महाभारत भाषा

शान्तिपर्व

राजधर्म्म, आपद्धर्म्म, मोक्षधर्म्म

जिसमें

अत्युत्तम विधान से नीतिपंथ प्रजापालन परोपकार शरणागत भयहरण काम क्रोध लोभ मोहादि विषय निवारण साम दाम दंड भेदादि ग्रहण छल पाखण्डादि वार्त्ताओं का त्याग यज्ञ धर्म्म होम देवपूजन शुभकर्म और धैर्यादि धर्म निबाहन परस्त्री सम्पत्त्यादि पर कुदृष्टि निवारण सम्पूर्ण विषय वासना रहित शम दम उपरति तितिक्षा श्रद्धा समाधानादि षट्सम्पत्ति साधन योगसमाधि कथन ईश्वराराधनासक्त सर्व्वाहंकार द्वेष ममतादित्यक्त ध्यान धारणा अन्तरङ्ग बहिरङ्ग साधनादि अनेक मार्ग्ग से मोक्षमार्ग प्राप्त्योपाय वर्णित हैं ॥

जिसको

भार्गववंशावतंस सकलकलाचातुरीधुरीण मुन्शीनवलकिशोरजी ने अपने व्ययसे आगरापुर पीपलमंडी निवासि चौरासियागौड़वंशावतंस श्रीपण्डित गोकुलचंद्र सूनु श्रीपण्डित कालीचरणजी से संस्कृत महाभारतका यथातथ्य पूरे श्लोक श्लोक का भाषानुवाद कराया ॥

दूसरीबार

लखनऊ

मुन्शी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने में छापागया

अक्तूबर सन १८९५ ई०॥

सूचना

अनेक प्रकार की पुस्तकें इस यन्त्रालय में मुद्रितहुई हैं उन में से जितने पुराण हैं उनसे चुनकर कुछ पुस्तकें नीचे लिखीजाती हैं जिनमहाशयों को इसमें से किसी पुस्तककी आवश्यकता हो वे इस प्रेसकेमैनेजरको पत्रलिखकर मँगालें तथा पुस्तकों का जोसूचीपत्र छपाहै वह भी मँगाकर देखलें ॥

देवी भागवत भाषा ॥

इसका उल्था पंडित महेशदत्त सुकुलने कियाहै-इसमें मुख्य करके श्री देवीजीके पाठ आदिक का विस्तार और सर्व प्रकार की शक्तियों का कथन और उनके अवतार, मंत्र, तंत्र, यंत्र, कवच, कीलक, अर्गला, पूजा, स्तोत्र माहात्म्य, सदाचार, प्रातकृत्य, रुद्राक्ष महिमा, गायत्री और देवियों के पुरश्चरण का वर्णन, सन्ध्योपासन, ब्रह्मयज्ञादि असंख्य तंत्र मंत्र रूप विषयहैं भाषा ऐसी स्पष्ट है कि साधारण लोग भी समझ सक्ते हैं ॥

लिंगपुराण ॥

इसका उल्था छापेखाने के बहुत खर्च से जयपुर निवासि पंडित दुर्गाप्रसादजी ने भाषा में किया है-जिसमें अनेक प्रकार के इतिहास, सूर्यवंश चन्द्रवंश का वर्णन, ग्रह नक्षत्र, भूगोल और खगोलका कथन, देव, दानव गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और नागादिकी उत्पत्ति इत्यादि बहुतसी कथायेंहैं ॥

विष्णुपुराणभाषा वार्त्तिक ॥

इसका पंडित महेशदत्त सुकुलने भाषान्तर कियाहै जिसमें जगदुत्पत्ति स्थिति, पालन, ध्रुव, पृथु आदि राजाओं की कथा, भूगोल, खगोल वर्णन धर्म शास्त्र, मन्वन्तर कथा, सूर्य और सोमवंशी राजाओं का कथन इत्यादि बहुतसी कथायें संयुक्त हैं ॥

विष्णुपुराण भाषा श्रीराजा अजीतसिंह वैकुण्ठवासीकृत ॥

जिसको श्रीराजा प्रतापबहादुरसिंह ताल्लुकदार व आनरेरी माजिस्ट्रेट रईस प्रतापगढ़ने छपवाया है इसमें सम्पूर्ण विष्णुपुराण दोहा चौपाई इत्यादि अनेक प्रकार के ललित छन्दों में वर्णितहै कागज़ सफ़ेद है ॥

म...रत भाषा शान्तिपर्व्व का सूचीपत्र ॥

आपद्धर्म्म ॥

शान्तिपर्व मोक्षधर्म पूर्वार्द्ध का सूचीपत्र प्रारम्भः ॥

शान्तिपर्व्वभाषाकासूचीपत्र ।

इति महाभारत शान्तिपर्व्व का सूचीपत्र समाप्तम् ॥

अथ महाभारत भाषा ॥

शान्तिपर्व्व ॥

राजधर्म्म ॥

सो० गणपति इष्टमनाय सुमिरि भवानी शंकरहिं ।
भाषा कहौं बनाय शांतिपर्वकी वार्त्तिकहि ॥

पहिला अध्याय ॥

वैशम्पायन मुनिबोले कि हे राजा श्रीगङ्गाजी के तटपर अपने सुहृदों को जल दानादि क्रियाकरके सब पाण्डव बिदुर धृतराष्ट्र और सब गतरूपास्त्रियों समेत पुरके बाहर एकमासतक निवास करतेभये वहां ब्यासदेव, नारद, देवल देवस्थान, कण्व इत्यादि बड़े २ मुनीश्वर और वेदके जाननेवाले बुद्धिमान् महात्मा अनेक ब्राह्मण लोगभी अपने २ शिष्यों समेत युधिष्ठिरके देखनेको आये और देशकालके सदृश राजा युधिष्ठिरने उनका पूजनकिया राजाकी पूजाको स्वीकारकरके उसको मध्यमें कर चारोंओर वृत्ताकार बिराजमानहुये और शोकग्रस्तकुरुपति राजायुधिष्ठिरका आश्वासन किया उससमय कृष्ण द्वैपायन आदि मुनियों समेत नारदजी बोले कि हे राजाधर्म तुम बड़े भाग्य शालीहो तुमने केशवजीकी सहायता और अपने सुधर्म्म बलसे प्रबल शत्रुओंको मार सम्पूर्ण पृथ्वीको बिजयकिया और प्रारब्धसे महाभयकारी घोर युद्ध से निश्चिन्त्यहो आनन्द प्राप्तकिया अब ऐसी बिजयको पाकर क्योंशोचमें पड़ेहो शास्त्र में लिखा है कि क्षत्रीधर्म्मके जाननेवाले को बिजयपाकर शोक करना उचित नहीं और तुमने तो बहुतसमयतक धर्म्महीका पालन किया परन्तु उन्होंने सदैव तुम्हारे साथ हठधर्म्मीही करी अर्थात् तुमने सब

प्रकारसे उनको समझाया परन्तु वह न माने अन्तको लाचार होकर युद्धही करना पड़ा और क्षात्रधर्म्म करके भूमिधन राज्यप्राप्तकिया अबतुम्हारा खेद करना क्षत्रीधर्म्म के विपरीत और अन्याय है तुमको अपना महाभाग्य समझकर आनन्दकरना उचितहै यह नारदजी के बचन सुनकर राजायुधिष्ठिर बड़ेविचार के साथबोले और नारदजी से कहनेलगे हे नारदजी आपके वचन सब यथार्थ और योग्य हैं और यह निश्चय है कि श्रीकृष्णकी कृपासे और ब्राह्मणों के आशीर्वाद और भीमार्जुनके भुजबल से मैंने विजय पाकर समस्त पृथ्वी को पाया और प्रबलशत्रुओं को भी दलसमेत परास्त किया परन्तु हे मुनिवर ज्ञातिबन्धु और गुरुजनोंका जो क्षयहुआ वह दुस्सह दुःख मेरेअन्तष्करणको बहुतपीड़ा करता है हाय इसयुद्ध में अभिमन्यु और द्रौपदी के अज्ञानी प्यारेबालकों का नाश और गुरुजनों में भीष्मपितामह द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य आदि बड़े २ अतुलपराक्रमी औरतेजस्वीसर्दार और महाबली अतिरथी अतुलपराक्रमी मेरासहोदर भाईकर्ण जिसकागुण पराक्रम वर्णन नहीं कियाजाता इनसबको वधकर के बिजयप्राप्तकी सोमहादुःखदायी मालूमहोती है यह विजय अजय के तुल्य है यह कठोर बिजय मेरे हृदयको यमकी स्त्रीके सदृश पीड़ित करती है जिन के पतिपुत्र बिचारे संग्राम में मरे वे स्त्रियां कैसे धीरज रक्खेंगी और श्रीद्वारकानाथ द्वारका को जायँगे तब वधू सुभद्रा अपने प्यारे भैयाकृष्णसे क्या कहैंगी और जिसके बेटे औरप्यारे भाई दोनों मारेगये वह द्रौपदी मेरेहृदय को वारम्बार पीड़ित करती है ॥

दो० सुमुखि सुभद्रा द्रुपदजा कैसे धरि हैं धीर ।
मरेपरमप्रियजासुसुत बन्धुबिदितरणधीर ॥

हे नारदजी मैं अपने दुःखोंको कहांतक कहूं कि मेरा कर्णसरीखा भाई जो युद्ध में अद्वितीय दशसहस्र हाथियों का बल रखनेवाला महारथी था उसके मरनेका महादुःख मेरेहृदयको बड़ीही पीड़ा देता है प्रथम हमनहीं जानते थे कि कर्ण हमारा सहोदर भाई है माताने प्रथम नहीं कहा यह बार्ता मैं यथार्थही आप से कहता हूं जो कदाचित पहिले से हम जानतेहोते तो उससे स्नेह प्रीति बढ़ाकर आपत्तियोंको मिटादेते वह कर्ण महाबुद्धिमान्, सत्यवादी, दानी, दयावान्, महाबली और पराक्रमीथा और धृतराष्ट्रके पुत्रदुर्योधनका महाप्यारा प्राणरक्षकथा और अपनी हस्तलाघवता से हरएक युद्धमें हमसब का अपमान करनेवालाथा उसको जन्मतेही हमारी माता कुन्ती ने एक पिटारीमें बंदकरके श्रीगंगाजीमें बहादियाथा जिसको यहांके लोगों ने सूतका और राधाका पुत्रमाना वास्तवमें वह कुंतीकाज्येष्ठ पुत्रहमारा बड़ा भाई था वह सुभराज्यके लोभी अज्ञानी के कारण मारागया मैं और मेरे

भाई भीमसेन अर्जुन नकुलसहदेव कोई भी इसभेदको नहीं जानते थे परंतु वहसुंदर व्रतरखनेवाला कर्णहमकोजानताथा क्योंकि हमने सुनाहै कि हमारी शुभचिन्तक कुंतीमाता हमारी रक्षाके लिये उसके पासगई और कहा कि तू मेरापुत्रहै सूर्य ने कृपाकरके तुझको दियाथा तबभी उस महात्माने कुंतीका मनोरथ पूरानहीं किया परंतु यहभी सुना कि उसने पीछेसे मातासे कहदिया कि मैं राजा दुर्योधन का साथनहीं छोड़सक्ता जो कदाचित् मैं तेरेकहने से युधिष्ठिरसे मिलापकरलूं तो मुझे सब लोग नीच और विश्वासघाती आदि अनेक दोषलगाकर यह कहेंगे कि यह अर्जुन से भयभीत होकर युधिष्ठिरसे जामिला इसकारण हे देवि मैं श्री कृष्ण समेत अर्जुन को बिजयकरके युधिष्ठिर से मिलाप करूंगा यह सुनकर कुंतीने कर्ण से कहा कि जो तुझेयहीहठ है तो अर्जुन के सिवाय चारों को अभय करके अर्जुन से इच्छापूर्वक युद्ध करियो तब उसबुद्धिमान् कर्णने हाथजोड़हुये कुंतीसेकहा कि मैं अपने बसाते तेरेचारों पुत्रोंको नहीं मारूंगा और हे माता तू काहे को अधीर होतीहै तेरेतो पांचहीपुत्र चिरंजीवि रहैंगे कैतो युद्ध में अर्जुन मुझे मारेगा या मैं अर्जुनको दोनोंमेंसे एकरहैगा पुत्रोंपर दयाकरनेवाली माताफिर बोली कि हे पुत्र जो तू इनका कल्याण चाहताहै तोरक्षाही करियो ऐसा कर्णसे सत्य २ कहकर कुंतीघरको गई ऐसा मेरासहोदर भाई अर्जुन के हाथसे मारागया हे मुनियोंमें श्रेष्ठ नारदजी मैंने अपने सहोदर भाई कर्णको पीछेसे माताके बचनोंसे जाना इसी से मुझभाईके मारनेवाले का हृदय बहुत खेदपारहा है क्योंकि जो मेराभाई कर्ण भी जीतारहता तो मैं कर्ण और अर्जुनकी सहायतासे इन्द्रको भी जीतलेता और सभामें धृतराष्ट्र के बिचारे निर्बुद्धी पुत्रों से मुझदुखियाको क्रोध अकस्मात् उत्पन्नहोगया कि द्यूतसभामें दुर्योधनका शुभ चाहनेवाला कर्ण जब मुझसे कटुबचनोंको बोलता उससमय मेरा क्रोध उसकर्ण के चरणों को देख २ कर दूरहोजाताथा क्योंकि कर्ण के दोनों चरण कुन्तीके चरणोंके सदृशथे मैं अपनी बुद्धिसे जब कुन्तीकी और उसकी तुल्यता का कारण शोचता तो किसी प्रकारका हेतु नहीं समझ में आताथा युद्धमें उसके रथके पहिये को जो पृथ्वीने पकड़ा और दबाया हे नारदजी इसका हेतु आपमुझसे कहिये उससेरे भाई को किसने किस अपराध के कारण शापदिया सो समझाकर कहिये क्योंकि आपत्रिकालज्ञ हैं संसारके कार्य्य कारण को जानते हैं और ब्रह्मज्ञानी हो इसी से आप के मुख से ठीक २ बृत्तांत सुना चाहता हूं ४४॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेयुधिष्ठिरनारदसम्वादेकर्णाभिज्ञानोनामप्रथमोऽध्यायः॥ १॥

दूसरा अध्याय ॥

वैशम्पायनजी बोले कि जब नारदसे युधिष्ठिरने ऐसा प्रश्न किया तब महा वक्ता श्रीनारदजी बोले कि भरतवंशियोंमें उत्तम महाबाहु युधिष्ठिर तुम्हारे भाई कर्णको परशुरामजीका जैसे शापहुआ वह मैं कहताहूं तुम चित्तलगाकर सुनो कि जो तुम कहतेहो कि युद्धमें कर्ण और अर्जुनकी कोई शत्रुता न थी यह केवल देवताओंकी गुप्त बातहै सो ठीकहीजानो वह वृत्तांत मैं कहता हूं तुम अच्छे प्रकारसे समझो हे युधिष्ठिर पूर्वकाल में देवताओं में यह विचार गुप्तहुआ कि यह क्षत्रियोंका समूह अधिक होगयाहै वह शस्त्रोंसे पवित्रहोकर कैसेस्वर्गकोपावे इसनिमित्त शत्रुताकीअग्निकाउत्पन्न और प्रकाशकरनेवाला यह कन्याका पुत्र कर्ण उत्पन्नकियागया और वह महा तेजस्वी बालक सूतका पुत्र कहाया और तरुण होकर द्रोणाचार्य्य गुरुसे धनुर्वेदपढ़ा उससमयभीमसेनकी सबलता और अर्जुन की युद्ध में हस्तलाघवता और हेराजेन्द्र तुम्हारी बुद्धिमत्ता और नकुल सहदेवकी पाण्डित्यता और नम्रता और श्रीकृष्ण अर्जुन से बाल्यअवस्था की मित्रता और प्रजाका अनुराग इत्यादि अनेक बातोंको देखदेखकर हृदय में जलताथा इसीहेतु से इसने बाल्य अवस्थासेही राजा दुर्योधनसे मित्रता अंगीकारकरी और प्रारब्धाधीन अकारणदैवइच्छा से तुमसे ईर्षाभाव रखता था अर्जुनको धनुर्वेद में अधिक पराक्रमी जानके अपनेगुरू द्रोणाचार्य्य से एकांत में जाकर विनय पूर्वक बोलाकि हेगुरुदेव मेरा यहविचार है किमैं अर्जुन से युद्धकरने को आपसे ब्रह्मास्त्रविद्या रहस्य प्रयोग संहार समेत सीखूं इसमेरे मनोरथ को आप पूर्ण करें आप महात्मा हैं आपकी प्रीति पुत्र और शिष्यों में समानहै आपकी कृपासे मुझे कोई पण्डित अकतास्त्र अर्थात् बे शस्त्रवाला नकहें द्रोणाचार्य्य जी ने जाना कि यह अर्जुन से शत्रुता रखताहै इसकारण कर्णसे क्रोध में आकर कहा कि तू अल्प बुद्धीहै और बुद्धिके तुल्य व्रती ब्राह्मणही ब्रह्मास्त्रपासक्ताहै अथवा तपस्वी क्षत्रीकोभी प्रयोग करना योग्य है और शूद्रको तो उसका अधिकारभी नहीं है तुमअपने योग्यही वस्तुओं को मांगो जबकर्ण ने अंगिराकुल भूषण द्रोणाचार्य का यह वचनसुना और सिद्धांत को जाना तो उसीसमय द्रोणाचार्य्य को दण्डवत् करके बड़े अहंकार से महेंद्रगिरि पर्वतपरगया वहां परशुरामजीको साष्टांग दण्डवत्करके बोला कि हे महाराजमैं भार्गव ब्राह्मण हूं आपकी प्रशंसा सुनकर शरण में आयाहूं फिर परशुराम जीने नामगोत्र प्रवर वेदइत्यादि सबबातें पूछकर अपनी शिष्यता में अंगीकार किया और बड़ी प्रीति से कहा कि किसकारण आपका आनाहुआ

तब वह बोला कि महाराज धनुर्वेद पढ़नेको आया हूं तब प्रसन्नहोकर कहा कि हमतुमको पढ़ावेंगे और सिखावेंगे और आज्ञाकी कि आनन्दसे रहो यहआज्ञापाकर कर्ण उस स्वर्गके तुल्य महेंद्र गिरिपर रहने लगा और वहां रहते हुये गन्धर्व राक्षस और यक्षों से मेलहुआ और परशुरामजीसे बुद्धिके अनुसार शस्त्रसीखे और देवता, दानव, दैत्योंसे प्रीतिहुई तिसपीछे वह सूर्य्य का पुत्र कर्ण आकाशके समीप समुद्रके तटपर हाथमें कभी खड्ग कभी धनुष लिये बनमें अकेला घूमाकरताथा एकदिवस फिरते फिरते दैवयोग से उसने धोखेसे मृग जानकर किसी, अग्निहोत्री ब्राह्मणकी होमधेनुको बाणसे मार डाला और धेनुके समीपजाकर मनहीमन में पछिताकर और उसके स्वामी उस अग्निहोत्री मुनिको क्रोधित जानउनके चरणपकड़ प्रार्थना करनेलगा कि स्वामी मृगकी भ्रांतिसे यहगौ हमारे बाणसे मारीगई इससे आपबड़े हैं क्षमाकीजिये क्योंकि बड़ेलोग छोटे उत्पाती बालकोंपर सदैव कृपाकरते हैं और पण्डित लोग धोखेसे हुये पापका दोषनहीं मानते यह सिद्धांत समझ के मेरीबिनयको अंगीकारकर क्षमाकरिये कर्णके ऐसेबचन सुन के वहक्रोध युक्त होकर बोला औ शापदिया कि हे मूढ़ शठ अबोध तू अवश्य बधनेके योग्यहै और मूर्ख तू जिसके जीतनेकेलिये धनुष बिद्या सीखकर अभ्यास करता है अथवा जयकी आशा करता है जब उसके साथ अथवा किसीदेवतासे युद्धकरेगा उसीदिन तेरायहपाप शिर घुमाकर प्रकट होगा और तेरे सुन्दर रथके चक्र को पकड़कर भूमि ग्रसलेगी और चक्रके ग्रसतेही तुझ ब्यग्रचित्तकाशिर तेराशत्रु अपने पराक्रमसे काटडालेगा हेनराधम तूचला जा तब उसशापित कर्णने बहुतसेरत्न और गौदेने कहकर चाहा कि शाप शान्तहो परन्तु न माना और कहा कि मेरे बचनोंको कोईभी मिथ्या नहीं करसक्ता तुमजाओ या ठहरो अथवा अपना कार्य्यकरो जबइसप्रकार ब्राह्मण के बचन सुने तब भावीप्रबल जानकर शापके दुःखसे शिरनीचाकर के भय भीतहो शापको शोचता हुआ कर्ण चलाआया २६॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेनारदयुधिष्ठिरसंवादेकर्णशापोद्वितीयोऽध्यायः२॥

तीसरा अध्याय॥

नारदजी बोले कि हे युधिष्ठिर कर्ण परशुरामजीके निकट आकर पहिले के अनुसार रहनेलगा और भार्गवजीकी सेवा समय समयपर जैसीकि उचितहै रात्रिदिन करनेलगा तब परशुरामजी ने उसका बिक्रमबुद्धिगुण और श्रेष्ठकर्मजानकर उसको शुभअंगों सहित ब्रह्मास्त्रदिया और अच्छे प्रकारसे धनुर्वेद पढ़ाकर बड़ा चतुर किया और ऐसा बिश्वास उसपरबढ़ाया कि तपसे

और व्रतोंसे जब निर्बलहोतेथे तो परशुरामजी जो कि बड़े बुद्धिमान्थे कर्ण केसाथ कभी कभी आश्रम के सन्मुख घूमाकरतेथे और शान्त होकर इसके सहारे से आरामभी कियाकरतेथे एकदिन अधिकथकित होकर कर्णकीबगल में अपना शिरधरके सोगये थे कि दैवयोगसे हेयुधिष्ठिर अकस्मात् मांस मज्जा, कफ, रुधिर आदि का खानेवाला एक महा भयानक कीड़ा जिसका स्पर्शभी अत्यन्त कठोर था कर्णके समीप आया और उसकी जंघाको अपने तीक्ष्ण दांतोंसे काटा परन्तु उस महावीर कर्णने गुरूके भयसे कि मतकभीमेरे देहके हिलाने चलाने से गुरूकी निद्राजातीरहै इसलिये उसके हटाने और मारनेका कोई उद्योग नहींकिया और उसीप्रकार कीड़ेसे काटीहुई जंघा समेत वहसूर्य का पुत्रकर्ण जराभी न हटा धैर्य्यसे उस महाक्लेशको सहाकिया और गुरूके शिरको धारण कियेरहा जब उसके रुधिरसे उसका सबदेह भीजगया तबतो तपोमूर्त्ति परशुरामजी निद्रासे जगकर महापीड़ितहुये और शीघ्रही बोलउठे कि बड़े आश्चर्य्यकी बातहै कि मेरा देह अपवित्र कैसे होगया और कर्णतुझसे यहपूछताहूं कि यह तैंने क्याकिया भयको त्याग सत्यसत्य कहो तबतो कर्णने उसकीड़ेका काटनाउनसे वर्णनकिया और परशुरामजी ने भी उस शूकरसमान कीड़ेकोदेखा कि जिसके आठपावँ तीक्ष्णदाढ़ सुई के सदृश सिमटाहुआ और घनेबालोंसे ढकाहुआ अंग जिसका बड़ा भयानक रूपभल्लकनाम कीट था उसने तपोमूर्त्ति परशुरामजीका जैसेही दर्शन किया तो उसीक्षण प्राणोंको त्यागकर ऐसा आश्चर्य्यकारी भयानक रूप धारण करलिया कि जिसकी लाल गर्दन मेघपर सवार राक्षसदेह आकाश में निराधार खड़ाहुआ दीखा और परशुरामजीको हाथ जोड़ेहुये आनन्द चित्त होकर बोला कि हे भृगुवंशियों में मृगेन्द्ररूप परशुरामजी महाराज आपका कल्याणहो मैं आपके दर्शनोंके प्रभाव से इसमहाघोर नरकसे छूटकर उद्धार हुआ और हे मुनिश्रेष्ठ आपकी कृपासे मैं अपने स्थानको जाऊंगा और आपने जो मेरा अभीष्ट सिद्धकिया इससे आपके चरणोंको प्रणामकरके प्रसन्नता पूर्वक आपको चाहताहूं कि आपका ईश्वरभलाकरै यहसुनकर प्रतापी श्रीपरशुरामजी बोले कि तुमकौनहो और कैसे नरकमें पड़े इसका सब वृत्तांत हमसे वर्णनकरो वह बोला कि हे महात्मामैं प्रथम सतयुग में दंशनाम महाअसुर था और भृगुजीके समान मेरी अवस्था थी उससमय मैंने अपने पराक्रमसे भृगुजीकी प्यारी स्त्रीको हरलिया था तब वह आपके पितामह भृगुजी महाक्रोधित होकरबोले कि अरे मूत्र, कफ, रुधिर, मज्जाके खानेवाले दुष्ट पापी तूनरकके योग्यहै उनकाशाप होतेही हेमहर्षि मैं ऐसी सूरतका कीड़ा बन पृथ्वीपर गिरपड़ा तब मैंने प्रार्थना करके पूछा कि हे ब्रह्मन्मुझ अपराधी

का शाप कब छूटेगा तब उन्होंने कहा कि जब भृगुबंशी परशुरामजीकादर्शन पावेगा तब तू शापसे मोचनहोगा सो अब मैं उन्हींके वचनों के अनुसार आपके चरणों का दर्शन पाकर इस कल्याणरूपी गतिको प्राप्तहुआ ऐसा कहकर वह परशुरामजी को प्रणामकर चला गया फिर परशुरामजी ने क्रोध में आकर कर्णसे कहा कि अरे मूर्ख यह महादुःख है ब्राह्मण इसकष्ट को कभी नहीं सहसक्ता तू छलकरके ब्राह्मण बनाहै तेरा धैर्य्यक्षत्री के तुल्यहै इससे तुम छल त्यागकर सत्यसत्य यथार्थ कहो तब शापसे भयभीत होकर उनकी प्रसन्नता के अनुकूल कर्ण ने उत्तर दिया कि हे भार्गव मुझे ब्राह्मण क्षत्री से भिन्न सूत जानो और इसलोक में लोग मुझको राधाका बेटा कर्ण कहते हैं और हे महात्मा आप दया करके मुझअस्त्रों के लोभी पर अनुग्रहकरो आप वेद और धनुर्वेदके देनेवाले गुरूपिताके तुल्यहैं मैं निःसन्देह सूतहूं मैंने अस्त्रोंके लोभसे आपसे अपना भार्गवगोत्र कहातब तोमहा क्रोधाग्नि में जलते हुये परशुरामजीने उस हाथबांधे आधीनखड़ेहुये कर्णसे कहा कि जिसप्रकार से तैंने अस्त्रोंके लोभ से अपना भेदछुपाया अरे मूर्ख इसी अपराध से यहब्रह्मास्त्र सीखाहुआ तुझको समय पर याद न आवेगा और अपने बराबरवाले के साथ युद्धकरने के समय स्मरण रहेगा कि वेद कभी ब्राह्मणसे भिन्न किसी अन्यजाति में अचल और दृढ़ नहीं होगा अब तुमजाओ तुम सरीखे मिथ्याबादियों के लिये यहांकोईस्थान नियतनहीं है पृथ्वीपर युद्ध में तेरेसमान कोई क्षत्री नहींहोगा जबपरशुरामजीने ऐसेबचन कहे तबवह नम्रतापूर्वक न्याय और धर्म्मकी रीति से दण्डवत्कर चलाआया और दुर्योधनकेपास आकर कहा कि मैं अस्त्रका जाननेवाला अद्वितीयहूं॥

इतिश्री महाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेनारदयुधिष्ठिरसंवादेभार्गवोक्तकर्णशापवरप्रदानवोर्नामतृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय॥

नारदजी बोले कि भरतवंशियों में उत्तम युधिष्ठिर वह कर्ण उनभार्गवनन्दन परशुरामजी से शाप और अस्त्र पाकर दुर्योधन के साथ में रहने को प्रसन्नहुआ और बड़े अहंकार से कुरुपति के साथ रहनेलगा तब हे राजा कर्णने जो जो पराक्रम किये उनको सुनो कि प्रथमतौ कलिंगदेश के श्रीमान् राजपुर नगर में राजा चित्रांगद के यहां उसकी कन्याके स्वयम्बर में देश देश के बहुत से शूर राजा इकट्ठहुये यहवृत्तांतसुनकर दुर्योधनभी अपने कंचन के रथपरसवारहो कर्णको साथलिये वहांगया उसस्वयम्बर में शिशुपाल, जरासन्ध, भीष्मक, वक्र, कपोत, रोमानील और दृढ़पराक्रमी रुक्मी और राजासृगाल और स्त्रीराज्याधिपति अशोकशतधन्वा वीरभोज इत्यादि

तो यह और अन्य बहुतसे दक्षिणदेश के राजा और म्लेच्छों के आचार्य्य राजालोग और इसी प्रकार पूर्व्वोत्तरके अनेक भूपति सबसुवर्ण के बाजूबन्द आदि अनेक रत्न जटित भूषणोंसे अलंकृत तेजस्वी शुद्ध सुवर्ण के से वर्ण उन्नतदेह सिंहसमान पराक्रमी से मदोन्मत्त इकट्ठे हुये हे भरतर्षभ उस स्वयम्बर में जब सब राजालोग यथायोग्य आसनोंपर बैठाये गये तब वह राजकन्या हाथ में जयमाललिये अपनी धात्री और क्लीवलोगों के साथ रंगभूमि में आई और राजाओं के नामगुण पराक्रम सुनाये गये तब वह कन्या हरएक राजा को देखती हुई चली और जो दुर्योधन को उल्लंघन करके दूसरेके समीप जानेलगी तो राजादुर्योधन उस अपमान को नहीं सहसका और सब राजाओंको तुच्छसमझ तुरन्तही कन्या को रोंक हाथ पकड़ रथपर बैठाय कर्ण के साथ अहंकार और बलबढ़ाकर चल दिया तिस पीछे द्रोण भीष्म आदिसेरक्षित उसकी सेनाभी चलदीराजा दुर्योधनका रथ सबशस्त्रोंसे भराहुआ था ऐसा कन्याकाहरण देखकर सबराजालोग अपने अपने रथोंपर चढ़चढ़ अपने शूरवीरों समेत बढ़बढ़कर पुकारते हुये और कन्याभिलाषी राजालोगोंने दौड़ दौड़कर कर्ण समेत दुर्योधन के रथको जाघेरा और क्रोध से भरकर कर्ण और दुर्योधन दोनोंके ऊपर शस्त्रोंकी वर्षा ऐसे करनेलगे जैसे कि दोपहाड़ोंके ऊपर बादल वर्षाकरे ऐसा देखकर कर्णसमेत राजा दुर्योधन भी बाणोंकी वर्षा करतेहुये सन्मुखहुये और महाघोर संग्रामहोनेलगा उस समय कर्णने ऐसा घोर युद्धकिया कि गदा शक्ति धनुषधारी ध्वजा समेत रथोंपरचढ़ेहुये बाणोंकी वृष्टिकरते हुये अगणित राजाओंके सबशस्त्रों को काट२ पृथ्वीपरडालदिया और अनेक घोड़े हाथी रथोंके सारथियोंको मार २ अगणित योधाओं को गर्द मर्दकर मारे शस्त्र और बाणों से दिनकी रात्रि कर महाघोर संग्राम किया और सब राजाओंको जीत विजयी बाजोंको बजाताहुआ तब वह भयभीत राजालोग युद्धको त्याग अपना २ जीवले रथों को भी त्याग घोड़ोंको हांकतेहुये अपने २ देशों को गये और राजादुर्योधन कर्णआदि सब साथियों समेत कन्याको लेविजयका शब्द करतेहुये हस्तिनापुरको आये ऐसा रणकर्कस और महाभटकर्णथा ॥ २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्म्मेकर्णवीरतावर्णनोनामचतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पांचवां अध्याय ॥

नारदजी बोले कि कर्णकी और भी वीरता सुनाताहूं तुम चित्तसे सुनो यह सत्य २ कहताहूं कि एक दिवस कर्णकी वीरता और पराक्रम सुनके चक्रवर्ती मगध देशके राजा जरासन्धने दोरथोंसमेत युद्ध में बुलवाया दोनों एक २ रथपर सवारहुये और शस्त्र लेकर दोनोंबड़े शस्त्रवेत्ता द्वन्द्वयुद्ध करने

लगे प्रथम तो धनुषबाणसे अनेकप्रकार से युद्धकिया फिर शस्त्रोंसे ठहरा २ कर पुकार पुकार के कि भागोमत भागोमत कहकर घोरसंग्रामकिया फिर खड्ग धनुष भी डाल २ बिरथहो बाहु कराटक युद्धकिया तब कर्णने ऐसा पराक्रम किया कि जरासन्धकी सन्धिको उखाड़नेलगा तबजरासंधने अपनी देहकी बिपरीति दशादेखकर दूरसेही शत्रुताको त्यागकेकहा कि हे कर्ण मैं तुझसे प्रसन्नहूं और सराहकर कहा कि तू बड़ाबीरहै और अपनीप्रसन्नतासे अंगदेश समेत मालिनी नगरी दीनी तभीसे कर्णभी भूमिपतिहो दुर्योधन के साथ शोभितहुआ और हे युधिष्ठिर वह कर्ण अंगदेशोंकाराजा कहलाया और शत्रुओं की सेना का मर्दन करनेवाला कर्ण ने चम्पानगरीकी रक्षाकी वह तुमभी जानतेहो इसप्रकार वहकर्णशस्त्रों के प्रतापसे इसभूमिपरप्रधान शस्त्रवेत्ताहुआ ॥

चौ० कर्ण सकल जगजीतनलायक। जो नहिं शापदेत भृगुनायक ॥

और हे राजा तेरी जयके लिये देवेन्द्र इन्द्रने उसके दोनों कुण्डल और कवच अर्थात् बखतर उससे मांगे और देवमाया से मोहित उसदानी कर्णने देहके साथ उत्पन्न अपने कवच और दोनोंपूजित कुण्डलोंको उतार इन्द्रको देदिये तबकर्णदोनों कुण्डलों और कवचों से रहित होगया इसीहेतु वह बिजयी कर्ण श्रीबासुदेवजीके सन्मुख युद्धमें अर्जुनके हाथ से मारागया ॥

दो० बिप्र न देतो शाप जो कवच न लेत सुरेश ।
तोको करिके करणसों लहत बिजयको लेश ॥

अर्थात् ब्राह्मण और महात्मा परशुरामजीकेशाप और कुन्तीको बचनदेने और इन्द्रकी मायाकरके भूलसे कवच कुण्डलों के देने से और संख्या में अधिरथी कहनेसे और भीष्मजी के कियेहुये अपमानसे और राजा शल्यकी ओरसे तेजबल और बुद्धिकी न्यूनता और बासुदेवजीकी इच्छा से वह कर्ण रुद्र इन्द्र यमराज बरुण कुबेर देवयक्ष राक्षसों से बरपाने वाले और महात्मा द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य के दियेहुये दिव्यअस्त्रवाले गांडीवधनुषधारी अर्जुनके हाथ से वह सूर्य्यके सदृश तेजस्वी सूर्य्यका पुत्रहोके भी मारागया इससे हे युधिष्ठिर वह तेराभाई कर्ण इसप्रकारसे शापित होकर बहुतों से ठगागया हे नरोत्तम वह शोचके योग्यनहीं है जो क्षात्रधर्म्मको पालनकर संग्राम भूमिमें महायुद्ध कर साक्षात् परब्रह्म श्रीकृष्णजीके सन्मुख मारागया ॥ १५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेनारदयुधिष्ठिरसंवादेमृतककर्ण बीरतावर्णनोनामपंचमोऽध्यायः ५ ॥

छठा अध्याय॥

वैशम्पायनजी बोले कि नारद तो इतना वर्णन युधिष्ठिरसे कहकर चुप-होगये और युधिष्ठिर फिर भी शोकसे पीड़ित हो दीन आतुरमन सर्पके तुल्य श्वासले २ अश्रुपात डालताहुआ तब दुःखसे हतचित्तकुंती माताने देशका-लके सदृश मधुर वाणीसे युधिष्ठिर से कहा कि हे युधिष्ठिर तुम ऐसे धर्मज्ञ ज्ञानी होकर कर्णका शोक क्यों करतेहो हे महाबाहु तुमशोकको दूरकर मेरे इनवचनों को सुनो कि मैंने उसकर्ण को पहिलेही भाइयों से प्रीतिकरने को प्रेरणा कियाथा और उसके पिता सूर्य ने भी बहुतसमुझाया और अनेक बार शिक्षा कीगई परंतु वह हठी कर्ण नहीं माना इससे तुम शोक को त्यागो भावीबड़ी प्रबलहोती है जो होनहार है सो अवश्य होता है उसका मेटनेवाला कोई नहीं यह माताके वचन सुनतेही अश्रुपात डालता युधिष्ठिर बोला कि हे माता तुमने जो इसवृत्तांत को गुप्त रक्खा इसीसे हम इस महा शोक में पड़े इस से मैं अब शापदेताहूं कि कोई स्त्री मंत्र और गुप्तभेद को अंतरण में न छिपावे ऐसा स्त्रियोंको शाप दे राजायुधिष्ठिर फिर सधूम अग्नि के सदृशहोकर शांतहोगये १३॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेकुंतीयुधिष्ठिरसम्वादेयुधिष्ठिर दत्तस्त्रीशापवर्णनोनामषष्ठोऽध्यायः ६॥

सातवां अध्याय॥

वैशम्पायन बोले कि शांत होकर भी दुःखार्णव में डूबेहुये व्यग्रचित्त उस धर्मात्मा युधिष्ठिरने उस महारथी कर्णका स्मरणकरके रुदन किया और दुः-खदशा में उष्णश्वास लेकर अर्जुनको देखकर यहवचनकहा कि जो हमलोग वृष्णि अन्धकक्षत्रियों के पुरमेंही भिक्षामांगतेरहते तो काहेकोजातिकेमनुष्यों का नाशकरके इसशोक दशाको पहुंचते हमलोग निश्चयकरके प्रारब्धहीन हैं और हमारे शत्रुबड़े प्रारब्धीथे हमनेबड़ा आत्मघात किया कि इसकाफल अवश्य पावेंगे क्षत्रियोंके बल पराक्रम क्रोध आदिको धिक्कारहै जिसकेकारण इस महाशोक में हमलोग पड़े हमसे तो अच्छे वनचारी ही लोगहैं जो इन्द्रि-यों को जीत क्रोध हिंसा आदिसे रहितहोके वैराग्यको धारणाकिये पवित्रा-त्मा हो साधुरूप होते हैं और हम सबतो लोभ और भूलसे दंभी और मानी होकर ऐश्वर्य्य पूर्वक राज्य भोगनेकी इच्छा करके इस महाघोर दुःखदायी अवस्था को प्राप्तहुये पृथ्वी के विजय के हेतु अपने भाइयों को मराहुआ दे-खकर त्रिलोकी के राज्यको भी हम धिक्कार मानते हैं सो हम पृथ्वी के लोभ से मारने के अयोग्य गुरुजन आदि भाइयों और अन्य बहुत से राजाओंको

बधकरके इच्छा रहित बांधव मारनेवाले पृथ्वीपर प्रसिद्धहुये और अपने पुत्र पौत्र सखाओं को जिसके लिये बधकराया ऐसी पृथ्वीके पाने से कौन सुखहै हमारी ऐसी दशाहै कि जैसे श्वान अस्थिको चबाकर प्रसन्न होता है वैसेही हमने अस्थिरूपी राज्यको पाकर प्रसन्नता पाई ऐसा राज्य मुझको नहीं भावता यह क्षत्रियों के बंशका नाश दुर्योधन की मतिके विपरीत होनेसे हुआ और तुम लोगोंने भी इसी राज्य के लिये बड़ाभारी पराक्रम किया हम को राज्य भूमि घोड़े हाथी गौ और सुवर्ण रत्नोंका ढेर तो मिलजायगा परन्तु वे मरेहुये भाईबन्धु न मिलेंगे जो राज्यकी इच्छा करके अभिमान और क्रोध में भरेहुये कालबश हो यमलोक को गये देखो पिता माता भी बड़े २ जप पूजन पाठ आदि अनेक तपस्या ब्रह्मचर्य्यादि शुभकर्म करके ऐसे पुत्रों को चाहते हैं जो शुभकर्म करनेवालेहों और माता गौरी गणेश महादेव आदि देवताओंका व्रत यज्ञ मंगलगानकरके ऐसे गर्भोंको दशमास पर्य्यन्त धारण करतीहै जो जीवनेपर ऐश्वर्य्यवान्हो अच्छी२सन्तानोंको उत्पन्नकरें औरइस लोकमें अपने माता पिता को अनेक सुख देकर अन्तको पुन्नामादि अनेक नरकों से उद्धार करें जब उनके उत्तम कुण्डलधारी तरुणपुत्र पृथ्वी सम्बन्धी भोगों को न भोगकर और देव पितृ ऋषि इनतीनों ऋणोंको न चुकाकर काल बश हुये तो निश्चयहै कि वे यमलोक को गये इससे निश्चय होताहै कि उनके माता पिता दोनों धन रत्नोंकी आकांक्षावाले थे तभी वह राजा लोग मारेगये जो राजालोग अपने वांछितके प्राप्तकी इच्छा और उसके न मिलने से दुःख और क्रोध में प्रवृत्तहोंगे वह कभी कहीं अर्थात् इसलोक परलोक दोनों में कभी सुख न पावेंगे पांचाल और कौरवों में जो मारेगये वे तो सत्यही मारेगये क्योंकि तृष्णा संयुक्त मरने से स्वर्गको नहीं गये जो लोग तृष्णा से रहित हैं वह ऐसी दशा में इसलोक परलोक दोनों में सुख भोगेंगे हम सब इस संसारकी अनित्यता में अर्थात् संसार के नाश में कारणरूप समझेगये परंतु हमारा राज्य हरने से वह सब कारण मिथ्या निश्चय होता है क्योंकि वह शत्रुता रखनेवाला और कपट के द्यूत आदिसे अपनी जीविका करनेवाला दुर्योधन हम शुभचिंतक लोगों के साथ मिथ्यावादी हुआ इसी से हमने न उन्होंने बिजय पाकर अभीष्ट सिद्धकिया अर्थात् उन्होंने नतो इस पृथ्वीको भोगा और नस्त्रियों के गीतवाद्य सुने और न अपने इष्टमित्र और मंत्रियोंके वचनोंको सुना और वह मूल्यरत्न और भूमिकी आमदनीके धन को भोगा इसका यहहेतुहै कि हमारी शत्रुतासे पीड़ित होके इसलोकका सुख न पाया उसधनको हमारेपास देखकर उसकासुख बिगड़कर पीलाहोगया और राजा धृतराष्ट्रभीअनेक बातोंसे बिदितकिया गया तबभी अन्यायकी बुद्धि में

प्रवृत्त हो पुत्रोंकी इच्छाको स्वीकार करके अपने पिताके तुल्यभीष्मजी और विदुरजीके कहनेकोभी न मानकर उनकीअवज्ञाकेकारण निश्चयकरके मेरेही सदृश ऐसी महाघोर कुलक्षयरूपी दशाको प्राप्तहुआ कि जो महाभ्रष्ट अन्तःकरणवाले और हमसे ईर्षारखनेवाले दुराचारी लोभी अपने दुर्योधनआदि पुत्रों को न समझाकरअपने सगेभतीजोंकोराज्यसे हतकरके अपयशका भागीहुआ और हमारे महाशत्रु पापात्मा दुर्बुद्धी सुयोधन आदि वृद्धोंको शोककी अग्नि में डालकर गया हमारे घरानेका कौनसा भाई सुहृदजनोंके मध्यमें श्रीकृष्ण से ऐसे वचन कहसक्ताथा जैसे कि उस दुराचारी महालोभी अभिमानी दुर्योधनने कहे और हमलोग अपने तेज प्रतापसे सब दिशाओंको बिजय करके अपने भाइयोंसे बरसोंतक शत्रुता त्याग करतेरहे तो भी उस दुर्बुद्धीने दुर्योधन की सलाहसे पराजय पाई जिससे कि यह हमारा सब कुटुम्ब नाशहुआ हमने मारनेके अयोग्य भीष्मपितामह आदिको मारकर इस संसारमें अपयशपाया इस घरानेके नाशकरनेवाले दुर्बुद्धी पापात्मा दुर्योधनको राजाधृतराष्ट्र राज्य देकर अब पछताताहै कि बड़े २ शूरवीर मारेगये और बहुतसे पापकरके देशका नाश किया उनको मारकर सबका क्रोध दूरहुआ यह शोक मुझको दबाताहै हे अर्जुन क्याहुआ पाप तो पुण्यश्लोकों के द्वारा अथवा पापका प्रायश्चित्तादि दान तपकरके और राज्यको त्याग स्मृतियोंके जपकरनेसे नाशहोता है त्यागीलोग फिर पापकभी नहीं करसक्ते यह स्मृतिहै त्यागी मनुष्य जन्म मरणसे भी छूटजाताहै अर्थात् मुक्त होजाताहै यह भी श्रुति है कि तब वह योगमार्ग का पकड़नेवाला ब्रह्मको पाता है अर्थात् ब्रह्मस्वरूप होजाताहै ऐसा समझकर निर्द्वंद गृहस्थाश्रमको त्याग ध्याननिष्ठ मननशील ब्रह्ममें मिला हुआ मैं तुम सबको पूछकर वनको जाऊंगा और हेशत्रुहंता अर्जुन गृहस्थाश्रम में धर्मसंकुल योग आदि से आत्मदर्शन नहीं होसक्ता यह भी श्रुति है सो हे शत्रुसूदन मुझ गृहस्थाश्रम में फँसेहुये के सन्मुख वह पाप वर्त्तमान है जो मैंने कियाहै उसी पापसे जन्म और मरणका करनेवाला मोह मुझे प्राप्त होनेवाला है इससे मैं सम्पूर्ण राज्य और राजसम्बन्धी सुखों को त्यागकर सब से अलगहो शोक और ममताको दूरकर कहींको अकेला चलाजाऊंगा और तुम इस निर्विघ्न अकंटक राज्य और भूमिको निस्सन्देह भोगो और हेकौरवनन्दन राज्य और भोगों से मेरा प्रयोजन नहीं ऐसे वचन कहकर राजा युधिष्ठिर चुपकाहुआ तब छोटा भाई अर्जुनबोला ४४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेयुधिष्ठिरअर्जुनसम्वादेयुधिष्ठिर परिवेदनोनामसप्तमोऽध्यायः ७ ॥

———————

आठवां अध्याय॥

वैशम्पायन बोले कि जब युधिष्ठिर ऐसे बचन कहकर चुपहोगया तब दृढ़ पराक्रमी तेजस्वी युद्धमें हस्त लाघवता आदि अनेक बातों से उग्रस्वरूप इन्द्र से सम्बन्ध रखनेवाला अर्जुन बड़ी नम्रता और सुशीलता पूर्वक पृथ्वी की ओर शिर झुकाकर यह बचन बोला कि हे धर्म्मराज आप नीति में निपुण और अशेष धर्म्मों के जाननेवाले होकर ऐसे क्लीवों के समान बचन कहते हुये शोभित नहीं होते धर्मका पालन करके और क्षात्र धर्म्म से विजय करी हुई भूमिको प्राप्त किया इसमें कौन पाप हुआ जो इसको त्यागके आप ब्राह्मणों के समान बनमें घूमना चाहते हैं यह आपकी बुद्धिकी न्यूनता है जो अपने शत्रुओं के मरने से बिकल होतेहो काल पाकर तो सब संसार नष्टहोता है और जिसका जिसके हाथ घात लिखा है वह अवश्य होगा और होताहै वही हुआ इस में आपको क्यादोष है नाहक आप पश्चात्ताप करते हैं ऐसे प्रबल शत्रुओं से बिजय पाकर खेद करना अत्यन्त अन्याय है इसप्रकार से राज्यपाकर कोई भाग्यशाली त्यागनहीं करता इसराज्य के त्यागने से आपको लोग क्याकहैंगे कि जिस के लिये ऐसे २ कर्म किये उसको त्यागकरना कौन धर्म है और जो राजा कि कुटिल पापात्माहोते हैं वह भिक्षा मांगते फिरते हैं प्रतिदिन जिसके ऐश्वर्य्यकी बृद्धिहोती है वही महा भाग्यमान् कहाता है और सब राजालोग अपने धनराज्यकी ऋद्धिबृद्धि के लिये अहर्निशि नीतिको शोचा करते हैं और दरिद्रताका होना महापाप का मूलहै दरिद्रको आप रौरव नरकका किनारा समझो जैसे कि पापीलोग रात्रिदिन शोच में रहतेहैं इसीप्रकार दरिद्रीकोभी कभी आनन्द नहींमिलता और जो राजाहोकर दरिद्रीहुआ उसकीतोदशा कौन कहसके अपने सुन्दर धनको त्याग दरिद्रीहोना कौनसी नीति है॥

दो० सकैन कछुकरि दारिदी दोऊ दिशा नशात।
होत सधनमति मानको दोऊ दिशि अवदात॥
सधन पुरुष के सधत हैं अर्थ धर्म्म अरु काम।
होत काज धन हीन को ग्रीषम सरसमछाम॥
धन ते धनहै होत अरु धन ते होत सुकर्म्म।
धनते प्रकटत धर्म्म जिमि गिरिते सरिता पर्म्म॥
काम क्रोध अरु हर्ष मद धीरज बड़ो विचार।
धनते प्रकटत भूप अरु सधत सकलउपचार॥
सो पंडित गुणवान अरु दाता शूर सुजान।

दासबन्धुहित तासु सब जो जग में धनवान ॥
गो हय सेवकबन्धु हित बिनु है जो कृश तौन।
नहिं शरीरकृश तौनकृश धनबिनुकृश सबभौन ॥
मुनिनसंगमाहि अजिनधरि दर्भ कमण्डलु पानि।
होनोंभूपहि उचित नहिं राज्यकरो हित मानि ॥

अर्थात् हेराजा आप न्यायसे विचारकरो कि जैसे देवता और दानवों से युद्धहुआ उससमय देवताओं ने अपने जातवालोंको मारनेके सिवाय कोई और भी विचार किया देवदानव परस्पर में एकही पुरखेकी संतति होने से सजाती कहलातेहैं और देखो किसी राजाको दूसरे का धन न लेनाचाहिये तो वह धर्म कहांसे करे इस विषयको पंडितलोगोंने वेदोंमेंभी निश्चयकिया तो यही निश्चयहुआ कि राजाको पण्डितहोकर वेदत्रयीपढ़ना औरसबदशा में धनकाहरना और धनसे रीतिके अनुसार यज्ञकरना योग्य है और देवताओंने द्रोहकरकेही स्वर्गआदि स्थानोंको पाया जैसे कि देवताओंने जाति वालोंसे शत्रुता के सिवाय कोई उपाय दूसरा न किया देवतालोगसदैव इसी वेद वाक्य को कहतेहैं और पढ़ातेहैं यज्ञ करते वा कराते हैं वहभी धर्म्म और कल्याण कारी हैं राजा लेताहै और फिर दे देताहै हम राजाओं के किसी धनको भी निंदारहित नहीं देखते हैं इसीप्रकार से सबराजालोग इसपृथ्वी को विजयकर के यहकहते हैं कि यहहमारी है जैसे कि पिताके धनको पुत्र कहते हैं कि यहहमाराहै वह राजर्षि भी स्वर्ग के योग्य हैं जिनका यह धर्म्म कथन होताहै जैसेकि पूर्णसमुद्र के अम्बुकण चारोंओर को जाते हैं इसी प्रकार राजकुलोंसे भी धन पृथ्वीपर ठहरताहै जैसा कि यहपृथ्वी दिलीपनृग नहुष अम्बरीष मांधाता आदि अनेक राजाओंकीथी वह तुम्हारी होगई यह सर्व दक्षिणावाला धनरूपीयज्ञ तुमको प्राप्तहुआहै जो तुम इसयज्ञको न करोगे तो तुम राजसंबंधी पापभागी होगे जहां का राजा सर्व दक्षिणावाले अश्वमेधको करता है उसके यज्ञान्त के अवभृथनाम स्नानमें सब देवता आकर पवित्रहोते हैं और देखो विश्वरूप श्रीमहादेव जीने सर्वमेध नाम महायज्ञ में सर्व जीवों समेत अपनेको होमकिया हमने श्रवण कियाहै कि यह जीव धारियोंका दाशरथ× नाम सनातन महामार्ग है सो हेराजा आप कुमार्गीमतहो॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वराजधर्मेयुधिष्ठिरमतिअर्जुनराजधर्म्मवर्णनअष्टमोऽध्यायः ८ ॥

×एकपशु दो स्त्रीपुरुष यजमान तीनवेद चार ऋत्विज यह दशरथ जिसयज्ञ में चलते हैं उसका नाम दाशरथ है ॥

नवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे अर्जुन तू एकाग्र चित्तहो एक मुहूर्त्ततक दोनों कानों को हृदय कमल में धारणकर पीछेसे मेरेबचनको सुन तब तू समझेगा मैं संसारी सुखों को त्यागकर साधुओं के चलेहुये मार्गों में चलूंगा और तेरेकहने से कभी उस राज्यको स्वीकार न करूंगा जो तुम मुझसे पूछो कि आनन्दों से भराहुआ एकाकी के चलनेका निर्विघ्न मार्ग कौनसा है अथवा नहीं पूछता है तो भी सुन घरके सुखों को त्याग जहां बड़े २ तपस्वीलोग तपस्या करते हैं उस जंगल में फल मूलों को भोजनकरके मृगों के साथ बिहारकरूंगा समयपर हवन करूंगा दोनों समय स्नानकरके स्वल्पाहारीहो मृगचर्म्म ओढ़ जटा धारण करूंगा और शरदी गरमी बर्षा धूप आदि भूख प्यास के दुःखको सहता अपने देहको सुखाकर बनमें रहनेवाले प्रसन्नचित्त पशु पक्षियों के नानाप्रकार के क्रीड़ित शब्द जो मनको और कानों को आनन्द देनेवाले हैं उनको सदैव सुनूंगा और प्रफुल्लित वृक्षों की और लताओंकी आनंदकारी सुगन्धिको सूंघता और अनेक प्रकार के रूप धारण कियेहुये बन बासियोंको देखूंगा और बानप्रस्थ मनुष्यों का और कुल बासियों के बिपरीत दर्शन न करूंगा तो फिर ग्राम बासियों का क्यों करूंगा एकान्त में निवास करने का अभ्यास करके विचारवान्हो पक्के कच्चे फलों से अपना निर्वाहकर बन के फल बचन और जलों से देवता और पितरों को तृप्त करूंगा ॥

इसप्रकार से बनके शास्त्रों की बड़ी २ उग्र बिधिओं को करता इस देहकी परिणाम दशाको देखूंगा फिर मुनिमुण्ड होकर एक एक वृक्षसे प्रति दिन भिक्षा मांगता देहको पोषण करूंगा फिर शरीर में धूललगा उजड़ेहुये मकान में या वृक्षों की जड़ों में निवास करके सबरोचक वा अरोचक वस्तुओं को त्याग शोच और आनन्दसे रहित स्तुति निन्दा को समानकर इच्छा और ममता को दूरकर गृहस्थाश्रमसे निर्द्वन्दहो आत्माराम प्रसन्न चित्त जड़ अन्ध और बधिरों कीसी दशा में योगसे आत्मा में रमण करनेवाला शुद्ध अन्तष्करणवान् अन्य किसी से विवाद रहितहो सब स्थावर जंगम और चार खानिके सब जीवों में अहिंसावान् अपने स्वधर्म्म में प्रवृत्त होकर इंद्रियों का पोषण करनेवाले जीवोंके समान कभी किसी से हँसतानभृकुटी हिलातासदैव प्रसन्नमुख जितेंद्री होकर किसीसे मार्गको नपूछता चाहेजिस मार्गहोकर अनियतदेशकी ओर अनिच्छावान् पीछे को न देखताकाम क्रोध लोभ से रहित निरभिमानी होकर दैवइच्छा पर चलूंगा और स्वभाव जोहै देहका पूर्व्वसंस्कार और भोजन वह आपसे आप पैदा होजाते हैं जैसे कि बालक

क्रोद्य इसलिये भोजन आदिकी चिन्ता न करना चाहै कभी पहले घर में न मिलै अथवा दूसरेमेंभी स्वादु अस्वादु थोड़ाही मिलै उसेही भक्षणकरना वल्कि न मिलनेसेभी तृप्तरहना जिसघर में धुवांनहो रसोई अलगकरदी हो अग्नि प्रज्वलितनहो मनुष्य भोजन करचुकेहों पात्रोंका मांजनाआदिभी होचुकाहो भोजन सबखागये हों ऐसे समय में दोतीन अथवा पांच घर में भिक्षाकरता संसारी प्रीतिकी फांसी को अलग करके इसपृथ्वीपर विचरूंगा समदर्शी महातपी लाभमें व अलाभमें व जीवन मरणमें न किसीकी अस्तुति न निन्दाकरके एकभुजाको ऊंचाकर दूसरीमें चन्दनलगाके उनदोनों भुजाओं के कल्याण और अकल्याणों को न शोचे धनआदि की वृद्धि के लिये जो काम कि जीवधारियोंको करनेके योग्य हैं उनसबको त्यागकरकेवल देहके निर्वाह होनेके योग्यकरे उनकामोंमें भी सदैव चित्त न देकर इन्द्रियों की सब क्रियाओं को छोड़कर चित्तके संकल्पको अपने वशमें रखनेवाला बुद्धिके दोषोंको दूरकरे सबसंगोंसे छूट मोहसे जुदेहुयेके सदृश किसीके वशीभूत न होगा इसप्रकार से संसारकी प्रीति को त्यागूंगा मैंने अपनी मूर्खता से बड़ा पाप किया है कोई मूर्ख मनुष्य भी बुरे भले कामों को करके ऐसी स्त्री आदि का पोषण करता है जोकि केवल अपने स्वार्थही के लिये मिलेहुये हैं और अन्तावस्थामें इस अनित्य शरीर को त्यागकर उस पाप का भागीहोताहै क्योंकि वह करनेवालेके कामका फलहै इसप्रकार रथके पहियेके सदृश घूमनेवाले इससंसार चक्रमें इसकामका न करनेवाला संसारके जीवों में मिलजाताहै जन्म मरण वृद्धावस्थाके दुःख और रोगोंसे भरेहुये आत्माके जुदा भ्रांतीसे रस्सी में सर्प के सदृश मिथ्या संसारको त्याग करके सुख को प्राप्तहोताहै स्वर्गसे देवताओं के गिरजाने और महर्षियों को अपने अपने स्थानोंसे नीचाहोनेका कारण अविद्याहै और तत्त्वका जाननेवाला कौनपुरुष स्वर्गके सुखोंको चाहताहै अर्थात् स्वर्गके सुखभी नाशवान्हैं औरअनेकप्रकार केचलणोंसे भरेहुये बड़ेराजालोग अनेक प्रकारके कर्म्मोंको करतेहुये तुच्छ वार्त्ताओं के कारण छोटे छोटे राजाओं के हाथसे मारे जाते हैं इसी हेतु से यह ज्ञानरूपी अमृत बहुतकाल पीछे मेरे सन्मुख अर्थात् मुझको प्राप्तहुआ है उसको पाकर मैं उस स्थानको चाहताहूं जोकि अनादि और अव्यय और सदैव एक स्वरूप में रहताहै मैं धैर्य्यवान् और निर्भयहोकर ऐसे निष्कंटक और भयरहित मार्ग में विचरताहुआ जरारोग आदिसे ग्रसित इस अपने शरीरको त्यागूंगा ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेयुधिष्ठिरज्ञानवर्णनोनामनवमोऽध्यायः ९ ॥

दशवां अध्याय॥

युधिष्ठिर के ऐसे वैराग्ययुक्त बचन सुनके छोटे भाई भीमसेन बोले कि हे राजा आप अर्थ न जानके अपंडित वेदपाठी के सदृश ऐसे बचन कहते हो जिनको बुद्धिमान् कभी न कहैं अगर आपकी ऐसीही बुद्धिथी तो प्रथमही कहते कि हम काहेको शस्त्रों को ग्रहण करते और काहेको यह उत्पात होता और मोक्षके लिये भीखही मांगते रहते इस दारुण युद्धको नहीं करते जो हम जानते कि बिजय करना बुरा होताहै तो छली धूर्त्त अधर्म्मी धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारकर कौनसा फल प्राप्तकरें जो आप इसराज्य और भूमिका धर्म्म बिचारकर त्याग करते हैं जैसे प्यासा मनुष्य सरके समीप पहुंचकर जल को नहीं पीता और वृक्षपर चढ़के मधुपाकर भयके मारे उसको नहीं पीता और जैसे हजारों कोस चलकर अभीष्ट नगर के समीप जाकर मारे श्रम और संदेह के प्रवेश न करके फिरजाय और क्षुधितहोके प्राप्त भोजन को दुःख मान कर नहींखाता और जैसे कि कामी पुरुष तरुणी को पाकर बिना भोग किये जाय तैसेही आपकी बुद्धि मालूम होती है कि ऐसे बिजय कियेहुये राज्यको अपनी निर्बुद्धिता से त्याग करते हैं हमको अपनी हारही अच्छी थी विजय लेनेसे कौन प्रयोजन निकला कि ऐसे बिजयरूपी यशको पाकर फिर अयश लेना चाहते हो हे युधिष्ठिर यहां हमहीं निन्दा के योग्यहैं कि आपको अपना बड़ाभाई समझकर अपनी निर्बुद्धिता से आपके पीछे पीछे काम करतेहैं कि भुजों से बली और विद्यायुक्त पराक्रमी बुद्धिमान् होके इस प्रकारके नपुंसक की आज्ञा में चलते हैं जैसे कि निर्बल मनुष्य किसी बलवान्के साथचले मेरे इन बचनों को ध्यानकरके बिचारो कि हम सामर्थ्यवानों को राज्य प्राप्त करने के लिये उद्योग करना उचित है व अनुचित और शत्रुओं से घिरेहुये और पराजय पानेवाले राजालोग आपत्तिकालमें संन्यास लेतेहैं इसी कारण ज्ञानी लोग क्षत्रियों के संन्यासकी प्रशंसा नहीं करते और सूक्ष्म देखनेवाले धर्म्म के विपरीत मानते हैं अर्थात् स्मृतियों के अनुसार क्षत्रियों का मुंडन निषेध और अयोग्य समझते हैं कदाचित् कहो कि क्षत्रीधर्म्म हिंसासे भराहै इसका उत्तर यहहै कि जो जिस धर्म्म में जिस जीविका में जिस जातिमें जिस घराने में पैदाहोते हैं वह उसी उसी धर्म्म में चलते हैं और कोई अपनी जाति व सनातनी धर्म्म की निन्दा नहीं करता क्योंकि सब क्षत्रियों का अक्षयधन तीनों वेदहैं इसके विपरीत क्षत्रियों का जो झूठा धर्म्म है वह नास्तिकों का बनायाहुआ है उसको धर्म्मज्ञ लोग नहीं मानते हैं शरीर को अनाशवान् जाननेवाले आप सरीखे मनुष्यको मौनहोकर धर्म्म कपट में प्रवृत्तहोकर म-

रना संभव है और पुत्र पौत्र देवऋषि पितृ इनको पालन किये बिना बन में अकेले अपने देहसे सुख पूर्वक जीना भी आपही में घटितहै तात्पर्य्य यहहै कि जब पूर्वोक्त मनुष्यों का पालन न हुआ तो पशुके तुल्यहुये क्योंकि यह मृग शूकर पक्षी जो जंगल में अकेले रहतेहैं वह स्वर्ग को नहीं प्राप्त करसक्ते न कोई दूसरे प्रकारसे वह पुण्यभागी हैं जो कोई राजा संन्यास धर्म्म से सिद्धता को प्राप्त होताहो तो हे राजा पर्वत वृक्ष भी सिद्धीको प्राप्त करनेवालेहैं क्योंकि यहसदैव निरुपाधि संन्यासीहो गृहस्थ धर्म्मसे बाहर ब्रह्मचर्य्य धारण किये रहतेहैं तात्पर्य्य यह है कि पशु पक्षी आदि कोई कर्म्म नहीं करसक्ते हैं अपने पूर्व्व कर्म्म फलको भोगतेहैं और हमलोग कर्म्म करने के अधिकारी हैं इससे बिना कर्म्म किये हमारी मोक्ष नहीं होगी जलके जीव जो अपनेही उदरको भरना जानते हैं वह भी सिद्धिको पाते हैं बिचारकरो कि जैसे यह संसार अपने २ कर्म्मों में प्रवृत्तहै वैसेही हम सबको भी कर्म्मही करना योग्य है बिना कर्म्म करनेवाले क्षत्री की गति अर्थात् मोक्ष नहीं होती २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मेदशमोऽध्यायः १० ॥

गेरहवां अध्याय ॥

अर्जुन बोले कि इस स्थान में हम उस प्राचीन कथा को कहते हैं जिस में तपस्वियों से इन्द्रने वर्णन किया है कि डाढ़ी मूछ कटाकर कोई बड़े घराने के निर्बुद्धी ब्राह्मण घरको त्यागकर इस बिचारसे बनको गये कि फिर घरको न आना चाहिये यह धर्म्म है ऐसा मानके वह धनाढ्य ब्राह्मणलोग अपने पिता माता भाई बन्धुओं को त्याग ब्रह्मचारी होकर जंगल में रहनेलगे यह देखकर इन्द्र देवता प्रसन्नहुये और सुवर्ण का पक्षीरूप धारणकर उनसे कहा कि जो यज्ञके शेष अन्नके खानेवाले मनुष्यों ने जो कर्म्म किया वह कठिनहै यह कर्म्म धर्म्म की वृद्धिका हेतु होताहै और इससे जन्म भी सफल होता है और अंतको धर्म्म परायण होकर अपने अभीष्ट को पाके मुख्य गतिको प्राप्त होताहै यह सुनकर वे ब्राह्मण बोले कि हे पक्षी बड़े आश्चर्य्य की बात है कि तुम यज्ञासियों की अर्थात् यज्ञके शेष भोजन करनेवालों की अर्थात् भीख मांगनेवालों की प्रशंसा करतेहो तो हमको भी सत्य निश्चय होताहै और हमलोग भी भिक्षासी हैं फिर पक्षी बोला कि मैं तुम सरीखे पापी और उच्छिष्टभोजी रजोगुणी अज्ञानियों की प्रशंसा नहीं करताहूं प्रशंसा के योग्य वे दूसरेही भिक्षा मांगनेवालेहैं जो वृक्षोंके पत्ते तृणफल जो कीड़ोंके उच्छिष्ट होतेहैं उनको शुद्ध करके खाते हैं तब ब्राह्मण बोले कि यह हमारा बड़ा कल्याण है जो तुमने वर्णन किया हे पक्षी हम सब वर्त्तमानहैं आप हमारे क-

ल्याणकी बातें कहिये आपके वचनों में हमारी बड़ी श्रद्धा होती है पक्षीरूप इन्द्र बोले कि जो तुम आत्मा से आत्माको जुदा करके द्वैत न मानो तो तुम से यथातथ्य वचन कहूं फिर ब्राह्मण बोले कि हे भाई हम तुम्हारे वचनों को सुनेंगे तुम मोक्ष मार्ग के जाननेवालेहो हे धर्म्मात्मा हम तेरी आज्ञामें वर्त्तमान हैं तुम हमको धर्म्म की शिक्षाकरो पक्षी बोला कि सुनो चार पैरवालों में गौ बड़ी और धातुओं में सुवर्ण और शब्दों में मन्त्र और द्विपदों में ब्राह्मण श्रेष्ठतमहै यह मन्त्र ब्राह्मणही को उचितहै जो जीवनसे मरणकालके श्मशान पर्य्यन्त समयके अनुसार जीवते ब्राह्मण का कहाजाता है इस ब्राह्मणका वेद के अनुसार स्वर्गमार्ग सर्वोत्तम है तात्पर्य्य यह है कि ऐसा न हो तो प्राचीन समयके पुरुषों ने मन्त्रोंसे प्रकट होनेवाले सब कर्म्मोंको मेरेनिमित्त कैसे किया मुख्य बात यह है कि वे कर्म्म स्वर्ग को देते हैं जो कोई मनुष्य निश्चयताके जिस २ रूपसे ईश्वर की उपासना करताहै उसीप्रकार से इसलोक में सिद्धीको पाता है जैसे कि माघ महीने के शुक्लपक्ष आदि में जो उपासना करते हैं उन को सूर्य्यके द्वारा मोक्षरूपी सिद्धी प्राप्तहोतीहै और श्रावण आदि माससें करने से चन्द्रमार्ग्ग से सिद्धी होतीहै अर्थात् स्वर्गकी प्राप्ति होतीहै फिर वह स्वर्ग से गिरकर अपने कर्म्मोंको भोगतेहैं और जो कोई कर्म्मकी निन्दाकरके कुपंथ में चलतेहैं वह अर्थहीन मूढ़ पापके भागीहोतेहैं और देवबंश पितृबंश ब्रह्मबंशों को त्यागकर वे मूढ़ वेद विहीन मार्गको प्राप्त होतेहैं अर्थात् राक्षस रूप होतेहैं मैं तुमको यह बरदान देताहूं कि तुम्हारी सगुण और निर्गुण उपासना सिद्ध हो और गोधन और पुत्रदेताहूं इससे हेऋषियो उसउस मार्गमें नेष्ठायुक्तहोना यही तपस्वियोंका तप कहाजाता है कुछ देह को सुखानाही तप नहींहोता अपने सनातन देवपितृ मार्ग से ही गुरुभक्ति करके ब्रह्मकी प्राप्तिहोतीहै वही निश्चय करके कठिन कहीजाती है इसी कठिन कर्मको करके देवताओं ने बड़े ऐश्वर्य्य को पाया इसी कारणमैं तुमसे कहताहूं और निश्चय जानो कि गृहस्थाश्रम धर्म धारण करना कठिन है यही प्रतिष्ठा पूर्वक कुटुम्ब पोषण करना प्रजाओंका श्रेष्ठ और मुख्यतप है इसीसे ब्राह्मणों ने द्वन्द्व मत्सरता आदि उपाधियों को छोड़ इसीको महातपजाना इसी आश्रममें ब्रह्मचर्य्य धारण कर वेदपाठकरना यही गृहस्थाश्रमका तप कठिन है ऐसी बुद्धिसे प्रातःकाल सायङ्काल के समय को विभाग करके यज्ञ करने से शेषअन्न को कुटुम्बसमेत भोजन करने वाले पुरुष अचल पदवी को पाते हैं इसीकारण देव अतिथि पितृ और अपने स्वजनों को देकर जो शेष अन्न भोजन करतेहैं वही बिघसासी हैं इसी से धर्म्मको आश्रयकर जो ब्राह्मण सुव्रती और सत्य वादी हैं वह लोकमें गुरुकी पदवी पाकर निस्संदेह होजातेहैं अर्थात स्वर्ग में

जाकर विमत्सर हो इन्द्रलोक में असंख्य वर्षों तक निवास करते हैं अर्जुन बोले कि इसके अनंतर वह ब्राह्मण उसके धर्म्म अर्थसे भरे वचनोंको सुनकर अपने हितकारी जान और यह समझकर कि दूसरेआश्रम में सिद्धी नहींहै वनवास को त्यागकर गृहस्थाश्रममें प्रवृत्तहुये इससे हे सर्वज्ञ युधिष्ठिर तुमभी उसीधैर्य्यको धारण करके इसशत्रु रहिता पृथ्वीको अपनीकरके राज्यकरो॥ २८॥

इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणिराजधर्मेअर्जुनवाक्यो ऋषिशकुनिसंवाद कथनोनामएकादशोऽध्यायः ११ ॥

बारहवां अध्याय॥

वैशम्पायनजी बोले कि ऐसे अर्जुन के वाक्यसुनकर नकुल बोले कि हे धर्म्मधारियों में उत्तम महाप्राज्ञ बड़ी छाती और प्रलम्बभुज वाले युधिष्ठिर वैशाख यूपनाम क्षेत्रमें सब देवताओंकी वेदियांहैं इससे जानोकि वह देवता भी यज्ञकरतेहैं और अपने कर्म्मोंसे देवभावको पहुंचे हे राजा जो पितृ आस्तिकता से रहित केवल जीव धारियों को वर्षा आदिसे प्राणदान करते हैं वहभी बुद्धिसे कर्महीको करतेहैं और जोलोग वेदके मार्ग को त्यागतेहैं उनको बड़ा नास्तिक जानो वह कभी स्वर्ग को नहीं पाते वेद के जानने वालोंका वचनहै कि यहगृहस्थाश्रम सब आश्रमों से श्रेष्ठहै और उन्हींको वेदपाठी जानो जिन्होंने धर्म से प्राप्तहुये अपने धनको उत्तम २ यज्ञों में खर्चकिया उसीकोजितेन्द्रिय और त्यागी भीजानो हेराजा जो पुरुष गृहस्थके सुखोंको न भोगकर वनमें जाकर देहको त्यागताहै वह तामसी त्यागी कहाताहै हे युधिष्ठिर जो ब्राह्मण संन्यासी हो घरको त्यागवृक्षोंकी जड़ों में निवासकरके किसीसे कोई वस्तु विना मांगे भिक्षाकेलिये घूमता विचरता है वह संन्यासी त्यागी है और जो ब्राह्मण कामक्रोध और तृष्णाको दूरकरके वेदों को पढ़ता है वह त्यागी कहाजाता है ऋषियोंने अपनी बुद्धिरूपी तराजू में एक ओर तीनों आश्रम और दूसरी ओर गृहस्थाश्रम रक्खा तो तीनों गृहस्थसे कम हुये हे राजा जो पुरुष इसपर चलताहै वही त्यागी है और वह पुरुषत्यागी नहीं कहाताहै जो मूर्खोंकी सदृश घरको छोड़ वनकोजाय जो ऐसा धर्मध्वजी मनुष्य वनमें जाकर अभीष्ट वस्तु को चाहताहै उसको धर्मराज मृत्युकी फांसी में बांधता है और अभिमान युक्तकर्म्म करना सफल नहीं होता इससे त्यागयुक्त निरभिमानी होकर करनाही महाफलदायक है और शम, दम, दया, धैर्य्य, शौच, सत्यता, सुहृद भावपने से जो यज्ञधर्म होता है वह ऋषियज्ञ कहाताहै औ पितृदेव अतिथियों को संतोषकरने वाले मनुष्य इसी लोक में प्रशंसा पाकर अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष चारोंफलों को भोगते हैं हे धर्मात्मा ब्रह्माजीने भी यही शोच विचारकर जीवोंको उत्पन्न किया है कि यह अनेक

प्रकारके दक्षिणा युक्त यज्ञोंसे मेरा पूजनकरेंगे और पशु वृक्ष औषधियों को भी हव्य वस्तुओं सहित उत्पन्न किया इसीसे वह यज्ञ कर्म्म गृहस्थाश्रमको दृढ़ करता है इसी हेतुसे गृहस्थाश्रम कठिन और दुर्लभहै उसको प्राप्तहो गृहस्थी लोग पशु धान्यधनको पाकर जो यज्ञादिक कर्म्म न करेंगे वह सदैव पापके भागीहोंगे जैसे ऋषिलोग स्वाध्याय अर्थात् वेदपाठ जप यज्ञ करते हैं वैसेही दूसरेलोग ज्ञान यज्ञादिकोंको और अन्यऋषिलोग चित्तही में मानसी पूजनादिसे यज्ञोंको करते हैं हे राजा देवता लोग भी ऐसे ब्राह्मणकी इच्छा करते हैं जो चित्तको एकाग्र करके ब्रह्मरूपको देखताहै इसीसे वह भी ब्रह्मरूपही हैं सो आप इधर उधरसे प्राप्त कियेहुये विचित्र रत्नोंको यज्ञोंमें खर्च न करके नास्तिकपना करते हो हे राजा गृहस्थाश्रमी होके मैं किसी को राजसूय अश्वमेध और सब यज्ञोंका तर्ककरनेवाला नहीं देखताहूं इससे आप उन ब्राह्मणोंके द्वारा पूजनकरो जो दूसरेयज्ञ ब्राह्मणोंसे पूजितहैं जैसे कि देवताओंके स्वामी इन्द्रने किया जो प्रजाका धन राजाकी भूलसे चोर उठाले जायँ और उसकी रक्षा राजा न करै तो वह राजा कलि कहाताहै और भूषणोंसे अलंकृत घोड़े हाथी दासदासी गौ और देशग्राम छत्र स्थान आदि ब्राह्मणोंको न देकर ईर्षाद्रोह में भरेहुये हमलोग कलियुगके पापी राजा होंगे और हे राजा प्रजाकी रक्षा और ब्राह्मणोंको दान न देनेवाले प्रजाके पापके भागी होकर अपने कियेको भोगेंगे अर्थात् कभी सुखोंको न भोगेंगे इससे हे स्वामी जो तुम अच्छे २ यज्ञोंसे पूजन और पितरोंको स्वधादानदिये बिना और तीर्थोंमें बिना स्नान किये बनको जाओगे तो ऐसी दशामें आप वायु से पृथक् टूटेहुये बादलके सदृश नाशको प्राप्त होगे और दोनों लोकों से गिरकर पिशाचयोनिको पाओगे जो बाहर भीतरकी प्रीतिको त्याग घरको छोड़ बनको जाता है वह त्यागी नहीं है हे महाराज ऐसे अयोग्य कर्म ब्राह्मणको करनेमें हानिकारी नहीं हैं जैसे कि इन्द्रने देवताओंकी सेनाको मारा उसीप्रकार युद्धमें वेगसे वृद्धिपानेवाले शत्रुओंको मारकर कौनसा राजा शोचकरताहै सो आप क्षत्री धर्म्म पराक्रमसे पृथ्वीको विजय करके मन्त्रोंके जाननेवाले ब्राह्मणोंको दान करके स्वर्ग के भी ऊपर अर्थात् ब्रह्मलोकको जाओगे सो अब तुमको शोच न करना चाहिये ३८॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेद्वादशोऽध्यायः १२॥

तेरहवां अध्याय॥

यह नकुलके बचन सुनकर सहदेव बोले कि हे युधिष्ठिर बाहर की द्रव्यों को त्यागकर सिद्धिनहीं प्राप्त होती जो मनुष्य अपने शरीर की द्रव्योंको त्या-

गदेता है वही सिद्ध होजाताहै देहकी द्रव्योंको त्याग पृथ्वीपर राज्य करने वालोंको जो धर्म्म और सुख होताहै वैसाही हमारे मित्रोंका भी हो दो अक्षर वालेको मृत्यु और तीन अक्षरवालेको ब्रह्मकी प्राप्ति होती है अर्थात् मेरा कहनेवालोंकी मृत्यु और न मेरा कहनेवालेकी मोक्ष होतीहै और हे राजा इसीसे ब्रह्म और मृत्यु दोनों बुद्धिसे मालूम होते हैं यह दोनों अदृश्य शास्त्र निस्संदेह जीवोंको लड़ातेहैं हेराजा निश्चयजानो कि इस जीवात्माका नाशनहीं है ऐसी दशामें धर्म युद्ध में जीवों को मारकर हत्या नहीं मालूम होती फिर भी ऐसे नाशवान् शरीरके साथ जीवकी उत्पत्ति और नाश वृथा मानना है इससे इस एकांत पनेको त्यागकर पहिले पुरुषोंने जो पथ प्राप्त किया उसी पथमें चलना योग्यहै अर्थात् स्थावर जंगम सहित इस सम्पूर्ण पृथ्वीको प्राप्त करके जो राजा भोग नहीं करता उसका जीवन निष्फलहै हे राजा वनमें रहनेवाले और फल फूलोंके खानेवाले जिस पुरुषकी ममता द्रव्योंमें होती है वह मृत्युके मुखमें है अर्थात् उसको सदैवता नहीं है तुम जीवोंके भीतर बाहरको देखो जो भीतर की द्रव्य हैं उनको परमात्माकी सत्ता जानो जो पुरुष उस नित्य शुद्ध परमात्माको देखते हैं वह इस महा भयानक संसार से मुक्त होते हैं आप मेरे पिता माता भाई गुरु हो मुझदुःखसे पीड़ावान् के अपराध के क्षमाकरने को योग्यहो हेभरतर्षभ मैंने जो आपके साम्हने सत्य झूठकहा उसको भक्तिसे कहाहुआ जानो १३ ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणि राजधर्मेसहदेव वाक्य वर्णनो नाम त्रयोदशोऽध्यायः १३ ॥

चौदहवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार नाना शास्त्र और वेदोंके ज्ञाता भाइयोंने ऐसे २ वाक्य कहे तब कुन्तीकेपुत्र धर्म्मस्वरूप युधिष्ठिर फिर चुपहोगये तो बड़ेघराने की पुत्री स्त्रियों में उत्तम बड़े नेत्रवाली श्रीमती द्रौपदीजी गज रूप भाइयोंके मध्यवर्ती गजेन्द्ररूप युधिष्ठिरको सन्मुख करके आनंद चित्तहो बड़ी सावधानीसे बोलीं कि हे राजा यह सब तुम्हारे भाई चातक पक्षी के सदृश मुखको कुम्हलारहेहैं और बराबर पुकार रहेहैं इनको क्यों प्रसन्न नहीं करते तुमको उचितहै कि इन मतवाले हाथियोंके सदृश महा भुजवाले पराक्रमियोंको जो महादुःखपारहे हैं युक्तिपूर्व्वक वचनोंसे सुखीकरो और हे राजा तुमने पहले द्वैतवनके मध्यमें वातशीत उष्णतासे पीड़ावान् अपने भाइयोंसे यह वचन क्यों कहाथा कि हमयुद्धमें दुर्योधनको मारकर संपूर्ण पदार्थों से भरीहुई इस पृथ्वी को भोगेंगे और युद्ध में विजयीहो संपूर्णमनोरथों को पूरा

करेंगे सो तुमनेमहा बलवान् रथी महारथी भाइयों को विरथ करके बड़े २ हाथियोंको मार घोड़ोंके सवारों समेत रथोंसे पृथ्वी को आच्छादित किया अब नाना प्रकारके दक्षिणा युक्त यज्ञोंसे जो पूजन करोगेतो बनवासमें जो दुःख पाये हैं वह सुखदायी होंगे हे धर्म्मध्वज आपने प्रथम उनसे ऐसा कहाथा अब क्यों उनके चित्तों को उदास करते हो नपुंसकलोग पृथ्वी और धनको नहीं भोगते और न उनके पुत्र उत्पन्नहोतेहैं और क्षत्री दण्डके बिना तेजवान् नहींहोता और दण्डबिना पृथ्वी को नहींभोगसक्ता हे राजा सब जीवोंमें दयाकरना और बेद पढ़ना और तप करना ब्राह्मणका धर्म्महै क्षत्री का नहीं दुराचारियों को दण्ड देना या देशसे निकाल देना सत्पुरुषों का पालन करना युद्धसे न हटना यह क्षत्रियोंका उत्तम धर्म्महै जिसमें क्षमा क्रोध दान और भेज आदि लेना और भयवा निर्भयता और कृपा होती है वही धर्म्मका जानने वाला कहा जाताहैं तुमने बेदविहित दानसेयायज्ञसे अथवायाचनाके द्वारा यह पृथ्वी नहीं पाई शत्रुओंकी युद्धकर्त्ता सेना और ऐसे २ युद्धवेत्ता पराक्रमी घोड़े हाथी रथों से भरेहुए प्रभुशक्ति मन्त्रशक्ति उत्साहशक्ति इन तीनों अंगों से युक्त और द्रोणाचार्य्य कर्ण अश्वत्थामा कृपाचार्य्य आदि महाप्रतापियों से रक्षित अपने शत्रुको मारा इससे अवश्य इस पृथ्वी को भोगो हे राजा यह जंबूद्वीप अनेक उत्तम देशों से शोभितहै इसको आपने दण्डसे मर्दन किया और हे महाराज इसीप्रकार सुमेरुपर्बत के पश्चिम की ओर जो क्रौंचद्वीपहै उसको भी आपने उक्त प्रकारसे आधीन किया और हे कुरुनन्दन उसी महा मेरुके पूर्बमें क्रौंच द्वीपके सदृश शाकद्वीप को भी दण्ड से स्वबश किया और शाकद्वीपके तुल्य सुमेरु के उत्तर और भद्राश्व द्वीप को दण्डसे बिजय किया और हे बीर तुमने सागरके पारहोके अनेक देशों से सुशोभित द्वीप और उप द्वीपों को दण्डसे परास्त किया ऐसे अनेक अप्रतिमेय कर्म्म आपने किये और ब्राह्मणों से प्रशंसा पाकर भी आप प्रसन्न नहीं होते सो हे भारत तुम इन अपने भाइयों को देखकर प्रसन्न करो जो बृषभों के सदृशमत्त और गजेंद्रों के समान बली देवताओं के से स्वरूप शत्रुहन्ता महातपी एक २ पृथ्वी के जीतने योग्य हैं यह मेरी राय है कि ऐसे भाइयों को आनन्द दो नहीं तो फिर मेरे यह सब नरोत्तम पति कैसे समर्थ न होंगे जैसे कि देह के पृथक्होने से इन्द्रियां समर्थहीन हों और सब देशकाल की जानने वाली हमारी सासने मुझसे यह बात मिथ्या नहीं कही कि हे पांचाली यह शीघ्र पराक्रमी युधिष्ठिर अनेक राजाओं को मारकर तुम को उत्तम सुख होगा सो हे राजा उस बचन को आपकी अज्ञानता से मैं निष्फल होतासा जानती हूं जिनके बड़े भाई बुद्धिमान् और वह

सब आज्ञाकारी ऐसे चारों पाण्डुनंदन आपके मोहसे और चित्त की भ्रान्ति से दुःखित हैं सोहे राजा आप के भाई जो सावधान चित्त हों तो तुमको नास्तिकों के साथ बांधकर आप पृथ्वी को भोगें इसप्रकार के कर्म अज्ञानी करते हैं वह कभी आनन्द को नहीं पाते वह औषधियों से चिकित्सा के योग्यहैं जो उन्मत्तोंके मार्गमें चलतेहैं वह इस लोकमें सबसे स्त्रियोंसेभी निकृष्टहैं मैंभी इसी प्रकार पुत्रोंसे रहित होजाऊंगी जो इन उद्योग करने वालों को त्यागकर जीवना चाहतीहूं मेरा वचन मिथ्या नहीं है तुम सब पृथ्वीको त्यागकर अपनी आपत्ति को बुलातेहो सो हे राजाओं में उत्तम जैसे कि तुम सब राजाओं में शोभित हो वैसेही मान्धाता और राजा अम्बरीष थे इसी प्रकार तुमभीधर्म्म से प्रजाका पोषण करके पृथ्वी देवीका पालन करो और पर्व्वत वन द्वीप आदिसे शोभित इस पृथ्वी पर राज्य करो हे राजा चित्त से उदासीन मतहो तुम अनेकप्रकार के यज्ञपूजनोंसे परमेश्वरको प्रसन्न करो और युद्ध में शत्रुओं को पराजयकर ब्राह्मणों को वस्त्र धन भोजन इत्यादिभोगोंका दान करो ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेद्रौपदीवाक्यकथनोनामचतुर्दशोऽध्यायः १४ ॥

पंद्रहवां अध्याय ॥

वैशंपायनबोले कि इसप्रकार द्रौपदी के वचन सुनकर बड़ेभाई का बड़ा मानकरके फिर अर्जुनबोले कि दण्ड देनेवाले सब प्रजापर आज्ञा कर्त्ता हैं और दण्डीही रक्षाकर सब सोनेवालों के बीचमें जगता है यह दण्डीके धर्म्म बुद्धिमान् लोग कहतेहैं कि दण्डही से धन धान्य धर्म्म आदि होतेहैं और दण्डसे अर्थ धर्म्म काम मोक्ष चारों पदार्थप्राप्तहोतेहैं इसीसे इसको त्रिवर्गकहतेहैं सो हे बुद्धिमान् इसको लोकव्यवहार मानो और अंतरदृष्टिसे आत्मभावको देखो कि कोई भी पापी राज दण्डके भयसे पाप नहीं करता और कोई यमदण्डके भयसे कोई पर लोकके डरसे पाप नहीं करते और कोई पापी आपसके भयसेभी नहींकरते लोकमें इस प्रकारके व्यवहार करने वाले सबजीवदण्डके अधिकारीहैं कोई दण्डके भयसे परस्पर में भोजनभीनहींकरते इससे जो राजा दण्डसे प्रजाकी रक्षा न करेगा वह अन्धतामिश्र नरकको जायगा जैसे कि अजितेन्द्रियपुरुष अन्यउत्तमपुरुषों को दुःख देताहै और दण्डलेने वाला कर्म्म करता होताहै तो उसीकारण से उसको दण्डकहते हैं ब्राह्मणों का वचन दण्ड है क्षत्रियोंका दण्ड मासिक देनाहै वैश्यकादान दण्डहै और शूद्र निर्दण्ड कहाजाता है सो हे राजा लोकमें धनकी रक्षा के लिये अज्ञानताही दण्डनाम मर्य्यादाहै जहां राजा दण्डलिये उद्युक्त रहताहै

वहा की प्रजा अज्ञान नहीं होती इसीसे वहां अच्छेप्रकार से निर्णय होता है ब्रह्मचारी गृहस्थ बानप्रस्थ भिक्षुक यह सब लोगभी दण्डही के भयसे अपने अपने मार्ग में वर्त्तमान रहते हैं भयभीत मनुष्य नतो यज्ञकरसक्ता न दान देनेकी इच्छाकरता नकहीं ठहरकर नियमधर्म्म करसक्ता न क्षत्री दूसरे मनुष्यों के मर्म्मों को छेदकर कठिनकर्म्म करसक्ता केवल एकमत्स्यघाती के समान जीवों को मारकर बड़ीलक्ष्मीको प्राप्तकरताहै इसलोकमें नहींमारनेवाले क्षत्री की नतो कीर्त्ति है न धन है तो प्रजाभीनहीं है इन्द्रने वृत्रासुर के मारनेसेही महेन्द्र पदवीपाई और देखिये जो मारनेवाले देवता हैं उन्हींकी पूजा अधिक लोगकरते हैं रुद्र, इन्द्र, स्वामिकार्तिक, अग्नि, वरुण, यम यह मारनेवाले हैं इसीप्रकार काल, वायु, मृत्यु, कुबेर, सूर्य्य, अष्टबसु, मरुद्गण, विश्वेदेवा यह भी मारने वाले हैं इनके प्रतापोंको जानके सबलोग पूजन करके प्रतिदिन नमस्कार करते हैं और ब्रह्माजी और पूषा देवता आदि को कोई नहीं पूजता और न किसी दशा में नमस्कार करते तात्पर्य्य यह है कि यह उत्पत्ति पालन करनेवाले हैं मनुष्योंमें कोई मनुष्यशांतस्वभाव और जितेन्द्रिय सब कर्मों से शांत देवता को पूजताहोगा इसलोक में हिंसारहित जीव तामें किसी को नहीं देखता बड़े बलवान् थोड़े बलवालों को मारखाकर जीते हैं जैसे नौला चूहों को मारकर खाताहै उसीप्रकार बिलार नौले को खाता है और कुत्ता बिलार को और चित्र ब्याघ्र कुत्तेको खाताहै और काल सब को ग्रास करलेता है देखो यह सब स्थावर जंगम जीवों का भोजनहै कर्म्म ईश्वर का बनायाहुआ है उसमें बुद्धिमान् अचेत नहींहोता जैसे उत्पन्न किया है वैसेही भोगना भी योग्य है क्रोध हर्षको त्यागकर निर्बुद्धी बनमें बसते हैं तपस्वीलोग भी बनमें बिना धंधा किये अपने प्राणों की रक्षा नहीं करसक्ते पृथ्वी जल फूल आदि बस्तुओं में अनेक जीव होतेहैं उनको कौन नहीं मारता ऐसे २ सूक्ष्म जीव होते हैं जो पलक मारने से मरजाते हैं काम क्रोध से रहित मुनिलोग ग्रामोंसे निकल बनमें जाकर गृहस्थी लोगोंको धर्म्मात्मा कर्म्म करनेवाले दृष्टि पड़ते हैं मनुष्य पृथ्वी को खोदकर अथवा जड़ीबूटी को काटकर औषधी से और पशु पक्षियों के मांससे यज्ञोंको रचते हैं वह स्वर्गको जाते हैं हे युधिष्ठिर दण्डसे मिलीहुई इच्छासे सब जीवों के कर्म्म सिद्धहोतेहैं यह निस्सन्देह बात है जो लोकमें दण्ड न होय तो प्रजा नाश होजाय और निर्बलों को सबल खाजायँ जैसे कि जल में बड़ी मछली छोटी मछली को खाती है यह सत्य बचन पहले समय में ब्रह्माजी ने कहा है कि दण्डसे प्रजाकी रक्षा करना उत्तम नीति है देखो शांतहुई अग्नियां फिर भयकारी दण्डरूप फूंकने से प्रज्वलित होती हैं जो संसार में दण्ड न हो तो अच्छे बुरेका ज्ञान न हो

जो कुमार्गी नास्तिक लोग वेद की निन्दा करते हैं वह भी दण्डके भयसे मर्य्यादा पालन करने के लिये अत्यन्त समर्थ होते हैं सब लोग दण्ड सेही जीते जाते हैं दण्डसे रहित लोग बड़ी कठिनता से प्राप्त होते हैं भयकारी दंड से ही मर्य्यादा पालन होती है ईश्वर ने चारोंवर्ण के आनन्द और नेक नियत होकर अर्थ धर्म की रक्षा के निमित्त पृथ्वीपर दण्ड निर्मित किया जो पक्षी और भेड़िया आदि दुष्ट जीव दण्डसे भयभीत नहीं तो यज्ञ की हव्य कव्यकी सामग्री समेत संसार को खाजायँ जो दण्डका भय न हो तो ब्रह्मचारी वेद को न पढ़ें और सन्तातिवाला गौको दुहे न कन्या विवाहको प्राप्त हो सर्व नाश होकर सम्पूर्ण मर्य्यादा टूटजायँ और दण्डके बिना कोई सम्बत्सर यज्ञों में मंत्रयुक्त कर्म्मभी न करे सब आदमी वेदोक्त आश्रम धर्म को छोड़ दे जो दंड रक्षा न करे और हाथी घोड़े ऊंट खच्चर गधे आदि सवारी या बोझेको न लेचलें नौकर लड़के दास दासी कोई आज्ञाको न मानें और स्त्रियांभी अपने धर्म्म में दृढ़ न रहें अर्थात् सब देव मनुष्य इसलोक परलोक में दण्डही से अपने अपने कर्म्मको सावधानी से करते हैं जहां शत्रुओं का नाशक दण्ड अच्छे प्रकार से जारी होकर घूमता है वहां कोई मिथ्या पाप छल आदि बुराकर्म्म दिखाई नहीं देता जो यह राज्यधर्म्म से वा अधर्म्म से विजय किया इसमें शोक न करना चाहिये राज्य के भोगों को भोगो और यज्ञादिककरो धनवान् अथवा पवित्र वस्त्रालंकार धारणकरनेवाले फल आदि के दानदेने से सुशोभित अनेक प्रकारके उत्तम अन्नादि भोजनों को करके सुखपूर्वक धर्म्म को करते हैं सब कर्म्मों का प्रारम्भ धन के आधीन है और वह धन दण्डके स्वाधीन है कोई अत्यन्त न तो गुणवान् है न निर्गुण दोनों सब कर्म्मोंमें अच्छे और बड़ेदृष्टिमें आते हैं देखिये पशुओं के वृषणोंको काटकर फिर उनके मस्तकोंको तोड़ते हैं फिरवहबड़ेबोझोंको लेचलते हैं और पीटेभी जातेहैं ऐसेअनेकविषयों से लोकभराहुआहै इससे हे धर्म्मतुम अपने धर्म्मका आचरणकरो शत्रुओंको निकालो और मित्रोंका पालनकरो हे शत्रुओं के मारनेवाले तुमको कोई दुःख मतहो और हे भाई कर्त्ताको उसके मारने में कोई पापनहीं होता जोसन्मुख शस्त्र लिये घातकी इच्छा करके आवे और मारने वाला भ्रूणहत्या से भी बचता है सबभूतों में अन्तरात्मा अवध्य है जब कि आत्मा अवध्य अर्थात् कभी नहीं मरता तो बधकरने में क्या दोषहै जैसे कि मनुष्य दूसरे नवीन स्थानमें प्रवेशकरताहै वैसेही जीवात्माभी कर्माधीन नवीन देहको पाताहै अर्थात् पुराने देहको त्यागनवीन शरीरमें जाताहै यह तत्त्ववेत्ता कहते हैं ५८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेअर्जुनवाक्यंनामपंचदशोऽध्यायः १५ ॥

सोलहवां अध्याय ॥

वैशम्पायनजी बोले कि ऐसे बचन जब अर्जुन ने कहे तब अतिअमर्षी भीमसेन धैर्य्यतासे अपने बड़े भाई से बोले कि हेराजा तुम धर्म्म के जानने वाले हो ऐसी कोई बात नहीं जिसको आप न जानतेहो आपको हम शिक्षानहीं देसक्ते हमारे मनमें यही रहताहै कि न कहूं न बोलूं परन्तु दुःख से बोले बिन रहा नहींजाता इसको आपसमझिये आपके बड़े मोहसे सबको संदेहहोताहै और बिकल होकर निर्बलताहोती है सब शास्त्रों के ज्ञाताहोकर लोकों के राजा कैसे होतेहैं ऐसी दशामें राज्यके बिषयमें एकयुक्तिको कहूंगा तुम चित्त से सुनो दो प्रकारकी ब्याधिहोती हैं एक दैहिक दूसरी मानसिक उनदोनों की उत्पत्ति परस्परमें होती है अर्थात जो पुरुष निर्द्वन्दहै वह देह और मनको आत्मासे जुदामानता है वह उन ब्याधियों से बचारहता है देहके रोगसे मनके रोग उत्पन्न होते हैं और यह भी निश्चय है कि मन के रोगोंसे भी देह में व्याधि उत्पन्न होती है और जो आदमी देह और मन के गतदुःखोंको शोचताहै वह दुःखसे दुःखको पाताहै और दोनों दुःखअनर्थक हैं शरीर से तीन प्रकारके गुण होते हैं अर्थात् शीतता उष्णता और बायुत्त्व और तीनों गुणों की जो ऐक्यता है उसी को स्वस्थता कहते हैं अर्थात् बात पित्त कफ यह तीनों देह से उत्पन्न होनेवाले गुण हैं उन तीनों की जो समता है वही नीरोगताका लक्षण है उन्हों में जब एक अधिक होता है तब चिकित्साकरी जाती है गरम औषधि से शीत दूरहोते हैं और शीत औषधिसे गरमी जाती है और सत्त्व, रज, तम यह तीनों गुण मानसी हैं उन तीनोंकी जो साम्यावस्थाहै उसी को स्वस्थता कहतेहैं उनमें भी एककी आधिक्यता होने में उपाय कियाजाता है जैसे कि शोककी शांति प्रसन्नतासे और प्रसन्न शोक से जाती रहती है कोई भी अज्ञानी सुख में बर्त्तमान होकर ब्यतीत दुःख को स्मरण करना चाहता है अर्थात् शोक से आनन्द को पीड़ित करता है यह दोनों देहादि के अभिमान से सम्बन्ध रखतेहैं परन्तु तुम तीनों काल में मन देह के दुःख सुखों से पृथक् हो इसकारण उन दोनोंको भूलकर सुख दुख के समय और दुःख सुख के समय स्मरण करने के योग्य नहीं हैं कौरव जो तुम याद करना चाहते हो तो कैतौ यह आप का स्वभाव है या दैवकी प्रबलता है जिससे कि दुखी होतेहो आप सब पाण्डवों के देखते हुए एकवस्त्रा रजस्वला द्रौपदी को देखकर उसकी क्यों नहीं याद करते नगर से निकाल देना और मृगचर्म्मों का धारण करना और बड़े बड़े बनों में रहना आप क्यों नहीं याद करते जटासुर से दुःखपाना और चित्रसेनसे युद्धकरना औरराजा

जयद्रथ से कष्टपाने की यादको कैसे भूलगये हो फिर गुप्तवास में कीचक से राजपुत्री द्रौपदी को जो दुख हुए उनकाभी विस्मरण होगया हे शत्रु नाशन जो तुम्हारे युद्ध द्रोणाचार्य्य और भीष्मजी के साथ हुए वह सब घोर आन्तरीय शत्रुता से हुए जिस युद्ध में दोनों हाथों में बाण और भाइयों से प्रयोजन नहीं केवल अकेले चित्त के साथ लड़ना है वह आपका युद्ध सन्मुख वर्त्तमान है इस युद्ध में विजय न पाकर जो आप प्राणों को त्यागोगे तो दूसरी देहमें आकर उनके साथभी युद्ध करोगे तात्पर्य्य यह है कि उस वासना रूप चित्तके न जीतनेपर दूसरे जन्ममेंभी पहले संस्कारसे आपको वह युद्ध प्राप्त होगा इससे हे भरतर्षभ अवश्यी अपने कर्म से इस अपवित्र देहको त्यागकर जो चित्त का विरोधी एकाकी भाव होनेके लायक है इसकारण चित्त के जीतने के लिये युद्धकरो उस चित्तके जीतनेपर उस दशा को प्राप्तहोगे कि चित्त से आत्मा पृथक् है इस स्वरूप की बुद्धिको और जीवोंकी उत्पत्ति और प्रीति को आत्मारूप चित्त से उत्पन्न होनेवाली विचारके उसको त्यागकर पूरे त्यागी हो बाप दादों की रीतिपर संसार में जैसा कि उचित है वैसा राज्य कर और पापात्मा दुर्योधन अपने साथियों समेत दैवइच्छासे युद्ध में मारागया और प्रारब्धहीसे तुमने द्रौपदीके शिरकेबाल पकड़नेका बदला पाया हे राजा बुद्धिके अनुसार तुम दक्षिणायुक्त अश्वमेध यज्ञकरके ईश्वरका पूजनकरो और हम सबलोग और महाप्रतापी वासुदेवजी आप के आज्ञाकारी हैं २९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेषोड़शोऽध्यायः १६ ॥

सत्रहवां अध्याय ॥

राजायुधिष्ठिर बोले कि बातोंसे त्यागनहींहोता किन्तु चित्त रोकने से होता है और वह चित्तकी रुकावट संतोष पूर्वक चित्तकी एकाग्रता नम्रता बैराग्य शान्ति धैर्य्य रूपान्तरहोना निरहंकारहोने से होती है और राज्य असन्तोषी मनुष्य के करने योग्य होता है इसकारण राज्य के चाहनेवाले तुम छोटे होकर हमसे पण्डिताई मत छांटो और राज्य को त्यागकर संतोषीहो इसबात को सिद्ध करते हुए युधिष्ठिर बोले कि असंतोषता प्रमादता मत्तता रागता अशान्तता बलवत्ता मोहता और सबप्रकारसे व्यग्रचित्तता आदि अनेक प्रकारके पापों से भरे हुए तुम राज्यको चाहतेहो जो अकेला राजा इससंपूर्ण पृथ्वी पर राज्यकरे तो निश्चय है कि उसका भी एकही पेटहै तुम उसकी क्या प्रशंसा करतेहो मास दिन आदिमें असंपूर्णहोनेके योग्य चित्त की इच्छाका पूरण करना उमर भरमें भी नहीं होसक्ता क्योंकि प्रतिदिन लाभ होने में भी इच्छाबढ़तीही जाती है ज्ञानी लोगभी अपने पेटकेही लिये बहुत

भक्षवाले अमृत यज्ञको करतेहैं पहले पेटको जीतो फिर परलोकके जीतने से पृथ्वी भी जीतीजाती है वही बिजय तुमको भी हुईहै तुम नरलोकके भोग और ऐश्वर्य्योंकी प्रशंसा करतेहो भोग न करनेवाले और तपसे देहकोदुर्बल करनेवाले उत्तम स्थानको पाते हैं निष्फल राज्यका मिलना और फलकी रक्षा यह दोनों धर्म्म और अधर्म्मरूप तुममें वर्त्तमानहै इससे बड़े बोझे से खाली होकर त्यागकेभी रक्षा करनेवालेहो देखो व्याघ्र एकपेटके लिये शिकार करताहै उससे औरभी निर्बुद्धी मृगलोभसे बंधकर जीविका करतेहैं जो राजा बाहरकी बिषय बासनाको अपने बशीभूत करके संन्यास धारण करतेहैं वह चित्तसे प्रसन्न नहीं होते यह बुद्धिकीविपरीतता जानों पत्तों के भोजन वा पाषाण पर कूटकर खानेवाले और इसीप्रकार दांतोंको ऊखल बनानेवाले जलका भोजन करनेवाले और बायु भक्षणवाले जो ऋषिलोगहैं वह इस नरकसे उद्धार होतेहैं जो राजा इस संपूर्ण पृथ्वीपर राज्यकरे उससे वह संन्यासी अच्छा है जिसकी बुद्धिमें पत्थर और सुवर्ण समान है पहले कहे हुए संस्कार और संकल्पोंका प्रारंभ कर्म्म न करनेवाला ममताको छोड़ निराश हो इसलोक परलोकदोनोंमें ऐसे अशोकस्थानको पाताहै जिसका नाश नहीं राज्यके त्याग करनेवाले शोचनहीं करतेहैं तुम राज्यको क्या शोचतेहो जब सब राज्यको त्यागदोगे तब मिथ्याबादसे रहितहोगे पितृयान या देव यान यही दोमार्ग प्रसिद्धहैं यज्ञ करनेवाले तो पितृयानसे और मोक्ष चाहने वाले देवयानसे अपने २ मार्गको जातेहैं और वह महर्षी जो तप और ब्रह्मचर्य्य और वेदके पाठसे देहोंको त्यागकर तत्त्वोंको प्राप्तहोते हैं वही जीवन-मुक्तहैं इस लोकमें आमिषही बन्धनहै तो उसी आमिष अर्थात् मांसादिकों को कर्म्ममें हवन करके उन पापों से छूटकर उत्तम पदको प्राप्त होतेहैं और जो लोग निर्द्वन्द मोक्षके जाननेवालेहैं वह इस पुरानी कथाओंको कल्पना कहते हैं महासुंदर शोभायमान मिथलापुरी में मेरा असंख्य धनहै उसकी मुझको कुछभी ममता नहीं है ज्ञानके रथपर चढ़कर शोचनेके अयोग्य स्वर्गबासी मनुष्योंको शोचनेवाला निर्बुद्धी नहीं मालूमहोता अर्थात वह उनकी दुखिया स्त्रियों आदिको नहीं शोचताहै जैसे कि पहाड़पर बैठा मनुष्य पृथ्वी परबैठहुये मनुष्यको देखे जो पुरुष देखनेके योग्य बातों को देखताहै वही बुद्धिमान् और नेत्र रखनेवालाहै इसकारण कि ज्ञात अज्ञात और करने वा अकरने के योग्य बातोंके जतलानेको बुद्धि कहतेहैं और ब्रह्मभावको जाननेवाला शुद्ध अन्तष्करण जो पुरुषहै वह विद्यावानोंके वचनोंको अच्छे प्रकारसे जानता है अर्थात् उनके बचनोंके आशयको समझताहै वही बड़ी प्रतिष्ठा पाताहै अब तत्त्वज्ञानका बर्णन करतेहैं कि जिससमय आकाशादि पंच महाभूतोंके अनेक

भेदों को एक आत्मामें देखताहै और उसी आत्मासे उनकी उत्पत्तियोंको भी देखताहै तब तत्त्वकी प्राप्ति होती है जो मनुष्य अज्ञानी निर्बुद्धी और तपस्या से रहितहै वह तत्त्वदर्शियों की गतिको नहीं पाते ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेसप्तदशोध्यायः १७ ॥

अठारहवां अध्याय ॥

इतना कहकर राजा फिर चुपका होगया तब भाईके बचनों से महाशोक युक्तहो फिर अर्जुन बोले कि हे राजा इस विषयमें हम एक पूर्व्व बृत्तांत कहते हैं कि जिसमें राजा जनक और उनकीस्त्री का सम्बादहै कि किसीसमय, राजा जनकने भिक्षा के निमित्त राज्य त्याग करने की इच्छाकी कि धन पुत्र स्त्री और अनेक प्रकार के रत्नों को और यज्ञादिक करने से शुद्ध सनातन मार्गों को त्याग मूर्खतामें पड़ कमंडल हाथमें ले मुट्ठी२ अन्नमांगते उदासीन वृत्ति हो विचरेंगे यह राजाका दृढ़विचारजान उसकी पतिव्रता स्त्रीने क्रोधित होकर कहा कि आपको यह क्या मूर्खता आईहै कि ऐसे धनधान्य युक्त अपने उत्तम राज्य को त्यागकर खप्पर हाथ में धारण करके घर२ भीखमांगोगे यह एक२ मुट्ठी जौका मांगना तुमको योग्य नहीं है राजा यह तुम्हारी प्रतिज्ञा मिथ्याहै कि तुम ऐसे बड़े राज्य को त्यागकर थोड़े सामान कमंडल आदि से तृप्तहोतेहो हे स्वामी इस थोड़ेसे सामान और मुट्ठी २ अन्नसे तुम देव ऋषि पितृआदिकोतृप्त नहीं करसक्ते इससे यह आपका परिश्रम निष्फल है हे राजा तुम देव ऋषि अतिथि और पितरोंको त्यागकर निष्कर्म्म संन्यासी होते हो जो तुम तीनों वेदों के पढ़ने से प्रतिष्ठित और हजारों ब्राह्मण और संसार का पोषण करनेवाले होकर शोभायमान थे सो तुम उन ब्राह्मण आदिके द्वारा अपना पेटभरनाचाहतेहो अत्यन्त प्रकाशवान् लक्ष्मीको छोड़कर कुत्तेके सदृश दीखतेहो अब आपकी माता पुत्रसे रहितहै और तुम्हारे कारण मैं भी पति रहितहूं जो बड़े २ धनी भाग्यमान क्षत्री राजा हजारों आपकी सेवाकरते हैं हे राजा लोकके बिगड़ने और देह ईश्वर के आधीन होनेसे तुम उन राजाओंको निष्फल करके किसलोक में जाओगे तुझ पापकर्म्मी का यह लोक परलोक दोनों नहीं है जो तुम धर्म्म से प्राप्त हुई स्त्रियोंको त्यागकर जीते रहना चाहते हो गन्धमाल और आभूषण और नानाप्रकारके वस्त्रों को भी त्यागकर विनाकर्म्म तुम कैसे त्यागी होतेहो और सब जीवों के पोषक रक्षक होकर और पक्षियोंके निमित्त फलवान् वृक्ष होकर दूसरोंकी सेवाकिया चाहते हो बहुतसे मांसभक्षी और कीड़े निरपराधी हाथी को भी खाते हैं फिर सब पुरुषार्थ से रहित तुमको क्यों नहीं खायँगे जो इस कुंडल को तोड़ आपके

वस्त्रों को भी छीनले तो ऐसी दशामें आपका चित्तकैसाहोगा जो तुम इन सबको त्यागकर एकमुट्ठी भुनेहुये जौ का धारण करनेवाले हुये जब उसमुट्ठी जौ के सदृश सब संसार है तो फिर तुमकैसे निश्चय करतेहो जो यहांएक मुट्ठी जौ से प्रयोजनहै तब आपकी प्रतिज्ञा अत्यन्त नाश को प्राप्त होगी तो त्यागी नहीं होसक्ते मैं कौनहूं और तुममेरे कौनहो और मुझपर तुम्हारी क्या कृपा है हे राजा इस पृथ्वीपर राज्य करके महल पलंग सवारी बस्त्र आभूषणोंको भोगो इसी में तुम्हारा कल्याण है ऋग यजु सामवेदरूपी यज्ञ लक्ष्मी से रहित निर्धन अमित्रवान परमसुख चाहनेवाले संन्यासियों को कुंडल धारण किये हुये देखकर राजाभी उसीप्रकार धारण करता है वह राज्य को क्या त्याग करता है अर्थात् त्यागकरना कठिन है आप उनदोनों मनुष्यों का अन्तरदेखो जो बहुतदेता या बहुत लेताहै और उनदोनोंमें कौनसा श्रेष्ठहै पाखंडसे भरेहुये याचक मनुष्यों को दक्षिणाका देना ऐसाहै जैसा कि निर्बुद्धितासे दावानल अग्नि में हवन करना हे राजा जैसे कि अग्निभस्म करके शांतहोजाती है उसीप्रकार याचनाकरनेवाला ब्राह्मण भी शांतिको प्राप्त होताहै इसलोकमें संन्यासियों को भोजन देना मानों जीविकाहै जो राजा होके दान करनेवाला न होय तो मोक्षचाहनेवाले कहां से होयँ इस संसार में कुटुम्बी लोग अन्नसे जीवते हैं उसी से संन्यासी भी जीवते हैं अन्न से प्राण बना रहताहै अन्नका दाता प्राणका दाता जानों जितेन्द्रीपुरुष कुटुम्बी लोगों से जुदेभीहोकर कुटुम्बवालों के हो ऐश्वर्य्य से प्रतिष्ठापाते रहते हैं त्यागनेसे और मूर्खतापूर्वकयाचनाके करनेवाले संन्यासीसे वह पुरुषउत्तमहै जो अपने शुद्धभावसे धनआदिको त्यागताहै हे राजा जो निस्संगहो बन्धनको त्यागशत्रुमित्र में समान बुद्धि और दृश्यपदार्थों से चित्तको नलगाकर बैराग्यवान्है वही मुक्तहै और शिरमुड़ाकर गेरुये बस्त्रपहिन बहुतसे जंजालों में फँसेहुये धनके खोजने में फिरते हैं जो अल्पबुद्धी वेदके सनातन मार्गको और अपने स्त्री पुत्रादिकों को त्याग करजाते हैं वहकभी मुक्तिनहीं पाते हे महाराजजितेन्द्रियपुरुष मूंड़मुड़ाये गेरुआ कपड़े जटाधारी मृगचर्म ओढ़नेवाले धनकांक्षी साधुओं से उत्तमहैं जो मनुष्य प्रतिदिन अपने प्रथमगुरू के निमित्त अग्निहोत्रोंकी दक्षिणाको देताहै और बड़े २ यज्ञोंको भी करता है उससे अधिक धर्मात्मा कौनहै अर्जुन बोले कि इसलोक में राजा जनक बड़ा तत्त्ववेत्ता प्रसिद्ध है वहभी अज्ञानके बशीभूतहुआ इस से आप भी मोहमें मतफँसो और धर्म्ममें प्रवृत्तहो सदैव दान तपमें तत्पर दया आदि गुणों से सम्पन्न काम क्रोध से बर्जित प्रजापालनरूपी महादान में स्थित अपने गुरू वृद्ध इष्टमित्र और याचकों को संतुष्टकर अपनी बुद्धि के अनुसार

देवता अतिथि और अनेक जीवों को यजन पूजन भोजन आदि से प्रसन्न करके वेदके अनुसार उत्तम ब्राह्मणोंका सत्कारकर सत्यवक्ताहो हमसब समेत आप उत्तमपदको पावोगे ४० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेअष्टादशोऽध्यायः १८॥

उन्नीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे भाई मैं वेदांत शास्त्र और अन्य शास्त्र को जानकर यहभी जानताहूं कि क्या त्यागना और क्यानहीं त्यागना चाहिये और उ-नशास्त्रोंको भी जानताहूं जोधरानोंसे सम्बन्ध रखतेहैं और मन्त्रोंमेंभी मुझे बुद्धिके अनुसार निश्चयहै परन्तु तुमलोग केवल अस्त्र विद्याओं के जान-नेवाले और वीरोंके व्रतसे भरेहुये हो इससे किसी दशामेंभी शास्त्रके यथार्थ आशय के जानने को समर्थ नहींहो और जो शास्त्रके सूक्ष्म आशयों का देखनेवालाहै और धर्मके निश्चय करनेमें पंडित है वहभी ऐसानहीं कहसक्ता और तुमने भाईकी सुहृदता में प्राप्त होकर वचनों को कहा इससे हे अर्जुन में तुमसे प्रसन्नहूं युद्धधर्ममें और क्रियाओंकी चतुरता में तीनों लोकों में कोई भी तेरेसमान नहीं है धर्म्म बड़ा सूक्ष्म है उसमें वार्त्तालाप करना तुमको बड़ा कठिनहै इससे हे वीर सन्देह करनेकेयोग्य तेरी बुद्धि नहीं है तुमतो के-वल जनककेही शास्त्रको जानतेहो तुमने बृद्ध पुरुषों का संग नहीं किया इससे तुमने उन तत्त्वदर्शियों के निश्चय भावको नहींजाना बुद्धिमान् लोग निश्चय पूर्वक कहतेहैं कि तपस्या का त्यागकरना बुद्धिकी विपरीतता है और जो तुम कहतेहो कि धन से उत्तम तपनहीं है इसविषयमें मैं तुमसे व-र्णन करूंगा जैसे कि यह उत्तमहै कि धर्म्मवान् पुरुष तप वेद को पठन पाठन और जपआदि के अभ्यास करनेवाले देखने में आते हैं ऐसे ऋषिलोगभी तपस्याही में प्रवृत्त रहतेहैं जिनके सनातन लोकहैं इसीप्रकारके अन्य बनबासी भी जो सब संसार से मित्रभाव करनेवाले वेदपाठ और जप तपके करने से स्वर्गको गये उत्तम पुरुष विषयों को त्याग अज्ञान रूपी अन्धकार से पारहो कर उत्तम मार्ग से कर्म्मत्यागियों के लोकों को गये और जो दक्षिण मार्ग हैं जिनको कि प्रकाशवान् कहतेहैं वह कर्म्मवालोंके लोक हैं जो इन मार्गों में जातेहैं वह जन्म मरण के फंदेसे नहींछूटते वहमोक्ष वर्णननहींकीजातीहै जिसको कि मोक्षमार्ग में चलनेवाले देखते हैं इसकारण उसके प्राप्तहोने के लिये योगाभ्यास करना उत्तम है परन्तु जानना उसका महाकठिन है पंडित लोग भी शास्त्रों में सारासार विचारतेहुये उसकेसत्यासत्य जानने में भूलेहुये हैं उन्हों ने वेदके वचनों को और वेदांत शास्त्रों को उल्लंघन करके केले के

खम्भेको चीरकर सारवस्तुको नहीं देखा और अब दूसरेकी मतिको त्यागकर-के सिद्धान्त कहते हैं कि वह आत्मा मन बुद्धिवाणी से परेनेत्रों से अदृश्य कर्म्म साक्षी प्रकाशवान्हो प्राणियों में वर्त्तमानहै चित्तको आत्मा की ओर लगाकर इच्छा और लोभको वशीभूत करके और नित्य कर्म्मों को त्यागके अहंकार रहित होजाता है हे अर्जुन इस सूक्ष्म बुद्धिसे प्राप्तहोने के योग्य सत्पुरुषों से सेवित मार्ग में तुम किसप्रकार से अनर्थ नाम अर्थकी प्रशंसा करतेहो हे अर्जुन कर्मकाण्ड के जाननेवाले दान यज्ञ कर्म्म और क्रियाओं के व्रत रखनेवाले मनुष्यभी इसीप्रकार देखते हैं तो फिर ज्ञानीलोग क्यों न देखेंगे कारणों के जाननेवाले पण्डित लोग सिद्धांत बातों को कष्टसे भी नहीं समझासक्के कारण यहहै कि वह पहिले जन्म के दृढ़ संस्कारको रखने वाले ऐसा नहीं कहनेवाले हैं और मिथ्याको निर्मूल करनेके लिये सभाओं में शास्त्रार्थ के करने में अति प्रगल्भ बुद्धि रखनेवाले और अनेक शास्त्रों के वेत्तालोग सम्पूर्ण पृथ्वीपर घूमते हैं इसप्रकार शास्त्रों के अच्छे ज्ञाता ज्ञानी और महापुरुष भी सुनेगये उनको हम नहीं जानते तो दूसरा कौन उनको जानसक्ता है हे अर्जुन तपसेही वैराग्यको पाता है और बुद्धिसे परब्रह्मको भी जानता है इसप्रकार के तत्त्वका जाननेवाला त्यागही से सदैव आनन्द को पाता है ॥ २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेयुधिष्ठिरवाक्येएकोन-
विंशतितमोऽध्यायः ॥ १९ ॥

बीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि इस बचन के कहने के समय सामयिक वक्ता देव स्थान नाम महा तपस्वी ऋषिने बड़ी युक्तिके सहित युधिष्ठिर से यह बचन कहा कि हे युधिष्ठिर अर्जुन ने जो कहा कि तप धन से बड़ा नहीं है इस वि-षय में तुझ से मैं कहताहूं तू एकाग्र चित्त होकर सुन हे अजातशत्रु युधिष्ठिर तुमने धर्म से सम्पूर्ण पृथ्वी को विजय किया उस जीतीहुई को अयोग्य रीति पर त्यागदेना उचित नहीं क्योंकि चारों आश्रमों से सम्बन्ध रखनेवाली श्रेणी ब्रह्महीं में नियत है इससे हे महाबाहु युधिष्ठिर तुमभी उसको बुद्धिकी परम्परा से विजय करो अर्थात् बड़ी दक्षिणावाले महायज्ञों से पूजनकरो वेदका पठन पाठन ये रूप यज्ञ तो ऋषियों का और ज्ञानरूपी यज्ञ औरोंका अर्थात् ब्रह्म-चारी और संन्यासी का और कर्म्मनेष्ठा गृहस्थियों का और तपोनिष्ठ होना बानप्रस्थों का जानो हे राजा इसीप्रकार वैखानस नाम ऋषियों का सुना जाता है जो पुरुष धनके लिये इच्छाको करे उसकी इच्छा न करनाही उत्तम

है और जो उस धर्म्म को कोई क्षत्री करे वह बड़ा दोषी होता है और यज्ञही के कारण धन संचय करते हैं जो देहको या उसी के समान धनको अयोग्य कर्म्म में खोताहै और योग्य कर्म्म में नहीं लगाता है वह आत्मा से शत्रुता करनेवाली भ्रूणहत्याको नहीं जानता है योग्यायोग्य कर्मोंका ज्ञान न होने से शुद्ध धर्म्म भी कठिनता से होताहै ईश्वर ने यज्ञ करनेके लिये धनुषधारियों को उत्पन्न किया इससे यज्ञके निमित्त आज्ञापायाहुआ मनुष्य उस यज्ञ का रक्षक है इस कारण सब धन यज्ञही में खर्च करनेके योग्य है उसीसे चित्त की इच्छा भी पूर्ण होती है बड़े तेजस्वी देवेश इन्द्रने निरीच्छा होकर ईश्वरार्पण यज्ञकेही द्वारा सब देवताओं को अपना आज्ञाकारी किया और उसी यज्ञके कारण वह अमरावती पुरीको पाकर अबतक शोभायमानहै इससे निश्चय करके यज्ञमेंही सब धन खर्चना उचितहै और महादेवजी भी सर्वयज्ञमें अपनी आत्माको हवन करके सब देवताओं के देवताहुये और महा तेजस्वीहो अपने तेजको इस ब्रह्मांड के सब लोकों में व्याप्त करके अपनी सुन्दर कीर्त्तिसे पूर्ण कर दिगम्बर रूप धारण किये विराजमानहैं और एक आविक्षित मरुतहुआहै जिसने देवराज इन्द्रको विजय किया उसके यज्ञ में आप श्रीलक्ष्मीजी ने आकर दर्शन दिया उस यज्ञ में सब सुवर्णकेही पात्र थे और हरिश्चन्द्र राजाको भी सुनाहोगा कि उसने भी बड़े २ यज्ञों से पूजन किया और इन्द्रको भी विजय किया इसी से सब धनको यज्ञही में लगाना चाहिये ॥ १४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

इक्कीसवां अध्याय ॥

देवस्थान ऋषि बोले कि हम इसस्थान में एक प्राचीन इतिहासको कहते हैं जिसको समय पर पूछने से बृहस्पति जीने इन्द्रसे कहा कि निश्चयकरके संतोष करनाही बड़ा स्वर्गहै संतोषी को महासुखहोताहै जब वह संतोषी इसप्रकार अपनी इच्छाको आत्मामें छिपाता है जैसे कि कछुआ अपने अंगों को तब थोड़ेही काल में ज्योतिरूप आत्मा अपनी आत्मामेंही प्रसन्न होता है तब यह भय नहीं करता और न इससे दूसरेको भयहोता है और किसी बातकी इच्छानहींकरता तब ब्रह्मभावको प्राप्त होताहै हेराजाइस प्रकार अधिकारीजीव जिस समय जिस२ रीतिसे जिस २ कर्म्मको करता है वह उस २ कर्म्मको अपने अनुभवसे देखता है इसकारण तुमभी ज्ञाताहो अर्थात् प्रजा के पालनसे निर्भयता प्राप्तकरो कोई शस्त्रको कोई उद्योग को कोई ध्यान को अच्छा कहते हैं और कोई २ दोनों कोही श्रेष्ठ समझते हैं इसीप्रकार कोई यज्ञकी कोईसंन्यासकी कोई दानकी प्रशंसाकरते हैं और कोई

दानलेने को भी अच्छा कहतेहैं कोई सब त्यागकर मौन हो बैठतेहैं और कितनेही राज्य और प्रजा पालनको श्रेष्ठ बतलातेहैं और कोई मारकर भेदकर बिदीर्ण कर एकान्त बासकरते हैं इनसब बातोंको देखकर कहताहूं कि निश्चय अपने कर्म्म में प्रवृत्तहो अब सिद्धान्त बात कहताहूं कि जीवोंमें जो शत्रुता न करने से धर्म्म होताहै वह सत्पुरुषोंका स्वीकृतहै जैसे कि द्रोह न करना सत्यबोलना बिभागकरने में दया पाखंड न करना भयभीतनहोना अपनी स्त्रियों में सन्ततिउत्पन्नकरना नम्रता लज्जा स्थिर स्वभाव इसप्रकार से उत्तम धर्मों में प्रवृत्तरहना स्वायम्भुवमनुने कहाहै इससे हे कौन्तेय बड़ी युक्तिसे इस धर्म को पालनकरो यज्ञके शेष अमृत अन्न का खानेवाला और शास्त्रके अर्थ को यथार्थ जाननेवाला अपराधियों को दण्ड देनेवाला साधुओं की पालना में अतिशय प्रीतिमान्हो प्रजाको सुमार्ग में स्थित करके आपभी धर्म पूर्वक कर्म्म करै फिर अपने पुत्र को राज्य का अधिकारी कर बनके कन्द मूल फलों से अपना निर्बाह कर बन में रह शास्त्र श्रवण करनेवाली सुबुद्धि से कर्म्मों को करै हे राजा आलस्य को त्याग ये धर्मनिष्ठ होकर जो राजा ऐसे कर्म करता है उसका यह लोक और परलोक सफल होता है और इसी कर्म्म से काम क्रोध लोभ भी नष्ट होजाते हैं प्रजापालन में तत्पर और दान तप में प्रवृत्त दयायुक्त क्रोध इच्छासे रहित उत्तम धर्मवान् गौ ब्राह्मणों के अर्थ युद्ध करनेवाले क्षत्रियों ने उत्तम गतिको पाया है और एकादश रुद्र और अष्टवसु और द्वादश सूर्य्य साधुबर्ग्ग और ऋषियों के अंशों से बना राजा का देह होता है इससे तुम इस धर्मपर निश्चय नियत हो ॥ २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेएकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

बाईसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि इतनी बातें सुननेवाले युधिष्ठिर से फिर अर्जुनने वचन कहाकि हे महाबुद्धिमान् धर्मज्ञयुधिष्ठिर क्षत्रीधर्मसे बड़ी कठिनता पूर्वक शत्रुओंको बिजयकर राज्यपाकर क्योंदुःखी होतेहो हे महाराज क्षत्रीधर्म्म को ध्यान करते महा पुरुषों ने क्षत्रियों का युद्ध में मरना बहुत से यज्ञों से भी उत्तम कहा है और ब्राह्मणों का संन्यास धर्म्म देह के त्यागने के समय पर कहागया है और क्षत्रियों का युद्ध में मरना ही संन्यास से उत्तम मानाहै और हे राजा क्षत्रीधर्म्म महा रुद्र और महेश्वर शास्त्रों से संयुक्त है और समय पाकर युद्ध में शस्त्रों से मरना होताहै इससे हे राजा जो ब्राह्मण भी क्षत्रीधर्म्ममें प्रवृत्त होता है उसका जन्म सुफल होता है और योग्य इस कारण है कि लोक में क्षत्री का बंश ब्राह्मण से उत्पन्न होनेवाला है और स्वामी क्षत्री को न तप

न संन्यास न ब्रह्मयज्ञ न दूसरे धन से जीविका करना योग्य है इससे हे बुद्धिमान् धर्म्मात्मा आप प्रजापालन में तत्परहो और दुःख से प्राप्त हुये शोक को त्यागकर कर्म्म करने में प्रवृत्त होजाओ मुख्य करके क्षत्री का हृदय वज्र के तुल्यहोता है सो ऐसे क्षत्री धर्म्मसे राज्य को पाकर जितेन्द्रियहो यज्ञदान आदिकर्म्मोंमें ध्यानदो निश्चयहैकि इन्द्रभी ब्राह्मणकापुत्रहो कर्म्मसेक्षत्रीहुआ उसने पापात्माजातिके आठसौदश प्रकारोंको मारा हे राजा उसका वह कर्म्म प्रशंसा के योग्य है उसी कारण देवताओं के स्वामी हुये यह हमने सुना है हे नरेन्द्र आप तप के सिवाय बड़े बड़े दक्षिणावाले यज्ञों को करके इन्द्र के समान पूजनकरो और हे भाई आप ऐसी दशामें कुछ शोच न करो उन-शस्त्रों से पवित्र क्षत्री लोग अपने क्षत्री धर्म्म से परमपद को प्राप्तहुये हे राज-शिरोमणि जो भवितव्यथा सो हुआ उसके मिटाने को कोई समर्थ नहीं इससे तुमभी उल्लंघन करने के योग्य नहीं हो ॥

इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणिराजधर्मे द्वाविन्शोऽध्यायः ॥ २२ ॥

तेईसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि अर्जुन के इतने कहनेपर भी युधिष्ठिर ने कुछ नहीं कहा तब व्यास जी बोले कि हे स्वामी युधिष्ठिर यह अर्जुन का बचन सत्यहै यह गृहस्थधर्म्म शास्त्र की दृष्टि से उत्तम है इस धर्म्म के रक्षक होकर धर्म्म में वर्त्तमान शास्त्रबुद्धी से अपनाकर्म्म करो हे धर्म्मज्ञ गृहस्थाश्रम को छोड़ तुम्हारा वन में वास करना धर्म्म नहीं है गृहस्थ से देवता अतिथि पितर और नौकर चाकर सब अपना निर्वाह करते हैं इससे उनका पोषण करो और पशु पक्षी आदि जीवधारी भी गृहस्थ ही से पलतेहैं इसहेतु से गृहस्थाश्रमही सब आश्रमोंमें श्रेष्ठहै चारों आश्रमोंमें यह आश्रम दुःखसे कटने योग्यहै हे राजा अब उस विधिको करो जोकि निर्बल असाहसी लोगोंसे कष्टसे होनेके योग्य है तुम सब वेदोंके जाननेवाले और महातपस्या करनेवाले हो सो आप बाप दादे के राज्य के धुर धारण करने के योग्य हो हे राजा तपसमाधी ब्रह्मविद्या भिक्षामांगना दृढ़ विश्वास ध्यान और एकान्त बैठना सन्तोष और सामर्थ्य के समान दानदेना यह ब्राह्मणों का कर्म्म मोक्ष का देनेवालाहै और क्षत्रियों के कर्म्म को कहता हूं वह सब तेरा जानाहुआ है यज्ञ करना विद्या पढ़ना लक्ष्मीके लिये उत्तम उद्योग सन्तोष करना दानदेना उग्ररूप होना और प्रजा का पोषण और सब वेदों का ज्ञान और ऐसे ही अच्छे प्रकार से कियाहुआ तप बड़े धन का संचय करना और पात्र को दान देना ये राजाओं के श्रेष्ठ कर्म्म हैं हे राजा वह इस लोक परलोक दोनोंको सिद्ध करतेहैं यह हमने सुना

है हे कुन्ती के पुत्र इन सबमें दण्ड का धारण करना उत्तम कहाजाता है क्षत्री में सदैव पराक्रम है और पराक्रम में सदैव दण्ड नियत है यह क्षत्रियों की विद्या मोक्ष की देनेवाली है और वृहस्पतिजी ने भी इस कथा को गाया है पृथ्वी इन पूर्वोक्त दोनों को निगलजाती है जिस प्रकार बिल में रहनेवाले चूहों को सर्प और शत्रुता न करनेवाला राजा और बनबास न करनेवाला ब्राह्मण निकृष्ट सुनाजाता है सुद्युम्न राजऋषि ने दण्ड के धारण करने से ही ऐसी परमगति को पाया जैसी कि प्राचेतसदक्ष ने पाई युधिष्ठिर बोले कि हे भगवन् राजा सुद्युम्न ने किस कर्म्म से ऐसी सिद्धिको पाया मैं उसका वृत्तान्त सुना चाहता हूं व्यास जी बोले कि मैं इस स्थानपर एक प्राचीन इतिहास कहताहूं कि शंख और लिखित नाम ब्राह्मण दोनोंभाई थे वे बड़े तेजस्वी और ब्रत करनेवाले हुये उनदोनों के पृथक् पृथक् आश्रम बाहुदा नदी के सामने सुपुष्पित सफल वृक्षों से शोभित अति सुन्दर बर्त्तमान थे किसी समय दैव इच्छा से लिखित शंख के आश्रम को गया तो उसे देख शंख भी अपने आश्रम से निकला तब उस लिखित ने शंख के उस आश्रम में जो सुन्दर फल फूलों से युक्त था जाकर झुकेहुये फलों को गिराया और फलोंका भोजनकरने लगा उसके भोजनकरने के समय शंखभी अपने आश्रम में आया और उस फलखानेवाले अपने भाई से कहा कि यह फल तैंने कहां से पाये और काहे को खाता है तब हँसकर लिखित ने उसकेपास जाकर कहा कि मैं ने यह फल यहां से लिये हैं तब महा क्रोधित हो शंख ने उससे कहा कि आप से तुमने जो इन फलों को लिया यह तुमने चोरी की तुम राजा के पासजाकर अपना कियाहुआ चोर कर्म्म कहो कि हे राजाओं में उत्तम मैंने बिना दीहुई बस्तु को लेलिया तुम मुझको चोर जानकर अपने धर्म्म का पालनकरो और मुझ चोरको शीघ्र दण्डदो हे महाबाहु इसप्रकारके अपने भाई के वचन सुनकर वह राजा के पास गया और अपना सब वृत्तान्त राजा से कहा तब राजा सुद्युम्न द्वारपालों के मुख से आयेहुये लिखितको सुनकर मन्त्रियों समेत पैदल उसके पास गया और उससे मिलकर राजा ने धर्म्म युक्त बचन कहे कि हे भगवन् आपका आना कैसेहुआ आपका जो मनोरथ हो वह मैं तत्कालही करूंगा इसप्रकार के राजा के बचनों को सुन वह ब्रह्मर्षी बोला कि हे नरोत्तम महाराज मैंने बड़े भाई से बिना आज्ञा लिये फलों को भोजन करलिया उसमें मुझको जो उचित दंडहो वह शीघ्रदो बिलम्ब न करो राजा सुद्युम्न बोला कि हे ब्राह्मणों में उत्तम जैसे आपने दंडदेने में राजाको प्रमाण माना है उसी प्रकार आज्ञा देने में भी प्रमाण जानिये इसकारण शुद्धकर्मी और महाब्रतधारी आप मुझ से आज्ञा पानेवाले हो इसके विशेप जा तुम

दूसरी कोई अन्यवार्त्ता अपने प्रसन्नताकी कहो उसे मैं अवश्य करूंगा यह सुन उसमहर्षी ने अपने दण्ड के सिवाय दूसरा कोई बर राजा से न मांगा तब तो राजा ने उस लिखित नाम ब्रह्मर्षी के हाथों को कटवाया और दंड पाकर वह ऋषि चलेगये और पीड़ित स्वरूप से अपने भाई शंखसे जाकर यह बोले कि मुझ निर्बुद्धी दंड पानेवाले का वह अपराध क्षमाकीजियेगा शंख बोला कि हे धर्म्म के जाननेवाले मैं तुझपर क्रोध नहीं करता क्योंकि तुम मुझको दोष का भागी नहीं करते तेरा धर्म्म बेमर्य्यादा हुआ था इसकारण तेरा प्रायश्चित्त हुआ तुम शीघ्रही बाहुदानदी पर जाकर बुद्धिके अनुसार देवता और पितरों को तर्पण करो और अधर्म्म में चित्त न लगाओ लिखित ने शंखके उस वचनको सुनकर उस पवित्र नदी पर जा आचमन आदि करना प्रारम्भ किया तब उसके दोनों हाथ कमल के सदृश प्रकट हुये तब उसने वह हाथ अपने भाई को दिखाये फिर शंख ने उससे कहा कि मैंने यह हाथ तपस्या से किये इसमें तुम कुछ संदेह मतकरो इसमें दैवही कारण कहा जाता है लिखित बोले कि हे महातपस्वी तुमने पहिलेही मुझको पवित्र क्यों न किया जो आप सरीके ब्राह्मणोत्तमों में तपका ऐसा प्रभाव है शंख बोले कि मैंने इसकारण ऐसा किया कि मैं तेरा दंडदेनेवाला नहीं वह राजा पवित्रहुआ और तुमभी पितरों समेत पवित्रहुये व्यासजी बोले कि हे राजा युधिष्ठिर उस सुद्युम्न राजा ने उसी कर्म्म के द्वारा परमानन्दरूपी पवित्रताको ऐसा पाया जैसा कि प्राचेतस दक्षजी ने पाई थी इससे हे महात्मा प्रजाका पालनही क्षत्रियों का धर्म्म है और दूसरा कुमार्ग है शोकसे चित्तको हटाकर भाई के हितकारी वचनों को सुनो कि राजाओं को दंडही धारण करना योग्य है मुंडन धर्म्म नहीं है ॥ ४४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेत्रयोविंशतमोऽध्यायः ॥ २३ ॥

चौबीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायनजी बोले कि इतना सुनाकर फिर उस अजातशत्रु युधिष्ठिर से व्यासजी ने यह वचन कहा कि हे तात तेरेमनस्वी भाइयों से बन में बसनेके समय जो मनोरथ हुयेथे हे महारथी उनको बताओ और तुम पृथ्वीपर राज्य करो जैसेकि नहुष के पुत्र ययाति ने किया हे नरोत्तम इन बिचारे तपस्वी वीरों ने बन में अनेक प्रकारसे दुःखोंको सहा और दुखके अन्त में सुखको सब भोगते हैं इससे हे कौन्तेय तुम अपने भाइयों के साथ धर्म्म अर्थ काम मोक्ष इनको प्राप्त करके पीछे से इन उपाधियों को त्यागोगे और देवता पितर जो आपका आश्रय किये रहते हैं उनके ऋणसे भी छूटोगे और तुम सर्वमेध और

अश्वमेधयज्ञों के द्वारा पूजनकरो उसके पीछे परमगतिको पावोगे और बहुत बड़ी दक्षिणावाले यज्ञों के फलों से भाई और स्त्री पुत्र आदि सहित बड़ी कीर्त्ति को पाओगे और हे कौरवोत्तम हम तेरेबचनको जानते हैं इसप्रकार से कर्म्म करनेवाला धर्म्म से नहीं गिरता हे युधिष्ठिर जो राजा समान धर्म्ममें प्रवृत्त हैं और बुद्धिमान् हैं वह दूसरे के धन हरनेवाले राजा का युद्ध और विजय करना आवश्यक मानते हैं जो राजा देशकाल को समभकर शास्त्रकी बुद्धि से अपराधियों को क्षमाकरके नहीं मारता वह उसी चोरी आदि पापोंके फलों को पाता है और जो राजा छठेभाग को लेकर अपनी प्रजाकी रक्षा नहीं करता वह उस रक्षा न करने के चतुर्थांश पापको भोगता है और यह समभो कि जो राजा अपने धर्म्मको करताहै वह कभी धर्म्म से भ्रष्ट नहीं होता सदैव राजाधर्म्मशास्त्रके विरुद्धकर्म्म करनेसेही भ्रष्टहोताहै जो पिताके समान सब प्रजापर शास्त्रबुद्धीसे समदृष्टिहोकर राज्यकरताहै वह कभी पापकाभागी नहीं होता और जो राजा दैवयोगसे समयपर अपनाकर्म्म नहींकरता वह अधर्म्म नहीं है बुद्धिके द्वारा बहुत शीघ्रही शत्रु को दण्डदेना योग्य है और पापात्मा लोगोंसे स्नेह न रक्खे अपनेदेशमें धर्म्मकी वृद्धिकरे और शूरवीर श्रेष्ठ पुरुषोंका सत्कार करे और कर्म्मकांडके जानने वाले ब्राह्मण और धनवान वैश्यादिकों की अधिक प्रतिष्ठाकरे और अनेक शास्त्रों के जाननेवाले पुरुष व्यवहारों में सम्मति करने के योग्य हैं और बुद्धिमान् राजा को उचित है कि कैसा भी कोई बुद्धिमान्हो किसी पर पूर्णविश्वास न करे रक्षा न करनेवाला राजा पाप को भोगता है हे राजा ईश्वर के कोप से जो दुर्भिक्ष आदि कष्ट प्रजापर होते हैं उन से और चोरी आदि से प्रजाका नाश होता है वहसब राजाकाही पाप है और हे राजा जो विचार पूर्वक न्याय और धर्म्मशास्त्र के अनुसार पालन करनेपर भी जो प्रजाकी हानि हो वह अधर्म्म नहीं है बहुधा होन-हार बातें भी होजाती हैं परन्तु उनके दूर करने के उद्योग करने से राजाको पाप नहीं होता इस स्थान पर एक कथा तुमसे कहताहूं कि प्राचीन समय में एक हयग्रीवनाम राजर्षिथा वह शत्रुओं के दंडदेने में और मनुष्यों के पोषण करने में जो उत्तम कर्म्म और श्रेष्ठ उद्योग थे वहसब करके युद्ध में कीर्त्तिमान् हो स्वर्ग में आनन्द करता है वह स्नेह को त्याग युद्धों में शस्त्र-धारियों के शस्त्रों से घायल दिव्य अस्त्र शस्त्र धारण किये चोरोंसे माराहुआ कर्म्मकर्त्ता साहसी और मनोरथों का पाने वाला था और अपने युद्ध रूप यज्ञकी अग्नि में शत्रुओं को हवनकर पापों से छूट प्राणों को त्याग देव लोक में बिहार करता है ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेचतुर्विंशोऽध्यायः २४ ॥

पच्चीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार के अनेक वचन व्यासजी से सुन कर अर्जुन को क्रोधित जान व्यासजी को सन्मुखकर युधिष्ठिर बोले कि यह पृथ्वी का राज्य और अनेक प्रकारके भोग मेरे चित्त को प्रसन्न नहीं करते अब यह दुःख मुझको सताता है हे मुनि अपने वीर पुरुषपति और पुत्रों के शोक से पीड़ित स्त्रियों के रोदन को सुनकर शांत नहीं होता यह वचन सुनकर वेद और धर्म्म के ज्ञाता योगियों में श्रेष्ठ श्रीव्यासजी ने युधिष्ठिर से कहा कि वह पति पुत्र स्त्रियों को कर्म्म करके वा यज्ञों से भी प्राप्त नहीं हो-सक्ते और न कोई उन पुरुषों का देनेवाला है ईश्वरने सबका समय नियत किया है इससे अपने अपने समय मनुष्य यथेच्छ वस्तु पाता है इन स्त्रियों का सौभाग्य जाना था इससे बिधवा हुईं इनका शोच करना व्यर्थ है विना समय के आये चाहे जितने ज्ञानशास्त्र धर्म्मशास्त्र पढ़ने से भी पुत्र नहीं होते कभी मूर्ख भी अर्थों को पाताहै सब कामों में समयही मूल कारण है विनाश काल में शल्यविद्या मन्त्रविद्या और औषधी सफल नहीं होती हैं वह सब कालसेही नियत और प्राप्त होते हैं जिसको विधाता ने उत्पन्नकिया है वह सबकाल पाकर नष्ट होते हैं विना समय आये कोई किसीका नाश नहीं करसक्ता समय पाके गुणी धनी निर्धनहोते हैं और उसी प्रकार निर्धन निर्गुणी धनवान् होते हैं कालही में तीक्ष्णहवा बादल मेह और बनके वृक्ष फूलते हैं समयही से अँधेरी उजेली रात्रि और विना समय के नदी वेग से नहीं बहतीं और पक्षी सर्प मृग हाथी पहाड़ी पशु उन्मत्त नहीं होते समय परही स्त्रियां गर्भ धारण करतीं विना समय फाल्गुनचैत्र में वर्षा नहीं होती समय परही मरना जीना पैदा धर्म्म अधर्म्म होताहै समय परही बालक बो-लता और तरुण होताहै समय परही बोयाहुआ उगता है और समय परही सूर्य्य का उदय अस्त आदि सम्पूर्ण बातें होती हैं इस स्थानपर हम राजा सेनजितका इतिहास वर्णन करतेहैं कि यह काल की गति दुःख से सहने के योग्य है और सब नरलोकवासियों को स्पर्श करती है कालसेही पृथ्वीके सबजीव मरते हैं और कालही से एक दूसरे को मारता है सो हे राजा यह मर-ना जीना कहनेही मात्रहै न कोई मरताहै न जीताहै न मारताहै तर्कशास्त्रवा-ले यह मानतेहैं कि मारता है और दूसरा सांख्यशास्त्रवाला कहता है कि नहीं मारता है यह जीवों का जन्म मरण केवल आत्मा की सत्तासे है कि अपने आप होते हैं अर्थात् धनस्त्रीके नाशसे दुःख और बेटे अथवा पिताके मरने में महा दुःख है इसप्रकार ध्यानकरता हुआ उसदुःखका उपायकरे मूर्खहोकर

शोच नकरे और शोकमें डूबकर मूर्ख स्त्रियोंको क्यों शोचताहै जिनके दुःखोंमें दुःख और भयमें भय भीहै अर्थात् दुःख और भयको दूनाकरना महाअज्ञानताहै यहआत्माभी मेरानहींहै और न यह पृथ्वी मेरी है अर्थात् मुझ आत्मारूपसे जुदे हैं और जैसे कि यह सबप्रपञ्च मेरारूपहै उसीप्रकार दूसरोंकाभीहै अर्थात् सब रूपों में एकही आत्माहै जो इसप्रकारसे देखताहै वह अज्ञानतामें नहींफँसता है शोकके हजारोंस्थान और आनन्दके सैकड़ोंस्थान प्रतिदिन अज्ञानियोंमें आतेहैं पण्डितोंमें नहींआते इसप्रकार कालके प्रेरित सुख दुःख जीवोंमें घूमा करते हैं जैसा समय पाते हैं वैसे ही सुखरूप दुःखरूप होजाते हैं यह सब मोह के लक्षण हैं ऐसा बिचार करे कि यहां जितने सुख हैं वहभी दुःखरूप ही हैं क्योंकि लोभसे जो चित्त में आकुलता होती है उससे दुःख उत्पन्न होताहै और दुःख के नाशहोने को सुख कहते हैं सुख के अन्त में दुःख और दुःख के अन्त में सुख अवश्य होता है न सदैव दुःख रहता है और न सुख बना रहता है कभी दुःख से सुख और कभी सुख से दुःख होजाता है इस कारण इनदोनों को त्यागकर मोक्षरूपी अक्षय सुख को प्राप्त करे और उन्हीं दोनों सुख दुःखों से शोक की भी वृद्धिहोती है इससे उन दोनों को एक अंग के सदृश समझकर त्याग करे सुख दुःख को हृदय से अलग करने के निमित्त मनुष्य उपासना करे तो इस शोक से निवृत्त होगा देह स्त्री पुत्रों में स्नेह करनेवाला पीछे से समझेगा कि किसप्रकार से किसकारण कौन किसका सम्बन्धी है अर्थात् कोई किसी का न बेटा है न स्त्री है इस संसार में जो अत्यन्त अज्ञान हैं और जो बड़े ब्रह्मज्ञानी हैं वह ही सुखों को भोगते हैं और मध्य के मनुष्य दुःख ही पाते हैं हे युधिष्ठिर उस महा ज्ञानी दानी दुःख सुख के ज्ञाता राजा शेनजितने यह कहा कि उस लोभआदि के कारण जो दुःखों से दुःखी है वह कभी सुखी न होगा दुःखोंका नाश नहीं है एक से एक दुःख पैदाहोता जाता है सुख दुःख राज्य नाश हानि मृत्यु जीवन इन सब को क्रम पूर्वक पाते हैं उन सबों से पण्डित लोग न खुश होते हैं न शोच करतेहैं युद्ध भूमि में जो युद्ध करना है वही राजा का दीक्षा यज्ञहै और राज्य में जो अच्छे प्रकार से दण्ड और नीति का जारी होना है उसी को योग जानो और यज्ञ के बीच जो दक्षिणा का देनाहै अथवा धन खर्चकर अच्छे प्रकार दानकरना है वह सब राजाओं को शुद्ध करता है देह के स्नेह को त्याग यज्ञ करनेवाला महात्मा राजा बुद्धि और नीति पूर्वक राज्य की रक्षा करनेवाला और धर्म्म की दृष्टि से सब मनुष्यों में घूमनेवाला जब समय पाकर देह को त्यागता है वह देवलोक में आनन्द करता है युद्ध में विजय कर देशों का पालनकर यज्ञों के अमृत को भोजन करके युक्ति दण्ड से प्रजाकी वृद्धिकर जो

राजा संग्राम में मरता है वह भी स्वर्ग में निवास करता है और वेद शास्त्रों को पढ़ अच्छे प्रकार से प्रजा पालनकर चारों वर्णों को अपने अपने धर्म्म में प्रवृत्त करके जो राजा शुद्ध अन्तःकरण होता है वह परमधाम को पाता है और उसके पुरवासी मन्त्री प्रजा आदि के मनुष्य उस स्वर्गवासी राजाकी कीर्त्तिको गाते हैं और नमस्कार करतेहैं वह राजा सर्वोत्तम है ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेपञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

छब्बीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि इसी विषय में राजा युधिष्ठिर बड़ी बुद्धिमानी के साथ अर्जुन से यह वचन बोला कि हे अर्जुन तुम जो यह मानते हो कि धन से कोई बड़ानहीं है विना धनके न स्वर्ग है न सुख है न राज्य आदि है सो यह सब तुम्हारा कहना मिथ्याहै वेदपाठ यज्ञ जप आदि से सिद्धहोने वाले बहुत से मनुष्य और तप में प्रीति करनेवाले मुनि ऐसे देखने में आतेहैं जिन को सनातन लोक प्राप्तहोते हैं हे अर्जुन जो ब्रह्मचारी और सबधर्म्मों के जाननेवाले पुरुषऋषियों के प्राचीन आचरणों की रक्षाकरते हैं उनको देवतालोग ब्राह्मण जानते हैं तुमभी वेदपाठ में प्रवृत्तहो इस से उनज्ञान निष्ठा को जानते हो हे युधिष्ठिर तेजोमय पुरुष ज्ञानी और निष्ठावानहो के हजारों स्वर्गलोक को गये हैं और वेद में कहेहुये कर्मों को प्राप्तहोकर यज्ञ वेदपाठ दान कठिनतासे प्राप्तहोते हैं जो पुरुष अर्य्यमा देवता के दक्षिण मार्ग होकर परलोक को गयेहैं उनकर्म करनेवालों के लोकों को मैंने प्रथमही कहा और उत्तरायण मार्ग है उसको जो नियम से देखेगा वह यज्ञ करने वालों के सनातन लोक में प्रकाशितहोगा हे अर्जुन उसस्थानपर ब्रह्मज्ञानी पुरुष उत्तरायण गतिकी प्रशंसाकरतेहैं संतोषसे स्वर्ग को पाता है और संतोषही से मोक्षभीमिलती है क्रोध और आनन्द को समान समझ कर जो जीनलेते हैं वह ज्ञानीलोग संतोष भी करसक्तेहैं और इन से अन्यलोग संतोषी नहींहोते क्योंकि यहवैराग्य बड़ीउत्तमसिद्धिहै इस स्थानपर राजाययातिकी कहीहुई उस कथाको कहते हैं जिससे कि ज्ञानीलोग त्यागीहो अपनी सब इच्छाओं को आत्मा में अन्तर्गत करते हैं जैसे कि अपने अंगोंको कछुआ लयकरताहै जब यहभय नहीं करता और न इससे कोई भयकरता औरइच्छा और शत्रुता को भी नहीं करताहै तब ब्रह्मभावको पाताहै जब अहंकार और अज्ञानको जीतने वाला स्नेहको दूरकरताहै तोभी मोक्षको पाता है हे जिते न्द्री अर्जुन तुम मेरेकहेहुये वचनोंको सुनो कि कोईतो धर्मको चाहताहै और कोई संसारी आनन्दको और कोई धनको सो जो पुरुष धनकी इच्छा करता

है उसकी अनीच्छाही उत्तमहै क्योंकि धनमें बड़े२ दोषहैं और उसधनसे जो कर्महोते हैं उन में भी अधिकदोष आजाताहै मैं प्रत्यक्ष देखरहाहूं और तुमभी देखसक्तेहो धनकी लिप्सावालों से त्यागकेयोग्यबातोंका त्यागकरना कठिन है जो धनको प्राप्तकरतेहैं उनमें सहनशीलता होना कठिनहै और धनहत्या करनेवालों को मिलताहै और वह प्राप्तहुआ धनभी शत्रुताका मूलहै अर्थात् भयका कारणहै फिर जो पुरुष उस बेशीलता शोक भयआदि से जुदाहोना चाहे वह थोड़े धनके लिये लोभ से हत्या करता हुआ ब्रह्महत्याको नहीं जानताहै अर्थात् लोभी थोड़ेधनमें भी भ्रूणहत्याको प्राप्तहोता है २१ कष्ट से प्राप्तहोनेवाले धनको पाकर अपने आज्ञाकारी नौकरों आदिकोभी देकर सदैव दुःखको पाताहै जैसे कि चोरों से इसलिये कि धनलेनेवाले नौकरभी विपरीत होजाते हैं बिनाधन और सबप्रकारकी उपाधियों से रहित जो पुरुष है वह सबप्रकार से स्तुति के योग्यहै वह लोक देवताओं के पंचयज्ञआदि करने के निमित्त भी जो संचित धनहै उससेभी प्रसन्न नहींहोते अर्थात् देवयज्ञादिकों के लिये भी न देकर उससे प्रसन्न नहीं होते क्योंकि लोभकी वृद्धिहोनेसे महा दुःख होताहै इसस्थान में प्राचीन वृत्तांतों के जाननेवाले तीनों वेदोंके ज्ञाता ज्ञानियों के यज्ञोंकी प्रतिष्ठा करनेवाले लोक में यज्ञकी गाईहुई कहावतको कहते हैं कि ईश्वरने यज्ञके लिये धनको और यज्ञकरने के लिये पुरुषों कोरचक पैदाकिया इसकारण सबधनको यज्ञ और ईश्वर के पूजन में लगाना चाहिये वह धनदेहके प्रयोजन के लिये हितकारी नहींहै हे धनवानों में उत्तम अर्जुन ईश्वर इसधनको अपने और यज्ञके अर्थ नरलोकके बासियों को देता है इससे वहधन किसीका नहीं है इसीहेतु श्रद्धावान् पुरुषदान और यज्ञकरें क्योंकि प्राप्त होनेवाले धनका त्यागही उत्तम है उसके भोगऔर नाश को कोई अच्छा नहींकहता है जब कि भोगमें न आसका तोउसके इकट्ठे करने से क्या प्रयोजनहै जो निर्बुद्धीलोग अपने धर्मके बिपरीत अन्य मनुष्यों को देते हैं वह मरकर सैकड़ों बर्षतक बिष्ठाको खाते हैं और जो अपात्रको देताहै और सुपात्रको नहींदेताहै तो पात्र अपात्रका ज्ञान न होनेसे दानधर्मका भी करना कठिन है प्राप्तहोनेवालेधन और धनसे पैदाहोने वाली बस्तुओं की अमर्य्यादा जाननी चाहिये जब कि पात्र और अपात्रका ज्ञाननहीं है ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेषड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

सत्ताईसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि द्रौपदीके पुत्र अभिमन्यु, धृष्टद्युम्न, विराट्, द्रुपद धर्म्मज्ञ वृषसेन, धृष्टकेतु तथा अन्य बहुत से देशों के राजालोग जो संग्राममेंमरे

निमित्त मारेगये इससे मुझज्ञातिघाती स्ववंश छेदक राज्यकी कामना करने वालेका शोकमनसे नहीं जाता जिसकी गोदी में हमलोग खेले वह गंगा जीके पुत्र हमारे पितामह भीष्मजी मुझराज्यके लोभी के कारण युद्ध में गिरायेगये वह वज्रके तुल्यथे शिखंडीको सन्मुख देखते अर्जुनके बाणों से कांपते हुये मैंने देखे उनवृद्धसिंहके समान अर्जुनके बाणोंसे विदीर्ण देहनरों में उत्तम अपने पितामह को देखकर मेरा चित्त अत्यंत पीड़ामान हुआ यहां तक कि उस पर्व्वत समान शत्रुहन्ता पितामह को घूमता देखके मुझको मूर्च्छा आगई उन भीष्मजीने कुरुक्षेत्र के मैदानमें बहुत दिवस तक भार्गव परशुरामजीसे महाप्रबल युद्धकिया और काशी में काशीराज की कन्या के निमित्त एक रथके द्वारा उन महावीर गांगेयजीने स्वयंबर में आये हुये सब राजाओं को युद्धमें बुलाकर बड़े २ अस्त्रोंको धारण किये महापराक्रमी चक्रवर्ती राजाशाल्वको बड़ी वीरतासे परास्त किया और जिनकी स्वेच्छाचारी मृत्यु ऐसे महाबली पितामहने पांचाल देशवाले शिखण्डीको बाणोंसे नहीं गिराया परन्तु आप अर्जुनके हाथ से गिरे हे मुनीश्वर जब मैंने उनको पृथ्वीपर रुधिरसे व्याप्त देखा तभी भयदायक तपमेरे चित्तमें उत्पन्नहुआ बाल्य अवस्था में जिसने हमारी रक्षा और पालन किया वह मुझ राज्य के लोभी पापी गुरुहन्ता महामूर्खके कारण नाशवान् राज्यके हेतु मारेगये सब राजाओं के पूज्य महाअस्त्रज्ञ गुरुजी को युद्धमें मिलकर पुत्रके निमित्त मुझपापी से मिथ्यावचन कहलाये गये वह बात मेरेअंगों को भेदतीहै कि जो गुरुने कहा था कि हे अर्जुन तुम सत्य२कहो कि मेरा पुत्र जीवता है सत्य को निश्चयकरने वाले ब्राह्मणने उसबात को मुझसे पूछा मैंने हाथी का बहाना करके मिथ्या वचनकहा युद्धमें सत्यताके कंचुकको त्यागकर मुझराज्य लोभी पापी गुरुजी के कहनेसे वह गुरुजी हाथीके छलमें छलेगये और कहागया कि अश्वत्थामा मारागया हे मुनि मैं ऐसे महा पापों को करके किसलोकमें जाऊंगा और जो मैंने युद्धमें दृढ़महावीर अद्वितीय शस्त्रों के जानने वाले अपने बड़ेभाई कर्णको मरवाया मुझसे अधिक पापी कौनहै जैसे कि पहाड़ों में सिंहहोता है उसीप्रकार उत्पन्नहोने वाला अभिमन्यु बालक को मुझ राज्यलोभी ने द्रोणाचार्य्य की रक्षित सेना में भेजा तबसे अर्जुन की ओर और कमल लोचन श्रीकृष्णजी और पुत्रों से रहित दुःखोंसे पीड़ामान द्रौपदीकी ओर देखनेको ऐसे समर्थ नहीं होताहूं जैसे कि बालकोंका मारनेवाला महापापी पहाड़ों के समान पांचोंपुत्रों से रहितहो पृथ्वीको शोधताहूंकि तुम परमुझसा कुटुम्बघाती पापात्मा वर्त्तमानहै ऐसा अपने को धिक्कार कर अपनी देहको सुखाऊँगा तदनन्तर मैं गुरुघाती महापापमूर्ति अपनी देह

के त्यागने का उद्योग करूंगा अर्थात् अन्न जल छोड़कर बैठूंगा तब हे तपोधन ऋषियो यहांपर अपने प्यारेप्राण को त्यागूं गा तुम सबको प्रसन्न करके कहताहूं कि इच्छाके अनुसार अपने अपने अभीष्ट स्थानको जाओ और मुझको सब महाशय आज्ञादो कि इसशरीरको त्यागूं बैशम्पायन कहते हैंकि इसप्रकार शोक सन्ताप करनेवाले युधिष्ठिरसे श्री व्यासदेव जी बोले कि ऐसानहीं करना योग्य है तुम इतना शोक मतकरो यही समझो कि ऐसाही होनहारथा सो हुआ जीवों के योग और बियोग होनेको ऐसा निश्चयजानो जैसे कि पानीके बबूले पानी से बनकर पानीमेंही मिलजाते हैं अर्थात् उत्पन्नहोते हैं और नाशहोते हैं सबधन समूह अन्तमें नाश होते हैं और सब बृद्धि पानेवाले परिणाम में नाशको पाते हैं इससे सुख और दुःख का अन्त देखकर दुःख को सुख का प्रकाश करने वाला जानो और लक्ष्मी, ऐश्वर्य, लज्जा, धैर्य, नेकनामी यह सब बातें बुद्धिमान् चतुर पुरुषों में निवास करती हैं दीर्घ सूत्रियों में नहीं होतीं मित्र सुख देने को और शत्रु दुःख देने को समर्थ नहीं है धनके प्राप्त करने के लिये बुद्धि समर्थ नहीं है और धनसे भी सुख नहीं मिल सक्ता हे राजा युधिष्ठिर जैसा ईश्वर ने कर्म्म बतादिया वैसाही करो इसी से तुम्हारी शुद्धी है तुम कर्मोंको नहीं त्याग सक्ते ३४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेसप्तविंशतिमोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अट्ठाईसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि ज्ञाति बन्धुओं के मरनेसे शोकमें मग्न प्राणत्यागने की इच्छा करने वाले युधिष्ठिर का शोक व्यासजी ने पूर्व्वोक्त अनेक बातों के कहने से दूर किया और कहा कि हे युधिष्ठिर इस स्थानपर तुम अश्मगीत अर्थात् अश्मनाम ब्राह्मण ने जो गाया उसको समझो कि राजा जनक ने दुःख और शोकमें मग्न होकर अश्मनाम ब्राह्मण से अपना सन्देहपूछा कि हे महाज्ञानी महात्मा धनके प्राप्त करने और नाश में इच्छा रखने वाले पुरुष कैसे कल्याण को पावें अश्मऋषि बोले कि उत्पन्न होनेवाले देह मनुष्यों को दुःख और सुख देने के निमित्त विनाशोंके समझे सन्मुख आजातेहैं तब उन सुख दुःखों का बर्ताव होता है अर्थात् आमने सामने वाले दोनोंमें एक की आपत्ति में जो २ सन्मुख आता है वह उसकी बुद्धि को जल्दी से हरलेता है जैसे कि बादल को हवा हरलेती है मैं श्रेष्ठघराने में उत्पन्न हुआहूं और सिद्धहूं केवल मनुष्यही नहींहूं इन तीनों बातों के हेतु से उसकाचित्त निर्बल होताहै संसारी सुखों में चित्त का लगाने वाला पुरुष पिताके संचित धन

आदिको उड़ाकर खाली हाथ अर्थात् निर्द्धन होजाता है तब दूसरे के धन लेने को अच्छा समझता है उस अमर्य्याद और अयोग्य लेनेवालेका राजा लोग निषेध करते हैं हे राजा जो चोर पुरुष हैं वह बीस व तीस वर्षतक जीते हैं और दूसरे सौवर्ष से अधिक नहीं रहते राजा को चाहियेकि उन बड़े दुःखियाओं का इलाज बुद्धिमानी से करे सब जीवों के आचार को जहां तहां देखताहुआ अपने प्रबंधकोकरे फिर मनुष्योंके पुनर्जन्मसे जो दुःख होते हैं उनसे चित्त में भ्रांति होती है और भ्रान्तिसे अनिच्छा होती है तीसरी कोईबात सिद्ध नहींहोती जो इसलोकमें यह और वह अनेकप्रकारके दुःखहैं उसीप्रकार विषयोंके सुखभी प्राप्तहोते हैं वृद्धावस्थापा मृत्यु उन महाबली और निर्बल व अहंकारी व महात्माजीवोंकी भी भक्षण करने वालीहै इसलोकमें कोई मनुष्य समुद्रके अंततक सम्पूर्ण पृथ्वीको विजय करकेभी मृत्यु और वृद्धावस्थाको उल्लंघननहीं करसक्ता जीवोंके सन्मुख नियतहोनेवाला सुख और दुःख मनुष्योंको लाचारी से भोगनेके योग्यहै उसकात्यागहोही नहींसक्ता हे राजा बाल्यावस्था तरुणता अथवा वृद्धावस्थामें वृद्धपनेकी दशा रुकनेवाली नहीं है जो कि उससेबिपरीत मनुष्योंको अभीष्टहैं अनिच्छाओंके साथ मिले संबंधियोंसे जुदा होना अथवा धनी वा निर्द्धनी होना और बिना जाने हुये सुख और दुःख सामने आते हैं जीवोंका जन्म मरण हानि लाभ या परिश्रम इन सब का मिलना दृष्टिसे अगोचर वर्त्तमान है रूप, रस, गन्ध, स्पर्श यह सब जैसे स्वाभाविक वर्त्तमान होते हैं इसीप्रकार सुख दुःख भी बिना जाने सन्मुख आतेहैं निश्चय करकेसब जीवोंका आसन शयन सवारी उद्योग और खानेपीनेवाली वस्तु सब कालही से पैदा होते हैं वैद्य और रोगी पराक्रमी निर्बल और धनीऔर नपुंसकता यह समयकी विपरीतिता अनेकप्रकारकी हैं सुन्दर घरानेमें जन्म और निरोगता, सुन्दर स्वरूप होना, प्रारब्धीहोना, संसारी सुखकी प्राप्ती यह सब होतव्यतासे ही पाताहै बहुधा निर्द्धन और इच्छा न करनेवालोंके बहुतसे पुत्र होतेहैं और इच्छा करनेवाले औरधनी और कर्म्म करनेवाले पुरुषों के नहीं होते रोग, अग्नि, जल, शस्त्र गृहस्थी आदिकी आपत्ति विष तप मृत्युनीचेऊपरका गिरना यह सब जीवों की दशाहैं जिसके जन्म में जो होनहार होताहै उसको उस कर्मकी मर्य्यादासे वहप्राप्तकरताहै उसको उल्लंघनकरता दृष्टनहींआता किन्तु उसमेंप्रवृत्त दृष्टआताहै इस संसारमें धनवान् मनुष्यबहुधा तरुणहीअवस्था में मरता दीखता है और दुःखी निर्द्धनलोग वृद्धहोकर सौ वर्षके भी देखने में आतेहैं और कुछ भी पास न रखनेवाले पुरुष चिरजीवी बहुत कालतक जीवतेहुये दृष्ट आतेहैं और अच्छे ऐश्वर्य्यवान् घराने में उत्पन्न होनेवाले पतंगके समान नाश होतेहैं इसलोक में धनके भोगने की बहुधा लोगोंको

सामर्थ्य नहींहै सब दरिद्री लोगोंको काष्ठभी हजमहोजातेहैं कालसे बँधाहुआ यह मानताहै कि मैं यहकरूं तो वह निर्बुद्धी असन्तोषता से जोजो चाहताहै उसको करताहुआ पाप करताहै ज्ञानियों ने शिकार खेलना, पांसा, स्त्री, मद्य, और युद्धमें वितंडावाद आदिको निन्दित कियाहै पर बहुतसे शास्त्रके जानने वाले पुरुष इन बातों में बड़े प्रवृत्त देखने में आतेहैं इससे निश्चयहै कि इस लोक में ईप्सित और बे ईप्सित सब अर्थ सब प्राणियों को समयके आधीन प्राप्त होतेहैं इसका हेतु नहीं जानाजाता है अर्थात् अज्ञात बातें सन्मुख आती हैं प्रलय होनेपर पृथ्वी आकाश वायु जल तेज चन्द्रमा सूर्य्य दिन रात नक्षत्र नदी पर्वत इत्यादि असंख्य पदार्थों को कौन उत्पन्न करता है इसीप्रकार शर्दी गरमी वर्षा भी कालही से इरते फिरते रहते हैं इसीप्रकार मनुष्यों के सुख दुःख भी हैं मृत्यु और वृद्धापनसे संयुक्त मनुष्यको औषधी मंत्रहोम जपआदि कोई नहीं बचासक्ता है जैसे कि महासमुद्र में परस्पर काष्ठ मिलजाय और मिलकर पृथक् होजाय उसीप्रकार जीवोंका संयोग बियोगहै जो पुरुष स्त्रियों के गीतबाद्योंसे सेवितहैं और जो अनाथहो दूसरेके अन्नके भोजन करनेवाले हैं उनमें मृत्यु समानही कर्म्म करनेवाली है हजारों पिता माता और सैकड़ों पुत्र स्त्री संसार चक्र ने उत्पन्न किये वे किसके और हम किसके हैं न इसका कोई है और न वह किसीका है स्त्री भाई पति इनके साथ यह संयोग इस प्रकार है जैसेकि मार्ग्ग में एक दूसरेसे मिले यह कहांजायगा और मैं कहां जाऊंगा और मैं कौनहूं और यहां किस निमित्त वर्त्तमान हूं किस कारण से किस बातको शोचूं इसप्रकार चित्तमें बिचारांश करे जिसमें कि अपने संबंधियों के साथ सदैव रहना नहीं है और जिसकी चालगाड़ी के पहिये के सदृश घूमनेवाली है ऐसे संसारमें माता पिता भाई आदि यह सब मार्ग्ग के से मिलाप हैं ज्ञानियों ने परलोक को ऐसा कहाहै कि वह ज्ञानरूप से नहीं देखागया अर्थात् ब्रह्मज्ञान से और धर्म्म युद्धमें मोक्ष होनेसे वह परलोक भी नाशको प्राप्त होता है इस निमित्त शास्त्रोंको उल्लंघन न करके इच्छावान् ऐश्वर्य्यकी श्रद्धा करनी चाहिये पितृ और देवताओं का तर्पण और कर्म्मों को करे फिर ज्ञानीहो यज्ञों को बुद्धिके अनुसार करे और त्रिवर्ग्ग अर्थात् अर्थ धर्म्म कामका सेवन करे यह जगत् कालरूप लहरों से भरेहुये समुद्रके समान जिस में मृत्यु और वृद्धावस्था यह दो बड़े ग्राहहैं उसमें डूबते हैं परन्तु कोई बचा नहीं सक्ता केवल आयुर्वेद वैद्य विद्याको पढ़नेवाले बहुतसे वैद्यलोग अपने कुटुम्ब समेत रोगों में बड़े दृष्ट आते हैं वह क्वाथ और अनेक प्रकारके रसों को खाकर मृत्युको उल्लंघनकर ऐसे वर्त्तमानही रहते हैं जैसे कि महा समुद्र अपनी मर्यादाको उल्लंघन नहीं करता रसों के बनानेवाले और धनभी

चर्चनेवाले आदमी वृद्धावस्था से निर्बल और कांपते दृष्ट आते हैं जैसे कि पराक्रमी हाथियों से वृक्ष कांपता है इसीप्रकार तपसे संयुक्त वेदपाठ और जपके अभ्यास में प्रीति रखनेवाले दानी और यज्ञ करनेवाले वृद्धावस्था और मृत्युसे नहीं बचते हैं उत्पन्न होनेवाले जीवों के न दिन न मास न वर्ष न पक्ष न रात फिरते हैं सो नाशवान् असमर्थ मनुष्य इस कालसे उस नाशवान् बड़े संसार मार्गको पाता है जिसमें कि सब जीव रहते हैं जो आत्माको अविनाशी समझे उस पक्षमें जीवात्मा से देहकी उत्पत्तिहै और जो आत्माको नाशवान् समझे उसपक्षमें देहसेजीवकी उत्पत्तिहोचाहै जो कुछहोय परंतुसब दशाओंमें स्त्री और अन्यबांधवोंकेसाथ मिलनामिलाना मार्गके मिलापहोने के समानहै यह कभी किसीके साथबहुतबड़े रहनेवाले साथीको नहींपाता है और न अपनी देहकेसाथ बड़े रहनेवाले साथीको पाता फिर अन्य किसका साथ पावेगा हे राजा अब तेरा पिता और पितामह कहां हैं हे पवित्रात्मा अब न तुम उनको देखते हो न वे तुमको देखते हैं स्वर्ग नरक का देखनेवाला पुरुष नहीं है सब पुरुषों का नेत्र रूप शास्त्र हैं सो हे राजा इस स्थानपर उसको प्राप्त करो दूसरे के गुण में दोष न निकालनेवाला ब्रह्मचारी पुरुष पितृ देवता आदि के ऋण से दूरहोने के लिये सन्तान को उत्पन्न करे वह यज्ञाभ्यासी सन्तान पैदाकरनेवाला पहिला ब्रह्मचारी विवेकयुक्त हृदयके अन्धकार और शोक और मिथ्या को दूरकर इसलोक और परलोक की इच्छाको दूरकर परमात्मा का आराधन करे राग द्वेष रहित धर्म्म को करताहुआ बुद्धि के अनुसार धनों को इकट्ठा करके धर्म्म पूर्वक राज्य करनेवाले का यश लोकपरलोक में बढ़ताहै इसप्रकार कारणों से भरेहुये सम्पूर्ण वचनों को जानकर अत्यन्त शुद्धबुद्धि और शोक से पृथक् राजा जनक अश्मऋषि से पूँछकर अपने घरको गये हे राजा इसी प्रकार तुमभी शोकको त्यागो हे इन्द्र के समान उठो और आनन्द करो तुमने क्षत्रीधर्म्म से पृथ्वी को विजयकिया उसको भोगो और उसका अनुमान कभी मतकरो ॥ ५९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणि राजधर्मे अष्टविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

उन्तीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि राजेन्द्र पांडुपुत्र युधिष्ठिर जब मौनहुये तब पांडुनन्दन अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से कहा कि हेमाधवजी शत्रुहन्ता धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर सम्बन्धियों के शोक से महा दुःखी हैं इस शोक समुद्र में मग्नको आप समाश्वासन करें इसी के शोकसे हम सब भी शोकवान् हैं इससे हे जनार्दन इसका यह महाशोक दूर करने को आपही समर्थ हैं ऐसे महात्मा

अर्जुन ने जब श्रीकृष्णजी से बचन कहे तब अविनाशी कमल लोचन गोविन्दजी राजाकी ओर दृष्टिकरके सन्मुख हुये केशव गोविन्दजी बाल्य अवस्था से राजा युधिष्ठिर को अर्जुनसे भी अधिक प्राणों से प्यारेथे और उनके बचनों को भी धर्म्मराज कभी उल्लंघन नहीं करते थे बातों से प्रसन्नकर महाबाहु श्रीबासुदेवजी चन्दन से चर्चित पर्वतकी कुक्षि समान युधिष्ठिर की भुजा को पकड़कर सुन्दर नेत्र दन्तों से शोभायमान कमल से प्रफुल्लित मुखारविन्द से बोले कि हे पुरुषोत्तम युधिष्ठिर तुम शोक से अपने सुख को मत सुखाओ जो इस युद्ध में मारेगये वह अब सुगमता से मिलने कठिन हैं हे राजा जैसे कि स्वप्न में प्राप्त होनेवाली बस्तु जाग्रत् अवस्था में मिथ्या हैं इसीप्रकार वह क्षत्री भी हैं जो महारण में मारेगये युद्ध को शोभित करनेवाले सब शूरबीर सन्मुख युद्ध करके परलोकको गये उनमें कोई न भगा और न किसी ने पीठि फेरी सब बीर भारी संग्राममें महा युद्ध कर शस्त्रों से अपने देहों को पवित्रकर प्राणों को त्याग त्याग स्वर्गलोक को गये उनका शोक करना वृथा है क्षत्रीधर्म्म के जाननेवाले वेद और वेदांगों के जाननेवाले शूरों ने बीरों की पवित्र गतिको पाया यह शोच योग्य नहीं है इसस्थल में इस प्राचीन इतिहास को कहते हैं जिसको कि पुत्रों के शोक में डूबेहुये राजा संजय से नारदजी ने कहा कि हे राजा संजय हम तुम और सब संसार सुख दुःखों से संयुक्त मरेंगे इसमें कौन संयोग है पहिले समय के राजाओं का माहात्म्य मेरेमुख से सुनो हे राजा सावधान हो फिर दुःख को त्यागोगे तुम इन महानुभाव राजाओं को सुनकर अपने दुःख को दूर करो यह वृत्तान्त कठिन ग्रह का शान्त कर्त्ता आयु बर्द्धक राजाओं के श्रवण करने योग्य चित्तरोचक है इसको यथावत् सुनो हे राजा संजय हम अविक्षित और मरुत राजा को मृतक हुआ सुनते हैं जिस महात्मा राजा के यज्ञ में इन्द्र बरुण के साथ वह देवता जो बिश्व को रचतेहैं और जिनके आगे चलनेवाले बृहस्पति जी हैं आके बर्त्तमान हुये जिसने ईर्षा से देवराज इन्द्र को भी बिजय किया और इन्द्र के शुभ चाहनेवाले वृहस्पति जी ने उससे कहा था कि यज्ञ मतकरो उस की आज्ञा पाने से वृहस्पति जी के छोटे भाई सम्बर्त्त ने उसको पृथ्वी पर यज्ञ कराया तब यज्ञसीमा के वृक्षों से घिरीहुई पृथ्वी बिना परिश्रम अपने आप फल संयुक्तहुई और आविक्षित के यज्ञमें विश्वेदेवा सभासद हुये और महात्मा राजा मरुत के यज्ञमें भोजन परोसनेवाले साध्यगण और मरुत्गण नाम देवता हुये जिन्हों ने यज्ञमें अमृत पान किया और यज्ञ में इतनी दक्षिणा दीगई कि देवता मनुष्य और गन्धर्वों से लेचलना कठिन हुआ हे संजय जो वह धर्म्मज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य्य नाम चारों कल्याणमय

तुझ से और तेरेपुत्र से भी अधिक पवित्र होकर मरगया तो ऐसी दशा अपने पुत्रके विषय में तुम शोक न करो और सुहोत्र अतिथिको भी सुन हैं कि कालवश हुआ जिसके देशमें इन्द्रने एक वर्ष पर्य्यन्त सुवर्णकी वर्ष करी इस पृथ्वी का नाम वसुमती तभी से हुआ उसी राजाके समयमें नदियों ने भी सुवर्ण धारण किया और लोक पूजित इन्द्र ने नदियों में कूर्म्म कर्के नक्र मकर शिशुक आदि जीवों को गिराया उसके पीछे राजा अतिथि ने हजारों लाखों सुनहरी मछली मगर कछुओं को गिराहुआ देखकर आश्चर्य किया फिर यज्ञकर्त्ता उस राजाने कुरुजांगल देशों में जाकर यज्ञों के बीच में ब्राह्मणों को बहुतसा सुवर्ण दान किया जबकि वह महादानी प्रतापी इसलोक को त्यागगये तो तुम शोकको किस निमित्त करते हो दक्षिणा पूर्वक यज्ञ न करनेवाले पुत्रका शोच त्याग शांत होकर चैतन्य होजाओ और सुनते हैं कि राजा अंगबृहद्रथभी मृत्यु वशहुये जिसने दशलाख श्वेत अश्व और सुवर्ण भूषणों से भूषित दशलाख कन्याओं को यज्ञमें पूजन करके ब्राह्मणों को दिया और वस्त्र भूषणों से अलंकृत उत्तम वर्ण के दशलाख हाथी और बैल उनके दक्षिणारूपी यौतुक में दिये जिनके साथ एकहजार गोपाल भी थे विष्णुपदनाम पर्वतपर यज्ञकरनेवाले राजा अंग के अमृत से इन्द्र देवता और दक्षिणाओं से ब्राह्मण महा तृप्त हुये हे राजेन्द्र प्राचीन समय में इस राजा के हजारों यज्ञों में देव ब्राह्मण गन्धर्व दक्षिणा के भारको न लेजासके ऐसादूसरा पुरुष उत्पन्न नहीं हुआ न होगा राजा अंग ने इसधनको सातसोम संस्थाओं में दान किया वह भी तुझ से और तेरेपुत्रसे अत्यन्त अधिक धर्म्मात्मा दान-धर्म्म यज्ञोंको कर मरगया तो तुम क्यों अपने पुत्र के शोक में डूबरहेहो और औशीनरके पुत्र शिविको भी मृतकहुआ सुनाहै जिस राजाने अपने शब्दा-यमान रथमें पृथ्वी को शब्दमय करके चर्म्म के सदृश लये अर्थात् विजय किया और एक रथसे पृथ्वी को एक क्षत्र किया और उसके जहांतक नौघोड़े आदि पशुथे सबको उस औशीनरके पुत्र शिवी ने दान किया ब्रह्माजीने उस के धनको ले चलनेवाला किसी को नहीं समझा उस शिवि राजा के समान पृथ्वी में न है और न होगा तुम दक्षिणायुक्त यज्ञ के न करनेवाले अपने पुत्र को न शोचो और भरतवंशी राजा दुष्यन्त और शकुंतला के पुत्र महात्मा और धनी भरतको भी मराहुआ हमने सुना जिसने यमुनाजी के पास देव-ताओं के लिये तीनसौ घोड़े और सरस्वती के पास बीस सहस्र घोड़े और गंगाजी के पास चौदह सहस्र घोड़ों को बाँधकर प्राचीन समयमें सहस्र अश्व-मेध और राजसूय यज्ञोंसे देवताओं का पूजन किया उसके समान दूसरे राजा लोगों में कर्मोंका करनेवाला कोई न हुआ उसने हजारों वेदियां बनवाकर

यज्ञमें सहस्र विधि उत्तम २ घोड़ोंका हवन किया उसीयज्ञमें भरतने कएवऋषि को हजार पद्मधन दक्षिणा में दिया वह भी महात्मा तुझ से और तेरेपुत्र से अधिक पुण्यात्मा होकर मरगया इससे तुमभी पुत्र शोक करने के योग्य नहीं हो और हे संजय दशरथजी के पुत्र रामचन्द्रजीको भी देह छोड़नेवाला सुनते हैं उन्होंने प्रजाको और ऋषिलोगों को अपने पुत्र पिताके सदृश पालनकिया जिनके देश में कोई स्त्री बिधवा और अनाथ नहीं हुई पिताके समान राज्य किया समय २ पर बर्षा होतीथी खेतियां अच्छे प्रकारसे होतीथीं उनरामचन्द्र जी के राज्यकरने में सदैव सुकालहुआ और कोई जीव उनके राज्यमें जलमें नहीं डूबा और अग्निमें कोई बिपरीत दशा से नहीं भस्म हुआ और रोगोंसे कभी किसी को भयभी नहीं हुआ श्रीरामचन्द्रजी के राजाधिराज होने में स्त्री और पुरुष हजार बर्षकी अवस्था प्राप्त करनेपर भी किसी रोगसे पीड़ित नहीं हुये और उनके समयमें कभीस्त्रियोंका शास्त्रार्थ अर्थात्बितंडावाद नहींहुआ तोपुरुषों का कैसे होता प्रजाके मनुष्य सदैव धर्मनिष्ठ होतेरहे और सब छोटे बड़े उनके राज्य में सन्तोषी निर्भय और सफल मनोरथ स्वतन्त्र और सत्य ब्रत होते हुये और वृक्षभी सदैव फलफूल युक्त निरुपाधि हुये और सबगौवें एकएक द्रोण प्रमाण दूध देतीथीं इस महात्मा ने चौदहवर्ष बनमें तपस्वियों का भेष धारण कर बड़े भारी दशअश्वमेधयज्ञों को किया और आजानुबाहु तरुणश्याम अरुणाक्षयूथप मातंग समान शोभायमान मुखारबिन्द सिंहके स्कन्ध महा भुजवाले रामचन्द्रजी ने श्री अयोध्याजी में ग्यारह हजारबर्ष पर्यन्त राज्य किया वहभी तुझ पिता पुत्रसे अधिक पुण्यात्मा दानी प्रतापी होकर इस अनित्य शरीर को त्याग गये फिरतू पुत्रशोक व्यर्थकरता है और राजा भगीरथजीको भी मृतकहुआ सुनते हैं कि जिसके रचे हुये यज्ञ में इन्द्र अमृत पानकरके मदोन्मत्तहुये और उसी के बलसे देवोत्तम देवेन्द्र ने हजारों असुरों को बिजय किया और अपने विस्तृत यज्ञ में उस राजा ने पूजन के पश्चात् सुबर्ण के आभूषणों से भूषित दश लाख कन्या दक्षिणा में पुण्यकरी वह सब कन्या चार चार घोड़ों के रथपर सवार थीं और हरएक रथ के साथ सुवर्ण भूषित बस्त्रों से अलंकृत सौ सौ हाथी थे और एक एक हाथी के पीछे एक एक सहस्र घोड़े और प्रत्येक घोड़ेके पीछे एकएक सहस्र गौ और प्रत्येक गौ के पीछे हजारों भेड़ बकरियां थीं तब उससमीपवर्ती राजा भगीरथ की गोदी में श्रीगंगाजी बैठगईं इसी कारण उनका भगीरथ की पुत्री उर्बशीनाम प्रसिद्ध हुआ उस इक्ष्वाकुबंशी राजा भगीरथ की पुत्री त्रिपथगामी श्रीगङ्गाजीने जिसके पुत्रीभावकोपाया ऐसे महातेजस्वीप्रतापी त्रिवर्गी भी जबमृत्युने ग्रासकिये तोतू अपने पुत्रहीको क्या शोचताहै और

इसीप्रकार राजा दिलीपका भी मरना सुना जिसमें अनेक कर्म्मों की प्रशंसा ब्राह्मण लोग करतेहैं ऐसे सावधान संपूर्ण संसारके राजाने अटूट धन से भरीहुई पृथ्वीको उस बड़े यज्ञमें ब्राह्मणोंको दानमें देदिया उस यजमानकी यज्ञमें पुरोहितजीने हिमालयदेशके हजारों हाथियोंको दक्षिणामेंपाया और शोभायमान सुवर्णके स्तंभवाले हरएक यज्ञ कर्म्मके करनेवाले इन्द्र आदि देवता उसके समीप वर्त्तमानहुये उसके उस स्वर्णमय यज्ञमें स्वर्ण निर्मित वस्त्रोंको धारण कर हजारों देवता और गन्धर्वों ने नृत्य किया और सप्तस्वरोंके अनुसार बाजा बजाया और विश्वावसु गन्धर्व ने बीणा को ऐसा बजाया कि जिस को सबलोगों ने यही समझा कि यह हमारेही आगे बजाता है अन्य राजाओं में कोई ऐसा नहुआ जो दिलीप कैसे कर्म्म करे जिसके मार्ग में सुवर्ण वस्त्रभूषित हजारों हाथी सोते थे जिन पुण्यात्मा पुरुषों ने इस राजा दिलीप को देखा वह भी स्वर्ग के बिजय करने वाले हुये दिलीप के महल में तीन शब्द सदैव होते थे वेदपाठ का धनुष का और दान देने का ऐसा होकर जो मृत्यु वशहुआ तो तू भी शोक मतकर और युवनाश्व के पुत्र मांधाता को भी मरा सुनते हैं जिस बालक को मृत्यु देवता ने उसके पिताकी जंघा से निकाला जोकि दही मिले घृत से उत्पन्न पिता के उदर में वर्द्धमान श्रीमान् तीनों लोकों का विजय करने वाला प्रतापी राजा हुआ पिता की गोद में सोने वाले उस देवस्वरूप को देखकर देवता लोगों ने परस्पर में यह कहा कि यह किसको भक्षण करेगा और इंद्रनेही भयभीत होकर कहा कि मुझेही यह खाजायगा इसी कारण उसका नाम इन्द्रने मांधाता रक्खा तदनन्तर उसके पोषण के लिये इन्द्रनेही अपने हाथ से दुग्धकी धार उसके मुख में गेरी तो वह इन्द्रके हाथही को भोजन करके बहुत शीघ्र एकही दिन में बढ़ाहुआ और बारह दिन में बारह वर्ष की अवस्था का होगया यह सब पृथ्वी उस महात्मा मान्धाता को एकही दिन में प्राप्तहुई समरभूमि में वह धर्म्मात्मा इन्द्रके समान शूरहुआ इसीसे इसने अंगार, मरुत, असित, गय, अंग, बृहद्रथ आदि राजाओं को युद्ध में विजय किया जब युवनाश्वका बेटा मांधाता रणभूमि में अंगार के साथ में लड़ा तब देवताओं ने धनुष की टंकारोंसे जाना कि स्वर्गका चूर्ण हुआ सूर्य्योदयसे सूर्य्यास्त पर्य्यन्त मांधाताका क्षत्र कहा जाता है हे राजन् उसने सौ अश्वमेध और सौ राजसूय यज्ञों से पूजन करके ब्राह्मणों को लालमछलियोंका दानकिया उनसे एक योजनऊंची सुवर्णकी मछली और दशयोजनऊंची चांदीकी बड़ी मछलियोंको ब्राह्मणोंकेअर्थ दान किया और दूसरे मनुष्योंने उनको विभाग किया वहभी तुमसे उत्तमथाइस कारण तुम पुत्रका शोक मतकरो और नहुषकेबेटे ययाति को भी मराहुआ

सुनते हैं जो इस पृथ्वीको सप्तसमुद्रों समेत विजयकरके धर्म्म शास्त्रकी विधि से परिमित पृथ्वी में वेदियां बनाकर पूजन करता वेदियोंसे पृथ्वीको सुशोभित करता चारोंओर को गया अर्थात् समुद्र के किनारे तक पहुंचा क्रतु नाम हजार यज्ञ और सौ अश्वमेधसे यज्ञोंसे पूजनकर तीन सुवर्ण के पर्व्वत दानकरके ऋत्विज अर्थात् यज्ञ करानेवालेको प्रसन्न किया नहुषकेबेटे ययातिने आसुरी बुद्धिके अनुसार दैत्य और दानवोंको मारकर सम्पूर्णपृथ्वीको अपने सबपुत्रों को बिभाग करदी यद्दुद्रुह्यु अणुतुर्वस इनचारों बेटोंको दूसरे राज्य और देशोंमें छोड़कर और मुख्यराज्य परपुरुको अभिषेककराके स्त्रीके साथ बनको गया हे संजय वह तुझसे और तेरेपुत्रसे अधिकतर होकर मृत्यु बश हुआ तो तू अपने पुत्रका शोक मतकर हमने अम्बरीषऔर नाभागको मरा हुआ सुनाहै प्रजाने राजाओं में उत्तम जिस पालन करनेवालेकोचाहा जिस बड़े महात्मा राजाने अपने महायज्ञ में दशलाखयज्ञकरने वाले राजा लोग अपने यज्ञके ब्राह्मण और अतिथियोंकी सेवा करनेके निमित्त नियत किये इस बातको नपहिले किसीने कियाऔर नआगे करेंगे बुद्धिमान्लोग राजा अम्बरीष की इसप्रकार प्रशंसाकरतेहैं कि उस राजाके यज्ञमें एकलाख दशहजार राजालोगों ने ब्राह्मणों की सेवा करने के कारण हिरण्यगर्भलोक पाया ऐसा भी प्रतापी तेजस्वी जब मरगया तो तू किसकारण पुत्रकाशोक करताहै इसके बिशेष हमने चैत्ररथके पुत्र शशिबिंदुको भी हमने मृतकहुआ सुनाहै जिसमहात्माकी एकलाख स्त्रियां थीं और एकलाख पुत्रसबकेसब महाधनुषधारी थे और प्रत्येक राजपुत्र के पीछे सौसौ राजकन्या चलीं और हरएक कन्याके साथ सौसौ हाथी और प्रतिहाथी सौसौ रथ और प्रत्येकरथ के साथ सौसौ घोड़े और घोड़े घोड़े के साथ सौसौगौ और गौओं के पीछे अनेक भेड़ बकरियांथीं ऐसे असंख्य धनको शशिबिंदुने बड़े अश्वमेधमें ब्राह्मणोंको बांटदिया उसकोभी तू महाउत्तम समझकर अपने शोककोदूरकर गये और अमूर्त्तयको भी हमने मृतक सुनाहै यह राजा सौबर्ष पर्य्यन्त यज्ञ के शेष अमृत अन्नका भोजन करनेवाला हुआ अग्निने उसको बरदानदिया और गयनेभी बहुतसे बरमांगे जिनमें एकयह बरदानहै कि मेरा धनदानकरते करते न निबटे और धर्ममें पूरीश्रद्धा बनीरहै और मेरेचित्तमें सदैव सत्यता बनीरहै यहसब बरदान अग्निने उसको दिये अमापूर्णिमा चातुर्मासमें पूरे सहस्रबर्ष पर्य्यंत अश्वमेधयज्ञ से परमेश्वरका पूजन किया सहस्रबर्षपर्य्यन्त उठउठकर एकलक्ष गौ और इतनेही खचर दान किये और धनसे ब्राह्मणों को और अमृतसे देवताओंको और स्वधासे पितरोंको और कामशक्ति से स्त्रियों को प्रसन्न किया और महा अश्वमेधयज्ञमें उसराजाने पचास हाथचौड़ी और

सौहाथ लम्बी सुवर्णकी पृथ्वी बनवाकर ब्राह्मणोंको यज्ञ दक्षिणादी और जितने बालूके कण गंगामें हैं उतनेही राजागय अमूर्त्तरयने गोदानकिये हे संजय जब ऐसाभी धर्म्मात्माकाल ने न छोड़ा तो तू क्या अपने पुत्रकाशोक करता है रन्तिदेव और सांत्यकोभी हमने स्वर्गवासी हुआ सुनाहै जिस महात्मा तपोधनने आराधना उत्तमकरके इन्द्रसे बरप्रदान पायाकि हमारेबहुत अन्न उत्पन्नहो और अतिथियों के भोजनों में हमारी श्रद्धा न घटै और किसी से कोई वस्तु न मांगे आपसे आप उसमहात्मा रन्तिदेवके पास सबपशु आये और कहा कि पितृकार्य्यमें हमको लगाओ इसीकारण उनपशुओं के चर्म्मों से जो रुधिर निकला उसी से चर्म्मण्वतीनदी प्रसिद्धहुई सभा नियतहोजाने पर वहराजा एक ब्राह्मण को सौसौ निष्कदेनेको पुकारताथा परन्तुवह नहीं लेतेथे जब हजार निष्कदेताथा तब ब्राह्मणों को पाताथा पितरों के मालिक श्राद्धकाजो सामानहै उसमें जो पीतलके पात्रहोतेहैं वह यहहैं कि कलश थाली यज्ञपात्र कराह पिठर आदि वह सबसामान सुवर्णरचितथा और जबबीस सहस्र राजा उसके घरमें रात्रिको वर्त्तमानहुये तब उन्होंने सौ२ गौ दक्षिणामेंपाईं वह उत्तम कुण्डल धारी रसोईदार पुकारतेथे कि अब अनेक व्यञ्जनोंको भोजन करो पहला मांस अब नहीं है वहभी तुम से और तुम्हारे पुत्र से अधिक पुण्यात्मा पुरुष मरगया तो तू क्यों पुत्रशोक करता है और इक्ष्वाकुवंशी महाबली महात्मा राजा सगर को भी मराहुआ सुनतेहैं जिसके पीछे पीछे उसके साठ हजार पुत्र चलते थे जैसे कि वर्षा के अन्त में निर्मल आकाश में चंद्रमा को हजारों नक्षत्र घेरेहुये चलते हैं प्राचीन समय में उसके प्रतापसे पृथ्वी एक छत्रवाली हुई और हजार अश्वमेधों से उसने देवताओंको प्रसन्न किया और अनेकसुवर्ण भूषित वरांगनाओंसे शोभित सर्व वस्तुसम्पन्न महलोंको बहुतसे धनसे पूर्ण करके ब्राह्मणोंको दान किया और क्रोधकरके समुद्रों से अंकित पृथ्वी को खुदवाया इसीकारण समुद्रका सागरनाम हुआ वहभी महा तेजस्वी जब काल बलीने दबालियातो तू क्या अपने पुत्रका शोक करताहै और वेणु के पुत्र राजा पृथुकोभी मृतक सुनतेहैं जिसको बड़े २ ऋषियोंने बनमें अभिषेक कराया और लोकोंमें प्रसिद्धहुआ इसीसे उसका नाम पृथुरक्खा और यह निश्चयहै कि जो क्षत अर्थात घावसे रक्षाकरे वह क्षत्री कहलाता है इसकारण वेणुकेपुत्र राजा पृथुकी प्रजाने देखकरकहा कि हम अनुरक्तहैं अर्थात प्रवृत्त हैं इससे राजा यह नामहुआ राजापृथुके राज्यमें वृक्षबिना परिश्रमकिये फलकोदेते थे और पत्रमें मिष्टरसहोताथा और सबगौ एक२ द्रोण परमित दूध देतीथीं क्षेत्र और स्थानोंमें सब प्रकारके मनुष्य निर्भयहुये समुद्रकाजल इसके देखतेही स्थिर होताथा और नदियां हटकर मार्गकरदेतीथीं कहीं इसकी ध्वजाकी रोकनहींहुई

इस राजा ने चारसौ हाथ ऊंचे इक्कीस सुवर्णके पर्वतों को महायज्ञ अश्वमेधमें ब्राह्मणों को दान किया ऐसा महादानी धर्म्मात्मा जब मरगया तो निरर्थक पुत्रशोक तू क्यों करताहै हे संजय तुम मौन होकर क्या बिचाररहेहो मेरे इन बचनों को नहीं सुनते हो मैंने जो इतने इतिहास कहे वह मिथ्या नहीं हैं जैसे आसन्नमृत्यु मनुष्यको हितकारी बचन असह्य होतेहैं तैसे ही तूभी मेरेबचनों को सत्य नहीं समझता संजय बोला कि हे नारदजी मैं चित्त से आप के बचनोंको सुनताहूं यह राज ऋषियोंकी कीर्त्तियोंसे भरेहुये अनेक शोकोंके दूर करनेवाले बचनहैं हे महर्षी आप ने निष्फलबार्त्ता कोई नहीं कही मैं आप के देखने से ही शोक रहित हूं और हे ब्रह्मवादी मैं आप के अमृतरूपी बचनों से तृप्त नहीं होता हेनारद जी आपका दर्शन सफल होता है इससे अनुग्रहकरके इस पुत्रको फिर जिलाओ जिससे कि मैं उससे मिलकर अपने शोक को मिटाऊं नारदजी बोले कि जो यह तेरा स्वर्णष्ठीवी नामपुत्र जिसको पर्व्वत ऋषि ने तुझको दिया था उसको मैं फिर तुझे देता हूं जिसकी हिरण्यनाभि होकर सहस्र बर्षोंकी अवस्था होगी १५० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतपर्वणिराजधर्म्मेएकोनत्रिन्शत्तमोऽध्यायः २९ ।

तीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि संजयका वह पुत्र हिरण्यगर्भ कैसे हुआ उसको पर्व्वत ऋषि ने कैसे दिया और किस कारण से मरगया उस समय सब मनुष्यहजार बर्ष की अवस्था रखते थे तो संजय का पुत्र कौमार अवस्थाही में कैसे मरगया आश्चर्य है कि वह नाममात्र को सुवर्णष्ठीवहुआ अथवाकैसे सुवर्णका उगलनेवाला हुआ इस बातको जानना चाहताहूं श्रीकृष्णजी बोले कि इस स्थानपर मैं यह वृत्तान्त तुझ से कहता हूं कि यह नारदऋषि और पर्व्वत ऋषि दोनों मामा भानजे थे लोकों के हितके लिये स्वर्ग से पृथ्वी में आये और पूर्व्व समय में वह दोनों नरलोक में बड़ी प्रीति पूर्व्वक विहार करते फिरते थे पवित्रान्न हव्यचावल और घृतसंयुक्त देवताओंके भोजनोंको करके मामा नारदजी और उनके भानजे पर्व्वत ऋषि पर्यटन करने को पृथ्वीपर घूमाकरते थे और दोनों तपोमूर्त्ति नरलोक बासियों के पदार्थों को भोजन करके स्वेच्छाचारी हो इस पृथ्वी के चारों ओर को घूमे और बड़ी प्रीतिपूर्वक परस्पर में दोनोंने यह प्रणकिया कि हृदय में जो अच्छा बुरा कोई संकल्पउठे उसे आपसमें कहना योग्य है और जो कोई मिथ्या कहै उसके बदले शाप होवे इस प्रकारकी शर्त्तें करके वह लोकपूजित दोनों ऋषि संजयनाम राजर्षिके समीप पहुंचे और बोले कि हम दोनों तेरे शुभ के

लिये कुछ समय तक तेरे पास रहेंगे हेराजा तुम भी बुद्धिके अनुसार हम
नों के समान होश्रो राजाने तथास्तु कहकर दोनोंका सत्कार किया त
न्तर किसी समय उन दोनों तपोमूर्त्तियोंको प्रसन्न जानकर राजाने यह
कि यह सुन्दर वर्ण स्वरूपवान् मेरी अकेली पुत्री आपकी सेवा करेगी
कन्या अति सुशील नम्र देखने योग्य निर्दोष गुरु सेवा परायण चतुर कुम
कमल नेत्र प्रकाशमान वर्त्तमान है उन दोनों ने कहा कि बहुत अच्छी
है तब राजाने उस कन्याको शिक्षाकरी कि हे पुत्री तू इन दोनों ऋषियों
पिताके समान सेवाकर वह सुशील कन्या राजाकी आज्ञा पा उन दोनों
ऋषियोंकी श्रद्धा पूर्व्वक सेवा करने लगी उसकी सेवा और अपूर्व्व लावण्य
से नारदजीको कामदेवने सताया तब उस बृत्तान्तको नारदजीने अपने भ
नजे पर्वत ऋषिसे नहीं कहा परन्तु पर्वतऋषिने अपने तपके बलसे नारद
अंगचेष्टाओं से उस बृत्तान्त को जाना और अत्यन्त क्रोध युक्तहो काम
ड़ित नारदजीको शापदिया कि सावधानहो आपने मुझसे शर्त्तकरके क
था कि हृदयमें जो बुरा भला संकल्पहो उसको परस्परमें कहना योग्यहै
सको आपने छिपाया हे ब्रह्मन् आपने उस प्रतिज्ञा किये हुये वचनको मि
थ्या किया इससे मैं शापदेताहूं कि यही कुमारी आपकी निश्चय करके भार
होगी हे स्वामी विवाह समयमें यह कन्या और अन्य मनुष्य तुमको बान
रूप देखेंगे जो कि आपके असली रूपको नाशकरेगा यह सुनकर नारदने
भी क्रोधितहोकर उस अपने भानजे पर्व्वत ऋषिको शापदिया कि तू भीतप
ब्रह्मचर्य सत्यता आदि धर्मोंको सदैव करताहुआ भी स्वर्गलोक न पावेगा
ऐसे प्रकारसे वह दोनों क्रोधाग्निमें भरेहुये शापाशापिकरके इधरउधर चले
गये और बुद्धिमान् पर्वतऋषि सम्पूर्ण पृथ्वी परघूमे और अपने तेज बलसे
न्यायकीरीति से पूजन पानेवाले हुये इसके पीछे नारदजीने उस संजयकी
पुत्रीको धर्मसेपाया अर्थात् पाणिग्रहणके मंत्रपढ़ने वालोंकी आज्ञासे नारद
जी को बानररूपमें देखकर अपमान नहींकिया और प्रसन्नहुये अपने स्वामी
के समीप प्राप्तहुई उस पतिव्रता ने दूसरे देवता मुनि यक्ष गन्धर्व आदि को
भी पति नहीं बनाया तदनन्तर किसीसमय तपोमूर्त्ति पर्वतऋषिने कहीं बनमें
घूमतेहुये नारदजीको देखा और नमस्कारकरके नारदजीसे कहा कि हे स्वामी
आप मेरे स्वर्गजाने के विषयमें शाप अनुग्रह करके कृपा करो तब नारदजीने
पर्वतऋषिसे कहा कि मुझे आपने प्रथम शापदियाथा कि तुम बानररूप
होगे इसीकारण पीछेसे ईर्षा युक्त मैंने भी तुमको शापदिया कि अबसे लेकर
यन्त तक स्वर्ग में नहीं रहसकेगा यह बात कहने योग्य नहीं है क्योंकि तुम
हमारे पुत्रके समानहो तब उन दोनों मुनियोंने परस्परमें शापको मोचनाकिया

तब वह सुकुमारी संजय कुमारी उस शोभायमान नारदके स्वरूपको देखकर दूसरे पुरुषकी शंकासे भागी तब उस पर्वतऋषिने उस निर्दोष भागनेवाली कुमारीसे समझाकर कहा कि यह तेरा पतिहै इसमें विचार न करना चाहिये यह परमधर्म्मात्मा नारदजी तेरेही पति हैं इसमें तू सन्देह मतकर तब उस कन्या ने पर्व्वत ऋषि से शाप दोष को समझकर चित्त में विश्वास किया कि नारदजी ने अपने मुख्य स्वरूप को पाया तब पर्व्वत ऋषिभी स्वर्ग को गये और नारदजी अपने स्थान को आये वासुदेवजी बोले कि यह भगवान् नारदऋषि जो सबको प्रत्येक वार्त्ता प्रकट करते हैं उनसे जब तुम पूछोगे तब वह इसके यथार्थ वृत्तान्त को कहेंगे ४४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेत्रिंशत्तमोऽध्यायः ३० ॥

इकतीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि श्री कृष्णजीके कहनेसे राजा युधिष्ठिर ने नारदजीसे कहा कि हे ब्रह्मन् मैं आपके मुखारविन्द से सुवर्णष्ठीव के जन्म को सुना चाहताहूं यह सुनकर नारदमुनिने धर्मराज से कहा कि सुवर्णष्ठीवका जैसा वृत्तान्त है कि वह सब केशवजीने आपसे कहा उसमें जो कुछ शेष रहगयाहै वह मैं तुमसे कहताहूं कि मैं और मेरा भानजा महा मुनि पर्वत निवास करनेकी इच्छा करके महाप्रतापी राजा संजयके पास गये वहां हम दोनोंने शास्त्रोक्तकर्म के द्वारा पूजितहो सब इच्छाओंसे पूर्ण उसके स्थान में निवास किया बहुत बर्षों के पीछे यात्रा करनेके समय पर्वतने मुझसे यह सार्थक वचन कहा कि हे ब्रह्मन् हम दोनों इस महाराजके घरमें बड़े पूजित होकर रहे हमको उचितहै कि इसका कल्याण बिचारें तब मैंने उस शुभदर्शन पर्वतऋषिसे कहा कि हे भानजे पर्व्वत यह सब सामर्थ्य तुझमेंहै राजाको बरोंसे लुभाना चाहिये जो २ वह बरमांगे वह उसको दो और वह हम दोनों के तपसे सिद्धीको पावे तदनन्तर पर्व्वतऋषिने उस प्रतापी संजयको बुलाकर कहा कि हे संजय आपके सत्यता पूर्व्वक होनेवाले कामोंसे हम बहुत प्रसन्नहैं सो हे नरोत्तम तुम हम दोनोंसे कोई बरमांगो देवताओंके पीड़ा न होनेसे मनुष्योंका भी कल्याण होताहै हे राजा आप उस वरको लीजिये तुम हम दोनोंकी ओर से पूजनके योग्यहो संजय बोला जो आप मुझसे प्रसन्न हैं इतनेही से मेरा बड़ा लाभहुआ फिर पर्व्वतऋषिने उत्तरदिया कि हे राजा उस चित्तकी इच्छाको मांगो जो बहुत कालसे आपके हृदयमें है संजय बोला कि मैं ऐसा पुत्र चाहताहूं जो महा पराक्रमी बीर दृढ़ ब्रतधारी विद्यावान् महा प्रारब्धी इन्द्रके समान तेजस्वी आयुष्मान् हो पर्व्वत बोले कि यह सब इच्छा

नेगी पूर्ण होगी परन्तु वह अवस्थामें पूर्ण न होगा तेरे हृदयमें यह संकल्प इंद्रके ऐश्वर्य्य के निमित्त है तेरा पुत्र सुवर्णष्ठीवके नामसे प्रसिद्ध होगा वह देवेन्द्र के समान तेजस्वी होगा परन्तु इंद्रसे रक्षा होनी चाहिये तब संजयने महात्मा पर्वतऋषिको प्रसन्न करके कहा कि आप ऐसी कृपाकरें कि इंद्रसे भय न होवे हे मुनीश्वर मेरापुत्र आपके महातपसे आयुर्द्दावान् होवे पर्वत जीने इंद्रकेहेतुसे उसको कुछ उत्तर नहीं दिया फिर नारदजी कहतेहैं कि मैंने राजा संजयसे कहा कि हे महाराज आपमुझको यादकरना मैं तुम्हारे पुत्रको यमराजके फन्दसे छुटाकर फिर उसी स्वरूपका करके दूंगा इससे हे पृथ्वीपति संजय शोच मतकरो ऐसा कहकर हम दोनों अपनी इच्छापूर्वक चले आये और राजा संजय इच्छानुसार अपने महल में पहुंचा तदनन्तर कुछ समय व्यतीत होनेपर राजऋषि संजयके पुत्र उत्पन्नहुआ वह बड़ा पराक्रमी और तेजसे देदीप्यमानथा और समयपाकर ऐसे बड़ाहुआ जैसे कि सरोवरमें कमल बड़ा होताहै वह नामके अर्थके अनुसार यथा नाम तथा गुणवान् होकर लोकमें बड़ा आश्चर्यकारी हुआ और इन्द्र उस पर्वतऋषिके वरदानको जानकर बृहस्पतिजीकी सलाह से अपने पराजयसे भयभीतहो उस कुमार के मारनेका मौका देखनेलगा और अपने दिव्य अस्त्र वज्रको आज्ञादी कि तुम व्याघ्र रूपहोकर इस कुमारको मारो नहीं तो हे वज्र यह कुमार बड़ा होकर मुझको मारेगा या पराजय करेगा जैसा कि पर्वतऋषिने राजासे कहा है जब इन्द्रने वज्रको यह आज्ञादी तब वह शत्रु हन्ता दिव्य अस्त्र कुमारके मारनेको व्याघ्ररूप होकर सदैव सन्मुख आया करताथा और संजय भी अपने ऐसे पराक्रमी पुत्रके होनेसे निर्भयहोकर वनमें वासकरनेलगा फिर एकसमय वह बालक निर्जन वनमें गंगाजीके तटपर अपनी धात्रीको साथलिये क्रीड़ाकरने के निमित्त चारोंओरको दौड़ा उससमय उस महाबली गजेन्द्रके समान पराक्रमी पांचवर्षके बालकनेअकस्मात् उछलतेहुये उस प्रबलसिंहको देखा तो भयभीत हो कांपनेलगा और उसी समय उस व्याघ्रने मारडाला तब वह धात्री पुकारी और वह शार्दूल उसको मारकर उसी स्थानपर अन्तर्द्धान होगया और देवराजकी माया से गुप्तहोगया तब उस धात्रीके रोनेका महा व्याकुल शब्द सुनकर वह राजा संजय वनसे दौड़ा और वहां आकर अपने पुत्रको मराहुआ पृथ्वीपर पड़ा देख व्याकुल हो उसने मृतक पुत्रको छातीमें लगाकर महा विलापकिया तदनन्तर उसकी सब माता भी महा घोर विलाप और रोदन करती हुई वहां आई जहां राजा संजय शोक कररहाथा उससमय राजा ने मुझको स्मरण किया तब मैंने जाकर उसको, दर्शन दिया उस समय उस शोक ग्रस्त ने मुझ से वह वचन कहे जो श्रीकृष्णजी ने तुमको सुनाये फिर

इन्द्रकी सलाह और नारदजी की कृपा से उसका सुवर्णष्ठीवी पुत्र जीउठा वह ऐसाही होना था उस होनहार से विपरीत करना असम्भव है तब उस पुत्रको देख कर उसके माता पिता प्रसन्न हुये और राज्य देकर तप के द्वारा स्वर्गवासी हुये उस सुवर्णष्ठीवी ने अपने माता पिता के मरने के अनन्तर ग्यारहसौ वर्ष पर्य्यन्त पृथ्वी पर राज्य किया और बड़े २ यज्ञोंके द्वारा देवता और पित्रों को सन्तुष्ट कर वंशकी वृद्धि करनेवाले बहुत से पुत्रों को उत्पन्न करके समयानुसार मोक्षरूप मृत्यु पाई सो तुमभी इस शोक को दूर करो जैसे कि केशव जी और महात्मा ब्यासजी ने तुमसे कहा है अपने बापदादेके राज्य में प्रवृत्त होकर धर्म्म करो अर्थात् संसारका पोषण करो और महान् यज्ञों से पूजन करके अभीष्ट पद को पाओगे ४७॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेएकत्रिन्शत्तमोऽध्यायः ३१॥

बत्तीसवां अध्याय॥

बैशम्पायन बोले कि महातपस्वी तत्त्वज्ञ ब्यासजी ने युधिष्ठिरसे कहा कि हे कमल लोचन राजाओं का परमधर्म्म प्रजा का पालन है सदैव धर्म्म पर चलनेवाले पुरुषों का धर्म्मलोक को प्रमाण होता है सो हे राजा तुम बापदादे के राज्यपर नियत होजाओ ब्राह्मणों में तप का होना जो धर्म्म है वह सदैव वेद से निश्चयहोता है कि हे भरतर्षभ वह ब्राह्मणों का प्राचीन कर्म धर्म्म की मर्य्यादा है उस सब धर्म का रक्षा करनेवाला क्षत्रिय है जिस देशबासी मनुष्य ने आज्ञा को न माना वह मर्यादा भंग करनेवाला पुरुष पकड़ने के योग्य है और जो अज्ञान होकर नौकर या पुत्र अथवा तपस्वीभी मर्यादाको बिगाड़े उस पापी को राजा दण्ड दे या मारडाले और जो राजा ऐसा न करे तो वह भी पापका भागी होता है और जो राजा नाशहोनेवाले धर्मकी रक्षा न करे वह धर्म का नाश करनेवाला है तुमने धर्मनाशक दुर्योधन आदि को उनके सहायकों और साथियों समेत मारा इससे हे पाण्डव तुमने धर्म्म से मारा अब तुम क्यों शोच करते हो राजा को उचितहै कि शत्रुओं को मारे और दान धर्म कर प्रेमसे प्रजाका रक्षा पूर्वक पोषणकरे युधिष्ठिर बोले हे तपो मूर्त्ति पितामह ब्यासजी मैं आप के बचनों में सन्देह नहीं करताहूं जो आप कहते हो वह सब धर्म आपके दृष्टिगोचर है अर्थात् आप उन सबके ज्ञाता हैं हे ब्रह्मन् मैं ने राज्य के लिये मारने के अयोग्य बहुत से मनुष्यों को मारा वही कर्म मुझको भस्मकर रहा है तब ब्यासजी बोले कि हे नरोत्तम ईश्वर में मिले पुरुष बुरा भला कैसा ही कर्म करें उन सब कर्मोंका फल ईश्वर ही में बर्त्तमान होता है जैसे कोई पुरुष बन में जाकर फरसे से वृक्ष को काटे तो

काटनेवाले को पाप नहीं होता अर्थात् फरसे को पाप नहीं होता कदाचित् ऐसा कहो कि फरसे के लेने और चलाने से कर्म्म के फल को भोगे तहां कहते हैं कि फरसे की लकड़ी और शस्त्र बनाने का पाप बनानेवाले मनुष्य में भी होना चाहिये सो नहीं होता है जब पहिले कर्त्ता में कर्म्मका फल नहीं हुआ तो दूसरे कर्त्ता में कहां से होगा इस कारण ऐसे सब कर्म्म ईश्वर की इच्छा से होते हैं जो यहबात अभीष्टनहीं है कि शस्त्रप्रहार करनेवालेका किया हुआ अकर्म्म फल शस्त्रबनानेवाला पाये ऐसी दशा में तुझमें पाप न होने से उसको ईश्वरही में जानो और जो यहीकहो कि अच्छे बुरे कर्म्मका कर्त्ता पुरुषही है ईश्वर नहीं है इस हेतु से भी यह कर्म्म अच्छा किया है राजा अदृष्ट होनहारके विरुद्धको कोई पुरुष अवश्य होनेवाले कर्म्म को नहीं त्यागता है जो यह समझते हो कि प्रारब्धभी अपने दूसरे जन्म का पुण्य पाप है उसके उत्तर में कहते हैं कि दण्ड और शस्त्र बनाने का पाप पुरुष में नहीं है तो पिछले कर्त्ता में क्यों मिलना चाहिये अब तीसरे पक्षको दोष लगाते हैं हे राजा जो तुम मारने के कर्म्म करने का कारण पुरुष को मानते हो तो इस प्रकार से भी तुझ हत्यादी का कर्म्म बुरा नहीं हुआ है न होगा फिर लोकके पुण्य पाप अर्थात् सुखदुःखका कर्म्म मिलाने के योग्य है इससेयही जानो कि यह राजाओंका दण्ड धारण करना लोकको प्रमाण है अर्थात् लोक और शास्त्र दोनोंमें देखा जाता है इसमें सन्देहकरते हैं हेभरतर्षभ लोक में भीतो अच्छे और बुरे कर्म्म अवश्य प्राप्तहोते हैं और नेक अशुभ फलको पाते हैं यह मेरामत है इसकारण मुझको देहके त्यागनेके लिये नियमकरना उत्तम है इसका उत्तर यह है कि हे नरोत्तम ऐसाभीहो परन्तु तुमपापोंकी जड़ होइससे उसकर्म्म को त्यागो जिसका फल दुःखन्तखाता है इसप्रकार चित्त में शोकमत करो हेभरतवंशी अपने निन्दित धर्म्ममें तुझको देहका त्यागकरना उचितनहीं है ऐसेनिन्दित कर्म्म सेभी महापाप होता है हेकुन्तीपुत्र सबकर्म्मों के प्रायश्चित्त शास्त्रों में लिखेहैं देहधारी उनको करे और देहका त्याग करने वाला नाशको प्राप्तहोता है हेराजा जो तुम देहधारी होकर प्रायश्चित्तको न करोगे तो मरकर पश्चात्ताप करोगे ॥ २५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मेद्वात्रिंशत्तमोऽध्यायः ३२

तैंतीसवांअध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले हे पितामह मुझ राज्यकेलोभी अकेले नेपुत्र, स्त्री, भाई, पिता श्वशुर, गुरु, मामा, पितामह, महात्मा, क्षत्रिय, सम्बंधी, सुहृज्जन समानबय भानजे, जानवाले और नानाप्रकार के उद्योग करनेवाले राजालोग मरवाये

सो हेतपोधन ऐसे ऐसे बीर राजाओंको मारकर मैं क्याफल पाऊंगा इससेउन श्रीमान् राजाओंसे खाली पृथ्वीको देखदेख मैं सदैव चिन्ता करता हूं और ज्ञातिवालोंके घोर नाशको और सैकड़ों शत्रु और करोड़ों अन्य मनुष्यों को मराहुआ देखकर महादुःखी होताहूं उनकी श्रेष्ठ श्रेष्ठ स्त्रियोंकी क्यादशाहोगी जोपति पुत्र और अपने भाइयोंसे रहित होगई वे तो दुर्बल शोक से पीड़ित हम सब पाण्डवों को दुर्बचन कहती हुई वे स्त्रियां पृथ्वीपर गिरेंगी या अपने पिता माता पतिभाई पुत्रआदिको न देख देहको त्यागत्याग यमलोक को जायँगी इसका निश्चय यह फलहोगा कि हमलोग धर्मकी सूक्ष्मतासे स्त्री बध कर्मके फलको पावेंगे और जो अपने सुहृज्जनोंको मार प्रायश्चित्तों से पापसे निवृत्तहोकर हमलोग मरेंगे तो अवश्य नरकमें पापोंको भोगेंगे इससे हे पितामह हम तप करके अपने देहोंको त्यागेंगे अब आप आश्रमों में जो उत्तम आश्रमहो उसको कहो वैशम्पायनबोले कि जबयुधिष्ठिरके ऐसे बचनोंको व्यासजीने सुनातब बड़े विचारपूर्वक व्यासजीबोले कि हे क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर क्षत्रिय धर्मको जानकर तुमव्याकुल मतहो यह सब क्षत्रियलोग अपने क्षात्रधर्महीसे मारेगये पृथ्वी के सबधन और बड़े यश के चाहने वाले कालके प्रेरित दूसरोंके मारने में प्रवृत्तथे इन सबने कालही से मृत्युपाई तुम न भीम न अर्जुन न नकुल न सहदेव कोई मारनेवाले नहीं हो कालने सबको बटोरलिया यह सब बातें कालके लिये हेतु रूपहोगई कि जीव जीवके हाथों से मरते हैं इसकारण यह तुमकर्म रूप बन्धनको प्रधान रखने वाला अच्छे बुरे कर्म्मोंका साक्षी सुख दुःखादि गुणोंका समय पर फल देने वाला कालरूप ईश्वरहीजानो और हे युधिष्ठिर तुम उनके नाशहोनेके कर्म्मरूप कारणको भी समझो जिससे कि वह कालकी फांसीमें बांधेगये हे सावधान तुम अपने कर्म्मकी प्रवृत्तिताको जानो कि जब तुम ईश्वरेच्छासे प्रारब्धाधीन ऐसेकर्म्ममें प्रवृत्तकियेगये जैसे त्वष्टाका बनायाहुआ यंत्र अंगके हिलाने वालेके आधीन होता है उसीप्रकारयह जगत्कालसे संयुक्त कर्म्मों के द्वारा चेष्टा करताहै पुरुषोंके जन्म और नाशको दैव इच्छासे होना जानकर सुख दुःखकरना बृथा है जो यहां मिथ्याभी तेरेचित्तका बन्धनहै उसके लिये प्रायश्चित्त करना होताहै उसको तुमकरो और पहिले समयमें देवासुरों के युद्धमें यह सुनाजाता है कि असुर बड़े भाई और देवता छोटेभाई थे उनका भी युद्धधनही के निमित्त बत्तीसहजार वर्षतक हुआ देवताओंने पृथ्वी को एक समुद्र वाली और रुधिरसे करते हुये दैत्यों को मारा और स्वर्ग भी प्राप्त किया उसीप्रकार वेदके पारंगत होनेवाले अहंकार में भूल हुये ब्राह्मण पृथ्वीको पाकर दैत्योंकी सहायताके लिये तय्यार हुये वह तीनोंलोक

में प्रसिद्ध शालावृक नाम से अट्ठासी सहस्रथे वहभी देवताओं के हाथसे मारेगये इससे यहबात सिद्धहुई कि जो अधर्मकेजारी करनेवाले और धर्म्म का नाशहोना चाहते हैं वे मूढ़ बुद्धी मारनेकेही योग्य हैं जैसे कि दैत्य देवताओं के हाथसे मारेगये जो एक पुरुषके मरनेसे घरानाबचे और एक घरानेके मारनेसे एक ग्राम बचे और एकग्राम के मारनेसे एकदेश भरबचे तोवह धर्म्मकानाश करने वाला नहींहै हेराजा कोई तो अधर्म्मरूप धर्म्म है और कोई धर्म्मरूप अधर्म्म है वह पंडितही के जाननेके योग्य है इस कारण तुम चित्तको स्वस्थकरो क्योंकि तुम शास्त्रों के ज्ञाताहो और पूर्व्व चरित मार्गों पर चलनेहो ऐसेपुरुष कभी नरक को नहींजाते इससे तुम अपने इन शूरवीर छोटे भाइयों को आनन्ददो जो पुरुष पाप संयुक्तकर्म्म में न्यायही में स्नेह रखता है वह पाप करता हुआ भी उसी दशावाला होजाय कर्म्म करके निर्लज्ज होजाय तो उसीमें वह पाप पूराहोगा यह कहते हैं कि उसके पापका नाश प्रायश्चित्त कर्म्मसे नहींहै परन्तु तुम पवित्र कुल और दुर्योधनके दोष से कर्म्म करनेवाले होकर इस कर्म्म की अनिच्छा करके पश्चात्ताप करतेहो सो सबका प्रायश्चित्त बड़ा अश्वमेध यज्ञ कहाहै उसको करो तो पापसेछूटोगे इन्द्रदेवता मरुद्गणों के साथ शत्रुओंको विजय करके सौसौबार एकएक यज्ञको करके शतक्रतु अर्थात् सौ यज्ञका करने वाला हुआ जो लोकों के आनन्द का प्रकट करने वाला मरुद्गणों समेत लोकोंको प्राप्तकरके चारों दिशाओंको प्रकाश करता शोभायमान है और स्वर्गलोकमें अप्सराओं से सेवित देवताओं के ईश्वर शचीपति इन्द्रकी ऋषि और देवता चारों ओर से उपासना करते हैं हे निष्पाप यह पृथ्वी तुमको पराक्रम से प्राप्त हुई औरतेरे पराक्रम से राजा लोग विजय हुये सो हे नरोत्तम तुम अपने सुहृज्जनोंसमेत उनकेपुर और देशोंको जाकर अपने भाई बेटेपोतों को यथायोग्य राज्यों पर अभिषेक कराओ और श्रेष्ठ आचरण युक्त सब नौकर चाकरोंको मीठेवचनोंसे प्रसन्नकर गर्भस्थ बालकोंकी और पृथ्वीकी रक्षाकरो और जिनके कि पुत्रकुमार नहींहैं वहांउनकी कन्याओंको अभिषेक कराओ स्त्रियोंका समूह इसप्रकार अपनेवांछितको प्राप्तहोकर शोकोंको तजेगा इसप्रकारसे सबदेशों को स्वस्थ और आनन्दकरके अश्वमेध यज्ञसे पूजनकरो जैसे पूर्वकाल में विजयी इन्द्रने कियाथा हेक्षत्रियोत्तम वह महात्माक्षत्रिय लोग शोचके योग्य नहीं हैं जिन्होंने अपने अपने कर्म्मकेद्वारा मृत्यु को पाया हेभरतवंशी युधिष्ठिर क्षत्रियधर्म तुमको प्राप्तहै और निष्कंटक राज्यभी तुमको प्राप्तहुआ इससे अपने उस धर्म्मकी रक्षाकरो जो कि परलोक में कल्याण करने वाला है ४८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

चौंतीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि इसलोक के मनुष्य कौनसे कर्म्मोंको करके प्रायश्चित्त के योग्य होताहै और किस कर्म्मके करनेसे उद्धारहोताहै व्यासजी बोले कि छलसे भरीहुई बातोंको करके अपने नित्य कर्म्मको त्यागताहै वह निषेधित कर्म्मोंको छोड़कर प्रायश्चित्त के योग्यहोताहै और जो ब्रह्मचारीहोके सूर्य्योदय और सूर्य्यास्त में सोताहै उसको सुवर्णस्तेयी और मद्य बेंचनेवाले के समान समझो उसको भी प्रायश्चित्त करना योग्यहै और जिसके छोटेभाई का बिवाह उससे पहिले होगयाहो अथवा बड़े भाईसे पहिले छोटेभाईने अपना बिवाह करलियाहो वहछोटाभाई ब्रह्मघाती होकर निंदितहै और जिसकी बड़ी बहिनका बिवाह न हुआहो और छोटीबहिन बिवाह करले अथवाछोटी बहिनका बिवाह होजानेके पीछे उसकी बड़ी बहिन का बिवाह करले वह मनुष्य अथवा जिसका व्रतनष्ट होगयाहो वा ब्राह्मण क्षत्रिय बैश्यका मारनेवाला और सुपात्र को छोड़कर अपात्रको वेदकादान देनेवाला और मनुष्योंके समूहोंको बिष आदिसे मारनेवाला और अग्नियोंको त्यागकर मासिकलेकर वेद पढ़ाने वाला और गुरु स्त्री का मारनेवाला इनसब में पहिले पहिले मनुष्य निन्दितहैं और पशुओं का निरर्थक मारनेवाला गृहको अग्निसेजलानेवाला मिथ्या कर्म्म करनेवाला और गुरु का तिरस्कार करनेवाला अपने विहितनियमोंका उल्लंघन करनेवाला यह सब पापरूपहैं और जोजो कर्म्म करने के योग्य नहीं हैं वह हम कहतेहैं तुम चित्तलगा कर सुनो और लोक वेदसे विपरीत चलने वालोंको भी एकाग्र होकर समझो अपने धर्मों को त्यागकर दूसरेके धर्मोंका आचरणकरे अथवा यज्ञके अनधिकारी को यज्ञ करावे इसीप्रकार लहसनादि अभक्ष्य बस्तुओंका खाना और शरणागतका त्याग और अपने दासोंका पोषणनकरना और गुड़ आदि रसोंका बेचना अथवा तिर्यग्योनिके जीवोंका मारना और जो सामर्थ्यवान्होके गर्भाधानादि कर्म नहीं करता और नित्यदान गोग्रासादिको नहीं देता और प्रतिज्ञा करके दक्षिणा किसीको न देना ब्राह्मण के धनको छीन लेना धर्म्मज्ञ पुरुषों ने इन सब कर्म्मों को निन्दित जानकर करना निषेध कियाहै और पुत्रका पितासे विवाद करना और गुरुकी स्त्रीसे सम्भोग करना और अपनी धर्म्मपत्नी से समय पर सम्भोग न करना यह सब कर्म्म बिस्तारपूर्वक कहे इनमें जो मनुष्य करनेके योग्योंको नहीं करता और नहीं करनेके योग्योंको करताहै वह प्रायश्चित्त के योग्य होताहै और जिनजिन कर्म्मोंको करके मनुष्य अपवित्र नहीं होता उनको सुनो कि चाहे वेदोंका पारगामी भी ब्राह्मणहो

और किसीके मारनेकी इच्छासे शस्त्रको धारण किये सन्मुख आवे ऐसे आत
नार्यों के मारनेसे ब्रह्महत्या नहीं होती है हे कुन्तीके पुत्र ऐसे स्थानमें वेद
में भी पढ़ा जाताहै वेदके प्रमाण की योग्यताको तुमसे कहतेहैं किजो पुरु
गुरुकी सेवा आदि से भिन्न मारने की इच्छाकिये शस्त्रधारी ब्राह्मणकोमा
उसके मारने से ब्रह्महत्या नहींहोगी क्रोध क्रोधमें प्रवृत्तहोकर उसकर्मकाफ
क्रोधहीमें जाता है प्राणों के नाश में अथवा अज्ञानता में मद्य पीनाभी ध
र्मात्मा पुरुषोंकी आज्ञासे निषेध नहीं है अर्थात् शुद्धिके योग्यहै हे युधिष्ठि
मैंने यह सब अभक्ष्य भोजनों का वर्णन किया इनसबसे प्रायश्चित्तके द्वा
शुद्ध होसक्ताहै और गुरुकी आज्ञासे उनकी स्त्रीसे सम्भोग करना मनुष्यको
पापका भागी नहीं करता है जैसे कि उद्दालकऋषि ने श्वेतकेतु को शिष्य
के द्वारा उत्पन्न किया गुरुके निमित्त अथवा आपत्ति में चोरी करना निषे
नहीं होता और ब्राह्मण के सिवाय दूसरे वर्णोंका धनलेना दोषभागी नहीं
करता है और अपने या दूसरेके प्राणोंकी रक्षामें गुरुके निमित्त स्त्रियोंमें अ
थवा विवाहोंके करनेमें मिथ्याबोलना अयोग्य नहीं गिनाजाताहै और स्वप्ना
वस्थामें वीर्य के गिरनेसे प्रातःकाल दूसरायज्ञोपवीत धारण करना योग्यनहीं
है अच्छी प्रज्वलित अग्निमें घृतसे हवन करना प्रायश्चित्त है बड़े भाई
केधर्महोने या संन्यासी होजानेपर छोटे को विवाह करना पापनहीं है औ
शास्त्रकीरीतिसे विषयकी प्रार्थनाकरने वाली दूसरेकी स्त्री से सम्भोगकरन
दूषणनहीं है पशुओं का वध निरर्थक करना वा दूसरे से कराना महानिषे
है पशुओंपर दया करनाही संसारमें योग्यहै अज्ञानता से अयोग्य ब्राह्म
को दानदेना औरइसीप्रकार पात्रके सत्कारोंका न करना भी दोषभागीन
करता इसीप्रकार कुपात्र स्त्री को दासी के समान त्याग देना और भोज
वस्त्रदेकर पृथक्करदेना भी अयोग्य नहींहै वह स्त्री भी उससे निर्दोष हो
पतिको दूषित नहीं करसक्ती सोमनाम वस्तुका तत्त्वजान कर जो उसको बेच
है वह अदोषीहै और असमर्थनों करके त्यागने में भी अदोषहै और गौअ
के निमित्त जंगल कटवानाभी दोष नहीं है इतनेकर्म्मोंका करनेवाला दोष
भागी नहींहोताहै और जो २ प्रायश्चित्तहैं उनको ब्यौरेसमेतकहूंगा ३२ ।

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेचतुस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ३४ ॥

पैंतीसवां अध्याय ॥

व्यासजीने युधिष्ठिर से कहा किजो मनुष्य अपने किये हुये पापों
फिर कभी न करे तो दान तपस्या आदि कर्म्मों से भी पापों से छूटजाता
जो ब्रह्मचारी कपाल और खड्गको धारण करके अपने नित्य कर्म्म

करताहुआ भिक्षावृत्ति से एकही समय भोजनकरे और दूसरों के गुणों में कोई दोष न लगाकर लोकमें अपना किया हुआ कर्म्म प्रकाश करता हुआ पृथ्वीपर शयन करे तो बारह वर्ष में ब्रह्महत्या दूरहोजाती है अथवा उपदेश कर्त्ता पण्डितोंकी आज्ञा से व अपनी इच्छासे शस्त्रधारियों का लक्ष अर्थात् निशाना होजाय चाहे अग्नि में नीचा शिर करके अपनी देह को डालदे या किसी वेद मन्त्र को जपता तीनसौ योजन चलाजाय अथवा अपने सम्पूर्ण धन को किसी वेद जाननेवाले ब्राह्मण के अर्पण करे वा जीवन पर्य्यन्त के उपयोगी धन को या वस्तुओं से भरेहुये घरको उस ब्राह्मणके अर्थ दानकरै वह गौ ब्राह्मण की रक्षा करनेवाला पुरुष ब्रह्महत्या से छूटताहै ब्रह्महत्या करनेवाला मनुष्य कृच्छ्रभोजी होकर छः वर्षमें पवित्र होताहै और प्रतिमास के चतुर्थांशका कृच्छ्र भोजी तीन वर्ष में शुद्धहोता है और मास मासका कृच्छ्र भोगी एकही वर्ष में शुद्धहोता है और केवल जलमात्र ही से जीवन करनेवाला पुरुष थोड़ेही समय में पवित्र होताहै और अश्वमेध यज्ञ सेभी निस्सन्देह पवित्र होता है जो कोई राजा इस प्रकार के यज्ञों के अन्त में अवभृत स्नान करनेवाले होते हैं वह सब पापों से छूटजाते हैं यह श्रुतिहै कि युद्ध में ब्राह्मण के निमित्त मराहुआ पुरुष ब्रह्महत्या से छूटता है अथवा ब्रह्महत्या करनेवाला पुरुष एक लाख गोदान पात्र ब्राह्मणों को दे तो सब पापों से छूटजाता है जो राजा पचीस हजार कपिला गौओं का दान करे वह सब पापों से रहित होता है जीवन के सन्देह होने में राजा सवत्सा दूधदेनेवाली एक सहस्र गौ साधू और ब्राह्मणों को दान दे तो निस्सन्देह पापों से छूटकर नीरोग होता है और हे युधिष्ठिर जो राजा काम्बोज देश के सौ घोड़े जितेन्द्री ब्राह्मणों को दानकरता है वह निष्पाप होता है और जो पुरुष एक ब्राह्मण को ब्राह्मण की यथेच्छ वस्तुओं को देवे और देकर नहींकहे वह पाप से अत्यन्त रहित होताहै जो पुरुष बारम्बार मदिरा पान करके अग्नि वरण की मद्यको पिये तो वह इस लोक और परलोक दोनों में अपने को पवित्र करता है निर्जल देश में पहाड़ के शिखर से गिरे या अग्निमें पड़े या केदार हिमालयपर्व्वतपर चढ़े तो सब पापों से छूटजाता है और मदिरा पीनेवाला ब्राह्मण वृहस्पति सवनाम यज्ञ से पूजनकरने के पीछे सभा में जाने के योग्य है यह ब्राह्मण की श्रुति है कि जो पुरुष मद्यको पीकर ईर्षा रहित हो पृथ्वी का दानकरे और फिर मदिरा को न पिये वह संस्कार करनेवाला शुद्ध होता है गुरुकी स्त्री से सम्भोग करनेवाला लोहे की गरम शिला से चिपटजाय अथवा अपना लिंग काटकर ऊंची दृष्टिवाला संन्यासीहोजाय वह नरक भोगने से देह को शुद्धकरता है एक वर्ष तक जितेन्द्री होकर जो स्त्री रहती है वह सब

कुकर्म्मों से पवित्र होती है जो पुरुष महाव्रत को करे अर्थात् एक महीनेतक जल को भी त्याग करे और सब धन को दान करदे अथवा युद्ध में गुरु के निमित्त मरे वह पाप कर्म्म से शुद्ध होता है और जो गुरुसे मिथ्या बोले या सत्कार गुरुका न करे तो वह उस गुरुकी इच्छाको पूर्णकरके पाप से शुद्ध होता है और जिस पुरुष का व्रत नष्ट होगया हो वह व्रत नष्टहोने के छः महीनेतक गोचर्म्म को धारण कर ब्रह्महत्याके व्रतको करेतो निर्दोष हो पापसे छूटे इसीप्रकार दूसरेकी स्त्री या धनको हरे वह एक वर्षतक व्रतीरहे तो पाप से छूटजाताहै अथवा जिसके धनकोले उसके धनकेसमान अनेक प्रकारसे धन देदेतो पापसे छूटे बड़े भाईसे पहिले अपना बिवाह करनेवाला छोटा भाई और छोटे भाईसे पीछे विवाह करनेवाला बड़ा भाई यह दोनों जितेन्द्री और व्रतमें नियत होकर बारह दिन के कृच्छ्र व्रतसे पवित्र होतेहैं सदैव पित्रों के उद्धार करनेवाले उस छोटे भाईको फिर अपना दूसरा बिवाह करना उचित है और स्त्री को दोष नहीं होता क्योंकि वह उससे कोई देह सम्बन्ध नहीं रखती चातुर्मास में व्रत का धारण और पारणहोता है स्त्रियां उससे शुद्ध होती हैं यह धर्मज्ञ लोग कहतेहैं सन्देहों से भरीहुई पापात्मा स्त्री बुद्धिमान् मनुष्यके सम्भोग करनेकेयोग्य नहींहोती और जिन स्त्रियोंकापाप केवल मानसी है वह मासिक धर्मसे शुद्धहोजाती हैं जैसे कि भस्मसे पात्र और जो शूद्रका झूठा कांसेकापात्र या मुखके बहुतसे जलसे झूठाहै वहभी दशवस्तुओंसे पवित्रहोता है गौकी पांचवस्तु और मिट्टी जल, भस्म, खटाई, अग्नि चारचरण रखने वाले सब धर्म्म ब्राह्मण के कहेजाते हैं और तीन चरणवाले क्षत्रियोंके और दो चरणवाले वैश्यों के और एकचरण वाले शूद्रके कर्म कहेजातेहैं इसरीति से उनकी उच्चता और नीचता को जानो तिर्य्यग् चलनेवाले जीवोंको मारने वाला वा वृक्षों का काटनेवाला तीन रात्रि हवाका भक्षण करेसे और अपने पाप को कहदे तो पापदूरहोय और अयोग्यास्त्रीसे संभोग करने में भी प्रायश्चित्त होताहै कि भस्मपर गीलेवस्त्रोंसे छः महीनेतक सोकर विहार करना चाहिये इसस्थान में भस्मशब्द के आनेसे सावित्रीका जप भी करना योग्यहै क्योंकि वह स्मृतियों से सिद्धहै इससे थोड़ा भोजनकर हिंसा राग द्वेष मान अपमान से रहित निर्विवाद होकर पवित्रस्थान में गायत्री को जपे वह मनुष्य सबपापों से मुक्तहोता है जो द्विजन्मा अज्ञानतासे पापों को करै वह दिनरात जंगलमें नियत होकर वस्त्रोंसमेत तीन दिनरात जलमें रहे और व्रतीहोकर स्त्री शूद्र और पतितसे वार्तालाप न करे तो पापोंसे रहित होजाय इस निमित्त दान तप और शुभकर्म्मों से पापों को दूरकरके श्रेष्ठफल की वृद्धिकरे जैसे पुण्यसे पापको जीते और सदैव उत्तमकर्म्मकर निकृष्ट

कर्म्मों को त्यागे और धनसे दानकरे तो पाप नष्टहोजाय यह सब प्रायश्चि-त्त पापोंके अनुरूपही मैंने कहे अब महापातकों के दूरकरने वाले प्रायश्चित्त कहताहूं हे राजा ज्ञानीपुरुष ओरसे कियाहुआ पाप बड़ाहोता है और अज्ञा-नी से थोड़ाहोता है इसी से प्रायश्चित्त होसक्ताहै शास्त्रोक्त विधि से पापका दूर करना संभव है परन्तु यह विधि आस्तिक और श्रद्धावान् के निमित्त कहीजातीहै और नास्तिक अश्रद्धावान् द्वेषी पाखण्डीपुरुषोंमे यहविधि कभी नहीं देखने में आती है हेनरोत्तम ज्ञानी लोगोंका धर्म और आचरण सर्वोत्तम है वह इसलोक और परलोक में सुखकी इच्छा करनेवालोंको करनेके योग्य हे राजा तुम इसहेतुसे अपने पापोंको दूरकरके उनको भी नरकोंसे उद्धार करोगे यह सुन युधिष्ठिर ने क्षणमात्र ध्यानावस्थित होकर ब्यासजीको उत्तर दिया ५१॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेपंचत्रिंशत्तमोऽध्यायः ३५॥

छत्तीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हेपितामह कौनबस्तु भक्ष्यहै और कौन अभक्ष्य है और कौनपदार्थ प्रशंसाके योग्य होताहै और कौन पात्र और कौन अपात्र है यहभी आप कहिये ब्यासजी बोले कि इस स्थानमें एक इतिहास कहता हूं जिसमें सिद्धों का और प्रजापति मनुका संबादहै पूर्वकालमें ब्रतकरने वाले ऋषियों ने प्रातःकाल के समय सामर्थवान् मनुजीसे पूछा कि हेप्र-जापतिजी भोजन किसरीति करनाचाहिये और किसप्रकारसे पाक सिद्ध होताहै और कौनसा करना योग्यहै और कौनसा नहीं करना योग्यहै यह सब वर्णन कीजिये यहसुनकर ब्रह्माके पुत्र स्वायम्भूमनुने कहा कि जिस देशकी शुद्धी नहीं हुई उस में भी जप होम ब्रत और आत्मज्ञान होता है और मनुष्य इन जपआदि कर्म्मों में प्रवृत्त करते हैं वहभी गंगाआदितीर्थ के समान पवित्र करनेवालाहै इसीप्रकार जप आदिके समान यह पर्वतभी पवित्र करने वाले हैं उनमें सुवर्णप्राशन औररत्नों से स्नान करना दोषहै देवालय में दर्शन करना वा घृत का स्पर्श करना यह बहुत शीघ्र मनुष्यों को पवित्र करते हैं ज्ञानीपुरुष कभी अहंकार न करे और जो कदाचित् करे भी तो दीर्घआयुकी इच्छा रखताहुआ तप्तकृच्छ्र ब्रतको करे और बिना दीहुई बस्तुका न लेना दानकरना बेदपढ़ना जप तप करना हिंसा न करना सत्यबोलना क्रोधन करना यज्ञकरना यह धर्म्म के लक्षण हैं वही धर्म देश काल पाकर अधर्म होताहै अर्थात् प्राणके जाने में धर्म्म अधर्म्म और अध-र्म्म धर्म्म होजाता है इसीकारणसे दूसरेके धनको लेना मिथ्या बोलना

हिंसा करना यहअवस्था के धर्म्म हैं ज्ञानियों के यह दोनों धर्म्म और अधर्म्म दो २ प्रकारके हैं लोक और वेदकी दो विधि हैं एक प्रवृत्ति दूसरी अप्रवृत्ति कर्म्मके फलकोतो प्रवृत्ति और देवत्व होनेको अप्रवृत्ति जानो इसी प्रकार बुरे कर्म्मका बुरा और अच्छे का अच्छा फल होताहै दैवदैवकरके युक्त अर्थात् होनहार शास्त्रोक्त कर्म्म से संयुक्त और शक्ति और ईश्वर इनचारोंके सम्बन्धसे जो कर्म्मकिया जाताहै उसके करनेसे नीच पुरुषोंका भी कर्म्मफल उत्तम होता है पंचहत्याके संदेह से अथवा इसलोक में परम्परा से प्रचलित रीति को जानकर कियाहुआ सन्ध्या बन्दनादि कर्म्म उत्तम होताहै और देव आदिके सम्बन्ध से कर्म्मका करना प्रायश्चित्त कहा जाता है अर्थात् काम क्रोध मोहसे उत्पन्न जो मनकी प्रिय और अप्रिय इच्छा वहभी दूर होजातीहैं और देहोंके जो रोगादि दुःखहैं वह औषध मंत्र प्रायश्चित्त और तीर्थयात्रा से दूरहोते हैं राजाको जो दण्डत्यागका पापहोताहै वह एक रात्रिके व्रतसे दूर होताहै और पुरोहित की पवित्रता तीनदिनके व्रतसे होतीहै जब पुत्रादिके मरने से शोकयुक्त मनुष्य शस्त्रादिके अपघात करने में न मरे तो तीनदिन व्रतकरे और जोपुरुष अपनी ज्ञाति वा जन्मभूमि वा अपने कुलके धर्म्मोंको सबप्रकारसे छुपाते हैं वहभी अधर्म्मी हैं और धर्म्माधर्म्म का जब सन्देह होजाय तो दश वेदशास्त्र के ज्ञाता और तीन धर्म के ज्ञाता मिलकर जो कहें वही धर्म्महै बैल, मृत्तिका, चैंटी और श्लेष्मा तक नामवृक्ष और विषवाली वस्तु यह सब ब्राह्मणोंको अभक्ष्य हैं अर्थात् खानेके योग्य नहीं हैं जो ब्राह्मण शक नाम जाति से अलग रहतेहैं उनको मछली और चारपैरवाला कछुआ और जो जल में उत्पन्न होनेवाले मेंढक, भासा हंस, सुपर्ण, चक्रवाक, प्लवक कौआ, गोह, गिद्ध, बाज, उल्लू और जितने चीड़ फाड़ करनेवाले और पैनी डाढ़वाले पशुपक्षी हैं और जिनके दोनों ओर दांत हैं और चारडाढ़ रखने वाले सबजीव अभक्ष्य हैं भेड़ बकरी घोड़ी गधी ऊंटनी और सूतकीगौका और मांसी पशुओंकाभी दूध ब्राह्मण नहीं पिये और प्रेतान्न, सूतकान्न और जो कुछ कि सूतकसे सम्बन्ध रखनेवाला है और जिसका बछड़ा दशदिनका न हुआहो उसगौकादूध अभक्ष्यहै राजाकाअन्न तेजको घटाताहै शूद्रकाअन्न ब्रह्मतेजको सुनारका अन्न और पतिपुत्ररहित स्त्री का धन आयुको क्षीण करता है ब्याज लेनेवाले का अन्न विष्ठाके समान होताहै वेश्याका और स्त्री-जितकाअन्न वीर्य्य के तुल्य है और दीक्षितका, कादरका और यज्ञ बेचने वालेका बढ़ई, चमार, धोबी और कुचालिनी स्त्री का अन्न, वैद्यकाअन्न सीमाके रक्षकका अन्न, भोजन के योग्य नहीं है सब ग्रामवासियोंने जिसको यह दोष लगायाहो कि यह दूसरेकी स्त्रीसे कुकर्म्म करताहै उसकाअन्न, स्त्रियोंके अन्न

से अपना जीवन करनेवालेका अन्न और जिसपुरुष के छोटेभाईका विवाह उसके विवाहसे पहिले होगयाहो उसकाअन्न रायभाट और जुवांखेलनेवालों काअन्न, बामहस्त से लायाहुआअन्न, भोजन कियाहुआ अन्न बासी अन्न मदिराके समीप रक्खाहुआ अन्न, खाने से बचाहुआ अन्न लड़के बालों को बिनाखिलायाअन्न, यहसबअन्न भोजनके योग्यनहीं है पेठेकी तरकारी उसी प्रकार दूधका बिकार मट्ठा दही जो बहुत दिनों होजाय तो भोजनके अयोग्यहैं और मुख्यकरके गृहस्थी ब्राह्मणों को यह सब बस्तुखानी और पीनी अयोग्य हैं गृहस्थी को देवता, ऋषि, मनुष्य पितर और कुलके देवताओं का पूजनकरने के पीछे भोजन करना योग्य है जैसे संन्यासी भिक्षुक होय वैसे अपने घरमें निवास करे अर्थात् घरके मनुष्य देवताआदिको देकर जो बचै वहभी संन्यासियों की भिक्षाके समान है ऐसी रीतिपर चलनेवाला अपनी धर्म्मपत्नीके साथ विहारकरता धर्म्मात्माहै और अपनी नेकनामीकेलिये दान करे और भयसे दान न करे और अपने मित्रआदि को दान न करे अर्थात् मित्रों के शिष्टाचार आदि से दान अलगहै और जो नाचने गानेका अभ्यास रखतेहैं और जो हास्य और कुतूहलमें प्रवृत्तहैं और नसापीते हैं और जो ग्रह भूतआदिसे पीड़ितहैं और जो चोरहैं या निन्दितहैं उनको कभी दान न देना चाहिये और जो बात चीत नहींकरसक्ते और कुरूप हैं और जो किसी अंगसे रहित दुर्जन वा निकृष्टकुलहैं और ब्रतोंसे संस्कारनहीं कियागयाहै उनको दान न देवे वेदपाठी के विशेष वेद हीन ब्राह्मणको दान न दे क्योंकि जो अच्छे प्रकारसे दाननहीं किया और न अच्छे प्रकारसे लियागया वह दोनों देने और लेनेवाले महा अज्ञान हैं जैसे कि कोई खदिर या पाषाणकोलेकर समुद्रको तरताडूबै उसीप्रकार दानदेनेवाला और लेनेवाला दोनोंडूबते हैं और जैसे गीले इंधनसे अग्निप्रज्वलितनहीं होतीहै तप और वेदपाठ और आचारों से खाली दानलेनेवाला ऐसाहै जैसे त्रिकुश में जलहोना और जैसे लकड़ी का हाथी और चमड़े का हिरनहोताहै वैसेही बिनापढ़ा ब्राह्मणहै वह तीनों नामहीमात्र हैं जैसे कि स्त्रियोंमें नपुंसक निष्फल है और जैसे बिना पक्षके पक्षी है उसीप्रकार मंत्रहीन ब्राह्मणहै और जैसे अन्नोंसे खालीग्रामहोय और पानी के बिना कूपहोय और जैसे राखमें हवन वैसेही मूर्ख ब्राह्मण में दान होता है देवता और पितरों के हव्य और कव्य का नाश करनेवाला और शत्रुरूप होकर धनका हरनेवाला लोकों को नहीं पासक्ता है युधिष्ठिर जैसा कि वृत्तान्त था सब हमने वर्णन किया परन्तु यह बड़ा इतिहास आपके सुनने के योग्य है॥ ५१॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेषट्त्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३६॥

सैंतीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि हे भगवन् महामुनि व्यासजी मैं आपके मुख से सम्पूर्ण राजधर्म्म और चारोंवर्ण के सबधर्म्मोंको सुनना चाहताहूं हे ब्राह्मणोत्तम जिसप्रकार आपत्तिकालके नियत समयों में जैसी नीति से चलना योग्य है मैं धर्म्मरूप मार्गसे कैसे पृथ्वीको विजय करूं प्रायश्चित्त व्रत शपथ आदि प्रसंगसे भरीहुई यहकथा मेरेचित्त को बड़ा आनन्ददेतीहै धर्म्माचार और राज्य सदैव विरुद्ध हैं इसी प्रकार मुझ चिन्ता करनेवाले का चित्त सदैव मोहको प्राप्तहोता है वैशम्पायन बोले कि वेद के महाज्ञाता व्यासजीने बड़ेप्राचीन सर्वज्ञ महामुनि नारदजी को देख कर युधिष्ठिर से कहा हे राजा जो तुम सम्पूर्ण धर्म्मको यथार्थ सुना चाहते हो तो कौरवोंके पितामह वृद्ध भीष्मजी के पास जाओ वह श्रीगंगाजीके पुत्र सब धर्म्मों के जाननेवाले तेरे उन सन्देहों को जोकि धर्म्म की गुप्तवार्त्ता तेरेचित्तमें नियतहैं दूरकरेगा तीनमार्गोंमें चलनेवाली दिव्यनदी श्रीगंगाजी ने उसको उत्पन्न किया और जिसने सब देवताओं को इन्द्रसमेत साक्षात् होकर देखा और अपनी सेवा से बृहस्पति आदि देवऋषियों को बराबर प्रसन्नकरके राजनीतिको पढ़ा शुक्रजी जिसशास्त्रको जानते हैं और देवगुरु बृहस्पतिजी जिस शास्त्र के ज्ञाताहैं और जो धर्म्म धर्मशास्त्रसे संयुक्तहै वहसब कौरवोंमें श्रेष्ठ भीष्मपितामहने प्राप्तकिया उस व्रतकरनेवाले भीष्मजी ने अंगोंसाहित वेदोंकोभी बड़े महात्मा ज्ञानी च्यवनऋषि से पढ़ा जिसने पूर्व्वकाल में ब्रह्माजी के बड़े बेटेब्रह्मज्ञानियों की गतिके जानने वाले कुमारजी के पास शिक्षा पाई और मार्कण्डेयजी के मुखसे सम्पूर्ण संन्यास धर्मको जाना और उस पुरुषसिंहने परशुरामजी से और इन्द्रदेवतासे अस्त्रोंको पाया वह मनुष्यदेहसे जितेन्द्रिय अपुत्रवान् मृत्युका वशकरनेवाला सत्पुरुष स्वर्गमें प्रसिद्धहै और जिसकी सभामें बड़े २ पवित्र ब्रह्मऋषि सभासदहुये और ज्ञान यज्ञों में जिसको कोई बात अज्ञात नहीं है वह धर्म्मका ज्ञाता सूक्ष्म धर्म्म अर्थके तत्त्वोंका तुझसे कहेगा उसके पासजा वह धर्म्मज्ञ बहुत शीघ्र प्राणों को त्यागना चाहताहै इसप्रकार की बातेंसुनकर धर्म्मज्ञ महाबाहु युधिष्ठिरने सत्यवती के पुत्र वेदव्यासजीसे कहा कि मैं लोकोंका अपराधी और सम्पूर्ण संसारका नाशकर्त्ता और जातिवालोंके उसनाशको जिससे कि रोम २ कांपउठे करवाके और ऐसेधर्मसेयुद्धकरनेवाले पुरुषको छलसे मरवाकेमैं किससुखसे उनके पासजाकर अच्छे प्रकारसे प्रश्नकरने के योग्यहूं वैशम्पायनबोले कि जब युधिष्ठिरने से व्यासजीसे इसप्रकार वचनकहा तब यादवोंमें श्रेष्ठ महाबाहु श्रीकृष्णजी ने

चारों वर्णके उपकारके लिये राजायुधिष्ठिरसे कहा कि हे राजेन्द्र अब तुम शोक त्यागो जो भगवान् व्यासजीने कहाहै उसको करो और इस प्रार्थनाके करने वाले ब्राह्मण और महातेजस्वी तेरे भाई सन्मुख वर्त्तमानहैं और युद्धमें मरने से शेषरहे हुये राजालोग और कौरव जांगल देशवाले सबके सब तुम्हारे पास प्राप्तहुये सोहे समर्थ युधिष्ठिर उन महात्मा ब्राह्मणों के और द्रौपदी के प्रियकारी और लोकको हितकारी बातों को बड़े तेजस्वी गुरू व्यासजी की आज्ञासे करो श्रीकृष्णजीके यह बचन सुनकर महाप्राज्ञ साहसी राजा युधिष्ठिर सबके आनन्द के निमित्त उठ खड़ाहुआ और शोकको दूरकिया और जैसे नक्षत्रों से चन्द्रमा घिरा होताहै उसी प्रकार उनसब देव ब्राह्मण भाई बन्धु आदिसे घिरे हुये राजा युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को आगे करके अपने पुर में प्रवेश किया और वहांजाकर बड़ी श्रद्धाभक्तिसे देवब्राह्मण अतिथी आदिको दान दक्षिणा देकर पूजनकिया तदनन्तर नवीन उज्ज्वल शालदुशालों से सुशोभित और कल्याणकारी चिह्न वाले श्वेत सोलह बैलों से जुतेहुये मंत्रोंसेपूजित रथपर सवारहुये उससमय महाबली भीमसेन ने तो रथकी बागडोर पकड़ी और अर्जुन ने प्रकाशित श्वेत छत्रको धारणकिया उस समय की शोभा छत्र सहित युधिष्ठिर की ऐसे थी जैसे नक्षत्रों से घिरा हुआ श्वेत बादल हो तब नकुल और सहदेवने उसके व्यजन और चमरको हाथोंमें लिया इसप्रकार सुन्दरता से आच्छादित पांचों भाइयों ने रथपर बैठ कर सब छोटेबड़ोंको दर्शन दिया और शीघ्रगामी श्वेतअश्वों से सुशोभित रथपर सवार होकर युयुत्सुभी राजा युधिष्ठिरके रथके पीछे २ चलदिया और श्रीकृष्णजीभी सात्यकीके साथ उज्ज्वल सुवर्णनिर्मित शैब्यसुग्रीवनामघोड़ों से जुतेहुये रथमें सवारहोकर कौरवोंके पीछे चले और पाण्डवोंके ताऊ धृतराष्ट्र भी गान्धारी समेत नरयानमें अर्थात् पीनस आदि में चढ़कर धर्म्मराज के आगेचले और कौरवों की वहसब स्त्रियां कुन्ती द्रौपदी आदि जिनके आगे बिदुरजी थे नाना प्रकार की सवारियोंपर चढ़कर चलीं और बहुत से हाथीघोड़े पैदल बनठनकर पीछे से चले इसप्रकार से शोभित होकर सब इष्ट मित्र भाइयों सहित सुन्दर बचन बोलनेवाले बैतालक, सूत, मागधोंसे कीर्त्तिमान् होते राजा युधिष्ठिर हस्तिनापुर नगरको गये उस महाबाहु युधिष्ठिर की वह सवारी बड़ी भीड़भाड़केसाथ अच्छे २ छोटेबड़े शूरोंसमेत अद्वितीयदीखतीथी राजाकी सवारीको नगर बासी मनुष्यों ने आते सुनकर नगरको और राजमार्ग को बुद्धिके अनुसार अच्छे प्रकार सुशोभित किया पृथ्वीको श्वेत माला और पताकाओं से और राजमार्ग को अगर चन्दन अतर आदि से सुगन्धित किया और नगरके द्वारपर नवीन दृढ़ सुवर्णके कलश जलसे पू-

रित किये और जहां तहां पुरकी कन्याओंने श्वेत फूल इकट्ठे किये फिर शुभ वचनोंसे स्तुतिमान और सुहृदजनोंसे संयुक्त पाण्डुनन्दन युधिष्ठिरने सुन्दर अलंकृत नगरके द्वारमें सुशोभितहोकर प्रवेशकिया ४१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेसप्तत्रिंशत्तमोऽध्यायः ३७ ॥

अरतीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि नगरमें पाण्डवोंके पहुंचतेही हजारों पुरवासी राजा के दर्शन करने को आये तब वह राजमार्ग जो अत्यन्त बिस्तृत था वहऐसा शोभायमान हुआ जैसाकि चन्द्रमाके उदयमें बढ़ाहुआ महासमुद्र हो और राजमार्गमें जो रत्न जटितगृहथे वह स्त्री पुरुषों के बोझसे कम्पायमान हुये और उन कुलांगनाओंने बड़ी नम्रतासे पांचों भाइयोंको शोभितकियाऔर द्रौपदी से कहने लगीं कि हे कल्याणी तुम धन्यहो जो पुरुषोत्तम पाण्डवों में वर्त्तमानहो जैसे कि महर्षियोंके पास गौतमी वर्त्तमानहो हे भामिनी तेरेकर्म्म और आचरण सफलहैं ऐसी २ बातोंसे अन्तःपुरमें आनन्द कुतूहल होनेलगा और युधिष्ठिरभी उस राजमार्गको योग्यरीतिसे शोभित करताहुआ राजमहल के समीप पहुंचे तदनन्तर सब अधिकारी लोग जहां तहांसे पुरवासियों समे त सन्मुख आकर सुन्दर वचनों को कहने लगे कि हे शत्रुओं के मारनेवाले राजाशिरोमणि आपने प्रारब्धसे शत्रुओं को विजय करके फिर अपने राज को पाया आप हजारों वर्षतकहमारे राजाहोकर धर्म्मसे प्रजाकी ऐसीरक्षाकरें जैसे कि स्वर्गकी रक्षा इन्द्रकरतेहैं इसप्रकार मंगल शब्दों से पूरित चारों ओरसे ब्राह्मणों के आशीर्वादोंको लेताहुआ इन्द्रभवनके समान घरमें प्रवेश करके विजयके वचनों को सुन रथसे उतर गृहके सब देवताओं को रत्नादि द्रव्य और फलोंसे पूजन किया तिसपीछे मंगल द्रव्यलिये ब्राह्मणों के देखने को फिर स्थानसे निकला तो उन आशीर्वाद देनेवाले ब्राह्मणोंके मध्य वह राजा ऐसा शोभायमानहुआ जैसे कि नक्षत्रोंके मध्यमें निर्मल चन्द्रमा विराजमानहो फिर युधिष्ठिरने धौम्यगुरु और ताऊ धृतराष्ट्रको आगे करके विधिपूर्वक उन ब्राह्मणोंका पूजन किया और अपने नौकरों को मोदकरत्न सुवर्ण गौ वस्त्रआदि अनेक वांछित द्रव्योंसे प्रसन्न किया तदनन्तर मित्रोंके और श्रवणों का आनन्ददायी पुण्याहवाचन शब्द होनेलगा और आनन्द दायक विजयके द्योतकशंख और भेरीशब्दहुये तब ब्राह्मणों के शान्त होने पर कपटसे ब्राह्मणरूप बनाय चार्वाकराक्षस जो दुर्योधनका मित्र संन्यासी रूपमें ढकाहुआ शिखाधारी त्रिदंडी रुद्राक्ष धारणकिये निर्लज्ज आशीर्वाद देनेवाले हजारों ब्राह्मणोंमें मिलाहुआआया वह महादुष्ट महात्मा पाण्डवों

दोषोंके कहनेकी इच्छासे उनसब ब्राह्मणों से बिना पूछे राजासे बोला कि मैं इन सबकी ओरसे कहताहूं कि हे राजा तुम जातिवालोंके मारनेवाले निन्दित होकर धिक्कारके योग्यहो हे कुन्तीपुत्र तू जाति वालों और गुरुओंको मारकर अपने को क्या उत्तमजानताहै तुझ धिक्कारवानका मरनाहीयोग्य है उस दुष्ट राक्षसके यहबचन सुनकर ब्राह्मण उसके बचनों को तिरस्कारकर महाक्रोधितहुये और राजाभी उनब्राह्मणों समेत व्याकुलहोकर बोला कि आपलोग कृपाकरके मुझ नम्रीभूत प्रार्थना करनेवालेके ऊपर प्रसन्नहो क्योंकि मेरेभाई बहुतकालसे दुःखी हैं इससे मुझ राज्य चाहनेवाले को धिक्कार करना उचित नहीं है तदनन्तर वह सब ब्राह्मण बोले कि हे राजा यह हम लोगोंका बचन नहीं है आपका धन निर्विघ्नहो फिर उनमहात्मा वेदज्ञज्ञानी ब्राह्मणों ने अपनी दिव्य दृष्टी से उसको जानलिया और कहा कि यह दुर्योधनका मित्र संन्यास धारणकिये चार्वाक राक्षस उसका प्रिय करना चाहताहै हे राजा हम नहीं कहतेहैं तेरा ऐश्वर्यअचलहो ऐसा राजाको कहकर क्रोधित मूर्च्छावान् महातेजस्वी ब्राह्मणोंने हुंकार करके उस पापी राक्षसको मारडाला और राजा को आशीर्वाददे वह सब ब्राह्मण अपने २ स्थानों को चलेगये और राजाने सुहृदजनों समेत आनन्दको पाया ३७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेअष्टत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

उन्तालीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायनबोले कि इतनी बातोंके उपरान्त देवकीनन्दन सर्वदर्शी जनार्दन श्रीकृष्णजीने सब भाइयों सहित विराजमान राजा युधिष्ठिरसे कहा कि हेतात इसलोकमें ब्राह्मणलोग हमलोगोंको सदैव पूजने योग्य हैं क्योंकि यह पृथ्वीपर घूमनेवाले देवताहैं इनके वचनोंमें विष और अमृत दोनोंहैं हे राजा पहिले सतयुग में चार्वाकनाम राक्षस ने बहुत समयतक बदरिकाश्रम में तपस्याकी और यहांतक हुआ कि बारम्बार ब्रह्माजी से वरमांगने को लुभायागया तो उसने यही मांगा कि मुझे किसीप्रकारके जीवधारीसे भयनहो तब ब्रह्माजीने अमान ब्राह्मणके सिवाय किसीजीवधारी से भय नहोगा यह वरदानदिया फिर बड़ेपराक्रमी शीघ्रकर्म्मी वरपानेवाले पापी राक्षसने देवताओं को दुःख दिया और उसके पराक्रमसे हारेहुये देवताओंने उसके मारने की प्रार्थना ब्रह्माजीसे करी तब ब्रह्माजीने कहा कि मैंने वही युक्ति करी है जिससे कि उसकी मृत्यु शीघ्र होगी लोक के मनुष्यों में राजा दुर्योधनसे इसकी मित्रताहोगी उसके स्नेहमें बँधाहुआ यह राक्षस ब्राह्मणोंका अपमान करैगा वहांपर अपमानसे तिरस्कृत क्रोधाग्नि वचन रूप पराक्रमरखने-

वाले ब्राह्मण इस पापीको भस्म करेंगे तब इसका नाशहोगा सो हेराजा वह चार्वाक नाम राक्षस ब्रह्मदण्डसे मृतकसोताहै तुमकिसी बातका शोच मत करो और जो आपके जातिवाले क्षत्री मारेगये वह धर्म्म से मारे गये स्वर्ग को गये इससे हे विजयी तुम अपने कर्म्म में सावधान होकर ग्लानि त्याग कर शत्रुओं को मारो और प्रजाकी रक्षापूर्वक ब्राह्मणोंका पूजनकरो ॥ १३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेकोनचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३९ ॥

चालीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन जी बोले कि ऐसे श्रीकृष्ण जी के समझाने से राजा युधिष्ठिर प्रसन्नचित्त हो शोकरूपी दुःख को त्याग पूर्वाभिमुखहो सुवर्ण निर्मित आसनपर विराजमान हुये और उसी आसन के समान आसनपर महा तेजस्वी प्रतापी श्रीवासुदेव और सात्यकीभी बैठे और महात्मा भीमसेन और अर्जुन राजा को मध्य में करके शुद्ध रत्नजटित आसनोंपर बैठगये और कुंती माता भी नकुल और सहदेव के साथ सुवर्ण से चिह्नित महा दीप्यमान हाथीदांत के सिंहासन पर बैठगईं और सुधर्म्मा विदुर धौम्य धृतराष्ट्र यह सब पृथक् २ अग्नि वर्ण आसनोंपर बैठगये जिधर राजा धृतराष्ट्र बैठेथे उधर युयुत्सु संजय और यशस्विनी गान्धारी आदि सब बैठगये ऐसी सभामें बैठेहुये धर्म्मात्मा युधिष्ठिर ने अगस्त आदि श्वेत पुष्प पृथ्वी सुवर्णरजतमणि आदि से चित्रविचित्र सर्वतोभद्रसे चिह्नित देवताओं के आसनों को स्पर्शकिया उसके पीछे सब नौकर चाकर आदि अधिकारियों ने पुरोहितजी को साथले बहुत सी मंगली वस्तुओं समेत राजा धर्म्मराज को देखा पृथ्वी सुवर्ण और नानाप्रकार के रत्न और सब सामानों से पूर्ण अभिषेक के पात्र और मृत्तिका सुवर्ण चांदी तांबे के जलपूरित कलश फूल फल अक्षत यह सब ब्राह्मणों के हाथों में लिये अग्नि गोरस शमी पीपल ढाक आदिकी लकड़ी शहत घृत उदुम्बरस्रुवा और इसीप्रकार सुवर्ण वेष्टित शंखआदि सब सामान लाये और श्रीकृष्णजी की आज्ञा पाय धौम्य पुरोहित ने ईशान दिशा में लक्षण समेत वेदी रचकर व्याघ्रचर्म्म से संयुक्त श्वेतरूप अग्नि समान देदीप्यमान सर्वतोभद्र नाम आसनपर कृष्णा द्रौपदी समेत महात्मा युधिष्ठिर को बैठाकर मंत्र की विधि से सन्मुख स्थापित अग्नि में हवन किया फिर श्रीकृष्णजीने उठकर पूजित शंख को हाथ में लेके कुन्तीपुत्र पृथ्वी के स्वामी युधिष्ठिरको अभिषेक किया इसीप्रकार राजऋषि धृतराष्ट्र और सब अधिकारियों ने श्रीकृष्णके पांचजन्यशंखसे अभिषेक कियाहुआ भाइयों समेत राजा युधिष्ठिरका दर्शनकिया तदनन्तर आनक दुन्दुभी नाम पणवको बजाया तब युधिष्ठिर नेभी

इन सब पूजनों को स्वीकार करके और विधिपूर्वक सबका पूजन किया फिर स्वस्तिवाचन करनेवाले वेदपाठी की जो क्षमा शील आदि गुणों से सम्पन्नथे उनको हजार निष्कस्वर्णमयी दक्षिणा देकर प्रसन्न किया फिर उन प्रसन्न हुये ब्राह्मणों ने स्वस्ति पूर्व्वक जयशब्द का उच्चारण किया और हंसों के समान शब्दों से युधिष्ठिर की प्रशंसाकोकिया कि हे पाण्डव युधिष्ठिर आपने अपने प्रारब्ध और पराक्रमसे अपने धर्म्म राज्य को पाया और प्रारब्धही से अर्जुन भीमसेन नकुल सहदेव समेत आप कुशलहैं अब सब बातोंसे निवृत्त होकर जो आगे करने के योग्य कर्म्म हैं उनको शीघ्र करो यह सुनकर धर्म्मराज सब सुहृदों समेत प्रसन्न हुये और राज्यासन को सुशोभितकिया २४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मेचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४० ॥

इकतालीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायनजी बोले कि अधिकारी आदिके इन बचनोंको सुनकर राजा युधिष्ठिर ने देशकाल के सदृश यह उत्तर दिया कि निश्चय पाण्डव धन्य हैं जिनकी सच्ची या झूठी प्रशंसा को बड़े बड़े महात्मा ब्राह्मणों ने किया निश्चय है कि हम आप लोगों की कृपाके योग्य हैं जो ईर्षा रहित होकर आप इसप्रकार हमलोगों के गुणों की प्रशंसा करते हो मेरा पिता महाराजा धृतराष्ट्र उत्तम है मेरेप्रियबादी तुमलोगों को इसकी आज्ञा और अभीष्ट बातोंमें प्रवृत्तहोनाचाहिये में जातिकानाशकरके इसीनिमित्त जीताहूं इसकीसेवा मुझ को सावधानीसे सदैवकरनी योग्यहै जो मैं आपलोगों की और सुहृदजनोंकी कृपाकेयोग्यहूं तो तुम पहिलेके समान धृतराष्ट्रकी सेवाकरने में प्रवृत्त होनेको योग्यहो मेरेसाथीलोगोंका और जगत्कायहस्वामी है और सम्पूर्णपृथ्वी और हमसब पाण्डव इसीके हैं आपलोगोंको यह मेरा वचन चित्तमें दृढ़ रखना चाहिये यह कह सबको आज्ञादी कि अपनी इच्छाके अनुसार जाओ इस प्रकारसे सब पुरबासियोंको बिदाकरके युधिष्ठिरने भीमसेन अपने भाईको युवराज पदवीपर नियतकिया और सर्वगुणसम्पन्न महाबुद्धिमान् संजय को सब कामोंके परिणाम आदि के जानने और आयव्यय अर्थात् आमदखर्चके बिचारनेमें नियत किया और महाधर्म्मज्ञ बुद्धिमान् बिदुरजीको मन्त्र अर्थात् सलाहके और छःगुणोंके बिचारांशमें नियत किया और सेना की संख्या और मासिकोंके विभागकरने और प्रतिदिनके हिसाब आदि देखनेमें नकुल को स्थापितकिया और शत्रुओंकी सेनाके रोकने और दण्ड देनेमें अर्जुन को नियत किया पुरोहितों में श्रेष्ठ धौम्यको ब्राह्मण और देवताओंके कामों में और अन्यकार्योंमें भी प्रवृत्त किया और अपने सन्मुख रहनेको जिससे कि

सदैव राजाकी रक्षारहै सहदेवको नियत किया तात्पर्य यहहै कि जिस जिस को जिसजिस कार्य्यमें कुशल समझा उस उसको उसी अधिकार पर नियत किया फिर धर्म्मात्मा युधिष्ठिरने महाबुद्धिमान् विदुर संजय युयुत्सुसेकहा कि आपलोग सावधानी से युक्ति बल और पराक्रमकेधरा इसमेरेपिता राजाधृतराष्ट्रका सबकार्य ठीक२ करनेको योग्यहो और पुरबासी और देशबासियों के जो कार्य्य हैं उनसबको राजासे पूछकर विभागादि कार्य करो ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेएकचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

बयालीसवां अध्याय ॥

इन सब प्रबन्धों के पीछे राजा युधिष्ठिरने उन२ जातिवालों के श्राद्धों को पृथक्२ करवाया जो कि युद्धमें मारेगयेथे और पुत्रोंके श्राद्धोंको राजाधृतराष्ट्र ने अपने हाथसे करके सब कामना आदिगुण संयुक्त धन और गोदान भी किये और बड़े मोलके रत्न उन महात्मा द्रोणाचार्य्य और कर्ण और धृष्टद्युम्न अभिमन्यु घटोत्कचराक्षस और सहायक विराट सुहृदजन द्रुपद और द्रौपदी के पुत्रोंके निमत्त ब्राह्मणोंको दिये और हजारों ब्राह्मणोंमें प्रत्येक ब्राह्मणको पृथक्२ समझाते हुये धन, रत्न, गो और वस्त्रोंसे अच्छेप्रकार तृप्त किया और जो ऐसे राजालोग मारेगये जिन्होंके कोई सुहृदजन नहीं हैं उनके नामसे संकल्प करके क्रियाकर्म्मकिया और सब सुहृदजनों के नामसे पांडवोंने धर्म्मशाला बावड़ी तालाब और अनेकप्रकार धर्म्मालय बनवाये और उनसब के ऋणसे उद्धार लोकनिन्दासे रहितहोकर धर्म्मसे प्रजापालन आदि कर्त्तव्य कर्म्मोंसे निवृत्त हुआ और पहिलेके ही समान धृतराष्ट्र गान्धारी विदुर आदि सब कौरवोंको और मान सत्कारके योग्य प्राचीन अधिकारियोंको भी अच्छे प्रकारसे प्रसन्नकिया और जो स्त्रियां मृतकहोगईं अथवा जिनके पति नहींरहे उनके निमित्त भी बहुतप्रकारसे दान पोषण आदि कर्म्मकिये अर्थात् उनके निमित्त घर वस्त्र और भोजनकी वस्तु इत्यादि से अच्छेप्रकार पूजन किया और दुखी अंधे गरीब व पुरुषोंपर कृपाकरी इनबातोंसे राजा युधिष्ठिर सम्पूर्ण पृथ्वीका विजयकर शत्रुओंसे अऋणहो निश्शत्रुहो सुख पूर्वक विहार करने लगा १२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणि राजधर्मेद्विचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

तैंतालीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायनबोले कि इसप्रकारसे अभिषेकादि से शुद्धहो बुद्धिमान् युधिष्ठिरने हाथजोड़ नम्रहो श्रीकृष्णजीसे यह कहा कि हे यादवोत्तम श्रीकृष्णजी

आपकी कृपासे नाति पराक्रम बुद्धिके योगसे मैंने बापदादेके इसराज्य को फिर पाया इससे हे कमललोचन शत्रुओं के पराजय करनेवाले आपके चरणों में बारम्बार नमस्कार करताहूं आप सम्पूर्ण संसारमें अकेले निवास करनेवाले हैं औ उपासना करनेवालोंकी गति भी आपही को कहते हैं जितेन्द्री ब्राह्मण बहुतप्रकारके नामों से आपकी स्तुति करते हैं हे विश्वकर्त्ता विश्वात्मा तुमको नमस्कार है हे सर्व्वव्यापी सर्व बिजयी हरि श्रीकृष्ण बैकुंठ पुरुषोत्तम आपको नमस्कार है और तुम्हे आप अकेले प्राचीनपुरुषने सात प्रकारसे अदितीके पुत्रहोकर परशुराम रामचन्द्र कृष्ण बलदेव आदिके रूपको धारण किया तुमको तीनों यज्ञोंमें प्रकटहोनेवाला और धर्म्मज्ञान वैराग्यका स्वामी या ऐश्वर्य लक्ष्मी यश आदिका स्वामीभी कहते हैं तुम पवित्रकीर्त्ति वाली इन्द्रियोंके और यज्ञों के ईश्वर होकर ब्रह्माजी के भी गुरु कहेजातेहो और तुमहीं पिनाकधारी त्रिनेत्र शिवजीहौ तुम्हीं समर्थ और दामोदर हौ और तुम्हीं अग्नि सूर्य्य बराह धर्म्म गरुड़ध्वज शत्रु सेना पराजय करनेवाले सबदेहोंमें प्रवेश होनेवाले बड़े पराक्रमी पुरुषहौ तुम्हीं उत्तम तुम्हीं सेनापति सत्य अन्नदाता और देवताओंके सेनापति स्वामिकार्त्तिकभी तुम्हींहो तुम्हीं अजेय और शत्रुओं के विजयकर्त्ताहौ और तुम्हीं ब्राह्मणआदिके रूप अनुलोम विलोम से उत्पन्न होनेवाले जीवों के रूप श्रेष्ठहौ और तुम्हीं ऊर्ध्ववर्त्मा अग्निहौ और तुम्हीं इन्द्रके अभिमानध्वंसक शिव विष्णुरूपहौ तुम्हीं सगुण निर्गुणहौ और क्रमसे पूर्व्व उत्तर ईशानआदि दिशा रूपहौ त्रिधामा और स्वर्गसे अवतार लेनेवालेहौ तुम्हीं संसार के राजकुलहौ और विराटरूप हौ तुम्हीं देवेन्द्रहौ तुम्हीं संसार के कारणहौ तुम्हीं सतरूप देहरहित श्रीकृष्णहौ तुम्हीं अश्विनीकुमार और उनके पिता सूर्य और कपिल, वामन, यज्ञ, ध्रुव गरुड़ यज्ञसेनहौ तुम्हीं शिखंडी, नहुष, महीश्वर और तुम्हीं पुनर्वसुनाम नक्षत्रहो और तुम्हींपिंगलवर्ण रुक्मयज्ञ सुवक्त्र और दुंदुभीहौ तुम्हींकालचक्ररूपहौ श्रीकृष्ण पद्म पुष्कर पुष्पधारी हौ तुम्हीं समर्थ और देवतारूप समुद्र ब्रह्मा पवित्र धाम और धामकेज्ञाताहौ तुमकोही हिरण्यगर्भ श्रद्धा स्वधा केशव कहतेहैं तुम्हीं इस संसारके उत्पत्ति स्थान और प्रलयस्थानहौ और तुम्हीं आदिमें इसविश्वको उत्पन्न करतेहौ हे संसार के उत्पत्तिस्थानरूप यह संसार आपके आधीन है हे शार्ङ्गधन्वाचक्र हाथमें रखनेवाले सभामें जब युधिष्ठिर ने बड़ी प्रीतिपूर्व्वक श्रीकृष्णजीकी प्रशंसा सहित स्तुतिकी तब यादवेन्द्र कमललोचन श्रीकृष्णजी ने उस भरतबंशी युधिष्ठिरको उत्तम २ वचनों से प्रसन्न किया १७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेत्रयश्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

चवालीसवां अध्याय॥

वैशम्पायनबोले कि यह सबस्तुति श्रीकृष्णजीकी करके राजा युधिष्ठिरने अधिकारी आदि सेवकों को विदाकिया और वह सब राजाकी आज्ञा पाकर अपने २ स्थानोंमेंगये तदनन्तर भयंकर पराक्रमी भीमसेन अर्जुन नकुल सहदेव चारों अपने भाइयोंसे यह कहा कि तुमलोग महाभारी युद्धमें शत्रुओंके नानाप्रकार के शस्त्रों से विदीर्ण और घायलदेह क्रोध और शोकसे दुखीहो अत्यन्त थकगयेहो और हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ आपलोगोंने मेरे हेतुसे बनमें दुःखके निवासोंको ऐसा पाया जैसे कि पापीपुरुष पावें इस्से सुख पूर्वक इस विजयके आनन्दको भोगो और सावधान होकर विश्राम के पीछे कल फिर तुमलोगोंसे मिलूंगा इसके पीछे महाबाहु भीमसेनने धृतराष्ट्र से स्वीकारकिये हुये और भाईके दियेहुये दुर्योधन के इस महलको जोकि नाना आनन्द के स्थानोंसे व्याप्त अनेक रत्नों से जटित दासदासियों से पूर्णथा ऐसे प्राप्तकिया जैसे कि इन्द्रने महेन्द्रपर्वतको पाया और उसीप्रकार दुश्शासनकेघरको जोकि बड़े २ महलोंकी पंक्तिसे घिराहुआ सुवर्णकी बन्दनवारोंसे शोभित दास दासियों से व्याप्त बहुत धन धान्य से पूर्णथा उसको अर्जुन ने राजा की आज्ञासे पाया और बनमें महापीड़ा पानेवाले नकुलको युधिष्ठिरने दुर्मर्षणका वह महलदिया जोकि दुश्शासन के महलसे उत्तम बीरभवनके रूपमणि और सुवर्णसे खचितथा और दुर्मुखका श्रेष्ठ महल जोकि सुवर्णसे अलंकृतशोभायमानथा और सुन्दर नेत्रवाली स्त्रियोंसे देदीप्यमान था वह महल सहदेवको दिया और सहदेव उसेपाकर ऐसाप्रसन्नहुआ जैसे कि कैलाशको पाकर कुबेर प्रसन्न हुआ और युयुत्सु, विदुर, संजय, सुधर्म्मा, धौम्य यह सब अपने२ महलोंको गये और पुरुषोत्तम श्रीकृष्णजी सात्यकीके साथ अर्जुन के महल में जाकर ऐसे विराजमानहुये जैसे कि पर्वतकी गुफा में व्याघ्र बैठे फिर अपने २ स्थानों में अच्छे २ पदार्थ भोजनकर सुख पूर्वक निद्रा लेकर आनन्द के सहित राजा युधिष्ठिर के पास सब मिलकर प्राप्तहुये १६॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेचतुश्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥ ४४॥

पैंतालीसवां अध्याय॥

जनमेजयबोले कि हे वैशम्पायनजी धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर ने राज्यको पाकर जो २ कर्म्मकिये वह सब आप मुझसे वर्णन कीजिये हे जितेन्द्री महाऋषि तीनों लोकों के नाथ महायशस्वी पराक्रमी श्रीकृष्णजीने जो २ कर्म्म किये वहभी कहने के योग्यहो वैशम्पायन बोले हेराजाजनमेजय मेरेकहे हुयेसत्य२

बचनों को सुनो कि जो पाण्डवों ने वासुदेवजी को अग्रगामीकरके जो २ कर्म्मकिये वह एकाग्रहो सुनो कि युधिष्ठिरने राज्य पाकर चारोंवर्णोंको यथा-योग्य अपने २ स्थानों पर नियत किया प्रथम तो पाण्डवोंने स्नातक ब्राह्म-णोंको एकएक सहस्र निष्क दानदिया दास और पोषणके योग्य, रक्षितऔर अभ्यागतों को भी सब कामनाओंसे पूर्णकिया और इच्छाकरनेवाले दुखियों को भी आनन्द देकर उसने धौम्य पुरोहितको हजारों गौ और सुवर्णरचित स्थानरत्नआदि धन और अनेक प्रकारके वस्त्रादिकदिये और कृपाचार्य्यजी के निमित्त गुरुवृत्ती केसमान सेवाकी अर्थात् गुरुके समान पूजन कियाऔर विदुरजीकी भी पूजाकरी और सब रक्षित लोगोंको नानाप्रकार सुस्वादुभोज-न और वस्त्र धनआदि से संतुष्टकिया और प्राप्तधनसे राजाने धृतराष्ट्रके पुत्र युयुत्सुकी भी पूजाकरी इनसबबातोंको करके उसराज्यको धृतराष्ट्र विदुर और गांधारीके स्वाधीनकरके सुखपूर्वक रहनेलगा इसप्रकार सबनगरको प्रसन्न करके राजा हाथ जोड़हुये बासुदेवजीके पासगये वहां श्रीकृष्णजीको श्याम सजल मेघके समानवर्ण शोभायमान मणिऔर सुवर्णसे भूषित पलंगपर बैठा हुआ देखा उससमय दिव्य अग्निके समान प्रज्वलित पीताम्बरधारणकिये दिव्यभूषणों से अलंकृत सुवर्ण मणि युक्त कौस्तुभमणिको छाती में धारण किये ऐसे शोभायमान थे जैसे सूर्य्योदय में उदयाचल की शोभाहोतीहै ऐसे अलौकिक शोभायमान श्रीकृष्णजी को देखकर बड़ी नम्रता और मृदुहास्य पूर्वक मीठे २ बचनोंसे राजायुधिष्ठिरने श्रीकृष्णजीसे कहा कि महाबुद्धिमान् प्रतापीपुरुष आपकी रात्रि क्या सुख पूर्वक ब्यतीतहुई हे अबिनाशी जैसेआप के सब बिचार शुद्धहैं इसीप्रकार दैवी बुद्धिभी आपमें है हे भगवन् त्रिलोकी-नाथ हमने राज्य आपकी कृपासे पाया और पृथ्वी हमारे आधीन हुई और हमारी उत्तम बिजय जिसको हमने प्राप्तकी वह नाशमान नहीं है श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर के इस बचनको सुनकर कुछ उत्तरनहीं दिया और ध्यानही में बैठेरहे २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेपंचचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

छियालीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरने कहा कि हे महापराक्रमी बड़ा आश्चर्य्य है कि तुम भी ध्यान करतेहौ हेत्रिलोकी के उत्पन्न करने वाले क्या इस त्रिलोकीमें कुशलहै क्यों-कि आप सरीके पुरुष देवोंके देव होके तीनों अवस्थाओंसे हटकर जो चौथी अवस्थामें प्राप्त हुये इससे मेरे चित्त को आश्चर्य्यहुआ प्राणायामादिकों का करने वाला और देहमें फिरने वाला आपका प्राण निश्चल हुआ और शुद्ध

ज्ञान आपके चित्तमें नियतहुये हे गोविन्द आपकी वाणी और मनने बुद्धि में प्रवेशकिया और सबगुण आप सरीके क्षेत्रज्ञ में प्राप्तहुये आपके रोमांचभी नहीं हिलते तुम्हारी बुद्धि और मन स्थिर है इससे हे माधव तुम काष्ठ वा पाषाणके समान निश्चलहो जैसे वायु से रहित स्थान में दीपक निश्चल और प्रकाशित रहता है उसी प्रकार आपभी निश्चेष्ट निश्चल वर्त्तमान हो जो आप इसको गुप्त नहीं रखना चाहते हैं और मुझे समझने का अधिकारी समझते हैं तो ऐसी दशामें मुझ सन्देही के सन्देह को निवृत्तकरो हे पुरुषोत्तम आपही कर्त्ता अकर्त्ता मायाके प्रवर्त्तक अविनाशी आदि अन्त रहित सबके आदि होकर तुम इस कारण मुझ नीचे शिखाले से कहने के योग्यहो तदनन्तर इन्द्रियों को यथास्थानों में नियत करके मन्दमुसक्यानसे श्रीकृष्णजी युधिष्ठिर से बोले कि शरशय्यापर वर्त्तमान अग्नि के समान शान्त होने वाला पुरुषोत्तम भीष्म मुझको ध्यानकर ताहै इस से मेरा चित्त उसमें गया वज्र के समान जिसकी प्रत्यंचा के शब्द को देवराज इन्द्र भी सुनने को असमर्थ होताहै उसको मैं प्राप्त हुआहूं जिसने बड़े पराक्रम से सम्पूर्ण राजाओं की विजय करके वह तीनोंकन्या बिवाहीं और जो तेईस दिनतक परशुराम जीसे युद्ध करता हुआ रोमांच से भी खण्डित न हुआ वह सब इन्द्रियों को इकट्ठा करके और चित्त को ज्ञान के द्वारा आधीन कर के मेरी शरण में प्राप्त हुआ और श्रीगंगाजी ने जिसको गर्भ में धारण किया और वशिष्ठजी का शिष्य होकर बड़ा तेजस्वी बुद्धिमान् दिव्यअस्त्रों का और अंगों के साथ चारों वेदों का जानने वाला है और हे पाण्डव जमदग्निजी के पुत्र परशुराम जीके शिष्य सब विद्याओं के मूलस्थान उस भीष्मको मैं चित्त से प्राप्त हुआ हूं सो हे युधिष्ठिर वह तीनों काल का जानने वाला धर्म्मज्ञों में उत्तम है उस पुरुषोत्तम के स्वर्गवासी होजाने में पृथ्वी ऐसी होजायगी जैसे चन्द्रमा के बिना रात्रि होती है सो हे युधिष्ठिर तुम गंगाजी के पुत्र महापराक्रमी तेजस्वी सत्यवक्ता भीष्मजीके पास बैठ कर उन सब प्रश्नों को करो जो तेरे चित्त में वर्त्तमानहैं और अर्थ धर्म्म काम मोक्ष और चारों विद्या चारों आश्रमों के धर्म्म और सब राजधर्म्मों को उससे पूछो कौरवोंके धुरन्धर उस भीष्मपितामह के अस्त होने पर सब धर्म्म भी अस्तंगत होजायँगे इससे मैं तुमको सलाह करताहूं अश्रुपात डालनेवाले युधिष्ठिर ने वासुदेव जी के उन उत्तम वचनों को सुनकर उत्तरदिया कि हे मथुरावासी वह ऐसेही हैं मैं निस्सन्देह जानताहूं क्योंकि मैंने बड़े २ महात्मा ब्राह्मणों के मुखसे भीष्मजी का प्रभाव और माहात्म्य अच्छे प्रकारसे सुना है हे यादवेन्द्र जैसा आप कहते हैं वह ठीकहीहै हे माधव जो आपकी मेरे

ऊपर कृपा है ऐसी दशा में हम आपको मुख्य करके भीष्मजी के पास जावेंगे और सूर्य भगवान् के लौटनेपर वह परम धाम को जायँगे इससे हे महाबाहु वह कौरवोत्तम भीष्म आप के दर्शन पाने के योग्य हैं तुमहीं ब्रह्मरूप देवताओं के देवता सगुण निर्गुण रूपमय होकर भीष्मजी को दर्शन दो यह बचन युधिष्ठिर के सुनकर श्रीमधुसूदन ने सात्यकी से कहा कि मेरा रथ जोड़ो सात्यकी ने शीघ्रही दारुक सारथी को हुक्म दिया कि बहुत जल्द श्रीकृष्णजीका रथ जोतकर लाओ उसने आज्ञा पातेही कृष्णके स्वर्णमयीरथ को जोतकर तैयारकिया और हाथजोड़कर श्रीकृष्णजीसे निवेदनाकिया ३५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेषट्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

सैंतालीसवां अध्याय ॥

जनमेजयने कहा कि हे वैशम्पायनजी शरशय्यापर सोने वाले भरतवंशियों के पितामह भीष्मजीने किस प्रकार से कौनसे योग को धारण करके देहको त्याग किया वैशम्पायन बोले कि हे महाराज आप सावधानहो पवित्र चित्त और नियमको दृढ़करके महात्मा भीष्मजीके देह त्याग के वर्णन को सुनो उत्तरायण सूर्य्य होनेपर भीष्मजी ने समाधि में स्थित होकर जीवात्माको परमात्मा में लगाया और सैकड़ों बाणोंसे छिदेहुये सूर्य्यके समान तेजस्वी भीष्मजी बड़े२ महात्मा ब्राह्मणोंसे घिरेहुये महा शोभावान् हुये उनके चारों ओर वेदव्यास, नारद, देवस्थान, वात्स्यायन, अस्मक, सुमन्त, जैमिनि, पैल, शांडिल्य, देवल, मैत्रेय, असित, वशिष्ठ, कौशिक, हारीत, लोमश, अत्रि, बृहस्पति, शुक्र, च्यवन, सनत्कुमार, कपिल, बाल्मीकि, तुम्बुरु कुरु, मौद्गल्य, परशुराम, सुनि, पिप्पल, पुलह, संबर्त्त, कच, कश्यप पुलस्ति, चक्रत,दक्ष, पराशर, मरीचि, अंगिरस, गौतम, गालव, धौम्य, विभाण्डव, माण्डव, धौम्य, कृष्णानुभौतिक, उलूक, मार्कण्डेय, भास्कर, पूरण कृष्णसूत इत्यादि महात्मा अपने२ अधिकारयुक्त सुन्दर आसनोंपर विराजमानथे ऐसी दशामें बर्त्तमान शरशय्यापर शोभित भीष्मपितामहने श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्दको स्मरण किया तदनन्तर बड़े महात्मा धर्म्मज्ञभीष्मजीने उस योगेश्वर कमलनाभ सर्वव्यापी जगत्केस्वामी श्रीवासुदेव श्रीकृष्णजीकी स्तुतिकरी और कहा कि मैं श्रीकृष्णजी के आराधनकरनेकी इच्छाकरके जिस बचनको कहना चाहताहूं उसबचनसे वह आदिपुरुष मेरेऊपर प्रसन्नहो अब आशिष कहतेहैं कि मैं सर्वात्मासे आत्माको त्यागकरके उनदोषोंसेरहित पवित्रमार्गी सबसेउत्तम जो तत्त्वमासि महावाक्यहै उसकेतत्पदका अर्थरूप हिरण्यगर्भ प्रजाके स्वामी ईश्वरको प्राप्तहोताहूं देवता और ऋषियोंनेभी उसअनादि

परब्रह्मको नजाना यह धाता नारायण भगवान् हरि अकेला आपको जानता है सिद्धऋषिमुनियोंके समूह और देवता यक्ष गन्धर्व राक्षस पन्नग दैत्य दानव आदि जिसको नहींजानतेहैं कि यह ईश्वर कौनहै और कहांसे कबआयाहै जिस जीवों के ईश्वर में तीनों गुणसे उत्पन्न होनेवाले संसारी जीव ऐसे ठहरते और प्रवेश करते हैं जैसे कि सूत्र में मणियों के समूह नियतहोते हैं ऐसे परमात्मा हरिको सहस्र शिर और सहस्र चरण सहस्र भुजा मुकुटमुखवाला नारायण विश्व परायण सूक्ष्मसे सूक्ष्म स्थूल से स्थूल गुरुसे गुरु श्रेष्ठों से श्रेष्ठ तमकहा और जिसको वेद और उपनिषद्आदि साममंत्रोंमें ध्यानकरतेहैं और वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध इन चारों नामोंसे और अन्य गुप्त उत्तम नामोंसे ब्रह्मजीव मन अहंकार रखनेवाली बुद्धिसे प्रकटहोनेवाले जिन भक्तों के स्वामी को पूजते हैं वहतप जो उसकी प्रीतिके निमित्त किया गया और जिसकेद्वारा वह हरसमय चित्तमें नियतहोताहै और सबका आत्मा और पैदा करनेवाला और जाननेवाला सर्वरूपहै मैं उसको प्राप्तहोता हूं और जिसको श्रीदेवकीजीने वेदब्राह्मण और यज्ञोंकी रक्षाकेनिमित्त वसुदेवजीकेद्वारा उत्पन्न किया जैसे कि अरणी काष्ठअग्निको उत्पन्नकरताहैजो द्वैतभावको त्यागकर अनिच्छायुक्तपुरुष मोक्षकेलिये उपाधि और पापोंसे जुदा सबके ईश्वरगोविन्द जीकोसूक्ष्म बुद्धिसे हृदयकेआकाशमें देखताहै और जो प्राण इन्द्रियोंको उल्लं-घनकर कर्म्मकरनेवाला सूर्यादिसेभी अधिक प्रकाशवान मनबुद्धि चित्तसे परे हैं उस संसार के स्वामीको प्राप्त होताहूं और पुराणोंमें पुरुष और यज्ञादिकोंमें जिसको ब्रह्म कहा और संसारके नाशमें संकर्षण कहा उस उपासनाके योग्य की उपासनाकरते हैं द्वैतसे भिन्न क्रियावान् भक्त पुरुष जिस एक और अने-क रूपसे प्रकट होने वाले की पूजा करते हैं उसीको जगत का आश्रयरूप भंडार कहा जिस में कि सब संसार वर्त्तमान है और जिसमें सब जीव ऐसे चेष्टाकरते हैं जैसे कि जल में पक्षी क्रीड़ाकरें जिस के आदि अन्त को देवता ऋषि गंधर्व यक्ष राक्षस सर्प आदि कोई नहीं जान सक्ताहै और सब जिते-न्द्री लोग उस अविनाशी और महा दुःखकी औषधि को पूजते हैं और जो आदि अन्त रहित सनातन आत्मयोनि अदृष्ट जाना नहीं जाता हरिनारा-यण प्रभु और जिसको सब स्थावर जंगमजीवोंका स्वामी अविनाशी परम्पद रूप कहते हैं और जिस दैत्यों के नाश करनेवाले सुवर्ण वर्ण एक गर्भ को अदिति ने बारह प्रकार से उत्पन्न किया उस सूर्य्य रूप आत्मा को नमस्कार है और जो शुक्लपक्ष में देवताओं को और कृष्णपक्ष में पितरों को अमृतसे तृप्तकरता है वह ब्राह्मणोंका राजाहै और अमावसके चन्द्रमा रूपको नमस्कार है जो बड़े अंधकार के अन्त में जिस महा तेजस्वी पुरुषको जानके मृत्युको

उल्लंघन करता है उसउपासना योग्य आत्मा को नमस्कार और जिस ब्रह्म को बड़ी२ ऋचाओं से अग्निस्थापनादि बड़े२ यज्ञों में ब्राह्मणों के समूह गाते हैं उस वेद आत्मा को नमस्कार और ऋग् यजु साम यह तीनों वेद जिस के धाम हैं और पंच हव्य जिसका रूप है और जिस को साततार गायत्री आदि विस्तार करतेहैं उस यज्ञात्माको नमस्कार और जो २ नानामंत्रों से होमा जाताहै उस होमात्माको नमस्कार उस यज्ञरूप सरूप आत्माको नमस्कार जिसको वचनरूपअंग और संधिरूप अंगुष्ठ आदि रखनेवाला सुरंजनरूप भूषणोंसे भूषित दिव्य और अक्षरकहा उसवागात्माके अर्थ नमस्कार और जिस यज्ञोंके अंगरूपने वराहहोकर तीनों लोकों का हितकरने के हेतु पृथ्वी को ऊपर उठाया उस यज्ञरूप वीरात्माको नमस्कार जो पुरुष वेदमें कहीहुई मोक्षकी देनेवाली युक्तियों से और धर्म्म अर्थ ब्यवहार और उसके अंगोंसे सत्पुरुषोंके पुल अर्थात् योगधर्म्म को तैयार करताहै उससत्यात्माके अर्थ नमस्कार पृथक् २ धर्म्मकरनेवाले और पृथक् कर्म्मफलके चाहनेवाले पुरुष जुदेजुदे धर्मोंसे जिसको अच्छीतरहपूजते हैं उसधर्मात्माको नमस्कार जिस कामदेवके अंगोंसे सब देहधारी उत्पन्नहोतेहैं वह शरीरके उन्मादरूप कामात्माको नमस्कार महर्षिलोग देह में वर्त्तमान अर्थात् देहरूपी क्षेत्र में बिराजमान दृष्टिमें न आनेवाले क्षेत्रज्ञको निश्चयकरके खोजते हैं उसक्षेत्रज्ञ आत्माके अर्थ नमस्कार है सांख्यशास्त्र वालोंने जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तीनों अवस्थावान सोलहगुण सम्पन्न चैतन्यको सत्रहवां कहा उस सांख्य आत्मा को नमस्कार आत्माको परम आत्मा में मिलानेवाले और निन्दा से रहित श्वासाजीतनेवाले बुद्धी में वर्त्तमान अच्छेजितेन्द्रीपुरुष जिसको ज्योतिरूप देखतेहैं उस योगात्माके अर्थ नमस्कारहै पाप पुण्य के दूरहोनेपर संसार से निर्भय शान्तरूप संन्यासी जिसको प्राप्तकरतेहैं उसमोक्ष आत्माको नमस्कार हजारयुगके अन्त में जो देदीप्यमान अग्नि सम्पूर्ण संसारको अच्छे प्रकारसे भक्षणकरतीहै उस घोरात्मारूप के अर्थ नमस्कार जो महापुरुष सब जीवोंको अपने आत्मामें लयकरके जगत्को एक रसकर बालकरूप होता है उस मायात्माको नमस्कार और जिस अजन्मा कमललोचन की नाभि में कमल उत्पन्नहुआ और जिस कमल में यहसब विश्वस्थिरहै उस परमात्माको नमस्कार हजार शिर रखनेवाले अनन्तपुरुषके अर्थ नमस्कार जिसके शिरके बालोंमें बादल और सबदेह के जोड़ों में नदियां और कोखमें चारों समुद्रहैं उसजल आत्माको नमस्कार जिससे महाप्रलय की सब विपरीत सूरत पैदा होतीहैं और जिसमें लयहोतेहैं उस हेत्वात्माको नमस्कार जो रात्रिमें अर्थात सुषुप्ती में साक्षीहोजाय और जाग्रतमें निष्फल निष्कामहोताहै और प्रिय

और अप्रियका कर्त्ता नहीं है उस दृष्टात्माको नमस्कारहै जो बिना रोक सब
कर्म्मों में और धर्म्म कार्य्यों में तैयार वैकुण्ठका रूपहै उस कार्य्यात्मा के अर्थ
नमस्कार जिस क्रोधाग्नि ने धर्म्म त्याग पशुवत् क्षत्रियों को इक्कीसबारयुद्ध
में मारा उस कर्म्मात्मा के अर्थ नमस्कार है जो अपने को पञ्चप्राणरूप होकर
देह में वर्त्तमान वायुरूप होकर जीवों को चेष्टावान करता है उस वायुआत्माके
अर्थ नमस्कार जो योगमाया के बलसे सतयुग आदि युगों में अवतार लेता
है और मास ऋतु दक्षिणायन उत्तरायण वर्ष इनसब के हिसाब से उत्पत्ति और
प्रलय का कर्त्ता है उस कालात्मा के अर्थ नमस्कार जिसका मुख ब्राह्मण और
दोनों भुजा क्षत्री और सब जंघा और पेट वैश्य हैं और शूद्र जिसके चरणों में
रक्षावान हैं उस वरण आत्मा को नमस्कार जिसका मुख अग्नि मस्तक स्वर्ग
नाभि आकाश चरण पृथ्वी नेत्र सूर्य्य कान दिशाहैं उसलोकात्माको नमस्कार
जो काल से और युगसे परे परजन्य हिरण्यगर्भ है उससे परे जो मायोपहित
अर्थात् मायासे ढका जो ईश्वर है उससे भी परे है अर्थात् शुद्ध ब्रह्म है जि
की आदि नहीं और वह विश्वका आदि है उस विश्वात्माको नमस्कार विषय
में कर्म्म करनेवालों को अनादर करके वैशेषिक गुणों अर्थात राग द्वेष
जिसको विषयों का रक्षक कहा उस गुप्तार आत्मा को नमस्कारखाने पीने
वस्तुओं को इन्धन और रस के द्वारा वृद्धिपाने वाला प्राणरूप अग्निहोव
जीवों को धारण करता है उस प्राणात्मा को नमस्कार जो अग्नि देहके भी
के प्राणों की रक्षा के निमित्त अन्नको चारप्रकार से भोजन कराती है अ
परिपक्वकरती है उस पावक रूप आत्मा को नमस्कार जो पिंगलवरण
स्थूलकण्ठ बड़ी दाढ़ नख रूप आयुधधारी रूप दानवेन्द्र का नाशक
उस दृप्त आत्मा को नमस्कार अर्थात् नृसिंह जी को नमस्कार है जिस
देवता गन्धर्व दैत्य और दानव मुख्यता से नहीं जानते उस सूक्ष्मात्मा
नमस्कार जो समर्थ भगवान् शेषजी रसातल में स्थितहोकर सम्पूर्ण संस
को धारण करते हैं उस वीर्य्यात्मा को नमस्कार जो संसार की रक्षा के लि
मोहपाशों से जीवों को मोहता है उस मोहात्मा को नमस्कार इस उत्तम
को पञ्चविषयों में लगा जानकर जिस पुरुष को ज्ञान से प्राप्त करते हैं
ज्ञानात्मा को नमस्कार जिसका स्वरूप ध्यानचक्र से बाहर और सब ओर
ज्ञानरूप नेत्र रखनेवाला है और जिसमें अत्यन्त विषय पैदा होता है
दिव्य आत्मा को नमस्कार सदैव जटा दण्ड धारण किये पेट और देह ल
रखनेवाला और कमण्डलुरूप धनुषधारी है उस ब्रह्मात्मा को नमस्कार है
शूलभागी देवताओं के ईश्वर त्रिनेत्र रखनेवाले महात्मा भस्म से लिप्त देह
अर्द्धांग हैं उस रुद्रात्मा को नमस्कार जो अर्द्धचन्द्रको शिरपै और सर्पों

यज्ञोपवीत किये पिनाक धनुष और शूल हाथ में लिये हैं ऐसे उग्रात्मा को नमस्कार जो सब प्राणियोंका आत्मारूप आदि भूति अर्थात् अहंकार का नाश करनेवाला और काम क्रोध मोह से रहित है उस शान्तात्मा को नमस्कार जिससे सब स्थित हैं और जिससे सबकी उत्पत्तिहै और सर्वरूप है और सर्व ओर है उस सर्वात्मा को नमस्कार है विश्वकर्म्मा विश्वकी आत्मा विश्व के उत्पन्न कर्त्ता आप पञ्चभूत से पृथक् मोक्षरूप हो ऐसे तीनों लोक में वर्त्तमान को नमस्कार है तीनोंलोकों से परे सब दिशाओं में व्याप्त होकर सब के आश्रयस्थान हो हे लोकोत्पादक अविनाशी विष्णु तुमको नमस्कार, हे इन्द्रियों के स्वामी दुर्धर्ष तुमहीं उत्पत्तिकरनेवाले और नाशकर्त्ता हो तीनों मार्ग में आपके दिव्य भाव को नहीं देखता किन्तु आपके सनातनरूपको देखता हूं आपके शिर में स्वर्ग चरणों में देवी पृथ्वी और पराक्रम में तीनों लोक व्याप्त हैं इससे आपही सनातन पुरुषहो आप की भुजा दिशानेत्र सूर्य्य और वीर्य्य प्रजापति हैं और तेजस्वी वायुके सातमार्ग आप ही से रुके हुये हैं जो पुरुष आतसी पुष्प के सदृश पीताम्बरधारी अविनाशी श्रीगोबिन्द जी को नमस्कार करते हैं वह निर्भय होते हैं श्रीकृष्ण जी को एकबार भी प्रणाम करना दश अश्वमेध के अमृत स्नान के तुल्य है दश अश्वमेध करनेवाला तो जन्म पाता है परंतु श्री कृष्ण को नमस्कार करनेवाला फिर जन्म को नहीं पाता जो अहर्निशि श्रीकृष्ण का स्मरण करते हुये कृष्णही का व्रत करते हैं वह ऐसे श्रीकृष्णही में प्रवेश होते हैं जैसे कि मंत्र से होम हुआ घृत अग्निमें लय होता है हे नरकासुर का भय उत्पन्न करनेवालों की रक्षा करनेवाले संसार सागरके पार उतारनेवाले वेद ब्राह्मणों की रक्षा करनेवाले और गौ ब्राह्मण के और जगत् के हितकारी श्रीकृष्ण गोविन्द तुमको नमस्कार हरि यह दोनों अक्षर प्राणों के मार्ग में पांथेय हैं और संसार रूप रोग की औषधि दुःख शोक के नाशक जैसे सब जगत् कृष्णमय है और सत्य विष्णुरूप है उसी प्रकार जगत् विष्णुरूप है जैसे सब विष्णुरूप है उसी प्रकार मेरेपापभी नाशहोयँ हे देवोत्तम कमललोचन आप के शरणागत और इच्छासदृश गतिचाहनेवाले भक्त के लिये जो कल्याणहै उसको ध्यान करो विद्यातपआदिके आलय अजन्मा सर्वव्यापी दुष्टोंका त्रास का वंचनरूप यज्ञोंसे पूजित स्तुतिके योग्य मुझपर प्रसन्नहो नारायणही परब्रह्मनारायणही बड़े देवताआदि पुरुषहैं जब भीष्मजीने इसप्रकार श्रीकृष्णचन्द्रजीको स्तुति करके नमस्कारें करीं तब माधवजी ने योगसे भीष्मजी की भक्तिको जानकर त्रिलोकी दर्शन दिब्यज्ञानदेकर अपनी देहमें फिर आगये फिर भीष्मजी के उस शब्द के बन्दहोनेपर प्रीतिसे भरे गद्गद कण्ठहो उन ब्रह्मवादियोंने उस

बड़ेज्ञानी महात्मा भीष्मजी को वचनों से पूजन किया और श्रीकृष्णजीकी ऐसी स्तुतिकरने से भीष्मजी की बड़ी प्रशंसाकी और श्रीपुरुषोत्तम जी भी योगबल से भीष्मजी की दृढ़भक्तिको जानकर अकस्मात् आनन्दयुक्त उठ कर रथपर सवारहुये और सात्यकी को साथलेकर चलने को उपस्थित हुये और महात्मा युधिष्ठिर अर्जुनसमेत दूसरे रथपरसवारहुये भीमसेन और नकुल सहदेव तीनों एक रथपर सवारहुये परमतपस्वी कृपाचार्य्य सूत संजय सुयुत्सु भी रथोंपर सवारहुये वह सब पुरुषोत्तम रथोंके बड़ेशब्दों से पृथ्वीको कंपायमान करते नगरकेस्वरूप रथोंपर बैठे चलखेड़हुये तदनन्तर उस प्रसन्न चित्तमार्ग में पुरुषोत्तमकी प्रशंसामें प्रवृत्त ब्राह्मणोंके कहेहुये वचनों को सुनकर उस केशी दैत्यके मारनेवाले आनन्दकन्द श्रीकृष्णजीने शिरझुकाये हाथजोड़े हुये दूसरे मनुष्योंको प्रसन्नकिया १०८॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेसप्तचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

अड़तालीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायनजी बोले कि वहांसे वहसब युधिष्ठिरआदि पांचोभाई और श्रीकृष्णजी समेत सबलोग रथोंपर सवार उस कुरुक्षेत्रको गये जहां कि उनक्षत्रियोंने युद्ध में शरीरों को त्याग किया था वहां रथोंसे उतर पर्व्वताकार हाथी और घोड़ोंकेहाड़ और देहोंके समूहोंसे और शंखोंके समान मनुष्योंके कपालोंसे व्याप्त हजारों चिताओंसे चितेहुये अस्त्रोंके खण्डोंसे पूर्ण उस कुरुक्षेत्र को देखतेहुये वह महारथी बड़ीशीघ्रतासे चले और चलतेहीमें श्रीकृष्णजीने परशुराम जीके महापराक्रमको युधिष्ठिरसे कहा कि हे राजा यह पांच परशुरमाजीके हृद दिखाई देतेहैं परशुरामजीने इनहृदों में क्षत्रियों के रुधिरसे उन अपने पितरोंको तृप्तकिया परशुरामजीने इक्कीस बार पृथ्वीको निक्षत्रकरके यहां युद्धसे निवृत्तहुये युधिष्ठिरबोले कि पहलेसमयमें परशुरामजीने जापृथ्वीको इक्कीसवार निक्षत्रकिया इस आपके कथन में मुझे बड़ासन्देह है कि जब परशुरामजीने क्षत्रियों को निर्वंश किया फिर क्षत्रियों के वंशकी उत्पत्ति कैसेहुई सो आप कृपाकरके समझाइये कि कैसे तो परशुरामने पृथ्वीको निक्षत्रकिया और कैसे इसकी वृद्धिहुई हे महावक्ता जब कि करोड़ों क्षत्रियों का नाश हुआ और फिर उसी प्रकार पृथ्वी क्षत्रियों से पूर्णहोगई और महात्मापरशुरामने किसकारण से कुरुक्षेत्र में क्षत्रियों का नाश किया इस मेरे सन्देहको आप निवृत्त कीजिये और हे इन्द्रावर यह वेद आपके वचनों से है आपसे अधिक नहीं है वैशम्पायन बोले कि जब युधिष्ठिर ने ऐसा सन्देह किया तब

पुरुषोत्तम श्रीकृष्णजी ने ब्योरेवार सब वृत्तान्त क्षत्रियोंके नाश और उत्पन्न होनेका कहा ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेअष्टचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

उनचासवां अध्याय ॥

श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि हे युधिष्ठिर उन परशुरामजीका प्रभाव और पराक्रम और जन्म जैसा कि मैंने महर्षियों से सुनाहै वह सब तुम मुझसेसुनो और जैसे परशुरामजीके हाथसे सबक्षत्री मारेगये और पैदा होकर इस महाभारत के युद्धमें संहार कियेगये उनमें जह्नु का पुत्र अज और अजका पुत्र बलाकाश्व उसका बेटा धर्म का जाननेवाला कुशिकनाम पृथ्वीपर इन्द्रके समान महातपीहुआ और उसने चाहा कि मैं तीनोंलोकोंसे अजेय पुत्रको उत्पन्न करूं उस उग्र तपस्यावान् को पुत्रके उत्पन्न करनेमें समर्थ जानकर उस के घर में आप इन्द्रने आकर अवतारलिया और लोकेश्वरोंके ईश्वर इन्द्र उसकी पुत्रतामें प्राप्तहुये अर्थात् कुशिकका पुत्र गाधि नामहुआ और उसकीकन्या सत्यवती हुई कुशिकने उसकन्याकी भृगुजी के पुत्र ऋचीकको बिवाहकरदी ऋचीकमुनिने उस कन्याकी पवित्रता से प्रसन्न होकर उसके बेटेके निमित्त और उसीप्रकार गाधीके बेटेके लिये दो स्थानोंमें चरुकोबनाया अर्थात् दो स्थानोंपर तस्मैबनवाई और उस अपनी स्त्री सत्यवतीको बुलाकर कहा कि यहचरु तुमखाओ और दूसरा अपनी माता गाधी को खानेको दो उसका बेटा क्षत्रियों में उत्तम होकर उत्तम २ क्षत्रियोंका मारनेवाला लोकमें अन्य क्षत्रियों से अजेय उत्पन्न होगा और हे कल्याणी यह तुम्हारा चरु तुम्हारेभी पुत्रको उत्पन्नकरेगा जो धीर्य्यवान् इन्द्रियोंका जीतने वाला तपस्वी ब्राह्मणों में श्रेष्ठ होगा ऐसा अपनी भार्य्या को समझाकर वह तपस्वी महात्माऋचीक ऋषि बनको चलेगये और उसी समय तीर्थयात्रामें तत्पर वह राजा गाधिभी अपनीस्त्री समेत अर्चीकऋषिके आश्रम में आया तो सत्यवतीने उनदोनों चरुओंकोलाकर अपनी माताको भर्त्ताकी आज्ञानुसार बड़ीप्रसन्नतासे दिया और भर्त्ताकी आज्ञाको मातासे कहदिया सो हेयुधिष्ठिर उसकी माताने अपना चरु तो बेटीकोदिया और सत्यवतीने अज्ञानतासे उसके चरुको खालिया तब सत्यवतीने प्रसन्नानन होकर क्षत्रियोंके नाश करनेवाले उग्ररूप दर्शनको गर्भमें धारण किया तब ब्राह्मणों में उत्तम ऋचीक उसके गर्भमें वर्त्तमान ब्राह्मण को जानकर अपनी देवीरूप भार्य्यासे बोले हे कल्याणी चरु के विपरीत होने से तू माता से ठगी गई तेरापुत्र महा क्रोधी और कठिन कर्म करनेवाला होगा और तेरा भाई ब्रह्मरूप और तप में प्रीति रखनेवाला उत्पन्न होगा मैंने

तेरेचरु में विराट्रूप पुरुषका बड़ा ब्रह्मतेज नियत कियाथा और तेरीमाता के चरु में सम्पूर्ण क्षत्रियों का तेज नियत कियाथा सो हे कल्याणी तेरे इस विपरीत चरुहोने से ऐसा नहोगा तेरी माता का बेटा ब्राह्मण होगा और तेरा पुत्र क्षत्रियों का कर्म करनेवाला होगा जब पतिने ऐसा कहा तो सत्यवती गिरपड़ी औ कांपती हुई अपने पति से यह वचन बोली कि हे भगवन् अब आप मुझसे ऐसे वचन न कहिये कि ब्राह्मणों में नीच बेटेको उत्पन्न करेगी ऋचीक बोले कि हे कल्याणी मैंने तुझमें ऐसे पुत्रकी इच्छा नहींकी परन्तु चरुके विपरीत होने से निर्दय कर्म करने वाला पुत्रहोगा सत्यवती बोली कि हे समर्थ मुनि तुम इच्छाकरके लोकोंको भी पैदा करसक्तेहो फिर पुत्रका पैदा करना कितनी बातहै तुम मुझको विजयी ज्ञानवान् भीतरसे सच्चा शूर बुद्धिमान् पुत्र देनेको योग्यहो ऋचीक बोले कि हेकल्याणी मैंने कभी स्वप्नमें भी मिथ्या नहींकहा फिर मंत्रों सहित चरु साधनमें अग्निके समक्ष कैसेकहूंगा हेकल्याणी मैं ने पहले समय में तपके द्वारा इस बातको देखाथा और जाना था कितेरे पिता का सब कुल ब्राह्मण होवे सत्यवती बोली कि हे समर्थ चाहो मेरा और आपका निवेड़ा किसी प्रकार से होवे परन्तु मैं बुद्धिमान् बिजयी धर्मात्मा पुत्र को प्राप्त करूं ऋचीक बोले कि हे प्यारी पुत्र और पौत्र में मेरी सामर्थ नहीं है परन्तु हे कल्याणी जैसा तुम चाहती हो वैसाही होगा इतनी कथा सुनाय वासुदेव जी बोले कि इस के पीछे सत्यवती ने पुत्रको उत्पन्न किया वह तप में प्रीति रखनेवाले सावधान व्रत शान्त रूप भार्गव जमदग्नि नाम से प्रसिद्ध हुये और कुशिकनन्दन गाधिने ब्रह्मरूप विश्वके संपूर्ण ब्रह्मगुणों से संयुक्त विश्वामित्र नाम पुत्र को उत्पन्न किया और ऋचीकने तपका भण्डार जमदग्निजी को उत्पन्न किया फिर उन जमदग्निजीने भी ऐसे पुत्रको उत्पन्नकिया जो बड़े भयके हेतु और धनुर्वेद आदि सब विद्याओं के पारंगत होनेवाला उत्तम प्रकाशमान अग्निके समान तेजस्वी क्षत्रियों के नाशकरने वाले परशुराम नामथे इन परशुरामजीने गन्धमादन पर्वतपर श्रीमहादेवजी को प्रसन्नकरके उनसे अस्त्रोंको और बड़ेतेजस्वी फरसेको पाया उस अकुंठधार महातेजस्वी अग्नि समान प्रकाशित अनन्य फरसेकेद्वारा परशुरामजी लोकोंमें अद्वितीय प्रसिद्धहुये उसीसमय कृतवीर्यकेबेटे पराक्रमी तेजस्वीअर्जुन नाम क्षत्री दत्तात्रेयी ऋषि की कृपासे सहस्रभुजा पानेवाले चक्रवर्त्ती महातेजस्वी राजाने अश्वमेधयज्ञमें पहाड़ और सातों द्वीपों सहित सम्पूर्ण पृथ्वी को वेदपाठी ब्राह्मणों को दान किया हे युधिष्ठिर वह सहस्रभुजा रखनेवाला पराक्रमी अर्जुन पिपासित अग्निदेवतासे भिक्षाके निमित्त प्रार्थित कियागया तब उसराजाने अग्निको भिक्षादी उसके बाणोंकी नोकोंसे प्रकट होनेवाले

पराक्रमी अग्नि देवताने भस्मकरनेकी इच्छासे गांव पुर देश घोसोंको पहाड़ बनस्पति समेत उस सहस्राबाहु की सहायता से भस्म करदिया हवासे बढ़ी हुई उस अग्निने सहस्राबाहु के साथ होकर महात्मा वशिष्ठजी के केवल आश्रम को भस्मकिया तदनन्तर आश्रम भस्म होनेके कारण वशिष्ठजी ने महाक्रोधसे सहस्रार्जुनको शापदिया कि जैसे तैंने मेरे इसबनको त्यागनहीं किया और जलादिया इस कारण परशुरामजी युद्धमें तेरी भुजाओंको काटेंगे उस समय इस शापको उस महातेजस्वी पराक्रमी सदैव विजयी सहस्राबाहु ने सन्देह नाकिया इसीशापके कारण इसके पराक्रमीपुत्र अपने पिताके मारनेमें कारणरूप और अहंकारी और निर्दयहुये और जमदग्निजी की गौकेबछड़ोंको उस हयदेशके बुद्धिमान् राजा सहस्राबाहु के बिना जनाये अपने देशमें लेआये इस कारण महात्मा परशुरामजी से युद्ध हुआ तदनन्तर क्रोधमें भरकर परशुरामजीने सहस्राबाहु की उनभुजाओं को काटकर घूमतेहुये अपने बछड़ोंको आश्रममें लेआये तब सहस्राबाहुके उन अज्ञानी बेटोंने एकताकरके गुप्तआश्रममें जाकर भालोंसे महात्मा जमदग्निजीके शिरको काटडाला उस समय परशुरामजी लकड़ी और कुशाओंके लेनेको बनको चलेगयेथे तदनन्तर आश्रम में पिताको मृतकदेख महाक्रोधाग्नि से प्रज्वलित हो शस्त्र धारणकरके यह प्रतिज्ञाकी कि पृथ्वी को निक्षत्र करूंगा यह कहकर सहस्राबाहु को पुत्र पौत्रादि कुटुम्ब सहित मारकर हयदेशी हजारों उसके भाई बन्धुओं के रुधिर से पृथ्वी पर कीच करदी और क्षत्रियोंको विध्वंसकरके उसी समय क्रिया में युक्त हो बन को चले गये फिर कितने ही हजार वर्ष पीछे स्वाभाविक क्रोध रखनेवाले प्रभु परशुरामजी की महानिंदा हुई अर्थात् विश्वामित्र के पोते ऋभुके पुत्र महातपस्वी पराबसुने उनसे सभा में निन्दाकरके यह कहा कि हे परशुराम ययाति के गिरने पै स्वर्ग नाम यज्ञ में जो प्रतर्दननाम भृगुवंशी आदि सन्तपुरुष आये वह क्या क्षत्रिय नहीं हैं हे परशुराम जी तुम मिथ्या प्रतिज्ञा करनेवालेहो सभामें अपनी प्रशंसाकरते हो और वीर क्षत्रियोंके भय से तुम पर्वतों में आश्रयीभूतहो अब यह पृथ्वी सबओर से क्षत्रियों से व्याप्त हुई यह पराबसु के बचनको सुनकर भार्गवजी ने फिर शस्त्रको हाथ में लिया इसके पीछे जो सैकड़ों क्षत्री परशुरामजी ने छोड़दिये वह वृद्धिपाकर पृथ्वी के स्वामी हुये हे राजा फिर परशुरामजी ने उन बालकों को भी मारा तब फिर भी गर्भों में वर्त्तमान बालकों के उत्पन्न होने से पृथ्वी व्याप्त हुई फिर उसने उनको भी मारा तब क्षत्रियों की स्त्रियों ने कितनेही पुत्रों की रक्षाकी इसी प्रकार इक्कीसवार परशुरामजी ने पृथ्वीको निक्षत्रकर अन्त को अश्वमेध यज्ञ में कश्यपजी को यज्ञ दक्षिणा में दान

करदी तब कश्यपजी ने क्षत्रियों के शेष रहने के निमित्त यज्ञका श्रुवारखने वाले हाथ से बुलाकर परशुरामजी से यह वचन कहा कि हे मुनि तुम दक्षिण समुद्र के किनारे जाओ और यहां मेरेदेश में तुमको कभी न रहना चाहिये तदनन्तर उस समुद्र ने अकस्मात् उन परशुराम जी के शूरपारकनाम देशको उत्पन्न किया जो कि पृथ्वी से जुदागिनाजाता है और कश्यपजी इस पृथ्वी कोले ब्राह्मणोंको स्वाधीन करके महावनमें चलेगये फिर वैश्य और शूद्र स्वेच्छाचारी होकर ब्राह्मणोंकी स्त्रियों से कुकर्म करनेलगे इस जीवलोक के वे राजा होने से निर्बल मनुष्य सबलों से अधिकतर पीड़ावान् होनेलगे और ब्राह्मणों में किसी की प्रतिष्ठा नहीं रही इसके पीछे पृथ्वी समय के विपर्य्यय से नष्टबुद्धियों के हाथ से पीड़ितहुई और वे मर्य्यादा होने से रसातलको चलीगई जोकि धर्म्म की रक्षा करनेवाले क्षत्रियों से बुद्धि के अनुसार रक्षा नहीं कीगई इसकारण भयभीत होकर भागजानेवाली उस पृथ्वीको देखकर बड़े साहसी कश्यपजी ने उसको जंघा से धारण किया इसी कारण उसका नाम उर्व्वी हुआ और उस देवी पृथ्वी ने कश्यपजी को प्रसन्न करके अपनी रक्षाके लिये प्रार्थनाकरी कि कोई राजा हमारी रक्षा करे और कहा कि हे ब्रह्मन् हैहयकुलकी स्त्रियोंमें मुझ से रक्षित क्षत्रिय लोग उत्तमहैं वही मेरी रक्षा करें उनमें वेदपाठी पौरववंशी विदूरथका पुत्र वर्त्तमान है वह ऋक्षवत् पर्व्वत में वहां के ऋक्षों से रक्षित किया गयाहै उसीप्रकार यज्ञ करनेवाले बड़े दयावान् तेजस्वी पराशरजी ने राजा सुदास के बेटेकी रक्षा करी है वह क्षत्रीभी शूद्रभृत्यके समान उनके सबकामोंको करताहै इसकारण शूद्रकर्म नाम प्रसिद्धहुआ वह मेरीरक्षाकरे, शिवीका महातेजस्वी गोपतिनामपुत्र बनमें गौओंके दूधसे पोषणकियागयाहै वह मेरी रक्षाकरे और प्रतर्दनका पुत्र बड़ा पराक्रमी वत्सनाम गोशालामें बछड़ोंके संगमें रक्षा कियागया वह राजा मेरी रक्षाकरे दधिवाहनका पौत्र दिविरथकाबेटा गंगाजीके किनारेपर गौतमऋषिसे रक्षित होकर महातेजस्वी महाभाग बृहद्रथनाम गिरिधरकोटिनाम पर्व्वतमें गोलांगूलनाम वानरों से रक्षित कियागया है मरुतके वंश में जो क्षत्रियों के लड़के रक्षा कियेगये वह इन्द्रके समान पराक्रमी समुद्र से पोषण कियेगये हैं वह क्षत्रियों के पुत्र जहां तहां सैमार सुनार आदिकी जाति में रक्षाकिये गयेहैं वह मेरी रक्षाकरनेही अचलहोंगे उनके बाप दादे मेरेही निमित्त युद्धमें परशुरामजीके हाथसे मारेगये इस कारण उनसे अऋणहोनेके लिये मुझे उन का पूजन करना चाहिये मैं धर्म्महीन पुरुषसे अपनी रक्षा कभी नहीं चाहती धर्म्मात्मा राजाके कारण ठहर सक्ती हूं इससे शीघ्र विचारकीजिये तब कश्यपजीने पृथ्वी के बताये हुये उन पराक्रमी क्षत्री राजाओं को बुलाकर अ-

भिषेक कराया उनके बेटेपोते होकर वंशानियतहुये इसप्रकारका यहप्राचीन इतिहासहै यह सब इतिहास कहतेहुये महातेजस्वी श्रीकृष्णचन्द्र जी रथ में चढ़हुये बड़ी शीघ्रतासे गये ६० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मैकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ४९ ॥

पचासवां अध्याय ॥

वैशम्पायनबोले कि श्रीकृष्ण से यह इतिहास सुनकर राजायुधिष्ठिर ने श्रीकृष्णजीसे कहा कि हेमहाराज परशुरामजी का पराक्रम इन्द्रके समान है जिसने कि क्रोधसे पृथ्वीको निक्षत्र किया और उनके भयसे क्षत्रियोंके बालक व्याकुलहोकर गौसमुद्र गोलांगु रीछबानरोंसे रक्षाकियेगये इससे आश्चर्य है और यहनरलोक भी धन्यहै और पृथ्वीपर सब मनुष्य प्रारब्धी हैं जहां पर ब्राह्मणोंने ऐसा धर्म्मरूप कर्म्म किया अर्थात् क्षत्रियोंको पापोंसे मोक्षकरके स्वर्गवासी किया हेराजा श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर यह संवाद कहतेहुये वहां पहुंचे जहां शरशय्या पर पड़ेहुये श्रीगंगाजीके पुत्र भीष्मजी वर्त्तमानथे वहां जाके सूर्य्यके समान तेजसे भरेहुये महाप्रतापी भीष्मजीका दर्शन किया वह भीष्मजी बड़े धर्मिष्ठदेशमें ओघवतीनदीके तटपर देवताओं से सेवित इन्द्रके समान मुनि ऋषियोंसे घिरेहुयेथे उनको दूरसे देखकर श्रीकृष्णजी युधिष्ठिर आदि पांचोभाई और कृपाचार्य्यआदि सबसाथियों समेत सवारियों से उतर चंचलमनको स्थिरकरके उन महामुनियोंमें जाकर विराजमानहुये फिर गोबिन्दजी सात्यिकी और सब पाण्डव आदि व्यासजी को दण्डवत् करके भीष्मजीके आगे जाकर खड़े हुये और उनको उसदशामें देख प्रणामादिक करके और उनके चारों ओर परिधि समानहो बैठगये तदनन्तर श्रीकेशवजीने चित्त को ग्लानकरके भीष्मजीसे कहा कि हे महावक्ता आपके सर्वज्ञान पूर्व्वके समान शुद्ध हैं और आपकी बुद्धि व्याकुल तो नहीं है और बाणों की चोटोंके दुःख से आपकादेह पीड़ित तो नहीं है चित्तके दुःख से देहका दुःख महाप्रबलहै हे समर्थ आपसदैव धर्मकरने वाले शन्तनु पिताके वरदानसे इच्छापूर्वक मृत्यु चाहनेवाले हो यह पिताका आनन्द मुझको भी प्राप्तनहीं है यह अत्यंत सूक्ष्मभाले भी देहमें पीड़ाकरतीहैं सो हे महात्मा आपसरीखे इतनेबाणोंसे भिदेहुयेको क्यों न पीड़ाहोगी जीवोंकी यह मुख्यता और नाश आपके सामने कहने के योग्य नहींहै अर्थात् आपसर्वज्ञहो और ऐसे प्रतापीहो कि देवताओं के भी उपदेश करनेको समर्थ हो हे भीष्मजी जो भूत भविष्य वर्त्तमानहै वह सब तुम्हारी वृद्धिबुद्धिमें वर्त्तमानहै और जीवोंका नाश और धर्म्मके फलका प्रकाश आपका जानाहुआ है तुमहीं धर्म्मरूप नदीहो आप निरोगदेह राज्य

में वर्त्तमान हजारों स्त्रियों से व्याप्तहोकर भी मुझको ऊर्ध्वरेता दीखतेहो महाराज तीनों लोकमें सच्चे धर्म्मवाले महा पराक्रमी शूरश्रेष्ठ केले धर्म्ममें प्रवृ उसमृत्युको रोकेहुये तपके द्वारा शरशय्यापर सोनेवाले सिवाय भीष्मजी किसीनामी पुरुषको संसारमें नहीं सुनते हैं सत्य, तप, दान और यज्ञ अधिकरण धनुर्वेद और वेदों की विज्ञता और सदैव संसार की रक्षाकरनेवा ला आप के सिवाय किसी को नहीं देखता हूं और आप के समान किसी महारथी को दयावान् पवित्र जितेन्द्री और सबों को उपकारी किसी को नहीं सुनते हैं तुमहीं एक रथ के द्वारा देवता यक्ष गन्धर्व दैत्य राक्षसों के विजय करने को समर्थ हो हे महाभुज भीष्म तुम ब्राह्मणों के और वसुओं के अंश से मिले हुये नवम वसु हो परन्तु गुणों में उनके नवम नहीं हो हे पुरु षोत्तम जो तुमहो उसे मैं अच्छे प्रकार से जानता हूं तुम पराक्रम के द्वारा देवताओं में भी प्रसिद्ध हो हे श्रेष्ठ मैंने आपके समान संसार में कोई गुणी न देखाहै न सुनाहै इससे हे भीष्मतुम सब गुणोंमें देवताओं से भी अधिकहो आप अपने तपके बलसे सब स्थावर जंगमजीवोंके उत्पन्न करनेको भी समर्थ हो ऐसे होकर आपते शुद्धप्रकाशवान् लोकोंको क्योंनहीं प्राप्तकरोगे हे भीष्म आप इसजातिवालों के नाशसे दुःखी राजा युधिष्ठिर के शोकको दूरकरने को योग्यहो हे भरत वंशीचारोंवर्णके धर्म्म जो चारों आश्रमोंके धर्म्मोंसे मिले हुयेहैं वह सब आपके जानेहुयेहैं चारों विद्या और शालुहोत्र में जो धर्म्मकहे और सांख्ययोगमें जो सनातन धर्म्मवर्त्तमान है और चारोंवर्णोंका जोधर्म एक दूसरे से विरुद्धनहींहै वह सेवन कियाहुआ धर्म्म क्रम पूर्वक आप का जानाहुआ है और प्रतिलोमसे उत्पन्नों के धर्म्मों को भी आप जानते हैं और देशजातिकुलके धर्म्म और लक्षणोंको भी जानतेहो वेदोंमें कहाहुआ और श्रेष्ठलोगोंका उपदेश कियाहुआ धर्म्म अच्छे प्रकारसे आपका जाना हुआहै और इतिहास पुराणोंका भी अभिप्राय अच्छेप्रकारसे आपका जाना हुआहै और आपके चित्तमें सम्पूर्ण धर्म्मशास्त्र वर्त्तमानहैं हे पुरुषोत्तम इस लोकमें जो कोई अर्थ संशयमें पड़हुये हैं उनशोकों का दूरकरनेवाला आप के समान कोईनहीं है हे नरेन्द्र वह पाण्डवों के चित्तका शोक अपनी बुद्धि से आप निवृत्त करिये आप सरीखे महान् बुद्धिमान्पुरुष मोहित जीवकी शान्तिके अर्थहोतेहैं ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेपंचाशत्तमोऽध्यायः ५० ॥

इक्यावनवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि भीष्मजी श्रीकृष्णजीके इनवचनोंको सुनकर कुछ

मुखको उठाकर हाथ जोड़कर बोले हे भगवन् श्रीकृष्णजी तुमको नमस्कार और हे जीवों के उत्पत्तिनाशक आपही इंद्रियों के स्वामी और संसार के ईश्वर नाशकर्त्ता अजेयहौ और हे विश्वात्मा विश्वकर्म्मा विश्व के उत्पत्ति स्थान आपको नमस्कार पंचतत्त्वोंसे परे मोक्षरूप तीनों लोकों में वर्त्तमान और तीनोंसेपरे आपको नमस्कार हे योगेश्वर तुमहीं सबके मुख्य आश्रयहो सो हे माधव आपने मुझसे सम्बंध रखनेवाले जैसे बचन कहे उसीसे आपके दिब्य भावोंको देखताहूं जो कि तीनों मार्गोंमें बर्त्तमान हैं और गोविन्दजी में आपके सनातन रूपको देखताहूं महातेजवान् वायुके सातोंमार्ग तुमही से रुकेहुयेहैं आपके शिरसे स्वर्ग और चरणोंसे देवी पृथ्वी व्याप्तहै दिशा भुजा और सूर्य्य नेत्रहैं और पराक्रमसे वीर्य्य नियतहै अतसी पुष्पके समान पीत पीताम्बर धारी अजेय और विद्युत वाले बादलके समान आपके रूपको बिचारताहूं हे देवताओंमें उत्तम कमल लोचन तुम अपनी प्यारी गति प्राप्त करने के इच्छावान् होके अपने शरणागत भक्तके लिये जो कल्याणहै उस को ध्यानकरो वासुदेवजी बोले हे पुरुषोत्तम राजा भीष्म निश्चय करकेजिस हेतुसे तुझमें मेरी परमभक्ति है उसी कारण मैंने अपना दिब्यरूप तुमको दिखाया और हे भीष्म जो पुरुष कि भक्तनहींहै और भक्तहोकरभी सरलचित्त और शान्त नहींहै उसकोमैं अपने रूपका दर्शननहीं देता आप मेरेभक्त सदैवसत्य आचरणोंमें बर्त्तमान शान्त चित्त तपदानमें शीलिमान पवित्रहो इससे हे राजा भीष्म अपने तपके प्रतापसे मेरे दर्शनके योग्यहो वह सब लोक आपके साम्हने वर्त्तमानहैं जिनमें जाकर फिर नहीं लौटताहै हे कौरवेन्द्र तेरेजीनेके तीस दिवस बाकी हैं वह सौदिनके समानहैं तब तुम इस देहको त्यागकर अच्छे कर्म्मों के उदय से प्रकाशित होगे अग्निके समान तेजस्वी अग्नि वर्ण गुप्त रूप वसुदेवता बिमानों पर सवार होकर तुम्हारी और उत्तरायण होने वाले सूर्य्यकी बाट देखरहेहैं हे पुरुषोत्तम उत्तरायण भगवान् सूर्य्य के होनेमें और जगत् काल के आधीन होनेपर उनलोकों को जाओगे जहां जाकर वह ज्ञानी फिर लौटकर नहीं आता है हे वीर भीष्मजी आपको परलोक जाने परसब ज्ञान नष्टताको प्राप्तहोंगे इस कारणहम सब धर्म्मके निश्चय करने के निमित्त आप के पास आये हैं इससे आपइस सत्य प्रतिज्ञ और जाति वालोंके शोक से ज्ञान नष्ट युधिष्ठिर के निमित्त धर्म्म अर्थ समाधि संयुक्त सीधे और सत्य २ बचनों को कहौ और इसके संतापको दूरकरो १८॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मेएकपंचाशत्तमोऽध्यायः ५१॥

बावनवां अध्याय॥

वैशंपायन बोले कि श्रीकृष्ण जीके उस वचन को सुनकर जो धर्म्म अर्थ से संयुक्त सबका हितकारीथा भीष्मजी हाथ जोड़कर यह बोले हे लोकनाथ शिवनारायण महाबाहु अविनाशी श्रीकृष्ण जी मैं आपके वचनों को सुन कर बड़ाही प्रसन्नहूं हे स्वामी मैं आपके सम्मुख क्या वचन कहूंगा जब सब संसारके वचन आपके दिव्य वचनों में अन्तर्गतहैं हे देव इसलोक में जो कुछ करनेके योग्य है और जो कियाजाता है वह दोनों लोकों के उपकारी कर्म तुझ बुद्धिमान् से उत्पन्न हुयेहैं जैसे पुरुष देवराजके सन्मुख देवलोक का वर्णन करे वैसेही आपके सन्मुख धर्म्म अर्थ काम मोक्षका बृत्तांत कहना है हे मधुसूदनजी मेरा चित्त बाणोंकी पीड़ासे पीड़ित है और अंगों में क्लेश है और बुद्धिमें शुद्धी नहीं होती और कोई बात कहनेकी मुझमें सामर्थ्यवान् बुद्धि नहींहै हे गोविन्दजी जोकि मैं बाणोंसे विष अग्निके समान पीड़ावान् हूं पराक्रम मुझको छोड़ताहै और प्राण भी शीघ्रता कर रहेहैं मर्म्म स्थान में बड़ी पीड़ाहै इससे मैं भ्रान्ति में डूबाहुआहूं निर्बलतासे मेरा वचन रुकताहै सो मैं किस प्रकारसे कहने को समर्थहूं सो हे दाशार्ह आपमुझसे प्रसन्नहैं इसीसे सब अच्छाहै हे महाबाहु अजेय मुझको क्षमाकीजिये मैं आपके साम्हने क्या कहसक्ताहूं आपके साम्हने बृहस्पति जीकी भी बोलनेकी सामर्थ्य नहीं मैं इस समय दिशा आकाश और पृथ्वीको नहीं पहिंचानताहूं हे मधुसूदन जी मैं केवल आपकी सामर्थ्यसे वर्त्तमानहूं इससे आप शीघ्रही कहिये जो धर्म्मराजको अभीष्ट है तुम सब शास्त्रोंके भी शास्त्रहो तुम्हारे साक्षात्कार में मुझसा कौन पुरुष किसप्रकार शास्त्रको वर्णन करै जैसे कि गुरुके वर्त्तमान होने पर कोई शिष्य शास्त्र कहै फिर वासुदेवजी बोले कि हे कौरवोंके धुरन्धर महाबली बुद्धिमान् सब अर्थों के दर्शी शान्त स्वभाव भीष्म जी यह वचन आपही में वर्त्तमान और योग्यहै हे गांगेयजी जो आपनेबाणों की पीड़ाके विषय में मुझसे कहा सो हे समर्थ भीष्मजी यहां मेरी प्रसन्नता से प्राप्त होने वाले वरदानको लो कि तुमको ग्लानि मूर्च्छा दाह पीड़ाआदि कोई व्यथा न होगी और क्षुधा पिपासा भी न होगी और हे निष्पाप तुम्हारे सबज्ञान प्रकाशित होंगे और कहीं भी आपकी बुद्धि नहीं रुकैगी और सदैव आपका चित्त सतोगुण में वर्त्तमान रजोगुण तमोगुणसे पृथक् रहैगा जैसे कि चंद्रमा बादलोंसे जुदाहो तुम धर्म्मसे संयुक्त या अर्थसे संयुक्त जिस २ बात को विचारोगे उसमें आपकी बुद्धिश्रेष्ठ रहैगी और तुम दिव्यदृष्टिको पाकर इसचारप्रकारके जीवोंके समूहोंको देखोगे फिर ज्ञान रूप अक्षको पाकर तुम

इस घूमने वाले प्रजाके जालको मुख्यतासे देखोगे जैसे कि जलकी वस्तुको मछली देख लेतीहै बैशम्पायन बोले कि इन बातोंके पीछे व्यास समेत उन सब महर्षियोंने ऋग् यजुः सामवेदोंकी ऋचाओं के साथ बचनोंसे श्रीकृष्ण जीका पूजन किया फिर वहां आकाशसे सब ऋतुओंके पुष्पोंकी दिव्यबर्षा हुई जहां कि श्रीकृष्ण जी उन पाण्डव और भीष्मजीके साथ विराजमानथे और सब प्रकारके बाजे बजे और अप्सरा नाचीं और गंधर्वों ने गाया और शीतल मंद सुगंध लिये पवित्र कल्याणरूप हवा चली और दिशाओं के शान्त होने से शान्तरूप पशु पक्षीभी क्रीड़ाकरने लगे तदनन्तर एकमुहूर्त्त मेंहीं सूर्य्य भगवान् पश्चिम में ऐसे दिखाई दिये जैसेकि बनको भस्म करती हुई अग्नि होतीहै फिर सब महर्षियोंने उठकर श्रीकृष्णजी और भीष्मजी से कहा कि अब हमलोग जाते हैं फिर कलआवेंगे उनके पीछे पाण्डवके साथ केशवजी और सात्यकी संजय और कृपाचार्य्य जी ने प्रणाम किया फिर वह सब ऋषि कल मिलेंगे ऐसा बचन कहकर चलेगये उसी प्रकार केशवजी और पाण्डव भीष्मजीको पूछकरपरिक्रमाकरके शुभ रथोंपर सवारहुये फिर वह सुबर्णमयरथ और पर्ब्बताकार मतंग हाथी और गरुड़ के समान शीघ्रगामी घोड़े और धनुष आदि रखने वाले पदातियों के साथ रथों की वह सेना आगे पीछे से अत्यन्त चपलता करने वाली ऐसी चली जैसे महानदी नर्मदा आगे पीछे से रत्नावन्त पहाड़ को प्राप्त करके चले तदनन्तर चन्द्रमा जी उस सेना को प्रसन्न करते और उन औषधियों को जिनके रसों को सूर्य्य देवताने शुष्क किया उनको फिर अपनी किरणोंसे औरगुणों से संयुक्त करते पूर्व्व दिशा से ऊपरको उठे फिर वह यादव और पाण्डव देवराज की पुरी के समान तेजोमय पुर में प्रवेश कर के अपने महलों में ऐसे घुसे जैसे कि थके हुये सिंह गुफा में प्रवेश करते हैं ३४॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्मेद्विपंचाशत्तमोध्यायः ५२॥

तिरपनवां अध्याय॥

वैशम्पायन बोले कि वहां जाकर मधुसूदन जी शयन स्थान में जाकर सोगये और प्रातःकाल की अमृतबेला में जगे उस समय ध्यान मार्ग में प्रवृत्त होकर सब ज्ञानियों को देखकर फिर सनातन ब्रह्मका ध्यान किया तिसके पीछे स्तुति और पुराणों के जानने वाले रक्तकण्ठ और सुशिक्षित पुरुषोंने उस प्रजाके स्वामी और सब जीवों में निवास करने वाले संसार के भर्त्ता श्रीकृष्ण जी की स्तुति की उसके पीछे पाठवाले पढ़ने और गान वाले गाने और हजारों शंख मृदंगों के शब्द होने लगे और उस महलके

सं संयुक्त चारोंओर वीणा पणव वेणुके शब्द अति मनोरम और हास्यरस से संयुक्त चारोंओर फैले हुये सुने गये उसके पीछे राजा युधिष्ठिर के गीत और बाजों के शब्द जोकि मङ्गल रूप मधुर वचन वाले थे होने लगे फिर उठकर स्नान कर हाथ जोड़ शिरझुकाकर हो महाबाहु श्रीकृष्ण जी मन्त्र जपकर अग्नियोंको प्रका- शित करके वर्तमान हुये फिर माधवजीने चारों वेदोंके जानने वाले ब्राह्मणों से एक सहस्रगौओं के दान से स्वस्तिवाचन कराया फिर श्रीकृष्णजी गौओं को स्पर्श करके निर्मल आदर्श में अपना मुख देखकर सात्यकी से बोले कि हे सात्यकी तुम जाकर देखो कि युधिष्ठिर भी भीष्मजी के देखने को तय्यारहुये यह सुनतेही सात्यिकी ने शीघ्रही युधिष्ठिर से जाकर कहा कि हे राजा वासुदेवजी का रथ तय्यार हुआ वह भीष्मजी के पास जायँगे और आपकी बाट देखते हैं यहां जो काम शीघ्र करने के योग्य है उसको करिये यह सुनकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने हुक्म दिया कि हे अर्जुन मेरा भी उत्तम रथ तय्यार हो और सेना को छोड़ हमही लोग केवल वहां जायगे धर्मात्मा भीष्मजी को हम पीड़ा नहीं देसक्ते हे अर्जुन इसकारण आगे चलनेवाले मनुष्यों को भी लौटा दो अब वहां भीष्मजी बड़े गुप्त धर्मों को कहेंगे इससे साधारण मनुष्यों को लेजाना मैं नहीं चाहता हूं तदनन्तर राजा की आज्ञा को जानकर अर्जुन ने रथतय्यार करने की आज्ञा दी फिर राजा युधिष्ठिर नकुल, सहदेव, भीमसेन और अर्जुन समेत सब मनुष्यों को ले श्रीकृष्णजी के महल में गये तब श्रीकृष्ण जी सात्यकी को साथले पांडवों समेत रथोंपर चढ़२ तय्यार हुये और परस्पर में दण्डप्रणाम करके उन शीघ्रगामी रथों में बैठेहुये चक्रादिय दारुक ने श्रीकृष्ण के उसरथ को जिस में कि बलाहकमेघ पुष्पसैन्य सुग्रीव नाम घोड़े जुते थे तेज किया और बड़ी शीघ्रता से ब्रह्मादि- क्षोंके धर्मस्थल कुरुक्षेत्र में जाकर ठहरे और वहां से रथों से उतर२ कर भीष्म जी के पास गये वहां सब पाण्डव आदि ने उन महर्षियों को जो भीष्मजी के पास बैठेथे दण्डप्रणाम किया फिर भीष्मजी का दर्शन किया २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेत्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः ५३ ॥

चौवनवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि वह सब पाण्डव और श्रीकृष्ण जी महातेजस्वी भीष्म जी के चारों ओर पास विराजमान हुये इस कथा को सुनकर जनमेजय बोले कि पाण्डव आदि करके चारों ओर से घिरे हुये महा पराक्रमी सत्यव्रत जितेन्द्रिय भीष्मजीसे युधिष्ठिरने कौनसीकथा पूंछी उसको आपमुझसे कृपाकरके वर्णन कीजिये वैशम्पायन बोले कि हे राजा जनमेजय कौरवों के धुरन्धर भी

जीके शरशय्यापर वर्त्तमान होनेपर नारदआदि ऋषि और सिद्धलोग आये और मरनेसे शेषबचेहुये राजाजिनके अग्रबर्त्ती युधिष्ठिरथे उन्होंने और धृतराष्ट्र श्रीकृष्णजी भीमसेन अर्जुन नकुलसहदेवआदि बहुतसेमहात्माओंने उनभरत बंशियोंकेपितामह गंगाजीकेपुत्र श्रीभीष्मजीके पासजाकर उनकाशोचकिया फिर थोड़ेसमयतक ध्यानावस्थितहोकर देवदर्शन नारदजी पाण्डवआदिसब राजाओंसेबोलेकि हेभरतबंशियोंमें श्रेष्ठ मैंसमयके अनुसार कहताहूं कि यहगांगेय भीष्मजी अब सूर्यकेतुल्य अस्तहुआ चाहतेहैं इससेतुमसब प्रश्नकरो यह महात्मा चारों बर्णोंके नाना प्रकारके धर्म्मों को जानते हैं यह बृद्ध देहको त्यागकर उत्तमलोक को पावेंगे तुम अपने चित्तके सन्देहोंको इनसे पूछो नारदजीके ऐसे बचन सुनकर राजालोग भीष्मजीके पासगये और प्रश्नकरनेको समर्थ न होकर परस्पर में प्रश्नकरनेको उपस्थितहुये तदनन्तर युधिष्ठिर श्रीकृष्णजी से बोले कि आपके सिवाय दूसरा मनुष्य पितामहजी से प्रश्नकरनेको समर्थ नहीं है इससे हे यादवेन्द्र श्रीकृष्णजी आपही पहिले बार्त्तालाप भीष्मजीसे करिये और हे महात्मा हमसब में आपही धर्म्म जाननेवालों में श्रेष्ठहो यह पाण्डव युधिष्ठिर के बचन सुनकर श्रीकृष्णजीने भीष्मजीके पास जाकर यह बचन कहा कि हे राजाओंमें श्रेष्ठ क्या आपकी रात्रि सुखसे व्यतीत हुई और शुद्ध लक्षण वाली बुद्धि क्याआपमें वर्त्तमानहै और हे जितेन्द्री क्या सम्पूर्णज्ञान आपमें प्रकाशितहै और हृदयमें कोई ग्लानि तो नहीं है आपकाचित्त सावधानहै यह सुनकर भीष्मजी बोले कि हे कृष्ण आपकी कृपासे मेराचित्त सबप्रकारसे आनन्दमेंहै अर्थात् अंगोंकी वेदनाभूल परिश्रम और थकावट ग्लानि आदि सब दैहिक व्यथा दूरहोगई और भूत भविष्यत वर्त्तमान सब बातों को देखताहूं हे अबिनाशी वेदमें कहेहुये जो धर्म्महैं और जो वेदान्तसे प्राप्त होनेवाले शम दम संन्यास आदिधर्महैं उनसबको देखता हुआ यथार्थ जानताहूं और श्रेष्ठपुरुषोंके कहेहुये धर्मभी मेरेचित्तमें वर्त्तमान हैं सो हे जनार्दनमैं देशकाल जातिकुल आदिके धर्मोंका जानने वालाहूं और चारों आश्रमोंके धर्मोंके अर्थको भी जानताहूं वहसब मेरे हृदयमें वर्त्तमान हैं और सब राजधर्मोंकोभी जानताहूं और जहां जो कहनेके योग्यहै उसको भी कहूंगा और हे जनार्दनजी आपकीकृपासे मेरेचित्तमें शुभबुद्धि उत्पन्नहुई आपके अनुग्रहसे मैं तरुणके समान सब बातों में होगयाहूं अब हेमाधव जी मैं कल्याणकारी धर्म्म के रखनेको समर्थ हूं हे माधव आपनेही पाण्डवों से कल्याणकारी धर्म्म श्रीमुखसे क्योंनहीं कहा और यहां आपको क्या अभीष्टहै उसे बर्णन कीजिये बासुदेवजी बोले कि हे कौरवेन्द्र तुम मुझको संसार का हितकर्त्ता मोक्षरूपजानो सत्य असत्य व दृश्यमान पदार्थ मुझहीसे हुये

चन्द्रमा शीतल प्रकाशवान्है ऐसा कहनेसे कौनपुरुष सन्देह करेगा उसी प्रकार मेरे यशवान् होने में भी कौन आश्चर्य करेगा हे महातेजस्वी मुझको तेरा यश प्रसिद्ध करना अभीष्ट है इससे हे भीष्म मैंने तुझ में बड़ीबुद्धि को प्रवेश किया सो हे पृथ्वीपाल जबतक यहपृथ्वी बर्तमान रहैगी तबतक तेरी अविनाशी कीर्ति लोकों में प्रसिद्ध रहैगी हे भीष्मजी आप प्रश्न करनेवाले पाण्डव युधिष्ठिर से जो कहोगे वह आपका वचनवेदवचनों के समान पृथ्वी पर अचलहोगा जो पुरुष आपके इस प्रमाणसे आत्माको आत्मामें मिलावेगा वह देह त्याग करके सब प्रश्नोंके फलको पावेगा इसीकारण हे भीष्मजी मैंने आपको दिव्यबुद्धिदी जबतक इस भूलोकमें पुरुषका यश बर्त्तमान रहताहै तब तक उसकी कीर्त्तिका नाश नहीं होता हे भरतबंशी राजाभीष्म यह मरनेसेबचे हुये धर्म्मके पूछने की इच्छा करने वाले राजा लोग आपके चारोंओर बैठेहैं उनसे धर्मोंको कहो आप अवस्थामें वृद्ध शास्त्र और आचारोंसे पूर्ण राजधर्म आदि सबधर्मोंमें विख्यातहो जन्मसे लेकर आजतक आपका कोई पाप कि-सीने नहीं देखा सब राजा लोग आपकोही धर्मका जाननेवाला समझते हैं जिसप्रकार पिता पुत्रको उपदेश करताहै उसीप्रकार आप नीतिका बर्णन की-जिये हे राजा तुमने ऋषि देवता आदिकी सदैव उपासनाकरी इस कारण स-त्पुरुषसे पूछेहुये तुम्हारे धर्मोंके सुननेकी इच्छा सब राजा लोगों को है इससे आप इस धर्म को अवश्य कहिये ज्ञानियों ने धर्म को पण्डितों के करनेयो-ग्य कहा है हे समर्थ जो आप धर्म्म को न कहोगे तो बड़ा दोष होगा इससे आप इन राजाओं को अपना पुत्र पौत्र समझकर इनके प्रश्नों को सुन्दर रीति से वर्णन करो ॥ ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेचतुःपंचाशत्तमोऽध्यायः ५४ ॥

पचपनवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि हे राजा जनमेजय इन बातों को सुनकर भीष्मजी बोले कि बड़े आनन्दकी बात है कि अब मेरा चित्त और बाणी दृढ़ है इससे मैं धर्मों को वर्णन करूंगा हे गोविन्द माधव आपकी कृपासे मैं सब कहने को समर्थहूं आप सनातनरूप होकर सब जीवोंके आत्माहो और हे धर्मात्मा युधि-ष्ठिर तुम सब धर्मों को मुझ से पूछो मैं बड़ी प्रसन्नता से तुम्हारे पूछेहुये धर्मों का वर्णन करूंगा जिस राजऋषि धर्मात्माके उत्पन्न होने से सब ऋषि मुनि प्रसन्न हुये वह पाण्डव मुझसे प्रश्न करनेको योग्य है धर्म्मका प्रकाश करने वाला कौरववंश में जिसके समान कोई नहीं है वह पाण्डव मुझसे प्रश्नकरे जिसमें धैर्यता, शान्तता, ब्रह्मचर्य्य, क्षमा, धर्म, पराक्रम और तेज सदैव

बर्त्तमान है और जो भाई बन्धु अतिथि सेवक शरणागतों को अच्छे प्रकार से सत्कार करके श्रेष्ठ आचरणों से मानता है और सत्यता, दान, तप, शूरता शान्ति, चातुर्य्यता, असंभ्रमता आदि गुण जिसमें हैं वह पाण्डव मुझसे प्रश्न करो जो धर्मात्मा इच्छा क्रोध भय और प्रयोजन के लिये अधर्म्म को नहीं करे अथवा जो सदैव सत्यवक्ता सहनशील और ज्ञानी अतिथियोंका प्यारा सदैव दान सत्पुरुषों को देता है और प्रतिदिन यज्ञ वेद पाठ करता श्राद्धों में प्रीति करनेवाला है वह पाण्डव मुझसे धर्म पूछनेको योग्यहै और जो शान्त ब्रह्मज्ञान का उपदेश पाने वाला है वह पांडव मुझ से इच्छापूर्वक प्रश्न करे यह सुनकर बासुदेवजी बोले कि बड़ी लज्जामें डूबेलोक की निंदासे भयभीत धर्मराज युधिष्ठिर आपके पास नहीं आते हैं हे राजन् इस लोक का स्वामी युधिष्ठिर लोकके नाश करने की निन्दा से आप के समीप नहीं आता है जो गुरुभक्त सम्बन्धी बान्धव अर्घ के योग्य थे उनको बाणों से छेदकर आपके पास नहीं आता है भीष्मजी बोले कि हे श्रीकृष्ण जी जैसे ब्राह्मणों का धर्म दान तप बेदपाठहै उसीप्रकार क्षत्रियोंका धर्म युद्धमें देहका त्यागना है जो राजा मिथ्याकर्म करनेवाले पिता पितामह गुरू सम्बन्धी और बांधवोंको युद्ध में मारे वहभी धर्म्म है हेकेशव जो क्षत्री प्रणका त्यागनेवाला लोभी पापीभी होके युद्धमें गुरुओं को मारताहै वह धर्मका ज्ञाताहै जोपुरुष लोभसे धर्म्मकी सनातन मर्य्यादाको नहीं बिचारताहै और जो क्षत्री उस लोभी को युद्ध में मारता है वह भी निश्चय करके धर्म्म का जाननेवाला है और जो क्षत्री युद्ध में पृथ्वी को रुधिर के स्वरूप जल और कटेहुये शिर के समान तृण और हाथियों के तुल्य पहाड़ और ध्वजाओं के समान वृक्ष धारण करनेवाली करता है वह धर्म का ज्ञाता है युद्ध में बुलायेहुये क्षत्री को सदैव लड़ना चाहिये क्योंकि मनुजी ने युद्ध को धर्म और स्वर्ग और इस लोक का देनेवाला कहा है बैशम्पायन बोले कि भीष्मजी से इस प्रकार कहेहुये धर्मपुत्र युधिष्ठिर नम्रतापूर्वक पास जाकर उनके नेत्रों के सामने उपस्थितहुये और दोनों चरणों को पकड़लिया फिर उन भीष्मजीनेभी उनको प्रसन्न किया और उसकामस्तक सूंघकरकहा कि बैठो फिर सब धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ श्री गंगा जीके पुत्र भीष्मजीने उनसे कहा कि हे तात तुम बिश्वासकरके मुझ से प्रश्नकरो और किसी बातका भयमतकरो २२॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेपंचपंचाशत्तमोऽध्यायः५५॥

छप्पनवां अध्याय॥

बैशम्पायन बोले कि युधिष्ठिर ने श्रीकृष्णजी को प्रणाम और पितामह

को दण्डवत् और सब गुरुओं की प्रतिष्ठा करके पूछा कि निश्चय राजा-
ओंका धर्मउत्तमहै क्योंकि जब ऐसे धर्मज्ञों ने इसको माना है तो मैं भी
इसको सत्यही जानताहूं सो हे पितामह सम्पूर्ण राजधर्मोंको कहो क्योंकि
राजधर्मही इससम्पूर्ण जीवलोककी रक्षाका मुख्य स्थानहै हे कौरव धर्म अर्थ
काम यह तीनों राजधर्मों में रक्षा करने वाले हैं और इसी राजधर्म्म में मोक्ष
धर्म भी अच्छे प्रकार से वर्त्तमान है जैसे कि घोड़ेकी बागडोर और हाथी
का अंकुश होता है इसीप्रकार राजशासन भी लोकका धर्म्मरूप कहाजा-
ताहै राजऋषियों से सेवित उसधर्म्म में जो अधिक अज्ञानहोजायँ तो ऐसी
दशा में लोककी मर्य्यादा न रहैगी और सबलोग व्याकुल होजायँगे जैसे
कि अँधेरेको सूर्यका उदय नाश करताहै वैसेही राजधर्म्म भी गुप्त अशुभगति
को दूरकरते हैं अर्थात् राजासे दण्डपाने वाले अपराधी पवित्र होकर स्वर्ग
को जाते हैं इसहेतुसे हे पितामह आप पहले राजधर्मों को वर्णन कीजिये
आप धर्म धारियों में श्रेष्ठहो हेपरन्तप हम सबका उत्तमज्ञान आपके द्वारा
प्राप्तहो क्यों कि वासुदेवजीभी आपको बुद्धि में महान् जानते हैं भीष्मजी
बोले कि मैं श्रेष्ठधर्मको नमस्कार करताहूं और संसारके स्वामी श्रीकृष्णजी
को भी नमस्कारहै अब ब्राह्मणोंको नमस्कार करके वेदोंसे जाननेके योग्य
सनातन धर्म्मको कहताहूं हे युधिष्ठिर आप सावधान होकर अपने पूछे हुये
सब राजधर्मों को मुझसे सुनो और जो २ दूसरी भी बात सुनना चाहते हो
उसे भी सुनो हे कौरव युधिष्ठिर उत्तम राजा को प्रजाकी प्रसन्नता के निमित्त
पहिले बुद्धिके अनुसार देवता और ब्राह्मणोंका पूजन करना चाहिये क्योंकि
देवता और ब्राह्मणोंके पूजनेसे धर्मके ऋणसे उद्धारको पाताहै और लोकमें
अच्छेप्रकारसे पूजितहोताहै हे बेटा युधिष्ठिर तुम सदैव उद्योगके साथ कर्मकरो
बिना उद्योगके दैव अर्थात् प्रारब्ध राजा लोगोंके अभीष्टोंको सिद्ध नहींकरता
यह दोनों प्रारब्ध और उद्योग साधारणहैं मैं उद्योगकोही उत्तम मानताहूं फल
के द्वारा प्रारब्ध को निश्चय करके कर्म्म न करने के दोष से सिद्धी में दुःख
में निवृत्तहोताहै तुम प्रारम्भ कर्मके निष्फल होजाने का शोकमतकरो और
इसी प्रकार से सदैव उद्योगकरो यहीराजाओं की बड़ीनीतिहै निश्चयहै कि
राजाओंकी सिद्धीका करने वाला सिवाय सत्यताके और कोई कर्म नहीं है
सत्यमें प्रवृत्तराजा इसलोक परलोक दोनोंमें प्रसन्न रहताहै हेराजेन्द्र सत्यता-
ही ऋषियोंकी उत्तम द्रव्यहै उसीप्रकार सत्यता के सिवाय राजाओं का वि-
श्वास उत्पन्न करनेवाला दूसरा कर्म्म नहींहै गुणवान् सदाचारी स्थिरस्वभाव
दयावान् धर्मपरायण जितेन्द्रिय सावधान बहुतदानी प्रसन्न मुख सत्पुरुषों
को शुभमानेवाला राजाकभी नाशको नहीं प्राप्तहोताहै सो हेकौरवनन्दन

तुम सब कर्म्मों में तीन कर्म्मोंके गुप्त करने वाले नीतिविचारके साथ सत्यबोलने में सावधानहो वह तीनिकर्म्म यह हैं कि अपने दोषको छिपाना और शत्रुके दोषको निश्चय करना तीसरे जो उद्योग प्रारम्भ करना हो उसको गुप्तकरना और जो सलाह कीजाय वह भी गुप्त करना बराबर मृदुलता करने वाला राजा सबदशामें आज्ञाभंगहोने के योग्य होताहै और तीव्रप्रकृतिहोने से सब प्रजाव्याकुल रहतीहै इसहेतुसे दोनों कर्म्मों को करो हे महावक्ता बेटा युधिष्ठिर ब्राह्मण तुझसे दण्डके योग्य नहीं हैं हे पाण्डव इस लोकमें यह ब्राह्मण सब मनुष्यों में उत्तमहैं इस में महात्मा मनुजी ने दोश्लोककहे हैं उन दोनों श्लोकों में धर्म्मोंको तुम अपने चित्तमें धरने के योग्यहो कि जलसे अग्नि ब्राह्मणसे क्षत्री और पाषाणसे लोहा उत्पन्न हुआ उन्होंका सर्वव्यापी तेज अपनीही योनीमें शान्त होता है जब लोहा पत्थरको मारताहै और अग्निसे जल माराजाताहै और क्षत्री ब्राह्मणसे शत्रुता करताहै तब वह तीनों पीड़ाको पाते हैं इससे हे महाराज ब्राह्मण प्रतिष्ठा और पूजने के योग्यहैं हे पुरुषोत्तम इस प्रकार जो तीनोंलोकों को दुःख देनेवाले ऐसे पुरुष हों वह बराबर भुजाओं से दंडदेने के योग्य हैं हे राजा प्राचीन समय में महर्षि शुक्रजीने दो श्लोककहे हैं तुमएकाग्र चित्तसे उनको सुनो धर्म्म सम्बन्धी रखने वाला राजा संसार में शस्त्र उठाकर युद्ध में आनेवाले वेदपाठी ब्राह्मण को भी अपने धर्म्म से पकड़े वह धर्म्म का जानने वालाहै और उस कर्म्म से धर्म्म का नाश करने वाला नहीं होसक्ता क्योंकि क्रोध क्रोध को पाता है हे राजा यद्यपि ऐसा भी है तौ भी ब्राह्मण रक्षा के योग्य है और अपराधी ब्राह्मण को भी देश से बाहर निकाल दे हेराजन् जिस ब्राह्मण को दूसरेकी स्त्रीसे कुकर्म्म करने का दोष लगाहो उसपरभी दयाकरे ब्राह्मण का मारने वाला गुरूकी स्त्रीसे कुकर्म्म करने वाला इसी प्रकार बालबध करने वाला और राजासे शत्रुताकरनेवाला होनेपरभी देशसे बाहरनिकाल देनाही वेदपाठी ब्राह्मण का बिचार कियागयाहै उनको किसी दशामें देह दण्डनहीं होसक्ता और जो ब्राह्मणों में भक्ति रखने वाले हैं वह राजा के संबंधी प्यारे होवें ब्राह्मणों के भक्त मनुष्यों के समूहों से बढ़कर कोई उत्तम खजाना नहीं है हे राजा जो शास्त्रके निश्चय करने वाले हैं वह सब छःकिलों में से मनुष्यों के किले को दुर्गम और अजेय मानते हैं वह छःकिले यह हैं मरुदेश जल, पृथ्वी, बन, पहाड़, मनुष्य, इसी कारण बुद्धिमान् राजा को चारोंवर्णों पर कृपा करनी चाहिये जो राजा धर्मात्मा और सत्यबक्ताहै वह प्रजाकोप्रसन्न करता है हे पुत्र युधिष्ठिर तुझ क्षमावान् को सब जातों में दण्डकी क्षमा न करनी चाहिये क्योंकि हाथी के समानभी क्षमाशील राजा नीच और धर्म्म

का विरोधी होता है हे महाराज प्राचीन समय में बृहस्पतिजी के धर्म्मशास्त्र में इसी आशयका एक श्लोक कहा है उस को मुझ से सुनोकि क्षमापराधी राजा को नीच मनुष्य सदैव अप्रतिष्ठा करते हैं जैसे क्षमावान् हाथीपर हाथीवान् सवार होजाता है इससे श्रीमान् राजा वसन्त ऋतु के सूर्य्य के समान न शीतल हो न अधिक ऊष्म का देने वाला हो हे राजा तुमको अपने और दूसरे मनुष्यों की परीक्षा प्रत्यक्ष अनुमान से करनी योग्य है इस से तुम सब व्यसनों को त्याग करो राजा सदैव विजय के हेतु शत्रुओं पर अपने शूर पुरुषों को चढ़ावे साम नीति के स्थानापन्न दण्ड को त्यागे वह व्यसन यह हैं शिकार करना, पांसा खेलना, दिनका सोना, निंदा, स्त्रीसंग, नसापीना बाजाबजाना, सरोदव्यर्थ मद्यपान इनकर्मों से उत्पन्न होने वाले सब व्यसन हैं इनमें कठोर वचन धनको व्यर्थलेना दण्डलेना यह क्रोध से उत्पन्न होने वाले तीन व्यसन कठिन हैं कठिन व्यसनों का रखने वाला सदैव अप्रष्ठित होताहै और लोक को व्याकुल करता है और प्रजासे शत्रुता रखने वाला होताहै और राजा को विवाहिता रानी से सदैव प्रीति रखनी चाहिये इस का यह कारण है जैसे कि गर्भवती रानी चित्त में आने वाली प्रियबार्त्ताको त्यागकरके गर्भ की वृद्धिको करती है उसी प्रकार राजा को भी निश्चय कर्म्म करना चाहिये धर्मात्मा राजा को अपने चित्त की प्रियबातों को त्याग के उन बातों में ध्यान लगाना चाहिये जिनसे संसार का उपकार हो हे युधिष्ठिर तुझ को किसी समय भी धैर्य्य त्यागना उचित नहीं है धैर्य्यवान् चतुरंगिणी सेना रखने वाले राजा को किसी स्थान में भय नहीं है इस से तुमको नौकरों के साथ कभी हँसी न करना चाहिये इसमें यह दोष हैं कि सेवक लोग बहुत हँसी आदि करनेसे स्वामीका अपमान करतेहैं और अपने अधिकार परभी स्थित नहीं होते हैं और आज्ञाभंग करते हैं और करने के योग्य कामों के करने में भी सन्देह उत्पन्न कराते हैं और गुप्त विचारको भी प्रकट करते हैं और मांगने के अयोग्य वस्तुओं को मांगते हैं और राजा के भोजन योग्य वस्तुओंको भोजन करतेहैं क्रोधकरके भड़कतेहैं और राजा की छाती पर चढ़ते हैं और छलयुक्त बातों से संसार के कामों को बिगाड़ते हैं और जालसाजी के आज्ञापत्रों से उसके देशको निर्बलकरते हैं और स्त्रियोंके रक्षकों से मिलजाते हैं और एकसी पोशाक पहिनने लगते हैं और राजा के सन्मुख मेंही थूकाथाकी किया करतेहैं और वह निर्लज्ज होकर उनके वचनको संसार में प्रकट करते हैं राजा के मृदुस्वभाव होने से और चित्त मिलेहोने से नौकर लोग उसका अपमान करके उसके घोड़े हाथी रथ आदि सवारियों पर सवारहोते हैं और सभामें बैठकर सुहृज्जन ऐसे वचनों

को कहतेहैं कि हे राजा यह आपका कठिन कामहै अथवा बुराकाम है और काम बिगड़ने से हँसते हैं और इनाम आदिसे प्रसन्ननहीं होते फिर परस्परमें ठट्ठाकरतेहैं गुप्तमंत्रको प्रकट करते हैंऔर बुरेकामको अधिक प्रसिद्ध करते हैं और उसकी आज्ञाको खेल और अपमानसे करतेहैं इसीप्रकार भूषण भोजन और स्नानकी वस्तु चन्दन आदि के निकट जानेपर उसकी आज्ञा भंगकरते हुये निडर और ढीठहोजातेहैं और अपने अधिकारको तुच्छकहकर त्यागकरते हैं और नियत मासिक पर सन्तोष नहीं करतेहैं और राज्यके धनको चुराते हैं और राजा के साथक्रीड़ा व्यवहार किया चाहतेहैं और लोगोंमें कहतेहैं कि यह राजा हमारा गुलामहै हे युधिष्ठिर राजाके मृदुल चित्तहोनेमें यहदोष और अन्यभी बहुत से दोष उत्पन्न होतेहैं ६० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेषट्पंचाशत्तमोऽध्यायः ५६ ॥

सत्तावनवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि राजाको सदैव उद्योग और बिचार करना चाहिये स्त्री के समान अबिचारी राजा की प्रशंसानहीं होती इसस्थान में शुक्रजीने एक श्लोक कहाहै कि जैसे सर्प बिलके रहनेवाले जीवोंको निगलजाताहै उसी प्रकार पृथ्वी भी दण्ड के योग्य पुरुषोंको दण्ड न देनेवाले राजाको और वेदा-ध्ययनके निमित्त परदेश न जाने वाले ब्राह्मणको और पर्यटन न करनेवाले संन्यासीको निगल जाती है इससे तुमहृदय में शोचकर इसबातको ठानकर सलाह के योग्य पुरुषोंसे सलाहकरो और दण्डके योग्य पुरुषोंको दण्डदो जो पुरुष सातअंगवाले राज्यके बिपरीत कामकरे वह चाहे गुरुहो या मित्र हो मारने के योग्यहो हे राजा प्राचीन समयमें मरुतनाम राजाने बृहस्पतिजी के कहनेसे यहश्लोक कहा कि कर्त्तव्य और अकर्त्तव्यके योग्यकर्मको न जान-ने वाले कुमार्गगामी गुरूकोभी दंड होताहै बाहुकेबेटे राजा सगरने पुरवासियों की वृद्धिके निमित्त असमंजसनाम बड़े पुत्रको त्यागकिया हे राजा उस अ-समंजस लड़के ने पुरवासियों के बालकोंको सरयूनदी में डुबाया इसकारण पिताने उस को क्रोधकरके देशसे निकाला और उद्दालकऋषिने भी अपना प्याराबेटा महातपस्वी श्वेतकेतुनाम जोकि ब्राह्मणोंसे मिथ्या व्यवहार करता था उसको त्यागकिया इसलोकमें राजाओंका सनातनधर्म्म यहहै कि संसार की प्रसन्नता रक्षा सत्यबोलना व्यवहार का यथार्थ बर्त्ताव करना दूसरेके धन का नाश करना और समयपर देने के योग्य पुरुषोंको देवे और पराक्रमी क्षमावान् सत्यबक्ताहोवे वह राजा सुमार्ग से नष्टनहीं होताहै चित्तके क्रोधका रोकनेवाला शास्त्रार्थमें निश्चयबोधवाला और धर्म्म अर्थ मोक्षमें सदैव प्रवृत्त

अर्थात् दिनके पूर्वभाग में धर्मको और मध्याह्नकाल में अर्थको अन्त
कामको और रात्रि के अंत में योगका करनेवाला और विचारको गुप्तरख
वाला राज्य के योग्यहै क्योंकि गुप्त रक्षा और सलाहके बिना राजाको औ
कोई नाश कारक नहीं है राजाको चारों वर्णके धर्मोंकीरक्षा करनी योग्य
और धर्मोंके अस्तव्यस्त होने से प्रजाकी रक्षा करना राजाओं का सनात
धर्म है अच्छे पुरुषोंपर विश्वासकरे परन्तु अधिकतर बिश्वास न करे औ
सदैव बुद्धिसे छःगुणोंके गुणदोषोंको देखे शत्रुके दोषोंका देखनेवाला राज
सदैव प्रशंसनीयहै और जो धर्म अर्थ कामके मूलको जानताहै वह दूतों
कामकरानेवाला और गुप्त धन देकर शत्रुके मंत्रियोंको मिलानेवालाहै व
भी प्रशंसाके योग्य है विनाजीविका वाले पुरुषोंकी रक्षा करनेवाला औ
नौकरोंका प्रबन्धक होकर मन्दमुसुकान के साथ बोलनेवाला सुन्दर मु
वृद्धोंका सेवक निरालस्य निर्लोभ सत्पुरुषों के चलनपर बुद्धिको स्थिर कर
वाला दृढ़स्वभाव सुन्दर दर्शनहोवे और कभी सत्पुरुषोंसे धनका दंड न ले
नीचोंसे लेकर सत्पुरुषोंको देवे आप लेनेवाला और दानकरनेवाला शा
चित्त और सुन्दर साधन करनेवालासमयपर दानकरनेवाला भोगोंका भो
औरशुद्धआचारवान् शूरभक्तहो और धनलेकर शत्रुओंमेंन मिलनेवालेउत्त
कुलवालेदूसरेका अपमान न करनेवालेविद्यावान् संसारकेजाननेवाले परलो
काविचारकरनेवाले धर्ममेंप्रवृत्तसाधुवृत्ति और पर्वतोंके समानदृढ़चित्तपुरुषों
सदैव अपना सहाय बनावे जोराजा ऐश्वर्यवान् होकर उनसहायकों के स
भोगों में समान होवे केवल छत्र और आज्ञामें अधिक हो ऐसे राजा
चलन शूरपुरुषोंके साथ आगे पीछे एकसाहोवे इसप्रकारसे करताहुआ
राजादुःखको नहीं प्राप्तहोता जो राजा कि सबके ऊपर सन्देह करनेवा
होवे वहकुटिललोभी राजा अपनेही मनुष्योंके हाथसे माराजाताहै प
और संसार के चित्तको आधीन करनेकी इच्छा रखनेवाला राजा शत्रुओ
दबकर नाशको नहीं पाताहै और चारोंओरसे दृढ़होताहै क्रोध औरव्यस
से जुदा थोड़ा दण्डदेनेवाला जितेन्द्रिय राजा हिमाचलके सदृश जीवों
विश्वास पात्र होताहै उसीप्रकार ज्ञानी त्यागी और शत्रुओंके छिद्रोंके देखन
प्रवृत्त सुन्दर दर्शन सबवर्णोंकी नीति और अनीतिका जाननेवाला शीघ्रक
क्रोधका जीतनेवाला सुगमता से प्रसन्न होनेवाला महासाहसी निरहंका
क्रियावान् अपनी प्रशंसा न करनेवाला राजाभी संसार का प्यारा होता
जिसराजाके कर्म प्रारम्भहीसे अच्छे और नीतियुक्तहोते हैं वह राजा राज
ओंमें उत्तमहै जैसे कि पिताके घरमें पुत्र स्वच्छन्द आनन्दमें रहते हैं उ
प्रकार जिसराजाके देशमें मनुष्य निर्भय विचरते हैं वहराजा सब राजाओं

उत्तम है जिसराजा के पुरवासी और देशवासी धनको प्रकट रखनेवाले और नीति अनीति के जाननेवाले हैं वह राजाभी श्रेष्ठतम है जिसके देशवासी अपने कर्म्मोंमें प्रीति रखनेवाले देहके निरहंकारी धर्म्म में प्रवृत्त जितेन्द्रिय और बुद्धिके अनुसार पोषण करनेवाले होतेहैं और जिसके देशमें मनुष्य बिजयी सावधान और सेवाके योग्य दूसरेकी अप्रतिष्ठा करनेकी इच्छानरखने वाले और दानदेनेमें प्रीति रखनेवालेहोतेहैं वह राजाहै जिसराजाके देश में सत्य २ विषयको मिथ्यासे प्रगट करना नहींहै और मिथ्याछल ईर्षाआदि कोई नहीं है उसराजाका धर्म्मसनातन है जो राजाज्ञानी पण्डितोंका सत्कार कर-ताहै और शास्त्रार्थमें दूसरे का भला करनेवालाहै और सत्पुरुषोंकेमार्गमेंचलने वाला और दानीहै वह राजाराज्यके योग्यहै जिसराजाके दूतको और करने नकरनेकी सलाहको कभीशत्रुलोग नहींजानसक्के वहराजाभी राज्यकेयोग्यहै प्राचीन समयमें किसी राजाके आगे परशुरामजीके चरित्र कहनेमें यहश्लोक कहागया कि प्रथमराजा अपनी उत्तमताको प्राप्तकरे तदनन्तर भार्य्या को फिर धनको और नीचराजाके होने में लोगोंको कहांभार्या और कहांधन है जोकि राज्यके चाहनेवाले राजाओंका सनातन धर्म राज्यमें संसारकी रक्षाके बिशेष और कुछनहींहै इसीसे यहरक्षाधर्म संसारको धारण कियेहुये है हे रा-जेन्द्र प्राचेतस मनुने राजधर्ममें यह दोश्लोक कहे वह तुम चित्तसे सुनो कि पुरुष इन छःबातोंको ऐसे त्यागदे जैसे कि टूटी नौकाको समुद्र में त्यागतेहैं उनके नामयहहैं--उपदेश न करनेवाला आचार्य १ वेद विद्यासे रहित ऋत्वि-ज २ रक्षा न करनेवाला राजा ३ अप्रियबादिनी भार्य्या४गांवका चाहनेवाला गोपाल ५ वनका चाहनेवालानाई ६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मे सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ५७ ॥

अट्ठावनवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि हे युधिष्ठिर यह राजधर्म्मोंकी रक्षाका आशय तुमसे कहा इसधर्म्मका बर्णन श्रीबृहस्पतिजीने न्यायके अनुसारकहा है इसीप्रकार महातपस्वी भरद्वाज और महातप भगवान् शुक्रजी और सहस्राक्षइन्द्र और प्रचेतसमनु गौरशिरामुनि यहसब राजशास्त्रके जारीकरनेवाले वेदब्राह्मणोंके रक्षकब्रह्मबादी संसारकी रक्षा करनेवाले राजाओं के धर्म्मकी प्रशंसा करते हैं हे धर्म्मात्मा युधिष्ठिर इसधर्म्ममय युक्तिको मुझसे सुनो चार अर्थात् दूतोंको नियतकरना समयपर प्रसन्नहोकर मासिकदेना और युक्तिबलसे राजभागलेना बिनायुक्तिके महसूलनलेना सत्पुरुषोंका संग्रह करना शूरता चतुराई सत्यता और प्रजाका अभीष्टकरना छलबलसे शत्रुओंकेपक्षवालोंको तोड़ना पुराने

टूटे फूटे स्थानोंको देखना और समयकेमाफिक दोप्रकारके दण्डोंका जारीकरना साधुओंका त्यागनकरना कुलीन लोगोंकापोषण और अन्नआदिको इकट्ठा करना ज्ञानियोंकी सेवाकरना और सदैव सेनाको प्रसन्नकरना प्रजाका देखना संसारी कामोंमें खेद न मानना और खजानेकीभी अधिक वृद्धि करना शत्रु से रक्षा और विश्वास न करना और जो शत्रुओंने पुरवासियोंको व्योपारआदिके छलसे स्वाधीन करलियाहो उनको अपने आधीन करना और शत्रुओं में वर्त्तमान अपने मित्रों को बुद्धिके अनुसार देखना और जो नौकरों को शत्रुलोग अपने आधीन करते हैं उनको देखना कभी नौकरों पर पूर्ण विश्वास न करना अपने देश को देखना उसी प्रकार आपभी दूसरे को दृढ़ता कराना सब कर्म्म नीति धर्म्मके अनुसारकरना सदैव उद्योग करना शत्रुओंका अपमान न करना और निकृष्टकर्म्मकभी न करना जो बृहस्पति जीने राजाओंके उद्योगको कहाहै वह राजधर्म्मकी जड़ है इसके श्लोकोंको मुझसे सुनो कि इंद्रने उद्योगहीसे अमृतको पाया और असुरोंको मारा और नरलोक और सुरलोक दोनों में प्रतिष्ठावान हुआ जो पुरुष उद्योग करने में निपुणहै वह वचनके वीर पण्डितोंसे भी उत्तम समझे जावे हैं उद्योगी पण्डित लोग वीरोंको प्रसन्न करके उनकी उपासना करतेहैं उद्योग रहितराजा सदैव शत्रुओंसे पराजय होनेके योग्यहै जैसे कि विना विषवाला सर्प विनाउद्योग सबलभी निर्बल शत्रुको नहीं मारसक्ता थोड़ी अग्निभी भस्म करसक्ती है और थोड़ा विषभी मारडालताहै सेनाके एक अंगसे भी युक्त शत्रुके गढ़पर वर्त्तमान होकर राजा धन और सेनासे वर्द्धमान सब देशको तपाता है अपने शत्रुराजाकी गुप्तसलाह और उसका वचन और विजय के लिये मनुष्यों का इकट्ठा करना और उसके हृदयका जो कपटहो और विजय आदि के हेतु जो छलहो और जो उसके राज्य के कामों में बिगाड़हो उन सबबातों का अपनी बुद्धिमत्तासे जानकर विजय करे और देशको स्वाधीन करनेके लिये धर्म्मिष्ठ बातेंकरे यह राज करना बड़ा भारीतन्त्रहै यह तन्त्र निर्दय राजाओं से धारणनहीं किया जासक्ता और मायाका यह उत्तम स्थान राज्यमृदु स्वभाव वाले राजासे धारण करने के योग्यनहीं है इसलोकमें यह राजधर्म्म विषयरूपहै वह सत्यतासेही धारण कियाजाताहै इससे मृदुता और कठोरतासे संयुक्त बुद्धिसे कर्म्मकरना चाहिये यद्यपि संसारकी रक्षाकरनेवाले राजाको हानि भी होजाय वह भी उसका धर्म्महो है राजालोग ऐसे प्रकारके चलनको किया करतेहैं तुझ अच्छे प्रकार से कर्म्म करनेवालेके सन्मुख राजधर्मोंका यह थोड़ासा वर्णन किया फिर जिसमें तुझे सन्देह है उसे कहो वैशम्पायन बोले कि इतनी बात के पीछे भगवान व्यासजी, देवस्थान, अस्म, वासुदेवजी, कृपाचा-

र्य्य,सात्विकी और संजय यह सब अत्यंत प्रसन्न चित्तहोकरबोले कि हे भीष्म तुमको धन्यवादहै तदनन्तर भीष्मजीके चरणोंको स्पर्शकरके युधिष्ठिरने कहा कि हे पितामह इससमय अपने सन्देहों को आपसे नहीं पूछूंगा क्योंकि सूर्य्यास्त हुआ फिर युधिष्ठिर, केशवजी, कृपाचार्य्य आदि ब्राह्मणोंको दण्डवत् और श्रीगांगेयजीकीपरिक्रमाकरकेरथोंपर सवारहुये और दृशद्वतीनामनदीमें स्नान आचमन सन्ध्याबन्दनादिकर्म्म करके फिर हस्तिनापुरमें पहुँचे ३० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेअष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ५८॥

उनसठवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि फिर वह पाण्डव और यादव प्रातःकाल उठकर सन्ध्या बन्दनादि से निवृत्त होकर रथों पर चढ़ भीष्मजी के पास आये और व्यास आदि ऋषियों को प्रणामकर चारोंओर को बैठगये और श्री भीष्म जीको बड़ी नम्रतासे प्रणामकरके हाथ जोड़के यह कहा कि हे भरतबंशी महाराज भीष्मजी इसपृथ्वीपर जो यह राजा शब्द प्रचलितहोरहाहै इसका हेतुक्याहै और काहेसे उत्पन्नहुआ यह आपमुझसे कहिये सब पुरुषोंकेसमान भुजा, ग्रीवा, बुद्धि, प्राण, आत्मा, दुःख सुख पीठ मुख उदर आदि रखने वाला और एकसाही बीर्य्य, अस्थि, मस्तक, मांस, रुधिर रखनेवाला और श्वास का भी बराबर आनाजाना और एकसादेह और जन्म मरणवाला और मनुष्यों के समानही गुण रखनेवाला एक पुरुष किसकारण से सब मनुष्यों पर आज्ञा करनेवाला होताहै और अकेला किस प्रकारसे शूरवीर और उत्तमपुरुषोंसे व्याप्तकैसे सब पृथ्वीकी रक्षाकरताहै और संसार की प्रसन्नताको भी चाहता है उसी अकेले की प्रसन्नता से सब संसारप्रसन्नहोता है और उसके व्याकुल होने में सब महाव्याकुल होते हैं सो वक्ताओं में श्रेष्ठ आप इस बातको मुझको समझाके कहिये मेरीबुद्धिमें यह छोटानहींहै जो सब पुरुषों में देवताओंके समान पूजितहोता है भीष्मजीबोले कि हे नरोत्तमतुम सावधानहोकर सब वृत्तांत सुनो जैसे कि सतयुग के प्रारम्भ में राजशब्द हुआ उससमय नतो कोई राजा और न राज्यथा न दण्ड और दण्डदेनेवाला था सब संसारी लोगोंने परस्पर में धर्म्महीसे रक्षाकरी तब धर्म से परस्पर रक्षाकरनेवालों ने बड़ा खेदपाया इसकारण उनमें अज्ञानता प्रकटहुई और अज्ञान के वशीभूत होकर ज्ञानके लोपसे उनका धर्म नाश हुआ फिर उत्तम ज्ञानके नष्टहोनेसे मोह के वशीभूतहो सब मनुष्य लोभ में प्रवृत्तहुये उसके पीछे मनुष्य असम्भवबातों के बिचार करने वाले हुये और फिर वहां कामनाम दूसरी इच्छा भी आकर वर्त्तमानहुई फिर काम के

वशीभूत मनुष्योंको रागने आकर दवाया और रागमें प्रवृत्तहोकर मनुष्यो
ने करने और न करनेके योग्यकर्म्म को नहींजाना फिर हे राजा उन्होंने
भोगकरनेके अयोग्य स्त्रीके भोगको और इसीप्रकार कहने और न कहने
योग्य वचनको और भोज्य और अभोज्य वस्तुको और दोषों का भीत्याग
न किया अर्थात् सवबातें करनेलगे ऐसी दशामें इस नरलोकको वे मर्याद
होनेसे वेदभी लोपहुआ फिर वेदके लुप्तहोने से धर्म्मका नाशहुआ फिर वेद
और धर्म्मके लोपहोनेपर देवताओं में भयउत्पन्नहुआ तब वह भयभीत दे
वता ब्रह्माजीकी शरणमें गये और महादुःखीहो हाथजोड़कर ब्रह्माजीको प्र
सन्नकरके कहा कि हे भगवन् लोभ मोह आदिके होनेसे नरलोकमें सना
तन वेद और धर्म्मका लोपहुआ इसकारण हम सबमें भय उत्पन्नहुआ इसी
हेतु से हमलोगभी नरलोक वासियोंके समान होगये अर्थात् स्वाहा आ
दिके न होनेसे भूखे मरतेहैं हमारी वर्षानीचेको होती है और मनुष्यही वर्ष
करनेवालेहैं उनकी क्रियानष्टहोनेसे हमको संशय प्राप्तहुआ इससे हेपितामह
यहां जो कल्याणकारी कर्म्म है उसको ध्यानकरो आपही के प्रभावसे य
नर्वान उत्पन्न होनेवाला भय नाशको प्राप्तहोगा तब ब्रह्माजीने उत्तरदिया कि
मैं तुम्हारे कल्याणको विचारूंगा जिससे कि तुम्हारा भय दूरहो फिर ब्रह्माज
ने अपनी बुद्धिसे एकलाख अध्याय बनाये जिनमें कि धर्म्म अर्थ कामक
वर्णनहै और ब्रह्माजीसेही यह त्रिवर्गगुण प्रसिद्ध हुआ फिर चौथामोक्षहै ज
कि इस त्रिवर्गके फल और साधन से अपनाफल और साधन पृथक् रखत
है अर्थात् मोक्षका त्रिवर्ग दूसराहै तात्पर्य्य यह है कि इच्छाफलसे रहित
यह भी उसीमें कहाहै और धर्म आदिके विपरीत होनेका कारण सतोगुण
रजोगुण, तमोगुण और धनुपसे व्यापारियोंका मार्गमें निवास तपस्वियोंकी
वृद्धि चोरोंका नाश, दण्डसे उत्पन्नहोनेवाला यह त्रिवर्गभी वर्णन किय
नित, देश, काल, साधन कर्म्म, सुहृद आदि जिनके सुधारनेका कारणनी
तिमें उत्पन्न होनेवाला षट्वर्गभी वर्णन किया अर्थात् नीतिके बलसे प्रजाकी
व्याकुलताभी मिटतीहै और कुदेशभी सुदेशहोजाताहै और कलियुगभी सत
युगहोजाताहै हेभरतवंशी कर्म्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड, वार्त्ता अर्थात् खेतीजीविका
व्यापार आदिकाकाण्ड दंडनीति अर्थात् प्रजाके पोषण करनेकीविद्या औ
बड़ी विद्या उनलाख अध्यायोंमें दिखाई मंत्रीलोगों की रक्षा और उनप
रामा गुप्तदूतका नियतकरना जो कि नानाप्रकारकी युक्तियोंका जाननेवाल
हो जैसे कि ब्रह्मचारी आदिके रूपरखनेवाले और हरएकस्थानमें भिन्न
परीक्षाकरनेवाले तीनतीन नियतहों यह सब बातें और राजकुमारका लक्षण उ
में वर्णन किया हेराजा इसमें साम दाम दंडभेद और पांचवां उदासीनताभी

सम्पूर्णता के साथ वर्णनकी सब गुप्तविचार उसी प्रकार भेदके निमित्त सलाहका मिथ्याकरना और मंत्रकी सिद्धी और असिद्धीका जो फलहै उसको भी वर्णन किया और तीन प्रकार की सन्धियां जो भय और लेख और धन से सम्बन्ध रखती हैं अधम मध्यम उत्तम नामसे बर्णनकीं भयसे होनेवाली सन्धिलघु और सत्कारसे होनेवाली सन्धि मध्यमहै और लेनदेन से होने वाली सन्धि उत्तमहै*यात्राके चारों समय धर्म और त्रिवर्गका विस्तार और धर्म्म युक्त विजय और अर्थकी बिजय और ० आसुरी बिजय सम्पूर्णता के साथ वर्णनकी + और उस से पंचबर्ग के लक्षण भी तीन प्रकारके बर्णन किये और प्रकाशित वा अप्रकाशित दोनों प्रकारकी सेना भी कही उनमें प्रकाशित सेना आठ प्रकारकीहै और अप्रकाशित सेना बड़े विस्तारकी हैं ॥

हे पाण्डव रथ, हाथी, घोड़े, पैदल, भारकस, नौका, दूत, उपदेशक गुरू यह सेना के आठअंग हैं और जंगम बिष बिच्छू आदिसे पैदा होने वाले और स्थावर बिष और चूर्ण में मिलनेवाले कहे और बस्त्र आदिके स्पर्श में और खाने पीने की बस्तुओं में विष मिलाना और मारण आदि प्रयोग यह तीन प्रकारके बिषकामेल करना दण्ड रूप कहा और शत्रुमित्र उदासीन यह भी बर्णन किये ग्रह नक्षत्र आदि मार्गों के गुण इसी प्रकार पृथ्वीके गुण मंत्र यंत्र आदिसे अपनी भयभीत रक्षाकी रक्षा करना रथ आदिके कार खाने को देखना मनुष्य हाथी घोड़े रथ आदि को नीरोग और पराक्रमी करनेवाली अनेक प्रकार की युक्तियां और बहुत प्रकारके व्यूह और बिचित्र युद्ध में जानकारी यहभी उसमें बर्णन किये और उत्पात निपात अर्थात् ग्रहोंका बिरोध और पृथ्वीका कम्पन और उल्कापात होना उत्तम युद्ध और भागना और शस्त्रोंका तीव्रकरना और उनका ज्ञान भी बर्णन किया सेनाका दुःख और उसी प्रकार सेनाका प्रसन्न करना पीड़ा और आपत्ति के समय का ज्ञान भी वर्णन किया इसीप्रकार बाजों के शब्दों से चढ़ाई आदिके इंगित को समझकर काम करना योग संचार, पताका और मंत्र आदि के सुनने और देखने से मोहित करना और चोर उग्ररूप बनबासी मनुष्यों की सेनासे शत्रु के देशको पीड़ा देना यह सब उसमें बर्णन किया और अग्नि लगाने वाले बिष देनेवाले मूर्त्तिबनानेवाले और सेना के प्रधानों को अपनी ओर मिलाने और खेती आदि के काटने और हाथियोंके बधकरने और सन्देह पैदाकरने रोजीना देने और बिश्वास उत्पन्न करने से शत्रु के देश को पीड़ा

---

* अपने मित्रोंकी जवबृद्धि हो–अपने खजानेका इकट्ठा होना—शत्रुके मित्रों का नाश-शत्रुके खजानेका नाश--यहचार यात्राके समयहैं ० रात्रिको मारपीट करना + मंत्री देश-गढ़ सेना-खजाना--यहपंचबर्ग हैं और अत्यन्त-साधारण-न्यून यह तीन प्रकार हैं ॥

देना वर्णन किया सातअंग रखने वाले राज्य के नाश वृद्धि और समानता और दूत के उद्योग के फल से अपने देशकी वृद्धिका वर्णन किया और शत्रु मित्र और मध्यस्थों की फूटका वर्णन किया इसी प्रकार पराक्रमियों को पीड़ा देना और मारना वर्णन किया अत्यन्त सूक्ष्म व्यवहार उसीप्रकार कांटेका उखाड़ना अर्थात् दुष्टोंको मारना मल्लक्रीड़ा व्यायाम आदि शस्त्रों के चलाने का अभ्यास धनका संचय--यह सब वर्णन किये बिना जीविका के पुरुषों का पालना और सेवकों का देखना समयपर धन का दान करना व्यसनों में प्रवृत्त न होना यह सब वर्णन किया इसीप्रकार राजगुण अर्थात् चढ़ाई आदि सेनापति के गुण त्रिवर्गका हेतु और गुणदोष वर्णन किये नौकरोंके अनेक प्रकार के बद चलन और नेकचलन सबमें संदेह करनाभूल का त्यागना अप्राप्त को प्राप्तकरना और प्राप्त वस्तुकी बहुतवृद्धि करना फिर अच्छीवृद्धि पानेवाली वस्तुको अच्छे सुपात्रोंका दानकरना यहसब वर्णन किया धनका खर्चकरना धर्मअर्थ काम मोक्षके लिये कहाजाताहै इसीप्रकार आपत्तिके दूर करनेकेलिये चौथा दान इसमें वर्णन किया हे राजा इसीप्रकार इस खास अध्यायमें क्रोध और कामसे उत्पन्न होनेवाले दशव्यसन वर्णन किये और आचार्योंने शिकार बाजी, पांसा, मद्यपीना, स्त्री यह चार व्यसन कामसे उत्पन्न होनेवाले कहे ब्रह्माजीने उनको भी इसमें वर्णन किया और वैसेही क्रोधसे उत्पन्न होनेवाले, कठोर वचन, उग्रता, दण्डपारुश्य, देहको घायल करना त्यागकरना, धनको निरर्थक खर्चकरना, यह छः व्यसनवर्णन किये नानाप्रकारके यंत्र और उनकी क्रिया वर्णनकीं शत्रुकी सेना से देशआदिकी पीड़ा और घायलहोना स्थानोंका तोड़ना यहसब वर्णन किया सीमाके वृक्षोंका तोड़ना और राज्यकी आमदनीका रोकना शस्त्र आदि सामानके बनानेकी रीतोंकावर्णन किया और पणवानक शंख भेरी बाजोंका बजाना और द्रव्योंका संग्रहकरना वर्णन किया जो कि संख्यामें छःहैं मणि, पशु, पृथ्वी, वस्त्र, दासी, दास और स्वाधीनहोनेवाले को शान्तकरना तत्पुरुषोंका पूजन करना पण्डितोंके यज्ञांगत दान और होमकी विधिको जानना वर्णनकिया मंगली वस्तु सुवर्णादिका स्पर्शकरना देहको शृंगार करना भोजन करना सदैव ईश्वरकोमानना यहसब वर्णन किया अकेलकी चढ़ाईकी रीति सच्चना मीठाबोल उत्सव समाजोंकी क्रिया इसीप्रकारध्वजा धन आदि का वर्णन किया हे युधिष्ठिर इसीप्रकार चौतरा आदि बैठनेका स्थान मनुष्यों के गुप्तप्रकट वृत्तान्तोंका और व्यवहारोंको सदैव देखना वर्णन किया ब्राह्मणों को अदण्डहोना और युक्तिसे दंड देना और बिजातिवालों और गुणोंसे उत्पन्न होनेवाली प्रतिष्ठा पुरवासियोंकीरक्षा देशकी अच्छीवृद्धि करना और वा-

रह राजाओं से सम्बन्ध रखनेवाले मण्डलमें जो स्थिरचिन्ता है उसका भी
वर्णन किया अर्थात् विजयके चाहनेवाले चारोंओर चारशत्रु और उनसे आ-
गे चारमित्र फिर उनसेआगे चारउदासीन यहीमण्डलके बारह राजाहोते हैं
और बहत्तर प्रकारके संस्कार देह, देश, जाति और कुलके धर्म अच्छेप्रकार
वर्णनकीजिये और धर्म्म अर्थ काम मोक्ष युक्तियां और अनेकप्रकारकी इच्छा
धन आदि इसमेंकहे मूलकर्म्म अर्थात् मालकी प्रबन्धकी रीति माया, योग,
नदी और नियत प्रदेशोंके दोषी करनेकाभी वर्णनकिया औरजिन २ रीतों
से यहसंसार बिरुद्ध न होवे वह सबरीतें नीतिशास्त्र में वर्णनकीं वहब्रह्माजी
इस उत्तम शास्त्रको बनाकर उन देवताओंसे जिनमें मुख्य इन्द्रदेवताथेप्रसन्न
होकर यह बोले कि संसारकी बृद्धि और धर्म्म अर्थ कामके नियत होने के
वास्ते सरस्वती की यह सारबुद्धि प्रकट है लोककी रक्षा करनेवाला दंडपारि-
तोषिकसे संयुक्त यह नीतिशास्त्र दंड युक्तहोकर लोगोंमें बिचरेगा यह संसार
दंडहीसे आधीन होताहै और दंडहीको पाताहै यह दंडनीतिनामसे प्रसिद्ध
तीनोंलोकमें वर्त्तमान होगी छः गुणोंसेभरी यह दंडनीतिमहात्माओंकेआगे
नियतहोगी इसमें धर्म अर्थ काम मोक्ष आदि सबका वर्णन कियातदनन्तर
भवरूप विशालाक्ष स्थाणु उमापति शंकर भगवान्‌ने इसनीतिकोलियाफिर
शिवजीने संसारीजीवों की थोड़ी अवस्था जानकर उस ब्रह्माजीके बनाये
हुये महा अस्त्रनाम शास्त्रकासार निकाला उसमें दशहजारही रहगया कि
उस विशालाक्ष नाम सारको इन्द्रनेपाया इन्द्रनेभी उसका पांचहजारही में
आशय निकाला उसका नाम बाहुदन्तक रक्खा उसको बृहस्पतिजीने तीन्
ही हजारमें संक्षेप किया वहबार्हस्पती नामसे प्रसिद्ध हुआ फिर योगाचार्य
शुक्रजीने एकही हजार में संक्षिप्त करके वर्णन किया इसक्रमसे महर्षियों ने
अवस्थाकी न्यूनता देखकर संक्षेप किया इसपीछे देवताओंने प्रजापति बि-
ष्णुजीसे कहा कि संसारी पुरुषोंमें से एकयोग्य पुरुष जो राज्य शासन कर-
ने के योग्यहो उसको आज्ञा दीजिये तब नारायणजी ने बिचारकर रजोगुण
से रहित तेजसनाम मानसीपुत्र उत्पन्न किया वह निरंजन महाभागने पृथ्वी
पर राज्य करना न चाहा और संन्यास धारण करनेकी इच्छाकरी उसकापुत्र
कीर्त्तिमान्‌हुआ वहभी जीवन् मुक्त हुआ उसके पुत्र कर्दमजी हुये वह भी
बड़े तपस्वी हुये और कर्दमजीका पुत्र अनंग नाम साधुरक्षक और दंडनी-
तिमें प्रवीण हुआ अनंग के पुत्र महानीतिज्ञ पराक्रमी ने जाकर बड़ेभारी
राज्य को प्राप्त किया और इन्द्रियों के बशीभूत हुआ उसमृत्यु को पुत्रमा-
नसी सुनेथा नाम तीनों लोकमें प्रसिद्धहुआ उसका पुत्र वेणुहुआ वह राग
द्वेष में वशीभूत हो प्रजापर अधर्म करने वाला हुआ उसको ब्रह्मवादी ऋ-

षियों ने मंत्रों से अभिमंत्रित कुशाओं से मारा और उसकी दाहिनी जंघाको मंत्रों से मथा तब उसजंघा से एक पुरुष ऐसा उत्पन्न हुआ जो कि छोटा देह कुरूप और कोयले के समानवर्ण रक्तनेत्र कालेकेश वालाथा उसको देखकर ऋषियों ने कहा कि बैठजाओ उसीसे सैकड़ों निषाद उत्पन्न हुये जो कि वनमें और पर्वतोंमें निर्दय चित्तहोकर रहतेहैं और विन्ध्याचल वासी दूसरे प्रकारके म्लेच्छहैं वह भी उसीसे पैदाहुये फिर उन महर्षियोंने उसकी दाहिनी जंघाको मथा उससे ये एक ऐसा पुरुष उत्पन्नहुआ जो रूप में द्वितीय इन्द्र सुवर्ण निर्मितवस्त्र और खड्ग धनुष बाण धारणकरे वेदवेदांगों का जाननेवाला धनुर्वेद में पंडितथा उसके आधीन सब दंडनीति हुई तब वह वेणु पुत्र ऋषियोंसे हाथ जोड़कर बोला कि धर्म अर्थकी देखनेवाली बड़ी सूक्ष्मबुद्धि मुझमें उत्पन्नहुई इसबुद्धिके अनुसार मुझको क्या करनायोग्य है यह समझाकर आप मुझसे कहिये आप अर्थसंयुक्त जिस कामको कहोगे उसको मैं करूंगा इसमें कोई विचार न करियेगा तब देवता और महर्षिलोग बोले कि जिसमें ठीक२ निश्चयपूर्वक धर्म है उसको निस्सन्देह करो और सब जीवोंमें समान दृष्टिहो प्रिय अप्रियको त्यागकर कामक्रोध लोभको दूर से त्याग ऐसा कामकरो कि लोक में जो कोई मनुष्य धर्म से हटजाय वह सदैव आपसे दंडके योग्यहै चित्तसे कर्म्म से वार्त्तासे बराबर शपथकरो कि मैं ब्राह्मणोंका पालन करूंगा और इस शास्त्रमें दंडनीतिसे सम्बन्ध रखनेवाला जो नीतिधर्म कहा उसको निस्सन्देह मैं करूंगा और कभी इन्द्रियोंके वशीभूत न हूंगा और यह भी प्रतिज्ञाकरो कि मुझसे ब्राह्मण अदंडहैं और यह भी प्रणकरो कि सबसंसारकी रक्षाकरूंगा फिर उस वेणुपुत्र ने देवताओं से कहा कि महाभाग पुरुषोत्तम ब्राह्मण मुझसे नमस्कार के योग्यहैं फिर ब्रह्मवादी ऋषियोंने कहा कि ऐसाहीहो वेदरूप भंडार रखनेवाले शुक्रजी उसके पुरोहितहुये वालखिल्यऋषियों के समूह और सारस्वत ब्राह्मण उनके मंत्री हुये और गर्गमुनिजी उसके ज्योतिषी हुये यह अपने कुल में आठवांहुआ अर्थात् पहिला विष्णु दूसरा विरज,तीसरा कीर्तिमान, चौथा कर्दम, पांचवां अंग,छठाअनंगल, सातवांवेणु, आठवां पृथुहुआ मनुष्योंमें यहश्रेष्ठ श्रुतिप्रसिद्धहै प्रथम इसके पुत्र सूत और मागधनाम उत्पन्नहुये वेणुकापुत्र पृथु इन दोनोंपर प्रसन्नहुआ तब सूतको अनूपदेश और मागध को मगधदेश दिये उसके समयमें जो असमभूमि थी उसको उसने समकरवाया यह भी सुना है कि सब मन्वन्तरोंमें पृथ्वी असम होजाती है फिर पृथुने चारों ओर से शिला के जालोंको धनुषकी कोटी से उठाया उससे पहाड़बड़ेहुये तबपृथु देवताओं के इन्द्रदेवता और विष्णुजी और प्रजापालक ऋषिमुनि ब्राह्मण आदि

से अभिषेक करायागया उसको पृथ्वीने साक्षात् रत्नोंको लेकर सेवन किया और नदियों के स्वामी समुद्रने और पर्वतोंके अधिपति हिमाचल ने और इंद्रदेवता ने उसको असंख्य धनदिया और स्वर्णमयी पर्वतोंने सुवर्ण दिया यक्ष राक्षसों के अधिपति कुबेरने भी अक्षयधन दिया उससे धर्म्म अर्थ काम सिद्धहुये हे पाण्डव घोड़े रथ हाथी और करोड़ों मनुष्य पृथुके ध्यानमेंही उत्पन्न होगये उस समय किसीको वृद्धापन देह रोग और न दुर्भिक्ष आदि कोई प्रकारकी व्याधि नथीं उसकी उत्तम रक्षा से कभी सर्प चोर आदि से भयनहीं होताथा उसकी यात्रा के समय समुद्रके जल स्थिरहुये और पर्वतों ने मार्ग दिये और कभी ध्वजा पतन नहींहुआ उसने यक्ष राक्षस नाग आदि समेत पृथ्वीको दुहा और सत्रह प्रकारकी खेतियां प्रकटकीं औरजिसजिस का जो अभीष्ट था वह भी उस महात्मा ने लोक धर्म्मको उत्तम रखने वाला किया और सबप्रजा को प्रसन्न किया इसीसे राजा शब्द कहाजाता है ब्राह्मणोंके घावोंकी रक्षा से क्षत्रीशब्द हुआ और बहुत धर्म से यह भूमि प्रसिद्ध हुई और पृथ्वी नामहुआ और आप सनातन विष्णुजीने मर्यादा नियत की कि हे राजा कोई पुरुष तेरे विरुद्ध काम नहीं करेगा और योगके द्वारा आप विष्णु ने उसकी देह में प्रवेश किया इसीसे यह नर देवतोंके समान है इसीसे जगत् राजाको प्रणाम करता है इससे राज्य दण्डनीति से सदैव रक्षा के योग्यहै इसप्रकार दोनों के होने से और देशकी दशाओं के देखने और पोषण करने से राजाको कोई पराजय नहीं करसक्ता है इस लोक में समदर्शी राजाके चित्त और कर्मसे कियाहुआ उत्तमकर्म और उत्तम फलके वास्ते कल्पना किया जाताहै इसका क्या हेतुहै जो देवगण के सिवाय सबलोगराजा के स्वाधीन होते हैं इसका हेतु यह है कि प्रथम विष्णुके मस्तक में सुवर्णका कमल उत्पन्न हुआ उससे बुद्धिमान धर्म्मकी रक्षा करनेवाली देवी लक्ष्मी उत्पन्न हुई और लक्ष्मी से धर्म्म के द्वारा अर्थ उत्पन्न हुआ इसीप्रकार अर्थसे धर्म्मार्थ उत्पन्न हुये और लक्ष्मीजी राज्य में नियत होती हैं तबस्वर्ग से आकर दण्डनीति में कुशल बुद्धिराजा उत्पन्न होता है वहमनुष्य विष्णुके माहात्म्यका जानने वाला बुद्धिमान होकर प्रतिष्ठाको पाता है इसकारण देवताओंके अभिषेक कियेहुये राजाको कोई उल्लंघन करके कर्मकर्ता नहीं होसक्ता है और यह संसार एक राजाके आधीन होता है उसके बिना यहजगत् कर्म करने को समर्थ नहीं होसक्ता हे राजा शुभकर्म शुभफल के निमित्त कियाजाता और लोक उस समानअंगी एकके आज्ञावर्ती नियत होता है जिसने उसके सौम्य मुखको देखा वही उसका आज्ञाकारीहुआ और वही उस सुन्दर ऐश्वर्यवान् अर्थवान् और रूपवान् को भी देखता है उसदण्डकी प्र-

निष्ठासे शुद्ध लक्षण वाली नीति और उसमें वर्त्तमान जो उत्तम धर्म सो दृष्टि पड़ता है इसी से यहसब क्रमपूर्वक कियागया और इसशास्त्र में शास्त्रपुराण महर्षियों की उत्पत्ति तीर्थों का और नक्षत्रोंका वंश कहागया और इसी प्रकार चारों आश्रमों का धर्म्म चातुर्होत्र आदि चारोंवर्णों का धर्म्म और चारों विद्या इसमें वर्णन हुई इतिहास वेद सम्पूर्ण न्याय, तप, ज्ञान, अहिंसा सत्य, मिथ्या और उत्तम नीति इस में वर्णनकरी वृद्धोंकी सेवा दान, शौच, युक्ति, चढ़ाई आदि सबजीवों पर कृपाका करना और सबयंत्र इसमें कहे गये और उस ब्रह्माजी के शास्त्र में पृथ्वी और पाताल का सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन कियागया इसी हेतु से ज्ञानियों ने राजा शब्द को सदैव जगत् में कहा है राजा देवता और नरदेव यह दोनों समानहैं यह सब राजाओं का माहात्म्य हमने पूर्णतासे कहा अब अन्य क्या वार्त्ता आपको पूछनाहै १४५॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्म्मेएकोनषष्टितमोऽध्यायः ५९॥

साठवां अध्याय॥

वैशम्पायन बोले कि इसके पीछे युधिष्ठिर ने हाथ जोड़कर भीष्मजी से यह प्रश्न किया कि सबवर्णों के कौनकौन धर्म हैं वह सबपृथक् २ कहिये चारों वर्ण और आश्रम औरधर्मों को कौन मानता है और देश किसरीति से वृद्धि को पाता है और राजा किस राजा से बड़ाई पाता है और पुरवासी और अधिकारी लोग कैसे आनन्द पूर्वक वृद्धिपाते हैं और कैसे खजाने दण्डगढ़ सहायक मंत्री सेना पुरोहित आचार्यों को त्यागकरे राजा को कौनसी आपत्ति में कैसे २ मनुष्यों पर विश्वास करना योग्यहै और आत्मा की रक्षा दृढ़ता पूर्वक कहांकरनी योग्य है यह सबबातें आप कृपाकरके वर्णन कीजिये भीष्मजी बोले कि महाधर्मको और जगत् के स्वामी श्रीकृष्णजी को प्रणाम करके मैं सनातन धर्म्मों को कहता हूं क्रोध न करना सत्यबोलना क्षमाकरना अपनी स्त्रियों में सन्तति पैदाकरना पवित्रता और प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष किसीसे शत्रुता न करनाशुद्धभावहोना पोषण आदि यहहैं तो सब वर्णोंके धर्म हैं अब जो केवल ब्राह्मणों का धर्म है उसको कहताहूं कि शान्त स्वभावही को प्राचीन धर्म कहा और उसी में वेदपाठ का अभ्यास यहभी नित्यकर्म होताहै उसअपने कर्म में सावधान शांत वृत्ति और विपरीत धर्म न करने वाले ब्राह्मणको जो धनप्राप्त होय तो विवाह करके सन्तानको उत्पन्नकरे और दान और यज्ञकरे धनको विभागकर भोगना चाहिये ब्राह्मणवेदपाठहीमें आनन्दित रहताहै दूसरा कर्म्म करे या नकरे क्योंकि मैत्रकहाजाता है अर्थात् सबकामित्र होता है और क्षत्रीकाभी धर्म मैं कहता हूं कि दानकर

किसी से प्रार्थना न करे यज्ञकरे परन्तु दूसरे को यज्ञ न करावे वेदपढ़े परंतु किसीको पढ़ावे नहीं प्रजाको पोषण करे चोरों के मारने में तत्पररहै और युद्ध में पराक्रम करे जो राजा लोग शास्त्रज्ञ और यज्ञों से पूजन करने वाले हैं और युद्ध में बिजयी हैं वह क्षत्रियों में उत्तम और लोकों के विजय करनेवाले हैं जो क्षत्री बिना घायल युद्ध से पीठ फेरता है उसकी प्राचीन लोग प्रशंसा नहीं करते हैं यह क्षत्रियों की उत्तम रीति कही चोरोंके मारने के सिवाय इसका कोई बड़ाकर्म नहीं है दान वेदपाठ जप यज्ञ राजाओंका कल्याण कहा जाताहै इस कारण से धर्म्म की इच्छा रखने वाले राजाको अधिक युद्ध करना चाहिये राजा अपनी सबप्रजा को अपने धर्म्मोंमें नियतकरके वह सब कर्म्म जिसमें अन्तःकरणमें शान्तचित्तहो धर्म्म से करावे राजा प्रजाके पोषण करने से महा आनन्द में प्राप्त होताहै दूसरा कर्म्मकरे या न करे राजाइन्द्र का पुत्र कहा जाताहै अब वैश्यके धर्म्म कहताहूं वेदपाठ पवित्र यज्ञसे धनको संचय करने में प्रवृत्त चित्त होकर वैश्य पिताके समान पशुओं का पोषण करे इसके विशेष दूसरा कर्म्म विपरीत है पशुओंकी रक्षा से बड़े सुखको पाता है ब्रह्माजी ने पशुओं को उत्पन्न करके वैश्यको दी और ब्राह्मण और राजाको सब प्रजादी है इनकी जीविका भी कहताहूं छः गौओंमें से एकगऊ के दूधको पिये और सौमेंसे एक गऊ और बैलको ले और ब्यापार के नफेमें सातवां भाग ले इसी प्रकार उनके सींगखुर आदिको ले और सब बीजके ब्यापार और खेतीके सातवें भागको ले यही वर्षौंड़ी जीविका है वैश्यको ऐसी बुद्धि कभी न करनी चाहिये कि मैं पशुओं का पोषण नकरूं वैश्यके राजी होनेमें दूसरे किसी की रक्षा पशुओं में योग्य नहीं अब शूद्रका भी धर्म कहताहूं ब्रह्माजी ने शूद्रको सब वर्णोंका दास नियतकिया इसहेतु से तीनों वर्णोंकी सेवाही शूद्रका कर्म कहाजाता है उनकी सेवासे वह बहुत सुख पाताहै शूद्र क्रमपूर्व्वक तीनों वर्णों की सेवाकरे और किसी दशामें धनको इकट्ठा न करे क्योंकि वह छोटा होकर धनके हेतुसे उत्तम वर्ण को अपने आधीन न करेगा चाहे राजाकी आज्ञा से धर्म्मज्ञ शूद्रधन को संचयकरे उसकी जीविकाको कहताहूं शूद्र तीनोंवर्णों की ओरसे अवश्य पोषणके योग्य कहाजाता है छत्र सितार पलँग आदि जूतेका जोड़ा बानका काढ़ना यह सब पुरानी वस्तु सेवा करनेवाले शूद्रको देना चाहिये पुरानेवस्त्र द्विजों के धारण करने के योग्यनहीं होते वह शूद्रही को देने योग्यहैं वही उसका धर्मरूपधनहै द्विजोंमें जिसकिसी की सेवा करनेकी इच्छासे शूद्रआवे उसकी जीविका उसाद्विजसेही धर्म्मज्ञोंने कही है वहीद्विज असन्तान् शूद्रको भोजन देने के योग्यहै और वृद्धअय-

गीतको कहाहै जो कि बड़े २ अर्थ और तपसेभरा है उसको सुनो कि अपनी स्त्रियों के साथ सत्यता और शुद्धभाव और अतिथिपूजन धर्म्म अर्थ और प्रीति यह सुखरूप कर्म्म इसलोक और परलोक में सेवन करने के योग्य हैं महर्षीलोग इसउत्तम आश्रममें निवासकरनेवाले पुरुषोंका कर्म्म पुत्र स्त्रियों का पोषण और वेदोंकापढ़ना कहते हैं जो यज्ञकरनेका अभ्यास रखनेवाला ब्राह्मण इसप्रकार बुद्धिके अनुसार गृहस्थ आश्रममें निवास करता है वह गृहस्थोंकी जीविका को अच्छी तरह शुद्धकरके स्वर्गमें अत्यन्त पवित्रफल को पाताहै अब ब्रह्मचारीकी कैवल्य मोक्षको वर्णन करते हैं कि अकेला सब देवताओंको स्मरण करता और सब देवमंत्रों को जपता और एकगुरू में विश्वास करने वाला मैलेवस्त्र धारण करने वाला ब्रह्मचारी सदैव व्रत करनेवाला दीक्षावान् जितेन्द्रिय वेदान्तशास्त्र के विचारकरनेके योग्य ध्यान को करता गुरु के कुलमें निवासकरे गुरुसेवा परायण होकर छः कर्मों से निवृत्तहोजाय उन में प्रवृत्त न होजावे और दण्ड क्रिया से युक्त आचरण नहींकरे शत्रुओं को न सेवे यह ब्रह्मचारी का आश्रमपद इच्छाकिया जाता है २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणि राजधर्मेएकषष्टितमोऽध्यायः ६१ ॥

बासठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह आप मुझसे वह सब धर्म्म वर्णन कीजिये जो कल्याणरूप सुखद उत्तमफल के दाता हिंसारहित सब के प्रिय सुगम रीतिवाले मुझ सरीके राजाको सुख के देनेवाले हों भीष्मजीबोले कि ब्राह्मण के चार आश्रमकहे उनको तीनवर्ण नहीं करसक्ते हे राजा बहुत से कर्म्म ऐसे कहे जो राजासेही सम्बन्ध रखते हैं वह स्वर्ग के दाता हैं तेरेप्रश्न के अनुसार यह धर्म्म हिंसा युक्तनहीं हैं वह सब बुद्धि के अनुसार क्षत्रीधर्म में नियत हैं जो निर्बुद्धी पुरुष ब्राह्मणहोकर क्षत्री वैश्य शूद्रोंके कर्म करता है वह इससंसार में निन्दितहोकर परलोक में नरक भोगकरता है और हेराजा इस लोकमें दास, कुत्ता, भेड़ियाआदि जो पशुओं के नामनियत हैं वही नाम उस ब्राह्मण के होते हैं जो अपनेकर्मों को त्यागकरदेता है चारों आश्रमों में चपलतासे रहित सबधर्मों में प्रवृत्त चित्तके जीतनेवाले ब्राह्मण के जो कर्म हैं उनकर्मों के करनेवाले ब्राह्मण ब्रह्मरूप हैं ब्राह्मण अपने कर्म्मों को छोड़कर छोटेधर्म्मों में क्यों प्रीति करता है यह संस्कार का हेतु कहते हैं जो पुरुष जिसनिजदशा में जिसदेश और काल में जिसफल की इच्छासे जो बुराभला कर्म्म करता है वह लोभ कर्म्मके फलसे और बहुतदिन के अभ्यास से सगुणब्रह्मको पाताहै अर्थात् यहभी निन्दित नहीं है हे राजा

लुम ब्याजलेना खेती करना ब्यापार शिकार से जीविका करना और इन सब से बढ़ा बेदपाठ को जानने के योग्यहो अभ्यास से कर्म्म स्वीकारहोते हैं फिर उत्तमकर्म्म का अभ्यासनहीं करते हैं और यह शंकाकरके कहते हैं कि कालसे प्रकट होनेवाला पुरुष पिछले संस्कार और काल की गति से चलायमान होता है इसीसे स्वाधीन होकर उत्तम मध्यम निकृष्ट कर्म्मोंको करता है पिछले पुण्यपापदेह की उत्पत्ति में प्रधान और यहलोक अपने प्रिय कर्म्म में श्रद्धा प्रीति रखनेवाला है और जीवात्मा प्रवृत्तहै वा स्वतन्त्रहै इसी कारण शास्त्र में आज्ञानहीं कियेगये ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मे द्विषष्टितमोऽध्यायः ६२ ॥

तिरसठवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि धनुष का खैंचना शत्रुकामारना खेती व्यापार पशुपालना धन इत्यादिके लिये दूसरेकी सेवाकरना यह कर्म्म ब्राह्मणों के करने के योग्यनहीं हैं ज्ञानी गृहस्थी ब्राह्मण को छःब्रह्मकर्म अर्थात् प्राणायाम आदि सेवनकरनेके योग्य हैं सबकर्मों से निवृत्त ब्राह्मण का कर्म्म बनवास उत्तम कहाजाता है राजाकी नौकरी खेती करना व्यापार से जीवन करना कुटिलता परस्त्रीगमन और ब्याज की जीविका करना इनसबबातों को अत्यन्त त्यागकरे जो ब्राह्मण दुराचारी धर्म्मोंसे पृथक् बृषलीपति अर्थात् बिना बिवाही स्त्री का पति निर्दय मनुष्यकी देहकानौकर अपने कर्म्म का त्यागने वाला है वह शूद्रहोता है वेदोंको पढ़े वा न पढ़े तौभी शूद्रोंके समान है वह भी दासोंके समान भोजन करानेके योग्य है यहसब शूद्रके समान होते हैं इनको देवकार्य्य में त्यागकरे उस ब्राह्मण में दियेहुये हव्य कव्य और सब दान न देने के बराबर हैं जोकि बिनामर्य्याद अपवित्र निर्दय चलन और हिंसा करनेवाला अपने धर्म्म कर्म्म का त्यागनेवाला हो इसकारण ब्राह्मण का शान्त स्वभाव पवित्रता और शुद्धापन भी नियतकिया इसी प्रकार पहले समय में ब्रह्माजी ने ब्राह्मण के सब आश्रम पैदाकिये जो जितेन्द्रिय यज्ञमें अमृत का भोजन करने वाला सबका प्रिय दयावान् क्षमायुक्त निर्लोभ सरल मृदुचित्त हिंसारहित संतोषी और सहनशील हो वही ब्राह्मण है दूसरा पापकर्म्म करनेवाला नहीं हेराजा इच्छायुक्त धर्म्म सब जीव और क्षत्री वैश्य शूद्र में रक्षित रहतेहैं इसकारण बिष्णुजी वर्णों को शान्ति धर्म्म में अप्रवृत्त मानकर उनको नहीं चाहते तब उनमें जो हानिहोतीहै वह कहते हैं लोकमें सबजीवों को सुख आदि न होवे और चारों वर्णका धर्म्म और वेदवचन भी नहींहोयँ सब यज्ञ कर्मादि क्रियानष्टहोजायँ और सब आश्रमी न होंय

क्योंकि यह सब विष्णुही की कृपा से होतेहैं जो राजा तीनों वर्णों के आश्रम का सेवन किया चाहो तो हे राजा चारों आश्रम में देखे हुये उनधर्म्मों को सुनो कि वेदान्तमें अधिकार न होने से पुराणों के द्वारा आत्माको सुनने की इच्छासे देह के बलके अनुसार तीनोंवर्णोंकी सेवाकरनेवाले संततिवान् राजाकी आज्ञापाके और आचारनिष्ठा में तीनों वर्णोंके समान दश धर्मोंके प्राप्त करने वाले अर्थात् योगधर्मों के जाननेवाले शूद्रके सब आश्रम नियत हैं एक शान्तिदान्ति कल्याण गुणको त्यागकर उसधर्मचारी शूद्रका अन्तमें भिक्षाधर्म्म कहा इसीप्रकार वैश्य और क्षत्रीका भी भिक्षाकर्म्म कहा है कर्मसे निवृत्त वृद्धराजा के कामोंमें परिश्रम करने वाला राजाकी आज्ञा से वैश्य संन्यास आश्रम को धारणकरे इससे हे युधिष्ठिर राजा भी धर्मसे वेदोंको और राजशास्त्रोंको पढ़कर सन्तति को उत्पन्न करके यज्ञमें अमृतको भोजन करके धर्म्मपूर्व्वक प्रजापालन कर राजसूय अश्वमेध आदि अनेकयज्ञों को बुद्धिके अनुसार करके ब्राह्मणोंको दक्षिणादे के युद्धमें थोड़ी या बहुत विजय को पाकर प्रजापोषण करने वाले पुत्रको या दूसरे गोत्रके उत्तम क्षत्री के पुत्रको राज्यपर नियत करके विचारयुक्त बुद्धिके अनुसार पितृयज्ञों के द्वारा पित्रों को अच्छेप्रकार से पूजकर यज्ञोंसे देवताओं को और वेदों से ऋषियों को प्रसन्नकर अन्तावस्था में जो दूसरे आश्रम को चाहे वह क्रम से एक आश्रम से दूसरे आश्रमों को प्राप्त करके सिद्धी को पाता है वह राजर्षिभाव से भिक्षाकरे और सेवासे न करे तो वह गृहस्थधर्म्म से जुदाभी आनन्दपूर्व्वक भिक्षा करे यहतीनों का सदैव कर्म नहीं है यही वृत्तान्त चारों आश्रमियोंकाहै अपने धर्म्म पर चलने वाले मनुष्यों का जो धर्म लोकमें उत्तमहै वह क्षत्रियों की भुजा से संबंध रखताहै तीनोंवर्ण और आश्रमियोंके सब धर्म्म उपधर्म्मों समेत राजा के धर्म्म से प्रकटहोते हैं इसको वेद में कहाहुआ जानताहूं जैसे कि सब जीवों के चरण हाथी के पैरमें छिप जाते हैं इसीप्रकार सब धर्मों को राजधर्मों में अन्तर्गत जानो धर्म के जानने वाले दूसरे धर्मों को अल्प फल देनेवाला कहते हैं उत्तम पुरुषों ने क्षत्रीधर्मको बड़ा रक्षाका स्थान और महाकल्याण रूप है राजधर्मको श्रेष्ठ माननेवाले सब धर्म और वर्ण पोषणकर्त्ता जानते हैं राजाको धर्मरक्षा करनेसे सब धर्म्मों का छठाभाग मिलताहै दण्डनीतिके नष्टहोनेपर तीनोंवेद नष्टजाते हैं और सब बड़ेबड़े धर्म्म भी नष्टहोजाते हैं और आश्रमों के सब धर्म जाते रहतेहैं सबत्यागों के छठेभागको लेताहै इससे राजा भी त्यागी होता है सबदीक्षा राजधर्मोंमें कही और सब विद्या भी राजधर्म्मों में संयुक्त हैं और सबलोक भी राजधर्म्महीं में हैं जैसे कि नीचों के हाथों से मारेहुये मृग आदि

जीव उनघातकों के शास्त्रोक्त धर्म्म के नाशकारकहोते हैं इसी प्रकार राजध-र्म्मों से जुदे सब धर्म्म हैं क्षणक बुद्धिलोग अपने धर्म्म का आदर नहीं करते हैं इसकारण राजधर्म्महीं उत्तम है॥ ३० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेत्रिषष्टितमोऽध्यायः ६३ ॥

चौंसठवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि चारों आश्रमोंके और संन्यासियों के लौकिक वैदिक धर्म क्षत्री धर्ममें बर्त्तमान हैं क्षत्री धर्मके अच्छे प्रकार नियत न होनेसे सब संसारी जीव निराशहोजाते हैं आश्रमबासियों का गुप्तधर्म्म बहुत द्वारवाला है उस सनातन धर्म्मके स्वरूपको दूसरे मनुष्य शास्त्रसे विपरीत क्रोधयुक्त करते हैं वह मनुष्य पवित्र वचनों से लोकके निश्चय के कहनेवाले हैं और धर्मों के निश्चय और सिद्धान्तों को न जानकर निर्बुद्धीलोग उस-कर्म को क्रोधमें भरेहुये करते हैं प्रत्यक्ष में बहुतसुखों का करने वाला आत्माकासाक्षी छल रहित सबका उपकार करनेवाला धर्म्म क्षत्रियों में बर्त्तमानहै हेयुधिष्ठिर जैसेकि पूर्व्व समयमें गृहस्थाश्रम नैष्ठिक प्रस्थवीती नाम ब्राह्मणोंका और तीनों बर्णोंका अन्तर्भाव प्रसिद्धहुआ उसीप्रकार राजधर्म्मों में सब संसार को आचरणोंकेद्वारा नियतमाना है हे राजा जिसप्रकार कि पहले समय में बहुत से शूरबीर राजा दण्डनीति के लिये उन बिष्णुजी के पासगये जो कि महातेजस्वी सब जीवों के ईश्वर देवता प्रभु नारायण हैं उससमय में राजालोग अपने हरएक कर्म्म को ध्यान करके कि इन में कौ-नसा उत्तम है यहसंदेह करके सिद्धान्तके सुनने को विष्णुजी के पासपहुँचे उसकाल में प्रथम देवतासेमिलेहुये साधुगण देवता और अष्टवसु अश्विनी-कुमार रुद्र बिश्वेदेवा मरुद्गण और सिद्धलोग क्षत्रीधर्म्म में प्रवृत्तथे इस स्थान में धर्म्म अर्थ के निश्चय को तुमसे कहूंगा हेराजा प्राचीन समय में दानवों से व्याप्त बेमर्याद लोक के होनेपर मान्धाता नाम पराक्रमी राजा हुआ उस समय उस मान्धाता ने प्रभु के दर्शन करने की इच्छा से यज्ञकि-या और उसने महात्मा विष्णुजी के चरणों में शिर रखकर प्रार्थना करी तब बिष्णुने इन्द्रके रूपमें उसको दर्शनदिया तब अन्य सत्पुरुष राजाओं स-मेत उसने उनका पूजनकिया तब इन्द्ररूप प्रभुने कहा कि हे धर्म्मधारियों में उत्तम तू क्याचाहता है जो ऐसे ध्यानसे उस परब्रह्म बिष्णुकादर्शनकिया चाहता है यह बिश्वरूपदेवता मुझसे और साक्षात् ब्रह्माजी केभी दर्शन के योग्यनहीं है और दूसरी इच्छाजो तेरे हृदय में वर्त्तमान है उसकोदूंगा तुम हीं नरलोकों में राजाहो तुम सत्यता में नियत धर्म्म को श्रेष्ठमाननेवाले जि-

तेन्द्रिय सूर्य्य देवताके उपासक बुद्धिभक्ति और श्रद्धा से उत्तमहो इससे मैं तुमको तेरे चित्तके प्रिय वरदानको देताहूं मान्धाता बोले कि मैं निस्सन्देह आपको प्रणामोंसे प्रसन्नकरके आदिदेव भगवान्‌का दर्शन करूंगा धर्म्म की इच्छाकरनेवाला मैं सब अन्य इच्छाओं को त्यागकरके बनजाने की ओर सत्पुरुषों के देखेहुये सन्मार्ग की इच्छारखताहूं मैंने इस अप्रमेय क्षत्री धर्म्मसे लोकोंको प्राप्तकिया और अपनेयशको दृढ़किया और जोयह धर्म आदि देवतासे जारी कियागयाहै इससे उत्तमधर्म करना नहींजानताहूं इन्द्र बोले कि जो क्षत्री राजानहीं हैं और धर्म्ममें प्रवृत्तहैं वह धर्म्मके अंशसे परमगति को नहीं प्राप्तहोते वहकर्म्म निश्चय प्रकट करने के योग्यनहीं है कि जो क्षत्री धर्म्मआदि देवता से जारी कियागया फिर दूसरे धर्म्म उसके अंग रूप जारी किये बाकी के असंख्य धर्म्म संन्यास धर्म्म के साथ क्षत्री धर्म्म से पृथक् हैं वह विनाशी फलवाले उत्पन्न किये अर्थात् उनकाफल करनेही वाले को होता है दूसरे को नहीं होता इसराजधर्म्म में सब धर्म्म वर्त्तमानहैं इसकारण इसधर्मको उत्तम कहते हैं पहले समयमें क्षत्री धर्मरखने वाले विष्णुजी ने शत्रुओं को पराजयकरके अपने कर्म्मसे सब देवता और महातेजस्वी ऋषि मुनियोंकी रक्षाकी जो ध्यानचक्र से बाहर भगवान् सब शत्रुओं को न मारते उसदशा में न ब्राह्मणहोते और न लोकआदि के बनानेवाले प्रजापतिहोते और न यह धर्म्म न पहला धर्म्महोता जो वह देवोत्तम आदिदेव इसपृथ्वीको और सबअसुरों को विजय न करते उसदशा में ब्राह्मणों के नाशहोने से सबवर्ण धर्म और आश्रमों के धर्म्मनहीं होते वह सनातन धर्म सेकड़ों प्रकार से नाशहोकर फिर क्षत्रीधर्म्मके द्वारा बड़ी वृद्धिको पहुंचा और हरएक यज्ञआदि में धर्म्मजारी हुये इसहेतुसे संसार में क्षत्रीधर्म्म को उत्तम कहते हैं युद्ध में देहकात्याग सब जीवों में दया लोक काज्ञान और व्याकुल संसार का पोषण और पीड़ित पुरुषों को दुःखसे छुटाना यह सब राजाओंके क्षत्रीधर्म में वर्त्तमान हैं राजासे भयभीत होकर वह पुरुष पापको नहीं करते हैं जो कि वे मर्य्याद और काम क्रोधसे भरे हुये हैं दूसरे उत्तम लोग सब धर्म्मों में प्रवृत्त श्रेष्ठ आचरणवान साधुधर्म्म का उपदेश करते हैं राजाओं के राजधर्म्म से पुत्रके समान पोषण कियेहुये सब जीव निस्सन्देह लोकमें विचरते हैं इससे यह क्षत्री धर्म्म सब धर्म्मोंमें श्रेष्ठ लोकमें उत्तम सनातन अविनाशी प्राचीन सब स्थानों में जारी और मोक्षकी सीमा है ॥ ३० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेचतुष्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

पैंसठवां अध्याय॥

इन्द्ररूप भगवान् बोले कि ऐसा पराक्रमी सब धर्म्मोंमें प्रवृत्त और सब धर्म्मों में उत्तम क्षत्री धर्म्म है यह संसार की बृद्धि करने वाला धर्म तुमसरीखे अधिकारी राजाओं से रक्षाके योग्य है उसके बिपरीति कर्म करने से संसार की हानि होती है सब जीवोंपर दया करने वाला राजा खेतीके प्रबन्ध और राजसूय यज्ञ आदिमें अनृत स्नान करना भिक्षा न मांगना अर्थात् संन्यास न लेना सबका पोषण करना इत्यादि बातों को जाने और युद्धमें देहत्यागही को श्रेष्ठ धर्म्ममाने इस निमित्त कि मुनिलोग देहत्यागही को उत्तम कहते हैं जैसे कि आपके नेत्रोंके सामने सदैव राजधर्म्मों में प्रवृत्त राजा लोगोंने देहको त्याग किया परस्परमें दृढ़ता पूर्बक कहते हैं कि आश्रम धर्म्मका चाहने वाला ब्रह्मचारी अकेलाक्षत्री बहुतसे शास्त्र और गुरु सेवा ससेत प्राचीन धर्म को करे और एकसे अर्थवाले व्यवहार को जारी होने पर युक्तिसे प्रिय अप्रिय बार्त्ताओं को त्यागकरके उसको करे और चारों वर्णका धर्म्म नियत करके और उद्योग नियम और परिश्रमसे बर्ण धर्म्मों को पालन करे इसीसे सब धर्म्मों में प्रवृत्त क्षत्री धर्म्मको सब आश्रम धर्म्मों से श्रेष्ठ धर्म्म कहा जो वर्ण अपने २ धर्म्मको नहीं करते हैं और उनधर्म्मों को बिपरीत अर्थवाला कहते हैं उन मनुष्यों को बे मर्याद और सदैवधन के संचयमें प्रवृत्त पशुओं के समान जानो जो कि धनके व्ययसे नीति को जारी करताहै इस हेतुसे भी क्षत्रीधर्म्म अन्य आश्रम धर्म्मों से अधिक कल्याणकारी है त्रिवेदी ब्राह्मणों के यज्ञ आदिधर्म्म और अन्य ब्राह्मणों के जो आश्रम धर्म हैं यही ब्राह्मणके उत्तम धर्म कहेजाते हैं दूसरा कर्म कर्त्ता शूद्रके समान शस्त्रसे मारनेके योग्य है हे राजा चारों आश्रमोंके धर्म ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मणसे प्राप्त करने के योग्यहैं दूसरा कभी नहीं जानता बिपरीत कर्म करने वाले की यह वृत्ती कल्पनाही गिनीजाती है अर्थात् कर्मसे धर्मकी वृद्धि होती है जैसा धर्म है वैसाही वह भी है जो वेदपाठी ब्राह्मण बिपरीत कर्म्म करता है वह प्रतिष्ठा करने के योग्य नहीं है अपने कर्म को न करने से वह ब्राह्मण बिश्वासके योग्य नहीं होता यह धर्म सब धर्मोंमें करने के योग्य है और क्षत्रियोंसे इसकी वृद्धिहोनी योग्यहै इस कारण राजधर्म उत्तमहै न दूसरे धर्म कि जिनमें बीरबड़ा है वहवीर धर्म मुझको भी स्वीकृत हैं मान्धाता बोला कि किरात, गांधार, चीना, शबर, बर्बर शक, तुषार, कंक, पल्हव, अन्ध्र मद्रक पौंड्र, पुलिन्द, रमठ, काम्बोज और ब्राह्मण क्षत्रीसे उत्पन्न होने वाले और वैश्यशूद्र मनुष्य आदि सब देशके बासी कैसे धर्मोंको करेंगे और मुझ

से चोर राजासे सब मनुष्य कैसे धर्मपर नियत करने के योग्यहैं सो हे भगवन् में वह सुना चाहता हूं उसको मुझसे कहिये हे देवेश्वर तुम क्षत्रियोंके मान्धव रूपहो इन्द्र बोले कि सब चोर जातोंको पितामाता की सेवा करना योग्य है उसी प्रकार आचार्य गुरू और आश्रमवासियोंकी सेवा करनी चाहिये सब चोरजातों से राजाकी भी सेवा करनी योग्यहै वेदधर्म यज्ञाक्रिया आदि भी उनका धर्म कहाजाता है इसी प्रकार पितृ यज्ञ कूप प्रपा और समयके अनुसार सदैव ब्राह्मणों को दानदेना अहिंसा, सत्यता, क्रोधत्याग, धाजीविका और विभाग की रक्षा पुत्र और स्त्रियोंका पोषण पाकर शत्रुता न करना और ऐश्वर्य चाहने वालों को सब यज्ञोंकी दक्षिणा देना चाहिये सब चोरजातों की ओरसे धनरूप पवित्र यज्ञदेने के योग्यहै हे निष्पाप मान्धाता प्राचीन समयमें इस प्रकारसे ऐसे २ कर्म नियत किये वह यहां सब लोक को करने के योग्य हैं मान्धाता बोले कि नरलोक में सबवर्णोंमें चोर दृष्टिआते हैं चारोंआश्रमों में आश्रम के नीचचिह्न वर्त्तमान हैं इंद्रबोले कि दण्ड नीति के नाशहोने और राजधर्म के दूरकरने से राजाकी निर्बुद्धिता और अप्रबन्ध से जीव अचेत होजाते हैं इस सतयुग के समाप्त होनेपर भिक्षा मांगने वाले उसी प्रकार ब्रह्मचर्य आदिका चिह्न रखने वाले और आश्रमों के कल्पना करने वाले असंख्य होंगे और पुराण और धर्मोंकी परमगतिको न सुनने वाले काम क्रोधसे चलायमान पुरुष कुमार्ग को पावेंगे जब महात्माओं की दण्डनीति से पापदूर होता है तब उत्तमसनातन सद्धर्म चलायमान नहीं होता है जो पुरुषलोकके गुरू राजाका अपमान करता है उसको दान होमश्राद्ध आदिका कर्मफल नहींहोता मनुष्यों के स्वामीसनातन देवता रूप धर्मनिष्ठ राजाका देवता भी अपमान नहीं करते हैं भगवान् प्रजापति जीने सब जगत् को उत्पन्नकिया और धर्मोंकी प्रवृत्ति निवृत्ति के लिये क्षत्रीकुल को पैदा किया है जो बुद्धिसे जारी होनेवाले धर्म्मके फल को स्मरण करता है वह मेरा माननीय और पूज्य है उसमें क्षत्री धर्म्म वर्तमान है भीष्मजी बोले कि वह भगवान् प्रभु मरुद्गणों से घिरेहुये ऐसाकह कर अपने भवन को गये हे निष्पाप प्राचीन समय में इस श्रेष्ठ प्रकार से किये हुये धर्मके जारीहोने मे बुद्धिमान् और बहुत शास्त्रों का जानने वाला कौनपुरुष क्षत्रीधर्म का अपमान करसक्ताथा अन्याय से प्रवृत्त और निवृत्त होनेवाले बीचही में राजाकी नाशको प्राप्तहोते हैं जैसे कि मार्ग में अन्धेपुरुष दुःखकोपाते हैं हेपुरुषोत्तम आदि में जारीहोने वाले पिछले पुरुषोंका रक्षास्थान धर्म्मरूप कर्म्मकरो और मैं तुमको अच्छेप्रकार जानताहूं कि तुम सबप्रकारसे समर्थ हो ३५॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेपंचषष्टितमोऽध्यायः ६५॥

छासठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि आपने जो मनुके पुत्रोंके चारों आश्रम कहे इनआश्रमों के आशय को मुझसे वर्णन कीजिये भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर यहां साधुओं के प्रिय सबधर्म्म तुमको मालूमहैं और जोतुम हृदय आकाश में वर्त्तमान ब्राह्मणोंसे सम्बन्ध रखने वाले धर्मको पूछते हो उसको समझो कि साधु आचारसे संयुक्त चारों आश्रमियों के सब धर्म राजधर्मों में वर्त्तमानहोते हैं, दण्डनीति के साथइच्छा और शत्रुतासे रहित सब जीवों में समदर्शी राजाको वह ब्रह्मलोक प्राप्तहोता है जो कि संन्यास आदि के द्वारा प्राप्त होताहै जो ब्रह्मज्ञान दानयुद्ध पोषणआदिको जानताहै उसशास्त्रवृत्ती पण्डित राजा का गृहस्थ आश्रमही उत्तम होता है और सदैव विभागके द्वारा सब ओर से पूजनके योग्य पुरुषों को पूजतेहुये राजाको वह लोक प्राप्त होताहै जो ब्रह्मचारियों को ब्रह्मज्ञान से मिलताहै और शरणागत संबन्धी मित्रऔर जातवालों का पोषण करने वाला राजा वहलोक पाता है जो दीक्षासेलोगोंको प्राप्तहोताहै और जो उत्तमपुरुष आश्रमियों में श्रेष्ठ हैं उनका सत्कार करने वाले राजाको बानप्रस्थ के प्राप्त योग्य स्थानकी प्राप्ति होती है और नित्यकर्म्म पितृयज्ञ भूतयज्ञ नरयज्ञ इन उत्तम यज्ञों के करनेवाले राजा को भी बानप्रस्थवाला ही स्थान मिलता है और जीवों को भाग और अतिथियोंका पूजन और देवयज्ञों से भी पूर्वोक्त स्थानकी प्राप्तिहोती है और अच्छे पुरुषों की रक्षा के लिये शत्रुके देशों के मर्दन करने वाले राजाको भी वही बानप्रस्थ वाला लोक मिलता है और सब जीव और अपने देश की पूरी रक्षा करने से दीक्षासे ब्रह्मलोकका प्राप्त करनेवाला संन्यास आश्रमधर्म प्राप्तहोता है और सदैव वेदपढ़ना शान्त और श्रेष्ठपुरुषोंका पूजन उपाध्यायकी सेवा यहभी ब्रह्म आश्रमको देते हैं और सर्व्वदा दिनको धर्म्मपूर्व्वक जप करनेवाले और देवपूजन न करनेवाले राजाको धर्म्म आश्रमपद मिलताहै और सबजीवोंपर दया करने वाले मृदुचित्तवाले राजा को सर्व्वावस्थ पद मिलताहै और सबदशामें बालक और वृद्धोंपर दयाकरने से भी सर्व्वावस्थ पद प्राप्तहोता है और हठसे कर्म्म करनेवाले जीवोंमेंसे शरणागतोंकी रक्षा और बुद्धिके अनुसार पूजन भी करता गृहस्थ आश्रम में निवासकरे और सब जड़ चैतन्य जीवोंकीरक्षा और बुद्धिके अनुसार पूजक होकर भी गृहस्थाश्रममें निवासकरे और भाई बेटेपोतों की स्त्रियोंपर अवस्था के विचारसे शासना और कृपा करना गृहस्थाश्रमका तपहै और ज्ञानी और पूजन के योग्यसाधुओंकी सेवा और पालन से भी गृहस्थाश्रम पद होताहै

और जो राजा अपने आश्रम में वर्त्तमान और घरमें रहनेवाले ज
को भोजनकेद्वारा अपने वशीभूत करता है वहभी गृहस्थाश्रम पदद्योत
जो पुरुष ईश्वरके रचेहुये धर्म्ममें बुद्धिके अनुसार वर्त्तमान है वह सब आ
मोंके शुद्धफलको पाता है और जिसपुरुष में सदैवगुण नाशको नहीं प
उस आश्रमीको भी नरोंमें श्रेष्ठ कहते हैं और जो राजा स्थान कुल अव
आदिके विचारसे सबकी प्रतिष्ठा करता है वह सब आश्रमों में निवास क
है और जो राजा राज्य देशकुल धर्म्मोंकी रक्षाकरता है वह सर्वाश्रमी है
है और समय पर जीवोंके ऐश्वर्य और भेंटोंको करता है वह साधुआश्र
निवास करता है और जो दशधर्म को भी न जाननेवाला राजा सब लं
के धर्म को विचारताहै वह भी आश्रमी होताहै और जो धर्म्मज्ञ पुरुष लो
धर्मको करते हैं वह जिस राजाके राज्य में रक्षाकिये हुये हैं वह राज
धर्मकाभाग पाता है और जो राजा धर्मको उत्तम माननेवाले धर्मज्ञ पु
की रक्षा नहीं करते हैं वह उनके पापको भोगते हैं जो पुरुष इसलोक में रा
ओं के सहायक होयँ वह सबभी दूसरेके कियेहुये धर्म्म में भागलेने वाले
हे पुरुषोत्तम सब आश्रमों में गृहस्थाश्रम को प्रकाशवान् और निर्णयव
और पवित्र कहा और जो मनुष्य सब जीवोंको आत्मा के समान रखनेव
दराड और क्रोधको त्याग करताहै वह इसलोक और परलोकमें सुख पा
और धर्मरूप समुद्रमें वर्त्तमान सतोगुणरूप पराक्रम और धर्मरूप रस्सी
धने वाली और त्यागरूप हवासे चलनेवाली शीघ्रगामी नौका उसको
अन्धकार से तारती है जब सबसे निवृत्त होता है और जो इसके हृदयमें
गनावर्त्तमान है उसको भी त्यागकरताहै तब ज्ञानी होकर ब्रह्मभाव को
होता है हे राजा तुम शुद्धचित्त हो इससे धर्म को पावोगे वेदपाठका अभ
करने वाले शुभकर्मी ब्राह्मण आदि सब लोगों के पोषणका उद्योगकरो
हे राजा जो पुरुष आश्रमों में वर्त्तमान वनमें धर्म करते हैं उनसे सौगुणा
राजाको प्रजाके पोषणसे होता है हे पाण्डवों में श्रेष्ठ यह अनेक प्रका
धर्म मैंने तुमसे कहे इससे तुम इस सनातन धर्ममें वर्त्तमान होकर प्रजाप
नसेही चारों आश्रम और वर्णोंके धर्मोंको जो कि ब्रह्मके प्राप्त होनेकी सा
है उसको प्राप्तहोगे ॥ ४३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेषट्षष्टितमोऽध्यायः ६६ ॥

अरसठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह आपने चारों आश्रम और चारों वर्णे
धर्मकहा अबदेशके बड़ेधर्मोंको कहो भीष्मजी बोले कि जो राजाका अ

षेकहै वही देशका बड़ाकर्म है क्योंकि राजा और सेनाकेबिनाचोर देशको नष्ट करते हैं राजाके बिना देशोंमें धर्म नियत नहीं रहता परस्परमें एक एकको खाजाते हैं राजाके बिना देशको सदैव धिक्कारहै जो राजाको चाहता है वह इन्द्रको चाहता है यहश्रुति है कि (यथाइन्द्रस्तथानृपः) अर्थात् जैसा इन्द्रहै वैसाही राजाहै इससे वह पूजनके योग्यहै राजासे रहित देशों में कभी निवास न करना चाहिये क्योंकि राजासे रहित देशमें अग्नि देवता हव्यको नहीं ग्रहण करताहै जो ऐसे देशमें कोई दूसरा राजा इच्छाकरके आवे तो वह पूजा के योग्य कहां से होसक्ता है तात्पर्य यह है कि बिना राजा के देश में पाप के सिवाय कोई धर्म्म नहीं है जो राजा अच्छे प्रकार से विचार करे तो सर्वानन्दहो क्योंकि क्रोधयुक्त पराक्रमी राजा सबनाशकरता है हे राजा जो गौ दुःखसे दूधदेनेवाली होती है वहमहादुःख पाती है और जो सुखसे दूध देती है उसकोपीड़ा नहींदेते हैं जो बिना तपाये लकड़ी अच्छीतरह नव जाती है उसको तपानेकी कोई आवश्यकता नहीं होती और जो लकड़ी आप झुकती है उसको भी नहीं झुकाते इससे हे राजा पराक्रमी को अच्छे प्रकार नमस्कार करे जो बलवान् को नमस्कार करता है वहइन्द्रको नमस्कार करता है इससे ऐश्वर्य चाहनेवाली प्रजाको सदैव राजाकरना अवश्य है जिन्होंकाराजा नहीं है उनका धन और स्त्रीसे सम्बन्ध रखनेवाला कोई प्रयोजननहीं सिद्ध होता राजासे रहित देशमें पापी पुरुष दूसरेके धन को चुराता है और प्रसन्नरहताहै जब दूसरे मनुष्य उसके धनको हरते हैं तब राजा को चाहताहै तब पापीभी कभी आनन्दको नहीं पाते हैं एकके धनको दो हरतेहैं और दोके धनको दूसरे अन्य लोग हरते हैं और जो दास नहीं है वहदास कियाजाता है और बलसे स्त्रियां हरण की जाती हैं इसी हेतु से देवताओं ने राजाको नियत किया है जो लोकमें पृथ्वीका दण्ड धारण करनेवाला राजा न होय तो अधिक बलवान् निर्बलोंको भक्षण करजायँ जैसे कि जल में मछली मछलियों को खातीहैं पूर्व समय में राजा न रखनेवाले परस्पर भक्षण करने वाले जीव नाशको प्राप्तहुये जैसे कि जलमें बलवान् मछली निर्बल मछली को खाकर नाश करदेती है यह हमने सुना तदनन्तर उन्होंने परस्परमें मिलकर नियम किया यह भी हमने सुना कि जो वचनकी कठोरता और दूसरे की स्त्रीसे भोगकरने का उग्रदण्डहो और जो दूसरे के धनको चुरावे ऐसे प्रकारके मनुष्य हमको त्यागने के योग्य हैं वह सब वर्णोंके बिश्वास के लिये उस प्रकारके परस्पर नियमोंको करके नियमोंमें दृढ़ नहीं हुये तब दुःखसे पीड़ितहो वह जब प्रजाके लोग ब्रह्माजी के पास गये कि हे ईश्वर हमबिना राजाके नाश होजायँगे इससे हमको राजादो

हम ऐश्वर्यवान् होकर उसीकी प्रतिष्ठा करेंगे जो हमारी रक्षाकरेगा तब ब्रह्माजीने मनुजीको आज्ञाकरी मनुजीने उन प्रजाओं को स्वीकार नहीं किया और कहा कि मैं पापकर्म से बहुत डरताहूं राज्यमें बड़े २ दुःख हैं इस से पारहोना कठिन है मुख्यकर विनलाभ चलने वाले मेरी सन्तानों में वर्त्तमानहैं भीष्मजी बोले कि यह सुनकर प्रजाने मनुजीसे कहाकि भयमतकरो पापकर्त्ता कोही होगा हम पशुओंका और सुवर्णका पचासवांभाग और अनाजका दशवांभाग खजानेकी वृद्धिके लिये तुमकोदेंगे और कन्याओंके विवाहोंमें कर लगने पर सुन्दर रूपवती कन्याओं को देंगे जो आपकीउत्तम सन्तान हैं वह उत्तमशस्त्र और सवारियों समेत आपके पीछे ऐसे चलेंगे जैसे देवतालोग महेन्द्रके पीछे चलते हैं सो तुम पराक्रमी प्रतापी बिजयीराजा हम सब को ऐसे प्रसन्न करोगे जैसे कि राक्षसों को कुबेर प्रसन्नकरताहै राजासे रक्षित होकर प्रजा जिसधर्मको करेगी उसधर्मका चौथाभाग तुमको मिलेगा सो हे राजा उसबड़े धर्म्म से वर्द्धमान सुखसे प्राप्त होनेवाले आप हमसबकी रक्षा उसीप्रकार करो जैसे कि देवताओंकी रक्षा इन्द्रकरता है आप सूर्य के समान तपानेवाले हैं इससे विजयके निमित्तचलो और शत्रुओं के अहंकारों को नाशकरो और सदैव तुम्हारी विजय होगी तब बड़ीभारी सेनासमेत महाप्रतापी सूर्यसमान तेजस्वी मनुजी वहां से चले और जैसे देवता महेन्द्र की प्रतिष्ठा को देखते हैं उसीतरह उसकी उसप्रतिष्ठाको देखकर सब भयभीत हुये और अपने२ धर्ममें चित्त लगानेलगे फिर वर्षा करनेवाले बादल के समान मनुजी सबओर से पापियों को विजयकरते और अपने कर्ममें लगाते हुये पृथ्वीपर भ्रमण करनेलगे इसीप्रकार जो मनुष्य पृथ्वीपर ऐश्वर्यको चाहै वह अवश्य राजाको बनावै और उसकेपास वर्त्तमान होकर जैसे कि शिष्यलोग गुरुको और देवता देवराजको मानते हैं उसीप्रकार वह भी भक्तिपूर्वक उसको नमस्कारकरै अपने मनुष्यों में प्रतिष्ठित मनुष्यको अन्यलोग भी प्रतिष्ठा देतेहैं और अपनेलोगों में अपमान पानेवालोंको दूसरे भी अपमान करते हैं शत्रुओंसे राजाकी पराजयहोना सबका दुःखदायी है इसकारण छत्र सवारी वस्त्र आभूषण और खाने पीनेकी वस्तु और मकानात आसन शय्या आदि राजाको निवेदनकरैं जिससे कि वहराजा शुद्धचित्त से आनन्दपूर्वक मन्द मुसक्यान से प्रजा से मीठे वचनकहै और उपकार करनेवाला दृढ़ भक्त विभाग करके भोजन करनेवाला जितेन्द्रिय समानदृष्टा सुन्दर दृष्टि से देखे ३१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेसप्तषष्टितमोऽध्यायः ६७ ॥

अरसठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने मनुष्यों के स्वामी देवतारूप राजाको क्याकहा उसे आप कहिये भीष्मजी बोले हे राजा इस स्थानपर इस प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसको कौशिकी राजा वसुमनाने बृहस्पतिजी से पूछाथा कि हे महाज्ञानी बृहस्पतिजी जीव कैसे बढ़ते और कैसे नाशहोते हैं और किसके पूजन से अविनाशी सुखको पावें यह सुनकर बृहस्पतिजी ने कहा कि हे महाज्ञानी लोकका धर्म राजाको मूलरखनेवाला दृष्टिपड़ता है प्रजालोग राजाके भयसे परस्पर में भक्षण नहीं करते हैं राजा सबसंसार के कुकर्मी लोगों को पवित्र करता है और पवित्र करके शोभायमान होता है जैसे कि चन्द्रमा और सूर्य्य के उदय न होनेपर परस्पर में न देखने वाले जीव अन्धतामिश्र नाम नरक में गोतेखाते हैं और जैसे थोड़ेजलमें मछलियां और बधिक से स्व-च्छन्द विहार करनेवाले पक्षी भयभीत रहते हैं उसीप्रकार श्रेष्ठ दण्ड से प्रजाभी भयभीत होकर अधर्मों से बचीरहती हैं इससे बिनाराजा के प्रजा नाशहोजातीहै जैसे कि ग्वालसे रहित पशुहोते हैं और पराक्रमी अल्प परा-क्रमीकी स्त्री को हरण करते हैं और धनकी रक्षाकरने वालों को मारते हैं जोराजा रक्षा नहींकरे तो इस लोकमें यह न होगा कि यह मेरास्थान या स्त्री या पुत्र है अर्थात् धनस्त्री पुत्र अपने नहीं कहसक्ता और सबओरसे धन कानाशहोता है जब कि राजा रक्षा नहीं करता है तो पापीलोग अकस्मात सवारी वस्त्रभूषण और अनेक प्रकारके रत्नोंको हरण करते हैं जब रक्षाराजा की न हो तो बहुधा धर्म करनेवालों पर बहुतसे शस्त्रचलाये जाते हैं और अधर्म मचजाता है और जो राजाकी श्रेष्ठ रक्षा न होय तो वृद्ध मातापिता आचार्य अतिथि और गुरु इत्यादि को कष्टदेकर मारते हैं और सदैव धन-वानोंको दुःख और बन्धन और मरणहोताहै और इसबातको कोई मानकर सके कि यह धनस्थानआदि पदार्थ हमारा है बिना काल मरते हैं और सं-सार चोरोंके ही आधीन होकर घोर नरक में गिरता है और योनीका दोष वर्तमान न होवे खेती और व्यापार का मार्ग भी नचले धर्म्म डूबजाय तीनों वेदों का अभाव होजाय और पूरी दक्षिणा वाले यज्ञविधि के अनुसार न हों न विवाह समाज आदि हो बैल गौओंमें भोग न करें और मनुष्य दही को न बिलोवें और अहीरों की गाय नाश होजायँ भयभीत व्याकुल हृदय और हाहाकाररूप अचेतहो संसारका शीघ्रही नाशहोजाय और मारेभयके कोई राजा स्वयम्बर भी न करे तपस्वी और विद्या व्रतधारी ब्राह्मण वेदोंको न पढ़ें

और अत्यन्त दुःखी होकर मनुष्य धर्म के स्नानादिकों को भी न करसकें और चोरोंको निर्भयता होजाय और हाथोंहाथ चोरीकरें और सबमर्यादा टूटजायँ और भयसे पीड़ित होकर सबदेश भागजाय अनीति जारी हो और संसार वर्णसंकर होजाय और सब देशों में दुर्भिक्ष पड़े औरजब मनुष्य राजासे रक्षितहोकर चारों ओरसे निर्भयहोते हैं तब इच्छा पूर्वक अपने द्वारोंको खोल २ सोते हैं जो धार्मिक राजा पृथ्वी की रक्षा अच्छे प्रकार से नहीं करता है तब कोई किसी की घुड़की को नहींसहताहै तो तमाचा कब सहैगा जब कि राजाकी अच्छीरक्षा होती है तब सबस्त्रियां भूषणों से भूषित पुरुषों से अरक्षितभी निर्भयमार्ग में चलती हैं और मनुष्य धर्म्म को करते हिंसा नहीं करते और एक दूसरेपर कृपा करताहै तीनों वर्ण पृथक् २ बुद्धिके अनुसार महायज्ञों से पूजन करते हैं और परिश्रम करके विद्याको पढ़ते हैं यह लोक जीविका रूप जड़रखताहै और वेदके लिखे हुये कर्म जोकि वर्षाआदिके कारण हैं धारण किये जाते हैं जब राजा बड़े बलसे प्रजा के श्रेष्ठभार को लेकर उसकी रक्षा करताहै तब संसार प्रसन्न होताहै और उसके नाशसे चारोंओर जीवोंका भी नाशहोताहै और ऐश्वर्य में ऐश्वर्य होवे तो कौन उसकी प्रतिष्ठा न करे जो पुरुष राजाके प्यारे हित में नियत होता है तो संसारमें भय उत्पन्न करने वाला राजाभी उसपुरुषका बोझा धारणकरता है और दोनों लोकों को विजयकरने वाला है जो पुरुष चित्तसेभी उसके पापको विचारे वह निस्सन्देह इसलोक में दुःखभोगकर अन्तमें नरकपाता है राजाकभी अपमान के योग्यनहीं है क्योंकि वह मनुष्योंका बड़ा देवता नररूप में वर्त्तमान है कि सदैव समय के अनुसार पांचरूपको धारण करता है अर्थात् सूर्य, अग्नि, मृत्यु, कुवेर और यमराजभी होताहै जब छलादुआराजा पापियों को सबकेसन्मुख उग्रतेज से भस्मकरता है तब अग्निरूप होताहै और जब दूतकेद्वारा राजासबजीवों को देखता है और मंगलमनाकर चलता है तब सूर्यरूपहोता है जबक्रोध युक्तहोकर सैकड़ों अपवित्र मनुष्योंको पुत्रपौत्र मंत्रियों समेत मारता है तब मृत्युरूप होता है जब सब अधर्मियों को कठिन दण्ड देता है और धर्म्म करने वालोंपर कृपा करता है तब यमराज रूप होताहै जब राजा सहायता करने वालोंको धन की धाराओं से तृप्त करता है और शत्रुता करनेवालों के अनेक प्रकारके रत्नोंको छीनलेता है किसी से लेताहै और किसी को देताहै तब वह कुवेररूप होता है बुद्धिमान् शुभकर्मी धर्म रूप लोकके चाहने वाले और दूसरेके गुण में दोष न लगाने वाले मनुष्य को इस ईश्वर स्वरूप राजाकी निन्दा न करनी चाहिये पुत्र भाई अथवा समान अवस्था वाला यद्यपि आत्माकी बराबर है भी राजा की निन्दा करके सुखको नहीं पाते हैं वायुको सारथी रखने

वाला अग्नि चाहे कुछ भस्म करने से बाकीभी छोड़े परन्तु राजासे विरोधी का चिह्नभी नहीं रहता उसराजा की रक्षाके योग्य वस्तुओं को मनुष्य दूरसे-ही त्यागकरे और राज्य धन हरणसे ऐसा डरे जैसे कि मृत्युसे डरते हैं क्यों कि राज्य धन के छूने से ऐसे नाश होजाता है जैसे कि फन्दे के छूतेही मृग मरजाता है इसलोक में बुद्धिमान् मनुष्य राजधन को अपने धनके समान रक्षा में रक्खे राजधनके चुराने वाले महाघोर नरकमें पड़ते हैं भोज, विराट्, सम्राट्, क्षत्री, पृथ्वीनाथ, मनुष्य रक्षक जो राजा इनशब्दों से विशेषण अ-र्थात् प्रशंसा किया जाताहै उसके पूजनको कौन योग्य नहींहै इससे ऐश्वर्य की इच्छा करने वाला शास्त्रज्ञ बुद्धिमान् मनुष्य राजाकी शरणमें रहै राजा ऐसे मंत्रीको पारितोषिक आदि देकर प्रसन्न करे जोकि उपकारी ज्ञानीकु-लीन दृढ़भक्ति रखनेवाला जितेन्द्रिय धर्म्मात्मा और स्थिर स्वभावहो राजा मनुष्यकी बुद्धिसे प्रशंसा करता है और दुर्बल भी करदेता है इससे राजाके अपराधी को कहां सुखहै और अपने आज्ञाकारी को राजासुखी करता है प्रजालोगों की हृदयसे प्रतिष्ठा उत्तम और सुखरूपहोतीहै मनुष्य राजाकेपास शरणागत होकर इसलोक परलोक दोनों में सुखीहोते हैं और बड़ा यशस्वी राजाभी समदर्शी भाव सत्यता प्रसन्नता आदिसे पृथ्वीपर आज्ञाओं को और बड़े २ यज्ञोंको करके स्वर्ग में सनातन स्थान को पाताहै ऐसे बृहस्प-तिजी के समझाने से राजावीर कौशली ने बड़ी धर्म्मनीति से प्रजाका पालन किया ६१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेअष्टषष्टितमोऽध्यायः ६८ ॥

उनहत्तरवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले राजासे कौन कर्म्म करना रहजाता है और कैसे देशकी रक्षाके योग्य है और कैसे शत्रुओंको बिजय करे और कैसे दूतोंको नियत करे और कैसे वर्णोंको विश्वास दिलावे और नौकर पुत्र स्त्री आदिको कैसे शिक्षाकरे भीष्मजी बोले कि तुम सावधान होकर राज्यके सम्पूर्ण प्रबन्ध और रीतोंको सुनो पृथुंबशी यादूसरे वंशके राजाको भी प्रारम्भ में जो करने के योग्य है वह कहता हूं कि प्रथम तो राजा अपने चित्तको वशकरे फिर शत्रु बिजय करने के योग्य है चित्तको बिना बशकिये राजा कभी शत्रुओं को बिजयनहीं करसक्ताहै पांचों इन्द्रियोंको स्वाधीन करना यही चित्तका बिजय करनाहै इन्द्रियोंका जीतने वाला राजा सदैव शत्रुओं को पीड़ादे सक्ता है गुल्म अर्थात् रक्षा करनेवाली सेना को गढ़देश नगर वन उपवन आदि स्थानों में नियतकरे और कोष्टपालोंको सबस्थान पुर नगर राज-

महल आदिसब स्थानोंमें जंगीपहरा बनाकर नियतकरे फिर मनुष्योंके ज्ञाता बुद्धिमान् भूखप्यास परिश्रम के सहनशीलों को अज्ञान अन्धे बहरेके रूपमें गुप्तचारी अर्थात् जासूसोंको नियत करे और सावधान राजाको उचित है कि सबमंत्री और नानाप्रकार के मित्र और पुत्रों से भी गुप्त दूतोंको नियत करे ऐसे ही नगर देश और सामन्तनाम राजाओंपर भी गुप्त दूत नियत करने योग्य हैं जिनको कि वह परस्पर में भी न जानें और शत्रुओं के भेजे हुये दूतों को जाने हुये व्यापारियों की दूकान विहारस्थान संन्यासियों के समाजों में वन उपवन और पंडितों की सभा में अथवा देशकी कचहरी राजसभा और बड़े घरोंपर नियत करे ऐसी सावधानी से राजा शत्रु के दूत को निश्चय करे प्रथम तो दूतके निश्चय होने पर प्रयोजन सिद्ध होता है जब राजा अपनेको बुद्धिमें कमसमझे तब मन्त्रियों से सलाह करके पराक्रमी राजासे सन्धिकरे जोराजा बड़ेउत्साह युक्त धर्मज्ञ और साधु है उनकेसाथ धर्मात्माराजाको सदैव सन्धिकरनी चाहिये बुद्धिमान् राजा अपनी पराजयहोती जानकर अपराधसे छूटकर कृपासे पोषणहोने वाले और प्रजाके शत्रुरूप सब अपराधियों को मारे जो राजा उपकार और अनुपकार करनेको समर्थ नहीं है और पराजय करनेकी भी सामर्थ्य नहीं है उसप्रकार के राजासे तरहही देना योग्यहै बुद्धिमान् राजा उससमय युद्धके लिये चढ़ाई करके जब कि शत्रु निर्बल और मित्रोंसेरहित बांधवोंसे पृथक् दूसरेसेयुद्धकरनेवाला और अचेतहो ऐसे और चढ़ाई की जाय कि मालूम न हो और जब कोई वीरपराक्रमी राजासमर्थ और पराक्रमी सेना सहित सुखीहो तब चढ़ाईके समय पहिले नगरमें रक्षाकरने वाली सेनाको सामान सहित नियत करके अपनी चढ़ाईको प्रकट करे और जो वह भी पराक्रमीहै और इसके आधीन नहीं उस दशामें सेना और बलपराक्रमसे हीनराजा बलीराजाको अशंकीन करताहुआ उसकर्ममें प्रवृत्तहोकि विषके शस्त्र और अग्नि आदिसे उसके देशको व्याकुल करे और उसके मन्त्री वा भाई बंधुओंमें परस्पर कलह मचावे राज्यके चाहनेवाले बुद्धिमान् राजाको सदैव युद्धत्यागकरना योग्य है बृहस्पतिजीने तीनयुक्तियोंसे राजाके प्रयोजन सिद्धहोनेको कहाहै पंडित राजायुद्ध निवृत्तकर्ता कुछ देकर संधिकरना शत्रु और शत्रुओंके मित्रों में विरोधकरवाना इनतीनों युक्तियों के द्वारा जिसप्रयोजनके सिद्धकरने को चाहे वही प्राप्तकरे और ज्ञानीराजा अपनी प्रजासे भी छठाभाग उपजे का उनकीही रक्षाके निमित्त लेवे और दयाधर्म्म में प्रवृत्तलोगोंसे जो थोड़ा बहुत राजअंश लेना उचितहै उसको पुरवासियों की रक्षाके लिये विना विचारके लेवे जैसे पुत्रदेखने योग्य हैं वैसेही पौत्रभी निस्संदेह देखनेचाहिये

मुकद्दमेके दृष्टिगोचर होनेपर उसमें परिश्रम न करनाचाहिये किन्तु राजा मुकद्दमे के सुनने और योग्यायोग्य जानने के लिये सब अर्थोंके जानने वाले ज्ञानी पुरुषोंको नियतकरे क्योंकि उनमें राज्यनियतहै उन बुद्धिमान् आज्ञाकारी पुरुषों और मंत्रियोंको सुवर्णकी खान निमकका स्थान अनाजकी मण्डी और रुईपान नदीकेपुल आदिस्थानोंपर उनकी आमदखर्च विचारनेके वास्ते नियत करे सदैव अच्छेप्रकार दण्डका धारण करने वाला राजाधर्म्मको प्राप्त होता है राजाका सदैव दण्डजारी होना पूराधर्म्म कहलाता है और जो राजा वेदवेदांगका जानने वाला पंडित तपस्वी दानयज्ञका अभ्यासीभीहो और व्यवहारलोपकरने वालाहो अर्थात् मुकद्दमे को अस्तव्यस्त करे ऐसे राजाको यश और सुखकी प्राप्ति कैसे होगी जब राजा दूसरे पराक्रमी राजासे पीड़ामानहोय तब वह बुद्धिमानीसे गढ़मेंरक्षाले मित्रोंको संयुक्तकरके युद्धके व्यवहारोंमें रीतें जारीकरे और सामवेदके विपरीत अर्थोंको बिचार करे मार्गमें अहीरोंके गाँवोंको नियतकरे और अन्य गाँवों को उठादे और उनसबकोभी बड़े नगरों के उपनगरोंमें बसावे और जो रक्षाके योग्य दुर्गमस्थान हैं उनमें देशवालोंको बसावे और धनीलोगोंको और सेना के प्रधानोंको बराबर धैर्य्य बँधवावे और शत्रुके खेतोंको आप राजाछीनले और दखलहोने के असंभव होनेपर अग्निसे भस्मकरे खेतोंमें अनाजबोने पर शत्रुके मनुष्योंको अपनी ओर करके उनकेद्वारा खेतोंको छीनले या अपनी सेनाकेद्वारा उनसबका विध्वंसकरे इसी प्रकार नदीकेमार्गपुल आदिको तोड़ डाले सब जलको हटा दे और हटनेके अयोग्य जलको बिषयगर्दसे बिगाड़े बर्त्तमान और भविष्यत कालमें सदैव मित्रका कार्य वर्त्तमान होनेपरभी उसको त्याग करके मैदानमें शत्रुके मारनेवाले और बिवशशत्रुके पास रहनेवाले राजासे मिलकर निवास करे अर्थात् उससे सांधिकरके उसकी सेना के द्वारा शत्रुओंको अपने देश से दूरकरे राजा सब ओरसे गढ़ोंकेओर पासवृक्षोंको लगावे और सब छोटेवृक्षोंको कटवावे परन्तु चैतनाम बृक्षोंको त्यागकरे उसीप्रकार बहुत बड़े वृक्षों की शाखाओंको कटवावे सबदशामें चैतनामवृक्षोंकी पत्तीको अवश्यगिराना चाहिये तब अच्छे प्रकार से प्रगंजी अर्थात् धुसआदि और आकाश जननी अर्थात् गोलेकेबाहर आनेके छिद्रों को बनवावे और खाईंको जलपूरितकर मगर मच्छों से पूरित करे पुर के श्वासलेने के लिये छोटे २ द्वारहों और सब प्रकार से उनकी रक्षाकरे द्वारपर सदैव भारीयंत्र तोप इत्यादि को नियतकरे और शतघ्नियों को अपने आधीन करके आरोपणकरे और काष्ठ इकट्ठाकराने के योग्य है इसीप्रकार कूपों को खुदवावे और पहले बनेहुये कूपोंको साफकरावे और फूंस आदि से बननेवाले स्थानों को मृत्तिका से

लिपवावे इसीप्रकार अग्नि के भयसे चैत के महीने में घासआदि को खु-
दवावे और इकट्ठीकरे और सेना के खाने की वस्तु को रात्रि में पकवावे
और अग्निहोत्र के सिवाय दिन में अग्नि न जलावे और कर्म्मारिष्ट शा-
लाओं में अर्थात् लोहार आदिकी दूकानों में आग्नि बड़ीरक्षापूर्वकरहे और
घरोंमेंभी दबीहुईअग्नि रहै दिन में जिसकेघर में अग्निबलाईजाय उसको
बड़ादण्डहो और पुरकी रक्षाके लिये भी इसीप्रकार प्रघोष अर्थात् मनादी
करादे और भिक्षुक, कुम्हार, क्लीब, प्रमत्त, कुशील आदि पुरुषों को देशसे
बाहर करदे क्योंकि वह दूसरीदशा में हानिकारकहोंगे और चौतरे आदि
अठारह नाम से प्रसिद्ध तीर्थ सभा और बड़े २ मकानों में वर्णों के अनु-
सार सब के गुप्त देवताओं को नियतकरे और बड़े २ राजमार्गों को बन-
वावे और जलकीप्याऊ आदि बाजारों में शास्त्र के अनुसार नियतकरे और
पात्रस्थान शस्त्रस्थान और सब लड़नेवालों के मकानात् अश्वशाला गज-
शाला आदि सड़ककीखाई और बाग महल इत्यादिबनवावे और इनस्था-
नों को ऐसागुप्तरक्खे कि दूसरा मनुष्य कोई न जानसके तेल, चरबी,
शहत, घृत, और सब औषधी,कोयले, कुश मूंज, ढाक, जौ, ईंधन और
विषमेंभरेहुये बाणोंका ढेरकरावे और सब धनुषआदि शस्त्र, शक्ती, दुधारा,
खड्ग, वर्म्म, औषधमूल, फलऔर अच्छे ज्ञाता चारप्रकार के वैद्यों को नौकर
रक्खे अर्थात् विषका दूरकरने वाला व्रणका अच्छा करनेवाला औररोगोंको
जान कर चिकित्सा करनेवाला और कृत्तिआ अर्थात् घात आदि से बचाने
वाला यह चारप्रकार के वैद्यकहलाते हैं और नट, नर्तक, मल्ल और मायावी
आदि पुरुषों को बसावे वहसब पुरके उत्तम लोगों को प्रसन्न करें और राजा
उनको धनसे मानसे पूजनसे और अनेकप्रकार से प्रसन्न रक्खे और उनको
नौकर चाकर पुरवासी अथवा दूसरे राजासेभी शंका होय तौ अपने आधीन
करे और दान मान से और अनेक प्रकार के विश्वास से उनका सत्कार
करे और शत्रुको ताड़ना करके अथवा मारकर उन से उऋणहोवे यह शा-
स्त्र में कहा है और राजा को सात वस्तु रक्षाके योग्य हैं अपनादेह, मन्त्री,
खजाना, मित्र, दण्ड,देश, पुर यह सातोंराजा के अंग हैं इनकी सदैव रक्षा
उचित है और जो षाड्गुण्य और त्रिवर्ग को जानता है वह इसपृथ्वी को
भोगता है वह छःगुणयह हैं कि सन्धिकरना चढ़ाईकरना शत्रुताकरके वर्त्त-
मानहोना शत्रुको भयभीत करने के लिये चढ़ाई दिखाकर अपने स्थानहीपर
वर्त्तमानरहना दोनोंओर से सन्धि करना इसीप्रकार गढ़ आदि में वर्त्तमान
होना अथवा दूसरे किसी महाराज की शरण लेना और त्रिवर्ग कोभी स्व-
स्थचित्तसे सुनिये आमदनी और खर्च और खजाने की वृद्धि इसीप्रकार

धर्म अर्थ काम यह भी श्रेष्ठ त्रिवर्ग समयपर सेवनकरने के योग्य है इसरीतिसे धर्म्मपूर्व्वक राज्यकरने वाला राजा बहुतकालतक पृथ्वी को भोगता है इसविषय में बृहस्पतिजी ने दोश्लोककहेहैं सो हे श्रीकृष्णजी आपकीजयहो उनकोभी सुनिये कि सबकरने के योग्य कर्म्मों को करके और सुंदररीति से पृथ्वीकापालन और पुरवासियों का पोषणकर परलोक में आनन्द से वर्त्तमानहोता है उस राजाको तप यज्ञादिसे क्या प्रयोजन है जो राजा धर्म्म से प्रजापालन करता है वही सब धर्म्मोंका ज्ञाता है युधिष्ठिरबोले कि दण्डनीति और राजा दोनोंसमान हैं इन में कौन कर्म्मकरता है और किस को सिद्धिप्राप्तहोती है इसको मुझे समझाइये भीष्मजी ने कहा कि दण्डनीति चारोंवर्णोंको अपने धर्म्म में प्रवृत्त करती है और राजासे अच्छेप्रकार जारी होनेसे वह अधर्म्मों से भी रक्षाकरती है चारों वर्णोंकोअपने २ कर्म्मोंमें नियतहोने और मर्य्यादा ठीक रहने में औरदण्डनीति के कुशलरहने औरप्रजाके निर्भयरहने से तीनोंवर्ण बुद्धि के अनुसार अपनीदृढ़ बुद्धिसे बड़े २ उद्योग करतेहैं उसीसे मनुष्योंके सुख बने रहते हैं और कालका हेतु राजा या राजाका हेतु कालहै इस में सन्देह मतकरो कि राजाही कालका कारण है क्योंकि जब राजा दण्डनीति में अत्यन्त कर्मकर्त्ता होताहै तब सतयुगनाम काल उत्पन्नहोताहै उसमें धर्म जारी होताहै और अधर्म नष्टहोता है और किसी वर्णका चित्त अधर्म्म में नहीं जाता है और सबगुणबुद्धि के अनुसार होते हैं सब सुख और ऋतु निर्विघ्न होतीहैं और मनुष्यों के स्वर वर्ण और चित्त शुद्धहोते हैं उसयुग में रोग और अल्पावस्था नहीं होती और स्त्रियों में कुपात्रता नहींदृष्टिआती कोई कृपणनहीं होता और बिना परिश्रमपृथ्वी में अन्न बहुत उत्पन्नहोताहै और औषधीफल फूल त्वचा मूल महापराक्रमी होते हैं और अधर्मकालोप होताहै धर्मही व्याप्त होजाताहै इन धर्मों को यज्ञसंबंधी जानों जब राजा दण्डनीति में चौथाभाग दूरकरके तीन भागों को लेताहै तब तृतीय वर्त्तमान होता है और दण्डनीति के उन तीनों भागोंके सम्मुख अधर्म्म का चौथाभाग आकर वर्त्तमान होताहै और खेतीसफल होती है और औषधियां भी उत्पन्न होती हैं और जब राजा दण्डनीति के आधेभाग को छोड़ देता है तब द्वापरनाम युग आजाता है उस समय अधर्म्म का आधाभाग दण्डनीति के आधेभाग के सन्मुख आजाता है तब पृथ्वी में आधा फल अन्न औषधि आदि उत्पन्नहोतेहैं जब राजा दण्डनीति को अत्यन्तही त्याग कर बिना बिचारे प्रजा को दुःख देताहै तब कलियुग वर्त्तमान होजाताहै कलियुग में बहुत अधर्मियोंके उत्पन्नहोने से कभी धर्म्म नहीं होताहै सब वर्णोंका चित्त अपने धर्मसे पृथक् होजाताहै और शूद्रलोग भिक्षा से जीव-

न करतेहैं ब्राह्मण सेवासे अपना पोषण करतेहैं धनकी प्राप्ति और उसकी रक्षा दोनों का नाशहोताहै और वैदिककर्म निष्फल होजाते हैं सब ऋतु सुखरहित और रोगों से व्याप्तहोतीहैं मनुष्यों के स्वर देह चित्त म्लानहोजाते हैं और रोगों के कारण मनुष्योंकी अकाल मृत्युहोतीहै और स्त्रियां पापात्मा कुचालिनी होजाती हैं और प्रजा के लोग निर्दय उत्पन्नहोते हैं खंड वृष्टि और खेती कभी फलती कभी नहीं फलतीहै जब राजा दण्डनीति से सावधानहोकर प्रजाको अच्छे प्रकारसे पोषण नहींकिया चाहता है तब सब रसों का नाश होताहै राजाही सतयुग त्रेता द्वापर और कलियुग चारों युगोंका कारणहै सतयुगका जारी करनेवाला राजा अक्षय स्वर्ग भोगता है और त्रेतायुग उत्पन्न करनेवाला स्वर्गको अल्पकाल भोगताहै और द्वापर को पैदाकरनेवाला भागके अनुसार स्वर्ग भोगताहै और कलियुगको जारी करनेवाला महापापोंको भोगताहै अर्थात् बहुत समयतक नरक भोगताहै और प्रजाके पापों में डूबाहुआ महा अपयशको प्राप्तहोता है इससे क्षत्री लोग दण्डनीति को आगे करके अप्राप्तको प्राप्तकरे और प्राप्तकी चारों ओरसे रक्षाकरे अच्छे प्रकारसे जारीकीहुई दण्डनीति माता पिताके समान संसारकी स्थिति और वृद्धिकरनेवाली मर्य्यादारूप होतीहै सो हेराजा यही धर्म्म उत्तमहै और इसीसे सब जीव ऐश्वर्य्यवान्‌होते हैं इस कारण हे कुन्तीनन्दन तुम नीतिपूर्व्वक प्रजापालन करो ऐसे आचरणोंसे प्रजाका पालन करनेवाला दुर्गम स्वर्ग को पाता है ६९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेएकोनसप्ततितमोऽध्यायः ६९ ॥

सत्तरवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे क्षत्री व्यवहारके जानने वाले पितामह किस रीति से कर्म्म करनेवाला सुखपूर्वक दोनों लोकों में उनसुखोंको पावे जोकि भविष्यत काल में आनन्ददायक हों भीष्मजी बोले कि यह छत्तीसगुण छत्तीसही विशेषणों से संयुक्त हैं इन सविशेषणगुणों से युक्त राजा जो २ कार्य करताहै वह सब कल्याणकारी होतेहैं रागद्वेष वर्जित आस्तिक बुद्धिराजा सब धर्मों को प्रीति से करे और परलोक का चिन्तवनकरे लोभ न करे और दयायुक्तहोकर धनको इकट्ठाकरे और धर्म अर्थ संयुक्त इन्द्रियोंको प्रसन्नकरे और उदारता पूर्वक प्यारे वचनकहे और आत्मस्तुतिरहित पात्रापात्रविचार कर पात्रको दानदे नीचोंसे स्नेह न करे और बुद्धिमान्‌होकर बांधवों से द्वेष न करे थोड़ी जीविका के दूतोंको भ्रमण न करावे और न कभी कष्टदे और नीचपुरुषोंसे न तो अपने गुणकहै और न अपना प्रयोज न वर्णन करे साधुसे

लेनहीं नीचोंकी रक्षा न करे बिना परीक्षा किये दण्ड न दे मंत्र गुप्तरक्खे लोभियों को धन न दे कृतघ्नी लोगोंपर विश्वास न करे अनीर्षु और स्त्रियों का रक्षक शुद्ध दयावान् बहुतसी स्त्रियोंका सेवन न करनेवाला शुद्ध भोजन करे और क्रियावान् पुरुषोंका पूजन और गौओंका पूजन निश्छल होकर करे इसीप्रकार देवताओं को यज्ञादि धर्म्मोंसे प्रसन्न करे और उत्तम लक्ष्मी को चाहै नम्रतापूर्वक ईश्वरकी सेवाकरे बुद्धिमान् और कालका जाननेवाला शत्रुको भी अपराध जाने बिना दण्ड न दे और अपराधी शत्रुओं के मारने में शोच न करे बिना कारण क्रोध न करे कृतघ्नियों पर नम्रता न प्रकट करे जो इसलोकमें कल्याण को चाहतेहो इससे तुम राज्यमें प्रवृत्त होकर इस प्रकारसे कर्म्म करो इसके विपरीत कर्म्म करनेवाला राजा बड़ी बिपत्ति में पड़ता है जो राजा इन सब गुणों से सम्पन्न कर्म्मोंको करता है वह इसलोकमें अनेक ऐश्वर्यों को भोग स्वर्ग में बड़ी प्रतिष्ठा पाताहै यह सबबातें सुनकर राजा युधिष्ठिरने भीष्म जीको प्रणाम करिकै वैसाही किया १४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेसप्ततितमोऽध्यायः ७० ॥

इकहत्तरवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह किसप्रकार से प्रजाकी रक्षा करता हुआ राजा चिन्ता से रहित होता है और कैसे धर्म में बिपरीत कर्म्म नहीं करता भीष्मजीने कहा कि हे राजा मैं मिलेहुये सनातन धर्म्म तुमसे कहताहूं क्योंकि धर्म्मोंको ब्योरेवार कहने में अन्त नहीं है तुम धर्म्मनिष्ठ वेदपाठी देव व्रत परायणहो गुणवान् ब्राह्मणों को पूज घरहीमें यज्ञोंको करो और अपने पुरोहितादिको दानदक्षिणा देकर राज्यके कामों को करो और शुद्धभाव से धैर्यभाव में प्रवृत्त बुद्धिके अनुसार राज्य अंश को ले और काम क्रोधको त्याग दे क्योंकि जो राजा काम क्रोधमें प्रवृत्त होकर राज्य के प्रबन्धको करता है वह निर्बुद्धी अपने अर्थ धर्म्मको भी खो बैठता है लोभी और मूर्खोंको काम और अर्थ में नियत मतकरो निर्लोभी बुद्धिमान् पुरुषोंको सब अधिकारों पर नियत करो राज्य के कामों में बिना कुशल काम क्रोधमें भरेहुये मालके महकमे आदिमें अधिकारी होनेवाले मूर्ख बिना विचार युक्तिके कारण प्रजा को दुखदाई होते हैं खेतीके पवित्र षष्ठांश से और अपराधियों के जुर्माने से और परमठ आदिके महसूल को शास्त्रकी रीतिपर लेनेसे धनका आगमचा- हो और जब छठाभाग अन्नादिका लेनेसे प्रजाका बार्षिक व्यय पूरा न होसके तब आलस्य को त्याग राजनीतिके द्वारा राजा प्रजाके महसूल आदि लेने को माफकरे और इसीप्रकार बुद्धिके अनुसार उनकी जीविका और रक्षाका

भी विचार करे उसकी प्रजाभी उस धर्मात्मा दानीको अनेक प्रकारसे आनन्द देती है इससे तुम अधर्म और लोभसे धनको मतचाहो जो राजा शास्त्र के अनुसार न चले उसके धर्म्म अर्थका नाश होता है जो धनकी इच्छा रखनेवाला राजा शास्त्रपर दृष्टिनहीं रखता और भूलाहुआ प्रजाको क्लेश देताहै वह अपना मरण आप करता है जैसे कि दूधका चाहने वाला गौके थनको काटे उसको दूध कहांसे मिलसक्ता है उसीप्रकार बिना विचार के पीड़ा दियाहुआ देशभी अच्छी वृद्धिको नहींपाताहै और जो दूध देनेवाली गौकी उपासना करता है वह सदैव दूध पाता है इसीप्रकार विचारपूर्वक देश का भोगनेवाला राजाभी फलको पाताहै और विचार से भोगेहुये सुरक्षित देशकी भी वृद्धि करता है तब खजानेमें धनकी वृद्धि होती है राजासे अच्छे प्रकार सुरक्षित भूमिभी अन्न सुवर्ण रत्न आदि राजाको और प्रजा दोनोंको ऐसे देतीहै जैसे कि तृप्तिमाता दूधको देती है इससे हे राजा तुम मालीके समानहो जैसे कि माली उत्तम वृक्षोंकी रक्षा करता है और हानिकारी वृक्षों को निकालता है वैसेही अपनी प्रजाका पालन करो तो सदैव आनन्दपूर्वक रहोगे जो शत्रु पर सेनाकी चढ़ाई करने से तेरे धनका व्यय हो उस दशामें सामनीति के द्वारा ऐसे धनको इकट्ठा करो जो कि ब्राह्मणों के विशेष दूसरे वर्णोंकाहो ब्राह्मणको धनाढ्य जानकर तू अपने चित्तसे कभी लोभमें प्रवृत्त नहो किन्तु सामर्थ्य के अनुसार ब्राह्मणों को यथायोग्य धन को दो इस प्रकारसे ब्राह्मणों को दानसे प्रसन्न करोगे तो सदैव आनन्द से राज्य भोगोगे और अन्तमें स्वर्गकी भी प्राप्ति होगी ऐसे संपूर्ण धर्माचरणसे प्रजा पालनकरो जिससे कि तुम कभी शोकमें नहीं प्रवृत्त होगे यही प्रजापालन सब धर्मोंमें उत्तम गिना जाताहै प्रजाको भयसे रक्षा नहीं करने वाला राजा एक दिन में जो पाप करता है वह हजार वर्षमें भी उसके पाप से नहीं छूटता और जो राजा धर्मपूर्वक प्रजापालन करता है उसका एक दिनका पुण्य स्वर्ग में दशहजार वर्षतक आनन्द देताहै ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ धर्मोंके करने में जो धर्म्म प्राप्त होताहै वह धर्मपूर्वक प्रजापालन करने वाला राजा एक क्षणमें पाताहै इससे हे युधिष्ठिर तुम बड़ी सावधानी से युक्ति पूर्वक प्रजाका पालन करोगे तो पवित्र फलको पाकर कभी शोक को प्राप्त न होगे और सब लोकोंमें महालक्ष्मी को पाओगे जो राजा नहीं है उनके पास ऐसे धर्मोंका प्रकाश नहीं होता इस कारण जो ऐसे धर्म के फलको पावे वही राजा है सो तुम धैर्यवान् होकर देवोंको अमृतसे और सुहृज्जनोंको कामनाओं से तृप्तकरो ३३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेएकसप्ततितमोऽध्यायः ७१ ॥

बहत्तरवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजा जो ब्राह्मण सत्पुरुषोंकी रक्षा और असत्पुरुषों को राज्यसे निकलवादे वही राजाको पुरोहित करने के योग्य है इस स्थान पर इस प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें पुरूरवा ऐल और वायु का संवाद है पुरूरवा बोले कि ब्राह्मण कहांसे उत्पन्न हुआ और तीनोंवर्ण कहां से पैदाहुये और कौन २ कर्मोंसे उत्तमता प्राप्ति होती है वह सब मुझ से वर्णन कीजिये वायु देवता बोले कि हे राजा ब्रह्माजी के मुखसे ब्राह्मण भुजासे क्षत्री जंघासे वैश्य चरणसे शूद्र उत्पन्न हुये सो ब्राह्मण तो संस्कार के द्वारा धर्मोंके समूहोंका रक्षक सबका ईश्वर पृथ्वीपर जन्मलेने वाला है और दण्ड धारण के लिये क्षत्री पृथ्वीकास्वामी और रक्षक उत्पन्न हुआ और धनधान्य की रक्षाके लिये वैश्य और इन तीनों वर्णोंकी सेवाके निमित्त शूद्र उत्पन्न हुआ ऐलबोला कि ब्राह्मण और क्षत्री इन दोनोंमें से यह वसुन्धरा पृथ्वी किसकी होनी चाहिये इसको हे वायु देवता मुझसे कहिये तब वायु बोले कि इसलोक में यह पृथ्वी वेदपाठी ब्राह्मण की है यह धर्मज्ञ पुरुषकहते हैं ब्राह्मण अपने धनको भोगताहै और अपनेही वस्त्रादि को धारण करता है और दान भी अपने ही धनका करता है इससे निश्चय है कि द्विजन्मा ब्राह्मणही सब वर्णोंका गुरू और वृद्ध और उत्तम समझा जाताहै जैसे कि स्त्री पतिके न होने में सन्ततिके लिये देवरको पति करती है यह प्रथमकल्प तुम से कहा और आपत्ति काल में इससे भिन्न होताहै इससे जो कोई स्वर्गको चाहे वह इस धन समेत पृथ्वीको तपस्वी ब्राह्मणको अर्पण करे जो कुलवान् बुद्धिमान् नीतिज्ञ ब्राह्मण अपनी उत्तम बुद्धिसे सब प्रकारकी बातोंकी शिक्षा राजा को करे वह कल्याणकारी है उसके उपदेश कियेहुये धर्म्मोंको जो राजा करता है वह सेवा परायण निरहंकारी क्षत्री धर्म्ममें प्रवृत्त ज्ञानी शुभकर्मी राजा उसी धर्म्मसे बहुत कालतक कीर्त्तिमान् होता है और उससब धर्म्मका भागी राजपुरोहित है और इसी प्रकार सब प्रजाभी राजाकी रक्षा में हैं वह सुन्दर वृत्ति करने वाली प्रजा जिसराजा के राज्यमें धर्म्मोंको करती है उसके पुण्य के चौथेभाग को राजा प्राप्तकरताहै और देवता मनुष्य पितृ गंधर्व उरग राक्षस यह सब यज्ञसेही जीवन करते हैं और बिना राजा के देशमें यज्ञनहीं है इससे इन सब धर्म्म यज्ञोंका मूल राजाही है इसीसे सबकी तृप्ति होतीहै वह राजा गरमी में वायु, जल, छाया आदि से प्रसन्न रहताहै और शीतकाल में अग्नि, वस्त्र और सूर्य्य इनसे सुखपाताहै और चित्त शब्द स्पर्श रस रूप गन्धादि बिषयोंमें रमताहै और भयभीत मनुष्य इन सब

भोगों में आनन्द नहीं प्राप्त करता है इससे जो निर्भयता करने वाला है उस का बड़ा फल है तीनों लोकों में प्राण दान के समान कोई वस्तु नहीं है जैसे इन्द्र और यम राजा हैं वैसे ही धर्म्म भी राजा है राजा बहुत से रूप धारण करता है और राजा ही से यह सब धारण किये हुये हैं २६ ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिराजधर्मे द्विसप्ततितमोऽध्यायः ७२ ॥

तिहत्तरवां अध्याय ॥

भीष्म जी बोले कि बहुश्रुत और महा प्रभाववान् धर्म्म अर्थ के जानने वाले ब्राह्मण राजा को पुरोहित करने के योग्य हैं जो राजाओं का पुरोहित धर्म्मात्मा और मंत्र का जानने वाला हो और उन का राजा भी उसी प्रकार के गुणों का जाननेवाला हो वहां सब प्रकार से कल्याण होता है वह राजा और पुरोहित दोनों प्रजा को और सब देव पितरोंको और पुत्रादिकोंको वृद्धि करनेवाले हैं वह श्रद्धा पूर्वक अच्छे वेदोक्त धर्म्मों में प्रवृत्त चित्त सुहृद जनों के सुखदाई और हितकारी हैं प्रजा में ब्राह्मण लोग क्षत्री की प्रतिष्ठा करने से सुख को पाते हैं और जो प्रजा उन दोनों का अपमान करती है तो नष्ट हो जाती है क्योंकि ब्राह्मण और क्षत्री सब वर्णों के मूल कहे जाते हैं इस स्थान में इस प्राचीन इतिहास को कहते हैं जिस में ऐल और कश्यप ऋषि के उत्तर प्रत्युत्तर हैं उसको सुनिये ऐल बोला कि जब ब्रह्मकुल क्षत्री कुल को त्याग करता है ऐसी दशामें सबवर्ण कैसे होजाते हैं और कैसे पोषण कियेजाते और जीवन किसके द्वारा होता है कश्यपजी बोले कि इसलोक में जहां ब्राह्मण और क्षत्री परस्परमें विरोध रखते हैं वहां क्षत्री का देश नष्टताको प्राप्त होता है फिर जैसे पराक्रम प्रकट होता है वैसेही उसदेशको चोर सेवन करते हैं और उसीप्रकार सन्तलोग भी उनमें रूपधारण करते हैं अर्थात् यह जानते हैं कि यह ब्राह्मणों का अपमान करने वाला म्लेच्छराजा है उन्होंके वेदकी वृद्धिनहीं होती और संतान भी वेद नहींपढ़ते और घरों में कभी लक्ष्मीकी वृद्धिनहींहोती और सबसन्तान मूर्ख होती है और यज्ञादि से रहित म्लेच्छरूप होजाते हैं इससे यहदोनों परस्परमें स्नेह और पोषणके योग्य हैं क्योंकि क्षत्रीकुल ब्रह्मकुलका रक्षास्थानहै इसीप्रकार ब्रह्मकुल क्षत्रियोंका रक्षास्थानहै यह दोनोंकुल सदैवसे प्रतिष्ठवान् हैं जब इनदोनों में स्नेह नहीं होता उनदशामें सब संसार नष्ट होजाताहै और अज्ञानकी फांसीमें फँसताहै और इस संसाररूपी अथाह समुद्रसे ऐसेपार नहीं उतरसक्ता जैसे कि अथाह समुद्रमें उत्पातमें पड़ीहुई नौकाके चारोंवर्ण महाभयभीत होतेहैं फिरप्रजा नष्ट होजाती है रक्षा कियाहुआ ब्राह्मण देशमें सुवर्णकी वर्षाको करता है और

अरक्षित ब्राह्मण अश्रुपात से पापकी वर्षा करताहै जब ब्रह्मचारी ब्राह्मण पढ़ी हुई वेदशाखाओं से रहित चोरोंसे घिराहुआ होताहै और क्षत्री उसकीरक्षा नहींकरता है वहां देवतावृष्टिको संदेहपूर्वक करते हैं अर्थात् वर्षाकाहोना कठिनहोताहै और देशमें मरी और दुर्भिक्षभी प्रवेश करतेहैं और जहांपर पापात्मालोग स्त्री या ब्राह्मण को मारकर प्रशंसा पाते हैं और राजा के सन्मुख भी भयनहींकरते तबक्षत्रियोंको भयप्राप्तहोताहै सो हे ऐल पापियोंके पापकरने से यह राजारूप देवता रुद्ररूप अर्थात् कलिरूप होजाताहै क्योंकि पापीलोग ही पापों से कलियुगको उत्पन्नकरते हैं वह कलि साधु असाधु सबको मारता है ऐल बोला कि राजाका रुद्ररूप कहांसे होता है यह मुझसे कहिये कश्यपजी बोले कि मनुष्यों के हृदय में जो आत्मा अर्थात् जीवात्मा है वही नाशकर्त्ता होता है तब अपने और दूसरेके देहोंको घातकरता है रुद्र उत्पात की बायुके समान है और उसदेवता रूप बादल के तुल्य है अर्थात् जैसेबायु बादलोंको पृथक् २ करदेती है उसीप्रकार काम क्रोध आदि आत्मा को बिपरीतदशा में करतेहैं ऐलबोले कि पवन किसीको अलग नहीं करती है और देवता इन्द्र बादलरूप होकर भी वृष्टिनहीं करता परंतु नरलोकों में संयुक्त होकर ऐसागर्भित दृष्टिपड़ता है और कामद्वेषके कारण मरना और बिस्मरण होना होता है कश्यपजी बोले कि जैसे एकस्थानकी देदीप्त अग्नि सम्पूर्ण ग्रामको भस्मकरती है उसीप्रकार यह देवता भी बड़ामोह प्रकट करता है इसीसे सबजीव पुण्य पापों में प्रवृत्त होते हैं ऐलबोला कि मुख्यकर पापियों के पाप करने से पुण्य पाप से पृथक् आत्मा को अज्ञानता से दण्डस्पर्श करता है ऐसी दशा में किसकारण से पुण्यकरता है और किसहेतुसे पापनहीं करता अर्थात् शास्त्रोक्तकर्म्म निष्फल नहीं होता कश्यपजी बोले कि अहंकार के साथ आत्माका योग न होने से अहंकारका कियाहुआ पाप नहीं होता और अहंकार में प्रवृत्त होने से पापके समान दण्डस्पर्श करता है जैसे कि सूखे काष्ठके साथ गीलाकाष्ठभी जल जाताहै इससे पापियों से कभी मेल मिलाप न करे ऐल बोला कि पृथ्वी इस लोक में साधु असाधु सब को धारण करती है और सूर्य भी साधु असाधुकोई हो सबको तपातेहैं और बायुभी इसी प्रकार सबपर चलती है इसी प्रकार जलभी साधु असाधु सबको पवित्र करता है तात्पर्य यह है कि पृथ्वी आदिके समान आत्मा सबसे असंग है फिर अहंकार युक्त रुद्रभाव से आत्माको क्या सम्बन्ध है इससे आत्मा रुद्ररूपहै यह कहनायोग्य नहीं कश्यपजी बोले कि हे राजकुमार इसी प्रकार से वह शुद्धआत्मा रूप दृष्टि गोचर होता है परन्तु परलोक के बिषय में ऐसे प्रकारका दर्शन वर्त्तमान नहीं है

उसदशामें जो पुण्य पापको करता है तब देह त्यागने पीछे उन दोनों के रूपमें अन्तर होताहै अर्थात् पुण्यका लोक मधुमान और दिव्य प्रकाशवान सुवर्णरूप ज्योति रखनेवाला और अमृत की नाभिहै उसीमें ब्रह्मचारी लोग देह त्याग करके आनन्द को करतेहैं उसमें जरामृत्युआदि कोई दुःख नहीं है और पाप का लोक कुचाली सदैव दुःख रूप अत्यन्त शोक का कर्त्ता है उस में भूले हुये पापात्मा लोग गिरते हैं और बहुत समय तक अपने को शोचा करतेहैं ब्राह्मण क्षत्रियों के परस्पर विरोध होने से प्रजाअसह्य दुःखको सहती है ऐसा जानकर राजाको इस लोक में सदैव विद्यावान् वेदज्ञ ब्राह्मण पुरोहित करना चाहिये उस पुरोहितको नियत करके राज्याभिषेक करे इसलोक में ब्राह्मण धर्म्म से सबसे मुख्य और धर्म्म का मार्ग दिखाने वाला कहा है ब्राह्मण की उत्पत्ति सबसे प्रथम है इससे इनको प्रथम पदकी प्राप्ति है और सब प्रकार पूजन के योग्यहै सब उत्तम पदार्थ उसकी भेंटके योग्यहैं यहबात पराक्रमी राजाभी सदैव करे क्योंकि ब्राह्मण क्षत्री की वृद्धि करता है और क्षत्री से ब्राह्मणभी वृद्धि पाताहै इसी हेतुसे ब्राह्मण क्षत्रियों से सदैव पूजने के योग्यहैं ॥ ३२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मेत्रयस्सप्ततितमोऽध्यायः ७३ ॥

चौहत्तरवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि देशका अभीष्ट और रक्षा राजा के आधीन है और राजाका जो अभीष्ट और रक्षाहै वह पुरोहितके आधीन कही जातीहै जिस में प्रजाओं का जो गुप्त भय है उसको ब्राह्मणही दूर करताहै और दृष्टिगोचर भयको राजा अपने भुजबल से दूर करताहै इस कारण संपूर्ण राज्य के लोग आनन्द को प्राप्तहोते हैं इसस्थान पर इस प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें राजा मुचुकुन्द और कुबेरजीके प्रश्नोत्तरहैं राजा मुचुकुन्द इस सम्पूर्ण पृथ्वीको विजय करके कुछ इच्छा पूर्वक सेना समेत कुबेरजी के पास गया तब कुबेरने राक्षसों को आज्ञादी कि इस सेनाको मारो तब मुचुकुन्दकी सेनाको राक्षसों ने मारा उस समय अपनी सेना के नष्टहोने पर विद्यावान मुचुकुन्दने अपने वेदपाठी पुरोहित की निन्दाकी तबतो पुरोहित वशिष्ठजीने अपने तप के प्रभावसे सब राक्षसों को मारडाला और उस राजाके मार्गको भी जाना फिर कुबेरजीने अपनी सेना के मरने पर मुचुकुन्द को दर्शन दिया और यह वचन कहा कि तुमसे पहले राजालोग पुरोहितों के कारण महापराक्रमी थे ऐसा किसीने कर्म नहीं किया जैसा कि तुमने यहां किया निश्चयकरके वह अस्त्रज्ञ पराक्रमी राजालोग आकर मुझ सुखदुःखके स्वामी

की उपासना करतेहैं इससे जो तू पराक्रमी है तो अपने पराक्रमको दिखातुम ब्राह्मणों के पराक्रमसे क्या अधिक कर्म करतेहो तबतो क्रोधयुक्तहोकर मुचुकुन्दने धनके स्वामी कुबेरजीको उत्तर दिया कि ब्रह्माजीने एकस्थान में उत्पन्नहोने वाले ब्रह्मकुल और क्षत्री कुलको उत्पन्न किया वह विद्या और पराक्रम से भराहुआ संसारकी क्या रक्षा नहींकरे क्योंकि तप और मंत्र बल तो सदैव ब्राह्मणों में वर्त्तमानहै और क्षत्रियोंमें अस्त्र और भुजाबल सदैव वर्त्तमान हैं दोनों मिलकर प्रजाका पालन करनायोग्य है इससे हे अलिकापुरीके राजा कुबेरजी क्यों मेरीनिन्दा करते हो फिर कुबेरजी ने राजा से और उनके पुरोहित जी से कहा कि मैं ईश्वर के बिना दिये हुये किसी को राज्य नहीं देताहूं और ईश्वरकी इच्छा बिना किसी का राज्य हरता भी नहीं हूं तब मुचुकुन्द ने उत्तर दिया कि हे कुबेर जी मैं भी आप के दियेहुये राज्य को भोगना नहीं चाहता हूं मेरी यहीइच्छाहै कि मैं अपनी भुजाबलसे जीते हुये राज्य को भोगूं भीष्मजी बोले कि ऐसे मुचुकुन्द के निर्भय बचनों को सुनकर कुबेरने बड़ा आश्चर्य किया तदनन्तर क्षत्रीधर्म्मके ज्ञाता उसराजा मुचुकुन्द ने भुजबलसे प्राप्त होनेवाली पृथ्वीपर बड़े आनन्दसे राज्य किया इसप्रकार से जो उत्तम ब्राह्मण को अग्रगणनीय करके धर्म्मज्ञ राजा राज्य को करता है वह कठिन भूमिको भी बिजय करके सुख और आनन्द भोगताहै और सदैव यशस्वी रहता है ब्राह्मण सदैव जल रखने वाला और क्षत्री शस्त्ररखने वाला हो तो उन दोनों के आधीन सब विश्वके पदार्थ हैं २२॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मेचतुस्सप्ततितमोऽध्यायः ७४॥

पचहत्तरवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि राजा जिसरीतिसे मनुष्यों की वृद्धि करता है और पवित्र लोकोंको बिजय करताहै वह सब आपमुझसे कहिये भीष्मजी बोले कि दान, यज्ञ, व्रत, तप का अभ्यास रखनेवाला प्रजा पालन में प्रीतिकर्त्ता राजा सदैव धर्म्म से प्रजाका पालन करे और दानमान प्रीतिसे धार्मिक पुरुषों का सन्मान न करे क्योंकि राजा से पूजितधर्म सब स्थानोंपर पूजाजाताहै राजा जो २ कर्मकरता है वही प्रजाओंको सुखदायी जानपड़ता है राजा सदैव शत्रुओंपर मृत्युके समान दण्डधारण करने वाला होवै और सब चोर आदि को मारे और अपनी इच्छा से किसीको क्षमा न करे इसलोक में राजा से रक्षित प्रजा जिस धर्म्म को करती है उसके चौथे अंशको राजा प्राप्तहोता है और प्रजाके लोगजो दान, यज्ञ, व्रत, और वेदपाठ आदिकर्म्म करतेहैं प्रजापालन करनेवाला राजा उसके चौथेभागको भोगता है और जो रक्षा

नहींकरता उसकी प्रजा जो पापकरती है उसका चौथाई पाप राजा भोगता है और निर्दय मिथ्यावादी मनुष्य जो कर्म्म करते हैं उस कर्मके सम्पूर्ण या आधेभागको राजापाता है और जिस कर्मसेराजा जैसे पापसे छूटता है उस को सुनो जो चोरोंसे हराहुआ धन उनसे फेरलेनेको असमर्थहो ऐसी दशामें असमर्थ और व्यापारियोंके साथ जीविका करनेवाले राजाको अपने भण्डारसे देना चाहिये सदैव ब्राह्मणका धर्म रक्षाकरनेके योग्य है जो कि ब्राह्मण रक्षाके योग्य हैं और जो पुरुष ब्राह्मणोंके साथ निकृष्ट कर्म्मकरे वह देशमें रखनेके योग्य नहीं है ब्राह्मण के धनकी रक्षासे सबकी रक्षा होती है इसीसे राजा ब्राह्मणकी कृपा से अभीष्ट सिद्धकरे जैसे जीवोंकी रक्षा मेघ और पक्षियोंकी रक्षा वृक्ष करते हैं उसी प्रकार मनुष्यों का अभीष्ट राजासे सिद्ध होता है अपनी इच्छा के अनुसार चित्त और बुद्धि रखने वाले निर्दयी लोभी राजा से प्रजा की रक्षा का होना सम्भव नहीं युधिष्ठिर बोले कि मैं राजसुख का चाहने वाला एक क्षणमात्र को भी राज्य नहीं चाहताहूं केवल धर्म्म के निमित्त राज्यको अच्छा समझताहूं और इस में धर्म्म वर्त्तमान नहीं है इससे राज्य से मुझको अलग कीजिये और धर्म्म करने के लिये बनही को जाऊंगा वहां पवित्र वनमें तारक दण्ड जितेन्द्रिय फलमूल भोजन करनेवाला मुनिरूप धारणकर धर्म्मका साधन करूंगा भीष्मजी बोले कि मैं तेरीउसबुद्धिको जानताहूं जो कि दूसरेके दुःखकी हरने वालीहै परन्तु वह निर्गुणहै शुद्धदयावानसे राज्य का भोगना असम्भव है यह लोकतुम्ह मृदुस्वभाव बड़े धार्मिक उत्तम और नपुंसक धर्म्म रखने वाले दयावान को भी बहुत मानता है पिता पिता- मह का चाल चलन देखो इस प्रकार का राजाओं का चलन नहीं होता है जैसा कि तुमकर्म किया चाहतेहो इसलोकमें व्याकुलतामें प्रवृत्त दयावान तुम प्रजापालन से उत्पन्नहोने वाले धर्म्मफलको नहींप्राप्तहोगे पांडु और कुन्तीने ऐसाआशीर्वाद नहींमांगा जैसे कि शास्त्रज्ञहोकर अपनीबुद्धिसे तुम कर्मकरतेहो पितानेतेरी शूरता पराक्रम सत्यता आदिको सदैवकहाहै अर्थात आशीर्वाद दिया और कुन्तीने आपके माहात्म्य और उदारताको चाहा और पितृ देवता पुत्रोंमें स्वधा और स्वाहाको नरयज्ञ देवयज्ञके द्वारा चाहाकरतेहैं दानयज्ञ और वेदपाठ करना और चारोंओरसे प्रजाका पालन करना यह धर्म्महो या अधर्म्महो तुमजन्मसेही उनकेकरनेकेलिये उत्पन्नहुये हो हे कुन्ती- पुत्र समयपर धुरेमें जुड़नेवाले और रक्खेहुये भारको उठानेवाले पीड़ामान पुरुषोंकीभी कीर्त्तिनाश नहींहोती है और शिक्षाकियाहुआ मार्गमें वर्त्तमान घोड़ा भी भारको लेचलता है कर्म्म वचनसे जो निरपराधताहै वही कर्म्मकी सिद्धीहै इसलोकमें किसी धर्मवान गृहस्थी, राजा और ब्रह्मचारीने एकान्तमें

बैठकर धर्मको नहीं किया छोटाभी कर्म्म बहुत मनुष्योंका सुखदायी होने से बड़ासारवान है इससे न करने से करनाही उत्तम है बिना जाने का अधिक पापनहीं है जब कुलवानधर्म्मज्ञ पुरुष उत्तम ऐश्वर्य्यको पाताहै तब राजा का सिद्धप्रयोजन और उसकी रक्षा उसके कल्याणके निमित्त कल्पनाकीजातीहै इसलोकमें धर्म्मकरनेवाला राजाराज्यकोपाकर सब ओर किसीको दानसे किसीको पराक्रमसे किसीको सत्यवचनोंसे अपने स्वाधीनकरे विद्यावान् कुलवान निर्जीविका से भयभीत पुरुष जिसको प्राप्तहो तृप्तितासे आनन्दपाते हैं उससे अधिक कौनधर्म्महै युधिष्ठिरबोले हेपितामह उत्तमस्वर्गका देनेवाला कौनकर्म्म है और उत्तम प्रीतिक्याहै और इसका फलबड़ा ऐश्वर्य कौनहै यह मुझे समझाइये भीष्मजी बोले कि जिसराजाके पास भयसे पीड़ामानपुरुष एकक्षण मात्रभी अच्छेप्रकारसे कुशलतापूर्वक आनन्दकोपाताहै वह हमलोगोंमेंस्वर्ग का जीतनेवाला है इससे हे कौरवोंमें उत्तम कौरवोंमें प्रीति करनेवाले तुमहीं राजाहोकर स्वर्गको विजयकरो सत्पुरुषोंकी रक्षाकरो और दुष्टोंको मारो हे तात जैसे बड़े २ पुण्यात्मा उपकारी जीवोंकी रक्षाकरते हैं वैसेही तुम अपने सुहृद्जन और प्रजाका पालनकरो ३७॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मे पंचसप्ततितमोऽध्यायः ७५॥

छिहत्तरवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह कोई ब्राह्मण अपने कर्म्म में प्रवृत्त है और कोई उसके विपरीत कर्म्म में डूबेहुये हैं उनकी न्यूनाधिकता कहिये भीष्म जी बोले कि जो ब्राह्मण ब्रह्मविद्या और शम दमआदि लक्षणों से संयुक्त समदर्शी हैं वह ब्रह्मरूप कहेजाते हैं और ब्राह्मणों में जो ब्राह्मण ऋग्, यजु, साम, आदि वेदयुक्त अपने कर्म्म में अत्यन्त प्रवृत्त हैं वह देवताओं के समान हैं और जो जन्म के योग्य कर्मोंसेरहित और सब बालबच्चे स्त्रीआदि के दुःखदेनेवाले हैं और लोभसे धन इकट्ठा करनेवाले नाममात्रको ब्राह्मण कहलाते हैं वह शूद्रके तुल्य हैं और जो वेदपाठी अग्निहोत्री नहीं हैं उन सबसे धर्म्मात्मा राजा करले और बिनामासिक के राजसेवा करावे धर्म्माधिकारी और मासिकलेकर देवताकी पूजाकरनेवाला नाक्षत्रिक, ग्रामयाजक मनुष्योंके समूहको यज्ञकरानेवाला और मार्गका करलेनेवाला यह पांचों ब्राह्मण चांडाल के सदृश हैं और ब्राह्मणों में जो ब्राह्मण ऋत्विज पुरोहित मन्त्री दूत और सन्देशहर हैं वह क्षत्री के समान होते हैं और जो ब्राह्मण अश्वयानी या हस्तियानी, रथयानी और पदाती होते हैं वह वैश्य के समान होते हैं जिस राजाका कोशागार धनसे खालीहो वह ब्रह्मरूप और

देवरूप ब्राह्मणों के सिवाय इनसब ब्राह्मणों से पृथ्वीकी भेजले और जो ब्राह्मण नहीं हैं उनके धनका स्वामी राजा है और ब्राह्मणहोके अपने धर्म्म के विपरीत चलनेवाले ब्राह्मण के धनका भी राजाही स्वामी होता है यह वेद वाक्य है अपने धर्म्म के विपरीत धर्म्मवाला ब्राह्मण किसी प्रकार से भी राजा से अदण्ड नहीं होसक्ता अर्थात् धर्म्मपर अनुग्रह करने के कारण वह लोग समझाने और भाग देने के योग्य हैं और जिस राजा के देश में ब्राह्मण चोर होता है उसके आन्तर्य्य के जानने वाले मनुष्य उसको राजा ही का अपराध जानते हैं जो वेदज्ञ और स्नातक ब्राह्मण आजीविका के न होने से चोर हो जाय वह राजा से पोषण के योग्य है यह वेदज्ञों का वचन है और जिस ब्राह्मण की आजीविका नियत की गई है और अपराधी हो जाय तो वह अपनी जीविका को त्याग दे और जो न त्यागे तो राजा उसको सकुटुम्ब देश से बाहर निकाल दे १५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेषट्सप्ततितमोऽध्यायः ७६ ॥

सतहत्तरवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह राजा किस २ के धनका स्वामी होता है और किस वृत्तीसे रहे यह कृपाकरके मुझसे कहिये भीष्मजी बोले कि ब्राह्मणके सिवाय राजा सबके धनका स्वामी होताहै और ब्राह्मणों में भी जो अपने धर्म्म के विपरीतहैं उनकेभी धनका स्वामी गिनाजाता है यह वेदकीश्रुतिहै विपरीतधर्म करनेवाले ब्राह्मण किसी दशामेंभी राजासे अदण्ड नहींहोसक्ते श्रेष्ठलोग राजाओंका यह प्राचीन व्यवहार कहतेहैं जिसराजाके देशमें ब्राह्मण चोरहोताहै उस अपराध को राजाही का पापमानते हैं उसकर्म्म से आत्माको जब लगाने के योग्यमानते हैं इसीसे सब राजऋषियोंने ब्राह्मण को पोषण किया इस स्थानपर इस प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसको राक्षससे हरेहुये राजाके कथन वर्णन कियाहै वह यह है कि एक भयानक रूप राक्षसने वेदपाठी व्रतनिष्ठ केकय देशके राजाको वनमें पकड़लिया तब राजाने उससे कहा कि मेरे देशमें चोर कृपण मद्यपी आदि कोई नहीं है और सब मनुष्य अग्निहोत्रीहैं और सदैव यज्ञधर्म्म करनेवाले हैं और मेरा ब्राह्मणभी मूर्ख नहीं है किन्तु व्रतनिष्ठ अमृत पानकरनेवाला अग्निहोत्री यज्ञकरनेवाला है और मेरे देशमें कोईभी बिना दक्षिणावाले यज्ञसे पूजननहीं करते और कोई वेद पाठ और यज्ञसे खाली नहीं है पठन पाठन यज्ञ करते कराते दान देते और लेते हैं इन छः कर्म्मों में प्रवृत्त हैं मृदु स्वभाव सत्यवादी स्वकर्म्मनिष्ठ ब्राह्मण मुझ से पूजित और अच्छे प्रकार से भोगों के पानेवाले हैं सत्य धर्म्म में कु-

आप पढ़ते हैं यज्ञ
शल अयाचक दान लेते हैं वेतन लेकर नहीं पढ़ाते हैं
करते हैं परंतु दूसरे को नहीं कराते और दान लेने को भी निषेध करते हैं
अपने कर्म्म में सावधान और युद्ध में न मुड़ने वाले ऐसे मेरे क्षत्री ब्राह्मणों
की चारों ओर से रक्षा करते हैं निश्छल होकर खेती गौओं का पालन
और व्यापार आदि से अपना निर्वाह करते हैं सावधान क्रियावान् सुन्दर
व्रत वाले सत्यवादी हैं और भागों का विभाग शान्त चित्त बाहर भीतर से
पवित्र और सब से प्रीति रखने आदि में प्रवृत्त हैं ऐसे मेरेदेश के वैश्यलोग
भी अपने अपने कर्म्म में प्रवृत्त हैं और अपने कर्म्म में सावधान दूसरे के
गुण में दोष न लगाने वाले मेरे देश के शूद्रभी तीनों वर्णों की सेवा करते
हैं दुखिया अनाथ वृद्ध अल्प प्राण रोगी स्त्री इन सब को भाग देने
वालाहूं और कुल देश आदि के सब नियत धर्म्मों को बुद्धि के अनुसार दृढ़
करने वाला हूं और मेरे देश में तपस्वी लोग सत्कार पूर्वक पूजित सब
ओर से रक्षित अच्छे प्रकार सेभागपाने वाले हैं और मैंभी सब भागों के
दियेबिना भोजन नहीं करताहूं और अन्यकी स्त्रीसे सम्भोग नहीं करता
और न कभी स्वतन्त्रतासे क्रीड़ाकरताहूं मेरेदेशमें ब्रह्मचारी लोगोंके सि-
वाय और कोई भिक्षा मांगनेवाला नहीं है और सब भिक्षुकभी ब्रह्मचर्य्यसे
रहित नहीं हैं बिना ऋत्विज के होम नहीं होता और मैं कभी वेदपाठी या
वृद्ध या तपस्वियोंका अपमान नहीं करता और अपने देशके सो जाने पर
जागा करताहूं मेरा पुरोहित ब्रह्मज्ञानमें प्रवृत्त तपस्वी सब धर्म्मोंका जानने
वाला सब देश भरका स्वामी और बुद्धिमान है मैं दानसे विद्याको चाहता
हूं और ब्राह्मणों की रक्षाके लिये सत्यता पूर्व्वक धनको चाहताहूं और सेवा
के लियेगुरू लोगोंके पास जाया करता हूं और मैं राक्षसोंसे कभी भय
नहीं करतामेरेदेश में विधवास्त्री नहीं है और अपने कर्म्मका त्यागकरने
वाला कोई नामको भी ब्राह्मण मेरेदेशमें नहीं है और न कोई छली चोर
ब्राह्मण है और अनधिकारियोंका यज्ञ करानेवाला भी कोई नहीं है और न
कोई पापकर्म्मी है इसहेतु से मुझ को राक्षसों से किंचित् भी भयनहीं है
और मुझ युद्धकर्त्ता की देह में शस्त्रों से विनाव्रण दोअंगुल भी देहनहीं है
और मेरे देशवाले सदैव गौ ब्राह्मण और अन्यमनुष्य यज्ञोंसे मेरे कल्याण
को चाहते हैं इससेतुम मेरेदेह में प्रवेश मतकरो राक्षसबोला कि हे केकय
जिसकारण से तुम सबदशा में धर्म्म को ही विचारते हो इस से तुम कुशल
पूर्व्वक घरकोजाओ मैं आपको छोड़ करजाताहूं और सुनो कि जो गौब्राह्म
णों और प्रजा की रक्षा करते हैं उन को राक्षसों से कभीभय नहींहोता फिर
पापसेभय कैसे होगा जिन के अग्रगणनीय ब्राह्मण हैं और पुरवासी वा अ

निधियोंका सत्कारकरते हैं वह राजा निश्चय करके स्वर्गपाने वाले हैं भीष्म जीबोले कि इसकारण ब्राह्मणोंकी रक्षाकरे क्योंकि वह रक्षाको निर्विघ्नकरते हैं और उनका आशीर्व्वाद राजाओं को सफल होता है इस हेतु से बिपरीत कर्म्मी ब्राह्मणों को भी राजा सुधर्म्म में प्रवृत्त करे और उनपर ऐसा अनुग्रहकरे कि वह भाग पानेकेयोग्य होजायँ जो राजा इसप्रकार से अपने देश और पुरवासियोंके साथ वर्त्ताव करताहै वह इसलोक में कीर्त्तिमानहोकर अन्तमें इन्द्रकी समताको प्राप्त होताहै ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेसप्तसप्ततितमोऽध्यायः ७७ ॥

अठहत्तरवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि आपत्ति कालमें ब्राह्मणों की जीविका राज धर्म्मों से कहीहै तो किसी दशामें ब्राह्मण वैश्यधर्म्मसे भी अपनी जीविका कर सक्ताहै या नहीं भीष्मजी बोले कि आजीविका के नष्ट होजाने से और दुःखहोने के कारण क्षत्री धर्म्ममें प्रवृत्तहोने को असमर्थ ब्राह्मण खेती और गौ के पालन आदि में प्रवृत्त होकर वैश्यके धर्मसे निर्वाह करसक्ता है युधिष्ठिर बोले कि ब्राह्मण वैश्य धर्ममें प्रवृत्त होकर किस२ वस्तुके बेचनेसे स्वर्गसेच्युत नहींहोताहै भीष्मजीने कहा कि मद्य नोन, तिल, घोड़े, गौ, बकरी, बैल, मधु, मांस, सिद्धान्न इतनी वस्तुओं को ब्राह्मण सबदशामें नहींबेचे क्योंकि इन में से कोई भी वस्तु बेचे तो अवश्य नरकभोगे बकरा अग्निरूप और भैंसा वरुणरूप, घोड़ा सूर्य्यरूप, पृथ्वी विराटरूप, गौ यज्ञ अमृत रूप हैं वह किसी दशा में भी बेचने के योग्य नहीं हैं साधु लोग पक्के अन्न से कच्चे अन्न को बदलने की प्रशंसा नहीं करते हैं इस से कच्चे अन्न से पक्के अन्नको भोजन के लिये बदला बदलीकरे यह कहकर बदला करे कि हम पक्के अन्न को भोजन करेंगे आप इसको तैयार करो इसप्रकार विचार कर बदला करने से कोई दोष नहीं है इस स्थान पर व्यवहार अच्छे लोगों के सनातन धर्म्म को समझो मैं यह आपको देता हूं आप इसको लीजिये धर्म्म मनकी इच्छा से वर्त्तमान होता है पराक्रम से जारीनहीं होता इसप्रकार से ऋषि लोग और अन्यपुरुषों के सनातन व्यवहार जारी होते हैं यही श्रेष्ठ है इस में कुछ संदेह नहीं है युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जबसब प्रजाशस्त्रों को धारण करती है और सब अपने धर्म्मों से हट जाते हैं तब क्षत्री धर्म्म नष्ट होजाता है तब लोकका राजा कैसे रक्षा करने को योग्य होय इसमेरे संदेह को उपकारपूर्वक कहकर दूरकरो भीष्मजी बोले कि जिन वर्णों में ब्राह्मण श्रेष्ठहैं वह वर्ण दान तप यज्ञ असाहुता और शान्त स्वभावसे अपना कल्याण

चाहें उनमें जो वेदपाठके पराक्रम रखनेवाले ब्राह्मण हैं वहचारों ओर उद्योग करके राजाके पराक्रमको बढ़ावें जैसे कि देवतालोग अपने इंद्रके पराक्रमको बढ़ाते हैं हतराज्य राजाकाभी ब्राह्मणही रक्षकहै इससे ज्ञानी राजाको ब्राह्मण के पराक्रमसे उद्योग करना चाहिये जब पृथ्वीका विजय करनेवाला राजा देशमें मंगलकरे तबवर्ण अपने २ धर्म्ममें कैसे नहीं चलेंगे अर्थात् अवश्य चलेंगे हे युधिष्ठिर बे मर्य्यादा जारीहोनेमें और चोरोंसे वर्णसंकर करने में शस्त्रधारी सबवर्ण दृष्टिनपड़े अर्थात् वर्णोंकी पृथक्२ पहिचाननहो औरक्षत्री अज्ञानतासे ब्राह्मणके साथ सबप्रकारसे शत्रुताकरे उसब्रह्मकुलका कौनरक्षक है औरकौनधर्म्म औरक्या उनकीरक्षाका स्थानहै भीष्मजीबोले कि जपतपब्रह्म-चर्य्य शस्त्र पराक्रम छल और बिना छलसे शासन करना उचित होय तो ब्राह्मणों के ऊपर अधिकतर बे मर्य्यादगी करने वाले क्षत्रीका दण्ड देने-वाला ब्राह्मण ही होगा क्योंकि क्षत्री ब्राह्मणही से प्रकट हुआ है जलसे अग्नि ब्राह्मणसे क्षत्री पत्थर से लोहा उत्पन्न हुआ उनका सर्व व्यापी तेज अपने उत्पत्ति स्थानमें शान्तिताको पाता है जब लोहा पत्थरको काटता है और अग्नि जलको स्पर्श करती है और क्षत्री ब्राह्मण से शत्रुता करता है तब वह तीनों नाशको पाते हैं इससे हे युधिष्ठिर क्षत्रियों से अजय और बहुत बड़े तेज और बल ब्राह्मण में शान्ती को पाते हैं ब्राह्मण का पराक्रम न्यून होने और क्षत्रीका पराक्रम कठिन होने में और सब ब्राह्मणों के ऊपर सब वर्णोंके शत्रुहोने में ब्राह्मणों को और धर्मोंको और अपनेको रक्षा करने वाले जो पुरुष अपने जीवको त्याग करके यहां युद्धको करतेहैं वह साहसी और क्रोधजित पवित्र लोक गामी होते हैं ब्राह्मणों के लिये सब वर्णों को शस्त्र धारण करना अभीष्ट समझा जाताहै वह शूर भोजन रहित अग्नि प्र-वेश करने वालोंके सदृश ऐसे उत्तम लोकों को प्राप्त होतेहैं जो कि यज्ञवेद पाठ तपस्या आदिसे संयुक्त तपास्वियोंके भी लोकोंसे बड़े हैं और मोक्षरूप परम गतिको भी पाते हैं ब्राह्मण तीनों वर्णोंके ऊपर शस्त्र धारण करता दोषको नहीं प्राप्त होताहै इसी प्रकार मनुष्योंने भी अपने देहके त्याग से दूसरे धर्म्मको नहीं जाना उनको नमस्कार है और उनका कल्याणहो जो ब्राह्मणों के शत्रुओं के मारने में अपनी देहको अर्पण करते हैं हमको भी उन्हीं की सी योग्यताहो मनुजीने उनवीरोंको स्वर्ग्गवासी और ब्रह्मलोक का विजय करने वाला कहा जैसे कि अश्वमेध यज्ञके अभ्रतस्नान सेमनुष्य पवित्र होतेहैं और जैसे युद्धमें पापके नाशकर्त्ता अस्त्रोंसे मरने वाले पवित्र होते हैं उसी प्रकार देश कालके कारण से दोनों धर्म्म और अधर्म्म पर-स्परमें लौटपोट होते हैं अर्थात अधर्म्म धर्म्मरूप होजाताहै क्योंकि वह देश

काल इसी प्रकारका है सबके मित्र निर्दय कर्मको करते उत्तम स्वर्गको पाते हैं और धर्ममें प्रवृत्त क्षत्री पाप कर्मको करते परमगति को पातेहैं क्षत्री आदि वर्णके विपरीत कर्म होने से ब्राह्मण अपनी रक्षाके निमित्त तीनों कालमें दुःखसे विजय होनें वाले नीचोंके विजय करने के लिये शस्त्र को धारण करना दोषको नहीं प्राप्त होताहै युधिष्ठिर बोले कि हे महाराज चोर और वर्ण संकरोंका समूह उठने और क्षत्रियोंके असावधान होनेपर जो दूसरा वर्ण पराक्रमी प्रजापालन के लिये चोरोंको विजय करे वह ब्राह्मण या वैश्य या शूद्र चोरोंसे प्रजाकी रक्षाकरे और धर्म से दण्डको धारणकरे दूसरे के योग्य कर्मको करे या नकरे और चाहे निषेध करने के योग्यहो या नहो मेरी बुद्धिमें इस कारणसे क्षत्रीके सिवाय दूसरे वर्णको भी शस्त्र धारण करना उचित है भीष्मजी बोले कि जो शूद्र या दूसरा कोई अपारमें पारहो और बिनानौका के नदीकी नौकाहो वह सब प्रकार प्रतिष्ठाके योग्य है हे राजा जिसकी रक्षामें मनुष्य अपना सुख पूर्वक काम करें और चोरोंसे अनाथोंकी रक्षा होय वह प्रीति पूर्वक उसी राजाको ऐसे पूजें जैसे कि अपने बान्धव को पूजते हैं हे कौरव निर्भयदान करने वाला सदैव मानने के योग्यहै जो बैलसवारी के योग्य नहीं होता उससे क्या प्रयोजन है और दूधन देनेवाली गौसे भी क्या प्रयोजनहै बांझस्त्री भी निःप्रयोजन है इसी प्रकार रक्षा न करनेवाले राजा से भी कौन अर्थहै हे राजा जैसे लकड़ी काहाथी और चर्मका मृग और नपुंसक और ऊपर खेत निष्प्रयोजन हैं इसी प्रकार जो ब्राह्मण वेदपाठी नहींहै और राजा रक्षक नहीं है और मेघवर्षा रहित है वह सब निरर्थकहैं जो पुरुष सदैव सत्पुरुषोंकी रक्षाकरे और नीचपुरुषों को मार्ग में चलावै वही राजा करने के योग्यहै उससेही यह सब राज्यभार धारणकिया जासक्ता है ४४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिराजधर्मेअष्टसप्ततितमोऽध्यायः ७८ ॥

उन्नासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे महावक्ता ऋत्विज किस निमित्त नियत किये जातेहैं और उनका स्वभाव कैसा होना योग्य है और कैसे प्रकार के होंय इसका वर्णन कीजिये भीष्मजी बोले कि साम आदि वेद और शास्त्रों को जानकर प्रति दिन कर्म में प्रवृत्त ऋत्विज ब्राह्मणों का प्रति कर्म जो कि अच्छे प्रकार प्रवृत्त होकर कियाजाय वह कहाजाता है जो ऋत्विज सदैव एकही राजा के समीप रहने वाला और शत्रुओंके प्रश्नोंका उत्तर देनेवाला सबका मित्र और समदर्शी होय वह दयावान् सत्य-

बादी ब्याज न लेनेवाला शुद्ध अन्तःकरण शत्रुता और अहंकार से रहित लज्जायुक्त शान्त चित्त भीतर बाहरकी बातोंका जाननेवाला बुद्धिमान् सत्य धैर्य्यवान् तपयुक्त जीवोंकी हिंसा न करने वाला रागद्वेष से भिन्न निर्दोष तीन गुणोंमें प्रवृत्त ज्ञानसे तृप्त होय वह ब्रह्म आसन के योग्य है वही महाऋत्विज प्रतिष्ठा के योग्य हैं युधिष्ठिर बोले कि जो यह वेदका वचन दक्षिणाओं के विषय में कहाजाता है कि यह देना चाहिये यह देनाचाहिये वह कहीं व्यवस्था को नहीं पाता है यह शास्त्र धनकी संख्या का निश्चय करने वाला नहीं है किन्तु आपधर्म्म से संबंध रखने वाला है क्योंकि शास्त्र की यह बड़ी आज्ञा सामर्थ्य को नहींदेखती हैं श्रद्धादान से यज्ञकरना चाहिये यह वेदकी श्रुति है निष्फल कर्म्म वाले यज्ञ को श्रद्धा क्या पूर्णकरेगी अर्थात् जितनी गौ उतनेही वस्त्र या उनकेबदले चरुदेवे यह निर्धनके लिये विधिहै जो सामर्थ्यवान् पुरुष गौके स्थान में चरुदेवे तो वह मिथ्या यज्ञ है भीष्मजी बोले कि कोई मनुष्य वेदोंके अपमान दुष्टता और छल आदि से बड़ेपदको नहीं पाता है तेरीबुद्धिऐसी नहो हे तात दक्षिणा यज्ञों का अंग है यह वेदका बचन है दक्षिणा रहित यज्ञ किसी दशा में भी सफल नहीं होता इससे तीनोंवर्णोंको सदक्षिणा यज्ञ करनाचाहिये ब्राह्मणोंका राजा सोम है यह वेदकी मर्य्याद है उसको बिक्रय किया चाहते हैं परन्तु बिनायज्ञ के उसका बेचना अभीष्ट नहीं है क्योंकि उसधनके द्वारा प्राप्तहुये सोमसे फिर यज्ञ होसक्ता है यह धर्म्मज्ञ ऋषियोंका बिचार है परन्तु उससमय जब कि पुरुषयज्ञ और सोमयज्ञ न्यायके अनुसारहो न्याय के बिपरीत पुरुषदूसरेका है न अपनाहै अपमानसे संयुक्त महात्मा ब्राह्मणोंके किये हुये यज्ञ आदि शुभ नहींहोते यहभी वेदकी श्रुतिहै तपयज्ञसे भी उत्तम है यह बिशेष श्रुति है वह तप मैं तुझसे कहताहूं उसको सुन हिंसारहित सत्य बोलना दया और शान्तचित्तहोना इसीको पंडितों ने तपकहा है देहका सुखाना तपनहीं है वेदों का प्रमाण न मानना शास्त्रोंको उल्लंघन करना सबधर्म्मों में प्रवृत्त न होना यहबात अपना नाश करनेवाली है कर्म्मभी ज्ञानही से सम्बन्धरखते हैं इस को समझो कि दशहोमकरनेवालोंकी बुद्धीको साकल्य और चित्तरूप स्रुक और ज्ञानरूप घृत यही ज्ञानकरना उत्तम है केवलयज्ञ नहीं उचित है और सब प्रकारकी कुटिलता मृत्युका स्थान है और सीधापन ब्रह्मपद है ज्ञानका विषय इतनाही है और सबवृथाहै २१॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिराजधर्म्मेएकोनाशीतितमोऽध्यायः ७९॥

अस्सीवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह जो कर्म्म न्यूनतम भी हैं वहभी बिना
सहायताके अकेले मनुष्य से करना कठिन है फिर राजासे करना कैसे सुग
होगा। राजा का मंत्री कैसे स्वभाव और आचरणवाला होवे और कैसे मं
पर विश्वास करे और कैसेपर न करे भीष्मजी बोले कि हे राजा राजालो
के मंत्री चारप्रकारके होते हैं एक तो समान प्रयोजनवाला, दूसरा प्राची
तीसरा सम्बन्धी, चौथाबनाहुआ, पांचवां धर्म्मात्मा मित्रभी मंत्री है जो
पक्षपात रहित और दोनोंओरसे गुप्तधनपानेके कारणछली नहो जिधर ध
होय उधरही संयुक्त हो अथवा उसके उदासीन पनेमें भी जो धर्म्म में अ
रूढ़हो उसीमें संयुक्तहो जो प्रयोजन उसकी बुद्धिमें निकृष्टहो उसको उस
न कहै विजयकी इच्छाकरनेवाले राजालोग धर्म और अधर्म दोनों से क
को करते हैं इनचारों मंत्रियों में मध्य के दोमंत्री श्रेष्ठ हैं पहला और चौ
सदैव सन्दिग्धहैं और जितनेहैं सब शंकाके योग्यहैं अपनाकाम अपने ने
के सन्मुखकरना योग्यहै इससे निश्चयकरके राजाको अपने मित्रोंकी रक्षा
ढील न करनी चाहिये क्योंकि असावधानराजाका सबलोग अपमानकर
असाधुसाधुरूप और साधूभय उत्पन्नकरनेवालेहोजातेहैं शत्रुमित्रहोताहै
मित्रभी शत्रुताकरताहै जो कि मनुष्यकीबुद्धि सदैवएकसी नहीं रहती इस
कौनउसपर विश्वासकरे इससेजो उत्तमकर्म्महैं उनको अपनेसन्मुखही करे
करावेजो अत्यंतविश्वास करता है वह सबधर्मार्थों को नाशकरताहै परन्तु
स्थानों में अविश्वासही करना मृत्युसे भी अधिक है विश्वास अकालमृ
है विश्वास का करनेवाला आपत्ति में पड़ताहै जिसपर विश्वास करता
उसी की इच्छासे जीवता है इस कारण कितनेही पुरुषोंपर तो विश्वास क
ना योग्यहै और कितनेही पर ससन्दिग्ध विश्वास योग्यहै हेतात यह स
तन नीति की गति देखने के योग्यहै अविश्वास के स्थान यह हैं कि जि
को जानें कि मेरे मरने के पीछे इसीको राज्य होगा उससे सदैव शंका
रनी योग्यहै ज्ञानी लोग इसको शत्रु कहतेहैं जिसके क्षेत्र से दूसरे के
में जलजाताहै वहां उसके न चाहते सब पुलक्या नष्टनहोवें अर्थात्
अधिक जल छोड़ने से देशको भी बरबाद करसक्ताहै इसीप्रकार अपने दे
की सीमाके समीपी जो राजाहै जबतक वह सीमापर प्रबंध न रक्खे तब
व्यापारादि अच्छे प्रकार से होते हैं और जब वह विपरीतताको करे तब दे
की हानिहोतीहै इससे वह राजा भी विश्वास योग्य नहींहै वैसेही वह रा
जलकी अधिकता से भयभीत उस बन्दको तोड़ना चाहता है जिस

कि उसप्रकार का हानिकारक जानें उस शत्रुको अच्छे प्रकार से धमकावे जो मित्रवृद्धि से सन्तुष्ट न होवे और हानि में बड़ा दुःखी होवे यह मित्रका बड़ा लक्षणहै ऐसे महान्लोग कहतेहैं और जो यहमानें कि मेरे नाशसे उसका नाश होगा उसपर निश्चयपूर्वक ऐसा बिश्वासकरे जैसा कि पिता पर बिश्वास होताहै वह सदैव धर्म कर्मोंमें भी घावों से बचाता है अपनी सामर्थ्य से वृद्धिमान्होकर उसकी सब ओरसे वृद्धिकरे और घावोंसे भयभीत मित्रको अच्छा मित्रजाने और जो घावों के चाहनेवाले हैं वही शत्रुहैं जो सदैव व्यसनों से भयभीत रहताहै और जो राज्यकी वृद्धिके कारण शत्रुता नहीं करता है जो ऐसे प्रकारका राजा मित्रहोय वह आत्माके समानकहा जाता है जो रूपवर्ण और स्वरसे संयुक्त क्षमावान् गुण में दोष न लगाने वाला कुलीन अपने श्रेष्ठकुल से संपन्न है वह प्रधानहै और शास्त्रों को स्मरण रखनेवाला बुद्धि का स्वामी हरएक बातको यादरखनेवाला चतुर और स्वभावसे दयावान् है और जो प्रतिष्ठावान् व अप्रतिष्ठावान् होकरभी कभी शत्रुता न करे ऋत्विजया आचार्य्य या प्रशंसनीय मित्रहो ऐसामंत्री तेरेघरमें पूजितहोकर वर्त्तमानहो वही तेरे बड़े मंत्रको जाने और अर्थ धर्म्म की प्रकृति को जाने उसपै तेरा बिश्वास पिताके समानहो एक कामपर दो या तीन अधिकारी नहीं नियतकरने चाहिये अर्थात् एक कामपर एकही अधिकारी कियाजाय क्योंकि जीवोंमें सदैव विपरीतता होती है इससे वह भी कभी परस्पर में क्षमा न करेंगे जो नेकनामीको उत्तम माननेवाला और मर्य्याद पर चलनेवाला समर्थ मनुष्यों से शत्रुता नहीं करता है और अनर्थों को नहीं करता और इच्छा,भय,लोभ, क्रोध इत्यादि के कारण धर्म्म को नहीं छोड़ता चतुराई से सबका प्रिय बोलनेवालाहै वह तेरा प्रधानमंत्री होके कुलीन श्रेष्ठस्वभाव क्षमावान् अपनी प्रशंसा न करनेवाला,शूर, श्रेष्ठ, चतुर, बुद्धिमान्, करने न करनेके काममें बिचारवान्,सत्संगी,सुकर्म्मी, सब कर्म्मों में प्रवृत्त ऐसे मंत्री करनेके योग्यहैं और जो पूजित अच्छेभाग को पानेवालेहों वा अपनी योग्यतासे बड़े अधिकारोंपर नियत होनेवाले बड़े कार्यों में प्रवृत्त ऐसे लोग कल्याणों को करतेहैं और परस्पर में ईर्षा करने वाले लोग सदैव पापों को करतेहैं और आपस में एक एकको कहकर राज्य के करके लेने पर अधिकारी होतेहैं इनलोगों से और जातिवालोंसे मृत्युके समान भयभीत जानो ज्ञातिवाले समानताके बिचारसे सदैव धनकी वृद्धिको नहीं सहते हे महाबाहु जातिवालोंके सिवाय कोई उसके नाशको नहीं चाहता है जो सीधा मृदुस्वभाव दानी लज्जावान् सत्यवक्ता और सुचाली हो और जो अन्य बिरादरी हैं वह भी सुखदायी नहीं हैं इस कारण वह भी अपमान के

योग्य नहीं हैं क्योंकि जातिवालों से बाहर हुये मनुष्यको दूसरे भी अपमान करते हैं दूसरे मनुष्यों के दबाये हुये अप्रतिष्ठित मनुष्य का जातिही रक्षाका स्थान है जातिवाला अन्य जातिवालों से होनेवाली जाति वालोंकी अप्रतिष्ठाको किसी दशामें भी नहीं सहता है सम्बन्धियों से किसी बान्धव का अपमान करनेपर सम्पूर्ण जाति भर अपना अपमान मानती है उनमें गुण और अगुणभी दृष्ट आते हैं अन्य जातिवाला न तो कृपा करता है और न किसी अन्य जातिको झुकता है यह दोनों बातें और उत्तम अनुत्तमता जातिवालों में दृष्ट पड़ती हैं इससे जातिवालोंकी अपने सुष्ट वचन और देहके अभ्युत्थान से प्रतिष्ठा करे और यथायोग्य पूजन सत्कार भी करे जहां तक बने वहांतक इनके अभीष्ट को करे बिश्वासरहित और बिश्वास के समान सदैव उनके साथ बर्त्ताव करे दोष या गुण उनसे नहीं कहना योग्य है इसप्रकार अधिकारी और चतुर मनुष्य के शत्रु अत्यन्त प्रसन्न होते हैं और मित्र होजाते हैं जो इसप्रकार से जाति वा सम्बन्धियों के मण्डल में और मित्र शत्रु और उदासीनों में सदैव बर्त्तावको करता है वह बहुत काल पर्य्यन्त कीर्त्तिमान् रहता है ॥ ४१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेअशीतितमोऽध्यायः ८० ॥

इक्यासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि इसप्रकार जाति और सम्बन्धियों का मण्डल और शत्रु मित्रके आधीन भी न होने पर किसप्रकार से उनका चित्त स्वाधीन कियाजाता है भीष्मजी बोले कि मैं इस स्थानपर इस भूत बृत्तान्तको कहता हूं जिसमें वासुदेव और नारदजी का संवाद है वासुदेवजी बोले कि हे नारदजी सुहृद्जन परममंत्र के जानने योग्य नहीं हैं चाहै पण्डित या मूर्ख हो या अजितहो ऐसा जानकर आपको सुहृद् मित्र जानकर कुछ कहूंगा कि हे स्वर्गगामी आपकी सम्पूर्ण बुद्धि और पराक्रमको देखकर पूछताहूं कि मैं सब भागोंके आधे अंशको भोगताहूं और कठोर वचनोंको सहताहूं यह जो आपकी सेवा है उसको जातिवालों के ऐश्वर्य्य भाव से नहीं करताहूं जैसे अग्निका चाहनेवाला अरनी काठको सहता है उसीप्रकार कठोर वचन मेरे हृदयको सुखाता है बलदेवजी में सदैव पराक्रम गदमें सुकुमारता और प्रद्युम्न में रूपकी अहंकारता है इससे हे नारदजी मैं असहायहूं और बड़े महाभाग पराक्रमी अजित सदैव दूसरे पर चढ़ाई करने में सन्नद्ध अन्धक और वृष्णी चर्चा हैं वह जिसके सहायक न हों उसका नाश होजाय और जिसके साथी होजायँ उसका कुलभर वृद्धिको पावे अक्रूर और उग्रसेन इन

दोनों से सदैव निषेध कियाहुआ मैं केवल एककोही नहीं चाहताहूं जिससे कि एकके चाहने से दूसरे का क्रोध न हो परस्पर में विरोधी उग्रसेन और अक्रूर जिसके दोनोंओर होयँ और वह उनका मध्यस्थहो इससे अधिक उसको क्या दुःख होगा और वह दोनों जिसके मित्र नहीं उस दशामें इससे अधिक दुःख क्या है सो हे महाज्ञानी मैं एककी विजय दूसरे का अपमान ऐसे चाहता हूं जैसे जुआ खेलनेवालों की माता दोनों पुत्रोंके मध्यमें दुःख पाती है इससे हे नारदजी ऐसी दशामें मुझ दुःख पानेवालेका कल्याण और जातिवालों की बृद्धिके कहने को आप योग्य हैं नारदजी बोले हे श्रीकृष्णजी दो प्रकारकी आपत्तिहैं एक आन्तरीय दूसरी बाह्य वह दोनों आपत्तियां अपने स्वभाव और जातिवालों की ओर से उत्पन्न होती हैं सो यह आपकी आन्तरीय सम्पूर्ण आपत्ति अपने कर्म्म से उत्पन्न होकर अक्रूर और उग्रसेन के द्वारा प्रकट होनेवाली है क्योंकि यह सब उनके वंशमें हैं और वही आपत्ति धन इच्छा या निन्दा युक्त वचनों से उत्पन्न होनेवाली है अपनी जाति से उत्पन्न होनेवाला ऐश्वर्य्य दूसरे में नियत किया है और अब उसमें मूल उत्पन्न हुआहै क्योंकि जातिका शब्द उसका सहायक है अर्थात् जातिका नाश न करना चाहिये तुमको उस ऐश्वर्य्य का फेरलेना ऐसे उचित नहीं है जैसे कि बमन कियेहुये अन्नको हे श्रीकृष्ण तुमको भी जातिके बिरोधके भय से किसी दशामें भी बभ्रु और उग्रसेनका राज्य लेलेना योग्य नहीं है और जो बड़े उद्योगसे कठिन कर्म्म से प्राप्त भी होगा तो ऐसी दशामें बड़ी हानि और व्यय भी होगा और अन्त में नाश भी होगा बराबर सफाकर उस मृदुचित्तके छेदनेवाले निर्लोह अस्त्र से सबकी बाणीको बन्दकरो वासुदेवजी बोले कि हे नारदजी मैं मृदुआदि लोहके अस्त्र को कैसे जानूं जिससे कि सफा और तेजकरके उनकी जिह्वाओं को बन्दकरूं नारदजी बोले कि सामर्थ्य के अनुसार अन्नदान करना क्षमा शीलता मृदुत्व और जो जिसके योग्य हो उसकी उसी प्रकार पूजाकरना यही निर्लोह अस्त्रहै तुम अपनी वाणी से उन कठोर मिथ्यावचनों को कहने वाले जातिवालों के हृदय और वचन दोनों को शान्तकरो जो महापुरुष चित्तका जीतनेवाला सत्संगी भी नहीं है उसप्रकारका कोई पुरुष बड़ेधुरको धारण नहीं करता है तो तुम उसको हृदय से स्वीकार करके धारण करो बैल बड़े भारी बोझेको समभूमि में बराबर लेचलता है और प्रत्येक सौगद नाम कठिन स्थानमें दुःखसे धारण करने योग्य बोझे को लेजाता है विरोध से समूहोंका नाश होताहै और आपसमूहों के स्वामीहो इससे यह समूह आपको आश्रय लेकर नाश को प्राप्त न हो वही करिये बुद्धि क्षमा शान्त

नित्त और दान धन के सिवाय ज्ञानी पुरुषमें गुण नियत नहीं होता है सदै
अपने पक्षकी वृद्धिकरना धनकीर्ति वृद्धि और आयुका पूर्ण करनेवाला
इससे हे कृष्ण जैसे जातिवालों का कल्याणहो वही करिये हे प्रभो वर्तमा
और भविष्यत्कालमें छः गुणकी वृद्धि से सेनाका इकट्ठा करना चढ़ाई क
रना उसीप्रकार उसकीरीतें जिनको कि आपजानते हैं अर्थात् सर्वज्ञ हो
महाबाहो सब यादव कुरुभोज अन्धक वृष्णी कुलवालेक्षत्री आपके आधी
हैं वह सब लोकालोक पर्य्यन्त के स्वामी हैं हे माधव ऋषिलोग भी आपक
बुद्धिकी उपासना करतेहैं तुम सबजीवों के गुरुहोकर भूत भविष्यत् को ज
नतेहो यादवलोग आपसरीखे ईश्वरको पाकर सुख को पातेहैं ॥ ३० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्म्मेएकाशीतितमोऽध्याय ८१ ॥

बयासीवांअध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि हेभरतवंशी यह पहिला आचरण है अबदूसरा आचर
सुनो जो कोई पुरुष धनकी रक्षा आदिको करे वह राजासे रक्षाके योग्य
हे युधिष्ठिर जो दास या नौकर मंत्रीकरके जब्त और नष्टकियेहुये खजा
को राजासे कहदे उसकी बातें एकान्त में सुनने के योग्यहैं और उसक
मंत्री से रक्षा की जाय चोरी करने वाले मंत्री बहुतोंको मारते हैं राज्य
खजाने के गुप्त चुरानेवाले सब नौकर मिलकर खजाने के रक्षकको पीड
देतेहैं वह अरक्षित होकर नाशको पाताहै इस स्थानपर इस प्राचीन इतिह
स को कहते हैं जिसको कालकवृक्षीय नाममुनि ने कौशल राजासे कह
वहमुनि कौशलदेशोंके क्षेमदर्शन नाम राजासे मिलने को गये और ए
काकको किसी पिंजरे में बन्दकरके अपने विचारको प्रचलित करने क
इच्छासे उसक्षेमदर्शी के सब देशोंमें घूमतेहुये यह कहते फिरतेथे कि का
की विद्याको पढ़ो मेरेकाक भूत वर्तमान भविष्यत् कालको वर्णन करते
इसप्रकार बहुतसे मनुष्योंके साथ देशमें चारोंओर घूमते घूमते राजाके स
नौकरों के अन्यायों को देखा और सबदेशकी यथार्थ बातोंको जानक
जहांतहां राज्यके धनके चुराने वाले राजाके नौकरों को पहिचानकर का
को लिये व्रतपरायण मुनि यह वचन कहते हुये कि मैं सर्वज्ञहूं राजा
मिलनेको गये और राजासे मिलकर काकके वचनसे वस्त्रालंकार से अलंकृ
राजाके प्रधानों से कहा कि तुमने अमुक स्थान पर यह चोरीकी है औ
इसबात को यह सब मनुष्य जानते हैं कि तुमने राज्यके खजाने को चुराय
ऐसा यह काककहता है इस को जल्दी से देखो तब उसकाकने राज्य
धनके चुरानेवाले दूसरे नौकरों को भी कहा और यह भी कहा कि मे

इसका कोई वचन मिथ्यानहीं हैतात्पर्य्य यह है कि उसने सबनौकर दोषी किये उनलोगों ने रात्रि के समय निद्रा में निश्चेष्ट मुनि के उस काक को तीरों से घायल किया प्रातःकाल होतेही पिंजरे में उसकाकको बाणसे छिदाहुआ देखकर वहमुनि राजासे बोले हे राजा मैं तुझसे निर्भयता चाहता हूं तुम्हारी आज्ञासे तुम्हारे हितकारी वचनों को कहताहूं राजाने उत्तर दिया कि अपने अभीष्टको चाहनेवाला मैं आपके हितकारी वचनोंको कैसे न सुनूंगा और हे मुनि मैं आपसे प्रतिज्ञा करताहूं आप जोचाहैं सो कहिये मैं आपके वचनोंको सुनूंगा और करूंगा मुनिबोले कि हे राजा मैं तुम्हारे अपराधी नौकरों के किये कर्म्मको और नौकरोंसे तेरेभयोंको जानकर भक्तिसे सब वृत्तान्त कहनेको तुम्हारेपास आयाहूं प्रथमही आचार्य्योंसे राजाकी सेवा करनेवाले नौकरोंका यहदोष कहागया कि राजाकी सेवा करनेवाले पुरुषोंकी यहपापरूप आजीविका बहुत थोड़ी है जिसका स्नेह राजासेहै उसकीमानो सर्पसे प्रीतिहै राजा लोग बहुतसे मित्र और शत्रु रखनेवाले होते हैं राजाकी सेवा करने वालोंको उन सबसे भय करना कहाहै उसी प्रकार इननौकरों को भी एकमुहूर्त्त तो राजासे भयहोय अस्वस्थ चित्तपने से राजाको भुलावा देनेको समर्थ होतेहैं परन्तु इच्छावान् राजा को किसीदशामें भी भूलकरना योग्य नहीं राजानौकरोंकी चूकसे हानिको पाताहै और हानि पानेवाले राजा में जीवननहीं होसक्ता राजाको शिक्षा करनेवाला नाशको पाता है जैसे देदीप्य अग्नि में जीव भस्म होते हैं अप्रिय वचन और निष्फल उठाबैठी और यात्रा आदि इंगित और देह के अंगीय कर्मों से शंकाकरनेवाला मनुष्य जीवने की आशा को त्याग करके सदैव युक्तिपूर्वक राजा की सेवाकरे जो कि समर्थ और प्राण धन का स्वामी सर्प के समान क्रोधवान् होता है प्रसन्न राजा देवताओं के समान सब अभीष्टोंको प्राप्तकरता है और क्रोधयुक्त भी बैश्वानर अग्नि के समान मूलसमेत भस्म करताहै हे राजा यह मैंने जैसा कहा है वसाहा वतमान है और मैं बराबर तेरेबड़े २ प्रयोजनों को करूंगा मुझसामंत्री आपत्ति में बुद्धि को ऐसी सहायता देता है जैसे कि मेरे काम को पूरा करनेवाला काक परन्तु मुझ को यह सन्देह है कि जैसे मेरा काक मारागया उसीप्रकार तेरे मंत्री मुझ को भी मारेंगे यहां आपकी मैं निन्दा नहीं करसक्ता और आप जिनके प्यारेहो वह भी निन्दाके योग्य नहीं राज्यके कार्य करनेवाले और बिगाड़ करनेवाले नौकरही हैं नौकरोंपर बिश्वास मतकरो जो जीवोंकी निर्द्धनता चाहने वाले खजानेके नौकर आपके दर्बारमें वर्तमान हैं उन्होंने मुझसे शत्रुता की हे राजा जो पुरुष आपकी हानिसे निस्सन्देह राज्यको चाहते हैं रसोइये लोगों से मिलकर उन

के मनका विचार सिद्ध होता है और नहींभी होता है इससे हे राजा मैं उन
भयसे दूसरे आश्रम को जाऊंगा हे समर्थ उनका चलायाहुआ बाण
काकपर गिरा छली पुरुषों के कारण मुझ अनिच्छावान्का काक यमल
कको गया मैंने तप और सूक्ष्मदृष्टी के द्वारा इसराज्य नदीको देखा
बहुत से नौकर रूपी नक्रझषग्राह और छोटी २ मछलियों से संयुक्त
उसनदीको अपनी मृत्यु उत्पन्न करने वाले अपने काक के द्वारा जो तरा
वह नदी विनाशाखा के वृक्ष और पत्थर कांटोंसे भरी सिंह व्याघ्रों से व्या
अगम असह्य हिमालय की कन्दरा के समान पड़ी दीपक के द्वा
अन्यायगढ़ और नौका के द्वारा जलगढ़ प्राप्त कियाजाता है पण्डितों
भी राज्यरूपी गढ़ में प्रवेश होने की युक्तिको नहीं जाना ऐसा आप
राज्य कपट और अंधकारयुक्त तमोगुण से व्याप्त है यहां कोई आप से
विश्वास करने को योग्य नहीं है फिर मुझ को कहाँ से होगा इस हेतु
यह अच्छास्थान नहीं है यहां सत्य और मिथ्या एकसीही हैं अच्छे क
में मृत्यु है तब बुरेकर्म्म में तो कुछ सन्देहही नहीं बुरे कर्म में भी न्य
से घात होता है और अच्छे कर्म्म में कभी नहीं होता यहां ज्ञानी पुरुष ब
न ठहरे शीघ्रही चलाजाय हे राजा एक सीता नाम नदी है जिस में नौ
डूबजाती है सब जीवों का नाशक फांसीरूप उसी नदी के समान मान
हूं आप तो मधु प्रपातहो और भोजन विष से युक्त हैं और तेरा चित्त स
रुषों से विपरीत नीचों के समान है और सर्पों से भरेहुये कूपसदृश शी
जल की नदीसमान आपहो कुत्ता गीदड़ गिद्धआदि से घिरेहुये राज
के समान हो जैसे कि बड़े वृक्ष को पाकर लताकी बड़ी वृद्धि होती
फिर अग्नि उसलताको घेरती है और उस वृक्षको भी उल्लंघन कर वृद्धि
पाती है उसकठोर इन्धनसे भय उत्पन्न करनेवाली दावानल नाम अ
उसको भस्मकरतीहै ऐसे प्रकारके तेरेमंत्री हैं उनको दण्डदो और हे र
तुम्हारी ओरसे अधिकारों पर नियत कियेहुये और आपहीसे पोषितहुये
आपसे मिलकर आपके प्यारेको मारा चाहते हैं अन्यायीकी रक्षा करने
और शंका करनेवाले मैंने तेरेदेशमें इसप्रकारसे निवास किया जैसे कि
पुरुष वीरपत्नियोंके घरमें अथवा सर्पवाले घरमें निवासकरे नौकरोंके
राजाके स्वभाव जाननेकी इच्छा से मैंने इसदेशमें निवास किया कि
जितेन्द्रियहै या इसने कामक्रोध आदिको विजय कियाहै राजा इन सु
योंका प्याराहै या प्रजालोगही राजाके प्यारेहैं इन सब तेरीबातों के जान
इच्छासे यहांआया आप मुझे ऐसे अच्छे विदित होतेहो जैसेकि भूखेकोभो
और मन्त्री लोग ऐसे बुरे मालूम होते हैं जैसे विना पिपासा के जल में

शत्रुता करने वाला नहींहूं उनका वह दोष दिखलानाही शत्रुताप्रकट करता है शत्रुकी भीतरी विपरीततासे ऐसे डरना चाहिये जैसे चोरियल सर्प से राजा बोला कि हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ आप बड़े दानमान से पूजित मेरेघरमें निवास करो और जो तुमको नहीं चाहते हैं वह मेरेयहां नहींरहैंगे और जो उनका अपराध हैवह आपहीसे जाननेके योग्य है हे मुनि जैसे कि दण्डधारण अच्छे प्रकार से होय और शुभकर्म्महोय वह आप विचार कर मेरा कल्याण करो मुनिबोले कि पहले आप काकके मारनेके अपराधको बिचारकर हरएकको अधिकार से अलग करो फिर मारने के हेतुको जानकर प्रत्येकको मारो एकसे अपराध वाले बहुत मनुष्य भेद खुल जानेके भयसे कांटोंसे भी मार डालतेहैं इससे यह तुमको कहताहूं हम मृदुदण्डवाले दयावान् ब्राह्मण हैं आपकी अपनी और दूसरोंकी कुशलको चाहते हैं इससे तुमको कहताहूं कि मैं कालकवृक्षी-य नाम मुनि आपका सम्बन्धीहूं आपके पिताका प्यारा मित्र सत्य संकल्प हूं आपके पिताके स्वर्गवासी होनेमें आपको राज्यासन पर वर्त्तमान होनेपर मैंने सब इच्छाओंको त्यागकर तप किया मैं प्रीतिपूर्वक तुमसे कहताहूं कि फिरअचेत मतहोना तुम दैवइच्छासे राज्यको पाकर और दुःखसुखको देखकर मन्त्री के आधीन होनेवाले राज्यसे क्यों भूलेहुयेहो तिसपीछे उत्तम ब्राह्मण के प्राप्त होनेपर राजकुल और पुरोहित कुलमें बड़ा मंगल हुआ कालक बृक्षीय मुनिने पृथ्वीको एकछत्रा करके यशस्वी राजा कौशल से उत्तम यज्ञों से पूजन कराया और कौशल राजाने भी उस हितकारी वचन को सुनकर पृथ्वी को बिजय किया और जैसा मुनिने कहा वैसाही किया ६८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेद्व्यशीतितमोऽध्यायः ८२ ॥

तिरासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे पितामह सभासद और युद्धके सहायक व सुहृदजन और सेना के अधिकारी और मंत्री लोग कैसे होने चाहिये भीष्मजी बोले कि जो पुरुष लज्जावान् जितेन्द्रिय सत्यवक्ता सन्मार्ग्गी आदिसे संयुक्त और न्याय अन्यायके कहने को समर्थ हों वह तेरे सभासद होयँ जो मंत्री बड़ेशूर और शास्त्रों के ज्ञाता ब्राह्मण जातपुरोहित इत्यादि संतोषी और श्रेष्ठकर्मी होयँ ऐसे सहायकों को सब आपत्तियों में पूछो क्योंकि सदैव पूजित कुलीन मनुष्य अपनी सामर्थ्य को नहीं छुपाता है वही पूजित और पोषित मंत्री प्रसन्न अप्रसन्न पीड़ित और घायल बहुत से मनुष्योंके समूहों कोराज्यके कर्म्मोंमें प्रवृत्त करताहै कुलीन देशी रूपवान् ज्ञानी बहुत शास्त्र के जानने वाले बुद्धिमान् स्वामिभक्त ऐसे पुरुषतेरे नौकरहोयँ और जो अ-

कुलीन लोभी निर्दयी और निर्लज्जहैं वह तेरी तब तक सेवाकरें जब तक कि गीलेहाथहों राजा ऐसे मंत्रियोंको सदैव मालके अधिकारों पर नियतकरे जोकि कुलीन और आनन्द चित्त नेत्र आदिके इंगित अर्थात् इशारेको जानने वाले मृदुस्वभाव देशकाल रीतोंके ज्ञाता और स्वामीके कामकी वृद्धिचाहने वालेहों उनको राजा पारितोषिक और पोषणके योग्यमाने वह धन और बड़े२ अधिकारोंपर नियतता और दिव्यवस्त्रादिकोंका देना और आदर मानपूर्वक छोटे बड़े प्यारेभोगोंसे सुखभागी होयँ वह ज्ञानी और गुरुपूजन आदिसे संयुक्त नेकचलन व्रतकरनेवाले साधु सत्यवक्ता सदैव चाहनेवाले मंत्री आपत्तिकाल में भी त्यागनहीं करें जो नीच निर्बुद्धी धर्माधर्मकी मर्यादाको नहीं जानते हैं और उस मर्यादा के त्यागनेवाले हैं उनसे अपनेको बचाओ समूहको छोड़कर एकको न चाहै और जो समूहमें एक स्वीकार करने के योग्यहो ऐसी दशामें बहुत से मंत्रियों से एकही मंत्री कल्याण करनेवाला है उसको स्वीकारकरके इच्छासे समूहको त्यागकरे जिसका पराक्रम दृष्टिआता है और नेकनामी को उत्तममाने और मर्यादा को दृढ़करे वह साधूहै और जो समर्थों को पूज ईर्षारहित व मनुष्योंसे ईर्षा नहीं करता है और इच्छा भय क्रोध लोभसे धर्मको नहीं छोड़े और निरहंकारी सुचाली क्षमावान् सावधान चित्त और मानयुक्त होय वह सब दशामें परीक्षा लियाहुआ तेरी सलाह आदिमें सहायक होय हे कुलीन और कुलसंयुक्त क्षमावान् चतुर ज्ञानी शूर कृतज्ञसुचाली मंत्री कल्याण का लक्षण है ऐसे कर्म करने वाले ज्ञानी पुरुष के शत्रुलोग प्रसन्न होते हैं और मित्र बनजाते हैं इस पीछे चित्तका जीतने वाला बुद्धिमान् ऐश्वर्य का चाहनेवाला राजा मंत्रियोंके गुण अवगुणोंकी परीक्षा करे जिन मंत्रियोंकासंबंध उनपुरुषोंसे है जोकुलीनस्वदेशी कामकरनेमें कुशल और धन आदिके द्वारा किसीके स्वाधीन न होनेवाले स्वामीसे अप्रतिकूल और सबप्रकारसे परीक्षित उत्तमयोनि वेदमार्गी निरहंकारी हों ऐश्वर्य्य और राज्य की इच्छा रखनेवाले पुरुष हों ऐसे मंत्री करनेचाहिये न्यायके अनुसार यह बुद्धि और पिछले कर्म्मों से पैदाहोने वाला संस्कार और सत्यता आदि से संयुक्त बुद्धि दूसरे को विजय करनेकी सामर्थ्य महा आपत्ति में भी स्थिर चित्त बड़ी कृतघ्नता में भी पवित्र क्षमा, बाहर भीतर से स्वामी से प्रीति करना स्थिर चित्तता धारण करनेकी सामर्थ्य यह अनेकगुण हैं राजा इनगुणों की परीक्षा लेकर सदैव शुभचिन्तक कार्य्य कर्त्ता और पांचों छलोंसे जुदेपुरुषों को मालके अधिकारों पर नियतकरे श्रेष्ठवक्ता वीर और कर्त्तव्य अकर्त्तव्य कामों में कुशल कुलवान्,धनाढ्य,और नेत्रोंके इंगित अर्थात् इशारे आदिके पहिचानने वाले मृदु स्वभाव देशकालकी विधिके जाननेवाले औरभर्त्ता

के काममें हित करने वाले मन्त्रियों को सालके सब अधिकारों पर नियतकरे जो मित्र तेजस्वी नहींहै उससे एकमत होकर कभी करने न करने के योग्य कर्म्म को निश्चय नहीं करना योग्य है क्योंकि वह सब कर्म्मों में सन्देहों को उत्पन्न करते हैं इससे थोड़े शास्त्र का जाननेवाला मंत्री यद्यपि उत्तम कुलवान और धर्म अर्थ कामसे संयुक्तभीहो तौभी मंत्रके विचारने को समर्थ नहींहै इसी प्रकार अन्य कुलका पुरुष चाहे वह बहुत से शास्त्रका जानने वालाभीहो तौभी छोटे कामों में ऐसे अचेत होजाता है जैसेकि अन्धा और अनायक मनुष्य होताहै और जिसका संकल्प नियत नहींहै वह विधिज्ञ शास्त्रज्ञ उपायज्ञभी हो परन्तु सदैवके लिये कामपूरा करनेको समर्थ नहीं होता और शास्त्र से रहित दुर्बुद्धी मनुष्य के केवल कर्म्म के प्रारम्भसे उसके मुख्य कर्म्म के फलोंका बिचार साबित नहीं होता है जो मन्त्री स्वामी से प्रीति करनेवाला नहीं है उसपर बिश्वास नहीं आता है इस कारण प्रीति न करने वाले मन्त्रीसे गुप्त बिचारों को प्रकट न करे वह कुचाली पुरुष मन्त्रियों समेत राजाको ऐसेपीड़ित करता है जैसे अग्नि और हवा छिद्रों में प्रवेश करके वृक्षको पीड़ा देती है कभी स्वामी नौकर को क्रोधित होकर छुड़ा देता है और मारे क्रोधके बचनों से निन्दा करता है फिरि प्रसन्नभी होजाता है वह बातें स्वामी में प्रीति रखने वाले पुरुषको क्षमा करने के योग्य हैं और मन्त्रियोंकाभी क्रोध बज्रपातकेसमान होता है जो नौकर अपने स्वामी की भलाई के कारण इनबातों को क्षमा करता है ऐसे मनुष्य को सुख दुःख आदि कामों में सदैव पूछे जो प्रीति न करनेवाला कुटिल मनुष्य दूसरे अवगुणों से भरा हुआ महाज्ञानी भी हो तौ भी राजा का मन्त्र सुनने के योग्य नहीं है जो शत्रुओं के साथ मिला हुआ है और पुरवासियों को बहुतनहीं मानता है वह शत्रु जानने के योग्य है परन्तु मन्त्र के सुनने के योग्य नहीं है अज्ञानी अपवित्र कुटिल शत्रुकी सेवा करनेवाला और अपनी प्रशंसा करने में प्रवृत्त अशुभ चिन्तकतामें लगा क्रोधी लोभी हो और नवीन नौकर चाहे स्वामीसे प्रीति करनेवाला बहुत शास्त्रों का ज्ञाता प्रतिष्ठितबड़ा भाग पानेवाला भी हो और जिसका पिता पहले समय में अन्याय से अप-मान किया गयाहो वह अहंकारी फिर अधिकार पर नियत कियाहुआ भी मंत्रके सुनने के योग्य नहीं है, जो पुरुष मित्रकी ओर से छोटे कामों सेभी अलग कियागया हो फिर अन्य अवगुणों से युक्तहो वह भी मंत्रसुनने के योग्य नहीं है ज्ञानी शास्त्रज्ञ बुद्धिमान् पवित्र सब कामों में कुशल और दे-शीही वह मन्त्र के योग्य है और जो ज्ञान विज्ञान में पूर्ण अपने शत्रु के

के समानहो वह भी मंत्रके सुनने योग्य है जो सत्यवक्ता प्रसन्नचित्त और मंत्रके गुप्तरखनेमें समर्थ लज्जावान् मृदुस्वभाव बाप दादे से नौकर चलाआयाहो वह मंत्रके सुननेके योग्यहै सन्तोषी कृतज्ञ सत्यवक्ता बुद्धिमान् पापको अपना शत्रु समझनेवाला मंत्र और समयका ज्ञाता वहभी मंत्रसुनने के योग्य है हे राजा दण्डधारण करनेवाले राजा को उस के साथ सलाह करनी चाहिये और समर्थ होकर अपने मीठे वचनों से लोकको स्वाधीन करता है और पुरवासी और देशबासियों ने जिसमेंधर्म्म का विश्वास किया वह लड़नेवाला और नीतिज्ञ हैं वह भी मंत्रके सुनने के योग्य है इस कारण इन सबगुणों से संयुक्त और अच्छे पूजित और बड़े २ कर्म्मों के चाहनेवाले तीन मंत्री प्रकृति के ऊपर आरूढ़होयँ वह अपनी और शत्रु की प्रकृतियों में दोष को देखे, वह राजा का देश जिसका मूल मंत्रियोंका मंत्र है अच्छी बृद्धिको पाता है शत्रु इसकेअवगुणको नहीं देखे और अवगुणों में शत्रु के सन्मुख कच्छप के सदृशजाय, और अंगों को छिपायेहुये अपने दोषको ढके राजाके जो बुद्धिमान् मंत्री अपने मंत्रके छिपानेवाले हैं वहराजा और मंत्रीलोग मंत्ररूप कवचरखने वालेहैं, राज्यको कहतेहैं कि दूतहीइसकीजड़ है और सार इसमेंमंत्र है ऐसे राज्य में जो स्वामी और मंत्री जीविका के कारण अहंकार क्रोध ईर्षा रहित अपनेको माननेवाले सब को अपने आधीन करके कर्म्म करते हैं तब सुखी होते हैं जो मंत्री पांचोंप्रकार के छलोंसे जुदे हैं उन के साथ सदैव सलाह को बिचारे इनतीनों विचारों में नाना प्रकार के विचार करके चित्तको लगाकर सलाह के अन्त समयपर उस को उत्तर के लिये उसगुरूसे पूछे जो कि उस के असली मूल को जानता हो और उस धर्म अर्थ कामके जाननेवाले गुरू ब्राह्मण से मिलकर तात्पर्य को पूछे जब तीनोंकी रायकी ऐक्यताहोय तब असक्तराजा उसमंत्र को भी अपने काम से संयुक्तकरे जोमंत्र और तत्व अर्थके निश्चय को जानने वाले हैं उन्होंने इसप्रकार सदैव मंत्र करना कहाहै इसहेतुसे प्रजा को आज्ञावर्ती करनेमें समर्थ तेरा मंत्र इसप्रकार सदाजारी होय इस मंत्रशाला के मध्य किसीदशामें भी बौना, कुबड़ा दुर्बल, खंजा, अन्धा अज्ञान, स्त्री, नपुंसक वह सब लोग तिरछे होकर आगे पीछे ऊपर नीचे नहींघूमे उसी प्रकार नौका पर चढ़ कर वन आकाश और कुश और काश से रहित मकान पर सावधान होकर राजके बड़े अंगोंके सबदोषोंको दूरकरके उचित समयतक करने के योग्य कर्म्मका विचार करे ॥ ५७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्मेत्र्यशीतितमोऽध्यायः ८३ ॥

चौरासीवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हेयुधिष्ठिर इसस्थानपर इसप्राचीन इतिहासको कहतेहैं जिसमें बृहस्पतिजी और इन्द्रका सम्बादहै इन्द्र बोले कि हे बृहस्पतिजी और वह एकपद कौनसाहै जिसको पुरुष अच्छेप्रकार से करता हुआ सबजीवोंका प्याराहोके बड़ी कीर्तिकोपावे बृहस्पतिजी बोले कि हेइन्द्र कपटसे रहित पुरुष मीठेबचनोंके बोलनेसे सब जीवोंका प्याराहोकर महान् कीर्तिको पाता है यही एक पद सबलोकका सुखदाई है इसको सबजीवोंमें करनेसे सदैव प्याराहोताहै सदैव भौंह चढ़ानेवाला जो पुरुष किसीसेबात नहीं करताहै वहमीठे वचन न बोलनेसे सबजीवोंका शत्रुहोजाता है मन्द मुसुकान सहित वार्त्तालाप करने वाला जो पुरुष सबको देखकर प्रथमही बोलता है उसपर संसारी जीव प्रसन्न होते हैं, सब स्थानों में मीठेबचन रहित दान भी मनुष्यों को प्रसन्ननहीं करताहै जैसे कि ब्यंजनसे रहितभोजन और हे इन्द्र जीवों के सब धनको भी लेकर जो पुरुषमीठे बचनों को कहता है वह उन बचनों से इस सब लोक को आधीन करता है इस कारण दण्डधारी राजाको भी मीठा बचन बोलना योग्यहै इसका फल राज्य की वृद्धि करता है और उसके मनुष्य भयभीतनहीं होते हैं श्रेष्ठकर्म्म के साथ मीठेबचन बोलनेके सिवाय दूसरी कोईबात उत्तम नहींहै भीष्मजी बोले कि हे कुन्ती नन्दन बृहस्पतिजी के ऐसे बचनसुनकर जैसे इन्द्रने सब कर्म किये उसीप्रकार तुम भी सब कर्म्मों को करो ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेचतुरशीतितमोऽध्यायः ८४ ॥

पच्चासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे राजेन्द्र संसारके धर्म्म के प्रजापालन करने वाला राजा इसलोक में किसप्रकार कीर्ति और आनन्दको पाता है भीष्मजीबोले कि प्रजापालन में संयुक्त पवित्र और शुद्धन्यायका करने वाला राजा धर्म कीर्तिको पाकर दोनोंलोकों को प्राप्त करता है युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह किसप्रकार के व्यवहारों और कैसे अदालत के हाकिमोंके साथ मुकद्दमा फैसलकरे इसको आप कहने के योग्यहो आपने जो पहले पुरुषके विषय में गुणकहे वह एकपुरुष में वर्त्तमाननहीं है यह मेरा कथन है भीष्मजी बोले कि हेमहाज्ञानी यह ऐसेही है जैसे कि तुम कहते हो इनसब गुणोंसे संयुक्त कोई पुरुषकठिनतासे प्राप्तहोता है इसलोक में बड़ीयुक्तिसे निश्चित स्वभाव भी कठिनतासे मिलताहै इसको फिर कहूंगा जैसे कि तुम उक्तप्रकार के मंत्रियोंको नियत करोगे वहां उसअदालत में [illegible]

करो जो कि वेदोंके जानने वाले बुद्धिमान् और ब्रह्मचर्यव्रती और पवित्रहों और वैसेही पराक्रमी शस्त्रधारी आठक्षत्रियों को भी नियत करो और इक्कीस धनाढ्य वैश्यों को स्थापित करो और अच्छे शिक्षित प्रतिदिन के कर्मकरने में पवित्र देह तीन शूद्रभी अवश्य नियतकरो और ऐसे सूत पौराणिकों कोभी नियतकरो जो कि आठगुणों से संयुक्त पचासवर्षकी अवस्थाके हों और जो दूसरे के गुणोंमें दोष न लगानेवाला श्रुतिस्मृति संयुक्त नम्रसमदर्शी विवाद कर्त्ताओंके कार्य में प्रसक्तधनका निर्लोभी महाघोर सातव्यसन शिकार, पाँशा, स्त्री, मद्यपान, दूसरे पर घातकरना, कठोर वचन अर्थ दूषण आदिसे रहितहो ऐसेपुरुष को आठो मंत्रियों के मध्य में मंत्रियों का प्रधान नियतकरो फिर उनको देशोंमें भेजो अर्थात् राजा दौरा करावे और देशके लोगों को उनसे विदित करे सो हे युधिष्ठिर तुमको इसव्यवहारसे प्रजालोग देखनेके योग्य हैं दावेकी वस्तुपर मुद्दई और मुद्दाअलह के परस्पर में वेदावा होनेपर उसधरोहररूप वस्तुको न लेनाचाहिये क्यों कि वहमुकद्दमे का नाश करने वालीहै मुकद्दमेके निश्चय विगड़नेपर वहअधर्म तुझको और उनको पीड़ामान् करेगा और तेरादेश ऐसे भागजायगा जैसे बाजके भयसे पक्षियोंका समूह इसलोक में अच्छेप्रकार प्रजापालन करनेवाले राजा के अधर्म्म से सब देशभर दूसरे देशोंको ऐसे चलाजाता है जैसे कि समुद्रमें टूटीनौका उसअधर्म्म से हृदय को भय उत्पन्न होताहै और अस्वर्ग होताहै, जब कि राजाकामंत्री या उसका पुत्रधर्मासन अर्थात् न्यायाधीश वर्त्तमान होकरधर्म्ममूल राज्यमें अधर्म्म से रक्षाकरता है, अधिकारोंपर नियत होनेवाले और उचितकर्म्मको न करनेवाले राज्यके नौकर आपको आगे करके राजाकेसाथ अधोगतिकोपातेहैं, संसारका रक्षकराजा पराक्रमियोंके बलसेघायल औरदुःख से सब्द करनेवाले अनाथोंका सदैव नाथहोय इस हेतुसे मुद्दई और मुद्दाअलहकी दोनों ओर के वाद प्रतिवाद से साक्षीकी आवश्यकता होगी साक्षी और नाथ अर्थात् मुखतार वकील से रहित मुकद्दमा अधिकव्यान करने के योग्य है और अपराधों के अनुसार अपराधियों को दण्डदे धनवानों से जुर्म्मानाले और निर्द्धनियोंको कैद आदि से दण्ड देवे और दुराचारी राजाओं को भी चढ़ाई आदि से भयभीत करे और शासना करे और श्रेष्ठ पुरुषों को मीठे वचन और इनाम आदि से पालनकरे जो पुरुष राजा को मारनाचाहै या कहीं अग्नि लगानेवाला चोर और वर्णसंकर करनेवाला है उनका घात अनेक प्रकारसेहो हे राजन् अच्छेप्रकार दण्ड देनेवाले और शास्त्रानुसार कर्म्मकरनेवाले राजा को अधर्म्म नहींहोता किन्तु सनातन धर्महो है जो अज्ञानी राजा इच्छा के अनुसार दण्डदेता है

वह इसलोक में अपकीर्तिमान होकर अन्त को नरकपाता है अन्य के अप-
राध से अन्य को दण्ड न दे अर्थात् पिता के अपराध में पुत्र को दण्ड न दे
किन्तु पुत्र के द्वारा पिता को बुलवाकर कैदकरे और पुत्र को छोड़दे राजा
कैसीही आपत्ति में किसी दूत को न मारे दूत का मारने वाला राजा मन्त्रि-
यों समेत नरकको भोगता है क्षत्री धर्म्म में प्रीति रखनेवाला जो राजा सत्य
बोलनेवाले दूत को मारे उसके पितर भ्रूणहत्या को प्राप्तहोते हैं कुलीन और
कुलसंयुक्त प्रियवक्ता चतुर और अपने मालिक के कहने के अनुसार वार्त्ता-
लाप करनेवाला स्मरण रखनेवाला सातों गुणों से संयुक्त हो, इनगुणों से
भरा और रक्षक इसका दरवानहो वह इनगुणोंसे व्याप्त क़िलअ नगर आदि
का रक्षक होता है, संधि विग्रहका विचार करनेवाला मन्त्री धर्म्मशास्त्र के
अर्थांशका जाननेवाला बुद्धिमान् धैर्य्यवान् लज्जायुक्त गुप्त मन्त्रों को छुपा-
ने वाला होता है, कुलीन सतोगुणी पवित्र मन्त्री की प्रशंसाहोती है इसी
प्रकार सेनापति भी इनगुणों से संयुक्त होना चाहिये व्यूह यन्त्र आयुध
तत्वज्ञ पराक्रमी शीतोष्ण वर्षा वायु का सहनेवाला शत्रु के दोष का ज्ञाता
हो शत्रु को विश्वासदे और आप किसी पर विश्वास न करे यहां तक कि
पुत्रपर भी विश्वास नहीं करे हे निष्पाप मैंने यह शास्त्र का तत्वार्थ तुम से
कहा राजाओंका बिश्वास न करनाही गुप्तकर्म्म कहाजाता है ३२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेपंचाशीतितमोऽध्यायः ८५ ॥

छियासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि राजा कैसेबनेहुये पुर में रहने के योग्य है अथवा कैसे
पुर को बसाकर उस में निवास करे हे पितामह यह सब मुझ से कहिये भी-
ष्म जी बोले कि हे युधिष्ठिर राजाको पुत्र और बांधव और जातिवालों समे-
त जहां पर निवास करना चाहिये वहां वृत्ति अर्थात् जीविका और रक्षा
पूर्व्वक पूछना न्यायके अनुसारहै इसकारण क़िलअकी तैयारी और रक्षाकी
रीति सब ब्योरेवार तुझ से कहूंगा सुनकर उसीप्रकार करना चाहिये और
युक्ति से कर्म्म करना चाहिये छःप्रकार के क़िलअ में वर्तमान होकर फिर
पुरों को बसावे जो क़िलअ सब प्रकार के धन से भी पूर्ण और चारों ओर
से पांच योजन विस्तृत एक मनुष्य ऊंची पृथ्वी से घिराहुआ है वह मुख्य
क़िलअ है दूसरा महीदुर्ग अर्थात् कोट तीसरा गिरिदुर्ग जिस के चारों ओर
पहाड़ हो चौथानरदुर्ग अर्थात् मनुष्योंका क़िलअ पांचवां मृत्तिका का क़ि-
लअ छठा बनदुर्ग जिस के चारों ओर बनहो यह छःक़िले हैं,जो पुर अर्थात्
प्रधान नगर क़िले से संयुक्त धान्य और आयुधों से पूर्ण दृढ़ प्राकार और

परिखा अर्थात् परकोटा और खाई से दृढ़ हाथी घोड़े रथ आदि से संयुक्त हो और जिस में चतुर कारीगर और अनाज आदि का संचय अच्छे प्रकार वर्त्तमानहो और महाचतुर धर्म्मात्मा मनुष्यों से व्याप्त पराक्रमी मनुष्य हाथी घोड़े रखनेवाला चबूतरा और दुकान आदि से शोभायमान और प्रसिद्ध व्यापारवान उपाधि रहित निर्भय श्रेष्ठ प्रकाशवान् गीतवाद्यों से शब्दाय मान उत्तम स्थानों से शोभित शूर और धनीलोगों से भराहुआ वेदध्वनि और समाज उत्सव आदि आनन्दों से संयुक्तहोकर जिस में सदैव देवपूजन होताहो उस में मंत्री और सेना को स्वाधीन रखनेवाला राजा आप निवास करे उसीपुर में खजाना सेना मित्र और व्यवहार आदि की वृद्धि करके पुर और देशों के सब दोषों को दूरकरे, तोपखाने और अस्त्रालय की बड़ी युक्ति से वृद्धिकरे अर्थात् अन्न आदि के सबदेर और मन्त्रालय आदि की वृद्धि करे काठ लोहा भूसा कोयला लकड़ी सींग हाड़ बांस कपाल चरबी शहद आदि औषधियों का समूह सनशालवृक्ष का रस, धान धनुष बाण चमड़े की नसें, देह, बेत, मूंज, बल्वज, तृण, धन्वाबाण, पीनेकी बस्तु, कूप, बहुत जलवाले तड़ाग, हौज, और दूधके बड़ेवृक्ष यह सब राजासे रक्षाकरने के योग्य हैं और बड़ीयुक्तिसे सत्कार कियेहुये आचार्य्य ऋत्विज, पुरोहित और बड़े तीरंदाज शिल्पी, ज्योतिषी, वैद्य ज्ञानी, शास्त्रज्ञ, बुद्धिमान् लोग और अच्छी शिक्षापाये हुये चतुर शूर और बहुत शास्त्रों के जाननेवाले कुलीन सतोगुणी सब अधिकारों पर नियत और प्रवृत्त धार्मिक पुरुषों को उपदेश का राजा पूजन करे अर्थात् उनका पोषण करे और धर्म्म के त्यागी पुरुषोंको दण्डदे और सब वर्णोंको बड़ीयुक्तिसे अपने कर्म्मों में प्रवृत्त करे इसप्रकार दूतोंकेद्वारा पुरवासी और देशवासियों को भीतर बाहर से अच्छे प्रकार निश्चयकरके फिर कर्म्ममें प्रवृत्त करे राजा आपदूतों को और मंत्र खज़ाना आदि दण्ड को अधिकतर देखे क्योंकि सब प्रबन्ध के मूलयही हैं दूतोंके नेत्रोंसे पुर और देशमें उदासीन शत्रु मित्रोंके सब इच्छा कर्म्मोंको जाने फिर सावधानी से उनका सब प्रबन्ध करना योग्यहै जो राजा सदैव भक्तोंको पूजनेवाला और शत्रुओं का दण्ड देनेवाला है उसको सदैव यज्ञों से पूजन करना योग्यहै और पीड़ा रहित दान भी करना चाहिये प्रजाकी रक्षाकरना चाहिये धर्म्मको पीड़ादेनेवाला कर्म्म न करना चाहिये दुखी अनाथ वृद्धा विधवा स्त्रियों की इच्छा पूरीकरके उनकी रक्षा और जीविका को सदैव विचार करे राजा आश्रमों में तपस्वियों का सत्कार पूर्वक पूजन और प्रतिष्ठा करके सदैव कालके अनुसार वस्त्र भोजन पात्र आदिको देवे राज्य और देशके सब कार्य्योंको अपने देहसमेत तपस्वियों को निवेदनकरे

और सदैव बड़ीयुक्ति के साथ नम्रता पूर्व्वक वर्तमान हो राजा उस प्रकार के कुलीन और बहुत शास्त्रों के जाननेवाले सर्वत्यागी तपस्वीको देखकर वस्तु आसन भोजन आदिसे सदैव पूजन करता रहै राजा आपत्ति में तपस्वीपर विश्वासकरे क्योंकि चोर भी तपस्वियोंपर विश्वास करतेहैं परंतु तपस्वी के पास खजानों को नहीं रक्खे क्योंकि धनके कारण चोरोंसे उसके मारे जानेका भयहै, सदैव प्रतिदिन सेवन और पूजन न करे और अपने देशोंमें दूसराभी तपस्वी मित्र करना चाहिये और शत्रुके देशों में बनों में और सावन्त नगरों में भी दूसरा तपस्वी मित्रकरना चाहिये शत्रुके देश और बनमें वर्त्तमान उनतपस्वियों के भागोंको सत्कार और प्रतिष्ठासे भेट करावे जिससे कि अपने देश में वह तीव्र ब्रतवाले तपस्वी किसी आपत्तिमें शरणागत राजाको उसकी इच्छानुसार शरणदें यह लक्षण देशामिश्रित तुझने कहा इस प्रकार को नगर में राजा आप बास करनेको योग्य है ३३॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मे षडशीतितमोऽध्यायः ८६ ॥

सत्तासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह देशके पालन और स्वाधीन करने में जो विचार हैं उन्हें आप वर्णन कीजिये क्योंकि मैं चित्तसे जानना चाहता हूं, भीष्मजी बोले कि मैं देशकी रक्षा और स्वाधीन करने की सबरीतें तुझ से कहता हूं तुम चित्तलगाकर सुनो गांवका जैसा प्रधान होता है वैसाही दश गांवका दूसरा प्रधान करना चाहिये इसीप्रकार बीससौ हज़ार आदि ग्राम का प्रधान करना चाहिये वह प्रधान ग्राम और देशके वासियों के दोषोंको निश्चयकरे और उन सबबातोंको दशग्राम के प्रधान से कहे वह बीसवाले से इसीप्रकार क्रम से बीसवाला सौवाले से और सौवाला हज़ार गांव के प्रधान से कहै और वह सबप्रधान लोग उन वस्तुओं को भोजन करें जो कि ग्राम वा देशमें उत्पन्नहों एक गांववाला दशगांववाले को और दशगांव वाला बीसगांव वाले को इसी प्रकार एक से एक ऊपरवाले को भेजदे वह सौ ग्रामका स्वामी सत्कार कियाहुआ एक ग्राम के भोगने को समर्थ है और जो बड़ा और श्रेष्ठ वृद्धि पायाहुआ मनुष्यों से भरादेश हो उसमें हज़ार गांव का स्वामी राजाका नायब होता है वह हज़ार गांवका स्वामी नगर की उत्तम शाखाओं के भोगने के योग्य है वही देशी मनुष्यों से संयुक्त उस नगर की शाखा अनाज धन आदि के भोग से प्रजाके पोषणकरने को भी योग्य है उन का काम जो युद्ध है और ग्राम से संबंध रखता हो धर्म का जाननेवाला और सावधान कोई मंत्री उन उन कामों

को देखे अथवा प्रत्येक नगर में हर एक बात का विचारने वाला एक पुरुष नियत होय और नगर का स्वामी भयानक रूप होकर ऊंचे स्थान पर विराजमान होके अपने प्रताप से उन सब सभासदों को आच्छादित करे जैसे कि चंद्रमा नक्षत्रों के तेज को दबा लेता है उस देश में घूमने वाला कोई दूत उनके वृत्तान्तों को पहुँचावे और जो अधिकारी रूप राक्षस मारने की इच्छा करने वाले पापात्मा दूसरे के धन को हरने वाले मूर्ख हैं उन सब से जीवों की रक्षा करे, मोल बेच मार्ग और अनाज वा अपने लड़के स्त्री समेत प्राप्त किये हुये धन और माल को अच्छे प्रकार से ध्यान करके व्यापारियों पर महसूल नियत करे और पैदाइश धन और खर्च और कारखाने को सदैव बारबार देखकर शिल्प के कारखाने के विषय में शिल्प विद्यावानों पर महसूल नियत करे प्रथम राजा के छोटे बड़े महसूलों को नियतकरे जिससे कि प्रजा पीड़ावान् नहीं होवे पृथ्वी का स्वामी वैसाही करे अनाज आदि फल और परिश्रम आदि कर्म्म को अच्छे प्रकार से विचारकर सब महसूलों को विचार करे फल और कर्म्म इन दोनों में कोई बिना हेतु के वर्त्तमान नहीं होता है जैसे कि राजा और कर्म्मकर्त्ता दोनों कर्म्मों के भोगनेवाले होयँ उसी प्रकार ठीक विचार कर राजा की ओर से महसूल नियत करना चाहिये और अपनी जड़ देश को नहीं काटे और लोभ से दूसरोंकी जड़ खेती आदि को नहीं काटे और राजा इच्छारूपी द्वारों को बन्द करके अत्यन्त प्रसन्न होता है और जो बहुत खानेवाले प्रसिद्ध हैं वह उस राजा के साथ शत्रुता करते हैं जब प्रजा शत्रु है तब राजा का कल्याण कहाँ है और वह शत्रु होकर फल को नहीं पाता है सावधान बुद्धिवाले राजा को बछड़े के समान होकर देश को दुहना योग्य है और हे युधिष्ठिर नौकर और बछड़ा पराक्रमी होने पर पीड़ा को सहता है और माता के दूध से रहित किया हुआ बछड़ा कर्म्मको नहीं करता इसीप्रकार अत्यन्त दुहा हुआ देश भी बड़े कर्म्मको नहीं करता है जो राजा आप देशकी रक्षा करताहै वह श्रेष्ठ महसूल योग्य पृथ्वी की भेज ले आनन्द पूर्वक निर्वाह करता है और उत्तम फल को पाता है उस देश में आपत्ति के लिये दिये हुये धन की अधिक वृद्धि करे देश खजानारूप है और जैसे कि खजाने की रक्षा महल में होती है उसी प्रकार पुरवासी देशवासी सब शरणागत और अल्प पराक्रमियों पर भी सामर्थ्य के अनुसार राजा कृपाकरे बाह्यजन चोर वनवासी आदि को दूसरे के सुपुर्दकरके उससे बहुत धन लेकर मध्य का देश सुख पूर्वक भोगने के योग्य है इस प्रकार से सुखी दुःखी कोई मनुष्य भी राजा पर अप्रसन्न नहीं होते पहले ही भेजकी तहसील को प्रकट करके अपने देश में भय दिखलावे और कहे कि

यह शत्रु की सेना का भय महा आपत्तिरूप है उसको भी हम देश के नष्ट होने का कारण जानते हैं जैसे कि बांस के वृक्ष में फल की उत्पत्तिका होना मेरे शत्रु चोरों के साथ बड़े उद्योग करके अपने नाश होने के लिये इस देश को पीड़ा देना चाहते हैं इस घोर आपत्ति में असह्य भय होने से आप लोगों की रक्षा के लिये तुमसे धन को चाहता हूं और भय दूर होने पर तुम्हारा सब धन फेर दूंगा और शत्रु लोग जो यहां से धन हरले जायँगे वह फेर न देंगे और स्त्री आदि तुम्हारे सब नष्ट होजायँगे और यह भी बात ठीक है कि पुत्र स्त्री के लिये धन के इकट्ठे करने की इच्छा कीजाती है मैं तुम्हारे प्रभाव से प्रसन्न होताहूं जैसे कि पुत्र के उदय में पिता प्रसन्न होता है मैं अपनी सामर्थ्य के अनुसार देश के साथ तुम्हारी सुख पूर्वक रक्षाका प्रबन्ध करता हूं और आप लोगों को आपत्तियों में बोझका सहनेवाला होना चाहिये जैसे कि श्रेष्ठ बैल भार को सहते हैं किसी आपत्ति में धनको अत्यन्त प्यारा न समझना चाहिये समय का जानने वाला राजा इन मीठी और सफा बातों को आज्ञापत्र के द्वारा अपने नौकरों को विदित करे और धन के लेनेवाली युक्तियों को प्रजा पर जारी करके धन को ले पर कोटा और नौकरों के पोषण आदि का खर्च और युद्ध सम्बन्धी भय वा मनोरथका सिद्धकरना और उसकी रक्षाको अच्छेप्रकारसे विचार कर वैश्यों को भेजदेनेवालाकरे वनबासी वैश्य प्रबन्धसे रहितहोकर नाशको पाते हैं इस कारण उन वैश्यों में बड़ी मृदुतासे कामकरे हे राजा वैश्योंकी रक्षा और मीठेवचनोंसे आश्वासन दान मान और बराबरभाग उनकी इच्छाके अनुसार करना योग्यहै और उनमें बराबर फलको भोगना चाहिये जिससे कि वह देशके सब व्यवहार और खेती आदिकी वृद्धिकरें इस कारण युक्तिपूर्वक वैश्योंपर साधारण महसूल लगावे और सबस्थानों में मंगल करना यह बात वैश्योंमें ही सुगमता पूर्वक है इनके समान कोई उत्तमनहीं है ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मे सप्ताशीतितमोऽध्यायः ८७॥

अट्ठासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह जब समर्थ राजा भी खजानेकी इच्छाकरें तब कैसा कर्म्मकरे वह कृपाकरके कहिये भीष्मजी बोले कि धर्मका चाहने वाला प्रजाकी वृद्धिमें प्रवृत्त राजा देशकाल और बुद्धिके पराक्रमके अनुसार प्रजाको उपदेश करे राजा जैसे उनके और अपने कल्याण को माने उसी प्रकारके कर्मोंको सबदेशमें जारी करे देशकोश हद निकालने के समान दुहे जैसे कि मधुमक्खी वृक्षको और बछड़ागौको दुहताहै और थनोंको पी-

ड़ित करके नहीं काटता है इसी प्रकार राजा जोंकके समान देशको
पिये और जैसे व्याघ्री बेटों को हरणकरे उसी प्रकार काटे और पीड़
जैसे तीतर चोंचवाला चूहा और सदैव पैरोंको मृदुता पूर्वक काटता
प्रकार देशको पानकरे अर्थात् उससे मालगुजारीले थोड़ी थोड़ी माल
से वृद्धिपानेवाली प्रजापर पहले थोड़ी भेज बढ़ावे फिर क्रम २ से
के खजाने की वृद्धिकरे बोझा लेजाने के योग्य बैलों को सिखात
वस्तुओं की वृद्धि करे और बड़ी युक्तिपूर्वक सुगमता से पाशों को
करावे अर्थात् इसप्रकार से प्रजाको वशीभूत करे पाशों से जुदेहोते
मरजायंगे क्योंकि कठिनता से स्वाधीन होनेवालेहैं इससे उचित यु
भोगने के योग्यहैं इसी हेतु सब प्रारम्भ कर्म्म हरएक आदमी में क
होतेहैं उत्तम पुरुषों को मीठे वचनों के द्वारा विश्वास कराके दूसरे
कताके योग्य मनुष्य भोगने के योग्यहैं तदनन्तर उनउत्तम पुरुषोंके
वारकसीके योग्य आदमियोंको परस्परमें पृथक् करके मीठे वचनोंसे
कराके विना उद्योग सुखपूर्वक भोगे हरस्थान में बेसमय पर महसू
नहीं जारी करे समय और वृद्धिके अनुसार क्रमपूर्वक मीठेवचनों
करे मैं माया रहित उनयुक्तियोंको कहताहूं कि विनायुक्तिके स्वाधी
घोड़ोंको क्रोध युक्त करताहै शराबखाने के लोग और वेश्याओं के
वाले और नीच स्वभाव से धर्म्म नष्टकरने वाले कुटिनी स्त्री ज्वा
जो कोई इसप्रकार के पुरुषहैं और देशको नष्ट करनेवाले हैं वह
योग्यहैं देशमें वर्तमान ऐसे लोग कल्याण रूप प्रजाको पीड़ा देने
ना आपत्ति के किसीसे कुछकोई मांगने के योग्य नहीं हैं मनुजी
यह जीवोंकी मर्य्याद कही उसके अनुसार कर्म्म करें जो इसलोक
नहीं करतेहैं वह निस्सन्देह नाशको पावेंगे समर्थ राजा जो इनको
नियत नहीं करता वह उस पाप के चौथेभाग को भोगता है
उसपापको ऐसे भोगता है जैसे कि पुण्यको जो पापी हैं वह सदै
दण्डके योग्यहैं जो इनको दण्ड नहींदेता है वह राजा पापात्मा
राजा धर्म्म के चौथे भागको भोगताहै उसी प्रकार पापके चौथे
भोगता है शराबखाने आदि स्थानों में प्रसंग करना ऐश्वर्य्यको
है काममें प्रवृत्त पुरुष सब नष्टकर्मोंको त्यागकरे प्रीति में फँसा
मद्यमांस वा दूसरे का धन और स्त्रियोंको हरण करता है और
जारी करताहै या वैसेही शास्त्रको दिखलाता है जिन में कि गृ
समान नहीं हैं वह उसको आपत्ति के लिये चाहतेहैं उनको
धर्म और दयापूर्वक देना योग्यहै तेरेदेशमें ठग और चोर न हों

इन प्रजाओंके मारनेवालेहैंइनसे ऐश्वर्य नहीं होसक्ता जो जीवों पर दयाकरते हैं और प्रजाकी वृद्धि करतेहैं वहलोग तेरेदेशमें वृद्धिपावें जीवोंके नाशकारी वृद्धिमतपाओ और नियत महसूलसे अधिक लेनेवाले अधिकारी दण्ड के योग्य हैं दूसरे अधिकारी उन भेजदेनेवालोंको इत्तिलादेकर भेजका धन दाखिलकरावें खेतीरक्षा गौ व्यापार और जो दूसरा इसी प्रकारका कोई कर्म्म है उनको बहुत मनुष्योंसे करावे दूसरी दशा में कर्म्मका नाशहो जो खेती गोपालन व्यापारमेंभी कर्म्मकरनेवाला मनुष्य कुछसंशयको पाताहै उससेराजाकी निन्दाहोतीहै धनीलोगोंको खानेपीनेकी वस्तु और वस्त्रादिसे प्रसन्नकरे और यहकहै कि तुममेरी प्रजापर अनुग्रहकरो हे युधिष्ठिर यह धनवान्नाम राज्यका बड़ाअंगहै और सबजीवोंमें प्रधानहै जोज्ञानी। शूर धनीस्वामी धर्म्मकरनेवाला तपस्वी सत्यवक्ता बुद्धिमान् है वहप्रजाकी रक्षाकरताहै इससे सबजीवोंमें प्रीतिमान्हो और सुहृदता दया अक्रोधताको पालनकरो इसप्रकार सुहृदता सत्य कथनमें प्रवृत्त मित्र खजाने पराक्रमी सेनासे संयुक्त पृथ्वीको पाओगे ३३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेअष्टाशीतितमोऽध्यायः ८८॥

नवासीवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि तेरेदेश में बनस्पति और खानेकेयोग्य फलोंको कोई न काटे क्योंकि ज्ञानियों ने यहधर्म्म कहा है कि मूल और फल ब्राह्मणोंका धन है ब्राह्मणों से जो शेषरहै उसको दूसरे लोग खांय अन्य मनुष्य किसी दशा में भी ब्राह्मणोंको बिनादियेहुये न लें हे राजा जो वेदपाठी ब्राह्मण अपनी जीविकासे पीड़ित होकर देश त्यागनेकी इच्छाकरे तब उसकी और उसकीस्त्रीकी जीविकाविचार करे और जो वह ब्राह्मण नहींलौटे उसदशा में ब्राह्मणों की सभामें कहै कि अब यह संसार किसमर्य्याद में कामकरेगा तो निस्सन्देह लौटेगा। जो इसपर भी उत्तर नहीं दे तो उसके पीछे कहना चाहिये कि पिछला अपराध क्षमाकरना योग्य है यह सनातन धर्म्म है यह मनुष्यों का कथन समझकर मैं श्रद्धा नहींकरूं यहबात ठीकनहीं अवश्य करताहूं जो आजीविका नियत करनेपर भी देशको त्यागकरे तो भोगपदार्थों से निमंत्रणकरे और जो आजीविकाकेही कारण देशको त्यागे तब उसको नियत करे यहां जीवोंकी जीविका खेती गोपालन व्यापार और स्वर्ग और तीनों वेद हैं वह जीवोंको ऐश्वर्यवान् करते हैं उसके क्षीणहोने से उसके शत्रुरूप जो चोरहैं उनके मारने के वास्ते ब्रह्माजी ने क्षत्रीकुलको उत्पन्नकिया इससे हे राजा तुम शत्रुओं को विजयकरो और प्रजाकी रक्षाकर यज्ञों से देवताओं का पूजन करके युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ो जो राजा रक्षाके योग्य पुरुषों के

रक्षा करता है वह राजाओं में उत्तम हैं हे युधिष्ठिर राजाको सदैव सबप्रजा से ज्ञात होनाचाहिये आदमी आदमीको कैसेभोगे अपने आदमियों से दूसरोंको और दूसरोंसे अपने आदमियों को रक्षाकरना अथवा अपने आदमियों की अपनेही आदमियों से सदैव रक्षाकरो हे राजा अपनेको सब ओर से रक्षित करके पृथ्वीकी रक्षाकरो ज्ञानियोंने इससबको आत्मारूप मूल रखने वाला कहा मेरा प्रतिबन्धक कौन है और व्यसनवालों से मेरास्नेह क्यों है और बिना गिरायाहुआ शत्रुकौन है और मुझको कहां से दोषलगता है यह सदैव विचारकरे दूतलोग दिनके अन्त में वृत्तान्तको कहते हैं या नहीं कहते हैं प्यारे और गुप्त दूतोंसे पृथ्वीको संयुक्त करे और जो मेरे वृत्तांत को जाने उस दशा में कहते हैं या नहीं कहते हैं मेरेदेश और राज्य में यश अच्छा मालूमहोता है या नहीं और जो पुरुष धर्मज्ञ धैर्यवान् और युद्ध में पीठ न फेरनेवाले क्षत्रियों के देशमें गुजारा करते हैं और जो राजा के पास नौकर हैं सबमन्त्री और मध्यस्थ पुरुषों में जो तेरी प्रशंसाकरे या पीछे से निन्दाकरे उनसबका सत्कार कराओ और अच्छे प्रकार से सबका प्रसन्न करना असम्भव है क्योंकि सब जीवों में शत्रु मित्र और उदासीन होते हैं युधिष्ठिर ने कहा कि भुजाओं के जोर में और गुणों में समान पुरुषों के बीच कौन कैसे अधिकहोय और फिर वह सबमनुष्यों को आज्ञावर्ती कैसेकरे भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर जो चेष्टाकरने वाले जीव स्थिर जीवों को भक्षण करते हैं इसी प्रकार डाढ़रखने वाले बिना डाढ़वालों को खाते हैं और डाढ़में विषरखनेवाले क्रोधयुक्त सर्प अन्यसर्पोंको खाते हैं इनसे और शत्रुओंसे राजा सदैव सावधानरहे यह सब गिद्धके समान अचेत होकर गिरते हैं तेरेदेशमें कर लगने के कारण पीड़ामान व्यापारी भयभीत तो नहीं होतेहैं और बनवासी मनुष्य थोड़े से धनके बदले बहुत सी वस्तुओं को मोल तो नहीं लेते अत्यन्त पीड़ामान होने वाले क्या देशको तो नहीं त्यागते जो राज्यके धुर को उठाते हैं वह दूसरों काभी पोषणकरते हैं यहांकेदान से देवता पितरगण मनुष्य सर्प राक्षस पक्षी पशुआदि सबका जीवनहोता है हे भरतवंशी यह देशकी रीति और राजाओं की रक्षा तुमसे वर्णनकी इस प्रयोजन में वर्त्तमान होकर फिर कहूंगा २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेएकोननवतितमोऽध्यायः ८९ ॥

नब्बेवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि बड़े ब्रह्मर्षि अंगिरावंशी प्रसन्नचित्त उतथ्यऋषिने जिन वचनोंको युवनाश्व के पुत्र मांधाताकेलिये वर्णन किया उसबड़े ब्रह्मज्ञानी

उतथ्यऋषिने जिस प्रकारसे उसको उपदेश किया वह सब मैं तुझसे कहता हूं उतथ्यजी बोले कि राजा धर्म्म के लिये होता है न कि इच्छापूर्वक कर्म्म करनेको हे मांधाता तुम इसको जानो कि राजा लोकका रक्षकहै जो राजा धर्म्मको करता है वह देवभाव के लिये कल्पना कियाजाता है जो अधर्म्म को करताहै वह नरकको जाताहै जीवधर्म्म में नियतहोते हैं और धर्म्म राजा में वर्त्तमान होता है जो साधू राजा उसको उपदेश करता है वह पृथ्वी का स्वामी है बड़ा धर्म्मात्मा धनी राजा धर्म्मरूप कहाजाताहै राजा धर्म्मरूपनहीं है जहांऐसाकहाजाताहै वहाँ देवता निन्दाकोपातेहैं अपने धर्म्ममें वर्त्तमान पुरुषोंके मनोरथ सिद्धहुये मालूम होतेहैं सबसंसार उसीमंगलमें वर्त्तमान होता है जब धर्म्मरूप रीतिका नाशहोता है तब बड़ा अधर्म्म वर्त्तमान होता है जब पाप नहीं हटाया जाताहै तब अहर्निश भय उत्पन्नहोता है हे तात जब पाप नहीं रोकाजाता है तब धर्म्मसे साधुओंकी मर्य्याद भी घटती है कि यह धन मेरा है अथवा यह मेरानहीं और जब पापकी प्रबलता होती है तब मनुष्यों की स्त्री गौ क्षेत्र स्थान दृष्ट नहीं आते तब देवता पूजाको और पितर स्वधा को नहीं जानतेहैं और अतिथि भी नहीं पूजेजाते और व्रतकरनेवाले ब्राह्मण भी वेदोंको नहीं प्राप्तकरते और वेदपाठी ब्राह्मण यज्ञोंको विस्तृत नहीं करते शस्त्रोंसे घायलहुये के समान जीवोंका चित्त भय आदि से व्याकुलहोता है ऋषियोंने आप दोनों लोकोंको देखकर राजाको उत्पन्नकिया कि यह संसारी जीवों का अच्छा पालन करेगा जिसमें पालनशक्ति बिराजमान होती है उसको राजा कहते हैं और जिसमें धर्म लुप्तहोताहै उसको देवताओंने वृषिल कहा भगवान्‌का धर्म्म वृषनाम है जो उसको बन्दकरता है उसको देवताओंने वृषिल जानाइसकारण धर्म्मकी अधिकवृद्धिकरे धर्म्मकी वृद्धि होनेपर सब जीव सदैव बृद्धिको पाते हैं और जिसके नाशवान् होनेपर सब नाश को पाते हैं इसहेतु धर्म्मका लोप नहीं करना योग्य है हे राजाधर्म्म धनसे या धारणसे जारी होता है यह निश्चय है उस धर्म को निषिद्ध कर्म्मोंका नाशकरनेवाला कहा ब्रह्माजी ने जीवों की वृद्धि के लिये धर्मको उत्पन्न किया इसकारण प्रजाके उपकारार्थ धर्म्मको करे इसीसे धर्म्मको महाउत्तम कहा, हे पुरुषोत्तम, राजावही उत्तमहै जो प्रजाको धर्म्मका उपदेश करता है और काम क्रोधको त्यागकर धर्म्मको पालन करे धर्म्म राजाओं का बड़ा कल्याण करने वाला है हे मांधाता ब्राह्मण धर्म का उत्पत्ति स्थान है इस हेतु उनको सदैव पूजे मित्रता से पृथक् राजा ब्राह्मणों की इच्छाआदिको पूर्णकरे उन्हीं की इच्छापूर्ण न करने से राजाको भय उत्पन्नहोता है मित्र वृद्धिको नहीं पाते और शत्रुओं की भी वृद्धि होजाती है विरोचन के पुत्र

राजा बलिने अज्ञानता से सदैव ब्राह्मणों में दोषलगाया इसकारण उससे वहलक्ष्मी जुदीहुई जो उसकेपास प्रतापवालीथी फिरवहलक्ष्मी उससे पृथक् होकर इन्द्रके पासगई जब उसने इन्द्रके पास लक्ष्मी को देखा तौ बड़ा शोच कर पश्चात्ताप करने लगा हे समर्थ दूसरे के गुण में दोष लगाने का और अहंकार करने का यहफल है सो हे मांधाता सावधान रहौ कि यह प्रताप वाली लक्ष्मी तुमको त्यागनहींकरे लक्ष्मी का पुत्र दर्प अहंकार नाम अधर्म से उत्पन्न हुआ है यह श्रुति है हे राजा उससे बहुत से देवता और असुर नाश कियेगये और बहुत से राजऋषि भी नाश किये गये हे भरतवंशी उस अहंकार को विजय करके राजा होता है ऐसा निश्चय जानो और उस से हाराहुआ दास होता है सो तुम अहंकार के साथ अधर्म्म का सेवन मतकरो वही बात करो जो सत्य है हे मान्धाता जो बहुतकाल पर्य्यन्त वर्त्तमान रहा चाहते हो तो मद्यसे प्रमत्त पाखण्डी लोगों का संग और उन से मिले हुये के सेवन को त्याग करो पकड़े हुये मंत्री से और स्त्री पहाड़ कुटिल मार्ग और अगम्य स्थान हाथी घोड़ा सर्प आदि से सदैव चैतन्य रहना चाहिये रात्रि के फिरने को त्यागकरो अदानता अहंकार कपट क्रोध इत्यादि का त्यागकरो हे राजा बिनाजाने नपुंसक और स्वतन्त्र अन्य की स्त्री और कन्याओंके साथ विषय को न करो वर्णोंके मेल होने से कुलोंमें पापी राक्षस नपुंसक अंगहीन विक्षिप्त उत्पन्न होते हैं और अन्य प्रकार के भी मनुष्य उत्पन्न होते हैं जब राजा असावधानी करता है तब राजाको प्रजाकी वृद्धि में अधिक कर्म्म करना उचित है अचेत क्षत्री को महादोष उत्पन्न होता है और प्रजाको वर्णसंकर करनेवाले अधर्म्म की बड़ी वृद्धिहोती है गरमी में सर्दी वर्त्तमान होती है और शरदऋतु में सर्दी वर्त्तमान नहीं होती वर्षा का न होना या अधिक होना औररोग प्रजा में वर्त्तमान होते हैं उसदशामें धूम्रकेतु और घोर ग्रहआदि साम्हने प्रकट होते हैं और राज्यके नष्ट करनेवाले बहुत उत्पात दृष्टि आतेहैं जो आत्मा की रक्षा किये बिना राजा प्रजा की भी रक्षा नहीं करता है उसकी प्रजा नाशको पाती है तबवह भी नाश को पाता है एकके धनको दो लेते हैं और दोके धनको दूसरे अन्य बहुत से लोग लेते हैं और कुमारियां बहुत गुप्त करलीजाती हैं तब राजाका दोष कहा जाता है जब राजा धर्म्म को त्यागकर असावधानी से कर्म करता है तब मनुष्यों में एककीभी मर्य्याद नियत नहींहोती है कि यह मेराहै ४० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेनवतितमोऽध्यायः ९० ॥

———

इक्यानबेवां अध्याय ॥

उतथ्य बोले कि समयपर वर्षा करने वाला पर्जन्य और धर्म्म करनेवाला राजा जो यह सम्पत्तिहोतीहै वह सुखसे प्रजाको पोषण करती है जो धोबी वस्त्र या दुशाले आदिके मैल दूरकरने को नहीं जानताहै वह उत्पन्नभी अनुत्पन्न साहै इसीप्रकार ब्राह्मण क्षत्री वैश्यों के मध्य में भी यही बातहै और वर्णों में चौथा शूद्र जो नाना प्रकार के कर्म्मों में वर्त्तमान है उसमें भी यही बातहै अर्थात् अपने धर्म्मों के विपरीत धोबी के समानहै सेवा करना शूद्र में खेती करना वैश्य में और दण्डनीति राजा में और ब्रह्मचर्य्य, तप, मन्त्र और सत्यता ब्राह्मणों में वर्त्तमान है उनके बीचमें जो क्षत्री पवित्र वस्त्र के समान प्रजाकी नेक प्रकृति को जानता है वह पिता के समान प्रजापति है हे भरतबंशी राजा के सब चलन सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग रूप है राजाही युग कहाजाता है चारों वर्ण और चारों आश्रमों का धर्म्म इसी प्रकार चारों वेद यह सब अज्ञानताको प्राप्त होते हैं जब कि राजा अचेत होता है तीनों वेद तीनों अग्नि और दक्षिणा सहित सब यज्ञ मोह को प्राप्त होते हैं राजा ही जीवों की वृद्धि का करनेवाला है जो धर्म्मात्मा है वह वृद्धि करने वालाहै और जो अधर्म्मीहै वह नाशकर्त्ताहोताहै राजाकीभार्य्या पुत्र भाई बंधु और सुहृद्जन सब मिलकर शोच करते हैं जबराजा अचेतहोताहै, राजा को अधर्म्म रूपहोनेसे हाथी, घोड़े, ऊंट, खच्चर, गधे और सबजीव पीड़ा पातेहैं हे मान्धाता ईश्वरने पराक्रमको निर्बल के लिये उत्पन्नकिया क्योंकि निर्बलही बड़ाजीव है जिसमें सबवर्त्तमानहै हेराजा यश निर्बलजीवको सेवन करता है और जो जीव उसके कुलमें हैं वहसब राजाको अधर्म्म में प्रवृत्त होने से शोच करते हैं निर्बल और मुनि, सर्पकी जोआंख है उसको क्षमा के अयोग्य मानताहूं इस से निर्बल को पीड़ामतदो हेतात तुम सदैव जिनका अपमानहुआ हो उनको निर्बलजानो निर्बलों के नेत्र तुमको बन्धुओं समेत नाश न करेंगे निर्बल से नष्टहुये राजा के कुलमें कुछ भी नहीं रहता मूलतक भस्मकर देता है इससे निर्बलको पीड़ामतदो निश्चयकरके निर्बल सबलसे उत्तमहै क्योंकि पराक्रमी को निर्बल से नष्टताके विशेष कुछ प्राप्त नहीं होता अपमान कियाहुआ वा घायलहुआ अथवा पुकारनेवाला मनुष्य जोरक्षकको नहींपाता है वहां दैवका रचाहुआ दण्ड राजाको मारता है हेपुत्रतुम पराक्रमीहोकर निर्बल मनुष्यों को मतभोगो अर्थात् बलसे उनसे भेंज मतलो और तुझको निर्बलके नेत्रऐसे भस्म न करें जैसे कि मकानको अग्नि जिनको मिथ्यादोष लगाया गया उन रोनेवालेआदमियों के जोअश्रुपात गिरतेहैं वह उनके मिथ्याबोलने

से उनके बेटेऔर पशुओंको मारतेहैं जोवह पाप आपको न होगा तो बेटोंको प्राप्त होगा वा पोतोंमें फलहोगा कियाहुआ पापपृथ्वीके कर्म के समान शीघ्र नहीं फैलता जिस स्थानपर निर्बल घायलहोताहै वहां दैवकारचाहुआ महा भयानकवज्रपात आकरटूटताहै जब देशवासी योगीब्राह्मणोंके समानबराबर भिक्षुक रूपहोकर भिक्षाको मांगतेहैं उसप्रकारके मनुष्य राजाकानाशकरतेहैं जब राजाके देशमें बहुत से नौकर लोग अन्यायसे कर्मकर्त्ता होते हैं वह राजा का बड़ा पाप है जब विपरीत युक्ति राजा इच्छा धनके आधीन होकर दुःखसे प्रार्थना करनेवाले पुरुषों का धन आदिछीनले वह राजाकामहा नाश करनेवाला है वृक्षबड़ा उत्पन्न होताहै और बृद्धिको पाताहै तब जीवोंका आश्रयहोता है और जब वृक्षकाटाजाताहै और जलाया जाताहै तब आश्रयी जीव महादुःख पाते हैं जब राज्य में राजगुणों के कहने वाले मनुष्य उत्तम धर्म्म और संस्कारको करते हैं तब राजाकी बृद्धि होतीहै और धर्म में असावधानी होनेसे उनका किया हुआ अधर्म्म राजाके पुण्यको नाश करता है और पापका भागी कर देताहै जिस स्थान पर सत्पुरुषोंके जानेहुये पापात्मा लोग फिरते हैं वहां कलियुग राजालोगोंको अपने आधीन करता है जब राजा नीचमनुष्योंको दण्डदेताहै या सच्चेमार्ग में चलताहै तब उसका राज्यवृद्धि पाताहै जो राजा मन्त्रियोंको यथायोग्य सत्कारकरके दूरदर्शकताकी सलाहसे युद्धमें प्रवृत्ति करता है उस राजाका देश बृद्धि पाता है और सम्पूर्ण पृथ्वीको बहुत काल तक भोगता है जो कर्म श्रेष्ठ है और अच्छे प्रकार कहाहुआ वचन है उसको भी राजा अच्छेप्रकारसे विचार कर पूजता हुआ उत्तम धर्म्म को पाता है जब भागों का विभाग करके भोगता है और मंत्रियों का अपमान नहीं करता है और अहंकारी और पराक्रमी को मारता है तब राजाका धर्म्म कहाजाता है जब देह चित्त और बचनों से सबकी रक्षाकरताहै और पुत्रके भी अपराधको क्षमा नहीं करता वह राजाका धर्म कहा जाता है जब पराक्रमी राजा अच्छेप्रकारसे भागोंको विभागकरके मनुष्योंको भोगताहै अर्थात् उनपर आज्ञाकरताहै तब वह बलवान् होते हैं यहभी राजाका धर्मकहाता है जिसस्थानमें कर्म बचनसे पापात्मा प्यारेकी भी क्षमा न करे वह राजाका धर्म्म कहाजाताहै जबराजा प्रधानव्यापारियों को पुत्रके समान चारोंओर से रक्षाको करता है और मर्यादा को नहीं तोड़ता वह राजाका धर्म कहाता है जबश्रद्धायुक्त राजा इच्छाद्वेषको त्यागकर दक्षिणाके योग्ययज्ञोंको करताहै वहराजाकाधर्म कहाजाता है जब राजामनुष्योंकी प्रसन्नताको उत्पन्न करता दुःखी अनाथ और बृद्धोंके नेत्रोंके अश्रुपातको साफ़करताहै वह राजाका धर्म्म कहाजाताहै मित्रोंकी बृद्धि और

शत्रुओं को पीड़ादेता है और साधुओंको अच्छेप्रकारसे पूजता है वहराजा का धर्म्म कहाजाताहै प्रीति से सत्यताकी रक्षाको करता और सदैव धर्मको जारीकरता अतिथि और पोषणके योग्य मनुष्योंको तृप्त करताहै वहराजाका धर्म्मकहाजाताहै दंड और पारतोषिकयहदोनों जिसराजामें वर्त्तमानहोय वह इसलोक और परलोकमें फलकोपाताहै हे मान्धाता यह यमराजरूप धर्मात्मा राजा पुरुषोंका बड़ास्वामीहै इन्द्रियोंकोस्वाधीन करता ऐश्वर्य्यकोपाताहै और अजितेन्द्री नष्ट होताहै जब ऋत्विज पुरोहित और आचार्य्यकोअपमानरहित सत्कारकरके अच्छे प्रकार से पोषण करताहै वह राजा का धर्म्म कहा जाता है यमराज सब जीवों को अधिक दण्ड देता है उसी प्रकार राजा को भी कर्म्म करना चाहिये और प्रजा भी बिधि पूर्व्वक सतमार्गमें लाने के योग्यहै हे पुरु- षोत्तम राजा सब प्रकार से इंद्र के समान गिनाजाता है वह जिस धर्म्म को देखता है वही धर्म्म है क्षमा बुद्धि धैर्य्य ज्ञान और सदैव सावधानी से जीवों को शिक्षा करो सब जीवों को स्वाधीन करना और दानमान मीठे वचन आदि की भी शिक्षाकरो तुमको सुख पूर्वक पुरबासी और देशवासी रक्षाक- रने के योग्य हैं असावधान राजा प्रजा की रक्षा में कभी समर्थ नहीं होता हे बेटा यह राज्य नाम बड़ा कठिन भार है इसकारण दण्ड का जाननेवाला ज्ञानी और शूरबीर राजा रक्षा करने को समर्थ होता है दण्ड न जानने वाले नपुंसक व अज्ञान राजा से भी रक्षा करना असम्भव है पण्डित कुलीन साव- धान भक्त और बहुत शास्त्र के जाननेवाले मन्त्रियों के साथ तपस्वी और आश्रमियों के सब ज्ञानियों की परीक्षा करो इन बातों के पीछे तुम सब जीवों के उत्तम धर्म्मों को जानोंगे अपने देश में और परदेश में तेरा धर्म्म नाशको नहीं पावेगा क्योंकि अर्थ और काम से धर्म्मही उत्तम है इससे धर्म्मात्मा इस लोक और परलोक में सुख से वृद्धिको पाता है अच्छे प्रकारसे पूजित मनुष्य स्त्री और पुत्रों का भी त्याग करते हैं जीवोंको स्वाधीनता में करना दानमीठे वचन भ्रान्तिकात्याग और पवित्रता यह सबगुण राजा के ऐश्वर्य्य करनेवाले हैं हे मान्धाता तुम इन गुणों को कभी मत भूलो अपना और शत्रु का दोष देखनेवाला राजा सावधान होता है शत्रु के दोष को नहीं देखै और शत्रु के समान दोषों को करे यह कर्म्म इन्द्र यमराज और वरुण देवता का है और सब राज ऋषियों का भी है इससे तुमभी इसको करो और राजऋषियों से सेवित कर्म्म में सावधान होकर मोक्ष के लिये दिव्य मार्ग में प्रवृत्त हो और देव ऋषि पितृ गन्धर्व आदि दोनों लोकों में धर्म्म पर आरूढ़ राजा की कीर्त्ति करते हैं भीष्म जी बोले कि हे भरतवंशी उस उतथ्यऋषि से उसप्रकार कहे हुये उस मान्धाता ने शंका रहित होकर उन सब कर्मों को किया और

सम्पूर्ण पृथ्वी को वे अकेले ने विजय किया है राजा इसी प्रकार आप भी मान्धाता के समान अच्छे प्रकार धर्म्म करके पृथ्वीको रक्षाकरो इससे स्वर्ग में स्थान पाओगे ६० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेएकनवतितमोऽध्यायः ९१ ॥

बानबेवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि धर्म्म में प्रवृत्तहोनेवाला धर्मात्माराजा किस प्रकार से कर्मकरे यह आपवर्णन कीजिये भीष्मजी बोले कि इसस्थानपर एकप्राचीन इतिहास कहताहूं जिसको तत्त्वार्थ ज्ञाता वामदेव ऋषिने गाया ज्ञानी पवित्र धैर्य्यवान् राजा वसुमताने ब्रह्मर्षिवामदेवजी से पूछा कि हे भगवन् धर्म अर्थ से संयुक्त वचनों के द्वारा मुझे आप उपदेश करिये जिससे कि मैं उस कर्म्मको करके धर्मसे च्युत न होऊं यह सुनकर तप करनेवालोंमें उत्तम तपस्वी वामदेवजीने उस सुवर्ण वर्ण ययातिके पुत्रनहुषके समान सुख पूर्वक विराजमान राजासे यह कहा कि धर्म पूर्व्वक कर्म्मकरो धर्म्म से उत्तम कोई कर्म्म नहीं धर्म्म में वर्त्तमान राजाही इस पृथ्वी को विजय करते हैं जो राजा धर्म्मको प्राप्त किये हुये धनसे उत्तम मानकर धर्म्मकी वृद्धिमें प्रवृत्त होता है वह धर्म से शोभायमान होता है जो अधर्म्मका देखनेवाला राजा पराक्रम में प्रवृत्त होता है उससे धर्म्म और अर्थ शीघ्रही हट जाते हैं और जिसके मन्त्री दुष्ट और पापी हैं वह धर्म्मका नाश करनेवाला लोकमें मरा हुआ है अर्थात् अपने बालबच्चों समेत शीघ्र नाशको पाताहै धनको सुमार्ग में न लगानेवाला इच्छाचारी अपनी प्रशंसा करनेवाला राजा सब पृथ्वी को भी पाकर शीघ्र नष्टहोता है और कल्याण का प्राप्त करने वाला और अन्यके गुण में दोष न लगानेवाला जितेन्द्रिय ज्ञानी राजा ऐसे वृद्धिको पाता है जैसे कि नदियों से समुद्रकी वृद्धिहोती है हे राजा वह पृथ्वीका स्वामी अपने को सदैव ऐसामाने कि मैं धर्म्म अर्थ काम बुद्धि और मित्रों से भी पूर्ण नहीं हूं इन सब में लोकयात्रा वर्त्तमान है अर्थात् इनसे संसार का प्रबन्ध होताहै इन धर्म्म आदि में प्रवृत्त राजा यश कीर्त्ति लक्ष्मी सहित प्रजाको पाताहै इसप्रकार जो धर्म्मसे संयुक्तहो धर्मार्थका विचारनेवाला राजा अर्थोंको विचारकर सेवनकरताहै वह निश्चयकरके बड़े ऐश्वर्य्यको पाता है दान न करनेवाला प्रजापर प्रीति न रखनेवाला विनाविचार कर्म्म का अभ्यास रखनेवाला प्रजा को दण्ड देता शीघ्र नाश को पाता है जो अज्ञानी राजा बुद्धिसे पाप करनेवाले को नहीं देखता है वह अपमान युक्त हो नरक को भोगता है और जो राजासत्कार करनेवाला दानी शुद्धप्रजाके आधीन

रहनेवाला है उसके व्यसनों को मनुष्य ऐसे दूरकरते हैं जैसे कि अपने दुर्व्यसन को धर्ममें जिसका गुरुनहीं है और दूसरोंसे भी नहीं पूछता वह स्वतन्त्रतासे सिद्धहोनेवाले लाभमें बहुतकालतक सुखको नहीं भोगता है और जो आप अर्थोंका देखनेवाला और धर्मों में गुरुको और लाभमें धर्म को उत्तम माननेवाला है वह राजा बहुत कालतक सुखको भोगता है १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेद्विनवतितमोऽध्यायः ९२ ॥

तिरानबेवां अध्याय ॥

बामदेवजी बोले कि जिसस्थानपर बड़ापराक्रमी राजा निर्बलपर अधर्म करताहै उसके कुलके लोगभी उसीकर्म्मको करते हैं उसपापी और पाप के जारी करनेवाले राजाके समान कर्म्मकर्त्ताहोते हैं जिसदेशके मनुष्य शिक्षित नहीं होते हैं वहदेश शीघ्रही नष्टहोता है मनुष्य स्वकर्मी राजाके कर्म्म से से निर्बाहकरते हैं उस राजाके भाई बन्धु उस गोमार्ग में बर्त्तमान राजाकी क्षमा नहीं करते जिस स्थानपर बिनाबिचार कर्म्म करनेवाला कुछ निकृष्ट कर्म्म करे वह शास्त्र के बिपरीत लक्षण रखनेवाला राजा शीघ्रही नाशको पाता है जो क्षत्री दूसरेके स्वाधीन होनेवाले और स्वतंत्र क्षत्रियों के अच्छे आचरण की हुई वृत्तीपर वर्तमान नहींहोताहै वह क्षत्री धर्म्म से जुदा होताहै जो राजा पहले समयमें उपकार करनेवाले और बर्त्तमान में शत्रुता करने वाले राजाको क़ैदकरके शत्रुतासे सत्कार नहीं करता है वह क्षत्री धर्म से नष्ट होता है और जो समर्थ राजा अच्छेप्रकार सुख को प्राप्तकरे और आपत्तिकालमें उस आपत्ति को दूरकरने का उपायकरे वह जीवोंका प्यारा होकर लक्ष्मीसे रहित नहीं होताहै और वह मनुष्य जिस से कि कोई बिरुद्धभाव रखता हो और फिर उससे सुहृद भावकरे वह थोड़ेही समयमें उसका प्यारा होजाता है और जो शत्रुभीहो वहभी भलाईकरे और निरर्थक विवाद का त्यागकरना और बिनामांगे भलाईको करना इच्छा क्रोध शत्रुता आदि से धर्म्मको न छोड़ना प्रश्नों में न्याय के बिपरीत उत्तर का न देना और अकथनीय बातको मुखसे न कहना शीघ्रता न करना गुणों में दोष न लगाना आदि बातें शत्रुको स्वाधीन करती हैं मित्रके साथ अतिप्रसन्न शत्रु के साथ क्रोधयुक्त प्रजाकीवृद्धि चाहनेवाला आपत्ति में दुःखी नहीं होता है जो राजा नौकर आदि अपने मनुष्यों की भलाई को अपने गुण से करताहै उसके सबकाम सिद्ध होते हैं और लक्ष्मीवान् रहता है बिपरीत कर्मोंका न करनेवालाभलाई में प्रवृत्त भक्त और सावधान नौकरको राजा सदैव सेवनकरे और बुद्धिमान् आज्ञाकारी पवित्र समर्थ और प्रीति करनेवाले मनुष्य को

बड़े अधिकार पर नियत करे इन गुणों से संयुक्त जो नौकर राजा को प्रसन्नकरे उस स्वामी के कार्य्यों में सावधान पुरुष को माल के अधिकार पर नियत करे और जो राजा कि अस्वस्थ चित्त लोभी दुराचारी मूर्ख छली दुखदायी दुर्बुद्धी अल्पशास्त्रज्ञ बड़ेकर्मोंका त्यागनेवालामद्यपीद्यूत स्त्री और शिकार में प्रवृत्त पुरुषको बड़े अधिकारपर नियतकरता है वह लक्ष्मीसे रहित होता है जो राजा रक्षित होकर रक्षाके योग्य मनुष्योंकी रक्षा करता है उसकी प्रजा वृद्धिपाती है और निश्चय बड़ेपदको भोगता है और जो राजा कि दूसरे राजाओं को शुभचिन्तक गुप्तदूतोंके द्वारा देखता है वहराजा वृद्धिको प्राप्त होताहै पराक्रमी के साथ बुराई करके यह विश्वास न करे कि मैं दूरहूं क्योंकि बाज़ के समान अचेत मनुष्यों पर गिरते हैं जिसकी जड़ पक्की है और बुद्धि निर्दोष है वह अपने पराक्रमको जानकर निर्बलों को अधिकारों पर नियत करता है नाकि अधिक पराक्रमियों को पराक्रमसे पृथ्वी को पाकर धर्म्म से प्रजापालन करे और धर्म्म में स्थित राजा युद्धमें शत्रुओं को मारे यह सब मरण पर्य्यंत होना चाहिये इस में कुछ हानि नहीं है इस कारण धर्म्म में वर्त्तमान राजा धर्म्म से प्रजापालन करे क़िलेआदि का बनाना युद्ध करना और धर्म्म का उपदेश करना सलाह करना समयपर सुख देना इन पांचों बातोंसे पृथ्वी की वृद्धिहोती है यह गुण जिसके रक्षितहैं वह राजा राजाओं में उत्तम है इस धर्म्म में सदैव वर्त्तमान राजा इस पृथ्वी को आधीन करता है यह पांचों अकेले राजा से देखने के योग्य नहीं राजा उनपांचों में सबको नियत करके बहुत समयतक पृथ्वी को भोगताहै देशके मनुष्य उसदानी न्यायी मृदुता युक्त पवित्र पुरुषको जोकि मनुष्योंका त्याग नहीं करता है राजा करतेहैं जो पुरुष अपनी रायको त्यागकरके अपने कल्याणकारी ज्ञानको सुनकर उसको प्राप्त करता है उसको लोकराजा करता है जो राजा मित्र के वचनको विरुद्धतासे नहीं मानताहै और सदैव बेमनसे उसके शत्रुओं से विपरीत वचनों को सुनताहै और जो सदैव दूसरे राजाके विजय किये हुये या न विजय किये हुये राजाओं और बुद्धिमानोंकी सेवन की हुई लाभकी युक्तिको सेवननहीं करे वह क्षत्री धर्म्मसे हीनहोता है कर्म्म में प्रवृत्त राजा क़ैद किये हुये मंत्री स्त्री पहाड़ और टेढ़े और कठिन स्थान हाथी घोड़ा सर्पआदि से सदैव अपनी रक्षाकरे जो राजा प्रधान मंत्रियों को त्यागकरके नीच पुरुषों को प्यारकरताहै वह पीड़ामान दुःखको पाकर अन्त में कुशलता को नहीं प्राप्त होताहै और जो राजा कल्याण गुणों में संयुक्त अपने सजातियों की शत्रुतासे वृद्धि नहीं करता वह अदृढात्मा और दृढ़ क्रोधी मृत्युके समीपही वर्त्तमान होताहै और जो राजा गुणों से युक्त हृदय

से प्यारे पुरुषोंको भी उनका अभीष्टकरने से आज्ञाकारी करता है वह बहुत कालतक कीर्तिमान होता है और जो बेसमय धनका व्ययनहीं करे और शत्रुके ऊपर कभी क्रोधयुक्त न होवे और मित्रके साथभी बहुत प्रसन्न न होवे और देहके सुखदायी कर्म में प्रवृत्तहोवे और सदैव यह विचारकरे कि इन राजाओं में कौन राजा तो प्रीति करनेवालेहैं और कौनभयसे शरणागत हुये और कौनसे उदासीनहोकर दोषरखनेवाले हैं और पराक्रमी होकर कभी किसीभी स्थानपर निर्बलका बिश्वास न करे यह राजा गिद्ध के समान अचेत राजा के ऊपर गिरतेहैं जो पापात्मा मनुष्य सबगुणोंसे भराहुआ प्यारे वचन बोलनेवाले स्वामीसे भी शत्रुता करता है उस मनुष्यपर विश्वासनहीं करे इसप्रकार नहुष के पुत्र राजाययातिने राजाओं की यह गुप्त विद्या कही यह विद्या मनुष्योंके देशमें जारी होकर बड़े बड़े शत्रुओं को मारतीहै ३९॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिराजधर्म्मेत्रिनवतितमोऽध्यायः ९३ ॥

चौरानबेवां अध्याय ॥

वामदेवजी बोले कि राजा बिनाही युद्धके विजयको बढ़ावे क्योंकि युद्धसे विजय करना मध्यम कहाजाताहै राज्यके मूलदृढ़ न होने से अप्राप्तको कभी न चाहै निर्बल मूल राजाको लाभहोना नहीं कहाजाताहै जिसका देश धनाढ्य और राजाको प्यारा माननेवाला प्रसन्न मंत्रियों से संयुक्त है उस राजाका मूल दृढ़होताहै जिसके योद्धा संतुष्टहों और उसके प्यारे मीठेवचनों से प्रसन्नहों वह राजा थोड़ेही दण्डसे पृथ्वीको बिजय करता है जिसके पुरवासी देशबासी धनी और अनाज आदि रखनेवाले जीवोंपर दयाकरने वालेहैं वह राजा दृढ़मूल रखनेवालाहै जब राजा अपने प्रताप के समयतक अधिकमाने उससमय वह बुद्धिमान् शत्रुके देश और धनके बिजय करने की इच्छाकरे और जो राजा भोगों में उदयमान जीवोंपर दयावान् शीघ्रकर्मी रक्षितात्मा होताहै उसकी बिजय अत्यन्त होतीहै जो राजा अच्छेप्रकार वर्त्ताव करनेवाले अपने मनुष्योंसे मिथ्या बोलताहै वह अपनेको ऐसे मारना चाहताहै जैसे कि फरसेसे बनकाटा जाताहै सदैव न मारनेवाले राजा के शत्रु नाश नहीं होते परन्तु जो राजा क्रोधके मारने को जानता है उसका कोई शत्रु नहीं होता जो काम अच्छे लोगों के विरुद्ध है उसको ज्ञानी पुरुष नहीं करे और जिस भलाई को विचारे उसी में अपने को प्रवृत्त करे जो राजा दूसरों की इच्छा पूर्णता के साथ अपने सुखों को प्राप्त करता है और दूसरे लोग उसका अपमान नहीं करते और आपभी कभी दुःखी नहींहोता ऐसी वृत्तिवाले मनुष्यों में जो राजा वर्त्तमान रहै वह दोनों लोकों का विजय करके

पूरी विजय में प्रवृत्त होता है भीष्मजी बोले कि बामदेव जीके ऐसे समझाये हुये राजा ने उन सब बातों को किया इसी प्रकार तुम भी कर्म्म करके दोनों लोकोंको निस्सन्देह विजय करोगे १३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्म्मेचतुर्नवतितमोऽध्यायः ९४ ॥

पंचानबेवांअध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि जो क्षत्री युद्ध में किसी अन्य क्षत्री को विजय करना चाहै उसको विजय करने में क्या धर्म करना चाहिये यह आप कृपा करके वर्णन कीजिये भीष्मजी बोले कि सहाय रखनेवाला वा असहाय राजा देश में आकर कहै कि मैं तुम्हारा राजाहूं तुम्हारी सदैव रक्षा करूंगा मेरा धर्म्मरूप राज अंश दो अथवा क्या कहतेहो वह प्रजा उस आये हुये राजा को स्वीकारकरे तो कुशल है और जो वह क्षत्री न होयँ और किसी प्रकार का विरुद्ध करें तो वह विपरीत कर्म्मी सबप्रकार से दण्ड और सासना के योग्य हैं दूसरा मनुष्य उसक्षत्री को रक्षा करने में भी अत्यन्त असमर्थ और अशस्त्री जानकर शस्त्र को हाथ में लेता है यह भी बहुधा होताहै युधिष्ठिर ने कहा कि जो क्षत्री राजा क्षत्री के सन्मुख जाय उस को किस प्रकार से युद्ध करना चाहिये भीष्मजी बोले कि जो क्षत्री युद्ध में कवचआदि नहीं धारण किये हैं उससे युद्ध नहीं करना चाहिये एक को एकही से युद्ध करना योग्य है जो वह शत्रु कवच धारण किये हुयेही आवै तो इसको भी कवच धारण करना योग्य है और जो वह सेना समेत आवे उसदशा में उस को सेना समेत बुलावे और जो वह छल से युद्ध करे तो उस से आप भी छलकरे और धर्म्म से युद्ध करे तो धर्म्महो से उसेहटावे घोड़े की सवारी से रथी के सन्मुख न जाय रथीरथ के सन्मुख जाय किसीप्रकार की आपत्ति में शस्त्रघात न करना चाहिये और भयभीत वा विजय किये हुये परघात न करना चाहिये बड़ा बाण और करणी नामबाण विष का भराहुआ न हो यह शस्त्र नीच लोगों के हैं बुद्धि के अनुसार युद्धकरना श्रेष्ठ है मारने की इच्छा करनेवाले शत्रु की रक्षा न करे जब साधुओं के विरोध से साधुलोग व्यसनी होगये तब निर्बल और असन्तान किसीदशा में भी मारने के योग्य नहीं है शस्त्र और कवच जिस के खण्डित हों और मृतकरूप सवारी में सवार आपत्ति में पड़ा हो और अपने देश में चिकित्सा के योग्य होय और घरमें पहुँचने के योग्य हो वह बिना घायल छोड़ देनेके योग्यहै यह सनातनधर्म्महै इसकारण धर्म्महो से युद्ध करना चाहिये यह स्वायम्भुव मुनि ने कहा है जो धर्म्म सत्पुरुषों के मध्य में सत्पुरुष करते हैं उस में नियत होकर उसका नाश न करे जो धर्म्म

रूप ग्रहण करनेवाला क्षत्री अधर्म्म से विजय करता है वह छली पापात्मा आप अपना घात करता है यह कर्म्म नीचोंका है असाधु को शुभ कर्म्म से विजय करे क्योंकि धर्म्म सेही मरना उत्तम है और पापकर्म्म से विजय करना अच्छानहीं है राजा किया हुआ अधर्म पृथ्वी के समान शीघ्रफल नहीं देता वह अधर्म्म जड़ों को और बड़ी २ शाखाओं को नष्ट करता हुआ प्राप्त होता है पापी पापकर्म्म सेही धनको पाकर प्रसन्न होता है चोरी से वृद्धिपाने वाला और अधर्म्म को नहीं माननेवाला पवित्र मनुष्योंकोहँसता है पापात्मा पापही में सना रहता है और श्रद्धा रहित होने से भी नष्टहोता है वरुणके पाशों से बँधाहुआ अपने को सदैव जीवतासा मानता है हवा से पूर्ण मसक चर्म्म के समान मोटा देह शुभ कर्म्म में प्रवृत्त नहीं होता है वह मूलसहित ऐसे नष्टहोता है जैसे नदी के तटके वृक्ष इसकी पीछेसे सब निन्दा करते हैं इससे राजा धर्म्मसेही विजय और धनको चाहे २२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेपंचनवतितमोऽध्यायः ९५ ॥

छानबेवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि राजा अधर्म्मसे पृथ्वीको विजय न करना चाहिये कौन सा राजा अधर्म्म से जीतको पाकर संतुष्टहोता है अधर्म से संयुक्त विजय और स्वर्ग दोनों नाशवान् हैं हे राजा यह विजय राजा को और पृथ्वी भरको पीड़ा देती है टूटे कवचवाले और तेरे आधीन हूं ऐसे बचन कहने वाले हाथ जोड़े हुये शस्त्रत्याग कियेहुये शत्रुको पकड़कर नहीं मारे और जो पराक्रमसे विजय कियाहुआ है उस राजा से युद्ध नहीं करे औ वर्ष पर्यन्त उसको समझावे तदनन्तर उसका बेटा राजाहोवे और पराक्रमसे लाई हुई कन्या एकसे पहिले पूछने के योग्य नहीं कि तू हमको बरेगी या दूसरे को वरैगी अर्थात् विपरीत कहनेवाली कन्याको अपने घरमें न रहने दे इसीप्रकार सब धनके विषयमें भी कर्म्मकरना चाहिये जो दूसरेका धनछल से हरण कियागया और चोरका भी न गिनाजाय तो वह खर्चके योग्य है उस धनसे ब्राह्मणलोग दूधकोपियें और बैलोंको भी जोड़ें अर्थात् सवारी करें जब घातकरने के योग्य पुरुष चोर न ठहरे तो क्षमाके योग्य होता है अर्थात् वह धनके फेर देने के योग्य है राजा राजासे युद्ध करने के योग्य है ऐसा धर्म्म कहाजाता है राजाके सिवाय दूसरा वर्ण किसी दशामें भी राजा के सम्मुख शस्त्र न चलावे जब दोनों ओरकी संधिका चाहनेवाला ब्राह्मण दोनों सेनाओंके मध्य में होय तब उचित युद्ध न होना चाहिये उनदोनों में से जो ब्राह्मण को उल्लंघन करता है वह सनातन मर्य्याद को तोड़ता है

और जो क्षत्रियों में विजयी पुरुष मर्य्यादाका उल्लंघनकरे वह क्षत्री क्षत्रियों में अयोग्य अर्थात् जातिसे निकालने के योग्य और सभामें प्रवेश करनेके अयोग्य होता है जो विजयकी इच्छा करनेवाला राजा धर्म्मलोप और मर्य्याद के तोड़ने से उसीरीतिपर कर्म्म न करे उस समय धर्म्म से प्राप्त हुई विजय से अधिक कौनलाभ होगा वह विना विचारे विजय आदिको करके शीघ्रही अपने विजय कियेहुयेको मीठे बचन और भोगदानसे प्रसन्नकरे यह राजाओं कीनीति उत्तम है कटुवचनों से आज्ञा में वर्त्तमान कियेहुये अपने देश से अप्रसन्न और व्यसनोंके समूहों की आपत्तिके चाहनेवाले शत्रु उसके समीप वर्त्तमान हों वह शीघ्रही आपत्तिकालमें उन शत्रुओं के आज्ञाकारी होते हैं हे राजन् जो राजके व्यसनों के चाहनेवाले यद्यपि सब ओरसे तृप्त भी होंय तौ भी शत्रुछल से ठगने के योग्य नहीं होते और किसींदशामें वार्त्तालाप से भी विरुद्ध करने के योग्य नहीं कभी अत्यन्त घायल वा शत्रु अपने जीवन को भी त्यागकरे इसीप्रकार राजा थोड़े धनयुक्त देशसे भी तृप्तहोता है और उस प्रकार का होकर पवित्र जीवन को भी बहुत मानता है जिस राजा का देश बृद्धि युक्त धनी और राजा का आज्ञाकारी है और जिस के मंत्री नौकर आदि प्रसन्न हैं वहराजा दृढ़मूल रखनेवाला है ऋत्विज पुरोहित आचार्य और अन्यशास्त्रज्ञ पूजने के योग्य जिस राजा के पूजेजाते हैं वही राजा लोक का जानने वाला कहा जाता है इन्द्रने इसीरीतिसे पृथ्वीको प्राप्त किया इसीरीति से राजा लोग इन्द्रलोक को विजय किया चाहते हैं हे युधिष्ठिर राजा प्रतर्द्दन ने भारी युद्ध में विजय करके पृथ्वी के सिवाय अन्न धन औषधियों को भी सदैव हरण किया राजा दिवोदासने अग्निहोत्र के शेष बचे हुये हव्य और भोजन को खाया इस कारण से अप्रतिष्ठित हुआ तात्पर्य्य यह है कि इनवस्तुओं को नहीं हरना चाहिये और राजानाभागने वेदपाठी और तपस्वियों के धनके सिवाय राजाओं के समूह सहित सबदेशों को दक्षिणा में दिया हे युधिष्ठिर धर्म्मज्ञप्राचीन राजाओं के जो नानाप्रकार के धनहुये वह सब मुझको प्रिय हैं ऐश्वर्य्य का चाहनेवाला पृथ्वीका राजा विद्याओं के प्रताप से विजयको प्राप्त करे छल और कपटसे न चाहे २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिराजधर्म्मे षण्णवतितमोऽध्यायः ९६ ॥

सत्तानबेवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह निश्चय करके क्षत्री धर्म्म से अधिक कोई पापयुक्त कर्म्म नहीं है क्योंकि राजा युद्धकरने में वैश्य आदि लोगों को मारता है और पृथ्वीका स्वामी राजा किसकर्म्म से अपने लोको को विजय

करता है यह आप मुझ से कहिये भीष्मजी बोले कि राजा लोग पापियों को दण्ड देने और साधुओं का पोषण करने से और यज्ञ दानादि से पवित्र निर्म्मल होते हैं विजयकी इच्छा करने वाले राजा लोग जीवों को पीड़ा देते हैं फिर विजय को पाकर प्रजा की वृद्धि करते हैं और दान, यज्ञ, तपआदि के बलसे पापों को दूर करते हैं उनका पुण्य जीवों के कल्याण के लिये वृद्धि पाता है जैसे कि खेतका निराव करनेवाला निरायेहुये खेतको काटकर अनाज भूसा आदि को जुदा करता है परन्तु अनाज नष्टनहीं होता इसीप्रकार शस्त्रों के मारनेवाले राजा लोग मारने के योग्य शत्रुओं को बहुत प्रकार से मारते हैं उनका यही महा प्रायश्चित्त है जो फिर जीवों की रक्षा को करते हैं जो राजा धनखर्चने के द्वारा जीवों को मारने आदि दुःखसे और चोरों से रक्षा करता है वह प्राणदान से धनका देनेवाला सुखदायी पोषक निर्भयरूप दक्षिणायुक्त सब यज्ञों से पूजन करनेवाला है वह राजा इसलोक के कल्याणों को भोगकर इन्द्र की समानता को पाता है जो राजा ब्राह्मणों के प्रयोजन के लिये अपने देह रूपी यज्ञस्तम्भ को ऊंचा करके शत्रुओं से युद्धकरताहै वही महादक्षिणावाला यज्ञहै उससे श्रेष्ठ कोई पुरुष नहीं है युद्ध में जितने शस्त्र उसकी देहके चर्म्मको छेदते हैं वह उतनेही लोगोंको जो कि अविनाशी और सबइच्छाफलको पूर्णकरनेवाले हैं भोगता है युद्धमें उसकी देह से जो रुधिर आदि निकलता है उसदुःखसे वह सबपापोंसे छूटता है युद्ध में सन्तप्त क्षत्री जिनकष्टों को सहता है उसीदुःखसे उस के बड़े तपकाफल प्राप्तहोता है यहधर्म्मज्ञों का कहाहुआ है युद्ध में भयानक रूप धर्म्मात्मा पुरुष शूरवीरसे रक्षा को चाहते हुये ऐसे पीछे को वर्त्तमान होते हैं जैसे पर्जन्यनाम मेघके पीछे वर्षासे जीविका चाहनेवाले वर्त्तमान होते हैं शूरवीर होकर उसी प्रकार रक्षाकरे जिस से कि भय जातारहै और अपने मनुष्यों को शत्रुओं के सन्मुख न करे किन्तु आप संमुख होके उन को पीछे की ओरकरे वह भी महापुण्य है और वह लोग उस उपकार के कारण सदैव उस को नमस्कारकरें अथवा संसार के समान युद्ध करें वह पहिले के समान नहीं हैं युद्ध में सेनाकी चढ़ाइयां होनेपर समान पुरुषोंमें भी बड़ाअन्तर देखने में आता है अर्थात् कोई सन्मुख होता है कोई नहीं शूर पुरुष स्वर्गमार्ग में वर्त्तमान होकर शत्रुओं के सामने गिरता है और जो भयभीत है वह भागता है इस कारण प्राणसंकट में साथियों को त्यागकरे हे तात ऐसे नीच मनुष्यों को आगे मतकरो जो युद्ध में साथियोंको छोड़कर कुशलता पूर्वक घरको जायँ जिन के प्रधान इन्द्रदेवता हैं वहदेवता उनके कल्याणको करते हैं जो पुरुष साथियों के त्याग से अपने प्राणोंकी रक्षाचाहता है उसको काष्ठ

वा पाषाण आदिसे मारे अथवा तृणकी अग्नि से भस्मकरे और ऐसे क्षत्रियों को पशुओं के समान मारे जो कफ मूत्र छोड़ता दुःख विलाप करता शय्या परमरै वह क्षत्रियों का अधर्म्म रूप बिनाघायल देहके साथ नाशको पाता है इसके इस कर्म्म को प्राचीनलोग बुरा कहते हैं हे तात शूरवीर अभिमान रखने वाले क्षत्रियों का घर में मरना प्रशंसा के योग्य नहीं होता वह अचेततादुःख रूपी अधर्म्म है यह दुःख और महाकष्ट है जो पापी पुरुष विपरीत स्वस्त दुर्गन्धित देहयुक्त पुत्र आदि का शोच करता और पुकारता नीरोगों की इच्छा करता है और मृत्युको भी चाहताहै परन्तु वीर अहंकारी लोग ऐसीमृत्यु के योग्य नहीं हैं चत्री युद्धों में शत्रुओं का नाश करके जातिवालों से घिरा हुआ तीक्ष्ण शस्त्रोंसे पीड़ित मृत्यु के योग्य है इच्छा क्रोध से भराहुआ शूर ही कठिनयुद्ध को करता है और शत्रुओंसे घायलहुये अंगों को नहीं जानता है वह युद्ध में मरण को पाकर संसार में कीर्तिमान् अपने उत्तमधर्म्मको प्राप्त करके इन्द्रकी समानता को पाता है जीवनका त्यागी शूर पुरुष सब युक्तियों से युद्ध में वर्त्तमान पीठको नहीं फेरताहै वह इन्द्रकी समानता को पहुंचता है और शत्रुओं से घिराहुआ जहां तहां घायल शूरवीर जो कष्टको नहीं मानता है वह अविनाशी लोकों को प्राप्त होता है ३२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्म्मेसप्तनवतितमोऽध्यायः ९७ ॥

अट्ठानबेवांअध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह मरणको पाके युद्धकरनेवाले मुख न मोड़ने वाले शूरों के कौन लोक होतेहैं यह आप वर्णन कीजिये भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर मैं इस स्थान पर एक प्राचीन इतिहास कहताहूं जिसमें राजा अम्बरीष और इन्द्रके प्रश्नोत्तरहैं नाभागके पुत्र राजा अम्बरीषने बड़ीकठिनतासे प्राप्तहोनेवाले स्वर्ग में जाकर इन्द्रके साथ बैठेहुये अपने मंत्री को और दिव्य प्रकाशवान् ऊपर २ चलनेवाले उत्तम बिमानमें बैठेहुये अपनेसेनापति उस सुदेवकी ऋद्धिको दृष्टिगोचरकरके आश्चर्य्ययुक्त होकर इन्द्रसेकहा कि मैं सागरान्त सम्पूर्ण पृथ्वीको रीतिके अनुसार शिक्षा करके और धर्म की इच्छा से चारों वर्णों के धर्म्मों में शास्त्रके अनुसार कर्म्मकर्त्ता घोर ब्रह्मचर्य्य गुरु सेवाआदि आचारसे वेदोंको और धर्म्मसे शुद्ध राजशास्त्रको पढ़कर खाने पीनेकी वस्तुओंसे अतिथियोंको और इसीप्रकारश्रद्धापूर्वक पितरों को वेद पाठकी दीक्षासे ऋषियों को और उत्तम यज्ञों से देवताओं को तृप्तकरके शास्त्रकी विधिसे चत्री धर्ममें वर्त्तमान होकर देवको देखता युद्धमें विजयकरता या हे देवराज इन्द्र प्राचीन समयमें यह बड़ा शान्तात्मा सुदेवनाम मेरासे-

नापति युद्धमें प्रवीण था यह किसकारणसे मुझसे अधिकारका पानेवाला है इसने न तो मुख्ययज्ञों से पूजन किया और न विधिके अनुसार ब्राह्मण तृप्तकिये वह अब मुझसे किस कारणसे अधिकहै इन्द्रबोले कि हे तात इस सुदेव का युद्धरूप एकयज्ञ बड़ा हुआ और जो दूसरा क्षत्रिय युद्ध करता है उसका भी यही यज्ञ है अर्थात् जो कवच पहिने शस्त्रधारी सब युद्धकर्ता दीक्षितहोकर सेनामुखकोपाकर युद्ध रूप यज्ञके अधिकार में वर्त्तमान होतेहैं अम्बरीषने कहा कि यज्ञ में कौनहविष्य और क्याघृतहै कौनदक्षिणाहै कौन ऋत्विजकहाहै हे इन्द्र यह आप मुझसे कहिये इन्द्रबोले कि इस युद्धयज्ञ में हाथी ऋत्विज घोड़े अध्वर्यु शत्रुओं का मांस हविष्य और रुधिर घृत कहा जाताहै उसमें शृगाल गिद्ध काकोल पक्षी सदस्य हैं यहीयज्ञके शेषबचे घृत को और हविष्य को भोजन करते हैं और प्रास तोमरोंके समूह खड्ग,शक्ति, फरसा जोकि प्रकाशित तीक्ष्ण विषों में बुझाये हुये होते हैं वह उस यज्ञके शुचनाम पात्रहैं वेगयुक्त लम्बे चौड़े तीक्ष्ण परकायाके भेदन करनेवाले सीधे पैने बिषमें बुझायेहुये जो बाणहैं वही बड़ाश्रुवाहै युद्ध में हाथी के चमड़े से मढ़ाहुआ हाथी दांतकी मूठवाला हाथीकी सूंड़का काटनेवाला खड्ग उसयज्ञका स्फियहै प्रकाशवान् निशित लोहमयी तीक्ष्ण परासशक्ति दुधारा खड्ग और फरसों से मारना उसयज्ञकी द्रव्यहै युद्ध में बिनासमय फैलनेवाला कुलीनों की देह से उत्पन्न होनेवाला जो बहुतसा रुधिर शीघ्रतासे पृथ्वी पर गिरताहै वह वृद्धिकर्त्ता सब मनोरथोंकी पूर्ण करनेवाली पूर्णाहुती होती है सेना मुखमें काटो छेदो यह जो शब्द सुनेजातेहैं उसको सामग ब्राह्मण यज्ञ के सामभंत्रोंसे यमलोकमें गातेहैं और शत्रुओं का सेनामुख उसयज्ञका हविर्धान अर्थात् साकल्य रखने का पात्र होताहै और कवचधारी हाथी घोड़े आदि का जो समूहहै वहयज्ञमें श्येनचित्तनाम अग्नि होती है और युद्धमें हजारों को मारकर जो कबन्ध उठता है वही खदिरका अष्टकोण वाला यज्ञस्तम्भ कहाजाताहै और उस युद्धमें वचन से बुलाये हुये अंकुश से चलाये हुये हाथी वषट्कार रूप तलनाद से पुकारेजाते हैं और उस युद्धमें ब्राह्मण का धन चोरी जाने पर प्यारे देहको त्याग कर जाताहै यह शब्द जो गाया जाता है वही त्रिसामानाम दुन्दुभीहै और देहरूप स्तम्भको छोड़कर वह यज्ञ अत्यन्त दक्षिणावाला है जो शूरस्वामी के निमित्त सेना मुखपर पराक्रमकरे और भय से मुख न फेरे उसकोलोक ऐसेहैं जैसे कि मेरे हैं नीले चर्मसे मढ़ेहुये खड्ग परिघनाम अस्त्रों के समान भुजाओंसे जिसकी वेदी रचीगई है उसके भी लोक मेरेही सदृश हैं जिसको कि किसी सहायक की इच्छानहीं और सेना के मध्य विजय में वर्तमान है उसके लोक ऐसे हैं जैसे मेरे जिस युद्ध कर्ता

की रुधिर समूह रखने वाली नदी भेरी स्वरूप मेढ़क और कछुआ रखने वाली और वीरों के हाड़रूप कंकड़ वाली अगम्या रुधिर मांसरूपी कीचड़ से भरी खड्ग ढालरूपी प्लव नाम नौकावाली भयानक मरे शिररूप शैवल शाड्वल रखनेवाली और मरेहुये घोड़े हाथी रथ रूप संग्रामवाली पताका और ध्वजारूप वृक्ष वेत रखनेवाली और हाथियों की बहानेवाली रुधिररूप जल से पूर्ण तीरके मनुष्यों को अगम्य मृतक हाथी रूप नक्रवाली परलोक की ओर वहने वाली कल्याणरूप दुधारा खड्ग रूप बड़ी नौका रखनेवाली गिद्ध कंक समूहरूपी बल प्लवावाली मृतक भक्षियों से सेवित भयभीतों को मूर्च्छा देनेवाली भूमि में जो युद्ध जारी होता है वही उस यज्ञका अवभृथस्नानहै जिसकी वेदी शत्रुओंके शिरकी बनाईहुई होती है और घोड़े हाथियों के कन्धों से भी संयुक्त होती है उसके लोक ऐसे हैं जैसे कि मेरे शत्रुओं का सेनामुख जिसका कि स्त्रियों से भरा हुआ महलहै ज्ञानियों ने अपनी सेनाको उसका हविर्धान अर्थात् साकल्यपात्र कहा और युद्ध कर्त्ता सदस्यों की दक्षिणाहै और उत्तर दिशा उसका आग्निध्र है उस शत्रुरूप स्त्री रखने वाली सेना में सबलोक वर्त्तमान हैं जब व्यूहमें दोनों ओर से आकाश आगे होताहै वही उसकी वेदी इस प्रकार के यज्ञों समेत है और तीनों वेद तीनों अग्नि हैं जो भयभीत मुखमुड़ा युद्धकर्त्ता शत्रुके हाथ से मारा जाताहै वह प्रतिष्ठासे खाली होकर निस्सन्देह नरकको जाताहै जिसके रुधिरकी आधिक्यता से वेदी डूबजाय और मरे शिर मांस हाड़ से पूर्ण होय वह परमगति को पाता है जो युद्धकर्त्ता सेनापति को मारकर उसकी सवारी पर सवार होता है वह विष्णु के समान चरण उठानेवाला समर्थ युद्धकर्त्ता बृहस्पतिजी के समानहै जो युद्धकर्त्ता सेनापति या उसके पुत्रको अथवा जो उससेना में पूजितहोय इनमें से किसी को जीता पकड़ लाता है उसकेलोक ऐसे हैं जैसे कि मेरे युद्धमें मरने वाले शूरको किसी दशामें भी शोचनहीं वह मृतक शोचसे रहित शूर होकर सबलोकों में प्रतिष्ठाको पाताहै उसमृतक के अन्नजल स्नान सूतक आदि करना नहीं चाहते हैं उसके लोकोंको मुझ से सुनो शीघ्रता करनेवाली हजारों श्रेष्ठ अप्सरा उसयुद्ध में मृतकहुये शूरवीर के सन्मुख दौड़तीहैं और कहतीहैं कि यहहमारा स्वामी होय यही तपकापुण्य और सनातन धर्म्महै और जो युद्धको रीतिके अनुसार करे उसके चारों आश्रमहैं वृद्ध, बालक, स्त्री और मुखमोड़नेवाला मारने के योग्य नहीं है जो मुखमें तृण रखनेवालाहो और कहे कि मैं तेरा हूं उसको भी मारना नहीं योग्य है मैं जम्भ वृत्र बल पाक शतमायावी विरोचन दुःखसे हटाने के योग्य नमुचि बहुमायावी सम्बर विप्रचित्तिदैत्य आदि सब दानव और प्रह्लादको

युद्धमें मारने के पीछे देवताओं का स्वामी हुआ भीष्मजी बोले कि इन्द्र के इस वचनको सुनके राजा अम्बरीष ने युद्धकर्त्ताओं की और अपनी सिद्धि यों को नेत्रों से देखा ५१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेअष्टनवतितमोऽध्यायः ९८ ॥

निन्नानबेवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इस स्थानपर इसप्राचीन इतिहास को भी कहता हूं जिसमें राजा प्रतर्दन और मिथिलापुरी के राजा ने युद्धकिया हे युधिष्ठिर जैसे युद्धमें यज्ञोपवीत धारी मैथिली राजा जनक ने युद्ध कर्त्ताओं को विजय किया उसको समझो सब तत्त्वों के ज्ञाता मैथिली राजा जनक ने अपना योग बलसे युद्धकर्त्ताओं को स्वर्ग और नरक दिखलाये कि युद्ध में निर्भयशूरों को प्रकाशवान् गन्धर्वों की कन्याओं से पूर्ण सब मनोरथों के पूर करनेवाले अविनाशीलोक हैं उनको देखो और युद्धमें मुख मोड़ने वाले मनुष्यों के यहलोक सन्मुख हैं और सदैव के लिये अपकीर्ति है इससे निस्सन्देह उद्योग करना योग्य है इनको देखकर तर्क से असंयुक्त बुद्धिहोकर शत्रुओं को बिजयकरो और प्रतिष्ठा रहित होकर नरक में मतपड़ो शूरों को स्वर्ग द्वारमें जानेके लिये देहके स्नेह का त्यागनाही मूल कारणहै हे शत्रुहन्ता उस राजासे इसप्रकार कहेहुये उनयुद्ध कर्त्ताओं ने राजाकोप्रसन्न करके युद्ध में शत्रुओं को बिजय किया इससे ज्ञानी पुरुषको सदैव युद्ध में आगे होना चाहिये हाथियों में रथोंको और रथोंमें अश्वारूढ़ोंको और अश्वारूढ़ों के मध्यमें कवचधारी और शस्त्रधारी पदातियोंको वर्त्तमान करना चाहिये जो राजा इसप्रकार व्यूह रचता है वह सदैव शत्रुओं को विजय करता है हे युधिष्ठिर इससे ऐसा कर्म्म सदैव करना चाहिये अत्यन्त क्रोधयुक्त सब युद्धकर्त्ता युद्धमें शुभकर्म्म को चाहते हैं वह सेनाओं को क्षोभयुक्त करे जैसे कि सागर को मगर दोलायमान करता है और परस्पर में नियत करके व्याकुल युद्धकर्त्ताओं को प्रसन्न करें और विजयकीहुई पृथ्वी की रक्षाकरें परास्त होने वालोंका पीछा नहीं करे हे राजन् फिर लौटआने वाले और जीवन से निराश होनेवाले युद्ध कर्त्ताओं की चढ़ाई असह्य है इस कारण बहुत पीछा न करे शूरवीर भागे हुओं के ऊपर घात नहीं करते इससे उनका पीछा न करे चलने वाले जीवों का भोजन स्थिरजीव हैं और दाढ़ रखने वालोंका भोजन बिन दाढ़ रखने वालेहैं प्यासोंका अन्नजल है और शूरका अन्न नपुंसक हैं समान पीठ वा पेट और हाथपैर रखनेवाले भयभीत युद्ध करनेवाले पराजय को पातेहैं इस कारण भयसे पीड़ामान युद्धकर्त्ता दण्डवत् करके फिर हाथ

जोड़के शूरोंके सन्मुख वर्त्तमान होतेहैं यहलोक सदैव पुत्रके समान शूरोंकी भुजाओं में रक्षा किया गयाहै इस हेतुसे शूरवीर सब दशाओंमें प्रतिष्ठा के योग्यहै तीनों लोकोंमें शूरतासे उत्तम कोई बात वर्त्तमान नहींहै शूर सबकी रक्षाकरताहै और सब शूरहीमें वर्त्तमान है १८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेनवनवतितमोऽध्यायः ९९ ॥

सौवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हेपितामह विजयकी इच्छा करनेवाले राजा लोग धर्म्म को कुछ पीड़ा देकर भी सेनाकी चढ़ाई करतेहैं वह आप मुझसे कहिये भीष्म जी बोले कि क्षत्रियोंका कर्म्म धर्म्महीसे वर्त्तमान है इसीप्रकार दूसरे कहते हैं कि मरणके निश्चय से वर्त्तमानहै और कोई कहते हैं कि अच्छेलोगों के आचार से वर्त्तमान है इसीप्रकार राजाके भय दिखलाने से भी वर्त्तमान है अर्थ धर्म्म में शुद्ध अर्थवाले उपाय धर्म्मोंको कहूंगा क्योंकि चोर जातवाले बेमर्य्याद और नष्ट करनेवाले होते हैं उनचोरोंका नाश और सब कर्म्मों के सुधारने के लिये वेदमें कहीहुई युक्तिको कहूंगा उनयुक्तियोंको मुझसे सुनो हे भरतवंशी दोनों बुद्धि सीधी और टेढ़ी जानने के योग्यहैं ज्ञाता होकर कुटिलों का संग न करे और आने वालोंको जानले शत्रु भेद के द्वारा राजा के पास घूमते हैं राजा उसछलको जानकर शत्रुओं के समान उनको पीड़ा देताहै हे कुन्तीनन्दन हाथी बैल और अजगरों के चमड़े और सिल्लीबाण तोमर आदि कंटकनाम वस्तु और सबधातु और कवच और चमड़ा और श्वेत पीतरंगके वस्त्र और पीतरक्तवर्म और पताका ध्वजा नानाप्रकार के रंगोंसे रँगीहुई दुधारा खड्ग तेजधार फरसा ढाल यहसब सामान बहुत प्रकार के विचार करने चाहिये युद्ध के योग्य शस्त्र और युद्धके निश्चय करनेवाले युद्धकर्त्ता विचार किये जायँ चैत्र वा मार्गशिर के महीने में सेनाकी चढ़ाई उत्तम गिनीजाती है तब पृथ्वीपकी खेतीवाली और जलसे पूर्ण होती है उस समय नतो अधिक शरदी और न गरमी होती है इसकारण उस समय में अथवा शत्रुओं के व्यसनमें सेना की चढ़ाई करे शत्रु के पीड़ादेने में यह सेना योग उत्तमहै जल तृणसे संयुक्त सीधाचलनेके योग्य वह मार्ग प्रशंसा कियाजाताहै जिसके इधर उधरके स्थान बुद्धिमान् और वनवासी दूतों के द्वारा अच्छे प्रकारसे मालूमहोगये हों वनमें जानेका ऐसे विचार न करे जैसे कि हिंसक जीवों के भयसे मृगगण नहीं जाते इसहेतु विजयकी इच्छाकरने वाले राजालोग उन वनवासियों को सेना में भरती करते हैं कुलीन समर्थ पदाती सेनाको भी आगे करे सेना का निवासस्थान जलसंयुक्त अगम्य

एकही मार्गवाला श्रेष्ठ कहाजाता है इससे सन्मुख आनेवाले शत्रुकी रोक होती है आकाश अर्थात् मैदान से बनमें निवासकरना अधिक लाभकारी है जहां युद्धमें कुशल बहुतसे गुणीपुरुषहोयँ वहां समीपही सेनाका निवासस्थान होना चाहिये बनके निवास स्थानके सन्मुखसे सेनाका उतरना पदातियों को गुप्त नियत करना फिर समीप आनेवाले शत्रुके ऊपर आघात करना योग्यहै जोकि आपत्तिके लिये रक्षाकास्थानहो सप्तर्षियों की ओर पीठकरके पर्वतोंके समान निश्चल होकर युद्धकरें इस रीतिसे शत्रुओं को बिजयकरे चाहैं वेशत्रु कठिनतासे भी बिजयके योग्य हों जिसओर की हवाहो और सूर्य्य इन्द्र जिसदिशामेंहों उधरही बिजयहै हे युधिष्ठिर युद्ध में इनतीनों में से एकसे एक उत्तम हैं जो युद्धमें कुशल मनुष्य हैं वह कीचजल ढेले पुलआदिसे रहित सम पृथ्वीको घोड़ों के युद्धमें अच्छा कहतेहैं कीच और गर्त्त से रहित पृथ्वीरथोंके लिये भी उत्तम कही जातीहै छोटेबृक्ष और जल सहित पृथ्वी हाथीकी सवारीके युद्ध में श्रेष्ठसमझी जातीहै बहुत से गढ़ और घने जंगलवाली बांस और बेतोंसेपूर्ण पहाड़वाली सजल पृथ्वी पदातियों के योग्य होतीहै हे भरतबंशी बहुत पदाती रखनेवाली सेना दृढ़होती है और बहुतरथ घोड़े रखनेवाली सेना बर्षाके बिना सूखे दिनों में उत्तम समझी जातीहै बहुतपदाती और हाथी रखनेवालीसेना बर्षाऋतुमें प्रशंसा के योग्य होतीहै इन गुणोंको अच्छेप्रकार बिचारकर देशकालको संयुक्त कर न क्षत्री आशीर्वाद पाने वाला राजा अच्छे प्रकार बिचारकर चलता है वह उत्तम चढ़ाई करके सदैव बिजय को पाता है सोतेहुये पिपासा युक्त शान्तचित्त और युद्ध से पृथक् होनेवालों को नहींमारे अशस्त्री रोते हुये भागेहुये भोजन करनेवाले युद्धकर्त्ताओं कोभी नमारे इसीप्रकार ब्याकुल अचेत घायल टूटेअंग शान्ततासे पृथक्हुये कर्म्मका प्रारम्भ करने वाले गुप्तसुरंग या अन्य युक्तियों से तपेहुये और घासआदिके लिये घूमनेवाले डेरों के रक्षक और पहरादेनेवाले सदैव से घरपै रहनेवाले जोकि द्वारोंपर वर्त्तमान हों अथवा मंत्रीके द्वारपर जो कोई समूहके स्वामी हैं इनसबको भी कभी न मारे जो युद्ध कर्त्ता शत्रुकीसेना को परास्त करते हैं और अपनीसेना को नियतकरते हैं वहसमान भोजनपानवाले दूनेमासिक करने के योग्य हैं दश दश योद्धाओं में एक २ स्वामी नियत करना योग्य है इसीप्रकार सौसौ युद्धकर्त्ताओंके ऊपर अधिपति नियतकरना चाहिये तदनन्तर आलस्यको दूरकरके शूरपुरुषको हजारयोद्धाओंका नियन्तावनावे सब बड़ेबड़े अधिकारियों को इकट्ठा होकर यह कहना योग्य है कि हमलोग प्रतिज्ञापूर्वक शपथखाते हैं कि हमबिजयके लिये परस्परमें पृथक् होकर युद्धकोत्याग नहींकरेंगे और जे

कोई भयभीत हैं वह यहींसे लौटो जो लोग अपने नियत किये हुये अधि-
पतिको युद्धमें मारडालें ऐसे लोग युद्धमें भागे हुये अपने मनुष्यों को नहीं
मारें क्योंकि युद्ध में अपनी रक्षाको करता अपनेही पक्षको मारता है भाग
जाने में धनकानाश और अपने मरण के साथ अपकीर्ति और अयश है
पुरुषके भागनेमें चित्त के बिरोधी दुःखदायी वचनसुनने में आते हैं हमारे
शत्रुओं में जो विपरीत दशावाला होठ दन्त रखने वाला सबशत्रों को
त्यागेहुये शत्रुओंसे घिराहुआ है उसको सदैव धनकीहानि और मरणआ-
दि प्राप्तहो जो युद्ध में मुखफेरते हैं वह नीच मनुष्य हैं वह केवल भीड़ब-
ढ़ानेही मात्रको हैं अर्थात् उनका जन्म निरर्थक है वह इसलोक परलोक
दोनोंलोकोंसे गये हैं प्रसन्न चित्त शत्रु भागनेवाले के सन्मुख दौड़ते हैं हे
तात विजयी मनुष्य नमस्कार और प्रशंसाओं से प्रसन्नचित्त भागने वाले
शत्रुकापीछा करते हैं युद्धमें वर्त्तमान शत्रु जिसकी नेकनामी का विध्वंस
करते हैं उस दुःखको मारनेसेभी अधिक असह्य जानताहूं विजयको सब
धर्म्म और सुखकामूल जानो भयभीतोंकी मृत्युघात है उसके सन्मुख शूरपु-
रुषही जाता है युद्धमें जीवनसे निराश स्वर्ग को चाहनेवाले विजयकरते या
मरते सिद्ध गतिको पाते हैं इसप्रकार से शपथ खानेवाले और जीवनसे
निराश निर्भय वीरपुरुष शत्रुकी सेनाको मथाते हैं ढालतलवार रखनेवाले
पुरुषोंकी सेना आगेहोय और पीठकीओर शकटोंकीभीड़ और स्त्रियांमध्य
में होयँ उसपुर में भी जो वृद्ध मनुष्य आगेबढ़ेहुये हों वहशत्रुओं के मारने
के निमित्त पदातियोंकी रक्षाकरें जो प्रथमही पराक्रमी और साहसी समझे
गये हैं वह आगेको वर्त्तमानहोयँ अन्य मनुष्य उनके पीछेहोयँ और युक्ति
भयभीतोंकोभी प्रसन्नकरना चाहिये चाहै वह केवल भीड़बढ़ानेहीके लिये
सन्मुख वर्त्तमानहों थोड़े युद्धकर्त्ताओं को इकट्ठाकरके लड़वावे और बहुत
से युद्धकर्त्ताओंको इच्छानुसार फहलावे थोड़े योद्धाओंकी सेना बहुतसे युद्ध
कर्त्ताओं के साथ शूचीमुखहोय बेमर्य्याद चढ़ाई या दौड़होनेपर बीच अ-
र्थात् मिलाप हो या मिथ्या होतो दोनों भुजाओं को पकड़ कर पुकारे कि
शत्रुने पराजय पाई पराजय पाई मेरेमित्रों की सेनाआई निर्भय होकर आ-
घात करो भयानक शब्दोंको करते हुये पराक्रमी शत्रुओं को पीड़ादें और
आगे चलनेवाले मनुष्य सिंहनाद और कलकलाक्रकच गोविषाण भेरी
मृदंग पणव आनक इत्यादि बाजोंका शब्द करें ५० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मे सेनानीतिनामशततमोऽध्यायः १०० ॥

एकसौएकका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे भरतवंशी पितामह कैसो स्वभाव आचरण रूप कवच शस्त्र रखनेवाले मनुष्य युद्धके योग्य हैं भीष्मजी बोले कि यहां कुल देश आचार आदि से प्राप्त होनेवाले शस्त्र और सवारी कही जाती हैं उसी प्रकार वीर पुरुष आचरण कर्त्ता कर्म्मों में प्रवृत्त होता है गंधारी सिन्धी सौवीर देशी नखरुप्रास से युद्ध करने वाले निर्भय और महापराक्रमी होते हैं उनवीरों की सेना सबके पारहोनेवाली है उन्हीं नरजातों के क्षत्री सब शस्त्रों में कुशल और पराक्रमी होते हैं और पूर्वदेशीय हाथियों के युद्ध में प्रवीण माया से लड़नेवाले हैं इसी प्रकार यवन कांबोज और मथुरा देश वासी हैं यह भुजाओं के युद्धमें महाप्रबल हैं और दक्षिणात्य लोग तलवार चलाने में प्रवीण हैं सब स्थानों में बहुधा शूर पराक्रमी प्रसिद्ध उत्पन्न होते हैं उनके लक्षण मुझसे सुनो कि जिनके वचन सिंह शार्दूल समान इसी प्रकार चाल भी इन्हींके तुल्य कबूतर सर्पके समान नेत्र रखनेवाले सब शूर और शत्रुओं के मथने वाले होते हैं मृगके समान स्वर हाथी के समान उत्तम नेत्रधारी निरहंकारी प्रमादी मुखपर क्रोध रखनेवाले अल्प बुद्धि किंकिणी और मेघके समान स्वर कोई २ ऊंटके समान टेढ़ीनोक नाक और जिह्वा रखनेवाले दूरतक पीछा करनेवाले बिड़ाल के समान कुबड़ा देह रखनेवाले मृतकों को खानेवाले सूक्ष्म केश और त्वचा रखनेवाले शीघ्रगामी चपलता युक्त होते हैं वह कठिनता से जीते जाते हैं कितनेही गोह के समान नीची आंखवाले और मृदुप्रकृती घोड़के समानगति और शब्दवाले हैं वह बिजयी होते हैं जो अतिदृढ़ देह उन्नत स्कन्ध चौड़ीछाती स्थिर स्वभाव होते हैं वह मनुष्य बाजोंके बजने से क्रोधयुक्त होतेहैं और प्रसन्न चित्त होकर युद्धकरतेहैं गंभीर और निकले हुये पीतवर्ण नकुल के समान नेत्र भृकुटी संयुक्त मुख देहकी प्रीति रहित शूर ऊंचाललाट मांसरहित ठोढ़ी रखनेवाले भुजा पर वज्र और उंगलियोंपर चक्र रखनेवाले दुर्बल हाड़ों की मालारूप पुरुष युद्ध के होने में तीव्रता से सेनामें प्रवेश करते हैं वह हाथी के समान मतवाले कठिनतासे विजय कियेजाते हैं और पिंगल वर्ण दीप्त के शान्त मोटेगाल ठोढ़ीमुख ऊंचे कन्धे मोटीगर्दन विकटरूप स्थूलदेह ऊंचेसुन्दर सुग्रीवनाम घोड़े और गरुड़ की समान उछलने वाले देह शिर टेढ़ा वृषभके समान मुख और दांत उग्रस्वर क्रोधयुक्त युद्ध में शब्दकर्त्ता अधर्म्मी घोर भयंकर रूपहोतेहैं यहभी देहकी प्रीति रहित सेना के आगे करने के योग्य हैं वहअपनी इच्छा से विरुद्ध जब देखते हैं तब शत्रुओं को

ारते हैं वह अधर्मी दुराचारी हैं इनको जीतना मीठे वचनों से होताहै यह
जा के ऊपर भी इसीप्रकार क्रोध करते हैं २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेएकशततमोऽध्यायः १०१ ॥

एकसौदोका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे भरतबंशियों में उत्तम विजयी सेना की कौनसी
ूरत उत्तम होती है भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर विजयी सेना की जो
त्तम सूरत है वह मैं कहता हूं कि प्रथम दैवके क्रोधहोने और समय की
ाट पौट से उसके जाननेवाले पुरुष ज्ञानरूप दिव्य नेत्रोंसे उसको देखते हैं
सके ज्ञाता पुरोहित आदिपुरुष इसस्थानपर प्रायश्चित्त बुद्धी को और जप
ाम मंगलों को करते हैं और शत्रुओं को मारते हैं हे युधिष्ठिर जिस सेना
 युद्धकर्त्ता और सवारियां बहुत साहसी होती हैं निश्चय करके उससेनाको
जयप्राप्तहोती है जिसके पीछेकी ओर वायुबहतीहै इसीप्रकार इन्द्रधनुष सूर्य्य
ी किरणें और बादल पीछेकी ओरहोते हैं और गीदड़ कागगिद्ध सबअनुकूल
ोकर सेना का पूजन करतेहैं तब उत्तमसिद्धी होती है और जिससमय ऊपरकी
ोर प्रकाशवान् ज्वाला रखनेवाली प्रदक्षिणावर्त्त शिखा रखनेवाली निर्धूम
ग्नि जिसमें आहुतियोंकी पवित्र सुगन्धिहोती है वह होनहार विजय का
क्षण है और जहां गंभीर शब्द और बड़े शब्दवाले शंख भेरी आदि बाजे
जते हैं और युद्धकांक्षी लोग अनुकूल होते हैं यहभी होनेवाली बिजय का
प है यात्राकी इच्छासंयुक्त युद्धाभिलाषी लोगोंके चलने के समय उनके
ीछे और बायें मंगली पशुहोतेहैं और वह दाहिनी ओर आते दृष्टपड़ें तो
वश्य युद्धकर्त्ताओंकी सिद्धीहोती है और जो आगेआते दृष्टपड़ें तो युद्ध
 निषेध करना सूचन करते हैं और जब हंस क्रौंच शतपत्र चाषनामपक्षी
ंगलीक शब्दों को करतेहैं और युद्धकर्त्तालोग प्रसन्न और बलवान् होते
 तब होनेवाली विजयका लक्षणजानो और जिनकी सेनाके योद्धाओं के
्रकाशवान् अस्त्रशस्त्र यन्त्र कवच ध्वजा और मुख ऐसे प्रकाशित और प्र-
ज्वलितहों जिनको कठिनतासे कोई देखसके वहभी अवश्यशत्रुओंको विजय
रतेहैं और जिनके युद्धकर्त्ता वृद्धों की सेवाकरनेवाले निरहंकारी परस्परमें
ित्रभीतर बाहरसे एकसाभाव रखनेवालेहैं यहभी बिजयहोने का लक्षण है
ौर जहां चित्तरोचक शब्दस्पर्श गन्धघूमतेहैं और युद्धकर्त्ताओं में धैर्य्यता
र्त्तमान होतीहै वह विजयका मुखहै प्रवेशकरनेवाले युद्धकर्त्ता के बायें ओर
ा काग शुभदायीहोताहै और प्रवेशकरनेकी इच्छाकरनेवालेको दक्षिणकाग
ुभदायीहै और पीछेसे मनोरथ को सिद्ध करताहै और आगेहोनेसे निषेध कर-

ताहै हे युधिष्ठिर चतुरंगिणी सेनाको पारतोषिक आदिसे प्रसन्नकरके प्रथम तो सामनाम नीतिसेही कामकरो फिर युद्धका उद्योगकरो यह साधारण विजयहै जिसका कि नामयुद्ध है और युद्धमें जो व्यूहकी इच्छासे विजय है उसके सिद्धांतको ईश्वर जानताहै पराजय होनेवाली बड़ी सेना कठिनतासे रोकने योग्य है जैसे कि जलका महावेग और भयभीत मृगरोकने योग्य नहींहोता बाजेपराक्रमी रुरुनाम मृगसमूह के समानबड़ीसेना परास्त हुई सुन कर बुद्धिमान् युद्धकर्त्ताभी पृथक् होजातेहैं एकएकको जाननेवाले अति प्रसन्न चित्त प्राणके त्यागी युद्धमें श्रेष्ठनिश्चय करनेवाले पचासशूरभी शत्रुकी सेनाकोमारतेहैं इसपृथ्वीपर निश्चययुक्त पूजित कुलीनामिलेहुये अठारह युद्धकर्ताभी अच्छे प्रकार शत्रुको बिजय करते हैं समर्थ होनेपर किसी दशामें भी युद्धको स्वीकार नकरना चाहिये जो पुरुष सामदामभेद नीतिको करतेहैं उनका युद्ध उत्तम कहाजाताहै सेनाके देखने सेही भयभीतोंको महादुःखहोताहै समीप आनेवाले युद्धको जानकर जो सन्मुखताको जातेहैं उन युद्धकर्ताओं के बिजयके अंगफड़कतेहैं उससमय स्थावर जंगम जीवोंसमेत देश भर पीड़ामानहोता है और अस्त्रोंकी उष्णतासे मनुष्यों के देहकी मज्जापीड़ा पाती हैं बारबार उनशत्रुओं के पास युद्धसंयुक्त सामका पैगाम पहुंचाना चाहिये शत्रुओंसे अत्यन्त पीड़ामान और र वह लोग सब ओरसे संधिको चाहते हैं और शत्रुओं के जो मित्रहैं उनो त्यागनेके लिये दूतलोगों को भेजे और जो राजा अपने से बड़ा है उसकेसाथतो यही करना योग्य कहाजाता है उसकी इसप्रकारकी पीड़ा दूसरी रीति से करनी असम्भवहै जैसे कि शत्रु को सब ओरसे पीड़ादीजाती है निश्चय है कि साधु पुरुषोंको क्षमा और धैर्यता प्राप्तहोती है और असाधु पुरुषोंको कभी नहीं होती इससे हे राजा तुम धैर्य्य और अधीर्य्यता के प्रयोजनको समझो कि बिजय करके धैर्य्यता करने वाले राजा का यश बड़ीवृद्धिको पाताहै और महाअपराध में भी शत्रुलोग बिश्वास करतेहैं सम्बरनाम असुर शत्रुको पीड़ादेकर क्षमाको अच्छाजानता था क्योंकि जो लकड़ी नहीं तपाई गई है वह फिर मुख्यदशाको प्राप्तहोतीहै आचार्य्य लोग इसकी प्रशंसा नहीं करतेहैं और यह साधुपुरुषों का उपदेश भी नहीं है बल्कि बिना क्रोध औरनाश के शत्रु अपने पुत्रके समान शिक्षा के योग्यहै हे युधिष्ठिर उग्ररूपराजा सबका शत्रु होताहै और मृदुस्वभावको भी अपमान करते हैं इसकारण दोनोंको काम में लावे और घातकी इच्छा करने वाला घात करता हुआ भी चित्तरोचक बचन कहे और घात करके शोचता और रोताहुआ कृपा करके कहै कि यह मेरा अभीष्ट नहीं है जो तुम युद्ध में मेरे मनुष्यों से मारे गये और बारम्बार समझायेहुये यह मेरेलोग मेरे

हनेको नहीं करते हैं बड़े कष्टकी बात है क्योंकि जीवन की इच्छा करने ला ऐसा योद्धा मारने के अयोग्यहै युद्ध में मुख न मोड़ने वाले श्रेष्ठ रुष बहुत कम होते हैं और जिसके हाथसे यह युद्ध में मारागया है उसने री इच्छा के विरुद्ध किया इन वचनों को कहकर मारनेवालोंको एकान्त पूजन करे मारनेवाले और मृतक पुरुषों का अपराधी जो अप्रिय करे उस शा में मनुष्यों को स्वाधीन करना चाहता हुआ भुजा को पकड़कर रोदन रे इसप्रकार सब दशाओं में मीठे वचन बोले धर्म्मज्ञ और निर्भय राजा म-ष्योंका प्यारा होता है उसी में सब जीव विश्वास को करते हैं वह विश्वासी और राजसिंहासन पर वर्त्तमान राजा नियत समय तक पृथ्वी के भोगने ो समर्थ होता है इससे पृथ्वी के भोगने की इच्छा करनेवाला राजा छल हित होकर सब जीवोंको अपना विश्वास दिलावे और सब ओर से अच्छी रक्षा करे ४१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्मेशतोपरिद्वितीयोऽध्यायः १०२ ॥

एकसौतीनका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह पृथ्वीका राजा प्रारम्भ में मृदु कठिन और हापक्ष वाले राजा के साथ कैसे व्र सुग करे उसको मुझ से कहो भीष्मजी ोले कि हे युधिष्ठिर इस स शब्द और प्राचीन इतिहास को कहता हूं जिस ं बृहस्पति जी और इंद्रका प्र उत्तर है शत्रुके वीरोंको मारने वाले देवता-ओं के इन्द्रने हाथ जोड़कर बृहस्पतिजी से कहा कि हे ब्रह्मन् सावधान ाजा शत्रुओं के साथ किसप्रकार से वर्त्ताव करे मैं उनको बिना पीड़ादिये कैसे स्वाधीन करूं दोनों सेनाओं के परस्पर युद्ध होने से साधारण विजय होती है प्रतापवान् प्रकाशरूपालक्ष्मी मुझको किस कर्म्म के करने से त्याग नहीं करे यह सुनकर धर्म्म अर्थ कामके जाननेवाले बृहस्पतिजी ने उत्तर दिया कि शत्रुको भी युद्ध से स्वाधीन न करना चाहिये यह वह अज्ञानी लोग करते हैं जो क्रोधी और अधैर्य्यवान् हैं मारनेवाले राजाको शत्रु को सावधान करना अयोग्य है क्रोधके भय प्रसन्नता को आत्मा के बीच में अन्तर्गत करके विश्वासरहित विश्वासी के समान शत्रुका सेवन करे सदैव प्यारे वचन कहै और कोई अप्रिय बात न करे निरर्थक शत्रुता से अलग रहे और अप्रिय वचनों को ऐसे त्यागकरे जैसे कि बहेलिया पक्षियोंकीसी बो-लीबोलकर पक्षियों को आधीन करता है हे इन्द्र इसीप्रकार कर्म्मकर्त्ता राजा शत्रुओंको आधीन करके मारे क्योंकि शत्रुओं को परास्त करके सुखसे कोई नहीं सोता है दुष्टात्मा शत्रु ऐसे जागता रहता है जैसे उठीहुई संकर नाम

अग्निथोड़ी विजय के लिये युद्ध न करना चाहिये विश्वास देकर मनोरथसिद्ध करनेवालाराजा शत्रुको आधीन करके औरमन्त्र जानने वाले महात्मा मन्त्रियोंसे सलाह करके अपमान युक्त हृदय से अजय फिर समय पाकर राज्य के चलायमान होनेपर इस पर घातकरे और काम पूरे करनेवाले मनुष्यों के द्वारा सेनाको रक्षक बनावे आदि अन्त मध्य का जानने वाला शत्रुता को गुप्तरक्खे और सेनाकी संख्या का जानने वाला उसकी सेनाओं को विरुद्ध करे इसी प्रकार भेददान और विष आदि औषधियों से प्रयोजन को सिद्धकरे और शत्रुओं से सन्धिकरना न चाहै और बहुत काल तक मौके मौकेको देखे फिर शत्रुओं को मारे और कालकी इच्छा करनेवाला समय व्यतीत करे जिससे कि शत्रु बिश्वासयुक्त हों शत्रुओंको शीघ्र न मारे विजय में सुहृद देखने के योग्य है वह चित्तके काँटेको नहीं उखाड़ता है और बचनों से घावनहीं उत्पन्न करता वह समय पर बर्त्तमान होनेसे घात करता है हे देवेन्द्र मारने की इच्छा करने वाले पुरुषको शत्रुओं के विषय में फिर समय नहीं मिलता है जो समय के इच्छावान् पुरुषको समयही उल्लंघन करे फिर वह समय उस कर्म्म करने के इच्छावान् पुरुषको कठिनता से मिलता है साधुओं के किये हुये कर्म्म को अंगीकार करता पराक्रमको प्राप्त करे और वे समय मित्र को प्राप्त करे और प्राप्त होने पर पीड़ा न दे कर्म्मकर्त्ता राजा काम क्रोध और अहंकार को त्याग करे बारम्बार शत्रुओंके दोषों की इच्छाकरे और हेइन्द्र दण्डमें मृदुता सुस्थिरमल और अच्छेप्रकारसे नियत की हुई माया मूर्ख अज्ञानी को पीड़ा देती [illegible] चारों को दूर करके छलसे रहित बिचार न करता शत्रुओं के ऊपर घात करने को समर्थ होता है जो एक मंत्री गुप्त करनेके योग्य हो उसी से मन्त्र कहना योग्य है मंत्री लोग गुप्त बात को चित्त में रखते हैं और परस्पर में सुनाते भी हैं पहिला मंत्री राज्य के गुप्त बिचार में असमर्थ है यह बिचारकर फिर दूसरे मंत्रियों के साथ सलाह करे जो शत्रु दूर हैं उनपर पुरोहित के द्वारा ब्रह्मदण्ड का प्रयोग करावे और जो सन्मुख आवे उसपर चतुरंगिणी सेना चढ़ावे राजा जब तब समयपर उस उस शत्रुके ऊपर सामआदि युक्तियोंको वर्त्ते प्रथम भेद को फिर इसीप्रकार शांतता को भी संयुक्त करे समय पर बलवान् शत्रु का आज्ञावर्त्ती हो जाय सावधान कर्म्म में प्रवृत्त आपही उस असावधान के घात को करे प्रणाम दानमान समेत मीठे बचनों से वार्त्तालाप करता हुआ शत्रु का सेवन करे और उसको कभी शंकायुक्त न करे राजा शंकावान् शत्रुओं के स्थानों को सदैव त्याग करे अर्थात् उनपर विश्वास न करे वह अप्रतिष्ठित शत्रु इस संसार में सावधान रहते हैं हे देवताओं में श्रेष्ठ इससे अधिक उत्तम कोई

कठिन कर्म नहीं है जैसे कि व्याकुल चित्त पुरुषों का ऐश्वर्य्य होताहै इसी प्रकार नाना प्रकार के स्वभाव रखनेवालों का भी ऐश्वर्य्य कहाजाता है इस से युक्ति में प्रवृत्त होकर उद्योग करता है परंतु वह मित्र और शत्रु को विचार ले मनुष्य मृदु चित्त राजा का भी अपमान करते हैं और कठोर प्रकृतिवाले से व्याकुल और भयभीत होते हैं तुम कठोर प्रकृति मत हो और अत्यन्त मृदु भी हो अर्थात् कठोर मृदु दोनों समय समय पर होना योग्य है जैसे सब प्रकार से पूर्ण अमोघ जल के किनारे पर नगर को छिद्र के द्वारा सदैव पीड़ा है उसी प्रकार असावधान राजा को भी पीड़ा होती है हे इन्द्र एक साथ बहुत से शत्रुओं के सन्मुख युद्ध न करे साम दाम दण्ड भेद के द्वारा उनमें से हरएक को आधीन करके शेष बचे हुये शत्रुओं के साथ उत्तम युक्तिकरे और जो वह बुद्धिमान् राजा समर्थ नहीं होता है उस दशा में सब युक्तियों को प्रकट करे जब कि बड़ी सेना घोड़े हाथी रथ पैदलों से व्याप्त बहुत से यंत्रों की रखनेवाली प्रीतियुक्त छः अंग रखने वाली होय और जब शत्रु से अधिक अपनी बहुत प्रकार की वृद्धि माने तब प्रकट होकर वे विचारे चोरोंपर घात करे क्योंकि पराक्रमी शत्रुओंके ऊपर सदैव सामकरना प्रशंसाके योग्य नहीं है न मृदुता न सेना की चढ़ाई न खेती का नाश न विपस जल आदि को दूषित करना और फिर स्वभाव से विचारना भी नहीं अर्थात् कपट रूप दण्ड ही उत्तम है नाना प्रकार की माया और उस माया से परस्पर में दूसरे शत्रुओं की चढ़ाई कराना और छल को करे और सेना की चढ़ाई से अपनी बदनामी न करे कार्यकर्त्ता मनुष्यों के द्वारा कार्य में प्रसक्त चित्त पुरुषों को पुर और देशों में भ्रमण करावे उन पुरों में बुद्धि के अनुसार नियत की हुई नीतिको संयुक्त करते हुये राजा लोग उनमें जाकर वहां के सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों को विजय करते हैं हे इन्द्र राजा लोग अपने मन्त्रियोंको गुप्त धन देकर और प्रत्यक्ष भोगों को छीन कर और यह बात प्रसिद्ध करके कि मेरे दुष्ट मंत्री मुझ को छोड़ कर अपने दोषोंसे दूसरे राजाओं में संयुक्त हुये फिर उनको पुर और देशों में नियत करते हैं उसीप्रकार दूसरे शास्त्रज्ञ गुणी सुन्दर शिक्षित भाषा और प्रबन्ध रचना में प्रवीण पण्डितों के द्वारा शास्त्रकी रीतों के अनुसार मारनेवाले देवता को पुरों में स्थापन करे इन्द्र बोले कि हे ब्राह्मणों में उत्तम दुष्ट के कौन कौन चिह्न होते हैं और कैसे दुष्ट को जाने यह आप मुझसे वर्णन कीजिये बृहस्पतिजी बोले कि जो मनुष्य पीछे दोषों को कहता है और अच्छे गुणों में दोष लगाता है और दूसरेकी प्रशंसा में मौनहोकर मुख फेरता है मौन होनेपरभी उसको दुष्ट जाननाचाहिये जो उस मौनहोने में कोई कारणभी नहीं होता है बारम्बार श्वास लेना होठों का काटना शिरका हलाना और बारबार

मिलाप को करता है और शत्रु के समान बातें करता है और स्वीकार किये हुये कर्मको पीछे नहीं करता है और देखीहुईबात को नाहीं करता है और अलगहोकर कहता है तब जानना चाहिये कि अब यह अनुकूल नहीं है अधिकतर आसन शयन और सवारी में उस के भाव देखने के योग्य हैं मित्र के पीड़ामान् होने में पीड़ित होना और प्रीति करना यही मित्रका लक्षण है उस के विपरीत शत्रु जानने के योग्य है क्योंकि वह शत्रु के चिह्न हैं हे देवेन्द्र इन कहेहुये दुष्टपुरुषों का स्वभाव बड़ाबलवान् है इसे तुम जानो यह दुष्टों का विज्ञान तुम से कहा इससे तुम शास्त्र के तत्त्वार्थको समझकर बुद्धि के अनुसार कर्म करो भीष्मजी बोले कि शत्रु के नाश करने में प्रीति चित्त उस इन्द्र ने बृहस्पति जीके इस सत्य बचन को वैसेही किया और समय पर विजय के निमित्त जाकर शत्रुओंको परास्तकिया ५३॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरितृतीयोऽध्यायः १०३ ॥

एकसौचार का अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि मन्त्रियों के हाथ से पीड़ामान् खजाने और सेना से रहित धार्मिक राजा अर्थों को न पाकर सुख को चाहता कैसे कर्मकरे भीष्मजी बोले कि इसस्थानपर राजा क्षेमदर्शी का इतिहास तुझ से कहताहूं उस को समझो प्राचीन समय में सेना से रहित राजकुमार राजा क्षेमदर्शी कालकबृक्षीय मुनि के पास गया और कष्टरूप होकर राजाने उस से पूछा हे ब्रह्मदेव अर्थ में भागपाने योग्य बारम्बार उद्योग करनेवाला मुझसा पुरुष राज्य को न पाकर क्या करने के योग्य है चोरी दूसरे की शरण नीच आचार और मरण के सिवाय क्याकरे इस को आप मुझ से कहिये तुम से धर्मज्ञ और सर्वज्ञ पुरुषोंकी शरण में जाकर मनुष्य प्रीति और शोक को त्याग ज्ञानरूप धन को पाकर इच्छा से वैराग्य को पाता है और वैराग्यवान् होकर सुखपूर्वक वृद्धिकोपाता है जिनका सुख धन आदि के आधीनहै मैं उनको शोचताहूं स्वप्न के समान मेरे बहुत से अर्थ नष्ट होगये जो बड़े अर्थों को त्याग करते हैं वह बड़े कर्मकर्ता हैं हमसरीके भी असत्पुरुष उन के करने को समर्थ नहीं होते सो हे ब्राह्मण मुझ सरीके दुःखी पीड़ामान् लक्ष्मीरहित पुरुष को जो यहां दूसरासुख है उसको वर्णन करो इस बात को सुन कर कालकबृक्षीय मुनि ने राजा क्षेमदर्शी को उत्तर दिया कि तुम विज्ञानी को प्रथमही यह बुद्धि करनीचाहिये कि यह और मैं और जोकुछ मेरा है वह सब नाशवान् है तुम जो मानतेहो कि यह कुछ है सो कुछभी नहीं है इसको जानो कष्टरूप आपत्तिको प्राप्तहोकर ज्ञानीपुरुषइसप्रकार पीड़ामान् नहींहोता

है जो भूत है वहसब भविष्यतकाल में नहींहै इसप्रकार जाननेके योग्य बातों को जाननेवाले तुम अधर्मोंसे बचौगे प्राचीन राजाओंके समूहमें जो कुछ सम्पत्तिथी और जो पहलेही पहले राजाके पासहुई वह सब तेरी नहीं है उसको जानकर कौन दुःखीहोगा यह होकर नहीं होता न होकर होगा शोक में धन के लाने की सामर्थ्य नहीं है इस से कभी शोक न करे हे राजा अब तेरापिता और पितामहकहां हैं अब तुम उनको नहीं देखते न वह तुमको देखतेहैं तुमअपनी नष्टताको देखके उनको क्या शोचतेहो बुद्धिसे जानलो कि अवश्यमरेंगे और मैंतुम औरतुम्हारे मित्र और शत्रुसब अवश्यमरेंगे और सबका नाशहोगा जो बीस या तीस बर्ष की अवस्था के हैं वह सौ बर्षसे पहलेही मरजांयगे जो पुरुष बहुत से धनसे भी पृथक् न होसके ऐसीदशा में मेरा वहधन नहीं है इसप्रकार उस को मानकर अपने अभीष्टको करे और जो प्राप्त नहीं हुआ है उसको भी जाने कि यह मेरानहीं है और जो हाथ से जातारहा हो उसको भी अपना न जानो और जो प्रारब्ध को बलवान् मानते हैं उन को परिडतसमझो वही सत्पुरुषों के आश्रयस्थान हैं वहअन्न रहित भी जीते हैं और जो राज्य पर शासन करता है वह भी जीता है बुद्धि और उद्योग संयुक्त मनुष्य तेरे समान और तुझसे अधिक भी हैं वहतेरे समान शोच नहींकरतेहैं इसहेतु भी शोचकोत्यागो क्यातुमबुद्धि और उद्योगों के द्वारा इन मनुष्यों से उत्तम अथवा समानहो राजा बोले हे ब्राह्मण वह सब राज्य विना उद्योगके प्राप्तहुआ महाकालसे हरण कियाजाता है यह मैं शोचताहूं हेतपोधन जीविकाका हेतु प्राप्तहोनेसे मैं जीवन करता हुआ मानों नदी से हरहुये उस राज्यके इसशोकरूपी फलको देखताहूं मुनिबोले कि हे क्षेमदर्शी तुम उसीप्रकारके होजाओ जो भूत और भविष्यकेयथार्थको बिनाशोचे प्राप्तहोनेवाले अर्थोंको चाहते हैं और अप्राप्त अर्थोंको कभी नहीं चाहते हैं और प्रत्यक्षको अनुभव करते तुम अप्राप्तअर्थोंको मतशोचो हे राजा कौशिल जिसप्रकार प्राप्तहोनेवाले योग्य अर्थों से लोग प्रसन्न होते हैं उसीप्रकार तुम भी आनन्दित होतेहो क्या लक्ष्मी से रहित तुम अपने शुद्धस्वभाव से शोच नहींकरतेहो पूर्व्व कर्म्मों से अभागा दुर्बुद्धी सदैव ईश्वरकी निंदा करता है और मनोरथ पूर्ण करनेवाले पुरुषोंसे ईर्षा करता है और दूसरे धनवान् मनुष्योंकोभी नीच और नालायक मानता है इसीहेतुसे यह फिर दुःखमें प्रवृत्त होता है हेक्षेमदर्शी आयेको पुरुष माननेवाले मनुष्य ईर्षा और अहंकार में डूबते हैं सो तुम उनकेसमान ईर्षावान् मतहो जो लक्ष्मी दूसरे के पासहै और तेरेपास नहीं है उसको तुम क्षमा करो बुद्धिमान् पुरुष सदैव दूसरे के स्थान पर अर्थात् शत्रुओं के पास भी सत्यलक्ष्मीको भोगते हैं सत्यलक्ष्मी भी

शत्रुओं के ही पास से प्राप्त होती है योग धर्म्म के जानने वाले धर्मचारी पण्डित मनुष्य लक्ष्मी और पुत्रपौत्र आदि को दूर करते हैं दूसरी प्रकृति के मनुष्य कर्म और साधनकी इच्छा से नवीन कर्म्म के प्रारम्भ करनेवाले पुरुषको देखकर और उसको महाकष्टसे प्राप्तहोनेवाला मानकर त्यागकरते हैं सो तुम ज्ञानीरूप होके इच्छाकरने के अयोग्य दूसरे के आधीन वर्त्तमान नाशवान् अर्थोंको चाहतेहुये दुःखसे विलाप करतेहो ऐसी बुद्धिके चाहनेवाले तुम उनका त्यागकरो क्योंकि अनर्थ वस्तु अर्थरूपसे और अर्थ अनर्थरूप से देखनेमें आनेवाली हैं धनका नाश कितनेही मनुष्यके मनोरथ सिद्ध होनेके लिये होताहै दूसरा पुरुष उसको अत्यन्त आनन्द मानकर लक्ष्मीको चाहता है कोई लक्ष्मीसे क्रीड़ा करताहुआ दूसरे कल्याण को नहीं मानताहै इस प्रकार से उस इच्छावान्का प्रारम्भकर्म्म नष्टहोताहै और जो कष्टसाध्य प्रयोजन चित्तसे नाशको प्राप्तहोताहै तब अर्थसे रहित होकर प्रारम्भ करनेवालामनुष्य वैराग्य को पाता है कल्याणरूप कुलवान् कोई पुरुषधर्म्मको प्राप्तहोकर परलोकके सुखकोचाहते हैं वह लौकिक धर्म्म से वैराग्यपाते हैं और कोई मनुष्य धनकेलोभ में भरेहुये जीवन को त्यागकरतेहैं वह पुरुष धनके प्रयोजनके सिवाय जीवनको नहीं मानतेहैं उन्होंकी कृपणता और निर्बुद्धिताको देखो कि जीवनको नाशवान् भी जानकर मोहसेअर्थदृष्टी मेंपड़ेहुयेहैं नाशहोनेवाले धनसमूहके रखनेवाले मृत्युपानेवाले और अन्तमें वियोगहोने वाले संयोगके होनेपर कौनचित्तको लगावे हे राजा पुरुषधनको अथवा धनपुरुषको अवश्य त्यागकरता है इससेकौन बुद्धिमान् दुःखीहोगा दूसरों के भी सुहृद्जन और सबधन नष्टहोजातेहैं हेराजा बुद्धिसे मनुष्योंकी और अपनी आपत्तिकोजानो इन्द्रियोंको रोको चित्तको थांभो बचनोंको स्वाधीनकरो इन निर्बल शत्रुरूपके बल देखने ही मात्रको उत्पन्न होनेवाले अर्थोंमें निषेध करनेवाला वर्त्तमान नहीं है देशकाल से पृथक् अर्थोंके जानने से बड़ेज्ञान से तृप्त तुमसा शूर पुरुष पीछेशोच नहीं करता है चपलता रहित मृदुस्वभाव जितेन्द्री और श्रेष्ठ निश्चय पूर्वक ब्रह्मचर्य्य में प्रवृत्त थोड़ेधन को चाहता हुआ शोचनहीं करता तुम निर्विवेक और पापरूप निर्दयवृत्ती दोषों से भरेहुये नपुंसकों के योग्य कापाली वृत्ति के प्राप्तकरनेको योग्य नहींहो तू वाकजित् चित्तको जीतनेवाला सब जीवोंपर दयावान् महाबन में मूलफलों को भोजन करके अकेलाहोकर क्रीड़ाकर पंडित का यह कर्म्म ईषादण्ड अर्थात् हलकी लकड़ी के समान एकाकीवन में क्रीड़ाकरनेवाले दन्तीहाथीकेसमानहै वहवनमें ऐसे तृप्त नहींहोता जैसे कल्लोलवान् महाह्रदआपही स्थिरहोताहै मैं इसी दशावाले पुरुषके जीवनको सुखरूप देखताहूं हे राजा धनकी प्राप्ति न होने और दैव

के आधीनहोनेपरमंत्री से रहित राजा का आप क्या कल्याण मानतेहो ५३॥
इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्मे शतोपरिचतुर्थोऽध्यायः १०४॥

एकसौपांचका अध्याय॥

मुनिबोले कि हे क्षत्री तुम जो अपनी जाति में कुछ बीरता देखते हो उस नीतिको राज मिलने के लिये तुम से कहताहूं तुम उसके करनेमें समर्थहोकर कर्म्मभी करोगे उसको आद्योपान्त सुनो मैं कारण समेत कहूंगा जो इसकर्म्म को करोगे तो बड़े अर्थवाले राज्य और राजमंत्रों सहितमहालक्ष्मीको पाओगे जो आपको अभीष्ट होयतोकहूं राजा बोला कि हे भगवन् आपनीतिको कहिये मैं बीरतामें प्रवृत्तहूं अब आपके साथ यह मेरामिलाप सफलहो मुनि बोले कि कपट,काम,क्रोध,भयको त्याग हाथजोड़कर शत्रुओंकोभी सेवनकरो उनको बड़ी सावधानी और पवित्र कर्म्मों से आधीन करो सत्यप्रतिज्ञ राजा मासिकके द्वाराधन तुझको देनेके योग्य हैं तुम सबजीवों में विश्वासपात्र और उसकी भुजारूपहोगे तदनन्तर तुमबड़े उत्साह युक्त व्यसनों से रहित पवित्र सहायकों को पाओगे अपने शास्त्रका जानने वाला चित्तका जीतनेवाला जितेन्द्री राजा अपने को दुःखसे रहित करता है और प्रजा को प्रसन्न करता है उस धैर्य्यमान् श्रीमान् राजा से सत्कार पानेवाले तुम सबजीवों में विश्वासपात्र और उस राजा की बड़ी भुजारूप होकर सुहृद्गणों को प्राप्त होकर श्रेष्ठ मंत्रियों से सलाह करके बीच के राजाओं को शत्रुओं से प्रतिकूल करके वेलपत्र से बेलपत्र भेदनकरो अथवा दूसरोंसे सलाह करके इस राजा जनक की सेना को घात कराओ और जो सुन्दर स्वभाववाली अलभ्य स्त्री वस्त्र शय्या आसन सवारी और बड़ेमोल के स्थान पशुपक्षी रस गंधफल आदि हैं उन में उसको प्रवृत्तकरो जिससे कि शत्रु की नष्टता होय और जो निषेधित और अननिषेधितवस्तु हैं उनको नीतिज्ञ पुरुष शत्रु कोकभी न जनावे हे राजा तुम शत्रु के देश में क्रीड़ाकरो कातामृग और कागकी युक्तियों से शत्रुओं में मित्रभावको करो और पराक्रमियों के साथ उसका विरोधकरवाओ उद्यान और बड़ेमोल के शयन आसन आदि कोतैयारकराओ और भोगों के आनन्द के द्वारा इसके खजानों को खाली कराओ एक गोदानकरने की शिक्षाकरो और यज्ञके करने के लिये ब्राह्मणोंकापूजनकरो वह ब्राह्मण स्वस्तिवाचन आदि से तेरा उपकार करेंगे और उस शत्रुको भेड़ियेके समान भोगेंगे निस्सन्देह पुण्यशील मनुष्य परमगति कोपाताहै और स्वर्गमें पवित्रतमस्थानको पाताहै हे राजा कौशिल खजाने केखालीहोनेसे मनुष्य शत्रुके आधीन होताहै धर्मअधर्म दोनोंमें प्रवृत्त पुरुष

का खजाना जोकि फल और अर्थका मूलहै नाशको पाताहै शत्रुके सन्मुख श्रेष्ठ मनुष्य के कर्मको न कहो किन्तु इसके समक्ष में दैवकी प्रशंसाकरो निस्सन्देह दैवका माननेवाला अर्थात् उद्योग न करनेवाला शीघ्र नष्ट होताहै और शत्रुको विश्वजित यज्ञकराके धनसे खाली कराओ फिर पीड़ामानहोकर उसके महाबन को जानेपर तुम मनोरथ को सिद्ध करोगे योगधर्म्म जाननेवाले पवित्र किसी आचार्य्य को इसके सन्मुख करो जो वह त्यागकर संन्यास धर्म्म को प्राप्तकरे तो सबशत्रुओंकी मारनेवाली सिद्ध औषधियोंके योगसे उसके हाथी घोड़े और मनुष्यों को मारो यह बात महा कपटी छली बुद्धिमान् किसीदूसरे मनुष्य से करानी योग्य है २४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिपंचमोऽध्यायः १०५ ॥

एकसौछःका अध्याय ॥

राजा बोला कि हे ब्राह्मण मैं छलकपट से जीवननहीं चाहताहूं मैं अधर्म्मयुक्त बड़ेअर्थों कोभी नहीं चाहता हे भगवन् मैंने पहिलेही इसको त्याग किया है जिसकर्म्म से मुझमें कोई संदेह न करे और सबकीबृद्धिहोय उसी वृत्तिसे जीवनेकी इच्छाकरताहूं इसके विपरीत आपकोभी कहना अयोग्यहै मुनि बोले कि हे राजा तुम इसगुण से संयुक्तहो जैसा कि तुमकहतेहो हे सर्वदर्शी तुम स्वभाव और बुद्धिसे संयुक्तहो मैं तुमदोनों शत्रु मित्रोंके प्रयोजन में उद्योग करूंगा तेरे और उसके मिलापको ऐसाकरूंगा जोकि सदैव वर्त्तमान और अविनाशी होगा इसप्रकार के दयावान् कुलवान बहुत शास्त्रोंके जाननेवाले राजनीति के ज्ञाता को कौन राजा मन्त्री न करे और जोकि तुम राज्य से भ्रष्ट कियेगये और बड़े २ व्यसनों में प्रवृत्तहुये हे क्षत्री दयावान् तुम श्रेष्ठचलन से जीवन करना चाहतेहो हे तात वह सत्यवादी राजा जनक मेरेघर में आवैगा तब मैं उसको आज्ञा दूंगा वह निस्सन्देह उस को करेगा फिर मुनि ने राजा जनक को बुलाकर यह वचन कहा कि यहक्षत्री राजकुल में उत्पन्नहुआहै और इस के अन्तःकरण की बात मैं जानताहूंयह शरदऋतु के चन्द्रमा और आदर्श के समान शुद्धचित्तहै मैं इस में कोई पापनहीं देखताहूं सब प्रकार से मेरा परीक्षा कियाहुआ है इस के साथ तू सन्धिकर इसपर ऐसा विश्वासकर जैसा कि मुझमें करता है मन्त्री के विना राज्य में तीनदिन भी शासन करना या आज्ञादेना योग्य नहीं है हे राजा शूर या बुद्धिमान् मन्त्रीहोना चाहिये उन दोनों शूरता और बुद्धिसे दोनों लोकोंको देखो और राज्यके प्रयोजन को भी देखो लोकमें किसी स्थानपर धर्मात्माओंकी ऐसी अन्यगति नहीं है यह राजपुत्र महात्मा और सत्पुरुषों

के कर्म्मों को करता है तू इसको अपने साथ रखने को स्वीकारकर यह धर्म का सन्मुखकरनेवाला राजा तेरे शत्रुओं के बड़े समूहों को पकड़ेगा और जो यह तुम्हारे सन्मुख होकर युद्ध करे तो वह क्षत्री का मुख्यधर्म है बाप दादों के स्थानपर युद्ध में वर्त्तमान होकर तेरे विजयकरने की इच्छाकरे तो विजयरूपी व्रत के चाहने वाले तुमभी इससे युद्धकरो अपनी वृद्धि में प्रवृत्त होकर तुम मेरी आज्ञा से युद्ध के बिनाही उसको अपने आधीनकरो इस से तुम अयोग्य लोभको त्यागकरके धर्म्मको देखोगे शत्रुताकी इच्छा से अपना धर्म्म त्यागकरना योग्य नहीं है, हेतात सदैव जय और अजय नहींहोती इस कारण शत्रुलोग भोजन आदि के द्वारा आधीनकरनेके योग्य हैं अपनीजात में भी जय और अजयदृष्टि में आनेवाली है हे तात नाश करनेवाले पुरुषों को नाशकरनेवाले अन्य पुरुषोंसे भयहोता है यह सब बातें सुनकर राजा जनक ने उन क्षेमदर्शी ऋषि से विधिपूर्वक पूजन सत्कारकरके प्रतिष्ठापूर्वक यहवचन कहा कि बड़ाज्ञानी जैसा कहै औरबड़ा शास्त्री जैसा वर्णनकरे, और वृद्धि चाहनेवाला जो कहै, वही दोनोंलोकों का देनेवाला वचन है मुझको जो २ आपकी आज्ञा हुई हैं वह सब मैं करूंगा इसी में कल्याण है इसमें विचारना मेरा अयोग्य है तदनन्तर राजा जनक ने कौशिल राजा को बुलाकर यह वचन कहा कि मैंने धर्म्म और नीति से संसार को विजय किया परन्तु हे राजाओं में उत्तम मैं तेरेनिजगुणों से पराजयहुआ आप अपना अपमान न करके विजय कियेहुये के समान विराजमानरहो मैं तुम्हारी बुद्धिका अपमान नहींकरताहूं और न तुम्हारे पराक्रमका अपमान करताहूं और यहभी नहीं मानताहूं कि मैं विजयकरता हूं आपविजयी होनेवालों के समान कामकरो हे राजा बुद्धि के अनुसार अच्छे प्रकार पूजेहुये तुम मेरेघरको भी चलो तब वह परस्पर में विश्वासी दोनोंराजा ऋषिका पूजन करके घर को गये तदनन्तर राजाजनक ने कौशलराजा को शीघ्रता से अपनी राजधानी में लाके उसपूजन योग्य को पाद्य, अर्घ, मधुपर्कसे पूजा और इसकी प्रसन्नता के लिये अपनी पुत्री से विवाहकर के उस के यौतुक में अनेक रत्नआदि दासीदासादिये यह राजाओं का उत्तम धर्म्म है और जय पराजय सदैव नहींहोती २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेपुनःकालकवृक्षीयनाम शतोपरिषष्ठोऽध्यायः १०६ ॥

एकसौसातका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे परमतप तुमने ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्रों के

धर्म्म चलन और धन उद्योग, जीविका के हेतु और फलोंको कहा और राजाओं के धन खजाने और खजानेकी वृद्धि विजयमंत्रियों के गुणवृत्ति और नौकरोंकी वृद्धिको कहा छःगुणों कागुण इसी प्रकार सेनावृत्ति दुष्टका ज्ञान और सत्पुरुषोंका लक्षण कहा और समान न्यून अधिक पुरुषोंका जो ठीक लक्षणहै और अच्छी वृद्धि पानेवाले राजाको मध्यम पुरुषकी प्रसन्नताके लिये जैसे वर्त्तना चाहिये वह भी वर्णन किया और शास्त्रके अनुसार उपदेशरूप साधारण युक्तिसे राज्यसेभ्रष्टहुयेका पोषण और अजीविकाको धर्मपूर्वक वर्णन किया और विजय की इच्छा करनेवाले राजा के चलन को भी वर्णन किया हे ज्ञानियों में उत्तम इसीप्रकार समूहों की आजीविका को सुना चाहताहूं और हे पितामह जैसे गण समूह अच्छीवृद्धि पाते हैं और विरुद्धनहींकरते और शत्रुको विजयकरना चाहते हैं और मित्रोंको प्राप्त किया चाहते हैं मैं उन समूहों की नष्टता को देखताहूं जो विरोधताका मूल रखनेवाली है और बहुत मनुष्यों से मंत्रका छिपाना कठिन है उसको मैं पूर्णताकेसाथ सुना चाहताहूं जिसरीतिसे वह विरोधी न हों वह आप कहनेको योग्य हैं भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर यह दोनों लोभ और क्रोध उनसमूह व घराने और राजाओंकी शत्रुताको बढ़ानेवाले हैं अकेलाराजा लोभकोकरताहै तदनन्तर समूह क्रोधको करताहै वह दोनों भ्रष्टता से नाशको प्राप्तहोते हैं वह दूतों के द्वारा अथवा मंत्रबलसे पृथ्वीका भेजदेनेसे और साममंत्रके तोड़ने से भ्रष्टता और नाशसे और भयकारी युक्तियों से परस्पर पीड़ा देते हैं मिलकर जीविकाका निमित्त प्राप्त करनेवाले धनके लेने से शत्रुहोजाते हैं विमन और शत्रुहोकर वह सब भयसे शत्रुके आधीन होते हैं और शत्रुओंके समूहों में नाशपाते हैं और विरोधी शत्रुओं से सुगमतासे विजय होते हैं इस कारण समूहवाले लोग सदैव एकतासे उद्योगकरें क्योंकि मिलेहुये समूह के पराक्रम और उद्योगों से सबमनोरथ सिद्ध होते हैं और उनमिलकर जीविका करनेवालों से दूसरेदेश के मनुष्य मित्रता करते हैं ज्ञानीपुरुष परस्पर में प्रीतिरखनेवालों की प्रशंसाकरते हैं और व्यवहार आदिमें एकमतवाला समूह आनन्दपूर्वक वृद्धिको पाता है शास्त्र के अनुसार धर्म्मिष्ठ व्यवहारों को नियत करके बुद्धिके अनुकूल उनको देखने से सब समूहबड़ी उत्तम वृद्धिपाते हैं बेटे और भाइयोंको सासना और शिक्षा करते और शिक्षापानेवालों को पोषण आदि करतेहुये सदैव उत्तम वृद्धिको प्राप्तकरते हैं हे महाबाहो दूत और सलाह के विषयका विचार करते खजानेकी वृद्धिमें सदैव प्रवृत्तहोनेवाले समूहको सब ओरसे वृद्धिहोती है हे राजाकार्य्य में सदैव प्रसक्त समूह की बड़े उत्साहवाले स्वकर्म्मनिष्ठ उद्योगी बुद्धिमान् लोग प्रशंसा करते हैं और

शास्त्रमें प्रवीण शस्त्रविद्याके ज्ञाता महाधनी भी बड़ाई करते हैं और क्रोध, विरोध, भय, दण्ड, पीड़ा, घात इत्यादि बातें समूहको शीघ्रही शत्रुके आधीन करती हैं इस निमित्त उक्तबातों से रहित समूह प्रशंसा पूर्वक मानने के योग्य है और संसार के बड़े २ प्रबन्ध और कार्य्य इनसमूहों के आधीन हैं सो हे युधिष्ठिर जो गुप्त विचार में श्रेष्ठहैं उनपर दूतोंकोनियत करना चाहिये सब समूहमंत्र के सुनने के योग्यनहीं हैं इन उत्तम समूहों से मिलकर परस्परमें समूहका अभीष्ट करना चाहिये पृथक् वा विरोधी वा भिन्न २ होनेवाले समूहकाउनके विपरीत करना चाहिये और परस्परमें विरोधी केवल अपनीही सामर्थ्यसे कर्म्म करनेवाले समूहों के धनआदि अर्थ नाशहोजातेहैं और अनर्थ प्राप्तहोजाते हैं पण्डितलोग उनको शीघ्रही धमकाकर आज्ञा करने के योग्य हैं कुलोंमें उत्पन्न होनेवाले उपद्रव कुलों के बृद्धों से दूर नहीं किये जायँ तो गोत्रभरेका नाशकरते हैं वह दोष समूहमें विरोधका कारण है जो समूहके सबलोग परस्परमें एकसीबातचीत नहींकरते यहभी हानिका कारण है फिर वह समूह जो धन बुद्धि और युक्तिबलसे कर्म्मकरें उसदशा में विरोध के कारण या अपनी अज्ञानतासे वह समूह शत्रुओं के हाथसे मारेजाते हैं इस हेतुसे समूहों के मिलापको रक्षाका बड़ाआश्रय कहते हैं ३२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिसप्तमोऽध्यायः १०७ ॥

एकसौ आठका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे भरतवंशी यह धर्म्ममार्ग्ग बड़ा और बड़ी २ शाखाओंका रखनेवाला है इस देश में धर्म्मों के मध्य कौनकर्म बड़ी धैर्यता से मानने के योग्य है और आपने कौनसा कर्म्म बड़ा माना है उसी को में भी कर के इस लोक परलोक दोनों में धर्म्म प्राप्त करूं भीष्मजी बोले कि माता पिता और गुरुओंका पूजन मेरेचित्तसे बड़ा प्रिय है इस में प्रवृत्तहोकर मनुष्य इसलोकमें यशी प्रतापीहोकर उत्तमलोकों को प्राप्तकरता है हे तात युधिष्ठिर अच्छे पूजित महात्मालोग जिसबात की आज्ञादें वहचाहै धर्म्म अधर्म्म या विपरीतभीहो करना योग्यहै उनकी आज्ञाबिना कोई धर्म्म न करे वहलोग जिसबातकी आज्ञा करें वही निश्चयधर्म्महै यह माता पिता गुरुतीनों लोकरूप आश्रमरूप वेदरूप और तीनों अग्निरूपहैं निश्चयकर के पितातो गार्हस्पत्य अग्निहैं और माता दक्षिण अग्नि और आहवनीनाम अग्निगुरुहैं यह तीनों अग्नियोंका समूह बड़ाहै इन तीनों में भ्रान्ति न करता पुरुषतीनोंलोकों को तरता है अर्थात् पिताके पूजनसे इस लोक को और माताके पूजनसे परलोकको और नियम पूर्वक गुरुके पूजनसे ब्रह्म

लोकको प्राप्तहोताहै सो हे युधिष्ठिर इन तीनों के साथ अच्छे प्रकार वर्त्ताव
कर इससे तीनों लोकमें यशपावेगा और महाफलवाले धर्म्मको भोगेगा इससे
भोजन और कर्म्मों में अधिकता न करेगा और न दोष लगावेगा तो तेरा
बड़ा कल्याण होगा सदैव सेवा करनाही बड़ा उत्तम कर्म्महै हे तात तुम की-
र्त्तिवान् पुण्यवान् और यशीहोकर उत्तम लोकों को पाओगे जिसके यह
तीनों पूजितहोंगे उसका तीनों लोकोंमें आदरहोगा और जिसके यह तीनों
पूजितनहीं हैं उसके सब कर्म्म निष्फलहैं हे परंतप जिसके यह तीनोंगुरू
सदैव नहीं पूजेजातेहैं उसका न यह लोकहै न परलोकहै और इस लोक
परलोक दोनों में इसका यशनहीं प्रकाशपावेगा और न परलोकमें इसको
दूसरा कल्याणहै मैंने अन्य सब कर्म्म करके इन तीनों को अधिककिया तब
मेरा सौगुने से हजारगुना होगया इसी कारण हे युधिष्ठिर मुझे तीनों तीनों
लोक प्रकाशितहैं उत्तम आचार्य्य दश वेदपाठियों से श्रेष्ठहै और उपाध्याय
दश आचार्य्योंसे अधिकहै और पितादशउपाध्यायों से अधिकहै और माता
दश पिता और पृथ्वी और मुझसे भी वृद्धतामें वा बड़ाई में अधिक होती है
माताके समान गुरूनहींहै परन्तु पिता से गुरू बड़ाहै यह मेरा मतहै क्योंकि
माता पिता जन्म दिलाते और देहको उत्पन्न करते हैं और आचार्य्यसे होने
वाला जो उत्तम जन्म है वह दिव्य और अजरअमर है उपकार करनेवाले
माता पिता गुरू यह तीनों सदैव अवध्यहैं अर्थात् मारने योग्य नहींहैं उस
को करके वह दोषी नहीं होता और न वह इसको दोष लगातेहैं देवताओं
ने धर्म्मके निमित्त महर्षियों के साथ उद्योग करनेवाले उन पुरुषोंको जाना
है जो आचार्य्य वेदोंको कहता अमृतको देता सत्कर्म्म से कृपाकरता है उसी
को माता पिता अपने और उसके लोकको जानते हैं इस हेतुसे शत्रुतासे
रहित जो विद्यावान् होकर कर्म्म और मनसे गुरूकी प्रतिष्ठा नहीं करते हैं
वह बिरोधतासे नाशको प्राप्तहोते हैं उनका पापभ्रूणहत्यासे भी अधिक है
संसारमें उनसे बिशेष दूसरा पापकर्त्ता नहींहै क्योंकि जैसे वह गुरूसे बृद्धि
पाने के योग्य है उसीप्रकार गुरूभी उनकी ओर से पूजन के योग्य है इस
हेतुसे वह गुरू उस प्राचीन धर्म्म चाहनेवाले पुरुषको युक्तिसे पूजन अर्चन
और भागदेनेयोग्य हैं जिसकर्म्मसे पिताको प्रसन्न करता है उससे पृथ्वी पू-
जितहोती है और जिसकर्म्म से उपाध्यायको प्रसन्न करताहै उससे वेदपूजित
होते हैं इसीकारण गुरू माता पिता से भी अधिक पूजनीय है गुरुओं के पू-
जित होनेसे पितर समेत ऋषि और देवताभी प्रसन्न होते हैं इससे सर्वथा
गुरू पूजनीय हैं किसी चलनसे भी गुरू अपमान के योग्य नहीं है जैसा
गुरू मोक्षके पदपर पहुंचानेवाला है वैसा माता पिता से नहीं होसक्ता यह

ज्ञानियों का मत है वह सब अपमान के योग्य नहीं है उनके कर्म्मों में दोष नहीं लगावे महर्षियों समेत देवताओंने गुरुओंके सत्कारको उत्तमकहाहै जो पुरुषमन और कर्म्म से उपाध्याय पिता और माता से शत्रुताकरते हैं उनका पाप भ्रूणहत्या से अधिकहै लोकमें इससे अधिक कोई पाप कर्त्ता नहीं है जो पालाहुआ बड़ा होनेवाला अपनी योनिसे उत्पन्न हुआ पुत्र माता पिता का पोषण नहीं करता है वह पाप निश्चय करके भ्रूणहत्या से भी अधिक है संसार में इससे भी अधिक पाप करनेवाला दूसरा नहीं है मित्रसे शत्रुता करनेवाला उपकारका भूलनेवाला स्त्री को मारनेवाला गुरुहन्ता इनचारों के प्रायश्चित्तों को हम नहीं सुनते हैं जो इस संसार में पुरुष से करने योग्य है वह सब विधिपूर्वक कहा यह सब धर्म्मों का सार तुझसे कहा इससे अधिक कल्याणकारी दूसरा नहीं है ३३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्म्मेशतोपरिअष्टमोऽध्यायः १०८ ॥

एकसौनवका अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हेपितामह धर्म्म में प्रवृत्त होनेको इच्छावान् पुरुष किस प्रकार से कर्म्म करे यह आप मुझ से वर्णन कीजिये हे राजन् सत्य और मिथ्या यह दोनों संसारको वृत्तरूपघेरेहुये हैं धर्म्मको निश्चय करनेवाला पुरुष दोनों में से किसको करे सत्य क्या है और मिथ्याक्या है और प्राचीनधर्म क्या है किससमय सत्य बोले और किससमय मिथ्याबोलना चाहिये भीष्मजी बोले कि सत्य वचन उत्तम है सत्य से अधिक कुछनहीं है हे युधिष्ठिर लोकों की जो बुद्धि है उस को कहताहूं जहां मिथ्यासत्य के समानहो और सत्यमिथ्या के समान हो वहां सत्य बोलना उचित नहीं किन्तु मिथ्याही बोलना योग्य है ऐसा अज्ञानी बालक जो सत्य और असत्य के मूलको नहीं जानता वह नष्टताको प्राप्तहोता है जहां सत्यता नष्टपने से मिली हुई है वहां सत्य और मिथ्या को अच्छे प्रकार निश्चयकर के धर्म्म का जाननेवाला होता है और नीचअज्ञानी व हिंसाकरनेवाला पुरुषभी बहुतबड़े पुण्य को प्राप्तकरता है जैसे बहेलिये ने पक्षियों की प्यारी बोली बोलकर पक्षियों के घातसे स्वर्ग कोपाया क्या आश्चर्य्य है कि जो अज्ञानी धर्म्म का न जाननेवाला धर्म्म की इच्छा करनेवाला भी बड़े पुण्यका भागीहोजाय जैसे कि श्रीगंगाजी पर कौशिक ने मोक्षप्राप्तकी थी अर्थात् कौशिक उलूने गङ्गाजीपै सर्पों के हजारों अंडों को तोड़कर पुण्य प्राप्तकियाथा यह तुम्हारा प्रश्न उस प्रकार का है जिस में धर्म्म बड़ा और लम्बाहै जिसकी संख्या करनी कठिन है सो इस धर्म्म लक्षण में निश्चय करते हैं

कि वह किसरीति से होता है जीवों की वृद्धिके लिये धर्म्म का वर्णनकिया जो कर्मजीवोंकी वृद्धि से संयुक्त है वह निश्चय धर्म्महीहै प्रजाकी रक्षा से धर्म्म कियागया और धर्मसे प्रजारक्षित है जो प्रजाकी रक्षा में प्रवृत्तहोय वह भी निश्चय करके धर्म्म है किसी ने कहा कि सब धर्म्म वेदोक्त हैं दूसरे मनुष्यों ने कहा कि नहीं हम इसकी निन्दा नहीं करते क्योंकि सब नहीं किया जाता है अर्थात् देशकाल के अनुसार कर्म्म कियाजाता है अन्याय की रीति से हरलेने के इच्छा रखनेवाले जो पुरुष किसी के धनको चाहते हैं उस धनको उन्हीं से न कहना चाहिये यह भी निस्सन्देह धर्म्म है जहां मौनतासे जानबचै वहां किसी प्रकार से भी वार्त्तालाप न करे बोलनेके स्थानपर न बोलने से भी अवश्य शंकाकरते हैं वहां मिथ्याबोलना सत्यसे भी अच्छा है जहां शपथ के खाने से पापों के सम्बन्ध से छूटता है यही निर्धार कियागया वहां सम्भवहोय तो किसी दशामेंभी उनपापियोंको धन न देनाचाहिये क्योंकि पापियोंको दियाहुआ धन दाताको भी पीड़ामान करता है मुद्दाअलेह के पकड़नेसे अपना रुपया लेनेकी इच्छा करनेवाले मुद्दईका मुकद्दमह झूठाहोनेके लिये गवाहलोग ऐसे स्थानपर जो वार्त्तालापकरैं वहां कहने के योग्य बचन को न कहने से वह सब मिथ्या वादी हैं प्राण त्याग और विवाह में मिथ्याबोलना योग्य है अधर्म्म के कारण दूसरोंकी सिद्धी को चाहता दूसरोंकेधनकी रक्षाकेलिये नीचधर्म्म भक्तहोता है प्रतिज्ञाकरके देना चाहिये जो न देतो धनका पचानेवाला दासहो जो कोई धर्म्मका साधनकरनेवाला धर्म्मरूप नियमसे भ्रष्ट होजाय उसमार्ग में वह शरणागत पुरुषभी दण्ड केद्वारा मारने के योग्य है वह दिव्यधर्म्म से भ्रष्ट आसुरीधर्म्म में वर्त्तमानहुआ वह छली अपने धर्म्म को छोड़कर उस आसुरी धर्म्म से जीतारहना चाहता है वह छल से जीवनेवाला पापी सब रीतोंसे मारने के योग्य है सब पापियोंको धनही अच्छा लगता है निश्चय कर के धर्म्मजरा अच्छा नहीं लगता है वह क्षमा के अयोग्य अधर्म्मी मनुष्य देवता और मनुष्यों से पृथक् कियेहुये प्रेतके समानहैं यज्ञ और तपसेरहित पुरुषों से तेरी मित्रता मतहो क्यों कि उनके संगसे धनके नाश के द्वारा बड़ा दुःख होताहै और जीवन में सन्देह होता है यह धर्म्म तुझको मानना चाहिये इसप्रकार बड़ी युक्तिसे उसछली को समझाना चाहिये परंतु पापियोंका किसी धर्म्म में निश्चय नहीं है यह जानो जो पुरुष उसदशावाले पुरुषको मारे वह पापमें संयुक्त नहीं होता है क्योंकि अपनेही कर्म्मसे वह मृतक माराजाताहै जोकोई मनुष्य उनघातबुद्धी मनुष्योंके विषय में इसनियम को करे कि मैं उनकोमारूंगा वहश्रेष्ठ है जैसे कि काग और गिद्धहैं वैसेही वहलोग हैं जोकि कपटसे

अपने दिनपूरे करतेहैं वह देहत्यागने के पीछे इनकाग आदिकी योनियों में उत्पन्नहोतेहैं जो मनुष्य जिसमें जैसा वर्त्तावकरताहै उसमें उसीप्रकार वर्त्ताव करना चाहिये यहीधर्म्म है छलीछलसे ही पीड़ा देनेयोग्य है और नेकचलन नेकचलनसे पीड़ादियाजाताहै २९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिनवमोऽध्यायः ९ ॥

एकसौ दशवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जहां तहां उन २ कारणों से जीवोंके दुःखी होने पर जिस प्रकार से उन आपत्तियां से पारहोय उसको आपकृपाकरके कहिये भीष्मजी बोले कि जो जितेन्द्रिय ब्राह्मण शास्त्रोक्त आश्रमों में बुद्धि के अनुसार निवास करते हैं वह आपत्तियोंसे पारहोते हैं कपटयुक्त कर्म्मनहीं करते हैं और जिन की बुद्धि की वृत्ति नियमों में लगीहै और इंद्रियों को स्वाधीन करते हैं वह आपत्तियों को तरते हैं और जिननिन्दा पानेवालों ने निन्दानहीं की और जिन दुःख पाने वालोंने किसी को दुःख नहीं दिया और दानकरते हैं और किसी से दान नहीं लिया वह आपत्तियों से पार होते हैं और जो सदैव अतिथियों को घरमें निवासकराते हैं और दूसरे के गुणों में दोष नहीं लगाते हैं और सदैव वेदके पाठका अभ्यासकरते हैं वह आपत्तियोंसे पारहोते हैं और जो धर्म्म में कुशल अपने माता पिताके पूजन में प्रवृत्त रहते हैं और दिवसका सोना त्यागकरते हैं वह आपत्तियों से पार होतेहैं और जो पुरुष मनवचन कर्मसे पापको नहीं करते हैं और जीवोंको नहीं सताते हैं वह विपत्तिसे पारहोते हैं और जो राजारजोगुण से संयुक्त हो लोभसे किसीके धनको नहीं हरते हैं और इंद्रियों की चारों ओरसे रक्षा करतेहैं वह आपत्तियों से निवृत्त होते हैं और जो पुरुष अग्निहोत्र में प्रवृत्त होकर केवल ऋतुकाल मेंही अपनी धर्म्मपत्नी में विषयादि करते हैं वह आपत्तियोंसे पारहोते हैं और जो शूर मृत्युके भयको त्यागकर युद्धमें धर्म पूर्वक विजय चाहते हैं वह आपत्तियों से पार होतेहैं और जो पुरुष प्राणत्यागहोने पर भी सत्यवचनों को कहते हैं और जीवों के प्राणरूप हैं वह आपत्तियोंको तरते हैं और जिनके कर्म्म सत्यप्रयोजन वाले हैं और सत्यवक्ताहैं और जिन के धनआदि अच्छेप्रकार सुरक्षितहैं वह आपत्तियों को तरते हैं इसलोकमें जो वेदपाठी ब्राह्मण अनध्यायों में वेद के पाठों को नहीं करते हैं और तपोनिष्ठहैं वह महातपाने वाली आपत्तियोंसे पारहोतेहैं और जो ब्रह्मज्ञान विद्या और वेद व्रतमें परायण कौमार ब्रह्मचर्य्य व्रतको तपते हैं वह विपत्तियों से छूटते हैं और जो शान्त रजोगुण और शान्त तमोगुण और महात्मा सतो-

गुण में प्रवृत्त हैं वह आपत्तियों को तरते हैं और जिनसे कोई भयनहीं करता और न वह किसीका भयकरते हैं और यहलोक जिनका आत्मारूप है वह बिपत्तियोंसे पारहोते हैं और जो पुरुषोत्तम सन्त दूसरेकी लक्ष्मीसे दुःखीनहीं होते हैं और बिषयादि भोगोंको त्यागेहुये हैं वह आपत्तियोंसे पारहोतेहैंऔर जो श्रद्धावान् शान्तपुरुष सब देवताओंको नमस्कार करते हैं और सबधर्मों को सुनते हैं वह कष्टसे तरनेके योग्य स्थानों को तरते हैं जो अपनीप्रतिष्ठाको नहींचाहते हैं और दूसरोंकी प्रतिष्ठा करते हैं और प्रतिष्ठाके योग्य पुरुषोंको नमस्कार करतेहैं वह कष्ट साध्यस्थानों से तरते हैं जो सन्तानके चाहनेवाले पुरुष अत्यन्त पवित्र चित्तसे तिथि तिथि में श्राद्धोंको करते हैं वहदुस्तर स्थानों को तरते हैं औरजो क्रोधको रोकते हैं और क्रोधयुक्त पुरुषोंको शान्त करते हैं और जीवोंपर क्रोधनहीं करते हैं वह दुस्तर स्थानोंसे पारहोते हैं और इस लोकमें जो मनुष्य जन्मसे लेकर मरणपर्य्यन्त मांस और मदिरा को त्यागकरते हैं वह कठिन स्थानोंको तरते हैं और जिन्होंका भोजन शरीर की यात्राके लिये और विषय सन्तानके लिये और वचन सत्य कहने के निमित्तहैं वह दुस्तर स्थानों से पारहोते हैं और जो भक्तजन सब जीवोंके ईश्वर जगत्के उत्पत्ति स्थान अविनाशी नारायणदेव का ध्यान करते हैं वह दुस्तरस्थानों से पारहोतेहैं और यह कमलरूप रक्तनेत्र पीताम्बरधारी महाबाहु भाईबन्धुसम्बन्धियों का शुभचिन्तक ऐसा अविनाशी है वह प्रभु अचिन्त्य आत्मा पुरुषोत्तम गोविन्दजी इच्छाकरके इनसब लोकोंको चर्मके समान लपेटे वही बैकुण्ठरूप दुर्द्धर्ष पुरुषोत्तम आपके और अर्जुनके प्यारे हितमें वर्त्तमान हैंजो भक्त इस लोकमें इसनारायण हरिकी शरण होतेहैं वह इसलोकमें दुस्तर स्थानों को निस्संदेह तरतेहैं इसमें विचारना नहीं और जो पुरुष इस दुर्गाति तरणको वेदपाठों से पढ़ते पढ़ाते सुनते सुनातेहैं वह दुस्तरस्थानों से पारहोते हैं हे अनघ मैंने करने के योग्य कर्म्मोंका आशय तुमसे कहा जिसके द्वारा मनुष्य इस लोकमें महादुस्तर स्थानोंसे पारहोते हैं २९॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिदशमोऽध्यायः ११०॥

एकसौग्यारहवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह असौम्य पुरुष अर्थात् अज्ञानी पुरुष सौम्यरूप और सौम्यपुरुष असौम्यरूप दृष्टआने वाले हैं हम इसप्रकार के पुरुषोंको कैसे जानें भीष्मजी बोले कि यहां मैं इसप्राचीन इतिहास को कहता हूं जिसमें व्याघ्र और शृगाल का प्रश्नोत्तर है उसको सुनो प्राचीन समयमें पूरिकानामपुरी में श्रीमान् पौरकनाम राजाहुआ जोकि दूसरे की हिंसामें

कठोर चित्त निर्दयी नीच पुरुष था उसने मरनेके पीछेमनके विरुद्ध गतिको पाया अर्थात् पूर्व जन्मके दोषसे उसने शृगाल अर्थात् स्यारकी योनि को पाया फिर उसने पिछले जन्म के ऐश्वर्य्य को स्मरण करके बड़े वैराग्यको पाया दूसरे जीवोंके लायेहुये मांसको भी नहीं खाताथा सबजीवोंमें हिंसा-रहित सत्यवक्ता महादृढ़ व्रतरखनेवालाथा उसने समय के अनुसार पृथ्वी पर गिरेपड़े हुये फलोंसे निर्वाह किया श्मशान भूमि में उसस्यारको रहना स्वीकार हुआ उसने जन्मभूमि की प्रीतिसे दूसरे निवासस्थान को पसन्द नहीं किया उसकी पवित्रताको न सहने वाले उसकी जातिवालों ने प्यारे वचन कहकहकर उसकी बुद्धिको विपरीत करना चाहा और कहाकि रौद्रपि-तृवन में निवास करके तू पवित्रता को चाहता है यह तेरी विपरीत बुद्धिहै जब कि तुम मांसभक्षी होतो हमारे समान होजाओ हम तुमको भोजनदेंगे पवित्रताको दूरकरके जो तेरा भोजन है वही खा उससावधानने उनके वचन को सुनकर मीठे और ब्यौरेवार कारणों समेत मृदुता पूर्वक उत्तरदिया कि मेरी उत्पत्तियां अप्रमाण हैं अर्थात् इन्द्रियों की मर्याद से रहित हैं और कुल कानाम स्वभावसे प्रसिद्ध होताहै इससे मैं उनकर्म्मोंको चाहता हूं जिनसे कि यशकी प्रसिद्धी होती है जो मेरा निवास श्मशान में है मेरीसमाधि को सुनो कि आत्मा कर्म्मको सफल करता है और आश्रम धर्मका कारण नहीं है जो पुरुष आश्रम में द्विजको मारे वह क्या पातक नहीं है अथवा अन्य आ-श्रमी को गोदानकरे वह दियाहुआ क्या निरर्थक होता है आपअपने अर्थलोभ से केवल मांसखाने में मन लगाये हुये हैं परिणाम में तीनदोष हैं अज्ञानीजीव उसको नहीं देखते हैं इसकारण असंतोषतासे निन्दित कीहुई और धर्म्म के नाशसे दूषित इसलोक और परलोकमें बे मर्य्याद आजीवि-काको स्वीकार नहीं करताहूं प्रसिद्ध पराक्रमी शार्दूलने उसे पवित्र और पंडितजान के अपने योग्य पूजितकराके आप उसको प्रधानता में नियत करना चाहा और बोला हे ज्ञानी तुम प्रसिद्ध चलनहो मेरेसाथ राज्यको पाओ इच्छा भोजन और बड़े सामानोंको भोगो हमक्रोध प्रकृति प्रसिद्धहैं आपको जतलाते हैं तुम मृदुता के साथ अपने हित और कल्याणों को चाहोगे यह सुनकर स्यार ने बड़ी नम्रता से शार्दूल के वचन की प्र-शंसा करके यह वचन कहा कि मेरेविषय में जो आपका वचन है वह आपसरीके मृगराज के योग्यहै जो आप धर्म्म अर्थ में कुशल पवित्र सहा-यकों को तलाश करते हो हे वीर मन्त्री न रखने वाले अथवा देहके शत्रुदुष्ट मन्त्रीवाले राजासे राज्यकरना असंभव है प्रीति रखनेवाले नीतिज्ञपरस्पर शुभचिन्तक सहायता करनेवाले विजयकी इच्छा रखने वाले चपलचित्त

नम्रज्ञानी और मनका अभीष्ट करने में प्रवृत्त साहसी सहायकों का ऐसा पूजनकरो जैसे कि आचार्य्योंका और वृद्धोंका होताहै इससे हे मृगेंद्र सन्तोष के सिवाय मुझे दूसरीबात स्वीकार नहींहै मैं सुख भोग और उनसे सम्बन्ध रखनेवाले ऐश्वर्य्यको नहीं चाहताहूं जो मेरास्वभाव तेरेनौकरों से मेल न खायगा वह मेरे विषयमें बुराई करनेवाले होंगे और तुमको मेरा शत्रुबना देंगे दूसरे तेजस्वियोंका भी मिलाप प्रशंसाके योग्य नहींहै मैं आत्मावान् श्रेष्ठ महाभाग पापकर्ममें भी सहनशील दूरदर्शी उन्नताकांक्षी बड़ादानी महाबली कर्मकर्त्ता और प्रारब्धवान् सफल कर्म का करनेवाला हूं मैं थोड़े सामानसेभी संतोष करसक्ताहूं और दुःख रूप जीविका मैंने प्राप्तनहीं की और सेवामेंभी अज्ञानीहूं अपनी इच्छा से वनचारीहूं राजाके सन्मुख निन्दा से उत्पन्न होनेवाले सब दोष उसके शरणवालोंको प्राप्त होतेहैं और वनवासियों की व्रतचर्य्या संग और क्रोधसे पृथक्है राजाके बुलायेहुये नौकर के हृदय में जो भय उत्पन्न होताहै वहभय बनमें मूलफल खानेवाले सन्तोषी पुरुषोंके हृदयमें उत्पन्न नहीं होताहै बिना परिश्रम के मिलनेवाला जल और सुस्वादु भोजन अथवा अन्तमें भयकारी दोनों बस्तुओं को बिचारकर देखताहूं कि वही सुखहै जिसमें निस्सन्देहताहै इतने नौकर अपराधके कारण राजाओंसे दण्ड नहीं दिये गये जितने कि नौकर दूसरों की बुराईसे अपराधी होकर नष्टहुये हे मृगेन्द्र जो यह मेरे करनेके योग्यहै और जो तुम मानते हो तो मैंप्रतिज्ञा कियाचाहताहूं जैसेकिमेरेसाथ करनाचाहिये मेरेबालबच्चे आप, पालनेको योग्यहैं और हितकारी वचन आपके सुननेके योग्यहैं और जो मेरी आजीविका विचारकीगई है वह तुम्हारे पास अच्छेप्रकारसे वर्त्तमान होय मैं कभी तेरेदूसरे मंत्रियोंके साथ सलाह नहीं करूंगा नीतिज्ञ इच्छावान् शत्रु मेरे विषयमें विपरीत कहेंगे और अकेला एकान्तमें केवल आपहीसे मिलकर हितकारी वचन कहूंगा तेरीजातके कागजों में हित और अनहित पूछने के योग्य नहीं होऊं मेरेसाथ सलाह करके मंत्री आपके हाथसे मारनेके योग्य नहीं और क्रोध युक्त होकर तुम मेरेसमीपी लोगोंको दण्ड मतदो व्याघ्र ने उसकी सबबातोंको स्वीकार किया और स्यारने प्रधानताका अधिकार पाया प्राचीन नौकर एकमत होकर इसप्रकारसे बड़े अधिकार के पाने वाले अपने काममें पूजित उस स्यारको देखकर अकस्मात् विरोधी हुये इन दुर्बुद्धियों ने मित्रता की बुद्धिसे उस स्यारको विश्वास पूर्व्वक प्रसन्न करके दोष लगाना चाहा दूसरेके धनोंके हरने वाले वह सब पूर्व्व समय में विरुद्ध कर्म्मी थे अब स्यारके स्वाधीन रहने वाले वह किसीप्रकार की द्रव्य के लेनेको समर्थ नहींहुये वह स्यार विरोध चाहने वालों से कथाओंके द्वारा लुभाया जाताथा

और बड़े धनसे उसकी बुद्धि लुभाई जाती थी परन्तु वह बड़ाज्ञानी अपने धैर्यसे चलायमान नहींहुआ इसी प्रकार दूसरोंने उसके नष्ट करनेकी सलाह करके वहां मृगराजका अभीष्ट जो मांस तय्यार कियाथा उन्होंने आप जाकर उसके घरमें रखदिया इस निमित्त कि वह चोर ठहराया जाय और जिसने वह सलाह की वह उसको विदित होगया परन्तु किसी हेतुसे उसने क्षमा किया और प्रधानता प्राप्तकरनेवाले स्यारने यह विचार किया कि यहां मित्रता करने वाले तुझको नाश न करने चाहिये भीष्मजी बोले कि भूखे और खानेके वास्ते उठेहुये मृगराज को भोजनके निमित्त जो मांस भेंट करना चाहियेथा वह दृष्टि न पड़ा मृगराजने हुक्म दिया कि चोरको ढूँढ़ना चाहिये छलियों ने उसका वर्णन मृगराज के सन्मुख किया कि आपका मंत्री जो कि अपने को पण्डित और ज्ञानी मानता है उसने छिपाया शार्दूल स्यार की चपलता को सुनकर क्रोधित हुआ और उसके मारनेको स्वीकार किया तब पहले मंत्री उस अपने शत्रु को देखकर बोले कि यह हम सबकी जीविका खोनेमें लगा हुआहै फिर उन्हों ने निश्चय करके उसके कर्म्म को भी वर्णन किया कि उसका जब यहकाम है वह क्या काम नहीं करसक्ता स्वामी ने पहले जैसा सुनाथा वैसा नहीं है यहकेवल बातों से धर्म्मिष्ठ है परन्तु स्वभाव से निर्दयी है यहपापी कपटरूप धर्म्म रखने वाला और मिथ्या आचार परिग्रह रखनेवाला है इसने अपने कार्य के लिये भोजन के अर्थ व्रतआदिमें परिश्रमकिया यह अविश्वासी है यह हम आपको दिखाते हैं यह कहतेही शीघ्र उस स्यार के घरमें से मांसको लाकर व्याघ्र को दिखाया तब व्याघ्रने उसमांसका चुराना जानकर और उनके वचनों को सुनकर आज्ञादी कि स्यारको मारो तब व्याघ्र की माता अपने पुत्रकी बातोंको सुनकर मृगराज को हितकीबात समझानेको उसके पास आई और कहा कि हे पुत्र कपट और छलसे संयुक्त यह बुराई तुमको स्वीकार न करनी चाहिये क्योंकि पवित्रराजा भी पापात्मा और ईर्षा करने वालों के दोष दोषी होता है कोई ऊंचे अधिकार वालेको चित्तसे नहीं चाहताहै अधिकारही शत्रुता उत्पन्न करनेवाला है पवित्र और स्वकर्म्मनिष्ठ नौकर में और स्वकर्मी वनवासी पवित्र मुनि में भी दोष लगायाजाता है मित्र उदासीन और शत्रुनाम तीनपक्ष उत्पन्न होते हैं पवित्रमनुष्य लोभोंके शत्रु औरपराक्रमीपुरुष नपुंसकों के शत्रुकहे जाते हैं और पण्डितमूर्खोंके और बड़े धनी निर्द्धन लोगों के और धर्म्मिष्ठ पुरुष अधर्म्मियों के स्वरूपवान् कुरूपों के शत्रु समझे जाते हैं बृहस्पतिजीकेमतसे मूर्ख लोभी और कपटसे जीवनकरनेवाले अपने को पण्डित माननेवाले ऐसे बहुत से मनुष्य निर्दोषी को दोष

लगातेहैं जो कि तेरे खाली मकानसे उसमांस को चुरालिया और दिया हुआ नहींचाहता है अच्छा है तबतक बिचारकरो सभासद जो अयोग्य हैं वहयोग्य रूप और जो योग्य हैं वह अयोग्यरूप दीखते हैं और नाना प्रकार के चित्तवाले दीखते हैं इन्हों में परीक्षाकरनी योग्य है आकाश पृथ्वी के समान और पटवीजना अग्नि के समान दृष्टि पड़ता है वास्तव में आकाश पृथ्वीनहीं है और न पटवीजने में अग्नि है इसकारण नेत्रों से भी देखाहुआ प्रयोजन परीक्षा लेने के योग्य है परीक्षा करके मुक़द्दमोंका प्रकट करने वाला पीछे पश्चात्ताप नहीं करताहै हे बेटा यह कठिन बात नहीं है जो स्वामी दूसरेको मरवावे लोकमें समर्थ पुरुषोंकीक्षमा प्रशंसाके योग्य शुभ कीर्तिको का विख्यात करनेवाली है हे पुत्र तुमने इसको इसअधिकार पर नियत किया और सामन्तों में भी प्रसिद्धहुआ पात्र मनुष्य कठिनतासे मिलता है यहतेरा शुभ चिन्तक जीतारहै जो राजादूसरे के दोषोंसे मित्र या पवित्रनौकर को दण्डदेता है वह दोषसे संयुक्त मंत्रीवाला आपसेआप शीघ्रनाशहोजाता है स्यार के उसशत्रु समूहमें से कोई धर्म्मात्मा आया और उसने सब छलकरने का भेद वर्णनकिया तब वह स्यार मृगराजसे प्रीतिमान् और पूजि- त होकर बड़ेस्नेह और मिलाप के साथ शुद्ध जानकर दण्डपाने से छूटाफिर नीति शास्त्रज्ञ और क्रोधसे दुःखित स्यारने मृगराज को पूजकर देहके त्याग के लिये नियम करना चाहा पूजा से पूजन करते और प्रीति से प्रफुल्लित नेत्रवाले उस शार्दूल ने उसधार्म्मिष्ठ स्यार को निषेध किया तब स्यार ने नम्रता पूर्वक भ्रान्त चित्त उस शार्दूल को देखकर अश्रुपात युक्त गद्गद वचनों से कहा कि मैं पहले आप से पूजित हुआ और पीछे से भी सत्कार किया गया दूसरों के अधिकार पर नियत होनेवाला मैं आपके पास निवास करने के योग्य नहींहूं ब्याकुल अधिकारहीन प्रतिष्ठा रहित नौकर और जो अधिकारी कि शत्रुओंसे दुःखी किये गये और लोभी, क्रोधी भयभीत और जिसको कुछकर्म्मों का दोष लगाया गया और जो अहंकारी होकर ऐश्वर्य्यकाचाहनेवाला है और जो जीविका त्यागकरनेवाला है और जो बहुत व्यसनों के मिलने से दुःखी है और जो कोई धनधान्य सहित गुप्तहुआ है वह सब अप्रीति कारी और निर्द्धन हैं फिर तुम अप्रतिष्ठित अधिकार रहित करके विश्वास को कैसे पाओगे और मैं कैसे रहसकूंगा तुमने मुझको समर्थजान के परीक्षा लेके लिखपद अधिकार पै नियत किया फिर प्रतिज्ञाओं को तोड़कर मेरा अपमान किया, पहिले सभामें जो श्रेष्ठप्रकृति वाला प्रसिद्ध हुआ उसकी प्रतिज्ञा पालन करने वाले राजा को अप्रशंसा करनी चाहिये यहां इसप्रकार मुझ अपमान पानेवालेमें विश्वासको नहीं

पाओगे और तुम्क अविश्वासीमें मेरेचित्तकी व्याकुलता प्रकट होगी मैं शंकायुक्त और भयभीतहुआ और मेरेशत्रु म्लानचित्त असंतोषी मेरेदोषको देखने वाले हैं और यहकाम बहुत कपट छलवाला है,शत्रु दुःखसे मिलाप करने वाला होताहै और मिलापकरनेवाला दुःखसे शत्रुहोताहै जो प्रीति कि मिलाप और विरोध नाम दोनों बिशेषण रखनेवाली है वह उसके साथ वर्त्तमान नहीं होतीहै अर्थात् वह प्रीति स्वामी के अभीष्ट को नहीं करती है कोई स्वामीके प्रिय करने में दृष्टनहीं आता है अपने और दूसरेके प्रयोजन के कारण गर्भित होते हैं शुद्धचित्त नौकर बड़ी कठिनतासे प्राप्तहोते हैं मनुष्यका जानना कठिन है क्योंकि राजाओंका चित्त स्थिर नहीं है समर्थ और शंकासे रहित मनुष्य सौमेंसे एक मिलता है एकाएकी मनुष्योंका नियतकरना और अकस्मात् अधिकारसे छुड़ादेना प्रतिष्ठादेना और बुराभला कर्म्म करना बुद्धिकी न्यूनता है इसप्रकार से वह स्यार धर्म अर्थ से सम्बन्ध रखनेवाले मीठेवचनों को कहकर राजाको प्रसन्नकरके बन को चलागया फिर वह बुद्धिमान् स्यार उसमृगराजकी शिक्षाको स्वीकार न करके देह त्याग के नियम में नियतहोकर देहको त्याग स्वर्गको गया ८८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिएकादशोऽध्यायः १११ ॥

एकसौबारहका अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे सर्वधर्म भृताम्बर राजाको क्याकरना चाहिये और किस कार्य्य को करके सुखीहोता है इसको विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये भीष्मजी बोले अच्छा श्रवण करो मैं कार्य्य के एक निश्चय को कहताहूं जैसे कि इसलोक में राजाको करनाचाहिये और वह करके सुखीहोताहै इस प्रकारसे न करना चाहिये जैसे कि हम ऊंटके बड़े बृत्तान्तको सुनाते हैं हे युधिष्ठिर उसको समझो प्रजापति यज्ञ में एकजातिस्मर नाम बड़ाऊंट हुआ वह महाव्रतवाला ऊंट वनके बीच बड़ीतपस्या करनेलगा उसके तपसे समर्थ ब्रह्माजी प्रसन्नहुये और वरमांगने को इच्छाकरवाई तब ऊँटबोला कि हे भगवन् जो आप प्रसन्न हैं तोमेरीगर्दन लम्बीहोजाय क्योंकि मैं सौयोजन से अधिक चरनेकोजाताहूं वरदायी ब्रह्माजीने कहाकि ऐसाहीहोय यहउत्तमवरपाकर ऊंट अपने वनकोगया तब उस निर्बुद्धी ने वरके पाने से आलस्य किया और कालके मारे उसदुरात्माने चरनेके निमित्त जाना भी छोड़दिया किसी समय परिश्रम से शान्त होकर अपनी सौयोजन की गर्दन को फैला कर चरनेलगा दैवयोग से उससमय बड़ी वायुचली तब वह पशु अपनी लम्बी गर्दन को गुफामें रखकर बैठगया फिर सब संसार कोव्याप्त करती हुई महावृष्टि

हुई तब तो शीत में डूबाहुआ भूख और थकावटसे दुःखी जल से पीड़ामान एक शृगाल अपने बालबच्चों समेत उस गुफामें आनबैठा तो हे भरत बंशी युधिष्ठिर भूखसे महा व्याकुल थकेहुये मांसाहारी शृगालने इधर उधर देखकर उसऊंट की गर्दनको भक्षणकिया जब ऊंटने अपनेको भक्षणहुआ जाना तब महादुखीहो गर्दनको सिकोड़नेका विचार किया जबतक उसपशुने गर्दनको ऊपर नीचेकी ओर सकोड़ा तब तक उस स्त्री संयुक्त शृगाल ने गर्दन को भक्षण करडाला तब वह शृगाल ऊंटकोमार भक्षण करके आंधी और वर षाके बन्दहोने पर गुफाके मुखसे बाहर निकला इसप्रकार उस निर्बुद्धी ऊंटने अपना जीवगँवाया आलस्यके करनेसे इसप्रकारके दोषहोते हैं इससेतुमजिते न्द्रिय होकर इसप्रकारके आलस्यको चित्तसे दूरकर के उद्योग पूर्वककर्मकरो मनुजीने बिजयको बुद्धिरूपीमूल रखनेवाली कहा है इससे बुद्धिसे होनेवाले काम उत्तमहैं और शूरतासे होनेवाले मध्यम और बड़ीभारीजमातसे होनेवाले काम निकृष्ट गिनेजाते हैं बुद्धिमान् जितेन्द्रिय राजाकाराज्यदृढ़ होताहै मनु जीने अत्यन्त इच्छावानकी पूर्ण बिजयको भी बुद्धिरूपी मूलरखनेवाली कहा है हे युधिष्ठिर इसलोक में शास्त्रज्ञ सभासद रखनेवाले राजा का गुप्त मंत्र और परीक्षा लेकर कर्म्म करने वाले के सब मनोरथ पूर्णहोते हैं यह सम्पूर्ण पृथ्वी बुद्धिरखनेवाले राजा से राज्य करने के योग्य है हे युधिष्ठिर प्राचीन समय में यह बचनबुद्धि के ज्ञाता सत्पुरुषों का कहा गया है और मैंने भी शास्त्र कीदृष्टि से तुमको कहा कि तुम बुद्धिके अनुसार कर्म्म करो २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्मेशतोपरिद्वादशोऽध्यायः ११२ ॥

एकसौ तेराका अध्याय ॥

हे पितामह कठिनता से प्राप्त होनेवाले राज्यको पाकर फिर साधन न करनेवाला होकर अत्यन्त वृद्धिपानेवाले शत्रुके पास कैसे निवासकरे भीष्म जीबोले कि हे भरतबंशी यहां एक प्राचीन इतिहास कहताहूं जिसमें नदि- योंके और समुद्र के प्रश्नोत्तर हैं कि असुरोंके आश्रय स्थान नदियोंके स्वामी समुद्र ने अपने उत्पन्न होनेवाले सन्देहको नदियोंसे पूछा कि हे नदियो तुम जलसे पूर्ण अपनी तरलधार के वेगसे जड़समेत बड़े २ भारी वृक्षों को उखा- ड़कर यहां लातीहो उनमें छोटीदेह और जड़ रखनेवाला तुम्हारे तटोंपर हो नेवाला बेतका वृक्ष कभी नहीं देखागया उसको तुम अनादर से नहीं लातीहो अथवा तुम्हारा कोई उपकार किया है जिससे तुम उसको नहीं उखाड़ती हो इसका कारण तुम सबसे मैं सुना चाहताहूं कि क्यों नहीं बेतका वृक्ष तुम्हारे किनारोंको छोड़कर यहां आता है वहां नदियों में से

श्रीगंगाजी ने समुद्रको ऐसा उत्तर दिया जोकि सार्थक और श्रेष्ठ और
स हेतुथा कि जो यह स्थावरवृक्ष अपने २ स्थानों में नियत हैं वह सब हमा-
री शत्रुता से स्थानको त्यागकरते हैं परन्तु वेत हमारी शत्रुता से नहीं स्थान
त्यागता इसका कारण यहहै कि यह वेतकावृक्ष हमारे वेगको आते हुये देख
कर झुकजाता है और वहवृक्ष नहींझुकते फिर वह वेतकावृक्ष नदी का वेग
हटजाने पर स्थानपाकर जम जाता है और नियम पूर्वक सदैव जितेन्द्रिय
और अनुकूलहोकर झुकता है कभी उपद्रव नहीं करता इस कारण वह नहीं
आताहै जो औषधी वा वृक्ष वा गुल्म हवा और जलके वेग से हिलतेहोते हैं
रहतेहैं वह नष्ट नहीं होते हैं भीष्मजी बोले कि जो मनुष्य अत्यन्त वृद्धि समर्थ
और पकड़ने या मारने में समर्थ शत्रु के वेगको पहिले नहीं सम्भालताका नि-
वह शीघ्र नष्ट होता है जो ज्ञानी शत्रु के और अपने सारअसार और बुराभला
जानता हुआ विचरता है वह नाशको नहीं पाता है इसी प्रकारसे सम्बन्ध
मनुष्य जब शत्रु को महा बलवान् जानता है तो वेत वृक्ष के समानगया फिर
कर रहता है यहीबुद्धिमत्ता के चिह्न हैं १४ ॥ देह त्याग के

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरित्रयोदशोऽध्यायः ११

एकसौचौदहका अध्याय ॥ ११४ ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह सभा के मध्य में पण्डित, मूर्ख,
मृदु, कठोर मनुष्य जो असत्य वचन कहें उसको सुनकर राज चाहिये और
भीष्मजी बोले हे युधिष्ठिर सुनो जिस प्रकार यह प्रयोजन सिद्ध णन कीजिये
है वह यह बात है कि इस लोक में शुद्ध चित्त मनुष्य सदैव अ य को कहताहूं
र वचनों को सहता है कठोर वचन कहनेवाले मनुष्यपर क्षमा सुखीहोताहै इस
पुण्यका भागी होता है और वह क्षमावान् मनुष्य अपने पाप सुनाते हैं हे
मनुष्य पर छोड़ता है रोगी और टिटीरी के समान अयोग्य व बड़ाऊंट हुआ
को क्षमा करे सबसे शत्रुतारखने वाला पुरुष फलको नहीं पाता सके तपसे सम-
उस पापकर्म्मके साथसदैव अपनी प्रशंसा करता है कि अमुक ऊँटबोला कि हे
मैंने सभामें यह कहा कि और उसने सुनकर मृतकसम कि मैं सौयोजन
होकर शिरको नीचाकरलिया प्रशंसाके अयोग्य कर्म्म से प्र हीहोय यहउत्तम-
निर्लज्ज होताहै ऐसानीचपुरुष युक्तिसे क्षमाकरनेकेयोग्यहै पाने से आलस्य
जो जो कहैं वह ज्ञानीको क्षमा करनेकेही योग्य है ना भी छोड़दिया
निन्दा और स्तुति से क्या प्रयोजन सिद्धहोता है जैसे गर्दन को फैला
कागके अयोग्यशब्दकरनेसे जोपाप कर्म्मके प्रकटकरनेपर वह
दोपको साबितकरताहै उससमय उसका प्रयोजन वचनोंही से होजा अपनी लम्बी
त् उस मिथ्या दोप लगानेवाले को शापदे वहां मारनेका व्यापार नहीं होता है

वह मनुष्य मोरकेसमान गुप्त अंगोंको दिखाताहुआ कर्म्म और वचन आदिके व्यापारसे प्रत्यक्ष कहताहै किमेरी माता के पेटमें अन्य मनुष्य ने वीर्य्य डाला है,लोकमें जिसके कहने और करने के योग्य कुछभी नहींहै बुद्धिमान् पवित्र मनुष्य उस निर्बुद्धिता में फँसेहुये केसाथ वार्त्तालाप कभी न करे जो मनुष्य नेत्रोंके सामने गुणोंका कहनेवाला है और परोक्षमें निन्दा करताहै वह लोक में ज्ञान धर्म्मसेनष्ट होकर कुत्तेके समानहै ऐसा मनुष्य जो परोक्षमें निन्दा कर

षाके है,वह सौ मनुष्योंको भी जो दानदेता है और होमकरताहै उसके फलको अपना त्र में नष्ट करताहै इसकारण ज्ञानी मनुष्य शीघ्रही उस प्रकारके पापा न्द्रिय होर असाधु पुरुषोंको त्याग करे शिष्टलोगोंके मध्यमें दुर्वचनोंको कह- मनुजीने बि पुरुषदोषोंको ऐसे प्रकट करता है जैसे कि सर्प अपने फनको जो काम उत्प दुष्टकर्मों को बदला देनेकी इच्छा करता है वह महा दुःख में काम नि शान्त चित्त मनुष्योंकी निन्दाकरनेवाले को कुत्ते और गरजने जीने अ वाले हाथीके समान त्यागकरे,अज्ञानियों के मार्ग में वर्त्तमान इ- है हे युधि शीभूत नम्रता रहित शत्रुभाव रखनेवाले सदैव ऐश्वर्य्यके चाहने परीक्षा ले बुद्धी मनुष्योंको धिक्कारहै ऐसे लोगोंके कठोर बचन सुनकर तुम बुद्धिरखे तरमतदो और क्रोधयुक्त मतहो जो स्थिरबुद्धी मनुष्य हैं वह नीच यह बचनबु पुरुष की निन्दा करते हैं वह क्रोध युक्त थप्पड़ मारे या धूल और से तुमको क और दांत निकालकर भय भीतभी करताहै यह सब बातें अ- इति निर्दयी मनुष्य में होती हैं जो मनुष्य सभामें दुष्टात्मा दुर्जन रीहुई निन्दाको क्षमाकरे और सदैव इसदृष्टांत को भी पढ़े वह प्रियताको नहीं प्राप्तहोताहै २१ ॥

श्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिचतुर्दशोऽध्यायः ११४ ॥

हे पितामह करनेवाला हो

एकसौ पंद्रहवां अध्याय ॥

जीबोले कि हे ले कि हे महाज्ञानी पितामह मेरा यह बड़ा संशय है वह आप योंके और समु यहै आपहमारे कुलके उत्पन्न करनेवाले हो हेतात दुरात्मा समुद्र ने अपने ातें आपने वर्णनकीं इसकारण तुमको बतलाताहूं कि जो जलसे पूर्ण अ तकारी है कुलका उदय कारी है वह वर्त्तमान या भविष्यत कर यहां ला और वृद्धिका करनेवाला पुत्र पौत्रादि को पराक्रमी करने नेवाला हितका वृद्धिकरने वाला है और जो खानेपीनेकी वस्तुओं में देहकी लातीहो अर्थ यह सब आप कहिये और जो राजा राज्याभिषेक युक्त अपने उखाड़नी मित्र और सुहृदजनों से संयुक्त है वह प्रजाको कैसे प्रसन्नकरे और जो राजा इन्द्रियों को आधीन न करने से उनकी प्रीतिके आनंद में मग्न

हठीहोकर नीचोंके ऐश्वर्य्यका चाहनेवाला है उसके घरानेवाले नौकर विरुद्धता को प्राप्तहोते हैं वह राजा नौकरों के उद्योगों से प्राप्त होनेवाले धन आदिसे संयोग नहीं पाताहै हे बुद्धिमें वृहस्पति समान आपमेरे इस संशय के दूर करनेके निमित्त बड़ी कठिनता से जाननेके योग्य राजधर्म्मको कहिये हे पुरुषोत्तम तुम हमारे कुलकी वृद्धिके चाहनेवाले हो और एकबड़े ज्ञानी बिदुरजी जो सदैव हमको उपदेश करते हैं मैं तुमसे कुलका हितकारी और राज्य की वृद्धिका उदय करनेवाला वचन सुनकर सुखपूर्वक अमृत से तृप्त हुये के समान आपको उत्तर दूंगा, सब गुणों से सम्पन्न समीप रहनेवाले नौकर कैसे होने चाहिये, कैसे कुलीन और किसप्रकार के नौकरों के साथ राज्य काम कियाजाता है, नौकरों से रहित अकेला राजा रक्षित नहीं होता है और यहराज और सब प्रजाभी रक्षित नहीं होती है कुलीन राजा उनको चाहता है, भीष्मजी बोले कि हे भरतवंशी अकेले राजा से राज्यकरना असम्भव है हे तात साथी न रखनेवाले राजा से कोई अर्थ सिद्धहोना असम्भवहै और अर्थप्राप्त करने परभी सदैव रक्षाकरना असम्भव है जिसके सब नौकर ज्ञान और विज्ञान में पण्डित शुभचिंतक कुलीन और प्रीति रखनेवाले हैं वही राज्यके फलको पाता है जिसराजाके मंत्री कुलीन और गुप्तधन लेकर शत्रुसे मिलनेवाले नहीं हैं और साथरखनेवाले राजाको सलाहदेने वाले शान्तस्वभाव और समय के जानने में पण्डित हैं, व्यर्थकर्म्मोंके न करनेवाले कालज्ञानमें बिशारद गतबातोंका शोच नहीं करनेवाले हैं वह राजा राजफल को भोगता है जिस के नौकर सुख दुःख में एकभाव होकर सहायक और प्रियकारी हैं और राज्य के बिचार में तत्पर होकर सत्यवक्ताहैं वह राजा राज्य के फलको भोगताहै, जिसके पासके रहनेवाले मनुष्य सदैवपीड़ामाननहींहोतेहैं और शिष्टऔर कुलीनोंकाशरण्य है वह राजा राज्य फलको भोगताहै जिसराजाके खजाने का संचय उनमनुष्योंसे वृद्धिकियाजाता है जोकि खजानेकी वृद्धि करने वाले बिश्वासित और सदैव संतोषीहैं वह राजाओं में उत्तम है जिसके नौकर गुप्तधन लेनेसे शत्रुता न करनेवाले विश्वासित खजाने की वृद्धि में लगे हुये पात्ररूपनिर लोभी अन्न आदिके गोदाम में गुणयुक्तहों और नगर में जिसका कारोबार श्रेष्ठ और अदालतोंमें शंखकी स्मृतिकेअनुसार जिसका निर्णयकरना देखने में आताहो वहराजा अपने धर्म फलको भोगनेवाला है जो राजा मनुष्योंको पारितोषिक आदि के द्वारा स्वाधीन करनेवाला राजधर्म्मों का ज्ञातापड्वर्ग कोकाम में लाता है वह धर्म्म के फलको भोगता है २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मे शतोपरिपंचदशोऽध्यायः ११५ ॥

एकसौ सोलहवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इस बिषयमें एक प्राचीन इतिहासको कहता हूं जो कि लोक में बड़ा दृष्टांतरूप और सदैव सत्पुरुषोंको करनेके योग्य है वहइ-सी प्रयोजन के समान तपोबन में मैंने सुनाहै और उत्तम ऋषियोंने परशु रामजीसे कहा है वह यहहै कि हिंसकआदि जीवोंसे व्याप्तकिसी महावनमें मूलफल के आहार करनेवाले सावधान जितेंद्री दीक्षावान शांत चित्तवेद पाठी पवित्र ब्रतोंसे बिशुप आत्मा सदैव सतोगुण वृत्ती एकऋषिथे उनबुद्धि मान् आसन रद्धबिराजमान ऋषिकेशुद्ध चित्तको जानकर सबवनचारीजीव उनके सन्मुख बर्त्तमानहुये उनमें सिंह और ब्याघ्रों का समूह और निर्दयी मदोन्मत्त बड़े २ हाथी और नानाप्रकार के ब्याघ्र गेंड़ेरीछ और अन्यबहुत से भयानक पशुथे वह सबरुधिर मांसकेखानेवाले उसके सखाहुये और शिष्यों की समान उसऋषि के दासरूपहोकर प्रियकारीहुये और सबउनको सखामान कर अपने २ स्थानोंको चले गये वहां गांव का रहने वाला एककुत्ता भी था वह नहीं गया वहीं उनकी रक्षामें रहा वह पशुभक्त प्रीतिमान् सदैवब्रत कर नेसे बलहीन फलफूल जलका आहारकरनेवाला शान्त रूप अच्छे जीवोंकी सूरत था वह वृक्षकी जड़ में बैठेहुये ऋषिकी प्रीति में बँधाहुआ मनुष्यके से भावको पहुंचा तदनन्तर रुधिरभक्षी मृत्युकालके समान पराक्रमी निर्दयी और कुत्ते के निमित्त अत्यन्तप्रसन्न द्वीपीनाम ब्याघ्र सन्मुखआया और जिह्वासे होठों को चाटता पिपासायुक्त पूछको हिलाता क्षुधायुक्त हो उसने उसकुत्तेके मांसकोचाहा और हे युधिष्ठिर वहां जीवन की इच्छाकरने वाले कुत्तेने उस निर्दयीको आताहुआ देखकर मुनिसे कहा कि हे महाराज यह कुत्तोंकाशत्रु द्वीपीनाम ब्याघ्र मेरेमारने को आताहै इससेआप मेरी रक्षाकरिये यहसुनकर मुनिने कहा कि तुझकोइसद्वीपी ब्याघ्रसे कभीभय न करनाचाहिये हे पुत्रयह द्वीपी अपने स्वरूप वाले हसिजुदाहोता है यहकहकर उसकुत्ते को द्वीपी के स्वरूप में प्रविष्टकिया जिसकारंग सुनहरी चित्रविचित्र अंगचजायमानदाढ़ होकर निर्भयवन में रहनेलगा जबद्वीपीने उसपशुको अपनेसमान सन्मुख देखातो क्षणभरमेही उसका मित्रहुआ उसके पीछे महाभयानक बड़े दांत और मुखको चाटताहुआ एकब्याघ्र उसद्वीपी ब्याघ्रके मांसकीइच्छा से उसकेस-न्मुखआया द्वीपीने उस क्षुधातुर वनचारी हिंसक ब्याघ्रको देखकर मुनिकी शरणली तब मुनिने उसको ब्याघ्र बनादिया तब उसशार्दूलने उसको देख कर नहींमारा फिरतो उसकुत्तेने ब्याघ्ररूप पराक्रमी मांसाहारी होकर मूल फूलों के खानेकी इच्छानहींकी २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मे शतोपरिषोड्सोऽध्यायः ११६ ॥

एकसौ सत्रहका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि मारेहुये मृगोंसे तृप्तहोकर पर्णशाला के समीपी वृक्ष की जड़पर वहव्याघ्र निर्भय होकर बैठाथा दैवयोग से बादलके समान कालामतवाला मेघ समान गर्जना करनेवाला एक हाथी आया तब वह व्याघ्र उसहाथी के भयानक शब्द से भयभीत होकर ऋषिजी के पास जाकर शरणागत हुआ फिर उस महामुनिने व्याघ्रको हाथी के रूपमें समाधिस्थ किया और वहहाथी उसपर्वताकार हाथी को देखकर भयभीत हुआ फिर वह हाथी रूप आनन्द युक्तहो कमल खण्डोंसे अलंकृत पद्मरेणुसे भूषित गेंड़ोंके समूहों में बिचरने लगा इस आनन्द में इसको बहुत दिवस व्यतीत हुयेथे कि पर्वत की कन्दरा में उत्पन्न होनेवाला हाथियोंका नाशक मृगेन्द्रों का राजा महाभयानक केशरीसिंह उसदेशमें आया उस आते महामृगेन्द्रको देख भयभीत कम्पित देह उस हाथीने फिर मुनिकी शरणली तबउस गजेन्द्रको मुनिने सिंहरूप बनाया तब बनवासी सिंह उसको देखकर भयभीत हुआ और वह बनाहुआ सिंह मुनिके आश्रममें ही रहा तब अन्य बनबासी जीव मारे भयके तपोवन के सन्मुख दृष्टि नहीं पड़े दैवयोगसे सब जीवोंका मारनेवाला महाबली रुधिरभक्षी सबजीवों का भयकारी आठ पैर ऊंचेनेत्र वाला बनवासी शरभ उस सिंहके मारने के लिये उसमुनिके आश्रम में आया तब फिर मुनिने उससिंहको मतवाला शरभ बनाया उसको देखकर वह बनवासी शरभभी भयभीत होकर तपोबनसे भागा फिर वह कुत्ताशरभरूपसे आश्रममें रहनेलगा और सदैव मुनिकी शरणमें आनन्द करनेलगा तब उस शरभको देख सबवन के जीव जिधर तिधरभागे और यह शरभ भी फल मूलोंका भोजन त्याग के मांसाहारी होगया और कुत्ते की योनिसे उत्पन्न उसशरभ ने सब उपकारों को भूलकर उस मुनिको मारना चाहा फिर मुनि ने ज्ञानचक्षु से जानकर उस शरभ से कहा कि हे कुत्ते तैंने कुत्तेसे द्वीपीरूप और द्वीपीसे व्याघ्ररूप और व्याघ्रसे मतवाला हाथीहुआ और हाथीहोकर सिंहरूप और सिंहरूपसे शरभरूप को पाया मैंने बड़ीप्रीति से तुझको नाना रूपों में बदला और हे पापी तू मुझसे निरपराधी को मारना चाहता है इस कारण तू उसीअपने कुत्तेकी योनि में प्राप्तहोजाने के योग्य है तदनंतर वह मुनियोंकाशत्रु दुष्टात्मा अज्ञानी शरभ फिर कुत्ताहोगया २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिसप्तदशोऽध्यायः ११७ ॥

एकसौ अठारहका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि पूर्व्वरूप को प्राप्त होनेवाले उस कुत्ते ने बड़ाकष्टपाया और ऋषिका फटकाराहुआ पापीबनसे भी निकाला गया इसप्रकार बुद्धिमान् राजा सत्यता, पवित्रता, स्वरूपता, शास्त्रज्ञता, चलन, रीति, कुलीनता, शान्तता, दया, पराक्रम,प्रभाव,प्रीति,क्षमा आदि सत्त्गुणोंको जानकर जो नौकर जिसअधिकार के योग्य होय उसपर नियतकरे और उनकी अच्छेप्रकारसे रक्षाकरे, बिना परीक्षालिये मंत्री भी राजाको नियत नहींकरना चाहिये अन्य कुलवाले मनुष्योंसे राजा सुखपूर्वक आनन्द और वृद्धि नहींपाताहै निरपराध होनेपर कुलीन नौकर को दण्डदेना राजा को पापयुक्त करता है, अच्छेलोगोंकी प्रीति से कठिनअधिकारका पानेवाला अन्य घराने का प्राकृति मनुष्य धमकाने से शत्रु होजाता है सुशिक्षित कुलीन बुद्धिमान् ज्ञानविज्ञानमें पूर्ण सबशास्त्रोंका ज्ञाता, क्षमावान् देशी, कृतज्ञ, बलिष्ठ, शान्तचित्त, नम्र, सुशील, निर्लोभी, मासिकपर सन्तोषी, स्वामीके मित्रोंका ऐश्वर्य्यको चाहनेवाला, देशकालकाज्ञाता, जीवोंकी प्रसन्नता करनेवाला सदैव अपने काममें प्रवृत्त शुभचिन्तक निरालस्य आचारवान् अपनेदेशकी सन्धिविग्रहके बिषयों में प्रवीण राजाके त्रिबर्गका जाननेवाला, पुरबासी और देशवासियों का प्यारामंत्री होना चाहिये ॥

शत्रुकी सेना का छिन्न भिन्न करनेवाला व्यूहों की मुख्यता का जाननेवाला, सेना के प्रसन्न करने में चतुर, देह और अंगों की चेष्टाकी मुख्यता का जाननेवाला यात्रा के कुशल हाथियों की शिक्षाकी मुख्यता का ज्ञाता अनुत्तरज्ञानी वेदके अनुसार कर्म्मकर्त्ता जितेन्द्रिय पराक्रमी उचित कर्म्मी, शुद्ध मनुष्यों से संयुत सुमुख, सुनेत्र नीतिज्ञ गुण चेष्टायुक्त सेनाका अधिपति नियत करना चाहिये ॥

शीघ्रकर्म्मी, सूक्ष्म आशय का जाननेवाला शुद्ध और मृदुभाषी पण्डित शूर धनी देशकालका जाननेवाला ऐसे मंत्रीको जो राजा नियत करताहै और उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाता है उसका राज्य ऐसा वृद्धि पाता है जैसे कि चन्द्रमा की किरणें, ऐसे गुणों से संयुक्त शास्त्रज्ञ धर्म्मात्मा और प्रजा पालन में प्रवृत्त राजा वृद्धिपाने के योग्य है, पण्डित, क्षमावान पवित्र देशकालका जाननेवाला सेवाकरनेवाला शास्त्रज्ञ शास्त्रोंका सुननेवाला उत्तर प्रत्युत्तर और खण्डन मण्डनमें कुशल और शास्त्रका स्मरण रखनेवाला धारण बुद्धिवाला न्यायके अनुसार वार्त्तालाप करनेवाला जितेन्द्रियसदैव प्रियभाषी और शत्रुओं परभी क्षमावान् दानविषय में आपकर्म्म करनेवाला श्रद्धामान सुख-

दर्शन पीड़ामान के हाथ में देनेवाला स्वामीके हितमें प्रीतिवान अमात्य कर्म्म में सावधान निरहंकारी सत्संगी राज्यके कामोंका देखनेवाला कार सर्कारी करनेपर मंत्रियोंको पारितोषिक देनेवाला भक्तोंका प्यारा मनुष्यों की शिष्टाचारी करनेवाला स्थिर चित्त प्रसन्न मुख सदैव नौकरों की इच्छा रखनेवाला क्रोध रहित महा साहसी योग्य दण्ड देनेवाला न कि दण्ड से रहित धर्मके कामोंकी शिक्षा करने वाला दूत रूपनेत्र रखनेवाला प्रजा के वृत्तान्तों का जाननेवाला सदैव धर्मअर्थमें कुशल सैकड़ों गुणोंसे भराहुआ जो राजा है वह चाहनेके योग्य है और हे युधिष्ठिर युद्धकर्त्ता लोग भी सब गुणों से व्याप्त श्रेष्ठ मनुष्य राज्य के पोषण में सहायक खोजने के योग्य हैं और ऐसेही मनुष्योंकी वृद्धि चाहनेवाला राजा कभी अपमान न करे और जिसके युद्धकर्त्ता युद्ध में अहंकारी कृतज्ञ शस्त्रविद्या में प्रवीण धर्म्मज्ञ निर्भय हाथी और रथकी सवारी में कुशलबाण और अस्त्रविद्या में पूरे हैं उसीराजा की यह पृथ्वी है, जो राजा सबके प्रसन्न और आधीन करने में प्रवृत्त युद्ध और उद्योग आदिका अभ्यास रखनेवाला और मित्रों से संयुक्त होता है और वह राजा राजाओं में उत्तम है, हे भरतबंशी जिसके मनुष्य स्वाधीन हों उन एकहजार अश्वारूढ़ों से यह सम्पूर्ण पृथ्वी बिजय के योग्यहै २८॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिअष्टादशो-ध्यायः ११८ ॥

एकसौ उन्नीसका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि जो राजा इसप्रकार कुत्ते के समान नौकरों को अपने२ स्थान और अधिकारोंपर नियत करता है वह राजफलको भोगता है,सत्कार कियाहुआ कुत्ता अपने योग्य स्थानों को उल्लंघन करके बड़े अधिकारपर नियत करना न चाहिये क्योंकि वह अपने स्थान से ऊंचे अधिकार पर पहुंचकर दूसरी भूलकरता है, अपने स्वाभाविक गुणोंसे संयुक्त अपने कामों में अच्छा प्रवृत्त मन्त्री नियतकरने के योग्य है अन्यस्थानपर राज्यके कार्य्य पूरे होने के योग्य नहींहैं जो राजा नौकरों के लिये उनके योग्य अधिकारों को देताहै वह राजा नौकरों के गुणोंसे संयुक्त राज्यके फलको पाता है शरभ शरभ के स्थानमें बड़ा सिंह सिंह के स्थानपर और व्याघ्र व्याघ्र के स्थानपर और द्वीपी द्वीपीके स्थानमें बुद्धिके अनुसार योग्य अधिकारोंपर नियत करके फिर उननौकरों को विपरीति रीति से नियत करना अयोग्य है जो निर्बुद्धीराजा प्रमाणसे बाहर नौकरोंको विपरीत अधिकारोंपर नियत करता है वह प्रजाको प्रसन्न नहींकरता है सबगुणोंकाचाहने वाला उनमनुष्योंको नियत न करे जो अज्ञानीनीच अल्पबुद्धी अजितेंद्रिय और अकुलीन हैं जो

आदमी साधूकुलीन-शूरज्ञानी दूसरेके गुण में दोषनहीं लगाने वाले पवित्र चतुरहों और नीच न हों वह सदैव करने के योग्य हैं जो दासरूप प्रीतिमान हैं शांत शुद्ध और स्वाभाविक उपकारीहैं और अपने स्थानसे अलग नहीं कियेगये हों वहराजाओंके प्राणरूपहोने चाहियें, सिंहही सदैवहो और सिंहही पीछेकी ओरहो जो सिंहनहींहै वह सिंहकेसाथ सिंहके समान फलको पाताहै जो सिंह कुत्तोंसे घिराहुआ सिंहके कर्म्म फलमें चित्तलगा रहा है वह कुत्तोंसे सेवाकिया हुआ सिंहकाफल भोगनेको समर्थ नहीं होता हेराजा इसप्रकार ज्ञानी शूर बहुत शास्त्रका जाननेवाला राजा कुलीन पुरुषोंकेसाथ सम्पूर्ण पृथ्वीके विजयकरने को समर्थ होताहै हे युधिष्ठिर जो निर्बुद्धी विद्या रहित मिथ्यावादी और निर्बलहों ऐसे नौकर राजा लोगोंको फलोंमें नियत करने के योग्य नहीं हैं राजा ऐसे नौकरोंको दिलासा और भरोसादे जोकि स्वामीके कामोंमें प्रवृत्त और राजाके हितकारी बाणके समान बिनारोक के चलते हैं उद्योग में प्रवृत्त होकर राजाओं की ओरसे खजाना सदैव रक्षा के योग्य है राजा लोग खजाने को मूल समझने वालेहैं और खजानाही वृद्धि करने वाला होता है तेरा गोदाम अनाज आदि से भराहुआ सदैव सत्पुरुषों को सुपुर्द हो और तुमधन धान्यको उत्तममानने वाले हो और युद्धमें कुशल तेरेनौकर सदैवकाम में प्रवृत्त रहें यहां हाथियोंके चलाने आदि में कुशलता इच्छाकी जाती है हे कौरवनन्दन तुमजाति और बांधवोंकी ओर दृष्टिकरने वाले मित्र सम्बन्धियों से संयुक्त और पुरबासियों के मनोरथों की सिद्धि चाहने वालेहो, हे तात तेरी यह दृढ़बुद्धि प्रजालोगों में हितकारी है मैंने कुत्ते के दृष्टांतको वर्णन किया अब क्यासुनना चाहतेहो २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिएकोनविंशतितमोऽध्यायः ११९ ॥

एकसौ बीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह तुमने बहुतसे राजाओंके वह चलन व्यवहार वर्णन किये जो कि प्राचीन समयमें राजधर्म्म के जानने वालेप्राचीन आचार्य्योंने कहे वही वेदोक्त सनातनधर्म्म व्योरेवार वर्णनकिया हे पितामह राजधर्म्मोंके विशेष उनधर्म्मोंको भी कहिये जिनको अच्छेप्रकार से धारण करसकें भीष्मजी बोले कि सब जीवों की रक्षाही को क्षत्रियोंका धर्म्ममाना है उसको जिस प्रकार से करना योग्य है वह मैं कहताहूं कि जैसे मोरचित्र विचित्र परोंको धारण करता है उसीप्रकार धर्म्मज्ञ राजाभी बहुत प्रकार के रूपोंको प्रकटकरे जैसे तीव्रता कुटिलता सत्यता और सीधेपने को धारण करताहै वैसेही न्याय और बुद्धिबल में प्रवृत्त होकर सुखको पाताहै जिस

प्रयोजनमें जैसे रूपसे मनोरथ सिद्धहोताजाने उसीवर्ण और रूपको दिखा-
वे बहुरूप राजाका सूक्ष्मअर्थ भी पीड़ाको नहीं पाताहै, सदैव गुप्तवार्त्ता का
रक्षा करनेवाला ऐसाहो जैसे कि शरद ऋतुका मौनहुआ मोरहोताहै शास्त्रमें
प्रवीण श्रीमान्‌राजा शुद्ध वचन और शुद्ध देहवाला हो और आपत्ति के
द्वारों पर सावधानीसे ऐसे वर्त्तमानहो जैसे कि बर्षासे उत्पन्न होनेवाले पर्वतों
के जलझरनोंपर वर्त्तमान होते हैं और सिद्ध ब्राह्मणोंका शरणागतहो, अर्थ
की इच्छा करने वाला राजा शिखाको धर्म्मध्वजा रूपकरे और दण्डमें सदैव
सन्नद्धहोवे और उसको बड़ी सावधानी से करे लोककी आमद और खर्चको
देखके बड़े वृक्षवाले बनको निचोड़े अर्थात् धनरूप रसको लेवे, अपने स-
मूहमें शुद्ध चित्तहोवे और शत्रुके खेतोंको घोड़े आदिके पैरोंसे सत्यानाश
करे और अपने पक्षको खूबदेखे शत्रुके मित्रोंकोचाहै और शिकार बाजीके
बहानेसे खूब भ्रमण करताहुआ शत्रुओंके पक्षवालोंको ऐसा कम्पायमान
करे जैसे कि वनोंमें फूलोंको ऊंचे और बृद्धि पानेवाले पहाड़ों की समानता
रखने वाले राजाओंको नष्टकरे और अविज्ञात स्थानमें प्रवेश करके गुप्तयुद्ध
को करे, और जैसे वर्षाऋतुमें सायंकालके समय मोर निर्जन स्थानमें गुप्त
होताहै इसीप्रकार मोरकेसमान स्त्रियोंकेसाथ महलमेंनिवासकरे परंतु कवचको
नहीं त्यागे आप अपनी रक्षाकरे, दूतोंके बतायेहुये स्थानोंपर शत्रुके लाये
हुये वर्णरूप पाशोंको अपनी देहसे जुदाकरे कठिनतासे निश्चय होनेवाले
पाशज्ञान होनेपर उसकपट भूमिको पाकर अपनेको उससे मिलावे तब नष्ट-
ताको प्राप्त होताहै उनबड़े विषभरे क्रोधी मनुष्योंको मारे जो कि कुटिलता
किया करते हैं शत्रुकी सेनाके पक्षोंका नाशकरे और दृढ़मूल रखने वाले
मन्त्री और शूरोंकोनियतकरे और सदैव मोरकेसमान इच्छाके अनुकूल उत्तम
कर्म्मों को करे और सब ओरसे बुद्धिको ऐसे प्राप्तकरे जैसे कि घनेबनों में
टीड़ियोंका समूह बृक्षोंको बेपत्ते करता है इसप्रकार से राजा मोर के समान
अपने राज्यकी रक्षाकरे और वह चतुर मनुष्य नीति उत्पन्न करनेवाली बु-
द्धिको धारणकरे और अपनी बुद्धिसे चित्तको स्वाधीन करना और दूसरे
की बुद्धिसे दृढ़ निश्चय करना और शास्त्रसे उत्पन्न होनेवाली बुद्धिके द्वारा
अपने गुणोंका प्राप्त होना यह शास्त्र का प्रयोजन है शत्रुको मीठे बचनोंसे
विश्वास दिलावे और अपनी सामर्थ्य को देखे,अपने विचार से अपनीबुद्धि
को भ्रमावे जो कि सामनीति से संयुक्त बुद्धि रखने वाला हो और कर्त्तव्य
अकर्त्तव्य कर्म्मों का जारी करनेवाला हो उस गंभीर बुद्धि पंडित को योग्य
उपदेश होनेपर उपदेश का करना वृथा है अर्थात् उपदेश की आवश्यक-
तानहीं है चाहे वहज्ञानी बुद्धिमें बृहस्पतिजी के भी समान हो और निर्बुद्धि

ताके बादको करे वह शीघ्रही ऐसे बिश्वास को प्राप्तहोताहै जैसे कि जलमें डाला हुआ गरमलोहा शरदीको प्राप्तहोता है राजा अपने और दूसरेके सब कामोंको जो कि शास्त्रोंसे उपदेश हुयेहों जारीकरे प्रबन्धकी रीतोंकाजानने वाला राजा मृदुस्वभाव ज्ञानी और शूरको और जो दूसरे महाबलवान् हैं उनको अपने राज्यके कामोंपर नियतकरे फिर अपने योग्य अधिकारों पर नियत होनेवाले पुरुषोंको देखकर उनसबका ऐसादृष्टाहो जैसे कि वीणाके बड़े स्वरको देखता है धर्म्मोंकी अबिरोधता से सबका हितकरे जो राजा यह मानता है कि यह मेराहै वह पर्ब्बत के समान अचल है प्रिय अप्रियको समानकर निर्णय को बुद्धि में दृढ़ नियत कर के धर्म्म की ऐसे रक्षाकरे जैसे कि सूर्य्य बड़ी किरणों को धारण करके प्रजाका पोषण करता है प्रकृतिदेश और घराने के जानने वाले नम्र भाषी तरुणावस्था में निर्दोषी हितसंयुक्त व्याकुलता रहित निर्लोभी शिक्षावान शान्तचित्त धर्मों में कुशल,धर्म, अर्थ के रक्षक पुरुषों को राजा सब अधिकारों पर नियतकरे कर्म में प्रवृत्त राजा इसप्रकारसे राज्य के कामोंकी प्राप्त होनेवाली यात्रामें कुशल हो और प्रसन्न चित्त दूतोंसे संयुक्तहो उससफल क्रोध हर्षवाले और राज्यकार्य्य के देखनेवाले खजाने पर अपना बिश्वास रखनेवाले राजाको यहधनसे पूर्ण पृथ्वीमहाधन ऐश्वर्य्य की देनेवाली है जिसकी कृपालुता प्रकट है और दण्ड उचितहै और जिसका देश और देहरक्षित है वह राजा राजधर्म्मोंका जानने वालाहै और जैसे उदय होनेवाला सूर्य्य अपनी किरणोंसे संसारको देखता है उसीप्रकार सदैव अपने देश को देखै और दूतोंसमेत अपनी प्रजाके सब वृत्तान्तों को जाने उसीप्रकार अपनीबुद्धिसे कर्म्म करे, राजा अपने बर्त्तमान समयकोजानकर अपने धनको नहींबखाने वह बुद्धिमान गौ भैंसकेसमान देशको प्रतिदिन दुहै, जैसे क्रमपूर्बक भौंरा रसको पीता है उसी प्रकार राजा धनको लेकर संचयकरे, जो धन रक्षित धनसे अधिक होय उसको धर्म्म के कामों में खर्चकरे जो राजा कि शास्त्रज्ञ और बुद्धिमान है वह खजाने से धनकोकभी न दे,थोड़ेधन का और शत्रुके मनुष्योंका अपमान नहीं करे, बुद्धिसेआत्मा को जाने और निर्बुद्धियोंपर बिश्वास न करे धैर्य्यता चातुर्य्यता जितेन्द्रिय होना, बुद्धि,देह, पृथ्वी,शूरता और देशकालमें असावधान न होना यह आठ बातें थोड़े या बहुतधनमें वृद्धिकारकहैं, घृतसे सींचीहुई थोड़ी अग्निभी वृद्धि पातीहै और एकबीज हज़ार रूपसे उत्पन्न होताहै इसकारण बड़ी आमद और खर्चकोसुनकर थोड़ेधनका अपमान न करे,बालक,तरुण,वृद्ध कैसाही जो शत्रु है वह असावधान रहनेवाले पुरुषको सदैव मारताहै दूसरा राज्य का चाहने वाला काल के द्वारा उसकी जड़को काटता है, जो कालज्ञ है वह राजाओंमें

श्रेष्ठ इसकी कीर्तिको हरण करके धर्मका नाशकर अर्थमें इसके बड़े पराक्रम को नष्ट करता है, बिरोधी शत्रु निर्बल अथवा बलवान् कैसाही हो उससे राजा असावधान न रहै संचित धनकी नष्टता वा वृद्धि वा रक्षा वा ऐश्वर्य और विजय आदि को जानकर शत्रुसे सन्धिकरे या युद्धकरे इसहेतुसे बुद्धिमानराजा अपनी बुद्धिसे रक्षा कियाजाता है, प्रकाशित बुद्धि पराक्रमी को मारती है और बुद्धिसे बृद्धिपानेवाली सेना रक्षित रहतीहै और वृद्धिपानेवाला शत्रुभी बुद्धि से पीड़ाकोपाता है जो काम बुद्धि के अनुसार होता है वही उत्तमहै पंडित निर्दोष और सब मनोरथों का चाहनेवाला राजा थोड़े पराक्रम से भी उनको प्राप्तकरताहै अपने को इच्छाओं से संयुक्त चाहता है अर्थात् लोभी और अहंकारी होता है वह कल्याण के पात्रको थोड़ाभीनहीं भरता है इसकारण प्रजाका प्यारा राजा सब से राज्य की भेजलेव प्रजापर विजली के समान गिर कर देरतक पीड़ादेनेसेभी पराक्रमी नहींहोता विद्या, तप और बहुतसा धन यहसब उद्योगसे मिलसक्तेहैं और बुद्धि के आधीनमें हैं इस कारण से उद्योग को बड़ाजाने जिसदेहमें इन्द्र, विष्णु, सरस्वती, आदि देवता और सबजीव सदैव निवासकरतेहैं इसहेतु से ज्ञानी मनुष्य देहका अपमान नहींकरे लोभी पुरुष को सदैव दान के द्वारामारे लोभी दूसरे के धन से शान्त नहीं होताहै जो निर्धन हैं वह सबकर्मके फल सिद्धकरनेमें लोभी हैं वह सुख के लोभसे धर्मभोग, पुत्र और स्त्री की इच्छाकरते हैं इसलोकमें लोभी पुरुष के भीतर सब दोषही होते हैं इसकारण राजा लोभीको अधिकारोंपर नियत नहींकरे पूरी बुद्धिसे नीचपुरुष को चेतावैहै इसलिये ज्ञानी राजा शत्रुओं के प्रारंभ कर्म और सब अर्थोंको भी नष्टकरे हे युधिष्ठिर ब्रह्ममंडली में मुख्य वृत्तान्त का जाननेवाला मंत्रियों से रक्षित कुलीन राजा सामन्तों को अपने आधीनकरने को समर्थ है बुद्धिसंयुक्त मिश्रितकहेहुये राजधर्मों को बुद्धिसे समझो, जो राजा गुरुकेपास जाकर इनधर्मों को हृदय में धारणकरे वह संसारकी रक्षाकरने को समर्थ है जिसराजाका सुख अनीति उत्पन्न दैवसे मिलनेवाला बुद्धिके अनुसार हठसे वर्त्तमान दीखता है उसको उत्तमगति और राज्यके सुख प्राप्तनहीं होते धनों से उत्तमबुद्धि और संसार से पूजित शूरता आदि गुणों से सम्पन्न युद्धके बीच पराक्रम में देखेहुये पुरुषों का समूहों में देखकर सावधान राजा चढ़ाईकरनेवाले शत्रुओं को निशान कर के थोड़ेदिनों मेंही मारता है नानाप्रकार के मार्ग और कामोंसे युक्तियों को देखे और बिनायुक्तिके रायको संयुक्तनहींकरे, निर्दोषी मनुष्योंमेंभी दोषों का देखनेवाला राजा उत्तमधन और सुन्दर कीर्त्ति और धनको अच्छे प्रकार से नहीं भोगता ज्ञानी राजा मित्रों की अच्छी परीक्षा लेकर जिनदोमित्रों

को विचार करके एकही अधिकार पर नियत करे उन दोनोंके मध्य में जो भारीबोझेकोउठावे उसकी प्रशंसाकरे मेरेकहेहुये उन राजधर्मों के ऊपर ध्यान करो और मनुष्योंकी रक्षाकरने में बुद्धि को प्रवृत्तकरो तुम सुख से पुण्य के फलको पाओगे हे राजा सबलोक धर्म्महीको मूल जानता है ५६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्म्मेशतोपरिविंशतितमोऽध्यायः १२० ॥

एकसौइक्कीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह आपने यह सनातन राजधर्म्म कहा और दण्ड बड़ासमर्थ है सब दण्डों में वर्त्तमान है देवता ऋषि महात्मा,पितृ,यक्ष, राक्षस, पिशाच, साधुगण और अधिककरके लोकमें सबजीव और पशुपक्षियोंके मध्य बड़ातेजस्वी सर्वव्यापी दण्डही उत्तम है आपने इसप्रकार कहा है कि देवता असुर, मनुष्य, जड़, चैतन्य जीवोंकेसाथ सम्पूर्ण संसारको दण्ड में वर्त्तमान देखो सो हे पितामह मैं इसको मूल समेत जीतना चाहताहूं कि दण्डकौनहै, कैसाहै कैसा रूपहै और उसका मुख्यस्थान कौनसा है और किसका आत्माहै कैसे उत्पन्नहुआ और क्या आकृतिहै और प्रजाकेमध्य किस प्रकार जागता है आदिअन्त में रक्षाकरता हुआ जागता है पहले कौनरूप से जानाजाता है और दण्डका कौनसानाम उत्तम है, दण्डकिसमें नियत करनेवाला है और इसकी कौनगति कहीजातीहै इनग्यारहप्रश्नोंमें दण्डकौनहै इसका उत्तर भीष्मजीदेतेहैं कि हेयुधिष्ठिर सुनो जोदण्डहै और जैसे व्यवहाररूपहै और जिसके आधीनहै केवल वही दण्डहै और हेतात अच्छीतरह धर्म्मका प्रकट करनेवाला व्यवहार इच्छाकियाजाताहै, लोकों में सावधान बुद्धिराजा के धर्मकालोप कैसे नहींहोता, जैसे कि इसप्रकार के व्यवहारका वह कर्म्म इच्छाकिया जाताहै जिसमें कुमार्ग के द्वारा दूसरेका धनका लेना नहींहोताहै हेराजाप्राचीनसमयमें मनुजीनेभी आदिमेंइसको कहा,प्रियअप्रिय जिसमें समान हैं उस जारी किये हुये दण्डसे जो राजा अच्छे प्रकारसे प्रजा की रक्षाकरता है केवल वही धर्म्म है और प्राचीन समय में जिस प्रकार मनुजीने यह वचन कहा है और जो मैंने कहा वह ब्रह्माजी का महा वचन है यह वचन प्रथम कहागया इस हेतुसे इसको पहला वचन जानो, इसलोक में वह दण्ड व्यवहार के प्रकट करनेसे व्यवहार नाम कहा जाताहै अच्छे प्रकार जारी होनेवाले दण्ड में तीनवर्ग अर्थात् धर्म्म, अर्थ, काम बराबर जारी होतेहैं रूपसे अग्नि के समान प्रकट होनेवाला अर्थात् रुद्ररूप दण्ड परम देवहै वह दण्ड नीले कमल की समान श्याम चारदाढ़ चारभुजा आठ चरण बहुतसे नेत्र तीक्ष्णकर्ण खड़ेरोम देहवाला जटाधारी दो जिह्वा रखने

वाला रक्तमुख मृगराज के चर्म्मका धारण करनेवाला है वह अजय दण्ड सदैव इस उग्ररूप को धारण करता है अर्थात् खड्ग, धनुष, गदा, शक्ति, त्रिशूल, मुद्गर, बाण, मूशल, फरसा, चक्र, पाश, दण्ड, दुधारा, खड्ग, लोष्ठू और इसलोक में जो कोई शस्त्रहैं उनकारूप मूर्तिमान् दण्डही भेदता, छेदता, पीड़ादेता, घातकरता, चीरता, गिराता, मारता, चारोंओर दौड़ता घूमता है खड्ग से घात करने वाला और तीक्ष्ण कवच रखनेवाला दुःखसे धारण होनेवाला लक्ष्मी से उत्पन्न हुआ विजयरूप धर्म्मरूप हाकिम और सनातन व्यवहार रूपहै शास्त्र ब्राह्मण और मंत्ररूप प्राचीन धारणा बुद्धि वाले आचार्योंमें उत्तमधर्म्म रक्षक अविनाशी देवता सीधा चलने वाला सदैव गमन करनेवाला सबसे पहले उत्पन्न होनेवाला असङ्ग रुद्रका पुत्र मनु बड़ा कल्याण करने वालाहै हे युधिष्ठिर दण्डके यह सब नाम कहे अब दण्डके मुख्यरूपको कहते हैं कि दण्डही भगवान् विष्णुहै और दण्डही प्रभु नारायण है सदैव महारूप को धारण करता महापुरुष कहाजाताहै अब दण्ड को शक्तिरूप वर्णन करतेहैं जिसप्रकार ब्रह्मकन्याओंको लक्ष्मी, वृत्ति, सरस्वती, दण्ड नीति और जगद्धात्री कहतेहैं यह सब दण्डही बहुत से रूप धारण करनेवाला है अर्थ, अनर्थ, सुख, दुःख, धर्म्म, अधर्म्म, बल, निर्बल, प्रारब्धहीन, प्रारब्धी पुण्य, पाप, गुण, अवगुण, इच्छा, अनिच्छा, ऋतु, मास, रात्रि, दिवस, क्षण, सावधानी, असावधानी, प्रसन्नता, क्रोध, शान्तचित्त, बाहर, भीतर, प्रारब्ध, उद्योग, मोक्ष, बन्धन, भय, निर्भय, हिंसा, अहिंसा, तप, यज्ञ, संयम, विष, निर्विष, अन्त, आदि, मध्यकी क्रियाओंका प्रपंच, अहंकार, भूल, एकता, कपट, धैर्य, न्याय, अन्याय, बल, अबल, बिरुद्धता, व्यय, अव्यय, नम्रता दान, काल, अकाल, मिथ्या, बुद्धिमानी, सत्य, श्रद्धा, अश्रद्धा, नपुंसकता, निश्चय, लाभ, हानि, बिजय, पराजय, कठोरता, नम्रता, मृत्यु, शास्त्र अशास्त्र, शत्रु, अशत्रु, कार्य्य, अकार्य्य, निंदा, अनिंदा, लज्जा, निर्लज्ज, धनी, निर्धनी, तेज, कर्म्म, पण्डिताई, सामर्थ्य, वचन, बुद्धिमानी, सिद्धांत इत्यादि इसदण्डके बहुतरूपहैं जो इसलोकमें दण्ड नहींहोय तो परस्पर में एकएक को मारडालें हे युधिष्ठिर दण्डके ही भयसे परस्पर नहींमारते हैं इसलोकमें दण्डसे प्रतिदिन रक्षित प्रजा राजा की सदैव वृद्धि करती है इसहेतुसे दण्डका स्थान बड़ाहै यह दूसरे प्रश्न का उत्तर है किसका आत्मा है किसप्रकार उत्पन्नहुआ और किस रूपका है इनतीनों प्रश्नों का उत्तर देतेहैं हे राजा इसलोक को दण्ड शीघ्र वर्त्तमान करता है ऐसे निश्चयवाला धर्म्म है और वह ब्राह्मणों में वर्त्तमान होताहै किसप्रकार जागताहै इसका उत्तरदेते हैं कि धर्म्म संयुक्त ब्राह्मण देवताओं से संयुक्त होते

हैं यज्ञवेदोंसे उत्पन्नहुआ और देवताओं को प्रसन्न करताहै और प्रसन्न होकर देवता सदैव इन्द्रसे वार्त्तालाप करते हैं इन्द्र प्रजा पर कृपाकरके अन्न को देताहै सब जीवोंके सदैव अन्नमय प्राण हैं इसीके बल से प्रजानियत रहती है इनकेबीच में दण्ड जागता है ऐसे प्रयोजन वाले दंडने क्षत्रीरूपकोपाया सदैव सावधान अबिनाशी दंडप्रजाकी रक्षा करताहुआ जागताहै ईश्वर, पुरुष, प्राण, पराक्रम, धन, प्रजापति, भूत, आत्मा, जीव, इन आठनामोंसे भी कहनेमें आताहै ईश्वरने इसराजामें वह दंडनीति और ऐश्वर्य्य धारण कियाहै जो कि पराक्रम से संयुक्तहै और सदैव पांचरूप रखनेवालाहै वहपांच रूपयहहैं धर्म्म, ब्यवहार, धर्म्मेश्वर, जीव, रूप, कुल, महाधनी, मंत्री, बुद्धि और सबप्रकार के जो पराक्रम कहेगयेसो हेयुधिष्ठिर इनआठ दिव्य पदार्थोंके द्वारा दूसराबल अर्थात् खजानेकी वृद्धि प्राप्त करनी चाहिये हाथी, घोड़े,रथ, पदाती,नौका उसीप्रकार नौकर या बेगारी देशीवस्तु कम्बलआदि यह आठ अंग रखनेवाला पराक्रम कहा अथवा सेना और राजका दण्डही अंगहै इसके विशेष शेषवार्त्ता युक्त दण्ड के अंग रथके सवार हाथीके सवार,अश्वसवार मंत्री, वैद्य भिक्षुक अदालत के हाकिम, मुहूर्त्त रखनेवाले दैवचिन्तक खजाने के मित्रयह सबसामानहैं सात प्रकृति और आठअंगों समेत इसका देहकहा-गया है जो लोक में दण्डका ज्ञाता है वह राजका अंगहै और दण्डही उत्प-त्ति स्थानहै ईश्वरने किसी कारणसे बड़ीयुक्तिकेसाथ क्षत्रीको दण्डसुपुर्द किया यह समदर्शी दण्ड सनातन है संसारकी रक्षा और अपने धर्म्म के नियतरखनेके निमित्त ब्रह्माजीका दिखायाहुआ धर्म राजाओंको महा पूज-नीयहै इसीप्रकार मुद्दई और मुद्दाअलहके कारण पैदाहुआ दूसरा ब्यवहारहै इसी निमित्त जो ब्यवहार मनोरथों से भराहुआ देखागया उसका नाम भ-र्तृ प्रत्यय लक्षणहै फिर ब्यवहार वेदोक्त और वेदमूलकहा जाता है इसीप्र-कार दूसरा ब्यवहार कुलाचारसे संयुक्त और शास्त्रोक्त है जो यह पहिलाभर्तृ प्रत्यय लक्षण नाम दण्ड कहा वह हमराजा लोगों में जानना चाहिये इस हेतुसे दृष्टआने वाला दण्ड भी ब्यवहाररूप कहा गयाहै और जो ब्यवहार कहागयाहै वह वेदोक्तहै जो वेदसे प्रकट होनेवाला है वह गुणदर्शन नाम धर्म्म है जो कि कर्म्म के कारण से ज्ञानियोंने धर्म्मके लिये उपदेशकिया हे राजा ब्रह्माजीका दिखाया हुआ दण्ड प्रजाका रक्षक है वह सत्यबुद्धि और ऐश्वर्य्यका बढ़ाने वाला दण्ड तीनों लोकोंको धारणकरताहै जो दण्डहै वह देखाहुआ हमारा सनातन ब्यवहारहै जो ब्यवहार देखागया वह वेदहै यह निश्चयपूर्वक निर्णय कियागया है जो वेदहै वही धर्म्महै जो धर्म्महै वही सत्यमार्गहै पितामह ब्रह्माजी पहिले प्रजापतिहुये तबसंसार के स्वामी देवता

असुरराक्षस मनुष्य और सर्पोंसमेत सब लोकोंके ईश्वरहुये इस कारण यह भर्तृप्रत्यय लक्षणनाम हमारा व्यवहार जारीहुआ इसी कारण उनब्रह्माजीने इस व्यवहार दर्शी वचनको कहा माता, पिता, स्त्री पुरोहित, यह सब उसराजा की ओरसे दण्डके योग्यहैं जो राजा अपने धर्म्मसे राज्यपै नियतहै ६० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्मेशतोपरिएकविंशतितमोऽध्यायः १२१ ॥

एकसौबाईसका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हम यहां इसप्राचीन इतिहासको भी कहतेहैं कि अंग देशोंमें महातेजस्वी वसुहोमनाम राजा प्रसिद्धहुआ सदैव धर्म्मकाज्ञाता महा तपस्वी वह राजाअपनी रानीसमेत उसमुंजपृष्ठपर्वतपर गया जो पितृ और देव ऋषियों से पूजितथा वहां हिमालयके शिखरपर सुवर्ण पर्वतके समान मुंजावटमें जहां श्रीरामचंद्रजीने जटाहरण उपदेशकियाथा हे राजेंद्र तभीसे वह तेजव्रतवाले ऋषियों ने उस रुद्र सेवित देश का नाम मुंजपृष्ठ रक्खा तब वहां वेदोक्त बहुत गुणोंसे संयुक्त और ब्राह्मणोंका प्यारा वह राजा देव ऋषियोंके समान होताहुआ दैवयोगसे इन्द्रका प्रतिष्ठितमित्र शत्रुहन्तामहा प्रतापी राजामान्धाता उसके पास आया वह मान्धाता उसवसुहोम राजाके पासजाकर नम्रता पूर्व्वक दण्डप्रणाम करके उसकेआगे वर्त्तमानहुआ वसु-होमने भी पाद्यअर्घ दिया और सप्तांग रखनेवाले राज्य की कुशल को पूछकर उस राजामान्धाता से जो कि प्राचीन समयमें सत्पुरुषोंसे सेवित और बुद्धि के अनुसार धर्म्म में प्रवृत्तथा कहा कि हे राजन् आपका क्या शिष्टाचार करूं तब मान्धाता उस महाज्ञानी वसुहोमसे कहा कि हे राजा तुमने बृहस्पति जी के सब मतको पढ़ा और इसीप्रकार शुक्रजी के भी शास्त्रकाजाना सो मैं यह जानना चाहताहूं कि दण्ड किसप्रकार उत्पन्न होता है क्या वह पहले जागताहै या उत्तम कहाजाताहै वह दण्ड क्षत्रि योंमें कैसे नियतहुआ यह आप मुझसे कहिये मैं आपको गुरुदक्षिणा दूंगा वसुहोमने कहा कि हेराजा जिसप्रकारसे संसारका वशकरनेवाला धर्मका आत्मासनातन नीतिदण्ड प्रजाकीरक्षाके लिये उत्पन्न हुआ उसको सुनो कि यज्ञकी इच्छा करने वाले ब्रह्माजीने जब अपने योग्य ऋत्विजकोनहीं पाया तब उसने अपने गर्भको बहुत वर्षोंतक शिरमें धारण किया और हज़ार वर्षके पीछे वह गर्भ छान लेतेही गिरपड़ा वह क्षुपनामप्रजापतिहुआ और वहउसके यज्ञ में ऋत्विज हुआ उस ब्रह्मयज्ञके जारी होने पर प्रधान रूपके देखनेसे वह दण्ड अन्तरध्यान हुआ अर्थात् दीक्षा रूपमें नियतहुआ उसदण्डके अन्तरध्यान होनेपर प्रजाओंकी मिलावटहुई तब योग्य अयोग्य

कर्म और भक्ष्य अभक्ष्य वस्तुओं का विवेक नहीं रहा और भोजन करने न करने के योग्य बस्तुभी बर्त्तमान नहीं हुई तो सिद्धकहांसे होय एक दूसरे को मारताथा उस समय भोग्य अभोग्य स्त्रीका विचार नहींहोताथा अपना और दूसरे का धनसमान गिनतेथे परस्परमें ऐसे घात करतेथे जैसे कि कुत्ते मांसको टुकड़े टुकड़े करते हैं पराक्रमी निर्बलोंको मारतेथे ऐसी सब मर्यादा बर्त्तमान हुई तब ब्रह्माजी ने सनातन बरदायी भगवान् विष्णु देवता और महादेव जीको अच्छे प्रकारसे पूजन करके यह कहा कि हे केशवजी आप यहां कृपाकरिये यहां बर्णोंका मिलाप जैसे नहो वही आप कीजिये तदनन्तर देवताओंमें उत्तम त्रिशूलधारी भगवान् शिवजी ने देरतक ध्यान करके अपने आत्मारूप दण्ड को अपनी देहसे उत्पन्न किया उस धर्म्म चरणसे नीतिनामदेवी सरस्वती उत्पन्नहुई उसने तीनों लोकों में दण्ड नीतिको प्रसिद्ध किया फिर भगवान् शिवजीने देरतक ध्यानकरके समूहोंका एक २ स्वामी नियत किया अर्थात् इंद्रको देवताओंका स्वामी और सूर्य्यके पुत्र यमराजको पितरोंका स्वामी और कुबेरजी को धनका और राक्षसोंका स्वामी किया और सुमेरु को पर्ब्बतोंका और महासमुद्र को नदियोंका स्वामी बनाया जल और अस्त्रोंके समूहका बरुणजीको स्वामी नियतकिया फिर मृत्युको प्राणका ईश्वर और अग्निको तेजोंका स्वामी किया प्रभु ईशान महात्मा महादेव बिशालाक्ष सनातनदेवको भी रुद्रों का स्वामी नियत किया बशिष्ठ जीको ब्राह्मणों का अग्नि को बसुओंका सूर्य्यको तेजों का, चन्द्रमा को नक्षत्रों का, स्वामी किया अंशुमन्त को बरुधोंका और द्वादशभुजधारी षण्मुख कुमार स्कन्द को देवता आदि सब जीवोंका राजा किया उत्पत्ति नाश कारक कालको चारप्रकार वाली मृत्यु और दुःखसुखका स्वामी बनाया कुबेरजी राजाओं के राजाहुये और शूलधारी शिवजी सबरुद्रों के स्वामी हुये और समीपही उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मपुत्र क्षुपनामको प्रजाओंके सब धर्म्म धारियोंका बड़ा स्वामी किया उसके पीछे महादेवजी ने बुद्धि के अनुसार उसयज्ञके जारीहोने पर धर्म्मके रक्षक दण्डको विष्णुजी के सुपुर्द किया और विष्णुने अंगिरा ऋषिको दिया अंगिराने इन्द्र और मरीचि को दिया मरीचिने भृगुजीको दिया भृगुजीने उस सावधान दण्ड धर्म्मको ऋषियोंको दिया ऋषियों ने लोकपालों को दिया और लोकपालों ने क्षुपको दिया क्षुपने सूर्य्यके पुत्र मनुजीको दिया उन्होंने अपने पुत्रोंको दिया और कहा कि न्यायके अनुसार विचारकर धर्मसे दण्ड जारीकरना चाहिये अपने आप स्वतंत्रतासे दुष्टोंका दण्डदेना दण्ड नहीं है जुर्माना लेना बाहरी कर्म है अर्थात् केवल भयभीत करने के निमित्त है खजाने की वृद्धिके लिये

नहीं है अंगों से रहितकरना देहघात और देहकी अनेक पीड़ादेना देहको गिराना और देशसे निकालना छोटेकारणों से नहीं होताहै सूर्य्य के पुत्र मनुने उनसे वर्णन किया कि यहदण्ड क्रमसे प्रजाकी रक्षापूर्वक सदैव जागता रहताहै और इन्द्रभी जागते हैं और इन्द्रसे अग्नि देवता जागते हैं प्रथम वरुण देवता जागते हैं वरुणसे प्रजापति प्रजापतिसे नीतिरूप धर्मजागताहै धर्म्मसे ब्रह्माजीका पुत्र सनातन व्यवसाय नाम जागताहै व्यवसाय से चारों ओर रक्षा करता हुआ तेज जागता है उस तेजसे औषधियां और औषधियोंसे पहाड़जागते हैं पहाड़ोंसेरस और रसोंसे गुण और निर्ऋतिदेवी जागती है निर्ऋतिसे सब ज्योतियां जागती हैं ज्योतियोंसे वेद की प्रतिष्ठा और उससे हयग्रीवप्रभुजागते हैं उसहयग्रीव से प्रभु पितामह ब्रह्माजीजागते हैं ब्रह्माजीसे भगवान् महादेव शिवजी जागते हैं शिवजी से विश्वेदेवा और विश्वेदेवाओं से ऋषि ऋषियों से चन्द्रमा चन्द्रमासे सबसनातन देवता और देवताओं से लोक में ब्राह्मणजागते हैं और ब्राह्मणों से राजालोग जागतेहैं वही धर्म्म से संसार की रक्षा करते हैं और राजाओंसे स्थावरजीव और प्रजा के लोग जागते हैं उन्होंमें दण्डजागताहै ब्रह्माजी के समान तेजस्वी दण्ड सब को धर्षण करताहै और काल आदि मध्य अंत तीनों समय जागता है सबलोकों के ईश्वर महादेव शिवजी महाराज सदैव जागाकरते हैं यह दण्ड आदि मध्य अंत इन तीनों समयों में प्रसिद्धहुआ धर्मका जाननेवाला राजा न्याय के अनुसार इसको करे भीष्म जी बोले कि जो मनुष्य वसुहोम के इसमतको सुने और सुनकर अच्छेप्रकारसे काम में लावे वह सब मनोरथों को सिद्धकरे हे भरतवंशी युधिष्ठिर यह दंडधर्म्म से विरुद्ध होने वालेसब लोगोंको बदला देनेवाला मैंने तुझ से कहा ५६॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिराजधर्मेशतोपरिद्वाविंशोऽध्यायः १२२॥

एकसौ तेईसका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे तात मैं धर्म्म अर्थ काम के निश्चय को सुना चाहता हूं संसारका सब कार्य्य किन २ वस्तुओं में नियत होता है धर्म्म अर्थ काम का मूल क्या है तीनोंका उत्पत्तिस्थान क्या है वह परस्पर में संयुक्त होते हैं और किसप्रकार से जुदे २ होजाते हैं भीष्म जी बोले कि जब मनुष्य शुद्ध चित्त होते हैं तब पृथ्वी पर धर्म्म को आगे करने वाले अर्थ धर्म्म काम यह तीनों ऋतुकालमें बुद्धि के अनुसार स्त्रीके गर्भाधान में निश्चय आकर संयुक्त होते हैं दैव से मिलाहुआ अर्थ धर्म्मका और कामअर्थ का मूल कहा जाता है और सबका मूलसंकल्प कहाजाता है अर्थात् धर्म अर्थ काम तीनों

संकल्प से उत्पन्न होते हैं और संकल्प बिश्वरूप है और सब विषय आहार सिद्धी के निमित्त हैं और निवृत्ती मोक्ष इस त्रिवर्ग का मूल कहाजाता है अर्थात् आदि में मोक्षके लिये इन तीनोंका बर्णन है धर्म्म से देहकी रक्षाहै और अर्त्थ धर्म्मके निमित्त होताहै और काम ऋतु फलवालाहै ऐसी दशा में वह सब रजोगुण प्रधान हैं धर्म्म नीरोगताके निमित्त है और अर्थ धर्म की इच्छा के लिये है काम इन्द्रियों की तृप्तिके लियेहै इनतीनों में जो श्रेष्ठ होय उसको सेवनकरे अर्थात् धर्म्म चित्त की शुद्धी के निमित्त और अर्थ निष्काम कर्म के लिये और काम केवल देहके ठहरने के निमित्तहै इसप्रकार से करना चाहिये इन धर्म्म अर्त्थ काम तीनोंको चित्त से भी त्याग न करे फिर स्वरूप को क्यों त्यागेगा तपसे बिमुक्त होकर इन सब धर्म्म आदिसे पृथक् होना चाहिये अर्थात् फलकी इच्छा से इनको न करे किन्तु अकाम करे मोक्ष में त्रिबर्ग की यह श्रेष्ठ बुद्धी है अर्थात् निष्ठा है जब कि मनुष्य उसको प्राप्त कर सके इसप्रयोजन से कि धर्म से अर्त्थ है और अर्त्थ से धर्म्म है अज्ञान नीच बुद्धी से दृष्ट आनेवाला अज्ञानी धर्म अर्त्थ के फलको नहीं पाता है अब धर्म आदिके रजोगुण को दिखलाते हैं धर्म्म की प्रवृत्ति फलकी इच्छा है और दान भोगका प्राप्त न करना अर्थ की प्रवृत्ति है और कामप्रीति रूप प्रवृत्ति का रखनेवाला है फिर अपने गुणोंसे पृथक् वह त्रिबर्ग चित्तशुद्धीआदिके द्वारा ब्रह्मानन्द रूप फलको देता है तीनोंप्रश्नों को कहकर चौथेप्रश्न को इतिहास के द्वारा कहताहूं उसप्राचीन इतिहास में कामन्दक ऋषि और आग रिष्ट राजा का प्रश्नोत्तर है आगरिष्ट राजाने मर्य्याद भंग करके कामन्दक ऋषिसे पूछा कि हे ऋषि जो काम मोह से युक्त राजा पाप को करता है उसके पाप दूर होनेका कौन सा उपाय है जो मनुष्य अज्ञानता से अधर्म को धर्म्म जानकर सेवन करे उसप्रसिद्ध मनुष्यको किसप्रकारसे राजा सुमार्गमें लावे कामन्दक ने उत्तरदिया कि जो पुरुष धर्म अर्थको त्यागकरके कर्म में ही प्रवृत्त रहता है वह इसलोक में धर्म्म अर्त्थके त्यागने से ज्ञान भ्रष्ट होता है और ज्ञानभ्रष्ट होनेसे मोहको प्राप्त होकर धर्म अर्थ को नाश करता है जब राजा उनदुराचारी दुष्टमनुष्यों को दण्ड नहीं देता है तब लोक ऐसा व्याकुल होता है जैसे कि घर में बैठेहुये सर्प से व्याकुल हो प्रजा ब्राह्मण और साधु उसकी इच्छा के अनुसार कर्म नहीं करते हैं इस कारण से संशय को प्राप्त होकर इसी प्रकार से घातको प्राप्त होता है वह अपमान और निन्दायुक्त होकर दुःखरूप जीवन को पाता है निन्दित जीवनेसे मनुष्य का मरना उत्तम होता है उसनिंदित के करने योग्य कामोंको कहते हैं इस स्थानमें आचार्य्यों ने उसपापी को तीनों वेद और

ब्राह्मणोंका सत्कार करना कहा है वह धर्ममें बड़ा चित्तलगावे और बड़ेघराने में विवाह करे शान्त क्षमावान् ब्राह्मणों का भी सेवन करे इस लोक में सुख से बैठाहुआ जपकरे और सदैव जलसे देहकी शुद्धि रक्खे पापियों को त्याग करके धर्मात्माओं को साथ बैठावे और मीठे बचनों से उनको प्रसन्न करे और दूसरे की प्रशंसा करके सदैव कहै कि मैं तेरा हूं इस प्रकार से पापसे निवृत्त होकर शीघ्र सबका प्रिय होता है और गुरु जिस परम धर्मको कहैं उसके करने से भी निश्चय परम कल्याण को पाता है १४ ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरि त्रयोविंशतितमोऽध्यायः १२३ ॥

एकसौ चौबीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे नरोत्तम पृथ्वीपर मनुष्य यह कहते हैं कि धर्म्म का आदिकारण सुशीलता है इस कारण मुझको बड़ा सन्देह है जो वह हमारे जानने के योग्यहोय तो आप कृपाकरके कहिये कि वह सुशीलता किस प्रकार से प्राप्त होती है और उसका क्यालक्षण है भीष्मजी बोले कि हे महाराज युधिष्ठिर प्रारब्ध और पराक्रम से प्राप्त होनेवाली तुम्हारी लक्ष्मी को और इंद्रप्रस्थ में सभाके मध्य भाइयों समेत तुम्हारे ऐश्वर्य को देखकर महादुःखी हो ईर्षासे भरेहुये दुर्य्योधन ने अपने पिता धृतराष्ट्र से प्रार्थना पूर्व्वक जो वचन कहा उसको सुनो कि अपने स्थानमें बैठेहुये धृतराष्ट्र को अकेला देखकर ईर्षायुत दुर्योधन ने सभाका सबवृत्तान्त जब सुनाया उसको सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा कि हे बेटा क्यों दुःखी होता है अपना मनोरथ कह फिर मैं उसका योग्य उत्तरदूंगा हे शत्रुओं के बिजय करनेवाले तुमने बड़े ऐश्वर्य्य को पाया सबभाई मित्र सम्बन्धी तुम्हारे आज्ञाकारी हैं और तुम बहुमूल्य वस्त्रों को देह में धारण करते हो और मांस ओदनों का भोजन करते हो नानाप्रकार के घोड़ोंपर सवार होतेहो तुम्हारा देह क्यों पाण्डु वर्ण और दुर्बल है दुर्योधन ने कहा कि वह दश हजार महात्मा स्नातक ब्राह्मण युधिष्ठिर के घर सुवर्ण के पात्रों में नित्य भोजन करते हैं हे तात शत्रु पाण्डवों की दिव्यफूल फलों से संयुक्त उस उत्तम सभा को और तीतर के समान चित्रित घोड़ों को और नाना प्रकार के वस्त्रालंकारों को और कुबेरके समान अमोघ धनको देखकर शोचकरता हूं धृतराष्ट्र बोले कि हे नरोत्तम बेटा जो तुम उस लक्ष्मी को चाहतेहो या उससे अधिक चाहते हो तो तुम शीलवान् होजाओ क्योंकि शीलसे तीनोंलोक निस्सन्देह विजयहोने के योग्य हैं लोकमें शीलवानोंको कोईवस्तु अप्राप्त नहीं होती देखो मान्धाता ने एकदिनमें जनमेजयने तीनदिनमें नाभागने सातदिन में सम्पू-

ण पृथ्वीको विजय किया यह सब राजा शीलवान् और दयायुक्त थे इस हेतु
से उनके गुणसे मोललीहुई के समान आपसे आप पृथ्वी प्राप्त हुई दुर्य्योधन
ने कहा कि हे पिता मैं सुनाचाहताहूं कि वह शील किसप्रकारसे प्राप्तहोताहै
जिसकेद्वारा उनराजालोगोंको शीघ्रतासे पृथ्वी प्राप्तहुई धृतराष्ट्रबोले कि हे
दुर्योधनपुत्र मैं इस स्थानपर एकप्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसको प्रा-
चीन समयमें शीलयुक्तहोकर नारदजीने वर्णनकिया और प्रह्लाददैत्य ने
शीलवान्होकर महात्मा इन्द्रकाराज्य छीनलिया और तीनोंलोकोंको स्वाधी-
न किया तब इन्द्रने हाथ जोड़कर बृहस्पतिजीसे कहाकि मैं कल्याणको जान-
ना चाहताहूं तब बृहस्पतिजीने मोक्ष सम्बन्धी महाउत्तम ज्ञानउस देवराजइन्द्र
को सुनाया और कहाकि इतनाही कल्याण है इंद्रने फिरपूछा कि इससे अ-
धिकभी कोई ज्ञानहोताहै बृहस्पतिजीबोले कि हेतात महात्माभार्गव शुक्रजी
काज्ञान अधिकहै तू वहांज्ञानको प्राप्तकर तेराभला होगा तदनन्तर उसतपस्वी
इंद्रने वह महाज्ञान श्रीभार्गवशुक्रजीसे प्राप्तकिया और प्रार्थना पूर्वक पूछाकि
महाराज इससेअधिकभी कोई कल्याणहै तब सर्वज्ञ शुक्रजीने कहा किमहात्मा
प्रह्लादकाज्ञान अधिकहै यह सुनकर इंद्रप्रसन्नहुआ और ब्राह्मणकारूप बन
करप्रह्लाद से जाकर कहा कि मैं कल्याण को जानना चाहताहूं प्रह्लादने
उत्तर दिया कि हेब्राह्मण मुझ तीनों लोक के राज्यवाले को अवकाश नहीं
है इसहेतु से तुमको उपदेश नहीं करसक्ता फिर ब्राह्मण ने कहा कि जब
आप को अवकाश हो तब सुना चाहताहूं फिर वह प्रह्लाद उस ब्रह्मबादी
के ऊपर प्रसन्न हुआ और स्वीकार कर के उसने शुभकाल में ज्ञानतत्त्व को
दिया ब्राह्मण ने भी अपने चित्तकी इच्छानुसार उस गुरुबृत्ती को न्यायपूर्व-
क प्रीति से किया उस प्रह्लाद से बहुधा इसने पूछा कि आपने तीनों लो-
कों का राज्य कैसेपाया वह सब मुझ से कहिये तब प्रह्लाद ने यह बचन
कहा कि मैं राजाहूं इस अहंकार से वचन कभी नहीं कहताहूं नीतिशास्त्र के
वक्ता ब्राह्मणोंको दानदेकर उन से वार्त्तालाप करताहूं वह विश्वासयुक्त हो-
कर सदैव वे मुझसे वार्त्तालाप करते हैं और शास्त्र को देते हैं और मुझ शुक्र-
नीतिके मार्गमें प्रवृत्त सेवा करनेवालेऔर दूसरेके गुणोंमें दोष न लगानेवाले
धर्म्मात्मा क्रोधजित के चित्तको शास्त्रों से ऐसे सींचते हैं जैसे कि मक्खियां
शहदको सो मैं जिह्वाग्रवर्ती विद्यावान् ब्राह्मणों के वचन रूपी रसोंका आ-
स्वादन करनेवाला अपने सजातियों पर ऐसे आज्ञा करताहूं जैसे कि चन्द्रमा
नक्षत्रोंपर करता है पृथ्वीपर यही शीलादि गुण अमृत रूप हैं यही कल्याण
है और कहा कि हे ब्राह्मण मैं तेरी गुरुभक्ति से प्रसन्नहूं तेराभलाहो तू अप-
ने अभीष्ट को मांग मैं तुझ को दूंगा तब उस ब्राह्मण ने कहा कि आपने

मेरा सब कार्य्य किया तब प्रसन्न होकर प्रह्लादने कहा कि बरकोलो तब ब्राह्मण ने कहा कि हे राजा जो आप मुझसे प्रसन्न हैं और जो मेराअभीष्ट चाहतेहो तो आपका सा शील मुझमें होय यहीमेरी प्रार्थना है यह सुनकर दैत्येंद्र प्रसन्नतोहुआ परन्तु बरके देने में उसको बड़ा भयहुआ और जाना कि यह थोड़े तेजवाला नहीं है तब बिस्मित प्रह्लाद ने कहा कि ऐसाही हो और वरदेकर दुःखीहुआ और वरलेकर उस ब्राह्मण के चलेजाने पर प्रह्लादको बड़ी चिन्ताहुई और उस को निश्चय नहीं हुआ फिर उस के चिन्ता करने से छायारूप महा तेजस्वी देहधारी तेजरूपशील ने उसकी देह को त्याग किया तब प्रह्लाद ने उसमहारूप और देहधारी से पूछा कि आप कौन हैं उस ने उत्तर दिया कि मैं शीलहूं तुम से अलग होकर जाताहूं और हे राजा मैं उस उत्तम ब्राह्मण की देहमें प्रवेश करूंगा जो शिष्यता में होकर बहुत कालतक तेरेपास वर्त्तमान रहा ऐसा कहकर वहशील अन्तर्द्धान हुआ और इन्द्रकी देहमें प्रविष्टहुआ उस तेज के चले जाने के पीछे दैत्येन्द्र की देहसे वैसाही दूसरारूप और बाहर निकला उससे भी पूछा कि आप कौन हैं उसने कहा कि मैं धर्म्म हूं जहां वह उत्तम ब्राह्मण है वहांही मैं भी जाता हूं क्योंकि जहां शील है वहां मैं हूं तदनन्तर तीसरारूप उस महात्मा प्रह्लाद की देह से निकला जब उससे भी पूछा कि आप कौन हैं तब उसनेकहा कि हेअसुरेन्द्र मैं सत्यहूं मैं अब धर्म्मके पासजाताहूं इसके अनन्तर चौथा पुरुष निकला उसने भी पूछने पर कहा कि मैं ब्रतहूं जहां सत्य है वहीं मैंभी रहताहूं इसके जाने केपीछे उसकी देह से एक बड़ाशब्द प्रकटहुआ उसने भी पूछने से कहा कि मैं पराक्रमहूं जहां व्रत है वहीं मैं भी हूं यह कहकर वहां गया जहां ब्रतथा उसके पीछे उसके देह से प्रकाश रूप देवी निकली उसने भी पूछने से कहा कि मैं लक्ष्मीहूं हे सच्चे बीर मैं आप तेरे पास आई हूं तुझसे त्याग कीहुई जातीहूं पराक्रम के पीछे चलने वाली हूं फिर तो महात्मा प्रहलाद को महाभयहुआ और पूछा कि हे लक्ष्मी कहां जाओगी हे देवी तुम सत्यव्रती और लोक की माता हो यह ब्राह्मण कौन है मैं इसको अच्छे प्रकारसे जानना चाहताहूं लक्ष्मी बोली वह इन्द्र है उसीने आप से शिक्षा पाई है हे समर्थ तेरा तीनों लोकों का ऐश्वर्य्य उसने लेलिया और हे महाराज तुमने शीलही से तीनों लोक विजय किये थे देवराज ने उसको मूल कारण जानकर तुझ से लेलिया और हे महाज्ञानी धर्म्म, सत्य, व्रत, पराक्रम और मैं सब शीलही को मूल कारण कहते हैं भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर लक्ष्मी समेत वह सब ऐसा कहकर चलगये यह इतिहास सुनकर दुर्योधनने फिर अपने पितासे पूछाकि हे कौरवनन्दन मैं शील

को मुख्यताको जानना चाहताहूं और जैसे शील प्राप्त होताहै उस युक्तिको भी मुझसे कहो धृतराष्ट्र बोले कि महात्मा प्रह्लाद ने प्रथमही उसको युक्ति के साथ कहाहै उसके मिलने का ब्योरेवार वृत्तांतसुनो कि देहमन और वचनोंसे सबजीवोंकेसाथ शत्रुताकाकरना अनुग्रह और दानकरना यही सदैव शील कहाजाताहै जो युक्तिकर्म दूसरों का और अपना हितकारी न हो अथवा जिसकर्म्म से लज्जा युक्तहोनोपड़े उसको कभी न करे सब काम ऐसे करे जिससे सभामें प्रशंसापावे हेकौरवोत्तम यह शील ब्योरेवार तुझसेकहा हेराजा कदाचित् कोईमनुष्य शीलरहित होकर लक्ष्मीको पातेहैं वहबहुतकाल तक उसको नहीं भोगसक्के अर्थात् निर्मूल होती है धृतराष्ट्र बोले कि हे पुत्र जो तुम युधिष्ठिर की लक्ष्मीसेभी उत्तम लक्ष्मीको चाहतेहोतो इसकोमूलसमेत जानकर शीलवानहो भीष्मजी बोले कि इसप्रकार धृतराष्ट्र ने अपने पुत्र से कहा इससे तुमभीइसको करो तदनन्तर इसके फलको पाओगे ७१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिचतुर्विंशोऽध्यायः १२४ ॥

एकसौ पच्चीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह तुमने पुरुषकी देह में शीलको प्रधान कहा आशा और अनाशा यह दोनों कैसे हुई इसको भी आप कहिये क्यों कि इसमहासंशय का दूर करनेवाला आपके समान कोई दूसरा नहीं है हे समर्थ तात दुर्योधनसे मुझे बड़ी आशा थी कि युद्ध वर्त्तमान होने पर बिनाही युद्धकरने के आधाराज्य देगा सब मनुष्योंको बड़ी २ आशा उत्पन्न होती हैं उनके निष्फल होने से निस्संदेह मृत्युहै सो हे राजेन्द्र उस दुरात्मा दुर्योधन ने मुझ निर्बुद्धी को निराशाकिया इसमेरी निर्बुद्धिता को देखो मैं आशाको वृक्ष युक्त पहाड़ से अथवा आकाश से भी बहुत बड़ी मानताहूं यद्यपि वह आशा साधारण भी है तो भी चिंता के योग्य कठिनता से विजय होनेवाली है और दुर्लभ होनेसे विचार करताहूं कि उससे अधिक दुर्लभ क्या है ॥

भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर इसस्थानमें सुमित्र और ऋषभ के सम्पूर्ण इतिहासको तुमसे कहताहूं हय हय देशका सुमित्र नाम राजऋषि जब शिकारको गया और तीक्ष्ण बाण से किसी मृगको बेधकर उसके पीछे चला तब वह महा पराक्रमी मृग उस बाणको लेकर चलागया और राजा भी बड़े वेगसे उस मृगराज के पीछेदौड़ा तदनन्तर वह शीघ्रगामी मृगपृथ्वी के नीचे गया और एक मुहूर्तमात्र मेंही वह सममार्ग में वर्त्तमान हुआ तब वह तरुणवय कवचधारी पराक्रमी राजा नदनदी पल्वल आदि वनों को उल्लंघन करता हुआ उसके पीछेचला तब वह मृग इच्छावान राजाको बारम्बार मिल

कर फिर बड़ेवेगसे सम्मुखआताथा और बहुतसे बाणों से भिदाहुआ भी वह वनचारी मृगक्रीड़ा करताहुआ सन्मुखही आताथा इसीप्रकार वह मृगराज वारम्बार वेगवान् होकर दूरजाजाकर फिर सन्मुख आताथा तब उसशत्रुहन्ता राजाने उसके मर्मों के छेदनेवाले महाघोर तीक्ष्णधारवाले बाणोंको धनुषमें लगाकर छोड़ा तदनन्तर वह मृगराज कुछ दूरपर जाकर उसके बाणमार्गको छोड़कर हँसताहुआ ठहरगया उसतीक्ष्ण प्रकाश बाणके पृथ्वीमें गिरनेसे मृग महावनमें घुसगया और राजाभी शीघ्रतासे चला १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिपंचविंशोऽध्यायः १२५॥

एकसौ छब्बीसका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इस दौड़धूप के पीछे राजा महावनमें प्रवेश करके तपस्वियोंके आश्रमोंको प्राप्त होकर परिश्रमके कारण बैठगया तब ऋषियोंने इस क्षुधापिपासा युक्त धनुषधारी राजाको देखकर बुद्धिके अनुसार मिलकर उसका पूजनकिया तबराजाने उनके आतिथ्य पूजनको स्वीकारकरके तपकी उत्तम वृद्धिको सब तपस्वियोंसे पूछा तब उन तपोधन ऋषियोंने उसके वचन का उत्तर देकर उसके प्रयोजनकोपूछा कि हे कल्याण रूप राजा किस सुखके लिये खड्ग धनुष बाणधारणकिये पदातीहोकर इसवनमें आयेहो इसकाकारण कहो कि तुम कहांसेआये और किसकुलमें उत्पन्नहुये और क्या तुम्हारा नामहै यह सब हमसे कहो तब उसने अपनी दौड़धूपका कारण उन सबब्राह्मणोंसे वर्णनकिया कि मैं मित्रोंका प्रसन्नकरनेवाला हयहय देशियोंके कुलमें उत्पन्न हुआ बाणोंसे हजारों मृगयूथों को मारता घूमताहूं मन्त्री और रानी समेत मैं बड़ीसेना समेत था मेरेबाणसे भिदाहुआ भालसंयुक्त देहवालामृग जाता है मैं दैव इच्छासे उस भागनेवाले मृगके पीछे इसबनमें आगयाहूं इसी से शोभा और आशासे रहित परिश्रमसे पीड़ित आपके सन्मुख बर्त्तमानहूं इस से कठिन दूसराकौन दुःखहोगा जो परिश्रमसे पीड़ामान आशारहित राज्य चिह्नों के विना मैं आपलोगों के आश्रम में आया हेतपोधन ऋषियो राज्यके चिह्न और पुरकात्याग उसकठिन दुःखको ऐसानहीं उत्पन्न करता है जैसे कि मेरी नष्ट हुई आशा इतनी वड़ीहै कि बड़ापहाड़ हिमालय वा महासमुद्र और आकाश भी उसके एक भाग को नहीं पासक्ता इसीप्रकार हे महाऋ-षियो मैंने भी आशाके अंतको नहींपाया आपसरीखे तपोधन ऋषि सब जानते हैं आपबड़े महाभाग हैं इसकारण अपने सन्देहको पूछताहूं कि जो मनुष्य आशावान् होकर संतुष्टताको प्राप्तहुआ होय ऐसा लोक में प्रतिष्ठा के साथ कौनबड़ाहै उसको मूल समेत सुना चाहताहूं इस संसारमें दुर्लभ

पदार्थ क्याहै जो यह बातें सदैव गुप्तरखने के योग्य नहीं हैं तो शीघ्रकहिये बिलम्ब न करिये और उत्तम ऋषियों में गुप्तरखनेकेयोग्य बचनोंको तुमसे नहीं सुना चाहताहूं और जो इसमें किसीप्रकारका आपके तपमें विघ्नहोतो मौनता प्राप्तकरो या कहना है तो कहो क्योंकि मैं समर्थको भी मूलसमेत सुना चाहताहूं उसको भी आप वर्णन करें १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेशततोपरिषट्विंशोऽध्यायः १२६ ॥

एकसौ सत्ताईसका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि उन ऋषियोंमें से मन्दमुसक्यानकरते महाब्रह्मर्षि ऋषभदेवजी बोले कि हे नृपोत्तम मैं तीर्थाटन करताहुआ श्रीनारायणके दिव्यआश्रम में पहुंचा जहां क्रीड़ाके योग्य बद्री और वैहायस नामहृद है वहांहीं अश्वशिरा सनातन वेदोंको पढ़ते हैं वहां मैं प्रथमही हृदमें जाकर देवपितृ तर्पणकरके पीछे आश्रमको गया और नरनारायणके पासही एक स्थानमें निवास किया वहां चीर मृगचर्म्मको धारणकिये महादुर्बल तनु नाम ऋषिको आतेहुये देखा तो हे राजा वह दूसरे मनुष्योंकी देहका अष्टमांशथा मैंने ऐसा दुर्बल देहवाला भी कोई नहींदेखा कि जिसका देहकनिष्ठ उँगली के समान पतलाथा वैसेही हाथ पैर मुख भुजा और शिरके बाल अपूर्व देखनेके योग्य थे और उसी देहके सदृश शिर आंख कानभी थे और उसके सब अंग और बचनभी देहकेही अनुरूपथे मैं उस दुर्बलदेहको देखकर भयभीत होकर दुःखी हुआ और उसके दोनों चरणों में प्रणामकरके हाथजोड़के सन्मुख हुआ और अपनेनाम गोत्र पिताको कहकर उसके बतायेहुये एक आसनपर बैठगया फिर उस धर्म्मध्वज तनुने ऋषियोंके मध्यमें उन कथाओंको कहा जोकि धर्म्मअर्थ से संयुक्तथीं उसकी कथाही के समय में एक कमललोचन नाम राजा सेना और स्त्रीसमेत शीघ्रगामी घोड़ोंकी सवारी से आनपहुंचा वह अति दुःखी यशस्वी श्रीमान्वीर देवमणिका पुत्रबनमें गुप्तहोनेवाले अपने बेटे भूरिदेवमणि को स्मरणकरता हुआ कि उस पुत्र को यहां देखूंगा वहां देखूंगा इस प्रकार आशामें बँधाहुआ यह बचन कहताहुआ इसबनमें घूमताथा कि निश्चय इसी महाबन में मेराधार्मिक बड़ा बेटा अकेला गुप्तहुआ मुझको दृष्ट आना कठिन है यही बारम्वार कहताथा कि उसका देखना मुझको कठिन है और मेरी आशा बड़ीहै उससे जुदाहोकर मैंमरनेकी इच्छा करताहूं यह कहता हुआ आपहुंचा और इसबातको सुन कर मुनियों में श्रेष्ठतनुमुनि एकमुहूर्त्त मात्रध्यान में मग्नहुये उन ध्यानकरनेवाले ऋषिको देखकर महा दुःखीमन से धीरे २ बारंबार इस बचन को राजाने कहा कि हे देवऋषि कठिनतासे

विजयहोनेवाला कौन है और आशासे बड़ाकौन है यह सब आप प्रकटकर के मुझसे कहिये मुनिबोले कि पहिले समय में उसतेरे पुत्रभूरिदेव मुनि ने बाल्यबुद्धिमें नियतहोकर अपनी अभाग्यतासे किसीसमर्थ ऋषिका अपमान कियाथा अर्थात् सुवर्ण के कलश और वल्कलके वस्त्रोंको देना कहकर उस राजकुमारने अपमान करके फिर उनको लाकर नहींदिये और हे राजा जैसे तुम थकगये हो उसीप्रकार थकाहुआ वीरदेवमणि भी पीड़ामानहुआथा यह वचन सुनकर वह राजा उसलोक पूजित ऋषिको दण्डवत् करके दुःखी और निराशाहुआ तदनन्तर उस महर्षिने अर्घ्यपाद्य को लेकर बनसे सम्बंध रखने वाली बुद्धिके अनुसार उससबको राजाकी भेट किया तिसपीछे वह सबमुनि उसराजा को घेरकर ऐसे बैठगये जैसे कि सप्तऋषि ध्रुवजीको घेरते हैं और राजासे सबवृत्तांत पूछा २६॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मे शतोपरिसप्तविंशतितमोऽध्यायः १२७॥

एकसौ अट्ठाईसका अध्याय॥

राजा बोले कि मैं वीरदेवमन नामराजा सब दिशाओंमें प्रसिद्धहूं अपने बेटेभूरिदेवमन के खोजने को वनमें आयाहूं हे ब्राह्मणोत्तम वह मेरा इकलौता बालक लड़का दृष्ट नहींआता ऋषभ मुनि बोले कि यह राजाका वचन सुनकर उसतनुऋषिने उत्तर नहींदिया मौनहोकर शिरझुकालिया हे राजेन्द्र पहले समय में उसराजाने उन तनुऋषिका बड़ा अपमान कियाथा फिरवह अपमान बड़े तपसे दूर हुआ अर्थात् यह संकल्प किया कि किसी राजाका अथवा दूसरे वर्णोंका भी दाननहीं लूंगा और यह बात ठहराके कि वर्त्तमान होने वाली आशा अज्ञान मनुष्य को चलायमान करदेती है मैं उस आशा को दूरकरूंगा यह दृढ़करलिया तदनन्तर वीरदेवमन ने फिर उस महात्मा ऋषिसे पूछा कि आशामें क्या बात हीन होजाती है और इसलोक में क्या दुःप्राप्त है आप धर्म्म अर्थ के दृष्टा हैं इससे आप कृपा करके कहिये तब महात्मा तनुऋषि वह सब वृत्तान्त राजा को स्मरण कराके बोले कि हे राजेन्द्र आशा की कृशता के समान दूसरी कोई वस्तुनहीं है मैंने उस आशा की कठिनता को राजाओं से कहा है राजाने कहा कि हे ब्राह्मण मैं आपके वचन से आशा की कृशता और अकृशता का होना जानता हूं परन्तु उसका दुर्लभ होना वेद वचन के समान है अर्थात् आशाने जिसको जीता वही कृश है और जिसको नहीं जीता वही पुष्ट है हे महाज्ञानी मेरे चित्त में बड़ा सन्देह उत्पन्न हुआहै उसको आपदूर करने को समर्थ हैं तुमसे अधिक कौन कृशांगहै इसको कहना आप उचित समझें तो कहिये कृशतनुबोले

यह चाहै दुर्लभ है या नहीं है परन्तु जो इच्छावान् धैर्यता को पावे वही बड़ा दुर्लभ है और जो इच्छावान् का अपमान नहीं करता वह महादुर्लभ है जो समर्थ और योग्यता के अनुसार सत्कार करके अभीष्ट सिद्ध नहीं करता और जिसकी आशा सबजीवों में लगीहुई है वह मुझ से अधिक दुर्बल है उपकार को भूलनेवाले निर्दयी और सुस्त आदमियों में और शत्रुता करनेवाले मनुष्यों में जो आशा वर्त्तमान है वह मुझ से अधिक दुर्बल है जो एक पुत्र वाला पिता बेटेके गुप्त होने या मरनेपर उसके वृत्तान्त को नहीं जानता उसकी आशा मुझ से भी अधिक दुर्बल है बेटेके उत्पन्न होने के समय स्त्रियोंकी और पुरुषोंकी आशा और उसीप्रकार धनीलोगोंकी जो आशाहै वह मुझसे भी न्यूनहै तरुणाई में होकर उस तरुणाई से सम्बन्ध रखनेवाली कथाओंको सुनकर विवाहके चाहनेवालोंको जो कन्याओंकी आशाहै वह मुझसे अधिक दुर्बलहै तबवह राजाने अपनी रानी समेत ऋषिकेपास जाकर दोनों चरण छुये और कहा कि आपको प्रसन्न करके पुत्रसे मिलना चाहता हूं हे ब्राह्मणोत्तम आपने जो कहा वह सब सत्य है इसमें संदेहनहीं तब तनुऋषि ने हँसकर अपने शास्त्रबल से शीघ्रही उसके पुत्र को बुलादिया और राजाको अपराध युक्त कर अपने को धर्मरूपदिखाके बनकी यात्रा की हेराजा मैंने प्रत्यक्ष देखा और उनके इन वचनों को सुना इससे तुमभी इसमहानिकृष्ट आशा को त्यागकरो भीष्मजी बोले कि हे राजा तब महात्मा ऋषभ के ऐसे वचन सुन कर राजा सुमित्रने महा दुर्बल आशाको दूरकिया हे कुन्तीपुत्र तुमभी इस मेरेवचन को सुनकर हिमालयपर्वतके समान दृढ़हो मुझ कष्टयुक्त से तुम्हीं प्रश्न करनेवाले और सुनने वाले हो इससे मेरी बातें सुनकर दुःखी होने के योग्य नहीं हो २७॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिअष्टाविंशतितमोऽध्यायः १२८॥

एकसौ उन्तीसका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे पितामह आपकी वार्त्तालापों से अभी मेरी तृप्ति नहीं होतीहै जैसे कि अमृत पानसे और उसी प्रकारसे ध्यान लगारहाहूं जैसे समाधिमें पुरुष ध्यानावस्थित होताहै इसकारण हे पितामह पहले उसी धर्मको कहिये जो आपके वचनरूपी अमृतपान से पूर्णताको नहीं पहुंचता है भीष्मजी बोले कि इसस्थान पर मैं प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें गौतमऋषि और यमराज का प्रश्नोत्तरहै गौतमजीके महाआश्रम पारियात्रनाम पर्वतमें जितने दिवस गौतमजीने तपस्याकी उसको मुझ से सुनो कि साठ सहस्रवर्ष पर्यंत महाउत्तम तपस्या की उस तपको देखकर लोकपाल यमराज

आदि देवता मुनि के पासगये तबवह महामुनि यमराजजी को देखकर सावधान होकर हाथ जोड़कर सन्मुख बैठगये धर्म्मराजने उनसे सुन्दर वचन कहकर अपनी प्रसन्नता दिखाई और कहा कि हम तुम्हारा क्या मनोरथ करें गौतमजी ने कहा कि कौनकर्म करके माता पितासे अऋण होय और पुरुष किसप्रकार से दुःप्राप्य लोकोंको पाता है यमराज बोले कि तपसे पवित्र देह और सत्यधर्म में प्रवृत्त पुरुषको प्रतिदिन नियमके साथ माता पिताका पूजन करना चाहिये और पूर्ण दक्षिणा वाले बहुत से अश्वमेध यज्ञोंसे पूजन करना चाहिये इस कर्मसे पुरुषको अपूर्व लोकोंकी प्राप्ति होतीहै ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेशतोपरिएकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः १२९ ॥

एकसौ तीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे भरतवंशी पितामह मित्रों से रहित बहुत शत्रु रखने वाले और धनागार से रहित बिना सेनावाले की कौन गतिहै दुष्टमंत्री को साथ रखने और सबप्रकार से हत राज्य और सलाहकारों से दिव्य उत्तमगति को न देखने वाले दूसरेके देशपर चढ़ाई करने वाले शत्रुके मर्दन करनेवाले पराक्रमी के साथ युद्धमें प्रवृत्त, निर्बल और अरक्षित देशवाले और देशकाल के न जानने वाले राजाकी कौनगति है और जहांदेशको अधिक पीड़ा देनेसे साम और भेद भी प्राप्तनहो वहां क्या धनसे प्राप्तहोनेवाला जीवन या शुभकर्म अथवा अर्थअनरीतिसे भी प्राप्त होनेके योग्यहै भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर तुमने बड़े गुप्तधर्म को पूछा बिना तुम्हारे पूछे इस धर्मको कभी इच्छासे नहीं कहना चाहताहूं हे राजा शास्त्रके वचनोंसे सूक्ष्मधर्म और बुद्धिसे सुनकर सदा-चारोंको करके किसी २ स्थानमें कोई साधु होताहै बुद्धिरूपकर्म्मसे धनी होताहै या नहीं होताहै इसी प्रकारका यह प्रश्नहै अपनी बुद्धिसे निश्चय करनेके योग्यहै हे राजा राज्यके कामोंके जारी करनेके निमित्त आप राजाओंके आ-पद्धर्ममें बहुतसी युक्तियों को सुनो मैं धर्म के कारण ऐसे धर्म्मको प्राप्तनहीं किया चाहताहूं जो युक्ति प्रजाके दुःखसे स्वीकार की जातीहै और पीछेमरण समानहै अर्थात् आपत्ति कालमेंभी प्रजाकी पीड़ासे उत्पन्न होनेवाली अग्नि राजाके प्राण सेना और धनको नष्ट करके लौटतीहै सबके मतोंका निश्चय पाकर पुरुष जैसा जैसा शास्त्रको देखताहै वैसेही वैसा ज्ञाता होताहै फिर विज्ञानको चाहता है अज्ञानतासे पुरुषकी अनुयोगता प्रकट होती है और अच्छी विज्ञतासे भी उद्योग सिद्धहोता है यह युक्ति बड़े ऐश्वर्य्यकी उत्पन्न करनेवाली है तू इस वचन को संदेह और निन्दा रहित होकर सुन राजाका खजाना खाली होनेसे सेनाका अभाव उत्पन्न होताहै इससे राजा धनको ऐसे

पैदाकरे जैसे कि झिरनों से जल इकट्ठा होता है और समयपाकर प्रजाकापोषण करे यही सनातन धर्म्म है यह धर्म्मरूप युक्तिपहिले लोगोंने की है और हे राजा समर्थों का दूसरा धर्म है और आपत्ति कालों में दूसरे धर्म्म हैं बिनाखजाने के भी धर्म्म प्राप्त होता है परंतु धर्म्म से आजीविका बड़ीहै निर्बलराजा धर्मको पाकर न्यायमें प्रवृत्त जीविकाको नहींपाताहै इसकारण से सेना और पराक्रम का प्राप्त होना केवल धर्म्मही से नहींहोता है इस निमित्त आपत्ति समय में अधर्म्म भी धर्म्म लक्षण सुना जाता है और उसधर्म्म में अधर्म उत्पन्न होता है यह पण्डितों का कथन है उस आपत्तिकाल के पीछे चत्री को क्याकरना चाहिये जिससे कि वह धर्म्मग्लानिको पाकर शत्रुके वशीभूत न हो ऐसे स्थान में वह कर्म्म करना कहा है जिससे कि अपनी कोई हानि न हो किसी पराक्रम से अपने या दूसरे के धर्म्म को नष्ट न करे किन्तु अनेक युक्तियों से अपने को आपत्ति से पार करना चाहिये वह यह है कि उससमय धर्म्म के ज्ञाता पुरुषों का निश्चय धर्म्म की प्रवीणता है और भुजबल से उद्योग करना चत्री में बुद्धिमत्ता गिनीजाती है क्षत्रीको अपनी आजीविका के रोकने पर तपस्वी और ब्राह्मणों के विशेष और किसका धन लेना योग्य है और किसका अयोग्य है जैसे कि पीड़ित होकर ब्राह्मण यज्ञ के अयोग्य मनुष्यों को यज्ञ करावे और अभोज्य अन्नोंको भोजनकर ऐसीही यह भी कर्म्म है इस में सन्देह न समझो पीड़ित पुरुष का कौन द्वार है और शास्त्र के विरोधियों का कौन मार्ग है बुद्धिमान् जब पीड़ित होता है तब दुर्द्धार होकर भागता है जिस राजा के खजाने और सेना की ग्लानि से सब लोककी नष्टता है उस की कोई भिक्षा नहीं नियत की गई और न वैश्यशूद्र की आजीविका उस को नियत हुई सजातियों से चाहना न करने वाले राजाकी वहजीविका है जो कि अपने धर्म्म के योग्य है पहिले कल्पशास्त्र के जाननेवाले राजाकी जीविका आपत्तिकाल में गौणकल्पसे योग्य है आपत्तिवान्को धर्म्म के विपरीत जीवन करना यह बात आजीविका के नष्ट होने से ब्राह्मणों में भी देखी गई है तो किसकारण से क्षत्री के करने में सन्देह है इसप्रकार सदैव निश्चय कियागया वहचत्री भी अच्छे पुरुषों से बलके द्वारा धनको लेनेसे किसीप्रकारकी पीड़ाको न पावे क्षत्रीको प्रजाका रक्षक और पीड़ा देनेवाला कहा है इसीकारण अच्छे प्रकार से रक्षा करनेवाले क्षत्री को धनलेना चाहिये हे राजा बिनापीड़ा के किसीकी आजीविका नहीं है यहां तक कि वन वर्त्तमान घूमने वाले अकेले मुनिकी भी जीविका बिनापीड़ाके नहीं है कौरवोत्तम क्षत्री को प्रारब्ध में ही लिखीहुई जीविका पर संतोष करके

रहनायोग्य नहीं है तो रक्षा करने वाले राजा को तो सन्तोषसे रहना सदैव अयोग्य है आपत्ति में राजा को और देशको परस्पर में अन्योन्यरक्षा करनी चाहिये यह सनातन धर्म्म है जैसे कि राजा आपत्तिकाल में देश की द्रव्य और औषधियों आदिसे रक्षा करता है उसीप्रकार कोई व्यसन में राजा कीभी रक्षा देश को करनी अवश्य है खजाना, दण्ड, सेना, मित्र, और देशकी अन्य वस्तुओं के संचय को क्षुधा से संयुक्त राजा दूरनहीं करे बीज को तकावीधनके द्वारा प्राप्तकरना चाहिये यह धर्म्मज्ञों का कथन है इसस्थान पर बड़ीमायावाले शम्बर दैत्यका यह शास्त्र कहागया है जिसका देशआजीविका न पानेसे पीड़ापाता है अथवा जो राजा थोड़े मनुष्यों समेत दूसरे के देशसे जीवन करनेवाला है उसराजाके जीवनको धिक्कार है खजाना और सेनाराजाका मूल है और केवल खजाना सेनाकी जड़ है और धर्म प्रजाओं की जड़ है इसहेतु से सबधर्म्मों का मूल खजाना है यहां दूसरोंको पीड़ा न देकर खजानेकी वृद्धि सम्भव नहीं फिरसेना कहांसे होगी वहराजा उसके लिये प्रजाको पीड़ा देखकर दोषका भागी नहीं है यज्ञकर्म्मों में यज्ञ के लिये अकार्य्य भी कियाजाता है इसकारण राजा दोष के योग्य नहीं है आपत्तिकाल में दूसरा कर्म्म अर्थात् प्रजाको पीड़ादेना धनके लिये होता है और पीड़ा न देना विपरीत अर्थात् अनर्थ का हेतु होता है और हाथीआदिका पोषण धन के नष्ट होने के निमित्त होता है यह सब धनकेही कारण होते हैं इस प्रकार शास्त्रज्ञ मनुष्य बुद्धिके अनुसार निश्चय को विचारता कर्म्मकर्ता होय जैसे कि पशु आदि यज्ञके कारण होते हैं और यज्ञ धनका संस्कार है इस से पशुयज्ञ और संस्कार यह तीनों मोक्षके निमित्त होते हैं और यज्ञके साधनकहे जाते हैं इसीप्रकार दण्डखजाने के लिये और खजाना सेना के निमित्त और सेना शत्रुके विजय के लिये और तीनों मिले हुये देशकी वृद्धि के लिये हैं इसस्थानपर धर्म्मतत्त्व के प्रकट करनेवाले दृष्टान्त को कहताहूं, यहां जो शत्रु हैं वह यज्ञस्तम्भ को काटते हैं और कितनेही सामन्तलोग वृक्षोंको भी अवश्यकाटते हैं वह वृक्षभी गिरते समय अपने नीचेकी वनस्पतियों को मारते हैं इसीप्रकार जो मनुष्य बड़ेखजाने के शत्रु हैं उनको भी विनामारे सिद्धी नहीं प्राप्तहोती धनके ही द्वारा दोनों लोक और सत्यता आदि धर्म्म वचन को विजय करता है और विनाधन के मृतक समान है इससे हेयुधिष्ठिर यज्ञके निमित्त अनेक युक्तियों से धनको प्राप्तकरे इसप्रकार से कार्य्य कारण दोनों में दोष नहीं होता है हे राजा यह धनकी प्राप्ति और त्याग दोनों एकमनुष्यमें कभी किसी प्रकारसे भी सिद्धीको कहीं प्राप्तहोते धनवान् लोगों को वनमें कभी कोई नहीं देखता

अर्थात् जो धनीलोग हैं वह त्यागी नहीं होते हैं और जो त्यागी हैं वह धनी नहीं होते इसपृथ्वीपर जो कुछ यहधन दृष्ट पड़ता है उसको मनुष्य चाहते हैं कि यह मेरा होय इससे हे राजा राजधर्म्मसे अधिक कोई धर्म्म नहीं है वहीराजाओंका धर्म्मकहागया और आपत्ति के लिये इसके विपरीत कहा गया कोई दान और कर्म्म से और तपस्वी तपसे कोई बुद्धिकी चतुराई से धनके समूह को पाते हैं निर्द्धन को निर्बल और धनवान् को पराक्रमी कहते हैं तात्पर्य्य यह है कि धनवान् को सबवस्तुप्राप्त होसक्ती हैं खजाना रखनेवाला सब आपत्तियों से तरसक्ता है जैसे धन से धर्म्म अर्थ काम और परलोककी प्राप्तिहोती है वैसेही इस लोक के आनन्द प्राप्त होते हैं इस निमित्त उसधन को धर्म्म सेही प्राप्तकरे अधर्म्म से कभी न करे ५० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांवैयासिक्यांशांतिपर्वणिराजधर्म्मे शतोपरित्रिंशत्तमोऽध्यायः १३० ॥

इतिशान्तिपर्वराजधर्मसमाप्तः ॥

अथमहाभारत भाषा ॥

शान्तिपर्व ॥

आपद्धर्म ॥

पहिला अध्याय ॥

श्रीगणेशजी और नरोत्तम श्रीनारायण जी और सरस्वती देवी और व्यासजी को नमस्कार करके फिर जयको वर्णन करते हैं पहिले अध्याय में यह वर्णन किया है कि सेनाकी चढ़ाई करनेवाला राजा आपत्ति काल में प्रजा को पीड़ित करके भी धन से खजाने को पूरा करके आपत्ति से निवृत्तहो अब वर्त्तमान राजा आपत्ति के आनेपर क्या करे इस विषय में युधिष्ठिर ने प्रश्नकिया कि अनाज आदि के गोदाम और खजाने से रहित दीर्घसूत्री बान्धवों पर दयावान् अर्थात् राज्य और जिसकामंत्र प्रकटहो-गयाहो और राज्य करने में शंका युक्त गढ़से बाहर निकलकर युद्धकरने असमर्थ जिसके ग्रामदेश शत्रुओंने परस्पर में विभाग करलिये और देशों शत्रुओं ने परस्पर में विभाग करालियाहो और धनके समूहों से खाली मित्रों से भिन्न और सबमंत्रियों से रहित शत्रुकी सेना से घिराहुआ परा-क्रमी शत्रु से व्याकुल चित्त राजाका कौनसा कर्म शेषरहजाता है उसको कहिये—भीष्मजी बोले कि जो धर्म्म अर्थमें कुशल चढ़ाई करनेवाला राजा विजयकी इच्छा करनेवालाहोय तो शीघ्रही उससे सन्धिकरे और अपने प्रा-चीन पुरुषोंके ग्राम और नगरोंको शत्रुने विजयकर लियेहों उनको सामनी-तिसे छुड़ाये और जो पराक्रमी पापका निश्चयकरने वाला अधर्म्मसे विजय

करनेकी इच्छा करताहो उससे भी अपने थोड़े बहुत ग्रामदेकर सन्धिकरे अथवा राजधानीको त्यागकर धनकेद्वारा आपत्तिसे उद्धारहो फिर जीवता हुआ उन राजगुणोंसे संयुक्त धनोंको इकट्ठाकरे जो आपत्ति कि धन और सेनाके त्यागनेसे दूरहोती जानपड़े तो अर्थधर्मका जाननेवाला कौन पुरुष धनके सिवाय अपनेको त्यागकरे अर्थात् ऐसे समय में सेना और धनके त्यागनेसे सब अपनी २ रक्षाको उचित जानतेहैं महलों को भगाना चाहिये नहीं तो शत्रुके आधीन होनेवाले धनमें क्या प्रीतिहै समर्थ होकर आप उसके स्वाधीन न होय युधिष्ठिर बोले कि मंत्री आदि के क्रोध युक्त होनेसे और देशगढ़ आदि शत्रुकेआधीन होनेसे और खजाने के नष्टहोने और गुप्तमंत्रोंके प्रकटहोने में कौनकर्म शेष रहता है—भीष्मजी बोले कि मंत्री आदि के धर्म्मज्ञ होनेपर सन्धिकी शीघ्रही इच्छाकरे अथवा शीघ्रही महावीरता प्रकटकरे जबऐसा होताहै तब शत्रुकाहटाना शीघ्रहीहोताहै अथवा धर्म्मयुद्धकर मरजानेमें परलोककी प्राप्तिहोती है सबपृथ्वीका रक्षक राजा ऐसी थोड़ी सेना से भी पृथ्वीको बिजय करता है जो प्रीतिमान् स्नेहयुक्त और प्रसन्न चित्तहो मरकर स्वर्गको जाय अथवा मारकर पृथ्वीको बिजय करे वहयुद्ध में प्राणों को अच्छेप्रकार त्यागकरके इन्द्रके लोकको प्राप्त होताहै मृदुता के गुण प्राप्त करने के निमित्त लोकप्रसिद्ध शास्त्रकी बुद्धिसे प्रकटकरके विश्वास से विश्वासको पाकर मृदुता करे और युक्तिसे बिश्वासितहो जो मंत्रियोंके क्रोधसे सामनीति होना असंभवहो अर्थात् मेलहोना कठिनहो तब मिल मिला कर किले से भागनेकी इच्छाकरे और थोड़ेदिन देशको छोड़कर उत्तम सलाहके द्वारा फिर पराक्रमको करे १४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्म्मेप्रथमोऽध्यायः१ ॥

दूसरा अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह सबकेउपकारी उत्तमराजधर्म्मके नष्टहोने और सब पृथ्वीकी जीविका चोरोंके आधीन होजानेपर और उस नीच समय के आनेमें ब्राह्मण स्नेहसे अपने पुत्र पौत्रादि को नहीं त्यागकरे उसदशामें कैसे निर्बाहकरे भीष्मजी बोले कि उसदशामें बिज्ञान के पराक्रममें नियत होकर जीवनकरे क्योंकि यह सबसंसारी बस्तु साधुओं केलिये हैं असाधुओं के निमित्त कुछ भी नहीं है जो पुरुष अपनेको सेतुबनाकर नीचों से धनलेकर सत्पुरुषों को देताहै वही आपद्धर्म का जाननेवाला है हे राजा संसार की रक्षा करनेवालेका धनहै इसकारण यहशोचकर कि यह मेराही है अपने लिये अनिच्छा करके पालन धर्मको करता बिना दियेहुये धनको भी लेले

जो पूरीबुद्धिके बलसेपवित्र मनुष्य निन्दित कर्म्मोंमें भी प्रवृत्तहोताहै वहजी-
विकाकी पूर्णबुद्धि रखनेवाला और विद्वान्‌है उसकी निन्दा कौनकरसक्ताहै
जिनकी आजीविका बलसे उत्पन्न होनेवाली है उन्होंको दूसरी आजीविका
श्रेष्ठनहीं मालूमहोतीहै हेयुधिष्ठिर बलवान् मनुष्य अपनेबलसे सन्मुख होजाते
हैं और यहशास्त्र आपद्धर्म के योग्य वर्त्तमानहै इसको इसप्रकारसे काममेंलावे
और शास्त्रोंका ज्ञाता बुद्धिमान् पुरुषभी इससे उत्तम शास्त्रमें कुशल होताहै
अर्थात् जो अपने वा शत्रुके देशी मनुष्य दण्डके योग्य हैं उनसे धनकोलेना
चाहिये राजा आपत्तिकाल में शुभकर्मी ऋत्विज् पुरोहित आचार्यआदि पूज्य
ब्राह्मणों को जुर्माना आदिके सिवाय मारै नहीं क्योंकि उनके मारनेमें दोषी
होता है यह लोक मर्यादाहै और सनातन नेत्र हैं इसकारण इसमर्यादा का
माननेवाला उसको देशों में फिरावे चाहे वह उत्तमहो या अनुत्तमहो बहुतसे
ग्रामवासी परस्पर में क्रोध युक्त होकर कहैं राजा उनकी न तो बचनों से
अप्रतिष्ठा करे और न मारे गुरू आदिकी निन्दा न करनी चाहिये और न
किसी दशामें सुननी चाहिये ऐसे स्थान में दोनोंकान बन्दकरने योग्यहैं यह
निन्दा करना नीचों काही स्वभाव है और सन्त लोग सत्पुरुषों में गुणोंके ही
कहनेवाले होते हैं जैसे कि सुन्दर बोलने वाले सीधे सुशिक्षित अच्छे लो-
गों को सवार करने वाले दो बैल धुरको उठाकर ले चलते हैं उसी प्रकार
राजा भी कर्म्म करे जिस जिस रीति से उसके बहुत से सहायक होते हैं
उसी प्रकार दूसरे मनुष्य यहमानते हैं कि धर्म्म रूप आचार बड़ा है जो
दूसरे पुरुष शंख के लेख को प्रमाण मानते हैं वह इसप्रकार से चाहते हैं कि
मित्रता और लोभसेभी ऐसे वचन नहीं कहना चाहिये इसस्थानपर धर्म्मके
विपरीत कर्म्म करने वाले गुरू आदिके दण्डको आर्ष अर्थात् ऋषियों का
वचन कहते हैं परन्तु ऐसे प्रकारका कोई प्रमाण दृष्ट नहींआता तात्पर्य यह
है कि गुरू आदि कभी दण्डके योग्य नहीं हैं देवता धर्म्म के विपरीत कर्मी
नीच मनुष्यको दण्ड देते हैं इसी कारण वह राजा किसी मिसके द्वारा गुरू
आदि से धनको लेकर नष्टताको प्राप्तहोता है तात्पर्ययहहै कि जब देव गुरू
आदिको दण्ड देताहै उसदशा में राजा उस दण्ड देने से अलग होजाय
और जोवेदोक्त धर्म्म सबओरसे प्रतिष्ठाके योग्य औरसत्पुरुषोंसे सेवितस्मार्त्त
धर्म और सदैवसे प्राप्तहोनेवाले कुल देवता आदिसे स्वीकार कियेहुये धर्म
और इनतीनों हेतुओंके न होनेपरभी अपने हृदयका अभीष्ट जो धर्म्महै उस
को निश्चय करताहै तब ऋत्विज् आदि के दण्डदेने में उसका सम्मत नहीं
होताहै जो चारों गुणों से संयुक्त धर्मको कहै वह धर्मका जाननेवाला है स-
र्प के समान धर्म्मका खोज ढूंढ़ना कठिनहै जिसप्रकार घायल मृगके चरण

चिह्नपाकर उसके स्थानको पाताहै और रुधिरकी आधिक्यतासेउसको देखताहै उसीप्रकार धर्म्मकोदेखो और युक्तिसे ऐसे दूसरोंको प्राप्तकरावे जैसे कि सत्पुरुषोंसे उपदेश पायेहुये पुरुषको इसरीतिसे धर्ममार्ग पर चलना योग्यहै और यही राजऋषियोंका चलन है सो हे युधिष्ठिर तुम भी इसी प्रकार से चलो २२॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिआपद्धर्म्मेद्वितीयोऽध्यायः २॥

तीसरा अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि हेयुधिष्ठिर अपने देश और दूसरेके देशसेधनको उत्पन्न करे क्योंकि धनसेही धर्म्म होता है और राज्यकीभी दृढ़ताहोतीहै इस हेतु से धनको इकट्ठाकरे और सत्कार पूर्व्वक उसकी सबप्रकारसे रक्षाकरे और फिर अच्छे २ कामों में खर्चकरे यह सनातन धर्म्म है पवित्र शौच क्रियावाले अथवा निर्दय मनुष्य से धन कभी इकट्ठा नहीं होसक्ता साधारण स्थान पर नियतहोकर धनको बटोरे बिनापराक्रम धननहीं और धनकेबिना सेना नहीं और बिना सेना के राज्य कहां और राज्यके बिना राजलक्ष्मी कहां होसक्ती है बड़े आचारवान् पुरुषके पास लक्ष्मीका न होना मरणके समानहै इसकारण राजा खजाना सेना और मित्रोंकी वृद्धि अच्छे प्रकार से करे खजाने से रहित राजाका अपमान होता है और उसके मनुष्य थोड़ेमासिक से प्रसन्न नहींहोकर इसके कामको भी उत्साह पूर्व्वक नहीं करते हैं लक्ष्मी के कारण राजाबड़ी सत्क्रिया को पाता है वह इसके पापोंको ऐसे ढकतीहै जैसे कि स्त्री के गुप्तअंगोंको वस्त्र आच्छादन करता है पहिले समयके अपमान कियेहुये मनुष्य इसके ऐश्वर्य को देखकर दुःखीहोतेहैं और कुत्तेआदिके समान इसकेमारनेको बराबर बैठतेहैं हे राजा ऐसेराजा को सुख कहां होसक्ता है उद्योगकरे सुस्ती न करे क्योंकि युक्तिपूर्व्वक उद्योगही करना मनुष्यका धर्महै और असमर्थ होने या अपना बुरासमय होनेमें भागजाय पर किसीके साथ निकृष्ट कर्म न करे बनमें जाकर मृगयूथोंके साथ घूमे नहीं तो बेमर्याद होकर चोरोंके साथघूमे हे भरतबंशी दुष्कर्मों में चोरों की सेना सुगमता से प्राप्तहोती है बहुतसी बेमर्यादा से सबमनुष्यों को व्याकुलताहोती है और निर्दयकर्म्म करने वाले चोर भी शंकाकरते हैं इस से मनुष्यों के चित्तकी प्रसन्नता करने वाली मर्यादा को नियत करे वह मर्यादा इसलोक के छोटे अर्थों में भी पूजित होतीहै प्राकृत पुरुषों का यह निश्चय है कि न यह लोक है न परलोक है नास्तिक और भयभीत पुरुषों को बिश्वास होना ऐसा कठिन है जैसे कि सत्पुरुष को चोरों से

विश्वास नहीं होता दूसरेका धनहरना भी अहिंसा है इसको कहताहूं कि जैसे चोरोंकी मर्य्यादाहोने से सब जीवप्रसन्न होतेहैं उसी प्रकार युद्ध न करनेवा-लेका मारना और दूसरेकी स्त्रीका पुरुष उपकार को भूलजाना ब्राह्मण के धनका लेना और सर्वस्वहरण करना कन्याको चुराना गांवोंको अपने स्वाधीन करके उनका स्वामी बनजाना और दूसरे की स्त्रीसे सम्भोग करना यह सब बातें चोरों में निन्दित हैं चोर इनको त्यागकरे जो मनुष्य इस चोर के विश्वास के निमित्त उस से मिलाप करते हैं वह चोर उसके विश्वास होजाने पर स्थान आदि को पाकर उसके धन और बालबच्चोंको नाशकरते हैं ऐसा निश्चय जानके अपने स्वाधीनहुये भी चारजाति को शेष न छोड़ना चाहिये अपने को पराक्रमी समझकर जो उनको बाकी छो-ड़देते हैं तो वहबाकी के मनुष्य उस नाशकर्त्ता की बेबाकी करेंगे २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेतृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि प्राचीन वृत्तान्तों के जाननेवाले पुरुष इसस्थानपरधर्म्म के अनुबचनको कहते हैं कि धर्म्म अर्थ अच्छेबुद्धिमान् क्षत्री के दृष्टिगोचर होताहै ऐसेस्थानपर यह विचार न करनाचाहिये कि यह धर्म्महै या अधर्म्महै क्योंकि धर्म्मका उपदेश ऐसा गुप्तफलवालाहै जैसा कि भेड़ीका खोज कभी किसीने धर्म्म अधर्म्म के फलको नहीं देखा इससे पराक्रमकोही प्राप्तकरने की इच्छाकरे क्योंकि यहबात निश्चयहै कि यह सबसंसार पराक्रमीकेही आधीनहै इसलोकमें पराक्रमी राजा लक्ष्मी सेना और मन्त्रियोंकोपाताहै जो धनरहितहै वह पतित है अर्थात् अपने धर्म्मका करनेवाला नहीं है और जो इससेभी अल्पहै वह उच्छिष्टके समानहै पराक्रमीसे बहुत कुमार्गोंको देखकर भयसे कुछनहीं कियाजाता है वह पराक्रम और धर्म्म दोनों सच्चे अधिकारमें नियत होकर बड़े २ भयोंसे रक्षा करतेहैं मैं धर्म्मसे पराक्रमको अधिकमानता हूं क्योंकि पराक्रमहीसे धर्म्मजारीहोताहै धर्म्मपराक्रमहीमें ऐसे वर्त्तमानहै जैसे कि पृथ्वीपर चेष्टाकरने वाले जीव धर्म्म पराक्रम के पीछे ऐसे वर्त्तमान होता है जैसे कि धुआँ हवाकेआधीन होता है यह धर्म्मपराक्रम में वर्त्तमान होकर स्वतन्त्र ऐसे नहींहै जैसे कि वृक्षमें लगीहुई लता धर्म्म इसप्रकार पराक्रमि-यों के आधीन है जैसे भोगी लोगों के आधीन सुखहोताहै पराक्रमियोंको कोई अप्राप्तवस्तुनहीं है और उनके आगेसब पवित्र हैं कुमार्गी और निर्बल की रक्षानहीं होती है क्योंकि उससे सबलोग ऐसे व्याकुल होते हैं जैसे कि भेड़ियेसे राज्यसे भ्रष्टअपमानयुक्त मनुष्य दुःखरूप जीवनको पाताहै जो

जीवन निन्दित है वह मरण के समानहै जो कोई ऐसा कहे कि पाप और बदमासी के कारण बांधवों ने इसको त्यागाकिया इसबातसे वह अत्यन्त दुःख पाताहै वह वचनरूपभालों से चारोंओरसे घायलहै इसपापके दूरहोनेका उपाय आचार्य्यलोग ऐसा कहतेहैं कि तीनों वेदोंका पाठकरे और ब्राह्मणों की उपासनाकरे और नेत्रवचन कर्म्म आदिसे सबको प्रसन्नकरके महाउदारता प्रकटकरे और बड़ेकुलमें विवाहकरे और अपनी हीनताकरके दूसरेकी प्रशंसाकरे अथवा स्नान जपस्तोत्र आदिसे प्रसन्नचित्त पवित्र और मृदुस्वभाव होकर दूसरों को प्रसन्नकरे बुराई न करे बड़े कठिन कर्म्मको करके बारम्बार लोगोंसेकीहुई अपनी प्रशंसाको सुनी अनसुनी करके ब्राह्मण और क्षत्रियों के बीचमें निवासकरे इसप्रकारके आचरणोंसे वह पापरहित होकर सबका प्रियहोसक्ताहै और अपूर्व सुखको भोगताहुआ एक उपकारही मात्रके करनेसे ऐसे गुणवाला राजा लोकमें प्रतिष्ठाको पाताहै और दोनों लोकों में बड़े २ फलोंको भोगताहै १७॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिआपद्धर्म्मेचतुर्थोऽध्यायः ४॥

पांचवां अध्याय॥

भीष्म जी बोले कि इस स्थानपर इसप्राचीन इतिहास को कहता हूं जिससे मर्य्यादायुक्त चोर भी नरकको नहीं पाताहै, शिकार करनेवाला बुद्धिमान् शूरबीर शास्त्रज्ञ होकर शास्त्रकी रीतिसे हिंसा करनेवाला वेद ब्राह्मणों का रक्षक आश्रमियोंके धर्म्मकी रक्षा करनेवाले क्षत्रियोंका रक्षक एककायव्यनाम निषादका पुत्रथा उसने निषादी स्त्रीमें क्षत्री से उत्पन्न होकर चोर जाति में ही सिद्धी को पाया वह बनके मृगोंपर अहर्निश क्रोधकरनेवाला और मृगकी जातिके जीवों की बुद्धिका ज्ञाता निषादोंमें पण्डित सबकाल और देशका जाननेवाला सदैव पारियात्र पर्वतपर बिचरनेवाला सबजीवोंके धर्मोंका जाननेवालासफलबाण और शस्त्रधारीथा। उसअकेलेने बहुतसीकठिन सेनाओंकोबिजयकरके वृद्ध अन्ध वधिर अपनेमातापिताका वनमेंपूजनकिया और मधुमांस मूल फल और अनेकप्रकारके अन्नोंके भोजनोंसे सत्कार पूर्वक उनको तृप्तकिया और प्रतिष्ठाके योग्य पुरुषोंकी सेवा करके बनवासी ब्राह्मण संन्यासी लोगोंके निमित्त उसीबनमें मृगोंको मारकर उनके भेंटकिये जो पुरुष चोरजाति की शंकासे इससे नहीं लेतेथे उन्होंके घरमें वह प्रातःकाल ही भोजन रखकर चला जाताथा, निर्दयकर्मी चोरोंके समूहों ने इसको अपना मालिक बनाना चाहा और कहा कि हे मुहूर्त, देशकाल आदिके जाननेवाले ज्ञानी शूर और दृढ़व्रतवाले तुम हममें मिलकर हम सबके बड़े अधि-

पति होजाओ और जो हमको आज्ञाकरोगे वही हम सबलोग करेंगे तुम माता पिता के समान न्याय की रीतिसे हम सबकी रक्षाकरो कायव्य बोला कि तुम भयभीत स्त्री को, बालकको, तपस्वीको और युद्ध न करने वाले को, मतमारो और स्त्रियांकभी पराक्रमसे पकड़ने के योग्य नहीं होतीं सबदशा में जीवधारियों के मध्य स्त्रियां अवध्यहैं, सदैव ब्राह्मणोंका कल्याण विचारना योग्य है और उनके आनन्द के लिये युद्धकरना भी उचित है सत्यता को कभी नष्ट न करना चाहिये और किसी के बिवाहादि कार्य्यों में विघ्न मतकरो क्योंकि विवाहादि में देवता, अतिथि, पितृ पूजेजाते हैं सब जीवों में ब्राह्मण अदण्ड्यहै और उन ब्राह्मणों की वृद्धि सब प्रकार से करनी चाहिये वह ब्राह्मण क्रोधयुक्त होकर जिसका नाश करना चाहते हैं उसका रक्षाकरनेवाला तीनोंलोक में कोई नहीं होता है, जो ब्राह्मणोंकी निन्दाकरे और उनके नाशको चाहे उसका नाश ऐसे शीघ्रहोताहै जैसे कि सूर्य्योदय में अन्धकार का नाशहोता है इन ब्राह्मणों में बैठाहुआ सब प्रकार से राज फलकी इच्छाकरे कि जो व्यापारी हमको नहींदेंगे उससे उनलोगों को चोरी लगेगी क्योंकि यह दण्ड निश्चय करके कुकर्मियों के नाश के निमित्त नियत कियागया है खजाने की वृद्धिके लिये नहीं कियाहुआ है जो श्रेष्ठ लोगों को पीड़ादेते हैं उनका मारना ही दण्ड कहागया है जो कोई देशके नाश से अपनी वृद्धि करते हैं वह ऐसे मारेजाते हैं जैसे मृतकके साथ कीड़े मारेजाते हैं और जो चोर धर्मशास्त्र के अनुसार कर्म्म करें तो वह चोर जाति में भी शीघ्र सिद्धी को पातेहैं भीष्मजी बोले कि इतनीबातें सुनकर उनचोरों ने उस कायव्य की शिक्षा और आज्ञाको किया तब सबलोग पापों से निवृत्त होकर वृद्धि को प्राप्तहुये साधुओं की भलाई और चोरोंको पापकर्म्मोंसे निवृत्त करके कायव्य ने बड़ी सिद्धि प्राप्तकी जो पुरुष इस कायव्य के चरित्र को सदैव विचार करेगा वह बनवासी जीवोंसे कभी भयभीत न होगा हे राजा जिसको सबजीवों से भय न हो और नीचोंसे भी कभी भय न करे वही बनका राजा है २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिआपद्धर्मे पंचमोऽध्यायः ५ ॥

छठा अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इसस्थानपर प्राचीन वृत्तान्तों के जानने वाले पुरुष ब्राह्मणोंकी कही हुई कथाको कहते हैं कि राजा जिन २ से धनको इकट्ठा करता है उनमें यज्ञकरनेवालोंका और देवताओंका धन न हरनाचाहिये, क्षत्रीराजा चोरोंका और यज्ञ न करनेवालों का धन हरसक्ता है क्योंकि यह

प्रजा और राज्यभोग क्षत्रियों के ही हैं धनभी क्षत्रियोंकाही है अन्य किसीका नहींहै वहधन इसके पराक्रम और सेनाकेवास्ते अथवा यज्ञके निमित्त होताहै भोगनेके अयोग्यइन्धन आदि और भोजनकेयोग्यचावल इत्यादि और औषधियोंको काटकर पकातेहैं जोपुरुष हविष्यान्नसे देव पितृ मनुष्योंकापूजन नहीं करता है उस स्थलमें धर्म्मज्ञ पुरुषोंने धनको निष्फल कहा है हे राजा धर्म्मज्ञ राजा पहिले धनकोहरणकरे तदनन्तर लोकको प्रसन्नकरे इसप्रकार करनेवाला राजा शोक रूप नहीं होता, जो पुरुष अपने देहको सेतु बनाकर असाधुओं से धनलेकर साधुओंको देताहै वही सब धर्म्मोंका ज्ञाता है अपनी सामर्थ्यसे ऐसेप्रकार से संसार को बिजय करे जैसे कि उद्भिज चेंटी आदि जीव धीरे २ दूरतक चलेजाते हैं जैसे कि डांस मच्छर और चेंटियोंके अण्डे अपने आप उत्पन्नहोते हैं उसीप्रकार यज्ञ न करनेवाला पुरुष भी बारम्बार पैदाहोता है और जैसे डांसआदि जीवोंको पशु अलग करते हैं वैसेही यज्ञ न करनेवालों को त्यागना चाहिये और जैसे बहुत पिसावट से पृथ्वीकी रेणु महीन होजाती है उसी तरह इसलोक में धर्म भी सूक्ष्मसे सूक्ष्म होजाता है ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेषष्ठोऽध्यायः६ ॥

सातवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि जो मनुष्य भविष्यबातको पहिलेही करनेवालाहैऔर जो समय पर बुद्धिके अनुसार कार्य करता है यह दोनों सुखपूर्वक वृद्धिको पाते हैं दीर्घसूत्री सदैव नष्टताकोपाताहै इसस्थानपर इसउत्तम व्याख्यानको कहताहूं जोकि दीर्घसूत्रीको करने और न करने के योग्य कर्म्मके निश्चयके विषयमें कहाहै, हे राजा किसी बड़े गहरे तालाबमें मित्रभावके साथ रहनेवाले तीनमत्स्य थे उन तीनों में से एक तो प्राचीन वृत्तान्तोंका जाननेवाला दूसरा समय पर बुद्धिसत्ता प्रकट करनेवाला और तीसरा दीर्घसूत्री था किसी समय मछली मारनेवालोंने चारोंओरसे नीचाखोदकर उसके जलको खाली किया तब वह दूरदर्शी उसतालाब को खालीहोता देख कर अपने दोनों मित्रोंसे बोला कि सब जल जीवों की यह आपत्ति उत्पन्न हुईहै सो जबतक मार्गमें कोई दोष न आवे तब तक दूसरे किसी अन्यस्थान को चलना चाहिये हे मित्रलोगो जो पुरुष सन्मुख आनेवाली किसी आपत्तिको अच्छी नीतिसे निवृत्तकरे वह संशय से रहित होता है जो तुमलोगों को यहबात स्वीकार होयतो चलो उनमें से दीर्घसूत्रीने कहा कि ठीक है परन्तु शीघ्रता न करनीचाहिये यह मेरीपक्कीरायहै तदनन्तर समयपर बुद्धिप्रकट करनेवालेने दूरदर्शीसे कहा कि समय वर्त्तमान होनेपर मेराकोईकाम न्याय के विपरीत

नहीं होता है तबतो महाबुद्धिमान् दूरदर्शी वहांसे नालियों के मार्ग होकर किसी बड़े गहरे तालावको गया तदनन्तर मछुओं ने उस तालाव को खाली करके बड़ी २ युक्तियोंसे मछलियोंको पकड़ा उनमें वह दीर्घसूत्री भी पकड़ा गया वहां रस्सियों से मछलियों के बांधने पर वह समयपर बुद्धिप्रकट करने वाला भी उनमें आकर घुसगया और सबको जालमें लेकर वह मत्स्यघाती चलदिया और उसने उनसब पकड़ीहुई मछलियोंको देखा तदनन्तर मछलियों के धोने के समय यह बुद्धिमान् मत्स्य रस्सी से निकलकर गम्भीर जल में चलागया और उस निर्बुद्धी असावधान दीर्घसूत्री की मृत्युहुई इसीप्रकार जो पुरुष सन्मुख आयेहुये समय को नहीं जानता है वह दीर्घसूत्री मत्स्य के समान शीघ्रही मृत्युको पाता है और जो अपनेको बुद्धिमान् समझ कर प्रारंभ में अपने कल्याण को नहींकरता है वह ऐसे सन्देह में पड़ता है जैसे कि समयपर बुद्धिप्रकट करनेवाले ने पाया और जो आगामी होनेवाले कर्म्म को करता है और समयपर बुद्धिको प्रकट करता है वह दोनों सुखसे वृद्धिको पातेहैं और दीर्घसूत्री का नाश होजाताहै काष्ठा कला मुहूर्त दिन रात मास पक्ष छओंऋतु कल्प चारोंप्रकार के वर्ष पृथ्वी देश काल यह सब समय के विभागहैं इनकी सूक्ष्मता दृष्ट नहींआती है जो पुरुष मनोरथ सिद्धिकरने के लिये ध्यान करता है वह अपनेही प्रकार से जानता है ऋषियोंने यह दोनों धर्म्म अर्थ और मोक्षके शास्त्र और मनुष्यों के स्वीकतशास्त्रों को ऋतुकहा है परीक्षा लेकर करनेवाला और कर्म्म का करनेवाला दोनों अच्छे प्रकारसे प्रयोजनको सिद्धकरतेहैं देश और काल चित्तके रोचकहैं इससे इन्हीं से फलको पाताहै २४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणि आपद्धर्म्मेसप्तमोऽध्यायः ७ ॥

आठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह आपने सर्वोत्तम बुद्धियोंका वर्णन किया प्रथम वह है कि जिससे भविष्यतबात ज्ञातहोजाय द्वितीय वह कि समयपर आपत्तिसेबचे तृतीय नाशकरनेवाली दीर्घसूत्रियों की बुद्धिहै हेपितामह अब मैंआपसे उसबुद्धिको सुनाचाहताहूं जिससे कि शत्रुसे घिराहुआ राजा मोहयुक्त नहो और जो राजा धर्म अर्थमें प्रवीण और धर्मशास्त्रका पण्डित हो ऐसाकौनहै उसको आपकहिये मैं इनसबको बुद्धिके अनुसार सुना चाहताहूं पूर्व समयके खेदपायेहुये बहुतसे शत्रुआपत्तिमें संयुक्तअकेले भी होकर राजाकेनाशको चाहतेहैं बड़े पराक्रमियों से सब स्थानोंपर कैदकरने के योग्य निर्बल और असहाय राजा कैसे वर्त्तमान होनेको योग्यहै और शत्रु

मित्रको कैसे प्राप्त करताहै यहां शत्रुमित्र के मध्यमें कैसे कर्म्म करना चाहिये इसीप्रकार जिस पुरुष का लक्षण जानागयाहै ऐसे मित्रको शत्रु होजाने पर कैसे कामकरे जिससे कि सुखको प्राप्तहो, किसको मित्र और किसको शत्रु करे और शत्रुओंमें वर्त्तमान बीर पराक्रमी भी किसप्रकारसे बर्त्तावकरे इन सब बातोंको आप बिचार पूर्वक कहिये भीष्मजी बोले हे युधिष्ठिर बेटा यह सुखदायी प्रश्न तेरे पूछने योग्य है इसको ब्यौरेसमेत मैं कहताहूं कि कार्य्योंके सामर्थ्य योगसे शत्रुमित्र होजाताहै और मित्रशत्रु होजाता है यह बात सदैवसे चली आई है इसकारण देशकाल को जानकर योग्यायोग्य कर्म्मके निश्चय करने में विश्वास करना चाहिये और आतंकबन्ध घातइत्यादिको अच्छेप्रकारसे करे और बुद्धिमान् शुभचिन्तकलोगों से सदैवमेल और स्नेह रखना चाहिये और शत्रुओंसे भी सन्धिकरनी चाहिये क्योंकि अपने प्राणोंकी रक्षा अवश्यहै जो मूर्ख शत्रुओं से सदैव मेल नहीं रखताहै वह किसी अर्थ और फलकोनहीं पाताजो पुरुष अपना अर्थ समझकर शत्रुसे सन्धिकरता है और मित्रकेसाथ शत्रुताकरताहै वहबड़े भारी फलको पाता है इस स्थान पर इस प्राचीन इतिहास को कहता हूं जिसमें बट वृक्ष के समीप रहनेवाले बिलार और चूहेका परस्पर विवादहै कि किसी बड़ेबन में एक बड़ाभारी बरगद का वृक्षथा जिसकी बड़ी २ लता उसको घेरेहुयेथीं और अनेक प्रकारके पक्षियों के समूहोंसे ब्याप्तथा उसकी सघनछायामें अनेक सर्पादिक बिषवाले जीव और मृगोंका निवासस्थान था वहां एक पलितनाम चूहाभी उसकी जड़ में सौ मुखवाले छिद्रमें निर्भयरहताथा और पक्षियों का घातक लोमशनाम बिलारउसबृक्षकी शाखापर रहताथा वहांएक बहेलिया सूर्य्यास्तके समय उस वृक्षके नीचे जालबिछाकर प्रतिदिन घरको चलाजाताथा और प्रातःकाल जब आताथा तब रात्रिके फँसेहुये मृग उसमें पाताथा दैवयोगसे एक दिन वह बिलार उसमें फँसगया उसबड़े पराक्रमी अपने शत्रु के फँसजाने पर वह पलितनाम चूहा निर्भय होकर इधर उधर फिरनेलगा तब बहुत दिनोंसे आकांक्षी घूमने वाले चूहेने उसजालके समीप पड़ेहुये मांसखण्डको देखा और जालपर चढ़कर उसको खाया और उसफँसेहुये अपने वैरी बिलार के सिवाय उसने एक नौलेको और उलूकपक्षीको देखा यह दोनों भी चूहेके शत्रुथे और चूहेकी गन्धपाकर होठोंको चाटतेहुये चूहेकी खोजमें इधर उधर फिरनेलगे तब चूहेने चारोंओर से अपने को शत्रुओं से घिराहुआ देखकर महाचिन्तायुक्त होकर यह बिचार किया कि ऐसे मृत्युके वर्त्तमान होने से और चारोंओर से भयभीत होनेपर अपनी बृद्धिचाहने वालेको किसीप्रकार काम करना चाहिये जिससे कि आपत्तिमें पड़ेहुये जीव अपनी आपत्तिदूर

कर के उत्तम जीवन प्राप्तकरूँ अगर पृथ्वीपरजाऊं तो नौला भक्षणकरेगा और जो यहां ही बैठा रहूंगा तो उलूक खाजायगा और फाँसियों के कटने से बिलार भोजन करेगा ऐसी दशा में मुझ सरीखा बुद्धिमान् मोह करने के योग्य नहीं है क्योंकि मैं जहां तक बनेगा वहां तक जीवने का उद्यो- ग करूंगा बुद्धिमान् नीतिज्ञ लोग बड़ी आपत्ति में भी फँसकर चिन्ता में मग्न नहीं होते हैं इससे अबमैं इसस्थान पर बिलार के सिवाय दूसरे उपाय को नहीं जानताहूं यह मेरा शत्रु आपत्तिमें है और इस समय मैं उसका बड़ा काम कर सक्ताहूं अब तीन शत्रुओंसे घिरा हुआ अपने जीवनके लिये क्या काम करूं इससे इस बिलार अपने शत्रुकी शरण में जाताहूं नीतिशास्त्र की रीतिसे इसकी शरण में जाकर इसके अभीष्ट को वर्णन करूं जिसके द्वारा अपनी बुद्धिमत्तासे इनसब शत्रुओं से बचूं यह मेरा शत्रुबड़ी आपत्तिमें है जो यह मूर्ख अपना प्रयोजन सिद्ध करने के लिये मेलकरनेको तैयारहोजाय अर्थात् महा दुःखी होकर जो मुझसे मित्रताकरे तो आपत्तिमें पड़ेहुये जी- वन की इच्छाकरनेवाले उसपराक्रमी शत्रुसेभी मिलाप करनायोग्यहै जो कि समीप वर्त्तमान हो ऐसा आचार्य्यलोग कहते हैं कि पण्डित शत्रु भी श्रेष्ठहै और मूर्ख मित्रभी अच्छा नहीं और मेरा जीवन इस बिलार से है मैं अपने वचनेके लिये इसबिलारसे कहूंगा तो यहशत्रुभी मिलापसे पण्डितहो- जायगा ऐसा मनमें विचारकर बड़ीमीठीबाणी से चूहेने बिलारसे कहा कि हे बिलार मैं मित्रता से पूछताहूं कि तुम जीतेहो मैं तेरा जीवन चाहताहूं हम दोनोंका कल्याण सुगम है हे स्वामी तुमको भय न करना चाहिये तू सुख को अधिक भोगेगा मैं तुझको इसबंधनसे छुटादूंगा जो मुझको न मारे यहां एककठिन उद्योग मुझको दृष्टपड़ता है जिसके द्वारा तुझको छुटाऊंगा औ मेरा भी कल्याण होगा मैं ने अपने और तेरे लिये खूब विचारकर यह यु- क्ति शोची है इसीमें हमदोनोंका कल्याणहै हे बिलार यह नौला और पापा- त्मा उलूक मुझको नहीं मारते हैं इसीसे मेरा कल्याण है परन्तु यह चपलने- त्र नौलामुझको देखताहै और शब्दकरताहै और वृक्षकी शाखापर बैठा हुआ यहउलूक भी देखताहै मुझको इनसे बड़ाभयहै सातचरण साथचलने से स- त्पुरुषों की मित्रता होतीहै सो तुम पण्डितहो मैं भी तुम्हारे साथचलूंगा तुम मेरे मित्र हो अब तू भयमत कर हे मित्र बिलार तुममेरे काटने बिना फंदे से नहीं निकलसक्ते जो तुममुझको न मारोगे तो मैं तेरेफन्दोंको काटूंगा तुम अपने वृक्षपरजाओ और मैं वृक्षकी जड़में जाऊं क्योंकि हमतुम बहुतकाल से इस स्थानमें रहते हैं जिसका कोई विश्वास नहींकरता और कहीं आपभी विश्वास नहींकरता ऐसे चित्तवालोंकी पण्डित प्रशंसा नहींकरतेहैं इसकारण

हमदोनोंकी मित्रता बड़ीहोय और सदैव हमदोनों का मिलाप रहै इसस्थानपर पण्डितलोग समय पर प्रयोजन उल्लंघन करनेकी प्रशंसानहीं करते हैं यहां इसअर्थ युक्तिको सुनो कि मैं तुम्हारे जीवनको और तुममेरे जीवनको परस्पर चाहतेहो जैसे कि कोई पुरुषकाष्ठकेद्वारा महा गंभीरनदीसे पारउतरता है वह उसकाष्ठकोभी तारताहै और उसके द्वारा आप भी तरताहै इसी प्रकार हमारा तुम्हारा योगहै मैं तुमकोतारूंगा और तुम मुझको तारोगे ऐसी उचितबातेंकरके वह चूहाचुपहोगया तब वह पण्डित बिलार बड़े मीठेवचनों से उसकी प्रशंसाकरके बोला कि हे सौम्य तेराभला हो मैं प्रसन्नहोताहूं जो तुम मेराजीवन चाहतेहो तो इस कल्याणको करो इस में बिचारमतकरो मैं इसकठिनफंदेमें फँसाहूं और तुममुझ सेभी अधिक आपत्तिमें फँसेहो हमदोनों आपत्तिमेंहैं मिलापकरनेमें विलम्ब न करनाचाहिये और हेमित्र समयके अनुसार जिसकर्म्मसे सिद्धीप्राप्तहोगी उसीकोकरूंगा मेरीआपत्तिके निवृत्तकरनेसे तेरा उपकारव्यर्थ न होगा मैं निरहंकारीभक्तहूं शिष्यकेसमान तेरीभलाईकरूंगा यहसुनकर उस पलितचूहेने यह हितकारी बचनकहा किआपने जो बातकही वह आपसरीखे जीव में आश्चर्य्य कारी नहीं है प्रयोजन के सिद्धकरने को जो युक्ति मैंने नियतकीहै उसको सुनो मैं तेरेपासआताहूं मुझको नौलेसे बड़ाभय है सो तुममुझको मतमारो क्योंकि मैं तेरीरक्षा करनेमें समर्थहूं और उलूक भी मुझको चाहता है उसनीचसे भी मेरीरक्षाकरो हे मित्र मैं सत्यसत्य शपथकरता हूं मैं तेरी फाँसी को काटूंगा तब उसलोमशनाम बिलार ने ऐसे सार्थकवचनों को सुनकर उसपलित नाम चूहे की बड़ी प्रशंसा की और कहा कि तुम मेरे प्राण के समान मित्र हो तुम्हारा सदैव भलाहो जल्द फन्दों को काटो हेज्ञानी तेरी कृपासे बहुत दिनतक जीऊंगा और जो २ मुझसे इसके बदले में चाहैगा वह सब तेरे लिये करूंगा हेमित्र जल्दी से हमारा तेरा मिलाप हो इस आपत्ति से जल्दी छुड़ा मैं तेरेअनेक उपकार करूंगा भीष्मजी बोले कि इस प्रकार से दोनों विश्वासित होगये तब चूहा उसकी बगल में फंदे काटने को आया और बिलार से निर्भय होकर उसकी छातीके नीचे ऐसे शयनकिया जैसे कि विश्वासी मातापिता के साथ सोताहै उसचूहेको बिलार के नीचे चिपटा हुआ देखकर वह नौला और उलूक दोनों निराश हुये और उनकी ऐसी प्रीति देखकर वह दोनों महा आश्चर्यकरनेलगे और उसचूहेको अपनेपराक्रम और उद्योगसे पकड़ने को असमर्त्थहुये और उसका पकड़ना असम्भवजानकर शीघ्रता से अपने २ स्थानोंको चलेगये तब उसपलित ने बहुत धीरे २ उसबिलार की फाँसियों को काटा तब उसबिलार ने चूहेसे कहा कि हे सौम्य मित्र क्यों नहीं शी-

घ्रता से काटता और अपने सिद्धमनोरथ का क्यों अपमान करता है हे शत्रुओंकेमारनेवाले जल्दीसे फाँसियोंको काटसामनेसेवह चाण्डाल आताहै तब चूहेने उससे कहा कि हे मित्र चुपहोजाओ तुमको शीघ्रता न करनी चाहिये क्योंकि हम समय के जानने वालेहैं समय त्याग नहीं किया जाता बिना समय करने वाले का प्रारम्भ कर्म्म सिद्ध नहीं होता है और समयपर करने से वही प्रारम्भ कर्म्म शीघ्रही सिद्ध होता है बे समय तुझफाँसी से छूटेहुये से मुझको भयहै इससे समयतक राहदेख शीघ्रता क्यों करता है जब उस शस्त्रधारी चाण्डालको समीप आता देखूंगा तब साधारण भय होनेपर तेरीफाँसियों को काटूंगा फाँसीसे छूटतेही तुम अपने जीवन के निमित्त वृक्ष परही चढ़ोगे तब मैं अपने बिलमें जाऊंगा और आप अपने वृक्षपर बैठोगे तब चूहेसे अपने हितकारी ऐसे वचनों को सुनकर बिलार बोला कि हे मित्र प्रीतिसे करने वाले साधूलोगइस प्रकार नहीं करते हैं देखो जैसे मैंने तुमको शीघ्रही आपत्ति से छुटाया उसी प्रकार तुमभी मुझको शीघ्रता से छुटाओ और जो तुम प्राचीन शत्रुता से देर करते हो सो देखो कि तुम्हारा जीवन मेरेकारण से सिद्ध हुआ और जो कोई अज्ञानता से मैंने तुम्हारे साथ पहिले पाप कियाहो उसको क्षमाकरो और चित्तसे द्वेषको त्यागकर मेरा कामकरो तब उसशास्त्रज्ञ चूहेने शास्त्रकी बुद्धिसे फिर श्रेष्ठ वचन कहा कि हे बिलार मैंने तुझ स्वार्थीका वचन सुना और तुम भी मुझ अपने स्वार्थी को जानतेहो जो मित्र भयकारी के समान मिलने वाला है और जो भय से हितकारी है वहकार्य बहुत विचारके साथ ऐसे करने के योग्यहै जैसे कि सर्पके मुखसे हाथ विचार करने के योग्यहै जो पुरुष पराक्रमियों से मिलाप करके अपनीरक्षा नहीं करताहै उसकी बात उसके प्रयोजनको सिद्ध नहीं करसक्ती है जैसे कि भोजन किया हुआ अपथ्य-- न तो कोई मित्र है न कोई किसीका शुभ चिन्तक है प्रयोजन से ही मित्र और शुभ चिन्तक होते हैं प्रयोजन से प्रयोजन ऐसे बांधाजाता है जैसे कि हाथियोंसे जंगलीहाथी– कार्य होजाने पर कोई उपकारको नहीं ध्यान करता है इस कारण सब कामोंको पूरा नहीं करता दिनमें भयभीत होकर आप भी मुझपर घात नहीं करसकोगे और भागने में प्रवृत्त होगे बहुत से फन्दे काटे हैं एकही फन्दा बाकीहै हे लोमश मैं उसको भी बहुतशीघ्र काटूंगा विश्वासयुक्तरहो इसी प्रकार से वार्त्तालाप करते २ रात्रि व्यतीतहुई और बिलारको भय उत्पन्नहुआ तिस पीछे प्रभातकेसमय विकृतकाला और पीलावर्ण महाघोर रूप कुत्तोंको साथलिये शंकुकर्ण चौड़ाभयानक महामलिन घोर दर्शन हाथमें शस्त्रलिये परिघनाम चाण्डाल दृष्टपड़ा तब महा

भयभीत होकर बिलारने कहा कि अब क्या करेगा तदनन्तर वह दोनों नौला और उलूक जो निराश होकर चले गयेथे फिर उससमूह में आये और उस बिलार और चूहेको देखतेथे कि चूहेने बिलारका वह बाकीफंदा भी काटडाला और बिलार बड़ी शीघ्रता से पेड़पर चढ़गया फिर पलितचूहा भी बिलमें घुसगया तब वह चाण्डाल क्षणमात्र ठहर कर उस जालकोलेकर चलागया तब बिलार ने बिलमें बैठेहुये उस चूहेसे यह कहा कि हे मित्रजीवदान देकर मित्रता से मेरेपास क्यों नहीं आतेहो जो मनुष्य पहिले मित्रताकरके पीछे पासनहीं आताहै वह निर्बुद्धी बड़ी आपत्तियोंमें कष्टसेभी मित्रोंको नहीं पाता है हे मित्र तैंने अपनी सामर्थ्य से मेरेऊपर उपकार किया इससे मुझसे मित्रता भोगो मेरेइष्टमित्र बान्धवभी तुमको ऐसेपूजेंगे जैसे कि शिष्यलोगअपने प्यारे गुरू को पूजते हैं और मैं अपने सब कुटुम्ब समेत तुझजीवदान देनेवालेको सदैव पूजूंगा उपकारको जानकर कौन पुरुष है जो उसकीसेवा न करे आप मेरेदेह प्राण घर आदिके स्वामीहो और मेरेमंत्रीहोकर पिता के समान मुझ को उपदेश करो हम शपथखाते हैं हम से आप कभी भय न करें यद्यपि हमपराक्रम में तुम से अधिक हैं परन्तु तुम शुक्रजीके समान गुरूहो इस से पराक्रमी सलाह में प्रवृत्त हो बिलार के ऐसे २ बचनों को सुनकर चूहेनेसाफ २ अपना हितकारी बचन कहा कि मैंने सब तुम्हारी बातें सुनी अब मुझको जैसा मालूम होता है उस मेरी बातको भी सुनो कि शत्रु जानने और पहिंचानने के योग्य हैं लोक में यहअत्यन्त सूक्ष्म ज्ञानियोंका वचन सुनने में और देखने में आता है कि मित्रशत्रुरूप हैं और शत्रु मित्ररूप हैं वह काम क्रोधमें संयुक्तहुये नहीं पहिंचाने जातेहैं प्रत्यक्ष में कोईशत्रुहै न मित्रहै मित्र और शत्रुदोनों सामर्थ्य के योग से उत्पन्न होते हैं जो अपने प्रयोजन के लिये जिसके पास जीवन करता है और जीवन में कोई दुःख नहीं पाता है वह तबतकही उसका मित्र बना रहता है जबतक कि कोई बिपरीतता न होवे प्रत्यक्ष है कि मित्रता स्थिर नहीं है और शत्रुता भी अविनाशी नहीं है मित्र और शत्रु सब अर्थयुक्तियों से उत्पन्न होते हैं किसीसमय की विपरीतता में मित्र शत्रु होता है और शत्रु मित्र होजाता है अपना प्रयोजनही महाबली है जो मित्रों में बिश्वास करता है और शत्रुओं में विश्वास नहीं करताहै और जोअर्थ युक्तिको न जानकर प्रीति करनेवालों में इच्छाकरता है उसकी बुद्धि शत्रु या मित्र में अवश्य चलायमान होगी अविश्वस्तों में अधिक बिश्वास न करे विश्वाससे उत्पन्न होनेवाला भय मूलकोभी काटडालताहै अर्थ युक्तिसेही पिता, माता, बेटा, मामा, भानजे, सम्बन्धी बान्धव आदि सब उत्पन्न होते हैं और पतित होनेवाले पुत्रको माता पिताभी त्याग करते

हैं सबसंसार अपनी आत्माकी रक्षाकरता है तुम अपने अर्थ की सरिता देखो हे ज्ञानी जो बंधन से छूटनेकेपीछे बदला है वहसाधारण है निस्सन्देह तुम सुगमता से अपने शत्रुको प्राप्त कियाचाहते हो इसबड़े बरगद से उतरत हुये तुमने चपलता से पहिले से बिछाये हुये जालको नहीं जाना चपल पुरुष जब अपनाहीनहीं है तो दूसरों का कैसेहोगा इसकारण चपल मनुष्य अवश्य सबकार्यों का नाशकरता है जो तुम इसमीठे बचनोंको कहते हो कि आप मेरे प्यारेहो तो मित्रहोने के उस संपूर्ण कारणको ब्यौरेवार मुझ से सुनो कि कारणही से मित्रता प्राप्त होती है और कारणही से शत्रु भी हो जाता है यह जीवलोक अपने स्वार्थ का चाहने वाला है कोई किसी का प्यारानहीं है सगेभाई या स्त्री पुरुषोंमें परस्पर प्रीति होती है मैं इसलोक में किसीकी प्रीति को बिनाकारण के नहीं जानता हूं जो किसी हेतु से भाई या स्त्री क्रोध युक्त हो जाते हैं तो वह स्वभाव से प्रसन्न भी हो जातेहैं दूसरा मनुष्य प्रसन्ननहीं होता कोई धनसे कोई मीठे वचन से कोई मंत्र, होम, जपआदि से प्रसन्न होता है सब मनुष्य कार्य के निमित्त प्रीतिकरतेहैं हमारी तुम्हारी प्रीतिकारणसे हुई है बेकारण नहींहुई मैं जानताहूं कि उस कारण स्थान के नाश होनेसे वहप्रीति दूरहोजाती है, वह कौनसाकारणहै जिससे मैं आपका प्याराहुआ, भोजन के प्रयोजन के सिवायभी उसस्थान पर हम बुद्धिमान् हैं समय कारण को बदलता है और अपनाप्रयोजन उसके पीछे वर्त्तमान होताहै ज्ञानी अपने प्रयोजन को जानता है और ज्ञानी के समान संसार कर्म्मकरता है बुद्धिमान् पण्डितहोकर तुमको ऐसा न कहना चाहिये तुझसरीखे समर्थ मनुष्यका यह प्रीति का कारणअयोग्य है इसकारण संधि और विरोध में स्थिरस्वभाव होकर मैं प्रयोजनके मित्रसे अलगहोताहूं जैसे कि बादलोंकेरूप क्षणक्षण में बदलतेरहतेहैं इसीप्रकारआपभी शत्रुहोकर मेरे मित्रहोतेहो और फिर शत्रुहो जाओगे इनयुक्तियों की चपलताको देखो तभीतक हमारीमित्रतारही जबतक कि पूर्वसमयमें मित्रताका कारण वर्त्तमान था उससमयसे मिलीहुई मित्रताजातीरही तुम जन्मसेही मेरेशत्रुहो सामर्थ्यके योग से मित्रता हो गई उस कार्यको सम्पूर्ण करके स्वभाव ने शत्रुताको पाया सो मैं शास्त्रज्ञ होकर अपने को तेरेजाल में कैसे फँसाऊं यह मुझेसमझाओ मैं तेरेबल से छूटा इसीप्रकार आपभी मेरे पराक्रमसे जालसेछूटे परस्परमें कृपाहोनेसे फिर मिलापनहींहै हेबिलार अब जैसेतुम अभीष्टसिद्धकियेहो उसी प्रकार मैं भी सिद्ध मनोरथहूं अब भक्षण करनेके सिवाय कोई काम मुझ से तेरा नहीं है मैं भोज्य वस्तु हूं आप भोक्ताजीव हैं मैं निर्बलहूं आपपराक्रमी हैं भिन्न २ पराक्रमियोंका परस्परमें मेल नहीं होता सो मैं तेरी इस बुद्धिको

जानताहूं जो जाल से छूटने के पीछे तुझ में उत्पन्नहुई तुम निश्चय करके सुगमता से भोजन को चाहतेहो भोजनहीके लिये तुम जाल में फँसे थे अब उससे छूटकर फिर गृहस्थाश्रम से दुःखीहो मुझे निश्चय है कि तुम अपनी विद्याबुद्धि के बलसे मुझको भक्षण करना चाहतेहो मैं तुझ को जानताहूं यह तेरेभोजन का समयहै सो मुझसे मिलापकरके भोजन चाहते हो जो तुम मुझ से मित्रता करतेहो तो तुमभीस्त्री और बेटों में संयुक्तहो और मेरी सेवाकरनेकी युक्तिकरते हो सो हे मित्र वह तेरेस्त्री पुत्र मुझ को तेरेसाथ देखकर कबखाने से छोड़ेंगे इस से मैं तुझ से नहीं मिलूंगा मिलापकरनेका जो कारण था वहतो समाप्तहुआ अब जो उपकार को तुम स्मरणकरतेहोतो सावधानहोकर मेरी भलाईको ध्यानमें रक्खो नीच--दुःखी और भोजन को चाहनेवाली शत्रुके देशको कौन बुद्धिमान् जाताहै मैं दूरहीसे तेरा भय करताहूं क्षणमात्र में तेरा भोजनरूप कल्याण होजाऊंगा चाहे विश्वास युक्तहो या अत्यंत प्रसन्नहो परन्तु समयपर यही कर्महोगा क्योंकि पराक्रमीकीसमीपता किसी २ समयपर दुखदायीभी होती है इस से हेलोमश मैं तुमसे नहीं मिलूंगा अपनी आशा दूरकरो और जो तुम उत्तम कर्म्म को जानतेहोतो चित्तमे प्रीति रक्खो मुझको शान्तचित्त पापी पराक्रमी से अवश्य डरना योग्य है जो तुम अपने मतलबी होजाओ तो मैं तुम्हारा क्याकरसक्ताहूं मैं इच्छाके माफिक सबवस्तुदूंगा परन्तु देहको नहींदूंगा क्योंकि देहकेपीछे सन्तान राज्य रत्न धनभी त्याग करनेके योग्यहैं सबधनकोभी त्यागकर बुद्धि के अनुसार देह की रक्षाकरे धन रत्नों के ऐश्वर्य्यको पाकर मित्रकेपास वर्त्तमानहो और धनकी प्राप्ति के अनुसार अपने जीवन का निर्वाहकरो, धन और रत्नों के समान अपने देहको कोई नहींदेनेकी इच्छाकरताहै स्त्री और धनसेभी अधिक अपना आत्मा रक्षाके योग्य है--जो पुरुष अपने आत्मा की रक्षा में प्रवृत्त अच्छी परीक्षाकरके कर्म करते हैं उन पुरुषोंको अपनेदोषसे प्राप्त होनेवाली आपत्ति कभी नहींहोती है, जो निर्बल अपने पराक्रमी शत्रुको अच्छे प्रकारसे जानते हैं उनकी बुद्धि चलायमान नहींहोती है तब तो बिलार ने लज्जायुक्त होकर उस पलित चूहे से यह वचन कहाकि पलित मैं तुझसे सत्य २ शपथखाताहूं मित्रसे शत्रुता करना महानिन्दितकर्महै और तुमजो मेरे अभीष्ट को चाहतेहो इस से मैं तेरी इसबुद्धि को श्रेष्ठ जानताहूं तुमने अपने प्रयोजन के लिये अथवा मुख्य प्रयोजन पर दृष्टि करके अपूर्बबातें मुझ से कहीं सो हे मित्र तुम मुझको प्रतिकूल जानने के योग्य नहीं हो क्योंकि प्राणदानसे मैं तुझको मित्रबनाताहूं मैं गुण और धर्मों का जाननेवाला अच्छेप्रकार तेरे उपकार को जानताहूं मित्रों से प्रीति रखताहं

और विशेषकरके तेराभक्तहूं इसकारण तुम मेरेसाथ विचरने के योग्यहो तेरे त्यागनेसे मैं बान्धवों समेत प्राणत्याग करूंगा जब कि यह मेरा विचारहै तो आपको भय करना कभी नहीं योग्य है यहसुनकर चूहे ने फिर उत्तरदिया कि आपसाधू हैं परन्तु मैंने अर्थशास्त्र पढ़ाहै इस से शत्रुपर बिश्वास कभी नहीं करसक्ता तेरी प्रशंसा और धनके देने से भी मैं तेरेआधीन नहींहोसक्ता अरेभाई ज्ञानी पुरुष बिनाप्रयोजन शत्रु के आधीन नहींहोते हैं इसप्रयोजन में शुक्र जीकी दोगाथाओं को सुनो कि जहां साधारण शत्रुहै वहां पराक्रमी के साथ मेलकरके सावधानी से युक्तिपूर्वक कर्म्मकरे और मनोरथ सिद्ध करके भी विश्वास न करे, अविश्वासी में बिश्वास न करे और विश्वासी में भी अधिक बिश्वास न करे, सदैव दूसरोंको अपना विश्वास दिलावे परन्तु आप किसी दूसरे का बिश्वास न करे इसकारण चाहिये कि स[illegible] दशाओं में अपने आत्माकी रक्षाकरे धन और पुत्र देहसेही उत्पन्नहोते [illegible] अविश्वासही को नीतिशास्त्रका उत्तम आशय कहतेहैं इससे मनुष्यों [illegible] विश्वास न करना ही अपना बड़ा हित है बिश्वास न करनेवाले निर्बलभी पराक्रमियों के हाथ से नहीं मारे जाते हैं और बिश्वासी पराक्रमी भी होकर निर्बलोंके हाथ से मारेजाते हैं इससे हे बिलार मुझको अपना आत्मा तुझ सरीखे जीवोंसे सदैव रक्षाके योग्य है तुमको भी उचित है कि पापी चांडालसे अपनी रक्षाकरो उस के यह वचन सुनतेही वह बिलार भयभीत होकर वृक्षको त्यागकर शीघ्रही बड़ी तीव्रतासे भागा वह पलित चूहा अपनी बुद्धिकी सामर्थ्य ऐसे वचन सुनाकर दूसरेबिल में चलागया इस प्रकार से इस [illegible] अपनी [illegible] बहुतसे पराक्रमी शत्रुओं को स्वाधीन किया पंडित होकर समर्थ शत्रुसे सदैव संधिकरे मैंने [illegible] क्षत्री धर्म चूहे और बिलार के दृष्टान्तसे तुमको सुनाया अब हे युधिष्ठिर इस का आशय भी मुझसे सुनो कि उनदोनों विरोधियों ने परस्पर में प्रीति करी और फिर परस्पर में मेल करने कीभी उन दोनों में इच्छाहुई ऐसे स्थान में ज्ञानी पुरुष बुद्धिके बलसे अच्छे प्रकार मिलाप करताहै ज्ञानी भूलसे भी अज्ञानियोंके साथमिलाप करता है इसकारण निर्भयता के समान भयभीत और विश्वासी के सदृश विश्वासको नहीं करता सावधान पुरुष चलायमान नहीं होताहै और जब चलायमान होताहै तब नाश को प्राप्त होता है समय पर शत्रुसे संधि और मित्रसे विरोध भी करना चाहिये यह सन्धिके जानने वालोंने बारम्बार कहाहै हे युधिष्ठिर इस को जानकर शास्त्रके अर्थको निश्चय करके कर्ममें प्रवृत्त प्रसन्न चित्त होकर भयसे पूर्वही भयभीत के समान कर्मकरो, क्योंकि भय पूर्वकसावधानी से उद्योग करने से बुद्धि उत्पन्नहोती है

और सम्मुख न आनेवाले भयमें भयभीत होनेवालेको भयनहीं प्राप्तहोता है और विश्वासयुक्त निर्भय से भी बहुत बड़ाभारी भय उत्पन्न होता है--जो पुरुष सदैव निर्भयहोकर घूमता है उसको बड़ी युक्तिसे मंत्रदेनाचाहिये कि अच्छेप्रकारसे जाननेवाला वह पुरुष अज्ञानी के समान उन लोगोंके पास जाय जोकि ऐश्वर्यमान हैं भयभीत विश्वासी के समान विश्वासकरने के कारण निर्भय के समान कार्य्योंकी महानता को पाकर मिथ्याकर्म नहीं करताहै हे युधिष्ठिर मैंने इसप्रकार यहइतिहासकहा इसको समझकर तुम मित्रों में बुद्धि के अनुसारकर्मकरो अर्थात् उत्तम बुद्धि और शत्रु मित्रके अन्तरको जानकर संधि और बिरोध के समय अपना बचाव जानके शत्रुको साधारण जान पराक्रमीसे मेलकर मिलापमें युक्तिके साथ कर्मकरो और मनोरथ सिद्धकरके विश्वास न करो--हे राजा यहनीति त्रिवर्ग से मिलीहुई है इसको काममें लाओ और फिर इसशास्त्रसे प्रजाकी अच्छी रक्षाकरके सावधानहो और तेरी यात्राभी ब्राह्मणों के साथ हो क्योंकि ब्राह्मण लोग इसलोक और परलोक में महाकल्याणरूप हैं और यही धर्मज्ञ और कृतज्ञ पूजितहोकर भला करनेवालेहैं इनका पूजन करनेसे परमकल्याण और यशकीर्तिको प्राप्तहोगे और न्यायपूर्वक परम्परा के समान घरानेकी संतानोंकोभी पाओगे--इसनीतिके अनुसार राजालोगोंको शत्रुओं के बीचमें बर्त्ताव करना चाहिये २२१॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिआपद्धर्म्मेअष्टमोऽध्यायः ८॥

नवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे महाबाहो आपने मंत्र अर्थात् सलाहका वर्णन किया कि शत्रुओंपर बिश्वास नहीं है जो राजा किसीपर बिश्वास न करे तो कैसे अपने सब राज्यकर्मकरे और विश्वाससे राजाओंको बड़ाभय उत्पन्नहोता है पृथ्वीकाराजा विश्वास रहितहोकरकैसे शत्रुओं को विजय करताहै इसअविश्वस्थता के वृत्तान्तको सुनकर मेरे चित्त में बड़ी अज्ञानताहै इससे मेरेसंदेहको दूरकीरिये भीष्मजीबोले कि हे राजासुनो कि राजाब्रह्मदत्तके महलमें पूजनीनामपक्षीकी स्त्रीकेसाथ राजासे वार्त्तालापके द्वाराजो वृत्तान्तहुआ वहयहहै कि कांपिल्यनाम नगर में राजा ब्रह्मदत्त के राज महलमें पूजनीनाम पक्षिणी बहुत दिवस से रहतीथी यद्यपि वह तिर्य्यक्योनि में उत्पन्न हुई थी परन्तु सब सिद्धान्तों की ज्ञाता होकर सम्पूर्ण जीवोंकी भाषा जीव जीवके समान जानती थी (जीव जीवक पक्षियोंकी बोलीमे शुभ अशुभ जानने वाला होताहै) उसी महलमें उस पूजनी में एक तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ और उसी समय राजा के भी पुत्र हुआ तब वह पक्षिणी समुद्र के तटपर जाकर

दोनों बालकोंके निमित्त दोफललाई वह अमृतके समान सुस्वादु तेज बलका बढ़ाने वाला एक फल अपने पुत्रको और दूसरा राजकुमारको दिया उस फलसे राजकुमार की बड़ी वृद्धि हुई एक दिन धात्रीकी गोदमें बैठेहुये राजकुमार ने उस पक्षीके बच्चे को देखा और लड़कपन से उसके पास जाकर उससे खेलने लगा और खेलते २ उसखाली मकान में उस पक्षीको मारकर धात्रीकी गोदीमें आबैठा तदनन्तर वह फललानेवाली पूजनी आपहुँची और उस अपने बच्चेको राजकुमार से माराहुआ पृथ्वीपर पड़ा देखा और महाव्याकुल शोक से अश्रुपात डालती हुई उस पूजनी ने यह वचन कहा कि क्षत्री में न मिलाप है न प्रीतिहै यह क्षत्री लोग कारण से मीठेवचन कहकर दमदिलासा दिया करतेहैं और अपना मनोरथ करके उसको त्याग करते हैं सबप्रकार से अनुपकारी अकृतज्ञ क्षत्रियोंका विश्वास न करना चाहिये बुराई करके भी निरर्थक दिलासा देते हैं अब मैं भी इस शत्रुताका बदलादूंगी साथ उत्पन्न होकर बड़े होनेवाले और साथ भोजन करनेवाले और शरणागत में आनेवाले इनतीनों को मारने से तीन प्रकारका पातक है ऐसा कहकर दोनों पंजों से राजकुमार की दोनों आंखोंको फोड़कर आकाशमें जाकर यह वचन कहा कि इच्छा से किये हुये पापका फल इसलोक में शीघ्रही होताहै अर्थात् जैसा कर्म किया वैसा फलपाया क्योंकि कर्म का लोप नहीं होता जोकि किया हुआ पाप कर्म कर्त्तामें दृष्ट नहीं आताहै तो उसके पुत्र पौत्रादि में अवश्य दृष्टआता है राजा ब्रह्मदत्त ने अपने पुत्रको आंख रहित देखकर और जैसे कर्मका तैसाही फल जानकर उस पूजनी से यह कहा कि निश्चय हमारी ओर का दुष्कर्म है और तेरी ओर से उस कर्मका बदला है वह दोनों बराबर हुये सो हे पूजनी यहां से मतजाओ पूजनी बोली कि एकबार अपराध करनेवाले को उसीस्थान में शरण होनेवाला कर्म ज्ञानी लोग अच्छा नहीं समझते ऐसे स्थानसे अलगही होना कल्याणकारी है सदैव दम दिलासा देने से शत्रुका विश्वास न करे नहीं तो वह अज्ञानी शीघ्रही माराजाता है क्योंकि शत्रुता दूर नहींहुई परस्पर में शत्रुता करने वालों के पुत्र पौत्रादि को मृत्यु मारती है और पुत्र पौत्रादि के नाशहोने से उसके परलोक का भी नाशकरतीहै शत्रुसे अविश्वास करना सबप्रकार से सुखकारी है विश्वासघातियों का विश्वास कभी न करना चाहिये अप्रमाणीकमें कभी विश्वास न करे और प्रमाणीक में भी अधिक विश्वास न करे विश्वास से उत्पन्न होनेवाला भय मूल समेत काटता है दूसरोंको इच्छा के समान विश्वास करावे परन्तु दूसरोंका विश्वास न करे बांधवों में माता पिता सबसे श्रेष्ठ हैं और स्त्री वीर्य्य ग्रहण करनेसे

और पुत्र वीर्य रूप होनेसे श्रेष्ठ गिनेजाते हैं भाई शत्रुहै जिस को धनसे प्रसन्न करना पड़ताहै वह आत्माही अकेला मित्र होकर सुख दुःखका भोगने वाला है परस्पर में शत्रुता करनेवालों का स्नेह शुद्ध नहीं होता है वह सब बातें दूर हुईं जिनके कारणमैं वहां रहती थी, धन और प्रतिष्ठा से पूजित पहिले बुराई करनेवाले जीवका चित्त अविश्वासी होता है और अपना कर्म्म मुझ सरीखे निर्बलकी रक्षा करता है जिस स्थान पर पहिले प्रतिष्ठाहो और पीछे अपमान हो उस स्थान में चाहे शत्रु बहुतसी प्रतिष्ठाभी करे परन्तु बुद्धिमान् वहां कभी न रहै, मैं तेरेमहल में बहुत कालतक अच्छे प्रकार से प्रतिष्ठा पूर्वकरही अब यह शत्रुता उत्पन्न हुई इससे आनन्द पूर्वक शीघ्रही जातीहूं, ब्रह्मदत्त ने कहा कि जो जीव कर्म्म के बदले कर्म्म करे उस स्थान पर अपराधी नहीं है उससे अऋण होता है इससे हे पूजनी निवास करो कहीं मतजाओ पूजनी बोली कि कर्त्ता और कर्म्म की मित्रता फिर नहीं होती है क्योंकि उस स्थान पर कर्त्ता और कर्म्मका हृदयही जानता है ब्रह्मदत्त बोला कि कर्त्ता और कर्म्म की मित्रता फिर भी होती है शत्रुता के दूरहोने से फिर वह पाप को नहीं भोगता है पूजनी ने कहा कि शत्रुताका दूरहोना वर्त्तमान नहीं है मैं दम दिलासा दीजाती हूं यह बिश्वास न करे क्योंकि लोक में बिश्वासही से माराजाता है इसकारण अलगहोनाभी कल्याणकारी है जो लोग कि बड़े तीव्रशस्त्रों से भी विजयनहीं होसक्ते वह मीठे बचन और दिलासासे पकड़ेजातेहैं जैसे कि हाथी हथिनियों के द्वारा—ब्रह्मदत्त बोला कि जीव नाश करनेवाले जीवों में भी साथ निवास करने से प्रीतिउत्पन्न होतीहै और परस्पर बिश्वासहोता है जैसे कि चांडाल के साथ कुत्ते का होता है परस्पर शत्रुताकरनेवालों के सहवास होनेसे मृदुतायुक्त शत्रुभाव से ऐसे नहीं होताहै जैसे कँवलपर बर्त्तमान जल-पूजनीबोली शत्रुता पांचस्थानों से उत्पन्न होती है उसको पण्डितहीजानते हैं प्रथम तोस्त्रीके कारण से--दूसरी पृथ्वीसे--तीसरीवचनोंसे--चौथी स्वाभाविकीय--पांचवींअपराध से उत्पन्नहोनेवाली--शत्रुता के स्थान पर बल और अबल के दोषको जानकर बिशेषकर क्षत्रीकी ओर से प्रकट वा अप्रकट बांछित बस्तुका देनेवाला मारने के योग्यनहीं है परंतु इस लोक में शत्रुता करनेवाले मित्र में भी बिश्वास न करना चाहिये जैसे कि लकड़ी में गुप्त अग्नि होती है उसीप्रकार शत्रुता भी गुप्तरहा करती है हेराजा क्रोधकीअग्नि न धनदेनेसे न कठोर और मीठे बचनोंसे किन्तुशास्त्रों से शान्तहोतीहै जैसे कि सागरकी वड़वानल अग्नि--हे राजा शत्रुता से प्रकटहोनेवाली अग्नि और अपराध से उत्पन्न होनेवाला कर्म्मभी शत्रुको विध्वंसाकियेबिना शान्त

नहींहोता है, पहिले बुराई करनेवाले और पीछे धनप्रतिष्ठासे सत्कार पाने वालेको मित्रकरनेकेयोग्य बिश्वासनहीं होताहै क्योंकि निर्बलोंको अपना कर्महीं रक्षाकरता है किसी बुराई के कारण जैसे मैं तुझपर बिश्वास नहीं करतीहूं और वैसेही आप भी मुझपर बिश्वास नहींकरतेहो--मैं तेरे घरमें रह-तीथी परंतु अब नहीं रहूंगी ब्रह्मदत्त बोला कि करने और न करनेके योग्य अनेक काम कालसे किये जाते हैं यह सबकर्म्म समयपरहोते हैं इसलोकमें कोई किसीका अपराध नहीं करता है जन्ममृत्यु दोनों बराबर वर्त्तमानहोतेहैं यहकालही पैदाकरता है और वहीमारताहै कितनेही एकही साथ परस्परमें मारे जाते हैं दूसरे परस्पर नहीं मारेजाते हैं जैसे अग्नि इंधन को भस्मकरती है इसीप्रकार काल सबको भस्मकरता है हे पक्षिणी हम और तुमदोनों कि-सीका कोई कारण नहीं है कालही संसार के सुख और दुःख को उत्पन्न करता है इससे हे पूजनी बड़ीप्रसन्नतासे अविनाशी होकर यहां निवासकरो तुमने जो किया वह मैंने क्षमाकिया और हमारेकरने को तुम भी क्षमाकरो पूजनी बोली कि जो कालही से सबहोता है तो एकको एकसे शत्रुता न होनीचाहिये बांधव किसकारण से मारेहुये बांधवों के द्वारा हानिको पाते हैं जो कालहीसे सुख दुःख और हानि लाभ है तो प्राचीनसमय में देवता और राक्षसों में क्यों परस्पर युद्धहुआ जो कालही सबका हेतुहै तो वैद्य रोगियों को औषधियोंसे क्यों चिकित्साकरते हैं और जीवोंके शोकसे पीड़ामानक्यों विलाप को करतेहैं किसकारण से कर्त्तालोगों में धर्म्म वर्त्तमान है तेरेपुत्रने मेरेपुत्रकोमारा वह मेरे हाथसे मारागया तदनन्तर हे राजा मैं तेरेहाथ से मारने के योग्यहूं मैं पुत्रके शोक से तेरेपुत्र के साथ पापकर्म्माहुई मैं तेरेहाथसे जैसे मारने के योग्यहूं उसको व्योरेसमेतसुनो--मनुष्यपक्षियों को भोजन और क्रीड़ाकरने के लिये चाहाकरते हैं उनको पक्षियोंको पकड़ना या मारनाइस के सिवाय तीसरा मिलाप हितकारी नहीं है यह सब जीवघात और बंधनके भयसे मोक्षतन्त्रमें रक्षावान्हैं वेदकेज्ञाताओंने दुःखको मरणकेउत्पातसे उत्पन्न होनेवाला कहा है प्राण सबकोप्याराहै और पुत्रसबकेप्रियहैं सबदुःखसेडरतेहैं और सुखसबको अभीष्ट है हेब्रह्मदत्त बुढ़ापाहोना और धनका हाथसे जाना यही दुःख है और अप्रिय के साथभी रहना दुःख है और हितू बांधवों से पृथक् रहनाभी दुःख है घात और बंधन से उत्पन्न होनेवाला दुःख है, स्त्री से संबंध रखनेवाला दुःख है इसीप्रकार देह से उत्पन्न होने वाला भी दुःख है, विरोधी पुत्रसे सदैव दुःख है, ऐसे २ दुःखों को जानकर भी इन्हींबातों में अधिक प्रवृत्तहोता है कितनेही अज्ञानी लोग दूसरे के दुःखको दुःख नहीं मानते हैं जो दुःख को नहीं जानता है वह बड़े मनुष्यों में बाद करता है

और जो अपने देह में सब दुःखों का जाननेवाला है वह दूसरे में भी वैसा-ही मानता है और दुःख से पीड़ित होकर शोचभी करता है वह कैसे कहने को समर्थहो हे ब्रह्मदत्त जो तुमने मेरा उपकार किया और जो मैं तुम्हारा किया वह बहुत कालतकभी चित्तसे दूरहोने को असम्भव है हमदोनोंका काम परस्पर में है अब संधि नहीं होसक्ती पुत्रको याद करके तेरी शत्रुता नवीनहोगी, जो शत्रुता के समीप होकर मित्रता चाहता है वह इस प्रकार कभी नहींहोती जिस प्रकार टूटी मिट्टी के पात्रकी सन्धि नहीं होती है अपने प्रयोजन के शास्त्र जाननेवाले जीवोंपर बिश्वास करना निश्चयकरके शोकका उदय करनेवाला है-प्राचीन समय में शुक्र जीने प्रह्लादजी से दो कथाकही हैं कि जो जीव शत्रुओं के सत्य बचन अथवा मिथ्या बचनोंपर श्रद्धाकरता है तो वह श्रद्धाकरनेवाले ऐसे मारे जाते हैं जिसप्रकार लोभरूपी शहदसे सूखेतृणोंसे ढकीहुई पृथ्वीपर गिरनेवाले लोग दुःखसे होनेवाली घराने की शत्रुता दूरनहीं होती है परन्तु उसमें शिक्षा समाधान करनेवाले बहुत होजाते हैं हे राजा शत्रुताओं को करके दमादिलासा देते हैं परन्तु किसी समय उसको ऐसे मारते हैं जैसे कि भरेहुये घड़े को पत्थरपर राजा इसलोक में किसीका पापकरके सदैव बिश्वास न करे क्योंकि दूसरों का अपमान करने वाला बिश्वाससे दुःखको भोगता है-ब्रह्मदत्त बोला कि कोई भी विश्वासके बिना मनोरथों को सिद्ध नहीं करसक्ता है और न कुछ इच्छा करसक्ता है लोगपूरेभयसे सदैव मृतक के समान रहते हैं, पूजनी बोली कि जिस के दोनों पैरों में फोड़ा फुंसी है और पैरों से चलता है उसके दोनोंपैर घायलहोते हैं जोपुरुष पीड़ामान नेत्रोंसे हवाकी ओर देखता है उसकी आंखोंको वह हवा महापीड़ादेतीहै--जो पुरुष कुमार्ग को प्राप्त होकर अपने पराक्रम को जानकर भूल से उस में चलता है उसका जीवन उसी मार्ग में समाप्त होता है, जो बर्षा न होना जानकर खेतको जोतता है वह खेतीके फल को नहींपाता है, जो पुरुष तिक्त कषाय मधुरआदि रसों को बिचार पूर्वक पथ्य सेखाता है वह नीरोग होता है और जो पुरुष पथ्य भोजन को छोड़के परिणाम को न जान के अज्ञानता से दुष्टभोजन को खाता है उसकी मृत्युहोती है प्रारब्ध और उद्योग परस्पर में एक एककी रक्षा में वर्त्तमान हैं-बड़े साहसी पुरुषों के कर्म्म श्रेष्ठ हैं, नपुंसक लोग प्रारब्धको ही रोयाकरते हैं--सब को अपनी वृद्धिकरनेवाला काम करनाचाहिये चाहे वह सुगमहो या कठिन हो क्योंकि निकम्मा निर्धन मनुष्य सदैव अनर्थों से ग्रसित होता है इस से सब को त्यागकरके पराक्रम करना चाहिये मनुष्यों को अपने हितके लिये सब धनभी त्यागना योग्य है विद्या, शूरता, विज्ञता, वैराग्य, धैर्य्य यह सब

देहके साथ उत्पन्न होनेवाले मित्र कहेजाते हैं अर्थात् इसलोकमें इनगुणोंके द्वारागुणी होते हैं सुवर्ण रत्न छत्र स्त्री और सुहृदजन यह सब हितकारी हैं इनको सब स्थानोंपर पुरुष पाता है और ज्ञानी पुरुष उनको सर्वत्रपाकर सबस्थलों में विराजमान होता है कहीं उसको कोई नहीं डराताहै और जो कोई डराताभी है तो वहभयनहीं करता है बुद्धिमान्का थोड़ाभी धन बृद्धि को पाता है और असावधानी से करनेवालेका कर्म्म अचेतता से रुकावट को पाता है प्रीति में बद्ध निर्बुद्धी मनुष्यों के मांसों को खोटी स्त्रियां अपने अपराधों से पीड़ा देती हैं अर्थात् ऐसे सुखादेती हैं जैसे कर्कश मनुष्यको उसकी सन्तान यहघर, क्षेत्र, मित्रदेश अपना है इसप्रकारकी बुद्धिकी विपरीततामें मनुष्यपीड़ित होते हैं रोग और दुर्भिक्षता के कारण अपने देशसे भागकर दूसरे स्थानमें रहनेको जाय या सदैव सुरक्षित होकर रहै इससे हे राजा मैं दूसरेस्थान में जाऊंगी यहां रहने को चित्तसे नहींचाहती हूं क्योंकि मैंने तेरेपुत्रकेसाथ यह बहुत पाप कर्म कियाहै खोटीभार्य्या कुपात्रपुत्र अन्यायीराजा खोटी मित्रता--खोटा नाता--और खोटादेश इनसबको दूरहीसे त्यागकरे—क्योंकि कुपात्र पुत्र में विश्वास नहीं—कुभार्य्या में रतिनहीं—खोटेराज्य में सुख नहीं—खोटेदेश में जीविका नहीं—सदैव निर्मूल मित्रता वाले खोटेमित्र में मिलाप नहीं--धनके नाशहोने से खोटी नातेदारी में अपमान होता है जो प्यारे वचन कहती है वही भार्य्या है—जिससे सुख उत्पन्न होताहै वही पुत्रहै--जिसमें विश्वास है वहीमित्रहै—जिसमेंजीवनहोताहै वहीदेश है-जिसदेशमें अन्याय और भयनहींहै और कठिन आज्ञादेनेवाला राजा निर्द्धनोंकी रक्षा करना चाहताहै उसीगुणवान् धर्मज्ञ राजाकेपास भार्या देश-मित्र-बेटे--नातेदार-बांधवहोते हैं धर्म्म न जाननेवाले राजाकेदण्डसे प्रजानष्टहोती है क्योंकि राजा धर्म्म अर्थ कामकामूल है इसकारण से बड़ी सावधानतापूर्वक राजाको प्रजाकीरक्षा करनी चाहिये पृथ्वीके छठेभागकोलेकर अच्छे प्रकारसे खर्चकरे जो प्रजाकी रक्षानहीं करता है वह राजा चोरहै जो राजा आप अपनी निर्भयताको प्रकटकरकेधनके लोभसे उसको प्रमाणनहीं करताहै वह अधर्म्मी सब प्रकारके लोभसे पापीहोकर नरकको जाताहै और जो राजा अपनी निर्भयता प्रकटकरके प्रमाण पूर्वक धर्म्मसे प्रजापालन करता है वह राजा सबका सुखदायीहै—प्रजापतिमनुजीने—माता-पिता--रक्षक—गुरु—अग्नि--कुबेर—यमराज इन सात राजाके गुणोंका वर्णन कियाहै जो राजा प्रजाकेऊपर कृपाकरता है वह पिताकेसमान है उस के साथ मिथ्याकर्म्म करनेवाला मनुष्य तिर्यग्योनिकी यातनाकोपाताहै- जो माता के समान बृद्धिको चाहताहै और दुखियाओंका पोषणकरता है और अग्निकेसमान श-

त्रुओंको ऐसे भस्मकरताहै जैसे कि यमराज पापियों को दण्ड देता है मित्रों में धनों को त्याग अर्थात् उनको देता कुबेरके समानहै मनोरथों का देनेवाला है और धर्म का उपदेश करने से गुरू के समान और चारोंओर से रक्षा करने से रक्षक है, जो राजा अपने गुणोंसे पुरवासियों और देशवासियों को प्रसन्न करता है और देशकी रक्षा से उसकी प्रजा दुखी नहीं होतीहै वह देश भरका प्यारा होकर इसलोक और परलोक दोनों में आनन्द भोगता है जिसकी प्रजा करों के देने से पीड़ित भयभीत होकर सदैव अनर्थोंसे नाशहोतीहै वहराजा भी नाशहोजाताहै जिसकीप्रजा अधिक वृद्धि पातीहै वह राजा स्वर्गलोक में प्रतिष्ठापाताहै हे राजा बलवान् से विरोध करना कभी कोई अच्छा नहीं कहता है जिसका विरोध बलवान्से होताहै उसका राज्य कहां और सुख कैसे होसक्ताहै—ऐसा कह कर वह पक्षिणी राजा को खूब जतलाकर अपनी दिशाकोगई हे राजा यह मैंनेपूजनीकेसाथ ब्रह्मादत्तकावर्णनकिया अब दूसरी कौनसीबात सुनाचाहताहै ११३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेनवमोऽध्याय: ९ ॥

दशवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले हे पितामह युगके अन्त में लोकके धर्म्मक्षीण होने से चोरों से पीड़ामान होनेपर राज्य में किस प्रकारसे वर्त्तमान होना चाहिये-भीष्मजीबोले कि हे युधिष्ठिर इसस्थानपर मैं तुझ से उस नीतिका वर्णन करताहूं जोकि आपत्तिकालोंमें उपकारी होती है कि समयपर दयाकोभी त्यागकर जैसे कि कार्य्य करना चाहिये प्रथम इसस्थान में इसप्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें राजा शत्रुंजय और भारद्वाजऋषिका परस्पर में प्रश्नोत्तर है सौबेरदेश में महारथी राजा शत्रुंजय होताहुआ उसने किसी समय भारद्वाजऋषिके समीप जाकर अर्थके निश्चय को पूछा कि महाराज अप्राप्त वस्तु की इच्छा कैसे करनी उचित है और प्राप्तहुई वस्तुको कैसे बढ़ावै और वृद्धि को प्राप्तहुई वस्तुकी कैसेरक्षाकरे और उस रक्षितवस्तु को कैसे खर्चकरेअच्छे प्रकारसे निश्चयकियेहुये अर्थके लिये अर्थ निश्चयको पूछेहुये ब्राह्मणने इस सहेतुकउत्तम वचन का उससे कहाकि सदैव दण्डजारी करनेवाला और उद्योग करनेवाला कोई दोष न करनेवाला और दूसरे शत्रुओं के दोषोंका देखनेवाला और उनके दोषोंका पकड़नेवाला होना चाहिये--सदैव दण्डधारी राजा के मनुष्य अत्यन्त भयभीत होतेहैं इसकारण सब जीवोंको दण्डसेही स्वाधीन करे मुख्यता के देखनेवाले पंडितलोग दण्डही की प्रशंसा करते हैं इसीहेतु से चारोंनीतों में दण्डही उत्तम कहाजाता है, जिस देश का मूल

काटागया उसमें सबके जीवन का नाशहुआ जब कि वृक्षका बीजही नष्ट होगया तो उसकी शाखा कहांसे नियतहोगी—बुद्धिमान् पंडित राजाको उचित है कि पहलेही शत्रुकेपक्ष की जड़को काटडाले तदनन्तर उसके सहायकों को मारे और उसके मूलको अपनेस्वाधीन करे—आपत्तिकाल के आनेपर नेक सलाह और सुन्दर पराक्रम और युद्धको करके समय पाकर बिना विचारे युक्तिके साथ भाग भी जाय केवल बातें तो मृदुता से करे परन्तु हृदय में छुरे के समान रहे और सफाईके साथ वार्तालाप करनेवाला होवे और काम क्रोध को त्यागकरे अपनाकाम शत्रुके आधीन होजानेपर विश्वास के साथ संधि न करे और बुद्धिमानी से अपनाकाम सिद्धकरके शीघ्रही उस से पृथक् होजाय—मित्रोंके समान मीठेबचनों से शत्रु को विश्वास युक्तकरे और सदैव उससे ऐसा भय करता रहै जैसे कि सर्पयुक्त घर से करते हैं शत्रुओंको बुद्धिके अनुसार विजयकरे और उन को ब्यतीत वृत्तान्तोंसे दृढ़ताकरावे और दुर्बुद्धीको भविष्यतहोनेवाले वृत्तान्तोंसे विश्वास करावे और पंडित को उस समय के योग्य बचनोंसे धीरज करावे हाथजोड़ना शपथखाना मीठेवचन बोलनाभी उचित है और शिरको झुकाकर नमस्कार करना भी योग्य है और ऐश्वर्य्य के चाहनेवाले को शत्रुकी सफाई अश्रुपातों से भी करनी योग्य हैं जबतक समय अनुकूल न हो तबतक शत्रु को अपने कन्धे की सवारी में भी लेचले और समय वर्त्तमान होनेपर इस प्रकार से मारे जैसे कि पत्थरपर घटको मारते हैं हे राजेन्द्र एकमुहूर्त्त पर्य्यन्त तिन्दुक आलापवत् क्रोधाग्नि में संयुक्त होजाय बहुतसे मनोरथों का चाहनेवाला पुरुष कृतघ्नी मनुष्योंसे अर्थ सम्बन्ध न करै क्योंकि अर्थी पुरुष तो भोगने को समर्थ होता है और मनोरथ सिद्धकरनेवाला अपमान करता है इसीकारण से सबकामोंको पूरा न करावे और कोकिल, शूकर, पर्वत खाली मकाननट और भक्त मित्रका जो कल्याणकारी कर्म्महै उसको करे अर्थात् कोकिल तो अपने बालबच्चोंका पोषण दूसरेसे चाहताहै इसीप्रकार राजाभी रक्षाआदि कर्म प्रजा से करावे और बराह जड़को खोदताहै इसीप्रकार शत्रुओं कीजड़ राजा उखाड़े और मेरु पर्वत में दृढ़ता और उल्लंघनका न होनाहै इसीप्रकार राजा अपनी दृढ़बुद्धीको चाहै खाली मकानसे प्रयोजन धनके आमदनी है और नट से बहुतरूप धारण करना प्रयोजन है और भक्त मित्र अपने मालिक का उदय चाहता है इसीप्रकार राजाको भी अपनी प्रजाका उदय करना योग्य है मिलाप करनेवाला सदैव उठउठकर शत्रुके घरमें जाकर उसकी कुशलक्षेम पूछाकरे चाहै कुशल न भी हो तौभी पूछै और सुस्त नपुंसक, भगनेवाले संसारकीबातों से भयभीत और सदैव प्रारब्धहीका भरोसा

करने वाले मनुष्य कभी मनोरथों को सिद्धनहीं करसक्के, शत्रु जिसके दोष को न जाने परन्तु शत्रुकेदोषोंको आपजाने कछुये के समान अपने अंगों को छिपाये रहै और अपने दोषोंकी रक्षाकरै और बगले के समान अर्थोंको बिचारकरताहुआ सिंहकी समान पराक्रमकरके भेड़ियेकेसमान मारकर खरगोस के सदृश भागे और मद्यपान, पांसा, स्त्रीसंग, शिकार, गीतवाद्यआदि को बड़ीयुक्ति पूर्वककरे और बहुतसे प्रसंगों का करना महादोषहै धनुष को तृणरूप बनाकर मृगों की शय्यापर शयन करे समयपर सूझताभी अन्धा और बधिरबनजाय और अपनी बुद्धिमानी से देश कालको अनुकूल जान के पराक्रम करे क्योंकि देशकाल के अनुकूल हुये बिना पराक्रम करना वृथाहोजाता है अपनी सबलता निर्बलता को और समय असमय को और परस्पर के बलको अनुमान करके उसकर्म्म में प्रवृत्तहो जोराजा दण्डकेद्वारा झुकेहुये शत्रुको अपने स्वाधीन नहीं करताहै वह अश्वतरीके गर्भके समान अपनी मृत्युको प्राप्त करता है सुन्दर पुष्पित होकर अफलहो और फलवान् होकर कठिनता से चढ़ने के योग्यहो कच्चे पकेआमकी सूरतबनै परन्तु कभी मुरझायाहुआ न बनै आशा को समयपर होनेवाली समझै और उसको विघ्नमें न डाले और विघ्नको निमित्त के द्वारा और निमित्तको हेतुकेद्वारा वर्णनकरे, जबतक भय सन्मुखनआवे तबतक भयभीतके समानकर्म करे और आयेहुये भयको देखकर निर्भयके समान दूरकरना चाहिये, मनुष्य संशयपर चढ़ेबिना कल्याणको नहीं देखसक्ता जब संशयपरचढ़कर जीवतारहताहै तभी कल्याणको देखताहै सन्मुख न आयेहुये भयको अच्छेप्रकार से जाने और सन्मुख में वर्तमानहुये भयको दूरकरे फिर उसकी वृद्धिके भयसे कुछ शेषरहे के समानदेखे सन्मुखमें वर्तमानकालके सुखकात्यागना और पीछेसे प्राप्तहोने की आशाकरना यह बुद्धिमानों का मतनहींहै जो शत्रुके साथ मिलापकरके बिश्वास पूर्वक सुखसेसोताहै वह वृक्षकी सबसे ऊंची नोकपरसे सोताहुआ गिरकर सावधान होता है जैसे बने तैसे मृदु और कठोरकर्म्म के द्वारा अपने दीनआत्माको बचावै और समर्थहोकर धर्मकरे, जो शत्रुओं के शत्रुहैं उनसबसे स्नेहकरे और शत्रुके नियतकियेहुये दूतोंको और अपने जासूसोंको भी जानना अवश्य है अपना जासूस शत्रुका बिनाजाना गुप्त नियत करना चाहिये पाखंडी तपस्वियोंको शत्रुके देशमें प्रवेशकरादे, उद्यान विहार स्थान प्याऊआदि पीने के स्थान प्रवेश स्थान तीर्थस्थान और सभा आदि के स्थानों में वह मनुष्य आते हैं जोकि मारण आदि कर्म्मरूप धर्म रखने वाले महापापी संसार के कंटकहैं उनको पहचान २ कर स्वाधीनकरे अथवा मारडाले और अविस्वस्थ मनुष्योंमें विश्वासनकरे और विस्वस्थमें भी अधिक

विश्वास न करे परीक्षाकियेबिना विश्वास करनेसे भयप्राप्तहोताहै, सिद्धान्त रूपकारण से शत्रुको विश्वासदिलाकर फिर किसीसमय राज्यके चलायमान होनेपर उसको मारे, बिना संदेह में भी संदेहकरे और संदिग्ध मनुष्यपर तो सदैवही संदेह करताहै, असंदिग्धसे भी उत्पन्न होने वाला भयमूल समेतको काटताहै सावधानी और मौनता काषायवस्त्र, जटा, मृगचर्मआदिसे शत्रुओंको विश्वास कराके भेड़िये के समान घातकरे बेटा भाई पिता मित्र आदि भी जो प्रयोजन में हानिकारकहों वह ऐश्वर्य्य चाहनेवाले राजासे मारनेके योग्य हैं, अहंकारी कर्त्तव्य अकर्त्तव्य के न जाननेवाले कुमार्गगामी गुरुभी शासनारूपी दण्ड के योग्यहैं, तीक्ष्णचोंच वाले पक्षी के समान अभ्युत्थान और नमस्कार वा कुछदेनेसे शत्रुकेफूल फलोंको नाशकरे, शत्रुकेमर्मस्थानों को न काटकर और भयकारी कर्मकोभी न करके जो मछलीमारों के समान न मारे तो बड़ी लक्ष्मीको नहींपाता है, जन्मसेही शत्रुमित्र नहींहोते केवल सामर्थ्य के होनेसे शत्रुमित्र उत्पन्न होजाते हैं, शोकयुक्त बचनोंको कहता हुआ भी शत्रुनहीं छोड़नेकेयोग्यहै, प्रथम तो अपराधीको मारे उसमें दुःख न माने और दूसरेके गुणों में दोष न लगानेवाले मनुष्यको इकट्ठा करके कृपाकरना चाहिये और ऐश्वर्य्यका चाहने वाला उनको युक्ति पूर्वक दण्डभी देसक्ताहै, जो घातकरता हुआ प्यारे बचन कहे और घातकरके प्यारे उत्तरको भी दे और तलवारसे शिरकोकाट शोचकरके रोदनकरे, मीठे बचन पूर्वकप्रतिष्ठा और सहनशीलतासे उनको अपने सामनेकरे, ऐश्वर्य्य चाहने वाले को यह पुरुषोंकी प्रसन्नता करनेकेयोग्य है सूखी शत्रुताको नहीं करे नदीको भुजाओं से इसप्रकार न तरे जैसे कि गौके सींगकाखाना निरर्थक और आयुर्दाका घटानेवाला दांतोंका तोड़नेवाला नीरसताका देनेवालाहै, धर्म अर्थ काम यह त्रिवर्ग तीनप्रकारकी पीड़ारखनेवाला है अर्थात् धर्म्मसे अर्थकी और अर्थसे धर्म्मकी और कामसे अर्थ धर्म्म दोनोंकी पीड़ाहोतीहै और इनके फल भी इसीप्रकारके हैं अर्थात् धर्म्मका फल अर्थ और अर्थका काम और कामकाफल इन्द्रियोंका प्रसन्नकरना है, धर्म्मकाफल चित्तकी शुद्धी और अर्थकाफलयज्ञ और कामकाफल केवल जीवन यह सब फल उत्तमहैं ऐसे फल को जान करपीड़ाकोत्यागकरे जैसे कि ऋणकाशेष और अग्निशेष है उसी प्रकार शत्रुओं के शेषभी वारम्बार बढ़तेहैं इसकारण किसीप्रकारकी बाक़ीको न छोड़नाचाहिये जैसे वृद्धिपायाहुआ ऋणवर्त्तमान होताहै उसीप्रकार हाराहुआशत्रु और ध्यान न कियेहुये रोगभी बड़े भयको उत्पन्नकरतेहैं विपरीत रीति से कर्म्म न करना चाहिये सदैव सावधानरहै, अच्छेप्रकार न निकाला हुआ कांटाभी बहुत कालतक पीड़ादेताहै, मनुष्यों के मारने और मार्गों के

दोषी करने और स्थानों के तोड़ने आदि से शत्रु के देशको नष्ट न करे, गिद्ध के समान दीर्घदृष्टि बगले के समान निश्चेष्ट कुत्तके समान जागने वाला और चोरका जाननेवाला सिंहके समान पराक्रमी और निर्भय और काक के समान दूसरे की अंगचेष्टाओं को जाननेवाला हो और सर्प के समान अकस्मात् शत्रुकेगढ़ आदि में प्रवेशकरे और शूर भयकारी शूरवीर को हाथजोड़ने से और भेदकरके और लोभीको धनसे अपनी ओरकरे, समानसे युद्धकरना योग्यहै, प्रतिष्ठित नौकरोंके मिलाने से और शत्रुओंकी ओरसे अपनेमित्रोंके बहकानेपर बिरोध वा अबिरोधतामेंभी मंत्रियोंकीचारों ओर से रक्षाकरे, यह मृदुस्वभाव है ऐसा जानकर अपमान करते हैं और उग्रस्वभाव जानकर भयभीत होते हैं इसकारणसे तेजीके समय तेजहोजाय और नरमीके समय नरमहोजाना योग्यहै नरमीसे तो नरमकोकाटो क्योंकि नरमीसे भयउत्पन्न करनेवाला राजा शत्रुको मारता है नरमी से सब काम सिद्ध होते हैं इसीसे नरम आदमी बड़ातीव्रहोता है जो समय पर मृदु और क्षमावान्होता है वह सब कामोंको सिद्धकरके शत्रुकोभी विजयकरता है पण्डित के साथ बिरोधकरनेवाला यह बिश्वास न करे कि मैं दूरवर्त्तमानहूं क्योंकि बुद्धिमान्की दोनोंभुजालम्बी होतीहैं वह घायलहोकर भी उनदोनों भुजाओंसे मारताहै, जिसकापारहोनानहींहै उसकोनहीं तरनाचाहिये--जिस को दूसराहरले उसकोनहींहरे-जिसकी जड़कोनहींउखाड़े उसकोनहींखोदे- जिसकेशिर को नहीं गिरावे उसको नहींमारे--मैंने आपत्तिकालसे संबंध रखनेवाला यहबचनकहा इसको पुरुषकभी न करे परंतु शत्रुकी ओरसे युद्ध के लिये बुलायेजानेपर अवश्यकरे-हित चाहनेवाले ब्राह्मणके बुद्धिके अनुसार कहेहुये बचनों को सुनकर बड़ेबुद्धिमान् सुतीर देशके राजाने उनबचनोंको उसीप्रकार करके बांधवोंसमेत राजलक्ष्मी को भोगा ७१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणि आपद्धर्म्मेदशमोऽध्यायः १० ॥

ग्यारहवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह सबलोकों से उल्लंघन कियेहुये उत्तमधर्म्म के नष्टहोने और अधर्म्म धर्म्मरूपहोने और धर्म अधर्म रूपहोनेमें, मर्यादाका नाशहोने और निश्चयधर्म के नियतनहोने से राजाओं और दूसरेआदमियोंसे भी लोकके पीड़ामान् होनेपर सब रक्षास्थानों के बिरोधी शास्त्रहोनेमें कर्मोंके नाशहोने और कामलोभ मोहसे भयके देखने से अविश्वास और भयभीतहोने, छलसे घायल होने, और परस्परमें छलकरनेसे; देशोंमें अग्नि लगने और ब्राह्मणों के अत्यन्त पीड़ितहोने और मेघोंसे वर्षा न होनेमें प-

रस्पर भेदके उठने से, पृथ्वीकी सबजीविका चोरोंके आधीनहोने और नीच कालआने पर ब्राह्मण कौनसी आजीविका करके अपने पुत्र पौत्रादिसमेत आपत्तियोंमें जीवनकरै इसको आप कृपाकरके कहिये और हे परन्तप लोक के पापरूप होजानेपर राजा किसप्रकारसे कर्मकरे और कौनरीतिसे धर्म अर्थकानाश न हो—भीष्मजीबोले कि हे महाबाहो मनोरथोंको सिद्धकरके उनकी रक्षाकरना और अच्छीबर्षाका होना यह सब राजाको दृढ़ रखनेवाली हैं--प्रजाओं में रोगोंकाहोना और मरणआदि सबभयभी राजाकोही मूल रखने वालेहैं और हे राजा सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग यह सब भी राजमूल हैं यह निश्चय मेरामत है तब प्रजाओंका दोष उत्पन्नकरनेवाले उसकालके निकटआनेपर पूर्णबुद्धिके पराक्रममेंदृढ़होकर जीवनकरनायोग्य है इसस्थानपर इसप्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें चाण्डालके घर में विश्वामित्र ऋषि और चाण्डाल से बार्त्तालाप हुई थी कि त्रेता और द्वापर के संधिमें दैवके रचेहुये बिधान से बारहबर्षका भयानक दुर्भिक्ष संसार में प्राप्तहुआ अर्थात् त्रेता के अंत में और द्वापरके प्रारम्भ में बड़ीवृद्धि पाईहुई प्रजापर इन्द्रने वर्षा नहींकी और वृहस्पतिजी तिरछेहुये और बिपरीतचि-ह्नवाले चन्द्रमा दक्षिणमार्गकोगये तब धूमभी नहींहुआ तो बादल कहांसे होय नदियों में बहुतकम जल रहगया और कितनीहीं तो गुप्तहोगईं और सरोवर, नदियां, कूएं, झिरने भी ईश्वरकी आज्ञा से कुरूप होगये तब पृथ्वी इसप्रकार की होगई कि छोटे तालाब तो सूखगये और प्याऊ आदि बंदहो-गईं यज्ञ वेद बन्दहोकर वषट्रूप मंगल से रहितहुये खेती और गौओं की रक्षानष्टहोगई दूकानों में बस्तुओं का बेचना बन्दहोगया यज्ञस्तंभ की सामग्री गुप्तहुई और महाउत्सवों का नाशहुआ अस्थियों के ढेरों में भूतों केशब्द होनेसे सबलोग व्याकुलथे जिसके नगर ग्राम और बहुतसे स्थान समाप्तहुये कहींचिपसे कहींशस्त्रोंसे कहींदुखी राजाओंसे और परस्परके भय से भी मनुष्योंसे रहित होकर उजाड़ होगये और देवताओंके मन्दिर भीनहीं रहे और वृद्धमनुष्यों का अपमान होताथा गौ, भेड़, बकरी, भैंसोंसे रहित परस्परमें घायलथे जिसमें ब्राह्मण और रक्षाकरनेवाले मारेगये और औषधि-यों के समूहनष्ट हुये और सबपृथ्वी वृक्षोंकेसूखनेसे श्मशानके समान अग-म्या होगई यहांतक हुआ कि उसमहाकाल के समयमें परस्परमें मनुष्य मनु-ष्य को खानेलगे ऋषिलोग भी अपने २ नियम और अग्नि देवता आदि को अत्यन्तछोड़ आश्रमोंको त्याग इधरउधरको भागगये तदनंतर क्षुधा में आतुर बुद्धिमान् महर्षि विश्वामित्र भी आश्रमको त्यागकर चारोंओरको दौड़ स्त्रीपुत्रोंको किसीबसेहुये स्थान में छोड़कर भक्ष्य अभक्ष्य को एकसा

जानकर अग्नि और स्थानसे रहितहुये दैवयोग से इधर उधर फिरतेहुये उसऋषि ने कहीं जीवों के घातक किसी चाण्डाल के स्थानकोपाया वह स्थान फूटेकलशोंसे भराहुआ कुत्तेके चर्म्म छेदनेवाले यंत्रोंसेव्याप्त शूकरऔ गधोंकीटूटीहड्डियों और कपालोंसे संयुक्त मृतकोंके वस्त्रोंसे घिराहुआ नरोंकी मालाओंसे शोभित सर्पकी कांचलियों के हारोंसे चिह्नित मठवाला मुर्गों के अत्यन्त शब्दों से पूरित और गधोंके शब्द से परस्पर में शब्दकरके युद्ध करनेवाले और शब्द करनेवाले गधों के वचनोंसे और उलूकपक्षियों की धुनि और देवमन्दिरों से संयुक्त लोहेके घंटों से भूषित कुत्तोंके समूह से घिरा हुआथा उसघरमें भोजन के खोजमें महाव्याकुलहो विश्वामित्रपहुंचे वहां जाकर भी भिक्षा मांगनेवाले विश्वामित्र ने फल मूल मांसआदि कोई वस्तु नहींपाई तब तो महादुःखी हो भूख से निर्बल विश्वामित्रघबराके पृथ्वी पर गिरपड़े और चिन्ताकर के बिचार किया कि मैं कौनसा उत्तम कर्म्मकरूं और कैसेमृत्यु नहींहोती वहां विश्वामित्रने चांडाल के घरमें शीघ्रता से यंत्र के काटेहुये कुत्ते के मांस के खंडोंको फैला हुआ देखा तब यह विचार किया कि मुझको यहां से चोरी करना चाहिये क्योंकि अब प्राणबचाने की कोई अन्य युक्ति नहीं है आपत्ति कालमें चोरी करना भी बुद्धिसे उचित जाना गयाहै और बेदपाठी ब्राह्मण को प्राणकीरक्षा के निमित्त चोरी करना योग्य है प्रारम्भमें नीच से लेना योग्य है तदनन्तर बराबर वाले से लेनाठीकहै इसी प्रकार अप्राप्त होनेपर धार्मिक और श्रेष्ठपुरुष से भी लेले सो मैं बुरेकर्म के पूरेकरने के निमित्त इसको चुराताहूं दानकेदोष से चोरीकेदोष को अधिक नहीं जानताहूं इससे मैं कुत्तेकी जंघाको चुराऊंगा हे राजन् ऐसा बिचारकर- के वह महामुनि उसघर में सोगये जहांपर कि चांडालथा चांडालके घरके सब मनुष्योंको सोताजानकर बहुत धीरेपन से उठकर फिर कुटी में प्रवेशकर गये तब औंघसे नेत्रबन्द किये वह चांडाल यह बोलाकि चांडालकाघरभर सोजानेपर कौन जंघाओंको हिलाता है यहांमैं जागताहूं सोतानहींहूंमैं तुझे मारूंगा यह भययुक्त वचनकहा तबतो भयभीत होकर अकस्मात् विश्वामित्रने उससे कहा कि हे चांडाल मैं विश्वामित्रहूं भूखसे आयाहूं मुझको मतमार यह ऋषिकावचन सुनकर भयभीत युक्त वह चांडाल शयनसे उठा और आंखों से अश्रुपात डालकर हाथ जोड़कर बिश्वामित्रजी से बोला कि हे ब्राह्मण इस जंघा के बिषय में आपकी क्या इच्छा है फिर धैर्य्यता देकर विश्वामित्र ने उस मातंगनाम चांडाल से कहाकि भूखा और निर्बलहूं इस से कुत्तेकी जंघा को हरूंगा मुझ अधीने पापकर्म्मकी बुद्धिकी है बिभुक्षितको कोई लज्जानहीं है मुझको क्षुधादोषका भागी करती है इस से कुत्तेकी जंघा को हरूंगा मेरे

प्राण पीड़ायुक्त हैं और क्षुधासे मेराबल नाश होताहै निर्बल अचेतहोकर भक्ष्याभक्ष्यके विवेक से पृथक्हूं सो अधर्म्मरूप कर्म्म को जानकरभी कुत्तेकी जंघाको हरूंगा जब तुम्हारे मकान में घूमताहुआ भिक्षाको नहींपाया तब पाप युक्त कुत्तेकी जंघाको हरण करना चाहा है पदार्थों का पवित्र करने वाला देवताओं का मुखरूप अग्नि पुरोहित है जैसे कि वह सबका भोगने वाला है इसी प्रकार मैं ब्राह्मण भी उसके समान होकर सर्वभक्षी हूं मुझ को तुम धर्म्म पूर्वक जानों तब चांडाल बोला कि हे महर्षी मेरे बचन को सुनों और उसके सिद्धान्त को जान कर कर्म्म करो जिस से कि धर्म्म का नाश न हो हे ऋषि मैं आप के भी धर्म्म को कहूंगा जो मैं कहूं उसको सुनों बुद्धिमान् लोग कुत्तेको शृगालसे भी नीचकहतेहैं और उसकी जंघाभी उसके सब अंगों में निकृष्ट हैं इससे यह धर्म्म निन्दित है, जो कि चाण्डाल के धन का लेना भक्ष्य रहित बस्तुका है यह आपने ठीक निश्चय नहीं किया इससे बहुत श्रेष्ठ होगा कि तुम प्राण की रक्षा के निमित्त दूसरी वस्तुको बिचारो इस मांस के लोभ से आप के तप का नाश होगा ज्ञानी से ही धर्म्म नियत किया गया है इसे धर्म्म में अधर्म्म संयुक्त करना अयोग्य है तुम धर्म्म को मत छोड़ो निश्चय करके तुम धर्म्मधारियों में उत्तम हो यह चाण्डाल का बचन सुनकर क्षुधासे पीड़ित महा मुनिने फिर उत्तर दिया कि मुझ निराहार और दौड़नेवाले का बहुत बड़ा समय व्यतीत हुआ और मेरेप्राणों की रक्षा में कोई युक्ति वर्त्तमान नहीं है पीड़ामान् पुरुष जिस युक्ति अथवा कर्म्म से जीता रहे वही करे और समर्थ होकर धर्म्मको करे, क्षत्रियों का धर्म्म इन्द्र से सम्बन्ध रखनेवाला है और ब्राह्मणों का धर्म्म अग्नि से सम्बंध रखनेवाला है वेद रूप अग्नि मेरा पराक्रम है मैं भूख को दूर करने के लिये इसको भक्षण करूंगा जैसे जीवन रहै वही काम करना योग्य है मृत्यु से जीना उत्तम है क्योंकि जीवने से धर्म्म करेगा सो मैं जीवन के लिये अभक्ष्य को भी खाना चाहता हूं फिर जीवन पाकर अपने धर्म को करूंगा और विद्या तप आदि के द्वारा पापोंको ऐसे दूर करूंगा जैसे कि बड़े अंधकार को सूर्य्य दूर करता है चाण्डाल ने कहा कि इस मांस का खानेवाला बड़ी अवस्था को नहीं पाता है और न प्राणों को पाता है अमृत के समान गुणकारी नहीं है तुम दूसरी भिक्षा को मांगो आपका चित्त कुत्ते के मांस खाने को कभी मत हो कुत्ते ब्राह्मणों के अभक्ष्य हैं विश्वामित्र बोले कि हे चाण्डाल ऐसे दुर्भिक्ष के समय में कुत्ते के मांस के सिवाय दूसरा मांस सुगमता से नहीं मिल सक्ता है और मेरे पास धनभी नहीं है भूख से पीड़ित निराशाहोकर मैं इसी कुत्ते के मांस में षट्रसों का स्वाद मानता हूं

चाण्डाल बोला कि पञ्चनख रखने वाले जीव ब्राह्मण क्षत्री वैश्य तीनोंको अभक्ष्य हैं जैसे कि आप शास्त्र को प्रमाण मानते हो वैसेही इस अभक्ष्य में चित्तको मत चलाओ, विश्वामित्र बोले कि यह निश्चय है कि भूखे अगस्त्यजी ने वातापी नाम असुर को भोजनकिया मैंभी आपत्ति में पड़ाहुआ भूखसे कुत्ते की जंघाको भक्षण करूंगा, चांडालने कहा कि आप दूसरी भिक्षा का उद्योग करो इसके खाने को आप योग्य नहीं हैं सर्वथा यह कर्म आप के योग्य नहींहै विश्वामित्र ने कहा कि निश्चयकरके श्रेष्ठ पुरुष धर्म्म में कारण हैं मैं उसी चलनपर कर्म्म करताहूं मैं पवित्र भोजन से भी अधिक इस जंघा को मानता हूं चांडाल बोला कि जो नीचों ने किया वह सनातन धर्म्म नहींहै, आप को अयोग्य कर्म्म करना न चाहिये तुम छल से पाप मत करो विश्वामित्र बोले पाप को और निषिद्धकर्म को ऋषिलोग अच्छा नहीं मानते परन्तु मैं विश्व जाति होनेसे कुत्ते और मृगको समान मानता हूं इस हेतु से इस श्वान जंघा के मांस को अवश्य भक्षण करूंगा, चांडाल बोला कि ब्राह्मणों से प्रार्थना किये हुये उस अगस्त्य ऋषि ने उस दशा में ब्राह्मणों के निमित्त जो कर्म्म किया वही धर्म्म निष्पाप है ब्राह्मण सब रीति से रक्षा के योग्य हैं विश्वामित्र बोले कि यह मुझ ब्रह्मज्ञानी का देह मेरा मित्र और प्यारा है और संसार में बड़े पूजन के योग्य है उसके पोषण की इच्छा करनेवाला मैं इस मांस को हरता हूं मैं इस प्रकारकी निर्दयता का भय नहीं करता हूं, चाण्डाल बोला कि मनुष्य इच्छासे देह को त्याग करते हैं परन्तु किसी स्थानपर अभक्ष्य में बुद्धी को नहीं चलाते हैं और हे बुद्धिमान् इस लोक में पुरुष धर्म्म में बिजयी होने से सब मनोरथों को प्राप्त करते हैं तुम भी निराहारीहोकर सबकामनाओंको पूर्णकरो, विश्वामित्र बोले कि देह के त्यागने से संशय उत्पन्न होताहै और कर्मोंकी नष्टताहोतीहै इससे यह अयोग्य बात है मैं फिर पापों को दूरकरूंगा इस निमित्त इसअभक्ष्य को भक्षण करूंगा देहमें अभिमान न रखनेवाले पुरुषमें प्रत्यक्ष महापुण्यहै और आत्मामें ऐसा मोहकरना दोषहै जैसाकि कुत्तेके मांसमें होताहै यद्यपि यहबातहै और मैं संशयात्मा होकर भक्षण करताहूं तौ भी जैसा तू है वैसा मैं नहींहूंगा, चांडाल बोला कि यह पापमेरी रायसे गुप्त करनेके योग्यहै और जोपापी और अन्यब्राह्मण के समान आपसे निंदायुक्त कठोर बचन कहताहूं और छलकरनेवालाहूं इसको क्षमाकरिये-- बिश्वामित्र बोले कि मेढकोंके रोदनकरने पर भी गौवें जलको पीतीहैं धर्म्म उपदेश करनेमें तेरा अधिकारनहीं है तू अपनी प्रशंसा मतकर चांडाल बोला कि मैं शुभचिंतक होकर उपदेश करताहूं हे ब्राह्मण तुममें मेरी बड़ीकृपाहै इसमें आपका कल्याण है इससे मेरी बातको मानो

और लोभसे पापको मतकरो, विश्वामित्रने कहा कि जो तुम मेरे मित्र और सुखके चाहनेवालेहो तो मुझको आपत्तिसे छुटाओ मैं तुमको धर्मात्माजानताहूं कुत्तेकी जांघकोछोड़ो चांडालनेकहा कि मैं इसमांसको उत्साहसे आपको नहीं दियाचाहताहूं और अपने हरेहुये अन्नके दानोंकोभी उत्साहपूर्वक नहीं चाहता हूं क्योंकि इस कर्म से हम दोनों पाप संयुक्त होकर नरकमें जायँगे अर्थात् दान देनेवाला मैं और दान देनेवाले तुम ब्राह्मण हो विश्वामित्रबोले कि अब मैं इस पाप कर्म को करके बड़ी पवित्रता से रहूंगा और पाप रूप आत्मा में धर्म ही को प्राप्त करूंगा इन दोनों में जो बड़ी बात हो उसको कहो, आत्माही सब धर्म्म कार्योंका साक्षी है जो इस में पापहै वह तुमहीं जानतेहो जो पुरुष इस कुत्ते के मांसको भोजन करनेकी वस्तुके समान कर सकै उसको त्याग करना क्यायोग्यहै यह मेरा सिद्धांत है, और लेने और खानेमें यद्यपि दोषहै परंतु प्राणत्याग के समययही दोष अदोषहोजाता है अर्थात् उससमय अभक्ष्यभी भक्ष्य होजाताहै जिसस्थान में अभक्ष्यक्रिया है वहां उसके निषेध करनेवाला वचन उत्तम नहीं है क्योंकि उसअभक्ष्यके भक्षणमें हिंसाऔर मिथ्यापननहींहै कुछथोड़ीनिंदासे वह हिंसाऔर मिथ्या केसमान अधिकनिंदाके योग्यनहींहै चांडालबोला कि जो इसकेखानेमें प्राण का पोषणहीकरना आपको अभीष्टहै तो ऐसीदशा में ईश्वर और उत्तम धर्म्म आपको प्रमाणनहींहै हेद्विजेन्द्र इसहेतुसे तो भक्ष्य और अभक्ष्यमें कोई दोष नहींमानना योग्यहै विश्वामित्र बोले किअभक्ष्य खानेवाले का पाप हिंसाके समाननहीं देखनेमें आताहै मद्यकेपानकरनेसे अधिकारसे गिरताहै यहशास्त्र का वचन केवल अज्ञानमात्रहै,जिसप्रकार स्त्रीप्रसंग आदिकर्म्महैं उसीप्रकार यहभी है- केवल थोड़ेसे पापसे पुण्यकानाश नहीं होताहै हां थोड़ेपापकी उत्पत्ति होतीहै परन्तु ब्राह्मण धर्म्ममें हानि नहींहोती चांडालबोला कि श्रेष्ठ चलनेवाले ज्ञानीको चांडालकेघरमें बुरेकर्मके द्वारा बिनादी हुई वस्तुपीड़ादेती है और जो हठसे कुत्ते के मांसको लेता है उसको दंड भी क्षमाकरने के योग्य है अर्थात् मैं देनेवाला उसके फलको नहीं पाऊंगा ऐसा कहकर वहमातंग चांडाल मौनहोगया और विश्वामित्र ने कुत्तेकी जंघाको हरण किया तदनन्तर उसजीवनकी इच्छा करने वाले महामुनि ने उसकुत्ते के अंग को हाथसे ले जाकर आश्रम में अपनी स्त्री के साथ खाना चाहा तिसपीछे यहबुद्धिहुई कि मैं पहिले बुद्धिके अनुसार देवताओंको तृप्त करके फिर इसको इच्छापूर्वकखाऊंगा तब महामुनिने ब्राह्मण बुद्धि से अग्निको प्रज्वलित करके इन्द्राग्नि से सम्बन्ध रखनेवाली बुद्धि के द्वारा आपचरु को सिद्धकिया और देवपितरोंका पूजन प्रारंभकिया और इन्द्रादि देवताओं का

आवाहनकर के बुद्धि और क्रम के अनुसार उसके जुदे २ भागकिये--उसी समयपर सबप्रजा को जीवदान देतेहुये इन्द्रने बड़ी वर्षाकी और औषधियों को उत्पन्नकिया और विश्वामित्र ने तपस्यासे पापोंको भस्म करके बड़े कालमें महासिद्धी को पाया और कर्म्मको बन्दकरके उसहव्यको आप न खाया और देवता पितरोंको तृप्त करके प्रसन्न किया इसीप्रकार दुःखसंयुक्त जीवनकी इच्छा रखनेवाले बुद्धिमान् साहसी युक्तियों के ज्ञातालोग अनेक उपायोंसे आपत्तिकाल में अपनेको बचावे इसबुद्धि में प्रवृत्त होकर सदैव जीवन करने के योग्यहै जीवनसेही मनुष्य पुण्य को प्राप्तहोकर कल्याणको भोगता है इसी कारण हे कुन्तीनन्दन शुद्ध अन्तःकरण वाले ब्रह्मज्ञानीको धर्म्म और अधर्म्म निश्चयकरने के समय बुद्धि में स्थिरहोकर इस संसार में कर्म्म करना योग्यहै १०२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिआपद्धर्म्मेएकादशोऽध्यायः ११ ॥

बारहवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि जो मिथ्याके समान श्रद्धासे रहित घोर कर्म्मकरनेकेयोग्य उपदेश किया ऐसीदशामें यहचोरोंकी मर्य्यादहै जिसको मैं त्याग करताहूं अर्थात् चोरोंको धिक्कार न करना चाहिये इससे मैं अचेतहोकर मोहको प्राप्तहोताहूं मेराधर्म पक्कानहीं किया इससेआपकोविश्वास कराताहुआ भी निश्चयको नहीं पाताहूं भीष्मजी बोले कि मैंने शास्त्रसे सुनकर तुझको यहधर्म उपदेश किया यहबात नहीं है यहबुद्धिकी निष्ठा पण्डितों ने कल्पनाकीहै, राजाको जहां तहांसे बहुतसी बुद्धि प्राप्तकरना चाहिये यहलोक यात्रा एक देशीयधर्मसे जारी नहींहोती है हे कौरवबुद्धिका उत्पन्नकरनेवालाधर्म और सत्पुरुषों का आचार सदैव जाननेके योग्य होताहै उनसब प्रयोजनों में मेरेप्रयोजनको सदैव जानो उत्तम बुद्धिमान् विजयकी इच्छारखने वाले राजालोग कर्मकरतेहैं इसलिये राजाको जहांतहां से बुद्धिकेद्वारा धर्मप्राप्त करने के योग्यहैं क्योंकि एकदेशीय धर्म्मसे राजाका धर्म्म प्राप्तनहीं होताहै पहलेसे शिक्षा न पाईहुई बुद्धि निर्बल राजाको कहींसे प्राप्तहोतीहै अर्थात् नहींप्राप्तहोतीहै-- एककाम में दोप्रकार के प्रयोजनों का न जानने वाला राजा दो प्रकारवाले मार्ग में कष्टपाने के योग्य है इससे हे राजा पहलेही दोप्रयोजनवाली बुद्धि जानने के योग्य है, ज्ञानी राजा पीछेकरनेके योग्य बात को निश्चय करके करावे उसकर्म्म को मनुष्य धर्म्म रूप जानते हैं परन्तु ज्ञान दृष्टिसे धर्म नहीं होता कोई सच्चे कोई झूठे ज्ञानी विज्ञानी हैं उसको ठीकजानकर सत्पुरुषों के ज्ञानको स्वीकार करताहै धर्म्म के विरोधी लोग कहतेहैं कि अर्थशास्त्र ध-

र्मशास्त्र के विरुद्ध है वह आदर के योग्य नहीं है वह अर्थरहित अर्थशास्त्रों की अप्रमाणता को प्रकट करते हैं और जो पुरुष विद्या, यश, काम से जीवन की इच्छा रखतेहैं अर्थात् तीनोंको उदरपूर्ण करनेके निमित्त प्राप्तकरतेहैं वह सबपापी और धर्म्म के शत्रुहैं अल्पबुद्धि मन्द प्रारब्धी लोग मुख्यबात को ऐसे नहीं जानतेहैं जैसे कि शास्त्रमें अकुशल और सबस्थानों में अयुक्तिसे करने वाले और शास्त्रों के दोष देखनेवाले पुरुष शास्त्रोंको चुराते हैं अर्थात् विपरीत वर्णन करते हैं इसकारणसे विद्याओंका जानाहुआ अर्थ अच्छे प्रकारसे प्राप्त नहींहोता दूसरे की विद्याओं की निन्दा करनेसे अपनी विद्याको प्रसिद्धकरतेहैं वह वचन रूप अस्त्रशस्त्र रखने वाले निष्फल हैं जिनकी विद्या असारहै उनलोगों को विद्या बेचनेवाला राक्षसों के समान जानना चाहिये सत्पुरुषों से जारी कपटसे किया हुआ धर्म्म नाशको पाताहै-धर्म्मका निश्चय केवल वचन और बुद्धिसे नहीं है यह हमने सुनाहै वृहस्पतिजी के इसज्ञान को इन्द्र ने आप कहाहै यहां कोई वचन बिनाहेतु के नहीं कहाजाता है फिर इसदूसरे अच्छी नीतिवाले पुरुष शास्त्रसे इसको निश्चय नहींकरते हैं,इसलोकमें कितनेही ज्ञानियों ने यात्राकोही धर्म्म कहा है इसी कारण पण्डितलोग सत्पुरुषोंसे अच्छेप्रकार उपदेश कियेहुये धर्म्मको आप शास्त्रोक्त वचनों से निर्णयकरें हे राजा सभा के मध्य ज्ञानी पुरुष का कहाहुआ शास्त्र क्रोध और मोहसे नाशहोजाता है वेदोक्त बुद्धिसे प्राप्तहुये जो वचनहैं उनसे दूसरामनुष्य अज्ञान और ज्ञानप्राप्तहोने के कारण केवल वचनहीको अच्छा मानताहै अर्थात् तर्कणाओंसे उसको निश्चय नहीं करता है अन्यलोग मानते हैं कि इसयुक्तिसे इसशास्त्रमें दोषलगाया गयाहै इसलिये निष्फल है यहबात भी केवल अज्ञानसेहै पूर्वसमयमें इससंशयका दूरकरनेवाला यह वचन कहाहै कि वह संशयरूप ज्ञान भी उस प्रकारका है जैसे कि नहीं अर्थात् नहींहोनेके समानहै इसहेतु से उस संशय को निर्मूल करके काटने के योग्यहो,जो आप मेरे इसनीतियुक्त वचनको नहीं मानतेहो यही अयोग्यहै क्योंकि तुम हिंसात्मक कर्म्म के लिये उत्पन्न होकर उसको नहींविचारतेहो हेपुत्र तुमसुझकोही देखो कि दूसरे मनुष्य जिस प्रयोजनको अच्छा नहीं समझते वह पृथ्वी भरके चाहनेवाले राजालोग मेरीनिन्दा करतेहैं कि यहहिंसा करनेवालाहै और जो मैंने उनको स्वर्गलोकमें पहुंचाया वह उन्हींके कल्याणके लिये है कुछ अपने निमित्त नहीं है इस को वह नहीं जानते हैं--बकरा घोड़ा क्षत्री यह सब ब्रह्माजीने बराबर उत्पन्न किये अर्थात् दोनों प्रकार के यज्ञों में देह के त्यागने से मोक्ष के अधिकारी बनायेगये हैं इस कारण जीवों की कोई यात्रा बराबर सिद्ध होती है मारने के अयोग्य पुरुष के मारने में जो दोष है वही मारने

के योग्य मनुष्य के न मारने में भी कहा है निश्चय करके जिसको यह त्यागकरे वही मर्य्यादहै जैसे कि भेड़ियों के समान परस्पर में भक्षण करने वाली प्रजा घूमती है उसी प्रकारसे तीव्र बुद्धी राजा अपने धर्म में प्रजाओं को नियतकरे जिसके देशमें चोर मनुष्य दूसरे के धनको ऐसे हरते हैं जैसे कि काक जलसे मछलियों को वह राजा निश्चय करके क्षत्रियों को कलंक लगानेवाला है राजन् कुलीन वेदज्ञ मन्त्रियों को नियत करके धर्म से प्रजाको पालन करते हुये तुम सम्पूर्ण पृथ्वीपर राज्यकरो जो राजा राज्य के कर्म्मों से रहित संसार से विपरीत करको लेता है उस युक्ति के न जाननेवाले क्षत्री कुलको नपुंसक कहते हैं इस लोकमें रूप वा उग्रता रहित राज्य के योग्य नहीं होता है किन्तु धर्मसे प्रशंसा को पाता है तुम उग्ररूप होकर मृदु होजाओ, यही क्षत्री धर्म्म कठिन है और मेरी प्रीति तुझ में वर्त्तमान है तुम हिंसात्मक कर्म्म में उत्पन्न हुयेहो इससे राज्यका धर्म पूर्वक करो हे राजन् आपत्ति काल में सदैव नीचको दण्ड और योग्य मनुष्योंका पोषण करना चाहिये यह बुद्धिमान् शुक्रजी का वचन है युधिष्ठिरबोले हेपितामह जो यह मर्य्यादा है कि जिसको कोई दूसरा उल्लंघन नहीं करे वह आप मुझसे वर्णन कीजिये भीष्मजी बोले कि विद्यावृद्ध तपस्वी शास्त्र के आचार विचारमें प्रवीण ब्राह्मणोंका भी सेवनकरे यही पवित्र और उत्तम है देवताओं में जो तेरीवृत्ती है वही सदैव ब्राह्मणों में हो हेराजन् क्रोधयुक्त वेदपाठी ब्राह्मणोंसे बहुधा कर्म्म कियेगये हैं उनमें प्रीति करने से बड़ी कीर्ति होती है परन्तु प्रीति करनेसे बड़ाभय है वेदपाठी ब्राह्मण प्रीतिमें तो अमृतके समान और क्रोधमें विषकेसदृश होते हैं ३८॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेद्वादशोऽध्यायः १२॥

तेरहवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि हे महाशास्त्रज्ञ ज्ञानी पितामह शरणागत के ऊपर कृपा करनेवाले का जो धर्म है उसको मुझसे कहो--भीष्मजीबोले कि हे राजा शरणागतके पोषण करने में बड़ाधर्म है तुमको ऐसा प्रश्न पूछना योग्य है हे राजा शिविआदि राजाओं में शरणागतों पर कृपा करने से बड़ी २ सिद्धियोंको प्राप्तकिया सुनाजाता है कि किसी कपोत ने शरण में आयाहुआ शत्रु न्यायसे पूजा उसको अपने मांसका निमंत्रण दिया युधिष्ठिर बोले कि कपोत ने शरण में आयेहुये अपने शत्रु को अपने मांस से कैसे तृप्त किया और उसकाफल उसको क्या हुआ भीष्मजीने कहा कि भार्गव जीने राजा मुचुकुन्द से जिसकथा को कहा उस दिव्य पाप दूरकरने वाली कथा को

सुनो कि पूर्व समय में राजा मुचकुन्दने बड़ी नम्रतापूर्वक भार्गवजीसे यह प्रयोजन पूछा था तब भार्गवजीने राजा से यह कथाकही जैसे कि कपोत ने सिद्धी को पाया भार्गवजीने राजा मुचुकुन्द से कहा कि तुम एकाग्र चित्त होकर मुझसे इस कथाको सुनो कि किसी महावनमें नीच आचारवा- न् कालके समान घोररूप एक चिड़ीमार घूमताहुआ निकला वह काकोल प्रकारकर के कौएके समान कालारंग लालनेत्र बड़ी जंघा छोटेपैर बड़ामुख और तीव्र नखवालाथा उसकाकोई मित्र बाँधव नहींथा क्योंकि इसीहिंसा कर्म्म से उनसबने उसको त्याग कियाथा ज्ञानियों को पाप आचारवाला मनुष्य दूरसेही त्याग करने के योग्य है जो आत्मा को विषफाँसी आदि से मारना चाहता है वह कैसे दूसरे का हितकारी होगा जो मनुष्य निर्दयी दुष्ट बुद्धी जीवोंके प्राणहरनेवाले हैं वहसबकी समान जीवोंके भयकारीहोतेहैं वह सदैव जलको लेकर पक्षियों को बनमेंमारकर बेंचाकरताथा इसी प्रकारइसनष्ट कर्मको करते बहुतसमय व्यतीतहुआ तबभी उसने धर्मको नहींजाना भार्य्या समेत सदैवक्रीड़ा करनेवाले उस अज्ञानीको दूसरी जीविका अच्छी नहीं मालूम होतीथी एकदिन उस बनमें बड़ी आंधी आई उसके कारण आकाश बादलोंसे पूर्ण बिजलीकी चमकसे शोभायमान हुआ और एक मुहूर्त्तमेंही ऐसा ढकगया जैसे कि संपूर्ण मनुष्योंसे भरी नौका सागर में ढकजाती है और ऐसी वर्षाहुई कि क्षणमात्रमें पृथ्वी जलसे डूबगई तब वह व्याधा शीत से महाव्याकुलहो बनमें चारोंओर घूमा परंतु कोई आश्रयस्थान नहीं पाया और बनके सब मार्ग जलसे गुप्तहोगये तब तीव्र वर्षासे पीड़ित पक्षीभी गुप्त हुए मृग सिंह वराह आदि पशु अपने २ स्थानोंमें रक्षा पानेवाले हुए और वह व्याधा शीतके मारे शिथिल अंगोंसे चल न सका तब उसने शरदी से व्याकुल पृथ्वीपर पड़ेहुए किसी कपोत पक्षीको देखा उस पापात्माने उसको पीड़ायुक्त देखतेही पिंजरेमें डाला और बनखंडोंमें मेघके समान किसी नीले वृक्षको देखा जो कि पक्षियोंका आश्रय रूपथा वह बृक्ष ईश्वरने दूसरोंके हित के लिये साधूके समान उत्पन्न कियाथा थोड़े काल पीछे आंधी निवृत्तहुई और आकाशमें निर्मल नक्षत्र दीखनेलगे तब उस शीतसे व्याकुल व्याधने निर्मल आकाशको देखकर दिशाओंको देखा और यह बिचार किया कि इस स्थानसे मेराघर दूर है इसकारण वहां रहनेके बिचारसे उस वृक्षसे हाथ जोड़ नम्रता पूर्वक यह वचन कहा कि इसवृक्षपर जो देवताहैं उनकी शरण लेताहूं यह कहकर वहव्याध पृथ्वीमें पत्ते बिछाकर सोगया ३४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिआपद्धर्मेत्रयोदशोऽध्यायः १३ ॥

चौदहवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजा उसवृक्षकी शाखापर अपूर्व्व रोम रखनेवाला एक कपोत पक्षी अपने इष्टमित्रों समेत बहुत कालसे रहताथा उसकी भार्य्या प्रातःकाल चुगनेको गईथी वह नहीं लौटी और रात्रिको देखकर वह पक्षी महादुखी होकर कहनेलगा कि बड़ी हवा और वर्षाहुई और मेरी प्यारी नहीं आई इसका कारण क्याहै जो अबतक नहींलौटी बनमें वह जीतीरहै क्योंकि उसके बिना यह मेराघर उजाड़ है चाहै बेटेपोते नौकर चाकर बड़े बूढ़ोंसे पूर्ण भी घरहो उसको घरनहीं कहते केवल स्त्रीसेही घर कहाजाता है और स्त्रीसे खालीघर बनके समान मानाहै जो वह रक्तनेत्र अपूर्व्वदेह मीठेशब्द वाली मेरी प्यारी नहीं आती है तो मेराभी जीना वृथाहै वह ऐसी पतिव्रताहै जो बिनामेरे भोजन कराये भोजन नहीं करती है और मेरेस्नानके बिना स्नान नहीं करती और मेरेवर्त्तमान होनेबिना वर्त्तमान न होवे और मेरे सोजानेपर सोती है और प्रसन्न होनेपर प्रसन्न होतीहै दुखी होनेपर दुखी और दूरजानेपर मुख मैला करती है और मेरेक्रोध होनेपर प्यारे बचनोंको कहती है पतिव्रत रखनेवाली है जिसकी भार्य्या ऐसीहो वह पुरुष धन्यहै वह तपस्विनी मुझ थके और पीड़ावान्को जानती है और शांतचित्त भक्तिपूर्व्वक प्रीतिरखने वाली यशस्विनी है जिसकी प्यारी वृक्षकी जड़परभी होती है वह घरहै उसके बिना महलभी बनके सदृश निश्चय कियागयाहै धर्म अर्थ और कामकी बिपत्तियोंमें भार्य्या पुरुषकी सहायता करनेवाली है और इसके परदेश जाने पर वही बिश्वास करनेवाली है इसलोकमें स्त्रीही पुरुषकी उत्तम लक्ष्मी कही जातीहै इस संसारमें असहाय मनुष्यको स्त्रीही सहायता देनेवाली है उसीप्रकार रोगसे संयुक्त सदैव दुखसे पीड़ित आदमीको स्त्रीके सिवाय कोई औषधी नहीं है लोकमें धर्म्मोंके बीच भार्य्याके समान सहायक नहीं है बन्धुभी भार्य्याके समान नहीं होते जिसके घरमें नेक चलन और प्यारे वचन कहने वाली भार्य्या नहीं है उसको बनही जाना चाहिये क्योंकि उसको घरसे बन ही अच्छा है १७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिआपद्धर्मेचतुर्द्दशोऽध्यायः १४ ॥

पन्द्रहवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इसप्रकार बिलाप करने वाले कपोत के करुणा वचनों को सुनकर व्याधा से पकड़ी हुई कपोतनी ने वचन कहा कि मैं बड़ी प्रारब्धिनीहूं जो मेरापति मेरेगुणोंको कहता है चाहै मैं अच्छीहूं या बुरी हूं जिस स्त्री से पति प्रसन्न नहीं है वह स्त्रीमानने के योग्य नहीं है पतिके प्रसन्न

होनेसे स्त्रियोंके सब देवता प्रसन्न होतेहैं निश्चय करके पति देवता सब से उत्तम है जिसका साक्षी अग्निहै जैसे फूलफल वाले वृक्ष दावानलसे भस्म होते हैं उसी प्रकार वह स्त्रीभी भस्म होतीहै जिसका कि पति प्रसन्न नहीं होताहै तब महा दुखित व्याधा से पकड़ी हुई कपोतनी अपने पतिसे बोलीकि मैं तुम्हारे कल्याण को कहतीहूं तुम इसको सुनकर उसी प्रकार करना हे पति तुम शरणागतके बड़े रक्षकहो आपके निवास स्थानमें शरणागत यह व्याधा सोताहै यह शरदी और क्षुधासे पीड़ित है उसका पूजनकरो जो कोई ब्राह्मणको अथवा लोकमाता गौ को मारे और जो शरणागत को मारे तीनों का पाप बराबर है कपोत जातिके धर्मसे हमारी जीविका नियत की गई है तुमसरीके ज्ञानी पुरुषसे वह वृत्ती न्यायके अनुसार करने के योग्यहै जो कुटुम्बी सामर्थ्य के अनुसार धर्मको करताहै वहमरकर अबिनाशी लोकोंको पाताहै ऐसा सुनते हैं सोहेकपोत अब तुम कुटुम्बवाले हो अपनी देहमें दयाको धारण करके धर्म अर्थके साथ उसका पूजन ऐसा करो जिससे इसका चित्त प्रसन्न हो और मेरेनिमित्त दुख मतकरना अपने शरीरकी रक्षाके निमित्त दूसरीस्त्री को प्राप्त करना ऐसावचन कहकर उसपिंजड़े में से पतिकी ओरको देखा १४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्म्मेपंचदशोऽध्यायः १५ ॥

सोलहवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि जब उस व्याकुलनेत्र पक्षीने पत्नीके धर्म्म और युक्तिपूर्वक वचनोंको सुना तब बड़ी प्रसन्नता से संयुक्त होकर उस घातकको देखकर बुद्धिके अनुसार पूजन किया और बोला कि अब तेरा आगमन मंगलदायी हो आप कोई प्रकार से शोच न कीजिये क्योंकि यह आपहीका घरहै मैं आपको नम्रता पूर्व्वक कहताहूं कि आप मेरेशरण में आयेहो जो आपकी इच्छाहो सोकरूंघरमेंशत्रु कोभी आनेपर योग्य आतिथ्य धर्मकरना चाहिये जैसे कि काटने वाले पर वृक्ष अपनी छायाको दूर नहीं करताहै इसी प्रकार शरणागतका आतिथ्य बड़ी युक्तिसे करना चाहिये गृहस्थको पंचयज्ञ में आतिथ्यधर्म बड़ी प्रसन्नता से करना चाहिये जो पुरुष गृहस्थाश्रम में मोहसे यज्ञोंको नहीं करताहै उसका न यह लोकहै न परलोक होता है सो आप चिन्ताको दूरकरके जो मुझसे कहोगे वही मैं करूंगा व्याधा ने पक्षी के इस वचनको सुनकर कहा कि मुझेशरदी बड़ी पीड़ा देरहीहै उसका उपायकरो यहव्याध से सुनतेही पक्षी पृथ्वी पर पत्तोंको बिछाकर पराक्रमके अनुसार अग्नि लेनेको गया और बड़ी शीघ्रतासे अग्निको लेआया तद-

नन्तर उसने सूखे पत्तों के द्वारा अग्नि को प्रज्वलित किया और उसशरणागत व्याधसे कहा कि अब तुम बिश्वास युक्त होकर अपने सब अंगोंको सेंको तबतो व्याधने बहुत प्रसन्न होकर अपने अंगोंको तपाया जब अग्नि से प्राणबचे और प्रसन्न हुआ तो फिर उसपची से कहा कि अब क्षुधासे पीड़ामान् होकर तेरेदियेहुये आहारको चाहताहूं यह सुनतेही पक्षीने यह वचन कहा कि मेरेपास कोई सामान नहीं है जिसके द्वारा तेरीक्षुधा को मिटाऊं हम बनवासी सदैव मिलजाने वाले भोजन से आनन्द पूर्व्वक जीवतेहैं मुनियों के समान हमारे पासभी भोजन इकट्ठा नहीं है ऐसा कहकर वहपक्षी रूपान्तर हुआ और चिन्ताकरने लगा कि किस प्रकार कर्म करना चाहिये और अपनी जीविकाकी निंदाकरता शोचग्रस्त हुआ फिर क्षणमात्रमें सावधान होकर उसपक्षीने व्याधासे कहा कि थोड़े कालमें ही मैं तुझको तृप्तकरूंगा तू मुहूर्त्तभर और बाटदेख बड़ी प्रसन्नतासे और बहुतसे सूखेपत्तों में अग्निको प्रज्वलित करके यह वचन बोला कि मैंने पूर्वसमय में महात्मा, ऋषि, देवता, पितरोंका अतिथि पूजनमें बड़ाधर्म सुनाहै मैं आपसे सत्य २ कहता हूं आप कृपा करिये इससेही निश्चयकरके मेरी बुद्धि अतिथि के पूजनमें प्रवृत्त हुई तदनन्तर वहपची उस अग्निकी तीन परिक्रमा करके उसमें प्रवेश करगया व्याध ने पक्षी को अग्नि में घुसा देखकर चिन्ताकी कि मैं ने यह क्या किया इससे मुझको निश्चय करके महाघोर नरक होगा और अपने कर्म्म की निन्दा करके उसदशा वाले पक्षीको देखकर इसप्रकारका बहुतसा बिलापकिया २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मे षोड़शोऽध्यायः १६ ॥

सत्रहवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि तब उस महादुःखित व्याधने अग्निमें पड़ेहुये पक्षीसे यह वचन कहाकि मुझ निर्दयी निर्बुद्धी ने ऐसा क्यों किया इससे मुझ जीवने वालेको सदैव पातकहोगा अपनी निन्दा पूर्व्वक बारम्बार यही शब्द कहा कि मैं अपनी निर्बुद्धि और पापबुद्धि से अनेक उत्तमकर्मों को त्याग कर पक्षियोंका घातकहुआ अब मुझनिर्दयी को धिकार के साथ यह उपदेशहै कि भस्महोने वाले महात्मा कपोत ने अपनामांस मुझको दिया सो मैं भी अपने प्यारे प्राणों समेत स्त्री और पुत्र आदिको इसीप्रकार त्यागकरूंगा महात्मा कपोतने मुझको धर्म उपदेश कियाहै अब से लेकर जीवन पर्यंत व भोगोंसे रहित अपने देहको ऐसा सुखाऊंगा जिस प्रकार कि ग्रीष्म ऋतुमें बहुत छोटासरोवर सूखजाताहै क्षुधा, पिपासा, आतप का सहने वाला दुर्ब्ब-

ल और हड्डियों से तनाहुआ बहुत प्रकारके व्रतों के द्वारा परलोक से सम्बन्ध रखने वाला कर्मकरूंगा आश्चर्यकारी देहके दान से अतिथि पूजन इसकपोतने दिखाया इसकारण धर्मको करूंगा क्योंकि धर्मही परम गतिहै जैसा धर्म्म इस धर्मिष्ठ उत्तम कपोतमें देखा वह कहीं किसीमें नहीं सुना वह बीभत्सकर्मी व्याध इसप्रकार से कहकर और बड़ी दृढ़तासे व्रत में परायणहो संन्यास धर्ममें प्राप्तहोकर चलदिया और अपनी लाठी सलाका जाल और पिंजरे को डालदिया और उसपकड़ीहुई कपोतनी को छोड़ दिया १० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिआपद्धर्म्मेसप्तदशोऽध्यायः १७ ॥

अठारहवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि उसव्याध के चले जानेपर दुःखी व्याकुल उस कपोतनीने पतिको स्मरण करके यह कहा कि हे पति मैं तेरेअप्रियको कभीस्मरण नहीं करतीहूं सब विधवा स्त्रियां जो कि बहुत बेटेवाली होती हैं वह शोचती हैं विधवा तपस्विनी स्त्री बांधवों की ओरसे शोचके योग्य होती हैं मैं तुझसे बहुतप्यारकी गई और बड़े मानसे पूजित हुई मैं तेरेसाथ सुन्दर मीठे सुगम और चित्तरोचक बचनों के साथ पहाड़ोंकी कन्दरा और नदियों के झरने और वृक्षों की उत्तम शाखाओं पर क्रीड़ा करनेवालीहुई और तेरेसाथआकाश में सुख पूर्व्वक चलतीथी सो हे पति वह आगेकासुख मुझको अबकुछभी नहीं है पिता संख्यावाली वस्तुको देता है भाईबेटेभी संख्याहीकी वस्तुको देते हैं और असंख्यवस्तु देने वाले पतिका कौननहीं सत्कार करेगा पतिकेसमान सुख और नाथ नहीं है निश्चय करके सबधनों को त्यागकरके स्त्री का रक्षास्थान पतिही है हे नाथ तेरेबिना मैं यहां जीवन करना नहीं चाहती पतिके बिना कौनसी पतिव्रतास्त्री जीनेकी इच्छाकरती है ऐसे अनेककरुणा विलाप के वचन कहके वह भी अग्नि में प्रवेश करगई मरने के अनन्तर उसने अपूर्व बाजूबन्दयुक्त बिमान में बैठे शुभकर्मी महात्माओं से पूजित अनेक आभूषण वस्त्रों से अलंकृत श्रेष्ठकर्म्मी पुरुषों के अनेक बिमानों से घिराहुआ अपने पति को देखा फिर वहां स्वर्ग में वर्त्तमान होकर उत्तम बिमान में बैठा अपनी भार्य्या समेत क्रीड़ा करनेलगा १२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिआपद्धर्म्मेअष्टदशोऽध्यायः १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजा उसव्याध ने भी उन दोनों कपोत कपोतनी को विमानमें बैठाहुआदेखा और उसगति को खूब विचार करकेचाहा कि मैं भी इसप्रकार के तपसे परमगति को प्राप्तकरूं यह बुद्धिमें विचारताहुआ व्रत

दिया और सबसे ममता त्याग संन्यासी होकर हवाका भोजन करनेलगा और अनेक सुन्दर पक्षियों से व्याप्त अनेकरंग के कमलों से शोभित उसने किसी सरोवर को देखा जिसके देखतेही तृष्णा इसकी जातीरही तब बड़े२ व्रतों से देहको कृशकरके वह व्याध हिंसक जीवोंसे व्याप्त किसी निर्जन महावन में पहुंचा वहां बनके कांटोंसे घायल रुधिर से भराहुआ फिरनेलगा दैवयोग से वृक्षोंकी रगड़ से उसबनमें दावानल अग्निलगी और उसमहा प्रचण्ड अग्नि ने सब पशुपक्षी वृक्ष और लताओंसमेत उस काननको भस्म किया उससमय वह व्याधभी देहको शुद्धकर मोक्षके निमित्त उस अग्निके सन्मुख दौड़ा और जाकर उसमें भस्महोगया और मरनेके पीछे उसने बड़ी सिद्धिको पाया अर्थात् अपने को स्वर्ग में जाकर यक्ष गन्धर्वों से सेवित इन्द्र के समान शोभायमान देखा इसप्रकार से कपोत कपोतिनी उस व्याधा समेत स्वर्ग को गये इसी प्रकार जो कोई स्त्री पति की इच्छा के अनुसार कर्म्म करती है वह कपोतिनी के समान शीघ्रही स्वर्ग में जाकर शोभायमान होती है यह कपोत कपोतिनीका और व्याधाका पूर्ववृत्तान्त और शुभकर्मसे उत्तमगति पानेकाहै जो इसको सदैव सुनै सुनावैगा उसका पाप नष्ट होगा हे युधिष्ठिर यह बड़ाधर्म्म है इसकथाके कहने से गौ ब्राह्मण मारनेवालेकी भी गति होती है परन्तु जो शरणागतको मारता है उसका प्रायश्चित्त भी नहीं हो सक्ता है जो पुरुष इस पवित्र पाप के दूर करनेवाले इतिहासको सुनता है या सुनाता है वह दुर्गतिको त्याग स्वर्ग को जाता है १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेएकोनविंशतितमोऽध्यायः १९ ॥

बीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह अज्ञानता से जो पाप करै वह कैसे पाप से छूटता है भीष्म जी बोले कि इस स्थान पर मैं उस ऋषियों के कहे हुये पुराण को तुझ से कहता हूं जो शौनक के पुत्र इन्दोत ने राजा जनमेजय से कहा है कि परीक्षित का बेटा राजा जनमेजय महापराक्रमी हुआ उसने अज्ञानता से ब्रह्महत्या को किया था इस कारण पुरोहित समेत ब्राह्मणों ने उसको त्याग दिया तब वह राजा महाशोक से पीड़ित वन को गया और वहां जाकर अपने पाप का पश्चात्तापकरके शुद्धी के लिये उसने तपस्याकी और देश देशके ब्राह्मणों से उसने अपनी हत्या के निवृत्तहोने को पूछा वह धर्म्म की वृद्धि करने वाला इतिहास तुझ से कहता हूं कि पाप कर्म्म से दुःखित वह राजा जनमेजय जब बन को गया और बन में घूमतेहुये उसने शौनक के पुत्र इन्दोत को पाकर उसके दोनों चरण पकड़ लिये तब उस

ऋषि ने उस राजा की बड़ी निन्दाकी और कहा कि हे बड़ेपाप और भ्रूण-हत्या करनेवाले यहां क्यों आया है तुम हमारे पास क्या करसक्ते हो मुझको तुम कभी मत स्पर्श करो जाओ जाओ तुम्हारे रहने से हम प्रसन्न नहीं हैं तेरे देह की गन्धि रुधिर के समान है और तेरा मुख मृतकके तुल्य है अकल्याणवान् कल्याणवानों के समान मृतक जीवतेहुये के समान घूमता है ब्राह्मण को मार अपवित्र आत्मा पाप को ही बिचारता जागता सोता है और बड़े आनन्दमें बर्त्तमानहोता है हे राजा तेरा जीवन निष्फल है तू बुरे कर्म्म के लिये उत्पन्न हुआ है पिता माता आदि तप, देवपूजन नमस्कार और क्षमा युक्त होकर पुत्रों की इच्छाकरतेहैं और उनसे अपना बड़ा कल्याण चाहते हैं देख तेरे पिता का वंश तेरे कारण से नरक को गया उन माता पिता की तुझ से सम्बन्ध रखनेवाली सब आशा वृथा हैं जिनके पूजन से स्वर्ग और कीर्त्ति होती है उन ब्राह्मणों के तुम शत्रु हो तुम इस संसारको त्यागकर अपने पाप कर्म्म से बिनाशवान होकर ऐसे स्थान पर शिर के बल वर्षों तक गिरोगे जहां पर लोहेके समान मुख रखनेवाले गिद्ध और शतकण्ठों से छेदे जाते हैं फिर वहां से अलग होकर पापयोनि को पावेगा और हे राजा जो तुम यह मानते हो कि यह लोक नहीं है तो परलोक कहांसे होगा इसबातकी याद तुझको यमलोकके दूत दिलावेंगे १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणि आपद्धर्म्मेविंशतितमोऽध्यायः २० ॥

इक्कीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि यह बात जनमेजयने सुनकर उसमुनिसे कहा कि आपमुझ निन्दायोग्यकीनिन्दा करतेहो और धिक्कार के योग्यको धिक्कारी देतेहो मैं इसीके योग्यहूं यह मेरा पापहै अग्निमें बैठेहुये के समान भस्महो रहाहूं अपने पापको स्मरणकरके मेराचित्त प्रसन्न नहींहोताहै निश्चयहै कि मेरेपापसे उत्पन्न होनेवाली भालयमराज से भी अधिक घोरभयको पाकर पार निकरजायगी मैं उसभालको विनाउखाड़े कैसे जीवनको समर्थहूं हे शौनकजी आप सब क्रोधको त्यागकर मेरे सन्मुख बातकरो मैं ब्राह्मणोंका बड़ाभक्तथा इसको फिरकहूंगा यह वंशबनारहै इसका नाश न हो, ब्रह्महत्या करनेवाले और अपकीर्तिपाने वाले हमलोगोंका रहना वेदकीरीतिसे एकमत प्राप्तहोनेके योग्य नहींहै आपको अपमानकरके फिर सनातन बचन कहताहूं कि आपमेरी इसप्रकारसे रक्षाकरो जिसप्रकार योगीजन निर्द्धनोंकी रक्षाकरते हैं--यज्ञ न करनेवाले मनुष्य किसी दशा में भी परलोकको नहींपाते हैं और पुलिंदशबरनाम म्लेच्छों के समान नरकवासियों के समीप बर्त्तमान

होतेहैं जो मुझसरीखे अज्ञानी शरणमें आयेहुये की निन्दाकरै वह परिडत नहींहै हे शौनक जैसे पिता पुत्रपर प्रसन्न होताहै उसीप्रकार आप मुझपर कृपाकरिये शौनकने कहा कि क्या आश्चर्य्यहै जो अज्ञानीपुरुष अयोग्य कर्म्मकरै उसके ऊपर पंडित अवश्य क्रोधनहीं करते ज्ञानमहल पर चढ़कर शोचके अयोग्य पुरुष दूसरे मनुष्योंको ऐसे शोचताहै जैसे पहाड़ पर बैठा मनुष्य पृथ्वी के मनुष्योंको ज्ञानसे जानताहै--जो साधुओंमें प्रीति नहीं रखताहै और उनकी आंखों से गिराहुआहै और पहिले साधुओंसे धिक्कारी को पायाहुआ है वह ज्ञानको नहींपाता है उसप्रकारके पुरुषमें दूसरे मनुष्य आश्चर्य्य को नहीं करतेहैं ब्राह्मणका बलवेद और उसका माहात्म्य शास्त्रोंमें है वह तुमको मालूमहै तुमयहां शांतहोकर कर्म्मकरो और ब्राह्मण तुम्हारारक्षकहो हेतात क्रोधरहित ब्राह्मणोंका जो कर्म्म है वह परलोकका हितकारी पापयुक्तभीहो ऐसी दशामेंभी धर्म्मकोही समझो जनमेजय बोले कि हे शौनकजी मैं पापसे पश्चात्ताप करताहूं औरधर्म्मको लोप नहींकरताहूं मुझकल्याण चाहनेवाले सेवक पर प्रसन्नहूजिये-- शौनकजी बोले कि राजा मैं छल अहंकार रहित तेरी प्रीतिको चाहताहूं तू धर्म्मको यादकरके सब जीवोंकी वृद्धिमें वर्त्तमानहो मैं लोभदुःख भयआदिसे तुझको शिष्यनहीं बनाताहूं तुम ब्राह्मणोंसमेत मेरेउसदैवीसत्यबचनोंको सुनो मैं किसीसेधनकी इच्छा नहीं रखता हाहा धिक्कार धिक्कार ऐसेसबजीवोंके पुकारने से तुझको धर्म्मसे शिष्य करताहूं सुहृद्जन मुझको धर्म्मसे अज्ञानी जानकर त्यागकरेंगे और मुझपर महादुःखीहोंगे मेरे चित्तके प्रयोजनको कोई ज्ञानीही पुरुष जानेंगे वह ब्राह्मण मेरे कारणसे जिसप्रकार कुशलताको पावें उसीप्रकार तुमको करनायोग्य है हेराजा ब्राह्मणोंकी अविरोधता का प्रणकरो, जनमेजय बोला कि हे वेदपाठी शौनक मैं कभी बचन चित्त कर्म्मसे ब्राह्मणों से विरोध नहीं करूंगा और मैं आप के दोनों चरणोंको स्पर्शकरके कहताहूं २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिआपद्धर्मेएकविंशतितमोऽध्यायः २१ ॥

बाईसवां अध्याय ॥

शौनक बोले कि तुम बड़े पराक्रमीहोकर धर्मको देखतेहो और विद्यावान् प्रसन्नचित्त होकर पापसे व्याकुल चित्तहो इस कारण मैं तुझसे धर्मको कहताहूं कि राजा प्रथम भयानकरूप होकर फिर अपने चलनसे जीवोंपर कृपा करता है वह अपूर्व तर है वह सम्पूर्ण प्रजाको नष्टकरता है यह सब संसार कहताहै तुम ऐसे अन्यायीहोकर धर्मकोही देखतेहो इससे तुम बहुत काल तक भोज्यवस्तुओं को त्यागकरके तपस्यामें प्रवृत्तहोजाओ हेजनमेजय अध-

सैसे अपमान युक्त राजाओं की यह अपूर्व वार्त्ता है कि जो दानकरने वाला धनवान्हो और तपस्यारूपी धन का रखने वाला कृपण हो यह आश्चर्य्य नहीं है क्योंकि जो आदि अन्त में विचार नहीं किया यही सम्पूर्ण कार्पण्यता है जो कर्म ध्यानपूर्वक होता है उस में गुण है हे राजा यज्ञदान दया वेद सत्यता यह पांचों और अच्छे प्रकार किया हुआ तप सब पवित्र हैं यही राजाओं का पवित्र और उत्तम धर्म्म है इन गुणों से तू मोक्ष धर्म्म को प्राप्त करेगा पवित्र देश की यात्रा उत्तम और पवित्र कही जाती है इस स्थानपर राजा ययाति का कहाहुआ इतिहास कहते हैं जो आदमी अपनी आयु और जीवनको प्राप्त करे और बड़ी युक्ति से यज्ञ करके फिर तपस्याको करे वह तप कुरुक्षेत्र के समान पवित्र है और कुरुक्षेत्र से सरस्वती को और सरस्वती से तीर्थों को और तीर्थों से पृथूदक को पवित्र वर्णनकिया है जिन तीर्थों में स्नान और जल पान करके जीवन्मुक्त हो जाय वह महा सरोवर पुष्कर प्रभासक्षेत्र कालोदक आदि तीर्थ हैं और सरस्वती दृषद्वती दोनों का संगम और मानसरोवर यह बड़े तीर्थ हैं उन सब तीर्थों में वेद पाठ और जप का अभ्यास करनेवाला आचमन पूर्वक स्नान करे मनुजी ने कहा है कि पवित्र पुरुषों का धर्म त्याग है और उससे भी अधिक संन्यास है इस स्थान पर सतवान् के बनाये हुये इतिहासको कहता हूं जैसे कि बालकसत्य वक्ता है और पाप पुण्य का कर्त्ता नहीं है इसी प्रकार इस लोकमें सबजीवों के मध्य ब्रह्म से उत्पन्न होनेवाले अर्थात् ब्रह्म स्वरूप पुरुषों को सुख नहीं है तो फिर संसार के कुसंग से सब पापों के प्राप्त करनेवाले पुरुषों को कैसेहोगा अर्थात् वह दोनों कल्पित हैं पुण्य पाप के समाप्त होने पर त्याग करनेवालों का जीवन कल्याणकारी है राजाओं के कर्मों में जो उत्तम कर्म है वह तुझ से कहूंगा तुम धैर्य्यता और दानों से स्वर्ग को बिजय करो जिसको धैर्य्यता और इन्द्रियों के जीतनेकी सामर्थ्य है वह मनुष्य धर्मका स्वामी है तुम ब्राह्मणों के अर्थ और सुख भोगने के निमित्त पृथ्वी की रक्षा करो क्यों कि तुमने पहिले इनको तिरस्कार किया था अब इनको प्रसन्न करो और शपथ करो कि मैं ब्राह्मणों को नहीं मारूंगा तू अपने कामों में उद्योग करके परमकल्याण को कर कोई राजा तो बरफ अग्नि और यमराज के समान होता है और कोई राजाहल और बज्र के समान होता है मैं सदैव रहूंगा ऐसा विचारकर नीचपुरुषोंका निष्फल संगनकरनाचाहिये अर्थात् नाशकी इच्छाकरके कभी नीचोंकासंगनकरे पश्चात्तापके करने से विपरीत कर्म का पाप दूरहोता है यह फिर नहीं करूंगा ऐसा निश्चय करलेने से भी पापसे निवृत्त होताहै मैं धर्म्म ही को करूंगा यहसंकल्प करके भी अपनेपापसे उ-

द्धारहोताहै ऐश्वर्य चाहनेवालेको अपना कल्याण करनाचाहिये जो सुगंधियों का सेवन करते हैंवह उसी सुगंधिके रखनेवाले होतेहैं जो दुर्गन्धियोंके रखनेवाले हैं वह उसी प्रकारकी दुर्गन्धि रखनेवाले होते हैं तप में प्रवृत्तहोने से पुरुष शीघ्रही पापसे छूटताहै जिसको दुष्टकर्मका दोष लगाया गया हो वहएक वर्ष पर्यन्त अग्निकी उपासनाकरके पापसे पृथक् होता है भ्रूणहत्या करनेवाला तीनवर्ष अग्निकी उपासनाकर के पापसे निवृत्त होता है महासरोवर पुष्कर प्रभासआदि तीर्थोंकी यात्राको करके सौ योजन चलने से भी भ्रूणहत्या दूरहोती है जितने जीवों को मारे उतने ही मरनेवाले जीवोंको छुड़ाने से वहजीवघाती पापों से निवृत्तहोता है तीनऋचा अघमर्षणकी जल में गोतालगाकर पढ़े उसको अश्वमेध और अभृतस्नान के समान मनुजी कहतेहैं उससे शीघ्र ही पाप नष्ट हो सत्कार का पाता है और सब जीव भी जड़ और गूंगे के समान इसको प्रसन्न करतेहैं हे राजा देवता और असुरों ने देवगुरु बृहस्पतिजी से आदर पूर्वक पूछा कि हे महर्षी तुम धर्म से उत्पन्न होनेवाले सुखरूपी फल को जानते हो उसी प्रकार परलोक सम्बन्धी दुःख को भी जानते हो जिस योगी के वह दोनों सुख दुःख बराबर होयँ उन दोनों की बिजय भी वहां बराबर हो सक्ती है या नहीं, धर्म की प्रकृति रखने वाला पुरुष किस प्रकार से पाप को दूर करता है, बृहस्पति जी बोले कि जो पहिले अज्ञानता से पाप को करके फिर बुद्धि से पवित्र कर्म्मों को करता है वह कर्म का अभ्यासी उस पाप को ऐसे दूरकरता है जैसे कि देह से मैले वस्त्र को दूर करते हैं—पाप करके यह माने कि मैं कर्त्ता नहीं हूं अर्थात् देह के अहंकार से पृथक् है वह श्रद्धायुक्त दूसरे के दोष गुण में दोष न लगानेवाला कल्याण को प्राप्त होता है जो पुरुष साधुओं से प्रकटहोने वाले दोषों को ढकता है वह भी कल्याण भागी होता है--जो पुरुष पापको करके कल्याण को प्राप्त करता है वह इसप्रकार कल्याणको करताहुआ सब पापोंको दूरकरता है जैसे कि सम्पूर्ण अन्धकारको प्रातःकाल का सूर्य्य दूर करता है-भीष्मजी बोले कि शौनक के पुत्र इन्दोतने राजाजनमेजय से ऐसा कहकर बुद्धिके अनुसार अश्वमेध यज्ञ कराया तब वह जनमेजय निष्पाप होकर कल्याण युक्त देदीप्य अग्नि के समान रूपवान् शत्रुहन्ता होकर अपने नगरमें जाकर ऐसे पहुंचा जैसे कि आकाशमें पूर्णचन्द्रमण्डल का चन्द्रमा होता है ३९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिआपद्धर्म्मेद्वाविंशोऽध्यायः २२॥

तेईसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह आपने देखा या सुना है कि कोई मृतक होकर फिर जिया इसको कृपाकरके कहिये—भीष्मजी बोले कि एक प्राचीन इतिहास जिस में गिद्ध और शृगाल का वर्णन है उसको सुनो कि प्राचीन समय में नैमिष देश में किसी ब्राह्मण का बालक बड़ेनेत्र वाला कष्टसे प्राप्त होनेवाला बाल ग्रहसे पीड़ित होकर मरगया तब उस घराने के मूलधनरूप मृतक बालक को उसके भाई बन्धु महाव्याकुल शोक से अश्रुपात डालते हुये श्मशान भूमि के पास लेकर वर्त्तमान हुये और शोकसे उसबालक को पृथ्वीपर रखकर करुणा करके रोदन करनेलगे बारम्बार उसबालक के वचनों को यादकर कर मारेमोह के उसको वहां छोड़कर लौटजाने को समर्थ नहीं हुये उन के विलाप के वचन सुनकर एक गिद्ध उनसे बोला कि लोक में इकलौते पुत्र को छोड़कर जाओ यहां विलम्ब न करो यहां हजारों स्त्री पुरुषोंको बान्धव लोग छोड़ २ कर सदैव चले जाते हैं और सुख दुःख से भरे हुये सब संसार को देखो मिलना और बिछुड़ना क्रमसे सब को होने वाला है जो लेकर आते हैं वह जीव भी अपनी अवस्था की संख्या से मृत्युहोते हैं तुम इस गिद्ध शृगाल काकादि व्याप्त महाभयानक भूमिसे चलेजाओ काल को पाकर कोई इष्टमित्र फिरनहीं जिया है जीवोंकी ऐसी ही गति है इस में जो उत्पन्न हुआहै वह अवश्य ही मरेगा कौनपुरुष मृत्युसे बचाकर मृतक को जिलासक्ता है लोक का सबकाम करके अंतको सूर्य्य भी अस्तंगतहोताहै पुत्रके स्नेह को त्यागकर अपने २ स्थानोंको जाओ तदनन्तर गिद्धके वचनों से वह सब बांधव पुकारे और रोकर लड़के को छोड़कर चल दिये और निराशाहोकर अर्थके निश्चय करने को मार्ग रोककर वर्त्तमान हुये तब कौवेके समान काला एकशृगालबिल में से निकलकर उनसबमनुष्यों से बोला कि निश्चय करके मनुष्य निर्दय हैं अरे मूर्खो यह सूर्य्यवर्त्तमान है प्रीतिकरो भय मतकरो अब बहुतरूप रखने वाला मुहूर्त्त है कभी २ मृतक भी जीता है तुम पुत्रभाव की प्रीतिसे पृथक् हो निर्दय होकर अपने इस बालक को श्मशान में छोड़कर किसकारण से जाते हो इसमीठे वचन वाले बालक में तुम्हारा स्नेहनहीं है जिसकी केवल बातोंहीसे खुशीहोते थे तुम देखो कि जैसे पशु पक्षियों की अपने पुत्रों में प्रीति होती है उनको अपने पुत्रों के पोषण के सिवाय कोई फलनहीं प्राप्तहोता है पुत्रों में प्रीति रखनेवाले पशुपक्षी कीट आदि जीवोंको पोषणकरने का कोईफल ऐसे प्राप्त नहीं है जैसे कि परलोक गतिमें वर्त्तमान मुनियों के यज्ञ और क्रियाओंका

फल प्रकट नहींहोता अर्थात् वह फल ईश्वर में वर्त्तमान होता है बेटों से क्रीड़ा बिनोद करनेवालों को इसलोक परलोक दोनोंमें कोई फलनहींदेखने में आता है परन्तु सन्तान को पोषण करते हैं प्यारे पुत्रों के न देखने वाले उनजीवोंको शोकवर्त्तमान नहींहोता है और न बड़े होकर अपने पितामाता का पोषण करते हैं मनुष्य की प्रीति कहांसे है जिनका शोक कियाजाय इस अपने पुत्रको त्यागकर कहांजाओगे कुछसमय तक नेत्रों से जलबहाओ और प्रीतिसेदेखो इसप्रकारकी चित्तरोचकता अधिककरके उसमनुष्यको त्यागना कठिनहै जोकि सुखसे भ्रष्ट और प्यारीवस्तुओंसमेत श्मशान भूमि में वर्त्तमानहो, जिसस्थानपर बांधव वर्त्तमानहोतेहैं वहां दूसरा कोई नहीं ठहर सक्ता है प्राण सबको प्यारे हैं और सबप्रीतिको जानते हैं–तिर्यक् योनि के जीवोंमें भी सत्पुरुषों की प्रीति जैसी होतीहै उसकोभी देखो ऐसे कमलमुख कोमल बालक को छोड़कर तुम कैसे घरकोजातेहो जैसे कि हालके विवाह कियेहुये स्नानपूर्वक अलंकृतदूलहको-यहशृगालके वचन सुनकर वहसब भाईबन्धु उस मृतक बालक के लेनेको लौटे तब गिद्धबोला कि अरेनिर्बुद्धी लोगो तुम इसनीचबुद्धि शृगाल के बहकाने से क्यों लौटआते हो और पञ्चभूतोंसे बने प्राणरहित काष्ठरूप बालकको क्या शोचतेहो तुम अपनी आत्माको क्यों नहीं शोचते निश्चयकरके उग्रतपकरो जिससे पापसेछूटोतपसे सबप्राप्तहोसक्ताहै विलाप करनेसे क्या होगा सब अनिष्ट देह के साथ ही उत्पन्नहुयेहैं जिसके कारण यह बालक अत्यन्त दुखदेकर जाताहै धनगोधन और संतान भी तपसेही प्राप्त होते हैं और वह तप योगसे प्राप्तहोता है इसप्रकार अपनेकर्मसे उत्पन्नहोनेवाले सुख दुःख जीवोंको प्राप्त होतेहैं उसप्रकार सबजीव सुखदुःखोंको साथलेकर उत्पन्नहोता है पिताकेकर्म्म से पुत्र और पुत्रकेकर्म्म से पिता संयुक्त नहीं होताहै सब अपने अच्छे बुरे कर्मोंसे बंधेहुये इसमार्गहोकर जातेहैं तुम युक्तिपूर्वक अधर्मको चित्तसे दूरकरके धर्म को करो और समयके अनुसार देवता और ब्राह्मणोंमें वर्त्तावकरो शोक और दुःखको त्यागकरो और पुत्रके स्नेहसे अलग होकर इसको आकाशमें त्याग करके फिर शीघ्रतासे लौटो जो पुरुष बुरेभले कर्मको करता है उसीको भोगता है इसमेंबांधवोंसे क्यासम्बन्धहै बांधवलोग यहां अपने प्यारे बांधवको त्याग करके वर्त्तमान नहीं रहते हैं और अश्रुपात डालडालकर प्रीतिको त्यागकर अपने २ घरकोजातेहैं ज्ञानी या मूर्ख धनी वा निर्द्धन यहसब बुरे भले कर्मके साथ कालके बशीभूत होतेहैं शोचने से क्याहोगा और मृतकको क्याकरोगे सबको बराबर देखनेवाला कालधर्मसे सबका स्वामीहै तरुण, वृद्ध, बालक आदि सब जीवकर्म में बँधेहुये मृत्यु के आधीनहोतेहैं यह संसार ऐसाहै शृ-

गालने कहा बड़ाआश्चर्य्य है कि अल्पबुद्धी गिद्धने पुत्र के स्नेहमें भरेहुये
शोचग्रस्त तुम लोगोंकी प्रीति कम करदी जो यह समूह स्पष्ट विश्वा-
सित और अच्छे प्रकारसे कहेहुये वचनोंसे कठिन प्रीतिको त्यागकरजाताहै
और दुःखकास्थानहै कि पुत्रका वियोग और श्मशान के सेवनसे पुकारने
वाले आदमियोंका ऐसा बड़ादुःख है जैसे कि बछड़ोंके वियोग होनेसे गौ-
ओंको दुःखहोता है अब मैं पृथ्वी के मनुष्योंके शोकको खूबजानताहूं प्रीति
के कारण मेरे भी अश्रुपातहुये उद्योग सदैव करना चाहिये फिर वह दैव
के योगसे सफल होताहै प्रारब्ध और उद्योग दोनों दैव के द्वारा प्राप्तहोते हैं
सदैव प्रीति करना चाहिये बिना प्रीतिके सुखनहींहोता अर्थ की सिद्धी बड़े
उद्योगसे होतीहै तुम क्यों निर्दयी के समान जातेहो अपने वीर्य से उत्पन्न
आत्मारूप पितरों का बंश पैदाकरने वाले पुत्रको वनमें छोड़कर कहांजाते
हो तुम सूर्यास्त के समय पुत्रको लेजाओगे या यहांपर वर्त्तमानहोगे फिर
गिद्धबोला हे मनुष्यो अब मेरी अवस्था हजारवर्षसे अधिकव्यतीतहुई मैं स्त्री
पुरुष नपुंसक किसीको जीता नहीं देखताहूं मृतक जीवगर्भसे उत्पन्न होतेहैं
और जन्मलेतेही मर जातेहैं और इधर उधर घूमतेहुये भी मरजातेहैं इसीप्रका-
र तरुण बृद्धावस्थामें भी मरतेहैं इसलोकमें पशुपक्षी जड़ चेतन जीव और
पहाड़ों के भी प्रारब्ध नाशवान् है क्योंकि अवस्था आगे नियत होती है
प्यारी स्त्रीसे वियोग और पुत्रके शोकसे संयुक्त दुःखी मनुष्य सदैव शोककरते
घरको गये हजारों इष्ट मित्र शत्रु प्यारे कुप्यारे लोगोंको बांधवलोग यहां
छोड़कर चलेगये इस काष्ठतुल्य मृतक पुत्रको तुम त्यागकरो यह मृतकरूप
जीव दूसरी देहमें पहुंचगया इससबबसे इस निर्जीवको छोड़कर नहींजाते हो
यह प्रीति निरर्थकहै और परिश्रम निष्फल है यह न आँखोंसे देखता न का-
नोंसे सुनता है क्यों नहीं इसको त्यागकरके जल्दी घरकोजातेहो,मोक्षधर्म्म
से सम्बन्ध रखने वाले कारण युक्त मेरे कठिन वचनोंसे समझाये तुम अपने २
घरको चलेजाओ हे मनुष्यो निश्चय ज्ञान विज्ञानसे संयुक्त सलाहको सुनकर
लौटजाओ बालकको देखकर और चरित्रोंको शोचकर शोकदूनाहोजाताहै इस
वचनको सुनकर सब मनुष्यलौटे तबशृगालने शीघ्रहीआकर उसपड़ेहुये बाल-
कको देखा और मनुष्योंसेकहा कि तुम गिद्धकेवचनसे इससुवर्ण वरण भूषणोंसे
अलंकृत पितरोंके पिण्डदेनेवाले पुत्रकोक्योंत्यागे जातेहो,प्रीति शोकसे अलग
नहींहै निश्चय इसमृतकके त्यागसेतुमको खेदहोगा सुनतेहैं कि शम्बुक शूद्रके
मरनेपर ब्राह्मणका बालक धर्मको पाकर सच्चेपराक्रमीरामजीसे जिलायागया
उसीप्रकारसे राजर्षिश्वेतका पुत्र मृत्युवशहुआ फिर इसबालक को धर्मनिष्ठ
श्वेतने जिलाया उसीप्रकार कोई देव मुनि सिद्ध हो और शोचग्रस्त तुम

लोगों पर करुणाकरे तो यहभी बचे इसप्रकारसे कहेहुये शोकसे पीड़ितपुत्र पर प्यारकरनेवाले वह सबलोगलौटे और अपनी गोदी में बालक का शिर रखकर बड़ाभारी विलापकिया उनकी विलापयुक्तवाणी को सुनकर गिद्धने कहा कि अश्रुपात से भीजा देह हाथके छूनेसे घायल और धर्मराज के प्रयोगसे बड़ेभारी स्वप्नमें प्रवृत्त कियेगये तप से भरेहुये धनी महाबुद्धिमान् सब मनुष्य मृत्युके आधीन होते हैं यह वह मृतकोंका नगर है जहां बांधवलोग सदैव हजारों बालक और बृद्धोंको त्यागकरके पृथ्वी पर अहर्निश दुःख भोगते रहतेहैं हठको छोड़ चित्तसे शोक को दूरकरो अब इसका जीवन कैसे होसक्ता है मृतक और देहके त्यागनेवालों का फिर देह नहीं वर्त्तमान होताहै सैकड़ों शृगाल कीमूर्त्तियों के देनेसे भी यह बालक सैकड़ों वर्षतक भी जिलाना असम्भव है जो ब्रह्मा रुद्र विष्णु स्कन्दआदिमें से कोई इसको बरदान दें तो यह बालक जीवे और आपके इसरुदनके अश्रुपातों से नहीं जी सकेगा मैं तुम बांधव शृगाल आदि जितने हैं वह सब धर्म अधर्म को साथ लेकर यहां इस मार्ग में बर्त्तमान हैं अप्रिय मनुष्य दूसरे की स्त्री और जीवों की शत्रुता अधर्म मिथ्या इत्यादि बातों को ज्ञानी पुरुष त्याग करे तुम धर्म की सत्यता और न्यायशास्त्र के अनुसार गुण और जीवों पर बड़ी दया और निश्छलता को युक्ति से निश्चय करो, जो पुरुष माता पिता बांधव सुहृद आदि को जीवता नहीं देखते हैं उनके धर्म में विपरीतता है, जो बालक नेत्रों से नहीं देखता है और किसी प्रकार की अंगचेष्टा भी नहीं करता है उसकी अवस्था पूर्ण हो जाने में तुम शोक करके क्या करोगे यह सुनकर शोच में डूबे हुये वह बांधव बालक को पृथ्वी में छोड़कर घर को चले शृगाल बोला कि सब जीवों का नाश करनेवाला यह नरलोक भय उत्पादक और कठिनता से क्षमा किया जाता है यहां जैसे सुहृद बांधव आदि से वियोग है उसी प्रकार जीवन भी थोड़ा है बहुत से कुप्यारे जो परोक्ष में निन्दा और अप्रिय बोलनेवाले दुःख और शोक के बढ़ानेवाले पुरुषों से संयुक्त इस प्रकट संसार को देखकर यह नरलोक एक मुहूर्त्त भी मुझको अच्छा नहीं लगता है तुम सरीखे अज्ञान लोगों को धिक्कार है जो गिद्ध के कहने से पुत्र से निर्मोही होकर घर को जाते हो हे शोक युक्त मनुष्यो लौटो इस पापी गिद्ध के अशुद्ध बचनों को सुनकर क्यों जाते हो सुख के पीछे दुःख और दुःख के पीछे सुख है यहां सुख दुःख से संयुक्त इस संसार में एक बात बराबर नहीं होती हे अज्ञानियो इस कुल के शोभा देनेवाले स्वरूपवान् बालक को छोड़कर कहां जाते हो मैं इस रूपवान् तरुणता युक्त बालकको निस्सन्देह चित्त से जीवता देखता हूं हे मनुष्यो इसका नाश नहीं

है निश्चय तुम इसको आनंद से पाओगे अब बालक के शोक से दुःखी मृतक के समान आप लोगों को जाना उचित नहीं है सुख को प्राप्त करके और धारण करके निर्बुद्धियों के समान पुत्रको त्याग कर कहां जाओगे-भीष्मजी बोले कि हे राजा इस प्रकार शृगाल के अमृतरूपी वचनों को सुन-कर उन सब बांधवोंने मध्य के बसेरेको पाया और अपने प्रयोजनके निमित्त उसके पास वर्त्तमानहुये गिद्ध बोला कि यह श्मशान भूमि प्रेत यक्ष राक्षसों से व्याप्त भयकारी नौला आदि जीवों से शब्दायमान भयानक घोर सूरत नीले बादल के समान प्रभायुक्त इसमें मृतक को त्याग करके प्रेतक्रिया में प्रवृत्त हो जब तक सूर्य्य अस्त नहीं होता है तबतक सब ओर के मार्ग साफ हैं इससे इसी शुद्धमार्गमें प्रेतक्रियाको करो बाजपक्षी कठोरशब्द करतेहैं और भयकारी शृगाल बोलते हैं मृगेन्द्र प्रसन्नहोतेहैं और सूर्य्य अस्ताचलको जाता है चिता के नीले धुएं से वृक्ष रंगीनहोते हैं, श्मशानभूमि में निराहार देवता गरजते हैं इस भयानकरूप देशमें भस्मसे भरेहुये देह और कुरूपसे रुधिर भक्षी राक्षस तुमको रात्रिमें डरावेंगे यह कठिनस्थान है इसमें अब भय उत्पन्न होगा इसकाठरूप बालकको त्यागो और शृगाल के वचनोंको विचारो, जो तुम शृ-गालके निष्फल और मिथ्यावचनोंको सुनोगे तो बेहोशहोकर नाशको पा-ओगे-शृगाल बोलाठहरो यहांडरना न चाहियेजबतक सूर्य्यकाउदयहै तबतक इस प्यारे पुत्रमें अप्रीति नहीं करना योग्य है तुम विश्वास करके कुछ समय तक देखो जबतक सूर्य्य है तब तक कच्चेमांसभक्षी गिद्धसे तुमको क्या प्रयोज-न है जोतुम गिद्धके वचनोंपर विश्वासकरोगे तो तुम्हारापुत्र नहीं जीवेगा-फिर गिद्धने कहा कि सूर्य्यास्त हुआ शृगालने कहा नहीं हेराजा अपने काममें प्रवृत्त वह दोनों गिद्ध और शृगाल भूखप्याससे थकेहुये शास्त्र का सहारा लेकर चुप होगये--विज्ञानी और पंडितलोग उन गिद्ध और शृगाल के अमृतरूपी वचनों से चलतेथे और ठहरजातेथे फिर शोकमें भरेहुये वह सबलोग ठहरगये और उनदोनों चतुरों की चतुराईसे वह सबकाम करने लगे तदनन्तर वादी प्रतिवादी गिद्ध और शृगाल और उनमनुष्योंके सन्मु-ख श्रीमहादेवजीने आकर दर्शनदिया और सबसे कहा कि मैं वरका देने-वालाहूं तब सबने हाथजोड़ के कहाकि आपहमारे इकलौते बेटेको जीवदा-न दीजिये तब शिवजीने जलसे पूर्ण नेत्रों समेत उस बालककी सौवर्षकी उमर करदी उसी प्रकार सबके उपकारी शिवजीने शृगाल और गिद्धको भूखकेनाश करनेका वर प्रदानदिया और वहलोग लड़के को जीवदान कराके बड़ी प्रसन्नता पूर्वक श्रीशंकरजीको नमस्कारकरके घरकोगये तात्पर्य्य यहहै कि बड़ीप्रीति पूर्वक पूर्णनिश्चयसे और देवोंके देव शंकर जीकी प्रसन्नता

से शीघ्रही फलप्राप्त होताहै-दैव संयोग और गंधर्वोंके निश्चयको देखो और दुःखी भूखे प्यासे मनुष्योंके अश्रुपातका साफ होनादेखो थोड़ेही समयमें बड़े निश्चयको करके शोकसेदुःखी मनुष्योंने महादेवजीकी प्रसन्नतासे बड़ेभारी सुखरूप कल्याण को पाया जो इस अध्यायको चित्तसे सुनताहै उसको इसी प्रकारके अनेक कल्याण होतेहैं १२२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेत्रयोविंशतितमोऽध्यायः २३ ॥

चौबीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जो निर्बल मिथ्याबादी असावधान मनुष्यहैं वह अपनी अज्ञानतासे अयोग्यबचनों के द्वारा सदैव सन्मुख वर्त्तमान नेकी बदी करनेमें समर्थ उद्युक्त शत्रुके साथ बिरोध करके अपने बलके घमंडसे क्रोधयुक्त सन्मुख आनेवाले शत्रुके उखाड़नेकी इच्छासे कैसे कर्मकरे- भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर इसस्थानपर एकप्राचीन इतिहासको कहता हूं जिसमें शाल्मली वृक्ष और हवा का संबादहै--हिमालय पर्वतपर एक शाल्मलीका बहुतबड़ा वृक्षथा जिसकी बड़ी२ शाखाओंमें अनेक उपशाखाथीं वहां धूपसे पीड़ित थकेहुये मतवाले हाथी और अनेक प्रकारके पशुजीव निवास करतेथे उसकी मुटाई दोसौ गजकी बड़ी छायावाला तोता मैना आदि पक्षियोंसे शब्दायमान फलपुष्प युक्तथा दैव योग से उसउत्तम वृक्षकेनीचे बनबासी ब्यापारियोंका समूह और बिदेशी तपस्वी इकट्ठे हुयेथे वहां नारदजीने आकर उस वृक्षसे कहाकि आश्चर्य्यहै कि तुम चित्तरोचक क्रीड़ाके योग्य हो हेशाल्मलवृक्ष हमतुझसे सदैव प्रसन्न रहतेहैं और तेरीछायामें बड़े २ मतवाले हाथी आदि अनेक बनकेपशु आनन्दसे बिश्राम लेतेहैं और तेरी शाखाओंको मैं किसी प्रकारकी हवासे टूटता नहीं देखता क्याहवा तुम्हारी मित्रहै और तुझपर प्रसन्नहै जिससे कोई तुम्हारा बिगाड़ नहींकरती तीक्ष्ण हवा सैकड़ों बड़े२ वृक्ष और पर्वतोंके शिखर और अनेक स्थानोंको अपने २ स्थानोंसे हटादेतीहै अति सुगंधित पवित्र बायु देवता, पाताल सरोवर,नदी और सागरोंको प्रसन्न करतीहै बायुदेवता तुमको मित्रतासे रक्षाकरतेहैं इसी से तुमफल पुष्पयुक्तभी रहतेहो और तेरी सुन्दर शाखाओंमें यह प्रसन्नचित्त पक्षी कलोलें करतेहैं इनसब पक्षियों के शब्दऋतु २ के अनुसार मीठे और मनभावने सुनाई देते हैं और इसीप्रकार यहमतवाले गर्जनेवाले हाथी आदि जीवभी तेरे आश्रम में आनन्द पूर्वकनिवास करते हैं तुम इन सब बातों से सुमेरु पर्वतके समान शोभा देरहे हो तप से सिद्ध तपस्वी और भिक्षुक ब्राह्मणों के द्वारातुझ को स्वर्ग के समान मानताहूं २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिआपद्धर्मेचतुर्विंशोऽध्यायः २४ ॥

पच्चीसवां अध्याय॥

हे शाल्मल भयकारी सर्वव्यापी वायुदेवता बिरादरीके नाते से या मित्रतासे तुम्हारी सदैव रक्षाकरते हैं इससे हे वृक्षतुमवायु देवता के दासहो और मैं तेराहूं ऐसा सदैव दीनवचन कहते हौ इसी से वायु देवता तुम्हारी रक्षा करते हैं मैं ऐसाकोई वृक्षपर्वत स्थान पृथ्वी पर नहीं देखताहूं जो हवा से पीड़ित न हो--शाल्मल बोला हे ब्राह्मण वायु न मेरा मित्र है न बंधुहै और न मेरा शुभचिन्तक है इसी प्रकार ईश्वरभी नहीं है जो सबकी रक्षाकरता है हे नारदजी मेरा और हवाका तेज बल कठिनतासे सहनेके योग्य है वायुदेवता पराक्रम में मेरेअठारहवीं कलाकेभी समान नहीं हैं वहपवन वृक्षपर्वत स्थानों को तोड़ता हुआ मेरेही बलसे रोंकागयाहै वायुदेवता को बहुधा मैंने पराजय किया इससे हे नारदजी मैं क्रोध युक्त हवासे भी नहीं डरताहूं नारद जी बोले कि हे शाल्मल यहतेरा समझना मिथ्या है क्योंकि हवाके समान कोईजीव पराक्रमी नहीं है इन्द्रवरुण यमराज कुबेर यहभी बल में वायुदेवताके समान नहीं हैं तो तुमकैसे होसक्तेहो, और इस पृथ्वीपर जो कोई जीवचेष्टा करता है वह सब चेष्टा करनेवाले वायुदेवता ही हैं यही देवतासब में व्याप्तहोकर जीवमात्रोंको चेष्टाकराता है और बिपरीत से व्याप्त होकरबिपरीत चेष्टाभी करादेताहै सो तुम ऐसे पराक्रमी देवताका पूजननहीं करतेहो इससे यह बुरीबातहै जो स्वाभाविक गुणसे रहित है और शास्त्रकी जाननेवाली मेधाबुद्धि जिसकी नष्टहै वहबड़ी बकवादकरता है और क्रोधआदिसे आच्छादित निष्प्रयोजन बात करता है तेरेऐसे बचनोंसे मुझको क्रोधउत्पन्न हुआ मैं तेरेखोटे वचनोंको वायु देवतासे कहूंगा हेदुर्बुद्धी चन्दन, स्यन्दन, शाल, सरलदेवदारु वेत--धन्वनआदि अनेक पराक्रमी और ज्ञानीवृक्ष हैं वहसब भी वायुदेवताकी ऐसी निंदानहीं करसक्ते वे सबवायु देवताके और अपने बलको जानतेहैं इससे वहबड़े २ उत्तम वृक्षभी वायुदेवताको नमस्कार किया करते हैं तुमअपने मोहसे वायु देवताके अत्यन्तपराक्रम को नहींजानते हो जो यहबात ऐसेहीहै तो वायुदेवता के सन्मुख जाऊंगा १९॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिआपद्धर्मेपंचविंशतिमोऽध्यायः २५॥

छब्बीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि हेराजेन्द्र ज्ञानियों में श्रेष्ठ नारदजीने शाल्मलसे ऐसा कहकर उसकी सबबातों को हवासे कहा कि हिमालयके ऊपर एक शाल्मली वृक्ष है वह बड़ीजड़ और छाया रखनेवाला है वह तुम्हारा अपमान करता

है उसने बड़ी निन्दाके वचन जो तुमको कहे हैं वह मैं तुम्हारे आगे कह नहींसक्ता हे वायुदेवता मैं तुमको सब देव दानव राक्षसों से भी बड़ा पराक्रमी और क्रोध में यमराजसे भी अधिक जानताहूं यह नारदके वचन सुनतेही वायुदेवता क्रोधयुक्त हो उसशाल्मली से जाकर यह वचन बोले हेशाल्मल तैंने नारदजी से मेरी निन्दाकी है मैं अपना पराक्रम तुझको दिखलाऊंगा और जो ब्रह्माजी ने तेरेनीचे विश्राम किया उसी विश्राम करने से यहमेरी कृपा तेरेऊपर है हे दुर्बुद्धी इसी कारण से बचा हुआहै तू अपने पराक्रम से नहीं बचा है जो तू मुझको दूसरे प्राकृति जीवों के समान जानता है मैं अपनी आत्माको दिखाता हूं जिससे तू कभी मेरी निंदा न करेगा तब शाल्मली ने हँसकर उत्तरदिया कि हे वायुदेवता तुम अपना पूरा पराक्रम मुझको दिखाओ मुझपर क्रोधमतकरो और जो क्रोधकरोगे तो मेरा क्याकर सक्तेहो हेवायु यद्यपि आप समर्थहैं परन्तुमैं आपसे कभी नहीं डरता मैं तुझसे पराक्रम में अधिकहूं इससे तेरा भय मुझको जराभी नहीं है क्योंकि जो बुद्धि के बलीहैं वही पराक्रमी होते हैं जो देहसेही बलिष्ठ हैं वह बली नहीं समझेजाते हैं यह बचन शाल्मली से सुनकर वायुने कहा कि मैं कल अपनाबल तुझको दिखाऊंगा तदनन्तर रात्रि वर्त्तमान हुई और वायुके समान अपने को न जानकर शाल्मली ने ध्यान करके कहा कि मैंने नारदजी से जो २ वचन कहे वह सब मिथ्या हैं मैं वायु से निर्बलहूं वही पराक्रमी है निश्चय करके जैसा कि नारदजी ने कहा है सो ठीक है अर्थात् वायुदेवता बड़ेबलवान् हैं और मैं निस्सन्देह दूसरे वृक्षों से भी निर्बलहूं सो मैं बुद्धिमें नियत होकर वायु से अपने भयको दूरकरूंगा जो बनकेवृक्ष भी उस बुद्धि में नियत होकर ठहरें वह भी सदैव वायुके कोपसे बचेंगे इस में सन्देह नहीं है परन्तु वह अज्ञानी इसको नहीं जानते हैं इसी से क्रोधभरी वायु इन वृक्षों को हिलाती है १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्म्मेषड्विंशोऽध्यायः २६ ॥

सत्ताईसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि उस शाल्मलीवृक्ष ने व्याकुल होकर अपनी छोटीबड़ी शाखा और गुद्दों को अपने आप गिरादिया सब फलपुष्प और शाखा आदि के दूरकरनेवाले शाल्मली ने प्रातःकाल के समय आनेवाले वायु देवता को देखा कि श्वासाओं से बड़े २ वृक्षों को गिरातेहुये क्रोधाग्नि में भरेहुये उसस्थान में आये जहांपर कि वह शाल्मली वृक्ष था उसकेफल पुष्प और शाखाओं को गिराहुआ देखकर बड़े प्रसन्नचित्त मन्द मुसुकान

से यह वचन बोले कि हे शालमल मैं भी क्रोधसे तुमको ऐसाही करनेवाला था तुमने आपशाखाओंके दूरकरनेसे अपनेको दुःखमेंडाला अपने बुरेविचार से फूल फल शाखाओं से रहित सूखे गिरेहुये तुम मेरेपराक्रमके आधीन किये गये तब शालमली महा लज्जायुक्त होकर नारदजीने जो कहा उस वचन को स्मरण करके महा दुःखितहुआ हे राजेन्द्र इसी प्रकार अज्ञानी राजाभी निर्बल होकर बलवानों से जो विरोध करता है वह शालमली वृक्षके समान दुःखी और लज्जायुक्त होताहै इसकारण निर्बल राजा पराक्रमी राजा से विरोध ऐसा न करे जैसा कि शालमली ने वायु से किया--हे महाराज महात्मा-लोग दुष्टता करनेवालों पर शत्रुता प्रकट नहीं करतेहैं और धीरे २ अपने पुरुषार्थ को दिखलाते हैं – दुर्बुद्धी मनुष्य बुद्धिसे जीवन करनेवाले मनुष्य से शत्रुता न करे क्योंकि उसकी बुद्धि ऐसे प्रवेश करजाती है जिस प्रकार घासमें अग्नि—हे राजा जैसे पुरुषोंमें बुद्धिके समान कोई बस्तुनहीं है इसी प्रकार इसलोक में बलके समान कोई नहीं है इसी हेतु से बालक विक्षिप्त अन्धे, वहरे और अपने से अधिक बलवान् से क्षमाकरे हे युधिष्ठिर वह बात मैं तुझमें देखताहूं हे राजेन्द्र युद्ध प्रवृत्त होनेपर ग्यारह अक्षौहिणी सेना पराक्रम में महात्मा अर्जुन के समान न हुई सब सेनाके योद्धा पराक्रम में नियत होकर युद्ध में घूमनेवाले इन्द्र के पुत्र यशस्वी अर्जुन के हाथ से मारे गये और पराजय दियेगये--हे राजा यह राजधर्म और आपद्धर्म ब्योरेसमेत तुम से कहे अब और क्यासुनाचाहते हो १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेसप्तविंशोऽध्याय: २७ ॥

अट्ठाईसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे भरत वंशियोंमें उत्तम पितामह पापका जो नियत स्थान है और जिससे पापजारी होता है मैं उसको ब्योरे समेत सुना चाहता हूं, भीष्मजीबोले कि हे राजेन्द्र पापके रहनेके स्थानको सुनो केवल लोभही बड़ाग्राह है लोभहीसे पाप जारी होताहै इसीसे पाप अधर्म और महा दुःख प्राप्तहोताहै जिसलाभ से मनुष्य पापकरते हैं वही छलका मूल है—लोभ से ही क्रोधहोता है और उसी से कामजारी होता है लोभसेही मोहछल अपमान और पराधीनता प्राप्तहोती है अधैर्य्यता—निर्लज्जता—धनक्षय—धर्मनाश—अपकीर्ति-चिन्ता आदिभीलोभहीसे जारी होतेहैं-त्यागनकरना—अत्यंततृष्णा और विपरीति कर्म्मोंमें जो२बातें होतीहैं यहसब और कुलविद्या का अहंकार और रूप वा ऐश्वर्य्यका मद—सब जीवोंसे शत्रुता और उनका अपमान अविश्वस्यता—कुटिलता—पर धन का हरना—दूसरे की स्त्री से

सम्भोग करना—वचन वेग—चित्तका वेग—निन्दा का वेग—उपस्थइन्द्री और उदर का वेग—मृत्युका भयानक वेग—ईर्षा का बलिष्ठ वेग—दुःख से बिजय होनेवाला हत्या का वेग दुःख से हटाने योग्य रिस का वेग असह्यकानों का वेग—निन्दा—अपनी हीनता मित्रता और पाप दुःख से प्राप्त होनेवाला व्याज इसी प्रकार बिना बिचारे होनेवाली सबकार्य्यों की क्रिया यह सब लोभसे उत्पन्न हैं, बालअवस्था, कुमारअवस्था, और तरुणअवस्था वाले पुरुषभी अपने कर्म को नहीं त्याग करते हैं हे राजा यह लोभ वृद्धसे वृद्ध पुरुष का भी कम नहीं होता है और प्रति दिन के लोभ से भी ऐसे पूर्ण नहीं होता जैसे महागम्भीर नदियोंके जलसे समुद्र नहीं अघाता जो लोभ से प्रसन्न और कामसे तृप्तनहीं होताहै, वहभी उसीके समान है, हेराजा जो देवता गंधर्व असुर महासर्प और सबजीवों के समूहों से मुख्यता के साथ नहीं जानाजाताहै वहलोभ मोहसमेत जितेंद्री मनुष्यसे बिजयकरने के योग्य है—हेराजाकपट-शत्रुता-निन्दा दुष्टभाव-मित्रता यह अवगुण अशुद्ध अंतःकरण वाले-लोभियोंके होते हैं बड़े ज्ञानीपुरुष बहुत बड़े शास्त्रोंको भी धारण करते हैं और सन्देहोंको भी दूर करनेवाले होते हैं और जो निर्बुद्धीहैं वह दुःखको प्राप्तहोतेहैं शत्रुता और क्रोधसे भरे हुए उत्तम पुरुषोंके आचारसे रहित अन्तःकरण से निर्दयी प्रत्यक्षमें मृदुभाषी तृणोंसे ढकेहुए कूपोंके समानधर्मकेछल से दूसरोंको मारनेवाले धर्मध्वजा रखने वाले नीच मनुष्य जगतको ठगते हैं, धर्म अधर्मसे दूसरोंको प्रसन्न करनेवाले हेतुबलमें प्रवृत्त पुरुष इनबहुतसे मार्गों को उत्पन्न करतेहैं और लोभ ज्ञानमें नियत होकर सत्पुरुषोंके मार्गोंकोनाश करतेहैं—दुरात्मा लोभियोंसे हरेहुए धर्मकी जो जो मर्य्यादा भिन्न भिन्न होती हैं वह भी इसीप्रकारसे प्रसिद्धहोतीहैं, हे राजा अहंकार क्रोध धनआदिकामद—निद्रा, प्रसन्नता, शोक, यहसब दुष्टगुणलोभी मनुष्यमें दृष्टिआतेहैं—तुमइनको सदैव लोभसे भरेहुए नीच जानों और जिन्होंमें संसारके आवागमनकाभय नहीं है और परलोक की चिन्ता नहीं है और प्रिय अप्रिय विषयों मेंजिन का चित्त नहीं है और सदैव शिष्टाचार में प्रवृत्त हैं और प्रत्यक्ष में शांत चित्त हैं और सुख दुःख को समान जानते हैं और उच्चस्थानी और दानी हैं और किसी से प्रतिग्रह को नहीं लेते और दयावान् होकर पितृ, देवता और अतिथियों के पूजनमें सदैव सावधान हैं वह वीर सब के उपकारी धर्म रक्षक जीवमात्र के हितकारी प्राणतक देनेवाले हैं वहधर्म व्यापार करनेवाले मार्ग से भी हटाने के योग्य नहीं हैं उनका वह चलन कभी नष्ट नहीं होता है जोकि पहले साधुओं से चलाया हुआ है—जो पुरुष भय का उत्पन्न करनेवाला नहीं है और चपलता, रुद्रतासे रहित सतमार्ग में वर्त्तमान हैं और

अहिंसाही परमधर्म है ऐसे मनुष्य सदैव साधुओंसे सेवनयोग्य हैं, जो काम क्रोध से रहित ममता अहंकार आदि से पृथक् सुंदर व्रत और मर्य्यादाओं में वर्त्तमान हैं उन्हों की उपासना करके धर्मको पूछो, हेराजा उनका धर्म धन के और कीर्त्तिके निमित्त नहीं है किंतु देहकी भोजनादि सब क्रिया करने के योग्यहैं ऐसासमझकर करतेहैं उनमें भय क्रोध, चपलता शोकआदि अवगुण नहीं हैं और धर्मध्वजी भी नहीं हैं न किसी पाखण्डकर्म में प्रवृत्त हैं, लोभ मोहादिकसे रहित सत्य कहनेवालेहैं उनसे मिलाप करो ऐसे पुरुषोंका चलन कभी भ्रष्ट नहींहोता है—जो पुरुष हानि लाभहोने में शोक हर्ष नहीं करते और ममता अहंकाररहित सतोगुणमें वर्त्तमान समदर्शी हैं उनदृढ़पराक्रमी सतोगुणी पुरुषोंको हानि लाभ सुख दुःख प्रियअप्रिय जीवन मरण सब बराबरहैं, तुम जितेंद्री सावधान धर्मके प्यारे होकर बड़े बड़े महानुभावों का पूजनकरो पूर्वके अच्छे संस्कारियोंसे सब कर्म कल्याणकारी होतेहैं और अज्ञानियों के सबकर्म अशुभदायक होतेहैं २५॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्म्मेअष्टाविंशोऽध्यायः २८॥

उन्तीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह आपने अनर्थोंका उत्पत्तिस्थान वर्णन किया अब ज्ञानको भी यथा योग्य सुना चाहता हूं भीष्मजी बोले कि जो अज्ञान से पापको करता है और अपने नाशको नहीं जानता है और श्रेष्ठ कर्म्मी पुरुषों से शत्रुता करता है वह संसार में वर्त्तमान होकर निन्दा को पाता है और मोहसे नरक और दुर्गती को प्राप्त होता है और दुखसे पीड़ित आपत्तियों में डूबजाता है—युधिष्ठिरने कहा कि मैं अज्ञानकी प्रवृत्ति, स्थान, वृद्धिहानि, उदय, मूलयाग, गति, काल, कारण, हेतु इत्यादि को ब्योरेसमेत सुना चाहताहूं और जो दुखप्राप्त होता है वह अज्ञान से होताहै-भीष्मजीबोले--प्रीति--विरोध--मोह--हर्ष--शोक--अहंकार,काम--क्रोध--अपमान--सुस्ती आलस्य--इच्छा,अनिच्छा-कष्ट अन्यकी वृद्धिमें दुखपाना यही अज्ञान है अर्थात् यह अज्ञान केही रूप हैं--पापियोंकी जो हिंसाआदि क्रिया है वहपापरूप हैं इसजारी होनेवाले पापकी जिनवृद्धि आदि को तुम पूछतेहो उस को ब्योरे समेत कहताहूं कि यहदोनों अज्ञान और लोभ एकसा दोष और फल देनेवाले हैं इससे दोनों समान हैं लोभसे अज्ञान प्रकट होता है और पापकर्म से लोभकी वृद्धि होती है, समानता में समान और न्यूनतामें न्यूनहोता है उदयमें उदय होकर नाना प्रकारकी गतियोंका प्राप्त करता है अब सातवें प्रश्नका उत्तर कहते हैं कि अज्ञानरूप लोभकी जड़

मोहहै और योग्यायोग्यके विचारकर्म के निश्चय से मोहसंयोगी अज्ञानयोग है और कालात्मारूपसे अज्ञानकीगतिहै इसीप्रकार लोभकेघटने औरवृद्धहोने से कारण और काल होताहै उसकालके ज्ञानसेलोभ प्रकटहोता है और लोभ से अज्ञान उत्पन्न होता है इसी प्रकार लोभहीसे सब दोष प्रकट होते हैं इस निमित्तलोभको अत्यंत त्यागकरे--राजाजनक,युवनाश्व--वृषदर्भऔरप्रसेन-जित--लोभकेही नाशसे स्वर्गकोगये इसीप्रकार अन्यबहुत से राजाभी वैकुंठ-वासीहुए इससे हे कौरवेन्द्र तुम यहां प्रत्यक्ष होकर लोभ को त्याग करोगे तो इसलोक परलोक दोनों में आनन्दपूर्वक विचरोगे ४॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिआपद्धर्मेएकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः २९॥

तीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले हे धर्मात्मा पितामह वेदपाठ और जपकेउद्योग करनेवाले इच्छावान् पुरुष का इसलोक में क्या कल्याण होता है और नानारूप धारणकरनेवाले इससंसारमें कल्याणको मानते हैं और यहां वहां जो कल्याण है उसको भी मुझसे कहिये और यह बड़ाधर्ममार्ग बहुत शाखावाला है उसकी जो बड़ी जड़ है उसको भी ब्यौरे समेत कहो भीष्मजी बोले कि बहुतअच्छा इसको भी कहता हूं जिससे कि तेरा कल्याणहोगा, जैसे कि प्राणी अमृत को पान करके तृप्तहोताहै उसीप्रकार तू भी ज्ञानसे तृप्तहोगा देखो महर्षियों की कही हुई धर्म्म की बहुतसी रीतें हैं वह लोग अपने २ विज्ञान से वर्त्तमान होकर परम काष्ठाओंको करते हैं निश्चयकरके देखने-वाले महात्माओं ने प्रत्यक्ष शान्तचित्तको कल्याणकारी कहा है मुख्यकरके ब्राह्मणका प्रत्यक्ष में शान्तचित्तहोना सनातन धर्म है शान्तचित्त होने से उसके कर्म की सफलता अच्छेप्रकार से होती है शान्तचित्त होने से तेज की वृद्धि और अत्यन्त पवित्रता होती है पाप रहित तेजयुक्त पुरुष मोक्षको पाता है शान्तचित्तसे बढ़कर संसारमें कोई धर्मनहीं है यह चित्तकी शान्तता लोकमें उत्तम और सबधर्म्मों में श्रेष्ठ है हे राजा प्रत्यक्ष शान्तचित्त होने से बड़ा फलपाता है अर्थात् इसलोक और परलोकमें बड़ेसुखको पाता है शान्तचित्त मनुष्य सुखसे सोता जागता लोकों में घूमता चित्तसे प्रसन्न और साफरहता है और जो पुरुष शान्तचित्त नहीं है वह सदैव दुःखको पाता है और अपने दोषोंसे बहुत से अनर्थ करता है चारोंआश्रमों में प्रत्यक्ष शान्त चित्तकोही उत्तम व्रतकहते हैं अब उसके चिह्नकहताहूं जिन पुरुषों की चित्त की शान्तता अच्छेप्रकार से उदयहोनेवालीहै उनमें धैर्य्यता, क्षमा, अहिंसा समानदृष्टि, सत्यता, शुद्धभाव, इन्द्री निग्रह, चातुर्यता, मृदुता, लज्जा, अच;

पलता,उदारता, अक्रोधता, सन्तोष, प्रियवचन दूसरेके गुणमें दोष न लगाना गुरुपूजन और जीवोंपर दया दुष्ट मनुष्योंसे निर्विवादता,प्रशंसा,निन्दाआदि कात्याग यह सब बातेंभी होती हैं और काम, क्रोध,लोभ,अहंकार,दुष्टता,ईर्षा, अभिमान आदि बुरे गुणभी उनमें कभीनहीं होते हैं इच्छा रहित अविनाशी प्रशंसनीय सुखोंसे तृप्त न होनेवाला और अन्यके गुणमें जो दोषनहीं लगाने वाला पुरुषहै वह समुद्रके समान किसी प्रकारसे तृप्त नहीं होता है मैं तुझमें प्रीति रखता हूं तुम मेरेहो और मुझ में प्रीति रखते हो उसी प्रकार मैं भी उनमें स्नेह रखता हूं यह सब बातें और पहली नातेदारी का संयोग इत्यादि बातों को जितेंद्री नहीं सेवन करता है लोक में जो नगर और वन से सम्बन्ध रखनेवाले विषय हैं उनको और निंदा स्तुति को जो पुरुष काम में नहीं लाता है वह मुक्त होता है, जो पुरुष सब के मित्र सुंदर प्रकृति शुद्धचित्त और ब्रह्म ज्ञानी हैं वह अनेक प्रकार के दुस्संगों से रहित होकर स्वर्ग में वड़े फल को पाते हैं, श्रेष्ठ चलन, सुप्रकृति, शुद्ध चित्त, आत्मज्ञानी, बुद्धिमान् पुरुष इस लोक में सत्कार को पाकर परलोक में परमगति को पाता है इस लोक में जो शुभ कर्म्म हैं और सत्पुरुषों से किये गये हैं वह ज्ञान से भरे हुये मुनियों के मार्ग स्वाभाविक सिद्ध होते हैं जो घरसे निकलकर वन में वर्त्तमान होकर ज्ञान संयुक्त जितेंद्री काल को देखता विचरताहै वह ब्रह्मभाव के जानने को समर्थ होता है जो जीवों से निर्भय है और उससे जीव निर्भयहैं उस देह से निरभिमानी पुरुष को कहीं भय नहीं होता जो कर्म्मों को भोगों के करने से नाश करता है और उनको संचय नहीं करता है वह सब जीवों में समदर्शी होकर जीवों को निर्भय दान करे उसकी मोक्ष ऐसे गुप्तहोती है जिस प्रकार आकाश में पक्षियों की और जल में जलजीवों की गति नहीं मालूम होती है जो पुरुष घरों को त्याग कर मोक्ष को ही सेवन करता है उसके तेजरूप लोक बहुत दिनतक कल्पना किये जाते हैं, सब कर्मों को त्याग बुद्धि के अनुसार तप को विसर्जन कर नानाप्रकार की विद्याओं को त्याग सबको छोड़कर पवित्र इच्छावान् सब लोकों में जाने वाला अर्थात् माया के आवरण से पृथक् शुद्धचित्त आत्मज्ञानी अनिच्छावान् पुरुष इस लोक में सत्कार को पाकर स्वर्ग को प्राप्त करता है और जो ब्रह्माजी का स्थान ब्रह्म समूह से उत्पन्न होनेवाला हृदय कमल में वर्त्तमान है उसको शांतचित्त होकर प्राप्त करताहै उस ब्रह्मज्ञान में वर्त्तमान ज्ञानी सबजीवों के प्यारे पुरुष को संसार के आवागमन का भय नहीं होता है तो परलोक का भयकैसे होगा शांतचित्त होने में एक दोष के सिवाय दूसरा नहीं मालूम होता है वह एक दोष भी बड़े गुणवाला है संतोषी पुरुष को

संतोष के प्रभाव से बड़े बड़े लोक भी सुगम हैं हे युधिष्ठिर जितेंद्री पुरुष को वन से क्या प्रयोजन है उसी प्रकार अजितेंद्री को भी क्या लाभ है जितेंद्री जहां रहै वही वन और आश्रम है वैशम्पायन बोले कि भीष्मजी के इस वचन को सुनकर राजा युधिष्ठिर ऐसे प्रसन्न हुये जैसे कि अमृत से अच्छा तृप्तहुआ मनुष्य आनन्द को पाता है ३० ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्व्वणि आपद्धर्म्मे त्रिंशत्तमोऽध्यायः ३० ॥

इकतीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले इन सब का मूल तप ही है पण्डितलोग ऐसा कहते हैं कि तप न करनेवाला अज्ञानी पुरुष क्रिया के फल को नहीं पाता है ब्रह्मा जी ने इस सब सृष्टि को तप से ही उत्पन्न किया है और ऋषियों ने भी तप ही से वेदों को प्राप्त किया है तप से ही अन्न फल मूल हैं सिद्धलोग तप से ही तीनों लोकों को देखा करतेहैं रोगों की नाशक औषधियां और नाना-प्रकार की क्रिया तप से ही सिद्धहोती हैं जो साधन है उसकाभी मूलकारण तपहै जोकुछ कि कठिनतासे प्राप्त होताहै वह सबभीतपही से होताहै ऋषियों ने भी निस्सन्देह तप ही से ऐश्वर्य को पाया है मद्यपान करनेवाला भ्रूण-हत्या करनेवाला गुरुकी शय्या पर सोनेवाला पुरुष अच्छे प्रकार के तपे हुये तप से पाप से निवृत्त होता है बहुतरूप रखनेवाले तप के द्वारा कर्म्म को करता हुआ निवृत्त मार्गमें वर्त्तमान पुरुष का तप अनशन व्रत से उत्तमनहीं है और अहिंसा, सत्यता, दान, जितेंद्री आदि होकर अनशन करने से अधिक कोई व्रतनहींहै दानसे अधिक कर्मनहीं है दानके समान कोई गति नहींहै तीनोंवेदसे कोई उत्तम नहीं है संन्यास तपोंमें उत्तम तपहै इसलोकमें स्वर्ग और धर्म की रक्षाकेलिये इंद्रियोंकी रक्षाकरते हैं इसकारण अर्थ और धर्ममें अनशनसे उत्तमतपनहींहै ऋषि,पितर,देवता,मनुष्य,पशु,पक्षी और सब स्थावरजंगमजीव वह सबतपकोही उत्तमपद देनेवाला जानते हैं और तप हीसे सिद्धहोतेहैं और देवता लोग भी तपहीसे सबके पूजनीयहुये,यह तपके आठ भाग रखने वाले फलहैं तप और निश्चय से देव भावभी प्राप्तहोना सम्भवहै १३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणि आपद्धर्म्मेएकत्रिंशत्तमोऽध्यायः ३१ ॥

बत्तीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह ब्रह्मऋषि पितृ देवता आदि सब सत्यधर्म की प्रशंसाकरते हैं आप उस सत्यधर्मको कहिये और सत्यका लक्षण और

स्वरूप है और कैसे प्राप्त होता है और सत्यको कैसे करके क्या होजाताहै सोभी कृपाकरके मुझसे कहिये भीष्मजी बोले कि चारों वर्ण के धर्मों का सङ्कर अर्थात् मिलावट प्रशंसा के योग्य नहींहोताहै परन्तु सबवर्णों में सत्यही अपने स्वरूपको कभी नहीं बदलता है सत्पुरुषोंमें भी सत्यही धर्म सनातन गिनाजाताहै इससे सत्यही नमस्कार के योग्य परमगतिरूप है सत्यही धर्म तप योग और सनातनब्रह्महै और सब सत्यही में वर्त्तमान है इससे सत्यही उत्तमयुगहै इसस्थानपर सत्यके ठीक ठीक आचारोंको लक्षण समेत क्रमपूर्वक कहताहूं औरजिसप्रकारसे सत्यकी प्राप्ती होतीहै उसको भी सुनो हे भरतवंशीसबलोकोंमें सत्यतेरहप्रकारकाहै अर्थात्सत्य,समता,दम,अमत्सरता क्षमा,लज्जा,तितिक्षा,अनसूयता,त्याग,ध्यान,श्रेष्ठता,धैर्य्यता,दया,अहिंसा यह तेरह सत्यके स्वरूपहैं और इन सत्य आदि शब्दके अर्थोंको सुनो कि सत्य अविनाशी प्राचीन रूपान्तररहितहै और सबधर्मोंसे अविरुद्धहोकर योग के द्वारा प्राप्तहोता है इसी प्रकार इच्छा द्वेष आदि काम क्रोधको नाशकरके प्रिय अप्रिय शत्रुआदिमें जो समदृष्टी है उसको समताकहतेहैं और सिवा- य आत्माके किसी दूसरेकी इच्छा न करना गंभीरता, धैर्यता अभयता, रोग शमन यह दमकेरूपहैं और ज्ञानसे प्राप्तहोताहै और दानधर्ममें जो शान्त चित्तहै उसको अमत्सरता कहते हैं, वह अमत्सरता सदैव सत्यमें वर्त्तमान होनेसे प्राप्तहोतीहै जो साधू सहने असहने की प्रिय अप्रियताको क्षमाकरता है वह सत्यवक्ता होकर प्रतिष्ठाकोपाताहै जो बुद्धिमान् बड़े कल्याणको करता है और अप्रसन्न कभी नहींहोता सदैव शान्तता से बोलनेवाला और उदारहै उसकोधर्मसे लज्जा प्राप्तहोतीहै जो धर्म अर्थके लिये और लोकसंग्रह के लिये क्षमाकरता है, वह तितिक्षा और क्षान्ती कहीजाती है और धीर्यसे प्राप्तहोती है जो स्नेह और विषयोंका त्यागहै उसीरागद्वेषरहित पुरुषका त्याग कहाताहै जो देहाभिमान और स्नेहसे रहित पुरुष बड़ी युक्तिसे कर्म को करताहै वहीजीवोंकी श्रेष्ठताहै, सुख दुःखमें रूपान्तर को नहींपाना यह धृति कहाती है ऐश्वर्य्यका चाहनेवाला ज्ञानी उसका सदैव सेवनकरे और क्षमावान् सत्यवक्ता पुरुषको तो सदैव प्राप्तकरनी उचित है,रागद्वेष और क्रोध से रहित पंडित धृतिको प्राप्तकरता है मनवाणी कर्मसे किसी जीवपर शत्रुता न करना और दानपूर्वक कृपा करना यह सत्पुरुषोंका सनातन धर्म है, हे राजा यह तेरहस्वरूपवाले पृथक् पृथक् गुण एकसत्यही का लक्षण रखनेवाले हैं वह यहां सत्यही का सेवनकरके वृद्धिको पातेहैं सत्यकाअन्त अकथनीय है इसकारण वेदपाठी ब्राह्मणदेवतापितरोंसमेत सत्यहीकी प्रशंसा करतेहैं सत्यके समान धर्म नहीं और मिथ्या के समान पापनहीं है सत्यधर्मकी श्रुतिहै इ

से सत्यको गुप्त न करे सत्यके दान और दक्षिणा वाले यज्ञोंको और त्रेता अग्निहोत्रवाले वेदोंको और जो अन्य धर्मके निश्चय हैं उनसबको प्राप्त करता है हजार अश्वमेध एकओर और दूसरी ओर एक सत्यको रक्खे तो उन हजार अश्वमेधोंसे सत्यही अधिक होता है २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेद्वात्रिंशोऽध्यायः ३२ ॥

तेंतीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जिसकारण से कि क्रोध, काम, शोक, विधित्सा, परास्तुत्व, लोभ, मत्सरता, ईर्षा, निन्दा, असूया, कृपा, भयइत्यादि उत्पन्नहोते हैं उसको मूलसमेत मुझसे कहिये भीष्मजी बोले हेमहाराज युधिष्ठिर जीवोंके जो महापराक्रमी यह तेरह शत्रु कहेगये वह सब इससंसार में चारोंओरसे मनुष्यों की उपासना करते हैं और असावधान मनुष्योंको पीड़ा देते हैं और मनुष्यों को अचेत देखतेही भेड़ियों के समान बड़े पराक्रमसे मारते हैं तब उनसे दुःख और पाप जारीहोता है इससे हे युधिष्ठिर मनुष्य इनके उदयहोने और स्थिरहोने और नाशहोने को अच्छेप्रकार से जाने हे राजा इच्छा में जो क्रोधकी उत्पत्ति है उसको मैं मूलसमेत प्रारम्भसे कहता हूं तुमचित्त लगाकर सुनो कि जबलोभसे क्रोधउत्पन्न होकरदूसरों के दोषोंसे महातीव्रहोता है तब क्षमाकेकारण ठहरा रहता है अर्थात् रुकारहता है उसीसे दूरभी होजाता है—संकल्पसे काम पैदा होता है और सेवन किये जानेसे बड़ीवृद्धि को पाता है जबज्ञानी संकल्पको त्यागता है तब उसका काम नाशहोता है असूया क्रोध लोभ आदि यह सबमध्यवर्त्ती स्वरूप कहे जाते हैं वह सबजीवों पर दयाकरने और शास्त्रकी आज्ञा से निवृत्तहोते हैं यह असूया दूसरे में दोष लगाने से उत्पन्न होती है और बुद्धिमानोंके तत्त्वज्ञानसे दूरहोती है और अज्ञान से उत्पन्न होनेवाला मोह पाप के प्रतिदिन करने से जारी होता है और ज्ञानियों में रहकर शीघ्र नाशहोजाता है और भिन्न २ शास्त्रों के देखने से विधित्सा अर्थात् कर्मके प्रारंभकी इच्छा उत्पन्न होती है उसका नाश तत्त्वज्ञान से होता है और प्रीति से शोक उत्पन्न होताहै और उसदेहधारी के वियोग से जब उसको निरर्थक देखता है तब उसका शीघ्रही नाशहोता है और परासुता अर्थात् दुष्ट कर्म के आधीन होना क्रोध लोभ और अभ्याससे वर्त्तमान होती है वह सब जीवोंपर दया और वैराग्य से निवृत्त होती है और सत्यताके त्यागने और शत्रुओंके सेवन से ईर्षा उत्पन्न होती है यह ईर्षा साधुओंकी सेवासे नष्टहोती है और कुलज्ञान और ऐश्वर्य्य से मद उत्पन्नहोता है वह इनकुल आदि के अच्छेप्रकार जानने

से शीघ्र दूरहोजाता है—इच्छा प्रसन्नता आदिसे ईर्षा उत्पन्न होतीहै वहदूसरे जीवधारियों की बुद्धीसे निवृत्तहोती है और भ्रांतीके कारण धर्मरहित पुरुषों के जो अस्वीकृत और शत्रुतासंबंधी वचन हैं उनसे निन्दाउत्पन्नहोती है वह संसारको देखकर अर्थात् जीवमात्र की मुख्यताको जानकर शान्त होजाती है जोपुरुष अपने विरोध करनेवाले प्रबल शत्रुको बदला देने में समर्थ नहीं होता उसकी अत्यंत निन्दा होती है, वह दयासे निवृत्तहोती है और सदैव दुःखोंको देखकर कृपा उत्पन्नहोती है वह धर्म की निष्ठाके जानने से शांत होजाती है और सदैव जीवोंके अज्ञान से लोभदृष्ट आता है वहलोभ भोगों की अनियतताको देखने और जाननेसे दूरहोता है इनतेरहदोषोंको अन्तः-करणकी शांततासे विजयकरना कहा है यहतेरह धृतराष्ट्र के पुत्रों में थे सो तुम सत्यताके चाहनेवालेने वृद्धोंकी सेवा से उनको विजयकिया २२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिआपद्धर्मेत्रयस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ३३ ॥

चौंतीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे भरतवंशी पितामह मैं सदैव सत्पुरुषों के दर्शनों से दया को अच्छे प्रकार से जानता हूं परंतु निर्दय लोगों को और उनके कर्म्मोंको नहीं जानताहूं जैसे कांटे, कुए अग्नि को पुरुषत्यागकरतेहैं उसीप्रकारनिर्दय कर्मी मनुष्यों को लोगत्याग करते हैं इससे निर्दय मनुष्य इसलोक और पर लोक दोनों का नाशकर्त्ता है इसकारण हे पितामह आप उसकेधर्म निश्चय को कहिये, भीष्मजी बोले कि जिसके कर्मकीप्रीति और करनेकी इच्छा नि-न्दितहोती है वह ईश्वरका ठगाहुआ अपने को पुकारता है जो ऐसा कर्म करता है वही यह जानता है, दानदेकर अपनीश्लाघा करनेवाला, समता रहित नीचकर्मी स्नेह दिखाकर छलनेवाला और भागों का बिभाग अच्छे प्रकार से न करनेवाला अहंकारी कर्मफल चाहनेवाला काक के समान छलदृष्टि रखनेवाला सबपर संदेहयुक्त कृपण अपनी जातिवालों की प्रशंसा करनेवाला आश्रमोंका सदैव शत्रु और वर्णसंकर करनेवाला हिंसायुक्त गुण अवगुण में विवेक न रखनेवाला बहुत अस्तव्यस्त वचनबोलनेवाला असाहसी, महालोभी, निर्दयी मनुष्य धर्म के अभ्यासी गुणवानों को पापी जानता है और अपनी दुश्शीलता से किसीपर विश्वास नहीं करके गुप्त दोषवालेका दोष प्रकट करनेवाला दोषोंके समानहोनेपरभी अपनी आजी-विका के निमित्त नष्टकरके उपकार करनेवालेको ठगाहुआ शत्रुमानता है और समयपर उपकार करनेवालेकेलिये धनदेकर दुखीहोताहै, भक्ष्यपेय आदि जो अच्छेभोजन हैं उनको जो पुरुष सबके देखतेहुये भोजन करता है वह

निर्दयी कहाजाता है, जो पुरुष प्रथम ब्राह्मणों को देकर अपने मित्रों समेत भोजन करता है वह मरकर स्वर्गको पाताहै और इसलोक में भी बड़ेसुखको भोगता है हे राजा यह निर्दयी मनुष्यों का वर्णन तुझ से कहा यह ज्ञानी पुरुषोंको सदैव त्यागनेके योग्य हैं १३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिआपद्धर्म्मेचतुस्त्रिंशतमोऽध्यायः ३४ ॥

पैंतीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि जो पुरुष चोरोंके धनसे रहित यज्ञकरनेवाला सब वेदान्तका ज्ञाता आचार्य्य और पितरों के कार्यके निमित्त वेदपाठकेलिये भी उद्योग करनेवाला है वह धर्म्मभिक्षुक ब्राह्मण साधुकहाता है इन निर्धनोंको धनदान और विद्यादानदेना योग्य है और अन्य ब्राह्मणों में भी दक्षिणा दानदेना योग्य है वेदीसे बाहर कच्चा अन्न भिन्न ब्राह्मणोंको भी देना योग्य है, राजा सबरत्नोंको जैसा उचित है वैसेही दानकरे, ब्राह्मण वेद, बहुत दक्षिणावाले यज्ञ यहसब सदैव परस्पर ऐश्वर्य्य और आचारवाले अपने गुण से बिजय करते हैं, जिसकेपास बालबच्चों के पोषणके निमित्त तीनवर्षतक के लिये अन्न वर्त्तमान है चाहै इससे अधिकभीहो वह यज्ञ में अमृतपान करने के योग्य है, जो यज्ञकरनेवालेको यज्ञका एकभाग स्त्रीआदि के कारण रुकजाय तब धर्मिष्ठराजा उसब्राह्मण के धनको यज्ञके निमित्तलेले जो वैश्य यज्ञसेरहित अमृतका भोजनकरनेवाला नहीं है और बहुत से पशुओं को रखता है उसके कुटुम्बसे यज्ञकेलिये उसके धनकोलेले परन्तु शूद्रके घरसे इच्छापूर्वक कभी कुछ न ले क्योंकि यज्ञोंमें शूद्रकाधन नहीं ग्रहण कियागया है, जो अग्निहोत्रका न करनेवाला सौगौओंका रखनेवाला है अथवा यज्ञों का न करनेवाला हजार गौओंका रखनेवाला है राजा उनदोनों के भी कुटुम्बसे बिना बिचारे धनलेसक्ता हैराजा सदैव दान न करनेवालों से प्रसिद्ध करके धनकोले ऐसेकर्म करनेवाले राजा के धर्म में न्यूनता नहीं होती है इसीप्रकार यहभीजानो कि तीनदिन व्रतकरने वालेको नीचकर्मी पुरुषके घर से भी एक दिनका भोजन हरना चाहिये जिसका कि शेष दूसरे दिनको न बचे, पूछनेवाले या न पूछनेवाले ब्राह्मण से राजाको यहबात कहना योग्य है कि हे ब्राह्मण तू खेतबाग खिरियान या जहां से मिले वहांसे लेले, धर्म्मज्ञराजा धर्मके द्वारा उसको दण्ड न दे राजाकी अज्ञानतासे ब्राह्मण भूखा प्यासा कष्टसहताहै अर्थात् ब्राह्मण के निराहार रहने में राजाही को दोष है शास्त्र और स्वभाव को अच्छे प्रकार से जानकर इसकी जीविकाके हेतुको विचार करे और उसकी चारों ओर से ऐसी रक्षाकरे जैसे पितापुत्र की रक्षा

करताहै, जो वनपशु आदियज्ञको न करे तो प्रति वर्ष नियम से वैश्वानरीय यज्ञको करे क्योंकि अनुकल्प नामधर्म उत्तम होताहै, फिरकेवल धर्मवादीआपत्तियों में मरण से भयभीत होकर बिश्वेदेवा साध्यगण ब्राह्मण और महर्षि लोगोंकरके गौणधर्म्म कियाजाता है परंतु प्रथम कल्प के करने को समर्थ जो पुरुष अनुकल्प धर्म से कर्मकरता है उसनिर्बुद्धी को परलोक का कोईफल प्राप्त नहींहोता, वेद का ज्ञाता ब्राह्मण राजा से यहबातन कहै कि मैं ब्राह्मणहूं क्योंकि धन और राजबल से ब्राह्मणका निजपराक्रमबहुतबड़ा है, इसीकारण से ब्रह्मवादी ब्राह्मणोंका तेज राजा को सदैव बड़ी कठिनतासे सहने के योग्य है इसहेतु से कि ब्राह्मणको कर्त्ता शास्ता बिधाता देवतालोग कहते हैं जो ब्राह्मण के सन्मुख अकल्याणकारी बचनकभी न कहे और रूखे बचनों को जिह्वा से भी नहीं उच्चारण करे वह क्षत्री अपने भुजबल से आपत्ति से तरताहै, वैश्य शूद्रधनके द्वारा और ब्राह्मण हवन मन्त्रादि के पराक्रम से आपत्तिको तरता है, कन्या, तरुणस्त्री, मन्त्रका न जानने वाला, मूर्ख, असंस्कृत अग्नि में आहुतिका डालनेवाला, यह सबहोम करनेवाले यजमान समेत नरकगामी होते हैं इस कारण वेदोक्त बुद्धीसे अग्नि स्थापन में कुशल वेद में पूर्ण ब्राह्मणों के द्वारा यज्ञ कराना योग्य है, श्रद्धावान् जितेन्द्री पुरुष जिन पवित्र कर्मोंको करे उनमें बिना दक्षिणा वाले यज्ञोंसे पूजन नहीं करे, बिना दक्षिणा वालायज्ञ सन्तान पशु और स्वर्गका नाश करता है और इन्द्रियों समेत यशकीर्त्ति आयुका भी नाशकरने वाला है, जो कोईबिना अग्निहोत्री ब्राह्मण रजस्वलास्त्री से संभोग करताहै अथवा जिनका हवन वेदपाठी ब्राह्मण से रहित है वह सब पापकर्मी गिने जाते हैं, जिसग्राममें एक ही कूप है उसमें वृषलीपति ब्राह्मण बारह वर्ष रहकर शूद्रकर्मी होजाता है और जो अविवाहिता स्त्री को अपनी शय्यापर बैठाता है यह सब वृद्धक्षत्री वैश्य शूद्रको अपने से बड़ा मानकर तृणोंपर शयन करने से जैसे पवित्र होते हैं उसी प्रकार यहांमेरे वचनों को सुनो कि जो ब्राह्मण नीच वर्ण के साथ मकान आसन आदि में बिहार करनेवाला एक रात्रिमें जितना पाप करता है उतने पापको तीनवर्ष व्रतकरने से वह धोता है, हे राजा स्त्रियों में बिवाह के समय गुरूके और अपने जीवनके लिये निन्दा युक्त वचन नहीं मारता है, श्रद्धावान् पुरुष को शुभ विद्या नीचसे भी प्राप्त करनी योग्य है और सुवर्ण को अशुद्ध मनुष्य से भी बिना बिचारेलेले, और स्त्रीरत्न को दोषी कुलसे भी लेलेना उचित है और विषके द्वाराभी अमृत को पिये स्त्रीरत्न धर्म्म से ऐसे निर्दोष है जैसे जल, वर्णों के संकर होनेपर वैश्यभी गौ ब्राह्मणके मनोरथोंकी सिद्धी और अपनी रक्षा के निमित्त शस्त्रों को हाथ में ले

मद्यपान ब्रह्महत्या गुरुशय्यापर सोना यहतीनों जब कि जानकर किये होयँतो इनकी शुद्धी किसी प्रायश्चित्त से नहीं होसक्ती, सुवर्ण चुराना वा ब्राह्मणका धन चुराना यह पातक हैं, मद्यपीना और अगम्यास्त्री में भोग करना, पतितों से स्नेह करना, ब्राह्मणी से भोगकरना यह सब पापशीघ्रही पतित करते हैं, पतित के साथ एकबर्ष बिचरने से पतित होताहै परन्तु पतितको यज्ञ कराने पढ़ाने और बिवाहादि संबंध करने से शीघ्रही पतित होता है साथ सवारी आसन भोजन आदि के कारण शीघ्र पतित नहीं होता अर्थात् पतित के साथ एकबर्ष तक भोजनआदि करनेसे पतित होताहै इनके सिवाय जो पाप हैं उनका प्रायश्चित्त होसक्ता है जब कि रीति के अनुसार प्रायश्चित्त करके फिर किसीकाल में पापको न करे उन पतितोंके मरने और दाहादि क्रिया न होनेपर भी उनका अन्न सुवर्णादि बिना बिचार केभी हरलेना योग्य है धार्मिक राजा धर्म्म से ऐसे मन्त्री और गुरुओंकोभी त्याग करे, जो कि पतित होने से प्रायश्चित्तादि कर्म्मों के योग्य नहीं हैं उनके साथ बैठना न करे, अधर्म करने वाला धर्म और तपसे पापोंको दूर करता है चोरकोचोर कहने से उतनाही पाप होताहै और जो चोर नहीं है उसको चोर कहने से दूनापापका भागी होता है पतिके सिवाय अन्य से संभोग चाहने वाली कन्या ब्रह्महत्या के तीसरे भागको पाती है, इसलोक में जो पुरुष ब्राह्मणों की निन्दा करके बाण आदि से घायलकरे वह उस दुष्टाकन्याके शेष पापको पाताहै क्योंकि ऐसा कर्म करनेसे वह पाप बहुत वृद्धिपाताहै सैकड़ों वर्षतक प्रतिष्ठाको नहींपाताहै अर्थात् प्रेतयोनिसे नहींछूटता है और हजार वर्षपर्य्यन्त नरकभोग करताहै इसकारण ब्राह्मणकी निन्दानहीं करनी योग्यहै और कभी उसकोघायल न करना चाहिये ब्राह्मणके घायलहोने से जितनी धूल उसके रुधिरसे भीजे उतनेही वर्षतक वहनरकको भोगताहै भ्रूणहत्याका करनेवाला युद्धभूमिमें शस्त्रोंसे पवित्र होताहै अथवा देदीप्यअग्निमें अपनी देहके होमनेसे पवित्र होताहै मद्यपीनेवाला मनुष्य उष्णमद्य को पीकर पाप से छूटता है अथवा उस उष्णमद्य पानसे मृत्युपाकर पवित्रहोता है और वेदपाठियोंके लोकोंकोपाताहै, दुष्टात्मा और पापात्मापुरुष गुरुशय्यापर वर्त्तमानहोकर लोहेकी स्त्रीको बगल में देकर सोने से मृत्युपाकर पवित्र होता है अथवा अपनी शिश्नेन्द्रीको वृषणों समेत अपने हाथमें लेकर उत्तर दिशाकी ओर चलाजाय अथवा ब्राह्मणके निमित्त प्राणोंको त्याग करनेसे भी पवित्र होताहै अथवा अश्वमेध, गोमेध और अग्निष्टोम यज्ञोंके द्वारा अच्छेप्रकार अमृतको पीकर इसलोक परलोक दोनों में पूजित होताहै इसीप्रकार ब्रह्महत्या करनेवाला मनुष्य सदैव अपने को प्रसिद्ध करताहुआ बारहवर्ष तक

कपाली ब्रह्मचारी मुनि होकर फिरे अथवा इसीप्रकार से तपकरे तो ब्रह्महत्या के दोप से निवृत्त होताहै इसीप्रकार गर्भवती स्त्रीको गिरावे तो उसके मारने से ब्रह्महत्या से दूनापाप होताहै, मद्यपीने वाला ब्राह्मण ब्रह्मचारीके समान भोजन शयन करता तीनवर्षसे अधिक तक अग्निष्टोम यज्ञसे ईश्वर का पूजन करे अथवा एक बैल और हजार गोदान करके पवित्रताको प्राप्तकरे, वैश्यको मारकर दो वर्षतक एक बैल और सौ गोदान करनेसे पवित्र होताहै और शूद्रको मारकर एक वर्षतक एक बैल और सौ गोदान करनेसे पाप से छूटता है कुत्ते शूकर गधे को मारकर उक्तशूद्र व्रतको करे, और बिल्ली, चाख मेंढक, काक, सर्प, चूहेको मारकर भी शूद्रव्रतसे निवृत्त होताहै अब मैं दूसरे प्रायश्चित्तों को क्रमपूर्वक कहताहूं कि अज्ञानतासे कीट आदि जीवोंके मारनेसे जो छोटे २ पाप होतेहैं वह सब पश्चात्तापहीके करनेसे निवृत्त होते हैं गोहत्याके सिवाय प्रत्येक हत्याके पापका प्रायश्चित्त एकवर्ष तक करे, वेदपाठीकी स्त्रीसे भोग करने में तीनवर्ष और दूसरे अन्यकी किसी स्त्रीमें कुकर्म करनेसे दोवर्ष का प्रायश्चित्त है अथवा चौथेकालमें भोजन करने वाला व्रतपूर्वक ब्रह्मचारीहो तीनदिन केवल जलपान करके स्थान और आसनसे पृथक् होकर विहारकरे तो पापसे निवृत्त होताहै इसीप्रकार किसी का अपमान करनेवाला अथवा अग्नियोंका दूषित करनेवाला वा विना कारण माता पिता गुरूको त्याग करता है वह धर्मके निश्चयके अनुसार पतित होताहै, स्त्री को कुचालिनी होने से अधिकतर प्रबन्धमें रखकर केवल वस्त्र और भोजन देना योग्यहै और दूसरेकी स्त्रीसे संभोग करने में जो पुरुष का व्रतहै वही इस स्त्रीसेभी करावे, जोस्त्री अपने ब्राह्मण पतिको त्यागकरके दूसरे नीच पुरुषको प्राप्त करलेती है उसको राजा बड़े मैदानी मकानमें कुत्तों से पीड़ित करवावे और उसके जारज पतिकोभी लोहेकी गरम शय्यापर सुलवावे और काठ लगावे जिससे कि वह कुकर्मी जलजाय यह पति त्याग-नेवाली स्त्रियोंकादण्ड कहाहै वह दोषी कदाचित् एकवर्षतक इस प्रायश्चित्त को न करे तो उसका दोप दूनाहोताहै उसके साथ मिलनेवाली स्त्री नौ वर्ष तक व्रतको करे और उसका पति मुनियोंका व्रत धारण करके पृथ्वीपर घूम-ताहुआ पांचवर्ष तक भिक्षाको मांगे, बड़े भाईसे पहिले अपना विवाह करनेवाला छोटा भाई और जो स्त्री कि छोटे भाईको विवाहीजाय और जिनका कि अधर्मसे विवाहहो वह सब पतित कहेजाते हैं यह सब उस व्रत को करें जिसको कि वीरका मारनेवाला करताहै और पाप दूरकरनेके लिये एक मासतक चांद्रायण वा कृच्छ्र व्रतको करे बड़े भाईसे पहले विवाह करने वाला छोटा भाई उस अपनी स्त्री और पुत्रवधूको संभोगसे पहलेही उस बड़े

भाईके सुपुर्दकरे जिसका कि विवाह नहीं हुआहै फिर बड़े भाईसे आज्ञालेकर बिना विचारे उनको लेले इसप्रकारसे वह दोनों भाई और स्त्री पापसे निवृत्त होतेहैं, गौके सिवाय दूसरे पशुओंकी हिंसामें दोष नहीं होताहै क्योंकि पुरुष को पशुओंका स्वामी और पोषण करनेवाला कहतेहैं गोवध करनेवाला चर्म समेत गौकी पूंछको धारण करके मृत्तिकाका पात्र हाथमें लिये सबलोगोंसे अपने पापको कहताहुआ प्रतिदिन सात घरोंसे भिक्षा मांगकर भोजन करे तो बारह दिनमें पवित्र होताहै और पाप दूरहोनेके लिये एक वर्षतक इसी व्रतको करे इसप्रकारसे प्रायश्चित्त करे अथवा धनवान् होकर दानकरे, जो नास्तिकता रहितहैं उनको एक गोदानकेभी देनेसे पापसे निवृत्ती होती है, कुत्ता, शूकर, मनुष्य, मुर्गा, गधा, यह सब मांस और मूत्र विष्ठाके खानेसे भी संसारके योग्य गिनेजाते हैं, यज्ञमें अमृत का भोजन करनेवाला ब्राह्मण कदाचित् मद्य पीनेवालेकी गंधिको सूंघले तो तीनदिन उष्ण जल और तीनदिन उष्ण दूध और तीनदिन वायु भक्षण करके शुद्ध होताहै यह सब सनातन प्रायश्चित्त कहे गयेहैं परंतु प्रायश्चित्त अज्ञानता सेही करने का होताहै ७९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेपंचत्रिंशत्तमोऽध्यायः ३५ ॥

छत्तीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि खड्ग युद्धमें प्रवीण नकुलने कथा समाप्त होनेपर शरशय्या पर वर्त्तमान अपने पितामह से यह कहा कि हे पितामह इस लोकमें धनुष नाम शस्त्र उत्तमहै और मेरा खड्ग अत्यन्त तीव्र धार है तो धनुषके टूटजाने और घोड़ों के नष्ट होनेपर युद्धमें साधू लोगोंकी चारों ओर से रक्षा करना खड्ग से सम्भव नहीं है तब अकेला खड्गधारी वीर उनध-नुष गदा शक्तिधारियों के पीड़ा करने को क्या समर्थ है यह मेरा सन्देहबड़ा चमत्कारी है कि सब युद्धों में कौनसा युद्ध उत्तम है और खड्ग कैसे किसने किस प्रयोजन के लिये उत्पन्न किया खड्गके प्रथम आचार्य्य को कहिये यह बुद्धिमान् द्रोणाचार्य्य के शिष्य नकुल के प्रश्नको सुनकर भीष्मजी ने उसकी बड़ी प्रशंसा करके उत्तर दिया कि हे माद्रीनन्दन तुम अपने प्रश्नका उत्तर सुनो कि प्राचीन समय में यह सब संसार दिव्य जलरूप स्थिरता स-मेत आकाश से रहित नाम चिह्न के बिना धरातलपै वर्त्तमान अन्धकार युक्त शब्दस्पर्श रहित अत्यन्त गम्भीररूप अपरम्पारथा तब ब्रह्माजीने पैदा

होकर वायु अग्नि सूर्य्य आकाश स्वर्ग पाताल और पृथ्वीको और चन्द्रमा नक्षत्र ग्रह वर्ष ऋतु मास पक्ष तिथि लवक्षण काल इत्यादिको उत्पन्न किया तदनन्तर भगवान् ब्रह्माजी ने लोकमें वर्त्तमान देहको धारण करके उत्तम २ पुत्रोंको उत्पन्न किया मरीचि, अत्रि, पुलस्ति, पुलह, क्रतु, वशिष्ठ, अंगिरा इन सप्तऋषियों को और समर्थ ईश्वर शिवजी को प्रकट किया और इसी प्रकार प्राचेतस गोत्री दक्षने भी साठ कन्याओंको उत्पन्न किया उन सब ऋषियों ने संतान के निमित्त ग्रहण किया उनसे सब संसारीजीव, देवता पितृगण, गंधर्व, अप्सरा और अनेक प्रकार के राक्षस,पशु, पक्षी, मछली बंदर, रीछआदि महासर्प और जल थलके पक्षियोंका समूह और अंडज,स्वेदज, जरायुज, उद्भिज आदि चारों प्रकार की सृष्टि स्थावर जंगम संसार उत्पन्नहुआ सबके उत्पन्न करनेके पीछे ब्रह्माजीने सनातन वेदोक्तधर्मको जारी किया उसधर्ममें देवता, आचार्य्य,पुरोहित,द्वादश सूर्य्य,अष्टवसु,एकादशरुद्र, साध्यगण, मरुद्गण, अश्विनीकुमार, भृगु,अत्रि,अंगिरा,सिद्ध, काश्यपगोत्री, तपोधन, वशिष्ठ, गौतम, अगस्ति,नारद,पर्वतऋषि, बालखिल्यऋषि,प्रभास, सिकित नामऋषि,घृतिपा, सोमपा, वायव्य, वैश्वानर,मरीचिपऋषि, अकृष्ट हंस, अग्नि से उत्पन्न होनेवाले वानप्रस्थ, प्रश्नीनाम ऋषि यह सब ब्रह्माजी के उपदेश में वर्त्तमानहुये फिर क्रोध लोभसे संयुक्त दानवेन्द्रों ने ब्रह्माजी की उस आज्ञा को उल्लंघन करके धर्म का त्याग और नानाहानि कीं हिरण्य कशिपु, हिरण्याक्ष, विरोचन, शंवर, विप्रचिति, प्रह्लाद, नमुचि, बलि यह सब और अन्य दैत्य दानवों के गण धर्म मर्य्यादाको त्याग करके क्रीड़ाकरने वालेहुये और जो अधर्मका निश्चय करने वाले थे वह सब एकही जाति में थे जैसे कि देवता और हम सब लोग इसप्रकार के धर्म में नियत होकर देवता और ऋषियों से ईर्षाकरने लगे और जीवोंपरदया और प्रियबातों को नहीं किया तीनों युक्तियों को बड़ी बुद्धिमानी के साथ जारी करके दण्ड से ही प्रजाओंको आधीन किया तब असुरोंके मुख्य लोगों की उनसे एकता नहींहुई तदनन्तर ब्रह्मऋषियों के सम्मुख वर्त्तमान ब्रह्माजी हिमालयके उस शिखरमें जहां कमलों के समान नक्षत्र चमकते थे और सौ योजनके विस्तार में मणिरत्नों के समूहोंसे अलंकृतथा उसपर संसारके प्रयोजनकी सिद्धि के लिये वर्त्तमानहुये वहां हजार वर्षके पीछे कल्पमें कही हुई यथार्थ विधिके अनुसार अच्छे प्रकारसे ठीक २ करीहुई यज्ञकी उसरचना को ब्रह्माजीने किया जो विधिके अनुसार यज्ञकरनेवाले यज्ञमेंप्रवीण ऋत्विज और देदीप्य अग्नियों से संयुक्त प्रभायुक्त सुवर्ण के यज्ञपात्रों से शोभित अच्छे २ देवगणों से व्याप्त यज्ञमंडल वाला और ब्रह्मऋषि सदस्यों से शोभायमान होती है

वहां मैंने ऋषियों के मुखसे बड़े भयकारी वृत्तान्त को सुना कि चन्द्रमा और नक्षत्रोंके उदयसे आकाश के समान निर्मल अग्नि के सदृश फैलाहुआ नील कमल के समान रूप तीक्ष्ण दाढ़ सूक्ष्म उदर उंचाईमें कठिनतासे प्राप्त योग्य महापराक्रमी जिसके प्रकटहोतेही सब पर्वतों समेत पृथ्वी प्रबल तरंग वाले समुद्र संयुक्त कंपायमान हुई और महा उल्कापातसे वृक्षोंकी शाखा टूट २ गिरनेलगीं और चारोंदिशाओंसे अशुभ वायु चलनेलगी और सबजीव भयके मारे पीड़ामान हुये तब इस महाउत्पातको देखकर ब्रह्माजीने महर्षि देवता गंधर्व आदि से कहा कि यह महातेज मेरेही ध्यान करने से उत्पन्न हुआ है तदनन्तर वह तेज लोककीरक्षा और असुरों के मारनेको अपनेतेज रूपको त्यागकर खड्गरूप होगया जिसकी निर्मल तीव्रधार थी और काल मृत्यु के समान ऊंचा था तब ब्रह्माजी ने उस अधर्म के हटानेवाले तेजरूप खड्गको वृषध्वज नीलकण्ठजीको दिया और रुद्रजीने उसखड्गको पाकर अपना ऐसा दूसरारूप धारण किया जो चार भुजायुक्त पृथ्वीपर बैठेहुये भी मस्तक से सूर्य्य को स्पर्श करने वाला बड़ीदृष्टि महालिंग मुख से अग्नि को निकालते अनेक रक्तनील पाण्डुवर्णोंको बदलते स्वर्णमय उत्तमचमक-दार कृष्ण मृग चर्म धारणकिये सूर्य्य के समान एकनेत्रको ललाटमें धारण करके अत्यन्त पिंगल वर्णदो नेत्रोंसे शोभायमानथा तदनन्तर महापराक्रमी त्रिशूलहाथमें लिये भगदेवताके नेत्रफोड़ने वाले देवदेव महादेवजी काला-ग्निरूप खड्गको लिये देदीप्य ढालको उठाकर नाना प्रकारके मार्गोंमें घूमे और युद्धकी इच्छासे खड्ग को आकाश में घुमाते महाशब्द से अट्टहास करतेहुये महाभयकारी रुद्ररूपहुये तब उस रुद्ररूप शिवजीको देखकर सब दैत्य दानव युद्धके लिये उनके सन्मुख गये और उनपर पाषाण और उ-ल्कापात किये और महातीव्र शस्त्रोंकी बर्षाकी तदनन्तर इन महाउग्र तेजस्वी रुद्रके स्वरूपको देखकर वह दैत्यों की सेना कंपायमानहोकर अचेत हुई और सबोंने अकेले रुद्रजीको हजारोंकी समान समझा क्योंकि उन महाशत्रुओं में छेदते भेदन करते पीड़ित करते काटते फाड़ते अकेले खड्गलिये ऐसेघूमे जैसे कि सूखे बनमें दावानल अग्नि सबको भस्म करती घूमतीहै उनकेतीव्र खड्गसे दैत्यों के अंगकट २ करगिरे और दानव महापीड़ित होकर पराजय हुये और परस्पर में पुकारते हुये इधर उधरको चलेगये कुछतो पृथ्वी में कुछ पहाड़ोंमें कुछ आकाश और जलमें प्रवेश करगये और पृथ्वीपर उनकेमांस रुधिरकी कीच होगई और पृथ्वी उनके बोझसे हलकी होगई इनदैत्य दान-वोंको मार रुद्रजीने अपने इस उग्ररूपको त्याग फिर कल्याण रूपको धारण किया तदनन्तर सबमहर्षि और देवगणोंने विजयी शब्दोंसे शिवजीकी स्तु-

ति करी फिर प्रसन्नहोकर शिवजीने सबकी रक्षाके निमित्त बिष्णुजीको दिया विष्णुने मरीचिको और मरीचिने महर्षियोंको, महर्षियोंने इंद्रको और इन्द्रने लोकपालोंको,लोकपालोंने सूर्य्यके पुत्र मनुजीको देकर कहाकि तुम मनुष्यों के ईश्वर हो इससे खड्गकी जन्मभूमि संसारकी रक्षाकरो जोकि देह और चित्तके कारण धर्मरूप मर्य्यादाको उल्लंघन करनेवाले दण्डको विभाग करके धर्मसे रक्षा के योग्यहैं स्वतन्त्रता से कठोर बचन सुनाना और जुर्मानालेना देह को अंगभंग करना वा मारना यहछोटे कारणोंसे नहीं होताहै इससे यह कठोर वचन आदिकाकहना खड्गकेही समान है यह उपदेशकरो—खड्गके ऐसेप्रमाणवाले रूपोंको बे मर्य्यादापनेसे रक्षाकरो तदनन्तर मनुजीने अपने पुत्रक्षुपको उत्पन्न करके प्रजाओं की रक्षाके निमित्त वह खड्गदिया क्षुपने इक्ष्वाकुको दिया इक्ष्वाकुने पुरूरवाको, पुरूरवाने आयु को, आयुसे नहुषने पाया,नहुषने ययातिको,ययातिने पुरुको,पुरुसे अमूर्त्तरयसनेपाया, उससेराजा भूमिशयको, उससे भरतने, उससे ऐलबिलको, ऐलसे धुन्धमारने,धुन्धमारसे काम्बोजने, उससे मुचुकुन्दने, मुचुकुन्दसे मरुतने, मरुतसे रैवतनेरैवतसे युव नाश्वने, युवनाश्वसे रघुने,उससे इक्ष्वाकुवंशी हरिनाश्वने, हरिनाश्वसे शौनकने,शौनकसे औशीनरने,उससे यादव भोजने,यदुवंशियोंसेशिविने,शिवि से प्रतर्द्दनने, प्रतर्द्दनसे अष्टकने,अष्टकसे पृषदश्वने,पृषदश्वसे भारद्वाजऋषि ने,उनसे द्रोणाचार्य्यने, उनसे कृपाचार्य्यने,कृपाचार्य्य से भाइयों समेत तुमने पाया उसखड्गका नक्षत्र कृत्तिका है और देवता अग्नि है रोहिणीगोत्र युक्त रुद्रजी उसके वड़े गुरू हैं अब खड्ग के आठ गुप्तनामों को मुझसेसु नो उननामों के उच्चारण करने से सदैव विजय को पाता है (श्लोक) असिर्विशसनःखड्गस्तीक्ष्ण धारोदुरासदः। श्रीगर्भोविजयश्चैवधर्मपालस्तथैव च॥ हेमाद्रीनन्दनयहखड्ग सबशस्त्रोंमें उत्तमहै यह महेश्वरजीने जारीकिया इसके निश्चय को पुराण कहते हैं तदनन्तर शत्रुहन्ता राजा पृथुने अवलीन धनुप को धारण किया उसीने पृथ्वी को दोहकर बहुत प्रकारकी बनस्पति और खेती उत्पन्नकरी उसवेन पुत्र पृथु ने धर्म से पूर्वके समान चारों ओर से इसपृथ्वी की रक्षाकी यह वह आर्षकथाहै कि जो युद्धविद्या में पंडित हैं वह सदैव इसका पूजनकरते हैं और सबको करना योग्य है हे नकुल यह खड्ग की उत्पत्ति और उसकी प्राप्ति प्रथम कल्प है इसको मैंने ब्यौरे समेत ठीक२तुझसे कहा इसखड्गके साधन के सुननेसे पुरुषकीर्तिको पाताहै और अन्तमें स्वर्ग के अनन्त सुखोंको भोगता है ८९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिआपद्धर्मेषट्त्रिंशोऽध्यायः ३६ ॥

सैंतीसवां अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि भीष्मजी के इस प्रकार कहने से मौन युधिष्ठिर ने घरमें जाकर विदुरजी समेत अपने भाइयों से यह पूछा कि धर्मअर्थ काममें लोभवृत्ती वर्त्तमान है उनतीनों में उत्तम मध्यम निकृष्ट कौन २ हैं त्रिवर्ग अर्थात् काम क्रोध लोभ तीनों की विजय के निमित्त किस में आत्माको लगाना चाहिये आप यथार्थता से कहने के योग्यहो तब धर्मशास्त्रके ज्ञाता विदुरजीने प्रथम यह वचन कहा कि शास्त्रका बहुत पढ़ना,तप,दान,श्रद्धा, यज्ञ,क्रिया, क्षमा,निष्कपटता,दया, सत्य, इन्द्रियोंका निग्रह यहदश आत्मा की सम्पत्ति हैं तू इनकोही प्राप्तकर कभी दिलको चलायमान मतकरो धर्म अर्थ का भी यहीमूल है और मेरा भी यहीआश्रय है ऋषिलोग धर्मसे पार होते हैं सब लोक भी धर्म में ही नियत हैं देवतालोग भी धर्म से बढ़े और अर्थभी धर्म में ही नियत है इससे हेराजा ज्ञानीलोग कहते हैं कि धर्मउत्तम गुण और अर्थ मध्यम और काम निकृष्टगुण कहाजाताहै इसकारण सावधान आत्मा औरधर्मप्रधान पुरुष ऐश्वर्यमान होनाचाहिये और जैसे कि अपनी आत्मामें ब्यवहार करे उसी प्रकार सबजीवोंमेंभी बर्त्तावकरना चाहिये वैश- म्पायन बोले कि बिदुरजी के पीछे अर्थशास्त्र के ज्ञाता अर्जुनबोले कि हे राजा यह कर्मभूमि है यहां उनवार्त्ताओंकीही प्रशंसाकीजाती है यथाखेती ब्यापार गोकी रक्षा नानाप्रकारकी शिल्पबिद्या इत्यादि सबकर्मों की मर्य्यादा अर्थ है यह वेदकीभी श्रुतिहै कि बिना अर्थ के धर्म और काम नहींवर्त्तमान होते हैं अर्थवान् पुरुष विषयों के द्वारा उत्तम धर्म के आराधन करने और कामके भोगने को समर्थ होताहै यह अशुद्ध अन्तःकरणवाले पुरुषोंको अ- गम है यहभी श्रुति है कि धर्म और काम यह दोनों अर्थके अंग हैं यहदोनों अर्थकी सिद्धीसे ही सिद्धहोते हैं उत्तमजाति के लोग उसअर्थवान् पुरुषकी सदैव ऐसे उपासना करते हैं जैसे कि सब जीव ब्राह्मणकी सेवाकरतेहैं जटा और मृगचर्म्म धारण करनेवाले सावधान चित्त निष्पाप जितेन्द्री मुण्ड नि- स्तंतु ब्रह्मचारी भी अर्थ की इच्छा से पृथक् २ निवासकरते हैं कापायवस्त्र और दाढ़ी मूंछरखनेवाले लज्जावान् पंडित शान्त सब परिग्रहों से रहित भी होकर कोईअर्थ की इच्छारखते हैं कोई स्वर्गका मनोरथ करतेहैं और कु- लीन शास्त्रज्ञलोग अपने २ धर्म में प्रवृत्त हैं कोई आस्तिक कोई नास्तिक कोई पूरे जितेन्द्रीहैं अर्थ शास्त्रका न जानना अन्धकार रूपहै और उसमें वि- ज्ञता होना प्रकाशरूपहै जो पुरुष भोगों से दास आदिकोऔर दण्डोंसे शत्रु- ओंको विजय करता है वही अर्थवान् है यहमेरामत है तुम इनदोनों नकुल

और सहदेवको वचन वाक्य और करारसे जानों वैशम्पायन बोले कि अर्जुन के पीछे धर्म अर्थमें प्रवीण माद्रीकेपुत्र नकुल सहदेवने उत्तमवाणीसेकहाकि बैठता, सोता, घूमता और नियत मनुष्य भी नानाप्रकार की युक्तियों से धनके समूह को दृढ़ता संचयकरे इस दुष्प्राप्य और महा प्यारे धनके प्राप्त होनेपर इस संसार में निस्सन्देह सम्पूर्ण मनोरथों को प्रत्यक्ष होकर प्राप्त करता है जो अर्थ धर्मसे मिला है अथवा धर्म से अर्थ मिला है वह दोनों आप को निश्चय करके अमृत के समान हैं इस कारण यह दोनों संसार में हम को अभीष्ट हैं अर्थ से रहित पुरुष को कामकी सिद्धी और धर्म से रहित पुरुष को अर्थकी सिद्धी नहीं होसक्ती जो पुरुष धर्म अर्थ से रहित हैं उनसे संसार भय करता है इस कारण धर्मरूप दानी लोगों से और जितेन्द्री पुरुषों से वह मनोरथ सिद्ध होनेके योग्य है हमारे वचनों में विश्वास करनेवाले जीवों में सब ही कल्पना किया जाता है प्रथम तो धर्मको अच्छे प्रकार से करे तदनन्तर धर्म संयुक्त अर्थको प्राप्तकरे फिर काम को सिद्धकरे वह फल अर्थवानहीका है वैशंपायन बोले कि अश्विनीकुमार के पुत्र यह वचन कहकर चुपहुए तब भीमसेनने यह बचन कहा कि काम से रहित पुरुष अर्थ धर्म और इच्छा इनतीनों को नहीं चाहता है इस कारण कामही प्रधान है कामसे संयुक्त ऋषिलोग फलमूल भोजनकरे शान्तचित्त वायु भक्षीहो अच्छे नियमवान् तपमें प्रवृत्त होते हैं बहुतेरे वेद उपवेदों में संयुक्त जपमें नियत श्रद्धा यज्ञ क्रिया तपदान और दान लेने में प्रवृत्त हैं और कोई व्यापारी, कृषिकर्मी गोपाल, कारव,शिल्पी, देवकर्म करनेवाले यहसब कामही से कर्म्मों में प्रवृत्त हैं और कितनेही कामना करनेवाले पुरुष समुद्र में भी प्रवेश करते हैं इससे कामही नानारूप धारण करनेवाला है और सब कामसे ही विस्तार पानेवाला है कामात्मा के सिवाय कोई जीव न था न है न होगा हे महाराज यह प्रत्यक्ष है कि इस में धर्म अर्थ अच्छे प्रकारसे वर्त्तमान हैं जैसे कि दहीकातत्त्व मक्खन है उसी प्रकार अर्थ धर्मका सिद्धांत काम है खल से तेल उत्तम है और मीठे से घृत उत्तम है काष्ठ से फूल फल श्रेष्ठ हैं इसीप्रकार धर्म अर्थमें काम सर्वोत्तम समझा जाता है जिस प्रकार फूल से मधु रस निकलताहै उसी प्रकार इनधर्म अर्थों से काम उत्तम गिना जाता है कामही धर्म अर्थ का उत्पत्ति स्थान है और कामही उनकारूप है विनाकाम केवल अर्थसेही स्वादिष्ट भोजन नहीं होता और विनाकामके ब्राह्मणोंको भी कोई दान नहीं करता है और काम विना नाना प्रकारकी लोकचेष्टा भी नहीं देखने में आती इस कारण यह कामही त्रिवर्ग मुख्य में जाना जाता है हेराजा तुम काम को पाकर सुन्दर पोशाक और भूषणों से

अलंकृत मदसे मतवाले होकर प्यारी स्त्रियों के साथ क्रीड़ाकरोगे तब जानोगे कि कामही सबमें उत्तम है यह मेरा सिद्धांत है इससे धर्म अर्थ कामतीनों सदैव सेवनके योग्यहैं और जो पुरुष एकहीको चाहताहै वह निकृष्टहै और जो त्रिवर्ग में सब ओरसे प्रीतिकरने वालाहै वह सबमें उत्तमहै यह कहकर अनेक गुण सम्पन्न महावीर भीमसेन भी चुपहोगये तब महाप्राज्ञ धर्म धुरंधर धर्मराज युधिष्ठिर क्षणमात्र इनके वचनोंको विचारकर यह वचन बोलेकि निस्संदेह आप सबलोग धर्मशास्त्र के ज्ञाता और प्रमाण जाननेवाले हो और मुझ इच्छावान् के लिये जो वचनकहा वहमैंने सुना हेसमानबुद्धिवाले भाइयोमेरे इसवचनको सुनों किजो मनुष्यनिश्चय करके पापपुण्य अर्थधर्म और काम में प्रीति करने वाला नहीं है वह निर्दोषी सुवर्ण मृत्तिका को समान जानने वाला पुरुष दुःखसुख और अर्थ सिद्धी से निवृत्त होता है जन्म मरण से संयुक्त वृद्धावस्था को प्राप्त बिपरीत दशामेंपड़े जीव उनगुरुओंके समझायेहुए फिर मोक्षकीही प्रशंसा करते हैं जिनको कि हम नहीं जानते हैं संसार में प्रीतिवान् पुरुषको मुक्तिनहीं होती है यह भगवान् ब्रह्माजीका वाक्य है ज्ञानी पुरुष मोक्षमेंही चित्तको लगाये रहते हैं इस कारण प्रिय अप्रिय दोनों को न करे यह बात उत्तमहै कि मैं अपनी इच्छा के समान असावधाननहींहूं जैसे मुझको सबों ने प्रवृत्त किया उसी प्रकार के करता हूं ईश्वर या प्रारब्ध सबजीवों को कर्मों में प्रवृत्त करता है वह ईश्वर या प्रारब्ध महा बलवान है इसको तुम सबजानो न पाने के योग्य अर्थ को कर्मके द्वारा नहींपासक्ता है जो होनहार है वही होताहै, त्रिवर्ग रहित पुरुषभी मोक्षको पाताहै इस कारण वह गुप्तज्ञान मोक्ष के निमित्त है वैशम्पायन बोले कि इन चित्तरोचक उत्तम२ वचनोंको सुनकर सबलोगोंने राजायुधिष्ठिरको बड़ी प्रसन्नतापूर्वक हाथजोड़े और उनकेवचनोंकी प्रशंसाकीफिरप्रसन्नचित्त युधिष्ठिरनेभी अपने सबभाइयों की प्रशंसाकी और भीष्मजीसे जाकर फिरउत्तम धर्मोंकोपूछा ५२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्म्मेसप्तत्रिंशत्तमोऽध्यायः ३७ ॥

अड़तीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे महाज्ञानी कुरुबंशियों के प्रीतिबढ़ानेवाले पितामह मैं कुछप्रश्न करताहूं उनके उत्तर आप कहने को योग्यहैं कि कैसेमनुष्य सौम्य होते हैं और कैसे लोगोंसे उत्तम प्रीति होती है और कौनसा पुरुषवर्त्तमान और भविष्यतकालमें वृद्धि करने को समर्थहै जहांपर मित्र होते हैं वहांधन की वृद्धि पूर्वक नातेदार बांधव लोग वर्त्तमान नहीं होते यह मेरा मत है सुननेवाले और हितकारी सुहृद लोग दुर्लभ हैं हे धर्मभृताम्बर इन सब का

आप वर्णन कीजिये भीष्म जी बोले कि मित्रता के योग्य और अयोग्य पुरुषों को सुनों कि लोभी, निर्दयी, अधर्मी, अकर्मी, शठ, नीच, पापचलन सन्दिग्ध चित्त, अनुद्योगी, दीर्घसूत्री, मिथ्यावादी, लोकनिंदित, गुरु की स्त्री से सम्भोग करनेवाला, व्यसनी, माता पिता आदिका त्यागकरनेवाला दुरात्मा, निर्लज्ज, सब की ओर पाप दृष्टि से देखने वाला, नास्तिक, वेद-निन्दक, भ्रांत चित्त, कार्य में संलग्न, कामी, असत्यवादी, सब का शत्रु, अनाचारी, कठोर, निर्बुद्धी, ईर्षा करनेवाला, पापकानिश्चयकरने वाला, दुस्स्वभाव, दुष्ट अंतःकरण, छली, मित्र द्रोही, दूसरे के धनकी इच्छा करनेवाला, जो अपनी सामर्थ्य के समान दान देनेवाले से अप्रसन्न होने वाला मित्र को धैर्यता से अलगकरनेवाला, अकारण क्रोधी, अचेत, अकारण शत्रु, कल्याणकारी, मित्रों का त्यागने वाला, अपने स्वार्थ के लिये मित्रों के साथ बैठनेवाला, अज्ञानतासे थोड़ी अनुपकारी, अप्रिय बात से मित्रता से शत्रुता करनेवाला, प्रत्यक्ष में मित्र और भीतर से शत्रुता करनेवाला, टेढ़ी दृष्टि से देखनेवाला और विपरीत दृष्टिवाला, उपकार से तृप्त न होनेवाला, दूसरेको अपने समान बनाने वाला, मद्यप, शत्रु, क्रोधी, अभीष्ट न मिलने से दूसरे को दुःख का देनेवाला, मित्र से शत्रुता करनेवाला, जीवहिंसा करने वाला कृतघ्नी, छिद्रान्वेषी इन पुरुषों से कभी मित्रता न करनी चाहिये और मित्रताकरने के योग्य पुरुषों को भी मुझ से सुनो कुलवान्, मधुरभाषी, ज्ञान विज्ञान में कुशल, रूपमें रूपवान्, गुणवान्, निर्लोभी, श्रमी, सन्मित्र, कृतज्ञ, सर्वज्ञ, लोभ, ईर्षा रहित, सत्य प्रतिज्ञ, जितेन्द्रिय, सदैव उद्योगी, कुलीन के बेटे, कुल के तारनेवाले दोषों से रहित प्रसिद्ध होयँ उन्हीं लोगों से राजा को प्रीति रखनी योग्य है हे राजन् सामर्थ्य के अनुसार आचार करने वाले अच्छे प्रकारसे तृप्त होतेहैं बिना स्थान क्रोध न करनेवाले, अकस्मात् प्रीति न त्यागने वाले, प्रीति करनेवाले, जो अर्थ में पण्डित होकर चित्त से भी विरोधी नहीं होते हैं और अपने हृदय को कष्टभी देकर मित्र के कार्य में प्रवृत्त होते हैं जिस प्रकार कम्बल पर दूसरारंग नहीं चढ़ता है उसप्रकार जो मित्रों से प्रीति नहीं छोड़ते और निर्धन होने में स्त्रियों पर क्रोध लोभ मोह से अप्रीति नहीं प्रकट करते हैं वह धर्मशील बिश्वासी लोग अपने मित्रों को भी अप्रीति नहीं दिखलाते हैं मृत्तिका और सुवर्ण को एकसा मानने-वाले मित्रोंमें दृढ़ बुद्धि, स्वतंत्रता रहित, स्वामी के अर्थ को सदैव उत्तममानने वाले जो पुरुष अपने मनुष्यों की रक्षा करते शास्त्रों से कर्मकरते हैं ऐसे उत्तम पुरुषों से जो राजा स्नेह पूर्वक मिलाप करता है उसका राज्य चंद्रमा की चांदनी के समान वृद्धिको पाताहै सदैव शास्त्रोक्त करनेवाले क्रोधजित्

युद्ध में पराक्रमी जन्म से ही उत्तम गुण स्वभाव युक्त श्रेष्ठ पुरुषभी मिलाप के योग्य हैं—हे राजन् जो गुण दोषयुक्त मनुष्य मैंने कहे उनमें भी जो उपकार को भूलने वाले मित्रघाती और नीच हैं वह दुराचारी त्यागने के योग्य हैं यहसबका मतहै—युधिष्ठिर बोले कि मैं मिलापसे सम्बन्धरखनेवाले इतिहासको मुख्यता से सुनना चाहता हूं और जो आपने मित्र से शत्रुता करने वाला और उपकार का भूलने वाला कहा उसको भी मुझसे कहो—भीष्मजी बोले कि मैं उस प्राचीन इतिहास को तुम से कहता हूं जो उत्तर दिशामें म्लेच्छलोगों में हुआ कि मध्यदेशका रहनेवाला वेदोंसे अज्ञान कोई ब्राह्मण वृद्धियुक्त गांवको देखकर भिक्षाकी इच्छासे उसमें पहुंचा वहां गांवमें दस्युजातिवाला कोई महाधनी सब वर्णोंके विभागों का ज्ञाता ब्राह्मणोंका भक्त सत्यप्रतिज्ञ और दानमें प्रीति रखनेवाला था उसके घरमें जाकर इस ब्राह्मणने रहनेके लिये स्थान और वर्षौंड़ी खर्चके निमित्त भिक्षामांगी तब उस धनीने ब्राह्मण को बहुतसे वस्त्र और एक नवीनस्थान दिया और एक तरुण स्त्री दासी करके दी हे राजन् इसप्रकार वह गौतम ब्राह्मण दस्युसे सब पदार्थ पाकर उस स्थानमें उस तरुण दासीसे बिहारकरने लगा और दासीके कुटुम्ब पोषणकोभी उसने प्राप्तकिया और बहुत दिनतक उस धनीके स्थानमें आनन्दपूर्वकरहा वहां उस गौतम ब्राह्मणने बाणविद्या में बड़ी कुशलता प्राप्तकी और वनमें जाजाकर हंसोंको उसीप्रकारसे मारता था जैसे कि दस्युलोगों के समूह माराकरतेथे तब तो वह गौतम महा हिंसामें प्रवृत्त होकर उन दस्युजातिके समान होगया इसीप्रकार अनेक जीवोंकी हिंसा करतेहुये बहुत दिन गौतमको व्यतीत हुये तब एक दूसरा ब्राह्मण उस देशमें आया वह जटा और मृगचर्मको धारण किये वेदपाठ और जपको उत्तम जाननेवाला पवित्रात्मा अवस्था के अनुसार भोजन करनेवाला वेदज्ञ ब्राह्मणों का रक्षक वेदमें पूर्णथा वह उस गौतमका स्वदेशी और परम मित्र था और शूद्र अन्नको त्यागकर अपने मित्र गौतमके घरको खोजता फिरता था और उस गांवको चारोंओरसे ढूंढा फिर गौतमके घरको पाकर उसमें प्रवेश किया तब गौतमने भी आकर मिलाप किया और उन हंसोंका बोझ कन्धेपर रखनेवाले धनुर्बाण हाथ में लिये शस्त्रधारी रुधिरसे भरादेह राक्षसी सूरत घरके द्वारपर वर्त्तमान महा निन्दित कर्मोंसे घरमें आकर महा लज्जा युक्त होकर आनेवाले ब्राह्मणने कहा कि तुम कुलीन ब्राह्मणहोके अज्ञानता से यह क्या कर्म करतेहो और तुम मध्यदेशी होकर दस्युके भावको कैसे प्राप्तहुये तुम अपने प्राचीन वृद्धोंको स्मरण करो कि कैसे वेदमें कुशल थे उनके वंशमें ऐसे कलंकी तुम उत्पन्न हुये इससे अपने स्वरूप और कुलको

ध्यानकरके इस महा निन्दित कर्म्मका त्यागकर इस स्थानमें मतरहो तब उस गौतमने बड़े विचारके साथ उसको उत्तर दिया कि हे मित्र मैं निर्द्धनहूं और वेदकोभी नहीं जानताहूं और तुम धनके निमित्त यहां आयेहो सो हे महा- ज्ञानी वेदज्ञ मैं तुम्हारे दर्शनसे कृतकृत्य हुआ अब रात्रिको आप निवास करिये कल प्रातःकाल हम दोनों अपने देशको चलेंगे वह ब्राह्मण घृणायुक्त किसी वस्तुका स्पर्श न करके वहां रहा और भोजनके विषय में बहुत सत्कार करनेपरभी न खाया ५१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेअष्टात्रिंशोऽध्यायः ३८ ॥

उन्तालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर उस रात्रिके अन्त में उस ब्राह्मण के जाने पर वह गौतम समुद्रके समीप गया वहां मार्ग में वर्त्तमान समुद्रके व्यापा- रियों को देखा और उनके साथ होकर सागरकी ओर चला दैवयोगसे वह जन समूह किसी पहाड़ी गुफाके समीप मतवाले हाथियों से मारागया और यहब्राह्मण मारेभयके घबराकर उत्तरदिशाको गया और अपने देशसे दूर उस समूहसे पृथक् होकर गुप्त होजाने के समान अकेला जंगलमें फिरनेलगा फिर मार्गको पाकर समुद्रके समीप एक बनको पाया जो कि क्रीड़ायोग्य दिव्य प्रफुल्लित वृक्षों से शोभित सब ऋतुओं के फलयुक्त नन्दनबनके समान यक्ष किन्नरोंसे सेवित शाल ताल तमाल और चन्दन अगरके वृक्षोंसे महासुगन्धि युक्त था वहां पर्वतोंके सुन्दरशिखरोंपर नानाप्रकारके पक्षी शब्दकरतेथे और मनुष्यकासा मुख रखनेवाले समुद्र और पर्वतोंमें उत्पन्न होनेवाले भूलिंगनाम पक्षी भी देखे उनके सुन्दर मधुर शब्दोंको सुनता हुआ वह गौतम ब्राह्मण वहां आया जहां अच्छी क्रीड़ाके योग्य वनमें सुवर्णकी रजसे निर्मित उत्तम प्रकाशवान् भूमिमें एक बड़ा ऊंचा वट वृक्षथा जिसकी शोभायमान शाखा महा सुन्दर छत्राकारथीं और उसकी जड़ उत्तम चन्दनकेजलोंसे सींचीहुईथी वह प्रफुल्लित शोभायमानवृक्ष कल्पवृक्षके समानथा गौतम उसअपूर्व उत्तम वृक्षको देखकर प्रसन्नहुआ और उसकेनीचे बैठगया उसकेनीचे सुगन्धियुक्त तीनोंप्रकारकी हवाचलनेलगी उस आनन्ददायी हवाके कारण वह सोगया और सूर्य्यास्तहोनेपर सन्ध्याके समय वहां एक उत्तमपक्षी ब्रह्मलोक से अपने स्थानकोआया वह नाड़ीजंघनामसे प्रसिद्ध ब्रह्माजीका परममित्र बड़ाज्ञानी कश्यपजीका पुत्र बगलोंकाराजाथा जिसको पृथ्वीकेलोग राजधर्म्मा कहते थे वह महासुन्दर प्रतापवान् देवकन्याका पुत्र शुद्ध किरीटआदि सुवर्ण रत्नोंके आभूषणोंसे अलंकृत सूर्य्यके समान प्रकाशमानथा उस पक्षीको दे-

खकर गौतम बड़ाआश्चर्य्ययुक्त हुआ और भूखप्यास से व्याकुल थकेहुयेने मारनेकी इच्छासे उसकी ओरकोदेखा तब वह राजधर्म्मा बोला हे ब्राह्मण तेराआना सफलहो तू मेरेघरपै प्रारब्ध से आयाहै और अब सूर्य्यास्तहोकर सन्ध्या वर्त्तमानहुई और तुम निर्दोषीप्यारे अतिथिहोकर मेरे घरमें आयेहो सो प्रातःकाल के समय तुम मुझ से पूजितहोकर प्रसन्नता से अपने घरको जाओगे २४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेएकोनचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ३९ ॥

चालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजा तब तो शोचदृष्टि से संयुक्त गौतमने उसके मधुरबचनोंको सुनके बड़ा आश्चर्य्य करके उस राजधर्म्मा को देखा--तब राजधर्म्मा बोला कि हे ब्राह्मण मैं कश्यपजीका पुत्रहूं और मेरीमाता दक्षकी पुत्री है और तुम गुणवान् अतिथिहो इससे तुम्हारा आना सफलहो यह कहकर उस राजधर्म्मा ने बुद्धि में देखेहुये कर्म्मसे उसका सत्कार करके शाल के पुष्पों के समान दिव्य कुशासनको दिया और जो मछलियां राजा भगीरथ के रथसे इधर उधरहोकर गंगाजी से सेवित देशोंमें घूमतीथीं उनको उसके भोजन के लिये देनेका विचारकिया और बड़ी२ मछलियां उसके भोजनकोदीं और उसके श्रमदूरकरने को भोजन के पीछे बड़े आनन्द से अपने परोंसे बायुकरी फिर विश्रामसे बैठेहुये गौतम से गोत्रको पूछा तब उसनेकहा कि मैं गौतमहूं वेदकी कोई वार्त्ता नहींकही फिर उसने मृदुपत्तों की शय्याबनाई और उसपर गौतमको सुलाया फिर उस राजधर्म्मा ने पूछा कि आपका आना कैसेहुआ तब गौतम ने कहा कि हे महात्माज्ञानी मैं निर्द्धनहूं और धनके लिये समुद्रपार जानेकी इच्छा करताहूं तब उस कश्यप ने कहा कि हे ब्राह्मण सन्देह मतकरो तुममनोरथ समेत घरको जाओगे सो हे प्रभु अर्थसिद्धि चारप्रकारकी हैं जैसा कि बृहस्पतिजी ने कहा है प्रथम तो प्राचीन अर्थात् बापदादों से दूसरी ईश्वर या प्रारब्धसे--तीसरी सफल कर्म करने से चौथी मित्रसे प्राप्त होनेवाली है सो मैं तेरा मित्र उत्पन्न हुआ हूं और मेरी मित्रता तुझमें है सो मैं वही विचारकरूंगा जिससे कि तू धनवान् होजायगा--फिर प्रातःकाल के समय उस प्रसन्न ब्राह्मण से यहकहा कि हे सौम्य तुम इसमार्ग होकर जाओ तुम्हारा मनोरथ सिद्धहोगा यहां से तीनयोजन पै राक्षसोंका बड़ा राजा महाबली विरूपाक्षनाम से प्रसिद्ध मेरा मित्र है सो हे ब्राह्मण तुम मेरे कहने से उसके पासजाओ वह तुमको निस्सन्देह अभीष्ट धनदेगा यह सुनकर परिश्रम रहितहो अमृत के समान

फल खाताहुआ उसके पासचला और मार्गमें चन्दन अगर दारचीनी तेज-
पत्र इत्यादि वृक्षोंको देखता चलादिया और उस मेरुव्रजनाम नगर में पहुंचा
जो पर्वतका द्वार और परकोटा खाईआदि से शोभित पर्वतोंकेही यन्त्रों से
वेष्टितथा वहां पहुँचतेही उसबुद्धिमान् दनुजपतिको मालूम हुआ कि यह
प्रीतिमान् अतिथि मित्रकी ओरसे भेजाहुआ आया है तब उसने अपने
नौकरों को आज्ञादी कि उस गौतमको शीघ्रही यहां लेआवो तब उसके
मनुष्य गौतमका नाम पुकारते नगर के द्वारपर आये और उससे कहा
कि शीघ्रही चलो राजा विरूपाक्ष तुमको देखना चाहता है तब बड़ी तीव्रता
से वह गौतम चला और उसके असंख्य धनकोदेख आश्चर्य्यित होताहुआ
राजमहलको गया २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ४० ॥

इकतालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि वहांजाकर वह ब्राह्मण राजासे पूजित होकर उत्तम
आसनपर बैठायागया-वहांभी राजाविरूपाक्षने ब्राह्मण से गोत्र प्रवरवेद
और ब्रह्मचर्य्यपूछा परन्तु उसने सिवायगोत्रके और कुछ नहींकहा तब उनके
रहनेके स्थान को पूछा कि हे ब्राह्मण तू कहांका रहनेवालाहै और तेरी ब्रा-
ह्मणी कौनगोत्रवाली है मुझपर विश्वासकरके निर्भयहोकर अपना सबवृ-
त्तान्त कहो-गौतम बोला कि मैं मध्यदेशमें उत्पन्नहुआहूं और मेरा स्थान
शबर जातिवाले मनुष्यके घरमें है-मेरीभार्या शूद्रापुनर्भूहै यह मैं तुझसेसत्य २
कहताहूं-भीष्मजीबोले कि इसबातको सुनकर राजाने विचार किया कि
मेराकर्म अच्छा कैसे होगा और इसकाकार्य कैसे बनेगा-निश्चय है कि यह
जन्मसे तो ब्राह्मणहै और उसमहात्माका मित्र है उसकाश्यपगोत्री ने मेरे
पास भेजाहै वह मेरा रक्षकहै इससे मैं उसके अभीष्टको अवश्यकरूंगा वह
मेराभाई बांधव और चित्तसे मित्र है अब कार्त्तिकी पूर्णमासीको मेरेघर हज़ार
ब्राह्मण भोजनकरेंगे वहां यहभी भोजन करेगा और मुझे इसको धनदेना
योग्य है और यही पवित्र दिनहै और यह अतिथिहै और धनभी संकल्प
किया है अब दानकरनाही योग्यहै तदनन्तर क्षौमवस्त्रधारी एकहजार स्ना-
तक ब्राह्मणभी आगये तब उसविरूपाक्षने शास्त्रकी रीतिसे जैसे अभ्युत्थान
करना योग्यहै उसीप्रकार उनका अभ्युत्थान किया और उनके चरणधोकर
उनके निमित्त उत्तमपवित्रकुशासन बिछवादिये औरयथायोग्य अपने २ आ-
सनोंपर राजासे पूजितहोकर बैठगये फिर तिल जल कुशाओंसे पूजेगये और
विश्वेदेवा समेत पितर और अग्नि स्थापन कियेगये और चन्दन पुष्प

अक्षतोंसे भी सुंदर रीतिसे पूजनकरके ऐसे विराजमानहुये जैसे कि नक्षत्रों के स्वामी चन्द्रमा फिर सुवर्णके थालोंमें अन्न मिष्ठान्नयुक्त नानाप्रकारके सुस्वादुभोजन ब्राह्मणों को परोसेगये आषाढ़ी या माघकी पूर्णमासीको बहुत से ब्राह्मण उसके घरपर सुन्दर बनायेहुये भोजनोंकोपाते थे और विशेषकरके कार्त्तिकी पूर्णिमाको ब्राह्मणोंको धनकाभीदान करताथा अर्थात् सुवर्ण,रजत, मणि, बहुमूल्यमोती, हीरा, वैडूर्य,मृग चर्म और दक्षिणा में रत्नों के ढेरोंको धरकर यह कहा कि अपनी इच्छाके अनुसार इनरत्नोंको लो और जिन २ सुवर्ण के पात्रों में तुमने भोजनकिया है उनकोलेकर अपने अपने घरको जाओ यह सुनकर सबब्राह्मणोंने अपनी अपनी इच्छाके अनुसार उन रत्नों को लिया जब शुभरत्नों से और सुन्दर वस्त्रों से शोभित वह ब्राह्मण उसके सत्कार से प्रसन्न होकर चलनेलगे तब फिर ब्राह्मणोंसे कहा कि हे ब्राह्मण लोगो अबकभी तुमको राक्षसोंसे भय न होगा प्रसन्नहोकर अपने अपने अभीष्टदेशों को जाओ देरमतकरो तब ब्राह्मणलोग चारोंओर को चलेगये और गौतमभी सुवर्णके बोझकोलेकर शीघ्रतासे उसबटके वृक्षकेनीचेआया और भूखप्याससेथकित पीड़ामानहोकर बैठगया फिर वह राजधर्मा उसके पासआया और कुशलपूछकर गौतम को प्रसन्नकिया और अपनेपरोंकी वायुसे उसकेश्रमको दूरकिया और पूजनकरके भोजनकाभी आतिथ्यकिया तब उसभोजनकरनेवाले गौतमने चिन्ताकी कि मैंने लोभ मोहसे इस सुवर्ण के बड़ेभार को लिया है और दूर मुझको जाना है और मार्गमें प्राणका धारण करनेवाला कोई भोजन मेरेपासनहीं है मैं कैसे प्राणोंको धारणकरूंगा इसकी चिन्ताकरके मार्गमें भोजनके योग्य कोईवस्तु न देखके उसअकृतज्ञनेमनमें यह विचारकिया कि मेरेसमीप यह बगलोंकाराजा बड़ेमांससे भरावर्त्तमानहै इसीकोमारकर साथलेकर शीघ्रजाऊंगा ३५॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिआपद्धर्मेएकचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ४१॥

बयालीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि वह पक्षियोंका राजा राजधर्मा उसगौतमके समीप रक्षा करने के लिये प्रकाशवान् अग्निको स्थापन करके विश्वासयुक्त होके सोगया और वह कृतघ्नी दुष्टात्मा जो पहिलेही से उसके मारने के विचारमें था उसने एक सूखीलकड़ीसे उसको सोते में मारा और मारनेकेपाप दोषको मनमें भी नहीं विचारा और बहुत प्रसन्न होकर उसके परोंको अलग करके अग्नि में भूनकर उसको बांध सुवर्णसमेत घरकोचला तब दूसरेदिनके अंतमें विरूपाक्ष ने अपने पुत्रसे कहा कि हे बेटा मैं अब पक्षियों के राजा राजधर्मा को

नहींदेखताहूं क्योंकि वह पक्षी सदैव पूर्वाह्न संध्यामें ब्रह्माजीके दर्शनोंको प्रतिदिन जाता है तब मुझको देखेबिना कभीघरको नहीं जाताहै सो दोदिनसे मेरेघरको नहींआया इसकारणसे मेरे चित्तमें संदेह है उस मेरे मित्रको देखनाचाहिये मतकहीं उस वेदपाठसे रहित जपहीन हततेज हिंसा धर्मवाले उस नीचब्राह्मणने तो उसकोनहींमारा यही मुझको संदेह है अर्थात् वह निर्बुद्धी दुराचारी है इसको मैंने उसके लक्षणों से जानाहै वह निर्दयी भयकारीरूप दुष्ट चोरोंके समान नीच गौतम वहां गयाहै उसीसे मुझको सन्देह होगयाहै सो हे बेटा तुम शीघ्रजाकर उस राजधर्माको घरमें देखो कि वह जीवताहै या नहीं यह पिताकी आज्ञा पातेही उसकापुत्र बहुत से राक्षसों समेत शीघ्रतासे वहां पहुंचा तो राजधर्माके देहके पक्ष पृथ्वी में पड़ेहुये खाली वृक्षको देखा यह वृत्तान्त देखकर वह राक्षसका पुत्र रोदन करके बड़ी शीघ्रतापूर्वक उसके पकड़नेको गया और समीपही उसने गौतमको पकड़ा और राजधर्माके देह समेत उसपापकर्मी दुष्ट गौतमको राजाके सन्मुख किया वह राजा उसको देख कर मंत्री और पुरोहितों समेत महा रुदन करनेलगा और उसके महलकी स्त्रियां और नगरके सब छोटे बड़े स्त्री पुरुषभी बड़े शोकयुक्त होकर रोदनकरने लगे तब राजाने पुत्रको हुक्मदिया कि इसपापी को मारो और अपनी २ इच्छाके सदृश इसके मांसकोखण्ड २करो क्योंकि यहदुष्टात्मा पापाचार पापकर्मी तुम लोगोंके मारनेके योग्यहै राजाकी इसआज्ञा होनेपर महापापी गौतमके मांसका भक्षण किसीने नहीं करना चाहा तब यहविचार किया कि इस नीच पापीको दस्युजातिवालोंको देना चाहिये और यही विचार राजासेनिवेदन करके शिरझुकाकर कहा कि हेराजा आप इसकापाप हमारे भक्षण के देनेको योग्य नहीं हो तबराजानेकहा कि ठीकहै अब यह कृतघ्नी पापात्मा गौतम दस्युजातिवालोंको दियाजाय तब उसके टुकड़े टुकड़ेकरके दस्युलोगोंकोदिया उनलोगोंने भी उस पापीको भक्षणकरना न चाहा इससे सिद्धान्त यहहै कि कृतघ्नीपुरुषके मांसको राक्षसभी कोई नहीं भक्षणकरता-हे राजा ब्रह्महत्या करनेवाला मद्यपीनेवाला चोरीकरनेवाला और व्रतकात्यागनेवाला ऐसे लोगोंका तो प्रायश्चित्तहोभी सक्ता है परन्तु कृतघ्नी मनुष्य के लिये कोई प्रायश्चित्त नहीं है और ऐसेलोग जो कि मित्रसे शत्रुता करनेवाले कृतघ्नी और हिंसा करनेवाले हैं उनका भोजन मांसभक्षी जीव और कीड़े भी नहीं करते २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेद्विचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ४२ ॥

तेतालीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि उसको इसप्रकार दण्डदेकर उस राक्षसों के राजा ने उस बकराजकी चिताको रत्न और वस्त्रोंसे अलंकृत नाना सुगन्धियोंसे युक्त बनाया और दाह क्रिया करके मृतकक्रियाओंको किया उसीसमय शुभकारी दाक्षायणी देवी सुरभीके रूपमें चिता के ऊपर वर्त्तमानहुई उसके थनों से बहुतसा दूध उसकी चितामें गिरा उस दूधके प्रभावसे वह पक्षियोंका राजा जीउठा और वहांसे उठकर अपने मित्र बिरूपाक्ष से मिला तदनन्तर देवराज इन्द्र भी बिरूपाक्षके पुरमें आये और बिरूपाक्षसे कहनेलगे कि यह राजधर्मा अपने प्रारब्धसे जीगयाहै और वह प्राचीनइतिहास बिरूपाक्षको इन्द्रने सुनाया कि जैसे ब्रह्माजीने राजधर्माको शाप दियाथा अर्थात् जबराजधर्मा ब्रह्माजी के पास नहीं गया तब क्रोधयुक्त होकर ब्रह्माजी ने राजधर्मासे यह कहा कि अरे अज्ञानी बगले जो मेरी सभामें तू नहींआया इससे थोड़ेही समयमें माराजायगा इसी कारण गौतमके हाथसे यह मारागया और अमृतके सींचने से फिर यह जी उठा यहसुनकर राजधर्माने इन्द्रदेवताको नमस्कार करके यह वचनकहा कि हेदेवेश्वर जो तुम बुद्धिसे मेरेऊपर अनुग्रहकरतेहो तो हेपुरुषोत्तम मेरे प्यारेमित्र गौतमको भी फिर जीवदानदो तब इन्द्रने प्रसन्नहोकर उस गौतमको भी अमृत सींचकर जिलाया तब वह राजधर्मा सुवर्णपात्रयुक्त उसको देखकर बड़ी प्रीतियुक्तहो उस मित्र से मिला और उस पापकर्मी को धनसमेत बिदाकरके अपने स्थानकोगया और पूर्वके समान फिर राजधर्मा ब्रह्मलोककोगये और ब्रह्माजीने इसमहात्माको आतिथ्यधर्म से पूजनकिया और उस गौतमने भी उस दस्युजाति के राजाके स्थानको पाकर अपनी उसी दासी शूद्रामें पापीपुत्रों को उत्पन्नकिया तब देवताओं के समूह ने उसे महाघोर शापदिया कि अरे पापी तू बहुत दिनतक कुत्तेकी योनिमें पुत्रोंको उत्पन्न करके महाघोर नरक को पावेगा क्योंकि तू कृतघ्नी उपकारका भूलने वाला है हे राजा पहिले समय में यह वृत्तान्त तुझसे नारदजी ने कहाथा और मैंने उसको यथार्थ स्मरण करके बुद्धिके अनुसार तुमसे कहा कि कृतघ्नी पुरुषको नतो यशहै न स्थानहै और न सुखहै वह कभी श्रद्धाके योग्य नहीं है न उसकेलिये कोई प्रायश्चित्तहै अधिक करके पुरुषको मित्रसे शत्रुता न करनी चाहिये क्योंकि मित्रसे शत्रुता करने वाला घोरनरक में गिरता है और कृतज्ञ और सदैव मित्रता चाहने वाले मित्रको ईश्वर सदैव ऐश्वर्यवान् करता है मित्रसेही सब मनोरथ और प्रतिष्ठा पूर्वक भोगोंको भोगता है और आपत्तियों में भी मित्रोंही के द्वारा उद्धार होताहै इससे बुद्धिमान् मनुष्य

उत्तम सत्कारों से मित्र का पूजनकरे पापी अकृतज्ञ निलज्ज मित्रसे शत्रुता करने वाला कुलनाशक पापकर्मी नीच मनुष्य ज्ञानियोंको त्यागने के योग्य है हे राजा युधिष्ठिर यह उपकार भूलने वाले पापात्मा मित्रसे विरोध करने वालेका वृत्तान्त तुझसे विधिपूर्वक कहा अब क्या सुनना चाहता है वैशंपायन बोले कि हे राजा जनमेजय इस प्रकार राजा युधिष्ठिरसे जब भीष्मजी ने कहा तब युधिष्ठिर बहुत प्रसन्न हुये २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिआपद्धर्मेत्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ४३ ॥

शान्तिपर्व आपद्धर्म समाप्तम् ॥

अथ महाभारतभाषा ॥

शान्तिपर्व्व मोक्षधर्म्म ॥

पूर्व्वार्द्ध प्रारम्भः ॥

श्लोक श्रीमन्महाभारतशान्तिपर्व्वान्तर्मोक्षधर्म्मस्यकरोतिभाषाम् ॥
करोमिकालीचरणभिधोहम् भाषाप्रबन्धेनजगद्धिताय १

पहिला अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह आपने राजधर्म्म और आपद्धर्म्मों को बड़ी उत्तमतासे बर्णन किया अब आप आश्रमोंके श्रेष्ठ धर्म्मोंको वर्णन कीजिये— भीष्मजी बोले कि सब आश्रमों में श्रेष्ठधर्म और ज्ञान देहहीसे नियत किया गया है उनके फलोंको मैं कहताहूं तुम चित्तको एकाग्र करके सुनो कि धर्म्म के अनेक मार्गहैं किसी मार्गसे धर्म्म करो सब सफल होतेहैं सबका फल क्रम २ से मोक्षही से सम्बन्ध रखता है इसलोक का किया हुआ धर्म्म बहुधा शीघ्रता से फलीभूत नहीं होता परन्तु दूसरे लोकमें जन्मान्तर के द्वारा अवश्य प्राप्त होताहै और जो धर्म्म ज्ञान पूर्व्वक इस लोकमें किया जाता है उसका फल इसी देहसे प्राप्त होताहै सो हे युधिष्ठिर जो पुरुष जिस २ विषयमें जैसा जैसा निश्चयकरताहै उसीमें अपना कल्याण मानताहै और जो कदाचित् इस मेरे कहनेसे तुझको शंकाहुईहो तो यही सिद्धांत समझना कि केवलधर्म का फल दृष्टिगोचर नहींहोताहै किन्तु ज्ञानयुक्त धर्म काहीफल प्रत्यक्षहोताहै तो धर्मकरना व्यर्थ है और ज्ञानही करना सार है इसका तात्पर्य्य यहहै कि जो इसलोक में कामनाकेनिमित्त धर्मको करते हैं उनको इसीलोक में फलकी प्राप्तिहोती है क्योंकि धर्मके अनेकमार्ग कहे हैं इससे कभी संदेह करना योग्यनहीं है और उत्तमलोगभी सदैवकहते हैं कि क्रिया कभी निष्फल नहींहोती है, पुत्रादिकी कामना, स्वर्गकीकामना, वेदान्तविचारकी कामना इनतीनोंमेंसे जिसकामनामें पुरुषका निश्चयहोता है उसी में फल की इच्छा करताहै अन्यमें वासना नहींकरता और जैसेजैसे तृणकेसमान

संसारको असारनाशवान् समझाजाता है तैसेहीतैसे सुखदायीवैराग्य बुद्धिमें आताजाता है तब संसारको दुःखमय जानकर बुद्धिमान्लोग मोक्षहोनेके यत्नको करते हैं, यहबात सुनकर युधिष्ठिरबोले कि यह आपनेकहा सो सत्यहै परन्तु अब यहभी कृपाकरके समझाइये कि माता पिता धन पुत्र स्त्री इनसब के नष्टहोनेसे जो शोक उत्पन्नहोताहै उसकी निवृत्ति किसरीतिसे होती है भीष्मजीबोले कि मातापिता धन स्त्री पुत्रादिके नष्टहोनेपर संसारको अनित्य दुःखमय विनाशवान्जान के शोकके दूरहोनेका उपायकरे अर्थात् चित्तसे खेदकोदूर करे इसतुम्हारे सन्देहके दूरकरनेकेनिमित्त ज्ञान का देनेवाला एक प्राचीन इतिहास तुमसे कहताहूं कि पूर्वसमयमें पुत्रकेशोकसे महापीड़ित एकसेनजित नामराजाथा उसको शोकसे महाव्याकुलदेख एक शुभचिन्तक ब्राह्मणने कहा कि हे राजा तू क्या मूढ़ निर्बुद्धियों के समान शोचकररहाहै तेरे शोचकोदेखकर तेरे सब बांधव तेरे भी शोचको करैंगे और हम तुमसब नौकर चाकर इष्टमित्र और जितने स्थावर जंगमजीवहैं सब अपनी अपनी देह और इन्द्रियों समेत वहांहीं जायँगे जहांसे कि आयेथे इससे ज्ञानमार्गमें प्रवृत्त धैर्यवानहोकर शोकको दूरकरो सेनजितबोला कि हे ब्राह्मण वह कौनसे उत्तमज्ञान धर्म तप बुद्धि इत्यादि हैं जिनसे कि आपको कभी शोक नहीं सताता है ब्राह्मण ने कहा कि हे राजा तुम संसार में जितने उत्तम मध्यम निकृष्ट अनेक जीवोंको देखतेहो सब दुःखोंहीं से भरे हैं इससे पंडित बुद्धिमान् पुरुष कर्मकोही दुःखसुखका देनेवाला समझकर कभीहर्ष शोकको नहींकरते इसमेंएक कारणऔर कहताहूं उसको चित्तलगाकर सुनो कि और सदैव चित्त में विचारो कि यह जोजीवात्मा है वह नित्य है अविनाशीहै और ईश्वर का प्रतिविम्बरूपहै वह न तेराहै न मेराहै जो देहका आत्माही अपना नहीं है तो धन पुत्र स्त्री माता पिता पृथ्वी स्थान आदि हमारे कैसे होसक्ते हैं और जब हमसे कोई सम्बन्ध नहीं है तो हमारा उनपर प्रेमभी व्यर्थ है ऐसी बुद्धिके अनुसार ज्ञानहोनेसे हे राजा हमको कभीशोक हर्ष नहींबाधा करते, जैसेकि दोकाष्ठ बहते२ समुद्रमें मिलजाते हैं और फिरजलकी तरंगसे पृथक्२होजाते हैं ऐसेही यह जीवोंका समागम और पुत्र पौत्र स्त्री ज्ञाति बांधव आदिका होनाहै इससे हेराजा यहसब पुत्रादि दुःखकेही हेतु हैं ऐसा जानकर इनमें स्नेह कभी न करना चाहिये और जो तेरापुत्र था वह ईश्वरकेही घरसे आयाथा और वहींफिरि चलागया अबतू किसकाशोच करताहै वह न तुझको जानताहै न तू उसकोजानताहै तो शोचकिसका है अबमैं पूछताहूं कितू अच्युतके प्रतिबिम्बको शोचता है या उसके शरीरको शोचता है जो देहको शोचताहै तो देहजड़है जैसे उसको शोचताहै वैसेहीकाष्ठ पाषाण का भी

शोचकरना चाहिये और जो अच्युतके आभासको शोचकरता है तो वह अच्युत एकही है परन्तु सबजगत् में व्याप्त है, तृष्णासे दुःखहोताहै और तृष्णाके नाशसे सुखहोताहै दुःखके अन्तमें सुख और सुखके अंतमें दुःख इसीप्रकार यहदोनों दुःख और सुख मनुष्यके पीछे चक्रके समान फिरतेरहते हैं इसीकारणसे हे राजा तुमको भी सुखकेअंत में दुःखहुआ है और इसदुःख के पीछे अवश्य तुमको सुखकी भी प्राप्तिहोगी क्योंकि न सदैव सुखरहता है न दुःखरहेगा यह शरीर दुःख और सुखकास्थानहै और मनुष्य जिस जिस शरीरसे जो जो कर्म करताहै उसके फलको उसीउसी देहसे भोगताहै हे राजा ज्ञानी लोग कहते हैं कि यहस्थूल और सूक्ष्मदोनों शरीर संगही उत्पन्नहोतेहैं और अनेकरूप प्रकाश करके संसार में भी साथ ही साथ रहते हैं और संग ही संग दोनों का विनाश भी होता है--जो पुत्ररूपी स्नेह की रस्सी से बँधे हैं वह ऐसे नष्ट होजाते मैंने देखे हैं जैसे कि रेत पर का बँधा हुआ सेतु जल से शीघ्र नष्ट होजाता है स्नेह के कारण तिल के समान कोल्हू में अज्ञानी लोग पिसते हैं उसीप्रकार मनुष्य संसारी स्नेह रूपी भार के द्वारा अज्ञान से उत्पन्न होने वाले क्लेश से पीड़ित होकर इस संसार चक्र में सदैव पीड़ा पाते हैं मनुष्य अपने पुत्र स्त्री आदि के पोषण के वास्ते पाप कर्म को करतेहैं वह दोनों लोक में महादुःखों को भोगते हैं अर्थात् उस कर्त्ता के पाप पुण्यको वह स्त्री पुत्रादि नहीं भोगते वह केवल उसके धनके भोक्ता हैं सब मनुष्य पुत्र स्त्री कुटुम्ब में चित्त से प्रवृत्त होकर ऐसे शोक के समुद्र में डूबे हुये हैं जैसे वृद्ध जंगली हाथी कीच में--और हे युधिष्ठिर धन जाति बांधव आदि के नष्ट होने में दावानल के समान बड़ा भारी कष्ट प्राप्त होताहै यह सवदुःख सुख ऐश्वर्य्य और नाश दैव के आधीन है तात्पर्य्य यह है कि पुत्रादि के नष्टहोने पर उनमें ममता न करनी चाहिये मित्र के साथ विना स्वार्थ के प्रीति और उपकार करने वाला या मित्र के साथ शत्रुता रखनेवाला मित्र, शत्रु, सुबुद्धि, निर्बुद्धि कैसा ही होय दैव से ही सुख दुःखको पाताहै अर्थात् दैव को न माननेवाले धनाढ्य होने पर भी सुख की प्राप्ति में दुःखी होते हैं और दैव को मानने वाले धनाढ्य न होने पर भी लोभ के त्यागने से सुखी होते हैं सुख दुःख के देनेवाले मित्र शत्रु नहीं हैं और धन आदि की प्राप्ति में बुद्धि कारण नहीं है और सुखों के मिलने में धन उपयोगी नहीं है और धनकी प्राप्ति में बुद्धि और नाश में अज्ञानता समर्थ कारण नहीं हैं तत्त्व का जानने वाला इस भोग के योग्य प्रपञ्च की उत्पत्ति और सिद्धान्त को जानता है और जोकि बुद्धिमान अज्ञान शूर भयभीत अल्पज्ञ दूरदर्शी नि- र्व्बल पराक्रमी दैव का माननेवाला है उसको सुख प्राप्त होता है, गौ अपने

बछड़े की है स्वामी की है और चोरकी भी है परन्तु जो पुरुष उसके दूध को पीता है वह निश्चय करके उसी की है तात्पर्य्य यह है कि उसमें दूरकी ममता होना वृथाहै इसी कारण आवश्यकता से अधिक इच्छा न करनीचाहिये जो पुरुष महा अज्ञानी हैं और जिन्हों ने बुद्धिमानों से भी बढ़ कर ऐश्वर्य्य पाया अर्थात् निर्विकल्प समाधि में हैं वे मनुष्य आनन्दपूर्वक वृद्धिको पाते हैं और जो भेद के देखनेवाले हैं वह कष्टको पाते हैं जो पण्डित लोग सिद्धान्तों में रमते हैं वह मध्यमें नहीं प्रवृत्त होते हैं यहां सिद्धांत की प्राप्ति को सुख और सिद्धान्त के मध्य को दुःख समझना योग्य है जो बुद्धि के सुख को प्राप्त करनेवाले हैं और सुख दुःख ईर्षा आदि से रहित हैं उनको अर्थ और अनर्थ आदि से कभी पीड़ा नहीं होती और जो पुरुष बुद्धि रहित अज्ञानता में डूबे हुये हैं वह दुःखों को भी पाते हुये अत्यन्त प्रसन्न होते हैं, अज्ञानी पुरुष अहंकारमें भरेहुये सत् असत् के न जाननेवाले कामादि दोषों से युक्त दूसरे की अप्रतिष्ठा या नाश करने से ऐसे प्रसन्न होते हैं जैसे कि स्वर्ग में देवतों के समूह परिणाम में दुःख रखनेवाले सुख को जानकर दुःख ही ज्ञानसाधन के अनुष्ठान में उत्साहयुक्त सुखका उदय करनेवाला है इसी प्रकार आत्मा आदि लक्ष्मीयुक्त ऐश्वर्य्य के साथ ज्ञानी पुरुष में हीं निवास करते हैं आलस्य युक्तों में कभी नहीं नियत होते दुःख शोकात्मक चित्त का जीतने वाला पुरुष प्राप्त होनेवाले प्रिय अप्रिय सुख दुःख को समान जानकर सहता है पण्डित के सिवाय अज्ञानी पुरुष में प्रतिदिन हजारों शोक भय उत्पन्नहुआ करते हैं और स्वयंसिद्ध ज्ञानी बुद्धिमान् शास्त्र के अर्थों में दोष न लगानेवाला शास्त्रज्ञ शान्तचित्त जितेंद्री पुरुषको शोक कभी स्पर्शनहीं करसक्ताहै ऐसीबुद्धिमें प्रवृत्तहो निष्कामचित्त होकर ज्ञानीपुरुष विचरताहै जो ब्रह्म संसारकी उत्पत्ति स्थिति लय का कारण है उसमें जो लगाहुआ ज्ञानी है उसको शोक कभी नहीं स्पर्श करताहै जिसदेहके किसी अंगके कारण शोक दुःखादि तापहोयँ उस अंगको भी जब कि काटडालना योग्यहै तो स्त्रीपुत्रादि किस गणना में हैं जब कुछ ममता कल्पना कीजातीहै तभी शोक दुःखादि उत्पन्न होते हैं विषयों में से जिस जिस विषयको त्यागता जाता है उस से सुख रूप मोक्षकी प्राप्ति होती है और विषयी पुरुष विषयों के साथ नाश को प्राप्तहोताहै, लोकमें जो विषयादि सुखहैं और स्वर्ग के जो बड़े सुख हैं वहसब मिलकर लोभके त्यागनेपर वैराग्यनाम सुखके सोलहवेंभाग के भी समान नहींहैं, वैराग्यवान् पुरुषको यह जानना चाहिये कि प्रथम देहका कियाहुआ शुभअशुभ कर्मज्ञानी अज्ञानी वा शूरपुरुषको स्वतः सेवन करता है निश्चयकरके इसीप्रकार यह प्रिय अप्रिय सुखदुःख जीवों के चारोंओर

वर्त्तमानहोते हैं इसबुद्धि में प्रवृत्त होकर गुणीपुरुष प्रसन्नहोता है जो सब विषयोंको त्यागकर क्रोधरहित होता है और यह चित्तसे उत्पन्न होकर हृदय में वृद्धिपूर्वक बासकरनेवाला क्रोधरूप जीवों के देह में नियतहोताहै उसको ज्ञानीलोग मृत्युरूप कहते हैं अर्थात् जन्ममरणवाले संसारका द्वारमानते जब इच्छाओंको सबप्रकार से कछुए के अंगों के समान देहमें लयकरताहै अर्थात् वहयोगी हार्दाकाशनाम कारण ब्रह्म में प्रवेश करता है तब यह जीवात्मा सब उपाधियों से रहित उस अपने स्वरूप में जहां केवल आत्माहीका प्रकाश है वहां अखण्ड चिन्मात्रको देखताहै और मायाके आवरणको त्याग करताहै और जब ममता से कुछ कल्पित होता है, तबवह सबदुःखों के निमित्त प्राप्तहोताहै, जब आत्मा में चित्तके लयकरनेपर भयनहीं करता और न इससे कोई भयभीतहोता और इच्छारहित होनेसे किसी से शत्रुता भी नहीं करता है तब ब्रह्मभावको प्राप्तहोता है, सत् असत् शोक हर्ष भय निर्भय प्रिय अप्रियताको अत्यन्त त्यागकरके महाशांतचित्त होता है और जब धीरपुरुष मनवाणी कर्मसे जीवोंमें हिंसाआदि पापोंको नहीं करता है तब ब्रह्मभावको प्राप्तहोता है, जो कुबुद्धियों से कठिनता से भी त्यागनहीं होसक्ती है और जैसे जैसे वहवृद्ध होते हैं तैसे तैसे वहभी दृढ़होती जाती है और जो प्राणान्तक महारोगरूपी तृष्णाकी आधिक्यता है उसके त्यागने से मनुष्य सदैव आनन्दयुक्त रहता है इस विषय में एक पिंगलानाम बेश्या के कहेहुए इतिहासको कहताहूं कि जैसे उसने दुःखके समय में भी सनातन धर्मको पाया उसको सुनो कि जब उस बेश्याको अपने स्थानपर निजप्यारे पुरुषसे वियोग हुआ तब महादुःखीहोकर उसने अपनी आत्मामें शांतिबुद्धिको धारण किया तात्पर्य्य यहहै कि वैराग्यका मुख्यकारण दुःखही है पिंगलाने अपने चित्त में बिचारा कि मैं बहुतकाल से उसनिर्विकार स्वामी ईश्वरको भूली हुईथी जो सदैव हृदय में रमण करनेवाला बिद्यमान अच्युत अनूपरूप कान्त है उसको मैंने अपनी अज्ञानता से ऐसे ढँकदियाथा कि कभीनहीं जानागया एक थूणरूप अज्ञानमें अबिद्यारूप जो यह शरीर है वह अत्यन्त दुःखदायी है उसके नासिकादिक नौओंद्वारोंको मैं अपनी ज्ञानरूपी विद्यासे चारोंओर से ढँकदूंगी तब अपने हृदय के रमण करनेवाले प्यारे कांतको बाहर न जानेदूंगी फिर उस आत्मलाभ से सब इच्छाओंके प्राप्तहोने पर मुझअनिच्छावान्को त्यागनेकेयोग्य वहधूर्त मनुष्य अज्ञानरूप कांत कांताभाव से कैसे ठगेंगे, इसप्रकार से बिदितहोकर अब मैं जागतीहूं तात्पर्य्य यह है कि जिसने तत्त्वको पायाहै वह बिषयों से आकर्षण नहीं होता है और दैवयोग से जो पिछले पापकर्म हैं वह भी नष्टहोजायँ मैं बिषयों से रहित ज्ञानको प्राप्तहुईहूं

इससे जितेन्द्रियहूं जो विषयभोगसे पृथक्है वह सुखपूर्वक सोताहै वही परम सुखहै इसकारण पिंगला भी धनकी आशाको विषयभोग से रहित करके आनन्दपूर्वक सोती है भीष्मजी ने कहा कि हे युधिष्ठिर तब ब्राह्मण के ऐसे सहेतुक वचन सुनकर राजासेनजित आत्मतत्त्व की निष्ठा में वर्त्तमानहोकर वहुत प्रसन्नहुआ ६६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेप्रथमोऽध्यायः १ ॥

दूसरा अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह आशाजीतिकर मोक्षकी इच्छाकरना यह आपने प्रथम अध्यायमें वर्णनकिया अब आपमेरे इससन्देहको निवृत्तकरिये कि जीवोंके नाशकरनेवाले इसकालके मध्यमें वृद्धावस्थाआदि अनेकदेहके रोगोंसे देहके नष्टहोनेपर मनुष्य किसकल्याणको प्राप्तकरे, भीष्मजीबोले कि इसस्थानपर मैंपिता पुत्रके सम्वादवाले प्राचीन इतिहासकोतुझसेकहताहूं कि किसी वेदपाठी ब्राह्मणके पुत्र उत्पन्न हुआ वह बड़ा बुद्धिमान् शास्त्रज्ञ मेधावी जिसका नाम था उसने अपने पिता से यह कहा कि हे पिता जब असत् सत्काज्ञान प्राप्त होजाय तब मनुष्य को क्या करना उचित है यह मुझसे आप वर्णन कीजिये क्योंकि मनुष्यों की आयुर्दा क्षीणहोती चलीजाती है पिताने कहा कि हे पुत्र जो तुमने प्रश्न पूछा वह बहुत उत्तमहै उसको समझ कर मैं कहताहूं तुम चित्त लगाकर सुनो कि ब्रह्मचर्य्यसे वेदोंको पढ़कर पितरोंकी पवित्रताके निमित्त पुत्रोंको उचित है कि अग्नियों को स्थापन करके पुत्रोत्पादन करे फिर विधिपूर्वक अग्नियों में यज्ञ करे तदनन्तर मुनिरूप होकर वनमें वास करें इस धर्म्ममें प्राप्त होनेसे बड़े आनन्द को पाता है पुत्रने कहा कि इसप्रकार मृत्युसे घायलहोने और वृद्धावस्थासे घिरजाने और क्षण क्षणमें अवस्था व्यतीत होनेपर धैर्य्यवान् के समान आप वार्त्ता कहतेहैं यह मुझको आश्चर्य होताहै पिता बोले कि लोक किसप्रकार किससे घायल और किससे व्याप्तहै और कौन सफल होतेहैं पुत्रने कहा कि यह लोकमृत्यु से घायलहै और वृद्धावस्थासे घिराहुआहै बड़े कष्टकी बातहै कि यह अहर्निश व्यतीत होतेजातेहैं तुम क्यों नहीं सावधान होतेहौ और यह दिनरात निष्फल आते जातेहैं अर्थात् अवस्था घटती जातीहै परन्तु मृत्यु नियत नहीं होती अर्थात् क्षण क्षणमें समीप आती जाती है इसको जानकरभी माया जालसे आच्छादित मैं किसप्रकार भ्रमण करता बाटदेखूं बुद्धिमान् मनुष्य को जानना चाहिये कि दिनरातके अन्त में आयुर्दा घटतीजाती है तब वह दिनरातभी निष्फल हैं जब इच्छाकी अपूर्णतामेंही मृत्यु आजाती है तब

बिनजल मछलीके समान कौन सुखको पाताहै सफल कर्म्मोंके फलोंको प्राप्त करनेवाले और आत्मा के विशेष दूसरी ओर चित्त लगानेवाले पुरुष को मृत्यु ऐसे लेजाती है जैसे कि सिंहनी गौके बछड़े को, तुम अब भी अपना कल्याण करो इससमयको व्यर्थ व्यतीत मतकरो क्योंकि मृत्यु करनेके योग्य कर्म्मोंको न करनेपर भी आकर्षण करैगी कलके कामको आज करो और रात्रिके कामको प्रातःकालही करो चाहै किसीका काम होचुकाहो या नहो-चुकाहो मृत्यु मुखफाड़ेही बैठी है कौन जानताहै कि कब किसकी मृत्युहोती है इससे तरुणाईमेंही धर्म्मका अभ्यास करे क्योंकि निश्चय करके जीवन नाशवान् है, धर्म्म करनेसे इस लोकमें कीर्त्ति और परलोकमें सुख की प्राप्ति होती है मोहसे भराहुआ पुरुष पुत्र स्त्रीके निमित्त कर्त्तव्य अकर्त्तव्य कर्म्मोंको करके उनका पोषण करता है उस गृहस्थके नाना जंजालोंमें फँसेहुये पुरुष को मृत्यु ऐसे उठालेजाती है जैसे कि सोतेहुये मृगको सिंह उठा लेजाता है निन्दित बस्तुओंके ग्रहण करनेवाले और इच्छाओं में प्रवृत्त पुरुषोंको काल ऐसे उठालेजाता है जैसे कि पशुको व्याघ्र उठालेजाता है, यहतो किया और यह करनेके योग्यहै यह आधा है और आधाबाकी है इसप्रकार के लोभमें फँसेहुये मनुष्य को मृत्यु अपने आधीन करलेती है कर्म्मोंके फलको आप न पानेवाले और व्यापारी नामसे प्रसिद्ध क्षेत्र वा दूकान आदिमें आसक्त चित्त मनुष्यको मृत्यु अवश्य लेजाती है, अबल सबल शूर भयातुर पंडित और सब मनोरथ न सिद्धहोनेवाले मनुष्य को मृत्यु लेजाती है, जब कि देहमें मृत्यु बुढ़ापा रोग आदि अनेक दुःख लगेहुये हैं तो धैर्य्यवान् के समान कैसे आप वर्त्तमान हैं मृत्यु देहके नाशकेही निमित्त प्रकट हुआहै और बुढ़ापा देहके अंगोंको शिथिल करता है और सब स्थावर जंगम जीव इन दोनों मृत्यु बुढ़ापेसे संयुक्तहैं और स्त्री पुत्रादिमें जो प्रीति है यही मृत्युका मुखहै और जो एकान्त स्थान है वह देवताओं के बन्धनका आलय है और अपने जन समूहोंमें जो प्रीति है यही सदैव बांधनेवाली रस्सी है और शुभकर्म करने वाले इस रस्सीको सदैव काटकर मोक्ष प्राप्त करते हैं और पापी इसको नहीं काटते हैं, जो पुरुष मन वचन वाणी और श्राद्धादिक कर्मोंसे जीवोंको नहीं मारता है न किसीको मारनेकी अनुमति देताहै वह धन और जीवनके नाश करनेवाले जीवोंसे नहीं माराजाता है न उनकी समानताको पाताहै, मृत्यु की आनेवाली सेनाको सिवाय सत्य के कोई पराजय नहीं कर सक्ता है यद्यपि सत्य असत्य का नाश करने वाला है तौ भी सब को असत्य का त्यागनाहीयोग्य है और सत्यहीमें मोक्षवर्त्तमान है इसहेतुसे सत्यव्रतका करनेवाला सत्ययोग में प्रवृत्त गुरू और वेदके वचनोंको प्रमाण माननेवाला

सदैव शान्तचित्त पुरुष उसी सत्यसे मृत्युको भी विजय करसक्ता है देहमें मोक्ष और मृत्यु दोनों वर्त्तमान हैं मोक्ष सत्यसे और मृत्यु असत्य से प्राप्त होती है मैं अहिंसक सत्यवक्ता काम क्रोध रहित सुख दुःख में समान परोपकारी हो हिरण्यगर्भ की समान मृत्युको विजय करूंगा—और देवयान मार्ग में शान्ति यज्ञ के द्वारा प्रीतिमान अर्थात् निवृत्त मार्ग में कुशलहो शान्त चित्त ब्रह्मयज्ञ में नियत उपनिषदों के अर्थ का ज्ञाता मुनियों के बचनोंसे यज्ञकरके चित्त का यज्ञ करने वाला हूंगा—जैसे कि पिशाच अपने देह के त्याग करने से पूजन को करता है उसी प्रकार मुझ सरीखा ज्ञानी विनाशवान् हिंसा युक्त पशुयज्ञों से पूजन करने को योग्य है अर्थात् नहीं है तात्पर्य यह है कि पशु आदि के देह को भी अपनाही देह समझ कर कैसे नाश करूं—जिसका मन वचन सदैव ब्रह्ममें अर्पित हो और तप, त्याग, सत्यभी होय वह ज्ञानी निश्चयकर के ब्रह्मको पाता है—विद्या के समान नेत्र नहीं और सत्य के समान तप नहीं और राग के समान दुःख नहीं और त्याग के समान सुख नहीं है हे पिता जो आश्रमों की परम्परा आपने वर्णन की वह मोक्ष मार्ग में व्यर्थ होती हैं—ब्रह्म में ब्रह्मरूप से उत्पन्न ब्रह्मरूप असन्तान होकर भी ब्रह्मही में उत्पन्न हूंगा सन्तान मेरी मोक्ष वैसी नहीं कर सक्ती है जैसी कि एकांत में स्थित और प्रशंसायुक्त गुरु पूजनादि से होती है-ब्रह्म भाव, सत्यता, शान्तचित्तता, मनबाणी से हिंसा रहित होना, शुद्धभाव इत्यादि से अधिक दूसरा ब्राह्मण का धन नहीं है—इन सब कर्म्मों से पृथक् तुमको धनों से और बांधव स्त्री आदि से क्या प्रयोजन है बुद्धि में स्थित आत्माको खोजो और आप के पिता पितामह आदि कहांगये—भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठिर जैसे इस पुत्र के कहनेके अनुसार उसके पिता ने किया उसी प्रकार तुम भी करो ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षद्धर्मे द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह आप ने जो कहा कि मोक्ष साधन यज्ञके द्वारा धन से होता है और निर्द्धन लोगों को मोक्ष होना कठिनहै यह सुनकर मुझ को आश्चर्य्य हुआ कि धनी और निर्द्धनी जो अपने शास्त्र के अनुसार कर्म करते हैं उन धनाढ्य लोगों का कौन रूप है और किस प्रकार से सुख दुःख की प्राप्ति होती है और निर्द्धनों को भी दुःख सुख की कैसी प्राप्ती है इसको आप वर्णन कीजिये—भीष्म जी बोले कि इस विषय में एक प्राचीनइतिहासको कहता हूं जिस की इस लोक में शान्त वृत्ति जी-

वनमुक्त सम्पाक ऋषि ने वर्णन किया है कि प्राचीन समय में निर्द्धनता से साधारण वस्त्र धारण किये भोजन की अभिलाषा युक्त प्रतिकूल स्त्री से पीड़ामान संसार से वैराग्यवान् किसी ब्राह्मण ने सम्पाक ऋषि से कहा कि इस संसार में उत्पन्न होनेवाले पुरुष को जन्म से ही नाना प्रकार के दुःख सुख सताते हैं जो कदाचित् दैव सुख दुःखके बीचमें इसको प्राप्त करके एक मार्ग में लेजाय तो ऐसी दशा में दुःख पाके सुखी न होय और न सुखपाकर सुखी होना योग्य है चित्त के आत्मारूप होने से सदैव अनिच्छा युक्त भी इच्छावान् होकर धैर्य्य से योगके भारको उठाकर अपने मोक्ष की समानता में नहीं प्राप्त होता है क्योंकि तुम चित्त के जीतनेवाले नहींहो धनस्त्री आदि से रहित चारों ओर को घूमताहुआ सुख को भोगेगा और वही आनन्दपूर्वक सोता और उठता है और अकिंचनहोकर लोक में सुखरूप मोक्ष के समीप निर्विघ्न रहताहै—शत्रुओं से रहित कल्याण रूप मार्ग कठिनता से प्राप्त होता है परन्तु इच्छावानों को सुगम है इस संसार में अकिंचन सिद्ध वैराग्यवान् ज्ञानी के समान मैं तीनों लोक में किसी को नहीं देखता हूं मैंने ज्ञानियों की अकिंचनता को और राजाओं के राज्य को अच्छे प्रकार से तुला में तोला तो अकिंचनता ही गुणों में राज्य से अधिक हुई अकिंचनता और राज्य में यह बड़ी मुख्यता है कि धनी तो ऐसा भयभीत रहता है मानो मृत्यु के मुख में ही वर्त्तमान है और धन के त्यागने से इस अनिच्छावान् विमुक्तके विघ्न, अग्नि, मृत्यु और चोरआदि संकटनहींहोते हैं ऐसीइच्छासे घूमनेवाले शय्यारहित पृथ्वीपर शयनकरनेवाले भुजारूप तकिया रखनेवाले निवृत्त पुरुषको देवतालोग भी अच्छा कहते हैं जो धनवान्, क्रोधवान्, निर्बुद्धि, कुटिलदृष्टि, रूक्ष और पाप मुखपर भृकुटी रखनेवाला दांतोंसे होठोंको काटता क्रोधाग्निसे कठोर बोलनेवालाहोता है वह जो पृथ्वीको भी देनाचाहता है तोभी कौन उसके देखनेकी इच्छाकरेगा जोलक्ष्मीवान्होकर सदैव अज्ञानी को मोहित करताहै उसकेचित्त को लक्ष्मी ऐसे हरलेती है जैसे कि शरदऋतु के बादलको वायु हरलेतीहै तदनन्तर इस धनी को रूप और धनका यह अहंकार होताहै कि मैं बड़ा कुलीनहूं और सिद्धहूं केवल मनुष्यही नहींहूं इनतीनों कारणों से इसकाचित्त असावधानहोता है और उनमें अत्यन्त टक्कर खाया हुआ पिता के संचित धनको खर्चकरके निर्द्धनता से धनआदिकी चोरीको अच्छामानता है उस बेमर्याद अर्थात् जहां तहां चोरी करनेवालेको राजा लोग ऐसे दण्डदेते हैं जैसे कि बहेलिया बाणोंसे मृगको-इसीप्रकारसे इस लोकमें नानाप्रकारकेदैवीदुःख और देहकोस्पर्शकरनेवालेदाहआदि भी मनुष्यको प्राप्तहोतेहैं लोकके धर्म्मको देहआदिके साथ

तुच्छ करके उन अवश्य होनेवाले दुःखों की चिकित्सा बुद्धिसे करे-बिना त्यागके सुख और मोक्षकीप्राप्ति और निर्भयतापूर्वक शयनको भी नहींकरता है और सबको त्यागकर आनन्दपूर्वक सुखभोगता है यह हस्तिनापुर में सम्पाकनाम ब्राह्मणसे मैंने सुनाहै इससे मैंने भी त्यागहीको उत्तममानाहै२३॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेतृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि जो कर्मकेप्रारम्भकरनेकी इच्छाकरनेवाले पुरुषको धन प्राप्त नहो वह धनकेलोभमें भराहुआ क्याकरके सुखकोपावे-भीष्मजीनेकहा कि हानि लाभ प्रतिष्ठा अप्रतिष्ठाको समानकर धनआदिके निमित्त परिश्रम करकेसत्यता, वैराग्यता, आदिमें अनिच्छा जिसपुरुषकीहोतीहै वही मनुष्य सुखीहै-वृद्धोंने मोक्षके निमित्त इनपांचपदोंको कहा है यही स्वर्गधर्म्म और सबसे उत्तम सुखमानाहै यहां एक प्राचीनइतिहासको कहते हैं जिसको कि वैराग्यपूर्वकमनकीने कहाहै कि धनके चाहनेवाले बारम्बार आशारहितहोकर मनकीनाम मनुष्यने कुछशेषधनसे छकड़ेमें जोड़नेके योग्यदो तरुणबैलोंको मोललिया तो वह दोनों बछड़े जुयेके लगने में बड़ेसीखेहुये निकले और एक ऊंटको बैठाहुआ देखकर अकस्मात दौड़े तो वह ऊंट महा क्रोधितहोकर उनदोनों बछड़ोंको उनकेकन्धोंके बीचसे उठाकर बड़ीशीघ्रतासे दौड़ा उसपराक्रमी ऊंटसे उठायेहुये उनबछड़ोंको मृतकहुआ देखकर वह मनकीबोलाकि चाहेजैसा श्रद्धावन् कर्म्म करनेवाला चतुर भी मनुष्यहोय परन्तु बिना दैवके दियेहुये धनको कठिनतासे भी नहीं प्राप्तकरसक्ता प्रथम मुझमनोरथ रहित सावधानचित्त और मनोरथ सिद्ध करनेवाले के इसउपद्रवको जो कि बछड़े और ऊंटकेकारण उत्पन्नहुआहै देखो कि कुमार्गकेद्वारा मेरेबछड़े उछल२ कर ऐसे चले थे जैसे कि किसीने दोनों हाथोंसे तालीबजाई और उसमें कौवा दबजाय अर्थात् काकतालीयन्याय होगया कि मेरेप्यारे दोनोंबछड़े मणिके समान ऊंटके कन्धेपरलटकते हैं इसीको मुख्यदैवकहते हैं उसकीनाहीं में कोई उद्योग और पराक्रम नहींहोसक्ता अथवा जो किसीसमयपर उद्योग भी बनपड़े तो वह भी उद्योग दैवाधीनही होजाताहै अर्थात् उद्योगका फल नष्ट होनेपर उद्योग भी प्रारब्ध सेही सिद्ध होता है इस कारण सुखके चाहने वालेको वैराग्यही प्राप्तकरना उचित है क्योंकि अर्थ साधन की आशाका त्यागनेवाला वैराग्यवान् पुरुष आनन्द से सोताहै-गुरुजनकके स्थान से जानेवाले सर्वत्यागी श्री शुकदेवजीने भी कहाहै कि जो पुरुष सब कामनाओं को प्राप्त करे अथवा त्यागकरे ऐसेस्थानमें सबकामनाओंके मिलनेसे उसको

सर्वत्याग ही अधिकहै-प्राचीन समयमें भी किसीने सबकर्म्मोंके प्रारम्भके अन्तको नहीं पायाहै--अज्ञानीका लोभीदेह जीवन में वृद्धिकोपाता है हे इच्छावान् मन तू सबकर्म्मों के प्रारम्भोंको त्यागकर अन्तर्य्य स्वस्थचित्तता को प्राप्तकर बारम्बार छलेजानेसे दुःप्राप्य वैराग्यको प्राप्तकर हे धनके चाहने-वाले मन जो तुझसे मेरानाश न होसकै तो मेरेसाथ इसप्रकार से क्रीड़ा करके मुझको निरर्थक लोभमें संयुक्त मतकर तेराधन बारम्बारामिला और नष्टहुआ अरेमूर्ख तू कभीभी इसधनकी इच्छाको त्यागेगा यहमेरी बड़ी अज्ञानताहै जो मैं तेरा क्रीड़ारूपीमृग बनाहुआहूं क्योंकि इच्छारहित होने पर कभी कोई भी पुरुष दूसरेकी आधीनी नहीं करसक्ता है पहले और दूसरे किसी मनुष्य ने भी इच्छाके अन्तको नहींपाया है इसकारण मैं सबकर्मों के प्रारम्भको त्यागकरके सावधानहोकर जागताहूं हे काम तेरा हृदय बज्रसा कठोर है जो हजारों अनर्थों से ब्याप्तहोकर भी खण्ड खण्ड नहीं होता है मैं तुझको और तेरेअभीष्टको जानताहूं और तेरे प्रियको भी चाहताहुआ भी मैं आत्मामें सुखको नहीं प्राप्तकरसक्ताहूं और तेरेमूलको भी जानताहूं नि-श्चयकरके तू संकल्प से उत्पन्न होताहै मैं जब किसीबातका भी मनोरथ न करूंगा तो तू मूलसमेत नाश होजायगा--धनकी इच्छा सुखदायी नहीं है उसके कारण बड़ीचिन्ता प्राप्तहोती है जब कि धनजाता है तब मृत्यु के स-मान खेदहोता है देहकी प्रीति त्यागनेसे जो दूसरोंके निमित्त धनको नहीं पाता है उससे अधिक क्यादुःख है जो प्राप्तहोनेसे भी तृप्तनहीं होताहै अर्थात् बारम्बार खोजाही करता है धनलोभको ऐसे बढ़ाताहै जैसे कि तृषाको उत्तम गंगाजल यही तृष्णा मेरा नाशकरनेवाली है हे काम मैं सावधानहूं मुझे छोड़दे जो यह इन्द्रीआदिका समूह मेरी देह में वर्त्तमान है वह चाहे इच्छा-नुसाररहै या नष्टहोजाय परन्तु यहां तुमसरीके कामके लोभियों में मेरीप्रीति नहीं है इसकारणसे कामनाको त्यागकरके सत्यवाले सतोगुण में वर्त्तमानहूं और मैं अपने चित्त और देहमें सबजीवोंको देखताहूं और योग में बुद्धिको शास्त्रमें चित्तको और ब्रह्ममें मनको लगाकर राग द्वेष से रहित निरोग सुख पूर्वक बिहारकरूंगा जिससे कि तुम फिर मुझको इसप्रकारके दुःखोंमें संयुक्त न करोगे क्योंकि मुझ तेरेभ्रमायेहुयेको दूसरी गतिनहींहै हे काम तुम लोभ शोक परिश्रम के सदैव उत्पत्ति स्थानहो मैंभी जानताहूं कि धनके नाश में सबसे अधिक दुःखहै निर्धन मनुष्यकी जातिवाले और मित्रलोग भी निन्दा करते हैं बिनाधनके मनुष्य में हजारों अपमान के साथ कठिन दोषहैं धनमें जो सुखका अंशहै वहभी दुःखमय है धनी पुरुषको चोरलोग नानाप्रकार से भयभीत करके दण्डपूर्वक कष्ट देते हैं यह मैं बहुतकाल से जानताहूं कि धन

की लालसा महादुःखदायी है यह पुरुष जिसजिस कामना में प्रवृत्त होता है उस उसको स्वाधीन करता है--तत्त्वका न जाननेवाला अज्ञानी दुःखसे तृप्त होनेवाला अयोग्य अग्निरूप होताहै तुमसुलभ दुर्लभ दोनोंको नहीं जानते हो पाताल के समान पूर्ण न होनेवाले तुमसुझको दुःखों में डालाचाहतेहो इससे मैं तुझसे मिलनेके योग्यनहींहूं अबधनक्षय और दैवकी इच्छासे वैराग्यवान् होकर परमनिवृत्तिको प्राप्तकरके कामनाओंकी बासना नहीं करताहूं और यहां बड़े बड़े क्लेशोंको सहकर भी अज्ञानता से ऐसे सचेत नहीं होताहूं मानो धनके नाशसे ठगाहुआ महाभारी तपमें प्रवृत्त अंगोंमें शयन करताहूं हेकाम मैं चित्तकी सबवृत्तियोंको त्यागकरके तुमको सबओरसे त्याग करताहूं सो तुम मुझसे कभी स्नेह मतकरो--मैं अपमान करनेवालों की क्षमा और दुःखदाइयोंको कभी दुःख न देकर सबकेप्यारे बचनोंको कहूंगा और यथालाभ सन्तोष करके तुझ अपने शत्रुको कभी न चाहूंगा वैराग्य, सुख तृप्ति,शांति,सत्य दम क्षमा और सबजीवोंमें दयावान होना इत्यादि गुणोंसे सम्पन्न मुझकोजानो इसहेतुसे मुझ मोक्षकामनावालेको काम लोभक्रोधादि में मत प्रवृत्तकरो क्योंकि मैं सतोगुण में बर्त्तमानहूं और काम लोभसे रहित होकर अब मैं बहुत प्रसन्नहूं और अज्ञान व लोभ के कारण दुःखको कभी न पाऊंगा--जो पुरुष इच्छा आदि को त्यागता है वह सुखीहोता है सदैवकाम केही आधीन होनेवाला पुरुष दुःखही पाता है थोड़े रजोगुणमें प्रवृत्त होकर मनुष्य योगइच्छामें चित्तकोचलाताहै और जो दुःखहै वहकाम क्रोधसेउत्पन्न होनेवाला अमित और निर्लज्जहै मैं ब्रह्ममें ऐसेप्रवेश करताहूं जैसे कि ऊष्म ऋतुमें शीतलता हृदयमें दुःखसेरहित कर्मोंकीनिवृत्तिकोपाकर सिद्ध सुखको प्राप्तहोताहूं लोकमें विषयरूप सुख और स्वर्गसम्बन्धी महाआनन्दहै यहदोनों उससुखके षोड़शांशके भी समाननहींहैं जो कि लोभके नाशसेप्राप्तहोताहै मैं सूक्ष्मदेहसे सातवेंकामको बड़ेशत्रुकेसमान मारकर और अविनाशी ब्रह्मलोककोपाकर राजाकेसमान सुखको भोगूंगा ऐसीबुद्धि बर्त्तमानहोकर मनकीने सबकामनाओंकोत्याग बड़ेब्रह्मानन्दमें प्राप्तहोकर वैराग्यकोपाया और निश्चयकरके बछड़ोंके नाशहोने से कामके मूलको काटकर बड़े सुख को भी पाया ५४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेचतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पांचवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि इसस्थानमें इसप्राचीन उपाख्यानकोकहताहूं कि जिसको त्यागवान् राजाजनकने कहाहै कि मेरा पंचकोष लक्षणयुक्तधन अ-

संख्यहै अर्थात् देशकाल बस्तुसेपृथक्है मुझशुद्धआत्मारूपका वहकुछ नहीं है अर्थात् रस्सी में सर्पके समान भ्रांतिके सदृश मुझमें कल्पितहै इसकारण मिथिलापुरीको अग्निमें भस्म होने पर भी मेरी कुछहानि नहींहै इस स्थान पर बोध्यऋषि ने भी यह श्लोक बैराग्यके विषयमें कहाहै उसको सुनो कि राजाययातिने बैराग्यसे शांतिरूप शास्त्रज्ञ,बोध्यऋषि से पूछा कि हेमहाज्ञानी आंतर्य्यस्वस्थताहोनेकेलिये मुझको उपदेशकरो कि तुम किसज्ञानको विचार करके शांत और सुखीहोकर विचारतेहो बोध्यऋषिने कहाकि मैं किसीको न उपदेश करताहूं न आज्ञादेताहूं उसके लक्षणोंको कहताहूं उससे अपनेआपही बिचारकरो कि पिंगलानाम वेश्या, कुररनामपक्षी सर्प बनमें भ्रमरकाघूमना बाणबनानेवाला कुमारी यह छः मेरेगुरूहैं और आशा अथवा विषयभोग बड़े प्रबलहैं और बिषयोंका त्यागनाही बड़ासुखहै—पिंगलाबेश्यातो विषयभोगों को त्यागकर सुखपूर्बक सोतीहै—मांसवाले कुररनाम पक्षीको मांस न खाने वाले पक्षियों से दुःखी देखकर दूसराकुररपक्षी मांसके त्यागनेके द्वारा आनन्दसे वृद्धिको पाताहै—घरका बनाना सदैव दुःखदायी है कभी सुखदायी नहींहोता, सर्प दूसरे के बनाये हुये बिलमेंघुसकर आनन्दसे रहताहै, भिक्षाबृत्ती में लगेहुये मुनिलोग भ्रमरपक्षियों के समान जीवोंसेशत्रुता न रखने के कारण निर्विघ्न रहते हैं बाण बनाने में संलग्न किसी बाणबनानेवाले ने समीप में आये हुये राजाको भी नहीं जाना इसीप्रकार ब्रह्ममें तदाकारहोना चाहिये, बहुत से मनुष्यों में सदैव कलह होती है और दो पुरुषोंका अवश्य बिवाद होता है इसलिये चूड़ी रखदेने वाली कुमारी के समान अकेला ही बिचरूंगा १३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेपंचमोऽध्यायः ५ ॥

छठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे ब्रतज्ञ शोकरहित पितामह ज्ञानीलोग किस ब्रतको करके पृथ्वी में विचरें और इससंसारमें मनुष्य किसकर्म्म को करके उत्तमगतिको पाता है—भीष्मजी बोले कि यहांभी एक प्राचीनइतिहासको कहता हूं जिसमें अजगरबृत्ती मुनिका और प्रह्लादका सम्बाद है—बुद्धिमान राजाप्रह्लाद ने रागद्वेष से रहित किसी दृढ़ चित्त ब्राह्मणसे पूछा कि तुम आत्मनिष्ठ,शुद्ध,मृदु,जितेन्द्रिय,होकर कर्म्मको प्रारम्भ कियेबिना अदोषदृष्टि सत्यबक्ता वाद प्रतिबाद में तत्पर तत्त्वज्ञहोकर भी बालकके समान विचरते होहानिलाभ में दुःख सुख रहित सदैव तृप्त पुरुषके समान किसीवस्तुको प्रिय अप्रिय न मानकर किसीको अपमान नहींकरते हो और कामादिके वेग से

प्रजाओंके लूटनेसे खेदरहित चित्त धर्म्म, अर्त्थ, कामके कार्य्यों में कूटस्थ के समान दृष्टपड़तेहो उसकूटस्थको सुनिये कि धर्म अर्थमें अनियत काम में भी वर्त्ताव न करनेवाले इंद्रियोंके भी विषयको अनादर करके भोजन करते हुये साक्षी के समान जीवन मुक्त होकर बिचरते हो और हे ब्रह्ममुनि आपका तत्त्वदर्शन शास्त्र और उसपर अभ्यास करना क्याहै इसको मेरे कल्याण के अर्त्थ शीघ्रतासे कहिये तब उसशास्त्रज्ञ ऋषिने प्रह्लाद से यह सार्त्थक वचन कहे कि हे प्रह्लाद जीवोंकी न्यूनाधिकता और नाशकोबिना कारण के देखो अर्त्थात् मायाके नाश होनेसे और सब दृश्यमान पदार्त्थोंको ब्रह्ममय होनेसे द्वैतता सिद्ध नहीं होती है इसीसे हर्ष बिषाद रहितहूं सब पदार्थ स्वाभाविक प्रकट होकर वर्त्तमान हैं और सब आत्मसत्ता में ही संयुक्तहैं इस हेतुसे किसी संसारी वस्तुको देखकर प्रसन्न नहीं होता और यही जानें कि यह संसार मिथ्या है इस प्रकारसे तत्त्वदर्शी लोग आत्मभावको सिद्धकरके अन्तर दृष्टिसे भी संसार को अनित्य और मिथ्याकहतेहैं हेप्रह्लाद योगसे वियोग प्राप्त होने वाले मनुष्यों को और अन्त में नाशवान् धनके समूहोंको देखो कि मैं इसी कारण से कहीं चित्तको नहीं लगाताहूं—तीनोंगुणों से संयुक्त जीव मृत्तिकासे स्वरूपान्तर होनेवाले घटके समान नाशवान्हैं इस उत्पत्ति नाशके देखने और जाननेवाले ज्ञानीको कोई बात करने के योग्य नहीं है— दूसरे को भी दृष्टिसे इस संसारको नाशवान् ही प्रसिद्धकरते हैं महा समुद्र के जलमें उत्पन्न होनेवाले सब बड़े छोटे देहवाले जीवोंका भी क्रम पूर्वक नाश देखने में आताहै और हे असुरेन्द्र प्रह्लाद पृथ्वीके भी सब स्थावर जंगमजीवों के भी नाशको सब ओर से देखताहूं और अंतरिक्षचारि पक्षियों की भी मृत्युको देखताहूं पराक्रमी जीवोंकी भी मृत्यु नियत समयपर होतीहै और आकाशके छोटे बड़े नक्षत्रों को भी नियत समयपर पतन होते देखताहूं इस प्रकार जीवोंको मृत्यु वश देखता हुआ सबमें ब्रह्मसत्ता जानकर ज्ञानी होकर आनन्द से सोताहूं और स्वतः मिलनेवाले बड़े ग्रासको भी खाताहूं और कभी बिना भोजन के भी बहुत दिनतक सोताहूं अर्थात् समाधि में वर्त्तमान होताहूं मैं अनेक गुणवाले अन्नोंसे बहुत भोजन फिर थोड़ा २ क्रमसे घटाता हुआ यहां तक कि कुछ भी नहींखाताहूं और इसकी अप्राप्ति में कभी धन खलमांसादि अनेक प्रकारके भोजनोंको भी खाताहूं कभीपलँग पर कभी पृथ्वीपर सोताहूं कभी शय्यामहल में जहां सनसूत्र और कोमल मृगचर्मोंका ओढ़ता बिछाताहूं कभी२ बहुमूल्यवस्त्रों को भी धारण करता हूं दैवइच्छासे प्राप्तहोनेवाले किसीप्रकारके भी वस्त्रोंको त्याग नहीं करता हूं और इसकठिनता से प्राप्तवस्तुको रक्षापूर्वक भी नहीं रखता हूं पवित्रहोकर

इस अजगरव्रतको करताहूं यहव्रत बड़ादृढ़ मृत्युका विरोधी कल्याणकारी शोकरहित अत्यन्त पवित्र ज्ञानियों करके स्वीकृत अज्ञानियों से असेवित और अस्वीकृत है और बुद्धि में सावधान स्वधर्म से नाश न होने वाला सन्धियोग करने वाला दोनों लोकका जानने वाला भय,मोह, लोभ,राग, द्वेष आदिसे पृथक् इस पवित्र अजगर व्रतको करताहूं जिसमें भोजन पान करने की जो फल आदि वस्तु विपरीत दशामें प्राप्त देशकालवाली हैं वह नियत नहीं हैं और जो हृदयका सुखरूप विषयके नानालोभों से सेवन नहीं किया गया है अर्थात् यहकरूं यहकरूं इस लालसासे निरादर युक्त धन न पानेवाले दुःखी मनुष्य को तत्त्वबुद्धी से अच्छे प्रकारसे विचार कर शुद्ध अन्तःकरणसे इस अजगर व्रतको करताहूं इसलोकमें धनके लिये उत्तम अनुत्तम मनुष्योंके आश्रित बहुत प्रकारके दुःखी मनुष्यों को देखकर शान्तचित्तहो सिद्धान्त से इन सुख, दुःख, लाभ, हानि, राग, द्वेष, मृत्यु, जीवनको दैवाधीन देखकर भय राग अहंकारसे रहित धैर्य्यवान् विचारवान् बुद्धि युक्त श्रेष्ठ फलके पानेवाले अजगर सर्पोंको देखकर और शयन भोजनके नियम से रहित स्वाभाविकीय शांतचित्तता नियम व्रतमेंदृढ़ सत्यता, पवित्रतायुक्त सब फलों से रहित प्रसन्न ज्ञानी होकर विषय वासनासे पृथक् चित्त जितेन्द्रिय शुद्ध अन्तःकरण होकर इस अजगर व्रतको करताहूं यह अजगर व्रत सब को इस प्रकारसे प्यारा वर्णन करते हैं और बुद्धिमान् कीर्त्तिचाहने वाले पण्डित जो तर्कशास्त्र के ज्ञाता हैं वह भी इस अतर्क्य आत्मतत्त्वको बहुत प्रकार से उत्तम कहते हैं कि यह प्रत्यक्षादि प्रमाणों से निश्चय होने वाला जगत् अज्ञानी मनुष्योंकी ओर से आत्मा से पृथक् मानागया है तो उस जगत्का हेतुकाल गुण देश आदिसे निश्चय न होनेवाला दोषरहित देश से सम्बन्ध रखनेवालाहै उसकोशास्त्रयुक्तियोंसे विचारकर तृष्णारूपी दोषसेपृथक् होकर मैं मनुष्योंके मध्य में विचारताहूं—भीष्मजी बोले कि इस लोकमें जो महात्मा ज्ञानी पुरुष राग, भय, लोभ,मोह, क्रोधसे पृथक् होकर इस अजगर व्रतरूप क्रीड़ाको करेगा वह सुख पूर्वक विहार करेगा ३७॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेषष्ठोऽध्यायः ६॥

सातवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह अजगर व्रतरूप और आत्मभाव लक्षण वाली प्रतिष्ठा कौनसीहै और भाईबंधु या मणिमन्त्र औषधी आदिकर्म, धन ज्ञान आदिको भी मुझसे कहिये भीष्मजी बोले कि जीवोंकी अहिंसारूप प्रतिष्ठाको ज्ञान समझो इसी ज्ञानको बड़ा लाभकारी लोकमें कल्याण रूप

सत्पुरुषोंने स्वर्गमानाहै ऐश्वर्य्य के नष्ट होनेपर राजाबलि, प्रह्लाद, नमुचि, मंकी आदिने भी ज्ञानसेही मनोरथोंको सिद्धकियाहै उस ज्ञानसे उत्तमकौन पदार्थहै इस स्थान पर उस पुराण कथाको भी कहताहूं जिसमें इन्द्र और काश्यपगोत्री ब्राह्मणका संवाद है किसी अहंकारी धनवान् बैश्यने किसी व्रती काश्यपगोत्री ब्राह्मणको रथकी टक्करसे गिरादिया तबवह गिरकर महा पीड़ामान क्रोधयुक्त हुआ और अधीर होकर बोला कि मैं मरजाऊंगा क्योंकि इस संसारमें विनाधनके जीवन निःप्रयोजनहै उस मरनेकी इच्छा करने वाले मूर्च्छित अचेत लोभी ब्राह्मण शृगालरूप होकर इंद्रने कहा कि सबजीव मात्र और देवता लोग नरयोनि कोहीचाहा करते हैं और नरोंमें भी ब्राह्मण वर्ण को श्रेष्ठ जानते हैं हे काश्यपगोत्री तुम वेदपाठी ब्राह्मण मनुष्यहो इस उत्तम देहको पाकर अज्ञानता से मरने के योग्य हो सब लाभ अहंकारसे संयुक्त हैं अर्थात् वास्तव में सत्य नहीं है यह सत्यश्रुति है तुम सन्तोषी होकर लोभ से ऐसे उत्तम देहका अपमान करतेहो बड़ा आश्चर्य्य है कि जिनके हाथ हैं उनकी यह मनोरथों की सिद्धता देखीजाती है- जैसे कि तुम धनकी इच्छा करते हो उसीप्रकार हम हाथवालों की इच्छा करते हैं क्योंकि हाथ के प्राप्त होने के सिवाय दूसरा कोई विशेष लाभनहीं है हे ब्राह्मण देखो कि हम हाथ के न होने से न तो काँटा निकाल सक्के और न देह में पीड़ा देनेवाले मच्छर मक्खी आदिको मारसक्के हैं हाथ रखने वाले मनुष्य देहमें दंशकरने वाले अनेक दुःखदायी कीटोंको मारते हैं और वर्षाऋतु बरफ और धूपआदिसे अपने को स्थान आदिवनाकर रक्षाकरते हैं औरअन्नवस्त्र शय्या वायु आदिके सुखको भी भोगते हैं और संसारमें पृथ्वी और बैल आदिको स्वाधीन करके भोगते हैं और सवारीमें लातेहैं और अनेक प्रकारके भोग भी हाथों ही के द्वारा अपने स्वाधीन करते हैं हे मुनि जिनके मुखजिह्वा हाथ पैर आदि नहीं होते हैं वही मनुष्य देहके त्यागको करतेहैं तुम इसके योग्य नहीं हो क्योंकि तुम प्रारब्धाधीन न तो शृगालहो न सर्पादिकीड़े न मेढक न किसी पापयोनि में पैदाहो हे काश्यप इतने पदार्थों के होते भी तुम अधै-र्यता करतेहो तुम सबप्राणियोंमें उत्तम ब्राह्मण होकर क्षमावान् क्योंनहींहोते तुममेरी दशाको देखो कि विनाहाथोंके यहकीड़े मुझको काटते हैं और कुछ नहीं करसक्ता मैं इस अयोग्य देहको भी नहीं त्यागसक्ता क्योंकि न जानें इससे भी निकृष्ट कोई पापयोनि में उत्पन्न होजाऊं मैंने पापयोनि में से इस शृगाल देहको पायाहै इससे भी अधिक बहुतसी पापयोनियां हैं--कोई तो जन्मसेही बड़सुखी हैं और कोई अत्यन्त दुःखीहैं इस संसार में किसीको सर्वसुख सम्पन्न नहीं देखताहूं मनुष्य धनवान् होनेके पीछे राजा होनेकी

इच्छा करते हैं राज्यसे देवभावको देवभाव से इन्द्रपदको चाहते हैं इससे तुम धनवान् होकर राजपद इन्द्रपद पानेपर भी सन्तोष नहीं करोगे लोभ ऐसा प्यारा है कि उससे कोई तृप्तनहीं होता--जैसा कि तुममें शोकहै वैसेही प्रसन्नता भी है यही दुःखसुख सबमें हैं इससे विलापकरना व्यर्थ है अर्थात् अपने उत्तम कुलमें बर्त्तमानहोकर आनन्दसे शोकको दूरकरसक्तेहो सबकर्म और कामनाओं की मूलबुद्धिको और इन्द्रियों के समूहको देहमें स्वाधीन करके ऐसे निर्भय होजाओ जैसे कि मनुष्य पिंजरे में पक्षियोंको बन्दकरके उनके भागजाने आदि नहीं सुनाजाता है क्योंकि वास्तव में एकशिर और दो हाथ होते हैं इनके सिवाय जो हैही नहीं तो उसके काटनेका भय भी नहीं है तात्पर्य्य यहहै कि जो तीनोंकाल में अद्वैत है तो भय भी नहीं है निश्चय है कि अज्ञानी पुरुषकी इच्छाकहीं उत्पन्न नहींहोती है क्योंकि वह स्पर्श और देखने सुननेसे भी प्रकटहोती है तुममद्य और लट्वाकूनाम पक्षी के मांसको स्मरण नहीं करतेहो इनसे अधिक कोई भक्षणकी वस्तु कहीं नहीं है हे काश्यप पहले समयमें जीवोंमें जो दूसरे प्रकारके भोजन बर्त्तमान हुये और जिनको तुमने भोजन नहींकिया उन भोगोंका भी ध्यान तुमको नहींहोता है इसमें संदेह नहीं है कि देहके निर्वाहयोग्य भोजन से अधिक भोजनकरने न छूने और न उसके देखने का जो नियम है वह निस्संदेह पुरुषका कल्याणकारीहै हाथ रखनेवालेपराक्रमी धनीलोगोंकोभी मनुष्योंने हीं स्वाधीनकियाहै वहलोग बारम्बारके घात और बन्धनसे दुःखको पातेहुये भी निस्संदेह क्रीड़ायुक्तहोकर प्रसन्नहोते हैं तात्पर्य्य यह है कि होतव्यता से दुःखको न माननाचाहिये बहुतसे भुजाओंके बली शास्त्रज्ञ धैर्य्यवान् मनुष्य निन्दितऔरदुःखरूप आजीविकाकोकरतेहैं और दूसरीभी आजीविकाकरनेकी इच्छाकरतेहैं वहभी अपने कर्मानुसार होतव्यताही गिनीजातीहै देखोम्लेच्छ चांडालभी अपने देहको नहीं त्यागना चाहता है सब अपनी २ योनियों में प्रसन्नहैं हेकाश्यप पक्षाघातसे अयोग्य हाथ रखनेवाले अथवा किसी रोगसे पीड़ामान मनुष्यों से अपनेको सबप्रकार से उत्तम समझो कि तुम देहसे नीरोग सर्वांगधारी उत्तम कुलीन अनिन्दित कलंकरहित बर्त्तमानहो इससे धर्म्म के निमित्तउठो और देहको त्यागनकरो जो तुम मेरे वचनको मानोगे तो विवेकसहित चित्तशुद्धीको पाओगे इससे सावधानहोकर वेदपाठ अग्नि संस्कार सत्यता शान्तता उदारता आदिमें प्रवृत्तहोकर किसीसे ईर्षानकरो- जो कोई वेदपाठी यजन याजन आदि कर्मोंको करते हैं वह शोचरहित क- ल्याणके भागीहोते हैं और अनेक उत्तम यज्ञोंको करके सुखपूर्वक विहार करते हैं शुभनक्षत्र तिथि मुहूर्त्तमें उत्पन्नहोनेवाले मनुष्य सामर्थ्यके अनुसार

यज्ञ दानादि करके सन्तान की इच्छामें उद्योग करते हैं और इसके विपरीत अशुभ नक्षत्रादि में उत्पन्न होनेवाले लोग आसुरी योनि में प्राप्तहोकर यज्ञों से रहितहोते हैं मैंपहिले समयमें पण्डितोंका विरोधी और वेदशास्त्रकी निन्दा करनेवालाथा और अन्वीच्छिकीनाम तर्कविद्या जो सबओरसे पुरुषार्थरहित है उसमें प्रीतिमान् हेतुवचनोंका बोलनेवाला होकर साधुस्वभाव में कारण रूपही वचन बोलताथा और वेदोक्त बचनों के बिरुद्ध कठोर बचन कहने-वाला और वेदबचनों में ब्राह्मणों का उल्लंघन करनेवाला मूर्खता से सब में शंकाकरनेवाला महानास्तिक पण्डिताई में अहंकार करनेवालाथा उसीकर्म के फल से यह शृगालयोनि मुझे प्राप्तहुई है कभी ऐसाभी ईश्वर करेगा कि मैं इस शृगालरूप नीचयोनि से छूटकर मनुष्ययोनि में भी प्राप्तहोजाऊंगा तो मैं यज्ञदान तपसे प्रीतिमान् योग्यायोग्यका ज्ञाता और त्याज्य योग्यको त्यागकरनेवाला होजाऊंगा तब उस आश्चर्य में भरेहुये काश्यपमुनि ने उठकर उससेकहा कि बड़ा आश्चर्य है कि तुम इसयोनि में ऐसे बुद्धिमान् और कुशलहो यहकहकर ध्यानपूर्वक उसको देखा तब देवेन्द्र शचीपति इन्द्रकोजाना और बड़ीविधि से उसका पूजनकिया और पूजापाकर इन्द्र अपने स्थानको गये ५४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेसप्तमोऽध्यायः ७ ॥

आठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि अजगर व्रतकेप्राप्तकरनेमें देहकेअभिमानके दूरकरनेकेनि-मित्त ज्ञानही कारणरूपहै और ज्ञान बुद्धिका ऐसारूपान्तरहै जैसा कि दूध से दहीकारूपान्तर होताहै वह समयपर आपही प्राप्तहोजायगा फिर दानयज्ञ से क्याप्रयोजनहै और हे पितामह जो ज्ञानइष्ट और कियाहुआ तप गुरुकीसेवा आदि बुद्धिकीप्राप्तिकेकारणहोतेहैं उनकोभी मेरेअनुष्ठानके योग्यआपकहिये भीष्मजीबोले कि अनर्थयुक्त बुद्धि के कारणचित्तपापमें प्रवृत्तहोताहै और अपने पापकर्म के कारण नरक भोगना पड़ता है पापात्मा दरिद्रीलोग दुर्भिक्ष से दुर्भिक्ष क्लेशसे क्लेश भयसे भय और मरण से मरणको भी भोगते हैं अ-र्थात् वारंवार उनको सहतेहैं और उत्सव से उत्सव स्वर्ग से स्वर्ग और सुखसे सुखको पाते हैं और जो श्रद्धावान् जितेन्द्री शुभकर्मी हैं वह धनवान् हैं— नास्तिक मनुष्य हाथोंमें हथकड़ी पहरे सर्प हाथी आदि से अगम्य मार्ग में चोरोंसे भयभीत होकर जाते हैं इससे अधिक कौनसा दुःखहोगा—जो पुरुष देवता अतिथियों के प्यारे दानी साधुओं के कृपापात्र हैं वह चित्तको जीत कर योगियों के मार्ग में नियत होते हैं वह योगमार्ग विघ्नरहित योग्य दान

के समान है—मनुष्यों में जिनका धर्म्म सुखका कारण नहीं है वह खेतों में गरमीसे पकेहुये अन्नके समान और पक्षियोंमें मच्छरके समान हैं जिसजिस पुरुषने जोजो कर्म पूर्वमें कियेहैं वही उनके साथ रात्रिदिन बने रहते हैं और शीघ्रता से दौड़ने के समय दौड़ते हैं और नियत होनेवाले साथ नियत होते हैं चलने वाले के साथ चलते हुये प्रतिबिम्ब के समान पुरुषके समान होते हैं पूर्व में अपने २ जैसे २ कर्म्म जिसने किये हैं उनको अकेला ही भोगता है ऐसे कर्मवाले लोगोंको काल पुरुष चारों ओरसे खैंचता है और जैसे कि अपनी २ ऋतुके समयफलफूल फूलतेहैं उसीप्रकार कालभी अपने समय को कभी नहीं चूकताहै अर्थात् कर्मका फल समयपर अवश्य होता है—प्रतिष्ठा अप्रतिष्ठा हानि लाभ नाश उदय प्रारब्ध यह बारंबार होनहारके पीछे रूपोंको बदलते हैं गर्भसे लेकर मरण पर्यंत अपनी आत्मासे उत्पन्न होने वाले पिछले देहके सम्बंधसे दुःखसुखको भोगता है बालवृद्ध तरुण कोई हो जो जिस समय जैसा २ कर्म करता है वह उसी २ दशामें अपने कर्म्मोंके शुभ अशुभ कर्म फलोंको भोगता है जैसे कि गौकाबछड़ा हज़ारों गौओंमें से अपनी माताको पहचानताहै उसी प्रकारसे पिछले जन्मोंका किया हुआ कर्म्म भी कर्त्ताको पहचान लेताहै कीचमें बिगड़ा हुआ वस्त्र जैसे जलसे साफ़होता है इसी प्रकारसे उपबास पूर्वक तप करने वालों को अत्यंत सुखकारी मोक्षरूप फलप्राप्त होताहै—तपोबनके बीच बहुत कालतक कियेहुये तपके द्वारा उन धर्म्मोंसे निष्पाप होने वाले पुरुषों के सब मनोरथ ऐसे सिद्धहोते हैं जिस प्रकार आकाशमें पक्षियोंके और जलमें मछलियोंके चरण दृष्टि नहीं पड़ते उसी प्रकारसे ब्रह्मज्ञानियों की भी गति है अर्थात् वह महा पुरुष ब्रह्मलोकके जानेकी इच्छा नहीं करतेहैं किन्तु उनके शुद्धप्राण ब्रह्ममें लयहोजाते हैं—निन्दा पूर्वक वचन कहनेके अपराधोंको क्षमा करके कुशलतासे अपने योग्य हितको करना चाहिये अर्त्थात् उसकर्मके द्वारा सब बासनाओं के उदयसे श्रेष्ठबुद्धि प्रकट होतीहै २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेअष्टमोऽध्यायः ८ ॥

नवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह ऊपरके आठ अध्यायों में क्रमसे वर्णन कियाहै कि पूर्वावस्थामें इच्छाको त्याग हिंसारहित परिग्रह भिन्न शुभकर्म्म करने वाला ज्ञानी अजगरी ब्रतमें वर्तमान ब्रह्मविद्याका अधिकारी होना और समयपर आत्मतत्त्वका भी वर्णनकर ब्रह्मको अद्वैत प्रतिपादन करके ब्रह्मज्ञानी को ब्रह्म ठहराया फिर कार्य्य कारणके न होनेसे संसारकी उत्पत्ति

को अनहोना मानकर युधिष्ठिरने फिर प्रश्न किया कि हे पितामह यह सब स्थावर जंगम कहांसे उत्पन्न हुये हैं और प्रलयमें किसको प्राप्तहोते हैं इसको आप मुझसे वर्णन कीजिये कि यह सागर आकाश पर्वत बादल पृथ्वी अग्नि वायु समेत संसार किससे उत्पन्न हुआ है जीवोंकी उत्पत्ति और वर्णों का विभाग होकर उनके शौचाशौच धर्म्माधर्म्म विधि किस २ प्रकारसे हुई हैं और जीवोंका जीवात्मा कैसा है और जो मुक्तहुये वह किसमें लयहुये इसलोक से परलोक पर्य्यन्तका यह वृत्तांत वर्णनकीजिये---भीष्मजी बोले कि इसस्थानपर एक प्राचीन इतिहासको कहते हैं जिसमें भृगुजीने प्रश्नकरने वाले भारद्वाज ऋषिसे शास्त्रकोवर्णन कियाहै कि भारद्वाजऋषिनेप्रकाशवान् कैलासके शिखरपर महातेजस्वी भृगुमहर्षिको बैठेहुये देखकर यहप्रश्न किया कि यहसागर बादल पर्व्वत आदि अनेक स्थावरजंगम जीवों सहित संसार किससेउत्पन्नहुआहै और पंचतत्त्व कहांसेहुये औरजीवोंकी उत्पत्तिपूर्व्वक व-र्णनविभागकैसे और कहांसेहुआहै औरशौचाशौच उनमेंकैसे और कहांसे हुआहै और धर्म्माधर्म्म और जीवोंकाजीव क्याहै और जो मुक्तहुये वह किस में लयहुये और होते हैं यह सब इसलोक से परलोक पर्य्यन्त आप मुझसे वर्णनकीजिये-तब भृगुजीने कहा कि सबसे प्रथम मानस नाम प्रकाश जो महर्षियों से जानागया वह आदि अन्त रहित देव दानवोंसे अभेद्य अजर अमर है और वृद्धि क्षय जन्मादिसे रहित सदैव एकरूप अव्यक्तहोकर प्रसि-द्धहै उसीसे जीवोंकी उत्पत्ति और नाशहोताहै तात्पर्य्य यह है कि निर्जीव गुणवाले चैतन्य नहीं होते अर्थात् उसीअव्यक्तदेवने प्रथममहान्तको उत्पन्न किया फिर महान्तसे अहंकारको अहंकारसे आकाशआकाशसे वायु वायुसे अग्नि अग्निसे जल जलसेपृथ्वीको उत्पन्नकिया स्थूलतत्त्ववाले चारप्रकारके जीवोंकी अहंकारसे उत्पत्तिहै जो आकाशादिपांचतत्त्व सबमेंवर्त्तमानहैं वही महातेजस्वीब्रह्मविराट्रूप है जिसके पहाड़ अस्थि, पृथ्वी मांसमज्जा, समुद्र-रुधिर, आकाश उदर, वायु श्वासा, अग्नितेज, नदीनाड़ियां और अग्नि सूर्य चन्द्रमानेत्र आकाश शिर पृथ्वी दोनोंचरण दिशाभुजा हैं यह अचि-न्त्यआत्मा सिद्धोंसे भी कठिनतासे जानाजाताहै और अनन्तनामसे प्रसिद्ध सबजीवमात्रों का आत्मारूप अहंकारमें वर्त्तमान यह विष्णु भगवान् अशुद्ध अंतःकरणवालोंसे कष्ट साध्य सबजीवोंके उत्पन्नकरनेके निमित्त अहंकारको उत्पन्न करनेवाले हैं और इसीसे यह विश्वहुआ यहीतेरे प्रश्नका उत्तर है और दूसराप्रश्न जोतेराहै कि संसार किससेउत्पन्नहुआ उसका उत्तरऊपरही दिया है कि विराट्रूपसे उसमें वर्त्तमानहै उसकामिलना नियतस्थानपर है अथवा सबस्थानपरहै इसका उत्तर फिरदेंगे भारद्वाजने कहा कि आकाश दिशा

पृथ्वी वायुइनका क्या परिमाण है इसको भी मूलसमेतवर्णनकीजिये भृगुजी बोले कि सिद्ध देवताओं से सेवित क्रीड़ायोग्य भवनोंसेयुक्त जो यह आकाशहै उसकाअन्त नहीं है जहांतक कि सूर्यकी किरणें जाती हैं उससेऊपर और नीचे सूर्य्य और चन्द्रमा दृष्टि नहींआते वहांपर देवताही अपने तेजों से सूर्य्यकेसमान प्रकाशवान् तेजस्वी अग्निकेसदृश तेजवान् हैं वह तेजस्वी देवता भी इसआकाशके अंतको नहींजानते हैं एकसे एकऊपर अपने २ तेजोंसे प्रकाशवान् लोकोंसे और अनेक देवताओं से यह आकाशव्याप्त है चौड़ाई का भी प्रमाण अनन्त है इसकोसुनो पृथ्वीके अन्तमें समुद्र और समुद्रके अन्तमें अन्धेराहै, अन्धेरे के अन्तमें जल और जल के अन्तमें अग्नि वर्त्तमानहै रसातल के अन्तमें जल और जलके अन्तमें सर्प्पराज उसके अन्तमें फिर आकाश और आकाशके अन्तमें फिर जल है इसप्रकारसे जल रूप भगवान् दीखतेहैं परन्तु जल अग्नि वायु आदि के मंडलकाअंत देवता भी कठिनतासे जानसक्ते हैं अग्नि, वायु, पृथ्वी तल, वरुण आदि आकाश से होते हैं और तत्त्वों के न देखने से विभागको प्राप्तहोते हैं अर्थात् बास्तव में सब आकाशरूप हैं परन्तु मुनिलोग नानाशास्त्रों में इसप्रकार से इस त्रिलोकी का परिमाण सागर समेत कहते और पढ़ते हैं कि जो अदृश्य और अगम्य है उसका क्यापरिमाण कहनाचाहिये जिसके जानने को देवताओं की भी गतिनहीं है वह अनन्त बिश्वरूप प्रलयकी दशा में योगनिद्रा करके सबको अपने में लयकरता है फिर जागने के समय वृद्धि कोपाता है अर्थात् आदि अन्त मध्यमें भी एकरूप होकरनहीं है अर्थात् ब्रह्मरूपहै दूसराकौन पुरुषहै जो उसप्रकारके ब्रह्मभावको प्राप्तहोकर जानने के योग्यहो अर्थात् कोईनहींहै क्योंकि मृगतृष्णा केबीच रसरूपजल और स्पर्श को कौन करसक्ताहै तदनन्तर उनके स्थूल सूक्ष्मरूपकी नाभि कमल से ब्रह्माजी उत्पन्नहुये वही सर्व्वज्ञ मूर्तिमान् धर्म्मरूपप्रभु पहले प्रजापति सर्वोत्तम हैं भारद्वाजजी बोले कि जो ब्रह्माजी कमलसे उत्पन्नहुये हैं तो उनसे पूर्वहोने के कारण कमल क्यों नहींबड़ा है और आप ब्रह्माजीकोही सबसे प्रथम उत्पन्न होनेवाला कहते हैं इसमें मुझको सन्देहहै भृगुजीने कहा कि मनुष्य देवकी जो मूर्त्ति है उसने ब्रह्मारूपको प्राप्त किया है उसके आसन विधान के निमित्त पृथ्वीही कमलरूप कहीजाती है उस कमल का जो एक भाग आकाश की ओरको ऊंचा है उसका सुमेरु पर्व्वत नाम है उसके मध्य में वर्त्तमान होकर लोकों के स्वामी ब्रह्माजी जगत् को उत्पन्न करते हैं ३८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेनवमोऽध्यायः ९ ॥

दशवां अध्याय ॥

भारद्वाजजी बोले कि हे भृगुजी सुमेरु पर्वतपर वर्त्तमान होकर ब्रह्माजी सृष्टिको किसप्रकार से उत्पन्न करते हैं क्योंकि जीवोंकी उत्पत्ति तो अपने २ वीर्यों से उत्पन्न दृष्टआती है उसमें उसकी क्या ईश्वरता है इसको आप वर्णन कीजिये—भृगुजी बोले कि मानसनाम देवता ने जीवों की रक्षा के निमित्त नानाप्रकार की सृष्टिको मनसे उत्पन्नकिया है अर्थात् वह सत्यसंकल्प है इससे वहां वीर्यकी कुछ आवश्यकता नहीं है प्रथम जलको उत्पन्न किया वहीजल सबजीवों का प्राणरूप है उसीसे सबकी वृद्धिहोती है और उसके विना सबकानाश होता है उसीसे सबव्याप्त है और पृथ्वी पर्वत मेघ और मूर्त्तिमान् जो अन्य पदार्थ हैं सब उसीजल से उत्पन्नजानो भारद्वाजबोले कि यहजल अग्नि, वायु, पृथ्वीआदि कैसे उत्पन्नहुये हैं इस संदेहको आप निवृत्त कीजिये भृगुजीने उत्तरदिया कि हे ब्राह्मण पूर्वकाल में ब्रह्मकल्प अर्थात् ब्रह्मलोक के कल्प के प्रारम्भ में महात्मा ब्रह्मऋषियों के समूह में भी संसारकी उत्पत्ति के विषयमें बड़ा संदेहहुआथा तब आज्ञाहुईथी कि ध्यानयोगमें वर्त्तमानहोना चाहिये यहसुनकर वह ब्राह्मण हृदय कमलकी ओर ध्यानलगाकर निरोधरूप योगमें नियतहोकर स्थिरहो वायुभक्षणके आधार से दिव्य शतवर्ष पर्य्यन्त वर्त्तमानहुये वहां हृदयकमल में हार्दाकाशकेद्वारा दिव्यरूप सरस्वतीजी प्रकटहुई और वेदरूपवाणी उनसबके कानों में पहुंची तो प्रथम हार्दाकाश में गुरुकी युक्तिके द्वारा और स्थूलदेह से भिन्न सूक्ष्म देह के चित्तधारण करने से श्यामरूप अचल अनन्त आकाश जिसमें सूर्य्य चन्द्रमा वायु नहीं है सोताहुआ सा दृष्टआया फिर कुछ अंधकार दूरहोने पर पुरुषको तृष्णायुक्त होनेसे जलकी इच्छाहोतेही जल उत्पन्नहुआ उसी के पीछे वायु उत्पन्नहोती ऐसी दृष्टपड़ी जैसे कि विनाछिद्रका घट विनाशब्द के देखने में आता है उसपात्रको जलसे पूर्णहोतेही वायु शब्दायमान करती है इसीप्रकार जलसे आकाशपर्य्यन्त व्याप्तहोने से शब्दायमान वायु समुद्रतलको फाड़कर उछलती है और समुद्रकी पूर्णता से उत्पन्न होनेवाला वायु आकाश स्थानको पाकर चारोंओरको घूमता है और कहीं शांतीको नहीं पाताहै फिर उसवायु और जल के बढ़ने से प्रकाशवान् तेजस्वी और पराक्रमी ऊंचीशिखा रखनेवाला अग्नि आकाशको अंधकारसे रहितकरके उत्पन्नहुआ वह अग्नि वायुसे मिलकर जलको आकाशकी ओर उछालताहै और वायु के ही योगसे वह अग्नि बादल रूप होजाता है उस आकाश में जानेवाले जलका जो दूसरा रसनीचे को वर्त्तमान होताहै वह अग्नि वायुसे संयुक्त

होकर पृथ्वीरूप होजाताहै---यहां सबरस गंधादि और जीवोंके उत्पत्ति स्थानको सब वस्तुओंकी उत्पन्न करने वाली पृथ्वी समझो १७॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे दशमोऽध्यायः १०॥

ग्यारहवां अध्याय॥

भारद्वाजबोले कि जो यह पांचधातु पंचतत्त्वों में ब्रह्माजीने प्रथम उत्पन्न किये उन्हीं महाभूतोंसे यह सबलोक आच्छादित है इसमें संदेहहै कि जब ब्रह्माजीने हजारोंभूतों को उत्पन्न कियाहै तो केवल पांचही भूतों का होना कैसे सिद्ध हुआ अर्थात् ब्रह्माजी के उत्पन्न किये हुए आकाशादि पंचधातु स्वप्न के समान मध्यवर्त्ती हैं वह अपनी मर्य्यादा से अलग होकर बाहर के लोकोंके ढकनेवाले कैसे होसक्ते हैं अर्थात् किसीप्रकारसे नहीं होसक्ते भृगुजी बोले कि जो अत्यन्तता से रहित हैं उनके लिये महाशब्द नियत हैं उनसे जीवों की उत्पत्ति होती है इसी कारण वह महाभूत कहे जाते हैं देह की चेष्टा बायु छिद्र आकाश उष्णता अग्नि रुधिरआदि सब जलहैं और मांस अस्थि आदि कठोर वस्तु देह में पृथ्वी है इन हेतुओं से देहपञ्चतत्त्वात्मक कहाजाता है इन प्रकारों से सब स्थावर जंगम जीव पञ्चभूतों से संयुक्तहैं-- श्रोत्र घ्राण रसना स्पर्श दृष्टि आदि सब इन्द्री हैं भारद्वाज बोले कि जो स्थावर जंगम जीव पञ्चभूतात्मकहैं तो स्थावर जीवों में भी पञ्चतत्त्व दृष्ट पड़ते हैं या नहीं उष्णता और चेष्टा से रहित ठोस वृक्षों के देह में पांचधातु मुख्यतासे मिलती हैं वह वृक्ष न देखते हैं न सुनते हैं न गन्ध रस आदि के अज्ञानने वालेहैं वह कैसे पञ्चतत्त्वात्मकहैं, जल अग्नि पृथ्वी वायु और आकाश योंका भाव न होने से वृक्ष पञ्च भूतात्मक नहीं मालूम होते हैं, भृगु जी बोले कोकि ठोस वृक्षों में भी आकाश निस्सन्देह है क्योंकि सदैव उन में फल फूल प्रकट होतेहैं तात्पर्य्य यह है कि उन में फल फूलों की प्रकटता और रस का गमना बिना आकाश के असम्भव है और ऊष्मा से छाल और फल फूल कुम्हलाते हैं और गिरते हैं इस कारण स्पर्शेन्द्री भी उनमें वर्त्तमान है—हवा अग्नि और बिजली के शब्दों से फल फूल गिरते हैं इस कारण उन में श्रवणेन्द्री भी है क्योंकि शब्द के सुनने से ही फल फूलों को गेरते हैं—लता वृक्षों से लिपटती है और सब ओर को जाती है और दृष्टि के बिना मार्ग नहीं है इससे वृक्षादि में चक्षुरिन्द्री भी है उसी प्रकार पवित्र अपवित्र गन्धि और नाना प्रकार की धूपों से ही नीरोग होकर पुष्पित होते हैं इस हेतु से वृक्षों में घ्राणेन्द्री भी वर्त्तमान है जड़ों से जल के पीने और रोगों के देखने से और रोगों की चिकित्सा होने से वृक्षों में रसनेन्द्री भी वर्त्तमान है जैसे

कि कमल अपने नाल से ऊपर को जल खींचता है उसी प्रकार वृक्षभी वायु के योगसे अपनी जड़ों के द्वारा जल को पीता है और सुख दुःख होने और खण्डित शाखा उत्पन्न होने से वृक्षों में जीवों को देखता हूं इस निमित्त उन में जड़ता नहीं मालूमहोती उसके पिये हुये जल को वायु और अग्नि पचाती हैं और आहारके रस से कोमलता और अंगों की दृढ़ता प्राप्त होती है सब जंगम जीवों के देहों में पांच धातु पृथक् पृथक् नियत हैं उन्हीं से देहों की चेष्टा होती ही है त्वक् मांस अस्थि गुदा नाड़ी इन पांचोंका एकत्वरूप देह में पृथ्वी है उसी प्रकार देहधारियों की देह में अग्नि, तेज, क्रोध, ऊष्म चक्षु, जठराग्नि यह पांचों अग्नि रूप हैं कान, नाक, मुख हृदय अन्नआदि का कोष, प्राणियों के देह में यह पांचों धातु आकाश तत्त्व से उत्पन्न हैं — कफ, पित्त, पसीना, मज्जा, रुधिर यह पांच प्रकार के जल सदैव प्राणियों के देह में वर्त्तमान होते हैं और प्राणी जैसे प्राण से चेष्टा आदि करता है उसी प्रकार वक्तृत्व शक्तिसे प्राप्त होनेवाले उद्योग को भी करता है, अपान चला करता है समान हृदय में वर्त्तमान है उदान से श्वास लेता है और कण्ठादि स्थान के विभाग से वार्त्तालाप करता है इस संसार में यह पांचों इन्द्रियां देह धारियों में चेष्टा करतीहैं—जीवात्मा घ्राणेन्द्री रूप पृथ्वी से गन्धि के गुणों को जानता है और रसना जल से रस को जानती है और चक्षुरिन्द्री से रूप का ज्ञान होता है स्पर्शेंद्री से वायु के द्वारा स्पर्श का ज्ञान होता है रूप रस गंध स्पर्श शब्द ये आकाशादि पञ्चतत्त्वों के गुण हैं और गंध के गुण जो ब्योरेवार वृद्धों ने वर्णन किये हैं उनको भी विधिपूर्वक कहता हूं कि इष्ट अनिष्ट गंध मधुर कटु निर्हारी सहत स्निग्ध रूक्ष विशद यह गंध सम्बंधी नवगुण पृथ्वीके हैं—अग्निनेत्रोंसे देखताहै और वायुसे स्पर्शको जानताहै और शब्द स्पर्शरूप रस यह भी गुण पृथ्वी में कहे हैं अर्थात् जो मुख्यपांचगुणहैं उनमें से रसकेगुण मुझसे सुनो उसरसको प्रसिद्धबुद्धी ऋषियोंने अनेक प्रकारसे कहाहै मधुरलवण तीक्ष्ण कषाय अम्लकटु यह जलरूप रस छः प्रकार के हैं और शब्द स्पर्शरूप इन तीनगुणों से युक्त अग्नि कहीजाती है ज्योतिरूप के द्वारा देखने से रूप अनेक प्रकार के हैं-लघु, दीर्घ, स्थूल, चतुष्कोण, सूक्ष्म गोल, श्वेत, कृष्ण, रक्त, नीला, पीला, हरित, कठोर, चिक्कण, स्वच्छ, श्लक्ष्ण, पिच्छल, मृदु, दारुण यह सब गुण अग्नि के हैं और स्पर्शगुण भी बहुत प्रकार काहै उष्ण शीत सुखरूप दुःखरूप स्निग्ध विशद तीक्ष्ण मृदु चिक्कण लघुअति विस्तृत और वायुके मुख्यगुण शब्द और स्पर्श हैं उन्हींके यह ग्यारहभेद हैं इसी प्रकार आकाश में भी केवल शब्द ही एक गुणहै परन्तु उस एकके भी बहुत भेदोंको कहताहूं-खर्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, धैवत, पंचम, निषाद

यह आकाश से उत्पन्न होनेवाले सातगुण हैं वह अपने ऐश्वर्य अर्थात् व्यापकता से पटहादि बाजों में भी वर्त्तमानहै मृदंग शंख भेरी बादलकी गर्ज्जना रथ जड़ चेतनका भी जो कोईशब्द सुनाजाताहै वह इन्हीं के अंतर्गतमें समझो इसप्रकार से आकाशजन्य शब्द बहुत प्रकारका कहाजाता है इनहवाके गुणों के द्वारा आकाश से उत्पन्न होनेवाला शब्द कहा है इन रुकावटों से रहित हवाकेगुणों से शब्द जानाजाताहै और भित्ति आदिकी रुकावटसे वहशब्द नहीं सुनाईदेता है और छाल आदि वस्तु गोलकरूप इन्द्रियोंकी धातुसे सदैव स्पर्शकोपाते हैं और जल अग्नि वायु यह सदैव देहोंमें जागते हैं यही तीनोंदेहकेमूलहैं और प्राणको आश्रय करके इसलोक में वर्त्तमान हैं ४४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्म्मेएकादशोऽध्यायः ११ ॥

बारहवां अध्याय ॥

देह और इन्द्रीआदिका पंचतत्त्वरूपहोना वर्णनकिया अब ज्ञान क्रिया शक्तिवाले विज्ञान और प्राणका भी पंचतत्त्वरूप होना वर्णन करते हैं क्योंकि वह चैतन्यआत्मासे पृथक्‌है यह सुनकर भारद्वाजनेकहा कि हे भृगुजी आप इसको सिद्धकरिये कि देहमें निवासकरनेवाली अग्नि पंचभूत रूप देहको पाकरकिसप्रकार से प्रकटहोती है और प्राण भी उस देहको पाकर स्थानभेद से किसरीति से देहको चेष्टित करता है भृगुजीबोले कि हे निष्पाप ब्राह्मण मैं उस हवाकी गतिको तुझसे कहताहूं जो प्राणियों के देहको चेष्टित करतीहै कि अग्नि और चैतन्य विज्ञान और प्राणोंकी ऐक्यतारूप जीवहै वही सब जीवोंका आत्मा सनातन पुरुष है अर्थात् उपाधि युक्त होनेसे जीव और निरुपाधि होनेमें ब्रह्मरूप है वही जीवोंका चित्त बुद्धि अहंकार और विषयरूप होजाता है इसप्रकार से वहदेह प्राणसे चेष्टा करताहै और जीवन प्राप्तहोने के पीछे समाननाम वायुसे चेष्टित कियाजाता है वह समानवायु अपनी गति में समानरूप होकर प्राण जठराग्नि में वर्त्तमानहो अन्नको परिपाक कर उसके रसको अपने २ स्थानको पहुंचाताहै और अपानरूप होकर गुदा और शिश्नेन्द्री में प्राप्त होकर मूत्रपुरीष को जारी करता हुआ घूमताहै और उसी प्रकार कण्ठमें रहनेवाला उदान और सबशरीर में फिरनेवाला व्यान भी वर्त्तमान है वह समान वायु से चेष्टित मांस आदिमें व्याप्त जठराग्निरस धातु दोषको विपरीतरूप करता नियतहोताहै और अपान प्राणके मध्यमें उनदोनोंके योगसे समान प्राप्त करनेवाले प्राणसे क्रोधाग्नि और नाभिमंडल में नियत जो है जठराग्नि वह अन्नआदि को अच्छे प्रकारसे परिपक्व करता है

वह पकाहुआ अन्न इसप्रकारसे शरीर में व्याप्तहोता है कि मुखसे लेकर वायुतक जिसके अन्तमें गुदाइन्द्री है वही प्राणके चलने का मार्ग प्रसिद्धहै उसबड़े मार्गसे दूसरे अन्य प्राणमार्ग उत्पन्न होतेहैं और जीवोंके देहमेंव्याप्त होकर नियतहोते हैं उनमार्गों से सब अंगोंमें प्राणोंके पहुंचने से उनप्राणों समेत घूमनेवाली जठराग्निका भी मेलहोताहै तबवहां ऊष्मासे अग्निजानना योग्यहै वहीदेहधारियोंके अन्नको पचातीहै, प्राणोंके परस्परमें सन्निपातहोने से सन्निपात उत्पन्नहोता है जबअग्निके वेगसे चलनेवाला वायु गुदाकेपास टक्करखाता है तब प्राणऊपरको आकर अग्निको उछालता है तात्पर्य्य यहहै कि प्राणके रोकनेकेद्वारा जठराग्निका भयदूर होता है इससे प्राण रोकने के योग्यहैं क्योंकि जठराग्निके रुकनेसे सब इन्द्रियोंका रुकना होताहै इसको कहते हैं कि पक्व अन्नका स्थान नाभिके नीचे है और कच्चेअन्न का स्थान नाभिकेऊपरहै और देहकी नाभिके मध्यवर्त्ती जठराग्निमेंसबइन्द्रियां वर्त्तमान हैं इसीप्रकार सब रस हृदयसेतिरछे और नीचे ऊपरको चलतेहैं और दशप्राणों सेलगीहुई नाड़ियांअन्नके रसोंको लेजातीहैं यह मुखसे लेकर वायु इन्द्रीतक योगियोंकामार्गहै जिसकेद्वारा उसपरमपदको प्राप्तहोते हैं परिश्रमको विजय करनेवालेजिनसमदर्शी पण्डितोंने सुषुम्ना नाड़ीके मार्गसे मस्तकको पाके वहांआत्माकोनियतकियाहै इसीप्रकार प्राणधारियोंकेप्राण अपाननाम होकर सबमार्गोंमेंप्राणनिरोध रूप योगमें वर्त्तमानहैं इसका अनुष्ठान करनेसेब्रह्मऐसे अच्छेप्रकारसे प्रकाशकरताहै जिसप्रकार थालीमेंरक्खीहुई अग्निहोतीहै १७॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे द्वादशोऽध्यायः १२ ॥

तेरहवां अध्याय ॥

भारद्वाज बोले कि जो वायुही जीवनमूलहो चेष्टाकरती है श्वासलेती है बोलती है तो जीवनका होना निरर्थक हुआ और जठराग्नि अग्निरूप है और उससेही अन्नपचता है और अग्निही उसको पचानेवाली है इसकारण से भी जीव निरर्थक है जब मृतकदेह में जीवनहीं रहता है तब वायु भी उस को त्यागदेती है और ऊष्माका नाशहोजाता है जो जीव वायुरूपहै अथवा उसवायु से उसकायोग है और वायुमण्डल के समान दृष्टपड़नेवाला है उस दशामें वहजीव हवाओं के साथ प्राप्तहोगा और वायुको प्रधान रखनेवाले इसतत्त्व समूह से उसका योगहै इसकारणसे भी वह इससे पृथक् है और देह के नाशहोनेपर वह इसप्रकार तत्त्वरूप है जैसे कि समुद्रमें तांबा पत्थरआदि गिरने में पत्थर से पृथक् तांबाही जल के ऊपर दृष्टआता है जीव ब्रह्मका अंशहै इससंदेहको निवृत्त करतेहैं कि कूपमें जलडाले और अग्निमें दीपक रक्खे जैसे कि इनदोनोंका नाशहोता है उसीप्रकार यहभी नाशको पाता है

तात्पर्य्य यह है कि देहके नाशहोनेपर ब्रह्ममें प्राप्तहोनेवाले जीवके स्वरूपका नाश ऐसेहोता है जिसप्रकार समुद्रमें नदियों के रूपका नाशहोता है-इस पंचतत्त्वात्मक देहमें जीवकहां से पृथक् है उनपांचोंमें से एकका नाशहोने से जैसे चारोंकी स्थिति नहीं रहती है वैसेही इसजीवका भी नाशहोजाता है तात्पर्य्य यह है कि पंचतत्त्वका समूहही जीव है जो भोजन न करने से शीघ्र नष्टताको प्राप्तहोता है और श्वासरोकने से वायु और वायुस्थानों के रोकने से आकाश नाशको प्राप्तहोता है और भोजन न करने से अग्निका नाशहोता है और नानाप्रकारके रोग और क्लेशोंसे पृथ्वीकी न्यूनता होती है उन्होंमें एकके भी पीड़ामान होनेपर संघात अर्थात् देहके तत्त्वआदि ना शको पाते हैं उन पंचतत्त्व के पृथक् २ होनेपर जीव न सुनता है न चेष्टा करता है न कहता है इससे ज्ञातहुआ कि संघातही जीव है इसकारण पर-लोकआदि नहीं है तो दानआदि भी करना वृथाहै इसको कहते हैं कि जो इस संकल्प से कियाजाता है कि यह गो मुझपरलोक निवासीको तारेगी यहकहकर जो जीवमरता है वह किसको तारेगी जब गोदान देनेवाला और लेनेवाला दोनों समान हैं वह इसीलोक में नाशको प्राप्तहोते हैं उन्होंका मिलाप कहां होसक्ताहै--पक्षियों के खायेहुये और पर्वतों से गिरेहुये और अग्निसे भस्मीभूतोंका फिर जीवन कहांसे होसक्ताहै जैसे कि जड़से टूटेहुये वृक्षनहीं जमते हैं तो उसके वीजही वृक्षके स्वरूपको धारण करते हैं परन्तु मृतक फिर जन्म नहीं लेताहै सबसे पहले समयमें केवल वीजहीको उत्पन्न कियाथा जिसने कि इस देहरूपको प्राप्तकिया मृतक से मृतक नहींजीते परन्तु वीजसे वीज वर्त्तमान होता है १५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेत्रयोदशोऽध्यायः १३ ॥

चौदहवां अध्याय ॥

भृगुजीबोले कि जीवका दानका और कर्म्मका नाशनहीं है सदैवप्राणी दूसरे देहको पाता है और पूर्वदेहका नाशहोता है देहमें वर्त्तमानजीव उस देहके नाशहोने में नाशको नहीं पाताहै जैसे कि काष्ठ के भस्महोजाने से अग्निदृष्ट नहीं पड़ती उसीप्रकार जीवभी देहके नष्टहोनेमें दिखाई नहींदेता तात्पर्य्य यहहै कि केवल दृष्ट न पड़ने से वस्तुका नाशमानना योग्यनहीं है भारद्वाजबोले कि जैसे अग्निका नाशनहीं होता उसीप्रकार उसका भी जैसे नाशनहीं होताहै उसको मैं कहताहूं कि इंधनके जलजानेसे वह अग्निनहीं रहताहै, इससे मैं जानताहूं कि जिसका गवन, रूप और नियत स्थान नहींहै तो इंधनसे पृथक् वह बुझीहुई अग्नि नाशको पातीहै, भृगुजी बोले कि जैसे

काष्ठके भस्म होनेपर अग्नि नहीं मिलती और रक्षा स्थानसे रहित आकाशमें प्राप्त होनेसे कठिनतासे ग्रहण करने के योग्यहै उसी प्रकार देहके त्याग करने पर आकाशके समान वर्त्तमान जीव सूक्ष्मतासे ऐसे नहीं पकड़ा जाताहै जैसे कि काष्ठके अंतर्गत अग्नि को नहीं पकड़सक्के—अग्नि रूप विज्ञान प्राणोंको धारण करता है उसी विज्ञान रूपको जीवजानना चाहिये-वायुसे नियत रहने वाली अग्नि श्वासके रोकनेसे दृष्टिसे गुप्तताको पाताहै उस शरीराग्नि के गुप्त होनेपर जड़रूप पड़ाहुआ देहपृथ्वी रूपको पाता है उसकीलय रूपस्थान पृथ्वी है उसी प्रकार सब स्थावर जंगम जीवोंकी वायु आकाशके पीछे चलतीहै और उस वायुके पीछे अग्नि चलतीहै उन तीनोंके एक होनेसे दो पृथ्वी पर नियत होतेहैं जहां आकाश है वहां हवाहै और जहां हवाहै वहां अग्नि है वह तीनों दृष्टिसे अलक्ष हैं इस कारण उनका नाश जानना कठिनहै इसी प्रकार जीवभी अरूपहै तो उसका नाशकैसे निश्चय करसक्केहैं भारद्वाज बोले कि हे निष्पाप जो देहोंमें पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाशहैं तो उनमें जीव कैसे लक्षणवाला है इसको आप समझाइये और जो प्राणियोंके देहोंमें पंचभूत रूप पांच विषयोंसे संयुक्त पंचज्ञानोंसे चैतन्य जीवहै उसकी मुख्यताको मैं जानना चाहताहूं और मांस मेदा नाड़ी और अस्थियों के समूह वाले देहके नाश होनेपर जो जीवनहीं पाया जाताहै और पंचतत्त्वसे मिलाहुआ देह चैतन्य नहींहै उस दशामें देह और चित्तके खेदमें कौन उसपीड़ाको जानताहै और जोकहते हैं कि जीव सुनता है परंतु वह चित्तके व्याकुल होनेमें कानोंसे नहीं सुनताहै इस कारण जीव निरर्थक है,चित्त संयुक्त सब मनुष्य नेत्रसे दृष्ट पड़ने वाली वस्तुको देखतेहैं और चित्तकी व्याकुलता में देखतीहुई आंखें भी उसको नहीं देखती हैं फिर निद्राके वशीभूत होकर न देखता न सूंघता न सुनता न बोलता न रसके स्पर्श आदिको जानताहै इस देहमें कौन क्रोध करता कौन शोच करता कौन भयकरता कौन प्रसन्न होता कौन इच्छा करता कौन ध्यानकरता कौन शत्रुता करता और कौन बात करताहै भृगुजी बोले कि इस देहमें पंचतत्त्वसे पृथक् कोई वस्तु नहीं है केवल अन्तरात्माही देहकी चेष्टा करताहै वही रूप रस गन्ध स्पर्श शब्द आदि गुणों को जानता है और पूर्व में जो कहआये हैं कि चित्त के व्याकुल होने में नहीं सुनता है उसपर कहते हैं कि पांचगुणयुक्त जो अन्तरात्मा है वह पंचतत्त्वात्मक देह में सब जगह वर्त्तमान है वही इस देहके सुखदुःखों को जानताहै उसके वियोग से देहको कुछज्ञान नहीं होताहै तात्पर्य यह है कि सुषुप्ति और समाधि में चित्त आदि देहमें रहते हैं परन्तु बिना अन्तरात्मा के अपना काम नहीं करसक्केहैं जब कि रूप

और स्पर्श नहीं होता न अग्निमें उष्णता होतीहै तब आग्निके शान्तहोने और देहके त्यागहोजानेपर अन्तरात्माका नाश नहीं होताहै--अब स्थूलशरीर के नाशको कहकर सूक्ष्म शरीरके नाशको कहते हैं कि यह सब दृश्यमान पदार्थ जलरूप हैं और जल शरीर धारीकी मृत्युहै उन जलरूपों में चित्त सम्बन्धी आत्मा ब्रह्मा आदि सबजीवोंमें लोकका उत्पन्न करने वाला है वही प्रकृतिके गुणोंसे संयुक्त क्षेत्रज्ञ कहलाता है और मायासे रहित होकर परमात्मा कहाजाता है उस आत्माको सब लोकों का सुखरूप जानो वह स्थूल सूक्ष्म शरीरमें ऐसे वर्त्तमान है जैसे कि कमल पर अम्बुकण होताहै,तुमअर्थ वाले परमात्माको सदैव सुखरूप जानो और इन सतोगुण रजोगुण तमोगुण को जीवके गुणजानो तात्पर्य्य यहहै कि आवरण प्रवृत्ति प्रकाश आदिका अभिमानी जो क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीवात्माहै वही परमात्माहै जीवको भोग सामग्री को चैतन्य के साथ रखतेहैं और जो जीवका गुणचेष्टा करताहै उसको सर्वात्माब्रह्म चेष्टा देताहैवह कैसाहै कि क्षेत्रके जाननेवाले ज्ञानी उसको इस जीवसे उत्तम अर्थात् असंसारी कहते हैं उसीमें सातों भवनोंको उत्पन्न करके अपनेसे व्याप्तकिया है यह अज्ञानियों ने मिथ्याकहा है कि देहके नाश में जीवका नाश नहीं है—अर्थात् मृतक होकर जीव दूसरे देहमें प्रवेश करता है उसका देहका त्यागनाही मृत्यु रूपहै परन्तु उसका नाशनहीं है इस प्रकार अज्ञान से ढकाहुआ सबभूतोंमें अर्थात देह इंद्रियों आदिमें व्याप्त होकर घूमताहै वह तत्त्वदर्शी ज्ञानियों की सूक्ष्म और उत्तम बुद्धिके द्वारा देखाजाताहै रात्रिदिन योगमें आरूढ़ अल्पभोजी शुद्धान्तःकरण ज्ञानी उस अबिनाशी आत्माको आत्मा हीमें देखताहै, चित्तकी शुद्धतासे शुभअशुभ कर्मोंको त्यागकर के शुद्धान्तःकरण ज्ञानी आत्मामें नियत होकर आनन्द रूप मोक्षको पाताहै—सबजीवों की देहमें चित्तसे प्रकट होने वाला अग्नि अर्थात् प्रकाशरूप परमात्मा पुरुष जीव कहाजाता है— यह ब्रह्मसृष्टि ब्रह्मज्ञानके निश्चय करनेके निमित्त प्रकट हुईहै ३१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेचतुर्दशोऽध्यायः १४ ॥

पन्द्रहवां अध्याय ॥

भृगुजी बोले कि जीवों की उत्पत्ति आदिको कहकर अबवर्णों के विभागों को कहते हैं यहां पहले कहा है कि चित्त की शुद्धता से मोक्ष को पाता है और चित्त की शुद्धी अपने धर्म का फल है इस कारण भृगुजी ने धर्म का वर्णन करना चाहा और कहा कि पहले ब्रह्माजी ने अपने तेज से सूर्य्याग्नि के समान तेजस्वी ब्रह्मनिष्ठ सनकादिक और मरीचि आदि प्रजापतियोंको

उत्पन्नकिया फिर स्वर्गकी प्राप्ति के लिये प्रभुने सत्य धर्म तप सनातन वेदके आचार शौच आदिको विचारकिया—तिस पीछे देवता दानव गंधर्व दैत्य असुर महाउरग यक्ष राक्षस नाग पिशाच और मनुष्योंको उत्पन्नकरकेब्राह्मण, क्षत्री,वैश्य,शूद्र और अन्य जीव समूहोंके जो नाना वर्णहैं उनकोभी पैदाकिया ब्राह्मणकावर्ण श्वेत अर्थात् सतोगुण प्रकाशात्मकजितेंद्री प्रकृति—क्षत्रियोंका वर्णलाल अर्थात् रजोगुण प्रवृत्त्यात्मक शूरता तेजयुक्त प्रकृति—वैश्यों का वर्ण पीला रजोगुण तमोगुणसे मिलाहुआ खेती आदि निकृष्टकर्म करनेवालीप्रकृति—इसीप्रकारसे शूद्रकावर्णकाला तमोगुणसे आवर्णित आत्मा प्रकाश प्रवृत्ति रहित प्रकृतिवाला उत्पन्नकिया—भारद्वाजने कहा कि जोचारों वर्णकी जातिसे वर्ण विभागहुआहैवह नहींहै क्योंकि निश्चयकरके सब वर्णों का वर्णसंकर दृष्टआताहै हमसबको काम क्रोध लोभ भय शोक चिन्ता क्षुधा आदिकी पीड़ाहोती है तो किसप्रकारसे वर्णोंका विभागकियाजाता है, पसीना मूत्र विष्ठा कफ पित्त रुधिरआदि सबके देहसे गिरते हैं तो कैसे वर्णोंका विभागजाने पशु वृक्ष पर्वतआदि की जाति अनेक हैं तो इन असंख्य वर्ण रखनेवालोंका निश्चय कहां से होसक्ता है भृगुजीबोले कि वर्णोंका विवेक नहीं है क्योंकि ब्रह्माजीने प्रथम यहसब जगत् ब्राह्मणजातिवालाही उत्पन्न कियाथा फिर अपने अपने कर्मों से वर्णोंकोपाया जो ब्राह्मण कामी भोगी उग्रप्रकृति क्रोधी बिनाविचार कर्मकरनेवाले धर्मको त्यागकर रजोगुणी हुये वह क्षत्रीवर्ण होगये—जो गौ वृत्ती में नियत रजोगुण तमोगुण से संयुक्त खेती से निर्वाह करनेवाले अपने धर्मको त्यागनेवाले हुये वह वैश्य वर्ण होगये हिंसा मिथ्या से अनुरागी लोभी सबकर्मों से जीविका करनेवाले शौचरहित तमोगुणी हुये वह शूद्रवर्ण में वर्त्तमानहुये इनकर्मों से भी पतित कर्मी ब्राह्मणों ने अन्य अन्य वर्णोंको पाया उनचारों वर्णोंको धर्म्म और क्रियाका करना निषेध नहीं है जिन चारोंवर्णों के लिये ब्रह्माजी ने वेदरूप सरस्वतीको उत्पन्नकिया उन्होंने लोभसे अज्ञानताको पाया अर्थात् शूद्रभाव से वेदके अधिकार से बाहर होगये जो ब्राह्मण वेदोक्त अनुष्ठान में नियत हैं उन वेद धारण करने वाले और सदैव व्रत नियम करनेवालों का तप नाश को नहीं प्राप्त होता है जो उत्तम वेद को नहीं जानते हैं वह नीच ब्राह्मण हैं उन्हीं के अनेक प्रकार के जन्म बहुधा स्थानों में हुआ करते हैं और जो पिशाच राक्षस प्रेत और अनेक प्रकार की म्लेच्छ जाति हैं वह ज्ञान विज्ञान रहित अपनी इच्छाके अनुसार ज्ञान चेष्टारखनेवाले संसारको वेदोक्तकरनेवाली अपने कर्म के निश्चय में प्रवृत्तप्रजा उत्पन्न होतीहैं प्राचीन ऋषियों के तप से दूसरे नवीन ऋषि उत्पन्न किये जाते हैं और जो आदि देव से उत्पन्न

ब्रह्म मूल अविनाशी धर्म में परायण हैं वह मानसी सृष्टि कहीजाती है २०॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेपञ्चदशोऽध्याय.१५॥

सोलहवां अध्याय॥

भारद्वाज बोले कि हे ब्राह्मणोत्तम भृगु जी ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र यह चारों वर्ण किस किस कर्म से होते हैं इस को आप कृपा कर के वर्णन कीजिये—भृगु जीने कहा कि जो पुरुष जाति कर्म आदि अड़तालीस संस्कारों से संस्कार कियाहुआ पवित्र वेद पाठ में प्रवृत्त अपने छः कर्मों में सावधान है अर्थात् स्नान, सन्ध्या, जप, होम, देवपूजन, अतिथि पूजन, बलिवैश्वदेव इन छः कर्मों का करनेवाला है—और शौचाचार में वर्त्तमान देवता और ब्राह्मणों से शेष बचे हुये अन्नादि को विधि पूर्वक भोजन करने वाला गुरू में प्रीतिमान सदैव ब्रत करनेवाला सत्य धर्म परायण है और जिसमें सत्यता ज्ञान अशत्रुता अहिंसा लज्जा दया तप आदि अनेक उत्तम बातें दृष्ट आती हैं उसको ब्राह्मण कहते हैं—जो हिंसायुक्त युद्ध आदि कर्म को सेवन करता है और वेद पाठ में प्रवृत्त दान देने और राज्य के कर लेने में तत्पर है वही क्षत्री है—जो पशुओं के होनेसे शीघ्र प्रतिष्ठाको पाता है और कृषि दान आदि में श्रद्धावान् पवित्र वेदपाठ में प्रवृत्त है उसको वैश्य कहते हैं—सदैव सब वस्तुओं के भोजन में प्रीतिमान और सब कर्मों का करने वाला अपवित्र वेद त्यागी आचार से रहित है वही शूद्र कहा जाता है—जो ब्राह्मण के गुण शूद्र में दृष्ट पड़ें और ब्राह्मण में वर्त्तमान न हों ऐसी दशा में शूद्र शूद्र नहीं और ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं गिना जायगा—सब युक्तियों से क्रोध लोभ को जीतना और चित्त को चलायमान न करना यही ज्ञान सब ज्ञानों से पवित्र है—कल्याण के नाश में उद्युक्त वह दोनों क्रोध लोभ आत्मा से रोकने के योग्य हैं—सदैव लक्ष्मी को क्रोध से रक्षा करे और तप की मत्सरता से रक्षा करे—विद्या को मानापमान से—आत्मा को अज्ञानता से रक्षा करे हे ब्राह्मण जिसके सब प्रारम्भ कर्म फल से रहित हैं और सब कर्म फल के त्यागरूप अग्नि में होमे गये हैं वह त्यागी और बुद्धिमान् है, सब जीवों की हिंसा न करनेवाला सबकी मित्रता प्राप्तकरे और परिग्रहों को त्याग करके बुद्धि से जितेंद्री हो ऐसे शोक रहित स्थान में वर्त्तमान हो जोकि दोनों लोकों में भय से रहित है—सदैव तप करने वाले शांत चित्त सावधान मन पुत्रादि के स्नेह से विरक्त दुर्विजयको विजयकरने केअभिलाषी मनही से बिचार करनेके योग्यहैं इसप्रकार जीवधारी के अनुष्ठान के योग्य योग को कहते हैं, जो जो इन्द्रियों से ग्रहण किया जाता है

वह व्यक्त अर्थात् मायारूप है यही मर्य्याद है और जो इन्द्रियों से बाहर अन्य कारणों से प्राप्त करने के योग्य है वही अव्यक्त जानने के योग्य है अर्थात् उसका साक्षात्कार होना चाहिये—बिश्वास के बिना जो प्राप्त होने के अयोग्य हो तो गुरू आदि के और वेद के बचनों में विश्वासयुक्त होकर उसमें तदाकार होके चित्त को प्राण में और प्राण को ब्रह्ममें धारण करे—वैराग्य से ही निर्वाण मोक्ष होती है क्योंकि निष्पाप ब्राह्मण वैराग्य ही से आनंद रूप ब्रह्मको पाता है अब योग के अधिकारीको कहते हैं उसको सुनो कि जो ब्राह्मण सदैव शौच आदि सत्य आचारवान् सबजीवोंपर दयाकरता है वही ब्राह्मण लक्षण युक्त है १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्म्मेषोड़शोऽध्यायः १६ ॥

सत्रहवां अध्याय ॥

भृगु जी बोले कि ब्राह्मण का धर्म श्वेत वर्ण और शूद्रका धर्म्म कृष्णवर्ण यह पूर्वमें कहा अब उन दोनों रूपोंको कहतेहैं कि ब्रह्मका प्राप्त करनेवाला वेद सत्यहै सत्य तपहै सत्यही संसारको उत्पन्न करता है सत्यही लोकों का धारण करनेवालाहै—सत्यसेही स्वर्गकी प्राप्तिहै—मिथ्या अविद्या आदि का रूप है इसी से नरक में पड़ता है अविद्यादि में लिप्त अज्ञान से आच्छादित पुरुष प्रकाश को नहीं देखते हैं यहां स्वर्ग को प्रकाश रूप और नरकको अन्धकार रूप कहाहै और उनदोनों से युक्त तमोगुणको सत्यमिथ्या से मिश्रित कहा है यहदोनों सबसंसारियों को प्राप्तहोते हैं उसमें जो सत्य है वही धर्मरूप प्रकाश है और जो प्रकाश है वहीसत्य है उसमें जो मिथ्या है वह अधर्म है जो अधर्म है वहीतम है जो तम है उसीको अन्धकार कहते हैं ज्ञानी पुरुष इससंसारकी उत्पत्तिको देखतेहुये देह और चित्त के सम्बंधी सुखदुःखों से मोहको नहीं प्राप्तहोते हैं इसस्थानपर ज्ञानीपुरुष तो मोहसे अवश्य निवृत्ती करे क्योंकि इसलोक परलोक में संसारियोंका सुख विनाशवान् है जैसे कि राहुसेग्रसित चन्द्रमा का प्रकाश नहींहोताहै उसीप्रकार अविद्या से निन्दित जीवोंकासुख नाश होताहै अर्थात् गुप्तहोजाता है वह संसारीसुख अनेक प्रकारका कहाजाता है जैसे कि देह और चित्त आदिका सुखहै इसलोक परलोक में प्रकट और अप्रकट फलवाले कर्म सुखकेलिये वेदमें इस प्रकार से कहेगये हैं कि कोईकर्म इसत्रिवर्ग से उत्तम नहीं है क्योंकि उसत्रिवर्गका फल अतिउत्तम है वह आत्माका मुख्यगुणकामन्याय शास्त्रवालों का स्वीकृत है और धर्म अर्थ जिसप्रधान सुखके गुणरूपहैं उसीके निमित्त कर्मका प्रारम्भ कियाजाता है इससुखका उदय धर्म्म से है और प्रारम्भ कर्म सब सुखोंके

लिये है—भारद्वाज बोले कि आपने जो यहसुखोंकी उत्तममर्यादा वर्णन की हमउसको स्वीकार नहींकरते क्योंकि इनयोग ऐश्वर्यों में वर्त्तमान ऋषियों काकर्म निष्फल नहीं है, जो कामनाम मुख्यगुणहै उसको वहऋषिलोग नहीं चाहते हैं—सुनाजाता है कि तीनोंलोकों के उत्पन्न करनेवाले प्रभुब्रह्माजी अकेलेहीतपमें प्रवृत्तहोते हैं वह ब्रह्मचारी ब्रह्माजी ईप्सित सुखों में आत्माको नहीं धारण करते हैं और श्रीमहादेवजी ने भी सन्मुख आयेहुये कामदेवको अनङ्गरूपसेही शान्तकिया इससे हमजानते हैं कि इसको महात्माओं ने नहीं स्वीकार किया है क्योंकि उनलोगोंका वह अद्भुत मुख्यगुण नहीं है और ईश्वरमें भी यह गुण नहींपायागया है क्योंकि भगवान् ने आपकहा है कि सुखसे श्रेष्ठनहीं है, लोकोंकाकथन दोप्रकारके फलों का प्रकट करनेवाला है कि अच्छेकर्म से सुख और नष्टकर्म से दुःखप्राप्तहोताहै-भृगुजीबोले कि इस स्थानपर इसबातको निश्चयसमझो कि अज्ञानसे अविद्या प्रकटहुई इसकारण अविद्या में पड़ेहुए मनुष्य अधर्मपरही आरूढ़ होकर धर्मयुक्त कर्म नहींकरते वह निश्चय करके क्रोध लोभ हिंसा मिथ्या आदिसे ठगेहुए इसलोक और परलोकमें सुखको नहींपाते हैं और नानाप्रकारके रोग और पीड़ाओंको भोगते हैं-घात बंधनादिके दुःख और क्षुधा पिपासा परिश्रमादि की पीड़ाओं से दुःखी चित्त वर्षा बायु और शीतोष्णकी न्यूनाधिकता से उत्पन्न होनेवाले भय और देहोंके कष्टोंसे दुःखी होते हैं और बान्धवों के बियोग और धनके नाशहोनेके दुःखों से मन्दादर जरामृत्युसे उत्पन्न अनेक कष्टोंको सहते हैं-जो पुरुष इनचित्त देहादिके दुःखोंसे अलग रहताहै वह सुखको जानताहै-यहदोष स्वर्गमें नहीं होते हैं वहां पुरुष ऐश्वर्य्यवान्ही रहता है स्वर्ग में बड़ी सुखदायी हवाहै वहां क्षुधा तृषा जरा थकावट और ऊष्मानहीं है केवल सुखही सुख है यह दोनोंदुःख सुख इसी लोकमें हैं नरकदुःखरूप परमपदमोक्ष सुखरूपहै,जैसे कि सबजीवोंकी उत्पन्न करनेवाली अविद्या सब क्लेशोंकीमूलहै वैसेही स्वर्ग में उसीप्रकारकी स्त्रियां हैं और पुरुष ब्रह्माजी हैं जो कि अपनी पुत्रीकेपीछे कामबश होकर दौड़े और शिवजी ने उनका शिरकाटा इसस्थानपर वीर्य्यही तेजरूप है पूर्वसमयमें ब्रह्माजीने इस संसारको उत्पन्नकिया इसके जीवमात्र अपने २ कर्मों में प्रवृत्तहोते हैं तात्पर्य्ययहहै कि मोक्षकासुखसबसे उत्तमहै१६॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे सप्तदशोऽध्यायः १७ ॥

अठारहवां अध्याय॥

भारद्वाजबोले कि मोक्षको कठिन जानके चित्तशुद्धीके द्वारा मोक्षकारक पवित्रकर्मोंमें प्रवृत्तहोके जो २ कर्मकरे उनमें दान, धर्म, आचरण, श्रेष्ठतप,

वेदपाठजप—होम आदिका क्याफल है इसको आपकृपाकरके वर्णन कीजिये भृगुजीनेकहा कि होमसेपापदूर होताहै-वेदपाठ और जपसेउत्तमशांति उत्पन्न होतीहै दानसेभोगोंकी अक्षयता होतीहै तपसे स्वर्गकीप्राप्ति है इसलोक और परलोकके निमित्तदानदोप्रकारकाहै कि सत्पुरुषोंकेनिमित्त जोदानदियाजाता है वहतो परलोकमें मिलताहै और नीचोंको जोदान दियाजाताहै उसकाभोग इसलोकमेंभोगताहै जैसा दानहोगा वैसाही फलभीहोगा—भारद्वाज बोले कि किसका कैसा धर्माचरण है धर्मका क्या लक्षणहै और कितने प्रकारका है-- भृगुजी बोले कि जो ज्ञानी अपने धर्मआचरण में प्रवृत्त होतेहैं उनको स्वर्ग फलकीप्राप्ति होतीहै और जोविपरीत आचरणकरताहै वह अज्ञानताको पाता है,भारद्वाजबोले कि हे ब्रह्मर्षिजी प्राचीनसमय में जो यह चारोंआश्रमों का धर्म नियतकिया उनचारों आश्रमों के मुख्य२ आचरणोंको आप कृपाकरके वर्णनकीजिये--भृगुजीने कहा कि लोकके हितकारी ब्रह्माजी ने पूर्वही धर्म की रक्षाकेलिये चारोंआश्रमोंको उपदेश कियेहैं उनमें गुरुकुलको प्रथम आ-श्रम कहते हैं इसआश्रममें अच्छेप्रकारके शौच व्रत नियम संस्कारआदि से शुद्धअन्तःकरण पुरुष दोनों संध्याओं में सावधान सूर्य अग्नि और देवता-ओंका उपस्थान करके निद्रा आलस्य अयुक्तियों को त्यागकरके गुरुको दण्डवत्करे फिर वेदके पढ़ने में अर्थका विचारकरना इन सबबातोंसे अन्तः-करणको शुद्धकर तीनों संध्याओं में स्नानकरके ब्रह्मचर्य अग्निसेवन गुरु-सेवा और सदैव भिक्षाकरना और भिक्षावस्तुओंको गुरुके अर्पणकरे तदन-न्तर अन्तरात्मा से गुरुके उपदेश बचनोंसे कर्ममें प्रवृत्त होकर गुरुकी आज्ञा से वेद पढ़नेमें उद्युक्तहोजाय यहां यहकहाजाता है कि जो द्विज गुरुको अच्छेप्रकारसे पूजनकरके वेदको प्राप्तकरे उसको स्वर्गकी प्राप्ति होती है और अन्तःकरणभी निर्मल होताहै अर्थात् सत्यसंकल्प से सिद्धि प्राप्ति होतीहै गार्हस्थको दूसरा आश्रम कहते हैं अर्थात् उस अच्छेप्रकार से उदयहोनेवाले सब आचारलक्षणको कहते हैं कि गुरुकुलमें निवास करनेवाले श्रेष्ठआच-रणी अपनी स्त्रीमें रति और उसको फल पुत्रादि के चाहनेवाले पुरुषोंका गृहस्थाश्रम कहाजाता है उसीमें धर्म अर्थ काम इनतीनोंकी प्राप्ति होतीहै उस त्रिवर्गसाधनको ध्यानकरके निन्दारहित कर्मोंकेद्वारा धनको प्राप्तकरके वेदपाठ या जपसे प्राप्तहोनेवाले या ब्रह्मर्षियों से नियत अथवा खानि से उ-त्पन्नहोनेवाले मणि सुवर्णआदि या नियमों के द्वारा ईश्वर की कृपासे प्राप्त होनेवाले मुनियों के हव्यकव्यरूपी धनसे वहगृहस्थी गृहस्थधर्म में प्रवृत्त होवे उसीको सबआश्रमों का मूल कहते हैं क्योंकि जो गुरुकुलनिवासी सं-न्यासी और जो दूसरे संकल्प से व्रत नियम और अनुष्ठान के करनेवाले हैं

उनकी भिक्षावलि और पुत्रआदि के भागोंका विभाग इसी आश्रम से होता है वानप्रस्थों का धर्म बहुधा धनका त्यागना अथवा फलमूलों का भोजन करना है निश्चय है कि यहलोग साधुवृत्ती सुपथ्यखानेवाले वेदपाठ और जपका अभ्यासकरनेवाले पृथ्वीयात्रामें देशों को पर्यटन करतेहैं उन्हों के समीपजाकर प्रतिष्ठाकरके आदरकरना और उनसे निर्दोषवार्त्ता को कहना योग्य है आनन्द और श्रद्धापूर्वक सामर्थ्य के अनुसार आसन शय्याआदि देना उचित है यहांपर यहधर्म्म उचित है कि जिसका अतिथि घरसे निराशा होकर लौट जाताहै वह अपना पाप उसको देकर और उसकापुण्य आप लेकर जाता है इस गृहस्थाश्रम में यज्ञादिकोंसे देवता भी प्रसन्न होतेहैं तर्पण से पितृ और विद्याभ्यास से ऋषि और सन्तान से प्रजापतिजी प्रसन्नहोते हैं यहांपर यह बातकरना योग्य है कि प्रीति पूर्वक सबजीवों से कानों के सुखदायी वचन कहना योग्यहै और दूसरेका दुःख दूरकरना चाहिये क्योंकि कठोर वचन अपमान, अहंकार, कपट, हिंसाआदि महानिन्दित कर्म हैं और हिंसा न करना सत्यबोलना क्रोध न करना यही सबआश्रमों का तपहै इस प्रीतिधर्म में माला भूषण बस्त्र तैलादिमर्दन सदैव उपभोग नृत्य, कर्ण, रोचक, गीतवाद्य और नेत्रों के सुखरूप दर्शनों की प्राप्ति और भक्ष्य भोज्य चोष्य लेह्य पेयआदि अनेक रसोंका भोजन उपभोग अपने बिहारसे सन्तोष और यथेच्छ सुखोंकी प्राप्ति है,जिसके गृहस्थआश्रममें सदैव त्रिवर्गगुणकी सिद्धी है वह इसलोक के श्रेष्ठ सुखोंको भोगकर उत्तमपदवीको पाता है--जो गृहस्थ उंछवृत्ती रखनेवाला अपने धर्म्माचरणमें प्रीतिमान् चित्तकी वृत्तियोंका रोंकनेवाला है उसको स्वर्ग की प्राप्ति सुगमता से होती है १८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेऽष्टादशोऽध्यायः १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

भृगुजी बोले कि बानप्रस्थभी धर्म्मको करतेहुये पवित्र तीर्थ नदी झिरनों पर मृग भैंसा वराह शार्दूल जंगली हाथियोंसे पूर्ण निर्जन वनोंमें तपकरते बिचरते हैं, गृहस्थियों के बस्त्र भोजन और उपभोगों के त्याग करनेवाले वनके फल मूल औषधी आदिसे नाना प्रकार के उचित भोजन करने वाले स्थान आसनयुक्त पत्थर पथरीली कंकड़ीली रेतलीआदि पृथ्वीपर सोनेवाले कांस कुशा मृगचर्म और भोजपत्रों के धारण करनेवाले शिर मुंड दाढ़ी मूछ नख और रोमयुक्तदेह समयपर स्नान करके पृथ्वीमें हवनका अनुष्ठान करनेवाले लकड़ी कुशा फूल दक्षिणाके शुद्धकरनेमें बिश्राम लेनेवाले शीत उष्ण बर्षा वायुके सहनेवाले नानाप्रकारके नियम उपभोगयुक्त चारोंओरको

घूमना और अनुष्ठान की विधिसे शुष्कमांस रुधिर चर्म्म हस्ति सहित धैर्य्य-
मान होकर शेष अवस्थाको व्यतीत करते हैं — ये जो इस ब्रह्मऋषियों के
नियत कियेहुये आचार पर चलता है वह अग्नि के समान दोषों को भस्म
करके दुःप्राप्य लोकोंको विजय करता है — तदनन्तर संन्यास धर्म्म है उसमें
अग्नि धन स्त्री शय्याआदि भोगोंकी सामग्री को त्याग करके आत्मा को
निस्संग करके प्रीतिकी फांसियों को काटकर संन्यासी होतेहैं — मिट्टी पत्थर
सुवर्ण आदिको समान माननेवाले त्रिवर्गी पुरुषों में बुद्धि न लगाने वाले
शत्रु मित्र उदासीन को बराबर देखनेवाले स्थावर जंगम और चारों खानिके
जीवोंसे मन वाणी चित्तसे शत्रुता न करनेवाले स्थानरहित पहाड़ पुलिन
वृक्ष और देवालय आदिमें बिचरने वाले कार्य्य बशसे ग्राम नगरों में क्रमसे
एक रात्रि पंचरात्रि निवास करतेहैं फिर उनग्राम नगरों में प्रवेशकरके प्राणों
की रक्षाकेलिये उन द्विजन्माओं के अर्थात् ब्राह्मण क्षत्री बैश्योंके स्थानोंके
समीप निवासकरें जहां रसोई आदि प्रबंध होचुकाहो वहां पात्ररहित भिक्षा-
वृत्तिमें काम क्रोध लोभ अहंकार मोह कृपणता कपट निन्दा अभिमान हिंसा
आदिसे रहित यह कर्म्म करे कि सब जीवोंको निर्भय करके बिचरे और कि-
सी स्थान में किसी जीवको उससे भय न हो और वेदपाठ और अग्निहोत्र
को अपने शरीरमें नियत करके अपने मुखमें भिक्षासे प्राप्त होनेवाले हव्यों
से देहकी अग्निमें आहुतिदे ऐसे अग्निहोत्र करनेवाले मुनियोंके लोकोंको
जातेहैं अथवा भिक्षासे मिलनेवाले हव्यों से प्राणाग्निमें हवनकर अग्निके
समान प्रकाशित देहमें वर्त्तमान जीवको अपने मुखमें अर्थात् ब्रह्ममें लय
करके एकता प्राप्तकरे तो वह अग्निहोत्र का त्यागी ब्रह्मज्ञानियोंके लोकोंको
पाताहै जो पवित्र संकल्पसे रहित बुद्धिवाला ब्राह्मण वेदोक्त मोक्ष आश्रम
में विचरताहै वह उसब्रह्मलोकमें जो निरिन्धन अग्निके समान शांतिरूप है
प्रवेश करताहै भारद्वाज बोलेकि इसलोकसे परलोक सुनाजाताहै परंतुप्राप्त
नहीं होता है मैं उस परमात्मा को साक्षात्कार करना चाहता हूं आप इसके
करने के योग्य हैं, भृगु जी बोले कि उत्तरमें हिमवान् महापवित्र सर्वगुण-
सम्पन्न है वही परलोक कहा जाता है वह निष्पाप सत्य इच्छा सत्य संकल्प
और सब कामनाओं के उपभोग के योग्य परमात्मा रूप है उस स्थान पर
समाधि में होकर वह पुरुष जाते हैं जो कि पापकर्म्मों से रहित पवित्र निर्म-
ल देह लोभ मोह से विमुक्त और उपद्रवों से रहित हैं, वह देश स्वर्ग के स-
मान है उसमें यह शुभगुण वर्त्तमान हैं कि समाधि के समय तो अविनाशी
है और रोगों का स्पर्श नहींहै और अनात्मारूप स्त्रियों में लोभरहित आत्मा
रूपस्त्री में प्रीतिमान् है निर्जनहै, और परस्परमें पीड़ारहित संकल्पजन्य द्रव्यों

में आश्चर्य्यरहित है वहां अनात्मरूप अधर्म्मभी नहीं है, निस्संदेह वहां योग और कर्म्म का कियाहुआ फल प्रत्यक्षमिलताहै खानेपीने की वस्तुओं से पूर्ण आसन आदिसे युक्त महलों के और घरों के रहने वाले सब ईप्सितों से पूर्ण सुवर्णादिके भूषणोंसे भूषित कितनेही पुरुषतो वहांसे लौटआतेहैं और कितने ही योगियों को परमात्मा में सब इच्छाओं का लयकरना प्राप्तहोताहै-अब सामान्य योग का बर्णन करतेहैं कि कितनेही पुरुष तो बड़े परिश्रमसे प्राणों को धारण करते हैं और कितनेही योगरूप ऐश्वर्य्यको पाकर धर्म्म में प्रवृत्त हैं कितनेहीछली हैं अर्थात् वाह्यभोगोंके कारण योगजन्य धर्म्मका नाशकरने वाले हैं इसी कारण से वह धर्म्मात्मा और छली दोनों सुखी दुःखी हैं क्योंकि कोई निर्द्धन कोई धनवान् हैं अर्थात् योग धर्म्म के द्वारा दूसरे के उपकारसे उत्पन्न होनेवाले धर्म्मरूप धनकी वृद्धिकरने वाले हैं और धनके कारण इस लोक में मनुष्यों का परिश्रम भय मोह गृहस्थादि की कठिनता और लोभ पैदाहोते हैं, इसलोक में धर्म्म अधर्म्म के करनेवाले बुद्धिमान् बहुत प्रकारके मनुष्य हैं जो ज्ञानी उनदोनों को जानता है वह पापमें नहीं फँसता है, कपट-युक्त छल, चोरी, निन्दा, दूसरेके गुणों में दोषलगाना, अप्रतिष्ठा, हिंसा, निर्दयता मिथ्या आदि दोषोंका जो सेवन करता है उसका तपरूपी धर्म्म नाश होता है और जो इनदोषों से रहितहै उसके तपकीवृद्धि होती है, इसलोक में धर्म्म अधर्म्मरूप कर्म्म से बहुत प्रकारकी चिन्ता होतीहैं यह लोककर्म्म भूमि है यहां शुभकाशुभ और अशुभका अशुभ फलहोता है प्राचीन समयमें इसी पृथ्वीपर देवता और ऋषियों समेत ब्रह्माजी ने यज्ञ और तपसे पवित्रहोकर ब्रह्मलोक में बासाकिया यह ब्रह्मलोक पृथ्वीका उत्तम और पवित्रभागहै इस में रहनेवाले मनुष्य जो शुभकर्मोंको करते वह वहांप्रकाशवान् होते हैं और जो बिपरीत कर्म्म करनेवाले हैं वह तिर्य्यक्आदि योनिमें महापापोंको भोगते और लोभ मोहमें फँसे इसी संसारमें घूमते हैं और जो जितेन्द्रियहोकर मन वचन देहसे गुरूकी उपासना करते हैं वहीज्ञानीसबलोकोंके मार्गको अर्थात् सगुण निर्गुणब्रह्मको ठीकजानते हैं, यह वेद से प्रकटहोनेवाला धर्म्मका आशय तुमसे वर्णनाकिया कि जो लोकके धर्म अधर्म को जानता है वही बुद्धिमान् है--भीष्मजी बोले कि जबभृगुजी ने भारद्वाजजीको ऐसे उपदेश-पूर्वक धर्म्म का वर्णन किया तब भारद्वाजजीने अत्यन्त प्रसन्नहोकर भृगुजी कापूजन किया सो हे महाज्ञानी राजायुधिष्ठिर यहसंसारकी सब उत्पत्ति तुम्हसे कही अब और क्यासुनना चाहता है २७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेएकोनविंशतितमोऽध्यायः १९ ॥

बीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरनेकहा कि हे पितामह आपने आचार योग मिलाहुआ कहा अब कृपा करके स्पष्टतासे व्यौरेसमेत आचार बुद्धिका वर्णनकीजिये, भीष्मजीबोले कि हे धर्म्मज्ञ तुम मेरे कहनेसे सर्वज्ञताको प्राप्त होकर सुनो कि असन्त दुराचारी दुर्बुद्धी बिना विचारे कर्म्मकरनेवाले प्रसिद्धहैं और आचार का लक्षण रखनेवाले सन्तलोगहैं अर्थात् उनका स्वरूप आचारही से जाना जाता है जो मनुष्य गोशाला राजमार्ग्ग और अन्नादि में मूत्रपुरीषको नहीं करते हैं वहउत्तम हैं, यह मनुष्योंका आवश्यकधर्म्म है कि आवश्यक विष्ठा मूत्रको त्यागे और दन्तधावन आदिसे निवृत्तहो आचमन पूर्व्वक नदी आदिमें स्नानकरे फिर देव पितृ मनुष्योंका तर्प्पण करके सूर्य्यका उपस्थान करे और सूर्यके उदय होजानेपर कभी न सोतारहै पूर्वाह्न और सन्ध्याकाल की सन्ध्याकेआदि में सूर्य के प्रकाश में गायत्रीका जपकरे और पूर्व्वाभिमुखहोकर हाथ पैर मुखशुद्धकरके आर्द्रभोजनको मौनहोकरकरे और भोजन की वस्तुकी निन्दा न करे भोजन के पीछे आचमन करके उठे और रात्रिके समय पैरधोकरसोवे, यह आचार लक्षण देवऋषि नारदजीने कहाहै, यज्ञशालाआदि पवित्र देश गौ बैल देवालय चौराहा स्नानकियेहुये ब्राह्मण आदिको मार्ग में मिलनेसे प्रदक्षिणाकरे कुटुम्बसमेत कुटुम्बी का भोजन अतिथि के भोजन के समान समझाजाता है अर्थात् भोजन में न्यूनाधिकता न करनी चाहिये--प्रातःकाल सायंकाल के समय भोजन करना मनुष्यों को वेदोक्त है इसप्रकार से करनेवाला व्रत के फलको पाता है और दोनों समयके मध्यमें भोजन करना वेदमें नहींकहाहै इसीप्रकार से होम के समय होमकरे और ऋतुकाल में अपनीस्त्रीके पासजाय एक स्त्री रखनेवाला ज्ञानी ब्रह्मचारीही कहलाता है ब्राह्मणोंके भोजनसे बचाहुआ अन्न ऐसा प्रशंसनीय है जैसा कि माताकाहृदय हितकारी होताहै उस अन्नकी उपासना सन्त लोग करते हैं इसीसे उनको ब्रह्मकीप्राप्ति होती है अर्थात् आहार की सिद्धी ब्रह्मको प्राप्तकरनेवाली है, यज्ञकीवेदी बनानेके लिये मृत्तिकाखोदना और तृणोंका छेदना चावल निकालनेकेलिये नखोंसे यज्ञके शेषमांस को काटकर खानेवाला सदैव झूठेमुख अमृतपान करनेवाला, फलका चाहनेवाला ब्रह्मको नहीं प्राप्तकरताहै, जो मांस खाना छोड़ाचाहे वह यजुर्वेदके मंत्रों से संस्कारकिये मांसको और असंस्कृत मांसको और श्राद्धसे बचेहुयेमांसको भी नहींखाय अर्थात् हिंसायुक्त कर्म्म न करे अपनेदेशमें या परदेशमें अतिथि को कभीभूखानरक्खे अवश्य भोजनकरावे अन्नआदि श्रेष्ठफलको प्राप्तकरके

गुरू पिता आदि वृद्धोंको भेटकरे और गुरू लोगों को आसन पूजन दण्डवत् करने से कीर्त्ति और लक्ष्मी प्राप्तहोती है उदयकाल के सूर्य्य को और अन्यकी नग्न स्त्री को कभी न देखे और एकान्त में ऋतुकाल सम्बन्धी दिवसों में सदैव स्त्रीसंगकरे—तीर्थों की गुप्त बातगुरुहै और पवित्रवस्तुओंकी गुप्तवस्तु अग्नि है और सत्पुरुषों का किया हुआ सबकर्म उत्तम है और गौ की पुच्छका स्पर्श करना सदैव पुण्यकारी है, सायंकाल प्रातःकाल ब्राह्मणों को दण्डवत् करना शास्त्रका उपदेश है जब देखे तब अच्छा प्रश्नकरे, देव स्थानमें, गौओंके मध्य में, और ब्राह्मणों के वैदिकस्मार्त्त कर्मके अनुष्ठान में और वेदपाठ आदि भोजन कर्ममें यज्ञोपवीत को बायें कन्धेपर रक्खे अर्थात् सव्यरहै जैसे कि दूकानोंकी बेचनेकी बस्तुसाफ और उज्ज्वल होती है और खेतों की खेती नियतकरके अनाजकी वृद्धि कीजातीहै और इन्द्रियोंको उनके ईप्सित बिषयोंमें प्रवृत्त कियाजाताहै उसीप्रकार सायंकाल प्रातःकाल बुद्धि के अनुसार वेदपाठी ब्राह्मणोंके पूजनकी इच्छा करना चाहिये तात्पर्य्य यहहै कि दूकानके देखने आदि के समान ब्राह्मणोंका पूजन प्रत्यक्ष फलवाला है, भोजन कराने में दाता सदैव संपन्न कहाता है और भोजन करनेवाला सुसंपन्न कहाता है उसीप्रकार जल पिलाने में दाता तर्पण और पीनेवाला सुतर्पणहै और तस्मैभोजन करानेमें दाता स्मृत और भोजन करानेवाला सुश्रृत बोला जाता है उसीप्रकार कृषरान्नके लेनेदेनेमें यवाग्वां बोलना योग्य है हजामत बनवाने में छींकलेने में स्नान पूजनमें ब्राह्मणों को दण्डवत् करना महारोगोंका करनेवाला है—सूर्य्य के सन्मुख मूत्र न करे, अपनी विष्ठाको न देखें, स्त्रीके साथ सोने और भोजन करने को त्यागकरे वृद्धोंका नामलेना अथवा तुम शब्द कहना दोनों न करे छोटे और बराबर वालोंके नाम का लेना वा तुम शब्द कहना दोष नहीं है पाप चलन पुरुषोंके नेत्र आदि का फिरना उनके पापी हृदयको प्रकटकरताहै बड़े मनुष्योंमें प्रत्यक्षपापका छुपाना नाशको करताहै—अज्ञानी पुरुष जानबूझकर कियेहुये पापको छिपाते हैं उस पापको जो मनुष्य नहीं देखते हैं तो देवता अवश्य देखते हैं—पापीका छुपाया हुआ पाप पापीकेही सन्मुख आताहै और धर्मात्मा से गुप्त किया हुआ अधर्म धर्मात्माहीके आगे आताहै, अज्ञानी इसलोकके कियेहुये पाप को स्मरण नहीं करता है वह पापशास्त्रोक्त बातोंके न माननेवाले कर्त्ता पर होताहै जैसे कि राहु चन्द्रमा को घेरता है उसीप्रकार पाप अधर्मीको घेरलेता है आशा से संचय किया हुआ धन दुःख से भोगाजाता है मृत्यु उसको धन के भोगने का समय नहीं देती है और ज्ञानीलोग उसको बुरा कहते हैं, ज्ञानियों ने सबजीवों का धर्ममानसी कहा है अर्थात् जो चित्त से किया

जाय इसकारण सब जीवोंपर चित्तसे दयाकरे अर्थात् सबको निर्भय करे धर्म में किसीकासाथ न करे क्योंकि धर्ममें कोई साथी नहीं है केवल शुद्धबुद्धी से ध्यान योगरूप धर्मको करे इसमेंकोई सहायता क्या करेगा धर्महीमनुष्य और देवताओं का उत्पत्तिस्थान है और हृदयाकाशनाम से प्रसिद्ध ब्रह्मलोक में अमृतरूप कैवल्यमोक्ष कारण है और अपूर्व देहकी प्राप्तिमें धर्मसेही उनधर्म करने वालोंको सुखमिलता है ३४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे विंशत्तमोऽध्यायः २० ॥

इक्कीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हेपितामह जो यह अध्यातम नाम पुरुषका धर्मरूप कर्म इसलोकमें विचाराजाता है उसको आपमुझसे कहिये और यह जड़ चैतन्य रूप विश्वकहांसे उत्पन्नहुआ और प्रलयमें कैसे लय होताहै उसको भी कृपा करके कहिये—भीष्मजी बोले कि हे पांडव जो तुमइस अध्यात्म को मुझसे पूछतेहो उसमहाकल्याणकारी अध्यात्मसुखको तुझसे कहताहूं कि यहब्रह्मज्ञान जिसमें कि उत्पत्ति लयसंयुक्तहै वह आचार्य्योंने दिखायाहै जिसको किपुरुष लोकमें जानकर प्रीतिपूर्वक ब्रह्मानन्दकोपाता है और फलकी सिद्धी होती है वही जीवोंका हितकारीहै—पृथ्वी जल तेज वायु आकाश यह पंचतत्त्व सबजीवोंकी उत्पत्ति और लयके स्थानहैं जिस आनन्द स्वरूपसे पंचभूत उत्पन्नहुये वहबराबर उसीमें लयहोतेहैं वह पंचभूत जरायुजआदि चारोंप्रकारके जीवोंसे ऐसेउत्पन्नहोते हैं जैसे कि समुद्रकीलहरें यहां जरायुजआदिसे आकाश आदि की उत्पत्ति और लयको वर्णनकरके उनका आनन्दरूपहोनाकहाहै और स्वप्न आदि के समान आकाश आदितत्त्वों को कल्पित होना कहा है— जिस प्रकार कछुआ अंगोंको फैलाकर अपने में लयकरलेता है उसी प्रकार से जीवात्मा देहादि प्राप्त करनेवाले तत्त्वोंको फिर आकर्षणकरता है, पंचतत्त्वात्मक जीवों से पंचतत्त्वों की उत्पत्तिकैसे होसक्ती है क्योंकि पुत्रसे पिता की उत्पत्ति नहीं होसक्ती इसके विषयमें कहते हैं कि ईश्वर ने सबजीवधारियोंमें पंचमहाभूतों को उत्पन्नकिया और पंचभूतोंमें वह अन्तर भी पैदाकिया है जिसको कि देहाभिमानी होकर नहीं देखता है जैसे कि स्वप्नका देखने वाला स्वप्नगत दृष्ट वस्तु को सत्यही जानता है और जागने पर मिथ्यारूप जानताहै इसीप्रकार देहके अभिमान दूरहोनेपर आत्माके सिवाय सब वस्तुओं को मिथ्या समझता है अब इस बातको सिद्धकरते हैं कि जीवही सबकी उत्पत्तिका कारणहै जैसे कि घटकी उत्पत्तिमें मृत्तिका कारणरूपहै इसीप्रकार शब्द श्रवण और देहों के छिद्र यहतीनों आकाश से उत्पन्न होते हैं और

स्पर्शचेष्टा त्वचायहतीनों वायु से पैदाहोते हैं और रूप नेत्र और अन्नादिका परिपाकहोना यहतीन प्रकार तेजसे होते हैं रस, शीतलता, जिह्वा, यह तीनों जलके गुणहैं सूंघने के योग्यवस्तु, घ्राणेन्द्री और देह यहतीनों पृथ्वी के गुणहैं यह पंच महाभूत और छठामन कहाजाताहै सो हे भरतवंशी जो इन्द्रियां कि पंचमहाभूतों में संयुक्त हैं और चित्त उनकी वृत्तीरूप है सातवीं बुद्धि आठवां क्षेत्रज्ञ साक्षी है, पांचों इंद्रियां तो बिषय प्राप्त करने के निमित्त और चित्तसंदेह करनेको बुद्धि निश्चय करनेको और क्षेत्रज्ञ साक्षीकेसमान वर्त्तमान है दोनों चरणों के तलुओंसे शिखातक जो नीचेऊपर दीखताहै वह सब उदर आकाशादि साक्षी चैतन्यसे व्याप्तहोने वाला जानो—इस प्रकार बुद्धि आदि के साक्षीका ब्रह्मभावकहकर इसबुद्धि आदिसे संयुक्त महाभूतोंकी उत्पत्ति कही यह युक्त और श्रुती से बिचार करने के योग्यहै, अब इसबात को कहते हैं कि पुरुषोंको पांचों इंद्रियां और चित्तबुद्धि यहसातो अच्छेप्रकार से जानने के योग्यहैं और जो सतोगुण रजोगुण तमोगुणहैं वह अप्रकटभी उन इन्द्रियों से उत्पन्न होकर उनमेंहीं वर्त्तमान हैं, ज्ञानी मनुष्य बिचारसे इस त्रिगुणात्मक मायाको अथवा बुद्धिको आकाश आदि भूतोंका और जरा-युज आदि जीवोंका उत्पत्ति और लयस्थान अच्छेप्रकारसे जानके वैराग्य वेवेकके क्रमसे उत्तमसुख अर्थात् ब्रह्मानन्दको प्राप्तहोते हैं अबभूतों के उत्प त्ति और लयके स्थानों को कहते हैं कि तमोगुणसे बुद्धि बारंबार बिषयात्मक ीजातीहै इसकारण बुद्धिही चित्त वा पञ्चेन्द्री और स्थूलसूक्ष्मपञ्चभूतरूपहै सबुद्धिके नाशहोने में सतोगुण,रजोगुण,तमोगुण,चित्त औरइन्द्रियोंकेवि-य आदि कैसेबाकी रहजायँगे-यह जड़ चैतन्यमय जगत् उसीबुद्धिका रूपहै द्धिके लय और प्रकटहोनेमें इसप्रकार बुद्धिरूप दिखलायाजाताहै, कि वह द्धि जिसकेद्वारा देखती है वहनेत्रहैं और जिससे सुनती है वह कान जिस सूंघती है वह घ्राण और जिस से रसपीती है वह रसनाकहलाती है और नससे स्पर्शहोताहै वह त्वक् इन्द्री है, यह बुद्धी भी चिदाभास से संयुक्त हो-र कर्त्तापन और कारणपनेको प्राप्त करती है और जब बुद्धिमें कोई इच्छा त्पन्न होती है तब वह चित्तरूप हो जाती है, बुद्धिके अधिष्ठान पांचप्रकारके उन्हींको भिन्न २ बिषय वाली पांचोंइन्द्री कहते हैं, चैतन्य आत्मा अपनी रूप सत्तामात्र से उन इन्द्रियों को कर्ममें प्रवृत्त करता है, चैतन्य आत्मामें यत होनेवाले बुद्धि सुख, दुःख, मोह इनतीनों भावोंको पाती है और सु-दुःख मोहमें वर्त्तमान होकर बुद्धि चित्तमें प्रवेश करती है और चित्तकेद्वारा न्द्रियोंके विषयों में भी प्रवृत्त होतीहै यह सर्वात्मा बुद्धि सुख दुःखादि भावों उनका आत्मारूप होनेपर भी उल्लंघन करके ऐसे वर्त्तमान होती है जैसे

कि नदियों का स्वामी समुद्र अपनी लहरोंसे बेलाको उल्लंघन करता हुआ वर्त्तमान होता है तात्पर्य्य यह है कि इस प्रकार बुद्धि से उत्पन्न होनेवाले देह इन्द्री, विषय जो कि योगके द्वारा बुद्धिमें लयहोते हैं उनके संस्कार ब्रह्माकार बुद्धिसे अन्तर्द्धान होतेहैं, आत्माकार वृत्तीवाला बुद्धिके निर्गुण सिद्ध होने पर उसकी दशाको कहते हैं कि सुख आदिभावसे पृथक् होनेवाली बुद्धि चित्तमें सत्तामात्र वर्त्तमान होती है अर्थात् पूर्णज्ञानमें मोक्षरूप सूक्ष्म होती है फिर उत्थान कालपर प्रकट होनेवाला रजोगुण बुद्धिके भाव को प्राप्तहोता है सबका आशययहहै कि जैसे तैलजलरूप होजाता है उसीप्रकार लयहोने वाली बुद्धि रजोगुण रूपी शीतसे तैलके समान फिर सूक्ष्म रूपको प्राप्तहोती है और जबतक प्रारब्ध कर्मका नाश नहीं होता तबतक अविद्या रूप देहा-दिकों को प्रकट करती है प्रारब्ध नाशहोने के पीछे कैवल्यमोक्ष प्रत्यक्ष हो-तीहै तब वह रजोगुण रूप बुद्धि सब इन्द्रियों को कर्ममें प्रवृत्त करती है फिर सतोगुण रूप बुद्धि विषयोंके मुख्य रूपको पहिंचानती है और तमोगुण से उत्पन्न होने वाला भावरागादि दोषोंमें प्रवृत्त होता है—सतोगुण प्रीति रूप रजोगुण शोक रूप तमोगुण मोहरूप है इसलोक में जो २ भाव शम दमकाम क्रोध, भय, विषाद आदिहैं वह सब इनतीनों गुणों में वर्त्तमान होतेहैं यहसब बुद्धिकी गतितुमसे कही बुद्धिमान्को सब इन्द्रियां जीतनी योग्यहैं यह तीनों गुण सदैव जीवोंमें रहतेहैं इसीसे सब जीवोंमें तीनहीं प्रकारकी पीड़ा देखने में आती है उसको सात्त्विकी राजसी तामसी बोलते हैं सतोगुण सुख रूप रजोगुण दुःखरूप और यह सुख दुःख तमोगुण से मिलके सुख दुःख रूप न-हींहोते किन्तु मोह के करनेवाले होते हैं फिर जो दुःख से मिलाहै और अ-पनी प्रीतिकरने वाला नहींहै वहां यह जानना चाहिये कि रजोगुण युक्त कर्म हुआ है किसी बातकी चिन्ता न करे अर्थात् दुःखको गिनती में नहीं गिने—यह सात्त्विकी गुण बड़ी कठिनतासे प्राप्तहोते हैं, तृष्णा, दुःख, शोक, लोभ अक्षमा—यह रजोगुण के लक्षणहैं, अपमान, मोह, प्रमाद, अर्थात् भूल स्वप्न, अर्धस्वप्नइत्यादि नानाप्रकार के तमोगुण बड़ी अभाग्यता से उत्पन्न होते हैं दुःप्राप्य वस्तुओं में भी प्राप्तहोने वाला बहुत से विषयों में एकबारही प्रवृत्त होनेवाला प्रश्नकर्त्ता, और संशयात्मक चित्त, अथवा जिसके चित्तकी वृत्तिरुकगई है वह इसलोक परलोकमें सुखका भोगकरता है—३७ उस सूक्ष्म रूप बुद्धिबल और क्षेत्रज्ञ साक्षीके अंतर को देखो कि उनमें एकतो गुणोंको पैदाकरता है दूसरा नहीं करता है जैसे कि मशक अर्थात् मच्छर और गूलर यहदोनों परस्पर में सदैव एकत्रहोते हैं उसी प्रकार उनबुद्धि और क्षेत्रज्ञ दो-नोंका संयोग है वह दोनों स्वभावसे भिन्न सदैव मिलेरहते हैं जैसे कि जलमें

मछली रहती है उसी प्रकार वह दोनों संयुक्तहैं गुणतो आत्माको नहीं जानते परन्तु आत्मा सबगुणों को जानताहै तात्पर्य्य यहहै कि गुण जड़ रूपहैं और आत्मा चैतन्यरूपहै इसीप्रकार पुरुष उनगुण अर्थात् देह अहंकारादिका द्रष्टाहै और उनको अपनेसे भिन्न नहीं मानताहै—वह परमात्मा उन चेष्टाओंसे रहित अज्ञान इन्द्री बुद्धिकेद्वारा दीपकके समान अर्थोंको प्रकाश करताहै—बुद्धिगुणों को उत्पन्न करती है और क्षेत्रज्ञ देखताहै उसबुद्धि और क्षेत्रज्ञका यह प्राचीन सम्बन्ध है,बुद्धि और क्षेत्रज्ञका सम्बन्ध वर्णनमें नहीं आसक्ता इसको कहते हैं कि बुद्धि और क्षेत्रज्ञका कोई आधार नहीं है क्योंकि क्षेत्रज्ञ असंग और निर्गुणहै और बुद्धि मिथ्या और चित्तकी उत्पन्न करनेवाली है उसके जड़ रूप गुणोंको कभी पैदानहीं करती अर्थात् वह गुण अपने कार्य्य समेत सब मिथ्या हैं—अब अध्यास निवृत्तिकी युक्तिको कहते हैं कि जब उस बुद्धिकी इन्द्री को अच्छे प्रकारसे स्वाधीन करता है अथवा रोकता है तब उसका आत्मा ऐसे प्रकाश करता है जैसे कि घटमें प्रज्वलित दीपक होताहै, जो ज्ञानी अपने स्वाभाविक कर्मों को त्याग करके केवल आत्मामें प्रीति रखनेवाला ध्यान शील मुनि होकर सबजीवों का आत्मारूप होता है अर्थात् जो इसप्रकार से जानता है कि मैं ब्रह्महूं वह सर्वरूप होता है और इसीसे उत्तम गति को पाताहै—जैसे कि हंस पक्षी जलमें नहीं भीजताहै उसीप्रकार ज्ञानी देहादि भूतों में घूमता है, इसप्रकार के इस आत्मरूप स्वभाव को अपनी बुद्धि से विचारकर समदर्शी और मित्रता से पृथक् मनुष्य हर्ष शोक रहित होकर बिहार करता है, इसी ज्ञानी की जीवन्मुक्ती को कहते हैं कि जो पुरुष आत्मस्वरूप योग से संयुक्त है वह सदैव गुणों को अपने ऐश्वर्य्य बल से ऐसे उत्पन्न करताहै जैसे कि सूत्रको मकड़ी उत्पन्न करती है वह गुण तारके समान जानने योग्य हैं यह दृष्टांत एकताके निमित्त वर्णन किया इस प्रकार जीवन्मुक्त पुरुष जिसका देह प्रारब्ध कर्म से बनाहै पूर्व्व संस्कार के कारण सन्मुख वर्त्तमान गुणों से देखने के समय उत्पत्ति को देखना योग ऐश्वर्य्य आत्मा आदि से अथवा निर्विकल्प ध्यानसे बर्त्ताव करता है यह तो पूर्व्वकहा और प्रारब्ध कर्म्म के समाप्त होनेपर गुणघटके समान निवृत्तहोते हैं अथवा रस्सी के सर्पके समान पीड़ादेतेहैं इसबातको विचारते हैं और नाशरूप होनेवाले गुणनिवृत्त नहीं होतेहैं क्योंकि प्रत्यक्ष में निवृत्ती नहीं पाईजाती है वह परोक्ष अनुमान से सिद्धहोती है अर्थात् नानाजीव माननेवाले व्यवहारकी रोकसे निवृत्ती होना नहीं मानतेहैं और दूसरे एकजीव माननेवाले निश्चय करते हैं कि निवृत्ती होजातीहै अर्थात् अपने अज्ञानसे उत्पन्न होनेवाला जो प्रपञ्च है उसके नाश होनेमें अत्यन्त निवृत्ती ऐसे होजाती है,जैसे कि स्वप्न

में दृष्ट आनेवाली वस्तु जागतेही नष्ट होजातीहैं इन दोनों को दिखाकर इन में से एक मतको शास्त्रमें अच्छे प्रकारसे विचारकर बुद्धिके अनुसार निश्चय करे अर्थात् ध्यानसे साक्षात्कार करे—क्षेत्रज्ञ और बुद्धिके अन्तररूपी हृदय की गांठको खोल अर्थात् दोनोंको एक करके सुख पूर्वक वर्त्तमान होकर संदेहरूपी शोचको न करे—क्षेत्रज्ञ में बुद्धिके धर्म दुःख आदि हैं और बुद्धिमें क्षेत्रज्ञके धर्मदृष्ट पड़ते हैं इससे बुद्धिसे होनेवाला जो अन्तर है उसको त्याग करे जैसे कि मलिन देहवाला मनुष्य पूर्ण नदी में स्नान करने से देह की पवित्रताको पाते हैं उसी प्रकार ज्ञानी पुरुष इस ज्ञानको प्राप्त करके शुद्धता को प्राप्त होते हैं, जैसे महानदी के पारको जानेवाला अत्यन्त दुःखको पाता है वह मिथ्या नहीं है किन्तु नौका आदिके द्वारा पारको जाताहै उसीप्रकार तत्त्वज्ञान का जाननेवाला ज्ञानसेही संसारको तरताहै जिन्होंने इसप्रकार से हृदयरूपी आकाशके मध्यवर्त्ती विषयों से पृथक् आत्मा को जाना है वही उत्तम ज्ञानको पाते हैं, सबजीवोंके उत्पत्ति और लयका स्थान ब्रह्मको जान कर धीरे २ सूक्ष्म बुद्धि से विचारकर जो पुरुष त्यागको करता है वह सुनने और विचार करने से ध्याननिष्ठ तत्त्वको देखनेवाला और आत्म दर्शन के सिवाय कहीं देखनेकी इच्छा न करनेवाला होता है—अपवित्र मिथ्यावादी मनुष्यों से कठिनता से प्राप्त होनेवाला आत्मदर्शन इन्द्रियों के द्वारा नहीं होसक्ता है इसको जान के ज्ञानी होवे—ज्ञानी का दूसरा लक्षण क्या है अर्थात् कोई नहीं ज्ञानी लोग इसी को जानकर निर्विघ्नता पूर्वक कर्मों से निवृत्त होते हैं अज्ञानियों का जो बड़ा भयकारी संसारी दुःख है उससे ज्ञानियों को भयकभी नहीं होता है—किसी की मोक्ष रूप गति अधिक नहीं है अर्थात् सबकी बराबर है गुणों के स्वीकार और अलंकार से असमानता होती है जो पुरुष कर्म को फल की अनिच्छा से करताहै वह पहले किये हुए पापों को दूरकरताहै पूर्वजन्मके और वर्त्तमान के कर्म उसज्ञानी के अनीप्सित को सबप्रकारसे उत्पन्न नहीं करतेहैं तो यहां अभीष्टको कैसे करेंगे अर्थात् कर्म मोक्षमें कारण रूपनहीं है—काम क्रोध लोभरूप विषयोंसे जर्जरीरूप लोक को देखनेवाला मनुष्य धिक्कारी देताहै वह निन्दित कर्म उस व्यसनी को यहां सब योनियों में पैदा करता है—लोकमें अच्छे प्रकार से मिलकर व्यसनी लोगों को देखो कि पुत्र स्त्रियों आदि के शोचनेवाले हैं और सारासार के विवेक के जाननेवाले और शोकसे रहित पुरुषोंको देखो जिन्होंने सत्पुरुषोंके उनदोनों क्रममुक्ति और सदैव मुक्तियोंको जानाहै६३॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेएकविंशत्तमोऽध्यायः २१॥

बाईसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि हे राजा युधिष्ठिर मैं चार प्रकारके ध्यानयोगको तुमसे कहताहूं जिनको कि इसलोक में महर्षि लोग जानकर सनातन मोक्षसिद्धीको पातेहैं, ज्ञानसे तृप्त निर्वाण मोक्ष में शांतचित्त योगी इसप्रकार से ध्यानको करतेहैं जैसे कि अच्छे अनुष्ठानवाले कियाकरतेहैं—हे युधिष्ठिर आत्मरूपमें चारोंओर से नियत होकर संसारी दोषों से रहित पुरुष फिर संसार में नहीं आते हैं, शीतोष्णता के सहनेवाले सदैव प्रकाश में नियत लोभ आदि से रहित और शौच सन्तोषादि कर्म्मों के करनेवाले हैं और जिनके स्थान स्त्री आदिके संगसे और पक्षपातसे रहित और चित्तकी शुद्धी करनेवाले हैं उन स्थानोंपर ध्यानसे मनको लगाकर एकाग्रता प्राप्तकरे और इन्द्रियोंको दमन करके काष्ठके समान वर्त्तमान होजाय—कानसे शब्दको न सुने त्वचा से स्पर्शको न जाने नेत्रसे रूपको न पहिंचाने जिह्वा से रसका आस्वाद न करे और घ्राणसे सबगन्धों को त्यागदे वह पराक्रमी योगी ध्यानसे पांचों इन्द्रियों को दमन करनेवाले इन बिषयों को नहींचाहै तदनन्तर वह ज्ञानी पंचवर्ग्गों को हृदय में रोककर पांचों इन्द्रियों समेत व्याकल चित्तको आत्मा में लयकरे, ज्ञानिपुरुष प्रथम उस चित्तको जोकि बिषयोंमें घूमनेका अभ्यासी पांच द्वारवाला चेष्टायुक्त बिषयों में भी चेष्टा रहितहै उसको हृदयाकाश में देहादि के अवलम्बन से रहितकरके चारप्रकारके ध्यानमार्ग्गमें धारणकरे—जबयह ज्ञानी चित्त और इन्द्रियोंको पिण्डीभाव करताहै यह पिण्डीकर्म्म मुख्य ध्यानमार्ग है,इसको मैंने तुमसेकहा–उस जीवात्मा के जो चित्त बुद्धि पंचेंद्री समेत सातअंगहैं उनमें छठाअंग जो चित्तहै वह प्रथम रोके जानेसे भी ऐसे चेष्टा करेगा जैसे कि बादल में घूमनेवाली बिजली–और पत्तेपर ठहराहुआ और सब ओर से चलायमान अम्बुकण होता है उसीप्रकार ध्यानमार्ग्ग में नियत होकर चित्तभी चलायमान होताहै वह थोड़े समयतक तो ध्यानमार्ग्ग में वर्त्तमान होताहै फिर नाड़ीमार्ग्ग में जाकर भ्रान्तियुक्त चित्तवायुके समान होजाता है–योग मार्ग्ग में कष्टपानेवालाभी उससे चित्तको न हटावे, और निरालस्य दूसरे की वृद्धिका सहनेवाला होजाय फिर ध्यानयोगका जानने वाला ध्यान के द्वारा चित्तको समाधान करे–प्रथम योगका अनुष्ठान न करने वाले मुनि का बिचार रूपी ध्यान या बिवेक अथवा वितर्क नाम ध्यान प्रारम्भमें अधिकारके भेदसे प्राप्तहोताहै अर्थात् चित्तसेकल्पित सुन्दर पीताम्बर आदिकेरूपमें चित्तका लगाना बीचवालों का बिचारहै वहभी सविचार और निर्बिचारके नामसे दो प्रकारकाहै, जब शब्दार्थ के लिखने के साथही भक्ति

होतीहै वह उत्तम है और उस शब्दार्थ के बिना जो होतीहै उसमें दूसरा वि-चार है, सवितर्क और निर्वितर्क नाम दो प्रकार के स्थूलालम्बनमें यहभेद अ-धम अधिकारियों के योग्यहै—चित्तसे क्लेशपानेवाला मुनि समाधिनिष्ठहो और उससमाधि से प्रीतिरहित न होकर अपनेहितकोहीकरे जैसे कि धूल भस्म और गोबर के खात आदिकी मूर्ति जलके योग से जल्दी नहीं बनसक्ती है परन्तु जैसे कि कुछ दिन पीछे उनमें चिकनाई आदि होने से मूर्ति बनजाती है इसीप्रकार सबइन्द्रियों को एकरूपकरे और क्रम से उसके अंगों के त्याग नेसे चित्तरूप करे वह पुरुष अच्छे प्रकार से शांती अर्थात् निर्विकल्पता को पाता है अर्थात् वितर्क से बिचारको पाताहै विचारसे आनन्दको आनन्दसे समताको समतासे कैवल्यभावको पाताहै यह क्रमयोगशास्त्र में प्रसिद्धहै—हे युधिष्ठिर इसप्रकार प्रथम बुद्धिवाला आपही चित्त और पांचों इन्द्रियोंको ध्यानमार्ग में नियतकरता है अर्थात् इनसबको लयकरके सदैवके योग से आपभी शांतीको पाताहै, नरलोक और देवलोक की किसी पदवीसे उससुख को नहीं पाताहै जो सुख कि चित्तरोकनेवाले योगी को होता है उस सुखसे संयुक्त ध्यान कर्म्म में प्रीतिमान् योगी इस प्रकार उसद्वैत से पृथक् कैवल्यरूप ऐक्यता को पाते हैं २२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेद्वाविंशोऽध्यायः २२ ॥

तेईसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि तुमने चारोंआश्रमों का हितकारी धर्म्मकहा उसीप्रकार राजधर्म्म आदि अनेक प्रकारके धर्म्मोंके उत्पत्ति स्थान और भिन्नभिन्न प्रकार के बहुतसे इतिहास वर्णन किये—हे महाज्ञानी आपसे मैंने बहुतसी धर्म्म संबंधी कथाओं को सुना अब मैं आपसे जप करनेवाली की फलकी प्राप्तिको सुना चाहताहूं कि जप करनेवालोंको क्या फल होताहै और उनका निवास कहांहोता है और जप करनेवाला पुरुष वेदान्त का बिचार करनेवाला है या योगी और कर्म्म करनेवाला है और यह सांख्य है या योग या क्रिया बुद्धि है यह क्या ब्रह्मयज्ञकी बुद्धि है यहजप क्या कहाजाता है यह सब मुझ से कहो मैंने आपको सर्वज्ञ माना है—भीष्मजी बोले कि इस स्थानपर मैं एक प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें यमराज कालपुरुष और ब्राह्मण आदि का प्राचीन वृत्तांतहै—मोक्षदर्शी मुनियों ने जो दोनोंसांख्यऔरयोगकहे उनके मध्य वेदांत के विषय में तर्कही वर्त्तमानहै अर्थात् संन्यासियोंको जपकी आ वश्यकता नहीं है वह उपासना के अधिकारसे भी बढ़कर उत्तमपदको प्राप्त हुये क्योंकि सब वेदवचन ब्रह्ममें नियत शांतरूप वैराग्यसे संयुक्तहैं समदर्शी

मुनियोंने जो सांख्ययोग कहे यह दोनों मार्गभी जपके उपकारी हैं अर्थात् चित्तशुद्धी के द्वारा तत्त्वमसि वाक्यका अर्थ जाननेसे आलम्बनरूप योग में प्रणवका जप उपकारी है और वह मार्ग जपका उपकारी भी नहीं अर्थात् साक्षात्कार में जपकी आवश्यकता नहीं है हे राजन् जैसे सुनाजाताहै उसी प्रकारसे यहां कहाजाताहै इन दोनों मार्गोंमें भी चित्तका रोकना और इन्द्रियों का जीतना, सत्यता, अग्निसेवा, एकांतवासी महात्माओंका सेवनध्यान, तप, विषयों में दोषदृष्टि होना, दम, क्षमा दूसरे के गुणों में दोष न लगाना अनुकूल भोजन, विषयों का जीतना, मितभाषी, देहेन्द्रीका जीतना, यहप्रवर्त्तक यज्ञ है अर्थात् स्वर्गादिका देनेवाला है, और निवर्त्तक यज्ञ यह है कि जैसे ब्रह्मचारी जपकरनेवाले का कर्म्म समाप्त होताहै अर्थात् मोक्ष प्राप्तहोती है वही निवर्त्तकयज्ञ है उसकी यह रीति है कि चित्तकी जो समाधि ऊपर वर्णन करचुके हैं उसको कर्मके द्वारा फलसे रहितकरे अर्थात् निवृत्तिमार्ग को जोकि गुप्त प्रकट आलंबन का आश्रय न करनेवाला शुद्ध चिन्मात्रहै उसको पाकर नियतहो—अब मार्ग प्राप्तहोने को कहते हैं—कि हृदय कमलसे कुशाके समान जो नाड़ियां निकलकर संपूर्ण देहमें फैली हैं उन प्रकाशात्माओं से भरीहुई नाड़ियों पर बिराजमान आगे ऊपर नीचे और चारोंओर कुशाओं से व्याप्त उसकुशाजालरूप हृदय पिण्डके मध्ययह पुरुष कुशाओंसे ढकाहुआहै अर्थात् दीपकके समान तेजकेद्वारा सम्पूर्णब्रह्मांडमें व्याप्तहै वही सबकाप्रकाश करनेवाला और आत्माहै—चित्तको बाहरके विषयोंसे पृथक्करे और अन्तर्य विषयोंको त्यागकरे चित्तसे जीवब्रह्मकी एकताको प्राप्तकरके चित्तको चित्तमें लय करे क्योंकि चित्त कूटस्थ ब्रह्मका रूपांतर नहींहै और मायामिथ्याहै इस कारण वह इनदोनों में लयनहीं होता है उससमदर्शी बुद्धि से हितकारी संहिता को जपकरताहुआ शुद्ध ब्रह्मको ध्यान करताहै फिर समाधि में नियत होकर वह पुरुष चित्तकी स्थिरता के पीछे उसको भी त्यागकरताहै यहां वह शुद्ध चित्ता विचारसे जितेन्द्री और योगियों की इच्छायुक्त ब्रह्मनाम का रखनेवाला ज्ञानी संहिता बलकी रक्षासे ध्यानको उत्पन्न करता है—राग, मोहसे रहित सुख दुःखादि योगोंसे जुदा वह पुरुष न शोचता है न शान्तचित्त होता है वह कर्म्मों का कर्मफल उत्पन्न करनेवाला नहीं है यही मर्य्याद है—कहीं अहंकार के योगसे चित्त को प्रवृत्त नहींकरे—धनके प्राप्त करने में प्रवृत्त अहंकार युक्त और कर्म रहित न होवे ध्यान क्रिया को उत्तम माननेवाला ध्यानमेंप्रवृत्त और निश्चय रखनेवाला ध्यान के आलम्बनमें समाधिको प्राप्त करके उसको भी क्रम क्रमसे त्याग करताहै उसदशामें वह सबका त्यागकरने वाला अनिच्छा से प्राणोंको त्याग करताहै वह आनन्द रूप ब्रह्ममें प्राप्त

होताहै अर्थात् उसके प्राण पितृयान और देवयानों के द्वारा चेष्टा नहीं करते हैं वह तद्रूप होजाताहै चाहे ब्रह्मरूप सुखका सेवन भी न चाहे तौ भी वह मार्ग्ग में वर्त्तमान ब्रह्मलोककी ओर चेष्टा करता है परन्तु कहीं जन्म नहीं लेता है आत्मारूप बुद्धि से अच्छेप्रकार ब्रह्ममें नियत होकर शान्तरूप जरा मृत्यु से पृथक् रजोगुण रहित अविनाशी आत्माको वह पुरुष प्राप्त करता है २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेत्रयोविंशत्तमोऽध्यायः २३ ॥

चौबीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह यहां आपने जप करनेवालों की उत्तम गति प्राप्तहोनेका बर्णन किया सो उनकी एकही गतिहै अथवा दूसरी भी कोई गतिहै—भीष्मजी बोले कि हे राजा युधिष्ठिर तुम जपकरनेवालों की उस दूसरी गतिको सावधान चित्तहोकर सुनों जैसे कि वह बहुत प्रकारके नरकों को जाते हैं कि जो जपकरनेवाला पहले कहेहुये बचनोंके अनुसारकर्म नहीं करता है और इसलोकमें अपूर्ण जपका करनेवाला है वह नरकको जाता है, श्रद्धा प्रीति रहित अप्रसन्न चित्तहोकर जपकरनेवाला भी अवश्य नरकको जाताहै अहंकार करनेवाले सबमनुष्य नरकमें जातेहैं, दूसरेका अपमान करने वाले भी नरककोजातेहैं, जो मोहसे भराहुआ मनुष्य चित्तकी इच्छाके अनुसार जप करता है उसकी जिस फलमें प्रीति होती है वह वहां २ उसके भोगने को जन्मलेताहै फिर उन्माद आदिमें वह जप करनेवाला इच्छा करताहै वही उसका नरकहै उससे उद्धार नहीं होताहै उन उन्माद आदि बिभूतियों में रागसे मोहित होकर जप करताहै ऐसी दशामें जिसफलकी उसको इच्छा होती है वहां उसका फलभोगने के लिये जन्म लेता है—दुष्टभोगों में बुद्धि लगानेवाला और भोगोंके परिणामवाले दुःखोंका न जाननेवाला चलायमान चित्तहोता है और चलायमान गतिको पाता है अर्थात् नरकको जाता है अज्ञानी बालक जप करनेवाला मोहको पाताहै और उस मोहसे नरकको जाताहै वहां जाकर शोचकरता है मैं करताहूं इस प्रकार जो दृढ़ग्राही जापक जप करताहै और वैराग्यवान् नहीं है परन्तु बहुतसे भोगोंको त्यागकियेहुये हैं—वह नरककोजाताहै, युधिष्ठिर बोले कि जो स्वाभाविक चित्तवृत्ति से रहित ब्रह्म में स्थित है ऐसा जापक किस प्रकार देह के साथ ब्रह्म में प्रवेश करताहै भीष्मजी बोले कि काम से ढकीहुई बुद्धि के कारण बहुत नरक और उस बुद्धि से सम्बन्ध रखनेवाले दोषरागादिक और उत्तम जपका करना यह सब वर्णन किये १३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणि मोक्षधर्मेचतुर्विंशोऽध्यायः २४ ॥

पच्चीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जप करनेवाला किस प्रकार नरकको जाताहै इस मेरे चित्तके शोकको आप दूरकरिये—भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर तुम धर्म्मके अंशसे उत्पन्न और स्वभावसे धर्म्मनिष्ठहो तुम सावधान होकरमेरे कहेहुये बचनोंकोसुनो—कि यह जो परमउत्तम देवताओंके उत्तमस्थान नाना वर्णोंके निवासरूप अनेकफलोंके देनेवालेहैंऔर वैसेही दिव्यकामचारी बिमान और सभाहैं औरक्रीड़ाके उद्यान आदिमें सुवर्ण सदृश कमलशोभित हैं और चारों लोकपाल शुक्र, बृहस्पति, मरुद्गण, विश्वेदेवा, साध्यगण, अश्विनी-कुमार, रुद्र सूर्य, अष्टवसु, इसी प्रकार दूसरे देवताओं के जो लोकहैं वह सब परमात्मा से पृथक् स्थान होने से नरकरूप हैं, परमात्मा का परमधाम तो निर्भय अविनाशी स्वभाव सिद्ध दोष रहित बाह्याभ्यन्तरसे शुद्ध आनन्दमय कालरूप ब्रह्म और स्वर्ग आदि का ईश्वर है शुद्ध आत्मारूप को पानेवाला ज्ञानी उस ब्रह्मरूप स्थान को पाकर शोच से रहित होता है परमधाम ऐसा है और वह नरक वैसे हैं—यह सब नरक ठीक २ तुम से कहेगये इस लोक में उस परमधाम की अपेक्षा सब नरक रूप हैं ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेपंचविंशोऽध्यायः २५ ॥

छब्बीसवां अध्याय ॥

जप करनेवाले के स्वाधीन यमराज आदि होते हैं वह आप समेत दूसरों को तारताहै उसको सत्यता आदिकी रक्षा करनी योग्य है और छल आदि भी त्याग करने योग्य हैं इन बातों को दो अध्यायों में वर्णन करेंगे युधिष्ठिर ने कहा कि आपने पूर्व्व में कालमृत्यु, यमराज राजा इक्ष्वाकु और ब्राह्मण का सम्बाद वर्णन किया सो इसके भी कहने को आप सामर्थ्य हैं—भीष्मजी बोले कि इस स्थान पर इस प्राचीन इतिहासको कहताहूं इस में भी सूर्य्य के पुत्र यमराज और इक्ष्वाकु और ब्राह्मण का वृत्तांतहै दूसरे उसी प्रकारके काल और मृत्यु का भी वर्णन है उसको मुझ से सुनो और उन्होंका वह सम्वाद भी जिसप्रकार जिस स्थानपर हुआ उसको सुनो—कि कोई जप करनेवाला धर्मवृत्ती ब्राह्मण बड़ा यशस्वी शिक्षा कल्पादि छः अंगों का जाननेवाला महाज्ञानी कौशिक गोत्री पिप्पलादि नाम वेद के छः अंगों में उसका अपरोक्ष ज्ञानथा वह वेदों में पूर्ण होकर हिमालयके मूल में वर्त्तमान था वहां संहिता को जप करते उस सावधान ब्राह्मण ने अति उत्तम ब्राह्मण के योग्य तपको किया, इस नियम से इसके हजार वर्ष व्यतीत हुये तब साक्षात् देवी

भगवती ने उसको दर्शन दिया और कहा कि मैं प्रसन्नहूं उस ब्राह्मण ने जप में मौनहोकर उससे कुछ नहीं कहा तब तो देवी सावित्री ने उसकी निरपेक्षता से बहुत प्रसन्न होकर उसके जपकी अत्यन्त प्रशंसाकी तब वह जपको समाप्त करने वाला धर्म्मात्मा उठकर मस्तक को नवाकर देवी के चरणों पर गिरपड़ा और यह बचन बोला कि हे देवी तुम प्रारब्धसे मेरेऊपर प्रसन्न हो इससे मुझको दर्शन दिया और मेरे देखने को आई जो आप मेरेऊपर प्रसन्न हैं तो मेराचित्त जपमें प्रवृत्तहो सावित्री बोली कि हे जप करनेवालों में उत्तम ब्रह्मऋषि तू क्या चाहता है तेरी क्या प्रसन्नताकरूं तू अपने अभीष्टको अच्छे प्रकारसे कह मैं सब पूर्ण करूंगी जब देवी ने ऐसा कहा तब उस धर्मज्ञ ब्राह्मण ने बारम्बार यही कहा कि मेरी यह जपकी इच्छा वृद्धिको पावे और प्रति दिन चित्तमें नियमबढ़े तब देवी ने इसे मधुरवचन से कहा कि यहतेरा अभीष्ट सिद्ध होगा और यह दूसराबरभी दिया कि तुम नरकयुक्त बिनाशवान् होनेसे उसस्वर्ग को नहीं जाओगे जहां कि उत्तम ब्राह्मण जाते हैं अर्थात् उस ब्रह्मलोक को जाओगे जो कि स्वभाव सिद्ध और निर्दोष है इसकारण से कि तैंने यही इच्छा मुझ से कीहै कि मेरा चित्त जपही में प्रवृत्तर है इसहेतुसे मेरी कृपा से तुझको वही प्राप्त होगा और तुम सावधानता पूर्वक चित्तको एकाग्र करके जपमें प्रवृत्तहो तेरेसमीप धर्म काल मृत्यु यमराज यह सब आवेंगे तब धर्म के विषय में तेरा और उनका शास्त्रार्थ होगा—भीष्मजी बोले कि इस प्रकार भगवती कहकर अपने भवनको गई और ब्राह्मण भी उसी प्रकार से दिव्य शतवर्षतक जप करने में वर्त्तमान रहा और चित्तसे जितेन्द्रिय क्रोध रहित सत्यवक्ता दूसरों के गुणों में दोष नहीं लगाता था फिर उस बुद्धिमान् ब्राह्मण का वह नियम समाप्त होने पर साक्षात धर्म देवता ने प्रसन्न मूर्ति होकर आप दर्शन दिया और कहा कि हे ब्राह्मण तुम मुझ धर्मको देखो मैं तेरे देखने को आयाहूं इस जपका फल जो तुमने पाया है उसको मुझ से सुनों कि तुमने पृथ्वी स्वर्ग से सम्बन्ध रखनेवाले सब लोकों को विजय करके देवताओं के भी सब लोकों को उल्लंघन करोगे इससे प्राणों को त्यागो तुमको इच्छा के समान लोकों की प्राप्ति होगी ब्राह्मण बोला हे धर्म मुझको लोकों से कोई प्रयोजन नहीं है तुम आनन्द से चलेजाओ और हे समर्थ मैं बहुत सुख दुःखवाले दूसरे देह को उत्पन्न नहीं करना चाहता अर्थात् इसीदेहसे मुक्तहोना चाहताहूं—धर्मने कहा हे मुनिश्रेष्ठ तुमको अवश्य देह त्यागना योग्यहै और हे अनघ तुम स्वर्गमें बसोगे या और कुछ चाहतेहो—ब्राह्मणबोला कि हे समर्थ मैं आत्माके देहबिना स्वर्गको नहींचाहताहूं हे धर्म तुमजाओ आत्मा के बिना स्वर्गजाने में मेरी श्रद्धा है धर्म्म बोले

कि देहमें चित्त लगाना त्यागकरो और शरीरको त्यागकरके सुखीहो रजो-गुणसे पृथक् लोकोंमें जाओ जहां किसी बातका शोच नहीं है, ब्राह्मणबोला कि हे महाभाग मैं जपताहुआ रमण करूंगा सनातन लोकोंसे मुझको क्या लाभहै इससे हे धर्म मुझको देहसमेत स्वर्ग जाना चाहिये या नहीं, तात्पर्य्य यहहै कि सदेह स्वर्गकोजाना जपके फलसे न्यूनहै—धर्म बोले हे ब्राह्मण जो तुम देह का त्यागना नहीं चाहते हो, देखो यह कालमृत्यु और यमराज तेरे पास आये हैं—तदनन्तर यमराज और कालमृत्युने उसमहाभाग ब्राह्मण के पासजाकर यहकहा कि अच्छेप्रकार तपेहुये और विधिपूर्व्वक कियेहुये इस तेरे तपकी यह उत्तम फलकी प्राप्तीहै मैं यमराज हूं तुमसे कहताहूं फिर काल पुरुषबोले कि इस जपकाफल उत्तम जैसा कि चाहियेथा उसी प्रकारसे किया तेरे स्वर्गजाने का कालहै मैं कालपुरुष तेरे पास आयाहूं मृत्युबोली किमुझ आई हुईको रूपवान् मृत्यु जानों हे ब्राह्मण मैं कालकी भेजीहुई तेरेलेने को यहां आईहूं ब्राह्मणने कहा कि काल, यमराज, मृत्यु और महात्मा धर्म का आनाशुभहो आपका क्याकार्य्यकरूं भीष्मजी बोले कि यह कहकर उनका अर्घ्यपाद्य करके प्रसन्नता पूर्वक यहबोला कि मैं अपनी सामर्थ्यके अनुसार आपकी क्या सेवाकरूं इसी अंतरमें तीर्थयात्रा करताहुआ राजा इक्ष्वाकु भी दैवयोगसे वहांगया जहांपर कि वहसबवर्त्तमानथे वहां उस राजर्षि ने सबको यथायोग्य प्रणाम पूजनादि करके कुशल प्रश्नपूछा तब उस ब्राह्मणने भी राजाका पाद्यअर्घ्य आसनादिसे सत्कारकरके यह प्रश्नकिया कि हे महाराज आपका आना कल्याणकारीहो आपका जोअभीष्टहै उसको यहां मैं अपनी सामर्थ्यके समान किया चाहताहूं आप आज्ञा दीजिये राजाने कहा मैंराजाहूं तुम ब्राह्मणहो जब तुम अपने छओं कर्मों में वर्त्तमानहो तब सुवर्ण रत्नादि धनोंमेंसे कौनसा आपकोदूं उसको आप मुझसे कहिये, ब्राह्मण बोला कि हे राजा ब्राह्मण दोप्रकारके हैं और धर्मभी दोभेदकाहै प्रवृत्त और निवृत्त इस कारण मैं दानलेना नहीं चाहताहूं जोदानलेनेवाले पवित्र ब्राह्मणहैं उन्हींको आपदानदीजिये मैं दान नहींलूंगा आपको क्या अभीष्टहै और मैं क्याकरूं और हेराजाओंमें उत्तम जो आप अपना मनोरथकहैं उसको मैं अपने तपके बलसे पूराकरूं, राजाबोला कि हे ब्राह्मणोत्तम मैं क्षत्रीहूं मैं इसवचनके कहनेको नहींजानताहूं कि मुझकोदो, हमइसप्रकारके कहनेवालेहैं किहमको युद्धदानदो ब्राह्मणने कहा कि हे राजा जैसे तुम अपने धर्मसे प्रसन्नहो उसी प्रकार हमभी अपने धर्ममें प्रसन्नहैं परस्पर में कोई अन्तर नहींहै जो आपको अभीष्ट है वहीकरो, राजाने कहा कि हे विप्रवर्य्य तुमने जो कहा कि मैं अपनी सामर्थ्य के अनुसार दूंगा तो मैं आपसे मांगताहूं कि इस अपने जपका फलमुझको

दीजिये, ब्राह्मणने कहा कि जो आप कहतेहैं कि मैं सदैव युद्धकी ही याचना करताहूं तो हमारे साथमें कोई युद्धनहीं है फिर ऐसी याचना क्योंकरते हो राजाबोला कि ब्राह्मण बज्ररूप वचन कहनेवाले होते हैं और क्षत्री लोग भुजबलसे जीवतेहैं सो हे ब्राह्मण यह बचनरूप कठिनयुद्ध मेरा आपके साथहै ब्राह्मणने कहा कि हे राजेन्द्र अबभी मेरा वही प्रणहै कि अपनी सामर्थ्य के अनुसार क्या दियाजाय आप कहिये मैं सामर्थ्य होनेपर दूंगा बिलम्ब न कीजिये-राजाने कहा कि जो आप मुझको दिया चाहते हैं तो आपने जो दिव्यशतवर्ष तक जप किया है उसका फल मुझको दो, ब्राह्मण बोला कि उसजपके श्रेष्ठफलको लोजो मैंनेजपाहै तुमबिना बिचारके उसके आधेफलको पाओ-और जोतुममेरा सबफल चाहतेहो तो सब जपका फललो राजा बोला आपका कल्याणहो मैंने जो जपके फल की इच्छा की वह आपने पूर्णकी अबयह भी बतलाइये कि इस जपका क्याफल है ब्राह्मणबोला कि मैं फलकी प्राप्तीको नहीं चाहताहूं मैंने जो जप किया वह मैंने दिया यह धर्मकाल यम मृत्यु इसकेसाक्षी हैं राजा बोला कि इस धर्मका अज्ञातफल मेराक्या उपकार करेगा जो तुम जपके धर्मफल को मुझसे नहीं कहतेहो इससे हे ब्राह्मण उस फलको आपही भोगें मैं नहीं चाहताहूं ब्राह्मण बोला कि दूसरे के विपरीत वचनों को स्वीकार नहींकरूंगा मैंने इस जपका फल तुमको दिया हे राजर्षि अब मेरा और तेरा वचनप्रमाण है मैंने कभी जपके फल की इच्छा नहीं की इससे हे राजेन्द्र मैं किसप्रकार जपके फलको जानूंगा तुमने मांगा मैंने दिया मैं अपने बचन को दोषी नहीं करूंगा सत्यता पर दृढ़ताकरो अब जो तू मेरे बचनों को नहीं करेगा तो मिथ्या बोलने से तुमको बड़ा अधर्म होगा-हे शत्रुहन्ता जैसे तू मिथ्या बोलने के योग्य नहीं उसीप्रकार मैंभी अपने वचन को मिथ्या नहीं करसक्ता-जो आपसच्चे हैं तो जैसे कि मैंने पहले बिना बिचारे देने को कहा उसीप्रकार बिना बिचारके उसको आपभी लीजिये तुमने यहां आकर जपके फल को मांगा मैंने उसको दिया और तुम उसको लो और सत्यतामें भी वर्त्तमान हो जो मिथ्या बोलता है उस का न यह लोक है न परलोक है और अपने पितरोंको भी नहीं तारेगा तो इनके पीछेवालों को कैसे तारेगा हे पुरुषोत्तम इसलोक परलोक में जैसे सत्यता उद्धार करती है उसप्रकार यज्ञोंका फल दान और नियम आदि नहीं तारते हैं हजारों लाखों वर्षतक जो तपकिये गये या करे जायँगे वह सबसत्य से अधिक नहीं हैं सत्य प्रणवरूप ब्रह्म है और सत्यही प्रणव रूप तप है सत्यही प्रणव रूप यज्ञ है सत्यही प्रणव रूप ज्ञान है सत्यही वेदों में जागता है सत्यही में श्रेष्ठफल भी है सत्यही से धर्म और शान्तचित्त है सत्यही में सब वर्त्तमान है सत्यही वेद

वेदांत विद्या बुद्धि ब्रत नियम है उसीप्रकार ॐ कारभी सत्यरूप है जीवों की उत्पत्ति सत्यरूप है सत्यहीसे वायु सन्मुख आतीहै सत्यही से सूर्य्य प्रकाश करताहै सत्यही से अग्नि भस्म करता है सत्यही में स्वर्गबर्त्तमानहै यज्ञ तप वेद स्तोभ मंत्र और सरस्वती यह सबसत्यरूपहैं हमने सुनाहै कि धर्म और सत्य एक तुलामें तोलागया तोसत्यही अधिकहुआ जहां धर्महै वहांसत्यहै सब सत्य हीसे बृद्धिपातेहैं हे राजा तुम किस कारण मिथ्या कर्म किया चाहतेहो सत्यमें चित्तको स्थिरकरो मिथ्याकर्म मतकरो तुम इसशुभ बचनको क्यों मिथ्याकरतेहो हेराजाजो तुममेरे इसजपके फलको नहीं चाहोगे तो धर्म से रहितहोकर लोकों में भ्रमतेडोलोगे, जो प्रतिज्ञाकरके देना नहीं चाहताहै और जो याचना करके लेनानहीं चाहताहै यहदोनों मिथ्या कर्म हैं तुम ऐसे मिथ्याकर्म करनेके योग्य नहीं हो राजा बोला हे ब्राह्मण युद्ध करना और प्रजापालन करना यही क्षत्री का धर्म्म है—क्षत्री दान देनेवाले कहे जाते हैं—मैं आपके दान को कैसे लूं ब्राह्मण बोला कि हे राजा मैं तुमको जबरदस्ती नहीं करताहूं कि तुम लो और न देने को तेरे घर गया तुम यहां आकर याचना करके क्यों नहीं लेते हो धर्म्म बोले कि तुमदोनों मत झगड़ो मुझआये हुये धर्मको जानों ब्राह्मण दानके फलसे और राजा सत्यके फल से संयुक्तहै स्वर्ग देवता बोले कि हे राजेन्द्र तुम मुझे आप आये हुए रूपवान् स्वर्गको जानो तुमदोनों मतझगड़ो क्योंकि दोनों समान फलवाले हो राजाबोला कि स्वर्गने मेरा काम किया तुम जैसे आयेहो वैसे स्वर्गको जाओ, जो ब्राह्मण स्वर्ग को जाना चाहता है तो मेरेसंचितफलकोलो—ब्राह्मणबोला कि जो मैंने बाल्यावस्था में अज्ञानतासे हाथ पसाराहो तो ऐसी दशामें तेरे दान को लूं मैं संहिता अर्थात् प्रणव गायत्री को जपकरता निवृत्ति लक्षणवाले धर्म की उपासनाको करूंगा हे राजा बहुतकालसे मुझ संसारकेत्यागने वालेको आप कैसे लुभातेहैं मैं आप अपनेकामको करूंगा तुझसे फलको नहींचाहताहूं मैं तप और वेदपाठका अभ्यास रखनेवाला दानलेनेसे निबृत्तहूं—राजाबोला किहेब्राह्मण जोतुमने जपके उत्तम फलको दिया उस दशामें हमदोनोंका जो कुछ फलहै वह हम दोनोंको साझे में आधा २ हो—ब्राह्मण दानलेनेमें प्रवृत्तहैं और राजवंशी राजा दाता है सो हे ब्राह्मण जो तुमने धर्म को सुनाहै तो ऐसी दशा में हम दोनों को फल साझे में हो चाहे हम दोनों साथ में न भोगें जो मुझपर तेरीकृपाहै तो मेरे किये हुये धर्म को लेकर मेरे फलको पाओ भीष्मजीबोले कि इसके पीछे कुरूप और मैलेवस्त्र पहरे दो पुरुष सम्मुख वर्त्तमानहुए और दोनों परस्पर में झपट और पकड़कर एकने दूसरेसे कहा कि तू मेरा ऋणीनहीं है दूसरेने कहा कि मैं तेराऋणीहूं यहहम दोनोंका झगड़ाहै और यहराजा न्याय करनेवाला

हमारा न्यायीहै—मैं यह सत्य कहताहूं कि आप मेरेऋणी नहीं हो और तुम मिथ्या कहतेहो कि मैं तेरा ऋणियांहूं अत्यंत दुःखीहोकर उनदोनोंने राजा से यह कहा कि आप ऐसा न्यायकरो जिसमें हमदोनों निन्दित न हों उनदोनों पुरुषोंमेंसे विरूपने कहा कि हे राजा मैं विकृतके एक गोदानके फल का ऋणीहूं सो मैं देताहूं और विकृत नहीं लेताहै विकृतने कहा कि हे राजा यह विरूप मेरा कुछ नहीं रखता है यह तुझ सत्यज्ञसे मिथ्याबोलताहै राजाबोला हे विरूप तुम किस वस्तुके इसके ऋणीहो यह मुझसे कहो मैं न्यायसेझगड़ा निपटाऊंगा यह मेरा चित्त कहताहै—विरूपबोला कि इस के ऋण को आप ध्यान देकर सुनिये हे राजा इस विकृतने धर्मकी प्राप्ति के लिये एकतपस्वी वेदपाठी ब्राह्मणको सुन्दर गौदानमें दी और मैंने इससे इस गोदान के फल को मांगा और इस विकृतने अत्यंत शुद्ध अंतःकरणसे मुझकोदिया तदनंतर मैंने अपनी पवित्रता के लिये शुभकर्म किया कि सवत्सा बहुतदूध देनेवाली दो कपिलागौ मोललेकर उंछवृत्ती ब्राह्मणके अर्थ बुद्धि और श्रद्धाके अनुसार अर्पणकरीं अबमैं इसके गोदान फलके द्विगुणफलको अभी देताहूं सोहेराजेन्द्र इस विषयमें हमदोनों में से कौन अपराधी और कौन निरपराधी है हमदोनों झगड़ालू तेरेसमीप आये हैं धर्म से या अधर्म से हम दोनों का निर्णयकरो जिसप्रकार मुझने इसको दिया और यह मेरेदान को नहीं चाहताहै अब आप यहां वर्त्तमान होकर हम दोनों को न्याय में नियतकरोगे फिर विरूपने विकृत से कहा कि तुम अपने दिये ऋणको मुझसे क्यों नहीं लेतेहो जैसे तुमने दियाहै वैसेही लो देर न करो—विकृतने कहा कि तुमने कहाथा कि मैं ऋण लेताहूं तब मैंने भी कहाथा कि मैं देताहूं, अब, यह मेराऋणीनहीं है वहांजाय जहां ऋण चाहता है—राजाबोला कि तुम इसके देने पर नहीं लेतेहो यह बात मुझको विरुद्ध ज्ञातहोती है तुम मेरीरायसे निस्संदेह दण्डके योग्य हो विकृतबोला हे राजर्षि मैंने इसको देदिया अब फिर किसप्रकारसेलूं जो इसमें मेरा अपराध समझो तो दण्डकी आज्ञादो विरूपने कहा कि जो तुम मेरेदिये हुये को नहींलोगे तो यह धर्म का जाननेवाला राजा तुमको दण्डदेगा विकृतने कहा कि मैंने तुम्हारे मांगने पर गोदानके फलको दिया अब मैं उसको किस प्रकार से फेरलूं आप जाइये मैं आपको आज्ञादेताहूं—ब्राह्मण बोले हे राजा तुमने इनदोनोंके इस वर्णनकोसुना, मैंने जो तेरेसाथ प्रतिज्ञा करीहै उसको विचार कियेहुयेलो—राजाबोला कि इनदोनोंका कर्म कलांतर बड़ा प्रशंसनीय है और जापक ब्राह्मणके सिद्धांत को दृढ़ करनेवाला है यह कैसे होगा जो अब ब्राह्मणका दिया हुआ नहीं लेताहूं तो मुझको भी बड़ा अधर्म क्यों नहीं होगा तब राजऋषि ने उन दोनोंसे कहा कि तुम मनोरथ

सिद्ध करके जाओगे अब यहां मुझको पाकर राजधर्म मिथ्या नहीं होगा राजाओं को यह बड़ा निश्चयहै कि अपना धर्म अवश्य रक्षाके योग्यहै— ब्राह्मणका धर्म कठिनतासे करने के योग्य मुझ निर्बुद्धी में प्रवृत्त हुआ—ब्राह्मण बोला कि मुझको योग्यथा कि तुमने याचना की और मैंने स्वीकार किया हे राजा जो तुम नहीं लोगे तो मैं अवश्य शाप दूंगा—राजाबोला कि राजधर्मको धिक्कारहै यहां जिसके विषयमें यह नीति है अर्थात् दान लेने का अधिकार नहीं और मुझे उसके जपका फल लेनायोग्य हुआ तो वहमेरे धर्म के समान कैसे होगा मैंने पूर्वके विपरीत यहहाथ धरोहड़के लिये पसारा—हे ब्राह्मण जोमेराऋणआप रखतेहैं उसकोदीजिये ब्राह्मण बोला।कि प्रणवव्याहृती सहित गायत्री का जपकरते में मैंने जो कोई गुण प्राप्त किया और जो कुछ यहां मेरा धनहै उस सबको लो—राजा बोला कि हे ब्राह्मण यह जल मेरेहाथ में गिरा वह मेराहो वा बांटेमेंहो आप उसको लीजिये—विरूप बोला कि हम दोनों काम और क्रोधहैं आपको हम दोनोंने इस बिषय में प्रवृत्त किया तुम ने जो साझेका शब्द कहा इस हेतुसे तेरे और इसके लोक बराबरहैं यहकुछ ऋणद नहींहै काल धर्म मृत्यु और हम दोनों काम क्रोधने तेरीबुद्धि जानने की इच्छाकरी तेरेसमक्ष में परस्पर के निर्णयमें सब झगड़ा किया गया तुम अपने कर्मसे जहां चाहतेहो उन्हीं बिजय कियेहुये लोकों को जाओ--भीष्म जी बोले कि मैंने तुमको जपकरने वालोंके फलकी प्राप्ति दिखाई जैसे कि उस जापक ब्राह्मणने सूर्य्यलोक आदि को बिजय करके मोक्षगतिको पाया संहिता का पाठ करनेवाला ब्राह्मण परमेष्ठी ब्रह्माजी को प्राप्त होता है अर्थात् उनके शरीरमें सायुज्य मुक्तिको पाताहै याजप करनेवाला अग्निलोकमें वा सूर्य्यमें प्रवेश करताहै और वहां तेजसरूप से रमताहै और रागादिसे रहित होकर उनके गुणों को प्राप्त करताहै—जैसे कि चन्द्रमा वायु पृथ्वी और आकाश की देहमें प्रवेश करनेवाला और रागवान् पुरुष उन्हीं के गुणको प्राप्त करता हुआ वहांपर वर्त्तमान रागवान् होताहै तब संशयको पाता है वह उस उत्तम अविनाशी ब्रह्मको चाहता हुआ फिर उसीमें प्रवेश करताहै उस अमृत से अमृतका अर्थात् कैवल्य मोक्षको प्राप्त करनेवाला इच्छा रहित बुद्धिमान अहंकारको त्यागकर ब्रह्मरूप हर्षशोक रहित सुखी शान्तरूप द्वैततासे पृथक् आवागमनसे रहित एक अविनाशी जरामृत्यु से अदूषित ब्रह्मरूप स्थानको पाता है वह चित्तके प्रत्यक्षागम अनुमानके बिनाहै क्योंकि रूप गुण सम्बंध और जड़भाव से हीन छः उर्मियों से और प्राणादि सोलह गुणों से पृथक् कारण ब्रह्मको उल्लंघन कर उस पुरुषको प्राप्त होताहै तब वह रागरूप पुरुष उस पुरुषकी प्राप्तिको नहीं जाताहै ऐसी दसा में उस सर्वात्मा कारण ब्रह्मको

अभिमानी होताहै वह जिस कामनाको चाहता है अथवा अनिच्छावान् वा सब प्रकारसे पृथक् होकर सुखपूर्वक उस निर्गुण ब्रह्ममें रमताहै—इसप्रकार जप करनेवालेकी गतिकही और क्या सुननाचाहतेहो १२८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणि मोक्षधर्मेषट्विंशत्तमोऽध्यायः २६ ॥

सत्ताईसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह उस विरूप के कहने के पीछे उस विकृत ब्राह्मण ने और राजाने क्या वार्त्तालाप करी उसकोआप मुझको समझाइये भीष्मजी बोले कि हे राजेन्द्र युधिष्ठिर उस ब्राह्मणने ऐसाही होगा यह स्वीकार करके और पूजनीय यमराज, काल, मृत्यु और स्वर्ग का यथोचित पूजन करके पूर्वमें जो अन्य ब्राह्मण वहां इकट्ठे हुये थे उन सबको शिर से दण्डवत्कर राजासे यह कहा कि हे राजा तुम इस फल में संयुक्त होकर प्रतिष्ठा को पाओ और आपसे आज्ञालेकर मैं फिर जपका प्रारम्भकरूं क्योंकि मुझको श्रीशारदाजीने वरदियाहै कि तेरी जपमें सदैव श्रद्धा रहै, राजाने कहा कि हे ब्राह्मण जो जपकरने में तेरीश्रद्धा है और बिनाफल के इस प्रकारकी सिद्धी है तो तुम मेरेसंगचलो और जपके फलको प्राप्तकरो ब्राह्मण ने कहा कि वहां सब के सामने बहुत बड़े उद्योग के समान फलवाले हम दोनों साथही जायँगे जहां कि हमारी गति है—वहां देवताओं के ईश्वर इन्द्र देवता उन दोनों के निश्चय को जानकर देवता और लोकपालों समेत उनके सन्मुख गये—और साध्यगण विश्वेदेवा मरुद्गण बहुत से बड़े २ बाजेवाले नदी पर्व्वत—समुद्र—और अनेक प्रकार के तीर्थ, तप, संयोग—विधिवेद—स्तोम—सरस्वती—नारद—पर्व्वत विश्वावसु हाहाहूहू गन्धर्व्व—चित्रसेनअपने परिवार गणों समेत नाग, सिद्ध—मुनि देवोंके देव प्रजापति-विष्णु—शेष यहसब देवता आये और नाना प्रकार के बाजों से आकाशमें मंगल शब्द करनेलगे और उन दोनों महात्माओं के ऊपर पुष्पोंकीवर्षाहुई और अप्सराओं के समूह नाचने गाने लगे तदनन्तर उस रूपवान स्वर्ग ने ब्राह्मणसे यह वचन कहा कि हे बड़भागी तुम्हारी पूर्णसिद्धी हुई और हे राजा आपकी भी इसी प्रकारकी सिद्धीहुई यह सुनकर दोनोंने एकसाथही विषय करने वाली इन्द्रियोंका संहारकिया और मूलाधार से कुण्डली को उठाकर ऊपर ऊपरके चक्रोंके विजय क्रमसे पांचोप्राणों को हृदय के अनाहद चक्रके मध्य में नियत करके अर्थात् रोककर उसमें नियत चित्तको एकरूप प्राप्त करनेवाले दोनों प्राणों में धारण करके नियत किया और पद्मासन होकर भृकुटी के नीचे नासिकाके अग्रभाग को देखते हुये उन दोनों ने धीरेधीरे प्राण अपानको चित्तके समेत दोनों

भृकुटी के मध्य दृष्टिको स्थिर किया उसी प्रकार दृष्टिको नियत किये हुये सावधान चित्तको एकाग्र करके निश्चेष्ट देह होकर मस्तक में धारण किया तदनन्तर ज्योति की बड़ी ज्वाला उस महात्मा ब्राह्मण के ब्रह्मरन्ध्रको फोड़ कर स्वर्गको गई उसी प्रकार चारों ओरसे सब जीवों का बड़ा हाहाकार हुआ तब वह ज्योति देवताओं से पूजित और प्रशंसित होकर ब्रह्माजी में प्रवेश करगई—फिर ब्रह्माजी ने आसन से उठकर उस प्रादेशमात्र पुरुषको अभ्युत्थान देकर उस तेजसे कहा कि आनन्द पूर्वक आये यह कहकर दूसरे मीठे बचन यह कहे कि जप करनेवाले और योगियों का फल बराबर है परन्तु इन में जप करनेवाले की अधिक प्रतिष्ठाहै, आनन्द से निवासकरो यह कहकर बराबर चैतन्य किया अर्थात् जीवब्रह्म अर्थात् अपनी और उसकी एकता को जताया—तिस पीछे वह ब्राह्मण तप से पृथक् होकर ब्रह्माजी के मुखमें प्रवेश करगया, और राजा मान्धाता भी उसी बुद्धिमे भगवान् ब्रह्माजी में प्रवेशकर गया; तब देवताओं ने ब्रह्माजी को दण्डवत् करके कहा कि हमलोग इसी निमित्त आये थे कि जापका फल देखें सो देखा कि आपने योगी और जापक को समान फल दिया यह दोनों वहां प्राप्तहुये जहां कि अनन्तसुख है ब्रह्माजीबोले कि जो पुरुष महास्मृतिअर्थात्मनुस्मृतिआदि शुभ स्मृतियोंका पाठ करता है वह मेरी लोकताको पाता है और जो पुरुष योग में प्रीतिवान होता है वह भी इसी प्रकार देहके अन्त में मेरेलोकों को पाताहै तुम अब अपने लोकों को जाओ मैं तुम्हारेभी अभीष्टों के निमित्त सिद्धीको साधन करूंगा यह कहकर ब्रह्माजी अंतर्द्धान होगये और देवता अपने अपने लोकों को आये हे राजा वह सब महात्मा प्रसन्न चित्त होकर धर्म्मका सत्कार करके चलेगये यह जपकरनेवालोंका फल और गति तुम से वर्णन किया अवक्या सुना चाहते—२५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेसप्तविंशोऽध्यायः २७॥

अट्ठाईसवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह ज्ञान योगका फल वेदों का फल उसीप्रकार अग्निहोत्रादि नियमका क्याफल है और जीवात्मा कैसे जानने के योग्यहै यह सब आप मुझ से वर्णन कीजिये—भीष्मजी बोले कि यहां में इसप्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें प्रजापति मनुजी और बृहस्पति महर्षीका सम्वाद है देवताओं में अतिउत्तम महर्षि बृहस्पतिजी ने अपने गुरू प्रजापतिजी से दण्डवत् करके यह प्रश्न किया कि हे भगवन् जिसके निमित्त कर्मकाण्ड जारीहुआ और ब्रह्मज्ञान होनेसे जिसके फलकी प्राप्ती है ऐसा जो जगत् का

कारण है और मन वाणी चित्तसे बाहर होनेके कारण वेद वचनों से प्रत्यक्ष नहीं होता उसको आप ठीक २ मुझ से वर्णन कीजिये—अर्थ शास्त्र और मंत्रशास्त्र और वेदके जाननेवाले पुरुषों के बहुत यज्ञ और गोदानों के जो फलरूप सुख सेवन कियेजाते हैं वह क्या वस्तु हैं और किस रीति से प्राप्त होते हैं वह कहां और किस देशमें हैं अथवा परमात्मा हैं पृथ्वी से उत्पन्न होनेवाले वृक्ष आदि वायु अन्तरिक्ष, जलजीव, जल, स्वर्ग, और देवता पर्यन्त जिससे उत्पन्नहुये उसपुराण पुरुषकोभी आपवर्णन कीजिये औरजिसके लिये मनुष्य ज्ञानकी इच्छाकरताहै और उसज्ञानसे सम्बन्ध रखनेवाली मिथ्या प्रवृत्तिहोती है और मैं भी उसमहापुराणपुरुषको नहींजानताहूंतो निरर्थकप्रवृत्तीको कैसेकरूं ऋग्यजु सामवेदोंकी और नक्षत्रोंकी गति निरुक्त और शिक्षा कल्प समेत व्याकरणोंको भी पढ़कर भूतोंकी प्रकृतिको अर्थात् आत्मा को नहींजानताहूं सो आप साधारण शब्दोंके द्वारा इनसबको और ज्ञान में वा कर्ममें जोफलहै उसको और देहधारी जोयह जीवात्मा देहसे पृथक् होता है और फिर जैसे देहको पाताहै वह सब आप वर्णन कीजिये—मनुजी बोले कि जो जिसको प्यारहै वह सुख और जोअप्रिय है वही दुःख कहाजाता है और किसी के अभीष्टका न होनाहोजाय इसनिमित्त कर्म्मकाण्ड जारीहुआ और प्रिय अप्रिय मुझको नहीं व्यापे इसनिमित्त ज्ञानरूप कर्म्म बुद्धि जारी हुई—अर्थशास्त्र जाननेवालोंका जोफलहै उनको कहतेहैं कि वेदमें जो कामनाको प्रधान रखनेवाले कर्म योगहैं अर्थात् सफल कर्महैं उनसे रहितहोकर मोक्षको पाताहै परन्तु नानाप्रकारके जोकर्म्म मार्ग्ग वैदिक लौकिक हैं उन में प्रवृत्त सुखका चाहनेवाला पुरुषस्वर्गको अथवा नरकको पाताहै—बृहस्पति जी बोले सुख और दुःख दोनोंमें सुखप्याराहै और दुःख कुप्यारा है अर्थात् त्यागने के योग्यहै वहइच्छा इसइच्छावान् को कर्मके अभ्यासमें प्रवृत्तकरती है मनुजीने कहा कि इन इच्छाओंसे रहित अर्थात् ब्रह्मज्ञान आदिकी इच्छा से ब्रह्ममें लयहोताहै इसनिमित्त कर्म्म बुद्धिजारी हुई फलकी इच्छा रखनेवाले पुरुषोंको वहकर्म्म योग बन्धन में डालताहै इसीकारण इनइच्छाओंको त्याग के ब्रह्मज्ञानकेही निमित्त कर्म्मकरे चित्त आदि और निष्फल कर्म्म से बुद्धि युक्त अर्थात् प्रीति आदि दोषोंके दूरकरने से प्रकाशमान् सत् असत् विषयों का ज्ञाता सुखकी इच्छा करनेवाला पुरुष उस परब्रह्मको पाताहै जो कि श्रेष्ठ होकर कर्म्म मार्ग से पृथक् इच्छा नहीं रखता है—यह सब सृष्टि चित्त और कर्म्म से उत्पन्नहुई है यह चित्त और कर्म्म दोनों संसारके देनेवाले भी ब्रह्म प्राप्तीके मार्ग हैं और लोकोंसे सेवित हैं क्योंकि वह वेदोक्त कर्म्म अविनाशी और नाशवान् हैं वहां चित्तसे फलका त्यागकरनाही मोक्षका हेतु है दूसरा

कोई नहीं है, जैसे कि निशाके अन्तमें अर्थात् प्रातःकाल के समय अन्ध-कारसे रहितहो नेत्र अपनेही तेजसे सबसंसारके त्यागनेके योग्य कांटेआदि को देखताहै उसीप्रकार विज्ञान गुणसे मिलाहुआ ज्ञान अशुभ कर्म्मको देखता है या जैसे सर्प्प कुशाओं की नोकों को त्याग करताहै उसी प्रकार क्रोध को जानकर सर्व्वथा त्याग न करता है वहां जोकोई गिरता है तो अज्ञानही से गिरताहै इससे ज्ञान में ही उत्तम फलको समझना योग्यहै बुद्धि के अनुसार पढ़ाहुआ मंत्र सम्पूर्ण शास्त्रोक्त यज्ञ दक्षिणा अन्नका बड़ा दान और देवता-ओं के ध्यान आदि में चित्तकी एकाग्रता इनपांचप्रकारके कर्म्मोंको फल के समान कहते हैं-अब कर्म्म कर्त्ताके स्वभावसे भिन्न कर्म्मोंके फलको कहते हैं कि करनेके योग्य कर्मवेदकी रीतिसे त्रिगुणात्मक अर्थात् सात्विकी, राजसी तामसी, कहाते हैं इस हेतुसे मंत्रभी त्रिगुणात्मक हैं क्योंकि मंत्रही के साथ कर्म्महैं, बुद्धि भी तीनप्रकार की है क्योंकि आत्माकी इच्छा करनेवाला वा स्वर्गकी कामनावाला अथवा अन्य के मारणादि प्रयोगकी इच्छा करने वाला यह तीनों पुरुष यज्ञकरते हैं और चित्तसे फलकी प्राप्ती भी तीनप्रकार कीहै उसीप्रकार फलका भोगनेवाला देहधारीभी तीन प्रकारका है अर्थात् सुखी दुःखी, अज्ञान, और शब्द, रूप पुण्य रसस्पर्श इसीप्रकार उत्तम गन्ध है उनका अधिकारी जीवधारी पुरुषहै परन्तु यह कर्म्म, फल प्राप्तहोने वाले लोकमें मिलता है तात्पर्य्य यहहै कि उसअदृष्ट कर्मफल से दृष्टगोचर ज्ञान फलही श्रेष्ठहै-देहसे जो २ कर्म्म करताहै वह दूसरे देहमेंही अच्छे प्रकार से उसके फलको भोगताहै क्योंकि देहही सुखालय और दुःखालय है अर्थात् बिना देहके आत्मा सुख दुःखसे पृथक्है इसीकारण देहके अभिमान से पृथक् होना मोक्ष है देहके कर्म्मोंसे मोक्ष नहीं होती है-जो कर्म कि बचन के द्वारा करताहै उसको बचनहीसे भोगताहै और चित्तसे जोकर्म करताहै उसके फल को चित्तमेंही नियतहोकर भोगेगा, कर्मफलका चाहनेवाला पुरुष जैसे सतो-गुणी रजोगुणी तमोगुणी कर्मफलको इच्छासे करताहै उसी उसी रीति से गुण संयुक्त पुरुष अच्छे बुरे कर्म्म फलको भोगता है जैसे कि मछली प्रवाह रहित जलके पीछे चलतीहै उसी प्रकार पिछले जन्ममें किया हुआ कर्म्मफल प्राप्त होता है और शुभफल में सुखी और अशुभ में दुःखी होना यही अज्ञानता है इससे आत्माही श्रेष्ठ है जिस से कि यह जगत् उत्पन्न हुआ चित्तके जीत नेवाले पुरुष उसको जानकर संसारको त्याग उस ब्रह्मको पाते हैं जो मंत्र शब्दों से प्रकाश नहीं करता है उसकी श्रेष्ठता को सुनों कि वह रसों से और नानाप्रकार के गंधादिकों से और शब्द स्पर्शरूप से पृथक् पकड़ने में नहीं आता है और गुप्तहोकर तीनोंगुणों से पृथक् उसी एकाकीने प्रजाओं

के पांचों विषयों को उत्पन्न किया है और पुल्लिङ्ग स्त्रीलिंग नपुंसक लिंग इनतीनों से रहित सतप्रधान परमाणु आदिभी नहीं है और असतभी नहींहै सदसत माया सबलभी नहीं है उसी अविनाशी को ब्रह्मज्ञानी लोग देखते हैं उसका कभी नाश नहीं है २७॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणि मोक्षधर्मेअष्टाविंशत्तमोऽध्यायः २८॥

उन्तीसवां अध्याय॥

मनुजीबोले कि उस अविनाशी ब्रह्मसे आकाश अर्थात् माया सबलब्रह्म उत्पन्नहुआ उससे वायु वायुसे अग्नि अग्निसे जल जलसे पृथ्वी पृथ्वीसे सब सूक्ष्म और अस्थूल उत्पन्नहुये और पृथ्वीपर जगत उत्पन्न होताहै इन पृथ्वी रूप देहोंसे जलको पाकर जलसे अग्निको अग्निसे वायुको वायुसे आकाश को वह आत्मारूप परम मोक्षको प्राप्त होते हैं और जो आत्मारूप नहींहै वह आकाशरूप माया सबलसे लौट आते हैं वह अक्षर ब्रह्म शीतोष्णता रहित मृदुत्व कठिनत्वविना मधुर अम्ल कटु कषाय तिक्तादिरसों से विगत श्रेष्ठआत्मभाव शब्द गंधादिका भी रखनेवाला नहीं है और स्पर्शेन्द्री जिस स्पर्श को जानतीहै और रसना रसको जानतीहै घ्राण गंधोंको और दोनों कानश ब्दोंको और नेत्ररूपोंको देखते हैं परन्तु उस श्रेष्ठ ब्रह्मको नहीं देखतेहैं जिस को कि योग रहित अज्ञानी पुरुष नहींपाते हैं जिह्वाको रसोंसे घ्राणको गंध से दोनोंकानों को शब्दसे त्वचाको स्पर्शसे नेत्रोंको रूपगुणसे पृथक्हटाकर अपने आत्मारूप श्रेष्ठब्रह्मको देखताहै—उस आत्मारूप को उन मुनियों ने करता आदि का समूह उत्पत्तिका कारण आत्मारूप कहाहै जो समूह करता है और जिसकेद्वारा देश, काल, कारण, स्वरूप सुख दुःखहोते हैं उसी के अनुसार उद्योग प्रारम्भ कियाजाताहै और जिसको राग द्वेष या ईश्वरकीइच्छा से प्रारम्भ करके उसका दर्शन और प्राप्ती आदि करताहै इस कारण करता-- कर्म हेतु कर्म्म- देश--काल--सुख, दुख, प्रवृत्ति प्रारम्भ कर्म्मनाम उद्योग राग, गति, ईश्वर आदिके समूहका हेतु जो चिन्मात्रहै वही स्वभावहै-वह कौनहेतु है जिसके कारणसे प्राचीनजीव और ईश्वरका कार्य्यरूप होना कहाजाता है यह शंका करके कहतेहैं कि जो व्यापक ईश्वर नामहुआ और साधकजीव नामहुआ और मंत्रार्थ के समान लोक में भी वर्त्तमान है अर्थात् एकहोकर वहुतरूपों से दृष्टि पड़ताहै और सबका कारणहै अपने एकही रूपसे सबको प्रकट करने वालाहै वह परमकारण आनंदरूप ब्रह्म है और शुद्धब्रह्म ईश्वरके विषयमें अवान्तर कार्य्यरूपहै अर्थात् प्रीतिकरानेके लिये केवल मध्यवर्त्तीवस्तु है इसी हेतुसे वह शुद्धब्रह्म इसकार्य्य रूपसे दूसराहै इसप्रकार स्वभावकी परम

कारणताको कहकर ज्ञानात्माको कहतेहैं कि जैसे कोई मनुष्य अपने कर्मोंसे अच्छे बुरे फलको बिना रोकटोक के पाताहै उसी प्रकार उत्तम अनुत्तम देहों में अपने कर्म्मसे उत्पन्नहोनेवाले पापपुण्यों से यह चैतन्य स्वभावनाम परम कारण ज्ञान बँधाहुआ है जैसे कि अग्निसेप्रकाशित वृक्षकी नोकपर नियत दीपकदूसरोंको प्रकाश करताहै वैसेहीवृक्षकी जड़मेंरक्खाहुआ दीपकप्रकाश नहीं करता उसीप्रकार चैतन्यस्वरूप दीपक से संयुक्त पंचेंद्री रूपवृक्ष प्रकाश रहित होकर ज्ञान दीपक से प्रकाशित और चैतन्य के प्रकाश से प्रकाशको करतेहैं-जैसे राजाके नियत किये हुये बहुतसे मंत्री पृथक् प्रमाणको कहतेहैं उसीप्रकार देहों में पांचइन्द्रियां ज्ञानरूप के मुख्यअंग होते हैं वह ज्ञानरूप स्वभाव अर्थात् आत्मभाव उनसे उत्तम है, जैसे अग्निकी ज्वाला—वायुका बेग—सूर्य्यकीकिरणें—नदियों का जल—यह सब अच्छे प्रकारसे घूमतेजाते हैं उसीप्रकार के जीवात्माकेभी देह हैं तात्पर्य्य यहहै कि देहों में चित्तसे बँधा हुआ ज्ञान देहकी नाश अवस्था में नाशको नहींपाता है जैसे कि कोई मनुष्य करसेको लेकर लकड़ी में अग्नि और धुवांको नहीं देखते उसीप्रकार देहकी पीठ और हाथ पैरोंको काटकर उसको नहीं देखते हैं, आत्मा उससे ऐसा पृथक् है जिस प्रकार युक्तसे उनलकड़ियोंको मथकर अग्नि और धुवां को देखे उसीप्रकार ज्ञानी जीवात्मा एकही समय उस श्रेष्ठ आत्मभाव को उत्तम बुद्धिसे देखता है, जैसे कि स्वप्नमें पृथ्वीपर पड़ेहुये अपनेदेहको अपने से पृथक् देखताहै उसी प्रकार चित्त बुद्धिसे मिलाहुआ दशइन्द्री पंच प्राणसे संयुक्त अर्थात् अपने रूपसे पृथक् देहको अपनेसे जुदा न समझने वाला एक देहसे दूसरी देहमें जाताहै यह श्रेष्ठ आत्मा उत्पत्ति, वृद्धि, क्षय, मृत्युआदि से संयुक्त नहींहोताहै वह अदृष्टकर्म्मफलसे युक्तहोकर इसमृतक देहसे दूसरीदेहमें जाताहै,नेत्रसे आत्माके रूपको नहीं देखताहै न स्पर्श करताहै अर्थात् वास्तव में भोगने वाला न होनेसे असंगहै उनइन्द्रियोंसे कार्य्यको साधन नहीं करता है वह इन्द्रियां भी उसको नहीं देखतीहैं और वह उनको देखता है अर्थात् उनका साक्षीहै—जैसे कि कोई प्रज्ज्वलित अग्निके सामने संतापसे उत्पन्न होनेवाले रूपको पाताहै और दूसरे रूपको नहीं धारण करता है उसी प्रकार इस आत्माका वह रूप देहमें भी दृष्टपड़ता है तैसेही मनुष्य इसदेहको त्याग कर दूसरे अदृश्य शरीरमें प्रवेश करताहै—महाभूतों में देहको त्यागकर दूसरे देह सम्बन्धी रूपको धारण करता है अर्थात् उस देहके धर्म्मों को आत्मामें मानता है फिर यह शरीरी देहको त्याग पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश में चारों ओरसे प्रवेश करता है और नानाप्रकार के निवास स्थान रखनेवाली कर्म में वर्त्तमान पांचों इन्द्रियां पांचों गुणों को प्राप्त करती हैं श्रोत्र इन्द्री

आकाश के शब्द गुणको, घ्राण पृथ्वी के गन्ध गुणको, नेत्र अग्नि के गुणरूपको, जिह्वा जल के गुण रसको और त्वचा वायु के स्पर्श गुण को, प्राप्त करती है अर्थात् पांचों इंद्रियां पांचों आकाशादि तत्त्वों में और पांचोंतत्त्व पांचोंइन्द्रियों में निवास करते हैं और चित्त बुद्धि के पीछे चलता है, और बुद्धि स्वभावके पीछे चलतीहै, इसकारण विषयों की उत्पत्तिस्थान इन्द्रियां हैं, उनकाकारण चित्त और चित्तकी कारण बुद्धिहै और उस बुद्धि का कारण चैतन्य आत्मा इसक्रमसे सब वासनाओंसे पूर्ण बुद्धिमें सब वर्त्तमानहैं उस बुद्धिके पृथक् न होनेसे चैतन्य आत्मा फिर संसारी होता है जो दूसरा अच्छा बुरा कर्म्मकिया उसको कर्म्माधीन प्राप्तहोनेवाले दूसरे नवीन देहमें प्राप्त करताहै—अर्थ और बुद्धि आदि चित्तके पीछे चलते हैं जैसे कि जलके जीव अपने जल प्रवाहके अनुसार जाते हैं जैसे कि नौकापर चलने वाले को नदीके किनारेके वृक्ष आदि चलते से दृष्टपड़ते हैं और छोटी वस्तु दूरदर्शी यन्त्रके द्वारा बड़ी मालूम होताहै—उसीप्रकार चैतन्य पुरुष बुद्धि मार्ग में प्राप्त होताहै अर्थात चेष्टारहित भी चंचलमाया के कारण चेष्टायुक्त मालूम होताहै और सूक्ष्महोकर भी बुद्धि में संयुक्त होनेसे बिराट आदि रूपवान् दृष्टपड़ता है और अपने अज्ञानसे अकेला भी बहुत रूपवाला देखने में आता है और जैसे कि ऐनक आदि के रहित होने से मुख्यरूप दिखाईदेता है उसीप्रकार वह आत्मा बुद्धि मार्गसे पृथक् होने में शुद्ध चिन्मात्र है तात्पर्य यह है कि ब्रह्मज्ञानही उसअनादि भ्रान्ति रूपमायाके नाश करने को समर्थ है २३ ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणि मोक्षधर्मे एकोन त्रिंशत्तमोऽध्यायः २९ ॥

तीसवां अध्याय ॥

मनुजी बोले कि चित्त और इन्द्रियोंसे संयुक्त जो चैतन्य जीवहै वह बहुत काल तक प्रथम प्राप्तहोनेवाले विषयों को स्मरण करता है परन्तु उनइंद्री आदिके लयहोने पर अपने मुख्य स्वभावको प्राप्त होता है फिर वह बुद्धि रूप सबसे उत्तम चैतन्य रूप आत्मा कहाता है अर्थात् वास्तव में बुद्धि से पृथक् है जैसे कि वह आत्मा एकही समय या बहुत समय पर इन्द्रियों के सम्पूर्ण विषयों को अच्छे प्रकार से प्रकाश करता है उसी रीति से चेष्टावानों में भी घूमाकरताहै,वह साक्षीहै उसी कारण से वहएकही श्रेष्ठआत्मा है तात्पर्ययहहै कि आत्मा बुद्धि आदिका प्रकाशकहै और बुद्धिआदि आत्माके प्रकाशकनहींहैं वहचेष्टारहितभी चेष्टावान् पदार्थोंमें घूमताहै इसकोसिद्धकरतेहैं कि यह आत्मासतोगुण रजोगुण तमोगुण अर्थात् त्रिगुणात्मक जागृतआदि

बुद्धीके स्थान और गुण अपूर्व दुःख सुख रूपों को जानता है अर्थात् केवल साक्षीरूपहै भोक्तानहीं है वह इसप्रकारसे इन्द्रियोंमें प्रवेशकरता है जैसे कि अग्नियुक्त इन्धनमें वायुका प्रवेशहोताहै उसको न आंख देखसक्ती न त्वचा स्पर्श करसक्ती क्योंकि वह आत्मा इन्द्रियोंकी भी इन्द्रीहै वह कानोंसेभी नहीं सुनाजाता और शास्त्र के अनुसार जो आत्माका दर्शनहै उसमें जैसी आकृतिका दर्शनहै वही नाशवान् है श्रोत्रादि इन्द्री अपनी सामर्थ्य से अपने २ विषयोंको देखती हैं उस आत्माको नहीं देखती हैं वह सर्व्वज्ञ और सर्वदर्शी आत्मा उन सबको देखता है, जैसे कि मनुष्यों ने प्रथम हिमालय पर्व्वत के फलोंको और चन्द्रमाकी पीठकोनहीं देखा इतनी बातसेही यह नहीं कहसक्ते कि वह नहीं है उसीप्रकार यह सूक्ष्म ज्ञान स्वरूप आत्मा जोकि पहले नेत्रोंसे दृष्ट नहींआया इतनी बातसेभी यह न कहनाचाहिये कि वह नहींहै जैसे कि चन्द्रमामें दृष्ट करताहुआ भी संसार के प्रतिबिम्ब चिह्नको नहीं देखता है अर्थात् यह जगत्ही चन्द्रमामें दृष्टपड़ताहै इसबातको नहीं जानताहै इसी प्रकारका यह आत्मज्ञानहै जो आत्माहै वही ब्रह्महै इसहेतु से वहज्ञान उत्पन्न नहीं हुआहै यहबात ठीकनहीं है क्योंकि आत्मज्ञानही सर्व्वोत्तम स्थान है तात्पर्य्यहहै कि ब्रह्मको जानकर बिपरीतरीतिसे मानतेहैं इससेशास्त्र की आवश्यकताहै, ज्ञानीलोग आदि अन्तमें बुद्धि से रूपवान्को बिनारूप देखते हैं अर्थात् वह जिससे प्रकट हुआहै उसी मूलको मानते हैं उस आदि अन्तको देखनेवाले पुरुष सूर्य्यकी गतिको देखतेहैं अर्थात् मण्डलको तो चलायमान और मण्डलके भीतर वर्त्तमानसूर्य्य को अचल देखते हैं, उसीप्रकार बड़ेज्ञानी पुरुष अज्ञानतासे दूरवर्त्ती आत्माको बुद्धिरूपी दीपकसे दीखतेहैं और समीप वर्त्ती प्रपञ्चको जानने के योग्य ज्ञानरूप ब्रह्ममेंलय किया चाहतेहैं निश्चयहै कि बिना उद्योगके कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है, जैसे कि मछलीमार सूतके जालों से मछलियोंको बांधते हैं और जैसे मृगोंके द्वारा मृगोंका पकड़ना और पक्षियोंके द्वारा पक्षियोंका पकड़ना होताहै और हाथियोंसे हाथी पकड़ेजातेहैं इसीप्रकार जाननेके योग्य ब्रह्मज्ञान से ब्रह्म प्राप्तहोताहै तात्पर्य यहहै कि सजातियोंके द्वारा सजाती पकड़ाजाताहै जो कि ज्ञानभी उसज्ञान स्वरूपका सजातीहै इससे वह ब्रह्मकी प्राप्तिमें उपयोगीहै, सर्पही सर्पके खोजों को देखताहै यह हमने श्रवणकियाहै इसीप्रकार जानने के योग्य और कारण नाम देह में नियत आत्माको सूक्ष्मदेहों के भीतर ज्ञानसे देखताहै, जबबुद्धि कीवृत्तीसे आत्मदर्शनहुआ तब आत्माकी जड़ता सिद्धहुई इस शंकाको इस प्रकार से निवृत्त करतेहैं कि जैसे इन्द्री इन्द्रीके जानने की उत्साह नहीं करती है उसीप्रकार पराबुद्धि उस जाननेके योग्य आत्माको नहीं देखतीहै आशय

यहहै कि वेदान्तकी प्राप्तिके लिये बुद्धिकी वृत्तीकी व्याप्ती है फलकी नहींहै वृत्तीरूप उपाधि के दूर होनेमें भी इसको ब्रह्मही कहते हैं, जैसे चन्द्रमा अमावसके दिन देह रहित होनेसे दृष्ट नहीं पड़ताहै और उस समय उसका अभाव नहीं होताहै उसी प्रकार देहवान् आत्माकोभी जानों प्रत्यक्षदेहसे पृथक् न मालूम होनेवाला चन्द्रमाऽमावस्याको प्रकाश नहीं करताहै ऐसेही वृत्ती या देहसेजुदा यहआत्मा भी दिखाई नहीं देताहै जैसे कि चन्द्रमा दूसरे आकाशको प्राप्तहोकर फिर प्रकाशकरताहै उसीप्रकार आत्माभी दूसरे देहको पाकर फिर अपना प्रकाश करताहै, प्रत्यक्षदेहका जन्म वृद्धिनाश पायाजाताहै वह चंद्रमंडलकाधर्म्महै उसआत्माकानहींहै,जैसे किउत्पत्ति वृद्धिदशासेएकपुरुषही जानाजाता है उसी प्रकार अमावास्या के दिन गुप्तहोनेवाला चंद्रमा भी फिर देहधारी होकर एकही दृष्ट पड़ता है उसीप्रकार बालदशा आदि और देहके रूपान्तरमें भी एकहीआत्माहै--देह और आत्मा का सम्बन्ध तीनोंकालमें नहीं है इसबातको इसप्रकार सिद्धकरतेहैं कि जैसे अन्धकार चन्द्रमाको स्पर्शकरता या त्यागकरता दृष्टनहीं पड़ताहै उसीप्रकार आत्माको देहकास्पर्श करनेवाला वा त्यागकरनेवालाजानों जिसप्रकार वहअन्धकार चन्द्रमा और सूर्यसेसंयुक्त देखाजाता है उसीप्रकार आत्मादेहसे संयुक्त मालूमहोता है अर्थात् देह और आत्माका प्रकाश परस्पर में सम्बन्ध रखनेवालाहै जैसे कि चंद्र सूर्यसेभिन्न वह राहुप्रकाश नहीं करता है उसीप्रकार देहसे पृथक् आत्मा भी प्रकाश नहींकरता है जैसे अमावास्याकेदिन सूर्यसे संयुक्त चंद्रमा नक्षत्रों से मिलताहै उसीप्रकार देहसे पृथक् आत्मा कर्म्म फलसे संयुक्त होताहै २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे त्रिंशत्तमोऽध्यायः ३० ॥

इकतीसवां अध्याय ॥

मनुजी बोले कि जैसे अस्थूलदेह सोजाताहै और स्वप्न में लिंग शरीर चेष्टाकरताहै और मृतकही स्थूल शरीर से पृथक् होकर विचरता है उसी प्रकार का संसार है और इन्द्रियों से संयुक्त लिंग शरीर भी सोजाता है और सुषुप्ती में अर्थात् स्वप्नावस्था से पृथक् अवस्था में ज्ञान विचरता है, लिंग शरीरके नाश में उससे पृथक् होकर विचरता है वैसेही मोक्ष है, जानने के योग्य आत्मा को ज्ञान से जानकर अज्ञानसे छूटता है और वह ज्ञान इन्द्रियों के जीतने से होता है उसको इसरीति से सिद्ध करते हैं कि जैसे शुद्धजल में नेत्र से रूपको देखता है उसीप्रकार इन्द्रियोंकी सफाई से ज्ञान के द्वारा आत्मा को देखताहै और जिसप्रकार उसजलके हिलने पर रूपको नहीं देखसक्ता है उसीप्रकार इन्द्रियों की व्याकुलतामें ज्ञान से आत्मा को नहीं देखताहै अ-

विद्याअज्ञानसेपैदाहोतीहै और अविद्याही सेचित्त खींचाजाताहै औरचित्तको दूषितहोनेमेंचित्तसे मिलीहुईपांचोंइन्द्रियांभी दोषयुक्तहोजातीहैं--अज्ञानतासे भराहुआ और इन्द्रियों के विषयों में डूबाहुआ जीवात्मा तृप्तिको नहीं पाता है और अदृष्ट के समान विषय भोग के लिये फिरजन्म लेताहै--इसलोक में मनुष्यकी इच्छापापों से नाशनहीं होतीहै जबपापका नाशहोताहै तबइच्छा भी नाशहोजातीहै विषयोंके योगसे साधनके विपरीत सुखदुखकी इच्छा करताहुआ पुरुष सनातन ब्रह्मके आश्रय से ब्रह्म को नहीं पाताहै और पापकर्मके नाशहोनेपर पुरुषोंको ज्ञानउत्पन्न होताहै और जैसे शुद्धआदर्शमें मुखको देखताहै उसीप्रकार बुद्धिमें आत्मा को देखताहै--और विषयोंमें प्रवृत्तइंद्रियोंसे दुखीहोताहै और उन स्वाधीन होनेवाली इन्द्रियों से सुखीहोता है इस कारण चित्तके द्वारा विषयोंसे इंद्रीनाम आत्मा को हटावे अर्थात् अपने वश में करे--चित्त इंद्रियोंसे प्रथमहै और उसचित्तसे महाउत्तम बुद्धिहै और बुद्धिसे उत्तमोत्तम ज्ञान अर्थात् जीवात्माहै और उस जीवात्मा से श्रेष्ठतम परमात्मा है तात्पर्य्य यह है कि परम्परासे एकको दूसरे में लय करता हुआ ब्रह्मभाव को प्राप्तकरे, उस लयता के निमित्त उत्पत्तिके क्रमको कहते हैं उसगुप्त और शुद्ध चिन्मात्र से ज्ञानात्मा उत्पन्नहुआ उससे बुद्धि बुद्धिसे चित्त चित्तसे पांचों इन्द्रियां और उन पांचों से शब्द आदि विषय उत्पन्नहुये वह चित्त इन्द्रीआदि से संयुक्त होकर शब्दादिकों को देखता है, जो पुरुष उन शब्दादि विषयों को और सब प्रत्यक्ष वस्तुओंका त्याग करताहै वह मायासम्बन्धी स्थूल सूक्ष्मादि शरीरों को त्यागकर अविनाशी एकत्वभाववाली मोक्ष को पाता है, जैसे कि सूर्य्य उदयहोकर किरणें प्रकट करताहै और अस्तहोकर उस किरण मण्डल को अपने में लय करताहै,उसीप्रकार से जीवात्मा किरणरूप इंद्रियोंके द्वारा देहमें प्रवेशितहोकर और पांचों इंद्रियोंके विषयोंकोपाकर अन्तमें आत्मरूपको पाताहै— अब बारम्बार उसकेदेहधारी होनेके कारणको कहतेहैं—कर्म्म में नियत बारंबार विषयों में प्रवृत्तहोनेवाला यह जीवात्मासुखआदि कर्म्म फलकोपाताहै क्योंकि उसनेप्रवृत्ती प्रधानकर्म्म अर्थात् पितापनको प्राप्तकिया इस हेतुसे निवृत्ती धर्म्मको कहते हैं कि विषयभोग से पृथक् जीवात्मा की विषयरूप इच्छादिक दूरहोजातीहैं परंतु बासनारूप रसका नाशनहीं होताहै वहभी आत्माको देखकर नष्टहोजाताहै,जब बुद्धि उन विषयोंकेद्वारा जिनके कि गुण कर्म हैं चित्तमें वर्त्तमान होतीहै तब वह चित्त ब्रह्मको प्राप्तहोताहै और उसीमें लयहोजाताहै और वहबुद्धि उसपरब्रह्म में प्रवेशकरतीहै जोकि स्पर्श गंध रूप रसादि से रहित चित्तसे बाहर है -- अब अध्यायभर के आशयको समझोकि सबरूपतो चित्तमें लयहैं और चित्तबुद्धिमें और बुद्धिज्ञानजीवात्मा में लयहोने

हैं और जीवात्मा परब्रह्म में लय होजाताहै इन्द्रियों से चित्तकी शुद्धीनहींहोती और चित्तबुद्धिको नहींजानता और बुद्धिआत्माको नहींजानतीहै परन्तु वह सूक्ष्मआत्मा सबको देखता है २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेएकत्रिंशत्तमोऽध्यायः ३१ ॥

बत्तीसवां अध्याय ॥

मनुजीबोले देहकेरोग और चित्तकेखेद वर्त्तमान होनेपर जिसके होतेहुये विचारयोग करनेको समर्थ नहीं होता उसको चिंता नहीं करे अर्थात् निर्भय होकर उसकोदूरकरे दुःखकायही उपायहै कि उसकी चिंता न करे क्योंकि चिन्ताकरनेसे सन्मुखआताहै और अधिक वृद्धिपाताहै, बुद्धिसे चित्तके खेदको दूरकरे और औषधियोंसे देहके रोगोंको दूरकरे यहपूर्णबुद्धिवाले की सामर्थ्यहै बालक बुद्धि अज्ञान से समताको नहीं प्राप्तहोती—तरुणता, स्वरूप, जीवन, धनसमूह, नीरोगता, बांधवोंमें निवास यह सबबातें सदैव नहींरहतीं अर्थात् सब नाशवान्हैं इनमें पंडित कभी इच्छा न करे—अकेला मनुष्य सबइलाके का दुःख शोचने को योग्यनहीं है इससे शोचरहित उपाय करे इसजीवन में सुखसे अधिकतर दुःखहै यहनिस्सन्देह बातहै कि इन्द्रियोंके विषयोंमें प्रीति करनेवाले की भूलसे अनिच्छा से मरण होताहै, जो मनुष्य इनदोनों सुखदुःखों को त्यागकरता है वहअपारब्रह्मको प्राप्तकरताहै और ब्रह्म प्राप्त करनेवाले पण्डित शोच नहीं करते हैं सबप्रकारके धन दुःखसेही मिलते हैं और वह रक्षा के कारण सुखदायीनहीं हैं और दुःखमेंप्राप्त नहींहोते हैं इनके नाशकीचिंता न करे इसप्रकार दुःखके दूरकरनेकी युक्ति वैराग्यको कहकर सुख मिलनेकी युक्ति ब्रह्मात्मज्ञानको कहतेहैं, जब ज्ञानजाननेके योग्यहुआ तब चित्तको उसज्ञानकागुण अर्थात् धर्म्मजानो और जबवह चित्त ज्ञानेन्द्रियोंसे मिलताहै तब बुद्धि वर्त्तमान होती है—बुद्धिका जो लयकरनाहै वही ब्रह्मकीप्राप्ती है इसको कहतेहैं कि जबकर्मोंसे उत्पन्न होनेवाले संस्कारों से मिलीहुई बुद्धि चित्तमें वर्त्तमानहोती है तब ब्रह्मज्ञान होता है वहबुद्धि, ध्यानयोग से प्राप्त होनेवालीसमाधिसे उदयहोती है—वह गुणवती बुद्धि अज्ञान से विषयों में वर्त्तमान होतीहै जैसेकि पहाड़के शिखर से निकलकर जलनदियों में प्राप्तहोताहै, जब ध्यानको जो कि सबकामूलहै चित्त में पाताहै तबब्रह्मजानाजाताहै जिसप्रकार पत्थरपर सुवर्णकी रेखा, जो ब्रह्मज्ञान इसप्रकारसे जानाजाताहै जैसे कि पत्थरपर सुवर्णकीरेखा ऐसी दशामें उसकी चैतन्यता प्रकट नहींहोती यह शंकाकरके कहते हैं कि चित्त जो इन्द्रियों के विषयों का दिखलानेवालाहै वह समस्त गुणों का अपेक्षीहोकर निर्गुणको नहींदिखलासक्ताहै, इनइन्द्रीरूप

सबद्वारों को बंदकरके संकल्पमात्रसे नियतहो उनको बुद्धि में लयकरके इस आत्मारूप एकाग्रता को पाकर उस अद्वैतता से ब्रह्मको पाता है, इसलय के क्रमको युक्तिसेभी सिद्ध करतेहैं, शब्दतन्मात्रा आदि अपंचीकृत भूतनाम है उनका नाशसुषुप्ती में होनेपर उनके कारणरूप महाभूत नाशहोते हैं इसीतरह चित्तकारण में लयहोनेवाला कार्य अपने दोषसे कारणको भी दोषसंयुक्त करता है जैसे कि जल में डालाहुआ पारा जल के खारको अपने उत्पन्नकिये हुये रससे दूषित करताहै—इस संदेहको कहते हैं कि जब निश्चयात्मक रूप गुणसे संयुक्त अहंकार में घूमनेवाली बुद्धि चित्त में वर्त्तमान होतीहै तब बुद्धि भी चित्तरूप होजाती है, मीठाजल निमक के पारे का कारण नहीं होता इसकारण वहदोष अन्य वस्तु के मिलाने से होताहै जब त्रिगुणात्मक चित्त अहंकाररूप कहाजाता है तब अन्यपदार्थ निर्गुणमें लय होनेवाला भी अपने धर्मसे दूषित करताहै इसशंकाको ध्यानसे सुनो कि वहअहंकार जब रूपआदि विषयोंके साथगुणोंको प्राप्तकरताहै तब सबगुणोंको लयकरके निर्गुणब्रह्मको प्राप्त करताहै जब बुद्धि आदिका लयन होताहै तब उनमेंलयहोनेवाला चित्त स्वभावस्था और प्रलय में फिर उठखड़ा होताहै क्योंकि उसके कारण का तो नाश नहींहुआ आशय यहहै कि रस्सीमें सर्पकी भ्रांतीके समान होनेसे वह माया ब्रह्मको दूषित नहीं करसक्ती और अव्यक्त नाम आदि जो चैतन्यके गुणहैं उनका स्वरूप कहना कठिनहै उसको भी कहतेहैं यहां विज्ञान में उस माया के समान कोई दृष्टांत नहीं है, जहां कि बचन का व्यापार नहीं उस विषय को कौन प्राप्त करसक्ता है इसीकारण से सगुण आदि से उत्पन्न होनेवाले साक्षात्कारसे आत्मतत्त्व को निश्चय करना चाहिये ऊपर कहीहुई रीति से तत्त्वदर्शी का गुप्तप्रकट एकसा है उसमें कोई अंतर नहींहै जैसे कि सुवर्ण और सुवर्ण के कुण्डल दोनों एक हैं और पृथक् भी हैं इसीप्रकार यहभी है-- विषयों से रहितहोने से बुद्धि ब्रह्मकोपाती है, जैसे कि पांचोंइन्द्रियां स्वभावस्थामें अपने कर्मोंसे छूटजाती हैं उसीप्रकार परब्रह्म भी कारण को त्यागकर जन्मांतर रूप और मायासेपरे है--इसप्रकार जीवात्मा स्वभावसेसंसारकी ओर वर्त्तमान होतेहैं और संसारसे निवृत्ती होनेपर परब्रह्मकी ओर लौटतेहैं अर्थात् ब्रह्मभाव को पाते हैं और स्वर्गादिकको भी पाते हैं जीव, प्रकृति, बुद्धि, सब विषय, इन्द्रियां, अहंकार, अभिमान इनसबको भूत कहतेहैं, सदैव प्रवाहयुक्त आकाशादिका नाशकहां से है इस शंकाको निवृत्त करतेहैं कि इसभूतसमूह की पहली उत्पति प्रधानसे होती है, और दूसरी उत्पति बीज अंकुरकी रीति से होतीहै ज्ञानी पुरुष पंचतन्त्र एकादश इन्द्री और अहंकार से पंचमहाभूतों की उत्पत्तिको रोकता है अर्थात् विशेषको अविशेष में लयकरता है, धर्म से

कल्याणकी बृद्धिहोती है और अधर्म से अकल्याण बढ़ताहै और संसार की प्रीति में फँसाहुआ मनुष्य समयपर मायाके लयको करताहै और वैराग्यवान् ज्ञानी मुक्तिको पाताहै २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेद्वात्रिंशोऽध्यायः ३२ ॥

तैंतीसवां अध्याय ॥

मनुजीने कहा कि जब अपने बिषयों समेत पांचोंइन्द्रियां चित्त बुद्धि से संयुक्त स्वाधीन होतीहैं तब वहब्रह्म इसप्रकार दृष्टपड़ता है जैसे कि मणि में प्रविष्टसूत्र होताहै आत्माकी एकता सिद्धकरनेके लिये इसदृष्टांतसे सबस्थानोंमें आत्माकी व्याप्तीको कहते हैं फिर जिसप्रकार वहखानका सोना स्वर्ण मुद्रिका आदि में भी बर्तमान होताहै और मोती मूंगोंके दानोंमें भी होता है उसीप्रकार आत्मा अपने कर्मोंसे गौ घोड़ा मनुष्य हाथी मुर्गा कीटपतंगों के देहोंमें चित्तलगानेवाला है, यह जिस जिस देहसे जो जो कर्म्मकरता है उस उस देहसे वैसेही फलको पाताहै, एकरसवाली पृथ्वी औषधीरूप अर्थके अनुसार होतीहै उसीप्रकार कर्म्मोंके पीछे चलनेवाली बुद्धीहै जिसका कि साक्षी आत्माहै—बुद्धीके अनुसार कर्मकी इच्छाहोय और उस इच्छा के अनुसार उद्योगहोय और उद्योगके अनुसार कर्महोय उसके पीछे कर्मरूप मूल रखनेवाला फलहोय, फलको कर्मसे उत्पन्नहोनेवाला जाने उसीप्रकार कर्मको बुद्धि आदि से और उस बुद्धिआदिको जीवात्मासे उत्पन्न होनेवाला जाने, वह जीवात्मा जड़ चैतन्यरूप है अर्थात् जीव जड़ और आत्मा चैतन्य है, ज्ञान बुद्धि आदि और संचितकर्मोंके नाशहोनेपर जोदिव्यफल ब्रह्मज्ञाननामप्राप्त होता है वहजानने योग्य ब्रह्म में बर्त्तमान है अब जानने के योग्य ब्रह्म के स्वरूपको कहते हैं योगी जन उसको देखते हैं और बिषयों में बुद्धि लगाने वाले अज्ञानी उसबुद्धि में वर्त्तमान ब्रह्मको नहीं देखतेहैं इसलोकमें पृथ्वीरूप से जलरूप बड़ाहै जल से अग्नि, अग्नि से वायु, वायुसे आकाश बड़ा है और उससे भी बड़ाचित्त है चित्त से बुद्धि बुद्धि से बड़ा काल है काल पुरुष से वह विष्णु भगवान श्रेष्ठ है जिसका कि यह सब जगत् प्रकटहै उस ईश्वर का आदि मध्य अंत नहीं है वह अविनाशी आदि मध्य अंतके न होने से सब दुःखों से पृथक् है उसको परब्रह्म कहते हैं वह ज्योति परमपदहै उसको जानकर कालपुरुषके देशसे छूटकर मोक्षको प्राप्त होतेहैं यह मुक्त पुरुष गुणों में प्रकाश करते हैं, ब्रह्मनिर्गुण होनेके कारण उनगुणों से प्रधानहै इसीप्रकार निवृत्ती लक्षणवाला धर्ममोक्ष के लिये कल्पना कियाजाता है अब वेदपाठ धर्म्मको दिखातेहैं—यजुर्वेद और सामवेदकी ऋचा कारणरूप देहोंमें जिह्वा

के अग्रभागोंपर वर्त्तमान होती हैं इसी हेतुसे युक्तिसे होनेवाली और विनाश वान्हैं यहबात ब्रह्ममें विपरीत हैं इस निमित्त ब्रह्म उसको नहीं चाहता है ब्रह्म युक्तिसे सिद्धहोनेवाला नहीं है और आदि मध्यान्त रहित होकर यजु साम-वेदोंकी ऋचाओंका आदि कहाजाता है और जब आदिहै तो अंत अवश्य हीहोगा इससे ब्रह्म अनादि कहाहै आदि अन्त न होनेसे वहब्रह्म अनंतअवि-नाशी है और अबिनाशी होनेसे आनन्दरूप है इसीकारण मानापमान से पृथक्है इस उन्नीस श्लोकसे बत्तीस तकका अभिप्रायहै कि मनऔर आत्मा के संग होने में मनका धर्म आत्मामेंनहींहोता- जिस में सत्वगुण प्रधान है वहमन जब प्रकृतिको प्राप्तहोताहै तब प्रकृति और गुणोंको त्यागकर निराकार को प्राप्तहोकर उसी निराकार में मिलजाताहै, वह निराकार देखनेमें नहीं आता है तो उसको दृष्टांतों से मुझे बताइये मनुजी ने कहा कि जो कहने में और देखने में नहीं आता उसको दृष्टांतोंसे कैसे बतलासक्ते हैं इससे जो अव्यक्त और निराकार आत्मा है उस में श्रवण मनन निदिध्यासनादि से विचारकरे फिर अपने में और ब्रह्मभाव में कुछ भेद न रक्खे वह निश्चय ब्रह्मज्ञान को पाता है जो सबगुण रहित मति से ब्रह्मज्ञान में तत्पर है वह अवश्य ब्रह्मकी प्राप्ति करते हैं और जो गुणसमेत बुद्धि से ध्यान करते हैं वह कभी ब्रह्मको नहीं प्राप्तहोते, जैसे कि सुषुप्ति अवस्था में इन्द्री और कर्मों से रहित होतेहैं उसीप्रकार मायासे जो पृथक् रहतेहैं वह ब्रह्मको पाते हैं जो मनुष्य इस संसारमें प्रकृतिसे युक्त हैं वह ज्ञानके उदय होने से स्वधर्म निष्ठहो मायाको त्याग ब्रह्म में मिलजाते हैं—जब प्रलयहोतीहै तबअज्ञानीजन प्रकृति में मिलतेहैं और जो ज्ञानवान् हैं वह निराकार ब्रह्ममें मिलजाते हैं ३२॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे मनुबृहस्पतिसम्वादेत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३॥

चौंतीसवां अध्याय॥

ब्रह्मके साक्षात्कार को मोक्षका कारण आप ने ऊपर वर्णन किया उस में सगुण ब्रह्मका ज्ञान होने से निर्गुण का दर्शनहोताहै इस निमित्त पहले मह-र्षियोंके मुखसे श्रीकृष्णजीको परमात्मारूप सुनकर श्रीकृष्णजीके गुणों का कीर्त्तन करने के निमित्त राजायुधिष्ठिरने कहा कि हे भरतर्षभ महाज्ञानी पि-तामह मैं कमल लोचन श्रीकृष्णजीको जानना चाहताहूं कि वह अविनाशी ईश्वर अजन्मा सर्बव्यापी सब जीवों के उत्पत्तिस्थान और नाशवान् देहके धर्मों को त्यागे नारायण इन्द्रियोंके स्वामी गोविंद और केशव जिन का नाम है, भीष्मजीबोले कि हेराजन् मैंने परशुरामजी, देवर्षि नारदजी और व्यासजी के वचनसे इसप्रयोजनको सुनाहै—हेतात महातपस्वी आसित, देवल, वाल्मीकि,

मार्कण्डेय ऋषि इत्यादि इन गोविन्दजी के अनेक अद्भुत महात्मों को कहते हैं, हेभरतबन्शी युधिष्ठिर यह श्रीकृष्णजी सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य ज्ञान यश लक्ष्मी वैराग्य और धर्म्म के स्वामी ईश्वर प्रभु पूर्णरूप देहों में निवास करने वाले व्यापकसर्वरूप वहुतप्रकारसे सुनेजातेहैं, लोकमें ब्राह्मणोंनेइसशार्ङ्ग धनुषधारी महात्मामें जो जो माहात्म्य निश्चयकिये उनकोसुनो किउसभूतात्मामहात्मा ने पंच महाभूत होकर पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाशको प्रकट किया, और वेद में लिखा है कि वह संसारको उत्पन्न करके उसीमें आप प्रविष्ट हुआ इस आशय को सिद्ध करतेहैं कि उन सबजीवोंके ईश्वरने पृथ्वी आकाशादिको उत्पन्न करके जल में निवास किया, जाग्रत आदि दशा के अन्त में नाश होनेवाली जीव सृष्टिको कहतेहैं उसजलमें शयन करनेवाले सब बासनारूप उस पुरुषोत्तमने सबजीवोंके पहले अहंकारको उत्पन्न किया, वह भूत भविष्य काल और जीवों को धारण करता है, उसके पीछे उस महाबाहु पुरुषोत्तम विष्णुकी नाभि में कमल उत्पन्न हुआ वह सूर्य्य के समान रूपवान्था उस कमलमें सबजीवोंके पितामह सब दिशाओंको प्रकाशकरतेहुये भगवान् ब्रह्मा जी उत्पन्नहोतेभये उनके पैदाहोनेपर अंधकारसे प्रथम उत्पन्नहोनेवाले योगका विघ्नकर्त्ता मधुनाम महाअसुर उत्पन्नहुआ उस भयंकर और भयानकरूपको पुरुषोत्तम चिदात्माने ब्रह्माजीकी प्रशंसाकरते२ मारडाला उसकेमारनेसे सब देवता दानव मनुष्यों आदिने उस पुरुषोत्तमका नाम मधुसूदन रक्खा फिर ब्रह्माजी ने मानसी पुत्र उत्पन्नकिये उनके यहनामहैं दक्ष, मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्ति, पुलहक्रतु, योगी और अज्ञानियोंकी मानसी उत्पत्ति एकसीहै तौभी सावधान चित्त योगियों की उत्पत्ति दुःखदायी नहीं है, अज्ञानियों की उत्पत्ति विपरीततासे दुःखदायीहै क्योंकि ज्ञान और अज्ञानसेही मोक्ष और बंधनहोता है यह प्रसिद्धहै जैसे कि प्रजापतिजी के असुर और देवता पुत्र हैं जिनमें छोटेपुत्रदेवता और बड़ेपुत्र असुरहैं वहपरस्परमेंशत्रुहैं परन्तुशमदमादि गुणोंसे देवता उनको विजयकरते हैं और बड़ेगिनेजाते हैंऔर कामआदि दुर्गुणोंसे संयुक्त असुरपराजयहोतेहैं, तात्पर्य्ययहहै कि कामआदिकोअसुरऔरशम दमादिको देवता जाननाचाहिये हेतातबड़ेभाई मरीचिनेमानसी तेजस्वी और ब्रह्मज्ञानियोंमें उत्तम कश्यपनामपुत्रको उत्पन्नकिया और हेयुधिष्ठिर ब्रह्माजी ने मरीचि सेभी प्रथम होनेवाले पुरुषको अंगूठेसे उत्पन्न किया वह दक्षप्रजापति नामसे प्रसिद्धहुये प्रथम उनप्रजापतिजीके तेरहपुत्रियां उत्पन्न हुईं उन सबमें दिति बड़ीथी उनसब के मरीचि के पुत्र महात्मा कश्यपजी पतिहुये उसके पीछे दक्षने दशपुत्रियां उत्पन्न करके धर्मको व्याहदीं उसधर्मके पुत्र बड़े तेजस्वी अष्टवसु, एकादशरुद्र, विश्वेदेवा, साध्य और मरुद्गण उत्पन्न

हुये, उनके सिवाय दक्षकी सत्ताईस कन्या और हुईं उन सबके पति चन्द्रमा हुये—उन छोटीकन्याओं ने गंधर्व घोड़ीपशु—गौ—किंपुरुष, मछली और पृथ्वी से उत्पन्न होनेवाले वृक्षों को उत्पन्नकिया और अदिती ने महाबली देवताओंको उत्पन्नकिया उनमेंही प्रभु वामनजीने अवतारलिया उनवामन जीने असुरोंसे तीनचरण पृथ्वीमांगकर देवताओंकी वृद्धिकी और दानवोंकी पराजयहुई और आसुरीप्रजा दितीसे उत्पन्नहुई दनुनामस्त्रीने विप्रचित्तीआदि दानवोंको उत्पन्न किया और दिती ने महाबली असुरों को उत्पन्न किया, मधुसूदनजीने दिनरात्रि कालऋतुप्रातःकालसायंकाल आदिको उत्पन्नकरके बादल और स्थावर जंगमजीवों समेत पृथ्वीको उत्पन्न किया तदनन्तर महा प्रभु श्रीकृष्णजीने मुखसे असंख्यब्राह्मणों को पैदाकिया भुजाओंसे क्षत्रियों को जंघाओंसे वैश्यों को और चरणोंसे शूद्रोंको उत्पन्न किया इस प्रकार चारों वर्णोंको उत्पन्न करके समष्टि अहंकारको सबजीवों का स्वामी किया फिर उसीपुरुषोत्तमने वेदविद्याके विधाता ब्रह्माजीको और भूत और मातृगणों के स्वामी विरूपाक्षजीको उत्पन्नकिया फिर विष्णुजीने पापीजन और पितरों के स्वामी यमराज को और सबधनके स्वामी कुबेरजी को उत्पन्न किया इसी प्रकार जलजीवों के और जलमात्रके स्वामी वरुणजी को उत्पन्नकिया और इन्द्रको सब देवताओंका स्वामी बनाया जहां तक जीवते रहनेकी जीवोंकी इच्छा हुई तबतक जीते रहे और यमराजका भय नहींहुआ उन सबमें विषय धर्मनहीं था केवल संकल्पसेही संतान उत्पन्न होती थी तदनंतर त्रेता युग में स्पर्श से सन्तान उत्पन्न होतीथी उनमें भी विषयधर्म नहींहुआ परन्तु द्वापर में प्रजाओंका धर्म विषयहुआ इसीसे कलियुग में मनुष्योंको दण्डप्राप्तहुआ इसप्रकार से यहजीवोंका स्वामी सर्वव्यापी कहाजाताहै और हेपुत्र युधिष्ठिर नरोत्तम अन्धक, गोह, पुलिन्द, शबर चुचुक यहसब मनुष्य जाति के लोग मद्रकोंसमेत दक्षिण देशोंमें रहनेवालेहैं और यौनक, कंबोज, गान्धार, किरात, शबर यहसब उत्तरके देशोंमें रहनेवाले हैं, हे राजा यहपापात्मा चांडाल काक और गधेके समान धर्मधारी इसपृथ्वीपर घूमतेहैं और हे युधिष्ठिर यह मनुष्य सतयुगमें इसपृथ्वीपर नहीं रहते हैं त्रेतायुग से इन की वृद्धिहोती है, फिर उसमहाघोर संध्याकालके वर्त्तमान होनेपर राजालोग परस्परमें युद्धादि कोंकोकरतेहैं इसप्रकारसे यहसंसार महात्मा विष्णुजीसे प्रकटहुआ इसदेवदेव का वृत्तांत सबलोकोंके घूमनेवाले देवऋषिने मुझसेकहा और श्रीकृष्णजीकी प्राचीनताको आपभीमाना इसप्रकारसे यहसत्यपराक्रमीकमल लोचन केशव जीभी ध्यानगम्यहैं यह केवल मनुष्यही नहीं हैं किन्तु साक्षात्परमात्माहैं ४६॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेभीष्मयुधिष्ठिरसम्वादेचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ३४॥

पैंतीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह, पहले कौन प्रजापति हुये और कौन से महाभाग ऋषिहरएक दिशामें विघ्नों के नाशकर्त्ता हुये, भीष्मजी बोले कि हे भरतर्षभ सुनो सबसे पहले स्वयंभू ब्रह्माजीहैं और उनब्रह्माजी के सातपुत्र मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्ति, पुलह, क्रतु—और महाभाग वशिष्ठ जोब्रह्माजी केही समानहैं पुराणोंसे निश्चय किये हुये यहसात ब्रह्माजी के पुत्र हैं इनके पीछे सब प्रजापतियोंको जानों, अत्रि के वंशमें उत्पन्न ब्रह्मयोनि सनातन भगवान् प्राचीन वर्ही हुये उनसे प्राचेतसनाम दशपुत्रहुये उनदशोंका एकपुत्र दक्षप्रजापति नामहुआ लोकमें उसके दोनाम कहेजाते हैं अर्थात् दक्ष और (क) मरीचि के पुत्र कश्यपजी हुये उनकेभी दो नाम बोले जाते हैं अर्थात् अरिष्टनेमि, और कश्यप अत्रिका औरसपुत्र पराक्रमी श्रीमान् राजा सोमहुआ जोकि हजार दिव्य युगोंतक चारोंओरसे सेवितहोगा हेराजा भगवान् अर्य्यमा और उनके पुत्र जोचन्द्रमा हैं वहसब भुवनों के उत्पन्न करनेवाले देवता स्वामीरूपहैं और राजा शशिबिंदुकी दशहजार स्त्रियांथीं उसने प्रत्येक स्त्री में एक २ हजार पुत्र उत्पन्न किये इसप्रकारसे उस महात्माके एक किरोड़ पुत्रहुये वहकिसी दूसरे प्रजापतिको नहीं चाहतेहैं यह राजा शशिबिन्दुकी संतानकी संख्या प्राचीन ऋषिकहतेहैं औरसंकल्पसे हुये हैं,यहप्रजापति जीका बड़ावंश वृष्णिवंशका उदयकरनेवालाहै,यहतोयशस्वी प्रजापति वर्णन किये इसके पीछे तीनों भुवनों के ईश्वर देवताओंको कहता हूं कि भव, अंश, अर्यमा, मित्र वरुण, सविता, धाता, विवस्वान्, महाबल, त्वष्टा, पूषा, इन्द्र और बारहवों विष्णु कहेजाते हैं यही कश्यपजीके पुत्र द्वादशसूर्य हैं, नासत्य, दस्र यहदोनों अश्विनीकुमार भी कहेजातेहैं यह दोनों आठवेंसूर्य्य महात्माके पुत्र हैं, पहले वह देवता और नानाप्रकारके पितृदेवताकहे, त्वष्टाकाबेटा बड़ा यशस्वी श्रीमान् विश्वरूपहै अजैकपाद, अहिर्बुध्न्य, विरूपाक्ष, रैवत, हर,बहुरूप, त्र्यम्बक, सुरेश्वर, सावित्र जयन्त, पिनाकी, अपराजित, यहग्यारहरुद्रहैं और महाभाग आठवसु प्रथमही कहे गये, प्रजापति मनुजी के पहले इतने प्रकारके देवता प्रकटहुये वहदेवता और पितृनामसे दो भेदके हैं प्रथम शील और यौवन से उत्तम हैं और दूसरे शुद्धभाव में उत्तमहैं आदिसे देवताओंके गण मरुतनामहैं इसीप्रकारसे विश्वेदेवा और अश्विनीकुमार हैं उनमें आदितीके पुत्र क्षत्री और वैश्य मरुतदेवताहैं और उग्रतपस्वी अश्विनीकुमार शूद्र कहेजाते हैं और अंगिरावंशी देवता ब्राह्मण कहेजाते हैं सब देवताओंके यह चार वर्णकिये जो पुरुष प्रातःकाल उठकर

शुद्धता पूर्वक इनदेवताओंका अच्छेप्रकारसे स्मरणकर वह अपने कियेहुये या दूसरे की प्रीतिसे कियेहुये सबपापोंसे छूटताहै, यवक्रीत, रैभ्य, अर्वावसु, परावसु, औषज, कक्षीवानबल, अङ्गिरस यह सब मेधातिथिके पुत्रहैं और कण्वऋषि के बर्हिषदहैं इसीप्रकार तीनोंलोकोंके उत्पन्न करनेवाले सप्तऋषि पूर्वदिशामें वर्तमान हैं और उन्मुच, विमुच, स्वस्ति और पराक्रमी आत्रेय प्रमुच, इध्मवाहु, भगवान् दृढ़व्रत, मित्रावरुणीके पुत्र और प्रतापी अगस्त्य यहसब ब्रह्मर्षिलोग सदैव दक्षिण दिशामें वासकरते हैं—उषंगु, कवष, धौम्य, पराक्रमी, परिव्याध, एकतद्वित, त्रित यह तीनों ब्रह्मर्षि और अत्रि के पुत्र प्रभुभगवान् सारस्वत यहमहात्मा पश्चिमदिशामें नियत हैं, अत्रि, वशिष्ठ, महर्षि, कश्यप, गौतम, भारद्वाज, विश्वामित्र, कौशिक, और ऋचीकके पुत्र भगवान् जमदग्नि यह सातों उत्तर दिशामें वर्तमानहैं यहसब तेजस्वी लोग चारोंदिशा में वर्णन किये, लोकों के उत्पन्न करनेवाले यह महात्मा साक्षीरूपहैं रक्षाचाहनेवाला मनुष्य जो इनका कीर्त्तन करेगा वहसब पापोंसे छूटेगा और आनन्द से अपने स्थानको जायगा ३७ ॥

इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणि मोक्षधर्मेपंचत्रिंशोऽध्यायः ३५ ॥

छत्तीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे युद्धमें सत्य पराक्रमी पितामह इनअविनाशी श्रीकृष्ण जीके सम्पूर्ण गुण तेज और पूर्वसमयमें जो कियाहुआ कर्म है उसको और तिर्य्यक्योनिमें प्रभुने कैसे किस निमित्त रूपको धारण किया यह सबबातें ब्योरे समेत आप मुझसे वर्णन कीजिये मुझे सुननेकी बड़ीउत्कण्ठाहै—भीष्म जीबोले कि पूर्व समय में आखेट करताहुआ मैं मार्कंडेयजी के आश्रममें प्राप्त हुआ वहां हजारों मुनियों को बैठाहुआ मैंनेदेखा कि उन मुनियों ने देखकर मधुपर्क से मेरा पूजन किया मैंने उस पूजाको लेकर ऋषियोंको प्रसन्न किया वहां कश्यप महर्षिजीने जो कथा कही वह आनन्ददायी कथा तुम चित्तल-गाकर सुनो—पूर्वकालमें दानवों में उत्तम क्रोध लोभमें प्रवृत्त नर्कासुर आदि सैकड़ों महाबली असुर पराक्रमके मदमें मदोन्मत्त होगये और देवताओं से ईर्षा करके महादुःख देनेलगे तब महापीड़ावान् होकर देवता और ऋषियोंने महाबली घोररूप दैत्योंसे व्याप्त पृथ्वीको भी महापीड़ित देखा कि मारे बोझ के डूबनेहीवालीथी यह दशा देखकर सब देव ऋषियोंने भयभीतहोकर ब्रह्मा जीसे यहसब वृत्तांत इसप्रकार से कहा कि हे ब्रह्मन् हम दानवों से कैसे बचें तबब्रह्माजी ने कहा कि यह मैंने बुद्धिसे विचार किया है कि यह दानवलोग बड़ेबड़े वरोंको पाकर पराक्रम और अहंकारसे युक्त देव देव पुरुषोत्तम विष्णु

को नहीं जानते हैं और पृथ्वी के नीचे बसते हैं वह इनकी अनीति को
वाराहरूप बनकर वहांहीं इनको मारेंगे यह ब्रह्माजी की सुखदायी वाणी
सुनकर हृदयका शोच दूरकर चित्त में प्रसन्न हुये, तदनन्तर श्रीविष्णुजी
हका रूप धारणकर वहां गये जहां कि पृथ्वीमें सबदनुजों का समूहरहता
वहां राक्षसोंने इसवाराहरूप विष्णुको देखकर बड़े २ पराक्रम करके उसको
इनेकी इच्छाकी और पकड़कर चारोंओर से खींचनेलगे जब उनके बल
ह नहीं चलायमान हुये तब वाराहजीने महाभयानकरूप करके ऐसाघोर
द किया कि तीनोंलोकोंमें व्याप्त होगया और इन्द्रादिक देवता महाभय
। होकर विचार करनेलगे कि यहशब्द कहां से हुआ परन्तु किसी ने इस
को नहींजाना सर्पलोकमेंभी सब महा भयभीत हुये और ज्ञान सबकेजाते
ऐसे शब्दके सुनतेही सब दैत्य महा भययुक्तहो पृथ्वीमें गिरपड़े और अ-
२ पुरुषार्थों को सबने त्याग दिया उससमय वाराहरूपने महाउग्ररूप धा-
करके उनके अस्थिमांस मज्जा रुधिर आदिको अपने तीव्र नखोंसे विदीर्ण
।। तब सब देवता घबरायेहुये उदासचित्त होकर ब्रह्माजीसे यहवचन बोलते
कि हे जगत्पति ब्रह्माजी यह महाभयानक घोरशब्द कहांसे और किसने
।। जिसको सुनकर सब संसार व्याकुल होगया उसको आप कृपा करके
ये, इतने में वाराहजी भी दैत्योंको मार महाक्रोधरूप धारण किये पृथ्वी
ाहर निकले तब ब्रह्माजीने देवताओं से कहा कि देखो यही वाराहरूप
ु भगवान्जी तुम्हारी रक्षा के निमित्त धारणकर दैत्यों का नाश करके
हैं इन्होंनेही दैत्योंके मारने के निमित्त वह भयानकशब्द कियाथा तुम
ने चित्तमें चिन्ताको मतकरो और आनन्दपूर्वक अपने स्थानोंको जाओ
ः युधिष्ठिर जिन श्रीमधुसूदन विष्णुजी ने वाराहरूपधारण किया वहयही
लोचन योगेश्वर महात्मा सबजीवोंके उत्पन्न करनेवाले जगत्पति श्री,
ाजी हैं यही कालरूप होकर नाशकरतेहैं यह वाराहअवतार धारणकरने
कारण तुमसे कहा अब क्या सुनना चाहते हो ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणिमोक्षधर्मे षट्त्रिंशोऽध्यायः ३६ ॥

सैंतीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि प्रथम तीनअध्यायों में वह ईश्वरकी उपासना वर्णनकी
ासे कि शीघ्रयोग सिद्धी होती है और योग में जो रोग दुःखादि प्रकट
हैं उनका नाश होता है अब आप प्रधान योगको कृपाकरके कहिये
ासे कि मोक्षकी प्राप्ति होय—भीष्मजी बोले कि इसस्थान में उसप्राचीन
हास को कहता हूं जिसमें शिष्य और गुरुका परस्पर में मोक्ष सम्बन्धी

सम्वाद है—बड़े सावधान बुद्धिमान कल्याण के खोजी। किसी शिष्यने किसी महा तेजस्वी ऋषियों में उत्तम महात्मा जितेन्द्रिय आचारवान ब्राह्मण को मिलकर उनके दोनों चरणों में शिर झुकाकर हाथ जोड़कर उनसे यहवचन कहा कि हे महात्मा जो आप मेरी उपासना से प्रसन्नहैं तो कृपाकरके मेरेसं-देहको दूर कीजिये कि मैं कहां से आया और आप कैसे और कहां से उत्पन्न हुये इसको और इस परमश्रेष्ठ ब्रह्मको बर्णन कीजिये और सब जीवों में और पुरुषों में उत्तम दशा बिपरीतता, नाश, उदय इत्यादि बातें कैसे सदैव हुआ करती हैं और वेदों में भी जो लौकिक और न्यायिक वचनहैं उनको भी आप कहने को योग्यहैं—गुरुजी बोले कि हे महाज्ञानी शिष्य तुम इस वेदकी गुप्त और उत्तम ब्रह्म बिद्याको जो कि सब बिद्या और शास्त्रोंका धन है अर्थात् धनके समान रक्षाके योग्य वा उपकारी है उसको सुनो कि वेद और संसार का आदि प्रणवरूप सर्व व्यापी श्रेष्ठ वासुदेवही सत्यता ज्ञान क्षमा शान्त चित्त और शुद्धभाव रूप हैं जिसको कि वेद के जाननेवालों ने सम्पूर्ण रूप और देहों में निवास करनेवाला सनातन सर्व व्यापी उत्पत्ति प्रलयका करता गुप्त और अविनाशी ब्रह्म कहाहै वही श्रीकृष्णजी हैं ब्राह्मण ब्राह्मणसे क्षत्री क्षत्री से वैश्य वैश्यों से शूद्र शूद्र से कहने के अधिकारी हैं इस से तुम इस इतिहासको मुझ से सुनो तुम श्रीकृष्णजी की कथाके सुननेसे कल्याणभागी होगे वह परमात्मा कृष्ण आदिअन्त रहित उत्पत्ति लयका कारण कालचक्र रूप है इस सबजीवों के ईश्वर में तीनों लोक चक्र के समान घूमते हैं इसीको केशव पुरुषर्षभ कहते हैं, जिस रूपांतर दशा रहित ने पितृ, देवता, ऋषि, यक्ष, राक्षस, नाग, असुर और मनुष्यों को और वेद, शास्त्र, सनातन लोक धर्म्म और प्रलयका स्थान रूप सबल मायाको भी उत्पन्न किया जिसप्रकार कि ऋतुओं के बदलने में नानाप्रकार के रूप दिखाई देते हैं उसीप्रकार यज्ञों में बहुतसे भाव प्रकट होते हैं इसको सिद्ध करते हैं कि यज्ञोंके मध्य में जो जो काल के योग से प्रकट होताहै उस उस विषयमें व्यवहार बुद्धी से उत्पन्न होने-वाला ज्ञान प्राप्त होता है यज्ञ के अन्त में इतिहास समेत गुप्त होनेवाले वेदों को ब्रह्माजी से उपदेश पानेवाले महर्षियों ने अपने तप के द्वारा प्राप्त किया, वेदके ज्ञाता भगवान ब्रह्माजी हैं और वेदान्त जाननेवाले बृहस्पतिजी हैं और जगत् का उपकारी नीति शास्त्र भार्गव शुक्रजी ने निर्माण किया, गां-धर्व वेदको नारदजी ने, धनुष धारण को भरद्वाज ने, देव ऋषियों के चरित्रों को गार्गीऋषिने, आयुर्वेद को कृष्ण और अत्रिऋषिने जाना उन्हीं कहने-वालों ने न्याय सांख्य पातंजलि शास्त्रभी कहे युक्ति, वेद और प्रत्यक्ष प्र-माणों से जो ब्रह्मका बर्णन कियागया उसीकी तुम उपासना करो वह परम

ादि कारण रहित है, उसको देवता और ऋषियों ने भी नहीं जाना
केलाही षड़ैश्वर्य्यवान् सबका धारण करता सर्व देह निवासी प्रभु पर-
अपने को आपही जानता है और नारायणसे उत्तम ऋषियोंकेसमूह
असुर और प्राचीनराजऋषियोंने उस पुरुषोत्तम सब दुःखोंके औषधी
मको जाना है—जब प्रकृति इस पुरुषके मनकी इच्छाके भावको उत्पन्न
और यहजगत पहलेही धर्म्म अधर्म्म से संयुक्तहै इसीकारण भ्रमताहै
हेतुरूप तेलबत्तीके होनेसे एकदीपकसे हजारों दीपक वर्त्तमान होजाते
प्रकार प्रकृति भी प्रारब्धके योगसे सृष्टिको उत्पन्न करती है और अनन्त
हानि को नहीं पाती है, अब सृष्टिकी उत्पत्तिको कहतेहैं कि प्रथम अ-
कर्म्म संयुक्त बुद्धि उत्पन्न होती है, बुद्धि से अहंकार अहंकार से आ
आकाशसे वायु वायुसे अग्नि, अग्निसेजल जलसे पृथ्वी उत्पन्न होती
आठ मूल प्रकृति हैं इनमें ही जगत वर्तमान है, इस पुरुष का उत्पत्ति
आठरूपवाली प्रकृति से रूपांतर दशा के साथ पंचज्ञानेन्द्रिय पंचकर्मे
ांचविषय और सोलहवां चित्त और एकचित्तका विषय यहसब उत्पन्न
वण, त्वचा, घ्राण, रसना, चक्षु, यह पांच ज्ञानेन्द्रियहैं और दोनों चर-
ा, लिंग, हाथ, नाक यह पांच कर्मेन्द्रिय हैं इनके पांचो कर्म्म भी
ं वर्त्तमानहैं, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध इनसबको च्युतरूप जान-
हिये अर्थात् चित्तके ज्ञापक हैं वहचित्त सब इन्द्रियों से सम्बन्ध रखता
शब्दादिकों में चित्तही सर्वइन्द्री रूपहै इसको सिद्ध करतेहैं कि रसका
जिह्वासे वार्त्तालाप वाक्इन्द्री से कहीजाती है यह चित्तहीहै उसीप्रकार
कार की इन्द्रियों से संयुक्त सब आभ्यन्तरीय सुख दुख बुद्धि इत्यादि
ाहरी आकाशादि उसीप्रकार अव्यक्त अर्थात् महत्तत्त्व आदिभी चि-
, दशइन्द्री पंच तत्त्व और चित्त इन सोलह देवताओं को विभागी
ो कि देहोंमें ज्ञान उत्पन्न करने वाले परात्मा की उपासना करते हैं
कार जिह्वा जलका कार्य्य है पृथ्वी गन्धका कार्य्य श्रोत्रइन्द्री आकाश
क्षुइन्द्री अग्निका कार्य्य है सबजीवों में स्पर्श करने वाली त्वकइन्द्री
ुका कार्य्य जानों, चित्त सतोगुण का कार्य्य और सत्त्वगुण अव्यक्त
न्न होता है इस कारण बुद्धिमान् पुरुष सबको सबजीवोंके आत्मारूप
में वर्तमान समझे सत्त्व वा ईश्वर जड़ चैतन्य समेत सब जगत को
करते हैं और वह सब मिलके उस कूटस्थ ब्रह्मके आश्रय हैं जो प्रकृति
प्रधान है वह महात्मा पुरुषोत्तम नौद्वारवाले सर्वभाव सम्पन्न पवित्र
व्याप्तहोकर शयन करता है इसी कारण से वह पुरुष कहा जाता है
ामृत्यु रहित अरूप रूपवान इनदोनों रूपोंसे उपदेश होने वाला व्या-

सगुण सूक्ष्मरूप होकर सबजीव और गुणों का आश्रय स्थानहै, जैसेकि
टा बड़ा कैसाही दीपकहो वह प्रकाश करनेवालाहै उसीप्रकार सबजीवोंमें
ज्ञानात्मा पुरुषको भी जानो—जिसके द्वारा श्रोत्रइन्द्री सुनती है और
नने के योग्यको जानता है वही आत्मा सुनता और देखता है यह देह
के शब्द ज्ञानादि का कारण है जानने वाला नहीं है सब कर्म्म भी वही
ने वालाहै—जैसे कि लकड़ी में व्याप्त अग्नि उसके तोड़ने छोरने परभी
नहीं आता है, उसीप्रकार देहमें वर्त्तमान आत्मा योगसेही दृष्ट पड़ताहै,
गके अभ्यासमें देहका सम्बन्ध दूरनहींहोताहै, इसको सिद्धकरतेहैं कि जैसे
दियों में जल भरा है और सूर्य्य में किरणें हैं और सदैव प्रचलित हैं उसी
ारसबजीवों के देहहैं, जैसे पांचों इन्द्रियों समेत आत्मा स्वप्नावस्था में दे-
ा त्याग करजाता है उसी प्रकार देहके अंतमें इसदेहको छोड़कर आत्मा
रे देहमें प्रवेश करता है यह बात शास्त्रसे वा योग से जानीजाती है अ-
त् दूसरे देहमें आत्माका जाना स्वप्नके समान है—अपने किये हुये प्रबल
र्म से प्राचीन देहका त्याग होताहै और उसी कर्म्म से दू राभी देह प्राप्त
ाहै और एक स्थानसे दूसरे स्थानको पहुंचाया जाताहै, जैसे कि देहको
ग कर वह एकदेहसे दूसरे देहमें प्रवेश करताहै उसीप्रकार अपने कर्म्मसे
न्न होनेवाले दूसरे जीवोंके समूह को कहता हूं ४६ ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेसप्तत्रिंशोऽध्यायः ३७ ॥

अड़तीसवां अध्याय ॥

पजी बोले कि चारप्रकारके जड़ चैतन्य जीव ऐसेहैं कि जिनके दूसरे
देहमिलना प्रकट नहीं होता और न उनके पूर्वदेहका वियोग प्रकट होता
है और दोनों स्वप्नके तुल्यहैं दूसरे स्थानमें जाने के समान नहीं हैं इसमें
हेतुहै कि इसका उसप्रकार का लक्षण प्रकटनहीं है देह चित्तके कारणसे
त्मारूपहै अर्थात् दूसरेचन्द्रमाके समान उसीमेंकल्पितहै और देहकी प्राप्ति
र त्यागमेंभी आत्मारूपहै,जैसेकिपीपलके बीजमेंप्राप्त बड़ावृक्षबीचमें प्रकट
र्त्तमान दृष्टपड़ताहै उसीप्रकारअव्यक्तसेचित्तकी उत्पत्ति है अर्थात् आदि
त और मध्यमें भी आत्माही है, जैसे कि जड़रूप लोहा चुम्बक पत्थरकी
र दौड़ताहै इसी प्रकार पिछले संस्कार से उत्पन्न होनेवाले कर्म्मों के धर्म्म
र अधर्म्म आदिका उदय और इसी प्रकार की जो दूसरी अविद्या आदिहैं
भी देहके सन्मुख दौड़तीहैं उसी प्रकार अव्यक्त अर्थात् अविद्यासे उत्पन्न
ेवाले जड़रूप भाव चारों ओरसे एकत्र इकट्ठे होते हैं इसी प्रकार चैतन्य
र कर्त्तारूप जीवात्मा के भाव बुद्धि चित्त आनन्दादि जो ब्रह्मका दर्शन

कराने वालेहैं वह सब भी इकट्ठे होते हैं, वीर्य और रुधिर के योग आदि से देह बुद्धि आदि दृष्टपड़तेहैं फिर किस प्रकार स्वप्न के समान अकस्मात दूसरी देहका प्राप्तहोनाहै इसशंकाको निवृत्त करतेहैं—चैतन्यधातु जीवके विना पृथ्वी आकाशादि पंचतत्त्व, प्राण, शम, दम और काम आदि प्रकट नहींहुये और इसअज्ञानकी उपाधिसे संयुक्त जीवकी उपासनाभी नहींकी फिर जीवमें उसका कैसे सम्बन्ध निश्चय होसक्ताहै, इसकारण से इसजीव में पृथ्वी आदि की तादात्मताहै वह अज्ञान कर्म्म और मायाका कार्य्यहै यह वेदमेंकहाहै, क्योंकि वहप्राचीन जिसकी आदि नहीं और सर्वव्यापी चित्तकी उत्पत्तिका कारण वाणीसेपरे है उसकी पूर्व्व वासनाही उसको जतलातीहै, वह जीवका स्वरूप वासनाओं से संयुक्त कर्मोंका संचय करनेवाला है जिसवासना और कर्म्म से यह आदि अन्त रहित बड़ा चक्र वर्त्तमान है, उसमें मन इन्द्रियों समेत जीव गिरकर तबतक भ्रमता है जब तक कि बुद्धिकी स्थिरता नहीं होती फलकी वासनासे जो२ कर्म्मकियेजातेहैं वह आगे देहप्राप्त होनेके हेतुहैं,जितने कर्महेतु और सब मायादिक हैं उनकायोग जब क्षेत्रज्ञ से होताहै तब देहके मिलने से यह सबभी परस्पर में मिलजातेहैं हे शिष्य जो पुरुष ईश्वरके आश्रय में पूर्व देहको त्यागते हैं वह लोकान्तरको प्राप्त होतेहैं जब जीव लोकान्तरको जाताहै तब उसके संग रजोगुण तमोगुण नहींजाते हैं उसकेसाथ केवल सतोगुणही जाताहै इस विषयको ज्ञानी पुरुषही जानते हैं संगमें जातेहुये भी रज और वायु के समान पृथक् है, ज्ञान प्राप्तहोने से आपे को जानताहै जब आपे को जानता है तब देह नहीं पाता है १७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेअष्टात्रिंशत्तमोऽध्यायः ३८ ॥

उन्तालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि जिसप्रकारसे यह प्रवृत्त लक्षणवाला धर्म्मसबको स्वीकार होता है उसी प्रकार उन विज्ञानी ब्रह्मज्ञानियों को विज्ञान के सिवाय दूसरा कोई तत्त्व नहीं भाताहै वेदके ज्ञाता पुरुष जोकि वेदोक्त कर्म्मों में प्रवृत्त हैं वह बहुत कमहैं वह बड़ेज्ञानी प्रयोजनकी महत्त्वतासे उत्तममार्ग्गको चाहतेहैं यह चलन सत्पुरुषों की शिक्षासे निन्दायोग्य नहीं होता अर्थात् कर्म्म उसज्ञान योगमें प्रवेश होनेका कारणहै और यहब्रह्मज्ञान वह वस्तुहै जिसको प्राप्तहोकर उत्तम मोक्षको पाताहै रजोगुण तमोगुण क्रोध लोभ आदि गुणों से संयुक्त देहाभिमानी पुरुष अज्ञानतासे सब स्त्री पुत्रादि परिग्रहोंको प्राप्त करताहै इस कारण मोक्षका चाहनेवाला अपवित्र कर्म्म नहींकरे कर्म्मसे ब्रह्मज्ञानकी इच्छा को उत्पन्न करता शुभ लोकोंको न चाहे अर्थात् फलके त्यागसमेत पवित्र

चित्त होने के निमित्त कर्म्मों को करे चित्तकी पवित्रता न होने से यह दोष होतेहैं जैसे कि लोहे से युक्त सुवर्ण पक्कहुये विना शोभित नहीं होताहै उसी प्रकार जिसचित्तने रोगादि दोषोंको विजय नहीं किया उसका विज्ञान उदय नहीं होताहै, जो पुरुष धर्ममार्गको उल्लंघन करके कामक्रोधके अनुसार कर्म्म करताहै और लोभसे अधर्म्मको करताहै वह अपने साथियों समेत नाशको पाताहै इसी हेतुसे पुरुषप्रीतिकी आधिक्यतासे शब्दआदि विषयोंको प्राप्तनहीं करे,क्योंकि यहां एकको एकसे क्रोधहर्ष और शूल उत्पन्नहोतीहै देहके पंचभूतात्मकहोने और चित्तके राजसी तामसी होनेपर यह किसकी प्रशंसा करताहै और क्या कहताहुआ किसकी निन्दाकरताहै अर्थात् किसीकी नहींकरता है, अज्ञानीलोग रूपरस गन्धस्पर्शादिकों में प्रीति करते हैं और अपनी विपरीत बुद्धिसे पृथ्वीकेगुण देहको नहीं जानतेहैं, देहकेभस्मीभूत होनेमें युक्ती कहतेहैं जैसे कि मृत्तिका का स्थान मृत्तिकासेही लीपाजाता है इसीप्रकार यहपृथ्वीसे उत्पन्न होनेवाला देह मृत्तिका के विकार अन्नादिक से पुष्टताको पाताहै , मधु तैल, दूध, घृत, मांस, लवण, धान, फलमूल यह सब जलकेद्वारा मृत्तिका के रूपान्तर रूप विकार हैं, और जैसे कि बनमें निवास करनेवाला संन्यासी सुट्ठीअन्न आदि से प्रसन्न नहीं होता उसीप्रकार ग्रामादिकोंके बेस्वाद भोजनों से अप्रसन्न देहके निर्वाहकेलिये प्राप्तकरे, उसी प्रकार संसार रूपी बनमें निवास करता परिश्रम में संयुक्त कुटुम्बी यात्रा के निर्बाहके निमित्त अन्नको ऐसेभोजनकरे जैसे कि रोगी औषधीका सेवन करताहै आशययह है किइन्द्रियोंकी प्रीतिकेलिये भोजननहींकरे इसप्रकार कुटुम्बी और संन्यासीके वैराग्यकोसुट्ठी अन्न आदि में प्रकट करके दोनों आश्रमोंकेयोग्य मोक्षधर्म्मको कहतेहैं—सत्य बोलना मृत्तिका और जलसे बाहरकीशुद्धी और चित्तशुद्धीसे भीतरकी पवित्रता, शुद्धभाव—वैराग्य वेदपाठ आदिसे उत्पन्न होनेवाला तेज, चित्तके विजय करने में शूरता, शास्त्र सुनने से उत्पन्न होनेवाली बुद्धि,क्षमा, धैर्यता, ज्ञान विवेक तप, उदारचित्तता, सन्मुख आनेवाले संन्यासी वा संसारीभाव या विषय स्वरूपको अच्छेप्रकारसे विचारकर शान्तचित्त इन्द्रीजित् होनाचाहिये—सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण से मोहित अज्ञानीजीव चक्रके समान घूमते हैं इसकारण अज्ञान से उत्पन्न होनेवाले दोषोंको अच्छेप्रकार से विचारकरे, अज्ञानमयदुःखदायी अहंकारको अत्यन्तता से त्यागकरे—क्योंकि पंचमहाभूत और सत्त्व रज तम यह तीनोंगुण, तीनोंलोक ऐश्वर्योंसमेत अहंकार में फँसे हुये हैं अर्थात् अहंकार से कल्पित हैं, जैसे कि इस लोक में सावधानकाल ऋतुसम्बन्धी गुणोंको दिखलाता है इसीप्रकार पंचभूतोंमें अहंकार को कर्म्म काजारी करनेवालाजाने, अज्ञान से उत्पन्नहोनेवाले अप्रकाश और महामोह

उत्पन्न करनेवाले अहंकारकोजाने फिरसुखदुःखसे मिलेहुये सतोगुणरजोगुण को जानेहर्ष,चित्तशुद्धी, आनंदयुक्तप्रीति, निस्सन्देहहोना, धैर्य्यता, स्मरणता यहसब सतोगुणकेरूपहैं-और काम,क्रोध,अविवेक,लोभ,मोह,भय,दुःखइत्यादि सब रजोगुणके स्वरूपहैं—शोक,अप्रीति,स्वतंत्रता,अहंकारता तीक्ष्णताइत्यादि सब तामसी गुणहैं, इसप्रकारके दोषोंकी हानिलाभको विचारकर उसआत्मामें वर्त्तमान हरएकगुण को अच्छे प्रकारसे विचारकरे अर्थात् कौनदोष है कौन नाश हुआ कौन शेषरहा इन सबबातोंको सदैव विचारकरे, युधिष्ठिरबोले कि पूर्व्व में मोक्षकी इच्छा करनेवालों ने चित्तसे कौनसे दोष दूरकिये और किस बुद्धिसे निर्बलकियेगये और कौनसी कठिनता से त्याग किये जाते हैं कौन लौट आते हैं और कौन अज्ञान से निष्फल हैं और ज्ञानीकिसबुद्धि और कारणोंसे गुणोंके बलाबल को विचारकरे इस मेरे सन्देह को हे पितामह आप दूर करिये– भीष्मजी बोले कि अत्यंत शुद्धात्मा पुरुष दोषोंको मूलसे उखाड़नेके द्वारा मुक्तहोताहै, जैसे कि धार रखनेवाला औजार लोहेकी बेड़ियों का काटने वालाहै उसीप्रकार विचारसे शुद्धहोनेवाली बुद्धिकेद्वारा पैदाहोनेवाली दोषयुक्त अविद्यादिक भी नाशहोजाती हैं अर्थात् उनको नष्टकरके आपभी शान्तीको पातीहै चौथेप्रश्नका उत्तर कहकर तीसरे प्रश्नका उत्तरदेते हैं, रजोगुण, तमोगुण, काम, मोह इत्यादिसेपृथक् शुद्धरूप सतोगुण यह सब देहके उत्पन्नकरनेवाले बीज रूप हैं उनमेंसे दृढ़ चित्तज्ञानीको ब्रह्म में मिलानेवाला केवल सतोगुणही है, पहले प्रश्नका उत्तर कहते हैं—कि ज्ञानीको रजोगुण तमोगुणत्यागकरनेयोग्यहैं क्योंकि रजोगुण तमोगुण रहित बुद्धीसे परमात्माको पाताहै अथवा सांख्यशास्त्रवाली बुद्धिको स्वाधीन करनेकेलिये मन्त्रयुक्त यज्ञादिकोंकोकरे अर्थात्उससे चित्तशुद्धी होती है और चित्त शुद्धी से मोक्षहोती है, वेदोक्त कर्म्मोंमें भी काम क्रोधकेकारण राजसी तामसी कर्म्म त्याज्यहैं सात्त्विकी कर्म्म में प्रवृत्त रहना योग्यहै इस विषयको तीन श्लोकों में कहतेहैं, रजोगुण के द्वारा अधर्म्म युक्त कर्मोंको प्राप्त करताहै वह रजोगुणी कर्म्म अर्थसे संयुक्त होते हैं उन्हीं से सबकामनाओं की इच्छाहोती है और तमोगुण से उनकर्मों को सेवन करताहै जो कि क्रोध से उत्पन्न होनेवाले लोभ हिंसा में प्रीतियुक्त आलस्य निद्रा में प्रवृत्त करते हैं और सतोगुण में वर्त्तमान ब्रह्मका आश्रय करनेवाला श्रीमान् निर्मल श्रद्धा और विद्यायुक्त जीवात्मा सतोगुणी शुद्ध भावोंको देखताहै २३॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे एकोनचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ३९॥

चालीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर रजोगुण तमोगुण से लोभ मोह क्रोध भय अहंकार आदि उत्पन्न होते हैं उनके नाश करने से पवित्र होताहै—शुद्धभाव का फल जीव ब्रह्मकी एकता का ज्ञानहै इसी कारण शुद्ध पुरुषोंने उस विभु परमात्मा अविनाशी सर्वव्यापी निराकार रूपको देवताओंमें श्रेष्ठतरजाना और शुद्धपुरुष अबभी जानता है, उसकी माया से मनुष्य ज्ञान विवेक रहित होकर अचेत होतेहैं उस व्यग्र बुद्धि से वा अज्ञानतासे वह मनुष्य क्रोध अथवा व्यग्र चित्तताको पाते हैं फिर काम क्रोध लोभ मोहसे संयुक्त होकर पूजन आदि करने में अहंकारको करके कर्म्मों को करते हैं, उन कर्मों के द्वारा राग में भरेहुये शोकको उत्पन्न करते हैं और जन्म मरणको अंगीकार करके कर्मों के प्रारम्भ से सुख दुःखको पाते हैं और जन्म से कर्मोंकी दृढ़ताको पाते हैं और वीर्य्य रुधिरसे उत्पन्न मूत्र विष्ठा और रुधिर में भरेहुये होते हैं फिरलोभ में आसक्त क्रोध इत्यादिसे दूषित उन्हींसे पार उतरनेकी इच्छा करते वर्त्तमान होते हैं वहां स्त्रियों को तो तंतुवाह अर्थात् कोलियोंके समान संसाररूपी वस्त्र के तारको तानाबाना बुननेवाली जाने, वह स्त्रियां स्वभावसे क्षेत्ररूप हैं और पुरुष क्षेत्रज्ञरूप है अर्थात् जैसे प्रकृति क्षेत्रज्ञको अपने स्वरूप से गुप्त करतीहै इसी प्रकार यह स्त्रियां जीवात्मा को संसार में स्वाधीन करती हैं इस कारण ज्ञानी पुरुष अत्यन्ततासे उनको त्यागकरें अथवा उनके पास न जावें यह स्त्रियां घोररूप कृत्या अर्थात् शत्रुके मारने को मन्त्ररूप शक्ति हैं और अज्ञानियों को अचेत करती हैं और रजोगुण में अन्तर्गत हैं और इन्द्रियों की सनातन मूर्त्ति हैं अर्थात् इन्द्रियोंसे कल्पितहैं इसी हेतुसे उन स्त्रियोंसे सम्बंध रखनेवाले प्रीतिरूप वीर्य्यसे उत्पन्न होते हैं, अब जिस प्रकार अपनी देह में पैदा होनेवाले और अपने में से पृथक् कीड़ों को देहसे जुदाकरते हैं उसी प्रकार पुत्रभावरूप रखनेवाले आत्मजरूपी कीड़ोंको त्यागकरे, स्वभाव और कर्म्मयोगके द्वारा वीर्य और पसीने से जीव उत्पन्न होते हैं उनको बुद्धिमान् लोग त्यागकरें, इस रीति से त्यागके योग्यको कहकर जानने के योग्य वस्तु को कहते हैं कि प्रवृत्ति और प्रकाशरूप रजोगुण सतोगुण यह दोनों तमोगुण में अन्तर्गत होजाते हैं वह अज्ञाननाम तमोगुण ज्ञानमें नियत बुद्धी और अहंकारका जतलानेवाला होता है, अहंकार और बुद्धिसे मिला हुआ वह अज्ञान जीवात्माओं को देहके मिलने में बीजरूप है उस कार्य्यके साथ ज्ञानका वीज अर्थात् अधिष्ठान रूप जो ज्ञान है उसीका जीव नाम है वह अज्ञान से मिला हुआ ज्ञान वीज रूपहै इस हेतुसे कि वह काल से मिलेहुये

कर्म्म के साथ संसारका घुमानेवाला है यह जीव या ईश्वर जैसे कि स्वप्न में चित्तके साथ देहधारीके समान रमताहै उसीप्रकार यह देहवान् आत्मा कर्म से उत्पन्न होनेवाले गुणों के कारण माता के उदर में उसको पाताहै जिसका कि आगे वर्णन है अर्थात् मांस पिण्ड रूप राग युक्त होकर पूर्ववासना से मिलकर चित्तके साथ जिन२ इन्द्रीको स्मरण करताहै वह इन्द्री बीजरूप कर्म और अहंकारसे उत्पन्न होती है जब इसकी शब्द में प्रीति होती है तब श्रोत्र इन्द्री उत्पन्न होतीहै इसीप्रकार रूप,रस,गन्ध,स्पर्शमें प्रीति होनेसे चक्षु जिह्वा घ्राण त्वचा यह सब क्रमसे उत्पन्न होतीहैं अर्थात् सबवासनासे उत्पन्न होतीहैं इसीप्रकारप्राण,अपान,व्यान, समान, उदाननाम पांचोंप्रकारकी इंद्रियों से देह का सब व्यापारहोताहै इसप्रकारसे दशोंइंद्रियों समेत पुरुषउत्पन्नहोताहै अर्थात् गर्भमें इन्द्रियों के अंगीकार करने से दुःखकोपाताहै और देहके अभिमान से उसदुःखकी अधिकवृद्धि होतीहै इसीप्रकार देहत्यागनेमें कष्टको भी पाताहै इन हेतुओं से दुःखोंका त्यागही योग्यहै क्योंकि उन दुःखों का रोकनेवाला मुक्ति कोपाताहै इन्द्रियोंकी उत्पत्ति नाश दोनों रजोगुण में हैं ज्ञानी इसको विचार कर बुद्धिके अनुसार शास्त्र रूप नेत्रोंसे कामकरे तात्पर्ययह है कि रजोगुण रूप प्रवृत्तीके रोकने और इन्द्रियजित् होनेसे दुःखकी रुकावट होती है, ज्ञानेन्द्रियां विषयों को पाकर भी निर्लोभी पुरुष को व्याप्त नहीं करती हैं और उन इंद्रियोंसे पृथक् वह जीवात्मा फिर देहोंके प्राप्तहोनेको योग्य नहीं होता २१॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेचत्वारिंशोऽध्यायः ४० ॥

इकतालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजा मैं इस स्थानपर शास्त्र रूप नेत्रों से उपाय को कहताहूं तुम इसी विज्ञान से कर्मको करना अर्थात् शम दम आदि गुणों से कर्म करने में मोक्षरूप गतिको पाताहै, सबजीवों में पुरुष उत्तम गिना जाता है, पुरुषों में ब्राह्मण श्रेष्ठ है और ब्राह्मणोंमेंभी मन्त्रज्ञ ब्राह्मण उत्तम होते हैं वह ब्राह्मण सब जीवों के आत्मारूप सर्वज्ञसर्वद्रष्टा वेदज्ञ और शास्त्र के तत्त्वार्थ निश्चयकरनेवाले हैं, जैसे कि अन्धा अकेला मनुष्य मार्ग में दुःखों को पाता है उसी प्रकार अज्ञानी लोग भी इस संसार में हैं इस कारण ज्ञानी पुरुष सबसे अधिकहैं—इसप्रकारसे उपाय जाननेवालोंकी प्रशंसा करके उन के गुणोंकोकहतेहैं—अर्थात् धर्मकी इच्छाकरने वाले शास्त्र के अनुसार उन उन धर्म्मोंका सेवन करते हैं जिनका कि मोक्ष में कोई भेद नहींहै वह आगे लिखेहुये गुणोंको करते हैं वह धर्म्मज्ञ सब धर्म्मों में इन शुभ गुणोंको जतलाते हैं देह वाणी चित्त इत्यादिकी पवित्रता, क्षमा, सत्यता, धैर्य्यता, स्मरण यह

जो ब्रह्मचर्य कहा वह ब्रह्मरूपहै वह सब धर्म्मोंसे उत्तमहै उसीसे मोक्षको पाते हैं जोकि पंचप्राणचित्त बुद्धि दश इन्द्रियोंको समूहके योगसे और शब्द स्पर्श से पृथक्है और कानसे सुनना आंख से देखना, बचन से कहना जिसमें जारी हुआ वह ब्रह्मचारी चित्तसे दृढ़ रहनेवाला विषयेन्द्रियों से रहित है अर्थात् वह शब्द से कहने योग्य विकल्प अवस्था है और जिस दोष से रहित ब्रह्मचर्य को बुद्धिसे निश्चय करताहै वह मूर्द्धा से उत्पन्न होनेवाली बुद्धिसे निश्चय किया हुआ सन्देह रहित परोक्ष ज्ञानहै, ब्रह्मचर्याओं के फलको परम्परा पूर्वक कहतेहैं, पूर्णबृत्तीवाला उस मोक्षको पाताहै जिसका लोकब्रह्महै और बीचवाला सत्यलोकको पाताहै और छोटीबृत्ती में बर्त्तमान ज्ञानी ब्राह्मणका जन्म लेताहै और ब्रह्मचर्य बड़ी कठिनतासे प्राप्तहोताहै उसके उपाय को मैं कहताहूं ब्राह्मणकुल में उत्पन्न होनेवाले बृद्धि पानेवाले रजोगुण को अपने में से पृथक्करे, स्त्रियों की कथाको न सुने, न कभी उनको नंगा देखे, इस निमित्त कि उनके दर्शनों से निर्बल मनुष्यों में कभी रजोगुण प्रवृत्त होजाता है, जिसके देहमें प्रीति उत्पन्न होजाय वह कृच्छ्रब्रतको करे, और बीर्य की बृद्धिसे अत्यन्त पीड़ित होने में जलमें प्रवेशकरे, जब स्वप्न में बीर्यपतन होजाय तब जल में बर्त्तमान होकर अघमर्षण नाम ऋचाको तीनबार जप करे, ज्ञानी मनुष्य ज्ञानसे संयुक्त उदार चित्तता के द्वारा इसप्रकार देह के अभ्यन्तर्गत रजोगुण रूपी पापको अत्यन्त नष्ट न करे, जिसप्रकार देह में बर्त्तमान मल पवित्र बस्तुओं से मिला निच्छिद्र जकड़ा हुआहै उसीप्रकार देह में नियत आत्मा और देहको दृढ़ बन्धनवाला जाने, नाड़ियोंके जालों से जैसे रस मनुष्यों के बात, पित्त, कफ, रुधिर, चर्म्म, मांस, अस्थि शिराओं को और देहों को तृप्त करता है, इस देह में पांच इन्द्रियों के गुणको बहानेवाली दश नाड़ियों को समझो जिन से हजारों एक से एक नाड़ी उत्पन्न होती हैं इसप्रकार यह नाड़ीरूप नदियां जिनमें रजोगुण रूपी जल भरा है नियत समयतक देहरूपी समुद्रको तृप्त करती हैं जैसे कि समुद्र को नदियां भरती हैं इस देह में चित्त के बीच एक नाड़ी मनोवाह नामहै जो कि मनुष्यों के संकल्प से पैदा होनेवाले बीर्य को सब अंगों से छोड़ती है उसके पीछे चलनेवाली नाड़ियां सब अंगों को तपानेवाली हैं, वह तैजसगुणको बहातीहुई नेत्रोंमें प्राप्तहोतीहैं जैसे कि दूधमेंगुप्त घृत मथन दण्डों से मथाजाताहै उसीप्रकार देहके संकल्पसे पैदाहोनेवाले मथन दण्डों से बीर्य भी मथाजाताहै इसीप्रकार स्वप्न में भी चित्त के संकल्प से उत्पन्न होने वाली प्रीति रूपास्त्री जिसप्रकार प्राप्तहोतीहै उसीप्रकार इसकी मनोवाह नाड़ी संकल्प से पैदाहोनेवाले बीर्य्य को देहसे प्रकट करतीहै इसबीर्यकी उत्पत्तिको

भगवान् अत्रि महर्षीने जानाहै जिसकी कि तीनस्थानोंमें उत्पत्तिहै अन्नरस, मनोवाह,नाड़ी और संकल्प और इन्द्र इसकादेवताहै इसहेतुसे वहइन्द्रही कहा जाताहै निश्चय करके जिनपुरुषोंने वीर्यकी गति को जो कि जीवोंको वर्ण संकर करने वालीहै विचारकियाहै वह प्रीतिरहित और वासनासे रहित देहकी उत्पत्ति को नहीं पातेहैं, जो कि चित्तके द्वारा योगवलसे निर्व्विकल्प भावको पाकर मनोवाहमें अन्त समयमें प्राणोंको चलायमान करताहुआ मुक्तहोताहै, वह केवल देहके निर्वाहके निमित्त कर्म्म करनेवालाहै, नाश और देहसम्बन्ध के लिये कर्म्म औरमुक्ती देनेवाले योगमार्ग को कहकर जीवन शक्ति उत्पन्न करनेवाले ज्ञानमार्गको कहते हैं अर्थात् चित्तसेही ज्ञान होता है चित्तही उत्पत्ति रूप होता है क्योंकि ब्रह्मज्ञानियोंका चित्त प्रणवकी उपासनासे सिद्ध अनादि मायाकेरूप वासनासे पृथक् प्रकाशित होजाताहै इसकारण इसलोकमें उसचित्तके नाशकेलिये निवृत्तिरूपकर्मकोकरे औररजोगुण तमोगुणको त्याग कर जैसे बने तैसे मोक्षको प्राप्तकरे, जिसको युवावस्था में ज्ञानप्राप्तहो और वृद्धावस्थामें न्यून न होगयाहो उसचित्तके वेगको अर्थात् संकल्पको वह पुरुष विरक्त बुद्धिसे स्वाधीन करताहै, अत्यन्त कठिन और अगम्य मार्गको जिसमें देह इन्द्री आदि गुणवन्धनहैं उनको निवटाकर जैसे दोषोंको देखे उसीप्रकार उनसे पृथक् होकर मोक्षको पाताहै २६ ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणि मोक्षधर्मे एकचत्वारिंशोऽध्यायः ४१ ॥

बयालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि परिणाममें दुःखदायी स्पर्शादि इन्द्रियों के विषय में प्रवृत्त चित्त जीव पीड़ाको पाते हैं, और जो महात्मा उनमें प्रसक्त चित्त नहीं हैं वह मोक्ष को पाते हैं बुद्धिमान् लोग इस संसारको जन्म, मृत्यु, जरा, रोग दुःख और चित्त के क्लेशों से व्याप्त देखकर मोक्ष के निमित्त उपायकरे, मन वाणी और देह से पवित्र अहंकार रहित शान्तरूप ज्ञानी और संन्यासी होजाय और अनिच्छावान् होकर सुखपूर्व्वक घूमे अथवा जीवों की करुणा से चित्तके बन्धन को देखे वहां भी संसारको कर्म्म रूप फल जानके त्यागकरे, जो शुभ अशुभ कर्म्म किया है उसको भोगता है इसकारण बुद्धि मन वाणी और देहसे शुभकर्म्मोंको करे वह शुभ कर्म्म यह हैं कि अहिंसा, सत्यता, सब जीवों में सत्यभाव, क्षमा, दीनदयालुता, जिसमें यह गुण होते हैं वह सुखको पाता है—इसी हेतु से ब्रह्मज्ञान के द्वारा सब जीवों में स्थिर चित्तता को धारण करे जो पुरुष सबजीवों के सुखदायी इस उत्तम धर्म्म को दुःखसे पृथक् होनेका कारण रूप जानता है वह सर्वज्ञ सुखी होता है इस हेतुसे ब्रह्मज्ञान के द्वारा

स्थिर चित्तको जीवों में धारणाकरे दूसरे की बुराई कभी नहीं विचारे और जो राज्य आदि वस्तु अपने योग्य नहीं हैं उनकी इच्छा न करे और नाशवान् स्त्री पुत्रादि का शोच न करे सकल उपायों से चित्त को ज्ञान के साधन में प्रवृत्त करे और वह मनोहर ज्ञान सकल प्रयोगवाले वेदान्त वाक्यों से प्राप्त होता है शुभ बचन कहने के इच्छावान् और सूक्ष्म धर्म्म को देखनेवाले पुरुष की ओर से ऐसाकर्म्म करना चाहिये कि वह सत्य युक्त और परनिन्दा रहित अन्यके सुखदायी बचनको सदैव कहे, सावधान चित्त पुरुषको ऐसा बचन बोलनाचाहिये जो शठतासेरहित कठिनतासे पृथक् दयायुक्त क्रूरता रहित संक्षिप्तहो,संसार देहसे बँधाहुआहै जो अप्रीतितासे वार्त्ताकरे तब बुद्धियुक्त चित्तकेसहित तामसकर्म्म अर्थात् हिंसा आदिको कहदे–आशय यहहै कि जो पुण्य पापहैं वह अपने मुखसे कहने पर नाश होजातेहैं, जो पुरुष रजोगुण में प्रवृत्त इन्द्रियोंके विषयादि कर्म्मोंमें प्रवृत्त होताहै वह इसलोक में दुःखोंको पाकर नरकगामी होताहै इस हेतु से अपने मनबाणी देहसे अपने धैर्य्यता को प्राप्तकरे अब कर्म्मके त्यागको दृष्टांत समेत दो श्लोकों में कहते हैं, कि जैसे मांसके बोझको लेचलनेवाले चोर जिसओरको जातेहैं उस दिशाको राज्य भयसे शत्रु जानके उसमांसको त्यागकर कल्याण दिशाकोजाते हैं और जैसे वह पकड़ेनहीं जाते उसीप्रकार अज्ञानी पुरुष अविद्या से सम्बन्ध रखनेवाले कर्मों को साथलेकर काम आदि के सन्मुख चलनेवाले संसारी भयको जानकर और उन रजोगुणी तमोगुणी कर्मोंको त्यागकरके फिर मोक्ष को पाते हैं निस्सन्देह जो पुरुष चेष्टासेरहित सब स्त्रीपुत्रादि परिग्रहसे रहित एकान्तवासी, अल्पाहारी, तपस्वी, सावधान इन्द्री, ज्ञानसेनष्ट क्लेशवाला योगांगोंके अनुष्ठानमें प्रवृत्त होने वाला बुद्धिमान्है वह शान्तचित्तके द्वारा परमगति मोक्षको पाताहै, जोपुरुष धैर्यमान् और बुद्धिमानहै वह बुद्धिको स्वाधीनकरे और उस बुद्धिसे संकल्प बिकल्पात्मक चित्तको स्वाधीन करे और उस चित्तके द्वारा बिषयोंको रोंके–अब योगके आवान्तर फलको कहतेहैं–इन्द्रियों को आधीन करके चित्तकोस्वाधीन करनेवाले योगीके देवता बड़ीप्रसन्नतासे प्रकाशमान होकर उसी योगीमेंलयहोजातेहैं जिसका चित्त उनदेवताओंसे तदाकाररहोताहै उसीका ब्रह्म अच्छे प्रकारसे प्रकाश करताहै और बुद्धि में इन्हीं के लयहोने पर ब्रह्मभाव के लिये कल्पना किया जाता है या योगी ऐश्वर्य के प्रकट करने से प्रत्यक्ष न होजाय तब योगतन्त्र से अनुष्ठान का प्रारम्भ करे तंत्रोक्त योगका अनुष्ठान करता हुआ जिसरूप से उत्तम बृत्तीहोवे उसीको काम में लावे और गोधूमचूर्ण अर्थात् गेहूं का आटा, कौमारी, खल, शाक, यवका सत्तू मूल फल इत्यादि जो भक्षण के योग्य हैं उनको बहुधा भोजन करे परन्तु

योग को प्रकट न करे देशकाल के अनुसार भोजनके उस सात्त्विकी नियम की परीक्षा करके उसकी प्रवृत्ति के समान कर्म करे जो कर्म जारी होजाय उसके रोकने से योगमें विघ्न न डाले इसीप्रकार धीरे२ज्ञानयुक्त कर्मकोअग्नि के समान वृद्धिकरे इस रीतिसे ज्ञान स्वरूप ब्रह्म सूर्य के समान अच्छेप्रकार से प्रकाश करताहै, आत्मासे अभिन्न ज्ञान के प्रकाशसे खालीहोना नहीं हो सक्ता है फिर वह क्यों नहीं प्रकाश करताहै यह शंकाकरके कहते हैं कि ज्ञान का अधिष्ठान अज्ञान तीनों लोकों में वर्त्तमान होताहै इसी हेतुसे बुद्धि का अनुगामी ज्ञान अज्ञानसे गुप्त कियाजाता है इस से निश्चय हुआ कि जिस के अंगहैं वह अंगोंसेही प्रकाशकरताहै और जो अंग रहितहै वह प्रकाशनहीं करता इसी हेतुसे इस अज्ञानका प्रकाश न करताही प्रकाशकरना चाहिये इस शंकाको कहते हैं तीनों दशाओंसे पृथक् उपाधिसे रहित आत्माको दशाओं में मिलाहुआ मानसे दोषलगता हुआ भी उसको नहीं जानताहै उनके पृथक् भाव और पृथक्भावके सिद्धांतका जाननेवाला संसारी प्रीति से रहित पुरुष मुक्तिको पाताहै कालका विजयकरनेवाला ज्ञानी जरामृत्युको जीतकर उस अविनाशी ब्रह्मको पाताहै जिसमें कि कभीनाश और न्यूनता नहींहोती२७॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ४२ ॥

तैंतालीसवां अध्याय ॥

पिछले अध्यायों में वर्णन कियागया कि योग और ऐश्वर्य्यको अनुभव करके वा न करके ब्रह्ममें लय होता है अब अनुभव ऐश्वर्य्य की निन्दाकरते हैं—भीष्मजी बोले कि सदैव शुद्ध ब्रह्मचर्य के करने में इच्छायुक्त और स्वप्न के दोषों को देखनेवाले पुरुषको निन्दा करनी कभी न चाहिये, यह जीवात्मा स्वप्न में रजोगुण तमोगुणसे संयुक्त होता है और दूसरे देह में प्रवेश हुआसा इच्छा रहित घूमता फिरताहै उसस्वप्नकी ओषधि जागरण को कहते हैं, ज्ञान के अभ्यास से जागरण होता है वह सदैव वारम्बार विज्ञान में प्रवेश करने से विचारके निमित्त जागताहै यहां पूर्व्वपक्ष करनेवाले ने कहाहै कि स्वप्न में दृष्ट आनेवाला देह आदि पदार्थ क्या है सत्य है या मिथ्या है वह विषयवान् के समान दिखाई देता है जैसे कि आकाश में वर्त्तमानसूर्य जल में वर्त्तमानसा दिखाई देता है इसी प्रकार जाग्रत् अवस्थावाले देह आदिभी स्वप्नदशा में दूसरे प्रकार से दृष्टआते हैं इतनी ही बातसे स्वप्नकी निर्विषयता नहीं इसको शंकाकरके कहते हैं कि इन्द्रियों के लयहोजानेपर जीवात्मा देहवान्के समान वर्त्तमान होताहै, इसस्थानमें यहकहाजाताहै कि जैसा यह है उसको योगेश्वर हरि जानते हैं इसीप्रकार इसयुक्ति से संयुक्तअर्थको महर्षि

लोग भी वर्णन करते हैं अर्थात् जैसे कि वेदमें लिखाहै कि इसयोगीके संकल्प से पितृ आदि प्रत्यक्षहोते हैं इसीप्रकार हमारे संकल्प से आकाशादि के जीव इत्यादि हैं और स्वप्नदशा भी संकल्पमात्रहै, ज्ञानियोंने सब जीवोंमें प्रसिद्ध स्वप्नको इन्द्रियों के परिश्रमसे जो कि जाग्रत अवस्था में होताहै उस को कहा है और चित्त के लय न होनेसे उस स्वप्नदशा में आगे लिखेहुए श्लोकों के दृष्टान्तको कहाहै निश्चय करके कार्य में चित्त लगानेवाले का संकल्प जाग्रत अवस्थामें भी होताहै और जैसा मनोरथका ऐश्वर्यहै उसीप्रकार स्वप्नावस्था में भी वह संकल्प चित्तमें वर्त्तमान होताहै अनेक जन्मों के संस्कार से विषय में चित्त लगानेवाला पुरुष स्वप्न आदिकी दशा के ऐश्वर्य को पाता है वह उत्तम पुरुष साक्षी आत्मा चित्तके सब गुप्त वृत्तान्तों को जानताहै अर्थात् प्रकाश करताहै, बुद्धि आदि के भीतर पिछले कर्म से जो २ सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण वर्त्तमान होताहै और चित्त जिस कर्म में प्रवृत्त होताहै तब सूक्ष्म तत्त्व उस २ को उसके सन्मुख प्रकट करतेहैं उस रूप दर्शन के पीछे निस्सन्देह जैसे सुख आदिका उदयहोय उसीप्रकार राजसी तामसी सात्त्विकी गुण भी समयके अनुसार उसके सन्मुख वर्त्तमान होतेहैं तदनन्तर अज्ञानसे उन बात पित्त कफ से सम्बन्ध रखनेवाले देहों को राजसी, तामसी भावोंसे देखतेहैं उसको भी कठिनता से पारहोनेके योग्य कहा, प्रसन्नेन्द्रियों से जब मानसी संकल्पोंको करताहै तो चित्त स्वप्न के वर्त्तमान होनेपर प्रसन्न होताहुआ उस उस वस्तुको देखताहै, वह व्यापक अरुद्ध चित्त सब जीवों में वर्त्तमानहै उसको आत्माके प्रभाव से जाने क्योंकि सब देवता आत्मा में हैं आशय यह है कि आत्मज्ञानसे सर्वज्ञ होजाताहै इसप्रकार स्वप्नदशाको कह कर सुषुप्तिदशाको डेढ़ श्लोकमें कहतेहैं—स्वप्न देखनेमें जो २ स्थूल देहरूपी द्वार हैं वह चित्त में गुप्तहै उस देहमें नियत होकर सोताहै और उस अहंकार में अपने उस आत्माको भी पाताहै जो कि अव्यक्त, सत्य, असत्यरूपवाली सबल माया में साक्षीरूप और सब जीवों का आत्मारूपहै उस सुषुप्तिदशा में आत्माको अहंकार आदि गुणोंसे स्पर्श करनेवाला जानो अर्थात् सुषुप्ति में शुद्ध साक्षी के मध्यमें अहंकार आदि लय होजातेहैं क्योंकि वह सब उस आत्मा के प्रतिबिम्बहैं, अब सम्परज्ञात नाम दशाको कहतेहैं, जो पुरुष चित्त के संकल्पसे ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य को चाहे उसको चित्तशुद्धी जाने, क्योंकि सब देवता आत्मा में हैं तात्पर्य यह है कि शुद्ध चित्तही ईश्वर है इसप्रकार विषय आदि के विचार से संयुक्त चित्त इसप्रकार का होताहै, और ज्ञानसे उत्तम ब्रह्मको पानेवाला चित्त सूर्य के समान प्रकाशित अर्थात् ज्ञानरूप होता है इस स्थान पर जीवात्मा के दोप्रकारके ब्रह्मभावको कहतेहैं जीवात्मा तीनों

लोकों का उत्पत्ति स्थान अर्थात् सगुण ब्रह्म है और अज्ञान के अन्त में महेश्वर अर्थात् शुद्धब्रह्महै देवताओंने तप आदि के करनेमें निवास किया और असुरों ने तपके नाश करनेवाले अहंकार और कपट आदि में प्रवृत्ती करी अर्थात् रजोगुणी तमोगुणी देवता और असुरोंसे वह ब्रह्म प्राप्त नहींहोसक्ता इस ब्रह्मको देवता असुरों से गुप्त करके ज्ञान स्वरूप वर्णन किया है, सत्त्व, रज, तम यह तीनों देवता और असुरों के गुणहैं परन्तु इनमें केवल तत्त्व गुण तो देवताओं काहै और शेष रजोगुण तमोगुण असुरों के हैं, वह ब्रह्म गुणों से परे ज्ञानस्वरूप स्वयं प्रकाशवान और व्यापकहै जिन शुद्ध चित्त ज्ञानियों ने ध्यान आदि से उसको जानाहै वही ज्ञानी परमगतिको पातेहैं, ज्ञान चक्षु से युक्तिके द्वारा केवल इतनाही कहना सम्भव होसक्ताहै अथवा उस अविनाशी को प्रत्याहार से अर्थात् विषयों को इन्द्रियों से खींचने के द्वाराजान सक्ता है २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ४३॥

चवालीसवां अध्याय ॥

अब सावधान से ब्रह्मकी प्राप्तीको कहते हैं, भीष्मजी बोले कि वहपुरुष परब्रह्म को नहींजानताहै जो स्वप्नावस्था सुषुप्त्यवस्था सगुण, निर्गुणब्रह्म इन चारोंको नहींजानता, व्यक्त अव्यक्त अर्थात् जगत् और चिदात्मा और जो तत्त्वहै उसको श्रीनारायणजीने अच्छे प्रकारसे वर्णन कियाहै कि व्यक्तसंसार को तोमृत्युका मुखजाने और अव्यक्त ब्रह्मको अविनाशी यहनारायण ऋषि ने प्रवृत्ति लक्षणवाला धर्म्म कहा, उसी कर्म्मफल में जड़ चैतन्ययुक्त तीनों लोक वर्त्तमान हैं और निवृत्ति लक्षणवाला धर्म्म ब्रह्महीं है वहप्रत्यक्ष और प्राचीन है, रजोगुणरूप ब्रह्माजी ने प्रवृत्ति लक्षणवाले धर्म्मको कहाहै, प्रवृत्ति धर्म्म संसार में फिर लौटाकर लानेवाला है और निवृत्ति धर्म्म मोक्षरूप है, सदैव चैतन्य आत्मतत्त्वका विचार करनेवाला और संसार से मुक्तिहोनेके मूल के देखनेकी इच्छा रखनेवाला निवृत्ति धर्म्ममें पूर्णमुनि उस ब्रह्मगतिको पाता है वहां तीनोंका विचारकरके आगेकी लिखीहुई युक्तिकोजाने अर्थात् अव्यक्त जो प्रधानमाया और क्षेत्रज्ञ पुरुष यह दोनों जाननेके योग्यहैं और जो इन माया और पुरुषसे दूसराहै उसकोभी जाने वह बड़ा परमात्मा है, दुःखादि से रहित उसपरमात्माको ज्ञानीपुरुष लक्षणोंके द्वारा साक्षात्कारकरे क्योंकि वह प्रधान और क्षेत्रज्ञ दोनों आदि अंतसे रहित विनारूप के हैं और प्राचीनता चेष्टारहित वृद्धसेभी वृद्धहैं दोनों के यहगुण एकसे हैं इसीप्रकार गुणोंसे रहित भी है, उत्पत्ति धर्म्मयुक्त और उसी त्रिगुणात्मिका माया से विपरीति क्षेत्रज्ञ के

मुख्य लक्षणको जाने वह प्रकृतिके विकारका देखनेवाला किन्तु आप दृष्ट न आनेवाला विषय और सब गुणों से पृथक् है, प्रधान और क्षेत्रज्ञ की एकतात्रा विपरीत गुणोंको कहकर जीव ईश्वरके एकसे गुणोंको कहते हैं-यहदोनों चेष्टा रहित होनेसे पकड़ने में नहीं आते क्योंकि पुरुष और निराकार में निश्चय करके उन रूपरहित जीव ईश्वरका विभाग किसरीति से है यह शंकाकरके उनका विभाग उपाधि सम्बन्धीहै स्वाभाविक नहीं है इसप्रयोजन से कहते हैं कि दृष्टिकी समानता और स्वीकारता जतलानेवाला और प्रत्यक्षका कारण है वही करता है उसीसे शास्त्रोक्त और लौकिक कर्म्मों की सिद्धी है वहकरता जैसे जैसे इन्द्रियों और साधनोंसे जो जो कर्म्म करताहै उसी उसीप्रकार उस योनि देनेवाले कर्म्म के साथ जानाजाता है इसप्रकार व्यवहार द्वारा करता तीसरा है वास्तव में नहीं है इसको दृष्टांत सहित वर्णन करते हैं, को हम इस शब्द से कहाजाताहै कि मैं कौनहूं जैसे कि अपनेको कुन्तीका पुत्र न जान कर कर्ण ने कहा कि कुन्तीका पुत्रकौन है तब सूर्य्य देवता से अपनेको निश्चय कुन्तीका पुत्रजान के कहा कि मैं कुन्ती का पुत्रहूं इसीप्रकार अज्ञानी पूंछता है कि ब्रह्मकौनहै और ज्ञानी जानताहै कि मैं ब्रह्महूं इसप्रकारसे एकही बस्तु में ज्ञान और अज्ञानके भेदसे दोबातें भेद खुलनेवाली उत्पन्न होती हैं, इसीप्रकार दृष्ट आनेवाली बस्तु में भी यहहै वह है यह दोनों गुणपाये जाते हैं ऐसेही जीव ईश्वर में जानो, जैसे कि दिस्तारबन्द मनुष्य तीनवस्त्रों से संयुक्त होता है उसी प्रकार यह आत्मा बस्त्रों के समान ढकनेवाले स्थूल सूक्ष्मकारण रूप देहों से गुप्त होता है और सतोगुण रजोगुण तमोगुण से ढकाहुआहै तात्पर्य्य यह है कि जैसे कि दिस्तारबन्द तीनों वस्त्रों से पृथक् है उसीप्रकार जीवात्मा तीनों देह और तीनों गुणों से पृथक् है इसकारण चारों प्रधान पुरुष के गुण हैं, इनचारोंको जानकर जोकरने के योग्य है उसको कहते हैं-हृदय आकाश में ब्रह्मगें प्रकट होनेवाली लक्ष्मीको चाहनेवाला और चित्त से पवित्र देहधारी पुरुष देह और इन्द्रियोंके उग्रनियमों से अनिच्छावान् होकर तपकरे, उस चैतन्य के प्रकाश से संयुक्त आंतरीय तप से तीनोंलोक व्याप्त हैं आकाश में सूर्य्य और चन्द्रमा तपसेही प्रकाश करते हैं क्योंकि वेद में वाह्य आकाश और हृदयाकाश दोनों समान हैं इसी कारण से योगियों का साक्षात्कार सिद्ध होताहै, तपका फल ज्ञान है स्वरूप ब्रह्महै वह तपलोक में प्रसिद्ध है तपका जो कर्म्म उन रजोगुण तमोगुणका नाश करनेवाला है अर्थात् वैराग्यके साथ वेदांत श्रवण नामहै वह असावधानरूपहै, अब मुख्य तपको कहतेहैं ब्रह्मचर्य और हिंसारहित होना देहका तप कहाजाता है, मन वाणी को अच्छे प्रकारसे आधीन करना चित्तका तप कहाजाताहै, जो अन्य

बुद्धी जाननेवाले ब्राह्मणोंसे अंगीकृतहै वह उत्तमहै क्योंकि आहारके नियम से इसका रजोगुणी पाप नाश होताहै और इसकी इंद्रियां विषयों से वैराग्य को पाती हैं इसकारण से उतनीही लेनाचाहिये जितनी कि उसको आवश्य कताहो अर्थात् भोजन से अधिक धनआदि को न लेवे इस बुद्धिके न होने पर मोक्षमें जो सुगमरीति है उसको कहते हैं अन्तके समयपर पूर्ण उपाय से उस ज्ञानको प्राप्तकरे जो ज्ञान कि योग से संयुक्त चित्तके साथ धीरेधीरे प्राप्त होताहै वह सुगमरीति यहहै कि अन्तसमयपर काशी सेवनकरे क्योंकि काशी के बीच देहत्यागकरने में रुद्रजी के मुखसे तारक मन्त्रका उपदेश होनेके द्वारा मुक्ती होती है इससे अंतसमयपर ईश्वरके उपदेश से ज्ञानको प्राप्त करे, रजोगुण से पृथक् यह जीवात्मा समाधिमें स्थूल शरीर का त्यागकरनेवाला भी देहधारी होकर विचरे जोकि कार्योंसे अबद्ध बुद्धिहै, वैराग्यसे उत्तमभोगों में अनिच्छावान् वह जीवात्मा प्रकृति में लयहोताहै अर्थात् प्रकृति से सर्वोपरि पुरुषको नहीं पाताहै त्यागकरने तक देह से सावधान रहने और तीनों देहोंके नाश होने से शीघ्रही मुक्तिको पाताहै जीवात्मा पूर्वोक्तकर्म्म मुक्तीको पातेहैं इसका वर्णन करते हैं, सदैव जीवों की उत्पत्ति उसीप्रकार अज्ञान के नाशको मूल रखनेवाली है अर्थात् देहके अभिमान से जुदे होनेवाले जीवों का अज्ञान और कर्मनाश न होनेसे सदैव जन्म मरण होता रहता है और शुद्ध ब्रह्मका साक्षात्कार उदय होनेपर धर्म और अधर्म वर्त्तमान नहीं होते हैं अर्थात् पूर्ण सिद्धीवाले के पिछले पापों का नाश और आगे के कर्मों का स्पर्श न होना प्राप्त होताहै इसीकारण से उत्पत्ति कारणके बिना मुक्तिहोती है, और शुद्धब्रह्मका साक्षात्कार न होनेपर संसारी अनर्थों से मिलता है इस को कहते हैं जो पुरुष ज्ञानकी बिपरीतता में वर्त्तमान है अर्थात् अनात्मा में आत्मबुद्धि करके वर्त्तमान है वहमहत्तत्त्वादि की उत्पत्ति नाश में बुद्धि रखने वाले हैं अर्थात् विपरीत बुद्धिवाले पुरुषोंमें मोक्ष कथाभी नहीं होती दृढ़आसनहोकर देहको धारणकरनेवाले और बुद्धिके द्वारा चित्तके बिषयोंको रोकने वाले इन्द्रियों के गोलक नेत्रआदि से पृथक् अन्नमयादिकों को वा त्यागकरनेवाले योगी उन प्राण इंद्री आदि को उपासना करते हैं अर्थात् आत्मारूप विचारतेहैं, यह सब ब्रह्मलोकमें नियतहोतेहैं इसकारण श्रेष्ठ ब्रह्मको पाकर उस में आपही बुद्धिसे शास्त्रके अनुसार जानताहै कोई शुद्ध अंतःकरण योगी उन तीनोंदेहोंसे पृथक् अपनी महत्त्वता में नियतशुद्धब्रह्मको उपासना करता है, कोई पुरुष श्रीकृष्णआदि रूप से संयुक्त आत्माको स्वामी सेवकभाव से उपासना को करतेहैं, कोई सबल अविद्याकी उपासनाकरते हैं और कोई सबल से उत्तम निर्गुण ब्रह्मकी उपासना करतेहैं अर्थात् लगातार अनुभव को सिद्ध

करतेहैं वह ब्रह्म बिजली के समान एकवार प्रकाश करनेवाला रूपांतर दशा से रहितहै, यह पांचों उपासनावाले अपने पापोंको तपसे भस्मकरके अंतकालमें शीघ्र वा क्रमसे परमगतिको प्राप्त होतेहैं शास्त्ररूप नेत्रों से उनभेद और उपासनावालों की सूक्ष्म द्वैतताको विचारकरे और स्थूल देह से प्रीति रहित संन्यासी को तीनों देहोंसे पृथक् ब्रह्मरूप मोक्षको पाते इसप्रकार जाने अथवा उस योगीको हृदय आकाश से श्रेष्ठतर ईश और सूत्रात्माजाने, वेदोक्त उपासनामें चित्तलगानेवाले नाशवान् लोकसे छूटजाते हैं वह रजोगुणरूप बृह्मसे पृथक् हैं इसकारण वेदजाननेवाले मनुष्योंने उसधर्मको कहाहै जिसमेंबृह्मही प्राप्तिस्थानहै, जैसे ज्ञानकी उपासना करनेवाले वह सब पुरुष मोक्षकोपाते हैं जिनका कि ज्ञान रागादि से रहित होकर अचल उत्पन्न होता है उसीप्रकार वह लोग भी उत्तम लोकोंको पाते हैं और वैराग्य के द्वारा मोक्षको पाते हैं और जो शुद्ध ज्ञान से तृप्त इच्छासे रहित हैं वह भक्तिके द्वारा उस सर्वैश्वर्य्यवान् अजन्मा सर्बव्यापी हृदयाकाश में वर्तमान अव्यक्तरूप को पाते हैं, और जीवन्मुक्त पंचकोशों में वर्तमान आत्मामें नियत हरिको जानकर फिर लौटकर संसार में नहीं आते किंतु उस अविनाशी उत्तम स्थान को पाकर आनन्द भोगते हैं, यह संसार है भी और नहीं भी है अर्थात् सर्प और रस्सी के समान होना न होना जानकर वाणी से कहने योग्य नहीं है आशय यह है कि मिथ्यारूप लोभ में भराहुआ सब जगत् चक्र के समान घूमताहै जैसे कमल का मृड़ाल सब प्रकारसे मृड़ाल में अन्तर्गत है उसी प्रकार लोभ सब देहों में सब रूपों से वर्त्तमान है जैसे कि सुई से सूत्रके द्वारा वस्त्र बांधाजाता है उसी प्रकार संसार संबंधी लोभ रूपी सुई के सूत्रसे देह बांधाजाताहै, लोभ त्यागने का उपाय यहहै कि जो पुरुष प्रकृति और प्रकृति के रूपांतर तत्त्वों को और सनातन पुरुषको यथार्थ जानता है वह लोभ से पृथक् होकर मुक्त होता है,इस मोक्ष साधन को जीवों की रक्षा के निमित्त संसार के उत्पत्ति स्थान भगवान् नारायण ऋषि ने स्पष्टतासे कहा है ३९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ४४ ॥

पैंतालीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह मिथिलापुरी के राजा जनक ने कौन से व्रतको करके संसार के विषय भोगों को त्यागकर मोक्षको पाया भीष्मजी बोले कि इस स्थान पर व्रत संयुक्त एक प्राचीन इतिहासको कहता हूं जिस व्रतको जानकर राजा जनक ने मोक्षको पाया, एक जनकवंशी जनदेवनाम मिथिलापुरी का राजा था वह ब्रह्म प्राप्ति करनेवाले धर्म्मों के विचारमें प्रवृत्त

था उसके स्थान में नानाप्रकार के शौचाचारी आश्रमी लोग उपासना के धर्म्मों को पृथक् २ दिखाते हुये इकट्ठेहुये उनमें कोई तो देहके नाश से अपना नाश कहते थे और कोई देहके नाशकोही नहीं मानते थे उन दोनों के वर्णनसे राजा प्रसन्ननहीं होताथा क्योंकि वह सिद्धी में वर्त्तमान आत्मतत्त्व का माननेवाला था वहां एक पंचशिखनाम महामुनि आये उनसे राजा जनक ने संसारकी मोक्षका वृत्तांत पूछा अर्थात् राजाने पूछा कि हेमहामुनि जैसे सुषुप्ति दशाकी मूर्च्छा में पूर्व स्मरण नहीं रहता उसी प्रकार मोक्षमें भी पूर्व स्मृति नहीं रहती है और सुषुप्ति अवस्था अज्ञानसे होती है और ज्ञान से मोक्ष अवस्था होती है यह बात बड़े २ महात्मालोग वर्णन करते हैं तो ज्ञान और अज्ञानमें क्या न्यूनाधिकता हुई जो ज्ञान अज्ञानमें कोई न्यूनाधिकता नहीं है तो ज्ञान के निमित्त अनेक क्लेशोंका सहना व्यर्थ है भीष्मजी बोले कि जनक के ऐसे वचन सुनकर पंचशिख मुनि ने कहा कि हे राजा मैं ज्ञान और अज्ञानका निर्णय तुझ से कहता हूं तू सावधान चित्तहोकरसुन—जब अज्ञान के द्वारा आत्माकेबीच बुद्धि आदि आरोपित कियेजातेहैं तब उसका अभाव होजाता है, और जब ज्ञान से आत्मा को जानता है तब सब अनर्थ मिटजाते हैं उन अनर्थों के मिटजाने से निर्विकार शुद्ध आनन्दमयब्रह्म और श्रेष्ठ बुद्धिका उदय होजाता है तब बुद्धि आदिका अभाव भी नहीं होता है इसहेतुसे ज्ञान के उपाय में क्लेश करना व्यर्थ नहीं है हे राजा अब देहादिक के अनात्मा सिद्ध करने को देहादिक के मूल वृत्तांत को कहता हूं कि देह में यह जो पंचधातु हैं वह तबहींतक एकत्र रहती हैं जबतक कि यह प्राणी जीवता है यह पांचों धातुओंका संघात देहादिकों का मूलहै इनको हे राजा तुम अनात्मा रूप जानो ॥

सो० बुध्यादिक सब जौन तौनहु सर्व अनात्मा।
इनमाहीं क्षिति रौन आत्मभावसो दुखित अति ॥
दो० जानै इन्हें अनात्मा मैं अरु मम यह भाव।
जौन बुद्धिसों कहतहैं रहत न सो नर राव ॥

अब यहां सांख्य शास्त्रका उत्तम विचार कहना योग्यहै उसको सुनो उस विचार को जो तुमकरोगे तो अवश्यही मोक्षधर्म को प्राप्तहोगे, अर्थात् जो पुरुष मोक्षको चाहै वह सबका त्यागकरे क्योंकि जो त्याग रहित मोक्षको चाहता है वह महादुःखों को प्राप्तहोता है, देखो द्रव्य के त्यागने से सबकर्म होजाते हैं और भोगके त्यागने से सबव्रत होजातेहैं और सबसुखोंके त्यागने से सब प्रकारकी तपस्या और योग होजातेहैं सब वस्तुओं के त्यागने से यह सब धर्म होजातेहैं हेराजा जो मनुष्य सर्वत्याग के मार्गको जानतेहैं वह उस

मार्गको चलकर मोक्षको पातेहैं ज्ञानसे इन्द्रियों समेत बुद्धिके ऊपर मनको भी त्यागना योग्य है क्योंकि मनमें कर्मेन्द्री बलयुक्तहोकर चपलता करती हैं इससे बुद्धिके त्यागमें सबका त्यागहोताहै; रूप, रस गन्ध स्पर्शचित्त और श्रवणका शब्द यहसबज्ञानमेंभी होतेहैं इनसबोंका कर्त्ताचित्तहै,आकाशकेआश्रितश्रोत्र और श्रोत्रकेआश्रित शब्दहै जिह्वाकेआश्रितरस औरजलके आश्रितजिह्वाहै इसीप्रकार सबइन्द्रियांभूतोंके आश्रितहैं औरइन्द्रियोंके आश्रित विषयहैं और सब इन्द्रियां मनके आश्रित हैं इसीसे मनही सबका आधाररूप है हे राजा दशों इन्द्रियों के जो ज्ञानकर्म हैं उन सबको मनही जानता है इस्से इन सबका राजा ग्यारहवां मन और बारहवीं बुद्धिहै जो मनकोभी जानती है इन बारहों से ज्ञानीलोग आत्माको पृथक् मानते हैं; हेराजा जाग्रत अवस्था में जो विषय देखा और सुनाहै उसे सूक्ष्म इन्द्रियों के द्वारा स्वप्नावस्थामें गुणोंके साथहोकर जीवात्मा प्रत्यक्षहीके समान अपने समीप देखता है वहां सब इन्द्रियोंका राजा चित्तमतसे युक्तहोकर आत्माको उससेभिन्न कर देताहै इन्द्रियोंसे आत्मा को पृथक् होनेसे सुखरूप नीचतामस नाम उत्पन्न होता है इससे सुषुप्ति और मोक्षमें समान आनन्द मालूम होता है परन्तु सुषुप्तिमें नाशवान् सुख है और मोक्ष में सदैव अविनाशी सुखहै और सुषुप्तिमें अहंकारादिक सबहोते हैं मोक्ष में नहींहोते और हेराजा सब भूतादिकों के समुदाय को क्षेत्र कहते हैं और उससमुदायके आधारको क्षेत्रज्ञकहते हैं, वह क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ दोनों कर्मोंकेप्रभावसे मिलजाते हैं इनमें किसको सत्यऔर किसको असत्य समझे, परन्तु जबतक यह कर्मका प्रभाव है तभीतक यह सब भी हैं परन्तु जब कर्मका अंशभी नहीं रहता तब इनका भी चिह्ननहीं रहता,जैसे कि नदी नदआदि समुद्र में मिलने से अपने नाम और रूपको त्यागदेतेहैं इसीप्रकार यह सबभी ब्रह्ममें लयहोनेसे अपने नाम और रूपोंको खोबैठते हैं, जो मोक्षरूपी बुद्धि को जानते हैं, वह आत्मा को प्राप्तहोते हैं, जैसे कि कमल के पत्तेमें जलस्पर्श नहीं करता उसी प्रकार मोक्षवाले पुरुष में कर्मोंका स्पर्श नहीं होसक्ता जैसे कि सर्पकांचली को डालकर चलाजाता है उसीप्रकार मुक्त मनुष्य दुःखों को त्यागकर चलेजाते हैं इन पंचशिख के वचनों को सुनकर राजा जनक बहुत प्रसन्नहुआ, इसमोक्षके निश्चयको जो कोई पढ़ेगा अथवा सुनेगा वहउपद्रवोंसे रहितहोकर आनन्दोंको पावेगा४८॥

इतिश्री महाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेपंचशिखवाक्यपाखंडखंडननामपंचचत्वारिंशोऽध्यायः४५॥

छियालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोलेकि महर्षि प्रबोधित राजा जनकजीने फिर यह प्रश्नकिया

कि हे भगवन् शरीर त्याग समय में संसार और मोक्षकी क्या अवस्था होती है १ यह संसार ज्ञान और अज्ञान शब्दों से कहने के योग्य नहीं फिर रज्जु सर्पवत् इस अल्प संसार के सुख की प्रत्याशा करनाही निष्फलहै यह शंका करके राजा जनकजी बोले हे द्विजश्रेष्ठ मरण पश्चात् जीवकी क्यासंज्ञा होती है और तब अज्ञान अथवा ज्ञान क्या करते हैं २ हे द्विजोत्तम सब उच्छेद और निष्टहोते हैं इसपर विचारकरो तो सजग और अचेत मनुष्य अज्ञान और ज्ञान भेदमें क्या करेंगे ३ प्राणियोंमें तो अलग होना और अविनाशियों में मिलापहोनाहै फिर यहां कौन पुरुष किस फलके लिये तत्त्व में निश्चय करै और उसकेलिये परिश्रमकरै ४ भीष्मजी बोले कि उसअज्ञान सेठके और भ्रान्तियुक्त दुःखी राजासे शांति वचनद्वारा पंचशिखा कविने यहकहा ५ यहां जन्ममरण कुछ नहीं है–यह चैतन्य इन्द्रियों और शरीर का संयोग कर्म्म प्रधान्यतासे होता है ६ शरीर को अनात्मा कहने के लिये उसकी प्रकृतियों को कहते हैं धातु पांच प्रकारकी हैं जल, आकाश, वायु, अग्नि और पृथ्वी वे स्वभाव से एकत्र स्थित होते हैं और स्वभावसेही भिन्न होजातेहैं ७ आकाश वायु और अग्नि के स्नेह और उन्हीं पांच धातुओं के समाहार से शरीर प्राप्त होताहै ८ शरीरांतर्गत बुद्धि अग्नि और प्राण यह तीनों सब कार्य्य साधक होतेहैं और इन्द्रिय और इन्द्रियोंके मनोरथ और स्वभाव, चेतना, मन, प्राण, अपान और विकार इत्यादि धातु यह सब इन्हीं तीनों से निकले हैं–९ कान छूनेकी इन्द्री जिह्वा, आंख और नाक यह पांचों इन्द्रिय हैं और इनका आदि कारण चित्त है १० वहां विज्ञान करके युक्त चेतनाकी तीन ध्रुवा हैं जिनको सुख दुःख और अदुःख असुख कहते हैं ११ शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध यह पांच सद्गुण मरण पर्य्यन्त ज्ञान सिद्धिके लिये होतेहैं १२ उन गुणों में कर्म्म, संन्यास और मोक्ष का कारण स्थित है उस तत्त्व निश्चयको मोक्षका बीज और श्रेष्ठ मोक्ष देने से अनन्त और ब्रह्ममें ज्ञान उत्पन्न करने से ब्रह्मरूप कहा १३ इस ज्ञान समूहको आत्मा रूपसे देखनेवाले पुरुषके विरुद्ध दर्शियों से भी अनन्त दुःख शांति को नहीं प्राप्त होता १४ जो दृष्टि पड़ै वह अनात्मा है उस कारण अहंकार ममता यह दोनों बातें वर्त्तमान नहीं होती हैं फिर आनेवाले दुःख का प्रस्ताव किस आधार पर होगा १५ इस स्थल पर उस अनुपम त्याग शास्त्र को शोच में वारम्वार सहस्रों मोतियों द्वारा लाना चाहिये जिनका तेरेमोक्षार्थ वर्णन किया जायगा १६ मुक्ति के लिये सर्व कर्म्मों का त्याग युक्त है नित्यही मिथ्या विनीत दुःखभागी होते हैं १७ द्रव्य त्याग के लिये कर्म्मोंको और भोग त्यागकेलिये वृत्तोंको और सुख त्यागकेलिये तपको और सर्वत्याग के लिये योग का उपदेश करते हैं १८ दुःख नाशके लिये उस सर्व त्यागका

यह मार्ग बतलाया है जिसका कोई भेद नहीं है और त्यागके न होने में दु-र्गति होती है १६ जिनका छठवां मन है उन पांच ज्ञान इन्द्रियों को बुद्धि में जोड़कर उन पांच कर्म्म इन्द्रियों को जिनका छठवां प्राण शक्ति है त्याग करै २० दोनों हाथों को कर्म्म इन्द्री और दोनों पांवों को गति इन्द्री जानना चाहिये प्रजोत्पत्ति और आनन्द में लिंग इंद्री और विष्ठा त्याग में गुदाको कहा २१ वाक् इंद्री वाक्य बोलनेके लिये जाननी चाहिये—मनको इन पांचों से सम्मिलित जानै इस प्रकार मनको त्याग करै और बुद्धिद्वारा शीघ्र ग्यारह इंद्रियों को छोड़देवे वाक् मनके त्याग करने में कर्म्म इंद्रियों का त्याग हुआ और बुद्धिके त्याग करनेमें मनके साथ ज्ञान इंद्रियोंका त्यागहुआ २२ दोनों कान शब्द और चित्त यह तीनों कर्म्म कर्ण इंद्री के कारण हैं इसीप्रकार रूप रस और गन्धमें भी तीन तीन कारण हैं २३ इसीप्रकार शब्दआदि विषयों के ज्ञान होने में यह पन्द्रह गुण कारण होते हैं जिसके द्वारा यह तीनप्रकार का भाव कर्त्ता कर्म करण भिन्न अभिप्राय के साथ सन्मुख उपस्थित हुआ २४ वे तीनों भी सात्विकी राजसी तामसी में हैं जिन के मध्य सबका साधन कर ने वाले तीन प्रकारके अनुभव वृद्धिको प्राप्त हुये २५ प्रसन्नता, प्रीति,आनन्द सुख,शांत चित्तता आदि सतोगुणके धर्म्महैं २६असंतोष,परिताप,शोक,लोभ क्षमा,रजोगुणके धर्म हैं२७ अविवेक, मोह, प्रमाद निद्रा स्वप्न यह तमोगुण हैं २८ यहां जो कोई शरीर अथवा मनमें प्रीति युक्तहोवे—वह सात्विकभावमें है इसीप्रकार उसका त्यागकरै जो आगे लिखाजावेगा २६ जो आत्मामेंअसंतुष्ट अप्रीतिकरै है वह रजोगुण प्रवृत्तहै ३० जो देह और मनमें मोह युक्त है उसको तमोगुणीजानो३१इसीप्रकार शब्दआदि विषय और ज्ञानइन्द्रियोंका शिरोमणि चित्तरूप होना कहा चित्तके त्यागसे गुण और इंद्री और विषयोंका त्यागहोता है इस ज्ञानके लिये अब आकाश आदि तत्त्व रूपी विषय और इन्द्रियों का भिन्न न होना अर्थात् एक रूप होना कहतेहैं इनके वश करने से आकाश आदि वश होतेहैं इस आशय के लिये दो श्लोक लिखतेहैं—आकाशमें शर-णार्थ श्रोत्र इंद्री आकाश रूपही है और श्रोत्र इंद्री में शरणार्थ शब्द है आकाश तत्त्वहीहै इस अवस्थामें शब्द और श्रोत्र यह दोनों विज्ञानके विषय नहीं ३३—इसी प्रकार आंख जिह्वा नाक आदि पांचों स्पर्शरूप सम्बंधरखतेहैं वे सब शब्द व आकाश आदि स्मरणात्मक चित्त रूपहैं वह चित्त भी निश्च यात्मक मनका रूपहै अर्थात् चित्तके वश होने से सबवशकोप्राप्तहोते हैं ३४ सबके मन रूप होने में जगतही को कहते हैं इन पांचों इंद्री व पांचों विषयों में प्राप्त होने वाला ग्यारहवां चित्त होताहै उसको जानो ३५ सूक्ष्म इन्द्री भी पहिले सुने के आगम से अस्मरण करती हुई भी तीनों गुणों से युक्त फिर

नहीं लौटती ३६ जो तमसे ढकाहुआ चित्त जिसका कोई निश्चय नहीं और जो शीघ्रही संहार होसक्ताहै अपने शरीरमें ग्रहण करतेहैं उसको पण्डितलोग तामस कहतेहैं ३७ जो चित्त तमोगुण युक्त और परवर्ती प्रकाशात्मक आत्मा को छिपाता है और जो नाश योग्यहै वह शरीर में युगपद भावको नाश करताहै ३८ इसी तरह से अपने कर्म का प्रत्ययगुण प्रसंख्यात हुआ किसी२ में वर्तताहै और किसी में निवृत्त रहताहै ३९ अध्यात्मकी चिंतना करनेवाले इसीको समाहार क्षेत्र कहते हैं मनमें जो भाव स्थित होताहै वही क्षेत्रकहाता है ४० ऐसा होते हुये स्वभावही से वर्त्तमान सब प्राणियों में हेतु से उच्छेद और शाश्वत कैसे होता है ४१ जैसे नदियां समुद्र में जाके अपनी पहली रीतिको छोड़ देतीहैं ऐसेही प्राणीको भी मरने के अनंतर समझिये ४२ ऐसा होते हुये मरण के अनन्तर फिर क्या संज्ञा होती है और जीव के सब ओर से ग्रहण हुये देह में प्रविष्ट होने से कैसी संज्ञा होती है ४३ इस विमोक्ष बुद्धि आत्माको जो जानता और अप्रमत्त होके ढूंढ़ताहै वह अनिष्ट कर्म फलोंसे लिप्तनहीं होता जैसे जल से सींचाहुआ कमल का पत्र नहीं कुम्हिलाता ४४ फिर प्रजा निमित्त जो दृढ़ फँसरीहैं तिनसे छूट के जब सुख दुःखको छोड़ताहै तब आगे की गतिको प्राप्त होताहै ४५ फिर वेद और आगम के मंगलों से बुढ़ापा और मृत्यु के भयसे निर्भय सोता है ४६ एक परमेश्वरही में आसक्त प्राणी जैसे पुण्य या पाप के नाश हुयेसे और निमित्त फलकेभी नाश होनेसे चिह्न रहित निर्मल आकाश में स्थित होके परमेश्वर ही को देखते हैं ४७ जैसे ऊनका बीनने वाला ऊनके डोरेके नाशमें निर्भय सोताहै ऐसेही विमुक्त पुरुष दुःखको छोड़के निर्भय सुखसे सोता है ४८ जैसे रुरु नामक जीव पुराने सींगों को छोड़ के नये सींग धारण करता है और सर्प पुरानी त्वचा को छोड़के नई त्वचा ग्रहण करता है तैसेही विमुक्त प्राणी दुःखको छोड़के सुखी होताहै ४९ जैसे जलमें गिरेहुये वृक्षको पक्षी छोड़के निर्भय दूसरे वृक्षमें बैठताहै तैसेही मुक्त पुरुष सुख दुःखको छोड़ के श्रेष्ठ गति को प्राप्त होताहै ५० इस मैथिल पंचशिखके मुखसे निकलेहुये अमृतके तुल्यपद जिसमें ऐसे गानको सुनके और सबको देखके निश्चय अर्थ और शोच रहित राजाजनक परम सुखी होके विचरते भये ५१ । ५२ इस मोक्षके निश्चयको जो सदैव देखता और पढ़ता है वह उपद्रवों से दुःखित नहीं होता जैसे कपिलदेवजीको पायके राजा जनक सुखी हुए तैसेही वह पुरुष सुखी होता है ५३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्म्मेषट्चत्वारिंशोऽध्यायः ४६ ॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह क्या करने से सुख और क्या करने से दुःख और क्या करने से लोकमें निर्भय होकर विचरताहै भीष्मजी बोले कि इसका उत्तर अंतर्गत होजायगा अबपूर्व कथाका शेष वर्णन करता हूं कि इस पंचशिख महर्षी के समझाये हुये राजा जनकने फिर प्रश्नकिया कि देह के त्यागने के समय संसार और मोक्षकी कौनसी दशा होतीहै—भीष्मजी बोले कि इन्द्रियों का जो जीतना है उसको दमकहते हैं उसीकी प्रंशसा सब वेदज्ञ और धर्मज्ञ ऋषिलोग करते हैं इसदमके साधन को सब लोग करें और विशेष करके ब्राह्मण तो अवश्यही करेंजो इन्द्रियों का दमन नहीं करता है उसकी क्रिया कोई सिद्ध नहींहोती, क्रियाकी सत्यता और तपस्या यहदोनों दमही में वर्त्तमान हैं दमही तेजकी वृद्धि करताहै दमही अनेकपवित्रताओं को करताहै दमही निष्पाप और निर्भय होकर ब्रह्मपदको प्राप्त करताहै दम-करनेवाला संसार में भी जबतकरहैगा तबतक आनन्दसे रहैगा, जोक्रोधीजन होताहै वहतेजस्वी नहीं होता किन्तु उसीको अन्य जनोंसे सदैवभय उत्पन्न हुआ करताहै, जो कच्चे मांसको खाता है उसका नामक्रव्याद अर्थात् राक्षस होता है उस से जैसाभय होता उसीप्रकार मनुष्यों सेभीहोना प्रसिद्ध है उन मनुष्यों के उपद्रवोंके दूर करने के निमित्त लोकेश ब्रह्माजीने राजाको पृथ्वी पति बनाया, आश्रमी धर्मों से जो २ फलहोते हैं उससेभी अधिक दमकरने वालों को धर्महोता है जिनपुरुषोंके कि दमका उदयहोताहै उनके चिह्न मैं अपनी बुद्धि के अनुसार कहताहूं कि अदीनता, सन्तोष, आस्तिकबुद्धि, मृदुता, अरुष्ठता, अहंकारकात्याग, गुरुपूजा, अनुसूया, जीवों में विशेषदया, स्तुतिनिन्दा से रहितहोना, असत्यबादका त्यागना, निर्वैरता, रागादिककी वार्त्ताओंका त्यागना, सर्वकामनाओं कात्याग, शीलवान् सुव्रती, चुगलीका त्यागना यहसब लक्षण दम वाले के हैं इसलोक में दमवालेका बड़ासत्कार होता है और देहके अन्त में उत्तमस्वर्गकी प्राप्तिहोती है सुंदर सरल स्वभाव वान् होकर सबजीवोंका हितविचारे किसीसे शत्रुतानकरे सबसे मीठेवचनोंको कहे नतोकिसी जीव को डराताहै नकभीआपकहीं डरता है उसदमवाले को सबजीव देखकर बड़ेप्रेमको करते हैं सबलोग समीप आकर प्रणाम करते हैं और बहुत से सन्मुख होकर खड़ेहोते हैं, बहुत से अर्थ में हर्षनकरे औरअनर्थ में शोचभी कभी नकरे हेराजा वहीदमीहै, चबकोई तामसी बुद्धिमान् नहीं कहाता प्रशंसा और बड़ीक्षमा, सन्तोष, शान्ति, प्रियवाणी इनबातों को

दुष्टमनुष्यनहीं पाताहै, विनाकालकोईनहींमरता है और दमीपुरुषही निर्भय होकर लोक में विचरता है ५३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेसप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ४७ ॥

अड़तालीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह आपने हिंसा को निषेधकिया परंतु वेद में यज्ञादिकों को हिंसायुक्त कहा यह संदेह और यज्ञदीक्षा मंत्रदीक्षासेयुक्त तीनों वर्ण द्विजन्मा जो इसहव्य और अन्न मांसादिक को इस मनोरथ के निमित्त जो वेदके ब्राह्मण में लिखा है भोजनकरते हैं इसकाब्योरा मुझेसमझाइये— भीष्मजी बोलेकि हेयुधिष्ठिर वेदके विपरीत व्रत करनेवाले पुरुष भोजनके अयोग्य मांसादिक को भोजन करनेवाले कामचारी हैं अर्थात् इसलोक में पतित गिनेजाते हैं और वेदोक्त कर्म्मोंमें भोजन करनेवाले दीक्षामें लिखेहुये फलके लोभीहैं अर्थात् वहभी स्वर्गको पाकर फिरनीचे पतितहोंगे युधिष्ठिरने कहा कि हेमहाराज संसारी मनुष्यों ने जो इसव्रत को तपकहा है सो तप है या और कुछ है—इस प्रकार से दूसरे के पीड़ा देनेवाले यज्ञादिकों की निन्दा करके देहको पीड़ा देनेवाले मोक्षकी इच्छावालों के विरुद्ध व्रतआदिक निन्दा के विषय में भीष्मजीने उत्तरदिया कि संसारी महीने और पक्षके व्रतादिक से जो तपमानते हैं वहतप आत्मविद्या का विघ्नरूप है उस तपको सत्पुरुष नहींकरते अब आत्मविद्या का उपकारी तप वर्णन करते हैं जीव हिंसावाले कर्म्मोंका त्याग और प्राणियों की रक्षा यहीउत्तम तप है, अब गृहस्थ के तपको सुनो बहुकुटुम्बीभी सदैव व्रतकरनेवाला और ब्रह्मचारी होताहै, वेदपाठी ब्राह्मण सदैव मुनिहै और देवता रूप भीहै वह धर्म चाहनेवाला सदैव निद्रा जीतनेवाला, मांस भोजन रहित पवित्रता से रहै, देवता अतिथियों का सत्कार करने वाला सदैव अमृत भोजन करे और श्रद्धा पूर्वक देव ब्राह्मणोंका पूजकहो, युधिष्ठिर ने कहा कि कैसे व्रत करके ब्रह्मचारी होय और विघसान्न को भोजन करके कैसे अतिथियों को पूजे—भीष्मजीबोले कि जो सदैव प्रातःकाल सायंकाल भोजन करनेवाला है और मध्य में भोजन नहीं करताहै वह सदैव उपवासी होता है ब्राह्मण ऋतुकाल में ही स्त्री संग करने वाला ब्रह्मचारी होता है, जो मनुष्य सदैव सत्यवक्ता और ज्ञानी होता है वह निरर्थक मांस को न खाय वह भी मांस का न खानेवाला ही समझा जाता है सदैव दानी पवित्र दिवस में न सोने वाला जागरण करनेवाला समझाजाताहै,जो मनु अतिथि और बालबच्चों के भोजन के पीछे आप भोजन करता है वह केवल अमृतका भोजन करने वाला है, जो ब्राह्मणविना अतिथि भोजन करा

ये भोजन नहीं करता है अर्थात् निराहार रहता है उस निराहारता से उसको स्वर्ग प्राप्तहोता है, जो पुरुष देवता पितृ अतिथि और बाल बच्चों से शेषबचे हुये अन्नादिको भोजन करता है वह भिक्षासी कहा जाताहै, ब्रह्माजीकेसाथ ब्रह्मलोकमें उसको अनेक लोकोंकी प्राप्ति होतीहै और अप्सरादिके आनन्दों को देखता चारोंओर घूमताहै, जो पुरुष देवता पितरों के साथ उपभोग करते हैं और अपने पुत्रपौत्रादि के साथ क्रीड़ा करते हैं उनको वह उत्तम गतिप्राप्त होती है कि जिस्से अधिक कोई गति नहीं है १७॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेअष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ४८॥

उनचासवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह इसलोकमें जो शुभ अशुभ कर्म कैसाहीहोवह फलीभूत होता है उनकाकर्त्ता पुरुषहै वा नहीं है यहसंदेह आप मेरा निवृत्त कीजिये, भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर इसविषय में एक प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिस में कि प्रह्लाद और इन्द्र का प्रश्नोत्तर है, कि फल की इच्छा रहित निष्पाप कुलीन शास्त्रज्ञ आलस्य विना निरहंकारी सतोगुणी जितेन्द्री धर्मानुरागी निन्दा स्तुति रहित सावधान सब जड़चैतन्यों के लय प्रलयकरने वाले परमात्मा के ज्ञाता अप्राप्ति में शोक रहित प्राप्ति में हर्ष रहित सुवर्ण मृत्तिकाको समान मानने वाले महा पंडित सर्वज्ञ इत्यादि अनेक गुण युक्त एकान्त में विराजमान प्रह्लादजी की बुद्धिकी परीक्षा करनेकी इच्छाकरके इन्द्र ने उनके निकट जाकर उन से यह कहा कि कोई पुरुष मनुष्यों में जिन गुणोंके द्वारा सबका प्याराहोताहै वह सब गुण तुम में वर्त्तमान देखताहूं और तेरीबुद्धि बालकोंके समान विदित होतीहै यहां तुम आत्माको जानकर किस साधनको श्रेष्ठतर मानतेहो, हे प्रह्लाद पाशोंसे बँधाहुआ राज्य से उतराहुआ शत्रुओं के स्वाधीन लक्ष्मीरहित शोच के योग्य स्थान पर शोच नहीं करते हो हे दैत्यपुत्र प्रह्लाद तुमज्ञानलाभ या धैर्यता से अपने दुःखको देखते भी बुद्धि में सावधान हो यहइन्द्र के बचन सुनकर उससर्वज्ञ महापंडित प्रह्लाद ने स्पष्टवाणी से यहकहा कि यहां सांख्यके मत से कर्त्तापने को अमुख्यकरते हैं, जो पुरुष जीवोंकी प्रवृत्ति और निवृत्ति को नहीं जानताहै उसको अज्ञानता से बंधन होताहै और जो जीवात्मा का देखनेवालाहै उस को कभी बंधन नहींहोता, सब भाव अभाव स्वभाव हीसे जारीहोते हैं और इसीप्रकार प्रीति भी स्वभाव के ही द्वाराहोती है इसकारण इस में पुरुषार्थ नहीं है अर्थात् रथ आदिके समान जड़ प्रकृतिमें भोगमोक्ष रूप सामर्थ्य नहीं है तात्पर्य यह है किजो कर्त्ताहै वहीभोक्ताहै आत्मा में भोक्तापन जानना केवल भ्रान्ति रूपहै,

चुम्बक पत्थर के समान उदासीन पुरुष की सत्तामात्र से संसारकी प्रवृत्ति है यानहीं इसशंका का समाधान करते हैं कि भोगमोक्ष रूपी पुरुषार्थ के नहोने से कोई कर्त्तानहीं है इसदेह में अपने आपकर्म न करनेवाले उसआत्मा का कभीअविद्या से अभिमान न होवेकि मैं कर्त्ताहूं, जो पुरुष शुभ अशुभ कर्मों का कर्त्ता आत्माको मानताहै उसकी बुद्धि दोषयुक्तहै तत्त्वोंकी जाननेवालीनहीं है इससे हेयुधिष्ठिर जो पुरुष निश्चयकरके अपनेकल्याणमें कर्त्तारूपहोताहै उसके आरंभ कर्मसिद्धहोतेहैं और कभी पराजयनहींहोती, उपायकरनेवालेपुरुषोंके अनिष्टोंकी वर्त्तमानता और इसवस्तुकावर्त्तमान न होनादृष्टपड़ताहै इसीकारण पुरुषार्थ नहींहै,हम कितनेही पुरुषोंके अनिष्टोंका प्राप्तहोना और अभीष्टों का वियोग विना उपाय के देखतेहैं उनका प्राप्तहोना स्वभावसे होताहै, कितनेही बड़ेबुद्धिमान लोग निर्बुद्धी कुरूपमनुष्योंसे धनकी प्राप्तिको चाहतेहैं और आज्ञा कारी बने रहतेहैं, जब कि सब शुभाशुभ गुण स्वभाव सेही होते हैं तब वहां कौन किस के अभिमानका कारणहै अर्थात् वहांयह अभिमान नहीं है कि मैं सुखीहूं अथवा कर्त्ता भोक्ताहूं मोक्षरूप आत्मज्ञान स्वभावही से होता है अर्थात बन्धन के निर्मूल होने से उसकी औषधि रूप मुक्ती भी अज्ञानसेही कल्पना की जाती है यह मेरा मत दृढ़है उसके बिपरीत मेरी बुद्धि नहीं है बादल के समान ईश और कालके स्थानपर नियत प्रकृती साधारण कारण हैं और बीज के समान कर्म असाधारणहै इस शंकाको कहतेहैं, इस लोकमें शुभाशुभ फलका योग और सब विषयोंको कर्मों से मिलेहुए मानतेहैं इसको मैंकहताहूं तुम सुनो जैसे काकओदन भक्षण करनाजानताहै इसीप्रकार सब कर्म स्वभाव के ही लक्षणहैं अर्थात् स्वभावही उनका बतलानेवालाहै जो पुरुष विकाररूप धर्मों कोही जानताहै और परा प्रकृति को नहीं जानता है उसकी अज्ञानता से बन्धन होताहै और पराप्रकृतिके साक्षात्कार करनेवाले पुरुषको बन्धन नहीं होताहै, ब्रह्मज्ञानी को बन्धन क्योंनहीं होताहै इस के विषयको कहते हैं—यहां स्वभावसे उत्पन्न होनेवाले निश्चयके जाननेवाले ज्ञानी का अहंकार क्या करेगा अर्थात् कर्त्तृत्वभावको अपने में सम्बन्धदेना अहंकारादि का कारण है उसके न होनेसे अहंकारादि भी नष्ट रूप हैं और हे इन्द्र मैं सब धर्म बुद्धिको और जीवों के नाशको भी जानताहूं इसहेतु से शोच नहीं करताहूं यह निश्चय करके नाशवान् है, ममता, अहंकार और इच्छा से पृथक् वासना रहित आत्मरूप में नियत देहाभिमान न होने से आत्मरूप से मैं अविनाशी जीवों के उत्पत्ति और लय में परब्रह्म को देखता हूं, हे इन्द्र मुझ जितेन्द्री ज्ञानी इच्छा लोभ से रहित अविनाशी ब्रह्मदर्शी का उपाय आदिवर्त्तमान नहीं है प्रकृति के बिकार में रागद्वेष रहित

हूं और अपने उसशत्रुको भी नहीं देखताहूं जो अब मुझको ममता में प्रवृत्त करे और जानने के योग्य विज्ञान और ज्ञान में मेराकर्म वर्त्तमान नहींहै अर्थात् मैं सिद्ध दशामें नियतहूं इन्द्रने कहा कि हे प्रह्लाद जिसप्रकार से यह ज्ञान होता है और शान्ति को प्राप्तहोता है उस युक्तिको मुझसे समझा कर कहो, प्रह्लाद बोले कि हे इन्द्र जो पुरुष विस्मरणता रहित शुद्धभाव और बुद्धिकी नम्रता से वृद्धोंकी सेवाकरताहै वह मोक्ष को पाताहै जो कुछ दृश्य पदार्थ हैं सबस्वभावही से हैं और स्वभाव सेही ज्ञान वा शान्तताको पाता है यह प्रह्लाद के वचनों को सुनकर इन्द्रने बड़ा आश्चर्य्य किया और प्रसन्नतासे प्रीति युक्तहोकर उसकी प्रशंसाकी और उस दैत्येन्द्रका पूजन करके अपने लोकको गये ३७॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेइन्द्रप्रह्लादसंवादेएकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ४९॥

पचासवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जिस बुद्धि से लक्ष्मी रहित होकर कालदण्ड से पीड़ित राजालोग पृथ्वी में घूमते हैं उसका वर्णन आप मुझ से कहिये, भीष्मजी बोले कि इस स्थान पर भी एक पुरातन इतिहास कहता हूं जिस में इन्द्र और वैरोचन के पुत्र राजा बलिका सम्वाद है, इन्द्रने सब असुरों समेत राजा बलिको विजय करके ब्रह्माजी से हाथ जोड़कर पूछा कि हे ब्रह्मन् दान करते हुए जिसका धन कभी कम न हुआ उस बलिको मैं नहीं पाताहूं उस को मुझ से कहिये इस बलि ने वायु, वरुण, सूर्य्य, चन्द्रमा, और अग्नि रूपहो सब जीवों को तपाया और जलरूप होकर गुप्त हो सब दिशाओं को प्रकाशित किया और उसीने समयके अनुसार जलकी वर्षा भी की उस बलिका आप वर्णन कीजिये वह मेरेहाथ नहीं आता, ब्रह्माजी बोले कि हेइन्द्र यहतेरी बात अच्छी नहीं है जो तू इसप्रकार से पूछता है और पूछीहुई बातको मिथ्या नहीं कहना चाहिये इसहेतुसे बलि का वृत्तान्त तुझ से कहताहूं कि वह जीवोत्तम बलि किसी उजड़े फूटे स्थान में ऊंट,गधे बैल, अथवा घोड़ों में होगा, इन्द्रबोले कि हे ब्रह्मन् जो मैं उस एकान्तस्थान में बलिसे मिलूं तो उसको मारना योग्य है या नहीं यह आप मुझको उपदेश दीजिये ब्रह्माजी बोले हे इन्द्र बलिको कभी न मारना क्योंकि वह मारने के योग्य नहीं है, तुम उससे इच्छाके अनुसार कारण पूछने के योग्यहो, भीष्मजी बोले कि इसप्रकार ब्रह्माजी के समझानेसे शोभा युक्त इन्द्र ऐरावत हाथी पर सवार होकर पृथ्वी पर घूमनेलगा तदनन्तर उस इन्द्र ने गधे की सूरत में किसी उजड़ेहुए मकानमें बैठाहुआ राजा बलिको देखा और जैसा

कि ब्रह्माजीने कहा था उसीप्रकार से पूछा कि हे दैत्य तुम गधे की यो- नि में होकर तृणखानेवालेहुये यह तेरीयोनि नीच है इसमें तू शोचताहै या नहीं बड़े कष्टकी बातहै कि मैं तुमको शत्रुओं के आधीन तेज बल लक्ष्मीसे रहित इष्टमित्रों से जुदा गुप्तरूप में देखताहूं किसीसमय तुम हजारों सवा- रियोंके साथ अपने जात कुटुम्ब इष्टमित्रोंसे व्याप्तसबलोकोंको तपातेहुये हम लोगों को तुच्छ समझते चलतेथे और बड़े२मुखिया दैत्यतेरे आज्ञावर्त्तीथे तेरे राज्यमें पृथ्वी बिनाबोये जोतेभी अन्नको उत्पन्नकरतीथी और अब इसदुःखमें हो इसको शोचतेहो या नहीं जब बहुतसे भोगोंको भोगकर तुम समुद्रकेपूर्वी तटपर नियत हुये तब तेरा चित्त कैसाथा कि हजारों देवांगना तेरे सन्मुख खड़ी होकर नृत्य करती थीं और हजारों बर्ष तक प्रतिदिन सुबर्ण और कमलों के अनेक आभूषण पहरे नाचाकरीं हे दानवेश्वर अब तेराचित्त कैसा है उससमय तेरा रत्नजटित छत्र भी अद्वितीय शोभायमानथा तेरे यज्ञस्तम्भ सुवर्णकेथे और हजारों गन्धर्व सप्तस्वरोंसे गानको करतेथे उसयज्ञ में हजारों गोदान ब्राह्मणों को देताथा उससमय तेरीक्या बुद्धिथी जब दण्डके फेंकने की बुद्धिसे उतनेही बिस्तारमें तुमने सम्पूर्ण पृथ्वीको भ्रमणकिया तबतेरे हृदय में क्याथा हे असुरेन्द्र मैं तेरे भृंगारपात्र छत्र,चमर, व्यजन और ब्रह्माजी की दीहुई मालाको नहींदेखताहूं राजाबलिने कहाकि हेइन्द्र तुम मेरे भृंगारपात्र छत्र, चमर, व्यजनको और ब्रह्माजी की दीहुई माला को भी नहीं देखतेहो तुम मूल प्रकृति में अन्तर्द्धान होकर मेरे रत्नादिकों को पूछतेहो जब मेरा उ- दयकाल आवेगा तब उन सब वस्तुओं को देखोगे यह तेरा पूछना व्यर्थ है और कुलके योग्य नहींहै कि तुम ऐश्वर्य्यवान् होकर मुझभ्रष्टराज्य लक्ष्मी वालेको लज्जायुक्त किया चाहतेहो ज्ञानी ज्ञानसे तृप्त और शान्त बुद्धिवाले पुरुष दुःखों में नहीं शोचतेहैं और न प्रतापके उदय में प्रसन्नहोतेहैं हे इन्द्र तुम प्राकृत बुद्धि से अपनी प्रशंसा करतेहो जब मेरेसमान होनहारमें फँसोगे तब इसप्रकार नहीं कहोगे ३० ॥

इतिश्री महाभारते शान्तिपर्वणि मोक्षधर्मे पंचाशत्तमोऽध्यायः ५० ॥

इक्यावनवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे भरतवंशी युधिष्ठिर इसबातको सुनकर भी इन्द्रने हँ- सते हुयेही फिर उससर्पके समान श्वासलेनेवाले राजा बलिसे यहबचन कहा कि जो तुम हजारों सवारियों समेत अपने सजातियों से संयुक्त सब लोकोंको तपाते और हमको तुच्छ समझते जातेथे अब जातिवालों से और मित्रोंसे त्यागेहुये अपनी इसकठिन दशाको देखकर शोचतेहो वा नहीं और पहिले

समयमें लोकों को अपने आधीन करके अतिप्रीति युक्तहो इस बाहरकी विपरीत दशाको देखकर शोचतेहो या नहीं राजा बलिबोले कि हे इन्द्र यहां धर्मकेरूपान्तरवाले समयसेइसविपरीतताको देखकर शोचनहींकरताहूं क्योंकि निश्चयकरके यह सबनाशवान्है हेदेवराज इसीकारण मैं शोचनहीं करताहूं और यह मेरागधेका रूप पापसे नहीं है किन्तु समयकी लौटपौट सेहै जीवन और देह जन्मके साथही उत्पन्नहोते हैं और दोनों साथही साथ वृद्धिपातेहैं मैं इसगधेके भावको पाकर देहके धर्म्मोंसे रहित नहीं हूं जब कि मुझे इतना ज्ञानहै तो मुझविज्ञानीको पीड़ाकैसे होसक्ती है,जो मरणहै वह जीवों की निष्ठा है आत्माकी नहींहै जैसे कि समुद्र नदियों की निष्ठा है अर्थात् परागति है हे इन्द्र उसपरागति के जाननेवाले मनुष्यमोहको नहींपाते हैं जोपुरुष रजोगुण और मोहमें फँसेहुये इसको इसप्रकारसे नहींजानते हैं और जिनकी बुद्धि नष्टहोजाती है वहदुःखको पाकर पीड़ित होते हैं पुरुष बुद्धीकेलाभ से सब पापों को दूरकरता है और पापसे पृथक् बुद्धिको पाताहै और बुद्धिमान् शुद्धहोता है अर्थात् मोहसे उत्पन्न होनेवाली स्याही को त्याग करताहै जो उसबुद्धि से रजोगुण तमोगुणमें प्रवृत्तहोते हैं वह बारम्बार जन्मधारण करते हैं और उन रजोगुण आदिसे चलायमान कृपणहोकर वह लोग दुःखोंकोपाते हैं मैं अर्थ अनर्थ सुखदुःखजीवन मरणके फलको बुरानहीं कहताहूं और न उसकी इच्छा करताहूं निर्जीव देहको मारताहै कुछ जीवात्माको नहीं मारता जो कोई मनुष्य मारताहै अर्थात् कहताहै कि मैं देहका दूसरा करताहूं वह विनाशवान् और जड़ है वह दोनों अर्थात् एक बाधक दूसरा बाध्य नहीं जानते हैं अर्थात् अज्ञानी हैं हे इन्द्र जो कोई मारपीट से विजय करके अभिमान करताहै वह अवर्तीही होताहै अर्थात् मुख्य कर्त्ता नहीं है क्योंकि उसको कर्त्ता बुद्धिही बनाती है तात्पर्य्य यह है कि कर्तृत्वता बुद्धिसेही सम्बन्ध रखती है आत्मा से नहींरखती है जगत्की कर्तृत्वता पुरुषमें नहीं हैइसको सिद्धकहते हैं अर्थात् लोक की उत्पत्ति और नाशको कौन करता है कि मायासे उत्पन्नहोनेवाले चित्तने उसकी उत्पत्ति और नाशको किया और उसचित्तका करता आत्मानहीं हैकोई औरही है पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, यह पांचों तत्त्वही स्थूल सूक्ष्मशरीरके उत्पत्ति स्थान हैं उसमें कौन विलापकरना है जो बड़ाविद्वान् छोटाविद्वान् सबल, अबल, सुरूप,कुरूप, भाग्य, अभाग्य इन सबको गम्भीर काल अपने तेजसे जैसे स्वाधीन करता है उसकालके स्वाधीन वर्तमान होने पर मुझ विज्ञानी को क्या पीड़ा है अर्थात् वह सब गुणचित्त और देह के हैं आत्मासे कुछ सम्बन्ध नहीं है तो पीड़ा क्या होसक्ती है, कालात्मा ईश्वर के नाशकियेहुयेको अग्नि आदिसे फिर भस्मकरता है और मृतक को पीछेमार-

ता है प्रथम नाशपाया हुआही नाशितहोता है और प्राप्तहोनेकेयोग्य पदार्थ को मनुष्यपाता है इसविधाता और पुण्य पाप से जुदे कालका कोईदेशनहीं है तो पारकहां से होसक्ताहै और वार भी दिखाई नहींदेताहै यह सब मैं विचारताहुआ भी उसके अन्तकोनहीं देखताहूं हेशचीपति जो कालमेरेदेखते हुये जीवोंकानाशनकरे ऐसीदशामें मुझको प्रसन्नता अहंकार और क्रोध होसक्ता है तुम इसउजड़े एकान्त स्थानमें तृणभक्षी मुझगर्दभ रूपको मिलकर और जानकर निन्दाकरतेहो मैं इच्छाकरताहुआ अपने अनेक प्रकारके भयकारी रूपों को बदलूंगा तुम उनमेरे रूपों को देखकर भागजाओगे, काल सबको अपने आधीन करता है और कालही नाशकरता है उसीसे सब उत्पन्नहुआ है इससे हे इन्द्रतुम अभिमान मतकरो हे इन्द्रपूर्व समय में मेरे क्रोधहोनेपर सब जगत् पीड़ितहोताथा मैं इसलोकके सनातन धर्म्मोंको भी जानताहूं अर्थात् वृद्धि और क्षय रूपको जानताहूं उसको भी इसीप्रकार से विचारो, वुद्धि से आश्चर्य्य में मतपड़ो ऐश्वर्य्य और उसका उदय लक्ष्मी अपने आधीनमेंनहीं है जैसे कि पूर्वसमय में तेराचित्त बालकों के समानथा वैसा अब भी है यह अच्छीतरहसे विचारकरो और नैष्टकी वुद्धिको प्राप्तकरो, देवता, मनुष्य, पितर, सर्प, गन्धर्व, राक्षस यह सब मेरे स्वाधीनथे इनसब बातोंको तुम भी जानतेहो उसदशासे इसदशाको भी नमस्कार है जिस में विरोचनका बेटा राजाबलिहै इसप्रकार वुद्धि और मत्सरतासे मोहित जीवमेरे आज्ञावर्ती थे हे शचीपति मैं उसबातको और अपनी नष्टताको नहीं शोचताहूं इसप्रकारकी मेरी निश्चित वुद्धिहै मैं ईश्वरकी आधीनतामें नियत रहताहूं वह महाकुलीन दर्शनके योग्य प्रतापवान् राजा मंत्रियोंके साथदुःखसे जीवता तुमको दृष्टपड़ता है यहऐसाही होनहारथा सोहुआ इसीप्रकार अकुलीन अज्ञान नष्ट उत्पत्तिवाले राजमन्त्रियों समेत सुखसे जीवता दृष्टपड़ता है उसकी वही होतव्यताहै हे इन्द्र कल्याणी स्वरूपा स्त्री अभागिनी दृष्टआती है और दूसरी कुलक्षणी कुरूपास्त्री भाग्यवाली दृष्ट आती है हे वज्रधारी जो तुमने इसदशाको प्राप्तहोकर यह नहीं किया तो हम भी ऐसी दशावाले हैं यहहमने भी नहीं किया और यह धनाढ्यता अथवा दरिद्रता मेराकर्म्म नहीं है वहकालके क्रम से कियाहुआ होताहै इसीप्रकार तुझ श्रीमानयशस्वीतेजस्वी वज्रधारीऊपर गर्जनाकरनेवाले आनन्दपूर्वक विराजमानको भी मैं एक मुष्टिका से गिरासक्ताहूं जोइसप्रकार गधेका रूप न होऊं और काल मुझको धर्षण न करके नियत न हो तो सब काम करसक्ताहूं यहहमारे पराक्रमका समय नहीं है यह शांतिका समयप्राप्त है काल सबको नियतकरताहै और पकाताहै जोदानव असुरोंसे पूजित मुझ को काल प्राप्तहुआ उसदशा में किस गर्जनेवाले और दूसरे के तपाने वाले

पुरुषको प्राप्तनहींहोगा, हे देवराज मुझ अकेलेने सब द्वादश सूर्य्योंके तेजों को धारणकिया और मैंहीं बादलरूपसे जलकोभी धारण करताथा और वर्षाताथा और मैंहीं सूर्य्यरूप होकर तीनों लोकोंको संतप्तकरके प्रकाशित करता था और संसारकी श्रेष्ठ प्रकारसे रक्षाको करताथा और दण्डदेता और लेताथा और लोकोंमें प्रभु ईश्वर होकर अपराधियोंको पकड़ता और बुरेमार्गोंसे बचाताथा हे देवराज अब वहमेरा ऐश्वर्य्य जातारहा और मुझकाल की सेना से घिरेहुयेका सब ऐश्वर्य्य दृष्टनहीं पड़ता है हे शचीपति इन्द्र मैं कर्त्ता नहीं हूं और न तुमहो और न कोई दूसराहै सब लोककालके क्रमसे और दैवइच्छासे भोगेजाते हैं आयुर्वेद जाननेवाले मनुष्योंने उसकाल पुरुषको ऐसा कहाहै कि वह कालमहीना पक्ष आदिसे विदितहोता है और उसका आश्रय माया सबलब्रह्महै ऋतुद्वार हैं अर्थात् उसकी प्राप्तीके साधन हैं वायु मुखहै अर्थात् प्रथम प्राप्तिके योग्यहै अथवा वायु के स्थान में वर्षशब्दहो उसका यह अर्थहै कि वर्षा करनेवाला धर्म्ममेघनाम ध्यान उसका मुखहै अर्थात् निर्विषय ध्यान से मिलने के योग्य है कितनेही जीवनमुक्त मनुष्यों ने बुद्धिसे न कि शास्त्र बलसे इस सर्वकालनाम ब्रह्मको ध्यानके योग्यकहाहै अर्थात् ध्यान में पूर्ण ब्रह्मका आना असंभव है क्योंकि वह अद्वैतता में गिनाजाताहै इसीसे इस ध्यानके पांच विषय अर्थात् अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमयकोशोंको पांचप्रकार से वर्णन करूंगा अर्थात् वेदमें प्राप्तकरूंगा जैसे कि कहावतहै कि यहपुरुष अन्नरसरूप पक्षी है उसका यह शिरहै यह दाहिना और बायांपक्ष है यहआत्मा है यह पुच्छहै वहजाननेके योग्यहै परन्तु वहब्रह्म नहींहै क्योंकि अनात्मा है आत्माब्रह्म है और वेदमें जोकहा है कि यह सब आत्मा है इसको दोषलगनेसे हम कहतेहैं कि आत्मा में सब प्रकाश इसरीति का है जैसे किसी सीमें चांदीका आभास जैसे कि स्फटिक में पद्मराग इन्द्रनीलमणि आदि दृष्टपड़ते हैं फिर ध्यानकरते २ अन्त में केवल स्फटिकही शेषरहजाता है उसीप्रकार बुद्धि और चैतन्यमें ईशसूत्र विराट्का अध्यास होताहै वहां देहका अभिमान दूरहोनेपर मैं विराट्हूं यह अध्यास शेषरहजाता है उसकी निवृत्तिहोने पर मैं सूत्रात्माहूं यह अध्यास होजाता है उसके भी निवृत्तहोनेपर मैं ईशहूं यह अध्यास नियतहोता है उसके भी निवृत्त होने पर चित्त और वाणीके विषय से रहित चिन्मात्र शक्तिके समान शेषरहताहै वह तर्क से प्राप्त न होनेवाला शास्त्र से प्राप्तहोकर भी अगम्यब्रह्म महासमुद्रके समान आदि अन्त और वारापार न रखनेवाला एकरसहै और जैसा कि शंख और चांदीका श्वेतरूप होताहै वैसारूप धारण किये है और जन्म मृत्यु से पृथक् भी संसार रूपसे नाशवान् और जीवरूप से अविनाशी है बुद्धि आदि

में अपने प्रतिबिम्बको प्रवेश करके आप चिह्न रहित भी है जो तत्त्वज्ञमनुष्य हैं वह उसको उपाधि धर्म्मसे स्पर्श रहित मानते हैं वह षडैश्वर्य्यमान् ईश्वर तत्त्वोंकी विपरीत सूरतका मिथ्यापन औरआश्रय अथवा दुःखादिदुर्भाग्यताको अपने में अविद्याके द्वारा मानता है यह अविद्यासे प्रकट होनेवाला दुःखादि आत्माको प्राप्त होनेके लायक नहीं है क्योंकि शुद्ध ब्रह्म से फिर दूसरा ब्रह्मा विष्णु रुद्र प्रकट नहीं होता है सब जीवोंकी गति को पाकर कहांजायगा वह भागनेवालेसे त्यागहोने के योग्यनहीं है और निश्चल होताभी उससेपृथक् नहींहोता है अर्थात् सदैव प्राप्त होने से चित्तवृत्तीमात्र सब इन्द्रियां पांचप्रकार से उसको नहीं देखती हैं कितनेही पुरुषोंने इसको अग्निरूप कहा और कितनोंही ने प्रजापति और कितनेही उसकाल पुरुषको ऋतुमासपक्ष दिन क्षण पूर्व और परदिन और मध्याह्न मुहूर्त्तभी कहते हैं एक होनेपरभी उसकालको बहुतप्रकार का कहते हैं यह सब बातें जिसके आधीन हैं उसीको मुख्यजानो हे शचीपति बल पराक्रम में पूर्ण जैसे तुम हो वैसे हजारों इन्द्र होचुके यह महाबली कालरूप समय आनेपर तुम्ह सरीके बलमें मतवाले देवराजको भी आधीन करेगा वही सदैव इस सब दृश्यादृश्यको आधीन करता है, इसकारण हे इन्द्र तुम सावधान चित्तहो वहकाल पुरुष हमसे तुमसे पुरुषों से और पूर्व पूर्वजों से हटाने के योग्य नहीं है न होगा इस अनूपम राजलक्ष्मी को पाकर जो कोई जानता है कि यह मेरेपासही रहैगी वह मिथ्याहै क्योंकि इस का नाम चंचलाहै यह एकही स्थानपर कभी नहीं रहती तुम्हसेभी महाउत्तम हजारों इन्द्रों के पास यहराजलक्ष्मी नियतहुई और सबको त्यागकर मुझ को भी प्राप्तहुई फिर यह तुम को भी उसी प्रकार का जानकर कभी दूसरे के पास जायगी ५६ ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे एकपंचाशत्तमोऽध्यायः ५१ ॥

बावनवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इसके पीछे महात्मा बलिकी देहसे स्वरूप युक्त प्रकाशमान लक्ष्मी को निकलते हुये इन्द्रने देखा उस तेजसे प्रकाशमान लक्ष्मी को देखकर बड़े आश्चर्ययुक्त होकर प्रसन्न नेत्रहो देवराज इन्द्रने बलिसे पूछा कि हे बलि यह अपने तेज से प्रकाशमान चूड़ाकेयूर धारण किये शोभायमान स्त्री जो तेरी देहसे निकली और वर्त्तमानहै वह कौनहै बलिने कहा कि हे इन्द्र मैं इस आसुरी वा दैवी अथवा मानुषी को नहीं जानताहूं तुम इस से पूछो या न पूछो या जो इच्छाहो सो करो इन्द्रबोले कि हे पवित्रालय शोभायमान चूड़ाधारी स्त्री तुम कौनहो मुझ अज्ञानी से अपना वर्णन करो हेतेज

से प्रकाशित तुम इस उत्तम दैत्यको त्यागकरके मेरेपास वर्त्तमानहो सो कौन हो हे सुभ्रू तुम अपनावर्णन मुझसे करो लक्ष्मीबोली कि मुझको न विरोचन जानताथा और न यह विरोचनका पुत्र बलिमुझको जानताहै तुम मुझको भूति लक्ष्मी श्रीजानो हे इन्द्र न तो तुम मुझको जानतेहो न सब देवता जानते हैं इन्द्रने कहा हे दुःसह इस बलिकेपास बहुतकाल से निवास करनेवाली सती तुम मेरेकारण या इस बलिके कारण से दैत्यराजको त्यागतीहो यह बात क्या है लक्ष्मी बोली हे इन्द्र मुझको किसीप्रकारसे भी धाता धारण नहींकरता है और विधाता धारणकरता है इसको कालने प्राप्त किया है तुम इसका अपमान मतकरो इन्द्रबोले हे पवित्रालय देवि तुम ने राजाबलिको किसकारण और किसरीतिसे त्यागकिया और मुझको क्यों नहींत्यागकिया, लक्ष्मीबोली कि मैं सत्यता, दान, व्रत तप, पराक्रम और धर्म्ममें वर्त्तमान हूं इनगुणों को सुनकर राजाबलि ने मुखफेर लिया इस ने पहिले समय में ब्राह्मणों का भक्त सत्यवादी जितेंद्रीहोकर फिर ब्राह्मणों की निन्दाकरी और उच्छिष्टभरे मुखसे घृतका स्पर्शकिया और सदैव यज्ञकरनेवाला होकर काल से पीड़ित अज्ञान बुद्धिने संसारके लोगोंसे कहा कि मुझको भी पूजनकरो इस कारणसे मैं इस से पृथक्होकर तेरेपास निवासकरतीहूं सावधानमनुष्यसे मैं तपस्या औरबलके द्वारा धारण करने के योग्यहूं इन्द्र बोले कि हे पद्मालय देवि देवता मनुष्य और सब जीवोंमें कोई पुरुष भी है जो अकेला आपके धारण करनेको समर्थ हो लक्ष्मीबोली कि कोई देवता गंधर्व असुर राक्षस ऐसानहीं है जो अकेला मुझे धारण करने को समर्थ होय, इन्द्रने कहा हे देवि तुम जिसप्रकार सदैव मेरेपास नियत रहो उस रीति को मुझ से वर्णन कीजिये मैं तेरेइस सत्यवचन को पूराकरूंगा लक्ष्मीने कहा कि हेइन्द्र मैं जिस प्रकारसे तेरेपास सदैव रहूंगी उसको मुझसे सुनो कि तुम वेदोक्त बुद्धिसे मेरेचार भागकरो, इन्द्रने कहाकि मैं अपने बल पराक्रमके अनुसार तुमको धारण करूंगा हे लक्ष्मी जी आप के सन्मुख मैं कभी बेमर्यादा न होऊंगा जीवधारियों में मनुष्योंका पोषण करने वाली आधार रूप पृथ्वी है वह तेरे चरणको सहैगी क्योंकि वह समर्थ है यह मेरा मतहै, लक्ष्मी बोली कि मैंने वही चरण रक्खा है जो पृथ्वी पर नियतहै हे इन्द्र इसीकारण से मेरेदूसरे चरणको अच्छे प्रकारसे नियत करो, इन्द्रबोले हे चारों ओर घूमनेवाली मनुष्योंमें जारी रहनेवाले जल हैं वहभी तेरेचरणों को सहैं क्योंकि जल भी क्षमाकरने को बहुत योग्य है लक्ष्मी ने कहा कि मैंने वही चरण रक्खाहै जो कि जलमें नियत है अब तू मेरेतीसरे चरण को अच्छी रीति से रख, इन्द्रने कहा कि जिसमें वेद यज्ञ और देवता वर्त्तमान हैं वह अग्नि तेरेतीसरे चरणको सुन्दर रीति से धारण करैगी, लक्ष्मी बोली हे

इन्द्र मैंने वही चरण रक्खाहै जो कि अग्नि में नियत है अब मेरे चौथे चरण को अच्छा नियत करो, इन्द्रबोले कि मनुष्योंमें जो निश्चय करके संत वेद ब्राह्मणों के भक्त और सत्यवक्ता हैं वह तेरेचौथे चरणको धारण करें क्योंकि संत बड़े सहनशील होते हैं पृथ्वीने कहा कि मैंने वही चरण रक्खा जो संतों में नियतहै, धन,तीर्थादिमें पुण्य यज्ञादिकर्म्म, विद्या, यहीचारों लक्ष्मीके चरण हैं जो कि पृथ्वी, जल, अग्नि और संतों में वर्त्तमान हैं, इन्द्रबोले कि निश्चय करके इसलोक में जीवोंकेमध्य जो पुरुष मुझे धारणकिये हुये तुझ सती को दुःखदेगा वह मारनेकेयोग्यहै यह सुनकर लक्ष्मीसेहीन दैत्योंकेराजा बलिने कहा कि जो मेरु नाम प्रकाशित पर्वत स्वर्ग में है उसके पीछे ब्रह्मलोक है और पूर्वादिचारों दिशाओं में इन्द्र, वरुण, कुबेर, यम इनचारों देवताओं की पुरी हैं वह चारोंपुरी मेरुके चारोंओर घूमने वाले सूर्य्यकी किरणों से प्रकाशवान्‌हैं जिस पुरीकानाश वर्त्तमान होताहै वहां सूर्य्यप्रकाश नहींकरतेहैं निवासियोंको सूर्य्यकादृष्ट आनाउदय और दृष्टनआना अस्तमालूमहोताहै जब पूर्वमें उदयहोताहै तब पश्चिम देशनिवासियों को अस्तमालूम और जब उत्तरवासियोंकोमध्याह्नकेसमय उदयहोना मालूमहोताहैतबदाक्षिणात्य लोगों के यहां अर्द्धरात्रिहोती है इसीप्रकार दक्षिण आदि में भी जानना चाहिये ऐसी दशा में जब पूर्वमें प्रकाशहोताहै तब मेरुकी प्रदक्षिणा बराबरहोने से सूर्य्य दूसरी दिशा में भी प्रकाशकरता है इसहेतु से जबतक पूर्व में प्रकाश करता है तबतक दक्षिण में इसकहने से जितने काल में पूर्व की नष्टताहोगी उससेदूने काल में दक्षिणकी होगी ब्रह्माजीका जो दिनहै उसके सोलहभाग कियेजायँ उनमें के पहिले भाग में पूर्वकीहानि, दो भाग में दक्षिण की, चार भाग में पश्चिमकी, आठभाग में उत्तरकी, तब देखनेवालोंके वर्त्तमान न होनेपर सूर्य्यका उदय अस्त जो कि दर्शनीय और अदर्शनीय रूपहै नहीं होता है किंतु मध्याह्नही रहता है अर्थात् बराबर ब्रह्महीलोक को प्रकाश करता है क्योंकि उससमय दूसरी पुरी वर्त्तमानता नहींहोती, उसीको वर्णन करते हैं कि जब एकस्थान अर्थात् ब्रह्मलोक में वर्त्तमान सूर्य्यमेरु पहाड़की पीठसेनीचेकी ओर वर्त्तमानलोकोंको प्रकाशकरेगा तब ब्रह्माजीके मध्याह्न समय के पीछे वैवस्वतमनुका अधिकार भ्रष्टहोने से सावर्णिनाम मनुकेहोनेपर राजाबलिही इन्द्रहोगा अथवा वैवस्वतमन्वंतरके आठभागकरके उनमें ऊपरके क्रमके अनुसार अष्टपुरियोंके भ्रष्टहोनेपर दूसरे मन्वन्तर में राजाबलि इन्द्रहोगा उसीप्रकार जब मध्याह्नके समय सूर्य्य प्रकाशमानहोगा अर्थात्चारोंपुरी नष्टहोजायँगी फिर देवता और असुरोंका युद्धहोनेवालाहै तब मैं तुमको विजयकरूंगा, इन्द्र बोले कि हे बलि मैं ब्रह्माजीसे आज्ञादियाहूंइससे मैं आपकेमारनेके योग्य

नहींहूं इसीकारण वज्रको तेरे मस्तक पर नहींमारताहूं हे दैत्येन्द्र महाअसुर तुम इच्छानुसारजाओ तेराकल्याणहो मध्यमें वर्त्तमानसूर्य कभी नहीं तपावेगा अर्थात् चारोंपुरी की नष्टता कभी न होगी प्रथमही ब्रह्माजी की ओर से इससूर्यका नियम नियतकिया गयाहैयह सूर्य सत्यकर्मसे संसारकोतपाता हुआ बराबर चलताहै उसका स्थान छःमहीने तक उत्तर और छः महीने दक्षिणको होताहै सूर्य जिसमार्ग से शीत और उष्णताको उत्पन्नकरताहुआ लोकोंमेंघूमताहै उसको क्रांतिवृत्तकहतेहैं भीष्मजीवोले कि हे युधिष्ठिर इन्द्रसे इसप्रकार कहाहुआ राजाबलि दक्षिणादिशाकोगया और इन्द्र उत्तर दिशाको चलकर राजाबलिके इससाहंकारी बचनकोसुनकर आकाशको चढ़ा ३८ ॥

इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणिमोक्षधर्मे द्विपंचाशत्तमोऽध्यायः ५२ ॥

तिरपनवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर इस निरहंकारता के विषय में और एक प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें इन्द्र और नमुचिका सम्वादहै किसी समय इन्द्र ने लक्ष्मी से रहित समुद्रकी समान स्थिरता में युक्त जीवोंके उत्पत्तिलय के जाननेवाले नमुचि से कहा कि हे नमुचि पाशों से बँधे स्थान से भ्रष्ट शत्रुओं के स्वाधीन वर्त्तमान लक्ष्मी से रहित तुम शोचते हो या नहीं शोचतेहो, नमुचि ने कहा कि दूर न होनेवाले शोचसे देहको पीड़ा होतीहै उससे शत्रु बहुत प्रसन्न होतेहैं शोक में किसी की सहायता नहीं है, इसकारण हेइन्द्र मैं शोच नहीं करताहूं क्योंकि निश्चय करके यह सब नाशवान् हैं शोकसे स्वरूप की नष्टता होतीहै और शोभाकी हानि होतीहै और शोकही से आयु वा धर्म नष्ट होतेहैं इस अनिच्छासे उत्पन्न होनेवाले दुःखको त्यागकरके ज्ञानी मनुष्यको हृदय में वर्त्तमान आत्मा और अपने कल्याणको चित्तसे ध्यान करना योग्यहै, पुरुष जब कल्याण में चित्त को करताहै तब उसके सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध होतेहैं एकही स्वामी है दूसरा कोई नहीं है वह स्वामी गर्भ में शयन करनेवाले पुरुषको उपदेश करताहै उसीसे कर्मों में प्रवृत्त पुरुष होताहै जैसे कि ढलाव के स्थान से जल बहताहै, मुझको भी जैसी आज्ञाहुई उसी कर्म को करताहूं, मोक्ष बन्धन अथवा सत्य मिथ्या इन सबके मध्यमें ज्ञान मोक्षको श्रेष्ठ जानता हुआ सिद्ध नहीं कर सक्ताहूं जैसे कि धर्मरूप उत्तम आशाओं में ईश्वरने कर्म करना कहाहै उस को उसी प्रकारसे करताहूं, मनुष्य जिसप्रकार से उसको प्राप्त करना योग्य समझताहै उसी उसी प्रकार से प्राप्त करताहै जैसी होतव्यता होतीहै वैसाही सब होताहै, ईश्वर ने जहां जहां बराबर गर्भों में अपने को निवेशित किया

है वहां वहांहीं निवास करताहै क्योंकि उसके आधीन है मुझ को जो यह जन्म प्राप्त हुआ सो मेरा होनहार था जिसका इसप्रकार से चित्त में ज्ञान है वह कभी मोहको नहीं पाता है, काल के क्रम से प्राप्त होनेवाले सुख दुःखों से पीड़ित मनुष्यों में कोई विपरीत नहीं जानता जिससे कि किसी नालिश को करे सब बुद्धिमान् पुरुष यही कहतेहैं कि हमहीं अपने दुःखों के करता हैं फिर नालिश किसकी किसकोकरें किस देवता असुर और बनमें निवास करनेवाले मुनि वेदज्ञों को आपत्ति नहीं आतीहै अर्थात् सबको प्राप्त होती है लोकमें जो सत् असत् अर्थात सत्य मिथ्या वस्तु के जाननेवाले हैं वह निर्भय रहतेहैं और पण्डित मनुष्य क्रोध नहीं करताहै न संसार में चित्तको लगाता है न पीड़ा पाताहै न खुश होताहै और दुःखसे हटानेके योग्य दुःखोंमें शोच भी नहीं करताहै और स्वभाव से हिमालय पर्वत के समान अचल होकर नियत है, जो मनुष्य उत्तम मनोरथों से और समयके सुख दुःखोंसे बिस्मरण नहीं होता और सुख दुःखों को समान गिनताहै वह मनुष्य बड़ा धुरन्धर गिनाजाताहै, जैसी जैसी दशाको पुरुष प्राप्त करे उसमें दुःखी कभी न हो किन्तु उसी में निर्वाह करे और बड़ेभारी चित्त में उत्पन्न होनेवाले दुःखदायी कष्टों को देह से दूरकरे, अब विवेककी कठिनताको सुनो कि वह सभावेद और स्मृतियों के न्याय और अन्यायकी खोलनेवाली है उसको पाकर कभी भय नहीं करताहै, जो बुद्धिमान् धर्मतत्त्वों को जानकर उसको प्राप्त करताहै वहपुरुषधुरन्धरहै अर्थात् सभासदोंमें उत्तमहैआशययहहै किधर्म्मतत्त्वभी कठिनतासेप्राप्तहोताहैतो ब्रह्मतत्त्व क्यों नहीं दुःखसे प्राप्तहोगा,ज्ञानीकेकर्म्म ऐसेहैं जिनकाफलआगेको समझमेंआना कठिनहै ज्ञानीमोहके समय मोहकोनहीं पाताहै,इसगृहस्थाश्रमसे रहितगौतमऋषि इसीप्रकारकी आपत्तियोंको पाकर उनके दुःखों से मोहित नहीं हुआ, तात्पर्य्य यहहै कि मैं तेरेसमान अजितेन्द्री और चित्त के आधीन नहीं हूं किन्तु गौतम ऋषि के समान चित्तका जीतनेवालाहूं, मनुष्य मन्त्र, बल, पराक्रम, बुद्धि, उपाय, स्वभाव, रीति और धन आदिसे दुर्ग्राह्य वस्तुको नहीं पासक्ताहै अर्थात् चित्तकी सावधानताको नहीं पाता है उसमें क्या शोचहै, पूर्व समय में ईश्वर ने इस प्रकार जन्मलेनेवाले का जो विधान कियाहै उसी के अनुसार कर्म्म करूंगा मृत्यु मेरा क्या कर सक्ती है, प्राप्त होनेवाले सुख दुःखों को अवश्य पाता है और यात्राके योग्य देशों को भी जाता है और प्राप्त होने के योग्य को प्राप्त होता है जो मनुष्य इसको सम्पूर्णता से अच्छेप्रकार जानकर मोहको प्राप्त नहीं होता है वह सब दुःखों से निवृत्त होकर धनका स्वामी होता है २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्मेत्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः ५३ ॥

चौवनवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह बन्धुओं समेत राज्य के नाश होने में महा कठिन आपत्तियों में डूबेहुये मनुष्य का कल्याण करनेवाला क्या है इस बात को आप कहने के योग्य हैं क्योंकि इसलोक में हे भर्त्तर्षभ आपही हमारे अद्वैतवक्ता हैं भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर पुत्र स्त्री सुख धनसे पृथक् और कठिन आपत्ति में पड़ेहुये मनुष्य को धैर्यही सुखका देनेवालाहै सदैव धैर्य युक्त पुरुष नाशको नहीं पाता है और शोक रहित सुखको पाता है और देह की उत्तम नीरोग्यता को भी धारण करता है वह देहकी नीरोग्यता से और सात्त्विकी वृत्तिमें नियत होकर पूर्ण लक्ष्मी को पाता है उसको धैर्य ऐश्वर्य्य और कर्मों में निश्चयभी प्राप्त होता है, इसस्थानपर फिर एक प्राचीन इतिहास को कहताहूं उसमें भी इन्द्र और बलिके प्रश्नोत्तर हैं कि देवासुरके युद्ध जारीहोने में दैत्य दानवों के नाश पूर्वक सबलोकों को विष्णुजी में व्याप्त होनेपर इन्द्रको देवराज पदवी मिली तब इन्द्र देवताओं के पूजित हुये उस समय चारों वर्ण नियतहुये और तीनों लोकोंकी वृद्धिहुई तब ब्रह्माजी समेत ग्यारहरुद्र, आठबसु, द्वादशसूर्य, दोनों अश्विनीकुमार, सब ऋषि गन्धर्व राक्षस सर्प आदि से व्याप्त इन्द्र अपने चार दांतवाले ऐरावतपर सवारहोकर तीनों लोकों में घूमे और घूमते हुए समुद्र के तटपर किसी पहाड़की गुफामें बिराजमान राजा बलिको देखा और समीपगया उस बलिने इस बड़ीधूमधाम समेत इन्द्रको देखकर कुछ भी शोच न किया और न दुखीहुआ तब इन्द्रने उस सावधान निर्भय स्वरूप राजा बलिसे कहा कि हे दैत्य बलि तुम शूरतासे या वृद्धों के सेवनसे अथवा अपने चित्तकी शुद्धतासे पीड़ा रहितहो यह बड़ा कठिन कर्म है कि शत्रुओं के आधीन अपने स्थान से भ्रष्ट राजलक्ष्मी से पृथक् होकर भी तुम किसके बलसे भयके स्थान में भी निर्भयहो पूर्व समय में अपने बापदादे के राज्यपर अधिकारी होकर अब तुम उसराज्यको शत्रुओं से छीनाहुआ देखकर क्यों शोच नहीं करते और वरुणके पाशों से बँधे वज्र से घायल स्त्री धन रहित भी क्यों नहीं शोच करते ऐसा कौनहै जो तीनों लोकों के राज्य भ्रष्टहोने पर जीवनेका उत्साहकरे ऐसी दुःखदायी मर्म भेदी इन्द्रकी अनेक बातें सुनकर उसइन्द्रको निरादर करके विरोचन का पुत्र राजा बलि यह बचनबोला कि हे इन्द्र मेरे आपत्ति के होने से तुझको प्रशंसाकरने की क्या आवश्यकता है अब तुम वज्र उठाये दीखते हो किसी समय तुम ऐसे असमर्थ थे कि भागते फिरते थे अब दैवयोग से इन्द्र पद पाकर तेरे सिवाय दूसरा कौन ऐसे निर्दयवचनों को कहने के योग्य है जो कोई

अपने बलवान् शत्रुको स्वाधीन करके उसपर करुणा करता है वही पुरुषहै ज्ञानियों के बीचमें दो पुरुषोंका विवाद निर्णय नहींहोता है उनमें एक हारता है और एकजीतता है हे देवेश यह तेरा स्वभाव ईश्वर ने कि सब जीवों का स्वामी तेरे बलपराक्रम से विजयहोय और यह हमारा कर्म नहीं है न तुम्हारा है जो तुम या दूसरा ऐसी दशा में हो और हम ऐसी दशा में हुये अबजैसे तुमहो वैसाही मैं भीथा और जैसे अबहमहैं वैसेही तुमभी होगे तुम यह न समझो कि मैंने बड़ाकर्म किया क्योंकि समयकी विपरीतता से पुरुष सुख दुःखको भोगताहै और तुमने भी समय की विपरीततासेही इंद्रपद पाया है कुछ अपने पुरुषार्थ से नहीं पाया कालने जैसे मुझे प्राप्त कियाहै उसी प्रकार तुझको भी अवश्य करेगा कभी मैं तेरे समान नहीं कभी तू मेरे समान न होगा, पुरुषका सुखदायी माता पिता से अधिक कोई नहींहै विद्या, तप, दान, मित्र, बांधव यहसब उस कालसे पीड़ित मनुष्यकी रक्षा नहीं कर सक्के मनुष्य बुद्धि बलके विशेष सैकड़ों उपाय और अनर्थोंसे भी होनहार सुख दुःखके दूरकरने को समर्थ नहीं होसक्के हैं, समय के विपरीतपने से दुखी मनुष्योंका कोई रक्षक नहींहै हे इन्द्र इसीको दुःख जानो जो तुम मानते हो कि मैं इसका कर्त्ताहूं, जोमनुष्य कर्त्ता होजाय तो वह कभी उत्पन्न भी न हो फिर कर्त्ताकी उत्पत्ति होनेके कारण वह कर्ताभी असमर्थहै मैंनेभी तुझेकाल से विजय कियाथा और अब कालसे तैंने भी मुझको विजय किया है काल ही कर्मके फलमें वर्तमान पुरुषों को प्राप्त होनेवालाहै, कालही जीवोंकी संख्या करताहै और एक को एकसे पृथक् करता है, हेइन्द्र तुम प्राकृत बुद्धिसे नाश को नहीं जानते हो, अपने कर्म्मोंसे प्रतिष्ठा पानेवाले लोग तुम को बहुत मानतेहैं, कालसे पीड़ित मुझसा पुरुष लोककी प्रवृत्तियों को जानता कैसे मोहित होकर शोचकोकरे और भ्रान्ती पावे मुझकालसे व्याप्त या मेरे समान पुरुष की बुद्धि टूटी नौका के समानपीड़ा को पाती है, मैं तुम और अन्यभी बहुतसे देवेन्द्र होंगे वह सबभी सैकड़ों इन्द्रोंके प्राप्त होनेवाले मार्गों में जायँगे, अन्तके समय तुझ शोभायमान विजयी कोभी काल ऐसेही भ्रष्ट करेगा जैसा कि मुझको किया है, देवताओं के हर एक यज्ञ में हजारों इन्द्र कालसे व्यतीतहोगये यह कालही कठिनतासे उल्लंघन के योग्यहै और जो तुम इन्द्रासनको पाकर अपने को बड़ामानते हो सो यह कालही जीवों के उत्पत्तिस्थान ब्रह्माजीके समान तुमको भी प्रतिष्ठित मानताहै यह किसीका अचलस्थान नहीं है, तुमनिर्बुद्धितासे जानतेहो कि यह मेराहै हे देवेन्द्र तुम अविश्वस्तमें विश्वासकरतेहो और चलको अचलमानतेहो तुममोह से राजलक्ष्मीको चाहतेहो कियहमेरीहै यहतेरीहै नमेरीहै नदूसरोंकीसदैवहै यहहज़ारोंको

उल्लंघनकरतीहुई तुझमेंप्राप्तहुईहै सोकुछकालतक यहचंचल तुझमें नियतहोकर जैसे कि गौस्थानको बदलती है उसीप्रकार तुझको भी छोड़कर फिर दूसरे को प्राप्तहोगी बहुतसे राजा व्यतीत होगये जिनकी संख्याकरना कठिनहै हे पुरंदर दूसरे तुझसे भी अधिकगुणवान् होंगे, यह पृथ्वी पूर्वसमयमें वृक्ष ओषधि बनआकररत्न और जीवोंसमेत जिनसे भोगीगई उन पुरुषोंको अबनहीं देखताहूं अर्थात् राजापृथु, ऐल, मय, भीम, नरक, शंबर, अश्वग्रीव, पुलोमा, स्वर्भानु, अमितध्वज, प्रह्लाद, नमुचि, दक्ष, विप्रचित्ति, विरोचन, ह्रीनषेव, सुहोत्र, भूरिहा, पुष्पवान, वृष, सत्येत्सु, ऋषभ, बाहु, कपिलाश्व, विरूपक, बाण, कार्त्तस्वर, बह्नि, विस्वदंष्ट्र, नैऋति, सकोच, वरीताक्ष, वराह, अश्व, रुचिप्रभ, विश्वजित्, प्रतिरूप, वृषाण्ड, विस्कर, मधु, हिरण्यकश्यप, कैटभ, यह सब दैत्येय और दानव नैऋति समेत और अन्य बहुत प्राचीनवृद्ध और उनसेभी प्रथमहोनेवाले दैत्येन्द्रदानवेन्द्र और जिन२को सुनतेहैं यहसबपृथ्वी को भोगकर चलेगये इससे कालही बड़ापराक्रमीहै सबनेसैकड़ोंयज्ञोंसे उसका पूजनकिया केवल तुम्हींशतक्रतु नहींहो वहसब धर्म्ममें पूर्णसदैव यज्ञकरनेवाले अंतरिक्षगामी सन्मुख युद्धकरनेवाले देहसेदृढ़परिघके समानभुजावालेसैकड़ों माया धारणकरनेमें समर्थकामरूपथे अर्थात् स्वेच्छासेरूप धारणकरनेवाले थे वहकभी युद्ध में पराजित नहीं सुनेगये वेदव्रत में परायणसत्यवक्ता और शास्त्रज्ञथे सबमें सबका अभीष्ट ऐश्वर्य्यपाया उन महात्माओंकोभी अपने ऐश्वर्य्यकाकभी अभिमान नहींहुआ सब अपनी सामर्थ्यके अनुसारदानी और मत्सरतासे रहितथे,सब ने जीवधारियों में जैसा वर्त्ताव योग्य था वैसाही किया दक्षप्रजापति के महाबली पुत्र प्रतापी हुये वह भी कालने आकर्षण किये, हे इंद्र तुम जब इस पृथ्वी को भोगकर फिर त्याग करोगे तब तुम अपना शोक दूरकरने को समर्थ न होगे कामभोगों में जो इच्छा है उसको त्यागदो और लक्ष्मी से उत्पन्न होनेवाले इस अहंकारको भी त्यागो इसी प्रकारसे तुम राज्य के नष्टहोने में शोकको न सहसकोगे तुमको चाहिये कि शोचके समय अशोच और हर्षके समय हर्ष रहित होजाओ, भूत और भविष्यको त्यागकरके वर्त्तमान वस्तु से निर्वाह करो क्योंकि सदैव कर्म्म में प्रवृत्त मुझसे सावधान को जो काल प्राप्त हुआ, हे इन्द्र क्षमाकरो वह थोड़ेही काल में तुमको भी प्राप्त होगा हे इन्द्र तुम यहां मुझको डराकर अपने वचनों से घायल करतेहो यह काल पहिले मुझको सताकर अब तेरेभी पीछे दौड़ताहै इसीहेतु से प्रथम काल से मेरेघायल होनेपर तुम गरजतेहो इसलोकमें युद्धके बीच तुझक्रोधी के सम्मुख कौन वर्त्तमान होने को समर्थ है और हे इंद्र पराक्रमी काल के प्राप्त होनेपर हजार वर्षतक तुम नियत रहोगे, जब मुझसे पराक्रमीके सबअंग

सावधान नहीं रहे तब मैं इंद्रासनसे उतारा गया और तुमको स्वर्ग का इन्द्र बनाया इसहेतु जीवलोक में समयके लौटने से उपासना के योग्य हुआ, अब तुम किस कर्म्म से इंद्र हो और हम किस अपराधसे राज्यसे भ्रष्ट हुये, काल ही कर्त्ता और नाशकर्त्ता है और सब निरर्थक हैं, ज्ञानी पुरुष ऐश्वर्य्यवान् होने वा न होने अथवा दुःख सुख होने न होने में सुखी दुःखी नहीं होते हे इंद्र तुम मुझको जानते हो और मैं तुमको जानताहूं तुम अपनी प्रशंसा हम से क्यों करतेहो क्यों काल से निर्लज्जहोते हो पूर्व समयमें तुम मेरेपराक्रम और उपायों को जानतेथे जो युद्धों में मैं करताथाहे शचीपति मैंने पूर्व समयमें बारह सूर्य्य, ग्यारह रुद्र, साध्यगण, मरुद्गण, बसुओं समेत देवासुर युद्धमें विजय किये इसको तुमभी जानतेहो, मैं ने युद्धमें बलसे भागने वाले देवता सब परास्त किये और जंगल वा जंगलके जीवों समेत अनेक पहाड़ों को हाथ से उठा २ नगरों समेत तेरेमस्तक पर फेंककर तोड़डाले अब मुझे क्या करना सम्भवहै निश्चय करके काल कठिनता से पारहोनेवाला है नहीं तो तुझ वज्रधारी को अभी मुष्टिका से मारने का उपाय करता यह मेरा पराक्रम का समय नहीं है किन्तु शांति का समय आया है इसीकारण से हे इन्द्र मैं तुमसे अधिक असहिष्णु होकर तुमपर क्षमा करताहूं सो तुम कालके विपर्यय से उस कालाग्नि से व्याप्त होकर कालकी फांसी में बंधे हुये मुझको अपनी प्रशंसा सुनातेहो, यह वह पुरुष श्यामवर्णलोक से दुर्ग्राह्यरुद्र काल मुझको बांधकर ऐसे नियतहै जैसे कि रस्सीसे पशुको बांधकर कोई वर्त्तमान हो, हानि, लाभ, सुख, दुःख, काम, क्रोध, ऐश्वर्य्य, नष्टता, मारना, पकड़ना मोक्षहोना इत्यादि सब बातें काल से प्राप्तहोती हैं न मैं कर्त्ताहूं न तू कर्त्ता है जो कर्त्ताहै वहसदैव सबका स्वामीहै वह कालवृक्षमें होनेवाले फलोंके समान हम सबको पकाता है, पुरुष जिन २ कर्म्मोंके करने से सुखको प्राप्त करता है फिर उन्हीं कर्मों को करता कालकेही कारण दुःखोंको भी भुगतता है, काल का जानने वाला पुरुष कालसे स्पर्श किया हुआ शोचके योग्य नहीं है इस कारणसे मैं शोच नहीं करताहूं, शोकमें किसीकी सहायता नहींहै जब शोच करनेवाले का शोक दुःखसे दूरनहीं करसक्ता है तब शोचको कौन करै इसी कारण से अब मैं शोच नहीं करताहूं इतनी बलिकी बातें सुनकर इंद्रने क्रोध को रोककर यह वचन कहा कि वज्र समेत हाथके उठने और वरुणके पाशोंको देखकर किसकी बुद्धि भयसे पीड़ित न होगी और यह तेरी तत्त्वदर्शी अचला बुद्धि मारनेवाली मृत्युसे भी पीड़ा नहीं पाती है निश्चयकरके तुम सच्चे पराक्रमी हो और अपने धैर्य्य से भय नहीं करतेहो और इस संसारको अस्थिर जानके कौनसा देहधारी विषयोंमें विश्वास करेगा मैं भी इसीप्रकार इसलोक

को नाशवान् जानताहूं,जोपुरुष उसघोररूप अविनाशी गुप्तप्रकट कालाग्नि में वर्त्तमानहै वह कभी नहीं छूटसक्ताहै चारोंओरसे जीवोंको तपानेवाले लोक को विनाशवान् जानताहूं,और फिर न लौटनेवाले कालकेपंजेसे नष्टताकोप्राप्त पुरुष मोक्ष नहीं होता है क्योंकि वह सावधानकाल अचेत जीवों में सदैव जागता है, पूर्वकाल में बड़े उपाय से भी वह प्राचीन सनातन धर्म्म और सबमें समान वर्त्तमान वह काल किसीसे उल्लंघन होनेके योग्यनहीं देखा वह काल न दूरहोसक्ता है और न बदलसक्ताहै जो काल दिनरात मास पक्ष क्षण काष्ठादि कला विकलाओंको ऐसेइकट्ठा करताहै जैसे व्याजकी जीविका वाला व्याजका संचय करताहै, अब यह करूंगा कल वह करूंगा इसप्रकारके कहनेवाले पुरुषको प्राप्तहोनेवाला काल आकर्षण करलेता है और जैसे कि नदीका वेग वृक्षको गिराताहै उसीप्रकार यह भी गिरालेजाता है, अर्थ भोग स्थान ऐश्वर्य्यादिक सब नाशहोजाते हैं, कालआकर जीवलोकके जीवनको लेजाताहै सब संसार विनाशवान् और अनियतहै तेरी वह अचल औरतत्त्व दर्शिनी बुद्धिपीड़ा से रहितहै, इस जगत्में बलवान् कालसे दबाकर पकड़ने परभी इसको चित्तसे ध्यान नहीं करताहै कि मैं पहिले समय में ऐसाथा यह ऐश्वर्य्यवान् नष्टहुआ इस बचन से चित्तको चलायमान नहीं करता है यह संसार, ईर्षा, क्रोध,लोभ,अहंकार,इच्छा,द्वेष,भय, मोहादिकों से अज्ञानताको पाताहै परन्तु आप तत्त्वभाव के ज्ञाता बुद्धिमान् ज्ञान तपसे संयुक्तहो,प्रत्यक्षमें कालको ऐसे देखतेहो जैसे कि हाथमें लिये आंवलेको देखा करते हैं हे विरोचनके पुत्र तुम कालके मुख्य चरित्रों के ज्ञाता सब शास्त्रोंमें प्रवीण बुद्धिमान् ज्ञानियों के चाहनेवाले हो मैं मानताहूं कि यह सब लोक आपकी बुद्धि से व्याप्त है सब ओर से मुक्तहोकर विचरतेहुये किसी बन्धन में नहीं पड़ते और तुमको रजोगुण तमोगुणभी आधीन नहीं करसक्ते हर्ष शोक से रहित तुम आत्माकी उपासना करतेहो सब जीवोंमें समभाव शान्त चित्त तुमको देखकर तुम में मेरी बुद्धि दयालुतायुक्त उत्पन्न हुईहै मैं ऐसे ज्ञानीको बन्धन दशा में कभी नहीं मारना चाहताहूं दयाही उत्तम धर्म्म है तुममें मेरी दयाहै और यह तेरी बरुणपाश समयके विपरीति होनेमें पृथक् होगी हेमहाअसुर प्रजाओंकी अभाग्यता से तेरा कल्याणहो जब पुत्रवधू वृद्धसासको अपनी सेवामें प्रवृत्त करेंगी और पुत्र अपने पिताको अज्ञानतासे काम करनेको भेजेगा और शूद्र ब्राह्मणों से पैर धुलवावेंगे और ब्राह्मणीस्त्रीको निर्भय होकर अपनी स्त्रीबना-वेंगे और उत्तम पुरुष अपने वीर्यको विपरीति योनिमें डालेंगे और वर्णसंकर होजायँगे और कांसीके पात्रों से बलिकर्म होने लगेगा और चारों वरण बे मर्याद होजायँगे तब तेरा एक २ पाश क्रम पूर्वक देहसे अलग होगा मुझसे

तुझे कोई भयनहीं है समय को देखते हुये सुखी निर्विघ्न स्वस्थचित्त नीरोगतापूर्वक विचरो याजहांचाहो वहांरहो उससेऐसेवचन कहकरदेवेश इन्द्र ऐरावत पर चढ़कर बड़ी प्रसन्नता से असुरों को विजयकर महाइन्द्र पदवी पाकर चलेगये और वहां सब देवताओंने उसकी स्तुतिकी और देव ब्राह्मण आदिसे पूजित स्वर्गमें इन्द्रासनको पाकर महा आनन्दयुक्त हुये ११९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेचतुःपंचाशत्तमोऽध्यायः ५४ ॥

पचपनवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह राजा भीष्मजी ऐश्वर्यवान् होनेवाले और नष्टताको प्राप्त होनेवाले पुरुषोंके जो मुख्य और प्रथम चिह्नहैं उनको आप मुझसे वर्णनकीजिये, भीष्मजी बोले कि तेरा कल्याणहो चित्तही से ऐश्वर्य होनेवाले और भ्रष्टहोनेवाले मनुष्यों के प्रथम चिह्नों को तुमसे वर्णन करताहूं हे युधिष्ठिर इसस्थान पर इस प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें कि लक्ष्मीजी और इन्द्र का सम्वाद है कि ब्रह्माजी के समान महा तेजस्वी तपोमूर्त्ति श्रीनारदजी ब्रह्मलोकवासी ऋषियोंकी समानतामें प्राप्तहोकर बड़े तपके तेजसेगुप्त और प्रकटदोनों लोकोंको देखतेस्वेच्छाचारीहो तीनोंलोकोंमें घूमे, कभी प्रातःकाल उठकर पवित्रजल में स्नानकरनेकी इच्छासे ध्रुवजीकेद्वारपर वर्त्तमान श्रीगंगाजी के तटपर पहुंचे और उस आकाशगंगापर उतरे वहां देव ऋषियों से पूजितपाकासुर औरशम्बरकेघाती वज्रधारी सहस्राक्षइंद्रजीभीउस देवऋषियोंसेव्याप्त श्रीगंगाजी पर आये वहदोनों जितेन्द्रीस्नानजप आदि क्रियासे निवृत्तहोकर कंचनके समान उसनदीकेरेतमें किसी टापूपरबैठगये(इस बातसे सिद्ध है कि स्वर्गवासी लोगभीस्नान जप आदि कर्मकरते हैं वहां बैठ कर उनदोनों पवित्रात्माओं ने उत्तम कर्मवाले देवऋषि और महर्षियों की कहीहुई कथा को वर्णन किया और भूतकालीन कथाओं को कहते हुये वह दोनों सावधान हुये फिर उन दोनों ने हजारों किरणों से व्याप्त उदयहुयेसूर्य्य को पूर्णमंडल युक्त देखकर उठकर उपस्थान किया और उसी सूर्य्य के समीप अन्य सूर्यकेसमान एकज्योतिभी जो कि प्रज्वलितअग्नि के सदृश देदीप्यमानथी दृष्टपड़ी वह गरुड़रूप सूर्यकेऊपर रचित चारोंओरसे नियत विष्णुकेसमान उनदोनोंके सम्मुख तीनोंलोकोंको प्रकाशकरता किरणों से अनुपम देदीप्यमानथी उसकेभीतर रूपवान् शोभायुक्त नाना अलंकारोंसे भूषित श्वेतमाला पहरे कमलदल में वर्त्तमान साक्षात् श्रीलक्ष्मीजीको देखा कि वह अपने उत्तम विमानमें से उतरकर देवेश इंद्र और नारदजी के पास आईं उनको देखतेही इंद्र और नारदजी हाथजोड़कर खड़ेहोगये और बड़ीविधिसे उनका

पूजन करके इस बचनको कहा कि हेसुन्दरी तुम कौनहो और किस निमित्त यहां आईहो और कहांको जाओगी, लक्ष्मीजीबोलीं कि तीनों पवित्रलोकों में सब स्थावर जंगम जीव मेरे प्रकाशको चाहा करतेहैं और मेरेलिये अनेक बुद्धियों से उपाय करतेहैं सो मैं कमल में उत्पन्न होकर सूर्य की किरणों से संसारको व्याकुलदेख उनके आनन्द देनेको उत्पन्नहुईहूं जो कि मैं पद्माश्री और पद्ममालाधारी लक्ष्मी भगवतीहूं हेबलिध्वंसी मैंहीं श्रीलक्ष्मी, श्रद्धा, मेधा सन्नति विजिति, स्थिति, धृति, सिद्धि, और मैंहीं तेरी विभूतिहूं स्वाहा, स्वधा, नियति, स्मृतिभी मैंहींहूं मैंहीं विजयी राजाओंकी सेनाओंकी अग्रध्वजाओं पर धर्मशीलोंकी आश्रयस्थान देशपुरों में विजय से शोभित युद्धों में और मुख न मोड़नेवाले शूरबीर राजाओंके पास सदैव निवास करतीहूं और बड़े बुद्धिमान् वेदज्ञ धर्मशील ब्राह्मणोंके पोषण करनेवाले सत्यवक्ता गुरूके वचनोंसे कर्म करनेवालेदान शील पुरुषों के पासभीसदैव वर्त्तमान रहतीहूं, और पूर्वसमयमें मैं सत्यधर्मसे सम्बन्धरखनेवाले असुरोंकेपासनियतथी फिरउनको कुमार्गगामी जानकर तेरेपास रहतीहूं, इन्द्रबोले कि हे सुमुखि तुम कैसे चलन वाले दैत्योंके पास वर्त्तमानथीं और फिर क्या देखकर तुम दैत्यदानवों को त्यागकर यहां आई लक्ष्मीजी बोलीं कि मैं धैर्यवान् अपने धर्ममें दृढ़स्वर्गमार्ग में क्रीड़ाकरनेवाले जीवोंमें प्रीतिमान्हूं दान, वेदपाठ, यज्ञ, पूजन, पितृ देवता ओंकापूजन, गुरुअतिथियोंका सत्कार और सत्यगुण वर्त्तमान होने से वही असुर बहुत शुद्धस्थान रखनेवाले स्त्रीसे अजित हवन करनेवाले गुरुसेवापरायण जितेन्द्री वेद ब्राह्मणोंके भक्तऔर सत्य बक्ताहुये और श्रद्धावान् क्रोधरहित दानी दूसरेके गुणोंमें दोषन लगानेवाले पुत्रमन्त्री और स्त्रीकेपोषण करनेवाले ईर्षा रहितथे कभी ईर्षासे परस्परमें इच्छावान् न हुये वह पण्डित अन्य के उत्कर्ष में कभीचित्तको म्लाननहीं करतेथे दानी योग्य भेजलेनेवाले अच्छेबुरे अनाथ दुःखीआदिके ज्ञाता बड़ेपारतोषिक देनेवाले सत्यवक्ता दृढ़भक्त और जितेन्द्री थे नौकर और मंत्रीआदिके प्रसन्न रखनेवाले प्रियाभाषी, सिद्धमनोरथी लज्जा वान् और व्रतपरायणथे, सदैव पर्वों में तीर्थादिस्नान दान यज्ञ धर्म्म करनेवाले चंदनादि सुगन्धित वस्तुओंसे अंगशोभित करके व्रत और तपके अभ्यासी प्रसन्नचित्त और ब्रह्मबादी थे प्रातःकाल के समय शयन नहीं करते और सोते में जिनके कभी सूर्य का उदय नहीं हुआ और रात्रि के समय जिन्होंने दही और सत्तूनहींखाया और ब्रह्मबादी हो प्रातःकाल घृतको देखकर घरसे निकले और मंगली पदार्थोंको भी देखा ब्राह्मणोंका भी पूजन किया सदैव धर्म्म कर्त्ता और दान नहींलिया और अर्द्धरात्रि पर शयन किया उसीप्रकार दिवसमें कभी न सोये, दुःखी अनाथ वृद्ध निर्बलरोगी और स्त्रियों पर करु

ण करते उनके भागों को सदैव विभागकिया और सदैव भयभीत उद्विग्न और व्याकुल चित्त भय से पीड़ित निर्बलअसमर्थ दुःखीलोगों को और जिनका धन जातारहा उनको प्रतिदिन विश्वास कराते थे और धर्म्महीं में प्रवृत्त एक दूसरे को नहींमारते थे और गुरुवृद्धों की सेवाआदिकर्मों में आसक्त चित्त थे और सब बुद्धि के अनुसार पितृ, देवता, और अतिथियों के पूजक थे और सत्यता, तपव्रत में प्रवृत्तहोकर देवताआदि से शेषबचेहुये अन्न को और उत्तम भोजन को भी अकेलेनहीं खाते थे और अन्य की स्त्रीकेपास भी नहींजाते थे और जीवों में ऐसे दयाकरतेथे जैसे कि अपनी आत्मा में, और आकाश में पशुओं में, बिपरीत योनियों में, और पर्वों में कभी बीर्य पतननहींकिया, हे इन्द्र उनमें इनगुणों के बिशेष दान करना, सावधानी और सीधेपने से उत्साह करना निरहंकार होना, उत्तम प्रीति, शांत, स्वभाव, पवित्रता, मृदुभाषण, मित्रोंसेद्रोह न करना इत्यादि अनेकबातें उत्तमथीं, मैं पूर्व समय में जीवोंकी उत्पत्ति के प्रारम्भ से बहुत से यज्ञोंके विपरीत होनेतक इस प्रकार के गुणवाले दानवोंकेपास वर्त्तमानरही, तदनन्तर समयकी विपरीतितामें उनकेगुण विपर्य्ययहोने से काम क्रोध लोभके आधीनहोनेवाले असुरों कीदेहोंसे बाहर निकलनेवाले धर्मको मैंनेदेखा औरबड़े बलवान्होनेसे अहंकारयुक्तहोकर उन्हों ने वृद्धोंकीनिन्दाकी और कथापुराणकहनेवाले वृद्धसभासदोंका हास्यकिया और अपनेस्थानों में बैठेहुये उनपराक्रमियोंनेपास आनेवाले वृद्धसत्पुरुषोंका सत्कारपूजन इत्यादिभी पूर्वकेअनुसार नहींकिया ५२ और पिताके वर्त्तमानहोने में पुत्र स्वामी होताथा और स्वामी सेवकभाव को पाकर अपने को बड़ेलज्जावान् प्रसिद्धकरते थे इसीप्रकार जो पुरुष धर्म से रहित निन्दितकर्म के द्वारा बड़े मनोरथों को प्राप्तकरते हैं वैसेहीकर्मों में इनकीभीइच्छाहुई और रात्रि के समय उच्चस्वरसे अप्रियवार्त्ताओं को भीकहा तब अग्निने अपने प्रकाश को कमकिया और पुत्रों ने पिता के विपरीत और स्त्रियोंने अपने स्वामियों के विपरीत कर्मकोकिया, और माता पिता वृद्ध आचार्य्य अतिथि गुरुआदिका प्रतिष्ठापूर्वक मानसत्कार और बालकों का लालन न करके भिक्षा बलि से रहित आपही अन्न को भोजन करते थे अन्नादिक का विभाग न करके पितृदेवता अतिथि ब्राह्मण और गौओं को न पूजकर भोजनकरते थे उसी प्रकार उनके रसोइयोंनेभी चित्त कर्म वाणीसे पवित्रता पूर्वक काम नहींकिया फलेहुये धानोंको कौवे और चूहोंने भोजन किया दूधउघड़ा रक्खा और झूठे मुख से असुरोंने घृतका स्पर्श किया, बाल बचेवाली स्त्रीने कुदाल, दरान्त, बांसका पात्र झूठे कांसीके और पीतल आदिके पात्रादि सामानको नहींदेखा और गिरनेकेयोग्य महल आदिकी दीवारों

को नहीं बनवाते थे और पशुजीवों को बांधकर घास जल आदि से पोषण नहीं करते थे जानबूझकर बालकों के भोजन को खाया और नौकर चाकर आदिको तृप्त न करके भोजन किया और केवल अपनेही निमित्तखीर मोहनभोग पूप पूरीआदि अनेक पक्वान्नों को बनवाया और देव पितरों के उद्देश विना मांसको भक्षण किया और सूर्यास्त के समय निद्रायुक्तहुये और प्रातःकाल सायंकाल सब समयों में शयन करनेलगे और घर घर में कलह वर्त्तमान हुई और नीचों में बैठ श्रेष्ठ पुरुषोंकी उपासना त्यागकरदी और विपरीतधर्मी पुरुषों ने परस्पर में आश्रमीलोगों से शत्रुताकी वर्णसंकर होगये किसी बात का शोच विचार नहीं रक्खा जो ब्राह्मण वेदज्ञथे और जो प्रत्यक्ष में वेदनहीं जानतेथे वहसब अत्यन्त प्रतिष्ठा और अपमानमें अन्तर रहित और मुख्यता से पृथक् हुये अर्थात् सब एकलाठी से हांकेगये और अनेक भूषण वस्त्रादि को अपमान से देखते थे स्त्रियों ने पुरुषोंका और पुरुषों ने स्त्रियोंका रूप धारण करके नानाखेलों में चित्तको लगाया, धन ऐश्वर्यों में प्रवृत्त असुरों ने नास्तिकतासे पूर्व पूजाके योग्यों को देना बन्द किया कभी धनके संशय में मित्रसे मित्रने भी मांगना प्रारम्भ किया और उस मित्रने अपने प्रयोजन के लिये बड़े मूर्खों के समूहों में अपने धनको वृथाखोया, श्रेष्ठ वर्णों के मध्य में व्यापार करनेवाले मनुष्य दूसरेके धन मारलेने में इच्छा करते देखे और शूद्र लोग भी तपस्या करनेलगे और कितनेही पुरुष ब्रह्मचर्य्य व्रतके विना पढ़ते थे और कोई २ मिथ्या व्रतभी करते थे, शिष्य गुरूकी सेवारहितथे और कोई २ गुरू भी शिष्य के मित्र होगये और उत्साहरहित वृद्ध मातापितापुत्रों से भोजनको चाहते स्वाधीन हुये और देवज्ञ और शान्तचित्त ज्ञानीलोग कृषि कर्म्मोंको करने लगे और मूर्खोंने श्राद्धों में भोजनकिया गुरूकी आज्ञाशिष्यों ने नहींकी बहूने सास श्वशुर के विद्यमानहोनेमें नौकरोंपर आज्ञाकी, स्त्रीने पति पर हुक्मचलाया और पति को बुलवाकर आज्ञादेतीथी पिता ने बेटे के चित्तको बड़े उपाय से बचावकिया चोर और राजाओं ने धनको हरा पुण्य श्लोक ईश्वरके न माननेवाले और गुरूकीस्त्रीसे प्रीतिकरनेवाले पापीमनुष्य और मित्रके पोषित भी होकर मित्रकी निन्दा करनेवालेहुये, निषिद्ध वस्तुओं के खाने में प्रीतिमान अमर्यादहोने से तेज और प्रताप से हीनहुये विपरीत समय में इसप्रकारके आचरण करनेवाले उनअसुरों के पास में निवासनहीं करतीहूं और हे देवेन्द्र तुम्हारे पूजनके पीछे देवतालोग भी सब मुझको पूजेंगे, जहां मैं रहूंगी वहां मुझसे विशेष मेरी बड़ी प्यारी और आज्ञाकारी सात देवी हैं और आठवीं जयानाम देवी है वह आठ रूपों से तेरे घर आवेंगी, उनके यह नाम हैं आशा, श्रद्धा, धृति, क्षांति 'विजिति, सन्नति, क्षमा और

हे इन्द्र इनके आगे चलनेवाली आठवीं वृत्ति है यह सब और मैं असुरों को त्यागकरके तुम्हारे देश में आई हूं हम उन देवताओं के पास निवास करें गी जिनका अन्तरात्मा धर्म्म निष्ठहै यह लक्ष्मी जी के वचनसुन देवऋषि नारदजी और इन्द्रने उसकी प्रसन्नता के अर्थ अनेक स्तुतियों से आनन्द दिया तदनन्तर उस देवमार्ग में वायुका बड़ा वेगहुआ उसमें नानाप्रकारकी ऐसी सुगन्धियां थीं जिनसे देहकी सब इन्द्रियों को आनन्द होता था और बहुतसे देवतालोगभी पवित्र स्थानों में निवास करते वर्त्तमानहुये और लक्ष्मी जी के पास बैठेहुये इन्द्रके दर्शनों की लालसा करते थे फिर इन्द्र और नारद जी हरे घोड़ेवाले सुन्दर रथ में सवार होकर देव सभाको गये और इन्द्रकी अंगचेष्टाको चित्तसे विचारते देवलके देखनेवाले नारदजी ने महर्षियों समेत श्रीलक्ष्मी जी के आने की कथाको लक्ष्मी के अर्थ वर्णन किया फिर उस प्रकाशमान स्वर्ग से अमृतकी वर्षा हुई और पितामह ब्रह्माजी के भवन में विना बजाये दुन्दुभी के शब्दहुये और दिशाओं में प्रकाश होगया इन्द्र ने ऋतु के अनुसार पृथ्वी पर वर्षाकरी और कोई पुरुष धर्म्म मार्ग से न हटा और देवताओं की विजय से पृथ्वी उर्वरा और रत्नों की आकरों से शोभित हुई, यज्ञादि कर्मों में क्रीड़ा करनेवाले और पवित्र कर्मी पुरुषों के शुभमार्ग में सम्पूर्ण मनुष्य चित्तसे प्रवृत्तहुये मनुष्य, देवता, किन्नर, यक्ष, राक्षस बड़े धनाढ्य और अच्छे साहसी हुये, वायु से पृथक् होनेवाले वृक्षसे भी कभी बे समय पर फूल नहीं गिरा तो फल कैसे गिरे और किसी का वचन दुःखदायी और भयकारक नहीं हुआ, ब्रह्म सभामें वर्त्तमान ऐश्वर्य्य की इच्छा करनेवाले जो पुरुष सब मनोरथों के दाता इन्द्र आदि देवताओं से किये हुये लक्ष्मी जी के इस पूजनको पढ़ते हैं वह लक्ष्मी को पाते हैं हे युधिष्ठिर जो तुम ने मुझ से पूछा वह सब मैंने कहा अबतुम खूबविचारकरके सिद्धांतके पानेकेयोग्यहो९६॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे पंचपंचाशत्तमोऽध्यायः ५५ ॥

छप्पनवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह किसस्वभाव, आचार, विद्या और पराक्रमवाला मनुष्य उस ब्रह्मलोक को पाता है जो कि प्रकृति से परे और निश्चल है, भीष्मजी बोले कि मोक्षधर्मों में सावधान अल्पाहारी जितेन्द्री पुरुष प्रकृति से परे अचल ब्रह्मलोक को पाता है इस स्थान पर इस प्राचीन इतिहास को सुनो जिसमें जैगीषव्य और असित देवलऋषि का संवादहै, असित देवल ऋषिने बड़े ज्ञानी धर्म्म शास्त्रज्ञ हर्षशोक से रहित जैगीषव्य से कहा कि हे अनघ तुम न प्रसन्न होते न निन्दा से दुखी होतेहो ऐसी तुम में क्या बुद्धि है

और कहां से है और उसका मुख्यस्थान कौनसा है यह वचन सुनकर उस महा तपस्वी ने देवलसे वह वचनकहा जो कि संदेहसे रहित बड़े सार्थकपदों से युक्त और पवित्रथा कि हे ऋषियों में श्रेष्ठ, पवित्र कर्मी पुरुषोंकी जोगति, पराकाष्ठा, और शांति है उसको तुमसे कहताहूं कि जो निन्दा और स्तुति करनेवाले मनुष्यों में एकभाव हैं और अपने ऐसे गुणोंको वा नियम और कर्मोंको गुप्तकरते हैं वह निन्दा कियेहुये ज्ञानी लोग उस निन्दकको निन्दा के बदले उत्तर नहीं देते हैं और मारनेवालोंको मारनेके बदले मारना नहीं चाहते और निष्प्रयोजनको नहीं शोचते और समय पर वर्त्तमान होनेवाले कर्मोंको करके व्यतीत दशाको नहीं शोचते न प्रतिज्ञा करते हैं वह समर्थ और व्रतकरनेवाले ज्ञानी पुरुषपूजाके प्राप्तहोनेपर इच्छा पूर्वक अर्थोंमें न्याय के अनुसार कर्म्मकर्त्ता होतेहैं वह दृढ़ विद्यावान् महाज्ञानी स्वभाव और चित्त के रोकनेवाले मनबाणी और कर्म्म से किसी समय भी अपराधको नहींकरते और ईर्षारहित हो परस्पर में मारपीट कभी नहीं करते वह पण्डित लोग दूसरे की वृद्धि आदि से कभी दुखीनहीं होते हैं और न किसी की अत्यन्त निंदा और स्तुतिको करते हैं और न कभी निन्दा स्तुतिसे बिपरीत दशाको प्राप्त होते हैं वह शांतचित्त सब जीवोंकी वृद्धि चाहनेवाले न कभी क्रोधकरते हैं न प्रसन्न होते हैं और कभी किसी समयपरभी अपराध नहींकरतेहैं हृदय की गांठको खोलकर सुखपूर्वक घूमते हैं जिनके कि बांधव नहीं हैं और न वह किसी के बांधव हैं अथवा न वह किसी के शत्रु न उनके कोई शत्रुहैं ऐसी वृत्तिवाले मनुष्य सदैव सुखपूर्वक जीवते हैं,हेब्राह्मणोत्तम जो धर्म्मज्ञ धर्म्ममें प्रवृत्तरहते हैं अथवा इसमार्ग से बाहर कियेगये हैं वह प्रसन्नहोते हैं न चित्तसे व्याकुलहोते हैं मैं उसमार्गमें नियतहूं किसको किसप्रकारसे निन्दाकरूं निन्दा स्तुति से मेरी हानि लाभ कुछनहीं है,तत्त्वका जाननेवाला ज्ञानी अपमानसे ऐसा तृप्तहोजाय जैसे कि अमृतसे होताहै और प्रतिष्ठासे ऐसा भयकरे जैसे कि बिषसे करतेहैं अपमान पानेवाला सुख से सोता है और दोनों लोकों में निर्भयरहता है और सब दोषरहित होताहै और जो अपमान करनेवाला है वह नष्टहोजाता है जो कोई ज्ञानी उत्तमगतिको चाहते हैं वह इस व्रतको धारण करके सुख से वृद्धिको पाते हैं, जितेन्द्री पुरुष सब ओरसे सब यज्ञोंको प्राप्तकरके ब्रह्मलोक को पाताहै इसपरमगति पानेवाले ज्ञानी के पदपर देव गंधर्वादि कोई नहीं प्राप्तहोते हैं २५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेपट्पंचाशत्तमोऽध्यायः ५६ ॥

सत्तावनवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि पृथ्वीपर कौनसामनुष्य सब संसारका प्यारा और जीवों का प्रसन्न कर्त्ता सबगुण सम्पन्न है, भीष्मजी बोले कि हे भरतवंशियोंमें उत्तम में इसस्थानपर एक इतिहास तुझ से कहताहूं जिसमें नारदजी के विषय में श्रीकृष्णजी और उग्रसेनका सम्वादहै उग्रसेनने श्रीकृष्णजीसे कहा कि हे केशवजी संसार नारदजी के कीर्त्तनको करताहै और मैंभी मानताहूं कि वह गुणवान् हैं उनका वृत्तांत आप वर्णन कीजिये बासुदेवजी बोले कि हेराजा उग्रसेन मैं नारदजीके उत्तम गुणोंको तुम से कहताहूं अर्थात् इसदेहका तपानेवाला अहंकार कुछ खेलके निमित्त नहीं है वह शास्त्र के अनुसार चरित्रों से युक्तहै इसीकारण सब स्थानों में पूजित है नारदजी में अमित्रता, क्रोध, चपलता, भय इत्यादि नहीं हैं न उनमें दीर्घसूत्रता है वह बड़े उपासना के योग्यहैं काम या लोभसे इनके वचनों में कोई बेमर्यादगी नहीं है वह वेदांत की बुद्धिसे सिद्धान्तके ज्ञाता शान्तचित्त समर्थ जितेन्द्रिय और सत्यवक्ता हैं, तेज, यश, बुद्धि, ज्ञान, नम्रता, जन्म और तपसे बड़े हैं इसीकारण सब स्थानों में पूजितहैं और उत्तम शीलवान् सुस्वरूप निद्रावान् श्रेष्ठ भोजन करने वाले इच्छाचारी पवित्र प्रियभाषी और ईर्षासे रहितहैं वह बड़े कल्याणकारी निष्पाप दूसरोंकेअनर्थोंसे अप्रसन्न वेद, श्रुति के आख्यानों से अर्थोंको प्राप्त किया चाहतेहैं क्षमावान्हैं और समान दृष्टिहोनेसे कोई उनकाप्रिय अप्रियभी नहींहैचित्तके अनुसार वार्त्ताकरनेवालेबहुतसेशास्त्रऔरअपूर्व कथाओंकेज्ञाता पण्डितइच्छाऔरद्वेषसे रहित उदारबुद्धि क्रोधलोभसे पृथक्हैंप्रथमधनकीअभिलाषामें इनका मुख्यज्ञान नहीं हुआ इसीसे यह अत्यन्त निर्दोषहैं दृढ़भक्ति पवित्र बुद्धि युक्त शास्त्रज्ञ दयावान् और अज्ञान दोष से पृथक् हैं इसकारण सब स्थानों में पूजित हैं सब संगों में प्रवृत्त चित्त नहीं हैं और न आसक्त चित्तके समान दृष्टिआते बड़े संशयसे रहित उत्तम वर्णन करनेवालेहैं इनकी समाधि कार्य के निमित्त नहीं हैं न किसी समय अपनी प्रशंसा करते हैं और हठसे रहित सूक्ष्मभाषण कर्त्ता हैं इसी से सर्वत्र पूजितहैं, निन्दा रहित लोक को नानाप्रकारकी बुद्धियों को देखते संसर्ग विद्या में कुशल सबशास्त्रों की स्तुति करते अपनी इच्छापूर्वक निर्वाह करके सफल कालवान् और चित्तको जीतनेवाले हैं इन हेतुओं से सर्वत्र माननीय हैं परिश्रमी ज्ञानी समाधि से तृप्त न होकर सदैव योगी और सावधानहैं लज्जा युक्त कल्याणके निमित्त दूसरों के कहने से काम में प्रवृत्त होते हैं और दूसरों के गुप्त भेदों को प्रकट न करनेवाले अर्थ लाभ से प्रसन्नता रहित और लाभ न होने में शोकदुःख रहित

स्थिर बुद्धि संसार से विरक्त हैं इसी कारण वह सर्वत्र सब पुरुषों से माननीय है इन सब गुणसम्पन्न चतुर पवित्र नीरोग काल और अभीष्ट के जाननेवाले को कौन अपना मित्र और प्यारा न बनावेगा २४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेसप्तपंचाशत्तमोऽध्यायः ५७ ॥

अट्ठावनवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह मैं जीवों के आदि अन्त को और युगयुग के ध्यान, कर्म, काल और अवस्थाको और लोकतत्त्व अर्थात् लोकका वास्तवरूप वा आकाशादि पंचभूतों की उत्पत्ति और लय के स्थान को अत्यन्तता से जानना चाहता हूं और यह भी निश्चय किया चाहता हूं कि यह उत्पत्ति और प्रलय कहां से होती है हे कौरवेन्द्र जो आपकी कृपा हमारे ऊपर है तो वर्णन कीजिये, प्रथम ब्रह्मर्षि भरद्वाजजी के सन्मुख भृगुजी के वर्णन किये हुये उत्तम ज्ञान से मेरी उत्तम बुद्धि योग धर्म में निष्ठायुक्त दिव्य रूपवाली हुई इसी हेतुसे फिर पूछताहूं आप विस्तार समेत कहने के योग्यहैं, भीष्मजी बोले कि इस स्थानमें एक प्राचीन इतिहास तुझ से कहताहूं जिसको कि भगवान् व्यासजी ने प्रश्न करनेवाले अपने पुत्रसे वर्णन किया अर्थात् व्यासजी के पुत्र श्रीशुकदेवजी ने सांगवेद और उपनिषदों को पढ़कर धर्म्म के पूर्ण दर्शन से नैष्ठिककर्मों की इच्छाकरके कृष्णद्वैपायन व्यासजी जो धर्म्म अर्थ के निस्सन्देह ज्ञाता हैं उनसे पूछा कि सब जीव समूहोंका ईश्वर जो काल, ज्ञान, अविद्या सम्बन्धी रूप धारण करके जीव भी कहलाता है उसको और ब्राह्मणों के जो कर्म हैं उनको मुझ से कहने के योग्यहैं भीष्मजी ने कहा कि इस प्रकारसे पूछे हुये धर्म्म अधर्म्म और ब्रह्मके ज्ञाता व्यासजीने पुत्र शुकदेवजी से इस सब भूत भविष्य वृत्तान्तको कहा कि हे पुत्र वहआदि अन्त रहित प्रकाशवान् जरावस्था और रूपान्तर से पृथक् अविनाशी जैसे जीवों करके ईश्वर कहाजाताहै वह अजन्मा तीनों कालों से पृथक् न जानने के योग्य ब्रह्मसंसार की उत्पत्ति से प्रथम वर्त्तमान होताहै, अबदूसरे प्रश्नका उत्तर देते हैं कि पन्द्रह निमेषकी एक काष्ठा और तीस काष्ठाकी एक कला और तीस कला का एक मुहूर्त्त जो कि सूर्य सम्बन्धी कला के दशवें भागसे संयुक्तहो वैसे तीस मुहूर्त्त का एक दिन और रातहोय यह प्रमाण मुनियों से नियत हैं और तीस रात्रि दिनको एकमास और बारह मासको एकवर्ष और गणितज्ञ पुरुष दक्षिणायन और उत्तरायण दोनों के होनेको वर्ष कहते हैं, सूर्य नरलोक में दिन रातको विभाग करते हैं रात्रि शयन करने को और दिन कर्म करनेको है मनुष्यों का एकमास पितरों का एक दिनरात होताहै फिर

उन दोनोंका यह विभागहै कि शुक्लपक्ष उनका दिन कर्म करने को और कृष्णपक्ष उनकी रात्रि शयन के निमित्त है और मनुष्य का एक वर्ष देवताओं का एक दिनरात है उन दोनों के यह विभागहैं कि उत्तरायण दिन और दक्षिणायन रात्रिहै और पूर्व में जो मनुष्यों के दिनरात कहे उनके वर्षों की संख्याकरके ब्रह्माजी के दिनरातको कहताहूं और सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुगके क्रम से दिव्य वर्षोंको भी कहताहूं सतयुग चार हजार वर्षोंका होता है और उसकी संध्या उतनेही सैकड़े अर्थात् चारसौ वर्ष की और सन्ध्यांश भी चारसौही साल काहै शेष बचेहुये सन्ध्या और सन्ध्यान्शयुक्त तीनोंयुगों में हजार और सैकड़े में एक २ चरण अर्थात् चौथाई भाग कम होजाता है यह वर्ष इन सदैव वर्त्तमान सनातन लोकों को धारण करतेहैं हे तात यह कालनाम चारयुग की सूरत आदि अन्त रहित जीवरूप चित्तरूप उपाधियों के योग से चार प्रकार का भी वास्तव में सर्व विकारसे पृथक् ब्रह्मही है और ब्रह्मज्ञानियों का जाना हुआ है, सतयुग में चारोंचरण रखनेवाला सब धर्म सत्य वर्त्तमान होताहै उसका कोई शास्त्र अधर्मयुक्त नहीं जारी होताहै, दूसरे युगों में वेदोक्त धर्म एक चरणसे कम होजाताहै चोरी, निन्दा, मिथ्या और शठता आदि से अधर्म की वृद्धि होतीहै, सतयुग में मनुष्य नीरोग और सब मनोरथों के सिद्ध करनेवाले चारसौवर्ष की अवस्थावाले होतेहैं, त्रेतायुग में आयुका एक चरण कम होजाताहै इस युगमें वेद बचन युगके अनुसार न्यूनताको प्राप्तहोतेहैं अवस्था आशीर्वाद और वेदके जो फलहैं वह भी न्यूनता को पातेहैं, सतयुगमें औरही धर्म हैं इसीप्रकार त्रेता द्वापर आदिमें भी पृथक्२ धर्म होतेहैं, सतयुगमें तपको प्रधान कियाहै त्रेतामें ज्ञान उत्तमहै द्वापरमें यज्ञ को और कलियुगमें केवल दानही श्रेष्ठ रक्खाहै पण्डित लोगोंने इनयुगोंकी बारह हजार संख्या कही है उसकी हजार आवृत्तिको ब्रह्माजी का एक दिन कहते हैं और उतनीही रात्रिहै इस दिन के प्रारम्भ में ईश्वर विश्वको प्रकट करता है और रात्रि के प्रारम्भ से प्रलय में प्रवृत्त ध्यानावस्थित होकर योग निद्रा में होताहै और उस निद्रा से रात्रि के अन्त में जागताहै, जिन्हों ने ब्रह्माजी के दिन रातको युगों की हजार २ चौकड़ी जानी है वही दिनरात के जाननेवाले हैं, और हम लोगों में भी इसी उत्पत्ति और प्रलयको दिखलातेहैं, प्रलयके समय निद्रा से व्याकुल होकर ब्रह्माजी इस अविनाशी आत्मस्वरूपको विकारवान् करतेहैं अर्थात् उससे अहंकारको उत्पन्न करतेहैं और अहंकार से व्यक्तात्मक चित्तको पैदा करतेहैं, तात्पर्य यह है कि काल और आकाशादि चित्तरूप हैं और योगनिद्रासे जगने की दशा में उत्पत्ति और नाश होताहै ३२ ॥ इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे अष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ५८॥

उनसठवां अध्याय ॥

व्यास जी बोले कि जो ब्रह्म है वह सूक्ष्म वासना रूप और बीज रूपहै क्योंकि इस अकेलेही से यह सब जड़ चैतन्यात्मक जगत् उत्पन्न हुआ वह ईश्वर प्रातःकाल के समय जगकर महत्तत्त्वोंकी कारणरूप अविद्यासे जगत् को उत्पन्न करताहै उत्पत्तिसे प्रथम महत्तत्त्व हुआ फिर वही शीघ्रतासे व्यक्त रूप चित्त वर्त्तमान होताहै फिर उसी चित्तरूप कर्त्ता ने दूरगामी बहुत प्रकार से चलनेवाला संकल्प बिकल्पात्मक होकर चैतन्य आत्माको ढककर चित्त से उत्पन्न होनेवाली सात वस्तुओं को उत्पन्न किया वही उत्पत्तिकी इच्छा से चलायमान चित्त बहुत प्रकारकी सृष्टिको उत्पन्न करताहै उसी चित्तसे आकाश उत्पन्न होताहै उसका गुण शब्दहै रूपान्तर होनेवाले आकाश से वायु उत्पन्न हुआ वह सब सुगन्धियों का चलानेवाला पवित्र और पराक्रमी है उसका गुण स्पर्श है फिर उस रूपान्तर होनेवाले वायुसे प्रकाशमान ज्योति हुई जिससे कि अग्नि उत्पन्न हुआ उसका गुणरूपहै उस रूपान्तर प्राप्त होने वाले तेजरूप अग्निसे रसात्मक जल उत्पन्न होताहै, जलसे गन्ध पृथ्वी और सबकी उत्पत्ति कही जातीहै, पहिले पहिले सब तत्त्वोंके गुण पिछले पिछले तत्त्वों को प्राप्त करतेहैं उन भूतों में जो भूत जितने कालतक जिस मार्ग से वर्त्तमान होताहै वह भूत उतने समयतक उतने गुणवाला कहा जाताहै यहां प्रथम आधे श्लोक में वर्णन होनेवाली दशा सूक्ष्मतत्त्वों में भी जानना चाहिये और स्थूल तत्त्वों में पंचीकरणके पीछे सब पांचों गुण वर्त्तमान होते हैं पंचीकरण यह है कि एक तत्त्व के दोभाग किये पहिला भाग तो उसीतत्त्व से सम्बन्धितरक्खे और दूसरेभागके चारविभाग करके चारोंतत्त्वों में मिलादिये जायँ यही बिभागपांचों तत्त्वोंमें करना चाहिये, जो कोई पुरुष जलमें गन्धि जानकर अज्ञानता से कहै कि जलमेंही गन्धि है तब जल और वायु में वर्त्तमान गन्धिको पृथ्वी में भी जाने, यह सात रूपयुक्त और पृथक् २ अनेक प्रकारके पराक्रमी सबमिलकर सृष्टिके उत्पन्न करनेको समर्थ न हुये१० किन्तु परस्पर सब मिलकरही रक्षाकरने वाले हुये और सब ने अपने २ अंशों से शरीर रूप को उत्पन्न किया इस कारण आत्मापुरुष कहाजाता है अर्थात् पुर देहको समझो और जो उसदेहरूप पुरमें बसे वह पुरुष कहाता है इनस्थूल तत्त्वोंके एकत्र होनेसे मूर्त्तिमान देह उत्पन्न होताहै यहदेह सोलह वस्तुओंसे बनता है वह सोलह यह हैं पंच भूत, चित्त, दशइन्द्रियां, सूक्ष्मतत्त्व महत्तत्त्व, अहंकार यहसब और भोग से और शेष कर्म्म के संयोगसे इस देहमें प्रवेश करते हैं १२ इसप्रकार से स्थूल शरीरमें सूक्ष्म शरीरके प्रवेशको कहकर उसमें

जैसे चैतन्य का प्रवेशहोता है उसको भी सुनो वह सबजीव मात्रोंका स्वामी प्रथम सब देहोंको लेकर तपकरने के लिये उसमें प्रवेश करता है उसजीवरूप प्राप्त करनेवाले को प्रजापति ब्रह्मकहा १३ वही जड़ चैतन्य जीवों को उत्पन्न करताहै फिर वही ब्रह्माजीदेवताऋषि पितर और मनुष्योंको उत्पन्नकरते हैं१४ लोक,नदी,समुद्र,दिशा,पर्वत,वृक्ष,मनुष्य, गन्धर्व,राक्षस,पशु, पक्षीसबआदि को उत्पन्न करते हैं अनाशमान आकाशादिक और नाशवान् घट इत्यादि और सब जड़ चैतन्यों को पैदाकरते हैं और उन सब जीवोंके जो पिछले कर्म्म पूर्व देहके वर्त्तमान थे वही बारंबार उत्पन्नहोनेवाले मनुष्य किन्नर आदि अपने उन्हीं कर्म्मोंके फलको प्राप्तकरते हैं और हिन्सात्मक पापोंसे रहित कठिन साधारण धर्म्म, अधर्म्म, सत्य, मिथ्या आदि गुणोंके कारण जन्मलेने वाले उनको पातेहैं इसहेतुसे उनको वही अच्छालगता है, महाभूत देह और इन्द्रियोंके नानाप्रकारके भोजन और विषयोंको ईश्वरही रचताहै,१६कितनेही मीमांसा जानने वाले पुरुषोंने कर्म्मोंमें पुरुषकीही सामर्थ्यको कहा है अर्थात कर्म्मही प्रधान कियाहै और कितनेही लोग दैव प्रधान कहतेहैं उनके मतसे ग्रहही अच्छे बुरे फलके देनेवालेहैं और भूत चिन्तकोंने स्वभावहीको प्रधान कहा है २० अर्थात् उपाय कर्म्म और दैव यह तीनोंफलवर्त्ती स्वभावसे पृथक् नहीं हैं उनका जुदा २मानना कोई विवेक नहींहै और कई मतवाले अपने२ मतके अनुसार कहतेहैं परन्तु सिद्धान्त मत यहहै कि जो पुरुष रजोगुण तमो गुणसे रहित सम्परिज्ञात नाम दशामें अर्थात् यथार्थ विचारावस्थामें वर्त्तमान हैं वह यही सिद्धान्त देखतेहैं कि ब्रह्मही सबका उत्पत्ति कारक है–अब ब्रह्म प्राप्ति के साधन और फलको ढाईश्लोकों में वर्णन करतेहैं कि जीवोंका तप ही मोक्षका कारण है उसका मूलचित्तका और इच्छाका रोकनाहै उस योग से सब मनोरथों को प्राप्त करसक्ता है, तपसे उस ईश्वरको पाता है जो कि जगत् को उत्पन्न करताहै ब्रह्मभाव को पानेवाला वह योगी सब जीवों का स्वामी होताहै, ऋषियों ने दिन रात्रि तपस्या करने के द्वारा वेदोंको प्राप्त किया अर्थात् पूर्वजन्म में पढ़हुये वेदोंको योगबलसे प्राप्त किया और ब्रह्मा जी ने आदि अन्त रहित विद्याको ईश्वरसे उपदेश पाकर शिष्योंकी शिक्षा के द्वारा जारी किया, ऋषियोंके नाम और वेदों में जो उत्पत्तियां हैं और जीवों का अनेक रूपहोना और कर्म्मों का जारीहोना इन सब बातोंको उस ईश्वरने वेदके शब्दोंसे उत्पत्तिकी आदि में पैदाकिया वेदों में जो शुद्ध ऋषियों के नाम और उत्पत्ति हैं उनको वह अखिलात्मा ईश्वर अपनी रात्रिके अन्त में दूसरों के निमित्त विचार करता है अर्थात् वेद में भविष्य काल का वर्णन है, नाम, भेद, तप, कर्म्म, यज्ञ, आख्या आलोक यह सब लोक की

सिद्धियां हैं, आत्मसिद्धि, दश साधन संपन्न वेदों में कही जाती है—अब अंतरङ्ग मोक्ष साधनको कहते हैं कि वेदोक्त कर्म्मोंमें जो कठिनता से प्राप्तहोने के योग्य ब्रह्म वेददर्शी ब्राह्मणोंसे कहाहुआ और उनवेदोक्त कर्मोंके अन्तमें अर्थात् उपनिषदों में जिसप्रकारसे वहब्रह्म साफ २ कहागयाहै वहब्रह्मकर्म्म योगके द्वारा दृष्टपड़ताहै लक्षण के योग्य ब्रह्मस्वरूपको दिखलातेहैं, देहका अभिमान रखनेवाली जीवकी द्वैतताकर्मसे पैदाहोनेवालीहै अर्थात् कर्म्मकेथकनेपर शयनदशाको समाधि नहींकहसक्ते वह द्वैतता सुखदुःख शीतउष्णआदिका जोड़ोंसेसंयुक्तहै और आत्माकी मोक्ष विज्ञान सेहै पुरुष विज्ञान के बलसे त्यागकरताहै,शब्दब्रह्म और परब्रह्म यहदोनों जाननेके योग्यहैं, शब्द ब्रह्मकी पूर्णउपासनासे पुरुष पर ब्रह्मको पाताहै अब दूसरोंको निन्दायुक्त करकेप्रणव उपासनाकी प्रशंसा करतेहैं, पशुहिन्सा युक्त यज्ञोंके करनेवाले क्षत्री लोग हैं और हविसे यज्ञकरने वाले बैश्यहैं और तीनों वर्ण की सेवारूप यज्ञकरनेवाले शूद्रलोगहैं, ब्राह्मण तपरूप यज्ञ करनेवालेहैं परन्तु यह यज्ञोंकीरीति त्रेतायुगमेंथी और सतयुगमें नहींहोतीथी क्योंकि सतयुगमें स्वतः सिद्धिहोजाती थी और द्वापर वा कलियुगमें ऐसे यज्ञोंमें उपद्रव होतेहैं द्वैततासे रहित धर्म रखने वाले अर्थात् अद्वैत निष्ठा रखनेवाले लोग सतयुग में तपकोही करतेहैं वह ऋग् यजुःसाम वेदोंको और फलयुक्त यज्ञोंको विचार के द्वारा अनात्मारूप स्वर्ग आदिका देनेवाला देखकर योगमार्गको ही अंगीकार करतेहैं वह वेद और शास्त्र जड़ चैतन्य स्थावर जंगम जीवों के शिक्षा करनेवाले होते हैं आशय यह है कि त्रेतायुगमें सतयुग के समान मनुष्यों की धर्म्म में प्रवृत्ति अपने आप नहींहोती, त्रेतायुग में वेदयज्ञ वर्ण और आश्रम दृढ़हुये फिर वह द्वापर युग में उमरकी न्यूनता से नष्टहोते हैं कलियुग में सब वेददृष्ट पड़ते हैं और नहींभी दृष्टआते हैं वहवेद केवल अधर्म्म से पीड़ामान यज्ञोंके साथ गुप्तहोजाते हैं उस सतयुग में जो धर्म्म ब्राह्मणों में दृष्ट आता है वह धर्म्म अबभी चित्तके जीतनेवाले योगनिष्ठ वेदांत और तपयुक्त वेदज्ञ ब्राह्मणोंमें नियतहै इसकारण वह सतयुगरूपहैं, अब त्रेतायुगके व्यवहारकोसुनो कि स्वधर्म्मनिष्ठ वैदिक ब्राह्मण वेदोक्त धर्म्मसे व्रत और तीर्थयात्रा आदिको इच्छानुसार करते हैं और स्वर्ग की कामना से यज्ञादिकभी करते हैं और द्वापर में पुत्रादिकी कामनासे यज्ञ करतेहैं और कलियुगमें शत्रुके नाशकी इच्छासे यज्ञकरतेहैं,जैसे कि वर्षाऋतुमें वर्षाकेहोने से स्थावर जंगम जीवोंकी वृद्धिहोतीहै उसी प्रकार हरएक यज्ञमें धर्म उत्पन्न होतेहैं और नाशकोपाते हैं और जैसे नानाप्रकारके रूपवाले चिह्न ऋतुके बदलने में दृष्टआतेहैं उसी प्रकार ब्रह्मा और रुद्र आदिमें उत्पत्ति और नाशकी सामर्थ्य वृद्धिपाती है,

चारोंयुगके रूप रखनेवाले पुरुषका अनेक प्रकारका होना और आदि अन्त रहित होना हमने प्रथमही तुमसे कहा वही कालपुरुष सृष्टिको उत्पन्न करताहै और मारताहै, स्वभावसेही जो सुखदुःख रखनेवाले चारोंप्रकार के जीव वर्त्तमान होतेहैं उन सबका उत्पत्ति स्थान काल है वही काल उनको धारण और पोपण करताहै और वही जीव रूप होताहै अर्थात् आपही भूतात्माहै, उत्पत्ति, काल, क्रिया, यज्ञ, श्राद्धादि, वेद यज्ञादिका कर्त्ता, कार्य, क्रिया, फल यह सब कालात्मा पुरुष है हे बेटा जो तुमने मुझसे पूछा वह सब मैंने वर्णन किया ४५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेएकोनषष्टितमोऽध्यायः ५९ ॥

साठवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि अब क्रम से प्राप्तहोनेवाली प्रलयको कहताहूं अर्थात् दिवसके अन्त में और रात्रिके प्रारम्भमें कालात्मा ईश्वरमें संसार लयहोताहै इसको सुनो कि जैसे ईश्वर इस संसारको आत्मा सम्बन्धी कारण में नियत करताहै उसीप्रकार आकाश में सूर्यनारायण अग्नि संयुक्तहो अपने तेजसे इस संसारको भस्म करते हैं तब यह सम्पूर्ण संसार सूर्य्य और अग्नि की ज्वालाओंसे अग्निके समान संतप्त होताहै पृथ्वीके सब जड़ चैतन्य स्थावर जंगम जीव तो प्रथमही नाशहोजाते हैं अर्थात् पृथ्वी के समान रूपहोजातेहैं तदनन्तर सब जीवों के नाशहोने के पीछे वृक्ष तृण आदि से रहित पृथ्वी कछुये की पीठ के समान दृष्टपड़ती है जब जल इस पृथ्वी के गन्ध गुणकोआकर्पण करताहै तब गन्ध रहित पृथ्वी लयके योग्यहोती है अर्थात् गन्धरूप कठोरता जाने से जल के समान होजाती है फिर यहां लहरें लेता और महाशब्द करता अमोघ जलही जल होजाता है फिर अग्नि जलों के गुणोंको आकर्पण करलेता है तब अग्नि गुण से जल अग्निमें उपरामपाता है अर्थात् अग्निरूपहोजाता है जब अग्निकीज्वाला आकाश में सूर्यकोढकती है तब यह आकाश ज्वालाओंसेव्याप्त अग्नि के समान होजाताहै फिर वायु अग्नि के गुण को आकर्पण करती है तब अग्नि शान्त होजातीहै और वायुका बड़ावेग होताहै तब वायु अपने उत्पत्तिस्थान शब्द तन्मात्राको पाकर नीचे ऊपर तिरछे दशोंदिशाओं में चेष्टाकरता है जब आकाशभी वायुकेगुण स्पर्शकोअपने में लयकरताहै तब वायु शान्तहोताहै फिर शब्दगुणवाला आकाश वर्त्तमानहोताहै रूप रस गन्ध स्पर्शरहित अरूप शब्दगुणवाला सबलोक में शब्द करनेवाला आकाश वर्त्तमान होताहै शब्द आदि और स्थूलरूप सबवस्तुओंको प्राप्त और सूक्ष्मचित्त अपनेसे उत्पन्न होनेवाले शब्दको जोकि

आकाशका गुणहै अपनेमेंही लयकरताहै यह चित्त विराट् से सम्बन्ध रखने वाली प्रलयहै अर्थात् विराट् चित्त से कल्पितहै और उसीचित्तमें लयहोजाता है— अब सूत्रात्माकी प्रलयको कहते हैं—जब हमलोगों से सम्बन्ध रखने वाला व्यष्टि चित्त उस अपने ज्ञान वैराग्य रूपमें प्रवेशकरके नियतहोता है तब चंद्रमा उस चित्त को लय करताहै चित्तके लयहोने और चन्द्रमा के नियत होनेपर पूर्व्वमें जो ब्रह्मकी प्राप्तिकेलिये प्रणवकी उपासना कहीहै और भूत शुद्धीमेंभी ऊपर लिखेहुये क्रमसेस्थूलतत्त्वोंके समूहरूप विराट्को जो कि आकारकारथहै लयकरके और सब आत्मासेस्थूल शरीरको विस्मरणकरके केवल चित्तरूप नियतकरे वह बन्धन से रहित चन्द्रमा नाम उकारार्थ से संयुक्त ऐश्वर्य्यवान् होताहै योगी उस चन्द्रमानाम समष्टिचित्त को जो कि उकारार्थवान् और संकल्प रूप देहका रखनेवालाहै उसको वहुत समयमें अपने स्वाधीनकरताहै वह संकल्प चित्तकोलयकरताहै और उससंकल्पको मकारार्थ वाला अहंब्रह्मास्मि नाम उत्तमज्ञान लयकरताहै, अब दो श्लोकों में ईशका भी लय वर्णनकरते हैं, काल विज्ञानको लयकरताहै कालको वल नामशक्ति लयकरती है वल शक्तिको महाकाल लयकरताहै उस महाकालको विद्यालय करती है अर्थात् स्वाधीन करती है अब उस विद्या के क्रमको सुनो कि वह ज्ञानी आकाश के उस शब्द को आत्मा में लयकरता है वह नादका उत्पत्तिस्थान और परब्रह्मका लयात्मक गुप्त और प्राचीनतायुक्त सब से उत्तमहै तात्पर्य्ययहहै कि सबजीव उसकेरूपहैं उनके लयहोने परब्रह्मही शेषरहताहै इस प्रकारसे परमात्मारूप योगियों ने समझाने के योग्य और विद्यारूप शिष्य शुकदेवजीको देखकर यह निस्सन्देह पूर्णज्ञानकावर्णन किया हे युधिष्ठिर इस प्रकार उत्पत्ति प्रलय प्रणव अखण्ड ब्रह्म है इसीप्रकार हजार चौकड़ीके प्रारम्भ में दिन और बराबर होना वर्णन किया गया १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे षष्टितमोऽध्यायः ६० ॥

इकसठवां अध्याय ॥

अब सांख्ययोग के अधिकारीको कहते हैं—व्यासजी बोले कि जीवोंके समूह में जोस्वामी है उसका वर्णनकिया अब ब्राह्मणों के कर्मोंका वर्णन करताहूं उसकोसुनो कि जिस के जातिकर्मआदि संस्कार और दक्षिणावाले कर्मोंकी क्रियाहोवै वह समावर्त्तनकर्मकरनेसे प्रथम वेदपारगआचार्य होनेपर सबवेदोंकोपढ़कर गुरूकी सेवा में प्रीतिकरनेवाला यज्ञोंकाज्ञाता गुरुओं से अनृणहोकर समावर्त्तनकर्मकरे फिर वहपुरुष गुरूकी आज्ञालेकर चारोंआश्रमोंमें से एकआश्रम में बुद्धि के अनुसार देहकी अवधितक नियतहोय और

स्त्रियोंकेपास सन्तानकी उत्पत्ति वा ब्रह्मचर्य से वन में या गुरुकुलमें अथवा संन्यासधर्म से अपनी अवस्था को व्यतीतकरे, यह गृहस्थाश्रम सब धर्मोंका मूल कहाजाता है इसआश्रममें ऐसा जितेन्द्रिय पुरुष जिसके अन्तष्करणके दोष नष्टताको प्राप्तहुये सबस्थानों में सिद्धिकोपाता है फिर सन्ततियुक्तवेदपाठी यज्ञकर्त्ता तीनोंऋणों से निवृत्त पवित्र कर्मी होकर दूसरे आश्रमों को प्राप्तकरे और पृथ्वी पर जिस स्थान को चित्त से अत्यन्त पवित्र जाने वहां निवासकरे उसस्थान में उत्तम परमात्मा की प्राप्तिका उपायकरे, ब्राह्मणों का यश, तप, यज्ञ, विद्या उनके दान देने से बढ़ताहै जबतक इसलोक में इसकी कीर्त्ति यशकी उत्पन्न करनेवाली होती है तबतक वह पुरुष अपने पुण्यसे अनेक लोकों को भोगता है १० वेदपढ़े और पढ़ावे यज्ञकरे करावे निरर्थक दान न ले न दे जब यज्ञकरनेवाले यजमान और शिष्यसे वा कन्यासे भी जो बड़ा धन प्राप्तहो उससे यज्ञ और दानको करे और अकेला भोजन कभी न करे, देवता, ऋषि, पितर गुरू और भोजनकी इच्छा करनेवाले वृद्ध रोगी और गुप्त शत्रु से दुखी और सामर्थ्य के अनुसार ऐश्वर्यवान् होने की लालसा युक्त पुरुषोंका इस कुटुम्ब के पोषण के निमित्त दानलेने के सिवाय और कोई उत्तम उपाय नहीं है धनकी सामर्थ्य न होनेपर भी इनसबको लाभ से देना योग्यहै क्योंकि पात्र और पूजन के योग्य पुरुषों को कोई वस्तु अदेय नहीं होती अर्थात् सब वस्तु देनी योग्यहैं यहांतक कि जो उच्चैःश्रवा घोड़ाभी होय वह भी सत्पात्र योग्य पुरुषों को देना योग्य है बड़े व्रतवाला सत्यसिंधु अपने वांछित मनोरथ को प्राप्त करके अपने प्राणों से ब्राह्मण के प्राणों की रक्षाकरके स्वर्ग को गया, रन्तिदेव और सांकृती यह दोनों महात्मा वशिष्ठ जी के अर्थ शीतोष्णजल देकर स्वर्ग में प्रतिष्ठित हैं, अत्रिवंशी बुद्धिमान् इन्द्रद्युम्न भी पूजनके योग्य ब्राह्मणको अनेक प्रकारके धन देकर अनन्त लोकों को गया, औशीनरकापुत्रशिवी, अपने अंगों को और अत्यन्त प्यारे औरस पुत्र को ब्राह्मणकी भेटकरके उत्तम लोककोगया, काशीका पति राजा प्रतर्द्दन अपने दोनों नेत्र ब्राह्मण को देकर इसलोक के सुखको भोगकर अब परलोक में आनंद करताहै देवावृध राजा सुवर्णकी बहुमोल्य आठशलाका युक्त दिव्यछत्रको ब्राह्मण के अर्थ देकर अपने देश निवासियों समेत वैकुंठ में विराजमान है, अत्रिवंशी महा तेजस्वी सांकृती अपने शिष्यों को निर्गुण ब्रह्मका उपदेश करके सब से उत्तम लोकों को गया, महा प्रतापी राजा अम्बरीप ब्राह्मणों को ग्यारह अर्बुद गोदान करके देश वासियों समेत स्वर्गकोगया, सावित्री और राजाजनमेजय दोनों अपने कुंडल और शरीरको ब्राह्मणोंके अर्पणकरके उत्तम लोकको गये, वृषदश्वका पुत्र युव-

नारव अपने सवरल और प्यारीस्त्री वा सुन्दर स्थानोंको दान करके स्वर्गको गया, राजा विदेहने निमिदेशको और परशुरामजीने पृथ्वीको और राजा पगयने नगरोंसमेत पृथ्वीको ब्राह्मणोंको दान में दिया, वशिष्ठजी ने वर्षा न होनेसे सब जीवोंको ऐसा जीवदान दिया जैसे कि ब्रह्माजी सबको जीव से रक्षाकरते हैं, करन्धमका पुत्र रुतात्मा अपनी मरुतनाम कन्या अङ्गिरा ऋषि को देकर शीघ्रही स्वर्गको गया, बुद्धिमानों में श्रेष्ठ ब्रह्मदत्तनाम पांचाल देशको राजा ने एकशंखधन उत्तम ब्राह्मणों को दानदेकर उत्तम लोकों को पाया, राजा मित्रसह भी बशिष्ठजी के निमित्त दमयन्ती नाम प्यारी स्त्री को देकर उस समेत स्वर्गको गया, राजा सहस्रजित राजर्षि ब्राह्मण के निमित्त अपने प्यारेप्राणोंको त्यागकर स्वर्गकोगया, राजा सतद्युम्न सब अभीष्टों से पूर्ण सुवर्णके महल मुद्गल ऋषिको दान देकर के स्वर्गकोगया, द्युतिमान प्रतापी राजाशाल्व अपने देश और राज्य को ऋचीक मुनि को दान देकर उत्तमलोककोगया, लोमपादराजर्षि अपनी शांतानाम पुत्रीको शृङ्गीऋषिके अर्थ दानकरके सब मनो रथों से पूर्ण हुआ, मदिराश्वराजाअपनी सुन्दरी कन्याको हिरण्यहस्तऋषिको देकर देवताओं से पूजित लोककोगया, बड़ा तेजस्वी राजाप्रसेनजित सवत्सा लक्षगोदान करके उत्तमलोककोगया, यह और अन्यबहुत से महात्मा जितेन्द्री बुद्धिमान् राजादान और तप के द्वारा स्वर्ग को गये, उनकी कीर्त्ति तबतक रहेगी जब तक कि पृथ्वी नियत है इनसबोंने दानयज्ञ और संतानके उत्पन्नकरनेकेद्वारा स्वर्गको प्राप्तकिया३८॥

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि मोक्षधर्म्मेएकषष्टितमोध्यायः ६१ ॥

बासठवां अध्याय ॥

ब्यासजी बोले कि वेदों में वर्णन कीहुई तीनप्रकार की विद्याको ऋग् यजुः साम और अथर्वण वेद के अक्षर और अंगों से विचार करे छओं ऐश्वर्य और कर्मों में प्रवृत्त परमेश्वर इनवेदआदि में नियत है जो पुरुष वेदवचनों में कुशल ब्रह्मविद्या में पूर्ण बुद्धिमान महाभाग हैं वह उसउत्पत्ति लयकेस्थान ईश्वरको देखतेहैं इसीप्रकार धर्मसे कर्म्मकरे और उत्तम पुरुषों के समान क्रियाको करे, सत्पुरुषोंसे विज्ञान प्राप्तकरनेवाला श्रेष्ठ शास्त्रज्ञ ब्राह्मण जीवों के बिना दुःखदिये अपनी जीविकाको करे, जो सतोगुणमें नियत,और लोकमें अपने धर्मसे क्रियाकर्मको अच्छेप्रकार से सिद्धकरनेवाला है वह गृहस्थी ब्राह्मण उनछःकर्म्मोंमें नियत होताहै, वह श्रद्धावान् बुद्धिमान् सावधान जितेन्द्री धर्म्मज्ञ ज्ञानीब्राह्मण बराबर पांचयज्ञोंसे पूजनकरे हर्ष क्रोध अहंकार से रहित ब्राह्मण पीड़ा नहींपाताहै दान, वेद पाठ, यज्ञ, तप, लज्जा, शांत

चित्त इनसबगुणों के प्रत्यक्षसे तेजकी वृद्धिकरताहै और पापको दूर करताहै पापरहित धारणा बुद्धि का स्वामी अल्पाहारी जितेन्द्री पुरुष कामक्रोध को जीतकर ब्रह्मपदको प्राप्तकरे और अग्नि ब्राह्मण देवताओं को प्रणामकरे,और अकल्याणरूपवचन और अधर्मयुक्त हिंसाको त्यागकरे यहप्राचीन समय से प्राप्तहोनेवाली वृत्तिब्राह्मणकी कहीजातीहै, वेदान्त शास्त्र से कर्मोंको करता हुआ कर्मोंमें सिद्ध होताहै, बुद्धिमान् पुरुष पंचेन्द्रीरूप जल लोभरूप किनारे क्रोधरूप कीचवाली दुस्तर नदी को तरताहै वह अत्यन्त मोहनेवाली सदैव सब ओरसे वर्त्तमानकाल और होनहारमें दृष्टपड़नेवाले अबिनाशी बड़े पराक्रम में भरे कर्मको देखे, १२ स्वभावरूप नदी से उत्पन्न होनेवाला बिस्तृतसंसार पूर्वोक्त पराक्रमसे बराबर मोहाजाताहै, वह नदी वर्षरूप घेरेवालाबड़ाजल रखनेवाली है जिसमें महीना तरंग ऋतुवेग पक्षलता और तृणहैं, पलक खोलना और बन्द करना फेण और रात्रि दिन जलहैं काम घोर ग्राह और वेद यज्ञ इत्यादि उसमें नौकाहैं, धर्मद्वीपहैं और जीवोंका अर्थ काम यह जलकी गम्भीरता है, सत्यबचन कहना किनारा है वह नदी हिंसारूप वृक्षकी बहाने वाली है वह ब्रह्मसे प्रकट होतीहै इसनदी के द्वारा जीव यमलोकमें खैंचलिये जातेहैं, बुद्धिमान् धैर्य्यवान् पुरुष इसनदी को ज्ञानरूप नौकाओं से सदैव पार होतेहैं और ऐसी नौका न रखनेवाले अज्ञानी क्या करसक्तेहैं इससे यही युक्ति से सिद्धहुआ कि सिवाय ज्ञानी के दूसरानहीं तरसक्ता क्योंकि ज्ञानीसबस्थान पर दूरसेही गुणदोषोंको देखताहै, वह निर्बुद्धी अज्ञानी चलायमान चित्तात्मा पुरुष इस संदेहको नहीं तरताहै और जो बर्त्तमानहै वह नहीं जाताहै, नौका न रखनेवाला अज्ञानी पुरुष बड़े दोषको पाताहै और कामरूप ग्राहके पंजेमें फँसेहुए इस पुरुषको ज्ञानभी नौका नहीं है, इसकारण सावधानमनुष्य इस नदीसे पारहोने के लिये बड़ा उपायकरे इसका तरना यही है कि ब्राह्मण होजाय अर्थात् महात्माहोजाय, और शुद्ध पुरुषोंमें संस्कारोंकेसाथ उत्पन्नहोनेवाला तीनोंवेदका ज्ञाता तीनकर्म का अर्थात् कर्म उपासना ज्ञानका करने वाला है इसीहेतुसे नदीसे निकलनेके उपायमें प्रवृत्तहोवे जैसे कि ज्ञानसे पार होतेहैं, संस्कारयुक्त जितेन्द्री सावधान चित्त ज्ञानीकी सिद्धि इसलोक परलोक दोनोंमें होतीहै, २४ किसी के गुणमें दोष न लगानेवाला क्रोधरहित गृहस्थी इन कर्मों में प्रवृत्तहो विघसान्नभोजी होकर सदैव पंचयज्ञोंसे पूजनकरे औरसत्पुरुषोंके आचरण क्रियायुक्त अहिंसापूर्वक निन्दारहित जीविकाको करे, जो शास्त्र और विज्ञानकी मुख्यताका ज्ञाता श्रेष्ठाचरण बुद्धिमान् अपने धर्म्म से क्रियावान्है वह भी कर्मके द्वारा संकरधर्मको नहीं करताहै, क्रियावान् श्रद्धावान् जितेन्द्रीज्ञानी अन्यमें दोष न लगानेवाला धर्म्माधर्मका विवेकीसबप्रकार

से पारहोताहै धैर्य्यवान् सावधान जितेन्द्री धर्मज्ञ बुद्धिमान् हर्ष शोक क्रोधअ-
हंकार से रहित ब्राह्मण भी अचेत नहीं होता है, यह ब्राह्मणकी प्राचीन वृत्ति
है कि ज्ञानभाव से कर्मों को करताहुआ सवस्थानों में सिद्धको पाताहै—इस
लोकमें धर्मका आकांक्षी अज्ञानी अधर्मको करताहै अथवा वह शोचताहुआ
अधर्मरूप धर्म को करताहै और अधर्म को करके कहताहै कि मैं धर्म करता हूं
औरअधर्मका चाहनेवाला धर्मकरताहै दोनोंकर्मों को अच्छे प्रकारसे न जा-
नतावह देहाभिमानी निर्बुद्धी जन्मको लेताहै और मरता है ३२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेद्विषष्टितमोऽध्यायः ६२ ॥

तिरसठवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि पूर्वकहेहुए साधनके पीछे जो पुरुष नीचेलिखीहुई शा-
न्तीनाम कैवल्य मोक्षको स्वीकारकरे वह ज्ञानी ज्ञानरूप नौकारखनेवाला है
धैर्यवान् और ध्यानजन्य साक्षात्कर्ता से निश्चयपानेवाले पुरुष ज्ञानरूप
नौकाओं के द्वारा अज्ञानियों को तारते हैं और अज्ञानी किसीप्रकार से दू-
सरेको नहींतारसक्ते न आपतरसक्ते, रागादि दोषोंसे रहित स्त्री आदि के संग
से पृथक् मुनियोग के बारह सहायकोंका सेवनकरे, प्रथम १ कंकड़ बालूअग्नि
इत्यादि दोषरहित निर्विघ्न शुद्धदेश में आसनजमावे दूसराधर्म्म २ आहार
बिहार कर्म्म सोना जागना सामान्यहो, तीसराधर्म्म ३ अच्छेशिष्य हों योग्य
धन, सामर्थ्य के अनुसार उपाय, रागादि से पृथक्ता, गुरु और वेदके वचनों
में बिश्वास, नेत्रआदि इन्द्रियां, शुद्धआहार, स्वाभाविक विषय प्रवृत्तिका
संकोच, संकल्प बिकल्पात्मक चित्तजन्म मृत्यु जरारोग इत्यादि दोषोंका द-
र्शन इनबारह पर इच्छावान् मुक्तिका चाहनेवाला पुरुष ध्यानकरे और मन
बाणी को बुद्धिसे स्वाधीनकरे इससे उत्तमज्ञान प्राप्तहोता है, इसप्रकार बारह
गुणों से युक्त अधिकारीको जो करनायोग्य है उसको कहते हैं कि ज्ञान से
आत्मा को स्वाधीन करे इससे उसकी शांति अर्थात् कैवल्य मोक्ष होगी,
अब योगफलको कहते हैं कि इनका साक्षी जो शांतआत्मा है, उसीरूपको
प्राप्तकरनेवाला पुरुष या महापुरुष अथवा अविद्या असमता आदि पांचक्ले-
शोंसे शोधितहो वह इसरीति से महाअगम्य जरामृत्यु रूपसागर को तरताहै,
इसप्रकार इसयोग से जिसका फल शांतानाम मोक्षकी प्राप्तिहै आत्मा को
परमात्मा में मिलाता ज्ञानकी इच्छाकरनेवाला भी शब्दब्रह्म को उल्लंघनकर
कर्म्मकर्त्ता होता है अर्थात् परोक्षज्ञानवालाभी अपने कर्म्म त्याग से उत्पन्न
होनेवाले दोषोंको नहींपाता है, जिसरथ के सारथीके बैठनेका स्थान यज्ञादिक
धर्म्महै और श्रमबरूथ है और उपाय आसन और रागादि से पृथक्ताहै अ-

पान अश्व है प्राणयुग है प्रज्ञाआयु है जीव बन्धनहै शीलता उसकीनेमि है अर्थात् चक्रधाराहै, देखना, स्पर्शकरना, सूंघना और सुनना उसरथके चारों घोड़े हैं शम दम आदि गुणों में कुशलता उसकीनाभिहै शास्त्र उसका चाबुक है और शास्त्रार्थका निश्चय उसकासारथी है क्षेत्रज्ञ के अधिकार में नियत पराक्रम में पूर्ण श्रद्धा और चित्तकी स्थिरताका धारण करनेवाला त्यागी नौकरों पर आज्ञा करनेवाला मोक्षकाचाहनेवाला शुद्धमार्ग गामी ध्यानगोचर और जीव से मिलाहुआ दिव्यरथ ब्रह्मरूपलोक मेंविराजमान है, वचनआदि से सावधान पुरुष उनधारणाओंको प्राप्तकरताहै जो कि संख्यामें सातहैं इन सातों धारणाओंसे इन्द्री और बुद्धिकीधारणा अधिक हैं वह दोनों अहंकार में वर्त्तमान हैं, क्रमवाली बुद्धि के द्वारापृथ्वी जल अग्नि बायु अहंकार और अव्यक्तके ऐश्वर्यको प्राप्तकरताहै पांव से जंघातक पृथ्वीका स्थान है और जंघासेलेकर गुदातक जलका स्थान है और गुदासे लेकर हृदयतक अग्निका स्थान है और हृदयसे भृकुटी पर्यन्त बायुका स्थानहै और भृकुटी से मस्तक के अंततक आकाशका स्थानहै पृथ्वीमें लकार (ल) अक्षर के संयुक्तवायुको नियत करके संसारकेकर्त्ता चतुर्मुख ब्रह्माजीको पांचघड़ीतक धारणा करके ध्यान करना इससे पृथ्वी बिजयहोतीहै, जलकेस्थान में (व) वकार अक्षरसे संयुक्त प्राणको नियतकरके पवित्रस्थान में पीताम्बरधारी शुद्ध स्फटिकके समान विष्णुजीको स्मरण करता पांचघड़ी धारणा करे उसधारणा केद्वारा सब इच्छाओंसे निवृत्तहोता है, अग्नि में (र) रकार अक्षर से संयुक्त प्राण को नियत करके तरुण सूर्यके समान प्रकाशमान तीननेत्र रखने वाले वरदाता भस्मधारी आनंदमूर्त्तिरुद्रजी को स्मरण करता पांचघड़ी धारण करे वह अग्नि से भस्मनहीं होताहै, वायुमंडल में (य) यकार अक्षर और ईश्वरसे संयुक्तप्राणकोपांचघड़ी धारणकरेवहवायुकेसमानआकाशमेंचेष्टाकरने वालाहोता है, आकाश में प्राणको नियत करके (ह) हकार अक्षरके ऊपर बिन्दुरूप आकाश स्वरूप महादेव आकाश में नियत चित्त से सदाशिवजी काध्यानकरे और एकमुहूर्त्ततकधारणाकरे यहां लकार आदि बीजोंके स्थान परक्रमसे अकार,उकार,मकार,अर्धमात्रा और बिन्दुको नियतकरेइससेअव्यक्त धारण में छठवां नादहै उसके सन्मुख शुद्धब्रह्म शेषरहताहै इसीप्रकार यहां भी प्रणवके द्वारा तीनतीन प्राणायामों से ब्रह्माआदि कार्य रूपोंको अपनेअपने कारण में लयकरके अत्यंत चित्तशुद्धी से नादकेपास परमेश्वरको देखे और अहंकारकी यहधारणाहै कि स्थूलदेहसे असंगहोकर यहसब मैंहीहूं यह अभिमानहोना अहंकारकी धारणा कहलातीहै, तत्त्वमसिआदि बचनसेउत्पन्न होने वाला विद्याके बिनाइसअहंकारकी धारणाका लोपहोना अव्यक्त धारणाहै१५

युक्तिसे योगमेंप्रवृत्त योगियोंकेमध्यमें जिसयोगीकेनीचे लिखेहुयेअनुभवकर्म्म जिसरीतिसे प्रकट होते हैं उसको और अपनी देह के भीतर ध्यान करनेवाले योगीकी योगसम्बन्धी पृथिव्यादिसिद्ध्यर्थकनाम सिद्धिको वर्णनकरताहूं १६ प्रथमअनुभव कर्म्मोंको कहताहूं जैसे कि गुरुकी बताईहुई युक्तिसे स्थूलदेह के अध्यासको त्यागकर सूक्ष्मतासे आत्माके लिखेहुए रूपों को देखताहै उसीप्रकारदेहसे मुक्तपुरुषका पहिलारूप प्रकट होताहै अर्थात् जैसे उस धुयें के गुप्त होने से दूसरारूप दर्शन जलरूप आकाश में होताहै उसीप्रकार योगी अपने देह के भीतर देखता है जल के रूपान्तर में इसका अग्निरूप प्रकाश करता है उस अग्निके लय होनेपर वह वायु जो शस्त्ररूपहो वृक्षस्थान पर्वतादिकों को भी भक्षण करताहै प्रकाश करताहै उसका रूप मकड़ी के तारके समान निराधार प्रकाशमान है, फिर वह योगी वायुजित होकर वायुसम्बन्धी सूक्ष्म श्वेत शुद्धस्वरूपको प्राप्तहोताहै भृकुटियोंके मध्यसे लेकर मस्तकके अंततक आकाशका स्थानहै उसमें मिलकर और लयहोकर नीलरूप आकाशमात्र फहले के समान प्रकाश करताहै जोकि मुक्तिकी इच्छाकरनेवाले पुरुषके चित्त को शुद्ध करनेवाला शास्त्र ने वर्णन किया है, इनके शुद्धहोने पर जो फल उत्पन्नहोते हैं वह मैं तुमसे कहताहूं, यहां शुद्ध होनेवाले योगीके पार्थिवऐश्वर्योंसे यह संसार ऐसे धारण और पालन कियाजाताहै, जैसे कि ब्रह्माजी देह के सब हाथ पांव आदि अंगोंसे सृष्टिको उत्पन्न करतेहैं, वायुके गुणको प्राप्त करनेवाला अकेला योगी पृथ्वीको चलायमान करताहै और आकाशरूपको प्राप्त करनेवाला सबस्थानों में वर्तमान होने से आकाश में प्रकाश करता है और स्वरूपसे गुप्तहोजाताहै अर्थात् अरूपतासे अन्तर्द्धान शक्तिको भी प्राप्त करताहै, अब जलके जीतनेके फलको कहतेहैं कि वह जल रूपको प्राप्तकरने वाला योगी इच्छासे वापी कूप आदिको भी पीजाताहै इसके तेजोंका रूप दृष्टि नहीं पड़ताहै और शान्तताकोभी प्राप्तहोताहै जोऊपर लिखेहुये क्रमसे पांचों तत्त्वों की विजय न हो तो भी अहंकारको विजय करने से पांचों स्वाधीन होजाते हैं, पांचों तत्त्व और छठे अहंकारके विजय होने से आत्मा रूप बुद्धिमें ऐश्वर्य्यमान् सात धारणाहोतीहैं इस योगीको संशय विपर्ययसे रहित पूर्णज्ञान प्राप्तहोताहै, उसीप्रकार बुद्धि आदि रूप आत्माको ब्रह्मभाव से जानताहै, यहलोक जिसहेतुसे ब्रह्मरूपकोभूलजाताहै उसीकारण से इसका व्यक्त नाम होताहै, इस स्थान पर तुम उस विद्या को जिसमें अव्यक्त प्रधान है मुझ से ब्यौरेवार सुनो कि योग और सांख्य शास्त्र में पच्चीस तत्त्व कहेहुये हैं वह महतत्त्व से लेकर विकारों पर्यंत तेईस तत्त्वों के समूहको व्यक्त कहतेहैं जो उत्पत्ति वृद्धिक्षय वृद्ध इन चार लक्षणों से संयुक्त है और जो इनसे विप-

रीत अर्थात् जन्म बृद्धि आदि से रहितहै उसको अव्यक्त कहतेहैं और सांख्य शास्त्रवाले एकही जीवको प्रत्येक देहमें पृथक् २ मानतेहैं इस कारण उसकी मुख्यताको कहताहूं, दोनों जीव ईश्वर वेदों में और सिद्धान्तों में ब्रह्मरूप कहे गये जीव तो कार्य की उपाधि है और ईश्वर कारणकी उपाधि है इस श्रुती के अनुसार जीव ईश्वर के विभाग को कहते हैं कि व्यक्त नाम जीव को चार लक्षण की उपाधि रखनेवाला और उन चारों बर्गों का इच्छावान् कहते हैं और ईश्वर को माया से ढका हुआ कहते हैं इसी प्रकार वह दोनों का च्युत अच्युत नाम है अब श्रुति के अनुसार जीव ईश्वर के भेदको कहते हैं, यह दोनों जीव ईश्वर बुद्धि और क्षेत्रज्ञ नाम श्रुती से दिखाये गये हैं, वेदों में दोनों को आत्मा कहाहै, विषयों में प्रीति करनेवाले की ओर से उत्पत्ति क्रम के विपरीत घट आदि विषयों को लय करना चाहिये तात्पर्य यहहै कि अज्ञानियोंकी ही समझ से जीव ईश्वरका मुख्य भेद है परन्तु ज्ञानियों की बुद्धिसे वह दोनों बिम्ब और प्रतिबिम्ब के समान हैं इससे प्रतिबिम्बरूप जीव के लय होनेपर चिह्नमात्रही शेषरहता है,इसप्रकार तत्त्वज्ञ जीवन्मुक्त पुरुषों के लक्षणों को कहते हैं, समता और अहंकारसे पृथक् सुख दुःख आदि योगोंसे रहित पुरुष जिसके कि सब संशय कटगये वह क्रोध नहीं करता है और शत्रुता रहित होकर न मिथ्या बचन कहता है, न किसीको शाप देता है और कठोर बचन हिंसात्मककर्म और चित्तसे दूसरे की बुराई इनतीनों को त्याग करताहै, सबजीवों में समदर्शी ज्ञानी ईश्वरकी ओर तदाकार होजाताहै इच्छावान् भी अनिच्छावान्है अर्थात् केवल शरीर के निर्वाहके लिये दूसरे विषयोंको त्याग करके मुख्य विषय में वर्त्तमान है, निर्लोभ पीड़ा रहित जितेन्द्री कर्म्म से निवृत्त और पूर्ण बस्त्रसे युक्त देह होताहै इसकी इन्द्रियां इकट्ठी होती हैं और सत्यसंकल्प होता है सब जीवों का मित्र सुवर्ण मृत्तिका को समान माननेवाला धैर्यवान् प्रिय अप्रिय और निन्दास्तुति को बराबर जाननेवाला सब मनोरथों से अनिच्छावान् ब्रह्मचर्य्य का दृढ़ व्रतरखनेवाला हिंसारहित वेदान्ती मुक्त होताहै, योगके द्वारा जिन हेतुओं से मुक्त होते हैं उनको समझो कि जो योगके ऐश्वर्य्यको उल्लंघन करनेवाला होजाताहै वह मुक्त होताहै सांख्य वा योग दोनों फलमें समान हैं इसको वर्णन किया इस प्रकार करनेसे निर्द्वन्द्वहो ब्रह्मभावको प्राप्तहोता है ४१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे त्रिषष्टितमोऽध्यायः ६३ ॥

चौसठवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि सांख्य और योगके मध्यमें सांख्यही कल्याण कारक

है इसको वर्णन करते हैं कि इस संसार सागर में गोते खाता और उछलता ध्यानीपुरुष ज्ञानरूप नौकाको पकड़कर अपनी शान्ति अर्थात् मोक्षके कारणरूप ज्ञानकोही आश्रय करे, शुकदेवजी बोले कि मैं उस ज्ञानको समझना चाहताहूं कि वह प्रवृत्ति लक्षणवाला धर्म्म है वा निवृत्तिवाला है जिसप्रकार कि दोनों जन्म मरणको बराबर तरताहै उसी प्रकार उसको भी वर्णन कीजिये, इस स्थानमें अहंब्रह्मास्मि अर्थात् मैं ब्रह्महूं इस अनुभवके होनेपर जड़ अहंकार और उसका प्रकाश वर्णन कियेजातेहैं वह दोनों आत्माहैं यहभट्टों का वर्णन है, अहंकार का अर्थही आत्मा है प्रकाश उसका गुणहै वह भी तीनक्षण नियत रहनेवालाहै यह तर्कशास्त्रवालों का सिद्धान्तहै और आत्माही सदैव प्रकाशमानहै अहंकारका अर्थ आत्मानहीं है यहसांख्य मतवालोंका सिद्धान्त है आत्मा और अनात्मा में अनात्मा नियत है और देह के नाश में चिदात्माका नाश होजाताहै यह बौद्धलोगोंका मतहै, आत्माही सत्य है अनात्मा मिथ्याहै यह वेदान्त वादियों का सिद्धान्तहै और दोनों नहीं हैं यहशून्यवादीकहतेहैं इससे आत्माका अभाव होने में ज्ञान निरर्थक होजाय इसनिमित्त उसमें दोषलगानेको व्यासजी बोले कि जो पुरुष अहंकारआदि को बिना आत्मभाव के प्रकाश करनेवाला देखता सब शिष्यों को जिनकी युक्तियां ज्ञानसेरहितहैं इसप्रकारके ज्ञानसे उपदेशकरके तृप्तकरताहै वह अज्ञानी है; अब आत्मा के नाशनाम बौद्धके सिद्धांतको दोष लगाते हैं कि जिन बौद्धोंके पूर्णनिश्चयके साथ स्वभावही कारण मानागया अर्थात् दहीआदि काकारण दूध है न कि अदृष्ट ईश्वरकी कृपा है क्योंकि प्रत्यक्ष में वह नहीं दिखाईदेती इसस्थानपर कहते हैं कि वह बौद्ध मूंजको शुद्धकर उसके भीतर वर्त्तमान पहिले न देखीहुई सींक को भी नहीं पाते हैं क्योंकि मूंज में वर्त्तमान सींकभी दृष्ट नहीं पड़ती है अथवा द्वितीय पाठमें देहसे पृथक् आत्मा को कहते हैं कि वेदमें लिखाहै कि आत्माको देह से भिन्न ऐसे जाने जैसे कि मूंजमें सींकहोती है, इस वेद वचनको ऋषियों के सन्मुख सुनकर कुछ तत्त्वको नहीं पातेहैं किन्तु आचार्योंकी उपासना न करनेवाले आपही ऐसी कल्पना करते हैं, स्वभावसेही शून्यमें संसारकी भ्रांती है और स्वभावसेही देहादिकी उत्पत्तिहै यह दोनों पक्षभी निरर्थक हैं इसको कहते हैं—जो अल्प बुद्धि मनुष्य इसपक्षका आश्रय लेकर और स्वभावको कारण जानकर वर्त्ताव करते हैं वह कल्याण को नहींपाते हैं, मोहसे उत्पन्न जोचित्त है उससे पैदा होनेवाला स्वभाव नाशवान् है आपस्वभाव सत्ताका कारणहै यह एकपक्ष हुआ और अपना और दूसरोंका भावकारणहै यह दूसरापक्षहै, इनदोनों का न कहनाही सिद्धांत है इसलोकमें कृषिकर्मादि में खेतीका काटना, सवारी,

आसन और घर बुद्धिमान् से विचार कियेगये आशय यह है कि जो स्वभावही कारण है तो इसदशा में बुद्धिकी चतुरता निष्फलहुई, ज्ञानियों के आज्ञाकारी ज्ञानी पुरुषही क्रीड़ास्थान घर और रोगोंकी औषधीको तय्यार करनेवालेहैं, बुद्धिअर्थोंसे संयुक्त करतीहै और कल्याण करती है इसीसे बड़े२ अर्थोंको भोगनेवाले राजालोग राज्यकरते हैं, जीवोंसे श्रेष्ठ चैतन्यआत्मा और मायाको ज्ञानहीसे जानतेहैं हे पुत्र विद्यासे उत्पन्न होनेवाले जीवोंके लयहोने का स्थान विद्याही है, इसप्रकार बुद्धिरूप उत्पत्ति और लयको कहकर व्यवहारको कहते हैं नानाप्रकारके सबजीवों के इन अण्डज, स्वेदज, जरायुज, उद्भिजके चारोंप्रकारकी उत्पत्तिको देखे और बिचारकरे, जंगमजीवोंको स्थावर जीवोंसे उत्तमजाने जो इन जड़चैतन्य जीवों में चेष्टाहोती है उनकोबड़ी रक्षासे मुख्यतादेवे अर्थात् वृक्षआदि में देखना और सुनना आदि सिद्धहोता है परन्तु कभी प्रत्यक्ष दृष्ट नहीं आते और वह गुण चेष्टावान् मनुष्यादि में प्रकटहैं इसकारण वह उनसे उत्तम हैं, चैतन्यजीवोंके बहुतसे पैर और दो पैर कहे बहुत पैरवालोंसे दो पैरवाले उत्तम हैं दो पैरवाले भी दोप्रकारके हैं एक पृथ्वीपर रहनेवाले दूसरे नभचारी उनमें पृथ्वी के रहनेवाले उत्तमहैं वह अन्नों को भोजन करते हैं वह पृथ्वी के दो पैरवाले भी दो प्रकारके हैं मध्यम और उत्तम उनमें जातिधर्म्मके धारण करने से मध्यम उत्तमहैं मध्यमभी दोप्रकार के हैं धर्म्मज्ञ, और अधर्म्मज्ञ, उनमें योग्यायोग्य कर्म्म के जाननेसे धर्म्मज्ञ उत्तमहैं, धर्म्मज्ञ पुरुषभी दोप्रकारके हैं वेदज्ञ और अवेदज्ञ, उनमें वेदज्ञ श्रेष्ठहैं क्योंकि उनमें वेद प्रतिष्ठावान्हैं वेदज्ञोंके भी दो भेदहैं वेदार्थज्ञाता, और अज्ञाता, उनमें वेदार्थज्ञ सबधर्म्मों के धारण करने से उत्तमहैं जिनके द्वारा वेद में धर्म्मयज्ञ और फल विदितहोते हैं क्योंकि सब वेदधर्म्मोंके साथ वेदार्थज्ञाताओं से जारी कियेगये, अब उत्तमोंका निर्णयकरने को मध्यमों में भी उनकी गणना करातेहैं, वेदार्थ जाननेवालों को दो प्रकारका कहा, आत्मज्ञानी और अनात्मज्ञानी उत्पत्ति और नाशके जानने से आत्मज्ञानी उत्तम हैं जो पुरुष दोनों धर्म्मोंको जानता है वह सर्वज्ञ और ब्रह्मज्ञानी है वह संन्यासीही सत्य संकल्प, पवित्रात्मा और ईश्वर है, देवताओं ने उसब्रह्मज्ञान में नियत वेद शास्त्रों में, पूर्णपरब्रह्म में निश्चय करनेवालेको ब्राह्मणजाना है हे तात ज्ञानी पुरुष उसदूसरे के चित्तमें बाह्याभ्यन्तर नियतको अध्यग और अधिदेव समेत देखतेहैं वही ब्राह्मण और देवता हैं यह विश्व उनमें प्रकट हुआहै और वर्त्तमानहै अर्थात् वहसब उनके आधाररूपहैं उनकेमाहात्म्यकी समानता किसीसे नहीं होसकी वहब्रह्मरूप सबप्रकारसेश्रेष्ठ अन्तमें मृत्यु और कर्म्मको उल्लंघन करके सबचारप्रकारकी सृष्टिके ईश्वरहैं २५ ॥ इति चतुष्पष्टितमोऽध्यायः ६४ ॥

पैंसठवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि जो पुरुष विना आत्मज्ञानके दान तप आदि कर्म्मको हजारों वर्षतक करताहै वह दानआदि नाशवान् होताहै इसकारण आत्माका आकांक्षी उसकी प्राप्तिकेलिये कर्म्मकरे, यहप्राचीन वृत्ति ब्राह्मणकी कहीजाती है और ज्ञानीपुरुषही सब स्थानोंपर कर्म्मोंको करताहै और सिद्धिकोपाताहै, जो इसकर्म्ममें निस्संदेह हो ऐसीदशामें कर्म करना सिद्धीकेही निमित्तहोताहै चाहै वहकर्म स्वभावहै अर्थात् नित्यहै,अथवा ज्ञान उत्पन्न करनेसे सफलहै इससंदेह के होने पर जो ब्राह्मणकी ओर से उस पुरुषको ज्ञान उत्पन्न करनेवाला कर्म उपदेश कियाजाय तब वह वेद बुद्धि होजातीहै अर्थात् आत्मज्ञानके लिये जो कर्म कियेगये उनसे भी सिद्धि होतीहै इन ईप्सित और अनीप्सित कर्मों की मुख्यताको सुनो कि बहुतसे मनुष्यों ने इस जन्म और पिछले जन्म के कर्मोंको कारण कहाहै कोई दैवको कोई स्वभावको कारणकहतेहैं इस वर्णनसे मीमांसक कालवादी शून्यवादी और बौद्धों के मतोंको कहकर उनके विकल्प और समुच्चयको कहतेहैं कि दृष्टादृष्ट,उपायकर्मऔर दैवयहतीनों कालवृत्तियां शोभा से पृथक् २ हैं अर्थात् उन में एकही प्रधान है दूसरा कोई नहीं है उन के समुच्चयको कहतेहैं, अब आर्हत मतको सुनो कि जीवों के अनेक प्रकार होने का क्या कारण है इसको कहें कि इसप्रकार का है सो नहीं कहसक्ता क्योंकि यह वाणी के विषय से दूर है तो यह भी इसप्रकार से नहीं कहसक्ते क्योंकि वह वाणी के विषयसे पृथक् नहीं है, और दोनों हैं यह भी नहीं कह सक्ते और यह भी नहीं कहते कि वह दोनों कर्म दैव नहीं है क्योंकि दोनों से पृथक् कारण नहीं है वह आर्हित मतवाले सत्त्वस्थ नामहैं, रजोगुण तमो-गुण से पृथक् अन्तःकरणवाली संप्रज्ञात दशामें नियत होकर योगी ब्रह्मको कारणरूप देखते हैं, त्रेता द्वापरमें और कलियुग में मनुष्य संदेह रखनेवाले होतेहैं सब यज्ञों में तपस्वी तीनोंवेद ऋग् यजुर् में भी भेद न देखनेवाले सब आदमी कामद्वेष रहित होकर तपस्या को करते हैं इसीकारण जो पुरुष तप धर्म युक्त सदैव तपनिष्ठ और श्रेष्ठ व्रत रखनेवाला है वह सब इच्छाओं को प्राप्त करता है, तपसे उस ब्रह्मको पाता है जो वृक्षस्वरूप होकर संसार को उत्पन्न करताहै, वह ब्रह्मरूप होनेवाला सब जीवमात्रका स्वामी होताहै, वह ज्ञान क्या है, विद्या या कर्म से उत्पन्न होनेवाला या नाशवान् आत्मा इनमें से पिछला स्वभाव के अपमान करने से त्याग कियाहै पहले में प्रमाण को दिखाकर मध्यवाले को त्याग करतेहैं वह ब्रह्म कर्मकाण्डों में भी कहाहै तो भी अज्ञात रहा, फिर वेददर्शियों ने वेदान्त शास्त्रों में विद्या से प्राप्त होने

वाले उस ब्रह्मको प्रत्यक्ष वर्णन किया वह ब्रह्म कर्म योग में दृष्ट नहीं आता अर्थात् भृंगीकीट के न्यायसे ब्रह्मकी उपासना के द्वारा ब्रह्मभाव की प्राप्ति कहना उचित नहीं है, हिंसात्मक यज्ञ करनेवाले क्षत्री और हव्यसे यज्ञ करने वाले वैश्य और सेवारूप यज्ञ करनेवाले शूद्र और जपरूप यज्ञ करनेवाले ब्राह्मण कहेहैं, ब्राह्मण जप यज्ञादि कर्म से ही निवृत्त होताहै जपके विशेष दूसरा कर्मकरे या न करे क्योंकि ब्राह्मण (मैत्र) वर्णन कियाजाताहै अर्थात् सबका मित्र कहा जाताहै, त्रेतायुगके प्रारम्भमें केवल वेद, यज्ञ, वर्ण और आश्रम थे यह द्वापरयुग में अवस्था की न्यूनता से प्रकारता को प्राप्त करते हैं वह वेद द्वापर और कलियुग में उपद्रवता से कलियुग के अन्त में दृष्ट आते हैं और नहीं भी आतेहैं वहां अधर्म से पीड़ित अपने धर्म नाश होजातेहैं गौ पृथ्वी जल और सिद्धियों के जो रस हैं वह भी नष्टता को पाते हैं, वेद वैदिक धर्म, और आश्रम अधर्म से गुप्त होजाते हैं, आश्रम दानलेने से स्थावर जंगम वस्तु लाभ के लिये बेंचीजाती हैं जैसे कि वर्षा सब पृथ्वी के जीवों को प्रसन्न करतीहै उसीप्रकार वेद प्रत्येक यज्ञमें सबओर से वेदपाठियों के योगांगों को प्रकट करतेहैं, जो सत्य यज्ञ आदि का रूप धारण करनेवाला जीवात्माहै उसका नानाप्रकार का होना निश्चय कियाहै कि वह आदिअंत रहित है और जो प्रथम मैंने तुझ से कहा वही सृष्टि को उत्पन्न करताहै तात्पर्य यह है कि जीव तत्पदार्थ से पृथक् नहीं है, जो यह जीवों की उत्पत्ति और लय का स्थान है वही सबका स्वामी और अन्तर्यामीहै, सुख दुःखादि से रहित बहुत से जीव ब्रह्मभाव से उसी में वर्त्तमान होतेहैं, कालही उत्पत्ति, धैर्य, वेद, क्रिया का कर्त्ता और क्रियारूप है हे तात जो तैंने पूछा वह सब मैंने कहा २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेपंचषष्ठितमोऽध्यायः ६५ ॥

छयासठवां अध्याय ॥

अबसांख्य और योगके अन्तरको छयासठ और सड़सठ अध्यायमें वर्णन करते हैं ॥

भीष्मजीबोले कि हे युधिष्ठिर इसप्रकार महर्षि व्यासजीसे सुनकर श्रीशुकदेवजीने उनके वचनों की प्रशंसा करके मोक्षधर्म के सम्बन्धी इस प्रश्न को व्यासजी से पूछा कि बुद्धिमान् वेदपाठी यज्ञकर्त्ता ज्ञानी और परनिन्दारहित पुरुष उस ब्रह्मको कैसे पाताहै जो कि वेद और प्रत्यक्ष अनुमानोंसे भी जाना नहींजाता है और जिस युक्तिसे पुरुषोंको चित्त और इन्द्रियोंकी अविकारता प्राप्त होतीहै उसकोभी आप वर्णन कीजिये, व्यासजी बोले कि कोई पुरुष

विद्या, तप, इन्द्री निग्रह और सर्व त्याग किये बिना किसी प्रकार से सिद्धि को प्राप्त नहीं होसक्ताहै, सब महाभूत प्रथम ब्रह्माजीकी उत्पत्ति अथवाजीवों की उत्पत्तिसे पृथक् हैं वह जीवात्माओंके समूहके मध्य देहाभिमान रखने वाले अज्ञानीजीवोंमें बहुतप्रविष्टहैं अर्थात् इनअज्ञानियोंने उनको आत्मारूप मानरक्खाहै, पृथ्वीसे देह,जलसेरस, अग्निसे नेत्र, व्यानमें वायु प्राण,अपान में आश्रितहै और देहके कर्णादि छिद्रोंमें आकाश वर्त्तमानहै, योग के मतसे आत्माभोक्ताहै कर्त्ता नहीं है, और सांख्यके मतसे न भोक्ताहै न कर्त्ता है उन में से पहलेको दूसरेका सिद्धान्त रूप प्रकट करने को दोष लगातेहैं कि पाद इन्द्रीमें विष्णु, पान इन्द्री में इन्द्र उनको कर्म्म में प्रवृत्त करनेवाले नियत हैं, जिसप्रकार राजाके रथआदिके पास युद्धकर्त्ता वर्त्तमानहों वहां युद्धकर्त्ताओंमें वर्त्तमान जिसप्रकार हारजीतको और रथमें वर्त्तमान वृद्धि और हानिको अभिमान से राजा अपने में नियत करता है उसीप्रकार चैतन्य आत्मा देवता और इन्द्रियों में वर्त्तमान भोक्तापन आदिको अज्ञानसे अपने में नियतकरता है किमैं भोगीआदिहूं जैसे कि नौकरमें उसका अभिमान न होनेसे हारजीत नहीं होती उसी प्रकार विष्णु आदि में भोग भी नहीं है आत्मामें उसका दृष्ट पड़ना अज्ञानसेहै इस वर्णनसे आत्माका कर्त्ता और भोक्ता न होना साबित हुआ स्थानरूप दोनोंकानोंमें दिशा देवता और श्रोत्र इन्द्री और जिह्वा में वाक् इन्द्री और उसकी देवता सरस्वतीदेवी वर्त्तमानहै,दोनों कान त्वचादोनों नेत्र जिह्वा और पांचवीं नाक यह इन्द्रियां दर्शन आदि विषय प्राप्त कराने के लिये द्वारहैं, शब्द स्पर्श रूप, रस, गन्ध इन विषयों को सदैव इन्द्रियों से पृथक्जाने चित्त इन्द्रियोंको अपने २ कर्म्म में ऐसे प्रवृत्त करताहै, जिसप्रकार सारथी अपने अधिकारमें नियतहोकर घोड़ोंको चलाताहै उसीप्रकार हृदयमें नियत जीवात्मा सदैव चित्तको कर्म्म में प्रवृत्तकरताहै जैसे चित्त इनसब इंद्रियोंका ईश्वरहै उसी प्रकार इस चित्तके उत्पत्ति और नाशमें जीवात्मा समर्थहै, इन्द्रियां उनके विषय स्वभाव, बुद्धिकी वृत्ति, चित्त, प्राण, अपान और जीव सदैव जीवोंकी देहमें वर्त्तमान रहतेहैं बुद्धिका आश्रय जो पहिले देहकोकहा वह भी नहींहै क्योंकि वह देहभी स्वप्नदशा के समान है फिर उसका आश्रय और स्वरूप क्याहै, मूल प्रकृतिही उस अपनी रूपान्तर रखनेवाली शब्दमात्र स्वरूपवाली बुद्धिका आश्रयहै, चिन्ता उसबुद्धिका स्वरूप और आश्रय नहीं है चाहे गुण बुद्धिकेही धर्म्महो परन्तु यहपुरुष सात्विकी और राज[illegible] है उस की उपाधिसे संयुक्त पुरुष में यह कहना सम्भवहै इस शंकाको कहते हैं–तेज बुद्धिको उत्पन्न करता है गुणों को नहीं करताहै इससे वह आदिरहित वासना बुद्धिका कारणहै गुण नहीं है यह सात्विकीहै यह कहना परम्परासे भी होना

है, जो चित्त को स्वाधीन करनेवाला है वह ब्राह्मण देह में सत्रहवीं चैतन्य आत्मा को जो कि सोलहगुण संयुक्त है चित्त के द्वारा बुद्धि में देखता है, यह आत्मा आंख और सब इंद्रियों से भी देखने के योग्य नहीं है, यह बड़ा आत्मा प्रकाशमान चित्त के द्वारा प्रकाशकरता है, उस शब्द रूप, रस गन्ध स्पर्श से रहित अविनाशी स्थूल और सूक्ष्म से सूक्ष्म देहों से पृथक् इन्द्री रहित आत्माको मरण धर्म्मवाले शरीरों में देखै, जो पुरुष मरण धर्म्मवाले सब देहों में नियत अव्यक्त आत्मा को गुरू और वेद के वचनों के अनुसार देखताहै वह देहत्यागके पीछे पूर्ण ब्रह्मभावके निमित्त कल्पना कियाजाताहै, पण्डितलोग गौ हाथी कुत्ता चाण्डाल और विद्या कुल शिष्य आदि रखने वाले ब्राह्मणमें ब्रह्मकोही देखते हैं, वही अकेला बड़ा आत्मा जिससे यह सब सन्सार उत्पन्नहुआहै सबस्थावर जंगम जीवोंमें निवास करताहै, अब योग फलकोकहते हैं जब भूतात्मा जीव जीवमात्रोंमें आत्माको देखता है अर्थात् यह सब मैं हीं हूं यह अनुभव करताहै और सबजीवोंको आत्मामें देखताहै तब वह ब्रह्मभावको पाता है, वेदवचन अपने स्वरूपमें देशकालसे जितने रूप वालाहै उतनाही जीव अपने स्वरूपमेंहै क्योंकि वेदमें लिखाहै कि ब्रह्मजहां तक कि नाना प्रकारके रूपोंसे वर्त्तमान है उतनाही वेदवचन है जो पुरुष सदैव इस प्रकारसे जानताहै वह अविनाशीहोनेको कल्पना किया जाता है, जो सबजीवोंका आत्मा और हितकारी हुआ उस अव्यक्त मुक्त पुरुषके मार्ग को देवता भी निश्चय करते २ मोहको प्राप्तहोतेहैं जैसे आकाशमें पक्षियों का और जल में जलजीवोंका मार्ग दृष्टनहीं पड़ता उसीप्रकार ज्ञानमार्गहै, अर्थात् प्रकृतिका जितना सामानहै वहसब क्रमसे लयहोकर अचल वा अनन्तआत्मा बाकी रहजाता है फिर उसका क्या मार्गहोगा, काल अर्थात् जीवात्मा सबभूतों को आप अपनी आत्मामें लयकरता है और जिसपरमात्मा में वह काल रूप जीवात्मा लयहोता है उसको यहां कोई नहीं जानताहै,वह परमात्मा ऊंचे नीचे तिरछे बायें दाहें नहीं है न कोई वस्तुहै न यह कहसक्ते कि वहकहांसे और कहांतकहै तात्पर्य्य यहहै कि किसी मुख्य स्थानका प्राप्त होना मुक्ति नहीं है यह सब संसारकेलोग मुक्ति स्वरूप के मध्यमें वर्त्तमानहैं इनलोकों के मध्यमें कोई स्थान उससे बाहर नहीं है जो प्राप्त करने के योग्य हो, अगर धनुपसे निकलेहुये बाणको समान बराबर चलाजाय तो भी ब्रह्म की सन्निकटताको नहीं प्राप्त होसक्ता और जो चित्तके समान शीघ्रगतिहो तो भी उस सूक्ष्मसे सूक्ष्म नहींहै न इससे कोई स्थूलसे स्थूलहै, वह सबओर हाथ पैर आंख शिर मुख कानयुक्त लोक में सबको ढककर वर्त्तमान है वही लघुसेभी लघुतमहै और वृद्धोंका वृद्धहै सबजीवोंमें वर्त्तमान दृष्ट नहीं आता

है, यह आत्माकाभाव क्षरअक्षरके नामसे दो प्रकारकाहै वही क्षरसब स्थावर जंगम जीवोंमें वर्त्तमान है और अक्षर भी दिव्य और अमृतरूपहै और सब जड़चैतन्य जीवोंका ईश्वर है सब उपाधि दोषों से रहित अचल आत्मा नवद्वारवाले पुरकोपाकर हंसरूप होजाताहै वहनौद्वारयहहैं महत्तत्त्व,अहंकार, पंचतन्मात्रा, अविद्या, कर्म्म, पुरको प्राप्तहोकर हंसरूप इस प्रकारसे होता है कि तत्त्वज्ञानियोंने अजन्मा परमेश्वरके देहमें वर्त्तमान और उन महत्तत्त्व से सम्बन्ध रखने वाले गति दुःख आदि और मनुष्यहैं वा पशुहैं यहकल्पना है इनबातोंके इकट्ठेहोनेसे हंसभावको कहा, इसप्रकार आत्मासे क्षर अक्षर की उत्पत्ति और अक्षरके द्वारा क्षरकीगति आदिको कहकर तत्त्वमसि वाक्य की सिद्धिके साथ ज्ञानीकी उपाधि न होनेसे उसकी गतिका नहोना वर्णन करते हैं कि जो जीवनाम अक्षरहंस शब्द करके कहागया वहरूपान्तर दशा से रहित अविनाशी ब्रह्मही है इस कारण ज्ञानी हंस उसरूपान्तर दशा से रहित परमात्मा को पाकर प्राण और जन्मको त्याग करताहै ३४ ॥

इतिश्री महाभारते शान्तिपर्वणि मोक्षधर्मे षट्षष्टितमोऽध्यायः ६६ ॥

सड़सठवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि इसप्रकार सांख्यतत्त्वको कहकर योगियोंका कर्म्म वर्णन करतेहैं कि हे श्रेष्ठ पुत्र यहां सांख्यज्ञानसे संयुक्त जो यहज्ञान मैंने तुमसे कहा सो सांख्यशास्त्रसे उत्तम दूसरा मोक्षमार्ग नहीं है फिर योगकर्म वर्णन करनेसे क्या प्रयोजनहै यह शंकाकरके योग मतमें ज्ञान शब्दके अर्थको कहते हैं सबइन्द्री और चित्तबुद्धिकी ऐक्यता और सर्व्वव्यापी आत्माकाज्ञान यह श्रेष्ठहै यहज्ञान चित्तके जीतनेवाले निष्ठावान् आत्मामें प्रीतिमान तत्त्वज्ञ शास्त्र यम नियम आदि युक्त पुरुष से जानने के योग्य है, जो कि योग के पांचों दोषोंको जिनको पण्डितोंने वर्णन किया है नाशकरके जानसक्ता है वह पांचोंयहहैं कि काम क्रोध लोभ भय स्वप्न, शान्ततासेक्रोधको और संकल्प के त्यागनेसे कामकोजीतताहै और बुद्धिके विचारसे धैर्यवान्पुरुष स्वप्नको और अपने धैर्य्य से लिंग उदर और दुष्टकर्म्मों से रक्षाकरे और हाथपांव को नेत्रकेद्वारा और नेत्रकानों को स्त्री आदि के देखने से और मनवाणी को यज्ञादि से भयको सावधानीसे और कपट वा शठताको ज्ञानियोंके सत्संग से रक्षाकरे, सावधान पुरुष सदैव इस प्रकार इनयोग के दोषों को विजयकरे और अग्नि ब्राह्मणका पूजन करे देवताओं को नमस्कारकरे और हिंसायुक्त चित्तके बिगाड़नेवाले काम प्रधान वचन को त्यागकरे, ब्रह्मज्ञानसेही मुक्ति प्रसिद्धहै केवल बुद्धिकेही विरोधसे मुक्तिनहींहोती यहशंकाकरके ब्रह्मशब्दके

अर्थ को कहते हैं - बीजरूप प्रकाशमान सतोगुण प्रधान जो महत्तत्त्व है वही ब्रह्म है उसीब्रह्मका यह सब सारभूत है इसभूतका दृष्टकरनाही सब जड़चैतन्यों का प्रकटहोना है, ध्यान, वेदपाठ, सत्यता, श्रम, शुद्ध भाव, संतोष, पवित्रता, बाहरभीतरसे आचारनिष्ठ शांतचित्त इनगुणों से तेजकी बड़ी वृद्धिहोती है, और पाप निवृत्तहोता है और सब इच्छा पूर्णहोकर तत्त्वज्ञान प्राप्तहोता है और रागद्वेषरहित अनायास प्राप्तिसेतृप्त निष्पाप तेजस्वी अल्पाहारी जितेन्द्री पुरुष काम क्रोध को आधीन करके महातत्त्वका लयस्थान प्रकृति को आधीनकरे वह सावधानचित्त इन्द्रियों को एकाग्र करके अर्थात् चित् को विषयों से हटाकरबुद्धि में धारणकरे अर्थात् संकल्परूप चित्तकोरोंके, इन्द्रियोंके न रोकने में दोषोंको कहते हैं जो इसपांचइन्द्री रखनेवाले जीवात्माकी एकइन्द्री छिद्ररूपहो उसछिद्र से उसकी शास्त्रजन्य बुद्धिऐसी गिरती है जैसे मसक से जल गिरता है, योगी पुरुष प्रथम चित्तको ऐसे आधीनकरे जैसे कि मत्स्यघाती जाल तोड़नेवाली मछली को करता है--तदनन्तर यतीहो इन सब चक्षु, श्रोत्र, जिह्वा, घ्राण आदि को रोककर चित्तमें नियतकरे, और संकल्पोंको त्याग करके चित्तको बुद्धि में धारणकरे, और पांचोंइन्द्रियोंको चित्त में धारणकरे जब यह पांचों इन्द्रियां और छठामन बुद्धि में नियतहोते हैं और नाशवान् स्वरूपहोकर संकल्पसे उत्पन्नहोनेवाली प्रवृत्ति को त्यागकरते हैं तब ब्रह्मप्रकाशकरता है, जहां आत्मा सूक्ष्मरूपबुद्धि में दृष्टपड़ताहै वहां सब रूप सर्वव्यापीहोनेसे दिखाई देताहै, उसको वह महात्मा ब्राह्मणदेखते हैं जो कि बुद्धिमान् धैर्यवान् महाज्ञानी सब जीवोंकी वृद्धि में प्रवृत्त हैं, इसप्रकार श्रेष्ठनियम वाला योगी नियत समय में कर्मकरता और एकांत में अकेलाबैठाहुआ शुद्धआत्म स्वरूपकी ऐक्यता को प्राप्तहोताहै-अब योगके विघ्नों को कहते हैं, बड़े मोह भ्रम इनदोनों को स्पर्श करनेवाला विषय दिव्यगन्धका प्राप्तकरना सुनना देखना अपूर्वरस स्पर्श शीत उष्ण वायु के समान शीघ्रगामीपने को और योगबलसे सब शास्त्रों के अर्थका ज्ञान दिव्यस्त्रियों के भोग आदि को पाकर वह तत्त्वज्ञानी उनको भी तुच्छ समझकर बुद्धिमेंही लयकरे आशय यह है कि बुद्धि से कल्पितहोने पर उनका लयबुद्धिमें भी होना उचित है जितेन्द्री मुनि शिखर पहाड़, दृढ़मूलवाले वृक्ष अथवा अन्यवृक्षकेनीचे आसन जमावे और तीनोंकाल योगका अभ्यासकरे, जैसे पात्रोंका चाहनेवाला मनुष्य पात्रोंकी रक्षाकरता है उसीप्रकार एकाग्रता करनेवाला इन्द्रियोंके समूह को हृदय कमल में नियत करके सदैव ध्यानको और योगसे चित्तको भयभीत न करे, जिसयुक्तिसे इस चंचल चित्तको वशमें करे उसीको सेवनकरे और तद्रूपहोकर उससे चलायमान न हो, वह सावधान

योगी निवासकेलिये जीवोंसेरहित पहाड़ीगुफा और देवताओंके मकान और उजड़े स्थानों को प्राप्त करे और दूसरे का संगकर्म्म वचन चित्तसे भी न करे उदासीन वृत्ति स्वल्पाहारी और हानिलाभ में और निन्दास्तुति में एकचित्त रहै लाभमें प्रसन्न न हो हानिमेंशोच न करे वायुके समान सबजीवों में समान धर्मीहोवे, इसप्रकार सावधान चित्तसाधु समदर्शी सदैव योग में छःमहीने तक प्रवृत्त मनुष्यका शब्दब्रह्म अपने अर्थका अपरोक्ष ज्ञानकरने से अत्यंत प्रकाश करताहै सुवर्ण पाषाण को समान जाननेवाला योगी धनकी प्राप्ति में पीड़ित मनुष्योंको देखकरधनके प्राप्तकरनेमें प्रीति न करे और अज्ञान न हो,इसमेंश्रद्धा वानही अधिकारी है इसका वर्णन करते हैं कि इसशांत चित्तरूप योगमार्ग से शूद्र और धर्म्म जाननेवाली स्त्रियां भी परमगति को पाती हैं आशय यह है कि तत्त्व मसि इत्यादि बाक्यों के अर्थ बिचार रूप वेदान्त में तीनवर्ण अ-धिकारी हैं परन्तु शांत चित्तरूप योगमार्ग में स्त्री और शूद्रभी अधिकारी हैं चित्त और बुद्धिसे संयुक्त अचल इंद्रियोंके द्वारा जो पायाजाय वह अजन्मा पुराण और विपरीत दशासे रहित शांतसूक्ष्म से भी सूक्ष्म बृद्धसे वृद्ध अनंत रूप है, चित्तका जीतनेवाला पुरुष उस बुद्धिसे मुक्तिको देखताहै अब कर्म्म-मुक्तिको कहते हैं कि बुद्धिमान् पुरुष इसबर्णन कियेहुए महात्मा महर्षि के बचनको ध्यानसे शब्द और अर्थयुक्त उपदेश जानकर और युक्तिसे विचार कर महाप्रलय तक ब्रह्माजी की सारूप्य मुक्तिको पाते हैं, आशय यह है कि परोक्ष ज्ञानवाले शुद्धचित्त पुरुष ब्रह्माजीके साथ एकसे भोगवाले होकर महा प्रलयपर ब्रह्माजी के साथ मुक्त होते हैं और अपरोक्ष ज्ञानवाले ३४ श्लोकके अनुसार निर्गुण ब्रह्मकी समताको पाते हैं ३५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेसप्तषष्टितमोऽध्यायः ६७ ॥

अड़सठवां अध्याय ॥

अब ब्रह्मविद्या समाप्त हुई और कर्म्मों के साथ उसका समुच्चय खण्डन करने को शुकदेवजी ने प्रश्नकिया कि यह जो वेदका वचन है कि कर्म्मकरो और त्याग करो इस ब्रह्मज्ञान से किस दशाको जाते हैं और कर्म्म से किस को प्राप्त करते हैं यह दोनों वचन परस्परमें विरुद्धसे मालूम होते हैं इसको आप कृपा करके समझाइये, भीष्मजी बोले कि ऐसेशुकदेवजी के वचनसुन-कर व्यासजी ने पुत्रको उत्तर दिया कि यह कर्म्म और ज्ञानरूप दोनों वि-नाशी और अविनाशी मार्ग मैं तुमसे कहताहूं, हे पुत्र, ब्रह्मज्ञान से जिस दशाको प्राप्त करते हैं और कर्म्म से जिसको प्राप्तकरते हैं उनको एक चित्त होकर सुनो कि दोनों में बहुतही अन्तर है, यह सत्य धर्म्मही कहागया इस

स्थान पर जो कहैं कि धर्म नहीं है उसकेही समान यह मेरा पक्ष होगा यह दोनों मार्ग वेद प्रतिष्ठित हैं निवृत्ति में प्रवृत्ति लक्षण वाला धर्म्म अच्छा वर्णन कियागया है अर्थात् जो प्रवृत्ति धर्म्म निवृत्ति धर्म्मका उत्पादक नहो तो अच्छानहीं है, जीवात्मा कर्म्म से बन्धन को पाता है और ज्ञानसे मुक्त होता है इसकारण पारदर्शी यती पुरुष कर्म्मको नहीं करते हैं, कर्म्म से ही दूसरा जन्म होता है जो कि सोलह अंगवालाहै और ज्ञानसे प्राचीन द्वैतता रहित अविनाशी ब्रह्मप्रत्यक्ष होताहै, कर्म्म की प्रशंसा महा अज्ञानी लोग करते हैं इस कारण वह लोग स्त्री आदि से रमणकरते शरीररूप जंजाल को प्राप्तकरते हैं, उत्तम धर्म्मों के देखनेवाले जिन पुरुषोंने उत्तम बुद्धि को प्राप्त किया है वह कर्म्मकी प्रशंसा ऐसे नहीं करतेहैं जैसे कि नदीके जलका पीने वाला कूपकी प्रशंसा नहीं करताहै, कर्म्म के फलसे सुख दुःख और ऐश्वर्य समेत नाशको पाता है और ज्ञानके फलसे अशोचता को प्राप्त होताहै जिस अखण्डब्रह्म में मिलकर न मरताहै न जन्म लेता है अर्थात् अहङ्कार रूपजीव स्वरूप को प्राप्त नहीं होता और फिर जन्म नहीं लेता न उसमें प्रविष्ट होकर वर्त्तमान रहताहै अर्थात् जीवगुण नाश होकर शुद्ध आत्मा रूपशेष रहजाता है, जिस दशामें वह ब्रह्मजीव ईश्वरकी द्वैतता रहित होताहै वह श्रेष्ठ और गुप्त अचल रूपांतर दशा से अदृष्ट सुगमतासे प्राप्त होनेवाला अविनाशीहै, सब स्थानोंमें समदर्शी सर्वमित्र सब जीवों के उपकारी ज्ञानी पुरुष हर्षशोक आदि संकल्प से पीड़ायान नहीं होते हैं, हे पुत्र ज्ञानी पुरुष दूसरा है और कर्म्म कर्त्ता दूसरा है अमावस के दिन चन्द्रमा को सूक्ष्मकला से युक्त देखो आशय यह है कि वृद्धिक्षययुक्त यह सम्वत्सर नाम प्रजापति चन्द्रमा प्रत्येक मास में अमावस के दिन एक कलाबाकी रहता है उसी प्रकार का कर्म्म कर्त्ताओं का ऐश्वर्य्य है सो आकाश में नवीन बक्रचन्द्रमा को देखकर याज्ञवल्क्य ऋषि से यह विधिपूर्वक कहा गया अनुमान कियाजाता है, जो दश इन्द्री और चित्त इन ग्यारह बिकार स्वरूप और कर्म्मरूप कलाओं के भारसे संयुक्त मूर्त्तिमान् है उसव्यष्टिजीवको त्रिगुणात्मक कर्म्मका फल और और चन्द्रमाके समान वृद्धिनाशवाला समझाहै, उसजीव उपाधिरूप चित्तमें जो प्रकाशमान चैतन्य नियत है वह ऐसा है जैसे कि कमलपत्रमें जलविन्दु होता है उसयोग से प्राप्तहोनेवाले चित्तजीव को क्षेत्रज्ञ परमात्मा अविनाशी जानो, और यह सतोगुण रजोगुण तमोगुण जीवके गुणहैं और जीवको आत्माका गुणजाने और उस आत्माको परमात्माका गुणजाने जड़ चैतन्य रूपजीव जड़भाग के त्यागकरने से ब्रह्मही है आप जड़रूप चेतनासे संयुक्त देहको जीवके गुणचैतन्यसे संयुक्त कहतेहैं इसकारण वह जीव सबको चेष्टा

देताहै और चैतन्य करता है क्षेत्रज्ञका ज्ञाता जीव से परे उसपरमात्मा को कहतेहैं जिसने भूलोकआदि सप्त भवनों को उत्पन्न कियाहै २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेअष्टषष्टितमोऽध्यायः ६८ ॥

उनहत्तरवां अध्याय ॥

शुकदेवजी बोले कि प्रधानसे लेकर चौबीस तत्त्वरूप जोसाधारण सृष्टिहै वह आत्मासे है इसी प्रकार विषयों समेत इन्द्रियां भी बुद्धि से उत्पन्न हुई हैं ईश्वर की सामर्थ्यसे उत्पन्न होनेवाली सृष्टिउत्तमहै और बंधनरूपहोनेसे अनुत्तम है, जीव और ईश्वरसे सम्बन्ध रखनेवाली सृष्टि दोप्रकारकीहै उनमें बुद्धि रूप जीवसृष्टि बंधनका कारणहै मैं काल से संबंध रखनेवाले सत्पुरुषोंके उस आचारको जिससे कि इसलोकमें सन्त कर्म्मकर्त्ताहोते हैं सुनना चाहताहूं और वेदमें कर्म्म करना और कर्म्मोंका त्यागना दोनों परस्पर विरुद्धबातें लिखी हैं इसको भी आप निर्णय करके सुनाइये, क्योंकि मैं लोकरीतिकी मुख्यताका जाननेवाला और देहाभिमान का त्यागने वाला गुरू के उपदेश से पवित्र बुद्धिका संस्कार करके अविनाशी आत्माको देखना चाहताहूंगा, व्यासजी बोले कि जैसे पहिले आपब्रह्माजी की ओरसे जो वृत्ति बिचारकी गई वही प्राचीन ऋषियों करके काममेंलाईगई आशय यहहै कि ज्ञानके साथ कर्म्मोंका समुच्चय नहींहै परन्तु कर्म्म समुच्चय होगा जैसे लिखाहै कि कर्म्मोंसे बुद्धिको शुद्धकरके उसबुद्धिके द्वारा आत्मदर्शनको चाहै,परम ऋषिलोग ब्रह्मचर्य्य के द्वारा लोकोंको विजय करतेहैं इसकारण चित्तकेद्वारा अपने कल्याणकोचाहा बन में मूलफलों का भोक्ता बड़ातपस्वी पवित्र देशगामी अहिंसायुक्त वानप्रस्थ आश्रम में समय पर भिक्षाकरता हुआ ब्रह्मभावके लिये कल्पना किया जाताहै, शुभ अशुभको त्यागकर किसी एक भोजन से तृप्तस्तुति और नमस्कार के व्यवहार से रहित अकेले बनमें घूमो, शुकदेवजी ने कहा कि कर्म्म करो वा त्यागकरो यह जो वेदका बचन है वह परस्पर में विरोधी है तो कैसे शास्त्रसे प्रमाणीकमाने, सो यह संदेह निवृत्त कीजिये कि दोनों प्रमाण किस प्रकार से हैं और कर्म्मोंके विरोधोंमें मोक्षकैसे प्राप्तहोतीहै,भीष्मजी बोले कि इसप्रकार महातेजस्वी शुकदेवजीके प्रश्नको सुनकर व्यासजी बोले कि ब्रह्मचारी गृहस्थ बानप्रस्थ संन्यासी यह सब शास्त्र उपदेशके अनुसार कर्म्म करने वाले परमगतिको पातेहैं, जो अकेलाही बुद्धिके अनुसार इन आश्रमों का अनुष्ठानकरे और काम द्वेषसे रहितहो वह ब्रह्मज्ञान के योग्यहोताहै यह चार पाये वाली ब्रह्मरूप नसेनी नियतहै इस नसेनी पर चढ़कर ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठा पाताहै, धर्म्म अर्थमें पण्डित किसीके गुणमें दोष न लगाने वाला ब्रह्मचारी

गुरू या गुरुके पुत्रकेपास चौथाई अवस्थातक निवासकरे नीचेपृथ्वीपर सोवे और प्रातःकाल उठकर गुरूके घरमें भृत्यकर्म्मकरके और गुरूको जतलाकरगुरू के पास बैठे और सर्व कर्म्मकर्त्ता होकर दासहोजाय, ऐश्वर्यकी इच्छा करने वाले पुरुषको गुरूके सब कामपूरे करके फिर उनके पास पढ़ना चाहिये और आज्ञाकारी होकर असभ्यबात कभी न कहे और गुरूके पासबुलानेसेप्राप्तहोवे, पवित्र और चतुरता युक्त प्रियवचन बोले और जितेन्द्रियसावधानहोकर नेत्रोंसे गुरूको देखे गुरूसे पहलेभोजन जलआदिको नग्रहणकरे और स्थिरन होनेपर स्थिर न हो और गुरूके जागतेहुये शयननहींकरे औरनम्रतासे गुरूके चरणछुए दाहिने हाथ से दाहिंचरणको और बायें हाथसे बायेंचरणको पकड़े गुरूसे दंड वत्करके कहै कि हे भगवन् पढ़ाओ यहकाम मैंने किया और यहकरूंगा और जो आप आज्ञादेंगे उसको करूंगा यह सब जतलाकर और बुद्धि के अनुसार प्रकटकरके दूसरी बारभी गुरू से कहना चाहिये, और ब्रह्मचारी को जो २ रसगन्धादि सेवन करना वर्जितहैं उनसबको समावर्त्तन कर्म से निवृत्त होकर सेवनकरे यह ब्रह्मचारीके धर्म हैं इनको सदैव कर्त्ताहुआ गुरूके सन्मुख वर्त्तमानहो और सामर्थ्यके अनुसार गुरूमें प्रीतिको प्रकटकरे फिर वह शिष्य एक आश्रमसे दूसरे आश्रमोंमें कर्मके द्वारा प्रवृत्तहोवे वेद व्रतके उपवास से अवस्था के चतुर्थांश व्यतीत होनेपर गुरू को दक्षिणा देकर विधिपूर्वक समावर्त्तन कर्म करे और व्रतीपुरुष धर्म पत्नियों से संयुक्त युक्ति से अग्नियों को स्थापन करके अवस्था के दूसरे भाग में गृहस्थी होय २९ ॥

इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणिमोक्षधर्मे एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ६९ ॥

सत्तरवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि सुन्दरव्रत परायण धर्मपत्नी संयुक्त गृहस्थी पुरुष अग्नियोंको स्थापनकरके अपनी अवस्था के दोभागतक घरमें निवास करे, पण्डितों की ओरसे गृहस्थियों की चारप्रकार की आजीविका कही हैं प्रथम तीनवर्षतकके निमित्त अन्नका संचयकरना उसको कुसूलधान्य कहते हैं दूसरा कुम्भधान्य अर्थात् कुंभकी पूर्णताके समान अन्न संचयकरना तीसरे एकदिन के खर्चके योग्य अन्नरखना चौथे उञ्छवृत्तीसे अपनी आजीविकाकोप्राप्तकरे इन चारों में पहले पहलेकी अपेक्षा दूसरा उत्तम है, एक छःकर्म करनेवाला कर्मकर्त्ता होताहै, दूसरा तीन कर्मसे कर्मकर्त्ताहोताहै, एक दोकर्मसे कर्मकर्त्ता होताहै, चौथा ब्रह्मयज्ञमें अर्थात् जप वेदपाठ आदिमें नियत होताहै अवगृहस्थीकेबड़े धर्मोंको कहतेहैं, केवल अपनेही निमित्त भोजननबनावे और देव पितृ यज्ञकेउद्देशके बिनाकभी पशुओंका घातन करे बकरी आदि जीवधारी

और फलआदि निर्जीवोंको यजुर्वेदके मंत्रोंकेद्वारा संस्कारकरे और दिवस वा अगली पिछली रात्रिमें कभी न सोवे और दोनों समयके भोजनके सिवाय मध्यमें फिर भोजननकरे और ऋतुकालोंके सिवाय स्त्रीसेभोगनकरे और पूजन भोजनके बिना कोई ब्राह्मण उसके घरमें निवासनकरे, इसीप्रकार उसके हव्य कव्यके धारणकरनेवाले वह अतिथिभी सदैव पूजन के योग्यहैं जो कि वेद विद्या और व्रतमें पूर्ण वेदकेपारदर्शी धर्मसे निर्वाह करनेवाले जितेन्द्रिय क्रियावान् और तपस्वी हों उन्हींके पूजन के निमित्त हव्यकव्य भी कहागयाहै, और पाखण्डके निमित्त नख आदि के बढ़ानेवाले अपनाधर्म विख्यात करनेवाले गुरूको न मानकर अग्निहोत्रके त्यागी इत्यादि, इसप्रकारके भी सब जीवोंका भाग इसगृहस्थको देना कहाहै इसीप्रकार ब्रह्मचारी और संन्यासी को भी गृहस्थ भोजनकरावे, सदैव बिघसान्न और अमृतका भोजन करे जो हव्य के समान वा अन्यपदार्थ यज्ञसे शेषरहाहो उसको अमृत कहते हैं और जो गृहस्थोंके बालबच्चे और बृद्ध अतिथियोंको देकर शेषरहै उसको विघसान्न जानो उसका भोजन करनेवाला विघसाशी कहलाताहै, अपनी स्त्रीसे प्रीति करनेवाला जितेन्द्री परनिन्दा रहित धर्ममें क्लेशादि रहित, ऋत्विज पुरोहित आचार्य्य, मातुल, अतिथि, आश्रित, वृद्ध, बाल, आतुर, वैद्य, ज्ञाति, सम्बन्धी बांधव, माता, पिता, सगोत्री, स्त्री, भाई, बेटा, भार्य्या और दास आदिकेसाथ भोजनके भागके विषयमें वाद न करे क्योंकि इनके वादको त्यागनेसे पापोंसे निवृत्तहोताहै, इन्होंसे बिजय कियाहुआ सबलोगोंको विजयकरताहै निस्संदेह आचार्य्य ब्रह्मलोकका और प्रजापति के लोकका स्वामी है अतिथि इन्द्रलोक का स्वामी ऋत्विज देवलोकका अधिपति, बहन बेटी बधू आदि अप्सराओं के लोक में स्वामी हैं, जातिवाले बैश्व देवलोकमें स्वामी हैं, नातेदार और बांधव दिशाओं में, और माता मामा पृथ्वीपर, और वृद्ध, बालक, रोगी, निर्बल आदमी आकाशमें स्वामीहैं, आशय यहहै कि जो जिस लोकका स्वामी है उसके अप्रसन्न करनेमें उन उन लोकों में हानिको पाताहै, बड़ा भाई पिताके समान है, भार्या और पुत्र अपना देह है दास लोगों के समूह अपनी छाया हैं, बेटी परम कृपण है इसीकारण गृहस्थ धर्म में प्रवृत्त बुद्धिमान् धर्माभ्यासी थकावटका विजयी और तपसेरहित पुरुष इनसब बातोंसे निंदित सदैवक्षमाकरे २१ कोई धर्मज्ञ पुरुष मनोरथ सम्बन्धी यज्ञआदिकोनहीं करे, गृहस्थी की तीन आजीविका हैं एकतो मुख्य तोलसे अन्न संचय रखना उंछ, शिल, कापोती उनमें पिछली पिछली कल्याण करनेवाली है, चारोंआश्रमों में भी एक से एक पिछले उत्तम समझो, २२ जिसप्रकार उनके नियम किये वह सब ऐश्वर्य की इच्छावालेको करनेके योग्यहैं, कुंभधान्य शिल उंछसे निर्वाह करनेवाले

कापोती नाम जीविका में प्रवृत्त हैं २४ यह योग्य मनुष्य जिस देश में निवास करते हैं वह देश सब ओर से वृद्धि को पाता है, जो पीड़ा रहित मनुष्य इनगृहस्थी की आजीविकाओं पर ध्यान पूर्वक कर्मकरे वह अगले पिछले दश २ पुरुषाओं को तारताहै, और चक्रवर्तियों के समान गति को पाता है यही गति जितेन्द्रियों की भी होती है, स्वर्गलोग उदार चित्तवाले गृहस्थियों का हितकारी है, विमानयुक्त स्वर्गवेदसे देखाहुआ क्रीड़ायोग्य है, सावधानचित्त गृहस्थियों की स्वर्गही प्रतिष्ठा है इसी कारण यह गृहस्थधर्म्म स्वर्गका देनेवाला ब्रह्माजीनेरचाहै और भोगकियाजाताहै,इसदूसरे आश्रमको क्रमसे प्राप्तकरके स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठापाताहै मैंने तुझसे तीसरे परमउदारवान प्रस्थोंके उत्तमोत्तम बड़े आश्रमकोकहा और जोदेहके अभिमानदूरकरनेवाले वनवासी और गृहपति अपने अस्थिचर्मवाले देहको सुखाने वालेहैं उनके भी आश्रमको कहताहूं तुम चित्त से सुनो ३१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेसप्ततितमोऽध्यायः ७० ॥

इकहत्तरवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर शास्त्रमें ज्ञानियों से विदितकी हुई गृहस्थी की आजीविका तुमसे वर्णन करी अब गृहस्थ वृत्तिको क्रमसे निन्दित करके जो आश्रम उत्तम कहा गयाहै उसको समझो कि इस स्त्री सम्बन्धित गृहस्थ वृत्ती से चित्तको हटाकर वानप्रस्थ आश्रम में आश्चर्य भूत तीसरी वृत्तिको कहताहूं जिनके कि सब लोक और आश्रम आत्मारूप हैं उन विचारवान् पवित्र कर्मियों के धर्म को सुनो, व्यासजी अपने पुत्र शुकदेवजीको आशीर्वाददेकर बोले कि जब गृहस्थी अपने मुखपर श्वेतकेश और पुत्रकी संतान को देखे तब वनमें ही निवासकरे अर्थात् अवस्थाके तीसरे भागको वानप्रस्थ आश्रम में व्यतीत करे और देवपूजन पूर्वक उनअग्नियोंका सेवन करे, जो अचारवान् सामान्यभोक्ता दिनके छठेभाग में भोजन करनेवाला सावधानहो वही अग्निहोत्र वही गौवही यज्ञोंके सब अंगहैं यहां वनमें भी पंचमहायज्ञोंके बीच लोहेकी फारसे रहित हल के जोतने से उत्पन्न धान जो नीवार नाम जो मुनियों के अन्न और सब प्रकारके विघसान्नहैं उनको भोजनकरे और करावे, वानप्रस्थ आश्रम में भी यह चार आजीविका कही हैं कोई तत्काल प्रक्षालक अर्थात् शीघ्र भोजन निवटानेवाले कोई एक मासके भोजनार्थ अन्न संचय करनेवाले हैं कोई अतिथि पूजन और यज्ञ तंत्र आदिके निमित्त वर्षके खर्चको और कोई वारहवर्ष के खर्च के लिये इकट्ठा करतेहैं, वर्षाके

रहित मैदान में तपकरनेवाले, हेमन्तऋतु में जलमें नियत होनेवाले और उष्णऋतुमें पंचाग्नि तपनेवाले मितभोजनवाले पृथ्वीपर सोते हैं एकपैरसे खड़े रहते हैं स्थान और आसनोंको भी त्यागदेते हैं और यज्ञों में अभिषेक करते हैं,कोई दांतको ऊखलबनानेवाले हैं अर्थात् केवल दांतसेही चबाकर खातेहैं और कोईपत्थरपर कूटकर खातेहैं कोई कृष्णपक्षमें व्रतकरके शुक्लपक्षमें यवागूनाम और अच्छे पक्के मूलआदिको एकबार खाते हैं कोई कृष्णपक्ष में जब आदि जो कुछ मिले भोजन करतेहैं आशय यहहै कि कोई फल कोई मूल कोई फूलोंसे न्यायके अनुसार निर्वाहकरतेहैं कोई वैखानस ऋषियोंकी गति में प्रवृत्तहैं उनज्ञानियों की यह और अन्यप्रकारकी भी अनेक दीक्षाहैं चौथाधर्म उपनिषद् सम्बन्धी साधारणहै, जो सब आश्रमों में वर्त्तमानहो उसको साधारणकहते हैं, हे पुत्र उसगृहस्थ और वानप्रस्थ से दूसरा आश्रम जो होता है इसेयज्ञ में सब अर्थके देखनेवाले ब्राह्मणोंमेंसे अगस्त, सप्तऋषि, मधुच्छन्द, अघमर्षण, सांकृति, सुदिव, अतंडि, यथावास, कृतश्रम, अहोवीर्य, काव्य, तांड्य, मेधातिथि, बुध, बलवान्, कर्णनिर्वाक, शून्यवाल इत्यादि ऋषियों ने किया है इसीहेतु से वह सब स्वर्गवासी हुये, इसीप्रकार सत्यसंकल्प आदि प्रत्यक्ष धर्म्मकरनेवाले या यावरनामगण स्वर्गको गये, हे तात इसीप्रकार धर्म्म दर्शी उग्रतपवाले अन्य उत्तम ब्राह्मण वनमें निवासीहुये और वैखानस वालखिल्य और सैकतनाम ऋषि कृच्छ्र चान्द्रायण कर्मोंके कारण आनन्दसे रहित सदैव धर्म्म करनेवाले जितेन्द्री प्रत्यक्ष धर्म्मधारी वनके वासीभी स्वर्गवासीहुये वह प्रकाशवान् नक्षत्रोंसे भी अधिक प्रकाशित निर्भय दृष्टपड़ते हैं, वृद्धावस्था से निर्बल और रोगसे अत्यन्त पीड़ित पुरुष अवस्थाके चतुर्थांश बाकी रहने पर वानप्रस्थ आश्रमको त्यागकरे एकदिनमें होनेवाले सबवेद और दक्षिणा युक्त यज्ञको करके जीवनदशा में आपश्राद्ध आदि करनेवाला आत्मासें प्रीतिमान् आत्मामें ही क्रीड़ा करनेवाला आश्रयी और अग्नियोंका स्थापनकर के सब परिग्रहोंको त्याग संन्यासी होजाय बड़ा वैराग्य न होनेपर दूसरा पक्ष कहतेहैं—शीघ्रहोनेवाले ब्रह्मयज्ञ और दर्शपूर्णमासनाम यज्ञादि तबतक सदैव करै जबतक कि कर्मरूप यज्ञसे आत्मयज्ञ अर्थात् योगाभ्यास वर्त्तमानहोताहै, अबआत्म यज्ञका स्वरूप कहते हैं—देहके त्याग पर्यन्त गार्हस्पति आहवनी आदि तीनों अग्नियां जोकि मनचित्त सुखरूपहैं उनको पूजनकर मंत्रकेद्वारा पांचोंप्राणके लिये पांच या छः ग्रासोंको खाय उसके पीछे कर्मों से पवित्र वा-[illegible] मृतक शिरदेह और नखोंको पृथक् करके एक आश्रमसे दूसरे पवित्र एक [illegible]को प्राप्तकरताहै, जोब्राह्मण सब जीवोंको निर्भय करके संन्यासी होना की इ[illegible] लोक तेजरूपहैं वहदेह त्यागकर मोक्षको पाताहै अच्छे शीलचलन

वाला निष्पापपुरुष इसलोक और परलोकमें कर्म्म अनुष्ठानको नहीं चाहताहै और काम क्रोध से रहित प्रिय अप्रियतासे जुदा उदासीन पुरुष आत्मज्ञानी होताहै अपने वेदान्तशास्त्र और सूत्र दोनोंलोकको त्यागकरके आत्म इच्छा रूप आहवनी और शिखायज्ञोपवीतके त्याग से सम्बन्ध रखनेवाले मंत्रका पराक्रम रखनेवाला प्राप्त होनेवाले नियममें पीड़ामान नहींहोय, आत्मज्ञानी की गति स्वेच्छाचारी होतीहै उसजितेन्द्री और धर्ममें पूर्ण पुरुषके विषय में संदेह नहीं है इसके अनन्तर उत्तम और सद्गुण युक्त श्रेष्ठ पुरुष तीनों आश्रमोंको तुच्छकर उच्चस्थानी चौथे आश्रमका वर्णन किया अब जिसमें शम आदिवृत्ति अधिकहैं और मोक्षका हेतुहै उसको सुनो २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे एकसप्ततितमोऽध्यायः ७१ ॥

बहत्तरवां अध्याय ॥

पूर्वमें वैश्वानर आत्माकी उपासना वर्णन की वह कर्म ढीले आदमी से होना कठिनहै इसबातको मानकर शुकदेवजीने यह प्रश्न किया कि इसबानप्रस्थ आश्रममें इसप्रकार नियत होकर जानने के योग्य ब्रह्मकी इच्छाकरने वाले पुरुषकी ओरसे उसआत्माका सामर्थ्य के अनुसार ब्रह्म में ठीक २ तद्रूप होना किसप्रकार से सम्भव है व्यासजी बोले कि इनदोनों आश्रमोंसे चित्त शुद्धीरूप संस्कारको पाकर फिर आत्माको ब्रह्ममें लयकरना चाहिये जो परमार्थ करनेके योग्यहै उसको एक चित्त होकर सुनो, तीनों आश्रमोंमें चित्तके दोषको दूरकरके सब आश्रमोंमें उत्तम पदवाले संन्यास आश्रमको धारणकरे, सो तुम इसप्रकार अभ्यास करके कर्म्मकरो इसीप्रकार अन्यभी सुनो कि अकेला किसीको साथ न रखनेवाला शुद्धी के लिये धर्म्मकोकरे, जो अकेला देखता किसीपदार्थको त्याग नहींकरताहै अर्थात् सर्वव्यापी है और मोक्षके सुखसे भ्रष्ट नहींहोताहै वह अग्नि और स्थानरहित अन्नकेनिमित्त ग्रामकोजाय, सावधान चित्त अल्पाहारी एक समय भोजन करनेवाला मुनि किसी वस्तु का संग्रह न करे कपालका जलपात्र वृक्षों के मूल पर निवास गेरुवेवस्त्र एकाकी सब जीवों के रागद्वेषसे पृथक् होना यह संन्यासी का लक्षणहै, जिसमें भयानक कोपयुक्त हाथी के समान वचन प्रवेश करतेहैं वे वचन फिर कहनेवाले को प्राप्त नहीं होतेहैं वह पुरुष कैवल्य मोक्ष सम्बन्धी आश्रम में निवास करे, कभी किसी की मुख्यकर ब्राह्मणकी निन्दाको न सुने न देखे न किसी दशा में आप करे, जिसमें ब्राह्मणकी भलाईहो उसीको सदैव कहै, अपने संसारी रोगों की चिकित्सा करता निन्दारहितहो सदैव जिस अकेले से आकाश व्याप्त होताहै और जिससे जन समूह भी निर्जनस्थान के समान होता है

देवता लोग उसको निर्दोष ब्राह्मण समझतेहैं जिस किसी रोगमें गुप्त देह और कोई अन्नसे तृप्त और जहां योगहो वहांही शयन करनेवालाहै उसीको देवता ब्राह्मण कहतेहैं, जैसे कि सर्प से भयभीत होतेहैं उसीप्रकार जन समूहों से भय करता रहै और जैसे नरक से भय उत्पन्न होताहै उसीप्रकार मिष्टान्नसे भयभीत रहै और जैसे मृतकव्यादि से भय होताहै उसीप्रकार स्त्रियों से भय करता रहै और मानसे प्रसन्न न हो और अपमानमें क्रोध रहितहो और सब जीवोंको अभय देनेवाला हो, जो मृत्यु जीवनको न चाहै और समयकी बाट आज्ञाकारी भृत्यके समान देखता रहै दोष रहित निर्दोष वक्ता सर्वपाप रहित अशत्रुहो उसको क्या भयहै जिससे सब जीव निर्भयहैं न किसी जीवसे उस को भयहै उस मोह रहित पुरुषको कहीं भय नहीं है, निर्भयता को कहकर पूर्णानंद प्राप्तिको भी कहतेहैं, जैसे कि हाथी के पैर में सबके चरण अंतर्गत होजातेहैं उसीप्रकार समाधि में वर्त्तमान योगी के स्थानपर इन्द्रियोंके स्थान अन्तर्गत होजातेहैं इसप्रकार के सब धर्म्म अर्थ इस हिंसासे रहित और सब जीवों की निर्भयता रूप संन्यास योग में लय होजातेहैं जो हिंसा रहित होताहै वह अविनाशी जीवनमुक्त होताहै, हिंसा रहित समदर्शी सत्यवक्ता धैर्यवान् सावधान सब जीवों का रक्षास्थान वह पुरुष उसगतिको पाताहै जिससे कि उत्तम दूसरीगति नहीं है, इसप्रकार मृत्युरूप आत्माके प्रत्यक्ष अनुभवसे तृप्त अनिच्छावान् पुरुषको उल्लंघन करनेवाला नहीं है क्योंकि वह पुरुष मृत्यु को उल्लंघन करजाताहै, सब संगों से रहित आकाश के समान वर्त्तमान अदृष्ट अकेले घूमनेवाले शान्तरूपही को देवताओंने ब्राह्मण कहाहै, जिसका जीवन निर्विकल्प समाधि से उत्पन्न होनेवाले पुण्य के निमित्तहै और वह धर्म भी पास रहनेवालेपुत्र और मित्र आदिके लियेहै और जिसके दिनरात्रि पुण्य के हेतुहैं अर्थात् समाधि परमेश्वरार्थ है उस अनिच्छावान् असावधानता रहित अपनी प्रशंसा रहित नमस्कारादि से उत्पन्न होनेवाले सुख और बासना रूप बंधनों से रहित पुरुषको ब्राह्मण जानों सब जीव सुख में क्रीड़ा करतेहैं और सब दुःखका भय करतेहैं उन कर्मों के द्वारा उत्पन्न होनेवाले भय से दुखी होनेवाले श्रद्धावान पुरुष हिंसात्मक कर्मोंको नहीं करें सब जीवों की निर्भयतारूप दान सब दानोंसे उत्तम होताहै जो पुरुष प्रथमही हिंसात्मक कर्मको त्याग करताहै और जीवों को निर्भय दान देताहै वहमोक्षको पाताहै व्यतीत अध्याय के तेंतीस श्लोक के अनुसार खुलेहुये मुखमें हव्य को नहीं होमताहै अर्थात् वह योगी चित्त और इन्द्री आदिको आत्मामें होमकरताहै, सब जड़चैतन्य जीवोंकी जो नाभिहै वह तीनों लोकके आत्मा वैश्वानरका स्थानहै उस लोक के मस्तक आदि अंगों से लेकर सब अंगोंतक वैश्वानरके

अंग हैं वह वैकल्पितहैं, हृदय से लेकर नाभि पर्यन्त आदेश मात्रस्थान में आत्माप्रकटहै जोयोगी इस चिन्मात्रमें सब प्रपंचको होमकरता है अर्थात् लय करताहै देह में नियत इन देवताओं से युक्त सब लोकोंमें होमाहुआ अग्निहोत्र होताहै अर्थात् उस होम से सब ब्रह्माण्ड तृप्तहोताहै, जिन पुरुषोंने उस प्रकाशमान और अकार अर्थवाले सूत्रात्मा को और तीनों गुणवालीमकार अर्थ युक्त मायाकी उपाधि रखनेवाले ईश्वरको और सूक्ष्मतम और उपाधि से पृथक् ब्रह्मभावको जानाहै वह सब लोक में प्रतिष्ठावान् हैं समर्थ देवता उस मोक्षरूपको प्राप्तहोतेहैं अर्थात् उसके अंगरूप होतेहैं, अब विद्या के फल को कहते हैं, जो पुरुष वेदोंको और जानने योग्य यज्ञादिकों को और कर्मकाण्ड वा परलोक आदिको आत्मामें जानताहै उसकी देवताभी सेवा किया चाहते हैं, अब इसके पक्षीरूपका वर्णन करतेहैं, किरणों से प्रकाशमान जो जीवात्मा उस पृथ्वीसे अनुराग रहित और स्वर्ग में भी अचिन्त्य प्रभाव चिन्मात्र रूप ब्रह्माण्डके मध्यमें प्रकाशित बहुतपक्षरूप देवताओंसे संयुक्त पक्षी अर्थात् असंग और मोद प्रमोद नाम वृत्तिरूप दो पक्ष रखनेवाले पक्षी को देहके भीतर हार्द आकाश में हृदय कमल पर जानताहै उसको देवता प्राप्त होतेहैं उसके छः ऋतु तो नाभि हैं और बारह महीने आरे हैं और मावस संक्रांति आदि सुन्दर पर्वहैं यह विश्व जिसके मुखके ऊपर जाता है वह भ्रमण करनेवाला ईश्वरमें युक्त अजर कालचक्र बुद्धिमें नियतहै,सुषुप्तिनामअज्ञान जो कि जाग्रत और स्वप्न अवस्थाका बीजरूपहै और संसारका शरीरहै और स्थूल सूक्ष्म सृष्टिको व्याप्तकरता है उस अज्ञानरूप स्थूल सूक्ष्मरूप देहमें जो जीवहै वह देवताओं को तृप्त करताहै वह तृप्त देवता इसके मुखको तृप्त करते हैं, वेदमें कहाहै कि इस मंत्रसे जो पहले आहुति मुखमें होमी जाती है उससे प्राण तृप्तहोताहै प्राणकी तृप्तिसे नेत्र तृप्तहोतेहैं और नेत्रोंकी तृप्तिसे सूर्य तृप्त होतेहैं सूर्यकी तृप्तिसे स्वर्ग तृप्तहोताहै, स्वर्गकी तृप्तिसे स्वर्ग संयुक्त सूर्यलोक तृप्तहोताहै, फिर वह आहुति देनेवालासन्तान पशु अन्नादि युक्तहोकर ब्रह्मतेज से तृप्त होताहै, जो निर्गुण ब्रह्मभावको न पाकर सगुणब्रह्ममें प्रवृत्तहोताहै उस की गतिको कहतेहैं, जिससे जीवमात्र निर्भयहोते हैं और जीवमात्रों से वह आपभी निर्भयहोताहै वह उन निर्भय अनन्त लोकों को पाता है, जो लोक वास्तवमें एकाकी तेजरूप और पुराण ब्रह्मलोकनामसे प्रसिद्ध है, जो ब्राह्मण अनिन्द्य और दूसरोंकी निन्दा नहीं करताहै और अज्ञान वा अपवित्रता से रहित जिसके स्थूल सूक्ष्म पाप निवृत्त होजातेहैं वही ब्राह्मण उसपरमात्माको देखताहै, वहपुरुष इस लोक और परलोकमें भोगने के स्थानों को नहीं प्राप्त होताहै तात्पर्य यहहै कि केवल मोक्षपानेसे उसकीगति नहींहै इसकी जीव-

नमुक्त की दशाको कहते हैं, क्रोध मोहसे पृथक् मृत्तिका सुवर्णको समानजाननेवाला प्रत्यक्ष ऐश्वर्य रखनेवाला राग द्वेषसे रहित निन्दास्तुति रहितप्रिय अप्रियता रहित संन्यासी और उदासीनों के समान भोगों को भोगता नियत होता है ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेद्विसप्ततितमोऽध्यायः ७२ ॥

तिहत्तरवां अध्याय ॥

व्यासजीबोले कि प्रकृतिके जो देह इन्द्री चित्त आदि विकारहैं उनके कारण यह क्षेत्रज्ञआत्मा कर्तृत्व और भोक्तृत्व गुणोंसे गुणीहै वहनेत्रआदि जड़ रूप होनेसे आत्माको नहीं जानते हैं अर्थात् आप प्रकाशमान नहीं होसक्ते हैं परन्तु वह आत्मा उनकोभी जानताहै अर्थात् प्रकाशकरता है आत्मा इस लोकमें उन इंद्रियोंसे जिनमें छठा चित्तहै करनेके योग्य कर्मको ऐसे करताहै जैसे कि अच्छे सीखेहुये घोड़ोंसे सारथी सारथ्यकर्मको करताहै, इन्द्रियोंसेपरे अर्थ अर्थोंसे परे मन मनसेपरे बुद्धि बुद्धिसेपरे महत्तत्त्व महत्तत्त्वसेपरे अव्यक्त अव्यक्तसेपरे चैतन्यात्मा है और चैतन्यात्मासे परे कुछ नहीं है वहीकाष्ठा और परमगतिहै, इसप्रकार सबजीवोंमेंगुप्त आत्माप्रकाश नहीं करताहै और सूक्ष्मदर्शी ब्रह्मज्ञानियों की सूक्ष्म और तीक्ष्ण बुद्धि से दृष्टिगोचर होता है, ध्यान ध्यानी ध्यानयोग्य और सब इंद्री और उनके विषयोंके विचाररहित बुद्धि और इंद्रियों के द्वारा चित्तको महत्तत्त्व में लयकरके ध्यान से उपरामहो अहंब्रह्मास्मि अर्थात् मैं ब्रह्महूं इस विद्यासे शुद्ध ईश्वरभावको लयकरनेवाला मुक्तचित्त कैवल्य मोक्षको पाताहै, इसके विपरीतपक्षमें दोष है उसको भी सुनो कि चित्त को सब इन्द्रियों के स्वाधीनकरनेवाला आत्मस्वरूपके स्मरण से पृथक् मरण धर्मवालामनुष्य विषयोंमें प्रवृत्त चित्तहोनेसेमृत्युकोपाताहै सबसंकल्पोंकोनाश करके चित्तको सूक्ष्मबुद्धिमें प्रवेशकरे, बुद्धिमें चित्त को प्रवेशकरके फिर काल इन्द्र पर्वतके समान अचलहो अथवा कालका नाश करनेवाला होवे, इस संसार में यतीपुरुष चित्तकी शुद्धतासे पाप पुण्यको त्याग करताहै वह शुद्ध चिदात्म स्वरूप में नियतहोकर बड़ेसुखको भोगताहै, चित्तकी शुद्धिका यह लक्षण है कि जैसे स्वप्न में शयन और निर्वातस्थान में प्रकाशमान दीपक निश्चल होताहै इसीप्रकार अगले और पिछले समयपर आत्माको परमात्मा में संयुक्त करनेवाला अल्पाहारी अति शुद्धचित्त योगी परमात्माको आत्मा में देखताहै यह उपदेश पुत्रानुशासन वेदमें गुप्त बातहै यहकेवल अनुमानसे विदित नहीं होता न केवलशास्त्रसे जानाजाता है यह अनुभवसे प्राप्त होता है और आत्मज्ञानसे सम्बन्ध रखताहै सब धर्माख्यान और सब आख्यानोंमें

जो सारहै और कुछऊपर दशहजार वेदकी ऋचाओं को मथकर यह ज्ञान रूप अमृत ऐसे निकालाहै जैसे दहीसे मक्खन को और काष्ठसे अग्निको निकालते हैं इसीप्रकार पुत्रके अर्थ यह ब्रह्मज्ञानियों का ज्ञान अच्छेप्रकारसे निकालागया है, यह पुत्रानुशासन नाम शास्त्रज्ञान स्नातकों के आगे कहना योग्य है और ऐसे पुरुषसे न कहना चाहिये जो इन्द्रीके विषयों से अशांतचित्त अवज्ञाकरनेवाला वेदरहित उपदेशके अनुसार कर्मकर्त्ता न होकर निन्दकतासहित कुटिल प्रकृतिहो, और न्यायशास्त्रसे रहित अहंकारीको भी उपदेश न करना चाहिये, और बड़े शान्ततपस्वी दूसरेकी स्तुति करनेवाले प्रियपुत्र शिष्य और उपासकके लिये यहगुप्तधर्म उपदेश करना चाहिये इस ज्ञानको किसीसे बिनापरीक्षा किये न कहा जाय यह ज्ञान रत्नजटित पृथ्वी से भी अधिक ब्रह्मज्ञानियोंके मतसे है इसीकारण यह अर्थ गोपनीयहै, जो दिव्य आत्मज्ञान महर्षियों से देखागया और वेदान्तियों से गायाजाताहै वह मैं तुमसे कहताहूं हेपुत्र जो तेरेचित्तमें दूसरीबातवर्त्तमानहै और उसमें जहां तुझे संशय है उसकोभी मैं कहूंगा २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेत्रिसप्ततितमोऽध्यायः ७३ ॥

चौहत्तरवां अध्याय ॥

शुकदेवजी बोले कि हे भगवन् आप जिस ब्रह्मज्ञानको ठीक जानतेहो उसको मुझसे वर्णनकीजिये व्यासजीबोले कि हेतात पुरुषका जो अध्यात्म पढ़ाजाताहै उसको तुमसे कहताहूं पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश यह पांचों महाभूत चारोंप्रकारकी सृष्टिके जीवोंमें पृथक्२ ऐसे कल्पितहैं जैसे कि समुद्रमेंतरंगेंहोतीहैं, जैसे कि कछुआ अपने अंगोंको फैलाकरखैंचलेताहै उसी प्रकार पंचभूत देहरूपहोनेवाले पंचमहाभूतोंमें नियतहोकर नाश और उत्पत्ति रूपांतर दशाको उत्पन्न करतेहैं, छोटेतत्त्वोंके रूप सब जड़ चैतन्य जगत की उत्पत्ति प्रलयहोनेपर उसदेहके अन्तर्गत नियत तत्त्वसमूहों में लय होते हैं, हे तात सबजीवमात्रोंमें पंचमहाभूतहीहैं परन्तु इनमें ईश्वरने कुछअन्तर किया है कारण यहहै कि जिसकर्मकेहेतु रूपहोनेमें देहके त्यागने के समय जो ध्यान करताहै वही प्राप्त करताहै, शुकदेवजी बोले कि देहके बुद्धि इन्द्री आदि अंगों में जो अन्तर उत्पन्न किया है उसको किसप्रकार देखके अपने विषयों समेत इन्द्रियां किस गुणरूपयुक्त होती हैं और कैसे उनको देखना चाहिये व्यासजी बोले कि इसको क्रमसे ठीक २ मैं कहताहूं तुमसावधान होकर मुख्यसिद्धांतको सुनो, शब्द श्रोत्र और देहकेछिद्र यह तीनों आकाश से संयुक्त हैं प्राण, चेष्टा और स्पर्श यह तीनों वायुके गुणहैं रूप नेत्र और

जठराग्नि यह तीनप्रकारकी ज्योति कहीजातीहै, रस, रसनेंद्री और आर्द्रता यह तीनों जलके गुणहैं, सूंघनेके योग्य वस्तु, घ्राणेंद्री, और देह यह तीनों पृथ्वीके गुण हैं पंचभूतसे संबंध रखनेवाली यह रूपांतर दशा इंद्री समूहों के समेत वर्णनकी, वायुकागुण स्पर्श जलकारस, अग्निकारूप, आकाशका शब्द, पृथ्वी का गंध है मनबुद्धि और स्वभाव यह तीनों अपनी योनि से उत्पन्न होने वाले हैं, सतोगुण आदि से श्रोत्र इन्द्री आदि स्वरूप को प्राप्त होनेवाले वह तीनों शब्द आदिगुणों को उल्लंघन नहीं करते हैं जिस प्रकार इसलोक में कछुआ अंगों को फैलाकर खैंचलेता है इसीप्रकार बुद्धि इन्द्रियों के समूहको उत्पन्न करके फिर अपनेमें लय करती है, पैरके तालु ऐसे ऊपर और मस्तकसे नीचे जिस देह को देखता है इनदृष्टरूप कर्म्मों में बुद्धिही उत्तम कर्म्म कर्त्ता होतीहै अर्थात् मैंहूं यह अनुभव विषय बुद्धिका रूप है, बुद्धि विषयों के रूपको प्राप्त करती है और बुद्धिही इन्द्रियों के भी रूप को प्राप्त करती है वह मन समेत छः हैं, बुद्धिके न होने में इन्द्री और विषय कहां से प्रकटहों, मनुष्यों के देह में पांच इन्द्री और छठा मन कहाजाता है, बुद्धि को सातवां कहतेहैं फिर आठवां क्षेत्रज्ञ है, नेत्र दर्शन के निमित्तहै और मन संशयको करताहै बुद्धि निश्चय करनेको है क्षेत्रज्ञ सबका साक्षीहै, रजोगुण तमोगुण सतोगुण यह तीनों अपनी योनिसे उत्पन्न होतेहैं आशय यहहै कि चित्त और उससे उत्पन्न इन्द्री आदि सब त्रिगुणात्मक हैं, सब देव मनुष्यादिक जीवमें समान हैं इन गुणोंको देखे और इनको जो प्रीतिसे संयुक्त बुद्धि में देखे उस अत्यन्त शांत और शुद्धको सतोगुण जाने, देह और चित्त में जो दुःख से संयुक्तहो उस स्थानपर जाने कि रजोगुण उत्पन्न हुआ, जो मोह से संयुक्त अज्ञानकाविषय होवे उस तर्करहित जाननेके अयोग्यको तमोगुण समझे, हर्ष, प्रीति, आनन्द समदर्शी होना, बुद्धिमान्की सावधानी यह सातोंके गुण सहेतुक और निर्हेतुक वर्त्तमान होतेहैं, अभिमान, मिथ्यावचन, लोभ, मोह, असंतोषयह रजोगुणके चिह्नहैं, यह भी सहेतुक और निर्हेतुक वर्त्तमान होते हैं, इसीप्रकार, मोह, भ्रांति, शयन, आलस्य अज्ञानता यहसब इसीप्रकार सामने वर्त्तमान होते हैं यह तमोगुण जानने योग्यहैं, २५॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेचतुःसप्ततितमोऽध्यायः ७४॥

पचहत्तरवां अध्याय॥

इसप्रकार बुद्धिका स्वाभाविक त्रिगुणात्मक होना कहकर कर्म्म से उत्पन्न होनेवाले तीन प्रकारों को कहते हैं, व्यासजी बोले कि चित्त नानाप्रकारके पदार्थों को उत्पन्न करता है बुद्धि उनको निश्चय करनेवाली है, हृदय अनु-

कूल और प्रतिकूल को जानता है यह तीन प्रकारके लिखेहुये कर्म्म हैं इसी कारण विषय इन्द्रियों से सूक्ष्म हैं और विषयोंसे सूक्ष्म चित्त और चित्त से सूक्ष्म बुद्धि और बुद्धिसे सूक्ष्म आत्माको माना है, मनुष्यकी व्यवहारिक आत्मा बुद्धि है, जब बुद्धि आत्मामें आपही विपरीत दशाको करती है तब वह चित्तरूप होतीहै, इन्द्रियोंके पृथक्२ विषयहोने से बुद्धिही रूपांतरकरतीहै इसकारण वह सुननेवाली बुद्धि श्रोत्रइन्द्री को प्रकाश करती है और जो स्पर्शकरती है वह स्पर्शेन्द्री कहीजातीहै, देखनेवाली चक्षुरिन्द्री होतीहै और रसको प्राप्त करके रसनेन्द्री होती है और सूंघनेवाली होकर घ्राणइन्द्री हो जाती है यह सब पृथक् २ रूप बुद्धिही प्राप्त करती है इनको इन्द्री कहते हैं उनमें दृष्ट न आनेवाला चैतन्य आत्मा ईश्वररूप नियत होताहै, पुरुषमें नियत होनेवाली बुद्धि तीनों सात्विकी आदि भावों में वर्त्तमान होती है, कभी रूप और कभी शोकमें होकर इसलोक में कभी सुख दुःखसे संयुक्तनहींहोती, यह भावात्मक बुद्धि उन तीनों भावों को उल्लंघन करके ऐसे वर्त्तमान होतीहै जैसे समुद्र लहराता हुआ किनारेको, जब इच्छावान् होती है तब मनरूप होती है बुद्धि में इन इन्द्री गोलकोंको गुप्त और परस्परमें पृथक् जाने, बुद्धि से सम्बन्ध रखनेवाली सब इन्द्रियां क्रम क्रमसे सबकी सब विजय करने के योग्य हैं, जो इन्द्री जब बुद्धिके साथ होती है तब पहिले निर्विभाग और एकरूप होनेवाली बुद्धि भी सतोगुण आदि भावों के साथ संकल्परूप चित्त में वर्त्तमान होती है तब बुद्धि से रक्षित इन्द्री संकल्प से उत्पन्न होनेवाले घट को अपना विषयरूप बनाती है इसी प्रकार क्रम पूर्वक रूप आदि विषयोंको भी जानो परन्तु एक समयही नहीं करतीहै, इन तीनों में जो भाव वर्त्तमान होते हैं वह विषयों के अनुसार ऐसे प्रकट होते हैं जिसप्रकार रथकी नेमि अर्थात् चक्रधारा रथके साथही होती है बुद्धि आदि उन सब सत्त्व आदि के रूप हैं परन्तु विषय नहीं हैं, विषयों के अलिप्त होने पर किस प्रकार इन्द्रियों से उनकी समीपता और उनसे घट आदि का ज्ञान होय इस शंका को कहते हैं कि बुद्धि तीनप्रकारकी है एक तो सीपमें चांदीका प्रकाश दूसरे घट आदि के व्यवहारसे संबंध रखनेवाली तीसरे ब्रह्मसे संबंध रखनेवाली इसी से वह बुद्धि सत्य, सत्यतर, सत्यमत, इनतीन नामोंसे प्रसिद्धहुई उनमें सत्यतर नाम बुद्धि ब्रह्मरूपहै इससे चित्त इनस्थानोंके अनुसार घूमनेवाली स्वतन्त्रता से उदासीन ब्रह्मरूप बुद्धिरूप इन्द्रियों के द्वारा विषयको ब्रह्मरूप करे अर्थात् ब्रह्मके छिपाने वाले अज्ञानका नाशकरे है इस अज्ञान के फलको कहते हैं, यह जगत् ऐसे स्वभाव वालाहै अर्थात् बुद्धिसे कल्पितहै इस बातको जानता मोहको नहीं पाताहै आशय यहहै कि जैसे जागने वाला पुरुष स्वप्नादि के

धनके नाशमें शोकनहीं करताहै न प्रसन्न होताहै किन्तु सदैव पृथक् रहताहै, इन्द्रियोंके विषयों में आसक्त अपवित्रचित्त पुरुषको इन्द्रियों के द्वारा आत्म दर्शन होना असम्भवहै जब चित्तकेद्वारा उन इन्द्रियों की लगामको अच्छे प्रकार से पकड़ताहै तब इसका आत्म ऐसे प्रकाश करताहै जिस प्रकार दीपकसे घट आदिरूप प्रकाश होते हैं उसी प्रकार इसको भी जानो, जैसे कि जलचारी पक्षी जलपर घूमताहै और उससें लिप्तनहीं होता है, उसी प्रकार विमुक्त आत्मा योगी प्राकृति पाप पुण्यसे लिप्त नहीं होता है इसी प्रकार सबमें चित्त न लगाने वाला ज्ञानी पुरुष विषयों को भोगताहै और दोषों से लिप्त नहीं होता है आशय यह है कि जैसे ज्ञानी पुरुष पुत्रादि के नाश में शोक आदिको नहीं करता है इसी प्रकार देहसे असंग योगी देहके कम्मोंसे लिप्त नहीं होता है, पहिले किये हुये कम्मों को त्याग करके सब जीवों के आत्मारूप और गुणसमूहमें चित्त न लगानेवाले जिस योगीकी प्रीति सदैव आत्मामें है, आत्माकभी बुद्धि और गुणोंकी ओर प्रवृत्त होता है, गुण तो आत्माको नहीं जानते परन्तु आत्मा गुणोंको अच्छे प्रकार जानता है वह निश्चय गुणोंका उत्पन्न करनेवाला और साक्षीहै इनसूक्ष्म बुद्धि और क्षेत्रज्ञका यह अन्तर जानो, कि इनमें एक तो गुण उत्पन्न करता है और दूसरा नहीं पैदाकरताहै वह दोनों स्वभावसे पृथक् और सदैव संयुक्तहैं, जिसप्रकार मछली जलसे पृथक् और संयुक्त होतीहै उसी प्रकार वह बुद्धि और क्षेत्रज्ञ दोनों संयुक्तहैं, जैसे कि मूंजमें सींक पृथक् और युक्त भीहै उसी प्रकार यह दोनों साथ और एक दूसरे से संयुक्तहैं २५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेपंचसप्ततितमोऽध्यायः ७५ ॥

छिहत्तरवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि बुद्धि विषयों को उत्पन्न करती है और ईश्वर क्षेत्रज्ञ विपरीत दशा करने वाले सत्त्व, रज, तम इन तीनों गुणों को उदासीन के समान देखताहुआ ऐश्वर्य पदपर नियत होताहै वह सर्व स्वभावयुक्त है जो इनगुणोंको पैदाकरताहै, जैसे कि मकड़ी सूत्रको पैदाकरतीहै इसी प्रकारका गुण वह भी रखनेवालाहै; तत्त्वज्ञान से गुप्त होनेवाले यह गुण लौटतेनहींहैं उनकी फिर वर्त्तमानता नहीं पाईजातीहै; आशय यहहै कि रस्सी में सर्पका ज्ञान ध्यानसे दूरहोता है, फिर कभी रस्सी में सर्प्पकी वर्त्तमानता नहीं होती इसी प्रकार यहगुणभी नष्ट होजातेहैं, कोई ज्ञानी पुरुष इसप्रकार से निश्चय करतेहैं और दूसरे न्यायशास्त्रज्ञ इनगुणों के लौटनेको निश्चयकरते हैं, इन दोनों को विचारकर बुद्धि के अनुसार निश्चयकरे इसी बुद्धि से आत्मा में

आश्रयकरे,आत्मा आदि अन्तरहितहै सदैव मत्सरता रहित मनुष्य उसआत्मा को जानकर क्रोध हर्ष रहित होकर विचरे इसप्रकार चिन्तारूप कर्म्म से बँधी हुई बुद्धिरूप हृदय की गांठ को काटकर निस्संशय जीवन्मुक्त पुरुष शोच से रहित सुख पूर्वक निवास करे, जैसे कि पूर्ण बहती नदी में गिरनेवाले अनपैराक पुरुष डूबने और उछलने से शोकको पाते हैं इसी प्रकार इस लोकको भी जानो परन्तु बुद्धिमान् तत्वज्ञ पुरुष थल में बिचरता शोकसे रहित होता है इसी प्रकार जो पुरुष अपनी आत्माको आनन्द स्वरूप जानता है वह मनुष्य इस प्रकार से सब जीवों का उत्पत्ति स्थान ब्रह्मकी लय को जान कर और लौटपौटको अच्छीतरह बिचारकर अर्थात् ईश्वरजानकर अद्वितीय सुखको पाताहै मुख्यकर जन्मपानेवाले और शास्त्रोक्तआचारवाले ब्राह्मणका यह पूर्ण आत्मज्ञान मोक्षरूप सुखको प्राप्तकरनेवालाहै, इसको जानकर पाप पुण्य से पृथक्होता है, ज्ञानीका दूसरालक्षण कहा है, इसकोजानकर ज्ञानी लोग कर्मों से निवृत्तहोकर मुक्तहोतेहैं, परलोकमें जो अज्ञानियोंका बड़ाभय है वहज्ञानियों को नहीं होताहै, ज्ञानीकी जो सनातनगतिहोतीहै उस से अधिक किसी कीनहींहोती है मनुष्य दोषोंसेयुक्त स्त्री आदि वस्तुके भोगकी निन्दा करते हैं और उस उस वस्तु को देखकर शोचकरते हैं उस स्थानपर शोच न करनेवाले ज्ञानियोंको देखो जिन्होंने उन हर्ष शोक को क्रम पूर्वक जानाहै, जो फलकी वासना रहित कर्म्म को करताहै वह उस कर्म्मका नाश करता है और जो पूर्व में कियाहै, वह दोनों उस कर्म कर्त्ता ज्ञानी के प्रिय अप्रिय को इसलोक में उत्पन्न नहीं करते हैं १४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेपट्सप्ततितमोऽध्यायः ७६ ॥

सतहत्तरवां अध्याय ॥

शुकदेवजी बोले कि इसलोक में धर्म्मोंमें उत्तम महाश्रेष्ठ ब्रह्मविद्याका प्राप्त करानेवाला जो धर्म्म है उस को आपकहिये ब्यास देवजी बोले कि ऋषियों का कियाहुआ और सब धर्म्मों से श्रेष्ठ प्राचीन धर्म्मको तुमसेकहताहूं तुम चित्त से उसको सुनो, जैसेपिता बालक पुत्रोंको स्वाधीन करताहै उसीप्रकार बुद्धि और उपायसे उन इंद्रियोंको एकाग्र करे जो कि दुखदाई और सब ओर से दौड़ने वालीहैं, मन और इन्द्रियों की एकाग्रतामें तपही उत्तम है और सब धर्म्मोंसे श्रेष्ठतरहै वह धर्म्म उत्तमकहाजाताहै कि उनसब इंद्रियों को जिनमें छठामन है बुद्धिसे स्वाधीन करके आत्मासे तृप्त और बहुत चिंताके योग्य को न मानकर नियत होजाय, जब बाह्याभ्यंतर अर्थोंसे रहित इन्द्रियां सब के उत्पत्तिस्थान ब्रह्ममें नियतहोंगी तब तुम बुद्धि के द्वारा सनातन पर-

आत्माको देखोगे, जो ब्राह्मण महात्मा और ज्ञानी हैं वह उस उपाधि रहित सबके आत्मा परमात्मा को देखते हैं, जिसप्रकार फूलफल से युक्त बहुत शाखावाला वृक्ष अपनी दशाको नहीं जानता है कि मेरे फूलफल कहां हैं इसीप्रकार बुद्धिभी नहीं जानती है कि मैं कहां से आई और कहां को जाऊं गी और दूसरा सबका देखनेवाला अंतरात्मा है वह देहके भीतर प्रकाशमान् ज्ञानदीपक से आत्मा को देखता है तुमसर्वज्ञ होकर आत्म ज्ञानसे आत्माको देखकर उपाधिसे पृथक् होजाओ, तुमइसलोक में ब्रह्मज्ञान को पाकर पाप रहित तपसे पृथक् कांचलीसे छुटेहुये सर्प की समान सब पापोंसे निवृत्त हो जाओ, सब ओर बहुत प्रकार से बहनेवाली और लोकों को बहानेवाली पांचइन्द्री रूपग्रह और चित्तरूप संकल्पवाले किनारेवाली लोभमोहरूप तृण युक्त कामक्रोध रूपसर्प और सत्यतारूप तीर्थवाली मिथ्यारूपी वचनोंसे व्याकुल क्रोधरूप कीचवाली अव्यक्त से प्रकाशित और अपवित्रचित्त पुरुषों से कठिनता पूर्वक पारहोनेवाली नदियों में उत्तम संसाररूपी नदीको अच्छी तरह से तरो यह संसार रूपीनदी अव्यक्त से प्रकट तीव्रधार अपवित्र चित्त पुरुषों से कठिनता पूर्वक पारहोने योग्य कामरूपी ग्राहसे व्याप्त संसार सागर में वर्त्तमान वासनारूप पाताल से अगम्य अपने जन्म से प्रकट होनेवाली जिह्वारूप भ्रमरचक्र से भयानक जिसको कि बुद्धिमान् ज्ञानी धीर पुरुष तरते हैं उसका तरनेवाला सब ओर से मुक्तज्ञानी पवित्र सर्वज्ञ और आत्मज्ञ उत्तम बुद्धि में नियत होकर ब्रह्महीहोगा सब संसार से उत्तम रीति से तरने वाले निष्पाप विमलबुद्धि क्रोधरहित दयायुक्त प्रसन्नता पूर्वक तुम इन ज्ञानियोंको ऐसे देखो जैसे कि पर्वत पर चढ़ा मनुष्य पृथ्वी के वर्त्तमान जीवोंको देखता है, फिर सब सृष्टिके उत्पत्ति और लयके स्थानरूप ब्रह्मको देखोगे धर्म्मध्वज तत्त्वदर्शी ज्ञानीमुनियोंने इस धर्म्म को जीवोंके उपकारार्थ बहुत उत्तमजाना है, सर्वव्यापी आत्मा का यह ज्ञान जो कि पुत्र को उपदेश कियागया वह सावधान हितकारी और अपने आज्ञाकारी पुरुष को उपदेश करना योग्यहै, हे तात यह आत्मज्ञान बड़ा गोपनीयहै जिस आत्मसाक्षीको मैंने बहुत स्पष्ट और यथार्थ वर्णनकियाहै, यह हर्ष शोक रहित भूत भविष्यका उत्पत्तिस्थान और उनका रूप आत्मा स्त्री पुरुष नपुंसक इन तीनों में कोई नहीं है, इसको स्त्री पुरुषमेंसे कोईभी जानकर पुनर्जन्मको नहींपाताहै, यह योगधर्म आत्म सिद्धी के निमित्त कहाजाताहै, हे पुत्र जैसे सब मत मुक्ति में समाप्त होते हैं उसीप्रकार यह मेरे वचनहैं–वह मत फलोंके अन्तर होनेसे होतेहैं और वाणी से परे होने से नहीं भी होतेहैं इसी कारण सब तान्त्रिकों को यह शास्त्र स्वीकार करना योग्यहै, हे उत्तम पुत्र इसी हेतु से प्रीतिमान् शान्त चित्त शक्ति-

मान् पुत्र से प्रश्न कियाहुआ पुरुष इस शास्त्रको जिसको कि पिताने पुत्र के सन्मुख वर्णन किया यथार्थ वर्णन करे २५ ॥

इतिश्रीमहाभारते शान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ७७ ॥

अठहत्तरवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि गन्ध रस आदि सुखों की इच्छा न करे और उनके सिवाय मान कीर्त्ति और यश को भी नहीं चाहै ज्ञानी ब्राह्मणका यही व्यवहार है, सेवा करने का इच्छावान् ब्रह्मचारी सब वेदोंको पढ़े जो पुरुष यजुर्वेद और सामवेद की ऋचाओं को जानता है वह ब्राह्मण उत्तम पदवाला नहीं है किन्तु जो सब जीवों में सजातियों के समान सर्वज्ञ और सर्व वेदज्ञ अनिच्छावान् अर्थात् ज्ञानसे तृप्तहै वह कभी नहीं मरताहै अर्थात् मुक्तहोकर जीवताही जीवन्मुक्त होताहै इस अनिच्छासे वह ब्राह्मण प्रथमाधिकारी अवश्यहै, नानाप्रकार के इष्टी और पूर्ण दक्षिणावाले यज्ञोंको करके दया और अनिच्छाके अभ्यास बिना किसी दशा में भी ब्रह्मभावको नहीं प्राप्त होसक्ताहै, जब यह निर्भय होताहै और जीवमात्र इससे अभय होते हैं और इच्छा और शत्रुता रहित होता है तब ब्रह्मभाव को प्राप्त होता है, जब जीवमात्र में मन वाणी और कर्म से हिंसा रहित होताहै तब ब्रह्मभावको पाता है, अकेला कामही बंधनहै यहां दूसरा बंधन नहीं है काम बंधन से छूटनाही ब्रह्मभाव के योग्य समझाजाताहै, जैसे काले बादल से चंद्रमा अलग होता है इसीप्रकार काल से अलग रजोगुण से पृथक् धैर्यमान काल को चाहता अपने धैर्यसे वर्त्तमान होताहै, जैसे कि जल सबओर से पूर्ण निश्चल समुद्र में प्रवेश करते हैं इसी प्रकार सब इच्छा जिसमें प्रवेश होतीहैं वह शान्तीको पाताहै अर्थ चाहनेवाला शान्ती नहीं पाता है, वही सत्य संकल्प और संकल्प से होनेवाली कामनाओं से शोभित है न कि स्वर्ग आदि का चाहने वाला क्योंकि वह देहाभिमानी कामनाओं से स्वर्गादिकों को पाताहै तात्पर्य यहहै कि थोड़े काल पीछे स्वर्ग से पतित कियाजाताहै, वेदका रहस्य हितकारी वचनहै और उसका शिर गुप्त शान्तरूप प्रकट है और शान्त चित्त की प्रकटता दानहै और दान का रहस्य तपहै, निर्गुण ब्रह्मको पाकर सब गुप्त और प्रकट संसार के उल्लंघन करनेवाले और परमपद पानेवाले को फिर आवागमन नहीं होताहै २४ ॥

इति श्रीमहाभारते शान्तिपर्वणि मोक्षधर्मे अष्टसप्ततितमोऽध्यायः ७८ ॥

उनासीवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि मानापमान श्रौ अर्थ धर्मादि गुणों का करता पुरुष जो मोक्षका चाहनेवाला होय तब उस शिष्यको पहले यह बड़ा आत्मज्ञान गुणवान कहनेवाले से सुनना योग्य है, आकाश, वायु, अग्नि, जल और पांचवीं पृथ्वी भाव, अभाव, काल यह आठों इन पंचतत्त्वों से मिले हुये सब जीवों में नियत हैं देह के रूप के प्रकट करनेवाले वेदवचनों का जाननेवाला पुरुष देह के छिद्रों को आकाश जानें उस आकाश का रूप श्रोत्र इन्द्री को जानें और उसके विषय को शब्द जाने, चलना वायुका रूप है प्राण अपान उसके भेद रूप हैं स्पर्श को इन्द्री और विषय जानें. ऊष्मा अन्नकी परिपक्वता दीपक आदि का प्रकाश सन्तप्तता और पांचवां नेत्र यह सब गुण उसके रूप हैं और यही रक्त श्वेतादि रूप उसका विषय है पवित्र करना और पृथ्वी में प्रवेशकर उसके अंगों के जोड़को निर्बल करके हलका रहना और रस यह तीनों जलके गुण कहेजाते हैं रुधिर मस्तक और जो जो आर्द्रवस्तु हैं उनको जलरूप जानो, जिह्वा रसनेन्द्री कहाती है और रस जलोंका गुणहै और कठोर वस्तु हाड़ नख आदि डाढ़ी मूंछ शिरकेश शिरा और स्नायु नाम नाड़ी पृथ्वी से सम्बन्ध रखनेवाली धातु और नाक नामसे प्रसिद्धघ्राणेंद्री यह विषयहैं और गन्ध नाम पृथ्वीरूप जानना चाहिये, पिछले सबतत्त्वों में पहले तत्त्वों के गुणहैं अर्थात् आकाशका शब्द गुण, वायुमें शब्दस्पर्श, अग्निमें शब्द, स्पर्श रूप जलमें शब्द, स्पर्श,रूप, रस और पृथ्वीमें गन्ध समेतपांचहैं इसीप्रकार सब प्राणियोंमें पहले अविद्या, काम, कर्म्म, गुण, कहेहैं, मुनियोंने पञ्चतत्त्वोंकी उत्पत्तिको जाना है इनमें नवां चित्त और दशवींबुद्धिहै ग्यारहवां आत्माहै वहअनन्त सर्वरूप और सर्वोत्तम कहा जाताहै, बुद्धि निश्चयात्मकहै और चित्त संशयात्मक है वह क्षेत्रज्ञ नाम जीवकर्मों के अनुमान से जानाजाताहै, जो पुरुष इनकामरूप भावोंसे संयुक्त आत्मा को देखता है और वास्तव में सबसे अलिप्त जानता है वह सकल कर्म्म करता नहीं है तपका रहस्य त्याग, त्यागका रहस्य सुख,सुखका रहस्य सर्ग अर्थात् सगुण ब्रह्मभाव है, सर्गकारहस्य शम है जो संतोष के द्वारा बुद्धिकी निर्मलता को चाहै वही बुद्धि शान्ति का लक्षण है क्योंकि वह शोक सन्देह को लोभके साथ संतप्त करके निर्बल करतीहै,शोक मोह और मत्सरतासे पृथक् शांत शुद्ध चित्त इनछओं गुणोंका लक्षण रखनेवाला ज्ञान से तृप्त मनुष्य ब्रह्मभावको प्राप्तहोताहै,इसप्रकार मुक्त पुरुषके लक्षणकोकहकर मुक्तिके साधनको कहते हैं—जिनपुरुषोंने सतोगुण युक्त सत्यना शांत चित्तना

दान, तप, त्याग, शम, इनछः गुण और श्रवण, मनन, निदिध्यासन और शास्त्र, अनुमान, अनुभव यह तीनों इच्छाओंसे युक्त और देहमें नियतआत्मा को देहकी वर्त्तमान दशामें जाना है वह इस मुक्त लक्षण गुणको प्राप्तहोकर देहमें उस अजन्मा अविनाशी, स्वभाव सिद्ध और ब्रह्मको प्राप्त होने वाले अविनाशी सुखको पाते हैं अथवा पक्षांतर में उपनिषद् नाम विद्याको प्राप्त होनेवाला पुरुषभी ध्यान आदि के क्रम से अविनाशी सुखको पाता है, वह उपनिषद् विद्या सदैव से अविनाशी आदि अनेक गुण रखनेवालीहै, केवल शास्त्रकेही ज्ञानसे मुक्ति नहीं होती किन्तु दूसरे साधनकी भी आवश्यकता है उसको कहते हैं, यह पुरुष चित्तको कर्म रहितकर सब ओर से नियत करके जिस तुष्टिताको पाता है वह दूसरे प्रकार से प्राप्त करना कठिन और असम्भव है, जिस ब्रह्मके कारण बिना भोजन के निर्धन भी तृप्त होताहै और संसार से वैराग्यवान् भी बलवान् होता है जो उसको जानताहै वहीवेदज्ञ है, जो ब्राह्मणों में श्रेष्ठ सावधानी से इन्द्रियों को रोककर ध्यानमें नियत होताहै वह आत्मा से प्रीति रखने वाला कहा जाता है परमतत्त्वों में समाधि करनेवाले अनिच्छा युक्त नियत पुरुषको सब ओरसे सुख मिलताहै, पंचतन्मात्रा, बुद्धि, महत्तत्त्व और प्रधान समूह और स्थूल तत्त्व ग्यारह इन्द्री और इंद्रियोंके विषय समूहों के त्याग करनेवाले मुनिके सुखसे दुख ऐसे दूर किया जाताहै जैसे कि अंधकार सूर्यसे दूरहोताहै, उस कर्म के उल्लंघन करनेवाले और गुणोंके ऐश्वर्य्यसे पृथक् विषयोंसे अलिप्त ब्राह्मण को जरामृत्यु नहींहोतीहै इसीसे करुणायुक्त सबओरसे वैराग्यवान् रागद्वेषसे रहित होताहै, अर्थात् आत्मतत्त्वका जाननेवाला इच्छारहित होताहै १२॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेएकोनाशीतितमोऽध्यायः ७९ ॥

अस्सीवां अध्याय ॥

इसप्रकारसे पंचतत्त्व अविद्याकाम कर्मचित्त बुद्धि इनदशरूप युक्तदेहहै इसकेविशेष अनन्तआत्माहै वहभी लिंगात्माहै इसभ्रमके निवृत्तकेअर्थ उसकोभी दशोंमेंही वर्त्तमानसिद्ध करतेहैं—व्यासजी बोले कि स्थूल शरीरसे पृथक्जीव को सूक्ष्म शरीरवालाकहा इसहेतुसे शास्त्रज्ञ योगी उसलिंगात्माको शास्त्रोक्त कर्मसे समाधिमें देखतेहैं अर्त्थात् उसका साक्षात्कार करतेहैं जैसे कि सूर्यकी किरणें एकबारही सब जगह घूमतीहैं और नियत रहती हैं और गुरूकी युक्ति से दृष्टिपड़तीहैं इसीप्रकार जीवन्मुक्त लोग प्राचीन स्थूल शरीरको त्यागकर सूक्ष्मरूप से पृथ्वी पर घूमतेहैं, जैसे कि जल में सूर्य का किरण मण्डल जिस रूपवाला विदित होताहै उसीप्रकार सजीव देहों में सत्वप्रधान लिंग उसीरूप

वाला दृष्ट आताहै, और वह योगी उसीको देखता है, जितेन्द्री और लिंग नाम देहके जाननेवालेयोगी पुरुष अपने लिंग देहसे उन स्थूल देहोंसे पृथक् सूक्ष्म शरीर रखनेवाले जीवोंको देखते हैं वह योगी परकाय प्रवेशनादि कर्म करनेको समर्थ होते हैं, योग ऐश्वर्य जो कि जगत् कारण प्रधानका आत्मा रूपहै उससे निवृत्त और कर्मसे दीखनेवाले रजोगुणको त्याग करनेवालेसोते जागतेहैं उनसब योगाभ्यासी पुरुषोंके स्वाधीन वह लिंग शरीर सदैवहोताहै जैसा रात्रिमें वैसाही दिनमें स्वाधीनताको करतेहैं उनयोगियोंका जीवात्मा सदैव गुणोंके कार्य महत्तत्त्व, अहंकार, पंचतन्मात्रा नाम सातसूक्ष्म गुणों समेत इंद्रलोक आदि में आनेजाने वाला और तीनों काल में विनाशवान व्यवहारसे अजर अमर होताहै,इसप्रकार योगियोंको सूक्ष्मशरीरका अपरोक्ष ज्ञान कहागया वह अज्ञानियोंको भी प्राप्तहै, चित्तवृद्धिसे विजय कियाहुआ जीवात्मा स्वप्नावस्था में भी अपने और दूसरेके शरीर जो कि स्थूल शरीरसे पृथक् हैं उनको जानताहै और सुख दुखोंका भी ज्ञाताहै परन्तु वहां भी सुख दुःखोंको पाकर क्रोध लोभसे दुखीहोता है और बहुत अर्थवान होकर प्रसन्न चित्तहोताहै तब पुण्यभी करताहै और जीवतासा दीखताहै,प्रत्यक्षहै कि उस जठराग्निके भीतर वर्त्तमान् होकर गर्भ रूपको धारण किया और दशमहीने तक माताके उदर में निवासी होकर भोजन की वस्तु के समान पेटमें नहीं पचताहै, तमोगुण रजोगुण से युक्त गिरे हुये मनुष्य उस परमेश्वर के अंश हृदयस्थ जीवात्मा को शरीरों के भीतर नहीं देखते हैं तो आत्माकी प्राप्ति कैसे होय उसका वर्णन करतेहैं, उस आत्माको चाहनेवाले पुरुष योगशास्त्र को जानकर सूक्ष्म और प्रलयमें भी अविनाशी कारण नाम शरीरको उल्लं-घन करतेहैं आशय यह है कि योग से तीनों देह त्याग करनेवाले योगियों को आत्माकी प्राप्तिहै, सांडिल्यऋषि ने पृथक् रूपवाले चार आश्रमके कर्मों के क्रम में समाधि के योग्य सब वृत्तियों के शान्ती रूप इसयोग का वर्णन कियाहै, सातसूक्ष्म अर्थात् इन्द्री, विषय, चित्त बुद्धि, महत्तत्त्व, अव्यक्त,पुरुष, आत्माको और छः अंगयुक्त महेश्वरको जानकर और त्रिगुणात्मक ज्ञानका रूपान्तर इस जगत्को जानकर गुरू, वेद वचनों के विचार से परब्रह्मको सा-क्षात्कार करताहै १५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे अशीतितमोऽध्यायः ८० ॥

इक्यासीवां अध्याय ॥

व्यासजी बोले कि इसप्रकार सूक्ष्म स्थूल देहों से पृथक् आत्मा को कहकर मूल अज्ञानसे भी उसकी पृथक्ता वर्णन करते हैं कि हृदयमें काम

रूपवृक्ष अपूर्व है जो मोहके समूहरूप बीजसे उत्पन्न क्रोध और अभिमान रूप शाखाओंसे युक्त इच्छाकर्मरूप थांवले में वर्त्तमान अज्ञानरूप मूल और प्रमादरूप जल से सींचाहुआ है उसमें निन्दारूपपत्ते और पूर्व पापही सार है मोहचिन्ता शोकआदि डालियां भयरूप अंकुर और लोभरूपी मोहिनी लता ओंसे आच्छादितहै लोहमयी पाशमें बँधाहुआ महालोभी उसकेफलके चाहनेवाले मनुष्य उसफल देनेवाले बड़े वृक्षको चारों ओर से घेरकर समीप बैठतेहैं, जो पुरुष उनपाशोंको आधीन करके उसवृक्षको काटताहै वह उन दोनों प्रकारके दुःखोंको त्यागकरताहै विषय से सम्बन्ध रखनेवाला सुखभी दुःखहै इसकारण दुःखको द्विवचन कहाहै, जिस कारणसे अज्ञानी उसवृक्षको बढ़ाताहै उसीकारणसे वहइसप्रकार उसको मारताहै जैसेकि विषकीगांठ रोगीको मारतीहै, उसदृढ़ बीजवालेवृक्षकीजड़ निर्विकल्पसमाधिरूप उत्तमतेजकेद्वारा काटी जातीहै, जो पुरुष केवलकामकी निवृत्ति और कामशास्त्रके बन्धन को जानताहै वहदुःखोंको उल्लंघनकरवर्त्तमानहोताहै, देहपुर और बुद्धिस्वामी और उस निश्चयात्मक बुद्धिकामंत्री चित्तहै वह शरीरमें नियतहै, चित्तरूप मंत्रीसे वसाये गये इन्द्री रूप पुरवासी हैं और इन्द्रियोंका विषय धनहै उनइन्द्री रूप पुरवासियों के पोषणके अर्थ दान आदि बड़ेयज्ञोंका प्रारम्भहै उसकर्म्मकेप्रारम्भमें दो दोषभयकारी हैं जो कि तमोगुण रजोगुणनाम हैं अर्थात् वह राजस, तामसअहंकार कर्म्मफल सुखदुःखको जैसे मंत्रीचित्त ने उत्पन्न कियाहो वैसे भोगते हैं, यह चित्त बुद्धि अहंकार इसदेहरूपी पुरके अधिपति हैं और तीनों उस सुख आदि रूप धनको पर स्त्री भोग आदिकेद्वारा भोगते हैं उस दशा में अजिता बुद्धि भी चित्तके समान दोषों से लिप्त कहीजाती है, पुरवासी भी चित्तरूप मंत्रीसे भयभीत होतेहैं तब उनकी दृढ़चित्तताभी नष्टहोजातीहै और दोषवान् बुद्धि भी जिसधन पुत्रादि अर्थको अपना हितकारी निश्चय करतीहै वह अर्थ दुखदायी होकर नाश होजाताहै, नाशवान् अर्थभी दुःखका देनेवालाहै उसको सुनो कि जब चित्त बुद्धिकेद्वारा धनआदिको उनकेनाश होनेके पीछे शोचकर यादकरता है तबवह चित्त महापीड़ावान् होताहै, जब चित्त बुद्धिसे पृथक् होताहै तब केवल चित्तकहा जाताहै परन्तु वास्तवमें वही बुद्धिहै इसीहेतु से चित्तके योगसे बुद्धि में भी दुःखसुखहोते हैं, अनात्मारूपबुद्धि और चित्तके दुःखमें आत्माकी क्याहानिहोतीहै इसको विचारकरकहतेहैं—उस बुद्धि में प्रतिबिम्बरूपसे नियतइसआत्माको केवल रजोगुणही व्याप्तकरता है वह रजोगुण दुःखरूप फलकादाता है इसकारण वह चित्त रजोगुण से मित्रता करताहै अर्थात् प्रवृत्ति के सन्मुख होताहै और उन पुरवासीलोगों को पकड़कर रजोगुण के आधीन करता है १४ ॥ इत्येकाशीतितमोऽध्यायः ८१ ॥

नयासीवां अध्याय ॥

इसप्रकार संसाररूपी कारागृहसे मोक्ष होने के लिये व्यासजीकी कहीहुई युक्तिके कहनेको भीष्मजी उद्यतहुये—भीष्मउवाच—हे निष्पापपुत्र व्यासजी के मुखसे निकलाहुआ चैतन्य आत्माकी उपाधिरूप आकाशादि तत्त्वों का बड़ा विचार तुम बड़ी श्लाघा से सुनो, देदीप्य अग्निके समान प्रकाशित अज्ञान रहित भगवान व्यासजी ने उन अज्ञान ढके धूमवर्ण शुकदेवजी से कहा कि हे पुत्र इसकारण से मैं निश्चय किये हुये शास्त्र को कहताहूं कि निश्चलता, गुरुत्व, कठिनत्व, अन्नादि की उत्पत्तिस्थान, गन्ध अपनी प्रबलतासे देहादि की वृद्धि करना गन्ध के प्राप्ति की सामर्थ्य एकत्र होकर दृढ़ होना, मनुष्यादि का रक्षास्थान और पंचभूत सम्बन्धी चित्त में जो धैर्य का भागहै यहसब पृथ्वी सम्बन्धी गुणहैं—शीतलता, आर्द्रता, जारीहोना, सचिक्कणता, शोभा, जिह्वा अर्थात् रसनेन्द्री की चेष्टा, बरफ आदि जल विकार, तन्दुलादि पाक यह सब जल सम्बन्धी गुणहैं—स्पर्श के योग्य होना, अग्नि का प्रकाश, ऊष्मा अन्न का परिपाक, शोक, रोग, शीघ्रगामिता, तीव्रता, ऊपरको बराबर जाना, यह सब अग्नि सम्बन्धी गुणहैं—शीत उष्ण से रहित स्पर्श, वचन इन्द्री के गोलक, गमन में स्वतंत्रता, पराक्रम, शीघ्रता, छूटना, स्वासका आना जाना, प्राणरूपसे चैतन्यकी उपाधिरूप होना, जन्म, मरण यह सब वायु सम्बन्धी गुण हैं—शब्द, व्यापकता, छिद्रत्व, आश्रयत्व, अनन्याश्रयत्व, स्पर्श रहित अव्यक्तता, एकदशासे दूसरी दशा में न होना,—यह आकाश सम्बन्धी हैं यह सब पचास गुण पांचों तत्त्वों से प्रकट हैं चित्त में नौ गुण हैं अर्थात् मण्डन करना, खण्डन करना, वार्त्तालाप में प्रवीणता, स्मरणता, भ्रांति, मनोरथ वृत्ति, क्षमा, वैराग्य, राग, द्वेष आदि और व्याकुलता, प्रिय अप्रियता का नाश, निद्रा रूप वृत्ति, समाधि से चित्त का रोकना, संशय प्रत्यक्ष आदि प्रमाण की वृत्ति इन पांचो को बुद्धि के गुण जानो, युधिष्ठिर ने कहा कि बुद्धि किस प्रकार से पांचों गुण रखने वालीहै और कैसे पांचों इन्द्रियों के गुणहैं हे पितामह इनसब मोक्षज्ञानों को मुझे समझाइये, भीष्मजी बोले कि तत्त्वोंके गुण पचास और बुद्धि के पांच ५५ पचपनहुये जो कि पांचोंतत्त्व भी बुद्धिकेही गुण हैं इससे सबको इकट्ठा किया तो ६० साठहुये वह सबगुण चैतन्य से संयुक्त हैं पंचतत्त्व और उनकी विभूतियों को अविनाशी ब्रह्मसे मिला हुआ कहते हैं हे पुत्र यहां उसको सदैव नहीं कहतेहैं अर्थात् जैसे सीपीमें चांदीहोना नित्यनहींहै इसी प्रकार केवल चैतन्य के देखने के समय से विश्वकी उत्पत्ति है, इसीकारण

चैतन्यकी सदैव एकदशा होनेपर उससे उत्पन्न होनेवाला जगत् रस्सीके सर्प की समान मिथ्याहै, ब्रह्म अद्वैत सिद्धहोताहै, यहऊपर वर्णन कियाहुआ वेद वचनके समानहै इसको कहतेहैं, हे पुत्रप्रथम लिखेहुये श्लोकमें सृष्टिकी उत्पत्तिके विषय में दूसरे वादियोंने जो वेदसे विरुद्ध वचन तुमसे कहावहविचारसे दोषयुक्तहै अर्थात् युक्ति सहितभी अयुक्तिकहै क्योंकि वेदका सिद्धान्तबड़ी युक्तिवाला है, परन्तु तुम इसलोक में मेरेकहे हुये उससदैव नित्य सिद्ध ब्रह्म को ब्राह्मय ऐश्वर्य्य अच्छेप्रकार प्राप्तकरके वृत्तिसे रहित बुद्धिवाले हो १२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे द्व्यशीतितमोऽध्यायः ८२ ॥

तिरासीवां अध्याय ॥

शान्त बुद्धिहोनेसे कल्याणहै वहशान्ति मरण समयपर स्वतः उत्पन्नहोजातीहै क्योंकि स्मृतिके अनुसार मृत्यु मौनरूपहै फिर साधनासे क्याप्रयोजन है यहशंका करके एकगावँसे दूसरे गावँके जानेके समान जन्म मृत्युहैं परंतु वह मौनता उत्पत्ति नाशके समान केवल स्थूल देहसे है सूक्ष्मदेहसे नहीं है इसके विषयमें मृत्यु और ब्रह्माजीके प्रश्नोत्तर वर्णन करते हैं—युधिष्ठिर बोले कि सेनाके मध्यमें जोमृतक छः महाबली राजा लोग वर्तमानहैं वह पृथ्वीपर सोते हैं उनमें हरएक भयकारी पराक्रमी दशहजार हाथीके समान बली था यहलोग युद्धमें पराक्रमी मनुष्योंके हाथसे मारेगये, मैं उसयुद्धमें इनपुरुषों के किसी दूसरे मारनेवालेको नहीं देखताहूं वहपराक्रम तेजबलमें युक्तथे फिर वह बड़े ज्ञानी निर्जीव सोतेहैं और उन निर्जीवों में यहशब्द वर्त्तमान है कि वह मरगये, बहुधा ऐसे भयकारी पराक्रमी राजा लोग मरगये इसमें मुझ को संशयहै कि मरगये यहशब्द कहांसे उत्पन्न हुआ, हे देव स्वरूप पितामह मृत्यु किस की है स्थूल सूक्ष्म शरीरकीहै या आत्माकी है और किस पुरुषसे उत्पन्न हुई और किसकारण संसारको मारती है यहसब मुझको समझाइये—भीष्मजी बोले हे तात पूर्वकालके सतयुगमें एक अनुकम्पक नाम राजाहुआ वह युद्धमें क्षीणवाहन होकर शत्रुकी सवारीपर शत्रुकी स्वाधीनतामें वर्त्तमान हुआ उसका हरिनामपुत्र जोभगवानके समान पराक्रमी था वह सेना और साथियों समेत युद्धमें शत्रुओंके हाथसे मारागया तब राजा अनुकम्पक जो शत्रुके स्वाधीनपुत्र शोक युक्त और शान्तचित्तथा उसने पृथ्वीपर स्वतः आये हुए नारदजीको देखा और अपने शत्रुवश और पुत्रशोक होनेका सबवृत्तांत नारदजीसे वर्णनकिया तब तपोमूर्त्ति नारदजीने उसके वचन सुनकर पुत्र शोककी दूरकरनेवाली कथा उससे वर्णनकी अर्थात् नारदजी बोले कि हेराजा इसबड़े विषयवाली कथाको सुनो कि प्रजा उत्पन्न करने के समय ब्रह्माजी

सृष्टिको उत्पन्न करके उसकी अत्यन्त वृद्धिको न सहसके, हे अधिकार संच्युत न होनेवाले युधिष्ठिर उससमय पृथ्वी जीवोंसे कहींभी खाली न रही तबतीनों लोक जड़पदार्थ के समान अचल होगये और संसारके नाशके विषय की चिन्ता ब्रह्माजीके चित्तमें उत्पन्नहुई और ब्रह्माजीने विचारकरके सृष्टिके नाश होनेका कोई कारण न समझा और उनके क्रोधकरने से इन्द्रियोंके छिद्रों के द्वारा अग्नि प्रकटहुई तब ब्रह्माजीने उसअग्निके द्वारासब दिशाओंको भस्म किया और भगवान के कोप से उत्पन्न हुई अग्नि ने स्वर्ग पृथ्वी ग्रह नक्षत्र आदि चराचर जगत्को भस्म किया और सब स्थावर जंगम जीवभी भस्म होगये तब जटाधारी संसार के रक्षक श्रीशिवजी महाराज ब्रह्माजी के पास गये तब ब्रह्माजी शिवजी से मिलकर संसार के उपकारार्थ यह वचन बोले कि हे शिवजी आप मेरी बुद्धिसे सबवरोंके योग्यहो मैंतुम्हारे मनकी इच्छा के समान तुम्हारा अभीष्ट करूंगा २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्म्मे त्र्यशीतितमोध्यायः ८३ ॥

चौरासीवां अध्याय ॥

शिवजी बोले कि हे प्रभु पितामह संसारकी उत्पत्तिके निमित्त इस मेरी प्रार्थना को सुनो कि यह सृष्टि आपनेही उत्पन्नकरी है इसपर क्रोध न करिये हे ब्रह्मन् सब प्रजालोग आप के तेज की अग्निसे जलतेहैं उनको देखकर मुझको दया उत्पन्नहोती है इन पर दया कीजिये, ब्रह्माजी बोले कि मैं कोप नहीं करताहूं और यह भी नहीं चाहताहूं कि सृष्टिका नाश होजाय यह सृष्टि का नाश पृथ्वी के बोझ उतारनेको किया जाता है सो हेमहादेवजी इसभार से क्रान्त भयभीत पृथ्वी को जल में डूबता हुआ जानकर यह युक्ति कीगई, जब बुद्धि के बड़े विचारसे इस संसारकी वृद्धिको न्यून करनेका कोई विचार न पाया तब मुझ में क्रोध प्रवृत्त हुआ, शिवजी बोले कि हे देवेश्वर प्रसन्न हूजिये और संसार के नाश के निमित्त क्रोधको त्यागो जिससे कि सब जड़ चैतन्य जीव बचें सब छोटे बड़े सरोवर नदी तृण और चारों खान के जीव जलकर भस्म होगये अब आप प्रसन्न हूजिये यही वर मैं मांगताहूं, यह नाशवान भस्म हुये जीव अब किसीप्रकारसे उत्पन्न नहींहोंगे इस कारण आप अपनेही तेज से इस तेजको हटाओ और इनके वृद्धिकी कोई दूसरी युक्ति विचारिये हे पितामह जैसे यह सब जीव बचें सोई कीजिये जिनकी क्रिया गौ आदि नष्ट होगई हैं वह नष्ट होवें, हे लोकेश्वरों के स्वामी मुझको आप ने अधिदेवके अधिकारपर नियत कियाहै और सब संसार तुम्हाराही बनाया है मैं आपको प्रसन्न करके मरमर कर जन्म लेनेवाली सृष्टिको चाहताहूं, ना-

रदजी बोले कि यह शिवजी के वचनको सुनकर ब्रह्माजी ने उस तेज को अपने अन्तरात्मा में आकर्षण कर लिया १३ और उस अग्निको भी अपने में लय करके जीवों के जन्म मरणको विचार किया आशय यहहै कि जन्म मरण इन दोनों के होने से न पृथ्वी पर भार होगा न सृष्टि की अधिकता होगी इन सब बातों के पीछे उन ब्रह्माजी के शरीरी छिद्रों से एक स्त्री प्रकट हुई जिसके काले और लाल वस्त्र और काले भीतरीनेत्र और दिव्य कुंडलों से शोभित दिव्य भूषणोंसे अलंकृतथी वह देहके छिद्रोंसे निकलकर दक्षिण दिशामें नियतहुई और उन दोनों विश्वेश्वर देवताओंने उस शोभित कन्या को देखा सो हे संसारके पोषण करनेवाले राजा युधिष्ठिर ब्रह्माजी ने उस कन्याको बुलाकर यह कहा कि हे मृत्यु तुमको हमने स्मरण किया था सो तुम सब स्थावर जंगम जीवोंको मारो और किसीपर दया मतकरो सब छोटे बड़ों को विनाश करो तुम मेरी आज्ञा से बड़े कल्याणको पाओगी यह ब्रह्मा का वचन सुनकर उस कमल मालाधारी स्त्रीरूप शोचग्रस्त मृत्युने बड़ाध्यान करके अश्रुपात किया और मनुष्यों के आनन्द के निमित्त उन अपने अश्रुपातों को दोनों हाथों में भर लिया और प्रार्थना की और आंशू गिरने से सब जीवों का एकही बार नाश न हो यह अभिप्राय था २२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे चतुराशीतितमोऽध्यायः ८४ ॥

पचासीवां अध्याय ॥

नारदजी बोले कि फिर वह दीर्घ नेत्रवाली चित्त से दुःख को दूरकर हाथ जोड़ नम्र शिर से इसी प्रयोजन को कहनेलगी कि हे श्रेष्ठवक्ता ब्रह्मा जी तुम से उत्पन्न हुई मुझसी स्त्री सब प्राणियों को भय उत्पन्न करनेवाली कैसे होसक्ती है, मैं अधर्म का भय करती हूं मुझको धर्मरूप कर्म का उपदेश करो आप मुझ भयरूप अग्निको विचार कर कल्याणरूप नेत्रों से देखो हे प्राणियों के स्वामी मैं उन निरपराधी बालक वृद्ध तरुण पुरुषों को नहीं मारूंगी मैं आपको नमस्कार करती हूं आप मुझपर प्रसन्न हूजिये, प्यारे पुत्र, बराबर के भाई और माता पिता आदिको भी नहीं मारूंगी जिनके कि सम्बन्धी मारेगये वह शापदेंगे मैं उनसे भयकरतीहूं,दुखियाजीवों का अश्रुपाती यजल मुझको बहुत वर्षोंतक सदैव भस्मकरेगा मैं उनसे अत्यन्त भयभीत आपकी शरण आई हूं हे देव पापकरनेवाले जीव यमलोक में गेरेजाते हैं इस से हे वरद मैं आपको प्रसन्न करतीहूं मेरेऊपर कृपाकरो हे लोक पिता मैं आप से यह चाहतीहूं कि तुम्हारे प्रसन्नता के अर्थ मैं तपस्याकरूं ब्रह्माजी बोले कि हे मृत्यु मैंने तुमको संसारके नाशके निमित्त उत्पन्नकिया है तुमजाओ सब

संसार को मारो किसीबातका विचार मतकरो यहीबात अवश्यहोगी कभीइस के विपरीत न होगी हे पापरहित निर्दोष स्त्री मेरे वचनोंको मानकर जैसाकहाहै वैसाहीकरो, फिर हे महाबाहु युधिष्ठिर इस प्रकारसे आज्ञापाईहुई मृत्यु ने उत्तर नहीं दिया और नम्रता पूर्वक ब्रह्माजी के सन्मुख नियतहोगई और वारम्वार आज्ञप्त होनेसे निर्जीवके समान अवाकहोगई तदनन्तर देवोंके देव ईश्वर ब्रह्माजी आपसे आप प्रसन्न हुये और मन्द मुसक्यानयुक्त होकर सब लोकोंको देखा और देखतेही अपनी कृपा प्रकटकी औरसुनाजाताहै कि ब्रह्मा जीको क्रोधरहित देखकर वहकन्या उनके साम्हनेसे पृथक् चलीगई,हे राजेन्द्र तबवह मृत्यु सृष्टिकेनाश कर्मको भूलकर वहांसे चलकर शीघ्रही धेनुकनाम तीर्थको गई और वहां महाउत्तम उग्र तपकिया और पन्द्रहपद्म वर्षतक एक चरण से खड़ीरही फिरभी उन महातेजस्वी ब्रह्माजीने उस उग्रतपवाली कन्या से कहा कि हे मृत्यु तू मेरेबचनकोकर यहसुनकर मृत्यु उनके वचनको ध्यान न करके फिर सातपद्म वर्षतक एकपैर से खड़ीरही फिर तेरह पद्मवर्ष खड़ीरही और अयुत वर्षतक मृगोंके साथ घूमी फिर दो अयुत वर्षतक वायुके आधारसे रही फिर मौनतामें नियत हुई और आठ सहस्रवर्षतक जलमें निवास किया फिर वह कन्या कौशिकी नदीको गई वहां वायु और जलके आहारसे नियम किया फिर वह श्रीगंगाजी और शुद्ध मेरुपहाड़पर गई वहां काष्ठके समान निश्चेष्ट सृष्टिके आनन्दकी इच्छासे नियतहुई तदनन्तर हे राजेन्द्र वह हिमालयके मस्तकपर जहां देवताओं ने यज्ञ कियाथा गई वहांभी एक निखर्व वर्ष तक अंगूठा विनालगाये खड़ीरही और बड़ीयुक्तिसे ब्रह्माजी को प्रसन्न किया तदनन्तर वहां लोकेश ब्रह्माजीने आकर उससे यहकहा कि हे पुत्री यहक्या करतीहै मेरा वह वचनकरो फिर मृत्युने भगवान ब्रह्माजीसे कहा कि हे देव मैं सृष्टि को नहींमारूं यह आपसे प्रार्थना करतीहूं, फिर तो ब्रह्माजीने बड़े हठसे उस अधर्मसे भयभीत मृत्यु से कहा कि हे मृत्यु तेरा अधर्म नहीं है तुम निस्संदेह प्राणियोंकोमारो मेरा वचन अन्यथा कभी नहीं होगा तेरेपास यहांही सनातन धर्म आवेगा मैं और सबदेवता सदैव तेरी भलाईमें प्रवृत्तहैं औरइस दूसरे तेरेमनोरथोंको देताहूं इससे पीड़ामान प्रजालोग तुझको दोष न लगावेंगे, तुम पुरुषोंमें पुरुषरूप स्त्रियोंमें स्त्रीरूप और नपुंसकोंमें नपुंसकरूप होगी अर्थात् ब्रह्मभावको प्राप्तहोगी और तुमको पाप नहीं होगा,हे राजा इसप्रकार आज्ञायुक्त भी उसमृत्युने हाथ जोड़कर फिर उस अविनाशी ब्रह्माजीसे निषेध किया, तब ब्रह्माने फिरकहा कितू मनुष्यादिकों को मार तुझको दोष कभी न होगा मैं ठीक विचार पूर्वक करूंगा, हे मृत्यु मैंने जिन अश्रुपातोंके कणों को जिनको पूर्वमें तैंने अपने हाथोंमें धारण कियाथा घोररूप रोग बनायेहैं

वह समय आनेपर जीवोंको मारेंगे, तुम सब जीवोंके अन्त समयपर उनदोनों काम क्रोध को चलायमानकरो अर्थात् उनके कर्म्मफल के द्वारा काम क्रोध प्रकट होनेपर तुम उनको मारो इसप्रकारसे तुमको धर्म्महोगा और राग द्वेषसे रहित तुमको अधर्म्मभी न होगा, तुम इसप्रकार से धर्म्मपालन करोगी और अधर्ममें नहींडूबोगी इसकारण इस अधिकारको अंगीकारकरो और जीवों में कामको प्रवृत्त करके उनकोमारो, तब मृत्युनाम स्त्रीने भयभीतहोकर ब्रह्माजी से कहा कि बहुत अच्छा तबसे वहमृत्यु जीवों के अन्तसमयपर उनमें काम क्रोधका प्रवृत्त करके प्राणोंको अज्ञानकर मारती है, और मृत्यु के जो वहअश्रुपात रोग रूपहुये उन से जीवन के अन्तमें सब मनुष्यादि जीवों का देह पीड़ामानहोताहै इसकारण शोकमतकरो और बुद्धिसे समझो, जीवों की सब इन्द्रियां अपने व्यवहारके अन्तमें अर्थात् जागृतदशाके समाप्तहोने पर सुषुप्तीमें जीव ब्रह्मकी ऐक्यताको प्राप्तहोकर उस प्रकार जागृत अवस्थामें प्रकट होती हैं जिसप्रकार से कि सब मनुष्य उन देवता इन्द्रियों के समान जीवन के अन्त में परलोकमें जाकर फिर इसलोक में प्रकट होते हैं आशय यह है कि जागृत और स्वप्नावस्थाके समान समाप्ति वा उत्पत्तिकर्म्मसे जन्मऔर मरणको प्राप्तहोतेहैं और तुमने पूछा कि किसकी मृत्युहोतीहै उसका उत्तर सुनो कि भयकारी शब्द और रूप धारण करनेवाला बड़ातेजस्वी जो वायु है वह सब प्राणियोंका प्राणरूप नानाप्रकारके देहोंमें वर्त्तमान और जीवोंके देहके नाशमें इन्द्रियोंका राजाहै इसकारण वह अपूर्व बिलक्षण है तात्पर्य यहहै कि शरीरकीही मृत्युहोतीहै प्राणात्माकी नहीं है, सब देवतालोग जिनका कि पुण्य समाप्त होताहै वह पृथ्वीपर आनकर जन्मलेतेहैं और सुन्दर कर्म्मवाले मनुष्य देवभावको प्राप्तहोते हैं हे राजाओं में उत्तम इसीकारणसे तुमअपने पुत्रका शोच मतकरो वह तुम्हारापुत्र स्वर्गको प्राप्तहोकर आनन्द करताहै, इसरीतिसे देवता से मिलेहुये कालके वर्त्तमान होनेपर जैसे चाहे वैसे मारने वाली है और उसके अश्रुपात से उत्पन्न होने वाले रोग इसलोक में समय आनेपर जीवमात्रोंको मारते हैं ४२॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्मेपंचाशीतितमोऽध्यायः ८५॥

छियासीवां अध्याय॥

इस प्रकारसे अपने कर्मोंके द्वारा जीवोंकी मृत्यु और रोगोंको जानकर उनकी निवृत्ति धर्मसे मानके आर्य,जैन और म्लेच्छशास्त्रों के बहुत प्रकारके मार्गों में संदेह युक्त धर्मरूपको लक्षण और प्रमाण से जानने के इच्छावान राजा युधिष्ठिरने प्रश्नकियाकि यह सबमनुष्य धर्ममें अनेक संदेह करते हैं कि

यहधर्म क्याहै और कहां से है यह इसलोक के या परलोकके या दोनों लोकोंके निमित्तहै इसको हे पितामह आप समझाके मुझसे कहिये, सदाचार स्मृतिवेद यह तीन प्रकारका धर्मलक्षणहै और चौथे अर्थको भी पंडितलोग धर्मका लक्षण कहते हैं, जो धर्मरूप कर्म कियेगये उनको न्यूनाधिकता के कारण भिन्न२ निश्चय करते हैं जैसे कि गृहस्थाश्रममें मोक्षको न जानकर संन्यासको चाहना और कामी लोगों की इच्छा गृहस्थाश्रम में होना इस स्थानपर क्या सिद्धांतहै इसको शंकाकरके कहते हैं, कि यहां लोकयात्राके निमित्त धर्मका नियम कियागया है कि राजा जनक आदिके समान सावधान चित्तपुरुषको गृहस्थाश्रमभी मोक्षका दाताहै और अन्यको यहसंन्यास धर्म इसलोक परलोक दोनोंलोकोंमें सुखका देनेवालाहै, पापात्मा पुरुषउत्तम धर्म को नपाकर पापमें प्रवृत्त होताहै, कोई पाप करनेवाले मनुष्य भी पापों से मुक्तनहीं होते हैं, आपत्ति कालमें पापवादी मनुष्य अपापवादी होता है और अधर्म करनेवाला धर्मात्मा होजाताहै, धर्मकी निष्ठा आचारहै उसीके आश्रय होकर जानेगा जैसे कि अधर्म में डूबाहुआ चित्तचोरीके धनको लेताहै और राजासे रहित देशमें चोर दूसरेके धनको चुराता रहताहै, जबदूसरे मनुष्य उसकेधनकोलेतेहैं तबराजाको चाहताहै तभीऐसे लोगोंकी भी इच्छा करता है जो कि अपने धन ऐश्वर्य्य से प्रसन्न हैं, सब ओरसे पवित्र मनुष्य निस्संदेह राजाके दरबार में वर्त्तमान होताहै और अपनी अंतरात्मा में कुछ पापको नहीं देखता है, सत्यबोलना अच्छाहै सत्यसे उत्तम कोईबात नहीं है सत्यसेही सबधारण कियाजाताहै और सत्यहीमें सब नियतहैं, पापियोंकोभी सत्यत्यागना अयोग्यहै इसबातको डेढ़श्लोक में सिद्धकरते हैं—कि पाप करनेवाले दुष्ट आदमी पृथक् २ शपथखाकर उससत्यमें नियत इन दोगुणवाले होते हैं, प्रथमद्वेष न करना दूसरे अधिक विवाद न करना, जो वह परस्पर में प्रतिज्ञाको त्यागकरें तो निस्संदेह नाशहोजाय, दूसरे का धन न हरना योग्यहै यह सनातन धर्म है, पराक्रमी मनुष्य उसपूर्वोक्त धर्मको निर्बलोंका कियाहुआ मानते हैं जब प्रारब्धहीन होता है तब यहबात उसको अच्छी मालूम होती है और अधिक बलवान सुखी भी नहीं होते हैं इसकारण तुमको कभी कुमार्ग में बुद्धि न लगानी चाहिये क्योंकि निर्दोषको नीचोंसे न चोरों से न राजासे भयहोताहै किसी का कुछ अप्रिय न करनाही निर्भय और पवित्रस्थान है, चोर सबओरसे ऐसे भयकरताहै जैसे कि गांवमें पहुंचने वाला मृग चारों ओरसे भयभीत होता है, बहुत प्रकारसे किया हुआ अपना पाप दूसरेमेंभी देखताहै, पवित्र और सदैव सबओरसे निर्भय मनुष्य प्रसन्नता पूर्वक सन्मुख आता है और अपने किसी बुरेकर्मको दूसरों में नहीं

देखताहै, जीवोंके उपकार में प्रवृत्त पुरुषोंने इसधर्मको कियाहै और उनकाही कथनहै कि दान करना योग्य है धनवान मनुष्य उस धर्मको निर्धनों का कियाहुआ मानते हैं, जब मन्द प्रारब्ध होता है तब यहबात उनको अच्छी लगतीहै और धनवानभी अत्यन्त प्रसन्न नहीं होतेहैं, सावधान लोग धर्म लक्षणको कहते हैं जो पुरुष दूसरों से किया हुआ अपना अप्रिय कर्म नहीं चाहताहै उसको अपना अप्रियजानता दूसरे मनुष्योंके साथनहींकरे २० जो मनुष्य किसीकी स्त्रीका जारज मित्रहै वह किसी से क्याकहने को योग्य है अर्थात् अपने कुकर्म से दूसरेको कुछनहीं कहसक्ता और जो दूसरेका किया हुआ आपकरे तो उसमें देर न करे,जो अपने जीवनको चाहे वहकिसीप्रकार दूसरेको न मारे जो जो अपनेसे इच्छाकरे उस उसको दूसरेका भी समझले, निर्धनोंको अपने खर्चसे और शेषोंको अपने भोगों से भागदे, इसी कारण ईश्वर की ओरसे व्याज जारी हुआहै जिस सत्मार्ग में देवता सन्मुखहों उसी मार्गमें नियतहो अर्थात् शान्त चित्त, दान, दयामें प्रवृत्तहो अथवा लाभ के समय परही धर्म में नियतहोना श्रेष्ठहै, ज्ञानियोंने हिंसा रहित सब कर्मोंको धर्म कहाहै हे युधिष्ठिर धर्म अधर्म में इस लक्षण के वर्णनको विचारो, पूर्व समयमें ईश्वरने यहलोक संग्रहसे युक्त धर्म प्रकट कियाहै और सत्पुरुषोंका कर्म सूक्ष्म धर्म के प्राप्त के अर्थ निश्चय किया गया है, हे राजा यह धर्म लक्षण मैंने तुमसे कहा इस कारण तुमको किसी दशामें भी कुकर्म में बुद्धि न लगानी चाहिये २७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेषडशीतितमोऽध्यायः ८६ ॥

सत्तासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोलेकि साधुओंसे उपदेश और निश्चय कियाहुआ धर्मलक्षण सूक्ष्म और वेदसे जाननेके योग्यहै समयके अनुसार मैं अपनी मतिके अनुमान से कहताहूं, मेरे हृदय में जो बहुत से सन्देहकारी प्रश्न थे वह आपने वर्णनकिये हे राजा अब यहप्रश्नमेरा छलसे रहितहै कि यह देहरूप प्राप्त होने वाले तत्त्व अपने आपही जिवाते उत्पन्न करते और देहके रूप से पृथक्भी करतेहैं, जैसे वेदमें लिखाहै कि अन्नसेही सबजीव उत्पन्न होतेहैं और उसीसे जीवतेहैं और लयभी उसी में होजातेहैं इसी हेतुसे वह धर्म केवल मर्य्यादही मात्रसे निश्चय नहीं होसक्ता, आपत्ति से मोक्षहोने वाले का दूसरा धर्म है और आपत्ति में पड़ेहुओं का दूसराहै वह आपत्तियां मर्य्याद मात्र से जाननी असम्भव हैं, सदाचार माना है और सन्त पुरुष आचार लक्षण वाले हैं कैसे

साधन और असाधन के योग्यजानें इससे सदाचारभी लक्षण से रहित है, प्राकृत मनुष्य अधर्मको करताहुआ धर्मरूप देखने में आता है और कोई संस्कारी मनुष्य धर्मको करता अधर्मरूप दिखाई देता है तात्पर्य यह है कि इस विषय में सदाचारभी निश्चय करना कठिन है ६ फिर शास्त्रज्ञ मनुष्यों से उसका प्रमाण कहागया इससे वेदवचनभी यज्ञके समान नाशको प्राप्त होते हैं यह हमने सुना है आशय यह है कि समयके विभाग से धर्म्म के प्रसिद्ध करने वाले वेदभी श्रद्धा के योग्य नहीं होते, सतयुग में दूसरे धर्म्म हैं, त्रेता द्वापर में और कलियुग में और २ हैं मानों यज्ञ करनेवालों कीही सामर्थ्य के समान नियत किये गये हैं वेद वचन सत्य हैं यह कहना केवल लोक रंजन है फिर सब ओर सुख रखनेवाले वेद आम्नायों से पूर्ण हैं, जो वह आम्नाय श्रुति हैं और इन स्मृतियों में उनका प्रमाण होना वर्त्तमान है स्मृतिसे भी वेदके विपरीत होनेमें शास्त्रता कहांसे होसक्तीहै, पराक्रमी दुष्ट आचरणवाले पुरुषों से कियेहुये धर्म्मका जो स्वरूप बदलजाताहै इस हेतु से उसकाभी नाशहोताहै, हमजाने हैं वा नहीं जाने हैं और जानना सम्भवहो वा असम्भव हो जो छुरीकी तीक्ष्णधार है वह पहाड़ों की अपेक्षा बड़ी भारी है कर्म्मकाण्ड पूर्व में गन्धर्व्व नगर के समान अर्थात् अपूर्व्व दृष्ट पड़ता है और पण्डितों से विचार किया हुआ फिर नाशको पाता है अर्थात् कर्म्मफल मोक्षदायी नहीं है, हे भरतवंशी युधिष्ठिर जैसे गौओं के निमित्त बनाहुआ छोटा तालाब खेत और क्यारी में काटकर लेजाने से शीघ्रही सूख जाताहै इसीप्रकार कलियुग के अन्त में लोप होनेवाला वैदिक धर्म और स्मृति धर्म दृष्ट नहीं आता है, कोई पुरुष फलयुक्त अग्निहोत्र को करते हैं कोई वेतनलेकर पढ़ाना आदि कर्म्म करते हैं और कोई अन्यप्रकार से धन लेने के लिये व्रतादिक करते हैं कोई छली बहुत से मनुष्य निरर्थक आचार को प्रतिपादन करते हैं और सेवन करते हैं, फलके चाहनेवाले अज्ञानियों का कहाहुआ कर्म्म शीघ्रही धर्म्मरूप होता है उन अज्ञानियों की दृष्टि से साधुओं में धर्म्म नहीं है और उन साधुओंको छली और विक्षिप्त कहते हैं और हास्य करतेहैं, बड़ेलोग अपने ब्रह्मकर्म्मसे पृथक् होकर राजधर्म्म में आश्रित हुये, कोई मुख्य आचार सब की भलाई के लिये वर्त्तमान नहीं होताहै और उसी आचारसे कोई २ विश्वामित्र के समान समर्थ होताहै कि वशिष्ठादिको पीड़ा देता है फिर वही आचारवान् वशिष्ठादि समान रूपवान् दृष्टपड़ता है, जिस आचार से कोई समर्थ होता है वह दूसरों को पीड़ा देता है इस कारण सब आचारों की विरुद्ध दशाको विचार करना योग्य है राजा युधिष्ठिर इस प्रकारसे श्रुति स्मृतियों का अप्रमाण कहकर अपने मतको कहतेहैं,

पूर्वकालमें जोधर्म्म प्राचीन पंडितोंसे उपदेश कियाहुआ है उसीप्राचीन आचार से सनातन मर्य्यादा होती है २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्म्मेसप्ताशीतितमोऽध्यायः ८७ ॥

अट्ठासीवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इसस्थान पर इसप्राचीन इतिहासको कहते हैं जिसमें तुलाधारने धर्म्म सम्बन्धी बचन जाजली नाम ब्राह्मण से कहेहैं, बनके बीच महातपस्वी बनचारी किसी जाजली नाम ब्राह्मण ने समुद्र के किनारे पर तपस्या की, वह बुद्धिमान् जितेन्द्री अल्पाहारी मृगचर्म और जटा धारण किये मुनिरूपहो बहुत कालतक मैलकीच आदिका धारण करनेवाला हुआ, हे राजा किसी समय वह महातपस्वी तेजधारवाले जल में निवास करने वाला अपनी इच्छाकेअनुसार ब्रह्मऋषियों के लोकों में घूमता देखता फिरता था कभी जल में बैठेहुये अपनी दृष्टि से बन पर्वतों समेत सब पृथ्वी को देख कर यह बिचार किया कि इसलोक के जड़ चैतन्यों में मेरेसमान कोई नहींहै जो मेरेसाथ जल में नियत होकर आकाशस्थ ग्रह नक्षत्रादि को देखे, इसी प्रकार जल में कहा करता था और राक्षसों की दृष्टिसे गुप्त था, उससे पिशाचों ने कहा कि तुमको ऐसा कहना उचित नहीं है हे श्रेष्ठ ब्राह्मण एक तुलाधार नाम यशस्वी वैश्यों का धर्म्म धारण कियेहुये काशी में रहता है वहभी इस प्रकारसे नहीं कहसक्ता है जैसे कि तुम कहते हो पिशाचों के यह बचन सुनकर महातपस्वी जाजली ने उत्तर दिया कि मैं उस यशस्वी तुलाधारको देखूंगा तब राक्षस उस ऋषिको समुद्रसे उठाकर बोले कि हे ब्राह्मणों में उत्तम तुम इस मार्गमें होकर जाओ, राक्षसों से यह सुनतेही बेमन होकर जाजली चल दिया और काशी में तुलाधारसे मिलकर यह बचन कहा, तब युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जाजली ने पूर्वसमय में कौनसा कठिनकर्म किया था जिससे कि उसने ऐसी बड़ीसिद्धिको पाया यह आप मुझे समझा कर कहिये, भीष्मजीने कहा कि उस जाजली मुनिने बड़ाघोर तप कियाथा और प्रातःकाल सायंकालको स्नान आचमनादि कर्म्म बड़ी प्रीति से करता था और वेदविद्यासे तेजमें पूर्णवानप्रस्थ आश्रमकी सबयुक्तियों का ज्ञाता अग्नियोंको अच्छेप्रकारसे पूजताहुआ वेदपाठ और जपमें प्रवृत्तहोताथा बनमें तपयुक्तहोकर उसऋषिने अपने धर्मको नहीं शोचा अर्थात् धर्मका किंचित्भी अहंकार नहींकिया वर्षाऋतुमेंबाहर शयन,हेमंतमें जलशयन ग्रीष्ममें वायुघाम सहता परंतु धर्मकाअहंकार नहींकरताथा इनबातोंके बिशेषउसकी बहुतप्रकार की दुखशय्या इस पृथ्वीपर वर्त्तमान हैं और बहुत बर्षतक वर्षाऋतुमें निराधार

आकाशमें नियतहुआ और बराबर अंतरिक्ष मेंही जलको मस्तकपर लिया, और सदैव वनजाने से उसकी जटायें धूल में लिपटीहुई पापसे रहित गांठ-दार और जलसे आर्द्ररहीं, कभी वह निराहार वायुभक्षी महातपस्वी सावधान मुनि काष्ठके समान नियतहुआ और कभी उसतपसे चलायमान नहींहुआ और हे युधिष्ठिर कलिंगनाम पक्षी ने उस काष्ठरूप जड़के समान पड़े हुयेपर घोंसले बनाये २० और जटाओंपर तृणके तारों से घोंसले बनानेवाले पक्षियों के जोड़ेको अपनी दयालुतासे निषेध नहींकिया, जबवह काष्ठरूप महातपस्वी अपने स्थान से चलायमान नहीं हुआ तब सुखपूर्वक विश्वास करनेवाले वहदोनोंपक्षी आनन्दसे निवासकरनेलगे, हे राजा वर्षाऋतुके व्यतीत होने-पर शरदी के प्रारंभ में उस काम से मोहित पक्षियों के जोड़े ने गर्भाधान बुद्धिसे विश्वासित होकर उसके शिर में अंडेदिये, और महातपस्वी मुनि ने जाना तब ऐसा देहको निश्चल किया कि कथंचितभी नहींहला सदैव धर्मज्ञ ने अधर्मको नहींचाहा तदनन्तर वह दोनोंपक्षी प्रतिदिन आकर उसकेमस्तक पर विश्वास युक्त हो बड़ी प्रसन्नता से निवास करनेलगे फिर अण्डों से पक्षी उत्पन्नहुये और उसी मस्तकपर बड़ेहुये और जाजली जरा न हला उनके अंडे बच्चोंकी रक्षाकरता वहव्रती धर्म्मात्मा चेष्टासे रहित सावधानरहा फिर वह बच्चे समयपर परवाले हुये और मुनिने सपक्ष देहवालाजाना तब वह महाव्रती बुद्धिमान् मुनिवहां उन पक्षियों को देखकर बहुत प्रसन्नहुआ और उन पक्षियों ने भी अपने बच्चों को बड़ा समर्थ देखकर बहुत आनन्द माना और निर्भय बेटों समेत उसके शिरपर रहनेलगे और प्रति दिन सायंकाल के समय लौटते हुये परवाले पक्षियोंको देखा कि लौटकर फिर बराबर चलेजाते थे फिर माता से अलग होगये परंतु जाजलीने शिर न हलाया इसीप्रकार सदैव दिन में चलेजाकर सायंकाल को लौटकर वहांही निवास किया करते थे कभी छः दिनकेपीछे भी आये तौभी जाजलीका शिर न हिला जबवह पर कभी पक्षी क्रम २ से बहुत दिनतक नहींलौटे कभी महीनोंतक नहींलौटे तबवह जाजली उठकर चलागया तदनन्तर उन पक्षियों के गुप्त होजानेपर उसने विचारकिया मैं सिद्ध हूं और अहंकार भी प्रवृत्तहुआ और इसप्रकार गयेहुये पक्षियों को देखकर उनके पोषण करने से अत्यन्त प्रसन्न चित्तहुआ और नदी में स्नान आचमनकर अग्निको तृप्त किया फिर उदय होनेवाले सूर्य्यका अभ्युत्थान किया, और जपकरनेवालों में श्रेष्ठ जाजलीने मस्तकपर पक्षियोंको बढ़ाकर के आकाशमें भुजाका शब्द किया और सूचित किया कि मैंने धर्म्म को प्राप्त किया, उसकेपीछे आकाशवाणीहुई कि हे जाजली तुम धर्म्म में तुलाधार के समान नहींहुये महाज्ञानी तुलाधार काशी में है वहभी ऐसाकहने के योग्य

नहीं है जैसा कि तुमकहतेहो फिरवह मुनि ईर्षायुक्त होकर तुलाधारके दर्शन की इच्छा से पृथ्वीपरघूमा और जहां सायंकाल हुआ वहांही उसका घर था, फिर वह बहुत काल पीछे काशीपुरी को गया तो उसने दूकानकी वस्तु को तोलता तुलाधारको देखा, मूलधन से निर्वाह करनेवाले अतिप्रसन्न उस वैश्य ने उस आतेहुये ब्राह्मणको देखकर उठकर कुशल मंगल पूछा और बोला हे ब्राह्मण तुम आतेहो मुझे मालूमहुयेहो सो हे ब्राह्मण मेरेवचनको सुनो,कि तुमने सागर के अनूप देश में आश्रय लेकर बड़ी तपस्या की और पूर्व में किसीदशामेंभी अपने को धर्म्मवान् नहींजाना फिर हे ब्राह्मण तुझ तप से सिद्ध होनेवाले के शिरपर शीघ्रही पक्षी उत्पन्न हुये और तुमने उनकी रक्षा करी जब वह पक्षवाले पक्षी भोजन के खोज में इधर उधर चलेगये तब पक्षियों के पोषण से अपने को तुम धर्म्मवान्समझनेलगे तब मेरे विषयका वचन तुमने आकाश से सुना और आतुरतासे यहां आये सो हे ब्राह्मणों में उत्तम आपका क्या शिष्टाचार करूं जो आपको अभीष्टहो उसको कहिये ५२ ॥

इति श्रीमहाभारते शांतिपर्वणि मोक्षधर्मे अष्टाशीतितमोऽध्यायः ८८ ॥

नवासीवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि ऐसे तुलाधार के वचनों को सुनकर जाजली ने कहा कि हे वैश्यपुत्र सब रस गन्ध वनस्पति औषधी और उनके मूल फलों के बेचनेवाले तुमने इस दृढ़ बुद्धिको कहां से पाया सो हे बुद्धिमान् इसको ब्यौरे समेत मुझसे कहो यह जाजली के वचन सुनकर धर्म अर्थ के मूल ज्ञाता तुलाधार वैश्य ने सूक्ष्मधर्म्मों को वर्णन किया, तुलाधारबोला कि हे जाजली मैं सनातन धर्म्म को रहस्य समेत जानता हूं मनुष्यों ने जिस धर्म्म को सब जीवों का उपकारी जानाहै, जीवों के साथ शत्रुभाव न करना अथवा आपत्तिकाल में थोड़ी शत्रुतासे जीविका होती है वह उत्तम धर्म्म कहलाता है हे जाजली मैं उसीसे अपना निर्वाह करताहूं मैंने दूसरे के काटे हुये काष्ठ और तृणों से यह स्थानबनवाया है हे ब्राह्मण मैं लाक्षारस पद्मकतुंग नाम काष्ठ और कस्तूरी आदि गंध और मद्य रहित अनेक रसों को सत्यता से दूसरों के हाथ से मोल लेकर बेचता हूं, हे जाजली जो पुरुष सब का मित्रहै और मनवाणी कर्म से सबकी भलाई में प्रवृत्त है वही धर्म्मज्ञ है, न मैं किसी को दुःख देताहूं न शत्रुता रखताहूं इच्छा रहित सब जीवों में समान हूं यह मेरा व्रतजानो, और मेरीतराजू सबजीवों में एकसी नियत होती है, हे वेदज्ञ मैं लोककी अद्भुतता को देखता हुआ दूसरों के कर्म्मोंकी प्रशंसा करताहूं मुझ को तुम समदर्शी और सुवर्ण मृत्तिका समान जाननेवाला समझो, जैसे

बहिरे अन्धे और ग्रहभूतादि से ग्रसेहुये ऊर्ध्व श्वास लेनेवाले और देवताओं से गुप्त इंद्री गोलकवाले होते हैं उसीप्रकार मुझको जानो, जैसे कि वृद्धरोगी आदि विषयों से अनिच्छावान् होतेहैं उसीप्रकार अर्थ कामादि भोगोंमें मेरी भी अनिच्छा होगई है, न किसीको भयदेता न दूसरेसे भयभीत होता इच्छा रहित शत्रुता से पृथक् होताहै तब ब्रह्मभावको पाताहै, जब मनवचकर्मसे सब जीवोंमें पापबुद्धि नहीं करता तब ब्रह्मभावको पाता है, जोपुरुष सबजीवों को निर्भय करता है उसने भूतकाल में न जन्मलिया न आगे कभीलेगा परंतु देहमें अभिमान आने से सब धर्म्मनष्ट होजाते हैं,जो निरभिमान है वह ब्रह्म रूप अभय पदको पाताहै कठोर वचन अथवा कठिन दण्ड बंधनादि से सब लोक भयकरताहै उनसबको त्यागदे, जो वृद्धलोग पुत्रादियुक्त और कुलीन हैं वहशास्त्रके अनुसार कर्म्मकरतेहैं, जोहिन्सारहितहैं हम उन महात्माओं के चलनपर चलतेहैं अब श्रेष्ठोंके आचारको प्रमाणकरतेहैं—किसीस्थानपर सदाचारसे विरुद्ध मोहको प्राप्त होनेवाला वेदोक्त धर्म्म परम्परासे प्राप्तभी ऐसेनष्ट होजाताहै जैसे कि आपत्तिकाल में वामदेव विश्वामित्र के निन्दित आचार को देखकर बहुत से मतवाले मोहको प्राप्तहोकर पाखण्डमत में प्रवृत्तहुये उस मोहरूपी कारण से विद्यावान् जितेन्द्री काम क्रोधका जीतनेवालाभी मोहको पाताहै अथवा पाठांतर से यह अर्थ है कि वह सदाचार से रहित होताहै, जो जितेन्द्री शत्रुता रहित पुरुष चित्तसे साधुओंका सत्संगी धर्म्मकोकरे वहज्ञानी आचार से शीघ्रही धर्म्म को पाताहै, जैसे कि लोक में नदी के मध्य अपने आप बहाहुआ काष्ठ आपही किसी दूसरे काष्ठ से मिलजाता है इसीप्रकार कर्म्म के प्रभाव से पिता पुत्र आदि का योग और वियोग है, उसनदी में कभी बिनाविचारे दूसरी लकड़ी तृण काष्ठ और सूखा गोबर भी परस्पर में मिलजातेहैं, हेमुनि जिस मनुष्यसे कभी किसी स्थानमें कोई जीव भयभीत नहीं होता है वह सदैव सब जीवों से निर्भयताको प्राप्त होताहै और जिससे सबभय भेड़िये के समान करतेहैं अथवा जैसे जलजीव वड़वानलसे भयातुर होकर किनारे में आश्रय लेतेहैं वह भयदायक पुरुष अभयता को नहीं पाता है इसीप्रकार यह अभय दायकरूप आचार जो कि प्रकटहै इधर उधरसे प्राप्त करना चाहिये जो सहायता रखनेवाला वा धनीहै वहऐश्वर्य्य और परलोक का हेतुहै, उस निर्भयदान से पण्डित लोग उस सहायता और धनसेयुक्त पुरुषों को शास्त्रोंमें उत्तम वर्णन करते हैं ।जिसके हृदय में बाह्य सुख नियत है वह संसार में निर्भयता पूर्व्वक अपनी उत्तम कीर्त्ति उत्पन्न करते हैं और जो सावधानहैं वह उस निर्भयदान को ब्रह्म सम्बन्धी जानतेहैं, सब तप यज्ञ दान और ज्ञानरूप वचनोंसे जिस जिस फलको पाता है उसी फलको अभय

दान देनेवाला भी प्राप्त करता है, जो पुरुष इस संसार में सब जीवों के लिये निर्भयदानरूप दक्षिणाको देताहै वह सब यज्ञोंसे पूजन करनेवाला निर्भयता रूप प्रतिष्ठा को पाता है, जीवों का कोई धर्म अहिंसा से उत्तम नहीं है जिस मनुष्य से कभी किसी दशा में कोई जीव भय नहीं करताहै वह सब जीवोंसे निर्भय रहता है और जिससे सर्प के समान संसार भयभीत रहताहै वह इस लोक परलोक दोनों में धर्म्म को नहीं पाता है, सब जीवों के आत्मा रूप अर्थात् निर्विकल्प समाधि में नियत और अच्छेप्रकार से जीवों के देखने वाले अर्थात् विकल्प समाधि में वर्त्तमान वे चिह्न मार्गमें उसके चिह्न को ढूंढ़नेवाले देवताभी मोहको पाते हैं, जीवोंके अभयरूप दानको सब दानों से श्रेष्ठ कहते हैं हे जाजली यह सब मैं सत्यहीसत्य कहताहूं.पूर्वोक्त दानकी प्रशंसा के अर्थ सफलदानकी निन्दाकरते हैं वह सफल कर्म करनेवाला स्वर्गवासी होकर फिर पृथ्वीपर आता है मनुष्य कर्म्मों के नाशको देखकर सदैव उसकी निन्दा करते हैं, हे जाजली सूक्ष्म धर्म्म निष्फल नहीं है इसलोक में ब्रह्म और स्वर्ग के निमित्त धर्म का बढ़ना वेद में नियत किया गया है आशय यहहै कि स्थूल धर्म यज्ञ आदि से दूसरा सूक्ष्म धर्म्म है, उसका ज्ञान सूक्ष्मता से असम्भव है क्योंकि मुख्य वस्तुको गुप्त करनेवाले बहुत हेतुवाले होतेहैं दूसरे आचारों को यथार्थ जानकर उस सूक्ष्म धर्म को जानता है जो बैलों को वधिया करते हैं या नथनोंको छेदतेहैं बांधतेहैं और बहुत से बोझों को लादकर लेचलतेहैं मारतेहैं और मारकर खाते भी हैं अथवा मनुष्य मनुष्य को दासबनातेहैं उनकी आप किसी प्रकारसे निन्दानहीं करतेहो और पकड़कर क़ैद कराते हैं मारते हैं क़ैद करने और मारने में रात्रि दिन अपने देह और चित्त को जो खेद होता है उसको भी जानता है, पांच इन्द्री रखने वाले जीवों में सब देवता निवास करते हैं अर्थात् सूर्य, चन्द्रमा, वायु, ब्रह्मा, प्राण, विष्णु, यमराज इत्यादि हैं उन जीवों को बेंचकर मृतकों में क्या विचार करना है बकरा अग्नि रूपहै मेढ़ा वरुण रूप है घोड़ा सूर्य रूपहै, पृथ्वी विराट्रूप है, गौ और बछड़ा चन्द्रमा रूप हैं इनको बेचकर सिद्धिको नहीं पाताहै, हे ब्राह्मण तेल घृत शहद और औषधीके बेचनेमेंभी क्या हानि है४३ डांस मच्छरों से रहित देश में सुख से बड़े होनेवाले उन पशुओं को माता के प्यारे जानकर उनको अनेक प्रकारसे स्वाधीन करके महाकीच के स्थान में जहां डांस मच्छरोंके समूह होते हैं बांधकर लेजातेहैं और बोझ से पीड़ित होकर बैल आदि मृत्युवश होते हैं, मैं जानताहूं कि उस कर्म से भ्रूणहत्या भी अधिक नहीं है और लोग खेती को अच्छा मानते हैं परन्तु वह जीविका भी बड़ी निर्दयता का कर्म्म है, क्योंकि लोहे के फलवाला हल पृथ्वी और

पृथ्वीके रहनेवाले जीवोंका नाश करताहै इसी प्रकार बैलों से युक्त रथ आदि कोभी जानो वेदमें गौओंका नाम अघ्न्याहै अर्थात् अवध्यहै तो कौन उनको मारसक्ताहै जो बैल या गौको मारताहै वह महाशोकोंको पाताहै, ऋषि और यती लोगोंने राजा नहुषसे जाकर कहा कि तुमने गौमाता और बैल प्रजापतिको मारा यह तुमने अयोग्य कर्म कियाहै हम तेरेकारण पीड़ाको पावेंगे, हे जाजली उन महानुभाव ऋषियोंने नहुषके पापसे उत्पन्न होनेवाली एकसौ एक रोगरूप हत्या सब जीवोंमें व्याप्त करदीं और ब्रह्महत्या करनेवाले नहुष से कहा कि हमतेरे हव्यको होम नहीं करेंगे हे जाजली उनसब तत्त्वार्थवेत्ता महात्मा शान्तरूप ऋषि और यतीलोगों ने अपने तपके द्वारा इसप्रकार के अकल्याणरूप घोर आचारों को प्रकटकिया अर्थात् जब नहुषकी भूलसे एक सौ एकगौ हत्या रोगरूपहोकर प्रजाओं में प्राप्तहुई तो जानकर होनेमें तो अवश्यही पाप प्रकटहोगा तुम केवल अन्धपरम्पराको जानकर हिंसारूपधर्मको नहीं जानते हो इसकारण धर्म को चाहनेवाला संसार के किये हुये कर्म को नहीं करे, हे जाजली जो मुझको मारकर मेरी प्रशंसाकरता है उसस्थान परभी मेरायह सिद्धान्त है कि यह दोनों भूलहैं क्योंकि मेरी बुद्धि से कोई प्रियअप्रिय नहीं है, इसधर्मकी ज्ञानी पुरुष प्रशंसाकरते हैं और संन्यास धर्म के समान कहाजाताहै और धर्मज्ञ पुरुषों की दिव्यदृष्टिसे देखागयाहै—५७ ॥

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि मोक्षधर्म्मे एकोननवति तमोऽध्यायः ८९ ॥

नब्बेवां अध्याय ॥

जाजलीबोला हे तराजू हाथमें लेनेवाले तुमसे जारीकिया हुआ यहधर्म्म स्वर्गरूप द्वारकी आजीविकाका बन्दकरनेवालाहै, हेवैश्य खेतीसे अन्नउत्पन्न होताहै उसीसे तुम भी जीवतेहो मनुष्य पशुआदि औषधियोंके द्वारा जीवते हैं और यज्ञादिक कर्महोतेहैं तुम नास्तिकताकी बातेंकरतेहो इसलोकमेंसिद्ध बातको त्यागकर कोई नहीं जीसक्ता, तुलाधार बोला कि हे जाजली ब्राह्मण मैं हिंसा रहित जीविकाको कहताहूं मैं यज्ञादिकी निन्दा नहीं करताहूं और नास्तिक नहीं हूं वह यज्ञ नारायण विष्णु जानना कठिन है, ब्रह्म सम्बन्धी यज्ञके और यज्ञकेदाता पुरुषोंको भी नमस्कार है ब्राह्मण अपने योग रूप यज्ञ को त्यागकरके क्षत्रियों के यज्ञमें ज्योतिष्टोमादि में प्रवृत्तहुये हे ब्रह्मन् वेद वचनोंको न जानके लोभी और धन में प्रवृत्त चित्त नास्तिक मनुष्योंसे वह हिंसात्मकयज्ञ जारी कियागया वह ऐसा है कि जैसे भीतर से मिथ्या और प्रत्यक्षमें सत्यता विदितहो, तात्पर्य यह है कि विश्वास के लिये वेद में प्रशंसाके वचन कहे गये कारणयहहै कि जो ज्ञानका अधिकारी नहीं है उसके

लिये प्रशंसाकर्म्म फलदायीहै क्योंकि कर्मकेद्वारा चित्तकी शुद्धिहोनेसे ज्ञान भी प्राप्त होजाताहै यहदेनायोग्यहै या अयोग्यहै ऐसायज्ञ प्रशंसाके योग्यहै इसीकारण हे जाजली विपरीत दक्षिणासे लोभी यजमानको चोरीका अपराध होताहै और अशुभकर्म्म उत्पन्नहोतेहैं, इस प्रकारसे क्षत्री यज्ञकी निन्दा करके ब्राह्मण यज्ञके स्वरूपको कहते हैं कि जब उत्तमकर्म से प्राप्तहोनेवाला हव्य तय्यारहुआ उस तीनप्रकारके हव्यसे देवता तृप्त होतेहैं, प्रथम नमस्कार रूप द्वितीयजप और वेदपाठ रूप तृतीयऔषधीरूप हव्यसे देवताओंकी पूजा होती है यथा ज्योतिष्ठोमादि यज्ञकरने और कुयें बावली बाग आदि के बनवाने से साधु पुरुषों की सन्तान भी लोभादि अवगुण युक्त उत्पन्न होती है, क्योंकि लोभियों से लोभी उत्पन्नहोते हैं और रागद्वेष रहित पुरुषोंकी सन्तान समदर्शी होतीहै यजमान और ऋत्विज अपने को इच्छावान् वा अनिच्छावान् देखते हैं उसीप्रकारकी उनकी सन्तानभी होती है यज्ञ से ऐसी सन्तान पैदाहोती है जैसे कि आकाशसे निर्मलजल उत्पन्नहोताहै अब इसका अभिप्राय लिखते हैं अर्थात् हे ब्राह्मण अग्निमें होमीहुई आहुति सूर्य्य के समीप जाती है सूर्य्य से वर्षा होती है वर्षा से अन्न और अन्न से सन्तान उत्पन्नहोती हैं, इस अनिच्छावान् यज्ञमें निष्ठावान् प्राचीन वृद्धोंने सब मनोरथों को प्राप्त किया और संसारका उपकार चाहनेसे पृथ्वी बिना परिश्रम उर्व्वराहोकर सब पदार्थोंकी उत्पन्न करनेवाली हुई उसीसे वीरुधिनाम लताहुईहैं, वह पुरुष आत्मयज्ञों में कुछ फलको नहीं देखते हैं और कभी यज्ञका फल जानके सन्देह युक्त पूजन करते हैं वह लोग असाधु धूर्त्त लोभी और धनकी इच्छावाले उत्पन्न होते हैं और पाप कर्मोंसे नरकको जाते हैं १४ और हे विप्रवर्य्य जो लोग वेद के प्रमाणको बुद्धिके वादसे अशुभ करते हैं वह इसलोक में सदैव पापात्मा और अज्ञानीहैं अर्थात्मोक्षके निमित्तज्ञान के अधिकारपर नहींचढ़ते हैं, इस प्रकार तीनश्लोकों से निष्फल कर्म्मकी प्रशंसाओर धूर्त्तकुतर्कियोंकी निन्दा करके अवज्ञानियों की दशाको कहतेहैं—करने के योग्य कर्म्मकरना योग्य है क्योंकि वहनिश्चय वेदनिष्ठ कर्म्म है उसके न करनेसे ब्राह्मण भयकरताहै फिर वह आत्मामें कर्तृत्त्व भावको नहीं जानता है क्योंकि लोक में ऋत्विज हव्य, मंत्र अग्नि इत्यादि रूपोंसे ब्रह्महीं वर्त्तमानहै जो इसबातको जानता है वही ब्राह्मण है, इस प्रकार के ज्ञानी ब्राह्मण में कोई अंगरहित भी कर्मउत्तम है यहवेद से निश्चय सुन ते हैं और आत्म ध्यान के कारण से उसज्ञानकि कर्ममें सब भ्रष्टजीव कुत्ता शूकर आदिका स्पर्शहोनाभी अशुभ नहीं है परन्तु फलकी इच्छामें प्रायश्चित्तहै, इसप्रकार ज्ञानी के यज्ञ कर्म की प्रशंसा करके दूसरे प्रकार के यज्ञों को भी कहते हैं कि सत्यता और शांतचित्तता से यज्ञ

करनेवाले परम पुरुषार्थके लोभी धन और विषयोंमें तृप्त अर्थात् वैराग्यवान् मत्सरता रहित सब मनुष्य प्राप्त वस्तुओं के त्यागी क्षेत्र और क्षेत्रज्ञके ज्ञाता तत्त्वज्ञ योगनिष्ठ प्रणवका जप करनेवाले पुरुष दूसरों को भी तृप्त करते हैं, वह प्रणवरूप ब्रह्म सब देवताओंका आत्मरूप ब्रह्मज्ञानी में नियत होता है हे जाजली उसब्रह्मज्ञानी के तृप्त होनेपर विराटरूप के अंगसंबंधी देवता तृप्तहोते हैं, जैसे कि सबरसों से तृप्तमनुष्य किसीवस्तु को देखकर प्रसन्न नहींहोता इसी प्रकार पूर्णज्ञानसे तृप्तहोना भी सदैव को सुखकारी है, हमलोग धर्म के आश्रित सुख माननेवाले स्वामीकी आज्ञाका निश्चय करनेवाले हैं हमारे विचार से बुद्धि में चिदाभास सूत्रात्मा रूपप्राण विश्वव्यापक होने से बड़ा है उस से भी प्राणआदिका उत्पत्तिस्थान भूतात्मावड़ाहै ज्ञानी इसको विचारता है, शास्त्र से उत्पन्नज्ञान और अनुभव के रखनेवाले और संसारसे पारहोने के इच्छावान् सात्त्विकी पुरुषउस ब्रह्मलोक को पाते हैं जोकि पवित्र पुण्य दायक उत्तम कुलवान् पुरुषोंसेप्राप्तहोने के योग्यशोकपीड़ा से रहितहैं वहांसे फिर अधोगति नहींपाते हैं वह स्वर्गको नहींजाते हैं और वेद अथवा धनसे होने वाले यज्ञों को नहीं करते हैं सत्पुरुषों के मार्गपरचलते हैं और अहिंसायुक्त यज्ञोंकोकरते हैं, उन्होंने बनस्पति औषधी फल मूलकोही जानाहै उनको धन चाहनेवाले लोभीऋत्विज यज्ञनहीं कराते हैं, फिर कर्मको पूरा करनेवाले संकल्पसे आत्मारूप यज्ञ सामग्री बिचार करनेवाले उन ब्राह्मणों ने संसार के उपकारकी इच्छासे मानसी यज्ञों कोही किया है, इसीकारण लोभी ऋत्विज उनके यज्ञनहीं कराते किन्तु धन के लोभसे अयोग्यों को यज्ञकराते हैं, और अन्य साधुओंने अपने धर्मके करनेसे भी प्रजाको स्वर्गमेंपहुंचायाहै आशय यहहै कि साधुलोग अपने धर्मसे दूसरोंका भी भलाकरते हैं, इसकारण मेरी बुद्धि सर्वत्र एकसी बर्त्तमानहै, हेमहामुनि इसलोक में ज्ञानी ब्राह्मण देवयज्ञ पितृयज्ञकेद्वारा जिनदेवयान पितृयान मार्ग से जातेहैं चाहैं वहदोनों देवयान मार्गसेही जातेहैं तो भी उनमें धौमआदि मार्ग से जानेवालेका पुनरागमन होता है और ऋचीक आदि ज्ञानी के मार्गसे जानेवालेका आवागमन नहीं होताहै ३१ सत्यसंकल्प ज्ञानियोंके ऐश्वर्य्यको कहतेहैं—इनज्ञानीपुरुषों के चित्त की संकल्पसिद्धि से बैलआप सवारी में जोड़कर लेजातेहैं और गौ आपदूध देतीहैं औरवह आपही संकल्प से यज्ञकुम्भको नियतकरके पूरी दक्षिणावाले यज्ञोंसे पूजन करते हैं, जो इसप्रकार योगके अभ्यास से शुद्धचित्तहोता है वह मधुपर्कमें गोहिंसाकरनेको योग्यहै, वह अज्ञानीलोग इसप्रकार से औषधियों से भी यज्ञनहींकरते इसीहेतुसे तर्कना पूर्वक ऐसे प्रकारका वर्णन तुमसे करताहूं, और मिलेहुये संन्यासीके लक्षणको भी कहताहूं देवतालोग उसीको ब्राह्मण

जानते हैं जो कि अनिच्छा से कर्मका प्रारम्भ करनेवाला नमस्कार, स्तुति आदि से पृथक् अधिकार से न डिगनेवाला और कर्मरहितहो, हे जाजली शास्त्र सुनता न सुनाता यज्ञ न करता और ब्राह्मणों को दान न देता इच्छानुसार जीविका चाहनेवाला पुरुष किसीगति को नहींपाता है, इसलक्षणको देवताके समान सेवन करके बुद्धिके अनुसार परमात्मा को प्राप्तकरे, जाजली ने कहा कि हे वैश्य हमने इस आत्मयज्ञ करनेवाले पुरुषोंकी इस गुप्तवार्त्ताको नहींसुनाहै यहकठिन बातहै इससे तुमसे पूछताहूं कि पहिले पुरुष इसयोगधर्म्म के विचार करनेवाले नहींहुये और विचारवान् ऋषियोंने भी इस परम धर्म्मको लोकमें जारी नहीं किया हे वैश्य जो आत्मारूप भूमिपर अज्ञानीलोग मानसी यज्ञको प्राप्तनहींकरे तो वह किसकर्म्म से सुखको प्राप्तहों हेज्ञानीमैं तेरे बचनोंपर विश्वास करताहूं इसको मुझे समझाकरकहो, तुलाधार बोला कि इनधूर्तों के यज्ञभी श्रद्धारहित होकर नष्टरूपहोते हैं वहकहींभीयज्ञके योग्यनहींहोते गोघृत, दूधदही मुख्यकरपूर्णाहुतीसे यज्ञको पूर्णकरताहै और जो उसवेदोक्त यज्ञके करनेमें समर्थ नहीं हैं उनको पुच्छशृंग,चरणआदिसे पोषणकरतेहैं अर्थात् गौकी पूछपर पितृ तर्पणकरनेसे और जलसे सींगको धोकर स्नानकरनेसे और चरणों की रजसे पापोंका दूरहोना और परलोककी प्राप्तिस्मृतियोंमें वर्णनकी है,बिना स्त्री के वेदोक्त यज्ञ कैसेहोताहै उसको सुनो कि हिंसारहित बुद्धियुक्त घृतादिक द्रव्योंको देवार्पणकर श्रद्धारूप स्त्रीको करता है यज्ञको देवताके समान सेवन करके सर्वव्यापी विष्णु ब्रह्मको प्राप्तकरै, सब पशुओंमें पुरोडासनाम हव्य पवित्र कहाजाताहै अर्थात् पशुयज्ञ निन्दितहै सत्यनदी सरस्वती है और सब पर्वत पवित्रहैं और आत्मातीर्थ है अर्थात् जहां आत्मयज्ञ है वहांसब तीर्थ हैं इस प्रकारके इनधर्म्मों को करता और कारणोंसमेत धर्म्मको चाहता वहपुरुष शुभलोकों को पाताहै, भीष्मजी बोले कि वह तुलाधार युक्तिसे मिला सदैव सत्पुरुषोंसे सेवित इसप्रकारके इनधर्म्मोंकी प्रशंसा करताथा ४५ ॥

इति श्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेनवातितमोऽध्यायः ९० ॥

इक्यानबेवां अध्याय ॥

तुलाधारने कहा कि सत्पुरुषों से वा असत्पुरुषों से सेवित मार्गको प्रत्यक्ष कर इसपर चलोगे तब इसकी यथार्थताको जानोगे और यह बाजआदि अनेकपक्षी जो तेरे शिरपर उत्पन्नहुये चारोंओर को घूमते हैं और प्रत्येकस्थान पर घोसलोंमें बैठेहैं इन पक्षियों को फिर बुलाकर हाथ पैर सकोड़कर देहमें चिपटे हुये देखो कि यह तेरेपोषण किये हुये पक्षी तुझ पितारूप से प्रीतिभी करतेहों तो निस्संदेह तुम पिताहो अपने बेटोंको बुलाओ तब उस जाजलीके

भुलायेहुये पक्षियोंने धर्म्म वचनोंसे कहा, कि जिसका प्रारम्भ हिंसासे रहित है वह कियाहुआ कर्मफल इस लोक और परलोक में मिलता है और हिंसा विश्वासघातनी है वह घायल विश्वास उस विश्वासघातनी को मारता है, हानि लाभमें समान जितेन्द्री श्रद्धावान् शान्तचित्त यज्ञकरनेवाले पुरुषोंका यज्ञ प्राप्तहोता है आशय यहहै कि कर्त्तापन और कर्मफलसे पृथक्होतेहैं, अब श्रद्धाकी प्रशंसा सुनो हे ब्राह्मण यह श्रद्धा प्रकाशरूप चैतन्य आत्मासे सम्बन्ध रखनेवाली है और सूर्य्य समान प्रकाशित सतोगुणकी पुत्री है वही पोषणकरनेवाली है और अत्यन्त पवित्र योनिकी देनेवाली है इसीहेतु मन वाणीसे परे है अर्थात् जप दानसे उत्पन्न धर्म्म से श्रद्धा श्रेष्ठहै, हे भरतवंशी वह श्रद्धा उस मंत्रको जो कि स्वर वर्ण से अशुद्ध उच्चारणहोनेसे नष्ट होताहै रक्षा करती है और श्रद्धा से नाशवान् मनवाणी यज्ञआदिसे रक्षा नहीं किये जासक्ते हैं इस स्थानपर ब्रह्माजीके कहे हुए इतिहासको कहताहूं ६ जो पुरुष पवित्रहैं परंतु श्रद्धावान् नहीं है और जो श्रद्धावान्है परंतु पवित्र नहीं है यज्ञ कर्म में देवताओं ने उन दोनोंके धनको समान कहाहै कृपण, वेदपाठी,दान का बड़ा देनेवाला, अनाजका बेचनेवाला इन सबके अन्नों को देवताओं ने समान कहाथा परंतु प्रजापति ब्रह्माजीने उनकेविचारको असिद्ध किया और कहा कि यह तुम्हारा विचार विपरीतहै, बड़े दानके अभ्यासी पुरुषका अन्न श्रद्धासे पवित्रहै और श्रद्धारहितका अन्न नष्टप्रायहै इससे दानीका अन्न भोजन करने के योग्यहै और कृपण वा अनाज बेचनेवालेका नष्टहै, श्रद्धारहित पुरुष देवताओंको हव्यभेटकरनेके योग्य नहींहै उसका अन्नभोजनकरना अनुचितहै यहधर्मज्ञोंका उपदेशहै,श्रद्धारहितहोना महापापहै श्रद्धामहापातकों को नाश करतीहै और श्रद्धावान्पुरुष ऐसे पाप मुक्तहोताहै जैसे कि कांचली को सर्प त्यागदेताहै, जो निवृत्ति श्रद्धायुक्तहै वह सब पवित्रगुणोंमें उत्तम है जिसके स्वभाव से दोष दूर होगये और श्रद्धावान् है वही पवित्रहै, तपसे उस को कुछ प्रयोजन नहीं है और व्रत और आत्मासे भी क्या प्रयोजन यहपुरुष श्रद्धारूपहै सात्त्विकी राजसी तामसी इनमेंसे जैसी जिसकी श्रद्धाहै वही उस का रूपभी है, धर्मार्थके देखनेवाले सत्पुरुषों ने इस धर्म को अच्छे प्रकार से कहाहै उस धर्म के जाननेकी इच्छावाले हमलोगोंने धर्म्म दर्शननाम मुनिसे धर्म्मको पाया, हे महाज्ञानी इस में श्रद्धा करो इसी से परब्रह्म को पावेगा हे जाजली श्रद्धावान् वेदवचनपर श्रद्धा करनेवाला धर्मात्मा और अपने मार्गमें नियत पुरुष श्रेष्ठतम है, तदनन्तर थोड़ेही कालमें वह दोनों बड़ेज्ञानी अर्थात् तुलाधार और जाजली हृदयाकाश ब्रह्मको पाकर सुखपूर्वक विहार करनेलगे अर्थात् योगऐश्वर्य से क्रीड़ा कियेहुये अपने कर्मसे प्राप्त अपने २

देशको पाकर ब्रह्मके ध्यानमें तत्परहुये, अनेकअर्थों का देनेवाला तुलाधार का यहवचन है हेयुधिष्ठिर इसजाजलीने उसमहाज्ञानी तुलाधारके वचनों से शांतिपाई इसवृत्तान्तको तुमने सुना अब और क्यासुनना चाहतेहौ २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेएकोत्तरनवतितमोऽध्यायः ९१ ॥

बानबेवां अध्याय ॥

अब हिन्सात्मक धर्म्मकी निन्दाकरनेको भीष्मजी बोले कि इसस्थानपर इसप्राचीन इतिहासको कहते हैं जिसको प्रजाओं के उपकारार्थ राजा विचख्युने कहाहै, गवालम्भननाम यज्ञमें वृद्धदेहवाले बैलको देखकर और गौओं के बड़े विलापको सुनकर यज्ञशालामें नियत निर्दयी ब्राह्मणोंके देखतेहुये उसराजाने यहवचन कहा कि लोकों में गौओं के निमित्त कल्याणहो उसके पीछे यहवचन निश्चय किया कि हिन्सात्मकयज्ञ क्षत्रियोंका है ब्राह्मणों का दूसरायज्ञहै इसमर्यादसे पृथक् होनेवाले अज्ञानी नास्तिक संशययुक्त चित्त यज्ञसेही कीर्त्तिचाहनेवाले मनुष्योंकी ओरसे यह हिन्सात्मक उपदेश किया गयाहै, धर्म्मात्मा मनुजीने सब कर्म्मों में अहिंसाहीको उत्तम कहाहै मनुष्य, अपनी इच्छासे वेदसे बाहर पशुओंको मारतेहैं आशय यहहै कि हिन्सात्मक कर्म्म अज्ञानियोंके हैं क्योंकि वह फलकी इच्छारखतेहैं और जब उनको ज्ञान के कारण अनिच्छा होतीहै तब हिन्सात्मक कर्म्मकी उत्पन्न करनेवाली श्रुति अपने अर्थके प्रकाशसे उसको मोक्षमार्ग में नियत करतीहैं, इसीकारण ज्ञानी पुरुपको वह सूक्ष्मधर्म्म प्रमाण के साथ करनाचाहिये, सब जीवमात्रमें अहिंसाधर्म्म सब धर्म्मोंसे उत्तम मानागयाहै, कुटुम्बीकी पांचहत्या निवृत्त न होने से कैसे अहिंसा होसक्ती है इसको कहते हैं कि गांवके सन्मुख निवास करके तेजव्रतवाला होकर और देवतासे प्रत्यक्ष श्रुतियोंके फलको त्यागकरके गृहस्थियोंके आचारसे रहित होजाय क्योंकि नीचपुरुष ऐसे होते हैं कि उनका कर्म्मफल कर्म्म में प्रवृत्तहोनेका कारणहोताहै, जो आदमी यज्ञविटप और यज्ञ कुम्भोंको नियतकरके निरर्थक मांसों को खाते हैं इसधर्म्मकी प्रशंसा नहीं कीजातीहै, मदिरा, मांस, मत्स्य, मधु, आसव कृसरोदन यहसब धूर्त्तोंने प्रवृत्त कियाहै श्रेष्ठलोगोंमें इसकी प्रवृत्ति नहींहै न वेदोंमें इसकी विधिहै, मान मोह लोभसे यहइच्छा कल्पनाकी गई है ब्राह्मण सब यज्ञों में विष्णुकोही पूजनके योग्य मानतेहैं और उनका पूजन चन्दन पुष्पोंसे कहाहै और वेदोंमें जोयज्ञ के योग्य वृक्ष विचार कियेगयेहैं वह सब अत्यन्त पवित्र बुद्धिमान् शुद्धचित्त पुरुषोंने नियत किये हैं और सब वस्तुओं से देवताकाभी पूजनहै, युधिष्ठिर बोले कि देह और आपत्ति यहदोनों भी परस्परमें विरोधी हैं अर्थात् आपत्ति

तो देहको सुखाती है और देह आपत्तिका नाश चहतीहै फिर हिंसासे पृथक् और प्रारम्भ कर्म्म करनेवाले देहका निर्वाह कैसे होसक्ताहै, भीष्मजी बोले कि जैसे देहको पीड़ा न हो और मृत्युके वशमें न पड़े वैसेही कर्म्म में प्रवृत्त होकर सामर्थ्यके अनुसार धर्म्मको करे १४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेद्विनवतितमोऽध्यायः ९२ ॥

तिरानबेवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह करनेके योग्य कर्मकी परीक्षा जल्दी या देर में किसप्रकारसे करे, भीष्मजी बोले कि इसस्थानपर इस प्राचीनइतिहासको कहताहूं जिसमें अंगिराऋषिके कुल में उत्पन्न होनेवाले चिरकारी नाम ब्राह्मणका प्राचीनइतिहासहै, हेचिरकारी तेराकल्याणहो हे विलम्बसे कर्म्मकर्त्ता तेराभलाहो क्योंकि विलम्बसे करनेवाला बुद्धिमान् पुरुषकर्म्मोंमें अपराधनहीं करताहै, बड़ाज्ञानी चिरकारिनाम ब्राह्मण गौतम ऋषिकापुत्रथा वहसबकामों को विचार पूर्वक बिलम्बसे करताथा और अर्थसिद्धिको प्राप्तहोताथा वहदेरमें ही अर्थोंको बिचारता और देरमेंही जागता देरमेंही करने के योग्य कर्म्मोंको जानताथा इसकारण से उसका नाम चिरकारी कहाजाता है, अल्पबुद्धि और अदूरदर्शी मनुष्य उसचिरकारीको सुस्त और निर्बुद्धी कहतेथे, किसी समय उसके पिताने क्रोधयुक्त होकर दूसरे पुत्रोंको त्यागकर इससेही कहा कि तुम अपनी माताको मारो यह कहकर वह महातपस्वी गौतम जपनिष्ठ बिना बिचार किये बनकोही चलेगये उसचिरकारीने अपने स्वभाव के अनुसार देरमें स्वीकार कर बिलम्बसे कर्म्म करने के अभ्यास से विचारकर बड़ी चिन्ताकी कि कैसे पिताकी आज्ञाकरूं और कैसे माताको न मारूं और कैसे नीचके समान इसधर्म्मसंकटमें न डूबूं पिताकी आज्ञामानना सर्वोपरिहै और माताकी रक्षाकरना अपना धर्म्म है इससे अब पुत्ररूपी अस्वतन्त्रता मुझको महापीड़ा देरही है स्त्रीको और मुख्यकरमाताको मारकर कौन सुखीहोता है और पिताकी आज्ञाको भंगकरके कौन प्रतिष्ठा को पाताहै, पिताका आज्ञाकारी होना योग्य है और माताकी रक्षाकरना भी योग्य है यह दोनों योग्य कर्म्मोंके सहनेवालेहैं मैं किसमार्गसे उनकी आज्ञाभंगआदि नहींकरूं, पिता अपनेको गर्भमें प्रवेश करता है अर्थात् नियत करता है और मातामें शील चरित्र गोत्रकुलसमेत उत्पन्नहोताहै फिर मैं आप माता पिताकी ओरसे पुत्रत्वके अधिकार पर नियत किया गया मुझको अज्ञान कैसे नहींहोय दोनों अपनी उत्पत्तिकाहेतु मानताहूं, पिताने जोजातकर्म्ममें आशीर्वाद दिये और दूसरे कर्म्मोंमें जपादिक किये पिता, गुरु धर्म्मरूप पोषण और शिक्षा रूपी

गुणोंसे संयुक्तहैं जो पिताने कहा वहीधर्म्महै उसीको वेदों नेभी उत्तमकहाहै, पुत्र केवल पिताकी प्रसन्नताका कारणहै और पिता बेटेका सर्वस्व है अकेला पिता देनेके योग्य देह आदिको देताहै इसकारण पिताका बचनमानना उचितहै इसमें कुछविचार न करना चाहिये, पिताकी आज्ञामाननेवाले पुरुषोंके पातकभी दूरहोजाते हैं, वस्त्र भोजनादि वस्तुवेदशिक्षा लौकिक शिक्षा और गर्भाधानसे सीमन्त आदिकर्म्मोंके संस्कार होनेमेंभी पिताही कारणहै, पिता ही धर्म्म और स्वर्ग है पिताही तप और पिताहीके प्रसन्नहोनेमें सब देवता प्रसन्नहोतेहैं, पिताने जो आशीर्वाद जिह्वासे दिये वह इसपुरुषको सेवनकरते हैं जबपिताप्रसन्न होताहै तब सबपापोंका प्रायश्चित्त होजाताहै, फूल बन्धन से छूटजाता है और फल वृक्षसे गिरपड़ता है परन्तु दुःख पानेवाला पिता पुत्रके स्नेह बन्धन से पुत्र को कभी नहीं छोड़ता है, यह पुत्रकी बिचारी हुई पिता की प्रतिष्ठा है और सर्वोत्तम स्थानहै, अबमैं माताका विचार करताहूं, मेरे नररूप होनेमें जो यहनीच आज्ञाभंग संबंधी समूहहै जैसे अग्निका उत्पत्तिस्थान अरनीकाष्ठ है इसीप्रकार इस समूहका उत्पत्ति स्थान मेरीमाता है मातापुरुषों के देहोंकी अरनीहै और सब दुःखी पुत्रआदिको सुखदेनेवाली है माताके वर्त्तमान होनेमें सनाथता नियत है और माता न होनेमें अनाथता होतीहै, निर्द्धन मनुष्यभी माता यह शब्द कहके घरमें जाकर शोकसे रहित होता है और माता के होने में इसको बृद्धावस्था भी पीड़ित नहींकरती है, जो पुत्रादि युक्त भी माताके शरणमें है वह सौबर्ष के अंतमें भी दोबर्षकी अवस्थाके समान आनन्दसे विचरता है, माता समर्थ असमर्थ दुर्बल स्थूल चाहे जैसापुत्रहो उनकी रक्षाकरती है ऐसीरक्षा उसबुद्धिसे अन्य मनुष्यनहीं करसक्ता, जब पुरुषमातासे पृथक् होता है तबहीं बृद्धहोकर दुःख को पाता है और संसार उसकी दृष्टिमें नष्टसा मालूम होता है, माताके समानछाया नहीं माताके समान गति नहीं माताके समान रक्षा स्थान नहीं, माताके समान कोई प्यारानहीं, उदरमें धारणकरनेसे धात्री और उत्पन्न करनेसे जननी और अंगोंकी वृद्धिकरनेसे अंबा और वीरपुत्र उत्पन्न करनेसे बीरसूकहाती है, बालकका पोषणकरने से स्वसूहै यह माता प्रत्यक्ष देहहै वहज्ञानी मनुष्य इस को नहीं मारताहै जिसका शिर कटुतूमरके समाननहींहै सत्संगकेसमय स्त्री पुरुष दोनों यही मनाते हैं कि हमारे पुत्र स्वरूपवान् और दीर्घायुहों परन्तु जीवों का प्रयोजन मातामें नियतहै जो गोत्र है उसको माता जानतीहै और जिसका पुत्रहै उसको भी माताही जानतीहै, गर्भ में धारण करने से माता की प्रीति और शुभ करना चाहिये और पुत्र पिताकी सन्तानहैं तात्पर्य्य यह है कि माता पिता दोनों की आज्ञा मानना अवश्यहै जो पुरुष आप प्रतिज्ञा

पूर्वक पाणिग्रहण करके और साथ में धर्मको पाकर दूसरी स्त्रियोंके पासजावेंगे वह पूजन और प्रतिष्ठाके योग्य नहीं हैं, तात्पर्य्य यहहै कि मेरा पिता पतिव्रताका स्वामीहै इससेपूजनके योग्यहै, फिरपिताकी आज्ञासेमाताको मारना चाहिये यह शंका करके कहतेहैं कि स्त्री के पोषण करनेसे भर्त्ता और पालन करने से पति कहाजाताहै इस गुण के न होनेसे न भर्त्ता है न पतिहै तात्पर्य यह हुआ कि भार्या के मारने का इच्छावान् और पोषण रक्षणादि गुण से पृथक् इस पिता की आज्ञासे माताको नहीं मारूंगा, कुचालनी स्त्री मारने के योग्यहै नहीं तो कुल में संकर होताहै यह शंका करके कहतेहैं कि स्त्री इस प्रकारसे भी अपराध रहितहै पुरुषही अपराध कर्त्ता है पुरुषही परस्त्री गमनादि बड़े २ दोषों को करताहै, ऐसे पुरुषके साथ आनन्द मानने से स्त्री का भी अपराधहै यह शंका करके कहते हैं कि स्त्री का परम देवता दैवत कहाहै उस के शरीर के समान इन्द्रको जानकर और देखकर अपना श्रेष्ठ अंग देदिया तात्पर्य्य यह है कि अपने भर्त्ताके रूपके समान अन्य मनुष्यको अपना भर्त्ता जानकर अपना देह देनेवाली मेरी माताका व्यभिचार दोष नहीं है, गर्भ से उत्पन्न कुल संकरके न होने से यह मारने के योग्य नहीं है, स्त्रियों का अपराध नहीं है पुरुषही अपराध कर्त्ताहै सबबातोंमें पतिके स्वतन्त्र होनेसे जबरदस्ती से होनेवाले व्यभिचार आदिमें स्त्रियां अपराध नहीं करतीहैं कामदेव को स्त्री में लगानेवाले इन्द्रकाही प्रत्यक्ष दोषहै मेरी माताकानहींहै यहनिस्संदेह बातहै आशय यहहै कि इन्द्रके अपराधसे माताका मरना न्याय विरुद्धहै इसप्रकार अज्ञानी पशुओं ने भी स्त्री को और पतिव्रता माताको मारने के अयोग्य समझाहै, एकही स्त्री के पास नियत पिताको देवताओं का समूह समझा है अर्थात् पिताके प्रसन्न करनेसे स्वर्ग की प्राप्ति है और देव मनुष्यों का समूह प्रीति से माताको प्राप्त होताहै अर्थात् माता दोनों लोकों की देने वाली और इस लोकमें पोषण करनेवालीहै अभ्यास और विलम्बसे करने के कारण बहुतविचार करतेहुये उसको बहुत समय व्यतीतहोगया और उनका पिता भी आपहुंचा, बड़ेज्ञानी तपनिष्ठ मेधातिथि नाम गौतम स्त्रीके अयोग्य मरणको विचारकर अत्यन्त दुःखित अश्रुपात डालतेहुये बोले और शास्त्रयुक्त धैर्य से शान्त हुये और पश्चात्ताप करने लगे कि तीनों लोक का ईश्वर इन्द्र ब्राह्मण रूपधारी अतिथिरूपी व्रतमें नियत होकर मेरे आश्रम में आया वह मेरे वचनोंसे विश्वासित कियागया और कुशलक्षेम पूंछकर पूजन किया गया और न्याय के अनुसार मैंने अर्घपाद्य भी प्राप्त किया और मैं आप से सनाथहुआ यहवचनभी कहागया, इस निमित्त कि वह इसवचनसे तृप्तहोकर मुझपर प्रीति करेगा इस विचार में कामी इन्द्रकी ओरसे स्त्री दोष उत्पन्न होने

से स्त्री की वे मर्यादगी नहीं है, इसप्रकार स्त्री समेत मैं और स्वर्गमार्गगामी देवेश्वर इन्द्रअपराधी नहींहैं योगधर्ममें जोअसावधानीहै वही अपराधकरती है, दुःखको अधैर्य से उत्पन्न होनेवालाकहाहै इसीकारण मुनि लोग ऊर्द्धरेता होतेहैं मैं अपने अधैर्य से अपमान युक्त हुआहूं और कुकर्मरूपी समुद्रमें डूबा हुआहूं, पतिव्रता स्त्री गर्भ का स्थान होने से और पोषण करनेके हेतु भार्या नामसे प्रसिद्ध है उसको मारकर मुझको कौन पार उतारेगा, बड़ा बुद्धिमान् चिरकारी जिसको भूलसे मैंने मारनेकी आज्ञादी है वह चिरकारीही मुझको पातक से निवृत्तकरे अर्थात् रक्षाकरे, हेचिरकारी तेराकल्याणहो और भला हो और तुम चिरकारीहो इसकारण कि विलम्बसे कामके करनेवालेहो, मुझ को और अपनी माताको और जो मैंने तप संचय किया है इन सबको और अपनेको पातकसे रक्षाकरो और विलम्बसे कार्यकर्त्ता होना यह गुण तुम में स्वाभाविक है यहतेरागुण तेरी बड़ी बुद्धिसे सफलहो बहुत समयतक मातासे इच्छाकियागया और बड़ेकालतक गर्भमें धारण कियागया हे चिरकारी तुम अपने विलम्बयुक्त कार्य्योंको फल युक्तकरो तेरे विचारसे बहुत कालतक रक्षा कियागया मनुष्यबहुतसमयतक सोताहै इससे हमदोनोंके बड़ेदुःखका विचार करो, हे राजा युधिष्ठिर जब इस प्रकारसे उस गौतम ऋषिने अपने चिरकारी पुत्रको सन्मुख वर्त्तमानदेखा उसकेपीछे बड़ेदुःखी चिरकारीने अपने पिताको देखकर शस्त्रको त्यागके मस्तकसे प्रसन्न करनेकेलिये कर्मको प्रारंभकिया ६० तदनन्तर गौतमनेभी शिरके बलसे पृथ्वीपर गिरेहुये उसपुत्रको और लज्जासे पाषाणरूप उसस्त्रीको देखकर बड़ेहर्षको पाया, आश्रममें नियत उसमहात्माके हाथ से वह स्त्री मारी नहीं गई और मारडालने की आज्ञा पानेवाला पुत्र भी निर्जन स्थानमें चैतन्यरहा अर्थात् माताको नहीं मारा और अपने पिताकी आज्ञामें अनुपस्थित खड्ग हाथ में लिये कार्य में नियत होनेपर और चरणों पर झुकेहुये पुत्रको देखकर पिताका यह सम्मतहुआ कि यह भयसे शस्त्र धारण करने की चपलताको गुप्त करताहै, फिर पिताने कुछ कालतक प्रशंसा करके विलम्बतक मस्तकको सूंघते दोनों भुजाओंसे मिलकर यह बचनकहा कि चिरंजीवीहो, इसप्रकार प्रीतिकी प्रसन्नता सहित उस महाज्ञानी गौतमने पुत्रकी प्रसन्नता के अर्थ फिर यह वचन कहा, कि हे चिरकारी तेराभलाहो विलम्बमें कार्य करनेवाले बहुत समयतक जियो हे सौम्यपुत्र तेरे विलम्ब से आज्ञावर्त्ती होनेसे मुझको दुःखी न होनापड़ा, यह कहकर पुत्रसे इसकथाको कहा जोकि विलम्बसे कार्य्य करनेवाले बुद्धिमान् पुरुषोंके गुणों के विषयमें है देरमें मित्रको पकड़े और बनायेहुये मित्रको विलम्ब से त्यागकरे और देरमें कियेहुये मित्रको विलम्बतक रखना उचित है, वह मनुष्य प्रीति, अहंकार,

शत्रुता, पापकर्म, और करने के योग्य अप्रिय कर्म में प्रशंसा कियाजाता है जो कि चिरकारी अर्थात् विलम्ब से कार्य्य करता है, बान्धव, सुहृद, स्त्री जन नौकर आदि इनसबके गुप्त अपराधों में चिरकारीही प्रशंसा किया जाता है, हे भरतवंशी इसप्रकारसे गौतमजी पुत्रपर प्रसन्नहुये और पुत्र चिरकारी उनसे आनन्दितहुआ, इसी हेतुसे सब पुरुष अपने सब कार्योंको विचारकर विलम्ब तक निश्चय करके बहुतदुखी नहींहोताहै अर्थात् फिर पश्चात्ताप नहींहोताहै, जबकि देरतक क्रोधको धारण करताहै और देरमें उसकर्मको निश्चय करता है ऐसी दशा में पश्चात्ताप पैदा करनेवाला कोई नहीं होता है, देरतक वृद्धोंकी उपासना करे, देरतक सन्मुख बैठकर पूजनकरे, देरतक धर्मका सेवन करे, देरतक धर्मको खोजकरे, देरतक ज्ञानियों के पास बैठे, देरतक श्रेष्ठ पुरुषों का सेवन करे, देरतक चित्तको स्वाधीन करे, तो देरतक प्रतिष्ठाको पाता है धर्म सम्बन्धी वचन कहने वालेभी दूसरे को देरमें उत्तर दें तो देरतक दुःखको नहींपाते हैं, इसके पीछे वहबड़े तपस्वी पुत्र समेत बहुतकालतक उसआश्रम में निवास करके स्वर्ग कोगये ७८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेत्रिनवतितमोऽध्यायः ९३ ॥

चौरानबेवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोलेकि हेसत्पुरुषोंमें श्रेष्ठ पितामह जबहिन्साही धर्महै हिन्साही पापहै तो अपराधियोंके दण्ड देनेवाले राजाको हिन्सा कैसे होगी और बिना दण्ड दिये संसारकी रक्षा कैसे होय और राजाकी रक्षा कैसेकरे और किसको मारे किसीको न मारे यह आपसे पूछताहूं आपसमझाकर कहिये, भीष्मजी बोले कि इस स्थानपर इस प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें द्युमत्सेन और राजासत्यवानका संवादहै, पिताकीआज्ञासे अपराधियोंके मारनेपरउपस्थित होनेपर सत्यवानने यहवचनकहा जिसको कि पूर्व में किसीने नहीं कहाथा, धर्म अधर्मरूपको और अधर्म धर्मरूपको वहांप्राप्तहोताहै जहांपर कि घातनाम ही धर्म होताहै यहनहीं होनेके योग्यहै, द्युमत्सेन बोले कि हे सत्यवान जो न मारनाही धर्म है तो ऐसीदशा में अधर्म कौनहोगा जो चोर न मारेजायँ तो वर्णसंकर होजायँ, यह मेराहै और इसका नहीं है यहबात कलियुग सम्बन्धी वर्तमान होजायँ तीर्थ यात्रा और व्यापारादिक व्यवहार भी मिटजायँ इस विषय में जो आप जानतेहो वह मुझसे कहिये, ६ सत्यवान् बोला कि यह तीनों वर्ण ब्राह्मणों के स्वाधीन करने चाहिये, इन धर्मपाश में बँधेहुये तीनों वरणों के दूसरे अनुलोम प्रतिलोम से पैदा होनेवाले सूत मागध इत्यादि भी इसी प्रकार कर्म्म करेंगे उनमें जो २ पुरुष न्यायके विपरीत हों उनको प्रकट

करदें कि यह मेरी आज्ञाको नहीं सुनते हैं राजा उनको दण्ड देगा, जिस शास्त्र में देहका नाश नहीं कहाहै उसमें प्रवृत्त होना चाहिये सब प्रकारकी बातोंको और शास्त्रके अभिप्रायको बुद्धिके अनुसार न विचारकर हिंसात्मक शास्त्रके अनुसार कर्म्म न करना चाहिये, राजा चोरों को मारता हैं तो उनके साथ उनकी स्त्री माता पिता पुत्र आदि बहुतसे मनुष्य निरपराध मारेजाते हैं इसी कारण किसी से आज्ञाभंग किया हुआ राजा अच्छे प्रकारसे विचार करे, किसी समय साधुओं के सत्संग से असाधु पुरुषभी उत्तम स्वभाव को पाता है और असाधुओं से भी श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न होती है, निर्मूल न करना चाहिये क्योंकि यह सनातन धर्म्म नहीं है, थोड़े मारनेका भी प्रायश्चित्त होता है, भय दिखाना, पकड़ लेना, कुरूप करना इत्यादि बातोंसे दण्डदेना चाहिये और उन भार्य्या पुत्रादि को पुरोहित की सभा में उनके अपराधी स्वामियों को मारकर दुःखी न करना चाहिये जब रक्षाकी इच्छा करके वह चोर पुरोहितके पास जाकर यह कहैं कि हे स्वामी हम फिर इसपाप को नहीं करेंगे तब छोड़देने के योग्य हैं क्योंकि ईश्वर की आज्ञाहै कि दण्ड मृगचर्म का धारण करनेवाला मुण्ड ब्राह्मणभी उपदेश के योग्य है, बड़े आदमी बड़ा अपराधकरें तब बराबर अपराध करनेपर छोड़नेके योग्य नहींहैं, द्युमत्सेन बोले कि प्रजाके लोग जिस जिस मर्य्याद में चलाने सम्भवहों वही धर्म तब तक कहाजाता है जबतक कि वह धर्म्म उल्लंघन नहीं किया जाता है, फिर धर्म्म के विपरीत चलने पर चोरों के न मारने में प्रजा का नाश होजाता है प्राचीनसे प्राचीन समयमें संसार के लोग सासना योग्य होतेथे क्योंकि वह मनुष्य बड़े मृदुस्वभाव सत्यवक्ता शत्रुता, क्रोध आदि साधारण रखते थे उस समयमें धिक्कार दण्ड करनाही महादण्ड समझते थे फिर वचनदण्ड अर्थात् दस्युनाम आदिही दंडनियतहुआ फिर आदानदंड अर्थात् जुर्माना दंडहुआ अब कलियुग में मारनाही बड़ा दण्डहै कोई कोई मनुष्य मारनेसे भी सुमार्ग में चलाने असम्भव हैं, चोर न मनुष्यका है न देव गन्धर्व पितरोंकाहै फिर यहां कौन किसका है कोई किसीका नहींहै यह श्रुति है, वह चोर मृतक के भूषण आदिको लेताहै और पिशाच से ग्रसित मनुष्यके भी वस्त्रादिक हरण करताहै उन निर्बुद्धी और नाशवान चोरों की बुद्धिमें कौन शपथ आदि मर्य्याद को जारीकरे अर्थात् कोई नहीं जारी करसक्ता तात्पर्य्य यह है कि चोरोंकी जातिका कभी विश्वास नहीं है सत्यवान बोला कि जो तुम हिन्सा आदि से उन साधुओं की रक्षा करने को समर्थ नहीं हो तो उसदशामें किस यज्ञके लाभसे उनचोरों के नाशको करतेहो आशय यह है कि वेदकी श्रुति के अनुसार चारों वरण जो कि अपराधी मारने के दण्ड योग्यहों वह यज्ञमें

मारने योग्यहैं क्योंकि वह यज्ञ पशु होकर स्वर्ग को जाते हैं, राजालोग इस प्रकारके चोरों से लज्जा करते हैं इस कारण चोरकर्मी होकर संसार के प्रबन्ध के निमित्त बड़ी तपस्या करते हैं, भयभीत करीहुई प्रजा नेकचलन होती है, राजा अपराधियों को अपनी इच्छानुसार नहीं मारते हैं अर्थात् जो बध के योग्य होता है उसको यज्ञ में मारते हैं और उत्तम कर्म्म सेही प्रजा को भय दिखलाकर शिक्षा करते हैं, ऐसा राजा होने पर सब मनुष्य परम्परा पूर्वक उसके चलन के अनुसार कर्म्म कर्त्ता होते हैं क्योंकि बहुधा मनुष्य अपने गुरू की मर्य्यादा पर चलते हैं जो राजा अपने चित्तको स्वाधीन किये बिना दूसरों को अपने स्वाधीन करना चाहता है मनुष्य उस राजा को जो कि पशुओं के मध्य में इन्द्रियों के स्वाधीन है हँसते हैं, जो मनुष्य कपट और मोह से राजा की कुछ आज्ञा भंगकरे वह सब प्रकार से दण्डके योग्य है वह उसी प्रकार दण्डसे और पाप से निवृत्त होता है, अपराधी को दण्ड देने की इच्छा करनेवाले राजाको पहिले अपना चित्तही स्वाधीन करना योग्यहै और अपराधी के भाई आदि को भी बड़े दण्डों से दण्ड देवे, जिस राज्य में पाप करनेवाला नीच मनुष्य बड़े कष्टको नहीं पाता है वहां निश्चय करके पापी लोगों की वृद्धि होती है और धर्मका नाश होता है, हे तात इसप्रकार दयावान ज्ञानी ब्राह्मणने शिक्षा करी उसी प्रकार विश्वास देनेवाले पूर्व के महात्माओं से भी यही शिक्षा हुई है हे राजा सतयुग में इस भूमण्डलको हिंसारूप दण्ड से भी स्वाधीन कियाहै, अर्थात् धिक्कार करना कठोर वचन कहना जुर्माना लेना बध करना इनमें एकएक दण्डको क्रमसे हरएक युगमें जारी करे इसप्रकार धर्म के तीन चरण त्रेतायुगमें प्राप्तकर द्वापरमें दो चरण से और कलियुग में एक चरण से और कलियुग के वर्त्तमान होनेपर मुख्य समयमें राजाके कुकर्म से धर्मकी सोलहवीं कलाबाकी रहजातीहै, हे सत्यवान फिर हिंसारूप दण्ड देनेसे वर्णसंकर होते हैं, अवस्था सामर्थ्य और समयको निश्चय करके तप रूप दण्ड की आज्ञादे अर्थात् जैसे तप से पाप नष्ट होता है इसी प्रकार अपराधी दण्ड पाने से पवित्र होताहै इसी कारण से तपका अर्थ दण्डहै, जैसे इसलोकमें बड़े धर्मफल अर्थात् ज्ञानको ब्रह्मप्राप्ति के लिये त्याग नहीं करे उसी प्रकारका अहिंसारूप धर्म स्वायम्भूमनुजी ने जीवों के उपकारार्थ वर्णन कियाहै ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे चतुर्नवतितमोऽध्यायः ९४ ॥

पञ्चानबेवां अध्याय ॥

जीवों की अहिंसा से जो छः गुणका कारण योगथा उसको कहा और

हे पितामह जो धर्म दोनों ओरका गुणदायक हो उसको मुझसे कहिये, ऐश्वर्य, ज्ञान, यश, लक्ष्मी, वैराग्य, धर्म यह छः भग नामहैं यहछओं जिसके पासहों और जो जीवों की उत्पत्ति नाश होना, मोक्ष, विद्या, अविद्या, को जानताहै उसको भगवान् कहते हैं १ हे पितामह यह दोनों सन्मुख वर्त्तमान गृहस्थधर्म्म और योग इन में कौनसा कल्याणकारी है, भीष्मजी बोले कि यह दोनों गृहस्थ और योगधर्म बड़े कठिनहैं इनका पूरा करना बड़ा कामहै परन्तु सत्पुरुषों के करने के योग्य और बड़े फल के देनेवालेहैं, मैं इन दोनों के प्रमाणको कहताहूं तुम चित्त लगाकर सुनो कि यह धर्म अर्थके संशयका हरनेवाला प्राचीन इतिहासहै जिसमें कपिलजी का और गौ का सम्बाद है, कि प्राचीन समयमें राजानहुषने सनातन अचल आम्नाय को देखके त्वष्टा के निमित्त मधुपर्क में गो वध करना चाहाथा यह हमने श्रवण कियाहै कि उस समय महाज्ञानी उदारबुद्धि सतोगुणी शान्तचित्त कपिलजीने इसप्रकार से मारने को आगे की हुई गौ को देखकर अकस्मात् यह वचन कहा कि हे वेदो तुमको धन्यहै, स्यूमरश्मि नाम ऋषिने उस गौ में प्रवेश होकर कपिल यती से यह कहा कि बड़ा आश्चर्य्य है कि वेदनिन्दित मानेगये तो अब हिंसारहित धर्म ज्ञानका निश्चय किससे कियाजाय, तपस्वीलोग उस सदैव ज्ञानरूप परमेश्वर के कहेहुये वेदको अत्यन्त आर्ष मानते हैं वह तपस्वी अत्यन्त ज्ञानी विज्ञान शास्त्ररूप नेत्र रखनेवालेहैं और ईश्वरका कहाहुआ वचन मिथ्या नहीं होसक्ताहै, कपिलजी बोले कि मैं वेदोंकी निन्दा नहीं करताहूं और धर्म के विपरीत भी कभी न कहूंगा जुदे२ आश्रमोंके कर्म एकही प्रयोजनवाले हैं, संन्यासी वाणप्रस्थ ब्रह्मचारी गृहस्थ यह सब परमपदको पातेहैं यह चारों सनातनमार्ग आत्माको प्राप्तकरनेवाले मानेहैं उनमें न्यूनाधिकता और एकसे एककी श्रेष्ठता दिखलाने के निमित्त यह कहाहै कि संन्यासी मोक्ष को, वाणप्रस्थ ब्रह्मलोकको, गृहस्थी स्वर्गलोक को, और ब्रह्मचारी ऋषि लोकको पाताहै, इसप्रकार जानकर सब स्वर्ग आदि अर्थोंके निमित्त यज्ञ आदिको प्रारम्भ करे यही वेदका मतहै इससे भिन्न कर्म्मोंका प्रारम्भ न करे यह निष्ठावान् श्रुति भी कहीं कहीं सुनीजाती है, कर्म्म के प्रारम्भ न करने में दोष नहीं होता है और कर्म्म के प्रारम्भ में बड़ा दोषहै इसप्रकार के नियत शास्त्रों मे प्रधानता अप्रधानता जानना कठिन है, जो यहां कोईशास्त्र प्रत्यक्ष फलवाला और अहिन्सासे श्रेष्ठतम वेदशास्त्रसे विशेष है और आप उसको अनुभव से देखतेहोंय तो कहिये, स्यूमरश्मिऋषि बोले कि यह स्मृति है कि स्वर्ग कामनावाला सदैव यज्ञकरे इसमें प्रथम फलका संकल्प करके यज्ञरचाया जाताहै १८ बकरा, घोड़ा, मेढ़ा, गौ और पक्षियोंके समूह आदिका भोजन

गावँ और वनकी औषधी है इसीसे इनके प्राणों की रक्षाहोतीहै यह श्रुति है इसीप्रकार प्रतिदिन प्रातःकाल सायंकाल अन्न नरोंके अर्पणहोता है पशु और धान्य यज्ञके अंगहैं यहभी श्रुतिहै इनको ब्रह्माजीने यज्ञोंके साथही उत्पन्न करके यज्ञसे देवताओंको पूजा २१ इसके सबजीव जो कि सातप्रकारकेहैं परस्पर में एकसे एकसेएक उत्तमहैं उसउत्तम नाम विश्वरूप पुरुषको यज्ञों में लया-दिक करनेके लिये संस्कारसे संयुक्तकिया अर्थात् गौ, बकरा, मेढ़ा, मनुष्य, घोड़ा, खिच्चर, गधा यह गांवके पशुहैं और सिंह, व्याघ्र, वराह, भैंसा, हाथी रीछ, हिरन यहसात वनकेपशुहैं सबके पूर्वमें विष्णु और फिर ब्रह्माआदिने यह यज्ञका उपदेश कियाहै मुझसे बकरा घोड़ा आदिका मारना संभवहै इसबात को जानकर कौन पुरुष प्राणियोंको यज्ञमें मारनेके निमित्त विचार न करेगा, यज्ञमें हिंसा दोषनहीं है इसबातको सिद्ध करके कहते हैं कि पशु आदिवृक्ष औषधी स्वर्गकोही चाहतेहैं और स्वर्ग यज्ञके विना मिलनहीं सक्ता, औषधी, पशु, वृक्ष, वीरुधि लता, घृत, दूध, दही, हव्य, पृथ्वी, दिशा, श्रद्धा, काल, यह बारह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, और सोलहवां यजमान और इनका ग्रहपति अग्निहै वह सत्रहवां कहाजाता है, यहसब यज्ञके अंगहैं औरयज्ञही संसारकी स्थितिका मूलहै यह श्रुतिहै, गौ अपनेघृत दूध, दही, गोबर, फटादूध चर्म, बैल, पूंछ, सींग, और चरण आदि से यज्ञको सिद्धकरती है अर्थात् पूर्ण करती है और जो २ अंग इस यज्ञका कहाजाताहै सब इसीप्रकारके हैं यहसब इकट्ठे होकर दक्षिणा पाने वाले ऋत्विजों के सहित यज्ञ को धारण करते हैं इन सबको इकट्ठा करके यज्ञ निर्माण करतेहैं, वह सब यज्ञकेही निमित्त उत्पन्न हुये इस अर्थवाली श्रुति कही और सुनी जातीहै इसीप्रकार सब प्राचीन लोग कर्मकर्त्ता हुये, जो पुरुष फलकी अनिच्छासे पूजन करताहै वह न हिंसा क-रताहै न यज्ञ कर्म का प्रारम्भ करताहै और शत्रुता भी किसी से नहीं करता है क्योंकि वह यज्ञ करने केही योग्यहै, यह औषधी आदि यज्ञके अंग और यज्ञ में वर्णित यज्ञ कुंभादिक अपनी अलौकिक बुद्धिके अनुसार परस्पर में एकएककी सहायता करतेहैं, मैं उस आम्नाय को आर्ष देखताहूं जिसमें वेद प्रतिष्ठावान्हैं ज्ञानी लोग वेद ब्राह्मण के विचारसे उसको देखतेहैं, यज्ञ में वह वेदके ब्राह्मणों से उत्पन्न होनेवाले हैं और ब्राह्मणमेंही वर्त्तमान हैं सब संसार यज्ञ के पीछेहै और यज्ञ सदैव संसार के पीछे है, वेदके उत्पत्तिस्थान प्रणव, नमस्कार, स्वाहा, स्वधा, वषट् यह सब जिसकी ओरसे सामर्थ्य के अनुसार होतेहैं वह प्रयोग कहेजाते हैं उसके भयसे इसलोकको तीनों लोकोंमें नहीं जाना इसबातको वेदसिद्ध और महर्षिलोग जानतेहैं, ऋग यजुसाम और स्तोम इत्यादि विधि जिसमें सबहोती हैं वह द्विज कहा जाताहै, फिर अग्नि

होत्र और सोमपानमें जो फल ब्राह्मण को मिलता है या अन्य महायज्ञों से मिलताहै उसको आपज्ञान ऐश्वर्य्य से संयुक्त जानतेहो, हे ब्रह्मन् इसीकारण यज्ञकरे और विचार सहित यज्ञकरावे स्वर्गके दाता ज्योतिष्टोमादि से पूजन करने वाले पुरुषको देहत्यागने के पीछे बड़ा स्वर्गफल मिलता है, यज्ञके न करने वालोंका न यहलोक है न परलोकहै यह निश्चयहै कि जो पुरुष वेदों के अर्थवादको जानता है उसका दोनों प्रकारका अर्थवाद प्रमाण है क्यों कि एक अर्थवाद केवल प्रशंसा रूप होता है जिसके द्वारा फलरहित कर्म्म करके शुद्धचित्त होकर मोक्षका अधिकारी होताहै और आत्मज्ञानी सबलोक और मनोरथों को प्राप्त करता है इसीकारण दोनों अर्थवाद समान हैं यह पूर्व पक्ष हुआ, ४० ॥

इति श्रीमहाभारते शान्तिपर्वणि मोक्षधर्मे पंचनवतितमोऽध्यायः ९५ ॥

छानबेवां अध्याय ॥

कपिलजी बोले कि हम नियमादि गुणयुक्त योगमार्गमें प्रवृत्त ज्ञानीलोग इसकर्मफल से उत्पत्ति और दृष्टि गोचर होने से अभाव रूप ब्रह्माण्ड के साक्षात्कार आत्माको प्राप्तहोते हैं और फलश्रुतिको अर्थवाद कहा यह शंका करके कहते हैं कि सबभोग पदार्थों में इन योगोंका संकल्प मिथ्या नहीं है अर्थात् इनके संकल्पसेही सब कुछ प्रकट होजाता है यह ज्ञानका फलहुआ आशय यहहै कि ज्ञानीका आत्मज्ञान कर्मके अंगत्व भावको प्राप्तनहीं होताहै क्योंकि वहांपर आत्मा के सिवाय कोई दूसरा शेष नहीं रहता इस कारण आत्मज्ञान का फल अर्थवाद नहीं होसक्ता और दूसरा अर्थवाद कर्म्म में ज्ञानी की श्रद्धा करने के लिये होता है यह उत्तर पक्ष हुआ, वह ज्ञानी लोग शीतोष्णता से उत्पन्न हर्ष शोकादि रहित किसी को नमस्कार न करनेवाले स्वभाव सिद्ध निर्म्मल अर्थात् आगामी दोष और पापों से रहित विचरते हैं वह मोक्ष सर्व त्याग और बुद्धि में निश्चय करने वाले ब्रह्मेष्टि ब्रह्मरूप ब्रह्ममें ही निवास करने वाले शोकरहित नाशवान रजोगुणहैं उनके सनातन अभीष्ट अर्थोंको अर्थात नित्य शुद्धतासे उत्तम गतिको पाकर गृहस्थ आश्रम के धर्मों में उनका क्या प्रयोजन है, स्यूमरश्मि बोले कि जो यह परम काष्ठाहै या परमगति है तौ भी गृहस्थियों को रक्षाश्रय होकर दूसरा आश्रम वर्त्तमान नहीं होता है, जैसे कि सबजीव अपनी २ माता के आश्रय होकर जीवते हैं इसी प्रकार अन्य आश्रम गृहस्थाश्रम का आश्रय लेकर वर्त्तमान होते हैं, गृहस्थी यज्ञ करता है गृहस्थीही तप करता है और सुखकी इच्छा से जो २ चेष्टा करता है उस धर्म्म फल का मूल गृहस्थाश्रम है, सब मनुष्य और जीव

मात्र सन्तान उत्पन्न होनेसे प्रसन्न होतेहैं दूसरे आश्रममें किसीप्रकारसे भी संतान नहींहोसक्ती;तृणधान औषधी आदिका मूलभी गृहस्थाश्रमहै जैसे कि यज्ञ करनेसे वर्षाअन्नादि जीव क्रमसे उत्पन्नहोतेहैं क्योंकि औषधीरूप प्राणसे कुछ बाहरनहीं दृष्ट पड़ताहै, किसका वचन सत्य नहीं है कि गृहस्थ आश्रम से मोक्ष नहीं है श्रद्धा रहित अज्ञानी सूक्ष्म दृष्टिसे पृथक् प्रतिष्ठारहित आलस्य परिश्रम युक्त और अपने प्राकृतकर्मों से दुःखित अपंडित मनुष्योंमें से संन्यासमें प्रवृत्त चित्त बाहर से उत्तम नहीं देखागया है, सनातन धर्मकी अचल मर्यादा तीनों लोककी कारण है प्रत्यक्ष है कि वेदज्ञ ब्राह्मण भगवान् के समान जन्म सेही पूजाजाताहै, ब्राह्मण आदि तीनों वर्णों में गर्भाधान से पूर्वही वेदोक्त मन्त्र जारी होतेहैं और इसलोक परलोक सम्बन्धी साधन के योग्य सब कर्म्मों में निश्चय करके मंत्रही साधकहोते हैं, मृतकका दाह आदि कर्म्म जो कि दूसरे जन्म से संबंध रखनेवाला है और जन्म लेनेवाले मृतकके लिये तर्पण श्राद्ध आदिमें अन्नजल गोदान आदिका देना और वृषोत्सर्ग और और जलमें पिण्डोंका डालना इत्यादि सबकर्मों में बड़े तेजस्वी वर्हिषदनाम पितृगण और कव्य के भोजन करनेवाले पितर मंत्रों को ही साधकमानतेहैं और मंत्रही कारणहै इसप्रकारसे कहनेवाले वेदोंमें कैसे किसी की मोक्ष है जब कि संसारके लोग देवता और ऋषि पितरोंके ऋणीहैं, निर्धन आलस्यी पण्डितों ने वह वेदवचनों के ज्ञानसे रहित सत्य समान दीखने वाला मिथ्यारूप मोक्ष स्वरूप जारी कियाहै, जो ब्राह्मण वेद और शास्त्रों के अनुसार यज्ञ करता है वह पापसे मुक्त और आकर्षण नहीं कियाजाताहै और यज्ञके द्वारा पशुओं समेत स्वर्गको जाता हैऔर कामनाओं से पूर्णदेव पितरोंको तृप्त करताहै; वेदोंकी निन्दा और छलसे मोक्षको नहीं पाताहै वह पुरुष वेदमेंही ब्रह्मको पाताहै, कपिलजी बोले कि दर्श पूर्णमास अग्निहोत्र चातुर्मास नाम यज्ञज्ञानी पुरुषोंके हुये इनमें सनातन धर्म है तात्पर्य्य यह है कि चित्त शुद्धिका चाहनेवाला बुद्धिमानही उनका अधिकारीहै २० कर्म्म प्रारंभ न करनेवाले बड़े धैर्य्यमान बाह्याभ्यन्तर पवित्र ब्रह्मज्ञानी और अविनाशी होनेकी इच्छाकरनेवाले संन्यासी लोग ब्रह्मसेही देवता ऋषि तृप्तकरते हैं, सब जीवों के आत्मारूप और सबजीव मात्रके देखनेवाले परमपद के इच्छावान चिह्नरहित संन्यासियोंके मार्ग में देवताभी मोह को प्राप्तहोते हैं, इस सर्वात्मा चिह्नरहित शरीरके मध्यवर्त्ती आत्माको गुरूके उपदेशसे चारप्रकारका अर्थात् विराट्, सूत्र, अन्तर्य्यामी और शुद्धरूप इनभेदों से जानता है उसके चारद्वार अर्थात् दोनोंभुजा, वचन, पीठ, लिंग, यही गुप्तकरनेवाले हैं और देह, चित्त, मन, बुद्धि यह चारमुख भोगके साधनहैं इनचारों में देवताओंकाभी मोह

उत्पन्नहोताहै इसकारण द्वारपाल अर्थात् भुजा इत्यादिका स्वामी ऐश्वर्यमान् होनाचाहिये पाशोंसे नहींखेले न दूसरेकाधन लेवे और विपरीत जन्मवालेका हव्यनलेवे अर्थात् उसको यज्ञ न करावे और बुद्धिमानोंसे न क्रोध युक्तहो न किसीपर चोटकरे गाली आदि न दे वृथावार्त्तालाप न करे कठोरवचन और निन्दा न करे सत्यव्रत मितिभाषी और सावधानहो और उसका वचन द्वारभी श्रेष्ठहोना चाहिये भोजनका अत्यन्तही त्यागी न होमिथ्यावादी न हो लोभ रहित साधुओं की संगतिकरे थोड़ा भोजनकरे इसप्रकार से उसके उदररूपी द्वारकी रक्षाहोती है हे वीर युधिष्ठिर यज्ञ सम्बन्धिनी स्त्रीको कभी पृथक् न करे अर्थात् दूसरी स्त्रीके करनेमें भी उसको धर्म्म अर्थ काममें अविभागिनी नहींकरे और ऋतुकालके विना स्त्रीको नहीं बुलावे और दूसरेकी स्त्रीकेरूपसे सदैव परहेज करे कभी परस्त्री वासना आत्मामें न धारणकरे इस प्रकार से उसकेलिंग रूपद्वारकी रक्षाहोतीहै जिस बुद्धिमान्के लिंग, उदर, भुजा वचन यह चारोंद्वार अच्छे दृढ़होते हैं वही ब्राह्मणहै और जिसके यह चारोंद्वार रक्षितनहीं हैं, उसके तप आदि सब धर्म्म निष्फल होते हैं और वस्त्राच्छादन रहित विना अस्तरण शयन कर्त्ता भुजा कांखवाले शांतरूपको देवता लोग ब्राह्मण जानते हैं, जो एकाकी दूसरों का ध्यान न रखनेवाला दुःख सुख के स्थानों में समभावसे निवास करनेवाला है उसको भी देवताओं ने ब्राह्मण कहा है और जिस से ब्रह्मकी एकता जानी जाती है और जीवों की गति का जानने वाला है और सब जीवों से निर्भय है और उस से भी सब निर्भय हैं वह सर्वात्मा रूपहै और दानयज्ञ क्रियाओंके चित्तशुद्धी आदि फलगुरु आदि से विना पूंछे और कहे हुये ब्रह्मज्ञानको नहीं जानते हैं, और उसब्रह्मको न जानकर दूसरे स्वर्गादिक फलको स्वीकार करते हैं, आश्रमियोंका वेदांत श्रवणादि रूप विचार अपने कर्म्मों समेत उस अज्ञानका भस्मकरनेवालाहोताहै जो कि संसारका मूलहै, उसआदि रहित सदैव मोक्षके योग्य निश्चेष्ट फलयुक्त सदाचार में आश्रित होकर धर्म्मशास्त्रों में लिखेहुये किसी कर्म्म के करनेको समर्थ न होते उनकर्म्मों को देखतेहैं जो कि प्रत्यक्ष फलवालेहैं, पर ऐश्वर्ययुक्त अविनाशी और त्याग यज्ञ आदि कर्म्मोंसे फलकी अनिच्छा रखनेवाले अनैकांतिक हैं सावधानी और कामादिसे पृथक्ता यह दोनों आचार आपद्धर्म्म से पृथक्हैं, तात्पर्य यहहै कि यज्ञ आदिको विनाशवान् जानके ज्ञाननिष्ठों में प्रवृत्तहो स्यूमरश्मि बोले कि कर्म्मको त्यागकरो इसपक्ष के होने पर जिस प्रकार वेदके प्रमाण हैं और जिस रीति से त्याग और वे त्याग फलयुक्त हैं वह दोनों मार्गवेद में साफ कहे गये हैं अब आप ऐश्वर्यज्ञान आदि से युक्त उसकी मुख्यताको मुझसे कहो, फिर अनुभवका

प्रमाण करते हुये कपिलजी बोले कि योगमें जो ब्रह्मप्राप्तिका मार्ग है उसमें नियत होकर आपलोग यहां शरीरके होतेहुये प्रत्यक्ष देखतेहैं और तुमसरीखे कर्मिष्ठ जिसको चाहते हैं वह इस लोकमें किसरूप का प्रत्यक्ष है स्यूमरश्मि बोले कि हे ब्रह्मन् मैं स्यूमरश्मिहूं और ज्ञान सीखने को यहां आयाहूं अर्थात् योगके द्वारा कल्याणकी इच्छासे गौमें प्रवेशकरके मैंने सत्यतासेप्रश्नकिया है अपने पक्ष सिद्धकरनेको नहींकियाहै आप छओं ऐश्वर्यवान्हैं इससेआप इस मेरे घोरसंशयको दूरकीजिये आप योगमार्ग में नियत प्रत्यक्ष देखरहे हैं और वह कौनसा प्रत्यक्षतमहै किसकी आप उपासनाकरतेहैं मैंने वेदके विपरीत बौद्ध, आर्हत, सौगत कापालिकआदि शास्त्रसे पृथक् आगमकेअर्थको बुद्धिके अनुसारजानाहै वहआगम वेदवचनहैं और वेदार्थको साफकरनेवाले पूर्वमीमांसा, उत्तर मीमांसा, सांख्य, पातंजलि यहचारोंभी आगम हैं इनको अपनेआश्रम धर्म्मके अनुसार उपासनाकरे तोआगम सिद्धहोताहै और आगमके निश्चयसे प्रत्यक्ष और अनुमानके अनुसार सिद्धि दिव्य भोगप्राप्ति इत्यादि रूपवाली दृष्टआती है, इसप्रकार दूसरेका मतजाननेके लिये अपने मतकी निन्दाकरते हैं हे वेदपाठी जैसे कि नावमें बँधीहुई और नदीसे बहाई हुई नावपारनहीं लगातीहै इसीप्रकार पहिले कर्म्मोंकी वासनासे बँधीहुई कर्म्म रूपी नौका किसप्रकारसे अज्ञानियोंको तारसक्तीहै आशय यहहै कि अज्ञानी जन्म मरणरूप प्रवाहके तरनेको समर्थ नहींहैं आप छओं ऐश्वर्यवान्हैं और मैं शिष्यरूप वा अधिकारीहूं मुझे उपदेश करके प्रत्यक्षतमको समझाइये,कोई पुरुष कर्म्म की इच्छासे रहित नहींहै और न शोकरोगादिसे पृथक्है, आपभी हमलोगोंके समान प्रसन्नहोते हैं और शोचते हैं आपकी इन्द्रियोंके विषयभी सब जीवोंके समानहैं इसप्रकार एकही सुखके चाहनेवाले चारोंवर्ण और चारों आश्रमोंके व्यवहारी सिद्धान्तमें कौनसा सुख अविनाशी है, कपिलजी बोले कि मोक्षशास्त्रकी प्राप्तिके निमित्त जिसजिस वैदिक अवैदिक शास्त्रको अच्छे प्रकारसे अनुष्ठान करताहै वह सबव्यवहारोंमें सफलहै और यह बात प्रसिद्ध है कि जिसशास्त्रमें जिसका अनुष्ठानहै अर्थात् शम दमआदिकी प्राप्ति है उस उसशास्त्रमें सब दोषोंसे रहित आत्मस्वरूपकी प्राप्ति होती है, साधन के अनुष्ठानसे उत्पन्न ज्ञान सब संसारको आत्मामें मग्नकरताहै अर्थात् ज्ञानीको आत्माके समानरूप करताहै ज्ञान से पृथक् होकर जो वृत्ति वेदोक्तभी है वह जीवोंको दुःखदायी होतीहै जन्म मरणरूपी प्रवाहके पारहोनेसे ज्ञानी आपसे आप प्रत्यक्ष और सब रोगोंसे पृथक्हैं परन्तु आपसरीखे ज्ञानियों में कोई पुरुष द्वैततारहित आत्मज्ञानको पाता है, कोई मनुष्य शास्त्रको तत्त्व पूर्वक न जानकर कामद्वेषसे युक्तहोनेके कारण पराक्रमके द्वारा अहंकारके आधीन

होते हैं, शास्त्रोंके चोर और ब्रह्मके विषयमें बिपरीत बचन कहनेवाले शम दम आदि के अनुष्ठानसे रहित मोहके फन्दमें वर्त्तमान पुरुष शास्त्रों के मुख्य सिद्धान्तको न जानकर फलका होना नहीं देखते हैं आत्मज्ञानको सिद्ध करके ज्ञान ऐश्वर्यआदि गुण दूसरेको प्राप्त नहीं कराते हैं अर्थात् पाषाण के समान आपडूबते हैं वह दूसरेके निकालनेको समर्थ नहीं होसक्ते उन शरीरोंका जो अज्ञानहै वही अज्ञान उनका रक्षा स्थान है ५४ जो जीव जैसी प्रकृतिवाला है वह उसी प्रकृतिके आधीन होताहै उसके काम क्रोध द्वेष कपट मिथ्याबचन अहंकार आदि जो प्रकृति से उत्पन्न होनेवाले गुणहैं वह सदैव वृद्धिको प्राप्त होते हैं परमगति के चाहनेवाले और धारणा ध्यान समाधि रूप नियम में प्रीतिमान् ज्ञानीलोग इसप्रकार से ध्यानकरके पाप और पुण्यको अत्यन्त त्यागकरें, स्यूमरश्मि बोले हे ब्रह्मन् मैंने यह सब शास्त्रसे बर्णन किये क्योंकि शास्त्रको न जानकर बचनविलास जारी नहीं होते हैं, जोकोई आचार न्याय रूपहै वह सब शास्त्रहै यहश्रुतिहै और जो न्यायके विरुद्धहै वह शास्त्र नहीं है यहभी श्रुति सुनीजातीहै, यहनिश्चयहै कि कोई बचनविलास शास्त्रसे रहित नहीं है वेदवचनसे जोअन्यहै वह शास्त्रनहीं है, यहभीश्रुतिहै, प्रत्यक्ष सिद्धको माननेवाले बहुतसेपुरुष शास्त्रसेभिन्न सिद्धान्तको देखतेहैं, आत्माका अनुभव न होनेसे जिनकी स्वरूपनिष्ठा जातीरही और विषयोंमें जिनकी बुद्धि प्रवृत्तहै वह तमोगुण युक्त जैसे कि बौद्ध शास्त्रोक्त दोषोंको नहीं देखतेहैं और शोचते हैं उसीप्रकार हमलोग भी शोचते हैं क्योंकि आपलोगोंकी इन्द्रियों के विषय शीत उष्णता रूपका स्पर्श सबजीवों में एकसाहै अर्थात् सबको सुख दुःख देनेवाले हैं ६० इसप्रकार एक सुखके जाननेवाले चारों वर्ण आश्रमियों के व्यवहारोंमें हमलोग तुमसे शान्तीको प्राप्त कियेगये जो कि आप सिद्धान्त में अर्थात् सबप्रकार सब शास्त्रोंके सिद्धान्तसे मोक्षको प्रकट करनेवाले वाद विवाद में समर्थ हैं परन्तु वह निष्ठा सब प्रकारसे कर्म्म निवृत्त शांतचित्त कोई ऐसे योगी पुरुषोंसे प्राप्त करनी सम्भवहै जोकि देहके निर्वाह योग्य भोजनके विशेष दूसरी वस्तुसे प्रयोजन न रखतेहों, यह न्यायशास्त्रसे रहितलोकनिंदित पुरुष से कहनेके योग्य है कि वेद बचनपर न चलनेवाले की मोक्षहोती है यह कठिनकर्म्म जो कि दान वेदपठन, यज्ञ, सन्तानकी उत्पत्ति, और सीधापन है इसको इसप्रकार करनेसे भी जो मोक्ष नहीं है तो ऐसी दशा में कर्त्ता और क्रियाको धिक्कारहै यह परिश्रम निरर्थक किन्तु दूसरी दशा में अर्थात् कर्म्मकाण्डको निरर्थक कहने में नास्तिकता होतीहै और वेदोंकी क्रिया का त्याग होजाता है, हे भगवन् मैं इस कर्म्मकाण्डकाहेतु मोक्ष न होना अथवा मोक्षका अंग होना ठीक २ सुना चाहताहूं हे ब्रह्मन् मैं आपकी शरण में

आयाहूं आप जिस प्रकारसे जानते हो कृपाकरके मुझे समझाइये ६७ ॥
इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्म्मेपर्वणषण्णवतितमोऽध्यायः ९६ ॥

सत्तानवेवां अध्याय ॥

कपिलजीबोले कि सब वेद लोकोंको प्रमाणहैं वेदको बिना उल्लंघनकिये एक शब्द ब्रह्म अर्थात् कर्म उपासना कांड दूसरा परब्रह्म अर्थात् उपाधिरहित सच्चिदानन्द यह दोनों ब्रह्म जानने के योग्य हैं शब्द ब्रह्म में पूर्ण कर्म कर्त्ता परब्रह्मको पाताहै वेद के उपनिषद्कांड में जिस शरीरको गर्भाधान बुद्धि से उत्पन्न करताहै वह देहको संस्कार युक्त करताहै क्योंकि गर्भाधानके मन्त्रोंमें यह आशीर्वादहोता है कि हे विष्णुजी योनिको कल्पनाकरो प्रजापति सींचो और धाता गर्भको धारणकरो इन मंत्रोंमें विष्णुआदि देवताओं के समान ज्ञान ऐश्वर्य्यादि युक्त जीव उत्पन्न होताहै, वेद और स्मृतियों के संस्कारों से पवित्र देहवाला ब्राह्मण ब्रह्मविद्याके योग्य होताहै इस लोक में कर्मों के फल इस चित्तशुद्धी रूप मोक्षके योग्यको प्रत्यक्षजानो उसका वर्णन तुमसे करता हूं कि वह चित्तशुद्धी रूप फलके बल वेदसे प्राप्त होनेवाला स्वर्ग के समान दृष्टि से गुप्त अथवा परम्पराका उपदेश नहींहै किन्तु लोकसाक्षीहै—अनिच्छा से प्राप्त होनेवाले धनको त्याग करनेवाले निर्लोभी राग द्वेषसे रहित पुरुष यह समझकर यज्ञोंको रचतेहैं कि यह धर्म्म है वही मोक्षका साधन है और धर्मों का वही मार्ग है कि तीर्थके समान पवित्र करनेवाले सत्पुरुषों को दानकिया जाय वह सत्पात्र अग्निहोत्र आदि कर्म्म, योगी पापकर्म्म रहित चित्त के संकल्प से बड़े शुद्ध, विषयों से पृथक्, ब्रह्मज्ञान में निश्चय रखनेवाले, क्रोध निन्दारहित, अहंकार ईर्षादि बिना श्रवण, मनन, निदिध्यासनमें निष्ठायुक्त, जन्म, कर्म्म, विद्या इन तीनों को शुद्ध रखनेवाले अपने कर्मों में प्रतिष्ठित, सबके प्यारे बहुतसी सन्तानवाले, राजाजनक आदि और ब्राह्मणोंमें याज्ञवल्क्य इत्यादि बुद्धिके अनुसार योगी समदर्शी सत्यवक्ता संतोषी ज्ञाननिष्ठ सत्यसंकल्पादि गुण युक्त उपाधि रहित ब्रह्ममें श्रद्धावान्हुये आदिमेंही शुद्ध अंतःकरण बुद्धिके अनुसार व्रती परस्पर में स्नेह रखनेवाले महा दुर्गमस्थान में भी धर्म्मको करते हैं, १० प्राचीन समयमें मिलकर धर्म्म करनेवालों का जो सुख हुआ किसी दशामें भी उनका धर्म्म प्रायश्चित्त के योग्य नहीं हुआ, वह सच्चे धर्म्म में नियतहोकर बड़े दृढ़बुद्धी समझे गये हैं बुद्धिसेही नहीं करते किन्तु शास्त्रोक्त कर्मों में प्रवृत्त होते हैं और अपने निश्चय से धर्म्म में छल नहीं करतेहैं कारण यह है कि जो प्रधान कला अर्थात् धर्म्म सत्ययज्ञ है उसी को सबने मिलकर किया कभी उनका प्रायश्चित्त करनेके

योग्य नहीं हुआ, उस रीति पर नियत पुरुषों का प्रायश्चित्त वर्त्तमान नहीं है अज्ञानी पुरुषका प्रायश्चित्त उत्पन्न होता है यह श्रुति है, इसप्रकारसे अनेकप्रकार के प्राचीन यज्ञ कर्त्ता ब्राह्मण तीनों वेद के ज्ञाता गुरु सेवा परायण यशस्वी इच्छा रहित ज्ञानी प्रतिदिन यज्ञों के करनेवाले हुये, उनके यज्ञवेद और कर्म्म शास्त्रके अनुसार क्रम पूर्वक संकल्प युक्तहुये उन काम क्रोध रहित कठिन आचारवान् अपने कर्मों में पवित्र शुद्ध चित्त सत्यवक्ता पुरुषों का यज्ञादिकर्म ब्रह्मरूप हुआ हमारेनिमित्तभी यही सनातन श्रुति है, उन बड़े बुद्धिमान् कठिनकर्म और आचारोंके करनेवाले पुरुषोंकेतप अविद्या दूरकरनेवाले हुये, जो सदाचार आपत्ति धर्म्म से पृथक् काम क्रोधसे अजित जिनमें किसी प्रकारकी अमर्यादा नहीं हुई उसप्राचीन रूपांतर रहित एक आश्रमरूप सदाचारको ब्राह्मणोंने चारप्रकारका जानाहै उसीको संत लोग बुद्धिके अनुसार पाकर परमगति को पाते हैं इसकारण अन्य ब्रह्मचारियों ने गृहस्थी होकर फिर घरसे निकलकर बनमेंही आश्रमलियाहै वहां अधिकारी होकर संन्यास आश्रम में प्रवृत्तहुये वह तेजस्वी ब्राह्मण स्वर्ग में नक्षत्रों के समान दृष्टआतेहैं २४ वैराग्यसेभी अगस्त्य वशिष्ठादिने ब्रह्मभावकोपाया यह वैदिक वचनहै कि इस प्रकारके लोग जो बारम्बार योनियोंमें संसारको आते हैं वह प्रारब्ध कर्म्मके कारण कभी पापोंके फलसे योग नहींपाते हैं तात्पर्य यहहै कि देहको प्राप्तकरना उनकी इच्छाके अनुसार एक घरसे दूसरे घरमें जाने के समानहै, गुरूकी सेवा करनेवाला निश्चयमें तदाकार ब्रह्मचारीभी इसी दशाका होताहै ऐसा योगी ब्राह्मणहो अर्थात् ब्रह्मज्ञानीके अर्थके अनुसार ब्राह्मण होजाय और दूसरा नाममात्रको ब्राह्मणहो, इस प्रकारसे जिनके अन्तष्करणका दोष नाशवान्हुआ उनपुरुषोंके साक्षात् कारत्वम् पदार्थ और ज्ञान तत्वमसि इस महावाक्यसे सबब्रह्मरूपहीहुआ, इसप्रकारकी हमारी सनातन श्रुतिहै आशय यहहै कि सबका ब्रह्मरूपहोना बनावटनहींहै किन्तु मुख्य और सत्यहै, उपनिषद् धर्म्म शम दमादि से लेकर समाधितक उन निर्लोभी निर्मल मोक्षबुद्धी वर्णाश्रमी पुरुषोंका चौथी अवस्थावाला परमात्मा है उस से सम्बन्ध रखनेवाला सावधानहै अर्थात् उसके सब अधिकारीहैं यहस्मृतिहैं, शुद्धचित्त और मनके रोकनेवाले ब्राह्मण उसको त्रयब्रह्मप्राप्ति कहते हैं संतोषवान् संन्यासी ज्ञानका उत्पत्तिस्थान कहाजाता है अर्थात् और कोई उस की योग्यतानहीं रखता सम्प्रदायक ब्रह्म साक्षात्कार वृत्तिवाला संन्यासियों का धर्म्म प्राचीनहै, वह धर्म्म दूसरे आश्रमोंके धर्म्म में मिलाहुआ वा पृथक् वैराग्यके अनुसार उपासना कियाजाता है वह धर्म्म उसके प्राप्त करनेवालोंके आनन्दका हेतुहै अर्थात् सब मनुष्य उससे लाभ उठासक्ते हैं और जो पुरुष

रागी है वह इसमें पीड़ापाताहै पवित्र मनुष्य ब्रह्मपदको चाहता संसारसे मुक्त होता है, स्यूमरश्मि बोले कि जो पुरुष प्राप्त होनेवाले अपने धनसे भोग करतेहैं, दानकरते हैं यज्ञकरते हैं और वेद पढ़ते हैं अथवा जो पुरुष त्यागी अर्थात् संन्यासी हैं इनमें सबसे अधिक कौन स्वर्गको प्राप्त करताहै यद्यपि गृहस्थ और संन्यासमें सदाचारमें प्रवृत्तपुरुषोंका निवृत्तीही धर्म्म है परंतु देह त्यागने के पीछे उनमें कौन अधिक है इस प्रश्न को हे ब्रह्मन् मुझे कृपाकरिके समझाइये, कपिलजी बोले कि गुणभावके प्राप्त करनेवाले सब परिग्रह शुभहैं परंतु संन्यास के सुखको नहीं पाते इसको तुमभी देखते हो, स्यूमरश्मि बोले कि आप निश्चय करके योगज्ञानमें निष्ठा रखनेवाले हैं और गृहस्थी कर्म की निष्ठा रखनेवालेहैं निष्ठामें सब आश्रमोंकी ऐक्यता कही जातीहै अर्थात् सबका निश्चय मोक्षहै इनमें एकता और द्वैतता में कोई मुख्यता नहीं दीखतीहै हेभगवन् आप इसको मुझे समझाइये, कपिलजी बोले कि स्थूल सूक्ष्म शरीरकी पवित्रता बुद्धिके अनुसार कर्म्म और ज्ञानमोक्षके साधनमें कर्मों से चित्तके दोषदूरहोने और शास्त्रसे उत्पन्न ज्ञानसे ब्रह्मानन्द रसमें नियत होने पर यह सब गुण उत्पन्न होतेहैं, दया ऐश्वर्य्य में भी चित्त को स्वाधीन रखना चित्तको जीतना, सत्यबोलना, सत्यता हिंसा न करना, अहंकार शत्रुता रहित लज्जा शांति, कर्मकात्याग यह सब ब्रह्ममार्ग हैं इन्हीं से ब्रह्मकी प्राप्ति होतीहै, विद्यावान् मनुष्य चित्तसे उसकर्म्मफल अर्थात् चित्त के दोषका दूरहोना और वैराग्य के उदयको जाने, सबओरसे शान्त और अति पवित्र ज्ञानमेंनिश्चय करनेवाले तृप्त वेदपाठी ब्राह्मण जिसगतिको पातेहैं उसीको परमगति कहते हैं ४१ इसप्रकार वेदों को जानने के योग्य ब्रह्मरूप कर्म्म को उसीप्रकार कर्म्मोंको अनुष्ठान धर्म्म ज्ञानको जानकर वेदकाज्ञाता वर्णन किया इससे दूसरापुरुष चमड़ेकी धौंकनीके समान तुच्छपुरुष कहनेवालाहोताहै वेद जानने वालोंने सबको जानाहै वेदमें सब नियतहै वेदमेंही सबकी वह निष्ठाहै जो कि है और नहीं है अर्थात् वेद तीनोंकालके वृत्तान्तका प्रकट करनेवालाहै, पूर्व में ज्ञानकोकहा अब जाननेके योग्यको कहतेहैं, सबशास्त्रोंमें एकहीनिष्ठाहै वह यह कि यहजगत् पूर्णप्रतीतिवालाहै और बाधकालमेंनहींहै, और तत्त्वज्ञानी की दृष्टिसे यह दृश्यमान आकाशादि आदि मध्य अंत युक्तहै अर्थात् मिथ्या है और ज्ञानीलोगों के मतसे सब दृश्यमान पदार्थ स्थिर हैं और सिद्धान्त में मिथ्यारूप भी अज्ञानियों की दृष्टि से दृढ़तम है, पुत्र स्त्री घर धन शरीर मन अहंकार तकके त्याग निर्विकल्प समाधिमें नियत होनेपर आत्मा अच्छे प्रकार से प्राप्त होताहै यह सब वेदों में लिखाहै, उस मोक्षरूप संन्यासी में संतोष जो कि निरानन्दसे लेकर ब्रह्मानन्द तक सब आनन्दों में वर्त्तमान हो

नियत होताहै, अब निर्व्वाण मोक्ष के स्वरूप को कहते हैं, वह अविनाशी है और अरूप सरूप प्रपंचकी मूर्त्तिहै क्योंकि सबका उत्पत्ति स्थानही आत्मा है इसी से जाना हुआहै और जोकि जड़ चैतन्य रूपहै इसीकारण जानने के योग्यहै और पूर्ण कलावान् सुखरूप और सर्वोत्तमहै शिव है ब्रह्म है और ईश के प्रकाशका कारण रूप रूपान्तर दशा से रहित और असंगहै जितेन्द्री होनेकीशक्ति बुराई करनेवालेपर भी क्रोध न करना, शान्ति अर्थात् सबकर्मों से वैराग्य यह तीनों शुभ हैं अर्थात् ब्रह्मानन्दकी प्राप्ति के हेतुहैं, बुद्धिरूप नेत्र रखनेवाले पुरुषों के इन तीनों गुणों से वह अकृत्रिम जगत् का कारण व असंग एकरूप अविनाशी प्राप्त होता है उस ब्रह्म और ब्रह्मज्ञानी को नमस्कार है ४७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे सप्तनवतितमोऽध्यायः ९७ ॥

अट्ठानबेवां अध्याय ॥

जो पुरुष मोक्षधर्म के अनुष्ठान में समर्थ नहीं है उसके निमित्त त्रिवर्ग में कौन श्रेष्ठतम है इस बात के निर्णय करनेके निमित्त राजा युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह वेद इन तीनों धर्म अर्थ कामको कहतेहैं उनमें किसका जानना उत्तमहै उसको मुझसे समझाइये, भीष्मजी बोले कि इस स्थान पर मैं इस प्राचीन इतिहासको तुम से वर्णन करताहूं जिसमें कुण्डधार नाम मेघने प्रीतियुक्त होकर अपने भक्तका उपकार किया, किसी निर्द्धन ब्राह्मणने विचार किया कि फलकी इच्छासे धर्मको करूंगा यह विचारकर उस आकांक्षी ने यज्ञके निमित्त कठिन तपस्याको किया और निश्चय करके देवताओंका पूजन किया और भक्तिसे देवपूजन करनेसे भी धनको नहींपाया फिर चिंता करके विचारनेलगा कि वह देवता कौनसा है जो कि मनुष्योंसे सिद्ध किया गयाहो वह मुझपर भी प्रसन्नहो फिर उसने मृदुचित्त से सन्मुख वर्त्तमान देवताओं के सेवक कुण्डधार नाम मेघको देखा उस महाबाहु बादल के देखने से उसको भक्ति उत्पन्न हुई और समझा कि यह मेरा कल्याण करेगा क्योंकि यह स्वरूप ऐसाही है और देवता के समीप रहनेवाला है और अन्य किसी मनुष्यसे संयुक्त नहीं है इस से यह शीघ्रही मुझको धन देगा तदनन्तर उस ब्राह्मणने कुण्डधारका धूप दीपादिसे विधि पूर्वक पूजनकिया तदनन्तर थोड़े ही समयमें उस मेघने प्रसन्न होकर उसके उपकार करनेकेलिये यह निश्चित वचनकहा कि ब्रह्महत्या करनेवाला मद्यपीनेवाला, चोर व्रतका खंडित करने वाला इनसबका प्रायश्चित्त होसक्ताहै परंतु उपकारको भूलनेवाले कृतघ्नीके लिये प्रायश्चित्तसे शुद्धि नहींहोसक्तीहै, आशाके पुत्र अधर्म, क्रोध निन्दाहैं

और छलकेपुत्र लोभादिहैं और कृतघ्नी पुरुष संतान हीन होते हैं, इसकेपीछे कुशाओंपर सोनेवाले उसब्राह्मणने कुण्डधारके प्रभावसे स्वप्नमें सब जीवोंको देखा, सुखदुःखके अनुभवसे पृथक् शान्तचित्त तप और भक्तिसे शुद्ध उस ब्राह्मणने रात्रिकेसमय उस कुण्डधारकी भक्तिके फलकोदेखा, हे युधिष्ठिर उसने महातेजस्वी महात्मा मानभद्रको १४ जो कि याचकोंको देवताओंसे कहकर कर्म फलका दिलानेवालाथा देखा वहां देवतालोग उत्तमकर्मोंके अनेकफलों को देतेथे और दुष्ट कर्म वर्त्तमान होनेपर पूर्व दियेहुये राज्यको भी फेरलेतेथे हे भरतर्षभ इसके पीछे बड़ा तेजस्वी कुण्डधार यक्षों को देखता हुआ पृथ्वीपर गिरा इसके पीछे बड़ेसाहसी उदार मानभद्र ने देवताओं के वचन से उस पृथ्वी पर पड़ेहुये कुण्डधारसे कहा हे कुण्डधार क्या इच्छाहै कुण्डधार बोले कि जो देवता मुझ पर प्रसन्नहैं तो मैं इस ब्राह्मणपर कुछ सुखदायी अनुग्रह किया चाहताहूं क्योंकि यह ब्राह्मण मेरा भक्त है फिर मानभद्र ने देवताओं के वचन से कुण्डधार को यह उपदेश किया कि उठ२तेरा भलाहो और तेरी इच्छा पूर्ण हो जो यह ब्राह्मण धनकी इच्छा रखताहै तो इसको बहुतसा धन देदो यह तेरा सखा ब्राह्मण जितना धन चाहताहै मैं देवताओं के वचन से उतनाही असंख्य धन देताहूं यह सुनकर कुण्डधार ने मनुष्यता को अनियत और नाशवान् विचारकर ब्राह्मण को तपस्या करनेकी सलाहदी और कहा कि हे धनदाता मैं ब्राह्मणोंके निमित्त धन नहीं मांगताहूं किन्तु केवल भक्तों के वास्ते दूसरा अनुग्रह किया चाहताहूं अर्थात् रत्नोंसे पूर्ण पृथ्वी को भी भक्तों के लिये नहीं इच्छा करताहूं यह इच्छाहै कि यहब्राह्मण धार्मिकहो और इसकी बुद्धि सदैव धर्म्म में प्रवृत्तहो यह धर्म्महो से अपना निर्वाह करे, मानभद्र बोले कि देहके कष्टसे रहित यह ब्राह्मण धर्म्मके फल राज्य आदि अनेक प्रकारके भोगों को भोगे भीष्मजी बोले कि इस बातको सुनकर कुण्डधार ने धर्म्मकेही निमित्त प्रार्थना बारम्बार की इससे देवता उसपर प्रसन्न हुये तब मानभद्र बोले कि सब देवता जैसे तुमसे प्रसन्नहैं उसीप्रकार इस ब्राह्मणसे भी प्रसन्नहैं यह धर्मात्मा होकर धर्म्म में बुद्धिको लगावेगा फिर इस ईप्सित वर को पाय कुण्डधार प्रसन्न हुये तब उस ब्राह्मण ने उन सूक्ष्म वस्तुओंको जो कि इधर उधर और सन्मुख रक्खी हुईथीं और वैराग्यवान् देखकर उनसे इच्छा को हटाकर यह कहा कि यह कुण्डधार उत्तम कर्म्मको नहीं जानता है तो दूसरा कौन शुभ कर्म्म को जानेगा मैं धर्म्म से जीवनके लिये श्रेष्ठ वनकोही जाऊंगा ३२ भीष्मजी बोले कि तब उस उत्तम ब्राह्मण ने वैराग्यसे और देवताओं की प्रसन्नतासे वनमें जाकर बड़ी तपस्या प्रारम्भकी और कन्दमूल फल भोजन करनेलगा और धर्म्म में अपनी बुद्धिको दृढ़ किया तदनन्तर

कन्दमूलादि को त्यागकर वृक्षोंके पत्ते खानेलगा फिर पत्ते भी त्यागकर जल का ही आहार करनेलगा तदनन्तर बहुत समयतक वायु भक्षण करनेलगा फिर भी इसके प्राणों की कोई बाधा न हुई यही आश्चर्य हुआ धर्म्मवान् उग्रतपी वह ब्राह्मण बहुतसमयमें दिव्यदृष्टिवाला होगया फिर अत्यन्त प्रसन्न होकर तपमेंही प्रवृत्त होगया और अपने पूर्व उत्तम बिचारको करके मनमें कहा कि जो मैं प्रसन्नहोकर किसीको राज्यदूं वह थोड़ेही समयमें राजाहोगा और मेरा वचन मिथ्या न होगा तब तो अत्यन्त प्रसन्न होकर उस कुण्डधार ने फिर दर्शन दिया और उस ब्राह्मण ने उस कुण्डधार का बुद्धिके अनुसार पूजन किया और आश्चर्य भी किया तब कुण्डधार ने कहा कि हे ब्राह्मण तेरेनेत्र दिव्यदृष्टिवाले हों तुम नेत्रों से राजाओं की गति और लोकों को देखो तब उसने अपनी दिव्यदृष्टि से नरक में फँसे हजारों राजाओंको देखा तब कुण्डधार ने कहा कि जब तुमने प्रीतिसे मुझको पूजा और तुमको खेद हुआ तो क्या हमारी प्रसन्नताका फल हुआ और स्वर्गमें केवल वही मनुष्य जाते हैं जिनमें देवताओंके से गुण होते हैं, भीष्मजी बोले कि यह कुण्डधार की बातें सुनकर उस ब्राह्मणने काम क्रोधादि अनेक दुर्गुणों को धारणकिये मनुष्योंको भी देखा तब कुण्डधार ने कहा कि सबलोग इस काम क्रोधादि से व्याप्त हैं और यही काम क्रोधादि देवताओं की आज्ञासे इस मनुष्य के विघ्नकारी होते हैं विना देवइच्छा कोई मनुष्य धार्मिक नहीं होताहै तुम इन बातों के देनेको तपकेद्वारा आप समर्थहो भीष्मजी बोले कि यहसुनकर वह ब्राह्मण कुण्डधार के चरणों में गिरपड़ा और कहा कि मुझपर बड़ा अनुग्रह किया पूर्व्वसमयमें काम लोभादि युक्त होकर जो आपकी प्रीतिकी मैंने निन्दा की उस को क्षमा कीजिये, तब कुण्डधार क्षमा किया यह बचन कह कर और उस ब्राह्मण से मिलकर वहीं अन्तर्द्धान होगया तब तपकी शुद्धि से वह ब्राह्मण सबलोकों में घूमा, आकाश में चलना, ईप्सित मनोरथों का प्राप्त करना, इस के विशेष जो परमगति हैं उन सबको भी धर्म्म सामर्थ्य से और योग से प्राप्त किया, देवता,ब्राह्मण, सन्त, यक्ष, गन्धर्व,चारण,मनुष्य और अनेक सुकृती जीव इत्यादिकोही इसलोकमें श्रेष्ठकहतेहैं परन्तु धनवान् कामीपुरुषों को नहीं कहतेहैं, देवता लोग तुझपर अत्यन्त प्रसन्न हैं इसहेतुसे कि तेरी बुद्धि धर्म्ममें तत्पर है, धर्म्म में तो सुखका समूह है और धनमें केवल सुखकी कलामात्रही है ५६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेअष्टनवतितमोऽध्यायः ९८ ॥

निन्नानवेवां अध्याय ॥

निष्काम धर्म्मकी उत्तमता वर्णनहुई इसधर्म्म में हिन्सा नहीं होती इस कारण इस अध्याय में हिन्सायुक्त यज्ञोंकी निन्दा करते हैं युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह चित्तकी पवित्रता या ईश्वरकी भक्ति रखनेवाले अनेक यज्ञ और तपों में वह सुख धन आदिकी इच्छा रहित केवल धर्म्म के निमित्त नियत किया हुआ यज्ञ कैसे रूपकाहै, भीष्मजी बोले कि इस स्थानपर यज्ञके विषयमें उंछवृत्ती वाले ब्राह्मणका प्राचीन वृत्तांत जिसको नारदजीने वर्णन किया है तुमसे कहताहूं नारदजीने कहा कि विदर्भ देशों में एक देश बड़ाधर्म प्रधान और श्रेष्ठथा वहां उंछवृत्तिवाला कोई तपस्वी ब्राह्मणथा वह यज्ञ पूजनको सावधानहुआ वहां वनमें श्यामाक, सूर्यपर्णी, सुवर्चला यह तीनों सागही भोजनको मिलतेथे यह तीनों साग नीरस और कडुवे परन्तु उस ब्राह्मणके तपके प्रभावसे वह सुस्वादु होगये और सब जीवोंकी हिन्सा न होनेसे वनमेंही सिद्धिको पाकर मूल फलोंसेही स्वर्ग सम्बन्धी यज्ञकिया, उसकी स्त्री व्रतसे निर्बल पवित्र पुष्कर धारणी नामसे प्रसिद्धथी वह विवाहिता यज्ञपत्नी सती स्वामी के साथ पशुयज्ञकी चाहनेवाली हिंसायज्ञ को उत्तम जानकर स्वामी से विपरीतथी परन्तु स्वामी के शापसे भयभीत होकर उसकेही स्वभाव के अनुसार कर्म्म करतीथी और उसका वस्त्र पुराने पंखोंका बनाहुआ था उसने पतिकी आज्ञा सेवन में निष्काम यज्ञकिया वहां शुक्रजी के शापसे मृगरूप उसी ब्राह्मणके समीप आश्रित सन्मुख बैठे हुये धर्म्मराजने उस ब्राह्मण से कहा कि यह तुमने विपरीति कर्म्म किया, क्योंकि यहयज्ञ मन्त्रांग से रहित है अर्थात् इसमें श्यामाकनाम चरुसे पशु बनालिया है मुख्य पशु नहीं है इस निमित्त तुम मुझे शीघ्रतासे हवनकरो और आनन्दपूर्व्वक तुमस्वर्गको जाओ तदनन्तर, यज्ञमें साक्षात्सावित्री जो कि सूर्य्य मण्डलकी अधिष्ठात्री देवी है उसने उसको समझाया कि मेरे निमित्त तुम पशु को होमो इन दोनोंके कहने परभी उसने यही उत्तर दिया कि मैं अपने समीपी आश्रित मृगको नहीं मारूंगा और यज्ञमें निकृष्टकर्म्म हुआ ऐसा कहकर वह देवीभी लौटगई और रसातलके देखनेकी इच्छासेयज्ञकी अग्निमें प्रवेश करगई फिर उस हाथ जोड़े हुये मृगने उस सत्यनाम ब्राह्मण से प्रार्थनाकी और सत्यने उसपर हाथफेर-कर आज्ञादी कि जाओ फिर वह हिरन आठचरण चलकर लौटआया और कहने लगा कि हे सत्य मैं चाहताहूं कि तू मुझको हवन करदे इस निमित्त कि मेरीभी सद्गति होजाय तुमसेरे दिये हुये दिव्य नेत्रों से उत्तम अप्सरा और श्रेष्ठ गंधर्वों के दिव्य विमानों को देखो तदनन्तर उस इच्छायुक्त ब्राह्म-

णने नेत्रों से बड़ी देरतकपशु और यजमान सहित स्वर्ग गतिकोदेखा और मृगको भी स्वर्गका आकांक्षी देखकर स्वर्ग में नियत होनेका विचार किया, वह धर्म्म देवता मृगरूप होकर बहुत कालतक वनमें रहे और उस शापके प्रायश्चित्तको किया और उसकी चित्तकी वृत्तिमें यह बात जो आई कि यह हिन्सात्मक यज्ञकी बुद्धिनहीं है इस कारण से उसके बड़े तपकी हानिहुई इसी हेतु से जानना चाहिये कि हिंसायज्ञ की पूर्ण करने वाली नहीं है, अब इस सन्देहको कहतेहैं कि धर्म्मने क्यों छलकिया अर्थात् उसके पीछे धर्म्मने आप उस पुष्कर धारणी स्त्रीके उस नियत यज्ञको पूर्ण किया और उस ब्राह्मणने तप के द्वारा मोक्षपदवी को पाया, अहिंसा पूर्ण धर्म्म है और हिन्सात्मक धर्म्म उत्तम नहीं है अब मैं उस सच्चे धर्म्मको तुझसे कहताहूं जो कि ब्रह्मवादी पुरुषों काहै २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेएकोनशततमोऽध्यायः ९९ ॥

एकसौका अध्याय ॥

अहिन्सा धर्म्महै और वैराग्य के द्वारा मोक्षकाहेतुहै इसको निश्चय करके फिर युधिष्ठिर ने प्रश्नकिया कि किसप्रकार पापात्मा होता है और कैसे धर्म्मको करताहै किसकेद्वारा वैराग्यकी प्राप्ति होती है और किसरीति से मोक्ष को पाताहै, भीष्मजी बोले कि सब धर्म्म तेरे जानेहुये हैं तुम मर्यादा के निमित्त पूछते हो वैराग्य से मोक्ष को और पाप धर्म्म को मूलसमेत सुनो, कि पांचों विषयोंका विज्ञानहोनेके निमित्त प्रथम इच्छा वर्त्तमानहोती है उस से काम और द्वेष उत्पन्नहोतेहैं, फिर कामनाकी प्राप्तिके अर्थ और पापदूर करने के लिये उपाय करताहुआ बड़े कर्म्म का प्रारम्भ करता है और इच्छानुसार सुगन्धियोंका सेवन करना चाहताहै उससे रागउत्पन्नहोता है उसकेपीछे द्वेष उत्पन्नहोता है फिर लोभ मोह उत्पन्न होते हैं, लोभमोह और राग द्वेषसेयुक्त पुरुषकी बुद्धि अधर्म में प्रवृत्तहोती है फिरछलसे धर्म्मको करता है और छलसेही अर्थको चाहताहै तब उसीमें बुद्धिको करताहै और पापकरना चाहताहै फिर पण्डितों से निषेध कियाहुआभी राग मोह से उत्पन्न कायिक, वाचिक, मानसिक इन तीनों प्रकार के अधर्म्मों को करताहै अर्थात् पापको विचारता है कहता है और करता है, उस अधर्मी के दोषों को साधुपुरुष कहते हैं और एकसी बुद्धि रखनेवाले पापीलोग परस्परमें मित्रता रखतेहैं, ऐसापुरुष जबकि इसीलोकमें सुखनहींपाता तोपरलोकमें कैसेपावेगा इसप्रकार पापात्मा होता है, अबधर्म्मात्मा का वर्णनसुनो जैसे कि वहकल्पनारूप धर्म्मवाला दूसरेकी भलाईमात्र करताहै इसीप्रकार कल्याणरूप धर्म्मसे वांछित गति को पाता है,

सुख दुःख के पहिँचानने में कुशल जो पुरुष बुद्धि से प्रथमही इन दोषों को देखताहै और साधुओंका भी सेवन करताहै उसके श्रेष्ठ आचरण और उत्तम अभ्यास से बुद्धि बढ़तीहै और धर्म्म में प्रवृत्त होताहै तबवह धर्म्मसेही निर्वाह करताहै और धर्म्म से प्राप्त होनेवाले धनों में चित्त करता है अर्थात् जिस में गुण देखताहै उसी की जड़को सींचताहै और धर्मात्मा होता है फिर श्रेष्ठ मित्रों को और उत्तम धनोंको पाकर इसलोक में आनन्द भोगकर परलोक में सुख को भोगताहै और शब्द स्पर्श रस रूप गंधमें संकल्प सिद्धि को पाता है यह सब धर्म्मका फलजानो फिर हे युधिष्ठिर वह धर्म्म के फल को पाकर प्रसन्न नहीं होताहै तब उससे अतृप्तहो ज्ञान रूप नेत्र से वैराग्यको प्राप्त करताहै, जब वह ज्ञान दृष्टियुक्त होकर रूपरस गन्धस्पर्शादि से भी मनको खींचताहै और शोचरहित होताहै तब इच्छाओंसे निवृत्त होताहै परन्तु धर्म्मको नहीं छोड़ता है और इस लोकको नाशवान् जानके स्वर्गादि धर्म्म फलके भी त्यागनेका उपाय करताहै फिर मोक्षकाचिन्तमन करता है और युक्ति से वैराग्य प्राप्तकर पाप कर्मोंको त्यागता है, फिर धर्मात्मा होकर परम मोक्ष कोपाताहै, हे युधिष्ठिर यह पापधर्म्म मोक्ष और वैराग्य सब तुझ से कहा इसी से तुमसब दशाओंमें धर्म्म के कर्त्ता हो, क्योंकि धर्म्म में नियत पुरुषों को सनातन सिद्धि होतीहै २४ ॥

इतिश्री महाभारते शान्तिपर्वणि मोक्षधर्मे शततमोऽध्यायः १०० ॥

एकसौएकका अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह आपने जिस युक्ति से मोक्षका वर्णनकिया उस युक्ति को न्याय के अनुसार सुना चाहताहूं, भीष्मजी बोले कि हे बड़े ज्ञानी मोक्षके निमित्त अपनी बुद्धिको साक्षी रखने वाला उपाय तुम में योग्य है उसीसे सब अर्थ धर्म्म काम मोक्ष की प्राप्ति होती है जैसे घटके बनाने में जो बुद्धि होती है उस बुद्धि का घट के बनजाने पर कुछ प्रयोजन नहीं रहता उसी प्रकार जिनमें यज्ञ आदि उपाय हैं उनप्रवृत्ति धर्म्मों में दूसरा निवृत्ति धर्म्म कारण नहीं होसक्ता किन्तु फलकी इच्छा न रखनेवाले पुरुष का यज्ञादिक धर्म्म चित्तशुद्धि के द्वारा निवृत्तिधर्म्म का हेतु होताहै तात्पर्य यह है कि निवृत्ति धर्म्म के वर्त्तमान होनेपर प्रवृत्ति धर्म्म की आवश्यकता नहीं होतीहै, क्योंकि पूर्वसिसमुद्र में जो मार्गहै वह पश्चिमको नहींजाताहै, मोक्षमार्ग एकही है उसको व्यौरे समेत सुनो कि निवृत्ति धर्म की जो पराकाष्ठा योग है उसके वर्णन करने में प्रथम उसके २२ साधन वर्णन करता हूं कि शान्तिता से क्रोधको और संकल्पके त्याग से कामको दूरकरै धैर्यमान् पंडित

सतोगुणी मनुष्य भगवत् के ध्यान आदि धर्म के सेवनसे निद्रा आलस्य को त्यागे और सावधानी और चतुरतासे संसार की अपकीर्त्तिके भयको निवृत्त करे और क्षेत्रज्ञमें मन लगाने से प्राण चेष्टाको रोके और धैर्यसे इच्छा, काम, द्वेषको शरीर में न रक्खे और तत्त्वाभ्यास से भ्रम अज्ञान आदि अनेक संशयोंको निकाले ऐसा तत्त्वज्ञानी ज्ञानके अभ्यासमे निन्दा और प्रतिभाको दूरकरे अर्थात् अन्यका ध्यान न करे प्रयोजन यहहै कि ब्रह्मकाही ध्यान ब्रह्मकोही कहना ब्रह्मकाही उपदेश और ब्रह्मकोही परस्पर में ज्ञानोपदेश करना इसीको ज्ञानका अभ्यास कहते हैं काम रहित शीघ्रतासे पचनेवाले निरुपद्रव सतोगुणी भोजनों से रोगादि को दूररक्खे सन्तोषसे लोभ मोहको और विषयोंके अनर्थ देखके विषयों को त्याग करे, दया से अधर्म को, विचार से धर्मको और भविष्यतकाल से आशाको और अनिच्छासे अर्थको त्याग करे और पण्डित मनुष्य अस्थिरतासे प्रीतिको योगसे गृहस्थाश्रमको, दया से चित्तके अभिमानको, सन्तोषसे लोभको, युक्तिसे आलस्यको, वेद बिश्वास से विपरीत वादको, मौनतासे अनर्गल बकनेको और छओं वर्ग के बिजय करने की सामर्थ्य से भयको त्यागकरे, इन अंगोंको कहकर अब प्रधानयोग को कहते हैं कि बुद्धिसे मन वचनको स्वाधीन करे और उस बुद्धिको ज्ञान शुद्धतम पदार्थ वा समष्टि बुद्धिसे आधीन करे फिर इस ज्ञानरूप शुद्धतम पदार्थको यह आत्मा ब्रह्मही है इस वचनके द्वारा उत्पन्न होनेवाली वृत्ति से और उस बुद्धिकी वृत्तिको भी परम चैतन्य के प्रकाशसे आधीन करे तात्पर्य यहहै कि इंद्रियों को मनमें, मनको बुद्धिमें, बुद्धिको तमपदार्थ को ब्रह्माकार वृत्तिमें, उसको शुद्धआत्मा में लय करके आत्म स्वरूप नियत होजाय, यह ज्ञान शान्तवृत्ति और पवित्र कर्म करनेवाले पुरुषसे जाननेके योग्यहै, काम, क्रोध, लोभ, भय, स्वप्नको त्यागकर वाक्जित् पुरुष योग साधन के योग्यहै, ध्यान, वेदपाठ, दान, सत्यबोलना, लज्जा, सरलता, क्षमा, पवित्रता बाह्याभ्यन्तर शुद्धी क्षुधा और इन्द्रियों का जीतना इत्यादि गुणों से तेजकी वृद्धि होतीहै और पाप नष्ट होताहै ऐसे पुरुष के संकल्प सिद्ध होतेहैं और विज्ञान प्राप्त होताहै, वह निष्पाप स्वल्प भोक्ता तेजस्वी जितेन्द्री पुरुष काम क्रोधको जीतकर उस स्थानको प्राप्तकरताहै जिसमें ब्रह्माजीका भी लयहोताहै, वेदांत श्रवण आदि अभ्यास से अज्ञान रहित वैराग्य युक्त सन्तोष क्षमाकी दृढ़ता से काम क्रोधका त्याग, परिपूर्ण काम होना, अहंकार से रहित होना निर्भयता और स्थान रहित होना और मन वाणी देहको आधीन करना यही पवित्र शुद्ध निर्मल सच्चा मोक्षमार्ग है १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे योगआचारवर्णनोनाम एकोत्तरशततमोऽध्यायः १०१ ॥

एकसौ दोका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि इस ब्रह्मपद प्राप्ति के विषय में इस प्राचीन इतिहासको भी कहताहूं जिसमें नारदजी और असित, देवलऋषि का सम्वाद है, नारद जी ने बुद्धिमानों में श्रेष्ठ वृद्ध देवलऋषि को बैठा हुआ जानकर यह प्रश्न किया कि हे ब्रह्मन् यह जड़ चैतन्य स्थावर जंगम जगत् कहां से उत्पन्न हुआ है और प्रलय में कहां समाजाताहै, असित ऋषि बोले कि प्राणियों की बुद्धिवासना से चेष्टित परमात्मा उनकर्म फलके उदयहोने के समय जिन से कि जीवों को उत्पन्न करता है और तत्त्वज्ञपुरुष जिनको आकाशादि पंचभूत कहते हैं चारों युगों का आत्मा जीव बुद्धि से चेष्टावान् होकर उन्हीं पञ्चभूतोंसे जीव मात्रों को उत्पन्न करता है जो कोई पुरुष कहै कि इनपञ्च भूतों से पृथक् है वह मिथ्या है अर्थात् बुद्धि आदि रूप से ब्रह्मही प्रकट होता है और संसार का प्रत्यक्ष होना केवल दर्शनही मात्रहै विचार से गुप्त होनेवाला वह ऐसे प्रकट नहीं है जैसे कि रस्सी में सर्प की भ्रान्ति होती है हे नारदजी इनपञ्च तत्त्वोंको रस्सीमें सर्पकी भ्रांति के समान स्वभावसे आदि अन्त और रूपान्तर रहित मोक्षपर्यन्त नियतरहनेवाला और महत्तत्त्व जो सतोगुण प्रधान प्रकाशरूप सूक्ष्मबुद्धिहै उससे प्रत्यक्षहुआ जानों वहीकाल जीवात्माहै, पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश यह पांचतत्त्वहैं महत्तत्त्व भी भूतभावसे इनमेंही गिनाजाताहै तो उनतत्त्वोंसे श्रेष्ठतम नहीं हुआ, जब कि सीपीमें चांदी कल्पना कीजाती है ऐसी दशामें उस मिथ्या चांदीसे सीपी पृथक् नहीं होती इसीप्रकार सब आत्माही है वास्तवमें तत्त्व नहीं हैं, तत्त्वोंसे श्रेष्ठ न वेद युक्तिसे हुआ न लौकिक अनुमानसे है जो कोई कहै कि तत्त्वों से उत्तम है वह अज्ञानता है उसको सबजीवों में निस्सन्देह वर्त्तमान जानो और यह छओं जिसके कार्य्यरूप हैं उसको असित अज्ञानजानो, यह पांचों तत्त्व और चतुर्युग रूप जीव पूर्व संस्कार अज्ञानआदि रहित और मोक्षपर्यन्त सदैव रहनेवाले स्थावर जंगमजीवों के उत्पत्ति और लयके स्थान यहआठों हैं इन्हींसे उत्पन्न और इन्हीं में लयहोते हैं, यह जीव उन विनाशवान् तत्त्वों को देखकर नाशहोताहै अर्थात् विज्ञान घन जीव इन तत्त्वों से निकलकर उन तत्त्वों के पीछे नष्ट होता है अर्थात् उपाधि के नाशहोने पर शुद्ध आत्माही शेष रहजाता है उसका शरीर पृथ्वीरूप है श्रोत्र आकाशरूप से नेत्र सूर्य्य रूपसे वायु से चेष्टा और जल से रुधिर उत्पन्न होता है आंख, नाक, कान, त्वचा, जिह्वा यह पांचों इन्द्रियों के विषयों का ज्ञान पैदाकरनेवाले हैं इनको सूक्ष्मदर्शी सर्वज्ञ पण्डितों ने जानाहै पंचेंद्री पंच विषय और रूपादि विषय

में पांच प्रकारसे वर्त्तमान इन्द्रियों को देखना सुनना, सूंघना, स्पर्शकरना स्वादुलेना इत्यादि कर्म्मरूपों को पंचतत्त्वही जानो और रूप रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द यह उसी विज्ञान आत्माके गुणहैं वह पांचों इन्द्रियों के द्वारा पांचप्रकार से सिद्ध कियेजाते हैं, फिर उस विज्ञान आत्माके गुण रूप रस शब्द गन्ध स्पर्शको इन्द्रियां नहीं जानती हैं उनको क्षेत्रज्ञ जानता है, अब क्षेत्रसे क्षेत्रज्ञ के विभागको कहते हैं मन इन्द्री समूहसे श्रेष्ठहै उससे श्रेष्ठ चित्तहै चित्तसे श्रेष्ठ बुद्धि और बुद्धिसे भी अधिकतर क्षेत्रज्ञ है जीव प्रथम इन्द्रियों के द्वारा अर्थों को जुदाजुदा जानताहै फिर चित्तसे विचारकर बुद्धिसे निश्चयकरताहै बुद्धिमान् पुरुष इन्द्रियों से प्राप्त होनेवाले विषयों को निश्चय करता है मन, इंद्री समूह, चित्त, आठवीं बुद्धि इन आठों को आत्मविद्याके विचारनेवाले पुरुष ज्ञानेन्द्री कहते हैं आशय यहहै कि बुद्धिको इंद्रियों में गिनने से क्षेत्रज्ञको उपाधि रहित चिन्मात्र स्वरूप दिखायाहै और हाथ पैर गुदा लिंग और मुख यह पांचों कर्मेन्द्री कहलाती हैं इनके काम सबको प्रसिद्ध हैं और छठवां पंच प्राण और बलहै यह सब छः हुये मैंने ज्ञानेन्द्री कर्मेन्द्री और उनके विषय शास्त्रकी रीतिसे अच्छे प्रकारसे वर्णन किये, जब परिश्रमसे थककर इंद्रियों को कर्म्मों से वैराग्य होता है तब मनुष्य इंद्रियों के त्यागसे सोजाता है, जो इंद्रियों के वैराग्य होनेपर चित्तको वैराग्य न हुआ तबउस दशा में विषयों को सेवनकरताहै उसको स्वप्नदर्शन समझे, जो सात्त्विकी राजसी तामसी वासना रूप विषय जाग्रत अवस्था में हैं उन भोगदेनेवाले कर्मों से संयुक्त सात्त्विक आदि वासनारूप विषयोंको स्वप्नदशामें भी कहते हैं अर्थात् जाग्रत वासनाही उनकर्म्मों से उत्पन्न होनेवाली स्वप्नावस्थामें दृष्टआती हैं, सुखकर्म्मोंकी सिद्धि ज्ञान वैराग्य धर्म्म यहसब सात्त्विकहैं सात्त्विक पुरुषकी स्मृति इन असाररूप आनन्द आदि और वासनाओंको स्वप्नमें स्मरण करतीहै, सात्त्विकी राजसी तामसी पुरुषोंकी जो कोई वासना कर्म्मगतिमें नियतहैं उनको स्मरण शक्ति स्वप्नमें यादकरती है, अर्थात् वह स्मृतिरूप ज्ञानभी भोग देनेवाले कर्म्मों के कारण प्रत्यक्ष के समान दृष्टआताहै उनदोनों वासनाओंका सुषुप्तिअवस्थामें लयहोना प्रत्यक्ष है वह सदैव रहनेवाली अभीष्ट है आशय यह है कि सुषुप्ति अवस्थाका सदैव रहनाही मुक्तिहै, पूर्वोक्त चौदहइन्द्री सात्त्विक, राजस, तामस तीनों भाव यह सब सत्रहगुण हैं उनका अठारहवां देहाभिमानी आत्मा जो देहमेंहै वह सनातन भोक्ताहै, क्योंकि जीवों के देहसमेत उक्त सब गुण जिस भोक्तामें रक्षित हैं उसकी पृथक्ता में वह शरीर समेत नहीं हैं किन्तु पंचभूत सम्बन्धी एक समूहहै अर्थात बुद्धिवृत्तिरूप भोक्ताके साथ १९ गुण और शरीर समेत पंचभौतिक बीस गुण हैं आशय यहहै कि जो इनका प्रकाशक

अखण्डज्ञानस्वरूप है वह अनुभव क्षेत्रज्ञ समझो और इक्कीसवां प्राण इनसब समेत देहको धारण करताहै वह प्राण देहके नाशमें अपने प्रभावसे युक्त उस महान्कालका निवासस्थानहै,जैसे किकच्चाघटआदि बनताहै और नाशहोता है इसीप्रकार यहअनुभवप्रारब्ध पुण्यपापके नष्टहोने पर संचितपापपुण्यसे चेष्टावान्होकर समयपर अपनेकर्म्म संयुक्त देहमें प्रवेशकरताहै,यह कालसेप्रेरित क्षेत्रज्ञ जिसका दूसरा देह अविद्या कर्म्म कामसे उत्पन्न है वह अपने पूर्व पूर्व देहोंको छोड़कर एकशरीर से दूसरे शरीर में ऐसे जाताहै जैसे कि पुराने स्थानको छोड़कर नवीन स्थानमें मनुष्य जातेहैं, सिद्धांतको निश्चय करनेवाले ज्ञानी पुरुष शरीर सम्बन्ध से ज्ञात होनेवाली मृत्यु आदि में दुखी नहीं होते हैं वास्तवमें देह और पुत्रादि के साथ सम्बन्ध न होनेपर भी भ्रांति से सम्बन्धदर्शी संसारको इच्छा करनेवाले मनुष्य दुखी होतेहैं—पुत्रादि से असम्बन्धता वर्णन करतेहैं—अर्थात् यह न तो किसी का है न इसका कोई वर्त्तमान है देह में दुःख सुख पैदा करनेवाला यह शरीरी सदैव अकेला रहता है—यह जीवात्मा उत्पन्न नहीं होताहै न कभी नाश होताहै यह कभी विद्या से कर्म के भस्म होनेपर देहको त्यागके मोक्षको भी पाताहै तो भी प्रारब्ध कर्म अवश्य भोगने पड़ते हैं इसको कहतेहैं प्रारब्ध कर्म के नाश होनेपर पापपुण्य रूप देहको त्यागकर वह जीवात्मा जिसके तीनों देह नाशहुये वह ब्रह्मभावको पाताहै ज्ञान से संचितकर्म्म नाश होते हैं पापपुण्य के नाशके लिये सांख्यशास्त्रका ज्ञान उपदेश कियाजाता है उसपुण्यपाप के नाशहोने और उसके ब्रह्मरूप होने पर पण्डित लोग शास्त्र दृष्टी से उस जीवात्मा की परम गतिकोदेखतेहैं क्योंकि एककी कैवल्यमोक्ष दूसरेको दृष्टआनाअसम्भवहै३८॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेनारदअसितसम्वादे द्युत्तरशततमोऽध्यायः१०२॥

एकसौतीनका अध्याय॥

सब अनर्थों का हेतु ज्ञानका नाशकरनेवाली तृष्णा और त्यागकेद्वारा ममताके त्याग और नाशके विषयमें॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह राजलक्ष्मी के निमित्त पापकर्मी निर्दयी हमलोगों के हाथ से भाई चाचा ताऊ पुत्र पौत्र जाति सुहृद् इत्यादि सब मारेगये जो यह तृष्णा अर्थसे उत्पन्न होनेवाली है उसको कैसे दूरकरूं हम सबलोग लोभसे पापकर्म्मी हुये, भीष्मजी बोले कि इसस्थानपर एक प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसको राजा विदेहने प्रश्न करने वाले माण्डव्यऋषिसे कहाहै, कि बड़े आनन्द का स्थानहै कि मैं अच्छे प्रकारसे प्रसन्नहूं किसी का

कुछ नहींहै इसी हेतु से मिथिलापुरी के अग्नि से भस्महोने पर मेरा कुछ भी नहीं भस्म होताहै निश्चय करके ब्रह्मलोकके अन्त तक प्राप्त होनेवाले विषय विवेकी पुरुषोंकी दृष्टि से महादुःखदायी हैं वह अप्राप्त होने पर भी अज्ञानी लोगों को सदैव मोहित करते हैं लोकमें जो स्त्री आदिका काम सुखहै और स्वर्ग सम्बन्धी महासुखहै वह सब मिलकर उस सुखकी सोलहवीं कलाकेभी समान नहीं है जो कि ईर्षाके दूरहोने से प्राप्त होताहै, जिस प्रकार बड़ेहोने वाले बछड़ेका सींग बड़ा होताहै उसी प्रकार वृद्धिपाने वाले धनसे ईर्षा भी बढ़तीहै, जब कुछ वस्तु मेरी है इस प्रकार कल्पितहोतीहै फिर वही वस्तु नाश होनेपर दुःखका मूलहोतीहै, इच्छाओंके अनुसार कर्मकर्त्ता न होना चाहिये क्योंकि इच्छाओं में प्रवृत्त होना निश्चय करके दुखदायी है धनको पाकर दूसरोंका उपकार करना योग्यहै परन्तु देहसम्बन्धी इच्छा और धर्म्मोंको त्याग करे ऐसा ज्ञानी पुरुष सबजीवों में आत्मा के समानहोताहै अर्थात् सबका सुखचाहै किसी का दुःख न देखे वह निवृत्त धर्म्मी शुद्धअन्तःकरणी ज्ञानी पुण्यपापोंके समूहको त्यागकरताहै,सत्य, मिथ्या, हर्ष,शोक,प्रिय,अप्रिय,भय निर्भयता आदिको अच्छेप्रकारसे त्यागकर सुखदुःखआदिसेरहित निर्विकल्प समाधिमें नियतहोय, जोनिर्बुद्धियोंसे त्यागना कठिनहै वहजरारहित प्राणों के सन्मुख रहनेवाला महारोग ईर्षारूपहै उसकेत्यागनेवाले पुरुषको आनन्द होताहै, धर्म्मात्मा पुरुष अपने सदाचारको चंद्रमा के समान उज्वल नीरोग देखता सुखपूर्वक इसलोक और परलोक में कीर्त्तिको पाताहै, माण्डव्यऋषि राजाके इन वचनों को सुनकर प्रसन्नहुये और उसके वचनोंकी प्रशंसाकरके मोक्षमार्ग में प्रवृत्तहुये युधिष्ठिर बोले कि सबजीवोंके भयदेनेवाले इसकालके भ्रमण होनेपर किस कल्याणको प्राप्तकरे, भीष्मजी बोले कि इसस्थानपर इस प्राचीन इतिहासको भी कहताहूं जिसमें कि पुत्रके साथ पिताका प्रश्नोत्तर है हे कुन्तीनन्दन वेद पाठया जपमें प्रवृत्त किसी ब्राह्मणका पुत्रथा वह शास्त्र स्मरण रखने वाली धारणा बुद्धिका स्वामी मेधावी नामथा मोक्षधर्म्म में पण्डित उस बेटेने वेदपाठ और जपकरनेवाले मोक्षधर्म्म रहित अपने पितासे प्रश्नकिया कि हेतात धैर्य्यवान् पंडित मनुष्य बहुत विषयों को जानकर क्या करे क्योंकि मनुष्योंकी आयु बहुतशीघ्र नष्टहोजाती है और योगको भी यथार्थ ऐसे कहोजैसे कि मैं क्रमपूर्व्वक करसकूं पिताने कहा कि हेपुत्र ब्रह्म चर्यसे वेदों को पढ़कर पितरोंकी पवित्रताके लिये पुत्रोंको उत्पन्नकरो अग्नि यों को स्थापन करके बुद्धिके अनुसार यज्ञोंका करनेवाला वनमेंजाकर मुनि वृत्तीहो वे फिर ऐश्वर्यवान्होकर गृहस्थाश्रममें प्रवृत्तहोवेपुत्रने कहा किचारों ओर से इसप्रकार लोक के घिरजाने और घायल होने और सफल वस्तुओं

के गिरनेपर आप कैसे घोर वचन कहतेहो, पिताने कहा कि लोक कैसे घायल या मृतकहै किससे घिराहै और कौन सफल होकर गिरते हैं हे पुत्र मुझ को क्यों डरातेहो, पुत्र बोला कि यहजगत् मृत्युसे घायल या मृतकहै और बृद्धावस्थासे घिराहै और यह दिनरात गिरते हैं इनसबको तुम कैसे नहीं जानतेहो, जब मैं भी जानताहूं कि मृत्यु नियत नहीं होतीहै तबज्ञानसे अपने हितको करता हुआ किसप्रकारसे मैं बाट देखूंगा, जब कि प्रत्येक रात्रि के व्यतीत होनेपर आयुर्दा न्यूनहोतीजातीहै तब थोड़े जलमें व्याकुल मछलीके समान कौन सुखको पावेगा, वह मृत्यु फूलोंके समान विषयों को प्राप्तकरने वाली और अन्य विषयोंमें प्रवृत्तचित्त मनुष्यको प्राप्तहोती है चाहे किसी ने मनोरथोंको सिद्ध नहीं भी कियाहो परन्तु घड़ीभरका भी अवकाश न देगी इससे उचितहै कि जो काम कलकाहै वह उसीक्षणकरे अर्थात् विलम्बकभी न करे जो कल्याण की बातहो उसको अभी करडालो बड़ासमय तुमको उल्लंघन न करजाय कौन जानताहै कि अब किसकी मृत्युका समयहै २८ मृत्यु कामपूरे न करनेपरही आकर्षण करलेती है मृत्युका कोई ऐसाकारण नहीं विदितहोता जिससे कि जीवनका समय विदितहो इससे धर्म्मकरना ही ठीकहै धन पुत्र स्त्री आदिमेंही प्रवृत्त न रहै धर्मके समय धर्म्महीं निश्चय करे जिससे कि इसलोक परलोक दोनों में आनन्द पावे जब मृत्यु लेजाती है तब इसके योग्य अयोग्य चित्तके मनोरथ रहिजाते हैं विषयोंमें लगे और मनोरथोंके पूर्णन करनेवाले मनुष्योंको मृत्यु ऐसे निर्मूल करतीहै जैसे कि जलकाबेग बनस्पति और कच्चे स्थानों का विध्वंस करता है अथवा जैसे भेड़िनी भेड़को उठालेजातीहै वैसेही मृत्यु सबके बीचमें से जीवों को उठाले जाती है यह किया यहनहीं किया यहकाम करना है ऐसे विचारवाले लोगों को और जिसने अपने कर्म्मोंका फल नहींपाया उन खेत दूकान घरमें आसक्त पुरुषोंको और सबल निर्ब्बल ज्ञानी अज्ञानी पण्डित मूर्ख इच्छा करनेवाले पुरुषोंको और जरा व्याधिसे ग्रसित महापीड़ित कोभी मृत्यु ग्रासकरजातीहै सिवाय सत्यब्रह्मके सबस्थावर जंगम जड़चैतन्य मृत्युकेही ग्रासहैं, जो बनहै वही देवताओंका निवासस्थानहै यहश्रुतिहै और ग्रामादिकमें निवास करके पुत्र स्त्री धनआदि में प्रीतिहै वही इसपुरुषके बन्धनकी रस्सीहै श्रेष्ठ लोग इस रस्सीको तोड़करजाते हैं और निकृष्टकर्म करनेवाले इसको नहीं तोड़ते, जब पुरुष मन वचन कर्म्मकेद्वारा अपने धनजीविन केनाशहोनेपरभी किसी जीव मात्रको नहीं मारताहै वह कभी अन्यजीवोंके हाथसे नहीं माराजाता है इस कारण सचेव्रत और आचारका रखनेवाला सत्यवक्ता जितेन्द्री समदर्शी पुरुष सत्य ब्रह्मकेही द्वारा मृत्युका जीतनेवाला होताहै अमृतता और मृतता दोनों

शरीरहीमें नियतहैं अज्ञानसे मृतता अर्थात् मृत्यु और ज्ञानसे अमृतता अर्थात् अविनाशताको प्राप्तहोताहै सो अहिंसायुक्त कामक्रोधरहित सत्य में आश्रित अविनाशीके समानमैं सुखसे मृत्युकोत्यागूंगा, क्योंकि शांतियज्ञमें प्रीतियुक्त जितेन्द्री ब्रह्मयज्ञमें नियत मनकर्म्मवाणीका यज्ञकरनेवाला मुनिहोकर उत्तरायण समयमें ऐश्वर्य्यवान् होऊंगा मुझसरीका समझाहुआ मनुष्य हिंसात्मक पशुयज्ञोंको कैसे करेगा, आत्मा में आत्माहीसे उत्पन्न आत्माही में निष्ठारखनेवाला सन्तानरहित मैं आत्मयज्ञ कर्त्ता होऊंगा हेपिता सन्तान मुझको पारनहीं लगावेगी जिसके मनवाणी सदैव सावधान हैं और तप त्याग और योगभी होवे वह उनकेद्वारा सब पाताहै विद्याकेसमान नेत्र और फल नहीं है संसार की प्रीति के समान दुःख नहीं और त्याग के समान सुख नहीं है ब्रह्मकी एकयता और अविनाशी होना इसके विशेष ब्राह्मण का दूसरा धर्म्म नहीं है हे पिता सदाचार में प्रवृत्त, दण्ड विधान, साधुता और सफल कर्म्मों से वैराग्यवान् होकर जब तुम मरोगे तब तुमको धनबांधव स्त्रियों से क्या प्रयोजन है इससे तुम हृदयस्थान में विराजमान आत्माकी इच्छाकरो भीष्मजी बोले कि हे राजा युधिष्ठिर पिताने पुत्रके ऐसे वचनोंको सुनकर वैसाही किया तुम भी इसीप्रकार सच्चेधर्म में प्रवृत्त होकर इसी कर्मको करो ५३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेपूर्वार्द्धेपितापुत्रसम्वादेत्र्युत्तरशततमोऽध्यायः १०३ ॥

इतिपूर्वार्द्ध समाप्तम् ॥

अथ महाभारत भाषा ॥

शान्तिपर्व्व मोक्षधर्म्म ॥

उत्तरार्द्ध प्रारम्भः ॥

एकसौचारका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि ज्ञानीपुरुष कौनसे आचारज्ञानसे भरेस्वभाव और उन्नत स्थानका ज्ञाता होकर ब्रह्मरूप स्थानको पाता है क्योंकि पराप्रकृति रूपांतर दशासे रहित है, भीष्मजी बोले कि मोक्षधर्म्म अर्थात् अध्यात्म विद्यामें प्रीतिमान् वह हितकारी जितेन्द्री पुरुष उस प्रकृतिसे भी ऊंचेराग द्वेष रहित रूपांतर अवस्था से पृथक् एक रसवाले स्थानको पाताहै जोकि कामरहित घरसे बाहर मोक्ष आश्रम में वर्त्तमान होवे और निष्पाप संन्यासी मनवाणी से भी दूसरे को दोषी न करे आगे पीछे कभी किसी स्थानपर किसी के अवगुण को न कहे हिंसारहित सूर्य्यके समान एकत्र स्थिर निवास न करे ईर्षा द्वेषसे पृथक् सबकी कठोर और असह्यबातोंको सहै कभी अहंकार न करे क्रोध उत्पन्न करानेवाले से भी प्यारेही वचन बोले कोई गाली भी दे तबभी उसकी भलाईकरे जन समूहोंमें उनकी इच्छानुसार वर्त्तावकरे उनकी इच्छाके विरुद्ध कोईकाम न करे भिक्षाके निमित्त बहुत घरोंमें न घूमेप्रथम निमन्त्रित होकर किसी के यहां भोजन के लिये संन्यासी को जाना अयोग्य है किसी दशामें भी अपने मुखसे कठोर वचन न कहे ऐसा दयालुहो कि अपने मारनेवाले पर भी प्रहार न करै निर्भयरहै और अपनी बड़ाई न करै जब घरमें धुआं न होताहो अग्नि न जलती हो मनुष्यों ने भोजन न करलियाहो और लोगों का आनाजाना बन्द होगयाहो और भोजनपात्र हाथ में हो तब मुनि भिक्षाको चाहे केवल प्राण यात्राकेही योग्य भोजनकरे भोजन के पूरे न होने में हठ न करे न प्राप्त

होने में अपनी हानि न समझे न लाभहोने में प्रसन्नहो सबके समान माला चन्दन आदिको भी न चाहै प्रतिष्ठित होकर भोजन न करे इस प्रकारका संन्यासी आदर के लाभकी प्रशंसा न करे अर्थात् (निन्दाकरे) परंतु अन्य के दोषों की निन्दा न करे न किसी गुणकी प्रशंसाकरे सदैव सब से पृथक् आसन बिछावे निर्जनस्थान पेड़ की खोह वन गुफा और दूसरे से अज्ञात अथवा श्मशान भूमिको पाकर फिर दूसरे किसी स्थान में प्रवेश न करे योगके अनुकूल संग से ब्रह्मरूपहोजाय और देवयान पितृयान गति से रहित रूपांतर अवस्था बिनाअच्छेबुरे कर्मोंको न चाहनेवाला जापक, शांत, सन्तोष, इन्द्रीनिग्रह, निर्भयता मौनता, वैराग्य, सबको आत्मारूप जानना कच्चे अन्न फलादिसे निर्वाहकरना चित्तबुद्धि से शुद्ध और अल्पाहारी, मनवचन क्रोधके वेगका सहना कामादिका रोकना रागद्वेष और निन्दास्तुतिमें समान बुद्धि इत्यादि गुणयुक्त, उदासीन, अशंक, गृहस्थ, वानप्रस्थके समीप न ठहरनेवाला, स्त्रीसेअशक्त, स्थानरहित, समाधि में नियतहोवे किसी समयपरभी गृहस्थ और वानप्रस्थकेघर में न ठहरे अनिच्छा लाभ में संतोषयह विज्ञानी संन्यासी सिद्धलोगों का मोक्षसाधन है इससाधन में अज्ञानी लोग दुःख पाते हैं २१॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्म्मे उत्तरार्द्धचतुरधिकशततमोऽध्यायः १०४॥

एकसौ पांचका अध्याय॥

युधिष्ठिरने कहा कि हे पितामह सब मनुष्य हमको धन्यधन्य कहते हैं परंतु हमारी समान संसार में कोईभी दुःखी नहीं है क्योंकि मनुष्यों में जन्म पाकर लोकों के उत्पन्नकरनेवाले देवताओं में दुःखदेखागया है तो हम क्यों उसदुःखदायी संन्यास को करें इस कारण इनदेहोंका पानाही आपत्तिकामूल है और पंचप्राण,बुद्धिमन और दशोंइन्द्रियां यही सत्रह संसारके बन्धनहैं और कामक्रोध लोभ भय स्वप्न यह पांच योगदोष हैं और शब्दादि विषय और सत्त्वादि तीनोंगुण और पंचसूक्ष्मतत्त्व, अविद्या, अहंकार और कर्म्म यह आठकर्म्म हैं इनसबसे पृथक् व्रत परायण मुनिलोग फिर जन्मको नहींपाते हैं तो हमलोग कैसे राज्यको त्यागकरजायँगे अर्थात् संन्यास आश्रम को कैसे करसके हैं, भीष्मजी बोले कि हेयुधिष्ठिर दुःखकाअन्त है अर्थात् दुःखके नाशकोही मोक्षकहतेहैं क्योंकि सब दृश्यपदार्थ और पुनर्जन्मादि नाशमान्हैं और सब ऐश्वर्य्य भी चित्त के लगाने से मोक्ष के हानिकारक दोष हैं सो हे धर्मज्ञ तुम इनसब के विशेष अपने शमदमादि के अभ्यासरूप उद्योगही से समयपर मोक्षको पाओगे,हे राजा यहजीवात्मा सदैवके पापपुण्य और सुक्ष्म

का स्वामी नहीं है और उस हर्ष शोक जन्य राग द्वेष रूप अज्ञान से भी रुकाहुआहै इसकारण दैवसेउत्पन्न सुखदुःखादि से व्याकुल न होनेवाला पुरुष मोक्षके निमित्त उपायकरे, जैसे कि रूपरहित वायु कृष्ण रक्तादि धूलोंसे मिलकर उसीरंगसे आकाश को रंगीनकरता दृष्टि पड़ता है उसीप्रकार अविद्या रूप उपाधि से संयुक्त समस्त जीव अपने २ कर्म्मों से रंगीन होकर त्रिगुणातीत अपने मुख्य अन्तर्य्यामी को भी व्याप्तकरके देहों में घूमते हैं, जब जीवात्मा ज्ञान अज्ञान से उत्पन्न अन्धकार को दूरकरताहै तब सनातन ब्रह्म का प्रकाश होताहै उस सनातन ब्रह्म को मुनि लोग कर्म्म उपासनादि उद्योगके बिनाही सिद्धहोना कहते हैं अर्थात् जैसे कि कोई पुरुष अपने कण्ठमें पड़ी हुई मणि को भूलजाताहै और फिर विचार से उसको पाता है उसीप्रकार का यह ब्रह्मभी है इसीहेतु से जो पुरुष जीवन्मुक्त हैं उनका सेवन तुम को और सब संसारको करनायोग्य है अर्थात् उनकी उपासना से ब्रह्मज्ञान प्राप्त होता है इसी निमित्त सब ब्रह्मर्षि लोग ब्रह्मकी उपासना करते हैं, हे भरत वंशी जिस प्रकार पूर्व्व समयमें ऐश्वर्य्य के नाश होने पर वृत्रासुर ने इसी विषय में अपने चरित्रों को वर्णन किया उसको तुम चित्तसे सुनो कि उस पराजित असहाय राज्य हीन बुद्धिमें सावधान शत्रुओं में शोचरहित वृत्रासुर से शुक्रजी ने कहा कि हे दैत्य तुझ पराजित की कोई भी वस्तु नहीं है तब वृत्रासुरने कहा कि मैं सत्य और तपके बलसे जीवों के जन्म मोक्ष को निस्सन्देह जानकर न हर्ष करताहूं न शोक करताहूं, चारों युगसम्बन्धी जो पुण्य पापनाम धर्म्म अधर्म्महैं उनसे चेष्टावान् और विवसजीव नरकमें पड़ते हैं और सन्तोष गुण संयुक्त जीवोंको ज्ञानियोंने स्वर्गके योग्य कहा वह उस पापपुण्य की संख्या रखनेवाले कालको व्यतीत करके कुछ शेष बचेहुये पाप पुण्य रूपी काल से बारम्बार जन्म को लेते हैं और इच्छारूपी बन्धन में बँधे विवसजीव हजारों पशुपक्षियों के जन्मोंको पाते हैं इसीप्रकार सबजीव मात्र चक्रमें फिरते हैं और मैं इच्छासे रहित असुरारि ईश्वरका जाननेवालाहूं जैसा जिसका कर्म्म है उसीप्रकार का उसका देह वा ज्ञान होताहै यह शास्त्र से निश्चय है कि पूर्व्वकेही कर्म्मोंसे देव, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि जन्मको और स्वर्ग, नरक, सुख, दुःख आदि प्रिय अप्रियको प्राप्त करते हैं सबलोकों के जीव यमराजसेही दण्ड पाकर जन्मको पाते हैं सबलोग पूर्व्व में प्राप्त होने वाले मार्गको सदैव प्राप्त करते हैं अर्थात् स्वर्ग नरकमें अपने कर्म्मों के फल सुख दुःखको पाकर फिर जन्म लेतेहैं, वह समय चारों युगमें उत्पन्न होने वाले पाप पुण्य की संख्यासे अंकित है और उत्पत्ति स्थितिका मुख्य स्थान है तात्पर्य्य यहहै कि जो पुरुष निष्काम कर्म्म करताहै वह इस मार्गमें कभी

नहीं आता है यह बातें सुनकर भगवान् शुक्रजी ने उस असुर के ज्ञान से आश्चर्यित होकर उसकी परीक्षा के निमित्त उसको उत्तरदिया कि हे बुद्धिमान् वृत्रासुर तुम किस कारणसे असुरभाव की निन्दा करनेवाले वचनोंको कहतेहो वृत्रासुरने कहा कि यहबात आपके और अन्य ऋषियोंके प्रत्यक्ष है जैसे कि मुझ विजयके लोभीने पूर्व्वकालमें बड़ी तपस्याकी थी, मैंने अनेक ऋषि गन्धर्व्वों को विवसकर अपने तेजसे तीनों लोकोंको व्याप्त करके नष्ट किया और सब निर्भय जल थल आकाशचारी जीवोंको वशमें किया और तप के बलसे बड़े २ ऐश्वर्य्योंको पाया हे भगवन् वह सामान ऐश्वर्य्य तेज बल अपने कर्म्मों से नाशवान् हुआ इसी हेतुसे धैर्य्य में नियत होकर शोच नहीं करताहूं फिर मैंने उस षडैश्वर्य्यवान् पापोंके दूरकरने वाले युद्धके इच्छावान् महात्मा ईश्वरको इन्द्रके साथमें देखा वही सबकी उत्पत्ति लयका आश्रय और सबका अन्तर्य्यामी है आदि अन्त रहित सर्व्वव्यापी है हे ईश्वर निश्चय वह मेरे उसकर्म्म के शेषफल का उदय था जिसके विषयमें कि आप से पूछना चाहताहूं कि बड़ा ऐश्वर्य्य किस ब्राह्मणादि धर्म्मों में नियतहै और उत्तम ब्राह्मय ऐश्वर्य्य फिर कैसेसदैव वर्त्तमान रहताहै अथवा दूरहोताहै,जीव किससे जीवते हैं जिसमें कि फिर बुद्धिके अनुसार चेष्टा करतेहैं अर्थात् कौन अन्तर्य्यामी है और जीव किस उत्तम फलको पाकर अर्थात् ज्ञानको पाकर ब्रह्मरूप होजाताहै, अथवा किस यज्ञादिकर्म्म या ज्ञान उपासना से उस फल का पाना सम्भवहै हे देव यहसब आप मुझे समझाके कहिये हे राजा युधिष्ठिर उसके उत्तरमें जो शुक्रजी ने वर्णन कियाहै उसको तुम चित्त लगाकर मुझ से सुनो ३४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेपंचाधिकशततमोऽध्यायः १०५ ॥

एकसौछ:का अध्याय ॥

शुक्रजी बोले कि उस षडैश्वर्य्यवान् ज्योतिरूप अनेक भावभेद से प्रकट होनेवाले परमेश्वरको नमस्कारहै जिसकी भुजाओं में आकाश समेत पृथ्वी तल वर्त्तमानहै और जिसका मस्तक अनन्त मोक्षका स्थानहै उस उत्तमसर्वव्यापी विष्णुभगवान्का माहात्म्य मैं तुझसे कहताहूं, यहदोनों इसप्रकार कहते ही थे कि इतनेमें धर्मात्मा सनत्कुमारजीभी संदेहके दूरकरनेके लिये वहां आपहुंचे और वृत्रासुर और शुक्रजीसे अभ्युत्थान पूर्वक पूजितहोकर वहमहात्मा सनत्कुमार बड़ोंके योग्य उत्तमोन्नत आसनपर विराजमानहुये और शुक्रजीने उनसे यहवचन कहा कि हे महाज्ञानी आप इस दानवेन्द्र को विष्णु भगवान्का उत्तम माहात्म्य सुनाइये इतनीबातके सुनतेही उन्होंने विष्णु के माहात्म्य

युक्त अर्थवान् वचन उस बुद्धिमान् असुरेन्द्र से वर्णनाकिये कि हे परंतपदैत्य जिस सर्वव्यापी विष्णु में सबसंसार नियत है उस के माहात्म्य को सुनो कि वही सब स्थावर जंगम जीवों को उत्पन्नकर समय आनेपर अपने में ही लय करताहै फिर समयपर प्रकट करता है यह तो निमित्तका वर्णनहै और इसी में लयहोना और प्रकटहोना यही उपादान है इत्यादि गुणयुक्त विष्णुको जानना कठिन है इसकी प्राप्ति ज्ञानी के तपऔर यज्ञादि से असम्भव है यह केवल इन्द्रियोंके संयम अर्थात् योगसेही प्राप्तहोसक्ताहै जो पुरुषोत्तम बाह्याभ्यन्तर कर्म्मों में अर्थात् यज्ञादि शम दमादि में चित्त से नियत है और बुद्धि से उन यज्ञादिको निर्म्मल करता है अर्थात् यज्ञादि से अपनीचित्तशुद्धी को करता है वहदेहके अभिमानकोत्याग आत्मलोक में प्राप्तहोकर मोक्ष को प्राप्तहोता है जैसे कि सुनार चांदीको अग्नि से शुद्धकरता है उसीप्रकार जीवात्मा अपने कियेहुये बहुतसेयज्ञ और शमदमादि से सैकड़ोंवर्ष में अपनेदोषों से निवृत्त होकर पवित्रहोताहै और एकहीजन्म में बड़े २ उपायोंसे सिद्धीकोपाताहै जैसे अपनेदेहके मैलको थोड़े जल से धोता है उसी प्रकार बहुतसे उपायों से दोष निवृत्तहोते हैं१२जैसे कि थोड़ेपुष्पोंके समीपवर्त्तमान सरसों अपनी गन्धको नहींत्यागती उसीप्रकार निर्मल सूक्ष्म ब्रह्मकादर्शनहै और बहुतपुष्पों के समीपवाली सरसों जैसे अपनी स्वाभाविक गन्धको त्यागती है उसीप्रकार सैकड़ों त्रिगुणात्मक दोष प्रसंगी पुरुषों के बुद्धि और अभ्यास से उत्पन्न हुये उपायों से दूरहोते हैं हे दानव जैसे उत्पन्न होनेवाले जीव कर्म्म से प्रीति युक्त वैराग्यवान् भी कर्म्म के रागादि विषयों को प्राप्त करते हैं उसको सुनो, कि जो आदि अन्त रहित पापोंकानाशक सबका आश्रयपरमात्मा नारायण है वही सबस्थावर जंगमका उत्पन्न करनेवालाहै उसकी सर्वात्मता कहनेको नौप्रकार के गुणोंकी उत्पत्तिको कहते हैं वही सब देहधारियों में पंचतत्त्वात्मक होने से क्षर और जीवात्मारूप से अक्षर कहलाता है और मनसहित दशोंइन्द्रियां इनग्यारहरूपोंसे जगतकी रचनाकरके अपनेमेंही लयकरलेताहै एकता सिद्ध करनेकेलिये सब सृष्टिको नारायणकाही अंग कहते हैं अर्थात् उस के चरण पृथ्वी, मस्तकस्वर्ग, दिशाभुजा, आकाश कान, सूर्यनेत्र, चित्तचन्द्रमा, ज्ञान में उसकी बुद्धिकोजानो रसजलमें और सबग्रह उसकी भृकुटीके समीप हैं और नेत्रोंके प्रकाशमें नक्षत्रचक्रहै दोनों चरणोंमें पृथ्वीहै और रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण नारायणकेरूप हैं और यही जगदात्मा नारायण आश्रमोंको जप आदि कर्म्मका और संन्यासधर्म्मका स्वरूपफल है अर्थात् उसका मिलनाही मोक्षहै वेदोंकेमन्त्रआदि उसके शरीररोमहैं और प्रणव रूप सरस्वतीहै और बहुतसे वर्णाश्रमोंमें नियत बहुतप्रकारकाधर्म आत्मदर्शनरूप हृदयमें वर्त्तमान

यहीब्रह्मधर्म्म सबसेश्रेष्ठहै वही तपवही कृच्छ्र चांद्रायण आदिव्रतहै वहीसत्य
सत्य जगत्को पैदाकरताहै वहीसब वेदशास्त्र और ग्रहादिसे संयुक्त सोलह
ऋत्विज्वालायज्ञहै वहीब्रह्मा वहीविष्णु वहीमहादेव वहीअश्विनीकुमार वही
इन्द्रवरुण कुवेरभीहै यहसब उसीएकके अंगीहैं वहसबको विज्ञानवृत्तीसे देख-
ताहै वही अद्वैत सबमें प्रकाश कररहाहै इस ब्रह्मकी प्राप्ति अत्यन्त कठिनहै इस
को सुनो जितनेकालमें सृष्टिकीउत्पत्ति और लयहोती है उसको कल्पकहतेहैं
और बहुतसे जीव हज़ारों कल्पतक जड़रूपहोते हैं और बहुतसे आनंदसे चर
रूप विचरते हैं हे दैत्य यह असंख्यबावड़ी इससंसारकी उत्पत्ति लयको प्रकट
करतीहैं यहप्रत्येक बावड़ीपांचसौ योजनलम्बी एककोसओंड़ी चारकोसचौड़ी
अगम्य वृद्धियुक्तहो ऐसी बावड़ीके जलको बालकीनोक से प्रतिदिन एकबार
जलकी बूंदनिकालीजाय और उस बूंदके निकलनेसे जितने कालमें उनका
जल निबटे उतनेकालमें प्रलयहोना समझो इस प्रकारसेभी संसार में एकही
जीविका लयहोताहै अर्थात् एकजीवकेमुक्तहोनेपर अथवानाशहोनेमें असंख्य
जीवहोतेहैं इस वर्णनसे किसी दशामें भी संसारका नाशनहींहै, जीवात्माके
छःवरण परम प्रमाणरूपहैं पहिला कृष्णवरण तमोगुणकी विशेषता और बाकी
के दो गुणकी परस्पर में प्रकटहोनेवाली कमी और बराबरी यह तोजड़जीव
स्थावरादि हैं, दूसरा धूम्रवरण और बाकी के दोनों गुणोंकी न्यूनाधिकता यही
पशुपक्षीहैं, तीसरा रजोगुणकी अधिकता नीलवरण और शेषदोनों गुणों की
कमीबराबरी यहीमनुष्यादिहैं, मध्यमवरण पूर्वके प्रत्येक दोदोगुणकी न्यूनाधि
कतासे प्रकट होनेवाले शमदम आदिगुण रक्तबरणहैं,वह प्रवृत्ति मार्गवालोंके
निमित्त सुखरूप हैं, बड़े साहसी ज्ञानियों के सतोगुणकी आधिक्यता और
शेष दोनों गुणों की परस्परकी न्यूनाधिकता स्वर्गरूप सुखदायी है, सतोगुण
श्वेत, रजोगुण लाल, तमोगुणका कालारंग है इनतीनों की न्यूनाधिकतासे
अन्य पीत आदिरंग उत्पन्न होते हैं हे दैत्य इनसृष्टियों में शुक्लनाम कौमार
वर्ग रागद्वेषसे पृथक् होनेके कारण निर्मल पापरहित शोकसे पृथक् मोक्षको
साधन करताहै परन्तु वह बहुतही कठिनता से प्राप्तहोताहै अर्थात् यह जीव
इन योनियों से उत्पन्न हजारों जन्मों को पाकर सिद्धिको पाता है उसका
वर्णन करतेहैं—इन्द्र देवताने जिसश्रेष्ठ शास्त्रके द्वारा जिस अनुभव आत्मारूप
गतिका वर्णन किया वही गतिरूप वरण धारण करने वाले संसारकाहै इस
प्रकार से वह वरण उसचारों युगों के रूपजीव से उत्पन्न होताहै आशय यहहै
कि धर्म्म में प्रीतिमान धर्महीका आलम्बन करने वाला अधर्म्मरहित अधर्म्म
सेही प्रीतिमान जीव इनचारों रूपसे चारोंयुगका स्वरूपहै और पूर्वसंस्कारके
कारण गुणोंमें प्रवृत्त होताहै और हेदैत्य यहां जीव पंचकर्म्मेन्द्री पंचज्ञानेन्द्री

चारअभ्यन्तरेन्द्री इन चौदहों के प्रयोजन से लाखोंहोजाते हैं और अर्थों के विभागसे भिन्नवृत्ति भी होतीहै उनसतोगुण प्रधान चौदह इंद्रीरूपसे जीवोंका ऊपरनीचे और सब ओरहोना अथवा पृथक् होनासमझो, अब सतोगुण प्रधान न होने से दोनोंको कहतेहैं—जड़भाव होनेवाले कृष्णवरणकी अधोगतिहै वह कृष्णवरण जीव नरक देनेवाले कर्म्म में प्रवृत्तहोता है इसी हेतु से नरकका भोगनेवाला होताहै ऐसेही उनचौदह इंद्रीके कारण कुमार्ग में चलने वालेका निवासभी नरकमें होताहै और बहुत कल्पतक रहताहै फिर वह जीव एकलाखवर्ष घूमकर धूम्रवर्ण पशुपक्षियों में जन्मको पाता है शीतोष्णता से दुखी सब ओरको भय और कालको देखनेवाला जीव उस योनि में निवास करताहै और पापके भोगके पूरेहोने पर विवेक बुद्धिसे जब वह सतोगुण से संयुक्त होकर तमोगुण प्रवृत्तिको दूरकरताहै तब अपनी बुद्धि से कल्याण के निमित्त उपाय करताहै वह लालवरण अर्थात् अनुग्रह स्वर्गशमदमादि गुणों कोपाताहै और सतोगुण से पृथक्होने में नीलवर्ण मनुष्यके जन्मको पाकर नरलोकमें आवागमन करताहै, वह जीव वहांपर एक कल्पतक अपने कर्म्म जन्मबंधन से खेदको पाताहै वहां ऊपरचढ़ने वाला वह जीव सौकल्पके अन्त होनेपर पीतवर्ण देवभावको पाता है अर्थात् सौकल्पतक कभी मनुष्य कभी देवता होताहै, हे दैत्य पीत वर्णवाला देवता हजारों कल्पों में भ्रमण करता हुआ भी विषयों से बँधाहुआ प्रत्येक कल्पमें प्राप्तफलोंको वास्तवमें नरकनाम स्वर्गमें भोगता गतियोंमें घूमता नियत होता है वह सबगति संख्यामें उन्नीस हजार हैं इस निमित्त इस जीवको नरक से अर्थात् भोग देनेवाले कर्म्म से जुदाजानो आशय यह है कि स्वर्गभी नाशवान् है और दूसरे जन्म में भी यही दशाहै इसी कारण पक्षियोंके जन्मके समान देवभाव भी भोग भूमिके होने से त्यागके योग्यहै वह जीव लोकमें सदैव विहार करताहै उससे छूटकर मनुष्य देहको पाताहै फिर देवभावको पाताहै पांचों इन्द्री मनबुद्धि चित्त यह आठों अपने अर्थोंके प्रत्यक्ष और लयके कारण हैं और अर्थों के विभाग से सैकड़ों होजातेहैं उन प्रत्यक्ष और लयादिको वह पाताहै जोकि नरलोकोंमें नियतहै वह इससंकल्पसे उत्पन्न प्रत्यक्ष और लयके कारण कलियुगसे भ्रष्टताको पाकर पृथ्वीपर सबसे छोटे वृक्षादिके रूपमें जन्म लेताहै, अब मुक्तिके उपायको कहते हैं—वह मोक्षका चाहनेवाला जोकि सातव्यूहरखनेवाले दिव्य सात्विक शमदमादि की वृत्तियों के कारण सैकड़ों वृत्ति रखनेवाले हैं उन में आश्रित होकर प्रथम लाल वर्ण अर्थात् शमदम आदि गुणों में अच्छेप्रकार से प्रवृत्त होताहै फिर पीतवर्ण देवभाव को पाता है फिर बालकके समान शुक्लवर्ण रागद्वेषसे रहित होताहै फिर इसी शुक्लमार्ग में दौड़ताहै वह अष्ट-

पुरियों से उत्तम अर्चितम लोकों को पाताहै, आशय यहहै कि धूम्रमार्ग से चन्द्रलोककी प्राप्ति होताहै वहीअर्चित और उससे भी ऊंचाब्रह्मलोक अर्चितर कहाता है और उससे श्रेष्ठतर केवल ज्ञानसेही प्राप्त होनेवाला योगफलरूप अर्चितम है, ब्रह्मज्ञानी इन आठोंको चित्तसे रोकते हैं इनके भी भेद पूर्वोक्त रीतिके अनुसार छःहजार होजाते हैं अर्थात् वह अज्ञानदृष्टि से पृथक् २ भी ज्ञानियों के केवल चित्तरूप हैं हे महानुभाव शुक्लवर्णकी जो गतिहै वह जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति इन तीनों दशाओं की रोधकरूप है अर्थात् तीनोंदशाओं की रोधकता तुर्यानाम अवस्था है क्योंकि उपाधि रहित होनेसे उसकी प्राप्ति नहीं कहसक्ते, इसप्रकार से जीवन्मुक्त पुरुष के भोग प्रारब्ध कर्मको जो कि हजारों प्रत्यक्ष और लयका रखनेवाला और अनिच्छासेही इसदेहमें निवास करताहै और योग ऐश्वर्य्य से प्राप्त दिव्यभोगों के त्याग करने में असमर्थ योगी दूसरे चार योगबलसे ऐश्वर्य्यमान् और कर्म्म मुक्तिके स्थान महलोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक में निवास करताहै क्योंकि वह उस शुक्लवर्ण रखनेवाले योगीकी गति है जिसने उसगतिकी सिद्धि में भी शुद्धब्रह्म के साक्षात्कार से जीवन्मुक्ति को प्राप्त नहींकिया परन्तु उसके रागद्वेष नष्टहोगये तात्पर्य्य यह है कि योग सिद्धि भी जीवब्रह्मकी ऐक्यता के ज्ञान से कर्म मुक्तिको प्राप्तहोताहै, योगभ्रष्टकी गतिको कहते हैं, जो योगी योगका अनुष्ठान अच्छीरीति से करने को समर्थनहीं है वह शेषबचेहुये कर्म्मसेयुक्त सौ कल्पतक इन्द्रीमन बुद्धि में प्रवृत्त होकर निवासकरता है फिर वहां से लौटकर नरलोकमें ऐसे मनुष्यकाजन्म पाताहै जो कि अच्छेकुल के व्यवहार और विद्या आदि में अति कुशलहो फिर उसनरदेहको त्यागकर क्रमसे उत्तम योनियोंके प्राप्तकरनेको जाताहै अर्थात् पहले अभ्यासकेद्वारा पिछली २ योग भूमियोंपर चढ़ता है इसप्रकारसे जानेवाला वहयोगी सातबार लोकों में ब्रह्म लोकतक भोगता और घूमता है वहयोगी समाधि और उत्थान से ऐश्वर्य्य को प्राप्तकरता है, फिर भूलोक आदिकी बुद्धि और चित्त से इच्छा को और पांचों ज्ञानेन्द्रियों को ज्ञानसे लयकरके और सब को दुःखरूप निश्चयकरके जीवलोकमें नियतहोता है, तदनन्तर देह को त्याग रूपान्तर दशा से रहित अनन्त सिद्ध ब्रह्मस्थान को पाता है वह शिवजी महाराजका लोक है ऐसा शैव लोग कहते हैं और वैष्णव उसको विष्णुलोक कहते हैं और हिरण्यगर्भ उपासक उसको ब्रह्मलोक और शेषजीका लोक कहतेहैं और सांख्य शास्त्र वाले उसको जीवात्माका परमपद कहते हैं और उपनिषद मतवाले उसको प्रकाश मान चिन्मात्र सर्व्वव्यापी तुरीयरूप परब्रह्म परमात्मा का स्थान कहते हैं अब वादीप्रतिवादी समेत सबकी स्वीकृत वृत्तिको कहते हैं संहार काल में

जिन जीवोंके स्थूल सूक्ष्म कारण और चेष्टारूप देवगण और जो ब्रह्मलोकसे दूसरे मध्यवर्ती प्रकृति आदिहैं यह सब देहसमेत ज्ञानसे जब अत्यन्त भस्म होतेहैं तब मोक्षहोकर ब्रह्मको प्राप्तहोतेहैं, इसप्रकार आत्मज्ञानसे उत्पन्न महा प्रलयको कहकर आवान्तर प्रलयको कहतेहैं—प्रलयकालके समीप होनेपर देवभाव को प्राप्त करनेवाले और सम्पूर्ण कर्म्म फलोंके न भोगनेवाले जीव पहले कल्पके प्राप्तहुये अपने स्थानोंको दूसरे कल्पमें भी पातेहैं क्योंकि वेद वचनोंके अनुसार सबकल्प पहले कल्पोंकेसमान होतेहैं और जो देवभावको प्राप्त करनेवाले जीव कल्पके अन्तमें कर्म्मों के फलोंको भोगचुकेहैं वह सब सृष्टिके संहारकालमें दूसरे मनुष्योंकी समान देहको प्राप्तकरतेहैं—तात्पर्य्यह है कि बिना ब्रह्मज्ञान के सैकड़ों प्रलय में भी किया हुआ कर्म्म नाश नहीं होताहै, जो जीव परम्परा पूर्व्वक ब्रह्मलोक से पतन हुये वह क्रम से उन्हीं मनुष्योंकी गतिको पातेहैं और जो जीव कि उनके बल और रूपमें समानहैं वह अपने २ अच्छेबुरे कर्म्मोंके फलको विपरीतताके साथ प्राप्तकरतेहैं, तात्पर्य्य यहहै कि एकहीकल्पमें स्थिति अस्थिति दोनों होतीहैं इसीकारण संसार से भयभीत मनुष्यको तत्त्वज्ञान में आश्रय लेना योग्यहै, इसप्रकार विवेकयुक्त ब्रह्मविद्याको कहकर संसारी दशाको कहते हैं—वहब्रह्मज्ञानी जब तक प्रारब्ध कर्म्मको भोगताहै तबतक उसके अंगों में उसकाही रूप सब संसार और दोनों शुक्लवर्ण वा दिव्यपरा अपरानाम मायावर्त्तमान रहती है अर्थात् ब्रह्मज्ञानीको शुद्ध कैवल्य मोक्षतकही सब जगत्है फिर नहीं है क्योंकि योग से शुद्धचित्त होकर और धारण, ध्यान समाधि रूप संयमका अनुष्ठान करके यहसब दृश्यमान् आकाशादि पंचइन्द्री के समानहै, सदैव श्रवण, मनन निदिध्यासनके अभ्याससे शुद्धहोकर निश्चयकरता उसअविद्या रहित शुद्धचिन्मात्र भावपरमगति ब्रह्मकोपाताहै फिरब्रह्मके साक्षात्कारके पीछे अविनाशी मोक्षस्थानको पाता है—वहब्रह्म शुद्ध चैतन्यतर है फिर उसआकाश सदृश अरूपकी प्राप्ति नहीं कहसके इसी से वहदुःप्राप्यहै, हे बुद्धिमान वृत्रासुर यह मैंने जगदात्मा नारायणकाबल पराक्रम तुझसेकहा—वृत्रासुरने कहा कि मैं इसदशाको अच्छेप्रकारसे देखताहूं इसमें मुझको व्याकुलता नहींहै हे बड़ेबुद्धिमान् मैं तेरेइसवचनको सुनकर अविद्या और शोक मोहसे रहितहूं हेमहर्षि इसबड़े प्रतापी अनन्त विष्णुका यह अत्यन्त पराक्रम युक्त चक्रही सनातन स्थानहै जिसमें सब संसार वर्त्तमान है—भीष्मजी बोले कि हे कुन्तीनन्दन उसवृत्रासुरने इसप्रकार वचन कहकर उक्तरीति से आत्माको ब्रह्ममें लयकरके उत्तम स्थानको पाया, युधिष्ठिर बोले हे पितामह पूर्व्वसमयमें जिसको सनत-
मारजीने वृत्रासुरसे वर्णन किया वहषड़ैश्वर्य्यवान् ज्योतिरूप यही श्रीकृष्ण

है जो राजाओंके समान मूर्त्तिमान सम्मुख वर्त्तमानहैं यह बातसुनकर ईश्वर में युधिष्ठिरको भ्रम न होनेके निमित्त भीष्मजीने कहा कि मैं मूल अधिष्ठान को कहताहूं जो उसके समान निराकाररूपसे नियतहुआ उसको मूलस्थायी कहतेहैं वह चैतन्यमहान् आत्मामायासे रहित भूमिरूप आधारस्थानहै वही प्रथमहुआ फिर चैतन्यमाया शबलनाम षड़ैश्वर्यमान कार्यकारणका आत्मा होताहै फिर स्थावर जंगमजड़ चैतन्यका आत्माजीव रूपहोताहै यही दूसरा है वह भी अपनेतेजसे दृष्ट आनेवाला तेजसनाम कार्यब्रह्मताको प्राप्तहोकर वृक्षहोताहै यह तीसराहुआ उसब्रह्मांडरूप कार्यमें नियत यहश्रीकृष्णजी बहुत बीजोंके गर्भ फलके स्थान में चौथे हैं यही श्रीकृष्णजी उसकार्य कारणरूप वृक्षबीज रूपभावको उत्पन्न करतेहैं इनकाचित्त सत्यसंकल्पादि गुणोंसे भरा हुआहै उसमूलस्थायी चिन्मात्रके आठवेंभागसे उत्पन्न इनमूर्त्तिमान् केशवजी को जानो यह अविनाशी हैं अर्थात् अविद्याके वर्त्तमान रहने तक इनका नाशनहीं है यह बुद्धिमान चैतन्यके आठवें भागसे तीनोंलोकों को उत्पन्न करताहै इसका आशय यहहै कि मूल स्थायी तो पूर्ण चैतन्यहै और माय सबल ब्रह्म मायाके भागकी संप्रधानतासे चैतन्यका आधाहै और अविद्यारूप समष्टि कार्य्य तैजसमें बीजका भाग आधाहोनेसे चैतन्यका चौथाई है और व्यष्टि कार्य्य में देहआदिको पृथक् न माननेसे आठवां भाग है यहबात हम लोगोंमें भी है क्योंकि उपाधि रहित होने से हमारी भी यहीदशा होसक्ती है तो इनको भगवान् से कहना चाहिये इसशंकाको कहते हैं—कि कर्म्मफलका स्वरूप ईश्वरता आदि श्रीकृष्णजीमें योग्यहै और हमलोगों में कच्चे फलके स्वरूप अनीश्वरता प्रकटहै इसीकारण से हम लोग इनके समान नहीं होसः के—इनचारों की पृथक्ता अपने अज्ञान से है नहीं तो चारों एकशुद्ध चैतन्य हैं इसीको कार्य्यरूप संसार और कारणरूप कर्त्ता की ऐक्यता सिद्ध करने से दृढ़ करते हैं— जो मध्यवर्ती समष्टि कार्य्य आत्मा तीसराहै वह कल्पके अन्त में लय होता है और षडैश्वर्य्यवान् ईश्वर महा पराक्रमी प्रभु अन्तर्य्यामी है वह भी अखण्ड एकरस ब्रह्ममें लयहोता है क्योंकि इस ईश्वर की अविनाशिता व्यवहार से है परमार्थ से नहीं है—शुद्ध चैतन्य ब्रह्माजी उस अखण्ड एक रस सदैव होनेवाले आत्मा को अविद्या के त्याग से प्राप्त करते हैं, वह अनन्त परमात्मा सब कारणों को अपनी सत्ता और स्फूर्त्ति देने से पूर्ण करता है और सदैव एकरूप वही उपाधि विशिष्ट श्रीकृष्ण रूप से लोकों में घूमताहै वह ऐसा भी हमारे समान उपाधि धर्म्म युक्तोंसे नहीं रोका जाताहै इसीकारण अहंकार रूप होकर जगत्को पैदा करताहै यह महात्मा सबका आधार रूपहै इसी में यह सब विचित्र जगत् ऐसे नियतहै जैसे कि

बीजमें वृक्ष और फलमें बहुत से बीज होतेहैं युधिष्ठिर ने कहा कि हेपितामह मैं जानताहूं कि वृत्रासुरने अपनी शुभगतिको देखा उस आत्मगतिके दर्शन से सुखी होकर शोच नहीं करता है और हे पितामह शुक्ल और शुक्लवंश में उत्पन्न पशुपक्षी योनि में जन्म नरक से छुटा फिर लौटकर नहीं आता है, और देवभाव युक्त पीतवर्ण जिसमें रजोगुण अधिक तमोगुण सम और सतोगुण कम होताहै अथवा लालवर्ण अनुग्रह स्वर्ग, शम, दमादि जिसमें रजोगुण अधिक सतोगुण सम तमोगुण कम होताहै इन सबमें वर्त्तमान मनुष्य अगर तामसी कर्मोंमें संयुक्तहो अर्थात् रजोगुणके समान होनेसे कभी आवरण प्रवृत्तिकी आधिक्यताहोय तो उससे पशुपक्षी के भी जन्मको देखे है और हम आपत्तिमें फँसे दुखरूप सुख में प्रवृत्त हैं इसकारण न जाने किस गतिको पावेंगे नीलवर्ण वा कृष्णवर्ण युक्त नीचगति पावेंगे, भीष्मजी बोले कि हे पाण्डव तुम उत्तम कुल में उत्पन्न प्रशंसनीयहो तुम देवलोकोंमें विहार करके फिर मनुष्य जन्म पाओगे अर्थात् समयपर सुखपूर्वक शरीरको त्याग देव भावको प्राप्त सुखको भोग आनन्दसे सिद्धरूप कहलाओगे चिन्ता मत करो तुम सब निर्मलहो ६९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेपडधिकशततमोऽध्यायः १०६ ॥

एकसौसातका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे तात बड़ा तेजस्वी वृत्रासुर प्रशंसाके योग्य है जिस में अपार विज्ञान और विष्णु भगवान्की ऐसी भक्ति वर्त्तमानहै और विष्णुका अपार तेजोमय परमपद भी कठिनतासे जानने योग्यहै हे पितामह उसने उस पदको कैसे जाना मैं आपके कथन से श्रीकृष्णजीपर श्रद्धा करताहूं परन्तु फिर भी ठीक २ न जानने से मेरी बुद्धि में यह शंकाहै कि वह धर्म का अभ्यासी विष्णुभक्त वेदान्त के अर्थ विचारमें महातत्त्वज्ञ ज्ञानी वृत्रासुर इन्द्र के हाथ से कैसे मारागया इसको कृपाकरके वर्णन कीजिये और जिसप्रकार से युद्धहुआ उसके भी सुनने की मुझे बड़ी उत्कण्ठा है— भीष्मजी बोले कि पूर्व समयमें इन्द्र अपने देवगणों के सहित रथोंमें बैठकर जातेथे कि दैवयोग से पर्वतके समान आगे खड़ेहुये वृत्रासुरको देखा वह उंचाईमें पांचसौ योजन और कुछ अधिक तीनसौ योजन मोटाथा वह त्रिलोकी से भी विजय करने के योग्य न था उसको देखकर सब देवता महा भयभीत होकर व्याकुल हो गये और इन्द्रभी उसके इस महाघोर अद्भुत रूपको देखकर निश्चेष्ट होगया फिर युद्धके प्रारम्भ में देवता और असुरोंके सुख और बाजों के महाशब्दहुये तदनन्तर सन्मुख इन्द्रको उद्यत (नियत) देखकर वृत्रासुरको भय और भय

वृत्रासुर जब ज्वररूप तपसे असावधान हुआ तभी इन्द्र ने बज्रसे मारा तो हे महाभाग यह ज्वर कहां से और किस प्रकार उत्पन्न हुआ इसका मूल से सब वृत्तांत सुना चाहताहूं भीष्मजी बोले कि इस ज्वरकी उत्पत्ति जो कि लोक में प्रसिद्ध है उसको सुनो कि सुमेरु पर्वतके शिखर जोतिषनाम सूर्य देवता से सम्बन्ध रखनेवाले सब रत्नोंसे भरे तीनों लोकोंसे पूजित और अजित बड़े प्रभाववाले थे हे राजा वहां पूर्वसमयमें वह सुवर्ण के समान प्रकाशमान अनेक धातुओं से शोभित पर्यंक अर्थात् पलङ्कके समान वर्त्तमानथे वहां शिव जी महाराज आनकर सुशोभित हुये उनके साथ श्रीपार्वती महारानी भी वर्त्तमानथीं और महातेजस्वी अष्टबसु देववैद्य अश्विनीकुमार, यक्ष, गुह्यक युक्त श्रीमान् राजराज कुवेरजी और महात्मा शुक्राचार्यभी शिवजी महाराज की सेवा उपासना में प्रवृत्त थे इनके बिशेष सनकादि महर्षि और अंगिरा ऋषि आदिक देवर्षि, विश्वाबसु गन्धर्व, नारद,पर्वत, ऋषि और अप्सराओं के बहुत से समूह प्राप्त हुये और शीतल मन्द सुगन्ध सुखदायी वायु चलने लगी और सब प्रकारके वृक्ष ऋतु सम्बन्धी फलफूलों से आच्छादित थे और विद्याधर आदि तपोधन सिद्ध लोग इत्यादि इन सब लोगों ने पशुपतिनाथ जीको चारोंओरसे व्याप्त करलिया और अनेक रूपधारी महापराक्रमी राक्षस पिशाच और देवताओंके शस्त्र लेचलनेवाले भी वर्त्तमानथे वहां अपने तेज से प्रकाशित भगवान् नन्दीश्वर देदीप्यमान त्रिशूलको लेकर देवताओं की आज्ञा में नियत थे और सब नदियों और तीर्थों में श्रेष्ठ श्रीगंगाजी भी शिव जी की उपासना में वर्त्तमानथीं कुछ समयके पीछे दक्षप्रजापति पूर्वकही हुई बुद्धिसे यज्ञ करने के लिये दीक्षायुक्त हुये तदनन्तर इन्द्रादिक देवता इकट्ठे होकर उसके यज्ञ में जाने के निमित्त एकमत होके सुनते हैं कि हरिद्वार को चलेगये उनको आकाशमार्गी बिमानों में स्त्रियों समेत जाता देखकर महापतिव्रता श्रीसतीरूप पार्वतीजी ने अपने स्वामी पशुपतिनाथजी से कहा कि हे महाराज यह इन्द्रादिक सब देवता कहांजाते हैं हे तत्त्वज्ञ इसको आप वर्णन कीजिये, महादेवजी बोले कि हे महाभाग दक्ष नाम प्रजापति अश्वमेधयज्ञ को करताहै वहांही यह सब देवताभी जातेहैं उमा बोलीं कि हे महाराज महादेवजी आप इसयज्ञमें क्योंनहीं जातेहो अथवा किसी कारणसे आपको जाना नहीं है, महादेवजी बोले कि हे पार्वती पूर्वसमय में देवताओंका नियत किया हुआ हमारा यज्ञभाग इसने नहीं दिया था और उसी पूर्व विचारसे देवता मुझको यज्ञभागनहीं देतेहैं भगवती उमाबोलीं किहे महाराज आपतेजप्रताप ऐश्वर्य्य लक्ष्मीबल पराक्रममें सबसे उत्तमहो आपको यज्ञभागन मिलनेसे मुझको महाखेदहै और मेरे रोम रोम कँपते हैं यहकहकर

महाक्रोधित होकर शिवजीके सन्मुख मौनहोकर बैठीं तदनन्तर शिवजीने पार्वतीके चित्तकी बातकोजानकर नन्दीश्वरसे कहा कि तुमठहरो यह कहकर थोड़ेही समयपीछे योगेश्वर शिवजी ने अपने भयानकरूप अनुचरोंके साथ योगबलकेद्वारा अकस्मात् उसयज्ञको विध्वंसन किया बहुतसे गणोंमेंसे कितनोहीने शब्दकिया कितनोने हास्य कितनोहीने मूत्रपुरीष और कितनोहीने यज्ञकी अग्निमें रुधिर छिड़का कितनोने रूपांतर और कितनेही यज्ञ स्तम्भ उखाड़ उखाड़ नाचनेलगे कितनोने अपने नखोंसे यज्ञके नौकरों को निकाला जब चारोंओर से घायलयज्ञ मृगकारूप धारण करके आकाशकी ओरचला तब शिवजी उसरूपसे जानेवाले यज्ञको जानकर बाणयुक्त धनुषलेकर उसके सन्मुख उपस्थितहुये और क्रोधसे वेगयुक्त शिवजीके ललाटसे महाभयकारी प्रस्वेदकण टपका उसके पृथ्वीपर गिरतेही कालाग्निके समान एक महाभयानक अग्नि उत्पन्न होगई उस अग्निमें एकपुरुष उत्पन्नहुआ जिसकाछोटा शरीर अत्यन्त रक्तनेत्र पिंगलवर्ण डाढ़ीमूंछ समेत महाभयकारी बिखरेगाल शरीरमें बहुतसेरोम बड़ीभुजा लालवस्त्र पहिरे इसमहाबलीने उसयज्ञको ऐसे मारडाला जैसे सूखेबनको अग्नि भस्मकरडालता है, वह चारोंओर घूमता देवता और ऋषियोंकी ओरभी भागा तब सब देवता भयभीतहोकर दशों दिशाओंमें भागे हेयुधिष्ठिर उसके यज्ञभूमि में घूमने से पृथ्वीभर कंपायमानहुई और संसारमें हाहाकार मचगया यह दशादेखकर प्रभुब्रह्माजीने प्रत्यक्ष होकर शिवजीसेकहा कि हेप्रभु शिवजी सब देवता आपकाभी यज्ञभागदेंगे हे देवेश्वर आपअपने इसतेजको लौटाओ, हे महादेव यह सब देवताऋषि आप के इसउग्रतेजसे महाव्याकुल होरहेहैं हे देव यह जो पुरुष आपके पसीनेसे उत्पन्न हुआहै वह ज्वरनामहोकर सब लोकोंमें घूमेगा, यह सम्पूर्ण पृथ्वी इस इकट्ठेतेजके धारणकरनेको समर्थनहींहै इसके बहुतसे भागकरदीजिये, यज्ञमें भाग बिचारहोनेपर शिवजी ने उनमहातेजस्वी ब्रह्माजी से कहा कि ऐसाहीहोगा और फिर पिनाक धनुषधारी शिवजीने अपनी मन्दमुसक्यान से बड़े आनन्द सहित यज्ञभागकोपाया, तबधर्म्मज्ञ शिवजीने जीवोंकी शांतिके अर्थ उसज्वरके बहुतसे भागकिये हेपुत्र युधिष्ठिरउनको भी सुनो कि हाथियों के शिरकादर्द, पहाड़ोंका शिलाजीत, जलोंकी काई, सर्पों में कांचली इन सबको ज्वरके भागजानो, खूरकनाम बैलोंके पैरोंकारोग, पृथ्वीपर ऊपर, पशुओंका अन्धाहोना, घोड़ोंके गलेके छिद्रमें वर्त्तमान जो बारहमासहै उसको और मोरोंकी शिखाओंके पृथक्होनेको सब पक्षियोंके नेत्ररोग इत्यादिको महात्मालोग ज्वरबोलते हैं, भेड़बकरियोंके पित्तभेदको और सबप्रकारके तोतोंका हिक्किकानाम रोगभी ज्वरकहाजाताहै हे धर्म्मज्ञ सिंहशार्दूलों में जो

रोगहैं उसेभी ज्वरकहते हैं और मनुष्यों में यह ज्वरहीनाम से प्रसिद्धहै यह ज्वरजन्म और मृत्यु और इनदोनों के मध्यवर्ती समय में भी मनुष्यके भीतर प्रवेश करताहै यह महेश्वरजीका तेजरूप ज्वर बड़ाभयानक है और सबजीवों से नमस्कार और प्रतिष्ठा करनेके योग्य है इसी ज्वरसे पूर्णहोकर जब धर्म्म धारियों में श्रेष्ठवृत्रासुरने जम्भाईलीथी तब इन्द्रने उसपर बज्रमारा उसबज्रने वृत्रासुर में प्रवेशकरके उसकी दोफांककरदीं वज्रसे फाड़ाहुआ वह महायोगी महाअसुर विष्णुजीके सर्वोत्तम लोकमेंगया, उससमय उसीकी विष्णुभक्तिसे यह सब जगत् व्याप्तथा इसीकारण उसने युद्धमें मरकर विष्णुलोकपाया हे पुत्र यह मैंने वृत्रासुरकी कथाके उपदेशसे ज्वरका मूल वर्णनकिया अब क्या सुननाचाहताहै,जो बड़े चित्तवाला अच्छासावधान मनुष्य इसज्वरकी उत्पत्ति को प्रतिदिन सुनेगा वह रोगोंसे रहित और सुखीहोकर आनन्दयुक्त वांछित फलोंको पावेगा ६३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेनवाधिकशततमोऽध्यायः १०९ ॥

एकसौदशका अध्याय ॥

पूर्वमें भगवान् श्रीकृष्णजी का रूपसिद्ध करने में पूर्णब्रह्मकी प्राप्तिकाद्वार वर्णनकिया अब इस अध्याय में इसबातको सिद्धकरते हैं कि दयावान् मूर्त्तिमान् परमेश्वर अपने शत्रुओं को दण्ड देकर फिर उसपर भी कृपाकरता है और भक्तिसे परमेश्वर को प्रसन्न करने के निमित्त एकहजार आठनाम को कहते हैं मोक्षधर्म्म में इस के लिखनेका यह प्रयोजन है कि वह एकहजार आठनामभी शम दम आदि गुणों के समान मोक्ष के हेतुरूप हैं—राजाजनमेजय वैशंपायन जी से पूंछते हैं कि हेब्रह्मन् वैवस्वत मन्वन्तर में प्रचेता के पुत्र दक्षप्रजापतिके यज्ञकाविध्वंस कैसे और किसकारण से हुआ, वह सर्वात्मा प्रभु शिवजी पार्वतीके शोककेफलको मानकर कैसे क्रोधितहुये फिर कैसे उनकी कृपा से दक्ष ने यज्ञको पूर्णकिया मैं इसका ठीक २ वृत्तांत जानना चाहताहूं आपकृपा करके ब्यौरेसमेत वर्णनकीजिये, वैशंपायनबोले कि पूर्व्व कालमें हिमाचलके पीछे सिद्ध ऋषि गन्धर्व और अप्सराओंसे सेवित नाना प्रकारके वृक्षवल्ली आदि से संकुलित गंगा द्वारनाम शुभदेशमें दक्षप्रजापति ने यज्ञकोरचाथा और पृथ्वीके सब मनुष्य पृथ्वीपर और स्वर्गवासी अंतरिक्ष में गन्धर्वऋषि आदि सब बड़ी नम्रतासे हाथजोड़ेहुये धर्मध्वजों में श्रेष्ठदक्षप्रजापति के संमुख वर्त्तमान हुये, देवता दानव गन्धर्व्व पिशाच उरग राक्षस हाहा हूहू और तुम्बुरु गन्धर्व्व और नारदऋषि, विश्वावसु विश्वसेन और अनेक अप्सरा, बारहसूर्य्य, अष्टवसु, ग्यारहरुद्र, साध्य और मरुद्गण इत्या-

दिक यज्ञभागी इन्द्रसमेत सबआये और ऊष्मपा, सोमपा, धूमपा, आज्यपा, ऋषि, पितर,ब्राह्मण आदि अन्यबहुत से चारों प्रकारकी सृष्टिकेलोग ब्रह्माजीके साथआये इनके विशेष अंडज स्वेदज जरायुज उद्भिज यहचारों प्रकार केभी जीवआये और निमंत्रण पूर्वक बुलायेहुये सबदेवता अपनी २ स्त्रियों समेत देदीप्यमान विमानोंमें बैठेहुये विराजमानहुये उनसबको देखकर दधीचि ऋषिने क्रोधयुक्तहोकर यह बचनकहा, कि वह यज्ञनहींहै और धर्मनहीं है जहांपर कि रुद्रभगवान् पूजेनहींजातेहैं इससे तुमनिश्चय बांधेजाओ और मारेजाओ क्या समयकी विपरीतबुद्धिहै कि सन्मुख वर्त्तमान नाशको अपनी अज्ञानता से नहींदेखते हैं और महायज्ञमें सन्मुख उपस्थित महाघोर उत्पात को नहींजानते हैं यह कहकर उसमहायोगी ने ज्ञानरूपनेत्रों से जबदेखा तो महादेव और बरदाता श्रीउमादेवीकोही देखा और उसदेवीके सन्मुख महात्मा नारदजीको भी देखा यह देखकर उसयोगीने बड़ासन्तोष पाया और निश्चय करके जाना कि इनसबका एकमतहै इसकारण सर्वेश्वर शिवजीको निमन्त्रण नहींदिया इसीसे उसदेशसे कुछहटकर दधीचि ने कहा कि अपूज्यों के पूजनसे और पूज्योंके न पूजनकरने से नृघातके समान पापहोता है इस को मैंने न पहिलेमिथ्याकहा न अबकभी मिथ्याकहूंगा मैं देवता और ऋषियोंमें बैठकर सत्य २ कहताहूं कि सब जगत्केस्वामी यज्ञ में प्रथम भोगलेनेवाले सबकेप्रभु शिवजी को तुम यज्ञ में आयाहुआ देखो, दक्षने कहा हमारे यज्ञमें ग्यारह स्थानों में वर्त्तमान बहुत से रुद्र हाथों में शूल धारण किये वर्त्तमान हैं यह सब गंगाजी से पूर्ण जटाधारी हैं मैं इन के सिवाय महेश्वरजी को नहीं जानताहूं, दधीचिऋषि बोले कि मैं जानताहूं कि यहीसबकी राय है इसी से शिवजीनहीं नौतेगये हैं, मैं शिवजीसेबढ़कर जैसे किसीदेवता को उत्तमनहीं देखताहूं वैसेही यहभी देखताहूं कि यह दक्षका बड़ायज्ञभीनहींहोगा, दक्ष ने कहा कि सुवर्णकेपात्र में मन्त्रकीविधि से पवित्र यह सम्पूर्णहव्य यज्ञेश्वर के निमित्तहै इसभाग को अनुपम विष्णुदेवता के अर्पणकरूंगा यह विष्णुदेवता सबका आत्मारूप और आहवनीयहै, देवीपार्वतीजीने अपनेचित्त में विचार किया कि अब मैं किसदान नियम तपव्रतादिकोकरूं जिससे कि हमारे षड़ैश्वर्यस्वामी शिवजीआधे वा तीसरेभागकोपावें, तब तो अत्यन्त प्रसन्नचित्त शिवजीमहाराजने ऐसे विचारकरनेवाली अपनी प्राणप्यारीका व्याकुलतामें व्यग्रचित्त देखकरकहा कि हेसूक्ष्मोदरी सुन्दररूप और विशाल नेत्रवाली तू मुझकोनहीं जानतीहै कि यज्ञेश्वरमें कौनसावचन योग्य है,हेसुन्दरी मैं अच्छे प्रकारसे जानताहूं कि ध्यानरहित असंतलोग मुझको नहींजानते हैं अबतेरे मोहसे इन्द्रसमेत सब देवता और तीनोंलोक भी अज्ञानी हैं, यज्ञ में स्तुति

करनेवाले ब्राह्मण मेरी स्तुतिकरते हैं और सामवेदी भी मुझीको गातेहैं और ब्रह्मज्ञ ब्राह्मणभी मुझीको पूजनकरते हैं और मेराभाग यज्ञमें कल्पना करतेहैं-(देव्युवाच) देवीबोलीं कि साधारण मनुष्य स्त्रियों में अपनी प्रशंसा और अहंकारको करताहै, भगवान् बोले हे देवेश्वरी मैं अपनी प्रशंसा नहीं करताहूं हे कृशांगी अब तुम मेरी उससृष्टिको देखो जिसको कि मैं यज्ञविध्वंस के निमित्त उत्पन्न करताहूं यहकहकर मुखसे घोर प्रसन्नतावाले पुरुषको उत्पन्नकिया और उससेकहा कि तुम दक्ष के यज्ञका विध्वंसन करो यह सुनतेही उसने एकलीलाही मात्रसे देवीके क्रोध के निवृत्तकरनेको उन देवताओं के यज्ञका विध्वंस किया और देवीके क्रोधसे महाभयानकरूप महेश्वरी काली उत्पन्नहुई और अपना चरित्र दिखलानेको उसवीरके साथही चलीगई तिस पीछे शूरतामें आत्माके समान पराक्रम और रूप संयुक्त रुद्र तेज सहितक्रोध रूप अमितबल महा उग्रतेज रखनेवाली देवीका क्रोधदूर करनेवाले भगवान् वीरभद्रनाम ने शिवजीकी आज्ञाको अंगीकार और दण्डवत् करके अपने अंगके रोम कम्पायके रोमीनाम गणोंके स्वामियोंको उत्पन्न किया वह सब गण रुद्रजीके समान भयानक और बलपराक्रम रखनेवाले थे तदनन्तर वह हजारों लाखों भयानकरूप और देहधारी गण दक्षके यज्ञके विनाशकरनेको बड़ी शीघ्रतासे दौड़े और महाकलकला शब्दोंसे आकाशको व्याप्तकर दिया उसशब्द के सुनतेही सब यज्ञके देवता महाभयभीत और व्याकुलहुये पहाड़ फटे पृथ्वी कम्पायमान होकर वायु में घूमनेलगी और समुद्र उथल फुतल होने लगा उससमय अग्नि प्रकाश रहित हुई सूर्य्य प्रकाशमान नहीं हुये और चन्द्रमा समेत ग्रह नक्षत्रादि मन्दप्रभा होगये ऋषि देवता मनुष्य प्रकाशसे रहित अन्धेसे होगये ऐसे अन्धकार में उनअपमान पानेवाले गणोंने यज्ञका नाशकिया और बहुतसे दूसरेगण घोरघात करतेथे और यज्ञस्तम्भोंको उखाड़ उखाड़ फेंकतेथे एक एकको पकड़कर मर्दन करतेहुये मारडालतेथे, महावेगवान् वायुके समान दौड़ दौड़ घूमते थे यज्ञके सब पात्र और आभूषणों को तोड़तोड़ चूर्णकरतेथे, वह टुकड़े २ होनेसे ऐसे मालूम होतेथे मानो आकाश में तारागण उत्पन्नहुये और दिव्य भोजन और पीनेकी वस्तुआदि पर्व्वतसे पड़ेहुये दृष्टआतेथे दूधकी नदियोंमें घृत और खीरकीचड़सी विदितहोतीथी दहीके समुद्रोंमें खांड़ बालूसी दिखाई देतीथी और एकओर इक्षुरसकी नदियां अत्यन्तही शोभित मालूमहोती थीं यह तो छओंरसोंकी दशाथी और नाना प्रकारके मांस और भोजनकी वस्तु और चाटने चूसनेकी वस्तु इत्यादि सब पदार्थोंको वह अनेकरूपके गण अपने नानाप्रकारके मुखों से खाते थे और फेंकतेथे और अत्यन्त कुत्सित वचनों को कहते थे और वह कालरूपगण

शिवजीके कोपसे देवताओंकी सेनाओंको चारोंओर से डरातेमारते व्याकुल करतेथे और नानारूपोंको धारणकिये क्रीड़ा करतेथे और देवांगनाओं को पकड़पकड़ फेंकतेथे ऐसे रुद्रकर्म करनेवाले वीरभद्रने शिवजीके कोप से उस यज्ञको जो कि देवताओं से अच्छेप्रकार रक्षित था इनउपायों से बहुत शीघ्र सब ओर से विध्वंस किया और सब जीवोंका भयकारी महाघोर शब्दकरके यज्ञके शिरको काट अत्यन्त प्रसन्नहुआ तदनन्तर ब्रह्मादिक देवता और दक्ष प्रजापति आदि सब प्रजापति हाथ जोड़कर बोले कि आप कौन हैं अपना वर्णनकीजिये, वीरभद्र बोले कि मैं रुद्र नहींहूं और भोगनेको भी यहां नहीं आयाहूं सब जीवोंके आत्मा प्रभु सदाशिवजी देवीके क्रोधकर्मको अंगीकार करके कोपयुक्त हुयेहैं न मैं ब्राह्मणोंके दर्शनोंकोआया न खेलक्रीड़ाको आया केवल तेरे यज्ञ विध्वंस करनेको आयाहूं मैं रुद्रजीके कोपसे उत्पन्नहुआ वीरभद्र नामसे प्रसिद्धहूं और देवीजी के कोपसे उत्पन्नहुई यहभद्रकाली प्रसिद्ध है उस देवेश्वरके भेजेहुये हमयज्ञके समीपआयेहैं हेविप्रेन्द्र दक्ष तुम उसीदेवेश्वर शिव का आश्रयलो उसीकी शरण में तुम्हाराबचनाहै दूसराकोईउपायनहीं है क्रोध में भी देवताओंका वरदान उत्तमहै और किसी का आनन्दमेंभी उत्तम नहीं है यह वीरभद्रके वचनसुनकर दक्ष ने महेश्वरजीको प्रणामकर इसस्तोत्र से प्रसन्नकिया—स्तोत्रं प्रपद्ये देवमीशानंशाश्वतं ध्रुवमव्ययं महादेवंमहात्मानं विश्वस्यजगतः पतिम् १ दक्षप्रजापतिर्यज्ञै द्रव्यैस्तैःसुसमाहितैः आहूतादेवता स्सर्वाः ऋषयश्चतपोधनाः २ देवोनाहूयतेतत्र विश्वकर्मामहेश्वरः तत्रक्रुद्धा महादेवी गणांस्तत्रव्यसर्जयत् ३ प्रदीप्तयज्ञवाटेतु विद्रुतेषुद्विजातिषु तारागण मनुप्राप्तेरौद्रेदीप्तेमहात्मनि ४ शूलानिर्भिन्नहृदयैः कूजद्भिः परिचारकैः निखातो त्पाटितैर्यूपै रपविद्धैरितस्ततः ५ उत्पतद्भिः पतद्भिश्च गृध्रैरामिषगृद्धिभिः पक्ष वातविनिर्धूतैः शिवाशतनिनादितैः ६ यक्षगन्धर्वसंघैश्च पिशाचोरगराक्षसैः प्राणापानौसंनिरुध्यवक्रस्थानेनयत्नतः ७ विचार्य्यसर्व्वतोदृष्टिं बहुदृष्टिरमि त्रजित् सहसादेवदेवेशोह्यग्निकुंडात्समुत्थितः ८ विभ्रत्सूर्य्यसहस्रस्य तेजःस म्वर्त्तकोपमः स्मितंकृत्वाब्रवीद्वाक्यं ब्रूहिकिंकरवाणिते ९ श्राविते चमखाध्याये देवानांगुरुणाततः तमुवाचांजलिंकृत्वादक्षोदेवंप्रजापतिः १० भीतशंकितवित्र स्तः सवाष्पवदनेक्षणः यदिप्रसन्नोभगवान्यदिचाहंभवत्प्रियः ११ यदिनाह मनुग्राह्योयदिवावरदोमम यद्दग्धंभक्षितंपीतमाशितंयच्चनाशितं १२ चूर्णीकृता पविद्धंच यज्ञसम्भारमीदृशं दीर्घकालेनमहता प्रयत्नेनसुसंचितं, १३ तन्नमिथ्या भवेन्मह्यं वरमेतदहंवृणे १४ तथास्त्वित्याहभगवान्भग नेत्रहरोहरः धर्म्माध्यक्षो विरूपाक्षः त्र्यक्षोदेवः प्रजापतिः १५ जानुभ्यामवनींगत्वा दक्षोलब्ध्वाभवाद्वरं नाम्नामष्टसहस्रेण स्तुतवान्वृषभध्वजं १६—७२ ॥ इतिदशाधिकशततमोऽध्यायः ११० ॥

एकसौग्यारहका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे निष्पाप पितामह दक्षप्रजापतिने जिन नामों से शिवजीकी स्तुतिकी उनको मैं श्रद्धापूर्व्वक सुननाचाहताहूं भीष्मजी बोलेहे युधिष्ठिर उन अपूर्व्वकर्म्मकर्त्ता और गुप्तव्रतधारी शिवजीके उननामोंकोसुनो जो कि प्रकटहैं और श्रद्धाविहीन पुरुषोंसे गुप्त हैं ॥

स्तोत्र ॥

युधिष्ठिरउवाच–यैर्नामधेयैः स्तुतवान्दक्षोदेवंप्रजापतिः ॥ वक्तुमर्हसिमेतात श्रोतुंश्रद्धाममानघ १ भीष्मउवाच–श्रूयतांदेवदेवस्य नामान्यद्भुतकर्म्मणः ॥ गूढव्रतस्यगुह्यानिप्रकाशानिचभारत २ नमस्तेदेवदेवेश देवारिबलसूदन ॥ देवेन्द्रबलविष्टम्भ देवदानवपूजित ३ सहस्राक्षविरूपाक्ष त्र्यक्षयक्षाधिपप्रिय ॥ सर्व्वतःपाणिपादान्त सर्व्वतोक्षिशिरोमुख ४ सर्व्वतःश्रुतिमल्लोके सर्व्वमावृत्य तिष्ठसि ॥ शंकुकर्णमहाकर्ण कुम्भकर्णार्णवालय ५ गजेन्द्रकर्णगोकर्ण पाणिकर्णनमोस्तुते ॥ शतोदरशतावर्त्त शतजिह्वनमोस्तुते ६ गायन्तित्वांगायत्रिणोअर्चयन्त्यर्कमर्क्किणः ॥ ब्रह्माणंत्वांशतक्रतु मूर्ध्वंखमिवमेनिरे ७ मूर्त्तौहितेमहामूर्त्ते समुद्रांबरसन्निभ ॥ सर्व्वादेवताह्यस्मिन् गावोगोष्ठइवासते ८ भवच्छरीरेपश्यामि सोममग्निंजलेश्वरं ॥ आदित्यमथवैविष्णुं ब्रह्माणञ्चबृहस्पतिं ९ भगवान्कारणंकार्य्यंक्रियाकारणमेवच ॥ असतश्चसतश्चैवतथैवप्रभवाप्ययौ १० नमोभवायसर्व्वाय रुद्रायवरदायच ॥ पशूनांपतयेनित्यं नमोस्त्वंधकघातिने ११ त्रिजटायत्रिशीर्षायत्रिशूलवरपाणिने ॥ त्र्यम्बकायत्रिनेत्रायत्रिपुरघ्नायवैनमः १२ नमश्चण्डायकुण्डाय अण्डायाण्डधरायच ॥ दण्डिने समकर्णाय दण्डिमुण्डायवैनमः १३ नमोर्ध्वदंष्ट्रकेशायशुक्लायावततायच ॥ विलोहिताय धूम्रायनीलग्रीवायवैनमः १४ नमोस्त्वप्रतिरूपाय विरूपायशिवायच ॥ सूर्य्यायसूर्य्यमालायसूर्य्यध्वजपताकिने १५ नमःप्रमथनाथायवृषस्कन्धायधन्विने ॥ शत्रुन्दमायदण्डायपर्णचीरपटायच १६ नमोहिरण्यगर्भायहिरण्यकवचायच ॥ हिरण्यकृतचूडायहिरण्यपतयेनमः १७ नमोस्तुतायस्तुत्यायस्तूयमानायवैनमः ॥ सर्व्वायसर्व्वभक्षायसर्व्वभूतान्तरात्मने १८ नमोहोत्रेथमंत्रायशुक्लध्वजपताकिने ॥ नमोनाभायनाभ्यायनमःकटकटायच १९ नमोस्तुकृशनासायकृशांगायकृशायच ॥ संहृष्टायनमस्तुभ्यंनमःकिलकिलायच २० नमोस्तुशयमानायशयितायोत्थितायच ॥ स्थितायधावमानाय मुण्डायजटिलायच २१ नमोनर्त्तनशीलाय मुखवादित्रवादिने ॥ नाट्योपहारलुब्धाय गीतवादितशालिने २२ नमोज्येष्ठायश्रेष्ठायबलप्रमथनायच ॥ कालनाथायकल्पाय क्षयायोपक्षयायच २३ भीमदुन्दुभिहासाय भीमव्रतधरायच ॥ उग्रायचनमोनित्यं नमोस्तुदशबाहवे २४ नमःक

पालहस्ताय चितिभस्मप्रियायच ॥ विभीषणायभीष्माय भीमव्रतधरायच २५
नमोविक्षतवक्त्राय खड्गजिह्वायदंष्ट्रिने ॥ पक्वाममांसलुब्धाय तुम्बीवीणाप्रिया
यच २६ नमोवृषायवृष्याय गोवृषायवृषायच ॥ कटंकटायदण्डाय नमःपचपचा
यच २७ नमःसर्व्ववरिष्ठाय वरायवरदायच ॥ वरमाल्यगन्धवस्त्राय वरातिवरदे
नमः २८ नमोरक्तविरक्ताय भावनायाक्षमालिने ॥ सम्भिन्नायविभिन्नाय छा
यायातपनायच २९ अघोरघोररूपाय घोरघोरतरायच ॥ नमःशिवायशान्ताय
नमःशान्ततमायच ३० एकपाद्बहुनेत्राय एकशीर्ष्णेनमोस्तुते ॥ रुद्रायक्षुद्रलु
ब्धायसंविभागप्रियायच ३१ पंचालायसितांगाय नमःशमशमायच ॥ नमश्च
ण्डिकघण्टाय घण्टायाघण्टघण्टिने ३२ सहस्राध्मातघण्टाय घण्टामालाप्रिया
यच ॥ प्राणघंटायगन्धाय नमःकलकलायच ३३ हूंहूंहूंकारपाराय हूंहूंकारप्रिया
यच ॥ नमःशमशमेनित्यं गिरिवृक्षालयायच ३४ गर्भमांससृगालाय तारकाय
तरायच ॥ नमोयज्ञाययजिने हुतायप्रहुतायच ३५ यज्ञवाहायदान्ताय तप्याया
तपनायच ॥ नमस्तटायनद्याय तटानांपतयेनमः ३६ अन्नदायान्नपतये नमस्त्व
न्नभुजेतथा ॥ नमःसहस्रशीर्षाय सहस्रचरणायच ३७ सहस्रोद्यतशूलाय सहस्र
नयनायच ॥ नमोबालार्कवर्णाय बालरूपधरायच ३८ बालानुचरगोप्त्राय बाल
क्रीड़नकायच ॥ नमोवृद्धायलुब्धाय क्षुब्धायक्षोभणायच ३९ तरंगांकितकेशाय
मुंजकेशायवैनमः ॥ नमःषट्कर्मतुष्टाय त्रिकर्मनिरतायच ४० वर्णाश्रमाणांविधि
वत्पृथक्कर्मनिवर्त्तिने ॥ नमोघुष्यायघोषाय नमःकलकलायच ४१ श्वेतपिंगलने
त्राय कृष्णरक्तेक्षणायच ॥ प्राणभग्नायदंडाय स्फोटनायकृशायच ४२ धर्मका
मार्थमोक्षाणां कथनीयकथायच ॥ सांख्यायसांख्यमुख्याय सांख्ययोगप्रवर्त्ति
ने ४३ नमोरथ्यविरथ्याय चतुष्पथरथायच ॥ कृष्णाजिनोत्तरीयाय व्यालयज्ञो
पवीतिने ४४ ईशानवज्रसंघात हरिकेशनमोस्तुते ॥ त्र्यंबकांबिकनाथाय व्य
क्ताव्यक्तनमोस्तुते ४५ कामकामदकामघ्न तृप्तातृप्तविचारिणे ॥ सर्वसर्वदसर्व
घ्न सन्ध्यारागनमोस्तुते ४६ महामेघचयप्रख्य महाकालनमोस्तुते ॥ स्थूलजी
र्णांगजटिले वल्काजिनधारिणे ४७ दीप्तसूर्य्याग्निजटिले वल्कलाजिनवास
से ॥ सहस्रसूर्यप्रतिम तपोनित्यनमोस्तुते ४८ उन्मादनशतावर्त्त गंगातोयार्द्र
मूर्धज ॥ चन्द्रावर्त्तयुगावर्त्त मेघावर्त्तनमोस्तुते ४९ त्वमन्नमन्नभोक्ताच अन्नदोन्न
भुगेवच ॥ अन्नसृष्टाचपक्ताच पक्वभुक्पवनोनलः ५० जरायुजांडजाश्चैव स्वेद
जाश्चतथोद्भिजाः ॥ त्वमेवदेवदेवेश भूतग्रामचतुर्विधः ५१ चराचरस्यस्रष्टा
त्वं प्रतिहर्त्तातथैवच ॥ त्वमाहुर्ब्रह्मविदुषो ब्रह्मब्रह्मविदांवर ५२ मनसःपरमायो
निः खंवायुर्ज्योतिषांनिधिः ॥ ऋक्सामानितथोंकार माहुस्त्वांब्रह्मवादिनः ५३
हायिहायिहुवाहोइ हुवाहोइतथासकृत् ॥ गायन्तित्वांसुरश्रेष्ठ सामगाब्रह्मवादि
नः ५४ यजुर्मयोऋङ्मयश्च त्वमाहुतिमयस्तथा ॥ पठ्यसेस्तुतिभिश्चैव वेदोप

निषदांगणैः ५५ ब्राह्मणाःक्षत्रियावैश्याः शूद्रावर्णावराश्चये ॥ त्वमेवमेघसंघा श्च विद्युत्स्तनितगर्जितः ५६ संवत्सरस्त्वमृतवो मासोमासार्द्धमेवच ॥ युगंनिमे षाःकाष्ठास्त्वं नक्षत्राणिग्रहाःकलाः ५७ वृक्षाणांककुदोसित्वं गिरीणांशिखरा णिच ॥ व्याघ्रोमृगाणांपततां तार्क्षोनंतश्चभोगिनां ५८ क्षीरोदोह्युदधीनांच यंत्राणांधनुरेवच ॥ वज्रःप्रहरणानांच व्रतानांसत्यमेवच ५९ त्वमेवद्वेषइच्छाच रागोमोहःक्षमाक्षमे ॥ व्यवसायोधृतिर्लोभः कामक्रोधौजयाजयौ ६० त्वंगदी त्वंशरीचापी खट्वांगीझर्झरीतथा ॥ छेत्ताभेत्ताप्रहर्त्तात्वं नेतामंतापितामतः ६१ दशलक्षणसंयुक्तो धर्मार्थःकामएवच ॥ गंगासमुद्राःसरितः पल्वलानिसरां सिच ६२ लतावल्ल्यस्तृणौषध्यः पशवोमृगपक्षिणः ॥ द्रव्यकर्मसमारम्भः कालपुष्पफलप्रदः ६३ आदिश्चान्तश्चदेवानां गायत्र्योंकारएवच ६४ ह रितोरोहितोनीलः कृष्णोरक्तस्तथारुणः ॥ कद्रुश्चकपिलश्चैव कपोतोमेचक स्तथा ६५ अवर्णश्चसुवर्णश्च वर्णकारोह्यनोपमः ॥ सुवर्णनामाचतथा सुवर्ण प्रियएवच ६६ त्वमिंद्रश्चयमश्चैव वरुणोधनदोनलः ॥ उपप्लवश्चित्रभानुः स्वर्भानुर्भानुरेवच ६७ होत्रंहोताचहोम्यंच हुतंचैवतथाप्रभुं ॥ त्रिसौपर्णंतथाब्रह्म यजुषांशतरुद्रियं ६८ पवित्रंचपवित्राणां मंगलानांचमंगलं ॥ गिरिकोहिंडिको वृक्षो जीवोमुद्गलएवच ६९ प्राणः सत्वंरजश्चैव तमश्चाप्रमदस्तथा ॥ प्राणो पानः समानश्च उदानोव्यानएवच ७० उन्मेषश्चनिमेषश्च क्षुतंजृंभितमेव च ॥ लोहितांतर्गतादृष्टिर्महावक्त्रोमहोदरः ७१ शुचिरोमाहरिश्मश्रूरूर्ध्वकेश श्चलाचलः ॥ गीतवादित्रतत्त्वज्ञो गीतवादनकप्रियः ७२ मत्स्योजलचरो जाल्यो कलःकेलिकलःकलिः ॥ अकालश्चातिकालश्च दुष्कालःकालएवच ७३ मृत्युक्षुरश्चकृत्यश्च पक्षोपक्षक्षयंकरः ॥ मेघकालोमहादंष्ट्रः संवर्त्तकबलाहकः ७४ घण्टोघण्टोघटीघण्टी चरुचेलीमिलीमिली ॥ ब्रह्मकायिकमग्नीनां दण्डी मुण्डस्त्रिदण्डधृक् ७५ चतुर्युगश्चतुर्वेदश्चातुर्होत्रप्रवर्त्तकः ॥ चातुराश्रम्यनेता चचातुर्वर्ण्यकरश्चयः ७६ सदाचाक्षप्रियोधूर्त्तो गणाध्यक्षोगणाधिपः ॥ रक्तमा ल्यांबरधरो गिरिशोगिरिकप्रियः ७७ शिल्पिकःशिल्पिनांश्रेष्ठः सर्वशिल्पप्रव र्त्तकः ॥ भगनेत्रांकुशश्चण्डः पूष्णोदन्तविनाशनः ७८ स्वाहास्वधावषट्कारो नमस्कारोनमोनमः ॥ गूढव्रतोगुह्यतपा स्तारकस्तारकामयः ७९ धाताविधाता सन्धाता विधाताधारणोधरः ॥ ब्रह्मातपश्चसत्यञ्च ब्रह्मचर्य्यमथार्जवं ८० भूतात्माभूतकृद्भूतो भूतभव्यभवोद्भवः ॥ भूर्भुवःस्वरितश्चैव ध्रुवोदान्तोमहे श्वरः ८१ दीक्षितोदीक्षितःक्षान्तो दुर्दान्तोदान्तनाशनः ॥ चन्द्रावर्त्तोयुगावर्त्तः संवर्त्तःसंप्रवर्त्तकः ८२ कामोविन्दुरणुस्थूलः कर्णिकारस्रजप्रियः ॥ नन्दीमुखो भीममुखः सुमुखोदुर्मुखोमुखः ८३ चतुर्मुखोबहुमुखो रणेष्वग्निमुखस्तथा ॥ हिरण्यगर्भः शकुनिर्महोरगपतिर्विराट् ८४ अधर्महामहापार्श्वश्चण्डधारो

गणाधिपः॥गोनर्दोगोप्रतारश्च गोवृषेश्वरवाहनः ८५ त्रैलोक्यगोप्तागोविन्दो गोप्तागोमार्गएवच ॥ श्रेष्ठस्थिरश्चस्थाणुश्च निष्कम्पःकम्पएवच ८६ दुर्वारणोदुर्विषहोदुःसहोदुरतिक्रमः॥ दुर्धर्षोदुष्प्रकम्पश्चदुर्विषोदुर्जयोजयः ८७ शशःशशांकः शमनः शीतोष्णक्षुज्जराधिधृक् ॥ आधयोव्याधयश्चैव व्याधिहाव्याधिरेवच ८८ ममयज्ञमृगव्याधो व्याधीनामागमोगमः॥ शिखण्डीपुण्डरीकाक्षः पुण्डरीकवनालयः ८९ दण्डधारस्त्र्यंबकश्च उग्रदण्डोंडनाशनः॥ विषाग्निपाःसुरश्रेष्ठः सोमपास्त्वंमरुत्पतिः ९० अमृतपास्त्वंजगन्नाथदेवदेवगणेश्वरः ॥ विषाग्निपामृत्युपाश्चक्षीरपाःसोमपास्तथा॥ मधुश्च्युतानामग्रपास्त्वंत्वमेवतुषिताद्यपाः ९१ हिरण्यरेताःपुरुषस्त्वमेवत्वंस्त्रीपुमांस्त्वंचनपुंसकंच बालोयुवास्थविरोजीर्णदंष्ट्रस्त्वं नागेन्द्रशक्रः त्वंविश्वकृद्विश्वकर्त्ता ९२ विश्वकृद्विश्वकृतांवरेण्यस्त्वंविश्ववाहोविश्वरूपस्तेजस्वीविश्वतोमुखः चन्द्रादित्यौ चक्षुषीतेहृदयंचपितामहः ९३ महोदधी सरस्वतीवाग्बलमनलोनिलः अहोरात्रंनिमेषोन्मेषकर्मा ९४ नब्रह्मानचगोविन्द पौराणाऋषयोनते ॥ माहात्म्यंवेदितुंशक्ता यथातथ्येनतेशिव ९५ यामूर्त्तयः सुसूक्ष्मास्ते नमह्यंयान्तिदर्शनं ॥ त्राहिमांसततंरक्ष पितापुत्रमिवौरसं ९६ रक्षमांरक्षणीयोहं तवानघनमोस्तुते ॥ भक्तानुकंपीभगवान् भक्तश्चाहंसदात्वयि ९७ यःसहस्राण्यनेकानि पुंसामावृत्यदुर्दृशः ॥ तिष्ठत्येकःसमुद्रान्ते समेगोप्तास्तुनित्यशः ९८ यंविनिद्राजितश्वासाः सत्वस्थासंयतेन्द्रियाः ॥ ज्योतिःपश्यन्तियुञ्जानास्तस्मैयोगात्मनेनमः ९९ जटिलेदंडिनेनित्यं लम्बोदरशरीरिणे ॥ कमण्डलुनिषंगाय तस्मैब्रह्मात्मनेनमः १०० यस्यकेशेषुजीमूतानद्यःसर्वांगसन्धिषु ॥ कुक्षौसमुद्राश्चत्वारस्तस्मैतोयात्मनेनमः १०१ सम्भक्ष्यसर्वभूतानि युगान्ते पर्युपस्थिते ॥ यःशेतेजलमध्यस्थस्तम्प्रपद्येम्बुशायिनं १०२ प्रविश्यवदनंराहोर्यःसोमंपिवतेनिशि॥ग्रसत्यर्कञ्चस्वर्भानुर्भूत्वामांसोभिरक्षतु १०३ येचानुपतितागर्भा यथाभागानुपासते ॥ नमस्तेभ्यःस्वधास्वाहा प्राप्नुवन्तुमुदन्तुते १०४ येंगुष्ठमात्राःपुरुषा देहस्थाःसर्वदेहिनां ॥ रक्षंतुतेहिमांनित्यंनित्यञ्चाप्याययन्तुमां १०५ येनरोदन्तिदेहस्थाः देहिनोरोदयन्तिच ॥ हर्षयन्तिनहृष्यन्ति नमस्तेभ्योस्तुनित्यशः १०६ येनदीषुसमुद्रेषु पर्वतेषुगुहासुच ॥ वृक्षमूलेषुगोष्ठेषु कान्तारेगहनेषुच १०७ चतुष्पथेषुरथ्यासु चत्वरेषुतटेषुच ॥ हस्त्यश्वरथशालासु जीर्णोद्यानालयेषुच १०८ येषुपञ्चसुभूतेषु दिशासुविदिशासुच ॥ चन्द्रार्कयोर्मध्यगतायेचचन्द्रार्करश्मिषु १०९ रसातलगतायेच येचतस्मैपरंगताः ॥ नमस्तेभ्योनमस्तेभ्यो नमस्तेभ्योस्तुनित्यशः ११० येषांनविद्यतेसंख्या प्रमाणंरूपमेवच ॥ असंख्येयगुणारुद्रा नमस्तेभ्योस्तुनित्यशः १११ सर्वभूतकरोयस्मात्सर्वभूतपतिर्हरः ॥ सर्वभूतान्तरात्माच तेनत्वन्ननिमंत्रितः ११२ त्वमेवहि

ज्यसेयस्माद्यज्ञैर्विविधदक्षिणैः ॥ त्वमेवकर्त्तासर्वस्य तेनत्वंननिमंत्रितः ११३
अथवामाययादेव सूक्ष्मयातवमोहितः ॥ एतस्मात्कारणाद्वापि तेनत्वंननिमं-
त्रितः ११४ प्रसीदममभद्रन्ते भवभावगतस्यमे ॥ त्वयिमेहृदयंदेव त्वयिबुद्धि
र्म्मनस्त्वयि ११५ स्तुत्वैवंसमहादेवं विरराम प्रजापतिः ॥ भगवानपिसुप्रीतःपुन
र्दक्षमभाषत ११६ परितुष्टोस्मितेदक्ष स्तवेनानेनसुव्रत ॥ बहुनात्रकिमुक्तेनम
त्समीपेभविष्यसि ११७ अश्वमेधसहस्रस्य वाजपेयशतस्यच ॥ प्रजापतेमत्प्र
सादात्फलभागीभविष्यसि ११८ अथैनमब्रवीद्वाक्यं लोकस्याधिपतिर्भवः ॥
आश्वासनकरंवाक्यंवाक्यविद्वाक्यसंमितं ११९ दक्षदक्षनकर्त्तव्यो मन्युर्विघ्न
मिमंप्रति ॥ अयंयज्ञहरस्तुभ्यं दृष्टमेतत्पुरातनं१२०भूयश्चतेवरंदद्मितंत्वंगृह्णी
ष्वसुव्रत ॥ प्रसन्नवदनोभूत्वा तदिहैकमनाःशृणु १२१ वेदात्षडंगादुद्धृत्य सां
ख्ययोगाच्चयुक्तितः ॥ तपःसुतप्तंविपुलंदुश्चरंदेवदानवैः १२२ अपूर्वंसर्वतोभद्रं
विश्वतोमुखमव्ययं ॥ अब्दैर्दशाहसंयुक्तं गूढमप्राज्ञनिन्दितं १२३ वर्णाश्रम
कृतैर्धर्मैर्विपरीतंक्वचित्समं ॥ गतांतैरध्यवसित मत्याश्रममिदंव्रतं १२४ मयापा-
शुपतंदक्ष शुभमुत्पादितंपुरा ॥ तस्यचीर्णस्यतत्सम्यक्फलंभवतिपुष्कलं १२५
तच्चास्तुतेमहाभागत्यज्यतांमानसोज्वरः॥ एवमुक्त्वामहादेवः सपत्नीकःसहानु
गः ॥ अदर्शनमनुप्राप्तोदक्षस्यामितविक्रमः १२६ दक्षप्रोक्तंस्तवमिमं कीर्त्तये
द्यःशृणोतिवा ॥ नाशुभंप्राप्नुयात्किंचिद्दीर्घमायुरवाप्नुयात् १२७ यथासर्वेषुदेवे
षु वरिष्ठोभगवाञ्छिवः ॥ तथास्तवोवरिष्ठोयं स्तवानांब्रह्मसंमितः १२८ यशोरा
ज्यसुखैश्वर्य्य कामार्थधनकांक्षिभिः ॥ श्रोतव्योभक्तिमास्थाय विद्याकामैश्च
यत्नतः१२९ व्याधितोदुःखितोदीनश्चोरग्रस्तोभयार्दितः ॥ राजकार्य्याभियुक्तो
वा मुच्यतेमहतोभयात् १३० अनेनैवतुदेहेन गणानांसमतांव्रजेत् ॥ तेजसाय
शसाचैव युक्तोभवतिनिर्मलः १३१ नराक्षसाःपिशाचावानभूतानविनायकाः॥
विघ्नंकुर्युर्गृहेतस्य यत्रायंपठ्यतेस्तवः१३२ शृणुयाच्चैवयानारी तद्भक्ताब्रह्मचारि
णी ॥ पितृपक्षेमातृपक्षे पूज्याभवतिदेववत् १३३ शृणुयाद्यःस्तवंकृत्स्नं कीर्त्त
येद्वासमाहितः ॥ तस्यसर्वाणिकर्म्माणि सिद्धिंगच्छंत्यभीक्ष्णशः १३४ मनसा
वर्जितंयच्च यच्चवाचानुकीर्त्तितं ॥ सर्वंसंपद्यतेतस्यस्तवस्यास्यानुकीर्त्तनात्१३५
देवस्यचगुहस्यापि देव्यानन्दीश्वरस्यच ॥ बलिंसुविहितंकृत्वादमेननियमेनच
१३६ ततस्तुयुक्तोगृह्णीयान्नामान्याशुयथाक्रमं ॥ ईप्सितान्लभतेसोर्थान्भो
गान्कामांश्चमानवः १३७ मृतश्चस्वर्गमाप्नोति तिर्यक्षुचनजायते ॥ इत्याहभ
गवान्व्यासः पराशरसुतःप्रभुः १३८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे एकादशाधिकशततमोऽध्यायः १११ ॥

एकसौबारहका अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हे पितामह स्तोत्रपाठ आदिके द्वारा चित्तशुद्धि होने से ब्रह्मज्ञान प्राप्तकरना योग्यहै यह आपने कहापरंतु इससंसारमें जिस पुरुषको अध्यात्मविद्याकाज्ञान वर्त्तमानहै वह कैसे और कहां से प्राप्तहोता है उसको कृपाकरके मुझे समझाइये, भीष्मजी बोले कितुम बुद्धिकेद्वारा जो उसको पूछते हो तो सबका विदितकरनेवाला सर्वोत्तम ज्ञानहै उसको मैं तुझसे बड़ी स्पष्टतासे कहूंगा तू उसकोचित्त लगाकर यथार्थतासे सुन, पृथ्वी जलवायु आकाश और अग्नि यहपंच महाभूत सबजीवोंके उत्पत्तिस्थान और नाश स्थान हैं, हे भरतबंशी सबजीवों का देह सूक्ष्म स्थूल गुणों का समूहहै वह बुद्धि आदि गुण परमकारण रूप आत्मा में सदैव लयहोते हैं और प्रकट भी होते हैं, इसी आत्मासे वह सब जीव उत्पन्न हुये और लय भी होते हैं इसीप्रकार जैसे सागरसे लहरें उत्पन्न होती हैं वैसेही जीवों से पंचमहाभूत भी प्रकट होते हैं, जैसे कि कछुआ अपने अंगोंको फैलाकर समेटलेताहै इसी प्रकार यह पंचभूत भी उन वृद्धजीवोंके छोटे अंगहैं अर्थात् देखतेही गुप्त और प्रकट होनेको समर्थहैं, यह तो शरीरको पंचमहाभूतों से भराहुआ कहा—अब उसमें उन भूतों के अंशोंका विवेक करते हैं—शरीरमें जो शब्दहै वह निश्चय आकाश का अंशहै और देहकी कठोरता पृथ्वीका अंशहै प्राण वायुका अंश है, रस जलका, रूप अग्निका अंशहै, यह सब जड़ चैतन्य ब्रह्मरूप हैं प्रलय में उसी ब्रह्ममें लय होते हैं और उत्पत्तिकाल में उसीसे उत्पन्न होतेहैं यह केवल कथनहीमात्रहै वास्तवमें रस्सी में सर्प के होने और लय होनेके समान है यह वेदान्तपक्षहै, पंचमहाभूतोंके उत्पन्न करनेवाले अहंकार ने सब देहों में आकाशादि तत्त्व और विषयों को कल्पना किया है और देह के भीतर उन आकाशादि तत्त्वोंमें जो कार्यरूप दृष्ट होताहै उसको कहताहूं, शब्दश्रोत्रेन्द्री और देहके छिद्र यह तीनों आकाश से उत्पन्नहैं रस, आर्द्रता, जिह्वा यह जल के गुण हैं, रूप, चक्षुरिन्द्री, जठराग्नि यह अग्नि के तीनों गुणहैं, सूंघने के योग्य गन्ध घ्राणेन्द्री और सब शरीर यह पृथ्वी के गुणहैं, प्राण, स्पर्श चेष्टा यह वायु के गुणहैं हे राजा पंचतत्त्वों से उत्पन्न होनेवाले यह सब गुण वर्णन किये, और इन शब्दादि पन्द्रह वस्तुओंमें उस मायाधीश ईश्वर ने सतोगुण रजोगुण तमोगुण यह तीन गुण और चारोंयुगका आत्मा चिदाभास, जीव अपने विषय स्वरूप का निश्चय और छठा चित्त और अच्छीतरह कल्पना किये जो कफ वायुसे ऊपर और मस्तकसे नीचे देखतेहो उस सबओरमें बुद्धि ही वर्त्तमान है अर्थात् वह बुद्धि शब्द से लेकर चित्ततक इक्कीस तत्त्वोंका रूप

है, अब बुद्धिके सात रूपोंको कहते हैं—मनुष्यमें पांच इन्द्री छठा चित्त सातवीं बुद्धि और आठवां क्षेत्रज्ञको कहते हैं यह बुद्धिसे विलक्षण है, इन्द्री और इन्द्रियों का कर्त्ता उनके कर्म के विभागसे जानने के योग्यहैं, सतोगुण रजोगुण तमोगुण और वह सात्विक आदि भाव भी उन इन्द्रियोंके कर्त्तामें आश्रितहैं अर्थात् उससे उत्पन्न हुये हैं, चक्षुरिन्द्री देखने को, चित्त सुनने को बुद्धि निश्चयकरनेको, और क्षेत्रज्ञ उदासीन चिन्मात्र कहाजाताहै तमोगुण सतोगुण, रजोगुण चारों युगों का आत्मा जीव और कर्म इन पांचों गुणोंसे बुद्धि बारम्बार विषयों में प्राप्त कीजाती है बुद्धिही सब इन्द्री और मन इत्यादि का रूपहै और तमोगुण आदि का भी रूप है, बुद्धि न होने से गुणों का भी अभावहै देखने के कारण से चक्षुरिन्द्री सुनने से श्रोत्रइन्द्री, सूंघने से घ्राणेन्द्री, रसोंके स्वादलेनेसे रसनेन्द्री; छूने से स्पर्शेन्द्री यह सब बुद्धिही सब रूपों को करती है अर्थात् जब कुछ इच्छा करती है तब वह चित्त होजाती है, यह बुद्धिके पांच प्रकारके अधिष्ठानहैं इन्हींको चित्त समेत विषयवाली इन्द्री कहते हैं इन्हींके दूषित होनेपर बुद्धि भी दोषयुक्त होतीहै, साक्षीपुरुषमें नियत बुद्धि सात्विकआदि दुःखसुखमें वर्त्तमान होती है कभीहर्ष कभी शोक कभीसुख से तृप्तनहीं होती है न कभीदुःख से वैराग्य को पाती है यह सर्वात्मा बुद्धिसुख दुःख, मोह, इनतीनों भावोंको उनका आत्मारूप होनेपरभी ऐसेउल्लंघकर वर्तमान होतीहै जैसेकि तरंगयुक्त समुद्र अपनी महाबेला को अर्थात् मर्य्यादा को उल्लंघनकर वर्त्तमानहोता है सुखआदि भाव से पृथक् होनेवाली बुद्धि सत्तामात्र चित्तमें वर्त्तमान होती है अर्थात् पूरे ज्ञानमें सूक्ष्मरूप होतीहै, फिर उत्थान काल में प्रकट होनेवाला रजोगुण बुद्धिभाव से वर्त्तमान होता है बड़ाहर्ष, अनुराग, आनंद, सुख, चित्तकी शान्ति यहसातों के गुणबड़े उपाय से वर्त्तमान होतेहैं, ईर्षा, शोक, अंगोंका जलना, चिन्ता, अधैर्य्य, यह रजोगुणकेचिह्न कारण और अकारण दोनोंप्रकारसे दिखाईदेतेहैं, अविद्या राग, मोह,प्रमाद,समय,चेष्टा,अचेष्टा, भय अपने तपआदिकी वृद्धि न करना शोक मोह,निद्रा,अर्धनिद्रा यहनानाप्रकारके तमोगुणकेचिह्न महाप्रारब्ध हीनता से उत्पन्न होतेहैं,देहऔरमनमें जब अनुराग उत्पन्नहोताहै तब सात्विक भावहोता है और उसको बिना ध्यानाकिये जो दुःखीहोकर प्रीतिनहींकरताहै वहां रजोगुणी कर्मजानो और भयकरके चिन्तानकरे अर्थात् दुःखको कुछ न गिने,और मोहयुक्त देह और मनहोय इस तर्कणासेरहित जाननेके अयोग्यको तमोगुण जाने,यहां बुद्धिकी जितनी गति हैं वह वर्णनकरीं इनसबको जानकर ज्ञानी होजाय,उस सूक्ष्म बुद्धि और क्षेत्रज्ञके अंतरको समझो कि बुद्धितो गुणोंको उत्पन्न करती है और क्षेत्रज्ञ गुणों को नहीं उत्पन्न करताहै, इसप्रकार स्वभाव

से पृथक् वह दोनों सदैव ऐसे संयुक्त भी रहते हैं जैसे मत्स्य जल से पृथक् और मिलाहुआ होताहै गुणों ने आत्माको नहीं जाना परंतु वह आत्मा सब ओरसे गुणों को जानताहै, जैसेकि अज्ञानी गुण और गुणी रूपसे आत्मा और गुणोंका योग जानताहै उसी प्रकार गुणोंका देखनेवाला पुरुष गुणोंको आत्मारूप देखताहै, इसके अनन्तर गुण किसमें आश्रित रहते हैं उसको भी कहते हैं—बुद्धिका आश्रय अर्थात् उपादान नहीं है क्योंकि उसका कर्त्ता अज्ञान नाशवान् है सतोगुण आदि के कार्य्य महत्तत्त्वादि से अन्य गुण भी उत्पन्न होते हैं परन्तु उनगुणों को कभी कोईभी नहीं जानताहै जैसेकि रस्सी के सर्पका कारण अज्ञान उसके कार्य्य से जान लियाजाताहै परन्तु वास्तवमें नहीं है और गुणों के मिथ्या होने से उसका कार्य्य भी दृष्टनहीं पड़ता इस शंकाको कहते हैं इन संसार के बुद्धि आदि गुणका आधार बुद्धिही है, बुद्धि गुणों को उत्पन्न करती है क्षेत्रज्ञ देखताहै इन बुद्धि और क्षेत्रज्ञका संयोग प्राचीन है, यह ऐसे स्वभाववालाहै उसको बुद्धिसे जानकर हर्ष शोक मित्रता से रहित होकर मनुष्य बिहारकरै, जड़ अज्ञान इन्द्रियां जिनमें मध्यस्थ बुद्धि है उनसे वह आवरणभंग कियाजाता है अर्थात् परदा अलग कियाजाता है वह इंद्रियां दीपकके समान हैं तात्पर्य्य यह है कि इन्द्रियां दीपक बुद्धि कर्त्ता और चिदात्मा साक्षी है, यह स्वभाव सिद्धहै जैसे कि मकड़ी तारोंको पैदा करती है उसी प्रकार बुद्धिगुणोंको उत्पन्न करती है, इस हेतुसे जो गुण बुद्धि से उत्पन्न होते हैं वह मकड़ी के तारकी समान जानने योग्य हैं अर्थात् उसी का रूप हैं, नाशरूप गुण निवृत्त नहीं होते हैं क्योंकि प्रत्यक्ष में प्रवृत्ति नहीं जाती है आशय यहहै कि उक्तरस्सी के सर्पकी समान नाशको पाते हैं कोई ऐसा निश्चय करते हैं कोई प्रतिकूल निश्चय करते हैं, इस हृदयकी दृढ़ चिन्तारूपी बुद्धि गांठको खोलकर निस्सन्देह शोक रहित सुख से वर्त्तमान होजाय, जैसे कि थाहके न जाननेवाले अज्ञानी मोहसे युक्त होकर संसार रूपी घोर नदी में गिरकर दुःखको पाते हैं उसीप्रकार बुद्धि योग रूप नौका का न जाननेवाला जीवभी कष्टको पाताहै, संसार नदी से पारजानेवाले ब्रह्मविद्यामें कुशल धैर्य्यमान ज्ञानी पुरुष दुःखको नहीं पाते हैं, ज्ञानियों को वह संसारी बड़ाभयनहीं होता है जो अज्ञानियोंको है किसी की गति अर्थात् मोक्ष अधिकनहीं है सबकी मोक्ष बराबर है ज्ञानियों में कुछ भी परस्पर अंतर नहीं होता है, ऐसे ज्ञानी के फल कहते हैं—यह ज्ञानी जो बड़े दोषवाले कर्म को करताहैऔर जो इसने ज्ञानदशासे पूर्व में कियाहै वह सब केवल ज्ञानसेही नाश होजाताहै यह ज्ञानी अज्ञान दशा में जो दूसरेके कर्म में दोष लगाता है और रागादि दोषों को आपकरताहै उनदोनों बातों को ज्ञानदशा में नहीं

करता है अर्थात् आप दोषरहित होकर दूसरे के दोषको नहीं देखताहै—४६॥
इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेद्वादशोपरिशततमोऽध्यायः ११२ ॥

एकसौतेरहका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह मनुष्य सुखदुःख और मृत्यु से भय करतेहैं यह दोनों जैसे हमको बाधा न करें वह उपाय आप मुझसे कहिये भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर इस स्थानपर एक प्राचीन इतिहासको कहतेहैं जिसमें नारदजी और समंग ऋषिका संवाद है नारदजी बोले कि हृदय से दण्डवत् करतेहो अर्थात् अत्यन्त नम्रहो और भुजाओं से तरतेहो और बड़ेसंकटमें भी आनन्दमें रहतेहो सदैव प्रसन्न चित्त और शोचसे रहित दृष्ट आतेहो आपके अव्याकुल चित्त या प्रियवस्तुके वियोगसे उत्पन्न दुःख और भयको भी नहीं देखताहूं बालकके समान रागद्वेष रहित चेष्टाकरतेहो सदैव तृप्तरूप सुखपूर्वक नियतहो, समंगऋषिने उत्तरदिया कि हे प्रशंसा करनेवाले मैं भूत भविष्य वर्त्तमान कालोंके सिद्धान्तको जानताहूं इसकारण चित्तसे व्याकुल नहीं होताहूं, और लोकमें फलके देनेवाले कर्म्मोंको और विचित्र फलोंको भी जानताहूं इसीकारणसे कर्मके प्रारम्भको त्यागकर फिर मोहित नहीं होताहूं, हे नारदजी जैसे कि धन स्त्री से रहित विद्यारूपी धनसे पूर्ण अन्ध सिड़ी मूर्ख मनुष्यजीवते हैं उसी प्रकार मुझको भी निर्वाह करनेवाला समझो, नीरोग देह स्वर्गवासी पराक्रमी और निर्बल मनुष्य पूर्वकियेहुये कर्म्मोंकेद्वारा जीवतेहैं उसीकारणसे हमको भी पूजन करते हैं, हजारों मनुष्य निर्वाह करते हैं कोई सागही खाकर जीवतेहैं उसीप्रकार हम भी अपना निर्वाह करते हैं, हे नारदजी जब हम शोकके मूल अज्ञानके अभाव रूप होनेसे शोच नहीं करते तब यज्ञादिक धर्म्म अथवा लौकिक कर्म्मोंसे हमको क्या प्रयोजनहै क्योंकि जब सुख और दुःख दोनों नाशवान् वस्तुहैं तब हमको वह कैसे आधीन कर सक्ते हैं, ज्ञानी मनुष्य जिस मनुष्यको ऐसा कहते हैं कि उसकी इन्द्रियोंकी शुद्धता अर्थात् मोहादिकसे रहित होना ज्ञानका मूलहै इन्द्रियांही मोहकरतीहैं इसप्रकारसे जो शोचताहै वही ज्ञानी हैऔर जिसकी इन्द्रियां ज्ञान विहीन हैं उसको ज्ञानका लाभनहीं है,जो अज्ञानी धनआदिका अहंकारी है वहीमोह में प्रवृत्त होताहै इसकारण अज्ञानी मनुष्यका न यहलोकहै न परलोकहै दुःख सुख सदैव नहीं रहते हैं तो दुःखमें शोच और सुखमें अहंकार भी न करना चाहिये, मुझसा आत्मज्ञानी इससंसाररूप और चारोंओर घूमनेवाले दुःखको कभी न माने प्रिय भोगोंको और सुखको कभी न चाहै और दैवयोग से होनेवाले दुःखमें चिन्ता न करे, योगमें नियतहोकर सुखादिकी चाहना न करे

और अप्राप्तवस्तुकी इच्छा न करे बहुतसे अर्थ लाभमें भी प्रसन्न न हो और अर्थों के नाश में भी कभी व्याकुल न हो बान्धव धन सब शास्त्र और मंत्र पराक्रम यह सब दुःखसे नहीं बचासक्ते शम दमआदि गुणोंसेही शान्ति अर्थात् निर्विकल्पताकोपाते हैं, जो योगीनहीं है उसके बुद्धिभीनहींहै और जो योगके बिना सुखकी भी प्राप्ति नहीं होती है राजा मन प्राण और इन्द्रियोंके कर्मोंके रोकने में सामर्थ्य और दुःखकात्याग यही दोनों सुखरूपहैं, योगमें प्रवृत्ति होनेकेलिये लौकिक प्रिय वस्तुओंकी निन्दा करते हैं प्रिय वस्तु प्रसन्नता और सुखको उत्पन्न करतीहै परन्तु फिर वही हर्ष सुख अहंकारको बढ़ाती है उससे नरक होताहै इसी हेतुसे मैं उनको अत्यन्त त्याग करताहूं और उस सुखदुःखमें इनशोक और भय आदिको मैं साक्षीके समान मोह उत्पन्नकरने वाला देखताहूं, और शोक और तपसे पृथक् अर्थ काम तृष्णा और मोहको अत्यन्त त्याग करके इसपृथ्वीपर विचरताहूं मुझको इसलोक परलोकमें मृत्यु अधर्म्म आदि किसीसेभी ऐसे भयनहीं है जैसे कि बड़े अमृत पीनेवालेको भयनहीं होता है ब्रह्मन्नारदजी मैं अविनाशी योगरूप तपको करके ब्रह्मको जानताहूं इसीकारणसे प्राप्तहोनेवाला शोक मुझको पीड़ा नहींदेताहै २१ ॥

इतिश्री महाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेत्रयोदशोपरिशततमोध्यायः ११३ ॥

एकसौ चौदहका अध्याय ॥

उस ब्रह्मविद्याको जिसमें उपदेशही प्रधानहै सुनकर उसीको युक्ति प्रधान जाननेकी इच्छासे युधिष्ठिरबोले—हे पितामह जिसने सब शास्त्रों के सिद्धान्त को नहीं जाना और सदैव संशय में ही पड़ा हुआहै और उस आत्मदर्शन के निश्चयकेलिये शम दमादिके अनुष्ठानको नहींकिया उसके कल्याणको आपकहिये, भीष्मजी बोले कि ईश्वरमें चित्तलगाकर गुरुकीपूजा और आचार्योंका सदैव पूजनकरे गुरु आदिसे शास्त्रोंकासुनना तदनन्तर शुद्ध ब्रह्मसे सम्बन्ध रखनेवाला कल्याण कहाजाताहै,इसस्थानपर इसप्राचीन इतिहासको भीकहताहूं जिसमें गालवऋषि और देवर्षिनारदजीका संवादहै,जितेन्द्री और कल्याणकी इच्छाकरनेवाले गालवऋषिने उनमोह और ग्लानिसे रहित वेदपाठी ज्ञान तृप्त नारदजीसे कहा कि हेमुनि मनुष्य जिनगुणोंसे लोकमें सबका प्याराहोताहै उनसब गुणोंको मैं आप में वर्त्तमान देखताहूं, इसप्रकारके आप सरीखे ज्ञानी हमसरीखे आत्मज्ञान न जाननेवाले अज्ञानियोंका सन्देहदूरकरने के योग्यहो,करनेकेयोग्य कर्मोंकी मुख्यतानहोनेसे ज्ञानमेंएकसी प्रवृत्ति होती है इसनिमित्त जो करनेकेयोग्यहै उसको हमनहीं निश्चयकरसक्ते इससे आप दानकी मुख्यताको वर्णन कीजिये, जिसमें अनुष्ठान से उत्पन्न होने वाला

परिश्रम नहींहै उसको आश्रम ज्ञान कहतेहैं और उसके जो साधकहैं उसको शास्त्रमें आश्रम कहतेहैं वह सब पृथक् २ आच र के दिखानेवालेहैं हेभगवन् सब मनुष्य भी उनको जानतेहैं, शास्त्रों से उपदेश पायेहुये और अपने २ शास्त्रोंको अंगीकार करने वाले नानाप्रकार के मार्गों में चलनेवाले और अपनेही शास्त्रों से तृप्त ऐसे पुरुषों को देखकर सन्देह करने वाले हम लोग कल्याणको नहींपाते हैं, जो शास्त्रएकहीहोयतो कल्याण प्रकटहो और बहुत शास्त्रोंकेही कारण से कल्याण अत्यंत गुप्तहै, इस हेतुसे मुझको वह कल्याण बड़े २ संदेहोंसे भराहुआ दिखाई देताहै हे भगवन उसको मुझे समझाकर उपदेशकरो, नारदजी बोले हे तात गालव जो चार आश्रम अर्थात् शास्त्रहैं उनसबको गुरूसे पढ़कर विचारो और उन शास्त्रोंके अनेक रूपवाले गुणदेश जो कि जहां तहां विपरीति रीति से नियतहैं उनको भी विचार करो जिसप्रकार दूसरेका धर्म्म गरम शिलापर चढ़नाहै वह हमको अधर्महै और हमारा धर्म पशु यज्ञादिकहै वह दूसरोंका अधर्महै यह विपरीति रीतिसे नियत धर्म्म हुआ, निस्संदेह जैसे स्थूल दृष्टिसे देखेहुए वह शास्त्र अच्छे प्रकारसे अभीष्ट आत्मतत्त्व धर्म्मको प्राप्त नहीं कराते हैं उसीप्रकार दूसरे सूक्ष्मदृष्टी मनुष्योंने शास्त्रोंकी परम गतिको अच्छे प्रकारसे देखाहै, जो शास्त्र कल्याणरूप और संशयसे रहितहैं और जीवोंकी निर्भयता देनेवालोंको अनुग्रहरूप और हिंसा करने वालोंको दण्डरूप तीनोंवर्गोंका समूहहै उसीको ज्ञानियोंने कल्याणरूप कहाहै और पापकर्म्म से पृथक् सदैव पवित्र कर्म्म करना सत्पुरुषों से उत्तम व्यवहार वर्त्तना यह भी कल्याण रूपहै, सबजीवोंमें मृदुता, व्यवहारमें सत्यवक्ता, प्रियभाषण, देवपितरोंको भागदेना, अतिथिसत्कारकरना, बालबच्चेनौकर चाकरोंका पोषणकरना, अविनाशी, तत्त्वोंका कहना सुनना यहसब और ब्रह्मप्राप्त करने वाले ज्ञान कठिनता से प्राप्तहोतेहैं, जो जीवोंका अत्यन्त उपकारी है मैं उसको सत्यब्रह्म कहताहूं, अहंकारका त्याग, मोहका रोकना, संतोष अकेलाघूमना, इनसबको अविनाशी कल्याण कहते हैं, धर्म्म से वेदों का पढ़ना, वेदांतों का विचार करना, ज्ञान अर्थ के अनुभवकी इच्छा भी कल्याणदायी है और वह मनुष्य रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्शको किसी दशा में भी अधिक सेवन न करे जो अपना कल्याण चाहै, रात्रिमें चलना दिन में सोना, आलस्य, निर्दयता, अहंकार, भोजनादि में न्यूनाधिकता, इनसब बातों को न करे जो कल्याण चाहै, दूसरे की निन्दा से अपनी प्रतिष्ठा न चाहै केवल अपने गुणों सेही नीचों से प्रतिष्ठाको चाहै, जो प्रतिष्ठावान् पुरुष अपने गुण और ऐश्वर्य्य के कारण दूसरे गुणवानों की निन्दा करते हैं वह बड़े अज्ञानी हैं वह अपने अभिमानसे बड़े लोगों को शिक्षा करतेहुये अपने

को बड़ा मानतेहैं, किसी की निन्दा न करता अपनी प्रशंसा रहित गुणी द-
यालु पुरुष ब्रह्मको पाताहै न बोलने से पुष्पों की पवित्र गन्धि उठतीहै और
आकाशमें निर्मल सूर्य्य देवता विना बोले प्रकाश करतेहैं, इसप्रकार के दूसरे
जीव बुद्धि के द्वारा संसारमें प्रसिद्ध हैं जो अधिकभाषण नहीं करते हैं वह
लोकमें यशकोप्रकाशकरते हैं, मूर्खमनुष्य केवल अपनीप्रशंसा से लोकमें प्र-
काश नहींकरताहै, विद्वान् मौनभी प्रकाशमानहोताहै ऊंचेस्वरसे कहाहुआ
भी असारशब्द निचाईको पाताहै और धीरे भी कहाहुआ सुन्दरशब्द लोकों
में प्रकाश करताहै, अज्ञानी मूर्खोंका कहाहुआ असारवान् बहुतबड़ा शब्द
अन्तरात्माको ऐसा दिखाताहै जैसे कि सूर्य्य अपने अग्निरूपको, इसीकारण
शास्त्रों के अन्तरोंसे नानाप्रकार रखनेवाली बुद्धिको निश्चय करतेहैं, जीवों
का जो बड़ा लाभहै वही हमको उत्तम दिखलाई देताहै, विना पूछे किसी से
कुछ न कहे और पूछाहुआ भी न्यायसे विरुद्ध न कहे, शास्त्रोंके स्मरण रखने
वाली बुद्धिकास्वामी ज्ञानीमनुष्य जड़केसमानबैठे और ऐसे मनुष्योंके मध्य
में रहनाचाहै जो सदैव धर्म्मकर्त्ता साधु दानी और अपने धर्म्ममें प्रीति करने
वालेहों, जिसस्थान में चारोंवर्णों के धर्मोंका योग हो वहां किसी दशामें भी
निवास न करे जो अपना भलाचाहै, कर्म्मका प्रारंभ न करनेवाला, यथालाभ
सन्तोषी पुरुष इसलोकमें पुण्यात्माओंमें पुण्य और पापात्माओं में पाप को
पाताहै, जैसे कि जल अग्नि और चन्द्रमाके स्पर्श को पुरुष जानता है उसी
प्रकार हम पापपुण्यके स्पर्श को देखतेहैं अर्थात् कुसंग और सुसंग पापपुण्य
का देनेवालाहै, देवता आदिसे शेषअन्नके भोजन करनेवाले स्वादु को न दे-
खते जो भोजन करतेहैं और जो बुद्धि सम्बन्धी विषयों को भोगते हैं उनको
कर्मबंधनमें बंधेहुएजानो, अब गुरु शिष्य के धर्मोंका वर्णन करतेहैं—गुरु आ-
त्मज्ञान धर्म्म के चाहने वालोंको उपदेशकरे और अश्रद्धावान् को कभीनकरे
और जिस देश में अप्रतिष्ठा पूर्वक गुरुको पूजते हैं ऐसेदेश को ज्ञानीसदैव
त्यागकरे, जहांपर कि गुरू और शिष्यकी आजीविका अच्छेप्रकारसे नियत
हो और बुद्धिके अनुसार शास्त्र युक्तहो ऐसे देशको कभीनत्यागे, जहां शा-
स्त्रसे विरुद्ध होकरलोग पंडितोंके मिथ्यादोषोंको वर्णनकरें वहांपर अपनी प्र-
तिष्ठा चाहनेवाला कभीनरहे ४३ जिसस्थानपर लोभियों ने धर्मरूपी सेतुओं
को तोड़फोड़ डालाहोय वहां और जहांपर कि लोग शोकरूपी अग्नि से
व्याकुलहों कभीनजाय, शंका और मत्सरता रहित जहां अच्छेलोग धर्मको
करतेहैं वहां अवश्यजाय और उन धर्म्मकर्त्ता साधुओंमें नियत होकर निवा-
सकरे, जहां लोगधन आदि के निमित्त धर्म्मकरें वहांपर भी कभी न जाय
क्योंकि वह पापकरनेवाले मनुष्यहैं, जिसस्थानमें मनुष्य पापकर्मोंको करके

अपना जीवनकरते हों वहांसे ऐसेशीघ्र अलग होजाय जैसेसर्प के स्थान से पृथक् होतेहैं; जहांकोई पूर्वकर्म वासनासे कठिन आपत्तिरूपी दुःख में पड़ा हुआ हो वहां आत्माभिलाषी को प्रायश्चित्त करना योग्य है, जिसदेश में राजा और राजा के मनुष्य छोटेबड़ों का अपमान करके बालबच्चों से पहले भोजनकरने वालेहैं ऐसे देशकोभी ज्ञानीसदैव त्यागकरे, जिस देश में सदैव धर्मकरने वाले ब्रह्मरूप यज्ञ कराने और पढ़ानेमें प्रवृत्त वेदपाठी प्रथम भोजन करतेहैं ऐसेदेशमें सुखसे निवासकरे,जिसदेशमें अच्छे प्रकारसे अनुष्ठान किये हुये यज्ञों में स्वधा स्वाहा वषट्कार सदैव वर्त्तमान होते हैं उसदेश में निस्सं-देह निवासकरे जिसदेशमें ब्राह्मण आजीविकासे दुःखी अपवित्र रहतेदीखें उसनिकटवर्त्ती देशकोभी अवश्य ऐसेत्यागे जैसे कि विषयुक्त भोजन को त्यागतेहैं, जिसदेशमें फलकी इच्छारहित दानको मनुष्य करतेहैं उसदेश में ऐसे सावधान चित्तहोकर निवासकरे जैसेकि चित्तकाजीतनेवाला कर्म्मों से निवृत्त मनुष्यहो, जिसदेशमें अपराधियों को दण्ड और ज्ञानियोंका सत्कार होताहै वहां विचरे और पुण्यात्मा साधुओंमें निवासकरे, जो मनुष्य जिते-न्द्रियोंपर क्रोधकरते हैं और साधुओंमें दुराचारीहैं उनलज्जा रहित लोभी म-नुष्यों को बड़ाभारी दण्डदेना चाहिये, जिसदेश में सदैव धर्मपरनियत और कामनाओंका स्वामीराजा इच्छाओं को त्यागकरके प्रजाका पालन धर्म्मसे करताहै उसदेशमेंभी बिनाविचारकिये निवासकरे, कल्याण न होने मेंभीप्र-सन्नचित्त राजालोग सबदेशवासियोंको शीघ्रकल्याण युक्तकरते हैं, हे तात मैंने यह कल्याण तुझ से कहा और आत्मारूप कल्याण प्रधानता से वर्णन करना असंभवहै ऐसीवृत्तिवाले सावधानचित्त पुरुषका कल्याण तपसेही प्रत्यक्षहोगा ५९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेचतुर्दशोपरिशततमोऽध्यायः ११४ ॥

एकसौपन्द्रहका अध्याय ॥

युधिष्ठिरने सबतन्त्रोंमें सावधान अहिंसाप्रधान मोक्षधर्मोंको सुनकर उसे राजाओंसे करना कठिनजानकर भीष्मजीसे प्रश्नकिया कि मुझसाराजा कर्म में प्रवृत्तहोकर किसरीतिसे पृथ्वीपरविचरे औरसदैव किनगुणोंसे युक्तहो स्नेह बंधनसे छूटे,भीष्मजीबोले कि इसस्थानपर इसप्राचीन इतिहासकोभी कहताहूं जिसको अरिष्टनेमिने पूछनेवाले राजासगरसे वर्णनकियाहै, सगरनेकहा कि हेब्रह्मन् इसलोक में किस परमकल्याणको करके सुखको पाता है और किस रीतिसे शोच और व्याकुलता रहित होताहै उसको आपमुझे समझाइये इस प्रकारसे पूछेहुये सर्वशास्त्रज्ञ अरिष्टनेमिने अच्छे प्रकार से विचारकर उपदेश

के योग्यइस वचनकोकहा कि पुत्रधनधान्य पशु इत्यादिमें प्रवृत्तचित्त अज्ञानी पुरुष इस लोकमें मोक्षरूपी सुखको नहीं पाताहै जिसकी बुद्धि विषयों में मग्न और चित्त लोभसे व्याकुलहै वह इससंसार रूपी रोगका इलाज करने को असमर्थहै वह अज्ञानी संसारी प्रीति की रस्सीमें बँधाहुआ मोक्षके योग्य नहीं समझा जाताहै उनप्रीतिके बंधनों को तुझसे कहताहूं किसमयपर पुत्रों को उत्पन्नकरके तरुण होनेपर उनका विवाहादि करके अपने निर्वाह करनेमें समर्थ जानकर जीवन्मुक्त होकर सुखपूर्वक विचरो और दैवाधीन प्राप्त होने वाले विषयोंमें रागद्वेष रहितप्यारी स्त्रीको सन्तानयुक्त पुत्रोंपर स्नेहकरनेवाली वृद्धाजान समयपर मोक्षका विचारकर उसभार्य्याको त्यागकरदो, तुम बुद्धि के अनुसार इन्द्रियोंसे विषयोंको भोगकर संतानयुक्त वा असंतान जीवनमुक्त घूमो, उनविषयोंमें इच्छारहित सुखपूर्वक जीवनमुक्त विहारकरो, यहविषयों के भोगके पीछे जो त्यागरूप मोक्षका प्रयोजनहै उसको मैंने तुझसे मिला हुआ वर्णन किया अब ब्यौरेवार कहताहूं उसको सुनो कि लोकमें प्रीतिरूपी बंधनसेछूट निर्भयहोकर मनुष्य निस्संदेह सुखसे विचरते हैं और विषयों में चित्त लगाने वाले लोग निस्संदेह विनाशको पातेहैं, इसीप्रकार इसलोकमें भोजन का संचय करनेवाले कीड़ेचैंटीके समान नाशवान् हैं और भोजनमें चित्तनहीं लगानेवाले सुखीहैं, तुझमोक्ष बुद्धीको अपने लड़के वालोंके लिये यह चिन्ता नहीं करनी चाहिये कि मेरे विनाइनकी कौन दशाहोगी, जीव आपही उत्पन्न होकर वृद्धिको पाता है और आपही सुख दुःख और मृत्युको पाताहै, और माता पिताके द्वारा वा अपनी देहके द्वारा भोजन वस्त्रादि को भी आपही प्राप्त करता है, जिसको पूर्व समयमें नहीं प्राप्तकिया वह इसलोक में प्रारब्ध फलके विभागकरनेवाले ईश्वरसे उत्पन्न और अपने कर्म्मोंसे रक्षित भोजन वाले सबजीव पृथ्वीके चारों ओर घूमतेहैं १६ आप मिट्टीके पिण्डके समान सदैव दूसरेकी आधीनतामें नियत निर्बल आत्मवाले पुरुष का कौन सा कारण अपने बालबच्चोंके पोषण और रक्षामेंहै, जब कि मृत्युतेरे देखतेहुये बालबच्चोंको बड़े उपाय करने परभी मारडालती है वहां अपनी बुद्धिसे समझना चाहिये कि इसीप्रकार पूरेपोषण कियेविना रक्षारहित इसजीवते कुटुम्ब को छोड़कर पीछेभी मरेगा, जबसुखीवा दुःखीमृतक भाईबन्धुरिश्तेदार आदि को कभी नहीं जानता है तब अपनी आत्मासे समझना चाहिये कि जैसे मैं इनसुखी दुखियोंको नहीं जानताहूं और कोई प्रकारसे उनकी सहायता नहीं कीजाती है उसीप्रकार वहभी मुझको न जानेंगे और न सहायता करेंगे, जब घरके लोग तेरेजीतेहुये वा मरनेपर अपने कर्म्म से उत्पन्न सुखदुःखको भोगेंगे और तुम उनकी सहायताकर नहींसक्ते इसी प्रकार वहभी तेरी सहायता नहीं

करसक्ते इसको जानकर अपना अभीष्ट प्रयोजन करना चाहिये, इसप्रकार हेपूर्ण बुद्धिमान् इसलोक में कौन किसकाहै इसको निश्चय करनेवाले तुम मोक्षमें नियत होकर फिरभीसनो, इसलोकमें जिस देहधारीने क्रोध, लोभ मोह, क्षुधा, तृषा आदिभावों को जीताहै वहसतोगुणी मुक्तरूपहै, जो मनुष्य अज्ञानतासे युवावस्थापाकर मद्यपान स्त्री शिकार में आत्माको भूलकर प्रवृत्त नहीं होताहै वहभी मुक्तिरूपहै, प्रत्यक्षहै कि जो पुरुष सदैव दिनरात्रि में यह ध्यान करकेदुखीहै कि अमुक भोगकरना चाहिये वहद्रोष बुद्धी कहाजाताहै, इसीप्रकार जो सदैव सावधान पुरुष अपने चित्तके स्वभावको स्त्रियोंसे मुक्त देखता है अर्थात् स्त्रीकी इच्छासे पृथक्है वह भी बुद्धिके अनुसार मुक्तहै, इस लोकमें जो पुरुष जीवोंके जन्ममरण और कर्म्मोंको मूल समेत जानताहै वह मुक्तहै देहके व्यवहारोंकेलिये हजारों लाखोंछकड़ेभरेहुये अन्नादिकभोजनको और सोने बैठनेको महलपलंगको विचारताहै अर्थात् इनसबवस्तुओंकेसमूहों को निरर्थकजानता है वहभी मुक्तहोता है, जो पुरुष इस प्रत्यक्ष संसार को मृत्युसे घायल रोगोंसे पीड़ित और आजीविका से दुःखी देखता है उसकी भी मुक्तिहोतीहै, जो देखताहै वह संतुष्ट और जो नहीं देखता वह नष्ट हो जाताहै और जो थोड़ेमें संतुष्टहै वह इसलोकमें मुक्तहै, यहसब भोजन करने वाले और भोजनके रूपहैं जो पुरुष इसको विचारताहै अर्थात् अपने को उन दोनों से पृथक् जानता है और मायारूप दुःखसुखके अपूर्व भावसे स्पर्शनहीं करताहै वह मुक्तही है, जिस देहधारीकी दृष्टिसे शय्या पलंग पृथ्वी आदि समानहैं और शालिनाम धान और निन्दित भोजन जिसकी बुद्धिसे बराबर हैं वह भी मुक्तरूप है अतसीके सूत्रका तृणोंका, रेशमी, वस्त्रकंबल, मृगचर्म आदिकावस्त्र जो समान समझता है वह मुक्तरूपहै, जो पुरुष इस लोकको छः तत्त्वोंसे उत्पन्न जानताहै अर्थात् विचारकर उसीप्रकार समदर्शी होकर वर्त्ताव करता है और जिसकी बुद्धिसे हानिलाभसुख,दुःख, हार, जीत, इच्छा अनिच्छा, भय, निर्भयता व्याकुलता आदि समानहैं वह सबप्रकारसे मुक्तहै, इसीप्रकार रुधिर मूत्र विष्ठा आदि दोषोंको और बहुत दोष रखनेवाले देहको देखकरभी मुक्तहोता है, जो पुरुष वृद्धावस्थाकी झुर्रीबालोंकी श्वेतता, निर्बलता, कुरूपता, कुब्जता आदिको देखताहै और विचारताहै वहभी मुक्तहोता है, समयकी लौटपौटसे पुरुषार्थहीनहोनेपर अंधता बधिरता और देहकी निर्बलताको आपदेखता है, वह मुक्तहोताहै जो पुरुष इसलोक से परलोक में जानेवाले ऋषि, देवता और असुरोंको देखताहै वहभीमुक्तहै, ऐसे २ प्रतापवान् तेजस्वी बली हजारों राजामहाराजा पृथ्वी को छोड़कर चलेगये उसके भी विचार करनेसे मुक्तहोता है, लोकमें कष्टसे प्राप्त होनेवाले प्रयोजनों को

और साधारणतासे प्राप्तहुई विपत्तियों को और कुटुम्बके लिये मिलने वाले दुःखोंको जो देखताहै और संसार में पुत्रोंकी और मनुष्योंकी गुणहीनता आदि बहुतसी अयोग्य बातोंको देखकर कौनसा मनुष्य मोक्षकी प्रशंसा न करेगा, जो मनुष्य शास्त्र और लोकसे विदित है और मनुष्यता को निर्मूल समझता है वहसब प्रकारसे मुक्तहै, आपमरेइस वचनको सुनकर बुद्धिकी व्याकुलताको त्यागके गृहस्थाश्रम वा मोक्ष आश्रममें मुक्तकेसमान विचरो, उसऋषिके ऐसे वचनोंको अच्छेप्रकारसे सुनकर मोक्षसे उत्पन्नहोनेवालेगुणों से युक्त उसराजाने प्रजाका पालन किया ४८॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धे पंचदशोत्तरशततमोऽध्यायः ११५॥

एकसौसोलहका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हेतात मेरे हृदयमें यह कौतूहल सदैव वर्त्तमान रहताहै उसको भी हे पितामह आपसे सुनना चाहताहूं कि देवर्षि शुक्राचार्य्यजी महा बुद्धिमान् होकर असुरोंके प्रिय और उपकारी और देवताओं के अप्रिय और अनुपकारी किस कारणसे हुए इनशुक्रजीने देवताओं के तेजको क्यों नाशकिया और दैत्यदानव देवताओंसे किस कारण शत्रुभाव रखतेहैं और देवताओंके समानतेजस्वी शुक्रजीका शुक्रनाम कैसेहुआ और कैसेवृद्धिपाई और आकाश मेंसे कैसे नहीं जातेहैं हेपितामह इसवृत्तांतको मैं यथार्थ और पूर्णताकेसाथ सुनाचाहताहूं, भीष्मजी बोले कि हे निष्पापयुधिष्ठिर जैसा कि मैंने बुद्धिके अनुसार पूर्वसमयमें सुनाहै वहसब ठीक २ चित्त लगाकर सुनो यह भृगुवंशी प्रतिष्ठाके योग्य मुनि दृढ़व्रतवाले शुक्रजी किसी कर्मके कारण से देवताओंके अप्रियकारी हैं अर्थात् असुरलोग देवताओंको दुःखदेकर भृगुपत्नीके आश्रममें छिपजातेथे उस आश्रममें जानेको असमर्थ देवताओंने विष्णुजीकी शरणली तबविष्णुजीने चक्रसे भृगुपत्नीके शिरको काटा फिर मरनेसे बचेहुये असुरोंने शुक्रजीकी शरणली अपनी माताके मरनेसे दुखी होकर शुक्रजीने असुरोंको निर्भय करके देवताओंको पीड़ामान किया यही कर्मरूप कारणहै, यक्ष राक्षसोंके और धनोंके स्वामी कुबेरजी इंद्रदेवता के खजानेके अधिपति हैं उन कुबेरजीकी देहमें शुक्रजीने अपने योग बलसे प्रवेश करके उसको रोककर उसके धनको योगसिद्धी से हरलिया तदनन्तर उसधनके हरने से कुबेरजी को महादुःख हुआ और क्रोध से महाव्याकुल होकर वहकुबेरजी महादेवजीके पासगये और उन भवरूपधारी देवताओं के स्वामी शिवजीसे यह सब वृत्तान्त वर्णनकिया कि योगीशुक्रजीनेमुझको रोक कर मेरा सबधनहरलिया और अपने उग्रतेज और योग बलसे धनको लेकर

निकलगया हे राजन् कुवेरसे इतनी वातके सुनतेही महायोगेश्वर शिवजीने अत्यंत क्रोधमें युक्तहोकर अरुण नेत्रकरके त्रिशूलको धारण किया और इस उत्तम शस्त्रको लेकरबोले कि वह कहां है शुक्रजीने शिवजीके कर्म करनेकी इच्छाजानकर दूरसे दर्शनदिया, फिर उस योग सिद्ध शुक्रजीने महायोगी महात्मा शिवजीके क्रोधकोजानकर जानेआने और रहनेके स्थानको जाना १५ योगसे सिद्धआत्मा शुक्रजी महेश्वरजीको विचारकर उग्रतपके द्वाराशूल की नोकपर दृष्टपड़े और वहतपोमूर्त्ति शुक्रजी धनुषधारी शिवजीको मालूम हुये देवेश्वरने उस चरित्रको जानकर शूलको धनुषरूप करने के निमित्त हाथ स नीचेको नवाया फिर वड़ेतेजस्वीके हाथसे शूलके झुक जानेपर उग्र धनुषधारी प्रभु शिवजीने शूलको पिनाक धनुष कहा फिर देवताओंके स्वामी प्रभु उमापतिजी ने शुक्रजीको हाथोंमें वर्त्तमान देखकर मुखको खोलकरके बड़े धीरेपनेसे मुखमें डाला वह तपसिद्ध महात्मा भृगुनन्दन शुक्रजी उनमहेश्वर जीके पेटमें पहुंचे और वहां विचरनेलगे अर्थात् अन्नके समान परिपाक नहीं हुये, युधिष्ठिर वोले कि हे पितामह वड़े तेजस्वी शुक्रजी उन देवदेव महादेव जीके उदर में किस निमित्त विचरे और उन्होंने कौनसा तपकियाथा भीष्म जी बोले हे युधिष्ठिर महाव्रतधारी शुक्रजी पूर्व्व समयमें जलके भीतर नियत होकर प्रयुत और अर्वुद वर्ष पर्यंत स्तम्भरूप होकर वर्त्तमान रहे वहां कठिन तपस्या को करके उस महा हृद से उठे तब देवताओं के देवता ब्रह्मा जी उनके पास आये और तपकी वृद्धिपूर्व्वक कुशल को पूछा और शिवजी ने भी कहा कि अच्छी तपस्याकी और बड़े बुद्धिमान् अचिन्त्य आत्मा सदैव सत्यधर्म्म परायण शिवजी ने उस तप योग के द्वारा शुक्रजी के महत्त्व को देखा उस तपोधनसे युक्त पराक्रमी महा योगी शुक्रजी तीनोंलोकोंमें शोभायमानहुए, तदनन्तर योगात्मा शिवजी ध्यान योगमें प्रवृत्तहुए इसकारण भयभीत होकर शुक्रजी उदरमें छिपगये और वाहर निकलनेकी इच्छासे उसी उदरमें नियत होकर उन्होंने शिवजीकी स्तुतिकरी और रुद्रजीने उनकोरोक लिया, तव उदर में वर्त्तमान महामुनि शुक्रजी ने उनरोकनेवाले शिवजी से वारम्वार स्तुतिकरके प्रार्थनाकी कि मुझपर कृपाकरिये, उस समय महा तेजस्वी शिवजीने अपनी देहके सव छिद्रोंको रोककर शुक्रजीसे कहा कि इस लिंगके द्वारसे तू निकलजा शुक्रजीने सव द्वारोंको वन्ददेखा और मारेतेजके जलनेलगे और व्याकुल होकर इधर उधर घूमनेलगे और लाचार होकर उसी लिंगद्वारमें होकर निकले तभीसे शुक्र यह नाम उनका प्रसिद्ध हुआ इसी लिंगद्वार से उत्पन्न होनेके कारण आकाशमें होकर नहींजाते हैं तेजसे ज्वालारूप उन निकले हुए शुक्रजीको देखकर क्रोधमें भरकर शिवजी शूल को

फिर उठाकर उपस्थितहुए तब देवी पार्वतीजीने अपने स्वामी रुद्रजीको निषेध किया शिवजीके रोकनेपर शुक्रजीने पार्वतीजीके पुत्रभावको प्राप्तकिया देवी ने कहा कि हे स्वामी इसने मेरे पुत्रभावको पायाहै इससे यह आपके हाथसे मारनेके योग्य नहीं है और देवताके उदरसे निकलनेवाला कोई नाशको नहीं पाताहै, फिर तोदेवीके ऊपर प्रसन्नहो शिवजीने हँसकर बारम्बार यहकहा कि यहइच्छापूर्वक जाय तदनन्तर महामुनि बुद्धिमान् शुक्रजी ने वरदाता शिव और पार्वतीजीको प्रणाम करके अभीष्ट गतिको पाया, हे भरतवंशियों में उत्तम तात युधिष्ठिर मैंने यह महात्मा भार्गवजी का चरित्रकहा जिसके सुननेकी तुमको इच्छाथी ३८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेषोडशोपरिशततमोऽध्यायः ११६ ॥

एकसौ सत्रहका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे पितामह महाबाहु अब फिर उन कल्याणरूपोंका वर्णन कीजिये मैं आपके अमृतरूपी वचनोंसे तृप्त नहीं होताहूं और हे तात किस शुभकर्म्मको करके इसलोक परलोक दोनामें परमगतिकोपाताहै इसको कृपा करके कहिये, भीष्मजी बोले कि इस स्थानपर मैं वह सम्बाद कहूंगा जो कि पूर्वकाल में बड़े यशस्वी तेजस्वी राजा जनक ने महात्मा पराशर ऋषिजीसे पूछाहै कि इसलोक और परलोक में कल्याणकारी जीवों के जाननेके योग्य क्या है तब सर्व्वधर्म्मज्ञ महातेजस्वी राजापर कृपालु पराशरजीने यह वचन कहा कि इसलोक परलोक दोनोंमें धर्म्मही कल्याणरूप कहाजाता है ज्ञानी लोग इससे उत्तम किसीको नहीं कहते; धर्म्म को प्राप्त करके मनुष्य स्वर्ग लोकमें प्रतिष्ठाको पाताहै, इस धर्म्म में निष्ठा करनेवाले पुरुष इसलोक में अपने कर्म्मोंको इसकामनासे करते हैं कि हमको धनकी प्राप्तिहो हे तात इस लोकमें चारप्रकारकी आजीविका कही जाती हैं उन्हीं जीविकाओंको संसारीलोग करते हैं अर्थात् ब्राह्मण की जीविका दान लेना क्षत्री की जीविका पृथ्वीकी भेज लेना वैश्यकी खेती आदि वाणिज्य करना, शूद्रकी आजीविका नौकरी करना सेवा करना, नानाप्रकार की रीतोंसे पापपुण्यको भोगकर देहके त्यागनेवाले जीवोंकी बहुत प्रकारकी गतिहोती हैं अर्थात् पापियोंका जन्म पशु पक्षियोंमें और पुण्यात्माओं को स्वर्ग मिलता है और पुण्य पाप के समान होने में मनुष्यका जन्महोताहै और तत्त्वज्ञानसे मायाके दूर होने पर मुक्तिहोना होताहै यही चारोंगतिहैं परन्तु इनकेभेद बहुतसेहैं जिसप्रकार तांबे आदिके बर्त्तन चांदी सोनेकेपानी से सुन्दर रंगीन किये जातेहैं इसी प्रकार पिछले कर्म्मों के पीछे चलने वाला जीव पूर्व के कर्म्मोंसे रंगको पाता

है विना बीजके कुछ उत्पन्न नहीं होताहै और कर्म्मकिये विना सुख भी वृद्धि नहीं पाताहै मनुष्य इसशरीरमें वा दूसरे शरीरको पाकर उत्तम कर्म्मसे सुख को पाताहै चारवाक कहता है कि मैं दैवको नहीं देखताहूं और उस पुण्य पाप का साधन भी नहीं है देवता गन्धर्व और मनुष्य स्वभावसेही सिद्ध हैं देहके त्यागनेके विना कर्म्मकाफल नहीं पासक्ते वह मनुष्य उस कर्म्मफलके मिलनेपर सदैव चारप्रकारके कर्मोंको स्मरण करतेहैं अर्थात् पापपुण्य इच्छा अनिच्छा यही चार प्रकारके कर्म्म हैं, लोकमें सुख दुःखका कारण जो पाप पुण्य आदि कियाजाता है और वेदमें जो यह वचनहै कि पवित्र कर्म्म से पवित्र होता है यह केवल मन सन्तोषके निमित्तहै यह वृहस्पति सरीखे वृद्धों का वचन नहीं है किन्तु उस पूर्व्वोक्त चारप्रकारके जैसे कर्मको करताहै वैसे-ही फलको भी पाताहै १६ हे राजा यह कर्त्ता दुःख सुख या दोनोंको पाता है क्योंकि कर्म्मका नाश नहीं होता, हे तात इस संसार सागरमें डूबाहुआ म-नुष्य तबतकही पक्षपातसे रहित उत्तमकर्म्म में प्रवृत्त होताहै जबतक कि वह दुःखसे नहींछूटता है, फिर दुःखसे निवृत्तहोकर सुखको भोगताहै और उत्तम कर्म्मोंके नाशहोनेपर पापकर्म्मके फलदुःखोंको भोगताहै, शान्तचित्त प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष में सन्तोष, धैर्य्य, सत्यता लज्जा, अहिंसा और क्रोध स्त्री मद्यपान आदिसे उत्पन्नव्यसनोंसे पृथक्होना प्रवीणता यहसबबातें सुखकीदेनेवालीहैं, जीव पापकर्म्म और शुभकर्म्ममेंभी नियमनकरे किन्तु बुद्धिमान् मनुष्य ब्रह्म-दर्शनके निमित्त समाधिमें ध्यानलगावे, यह जीव किसी दूसरे के पाप पुण्य को नहीं भोगताहै जैसा आप कर्म्यकरताहै वैसाही फल पाताहै, मनुष्य सुख दुःखके कारण पुण्यपापको तत्त्वज्ञानके द्वारा आत्मा में लयकरके दूसरे ज्ञान मार्गसे उनप्रियवस्तुओंको पाताहै जो पृथ्वीसे सम्बंधरखने वाले पुत्रस्त्री पशु गृह धन बाग इत्यादि हैं वह दूसरेही मार्गसे जाते हैं अर्थात् स्वर्ग और मो-क्षमें सहायता नहीं करते हैं, मनुष्य दूसरेके जिस कर्म्मकी निन्दा करता है उसको आप भी न करे जो योगी इसप्रकारसे दूसरे में और अपने में दोषोंका देखनेवालाहै वहनियमपूर्वक निंदाको स्वीकारकरताहै तात्पर्ययहहै कि योगी स्नेह और निन्दासे पृथक्होजाय, जिसप्रकार निन्दाकरनेवाला योगी निंदा के योग्यहै इसी प्रकार योगके विना वैरागी भी निन्दाके योग्यहै इसबातको बहुत से दृष्टान्तों के साथ कहते हैं, भय करनेवाला क्षत्री, सब क्षेत्रों में भो-जन करनेवाला ब्राह्मण, विना कर्म्मवाला वैश्य, सुस्तशूद्र, विद्यापढ़कर दुःख भाव गुरुपूजा आदि गुणोंसे रहित,कुलीन सत्यतासे रहित ब्राह्मण, दुराचारि-णीस्त्री, केवल अपनेही निमित्त भोजनबनानेवाला, अज्ञानी बोलनेवाला, राजा के विना देश, संसार से स्नेह करनेवाला योगी, प्रजापर प्रीति न करने

वाला राजा, योगाभ्याससे रहित, यहसबलोग शोच और निन्दाके योग्यहैं २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेसप्तदशाधिकशततमोऽध्यायः ११७ ॥

एकसौअठारहका अध्याय ॥

पराशरजी बोले कि इसप्रकार से सुख दुःखका कारण पूर्व कर्म्म को जानकर सब कर्मों के नाश करने के लिये योग धर्म्म में प्रवृत्त होना हमने वर्णन किया अब उसकी टीकाको कहते हैं कि जो मनुष्य चित्त देहरूपी रथ में जिसके इंद्रीरूप घोड़े हैं उसको पाकर ब्रह्मज्ञानरूपी रस्सी के द्वारा विषयों को भी चैतन्य रूप देखता है वही बुद्धिमान्है अर्थात् संपूर्ण विषयों को ब्रह्म रूप देखताहै वह भी मोक्षको पाताहै, हेब्रह्मन् सब आलम्बन से रहित चित्त के द्वारा नियत बृत्तिसे पृथक् पुरुषकी भक्ति प्रशंसाके योग्यहै वह भक्ति कर्म के त्यागी ब्रह्मज्ञानी से प्राप्तहोनेवाली होती है अपने समान परोक्ष ज्ञानीको नहीं प्राप्त होतीहै क्योंकि परोक्ष ज्ञानियोंको ब्रह्मज्ञान के उपदेश में अधिकार नहीं है हेराजा यहबात साधारण नहीं है इससे उसको पाकर विषयोंके सेवन से पूरानहीं करे किन्तु उत्तमकर्म्मके द्वारा क्रमसे उत्तमस्थान मिलने के लिये उपायकरे, वृत्रासुरकी गीतामें ऊंचे वर्णसे नीचेवर्णमें वर्त्तमान मनुष्य प्रतिष्ठा के योग्य नहीं है फिर जो सत्क्रियाको पाकर राजसी कर्ममें प्रवृत्त होताहै वह भी वैसाहीहै, शुभ कर्मके द्वारा मनुष्य क्रम से वर्णकी उत्तमताको पाता है और उस दुर्ग्राह्यको न पाकर पापकर्म से अपनाहीं नाश करताहै, अज्ञानसे कियेहुए पापको तपकेद्वारा नाशकरे अपने से किया हुआ पापकर्म्म दुःख को देताहै इसहेतुसे दुःखरूप फलका उदय करने वाला पापरूप कर्म कभी न करे, जो पापरूप फलदेने वाला कर्म्म है चाहै वह बड़ाभी फलदेने वालाहो तौ भी पंडित और पवित्र मनुष्य उसको चांडालके समान बुराजानकर कभी न करे, मैं पापकर्म के कठिन फलको देखताहूं वह यहहै कि विपरीत दृष्टी मनुष्य को सदैव आत्मा अच्छा नहीं मालूम होताहै अर्थात् देहकोही आत्मा जानताहै, इसलोकमें जिसअज्ञानी को वैराग्य उत्पन्न नहीं होताहै उस योग में प्रवृत्तमनुष्यको उत्तम स्थानके न मिलनेसे महाशोच उत्पन्न होताहै अथवा उसको मरने से भी बड़ा शोच प्रकट होता है अर्थात् नरक यातना भोगनी पड़तीहै, जो वस्त्र वास्तवमें पवित्रहै और प्रत्यक्ष में विपरीतरंगसे रँगाहुआ है वह शुद्ध होसक्ता है और किसी काले रंगसे रँगाहुआ वस्त्रबड़े उपायों से भी शुद्धनहीं होसक्ताहै हे नरेन्द्र इसीप्रकार पापको समझो अर्थात् कोई पापतो दूरहोसक्ता है और कोई नहीं होसक्ता, जो मनुष्य आप जान बूझकर पाप को करके उसके प्रायश्चित्त संबंधी शुभकर्मको करताहै वहदोनों पाप पुण्यको

पृथक् २ भोगताहै अर्थात् जान बूझकर जो पाप किया जाताहै वह किसी प्रायश्चित्तसेभी नाश नहीं होता, मनुष्य वेदके अनुसार शास्त्रकी आज्ञामें अहिंसा के द्वारा उस हिंसाके दोषको दूरकरताहै जो कि अज्ञानतासेहोगइ है यह ब्रह्मवादियोंका वचनहै कि अहिंसा धर्म उसकी उसहिंसाको नहीं दूरकर सक्ताहै जिसको कि उसने जानबूझकर इच्छासेकियाहो वेदज्ञ और शास्त्रज्ञ ब्राह्मणोंकाभी यही वचनहै परन्तु मैं इसबातको वहांतकदेखताहूं जहांतक कि कियाहुआ कर्मवर्त्तमानहै वह गुणयुक्तहो याबुद्धिसे जानकर कियाहो अथवा पापसे चाहो रहितहो तात्पर्य्य यहहै कि जानके या विनाजाने कैसाही छोटा बड़ा कर्म कियाजाय वह विनाभोगे नाश नहीं होगा १९ जिसप्रकार इस लोक में चित्त और बुद्धि से विचारेहुए वह सूक्ष्मछोटे बड़े कर्म्म सफल होतेहैं अर्थात् सुखदुःख आदिको देतेहैं,इसीप्रकार अभ्यास कियाहुआ कर्म्मफलभी अविनाशी होताहै और अज्ञानतासे हिंसारूप कर्म से कियाहुआ वा थोड़े फलवाला और नरकसे मिलानेवाला होताहै, जोकर्म्म देवता और मुनियोंसे कियेगयेहैं उनको धर्मात्मा पुरुष नहींकरे और उनको सुनकरनिन्दाभी न करे आशययहहै कि जब कर्मका फलनष्ट नहींहोता ऐसी दशा में विश्वामित्र जीने वशिष्ठजीके सौ पुत्रमारे उसका फलनरक उन्होंने नहींपाया यह संदेह करके उन देवता आदिके समान कर्मकर्त्ता न होना चाहिये क्योंकि उनके कर्म लौकिक नहींहैं, हे राजा जो पुरुष मनसे अच्छे प्रकार विचारकर और अपने शरीरसे उसका करना संभव जानकर शुभकर्मको करताहै वह कल्याणोंको देखता और भोगताहै जिसप्रकार कच्चे मिट्टी के पात्र में जलरखने से मिट्टीके पात्रका नाशहोताहै और पक्केमें जलरखने से नाशनहींहोता उसी प्रकार पक्का योगी ब्रह्मानन्द से अविनाशीपनको पाताहै आशययह है कि उसतेजस्वी को जो कि पाप पुण्य में उदासीन है कर्म्म नष्टनहीं करता है, जैसे कि रखनेवाले पात्रमें जल भरकर ऊपर से दूसरा जल जब भराजाताहै ऐसी दशामें उसजलकी वृद्धिहोनेपर जलही बढ़ता है इसी प्रकार से हे राजा इसलोकमें जोकर्म्म बुद्धिसेयुक्त कैसेही टेढ़ेभीहैं परंतु पवित्रहैं वहभी वृद्धिको पातेहैं, इसप्रकार से संसारी धर्मोंको कहकर राजाओं के धर्मोंको कहते हैं प्रथमतो राजाको बड़े २ शत्रुजीतने योग्यहैं और उत्तमरीतिसे प्रजाकापालन करनाउचित है और अनेक यज्ञों के द्वारा अग्नि स्थापन करना योग्य है अवस्था के मध्यमें अथवा अन्तमें वनमें रहनाचाहिये, शांतचित्त जितेंद्री धर्म का अभ्यासी पुरुष जीवमात्रको आत्माके समान देखे और हे नरेन्द्र सुख पूर्वक मधुरभाषी होकर ब्रह्मप्राप्ति के निमित्त अपनी सामर्थ्य के अनुसार ब्रह्मविद्या देनेवाले गुरुओंका पूजनकरे २३ ॥ अष्टादशाधिकशततमोऽध्यायः ११८ ॥

एकसौउन्नीसका अध्याय॥

पराशरजीने कहा कि जो कदाचित् तू यहशंका करताहोय कि मैं राजा होकर मुनियोंका पोषण करनेवाला और उन्होंके योगफलका छठाभाग लेने वालाहूं मुझको ब्रह्मप्राप्तिके अर्थ गुरुओंके पूजने की क्या आवश्यता है इस शंकाको मैं निवृत्त करताहूं कि कौन किसके साथ उपकार करताहै और कौन किसको देताहै यहजीव आपअपनेही निमित्त कर्मोंको करताहै, जब गौरवता रहित मातापिताभाई बन्धु स्त्री पुत्रादिको भी त्याग करता है तब अन्यनीच मूर्खोंको क्यों नहींत्यागेगा तात्पर्य्य यहहै कि उपकार न करनेवाले अपने वृद्धजनोंको भी त्यागकरते हैं इसकारण कोई किसीकेसाथ उपकार नहीं करताहै, फिर अपने आनन्दके लिये क्या कर्मकरे इसको कहते हैं कि श्रेष्ठ मनुष्य को दानकरना और श्रेष्ठहीसे दानलेना दोनों समान हैं अर्थात् सत्पुरुष से दानलेना वेदोक्त दानकी समान है, जोधन न्यायसे मिला और न्यायसे ही बढ़ाया गयाहो उस धनकी युक्तिपूर्वक धर्म के लिये रक्षा करना चाहिये, धर्मका चाहनेवाला मनुष्य हिंसात्मक कर्मके धनको इकट्ठा नहींकरे अपनी सामर्थ्य के अनुसार सब कामोंको करे और धनकी वृद्धिका विचार न करे, सावधान पुरुष अपनी सामर्थ्य से शीतल जल या उष्णजलको क्षुधासे पीड़ित अतिथिके देनेसे अन्नदानके फलकोपाताहै, महात्मा रन्तिदेवने लोकेष्ट सिद्धिको अर्थात् सर्वप्रियभावको पाया उसने केवल फलमूल और पत्तों से ऋषियों का पूजन कियाथा और राजा शैब्यने फलपत्रों से सूर्य्य देवताको प्रसन्न किया था इसी से उच्चस्थान को पाया, मनुष्य अपने पुत्रादिक बाल बच्चोंका और अतिथि देवता वा नौकर चाकर आदिका ऋणी अर्थात् कर्जदार उत्पन्न होताहै इसकारण उनके कर्जको अदाकरे अर्थात् वेदपाठ आदिके द्वारा महर्षियों से और यज्ञ कर्मादिकेद्वारा देवताओंसे और श्राद्धदान आदि के द्वारा पितरों से अनृण होना चाहिये और मनुष्यों के पूजन वेदशास्त्र पुराण आदि के सुनने विचारने और पञ्चयज्ञ में शेष अन्न के भोजन से जीवों के पोषण करने से आत्माकी अनृणता को प्राप्त करे और पुत्रादिके जातकर्म आदि संस्कार को वुद्धि के अनुसार प्रारम्भ से ही करना चाहिये: बड़े सिद्ध धन हीन मुनियों ने भी अग्निहोत्र को अच्छे प्रकार करके सिद्धि को पाया है, हे महाबाहो अजीगर्त के पुत्र ने विश्वामित्र के पुत्रभाव को प्राप्तकिया और यज्ञभागी देवताओं को ऋग्वेदकी ऋचाओं से प्रसन्नकर के सिद्धिकोपाया और उशनाने महादेवजी के प्रसन्न करने से शुक्र नामपाया और देवी पार्वतीकी स्तुति करने से यशी कीर्त्तिमान् होकर आकाश में वि-

राजमानहैं, असित, देवल, नारद, पर्वत, कक्षिवान् और जमदग्निकेपुत्र परशुरामजी और आत्मज्ञानी ताण्डयजी, वशिष्ठ, जमदग्नि, विश्वामित्र, अत्रि, भरद्वाज, हरिश्मश्रु, कुण्डधार, श्रुतश्रवा इन सावधान महर्षियोंने ऋग्वेदकी ऋचाओं से विष्णुजीको प्रसन्न करके उनकी कृपासे तपकेद्वारा सिद्धि को पाया और बहुत से पूजन से विमुख सन्तों ने उसीकी स्तुतिकरके पूजन कोपाया इसलोकमें निन्दित कर्म्म करके वृद्धिकरनी अयोग्य है, जो अर्थ कि धर्म्म संयुक्त हैं वही सच्चेहैं और जो अधर्म्म के साथ हैं उनको धिक्कार है इस लोकमें धनकीइच्छा से सनातन धर्म्मकात्याग नहीं करना चाहिये, जो धर्म्मात्मा अग्निका स्थापन करनेवालाहै वही श्रेष्ठ पुण्यात्मा है हेराजेन्द्र सब वेद तीनों अग्नियों में नियतहैं जिसकी जप गुरु पूजन आदिक क्रिया नष्ट नहीं होती हैं वह वेदपाठी अग्निको अच्छे प्रकार से स्थापन करनेवाला है अग्निस्थापन न करना अर्थात् संन्यास धर्म्मलेना मोक्षरूपहै, क्योंकि अग्निहोत्र भी कर्म्मही है, हे नरोत्तम आत्मा और पोषण करनेवाले माता पिता और गुरूभी अग्नि हैं इसीसे वह बुद्धिके अनुसार सेवाके योग्य हैं, वृद्धोंकी सेवाकरनेवाला विद्यावान् कामरहित साहसी धर्म्मयुक्त हिंसारहित मनुष्य अहंकार को त्यागकर सबको कृपादृष्टि से देखता है वह श्रेष्ठ पुरुष इस लोक में उत्तम पुरुषोंसे प्रशंसा कियाजाता है ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्म्मे उत्तरार्द्धेएकोनविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ११९ ॥

एकसौबीसका अध्याय ॥

पराशरजीनेकहा कि अपनी सहायता करनेवाला कोई दूसरा नहीं है इसीकारण अपनी भलाईकेलिये अपनी खुदीको त्यागकरके वृद्धों का सेवन करे यह ऊपर वर्णन किया अब वृद्धोंकीसेवा और सत्संगकी प्रशंसाके प्रयोजन से शूद्रवृत्तिकी उत्तमता वर्णन करते हैं, तीनों वर्णोंसे पञ्चशूद्रोंकी वृद्ध सेवारूपी आजीविका जो कि निश्चयसेयुक्त और प्रीतिपूर्वक कीहुईहोय सदैव सेवकोंको धर्म्मात्माकरतीहै इसी कारण से अच्छी है, जो शूद्रकी आजीविका बाप दादों से होनेवाली और प्राचीननहीं है तौभी वहशूद्र तीनों वर्णकी सेवाके सिवाय दूसरी आजीविका को नहीं ढूंढ़े किन्तु सेवाही करे सदैव सबदशाओं में धर्मदर्शी पुरुषोंका मिलाप सन्तोषके साथ में शोभित होताहै पञ्चोंके साथ नहीं शोभित होताहै यह मेरा मतहै, जैसे कि उदयाचल पर्वतमें मणि और सुवर्ण आदि सूर्य देवताकी समीपता से प्रकाशित होतेहैं, उसीप्रकार पञ्चवर्ण भी सत्पुरुषोंकी समीपता से प्रकाशित होते हैं श्वेत वस्त्र जैसे रंगसे रँगाजाताहै वैसाही रंग उसपर आता है इस को ऐसे

प्रकारसे समझो, किगुणों में प्रीति करो और कभी दोषोंमें प्रीति न करो, इस लोक में जीवमात्रोंका जीवन नाशवान् और अस्तव्यस्तहै, जो सुखकाचाहनेवाला दुःखमें वर्त्तमानहोकर परिडत मनुष्य शुभकर्म्मोंको प्राप्तकरताहै वही शास्त्रों का देखनेवाला है, जो कर्म्म धर्म्मसे रहित है वह चाहो बड़ेफलवाला भीहोय उसको बुद्धिमान्कभी न करे क्योंकि वह इसलोकमें उत्तम कभीनहीं कहाजाताहै, जो राजा हज़ारों गौओं को लूटकर बिनापोषण कियेहुए दान करता है वह चोर राजाकेवल संसारी प्रशंसाहीका फलपाने वालाहोता है ६ ब्रह्माजीने प्रथमही लोक से प्रतिष्ठापानेवाले धाताको उत्पन्न किया और धाताने लोकों के पोषण में प्रवृत्त पर्जन्यनाम पुत्रको उत्पन्न किया १० वैश्य उसको पूजनकर पशु और कृषि आदिकी रक्षाकरे वह सामान्यक्षत्रियों में रक्षाके योग्य है और ब्राह्मणों के भोगनेके योग्यहै ११ सत्यवक्ता क्रोध और कृपिणतारहित हव्य कव्यमें, प्रयोगकरनेवाले शूद्रोंसे भूमिशुद्धि आदिकरनी चाहिये इसप्रकारसे धर्म्मकानाश नहींहोता है १२ धर्म्मके नाशहोने से प्रजा सुखीहोती है और उनके सुखसे स्वर्गवासी सब देवता आनन्दको पाते हैं, इसकारण जोराजा अपने धर्म्म से संसार की रक्षाकरता है और जो ब्राह्मण वेदको पढ़ता है वा जपकरताहै और जो वैश्यधनके संग्रहकरने में प्रवृत्त है वह प्रशंसा कियाजाताहै १४ जो जितेन्द्रीशूद्र सदैवतीनों वर्णोंकी सेवाकरता है वहभी प्रशंसाके योग्य है हेराजा उसके विपरीत करनेवाला नाशको पाता है १५ प्राणोंको कष्टदेकर तीनकाकिणी अर्थात् एकधेलाभी दानकरनाबड़ा फलदायकहै फिर न्यायसे इकट्ठीकी हुई हज़ारों काकिणी क्योंनहींफलदेंगी १६ जो राजा सत्कार पूर्वक ब्राह्मणों को दानकरता है और जैसीश्रद्धासे देताहै उसीप्रकार से प्रबल फलको सदैव पाताहै १७ उसपात्र ब्राह्मणकी तृप्ति के निमित्त जो सन्मुख होकर दान दिया जाताहै वह सर्वोत्तमदान कहा जाताहै और याचना करनेसे जो दान किया जाता है उसको परिडतलोग मध्यमदान कहते हैं, १८ जो दान अनादरसे अथवा अश्रद्धासे दियाजाता है उसको सत्यवादी मुनिलोग अधमदान कहते हैं १९ संसारसमुद्र में डूबा हुआ मनुष्य सदैव नानाप्रकारके उद्योगोंसे संसारसागरको उल्लंघनकरे और ऐसे उपाय करे जिससे कि गृहस्थाश्रमके फन्देसे छूटे २० ब्राह्मण शांतचित्त होनेसे शोभाकोपाता है क्षत्रीशत्रुओं के विजयकरनेसे वैश्यधनकी आधिक्यतासे और शूद्रसेवाकी हिम्मतसे सदैव शोभाकोपाता है २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेदानविषयवर्णनोनामविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२० ॥

एकसौइक्कीसका अध्याय ॥

पराशरजी बोले कि दानकेद्वारा ब्राह्मणोंको प्राप्तहोनेवाला अर्थ धन और युद्धमें विजयकरनेवाले क्षत्रीको प्राप्तहोने वाला अर्थधन और न्यायसे वैश्यका संचित किया हुआ अर्थधन और सेवासे शूद्रके पासहोनेवाला बहुत थोड़ाभी धनआदि अर्थ प्रशंसाके योग्यहै वह सबके अर्थधन धर्म्मकरने के लिये बड़ेशुद्ध और फलके देनेवाले हैं १।२ शूद्र सदैव तीनोंवर्णोंकीसेवा करने वाला कहाजाताहै और आजीविका रहित ब्राह्मणक्षत्री और वैश्यके धर्म्मों करके पतितनहीं होताहै ३ परंतु जब ब्राह्मण शूद्रकाधर्म्म करनेवाला होताहै तब ऊंचे ब्राह्मणपनेके अधिकारसे नीचे अधिकारको पाताहै अर्थात् ब्राह्मणत्वसे रहित होता है और जबशूद्रको अपनी जीविका नहींमिले उसदशा में व्यापारकरके अथवा पशुपालन, शिल्पविद्यासे भी वह अपनी जीविका करसक्ताहै यह भी शूद्रका कर्म्म विचार कियागया है कुतूहलके स्थानमें स्त्री रूपसे उतरना कठपुतली आदिका तमाशा करना मद्य और मांससे जीवन करना धातु और चर्म्मकी वस्तुओंका बेंचना, और जिसने पूर्वमें मद्य और मांससे जीविका नहीं करीहै वह लोकमें निन्दित जीविकासे अपना निर्वाह न करे पहिले करनेवाले और पीछेसे त्यागकरनेवाले को बड़ाअधर्म्म होताहै यह श्रुतिहै (अपूर्विणानकर्त्तव्यं कर्म्मलोकेविगर्हितं ॥ कृतपूर्वन्तुत्यजतोमहान्धर्म्मइतिश्रुतिः) ६ धनवान् और अहंकारीसे कियाहुआ पापस्वीकारकेयोग्य नहीं है ७ पुराणों में ऐसी भी प्रजासुनीजातीहै जो केवल धिक्काररही मात्रसे दण्ड समझनेवाली जितेन्द्री धर्महीको उत्तममाननेवाली और न्यायधर्म निर्वाह करनेवाली थी ८ हे राजा इसलोक में सदैव से धर्म्महीकी प्रशंसा होतीहै धर्मप्रवृत्त मनुष्य पृथ्वीपर गुणोंकोही काममें लाते हैं ९ हे तात राजाजनक असुरोंने कामक्रोधादिके कारण इसधर्म को धारण नहीं किया इसीहेतुसे वह अत्यंत वृद्धिपाने परभी नाश को प्राप्तहुये और रहेसहे प्रजाओंमें आनमिले उन प्रजाओंका वह अहंकार जो धर्मका नाश करनेवालाहै अच्छे प्रकारसे प्रकटहुआ उसकेपीछे उसअहंकारी प्रजाकाक्रोध उत्पन्नहुआ तब उस क्रोधसे भरीप्रजाका गुरु पूजनादिक धर्म्म लज्जायुक्त हुआ अर्थात् केवल गुरु पूजनादिक धर्म्म लज्जायुक्त होकर करतेथे भक्तिसे नहीं करते थे जब लज्जाभी जाती रही तबमोह उत्पन्नहुआ तदनन्तर मोहमें भरेहुये परस्परमें एकएकको दुःख देकरपेट भरनेवाली उसप्रजाने पूर्व के समान बुद्धि के अनुसार सुखको नहींपाया और उसधिक्कार दण्डसे उसप्रजाको कुछलज्जा नहींहुई फिरदेवता और ब्राह्मणों का अपमान करके नानाविषयों में प्रवृत्त हुई, इसप्रकार काम

क्रोधादिकसे प्रजाके बंधनको दिखलाकर उससे छूटने के उपाय के लिये साधारण युक्तिको वर्णन करतेहैं—उससमय परशमदम आदिदेवता उसगुणों में श्रेष्ठ अद्भुत रूपधारी शिवजीकी शरण में गये जोकि ईश्वरसे भी श्रेष्ठ और सेवायोग्य तीनोंदशाके अभिमानी विश्व, तैजस प्रागनाम विराट्सूत्र अन्तर्यामी से भी उत्तम चौथाहै और मायाकरके अनेकरूप धारण करता है और ज्ञान ऐश्वर्यादि गुणोंसे अधिक उससाक्षात्रूप ब्रह्मसे व्यावृत आकाश में वर्त्तमान जो काम क्रोधरूप असुर वह उसके एकही बाणसे आत्मारूप पृथ्वी पर गिरायेगये अर्थात् लय कियेगये वह बाण इन्द्रीरूप देवताओं के द्वारा वृद्धिपानेवाला तेजथा और उन काम आदि का स्वामी भयानकरूप भय उत्पन्न करनेवाला और देवताओं का भी भय उत्पन्न करनेवाला महामोहनामथा वह हाथ में वर्त्तमान शूल के समान तीक्ष्ण अपनी स्वाधीनी में वर्त्तमान बुद्धिके द्वारा मारागया, उस महामोहके नाशहोने पर जीवों ने पूर्व्व के समान वेदशास्त्रों को पढ़कर ब्रह्मभावको प्राप्त किया अर्थात् जीवन्मुक्त होकर भी अनादि बासना के कारण से एक वेदकी निष्ठा रखनेवाले हुये, तदनन्तर चैतन्य आत्माको हृदयाकाश में इन्द्रियोंकी स्वामिता में अभिषेक करके अर्थात् ब्रह्मनिष्ठ होनेसे जितेंद्री होकर सप्तऋषियों ने मनुष्योंका दण्ड और पोषण विचार किया, जो सप्तऋषि संसार के अहंकार हैं उनसे भी ब्रह्मज्ञानी की उत्तमताको वर्णन करते हैं पंचज्ञानेन्द्री मन बुद्धि यही सप्तऋषि हैं इनसब ऋषियों के ऊपर हजार आरेवालाचक्र देहसे पृथक् परमात्माहै वह देह में नियत है और पृथक् २ मण्डलों में षट्चक्रों के राजा गणेश आदि जो कि योग के विघ्नों के नाश करनेवाले हैं, वह वर्त्तमानहैं अब उसकाम आदि के जीतनेकी कठिनताका वर्णन करते हैं जो बड़े कुल में उत्पन्न हुये वृद्ध से वृद्ध प्राचीनलोगहैं उनके हृदय से भी यह आसुरी भाव दूर नहीं होता है इस कारण से देहाभिमान रखनेवाले मनुष्य उन आसुरी गुणों में प्रवृत्त होने से आसुरीकर्मोंमें प्रवृत्तहुये, जो मनुष्य बड़ेअज्ञानहैं वह उन्हीं कर्मोंमें प्रवृत्तहोते हैं और उनकोही जारी करते हैं और अब भी उन्हीं का अभ्यास करते हैं, हे राजा इसकारणसे मैं शास्त्रसे अच्छेप्रकार विचारकर तुमसे कहताहूं कि जीव आत्मज्ञानही को प्राप्तकरे और हिंसात्मक कर्मों का त्यागकरे, बुद्धिमान् मनुष्य धर्म्म करने के निमित्त न्यायको त्यागकर वर्णसंकर से धनको प्राप्त नहीं करे क्योंकि उसमें कल्याण नहीं है भाइयों को प्यारा माननेवाले संसार के रक्षक और जितेन्द्री होकर तुम अपनी प्रजा और नौकर चाकर और पुत्रादिकों को धर्म्म से पोषणकरो, प्रिय अप्रियताके योग में शत्रुता और मित्रता को प्राप्त करता है और हजारों जन्मोंतक इसी चक्र में फिरताहै, इसकारण

गुणों में प्रीतिकरो और दोषों में कभी स्नेह न करो जो गुण रहित और नि-र्बुद्धी है वह भी अपने गुणों से अत्यन्त प्रसन्न होता है, हे राजा मनुष्यों में धर्म्म और अधर्म्म दोनों जारी हैं और मनुष्यों के सिवाय अन्य जीवों में इस प्रकारसे नहीं हैं, धर्म्म का अभ्यास रखनेवाला ज्ञानी भोजन आदिकी इच्छा से अथवा अनिच्छासे सदैव आत्मारूप मनुष्य या अन्यजीवों की अहिंसा से लोक में विचरे, जबउसका मन हृदय वासनासे और अहंकार वा अज्ञानता से पृथक् होता है तब ब्रह्मानन्दको पाता है ३१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेएकविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२१ ॥

एकसौबाईसका अध्याय ॥

पराशरजी बोले कि हे राजा अब मैं तपकी प्रशंसा करने के निमित्त गृहस्थाश्रम की निन्दा करताहूं—प्रथम गृहस्थ की यह धर्म्म बुद्धि वर्णनकी अब तपकी बुद्धिको सुनो कि बहुधा राजस, तामस, सात्त्विक भावों के कारण से गृहस्थी की ममता प्रीति से उत्पन्न होनेवाली होती है इस हेतुसे इसलोक में गृहस्थाश्रम में नियत होकर मनुष्यको पशु क्षेत्र धन स्त्री पुत्र नौकर चाकर आदि प्राप्त होतेहैं, इस प्रकारसे उसआश्रम में प्रवृत्त और उनके नाशकोहोते हुये दृष्टिकरनेवाले उसगृहस्थी के रागद्वेषआदि अत्यंत वृद्धिको पातेहैं, हेराजा उस रागद्वेषसे हारेहुये धनकी स्वाधीनतामें वर्त्तमान मनुष्यको मोहसे उत्पन्न होनेवाली प्रीति अच्छे प्रकार से प्राप्तहोती है, संसारी प्रीतिमें फँसे हुये सब मनुष्य अपने को यथेच्छ लाभवान् और भोगकरने वाला मानकर स्नेह और स्त्री प्रसंगादि सुखोंके कारणसे दूसरे लाभोंको नहीं विचारते हैं, इसकेपीछे लोभमें डूबेहुये वहमनुष्य संग से दासी दास आदिको बढ़ाताहै और उन सब के पोषणके निमित्त व्याज आदि व्यापारोंसे धनकी वृद्धि करताहै, वहमनुष्य करनेके अयोग्य कर्म्मों को भी जानबूझकर धनके लिये करताहै और पुत्रा-दिके स्नेहमें डूबा हुआ उनके नाशहोनेमें महाशोक करताहै, तदनन्तर अहंकार और अहं बुद्धिसे संयुक्त होकर अपनी पराजय को बचाता यश और स्त्री आदि की चित्तमें इच्छा करता है अर्थात् अपनेको भोगी मानकर उसी स्त्री आदि के कारण नाशको पाताहै, और इसीप्रकार धन स्त्री आदि के नाश और देह मनके रोग सन्तापादिसे उसको वैराग्य उत्पन्न होताहै और जो बुद्धि-मान् सनातन ब्रह्मके कहनेवाले उत्तम कर्म्मकी अभिलाषायुक्त संसारी सुखों के त्याग करनेवाले हैं, उनको सच्चावैराग्य होताहै और उसवैराग्यसे आत्मज्ञान होता है आत्मज्ञानसे शास्त्रदर्शन होताहै और शास्त्र के अर्थोंपर दृष्टि होनेसे तपको ही कल्याण रूप जानताहै, सारासारका विचारने वाला नरेन्द्र

मनुष्य कठिनता से मिलता है, जिसने स्त्री आदि से उत्पन्न होनेवाले सुखके निमित्त दुःखोंकोपाया वह उसमें दोषजानकर तपका करना निश्चय करताहै, हे तात वह सावधान होकर उसशूद्रकाभी तपकहाजाता है जो कि जितेन्द्री और तपकेक्लेशोंके सहनेवाले मनुष्यके स्वर्गमार्गको वर्त्तमान करनेवालाहै हे राजा प्रथम बड़ेब्रह्मज्ञानी प्रजापतिजीने किसी जन्म और किसी देशमें व्रतों में निष्ठहोकर तपस्यासे सृष्टिको उत्पन्नकिया, द्वादशसूर्य, अष्टवसु, ग्यारहरुद्र, अग्नि, अश्विनीकुमार, उनचासवायु, विश्वदेवा, साध्यगण, पितृगण, मरुद्-गण, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, सिद्ध और अन्यस्वर्गवासी देवता आदि सबतपसेही सिद्ध हुये हैं, प्रारम्भमें ब्रह्माजीने तपकेद्वारा जिनब्राह्मणोंको उत्पन्नकिया वह प्रजाको उत्पन्न करते पृथ्वी और स्वर्ग में विचरते हैं १८ जो राजालोग और गृहस्थी लोग इसनरलोकमें बड़े कुलमें उत्पन्न हुएआते हैं यह सब तपहीका फलहै और जो रेशमी इत्यादि वस्त्र सुंदर भूषण श्रेष्ठसवारी आसन और उत्तम भोजनादिकी वस्तुहैं वहसबभी तपहीकाफलहै, जो इच्छाके समान और स्व-रूपवाली अच्छी स्त्री हैं और महलोंमें निवासहै वह भी तपहीकाफलहै, उत्तम पलँग आदि यथेच्छ भोगकी उत्तम वस्तु भी श्रेष्ठकर्म्म करनेवालों को ही होती हैं, हे परन्तप तीनों लोकमें तपके बिना कोई वस्तुकी प्राप्तिनहीं है अर्थात् तपहीसे सबपदार्थ मिलते हैं और जिनको तत्त्वज्ञान प्राप्तनहीं हुआ उनके तपकेफल वैराग्यरूपहैं, हे राजा उत्तम मनुष्य सुखी दुःखी कैसाहीहो वह चित्त और विचारवाली बुद्धिसे शास्त्र को विचारकर लोभको सबप्रकारसे त्याग कर-ताहै, असन्तोषी होना दुःखकामूलहै और लोभसे इन्द्रियोंमें व्याकुलताहोती है और उस से उसकीबुद्धि ऐसी नष्ट होती है जैसीकि अभ्यास न रखनेवाले की विद्या नाशहोजाती है, जब बुद्धि में नष्टताहोती है तब योग्यायोग्य कर्म्म का विचार नहीं करता है इसकारण मनुष्य सुखके नाशहोनेपर कठिन तपस्या करे, जो चित्तसे प्याराहै वही सुख और जो चित्तसे बुराहै उसीकोलोकमें दुःख मानते हैं किये और बिनकियेहुये तपका फल जोसुखदुःखनामहै उसको देखो अर्थात् विचारकरो कि शुद्ध तपकाफल कल्याणहै उसी से सुखोंको भोगकर विख्यात होताहै फलकी इच्छारखनेवाला मनुष्य ऊपरलिखेहुये फलकोत्याग करके बड़े असह्य अपमान और दुःख वा विषयरूपी सुखको पाताहै, जैसे इस की इच्छा कर्म्म धर्म्म तप और दानमें उत्पन्नहोतीहै उसीप्रकार पापकर्म्मोंको भी करके नरकको पाताहै हे नरोत्तम सुखया दुःखमें भी वर्त्तमान मनुष्यअपने गुरुपूजन आदि व्रतोंसे नष्टता को नहीं पाताहै क्योंकि वहमनुष्य शास्त्ररूप नेत्र रखने वालाहै, स्त्री आदिके स्पर्शमें जोसुखहोता है वहउतनीही देरतक नियत रहताहै जितनी देरमें कमानसे निकलनेवाला तीर पृथ्वीपर गिरता है

इसीप्रकार रसना आदि इन्द्रियोंका भी सुख थोड़ेही कालतक होताहै, फिर उस स्त्री आदिके नाशसे इसको कठिन दुःखहोताहै, सबसे उत्तम जोमोक्ष सुख है अज्ञानी लोग उसकी प्रशंसा नहीं करतेहैं, इसीकारण सब बुद्धिमानों के शम दम आदि गुण मोक्षके निमित्त उत्पन्न होतेहैं, धर्मवृत्ति में सदैव रहने के कारण काम अर्थ से मोहित नहीं होताहै, सब बातें प्रारब्धाधीन हैं फिर उद्योग करना व्यर्थ है इस शंकाके निवृत्त करनेको दोनों की प्रशंसा करते हैं–प्रारब्धसे उत्पन्न होनेवाली जो स्त्री और खाने पीने भोगनेकी वस्तुहैं वह गृहस्थियोंको भोगनी चाहिये और अपना धर्म्म बड़े उपायसे होनेके योग्य है अर्थात् धर्म्म में उद्योगही बलवान्हैं, प्रतिष्ठावान् कुलीन और सदैव शास्त्रार्थ रूप नेत्र रखनेवाले पुरुषों को यज्ञादिक क्रिया प्राप्तहोनी सम्भवहै और धर्म्म रहित चित्तसे अज्ञानी पुरुषों की क्रिया असम्भवहै, अब दोनों के कर्मों के भेदोंको वर्णन करतेहैं–मैं मनुष्यहूं इस अभिमानसे कियाहुआ कर्म्म नाश होजाताहै इसीकारण उन शास्त्ररूप नेत्र रखनेवाले पुरुषों का कर्म्म तपस्या के सिवाय दूसरा नहीं है, अब उन अज्ञानी लोगोंके धर्म्मको सुनो–गृहस्थी अपने धर्म्म में प्रवृत्त हव्यकव्यके लिये बुद्धिमानी के साथ यज्ञादिक कर्म्मों में निश्चय करे, जैसे सब नद नदी समुद्रमें जाकर निवास करतेहैं इसीप्रकार सब आश्रमी गृहस्थी के पास आश्रय लेतेहैं २९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे द्वाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२२ ॥

एकसौतेईसका अध्याय ॥

राजा जनक बोले हे महर्षी वर्णों में जो विभागहैं वह किसकारण से हुये उनको मैं सुनना चाहताहूं १ जो यह सन्तान पैदा होतीहै वह उसी पिता के रूपहै यह श्रुति है ब्रह्माकी सन्तान सृष्टि ने कैसे दूसरे वर्ण को पाया अर्थात् सतोगुणी ब्राह्मणका पैदा होना योग्यहै उससे रजोगुण प्रधान क्षत्री आदि कैसे उत्पन्न हुये२ पराशरजी बोले हेमहाराज यह इसीप्रकारसेहै कि जो जिस से उत्पन्न हुआ वह वही है परन्तु तप के न होनेसे जाति भेद को पायाहै ३ अच्छे क्षेत्र और बीजसे उत्तम औरपवित्र सन्तान उत्पन्न होतीहै और नीच से नीचही सन्तान होतीहै ४ लोकोंके स्वामी ब्रह्माजीके मुख भुजा जंघा और चरणोंसे पुत्र उत्पन्नहुये ५ हे तात राजा जनक ब्राह्मण मुखसे उत्पन्नहैं, क्षत्री भुजासे, वैश्य जंघासे, शूद्र चरणोंसे पैदाहुयेहैं ६ इसप्रकार से चारों वर्णोंकी उत्पत्तिहै इनसे अन्य जो दूसरेहैं वे संकरवर्ण हैं ७ उनके नाम क्षेत्ररथ, क्षत्री, ज्ञातिरथी, अंबष्ट, उग्र, वैदेहिक, श्वपाक, पुल्कस, स्तेन, निषाद, सूत, मागध, आयोग, कारण, व्रात्य, चाण्डाल यह सब इन्हीं चारोंवर्णोंके अन्योन्य भोगों

से उत्पन्न हुयेहैं, भिन्न अंग न रखनेवाले अज्ञानसे यह सब संसार उत्पन्नहुआ है यही सर्व्वत्र सुना जाता है उसमें अंगों का विचार करना कहां से है यह शंका करके जनकने कहा कि एक ब्रह्माजी से सृष्टिके मनुष्योंकी मिलीहुई आधिक्यता और गोत्र आदिकी उत्पत्ति कैसे हुई क्योंकि इसलोकमें अनेक गोत्र हैं, जहां तहां किसीप्रकारसे पैदा होनेवाले मुनियों ने अपने मूलको पाया है जैसे कि कात्तीवान्से शूद्रामें उत्पन्नहोनेवाले पुत्रोंने ब्राह्मण वर्णको पाया उसीप्रकार शुद्ध योनिमें उत्पन्न होनेवाले अन्य मनुष्य विपरीतयोनि में नियतहुये, पराशरजी बोले कि हेराजा तपसेशुद्ध अन्तःकरण महात्माओं की यह उत्पत्ति उसमनुष्य से जो कि रजोगुण तमोगुण में प्रवृत्तहो जानने के योग्य नहीं है, हे राजा मुनिलोगों ने जहांतहां पुत्रों को उत्पन्न करके फिर अपने ही तपसे उनका ऋषिभाव विचार किया, पूर्व्वसमय में काश्यप गोत्री ऋषिशृंग मेरे पितामह वेदताण्डव, कृप, कात्तीवान्, कमठ, यवक्रीत, द्रोण, आयु, मतंग, दत, द्रुमद, मात्स्य, इन सब ने तपकेही आश्रय से अपने मूल को पाया वह वेदज्ञ शान्तचित्त तपकेही द्वारा प्रतिष्ठितहुये, हे राजा सगुण ब्रह्ममें यह चार गोत्र अर्थात् नाम पैदाहुये अंगिरा, काश्यप, वशिष्ठ, भृगु, आशय यह है कि अंगिरा अंगों का रस है इसीकारण देवताओं ने उसका नाम अंगिरा रक्खाहै और हम सबसे अधिक जितेन्द्री होने से देवताओं ने वशिष्ठ नाम रक्खा यह श्रुतिहै, हे राजा इसीप्रकार से दूसरे सब गोत्र कर्म्म से और उनका नाम तप से विख्यात हुआ यह सब नाम गोत्र सत्पुरुषों के अंगीकार कियेहुये हैं, राजाजनकबोले कि हे भगवन् आपप्रथम सबवर्णोंके मुख्यधर्म्मोंको वर्णन कीजिये फिर सर्वसाधारण धर्म्मोंको कहिये क्योंकि आपसर्वज्ञ हैं, पराशरजीबोले कि हेराजा दानलेना यज्ञकराना और वेदपढ़ना यह तो ब्राह्मणों के मुख्यधर्म्म हैं और संसारकी रक्षा करना यह क्षत्रियोंका मुख्य धर्म्म है, खेती पशुपालन और व्यापारादि यहवैश्यों के मुख्यधर्म्महैं हे भूपयह तीनोंवर्ण द्विजन्मा कहेजातेहैं इनतीनों वर्णोंके सिवाय शूद्रका कर्म पृथक् है, यहवर्णों के मुख्यधर्म्म वर्णन किये और इनके सिवाय सर्व्व साधारण वर्णों को सुनो उनको मैं विस्तार समेत कहता हूं, दया, अहिंसा, अप्रमादता, सबका भागदेना, श्राद्धकरना, अतिथि को भोजनदेना, सत्यबोलना, क्रोध न करना, अपनीही स्त्री पर सन्ताप करना, सदैव बाहर भीतर से पवित्ररहना, किसीकेदोष को न कहना, आत्मज्ञान, शान्ति, यह सब धर्म्म सर्व्व साधारण हैं अर्थात् सबके लिये योग्य हैं २४ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य यह तीनों दुबारा संस्कार होनेसे संस्कारी हैं और इनपूर्वोक्त धर्म्मों के अधिकारी भी हैं और हे राजा यह तीनों अपने धर्म्म से विपरीत चलने में

ापने२ अधिकार से अधःपतनहोते हैं अर्थात् नीचेअधिकारमें गिरते हैं और
तोगुण आदिसे उत्पन्न होनेवाले गुण उस स्वकर्म्मनिष्ठ मनुष्य के आश्रित
ाकर वृद्धिकोपातेहैं २५।२६ और शूद्र वेदोक्तधर्म्मों से रहितहोताहै इसीसे वह
ापने से नीचे अधिकारमें नहीं गिरताहै परन्तु उक्त दशप्रकारके धर्म्मोंमें इस
ो निषेध भी नहीं किया २७ हे राजाजनक वेदपाठी ब्राह्मण शूद्रको तीसरे
न्ममें ब्राह्मणके समान मुक्त होनेवाला कहतेहैं और वही वेदज्ञब्राह्मणलोग
द्रको वैदेहिककहतेहैं मुख्य आशय यहहै कि जो स्थूलशरीरको त्यागकरके
क्ष्मशरीरको आत्मारूप जानतेहैं वहविदेह कहलातेहैं और जो स्थूल सूक्ष्म
ोनों देहोंको त्यागकरके प्रधाननामकारणको आत्मारूप जानतेहैं वहप्रकृति
लयहोनेवालेहैं और तीनोंशरीरोंके त्याग करनेवाले ब्राह्मणहैं, पहलेकीमुक्ति
ाजन्म में दूसरेकी एकजन्म में और तीसरे की शीघ्रहीहोती है इसकारणसे
ाह्मणोंने शूद्रको वेदहीन कहा है अर्थात् शूद्र वैश्य क्षत्रीके जन्मको पाकर
ाह्मणहोता है यज्ञ न करनेवाले शूद्रकी चित्तशुद्धीहोने से वह कैसे विदेह
ादि होगा इसका कारण कहते हैं—कामादि दोषों को दूर करने की इच्छा
ाला अथवा आत्माकी निवृत्ति चाहनेवाला शूद्र सत्पुरुषों के शांतचित्त दया
ादि चलनपर नियत होकर विनामंत्रपौष्टिकादि क्रियाओं को करके दोष
भागी नहीं होतेहैं और अन्यलोग जिस २ उत्तमरीति चलनको अंगीकार
रते हैं उसी २ प्रकारसे इसलोक परलोक दोनों में आनन्दको भोगते हैं,
ाजा जनक ने कहा कि हे महामुनि इस मनुष्य को कौनसा कर्म्म दोषयुक्त
रता है इस मेरेसंदेह को भी आप निवृत्त करिये, पराशरजी बोले कि हे म-
ाराज निस्संदेह कर्म्म बिरादरी दोनों दोषों के उत्पन्न करनेवालेहैं इसके मूल
ो सुनो कि जो मनुष्य ज्ञाति और कर्म्म से दूषित कामों को नहीं करता है
ौर जो ज्ञातिसे दूषित मनुष्य पापको नहीं करताहै वह उत्तम पुरुष कहाता
राजा जनक ने कहा कि हे मुनि इसलोक में कौन से कर्म्म धर्म्मरूप हैं,
नको सदैव करनेसे मनुष्यकी हानि नहीं होती, पराशरजी ने कहा कि
िंसारहित धर्म्मही इसलोक में मनुष्यकी रक्षा करते हैं वह यहहैं कि तपसे
ुक उदासीन पुरुष अग्नियोंको त्यागकर अर्थात् संन्यासी होकर क्रमसे
ोगमार्ग में प्रवृत्तहोके मोक्षरूपसुख को देखते हैं श्रद्धा और नम्रतापूर्वक
ानयुक्त होकर मनवाणी से शान्त शुद्ध चित्तहोना, सूक्ष्म बुद्धि होकर सब
र्म्मोंका त्यागना इन कर्म्मोंसे मनुष्य रूपान्तर रहित स्थान को पाताहै, हे
ाजा सबवर्ण धर्म्मरूप कर्म्मोंको अच्छीरीतिसे करके सत्यवक्ता हो जीवलोक
भयकारी अधर्म्मोंको त्यागकर स्वर्गकोपातेहैं इसमें किसीबातका विचार न
रनाचाहिये ३६ ॥ इतिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेत्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२३ ॥

एकसौचौबीसका अध्याय॥

पराशरजी बोले कि इस लोकमें भक्ति आदि से रहित मनुष्यों के पिता, मित्र, गुरु, स्त्री, आदि कोईभी इसकी सेवा आदिका फल देनेको समर्थ नहीं होतेहैं और पूर्णभक्त प्रियवादी शुभचिन्तक जितेन्द्री मनुष्य रक्षा सेवा आदि के फलको पातेहैं, मनुष्योंका श्रेष्ठ देवता पिताहै पिताके कहने से माता संयुक्त समझना चाहिये और ज्ञानके लाभको उत्तम कहते हैं और जिन्होंने इन्द्रियोंके विषयोंकोजीता वहब्रह्मपदको पातेहैं, जोराजकुमार युद्धभूमिमें जहां बाणरूप अग्निका शस्त्रहै उससे घायल होकर मरताहै वह देवपूजित लोकों को पाताहै और सुखपूर्वक स्वर्गफलको भोगताहै, हे राजा जो मनुष्य थका हुआ भयभीत अशस्त्र हाथजोड़े रथ कवच आदि सामानसे हीन बिना शस्त्र प्रहार किये अथवा रोगग्रस्त सन्मुख आकर बालक या वृद्धके समान प्रार्थना करनेवालाहै ऐसे मनुष्यको कभी न मारे, हे राजा ऐसे क्षत्री के लड़के को जो रथशस्त्र कवच युक्त शस्त्रको प्रहार करनेवाला अपनी समान का है उस को मारे, इसलोकमें समान या अपने से उत्तम पुरुषके हाथसे अपना मरण होना कल्याणरूपहै और नीच नपुंसक और कृपणके हाथसे मरना निन्दित कियाजाता है, पापी पाप कर्म्मवाले और नीचजाति के हाथ से मरना पाप रूप कहाजाताहै और उसका फलभी निश्चय नरक होताहै, हे राजा मृत्यु के वशीभूत मनुष्यकी कोई रक्षा नहीं करसक्ता है और जिसकी अवस्था बाकीहै उसको कोई मार नहींसक्ता, इसलोक में माता आदि के किये हुये कर्म चाहैं हिंसा रूपही होंय उनपर कभी ध्याननकरे और दूसरे के प्राणों से अपने प्राणोंका पोषण नहींकरे ६ हेतात बन्धन का नाश चाहनेवाले या पक्षीरूप परमात्माके द्वारा परमानन्दकी इच्छा करनेवाले क्रियावान् सब गृहस्थियोंका तीर्थोंपर मरना अच्छाहै—अब हठसे तीर्थोंपर मरनेकी निन्दा करते हैं—जिस मनुष्य ने देहको पाकर हठजल प्रवेशादिकसे अपने देहको त्याग किया उसका देह वैसाही है जैसा कि पूर्व में उत्पन्न होताहै अर्थात् इसप्रकार से देहका त्यागनेवाला देहके कठिन दुःखों को पाताहै यह हठमार्ग निन्दित है क्योंकि यह मोक्षक्षेत्र में भी इस देहसे दूसरेही देहमें प्रवेश करता है फिर क्या इसकी मोक्ष नहीं है यह शंकाकरके कहतेहैं—एक देहसे दूसरे देहके मिलने में दूसरा कोई कारण वर्त्तमान नहीं है अर्थात् उस देहके गुण केवल भोगही होने और कर्मगुण न होनेसे दूसरे देहकी उत्पत्ति नहीं है क्योंकि जीवोंका वह यातना रूप देह मोक्षके योग्य होकर रुद्र पिशाचादिकों में पूर्व कर्म्म फलके पूरेहोने के निमित्त संयुक्त होकर वर्त्तमान होताहै वेदान्त विचार

करनेवाले ज्ञानियों ने देहको शिरा और स्नायुनाम नाड़ी और हाड़ोंका स-
मूह अत्यन्त अपवित्र वस्तुओं से भराहुआ पंचतत्त्वात्मक वासनारूप विषयों
के इकट्ठे होनेका स्थानहै ऐसा कहाहै और परिणाम में मृत्यु होनेवाला सुंद-
रतादि रूपों से रहित नाशवान् पूर्व संस्कारसे मनुष्यताको प्राप्त होनेवालाहै,
जीवात्मा से और चेष्टासे रहित जड़रूप देह जिसमें पंचतत्त्व अपने २ मूल
कारणों में लयहुए पृथ्वी में मिलजाताहै फिर योगादि कर्मों से प्रकट किया
हुआ जहां तहां उत्पन्न होताहै और स्थान २ पर मृत्युको पाताहै उसीप्रकार
उसीका स्वरूप अपने कर्म के फलसे दिखाई देताहै, हेराजा फिर वह भूतात्मा
कुछ समयतक जन्म नहीं लेताहै और ऐसे भ्रमण करताहै जैसे कि आकाश
में बड़ा बादल घूमताहै फिर इस लोकमें उद्धार होकर जन्मको पाताहै, उद्धार
यहहै कि चित्तसे अधिकआत्माहै अर्थात् संकल्पसे रहितहोना और संकल्पसे
पृथक् आत्मामें नियत होना मोक्षका लक्षणहै इन्द्रियों से प्रधान मनहै और
सब जीवों में चैतन्य जीव श्रेष्ठ हैं और चैतन्य चेष्टावान् जीवोंमें द्विपाद जीव
उत्तम हैं और द्विपादों में भी द्विज अर्थात् ब्राह्मण क्षत्री वैश्य यह तीनों
वर्ण श्रेष्ठ हैं और इन द्विज वर्णों में संतानयुक्त उत्तम हैं, प्रजाओं में योगी
और योगियों में योग ऐश्वर्य्य से उत्पन्न होनेवाले निरहंकारी उत्तम हैं,
मनुष्यों को यह पूर्ण निश्चय है कि संसार को मृत्यु प्राप्त होती है प्रजालो-
ग सतोगुण आदि से युक्त कर्म्मों को कहते हैं, हे राजा जब सूर्य्यनारायण
उत्तरायणहों तब शुभ नक्षत्र और मुहूर्त्त में जो पुरुष मरताहै वह ब्रह्मलोक के
पानेका अधिकारी है, पाप से निवृत्तहो मनुष्यों को बिना दुःख दिये अपनी
सामर्थ्य के अनुसार कर्मकरके कालजन्यमृत्युसे जो शरीरको त्यागता है वह
भी उत्तम गतिको पाता है, विष, फांसी, अग्नि, चोरों के हाथ से, मांसाहारी
डाढ़वाले पशु जीवों से मरना प्रकृति मरण कहाजाताहै, आशय यह है कि
दुःख से पीड़ित भी योगी इसअपमृत्युको नहीं चाहै, इच्छासे उत्पन्न इनअप-
मृत्यु और इसी प्रकारकी अन्य बहुतसी मृत्युओं को भी वह पुरुष नहीं पातेहैं
जो कि पवित्र कर्म्म करनेवाले हैं, हे राजा पवित्र कर्म्म करनेवाले पुरुषों के
प्राण सूर्य्यमंडल को भेदकर जाते हैं और सामान्य धर्म्म करनेवालों के प्राण
नरलोक नाम सामान्य मार्ग से जाते हैं और निकृष्टकर्म्म करनेवालों के नीचे
मार्ग जो पशुपक्षी योनिहैं उनमें जाते हैं, हेराजा पुरुषकाशत्रु एकअज्ञानहीहै
उससे अधिक कोई दूसरा दुःखदायी नहीं है उससेही ढका और संयुक्त मनुष्य
भयानक और भयके उत्पन्न करनेवाले कर्मोंको करताहै, उसी अज्ञान के नाश
के लिये वेदोक्त धर्म्म में प्रवृत्त होकर वृद्धों के सत्संग से समर्थहोवे, हे राजपुत्र
वह अज्ञान नाम शत्रु बड़े उपायों से जीतने के योग्य है वह ज्ञानरूप बाणसे

घायल करकेही नाश किया जाता है, ब्रह्मचारी तपस्याके द्वारा वेदको पढ़ कर सामर्थ्य के अनुसार पंचयज्ञों को करके धर्म्म और मोक्ष मार्ग में नियत होकर वनको जाय, मनुष्य उपभोगों के न मिलने से अपनी हानि न करे हे राजा जीवों में भी मनुष्य देह पाना बड़ा उत्तम है यही जन्म आदि है इसी को पाकर शुभ लक्षण युक्त कर्मों के द्वारा आत्माकी रक्षाहोना संभव है, इसी देह में वेदके प्रमाण से मनुष्य अनेक धर्म्म कर्म्म करसक्ता है, जो मनुष्य इस दुष्प्राप्य मनुष्य शरीर को पाकर उत्तम कर्म्म नहीं करताहै और धर्म्म का अपमान करनेवाला है वह दुराचारी कर्म्म से ठगाजाताहै, जो मनुष्य सबजीवों को कृपादृष्टि से देखताहै और सामर्थ्य के अनुसार दानमान सत्कारसे उनका पोषणभी करताहै और श्रेष्ठमीठेवचनों से प्रसन्न करताहै वह सुख दुःख में समान होकर परलोक में प्रतिष्ठा को पाताहै दान त्याग शान्तरूप श्रेष्ठहै और जल और तपस्यादि से शरीर को पवित्र करना चाहिये वह जल सरस्वती नदी पुष्कर नैमिष इत्यादि पृथ्वी के बहुत से तीर्थों में वर्त्तमानहैं, जिन पुरुषों के प्राण घरों में निकलते हैं उनको सवारी के द्वारा समीपी पुण्यक्षेत्र अथवा श्मशान भूमि में लेजाकर विधि से दाहादि कर्म्म करना उत्तमहै, अमावास्या पूनों के अंगरूप यज्ञको इष्टी कहते हैं और बालबच्चों के पोषणको पुष्टि कहते हैं इन दोनों को और यज्ञ करना कराना दान पवित्र कर्मोंका प्रचार करना इत्यादि जो उत्तम कर्म्म हैं इनसबको यह मनुष्य आत्माके निमित्त सामर्थ्य के अनुसार करताहै और साधारण कर्म्म करनेवाले मनुष्य के कल्याण के निमित्त वेदके छओं अंग और धर्म्मशास्त्र धारण कियेजाते हैं, भीष्मजी ने कहा हे युधिष्ठिर इस प्रकारसे पराशरजी ने राजा जनक से वर्णन किया ४१॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेचतुर्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२४ ॥

एकसौपच्चीसका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे तात मिथिलापुरी के राजा जनक ने फिर भी धर्म्म के निश्चय की उत्तमताको पराशरजी से पूछा कि हे बड़े बुद्धिमान् ऋषि कल्याण का क्या साधन है कौन गतिहै और कौनसा कर्म्म नाश नहीं होता और कहां जाकर फिर यहां लौटकर नहीं आता है इसको आप कृपाकरके समझाइये, पराशरजी बोले कि हे चिन्मात्र रूप जनक मायाके सब पदार्थों से प्रीति न करना कल्याण का मूल है और ज्ञान का होना परमगति है और करीहुई तपस्या का नाश नहीं होता है क्षेत्र और सत्पात्र में बोयाहुआ अथवा दिया हुआ दान नाश नहीं होता है, जब अधर्म रूप फाँसी को काटकर धर्म्म में प्रीति करता है तब निर्भयता करनेवाले दानको देकर संन्यास को

धारण करके मोक्ष रूप सिद्धिको पाता है यह चौथे प्रश्न का उत्तर हुआ, जो पुरुष हजारों गौ और घोड़ों को दान करता है और जीवमात्र को निर्भय दान देताहै उसको सदैव निर्भयता प्राप्त होतीहै, बुद्धिमान् असंग पुरुष विषयोंमें नियत होकर भी पृथक्ही रहताहै और दुर्बुद्धी मनुष्य सदैव नीच पुरुषों में और विषयों मेंही पड़ा रहताहै, कमल के पत्ते के ऊपर जैसे जलकी बूंद नहीं ठहरती है इसीप्रकार ज्ञानी को अधर्म स्पर्श नहीं करसक्ता है और काष्ठपर लाखके समान अज्ञानी महापापिष्ठ मनुष्यको स्पर्श करताहै,७और दानरूप क्रियाके फलके चाहनेवाले और कर्म के करनेके अभिमानी पुरुषको अधर्म्म कभी नहीं त्याग करताहै, शुद्ध अन्तःकरण और आत्मज्ञानके विचारनेवाले पुरुष कर्मोंके फलसे कष्टको नहीं पाते हैं ६ जो कर्त्ता, पुरुष बुद्धि और कर्मेन्द्रियों के नष्टकर्मोंको नहीं जानताहै और अच्छे बुरे कर्मोंके फलों में आसक्त चित्तहै वह बड़े भयको पाताहै, जो सदैव वैराग्यवान् और क्रोध का जीतनेवाला होताहै वह विषयों में वर्त्तमान भी पाप युक्त नहीं होताहै, जैसे नदीपर बाँधाहुआ सेतु चलायमान नहींहोताहै किन्तु नदीकी पुष्टि करताहै इसीप्रकार सब रागों से रहित धर्म रूप सेतु रखनेवाला मर्य्यादा पुरुषोत्तम मनुष्य पीड़ा नहीं पाता है और उसके तपकी वृद्धि होतीहै, हे राजेन्द्र जैसे कि सिद्ध मुनिलोग नियम के द्वारा सूर्य्य सम्बन्धी तेजको पाताहै इसी प्रकार योग प्राप्त होनेपर यह जीव समाधि और ध्यानके द्वारा ब्रह्मभाव को पाताहै, जब स्वर्गकी इच्छा करनेवाला मनुष्य स्त्रियोंका त्याग करताहै और स्थान धन सवारी और नानाप्रकार के उत्तम कर्मों को त्याग करताहै अर्थात् उन कर्मों के फलोंको नहीं चाहताहै तब उसकी बुद्धि विषयोंको नहींचाहती है, जिसप्रकार इसलोक में तिलों का गुण पृथक् २ फूलों के योगसे बड़ी २ मनोहर सुगन्धिताओं को पाताहै इसीप्रकार अत्यन्त शुद्ध अन्तःकरण मनुष्योंके सदैव अभ्यासके द्वारा सतोगुण उत्पन्न होताहै, जो विषयों में बुद्धि लगानेवाला मनुष्य किसीप्रकार से भी अपनी श्रेष्ठताको नहीं जानताहै वह सब भावोंमें प्रवृत्त चित्तसे ऐसे खैंचा जाताहै जैसे कि कांटे में लगेहुए मांससे मछली पकड़ी जाती है, यह नरलोक देह और इन्द्रियों के समूह आदि के समान स्त्री पुत्र, पशु आदिका समूहहै परस्पर में रक्षा स्थान से रहित है अर्थात् केलेके समान सारसे रहितहै, जैसे नौका जलमें डूब जातीहै इसीप्रकार यह भी डूब जाताहै मनुष्यके धर्म्म का समय नियत नहीं है और मृत्यु भी मनुष्यकी राह नहीं देखती इससे सदैव धर्म्मकाही अभ्यास रखना उत्तम है मनुष्य मृत्युके मुखमें अपनेको समझा करे, धर्म्म से चित्तशुद्धी होनेपर योगाभ्यास करना चाहिये इसको कहतेहैं कि जैसे अंधा अपने घरमें अभ्यास

सेही जाताहै इसीप्रकार ज्ञानीयोगी योगाभ्यासमें चित्तको लगाकर उसगति को प्राप्त करताहै, योगके न होनेमें अप्रियताको कहते हैं—मरना जन्मके लिये कहा और जन्म मृत्युसे संयुक्तही है अज्ञानी मोक्षधर्म को न जानता हुआ चक्र के समान मायामें घूमताहै, और बुद्धि मार्ग में चलनेवाले मनुष्य को इसलोक परलोक दोनों में सुख होताहै—विस्तार करने से क्लेश होताहै और संक्षेपतासे करना सुखकारी है सब विस्तार पराये निमित्त हैं और त्याग को आत्म हितकारी कहतेहैं, जैसे कमल के मृडाल की लगीहुई कीच शीघ्रतासे अलग होजातीहै वैसेही पुरुषका आत्मा उपाधि रूप चित्तसे पृथक् होताहै, चित्तसे उत्पन्न होनेवाला संसार चित्तसे ही नाश होजाताहै इसको कहतेहैं—चित्तही आत्माको योगमार्गमें लाताहै फिर वह योगी उस चित्तरूप आत्मा को परम काष्ठा में मिलाताहै जब वह योग सिद्ध होताहै तब उस परमात्मा को देखताहै, जो मनुष्य इन्द्रियोंकी तृप्तिके निमित्त कर्म करनेको अपना कार्य रूप मानताहै वह इन्द्रियों के विषयों में संयुक्त होकर अपने योगरूप कार्य से नष्ट होजाताहै, अब योग से नष्ट होनेवाले की गतिको कहतेहैं—इस जगत् में ज्ञानी और अज्ञानीका आत्मा कर्मों के द्वारा आप नीची और तिर्यग्गति को और स्वर्ग में इन्द्रलोक को पाता है, अब योगनिष्ठ मनुष्यकी गति को कहते हैं—जैसे मट्टी के पात्रमें पकाया हुआ जल आदि नष्ट नहीं होता है उसी प्रकार तप से तपाया हुआ देह ब्रह्मलोक तक विषय को व्याप्त करता है, जो आत्मा विषयों को प्राप्त करता है वह भोगता नहीं है अर्थात् निस्संदेह वहसाक्षी है और जो चिदाभास जीवरूप आत्मा वैराग्यवान्होकर भोगोंको त्यागकरताहै वही उनकेभोगनेको निश्चय करताहै, वह साक्षीरूप आत्मा जिस हेतुसे संयुक्त नहीं होताहै उसको सुनो—कोहरे से ढकेहुयेके समान उदर और लिंगकी तृप्तिमें प्रवृत्त जीवात्मा जन्मसेही अन्धे के समान मार्गको नहीं जानताहै, जैसे वैश्य समुद्रसे अपने मूलधन के अनुसार धन को पाताहै उसीप्रकार इससंसारसागर में कर्म और विज्ञान से जीवकी गति होतीहै, इसकालप्रधान लोक में वृद्धावस्था रूपसे घूमतीहुई मृत्यु जीवों को ऐसे निगलजातीहै जैसे कि सर्प हवाको निगलताहै, जन्म लेनेवाला जीव अपने कियेहुये कर्म्म फलों को पाताहै बिनाकर्म्म के कोई प्रिय अप्रिय वस्तु नहीं मिलसक्ती, सदैव अच्छे बुरेकर्म इस मनुष्यको प्राप्तहोते हैं, तत्त्वज्ञ पुरुषों का दूसराजन्म नहींहोता इसको कहताहूं देहधारी मनुष्य संसारसागरके किनारे को पाकर जलके सिवाय दूसरेका तरना निश्चय नहीं करताहै औरमहासमुद्र में इसका गिरना कठिन दृष्ट पड़ताहै, जैसे कि नौका बड़ेजलमें मल्लाहरूपी चित्तवृत्तीसे रस्सीके द्वारा खैंचीजाती है इसीप्रकार चित्तभी अपने विचारसे

देहको कर्म्म में प्रवृत्त करताहै, जैसे कि सब नदियां समुद्रमें मिलती हैं उसी प्रकार आदिप्रकृति चित्तके विचारके द्वारा एकताप्राप्त करती है, बहुत प्रकार की प्रीति रूपी रस्सियों से बँधेहुये चित्त और अज्ञानके स्वाधीन मनुष्यदुःख को पातेहैं, जो देहरूपघर और बाह्याभ्यन्तरीय शुद्धीरूप तीर्थवाला बुद्धिके मार्ग में चलनेवाला शरीरी है उसको दोनोंलोक सुखदायी हैं मोक्षमार्ग में यज्ञादिककर्म्म दुःखरूपहीहैं और त्यागादि सुखदायकहैं,क्योंकि सबयज्ञादिक कर्म्म दूसरेके अर्थहैं और त्यागादि अपनेही निमित्त होतेहैं, योगके विघ्नरूप जो पुत्रादिकी चिन्ताहै उसको न करना चाहिये इस बातको कहते हैं—सब मित्रवर्ग संकल्पसे उत्पन्न होतेहैं और ज्ञातिसंबंधी लोग कारणरूपहैं अर्थात् पूर्व संस्काररूपहैं पुत्रस्त्री दासदासीआदि अपने प्रयोजनके सिद्धकरनेवालेहैं, माता पिता किसीके कामनहीं आतेहैं और दानरूप पाथेयहै अर्थात् पथिका भोजनहै यहजीव स्वर्गमें जाकर अपने कर्म फलको पाताहै यह माता पिता पुत्र भाई स्त्री और मित्रों के समूह ऐसेदृष्टपड़ते हैं जैसे कि अशर्फी के ऊपर मुख्यरेखा—जैसे पूर्व समयके निजकिये हुये पापपुण्य मनुष्यको अपना २ फलदेने के लिये प्राप्तहोते हैं इसी प्रकार अन्तरात्मा सन्मुख वर्त्तमान कर्म फलोंको जानकर बुद्धिको प्रेरणा करताहै,जोमनुष्य एकाग्रचित्तयोगाभ्यासी शूरधैर्यवान् और पण्डितहै उसकोकभी लक्ष्मी ऐसे त्याग नहीं करतीहै जैसे कि सूर्यको सूर्यकी किरणें नहीं त्यागतीं, जिसकी प्रशंसायोग्य बुद्धिहै वह मनुष्य परमेश्वर और परलोकके मानने वा निश्चय वा उपाय वा निरहंकारता आदि से आस्तिक्य बुद्धिके द्वारा कर्म्मका प्रारम्भकरे वहकर्म्म मिथ्या नहीं होताहै, सब जीव निश्चय करके गर्भसेही अन्ततक अपने पूर्व कर्म्मों के फलोंको प्राप्तकरतेहैं इसकारण वह पाप पुण्य त्याग नहीं कियेजासक्तेहैं,मृत्यु अपने साथी जीवनके नाशकरने वाले कालके साथ देहको ऐसे त्यागकरातीहै जैसे कि आरेसे निकलेहुये काष्ठ चूर्णको वायु उड़ादेताहै, इसी कारण प्रारब्ध से मिलने वाली मर्य्यादाओं से प्राणों को धारण करके मोक्षकेही निमित्त उपाय करना चाहिये,धनस्वरूप पुत्र स्त्री सुंदरकुल आदि सुख अपने पूर्व कर्म्मकेही फलके द्वारा पाताहै तात्पर्य्य यहहै कि इन पदार्थों के निमित्त उपाय न करे केवल आत्मतत्त्व के साक्षात्कारके निमित्त उपायकरे, भीष्मजी बोले हे तात इसप्रकारसे पराशरजीसे उपदेश पायाहुआ राजाजनक अत्यंत प्रसन्न हुआ ४८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेपञ्चविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२५ ॥

एकसौछब्बीसका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे पितामह इससंसार में सत्यता, शान्तता और बुद्धिमत्ता इत्यादि गुणोंसे ज्ञानी मनुष्यकी प्रशंसा करते हैं इसको आपने किस प्रकार माना है, भीष्मजी बोले हे युधिष्ठिर इसस्थान में एक प्राचीन इतिहास को कहता हूं जिसमें साध्यों का और हंसका सम्वाद है, अजन्मा और नित्य प्रजापति ब्रह्माजी सुन्दर पक्षधारी हंसरूप होकर तीनों लोक में घूमते थे दैवयोग से घूमते हुये साध्य देवताओं के पास आये साध्य बोले हे पक्षी हम सब साध्य देवता तुमको नमस्कार करके मोक्ष धर्मको पूछते हैं क्योंकि आप निश्चय करके मोक्ष के जाननेवाले हैं आपको हमने पण्डित और ज्ञानियोंसे मोक्षधर्मका वर्णन करनेवाला सुनाहै आपकी कीर्त्ति और प्रकर्षता विख्यातहै आप किसको उत्तममानते हैं और किसमेंचित्तको रमातेहो हे महात्मा उसीकाउपदेश हमकोकीजिये और अनेककर्मोंमेंसे मुख्य एककर्मको बताइये जिसको करके मनुष्य संसार बन्धनोंसे छूटकर परम गतिकोपावे, हंसने कहाकि अमृतपान करनेवाले देवताओं में यहबात करनेके योग्य सुनताहूं कि तपस्या करना सत्यता पूर्वक शांतचित्तहोना चित्तको जीतना और हृदय के रागादि दोषोंको त्यागकर प्रिय अप्रियको समान जानना अर्थात् उनमें सुख दुःख न माननाचाहिये मर्मभेदी वचन न कहना नीचसे शास्त्रकोन पढ़ना दूसरेको व्याकुल करनेवाला भयकारी असभ्यबचनका न कहना यह बचनरूप बाणमुखसे निकलते हैं उनसे घायल होकर मनुष्य अहर्निश दुखी रहताहै वह बचनबाण दूसरेके मर्मस्थानको ऐसानहीं विदीर्ण करते जैसाकि कहनेवाले के मर्म्मको छिन्नकरतेहैं उनबचनरूप बाणोंको पंडित मनुष्य कभी दूसरेपर नहींछोड़े जो अन्यमनुष्य इसको किसी प्रकारसे वचन बाणोंसे घायलभी करे तबभी इसको शांतीही करनी योग्यहै जो अत्यन्त क्रोधरूप पुरुष को प्रसन्न कर देताहै वह उसके पुण्यके फलको प्राप्तहोताहै, जो पुरुष दूसरे की अप्रतिष्ठा करनेवाले क्रोधको अपने आधीन करता है वह निर्भय दूसरे की निन्दा न करनेवाला और प्रसन्नचित्त दूसरोंके पुण्योंकोलेताहै, जो पुरुष गालीखाकर कुछनहींकहता और चोट खाकर क्षमाकरताहै वहीउत्तमहै क्योंकि श्रेष्ठपुरुषोंने क्षमा सत्यता,सरलता और दयाकोही उत्तमकहाहै, सबकामत यहहै कि वेदकीगुप्तबात सत्यताहै,सत्यवचनोंकी गुप्तबात अपनेमनकीइच्छाओं का रोकना है और इच्छाआदि के रोकने की गुप्तबार्त्ता मोक्ष है, जो पुरुष मनवचन क्रोध लोभ उदर और कामकी शक्तिको रोके मैं उसको ब्राह्मण और मुनि मानताहूं, क्रोधकरनेवालों में क्रोधरहितहोना उत्तमहै इसीप्रकार अशा-

न्त पुरुषोंमें शांतपुरुष श्रेष्ठहै और जो मनुष्यताके गुणसे पृथक्हैं उनसे मि-
लनसार मनुष्य श्रेष्ठहै इसीप्रकार अज्ञानी से ज्ञानी अथवा ब्रह्मका जानने
वाला उत्तमहै गालीदेनेवालेको अपनी ओरसे गाली न देशान्त पुरुषका
क्रोध इसगाली देनेवाले को नाशकरता है और पुण्यभी हरलेताहै, जो अ-
त्यन्त निन्दित वा प्रशंसितमनुष्य रूखे और अप्रिय वचनको नहींकहे और
घायल कियाहुआ धैर्य्यसे बदलानहीं लेताहै और मारनेवालेके पापकोनहीं
चाहता है उस पुरुषकी इच्छा देवलोकमें देवता लोग करतेहैं अप्रतिष्ठा किया
हुआ और प्रहार कियाहुआ और गाली दियाहुआ भी अपने समानवाले या
अपने से बड़े या नीचकी क्षमाकरे तो सिद्धिको पाताहै, आशय यह है कि
मैंभी सदैव वृद्धोंका सेवन करताहूं मेरालोभ प्रकट नहीं होताहै और क्रोध
और बड़ी आवश्यकता में भी धर्म्मसे पृथक् नहीं होताहूं और विषयादिककी
प्राप्तिके लिये देवताओंसे भी याचना नहीं करताहूं, कोई मुझे शापभी दे-
ताहै तो मैं उसे शापनहीं देताहूं इसलोकमें शांतस्वभावहोने को मैं मोक्षका
द्वार जानताहूं सो यहगुप्त ब्रह्महै इसको कहताहूं कि मनुष्य देहसे बढ़कर
कोई कुछ नहीं है, जिसप्रकार चन्द्रमा बादलों से अलग होताहै उसीप्रकार
पापोंसे मुक्त रजोगुणसे रहित पंडित मनुष्य समयको देखता धैर्य्य से सिद्ध
होताहै, जो सबका बड़ाहोताहै और ब्रह्मांड मण्डपकास्तंभरूपहै और जिसकी
सबलोग प्रशंसा करते हैं वह जितेन्द्री देवताओं में मिलताहै,ईर्षा करनेवाले
लोगजैसे पुरुषोंके दोषोंको कहना चाहतेहैं वैसे उनके कल्याण रूपी गुणोंको
नहींकहना चाहतेहैं,जिसके वचनऔरमन अच्छेप्रकारसे आधीनहैं और वेद
तप अर्थात् स्वधर्मनिष्ठहोना और त्यागप्राप्तहै वहइस सबके फलको पावेहैं
ज्ञानी पुरुष अज्ञानियोंको गालीदेने और अप्रतिष्ठा करने से सावधान करसके
इसीकारण दूसरेको नहींमारे और अपघातभी न करे,पण्डित मनुष्य अपमान
से ऐसे तृप्तहोजाय जैसे कि अमृतपीनेसे संतुष्टहोताहै क्योंकि अपमान पाया
हुआ सुखसे सोताहै और अपमान करनेवालानष्ट होजाताहै, क्रोधयुक्त मनु-
ष्य जो यज्ञकरताहै वा दानदेताहै अथवा तपहोम आदि करताहै उसके सब
धर्मको यमराज हरलेते हैं और क्रोधीका परिश्रम निरर्थक होताहै हे उत्तम
देवताओ जिसके लिंग उदर दोनोंहाथ और वचन यह चारोंद्वार अच्छे प्रकार
दुरेकर्म्मसे बचेहुये हैं वह धर्मज्ञ पुरुष है, सत्यता शान्त चित्तहोना सरलता,
दया धैर्य्य, क्षमा इत्यादिका अच्छे प्रकार से अभ्यास करनेवाला सदैव वेद
पाठ या जपमें प्रवृत्त इच्छा रहित और एकान्त वासी है वह मोक्षका अधिकारी
है जैसे कि बछड़ाचारों थनोंको पीता है उसीप्रकार इनसब गुणोंको करताहुआ
मोक्षका अधिकारी होताहै और मैंने सत्यतासे बढ़कर कोई उत्तम पदार्थ नहीं

पाया, मैं घूमताहुआ मनुष्य औरदेवताओंसे कहताहूं किसत्यता स्वर्गकीनसेनी इसप्रकारकीहै जैसे कि समुद्रकी नौकाहोतीहै, यहपुरुष जैसे लोगोंकेसाथ रहता है और जैसे मनुष्योंका संग करताहै और जैसाहोना चाहताहै, वैसाही होताहै, जो संतोंका सेवन करताहै अथवा तपस्वी या चोरकी सेवाकरताहै वह इसप्रकार से उनके आधीन होताहै जैसेकि कपड़ा रंगके आधीन होताहै, देवता सदैव साधुओंसे वार्त्तालाप करतेहैं और मनुष्योंके विषयभोगोंको देखनाभी नहींचाहते हैं क्योंकि विषयादिक नाशवान्हैं देखो अमृतरूप चन्द्रमा भी सदैव एकरूपनहीं रहता अर्थात् घटताबढ़ताहै औरवायुभी समाननहींहोती तीव्र मध्यमधीरे चलती है इसीप्रकार न्यूनाधिक युक्ति विषयों को जो जानता है, वहीजाताहै, रागद्वेष से रहित जैसेहो वैसेही हृदय में अन्तर्य्यामी पुरुषके वर्त्तमान होनेपर उसी अंतर्य्यामीके ज्ञानसे युक्त और सत्पुरुषोंके मार्ग में नियत पुरुषसे देवता प्रसन्न होतेहैं अर्थात् जो अन्तर्य्यामीहै वहीजीवहै यह श्रुतियां जीव ब्रह्मकी ऐक्यता को सिद्ध करतीहैं यहआत्माब्रह्महै मैं ब्रह्महूं वहतू है इत्यादि श्रुति कहतीहैं, जो मनुष्यसदैव लिंगेन्द्री और उदरमूर्ति में प्रवृत्तहैं वहचोर और सदैव कठोरवचन कहनेवाले हैं उनको देवतालोग प्रायश्चित्त के द्वारा दोषों से रहित भी जानकर दूरसेही त्याग करतेहैं, जो मनुष्य नीचबुद्धी सर्वभक्षी कुकर्मीहैं उससे देवता कभी प्रसन्न नहींहोते, जो पुरुष सत्यव्रत कृतज्ञ और धर्म्ममें प्रवृत्त हैं देवता उनको सुख विभाग करके सेवन करते हैं, बहुत बकने से मौनहोना कल्याण रूपहै और सत्य वचन कहना दूसरा कल्याण रूपहै, धर्म्मरूप वचन कहना तीसरा कल्याण बचनहै, प्रियवचन कहना चौथा कल्याणहै अर्थात् यहचारों एक दूसरेसे उत्तमहैं, यह सुनकर साध्यलोगोंने पूछा कि जो ऐसाही है तोलोग क्योंनहीं कल्याण वचनोंको कहतेहैं और यहलोक किससे ढका हुआहै और काहेसे प्रकाश नहीं करताहै और किस कारणसे मित्रोंको त्याग-ताहै और स्वर्गको नहीं जाताहै हंसरूपने उत्तर दिया कि यह लोक अज्ञानसे ढकाहुआहै ईर्षा आदिसे प्रकाश नहीं करताहै लोभसे मित्रोंको त्यागकरताहै और कुसंगसे स्वर्गको नहीं जाताहै, जिसका अज्ञान नाशहोगयाहै उसके प्रकारके लक्षण पूछनेके लिये साध्यों ने प्रश्नकिया किब्राह्मणोंमें कौनअके-ला रमताहै और बहुत मनुष्योंमें कौनसा अकेला ज्ञानी सुख पाताहै और कौन अकेला पराक्रमी या निर्बलहै और इनमें कौन लड़ाई आदिको प्राप्त नहीं करता है, हंस बोले कि ब्राह्मणों में ज्ञानी अकेला रहताहै और अकेला ज्ञानी बहुत मनुष्यों के साथ सुखी रहताहै और अकेला ज्ञानी पराक्रमीऔर निर्बल भी है इनमें ज्ञानीही लड़ाई आदिको प्राप्त नहीं करता, साध्योंने कहा कि ब्राह्मणों के देवभाव होने का क्या कारणहै और साधुभाव होनेका क्या

कारण कहाजाताहै और इनके असाधु होनेका क्या हेतुहै और नरभाव कैसे होताहै, हंस बोले कि ब्राह्मणोंका वेदपाठ या जप देवभावका कारणहै और व्रतादिकों का करना साधुभाव कहाजाताहै दूसरेकी निन्दाकरना असाधुभावका कारणहै और मृत्यु नरभावका कारण कहातीहै, भीष्मजी बोले कि यह मैंने साधुओंका उत्तम संवाद वर्णनकिया और स्थूल सूक्ष्म शरीरोंकी उत्पत्तिके कारण कर्म हैं और सद्भाव अविनाशी कहा जाताहै अर्थात् सद्भाव रहित जो किया जाताहै वह मिथ्यारूपहै ४५॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेषड्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२६॥

एकसौसत्ताईसका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हेपितामह आपने सबके उपकारके लिये श्रेष्ठ लोगोंका अंगीकार कियाहुआ यहयोग मार्ग न्यायके अनुसार वर्णनकिया अब सांख्य शास्त्रमें और योगशास्त्रमें जोविशेषताहै उसको विस्तारपूर्वक कहिये क्योंकि आप तीनों लोकोंके ज्ञानको जानतेहैं, भीष्मजी बोले कि हे आत्मज्ञानी तुम सांख्यमतके इससूक्ष्मतत्त्वको मुझसेसुनो जोकि कपिल आदि महामुनियों से प्रकाश किया गयाहै हे नरोत्तम जिसमें अनेकगुण हैं और संदेह आदिनहीं दिखाईदेतेहैं वह शास्त्रके बलशुद्ध ब्रह्मसेही संबंध रखताहै इसका आशययहहै कि प्राणसंबंधी प्रपंच और दूसरा अविनाशी शुद्धब्रह्म इनके बिशेष सबकर्म्म उपासना आदि जो व्यवहार सिद्धहैं यहां इनमें से किसीको भी साथलेकर द्वैतभाव नहींहै केवल एकही अकेला है इस बचनसे संसार नाशवान्है परंतु इसके सिवाय अन्यमतोंमें द्वैतता माननेसे एकता सिद्ध करनेवाले वेद बचन निरर्थकसमझे जाते हैं उनको जगत्की सत्यताका भ्रम दृष्ट पड़ता है ऐसे अनेक प्रकारके भ्रमसांख्य शास्त्रमें नहींहोते और कर्मकाण्ड ज्ञान काण्डका अंतर अदृष्ट गुणहैं और इनके बिपरीत दोषहैं, हेराजा वहयोगी दोष और विषयोंको ज्ञानसे त्यागकर सब विषय भावको सीपीमें चाँदीकी भ्रान्तिके समान मिथ्या समझकर मनुष्य पिशाचादिके विषयों को यक्षराक्षस देवगंधर्वों के विषयों को मनुष्य से देवता पर्य्यन्तों के ऐश्वर्य्यरूपी बिषयोंको प्रजापतियों में ब्रह्मादिक पर्य्यन्तके विषयों को, और इसलोक में अवस्थाके अन्त को अच्छी रीतिसे जानकर और सुखके परमतत्त्वको भी जानकर बिषयके सदैव चाहने वालोंके दुःखके समयको समझकर पशुपक्षी तिर्य्यक् योनि के जन्ममें और नरकमें पड़ेहुये लोकोंका दुःख देखकर स्वर्गको और वेद संबंधी गुणोंको भी जानकर ज्ञानयोगके गुण दोषोंको ध्यानकरके रागद्वेषादिमें गुण अवगुण देखकर और सतोगुण रजोगुण तमोगुण इन तीनोंमें भी दश नौ

आठक्रम से अवगुण जानकर चित्तको छः आकाशको पांचबुद्धिको चारगुण वाली इत्यादि सबबातें अच्छे प्रकार से जानकर ज्ञान विज्ञानयुक्त सात्त्विक भावोंसे शुद्धचित्त आकाश के समान सूक्ष्मज्ञानी शुभउत्तम मोक्षको पाताहै अब ब्रह्ममें सबके लयभावको कहतेहैं कि जैसे कुण्डलमें सुवर्णहै उसी प्रकार रूपसेयुक्त चक्षुरिन्द्री गन्धमें घ्राण,शब्दसे श्रोत्र,रससेयुक्त रसनाइन्द्री स्पर्श में देह आकाश में वायुतममें मोह और अर्थों में लोभलयहोताहै,वायुकी गति में विष्णुको भुजामें इन्द्रको उदरमें अग्निको जलमें पृथ्वीको तेजमें जलको और वायुमें तेजको संयुक्तजानो,वायु आकाशमें आकाश अहंकारमें अहंकार बुद्धि में, तममेंबुद्धिको रजोगुणमें तमको, लयजानो, सतोगुण में रजोगुण को और त्वम् पदार्थ जीवमें सतोगुणको इसीप्रकारईश्वर नारायण देवतामें त्वम् पदार्थ जीव को और मोक्षमें नियत देवताको जानो, और मोक्ष किसी में भी संयुक्त नहीं है अर्थात् वह कैवल्य निर्विकल्प मोक्ष अपनीही महत्त्वता में संयुक्त है, सोलहगुणवाले स्वप्नसे सम्बन्ध रखनेवाले देहकोजानकर पिछले कर्मको और उसकर्मकी उत्पत्तिकारणरूप वृत्तिको लिंगशरीरमें आश्रयीभूतजान निष्पाप आत्माको उदासीनजानके जाग्रत अवस्थामें विषय जाननेवालों के कर्मको दूसरा जानकर सब इन्द्री और इन्द्रियों के विषयों को आत्मामें कल्पितजान कर वासनारूप तीनोंदशा के कारण से वेदवचनके अनुसार मोक्षकी कठिनता को जानकर प्राण अपान समान व्यान और उदान इनपांचोंप्राणोंको एककरके नीचे को प्राप्तकरताहै वह अधोनाम छठवांहै—फिर ऊपरको लेजाने वाला सातवां है इन सबको मुख्यता से जानकर इसीप्रकार फिर उनसातों को जिनप्रत्येकोंमें सातोंप्राण इसप्रकार वर्त्तमानहैं जैसे कि वृक्षकीजड़में बहुत सेबीज और उनबीजोंमें अगणितबीज होते हैं यह सबजानके प्रजापतिऋषि और अनेक उत्तम मार्गों को जानकर बड़े देवर्षि ब्रह्मर्षि और सूर्य्यके समान तेजस्वी महापुरुषों को जानकर देवताआदि अनेक जीवसमूहों को नाशवान देख सुनकर पांचोंकी अशुभ गतिको और यमलोककी वैतरणी नदीके गिरनेवालों के महादुःखों को जानकर और नानाप्रकारकी योनियों में अशुभ जन्मको थूक खकार विष्ठा मूत्रसे संयुक्त नानादुर्जातनामें बड़े अनेक नरकों के दुःखोंमें पीड़ितजानकर संसारी दुःखों में ढकेहुए तामसीजीव और सात्त्विकी जीवोंके निन्दित कर्मोंकोजानकर और आत्मज्ञानी सांख्यमतवाले महापुरुषों के अर्थ में निन्दित कर्मोंको जानके चन्द्र सूर्य के घोर ग्रहणको देखकर नक्षत्रों के गिरने और अदला बदली आदिको और स्त्री पुरुषोंके वियोग और दुःखको देखकर और जीवोंका परस्पर में भक्षण करना अशुभ भयकारी जानकर बालकपनेके अज्ञान और अशुभ नाशको जानकर प्रीति और मोह

होनेपर सतोगुणी बुद्धिमें और मोक्षबुद्धि में हजारों में कोई पुरुष नियत है, वेद वचनके अनुसार मोक्षकी कठिनता को जान अप्राप्त वस्तुओं में बहुतमानना और प्राप्त वस्तुमें साधारण मानना और हे राजा विषयोंमें दुरात्मभाव और निर्जीव पुरुषोंके अशुभ देहोंको देखकर ४१ हे युधिष्ठिर घरों में दुःखरूप निवासको और ब्रह्महत्या करनेवाले मनुष्योंकी असह्य गति को, मद्यपान और गुरुपत्नीसे आसक्त भ्रष्टाचारी ब्राह्मणोंकी गतिको और जो माताओं में अच्छा वरताव नहीं करते और देवताओंसे व्याप्तलोकों में श्रेष्ठ चलनवाले नहींहोते उनगतियोंको जानकर बुरे कर्मोंकी और पशु आदिकी योनि में जन्म होकर उनकी अनेक दुर्गतियोंको और जलजीव कीट पतंगादिके नाश को और मास वरस आदिके नाशको ४६ इसीप्रकार यक्ष राक्षस देवता गन्धर्व्व दिन रात सूर्य चन्द्र सम्बन्धी वृद्धि क्षय को समुद्रों की न्यूनाधिकता और धनोंके वृद्धि क्षय को ऋतुओं के पहाड़ों के नदियोंके नाशको देखकर और ब्राह्मण क्षत्री आदि वर्णोंका नाश वृद्धावस्था मरणावस्थाआदि देहों के विकारोंको और उनके दुःखों को ठीक २ विचारकर, शरीरकी व्याकुलता और आत्माभें नियत आत्माके सब दोषोंको जानकर अपने देहकोशुद्धकरके कोई मोक्षको चाहताहै, युधिष्ठिरबोले हे महाप्राज्ञ पितामह अपने देह से उत्पन्न होनेवाले कौन से गुण दोषों को देखतेहो इसमेरे सन्देहको भी अच्छे प्रकार से दूरकरिये, भीष्मजी बोले हे शत्रुहन्ता युधिष्ठिर कपिलमुनि के सांख्य शास्त्रज्ञ और सांख्यमत के आचरण करनेवाले ज्ञानीपुरुष इसदेह में पांचदोषोंको कहते हैं उनको सुनो, काम, क्रोध, भय, निद्रा, और श्वास यही पांचों देहधारियोंके शरीरमें दोषरूप दृष्टआते हैं, सन्तोष शान्तीसे क्रोध को निवृत्तकरतेहैं और संकल्पके त्यागसे कामको, सतोगुणरूप कर्म से निद्रा को, सावधानी से भयको और अल्पाहारी होने से श्वासको वशमें करते हैं, गुणोंको अनेक गुणों से दोषोंको दोषों से पहचानकर और अपूर्व बातको अपूर्व वार्तोसे, सैकड़ों मायासे व्याप्त भीतके चित्रके समान नरकुलके तुल्य असारवान् गुफाके अँधेरेके समान जलके ओलेके समान विनाशवान नाश रूप इसलोकको देखकर रजोगुण तमोगुण में भरी कीचड़में फँसे हाथी के समान परवश संसारको जानकर महाज्ञानी सांख्यशास्त्रवाले संसारी प्रीति को त्यागकर उस सर्व्वव्यापी बड़े सांख्यज्ञान योगसे राजसी असुर गन्धर्व्वों को और तामसीअसुर गन्धर्व्वोंको स्पर्श से उत्पन्न होनेवाले देहमें नियत जान पवित्र सात्त्विकी गन्धर्व्वोंको ज्ञान और तपरूप फरसेसे काटतेहैं हेराजा युधिष्ठिर इनसबबातोंके पीछे अपनी शुद्ध चित्तता और क्षेत्रज्ञके ज्ञानकेद्वारा ज्ञानी उसमहाघोर सागर कोतरतेहैं जिसमेंदुःखरूप जल औरचिन्ताशोक गम्भी

रता,रोगमृत्यु ग्राह और भय महाभयानक सर्प हैं, तमोगुण कछुआ रजोगुण मछली स्नेहकीचहै, वृद्धावस्था कठिन मार्ग ज्ञानद्वीपहै, और कर्मोंके कारण अथाहहै सत्यतीर और व्रतस्थिरताहै,हिन्साशीघ्रता महावेगहै और नानाप्रकार के रसही रत्नोंकी खानि हैं और बहुतप्रकारकी प्रीति बड़े २ रत्नाधिकहैं और दुःख ज्वर नाम महावायु के उत्पात हैं शोक लोभ चारों ओरका जल है उग्ररोगही बड़ा हाथी है अंगके जोड़ पानी इकट्ठे होनेका स्थानहै और हाड़ों के जोड़ों का इकट्ठा होना मैदान है श्लेष्म समुद्र के फेनहैं दांत मोतियों की खानि है और रुधिरका तड़ागही मूंगे हैं और हँसना पुकारना उसका शब्द है और नानाप्रकार के ज्ञानों से अगम्य है अश्रुपातही निमक है त्यागकरनेवालाही उससे पार होता है लोक में फिर जन्म लेनाही जलकी तीव्रता है पुत्र बांधव लोग नदी के दोनों तटों पर नगर हैं और अहिंसा और सत्यता नदी की मर्यादा हैं और प्राणों का त्यागनाही तरलतरंग है, वेदांतका प्राप्त करना द्वीप है उस द्वीप में सब जीवों पर दया करना पानी के सोते हैं और कठिनता से प्राप्त होनेवाला मोक्षरूप देश है और बड़वानल नाम अग्नि जीव सम्बन्धहै, हे राजा शुद्ध जितेन्द्री लोग ज्ञानरूप नौका के द्वारा इस समु को तरतेहैं और दुस्तर स्थूल शरीर से निर्मोही होकर अर्थात् देहका अध्यास दूरकरके निर्मल हृदयाकाश में प्राप्त होते हैं वहां उनको ज्ञानका उदय होता है तदनन्तर उसी हृदयाकाश में सूर्य देवता आत्मसम्बन्धी चित्त के द्वारा प्रवेशकरके नाड़ियों के संग अपनी किरणों के परस्पर सम्बन्धसे चौदह भुवन के विषयों को उन शुद्धकर्म्मी सांख्यवालों के ऐसे आधीन करते हैं जैसे कि कमलनाल के छिद्र के द्वारा मुख से आकर्षण कियाहुआ जल उदर में प्रवेश करता है, अर्थात् उसी हृदयाकाश में सूर्य अपनी किरणों से उन सुकृती सांख्यवालों को आकर्षण करता है फिर हे युधिष्ठिर उन यती रागरहित वीर्यवान् तपोधन लोगों को प्रवहनाम वायु ग्रहण करलेता है और उन ब्रह्माण्डरूप विषयों को लोकों में प्राप्त करताहै इसीप्रकार आकाशकी परमगतिरूप हृदयाकाशको भी जाता है फिर उसी में ब्रह्माण्डको प्राप्त करताहै वह वायु सातों वायु से उत्तमहै वही रजोगुण की परमगति अहंकार को पहुँचाता है और अहंकार सतोगुण की परमगति महत्तत्त्वनाम शुद्ध पदार्थ को प्राप्त करताहै और सतोगुण तदनन्तर श्रेष्ठ नारायण को प्राप्त कराता है, वह ईश्वर आत्मा के द्वारा शुद्ध परमात्मा को प्राप्त कराता है फिर परमात्मा को पाकर परमात्मारूप स्थान रखनेवाले निर्मल लोग मोक्षके निमित्त समर्थ होते हैं और फिर संसारमें लौटकर नहीं आते हैं हे राजा द्वन्द्व रहित सत्यता में प्रवृत्त सब जीवों में कृपाकरनेवाले महात्मा यतीलोगों की यह उत्तम गति है, युधिष्ठिर ने कहा कि हे निष्पाप

पितामह यतीलोग उस षडैश्वर्य्यवान् परमात्मारूप मोक्ष स्थान को पाकर सर्वज्ञ होकर जन्म मरणआदि को स्मरण करते हैं या नहीं अर्थात् मोक्ष में मुख्य विज्ञान है या नहीं, इस स्थान पर जो ठीक वचनहै वह जैसाहै वैसाही आप कहनेको योग्य हैं—मोक्ष सिद्धकरनेवाले मंत्रोंको पाकर यह बड़ा दोष प्रकट होता है और जो दूसरे यती उस मुख्य विज्ञान में कर्म्मकर्त्ता होते हैं उस दशा में मैं प्रवृत्ति लक्षणवाले धर्म्मको उत्तम देखताहूं किन्तु संसारमें डूबे हुये मनुष्य को उत्तमज्ञान का होना महादुःखदायी है—भीष्मजी बोले कि हे तात तुमने यहां न्यायके अनुसार बड़ा कठिन प्रश्न किया इस प्रश्न के उत्तर में ज्ञानीलोगोंको भी महामोह होता है इस स्थान में मेरे वर्णन कियेहुये उस उत्तम सिद्धान्त को सुनो जिसमें कपिल मतवाले महात्मा पुरुषों की उत्तम बुद्धि प्रकाशित है हे राजा जीवों के देहमें अपने २ स्थान में नियत इन्द्रियां जिनमें छठामन है अधिकतर दीखती हैं क्योंकि वहसब आत्म विज्ञान में मुख्य कारण हैं वह सूक्ष्म चिदात्मा उन कर्त्तारूप इंद्रियों में बाह्याभ्यन्तरीय ज्ञान को प्रकाश करताहै, अब आत्माकी ज्ञानशक्तिकी पृथक्ता न होना दिखलाने को इन्द्रियों की जड़ता वर्णन करते हैं—आत्मासे पृथक् इन्द्रियां काष्ठके समान नाश को पाती हैं यह निस्संदेह है कि जैसे महा समुद्रमें जल से पृथक् फेन होता है उसीप्रकार आत्मासे पृथक् इंद्रियां हैं—इंद्रियोंकी जड़ताको कहकर आत्मा के स्वयं प्रकाशवान् होने का वर्णन करते हैं कि स्वप्नावस्था में इन्द्रियों के साथ स्वप्न देखनेवाले देहाभिमानी का सूक्ष्म अन्तरात्मा सब विषयों में ऐसे घूमता है जैसे कि आकाश में वायु हे भरतवंशी वह न्याय के अनुसार देखताहै और स्पर्श के योग्योंको स्पर्श करता है और जैसे कि पूर्व जाग्रत अवस्थामें देखताथा उसी प्रकार इस स्वप्नावस्था में भी पूर्णता से सब विषयोंका प्रकाश करता है, इस स्वप्नावस्था में अपना स्वामी न रखनेवाली सब इन्द्रियां अपने २ स्थानपर बुद्धिके अनुसार निर्विष सर्प के समान लय होजाती हैं, वह आत्मा अपने स्थानपर नियत होकर सब इन्द्रियोंकी सूक्ष्म अशेष वृत्तियोंको फैलाकर विचरताहै अर्थात् चैतन्यसे व्याप्त वृत्तियां निस्सन्देह उदयको प्राप्तहोतीहैं अब चैतन्यकी सबस्थानोंमें व्याप्तिको दिखलातेहैं—हे युधिष्ठिर फिर वह आत्मा सत्त्वके और रजोगुण तमोगुण और बुद्धिके सब गुणोंको व्याप्त करके ६१ चित्तके संकल्प आदि गुणोंको आकाशके श्रोत्र आदि गुणोंको और वायु अग्निके गुणोंको भी व्याप्त करके विचरताहै इसी प्रकार जलके और पृथ्वी के भी गुणोंको व्याप्त करके विचरताहै, फिरवह ब्रह्म क्षेत्रज्ञोंमें नियत होकर सतोगुण आदि गुणोंको सतचित् आनन्द से व्याप्त करके क्षेत्रज्ञको भी व्याप्त करताहै और अच्छे बुरे कर्मभी इसी जीवको ऐसे

व्याप्त करतेहैं जैसे कि शिष्यलोग गुरू अध्यापक को घेरलेते हैं और चित्त समेत इन्द्रियांभी इसीप्रकार जीवको घेरतीहैं,वहजीव प्रकृतिको अर्थात् कारण की उपाधिको और इन्द्रियों कोभी उल्लंघनकर न्यूनाधिकता से रहित अविनाशी ब्रह्मको प्राप्तहोताहै, हेराजा सब पुण्य पापोंसे रहित निरुपाधि निर्द्वन्द्व निर्गुण उत्तम प्रकृतिसेपरे आत्मारूप नारायण में प्राप्त होनेवाला वह जीव फिर संसार में लौटकर नहीं आताहै, इस स्थानपर समाधि और व्यवस्थान कालके भेद से प्रारब्ध कर्म्म के अनुसार ईश्वराधीन कर्म्म करनेवाले शान्त चित्त जितेन्द्री के पासमन और इन्द्री आतेजातेहैं, इसीप्रकार जीवन्मुक्ती के शुद्ध भावको कहकर कैवल्य बुद्धीको कहतेहैं—हेकुन्तीनन्दन इसप्रकार उपदेश पायाहुआ ज्ञानी मोक्षके अधिकारी गुणग्राही मनुष्यसे थोड़ेही समयमें मोक्षका पानेवाला होजाता है, ऐसे बड़ेज्ञानी सांख्य मतवाले श्रेष्ठ गतिको पातेहैं हे युधिष्ठिर इस ज्ञानसे उत्तम कोई ज्ञाननहीं है, इसप्रकार सांख्य या योगसे शुद्धहोनेवाले त्वंपदार्थ का अद्वैतब्रह्म सिद्धहोने के निमित्त तत्पदार्थका अभेद कहने को तत्पदार्थ के स्वरूपको कहतेहैं—इसमें तुमको सन्देह नहीं होनाचाहिये कि सांख्य ज्ञान उत्तम माना है जिसमें सर्व्वव्यापी चेष्टा रहित पूर्ण सदैव एकरूप सर्वोत्तम ब्रह्मका वर्णनहै उसीको ज्ञानीलोग आदि अन्त मध्यरहित अद्वितीय जगत्के जन्म मरणका कारण सनातन निर्विकार अविनाशी और नित्यकहतेहैं उसीसे संसारकी उत्पत्ति प्रलय और रूपान्तर दशा प्राप्तहोती है उसकी महर्षि लोगोंने शास्त्रों के द्वारा बड़ी भारी प्रशंसा कीहै, सबब्राह्मण देवता और बाहर भीतरसे शुद्धचित्त लोग उस ब्रह्मण्य देव अनन्त अविनाशी सर्व्वोत्तमको अपना ईश्वर जानते हैं इसीप्रकार अच्छे सावधानयोगी और दूरदर्शी सांख्यमतवाले संसार का कर्त्ता और सबका आदि कारण उसको मानतेहैं और उस अरूपका स्वरूप शुद्ध चिन्मात्रहै यह वेदकी श्रुतिहै, उसके होनेको सिद्धकरते हैं—घट आदि वस्तुओंका जोज्ञानहै वही उस अरूप ब्रह्मका भी ज्ञानहै अर्थात् निर्विषयक घट आदि का ज्ञानही परब्रह्महै—हेभरतवंशी तातइसपृथ्वीपर दो प्रकारके जीवहैं अर्थात् स्थावर और जंगम इनमें जंगमजीव उत्तमहैं, हे राजा जो ब्रह्मज्ञानियोंमें ज्ञान और वेद शास्त्रोंमें सांख्य और योग बड़ेउत्तमहैं और नानाप्रकारके उत्तमज्ञान पुराणोंमें देखेगये हैं वह सब सांख्यशास्त्र में वर्त्तमान हैं आशय यह है कि सांख्य के विज्ञान से सबका विज्ञान होताहै इसीप्रकार स्थावर जीवों से जंगम अर्थात् चलने फिरनेवाले उत्तमहैं और जंगमोंसेभी ज्ञानी सर्वोत्तमहैं बड़े इतिहासोंमें जो ज्ञान देखा और अच्छे पुरुषोंसे कियाहुआ जो शास्त्रोंमें सुना और देखा वहसब सांख्य शास्त्रमें वर्त्तमानहै जो उत्तम बल चित्त वृत्तिनिरोध और सूक्ष्म

ज्ञानतपश्चादि सुखरूपहैं वहसब सांख्य विज्ञानकेही निमित्त नियत कियेगयेहैं, हे राजा उसज्ञानके पूरे होनेपर सांख्य मतवाले पुरुष देवलोकोंको जातेहैं और वहांके भोगोंको भोगकर अपने मनोरथोंको सिद्धकरके वही लोगयतीब्राह्मणों में गिरकर जन्मलेते हैं, और यहांसे शरीर त्यागकर वह सांख्यवाले देवताओं में प्रवेश करते हैं—हेराजा इसीकारण वहब्राह्मण बड़े प्रतिष्ठित और श्रेष्ठ पुरुषों से सेवित सांख्यज्ञानमें अधिक प्रवृत्तहैं इसहेतुसे देवता तत्पदार्थमें प्रवेश करते हैं, उनका तिरछा चलना अर्थात् पशु पक्षी आदि में जन्मलेना न अधोगति होना देखागयाहै और हे राजा वह ब्राह्मणभी नीचनहीं हैं जो इससांख्यज्ञान में प्रीति करनेवाले हैं, सांख्यज्ञान बहुत-बड़ा श्रेष्ठप्राचीन एकरस निर्मल और चित्तरोचक है उस अप्रमेय अशेष सांख्यज्ञानको महात्मा परब्रह्म नारायण भी धारण करतेहैं और श्रुति कहतीहै कि ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मही होताहै, हे नरदेव मैंने यह सिद्धांत वर्णनकिया यह सबविश्व प्राचीन नारायणहीहै वही समय पर संसारको उत्पन्न करताहै वही प्रलयकाल में सबको अपनेमें आपलय कर लेताहै, अब आधेश्लोकमें सांख्यके सब सिद्धान्त का संक्षेप कहते हैं—यह जगत् का अन्तरात्मा नारायण आकाशादि सब सृष्टिको अपने देहमें लय करके आपभी शुद्ध चिन्मात्र में लयहोजाताहै ११२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेसप्तविंशत्युपरिशततमोऽध्यायः १२७ ॥

एकसौअट्ठाईसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि त्वंपदार्थ के शोधनेवाले सांख्ययोगको आपने कहा अब उसके पारमार्थिक पदार्थ भावको मूलसमेत वर्णन करिये और जो आपने अविनाशी कहावह क्याहै जिसमें कि प्रवेश करके फिर लौटकर नहीं आता है और जो विनाशवान् कहा कि जिसमें जाकर फिर लौट आता है वहक्या है हेसर्वज्ञ पितामह उनविनाशी और अविनाशी का पूर्ण वृत्तान्त सुनना चाहताहूं आपको ऋषि और महात्मा यतीलोग वेदज्ञ और ज्ञानकी खानि वर्णनकरतेहैं, आपकी अवस्थाके थोड़ेही दिनबाकीहैं संसारके प्रकाश करनेवाले उत्तरायण में वर्त्तमान सूर्य्य भगवान् के होनेपर आपइस अनित्य संसारको त्याग परमगति को पावेंगे, आपके जानेपर हमफिर कहांसे ऐसे मोक्षरूप वचनोंको सुनेंगे आपकुरुवंशियोंके दीपकरूप अपने ज्ञानदीपकसे हमलोगोंपर प्रकाशकरतेहो हे कौरव कुलके दीपक स्वर्ग में पहुंचानेवाले राजेन्द्र आपसे सब वृत्तांत सुना चाहताहूं आपके अमृत रूपी वचनोंसे मेरी तृप्ति नहीं होती है, भीष्मजी बोले कि इस स्थानपर मैं तुमसे एकप्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें वशिष्ठजी और राजाकराल जनकका प्रश्नोत्तर

है, कि पूर्वसमयमें राजाकराल जनकने उन ऋषियों में श्रेष्ठ आत्मविद्या में कुशल ब्रह्मज्ञानके अनुभवमें निश्चय करनेवाले सूर्य्यके सन्मुख अभिवादन करके मैत्रावरुणके पुत्रवशिष्ठ जीको बैठाहुआ देखकर बड़ीनम्रतासे हाथजोड़कर यह मोक्षसंबंधी प्रश्नकिया, हेब्रह्मन् मैं सनातन परब्रह्म को सुनाचाहताहूं जिससे कि ज्ञानीलोग आवागमनसे छूटजातेहैं, जो वह आनन्द रूप कल्याण मय संसारसे छुटानेवाला अद्वैत ब्रह्म कहाताहै उसीमें यह अनित्य संसार नोंन और जलके समान लयहोताहै, वशिष्ठजी बोले कि हे सृष्टि और पृथ्वीके पालनेवाले जैसे कि यह संसार लयहोताहै उसको चित्तसे सुनो यह संसार कालसेभी पूर्णताके साथनाशनहीं होताहै, यह सब अनित्य संसार जितने समय में लयहोताहै उसकी संख्या को कहताहूं कि चारोंयुग बारह हजार दिव्यवर्षोंके होते हैं और चारों युगोंको एककल्प कहते हैं और एक हजार कल्पमें जो समय है वह ब्रह्माजीका एकदिन कहाजाताहै और इतनी ही रात्रिहोती है जिसके अन्तमें संसारके स्वामी शिवजीमहाराज जागते हैं वही उस महाकर्मी सबकी आदिमें पैदाहोनेवाले हिरण्यगर्भको उत्पन्न करते हैं वह शिव अरूप रूपमानविश्वरूप है और अणिमा लघिमा प्राप्तिआदि अष्टसिद्धियां उसको सदैव स्वयंसिद्धहोती हैं इसीकारण से उस कालस्वरूप ईश्वर को रूपांतरदशा से रहित चैतन्यरूप कहते हैं उस अविनाशी रूप रहित जानने के योग्य रूपको कहते हैं—वह परमेश्वर सबओरको हाथ मुख चरणनेत्र शिरकान आदिअंग रखनेवाला संसारमें सबकोव्याप्त करके नियत है यही अविनाशी सर्व ऐश्वर्य्यमान हिरण्यगर्भ है यही बुद्धिरूप योगेश्वर ब्रह्मा और अज हैं सांख्यशास्त्र में नामों से बहुत रूपवाले भी कहेजाते हैं वही विचित्ररूप विश्वात्मा और एकाक्षर अर्थात् प्रणवरूप है उसी ने अपनी आत्मा से तीनोंलोकों को उत्पन्न करके अनेक रूप युक्त किया इसी कारण बहुतरूप होनेसे विश्वरूप कहाजाताहै, रूपांतर प्राप्त करनेवाला बड़ा तेजस्वी यहसूत्रात्मा अपनेको आप प्रकटकरताहै और वही अहंकार अथवा अहंकारके अभिमानी विराट्को उत्पन्न करताहै, उसके दोप्रकार इसरीति से हैं कि अव्यक्तसेव्यक्त प्रकटहुआ उसको विद्यासर्ग अर्थात्महान्त समष्टि कहतेहैं और अविद्यासर्ग अहंकारभी उसी से प्रकटहुआ, अवविद्या और अविद्याके लक्षण को कहतेहैं प्रथम उत्पत्ति अक्षरकीहै अक्षर से दूसरी उत्पत्ति हिरण्यगर्भ की और तीसरी विराट्कीहै इनतीनों से एकके विषयमें अबुद्धि और बुद्धि उत्पन्न हुई, वेद और शास्त्रके अर्थ विचारनेवाले पंडितों की ओर से वहविद्या और अविद्यानाम असंभव प्रकारसे संभव प्रसिद्धहुई आशय यहहै कि वह तू है मैं ब्रह्महूं यह आत्माभी ब्रह्महै इस सिद्धी के समान कहना बुद्धि विद्याहै कोई

मनुष्य रस्सीको सर्पमाने और दूसरा उसको शिक्षाकरे कि यह रस्सीहै इससे उसका भयदूर होजाताहै यहीअबुद्धि विद्याहै हे राजा अहंकारसे उत्पन्न पंचतन्मात्रा स्थूल तत्त्व अपंचीकृत को तीसरी जानो और सब अहंकाररूप सातोंकी राजसी तामसी और प्रत्यक्ष में पंचीकृत सूक्ष्मतत्त्वको चौथाजानो इसको कहतेहैं–पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश और गंधरूप रस स्पर्श शब्दयह दशोंवर्ग दृष्टि के साथ उत्पन्न होनेवाले प्रकटहुए और पंचज्ञानेन्द्री पंचकर्मेंद्री मन समेत एकसाथ उत्पन्नहुये, यह चौबीस तत्त्वात्मक मूलप्रकृति सब शरीर मात्रों में वर्त्तमानहै, तत्त्वदर्शी ब्राह्मण जिसको पुरुषसे पृथक् जानकर शोच नहीं करतेहैं, हे नरोत्तम देवमनुष्य दैत्यदानव आदि से युक्त तीनोंलोकहैं, सबजीवों में यहसमान नाम देह अर्थात् पिंड ब्रह्माण्ड जानने और देखने के योग्य है यहब्रह्माण्ड पिण्ड हाथीसे लेकर लघु तम चेंटीपर्यंत असंख्यजीवों से भराहुआहै, इनसब समेत यहसंसार प्रतिदिन नाशकोपाताहै इसकारणसे इस भूतात्माको नाशवान्कहते हैं यहअक्षर अर्थात् अविनाशी ब्रह्मऔर जैसे यह जगत् नाशकोपाताहै इसकाभीवर्णनकिया अव्यक्तऔरव्यक्त नाम संसारको मोहरूपवर्णनकिया और जगतकेअव्यक्त और व्यक्तरूप कहनेसे अव्यक्तकाभी नाशकहा इसस्थानमें उसयुक्तिको कहतेहैं--जिसकेकारण बड़ीसूक्ष्मबुद्धि सदैव नाशवान्है इसीकारण उसकास्वामी अव्यक्त भी नाशवान्है यह दृष्टांत तुमसे वर्णनकिया यहीतुम मुझसे पूछतेथे, पच्चीसवां विष्णु शुद्ध चिन्मात्र रूप तत्त्व नहीं है परन्तु तत्त्वनामहै अर्थात् तत्त्वों में उसकी गणनाहै वह तत्त्वों का अधिष्ठानहोनेसे तत्त्वनाम कहाजाताहै स्वामीपन और सृष्टिपन से नहींकहाता और तत्त्वोंके मध्यवर्ती होनेसे तत्त्वोंके हेतुरूप अज्ञानके कारण ब्रह्मको कर्त्तारूप वर्णनकिया क्योंकि दूसरी दशामें उसका नाश भी सिद्धहोताहै, तत्त्व होनेसे उसमें अधिष्ठातापनभी नहींहै इसको अब वर्णन करतेहैं– जिस हेतुसे नाशवान् कर्त्ता और कर्मको उत्पन्न किया इसीकारण वहमूर्त्ति मूर्तिमान् जगत् प्रधानसे भी प्रकट होताहै वह अधिष्ठाता अव्यक्त चौबीसवां है क्योंकि पच्चीसवां पुरुष अंगरहित अमूर्त्तिमान् है इसीहेतुसे वह अधिष्ठाता नहींहै काष्ठ पाषाणके समान नाशवान् अव्यक्तभी अधिष्ठाता नहीं होसक्ता इसहेतुसे कहते हैं, चैतन्यकी छायासेसंयुक्त वह चौबीसवां अव्यक्त सबदेहोंमें हृदयस्थ अधिष्ठाताहै और उपाधि रहित प्राचीन चैतन्य प्रकृतिके द्वारा मूर्त्तिमान् होजाताहै वास्तवमें वह अमूर्त्तिमान् है, और उत्पत्ति नाशरूपधर्मवाली प्रकृतिसे वह उत्पत्ति और नाशवान्होताहै वहीनिर्गुण सगुणहोकर सदैवविषयों में ऐसे प्रवृत्त होताहै, जैसे कि दर्पणमें मुखप्रतिबिम्बरूप होता है, अबतत्त्वम् पदार्थको वर्णन करते हैं, इसप्रकार उत्पत्तिनाशका जाननेवाला यहमहान्

आत्मा अज्ञान और अविद्यामें संयुक्त होके विपरीत दशाको प्राप्त होनेके पीछे यहमानताहै कि मैंहूं अर्थात् देहाभिमानी होताहै,सत गुण रजोगुण तमोगुण में संयुक्तहोकर अज्ञानियोंके सत्संगसे उन उनयोनियों से ऐक्यता प्राप्तकरता है और संग में रहने से अपने को पृथक् नहीं मानता है और कहता है कि मैं अमुकका पुत्रहूं अमुक मेरी जात है यह अपने गुणों परही वर्त्ताव करताहै अर्थात् ज्ञाति के अभिमान आदिको त्यागनहीं करताहै, तमोगुण से नानाप्रकार के काम क्रोधादिकोंको प्राप्त करताहै इसीप्रकार रजोगुणसे राजस भाव प्रवृत्ति आदिको और सतोगुणसे सात्त्विक भाव प्रकाश आदिकोपातेहैं इन तीनों भावोंका रूप सतोगुण आदिके क्रमसे श्वेतरक्त कृष्णहै यह प्रकृतिसे संबंध रखनेवाले तीनोंरूप अग्नि जल पृथ्वी से संबंध रखनेवाले पूर्वोक्तही रंग केहैं, तमोगुणी नरकको जातेहैं रजोगुणी मनुष्य शरीर पातेहैं और सुख के भागी सात्त्विकी पुरुष देवलोकको जाते हैं केवल पापात्माजीव पशुपत्ती आदि के जन्मको और पुण्य पाप दोनों के योगसे मनुष्य योनि को और केवल पुण्यसे देवता रूपकोपाते हैं इसप्रकार जो यह पच्चीसवां आत्मा है उसमाया युक्तको अज्ञानसे नाशवान् अथवा विपरीत दशा प्राप्त करनेवाला कहा वह ज्ञानसे प्रकाश करताहै. आशय यहहै कि तत्पदार्थनेही अज्ञान से जीवभाव को पाया वह ज्ञानसे मुक्तहोताहै इसवर्णनसे तत्त्वमसि महावाक्य के अर्थ द्वारा जीव और परब्रह्मकी ऐक्यता सिद्धहोती है ४६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेअष्टविंशत्युपरिशततमोऽध्यायः १२८ ॥

एकसौउन्तीसका अध्याय ॥

वशिष्ठजीने कहा कि प्रकृतिमें मिलकर पुरुष उसीके अनुसारकर्म करताहै यहऊपर वर्णन कियागया अब दो अध्यायोंमें उसका व्यौरेवार वर्णन करते हैं कि जैसे ज्ञान न होनेसे अज्ञानके समान कर्म्म करते हैं इसीप्रकार एक देहसे हजारोंदेह प्राप्त करतेहैं, कर्मागुणों के साथ मिलने से गुणोंकी सामर्थ्य से हजारों तिर्य्यग्योनि और देवयोनियों में भी प्राप्तहोताहै, मनुष्य शरीरके द्वारा स्वर्गको जाताहै और स्वर्ग से क्षीणपुण्य होकर पृथ्वीपर मनुष्य का जन्मपाताहै और मनुष्य शरीरसे अपार नरकोंको पाताहै, जैसे कि रेशमका कीड़ाघर बनाताहै और सूत्र वा तन्तुओंकी रस्सियोंसे सदैव अपनेको बन्द करताहै इसीप्रकार यह निर्गुण आत्मा अपनेको गुणों से बँधाताहै यह सुख दुःखसे रहित उनउन योनियों में सुख दुःखकोपाताहै जैसे कि शिरपीड़ा,नेत्र पीड़ा,दांतपीड़ा, गलग्रह,जलोदर,तृषारोग, ज्वर, गण्डरोग, विशूचिका, कर्ण-पीड़ा, कुष्ठ, मन्दाग्नि, कास, श्वास, अपस्मार आदि अनेक रोगों में महा

कष्टोंको पाते हैं, मनुष्य अपनेको समझताहै कि मैं रोगीहूं और देहोंके मध्य में अनेक प्रकारके सुख दुःखआदि प्राकृत द्वन्द्व उत्पन्न होते हैं उनकोभी यह जीव अपनेही देह सम्बन्धी जानताहै अर्थात् कहताहै कि मैं दुःखीहूं रोगीहूं उसीप्रकार कभी हजारों पशुपक्षियोंकी योनियों में और देवताओंमें भी बड़े अहंकारसे अपने उत्तम कर्मोंका वर्णन करता है, श्वेत या मलिन पोशाक रखनेवाला और पृथ्वीपर सोनेवाला और मेढ़कके समानहाथ पैरोंका सकोड़नेवाला शिरके बलसे सोनेवाला और वीर आसनपर बैठनेवाला वस्त्रधारण कर मैदान में सोना और नियतहोना ईंट कांटोंपर सोना राख पृथ्वी पलँग आदिपर सोना और वीरोंके स्थान जल कीच आदिमें बैठना और नाना प्रकारकी शय्याओंपर सोना और फलकी आशायुक्तहोना अलसी के बल-कल या सनसे बनाहुआ वस्त्र और कालेमृग चर्मका धारण करनेवाला लँगोटी आदिका पहरना भोजपत्र या छालको धारणकरना शालमली आदि से उत्पन्न वस्त्रोंका पहरना रेशमी या सूत्र वस्त्रों से निर्वाह करनेवाला और चीथड़ोंका धारण करनेवाला ज्ञानीपुरुष बहुतसे उत्तम भोजन वस्त्र और अनेक रत्नादिकोंको चाहताहै, एकरात्रिके पीछे एकबार भोजनकरना चौथे आठवें औरछठवेंसमयपर भोजनकर और छठें आठवें दिन भोजन करनेवाला वा बारहवें दिनभोजन और एकमहीनेतक व्रतकरना फलमूलभोक्ता वायुजल दहीखल भोजन करनेवाला गोमूत्र पीनेवाला सागफूल सैवलऔरचावलके माड़से निर्वाह करनेवाला सूखे वृक्षोंके पत्र पेड़से गिरेहुये फल आदि से उदर भरताहुआमनुष्य अनेककृच्छ्र चान्द्रायणादिव्रतोंका सेवनकरताहै औरचान्द्रायणनाम व्रतोंको धर्मके नानाप्रकारके मार्गोंसे आचरण करताहै और पाशुपतिआदि अनेकयज्ञके पाखण्डोंको अभ्यासकरताहै और पर्वतों या एकांत में नानाप्रकारके नियम तप जप यज्ञआदिको बुद्धिमें प्रवृत्त करताहै इसीप्रकार ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्रआदिके धर्म्म और उनके व्यापार मार्गको और दुःखी अन्धे कृपलोगोंको अनेकप्रकारकेदान और अनेकगुणोंको वहआत्मा अज्ञानता से अपनेसे सम्बंधकरताहै, इसीप्रकार तीनोंप्रकारके गुण और धर्म्म अर्थ काममोक्ष इनचारोंकोभी वहआत्मा प्रकृतिकी प्रेरणासे अपनेसे संबंध करताहै स्वधावषट् स्वाहा नमस्कार यज्ञकराना वेदपढ़ाना दानलेना देना यज्ञकरना वेदपढ़ना इत्यादि सबकर्म्म और जन्म मृत्युआदि शुभ अशुभ कर्म्म इनसबको प्रकृति रूपामाया उत्पन्न और नाशकरतीहै फिर अकेलीमाया इनसब गुणोंको कुछदिनके पीछे आपनिगलकर नियतहोतीहै जैसेकि सूर्य्य अपनीकिरण समूहको समय समयपर प्रकट करके व्याप्त करताहै इसीप्रकार यह आत्मा बारंबार पूर्व्व आत्मामें कल्पित हृदयके प्यारे नानाप्रकारके गुणोंको क्रीड़ाके नि-

मित्त मानलेताहै इसप्रकार क्रियामार्गमें प्रीति करनेवाला त्रिगुणाधीश आत्मा उत्पत्ति नाशरूप धर्मवाली क्रियारूप त्रिगुणात्मक प्रकृतिको बहुतसे रूपोंमें बदलताहै और क्रियामार्गमें संयुक्त होकर क्रियाको मानताहै कि वहउसी प्रकारकाहै अर्थात् अवश्य करनेके योग्यहै, हे समर्थ युधिष्ठिर यहसब संसार प्रकृतिसे अन्धा कियागया है और रजोगुण तमोगुणसे अनेक प्रकार करके भराहुआहै, इस प्रकारसे यहसुख दुःखादि द्वन्द्व सदैवसे वर्त्तमानहैं और मुझ सेही उत्पन्न होकर मेरीही ओर दौड़तेहैं—२६ हेराजा यहसब सदैवतरने के योग्यहैं इसीप्रकार यहजीव ज्ञानसे मानताहै कि सबउत्तम कर्मभी ३७ मुझ देव लोकमें भीप्राप्त होनेवाले को भोगनेके योग्यहैं औरइन बुरेभले कर्मों के फल को इसलोकमेंभी भोगूंगा ३८ तो मुझे सुखही उत्पन्न करना योग्यहै एकबार सुख कर्म्म करके जबतक उसका अन्तहो तबतक वह मुझे प्रत्येक जन्मों में प्राप्तहोगा, इसलोकमें कर्म्म से मुझको अत्यन्त दुःखभीहोगा मनुष्यका शरीरपाना और नरक में भी पड़ना महादुःखहै नरक भोगकर फिरभी मनुष्य देहको मैं पाऊंगा मनुष्य देहसे देवभाव देवभावसे फिर नरदेहको पाऊंगा,मनुष्य देहसे क्रमपूर्वक नरकमें जाताहै आत्माके सत्चित् आनंदात्मक गुणसे संयुक्त जीवात्मा सदैव इसबातको जानताहै, इसकारण देवलोक नरलोक और नरकमें भी जाताहै और ममतामें फँसकर हजारों संसारीजन्मोंतक नाशवान् मूर्त्तियोंमें प्राप्तहोकर उन्हीं लोकोंमें घूमताहै, जो पुरुष इस प्रकारसे अच्छेबुरे कर्म्म को करता है जैसेकि स्त्री पुरुषसे सन्तान उत्पन्नहो यद्यपि इसीप्रकार प्रकृति पुरुषसेभी सबकाम होतेहैं तथापि आगेके वर्णनसे कर्त्तापन प्रकृति मेंही निश्चय होताहै क्योंकि प्रकृति विकारवान्है और पुरुष निर्विकार है,इसबातको सिद्धकरतेहैं—वहशरीरवान्जीव इसप्रकारसे तीनोंलोकोंमें इच्छानुसार फलकोपाताहै सबशुभअशुभ कर्मोंकी करनेवालीप्रकृतिहीहै और वहीप्रकृति जोकिइच्छानुसारतीनोंलोकोंमें चेष्टाकरतीहै वह पशु पक्षी नरदेव आदि योनियोंके द्वारा इसलोक परलोकमें उसकर्म फलको भोगतीहै इसस्थानमें तीनों स्थानों को प्रकृतिसम्बन्धीही जाने,प्रकृतिका कोईचिह्न नहीं है उसके महत्तत्त्वादि कार्य्यों से उसको अनुमान करतेहैं इसीप्रकार चैतन्य आत्मा को चिदाभासके चिह्नोंसे अनुमान करते हैं यहसांख्य मतवाले महापुरुष इस प्रकारसे मानतेहैं, यह जीव अष्टपुरीवाले शरीरको जोकि प्रकृतिसे संयुक्त मोक्षप्राप्त होनेतक निर्विकारहै पाकरउसके इन्द्री रूपी द्वारपर नियत होकर अपने कर्मकेद्वारा उसको आत्मामें मानताहै यहसब ज्ञानेन्द्री और कर्मेन्द्री अपने २ विषयोंके साथगुणों में वर्त्तमान होतीहैं,यहसब इन्द्रीरूप मैंहीहूं और यहसब मुझमें हैं इसप्रकार अपने को इन्द्रियों से पृथक् मानताहै और बिना

घायल अपनेको घायलमानताहै और लिंगशरीरसे पृथक् आत्माको उक्तशरीरवाला मानताहै और अक्षय होकर अपनी मृत्युको मानताहै बुद्धिसे पृथक् आत्माको बुद्धिरूप मानताहै और तुच्छशरीरआदिको आत्मतत्त्व समझताहै और मृत्युरहित अपनेको मृत्युरूप जानताहै और चेष्टारहितहोकर अपने को चेष्टावान्मानताहै और क्षेत्ररहितहोकर अपनेको क्षेत्रवान्जानताहै औरकर्तृत्व गुणसे हीन होकर सृष्टिको आत्मासंबंधी मानताहै, तप से असम्बन्धी होकर आत्माको तपस्वी मानताहै और सबस्थानोंमें वर्त्तमान होने से निश्चेष्टहोकर अपनीगतिको मानताहै और अजन्माहोकर आत्माको जन्मलेनेवालामानता है एकतासे निर्भयहोकरभी आत्मा केभयको मानताहै और अविनाशी होकर भी आत्माको नाशवान् मानता है कारण यहहै कि अज्ञानीहै ५४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेएकोनत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः १२९ ॥

एकसौतीसका अध्याय ॥

वशिष्ठजी बोले कि इसप्रकार अज्ञान और अज्ञानी मनुष्यों के संयोगी होनेसे हजारों नाशवान् जन्मोंको पाताहै, यहपुरुष सोलह कला रखनेवाला है इनसोलह कलाओंमें सोलहवां अविनाशी पुरुषहै उसप्रकाशरूप चैतन्य कलाके द्वारा अनेक पशुपक्षी मनुष्य देवयोनियों आदिमें देवलोक पर्य्यन्त हजारों नाशवान् स्थानोंको पाताहै सब जीवों के चन्द्रमा के समान पन्द्रह कलाहैं पञ्चतत्त्व पञ्चज्ञानेन्द्री पञ्चकर्मेन्द्री फिर यह अज्ञानी उनकलाओं में बुद्धि लगानेसे हजारों जन्मोंमें प्राप्त कियाजाताहै पन्द्रहवीं कलामूल प्रकृति है वह चिदात्मासे चैतन्य होतीहै इस चन्द्रमारूप अविनाशी चिदात्मा को सदैव सोलहवीं कलाजानो, अज्ञानी मनुष्य बारम्बार मूल प्रकृतिरूप पन्द्रहवीं कलामें जन्म लेताहै उसकी सोलहवीं कला सच्चिदानन्द रूपहै उस में आश्रित होकर जीवचेष्टा करते हैं इसीहेतुसे फिर जन्महोताहै, जोसोलहवीं सूक्ष्म कला है उसको चन्द्रमा अर्थात् अमृतरूप ब्रह्मजानो वह इन्द्रियों से पोषण नहीं कियाजाताहै किन्तु अपनी सत्तास्फूर्त्ति देनेसे उन इन्द्रियों का पोषण करता है, हे राजेन्द्र इस सोलहवीं चैतन्यात्मक कलाको अविनाशी मानकर यह सब ऐसे उत्पन्न होताहै जैसे कि रस्सीकी विद्यमानतामें सर्पका होना, वहसोलहवीं प्रकृति इसप्रत्यक्ष संसारकी उत्पत्ति और लयस्थान जानी जाती है, उससंसारके नाशहोने से अर्थात् अहंब्रह्माऽस्मि इसमहावाक्य के अनुभवसे मोक्षकही जातीहै दूसरा अर्थ यहहै कि इसपन्द्रहवीं कला नाम प्रकृतिको नाशकिये बिना जन्म लेताहै वही उसकी उत्पत्ति और लयस्थान है उसके नाशहोनेसे मोक्ष कहीजातीहै, जोधाम और मोक्षनाम शब्द से

कहाजाताहै वही आनन्दरूप सोलह कला रखनेवाला सब स्थावर जंगम का पिण्डरूप ब्रह्माण्डहै जोपुरुष पन्द्रहवीं प्रकृतिनाम से संयुक्त शरीरको इस प्रकार माननेवाला है कि यह मेराहै वह मनुष्य उसी में घूमाकरताहै अर्थात् देहसे नहींछूटता है आशय यहहै कि वेदमें लिखाहै कि निश्चयकरके आनंद सेही सब जीव उत्पन्नहोते हैं और आनन्दहीसे जीवते हैं और उसी में प्रवेश करते हैं, जो इसप्रकारसे माननेवाला है उसका वर्णन करतेहैं—पचीसवां बड़ा आत्मा है उस निर्मल अत्यन्त शुद्धके न जानने और शुद्धअशुद्धके सेवन करनेसे वह शुद्धआत्मा वैसाही अशुद्ध होजाताहै इसीप्रकार ज्ञानी भी अशुद्ध के सेवनसे अज्ञान होजाताहै हे राजा अच्छाज्ञानीभी इसीप्रकार जानने के योग्यहै और त्रिगुणात्मिका प्रकृतिके सेवनसे तीनोंगुण युक्तहोताहै ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेत्रिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३० ॥

एकसौ इकतीसका अध्याय ॥

राजाजनक बोले कि हे महाराज आपनेकहा कि प्रकृतिके नाशसे मोक्ष होतीहै इसमें मुझको शंकाहै कि जो प्रकृति और पुरुष समानहैं फिर प्रकृति की निवृत्ति कैसे होसक्तीहै हे भगवन् जैसे प्रकृतिपुरुष दोनोंका योगसम्बन्ध है इसीप्रकार स्त्री पुरुषकाभी सम्बन्ध योग कहाजाताहै, इससंसारमें स्त्री विना पुरुषके जैसे गर्भवती नहीं होसक्तीहै इसीप्रकार पुरुषभी विना स्त्री के गर्भ नियत नहीं करसक्ताहै, परस्पर सम्बन्धहोनेसे और परस्पर गुणोंमें संयोगहोने से सबयोनियोंमें गर्भ उत्पन्न होता है ऋतुकालमें संभोगहोने और परस्पर गुणसंयोगहोनेसे गर्भहोताहै इसकादृष्टान्त कहताहूं और इसलोकमें माता पिताके जो गुणहैं उनकोभी कहताहूं हे ब्राह्मण हाड़ नाड़ी और मस्तकको तो पिताका अंश और चर्म मांस रुधिर को माताका अंश सुनते हैं हे महा पुरुष ऐसा वर्णन वेदशास्त्रोंमें देखा पढ़ागया है, अपने वेद और शास्त्रों में जो कहाहुआ है वही प्रमाण है वह वेद और शास्त्र दोनों सनातन हैं और प्रमाण हैं, इसी प्रकार प्रकृतिपुरुष दोनोंके परस्पर गुणसंयोग और परस्परा-श्रित होने से परस्पर सम्बन्धवान् हैं इसकारण मैं देखताहूं और विचारकरता हूं कि मोक्षधर्म वर्त्तमान नहींहै या मोक्षके साक्षात्कार होनेमें कोई दृष्टान्त है इसको मूलसमेत आप वर्णन कीजिये क्योंकि आप सदैव प्रत्यक्षके देखने वाले हैं, और हममोक्षके चाहनेवालेहैं और उसको चाहतेहैं जिससे कि दुःख दूरहोजाताहै और जो शरीर रहित सदैव जरा इच्छारहित ईश्वरसेभी उत्तम है, वशिष्ठजी बोले जो यह वेदशास्त्रका दृष्टान्त आपने वर्णनकिया यह ऐसा

ही है जैसा कि आप समझरहे हैं, हे राजा तुमने वेद और शास्त्र दोनों अच्छे प्रकार से जाने हैं परन्तु जो उनका मुख्यसिद्धान्त है उसको नहीं जानतेहो जो पुरुष वेदशास्त्रके ग्रन्थोंको पढ़ाहै और उसके मुख्य आशय को नहीं जानताहै उसका वह सब पढ़ाहुआ निष्फल है अर्थात् जो ग्रन्थ के आशय को नहींजानता वह केवल उसग्रन्थका भार उठानेवाला है और जो ग्रन्थके मुख्य आशयका जाननेवालाहै उसका ग्रन्थपढ़ना सफलहै, ग्रन्थका आशय पूछाहुआ वैसाही कहने को योग्य होताहै तब वह मुख्य प्रयोजनके अनुसार उसकेआशयको पाताहै जो स्थूल बुद्धिवाला पुरुष पण्डितों की सभामें ग्रंथके प्रयोजन को वर्णन न करसके तो वह निर्बुद्धी ग्रन्थको खोलकर कैसे कहसकैगा,ज्ञानरहित चित्तवाला मनुष्य जिसहेतुसे इसस्पष्टबातकोभी मुख्यतासे नहीं कहसक्ताहै वह आत्मज्ञानी भी होकर हास्यके योग्य गिनाजाता है, हे राजेन्द्र इसी कारण अब चित्तदेकर श्रवणकरो जैसे कि यहबात सांख्ययोग में आत्मज्ञानियों के मध्यमें ठीकदृष्ट पड़ती है वह मैं कहताहूं, जिसको योगीजन देखते हैं उसीको सांख्य मतवाले प्राप्त करते हैं, सांख्य और योग यह दोनों एकही हैं जो ऐसा विचार से देखता है वही बुद्धिमान् है हे तात चर्म मांस रुधिर मज्जा पित्त और नसें यहसब इन्द्रियोंको अधिक रखनेवाले हैं यह तुमने मुझसे कहासो यहसब द्वैतसे उत्पन्नहोते हैं जैसे कि द्रव्यसे द्रव्य की उत्पत्ति होती है उसीप्रकार इन्द्री से इन्द्री शरीर से शरीर बीज से बीजको प्राप्त करते हैं तात्पर्य्य यह है कि समान जातिसे उसी जातिकी उत्पत्ति होतीहै और से और नहीं होसक्ती और प्रकृति पुरुषके भिन्नस्वभाव होनेसेयोग होना असंभवहै, उस इन्द्री रहित निर्बीजरूप मायाके आडम्बरसे पृथक् अशरीरी महात्मा पुरुषके गुण निर्गुण होनेसे कैसेहोसक्तेहैं तो यह उत्पत्ति किसप्रकार से है इसको कहतेहैं—आकाश आदिगुण इस त्रिगुणात्मक प्रकृतिमेंही उत्पन्न होतेहैं और उसीमें लयहोते हैं इसीप्रकार गुणप्रकृतिसे उत्पन्न होतेहैं और प्रकृतिमें ही लयहोते हैं फिर उस असहाय प्रकृति के सृष्टि संबंधी कर्तृत्वगुण कैसे होसक्तेहैं इस शंकाको दृष्टान्तसे सिद्धकरते हैं किचर्म मांस रुधिर मज्जा पित्तभेजा हड्डी नसें इनप्रकृतिसे संबन्ध रखनेवाली आठों वस्तुओंको वीर्य्य संबंधीजानो,जैसेकिबिना माताकेभी द्रोणाचार्य्यके शरीरमें केवल वीर्य्यहीसे त्वक् मज्जा मांसादि उत्पन्नहुये तो दर्पणके समान दूसरेके प्रतिबिम्बको प्राप्त करनेवाली प्रकृतिसे यहसब संसार उत्पन्न होताहै, पुरुषके अन्तःकरण चैतन्य का प्रतिबिम्ब जीव और आकाशादि अपुरुष आत्माको प्राप्तकरानेवाले प्रमाता प्रमाण प्रमेय यहतीनों प्रकृतिसे संबन्ध रखनेवाले कहेपरन्तु वहचिदात्मा पुरुष अपुरुष नहींकहाजाताहै अर्थात् वह चिदात्मा जीव संसारसे पृथक्है, संबन्ध

होने में प्रकृति पुरुष का लिंगी वा लिंगरूपहोना कैसे होसक्ताहै इसशंका को कहते हैं—वह प्रकृति अलिंगी अर्थात् चिह्न रहित पुरुषको पाकर अपने देह से उत्पन्न महत्तत्त्वादिक चिह्नों से उसीप्रकार विदित होती है जैसे कि विना रूपकी फसलें सदैव फूल और फलों से विदित होती हैं—हे तात इसी प्रकार शुद्ध चिन्मात्र भी अनुमानसे जानाजाता है जो कि पचीसवां है और चिदाभासों में व्याप्त आदि अन्त रहित है अर्थात् समय के चक्र से पृथक् अत्यन्त द्वेष रहित सबका द्रष्टाहै और उपाधियों से भिन्न सीपी में मिथ्या चांदी के समान केवल अभिमान करने से शरीर आदि रूप धारण करने वालों में कहाजाता है कि यह इन्द्री आदिका समूह आत्मा है, जबयह जीवात्मा प्रकृति संबंधी इनगुणों का नाश करता है अथवा (पाठान्तरसे) इन गुणों को श्रवण मनन निदिध्यासन से विचारकर जानता है तब शरीरादिके आत्मा जानने के भ्रमको दूरकरके उस परब्रह्म को देखताहै, सांख्ययोग और सब तांत्रिकों ने जिस परब्रह्मको जड़रूप अहंकारके त्यागनेसे ज्ञात होनेवाला महाज्ञानी और बुद्धिसे परे वर्णन किया है और अज्ञात अथवा गुणों से गुप्त अन्तर्य्यामी गुण संबंध से रहित ईश्वर प्राचीन अधिष्ठाता भी कहा है ३२ सांख्ययोग में कुशल मोक्ष के चाहनेवाले ज्ञानीलोग प्रकृति को और उसके महत्तत्त्वादिक गुणों को विचारकर जिसको पचीसवां कहते हैं, जब बाल्यावस्था और जाग्रत् अवस्था आदि जन्म से भयभीत ज्ञानी पुरुष निराकार ज्ञान स्वरूप परमात्मा को जानते हैं तब उस ब्रह्मको प्राप्त करते हैं अर्थात् वह उपाधि रहित ब्रह्मन् जानाहुआ जीव है और जानाहुआ ब्रह्म है हे राजा यह जीव ईश्वरकी एकताका सिद्ध करनेवाले शास्त्रज्ञ ज्ञानी की ओरसे अच्छे प्रकारसे पृथक् वर्णन कियागया और अच्छे प्रकार जीव ब्रह्मकी एकयता का न देखनाही अज्ञानीकी ओरसे अनुत्तम शास्त्र पृथक् कहागया, इस जड़ चैतन्यका सिद्ध करनेवाला शास्त्र इस प्रकारसे वर्णन कियागया कि अपनाही मत अच्छा है दूसरेका अच्छानहीं है—वादियों के भ्रमोंको कहकर अपने सिद्धांत को कहते हैं—एकयता को अविनाशी और द्वैतताको विनाशवान् कहाजाता है यह अनुभव जानके योग्य समझकर इसका वर्णन करते हैं—जब रस्सी में सर्प के समान ध्यान चिदाभासके साथ पचीस तत्त्वों में अच्छे प्रकारसे विचार करना होता है तब उनके अधिष्ठानसे पचीसवें आत्मा को साक्षात्कार करता है तब एकयता और द्वैतता शास्त्र और अशास्त्रकी सत्य होती है, संसार तत्त्व और असंसार तत्त्वका यह अनुभव पृथक् है ज्ञानियोंने पचीस प्रकारके तत्त्वोंकी उत्पत्ति को संसार कहा है और उस अतत्त्वको पचीसों तत्त्वों से उत्तमअनुभव कहाहै क्योंकि सृष्टि के समूह चारोंओर घूमनेवाले

हैं औरतत्त्वोंका तत्त्व पच्चीसवां परमात्मा सदैव एकरूप औरअविनाशीहै ३६॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे एकत्रिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३१ ॥

एकसौबत्तीसका अध्याय ॥

जनकबोले कि हे महर्षि आपने जो कहा कि एकता विनाश रहित है और दो आदि अनेक नाशवान् हैं मैं इनदोनों के इस सिद्धांत को अशुद्ध जानताहूं क्योंकि एकतामें बंधन और मोक्ष नहीं है और अनेकता में आत्मा का नाश सिद्ध है हे राजा इसी प्रकार से ज्ञानी और अज्ञानी से जाने हुये इस आत्मतत्त्व को सूक्ष्म बुद्धिसे देखताहूं हे निष्पाप तुमने जो अविनाशी होने का कारण एकता और नाश होनेका कारण अनेकता वर्णनकी वहभी मेरी अस्थिर बुद्धि से नष्टताको प्राप्तहुआ इस हेतुसे इसएकता और अनेकता के शास्त्रको और ब्रह्म प्रतिब्रह्म और प्रधान आदि ब्रह्मको और जड़ चैतन्य के आत्मारूप जीवको सुना चाहताहूं, हे भगवन् विद्या जानने के योग्य आत्माको प्राप्त करनेवाली और अविद्या आत्माकी गुप्त करनेवाली है इसी प्रकार अक्षर अविनाशी और क्षर नाशवान् है और सांख्यतत्त्वों का विवेक और योग चित्तकी वृत्तिका रोकना है और भेद अभेद अर्थात् एकता और अनेकता यह सबभी प्रधानरूप सांख्य और योग के वर्णन से सब प्रश्नों का उत्तर होजाता है इस निमित्त योगका वर्णन करने को वशिष्ठजी बोले कि हेमहाराज तुमजो यहपूछतेहो इसको मैं अच्छेप्रकारसे कहूंगा अबयोगके कर्मों को मैं पृथक्ता से वर्णनकरताहूं, योगियों के शास्त्रमें करनेकेयोग्य ध्यानहीपरम सामर्थ्यहै उस ध्यानको भी विद्या जाननेवालोंने दो प्रकार का कहाहै एकतो मनकी एकाग्रता और दूसरा प्राणायाम है फिर प्राणायाम भी दो प्रकारका है अर्थात् संगर्भ और निर्गर्भ उनमें मन संबंधी मुख्यहै, हे राजा मूत्र पुरीषका त्याग और भोजन इनतीनों समयपर योगका अनुष्ठान नहींकरे इनके सिवाय और समय में मन बुद्धिको लगानेवाला योगी आत्माको आत्मा में मिलावे फिर वह योगी मनसमेत इन्द्रियोंको विषयों से रोककर चित्तसे शुद्धहो उन बाईस चेष्टाओंसे जो कि मनरूपी घोड़ेके चाबुक समान हैं उस अजर अमर जीवनमुक्त जीवको जिसको ज्ञानीलोग तत्त्वरूप कहतेहैं उस पच्चीसवें परमात्मा में जो कि चौबीस तत्त्वोंसे उत्तमहै प्रवेश करनेकी चेष्टाकरे उनबाईस चेष्टाओंकेद्वारा आत्मा सदैव जानने के योग्य है जिसकामनकामादिमें आसक्तनहींहै उसका व्रतयोगनामहै यही निश्चयहै इसमेंकभी संदेहनहींहै, सब संयोगसेरहित अल्पाहारी जितेन्द्रीयोगी पहली पिछली रात्रिमें मनको आत्मा मेंतदाकारकरे, हेराजा जनक मनकेद्वारा इन्द्रियोंके समूहोंको वशकरे अर्थात्

इधर उधर चलने न दे और मनको बुद्धिसे पाषाणके समान निश्चल करके स्तंभरूप स्थिरता प्राप्तकरके पर्वतके समान अचल होजाय तब शास्त्रके प्रयोजनके जाननेवाले ज्ञानी योगी मिलनेकी दशापर ब्रह्ममें वर्त्तमान कहते हैं अब योगीके अनुभवको कहतेहैं योगदशामें वहयोगी स्वाद सुनना देखना स्पर्श आदि कोईबातनहीं करताहै और उसके चित्तमें कोई संकल्प विकल्पभी नहीं होता है न किसी प्रकारका अभिमान करता है और काष्ठ पाषाण के समान स्थिरहोकर संसार के व्यवहारों को भूलजाता है उस योगीको ज्ञानी योगीलोग अपने शुद्धस्वरूपसे मिलाहुआ कहतेहैं, वह बुद्धि आदि से पृथक् और व्यापक होने से निश्चेष्ट योगी इसप्रकारसे प्रकाशकरताहै जैसे कि वायु रहित स्थान में देदीप्यमान दीपक होताहै और अखंड चिन्मात्र रूपहोने में उसकी गतिशेष नहीं रहती, जिससमय अनुभव के बलसे यह कहता है कि जो हृदयमें नियत अन्तर्य्यामी ईश्वरहै वह मैंहीहूं तब आत्माको साक्षात्कार करे हेतात मुझसे मनुष्योंसे वह जाननेके योग्यहै दूसरा साफ अर्थयहहै कि जब सब वृत्तियों के निरोध से निराकार होनेके कारण आत्मा के न जानने योग्य होने से यहनहीं कहता है कि वह जानने के योग्य जानना चाहिये अर्थात् परोक्ष ज्ञानसे बढ़कर अपरोक्ष ज्ञानसे मिलगयाहै तब वह आत्मज्ञानी कहाजाता है, आत्मा में आत्मा इसरीतिसे दृष्ट पड़ता है जैसे निर्धूम अग्नि और आकाशमें प्रकाशमान सूर्य्य दीखताहै,जो धैर्य्यवान् बुद्धिमान् वेदांतके ज्ञाता महात्मा ब्राह्मण हैं वह उस उत्पत्ति स्थान रहित अविनाशी ब्रह्मको देखते हैं, उसीको सूक्ष्म से सूक्ष्म वृहत् से वृहत कहते हैं वह अचल तत्त्व सब जीवों में नियत होकर भी दृष्टनहीं पड़ताहै जबवह दृष्टही नहीं पड़ता है तो उसका योगकैसे होसक्ता है इसको कहताहूं–हे तात महान्धकारके अन्त में वर्त्तमान वह सृष्टिकास्वामी बुद्धिरूप धनसेपूर्ण सबसेपरे वर्त्तमान उस पुरुषके चित्तरूपी दीपकसे दिखाई देताहै, सर्व वेदपारग ब्राह्मणों से वह अन्धकारका नाशकर्त्ता चिदात्मा प्रकाशमान सूत्रात्मा से पृथक् उपाधि रहित ब्रह्म कहा गयाहै,इसप्रकार उसजरामृत्यु रहित साक्षीरूप उत्तम आत्माको देखताहै यही योगियों का योग कहाजाताहै, हेतात मैंने इतना योगशास्त्र सिद्धांतके साथ तुझसे वर्णन किया अब उससांख्य योगको कहताहूं जिसमें न्यायरूपी रस्सी और सर्पके समान पिछले पिछले कार्य्यको पहले पहलेमें लयकरनेसे साक्षात्कार होता है २६ हे राजेन्द्र प्रकृति वादियों ने प्रकृतिकोही अव्यक्त वर्णन कियाहै उसीसे महत्तत्त्वहुआ जो कि प्रकृतिसे दूसरा है तीसरा अहंकार महत्तत्त्वसे उत्पन्न होता है यहहमने सुनाहै सांख्य के सिद्धहोने वाले आत्माको देखनेवाले पुरुषोंने पंचतत्त्व अर्थात् पंचतन्मात्रा नामसूक्ष्म तत्त्वको अहंकारसे

उत्पन्न होनेवाला कहाहै यह आठप्रकृतिहैं और उनके विकृतरूप सोलहहैं और अपने२ विकारोंको प्रकटकरनेवाली ग्यारह इंद्रियां पांचसूक्ष्मतत्त्व जो कि विशेप नामकहेजातेहैं, सांख्यशास्त्रके आशय जाननेवाले और सांख्यमार्गमेंही सदैवचलनेवाले ज्ञानियोंने इतनेही तत्त्ववर्णन कियेहैं-अब इनकेलयको कहतेहैं—जो जिससे उत्पन्न होताहै वह उसीमें लय होताहै अर्थात् वह अन्तरात्मासे उत्पन्न होतेहैं, और विपरीति रीतिमें नियत होनेवाली लयताको प्राप्त होते हैं, वहगुण सदैव अनुलोम अर्थात् सीधे मार्गसे उत्पन्न होते हैं और प्रतिलोम अर्थात् उलटेमार्ग से ऐसे प्रकार गुणोंमें लयहोते हैं, जैसे कि समुद्रकी लहरें समुद्रमें ही लय होजातीहैं हे राजा इसी प्रकारसे प्रकृतिकीभी उत्पत्ति और लय है अर्थात् त्रिगुणात्मिका प्रकृति ब्रह्मसे उत्पन्न होकर उसीशुद्ध ब्रह्म में लय होजाती है, प्रकृतिके लय होनेपर इस पुरुषकी भी एकता होतीहै और जब उसको उत्पन्न करतीहै तब अनेकता होतीहै हे राजा उसी ओरकाभय ब्रह्मज्ञानियोंको जानना चाहिये जिसको कि अगले श्लोकमें वर्णन करेंगे जिसे महत्तत्त्वादिका चेष्टा करानेवाला अव्यक्त कहते हैं इसकाभी वहीदृष्टांत है जिसने अर्थ तत्त्वको अच्छे प्रकारसे पायावह सुषुप्ति और प्रलय कालमें प्रकृतिकी एकताको और संसारकी उत्पत्तिमें अनेकताको जानताहै, इसप्रकार अज्ञान के अधिष्ठाता सांख्यवाले मनुष्योंकी बिजय है इसशंकाको कहते हैं— मोक्ष में चिदात्मासे इस अज्ञानकी एकत्वताही है और स्वरूप सत्ताके द्वारा चिदात्मा प्रकृतिके प्रकट होनेसे उसकी अनेकताहै क्योंकि आत्माउस उत्पत्तिरूप प्रकृतिको बहुत प्रकारका करदेताहै इसी हेतुसे चिदात्माही मुख्य अधिष्ठाता है औरप्रकृति गौणअधिष्ठाता, हे राजेन्द्र वहां जो पचीसवां परमात्मा क्षेत्रमें अर्थात् प्रकृति और उसके विकार रूपोंमें नियत होताहै तबसाधुओं की ओर से अधिष्ठाता कहाजाताहै २६ क्षेत्रोंमें नियत होनेसे अधिष्ठाता होताहै और अव्यक्त नाम मायाको क्षेत्र जानताहै इसीहेतुसे क्षेत्रज्ञ कहाताहै, वह पुरुष इस आठपुरीवाली अविद्यारूप क्षेत्र में प्रवेश करताहै यहभी कहा जाताहै क्षेत्र एक पदार्थ और दूसरा अनेक पदार्थ कहाजाता है तात्पर्य्य यह है कि क्षेत्रज्ञका अधिष्ठातापन अव्यक्तही के द्वारा है, अब पुरुष और प्रकृति के विवेकको वर्णन करते हैं—क्षेत्रको अव्यक्त रूपकहा और उसके जानने वालेको पचीसवां चिदात्मा कहाजाता है दूसरा नहीं है परन्तु ज्ञेय अर्थात् जानने योग्य पदार्थ दूसराकहाजाताहै, ज्ञाताके ज्ञानको अव्यक्त और ज्ञेयको पचीसवां अव्यक्तको क्षेत्रबुद्धी और ईश्वरकहा और पचीसवां तत्त्व चिदात्मा ईश्वरनहीं है क्योंकि प्रत्यक्ष सामानसे दूसरा है और तत्त्वभी नहीं है क्योंकि तत्परोक्ष का जतलानेवाला है परन्तु वह चिदात्मा परोक्षहै, सांख्यशास्त्र

इतनाही है कि सांख्यमतवाले उस साक्षात्कारको जो स्थूल सूक्ष्म प्रपंचका आत्मामें लय करता है यही सिद्धकरते हैं और मायाको जगत् का कारण कहते हैं—अब लय होनेके योग्य वस्तुओं को कहते हैं सांख्य मतवाले चौबीस तत्त्वोंको प्रकृति के साथ वास्तव करके चिदात्मा में लयकरके सिद्धहोते हैं पच्चीसवां चिदात्मा सदैव अपरोक्ष है, प्रकृतिसे परे पच्चीसवां चिदात्मा जीव रूप कहा है और जब वह आत्माज्ञान स्वरूप होताहै तब सिद्धहोताहै, ब्रह्म दर्शन इतनाही है यह सब मैंने मूलसमेत तुमसे कहा इस प्रकारसे इसके ज्ञातालोग ब्रह्मभावको पाते हैं, ब्रह्मदर्शही पूर्ण दर्शनहै और रस्सी के सर्पकी समान अब्रह्मका दर्शन नहीं योग्यहै वहकेवल भ्रांतिरूप है इसीप्रकार ब्रह्ममें कल्पित अहंकारादिके देखनेसे द्रष्टा पूर्णताको नहीं पाताहै, किन्तु जो उस अहंकारादिकमें नियतहै उसका देखने वाला पूर्णताको प्राप्त होताहै निर्गुणके सिवाय यहभ्रान्तिरूप महत्तत्त्वादिक जैसे अपने सन्मुख और व्यवहार में सच्चा होनेसे प्रत्यक्ष है उसीप्रकार निर्गुण पुरुषोंका भ्रांतिरहित रूपहोना प्रत्यक्ष होता है अब आत्मज्ञानके फलको कहते हैं--इसप्रकार देहाभिमान से रहित ज्ञानमें प्रवृत्त पुरुषोंका आवागमन नहीं होताहै ब्रह्मरूप होनेसे अपर सत्य संकल्पादि ऐश्वर्य्य और पर अर्थात् उपाधिरहित समाधि समयका अविनाशी सुख वर्त्तमान होता है आवागमन किसको है उसको वर्णन करते हैं—जो नानाप्रकारकी बुद्धि रखनेवाले पुरुष अनेकताको देखते हैं और उनमें ब्रह्मदर्शन नहीं है वह बारंबार शरीरोंको धारण करते हैं, इसब्रह्मको विज्ञान और ध्यान बल से अपरोक्ष नकरनेवाले ब्रह्मका ज्ञान न होने से शरीर प्राप्त करनेवाले पुरुष शरीरके आधीनहोंगे, यह सबसंसार अव्यक्त अर्थात् अज्ञान प्रधान है और पच्चीसवां चिदात्मा इससे पृथक्है जो पुरुष इस पच्चीसवें को जानतेहैं उनको इस दुःखरूपी संसार का कोई भय नहीं है ४९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेद्वात्रिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३२ ॥

एकसौतेंतीसका अध्याय ॥

वशिष्ठजी बोले कि बारह प्रश्नों में से सांख्ययोग और एकता अनेकता का विज्ञान इन तीनों प्रश्नोंको मूलसमेत कहा अवशेष प्रश्नों के उत्तरवर्णन करताहूं—हेनरोत्तम यह सांख्ययोग तो तुमने सुना अब विद्या और अविद्या को क्रमसे सुनो, उत्पत्ति नाशकी धर्मरखनेवाली अविद्याको अव्यक्त अर्थात् अज्ञान प्रधानकहा और उत्पत्ति नाशसे रहित अविद्याको पच्चीसवां कहा, इस विद्याकी उत्तमता वर्णन करनेको अवान्तर विद्याके भेदको कहतेहैं एक दूसरेकी विद्याको ऐसे क्रमपूर्वकसमझो जैसे कि सांख्यऋषियोंने टीका वर्णन

कीहै, सब कर्मेन्द्रियोंकी विद्या अर्थात् लयस्थान ज्ञानेन्द्री और ज्ञानेन्द्रियों की विद्या स्थूल तत्त्व कहे गये यह हमने सुनाहै, ज्ञानीलोग उनस्थूल तत्त्वों की विद्याको चित्त और चित्तकी विद्याको सूक्ष्म पंचतत्त्व कहतेहैं, हेराजा इन पांचों सूक्ष्मतत्त्वकी विद्या अहंकारहै और अहंकारकी विद्या बुद्धिहै अर्थात् महत्तत्त्व है, महत्तत्त्वादिकी विद्या परमेश्वरी प्रकृतिहै जिसको प्रधानअज्ञान भी कहतेहैं, हेनरोत्तम वहश्रेष्ठ विद्या जानने के योग्य है और परमबुद्धिकोही श्रेष्ठसंसारका कर्त्ताकहा पच्चीसवें चिदाभास को उस अव्यक्तकी उत्तमविद्या वर्णनकी और सब ज्ञानियोंके ज्ञेय अर्थात् जाननेके योग्यको अव्यक्त कहा अर्थात् अव्यक्तके ज्ञानसे सर्वज्ञहोताहै, ज्ञान अर्थात् बुद्धिकी वृत्तिको अव्यक्त वर्णन किया और जाननेके योग्य रूपरहित पच्चीसवां है इसीप्रकार ज्ञान अव्यक्त और जाननेवाला भी पच्चीसवां है यह मैंने विद्या और अविद्या क्रम पूर्वक तुमसे वर्णनकी और अक्षर वा क्षर जो कहे उनको भी सुनो ब्रह्मजीव माया यह तीनों ब्रह्मरूप हैं इनमेंसे माया और जीव दोनोंका वर्णन करते हैं यह माया और जीव आदि अन्त रहित होनेसे अक्षरहैं अर्थात् अविनाशीहैं और यही दोनों हरसमयपर रूपान्तर करने से कहेजातेहैं उनका कारण ज्ञान से ठीक २ कहताहूं, यह दोनों आदि अन्त रहितहैं और दोनों मिले हुये अक्षरहैं अर्थात् उत्पत्तिके कारणहैं इनदोनोंको ब्रह्मदर्शी पुरुष तत्त्वनामसेवर्णन करते हैं उत्पत्ति नाशके धर्मरखनेसे अव्यक्तमायाको अविनाशीकहा क्योंकि उसके नाशवान् होने से संसारका अन्त होजायगा परंतु उस संसारका भी आदि अन्त मोक्षदशाके सिवाय नहीं है वह अव्यक्त गुणोंकी उत्पत्तिकेनिमित्त बारंबार रूपान्तर करनेवालाहै, पच्चीसवें चिदाभासकोभी परस्परके अधिष्ठानसे गुणोंका उत्पत्तिस्थान वर्णन करतेहैं अर्थात् बिनापरस्पर संगहोने के न तो प्रकृति संसार को उत्पन्न करसक्ती है न जीव करसक्ता है किन्तु दोनों मिलकरही करसक्तेहैं इसी हेतु से प्रकृतिके समान जीवभीअविनाशी है १४ यहतो दोनों की अविनाशताको कहा अब उनके नाशको कहतेहैं—जब योगी उस प्रकृतिको शुद्ध ब्रह्ममें लय करताहै तब वह पच्चीसवां चिदाभासजीव उन गुणों समेत लयको प्राप्त होताहै अर्थात् तीसरा महापुरुष शेषरहताहै तात्पर्य यहहै कि जबतक चिदाभास और प्रकृतिकी एकताहै तबतक दोनों अविनाशीहैं फिर दोनोंका नाशहोजाताहै जब प्रलयकेसमय महत्तत्त्वादि गुणप्रकृति के गुणोंमें लयहोतेहैं तबप्रकृतिही अकेलीरहजाती है इसीप्रकार क्षेत्रज्ञभी जब अपने प्रत्यक्षस्थान पच्चीसवें चिदात्मा में लयहोताहै तब वह पच्चीसवांही अकेलारहजाताहै,हेराजाजनक जबचिदाभासगुणोंमें कर्मकर्त्ता न होनेसेनिर्गुण भावकोपाताहै तबमहत्तत्त्वादिसमेत प्रकृतिभी नाशकोपातीहै,इसीप्रकारयहक्षे-

त्रज्ञभी क्षेत्रज्ञानके दूरहोनेमेंनाशकोपाताहै परंतुप्रकृतिमें औरउसमेंइतनाअंतर है कि यह वास्तवमें निर्गुणहै अर्थात् यद्यपिगुण और गुणी नामक्षेत्र क्षेत्रज्ञ विनाशवान् हैं परन्तु क्षेत्रज्ञके क्षेत्रसे पृथक् होनेवाला चिदंश अविनाशी है यह हमने सुनाहै १८ जब यह क्षेत्रज्ञ अज्ञानदशामें प्राप्तहोताहै तब विनाश युक्तहोता है इसी प्रकार जब प्रकृति को गुणयुक्त और आत्माकी निर्गुणता को देखता है, तब प्रकृति को लयादि करके अत्यन्त पवित्र होता है जब यह ज्ञानी अपरोक्ष कहता है कि मैं दूसरा हूं और यह प्रकृति दूसरी है तब यह तत्त्वनाश अर्थात् गुणों की कल्पना से पृथक्ताको पाता है, और उसकी सम्बन्धताको दूरकरताहै, हे राजेंद्र यह आत्मा प्रकृति से युक्त और पृथक् भी दृष्टआताहै, जब वह चिदाभास प्रकृति के गुण जालकी निन्दा करताहै और सर्व द्रष्टा चिदात्मा को देखता है तब उसको देखता हुआ त्याग नहीं करै है अर्थात् भूलता नहीं है, मैंने यह किया जो यहां इस प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाले देहका ऐसा साथी होताहै जैसे कि मछली अज्ञानसे जाल में आजाती है मैंनेहीं बड़ी भूल से एक देहसे दूसरे देह में ऐसे निवास कियाहै जैसे कि मछली जल के इस ज्ञान से कि यह मेरेजीवनका कारणहै तालाब में स्थिरता से निवास करती है, जिसप्रकार मछली अपनी अज्ञानताके कारण जल से अपनी अभिन्नताको नहीं जानती है उसीप्रकार मैं भी अज्ञानसे पुत्र आदि से अपने आत्माको पृथक् नहींजानताहूं, मुझ अज्ञानीको धिक्कारहै जो फिर उस आपत्ति में फँसे हुये देह का साथ किया और एक देह से दूसरे देह में प्रविष्ट हुआ, यहांपर यह मेरा भाई और मित्र है उसके साथमें मेरा कल्याण होगा यह विचारकर समानता और एकताको प्राप्त किया जैसा यहथा वैसा ही मैं भी हुआ निश्चय करके मैं उसी के समानहूं जैसे यह प्रत्यक्ष में कपट से रहित है इसीप्रकार का मैं भी हूं ऐसा विचार करनेवाला मैं अज्ञानी भूल से इस अज्ञानी के साथ प्रवृत्त हुआ मैं असंग होकर इतने समय तक इस संगी के साथ नियत हुआ और उसके आधीन हुआ अबतक नहीं चेताहूं मैं उस उत्तम मध्यम निकृष्ट देव मनुष्य पशु पक्षी से सम्बन्ध रखनेवाली प्रकृति के साथ कैसे निवास करूं यहां मैं अज्ञानतासे इस प्रकृति के साथ कैसे निवास करूंगा, अब सांख्ययोग में निष्ठावान् होकर मैं आत्मा को जानूं इस समय अज्ञानी छली अपने साथीको नहीं पाऊंगा, मैं निर्विकार होकर इस विकारवान् प्रकृति से ठगागयाहूं यह इसकाअपराध नहीं है यह मेरेही अपराध काफलहै जिससे कि मैं इसका साथी होकर आत्मासे बहिर्मुख हुआहूं अर्थात् विषयों के भोगने में प्रवृत्त होगया इसहेतु से मेरा आत्मारूप भी धन और रूपों में अथवा मूर्त्तियों में मूर्त्तिमान् है यह देह से रहित ममता में फँसकर

देहवान् है और अत्यन्त ममताके अभ्यास से नानायोनियों में गिरायागया, उनउन योनियों में चित्तकी भ्रान्ति के साथ वर्त्तमान ममता से उस ममता रहित आत्माका कुछ काम नहीं है, अहंकार से आत्माकी नाश करनेवाली इस प्रकृति से मेरा क्या काम है यह अनेक रूपों को धारण करके फिर मुझ को उनसे मिलाती है ३६ अब ममता और अहंकार से रहित होकर मैं सावधान हुआहूं कि अहंकार से आत्माकी नाशकरनेवाली ममता इसी प्रकृति से सदैव उत्पन्न होती है, मैं इस प्रकृति को छोड़कर इससे अलग होकर निरानन्द परमात्माकी शरण लूंगा और इसी परमात्मासे एकताको प्राप्तकरूंगा। इस जड़रूप प्रकृति से नहीं करूंगा, इस परमात्मा के साथ मेरी एकता है और प्रकृतिके साथ अनेकताहै, इसप्रकार उत्तम ज्ञान से पच्चीसवें चिदाभास ने शुद्धब्रह्म को साक्षात्कार कियाहै, नाशवान् प्रकृति को त्याग करके सब उपाधियोंसे पृथक् अविनाशीपनेको प्राप्त करना योग्यहै क्योंकि वह प्रकृति रूप अव्यक्त वा प्रत्यक्ष धर्म रखनेवाली सगुण और निर्गुणहै हे राजा जनक यह चिदाभास प्रथम आदि निर्गुण ब्रह्मको देखकर वैसाही होता है अर्थात् ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मही होताहै, यहां मैंने वेदानुभव के अनुसार यह ब्रह्म और प्रकृति का अनुभव जो कि ज्ञानयुक्तहै तुमसे कहा और जो सन्देह रहित सूक्ष्म पवित्र और दोषोंसे रहितहै उसको भी तुझसे वेद के अनुसार कहताहूं, मैंने सांख्य और योग दोनों शास्त्रोंकी रीति से वर्णनकी जो सांख्यशास्त्रहै वही योग दर्शनहै इसका तात्पर्य्य यहहै कि सम दम आदिसे द्वैतका नाशहोना मोक्ष का देनेवाला है यह बात दोनों शास्त्रों में बराबर है साधन के अनुभव फलोंसे दोनोंकी एकताई होतीहै, हेराजा सांख्यमतवालों का ज्ञान बड़ी विज्ञताका करनेवाला है वहां शिष्यों के प्रयोजन के सिद्धहोने की इच्छा से अच्छेप्रकार स्पष्टतासे कहाजाताहै, इसप्रकार यह शास्त्रबड़ाहै यह ज्ञानियोंका कथनहै फिर उस सांख्यशास्त्र और वेद में योगियों का बड़ा आदर है, जीव इसमें क्याहै यह समझकर सांख्यमतवाले योगकी प्रतिष्ठा नहीं करते हैं इसी से कहते हैं—हेराजा पच्चीसवें चिदाभाससे बड़ातत्त्व कोई नहीं है, और सांख्यमतवालों का उत्तम तत्त्व छब्बीसवांही ठीकवर्णन कियागया है, फिर योगमत में उक्त दोषकी कौनगतिहै यह शंकाकरके कहतेहैं—जो चिदात्मा स्वरूपहै वही सारूप्य वृत्तीदशा में शुद्ध रूपके न जाननेसे जीव रूप होताहै इसीकारण प्रधान और चिदात्माकोयोगका अनुभव वर्णनकिया है ४७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेत्रयोविंशत्युपरिशततमोऽध्यायः १२३ ॥

एकसौचौंतीसका अध्याय ॥

वशिष्ठजी बोले कि अब तुम परमात्मा जीव और सतोगुण आदि के प्रभावको सुनो कि वह चैतन्य अपने को मायाके कारण से बहुत प्रकारका करके उनके रूपोंको तत्त्वरूप देखताहै तात्पर्य्ययहहै कि वही दोनोंपरमात्मा जीव प्रधानसे पृथक् जानने उचितहैं उस दशामें जीवसे सम्बन्ध रखनेवाला शास्त्र निष्फल नहीं होताहै, इसप्रकार से भेदवादी की जीत नहीं होती है इसको कहते हैं—जीव इस ब्रह्मको नहीं जानताहै कारण यहहै कि अपनेको कर्त्ता और भोक्ता मानकर विपरीत दशा करनेवाला है जब यह गुणों को धारण करता है तब उत्पत्ति और नाशको करता है, हे राजा यहां क्रीड़ा के निमित्त रूपान्तरको करता है और कार्य के साथ अज्ञान के जानने से जीव को विधीयमान नामसे भी प्रसिद्ध करताहै, यह जानना जीवकाही धर्म्म है इस शंकाको कहते हैं—हे तात निश्चय करके यह रूप आदि से युक्त प्रधान अव्यक्त इस पचीसवें निर्गुण पुरुषको नहीं जानताहै इसीकारण इसको जड़ वर्णन किया, पचीसवें महात्मा चिदाभास को अव्यक्त के जानने से विधीयमान कहते हैं यह भी वास्तवमें नहीं जानताहै, अब जाननेवालेको कहते हैं—जो छब्बीसवां निर्मल ज्ञानस्वरूप अप्रमेय सनातन है वह पचीसवें चिदाभास और चौबीसवीं प्रकृतिको सदैव जानताहै अर्थात् उपाधि रहित चैतन्यही सबका प्रकाशकहै, हे महातेजस्वी वह पचीसवां अपनी सत्तासे कार्य कारण में वर्त्तमान है अर्थात् सन्मात्रही छब्बीसवां है हे तात इस जीवते शरीर में वह गुप्त उपाधि रहित ब्रह्मज्ञानियों को विदित होता है, फिर सर्वत्र वर्त्तमान वह शुद्ध ब्रह्म हमको साक्षात् क्यों नहीं होता है—इसी हेतु से कहते हैं—जब यह जीव अपने को आत्मासे जुदामानता है अर्थात् कहता है कि मैं अमुक पुरुषका बेटाहूं ब्राह्मणहूं तब शुद्ध ब्रह्म पचीसवें चिदाभास और चौबीसवीं प्रकृति को भी नहीं जानताहै, फिर कैसे शुद्ध ब्रह्मका जाननेवाला होसक्ता है इसी हेतुसे कहते हैं—जब शुद्ध ब्रह्मसे संबंधरखनेवाली द्वैतता रहित सर्वोत्तमा विद्याको प्राप्त करताहै तब अव्यक्त प्रधान अज्ञान में दृष्टि करने वाला यह चिदाभास प्रकृतिको जीतता है, हे नरोत्तम इस प्रकारसे छब्बीसवां ब्रह्म जीवभावको प्राप्त करताहै फिर वह जीव विद्या के द्वारा इस उत्पत्ति और नाश के धर्म्म रखनेवाले प्रधान अज्ञानको त्यागकरदेता है, यहजीव अव्यक्त अज्ञान को अपने से पृथक् देखने से शुद्ध होता है जो आप निर्गुण होकर गुणयुक्त जड़रूप प्रकृति को जानता है वही शुद्ध ब्रह्म है, तीनों उपाधियों से रहित जीव शुद्ध आत्मा से मिलकर उसी आत्मा को पाता है जिसको

कि निर्विकल्प अपरोक्ष अजर और अमर कहते हैं, हे महादानी तत्त्वज्ञ महात्मा दृश्यमान शरीरादिक में निवासकरने से तत्त्ववान् होताहै वास्तव में कभी नहीं होता इस कारण से कि केवल साक्षीमात्र है उन तत्त्वों को ज्ञानी लोग संख्या में पच्चीस कहते हैं, हे तात यह तत्त्ववान् अर्थात महत्तत्त्वादि का रखनेवाला परोक्ष नहीं है क्योंकि निस्तत्त्व अर्थात् कार्य्य कारण से रहित अपरोक्ष यह ज्ञानीके अहंब्रह्माऽस्मि इसतत्त्व लक्षणकोभी शीघ्र त्याग करता है, जबज्ञानी मानता है कि मैं अजर अमर छब्बीसवां हूं तब केवल अपनी सामर्थ्यरूप ब्रह्माकारवृत्तीकेद्वारा ब्रह्मभावको पाता है आशययह है कि यह ब्रह्माकार अन्तकी वृत्ती दूसरी वृत्तीको और अपने को भी शीघ्रशांत करती है, छब्बीसवें ब्रह्मकेद्वारा पच्चीस तत्त्वोंको जाननेवाला भी उस छब्बीसवेंको नहीं जानताहै यह उसका अज्ञान सांख्य श्रुति के दृष्टांतसे अनेक अर्थात् द्वैतताके विरुद्धहै कहा जाताहै, अब छब्बीसवेंके अनुभव स्वरूप को कहतेहैं—इसबुद्धिसे युक्त पच्चीसवेंकी ब्रह्मसे ऐक्यता उस समय होती है जब बुद्धिसेभी आत्माको नहीं जानताहै अर्थात् बुद्धिका निरोधहोनेपर पूर्णसुषुप्तिके समान छब्बीसवेंका अनुभवहै, हेराजा जनक जबयह सुखादिका भोक्ता अहंवृत्तीमें नियत जीव मनवाणी से परे छब्बीसवें चिदात्मासे एकताको प्राप्त होताहै तब पुण्य पापके स्पर्श से पृथक् होताहै, जब यह समर्थ उस असंग अजन्मा समर्थ छब्बीसवें परमात्म को पाकर अज्ञान प्रधान अव्यक्त को त्याग करताहै तब उसको जानताहै तात्पर्य्ययहहै कि पुरुषके देखतेही प्रकृति लयहो जातीहै,छब्बीसवेंका ज्ञानहोनेसे चौबीसवां रस्सीकेसर्पकीसमान अरूप असार होजाताहै,हेनिष्पाप यह मायाजीव और ब्रह्ममूल समेत वेदके प्रमाण संयुक्त तुमसेकहे अब चौबीस तत्त्वोंके साथ जीवकी यहएकता और द्वैतता शास्त्रके अवलोकन से जानना योग्यहै जैसे गूलर और गूलरके जीव वा मछली और जलजुदे हैं इसीप्रकार इनदोनों को पृथक्ता ज्ञातहोती है, इसीप्रकार इनदोनों कीभी एकता और द्वैतता जाननी उचितहै अव्यक्तको पुरुष से पृथक् जानना और केवल पुरुषका शेष रहना नामयह मोक्षउस पच्चीसवें चिदाभास का वर्णन कियागया जो कि शरीरों में वर्त्तमान है यह चिदाभास अज्ञान और उसके विषय महत्तत्त्वादिकों से जुदा करनेके योग्य वर्णन किया इस चिदाभास और अज्ञानके नाशहोने से मुक्तहोताहै दूसरी रीतिसे नहीं होताहै यह ठीक निश्चयहै यह चिदाभास क्षेत्रसे मिलकर चिदात्मासे दूसरा और क्षेत्रक धर्म्म रखनेवाला होताहै, हे नरोत्तम वह अत्यन्त पवित्र धर्म्मवान् बुद्धिमान् मोक्षधर्म्म में नियत चिदाभास उस शुद्धज्ञान स्वरूपमुक्त वियोगधर्मी चिदात्मासे मिलकर वैसाही होजाता है, वह पवित्रकर्मी महा प्रकाशमान होता है

और सब उपाधियों से पवित्र निर्मल आत्मा से मिलकर स्वच्छ निर्विकार आत्माहोताहै, इसीप्रकार केवल शुद्ध ब्रह्मसे मिलकर केवल आत्मा होता है और यह स्वतन्त्र चिदाभास इस स्वतन्त्र चिदात्मासे मिलकर स्वतन्त्रताको प्राप्त होताहै, ३७ हे महाराज मैंनेयह सिद्धांत इतना तुमसे वर्णन किया सो तुम ईर्षासे रहित होकर प्रयोजनको स्वीकार करके यह पवित्र सनातन आदि परब्रह्म तुमको उस मनुष्य से कहनेके योग्यहै जोकि तीनोंगुणों से रहितहो यह ज्ञानका कारण और नम्रपुरुषका उपदेश ज्ञानकी इच्छा करने वालोंको करना उचितहै और मिथ्या वादीशठ नपुंसक कुटिल बुद्धीको कभी न देना चाहिये ऐसे मनुष्यको देनायोग्य है जो सदैव श्रद्धायुक्त दूसरेकी निन्दा से रहित पवित्रात्मा योगी क्रियावान् शान्तरूप संतोषी महात्मा है, जो मनुष्य एकांतमें बैठनेवाला शास्त्रका माननेवाला विवादरहित अनेक शास्त्रोंकाज्ञाता विज्ञानी मोक्षमार्गमें शत्रुसे क्षमा न करनेवाला वाह्याभ्यन्तर से शान्तात्मा धर्मवान् है उसको उपदेश करना योग्य है, जो इनगुणों से अत्यन्त रहित है उसको कदापि न देनाचाहिये क्योंकि यहअत्यन्त पवित्र परब्रह्म कहाजाताहै इसीसे अभक्त मनुष्यको उपदेश करना निःप्रयोजन है क्योंकि वह उपदेश उसको कल्याणकारी नहींहोगा और अपात्रको दानकरनेसे उसदानी और धर्मोपदेश करनेवालेका भी कल्याण नहींहोता, चाहे रत्नोंसे भरीहुई सम्पूर्ण पृथ्वीको दानकरे परन्तु इसब्रह्मज्ञानको व्रत न करनेवाले मनुष्यको कभी न देना चाहिये यहज्ञान निस्सन्देह जितेन्द्री पुरुषको देनाचाहिये, हेकरालजनक अब तुमको किसी प्रकारकाभय न होगा क्योंकि तुमने यहशुद्ध उत्तम आदि अंत रहित सनातन परब्रह्मका उपदेश ठीकठीक वर्णन कियाहुआसुना हेराजा जोब्रह्म जन्म मृत्युसे छुटानेवाला उपाधिरहित निर्भय और आनन्दस्वरूपहै उसब्रह्मको विचारकर और इसज्ञानके तत्त्वार्थको जानकर अब सबमोहों को त्यागकरो हे राजेन्द्र मैंने उसउग्र आत्मा सनातन ब्रह्माजीको युक्तिसे प्रसन्नकर के उस उपदेशकरनेवाले सनातन हिरण्यगर्भसे इस ब्रह्मज्ञानको ऐसे पायाहै जैसे कि अब तुमने मुझसे प्राप्तकियाहै, हे राजा यहब्रह्म ज्ञान मोक्ष जाननेवालों का उत्तम रक्षाका आश्रयहै इसको जैसे तुमने मुझसे पूछा उसी प्रकार मैंनेतुम से कहा, युधिष्ठिरने प्रश्नकिया था कि वह अविनाशी कौनहै जिसको प्राप्त होकर आवागमन से छूटजाताहै इसको सिद्ध करनेके लिये भीष्मजी बोले कि हे राजा मैंने वेदोंके दृष्टान्त से यहपरब्रह्म वर्णन किया जिसको पाकर पच्चीसवां चिदाभास संसारमें फिरलौटकर नहीं आताहै, यहजीव इसअजर अमर परब्रह्मको सिद्धान्त सहित नहीं जानताहै इसीहेतुसे उत्तम ज्ञानको न पाकर आवागवन में फँसताहै हे पुत्र राजायुधिष्ठिर मैंने देव ऋषि नारदजी से सुन-

कर यह कल्याणकारी उत्तमज्ञान मूलसमेत तुमसे कहा, यहज्ञान महात्मा व-शिष्ठऋषिजीने ब्रह्माजीसे पाया और नारदजीने उस ऋषियोंमें श्रेष्ठ वशिष्ठ जीसे पाया और मुझको नारदजीसे मिला है कौरवेन्द्र तुम इस परमपदको सुनकर शोच मतकरो हे तात जिसने यहक्षर माया और अक्षर जीवको जाना वहनिर्भयहै और जो इसब्रह्मको नहीं जानताहै वह सदैव भयभीतहै, अज्ञा-नात्मा पुरुषने विज्ञानके न होनेसे वारंवार दुःखोंकोपाया और मरकर हजा-रों मृत्यु सम्बन्धी जन्मोंको पायाहै, देवलोक आदि लोकों को और पशु पक्षी मनुष्य पर्य्यन्त योनियोंको भी पाताहै जब इच्छा से रहित होताहै तब उस अज्ञान समुद्रसे पारहोताहै, हे भरतवंशी वहअज्ञान सागर महाघोर रूपहै उसी में हजारोंजीव डूबते हैं, हे राजा तुम जिसअथाह और प्राचीन अव्यक्तनाम समुद्रसे बाहर निकले हो इसहेतुसे तुमरजोगुण तमोगुणसे पृथक्हो अर्थात् शुद्धसतोगुण प्रधानहो ५१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे जनकवशिष्ठ सम्वादे चतुस्त्रिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३४ ॥

एकसौ पैंतीसकाअध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि चौबीस तत्त्वोंको क्षरकहकर और योगमत सम्बन्धी पच्चीसवें चिदाभासको जो कि धर्म्म आदिके सम्बन्ध से क्षरहै उसको वर्णन किया और धर्म्म आदिसे असम्बन्धी छब्बीसवां अक्षर ब्रह्मभी सांख्यमतसे वर्णनकिया अब उसके प्राप्त करनेमें अधिकारी होनेके हेतु कुछधर्म्मोंका वर्णन करताहूं—निर्जनवन में आखेट करते हुये राजा जनकके पुत्र राजाबसुमान ने वेदपाठियों के इन्द्र भृगुवंशी मुनिको देखा, उन बैठेहुये मुनिको शिरसे दण्ड-वत् करके उनके पास बैठगया और उनकी आज्ञालेकर राजाबसुमानने यह प्रश्नकिया, हे ब्रह्मन् इस अनित्य शरीरमें इच्छाकी आधीनतामें वर्त्तमान पुरु-षका इसलोक और परलोकमें कैसे कल्याणहोय, तब बड़ी प्रसन्नतासे सत्कार पूर्व्वक उसमहात्मा तेजस्वीने राजासे यह कल्याणकारी वचन कहा, जो तुम इसलोक और परलोक में मनोवांछित पदार्थों को चाहतेहो तो इन्द्रियोंसे सावधान होकर हिंसा आदि जीवोंके अप्रिय कर्म्मोंको चित्तसे त्यागदो, धर्म ही सत्पुरुषोंका हितकारी और रक्षाका स्थानहै और हे तात धर्म्मसेही तीनों लोक स्थावर जंगम जीवों समेत उत्पन्नहैं, विषयी लोगोंकी जो इच्छा और मनकी वांछा हैं उनकी अनिच्छा क्यों नहीं करताहै हे मूर्ख मधुको देखताहै और उन के दुःखोंको नहीं देखताहै जिसप्रकार ज्ञानकाफल जाननेवाले मनु-ष्यको धर्म्ममें अभ्यास करना चाहिये, जो सत्पुरुषनहीं है और धर्म्मकी इच्छा करने वालाहै वह अत्यन्त पवित्रहोना कठिन है परन्तु धर्म्मको चाहने वाले

सत्पुरुपसे कठिन कर्म्म होना सुगमहै, जो वनके बीच स्त्री प्रसंगादि सुखका अभ्यास करने वालाहै वह उस प्रकार काहै जैसा प्राकृत मनुष्य और जो गांव वनके सुखोंका अभ्यास करनेवालाहै जैसा वनचारी, तुम सावधान होकरनिवृत्तिमार्ग्ग वा प्रवृत्तिमार्गमें गुण अवगुणोंको विचारकर मन बुद्धि देहसे सम्बन्ध रखनेवाले धर्म्ममें श्रद्धाकरो, दूसरेके गुणमें दोष न लगानेवाले मनुष्य और ऐसे साधुओंको सदैव बहुतसा दानदेना योग्यहै जोकि बाहर भीतरसे पवित्र व्रती विरक्त देशकालपर पूजितहो, श्रेष्ठ बुद्धिसे प्राप्त होनेवाले धनकोयोग्य और पात्रलोगोंको दानकरे दानमें क्रोध और पश्चात्तापको न करे न अपने मुखसे उसका कहीं वर्णन करे, दयावान् पवित्र जितेन्द्री सत्यवक्ता स्वधर्म्म पत्नीमें सन्तान हेतु विषय करनेवाला शुद्धकर्म्मी वेदज्ञ ब्राह्मण दानदेने के योग्य पात्रहै—अब योनि और कर्म्मकी शुद्धिको कहतेहैं—इसलोकमें सन्तान का उत्पत्तिस्थान स्त्रीही समझीजाती है परन्तु जोएकही पुरुषकी स्त्रीहै वही पूजितहै, ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेदका जाननेवाला षट्कर्म्मी ज्ञानी ब्राह्मण पात्र कहाजाताहै, सबदानों में देशकालको विचारकर दानके योग्य पात्र और कर्म्मकी प्रशंसासे उसीमनुष्यको धर्म्म और अधर्म्म दोनों होते हैं जैसे कि मनुष्य शरीरके साधारण धब्बेको शरीरहीसे शुद्धकरता है और बड़ेधब्बे को बहुत उपायोंसे दूरकरता है इसीप्रकार पापका भी दूरकरनाहै जैसे विरक्त की मुख्य औषधिघृतहै उसीप्रकार दोषरहित मनुष्यका यज्ञादिधर्म्म परलोक में सुखदायक होताहै, सब जीवधारियों में मानसीपाप और पुण्य वर्त्तमान होताहै उसमनको सदैवपापों से पृथक्करके शुभकर्म्मों मेंही प्रवृत्तकरे, सर्वत्र सबसे कियेहुये सबकर्मोंको पूजनकरे जिसस्थानपर अपने धर्ममें मैत्री और प्रीतिहो वहां इच्छानुसार धर्म्मको करे, हे अधीर धीरजधर हे दुर्बुद्धी सुबुद्धी हो अशान्तीसे शान्ती धारणकरो हे अज्ञानी तुम ज्ञानीके समान कर्म्मकरो, अपनेसाथी सतोगुण अथवा पराक्रमसे उपाय करना उचितहै इसलोक और परलोकमें जो कल्याणहै उसका मूल उत्तम धीरजहै, धीरजसे रहित महाभिषनाम राजर्षि स्वर्गसे गिरा और पुण्य नाशहोनेपर भी राजाययातिने धीरज हीके द्वारा लोकोंको प्राप्तकिया, तपस्वी धैर्य्यवान् ज्ञानियोंकी संगत और सेवासे बड़ी बुद्धिको प्राप्तकरके उत्तम कल्याणको पाताहै, भीष्मजी बोले कि उसस्वाभाविक धर्म्मसे युक्त राजा वसुमानने मुनिके इसवर्णनको सुनकर और चित्तको इच्छाओंसे हटाके धर्म्ममें बुद्धिको नियतकिया २५॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेपंचत्रिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३५॥

एकसौछत्तीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि जो चिदात्मा सुख दुःखादि धर्म्मों से और अनेक संशयोंसे और जन्ममृत्युसे पृथक् पाप पुण्यसे रहितहै और सदैव निर्भय नित्य अविनाशी न्यूनता और दोषों से रहित उपाधियों से मिलाहुआ भी सदैव एकही रूपमें नियतहै उसको आप कहनेके योग्यहैं, भीष्मजी बोले कि हे भरतवंशी इसस्थानपर एकप्राचीन इतिहासको तुमसे कहताहूं जिसमें याज्ञवल्क्यऋषि और राजाजनकका प्रश्नोत्तर है, महायशस्वी राजा देवराति के पुत्र नरभूषण राजाजनक ने ऋषियोंमें और प्रश्नोंके महाज्ञाताओं में अति उत्तम याज्ञवल्क्यजीसे प्रश्नकिया, कि हे ब्रह्मर्षि कितनी इन्द्रियां और प्रकृति हैं और महत्तत्त्वसे परे कारण ब्रह्मकौनहै और उससेभी परे निर्गुण ब्रह्म कौन है, हे वेदपाठियों में इन्द्ररूप आपके अनुग्रह चाहनेवाले मुझ प्रार्थना करने वाले से उत्पत्ति प्रलय और कालकी संख्या कहनेको आप योग्यहैं क्योंकि आपज्ञानके समूहहैं मैं अज्ञानतासे इससंशयसे रहितको सुनाचाहताहूं, याज्ञवल्क्य बोले कि हे पृथ्वीपाल जिसको तुम पूछतेहो वह योगियों का और सांख्यमतवालोंका उत्तम ज्ञान है उसको विभागपूर्वक सुनो, तात्पर्य्य यह है कि योगमत में अव्यक्तको जड़ और सत्यभी मानते हैं और सांख्यमत में चैतन्य के प्रतिबिम्ब से युक्त अव्यक्त शुद्धब्रह्म के ज्ञान से लय होजाता है, प्रकृति आठ प्रकारकी और उसके विकार सोलहकहे इनमें से वेदान्त विचार करनेवालों ने भी आठही प्रकृति वर्णनकी हैं अज्ञान प्रधान अव्यक्त महत्तत्त्व, अहंकार पृथ्वी, वायु, आकाश, जल और अग्नि यह सूक्ष्म पंचतत्त्व जिनको तन्मात्राभी कहते हैं, यही आठप्रकृति हैं और सोलह विकारों को भी सुनो—श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा, घ्राण यह पांच ज्ञानेन्द्री और शब्द स्पर्श, रूप, रस, गंध जिनको स्थूलतत्त्वभी कहतेहैं, वाक्, पाणि, पाद, गुदा लिंग, यह कर्मेन्द्री, हेराजेन्द्रपांचों महाभूतोंमें यह दशों विशेषनामहैं अर्थात् उनसे विकारों की उत्पत्ति नहींहोतीहै यह ज्ञानेन्द्रियां विशेष नामहैं अर्थात् विशेष नहीं है, वेदान्त गतिके विचार करनेवाले और तत्त्वज्ञों में पंडित तुम ने और अन्य आत्मज्ञानियोंने मनको सोलहवां कहा अर्थात् मनविकार के मध्यवर्त्तीभी विशेष नहींहै क्योंकि वह तत्त्वोंकी उत्पत्तिका कारणरूप है—अब उत्पत्तिके क्रमको वर्णन करतेहैं—हे राजा अव्यक्त से महान् आत्मा उत्पन्नहोताहै इसकी उत्पत्तिको ज्ञानीलोग प्राधानिक कहते हैं और प्रधान से संसार और महत्तत्त्वसे अहंकार उत्पन्नहुआ इस दूसरी उत्पत्तिको बुद्धिसे संसारकहतेहैं, अहंकारसे चित्तउत्पन्नहुआ वही चित्त पंचतत्त्व और शब्दादि विषयों

का उत्पत्तिकारणहै यह तीसरी सृष्टिकी उत्पत्ति अहंकार सम्बन्धी कहीजाती है, हेराजा पंचमहाभूत चित्तसे उत्पन्नहुये इस सबकी अंगीकृत चौथी उत्पत्ति को चित्त संबंधी सृष्टि जानो, तत्वों के विचार करनेवाले ज्ञानियों ने रूपरस गंध स्पर्शशब्द को पांचवीं उत्पत्तिको तत्वसम्बन्धी सृष्टिवर्णनकरी है, श्रोत्र, त्वक्,चक्षु,जिह्वा,पांचवींघ्राण इस छठी उत्पत्तिको मनसम्बन्धी वर्णन किया हेराजा श्रोत्रादि ज्ञानेन्द्रियों से पंचकर्मेन्द्री उत्पन्न होती हैं वह चित्तरूप हैं अर्थात् चित्तसे हुईहैं इस सातवीं उत्पत्तिको इन्द्रीसमूह वर्णन किया, ऊर्ध्वग तिवाले प्राण और तिर्य्यक्गति रखनेवाले, समान,व्यान, उदानको, आठवीं उत्पत्ति कहते हैं और इन्द्रियोंसे उत्पन्न इन प्राण आदिकी वृत्तिको सामान्य कहते हैं इन समान व्यान उदानके नीचे अपान उत्पन्न होना है उसकी बाईं ओर को गतिहै ज्ञानीलोग इन्द्रियों की सृष्टिको सामान्य वृत्तिवाली कहतेहैं, हेराजा वेदोंके दृष्टांतों से यह नौप्रकारकी उत्पत्ति और चौबीस तत्त्वोंका वर्णन किया तदनन्तर महात्माओं की कहीहुई इस गुणकी उत्पत्तिसंख्यारूप काल को मूल समेत मैं कहताहूं अर्थात् उस २ गुणकी उपासनासे उसके स्वरूपको पाकर जितने २ समयतक नियतहोताहै वही उसकी संख्या है २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेषट्त्रिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३६ ॥

एकसौसैंतीसका अध्याय ॥

याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि हेनरोत्तम मोक्षका अन्त नहींहै और कर्मउपासनाके सब फलों का अन्तहै और जिसने अव्यक्तकी उपासना से अव्यक्त भावको प्राप्तकियाहै उसके समयकी संख्याको मैं कहताहूं उसका दिन दशहजार कल्पकाहोताहै और रात्रिभी इतनीही होतीहै, हेराजा वहजागनेवाला अव्यक्त प्रथम तो औषधीको उत्पन्न करताहै क्योंकि उसी से सबजीवोंका जीवनहै वेदमें लिखाहै कि चित्त अन्नरूपहै इसीकारणसे यहां औषधी का अर्थ सूक्ष्मचित्तही है, उसचित्तके द्वारा सुवर्णरूप अंडेमें अर्थात् वासनारूप ब्रह्मांड में प्रकटहोनेवाले ब्रह्माजीको उत्पन्न किया वही ब्रह्माण्ड सब प्रत्यक्षोंकी मूर्त्ति है इसप्रकारसे हमने सुनाहै, उस महामुनि प्रजापति ब्रह्माजीने एक वर्षतक अंडे में निवास किया और वहांसेनिकलकर पृथ्वी औरआकाशआदि संपूर्ण संसारका विचार किया और वेदोंमें भी इसस्वर्ग और पृथ्वीकी प्रकटता लिखीहुई है ईश्वरने उस आधे अंडे में मध्यको आकाश विचारकिया पूर्णपंडितों ने वेद वेदांगों में इस ब्रह्माण्डकी अवस्थाकी संख्या भी वर्णनकी है उसका दिन पौनेदशहजार कल्पका कहाजाताहै, और अध्यात्म ज्ञानीलोगोंने उस की रात्रिभी इतनीही वर्णनकीहै इसीप्रकार तत्त्वोंका हेतु अहंकारभी उत्पन्न

किया फिर उस महर्षिने भौतिकदेहकी उत्पत्तिसे पहले दूसरे चारपुत्र अर्थात् मनबुद्धि चित्तअहंकारनाम उत्पन्नकिये हेराजा वहीचारोंपुत्र महाभूतोंके पितर सुनेजातेहैं अर्थात् मनआदिही महाभूतोंके कर्त्ता हैं और चौदहइंद्रीरूप देवता महाभूतों के पुत्रहैं इन्हीं चौदहोंसे चौदहभुवन और स्थावर जंगमजीव ढकेहुये हैं ऐसा हमने सुनाहै, ब्रह्ममें लय होनेवाले अहंकारने पृथ्वीआदि पंचतत्त्वों को उत्पन्नकिया,—अहंकारकीउपासना करनेवाले औरउसमें तद्रूपहोनेवाले कालपुरुषकी संख्या को कहतेहैं—तीसरी अहंकारिक नामउत्पत्तिके कर्त्ता अहंकारकी रात्रिको पांचहजार कल्पकी वर्णन करते हैं इसी प्रकार दिनभी जानो, हेराजेन्द्र शब्दस्पर्शादि यहसब पंच महाभूतों में विशेष नामसे कहे जातेहैं, इन्हीं शब्दादिसे व्यासयह सबजीव परस्परमें प्रतिदिन इच्छाकरते हैं और परस्परकी वृद्धिहोने में प्रवृत्त हैं और एकएकको उल्लंघन करके कर्म कर्त्ताहोतेहैं और परस्पर ईर्षा भी किया करतेहैं और विषयोंसे पीड़ित पशुप- क्षी आदि योनिमें प्रविष्ट होकर इसीलोकमें घूमाकरते हैं, हेराजा विशेषकी उपासना करनेवाले पुरुषोंकादिन तीनहजार कल्पका कहाजाताहै औरइतनी ही रात्रिहोतीहै मननाममहत्तत्त्वकी उपासनासे भूतादि की उपासना अधिक नहीं है यहशंका करके मनकी प्रधानताको सिद्धकरते हैं—हे राजेन्द्र इन्द्रियों से घिराहुआ सबविषयों में मनहीविचरताहै इन्द्रियां नहीं देखती हैं मनही देखताहै, चक्षुरिन्द्री मनसेही रूपोंको देखती है आंखसे नहीं देखती क्योंकि मनकी व्याकुलताहोनेमें देखनेवाली आंखभी नहीं देखतीहै, इसीप्रकार यहां कहते हैं कि सब इन्द्रियां देखतीहैं परंतु इन्द्रियां नहीं देखतीं किन्तु मनही देखताहै और हेराजा मनके अनिच्छा होनेसे विषयों से इंद्रियोंकी अप्रीति होजाय और जिसहेतुसे इन्द्रियोंमें विषयोंकी अनिच्छाहुई इसकारण मन में भी अप्रीति होती है, इसप्रकारसे मनप्रधान इन्द्रियोंका ज्ञानकरे क्योंकि मन सब इन्द्रियोंका स्वामी कहलाता है यहां यह महायशस्वी मनसब इन्द्रियों में प्रविष्ट होताहै २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेसप्तत्रिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३७ ॥

एकसौअड़तीसका अध्याय ॥

याज्ञवल्क्यजीबोले कि मैंने तत्त्वोंकी और कालकीसंख्या क्रमसे वर्णन करी अब प्रलयको भी कहताहूं, जिसप्रकार उन आदि अंत न रखनेवाले अविनाशी ब्रह्माजीने वारंवार जीवोंको उत्पन्नकिया और अपने में लयकरते हैं, वह ब्रह्माजी अपने दिनका अस्तजानकर रात्रि के समय जबशयन करते हैं तब शिवजीको बुलाते हैं फिर अव्यक्त मायासे रहित सौसूर्य्यके समान

तेजरूप रुद्रजी अपने बारहरूप धारणकरके अग्निके समान प्रचण्ड होते हैं, और चारों खानके जीवोंको भस्मकरते हैं, उससमय यह स्थावर जंगम सब जगत् पलक भरमेंही नाशको प्राप्त होजाता है और सबपृथ्वी चारोंओरसे कछुएकी पीठके समान होजाती है, फिरवह महातेजस्वी सूर्य्यरूप देवता सब जगत् को भस्म करके पृथ्वीको जलसे पूर्णकरदेते हैं, फिर वह जलभी कालाग्नि उत्पन्न होनेसे नाशहोजाताहै जबवह महा कालाग्नि अत्यन्त प्रचंडतर होताहै, तौ महाप्रबल ऊंचे नीचे तिरछे घूमतेहुये महा वेगवान् अष्टमूर्त्तिधारी अप्रमेय वायु देवता रूप होकर सब जीवों के जाठराग्नि रूप सप्त जिह्वाओं से उस प्रबल प्रचंड अग्निको भी भस्म करतेहैं, फिर उसभयानक प्रचण्ड वायु को आकाश अपने में लयकरलेता है फिर अधिकारमें बड़ामन भी चारों ओर से अश्रुपात डालताहुआ उसआकाशको निकालताहै और अपना अहंकार बाहरकरताहै यह अहंकार महान् आत्माहै और भूत भविष्य बर्त्तमानतीनों कालोंका जाननेवाला है इसकोभी फिर वह अणिमादिक सिद्धियोंका रूप प्रजाओंका स्वामी ज्योतिरूप अविनाशी ईश्वर निगल जाता है अर्थात् अपने में लयकरलेताहै, जो कि सबओरको हाथपैर शिर, मुखनाक आंख रखनेवाले सबको व्याप्त करके लोकमें बर्त्तमान है और सबजीवोंका हृदयरूप है अर्थात् हृदयमें बर्त्तमान बुद्धिके प्रवृत्त कर्मका कर्त्ताहै और बुद्धिहीकी उपाधिसे अंगुष्ठ प्रमाण कहाजाता है वह अनन्त महात्मा ईश्वर इस विश्वको अपने में लयकरलेताहै, फिर मायाकेनाश होजानेपर वहब्रह्मप्रकट होताहै जोकि न्यूनता रहित अविनाशी विपरीत दशासे पृथक् तीनों कालों का स्वामी और मायाके दोषोंको स्पर्शनहीं करनेवाला है, हे राजेन्द्र यह प्रलयभी मैंने तुमसे अच्छे प्रकारसे वर्णनकी अब अध्यात्म, अधिभूत और अधिदैवको भी सुनाता हूं तुम चित्तसेसुनो १७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेअष्टत्रिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३८ ॥

एकसौउन्तालीसका अध्याय ॥

याज्ञवल्क्यबोले कि तत्त्वदर्शी ब्राह्मणों ने चरणों को अध्यात्म और गति को अधिभूत और विष्णुको अधिदैवत कहा है, तत्त्वार्थ दर्शियों ने वायु इंद्री को अध्यात्म विसर्गको अधिभूत और मित्र देवताको अधिदैवत वर्णन किया है और योगदर्शी पुरुषों ने उपस्थ इंद्रीको अध्यात्म और उसके आनन्द को अधिभूत और प्रजापतिजी अधिदैव वर्णन किये, सांख्यदर्शी पुरुषों ने दोनों हाथों को अध्यात्म और करने के योग्य कर्मको अधिभूत और इन्द्रको अधि-

देव कहाहै, श्रुति देखनेवालों ने वाक् इन्द्रीको अध्यात्म कहनेवाला अधिभूत और अग्नि अधिदैव वर्णन किये हैं, वेददर्शी चक्षुरिन्द्रीको अध्यात्म, रूप, अधिभूत और सूर्य्यको अधिदैव कहते हैं, और उन्हीं श्रुति देखनेवालों ने श्रोत्रइन्द्री को भी अध्यात्म कहाहै उसमें शब्द अधिभूत और दिशा अधिदैव है, वेद दर्शियों ने जिह्वा को अध्यात्म, रस अधिभूत और जलको अधिदैव कहा है, श्रुतिदर्शी घ्राणइन्द्री को अध्यात्म गन्धको अधिभूत और पृथ्वी को अधिदैव कहते हैं, तत्त्व बुद्धिमें कुशल पुरुषों ने मनको अध्यात्म उसके विषय को अधिभूत और चन्द्रमाको अधिदैव कहाहै, और शास्त्रवेत्ता पुरुषों ने त्वक्इन्द्री को अध्यात्म स्पर्श इंद्री को अधिभूत और वायुको अधिदैव कहा तत्त्वदर्शी अहंकारको अध्यात्म अभिमान को अधिभूत और इसमें वुद्धिहोना अधिदैव कहते हैं, फिर उन्हीं पुरुषों ने बुद्धि को अध्यात्म उसके विषय को अधिभूत और क्षेत्रज्ञको अधिदैव कहाहै, हेराजा आदि मध्य अंत अर्थात् उत्पत्ति समाधि लय में यह पृथ्वी रस्सी में सर्प के समान तुमको ऐसे दिखलाई गई है जैसे कि तत्त्वज्ञ पुरुष सिद्धांत के अनुसार देखताहै, हे महाराज यह प्रकृति रूप अविद्या स्वतंत्रता और अपनी इच्छासे हजारों महत्तत्त्वादि गुणों को पृथक् २ प्रकट करती है इसी से यह प्रकृति कहलाती है, जैसे कि संसारी पृथ्वी के पुरुष एकदीपकसे हजारों दीपक प्रकाशित करतेहैं इसी प्रकार प्रकृति पुरुष के हजारों गुणों को प्रकट करती है, उनका व्यौरा धैर्य्य ऐश्वर्य्य, आनंद, प्रीति, प्रकाश सुख, शुद्धि आरोग्यता, संतोष, श्रद्धा, उदारता, क्रोधरहितहोना, अहिंसकता समदृष्टिता सत्यता, तीनों ऋणों से निवृत्त होना, शील, लज्जा, अचपलता बाहर भीतरकी शुद्धता, सरलता आचारता निर्लोभता, निर्भयहोना प्रिय अप्रियतासे रहितहोना बुरेकर्म्म से बचना दान से जीवों को आधीन करना, इच्छा, परोपकार करना, सबपर दया करना, यह सत्त्वके गुणहैं और ऐश्वर्य्य स्वरूपादि त्याग न करना, निर्दयता, सुख दुःखका अभ्यास दूसरेकी निन्दा में प्रवृत्त होना, परस्पर में विवाद करना, अहंकार, असत्कार, चिन्ता, शत्रुता करना, शोक, भय, परायेधनका लेना, निर्लज्जता कुटिलता, परस्परमें विरोध रखना, अपनी वीरता प्रकट करना काम क्रोध अहंकार, बहुत बकना, यह राजसके गुण हैं, अब तामसके गुणों को सुनो मोह, अप्रकाश, तामिस्र, अन्धतामिस्र, यह तमोगुण के लक्षणहैं भोजन आदिकी वस्तुओं में अधिक प्रीति रखना भोजन से तृप्त न होना, पीने की वस्तुओं से तृप्त न होना सुगंधि, पोशाक, आनन्द के बाग आदि में विहार, पलंग आदि का शयन आसन, दिन में सोना, अधिक बोलना, और कामों में प्रवृत्त होकर विस्मरण होना, अज्ञान से नृत्यगीत वाद्य में

प्रवृत्तचित्त, धर्मात्माओं से विरोध करना, इत्यादि तमोगुण के धर्म हैं २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे एकोनचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १३९ ॥

एकसौचालीसका अध्याय ॥

याज्ञवल्क्यजी बोले कि इन गुणोंके विकारों से उनका प्रकाशक पुरुष अनेकरूपका होताहै और इनके समान उत्तम मध्यम निकृष्ट स्थानोंको प्राप्तकरता है इसबातको इसअध्याय में वर्णनकरते हैं--हे पुरुषोत्तम यह सतोगुण रजोगुण तमोगुण तीनों प्रधानकेही गुणहैं वहसदैव सब संसार के आगे वर्त्तमान होतेहैं यहपड़ैश्वरकास्वामी अव्यक्तरूप हजारोंप्रकारसे आत्माकेद्वारा इसअकेलेशुद्ध चैतन्यकोहजारों लाखोंकरोड़ों प्रकारकाकरताहै इससे इसब्रह्माण्डमें सात्त्विकी पुरुषका स्थान उत्तम है राजसी का मध्यम और तामसीका निकृष्ट स्थान है यह वेदान्त विचारवाले कहतेहैं यहां केवल पुण्यसेही स्वर्गको प्राप्त करना योग्यहै पुण्य और पाप से मनुष्य देह और अधर्म से अधोगतिको पाता है इन तीनोंगुणों की प्रशंसा और वैसेही उसके संयोगको भी मैं कहताहूं कि सतोगुणी में रजोगुण और रजोगुणीमें तमोगुण और तमोगुणी में सतोगुण और सतोगुणी का शुद्ध ब्रह्मरूपी अव्यक्त देखागया है सतोगुण से युक्त अव्यक्त जीवात्मा देवलोकको पाताहै, रजोगुण सतोगुणयुक्त मनुष्य नरलोकों में जन्मलेताहै और रजोगुण तमोगुणयुक्त पुरुष तिर्य्यग्योनि पशुपक्षीआदि में जन्म लेताहै, रजोगुण तमोगुण और सतोगुण तीनों से युक्त मनुष्य शरीर को पाताहै और पुण्य पाप से पृथक् मनुष्य महात्माओंके स्थानको पाताहै, और जो सनातन अविनाशी न्यूनता से रहितहै वह मोक्षरूप है, ज्ञानियोंमें जन्म लेना उत्तमहै उनका स्थान निर्विकार अविनाशी इच्छाओं से रहित अविद्या से पृथक् जन्म मरण और अज्ञानका नाश करनेवालाहै वह अरूप ब्रह्ममें नियत होनेवाला सर्वोपरि है जिसको तू मुझ से पूछताहै वही ब्रह्म प्रकृति में नियत होकर प्रकृतिहीमें निवास करनेवाला कहाजाता है, हेराजा प्रकृतिको भी जड़रूपही मानते हैं वह प्रकृति इस चैतन्यसे मिलकर उत्पत्ति और नाशको करती है परन्तु पकड़ने में नहीं आती है, हे वेदपाठियों के इंद्र याज्ञवल्क्य तुम मोक्षधर्मको सम्पूर्णता के साथ उपासना करतेहो मैं सम्पूर्ण मोक्षधर्म को मूल समेत सुनना चाहताहूं इसीप्रकार चैतन्य होनेपर भी आवश्यक गुणों के वर्त्तमान होने विना उसका होना कैसे होसक्ता है क्योंकि अग्नि और उसकी ऊष्माके समान प्रकृतिपुरुषकी प्रीति एकसाथ होजाती है और वर्त्तमानता होनेपरभी एकताअर्थात्प्रकृतिसे पृथक्कैसेहोसक्तीहै क्योंकि पुरुष के ऐश्वर्य्य और प्रकृति के अविनाशी होने से उसका होनाअसम्भव है

और शरीरमें जो देवता नियतहैं उनकोभी मुझे समझाइये, इसीप्रकार देहके त्यागनेवाले मृतकजीवके उसस्थान को भी बताइये जिसको कि समय पर प्राप्त करताहै और सांख्यज्ञान और पृथक्योग को भी मूल समेत वर्णन कीजिये हे महात्मा आप मृत्यु जाननेवाले तत्त्वोंके भी वर्णन करनेको योग्यहैं यह सब आप हस्तामलकके समान जानतेहैं १८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४० ॥

एकसौइकतालीसका अध्याय ॥

याज्ञवल्क्यजी बोले कि हेराजा वह निर्गुण ब्रह्म सगुणहोना ऐसे असम्भव है कि वह गुणवान् और निर्गुण दोनों है इसको मूलसमेत मैं कहताहूं वह मायाके गुणोंसे गुणवान्है इसीप्रकार गुणोंसे पृथक् निर्गुणहै ब्रह्मका साक्षात् करनेवाले महातमा मुनियोंने इसप्रकार से कहाहै, गुणकास्वभाव रखनेवाला अव्यक्त गुणोंको त्यागकर वर्त्तमान नहीं होसक्ता है और स्वभावसे अज्ञानी वही अव्यक्त उनगुणोंको भोगताहै, और दृष्टिसे अलक्ष दूसरा चिदात्मापुरुष स्वभावसेही गुणों को न जानताहै न भोगता है किन्तु सदैव मानता है कि मुझ आत्मासे भोगने के योग्य पदार्थ पृथक् नहीं हैं, इसीकारण भोक्तापन और अभोक्तापनकी विलक्षणता से स्वभावसेही जड़रूप वह प्रधान अव्यक्त चैतन्यकी प्राचीन योगता और विनाशी अविनाशीपन आदि गुणोंसे भोक्ता है और काठके समान चैतन्य के अंशसे भिन्न नहीं है इसीकारण अज्ञान के हेतुसे बारम्बार गुणों से मिलाकरताहै इस निमित्त जबतक आत्माको असंग नहीं जानताहै तबतक मुक्त नहीं होताहै, इसीप्रकार संसारके कर्तृत्वभावसे भी धर्मकी उत्पत्तिवाला कहाजाताहै और योगोंके स्वामीपनसे भी धर्म कहलाताहै इसहेतुसे मुक्तनहींहोताहै,प्रजाओं के स्वामीभावसे प्रकृति धर्मता नाम गुणको धारण करताहै इसकारणसे भी मुक्तनहींहोता बीजोंके स्वामी होनेसे बीजधर्मा और गुणोंकी उत्पत्ति लय करनेसे ईश्वर कहलाताहै इत्यादि सबकारणों से मुक्ति से रहितहोताहै,इसप्रकारके पुरुषकी एकता कैसेहोसक्ती है इसीसे कहते हैं—तप से पृथक् ब्रह्मविद्याजाननेवाले शुद्धयतीलोग केवल साक्षीभाव और एकत्वता से अथवाअभिमानसे मानतेहैं कि अव्यक्तअर्थात् गुप्तब्रह्म सदैवहै और प्रत्यक्ष कार्य्य सब विपरीत दशाकरनेवाले हैं अर्थात् विनाशवान् हैं यह सुनते हैं, इसी प्रकार अनीश्वरवादी सांख्यों ने अव्यक्तकी एकताको और पुरुषोंकी अनेकताको कहा है वह अनीश्वर सांख्यवादी सब जीवोंपर दयावान् होकर केवल ज्ञानमें नियत होते हैं, अब प्रकृति पुरुषके विभागको बहुत दृष्टांतों समेत कहते हैं वह सबमें पूर्णअविनाशी नाम अव्यक्त और है अर्थात् पुरुष

से पृथक्है जैसे कि सींकों के बाहर मूंजउत्पन्न होती है उसीप्रकार यह भी उत्पन्नहोता है इसीप्रकार गूलर और गूलरके भुनगोंकी अलगजानो क्योंकि भुनगे गूलरकेयोगसे पृथक् हैं इसीप्रकार जल और मछली को समझो क्यों कि मछली सब दशामें जलके स्पर्शहीकी पाबन्दी नहींरखती इसीप्रकार अग्नि और अग्निकी अंगीठी पृथक् पृथक्हैं इसीप्रकार कमल और जलभी जुदे २ हैं ज्ञानीपुरुष इन सबके निवासस्थान और साथीके निवास स्थानको सदैव मुख्यता अर्थात् आद्योपांतदेखतेहैं और जो प्राकृत मनुष्यहैं वह सदैव नहीं देखते हैं, जो पुरुष विपरीत देखनेवाले हैं उन्होंमें पूर्णदृष्टि नहींहै वह सबके प्रत्यक्ष घोरनरकमें पड़ते हैं, यह सांख्यदर्शन और उत्तमयोग तुमसे कहा सांख्यपर चलनेवाले पुरुषोंने इसीप्रकारसे ज्ञानीहोकर एकता को प्राप्त कियाहै, उससांख्यमें जो दूसरे ज्ञानीप्रवृत्तहों उनके निमित्त यहसब दृष्टांतहैं, अब योगियों के विचारज्ञान को कहताहूं--२० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेएकचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४१ ॥

एकसौबयालीसका अध्याय ॥

याज्ञवल्क्य बोले हे राजेन्द्र मैंने सांख्यज्ञानको तो वर्णन किया अब योगज्ञानको मूलसमेत मुझसेसुनो, सांख्यके समानकोईज्ञान नहींहै इसीप्रकार योगके समान कोई पराक्रमनहीं है वह दोनों एक चरियावाले अर्थात् शम दमादिका अनुष्ठान करनेवाले और मृत्युके नाश करनेवाले कहे हैं हे राजा जो मनुष्य अल्पबुद्धि हैं अर्थात् उनदोनों को पृथक् २ देखते हैं और हम अपने निश्चयसे एकही देखतेहैं, जिसको योगीलोग देखतेहैं वही सांख्य मतवाले भी देखतेहैं जो सांख्य और योगको एकदेखताहै वही तत्त्वज्ञ कहा ताहै, हे शत्रुहन्ताराजा दूसरे धारणरूप योगोंको रुद्रप्रधान जानो अर्थात् शरीर त्यागनेके समय जीवात्माको छलानेवाले प्राण इन्द्रीआदि प्रधानरूप आलम्बन उनधारणाओं में नियत हैं उसप्राणधारणाका यह फल है कि वह योगी दशोंदिशामें उसीदेहसे घूमते हैं अर्थात् आकाशकी गतिमें सामर्थ्यवान् होते हैं, हे निष्पाप जनकपुत्र जब तक ब्रह्ममें लयभावहो तबतक योगकेद्वारा अष्टपुरीरूपसूक्ष्मशरीरसे लोकोंमें घूमतेसुखपूर्वक संन्यासको धारण करो यह फल केवल श्रद्धाबढ़ानेके निमित्तकहाहै कुछयोगियोंको आवश्यक आदरार्थनहीं है, हे राजेन्द्र ऋषियोंने वेदोंमें अष्टउन्माद आदि गुणरखने वाले योगकोपढ़ाहै और प्राणायाम, प्रत्याहार,ध्यान,धारणा, त्याग,समाधि, यम, नियमरखनेवाले योगको सूक्ष्मकहाहै उसअन्यकोनहीं कहाहै जिसको पहिले आधेश्लोक में वर्णन कियाथा, योगियोंकी उत्तम योगचर्या को

शास्त्रके दृष्टांतसमेत दो प्रकारकीकही पहिली सगुण अर्थात् सबीज दूसरी निर्गुण अर्थात् निर्बीज, हेराजाप्राण निग्रहके साथ आधारोंमें मनकाधारण करना सगुण योगचरिया कहलाती है इसीप्रकार ध्यानकरनेवाला ध्यानके योग्य वस्तु और ध्यान इनतीनोंके विभागसे पृथक् उसएक ईश्वरके सन्मुख होना और मनसमेत इन्द्री और बुद्धिको रोकना यहनिर्गुण योगचरिया कहाती है, सगुण निर्गुणअंग और अंगी हैं इसबातको कहते हैं-प्राणायाम सगुण है और वृत्तिसे मनको पृथक् नियतकरना निर्गुणहै हेराजाजो योगीदृष्टिसे गुप्त त्यागके स्थानप्राणमें प्राणोंको छोड़ताहै तबवायुकी आधिक्यताहोतीहै तात्पर्य्ययहहै कि जो योगीहै और मूलाधार आदिके देवता आदिका ध्यानकरता हुआ वायुकी धारणाकरता है वह सिद्धिको पाताहै और जोध्यान रहित केवल अभ्यास करताहै वहअवश्य कष्टको सहताहै जैसे कि पवनयोग संग्रहमें लिखा है कि ध्यान देवतासे संयुक्त प्राणायाम करनेसे सब रोग दूरहोते हैं और जिसमें अभ्यास और योगयुक्त नहीं है उसके करनेवाले को महारोग उत्पन्न होता है वहदेवता यहहैं किनीलकमल दलके समान श्यामवर्ण नाभिदेशकेमध्यनियत चतुर्भुज रूपको पूरकके द्वारा ध्यानकरे और हृदयमें नियत कमलासन पर रक्तवर्ण वा श्वेतवर्ण चतुर्मुख ब्रह्माजीको कुम्भककेद्वारा ध्यानकरे और ललाटमें नियत शुद्धस्फटिकरूप पापनाशक महेश्वरजीको रेचकके द्वारा ध्यानकरे इन्हीं हेतुओंसे उसको नहींकरे अर्थात् मूलाधार चक्रसे लेकर सब चक्रों में प्राणको पहुंचाकर उनके अधिष्ठाता देवताका ध्यान यहांतककरे कि बारहवींबार शुद्ध ब्रह्ममें ध्यानलगाना होजाय इसप्रकारसे वायुधारणा आदि उपायकेद्वाराढुःखसे जीतने योग्य मनको अपने आधीन करके शांतरूप तत्त्वप्राप्तिके योग्य एकांत अभ्यासी केवल आत्मामेंही क्रीड़ाकरनेवाले तत्त्वज्ञ योगीकी ओर से जीव ब्रह्मकी निस्सन्देह एकताकरनेके योग्यहै, अब मिलजानेकी रीतिको कहतेहैं- पांचों इन्द्रियोंके पांचप्रकारके उनदोषोंको जोकि इच्छाके अप्राप्तिरूप शब्दादि विषयों को प्राप्तहो तुच्छकरके विक्षेप और लयको एकरूप करके सम्पूर्ण इन्द्री समूहोंको मनमें और मनको अहंकारमें, अहंकारको महत्तत्त्वमें, महत्तत्त्वको प्रकृतिमें लयकरके फिर मायासे रहित ब्रह्मका ध्यान करते हैं वह ब्रह्म रजोगुण से रहित अनन्त प्राचीन अत्यन्तपवित्र रूपांतर दशासे रहितहै १६ कूटस्थ पुरीरूप देहोंमें शयन करनेवाला अज्ञानदशामें जीव ईश्वररूपके कारणमाया से द्वैत न प्राप्तकरने वालाभी आकाशके समान गिरनेवाला अजर अमर सदैव अविनाशी परमेश्वर ब्रह्मन्यूनतासे रहितहै हे महाराज समाधियोंमें नियतयोगीके लक्षणोंको और आनन्दरूप योगीके उनलक्षणोंको सुनो जैसे कि तृप्तहोकर आनन्दसे सोताहै, वायुरहित स्थान में घृतसेपूर्ण दीपक प्रकाशमानहोते हैं और

अग्निकी ज्वालाभी निश्चल प्रकाशमानहोतीहै उसीप्रकारसे समाधिमें नियत योगीकोभी ज्ञानीलोगकहतेहैं औरजैसे कि मेहकीबूंदेंपर्वतको चलायमाननहीं करसक्तीं उसीप्रकार समाधिमें नियत योगीका चित्त नानाप्रकारके गीतवाद्य रागादिकों से नहीं चलायमानहोता यह मुक्त पुरुषका दृष्टांतहै,समाधिस्थों के लक्षण कहकर अवयोगी के लक्षणोंको कहते हैं--जिसप्रकार हाथ में खड्ग लिये मनुष्यों से घुड़काहुआ भयभीत मनुष्य तेलके पात्रको दोनों हाथों से पकड़कर सीढ़ीपर चढ़ताहै और वह सावधान चित्त उन खड्गधारियोंके भय से पात्रके तेलकी बूंद भी न गिरावे इसीप्रकार एकाग्र चित्त योगी के उत्तम लक्षणको पाकर वैसाही होजाताहै, इसप्रकार जितेन्द्री समाधिमें नियतयोगी के लक्षणको जानो आत्मामें मिलाहुआ पुरुष उस ब्रह्मको देखता है जो कि न्यूनता रहित महाउत्तमहै और ज्योतिस्वरूप तत्त्वंनाम दोनों पदार्थों में नियत है अर्थात् उन दोनों का सारांशरूपहै, हे राजा इसज्ञान के साक्षात्कारसे बहुत समयमें अनात्मारूप देहको त्यागकर शुद्धब्रह्मको पाताहै यह सनातन श्रुतिहै यही योगियोंका मुख्ययोगहै दूसरा योगनहीं है इसीयोगको जानकर ज्ञानीलोग अपनेको निवृत्त मानतेहैं २७॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे द्विचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४२॥

एकसौतेंतालीसका अध्याय॥

याज्ञवल्क्य ऋषि बोले कि राजयोगके फल कैवल्यप्राप्तिको कहकर अब हठयोगका फल कहतेहैं-हे राजा इसीप्रकार सावधान होकर अब देहके त्यागनेवाले जीवात्माको सुनो, मनके साथ प्राणको चरण में धारण करनेवाले और उसीमार्ग से देह के त्यागनेवाले का परमपद विष्णुलोक वर्णन करते हैं, जंघाओं से वसुदेवताओं के लोकों को और घुटनों के द्वारा साध्य देवताओं के लोकों को प्राप्त करताहै, पाप इन्द्री में मन और प्राण की धारणा से प्राण त्यागनेवाला मनुष्य मैत्रलोकको और जघन अंग से पृथ्वी को और ऊरू अंगसे प्रजापतिके लोकको और दोनोंपार्श्वोंसे मरुत् देवताओं के लोकको और नाभिके द्वारा इन्द्र पदवी को पाता है और दोनों भुजाओं सेभी इन्द्रलोकको और छातीके द्वारा रुद्रलोकको पाताहै; ग्रीवासे मुनियों में श्रेष्ठ नरलोकको मुखसे विश्वेदेवाओं के लोकको और श्रोत्रइन्द्रीसे दिशाओं को पाताहै और मूर्द्धाकेद्वारा सुषुम्णानाड़ी अर्थात् ब्रह्मरन्ध्रसे देवताओंसे प्रथमही प्रकट होनेवाले प्रभु ब्रह्माजीको पाताहै, हे मिथिलेश्वर यहशरीर त्याग के स्थान वर्णन किये अब ज्ञानियोंके नियत कियेहुये मृत्यु चिह्न जो कि एकवर्षके अन्तर्गत मरनेवालों के शरीरमें प्रकट होते हैं उनको वर्णन करताहूं

जो पुरुष पहले देखेहुये अरुन्धती के नक्षत्रको और ध्रुवजीके नक्षत्रको और पूर्ण चन्द्रमा और दीपक पूरा न देखसके वहएकही वर्षके भीतर देहको त्यागेंगे और हे राजा जो पुरुष दूसरे मनुष्य के नेत्र में अपने प्रतिबिम्बको नहीं देखतेहैं वहभी एकही वर्ष के भीतर जीवेंगे तेज और बुद्धिकी आधिक्यताहोना अथवा दोनों का नाशहोजाना और स्वभाव में विपरीत होना अर्थात् असन्तोषी से सन्तोषी होना कृपणसे उदारहोना यहतो ऐसा लक्षण है कि छही महीने में मृत्यु होजाय—जो देवताओंका अपमान करताहै और ब्राह्मणों से शत्रुता करता है कृष्ण वर्ण वा धूसर वर्ण दीखकर मृत्यु को प्रकट करताहै यह छः महीनेके पीछे मृत्युहोने का लक्षण है, जो पुरुष चन्द्रमा और सूर्यको मकड़ीके जालेके समान वा उन चन्द्रमा सूर्यमें छिद्रदेखताहै वह सातही रात्रिमें मरनेवाला है, जो पुरुष देवताके मन्दिर में वर्त्तमान सुगन्धित वस्तुको पाकर उसमें मृतककीसी गन्धको सूंघता है वहभी सातही रात्रिमें मरनेवालाहै,कान नाकका टेढ़ाहोजाना,दांत और आंखकारंग बदलजाना,देहकी बेहोशी और गर्मीका दूर होजाना यह बहुतजल्द मरनेके लक्षण हैं, हे राजा जिसके बायें नेत्रमेंसे अकस्मात् अश्रुपात होने लगें और मस्तकसे धुआंनिकले वहशीघ्र मरनेका लक्षणहै,ज्ञानी मनुष्य इतनेमरनेकेलक्षण जानकर दिनऔर रातआत्मा को परमात्मामें मिलावे, जिससमय कि मरणहोगा उसकालकीबाटदेखनेवाला अपने मरणको अप्रियजाने उसदशामें इसकर्म्मको करनाचाहिये,पूर्वोक्तरीति से पृथ्वी आदिके विजय करनेकेद्वारा उनके गन्धादि विषयभी जीतेजाते हैं और पांचोंतत्त्वोंके विजय करनेसे मृत्युकोभी विजय करताहै इसकोकहते हैं—हेराजा सबगन्ध और रसोंको धारणकरे अर्थात् आत्माके रूप समानकरे वह नरोत्तम सांख्य और योग से प्रशंसनीय ज्ञानीपुरुष योग और उसयोगमें प्रवृत्त अंतरात्माकेद्वारा संसारी मृत्युको जीतता है, और उसपूर्ण अविनाशी अजन्मा आनन्द स्वरूप न्यूनतादि आवागमन और रूपांतर दशासे रहित को प्राप्त होकर उसकेज्ञान से उसकीएकता प्राप्तकरे जो कि भ्रष्ट अन्तःकरण वालेपुरुषोंसे करना कठिनहै २२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेत्रिचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४३ ॥

एकसौचवालीसका अध्याय ॥

याज्ञवल्क्य ऋषिबोले हेराजा अचलहोनेकेकारण ब्रह्मऔरप्रकृतिकी पृथक्ता सिद्धकरनेकोयाज्ञवल्क्यऋषिबोले —तुम अव्यक्त में नियत जोपर परब्रह्म है उसको और अपने पूछेहुए गुप्तप्रश्नको सावधानीसे श्रवणकरो१ ब्रह्मविद्या की कठिनतासेप्राप्ति और गुप्तता देवताकी प्रसन्नतासे होतीहै इसको कहतेहैं२

हे नरोत्तम जिसप्रकार इससंसार में मैंने आर्षबुद्धि में प्रवृत्त होकर बड़ीनम्रतासे यजुर्वेदकीऋचाओं को सूर्य्य नारायण से प्राप्तकिया है निष्पाप मैंने बड़ी तपस्या से उसज्योतिरूप संसार के प्रकाशक देवताको सेवनाकियाथा तब उसने प्रसन्न होकर मुझको आज्ञादी कि हे ब्रह्मर्षि तुम वहवरमांगो जो तुम्हारा अभीष्ट और कठिनता से प्राप्तहोनेवालाहै मैं प्रसन्न चित्तहोकर वहवर तुमको दूंगा मेरा प्रसन्न करनाबड़ा कठिनहै तब मैंने शिरसे साष्टांग दण्डवत् करके उस सर्वप्रकाशक सूर्य्य देवता से प्रार्थना करी कि यजुर्वेद की उनऋचाओं को जो कि अन्य मनुष्यों को अप्राप्त हैं शीघ्रही जानना चाहताहूं तदनन्तर षडैश्वर्य्य के स्वामी सूर्य्य देवता ने मुझ से कहा कि हे ब्राह्मण मैं तुझकोदूंगा और यहां वचनरूप सरस्वती तेरेशरीरमें प्रवेशकरेगी, फिर आज्ञा दी कि अपना मुख फाड़ो जभी मैंने मुख को फाड़ा उसी समय सरस्वतीजी उसमें प्रवेश करगईं, इसके अनन्तर मैं अत्यन्त तप्त महात्मा नारायण सूर्य्य के तेज को न सहकर जल में घुसगया फिर मुझको अत्यन्त सन्तप्त समझकर भगवान् सूर्य्य ने कहा कि एक मुहूर्त्तमात्र शरीरके तापको सहो फिर तेरा शरीर शीतल होजायगा, सूर्य्यनारायणने जब मुझको तापसे रहित देखा तब प्रसन्नतासेकहा कि हे ब्राह्मण तेरा वेद उपनिषदों समेत बड़ी प्रतिष्ठाको पावेगा और सतपथनाम ब्राह्मणको प्रकट करेगा तदनन्तर तेरी बुद्धि मोक्ष में नियत होगी, सांख्ययोग में जो अभीष्टपदहै उसको भी प्राप्त करेगा इतना कहकर वह सूर्य्यरूप परमेश्वर अन्तर्द्धान होगये, फिर मैंने अत्यन्त प्रसन्नता से घरमें आकर सरस्वती को ध्यानकिया इस के अनन्तर स्वर और व्यंजन वर्णों से विभूषित प्रणवको सन्मुख करके देवी सरस्वतीजी मेरे मुखसे प्रकटहुईं फिर देवता में प्रवृत्तचित्त होकर मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार सरस्वती और सूर्य्यदेवता को ध्यान किया फिर तब उत्साह से सम्पूर्ण शतपथ रहस्य संयुक्त मैंने संग्रह किया तात्पर्य्य यहहै कि सरस्वती के मुखमें प्रवेश करने से और सूर्य्यदेवताकी कृपा से वह प्राचीन शतपथ आपसे आप प्रकट होगया और मेरे १००सौ शिष्य उनको पढ़कर विद्वान् होगये फिर जैसे कि सूर्य्य अपनी किरणों से घिरा होता है उसीप्रकार शिष्यों से घिरेहुये मैंने अपने मामा महात्मा वैशम्पायन और उनके शिष्योंका अप्रिय करनेको तेरे महात्मा पिता का यज्ञ व्याप्त किया,उसके पीछे धनके निमित्त मामाआदिसे बड़ा विवाद होनेपर अपने मामाके पक्षवाले देवल ऋषि के देखतेहुए मैंने अपनी वेद दक्षिणाका आधाभाग प्राप्त किया फिर जैमिनि आदि ऋषियों सेभी मैं स्तुतिके योग्यहुआऔर हेराजामैंनेतो सूर्य्यदेवतासे यजुर्वेदकीपन्द्रह ऋचाप्राप्तकीं और लोमहर्षऋषिने उन्हीं सूर्य्यदेवता से पुराणोंकोपढ़ा फिर मैं

बीजरूप प्रणव और देवी सरस्वतीको सन्मुख करके सूर्य्यनारायण के अनु-भाव से शतपथ के करने में प्रवृत्त हुआ और मैंने बड़े परिश्रम से अनूपम शतपथ नाम ब्राह्मण प्रकट किया और शिष्योंकी जैसी अभिरुचिथी उसीके समान सम्पूर्ण ज्ञान सिखलाया और शिष्यलोग बाहर भीतर से पवित्र अत्यन्त प्रसन्नचित्तहो अपने २ आश्रमोंको चलेगये सूर्य्यकी दीहुई इनपंद्रह शाखानाम विद्याको प्रतिष्ठा देकर इच्छानुसार उस जाननेके योग्य ब्रह्मका विचारकरे, इसलोकमें ब्राह्मणको कौनवस्तु हितकारी और कौनसी जाननेके योग्य सत्य और श्रेष्ठतर हैं इस बातको मैं विचारही रहाथा कि एक गंधर्वने वहांआकर मुझसे प्रश्नकिया फिर वेदांत ज्ञानमें पण्डित विश्वावसु गंधर्वने आकर वेद के चौबीस प्रश्नों को पूछा और युक्तिविचार संबंधी पचीसवें प्रश्न कोभी गंधर्वोंने मुझसे पूछा और विश्व, अविश्व, श्वा, अश्व, मित्र, वरुण, ज्ञान, ज्ञेय, ज्ञ, अज्ञ, कः, तपा, अतपा, सूर्य्याद, सूर्य्य, विद्या, अविद्या, वेद्य, अवेद्य, अचल,चल, अपूर्व, अक्षय, क्षय यह उत्तम चौबीस प्रश्नपूछे, इसके अनन्तर मुझसे आज्ञालेकर उनगन्धर्वोंमें श्रेष्ठ गंधर्वोंके राजाने अर्थयुक्तउत्तम प्रश्नोंको क्रमसे पूछना प्रारम्भकिया,तबमैंने कहाकिमैं एकमुहूर्ततक विचारांश करताहूं तबतक आपठहरिये यहसुनकर वहगन्धर्व मौनहोगया तब मैंनेभगवती सरस्वतीको स्मरणकिया भगवतीकीकृपासे वहप्रश्नमेरे चित्तकेऊपरऐसे आगया जैसे कि दहीपर घृतआजाताहै हेतातजनकमैंने उसस्थानपर सरस्वतीकीकृपासे दीखनेवाली युक्तिको देखकरवेदऔर उपनिषदोंकेदृष्टांतोंको मनहीमनमेंमथन किया हेनरोत्तम यहविद्या जो मैंने तुमसे वर्णनकीहै और तत्त्ववाले देहकेअधि-कारमेंनियतहैवहदण्डनीति और मोक्षसे सम्बन्धरखनेवालीहै फिर मैंनेराजावि-श्वावसुसे कहा कि हेगन्धर्वों के इन्द्र जो तुम विश्वऔर अविश्व नाम प्रश्नको पूछते हो तो इस विश्वको प्रधान अज्ञानरूप अव्यक्त नाम जानो यही इस संसार का उत्पन्न करनेवाला है और अपने कर्त्तापने के गुण से तीनगुणों को धारण करता है इसीप्रकार का अविश्व अर्थात् आत्मा भी अंगों के विभागों से पृथक् है ऐसेही अश्वा और अश्वका भी जोड़ा दृष्ट आता है अर्थात् प्रकृति अश्वा और उसका मानना अश्व है, स्त्रीरूप प्रकृतिको अव्य-क्त कहते हैं और वीर्य डालनेवाले पुरुषको निर्गुण कहते हैं अर्थात् प्रकृती पुरुषके प्रतिबिम्बको पाकर सृष्टिको उत्पन्न करती है इससे अन्य दूसरा शुद्ध ब्रह्महै इसीप्रकार पुरुषको मित्र और प्रकृतिको वरुण कहतेहैं, ज्ञानको प्रकृति और ज्ञेयको शब्द ब्रह्मइसकारणसे जीव और ईश्वरनाम रखनेवाला अकेला पुरुष शुद्धब्रह्महि कहाजाताहै और (क) वा तपा, अतपानाम जो कहा यह आनन्दपुरुष कहाजाताहै इनमें तपाको प्रकृति अतपाको शुद्धब्रह्म कहते हैं,

तात्पर्य यह है कि जीवतो कार्यकी उपाधिहै और ईश्वर कारणकी उपाधि है उपाधिके दूरहोनेपर वह दोनों शुद्धब्रह्म हैं, अवेद्य अर्थात् न जानने के योग्य को अव्यक्त और वेद्य अर्थात् जानने के योग्यको पुरुष कहते हैं और जो चल वा अचल है उसको भी कहताहूं अर्थात् अज्ञानके दूरहोनेसे केवल ब्रह्म जाननेके योग्यहै उपासनाके योग्य नहीं है और अव्यक्त तुच्छतासे जानने के अयोग्यहै जैसे कि रस्सीको सर्प माननाहै वहांउसको सर्प न मानें किन्तु रस्सीहीमानें, उत्पत्तिनाश के कारण रूपांतर होनेवाली प्रकृतिको चलकहा और उसकी उत्पत्ति और लयका करनेवाला अचलपुरुष कहाजाताहै अर्थात् सदैव एक दशामें रहताहै और उसीके आभाससे प्रकृतिका होनाहै,इसीसे अव्यक्तको प्रकटहोनेसे जानने के योग्य कहा और पुरुषको गुप्त होनेसे न जानने के योग्य वर्णन किया दोनों अज्ञानहैं अर्थात् प्रकृति जड़ है और पुरुष प्रकृतिके मिलनेसे अपने मुख्यरूप ब्रह्मको नहीं जानता है दोनों आदिरहित अविनाशी हैं अर्थात् द्वैतदशामें तो अवश्य विनाशी हैं परंतु अज्ञान रहित होनेमें केवल शुद्धब्रह्महैं, अध्यात्मगतिके निश्चयसे दोनोंको अजन्मा वर्णन करतेहैं, वेदोक्त बीसप्रश्नों का उत्तर वेदकीही रीति से देकर अब तर्कना से उत्पन्न प्रश्नोंके उत्तरको तर्क बलसेही देतेहैं—यहां बहुतरूपसे प्रकटहोनेपरभी न्यूनता न होनेसे उस अजन्माको न्यूनता रहित वर्णनकिया और उस अष्टपुरीमें निवास करनेवाले को अविनाशी कहा क्योंकि उसका नाश वर्त्तमान नहीं है, भोग ऐश्वर्यादि गुण बिनाशवानहैं और मायाको उत्पत्तिकरने से प्रकृतिनामहै कर्म्मउपासना ज्ञान से बारंबार उत्पन्नहोनेवाले भोग ऐश्वर्य्यको अविनाशीकहा क्योंकि वह तीनोंभोग पृथ्वीपर नहीं हैं इसीकारण अप्राकृत लोकोंमें भोगोंकी अविनाशिता योग्यनहीं है और कर्म्म भूमि में सिद्धहोने वाले भोगोंका अवश्य विनाशहै और भोग भूमि में अनुष्ठान नहीं होता है यहसब ज्ञानी लोगोंका कथन है और जिसमें युक्ति विचार उत्तमहै यहमोक्ष संबंधी चौथी विद्या तुमसे कही, इसचौथीविद्यासे मिलेहुये धनको श्रवणमनन करके गुरुके द्वारा नित्यकर्म में प्रवृत्त होनायोग्यहै हे विश्वावसु सब वेदकर्म नित्यहैं और ईश्वरके प्रत्यक्ष करनेवालेहैं हेगंधर्वराज यह आकाशादि जिस अधिष्ठानमें उत्पन्न और लय होतेहैं उस जानने योग्य वेदसे सिद्ध होनेवाले आत्माको जिस हेतुसे नहीं जानतेहैं उसी हेतु से सब नाशको पाते हैं; जो पुरुष वेदोंको अंग उपअंग समेतभी पढ़ताहै, और वेदसे जानने योग्य ब्रह्म को नहीं जानताहै वह वेदोंका भार उठानेवालाहै, हे गंधर्व जो घृतका चाहने वाला गधीके दूधको बिलोवे वह उसमें मठा और घी नहीं पाताहै किन्तु मठा रूप विष्ठाको देखताहै, इसी प्रकार जो वेदका जाननेवाला पुरुष जानने के

योग्य ब्रह्म और न जाननेके योग्यप्रकृतिको नहींजानताहै वहअज्ञानी केवल ज्ञानकाबोझा उठानेवालाहै, उनमें प्रवृत्त अन्तरात्मा समेत यह दोनों माया और ब्रह्म सदैव देखने के योग्य हैं जिससे कि वारम्बार जन्ममृत्युसे बचे, इस संसारमें वारम्बार होनेवाले जन्ममृत्युको बिचारकरके और इसकर्मकांडकेलिखे हुये कर्म्मधर्म्मको त्यागकर मैं अविनाशी योगधर्ममें प्रवृत्तहुआ, हे काश्यपगोत्री जबयह त्वंपदार्थ प्रतिदिन आत्माको देखता है तब वहशुद्धहोकर अर्थात् अविद्याको त्यागकरकेछब्बीसवें तत्पदार्थको साक्षात्कारकरताहै,अबतत्त्वमसि महावाक्यके अर्थ को वर्णन करते हैं–जैसे दृष्टिसे गुप्त ईश्वर दूसरा है उसी प्रकार पच्चीसवां जीवात्मा भी दूसराहै अज्ञानी उसपरमात्माके दोनों रूपोंको देखते हैं और वेदांतनिष्ठसांख्यमतवाले साधुलोग उस एकहीको देखते हैं, और जन्म मृत्युके भयसे व्याकुलहोकर मोक्षकी इच्छाकरनेवाले ज्ञानीपुरुष इसजीव ईश्वरके भेदको नहीं मानतेहैं, विश्वावसु बोले कि हे ब्राह्मणोंमें उत्तम तुमने जो पच्चीसवेंका सिद्धान्त अच्युत रूपहोना वर्णन किया वह उसीप्रकारकाहै वा नहीं है इसको वर्णन कीजिये, मैंने महात्मा ब्रह्मऋषि पराशरजी, जैगीषव्य, असित, देवल और वार्षगण्य के मुखसे सुनाहै और महात्मा पंचशिख, कपिल, शुक्र, गौतम, अर्ष्टिषेण और गर्गजीके मुखसेभी सुनाहै, फिर महात्मा बुद्धिमान नारद, आसुरी, पुलस्त्य, सनत्कुमार और शुक्रजीसे श्रवण किया परन्तु सबसे पहले मैंने अपने पिता कश्यपजी से सुनाथा तदनन्तर विश्वरूप रुद्रजीके मुखसे सुना इसके विशेष मैंने जहां तहां देवता, पितर, राक्षसोंसे भी इससम्पूर्ण ब्रह्म विद्याको पाया इसीको जाननेके योग्य और प्राचीन कहतेहैं, हे ब्राह्मण इसीकारण उसको मैं आपकी बुद्धि से सुनाचाहताहूं आप शास्त्रज्ञोंमें श्रेष्ठ वक्ता और सर्वज्ञहैं और वेदके भंडारहैं आपको देवलोक, पितरलोकमेंभी वेदका खजाना कहते हैं, ब्रह्मलोकके महर्षि और संसार के प्रकाश करनेवाले सूर्य्य नारायणभी वारम्वार आपकी प्रशंसा करतेहैं, हे याज्ञवल्क्यजी आपने सम्पूर्ण सांख्यज्ञान और योगशास्त्रको प्राप्त कियाहै, आप सब स्थावर जंगम व जीवमात्रोंके ज्ञाताहोकर पूर्ण बुद्धिमानहो आप उसज्ञानको सुनाइये जो कि घृतयुक्त मट्ठेके समान स्वादिष्ट है, याज्ञवल्क्य बोले कि हे गन्धर्व मैंभी तुमको सर्वज्ञ मानताहूं तुम मेरी परीक्षालेना चाहतेहो उसको आप शास्त्रके अनुसार सुनो, हे गन्धर्व पच्चीसवां अर्थात् चिदाभास जीव प्रकृति को जड़रूप जानता है परन्तु वह प्रकृति पच्चीसवें जीवात्माको नहीं जानतीहै तात्पर्य्य यहहै कि जड़रूप प्रकृती पुरुषसेही प्रकाशित होतीहै प्रकृति से पुरुष नहीं प्रकाशित होताहै इसकहनेसे जीवही शुद्धचैतन्य वर्णनहोताहै, तत्त्वज्ञयोगी और सांख्यमतवाले पुरुष इसप्रकृति में चैतन्यके प्रतिबिम्ब होनेसे

इसप्रकृतिको वेदके दृष्टांतोंके द्वारा प्रधान कहते हैं,तात्पर्य्य यहहै कि चैतन्य के प्रतिविम्ब से संयुक्त बुद्धिही अहंप्रत्ययका विषयहोतीहै, जो चिदाभास से दूसरासाक्षीहै वह पचीसवें चिदाभास और चौबीसवीं प्रकृतिको विकारों से संयुक्त देखता है और निर्विकल्प समाधि में अदृष्टा होकर भी छब्बीसवेंको देखताहै तात्पर्य्य यहहै कि जो साक्षी है वही दृष्टिसे मिलकर पचीसवां होता है और दृष्टिसे पृथक् होकर छब्बीसवां है और जिसको देखता है वह दीखता हुआ भी नहीं देखताहै, पचीसवां जीवात्मा यहमाने कि मुझसे बढ़कर कोई दूसरानहीं है परन्तु ज्ञानी मनुष्योंको चौबीसवां प्रकृतिरूप तत्त्व आत्मभाव से जाननेके योग्य नहीं है क्योंकि वह अनात्माहै, मछली जल में प्रवेश करती है और उसमें निवास और चेष्टाकरनेको प्रवृत्तहोकर जब उसको यहज्ञानहोय कि मैं जलसे पृथक् हूं इसीप्रकार यह जीवात्मा भी ज्ञानी होजाता है, जब जीवात्मा समयकी लौट पौटसे छब्बीसवें परमात्माके साथ अपनी एकताको नहीं जानताहै तब वह सदैव की प्रीति और साथके निवास करने से और अपने अभिमान से उसप्रकृति में संयुक्तहोजाता है और किसीसमयपर ब्रह्म भावसे शुद्धरूप होनेवाला उसप्रकृतिसे जुदाभी होजाताहै, हे ब्राह्मण जब यह अपने को चिदात्मा मानता है और यह अहंकारादिक अनात्मारूप दूसरे हैं तब अविद्यारहित शुद्धरूप होकर छब्बीसवेंको साक्षात्कार करताहै, हे राजा छब्बीसवां और पचीसवां यह दोनों अन्य २ हैं साधुलोग अज्ञान के नाश से केवल छब्बीसवेंही चिदात्माको अनुभव कहते हैं, इसीकारण से जन्म मरण से निर्भय योगी और वह सांख्यमतवाले पुरुष इसजीव और ईश्वर के विभाग को नहीं मानते हैं, जो कि छब्बीसवें परमात्माको अनुभव करने वाले पवित्र और परमात्मा में तदाकारहोरहे हैं जब अविद्या आदि से पृथक् शुद्धरूप होकर छब्बीसवेंको अनुभव करते हैं तबवह सर्वज्ञज्ञानी पुरुष पुनर्जन्मको नहींपाते हैं,हेनिष्पाप यह मैंने माया जीव औरईश्वर वेदकेनिश्चय संयुक्त मुख्यता से वर्णन किये, हे काश्यप जो पुरुष निर्विकल्प समाधि से दृश्य और अदृश्यको और केवल अकेवलको और दृश्यादृश्यकी अन्यता को नहीं देखता वही शुद्धब्रह्म है वही साक्षी वही पचीसवां चिदाभास और वही जगत्का कारणहै और जो कार्य्यरूप महत्तत्त्वादिकहैं वह भी वही है इस की साक्षी वेदकी श्रुतिहै अर्थात् जो यह जानताहै कि मैं ब्रह्महूं वही यह सब होजाताहै ब्रह्मशब्द से पूर्ण ब्रह्म और सर्व शब्द से शुद्ध और साक्षी आदि जानना योग्यहै, विश्वावसु बोले कि हे प्रभु आपने यह मोक्षके उपकारी शुभ और सत्य वचनसे ब्रह्मका अच्छेप्रकार से यथार्थ वर्णन किया आपका सदैव कल्याणहो और आपका मन भी सदैव बुद्धिसे नियतहो, याज्ञवल्क्य

बोले कि शोभायमान दर्शनसे दिखाई देनेवाला वह महात्मा गन्धर्व बड़ी प्र-
सन्नतासे यह कहताहुआ आशीर्वाद देकर मेरी परिक्रमा करके प्रकाश करता
हुआ स्वर्गको चलागया, हे नरेन्द्र पृथ्वी और पाताल में जो निवास करतेहैं
और जो ब्रह्मा आदि आकाशचारी देवताओं के लोक और कल्याण रूप
मार्ग में वर्त्तमान हैं वहांही उनको इसशास्त्रका ज्ञान देने को उस गन्धर्व ने
निवास किया, जैसे सब सांख्य मतवाले लोग सांख्यधर्म में प्रवृत्त हैं उसीप्र-
कार योगी लोग भी धर्म्म में प्रीति करनेवालेहैं और जो कोई अन्य लोग भी
मोक्षके आकांक्षी हैं उन्हींकेही निमित्त यह शास्त्र प्रत्यक्ष फलका देनेवाला
है, हे राजेन्द्र ज्ञानसेही मोक्ष उत्पन्न होतीहै अज्ञानसे कभी नहीं होती इस
कारण ज्ञानहीको मुख्यता समेत निश्चय करना योग्यहै ज्ञानही से आत्मा
जन्म मृत्युसे रहित होताहै, ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र अथवा कोई नीच भी
हो उससे भी ज्ञानके लेने में श्रद्धा करनी चाहिये श्रद्धावानको जन्म मृत्यु
नहीं होतीहै, सब वर्ण ब्रह्मासे उत्पन्न ब्राह्मण हैं जो सदैव ब्रह्मकोही कहते हैं
मैं ब्रह्मबुद्धि से तत्त्वशास्त्रको कहताहूं कि यह सम्पूर्ण स्थावर जंगम संसार
ब्रह्मही है, ब्रह्माजी के मुखसे ब्राह्मण भुजाओं से क्षत्री जंघाओं से वैश्य और
चरणों से शूद्र किसी वरणको भेद दृष्टिसे न जानना चाहिये, हेराजा अज्ञान
के द्वारा कर्मसे उत्पन्न होनेवाली उस उस योनिको सेवन करतेहैं और वह जैसे
नाशको पातेहैं उसीप्रकार ज्ञानसे रहित सब वरण महाअज्ञान से अनेक यो-
नियों में गिरते हैं, इसीकारण सबप्रकारसे सबसे ज्ञानलेना योग्यहै मैंने सब
वर्णों में वर्त्तमान यह ज्ञान पदार्थ तुमसे वर्णन किया जो ज्ञान निष्ठ है वही
ब्राह्मणहै और जो क्षत्री आदि भी ज्ञानमें प्रवृत्तहो उसके लिये भी यही मोक्ष
मार्गहै, जो तुमने पूछा उसको मैंने यथातथ्य वर्णन किया इससे अब तुम नि-
र्भय होजाओ तुम अपने अभीष्टको पाओगे तेरा कल्याणहो, भीष्मजी बोले
कि इसप्रकार से याज्ञवल्क्यजी से उपदेश पाकर वह बुद्धिमान् राजा जनक
बड़ाप्रसन्न हुआ और इनकी परिक्रमाकी तदनन्तर उनको बड़े सत्कार पूर्वक
चलेजाने के पीछे ध्यानमें प्रवृत्त होकर बड़ी श्रद्धाके साथ राजा जनकने एक
कोटि गोदान और अप्रमाण सुवर्ण और अनेक रत्नोंका दान ब्राह्मणों को
किया विदेह देशके राज्यको अपने पुत्रको सुपुर्द करके संन्यास धर्म में उप-
स्थित हुआ, हेराजा युधिष्ठिर अविद्या सम्बन्धी धर्म और अधर्म निन्दा करता
हुआ वह राजा जनक सम्पूर्ण सांख्यज्ञान और योगशास्त्र का ज्ञाता हुआ,
मैं अनन्तहूं यह मनमें निश्चय करके और धर्म अधर्म पुण्य पाप सत्य मिथ्या
जन्म मृत्यु आदि को अविद्यासे संयुक्त जानकर सदैव शुद्धब्रह्मकेही ध्यानमें
तत्पर होगया, हे राजा अपने शास्त्रोक्त लक्षण रखनेवाले योगी और सांख्य

मतवाले सदैव देखतेहैं कि यह धर्म आदि बुद्धि और अज्ञानका कर्म है १००
ज्ञानियों ने सदैव उस ब्रह्मको अप्रियता रहित बड़ेसे बड़ा पवित्र और अचल
वर्णन कियाहै इसकारणसे तुम भी पवित्र होजाओ, हे राजा जो दियाजाता
है वा जो पाता है और जो मानता है कि मैंने दिया अथवा जो लेताहै वा
देताहै वह सब आत्माही है, निश्चय करके देनेलेनेवाला वही ईश्वरात्मा है
उस आत्मासे उत्तम कोई नहीं है, उस पण्डित बुद्धिमान को तीर्थ और यज्ञ
साधन करना उचितहै हे कौरवनन्दन वेदपाठ जप तप यज्ञआदि में ज्योतिरूप
स्थानको नहींपाताहै वह अपरोक्ष ज्ञान प्राप्तकरके प्रतिष्ठाको पाताहै इसीप्रकार
महत्तत्त्व और अहंकारमें नियत होकर देवताओं के लोकोंको और अहंकार से
ऊपर के स्थानों को भी प्राप्त करे, अर्थात् जिस २की उपासना करताहै उस२
के रूपको प्राप्त करताहै और जो शास्त्रका जाननेवाला ज्ञानी अव्यक्तसे ऊंचे
और सदैव एक दशा रखनेवाले जन्म मृत्यु से रहित सत्य मिथ्या से पृथक्
ब्रह्मको जानते हैं वह ब्रह्मभाव को पाते हैं, हे राजा मैंने इसज्ञान को जनकसे
प्राप्त किया है और जनक ने याज्ञवल्क्यऋषि से पायाथा इस से यह ज्ञान ऐसा
बड़ा उत्तम है कि इस के समान कोई यज्ञ नहीं ज्ञानकेही द्वारा दुर्गमस्थानोंसे
पारहोता है और यज्ञों के द्वारा पार नहीं होसक्ता इसी ज्ञान से दुस्तर जन्ममृत्यु
के दुःख से भी पारहोता है ज्ञानी पुरुष ब्रह्मको माया से जुदा कहतेहैं जो पुरुष
ज्ञान मार्ग में नियत नहीं है वह यज्ञ तप नियम और व्रतों के द्वारा स्वर्ग को
प्राप्त होकर फिर पृथ्वी में गिरकर जन्मको पाते हैं, इस कारण तुम उस महा
पवित्र ब्रह्मकी उपासनाकरो जो कि कल्याणरूप निर्म्मल विमुक्त और पवित्र
है तुम क्षत्री शरीरको जानकर ज्ञान यज्ञ और तत्त्वोंकी उपासना करके ऋषि
होजाओगे, राजा जनक के पुरोहित इन याज्ञवल्क्यजी ने उपनिषद्बुद्धि के
अनुसार जो पाया जिसको कि न्यूनता रहित सनातनब्रह्म वर्णन करते हैं वही
शोक सन्ताप से रहित जीवन्मुक्ति को देता है ११२॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धे चतुश्चत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४४॥

एकसौपैंतालीसका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि यह ब्रह्मविद्या श्रुति और युक्ति प्रधान है अब साधन
प्रधान ब्रह्मविद्या का वर्णन करतेहैं अर्थात् अपने धर्म्म आचरणके साथ नि-
वृत्त मार्ग में प्रवृत्त पुरुष जरा मरणको उल्लंघन करता है इस अध्याय के इस
प्रयोजन को समझकर—युधिष्ठिर बोले कि हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ पितामह
बड़े २ धनादि ऐश्वर्य्य और पूर्ण अवस्थाको पाकर कैसे मृत्युको जीते और
कौनसी बड़ी २ तपस्या कर्म शास्त्र और बड़ी २ युक्तियों के अभ्यासमे जरा

मरणको नहीं पाता है, भीष्मजी बोले कि इस स्थानपर एकप्राचीन इतिहास को कहता हूं जिसमें पंचशिख संन्यासी और राजा जनक का प्रश्नोत्तर है, विदेह देशके स्वामी राजा जनक ने वेदज्ञों में श्रेष्ठ पंचशिख नाम संन्यासी जिसका कि धर्म्म अर्थ से संदेह मिटगया था उससे पूछा कि, हेभगवन् कौन से तप बुद्धि कर्म अथवा शास्त्रसे जरा मरणको जीते यहबात सुनकर उस अपरोक्ष ज्ञानी ने राजा को उत्तर दिया कि देहको किसी दशा में भी जरा मरण से पृथक्ता और अपृथक्ता नहीं है अर्थात् योग के द्वारा उससे पृथक्ता होसक्ती है, महीने दिन और रात लौटकर नहीं आते हैं और यह विनाशवान् जीवात्मा बहुत काल में अपने अचल मार्ग को पाताहै, सबजीवों का नाश सदैव होताहै मानों नदी के प्रवाहसे एक स्थान से दूसरे स्थानको पहुंचाया जाता है कोई मनुष्य इस बे नौका और जरामरणरूप ग्राहसे व्याप्त काल सागरमें बहनेवाले वा डूबनेवाले पुरुषको नहीं पाता है न इसका कोई है न यह किसी का है,, स्त्री और बांधवआदिका मिलाप मार्ग में है इसनिवास को पहले भी किसी ने सदैव नहीं किया न करताहै न करेगा, बारंबार मृत्यु पानेवाले देहको उसके ऐसे २ हितकारी बांधवलोग श्मशान भूमि में ऐसे डालजाते हैं जैसे कि काल से वायु के द्वारा बादलों के समूह इधरसे उधरको फेंकेजाते हैं, यह जरा मरण भेड़ियों के समान सब छोटे बड़े जीवों के भक्षण करनेवाले हैं, सदैव रहनेवाला भूतात्मा उत्पन्न होनेवाले और सदैव न रहनेवाले मायाके जीवों में कैसे प्रसन्नहोय और मृत्यु पानेवालों में कष्ट न पावे, मैं कहां से आया और कौनहूं किसकाहूं किसमें नियतहूं कहां जाऊंगा किस कारणसे किसको शोचताहुआ किसस्थानमें रहूंगा, स्वर्ग और नरकका देखनेवाला कौनहै इत्यादिबातें स्मरणकरके शास्त्रकीरीतिसे दानयज्ञादिकको करे १५॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेपंचचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४५॥

एकसौछियालीसका अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि हे कौरवेन्द्र पितामह किस पुरुषने गृहस्थाश्रमके बिना त्यागेहुये बुद्धिके लयस्थान मोक्षतत्त्वको पायाहै और जैसे इसस्थूल और कारण शरीरको त्यागते हैं और मोक्षका जो परमतत्त्व है इन सबबातोंको मुझसमझाइये, भीष्मजी बोले कि हेभरतवंशी युधिष्ठिर इसस्थान परभी एक प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें राजाजनक और सुलभानाम संन्यासिनीका प्रश्नोत्तर है, पूर्वसमयमें कोई मिथिलाका जनकनाम बड़ाधर्मध्वज राजासंन्यास धर्मकेफलका बड़ाज्ञाता होताहुआ, वेदमोक्षशास्त्र और अपने शास्त्र दण्डनीति आदिमें कुशलहोकर उसराजाने इन्द्रियोंको समाधान करके

इस पृथ्वीपर राज्यकिया, और संसारके वेदज्ञ ज्ञानीपुरुष उसकी साधुवृत्तीको सुनकर उसके मिलनेकी इच्छाकरतेथे, उसधर्म्म यज्ञमें योग धर्मका अनुष्ठान करनेवाली सुलभानाम संन्यासिनी अकेली पृथ्वीपर घूमाकरती थी उसने दैवयोगसेकईत्रिदंडी औरऔरसंन्यासियोंसे श्रवणकिया कि राजाजनकमोक्षमार्गकावड़ा ज्ञाताहै यहजानकर इसनेअपने अनेक संदेहनिवृत्त करनेकेलिये राजा जनकसे मिलनेकी इच्छाकी और अपने योगवलसे पूर्व रूप को त्याग कर दूसरे ऐसे उत्तम रूपको धारण किया जिसके कमलके समान नेत्र सुन्दर भृकुटी महातीव्रगामी स्वरूपा मोहनीरूप धारण कियेहुये क्षणभर में राजा जनक की राजधानी में पहुंची और वहां उसने क्रीड़ाके योग्य बहुत से मनुष्योंसे भरीहुई मिथिलापुरी को देखकर भिक्षुकी होकर राजाजनकको जाकर देखा तब राजानेभी उसके उत्तम रूपको देखकर आश्चर्य्य कियाकि यहकौन किसकी स्त्री और कहां से आईहै तदनन्तर उसको क्षेमकुशल पूछचरण धोकर उत्तमआसनपर बैठाय उत्तम अन्नसे तृप्तकिया फिर भोजनसे निवृत्त होकर बड़े प्रसन्न चित्तसे उस संन्यासिनी ने सूत्रार्थके ज्ञाताओंके और मंत्रियोंके मध्यवर्त्ती होकर मोक्षधर्मोंमें अन्यलोगोंका तिरस्कारकरके राजासे प्रश्नकिया कि यह राजा मुक्तनहीं है ऐसासंदेह करनेवाली सुलभाने योगवलसे अपनी बुद्धिको राजाकी बुद्धिमें प्रविष्ट किया अपनेनेत्रोंके प्रकाशसे उसकी आंखों के प्रकाशको रोका फिर उसप्रश्न करनेवाली भिक्षुकीने योगके वलसे रसना और चित्तकेद्वारा राजाको बांधा अर्थात् स्वाधीन करलिया, तबतो राजा जनकने भी उसके विचारको तुच्छकरके अपनेचित्तसे उसके चित्तको पकड़ लिया, उससमय एकही कारण शरीर में नियत होनेपर राज्यके छत्रादि चिह्नोंके प्राप्त होनेपर भी विमुक्त राजाके और त्रिदंडनाम संन्यास आश्रम में प्रवृत्त उस संन्यासिनीके प्रश्नोत्तरोंको सुनो, राजाजनक बोलेकि हे सुभद्रे भगवतीकी योगचर्य्या तुमने कहांसे सीखी कहां जाओगी किसकीहो और कहांसे आईहो आपके रूपमें साधुभाव नहीं विदित होताहै इसकारण मेरे मिलने में तुमको इनबातोंका उत्तरदेना उचित है मुझको राज्यके छत्र चमरादि चिह्न युक्तहोने परभीमुख्यतासे मुक्तही जानोसोमैंभी तुमको जानना चाहताहूं आपको प्रतिष्ठा के योग्य मैं समझताहूं और मैंने पहले समय में मोक्ष मार्ग के अद्वितीय जाननेवाले महात्मा जिसगुरुसे यह वैशेषिक ज्ञान प्राप्तकियाहै उसकोभी सुनो, मैं पराशरगोत्री बड़े महात्मा वृद्ध पंचशिख नाम संन्यासीका कृपापात्र शिष्यहूं, वहगुरू महाराज सांख्यज्ञान योग और राजबुद्धि कर्म्म उपासना ज्ञान इनतीनों प्रकारके मोक्षज्ञान धर्म्म मार्गके ज्ञाता सन्देहों से निवृत्तहैं, प्राचीन समय में शास्त्रमें देखेहुये मार्ग में घूमते हुये वर्षाऋतु के

चारमास पर्य्यंत मेरेसमीप आनन्द से निवास करतेहुये, उस सांख्य शास्त्र के मुख्य अर्थकेज्ञाता गुरू महाराजने तीन प्रकारका मोक्षधर्म मुझको सुनाया और इसराज्यसे पृथक् भी नहींकिया सो मैं उस श्रेष्ठपद पर नियत वैराग्यवान् अकेलाहोकर उसमोक्षकी उपकारी तीनों प्रकारकी वृत्तियोंको करताहूं इसमोक्ष का मुख्य उपाय वैराग्यहै और वैराग्य ज्ञानसे उत्पन्न होताहै उसीसे मुक्तहोता है, ज्ञानसे चैतन्य होकर पुरुष योगाभ्यासको करता है और योगाभ्याससे सर्व ज्ञताको प्राप्तहोता है वह सर्वज्ञता सुखदुःख आदि से निवृत्त होनेके निमित्तहै और सिद्धि वहहै जो कि मृत्युको जीतनेवालीहै, यहांही मोहसे जुदे मक्तसंगी घूमतेहुये गुरूजीसे सुखदुःख आदिसे पृथक्ता और उत्तम बुद्धिको मैंने पाया है, जिसप्रकार जुतेहुये जलके सींचेहुये खेतमें बीजकेद्वारा अंकुर उत्पन्नहोता है उसी प्रकार बीजरूप कर्म्म मनुष्यों के पुनर्जन्म को करता है जैसे कि भाड़की बालूमें भुनाहुआ बीजरूप अन्न उत्पत्ति कारणरूप भी होकर बीजके गुणसे रहित होकर नहीं उपजताहै इसीप्रकार इनभगवान् पंचशिख संन्यासी गुरूजी ने मेरी बुद्धिको भी निर्बीज अर्थात् बीज बासना से रहित करदियाहै इसीसे वह बुद्धि विषयों में नहीं लगती है किसी में प्रीति नहीं करती अनर्थ और स्त्री आदिक परिग्रह और राग द्वेष आदिको मिथ्या जानकर इनमें प्रीति नहीं करती है, जो पुरुष मेरी दाहिनी भुजाको चन्दनसे लेपनकरे और बाईं भुजाको शस्त्र से काटे यह दोनों मेरी दृष्टि में समानहैं, इसप्रकारका होकर मैं मट्टी पाषाण के समान सुवर्णको जानताहुआ मुक्तहूं और अन्य त्रिदण्डी नाम संन्यासियों से विलक्षण पाषाणरूप राज्यपर नियतहूं, अन्य मोक्ष के ज्ञाताओं ने तीन प्रकारकी निष्ठा देखी है सब लोकों में कर्म्म उपासना ज्ञान और सब मानसी आदिक कर्मका त्यागनाही मोक्ष कहतेहैं, और कोई मोक्ष शास्त्र के ज्ञाता केवल ज्ञाननिष्ठाकोही कहते हैं इसके विशेष दूसरे सूक्ष्मदर्शी यतीलोग केवल कर्मनिष्ठाकोही कहतेहैं इसीप्रकार अब चारों पक्षोंको छोड़ कर अपने मतको कहता हूं, ऊपरके दोनों श्लोकों के लिखे हुये दोनों सच्चे विकल्पोंको भी त्याग करके केवल ज्ञान और दूसरे के उपकाररूप कर्मकोही उस महात्मा पंचशिखने तीसरी निष्ठा वर्णनकीहै–इसी निष्ठाकी प्रशंसा करते हैं–यम, नियम, काम, द्वेष, परिग्रह, मान, दम्भ आदिके होनेसे गृहस्थी संन्यासीके समानही त्रिदंडी संन्यासीहैं अर्थात् यम आदिके होनेपर गृहस्थीभी संन्यासीकेही समानहै, और काम आदि के होनेपर संन्यासी भी गृहस्थी के समानहै, जो ज्ञानकेद्वारा त्रिदंडी आदि में किसीकी मोक्षहै फिर छत्र आदि परिग्रह रखनेवालों में कैसे मोक्ष नहींहोसक्की क्योंकि परिग्रहमें दोनों समान हेतु रखनेवाले हैं, यहां विषयादिककर्म्म में जिस२ से जिसका जो प्रयोजनहै

वह धन और स्त्री आदि अर्थ प्राप्त करनेको उसीउसी में प्रवृत्तचित्त होता है,
गृहस्थाश्रम में दोषदेखनेवाला जो पुरुष दूसरे आश्रममें जाताहै वह त्याग
और स्वीकार करनेवाला पुरुष भी संगदोषसे निवृत्त नहींहोताहै, इसीप्रकार
शिष्य वा सेवक कृपा और दण्डरूप आज्ञाके समान होनेपर संन्यासीलोग
राजाओंके समानहैं फिर वह कैसे मुक्तहोते हैं, आज्ञादेनेवाला होनेपर भी
उत्तम शरीर में नियत पुरुष ज्ञानके द्वारा सब पापों से छूटजातेहैं, फिर गेरुये
वस्त्रोंका धारण करना कमण्डलु त्रिदण्ड आदि चिह्न भी केवल कुमार्ग रूप
ही हैं मोक्षके निमित्त नहीं हैं यह मेरी रायहै, जो इन चिह्नों के होनेपर भी
ज्ञानही सुखका कारण है फिर यहां दुःखसे अलग होना किस निमित्त है इस
से केवल चिह्नोंका होना निरर्थकहै, अथवा चिह्नों में दुःखकी अप्रबलता
देखकर उसमें बुद्धि हुई है वह उन राज्यके छत्र आदि चिह्नों में क्या सदैव
दृष्ट नहीं होते हैं केवल संसारी सामानोंकेही त्यागने से मोक्ष नहीं होती है
और न संसार के समान रहने से बन्धन होताहै सब पुरुष संसारी सामान को
त्यागें वा न त्यागें परन्तु उनकी मोक्ष सब दशा में ज्ञानही से होसक्ती है ४६
इसी कारणसे धर्म्म अर्थ काम और राजपरिग्रह आदि बन्धनरूप स्थान में
नियत होनेपर भी मुझको मोक्षपदवी में प्राप्तही जानो, मैंने यहां त्यागरूप
खड्ग को मोक्षरूप पाषाणपर घिसकर उसकी तीक्ष्णधार से उस राज्यरूप
ऐश्वर्य्यमें चित्तकी प्रीतिरूप फांसीको जो कि प्रीतिके स्थान स्त्री धन आदि
से बन्धन में डालती है काटडालाहै, हे संन्यासिनी इस दशावाला मुक्तरूप
होकर मैं तुझ योगप्रभाव रखनेवालीको प्रतिष्ठा करनेवालाहूं तौ भी योग के
विरुद्ध त्रिगुण से उत्पन्न तेरे स्वरूप को मैं कहता हूं, शरीरकी कोमलतारूप
उत्तम देह और तरुणावस्था यह सब तुझको प्राप्त हैं और यह योगाभ्यास
रूप नियम भी सन्देहयुक्त है क्योंकि यह दोनों भिन्न २ दशा तुझ एक में
कैसे होसक्ती हैं, जैसे कि देह आदिके सूखेहोने पर इस योगरूपकी त्रिदण्ड
धारणादि चेष्टा तेरेयोग्य नहीं विदितहोतीं और मेरे सभासद तैंने अपने
उत्तमरूप के दिखाने से विपरीत दशामें करदिये इसी हेतुसे सन्देहहै कि यह
मुक्तहो या न हो, दूसरोंके अनुग्रह चाहनेवाले योगीमें संन्यासका फल नहीं
होताहै मेरे देहके सत्संगसे यह आश्रमके चिह्न तुझसे रक्षा नहीं कियेजातेहैं
इन चिह्नों से योगके अधिकारपर चढ़कर उस करनेवाले की रक्षा नहींहै
इसका दूसरा यहभी अर्थहै कि देहके कर्म्मसे मुक्तपुरुषकी रक्षा योग्यहै, अपने
मनसे जो मेरे शरीरमें तुझ आश्रय लेनेवालीने अमर्य्यादा से प्रवेश कियाहै
उसको भी सुनो, कुकर्म्मिणी स्त्री भी दूसरेके नगर वा स्थानमें इंगितभावसे
प्रवेश करतीहै वहांभी हमारा तिरस्कार करनेवाली तेराही अपराध है इसको

कहताहूं--तुमने किस कारण से मेरे देश वा नगर में प्रवेशकिया और तुमने किसके इशारेसे मेरीदेहमें प्रवेशकिया, उत्तम वर्णोंमें श्रेष्ठतुम ब्राह्मणहो और मैं क्षत्रीहूं हम दोनों का योग सजातीय नहीं है तुम वर्णसंकर मतकरो, तुम मोक्षधर्मसे वर्त्तावकरतीहो और मैं गृहस्थ आश्रममें हूं यहभी तेरी दूसरी बड़ी वर्णसंकरता है, मैं तुझको सगोत्रा वा असगोत्रा नहीं जानताहूं और तूभी मुझको नहीं जानतीहै तुझ सगोत्रमें प्रवेश करनेवालीका तीसरागोत्र संकरहै फिर तेरापति जीवताहै अथवा कहीं विदेशको गयाहै इससे भोगके अयोग्य दूसरेकी भार्य्या है यहचौथा अधर्म्मसंकर है तत्त्वका विज्ञान न होने से मिथ्या ज्ञानमें युक्त प्रयोजन की चाहने वाली तुमइन कर्मोंको निश्चय करतीहो, अथवा किसी समयपर अपने दोषोंसे स्वतंत्रभीहो उसदशामें तुमने जो कुछ शास्त्र पढ़ाहै वह सब निरर्थक है क्योंकि शास्त्रके अनुसार स्त्री कभी स्वतंत्र नहीं है तुझदूषित और भेद खोलनेवाली से प्रकट किया हुआ यह तीसरा चित्तका स्पर्शादि देखने में आता है, तुझविजय चाहने वालीने विजय के निमित्त केवल मुझपरही इच्छानहीं की किन्तु जो यह मेरी संपूर्ण सभा है उसको भी विजय करना चाहती है, इसीप्रकार तुमने मेरे पक्षकानाश और अपने पक्षकी विजय के लिये अपनी दृष्टिको पूजनके योग्य पुरुषों पर डाली है सो तुम ईर्षा से उत्पन्न मोहकी आधिक्यता से अज्ञान होकर फिर दूसरे की बुद्धिसे अपनी बुद्धिके संयोग को इसप्रकार पैदा करती हो जैसे कि विष और अमृत का मेल होता है, इसलोक में मिलनेवाले स्त्री वा पुरुष का जो योग है वह अमृत के समान है और जो मित्रका न मिलना अर्थात् बिना आज्ञाके मिलजाना है वह विषकेही समान है, अच्छाहै सावधान होकर अपने संन्यास शास्त्रकी रक्षाकरो उसको मत त्यागो तुम ने यह मेरी परीक्षा इस विचार से की थी कि यह मुक्त है वा नहीं है, यहसब बदला हुआ रूप आदि मुझ से गुप्त करना अयोग्य है, किसी दशा में भी राजा वा ब्राह्मण अथवा स्त्रियों में गुणयुक्त स्त्री से मिथ्या वचनों के द्वारा नहीं मिले जो मिथ्या वचनों के साथ मिलाप कियाजाय तो ऐसी दशा में यह तीनों उसको मारे हैं, राजाओं का बल ऐश्वर्य्य है, ब्रह्मज्ञानियों का बल ब्रह्म है और स्त्रियों का महाबलरूप यौवन और सौभाग्य है, इस कारण यह तीनों अपने २ बलों से पराक्रमी हैं, प्रयोजन चाहनेवाले मनुष्य को इन तीनों से सत्यता पूर्वक मिलना योग्यहै क्योंकि इनसे कुटिलता करना नाशकारी है, सो तुमअपनी जाति, शास्त्र, आचरण, चित्तका विचार, स्वभाव और यहां आने के प्रयोजन को मुख्यता समेत कहने के योग्यहो, भीष्मजी बोले कि राजाके इन दुःखरूप अयोग्य और असभ्य वचनों से तिरस्कार पानेवाली वह सुलभा क्रोधयुक्त

नहींहुई और राजाकी बातों के समाप्त होनेपर वह श्रेष्ठ रूपवाली सुलभा अत्यन्त उत्तम वचनों को बोली कि हे राजा वचनों के दूषित करनेवाले कठोर आदि नौ दोषहैं और बुद्धिके दूषित करनेवाले काम आदि नौ दोष से पृथक् और वचनके मृदुता आदि नौ गुण और कामादिके विपरीत बुद्धिके नौ गुण से संयुक्त सौक्ष्म्य अर्थात् पद अर्थों से बिगड़ाहुआ सांख्य—अर्थात् पूर्व्वपक्ष और सिद्धान्तमें गुणागुण बिचार, क्रम—अर्थात् प्रत्यक्ष गुणदोषों में बलाबल विचारना-निर्णय अर्थात् सिद्धांत-प्रयोजन अर्थात् अनुष्ठान यह पांचों जिसके अर्थसे सिद्धहोतेहैं वह वचन कहाजाताहै इनमें मुखसे निकलेहुये सौक्ष्म्यादि के प्रत्येक अर्थसम्बन्ध निज रूपको पद, वाक्य, पदार्थ, वाक्यार्थ इनभेदोंसे चार प्रकारका होना मुझ से सुनो जब जानने के योग्य अनेक प्रकारके वचनोंमें असंख्य संदेहोंको स्पर्श करनेवाली और उसके ज्ञान करने में अयोग्य बुद्धि वर्त्तमानहोतीहै वही सौक्ष्म्यहै और किसीप्रयोजनको दृष्टिकेगोचर करके दोष और गुणोंका जो विभाग से परिमाणहै वह सांख्यहै यह पहले और यह पीछे कहना चाहिये यह जो कहनेकी इच्छाहै उस वचनको वचनज्ञलोग कर्मयोग कहते हैं, अर्थधर्म काम मोक्षमें पृथक् निश्चयको जानकर अर्थात् वचन के अन्त में युक्ति पूर्वक जोकहाजाताहै कि यह वहहै वही निर्णयहै हेराजन् जिस विषयमें इच्छा और अनिच्छासे उत्पन्न होनेवाले दुःखोंसे यह विचार उत्पन्न होताहै कि यहकरना योग्यहै वा अयोग्यहै और उसमें जोप्रवृत्ति निवृत्ति रूप वृत्तिहै उसीको प्रयोजन कहते हैं, हे नरेश यह सौक्ष्म्य आदिक जैसे वर्णन कियेगये वह सब एकही अर्थ निश्चय होनेवाले हैं उनपांचों गुणोंसे युक्त मेरेबचनको सुनो—अब वचन के गुणको कहती हूं—प्रत्यक्ष अर्थवाला पूरा बहुत प्रकारके अर्थोंसे रहित प्रसिद्ध स्पष्ट अर्थवाला न्यायके अनुसार श्लाघ्य संक्षेप असंदिग्ध उत्तम कठिन अक्षरोंसे रहित सुकुमार नाम सुनने में सुखदायी सत्य त्रिवर्ग धर्मादिके अनुसार संस्कारकियाहुआ सम्यक्छन्द व्याकरणादि के दोषोंसे रहित सुगम शब्दयुक्त क्रम पूर्वक लक्षण से दूसरे पदों को जिसमें संयुक्त कियाजाय ऐसे वचनोंसे पृथक् अर्थ और युक्तिके साथहो उस को कहूंगी प्रथम बुद्धिके नौ दोषोंको कहतीहूं मैं किसीदशामें काम, क्रोध लोभ, मोह, दीनता, अहंकार, श्रम, कृपा और मानसे वचनको नहीं कहूंगी, अब वचन कहनेवाले के गुणको कहतेहैं—हे राजा जब कहनेवाला और सुननेवाला वचन के सिद्धान्त के अनुसार तत्त्वनिर्णय से सम्बन्ध रखनेवाली इच्छा में प्रवृत्त और प्रवीण होकर बुद्धिमें प्रवेश करतेहैं तब वह अर्थ प्रकाशकरता है, जब कहनेवाला कहनेके योग्य वचनहोनेपर सुननेवालेका अपमान करके अपने अंगीकृत वचनको कहताहै तब वह बड़े अर्थवालाभी वचन हृदय में

नहीं नियत होताहै, फिर जोमनुष्य अपने अर्थको त्यागकर दूसरेके अर्थ को कहे उसमें विशेष संदेह उत्पन्न होताहै वहवचन भी दूषितहै, हे राजा जोकहनेवाला अपने और सुननेवाले के अर्थको विपरीत नहीं करताहै वही वक्ताहै दूसरा नहीं है, हे राजा तुम एकचित्त होकर उस अर्थवान् वचनको सुनो, जड़ रूपदेह और इन्द्रीसे आत्माको पृथक् जानकर जड़ चैतन्य समूह रूप जीवात्माओंसे सम्बन्ध रखनेवाला अंशचैतन्य आकाशके समान तुझमें और मुझमें वही एकहै जो कि मनवाणीसे परेहै वह प्रश्नके योग्य नहींहै क्योंकि अद्वितीयहै और ईशजड़भी काष्ठमृत्तिकाके समान होनेसे प्रश्नके योग्यनहीं है इसको सुलभा वर्णन करतीहै— हे राजा जैसे लाख वा काष्ठधूल और जलकण मिलजाते हैं इसीप्रकार यहां प्राणियोंका जन्महै शब्दस्पर्श रूपरसगंध और पांचों इन्द्रियां नानाप्रकारके रूप धारण करनेवाले लाख और काष्ठ के समान आत्मा अर्थात् आकाशादि के योगसे मिलाप रखते हैं अर्थात् इन्हीं आकाशादिके रूप हैं, किसी शरीरमें इनमेंसे प्रत्येकका वर्णन नहीं है, चक्षुरिन्द्री अपनी दृष्टि शक्तिको नहीं जानतीहै इसीप्रकार श्रोत्रादि इन्द्रीभी अपने स्वरूप और शक्तिको नहींजानतीं और व्यभिचार से परस्परमेंभी एक दूसरे को नहींजानतीं अर्थात् वह अपनेसंघातसे पृथक् नहींहैं और प्रकाश करनेवाला आत्मा इनकेसंघातसे पृथक्है इसीसे संघातका भागभी न आपको जानताहै न दूसरेको, और परस्परमें मिलकर भी अपने मिलापको नहीं जानती हैं और रूपनेत्र और प्रकाश यहतीनों दृष्टिमें कारण रूप हैं उसीप्रकार ज्ञान और ज्ञेय यहदोनों रूपादिमें कारणहैं, उसज्ञान और ज्ञेयमें मनदूसरा गुणहै,यह जिसके द्वारा श्रेष्ठ उन्नतिरूप निश्चयको विचारताहै यही उनसबमें बुद्धिनाम दूसरागुण बारहवां कहाजाताहै,और जिसकेद्वारा संदेहमें भराहुआ ज्ञेय पदार्थको निश्चय करताहै वह उसबारहवेंमें सत्त्वनाम पृथक्गुणहै,जिसकेद्वारा सुबुद्धी और निर्बुद्धीप्राणी जानाजाताहै, उसीमें चौदहवां एकजुदागुण है जो कि अपने को कर्त्तापन सिद्ध करताहै उसीके द्वारा मानताहै कि यह मेराहै वा मेरानहीं है, हे राजा फिर उनमें पन्द्रहवां अन्यगुणहै वह यहां सोलह कलाओंके समूहका वासनारूप जगत् कहाजाताहै,उसवासनामें अविद्यानाम सोलहवां गुणहै वही त्रिगुणहोने से संघातरूप अर्थात् जगतका अंकुर और बीजरूप है, उसीअविद्यामें प्रकृति और व्यक्तिनाम दोनोंगुण अच्छे प्रकार से नियत हैं, प्रकृतिके कार्य्य रूप सुख दुःख जरा मृत्यु हानिलाभ प्रिय अप्रियनाम संयोग उन्नीसवां गुणहै इसको द्वन्द्वयोग कहते हैं, अबव्यक्तीके कार्यको कहतेहैं कि उन्नीसवें गुणके पीछे कालनाम एकवीसवां अन्य गुणहै इसी वीसवें से जीवोंकी उत्पत्ति और प्रलय होती है, यह वीसोंगुणोंका समूह और पांचमहातत्त्व, सद्भावयोग

असद्भावयोग यहदोनों गुणप्रकाशक इसप्रकारसे बीसों गुणोंका समूह और सात ऊपर कहेहुयेगुण और बुद्ध शुक्र और बल यह तीसगुण कहेगये जिसमें सबगुण वर्त्तमान होते हैं उसीको शरीरजानो,इनतीसगुणोंकी उत्पत्तिमें जुदे२ मत हैं उनको कहते हैं—अनीश्वर सांख्यवालोंने इनतीस कलाओं के उत्पत्ति स्थानको अव्यक्तकहाहै इसीप्रकार स्थूलदर्शी कणादिलोग इनकेव्यक्त अर्थात् महासमूहकोही इनका उत्पत्तिस्थान देखतेहैं अव्यक्तको कपिल मतवाले अंगीकारकरते हैं औरव्यक्तको चारवाक्आदि स्वीकार करतेहैं और जीव ईश्वर और इनदोनोंकी उपाधिरूप मायाको वेदांत विचार करनेवाले पुरुष सबजीवोंका उत्पत्ति स्थान समझतेहैं, हे राजेन्द्र जो यह अव्यक्त प्रकृति तीसकलाओंसे व्यक्तरूप होजाय तो मैं और तुम और जो अन्यशरीरधारी हैं वह सबभी इसी अव्यक्त प्रकृति के रूपहैं, इसप्रकारसे चैतन्यांशों में तू कौन है इसप्रश्न को अयोग्य कहकर जड़ांशमें भी उसप्रश्न की अयोग्यता वर्णन करतेहैं जन्मादिक वीर्य और रुधिरके योगसे होते हैं पुरुष स्त्रीकेयोगसे पहिले कलल पैदा होता है कललसे बुद्बुद होते हैं बुद्बुद से पेशी अर्थात् मांसपरकी झिल्ली और पेशीसे अंगोंकी प्रकटता और अंगोंसे नख रोमादिक इसप्रकार से देहकी उत्पत्तिहै,हे राजाजनक नौमास पूरे होनेपर जन्म लेनेवाली स्त्री वा पुरुष नाम रूपदेहसे प्राप्तहोताहै उत्पन्नहोनेवाले लालनख उँगलीयुक्त कौमाररूपको देख कर फिर रूपांतरदशा नहीं होसक्ती है कौमारदशासे तरुणावस्था और तरुणावस्थासे वृद्धावस्थाको प्राप्तकरताहै इसक्रमसे फिर वहजीव अपनीपूर्वअवस्थाको नहींपासक्ताहै सबजीवोंमें हरसमय विषयरखनेवाली कलाओंका रूपभेदपृथक् ही वर्त्तमान होताहै और सूक्ष्मतासे उसका ज्ञाननहीं होता है, हे राजा प्रत्येक दशामें इनकलाओंका उत्पत्ति नाश दृष्टिमें नहींआता है, ऐसा प्रभाव देखने वाले और उत्तमघोड़ेके समान दौड़नेवाले इससबलोकको यहप्रश्नकरना उचितनहीं है कि तू कौनहै और कहांसेआयाहै,यहकिस का यहकिसी का नहीं यह कहांसे आया यहकहींसे नहींआया अपनेअंगोंसेभी जीवोंको क्यासम्बन्ध है अर्थात् कुछनहीं, जैसे कि सूर्यकी किरण और मथन दण्डसे अग्नि उत्पन्न होता है इसीप्रकार कलाओं के उदय होने से जीव उत्पन्न होते हैं, जैसे कि तुम अपनी देहमें आत्मज्ञान के द्वारा आत्माको देखतेहो इसीप्रकार आत्मा केद्वारा दूसरेमें भी आत्माको क्यों नहीं देखतेहो, जो अपने और दूसरेकी आत्मामें ब्रह्मभावकी बराबरीको निश्चय करतेहो तो मुझको क्यों पूछते हो कि तू कौनहै और किसकी है, हे राजाजनक यह मेराहै वा मेरानहीं है इन दोनोंसे रहित ज्ञानीको इनबातोंसे क्याप्रयोजन है कि तू कौन किसकी और कहांसे आईहै. जो राजा शत्रु मित्र और उदासीनों में वा युद्धके जय पराजय

में योग्य कर्म्म करने वालाहै उसमें मुक्तों का कौनसा लक्षणहै जो इसलोक में सातप्रकार के त्रिवर्गका कर्म्मों में नहींजानता है और त्रिवर्गको साधन करताहै उसमें मुक्तोंकालक्षण कौनसाहै, प्रिय अप्रिय सबल निर्बलमेंभी जिस की समान दृष्टिनहीं है उसमेंभी मुक्तों का लक्षणक्या है अर्थात् कुछभी नहीं है ३० हे राजा इसी कारण तुममोक्षसे न मिलने वालेको जो अभिमान उत्पन्न हुआ वह श्रेष्ठ कर्म्मी पुरुषोंसे ऐसे हटानेके योग्यहै जैसे कि कुपथ्यकरनेवाले को औषधीसे करतेहैं हे शत्रुओं के जीतनेवाले स्त्री प्रसंगादिके स्थानोंको अच्छे प्रकारसे विचारकर आत्मज्ञान के द्वारा आत्मामेंही देखीहुई मुक्तिका दूसरा लक्षण न ढूंढ़नाचाहिये अर्थात् यही लक्षण बहुतहै, तुम मोक्षमें आश्रित होकर शयन, उपभोग,भोजन, वस्त्र इनचारोंहीं अंगोंमें नियत जानतेहो इन के विशेष पृथ्वीआदिके अनेक उपभोगोंको मुझसेसुनो, तुमने जो यह कहा कि मेरेराज्य अथवा पुरमें तुम किसके कहनेसे घुसे यहां तेरेपुरआदि से मेरा कुछभी सम्बन्ध नहीं है इसको मैं वर्णन करतीहूं, जो पुरुष एक एक छत्रवाली सम्पूर्ण पृथ्वी का चक्रवर्त्तीराज्य करता है वह भी निश्चय करके अकेला एकही पुरमें निवास करता है अर्थात् उसदशा में पृथ्वी निरर्थकहै, जो उस पुरमें उसका एकही महल नियतहै और महलमें भी एकही शयन स्थान है जहांपर कि रात्रिके समयआकर सो रहताहै ३५ उस शय्यामें भी आधी शय्या उसकी स्त्रीकीहै इसीकारण इसलोकमें स्नेहरूपी बन्धनसे मोक्षनहीं पाता है, इसीप्रकार भोजन वस्त्रादि गुणोंमें और अपने भृत्यादिमें दण्ड और अनुग्रह के करने के कारण राजाभी सदैव दूसरेकी आधीनतामें है थोड़े स्नेहसे भी बंधन में पड़ताहै और संधि विग्रहमें भी राजा अस्वतन्त्रहै स्त्रियोंकीक्रीड़ा विहारोंमें यह पुरुष सदैव स्वतन्त्र है मित्रोंमें और मंत्रियोंकी सभामें उसको स्वतन्त्रता कैसे होसक्तीहै, हां जब दूसरोंको आज्ञादेताहै तब अवश्यउसको स्वतंत्रता है ऐसे २ समयोंपर नियतहोकर वहराजा वहांपर अस्वतंत्र किया जाताहै शयनमें उत्सुकराजा भृत्योंके कहने से सोतानहींहै किन्तु उनकीप्रार्थनासे शयनमें सोयाहुआ भी जगाकर उठायाजाता है अर्थात् नौकरलोग कहते हैं कि स्नान पूजन दान हवन भोजनादि कर्म्मोंको करो इन २ प्रकारों से राजा भी दूसरोंके स्वाधीन गिनाजाताहै, मनुष्य सन्मुखता में आआकर वारंवार प्रश्न करते हैं परन्तु वह धनका स्वामी राजा बड़े बड़े साहूकारों को भी देना नहीं चाहताहै अर्थात् दे नहीं सक्ता है, दानमें तो इसका भण्डार खाली होताहै और न देनेमें शत्रुता उत्पन्न होती है और इसके वैराग्य उत्पन्न करनेवाले दोष उसी क्षण वर्त्तमान होतेहैं ४४ इसीप्रकार राजा एकस्थानपर भी अपने प्राचीनज्ञानी और शूरवीर कामदारों को भी भयभीत रखताहै और

राजाको भी उन नौकरोंसे निर्भयस्थानपर भी भयरहताहै जो कि सदैव सेवा में रहते हैं, हे राजा इसीप्रकार से वह लोगभी शत्रु होजाते हैं जिनको कि मैंने वर्णन कियाहै इसीप्रकार जैसा कि इसको भय उनसे उत्पन्न होताहै इसी प्रकार उनकोभी इसी रीतिसे समझो, अपने २ घरके सब राजा हैं और अपने २ घरोंकेस्वामी हैं, हे जनक मनुष्यदण्ड और कृपाको करनेसे राजाओंके समानहै, और मनुष्यके पुत्र स्त्री मित्र आत्मा और धनआदि वस्तुओंके जो समूहहैं वह सब उन २ हेतुओं से अन्य मनुष्यों के पुत्रादि के साधारण हैं, राज्याभिमानमें बड़ादुःखहै इसको वर्णन करते हैं देशका उजड़ना पुरमें अग्निका लगना प्रधानहाथी आदिका मरना इत्यादि लोकोंके साधारण कारणोंमें मिथ्याज्ञान से दुःखों को पाताहै, इच्छा अनिच्छा भयआदिसे उत्पन्न होनेवाले मानसी दुःख और शिरपीड़ा आदिरोग चारोंओर से खैंचनेवाली आपत्तियों से सदैव बन्धन में पड़ते हैं उनउन सुखदुःखादि योगों से घायल सबओर से सन्देहयुक्त मनुष्य रात्रियों को गिनताहुआ अनेक शत्रुओं से व्याप्त राज्यका सेवन करताहै, उसअल्पसुख और बहुतसे दुःखमें प्रवृत्त असार के समान राज्यको प्राप्तकरके फिर इसकी भी इच्छानहीं करताहै इसकारणसे शांतिको पाताहै, जो इन पुरदेश सेना खजाना और मंत्रियों को मानता है कि यह सबमेरे हैं हे राजा यह किसीके हैं और किसीके नहीं हैं मित्र मन्त्री पुत्र देश दण्डखजाना और राज्य यह सब त्रिदण्डके समान नियत एकदूसरे के गुणसे युक्त ऊपरलिखेहुये सात गुणयुक्त इस राज्यका कौनसा अंग किस अंगसे गुणमें अधिकहै अर्थात् सबअंग बराबर हैं उनउन समयोंपर वह वह अंग श्रेष्ठता को पाता है जिससे जो कार्य सिद्धहोताहै और वही श्रेष्ठता के लिये विचार कियाजाता है, हेराजा सातअंगों का पुतला और दूसरे तीन गुण यह दशवर्ग ऐश्वर्यमानकर राजा के समान राज्यको भोगते हैं जो राजा बड़ा उदार और क्षत्रीधर्ममें प्रवृत्तहो वह दशवें भागसेही प्रसन्नहोताहै और शेषबचेहुये नौभागसे दूसरा—राजा साधारण नहीं है और राजाके विना राज्यभी नहीं है, राज्यके होनेपर धर्म्म कहां है और धर्म्मके न होनेमें मोक्ष कहांहोसक्ती है यहां राजा और राज्यका जो उत्तम और पवित्रधर्म है, और जिसकी दक्षिणा पृथ्वीहै वह अश्वमेध मोक्षसाधनमें उपकारी नहींहोसक्ताहै, हे राजा जनक मैं इसराज्य के हजारों दुःखदायी कर्म्मों के कहनेको समर्थहूं जब अपने शरीरमें मेरासंगनहींहै तो दूसरेके शरीरमें मेरासंग कैसेहोसक्ताहै, मुझसरीकी ऐसी योगिनी को ऐसा कहना योग्य नहींहै कि तुमने पञ्चशिखनाम योगी संन्यासीसे सम्पूर्ण मोक्ष शास्त्रको सुना, श्रवण मनन निदिध्यासनादि उपाय और ध्यानके अंगनियम आदि युक्तजीव ब्रह्मकी एकताके

अनुभव समेत काम आदिकी फाँसियोंसे पृथक् तुझमुक्त संगीका संग उन छत्रआदि निजवस्तुओंमें फिरकैसेहै मेरीबुद्धिसे तो तुमने शास्त्रको नहींसुना अथवा सुनाभीहै तो कपटसे सुनाहै, अथवा इसशास्त्रके रूपका कोई दूसरा शास्त्रसुना है कि फिर इसलोककी बस्तुओं पर नियत होतेहो, तुम प्राकृत पुरुषके समान स्त्रीआदिकी स्नेहमें प्रवृत्तहो मैंने जो तेरे शरीरमें प्रवेशकिया वहतेरी बुद्धिमें प्रवेशनहीं है, मैंने उसमें तेराक्या अनुपकार किया जो तुम सब प्रकारसे मुक्तहो तो संन्यासियों का यह बनवास इनवर्णोंमें नियम किया जाता है, उजाड़ और विज्ञता रहित तेरी बुद्धि में मैंने प्रवेश करके किसका अपराध कियाहै हेराजा मैंदोनोंहाथ भुजाजंघा और अन्य अंगोंके भागोंसे तुझको स्पर्शनहीं करतीहूं बड़ेकुलीन लज्जावान् दूरदर्शी पुरुषसे सभाकेमध्यमें यह गुप्तकर्म उचितहुआ अनुचित्त न कहना चाहिये, यह ब्राह्मण गुरूहैं इसी प्रकार उत्तम गुरूभी प्रतिष्ठाके योग्यहैं तुमभी इनसब लोगोंके राजारूप गुरूहो इसप्रकार परस्परकी वृद्धता है, इसबातको विचारकर कहने और न कहने के योग्य बातोंके आप ज्ञाताहोकर आपको सभामें स्त्री पुरुषका योगहोना कहना योग्य नहीं है जिसप्रकारसे कमलके पत्तेके ऊपरका जलउस पत्तेको स्पर्श न करताहुआ नियत होताहै इसीप्रकार स्पर्शसे रहित मैंने तुझमें निवासकिया, अब जो मुझस्पर्श न करनेवाली के किसी स्पर्शको जानताहै ऐसी दशामें यहां पंचशिख संन्यासीने तेरे ज्ञानको किसरीतिसे निर्वासना रूप कहा, सो गृहस्थाश्रम से गिरेहुये तुमदुःखसे प्राप्त होनेवाली मोक्षको न पाकर दोनों आश्रमोंके बीचमें केवल मोक्षकीबातें करनेवालेहो,जाननेके योग्य आत्माकी एकता और द्वैतता में प्रकृति पुरुष के कारण से मुक्तका मुक्तके साथ और आत्मा का प्रकृतिके साथ मेल होनेसे वर्णसंकर नहींउत्पन्न होताहै,मिलेहुये वर्ण और आश्रम जिसको बहुत प्रकारके दृष्ट पड़ते हैं और जिसने अर्थको देखा उससे वर्णसंकर उत्पन्न होता है देह और आत्मा दो २ नहीं होते इस एकत्वताको जानकर मेरा दूसराचित्त तुझदूसरे में वर्त्तमान नहीं होता है, हाथमें कुंड कुंडमें दूध और दूधमें मक्खी यहसब आश्रय स्थानके मिलने से एकत्र होकर नियत हैं और फिर पृथक् २ भी नियत हैं, कुण्डमें दूध और मक्खीभी मिलावट नहीं रखती और दूधका अभाव भी नहीं निश्चय करके वहसब वस्तु अपनेआपही दूसरेके निवास स्थानको प्राप्त करतीहैं,आश्रमोंके और वर्णोंके पृथक् २होने और परस्परमें जुदेहोनेसे तेरा वर्णसंकरहोना किस प्रकारसेहै,मैं जातिमें तुझसे उत्तम वर्णहूं न वैश्याहूं न शूद्राहूं हेराजा मैं पवित्र उत्पत्तियुक्त और शान्तचित्तीमें तेरीसवर्णता रखतीहूं, प्रसिद्धीमें कभी तैंनेभी सुनाहोगा कि एक प्रधाननाम राजर्षिहै मैं उसीके कुल में उत्पन्नहूं मेरासुलभा

नामहै, मेरे पुरुषोंके यज्ञों में द्रोणशत शृंग और चक्रद्वार नामपर्व्वत इन्द्र के द्वारा ईंटों के स्थानापन्न लगाये गयेथे, मैं उसघराने में उत्पन्न हुई और मेरे समान पतिके न मिलनेपर मोक्षधर्म्मों में गुरुओं से शिक्षापाई हुई अकेली मैं मुनियों के व्रतों को करती हूं, मैं कपटरूप संन्यासिनी नहीं हूं मैं दूसरे का धन हरनेवाली हूं और धर्म्म संकर करनेवाली भी नहीं हूं अपने धर्म्म में व्रत करने वाली हूं अपनी मर्य्यादा में नियत होकर बिना विचारे वार्त्तालाप नहीं करतीहूं और इसतेरे स्थानमेंभी मैंबिना विचारके नहीं आई हूं, कुशल चाहनेवाली मैं मोक्षमें प्राप्ततेरी शुद्धबुद्धिको सुनकर इस तेरे मोक्षकी परीक्षा करनेके निमित्त यहां आईहूं, अपने और दूसरे के पक्षमें अपनेही पक्षपात परनियत होकर मैं ब्रह्मको नहीं कहतीहूं किन्तुतेरे कल्याणके हेतु कहतीहूंकि जो मनुष्य शूरवीरोंके समान अपनी विजयकेनिमित्त वार्त्तालापऔर ब्रह्मके निरूपणमें परिश्रमनहीं करताहै और ब्रह्ममें शान्तहोताहै वही युक्तरूपहै, जैसे कि संन्यासी पुरुष नगर के उजड़ेहुये स्थान में एकरात्रिही निवास करता है उसीप्रकार मैं भी इस तेरे शरीर में आज की रात्रिभर निवास करूंगी, हेराजाजनक मैं आपके प्रतिष्ठा और वचनरूप आतिथ्यसे पूजित श्रेष्ठस्थानमें शयनकरके प्रसन्नचित्त होकर कल प्रातःकाल जाऊंगी, भीष्मजीबोले कि राजाजकने ऐसीयुक्तियोंसे भरेहुयेप्रयोजनवाले वचनोंको सुनकर भी कुछदूसरा वचन नहींकहा अर्थात् उसको उत्तर देनेमेंसमर्थ नहींहुआ- इस वर्णनसे यह सिद्धांत दिखाया कि गृहस्थाश्रम में मुक्तीकाहोना कठिन है इसकारणसे संन्यासही उत्तमहै १९० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिमोक्षधर्म्मेउत्तरार्द्धेपञ्चचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४५ ॥

एकसौ छियालीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि पूर्व्व समयमें व्यासजीके पुत्र शुकदेवजीने कैसे वैराग्य को प्राप्तकिया और अव्यक्त वा व्यक्त वा तत्त्वोंका निश्चय और बुद्धिका निश्चय और अजन्मा देवता वा सगुणदेवताकी लीलाको आप मुझे समझाइये मुझेइसके सुनने की बड़ी उत्कण्ठाहै, भीष्मजी बोले कि पिता व्यासजीने प्राकृत आचरणसे विचरनेवाले निर्भय पुत्रको अपना संपूर्ण वेद पढ़ाकर उपदेश किया कि हे पुत्र तुम धर्मका सेवनकरो और उष्णशीत वा भूख प्यास और वायुका विजयकरके सदैव जितेन्द्री हो सत्यता सरलता क्रोधरहित होना दूसरेके गुण में दोष न लगाना शान्त चित्त अहिंसा दया आदि गुणों में अपनी बुद्धिके अनुसार प्रवृत्तहोना सत्यतामें नियत कुटिलता रहितहोना धर्म में प्रीतिमान देवता अतिथिआदिके पूजनसे जो शेष रहै उसीसे अपनी

प्राणरक्षाकरो, हेपुत्र देहको फेणके समान और जीवको पक्षीके समान नियत होनेपर और साथी भाई बन्धुओं के नाशवान् होनेपर कैसे सोरहा है अर्थात् पुरुषार्थ साधनमें क्यों नहीं प्रवृतहोताहै हे बालक तुम इनबड़े सावधान चैतन्य सदैव कर्म्ममें प्रवृत्त और कामादि शत्रुओंमें अवकाशकी इच्छा रखने वालोंके मध्यमें क्यों नहीं सावधान होतेहो दिनोंको संख्यायुक्त होनेसे और अवस्थाके न्यूनहोने वा जीवनके क्षणभंगुर होनेपर क्योंनहीं उठकर दौड़ता है अर्थात् देवता और गुरु आदिका क्योंनहीं आश्रयलेताहै, जो नास्तिक हैं वहमांस रुधिर आदिकी वृद्धि करनेवाले नरलोक संबंधी भोगोंको चाहते हैं और परलोक संबंधी कर्मों को भूलेहुये रहतेहैं, जो पुरुष बुद्धिकी भूलसे धर्म की निन्दा करतेहैं उनकुमार्गगामियों के पीछे चलनेवालाभी दुःखपाताहै, जो सन्तोप गुणयुक्त वेदको उत्तम जाननेवाले महात्माधर्मरूप मार्गमेंनियम हैं उनकी उपासनाकरो और उनसेही पूछो, उन धर्मदर्शी ज्ञानियोंके मतको स्वीकारकरो और उत्तम बुद्धिकेद्वारा बुरेमार्गसे चित्तको सदैव हटाओ, इसी समय देखनेवाली बुद्धिसे यह मानकर कि प्रातःकाल दूरहै इसहेतु से निर्भय निर्बुद्धी सब वस्तुओं के भक्षण करनेवाले मनुष्य कर्मभूमि को नहीं देखते हैं, तुमसीढ़ीके समान धर्ममें नियत होकर कुछ २ उसपर चढ़ो और तुमअपनेको रेशमके कीटके बंधनमें डालतेहुये क्यों नहीं चैतन्यहोते और तुम विश्वासयुक्त होकर नास्तिक और बे मर्य्यादा चलनेवाले बांससेऊंचे मनुष्यों का कभी संग न करो, तुम प्राण बेग धारण नाम योगरूप नौकाकोबनाकर मृत्युरूप काम क्रोध और पांचइन्द्रीरूप जलरखनेवाली नदीको और जन्म नाम कठिनस्थानोंको अच्छेप्रकारसेतरो, जरामृत्युमें पीड़ामान् लोकको जानकर और अवस्थाकी न्यूनकरनेवाली ऋतुओं के होनेपर धर्मरूप जहाज में चढ़कर इससंसार समुद्रकोतरो,जब मृत्यु सोतेहुये मनुष्यको प्राप्त होतीहै तब अकस्मात् मृत्युसे नाशवान् पुरुष किस से मोक्षपासक्ता है अर्थात् कोई नहीं उसको बचासक्ता है, इसधन आदि के संचय करनेवाले और मनोरथों से असन्तुष्टी मनुष्यको मृत्यु इसरीति से लेकरजाती है जैसे कि भेड़िया बकरी को लेकरजाता है, संसाररूपी अन्धकार में प्रवेशकरना चाहिये और क्रम पूर्व्वक धर्मरूप तेजस्वी अग्नि से ज्ञान रूपी दीपक को प्रज्वलित कर के बड़ी युक्तिसे उस को निवृत्त करना चाहिये, हे पुत्र इसनरलोक में देहरूपी जालमें फँसाहुआ जीव बड़ीकठिनता से कभी ब्राह्मण के शरीरको पाता है इस को तुम चारोंओर से बचाओ, ब्राह्मणका यहशरीर कभी काम और अर्थके निमित्त नहींपैदाहोताहै किन्तु तपस्या आदिकेनिमित्त होताहै ऐसे शरीर के त्यागकरनेके पीछे अनुपम सुख मिलता है, ब्राह्मणका शरीर बड़ी तपस्या से

होताहै उसको प्राप्तहोकर संसारी प्रीतिमें डूबकर मनुष्यको उसकी अप्रतिष्ठा करनी उचितनहीं है, वेदपाठ जपतप और चित्तकी शान्ती में सदैव प्रवृत्त मोक्षको उत्तम माननेवाले तुम सदैव उपाय करतेरहो, मनुष्यका जो अवस्था रूपी घोड़ाचलता है उसका उत्पत्ति स्थान अव्यक्त है और कला उसका शरीर है और उसका आत्मा सूक्ष्मरूप है वह क्षण और त्रुटिनाम समय में शयन करनेवाला है और पलकका लगाना उसकी देहके रोमाञ्च हैं दोनों सन्ध्याउसकेकन्धे हैं और एकसे प्रभाववाले शुक्लपक्ष कृष्ण यहदोनों उस के नेत्र हैं महीनेअंग हैं, उस तीव्र गामी सदैव चलने और दौड़ने वाले और अपूर्व्व दिखाई देनेवाले घोड़ेको देखकर जो तेरा ज्ञान अन्धे के समान नहीं है तब परलोक वा आत्मा को सुनकर तेरा मन धर्म्म में नियतहोगा २६ जो पुरुष इसलोक में धर्म से पृथक् संसारी भोगों में प्रवृत्तहोकर सदैव दूसरे के अप्रियकर्मोंके करनेवालेहैं वह अपने अत्यन्त अधर्म्मरूप कर्मोंसे यमकेलोक में शारीरक दण्डको पाकर महाआपत्तियोंको भोगतेहैं, जो राजा अच्छेप्रकार से विचारकर सदैव धर्म्म में प्रवृत्त छोटेबड़े जातिवालोंका रक्षक है वह श्रेष्ठ कर्म्मीपुरुषोंके लोकोंकोपाता है और अनेकप्रकारके सुखोंको भोगता है और हजारोंयोनियों में प्राप्तहोनेवाले दोषों से रहितहोकर ब्रह्म में प्राप्तहोता है अर्थात् मोक्षकोपाता है नरकदननाम भयानक नरक में कुत्ते और लोहेकेमुख वाले बल गृध्रनाम पक्षियों के समूह जो रुधिर मांसादि के भक्षी हैं वह सब उस देहके त्यागनेवाले पुरुषपर गिरते हैं, जो कि गुरू पिता माता आदि के वचनोंको नहीं मानताहै यह मर्य्यादा जो वेदसे नियतकीगई सांख्य में दश हैं अर्थात् शौच सन्तोष, तप, वेदपाठ, ईश्वरकाध्यान, अहिंसा, सत्यबोलना, चोरी न करना, ब्रह्मचर्य्य, परिग्रह रहितहोना, जो मनुष्य इन दशोंस्थानोंको मनसे नहीं मानताहै वह पापीपुरुष अत्यन्त दुःखरूप यमलोक सम्बन्धी असिपत्रनाम बनमेंजाकर निवासकरताहै, जो मनुष्य अत्यन्त लोभी मिथ्यावादी और सदैव दुष्टकर्म्मी छल में प्रवृत्तचित्त होताहै वहपापात्मा छलआदि से दुःखोंका उत्पन्न करनेवाला बड़े नरकमें पड़कर महाअसह्य कष्टोंको पाता है, ऊष्मजलवाली वैतरणी नाम महानदी में गोतेखाताहुआ असिपत्रवन से घायल फरसे के बन में सोता महानरक में गिराहुआ घोरकष्टको पाता है, अब स्वर्ग से भी अनिच्छा करातेहैं, ब्रह्मलोकादि परमपदोंकी प्रशंसा करता है और ब्रह्मको नहीं विचारता है और आगे प्राप्तहोनेवाली वृद्धोंकीमारने वालीमृत्युको पलकरक्याबैठा है बड़ाकरालबली भयउपस्थित हुआ है इससे सुखका उपाय कर २४ नहींजानताहै वह जबतक यमराजकी आज्ञासे मरकर यमलोकमें पहुंचायाजाता है तबतक तुम आगेके सुखके निमित्त कृच्छ्रआदि

तपोंकेद्वारा सत्यमार्ग में उपायकरो, ३५ जबतक दूसरेके दुःख को न जानने वाला प्रभु यमराज इसलोक में तेरे जीवनको बान्धवादिकों समेतनहींहरताहै क्योंकि उसका रोकनेवालानहीं है और यमराज के सन्मुखरहनेवाली वायुके द्वारा तू अकेलाही यमलोकको पहुंचायाजाताहै उससमयसे पूर्व्वही उसकाम कोकरो जो कि परलोक में लाभ दायकहो, ३७ वहीनाशकारी हवा तेरे सन्मुख जबतकनहीं चलती है इससे पूर्व्वही उपायकरो और जबतक बड़े भय के आने में तेरीदिशा और पास घूमतीहैं उससे पूर्वही उपायकरो, ३८ हेपुत्रयह जब तक तुझ व्याकुल और यमलोकमें जानेवाले की श्रवणेन्द्रीकी सामर्थ्य बन्दहोय उससे पूर्वही उत्तम समाधिको करो, कर्म्मकी भूल से दुःखीहोने पर पूर्व समयके बुरेभलेकर्मोंका स्मरण करताहुआ जबतक दुःख पाताहै तबतक शुद्ध ब्रह्म रूप खजानेको आत्मामें धारणकरो,जबतक देहके बलरूपकी हरने वाली वृद्धावस्था शरीरको अत्यन्त जर्ज्जरीभूत न करे तबतक शुद्ध ब्रह्मरूप खजानेको आत्मा में धारणकरो, जबतक जीवनके अन्तमें रोगको सारथी बनानेवाला यमराज हठकरके तेरेशरीरको निर्जीवनहीं करे उससे पूर्व्वहीबड़ी तपस्यामें प्रवृत्त होजाओ, जबतक मनुष्यों के शरीरों में घूमनेवाले भयानक भेड़िया के समान काम क्रोधादिक सबओर से सन्मुख न दौड़ें उससे पूर्वही पुण्यकी वृद्धि में उपायकरो, जबतक सहायता न रखनेवाला तेरेदोषरूप अन्धकारोंको नहीं देखे और पर्वतके शिखरपर पत्तोंके चिह्नोंको देखे न उससे पूर्वही शीघ्र उपायकरो, जबतक बुरी इच्छा और मित्ररूप शत्रु तुझको अपने नेत्र से या बुद्धि तुझको न बाहर फेंके हे पुत्र उससे पहलेही तू मोक्षमें उपाय करले ४५ जिस विद्यारूपी धनको राजा और चोरसे भयनहीं है और मरनेपर भी जिसकी कीर्त्ति विख्यात रहती है उस धनको अच्छे प्रकारसे सञ्चयकरो, वहां अपने कर्म्म का विभाग परस्परमें नहीं दियाजाताहै जिसका जो पाथेय है वही अपने को वहां भी भोगताहै हे पुत्र परलोक में जिससे अपना जीवन होता है उसी को दानकरो जो धन अविनाशी और अचल है उसीको उपाय करके इकट्ठा करो, जबतक साहूकार की यावकनाम भोजनकी वस्तु पकी नहीं होती है और उसके पके न होनेपर भी जो मरजायगा इस निमित्त पहलेही उपाय करना योग्य है, माता पिता पुत्र भाई और अच्छे प्रतिष्ठित रिस्तहदार लोग भी संकट में उसअकेले जानेवाले के पीछे नहीं जाते हैं, और पूर्व समय में जो कर्म्म अच्छा बुरा बनगयाहै केवल वही कर्म्म उसपरलोकगामी का साथी होता है, अच्छे बुरे कर्म्मों से जो सुवर्ण रत्नादिक इकट्ठे किये गये हैं वह देह के मरने के पीछे उसके काम में नहीं आते हैं, इस स्थान में तुझ परलोककी इच्छा करनेवाले के और अन्य सब मनुष्यों के क्रोधसे वा बिना

क्रोधसे कियेहुये कर्म्मों का आत्मा के सिवाय कोई साक्षी नहीं है, परलोकमें अर्थात् साक्षी पुरुष में जीवात्मा के लय होनेपरही मनुष्य का शरीर नाश होता है वह साक्षी हार्दाकाश में जाकर सबको दिखाई देता है, इसलोक में अग्नि, सूर्य्य, वायु यह तीनों देवता देह में वर्त्तमान रहते हैं वह धर्माधर्म के साक्षी होते हैं, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष वृत्तियों में सब जीवों के भीतर विचरने वाले और रात्रि दिन सब साक्षियों के चारों से स्पर्श करनेवाले होनेपर भी तुम धर्म्मकीही रक्षाकरो, बहुत से शत्रु और बुरी सूरतके भयानक दंश करने वाला परलोक के मार्ग में अपनाही कियाहुआ कर्म साथजाता है इसी हेतुसे अपने कर्मकी भी रक्षाकरो, वहां कोई किसी के कर्म का कोई भागी नहीं होता है जैसा करताहै वैसाही अपने कर्म से उत्पन्न होनेवाले भागों को भोगता है, जिसप्रकार अप्सराओं के समूह अपने कर्म फल रूपी सुखको पातेहैं उसी प्रकार इच्छानुसार चलनेवाले विमानों पर चढ़े हुये उत्तमपुरुष भी महर्षियों समेत कर्म के फलको पाते हैं, जिसप्रकार इसलोकमें पापों से रहित ज्ञानी पुरुषों से जो कर्म कियाजाताहै उसीप्रकार अत्यन्त पवित्र उत्पत्तिवाले पुरुष भी अपने उत्तम कर्म फल को पाते हैं, वह लोग गृहस्थ धर्म्मरूप पुलों के द्वारा प्रजापति वृहस्पति इन्द्र इत्यादि के लोकों को पाकर मोक्षको भी पाते हैं, फिर हमसरीके अज्ञानियोंको मोहनेवाला धर्म्म हजारों प्रकारसे कहने को समर्थ है और वही अपनी सामर्थ्य से हमलोगों को ईप्सित स्थान में भी पहुंचाकर पवित्र करनेवालाहै, तेरी अवस्था के वर्ष व्यतीतहुये अब केवल तुम्हारी अवस्था के पच्चीस वर्ष बाकी हैं तेरी अवस्था चलीजाती है इससे धर्म्मकाही संचयकरो जबतक अज्ञान में वर्त्तमान होनेवाली मृत्यु इंद्रियों को अपने२ कामोंसे पृथक् करती है उससे पूर्वही मृत्युके पंजे में फँसेहुये शरीरको मतत्यागो किन्तु तैयारहोकर अपने धर्मकी रक्षा शीघ्रहीकरो, जैसेकि आत्मा रूप तुमभी आगे या पीछे आत्माको प्राप्तहोगे उसीप्रकार मोक्षप्राप्तकरनेवाले को अपने शरीर अथवा पुत्रादिकों से क्या प्रयोजनहै अनेक भयोंके प्राप्त होनेपर केवल धर्म्म या ज्ञानके द्वारा परलोकमें जाने वाले सत्पुरुषों का जो हितकारी लोक होता है उसी शुद्ध और गुप्त निर्गुण को धारणकरो, वही असंग प्रभु सब जीवों को भाई बन्धु पुत्रादि समेत बाल वा वृद्धों को हरलेताहै उसका रोकने वाला कोई नहीं है इसहेतुसे धर्म संचय शीघ्रही करो, हे पुत्र अब यहांमैंने अपने शास्त्र और अनुमानसे यहउचितदृष्टांत मुझसे सबवर्णन किये इनकोही तुमअपना हितकारी जानकर अवश्यकरो, जो पुरुष अपने कर्मसेअपने शरीरको पुष्टकरता है और जिस किसी उपकारीको देताहै वही अकेला अज्ञानमोहजन्य कष्टोंसे मिलताहै, ६७ उत्तमकर्म करनेवाले पुरुषों

का तत्त्वमसि वाक्यसे उत्पन्न होनेवाला ज्ञान ब्रह्मांडको व्याप्तकरताहै वही परम पुरुषार्थ मोक्षरूप अर्थका दर्शन है कृतज्ञ पुरुषोंको उपदेश कियाहुआ ज्ञान पुरुषार्थसे संयुक्त होताहै, जो संसारी लोगोंमें निवास करनेवाले पुरुषों को प्रीतिहोती है वही बड़ाभारी रस्सीबंधनमें डालती है और उत्तमकर्मी मनुष्य इसरस्सीके बंधनको काटकर जातेहैं और निकृष्ट कर्मी नहीं काटसक्ते हैं, हे पुत्र जबकि तुमसृत्युके वशीभूत होनेवालेहो फिर तुमकोधनभाई बेटोंसे कुछ प्रयोजन नहींहै तुमअपने हार्दाकाशमें नियत आत्माकी इच्छाकरो देख तेरेपिता आदि कहांगये, कलकेकामको आजकर और रात्रिके कामको प्रातःकालही करले क्योंकि मृत्यु जराभी बाटनहीं देखतीहै न यह देखती है कि इसका काम समाप्त हुआ है वा नहीं, मरने के समय मित्र बांधव और जातिवाले पीछे२ चलकर मृतक को अग्निमें डालकर लौटआते हैं, ७२ तुम मोक्षके अभिलाषी आलस्यको दूरकरके विश्वासयुक्तहोके उन निर्दयी पाप बुद्धि नास्तिकों को अपनेसे सदैव हटाओ, इसप्रकार लोकसे घायलकालसे पीड़ावान् होनेपरभी तुमबड़े धैर्य्यसे सबजीवोंमें धर्मको करो, फिर जो मनुष्य इसज्ञानकी युक्तिको अच्छेप्रकारसे जानतेहैं वहइस लोकमें अपनेधर्मको अच्छे प्रकारसे करके परलोकमें सुखको भोगतेहैं, और देहके त्यागनेमें ज्ञानी लोगोंकी मृत्युनहींहोतीहै और अपने धर्ममार्गकी रक्षा करनेमें किसीप्रकार की हानिनहीं है जो धर्म्मकी वृद्धिकरताहै वहपंडितहै और धर्म्मसे हीनहोता है वह अज्ञानमें फँसता है, कर्म कर्त्ता मनुष्य कर्म मार्गमें प्रकट होनेवाले अपने दो प्रकारके कर्म्म फलोंको इसप्रकारसे पाते हैं जैसा कि उन कर्मोंको कियाहै अर्थात् बुराकर्म्मकरनेवाला नरककोपाताहै और परायण लोग स्वर्ग पातेहैं इस स्वर्गकी नसेनीको बड़ी कठिनतासे प्राप्त होनेवाले मनुष्य देहको पाकरउस आत्माको अच्छे प्रकारसे ध्यानकरे जिससे कि आपत्तिमें न फँसे, स्वर्गमार्गके अनुसार कर्म्मकरनेवाली जिसकी बुद्धिधर्म को नहीं उल्लंघन करती है उसको पवित्रकर्मी और पुत्र बान्धवादिसे शोचनेकेयोग्य कहाहै, जिसकीबुद्धि अज्ञान से मोहितनहीं है और निश्चयमें आश्रयलेती है उसस्वर्गमें निवासी को कोईभय नहीं होताहै, जो पुरुष तपोवनमें उत्पन्नहुये और वहीं मरे उन कामभोगों से रहित पुरुषोंकाधर्म्म अत्यन्तछोटाहै, जो पुरुष भोगों को चारोंओरसेत्यागकर देहसे तपस्याकरताहै उसको सब अभीष्ट प्राप्तहोते हैं मैंने भी इसीबातको सिद्धांत समझाहै, हजारों मातापिता और सैकड़ों पुत्रस्त्री भूतकालमेंहुये और आगे भी होंगे वह सब किसकेहुये और हम किसकेहैं, मैं अकेलाहूं मेराकोईनहीं है न मैं किसीकाहूं और जिसकाहूं उसको नहीं देख सक्ताहूं और जो मेराहै इसकोभी नहींदेखताहूं, न मुझसे उनका कामहोगा न

उनसेमेराकामहोगा वह अपने२कर्म्मोंसे उत्पन्नहोकरमेरेवामरेंगे और आप भी जाओगे, इसलोक में धनवान्के भाईबन्धु अपनी प्रसन्नताको प्रकटकरते हैं और निर्द्धनोंके भाईबन्धु नष्टताकोप्राप्तहोते हैं, मनुष्य स्त्रीकेद्वारा बुरेकर्मों को संचयकरताहै फिर परलोकमें और इसलोक में भी कष्टोंको पाताहै, अपनेकर्म्मोंसे इसदुःखरूप जीवलोकको देखताहै हेपुत्र इसीहेतु से इनसबबातोंको ऐसे हीकरनाचाहिये जैसा कि वर्णन कियागयाहै, इसको अच्छेप्रकार ध्यानकरके परलोक चाहनेवालेको उत्तमकर्म्म करनायोग्य है, जिसकालके महीने ऋतु वर्षभ्रमणहैं सूर्य अग्निहै और दिनरात ईंधनहै वह सूर्य कर्म्म और फलकी नियतताका साक्षी भी है ऐसे इन्धन और अग्निमें वह काल भ्रमाय२ कर सब को भस्मकरता है, उसधनसे क्या लाभहै जिसको न देताहै न भोगताहै और ऐसा पराक्रमभी निरर्थकहै जिससे कि शत्रुको नहीं पीड़ितकरताहै और वह शास्त्रभी निष्फलहै जिसके द्वारा धर्म्मको नहींकरे और उसआत्मासे भी क्या प्रयोजनहै जो जितेन्द्री और मनका जीतनेवाला नहींहै भीष्मजी बोले कि शुकदेवजीने व्यासजीके कहेहुये इन हितकारी वचनोंको सुनकर पिता को बिदाकर मोक्षका उपदेश करनेवाले राजाजनक के पास जाकर मोक्षकी रीति को पूछा, युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह दान यज्ञ तप और गुरुओंकी सेवा जैसे करनी योग्यहै वह मुझे समझाइये, भीष्मजी बोले कि अनर्थ में संयुक्त बुद्धिके कारण मन पापकर्म्मों में प्रवृत्त होताहै और अपने कुकर्म्म के फलसे महाकष्टोंको नियत होताहै दुर्भिक्षसे और नानाक्लेशों से अनेक भयकारी आपत्तियोंमें पड़कर मृतकनाम पाके अर्थात् मुक्त न होनेवाले पुरुष मृतक मनुष्योंमें मिलजाते हैं और पापी मनुष्य निर्द्धन होते हैं, उत्सवसे उत्सवको स्वर्गसे स्वर्गको सुखसे सुखको पाते हैं श्रद्धावान् जितेन्द्री और धनवान् लोग श्रेष्ठ कर्म्मी हैं, परलोकके न माननेवाले नास्तिकलोग सर्प हाथी आदि से दुर्गम और भयकारी मार्ग में हथकड़ियों समेत पिटतेहुए जाते हैं इससे कठिन दुःख क्याहोगा, देवता अतिथि साधलोग और देवता आदि जिन पुरुषोंकोप्यारे हैं और महादान दक्षिणाआदिके दाताहैं वह ज्ञानियोंके मार्गमें नियतहैं१८ जैसे धान्योंमें पुलाका और पक्षियोंमें पूत्यण्डाहोता है उसीप्रकार मनुष्योंके मध्यमें वह नास्तिक पुरुष गिनेजाते हैं, जिस २ मनुष्य से जैसा२ कर्म्म हुआहै वही कर्म्मफल प्रारब्ध रूपहोकर दौड़नेवाले के मनुष्यके पीछे२ दौड़ताहै और सोनेवाले के साथमें सोताहै और पापकर्म्म उसकर्म्मकर्त्ता के समीप नियत होता है और दौड़नेवाले पीछे दौड़ताहै और कर्म्मकरनेवाले के साथ कर्म्मकरताहै सदैव छायाके समान संगही बनारहताहै, जिस जिस पूर्व्वजन्म समयमें जो जो कर्म्म कियाहै उसउस अपने कर्म्म किये को आगे

के जन्म में सदैव वह भोगताहै, जिसमें कर्म्म और त्याग समानहैं उसप्रारब्ध से चारोंओर से रक्षित जीवको काल चारोंओर से खैंचकर पृथक् करदेताहै जैसे कि विना कहेहुये अपने अपने समय और ऋतु में फूल फल समय को उल्लंघन नहीं करतेहैं उसीप्रकार पूर्व जन्मके किये हुये कर्म्म भी कभी समय को नहीं उल्लंघन करतेहैं, प्रतिष्ठा अप्रतिष्ठा लाभ हानि जीवन मृत्यु इत्यादि सब जारी होनेवाले बंधनहीं होते हैं और प्रत्येक चरणपर नाशके जतानेवाले हैं, आत्माहीसे सुख और दुःख किये गये हैं गर्भशय्याको प्राप्तहोकर आत्मा अपनेही कियेहुये कर्म फलोंको भोगताहै, बालक, तरुण और वृद्धकोई मनुष्य जिस जिस शुभ अशुभ कर्म्मोंको करताहै उसीदशामें वहप्रत्येक जन्ममें उसके फलको भोगताहै, जैसे बछड़ा हजारों गौओं के मध्य में अपनीही माताको पालताहै इसीप्रकार पूर्वका कियाहुआ कर्त्ताका कर्म्म उसके पीछे २ चलता है, जैसे कि मैला वस्त्र फींचेसे जलके द्वारा शुद्धहोजाताहै उसीप्रकार व्रतादि अनेक नियमोंसे कष्टसहनेवाले पुरुषोंको अत्यन्त सुख प्राप्तहोताहै हे महाज्ञानी बहुत समयतक तपस्या करनेसे और धर्म्मसे जिनकापाप दूरहोगयाहै उनके मनोरथ शीघ्र सिद्धहोते हैं, जैसे कि आकाशमें पक्षियोंका और जल में मछलियोंका पहला चिह्न दृष्ट नहीं आता है उसीप्रकार पापात्माओं की भी गतिहै, प्राप्त और नियत नानाप्रकारकी वे मर्य्यादाओंको छोड़ो औरजो अपना हितकारी श्रेष्ठ कर्म्म है उसको करना उचितहै ११२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे सप्तचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४७ ॥

एकसौअड़तालीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर ने प्रश्न किया कि हे पितामह व्यासजी के पुत्र धर्म्मात्मा तपस्वी शुकदेवजी ने किस प्रकार से जन्म लिया और सिद्धि रूप मोक्ष को प्राप्त हुये यह सब आप वर्णन कीजिये, तपोधन व्यासजी ने किस स्त्री में शुकदेवजी को उत्पन्न किया इन महात्मा की माता को और उनके उत्तम जन्मको नहीं जानतेहैं और उस बालककी बुद्धि किसकारणसे ज्ञानमें प्रवृत्त हुई इसलोकमें ऐसी बुद्धि किसीकी ज्ञानमें नहीं प्रवृत्तहुई हे महाज्ञानी मैं उस को मूल समेत सुनना चाहताहूं क्योंकि आपके अमृतरूपी शास्त्रों के सुनने से मेरी तृप्ति नहीं होतीहै इसी से हेपितामह शुकदेवजी के माहात्म्ययोग और विज्ञानको ठीक२ क्रम पूर्वक मुझसे वर्णन कीजिये, भीष्मजी बोले कि ऋषि लोगों ने अधिक अवस्था वा वृद्धता मृतक-शरीर और धनके कारण से धर्म को नहीं कहा है जो पुरुष अंगोंसमेत वेदों को जानता है वही हम लोगों में बड़ाहै इन सबमें तपही मूलरूप है वह तप जितेन्द्री पुरुषों से होताहै दूसरोंसे

नहीं होसक्ताहै, हे तात हजार अश्वमेध और सौ वाजपेययज्ञ का फल योग की कलाकेभी समान नहीं होताहै अब मैं इसस्थानमें शुकदेवजीके उस जन्म योगफल और उत्तमगति को जो कि अपवित्र मिथ्यावादी मनुष्यों को कठिनतासे समझ में आसक्ती है तुझ से कहताहूं, निश्चयकरके पूर्व समय में भयंकररूप भूतगणों से सेवित श्रीमहादेवजी ने मेरु पर्वतके उस शिखर पर जो कि वन के नानावृक्षों से शोभित था उत्तम जानकर बड़े आनन्द से निहार किया और उससमय श्रीपार्वती जी भी उनके साथ थीं उसीसमय देवताओं के समान श्रीव्यासजी ने वहां तपस्या की और हे कौरवेन्द्र वहां व्यास जी ने योग धर्म में प्रवृत्तहो अपने योगबलसे इन्द्रियोंको हृदय में रोककर पुत्र की कामनाके निमित्त प्रार्थना की अर्थात् उन्होंने यह इच्छाकरी कि मेरापुत्र धैर्य से पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश के समान होवे, उस उत्तम तप में प्रवृत्त उसऋषि ने यह संकल्प करके योगके द्वारा उन शिवजी को आराधन किया जो कि अज्ञानियों को प्राप्त होने कठिनहैं, वायुका भक्षण करके बहुत रूप रखनेवाले उमापति शिवजी के ध्यानमें प्रवृत्त होकर व्यास जी सौवर्षतक खड़े रहे वहां परब्रह्म ऋषिराज ऋषिलोकपाल और साध्यगणों ने वसुओं समेत शिवजी महाराजको सेवनकिया और बारहसूर्य, ग्यारहरुद्र, चन्द्रमा, सूर्य, वसु, मरुद्गण, सागर, नदी, अश्विनीकुमार, देवता, गन्धर्व, नारद, पर्वत, देवऋषि, विश्वावसु गन्धर्व, सिद्ध और अप्सराओं ने शिवजीको आराधन किया उससमय शिवजी महाराज कनेरके पुष्पों की मालाको धारण किये हुये ऐसे शोभायमान थे जैसे कि अपनी किरणों समेत चन्द्रमा शोभायमान हो अपने धर्म में दृढ़ व्यासदेवजी उस दिव्य क्रीड़ाके योग्य देवता और देव ऋषियों से व्याप्त वनके मध्यमें पुत्रकी इच्छा करके उत्तम योग में नियतहुये इनका न तो प्राण निकलता था और कोई प्रकारकी ग्लानि भी नहीं उत्पन्न होतीथी यह बात देखकर तीनोंलोकों को आश्चर्यभा हुआ तब उस बड़े तेजस्वी की जटाकारूप तेजकेमारे महादेदीप्यमान अग्निकी ज्वालाके समान दृष्ट पड़ताथा यह चरित्र और अन्य भी अनेक देवचरित्र इसस्थान में मुझ से भगवान मार्कण्डेयजीने कहेहैं, हेतात अब भी उसी तपके प्रतापसे व्यास जीकी जटा अग्निवर्ण के समान दिखाई देतीहै हे युधिष्ठिर उनके इसयोग भक्ति से अत्यन्त प्रसन्नहोकर शिवजीने अपने चित्तमें विचार किया और ईषद्धास्य पूर्वक भगवान् शिवजीने व्यासजी से यह कहा कि हेव्यास तेरापुत्र पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश इनकेही समान सिद्धहोगा और महापुरुष समझा जायगा, मैं ब्रह्महूं ऐसा विचार करनेवाला उसीब्रह्ममें बुद्धिको लगानेवाला और उसी में मनको दृढ़ करनेवाला और उसी में निवास करके तेरा

पुत्र अपने तेजसे तीनों लोकोंको व्याप्त करके यशको विख्यात करेगा २६॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेअष्टचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४८॥

एकसौउनचासका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले उन व्यासजी ने शिवजी से उत्तम वरको पाकर और युग्म अरणीकाष्ठको लेकर कामनाकी प्रत्यक्ष करनेवाली अग्नि से उनको मथा, हे राजा फिर व्यासजी ने अपने तेज से उत्तमरूप धारण करनेवाली घृताचीनाम अप्सरा को देखा, हे युधिष्ठिर भगवान् व्यासजी उस वनमें अप्सरा को देखकर कामसे पीड़ितहुये और घृताचीभी व्यासजीको कामसे व्याकुलदेखकर अपना रूपतोतीका बनाकर उनके पासगई, वहऋषि उसअप्सराको पक्षीकेरूप में गुप्त हुआजानकर काममें संयुक्तहुये और बड़े धैर्यसे कामको स्वाधीन करकेव्यासजी अपने चंचल चित्तकोरोकनेको समर्थ नहींहुये और होनहारके बशसे घृताचीके शरीरकी लावण्यता पर मोहित होगये बड़ी युक्तिसे कामको स्वाधीन करनेवाले उसमुनिकी कामाग्निसे उनका वीर्यपतनहोकर एक अरणीकाष्टकेऊपर गिराइसीहेतुसे उसमहाऋषि ने अरणीकाष्टको मथा और उससे शुकदेव जीने जन्मलिया जैसे कि यज्ञ सम्बन्धी तीव्र अग्नि हव्यको धारणकरता हुआ प्रकाशमानहोता है वैसेही रूपवान् और तेजसे देदीप्यमान शुकदेवजी भी होतेहुये हेकुरुभूषण पिताके अनूपरूप और सुन्दरवर्ण को धारण करतेहुये शुद्धअन्तःकरण शुकदेवजी धूमरहित अग्निके समान प्रकाशमान होतेहुये हे राजा तदनन्तर मेरुपर्वत के पीछे श्रेष्ठरूपवाली सब नदियोंमें उत्तम श्रीगंगाजीने अपनेरूप से उनके पास आकर उनको अपनेजलसे तृप्तकिया और आकाशसे दण्ड और कृष्ण मृगकाचर्म उनमहात्माके निमित्त पृथ्वीपरगिरा और गन्धर्ववाअप्सराआदि गाने वा नाचनेलगे और देवतालोग बड़ीशब्दायमान दुन्दुभी बजानेलगे और विश्वावसु नारद तुम्बुरु और हाहा हूहू आदि गन्धर्वोंने शुकदेवजीके जन्मोत्सवका मंगलगानगाया और इन्द्रादिक सब देवता और लोकपाल, ब्रह्मर्षि, देवर्षिभी सबआये और वायुने सुगन्धित उत्तम पुष्पोंकी वर्षाकी और सब संसारके स्थावर जंगम जीव अत्यन्त प्रसन्नहुये तब महातेजस्वी महात्मा शिवजीने भगवतीके साथबड़ीप्रीतिसे उसमुनिके पुत्रको उत्पन्न होतेही बुद्धि से अपनाशिष्यकिया और देवेश्वर इन्द्रने अपूर्वदर्शनवाला दिव्यकमण्डल और देवताओंकेवस्त्र बड़ी प्रीतिसे उनकोदिये फिरहजारोंहंस सारस,शतपत्र, तोते और नीलकण्ठोंने उनको दक्षिण किया, हे भरतर्षभ फिर तो इसदिव्य जन्म को पाकर महातेजस्वी ब्रतमें सावधान अरणीकेपुत्र बुद्धिमान् शुक-

देवजी उसस्थानमें निवास करनेलगे तदनन्तर रहस्य और संग्रहोंसमेत सब वेद उनकेपास वैसेही वर्त्तमानहुये जैसे कि उनके पिताके पास आयेथे, हे राजा वेद वेदांगके भाष्यकेज्ञाता धर्म्म विचारनेवाले शुकदेवजीने बृहस्पति जीको अपना गुरुकिया और उनसे सब वेद वेदांग रहस्य संग्रहों समेत और इतिहास आदि अनेक शास्त्रोंकोपूर्णतासेपढ़ गुरुको दक्षिणादेकरसमावर्त्तन कर्म्मकिया, फिर उससावधान ब्रह्मचारीने महातपकरना प्रारम्भकिया और अपने ज्ञान वा तपसे बाल्यावस्थामेंही देवता और ऋषियों में बड़ेमाननीय हुये, हे राजा मोक्षधर्म्मके साक्षात्कार करनेवाले इनशुकदेवजीकी बुद्धि गृहस्थादिक तीनों आश्रमोंमें नहीं रमतीथी २७ ॥

इतिश्री महाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेएकोनपंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १४९ ॥

एकसौपचासका अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि शुकदेवजी गुरुसेमोक्षशास्त्रको पढ़करपिताके पासगये और कल्याणके आकांक्षी विनीततासे अपनेपितारूप गुरुकोदण्डवत् करके बोले कि हेपिता आपमोक्ष धर्ममें प्रवीणहैं इससेमुझको ऐसाउपदेशकीजिये जिससे कि चित्तमें उत्तम शान्तिहोजाय, व्यासजीने पुत्रके ऐसेवचनसुनकर उत्तरदिया कि हे पुत्र तुममोक्षशास्त्रको और अन्य नानाप्रकारके धर्मोंकोभी पढ़ो, हेभरतवंशी उस धर्म्मधारियोंमें उत्तम श्रीशुकदेवजीने पिताकी आज्ञासे संपूर्ण योगशास्त्र औरसांख्य शास्त्रकोभी पढ़ा जबउन व्यासजीने उस पुत्रको ब्राह्मणोंकी लक्ष्मी से संयुक्त ब्रह्मकी समान पराक्रमी और मोक्ष धर्मोंमें महा पंडितजानातबकहा कि अबतुम राजाजनक के पासजाओ वह मिथिलेश्वर संपूर्ण मोक्षशास्त्रको तुमसे कहैगा,हेराजा शुकदेवजी पिताकी आज्ञाको मान करधर्मनिष्ठा औरमोक्षके सिद्धांतके निर्णयके निमित्त मिथिलापुरीमेंगये और चलनेके समय पिताने समझादियाथा कि तुम निस्संदेह मनुष्यमार्ग होकर जाना आकाशमार्ग होकर न जाना सीधेऔरसत्त्वेपनसे जाना उचितहै और उसहमारे यजमानराजासे तुम कभीअहकार न करना उसकेआधीन होनाही योग्यहै वही तुम्हारे सन्देहों को निवृत्तकरेगा, वहराजा धर्म में कुशल और मोक्ष शास्त्रमें अद्वितीय पंडित है जो वहकहै वही तुमको निस्संदेह करना उचितहोगा इसप्रकार से समझाये हुये वह धर्मात्मा शुकदेव मुनि मिथिला पुरी को गये जो कि वहमुनि अन्तरिक्षके मार्गसे अपने चरणों करके समुद्रों समेत पृथ्वीके उल्लंघन करनेको समर्थथे इस हेतुसे उन्होंने पर्वतोंको उल्लंघन कर नदीतीर्थ सरोवर बन उपवन आदि अनेक पर्वत श्रेणी और सर्प मृगोंकरके व्याप्तवनोंके अनेक मार्गों को उल्लंघन करके मेरुके इलावर्त्तादि शिखरों

को क्रम पूर्व्वक व्यतीतकरके भारतखण्डको पाया, फिर चीनी और हूननाम मनुष्योंसे सेवित नानाप्रकारके देशोंको देखतेहुये इसआर्य्यावर्त्त देशमें आये (अन्यमतवाले लोग इस आर्य्यावर्त्त देशको एरियनकहते हैं) और पिताके वचनको जानकर उसी अर्थ को विचारतेहुये शुकदेवजीने मार्ग को व्यतीत किया; आकाशमें चलतेहुये पक्षीके समान क्रीड़ा के योग्य नानाकुतूहलों से वृद्धिमान नगर और नानाप्रकारके पृथ्वीके रत्नोंको देखतेहुयेभी उनकोतुच्छ समझकर अथवा वैराग्यसे नहीं देखतेथे और मार्गके अनेक क्रीड़ाके योग्य उद्यान स्थान और सुन्दर नानारत्नों को भी तुच्छही समझा इसी प्रकार से चलते २ थोड़ेही समय में महात्मा जनक से रक्षित विदेह नगरको पाया उस नगरमें और अनेकरस अन्नभोजनआदि पदार्थोंसे भरेहुये और अनेक गौओंसे शोभित घोसपल्लीजातिके लोगों से व्याप्त बहुतसे ऐसे ग्रामोंको देखा जिनमें घास अन्न से पोषित अनेक हंस सारसथे और बहुत प्रकारके कमल युक्त तड़ाग वापी कूपों से शोभित अनेक धनाधीश साहूकारोंसे और व्यापारोंसे युक्त हाथी घोड़े रथआदि अनेक वाहनों से पूर्ण विदेह नगरको उल्लंघन करके आत्मज्ञान और मोक्षज्ञानके आकांक्षी शुकदेवजी उसके खुलेहुये द्वारके भीतर निरशंक होकर घुसे वहां उग्रवचनोंके द्वारा राजा के द्वारपालों ने उनको रोका तब शुकदेवजी क्रोधरहित होकर यथावस्थित खड़ेहुये यद्यपि मार्गकी ऊष्मा और क्षुधा पिपासा से व्याकुल भी मुनिथे तथापि हर्षशोकसे रहित धूपमेंही वर्त्तमान रहे फिर उन द्वारपालोंमें से एक द्वारपालने आकाश में सूर्य्य के समान तेजस्वी शुकदेवजी को शोकयुक्त रूप धारण किये देखा और वह बड़ी प्रीतिसे पूजन करके दण्डवत्कर हाथजोड़ सन्मुख खड़ाहोगया और राजमहलकी दूसरी ड्योढ़ीपर लेगया हेयुधिष्ठिर वहां बैठकर शुकदेव जीनेमोक्षकाही विचार किया क्योंकि वहमहाप्रतापी धूप और शीतकोसमान देखतेथे, एक मुहूर्त्तहीमात्र में राजाके मन्त्रियों ने बड़ी नम्रतासे आकर शुकदेवजीको राजमहलकी तीसरी ड्योढ़ीपर खड़ाकरदिया और वहांसे लेजाकर स्त्रियों के समूह में प्रवेश करवाया वहां राजमहल से लगाहुआ चित्ररथ के समान सुपुष्पित वृक्षोंसे शोभित क्रीड़ा के योग्य जलक्रीड़ा स्थानसेयुक्त वन था उसमें शुकदेवजी का आसनकरवाके वह मन्त्री चलागया उसस्थान में सुन्दर नितम्बवाली यथास्वरूपवान् स्त्रियां जो अरुण सूक्ष्मवस्त्र धारण किये अग्निके समान सुवर्ण आभूषणोंसे अलंकृत सुन्दर आलाप करनेवालीमृदुभाषिणी गीतवाद्य में प्रवीण मन्दमुसुकान युक्त वार्त्तालाप करनेवाली थीं और अप्सराओं के समान रूपकाम कलामें कुशल हावभाव कटाक्ष जाननेवाली सब बातोंकी ज्ञाता ऐसी पचास स्त्रियां उनकेपास गईं और पाद्य अर्घ्यसे

उनका पूजन करके समयपर उपस्थित उत्तम भोजनों से उनको तृप्त किया और प्रत्येकस्त्रीने साथ लेलेजाकर वह क्रीड़ावन शुकदेवजीको दिखलाया और हँसती गाती और दूसरेके चित्तकी जाननेवाली उन स्त्रियों ने उस बुद्धिमान् महाज्ञानी शुकदेवमुनिकी अच्छे प्रकार से सेवाकी वह शुद्ध अन्तःकरण स्वकर्मनिष्ठ अरणीके पुत्र शान्तचित्त क्रोधरहित शुकदेवजी इन के प्रेमों से न प्रसन्न होतेथे न क्रोधित होतेथे तब उन सुन्दरस्त्रियों ने शुकदेवजी के बिछाने को वह कृष्णवर्ण अनेक रत्नों से जटित आसनदिया जो कि उत्तम देवताओं के योग्यथा शुकदेवजीभी चरण धोकर संध्योपासनादि कर्मों से निबटकर उसी मोक्षको बिचारते हुये उस पवित्र आसनपर बिराजमानहुये और रात्रिके प्रथमभाग में ध्यानावस्थित होकर अर्द्ध रात्रि के समय रीति के अनुसार शयन किया फिर एकही मुहूर्त्त में उठकर निरालस्य शौच और स्नानादिक करके स्त्रियोंसे घिरेहुये मुनिने अपने मन को ध्यानमें लगाया, हे भरतबंशी मोक्ष के अधिकारमें बड़ेदृढ़चित्त शुकदेवजी ने इसबुद्धि से उस दिनके शेषऔर रात्रिको उसी राजकुलमें व्यतीतकिया ४५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेपंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १५० ॥

एकसौ इक्यावनका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इनसब बातों के पीछे राजाजनक अपने सब मन्त्री पुरोहित और रानियोंको आगे करके बड़े २ आसन और नानाप्रकारके रत्नों समेत शिरसे अर्घ्यकोलेकर गुरू पितर देवताओंके सन्मुखगया और बहुतसे रत्नोंसे जटित बहुमूल्य वस्त्रों से युक्तबड़े पूजित ऋद्धिमान् सर्वतोभद्र नाम आसनको हाथ में लेकर गुरू और पितृरूप शुकदेवजीको दिया, ४ जबउस आसनपर शुकदेवजी विराजमान हुये तबराजा जनकने पाद्य अर्घ्यपूर्वक शास्त्रकी बिधिसे उनका पूजन करके बहुत से रत्न संयुक्त सुन्दर गौओं को दान में दिया और शुकदेवजीने उसके मन्त्रयुक्त पूजनको बुद्धिसे अंगीकार किया फिर ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ तपस्वी शुकदेवजीने भी उसके पूजनको और रत्नादिक समेत गौओं को स्वीकार करके और राजाको आशीर्वाद देकर उसराजाकी कुशल क्षेमको पूछा और राजा अपने सबसाथियों समेत हाथजोड़ेहुये मुनि की आज्ञासे ब्राह्मणों समेत नीचे पृथ्वीपर बैठगया फिर महाकुलीन प्रबल बुद्धिमान् राजाने शुकदेवजीका कुशल मंगल पूछकर कहाकि आपका आग मन कैसेहुआ शुकदेवजी बोले तेरा कल्याणहो मैंने अपने पितासे सुना है कि मोक्ष धर्म्ममें महाविद्वान् मिथिलापुरीका राजा जनक मेरा यजमानहै वह तुम्हारी बुद्धिसे प्रवृत्ति निवृत्तिवाले सन्देहोंको दूरकरेगा तुम मेरी आज्ञासे वहां

तेहो, मुझसरीखे पुरुषसे संशयको निवृत्त करके और शुद्ध निश्चयसे हृदयकी गांठोंको खोलकर उसगतिका प्राप्तकरताहै, आपविज्ञानी स्थिर बुद्धियुक्त और निर्लोभहो परन्तु हेब्रह्मन् विना निश्चयकियेहुये उत्तमोक्षको नहीं प्राप्त करताहै; सुखदुःखादिमें आपकी मुख्यता नहीं है लोभनहीं है न नृत्य गीतादिमें रुचि है न आपको शोक उत्पन्न होताहै, बांधवों में आपको बंधन या संलग्नता और किसी प्रकारका भयभी नहीं है और आपकी बुद्धि में सुवर्ण वा पत्थर समान देखताहूं, मैं अथवा अन्य लोग जो ज्ञानी हैं वह सब भी आपको इस मार्ग में स्थिरबुद्धि जानते हैं जो सर्वोत्तम निरुपाधि और अविनाशी है हे ब्रह्मन् इसलोकमें ब्राह्मण का जो फल है और जिसरूप का कि मोक्ष अर्थ है उनसब में आपका पूरापूरा बर्त्ताव है अब दूसरी कौनसी बात है जिसको आप पूछते हो ५१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेएकपंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १५१ ॥

एकसौबावनका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि वह निश्चय करनेवाले ज्ञानी शुकदेवजी जनक के इस वचनको सुनकर बुद्धिरूप आत्माके द्वारा आत्मामें नियतहोकर और आत्मा को आत्माही से देखकर सिद्धमनोरथ महा आनन्दित और शान्तरूप वायु के समान धर्मधारी हिमालय पर्वत की इच्छासे मौनहोकर चले और दैव योग से उसीसमयपर देवर्षि नारदजीभी सिद्धचारणों समेत उसपर्वतके देखने को आये, वह पर्वत अप्सरा गणों से व्याप्त मन्द २ शब्दों से शब्दायमान हजारों किन्नर गन्धर्व वा विचित्र जीव जीवकनाम पक्षियों से और मोरों की केकानाम वाणियों से शोभायमान राजहंस और कृष्णागौओं से शोभित था और पक्षियों के राजा गरुड़ चारों लोकपाल और ऋषियों के समूहों समेत देवतालोग जिसपर सदैव निवासकरते थे और सबका प्यारा उसको समझकर सदैव वहां आया करते थे उसी पर्वतपर महात्मा विष्णुजी ने भी पुत्रकी इच्छासे तपको किया था और उसी शैलपर बाल्यावस्था में स्वामिकार्त्तिकजीने देवताओंको अपने आधीन किया और तीनों लोकोंका अपमान करके शक्तिको पृथ्वी पर फेंका फिरसंसारको तुच्छकरके स्वामिकार्तिकजी ने यहवचनकहा किजोकोई दूसरा मुझ से अधिक है और वेदपाठी ब्राह्मण जिसको अधिकप्यारे हैं अथवा कोई अन्यभी जो ब्राह्मणों का माननेवालाहै और तीनोंलोकोंमें पराक्रमीहै वहइसशक्तिकोउठावे अथवा हिलादेवे यहवचनसुनकर सबलोकपीड़ायमानहुये कि कौन इसको उठावे तदनन्तर भगवान् विष्णुजीने सबदेवताओं के समूहको भ्रांतिचित्त और अस्वस्थ

व्याकुलता में प्रवृत्त और असुर राक्षसों से तिरस्कृत देखके यह विचारकिया कि इसस्थानपर कौनसाकाम उत्तमहोगा, ऐसाविचार अप्रतिष्ठाको न सहकर उसअग्नि के पुत्र स्वामिकार्त्तिक के समक्षमेंजाके उसप्रज्वलित शक्तिको अच्छेप्रकार से पकड़कर बायेंहाथसेही हिलाया तब महाबली विष्णुके शक्ति हिलातेही उस शक्तिकेसाथ वन पर्वतों समेत सब पृथ्वी कांपनेलगी जबवह शक्ति ऐसे धारणकरने में सामर्थ विष्णुजी ने केवल हिलाही मात्रदी और स्कन्द के अपमान को न किया अर्थात् भगवान् ने इसको हिलाकर प्रह्लाद से यह वचन कहा कि कुमार के पराक्रम को देखो इसपराक्रमको दूसरा नहीं करसक्ताहै इस वचन को न सहकर प्रह्लाद ने शक्तिके उठाने का निश्चय करके उस शक्तिको पकड़कर हिलाना चाहा परंतु उससे नहीं हिली तब तो वह महाशब्द करके पर्वतके शिखरपर मूर्च्छावान होकर अति व्याकुलता से पृथ्वी पर गिरा और फिर शैलराज के उत्तर दिशाकी ओर शिवजी ने जाकर हिमालय में सदैव तपस्याको किया उनका आश्रम अग्नि के समान देदीप्त है, उस पर्वत पर एक सूर्यनाम पर्वत हैं जो अशुद्ध अन्तःकरणवालोंसे महा कठिन और दुर्धर्ष है वहां यक्षराक्षस दानवनहीं जासक्ते उसका विस्तार दश योजन है और अग्निकी ज्वालाओं से व्याप्त है वहां भगवान् अग्निदेवता आप विराजमान रहते हैं हजार दिव्य वर्षतक एकचरण से खड़ेहोकर महा-प्रतापी अग्नि देवता श्रीमहादेवजी के अनेक विघ्नों को शान्त करते हुये वर्त्तमान हुये वहां महाव्रतधारी शिवजी ने देवताओं को अच्छे प्रकार से संतप्तकिया और उस पर्वतकी पूर्वदिशामें पहाड़केकिनारेमें बड़ेएकान्त स्थान पर बैठेहुये पराशरजी के पुत्र महातपस्वी व्यासजी ने अपने शिष्यों को वेद पढ़ाया उनके नाम महाभाग महाज्ञानी तपस्वी सुमन्त वैशम्पायन जैमिनि और पैलथे,जिसस्थानपर शिष्योंके मध्य वर्त्तमान व्यासजीथे उसपिताके उत्तम क्रीड़ाकेयोग्य आश्रमको शुकदेवजी ने देखा, जो कि अरणीकेपुत्र शुकदेवजी अत्यन्त शुद्धआत्मा और आकाशके सूर्यकेसमान तेजस्वीथे इसकारण व्यास जी ने अग्निकी ज्वाला के समान तेजस्वी और सूर्य के समान प्रकाशमान देश पर्वत वृक्षादि को प्रकाशित करते और सब से स्पर्श योगयुक्त महात्मा रूप धनुष से निकलेहुये बाणकी समान आतेहुये पुत्रको देखा, उस अरणी के पुत्र महामुनि शुकदेवजीने सन्मुख में आकर पिता के चरणोंको स्पर्श करके दण्डवत्की और उन अपने पिताके शिष्यों से भी मिले फिर राजा जनक से जो जो वृत्तांत हुआथा वह सब अपने पितासे प्रसन्नता पूर्वक सत्य २ वर्णन किया इसप्रकारसे पराशरजीके पुत्र व्यासमुनि ने अपने पुत्र और शिष्योंको वेद पढ़ाया और हिमालयके पृष्ठपर निवास किया एकसमय वेदपाठी शांत-

चित्त जितेन्द्री शिष्योंको चारोंओर बैठाकर व्यासजी पढ़ातेथे तब वह महा-
तपस्वी शिष्यलोग अंगोंसमेत वेदोंमें निष्ठाको पाकर हाथ जोड़के गुरु से
बोले कि हे गुरुदेव बड़े तेजस्वी यशस्वी और वृद्धि पायेहुये हमसब अब आप
से एकअनुग्रह करवाना चाहते हैं उनके इसबचनको सुनकर ब्रह्मर्षि व्यासजी
ने उनसे कहा कि हे पुत्रो तुम उसबातको अवश्यकहो जो मेरेकरने के योग्य
है, हेराजा गुरूके इस बचनको सुनकर शिष्योंने फिर हाथजोड़ शिरसे गुरू
को प्रणामकरके यह उत्तम बचनकहा कि हेमहाराज गुरुदेवजी जो आपहम
सबपर प्रसन्न हैं ऐसीदशामें हमलोग धन्य हैं और यह वरदान आपसे चाहते
हैं कि आपका छठवां शिष्य संसारमें कीर्त्तिको न पावै इसविषयमें आपप्रसन्न
हूजिये, हमआपके चारशिष्य हैं और गुरुपुत्र शुकदेवजी पांचवें हैं यही इस
लोक में वेदकी प्रतिष्ठा पावें यही हम बरदान चाहतेहैं, शिष्यों के बचन को
सुनकर वेदार्थ और सिद्धान्तों समेत परलोकके अर्थको जाननेवाले धर्मात्मा
बुद्धिमान व्यासजीने शिष्योंसे यह धर्मरूप कल्याणमय बचन कहा कि जैसे
ब्राह्मणको वेद होताहै उसीप्रकार सेवा करनेवाले के लिये सदैव धन आदि
पदार्थ देना चाहिये, जो पुरुष ब्रह्मलोकमें अचल स्थानको चाहताहै यह उस
का कामहै आप सबलोग वृद्धि पायेहुयेहो और यह वेद बहुत विस्तारकोपावे,
यह हमारा आशीर्वाद है जो शिष्य नहीं है वा ब्रत रहित है अथवा अशुद्ध
अन्तःकरण है उसको कभी न देना चाहिये शिष्योंके यह सब गुण अर्थ स-
मेत जाननेके योग्यहैं, जिसके ब्रत और चालचलन आदि की परीक्षा नहीं
ली है उसको किसी दशामें भी यह विद्या देना योग्य नहीं है, जैसे कि शुद्ध
सुवर्णकी परीक्षा गरमकरके काटने और खींचनेसे करतेहैं उसीप्रकार शिष्यों
की परीक्षा कुलीनपनके गुण आदि से करनी चाहिये, और अपने शिष्यों
को ऐसे स्थानपर तुमको आज्ञा नहींकरनी चाहिये जो कि आज्ञाके विपरीत
और भयका करनेवालाहो, जैसी बुद्धिहोतीहै वैसाहीपढ़ना होताहै इसीप्रकार
जैसेको वैसाही फलविद्याभी देगी, सबअगम्य स्थानोंको सुगमकरो औरसब
कल्याणोंको देखो ब्राह्मणको आगे करके चारों वर्णोंको सुनावे यहीवेदका प-
ढ़नाहै और महाकर्म है इसलोकमें ब्रह्माजीने देवताओंकी स्तुतिके लिये वेदों
को उत्पन्न कियाहै जोमनुष्य भूलसे वेदपाठी ब्राह्मणसे कठोरता पूर्वक दुर्बचन
कहताहै वह उस ब्राह्मणके शापसे निस्सन्देह नाश होजाता है और जो ब्रा-
ह्मणको अधर्म्म से उत्तर देताहै या अधर्म्म से ही प्रश्न करता है वह भी नष्ट
होजाताहै अथवा जोकोई वेदपाठीसे विरोध करताहै वहभी भ्रष्टहोजाताहै यह
सब वेदकी विधि तुमसे वर्णनकी और तुम शिष्योंका उपकार करो यही बुद्धि
तुम्हारे चित्त में सदैव नियतहो ५३ ॥ इतिद्विचत्वारिंशदुपरिशततमोऽध्यायः १४२ ॥

एकसौतिरपनका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि इसपरस्पर वार्त्तालापके पीछे व्यासजीके शिष्य जो बड़े तपस्वी तेजस्वी और प्रसन्नचित्तथे वह सब व्यासजी के इन वचनोंको सुनकर परस्परमें एकएकसे स्नेह पूर्वक मिले, भगवान् गुरूजीने जोउपदेश कियावह वर्त्तमान और भविष्यत कालमें हमारा हितकारीहै वह उपदेश हमारे चित्त में नियतहुआ हम सब उसको उसीप्रकारसे करेंगे; फिर अत्यन्त प्रसन्नचित्त और वार्त्तालापमेंप्रवीणउन शिष्योंने परस्परमें इसप्रकार कहकर फिर गुरूजी को जतलाया कि हेमहामुनिप्रभु हमवेदोंको बहुतप्रकारका करनेको पृथ्वीपरजाना चाहते हैं इसमेंक्याआपकी आज्ञाहै तदनन्तरव्यासजीने शिष्योंके वचनोंको सुनकर धर्म्मअर्थ संयुक्त हितकारी वचनोंको कहा, किजोतुमको इच्छाहै तो पृथ्वीपर या स्वर्ग में जहांचाहो वहांजावो परन्तु तुम को सावधान करना उचित है क्योंकि वेदविहित तर्कनाओं से युक्तअनेक अर्थवाला है, तदनन्तर सत्यवक्ता गुरूसे आज्ञालेकर वहसब शिष्य व्यासजीकी प्रदक्षिणाकरके मस्तक को नवा नवा दण्डवत्कर चलेगये, और पृथ्वीपर उतरकर उनशिष्यों ने चातुर्होत्रमन्त्रों को वेद से विचारकिया और ब्राह्मण क्षत्री वैश्य इनतीनों वर्णों को पूजन करातेहुये उन्हीं द्विजन्माओं से अन्यभी पूजितहोकर आनन्दसे गृह में प्रीतिमानहो यज्ञ कराने और पढ़ाने में प्रवृत्त होकर श्रीमान् और कीर्त्तिमान् जगत्में विख्यात हुये, पर्व्वतसे शिष्योंके जानेके पीछे पुत्र, को साथलिये बुद्धिमान् श्रीव्यासदेवजी मौनता पूर्व्वक ध्यान में प्रवृत्त होकर एकान्त में बिराजमान हुये, तब महा तपस्वी नारदजी ने व्यासजीको आश्रमरूपी स्थान में देखकर समय के अनुसार बड़ीमृदुता पूर्व्वक उनसे यह बचनकहा कि हेवशिष्ठगोत्री बिना वेदघोष के आप एकांत में मौनहोकर ध्यानावस्थित अकेले चिन्तायुक्त क्योंबैठेहो बिना वेदहोनेसे यह पर्व्वत ऐसे शोभायमान नहीं लगता है जैसे कि आकाश धूल अन्धकार और राहुसे ग्रसाहुआ शोभा नहींदेता है, देव ऋषियों के समूहों से व्याप्त होकरभी बिना वेदोंके यह पर्व्वत पूर्व्वके समान नहीं शोभित होता है ऐसा विदित होता है जैसाकि निषादों का स्थान हो बड़े तेजस्वी ऋषि देवता गन्धर्वभी वेदरूप धनसे रहित होकर शोभितनहीं मालूम होते हैं, व्यासजीने नारदजीके वचनों को सुनकर उत्तरदिया कि हे वेदविदाम्बर जो आपकहते हैं यहमेरे मनकी बात है क्योंकि आप सर्वज्ञ और वेदज्ञ होकर सर्वत्र उत्तम बातों के देखने वाले हो तीनोंलोकोंका वृत्तांत आपकीमति में नियत है सो हे ब्रह्मर्षि आप आज्ञा कीजिये कि आपका क्या शिष्टाचारकरूं जो मेरे योग्यहै वहां शिष्यों

से पृथक् होकर मेराचित्त अप्रसन्न है, नारदजीबोले कि अभ्यास न करना वेदकामलहै, व्रतन करना ब्राह्मणका मलहै और वाहीका जातिवाले मनुष्य पृथ्वीकामलहैं और उत्तम२ पदार्थोंके देखनेकी उत्कण्ठाहोना स्त्रियोंकामल है, आपअपने पुत्रसमेत वेदरूप धनकेद्वारा राक्षसादि के भयरूप अंधकार को निवृत्त करतेहुये वेदोंकोपढ़ो, भीष्मजीबोले कि उत्तमधर्मज्ञ वेदभ्यास में दृढ़व्रतधारी व्यासजीने अत्यन्त प्रसन्नहोकर नारदजीसेकहा कि ऐसाहीहो, तदनन्तर अपनेपुत्र शुकदेवजीसमेत बड़ेउच्चस्वर पूर्वकस्वरकी रीतियुक्त वेदों के शब्दोंसे लोकोंको पूरितकरके व्यासजीने वेदोंका अभ्यास किया, उन दोनों महातेजस्वी पुरुषोंके वेदघोष करतेही समुद्र कोभी व्यथितकरनेवाला वायुमहावेगयुक्तहोकर चलनेलगा, तब व्यासजीने पुत्रको वेदके पढ़नेसे निषेधकिया फिर शुकदेवजीने अपूर्ववातों के देखनेकी उत्कण्ठा से अपने पिता से निषेधका कारण पूछा औरकहा कि हे ब्रह्मन् यह वायुकहां से उत्पन्न हुआ आप इसका सबवृत्तांत मूलसमेत वर्णन करने को योग्यहैं, व्यासजीने शुकदेवजी के इस वचन को सुनकर बड़े आश्चर्य्य पूर्वक इस आंधी के विषय में यह वचनकहा कि तेरे दिव्यदृष्टि उत्पन्न हुई है और तेरा चित्तभी अति निर्मलहै अर्थात् तमोगुण रजोगुण से रहित बुद्धि में नियतहै, जैसे कि दर्पण में अपने प्रतिबिम्ब को देखतेहो उसीप्रकार बुद्धिसे आत्माको देखो और आपही वेदार्थोंको खंडन मंडनकी तर्कनाओं से सिद्धकरके बुद्धिसेही अच्छे प्रकार विचारकरो, सर्वव्यापी परमात्मा से सम्बन्ध रखनेवाला जो देवयान नाम मार्ग है उसमें विचरनेवाला अर्थात् सात्विक उपासकों के आवागमन रहित विष्णुलोक में पहुंचानेवाला वायु देवयानचर कहाजाता है और पितृयान सम्बन्धी वायु तामस कहाजाताहै यह दोनोंवायु दोनों मार्गोंको पाकर स्वर्ग और पाताल को जातेहैं, पिण्डरूप पृथ्वी और ब्रह्माण्ड रूप अन्तरिक्ष में जहां जहां वायु चलते हैं वह सब सात मार्ग हैं उनको क्रम से जानो, वहां पर महाबली साध्य नाम देवगण हैं उनका समान नाम पुत्र उत्पन्न हुआ वह बड़ी कठिनतासे विजय होताहै, उसकापुत्र उदान हुआ उसकापुत्र व्यान व्यानका पुत्र अपान और उसीका दूसरा भाई प्राणभीहै, शत्रुओंका संतप्त करनेवाला दुराधर्ष वहप्राणहीहै अर्थात् प्राणका दूसरारूपनहींहै उनके पृथक् पृथक् कर्म्मोंको मूलसमेत कहताहूं ३५ वायु प्राणियोंकी चेष्टाको सब ओरसे पृथक् पृथक् वर्त्तमान करताहै जीवोंके जीवनमूल होनेसे उसकाप्राण नामहै जो धूमसे वा ऊष्मासे उत्पन्न होनेवाले बादलोंके समूहों को इधरउधर करताहै वह प्रवह नाम प्रथम वायुहै वह प्रथम मार्गमें धूम और ऊष्मासेपैदा होनेवाले बादलों के समूहोंको चलायमान करताहै वही वायु वर्षाऋतुपाकर

विजलीरूप होकर महा तेजस्वी होजाता है और गर्जना करताहुआ दूसरा वायु चलताहै अथवा जो चन्द्रमा आदि प्रकाशमान पदार्थोंको सदैव उदय करता है वह आवह नामवायु कहाताहै, ज्ञानी पुरुष जिसको देहके भीतर आदान वा अपान कहते हैं और जो चारों समुद्रसे जलको उठाता है और जो जलको उठाकर आकाश में लेजाकर जीमूतनाम बादलोंके सुपुर्द करता है और जो जीमूतोंको जलमें मिलाकर पर्जन्य नाम बादलोंको सुपुर्द करता है वह तीसरा उद्वहनाम बड़ावायुहै, जिससे खिचेहुये एकस्थानसे दूसरेस्थान पर पहुंचाये हुये बादल पृथक् २ होतेहैं और जिन्होंने वर्षाकेलिये कर्मको प्रारंभ कियाहै वहघननाम जलसे भरेहुये और अघननाम विनाजलके बादल हैं, जिसवायु से मिलेहुये बादल पृथक् २ होजाते हैं इसीकारण उनगर्जने वालोंके नामनद होतेहैं और रक्षाके निमित्त प्रकट होनेवाले जलसे रहित बादल भी मेघही नामसे प्रसिद्ध बोलेजातेहैं अर्थात् रससे रहित फलके समान नाशको नहींपातेहैं, जो वायुजीवोंके विमानोंको आकाशमार्ग होकर चलाता है वह पर्व्वतोंका तोड़नेवाला चौथावायु संवह नामसे बोलाजाताहै, वृक्ष वा पर्वतोंको तोड़नेवाले रूखे वेगवान वायुसे खंडित होनेवाले मेघजिस वायुके साथी होतेहैं उसको बलाहककहतेहैं अर्थात् जो दूसरेके चलयाटकरसे चलते हैं वह बलाहक कहातेहैं, संसारका नाशसूचनकरनेवाले धूम्रकेतु सम्वर्त्तनाम मेघादिक जो उत्पात हैं और जिससे उन्होंकी चेष्टा होतीहै वह आकाशका स्तनयित्नुनाम बड़ाशीघ्रगामी पांचवांवायु विवहनाम कहाता है, जिसवायु में दिव्य और पारिप्लवनाममेघ आकाश मार्ग होकर चलते हैं और जो आकाशगंगाके पवित्रजलको आकाशमें नियतकरके आपस्थिरहोता है और जिसमें दूरसेटकरखाकर एकज्योतिवाला सूर्यहजारों किरणोंका उत्पत्तिस्थान होताहै और उससूर्य से पृथ्वी प्रकाशमानहोती है और जिससे कलारहित चन्द्रमा पूर्णमण्डल और वृद्धियुक्त होताहै वहप्रवहनाम छठवां वायुकहाताहै जो वायु कल्पके अन्त में सब प्राणियोंके प्राणोंको खैंचताहै और मृत्यु वा यमराज दोनों उसके पीछे चलतेहैं अर्थात् वह इन दोनोंकाभी चलानेवाला है, हे वेदांत विचारकरनेवाले तुम बाह्याभ्यन्तरीय विषयोंसे रहित बुद्धिकेद्वारा अच्छीरीतिसे साक्षात्कारकरो, और जो वायु उनपुरुषोंकी मोक्षकेलियेकल्पना कियाजाताहै जो ध्यान और अभ्यासमें क्रीड़ाकरनेवाले हैं, दक्षप्रजापति के दशहजार पुत्रों ने भी उसीको पाकर बड़े वेग से ब्रह्माण्ड के अन्त को पाया है—अब सातवें वायुको कहताहूं—जिसवायुसे संपर्क होनेवाला ब्रह्मरूप योगी जाता है और फिर लौटकर नहीं आता है वह दुःखसे उल्लंघन होने वाला सबसे परे परावहनाम वायुहै, यह अखण्डचैतन्य जन्य अर्थात् उसी

के रूपभेद सबमें वर्त्तमान सबको धारण करनेवाले अपूर्व वायु नियतहोते हैं और चलते हैं, यह बड़ाआश्चर्य्य है जो यह उत्तमपर्वत अकस्मात उसकठोर वेगवाले वायुसे कम्पायमानहुआ, हे तात जब सर्वव्यापी परमात्मा के वेगसे चलायमान उनका श्वासरूप यह वेद अकस्मात् उच्च स्वर से पढ़ाजाता है तब यह जगत् पीड़ामान होताहै इस हेतुसे कि मूलपुरुष के श्वास की वायु अकस्मात् ऊंचेस्वर से उत्पन्न होकर मतकहीं सब संसार का नाशही करदे, इसी कारण से ब्रह्मज्ञानी पुरुष वायु के कठोर और वेगयुक्त चलने पर वेदों को नहीं पढ़ते हैं क्योंकि वायुसे वायुकोही भयहोना कहागया और वहजगत् रूप या वेदरूप ब्रह्मभी पीड़ित होताहै तब यह वचन कहकर और अपने पुत्र को पढ़नेकी आज्ञादेकर व्यासजी आकाशगंगाको गये ५७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेत्रिपंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १५३ ॥

एकसौचौवनका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि व्यासजी के जातेही स्थानके भीतर एकांत स्थान में नियत वेदपाठ में तदाकार शुकदेवजी के पास जब नारदजी आये तब शुकदेवजीने सन्मुख आयेहुये देवर्षि नारदजीको देखकर वेदके अर्थोंके पूछनेकी इच्छासे अर्घ्यपाद्य पूर्वक वेदोक्त बुद्धिसे उनका पूजन किया,फिर प्रसन्नचित्त होकर नारदजी बोले कि हे धर्म्मधारियों में श्रेष्ठ बेटा मैं प्रसन्नहोकर तुम्हारा कौनसा कल्याणकरूं भीष्मजी बोले हे भरतवंशी युधिष्ठिर नारदजी के इस वचनको सुनकर शुकदेवजीने उत्तरदिया कि इससंसारमें जो महतहो अर्थात् बड़ाहो उसीसे मुझको मिलाओ, नारदजी बोले कि पूर्वसमय में भगवान् सनत्कुमारजीने शुद्ध अन्तःकरण और तत्त्वाभिलाषी ऋषियों से यहवचनकहा कि विद्याके समान आंख नहीं है त्यागके समान सुख नहीं, पापकर्म्म से पृथक् उत्तम प्रकृति श्रेष्ठवृत्ति और सदाचार यह महाकल्याणहै, जो दुखरूप मनुष्य शरीरको पाकर उसमें प्रवृत्ति चित्तहोता है वह मोहकोप्राप्तहोताहै और दुःखसे नहीं छूटसक्ता है क्योंकि संसारमें लगनाही दुःखका मूलहै, संसार में प्रवृत्तिचित्त मनुष्यकी बुद्धि मोहजालकी बढ़ानेवाली चलायमान होतीहै मोहजालमें फँसाहुआ जीव इसलोक और परलोक दोनों में दुःखको भोगताहै कल्याण चाहनेवाले मनुष्य अनेक युक्तियोंके द्वारा काम क्रोधादिके जीतने के योग्य हैं क्योंकि वह दोनों कल्याणके नाश के लिये सदैव तैयार रहतेहैं, सदैव क्रोधसे तपकी रक्षाकरे और आलस्य से लक्ष्मीजी की रक्षा करे और प्रतिष्ठा अप्रतिष्ठा से विद्याकी और प्रमाद से आत्माकी रक्षाकरे,दयाधर्महीं उत्तम है शांतहोनाही बड़ापराक्रम है और ज्ञानों में आत्मज्ञान श्रेष्ठ है और

सत्यसे बड़ाधर्म कोई नहीं है, सत्य बोलना कल्याणरूप है और सत्यसे भी वह उत्तमहै जो हितकारि बातकहै इस निमित्त जीवोंका जो प्रियवचन या प्राप्तहोनेवाला हितहै वह सत्यताही जानो, जो सम्पूर्ण प्रारम्भ कर्मोंका त्याग करनेवाला इच्छा और परिग्रहसे रहितहै और जिसने सर्वस्व त्यागभी किया है वही ज्ञानी और महापंडितहै, जो पुरुष आत्माके वशीभूत इंद्रियों से विषयादिकों को भोगते हैं उन में वहपुरुष श्रेष्ठ है जो उन विषयादि में चित्त न लगाकर रूपांतर दशासे रहित सावधान होता है उन आत्मारूप इंद्रियों के साथ अथवा उनसे पृथक्भी उनसे सम्बन्ध नहींरखताहै वह विमुक्तपुरुष शीघ्र ही कल्याण पदकोपाताहै, हे मुनि सदैव जीवधारियों में जिसको दृष्टि स्पर्श और वचन सम्बन्ध नहीं है वहभी परमकल्याण का भागी है कभी किसीजीवमात्र को न मारे और देवयान मार्ग में वर्त्तमानहोकर विचरे इस जन्मको पाकर किसीके साथ शत्रुता न करे कुछपास न रखना सन्तोषयुक्त चपलता रहितहोनाभी महाकल्याणकारी है जो कि मनको जीतकर आत्मज्ञानी हैं और स्त्रियादि परिग्रहको अत्यन्त त्यागकर जितेन्द्री और दुर्व्यसनोंसे रहित अशोकस्थानमें नियतहैं और जो संसारि विषयोंसे पृथक् हैं वह शोच कभी नहीं करते हैं, जो इन विषयोंको त्यागेगा वह दुःखरूप तीनों तापों से छूटेगा सदैव तप करनेवाले जितेन्द्री सदैव अजय को विजय करने के इच्छावान संगोंसे असंगीमुनिको मोक्षका अधिकारी होना उचित है, गुणों के संगों में प्रवृत्त न होनेवाला सदैव एकान्त विचार करनेवाला ब्राह्मण थोड़ेही समय में असादृश्य सुख को पाता है, जो एकाकी मुनि उन जीवधारियों में घूमता है जो कि सुख दुःखादि योगों में प्रवृत्त हैं उसको विज्ञान से तृप्तजानो क्योंकि ज्ञान से तृप्त पुरुष शोच नहीं करता है, उत्तम कर्म्मों से देवभाव को पाता है और दोनों अच्छे बुरे कर्म्मों से मनुष्य योनि को पाता है और बुरे कर्म्मों से महानीचयोनियों में जन्म को पाता है और जरामृत्यु और अनेक दुःखों से बारम्बार पीड़ित कियाहुआ संसार में पकायाजाता है उसको तुम कैसेनहीं जानतेहो, यद्यपि अमंगलमें मंगलबुद्धि और चलमें अचल अनर्थ में अर्थबुद्धिभीहो तो भी आपकिस निमित्त सावधान नहींहोतेहो, अपने मोह के कारण देहजन्य अनेक जालों से और बंधनों से बँधेहुये आपको कैसेनहीं जानतेहो और रेशमके कीड़ेके समान अपनेको आपही बंधमें करतेहुये भी नहीं जानते इसलोकमें स्त्रीआदि के परिग्रह से तृप्तीहो वह परिग्रह निश्चय करके दोषयुक्त है वहरेशम का कीड़ा परिग्रहसेही माराजाताहै, पुत्र स्त्री और कुटुम्ब में आशक्त चित्त मनुष्य बड़ीपीड़ापाते हैं उनकी वैसीही दशाहै जैसी कि वृद्ध जंगलीहाथी कीचके तालाब में फँसकर फिर नहीं निकलसक्ता है,

प्रीतिरूपी रस्सी से खैंचेहुये बड़ेदुःखी जीवों को देखो वहऐसी दशामें होते हैं जैसे बड़ी रस्सियों के जालमें फँसीहुई मछलियां सूखे स्थलमें धरीहों, पुत्र स्त्री कुटुम्ब और अपना संचित आदि अनेक संसारी पदार्थ सब नाशवान् हैं केवल पुण्यपापके सिवाय अपना यहां कुछभी नहीं है, जब सबको त्यागकरके तुझअसहायको चलनाहै तो फिर क्यों अनर्थमें फँसता है और अपने मोक्षरूप अर्थका अभ्यास नहीं करताहै, तुमअकेलेही उसअन्धकार बनके मार्गमें कैसे जाओगे वह बन निवासस्थान और रक्षास्थान मार्गके भोजन और आबादी से रहित हैं, तुझ यात्रा करनेवाले के पीछे तेरे पापपुण्य के सिवाय कोई भी नहींजायगा, विद्या कर्म्म शौच और बड़ाज्ञान यही केवल मोक्षकी प्राप्तिके लिये अभ्यास कियेजाते हैं और सिद्ध अर्थ अर्थात् मुक्तपुरुष उनसे छूटजाता है, वह रस्सी बारम्बार बांधने वाली है जो कि बहुतों में मनुष्यकी प्रीतिहोती है उसरस्सी को शुभकर्म्मी मनुष्य काटकर जातेहैं और पापी इसको काटनहीं सक्तेहैं, जिसमें रूप किनाराहै, मनप्रवाह, स्पर्शद्वीप, भावरस, गन्ध कीच, और शब्दजल है और स्वर्गके मार्ग में अगम्यरूप है अर्थात् स्वर्ग मार्गको रोकनेवाली है, शांति नौकाचलानेका दण्ड है और धर्म्म में नियत रहना नाव खैंचनेकी रस्सी है त्यागवायु है ऐसी नौकाके द्वारा वह नदी तरने के योग्यहै उसमार्गरूप मार्गमें वर्त्तमान तीक्ष्ण वेगवाली नदीकोपार होना चाहिये, धर्म्म अधर्म्म सत्य मिथ्या और जिसबुद्धिसे सत्य मिथ्या करतेहो उस बुद्धिको त्यागकरो, संकल्प न करनेसे धर्म्मको और अनिच्छासे अधर्म्मको त्यागकरो और दोनों सत्य मिथ्याको बुद्धिसे त्यागकरो और परमात्माके निश्चयसे बुद्धिको भी त्यागो, जिसमें कमरकी हड्डियांरूप खम्भा नाड़ीरूप रस्सियों से बँधाहुआमांस रुधिरसे लिपा देहके चर्मसेमढ़ा दुर्गन्ध मूत्रपुरीष आदिसे भराहुआ बुढ़ापे और शोकसे जीर्णरोगकाघर रजोगुण से आतुर है ऐसे भूतावासको अर्थात् देहके निवास स्थान को त्यागकरो यह विश्व और विश्वके सिवायभी जो कुछहै सब पंचतत्त्वरूप है और जो देहसे भी महत्है वह बुद्धिपंचइन्द्री पंचप्राण तीनोंगुणोंका समूह यह सत्रह वस्तुओंका ढेर अव्यक्तनाम कहाता है, यहां सब इन्द्रियोंके शब्दादि पंच विषय और दो विषय मनबुद्धिके गुप्तप्रकटनाम युक्त यह व्यक्त अव्यक्तरूप गुणबीस प्रकारका बोलाजाता है, इनसबसे युक्तहोनेवाले को पुरुष कहते हैं धर्म्म अर्थ काम यह त्रिवर्ग और सुखदुःख जीवनमरण इनसबको जो पुरुष मूलसमेत जानता है वह उत्पत्ति लयके स्थान रूपब्रह्म को जानता है ज्ञानियों का जो कुछ सार पदार्थ है वह क्रमसे जानना योग्य है, इन्द्रियों से जो जो वस्तुलीजाती हैं उनका नाम व्यक्त है और जो इन्द्रियों के घेरेसे बाहर है और कारणरूप देह-

से पकड़ने के योग्य है वह अव्यक्त कहाजाता है यही मर्यादा है इन्द्रियों से सावधान वह जीवात्मा धाराओं के समान तृप्त होताहै जो कि लोकमें फैले हुये आत्माको और आत्मा में फैलेहुये लोकोंको देखता है, सदैव सब दशा में जीवोंको और सगुण निर्गुण ब्रह्मको देखनेवाले पुरुषकी ज्ञानमूल शक्ति नाश नहीं होती है, ब्रह्मरूप ज्ञानीका योग पापकर्म्मों से प्राप्त नहीं होता है मोहसे उत्पन्न अनेक प्रकारके क्लेशोंको ज्ञानसे उल्लंघन करता है, लोकमें प्रकाशरूप बुद्धिसे लोकका मार्ग नाश नहीं होता है, मोक्ष की युक्ति जान नेवाले परमेश्वरने आत्मा में नियत जीवका आदि अन्त रहित न्यूनता से जुदा अकर्त्तारूप वर्णन किया है जोजीव अपने अपने कियेहुये उन कर्म्मोंसे सदैव दुःखी हैं वहदुःखके नाशके अर्थ जीवोंको अनेक प्रकारसे मारते हैं फिर जीव दूसरे नवीन अनेक कर्म्मोंको प्राप्त करता है, और उन्हीं कर्म्मों से ऐसे दुःखपाताहै जैसे कि रोगी अपथ्य वस्तुको खाकर पीड़ितहोताहै बारम्बारमोह से अन्धाहोकर दुःखोंमें सुख मानता है और सदैव मथनके समान बांधा और मथाजाताहै फिर वह बँधाहुआ जीव अपने कर्म्मोंकी मुख्य योनिको प्रकट करताहै और अत्यन्त पीड़ित होकर संसार में घूमताहै सोतुम बंधन से और कर्मों से जुदेहोकर सर्वज्ञ सर्वजित सिद्धरूप और संसारके भावों से रहितहोकर तपके बलसे दृष्टिदोषसे भी उत्पन्न हुये नवीन बंधनको पृथक् करके सुखको उदय करनेवाली बाधा रहित सिद्धिको अच्छे प्रकार से प्राप्तकरो ५६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेचतुःपंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १५४ ॥

एकसौपचपनका अध्याय ॥

नारदजी बोले कि शोकके नाशकेलिये शोकरहित शान्ति उत्पन्न करने वाले आनन्द रूपशास्त्रको सुनकर बुद्धिको पाताहै और उसको पाकर सुखमें वृद्धि पाताहै, शोक भयके हजारों स्थान प्रतिदिन अज्ञानी में प्रवेश करतेहैं पण्डित में कभीनहीं प्रवेश करते, इस कारण अप्रिय के नाशके निमित्त मैं एक इतिहासको कहताहूं जो बुद्धि स्वाधीनता में नियत होतीहै तो शोकका नाशहोता है, अप्रियके मेलसे और प्रियके वियोगसे अत्यन्त निर्बुद्धी मनुष्य मानसी दुःखों से संयुक्त होतेहैं, धन आदि के व्यय होजाने पर जो उसधन आदिके गुणोंको नहीं चिन्तवन करतेहैं उनकी प्रतिष्ठा करनेवाले मनुष्यकी प्रीतिरूप फांसी पृथक् नहींहोतीहै अर्थात् उसमें फँसाही रहताहै, जिसमें प्रीति उत्पन्न होती है उसका अपूर्व दृष्टहोवे और जब अप्रियता से देहको दुःखित जानता है तभी वैराग्यको प्राप्त होता है, जो गतबात को शोचता है वह न अर्थहै न धर्महै और न यशहै जिसका अर्थ नाशहोजाताहै वह फिर कभीनहीं

आताहै सबजीवमात्र जैसे कि गुणों से मिलते हैं वैसेही जुदेभी होतेहैं यह शोकका स्थल केवल एकजीवधारी काही नहींहै, किन्तु सबका है जो पुरुष भूतकाल के मृतकको अथवा नाश प्राप्त होनेवालेको शोचता है वह दुःखसे दुःखको पाताहै अर्थात् दुःखशोक दोनों अनर्थों को प्राप्त करता है, जो पुरुष लोकोंमें सन्तान आदिको देखकर बुद्धिके द्वारा अश्रुपात नहीं करताहै उस ब्रह्मदर्शन करनेवाले को अश्रुपात करनेवाला कर्म्म प्राप्त नहींहोता है, देह और मनके दुःखोंकारोग सन्मुखवर्त्तमान होनेपर जिसमें कि कोईउपाय नहीं करसक्ताहै उसमें चिन्ताभी न करे,दुःखकी औषधियहीहै जो इसको नहींशोचे शोचाहुआ दूरनहीं होताहै किन्तु औरभी वृद्धि पाताहै, बुद्धि के द्वारा चित्तके दुःखको और औषधी से देहके दुःखको निवृत्तकरे यह विज्ञानकी सामर्थ्य है बालकरूप अज्ञानियों से बराबरी न करे, युवावस्था, रूप, जीवन धनका ढेर, नीरोगता, मित्रोंके साथ निवास, इत्यादि सब वस्तु सदैव नहीं रहतीहैं इस हेतुसे इन वस्तुओं में बुद्धिमान् पण्डित लोग लोभ न करें, अकेला आप सम्पूर्ण प्रदेशका शोचकरने को योग्य नहीं है शोच न करताहुआ रोगके स्थानोंको देखकर उनकी चिकित्सा करे,जीवनमें निस्संदेह सुखसेभी अधिक दुःखहै इन्द्रियों के विषयों में जो प्रीतिकरनाहै वही मोहसे अप्रियकारी मृत्युहै, जो मनुष्य दोनों सुखदुःखोंको चारोंओरसे त्याग करताहै वह अनन्त ब्रह्मको पाताहै और पण्डित लोग उसको नहीं शोचते हैं धन आदि अर्थोंका त्याग करतेहैं इसहेतु से जो दुःखरूपहैं वह बिना पालन करने से सुखरूप होजातेहैं और जो दुःखसे प्राप्तहोतेहैं उनके नाशको नहींशोचतेहै कोईकोई धनकी मुख्य दशाको पाकर तृप्त न होनेवाले पुरुष नाशको पातेहैं,इसीकारण पंडित लोग सन्तोषको धारणकरतेहैं,सबधनआदिके समूह अन्तमेंनाशवान्हैं औरवृद्धिप्राप्त करनेवाले अन्त में गिरनेवालेहैं सब मिलनेवाले अन्तको वियोगी होनेवाले हैं जीवन अन्तमें मृत्यु रखनेवालाहै, लोभका अन्त नहीं है सन्तुष्टतामें बड़ा आनन्द है इससे पण्डितलोग संतोषरूपी धनको सर्वोत्तम समझते हैं, सदैव जातीहुई अवस्था अपने नाशवान् देहोंमें एक पलक भी नियत नहीं रहती है इस निमित्त शोच क्यों करना चाहिये, जो पुरुष मोक्षमार्ग में वर्त्तमान हैं वह बुद्धि के द्वारा चित्तसे भी परे भावको विचारकर परमगतिको देखके शोच नहीं करतेहैं, इन धन संचय करनेवाले और मनोरथों से अतृप्त मनुष्यों को मृत्यु ऐसे लेकर जाती है जैसे कि पशुको व्याघ्र लेजाताहै, तौ भी बुद्धिमान् पुरुष दुःख के दूरहोनेका उपाय विचारसे अवश्य करे और शोचरहित होकर उपायको विचार करे और जीवनमुक्तहोकर काम क्रोधादिकके दोषोंसे पृथक् होजाय, धनी वा निर्धनको शब्दादि विषयों में उपभोगसे अधिक कुछ नहीं

है, विषयों के योगसे पहला दुःख जीवोंका निवास स्थान नहीं है विषयों के वियोगसेही सबको दुःख उत्पन्न होताहै इसलिये मुख्य दशामें नियत होकर शोच नहीं करे, शिश्नेन्द्री और उदरको धैर्य से रक्षाकरे, हाथ पैरों की रक्षा नेत्रों से करे और आंख कानकी रक्षा मनकेद्वारा करे और मनवाणीकी रक्षा विद्याकेद्वारा करे, निन्दास्तुतिमें अनिच्छा और प्रीतिको दूरकरके जो बंधन से पृथक् होकर विचरे वही सुखी है और पण्डित है, जो ब्रह्मविद्या में प्रीति करनेवाला ज्ञानी अनिच्छासे एक स्थानपर नियत विषयोंसे जुदा होकर केवल आत्माहीको अपना साथी बनाकर विचरताहै वही महासुखी होताहै३०॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेपंचपंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १५५ ॥

एकसौछप्पनका अध्याय ॥

नारदजी बोले कि जब सुख दुःखका विपर्य्यास सन्मुख वर्त्तमान होताहै तब उसकी रक्षा बुद्धिसे नहींहोतीहै और अच्छेप्रकार से प्राप्त होनेवाले उपाय भी रक्षा नहीं करसक्तेहैं, स्वभावसे उपाय में नियत होवे क्योंकि उपाय करने वाला दुःखी नहीं होताहै अपने प्यारे आत्माको जरामृत्यु और अनेक रोगों से छुटावे, देह और मनके रोग देहोंको ऐसे पीड़ादेते हैं जैसे अच्छे बलवान् के धनुषसे छोड़ेहुये तीक्ष्णबाण भेदन करते हैं, लोभों से पीड़ित जीवनकी इच्छाकरनेवाले परतन्त्र प्राणीका शरीर नाशके निमित्त आकर्षणकियाजाता है यह दिनऔररात्रिजीवोंकी आयुर्दाको लेकर बराबर व्यतीतहोतेचले जातेहैं और लौटकर फिर इसप्रकार नहीं आते हैं जैसे कि नदियोंका प्रवाह फिरनहीं लौटता, शुक्लपक्ष और कृष्णपक्षका यह बड़ा आवागमन जन्मधारी जीवोंको वृद्धकरदेता है और एक पलकमात्रको भी स्थिरनहीं होता है यह जरारहित सूर्य्य बारम्बार उदय और अस्तहोताहै और जीवों के सुखदुःखोंको निर्बल करताहै, यहरात्रिभी मनुष्योंकी उनप्रिय अप्रिय वस्तुओंको लेकर समाप्त होजाती हैं जिनको कि पूर्वमें न देखाथा न किसीओरसे उनके आनेकीशंका थी, यह इच्छासे जो चाहै तो उनमेंसे उसको तभी प्राप्तकरे जब कि पुरुषका कर्म्मफल दूसरेके आधीन न होवे,परन्तु जितेन्द्री बुद्धिमान् सावधान सन्त लोग सब कर्म्मोंसे पृथक् अर्थात् कर्म्मफलके बिना दृष्टआते हैं और कितनेही गुणोंसे रहित आशीर्वाद न पानेवाले नीचपुरुष अज्ञानी भी मनोरथ पाने वाले दिखाईदेते हैं, जीवधारियोंमें कितनेही मनुष्य सदैव हिन्सा और लोक के ठगने में उपस्थित हैं वह सुखोंमेंही वृद्धहोते हैं, किसी २ निकम्मे बैठे हुये मनुष्य के पासभी लक्ष्मी निवासकरती है और कोई २ कर्म्म प्रवृत्त मनुष्य प्राप्तहोनेके योग्य वस्तुकोभी नहीं पाताहै, पुरुषके अपराधको कहताहूं स्वभाव

सेही वीर्य्य दूसरे स्थान में उत्पन्नहुआ और दूसरेही में फिर भी जाता है, उस योनिमें संयुक्त वीर्य्यकागर्भ उत्पन्नहोताहै अथवा नहींभी उत्पन्न होताहै उसका होना खपुष्पकेसमान पायाजाताहै पुत्रकी इच्छाकरनेवाले और पिछलीसंतान चाहनेवाले,सिद्धि में उपायकरनेवाले कितनेही पुरुषोंका वीर्य्यरूप बीजनहीं उपजताहै जैसेकि क्रोधभरेहुये महाविषवाले सर्पसेभयहोताहै इसीप्रकार गर्भसे भयभीत मनुष्योंका पुत्रभी बड़ीअवस्थावाला उत्पन्नहोताहै मानोंमरकर जीता है, देवताओंको पूजकर तपस्याकरके पुत्रकीइच्छावाले पुरुष दुःखोंसे दशमही- नेतक गर्भमेंरक्खेहुये कुलीनपुत्रकोभी दोषलगानेवालेहोतेहैं,उन्हीं मंगलोंसे प्राप्तहोनेवाले अन्यपत्र पिता के संचितकियेहुये धनधान्य और बड़े २ उत्तम भोगोंके भोगने के लिये उत्पन्न होते हैं, परस्पर में अच्छीरीति से सलाहकर के स्त्री पुरुषके भोगमें योनिकेद्वारा गर्भ ऐसे प्राप्तहोताहै जैसे कि देहमें प्रवेश करनेवाला उपद्रवप्रकटहोता है, शीघ्रही दूसरेशरीरको प्राप्त करते हैं अर्थात् स्वर्गनरकका वीर्यरूप सूक्ष्मदेह जिसका नाशवान् हुआ और मांसरुधिर रख नेवाले देहसे जिसकी चेष्टा है उसशरीरवाले प्राणीको देहकेत्यागने के समय दूसरादेह प्राप्तहोता है, मरने के समय दूसरीदेह में भस्म और नाशपानेवाले जीवको देखकर विपरीतदशा से क्षणमात्रमेंही नाशहोनेवाला दूसरादेह कर्म्म संबंधसे ऐसे उत्पन्नहोताहै जैसे कि नौकामें रक्खीहुई नौकाहोतीहै, स्त्री पुरुषके संभोग से उत्पन्नवीर्य जो कि चैतन्यनहीं है पेटमेंरक्खागयाहै उसगर्भ को किसउपायसे तुम सजीवकरतेहो और जीवतादेखतेहो, जिसउदरमें भो- जन की वस्तुके समान वह गर्भ क्यों नहीं परिपाक होताहै गर्भमें मूत्र विष्ठा आदिकी गति स्वाभाविक है उनकेधारण करने वा त्यागकरनेमें स्वतन्त्रभी कर्त्ता वर्त्तमाननहीं है, उदरसेगर्भ गिरभी पड़तेहैं इसीप्रकार बहुत से कर्म्मभी उत्पन्नहोकर नाशहोजातेहैं और ग्रहभूत पिशाचादिके प्रवेशसे अनेक गर्भों का नाशहोता है इसीकारण जो पुरुष योनिसम्बन्ध से वीर्यकोछोड़ता है वह किसीप्रकारकी सन्तानकोपाताहै और फिर सुखदुःख आदि योगों में संयुक्त होताहै, गर्भकानिवास, जन्म, बाल्यावस्था, कौमारअवस्था जो कि पांचवर्ष तक रहतीहै और पौगण्ड अवस्था जो दशवर्षतकहोतीहै तरुणवृद्ध और ज- रावस्था, प्राणरोधावस्था, नाश यह दशअवस्था हैं उसअनादि प्रवाह से बँ- धीहुई देहकीसातवीं वृद्धावस्था और नवीं प्राणरोधावस्थाओं को पंचतत्त्व प्राप्तकरते हैं आत्मानहीं कर्त्ता है तदनन्तर वह दशवीं नाशदशाको प्राप्तहोते हैं, उपाय करनेमें मनुष्योंकी सामर्थ्य निस्सन्देह नहीं होतीहै जब कि वह अनेक रोगोंसे ऐसे व्यथित कियेजातेहैं जैसे शिकारियोंसे मृगपीड़ित किये जाते हैं, उपाय और चिकित्सा करनेवाले वैद्यादि लोग अपनी अनेक ओष-

धियों से और अनेक रीति से धनके व्ययकरवानेसे भी उनके रोगों को दूर नहीं करसक्ते हैं और चिकित्साकरनेवाले भी जब तंगहोजाते हैं तब अनेक प्रकारके कड़ुए कसेलेकाढ़े और फुकेहुये दिव्य रसोंको खिलातेहैं फिर भी वृद्धावस्था से ऐसे जीर्णशरीर दिखाई देतेहैं जैसे कि बड़े २ हाथियों के तोड़े हुयेवृक्ष निस्सत्त्वहोजाते हैं, पृथ्वीपर रोगोंसे पीड़ित पशु पक्षी और व्याघ्रादि विचारे जीवोंकी कौनचिकित्सा करताहै इसीहेतु ईश्वरकी कृपासे बहुबहुधारोगी नहीं होतेहैं ३३ महाउग्रतेजस्वी राजाओं को भी रोगदबाकर अपने आधीन करते हैं जैसे कि पशुओंके समूहअन्यपशुओंके समूहोंको,यहलोक पीड़ाकरके व्याकुल मोह शोकसे व्याप्त और आकस्मिक महावेगवाले प्रवाह से घिराहुआ चेष्टाकरताहै,जो अपने दिव्य शरीरपर स्वाधीनहै वहधनराज्य और उग्रतपके द्वारा स्वभावको उल्लंघन नहीं करते हैं,उद्योग सफलहोने पर न मृत्युपाते हैं न वृद्ध होतेहैं न अशुभको देखते हैं किन्तु सब मनोरथों के सिद्धकरनेवाले होतेहैं, सब मनुष्य संसारसे ऊपर ऊपर जानाचाहते हैं और सामर्थ्यके अनुसार उद्योगभी करतेहैं परन्तु वह ईश्वर उसरीतिसे वर्त्तमान नहीं होताहै, सावधान शूरबीर पराक्रमी मनुष्य शठताको त्यागकर ऐसे लोगोंको प्राप्तहोतेहैं जो कि अपने रजोगुणमें मद्यपानसे उन्मत्त हैं, कितनेही मनुष्यों के अदृष्टक्लेश दूर होजातेहैं और कितनोंहीको अपना भी धनप्राप्त नहींहोता है, कर्म्मफलकी इच्छाकरनेवाले मनुष्योंमें फलोंका बहुतसा अन्तर दीखताहै कोई पालकीको लेचलतेहैं कोई पालकीमें सवारहोतेहैं, वृद्धिचाहनेवाले सब मनुष्योंके रथके आगे भी कोई मनुष्यहोते हैं, सैकड़ों मनुष्य तो विवाहिता स्त्रियों के रखने वाले हैं कितनेही सुख दुःखादि योगोंमें क्रीड़ायुक्त नानाप्रकारकी स्त्रियोंका संगकरतेहैं तुमइस दूसरे पदकोदेखो इसमें मोहकोनहीं करो, धर्म्माधर्म्मको त्यागकर सत्यमिथ्यासे रहित होकर जिसबुद्धिके द्वारा उनको छोड़ताहै उस-को भी त्यागकरो, हे ऋषियोंमें श्रेष्ठ शुकदेवजी यहबड़ीगुप्त वार्त्तामैंने तुमसे कही इसकेद्वारा देवता मर्त्यलोकको त्यागकर स्वर्गलोकको गये हैं, नारदजी के इनबचनों को सुनकर बड़े धैर्यवान् बुद्धिमान् शुकदेवजी मनसे अच्छे प्रकार बिचार कर दृढ़निश्चय को न पाकर जाना कि स्त्री पुत्रादि से बड़ी उपाधि में फँसताहै और विद्याके अभ्यास अथवा उपदेश में बड़ा परिश्रम होताहै इससे थोड़े परिश्रम में बड़े उदयवाला सनातन स्थान कौन है; यह विचारकर सगुण निर्गुण के जाननेवाले शुकदेवजी ने एकमुहूर्त्ततक अपनी निश्चयकी हुई और मोक्षधर्म में उत्तम कल्याण करनेवाली गतिको अच्छी रीतिसे विचारा कि मैं किसप्रकार से सब उपाधियों से छूटकर उत्तम गतिको पाऊं जिससे कि इसयोनिसंकट समुद्र में फिर न वर्त्तमानहूं, मैं उसपरम ब्रह्म

भावको चाहताहूं जिसमें आवागमन नहीं होता है इससे सब प्रकारके स्नेहों को त्यागकर मनसे गतिको निश्चय करनेवाला, मैं वहां जाऊंगा जिसमें मेरा आत्माशांतिको पावेगा और जिसमें अविनाशी न्यूनाधिकता रहित सनातन ब्रह्मरूप नियतहोगा, वह उत्तम गतियोगके बिना प्राप्त नहीं होसक्ती कर्मोंसे ज्ञानीको बन्धननहीं होताहै, इसीकारण योगमें अच्छेप्रकारसे नियत होकर और स्थानरूप देहको त्याग वायुके रूपसे इसप्रकाशपुंज सूर्य में प्रवेश करूंगा क्योंकि इसकानाश नहींहै जैसे कि असुरगणोंसे क्षीयमान होकर चन्द्रमा पृथ्वीपर गिरताहै और फिर चढ़ताहै अर्थात् सदैव नष्टताको पाताहै और फिर पूर्णकला होताहै मैं इसवृद्धिक्षयको बारम्बार जानकर नहींचाहता हूं अविनाशी मण्डलवालासूर्य अपनी प्रत्यक्ष पवित्र कलाओं से लोकों को अच्छी रीति से संतप्तकरता है और सब ओरसे तेजको खेंचता है इसकारण प्रकाशमान तेजवाले सूर्यमें जाना मुझको अभीष्ट है, दुर्धर्षमें निश्शंक अन्तःकरण से वासकरूंगा मैं सूर्यलोकमें इसकारण नाम देहको त्यागूंगा, और ऋषियोंके साथ बड़े असह्यसूर्यके अन्तर्यामी तेजमें प्राप्तहूंगा, मैं वृक्ष सर्पपर्वत पृथ्वी और दशोंदिशाओंको पूछताहूं, और दानव, देवता, गन्धर्व, पिशाच, उरग, राक्षस आदि से भी पूछताहूं कि मैं संसार के जितनेप्राणी हैं उनसबमें निस्सन्देह प्रवेशकरूंगा, सब देवता ऋषियोंके साथ मेरेयोग्य बलको देखो तदनन्तर उसअपूर्व प्रसिद्ध अनूपम नारद ऋषिसे पूछकर और उनकी आज्ञा लेकर पिताजीके पासगये वहांजाकर शुकदेवजीने अपने पिता व्यासजी को दण्डवत् और प्रदक्षिणाकरके पूछा तब महात्मा व्यासजीने शुकदेवजीके उस वचनको सुनकर कहा कि हे पुत्र तुम तबतक निवासकरो जबतक कि मैं तेरे निमित्त चक्षुओंको तृप्तकरूं तब शुकदेवजीने इच्छाप्रीति सन्देह इत्यादि से पृथक्होकर मोक्षकोही विचारकर चलने के लिये मनकिया और अपने पिता को त्यागकर कैलाशके उस ऊंचे शिखरपर गये जहां सिद्ध लोगों के समूह वर्तमान थे ६४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्म्मेउत्तरार्द्धेषट्पंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १५६ ॥

एकसौसत्तावनका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे भरतवंशी उनव्यासजी के पुत्र शुकदेवजीने पर्वत के शिखरपर चढ़कर तृणादिसे रहित एकान्तस्थलकी समभूमि में विराजमान होकर योगके क्रमको जाननेवाले शास्त्रबुद्धि के अनुसार चरण से लेकर शिखापर्यन्त सबअंगोंमें आत्माको धारणकिया, तदनन्तर सूर्य्यके शीघ्रउदय होनेपर वह ज्ञानी शुकदेवजी पूर्व मुखहोकर उसस्थानपर अपने हाथ पैरों को

छातीपर इकट्ठेकरके बड़ीनम्रतासे सूर्य्यके सन्मुख बैठगये, जिसस्थानमें न पक्षियोंका समूह न किसी प्रकारका शब्द न संसारी जीवोंका बहुधा दर्शनथा ऐसे स्थानपर बुद्धिमान् शुकदेवजी ने योगक्रियाको प्रारम्भ किया, जब आत्माको सब संगों से असंगदेखा तब शुकदेवजी ने उसपरमात्माको मोक्ष मार्गकी प्राप्तिके निमित्त योगारूढ़ महायोगेश्वरहोकर आकाशको उल्लंघन किया, फिर देवऋषि नारदजी को प्रदक्षिण करके उस अपने योगको महर्षि से प्रकट किया,शुकदेवजी बोले कि हे तपोधन मैंने मार्ग देख लिया मैं उसी में प्रवृत्त हूं आपका कल्याणहो हे महातेजस्वी आपके अनुग्रहसे मैं वांछित गतिको प्राप्तहूंगा, व्यासजीके पुत्र शुकदेवजी उनसे दण्डवत् पूर्वक आज्ञा लेकर फिर योगमें नियतहोकर आकाश में पहुँचे और अन्तरिक्षचारी योग के ज्ञाता शुकदेवमुनि वायुरूप होके कैलाशके ऊपरसे उछलकर स्वर्गको उड़े उससमय ऊपर की ओर चलनेवाले शुकदेवजीको सबजीवोंने गरुड़केसमान तेजस्वी और मन वायुके समान शीघ्रगामी देखा फिर बड़ेमार्ग के अंगीकार करनेवाले और सूर्यके समान प्रकाशमान उस मुनि ने पूरे निश्चय से तीनों लोकों को ध्यानकिया, सब स्थावर जंगम जीवोंने उस एकाग्रमन और सावधान निर्भयहोकर जानेवालेको देखकर सामर्थ्य और न्यायकेअनुसार पूजन किया और देवताओंने दिव्य पुष्पमालाओं की वर्षा से उनको व्याप्त किया और सब गन्धर्व और अप्सराओं के गण उनको देखकर आश्चर्य्यित हुये और बड़े २ शुद्ध ऋषियोंने भी बड़ा अचंभा किया कि इसकौनसे अन्तरिक्षचारीने तपसे सिद्धी को पाया, सूर्यकी ओर देखनेसे जिसका नीचेको शरीर और ऊंचेको मुखहै और नेत्रों से प्रीतिको प्रकट करताहै, तदनन्तर तीनोंलोकों में प्रसिद्ध वह बड़े धर्मात्मा शुकदेवजी सूर्य्यदेवताको देखतेहुये पूर्व्वाभिमुखहोकर सुन्दर वाणी को बोले और अपने शब्द से संपूर्ण आकाशको पूर्ण करतेहुये चले, हेराजा सब अप्सराओं के समूह उस आकस्मिक आते हुये ऋषिको देखकर महाआश्चर्ययुक्त मनसे अचंभा करनेलगे जो कि अत्यन्त सुन्दर नेत्रवाली पंचचूड़ा नाम आदि अप्सराथीं वह परस्परमें कहनेलगीं कि यह उत्तमगति में नियत कौनसा देवता है जो अच्छा निश्चय करनेवाले इच्छारहित विमुक्त पुरुषके समान यहां आताहै तदनन्तर उसमलयाचलनाम पर्वतको अच्छे प्रकारसेउल्लंघन किया जहांपर कि उर्वशी और पूर्व्वचित्तीनाम अप्सरा सदैव निवास करती हैं, वह सबभी उस महर्षिके पुत्रको देखकर आश्चर्य युक्तहुईं कि इस वेदाभ्यासमें प्रीति करनेवाले ब्राह्मणमें ऐसी बुद्धिकी एकाग्रता है, कि थोड़ेही समयमें चन्द्रमाके समानआकाशमें चलताहै इसने अपने पिताकीही सेवासे उत्तम बुद्धिको पाया है यह पितृभक्त दृढ़ तपस्वी

अपने पिताका प्यारापुत्रहै पुत्रके सिवाय दूसरे में चित्त न लगानेवाले उस पिताने इसको कैसे यहांको विदा कियाहै, परमधर्म के जाननेवाले शुकदेव जीने उस उर्वशीके वचनको सुनकर वचनमें चित्तलगाकर सब दिशाओं को देखा और पहाड़वन विपिनों समेत पृथ्वीको और अनेक सरोवर समेत नदी और अन्तरिक्षको देखा, तदनन्तर चारों ओरसे हाथजोड़ेहुये सब देवताओंने बड़ी प्रतिष्ठासे युक्त उन शुकदेवजीकोदेखा, तब परमधर्मज्ञ शुकदेवजीने उन-से यह वचनकहा कि जो पिताजी मुझको अरे शुक इस वचनसे पुकारतेहुये मेरेपीछे चलेआवें तो तुमसब उनको मेरी ओरसे सावधानीसे उत्तरदेना इसमेरी प्रार्थनाको आप सब लोग प्रतिपालन कीजिये, शुकदेवजी के इस वचनको सुनकर सब समुद्र वन नदी आदि समेत दिशाओंने उत्तर दिया कि हे वेद-पाठी ब्राह्मण जैसी तुम आज्ञाकरतेहो वह अंगीकार है इसी प्रकारहोगा जब ऋषि आवेंगे तो उत्तर दिया जायगा ३१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे सप्तपंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १५७ ॥

एकसौअट्ठावनका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि महातपस्वी ब्रह्मर्षि शुकदेवजी इस प्रकार के वचनको कहकर और चारों प्रकारके दोषों से जुदेहो बुद्धि में प्रवेश करते हुये, पाठांतर से शुकदेवजी ने सिद्धी में प्रविष्टहोकर, आठ प्रकारके तमोगुण और पांच प्रकार के विषयों को त्यागकर फिर सत्त्वगुण वा बुद्धिको भी त्यागकिया यह आश्चर्य सा हुआ, तदनन्तर निर्धूम अग्निके समान देदीप्यमान वह ऋषि उससूर्य के अंतर्यामी आवागमन रहित लय के स्थान निर्गुण निराकार ब्रह्म में नियत हुये अर्थात् ब्रह्मभावको प्राप्तहुये, उससमय उल्कापात और दिग्दाहहोकर पृथ्वी कंपायमान हुई यहभी महाआश्चर्यसा होताहुआ (महा पुरुषोंके लयादिक होनेपर संसारकी प्रारब्ध हीनतासूचक अनेक उत्पातहोते हैं,) वृक्षोंसेशाखा और पर्व्वतोंसे शिखर गिरे और निर्घातशब्दोंसे हिमालय पर्व्वतभी फटगया और सहस्रांशु सूर्य्य देवता भी प्रकाशित नहींहुये और अग्निने प्रकाश त्यागकरदिया और नदीसमुद्रादि सब व्याकुलहुये, इन्द्रने स्वादु सुगन्धि युक्त जलकी वर्षाको किया और दिव्य सुगन्धित युक्तपवित्र वायु भी चलनेलगी, हे भरतवंशी फिर उसने उत्तर दिशामें नियत होकर दो महासुन्दर शिखरों को देखा वह दोनों शिखर मेरुपर्वत के दिव्य प्रकाशवान और तुषार से श्वेतरूप ऐसे दिखाई देतेथे मानोंचांदी और सुवर्ण के ढेरहैं विस्तार में सौ योजन और ऊँचाई में तीनयोजन थे,, उसके समीप निश्शंक चित्तहोकर शुकदेवजी जो दौड़े तो उनके दोखण्ड अकस्मात् होगये यह भी

आश्चर्य्यसाही हुआ फिर शुकदेवजी उनशिखरों से अकस्मात् बाहर निकले उसउत्तम पहाड़ने भी इनकी गतिको नहींरोका इसकारण स्वर्ग में देवताओं का बड़ा शब्दहुआ और ऋषिगन्धर्व्व आदि जो पर्व्वतपर रहतेथे उन्होंने भी महाशब्दकिया और पहाड़ उल्लंघन करनेवाले शुकदेवजी को और दोफांक होनेवाले पर्व्वतके शिखरोंको देखकर वहां सबस्थानों पर धन्यधन्य यह शब्द हुआ और देवता ऋषि गन्धर्व यक्षराक्षस और विद्याधरोंके गणोंनेभी उनका यथोचित पूजनकिया और उनके ऊपर दिव्यपुष्पोंकी वर्षाहुई फिर ऊपरको चलकर शुकदेवजी ने मंदाकिनी गंगाको देखा जिसका तटसुगन्धित और प्रफुल्लित वृक्षों से व्याप्तक्रीड़ाके योग्य स्थानथा और उसगंगामें अप्सराओं के गण क्रीड़ापूर्व्वक नग्न होहोकर स्नानकर रहे थे वह नग्न शरीरवाली अप्सरा शुकदेवजीको ब्रह्मरूप देखकर उसीप्रकार नग्न शरीरही वर्त्तमानरहीं हृदयसे प्रीति और स्नेहयुक्त पिताव्यासजी उसमोक्ष मार्ग में चलनेवाले को जानकर, और उत्तम गतिमें नियतहोकर उन के पीछे २ चले तब शुकदेवजी वायु से ऊपर अन्तरिक्षकी चालको और अपने प्रभावको दिखाकर ब्रह्मरूप हुये और महातपस्वी व्यासजी ने दूसरी महायोग गति में उपाय करनेवाले होकर पलभरमें ही उनके मार्गमें पहुंचकर शिखरके दोटुकड़े करनेवाले शुकदेवजी को देखा और वहांके सब ऋषियोंने शुकदेवजीके उसकर्म को वर्णन किया तदनन्तर व्यासपिताने बड़े उच्चश्वरसे तीनोंलोकों को व्याप्तकरके हे शुक इस बचनको ऊंचेस्वरसे कहा, तब धर्मात्मा शुकदेवजीने सर्वव्यापी सर्वात्मा सर्वतोमुख होकर हे पिता इसगर्जना पूर्व्वक शब्दसे उत्तरदिया तिस पीछे भो इस एकाक्षरवाले शब्दके द्वारा सब दिशाओंसे अशेष जड़चैतन्य जीवोंने उत्तरदिया तबसे लेकर अबतक प्रथक् २ कहेहुये शब्दों कोगुफा और पहाड़ोंके ऊपर शुकदेवजीके विषय में कहतेहैं फिर शुकदेवजीने प्रभावको दिखाकर अन्तर्द्धान होकर, शब्दादि गुणोंको त्यागकरके परम पदको भी पाया उसमहातपस्वीपुत्रकी उसअपूर्व्व महिमाको देखकरपुत्र के शोच में व्यासजी पर्व्वतके शिखरपरही बैठगये तदनन्तर मंदाकिनी नाम आकाश गंगा के तटपर क्रीड़ा करनेवाले अप्सराओंके गणउन व्यासजीको देखकर भ्रांतियुक्त हो ऐसीलज्जा युक्तहुईं कि कोई तो जलमें छिपीं कोई गुल्मोंमें गुप्तहुईं और कितनीहीं अप्सराओं ने उन व्यासजीको देखकर वस्त्रों से अपने शरीरों को आच्छादनकिया तब मुनिअपने पुत्रकेमुक्त भावको जानकर और अपने में आत्माके बंधन को समझकर प्रसन्नहोके लज्जितहुये, उस समय देवगंधर्व्व और बड़े २ महर्षियों समेत हाथमें पिनाक धनुष धारण किये भगवान् शिवजी उनव्यासजीकेसन्मुख आये, और उसपुत्र शोकसे व्याकुल व्यासजी को

ढाढ़स और विश्वासकराके यह वचनबोले कि पूर्व्वसमय में पंचतत्त्व पृथ्वी जल अग्नि और आकाश केवलकी समान पुत्र तुमने मुझसे मांगाथा इस हेतुसे वह उसी प्रकारका पुत्र उत्पन्नहुआ और तुम्हारी तपस्यासे पोषितहुआ और मेरीकृपा से वह पवित्र और ब्रह्मतेज रूपहुआ, उसने उसउत्तम गतिको पाया जो अजितेन्द्रियोंसे प्राप्तहोनी कठिनहै हे ब्रह्मर्षि वह गतिदेवताओं से भी प्राप्तहोनी असंभवहै तुम उसको क्याशोचतेहो, जबतकपर्व्वत समुद्रादि नियत हैं तब तकतेरी और तेरेपुत्रकी कीर्त्ति अचलरहैगी, हेमहामुनि तुम इसलोकमें मेरी कृपासे सदैव अपनेपुत्रकी समान सबओरसे सन्मुख वर्त्तमान छाया को देखोगे, हे युधिष्ठिर आप भगवान् शिवजी के समझायेहुये वह व्यासजी छायाको देखतेहुये बड़ीप्रसन्नतासे लौटआये, हेराजा यह मैंने शुकदेवजीका जन्म और मोक्ष व्योरे समेत तुमसे वर्णनकिया, हे पुत्र पूर्व्व समय में देवर्षि नारदजी और महायोगी व्यासजीने हरएक स्थान की कथा में इस वृत्तान्त को मुझसे कहा, जो पुरुष बाह्याभ्यन्तरसे शान्तहोकर इसमोक्ष धर्मसेभरी महा पवित्रकथाको सुनेगा वह मोक्षरूप परमगतिको पावेगा ४२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्म्मेउत्तरार्द्धेअष्टपंचाशदुपरिशततमोऽध्यायः १५८ ॥

एकसौ उनसठका अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले कि हेपितामह गृहस्थी, ब्रह्मचारी, बानप्रस्थ, सन्यासी इत्यादिमें से जो कोई सिद्धिमें नियत होनाचाहै वह किसदेवताका पूजनकरे और आवागमन रहित ब्रह्मलोक किसकी कृपासे प्राप्तहोता है और किससे मोक्ष प्राप्तहोती है और किस बुद्धिसे देवता पितृसंबंधी हवनश्राद्धादिको करे, और मुक्त पुरुष किस गतिको पाता है और मोक्षका क्या स्वरूप है और स्वर्ग में प्राप्तहोकर क्या २ करे जिसके द्वारास्वर्गसे नहीं गिरे देवताओं काभी देवता कौन है इसीप्रकार पितरोंका पितरभी कौनसाहै और देवता आदिके स्वामी से जो श्रेष्ठतरहै इनसबको आप मुझेसमझाइये, भीष्मजी बोले कि हेनिष्पाप प्रश्नोंके ज्ञाता तुम यहबड़ाप्रश्नमुझसे पूछतेहो इसप्रश्नके उत्तरको मैं सैकड़ों वर्षमेंभी देवताकी कृपा और ज्ञानप्राप्ति के बिनातर्कनाओंके द्वारा कहनेको समर्थनहीं होसक्ता हे शत्रुहन्ता युधिष्ठिर यह कठिनतासे बुद्धिमें आने योग्य आख्यान तुझ से कहने के योग्यहै, इस स्थानपर इसप्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें नारदजी और श्री नारायण ऋषिकाप्रश्नोत्तर है, वह नारायणजी विश्वके आत्मा चतुर्मूर्त्तिधारी सनातन धर्मराज के पुत्रहुए अर्थात वासुदेवजी से संकर्षणनामजीव उत्पन्नहुआ जीवसे प्रद्युम्ननाम चित्तहुआ चित्त से अनरुद्ध नाम अहंकार प्रकट हुआ यही चार मूर्त्ति हैं, हे महाराज

पहले स्वायंभुव मन्वन्तर के सतयुग में स्वतः सिद्ध होनेवाले नर नारायण हरिकृष्ण नाम चारों रूप प्रकट हुए उन सब में आदि अन्त न रखनेवाले नर नारायणजी ने बदरिकाश्रम को पाकर मोह उत्पन्न करने से सुवर्ण रूप और शकट के समान अन्य से चेष्टा पानेवाले शरीर में तप स्याकरी वह सवारी रूप देह आठप्रकार की अविद्यारूप आठ पहिये रखनेवाला पंचतत्त्व युक्त मनको क्रीड़ा करानेवाला है अर्थात् मायारूप है वहां वहदोनों लोक नाथ महाकृशाङ्ग नाड़ियों से व्याप्त अपने तपके तेजके द्वारा देवताओं से कठिनतासे देखनेमें आतेथे, जिसपर प्रसन्न होतेथे वहीदेवता दर्शनके योग्य होताथा उनदोनों की इच्छा से और हृदयमें वर्त्तमान अन्तर्य्यामी की प्रेरणा से सर्वज्ञ सर्व दर्शी नारदजी महामेरुपर्व्वत के शिखरसे गंधमादन पहाड़पर आये और सब लोकों में घूमे, हे राजा शीघ्रगामी नारदजी घूमते हुये उस बदरीवन में उन दोनों नर नारायण की संध्याके समय पहुंचे और दर्शन न होनेका नारदको बड़ा शोक और पश्चात्ताप हुआ और कहनेलगे कि यह वह उत्तम अधिष्ठान है जिसमें देव गन्धर्व दैत्य दानवादिक सबजीवयुक्त लोक नियत हैं, प्रथम यह एकही मूर्त्तिथी फिर धर्मकी कुलसन्तान में चार प्रकारसे प्रकटहुए और धर्मादिकसे वृद्धियुक्त हुए, बड़ा आश्चर्य्य है कि अब यहां धर्म नरनारायण कृष्ण हरि इन चारों देवताओं से कृपा किया गया है इनमें से कृष्ण और हरि किसी कारणसे धर्म के उत्तममाननेवाले हुए और इसीप्रकार यहदोनों नर नारायण जी तपमें प्रवृत्तहुए, यह दोनों उत्तम तेजवान यशस्वी सबजीवों के स्वामी पिता और देवताहैं इनदोनों को संध्या आदि क्रियाकाकरना क्या आवश्यक है, बड़े बुद्धिमान् यह दोनों किस इच्छासे किस देवता और पितरका पूजन करते हैं ऐसामनमें बिचारकर नारद जी नारायणकी भक्तिसे अकस्मात् उनदोनोंके सन्मुख वर्त्तमानहुए तब देव कर्म पितृकर्म समाप्त होनेपर उनदोनों ने नारदजीको देखा और शास्त्रकी बुद्धिसे इनकापूजन किया इसआश्चर्य्यको देखकर परम प्रसन्नहोकर नारद जी उनके समीप बैठगये और आनन्द पूर्व्वक श्रीनारायणजीका दर्शनकरके बड़े ईश्वरका ध्यानकर यहबचन बोले, कि पुराण उपपुराण और अंगों समेत चारों वेद तुमको अजन्मा वा सदैव वर्त्तमान अविनाशी सर्वपालक और सर्वोत्कृष्ट वर्णनकरते हैं, यह सब संसार जो हुआ और है और होगा तुमहीमें नियतहै हे देव चारों आश्रम के पुरुषआपको अनेक मूर्त्तियों में नियत करके पूजन करते हैं तुमही सबजगतके पितामाता और सनातन गुरुहो ऐसे आप होकर किस देवता और पितरका पूजन करतेहो यह हमनहीं जानते आप अनुग्रह पूर्व्वक समझाइये श्रीभगवान् बोले कि हे ब्रह्मन् यह कहने के अयो-

ग्य बुद्धिमें गुप्त करनेके योग्य सनातन वार्त्तातुमसरीके भक्तिमानोंसे कहना उचितहै इसको यथा तथ्य तुमसे कहताहूं, जोकि सूक्ष्म कठिनतासे दर्शन होनेवाला द्वैतता रहितगुप्त और चेष्टाके विना अचल सनातन इन्द्रियों के विषय और तत्त्वोंसे भी पृथक् है, वहीजीवोंका अन्तरात्मा और क्षेत्रज्ञ कहा जाताहै और तीनोंगुणोंसे रहित पुरीरूप शरीरमें शयनकरनेवाला कल्पित हुआ, और हेब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ उसीपुरुषसे तीनोंगुणोंका रखनेवाला अव्यक्तवा व्यक्तउत्पन्न हुआ, वहअविनाशिनीशक्ति रूपप्रकृति है वहीअव्यक्त वा व्यक्त भावमें नियत होतीहै, उसीको हमदोनों ईश्वरजीवका उत्पत्ति स्थानजानो और जो यहकार्य्य कारणका आत्मा है उसी कोहमदोनों पूजते हैं और वही देवपितृकर्मों में देवता और पितृरूप कल्पना कियाजाता है, उससेबड़ा कोई पितादेवता और ब्राह्मण नहीं है वहहमारा आत्माजाननेके योग्य है इसीहेतु से हम उसको पूजते हैं, हेब्रह्मन् वही संसार की उत्पत्तिपालन रूपमर्य्यादाको स्थापित करताहै और देवपितृ सम्बन्धी कर्मसबकोअवश्य करना चाहिये यह भी उसीका उपदेशहै, ब्रह्मा, शिव, मनु, दक्ष, भृगु, धर्म, यम, मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्ति, पुलह, क्रतु, वशिष्ठ, परमेष्ठी, सूर्य्य, चन्द्रमा, कर्दम और जो क्रोध विक्रीत नामसे इक्कीस प्रसिद्धहैं वह प्रजापति कहे जाते हैं, जिस देवता की सनातन मर्य्यादा को पूजते हुए वह उत्तम ब्राह्मण उसके देव पितृकर्म को सदैव मुख्यता से जानकर आत्मासे प्राप्त भोगोंको उसीसे प्राप्त करते हैं: जो कोईपुरुष स्वर्ग में नियतहैं उनकोभी शरीरधारी नमस्कार करते हैं परन्तु वह सब उसकी कृपा से उसके दिये हुए फलवाली गतिको पाते हैं, जो पुरुष सत्रह गुणोंसे और कर्मोंसे रहित पन्द्रह कलाओंके त्यागनेवाले हैं वहनिश्चयकरके मुक्तरूप हैं, हेब्रह्मन् मुक्त लोगोंकी लयरूपागति क्षेत्रज्ञ है वही चिदात्मा मायासे सगुण रूप और वास्तवमें निर्गुणकहा जाताहै, वहयोग और ज्ञान से दृष्ट आता है हमदोनों उसीसे प्रकट हुए ऐसे जानकर उस सनातन आत्मा को हम पूजतेहैं सब वेद आश्रम और नाना प्रकार के मतों में नियत होकर मनुष्य भक्तिसे उस आत्माको अच्छी रीतिसे पूजते हैं और वहभी उन को शीघ्रही गति देताहै जो पुरुष संसार में उससे मिलेहुए एक निश्चय में नियतहैं उनमें यही विशेषताहै, कि इसमें प्रविष्ट होते हैं हेनारदजी भक्ति और प्रेम से यहगुप्त उपदेश हमने तुमसे कहा और हेब्रह्मर्षि आपनेभी बड़ी भक्ति से इसको सुना ४५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेएकोनषष्ट्युपरिशततमोऽध्यायः १५९ ॥

एकसौसाठका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे पुरुषश्रेष्ठ युधिष्ठिर इस प्रकार पुरुषोत्तम नारायणजी के समझायेहुए नारदजीने लोकोंका हितकारी प्रश्नफिर उन नारायण जीसे पूछाकि अपने आप उत्पन्न होनेवाले आपने धर्म देवता के घरमें जिस प्रयोजनके लिये चार रूपोंसे अवतार लियाहै उसको आपसाधन कीजिये और मैं अब लोकोंके हितके अर्थ आपकी श्वेत द्वीपमें वर्त्तमान प्रथममूर्त्तिके दर्शनों कोजाऊंगा उसके दर्शनमें मैं अपने अधिकारको वर्णन करताहूं कि एक तो मैं सदैव गुरूका पूजन करताहूं प्रथम मैंने किसीकी गुप्तवार्त्ता प्रकट नहींकी और सब वेदभी अच्छेप्रकारसे पढ़े और मिथ्या रहित होकर तपस्याकोभी किया, शास्त्रके अनुसार हाथपैर उदर शिश्न यहचारों मेरे रक्षितहैं और सदैव शत्रु मित्रको समान जानताहूं और सदैव उस आदिदेव ज्योतिस्वरूपकी शरणमें रहताहूं और सदैव अनन्य भक्ति भावसे पूजन आदि करताहूं, इनमुख्यगुणों से शुद्धहोकर भी मैं उसअनन्त ईश्वरको कैसे न देखूंगा सनातनधर्मकी रक्षा करनेवाले नारायणजीने अपनी बुद्धि और अनुग्रहों से नारदजीकी पूजा करके यहबचन कहा कि अब पधारो यह सुनकर वह ब्रह्माजीके पुत्र नारद जी उस पूर्ण ऋषिको पूज और उनसे विदाहो उत्तम योगमें संयुक्तहोकर आकाशको उछले और क्षणमें मेरुपर्व्वत पर जा पहुंचे और उसके शिखरपर एकान्त स्थानको पाकर एक मुहूर्त्ततक विश्राम युक्तहुए, फिर उत्तर पश्चिम के कोणोंकी ओर देखतेहुए नारदजी अद्भुत रूपवाले उस देशमें पहुंचे जो कि क्षीरससुद्र से उत्तर दिशामें श्वेतद्वीप नामसे प्रसिद्ध बड़ा विस्तारवान् द्वीपहै, पण्डितोंने इसद्वीपको मेरु पहाड़के मूलसे बत्तीस हजार योजन ऊंचा कहाहै वहांपर जोपुरुष रहतेहैं वह इन्द्रियोंसे पृथक् शब्दादि भोगोंसे रहित चेष्टारहित सौगन्धिनाम परमात्माका ध्यान करनेवाले शुद्ध सतोगण प्रधान श्वतरूप सर्वपाप रहित तेजस्वी होनेसे पापात्माको दृष्ट न आनेवाले वज्रके समान अस्ति और शरीरवाले मानापमान रहित दिव्य अंगरूप युक्त योग प्रभावसे उत्पन्न पराक्रमी जिनके छत्र के समान शिर और बादलके समान शब्द शरीरमें पतले और काठके समान चारभुजाधारी अनेक रेखाओं समेत उत्तम चरणहैं और हे राजा छयासठ दांतयुक्त संसारके भक्षण करनेको बर्षोंकी व्यतीतताके समान समर्थश्वेत आठ दाढ़वाले अर्थात् आठों दिशाओं के समान देश और कालको मुखमें धारण करनेवाले विश्वको और महाकालको अपनी रसनासे चाटनेवाले हैं, कारण यह है कि जिससे सब सृष्टि उत्पन्न हुई और सबका ईश्वर है उस देवताको उन्होंने अपने ध्यानके बलसे

अपने हृदय में धारण कियाहै चारोंवेद और सब धर्म देवता ऋषि गन्धर्वादिक जिसने विना उपायके उत्पन्न कियेहैं युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह वह इन्द्री भोजन चेष्टा आदिसे रहितहोकर सौगन्धिनाम परमात्माको ध्यान में दर्शन करनेवाले पुरुष किसप्रकारसे उत्पन्नहुए और कौनसी उनकी उत्तमगतिहै, हे भरतर्षभ इसलोकमें जोजीवनमुक्त होते हैं उन लोगोंका यह लक्षण है और वही श्वेतद्वीप निवासी सगुण उपासकोंका लक्षणहै, इसी हेतुसे इसमेरे संदेह को निवृत्तकरो क्योंकि मुझको अद्भुत बातोंके देखनेका बड़ा उत्साह है और आप सब कथाओंमें कुशलहैं और आपकी शरणहैं, भीष्मजी बोले कि मैंने यह बड़ी कथा पिताके सन्मुख सुनीथी वह तुझसे कहने के योग्य है क्योंकि वह सब कथाओंका सारहै, कि उपरिचर नाम एकराजा संपूर्ण पृथ्वीका स्वामी हुआ वह नारायण हरिकाभक्त और इन्द्रका सखाकरके प्रसिद्धथा, वह धर्म और भक्तिमें कुशल सदैव पिताकी सेवामें सावधानथा उसने पूर्व समयमें श्रीनारायणजीके वरसे सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यको भोगा, और पंच रात्रिनाम वैष्णवोंकी बुद्धिमें नियतहोकर प्रातःकाल सूर्यके मुखसे प्रकटहोनेवाले देवेश का पूजन किया फिर उसपूजनसे बचीहुई सामिग्रीसे पितामहादिकोंको तृप्त किया और पितरोंके शेषबचेहुए अन्नसे ब्राह्मणों औरआश्रितोंको विभागदेकर शेषबचेहुए अन्नका भोजन करनेवाला सत्यतासे न्यायकरने में प्रवृत्त जीव-मात्रमें हिंसासे रहितथा,२० उसभक्तने शुद्धमन से देवदेव दुष्टनिकन्दन आदि अन्तरहित अविनाशी सबके स्वामी भगवान्का पूजन किया, उसनारायणके भक्तदुष्टोंके पीड़ा करनेवाले राजाको इन्द्रने अपने हाथसे एक शैयासन दिया, वा अपनाराज्य धन स्त्री सवारीआदि जो समान सुखकेहैं इनसबको नारायण हीकाहै ऐसासंकल्प सदैव रखताथा हेराजा उससावधान राजाने वैष्णव बुद्धिमें नियतहोकर यज्ञसंबंधीकाम्य और नैमित्तिक उत्तमकर्म्मोंको किया उसमहात्मा के घरमें पंचरात्र शास्त्रके जानने वाले मुख्य ब्राह्मण उस प्रधान भोजन को खातेथे जो भगवत् का प्रसाद कहाजाताथा, धर्मसे उस शत्रुहंता राजाके आज्ञावर्त्ती लोग कभी मिथ्या भाषी नहींहुए और उसका चित्तभी कभीदोष युक्त नहीं हुआ, उसने अपने शरीरसे थोड़ा भीपाप नहींकिया और जो वह सात ऋषिचित्र शिखण्डी नामसे प्रसिद्धथे उन्होंने एकमत होकर जो उत्तम शास्त्रवर्णनकिया वहउसमहामेरु पर्व्वतपर चारोंवेदों के समान लोकका उत्तम धर्मरूप सातमुखों से वर्णन हुआ उनऋषियोंकेनाम मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्ति, पुलह, क्रतु और महातेजस्वी वशिष्ठजी यहीसातों चित्र शिखण्डी कहातेहैं यहसब प्रकृतिहैं और स्वायंभुवमनु आठवीं प्रकृतिहैं यहलोक इन्हींसे धारणकिया जाताहै और इन्हींसे शास्त्र उत्पन्न हुआ, उनएकमत जितेन्द्री

संयममें प्रीतिमान तीनोंकाल के जाननेवाले सत्यधर्म में नियत होकर मनुजीने यह कल्याण रूपब्रह्म है उत्तममतहै इस प्रकारमनसे लोकोंको विचार करफिर शास्त्रकोबनाया, उस शास्त्रमें धर्म अर्थकाम और सच्चीमोक्ष कोभी वर्णनकिया और नाना प्रकारकी वह मर्य्यादें जो स्वर्ग और पृथ्वीपर श्रेष्ठ गिनी जाती हैं उनकोभी वर्णनकिया, वहसब ऋषियों के दिव्यसात हजार वर्षतक हरिनारायणको तपस्या से आराधन करके नियत हुए, तबनारायण जीकी आज्ञासे देवी सरस्वतीजी लोकोंके हित करने को उनऋषियोंमें प्रविष्ट हुई तदनन्तर प्रथम उत्पत्तिमें उत्पन्न होनेवाली सरस्वती उनतपस्वी ब्राह्मणोंके कारणसे सिद्धार्थ और हेतुओंमें अच्छे प्रकारसे वर्त्तमानहुई, आदिमें ऋषियों की ओरसे प्राण व और स्वरयुक्त वहशास्त्र भगवान् विष्णुजीके स्थानमें सुना गया, तदनन्तर षड़ैश्वर्य्य के स्वामी वर्णन से बाहर देहमें वर्त्तमान दृष्टिसे गुप्त प्रसन्न मूर्त्ति परमेश्वरने उन सब ऋषियों से यहवचन कहा कि तुमने जो यह एकलाख उत्तम श्लोक बनाये जिससे कि सब लोक तन्त्र धर्म अर्थात् संसारका धर्मप्रबन्ध जारीहोताहै, और इसीसे यहशास्त्र प्रवृत्ति निवृत्तिमार्गमें ऋग् यजु साम अथर्वण इनचारों वेदोंकी ऋचाओंसे सेवित वा संयुक्तहोगा, हेब्राह्मणो जिसप्रकार वहक्रोधसे प्रकटहोनेवाले रुद्रदेवता ब्रह्मअनुग्रहसे प्रमाण कियेगयेहैं और तुमप्रकृतिरूप ब्राह्मण, सूर्य्य, चन्द्रमा, वायु, पृथ्वी, जल, अग्नि सबनक्षत्रगण और भूतगण इत्यादि अपने २ अधिकारोंपर वर्त्तमान रहते हैं और जैसे वह सब ब्रह्मवादी प्रमाणहैं इसी प्रकार यहआपका उत्तम शास्त्रभी मेरे उपदेशसे प्रमाणहोगा आप स्वायंभूमनुजी इस शास्त्रसे धर्मोंको कहेंगे, और जब शुक्र और बृहस्पतिजी उत्पन्नहोंगे तब वह भी तुम्हारे इस शास्त्रसे धर्मोंको कहेंगे, स्वायंभूमनुके सब धर्म और शुक्र वा बृहस्पतिजी के बनाये हुए शास्त्र लोकों में जारीहोने पर राजा वसु तुम्हारे बनायेहुए शास्त्रको बृहस्पतिजी से पावेगा हे उत्तमब्राह्मण लोगो इसको यथार्थही जानो, और वह राजा साधुओंकासेवी मेरा भक्त होगा वह उसशास्त्रसे लोकोंमें सब क्रियाओं को करेगा, यह तुम्हारा शास्त्र सब शास्त्रों में उत्तम है और सब अर्थ धर्मादि युक्त श्रेष्ठ रहस्यहै तुम इसकेजारी करनेसे सन्तानयुक्त होगे और महाराजा वसु लक्ष्मीमान होगा, उस राजा के परमपदहोनेपर यह सनातन शास्त्र गुप्त होजायगा यह सब वृत्तान्त मैंने तुमसे कहा, वह अदृष्ट पुरुषोत्तम यह वचन कहकर और उन सब ऋषियोंको विदाकरके किसीदिशाको चलदिये, तदनन्तर सब लोकोंका हित विचारनेवाले लोकके पितररूप ऋषियोंने उस धर्मके उत्पत्तिस्थान सनातन शास्त्रको जारी किया, प्रथम कल्पित सतयुग में अंगिरावंशी बृहस्पतिजी के उत्पन्न होनेपर अंग और उपनिषदों समेतशास्त्र

को उसमें नियतकरके,सबलोकोंके धारण करनेवाले और अशेषसंसारको कर्मों में प्रवृत्तकरनेवाले तपनिष्ठवहसबऋषिलोगअपनेअभीष्टदेशकोगये ५५॥

इतिश्री महाभारते शान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे पष्ठ्युपरिशततमोऽध्यायः १६०॥

एकसौ इकसठका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर महाकल्प के अन्त में बृहस्पतिजी के उत्पन्न होनेपर सब देवता उस देवताओं के पुरोहित बृहस्पतिजी के जन्म से बड़े प्रसन्नहुए, हे राजा बृहद्ब्रह्म महत्त्व जिसमें यह सबशब्द संयुक्तहों उसके पूरे अर्थ के कहनेवाले इत्यादि गुणों से संयुक्त बृहस्पतिजी हुए और प्रथम उनका शिष्य राजा उपरिचर वसु होताभया उसने चित्र शिखण्डी नाम ऋषियों के बनाये हुए शास्त्र को गुरु से अच्छे प्रकार पढ़ा, उस महात्मा ने प्रथम तो दिव्यबुद्धिसे पृथ्वी के जीवों का पालन ऐसा किया जैसाकि स्वर्ग का इन्द्र करता है फिर उस यशस्वी ने अश्वमेध नाम भारी यज्ञकिया उसमें उपाध्याय बृहस्पतिजी होतेहुए और प्रजापतिजी के तीन पुत्र एकत द्वित त्रितनाम तीनों महर्षि यज्ञमें सदस्य हुए और धनुषाख्य, रैभ्य, अर्वावसु, परावसु,मेधातिथि,तांड्य, शान्त, वेदशिरा, कपिल जो कि शालिहोत्र का पिता कहाजाता है, अद्य, कट, तैत्तिरि, वैशंपायन के बड़े भाई कण्व, देवहोत्र यह सोलह महान् ऋषि भी उस यज्ञमें वर्त्तमान थे उसबृहत् यज्ञमें और सामान तो सब इकट्ठा हुआ परन्तु उसमें पशुका नाश नहीं हुआ इन सब सामग्रियों समेत वह राजा यज्ञशाला में नियत हुआ, जो कि हिंसा रहित पवित्र अक्षुद्र निराकांक्षी कर्म में प्रशंसनीयथा इस निमित्त यज्ञमें वनके फल मूलों से विभाग विचार किये गये, तदनन्तर वह षडैश्वर्य्य का स्वामी देवताओं का देवता पुरातन पुरुषोत्तम ईश्वर इसपर प्रसन्न हुआ और अदृश्य होकर भी इसको साक्षात् दर्शन दिया और आप अपने पुरोडास नाम भाग को सूंघकर लेलिया अर्थात् अश्वमेध यज्ञसे अपना भागलेलिया, तदनंतर क्रोधित होकर बृहस्पतिजी ने शुच नाम पात्रको उठाकर उससे आकाशको ताड़न करके बड़े अश्रुपातकर उस उपरिचर राजा से कहा कि मेरेसन्मुख से मेरेदेखते हुए यह भाग उठायागया है इससे देवतासे निस्सन्देह लेना योग्य है युधिष्ठिर बोले कि यहां उठाये हुए यज्ञ भाग नेत्रों के आगे देवताओं ने अंगीकार किये परंतु उस हरिने सबको दर्शन क्यों नहीं दिया, भीष्मजी बोले कि यह दशा देखकर उस महाराजा वसुने और सब सदस्यों ने उसउठे हुए बृहस्पतिजीको बहुत प्रसन्न किया, भ्रांति रहित उनलोगों ने उनसे कहा कि आपको क्रोधकरना योग्य नहीं है सतयुगमें यह धर्म नहीं है जो आपने

क्रोधकिया, हे बृहस्पतिजी यह देवता क्रोध से रहित है जिसका यह भाग उठायागया है वह देवता हमसे और तुम से अदृष्ट है, जो इसकी प्रसन्नता करताहै उसीको यह दर्शन देता है तदनन्तर एकत, द्वित त्रित और चित्र शिखण्डी नाम ऋषियों ने यह कहा कि हम ब्रह्माजी के मानसी पुत्र कहाते हैं एक समय हम अपने कल्याण के निमित्त उत्तर दिशाको गये और हजारों वर्षतक उत्तम तपस्या करके सावधानी से काष्ठके समान एक चरण से खड़े रहे वह देश क्षीर सागर के तटपर सुमेरु पर्वतके उत्तर में है जहांपर कि हम ने इस मनोरथसे उग्रतप किया था कि हम उस ज्योतिरूप वरदाता देव देव श्रेष्ठ नारायण सनातनरूपको किसी प्रकारसे देखें तदनन्तर इस व्रत की समाप्ति में अवभृथस्नान होनेपर आकाश से यह गंभीर वाणी हुई कि हे ब्राह्मण लोगो तुमने शुद्ध अन्तरात्मा से अच्छा तप किया, तुम जानने की इच्छा करनेवाले भक्तहो उस प्रभुको कैसे देखोगे क्षीरसागर के उत्तरकी ओर महाप्रकाशवान् श्वेत द्वीप है वहां नारायण को श्रेष्ठतम जाननेवाले चन्द्रमा के समान तेजस्वी एकमें निश्चय भक्ति रखनेवाले मनुष्य हैं वह भक्तलोग पुरुषोत्तम को पूजते हैं, वह इंद्रियों से रहित भोजन और चेष्टासे रहित परमात्मा को ध्यान करनेवाले भक्त उस हजारों किरण युक्त सनातन देवता में प्रवेश करते हैं वह श्वेतद्वीप निवासी पुरुष एक निश्चय रखने-वाले हैं हे मुनियो तुम वहीं जाओ उस स्थान में मेराआत्मा प्रकाशवान्है, इसआकाशवाणी को सुनकर हमसब उसबताये हुये मार्गकेद्वारा उस देशमें पहुंचे और उसके देखने की इच्छाकी तबवह हमको दिखाई देकर गुप्त होगया उसके तेजसे नेत्रोंकी ज्योति नष्ट होजानेसे हम सबने उस पुरुषको नहींदेखा तदनन्तर देवता की कृपासे हमारा यह विज्ञान उत्पन्न हुआ कि तपस्या न करनेवाले पुरुषको निश्चय करके दर्शन होना असम्भव है, फिर हम सबने सौवर्ष तक तात्कालिक नाम तपस्याको करके शुभ लोगोंको देखा वह पुरुष श्वेतवर्ण चन्द्रमाके समान प्रकाशित सब लक्षणयुक्त सदैव हाथजोड़े गायत्री वा प्रणवका जप करनेवाले पूर्व्वोत्तर कोण में मुख कियेहुये वर्त्तमान थे वह महात्मा मानसी जपको करतेहैं उसी चित्तकी एकाग्रता से ईश्वर प्रसन्न होते हैं हे मुनि श्रेष्ठ युगके अन्तमें जैसी कि सूर्य्यकी किरणें होतीहैं वैसाही प्रकाश प्रत्येक मानसी भक्त का था तब हमने जाना कि यह द्वीप इनके रहने का स्थान है उनमें कोई न्यूनाधिक नहीं था सब बराबर के तेजस्वी थे, हेबृहस्पति जो इसके पीछे हमने फिर भी अकस्मात एकहीबार प्रकट होनेवाले हजार सूर्य के प्रकाशको देखा फिर वह मनुष्य हाथ जोड़ेहुये प्रसन्न चित्त नमस्कारकरके शीघ्रही सन्मुखको दौड़े और उन्होंके बोलने की ध्वनिको सुना फिर उन म-

नुष्योंने उस देवताकी बलिक्रियाकी, फिरउसके तेजसे अकस्मात बेहोश अंधे के समान महानिर्बल से होकर हम लोगों ने वहां कुछ भी नहीं देखा उनके मुख से निकला हुआ एक यह शब्द हमने सुना कि हे पुंडरीकाक्ष आपने सबको विजय किया है हे विश्वभावन आपको नमस्कार है हे सबकी आदि इन्द्रियों के स्वामी महापुरुष तुमको नमस्कारहै शिक्षा और हाथकी चेष्टायुक्त यह शब्द हमने सुना, इसी अन्तर में सब सुगंधियों के बहानेवाले वायु ने उत्तम पुष्पोंको और सब औषधियोंको इकट्ठा किया तब पांचों कालके जानने वाले उत्तम भक्तियुक्त एक निश्चयवाले लोगोंने मन बाणी और कर्म से हरि का पूजन किया जैसेही उन्होंने मंत्र वचनों से ध्यान किया वैसेही वह निस्सन्देह साक्षात्कार हुआ परन्तु उसकी मायासे मोहित हमलोगों ने दर्शन नहीं पाया, हे अंगिरा वंशियों में उत्तम बृहस्पतिजी वायु के बंद होनेपर और बलिके भेट करने पर हमलोग चिन्तासे व्याकुलहोगये, उनशुद्ध उत्पत्तिवाले हज़ारों पुरुषों के मध्य में किसी ने हमको मन और नेत्रों से भी पूजन नहीं किया अर्थात् देखा भी नहीं, उन सुस्वरूप एकभाव युक्त ब्रह्मभावका अनुष्ठान करनेवालों ने हमको मनसे भी नहीं देखा तदनन्तर वहां पर स्वर्ग में नियत देहके बिना किसी पुरुषने तपसे पीड़ामान और थकेहुये हमलोगों से यह वचन कहा कि यह दीखनेवाले श्वेतवरण पुरुष सब इन्द्रियों से रहित हैं इन देखनेवाले उत्तम पुरुषोंसे वह देवेश्वर देखनेके योग्यहै और इन्हीं को दर्शन देताहै ५१ हे मुनियो तुम जैसे आयेहो वैसेही शीघ्रतासे चले जाओ उस देवताका दर्शन अभक्त लोगोंसे करना असंभवहै अर्थात् भक्त लोगोंके सिवाय वह किसी को दर्शन नहीं देताहै वह षड़ैश्वर्य युक्त प्रकाश मंडलसे बड़ी कठिनतासे दर्शन होनेवाला काल पुरुष एक निश्चय करनेवाले भक्तों से बहुत काल में दर्शन किया जाताहै हेब्राह्मणो तुम बहुत कर्मोंको करो अबसे लेकर वैवस्वत मन्वन्तर में सतयुगके अन्तहोने और त्रेतायुगके वर्त्तमान होनेपर, तुम देवताओं के प्रयोजन सिद्ध करनेको मेरे साथी सहायता करनेवाले होगे तदनन्तर उस अपूर्व अमृतरूप वचनको सुनकर उसीकी कृपासे शीघ्रही हम सब अपने मनभावने देशको पहुंचे, इसप्रकार बड़ेतप और हव्य कव्यके द्वारा भी उस देवताको हमने नहीं देखा तो तुम उसके दर्शन कैसे करसक्तेहो वह नारायण बड़ाभत्यक्ष संसारका स्वामी हव्यकव्यका भोक्ता आदि अन्त रहित दृष्टिसे गुप्त देवता दानव आदि से पूजित है इसप्रकार द्वित त्रितऋषिके अभीष्ट एकतऋषि के वचनोंसे और सदस्योंसे समझायेहुये बुद्धिमान बृहस्पति जी ने उस यज्ञको समाप्त किया और देवताको अच्छी रीति से पूजा, और यज्ञपूर्ण करनेवाले राजा वसुने भी प्रजाका पालन किया तिस पीछे ब्राह्मणों

के शाप से स्वर्ग से गिरकर पृथ्वी पर आया, हे राजाओं में श्रेष्ठ सत्य धर्म में नियत और पृथ्वी के भीतर वर्त्तमानभी सदैव धर्म वत्सल उस राजा ने, नारायण का भक्त होकर नारायणही के नामका जप किया और उसी की कृपा से वह राजा फिर स्वर्ग को गया और बिना रोकके पृथ्वी तलसे ब्रह्मलोक को गया और बहुत शीघ्र उस संसार बंधन से छूटनेवाली गतिको पाया ६३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्व्वणिमोक्षधर्म्मे उत्तरार्द्धेएकषष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः १६१ ॥

एकसौबासठका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि महाराजावसुतो बड़ा भगवतभक्त था वह किस कारण स्वर्गसे गिरा और पृथ्वीमें आया, भीष्मजी बोले कि हेभरतर्षभ इस स्थानपर एक इतिहास को कहताहूं जिसमें ऋषियों का और देवताओंका सम्वाद है, देवताओंने उत्तम ब्राह्मणों से यह कहा कि अज अर्थात्‌बकरेसे यज्ञोंमें हवन करना चाहिये उस बकरेकोभी अज जानना योग्यहै दूसरा पशु न समझना यह मर्य्यादा है, ऋषियोंने उत्तरदिया कि यज्ञोंमें बीजों के द्वारा हवन करना चाहिये यह वेदकी श्रुतिहै क्योंकि सब बीजोंका अजनाम है इस कारण तुम बकरेके मारने के योग्यनहीं हो, हे देवतालोगो यह धर्म सत्पुरुषों का नहीं है जिसमें कि पशु माराजाय यही श्रेष्ठयज्ञहै पशुको क्योंमारें, भीष्मजी बोले कि देवताओंके साथमें उनऋषियोंकी इसप्रकारकी वार्त्ता होनेपर मार्गमें मिलनेवाले राजाओं में श्रेष्ठ महाराजा वसुभी दैवयोग से उस देशमें प्राप्तहुए वह राजा संपूर्ण सेना और सवारियों समेत श्रीमान अन्तरिक्ष में चलताथा वह ऋषि और देवता उस अन्तरिक्ष गामी राजा वसुको अकस्मात आतादेखकर बोलउठे कि यहराजा हमारे तुम्हारे सन्देहोंको निवृत्त करेगा क्योंकि यह यज्ञ करनेवाला दानपति महाश्रेष्ठ सब जीवोंकी बुद्धिको अच्छा जाननेवाला है यहमहाराजा कभी अन्यथा नहीं बोलेगा। इस प्रकारसे इन देवता और ऋषियोंने सम्मत करके अकस्मात उसके समीप जाकर यह प्रश्नकिया कि हेराजा यज्ञ पशुसे करना योग्य है वा औषधियों से उचित है हमारे इस सन्देह को आप निवृत्त कीजिये हमदोनों समूहोंने आपहीको प्रमाण मानाहै तब राजा वसुने हाथजोड़कर उनसे पूछा कि हे उत्तम ब्राह्मण लोगो आपमेंसे किसकी कौन इच्छा है यह सत्य २ कहो, ऋषिबोले हे राजा हमारा यहपक्ष है कि धानोंसे यज्ञकरना योग्यहै और देवताओं का अभीष्टपक्ष पशुहै यह हमको समझाइये, भीष्मजीबोले कि देवताओंका सम्मत जानकर उनकापक्ष धारण करके राजाने ऋषियों से कहा कि बकरेसे यज्ञ करना योग्यहै, तदनन्तर वह सूर्य्य के समान तेजस्वी ऋषिलोग महाक्रोधयुक्त हुए और देवताओं के पक्ष

धारण करने वाले विमान में बैठेहुए राजावसु से यहवचनकहा कि जिसहेतुसे तुमने देवताओं का पक्ष अंगीकार कियाहै इसपापसे तुमस्वर्ग से गिरो और हे राजा अबसे लेकर तुम्हारा आकाशका चलनाभी नष्टहुआ, हमारे शापसे तू पृथ्वीको चीरकर प्रवेश करेगा इसवाक्यके कहतेही तत्क्षण राजाउपरिचर पृथ्वी के छिद्रमें औंधा मुखहोकर वर्त्तमान हुआ परन्तु श्रीनारायणजी की आज्ञासे उसकी स्मृति बनीरही,तब सावधान देवताओंने राजावसुके शापके दूरकरनेका एक साथही विचार किया कि निश्चय करके राजाका ऐसाकहना यथार्थ था १८ इस महात्मा राजाने हमारे कारण से शापपाया इस हेतु से हमसब लोगोंको साथहोकर उसका अभीष्ट करना चाहिये,उस समय अत्यन्त प्रसन्न चित्त देवताओंने शीघ्रही बुद्धिसे निश्चय करके राजा उपरिचर से कहा कि देव ब्राह्मणों के रक्षक तुमदेवताके भक्तहो और विष्णुजी देवता और असुर दोनोंके गुरुहैं वह प्रसन्न चित्त तुम्हारी प्रीतिसे तुमको शापसे निवृत्त करें निश्चय करके महात्मा ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा करनी योग्यहै हे उत्तम राजा इन ब्राह्मणों के तपसे अवश्य फल प्रकट होनेके योग्य है, हे राजा जिसहेतु आप अकस्मात स्वर्गसे पृथ्वीपर गिरे इससे हमको भी तुम्हारा कुछ उपकार करना उचितहै हे निष्पाप जबतक तुम शाप दोषसे पृथ्वी के छिद्रमें प्रवेश करके शापकी मुद्दतको व्यतीत करोगे तबतक अपने मनोरथको भी सिद्ध करोगे अर्थात् यज्ञोंके बीचमें सावधान ब्राह्मणों से अच्छेप्रकारहोमी हुई बसोर्द्धाराको हमारीकृपासे पाओगे तुमको ग्लानि स्पर्शनहींकरेगी,हेराजेन्द्र बसोर्द्धाराके भोजन करनेसे पृथ्वीके छिद्र में तुमको भूख प्यास बाधा नहीं करेगी और तेजकी वृद्धिहोगी और हमारे वरसे प्रसन्न होकर वह देवता तुमको ब्रह्मलोकमें पहुँचावेगा इसप्रकार वर देकर वह सब देवता अपने भवन को गये और तपोधन ऋषिलोग भी चलेगये तदनन्तर हे भरतवंशी उस राजा वसुने विष्णुजीका पूजन किया, और नारायणके मुखसे प्रकटहोनेवाले जपकेयोग्य मंत्रको सदैव जपतारहा, हे युधिष्ठिर वहां भी पृथ्वीके छिद्रमें वर्त्तमान होकर राजा ने पांचयज्ञों से पांच समयपर देवताओं के स्वामी हरिका पूजन किया तब उसकी भक्तिसे भगवान नारायणजी प्रसन्नहुये ३० जो कि अनन्यभक्त और सत्पुरुषथा इसकारण विष्णु भगवान उसपर प्रसन्नहुए और महातीव्रगामी पक्षियोंके राजा अपने वाहन गरुड़जीसे कहा कि हे महाभाग गरुड़ तुम मेरेकहने से देखो कि सम्पूर्ण पृथ्वी का राजा धर्मात्मा प्रशंसा के योग्य व्रतका करनेवाला राजा वसु ब्राह्मणों के क्रोध से पृथ्वीतल में पहुँचा है वह ऋषि तो प्रतिष्ठा दियेगये अब हे खगेश तुम मेरी आज्ञा से पृथ्वी के छिद्र में गत राजा को जाकर यहां लेआकर उस पृथ्वीतलमें विचरनेवाले उत्तम राजा

को शीघ्रही आकाशचारी करो विलम्ब मतकरो यह सुनतेही वायुके समान शीघ्रगामी गरुड़जी अपने पंखों को फैलाकर पृथ्वी के छिद्र में जहां राजा वसु वर्त्तमानथे वहांपरपहुँचे और अकस्मात् उसको उठाकर शीघ्रही आकाश को लेउड़े और वहां जाकर इसको छोड़दिया इसीसे उस राजाका नाम फिर उपरिचर होगया अर्थात् आकाशचारी होगया फिर कुछ काल पीछे वह उत्तम राजा सदेह ब्रह्मलोक को गया, हे कुन्तीपुत्र इसप्रकारसे इस राजा ने भी दोषी वचनों से उन महात्मा ब्राह्मणों के शापसे और देवताकी आज्ञा से अधम और उत्तम दोनों गतियों को पाया, उस राजाने केवल सर्व्वव्यापी पापोंके दूर करनेवाले ईश्वरकाही सेवन और पूजन कियाथा इसी कारण से वह शीघ्रही शापसे मुक्त होकर ब्रह्मलोक को गया, भीष्मजी बोले कि यह वृत्तान्त मूल समेत तुझ से कहा अब मनुजी के पुत्र जैसे ऐश्वर्य्यमान हुए और जैसे वह नारद ऋषि श्वेतद्वीपको गये वह सब वृत्तान्त तुझ से कहता हूं तू एकाग्रमन होकर सुन ४१ ॥

इति श्रीमहाभारते शान्तिपर्व्वणि मोक्षधर्मे उत्तरार्द्धे द्विषष्ट्युपरिशततमोऽध्यायः १६२ ॥

एकसौ तरेसठ का अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि भगवान् नारदऋषिने श्वेतद्वीपको प्राप्तहोकर उन शुक्ल वरण और चन्द्रमाकी समान प्रकाशमान पुरुषोंको देखा और बड़ी भक्ति से दण्डवत करके पूजन किया फिर उनलोगों ने भी नारदजी का मनसे पूजन किया और अपने जपमें प्रवृत्त प्राजापत्यादि व्रत कियेहुए दर्शनकी इच्छा करके नियतहुएथे तब नारदजीने भी एकाग्रमन ऊंची भुजा और सावधान होकर उस विश्वरूप निर्गुण सगुण के निमित्त स्तोत्रका पाठ किया ॥

स्तोत्र ॥

नारद उवाच ॥ नमस्ते देव देवेश १ निष्क्रिय २ निर्गुण ३ लोकसाक्षिन ४ क्षेत्रज्ञ ५ पुरुषोत्तम ६ अनन्त ७ पुरुष ८ महापुरुष ९ पुरुषोत्तम १० त्रिगुण ११ प्रधान १२ अमृत १३ अमृताक्ष १४ अनन्ताख्य १५ व्योम १६ सनातन १७ सदसद्व्यक्ताव्यक्त १८ ऋतधामन् १९ आदिदेव २० वसुप्रद २१ प्रजापते २२ सुप्रजापते २३ वनस्पते २४ महाप्रजापते २५ ऊर्जस्पते २६ वाचस्पते २७ जगत्पते २८ मनस्पते २९ दिवस्पते ३० मरुत्पते ३१ सलिलपते ३२ पृथिवीपते ३३ दिक्पते ३४ पूर्वनिवास ३५ गुह्य ३६ ब्रह्मपुरोहित ३७ ब्रह्मकायिक ३८ महाराजिक ३९ चातुर्म्महाराजिक ४० आभासुर ४१ महाभासुर ४२ सप्तमहाभाग ४३ याम्य ४४ महायाम्य ४५ संज्ञासंज्ञ ४६ तुषित ४७ महातुषित ४८ प्रमर्दन ४९ परिनिर्मित ५० अपरिनिर्मित ५१ वशवर्त्तिन् ५२ अपरिनिंदित ५३

अपरिमित ५४ वशवर्त्तिन् ५५ अवशवर्त्तिन् ५६ यज्ञ ५७ महायज्ञ ५८ यज्ञसम्भव ५९ यज्ञयोने ६० यज्ञगर्भ ६१ यज्ञहृदय ६२ यज्ञस्तुत ६३ यज्ञभाग ६४ पंचयज्ञ ६५ पंचकालकर्तृपते ६६ पंचरात्रिक ६७ वैकुण्ठ ६८ अपराजित ६९ मानसिक ७० नामनामिक ७१ परस्वामिन् ७२ सुस्नात ७३ हंस ७४ परमहंस ७५ महाहंस ७६ परमयाज्ञिक ७७ सांख्ययोग ७८ सांख्यमूर्त्ते ७९ अमृतेशय ८० हिरण्येशय ८१ देवेशय ८२ कुशेशय ८३ ब्रह्मेशय ८४ पद्मेशय ८५ विश्वेश्वर ८६ विष्वक्सेन ८७ त्वंजगदन्वयः ८८ त्वंजगदाकृतिः ८९ तवाग्निरास्यं ९० वड़वामुखोग्निः ९१ त्वमाहुतिः ९२ सारथिः ९३ त्वंवषट्कारः ९४ त्वं तपः ९५ त्वंमनः ९६ त्वंचन्द्रमाः ९७ त्वं चक्षुराज्यं ९८ त्वं सूर्य्यः ९९ त्वं दिशांगजः १०० त्वं दिग्भानो १०१ विदिग्भानो १०२ हयशिरः १०३ प्रथमत्रिसौपर्णः १०४ वर्णधरः १०५ पंचाग्ने १०६ त्रिणाचिकेत १०७ षडंगनिधान १०८ प्राग्ज्योतिष १०९ ज्येष्ठसामग ११० सामिकव्रतधर १११ अथर्वशिराः ११२ पंचमहाकल्प ११३ फेनपाचार्य्य ११४ वालखिल्य ११५ वैखानस ११६ अभग्नयोग ११७ अभग्नपरिसंख्यान ११८ युगादे ११९ युगमध्य १२० युगनिधन १२१ आखण्डल १२२ प्राचीनगर्भ १२३ कौशिक १२४ पुरुष्टुत १२५ पुराहूत १२६ विश्वकृत १२७ विश्वरूप १२८ अनन्तगते १२९ अनन्तभोग १३० अनन्त १३१ अनादे १३२ अमध्य १३३ अव्यक्तमध्य १३४ अव्यक्तनिधन १३५ व्रतावास १३६ समुद्राधिवास १३७ यशोवास १३८ तपोवास १३९ दमावास १४० लक्ष्म्यावास १४१ विद्यावास १४२ कीर्त्यावास १४३ श्रीवास १४४ सर्वावास १४५ वासुदेव १४६ सर्वछन्द १४७ हरिहय १४८ हरिमेध १४९ महायज्ञभागहर १५० वरप्रदसुखप्रद १५१ धनप्रद १५२ हरिमेध १५३ यम १५४ नियम १५५ महानियम १५६ कृच्छ्र १५७ अतिकृच्छ्र १५८ महाकृच्छ्र १५९ सर्वकृच्छ्र १६० नियमधर १६१ निवृत्तभ्रम १६२ प्रवचनगता प्रश्निगर्भप्रवृत्त १६३ प्रवृत्तवेदक्रिय १६४ अज १६५ सर्वगते १६६ सर्वदर्शिन १६७ अग्राह्य १६८ अचल १६९ महाविभूते १७० माहात्म्यशरीर १७१ पवित्र १७२ महापवित्र १७३ हिरण्यमय १७४ बृहत् १७५ अप्रतर्क्य १७६ अविज्ञेय १७७ ब्रह्माग्र्य १७८ प्रजासर्गकर १७९ प्रजानिधनकर १८० महामायाधर १८१ चित्रशिखंडिन् १८२ वरप्रद १८३ पुरोडासभागहर १८४ गताध्वर १८५ छिन्नतृष्ण १८६ छिन्नसंशय १८७ सर्वतोवृत्त १८८ निवृत्तरूपः १८९ ब्राह्मणरूप, १९० ब्राह्मणप्रिय, १९१ विश्वमूर्ते १९२ महामूर्त्ते १९३ बांधव १९४ भक्तवत्सल १९५ ब्रह्मण्य १९६ वेदभक्तो हंत्वांदिदृक्षुरेकान्त दर्शनाय नमोनमः १९७ इतिश्री महापुरुषःस्तवः समाप्तः ॥

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि मोक्षधर्मे उत्तरार्द्धे महापुरुषःस्तववर्णनोनामत्रिदष्ट्युपरिशततमोऽध्यायः १६३ ॥

एकसौचौसठका अध्याय ॥

भीष्मउवाच ॥ एवंस्तुतः सभगवान्गुह्यैस्तथ्यैश्चानामभिः तंमुनिंदर्शयामासनारदं विश्वरूपधृक् १ किंचिच्चन्द्राद्विशुद्धात्मा किञ्चिच्चन्द्राद्विशेषवान् कृशासुवर्णःकिंचिच्चकिंचिद्धिष्ण्याकृतिः प्रभुः २ शुकःपत्रनिभःकिंचित्किंचित् स्फटिकसंनिभः नीलांजनचयप्रख्योजातरूपप्रभःक्वचित् ३ प्रवालांकुरवर्णश्च श्वेतवर्णस्तथाक्वचित् क्वचित्सुवर्णवर्णाभो वैदूर्यसदृशःक्वचित् ४नीलवैदूर्यसदृश इन्द्रनीलनिभः क्वचित् मयूरग्रीववर्णाभोमुक्ताहारनिभः क्वचित् ५ एतान्वहुविधान्वर्णान्रूपैर्बिभ्रन्सनातनः सहस्रनयनः श्रीमाञ्छतशीर्षःसहस्रपात् ६ सहस्रोदरबाहुश्च अव्यक्तइतिचक्वचित् ओंकारमुद्गिरन्वक्त्रात् सावित्रीचतदन्वयां, ७ शेषेभ्यश्चैववक्त्रेभ्यश्चतुर्वेदान्गिरन्वहून् आरण्यकंजगौदेवो हरिर्नारायणोवशी ८ वेदिंकमंडलुंशुभ्रान्मणीनुपानहौकुशान्अजिनंदण्डकाष्ठंच ज्वलितंचहुताशनं ६ धारयामासदेवेशोहस्तैर्यज्ञपतिस्तदातंप्रसन्नंप्रसन्नात्मा नारदोमुनिसत्तमः वाग्यतःप्रणतोभूत्वाववंदेपरमेश्वरं १० तमुवाचनतंमूर्ध्ना देवानामादिरव्ययः ११ श्रीभगवानुवाच ॥ एकतश्चाद्वितश्चैव त्रितश्चैवमहर्षयः इमंदेशमनुप्राप्ता ममदर्शनलालसाः १२ नचमांतेदद्दशिरेन चन्द्रक्ष्यतिकश्चन ऋतेह्येकान्तिकश्चेष्ठा त्वंचैवैकान्तिकोत्तमः १३ ममतास्तनवःश्रेष्ठा जाताधर्मगृहेद्विजतास्त्वंभजस्वसततं साधयस्वयथागतं १४ वृणीष्वचवरंविप्र मत्तस्त्वंयदिहेच्छसि प्रसन्नोहंतवाद्य हेविश्वमूर्त्तिरिहाव्ययः १५ नारदउवाच ॥ अद्यमेतपसोदेव यमस्यनियमस्यच सद्यःफलमवाप्तंवै दृष्टोयद्भगवान्मया १६ वरएषममात्यंतं दृष्टस्त्वंयत्सनातनः भगवान्विश्वदृक्सिंहः सर्वमूर्तिर्महान्प्रभुः १७ भीष्मउवाच ॥ एवंसंदर्शयित्वातुनारदंपरमेष्ठिनं उवाचवचनंभूयो गच्छनारदमाचिरं १८ इमेह्यनिंद्रियाहारामद्भक्ताश्चन्द्रवर्चसः एकाग्राश्चिंतयेयुर्मांनैषांविघ्नोभवेदिति १६ सिद्धाह्येतेमहाभागाःपुराह्येकांतिनोभवन् तमोरजोभिर्निर्मुक्ता मांप्रवेक्ष्यत्यसंशयं २० नदृश्यश्चचक्षुषायोसौनस्पृश्यःस्पर्शनेनच नघ्रेयश्चैवगन्धेनरसेनचविवर्जितः २१ सत्त्वंरजस्तमश्चैनगुणास्तंभजन्तिवै यश्चसर्वगतःसाक्षीलोकस्यात्मेतिकथ्यते २२ भूतग्रामशरीरेषुनश्यत्सुनविनश्यति अजोनित्यःशाश्वतश्चनिर्गुणोनिष्कलस्तथा २३ द्विर्द्वादशेभ्यस्तत्त्वेभ्यःख्यातोयःपंचविंशकःपुरुषोनिष्क्रियश्चैवज्ञानदृश्यश्चकथ्यते २४ यंप्रविश्यभवंतीहमुक्तावैद्विजसत्तमाः सवासुदेवोविज्ञेयःपरमात्मासनातनः २५ पश्यदेवस्यमाहात्म्यं महिमानंचनारदशुभाशुभैःकर्मभिर्योनलिप्यतिकदाचन २६ एतांगुणांस्तुसत्त्वाद्यान्भुंक्तेनैभिःसभुज्यते निर्गुणोगुणभुक्चैवगुणस्रष्टागुणाधिकः २७ जगत्प्रतिष्ठादेवर्षे

पृथिव्यप्सुप्रलीयते ज्योतिष्यापःप्रलीयंते ज्योतिर्वायौप्रलीयते २८ खेवायुःप्रलयंयातिमनस्याकाशमेवच मनोहिपरमंभूतंतदव्यक्तेप्रलीयते २९ अव्यक्तंपुरुषेब्रह्मन्निष्क्रियेसंप्रलीयते नास्तितस्मात्परतरःपुरुषाद्वैसनातनात् ३० नित्यंहिनास्तिजगतीभूतंस्थावरजंगमं ऋतेतमेकंपुरुषंवासुदेवंसनातनं ३१ सर्व्वभूतात्मभूतोहिवासुदेवोमहाबलःपृथिवीवायुराकाशमापोज्योतिश्चपंचमं ३२ तेसमेतामहात्मानःशरीरमितिसंज्ञितं तदाविशतियोब्रह्मन्नदृश्योलघुविक्रमःउत्पन्नएवभवतिशरीरंचेष्टयन्प्रभुः ३३ नविनाधातुसंघातंशरीरंभवतिक्वचित् नचजीवंविनाब्रह्मन् वायवश्चेष्टयंत्युत ३४ सजीवःपरिसंख्यातःशेषःसंकर्षणःप्रभुः तस्मात्सनत्कुमारत्वं योलभेतस्वेनकर्मणा ३५ यस्मिंश्चसर्व्वभूतानि प्रलयंयान्तिसंक्षयेनमसःसर्व्वभूतानांप्रद्युम्नःपरिपठ्यते ३६ तस्मात्प्रसूतोयः कर्त्ताकारणंकार्य्यमेवचतस्मात्सर्व्वसंभवतिजगत्स्थावरजंगमं सोनिरुद्धःसईशानोव्यक्तःसर्व्वेषुकर्मसु ३७ योवासुदेवोभगवान् क्षेत्रज्ञोनिर्गुणात्मकः ज्ञेयःसएवराजेन्द्रजीवःसंकर्षणःप्रभुः ३८ संकर्षणाच्चप्रद्युम्नोमनोभूतःसउच्यते प्रद्युम्नाद्योनिरुद्धस्तुसोहंकारःसईश्वरः ३९ मत्तःसर्व्वंसंभवतिजगत्स्थावरजंगमं अक्षरंचक्षरंचैवसच्चासच्चैवनारद ४० मांप्रविश्यभवंतीहमुक्ताभक्तास्तुयेमम अहंहिपुरुषोज्ञेयोनिष्क्रियःपंचविंशकः निर्गुणोनिष्कलश्चैव निर्द्वन्द्वोनिष्परिग्रहः ४१ एतत्त्वयानविज्ञेयंरूपवानितिदृश्यते इच्छन्मुहुर्त्तान्नश्येयमीशोहंजगतोगुरुः ४२ मायाह्येषामयासृष्टायन्मांपश्यसिनारद सर्व्वभूतगुणैर्युक्तंनैवंत्वंज्ञातुमर्हसि ४३ मयैतत्कथितंसम्यक्तवमूर्तिचतुष्टयं अहंहिजीवसंज्ञोतोमयिजीवःसमाहितः ४४ नैवंतेबुद्धिरत्राभूत्दृष्टजीवोमयेतिवै अहंसर्व्वत्रगोब्रह्मन्भूतग्रामान्तरात्मकः ४५ भूतग्रामशरीरेषुनश्यत्सुननशाम्यहं सिद्धाहितेमहाभागानराह्येकान्तिनोभवन् ४६ तमोरजोभ्यांनिर्मुक्ताः प्रवेक्ष्यन्तिचमांमुने हिरण्यगर्भोलोकादिश्चतुर्वक्त्रोनिरुक्तगः ४७ ब्रह्मासनातनोदेवोममबह्वर्थचिन्तकः ललाटाच्चैवमेरुद्रोदेवःक्रोधाद्विनिःसृतः ४८ पश्यैकादशमेरुद्रान् दक्षिणंपार्श्वमास्थितान् द्वादशैवतथादित्यान्वामपार्श्वेसमास्थितान् ४९ अग्रतश्चैवमेपश्यवसूनष्टौसुरोत्तमान्नासत्यंचैवदस्रं च भिषजौपश्यपृष्ठतः ५० सर्व्वान्प्रजापतीन्पश्य पश्यसप्तऋषींस्तथा वेदान्यज्ञांश्चशतशः पश्यामृतमथौषधीः ५१ तपांसिनियमांश्चैवयमानपिपृथग्विधान् तथाष्टगुणमैश्वर्य्यमेकस्थंपश्यमूर्त्तिमत् ५२ श्रियंलक्ष्मींचकीर्तिंच पृथिवींचककुद्मिनीं वेदानांमातरंपश्य मत्स्थांदेवींसरस्वतीम् ५३ ध्रुवंचज्योतिषांश्रेष्ठं पश्यनारदखेचरं अंभोधरान्समुद्रांश्चसरांसिसरितस्तथा ५४ मूर्त्तिमतः पितृगणांश्चतुः पश्यसिसत्तम. त्रींश्चैवमांगुणान्पश्यमत्स्थान्मूर्तिविवर्जितान् देवकार्यादपिमुने पितृकार्य्यंविशिष्यते देवानांचपितृणांचपिताह्येकोहमादितः ५६ अहंहयशिराभूत्वा समुद्रेपश्चिमोत्तरे पिवामिसुहु

तंहव्यं कव्यंचश्रद्धयान्वितम् ५७ मयासृष्टः पुराब्रह्मा मांयज्ञमयजत्स्वयमृततस्त
स्मिन्वरान्प्रीतोदत्तवानस्म्यनुत्तमान् ५८ मत्पुत्रत्वंचकल्पादौ लोकाध्यक्षत्वमेव
च अहंकारकृतंचैवनामपर्यायवाचकम् ५९ त्वयाकृतंचमर्यादांनातिक्रम्यतिक्र
श्चन त्वंचैववरदोब्रह्मन् वरेप्सूनांभविष्यसि ६० सुरासुरगणानांचऋषीणांचतपो
धन पितॄणांचमहाभाग सततंसंशितव्रत विविधानांचभूतानां त्वमुपास्योभवि
ष्यसिप्रादुर्भावगतश्चाहं सुरकार्य्येषुनित्यदा अनुशास्यस्त्वयाब्रह्मन् नियोज्य
श्चसुतोयथा ६१ एतांश्चान्यांश्चरुचिरान् ब्रह्मणेमिततेजसे अहंदत्त्वावरान्प्रीतो
निवृत्तिपरमोभवम् ६२ निर्वाणंसर्वधर्म्माणां निवृत्तिःपरमास्मृता तस्मान्निवृत्ति
मापन्नश्चरेत्सर्वांगनिर्वृतः ६३ विद्यासहायवन्तंच आदित्यस्थंसमाहितम् कपिलं
प्राहुराचार्य्याः सांख्यनिश्चितनिश्चयाः ६४ हिरण्यगर्भोभगवानेषछन्दसि
सुष्टुतः सोहंयोगरतिर्ब्रह्मन्योगशास्त्रेषुशब्दितः ६५ एषोहंव्यक्तिमागत्य ति
ष्ठामिदिविशाश्वतः ततोयुगसहस्रान्ते संहरिष्येजगत्पुनः ६६ कृत्वात्मस्थानि
भूतानि स्थावराणिचराणिच एकाकीविद्ययासार्द्धं विहरिष्येजगत्पुनः ६७
ततोभूयोजगत्सर्वं करिष्यामीहविद्यया अस्मिन्मूर्त्तिश्चतुर्थीया सासृजच्छेष
मव्ययम् ६८ सहिसंकर्षणःप्रोक्तः प्रद्युम्नंसोप्यजीजनत् प्रद्युम्नादनिरुद्धोहंसर्गो
ममपुनःपुनः ६९ अनिरुद्धात्तथाब्रह्मातन्नाभिकमलोद्भवः ब्रह्मणःसर्वभूतानि
चराणिस्थावराणिच ७० एतांसृष्टिंविजानीहि कल्पादिषुपुनःपुनः यथासूर्य्य
स्यगगनादुदयास्तमनेइह ७१ नष्टेपुनर्बलात्काल आनयत्यमितद्युतिः तथाब
लादहंपृथ्वीं सर्वभूतहितायवै ७२ सत्त्वैराक्रान्तसर्वांगो नष्टांसागरमेखलाम् आ
नयिष्यामिस्वस्थानं वाराहंरूपमास्थितः ७३ हिरण्याक्षंवधिष्यामि दैतेयंबल
गर्वितम् नारसिंहंपुनःकृत्वा हिरण्यकशिपुंपुनः ७४ सुरकार्य्येहनिष्यामि यज्ञ
घ्नंदितिनंदनम् विरोचनस्यबलवान् बलिपुत्रोमहासुरः ७५ अवध्यःसर्वलो
कानां सदेवासुररक्षसाम् भविष्यतिसशक्रञ्चस्वराज्यच्च्यावयिष्यति ७६ त्रै
लोक्येपहृतेतेन विमुखेचशचीपतौ आदित्यांद्वादशादित्यःसम्भविष्यामिकश्य
पात् ७७ ततोराज्यंप्रदास्यामि शक्रायामिततेजसे देवतास्थापयिष्यामि स्वेस्वे
स्थानेषुनारद ७८ बलिंचैवकरिष्यामि पातालतलवासिनम् दानवंचबलिश्रेष्ठ
मवध्यंसर्वदेवतैः ७९ त्रेतायुगेभविष्यामि रामोभृगुकुलोद्वहः क्षत्रंचोत्सादयि
ष्यामि समृद्धबलवाहनम् ८० सन्ध्यांशेसमनुप्राप्ते त्रेतायांद्वापरस्यच अहंदाश
रथीरामो भविष्यामिजगत्पतिः ८१ त्रितोपघाताद्वैरूप्यमेकतोथद्वितस्तथा
प्राप्स्यतेवानरत्वंहिप्रजापतिसुतावृषी ८२ तयोर्येत्वन्वयेजाताभविष्यंतिवनौक
सः महाबलीमहावीर्य्याःशक्रतुल्यपराक्रमाः ८३ तेसहायाभविष्यंति सुरकार्य्ये
ममद्विज ततोरक्षपतिंघोरं पुलस्त्यकुलपांसनम् ८४ हरिष्येरावणंरौद्रंसगणंलो
ककंटकम् द्वापरस्यकलेश्चैवसंधौपर्य्यवसानिके ८५ प्रादुर्भावःकंसहेतोर्मथुरा

यामविष्यति तत्राहंदानवान्हत्वा सुबहून्देवकंटकान् ८६ कुशस्थलींकरि
मिनिवेशंद्वारकांपुरीम् वसानस्तत्रवैपुर्य्यामदितेर्विप्रियंकरम् ८७ हनिष्येन
भौमं मुरुम्पीठंचदानवम् प्राग्ज्योतिषपुरंरम्यंनानाधनसमन्वितम् ८८कुशस्थ
नयिष्यामि हत्वावैदानवोत्तमम् महेश्वरमहासेनौ बाणप्रियहितैषिणौ
पराज्येष्याम्यथोद्युक्तौ देवौलोकनमस्कृतौ ततःसुतंवलेर्जित्वा बाणंबाहुसह
णम् ९० विनाशयिष्यामिततः सर्वान्सौभनिवासिनः यःकालयवनख्या
गर्गतेजोभिसंवृतः ९१ भविष्यतिवधस्तस्य मतएवद्विजोत्तम जरासन्धश्
बलवान् सर्वराजविरोधनः ९२ भविष्यत्यसुरस्फीतो भूमिपालोगिरिव्रजे
बुद्धिपरिस्पंदाद्वधस्तस्यभविष्यति ९३ शिशुपालंवधिष्यामियज्ञेधर्मसुत
वैसमागतेपुबलिपु पृथिव्यांसर्वराजसु ९४ वासविःसुसहायोवै ममत्वेक
विष्यति युधिष्ठिरंस्थापयिष्ये स्वराज्येभ्रातृभिःसह ९५ एवंलोकावदिष्य
नरनारायणावृषी उद्युक्तौदहतःक्षत्रं लोककार्य्यार्थमीश्वरौ ९६ कृत्वाभ
वतरणं वसुधायायथेप्सितम् सर्वसात्वतमुख्यानां द्वारकायाश्चसत्तम
करिष्येप्रलयंघोरमात्मज्ञानाभिसंवृतम् कर्माण्यपरिमेयानि चतुर्मूर्त्तिधरोम्य
९८ कृत्वालोकांगमिष्यामि स्वानहंब्रह्मसत्कृतान् हंसःकूर्मश्चमत्स्यश्च
दुर्भावाद्विजोत्तम ९९ वाराहोनारसिंहश्चवामनोरामएवच रामोदाशरथिश्
व सात्वतःकल्किरेवच १०० यदावेदश्रुतिर्नष्टा मयाप्रत्याहृतापुनः सवेद
सश्रुतीकाश्च कृतापूर्वंकृतेयुगे १ अतिक्रान्तापुराणेषु श्रुतास्तेयदिवाकचि
अतिक्रान्ताश्चबहवः प्रादुर्भावाममोत्तमाः २ लोककार्य्याणिकृत्वाच पु
स्वांप्रकृतिंगताः नह्येतद्ब्रह्मणाप्राप्तमीदृशंममदर्शनम् ३ यत्त्वयाप्राप्तम
एकान्तगतिबुद्धिना एतत्तेसर्वमाख्यातं ब्रह्मन्भक्तिमतोमया पुराणंचभवि
च सरहस्यंचसत्तम ४ भीष्मउवाच ॥ एवंसभगवान्देवो विश्वमूर्त्तिधरो
यः एतावदुक्त्वावचनं तत्रैवान्तर्दधेपुनः ५ नारदोपिमहातेजाः प्राप्यानु
भीप्सितम्नरनारायणौद्रष्टुंवदर्य्याश्रममाद्रवत् ६ इदंमहोपनिषदंचतुर्वेदस
न्वितम् सांख्ययोगकृतंतेन पञ्चरात्रानुशब्दितम्७युधिष्ठिर उवाच॥ एतदाश
र्य्यभूतंहि माहात्म्यंतस्यधीमतः किंवैब्रह्मानजानीते यतःशुश्रावनारदात्
पितामहोपिभगवांस्तस्मादेवादनन्तरः कथंसनविजानीयात्प्रभावममितौ
सः ८ भीष्म उवाच ॥ महाकल्पसहस्राणि महाकल्पशतानिच समतीता
राजेन्द्र सर्गाश्चप्रलयाश्चह १० सर्गस्यादौस्मृतोब्रह्मा प्रजासर्गकरःप्रभुः जा
तिदेवप्रवरं भूयश्चातोऽधिकंनृप ११ परमात्मानमीशानमात्मनःप्रभवन्त
येत्वन्येब्रह्मसदने सिद्धसंघाःसमागता १२ तेभ्यस्तच्छ्रावयामास पुराणंवेद
स्मितम् तेषांसकाशात्सूर्यस्तु श्रुत्वावैभावितात्मना १३ आत्मानुगामिनां
न् श्रावयामासवैततः षट्षष्टिर्हिसहस्राणि ऋषीणांभावितात्मनाम् १४

स्यतपतोलोकान्निर्मितायेपुरःसराः तेषामकथयत्सूर्यः सर्वेषांभावितात्मनाम् १५ सूर्यानुगामिभिस्तात ऋषिभिस्तैर्महात्मभिः मेरौसमागतादेवाः श्राविताश्चेद मुत्तम १६ देवानान्तुसकाशाद्वै ततःश्रुत्वासितोद्विजः श्रावयामासराजेन्द्र पितृणांमुनिसत्तम १७ ममचापिपितातात कथयामासशान्तनुः ततोमयापिश्रुत्वाच कीर्त्तितंतवभारत १८ सुरैर्वामुनिभिर्वापि पुराणंयैरिदंश्रुतम् सर्वेतेपरमात्मानं पूजयन्तेसमन्ततः १९ इदमाख्यानमार्ष्येयं पारंपर्यागतंनृप नवासुदेवभक्ताय त्वयादेयंकथञ्चन २० मत्तोन्यानिचतेराजन्नुपाख्यानिशतानिवै यानिश्रुतानिसर्वाणि तेषांसारोयमुद्धृतः २१ सुरासुरैर्यथाराजन्निर्मथ्यामृतमुद्धृतम् एवमेतत्पुराविप्रैः कथामृतमिहोद्धृतम् २२ यश्चेदंपठतेनित्यं यश्चेदंशृणुयान्नरः एकान्तभावोपगत एकान्तेषुसमाहितः२३ प्राप्यश्वेतंमहाद्वीपं भूत्वाचंद्रप्रभोनरः ससहस्रार्चिषंदेवं प्रविशेन्नात्रसंशयः२४ मुच्येदार्त्तस्तथारोगाच्छ्रुत्वेमामादितः कथाम् जिज्ञासुर्लभतेकामान्भक्तोभक्तगतिंव्रजेत् २५ त्वयापिसततंराजन्नभ्यर्च्यःपुरुषोत्तमः सहिमातापिताचैव कृत्स्नस्यजगतोगुरुः २६ ब्रह्मण्यदेवोभगवान् प्रीयतांतेसनातनः युधिष्ठिरमहाबाहो महाबुद्धिर्जनार्दनः २७ वैशम्पायन उवाच ॥ श्रुत्वैतदाख्यानवरं धर्मराज्जनमेजय भ्रातरश्चास्यतेसर्वे नारायणपराभवन् २८ जितंभगवतातेन पुरुषेणेतिभारत नित्यंजाप्यपराभूत्वा सरस्वतिमुदीरयन् २९ योह्यस्माकंगुरुःश्रेष्ठः कृष्णद्वैपायनोमुनिः जगौपरमकंजप्यं नारायणमुदीरयन् ३० गत्वान्तरिक्षात्सततं क्षीरोदममृताशयम् पूजयित्वाचदेवेशं पुनरायात्स्वमाश्रमम् ३१ भीष्म उवाच ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातं नारदोक्तंमयेरितम् पारंपर्यागतंह्येतात्पित्रामेकथितम्पुरा ३२ सूत उवाच ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातं वैशम्पायनकीर्त्तितम् जनमेजयेनतच्छ्रुत्वा कृतंसम्यग्यथाविधि ३३ यूयंहि तप्ततपसः सर्वेचचरितव्रताः सर्वेवेदविदोमुख्याः नैमिषारण्यवासिनः ३४ शौनकस्यमहासत्रे प्राप्ताःसर्वेद्विजोत्तमाः यजध्वंसुहुतैर्यज्ञैः शाश्वतंपरमेश्वरम् पारंपर्यागतंह्येतात्पित्रामेकथितंपुरा १३५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धे शतोपरिचतुःषष्टितमोऽध्यायः १६४ ॥

एकसौपैंसठका अध्याय ॥

इस अध्याय का टीका अर्थात् अर्थ लिखते हैं ॥

इसप्रकार गुप्त और सच्चे नामों से स्तुति कियेहुये बहुरूपी भगवान् ईश्वर ने उन नारदजी को दर्शन दिया १ चन्द्रमा से भी स्वच्छ वा विशेष और अग्निसे भी उत्तमवर्ण कुछ स्थानकीसी आकृति कुछ तोते के परोंकी समान कुछ स्फटिक और धवलागिरिके समान कहीं सुवर्ण समान प्रकाशकहीं वैडूर्य मणिके कहीं नीलवैडूर्यके समान कहीं इन्द्रनीलमणिके समान कहीं मोरकी

गर्दनके समान कहीं मुक्ताहारधारीके समान इत्यादि अनेकप्रकारके रूप युक्त हजार शिर चरण और नेत्रों से शोभित हजारों भुजा उदर आदिको धारण किये कहीं अव्यक्तरूप से ॐकार और उसके अंगरूप गायत्री के मुखसे उच्चारण करते और शेप मुखों से चारों वेद और अनेक शास्त्रों को कहते हुए उस सर्वैश्वर्य्यमान जगत् के स्वामी ने आरण्यक उपनिषद्को वर्णन किया फिर उस देव देव यज्ञपति ने हाथ में दण्डकमण्डल देह में मृगचर्म चरणों में पादुका अग्नि स्वरूप तेजवान्रूप को धारण किया ऐसा रूपक देखके ब्राह्मणों में उत्तम नारदजी ने बड़ी प्रसन्न बुद्धि और शांतताको धारणकर नम्रता पूर्व्वक उस अपूर्व्व मूर्त्तिधारी को दण्डवत् किया तब उसमहात्मा जगदीशने प्रसन्न होकर उसशिरझुकाये हुए नारदसे कहा कि हे नारद मेरे दर्शनों की इच्छासे एकत द्वित त्रित महर्षिलोग इस देशमें आये उनको मेरा दर्शन नहीं हुआ क्योंकि एकमेंही निश्चय करनेवाले अर्थात् अनन्य भक्तों के सिवाय किसी को मेरा दर्शन नहीं होता है सो तुम भी अनन्यभक्तहो हे नारद यह मेरेउत्तम अंग धर्म देवता के घरमें उत्पन्न हुए तुम उन्हीं अंगों का ध्यान करके मुझको भजो जिससे कि मेरी प्राप्तिहोय हे ब्रह्मर्षि नारद मैं तुम पर प्रसन्नहूं जो इच्छाहो सो वरमांगो नारदजी बोले कि हे देवेश्वर मैंने आप के दर्शन पाकर सब तप यज्ञों का फल पाया यही मुझको बड़ा वरहै जो संसार के उत्पत्ति पालन और नाश करनेवाले का दर्शनपाया, भीष्मजी बोले कि इसप्रकार ब्रह्ममें लय होनेवाले नारदजी को दर्शन देकर फिर यह वचन बोले कि हे नारद शीघ्रही जाओ विलम्ब मतकरो, यह मेरेभक्त अनिच्छा पूर्व्वक भोजन करनेवाले चंद्रमाके समान प्रकाशमान एकाग्र चित्त होकर मेरा ध्यान करते हैं उनको कभी विघ्न नहीं होता है यह महाभाग शुद्ध अन्तःकरण हैं यह सब पूर्व समय में अनन्यभक्त थे यह निस्सन्देह तीनों गुणों से पृथक् होकर मुझ में प्रवेश करेंगे, अब प्रवेश करने के योग्य आत्म स्वरूप को कहताहूं जो कि इन्द्रियों के विपयसे परे गुणातीत सर्वव्यापी साक्षी लोकका आत्मा कहाजाता है वह अज अविनाशी सदैव रूपान्तर रहित निर्गुण कलारूप उपाधियों से पृथक्है, जो पुरुष चौबीस तत्त्वों से पृथक् पच्चीसवां प्रसिद्ध है वही सूक्ष्म निर्म्मल बुद्धि से दृष्ट होता है, संसार में उत्तम ब्राह्मण जिसमें प्रवेश करके मुक्तहोते हैं वह वासुदेव सर्वव्यापी परमात्मा सनातन जानने के योग्य है हे नारदजी देवताके माहात्म्य और उसकी महिमा को देखकर जो पुरुप अच्छे बुरे कर्मों में प्रवृत्त नहीं होता है और मन से जानता है कि क्षेत्रज्ञही भोगता है वा नहीं भोगता है निर्गुण गुणों को पैदा करता भोक्ताहुआ भी गुणों से जुदाहै, हे देवर्षि जगत्की प्रतिष्ठा यहहै

कि पृथ्वी जल में, जल अग्नि में, अग्नि वायु में, वायु आकाशमें, आकाश मन में, और मन अव्यक्त में लय होता है, वह अव्यक्त अकर्त्ता पुरुषमें लय होता है उस सनातन पुरुष से उत्तम कोई नहीं है, उस अकेले सनातन पुरुष वासुदेव के सिवाय यह जड़चैतन्य जगत् नाशवानहै वही वासुदेव सवजीवों के आत्मा हैं यह पांचों तत्त्व इकट्ठे होकर देहरूप होते हैं तव वह ब्रह्मरूप उसमें प्रवेश करता है वह दृष्टिसे अगोचर महा बलवान् है वही देहको चेष्टा देता है तब संसार कहाजाता है बिना तत्त्वों के देहनहीं होता और बिना जीव के देह में वायु चेष्टा नहीं होती है वह प्रभु, जीव, शेष, संकर्षण, विश्व-धारक इन नामों से और अपने ध्यान पूजन आदि कर्मों के द्वारा सनत्कुमार भावको प्राप्त होता है अर्थात् जीवन्मुक्ति को पाता है, इस प्रकार अविद्या उपाधिवाले जीवको साबित करके उसी से प्रद्युम्न नाम मनकी उत्पत्ति को वर्णन करते हैं कि महाप्रलय में जिसके भीतर सब जीवमात्र लय होजाते हैं वह प्रद्युम्न नाम मन कहाता है जिस मनसे सब जीवों की उत्पत्ति है, उस संकर्षण से जो उत्पन्न हुआ वह कर्त्ता, क्रिया और कारण रूप है उसी से सब जड़चैतन्य जगत् उत्पन्न होता है वही प्रद्युम्न अनिरुद्ध नाम अहंकार होता है वह स्वामी है और सब कर्मों में प्रकट है, इसप्रकार प्रद्युम्न आदि के कर्त्ता रूप त्वं पदार्थ जीव को कहकर ऊपर लिखेहुए तत्पदार्थ से इसकी एकांगी गतिको कहते हैं हे राजेन्द्र जो निर्गुण क्षेत्रज्ञ भगवान् वासुदेव है वही प्रभु संकर्षण नाम जीव है, संकर्षण से उत्पन्न होनेवाला प्रद्युम्न नाम मन वही वासुदेव कहाजाता है और प्रद्युम्नसे जो अनिरुद्ध नाम अहंकार उत्पन्न हुआ वह भी वही ईश्वर है, यह सब चराचर जगत् मुझसेही उत्पन्न होता है हेना रदजी अक्षरजीव और क्षर महत्तत्त्वादिक जो कि सत् असत् रूप हैं वह उत्पन्न होते हैं ४० यहां जो मेरेभक्तहैं वह अपने को मुझ में प्रवेश करके मुक्त होते हैं मैंहीं चिन्मात्र निष्क्रिय कूटस्थ पच्चीसवां पुरुष जानने के योग्यहूं और उपाधि रहितनिर्गुण सुखदुःखादि और वासनाआदिपरिग्रहसे जुदाहूं तुम विश्वरूप का उपाधि से पृथक् होना कैसे होसक्ता है यह शंका करके कहतेहैं यह बात तुमको न जानना चाहिये कि यह रूप युक्त दृष्ट आताहै मैं इच्छा करतेही एकमुहूर्त में निराकारहोजाऊं मैं हीं जगत्का ईश्वर और गुरुभी हो-जाताहूं अर्थात् उत्पत्ति नाश केवल मेरी इच्छा है, हेनारद मैंने यह मायाकी है जो तुम मुझको देखतेहो तुम इसप्रकारसे मुझको सबभूतोंके गुणोंसेसंयुक्त मतजानो तात्पर्य यहहै कि मैं निर्गुण निराकारहूं मैंने यह चारोंमूर्त्ति तुम से अच्छेप्रकार वर्णनकरीं मैंहीं जीवभावसे जानागयाहूं और वह जीव मुझमेंही अच्छेप्रकारसे नियत है, यहां तूऐसा मतसमझ कि मैंने उपाधियुक्त समष्टि

जीव देखा है ब्रह्मन् मैं सब जगह वर्त्तमान सबजीवोंमें आत्मारूपहूं जीवसमू
होंके शरीरनाश होनेपर मैं नाश नहीं होताहूं वे महाभाग अनन्यभक्त पुरुष
सिद्ध हैं और तमोगुण रजोगुणसे पृथक् मुझमें ही प्रवेश करेंगे अर्थात् मुझ
सेही एकत्वताको प्राप्तकरेंगे संसार का प्रथम चतुर्मुख वेदांगनिर्गत नामको
जाननेवाला हिरण्यगर्भ सनातन देवता ब्रह्मा मेरे अनेक अर्थोंका विचारने
वालाहै और क्रोधकेकारण मेरेललाटसे रुद्र उत्पन्नहुए, और मेरे दक्षिणभा-
गसे ग्यारहरुद्र और वामभागसे बारह सूर्य्य और अग्रभागमें अष्टवसु और
पीछेकेभागमें अश्विनीकुमार दोनों देववैद्य उत्पन्न देखोजिसप्रकार सबप्रजा-
पति, ऋषि, वेद, यज्ञ, अमृत, औषध, तप, नियम, हैं उसीप्रकार मुझअकेले
में नियत आठप्रकारके ऐश्वर्य्यको देखो, श्रीलक्ष्मी, कीर्त्ति, पृथ्वी, ककुद्मनि
वेदमाता सरस्वतीको भी मुझमें नियतदेखो बादल, समुद्र, नदी, सरोवरमूर्त्ति
मान चारोंपितरोंको और तीनोंगुणोंको भी मुझीमें देखो हे मुनिदेव कर्मसे
पितृकर्मबड़ाहै मैं अकेलाही देवपितरदोनोंका पिताहूं मैंहीं बड़वानल समुद्र
की अग्नि होकर श्रद्धापूर्वक होमेहुए हव्यकव्यको भोजनकरताहूं, पूर्वसमय
में मुझसे पैदाहुए ब्रह्माने मुझी यज्ञरूपको पूजाथा जिसकेकारण प्रसन्न हो,
कर मैंने बहुतसेवर उसको दिये, कल्पकी आदिमें मेरापुत्रत्वभावलेकर लोकों-
के क्रमपूर्वक राज्य और अध्यक्षताको अहंकार प्राप्तहोगा तब तुम्हारी कीहुई
मर्यादाओंको कोई उल्लंघन नहीं करेगा और तुम जीवोंके वांछित वस्तुओं
के वरदाता होगे, हे तपोधन महाभाग तुम्हीं महातेजस्वी ब्रह्माहोकर सबदेव
पितृ ऋषि गन्धर्व आदि अनेक प्रकारके जीवोंके उपासना योग्यहोगे और
हे ब्रह्मन् देवकार्य्योंमें अवतारलेनेवाला मैं सदैव तुमसे पुत्रकेसमान उपदेश
और आज्ञालेनेकेयोग्य होऊंगा ६१ फिरमैं प्रसन्नहोकर इनवरोंके सिवायअन्य
बहुत उत्तम २ वर ब्रह्माको देकर निवृत्ति धर्मपरायण होऊंगा, सब धर्मोंसे जो
पृथक्ता है उसकोही उत्तम निवृत्ति कहते हैं इसीहेतु से सबअंगों से नि-
वृत्त धर्मयुक्तहोकर विचरे, सांख्य शास्त्रका निश्चय रखनेवाले आचार्य्यों ने
कपिलजीको सावधान विद्या सम्पन्न और सूर्य्यमें नियतहोना वर्णनकियाहै,
यह भगवान् हिरण्यगर्भवेद में स्तुतिकियाहुआहै हेब्रह्मन्वही मैं योग शास्त्रों
के मध्यमें योगमें प्रीतिमान वर्णन किया गयाहूं, मैंहीं सनातन सगुण रूप
होकर सर्गमें नियत होताहूं फिर मैंहीं हजार युगोंके अन्तहोनेपर संसारको
अपनेमें लय करलेताहूं,सब स्थावर जंगम जीवोंको अपनी आत्मामें नियत
करके अकेलामैंहीं विद्यानाम मायासे युक्तहोकर जगत्को नाशकरताहूं फिर
मैंहीं जगत्को उत्पन्नकरताहूं मेरीजो चौथीमूर्त्ति है उसने अविनाशी शेषजी
को उत्पन्न किया वहीशेष संकर्षण जीवकहाजाता है उसने प्रद्युम्ननाम मन

को उत्पन्न किया और प्रद्युम्न से अनिरुद्धरूप अहंकार उत्पन्न हुआ और बारंबार मेराही प्रत्यक्ष होताहै, इसीप्रकार अनिरुद्धसे ब्रह्मा उत्पन्न हुए उसकी उत्पत्ति नाभिकमलसे है और ब्रह्माजी से सब स्थावर जंगम जीव उत्पन्न हुए, बारंबार कल्पोंकी आदि में यह सब सृष्टिका होना ऐसा जानो, जैसे कि इस लोकमें आकाश से सूर्य्य का उदय और अस्त होता है, गुप्तहोने पर बड़ा तेजस्वी काल उसको फिर लेआताहै इसीप्रकार मैंभी सबजीवों के उपकारके लिये बाराहरूपको धारण करके बड़े बलसे,इससागररूप मेखलाधारी जीवोंके भारसे आक्रान्त सबअंगों समेत इसपृथ्वीको गुप्तहोजानेपर अर्थात् हिरण्याक्ष के हरलाने पर पाताल से ऊपरको लाऊंगा फिर नृसिंह रूपहोकर हिरण्यकशिपु दैत्यको बड़े बलसे नखोंके द्वारा बिदीर्ण करके मारूंगा तदनन्तर बिरोचनका पुत्र महा पराक्रमी महा असुर राजाबलि सब लोकोंका और देवअसुर राक्षसों का बिरोधी होगा और इन्द्रको अपने इंद्रासनसे नीचे उतारेगा उसके हाथसे तीनोंलोकों की बिजय होनेपर और इंद्रके पीठफेरने पर कश्यपजी से अदिति मातामें मैंहीं बारहवां सूर्य्य उत्पन्न होऊंगा, हे नारद फिर महातेजस्वी इंद्रको उसका राज्यदूंगा और देवताओंको नये सिरेसे फिर अपने २ स्थानों पर नियत करूंगा, सब देवताओं के बिरोधी पराक्रमियोंमें श्रेष्ठ दानवोत्तम राजा बलिको पाताल में स्थित करूंगा, त्रेतायुग में भृगु वंशका रक्षा करनेवाला परशुराम अवतारभी मैंहीं होऊंगा और बड़े २ क्षत्री राजाओंको सेना समेत मारूंगा, ८० त्रेता युगमें द्वापरके सन्ध्यांश होने पर मैं जगत्का स्वामी दशरथ का पुत्र रामचन्द्र नाम मर्य्यादा पुरुषोत्तम अवतार धारण करूंगा, प्रजापतिके पुत्र एकत द्विननामऋषि अपने त्रितनाम भाईके शापसे बिपरीतरूप अर्थात् वानरकेरूपोंको धारण करेंगे, उन दोनोंके वंशमें जो बड़े पराक्रमी वानर इन्द्रके बलके समान प्रचण्ड पराक्रमी होंगे वही वानर देवताओंके कार्य्य में मेरी सहायता करेंगे फिर उस राक्षसों के स्वामी घोर रूप पुलस्तिके कुलको दोष लगानेवाले भयानक रूपसंसारके कंटक रावणको उसकी सन्तान समेत मारूंगा,औरद्वापर कलियुगकी सन्धिके अन्तमें कंसादिकोंके मारनेको मेरा कृष्ण नाम अवतार मथुरामें होगा वहां भी देवताओंके कंटक रूपबहुतसे दानवोंको मारकर,कुशस्थली द्वारकापुरीको अपनानिवास स्थान बनाऊंगा उसपुरी में निवासी होकर अदिति माताके अप्रियकारी नरकासुर भौमासुर, मुरु और पीठ नाम दानवोंको मारकर नानाप्रकार के धनरत्नादि संपन्न क्रीड़ाके योग्य प्राग्ज्योतिषनाम रमणीक पुरको द्वारका में लाऊंगा फिरबाणासुर के हितैषीलोकपूज्य युद्धकांक्षी महेश्वरजीको सेना समेत बिजय करूंगा। तदनन्तर हजार भुजाधारी राजाबलिके पुत्र बाणासुरको बिजयकरके

ंसस्तोंभ निवासीको मारूंगा जो कि गर्गऋषि के तेजसे संयुक्त कालयवननाम
ा प्रसिद्धहोगा उसका वध मेरे हाथसे होगा हेब्रह्मन् बड़ाबली सबराजाओंका
वरोधी असुरों से वृद्धियुक्त जरासन्ध गिरिव्रज में राजा होगा उसका भी मरना
ारेही बुद्धिकी प्रेरणासे होगा,पृथ्वीके जितने पराक्रमी राजा हैं उन सबके इकट्ठे
ोनेपर धर्मके पुत्र राजायुधिष्ठिरके यज्ञमें शिशुपालको मारूंगा और इन्द्रका
त्रकेवल एकअर्जुनही मेरासाथी और सहायकरहेगा युधिष्ठिरको उसकेभाइयों
मेत उसके राज्यपर नियत करूंगा लोकमें यही प्रसिद्धी होगी कि देवताओं
ं कार्य के लिये आप श्रीनरनारायणऋषि युद्धकरके क्षत्रियों के समूहों को
ारेंगे,इच्छानुसार पृथ्वीकेभारको उतारकर सब यादव लोगोंकाऔरद्वारकाका
ीरनाश करूंगा फिरचारमूर्त्ति रखनेवाला मैं अनेक कर्मोंको करके आत्मज्ञान
प्रवृत्तहोके अपने लोकोंको जाऊंगा हे उत्तम ब्राह्मण मेरे अवतारों के हंस,
र्म,मत्स्य,वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, दशरथात्मज श्रीरामचन्द्र, कृष्ण
ौर कलकी यहनाम हैं, फिरमैं गुप्तहोनेवाले वेद श्रुतिको फेरकर जबलाया
ब सतयुग में सब प्राणी वेद और श्रुतिसे संयुक्त कियेगये तुमनेभीपुराणों में
ाहोगा कि मेरे बहुतसे उत्तम २ अवतार पूर्वकाल में होचुकेहैं,लोकके कार्य्यों
ो करके फिरअपने मूलमें प्रवेशकिया मेरायह इसप्रकारका दर्शनब्रह्माजी को
ाकभीनहींहुआ अबजोयहां तुझएकनिश्चयवाले बुद्धिके स्वामीसे यहमैंने
पना गुप्त वृत्तान्त जिसको कि कोईनहीं जानताहै तुझभक्तिमान से वर्णन
या, भीष्मजी बोलेकि इसप्रकार वहविश्वमूर्तिधारी अविनाशी भगवान
ता यहसब वचनकहकर उसीस्थान में अंतर्धान होगये फिर महातेजस्वी
रदऋषिभी अभीष्ट मनोरथोंको पाकर नरनारायण जीके दर्शन करनेको
रिकाश्रमकोगये, उननारायणऋषि ने सांख्ययोग औरचारोंवेदोंसे संयुक्त
चरात्रनाम महाउपनिषदबनाया , हेतात फिर नारदजीने श्रीनारायणजीके
ुखसे निकलेहुये शास्त्रोंमें जैसेसुना और समझाथा सबब्रह्मलोक में जाकर
नाया, युधिष्ठिरबोलेकि इन बुद्धिमाननारायणजी का यहमाहात्म्य अपूर्वहै
ाको क्या ब्रह्माजी नहीं जानतेथे जो नारदसेसुना,ब्रह्माजीभी उसी से एक
रखते हैं वह उसबड़े तेजस्वीके प्रभावको क्योंनहीं जानतेथे, भीष्मजीबोले
ाजेन्द्र हजारों महाकल्प और उत्पत्तिनाश व्यतीतहुए और संसारकी आदि
पत्ति में प्रभुब्रह्माजी संसार के स्वामी कहेगये हैं इससे वह इस नारदजीसे
धिकदेवसृष्टिको जानतेहैं, और उसी प्रकार से परमेश्वरको अपना उत्पत्ति
ानजानतेहैं, परन्तु ब्रह्मलोकमें जो दूसरे सिद्धोंके समूह इकट्ठे हुए उनसब
सुनाने को यह श्रेष्ठपुराण के समानवर्णनकिया हे राजाइसके पीछे इन
द्धों के मुख से सूर्य्यदेवताने सुनकर अपने पीछे चलने वाले ऋषियों को

सुनाया जिनकी कि संख्याछ्यासठ सहस्र है और सूर्य्यके आगे पीछेस्तुति करते चलते हैं और उन आगे पीछे चलनेवाले ऋषियोंनेभी सुमेरु पर्व्वतपर इकट्ठहोनेवाले देवताओंको यह उत्तम शास्त्र सुनाया, और देवताओंसे सुन-कर असित नामऋषिने अपने पितरोंको सुनाया, हे भरतवंशी बेटा मेरे पिता शंतनुनेभीमुझसे कहाइसीसे मैंनेभी तुझ से वर्णनकिया, जिनदेवता मुनि-योंने यह पुराण सुनायाहै वह सबभी सबप्रकारसे चारों ओर आत्माको पूजते हैं हे राजा यह ऋषिसम्बन्धी आख्यान क्रमसे परम्परा पूर्व्वक बहुत काल से प्राप्त है जो वासुदेव जी का भक्तनहीं है उस को तुम किसीदशामें भी देनेको योग्य नहींहो, हे राजा तुमने सैकड़ों अन्य आख्यान जो मुझ से सुने उन सबका यह सारभूत है, जैसे देवता असुरोंने समुद्रको मथकर अमृतको निका-लाहै उसीप्रकार पूर्वकाल में वेदपाठी ब्राह्मणोंने यह कथारूपी अमृत निकाला है अनन्य भक्तिका प्राप्तकरनेवाला और एकान्तमें सावधान होकर जो पुरुष इसको पढ़ताहै वासुनताहै, वहमनुष्य श्वेतद्वीपमें प्राप्तहोकर चन्द्रमाके समान प्रकाशमान होकर सहस्र रश्मिवाले सूर्य्यदेवता के भीतर वर्त्तमान अन्तर्य्यामी महातेजमें निस्सन्देह नियत होजाताहै, इसीप्रकार जो रोगी इसकथाको प्रा-रंभसे मनलगाकर सुनेगा उसका भारीभी रोग निवृत्तहोगा औरजो जिस बातकीकामनाकरे वहकामना उसको प्राप्तहोगी और भक्तपुरुष महाभक्तों की गति को पाता है, हेराजाउस पुरुषोत्तम का पूजन तुमकोभी करना उचित है वहीसंपूर्ण संसारकामाता पिता और गुरुहै, हे महाबाहु युधिष्ठिर वह महाज्ञानी दुष्टोंका नाशकर्त्ता षडैश्वर्य्याधिपति वेदब्राह्मणोंकीरक्षा करनेवाला भक्तोंका सनातन देवतातेरे ऊपरप्रसन्नहो, वैशंपायनबोले कि हे जनमेजयवह धर्मराज युधिष्ठिर और उसके वह सबभाई इस उत्तमआख्यानको सुनकर श्रीनारायण जीके भक्तहोगये, हेभरतवंशी सरस्वतीको उच्चारण करते हुये उसभगवान् पुरुष नरनारायणने सदैव जपमें प्रवृत्त होकर सबको विजयकिया, और हमारे श्रेष्ठ गुरु श्रीवेदव्यासजीने भी नारायण जीको स्मरणकरतेहुए मुख से उसी उत्तममंत्रकाजप किया, औरअन्तरिक्षमार्गके द्वारा अमृत के उत्पत्ति स्थान क्षीरसागरपर पहुंचकर देवेश्वरकी पूजाकरके फिर अपने आश्रम में निवास किया, भीष्मजी बोले कि यह नारदजीका कहाहुआ और मेरा वर्णनकिया हुआ आख्यान सबतैंने सुना यहपरम्परासे एकसे एकको मिलताहुआ चला आताहै और पूर्वमें मेरेपिताने मुझ से वर्णनकिया, सूतजीबोले कि यह वैशं-पायनजीका कहाहुआ सबआख्यान मैंने तुमसेकहा उसको सुनकर जनमेजय ने अपनी बुद्धिके अनुसार अच्छीरीतिसे अभ्यासकिया हे नैमिषारण्यवासियो तुमसब तप और नियमके करनेवाले वेदज्ञोंमें उत्तम श्रेष्ठ ब्राह्मण शौनकऋषि

के महायज्ञमें वर्त्तमानहो तुम सब अच्छे हवन पूर्व्वक उत्तम यज्ञों में सनातन परमेश्वरका पूजनकरो १३५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेशतोपरिपंचपष्टितमोऽध्यायः १६५ ॥

एकसौछ्यासठका अध्याय ॥

शौनकजी बोले कि वह षड़ैश्वर्य्यवान् ईश्वर यज्ञोंमें किसरीतिसे प्रथमभाग अर्थात् उत्तम भागके भागीहुए और यज्ञधारी होकर सदैव वेद वेदांगके कैसे जाननेवालेहुए वहभगवत् स्वरूपप्रभु शान्त और निवृत्तिधर्ममें नियतहै उसी भगवान् प्रभुने निवृत्तिधर्मको धारणकिया और सब देवता किस प्रकार प्रवृत्ति धर्मोंमेंभाग पानेवाले कियेगये और निवृत्ति धर्मवाले पुरुष किसरीतिसे निवृत्ति धर्मवाले हुए, हेसूतजी इस हमारे गुप्त और प्राचीन सन्देह को निवारण करिये क्योंकि आपहीसे नारायणकी हितकारी कथाओंको हमने सुनाहै, यहसुनकर सूतपुत्रने उत्तर दिया कि हेशौनक राजाजनमेजयने व्यासजीके शिष्य वैशंपायनजीसे जोपूछाहै उसप्राचीन वृतान्तको मैं तुमसे कहताहूंकिबड़ेज्ञानीजनमेजयने इस जीवधारियोंके अन्तरात्म नारायणजीके माहात्म्यको सुनकर वैशंपायनजीसेपूछा, कि यहसब ब्रह्माआदि सबदेवता मनुष्य असुरोंसमेत सफल कर्मोंमें प्रवृत्त संसारदृष्टआताहै और हेब्रह्मन् आपने मोक्षको निर्वाण और परमानन्द रूपकहा इसलोकमें जोपुरुष पुण्य पापसे रहित होकर मुक्तहोते हैं, वहसूर्य्यके अन्तर्य्यामी अनन्त चैतन्यरूपमें प्रवेश करते हैं यह हमने सुनाहै इससे यह सनातनमोक्षधर्म दुःखसेकरनेके योग्यहै, सबदेवता जिस मोक्षधर्मको त्यागकर हव्यकव्यके भोक्ताहुए क्या यहब्रह्मा, रुद्र और बलिका मारनेवाला इन्द्र,सूर्य्य, चन्द्रमा,वायु, अग्नि, वरुण, आकाश, पृथ्वी और जोशेषदेवताहैं वहसब अपने नियत नाशआदिको नहीं जानतेहैं इसकारण वह अचलअविनाशी न्यूनतारहित उत्तममोक्षमार्गमें नहीं नियतहोतेहैं और उसीनाशवान् प्रवृत्ति मार्गमें वर्त्तमानहैं और कालके व्यतीत होनेपर क्रियावान् पुरुषोंमें यह बड़ा दोषहै हे ब्रह्मन् इससन्देहरूपी हृदयके बाणको इतिहासों के द्वारा निकालो मुझ को अपूर्ववार्तोंके देखनेकी बड़ीउत्कंठाहै, हे ब्राह्मण देवता यज्ञोंमें भागलेनेवाले कैसेकहेगये और कैसे पूजेजातेहैं हे ब्रह्मन् जोदेवता यज्ञोंमें भाग को लेतेहैं वह पूजित देवता आप अपनेयज्ञोंमें किसको भागदेतेहैं, वैशंपायन बोले कि हे राजा बड़ाआश्चर्य्यकारी आपने प्रश्नकिया यहप्रश्न उसमनुष्यसे जिसने तपस्या नहींकीहै और वेदकोभी नहीं जानताहै अथवा पुराणकोभी सुना वा पढ़ानहीं है शीघ्रकहना असंभव है अच्छा जैसे कि पहले गुरूजीसे मैंने पूछाहै उस के अनुसार तुमसे कहताहूं मेरेगुरु वेदोंके विस्तार करनेवाले

द्वीपनिवासी कृष्णनामव्यास महर्षि हैं और सुमन्त, जैमिनि सुव्रतपैल, और चौथामैं पांचवें शुकदेवजी इनपांचोंशान्तचित्त क्रोधरहित जितेन्द्री शिष्योंको इकट्ठे होनेपर उन्होंने वेदोंको पढ़ाया इनमेंपांचवां महाभारतहै, पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ क्रीड़ायोग्य सिद्ध चारणआदिसेव्याप्त सुमेरुके किसीभागमें उनवेदपढ़नेवाले शिष्योंने किसीसमय सन्देहकिया और व्यासजीने इसीतुम्हारे प्रश्नको उन से कहा और मैंने भी सुना उसीको हे भरतवंशी अबमैं तुमसे कहताहूं, सबअज्ञात दोषोंके दूरकरनेवाले पराशरजीके पुत्र व्यासऋषिने शिष्योंके वचनोंको सुनकर यह वचन कहा कि हे उत्तम शिष्यलोगो मैंने भूतभविष्य वर्तमान इन तीनों कालों के जाननेके निमित्तही बड़ीतपस्या कीथी क्षीरसागरके समीप शान्तचित्त तपपरायण मुझत्रिकालज्ञ होनेवालेके मनोरथ को श्रीनारायण जीने अपनी कृपासे पूर्णकिया अर्थात् वहज्ञान मुझको उत्पन्न होगया उसको न्याय के अनुसार यथार्थ तुमसेकहताहूं तुमचित्त लगाकर सुनो,, २७ मैंने कल्पके प्रारंभमें ज्ञानरूप दृष्टिसे जैसा वृत्तान्तदेखाहै और सांख्यवायोग जाननेवाले पुरुषों ने जिसको परमात्मावर्णनाकिया है वह अपने कर्मसे महापुरुष नामकहलाताहै उससे अव्यक्त हुआ जिसको ज्ञानी प्रधानकहते हैं, संसारकी उत्पत्तिके निमित्त अपनी इच्छासे अव्यक्तईश्वर व्यक्तरूपहुआ वहलोकों में महान् आत्माअनिरुद्ध कहाजाताहै, जिसने अपने प्रकटहोनेके पीछे ब्रह्माको उत्पन्न किया वह अहंकार नाम प्रसिद्ध हुआ वह सब तेजों का रूपहै पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश यह पंचमहाभूत पांच रीति के द्वारा अहंकार से उत्पन्नहैं महाभूतोंको उत्पन्न करके गुणों को उत्पन्न किया और पंचमहाभूतों से सब देह उत्पन्नहुये उनको सुनो, मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्ति, पुलह, क्रतु, महात्मा वशिष्ठ, स्वायम्भुवमनु यह आठ प्रकृति अर्थात् उत्पत्तिस्थान जानने के योग्यहैं इन्हींमें लोक नियतहैं लोकों के पितामह ब्रह्माजीने उन वेदवेदांग यज्ञ और यज्ञों के अंगों से संयुक्त ऋषियोंको लोकसिद्धी के लिये उत्पन्न किया उन आठों प्रकृतियोंसे यह विश्वरूप संसार उत्पन्न हुआ,, फिर क्रोधरूप रुद्र पुरुष उत्पन्नहुए उन्होंने आप जिन देशों को उत्पन्न किया वह ग्यारहरुद्र रूपान्तर करनेवाले पुरुष कहेगये वह रुद्र प्रकृति, और सब देवर्षिलोग लोक की सिद्धि के निमित्त उत्पन्न हुये और ब्रह्माजी के पास नियत होकरबोले ३८ कि हे भगवन् अनेकरूपधारी पितामह आपने हमको उत्पन्न कियाहै इससे जो जिस अधिकारकी योग्यता रखताहै उसको उस अधिकार पर नियत करना योग्यहै आपने जो संसार के कामों का विचार करनेवाला पद हमको दिया है वह उस अहंकारकर्त्ता से कैसे रचा कियाजायगा,, जो अधिकार के कामों का विचार करनेवालाहै उसके पराक्रम उत्पन्न करनेवाले

कर्मको बताओ यह बात सुनकर उस बड़े देवता ब्रह्माजी ने उनसे कहा कि हे देवताओ तुमने मुझको खूब जताया तुम्हारा कल्याणहो मुझको भी यही चिन्ता हुईथी जो तुम चाहते हो सम्पूर्ण त्रिलोकी का दृढ़ बीजरूप परिग्रह किसप्रकार करने के योग्य है और हमारे तुम्हारे शरीरका बल किस रीति से नाश न हो, यहां से हम सब उस लोकसाक्षी गुप्तपुरुष के धामको चलें वह हमारे हित की बात कहैगा, तदनन्तर लोक के हितकारी वह ऋषि देवता ब्रह्माजी समेत क्षीरसागर के उत्तरीय तटपरगये, और सब ब्रह्माजी के बनाये हुए वेदसे कल्पित तपों में प्रवृत्तहुए वह तपचर्या महानियम नाम बड़े भारी दुःखोंसे भी असह्यहै, कि जिनकी दृष्टि और भुजा ऊपर को थीं और एकाग्र चित्तथा इस स्वरूपसे सब एक चरणसे नियत होकर काष्ठके समान दृढ़होके सावधान हुए उन्होंने दिव्य हजारवर्ष घोर तपस्याको करके उस मधुरबाणी को सुना जो कि वेद वेदांगसे शोभितथी, श्री भगवान् बोले कि हे ब्रह्मा समेत सब देवता और तपोधन ऋषिलोगो मैं तुम सबकी कुशल क्षेम पूछकर इस उत्तम वचनको सुनाताहूं, मैंने तुम्हारे प्रयोजन को जाना वह लोकका बड़ा हितकारी है प्रवृत्तियुक्त तुम्हारे बल की वृद्धि करनेवाला कर्म्म तुमको करना उचितहै हे देवताओ तुमने मेरेआराधनकी इच्छासे अच्छा तप किया हे बुद्धिमानों तुम इस तप के उत्तमफल को पाओगे यह ब्रह्मा लोकों का बड़ा मान्य और पितामहहै हे देवताओ तुम बड़ी सावधानी से मेरा पूजन करो तुम सब यज्ञों में मेरे भागोंको सदैव कल्पना किया करो मैं भी तुम्हारे अधिकारके समान सबका कल्याण करूंगा, वैशम्पायन बोले कि सब देव ऋषियों ने उस परमपुरुष के इन वचनोंको सुनकर वेदोक्तरीतियों से बुद्धिके अनुसार विष्णु यज्ञ की रचनाकी उस यज्ञ में आप ब्रह्माजी ने सदैव के लिये सबका भाग नियत किया, देवता और देवर्षियों ने अपने२ भागको कल्पना किया वह देवता आदि सब सतयुग का धर्म रखनेवाले थे और उनके भाग बड़ ऊँचेथे उनको सूर्यकासा वर्ण महावरदायी सर्वगामी तेजमय पुरुष कहतेहैं, तदनन्तर उस अदेहरूप आकाशमें नियत महावरदायी ईश्वरने उनसब नियत देवताओंसे यह वचन कहा कि जिसने जो विभाग विचार कियाहै वह वैसेही मुझको प्राप्त होगा मैं बहुत प्रसन्नहूं अब प्रवृत्ति लक्षणवाले फल को कहताहूं, हे देवताओ मेरी प्रसन्नतासे उत्पन्न होनेवाला यह तुम्हारा लक्षणहै कि उत्तम पूर्ण दक्षिणावाले यज्ञोंसे आप पूजन करनेवाले तुम सबहरएक यज्ञ में प्रवृत्ति फलके भोगनेवाले होजाओ जो मनुष्य अन्यलोकों में भी यज्ञोंसे पूजनकरेंगे वह मनुष्य वेद कल्पित तुम्हारे भी भागोंको विचारकरेंगे उसमहायज्ञमें जिसने मेरेभागको जिसरीति से विचार कियाहै वह उसीप्रकार वेद सूत्रमें यज्ञभागके

योग्यकियाहुआ यज्ञभाग और फलके योग्य तुम देवता लोगोंको पोषणकरो, लोकमें सब बातों के विचारनेवाले और प्रवृत्तिफल से सत्कारपानेवाले तुम सब देवता अपने २ अधिकारके अनुसार जिन २ कर्मोंको करोगे उनसे बलवान् होनेवाले तुम सब अन्य लोकोंका भी धारण करोगे सब यज्ञोंमें मनुष्योंके पूजन आदिसे ध्यान कियेहुए तुमसब फिर मुझको ध्यानकरो तुम्हारी ओरसे यह मेरीही भक्तिहै इस आशय से औषधियों समेत सब वेद और यज्ञ उत्पन्न कियेगये हैं, इन वेदादिकों का पृथ्वीपर अच्छे प्रकार से प्रचार और अभ्यास होनेसे देवता तृप्तहोतेहैं यह तुम्हारी उत्पत्ति जो कि प्रवृत्ति गुणसे कल्पितहै वह मैंनेही तबतक के लिये कीहै जबतक कि कल्पना का अन्तहो हे ईश्वरो तुम अपने अधिकार के अनुसार लोकोंका हित विचार करो ६८ मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्ति, पुलह, क्रतु, वशिष्ठ यह सातों ऋषिहैं मैंने उनको मनसे उत्पन्न कियाहै, यह महावेदज्ञ वेदके आचार्य्य विचारकिये गये हैं और प्रवृत्ति धर्ममें युक्त होनेसे वही लोग प्रजापति भावमें भी कल्पना किये हैं, यह क्रियावानों का मार्ग प्रत्यक्षरूप और सनातनहै इससृष्टिका उत्पन्न करनेवाला प्रभु अनिरुद्ध नामसे प्रसिद्धहै यहरजोगुण प्रधान पुरुषोंका प्रवृत्तिमार्ग वर्णन किया, अब सतोगुण प्रधान पुरुषों के निवृत्त मार्गको कहते हैं--सन, सनत, सुजात, (सनकसनन्दन) सनत्कुमार, कपिल, और सातवें सनातन, यहसातों ऋषि ब्रह्माजी के मानसी पुत्रहैं और आपसे आप विज्ञान प्राप्त करनेवाले निवृत्ति धर्म्ममें नियत हुए, यह सबयोग और सांख्यके उत्तमज्ञाता धर्मशास्त्रोंके आचार्य्य और मोक्षधर्मके जारी करनेवाले हैं, इनके मार्ग और अधिकार का विभाग कहांसेहै इसको कहतेहैं--जिससे कि अव्यक्त के तीन गुण रखनेवाला महा अहंकार प्रथम उत्पन्न हुआ उससेभी जो परेहै उसको क्षेत्रज्ञ नामसे कल्पित कियाहै, सो हमयह जो निवृत्ति मार्ग है वह आवागमन रखनेवाले क्रियावान् पुरुषोंको कठिनतासे प्राप्तहोताहै, जोजीव जिस२ कर्ममें जिसरीति से प्रवृत्ति वा निवृत्ति धर्ममें नियत कियागयाहै वह उस २ के बड़े फलको पाताहै यहब्रह्मा लोकोंका गुरू संसार आदिका उत्पन्न करनेवाला प्रभुहै, माता पिताहै और मेरा उपदेश कियाहुआ तुम्हारा पितामहहै और जीवधारियों को वरका देनेवालाहोगा, इनके पुत्र रुद्रजी जो ललाट से उत्पन्न हुए वह ब्रह्माजीके उपदेशसे सब जीवोंके धारण करनेवाले होंगे तुम अपने २ अधिकारों को प्राप्त करके बुद्धिके अनुसार विचारकर सबलोकों में धर्मक्रियाओंको शीघ्रजारी करो विलम्ब मत करो, जीवोंकी कर्मगतियों का उपदेश करो हे देवताओ यहां मनुष्योंकी आयुर्दा पूर्णहोती है; क्योंकि यह सतयुग नाम उत्तम समय जारीहुआ इसयुगमें यज्ञपशु नहीं मारे जायँगे और

इसमें सबधर्म्म चारों चरणयुक्तहोंगे इसके पीछे त्रेतायुग नाम आवेगा इसमें तीन चरण धर्मके रहेंगे, और संस्कार कियेहुए पशु यज्ञोंमें मारेजायँगे उसमें धर्मका चौथाचरण नहीं होगा तिसके पीछेद्वापर नामयुग होगा उसमें धर्मके दोही चरणहोंगे उसके पीछे चौथा कलियुग नाम समयहोगा उसमें एकचरणही धर्मका रहैगा अर्थात् जहां तहां कोई कहीं धर्मको करेगा इस प्रकार से कहनेवाले गुरूसे देवता और देव ऋषियोंने सुनकर कहा कि जब धर्म एक चरण होकर जहांतहांही होगा तबहम लोगों को किसप्रकार से कर्मकरना उचित होगा उसको आपकहिये श्रीभगवान्बोले कि हेउत्तम देवताओ जिस स्थान पर वेद यज्ञ तपसत्य शान्त चित्तता और अहिंसा आदि धर्म वर्त्तमान हों वहां विचरो वहीदेश तुम्हारे सेवन करने के योग्य है अधर्म तुमको कभी स्पर्श न करेगा, व्यासजी बोले कि भगवान् से शिक्षा किये हुए वह सब देवता और ऋषियों के समूह भगवान् को नमस्कार करके अपनी रुचिके देशोंको गये, देवता आदि के चलेजाने पर अकेले ब्रह्माजी उस अनिरुद्ध देह में नियत होकर भगवत् के दर्शनकी अभिलाषा से वहीं स्थिर रहे, तब भगवान्ने हयग्रीव रूप धारण कर कुण्डल और कमण्डलु हाथ में लिये उन ब्रह्माजीके सन्मुखआकर चारोंवेदोंको अंगों समेत वर्णन किया, व्यास जी बोले कि इसके पीछे संसारके स्वामी ब्रह्माजी उसमहातेजस्वी नारायण को घोड़ेके स्वरूप में देखकर लोकोंके हितकी इच्छासे उस बरदायीको नमस्कारकर हाथ जोड़के उसके आगे नियतहुए तब उसदेवताने उनसे स्नेह पूर्वक मिलकर यहवचन कहा तुम अपनी बुद्धि के अनुसार लोक के कामों की सब दशाओंको विचारो तुमहीं सबजीवोंके धाता अर्थात् पालनेवाले प्रभु और गुरूहो मैं तुम्हारे सुपुर्द पृथ्वीकाभार रखकर शीघ्रही शान्तताको प्राप्त होजाऊंगा, जब देवताओंका कोई कार्य्य तुम्हारी सामर्थ्यसे बाहरहोगा तब आत्मज्ञानका उपदेश करनेवाला मैं अवतार धारण करूंगा, ऐसा कह वह हयग्रीवरूप नारायण उसीस्थानमें अन्तर्द्धान होगये और उनसे उपदेशपाये हुए ब्रह्माजीभी शीघ्र अपने लोकको गये, हे महाभाग इसप्रकारसे यहकमल नाभ सनातन देवता सदैव यज्ञोंका धारण करनेवाला यज्ञोंमें उत्तमभाग का लेनेवाला हुआ, और अविनाशी धर्मधारी पुरुषोंकी निवृत्ति धर्मनाम गति को प्राप्तहुआ और अपूर्व संसारको उत्पन्न करके प्रवृत्ति धर्मोंको विचारनेलगा, वही आदि मध्य अन्तहै वहीप्रजापालक और ध्यानके योग्यहै वहीकर्त्ता वही क्रिया और उसीने युगों के अन्त में सबको अपने में लयकरके शयन किया और फिर उसी युगकी आदिमें जगनेवालेने संसारको प्रकटकिया उसमहात्मा निर्गुण देवताके अर्थ नमस्कारकरो और उस अजन्मा विश्वरूप सब देवोंके

धाम स्वरूपको नमस्कारकरो, महाभूतोंके स्वामी रुद्रों के अधिपति द्वादश सूर्य्योंके प्रकाशक वसुओंके और अश्विनीकुमारोंके, मरुद्गणों के वेद यज्ञ और वेदांगोंके स्वामीको भी प्रणाम करो, समुद्रमें स्थित हरस्प मुञ्जकेशि शांत स्वरूप सब जीवोंको मोक्षधर्मके उपदेश करनेवाले तप तेज यश वचन सरिता कपर्द्दी वराह एक शृंग विवश्वत अश्वशिर चतुर्मूर्त्तिधारी गुह्य ज्ञान दृश्य अक्षर क्षर सर्वत्र गति अव्यय न्यूनाधिक रहित इनरूपों से आनन्द पूर्वक विचरनेवाले को नमस्कारकरो, यह परब्रह्म विज्ञान नेत्रों से जानने के योग्यहै, मैंने भी पूर्व समय में इसीप्रकार ज्ञानदृष्टिमे उसको देखाथा और मैंने तुम लोगोंसे मूल समेत यथातथ्य वर्णन किया हे शिष्यलोगो मेरे वचनोंको मानकर उसी हरिका सेवनकरो उसीको वेदोंके शब्दोंसे गाओ और बुद्धिके अनुसार पूजनकरो, वैशम्पायन बोले कि हम सब शिष्य और उनके पुत्र महा तेजस्वी शुकदेवजी उन बुद्धिमान् वेदव्यासजीसे उपदेश किये गये, हे राजा उन हमारे उपाध्यायजीने हमलोगों समेत चारोंवेदोंकी ऋचाओंसे उसईश्वर की स्तुतिको किया यह जो तुमने पूंछा सो सब वर्णनकिया, यह सब पूर्व्वकाल में गुरु व्यासजीनेही हमसे कहाहै, जो सावधान बुद्धिमान् पुरुष भगवान्को श्रद्धा पूर्वक नमस्कार करके सदैव इसउपाख्यानको सुनै वा सुनावैगा, वह नीरोग बुद्धिमान् पराक्रमी होगा और रोगी रोगसे निवृत्त होजायगा और बद्ध मनुष्य बंधनसे छूटताहै, इच्छावान् मनोरथोंको और आयुर्दा चाहनेवाले दीर्घायुको और ब्राह्मण सब वेदोंका प्राप्त करनेवाला होताहै क्षत्री विजयको वैश्य बहुत लाभको शूद्र सुखको अपुत्री पुत्रको कन्या सुन्दर पतिको पातीहै गर्भवती स्त्री आनन्दसे निवृत्तहोवे और पुत्रको उत्पन्नकरे बंध्या प्रसव पावे पुत्र पौत्र धन संयुक्तहोय और जो मनुष्य मार्ग में इसको पढ़े वह आनन्दसे मार्ग व्यतीत करे, जो जिस कामनाको चाहै वह अवश्य उसमनोरथको पाता है, इसप्रकारसे उसमहात्मा पुरुषोत्तमके इसवचनको जो अच्छेप्रकारसे निश्चय कियाहुआ था राजासे महर्षिने विस्तार पूर्वक वर्णन किया इसदेवता और ऋषियोंके समाजको सुनकर भक्तलोग आनन्दको पाते हैं १२१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेशततोपरिषट्षष्टितमोऽध्यायः १६६ ॥

एकसौ सरसठका अध्याय ॥

राजा जनमेजय ने प्रश्न किया कि हे भगवन् व्यासजी ने शिष्यों समेत जिन नानाप्रकारके नामों से इन मधुसूदन जी की स्तुतिकरी उसका मुख्य हेतु क्याहै इसको आप कृपाकरके मुझे समझाइये जिससे कि मैं प्रजापतियों के स्वामी हरिकी कथाको सुनकर अपने पापों से ऐसे शुद्ध होजाऊं जैसे कि

शरदऋतु का चन्द्रमा निर्मल होता है, वैशम्पायन बोले कि हे राजा उस प्रसन्न भगवान् ने अपने नामों के सर्वज्ञता आदि गुण और संसारकी उत्पत्ति का क्रम और मूल कारण श्रीकृष्णरूप होकर अर्जुनसे कहा है और शत्रुहंता अर्जुन ने उन महात्मा श्रीकृष्णजी के कहेहुए नामों का मूल हेतु उन्हीं से पूंछा था कि हे षडैश्वर्य्यमान त्रिकालज्ञ सबके स्वामी सब तेजोमय जगन्नाथ सबके अभय देनेवाले देव देवेश्वर आप के जिन नामों को महर्षियों ने वर्णन किया है और जो वेद पुराणों में गुप्त हैं उनसबके मूल हेतुको आप से सुना चाहताहूं हे प्रभु केशवजी आपके सिवाय आपके नामों के मूल हेतुको दूसरा नहीं वर्णन करसक्ता है श्रीभगवान् बोले कि हे अर्जुन ऋक् यजु साम अथर्वण यह चारों वेद पुराण और उपनिषद्, ज्योतिष सांख्य योग शास्त्र और अन्य वैद्यक आदि शास्त्रों में भी मेरेबहुत से नाम ऋषियों ने वर्णन किये हैं उनमें कोई नाम तो गुण संयुक्त और कोई कर्म से उत्पन्न हैं उनको तुम सावधानी से सुनो हे तात पूर्वसमय में तुम्हीं हमारे अर्द्धांग कहे जातेथे उस महातेजस्वी जीवमात्रों के परमात्मा यशस्वी निर्गुण सगुणरूप विश्व रूप नारायण के अर्थ नमस्कार है जिसकी प्रसन्नतासे ब्रह्मा क्रोध से रुद्र उत्पन्न हुए और सब जड़ चैतन्यों का उत्पत्ति स्थानहै हे सतोगुणियों में श्रेष्ठ वह जो प्रकाश आदि अठारह गुणों की धारण करनेवाली मेरी परा प्रकृति स्वर्ग पृथ्वी रूप लोकोंको योगसे धारण करनेवाली है वह कर्म फल रूप बाधा से रहित चिन्मात्र रूप अविनाशी अजया नाम लोकोंकी आत्मारूप है उसी प्रकृति से उत्पत्ति नाशकी सब विपरीत दशा प्राप्त होती हैं तप यज्ञ और यज्ञकर्ता पुराण पुरुष विराट् लोकों का उत्पत्ति और लय स्थान इन नामों से नामी अनिरुद्ध कहाजाता है हे कमल लोचन अर्जुन ब्रह्माजी की रात्रि के अन्त होनेपर उस बड़े तेजस्वी अनिरुद्ध की इच्छासे कमल उत्पन्न हुआ, उसमें ब्रह्माजी उत्पन्न हुये यह ब्रह्मा उसीकी प्रसन्नता से उत्पन्न हुआ है इसी प्रकार उस देवता के क्रोध होनेपर ललाटसे सायंकालके समय संसार के नाशकर्ता रुद्रनाम पुत्र उत्पन्न हुए यह दोनों देवता प्रसन्नता और क्रोध से उत्पन्न होते हैं और उसकी आज्ञा से यह दोनों संसारकी उत्पत्ति और नाश के करनेवाले हैं यहां वह दोनों कारण रूप होकर सब जीवों के वर देनेवाले हैं, हे अर्जुन गंगाजल से पूर्णजटा मुण्डधारी श्मशानवासी उग्रव्रत परायण महायोगी रुद्रजी बड़े भयानक रूप, दक्ष प्रजापति के यज्ञ के विध्वंसी और भगनाम देवता की आंख निकालनेवाले हर एक युग में नारायण रूप समझने के योग्य हैं उस देवदेवेश्वर महेश्वरजी के पूजित होने से प्रभु नारायण देवहीकी पूजा समझीजाती है इससे इनकी पूजा सदैव अच्छे प्रकार

से सबको करना योग्य है, हे पाण्डवनन्दन मैंहीं सब लोकों का आत्माहूं इसीकारण प्रारम्भ में अपने आत्मारूप शिवजी का पूजन करता हूं जो मैं सबके ईश्वर बरदाता शिवजी का पूजन नहीं करूं तो फिर कोई आत्मा को पूजन नहीं करे मुझ शुद्ध अन्तःकरण का यहमत है कि यह लोक मेरीजारी करी हुई प्रमाणीक मर्य्यादाओं पर अच्छे प्रकारसे कर्म करनेवाला होता है और प्रमाणीकही पूजनके योग्य हैं इसहेतुसे मैं उनको पूजताहूं, जो उन शिवजी को जानता है वह मुझको भी जानता है और जो उनके सन्मुखहै वही मेरे भी सन्मुख है शिव और नारायण दोनों एकही आत्मा हैं केवल रूपमें दो हैं परन्तु वास्तव में एकही हैं हे अर्जुन वह शिवजी लोकों में विचरते हैं और सब कर्मों में प्रत्यक्ष रूप से नियत हैं हे पाण्डव मेरे बरदेने के योग्य कोई नहीं है, मैंने इस प्रकार विचारकर पुत्र के निमित्त आत्मा के द्वाराउस आत्मारूप पुराणपुरुष ईश्वर शिवजीका आराधन किया, विष्णु अपनी आत्माके सिवाय किसीको नमस्कार नहीं करते इसकारण से रुद्रजीका स्मरणकरताहूं, ऋषियों समेत सब ब्रह्मारुद्र देवता इस देवदेवनारायण हरिको पूजन करतेहैं हे अर्जुन सब वर्त्तमान भविष्यत देवताओं में श्रेष्ठ तम विष्णुजी सदैव सेवा करनेके योग्य हैं, इससे हे कुन्तीनन्दन तुमहव्यदेने वाले विष्णुजी को नमस्कार करो इसी प्रकार शरणदाता बरदाता और हव्य कव्य भोजन करनेवाले को सेवनकरो, चारप्रकार के मेरे भक्तहोते हैं उनमें भी अनन्यभक्त महाउत्तम हैं अर्थात् आत्माकेही उपासकहैं, उन अनिच्छावान् भक्तोंको मैंही गतिहूं इनके विशेष जो बाकीके तीन प्रकारके भक्तहैं वह कर्मफलके चाहने वालेहैं, वह विनाशवान् धर्म वालेहैं और ज्ञानी उत्तमफल का पानेवाला है ब्रह्ममहादेव और जो अन्यदेवताहैं उनके सेवन करनेवाले ज्ञानीपुरुष मुझकोही प्राप्त होतेहैं हे अर्जुन भक्तिके विषयमें यह मुख्यता तुम से वर्णन की, हे कुन्तीनन्दन तुम और हम नरनारायण कहाते हैं हम दोनों पृथ्वी के भार उतारने को मनुष्य शरीरमें प्रविष्ट हैं हे अर्जुन मैं अध्यात्म को जानताहूं और जोहूं और जिससे प्रकटहूं उसको भी जानताहूं और निवृत्ति प्रवृत्ति लक्षणवाले धर्मकोभी जानताहूं और मैंही सनातन अकेला जीवात्मा का भी उत्पत्ति स्थान कहाताहूं अर्थात् मुझ बिम्बरूप में प्रतिबिम्ब रूप जीवकल्पितहोते हैं और मुख्यता का ज्ञान होनेपर केवल बिम्बही शेष रहजाता है दूसरे जीवात्मासे संबंध रखनेवाले शरीर नारायणनाम हैं क्योंकि शरीर जीवात्मासे मिलेहुएहैं वह मोक्षसेपहले उपाधि दशामें मेरा निवास स्थानहै इसीहेतुसे मेरा नारायण नामहै, जैसे सूर्य्य उदयहोकर अपनी किरणोंसे सब को प्रकाशित करताहै उसीप्रकार मैंभी अपने प्रकाशसे इस संसार को व्याप्त

करताहूं और सब जीवोंका निवास स्थानहूं इस हेतुसे मेरा वासुदेव नामहै, सबजीवोंका लयस्थानहूं और मुझीसे सब प्रकट होतेहैं आकाश स्वर्ग और पृथ्वी सबव्याप्त है प्रकाशभी मेरा अधिकहै और जीवमात्र अपने शरीर त्यागने के समय जिस ब्रह्मको स्मरण करतेहैं वहभी मैंहीहूं इस अर्थ परम्परा से मेरानाम विष्णुहै, सबमन शुद्ध और शान्तचित्तसे मेरीही इच्छा करतेहैं और दमदामनामस्वर्ग, अन्तरिक्ष, और पृथ्वी मेरेही उदरमेंहैं इस हेतुसे मेरादामोदरनामहै, अन्न, वेद, जल, अमृत, यहसब पृष्णिनाम कहेजाते हैं सो सबमेरे गर्भस्थान हैं इसहेतुसे मेरानाम पृष्णिगर्भ है, ऋषियोंने इच्छाओं में प्रवृत्त कियेहुए त्रितऋषिको जतलाकर ऐसा मुझसे कहा कि हे पृष्णिगर्भ एकत और द्वितके हाथसे गिराये हुए त्रित ऋषिकी रक्षाकरो, तदनन्तर वह ब्रह्माजीकापुत्र प्राचीन और ऋषियों में श्रेष्ठत्रित पृष्णिगर्भका जयकरनेसे इच्छा से निवृत्तहुआ, लोकोंको तप्त वा प्रकाशमान करनेवाले सूर्य्य अग्निचन्द्रमा की जो किरणें प्रकाश करती हैं वह मेरेकेश अर्थात् बाल कहेजातेहैं इसी कारण सर्वज्ञ पुरुष मुझको केशवनाम से पुकारते हैं महात्मा उतथ्य ऋषिने अपनी स्त्री में गर्भस्थापन किया और दैवयोगसे उतथ्य ऋषिके कहीं चले जाने पर बृहस्पतिजीने उसमहात्माकी स्त्रीको एकान्त में पाकर विषय की वासनाकी उस समय हे अर्जुन स्त्रीके गर्भमें से उतथ्य के पंचभूतात्मक पुत्र ने बृहस्पतिजीसे यहकहा कि हे वरदाता मैं प्रथम आगयाहूं तुममेरीमाताको दुःखदेनेके योग्य नहींहो बृहस्पतिजीने यह सुनकर क्रोधमें होकर उसको शापदिया कि मेरे विषयकरने को जो तुमनेरोका है इसहेतुसे तुमनिस्सन्देह अंधे उत्पन्न होगे तब उनके शापसे वह जन्मांध होगये इसीसे वह ऋषि दीर्घतमानामसे प्रसिद्ध हुए और सनातन ऋषि से उसने अंग और उपअंगों समेत चारों वेदोंको पढ़ा और शुद्ध अन्तःकरणसे मेरे इस गुप्त केशव नाम को रीतिपूर्व्वक वारम्वार जपाइसजपके प्रतापसे वह दृष्टियुक्तहोगये और इसी हेतुसे उनका नामगौतम हुआ हे अर्जुन इसप्रकारसे यह मेरा केशवनाम सब देवता और ऋषियोंकोवरकादेनेवालाहै, चन्द्रमासमेत अग्निने एकहीउत्पत्ति स्थानको प्राप्तकियाइसीहेतुसेयहजड़चैतन्यरूप जगत्अग्निसोमरूपहै, यहभी वृत्तान्त प्राचीन सिद्ध होताहै कि अग्नि और चन्द्रमा एकस्थानमेंही उत्पन्न होनेवाले हैं और अग्निको आगे रखनेवाले हैं और एकही स्थानसे उत्पन्न होने के कारण परस्पर पूजित होकर लोकोंको धारण करतेहैं ५७॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिसप्तषष्टितमोऽध्यायः १६७॥

———

एकसौअरसठका अध्याय॥

अर्जुन बोले कि हे मधुसूदनजी पूर्व समय में अग्नि और चन्द्रमा किस प्रकारसे एकही योनिमें प्राप्त हुए इस मेरेसन्देहको निवृत्तकरो, श्रीभगवान् बोले हे पाण्डुनन्दन अर्जुन बहुतश्रेष्ठ है मैं अपने तेज से प्रकट होनेवाले प्राचीन वृत्तान्त को तुम से कहताहूं तुम एकाग्र मनसे सुनो, युगों की हज़ार चौकड़ियों के अन्त में प्रलयकाल के वर्त्तमान होने और सब स्थावर जंगम जीवोंके अव्यक्त में लय होनेपर, और वायु अग्नि पृथ्वी से रहित महाअन्धकार युक्त लोकके एकरस ब्रह्मरूप होनेपर और उस एकरस अद्वैतब्रह्मको अपनी महिमा में नियत होनेपर दिन, रात्रि, प्रधान आकाश परिमाण आदि और सबल मायाके वर्त्तमान होनेपर, नारायण के गुण ऐश्वर्य आदिकी रक्षा से पुरीरूप देहों में शयन करनेवाले अविनाशी हरि उस अन्धकार के भीतर से प्रकटहुए यद्यपि वास्तवमें अविनाशी अजर इच्छासे रहित अग्राह्य गुप्त सत्यवक्ता व्यवहारोंसे जुदे हिंसा से रहित चिन्तामणिके समान भावरूप नानाप्रकारकी निजवृत्तियों से युक्त द्वैपता रहित जरामृत्यु विनारूपरहित सब का स्वामी और सनातन वेद प्रमाण है तौभी उस समय सब सतसत् रात्रि दिन इत्यादि कोई भी न था केवल अन्धकार रूप विश्वथा वही विश्वरूप परमेश्वरकी रात्रिथी उस अन्धकारसे प्रकटहोनेवाले ब्रह्मयोनि पुरुषोत्तम सगुण ब्रह्मके प्रकट होनेपर संसारके उत्पन्न करनेकी इच्छा करनेवाले उसपुरुषने अपने नेत्रोंसे अग्नि और चन्द्रमाको उत्पन्न किया उससे भूत सर्ग के उत्पन्न होनेपर संसारी परम्परा में से ब्राह्मणों का वंश क्षत्रियों के वंशके पास नियत हुआ जो चन्द्रमा है वही ब्रह्महै जो ब्रह्म है वही ब्राह्मण है जो अग्नि है वही क्षत्रियों का वंश है और क्षत्रियोंके वंशसे ब्राह्मणों का वंश बड़ा बलवान्है कारण यह है कि यह गुण लोकके दृष्टि गोचर है कि प्रथम ब्राह्मणोंसे उत्तम कोई नहीं हुआ इसका हेतु यह है कि जो ब्राह्मणों के मुखमें हवन करता है वह प्रत्यक्ष प्रकाशित अग्निमेंहवन करताहै इसहेतुसे मैं कहता हूं कि ब्राह्मण से भूतसर्ग उत्पन्न किया गयाहै और हवनोंकोही प्रतिष्ठा करके तीनोंलोक धारण कियेजातेहैं और मंत्रवादी भी ब्राह्मण के माहात्म्यको प्रकट करता है कि हे अग्नि तुम देवता मनुष्य और संसारके हितकारीहो क्योंकि तुम यज्ञों के होताहो तात्पर्य्य यह है कि अग्निका होता ब्राह्मण अग्नि से भी अधिक है वेदभी इसकी गवाही देताहै हे अग्नि तुम यज्ञों को और विश्वेश्वरआदि देवताओंके होताओं के होताहो अथवा विश्वेश्वर आदि देवताओं से संबंध रखनेवाले यज्ञों के होताहो और तुम देवता मनुष्योंकेही हेतु से संसार के

हितकारी हो, और अग्निही यज्ञों का होता अर्थात् ऋत्विजहै और कर्तारूप यजमानभी वही है और वही अग्नि ब्राह्मणहै, विना मंत्रों के हवन नहीं है और विना पुरुष के तप नहीं होता है हव्यही मंत्रों की पूरी पूजा है इसी कारण तुम देवता मनुष्य और ऋषियों के होताहो यह वचन योग्य है कि जो पुरुष मनुष्यों में हवनका अधिकार रखनेवाले हैं वह ब्राह्मणकेही याजन को कहते हैं क्षत्री और वैश्यके याजनको नहीं कहते इस कारण अग्नि रूप ब्राह्मण यज्ञों को धारण करते हैं अर्थात् क्षत्री और वैश्यभी बिना ब्राह्मणकी सहायताके यज्ञ नहीं करसक्के उन यज्ञों से देवताओंकी तृप्तिहोती है और देवता सब पृथ्वी के जीवों का पोषण करते हैं और सत् पथ नाम वचनका अर्थ है कि वह देवताओं की तृप्ति ब्राह्मण के मुख में होती है अर्थात् अग्नि में हवन करनेसे ब्राह्मण तृप्त नहीं होताहै और ब्राह्मणके मुखमें हवन करने से अग्निआदि देवता ब्राह्मणके मुख में प्रवेश करकेउसको धारण करतेहुए उसकी तृप्ति से आप भी तृप्त होजाते हैं, वह ज्ञानी देदीप्य अग्नि में हवन करता है जो कि ब्राह्मण के मुख में आहुतिको होमता है, इस प्रकार होने पर भी अग्निरूप ज्ञानी ब्राह्मण अग्नि को पूजते हैं क्योंकि सर्वव्यापी अग्नि सब जीवधारियोंमें प्रवेश करके प्राणों को धारण करता है इस स्थान पर सनत्कुमारजी के कहे हुए श्लोक भी प्रमाण होते हैं सबके आदि रूप ब्रह्माजीने प्रथम इस विश्वको पैदाकिया जो कि उनके सिवाय दूसरेकी सृष्टि नहीं है ब्राह्मण योनिमें जन्म लेनेवाले देवता वेद घोषके द्वारा स्वर्गको जाते हैं ब्राह्मणों के जो बुद्धि, वचन, कर्म, श्रद्धा, और तपहैं वह पृथ्वी और स्वर्ग को ऐसे धारण करते हैं जैसे कि दही दूध आदिको छींका धारण करता है, सत्यतासे अधिक कोई धर्म नहीं है माताकी समान कोई गुरू नहीं है और इस लोक परलोक दोनोंमें ब्राह्मणों से श्रेष्ठकोई नहीं है,जिनराजाओं के देश में ब्राह्मणोंकी जीविका नहीं है और बैल वा अन्य सवारी उनके चढ़ने को नहीं हैं और दानके निमित्त उनका बुलाना नहीं होताहै वह राजा चोररूप विनाशको पाते हैं, वेद पुराण इतिहास आदि के प्रमाण से नारायणजी के मुख से उत्पन्न ब्राह्मण सबके आत्मा सबके पैदा करनेवाले और सब भावर खनेवाले हैं उसदेवताओंके देवता वरदाता नारायण जीकी मौन दशामें सब से प्रथम ब्राह्मण उत्पन्नहुये उन ब्राह्मणों से अन्य सब वर्ण उत्पन्न हुये इस प्रकार से ब्राह्मणलोग देवता और असुरों से श्रेष्ठहैं जो कि मुझ निज ब्रह्म स्वरूपसे पूर्व समय में उत्पन्न किये गये देवता असुर ब्रह्मर्षिआदि अधिकार पर नियत और पीड़ामान किये गये इन्द्रने अहल्या से विषय करनेके कारण अंडकोशोंको कटवाकर मेंढ़के अंडकोशों को पाया और अश्विनीकुमार के

यज्ञमें भाग रोकनेके लिये भी इन्द्रने वज्रको उठायाथा तब इन्द्रकी दोनोंभुजा च्यवनऋषि ने बांधदीन्हीं अर्थात् भुजा जड़रूप होकर हिलने झुलनेसे बन्द करदीं दक्षप्रजापतिने अपने यज्ञ विध्वंस होने के कारण क्रोधहोकर अपने तपमें संयुक्त होकर नेत्रका दूसरा रूप रुद्रजीके मस्तकपर उत्पन्न किया त्रिपुरासुरके मारने को महादेवजी के दीक्षित होने पर शुक्रजीने शिरकी जटा उखाड़कर शिवजीपर प्रयोग किया उससेसर्प प्रकटहुए उन सर्पोंसे रुद्रजी के पीड़ित कण्ठमें नील वर्णता होगई प्रथम स्वायंभूमन्वन्तर में भी नारायणजी के हाथपकड़ने से शिवजीके कण्ठ में नीलता आगई थी क्षीर सागर की समीपता प्राप्त करनेवाले अंगिरा वंशी बृहस्पतिजी के स्नान करने की दशा में जलने स्वच्छता को नहींपाया इससे बृहस्पतिजी ने जलोंके ऊपर क्रोध किया कि जो तुममेरे स्नान से मैले हुए और स्वच्छ नहीं हुए इसकारण आज से तुम मगरमच्छकछुए आदि अनेक जलजीवोंसे भ्रष्टहोगे तभी से जलकी नदीआदि जलजीवों से व्याप्तहुई हैं त्वष्टाका बेटा विश्वरूप देवताओं का पुरोहितहुआ वहअसुरोंका मित्रहोकर प्रत्यक्षमें तो देवताओंका भाग दिखाताथा परन्तु गुप्तअसुरोंकोही भागदेता रहताथा तदनन्तर असुरोंने हिरण्यकश्यपको अपना अग्रगामी बनाकर विश्वरूपकीमाता अपनी बहनकोवरदेने की इच्छाकी और कहाकि हेबहन यहतेरा बेटा विश्वरूपजोत्वष्टासेउत्पन्नहै तीन शिर धारी देवताओंका पुरोहितहै इसने प्रत्यक्षमें तो देवताओंको भागदिया और गुप्त हमकोदिया इसहेतुसे देवता वृद्धिपातेहैं और हमारा बिगाड़ होताहै तुम उसको समझादो किऐसान करे हमकोही चाहै तदनन्तर उसकी माताने नन्दनवन में वर्त्तमान अपने पुत्रसे कहा कि हे पुत्रतुम अन्य लोगोंके पक्षको क्योंवृद्धि करतेहो और मामाकेपक्षको घटातेहो तुमको ऐसा कर्मकरना उचित नहीं है तबउस विश्वरूपने माताके वचनको उल्लंघनके अयोग्य समझकर उसका अच्छी रीतिसे पूजनकरके हिरण्यकश्यपके पास यात्राकरी तब हिरण्यकश्यपने ब्रह्माजीके पुत्र वशिष्ठ जीसे शापपाया कि जो तुमने दूसरा होताबुलाया इसकारण तुम्हारा यज्ञ पूर्ण न होगा और प्रकट होनेवाले अद्भुत शरीर धारीके हाथसे मारेजाओगे उनके शापदेनेसे उसीरीतिसे हिरण्यकश्यप मारागया तदनन्तर माताकापक्ष बढ़ानेवाले विश्वरूपने बड़ातपकिया इन्द्रने उसका व्रत खंडितकरनेके लिये बहुतसी शोभायमानअप्सराओंको उसके पासनियतकिया उनकोदेखकर उसकाचित्त महाव्याकुल और चलायमानहुआ और शीघ्रही उनअप्सराओंके ऊपरआसक्त होगया उसको आसक्त जानकर अप्सराओंने कहा किहमजहां सेआई हैं वहींजातीहैं तब विश्वरूपने उनसेकहाकि कहां जाओगी बैठो हमारे साथ आनन्दकरो तब अप्सराओं ने कहा

कि हम देवताओंकी स्त्री अप्सराहैं हमने पूर्वसमयमें वरदाता और अनेक-रूप से प्रकटहोनेवाले इन्द्र देवताकोही अपनापतिबनाया है तब विश्वरूपने कहा कि इन्द्र समेत सब देवताओंका अभी नाश होजायगा यह कहकर मन्त्रों को जपा उन मन्त्रों के प्रभावसे तीन शिर रखने वाला विश्वरूप ऐसा बढ़ा कि जिसने अपने एकमुखसे तो अच्छे २ क्रियावान् पुण्यकर्मी ब्राह्मणों के श्रेष्ठरीति से होमेहुए अमृत को भोजनकिया दूसरे मुख से अन्नको और तीसरे मुखसे इन्द्रसमेत सब देवताओंको तिसपीछे इन्द्रनेउसकोऐसा देखकर देवताओं समेत क्षीणताको पाया फिर वह इन्द्रादि सबदेवता ब्रह्माजीके पास गये और कहा कि हे ब्रह्माजी सबयज्ञोंमें अच्छीरीतिसे होमाहुआ हव्य अमृत विश्वरूप भोजनकरताहै हम भागोंसे रहित हुए असुरोंकापक्ष वृद्धिको पाता है और हमारेपक्षकी हानिहोतीहै इससे आप बड़ीशीघ्रतासे हमारा कल्याण करो तब ब्रह्माजीने उनको उत्तरदिया कि दधीचिनाम भार्गवऋषितपस्याकरते हैं उनको प्रसन्नकरके उनसे यहवरदान मांगो कि आप अपने अस्थिहमको दें यहकामकरके उनके हाड़ोंका वज्रबनाओ यह सुनकर सब देवता वहांगये जहां भगवान् दधीचिऋषि तपकररहेथे इन्द्रसमेत देवताओंने उनके सन्मुखजाकर प्रार्थनाकरी कि हेभगवन् आपका तप मंगलदायक और निर्विघ्नहो दधीचिने कहा तुम सबआनन्दसे आयेहो हमतुम्हारा क्यासत्कारकरें जो आपलोग कहो वही मैं करूं उन्होंने अपना मनोरथ कहा कि आपसंसारके आनन्दके लिये अपना शरीर त्यागकरदीजिये तब तो हर्ष शोकरहित प्रसन्नहोकर महायोगी दधीचिजीने आत्माको परमात्मामें धारणकरके देहको त्याग किया परमात्मा में उसके लयहोजाने पर धातानाम देवताने उनके हाड़ोंको लेकर बज्रबनाया और उसवज्रमें विष्णुप्रवेशकरगये उसी वज्रसे इन्द्रने विश्वरूपनाम त्रिशिरा को मारडाला और उसके शिरको काटा तदनन्तर त्वष्टासे उत्पन्न मिथुनी से प्रकटहुए अपने शत्रु वृत्रासुरको भी इन्द्रने मारडाला उस ब्रह्महत्याके दोषप्रकार होनेपर इन्द्रने भयकेमारे इन्द्रासनको त्यागकर मानसरोवरके शीतलजल से उत्पन्न अत्यन्त शीतल स्पर्शवाली कमलनी में जाकर विश्राम किया वहां योगबलसे अणुमात्र अर्थात् अत्यन्त सूक्ष्मरूप होकर मृणालकी गांठमें प्रवेश किया ब्रह्महत्याके भयसे तीनों लोककेनाथ इन्द्रके गुप्तहोनेपर फिर संसार अनाथहोगया और देवताओंमें रजोगुण तमोगुणकी वृद्धिहुई मंत्र गुप्तहोयगे और ब्रह्मर्षियोंके सन्मुख राक्षस प्रकटहुए वेद ब्राह्मणरूप ब्रह्मका विनाशहुआ इन्द्रसेरहित निर्बल संसार होगया तिस पीछे देवता और ऋषियोंने आयुके पुत्र हंसको देवताओंके राज्यपर अभिषेक करके बैठाया जब हंसने ललाटपर प्रकाशवान् सब तेजों की हरनेवाली पांचसौ ज्योतियों से स्वर्गकी रक्षाकरी

तबसंसार यथावस्थित हुआ और सबस्थिरचित्त होकर प्रसन्नहुए इसके पीछे हंसने कहा कि शची के सिवाय इन्द्रका भोगा हुआ सब सामान मेरेसन्मुख आवे ऐसा कहकर वह शचीके सन्मुख गया और उससे कहा कि हे सुन्दरी मैं देवताओंका इन्द्रहूं तुम मुझको सेवनकरो शचीने उसको उत्तरदिया कि तुम स्वभावसेही धर्म शील और चंद्रवंशीहो अन्यकी स्त्रीसे संभोग करने के योग्य नहींहो फिर हंसने उससे कहा कि मैं इन्द्रासन पर बैठाहूं और मैंही इन्द्रके राज्य और रत्नोंका हरनेवालाहूं इसमें कोई अधर्म की बात नहींहै और तुम इन्द्रकी उपभोगहो उसने फिर उत्तरदिया कि मेरा कोई व्रत अभी पूरा नहीं हुआहै उस अवभृथस्नान अर्थात् पूरेव्रतहोनेपर तेरेपासआऊंगी फिर कुछ दिनके लिये शची के ऐसे वचन सुनकर चलागया तदनन्तर दुःख शोक से पीड़ित अपने पति के दर्शनकी इच्छा करती हुई हंसके भयसे भयातुर शची वृहस्पतिजी के पास गई वृहस्पतिजी ने उसको अत्यन्त भयभीत और व्याकुल देखकर अपने ध्यानसे शचीको पतिके कार्यमें प्रवृत्त जानकर यह कहा कि तुम इस व्रत और तप से साक्षात् वरदाता देवी सरस्वती का आवाहन करो तब वह तुझको इन्द्रका दर्शन करावेगी यहसुनकर बड़े नियममें प्रवृत्त होकर शची ने अपने शुद्धमंत्रों से उस वरदाता सरस्वतीका आवाहन किया और साक्षात् सरस्वतीजी शची के पास आई और कहा कि मैं आईहूं जो तू चाहै वह मैं तेरा मनोरथ पूराकरूं तब शची ने मस्तक से प्रणाम करके भगवती से कहा कि हे देवि तुम मुझको मेरेपति का दर्शन कराओ आप सती और पूजितहो यह सुनतेही सरस्वती उसको मानसरोवरपरलेगई वहां कमल की मृणाल की गांठ में बैठेहुए इन्द्रका दर्शन कराया फिर इन्द्रने उस अपनी स्त्री को दुर्बल और महादुःखी देखकर चिन्ता की कि यह मेरा दुःख वर्त्तमान हुआ यहस्त्री मुझ गुप्तको तलाश करतीहुई मेरे सन्मुख पीड़ामान होकर आई है इन्द्रने शचीसे कहा कि तू कैसे अपनावर्त्ताव करती है उसने उत्तर दिया कि हंस मुझको अपनीस्त्री बनानेको बुलाताहै और मैंने उसका समय भी नियत करदियाहै इन्द्रने कहा कि जाओ तुमहंससे यह कहौ कि तुमबहुत उत्तम ऋषियोंसे उठाईहुई सवारीपर सवारहोकर मुझको विवाहो इन्द्रकी बहुतसी अनेक सवारियां हैं और मैं उन सबपर चढ़ीहुई फिरीहूं इसके सिवाय उनमें से तुम कोई सवारी मतलाओ इस प्रकार इन्द्रकी शिक्षापाकर वहबड़ी प्रसन्नता से चलीगई फिर इन्द्रभी अपने कमल मृणालकी गांठमें प्रविष्ट हुआ फिर हंसने सन्मुख आईहुई इन्द्राणीको देखकर कहा कि तुम्हारा वादापूराहुआ शचीने उससे वही कहा जैसे कि इंद्रने समझाय दियाथा तब महर्षियोंकी सवारी में सवार होकर हंसशची के पासगया तदनन्तर मैत्रावरुणके पुत्र घट से उत्पन्न

होनेवाले ऋषियों में श्रेष्ठ अगस्तिजी ने उनमहर्षियों को हंसकी सवारी में विकार युक्त हंस के चरणों से स्पर्शवान् देखकर हंससे कहा हे अयोग्य कर्मी पापी पृथ्वी पर गिरो और तबतक सर्पयोनि में रहौ जबतक पृथ्वी और पर्वत नियतरहैं उस महर्षिके इस वचन के कहतेही वह हंस उससवारी से गिर कर पृथ्वी पर सर्प योनिमें आकर प्रवृत्त हुआ इसके पीछे फिर तीनों लोक इन्द्र से रहित होकर अनाथ होगये तिसपीछे देवता और ऋषिलोग इन्द्रके निमित्त भगवान् विष्णुजी के धाम को गये और प्रार्थनाकरी कि हे भगवन् ब्रह्महत्या के भयसे इन्द्रकी रक्षा करिये यह सुनकर विष्णुजी ने उनसे कहा कि इन्द्र अश्वमेधनाम विष्णुयज्ञको करके अपने स्थानको पावेगा तिसपीछे जब देवता और ऋषियों ने इन्द्रको नहीं देखा तब शचीसे कहा कि हेसुन्दरी तुम जाकर इन्द्रको लाओ तब वह फिर उसी मानसरोवर पर गई और इन्द्र उस सरोवरसे निकलकर बृहस्पतिजी के सन्मुख आया बृहस्पतिजी ने इन्द्रके निमित्त अश्वमेध नाम महायज्ञ को किया और श्यामकर्ण नाम पवित्र घोड़े को छोड़कर और उसको सवारी विचार करके बृहस्पतिजी ने मरुद्गणों के स्वामी इन्द्रको अपनेअधिकार स्थानको पहुँचाया तदनन्तर देवता ऋषियोंसे स्तुतिमान स्वर्गमें वर्त्तमान इन्द्रअपने पापसेनिवृत्तहुआ और ब्रह्महत्याकोस्त्री, अग्नि, औषधी औरगौ इनचारोंस्थानोंमें विभागकिया इसीप्रकार ब्राह्मणों के तेजऔरप्रतापसे वृद्धिमान इन्द्र अपने शत्रुओंके मरनेकेपीछे अपने स्थानपर पहुँचायागया, पूर्व समयमें आकाशगंगा पर वर्त्तमान भरद्वाजमहर्षि ने स्नान किया तब तीनचरण चलनेवाले त्रिविक्रम विष्णुजी उनसे मिले और विष्णुजी की छातीमें उनहाथमें जल धारणकियेहुये भरद्वाजने प्रहारकिया और वहछाती पर चिह्न नियतहुआ और भृगुजीने अग्निको शापदिया कि तुम सर्वभक्षी होजाओ सो अग्नि देवता सर्व भक्षी होगये--अदितिमाताने देवताओंके भोजनको ऐसे बनाया कि वह उसको खाकर असुरोंको मारें और वहां व्रतचर्य्या के समाप्त होनेपर बुधदेवताआये और उन्होंने अदितिसे कहा कि भिक्षादो तब अदिति ने यहसमझकर कि प्रथम देवताओं को भोजन करना चाहिये दूसरे को नहीं योग्य है ऐसा समझकर भिक्षा नहींदी तब भिक्षानदेने से क्रोधरूप ब्रह्मरूप बुधने अदितिको शापदिया कि विवस्वानके दूसरे जन्ममें अंड-नामजन्म लेनेवाले की माता अदिति केउदर में पीड़ाहोगी यहवचन कहा फिर वहमार्त्तण्ड विवस्वान श्राद्धदेवता होतेहुये और दक्षकी जो साठबेटियां हुईं उनमें से तेरह बेटी तो कश्यपजी को, दश धर्मको, दशमनुको और सत्ताईस चन्द्रमा को दीं उन सत्ताईस नक्षत्र नाम कन्याओं में चन्द्रमाकी प्रीति केवल एक रोहिणी में अधिकहुई तब उन शेष नक्षत्र नाम कन्याओं ने ईर्षा

करके अपने पिता से यह वृत्तांत कहा कि हे पिता हमसब समान रूप गुण वाली कन्याओं में से चंद्रमा केवल एक रोहिणी परही स्नेह करता है यह सुनकर दक्ष ने क्रोध होकर कहा कि जो तुमको नहीं चाहता है तो उसके शरीर में यक्ष्मानामरोग उत्पन्नहोगा इसी दक्षके शापसे चंद्रमामें यक्ष्मारोग पैदाहुआ यक्ष्मारोग से भराहुआ वह पीड़ित चंद्रमा दक्ष के पास गया दक्ष ने कहा कि तुम सबसे समान बर्ताव नहीं करते हो फिर वहां ऋषियों ने चंद्रमा से कहा कि तुम यक्ष्मारोग से नष्टहोते हो इससे पश्चिमकी ओर समुद्र के तटपर हिरण्य सरोवर नाम तीर्थ है उस में स्नान करो यह सुनकर चंद्रमा वहांगया और हिरण्य सरोवर तीर्थपर पहुंचकर अभिषेक पूर्वक स्नान करके पापसे छूटा और जब चंद्रमा उसपर प्रकाशितहुआ तबसे उसतीर्थका नाम प्रभासनाम प्रसिद्ध हुआ चंद्रमा अबभी उसके शान्त से अमावास्याके दिन अन्तर्द्धान होजाताहै और पूर्णमासी में प्रकट होकरभी मेघलेखासे आच्छादितशरीर दृष्टपड़ता है मेघकी समान वर्ण पानेसे उसका चंद्र लक्षण निर्मलहै स्थूलशिरा महर्षिने सुमेरुपर्वतके पूर्व्वोत्तरकोणमें तपस्याकी तब उसकेशरीर को सुगन्धित मन्दचलनेवाली पवित्रवायुनेस्पर्शकिया इससेवहबहुत तृप्तहुए औरवायुकेवेगसे हिलायेहुयें वृक्षोंने अपनेपुष्पों कीशोभा ऋषिको दिखाईतब उसने उनको शापदिया कि तुमसदैव फूलदेनेवाले नहींहोगे—पूर्व्व समय में नारायणजी संसारके आनन्दके लिये बड़वामुखनाम महर्षिहोगये थे उन्होंने मेरु पर्व्वतपर तपकरने हुएसमुद्रको बुलाया और समुद्रउनके बुलानेसे नहीं आयातब उन्होंने महाक्रोधयुक्तहोकर अपने संतप्तशरीर से समुद्रको अचल करदिया पसीने के समान जलको लवण सा करदिया और कहा कि पीनेके अयोग्यहोगा फिर बड़वानल अग्निसे सोखा हुआ तेरा जल मीठा होगा वह जल अब तक भी समीप रहनेवाली बड़वानल अग्निसे सोखाजाताहै रुद्रजी ने हिमालय पर्व्वतकी पुत्री कन्या रूप उमाकोचाहा और भृगुमहर्षिने भी हिमालयसे मिलकर कहा कि यह कन्या मुझेदो तब हिमालयने उनसेकहा कि रुद्रजीको इसका बर विचार कियागया है फिरभृगुजीने उससेकहा कि मैं कन्याकांक्षी हूं और तैंने हमको निषेधकिया इसकारणसे तुमरत्नों के निवास स्थान रूपनहींहोगे वह ऋषिका वचन अबतक नियतहै ब्राह्मणोंका ऐसा २ माहात्म्यहै क्षत्रियोंके वंशभी ब्राह्मणोंकेही आशीर्वाद से सदैव और न्यूनाधिक रहित स्त्रीरूप पृथ्वीको पाकर भोगकरतेहैं, जोयह अग्निषोमीय नाम तेजब्राह्मण और क्षत्रियोंमें नियत है उसीतेज से संसार धारण कियाजाता है इसीहेतुसे जगत् भी अग्निषोमीय कहाताहै सूर्य और चंद्रमा दोनों मेरे नेत्र कहेजातेहैं और उनकी किरणें मेरे बालहैं वह दोनों सूर्य्य चंद्रमा संसार को

जगाकर प्रसन्नकरतेहैं और संसार पृथक् २ उठताहै उनकेजतलाने और तप्त करनेसे संसार में आनन्दहोताहै हे पाण्डुनन्दन अग्निषोम के इनकर्मों से मैं भी संसारका वरदाता ईश्वर और हृषीकेशहूं अर्थात् अग्नि और चन्द्रमा की किरणेंजिसके वालहोंउसीको हृषीकेशकहतेहैं, ६५ मैं आवागमनके संबंध से यज्ञोंमें भागकोलेताहूं और श्रेष्ठ वर्णमेरा हरित है इसीसे मेरानाम हरिविख्यात है, मैं वाधासे रहितजीवोंका आधार कहाताहूं इसीसे मुझेब्राह्मण लोग अमृतविचारते हैं और रतधामा कहतेहैं, पूर्वसमयमें मैंने रसातलमें गुप्त पृथ्वीको पाया इसी हेतुसे मुझे देवताओं के वचनोंसे गोविन्द नामसे वर्णनकरतेहैं और जोकलासे खालीब्रह्माण्डका बनानेवालाहूं इसी से शिपिविष्टमेरानामहै बड़े सावधान यास्क नामऋषि ने बहुतसे यज्ञों में मुझ को शिपिविष्ट नामसे वर्णनकिया इसीसे मैं इसगुप्तनाम का धारण करनेवाला हूं बड़े बुद्धिमान् यास्क ऋषिने शिपिविष्टनामसे मेरीस्तुतिको करके मेरीकृपासे पातालमें गुप्त हुएवेदको पाया, मैंने कभी न जन्मलियाहै न लूंगा और सबजीवोंका क्षेत्रज्ञ हूं इसीसे अज कहलाताहूं मैंने प्रथमकभी स्वभाव के बिरुद्ध किसीसे कठोर वचन नहीं कहे वह मेरी वाणीसरस्वती सत्यअविनाशी और वेदसे उत्पन्न है, हे कुन्तीनन्दन मैंने नाभिसे उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मलोकमें पृथ्वी जलअग्नि रूपसत् और वायु आकाश रूप असत् अपनी आत्मामें प्रवेशित किया इस कारण मुझको ऋषियोंने सत्यनामसे प्रसिद्ध कियाहै,मैं प्रथम शुद्ध सतोगुण से कभीनहीं गिरा उसी शुद्धसतोगुणको मेरी सृष्टि जानो हे अर्जुन जन्म में मेरी इच्छा शुद्धसतोगुणी और प्राचीन है मैं अनिच्छावान् सतोगुणी कर्मी निष्पाप ब्रह्मज्ञानियोंको ब्रह्मज्ञानसे दृष्टआताहूं इसहेतुसे मेरासात्वत नाम है अर्थात् पंचरात्रि आदिसे उत्पन्न होनेवालेज्ञानसे दर्शन देताहूं और हेअर्जुन लोहेकाकालरूप महलहोकर पृथ्वीको विजयकरताहूं उसीसे मेराशरीर कृष्ण है इस हेतुसे कृष्ण नामसे पुकाराजाताहूं मैंने इस पृथ्वीको जलोंसे संयुक्त किया आकाशको वायुसे वायुको अग्निसे संयुक्त कियाहै इस कारणसे मेरा नाम वैकुंठहै अर्थात् व नामवायु व अग्नि और मेघरूपजलका है और कुपृथ्वी और ठः आकाशको कहतेहैं इन सबशब्दोंसे मिलकर वैकुण्ठ शब्दबना है इससे जो महापुरुष इनसबको परस्परमें मिलाता है उसीको वैकुण्ठ वर्णन करतेहैं ७८ यहउत्तम धर्मनिर्वाण और परब्रह्मरूप कहाजाताहै मैं प्रथम,जिस बुद्धिके कारण कहींसे नहींगिरा इसीकर्मसे मेरा नाम अच्युतबोलते हैं, पृथ्वी और आकाश दोनों विश्वतो मुखहैं प्रसिद्ध हैं इनका साधारण अर्थ मेरा अधोक्षज होताहै अर्थात् अधनाम पृथ्वीकाहै क्षोनाम आकाशका है जो इनदोनोंको विजयकरता है उसका नामअधोक्षजहै, वेदज्ञलोगोंका यहवचन

है वह वेदशब्दार्थको विचारनेवाले पुरुष यज्ञशालाके मुख्यस्थानपर मुझको अधोक्षज नामसे गानकरतेहैं, अर्थात् (अ) काअर्थयह है कि जिसमेंसदैव लयहो और (धोक्ष) का अर्थ यह है कि जिससे सबका पोषणहो और (ज) का अर्थयह है कि जिससे सबकी उत्पत्तिहो यह अधोक्षजशब्दके अक्षरोंका अर्थहै इनको इकट्ठाकरके एक शब्दबनाकर महर्षियोंनेगाया है कभी प्रभु-नारायण के सिवाय दूसरा अधोक्षजनहीं होसक्ता है इसलोकमें मुझ अग्नि स्वरूपकी ज्वालाको घृतपदार्थ वृद्धिकाकरने वालाहै और जीवोंके भी प्राणों का धारण करनेवाला है इसहेतुसे सावधान वेदज्ञलोगोंने मुझ को घृताची नामसे प्रसिद्ध कियाहै, और जो कर्मोंसे उत्पन्न हुई तीनधातु वात पित्त कफ हैं इसका नामसंघातहै इन्हींतीनोंसे जीवमात्रधारण किये जातेहैं और इन्हीं के विनाशवान् होनेसे जीवोंका विनाशहोता है इस हेतुसे वैद्यलोग मुझको त्रिधात्वरूप वर्णन करते हैं हे भरतवंशी धर्मलोकों में भगवान् का नाम वृष नामसे प्रसिद्ध है नैष्ठिक पदों के अर्थमें मेरा वृषनाम उत्तमहै वृष, कपि,वराह, यहीश्रेष्ठ धर्म कहाजाताहै इसीहेतुसे कश्यप प्रजापतिने मुझको (वृषाकपि) वर्णन किया है, देवता और असुर कभी मेरे आदि मध्य अन्तको नहीं कह तेहैं इसहेतुसे आदि अन्त से रहित प्रजाका स्वामी लोकसाक्षी (विभु) नामसे प्रसिद्धमैंहीहूं, हे अर्जुनमैं इसलोकमें पवित्र और संशयात्मक वचनों को सुनताहूं और पापोंको नहीं सुनताहूं इस हेतुसे (शुचिश्रवा) नामसे प्रसिद्ध हूं, पूर्व समयमें मैंने आनन्द बढ़ानेवाला और एक सींग रखनेवाला वराहरूप होकर पृथ्वी को पाताल से ऊपर को उठाया इससे मुझको एकशृंग नामसे वर्णन करते हैं, और उसी वराहरूपमें नियत होकर मैं तीन ऊंचेकंधे आदि रखनेवाला हुआ तब शरीर के मापसे (त्रिककुद) यहमेरा नामहुआ वेदान्त विचार करनेवालोंने मुझको (विरंचि) वर्णन किया अर्थात् जो सब तत्त्वोंको अपने में लय करता है उसको विरंचि कहतेहैं वह प्रजापति मैंहीहूं जो परमात्मा के द्वारा सबलोकोंका उत्पन्न करनेवालाहै, निश्चयको निश्चय करनेवाले सांख्यशास्त्रके आचार्य्योंने मुझीको कपिलनामसे कहाहै वही कपिल विद्यासंयुक्त सनातन पीतवर्ण सूर्य्य में नियतहैं, जो तेजस्वी वेदोंसे स्तुति कियाहुआहिरण्यगर्भ योगीलोगोंसे सदैव पूजाकियाजाताहैऔरपृथ्वी में चतुर्मुख नामसे प्रसिद्धहै वहभी मैंहीहूं, जो वेदज्ञ पुरुषहैं वह मुझकोइकीस सहस्र संख्या युक्त ऋग्वेद और सहस्र शाखायुक्त सामवेद वर्णन करते हैं, वेदपाठी ब्राह्मण आरण्यक उपनिषद् में मुझको गाते हैं वह मेरेभक्त बहुत दुर्लभ हैं जिस यजुर्वेद में एकसौ एकशाखाहैं वह वेद और यजुर्वेदोक्त कर्म मैंहीहूं जोकि अध्वर्यु से संबंध युक्तहै, इसी प्रकार अथर्वण वेद जाननेवाले

ब्राह्मण मुझको अथर्वण वेद कल्पना करते हैं वह वेद पांच कल्प और कृत्याओं से संयुक्त है और जो कुछ शाखाओंके भेद हैं और शाखाओं में जो गीत स्वर वर्णोंसे अच्छी रीतिपूर्वक उच्चारण किये जाते हैं उन सबको मेराही बनायाहुआ जानो, हे अर्जुन जो वह अश्वशिरनाम बरदाता अवतार ब्रह्माजीको दर्शन देताहै वह मैंही संसार के उत्तरभाग में क्रम और अक्षरके विभागका जाननेवाला हूं १०० मेरेही कृपासे महात्मा पांचाल मुनि ने वामदेव ऋषिके उपदेश कियेहुये मार्गके द्वारा उस सनातनब्रह्म से क्रमको पाया, और वाभ्रव्यगोत्री मुनिभी नारायणजीसे बर और उत्तम योगकोपाकर कर्म शास्त्र में सबसे विद्यावान् और शोभायमानहुए, और गालवऋषि कर्म और शिक्षाशास्त्रको निर्माण करके शोभायमानहुए और कण्डरीकवंशी महाप्रतापी राजा ब्रह्मदत्तने जन्म मरण से उत्पन्न दुःखों को वारवार स्मरण करके और सात जन्मोंमें से इस जन्म के उत्तम होने से योगियों के उत्तम ऐश्वर्य्य को प्राप्त किया हे अर्जुन मैं पूर्वकालमें किसी हेतुसे धर्मका पुत्र प्रसिद्धहुआ इसकारणसे मुझको धर्मज नामसे प्रसिद्ध करते हैं, और पूर्वहीकाल में गंधमादन पर्व्वत के ऊपर धर्म्मयान में सवार दोनों नरनारायण ने अविनाशी तपस्याकी, हे भरतवंशी उसी समयमें दक्ष प्रजापतिका यज्ञ हुआ वहां दक्ष ने रुद्रजी का भाग नहीं विचार किया, तिसपीछे रुद्रजी ने दधीचिऋषि के वचन से दक्ष के यज्ञको विध्वंस किया महाक्रोधित होकर बारम्बार त्रिशूल को छोड़ा, वह त्रिशूल दक्षके बड़े विस्तृत यज्ञको भस्मीभूत करके अकस्मात बदर्य्याश्रम के समीप हम दोनों की ओरको आया, हे अर्जुन वह शूल बड़े वेगसे नारायणकी छातीपर गिरा तब नारायणजी के बाल उस शूल के तेज से भरेहुए मुंजवर्ण होकर शोभायमानहुए इस हेतुसे मेरा नाम मुंजकेश भी है महात्माकी हुंकार से घुड़काहुआ और नारायणजी से घायल होकर वह शूल महादेवजीके हाथमें गया तदनन्तर शिवजी उन तपमें भरेहुए ऋषियों के सन्मुख दौड़े, तब उस विश्वात्मा नारायण ने इस आकाशमार्ग से आने वाले रुद्रजी के कण्ठ को अपने हाथ से पकड़ा इसी कारण अर्थात् कृष्णवर्ण नारायणजी के स्पर्श करने से शिवजी नीलकण्ठ हुए, तदनन्तर रुद्रजी के नाश करने को नरने एकसींकको उठाया और शीघ्रही मंत्रोंसे संयुक्त किया तभी वह बड़ा भारी फरसा होगया तब अकस्मात् शिवजी के घुड़केहुए उस फरसे ने पराजय पाई उस फरसेके पराजय होनेसे मेरानाम कण्ठपरशु कहाया गया (कण्ठपरशु नाम रुद्रजी का भी है कारण यहहै कि नारायण और रुद्र एकही आत्माहैं) अर्जुनने प्रश्नकिया कि हे दुष्टसंहारी तीनोंलोकोंकी शांति करनेवाले वासुदेवजी इस महायुद्धके होनेपर किसने विजयको पाया इसको

मुझे समझाइये, श्रीभगवान् बोले कि उस युद्ध में उन रुद्र और नारायण को प्रवृत्त होनेपर अकस्मात् सबलोक भयभीत और व्याकुलहुए, यज्ञों में अग्नि ने अच्छी रीतिसे होमेहुए उज्ज्वल हव्यको नहीं ग्रहणकिया और वेद शुद्ध अन्तःकरण ऋषियों की याद से विस्मरणहुए, तब देवताओं में रजोगुण और तमोगुण प्रविष्ट हुआ पृथ्वी कम्पायमान हुई और आकाश भी हलने लगा, सब सूर्य आदि के तेज प्रभा रहित हुए और ब्रह्माजी भी आसन से उठ खड़े हुए, समुद्र सूखने लगे और हिमालय पर्व्वत फटगया, हे पाण्डु नन्दन इसी प्रकार से ऐसे उत्पातों के होने पर महात्मा ऋषियों समेत देवताओं के गण सहित ब्रह्माजी शीघ्रही उस देश में आये जहां युद्ध वर्त्तमान था तब उन वेदज्ञ ब्रह्माजी ने हाथ जोड़कर रुद्रजी से वचन कहा कि हे विश्वेश्वर शस्त्रों को रखकर लोक की वृद्धि के अर्थ लोकों के कल्याण रूप होजाओ, जो अविनाशी और गुप्त लोकों का ईश्वर पालनकर्त्ता उपाधि रहित अकेलाही संसार का स्वामी हर्ष शोक से जुदा है उसको अकर्त्ता जाना इससगुण रूपधारीकी यह शुभमूर्त्ति है जो कि धर्म कुल के प्रकाश करनेवाले नरनारायण नामसे दोनों प्रकटहुए, यह देवताओंमें श्रेष्ठ महाव्रती और तपोमूर्त्ति हैं मैंभी किसी हेतुसे इन्हींकी प्रसन्नतासे उत्पन्नहुआ हूं हे तात सनातन तुमभी पूर्व उत्पत्ति में इन्हींके क्रोधसे उत्पन्नहुएहो हे वर दाता तुम और सब देवता महर्षियों समेत इनको शीघ्र प्रसन्नकरो जिससे कि लोकों की शान्ति होय इसमें विलम्ब न कीजिये क्रोधाग्निको छोड़तेहुए शिवजीने इसप्रकार ब्रह्माजीके वचन सुनकर प्रभु नारायण देवताको बहुत प्रसन्नकिया और उस श्रेष्ठ वरदाता प्रभु आदि पुरुषके शरणहुए इसके पीछे क्रोध और स्वभावके जीतनेवाले वरदायक देव देव प्रसन्नहुए और स्नेहपूर्व्वक रुद्रजी से मिले फिर ब्रह्मासमेत देवता और ऋषियोंने भी उनका पूजन किया तबउसदेव देव नारायणजीने शिवजीसे यहवचन कहा कि हे शिवजी जो तुमको जानता है वहमुझीको जानताहै और जो तुम्हारा भक्तहै वह मेराभक्त है हमारी तुम्हारी कुछ पृथक्ता नहीं है अर्थात् एकही रूपहैं आपकी बुद्धि कभी विपरीत नहो अब से लेकर यह मेरा श्रीवत्स तुम्हारे शूल से अंकित हुआ और मेरे हाथसे अंकित तुमभी श्रीकण्ठ होगे ३२ श्रीकृष्णजी बोले कि ऐसा कहकर उन दोनों नर नारायण ऋषिने इसप्रकार परस्परमें चिह्न अंकित करके शिवजी से बड़ी प्रीति भावकर देवताओंको बिदाकर सावधान होकर तपस्याको किया हे अर्जुन युद्धमें नारायणजीकी यह विजय मैंने तुमसे कही हे भरतवंशी गुप्त नाम और अनाम जोकि इसलोक में ऋषियों से वर्णन किये गये वह तेरे सन्मुख अच्छी रीतिसे वर्णन किये, हे कुन्तीनन्दन मैं इस रीतिसे इसलोक

ब्रह्मलोक और सनातन गोलोकमें बहुत प्रकारके रूपों से बिचरताहूं युद्ध में मेरी रक्षामें होकर तुमनेभी बड़ीभारी विजयको पाया और युद्धके वर्त्तमान होनेपर जो वह पुरुषतेरे आगे चलताथा, उसको गंगाजलसे पूर्ण जटाधारी देवताओंका देवता रुद्र जानो वही रुद्र तेरे सन्मुख मेरे क्रोधसे उत्पन्न काल पुरुषथा जिन शत्रुओंको तैंने मारा है वह पहलेही से उनकालरूप रुद्रजी से मारेगयेथे तुम सावधान होकर उस अप्रमेय प्रभाव युक्त देवदेव उमापति विश्वेश्वर अविनाशी हरको नमस्कारकरो हे अर्जुन उसमेरे क्रोधजन्य तेजका अतुल प्रभावथा उसको तैंने बारम्बार सुनाहै १४०॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिअष्टषष्टितमोऽध्यायः १६८॥

एकसौ उनहत्तरका अध्याय॥

शौनक ऋषि बोले कि हे सूतपुत्र आपने बहुत बड़ा आख्यान वर्णन किया इसको सुनकर हम सब मुनियोंने बड़ा आश्चर्य्य किया, सब आश्रमों में कर्म कर्त्ताहोना, सब तीर्थों में स्नानकरना ऐसा फल देनेवाला नहीं है जैसा कि नारायणजीकी कथासे फल मिलताहै हम इस नारायण जीकी पवित्र और पापमोचनी कथाको आदि से सुनकर निष्पापहुए, सब लोकों में पूज्य श्रीनारायण देवता ब्रह्माको आदि लेकर किसी देवता वा महर्षियोंसे विजय नहीं किये जासक्तेहैं, हे सूतनन्दन नारदजी ने जो उस देवता नारायण हरि को देखा वह निश्चय करके उन्हींकी इच्छाथी, जो नारदजीने उसजगन्नाथ अनिरुद्ध देहमें नियत प्रभुको वहां आकर देखा इसका हेतु आप हमसे वर्णन कीजिये, सूतजी बोले कि हेशौनक राजाजनमेजयने अपने यज्ञ प्रारम्भहोनेके समय अपने पिताके भी प्रपितामह व्यासजीसे पूछा कि श्वेतद्वीपसे लौटकर आने वाले और भगवत् वचन के ध्यान करनेवाले देवऋषि नारद जीने फिर कौनसा कर्म किया, और बदर्य्याश्रममें आकर उननरनारायण ऋषिसे मिल कर कितने समय तक वहां निवास किया और कौन २ कथाको भगवान् से पूछा, एकलाख श्लोक युक्त महाभारथसे बुद्धिरूप मथनी के द्वारा इसज्ञानरूप उत्तम समुद्रको मथकर जैसे दहीसे मक्खन, मलयाचलसे चन्दन और वेदों से आरण्यक उपनिषद् और औषधियोंसे अमृत निकाला जाता है उसीप्रकारसे हेतपोधनजी यह कथारूप अमृत आपने निकालाहै, हे विप्रेन्द्र वह षडैश्वर्य्य युक्तदेवता आदि जीवमात्रोंको आत्मारूपसे पोषण करनेवालाहै उननारायण जी का तेज बड़ी कठिनतासे दृष्ट आनेवाला है कल्पके अंतमें ब्रह्मा आदि देवता ऋषि गंधर्व और सब जड़ चैतन्य जिसमें प्रवेश करते हैं, मैं मानताहूं कि इस लोक और परलोक दोनोंमें उससे अधिक सबका पवित्रकरनेवाला

कोई नहीं है सब आश्रमोंका वास और तीर्थोंमें स्नान ऐसा फलदायक नहीं है जैसी नारायणजी की कथा फलदायी होती है यहां हम सब पापमोचनी नारायण और विश्वेश्वरजी की इस कथाको प्रारंभ से सुनकर सब दशामें पवित्रहैं उस कथामें मेरेबाबा अर्जुनने जो कर्म किये वह अपूर्व्व और अद्भुत हैं,, १८ वासुदेवजी को साथ रखनेवाले जिस अर्जुनने विजय को पाया मैं जानताहूंकि तीनोंलोकमेंभी उसको दुःप्राप्य वस्तुकोइनहींहै वह तीनों लोकके स्वामी जैसेहैं और जिसप्रकारसे वह अर्जुन के सहायक हुए वह सब मेरे वृद्ध प्रशंसाके योग्यहैं, दुष्टसंहारी श्रीकृष्णजी जिनके हित और कल्याण के निमित्तकर्मकर्त्ता हुए वह लोक पूजित भगवान् तपके द्वाराअच्छी रीतिसे दर्शन देनवाले हैं उन्होंने जिस श्रीवत्स चिह्न से अलंकृत विष्णुजीको अपने नेत्रों से देखा उनसे अधिक प्रशंसाके योग्य ब्रह्माजी के पुत्र श्रीनारदजी हैं, मैं मोक्षके अधिकारसे न गिरनेवाले नारदऋषिको थोड़े तेजवाला नहीं जानता हूं जिसने श्वेतद्वीप में जाकर आप साक्षात् नारायण जीका दर्शन पाया, प्रत्यक्षहै कि देवता की कृपासे उसको वहदर्शन हुआ जो अनिरुद्ध देहमें नियत गुप्तरूपथा हे मुनि फिर नारदजी नरनारायणजी का दर्शन करने के लिये बदर्य्याश्रम में गये इसका क्या कारण है, श्वेतद्वीप से लौटे हुए ब्रह्माके पुत्र नारदजी बदर्य्याश्रम को पाकर उन दोनों नरनारायण ऋषियोंसे मिलकर कितनेसमयतक वहां स्थिररहे और कौन२सी बातें उनसे पूछीं औरवहांसे चलने के समय नरनारायणजीने क्या२नारदजीसे कहा इनसब बातोंकोकृपा करके मुझ से कहिये, वैशंपायन बोले कि उसबड़े तेजस्वी भगवान् व्यासजी को मैं नमस्कार करताहूं जिनकी कृपासे नारायणजीकी इसकथाको कहताहूं, हेराजानारदजी श्वेतद्वीपमें प्राप्तहोके उस अविनाशी हरिका दर्शनकरके लौटे और बड़ीशीघ्रतासे मेरुपर्व्वतपर आये और परमात्मानारायणने जोउनसेकहा था उसबोझेको हृदयमेंधारणकरके जब यहां आये तब उनके चित्तमें यहबड़ा भयउत्पन्न हुआ कि मैं इतनीदूर जाकर फिर यहां आयाहूं फिर मेरुपर्व्वतसे गंधमादन पर्व्वत में आये फिर शीघ्रही आकाश से बड़ेभारी बदर्य्याश्रम के पासगिरे वहां पुराणपुरुष ऋषियों में श्रेष्ठ नर नारायणको देखा, बड़े तपस्वी आत्मनिष्ठ महाव्रती सबलोक के प्यारे होकर सूर्य्य के समान तेजधारी श्रीवत्सचिह्न और जटामंडल युक्त हंसचिह्निनी भुजाओंसे शोभित चक्रों से चिह्नित चरण बड़ावक्षस्स्थललंबी २ चार भुजाधारी साठदांत आठदाढ़रखने वाले मेघोंकेसमान शब्दायमान सुंदर और बड़ा मुखललाट भृकुटी ठोढ़ीनाक आदिसे शोभित उनदोनों देवताओं के शिरच्छत्र के समानथे इसप्रकार के लक्षणों से भरे महापुरुषनाम उनदोनों को देखकर नारदजी दोनों से पूजित

होकर प्रसन्न हुए मार्गकी कुशल क्षेमादिक पूछकर मनके आनंद को पूछा, उनदोनों पुरुषोत्तमों को देखकर नारदजीके अंतःकरण में यह बिचार उत्पन्न हुआकि उसश्वेतद्वीपीय भगवत्की सभा में वर्त्तमान सब जीवों से पूज्य जो पुरुष मैंने देखे वैसेही यह दोनों ऋषिमनको प्यारे मालूम होतेहैं वह नारद जी मनसे अच्छी तरह ऐसाविचार के प्रदक्षिणा कर सुंदर उत्तम कुशासनपर बैठगये, तिसपीछेतपयश और तेजों के निवासस्थान वाह्याभ्यंतर से शुद्ध चित्त सावधान दोनों ऋषियों ने पूर्वाह्न कालकी संध्या आदि क्रिया करके पाद्य अर्घ्य से नारदजी का पूजन किया जब संध्या पूजन आरती आदि कर्मों से निवृत्त होकर अपने २ आसनोंपर वह दोनों नरनारायण जी बैठगये और उनके बैठनेसे वह देशचारों ओरसे ऐसा शोभायमान हुआ जैसे कि घृतसे होमीहुई अग्निके तेजसे यज्ञ की शोभा होजातीहै तब नारायणजी ने नारदजी से यह वचन कहा कि हे नारदजी आपने हम दोनों के उत्पत्ति स्थान सबसे श्रेष्ठ परमात्मा भगवान् को भी श्वेतद्वीप में जाकर देखा है ४५ नारदजी बोले कि मैंने वह विश्वरूपधारी अविनाशी श्रीमान पुरुष देखाहै उस देवतामें सब ब्रह्मर्षियों समेत देवता नियत थे अब भी तुम दोनों सनातनपुरुषों को देखताहुआ भी मैं उनको देखता हूं वह गुप्त रूप धारी हरि जिन २ लक्षणों से युक्तहै वैसेही लक्षण तुम दोनों प्रत्यक्षरूप धारियों में भी मुझे दिखाईदेते हैं वहां उस देवता में तुम दोनों को भी उसके पार्श्व भागमें देखा है, अब मैं परमात्मा से बिदा होकर यहां आयाहूं प्रत्यक्ष है कि तीनों लोक में तुम दोनों धर्मपुत्रके सिवाय तेज यश और लक्ष्मी में उसके समान दूसरा कोई नहीं है उसने क्षेत्रज्ञ सम्बन्धी सम्पूर्ण धर्म्म मुझ से वर्णन किये और अपने वह अवतार भी कहे जो यहां होनेवाले हैं वहां जो सतोगुण प्रधान श्वेत पुरुष पांचों इन्द्रियों से रहित थे वह सब उस पुरुषोत्तम के ज्ञानी भक्त हैं वह सदैव उस देवता को पूजते हैं और वह भी उन्हों के साथ क्रीड़ा करता है, वह भगवान् परमात्मा भक्तों का प्यारा और ब्रह्मण्य देवहै वह ऐसा भगवद्भक्तों का प्रियतम सदैव उनसे पूजित और क्रीड़ायुक्त है, वही सर्व्वव्यापी विश्व का स्वामी माधव भक्तवत्सल कार्य कारण रूप है और बड़े तेज बल का धारण करनेवाला है और बड़ा यशस्वी तप युक्त आत्मा को धारण करके उत्पत्ति कारण और आज्ञाप्रधान तत्त्वरूपहै वहश्वेतद्वीपसे भी अतिउत्तमहै वह अपने प्रकाशही से तेजरूप प्रसिद्ध है उसशुद्धआत्मा से तीनों लोकमें वह शांति नियतहुईहै कि मैंभी इस शुभबुद्धि से नैष्ठिकव्रत में नियत हुआहूं वहां न तो सूर्य्यउदय होता है न चंद्रमा प्रकाश करताहै और दुःख से करनेके योग्य तपमें देवेश्वर के नियत होनेपर वायु भी नहीं चलती है वह

जगत्का स्वामी देवता आठ अंगुल ऊंचीवेदी को पृथ्वीपर बनाकर ऊर्द्धबाहु पूर्वाभिमुख एकचरण से नियत था अंगों से युक्त वेदों को पढ़तेहुए देवता ने महाकष्ट से करने के योग्य तपको तपाहै वहां आप पशुपति शिवजी ब्रह्माजी समेत सब देवता ऋषि महर्षि किन्नर गंधर्व उरग दैत्य दानवराक्षसअप्सराओंसमेत सदैव जिसबुद्धि युक्तहोकर हव्य कव्यको भेंटकरते हैं वह सबउस देवताके चरणों के समीप वर्त्तमानथा,व्यभिचार रहित बुद्धिकेस्वामी देवता उस भक्तिसे दियेहुए सबपदार्थों को शिरसे अंगीकार करता है महात्मा ज्ञानी भक्तोंकेसिवाय दूसरा उसका प्यारा तीनोंलोकमें कोई नहीं है इसीहेतुसे वह उनकी भक्तिमें नियत है, उस परमात्मासे विदाहोकर मैं यहां आयाहूं और जो कि उस आप परमेश्वरने वर्णनकियाहै इससे मैं उसीमें मनको लगाकर सदैव तुम दोनोंके पास निवास करूंगा ६४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिएकोनसप्ततितमोऽध्यायः १६९ ॥

एकसौ सत्तरका अध्याय ॥

नरनारायण बोले कि तुम प्रशंसाके योग्य और कृपापात्रहो तुमने साक्षात् प्रभुका दर्शन किया उसको किसी ने किन्तु ब्रह्माजीने भी नहीं देखाहै, हे नारद वह पुरुषोत्तम कठिनतासे दर्शन देनेवाला षड़ैश्वर्य्यका स्वामी और अव्यक्तका उत्पत्ति स्थानहै यहहमारा वचनसत्यही है, लोकमें व्यक्तसे अधिक उसका प्यारा कोई नहीं है हेउत्तम ब्राह्मण इसीहेतुसे उसने आप अपने रूपका दर्शनदिया, उसतपकरनेवाले परमात्माका जोनिवासस्थानहै उसको हमदोनों के सिवाय कोई प्राप्तनहीं करसक्ता है, जो कि उसका प्रकाश हजार सूर्य्य के समानहो इसीकारण उसी विराजमानही के प्रतापसे इस स्थानका भी वही प्रकाश होताहै, हे ब्राह्मण उस विश्व के स्वामी देवताके देवतासेही शान्ति उत्पन्न होतीहै हे शांतोंमें श्रेष्ठ इसशांति से पृथ्वी संयुक्त होतीहै उस जीवोंके हितकारी देवतासे रसउत्पन्न होताहै उसी से जल संयुक्त होते हैं और नाशको प्राप्तहोतेहैं, उसीसे रूपगुण रखनेवाला तेज होताहै सूर्य्यभी उसीसे युक्तहोकर लोकों में प्रकाश करता है, उसी पुरुषोत्तम देवता से स्पर्श और स्पर्शसे वायु उत्पन्न होकर लोकोंमें चेष्टाकरताहै, सब लोकोंके ईश्वरसे शब्दहुआ शब्द से आकाशहोकर सर्वत्र व्याप्त होताहै, उसीसे मनहुआ जिससे संयुक्तहोकर चन्द्रमा प्रकाशरूप धारण करताहै वह वेदनाम स्थान सब भूतोंका उत्पन्न करनेवाला है जहां ब्रह्मज्ञानसे उत्पन्न होनेवाले हव्य कव्य के भोक्ता भगवान् विराजते हैं हे ब्राह्मण श्रेष्ठ लोकमें जोपुरुष शुद्ध और पुण्यसे पृथक् हैं उन चलनेवालोंका मार्ग मंगलोंसे भराहुआ है १२ सबलोकों में अन्धकारका दूर

करनेवाला सूर्य्यही द्वाररूप कहाजाताहै सूर्य्य से सुखाये हुए सब अंग कभी किसीके दृष्ट न आनेवाले परमाणु रूपहोकर उसदेवतामें प्रवेश करते हैं और उससेभी छूटकर अनिरुद्ध शरीरमें नियत होते हैं, फिर मनरूप होकर उकार अर्थवाले सूत्रात्मा प्रद्युम्न नाम चित्तमें प्रवेश करतेहैं और प्रद्युम्नसे भी निकलकर संकर्षण नाम जीवमें प्रवेश होते हैं, वह सांख्यमतवाले श्रेष्ठ ब्राह्मण भगवत् भक्तोंके साथ संकर्षण में प्रवेश करते हैं तदनन्तर वह तीनों गुणोंसे रहित उत्तम ब्राह्मण उस क्षेत्रज्ञ निर्गुण परमात्मा में शीघ्रही प्रवेश करते हैं उसको सबका निवासस्थान क्षेत्रज्ञ और वासुदेव नाम मुख्यतासे जानो नियम व्रतधारी अच्छे सावधान चित्त जितेन्द्री बिचार रहित भक्तिमें प्रवृत्त पुरुष वासुदेवजी में प्रवेश करतेहैं, हे ब्राह्मणवर्य्य हम दोनों भी धर्म देवताके घरमें उत्पन्न हुए और रमणीक बद्रिकाश्रम में नियत होकर उग्रतप में नियत हुए, उसी देवताके अवतार जो सब देवताओं के प्यारे तीनों लोकमें नियत होंगे उनका कल्याणहो और हे ब्राह्मण पूर्व्व समयमें अपनी बुद्धिसे युक्त और सब कृच्छ्रनाम उत्तम व्रतमें नियत हम दोनोंने तुमको बहुत पूछाथा कि हे तपोधन तुम श्वेतद्वीपमें भगवान् से अपने संकल्पके समान मिले, जो तीनों लोकोंमें जड़ चैतन्यों समेत हम सबको जानते हैं और तीनों काल के शुभाशुभ कोभी अच्छी रीतिसे जानते हैं, वैशम्पायन बोले कि नारदजी उनदोनों के इसवचनको सुनकर उग्रतपमें प्रवृत्त हुए नारायणके चाहनेवाले नारदजी ने हाथ जोड़कर नरनारायणाश्रम में दिव्य हजार बर्षतक नारायण से पाये हुए अनेक मंत्रोंका बुद्धिके अनुसार जपकिया, और उसी देवता को इन दोनों नरनारायण समेत पूजते हुए नियत हुए २७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्बणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिसप्ततितमोऽध्यायः १७० ॥

एकसौइकहत्तरका अध्याय ॥

वैशम्पायन बोले कि किसी समयपर ब्रह्माजीके पुत्र नारदजी न्यायके अनुसार दैवकर्मको करके पितृकर्म में प्रवृत्त हुए तबधर्मके बड़े बेटे नारायणजीने नारदजीसे यह बचन कहा कि हे द्विजवर्य्य यहां दैव और पितृकर्म के कल्पित होनेपर तुम किसको पूजनकरतेहो, हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ यहकौन कर्म किया जाताहै और इसका फल क्याहै इसको शास्त्रके अनुसार मुझसे वर्णन करो, नारदजी बोले कि प्रथम तुमसे यहवर्णन कियागया है कि दैवकर्म करना चाहिये वह यज्ञपुरुष सनातन परमात्मा देवता उत्तमहै इसीकारण उससे पालन कियाहुआ मैं सदैव उस अविनाशीकी पूजाकरताहूं—पूर्व समय में उसी से पितामह ब्रह्माजीभी उत्पन्न हुए और ब्रह्माजीने प्रसन्नहोकर मेरे पिताको

भी उत्पन्न किया मैं पहले कल्पित होनेवाला पुत्र उसके संकल्पसे मिलाहुआ हूं, हे साधो मैं तान्त्रिक पूजनादिकोंमें पितरोंको पूजताहूं इसप्रकार से कि वही भगवान् माता पिता रूपहै, इसीरीतिसे वह जगत्पति सदैव पितृ यज्ञोंमें में पूजाजाताहै और दूसरी देवी सरस्वती भी है कि पिताओंने पुत्रोंको पूजा है अर्थात् वेदकी श्रुति जब प्रनष्ट होगई हैं तब पुत्रोंने पिताओं को पढ़ाया इसीकारण उनमन्त्र देनेवाले पुत्रोंने पित्राधिकार पाया,निश्चयहै कि तुम दोनों शुद्ध अन्तःकरणवालों को भी यह वृत्तान्त देवताओं से विदित हुआ होगा कि पिता पुत्रों ने परस्पर में एकने एककी प्रतिष्ठाकी प्रथम पृथ्वी पर कुशाओंको बिछाकर उसपर पितरोंके स्थानमें पिण्डों को धरके पूजनकिया पूर्व्व समय में उन पितरोंने किसी प्रकारसे पिण्डनामको पाया, नरनारायण बोले कि पूर्व्वकाल में गोविन्दजी ने बाराहरूप धारण करके सागररूप मेखलाधारी इस पृथ्वी को शीघ्रता से ऊपरको उठाया और उसको यथावस्थित स्थानमें नियत करके जलकीचसे भरे संसारके कार्य्य में उद्योग युक्त शरीर वाले प्रभुने मध्याह्नके समय सन्ध्याकाल होनेपर दाढ़ में लगेहुये तीनपिण्डों को अकस्मात् बाहर निकालकर पृथ्वीपर कुशाओंको बिछाकर पृथ्वी में उन पिण्डों को स्थापित किया फिर उन पिण्डोंमें अपने स्वरूपको नियतकरके बुद्धिके अनुसार उसने पितृकर्म किया, प्रभुने अपनी बुद्धिसे तीनोंपिंडों को संकल्प करके अपने शरीरकी ऊष्मा से उत्पन्नहुए घृत और तिलसे युक्त करके पूर्व्वाभिमुखहो पिण्डोंका दान किया,फिर मर्य्यादा नियत करनेकेलिये यह बचन कहा कि मैं संसारका स्वामी होकर आप पितरों के उत्पन्न करनेको प्रवृत्तहुआ हूं मेरे ध्यान करने से पितृकार्य्य की उत्तम रीति प्राप्त होती है, यह पिण्ड डाढ़ोंसे निकले और दक्षिण में पृथ्वीपर नियतहुये हैं इसहेतु से अब यह पितरहैं, यह तीनों पितर रूप रहित हैं और मुझ से मिलेहुए यह सनातन पितर पिण्डरूपधारीहों, इन तीनों पिण्डोंमें नियत मैंहीं पिता, पितामह,प्रपितामह नामसे जानने के योग्यहूं, मुझसे अधिक कोई नहीं है न कोई दूसरा मुझसे अन्य पूजनके योग्य है, लोकमें मेरा पिताभी कोई नहीं है अर्थात् मैं हीं पितामह ब्रह्माका भी पिता हूं मैंहीं सबका कारण हूं वह देवदेव बाराहजी इतना बचन कहकर और बराह पर्व्वतपर विस्तारयुक्त पिण्डों को दे अपने आत्माका पूजनकरके उसी स्थान में अंतर्द्धान होगये हे ब्राह्मण उसीकी यह मर्यादाहै कि पिण्डनाम पितर सदैव पूजाको प्राप्त करतेहैं जैसा कि बाराहजी का बचन है, जो पुरुष मन बाणी, कर्म से देवता, पितर, गुरु, अतिथि गौ ब्राह्मण और पृथ्वी माताको पूजन करते हैं वह विष्णु भगवानही को पूजते हैं क्योंकि वह षड़ैश्वर्य्य का स्वामी सब जीवोंके शरीर में वर्त्तमान उनदेवता

आदिके भी शरीरमें नियतहै वह हर्ष शोक रहित सब जीवों में समान बृद्धम-हात्मा सबका आत्मा नारायणहै ऐसा शिष्टलोगोंसे सुनते हैं २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिएकसप्ततितमोऽध्यायः १७१ ॥

एकसौ बहत्तरका अध्याय ॥

वैशंपायनबोले कि नारायणजीके कहे हुएइस वचन को सुनकर बड़े देव भक्त नारदजी अनिच्छा भक्तिमें प्रवृत्त हुए, हजार वर्ष तक नरनारायणजी के आश्रम में निवास करके भगवत् आख्यान को सुनकर अविनाशी हरि को दर्शनकर, शीघ्रही हिमालय पर्वत पर गये जहां कि उनका निजआश्रम था और प्रसिद्ध तपयुक्त उन नरनारायणने भी, उसी रमणीक आश्रममें श्रेष्ठ तपको तपा और पांडुके वंश में महाविजय पानेवाले तुमभी अब इस कथा को आदि से सुनकर पवित्रात्मा होगये हे राजेंद्र उनका यहलोक परलोक दोनों नहीं हैं जो पुरुष मन वाणी और कर्म से विष्णुजी से शत्रुता करते हैं ऐसे पुरुषों के पितरलोग भी हजारों वर्षतक नरकमें पड़ते हैं जो पुरुष देवता-ओंमें श्रेष्ठ देवदेव नारायण हरि से विरोध या अहंकार करे उसको ध्यान से विचारकरना योग्यहै कि सृष्टिका आत्मा कैसे शत्रुता करने योग्यहै, हे पुरुषो त्तम विष्णुही सबका आत्मा जाननायोग्यहै जोहमारे गुरू व्यासजी हैं,जिन से यह श्रेष्ठ और पूरण इतिहास और माहात्म्य मैंने सुनाहै हेनिष्पापजनमे जय यह मैंने उन्हींकी कृपासे तुमसे वर्णन कियाहै, हेतात नारदजीने साक्षात् नारायणजीसे पाया इसीसे यहबड़ाधर्महै वह धर्म पूर्व्वमें हरिगीताकेमध्य तुम से कहाहै, हेराजा तुम कृष्ण द्वैपायन व्यासजीको भी नारायणही जानो इन के सिवाय दूसरा कौनहै जो महाभारतको बनाता और उनके सिवाय कौन नानाप्रकारके धर्मोंको वर्णन करता तैंने बड़ा संकल्प जैसा किया है उसी के समान तेरायज्ञ वर्त्तमानहो तुम अश्वमेधका संकल्प करनेवाले और मुख्यता से धर्मके सुननेवाले हो सूतजी बोले कि उसउत्तम राजाने इस बड़े आख्यान को सुनकर फिर यज्ञ समाप्ति के लिये सब क्रियाओं को प्रारंभ किया, मैंने जो यह नारायणजी का इतिहास तुम से कहा उसी को पूर्व्व समय में नै-मिषारण्यवासी शौनक आदि ऋषियों में बैठेहुए नारदजी ने बृहस्पति जी से कहा उससमय सब ऋषि पांडव भीष्म और श्रीकृष्णने भी श्रवणकिया वही विश्वंभर धराधारी श्रुति नम्रता बुद्धि शांति के घर यम नियम में पूर्ण देवताओंका हितकारी असुर संहारी तप यश का पात्र मधुकैटभ का मारने वाला धर्मज्ञ सतयुगी पुरुषों को गति और निर्भयता का देनेवाला यज्ञभाग लेनेवाला नारायण हरिमहर्षि व्यासजी समेत तेरीगति और रक्षाका आश्रय

हो, त्रिगुणात्मक निर्गुण चतुर्मूर्त्ति वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्धनाममें प्रसिद्ध इष्टापूर्त्ति के फल और भागका हरनेवाला अजित नारायण श्रेष्ठ कर्मी ऋषियों की कैवल्यादि गतिको सदैव देताहै, उस लोकसाक्षी अजन्मा सूर्यवर्ण लयस्थान पुराण पुरुष को एकाग्रचित्तसे ध्यान और नमस्कारकरो जिसको कि शेष शायी भगवान् वासुदेवजी नमस्कार करतेहैं वही अव्यक्त आदिका उत्पन्नकर्त्ता मोक्षका सूक्ष्मस्थान अचल आवागमन रहित सर्वात्मा रूप है हे उदार वह वासुदेव सनातन सांख्य और योगके ज्ञाता चित्तके निरोधी ध्यान करनेवाले पुरुषोंसे दर्शन के योग्यहैं २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे शतापरिद्विसप्ततितमोऽध्यायः १७२ ॥

एकसौ तिहत्तरका अध्याय ॥

शौनकऋषिबोले कि उस भगवत् परमात्माका महात्म्य हमने सुना और धर्मके घरमें नारायणजी का जन्म होनाभीसुना, और महा वराहजीके उत्पन्न कियेहुए पिंडोंकी प्राचीन उत्पत्ति भी सुनी और प्रवृत्ति निवृत्ति धर्मोंकी कल्पना जैसे करी उसकोभी आपके मुखसे हमने श्रवणकिया, परंतु हे ब्रह्मन् जो आपने कहा कि हव्य भोगनेवाले विष्णुजीका अवतार अश्वशिर अर्थात् हयग्रीव पूर्वोत्तरकोणमें महासमुद्रके समीपहुआथा जिसे परमेष्ठी ब्रह्मा जी ने देखा सो हे परमबुद्धिमान् उसको लोकके स्वामी नारायणने प्रथमही क्यों उत्पन्न किया क्या महा पुरुषोंकारूप और प्रभाव अपूर्व होताहै हे मुनि प्रभु ब्रह्माजीने उसदेवदेव अपूर्वरूप पवित्रात्मा बड़े तेजस्वी हयग्रीव परमात्मा को देखकर क्या किया ६ हे बुद्धिमान् ब्राह्मण इस हमारे प्राचीन ज्ञानसे विचार किये हुए संदेहको वर्णनकीजिये, हे पवित्रकथा कहनेवाले आपकी कृपा से हम पवित्रहुए हैं, सूतजी बोले कि मैं वेदके समान सबपुराणों को तुमसे वर्णन करताहूं जिसको भगवान् व्यासजीने राजा जन्मेजयके सन्मुख वर्णन किया है, हयग्रीव नाम विष्णुकी मूर्त्तिको सुनकर सन्देह करनेवाले राजाने यह वचन कहा कि हे बड़े धर्मज्ञ ब्रह्माजीने जो उस अश्वशिरधारी देवताके दर्शन किये उस अवतारका कारण मुझसे वर्णन कीजिये, वैशंपायन बोले कि हे राजा निश्चय करके इसलोकमें जो जीवधारी हैं वह सब ईश्वरके संकल्परूप पंचतत्वों से मिश्रित हैं, जगत् का उत्पन्न करनेवाला ईश्वर प्रभु विराट् नारायण जीवोंका अंतरात्मा वरदाता सगुण और निर्गुण भी है, हे राजा तत्वोंकी महाप्रलयको कहताहूं कि पूर्वसमय में एकसमुद्ररूप जलमें पृथ्वी के लयहोने और जलके अग्निरूप होने और वायु में अग्नि के लीनहोने और आकाश में वायु के लीनहोने और इसीप्रकार मनमें

आकाश महत्तत्त्वों में मन, अव्यक्त में महत्तत्त्व, पुरुष में अव्यक्त और श्री वासुदेवजी में पुरुष के लय होनेपर, सब संसार अंधकार रूप होगया अर्थात् निज विज्ञान गुप्त होगया और कुछ नहीं रहा उस अंधकार से जिसका मूल शुद्ध ब्रह्महै अर्थात् जैसे कि रस्सीमें सर्पकल्पित हुआ उसीप्रकार ब्रह्ममें अंधकार कल्पित है उस अंधकार से जगत्का कारण ब्रह्म उत्पन्न हुआ, वहनाम रूप धारी विराट् देहमें नियतथा वही अनिरुद्धनामसे प्रसिद्ध हुआ उसी को प्रधान कहते हैं, हे राजा उसीको त्रिगुणात्मक अव्यक्त जानना योग्यहै निर्विशेष चिन्मात्राकार चित्त वृत्ती से संयुक्त निद्रायोग को प्राप्त देवता विष्वक्सेन प्रभुहरिने निर्विशेष ब्रह्ममें शयन किया अर्थात् लयताको पाया उसी चैतन्यने जगत् की उत्पत्ति को जो कि अपूर्व्व अद्भुत गुणोंसे प्रकटहोने वाली है ध्यान किया, जगत्की उत्पत्ति को विचारते हुए उसदेवताके निजगुणको महत्तत्त्व कहते हैं उस महत्तत्त्व से अहंकार उत्पन्न हुआ, तब वह चतुर्मुख सबलोकों के पितामह ब्रह्माकमललोचन भगवान् हिरण्यगर्भ कमलरूप ब्रह्माण्ड में अनिरुद्धसे उत्पन्न हुए, वह तेजस्वी सनातन ब्रह्मा हजार पत्तेवाले कमल पर बैठे और अद्भुतरूपवाले प्रभुने जलरूप लोकों को देखा, तदनन्तर जीव समूहोंको उत्पन्न करते हुए वह ब्रह्माजी सतोगुण में नियत हुए सूर्य्यकी किरण के समान प्रकाशमान कमलपत्र रूप ब्रह्माण्ड के मुख्य स्थान में नारायणजी से उत्पन्न श्रेष्ठ गुण सम्पन्न दो जलकणथे उस आदि अंत रहित षड़ैश्वर्य्य के स्वामी ब्रह्मभाव से पूर्ण ने उन दोनों जल कणोंको देखा उनमें एकजलकण तो सुंदर प्रभावयुक्त मधुर आम के वर्णकी समानथा तब नारायण की आज्ञा से वह जलकण तामसी मधुनाम दैत्यहोकर उत्पन्न हुआ, दूसराकण कठोर था वह राजसी कण कैटभनाम दैत्यहुआ तमोगुण रजोगुण यह दोनों श्रेष्ठ असुर बड़ेबली गदा हाथ में लिये कमलकी नाल में चलते हुए सन्मुख में दौड़े और कमलपर बैठे बड़े प्रकाशमान आदि में सुंदर रूपधारी चारों वेद के प्रकट करनेवाले ब्रह्माको बैठा देखकर उन स्वरूपवान् असुरों ने वेदों को देखके ब्रह्माजी के देखते हुए अकस्मात् वेदों को पकड़ लिया और दोनोंने वेदों को लेकर उस जल से पूर्ण समुद्र में प्रवेश किया फिर वेदों के हरेजाने पर ब्रह्माजी को मूर्च्छा हुई इसी कारण वेदों से रहित होकर ईश्वरसे यह वचन कहा कि यह वेदही मेरेउत्तम चक्षु हैं वेदही मेरा परमबल परमधाम अर्थात् उत्तम तेजहैं वेदही मेरा परमब्रह्म है यहां वह मेरेसब वेद दानवों ने बल से हरलिये वेदों से रहित होकर मेरेलोक सब अंधकार युक्त होगये मैं बिना वेदों के लोकों की उत्तम सृष्टिको कैसेकरूं वेदों के जाते रहनेसे बड़ा दुःख मुझको प्राप्तहुआ यह शोच मेरेहृदय को पीड़ा देताहै अब शोकसमुद्रमें डूबेहुए मुझ

को कौन यहां से छुटावे और गुप्तहुए वेदोंको लावे, मैं किसका प्याराहूं हे राजेन्द्र इस प्रकारसे कहनेवाले ब्रह्माकी बुद्धि हरिके स्तोत्र वर्णन करने को प्रकटहुई तदनन्तर ब्रह्माजी ने हाथ जोड़कर इस उत्तम स्तोत्रको वर्णन किया, ब्रह्माजी बोले कि हे ब्रह्म हृदय मुझ से प्रथम उत्पन्न होनेवाले लोकके आदि सब भूतों में श्रेष्ठ सांख्य योग के भंडार व्यक्त अव्यक्तके उत्पादक बुद्धिसे परे मोक्षमार्ग में नियत तुम्हारे अर्थ नमस्कार है हे विश्वभोक्ता जीवात्माओं के अंतरात्मा योनिसे उत्पन्न होनेवाले लोक प्रकाशक मैं तुम्ही स्वयंभूसे प्रसन्नता पूर्वक उत्पन्न होनेवालाहूं तुमसेही मेरा प्रथम जन्म ब्राह्मणों से पूजितमानस नाम है और दूसरा जन्म प्राचीन चाक्षुष नाम हुआ और आपही की कृपा से मेरा तीसरा जन्म वाचकनाम हुआ मेराचौथा जन्म श्रवणजनामभी तुम्हीं से हुआ और मानसी मेरा पांचवां नाम जन्मभी तुम्हीं से है छठा जन्म अंडज सातवां पद्मजभी तुमसेही उत्पन्न हुआहै हे त्रिगुणसे रहित प्रभु मैं प्रत्येक उत्पत्ति में आपही का पुत्रहूं, हे कमललोचन मैं शुद्ध सतोगुण से कल्पित आपका प्रथम पुत्रहूं तुम मुझ ब्रह्माके ईश्वर स्वभाव और कर्म बंधनहो, वेद रूप नेत्र रखनेवाला कालका बिजय करनेवाला मैं आपकाही पैदा किया हूं वहमेरे नेत्ररूप वेदहरेगये मैं उनके बिना अंधाहोगयाहूं आप चैतन्य हूजिये, मेरे नेत्रों को दो मैं आपका प्याराहूं और तुम मेरे प्यारेहो इस प्रकार ब्रह्मा से स्तुति किये हुए सर्वव्यापी जगदात्मा स्वयंभू प्रभुजागे और वेद लाने को सन्नद्धहो के वह प्रभु अपने ऐश्वर्य्य प्रयोग से दूसरे शरीरमें प्रवेशकरगये, तब वह प्रभु सुंदर नासिकायुक्त देहधारी चंद्रमाके समान प्रकाशित होकर अश्वका शिर धारण करके प्रस्थान करगये वह रूप वेदों का निवास स्थान था, नक्षत्र तारागणों समेत स्वर्ग मस्तक और लम्बेबाल सूर्य्यकी किरणों के समान प्रकाशमान हुए आकाश पाताल दोनों कान पृथ्वी ललाट गंगा और सरस्वती और दोनों महा समुद्र भृकुटी और सूर्य्य चंद्रमा दोनों नेत्र संध्या नाक प्रणव संस्कार बिजली जिह्वाहुई और सोमपनाम पितर दांतहुए और गोलोक ब्रह्मलोक उसमहात्माके दोनों होठथे, और गुणयुक्त कालरात्रि उसकी गर्दनथी ऐसे नाना अद्भुतस्वरूप रखनेवाले हयग्रीव विश्वेश प्रभु शरीरको धारण करके अन्तर्द्धान होकर जल में प्रवेशकर गये उस जलमें प्रविष्ट योग में नियत प्रभुने शिक्षायुक्त स्वरमें नियत होकर उद्गीत नाम स्वर को उत्पन्न किया वहशिर अत्यन्त स्वच्छ और दूसरा शब्द उत्पन्न करने वाला सबजीवों का गुण और हितकारी हुआ और ऐसाविदितहुआ कि मानो पृथ्वीके भीतरहोताहै तिसपीछे वहदोनों असुरवेदोंको बचन बद्धकर रसातलमें छोड़कर जिधरशब्द होरहाथा उधरको दौड़े हेराजा उसी अं-

तरमें हयग्रीवधारी देवताने रसातलमें जाकर आपसब वेदोंको लेलिया और वहांसे लाकर ब्रह्माजीको देदिये और अपने मुख्यरूपको धारणकरलिया, अर्थात् उस अपने हयग्रीव रूपको पूर्वोत्तर कोण के महासमुद्रमें नियतकरके अपने मुख्यरूपको धारणकिया तदनंतर हयग्रीवभी वेदों के निवास स्थानहुए, फिरमधुकैटभनाम दोनों असुरोंने वहांकुछभी न देखकर बड़ीशीघ्रता से वहां आकर उसस्थानको भी जहां वेदरक्खेथे खाली देखातबतो महाबली वहदोनों बड़े शीघ्रगामी होकर शीघ्रही फिर समुद्रसे ऊपरउठे तो वहां उसीआदिपुरुष प्रभुको देखा जोकि श्वेतवर्ण शुद्ध चंद्रमाके समान प्रकाशमान अनिरुद्ध देहमें नियत महापराक्रमी निद्राके योगसे मिलाहुआथा और उसशयनपर विराजमानथा जोकि जलोंके ऊपर कल्पित ज्वालाओंकी मालाओं से गुप्त शेषनागके फणोंपर वर्त्तमान अपने शरीरके समान रचाहुआथा, उनदोनों दानवोंने उसशुद्ध सतोगुण युक्त सुंदर प्रभाववाले पुरुषको देखकर बड़ाहास्य किया, रजोगुण तमोगुण से भरेहुए उनदोनोंने कहा कि यह वह श्वेतवर्ण निद्रामें भराहुआ पुरुष सोताहै, इसीने निश्चयकरके वेदोंको रसातलसे हराहै यह कौनहै किसकाहै और शेषकीशय्यापर क्यों सोताहै,ऐसावचन कहकर उन दोनोंने हरिको जगाया तब पुरुषोत्तमजी उनको युद्धाभिलाषी जानके जागे, और दोनों असुरेंद्रोंको देखकर युद्धमें मनको प्रवृत्तकिया फिरतो उनदोनों से और भगवान्से बड़ायुद्धहुआ, ब्रह्माजीकी रक्षाकरतेहुए मधुसूदनजीने उन रजोगुण तमोगुणसे भरेहुए दोनों असुरोंको मारडाला और वेदोंके लाने और उनके मारने से ब्रह्माजीके शोकको निवृत्तकिया, तदनंतर ईश्वरकी आज्ञासे और वेदोंसे प्रतिष्ठित ब्रह्माजीने सब जड़चैतन्यरूप लोकोंको उत्पन्नकिया, फिर भगवान् प्रभुजीको संसारके उत्पन्न करनेकी बुद्धिको देकर वहीं अंतर्द्धान होगये जहां से उदयहुएथे, इसप्रकारसे महाभाग हरिनेहयग्रीवहोकर अवतार धारण कियाथा यह ईश्वरका रूपबड़ा वरदाता और प्राचीन वर्णनकियाहै, हरिने हयग्रीव शरीर धारणकर दोनों दैत्योंका बधकरके प्रवृत्ति धर्मके लिये फिरउसी रूपको धारणकिया, जो ब्राह्मण इसको सदैव सुनेगा अथवा धारण करेगा वह अपनी पढ़ीहुई विद्याको कभीन भूलेगा, पांचालने बड़ातपकरके हयग्रीव रूपधारी देवताका आराधन करके देवताकी कृपासे कर्मको प्राप्तकिया, हेराजा यह हयग्रीव अवतारका आख्यानजो कि प्राचीन और वेदकी समान है मैंनेतुमसे वर्णनकिया, जब देवता संसारके प्रबंधकेलिये जिस २ शरीर को धारणकरना चाहताहै तब अपनी आत्माके द्वारा विपरीतरूप करनेवाला होकरउस २ शरीरको धारणकरताहै, यह श्रीमान् वेदोंका वा तपोंका और सांख्य योगोंका भण्डारहै यहीपरब्रह्म हव्य और प्रभुहै, वेद नारायणको सबसे श्रेष्ठ

कहनेवालेहैं यज्ञनारायणरूपहैं तप नारायणको अंत रखनेवालाहै नारायण परमगतिहै, नारायणसत्यरूपहै और सत्यधर्मदोनों नारायणको अन्तरखने- वालेहैं और जिसधर्मसे स्वर्गसे नीचेको आवागवन होताहै उससे कठिनता पूर्वकमिलताहै, प्रवृत्ति लक्षणवालाधर्मभी नारायणरूपहै, पृथ्वीमें जो सबसे उत्तमगन्धिहै उसकोभी नारायणरूप कहतेहैं, ८० हे राजा जलोंके गुणरसभी नारायणरूपहैं, अग्निआदिका उत्तमरूप भी नारायण स्वरूपहै वायुकास्पर्श गुण आकाशका शब्दगुण अव्यक्तके गुणरखनेवालामन और उसीसे प्रकट हुआ तेजस्वी वस्तुओं का निवास स्थानकालभी ईश्वर का रूपहै, कीर्त्ति शोभा लक्ष्मी देवताइत्यादि सबनारायण रूपहैं सांख्यनारायणको सर्वोत्तम वर्णन करता है और योग भी नारायण रूप है जिन्हों का कारण पुरुष प्रधान, स्वभाव, कर्म और दैव है और अधिष्ठान कर्त्ता, जुदे प्रकारका करण और नानाप्रकारकी चेष्टा जिसमें दैवहै और निश्चय करके पांच कारणों से प्रसिद्ध हरिही सब स्थानपर निष्ठाहै अनेक प्रकारके हेतुओंसे तत्त्व जाननेके अभिलाषी पुरुषोंका एकतत्त्व वही प्रभु नारायण हरि है, वही ब्रह्मादिदेवता, महात्मा, ऋषि, सबलोक, सांख्यमतवाले, योगी और आत्मज्ञानी संन्यासि- योंके भी मनके भेदको जानते हैं परन्तु वह सब उसकी इच्छाको नहींजानते लोकों में जो कोई पुरुष दैवकर्म पितृकर्म को करते हैं और दानों को देते हैं अथवा बड़ातप करते हैं उनसबके रक्षा स्थान ईश्वर सम्बन्धी बुद्धि में नियत विष्णुजीही हैं वह सब जीवोंका उत्पत्ति स्थान अथवा सबजीवों में निवास करनेवाला वासुदेव कहाजाता है, यह पुराण पुरुष महाविभूति युक्त प्रसिद्ध गुणातीत महाऋषि नारायण शीघ्रही गुणों से ऐसे मिलजाता है जैसे कि समय ऋतुओं से मिलजाताहै, यहां इस महात्माकी गतिको अथवा अगति कोभी कोई नहीं जानताहै न देखताहै जो ज्ञानस्वरूप महर्षि हैं वही उस गु- णातीत पुरुषको सदैव देखतेहैं, ९३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरित्रिसप्ततितमोऽध्यायः १७३ ॥

एकसौ चौहत्तरका अध्याय ॥

राजाजनमेजय बोले कि बड़ा आश्चर्य्यहै कि भगवान् हरि उन अनिच्छा- वान् सबभक्तोंका पोषण करताहै और बुद्धिसे अर्पणकीहुई पूजाको आपग्रहण करताहै, लोकमें जो पुरुष वासनारहित पुण्य पापसे पृथक् हैं तुमने उन्होंको ज्ञानगौरव सम्प्रदायसे प्राप्तहोनेवाला वर्णनकिया, वह अनिरुद्ध प्रद्युम्न संक- र्षणके सिवाय चौथीप्रकृति वासुदेवनाम से पुरुषोत्तमको पाते हैं परन्तु इच्छा रहित भक्तपरमपदको पातेहैं, निश्चयकरके यहएकांत धर्म महाश्रेष्ठ नारायण

का प्याराहै इसमें अनिरुद्धआदि तीनोंगतियोंको न पाकर अविनाशी वासु-
देवहरिको प्राप्तकरतेहैं, अच्छीरीतिसे धर्ममें नियत जो ब्राह्मण बुद्धिमें नियत
होकर उपनिषदोंसमेत वेदोंको पढ़तेहैं और संन्यासधर्मको भी रखते हैं उनसे
भी उत्तमगतिपानेवाले इच्छारहित भक्तोंको मैं जानताहूं यहधर्म किसीदेवता
और ऋषिने वर्णनकियाहै जनमेजयबोले कि हे प्रभु अनिच्छावान् पुरुषोंका
आदि नियमक्या है और कबसे है इस सन्देहको निवृत्तकीजिये मुझे इसके
सुननेकी बड़ीइच्छाहै, वैशंपायन बोले कि युद्धभूमिमें कौरव और पांडवोंकी
सेना तैयारहोने और अर्जुनके उदास होनेपर आप भगवान् ने गीताका व-
र्णनकिया, मैंने प्रथमही अगति अर्थात् ज्ञान धर्मगति उपासना धर्म तुझसे
वर्णनकिया यहमार्ग गहन है और अशुद्ध अन्तष्करण पुरुषों की बुद्धि में
कठिनता से आताहै, सामवेद तत्त्वमसि महावाक्यके समान है पहले सतयुग
में जारीकियाहुआ वह धर्म आपशिवजी और नारदजीसे धारण कियाजाता
है हे महाराजऋषियोंके मध्यमें श्रीकृष्णजी और भीष्मजीकी विद्यमानता में
महाभाग नारदजी से अर्जुन ने इसी विषय में पूछाथा, हे राजेन्द्र नारदजीने
इसको जिसरीतिसे वर्णनकिया और मेरेगुरूने भी जैसे यह धर्म मुझसे कहा
उसको मैं तुमसे कहताहूं, हे पृथ्वीपाल जब नारायणजीके मुखसे प्रकटहोने-
वाले ब्रह्माका मानसी जन्महुआ तब आपनारायणजीने, उसीधर्मसे देवकर्म
और पितृकर्मकोकिया फिरफेनपनाम ऋषियोंने इसधर्मकोपाया, फेनपाओंसे
वैखानसोंने वैखानसोंसे चन्द्रमाने पाया फिरवह गुप्तहोगया, हे अर्जुन जबब्र-
ह्माजीका दूसराजन्म चाक्षुप नामहुआ तब ब्रह्माजीने चन्द्रमासे धर्मकोसुना
और ब्रह्माजीने उसधर्मको रुद्रजीको दिया, तिसपीछे सतयुगके बीच योगा-
रूढ़ शिवजीने यह संपूर्ण धर्म बालखिल्य ऋषियों को पढ़ाया फिर उस दे-
वताकी मायासे वह धर्म गुप्तहोगया, हे राजाजब ब्रह्माजीका तीसरा जन्म
कल्याण वाचकहुआ तबयहधर्म आप नारायणजीने प्रकटकिया, सुपर्णनाम
ऋषिने श्रेष्ठ तपस्या और नियम पूर्व्वक शान्त वृत्तिहोकर इसधर्म को पुरुषो-
त्तमजी से पाया, इसकारण सुपर्णऋषिने इस उत्तम धर्मको प्रतिदिन तीनबार
पाठकिया उसके प्रभावसे यह व्रत त्रिसुपर्ण नामसे विख्यातहै यह कठिनता
से करनेकेयोग्य व्रत त्रिसुपर्ण नामऋग्वेदके पाठमें पढ़ागया सनातनधर्म है
तदनन्तर वायुने इसधर्मको किया फिर वायुसे विघसाशी सप्तऋषियोंने पाया
सप्तऋषियों से महोदधि ऋषिने फिर नारायणजी से नियत कियाहुआ वह
धर्म फिर गुप्तहोगया, हे पुरुषोत्तम जबमहात्मा ब्रह्माजीकी उत्पत्ति नारायण
जीके कानोंसे हुई उसके विषयमें जो मैं कहताहूं उसको सुनो, संसारकी उत्प-
त्ति में आसक्त चित्त नारायण हरि ने आप उससंसारकी उत्पत्ति करनेवाले

समर्थ पुरुषको ध्यान किया उसध्यान करतेहुए नारायणजी के कानोंसे सृष्टि के उत्पन्न कर्त्ता ब्रह्मानाम पुरुष बाहरनिकले उनब्रह्माजी से जगत्पति नारायण जीने कहा कि हे सुन्दर ब्रतवाले पुत्र तुम मुख और चरणों से सब सृष्टिको उत्पन्नकरो और मैं तेरे कल्याण बल और तेजको भी करूंगा २८ मुझ से सनातन नाम धर्म्मको लेकर उससे मिलेहुए सतयुगको बुद्धिके अनुसार नियत करो, तदनन्तर उन ब्रह्माजी ने नारायण देवताको नमस्कार करके रहस्य संग्रह समेत उत्तम धर्मको प्राप्तकिया, फिर नारायणजीने मुखसे उत्पन्न होनेवाले अमित तेजधारी ब्रह्माको उपदेश करके कहा कि तुम इच्छासे रहित होकर युगधर्मोंके कर्ताहो यहकहकर नारायणजी तो उसतमके पार चलेगये जहां दृष्टिसे गुप्त नारायण परब्रह्म नियतहैं, तदनन्तर उसलोकों के पितामह वरदाता ब्रह्माजीने सब जड़ चैतन्य लोकोंको उत्पन्न किया, सबसे पूर्व्व सतयुग वर्त्तमान हुआ तब सात्विक धर्मलोकोंको व्याप्त करके नियत हुआ। उस समय सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजी ने उसपूर्व्वधर्म्म से देवेश्वर प्रभु नारायण हरिको पूजन किया, और संसारकी वृद्धिकी इच्छासे धर्म प्रतिष्ठाके निमित्त स्वारोचिष मनुको शिक्षाकरी, तदनन्तर हे राजा सब लोकोंके स्वामी समर्थ सावधान ब्रह्माजीने आपही स्वारोचिष के पुत्र शंखपदनामको पढ़ाया ३७ फिर हे भरतबंशी शंखपदने भी अपने औरसपुत्र दिशापाल और सुवर्णाभको पढ़ाया, फिर त्रेतायुगके वर्त्तमान होनेपर वहधर्म फिर गुप्तहुआ, पूर्व्व समय में ब्रह्माजीके नासत्य नाम जन्म में प्रभु नारायण हरिदेवताने इसधर्मको उपदेश किया, अर्थात् कमललोचन विष्णुजी ने उसधर्मको ब्रह्माजीके सन्मुख बर्णन किया फिर भगवान् सनत्कुमारजीने उसको पढ़ा, फिर सतयुगके प्रारंभ में वीरणनाम प्रजापतिने सनत्कुमारजी से इसधर्म को पढ़ा और बीरणनेभी पढ़कर रैभ्यनाम मनुको दिया उसरैभ्यने अपने पुत्र कुक्षीको जो कि शुद्ध सुन्दर ब्रतयुक्त दिशाओंका रक्षक धर्मात्माथा पढ़ाया फिर वही धर्म गुप्तहोगया, जिसका उत्पत्ति स्थान हरि हैं उनब्रह्माजीके अण्डज जन्ममें यह धर्म फिर नारायण जीके मुखसे प्रकटहुआ, और ब्रह्माजीने उसधर्मको प्राप्त किया और बुद्धिके अनुसार काममें लाये और बर्हिपद नाम मुनिको पढ़ाया बर्हिपदने सामबेदके पूर्णज्ञाता ज्येष्ठनाम प्रसिद्ध ब्राह्मणोंको पढ़ाया और ज्येष्ठ ब्राह्मण ने अविकम्पन राजाको दिया क्योंकि हरिसामवेदका व्रत धारणकरनेवाले हैं फिर यह धर्म गुप्तहोगया हे राजा ब्रह्माजीका जो यह पद्मजनाम जन्म है उसमें यह धर्म आप नारायणजी ने नियत किया है, अर्थात् युगके प्रारम्भ में उसलोक धारी शुद्ध ब्रह्माजीके निमित्त कहागया फिर ब्रह्माने दक्ष को दिया दक्षने अपने बड़े धेव्रते सविताके बड़ेभाई आदित्यको दिया आ-

दित्यने विवस्वानको दिया, फिर त्रेतायुगके प्रारम्भ में विवस्वानने मनुको दिया मनुने संसारके ऐश्वर्य्यादिके लिये इक्ष्वाकुको दिया इक्ष्वाकुसे कहा हुआ धर्मलोकोंको व्याप्तकरके नियतहुआ अन्तको फिर भी वह धर्म नारायणमेंही आवागवन करेगा, हे राजा संन्यासियोंका भी जो धर्महै वह पूर्व्व में भगवद्गीताके मध्यवर्ती मिलाहुआ तुम से कहा इसधर्मको नारदजीने रहस्य संग्रहयुक्त नारायणजीसे प्राप्तकिया था, इसप्रकार यह सनातन आदि धर्म कठिनतासे समझने और करने के योग्य सदैव भगवत् भक्त पुरुषोंसे धारण किया जाता है, वह ईश्वर हरि इस अहिंसाधर्म युक्त श्रेष्ठ आचरित धर्म ज्ञान से प्रसन्न होता है, यह ब्रह्म एक व्यूह विभागवाला कहीं २ द्वैध नाम से भी युक्त है और त्रिव्यूहयुक्त भी प्रसिद्ध है और चार व्यूहवाला दृष्ट आता है, ममता और कला से पृथक् क्षेत्रज्ञ हरिही है और पंचतत्त्वों के गुणोंसे रहित सब जीवोंमें नियत जीवभी हरिहै, हे राजा पांचों इंद्रियों को चेष्टा करानेवाला मन अहंकार समेतहरिहीहै और हरिही लोकप्रवर्त्तक अंतर्य्यामी और बुद्धिमान्है और संसारकी उत्पत्तिका ज्ञाता कर्त्ता अकर्त्ता कार्य्य कारण रूपहै हे अर्जुन यह पुरीरूप शरीरोंमें निवास करनेवाला अविनाशी हरि जैसाचाहताहै वैसीही क्रीड़ा करता है,हेराजेंद्र मैंने गुरुकी कृपासे अनिच्छावान् भक्तोंका धर्म जो कि अज्ञानियों से जानने के अयोग्य है तुमसे वर्णनकिया, हे राजेन्द्र इच्छारहितभक्तपुरुष बहुत कमहोते हैं कदाचित् यह संसार अनिच्छावान् पुरुषोंसे भराहुआ होजाय तोहिंसा रहित आत्मज्ञानी सबजीवों की भलाई में प्रवृत्त भक्तोंसे सतयुग वर्त्तमानहोजाय वह युग फल रहित कर्मोंसे संयुक्त है, हे राजा इस प्रकारसे उसमें रे धर्मज्ञ गुरू ब्राह्मणोत्तम व्यासभगवान्ने इसधर्म को धर्मराजके सन्मुख वर्णन किया और ऋषियोंके सन्मुख श्रीकृष्ण और भीष्मजीके सुनतेहुए भी वर्णनकिया उन व्यासजीके सन्मुख भी पूर्व्व समय में बड़े तपस्वी नारदजीने उसदेवताका वर्णन किया जो कि परमब्रह्म चन्द्रमाके समान उज्ज्वल देदीप्तवर्ण अविनाशी है उसी में वह निराकांक्षी नारायण परायण भक्तलय होते हैं, राजा जनमेजयने प्रश्न किया कि नानाप्रकारके व्रतमें नियत दूसरे ब्राह्मण इस प्रकार ज्ञानियोंसे सेवित बहुत प्रकारवाले धर्मको क्यों नहीं करते हैं, वैशम्पायन बोले हे भरत वंशी राजा जनमेजय शरीररूप बंधन रखनेवाले जीवोंमें तीनप्रकृति सात्विकी राजसी तामसीनाम उत्पन्न की गई हैं और शरीररूप बंधन रखनेवाले जीवों में सात्विकी पुरुष श्रेष्ठहै वह मोक्षके निमित्त निश्चय किया जाताहै, यहां वह ब्रह्मज्ञानियों में श्रेष्ठ उस पुरीरूप देहोंमें निवास करनेवाले को भी अच्छे प्रकारसे जानताहै और मोक्ष नारायण को प्राप्त करनेवाली है इसीसे

वह ज्ञानी सात्विकी कहा जाता है, वह इच्छा रहित भक्ति रखनेवाला सदैव ईश्वर का ध्यान करनेवाला पुरुष उस पुरुषोत्तमको ध्यान करता हुआ अभीष्टको प्राप्त करताहै, जो कोई मोक्ष धर्मवाले बुद्धिमान् संन्यासी हैं उन निराकांक्षी पुरुषोंके योग क्षेमको हरिही प्राप्तकराते हैं, जिस जन्मलेनेवाले पुरुषको मधुसूदन जी अपनी कृपादृष्टिसे देखते हैं उसको भी सात्विकी जानना योग्य है वह भी मोक्षके योग्यहै, नारायणरूप मोक्षमें इच्छारहित भक्तोंसे सेवन कियाहुआ धर्म सांख्ययोगके समान है, इसकारणसे वहभक्त परमगति को पाते हैं ईश्वरकी कृपासेही ज्ञान उत्पन्न होताहै अपनी इच्छासे नहीं होताहै इसको वर्णन करतेहैं कि नारायणसे देखाहुआ पुरुष ज्ञानीहोता है–अब भक्ति न होनेसे दोषोंको कहते हैं हे राजा इसप्रकार अपनीइच्छासे ज्ञानी होनेवाला पुरुष जन्म नहींधारणकरताहै, राजसी और तामसी स्वभाव दोषों से संयुक्त हैं, रजोगुण तमोगुणसे संयुक्त प्रवृत्ति लक्षणोंसे युक्त जन्म लेनेवाले पुरुषको आप नारायण नहीं देखते हैं अर्थात् प्रवृत्ति मार्गमें ही लगाते हैं, और लोकपितामह ब्रह्माजी इस रजोगुण तमोगुण से मिलेहुए जन्म लेनेवाले पुरुषको देखते हैं अर्थात् प्रवृत्ति मार्गी करते हैं और देवता ऋषि तो अवश्य सतोगुण में नियत हैं परंतु सूक्ष्म सतोगुणसे पृथक् हैं इसी हेतुसे वैकारिक कहेजाते हैं, राजा जनमेजय ने प्रश्नकिया कि अहंकारी जीव किसरीतिसे पुरुषोत्तम को प्राप्त करसक्ता है इसको वर्णन कीजिये और प्रवृत्तिको भी क्रम पूर्व्वक वर्णन कीजिये, वैशंपायन बोले कि संन्यास धर्ममें नियत पच्चीसवां पुरुष उस पुरुषको प्राप्तकरता है जो कि अत्यंत सूक्ष्मतत्त्वों से युक्त अधिष्ठानरूप अकार उकार मकार इन तीन अक्षरों से संयुक्त अर्थात् उपाधियों को त्यागकर पुरुष उस आदिपुरुषको प्राप्त करता है वह प्रवेश करनेवाला पुरुष अन्य नगरकी समान नहीं है किंतु उपाधि से रहित होना ही इसकीप्राप्ति है ८० इस प्रकारसे आत्मा अनात्मा का विवेकरूप सांख्य और चित्तवृत्ति निरोधरूप योगजीव ब्रह्मकी एकताकोसिद्ध करनेवाला तत्त्वमसिवाक्य से उत्पन्न होता है और ज्ञानरूप वेदारण्यक और भक्तिमार्ग रूप पंचरात्रि यह सब एक दूसरेके अंगकहे जाते हैं अर्थात् यह सब एकही पुरुष के धर्म हैं पृथक् २ पुरुषोंके नहीं हैं ८१ अनिच्छावान् पुरुषोंका यहधर्म नारायणमें निष्ठारखने वाला है हे राजा जैसे समुद्रसे निकलनेवाले जलसमूह फिर उसी में प्रवेश करते हैं, उसीप्रकार यहज्ञानरूप बड़ेजलसमूहरूप फिर नारायण में प्रवेश करते हैं, हे कौरवनंदन यह मैंने सात्विक धर्म तुम से वर्णन किया, उसको न्याय के अनुसारकरो जिससे कि समर्थहो इसीप्रकार उन महाभाग नारदजीने मेरे गुरूसे, श्वेत गर्हितआदिकी और संन्यासियोंकी एकांत नाम

अविनाशी गतिको वर्णनकिया और व्यासजीने बड़ी प्रीतिपूर्व्वक बुद्धिमान् युधिष्ठिर के सन्मुख वर्णन किया, गुरूसे उपदेश किया हुआ यह वहीधर्म मैंने तुमसे कहा हे राजाओं में श्रेष्ठ इसप्रकारसे यह धर्म असाधारण है, जैसे कि इसमें तुम मोहित होतेहो उसीप्रकार अन्य पुरुषभी अधिक मोहित होते हैं, हे राजा श्रीकृष्णजीही संसार के पालन कर्त्ता मोहित करनेवाले नाश करने वाले और उत्पत्तिके कारण हैं ८८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे शतोपरिचतुस्सप्ततितमोऽध्यायः १७४ ॥

एकसौपचहत्तरका अध्याय ॥

राजाजनमेजयने प्रश्नकिया हेब्रह्मऋषि यहसांख्ययोग पंचरात्रिवेद अरण्यकनामज्ञान लोकोंमेंजारी है,हेमुनि यहक्या एकही पुरुषकी निष्ठाहै अथवा पृथक्२ पुरुषोंकी निष्ठाहै आप इनज्ञानियोंकी प्रवृत्तिको क्रमसे वर्णनकीजिये, वैशम्पायनबोले कि पराशरऋषि और सत्यवती माताने द्वीपके मध्यमें अपने योग के द्वारा जिसबहुज्ञ उत्तम बड़ेउदार महर्षिपुत्रको उत्पन्नकिया उस अज्ञान के नाशकरनेवाले व्यासजीको नमस्कारहै,जिनव्यास महर्षिको ऋषियोंके ऐश्वर्ययुक्त वेदोंका बड़ाभण्डार नारायणजीका छठवांअवतार और नारायणही के अंश से उत्पन्न एकपुत्र कहते हैं, महाविभूति और ऐश्वर्य्य युक्त तेजस्वी नारायणजी ने पूर्व्व समय में उस वेदों के बड़े भंडार महात्मा अजन्मा पुराणपुरुष व्यासजीको अपनापुत्र होनेके निमित्त उत्पन्नकिया, जनमेजय ने कहा हे उत्तम ब्राह्मण पूर्वमें आपनेही व्यासजीका जन्म वह वर्णन किया था कि वशिष्ठजी के बेटे शक्ति और शक्तिके बेटे पराशर जी और पराशर के पुत्र कृष्ण द्वैपायन हैं उनको आप नारायणजी का पुत्र कहतेहो इस कारण से बड़े तेजस्वी व्यासजी का होनेवाला जन्म नारायणजीसे कैसेहुआ इन सबकोआप वर्णन कीजिये, वैशम्पायन बोले कि हे राजा वेदार्थ कहनेके उत्सुक धर्मिष्ठ तपोमूर्त्ति ज्ञाननिष्ठ हिमालयके नीचे विराजमान और महाभारत को बनाकर तपसे थकित बुद्धिमान् गुरूकी सेवामें प्रीतिमान हम सबने उन व्यासजीकी सेवाकरी, सुमंतु जैमिनि, (बड़ेदृढ़व्रत पैल) (चौथा शिष्य मैं) और व्यासजीके पुत्र शुकदेवमुनि इनपांचों उत्तम शिष्यों समेत शिवजी शोभायमान होते हैं, अंगों समेत वेद और सबमहाभारत के बारम्बार अर्थ वर्णन करतेहुए व्यासजी ऐसे शोभायमान हुए जैसे कि भूतगणों समेत शिवजी शोभित होते हैं और हम सब शिष्योंने भी एकाग्रमन होकर उन जितेन्द्री व्यासजी को मनसे पूजन किया और किसीकथामें हम सबने उनसे पूछा कि वेदार्थ और महाभारतके अर्थोंको और नारायणजीसे होनेवाले

अपने जन्मको वर्णन कीजिये, उस तत्त्वज्ञानीने प्रथम तो वेदकेअर्थोंको और महाभारतके अर्थोंको कहकर नारायणजीसे होनेवाले इसअपने जन्मको वर्णन करना प्रारम्भ किया, हे ब्राह्मणोत्तम इस ऋषिसंबंधी पूर्व्व समयमें प्रकट होनेवाले उत्तम आख्यानको सुनो मैंने इसको तपके द्वारा जाना है, कमलमें उत्पन्न संसारकी सात्विक उत्पत्ति होनेपर शुभाशुभरहित बड़े तेजस्वी और योगी नारायणजीने अपनी नाभिसे प्रथम तो ब्रह्माजीको उत्पन्न किया और जब ब्रह्मा प्रकटहुए तब उनसे यह वचनकहा कि तुम समर्थ संसारके स्वामी मेरी नाभि से उत्पन्न हुएहो सो हे ब्रह्माजी तुम नानाप्रकारके स्थावर जंगम जीवों को उत्पन्न करो, इस प्रकारसे कहेहुए चिंता से व्याकुल मनसे विमुख उन ब्रह्माजीने बरदाता ईश्वर हरिको प्रणामकरकेकहा कि हे देवेश्वर तुमको नमस्कार करके कहताहूं कि सृष्टिके उत्पन्न करनेकी मुझमें सामर्थ्यनहीं है मैं अज्ञानीहूं यहब्रह्माजीके बचन सुनकर उस महाज्ञानी देवेश्वर भगवान्ने अन्तर्द्धान होकर बुद्धिदेवीको स्मरणकिया; स्मरण करतेही वह स्वरूपधारी बुद्धिदेवी नारायणजीकेपास आकरप्राप्तहुई तबउसनिस्संग ईश्वरने अपने योगसे उस बुद्धिदेवीको संयुक्तकरके यहवचन कहा, कि संसारकी उत्पत्तिके लिये तुमब्रह्माजीमें प्रवेश करो तदनन्तर ईश्वरकी आज्ञासे वहबुद्धि बड़ीशीघ्रतासे ब्रह्माजीके शरीरमें प्रवेश करगई, उसकेपीछे उसहरिने इसबुद्धि से संयुक्त ब्रह्माजीको फिर दर्शनदिया और यह वचनकहा कि नानाप्रकारके जीवोंको उत्पन्नकरो, तब ब्रह्माजी ईश्वरकी आज्ञाको स्वीकारकरके विचारपूर्व्वक कर्ममें प्रवृत्तहुए औरभगवान् वक्ष्यमाण बातोंको कहकर उसीस्थानमें अन्तर्द्धान होगये, कि ब्रह्माजीतुम उस निवासस्थानको एकमुहूर्त्तमेंही पावोगे और उस स्थानकोपातेही अद्वैतभगवत् भक्तहोगे इस अनन्य भक्तिके होतेहीहेब्रह्माजी तुम्हारी दूसरीबुद्धि फिर प्रकटहोगी उसी बुद्धिके द्वारा सब सृष्टि उत्पन्नहोगी दैत्य दानव गन्धर्व औरराक्षसोंके समूह से यहतपस्विनी पृथ्वी महाव्याकुल हो उन सबके भारसे दब जायगी तब पृथ्वीपर महाबलवान् तपसंयुक्त बहुतसे दैत्य दानव और राक्षसहोंगे और उत्तमवरोंको पावेंगे, वरोंके पानेसेअभिमानी इनसब राक्षस आदि के हाथों से देवता आदि ऋषि मुनि तपोधन लोग अवश्यपीड़ाको पावेंगे तब मैं उस पृथ्वी के भारके उतारने को अवतार धारण करके न्यायके अनुसार धर्मजारी करूंगा, तदनन्तर यह तपस्विनी पृथ्वी पापियों को दण्ड और साधुओं के पोषण करने से प्रजाको धारण करेगी, क्योंकि मुझ पातालवासी शेषनागरूप से यह सूक्ष्म स्थूलरूप चौदह भुवन नाम पृथ्वीधारण कीजाती है और मुझ से धारण किये हुए इस जड़, चैतन्य विश्वको यह धारण करती है, इसीकारण अवतार लेनेवाला मैं पृथ्वी

की रक्षाकरूंगा, फिर उस भगवान् मधुसूदनजी ने ऐसा विचारकरअवतार लेने के लिये वाराह, नृसिंह, वामन आदि अनेक रूपों को उत्पन्न किया, यहसमझकर कि इनरूपोंकेद्वारा मैं दुष्टराक्षसोंको मारूंगा, तदनन्तर संबोधन पूर्व्वक वार्त्तालापकरतेहुए संसारके स्वामीने, सरस्वतीका उच्चारणकिया उस स्थानपर वचन से प्रकटहोनेवालापुत्र सारस्वत प्रभुउपान्तरतमानाम उत्पन्न हुआ, वह तीनोंकालका जाननेवाला सत्यवादी दृढ़व्रतधारीथा, उसको देख-कर देवताओंके आदिभूत अविनाशी ईश्वरने उसमाथा नवायेहुए पुरुष से यह वचन कहाकि हे बुद्धिमानोंमेंश्रेष्ठ तुमको वेदाख्यानमें श्रुतियोंका करना योग्य है हे मुनि इसी कारण जैसा मैंने कहा है वैसाही करो, तब स्वायम्भू मन्वन्तर में उसने वेदोंका विभागकिया तिसपीछे भगवान् हरि उसके उस कर्मसे प्रसन्नहुए, और कहा कि हे पुत्र अच्छे तपेहुए तप यम और नियमोंसे तुम हरएक मन्वन्तरमें इस प्रकार वेदोंके जारी करनेवालेहोगे, और सदैव अचल और अजयहोगे, फिर कलियुग वर्त्तमान होनेपर कौरवनाम भरत-वंशी महात्मा राजा पृथ्वीपर वर्त्तमानहोंगे और तुझ से उत्पन्न उन भरत वंशियों में नाश करनेवाला परस्पर का विरोध उत्पन्न होगा हे ब्राह्मणोत्तम तुमवहांभी तपसे संयुक्तहोकर वेदोंको बहुतप्रकारका करोगे, कलियुगवर्त्तमान होनेपर कृष्णवर्णहोगा वह नानाप्रकारके धर्मोंका उत्पन्न करनेवाला ज्ञानका उत्पादक और तप से संयुक्त होगा और वैराग्य से जीवनमुक्त होगा, और तेरापुत्र वैराग्यवान् परमात्मा महादेवजीकी कृपासे उत्पन्नहोगा यहमेरावचन सत्यहै, वेदपाठीब्राह्मण जिन वशिष्ठजीको ब्रह्माजी की उत्तमबुद्धिसे संयुक्त और उत्तम तपका भंडार मानसी विख्यात जिसकी किरणें सूर्य से भी अधिक देदीप्यहैं, उसके वंशमें बड़े प्रभाववान वेदों के घर श्रेष्ठ महातपस्वी तपोमूर्त्ति महर्षि पराशरजी उत्पन्नहोंगे वही तुम्हारे पिताहोंगे तुम उस ऋषि से कन्या के बीच कानीनगर्भ नाम पुत्र उत्पन्न होगे और त्रिकालज्ञ होगे पूर्व्व में जो कल्प व्यतीत हुए उन सबको तुम तप युक्त होकर मेरे उपदेश से देखोगे फिर आगे होनेवाले अनेक कल्पोंको भी देखोगे हे मुनिलोकमें मेरे ध्यान से मुझ आदि अन्त रहित चक्रधारीको भी देखोगे इस वचनको सत्यही जा-नना, हे बुद्धिमान् तेरी बड़ी कीर्त्ति होगी और सूर्य्य का बड़ा बेटा शनैश्चर मनु होगा, हे पुत्र उस मन्वन्तर में मेरी कृपा से तुम निस्सन्देह मनु आदि समूहके पूर्वहीहोगे, संसारमें जो कुछ वर्त्तमानहै वह मेराकर्महै एक अनात्मा दूसरे अनात्मा का ध्यान करताहै, मैं अपनी इच्छा के अनुसार कर्म्म करता हूं, वह परमेश्वर सारस्वत ऋषि उपान्तरतमानामसे प्रकट होगा ऐसा वचन कहकर बोले कि साधन करो सो मैं उस विष्णु देवताकीकृपासे उपान्तरतमा

नाम उत्पन्न हुआ फिर हरिकी आज्ञा से जन्म लेनेवाला मैं वशिष्ठजी का कुलनन्दननाम प्रसिद्ध हुआ मैंने नारायणजीकी कृपासे वह अपना पहला जन्म और यहजन्म जो कि नारायणके अंशसे उत्पन्न हुआहै वर्णन किया, हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ शिष्यलोगो मैंने प्राचीन समय में उत्तम समाधि युक्त महाअसह्यतप कियाथा हे पुत्रो मैंने भक्तों की प्रीति से तुम्हारा पूछाहुआ यह प्रथम जन्म और होनेवाला वृत्तान्त तुमसे कहा, वैशम्पायन बोले हे राजा इस मृदुलचित्त अपने गुरु व्यासजी का प्रथम जन्म जो तैंने पूछाथा उसका वर्णन फिर भी सुनो, हे राजऋषि सांख्ययोग, पंचरात्रि, वेद, पाशुपत इत्यादि नानाप्रकारके मतोंको ज्ञान जानो, सांख्यशास्त्रके वर्णन करनेवाले कपिलमुनि हैं वह परमऋषि कहेजाते हैं वही पुरातन हिरण्यगर्भ योग के जाननेवालेहैं दूसरा नहीं है, वह उपान्तरात्मा ऋषि वेदोंके आचार्य कहेजाते हैं यहां कोई पुरुष उस ऋषि को प्राचीनगर्भ भी कहते हैं, ब्रह्माजी के पुत्र उमापति, भूतपति, श्रीकण्ठ सावधान शिवजीने इस पाशुपतज्ञानको वर्णन कियाहै, हे राजा सम्पूर्ण पंचरात्रि के जाननेवाले आप भगवान् नारायण हैं और इन सब ज्ञानियों के मध्य में, शास्त्र और अनुभवके अनुसार प्रभु नारायणही निष्ठारूप दिखाईदेतेहैं अर्थात् नारायणही सबके परमात्माहैं और जो पुरुष तमोगुणी हैं वह इसको अच्छी रीति से नहीं जानते हैं, शास्त्र बनानेवाले ज्ञानी पुरुष उसी नारायणऋषि को निष्ठा कहते हैं, और नारायण के सिवाय दूसरी निष्ठा नहीं है यह मेरा वचन है, सब पुरुषों में निस्सन्देह हरि सदैव निवास करते हैं और सन्देहसे भरेहुए कुतर्कना करनेवाले मनुष्यों में माधवजी निवास नहीं करते हैं, हे राजा जो मनुष्य क्रमानुसार पांच रात्रि के जाननेवाले और अनिच्छा भक्तहैं वहपरमेश्वर हरि में प्रवेशकरते हैं, सांख्य और योग यह दोनों शास्त्र सनातनहैं और सब वेदोंसमेत ऋषियों सेभी प्राचीन विश्वनारायण रूप कहेजाते हैं अर्थात् वह नारायण अद्वितीयहै, सब लोकों में जो कुछ वेदोक्त शुभाशुभकर्म वर्त्तमान होताहै वह सब स्वर्ग अंतरिक्ष पृथ्वी और जल में उसी नारायण ऋषि से उत्पन्न होताहै अर्थात् सबको कर्म में प्रवृत्त करनेवाला अन्तर्यामी वही नारायणहै ७४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेशतोपरिपंचसप्ततितमोऽध्यायः १७५ ॥

एकसौ छिहत्तरका अध्याय ॥

जनमेजय ने प्रश्न किया कि हे ब्रह्मन् बहुतसे पुरुष हैं अथवा एकही पुरुष है यहां कौन पुरुष उत्तम है और कौन उत्पत्तिस्थान कहाजाताहै, वैशम्पायन बोले कि हे राजा जनमेजय लोकव्यवहार में बहुत पुरुषहैं और सांख्ययोगके

विचार में एकही है उस एक पुरुष को नहीं जानते हैं, जिसप्रकार बहुत से प्रतिबिम्बों का उत्पत्तिस्थान एकही बिम्ब होता है उसीप्रकार हमलोगों का उत्पत्तिस्थान इस पुरीरूप शरीर में निवास करनेवाले गुणों से परे नारायण को वर्णन करताहूं—श्रीगुरु व्यासजी को नमस्कार करके कहताहूं कि उत्तम ऋषि से विचार कियाहुआ यह पुरुष शूक्त सब वेदों में सत्य और पूजन के योग्य प्रसिद्ध हुआ, हे भरतवंशी कपिलादि ऋषियों ने वेदान्त विचार में नियत होकर योग्यायोग्य और विधि निषेध के साथ शास्त्रों को वर्णन किया, व्यास गुरूने जो सूक्ष्मके साथ पुरुषकी ऐक्यता वर्णनकीहै मैं उसको अपने महात्मा गुरू की कृपा से वर्णन करता हूं हे राजा इस स्थान पर इस प्राचीन इतिहास को कहते हैं जिस में ब्रह्माजी और शिवजी के प्रश्नोत्तर हैं, हे राजेन्द्र क्षीर समुद्र में सुवर्ण के समान प्रकाशित वैजयन्त नाम से प्रसिद्ध एक उत्तम पर्वत है वहां वेदान्त गति को विचारते अकेले देवता ब्रह्माजी सदैव विराट् भवनके समीप उसी वैजयन्त पर्व्वतको सेवन करतेथे, दैवयोगसे वहांपर बुद्धिमान चतुर्मुख ब्रह्माजीके ललाटसे उत्पन्न पुत्र शिवजीभी आपहुंचे, और प्रसन्नमन होकर शिवजीके सन्मुखहुए और दोनों चरणोंको प्रणाम किया तब अकेले प्रभु ब्रह्मा प्रजापतिने उननमस्कार करते हुए शिवजीको देखकर हाथोंसे ऊपरको उठाया और बहुतकालमें मिले हुए अपनेपुत्र शिवजीसे बोले कि हे महाबाहो तुम आनन्दसे आये और मेरे प्रारब्धसे यहां आयेहो हे पुत्र सदैव तुम्हारे वेदपाठ और तपस्यामें निर्विघ्नता है, तुम सदैव उग्रतप करनेवालेहो इसकारण फिर तुमसे पूछताहूं, शिवजी बोले कि हे भगवन् आपकी कृपासे मेरे वेदपाठ और जप तपकी कुशलता पूर्वक वृद्धिहै और सब जगत् की कुशलहै, बहुत काल हुआ कि मैंने आप भगवान्को विराट् भवनमें देखाथा इसीकारण मैं आपके चरणोंसे सेवित इस पर्व्वतपर आया हूं हे पितामह आपकी मुलाकातहुई मुझकोभी आपके दर्शनों की बड़ी अभिलाषा थी और हे तात वह श्रेष्ठ भवन कौनसा है जोक्षुधा तृषा से रहित देवता असुर औरतेजस्वी ऋषियोंसे सेवितहै और गंधर्व अप्सराओं से भी शोभितहै अकेले आपने इसउत्तम पर्वतको छोड़कर इसभवनको सेवन किया, ब्रह्माजी बोले इसपर्व्वतोंमें श्रेष्ठ वैजयन्त नाम पर्व्वतको मैं सदैवसेवन करताहूं यहां मैं एकाग्र मनसे विराट् पुरुषका ध्यान करताहूं, रुद्रजी बोले कि हे ब्राह्मण स्वतः उत्पन्न होनेवाले तुमने बहुतसे पुरुषोंको उत्पन्न किया और अब भी करतेहो सो हे ब्रह्मन् वह विराट् पुरुष अकेलाहै सो कौनहै जिसको तुम ध्यान किया करतेहो आप इसमेरे संदेहको दूर करिये मुझे इसके जानने की बड़ी इच्छाहै, ब्रह्माजी बोले हे पुत्र तत्त्वोंसे संघातरूप अनेक पुरुषहैं जो

तुमने अच्छीरीतिसे वर्णन किये इससंघातको उल्लंघन करनेवाला पुरुष इस प्रकारसे दर्शनके योग्य नहींहै उस अकेले पुरुषके अधिष्ठानको मैं तुमसे कहताहूं जैसे कि बहुतसे पुरुषोंका उत्पत्ति स्थान एकही कहाजाताहै, उसीप्रकार ज्ञानीपुरुष निर्गुण होकर उस विश्वरूपपरम सूत्रात्मा वृद्धोंको वृद्ध निर्गुण अनिरुद्ध प्रद्युम्न संकर्षण वासुदेव नाम रखनेवाले सनातन निर्गुण ब्रह्म में प्रवेश करते हैं २७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेशतोपरिषट्सप्ततितमोऽध्यायः १७६ ॥

एकसौ सतहत्तरका अध्याय ॥

ब्रह्माजी बोले हे पुत्र जैसे यहन्यूनता रहित अविनाशी सनातन पुरुष सब स्थानोंमें वर्त्तमान कहाजाताहै और देखाजाताहै वह पुरुषहमसे तुमसे और अन्य पुरुषोंसे जो बुद्धि इन्द्री युक्त वा शमदमादि गुणोंसे रहितहैं दर्शनकरने के अयोग्य है वह विश्वात्मा केवल ज्ञानीसेही देखनेमें आता है, तीनों देहों से पृथक् यह पुरुष सब शरीरोंमें निवास करताहै और शरीरों में बसता हुआ भी कर्मोंमें प्रवृत्त नहीं होताहै, वही मेरा और तेरा अन्तरात्मा है और दूसरे शरीरवान् हैं उनसबका साक्षीहै तोभी वह कहीं किसी से पकड़ने के योग्य नहीं है,--यही विश्वरूपहै इसको कहते हैं—विश्वही उसका मस्तक भुजा चरण नाक आंख आदि हैं वह अपनी इच्छासे कर्म कर्त्ता है सब शरीरों में सुख पूर्वक घूमताहै, सब शरीरक्षेत्रहैं और अच्छे बुरे कर्म बीजरूपहैं वह योगात्मा उनको जानताहै इसीसे क्षेत्रज्ञ कहाता है, जीवों में किसी से उसकी ऊर्द्ध वा दिव्ययान आदिकी गतिजानी नहीं जासक्तीहै मैं सांख्ययोगसे क्रमपूर्वक उसकी गतिको विचारताहूं परन्तु उसकी उत्तम गतिको नहीं जानताहूं तोभी ज्ञानकेअनुसारसनातन पुरुषको वर्णन करताहूं और एकता औरबुद्धिमत्ताको भी कहताहूं—जो अकेला पुरुषकहा जाताहै वही सनातन अकेला पुरुष महा पुरुष कहलाताहै एकही अग्नि अनेक प्रकारसे वृद्धि पाता है एकही सूर्य्य सर्वत्र प्रकाश करता है तपका उत्पत्तिस्थान एकही है लोकमें एकही वायु अनेकप्रकारसे चलताहै और जलोंकाभी उत्पत्ति स्थान केवल एकसमुद्रहै और पुरुषभी अकेला निर्गुण और सगुणहै उसीनिर्गुण पुरुषमें सब प्रवेशकरते हैं सब देह इन्द्री अहंकार रूपगुणों को छोड़ शुभाशुभ कर्मों को त्यागकर अविनाशी जीव और प्रधानभोक्ता भोगको त्यागकरके निर्गुण होता है, जो पुरुष गुरु से जताये हुए मनसेपरे परमात्मा को जानकर अर्थात् साक्षात्कार करके सूक्ष्म विभागरूप अनिरुद्ध प्रद्युम्न,संकर्षण, वासुदेव अथवा अधिदेव विराट् सूत्रात्मा अंतर्य्यामी शुद्धब्रह्मया अध्यात्म विश्वतैजस प्राग इन सब में कर्म

करनेवाला होता है अर्थात् सूक्ष्म स्थूल लयके क्रमसे सदैव समाधि को अधिष्ठान करताहै वह बड़ा शांतहै और वहीउस शुभपुरुष को प्राप्तकरताहै, इसप्रकारकोई पंडित वा योगी परमात्माको चाहतेहैं, उसस्थानपर जो परमात्मा है वह सदैव निर्गुण कहाताहै वही सबका आत्मापुरुष नारायण जानने के योग्यहै वह कर्मोंके फलसे भी कभी संबंध नहींरखता जैसे कि जलसे कमल का पत्ता स्पर्श नहीं करता, कर्मकर्त्ता दूसरा पुरुष है जो कि मोक्ष बंधनों से संयुक्त होताहै वह तत्त्वोंके समूह लिंगशरीर से संयुक्त होते हैं इस प्रकार वह उपाधि युक्त जीवात्मा कर्मोंके विभागसे देवमनुष्यादिके रूपोंको प्राप्तकरनेवाला पुरुष क्रम पूर्वक बहुत प्रकारका तुम से कहाहै जो वहपुरुष संपूर्ण लोक मंत्रकाप्रकाशक चैतन्य ज्योतिरूपहै वही जाननेके योग्यउत्तम समझने वालाजीवहै वही सब इन्द्रियों के विषयों का भोगनेवाला जानने के योग्य है हे तात जिसको सगुण निर्गुणऔरप्रधान पुरुषभी कहतेहैं,वहप्रधान पुरुष सदैव रहनेवाला आदि अंतरहित रूपान्तर दशासे हीन और धातासे प्रथम महत्तत्त्वको उत्पन्न करताहै-वेदपाठी ब्राह्मण उसको अहंकार रूप अनिरुद्धकहतेहैं जोकि लोकमें वैदिककर्मोंका अधिष्ठातादेवताहै वही इच्छाकिया जाता है उसीका ध्यान करना उचितहै अच्छे शांतरूप सबमुनि सावकाश के समय कर्मयज्ञ और उस यज्ञभोक्ताको समझते हैं अर्थात् यहकहते हैं कि इस अग्निहोत्रसे वह अनिरुद्धका आत्मा वासुदेव प्रसन्नहो मैं संसार का आदि ईश्वर ब्रह्मा उससे उत्पन्न हुआ और तुम मुझ से प्रकट हुए, हे पुत्र मुझसेही जड़ चैतन्य जगत् और सबवेद रहस्यों समेत प्रकटहुए, चाररूपोंमें विभाग होनेवाला वह पुरुष क्रीड़ा करता है जैसा चाहताहै वैसाही वह षड़ैश्वर्य्य का स्वामी अपने द्वैत ज्ञानसे सावधान होता है अर्थात् वह वासुदेव उपाधि युक्तहोकर चारप्रकारका होता है और अंत में अपने अखण्ड स्वरूप के ज्ञानसे जीवभाव को त्यागकर वासुदेवही होता है, हे पुत्र यह मैंने तेरे पूछनेसे भक्ति और भक्तिजन्य ज्ञान और ज्ञानसे प्राप्तहोने वाला मोक्ष जो कि सांख्यज्ञान और योगशास्त्र में निश्चय किया गया है मूल समेत वर्णन किया २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिसप्तसप्ततितमोऽध्यायः १७७ ॥

एकसौअठहत्तरका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि यद्यपि सुलभा और राजा जनकके संवाद में संन्यास धर्मको उत्तम कहा तथापि सुखसे प्राप्त होनेवाला श्रेष्ठ आश्रम कौनहै और इस ज्ञानकी इच्छासे प्रश्न कियेहुए मोक्षधर्म से संबंध रखनेवाले पितामह

ब्रह्माने जो शिवजीसे वर्णनकिया वह आश्रमियोंके मध्यमें उत्तम धर्म आप कृपाकरके वर्णनकीजिये भीष्मजी बोले कि सब आश्रमियोंमें वह धर्म विचार कियागयाहै जोकि स्वर्ग और मोक्षनाम बड़े फलका देनेवाला है इसलोक में यज्ञदान आदि बहुतसेद्वार रखनेवाले धर्मके कर्मनिष्फल नहीं हैं हे भरतर्षभ जो पुरुष जिस २ आश्रम धर्म में पूरे निश्चयको पाता है वह उसी को जानता है दूसरे को नहीं जानताहै, इसदशा में न्याय पूर्व्वक धन प्राप्त करनेवाले गृहस्थाश्रम की उत्तमता सिद्ध करने को उंछवृत्तीवाले ब्राह्मण का इतिहास प्रारंभ करते हैं, हे नरोत्तम पूर्वसमय में श्रीनारद महर्षि से इन्द्र के सन्मुख वर्णन कीहुई यह कथा मैं तुम से कहताहूं, कि तीनों लोकोंका अभीष्ट सिद्ध करनेवाले वायु के समान वेरोक शुद्ध नारदजी क्रम पूर्वक लोकों में भ्रमण करते थे, वहनारदजी घूमतेहुएकभी इन्द्रलोककोगये और वहां इन्द्रने उनकी उत्तम प्रतिष्ठा करके श्रेष्ठआसनपर विराजमान किया और यह पूछा कि हे निष्पाप महर्षि आपने कोई अद्भुतताभी देखी है,आप नाना प्रकारके अद्भुत कौतूहलों को देखतेहुए तीनों लोकों में आनन्दसे विचरते रहते हो ऐसी कोई बात नहीं है जो आपको विदित न हो चाहै आपने सुनाहो वा अनुभव कियाहो अथवा देखाहो मुझको आपके मुख से सुनने की बड़ी अभिलाषा है हे युधिष्ठिर तबतो नारदजी ने इस बड़े इतिहास को इन्द्र से वर्णन किया सो जैसे नारदजी ने इन्द्र के पूछने पर कथा को कहा वैसेही तुम्हारे पूछने पर मैं तुम से कहता हूं ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिअष्टसप्ततितमोऽध्यायः १७८ ॥

एकसौ उनासीका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे नरोत्तम गंगाजी के दक्षिण तटपर महापद्मनाम उत्तम नगरमें कोई सावधान तपस्वी ब्राह्मण था, जो कि सौम्य और अत्रिगोत्रवाले वेद मार्ग जानने में संशय रहित सदैव धर्मिष्ठक्रोध और इन्द्रीजित तप वेदपाठ अथवा जप में प्रीति करनेवाला सत्यवक्ता सज्जन न्यायसे उपार्जित धन और अपने शील स्वभाव युक्त बहुतसे सजातीय कुटुम्बी लोगों से युक्त ब्रह्मचर्य्य आश्रम के समान प्रसिद्ध बड़ा कुलीन श्रेष्ठवृत्ती में नियत था, वह अपने बहुतसे पुत्रोंको देखकर महाकर्म में नियत कुलधर्मी अपनी धर्मचर्य्या में उपस्थितहुआ, फिर वह ब्राह्मण वेद और शास्त्र के लिखेहुए उत्तम लोगों के अनुभूत तीन प्रकारके धर्मको मन से विचारकर, सदैव ऐसा दुःख पाताथा कि कैसे मेरा बेड़ापारहो ऐसा कौनसा कर्म और स्थान है जिसका सेवनकरूं किसी बातमें पूरा निश्चय नहीं होता था, एक समय कोई बड़ा सावधान अ-

तिथि ब्राह्मण जोकि उत्तमधर्मका ज्ञाताथा उसदुःखी ब्राह्मण के समीप आया उसने बड़ी भक्तिसे उसका शिष्टाचार किया और उनको प्रसन्नकर आनंद से बैठाकर यह वचन कहा ६२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिएकोनाशीतितमोऽध्याय १७९ ॥

एकसौ अस्सीका अध्याय ॥

ब्राह्मण ने कहा हे निष्पाप मैं तेरेमीठे वचनों से तेरेवशमें हूं तुममेरे मित्र हो अब मैं जो कुछ कहूं उसको सुनो हे वेदपाठियों में उत्तम मैं गृहस्थआश्रम को अपने पुत्र के आधीन करके मोक्षधर्म में प्रवृत्तहोना चाहता हूं आप मुझ को वह मार्ग बताइये, मैं अकेलाही आत्माका आलंबनकर आत्मामें नियत होकर संन्यास आश्रमको धारण किया चाहताहूं परंतु इंद्रियों के जालमें फँसे हुए होने से उसको नहीं चाहताहूं जबतक पुत्रके स्नेह कर्म में फँसकर मेरी अवस्था व्यतीतहो तबतक परलोक संबंधी पाथेय अर्थात् परलोक के मार्गका भोजनादि पदार्थ प्राप्त किया चाहता हूं, इस ब्रह्माण्डके बीच मुझ संसार से पार उतरनेवाले का विचार हुआ है कि धर्मरूप नौका किस आश्रम में है संसारमें देवताओं को कर्म में प्रवृत्त और पीड़ामान विचारता सृष्टि में ऐसे फैले हुए रोगों को जोकि यमराजकी पताकाके दण्डरूप हैं देखताहूं और भोजन के समय संन्यासियों को दूसरे के घरमें भिक्षा मांगनेवाला देखकर इस संन्यास धर्म में भी प्रवृत्त नहीं होताहूं हे अतिथि इसी कारण बुद्धिबल में नियत धर्म के द्वारा मुझको धर्म में प्रवृत्तकरो उसज्ञानीअतिथि ने उसधर्मका वर्णन करनेवाले ब्राह्मण के वचनको सुनकर बड़ी मधुरतासे इस स्वच्छ वचन को कहा कि इसस्थानपर मैं भी मोहको पाताहूं मेराभी यही मनोरथ है कि अनेक द्वारयुक्त स्वर्ग होनेपरपूरे निश्चयको नहींपाताहूं कोईमोक्षकी प्रशंसा करते हैं कोईयज्ञके फलको उत्तम कहते हैं कोई वानप्रस्थ धर्म में कोई गृहस्थाश्रम में नियत हैं कोई राजधर्म संबंधी धर्मको कोई आत्मफल संबंधी धर्मको कोई गुरुधर्म संबंधी कर्मको कोई शांतचित्तीयधर्मको और कोई मातापिताको सेवन करतेहुए स्वर्गकोगये कोई हिंसारहित सत्यताकेद्वारा स्वर्गको गये,कोई युद्धमें लड़कर मरनेवाले स्वर्गकोगये कोई पुरुष उंछवृत्तीसे शुद्ध कोईपुरुष स्वर्ग मार्गमें प्रवृत्त कोई वेदपाठी वेदव्रतमें नियत बुद्धिमान् तृप्त आत्मा जितेंद्री उत्तम पुरुष स्वर्ग को गये शुद्धस्वभाव शुद्ध अन्तःकरण प्रतिष्ठावान् सत्यवादी और ऐसे भी मनुष्य जो कुटिल पुरुषों के हाथसे मारेगये स्वर्ग में आनन्द करतेहैं इसप्रकार बहुत प्रकार के लोकों और धर्मके बड़े २ द्वारोंसे मेरीभी बुद्धि ऐसी व्याकुल हुई है जैसे वायुसे बादल अस्तव्यस्त होजाते हैं १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिअशीतितमोऽध्यायः १८० ॥

एकसौ इक्यासी का अध्याय ॥

अतिथिने कहा कि हे ब्राह्मण जैसा मेरेगुरूने उपदेश किया है वैसाही मैं तुमसे वर्णन करताहूं प्रथम अर्थ तत्त्वको कहता हूं उत्पत्तिके समय में जिस नैमिषारण्य क्षेत्रके गोमती के तटपर धर्मचक्र वर्त्तमानहुआ वहां नागाह्वय नाम एक नगरथा जहां राजाओं में श्रेष्ठ मान्धाताने यज्ञकरके इन्द्रको विजय किया अथवा स्वाधीन कियाथा वहांपर पद्मनाभ नागनाम से प्रसिद्ध महाभाग धर्मात्मा सर्प निवास करता है हे विप्रेन्द्र कर्म उपासना ज्ञान इन तीन प्रकारके ज्ञान में प्रवृत्तहोकर वह सर्प मनवाणी कर्म से सबजीवों को प्रसन्न करता है और साम दाम दण्ड भेद इन चारप्रकारके नीति विचार से अर्थ के मूलको जानकर कुटिलता रहित सत्यताको प्रतिपालन करता है अर्थातसत्य वक्ताको अभय और दुष्टको दण्ड देताहै तुम उसके समीप जाकर अपनेप्रयोजनका प्रश्न बुद्धिके अनुसार उससे कहनेको योग्यहो वह सत्यवक्ताधर्मात्मा अतिथियोंका पूजन करनेवाला नागवुद्धि और शास्त्र में कुशल सर्वज्ञ और अनेक गुणोंसे पूर्ण है और स्वभावसे सदैव जलके समान निर्मल अहर्निश जपमें प्रवृत्त तप और शान्ति से शोभित श्रेष्ठ आचरणवान् ईश्वरका पूजन करनेवाला महादानी सन्तोषरूपी उत्तम व्रतमें नियत सत्यवक्ता किसीके गुण में दोष न लगानेवाला जितेन्द्री और प्रसन्न चित्त है, देवता पितृ आदि से शेष अन्नादि भोजनका करनेवाला सबसे प्रियभाषी उपकार और सत्यता संयुक्त दूसरे के शुभाशुभ कर्मोंका जाननेवाला शत्रुतारहित दूसरेके अभीष्टमें प्रवृत्त गंगाजलके समान शुद्ध कुलवालाहै ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिएकाशीतितमोऽध्यायः १८१ ॥

एकसौ बयासीका अध्याय ॥

ब्राह्मणबोला कि मैंने आपसे दूसरे का निश्चय और दृढ़ता करानेवाला वचन सुना यह ऐसा है जैसे कि किसी भारधरेहुये मनुष्यका भार उतारलेना और मार्ग में किसी थकेहुए का सोरहना अथवा थकेहुए को आसन देना प्यासेको जल और भूखेको अन्नका देना होता है, समयपर भूखे अतिथिको मनमाना भोजन मिलना और जैसा वृद्धपुरुषकापुत्र प्रसन्नताका देनेवाला होताहै अथवा जैसे मन से विचार कियेहुए की प्रीति और मित्रका दर्शन आनन्ददायक होताहै उसीप्रकार आपने जो वचन कहे वहमुझको अत्यंत प्रसन्नताके देनेवाले हैं, अब तुमने विज्ञान वचन से जो यह उपदेश मुझको किया उसको मैं आकाश में दृष्टि करनेवाले के समान देखता और शोचता

हूं हे साधो आप आनन्द पूर्वक निवास करके प्रातःकाल जानेका विचार करियेगा आजकी रात्रि मेरेसाथ में सुखपूर्वक निवासकरो और जैसी आपने आज्ञाकी है वैसाही मैं करूंगा इससमय सूर्यनारायण अस्तंगत होनेवाले हैं, भीष्मजी बोले हे शत्रुहंता तब वह अतिथि उसके शिष्टाचार को पाकर रात्रि भर उसीके समीपरहा और आनन्द से चौथे धर्मका वर्णन करतेहुए दोनों ने जब वह रात्रि व्यतीतकी तब प्रातःकाल होतेही ब्राह्मणने उस अतिथिको अपनी सामर्थ्य के अनुसार पूजा तदनन्तर वह कर्म का निश्चय करनेवाला अपने भाई बेटेस्त्री आदिसे पूछकर शुभकर्म में निश्चय करनेवाला ब्राह्मण अतिथि के बतायेहुये उस सर्पराज के स्थानको चला ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेशतोपरिद्व्यशीतितमोऽध्यायः १८२ ॥

एकसौ तिरासीका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि वह ब्राह्मण अपने स्थान से चलकर मार्ग के अनेक विचित्र वन पर्व्वत तीर्थ नदी सरोवरोंको देखताहुआ चला २ किसी मुनिके पास पहुँचा तो उस ब्राह्मणने उस अतिथिके बताये हुए नागके स्थानको उस मुनिसे पूछातो वह इसके वचनको सुनतेही चल दिया, उसअर्थके जाननेवाले ब्राह्मणने नागके स्थानपर पहुंचकर हे अमुकनाग ऐसा सुन्दर वचन कहा कि मैं अमुक ब्राह्मणहूं इसके इस वचनको सुनतेही धर्मचारिणी पतिव्रता नागपत्नीने आकर उसब्राह्मणको दर्शन दिया और सुन्दर व्रतमें प्रवृत्त उसनागकी पत्नीने बुद्धिकेअनुसार धर्म्म पूर्व्वक उसब्राह्मणका सत्कार पूर्व्वक पूजन किया और कुशल मंगल पूछकर बोली कि क्या आज्ञा है, ब्राह्मणने कहा कि मैं तेरे इस स्वच्छ पवित्र सुन्दर वचनों से ही आनन्द युक्त होकर उस उत्तम नाग देवता का दर्शन करना चाहताहूं यही मेरा प्रथम उत्तम कार्य्य है इसीमें मेरेमनकी परम इच्छाहै इसीप्रयोजनसे मैं सर्पराजके आश्रम को आया हूं, नागकी भार्य्या बोली हे ब्राह्मण वह मेरा पति चारमहीने से सूर्य्य देवता का रथ धारण करनेको गयाहै सो तुमको निस्सन्देह पन्द्रह दिन पीछे दर्शन देगा मैंने अपने पतिके परदेश जानेका यह कारण तुमसे वर्णन किया इसके सिवाय जो आपकी आज्ञा सेवाहो उसको हमसे कहिये वही हमकरें, ब्राह्मणने कहा हे साध्वी देवी मैं उसीसे मिलनेको आयाहूं और उस नागराज की बाटदेखता हुआ इस महावन में निवास करूंगा तुम मेरी यह प्रार्थना नागराज से कहने के योग्यहो कि मेरे संग स्नेहकरे, मैंभी सामान्य आहार करनेवाला उसके आने के समयतक गोमती के सुन्दर पुलिनमें उसकी बाट देखूंगा, तदनन्तर वह वेद पाठियों में श्रेष्ठ ब्राह्मण बारबार उसनाग

पत्नीको विश्वास देकर उक्तनदी के पुलिन अर्थात् रेतके टीलेपर गया १३ ॥
इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेशते. परित्र्यशीतितमोऽध्यायः १८३ ॥

एकसौचौरासीका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे नरोत्तम तब वह सर्पिणी उसतपस्वी ब्राह्मणके निराहार निवासकरने से महादुःखित हुई और उस नागके भाई बन्धु बेटे आदिभी सब इकट्ठे होकर उस ब्राह्मण के पासगये और उस नदी के रेतमें निराहार निवास करते हुए जपमें प्रवृत्त उस ब्राह्मणको बैठाहुआ देखा, अतिथि पूजनमें कुशल सर्पराज के सब भाईबंधु वहां उस ब्राह्मण का बारंबार पूजन करके यह शुभ वचन बोले कि हे तपोधन यहां तुमको आये हुए छःदिन व्यतीतहोगये हे धर्मवत्सल तुम अपने भोजनके विषयमें कुछ नहीं कहतेहो तुम हमारेपास आयेहो और हम आपके सन्मुख वर्त्तमान हैं और हमको आपका अतिथि पूजन करना उचित है क्योंकि हमसब कुटुम्बी हैं, हे द्विजन्माओं में श्रेष्ठ-ब्राह्मण तुम आहारके निमित्त मूल फल पत्र दूध अन्नआदि भोजन करने को योग्यहो, हे बनमें निवासी आहार त्यागनेवाले आपके कारण धर्मसुनने के हेतुसे यह सब बालक और वृद्ध पीड़ापारहेहैं, हमारे इसकुलमें कोईभी गृहस्थी ब्रह्महत्या करनेवाला मिथ्यावादी नहीं है और देवता अतिथि बांधवोंसे पहले भोजन करनेवाला भी कोई नहीं है, ब्राह्मण बोला कि मैंने तुम्हारे कहने से यह आहार का वचन किया कि नागके आनेमें आठदिन बाकी हैं, जो आठ रात्रिके व्यतीत होनेपर वह सर्प नहीं आवेगा तब आहारकरलूंगा यहउसी के निमित्त मेराव्रतहै, शोच न करनाचाहिये जैसे आयेहो वैसेहीचलेजाओ उसके निमित्त इस मेरे व्रतको तुम खंडित करने के योग्य नहींहो, हे नरोत्तम तब उस ब्राह्मणकी आज्ञापाकर अपने मनोरथ प्राप्त किये विना वह सब सर्प अपने २ घरको आये १३ ॥
इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मे उत्तरार्द्धेशतोपरिचतुरशीतितमोऽध्यायः १८४॥

एकसौपचासीका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इसके अनन्तर बहुत तिथियुक्त समयके व्यतीत होने पर उस काम से निवृत्त हो सूर्य्य देवताकी आज्ञालेकर वह सर्प अपने स्थान पर आया, तब उसकी स्त्री चरण प्रक्षालनादि सेवा गुणयुक्त होकर उसके पास गई सर्प ने भी उस शुद्ध साध्वी स्त्री का बड़ा सत्कार करके पूछा, कि हे कल्याणिनि पूर्व्व कही हुई युक्ति संयुक्त बुद्धि से देवता अतिथि आदि के पूजन में नियत हो क्योंकि वह कर्म तेरे योग्य है, हे सुन्दरी तुम स्त्री बुद्धि से प्रयोजन की सिद्धि करनेवाली होकर आलस्य से मेरे वियोग में

धर्म मर्य्यादासे पृथक्तो नहीं होगई, नागपत्नीबोली कि शिष्योंका धर्म गुरु की सेवाहै ब्राह्मणोंका धर्म वेदका पढ़नाहै नौकरोंका धर्मस्वामीकी आज्ञाका करनाहै राजाका धर्म प्रजाका पालनाहै, इसलोकमें सबजीवोंकी रक्षाकरना क्षत्रीका धर्म कहाजाताहै वैश्योंका धर्मअतिथि पूजन और यज्ञस्मृति है अर्थात् गौसेवाआदिहै शूद्रोंकाकर्म ब्राह्मणक्षत्री वैश्यकीसेवाहै हेनागेन्द्र गृहस्थीकाधर्म सबजीवोंकी वृद्धिको चाहनाहै, गृहस्थीको योग्यहै कि सामान्य भोजन करना और सदैव बुद्धिके अनुसार व्रतकरना मुख्यकर वहधर्म जो इन्द्रियोंके संबंधसे होताहै और यह समझना कि यहांमैं किसका हूं कहांसे आया और मेराकौनहै इसप्रकार सदैव मोक्षआश्रमके बीचबड़ेकाममें श्रेष्ठ बुद्धिका लगानेवालाहोवै और भार्य्याका उत्तम धर्मपतिव्रत कहाजाताहै हे नागेन्द्र मैं तेरे उपदेशसे उसको मुख्यता समेत जानतीहूं सोमैंधर्म को अच्छे प्रकार जानतीहुई तुझधर्म्मात्माके नियतहोते उत्तम मार्गको त्यागकर कैसे कुमार्गमें चलूंगी, हेमहाभाग देवताओंकी धर्मचर्य्या नाशनहीं होतीहै मैं आलस्यरहित होकर अतिथियोंके पूजन में सदैव प्रवृत्तहूं अब यहां आनेवाले ब्राह्मणको पन्द्रहदिन हुए उसने अपना प्रयोजन मुझसेनहीं प्रकटकिया और तेरे दर्शनको चाहताहै, तेरे दर्शनका अभिलाषी तीव्रव्रतधारी वह ब्राह्मण गोमतीके पुलिनमें वेदपाठ कररहाहै, हे नागेन्द्र मुझको उस ब्राह्मणने बड़ी सत्यतासे उपदेश कियाहै कि वहसर्प जबआवै तबमेरे समीप उसको भेजना उचितहै, हे महाज्ञानी सर्प तुमको इसवचनके सुनतेही वहां जाकर उसको दर्शनदेना अवश्यहै १६॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिपंचाशीतितमोऽध्यायः १८५॥

एकसौछियासीका अध्याय॥

नाग बोला हेपवित्र स्त्री तुम उसको ब्राह्मणरूपसे कौन जानतीहो केवल मनुष्य ब्राह्मण जानतीहो वा देवता समझतीहो हे यशस्विनी वहकौन मनुष्य मेरे दर्शनका अभिलाषी और समर्थहै और देखनेपर कौनसी आज्ञाके साथ वचनको कहेगा २ हे भामिनी निश्चय करके देवता असुर और देवऋषियों में नागलोग बड़ेपराक्रमी दिव्यगंध धारण करनेवाले और वेगवान् होतेहैं और वन्दनाके योग्यहोकर वरकोभी देनेवालेहैं और हमभी उनके समान अथवा उनके अनुगामीहैं वहनाग मुख्यकरके मनुष्योंको नहीं दर्शन देसक्के यह मेरामतहै, नागभार्य्या बोली हे वायुभक्षी महाक्रोधी मैं सत्यतासे जानती हूं कि देवता नहीं है इसके विषयमें इसप्रकार जानतीहूं कि वह भक्तपुरुष है और अपने निजकामका चाहनेवाला तेरे दर्शनको इस प्रकारसे चाहनेवाला

है जैसे कि स्वातिके जलकाप्यासा पपीहा वर्षनेवाले बादलकी बाटको देखे, वह तेरे दर्शनके कियेबिना किसी दुःखरूप विघ्नको नहीं मानताहै उत्तम कुलमें जन्म लेनेवाला कोई अन्यसर्पभी किसी अतिथिको त्यागकरके अपने घरमें नहींबैठरहताहै सोतुम देहजन्य क्रोधको त्यागकरके उसके देखने को योग्यहो अब उसके अभीष्ट नष्टकरनेसे तुम अपनेको नष्टमतकरो, राजा अथवा राजकुमार आशावान् अपने आश्रितोंके अश्रुपातन पोंछकर भ्रूणहत्या को प्राप्तहोता है मौनतासे ज्ञानकी प्राप्ति है और दानसे बड़ी शुभ कीर्त्ति होती है और सत्य बोलने से वाणी प्रसन्नहोती है और परलोक में प्रतिष्ठा होतीहै, भूमि दान करनेसे आश्रमके समान गतिको प्राप्तकरताहै और न्याय से धनसंचय करके उसके फलको भोगताहै, सबके अंगीकृत पक्षपात रहित अपनेहित करनेवाले धर्म को करके कोई भी नरकको नहीं जाताहै यहबातें धर्म की जानी हुई हैं, नाग बोला अहंकारादिक से मेरा क्रोध नहीं है मेरे उत्पत्ति दोषसे मुझको बड़ा क्रोधहै हे साध्वि तुमने अपने वचनरूप अग्नि से उस मेरे क्रोधको भस्म करदिया जो संकल्पसे उत्पन्नहुआथा, हे साध्वी मैं क्रोधसे अधिक कोई बुरादोष नहीं समझताहूं सर्पहीमें विशेष करके वह क्रोधरूप निन्दा होतीहै, इन्द्रसे ईर्षा करनेवाला वह महाप्रतापी रावण क्रोधके वशीभूत होकर रामचन्द्रजीके हाथ से मारागया, राजा कार्त्तिवीर्य्य के पुत्रादिक महलों से बछड़ों को परशुराम करके लेजाना सुनकर अपने क्रोध से व्याकुलहोकर मारेगये इन्द्रकी समानता रखनेवाला महापराक्रमी कार्त्तिवीर्य्य जिसका दूसरानाम सहस्रार्जुन भी है वह भी क्रोधकेही कारण जमदग्निजी के पुत्र परशुरामजी के हाथसे मारागया, मैंने तेरे वचनको सुनकर यह तप और अनेक कल्याणों का नाश करनेवाला क्रोध अपने स्वाधीन किया, हे विशालाक्षी मैं अधिकतर अपनी प्रशंसा करताहूं उसी मुझ अवगुणी सर्प की तुमगुणवान् भार्य्याहो, मैं वहीं जाताहूं जहां वह ब्राह्मण नियतहै और सब प्रकारसे यहीवचन नागिन से कहा कि वह ब्राह्मण अपने मनोरथको प्राप्त करके ही जायगा॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धे शतोपरिषष्ठाधिकाशीतितमोऽध्यायः १८६॥

एकसौ सत्तासीका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि वह सर्प उसीब्राह्मण को मनसे ध्यान करता हुआ उसके मनोरथको विचारता अपनी सर्पगतिसे उस ब्राह्मणके पास पहुंचा हे राजा स्वभावसे धर्मवत्सल बुद्धिमान् वह नागेन्द्र उसके समीप पहुँचकर यह मीठे वचन बोला कि हे ब्राह्मण मैं तुमको सन्मुख करके कहताहूं कि तुमको

क्रोध करना योग्य नहीं है यहां किसहेतुसे आये और क्या आपका प्रयोजन है, हे ब्राह्मणोत्तम मैं सन्मुख से समीप होकर प्रीति के साथ तुम से पूछताहूं कि तुम इस एकान्तस्थान में गोमती के रेतपर किसकी उपासना करते हो, ब्राह्मण ने कहा कि पद्मनाभ सर्प के दर्शन करने को यहां मुझे आये हुएको धर्मारण्यनाम उत्तम ब्राह्मण जानो मेरा प्रयोजन उसीसे है, मैंने उसको यहां से सूर्यलोक में जाना सुना है उसी अपने सुजन मित्रकी बाट ऐसे देखरहा हूं जैसे कि खेती करनेवाले पर्जन्य नाम वर्षा के देवता बादल को देखते हैं, योगसंयुक्त सब दोषोंसे रहित होकर मैं उस वेदको पढ़ताहूं जो कि दुःखों का दूरकरनेवाला और कल्याणों से भराहुआ है, नाग बोला कि बड़ा आश्चर्य है कि तुमसाधु और मित्रवत्सल कल्याणरूप चलन रखनेवालेहो हे महाभाग निन्दा से रहित तुम दूसरे को कृपादृष्टि से देखतेहो, हे ब्रह्मर्षि मैं वही नागहूं जैसा कि आप मुझको जानतेहो तुम अपनी इच्छानुसार आज्ञाकरो आपका क्या अभीष्ट करूं हे श्रेष्ठ ब्राह्मण मैंने अपनी स्त्री आदिसे आपका आगमन सुना है इसकारण मैं तुम्हारे दर्शनों को आयाहूं अब आप मुझको मिलेहो अपने मनोरथको सिद्ध करके जाओगे हे विश्वासयोग्य उत्तमब्राह्मण आप अपने अभीष्ट को मुझसे कहने को योग्यहैं वास्तव में हम सब आपके गुणों से बिकेहुएहैं इसहेतुसे कि आप अपने हितको छोड़कर मेरा भी भलाचाहते हैं, ब्राह्मणने कहा हे महाभाग सर्प मैं तेरे दर्शनकी अभिलाषा करके आयाहूं और प्रयोजनका न जाननेवाला मैं किसी अभीष्ट के पूछने को तुम्हारे पास आयाहूं, हे महाभाग ज्ञानी मैं बिषयोंसे रहित आत्मामें नियत होकर जीवोंके लयस्थान ब्रह्मको निश्चय करताहुआभी चलायमान चित्तहूं, तुमअपनेउन उत्तम गुणोंसे प्रकाशमानहो जोकि कीर्त्तिरूपकिरणोंसेयुक्त चन्द्रमाके समान आत्मा से प्रकाशितहैं, हे सर्प मुझ पूछनेवाले के जोजो प्रश्नहैं उनका तुम उत्तरदो फिरमैं अपने प्रयोजनकोभी कहूंगा आपउनके सुननेके योग्यहैं१६॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिसप्ताधिकाशीतितमोऽध्यायः १८७॥

एकसौ अठासीका अध्याय॥

ब्राह्मण ने कहा कि आप समय पर सावधानी से सूर्य्य का वह रथ धारण करने को जाते हो जिसमें एकचक्र है आपने जो कुछ वहां आश्चर्य्य नवीन देखाहो उसके कहनेको योग्यहो, नागने कहा कि भगवान् सूर्य्य देवता बड़ेआश्चर्यों के निवासस्थान हैं तीनों लोकों के अब अभीष्टतत्त्व उसी से प्रकट होते हैं, अच्छे २ सिद्धमुनि देवता आदि जिसकी हजारों किरणों में आश्रितहोकर ऐसे निवासकरतेहैं जैसे कि इसलोकके पक्षीवृक्षकी शाखा-

ओंपर विश्राम करतेहैं, सूर्य्यमें नियत जिस बड़े भारी तेजसे अति प्रबल वायु निकलकर उसी सूर्य्यकी किरणोंमें नियतहोताहै और आकाशमें जंभाई लेता है तबबड़ा आश्चर्य होताहै, हेब्रह्मऋषि वह सूर्य्यदेवता संसारकी वृद्धिकेलिये उस वायुका रूपांतर करके वर्षाऋतुमें जलको उत्पन्न करताहै इससे अधिक कौनसा आश्चर्य है उसीके मंडलमें उत्तम तेजरूपसे नियत होकर महा प्रकाशमान अंतर्यामी परमात्मा लोकोंको देखताहै यह भी बड़ाआश्चर्य्यहै, जो देवता आठमहीनेतक अपनी पवित्र किरणों से संयुक्त होनेवाले जलको समयपर वर्षताहै इससे अधिक और आश्चर्य क्या है, जिसके प्रकाश समूहमें आप आत्मा नियत है उसीकी कृपासे यहपृथ्वी जड़ चैतन्य समेत सब औषधियों को धारण करती है, हे ब्राह्मण जिस सूर्य देवतामें महाबाहु आदि अंत रहित सनातन देवता पुरुषोत्तम नियत है इससे अधिक आश्चर्य्य क्याहै, यह एकबात आश्चर्य्य का भी आश्चर्य्य है जिसको कि तैंने निर्मल आकाश में सूर्य्यके द्वारादेखाहै उसको मैं तुमसे कहताहूं मध्याह्नके समय संसारमें सूर्यके प्रकाशमान होनेपर एक प्रकाश सूर्य्यके भीतर ऐसा तेजस्वी दिखाईदिया जो अपने तेजके प्रकाशसे सब लोकोंको प्रकाशित करता आकाश को पूर्णकरके सूर्य्यदेवताके सन्मुख जाताथा, जिसप्रकार आहुति संयुक्त अग्निप्रकाशमान होताहै उसी प्रकार अपने तेजकी किरणों से लोकोंको व्याप्त करके वार्णीसेपरे दूसरेसूर्य्य रूपके समानथा,उसकेसन्मुख आनेसे सूर्य्य देवताने दोनों हाथदिये फिर उसपूजन के इच्छा करनेवालेने भी अपना दक्षिण हाथ दिया, १५ और आकाशको चीरकर किरणोंके मंडलमें प्रवेश किया और क्षणमात्र में ही वह तेज एकहोगया और सूर्य्य के रूपको प्राप्तकिया फिर दोनों तेजों के मिलजाने पर हमको यह संदेह उत्पन्नहुआ कि इन दोनोंमें वह सूर्य्य कौनसा है जो रथ में नियत होकर वर्त्तमान है हम सबने संदेहमें प्रवृत्त होकर सूर्य्य देवतासेही पूछा कि यह कौनपुरुष है जो आकाशको उल्लंघन करके दूसरे सूर्य्य के समानगया है १८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेशतोपरि अष्टाशीतितमोऽध्यायः १८८ ॥

एकसौ नवासीका अध्याय ॥

सूर्य्यदेवताने उत्तर दिया कि यह नतो अग्नि देवताहै न कोई असुर गन्धर्व है यह उंछवृत्ती सिद्धमुनि स्वर्गको गया है, यहब्राह्मण मूल फल का आहार करनेवाला सूखेपत्तों का खानेवाला वा पूजन करनेवाला सावधानथा, इस ब्राह्मणने संहिताओंके पाठोंसे शिवजीकी स्तुति की और जिस निमित्त इसनेस्वर्गके द्वारके लिये उद्योग कियाथा उसीके हेतुसे वह स्वर्गकोगया है भुजंग

लोगो यह ब्राह्मण संसारी मनुष्योंसे न मिलनेवाला अनिच्छावान् सदैव उंछ सिलाका भोजन करनेवाला सबजीवोंकी भलाईमें प्रवृत्तथा, देवता असुर गंधर्व पन्नग इत्यादि उनजीवों के ऐश्वर्य्यको प्राप्तनहीं करसक्ते हैं जिन्होंने उत्तम गतिको पायाहै हे ब्राह्मण वहां मैंने इसप्रकारसे आश्चर्य्यको देखा, हे ब्रह्मन् अच्छेशुद्ध इस मनुष्यने चित्तकी इच्छाके अनुसार शुद्धगतिको पाया और सूर्य्यके साथपृथ्वी पर भ्रमण करताहै, ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्व्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिनवाशीतितमोऽध्यायः १८९ ॥

एकसौनब्बेका अध्याय ॥

ब्राह्मणने कहा कि हे सर्प बड़ा आश्चर्य्यहै और निस्सन्देह मैं प्रयोजनके अनुसार प्राप्त होनेवाले वचनोंसे बिदित कियागयाहूं, हे साधुरूप सर्प तुम्हारा कल्याणहो आपमुझको अबजानेकी आज्ञादो और आपका कोईकार्य्य मेरे करने के योग्य होयतो मुझेस्मरण करियेगा नागने कहा कि हे ब्राह्मण आप अपने हृदयके कार्य्यको कहेबिना कहांजातेहो जो करनेके योग्यहैऔर जिसके निमित्त तुमयहां आये हो उसको अवश्यकहो हे सुन्दर व्रतवाले ब्राह्मण उक्त अनुक्त कामके करनेपर तुममुझसे पूछकर और आज्ञालेकर यहांसे जाओगे हेमित्रब्रह्मर्षि जैसे कि कोई मनुष्य वृक्षके फललेनेके निमित्त वृक्षकेनीचे जाकर उसवृक्षको त्यागकर निष्फलजाय उसी प्रकार तुम यहां आकर अपने, अभीष्ट सिद्ध किये बिना मुझे त्यागकर जातेहो यह तुमको योग्य नहीं है, हे निष्पाप ब्राह्मण मैं तुमसे प्रीति करनेवाला हूं और तुमभी मुझपर प्रीति करते हो इसमें कुछ भी संदेह नहीं है यह सबलोक आपका है आपको मेरी मित्रता करने में क्या संदेहहै, ब्राह्मण ने कहा हे बड़े बुद्धिमान् आत्मज्ञानी सर्प यह इसी प्रकारसे है किसी दशा में भी देवता तुमसे अधिक नहीं हैं अर्थात् तुम देवताओं के समानहो, जो पुरुषोत्तम सूर्य्य के भीतर वर्त्तमानहै वही तुम और हमभीहैं और जोमैंहूं वही आपहो अर्थात् हमतुममें कुछभी अन्तर नहींहै वहआत्माअद्वैतहै जिसमें हमतुम औरसबतत्त्व सदैवलयहोतेहैं हमवही ब्रह्महैं, ब्राह्मणनेकहा हेसर्पराज पुण्यसंचयमें मुझको सन्देहथा सो हेसाधो मैं मोक्षसाधन नामउंछवृत्ती व्रतको करूंगा, यह मेरापूर्व निश्चयका श्रेष्ठ कारण नियत हुआथा सो पूर्णहुआ तुम्हारा कल्याणहो अबमुझे आपविदा कीजिये मेरा सब मनोरथ पूर्णहुआ १० ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिनवतितमोऽध्यायः १९० ॥

एकसौ इक्यानबेका अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि हेराजातब निश्चय करनेवाला वह ब्राह्मण सर्पकी आज्ञालेकर दीक्षालेनेकी इच्छासे भार्गव च्यवनऋषिके पासगया, और भार्गव जीसे संस्कारयुक्त होकर धर्ममें प्रवृत्तहुआ और इस कथाको भी अपने गुरु च्यवनजीके सन्मुख वर्णनकिया, हेराजा तब भार्गवजीने भी राजा जनककी सभामें महात्मा नारदजी के सन्मुख इसपवित्र कथाको वर्णनकिया, हेराजेन्द्र उननारदजीने इसउत्तम कथाको इन्द्रके पूछनेपर देवसभामें वर्णनकिया, और पूर्व समयमें यहशुभकथा इन्द्रनेभी श्रेष्ठ ऋषियोंके सन्मुख वर्णनकी, हेराजा जब परशुरामजीसे मेरायुद्ध बड़ाभयकारी हुआ तब यहकथा वसुओंने मेरेसन्मुख वर्णनकरी हे धर्मध्वज मैंने भी यह धर्मरूप उत्तम कथा मूलसमेत तुमसे वर्णनकरी, हे राजायुधिष्ठिर जो तुममुझसे पूछतेहो वहयहीउत्तम और पवित्र धर्म्म है, जिसको करके वहवीर ब्राह्मण भी इसीव्रतमें धर्म अर्थ कामादिक से निरपेक्षहुआ, और अपने कर्ममें सर्पराजकी आज्ञापाके हिंसाआदि दोषोंसे और शोच आदि दुःखोंसे रहित सहनशील होकर उंछशिलको निर्वाहमात्र भोजन करनेवाला होकर वनमेंजाके पूर्वोक्त उत्तम गतिको प्राप्तहुआ ६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशान्तिपर्वणिमोक्षधर्मेउत्तरार्द्धेशतोपरिएकनवतितमोऽध्यायः १९१ ॥

मुंशी नवलकिशोर (सी,आई,ई) के छापेखाने मुक़ाम लखनऊ में छपी
अक्टूबर सन् १८९५ ई० ॥

भविष्यपुराण ॥

श्रीपंडित दुर्गाप्रसाद जयपुर निवासी कृत भाषा है--इसमें पौराणिक इतिहास, चारोंवर्णोंके धर्म, स्त्रीशिक्षा व परीक्षा, व्रतोंके उद्यापन, शाकद्वीपीय ब्राह्मणों की उत्पत्ति, होनेवाले राजाओं का राज्य समय, गर्भिणी के धर्म, धेनुदान विधान, जलाशय, देवालय बनाने और वृक्ष लगाने का फल और सब प्रकारके दानों का माहात्म्य आदि वर्णन किये गयेहैं ॥

शिवपुराण भाषा ॥

इसका पंडित प्यारेलालजी ने उर्दू से हिन्दी भाषा में भाषानुवाद किया है इसमें शिवजी के निर्गुण सगुण स्वरूप का वर्णन, सतीचरित्र, गिरिजा चरित्र, स्कन्दकथा, युद्धखण्ड, काश्यपाख्यान, शतरुद्रिखण्ड, लिंगखण्ड, रुद्राक्ष व भस्ममाहात्म्य, व्रतविधि, भूगोल, खगोल व आदिमें छवों शास्त्रों के मतकी भूमिका भी संयुक्त कीगई है ॥

स्कन्दपुराणका सेतुमाहात्म्यखण्ड ॥

पंडित दुर्गाप्रसाद जयपुर निवासीका भाषाहै इसमें सेतुबन्धका माहात्म्य वहां के सब तीर्थों का वैभव, महालयश्राद्ध का माहात्म्य, नरकों व रामेश्वर महादेव का वर्णन इत्यादि बहुतसी कथायेंहैं ॥

ब्रह्मोत्तरखण्ड भाषा ॥

जिसको पंडित दुर्गाप्रसाद जयपुर निवासी ने स्कन्दपुराणान्तर्गत संस्कृत ब्रह्मोत्तरखण्ड से देशभाषा में रचा जिसमें अनेक प्रकार के इतिहास और सम्पूर्ण व्रतों के माहात्म्य आदि वर्णित हैं ॥

बारहोस्कन्ध श्रीमद्भागवत ॥

इसके भाषा टीका को श्रीअंगदशास्त्री जी ने अक्षर अक्षर के अर्थ को ललित व्रज बोलीमें रचना कियाहै यह टीका ऐसा मनोहर हुआहै कि जिसकी सहायता से थोड़ा भी जाननेवाला भागवतको अच्छीतरहसे समझ सक्ताहै यह पुस्तक प्रत्येक विद्वान् के पास रहनी चाहिये क्योंकि भागवत बड़ा कठिन पुराण है बिना ऐसे सहज भाषा टीकाके सबका श्लोकार्थ नहीं समझ पड़ता है इसका मूल बीच में और भाषा टीका नीचे ऊपर रखकर अत्यन्त शुद्धतासे पत्रेनुमा छपा है कागज़ हिनाई है और छापा पत्थर है ॥

बृहन्नारदीयपुराण ॥

पंडित देवीसहाय शर्मा नारनौल निवासीकृत भाषा है जिसमें श्रीनारद जी और सनत्कुमार सम्वाद द्वारा श्रद्धाभक्ति निरूपण, भगवद्भक्ति माहात्म्य वर्णन उत्तम तीर्थों का निरूपण सगरवंशी सौदास राजा की कथा, श्री गंगाजी की उत्पत्ति, राजा बलिका वृत्तान्त, दान विधि का निरूपण, व्रतों और श्राद्धों का विधान, तिथिनिर्णय, प्रायश्चित्त विधान, यममार्ग का निरूपण, संसारके दुःखों का कथन, मोक्षोपाय वर्णन, वेद माली और तिसके पुत्र यज्ञमाली वा सुमाली की कथा और विष्णुजी के चरणोदक का माहात्म्य इत्यादि कथा वर्णित हैं ॥

सुखसागर ॥

सुखसागरों का तर्जुमा पंजाबके रहनेवाले बाबू मक्खनलालजीने किया है इस सुखसागर में बहुतही मोटेहरूफ और अत्यन्तही उम्दा तसवीरें इत्यादि सब सामान है कि जिसकी तारीफ नहीं होसकी देखनेही से हाल मालूम होगा ॥

गणेशपुराण भाषा ॥

इसको मुंशी नवलकिशोरकी आज्ञानुसार नारनौल निवासी पंडित देवीसहायजी ने संस्कृतसे श्लोक २ का देशभाषा में उल्था कियाहै इस में गणेशजीका सम्पूर्ण चरित्र विस्तारपूर्वक तथा और भी अनेक विषय वर्णितहैं

श्रीवाराहपुराणपूर्वार्द्ध व उत्तरार्द्ध ॥

जिसका जयपुर निवासि पंडित माधवप्रसादजी ने मुंशी नवलकिशोर जी के व्यय से संस्कृतसे देवनागरी में भाषा किया और पंडित दुर्गाप्रसाद और पंडित नरसूप्रसादजीने शुद्ध कियाहै इसमें श्रीभगवान् वाराह नारायण ने धरती से चौबीसहजार श्लोकों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सिद्ध होने के लिये इतिहास संयुक्त कथायें वर्णन की हैं ॥

गरुड़पुराण ॥

इस में ३४ अध्याय प्रेतकल्प के बीच में मूल और नीचे ऊपर भाषा टीका रखकर छापेगये हैं जिसमें सम्पूर्ण प्रेतही का कर्म है और प्रेतही की सम्पूर्ण षोड़शी सापिंडन शांति वृषोत्सर्ग इत्यादि क्रिया भी विस्तार पूर्वक वर्णितहैं ॥

१३

महाभारत भाषा

अनुशासनपर्व

—*—

जिसमें

सम्पूर्णधर्म व सम्पूर्ण दान व सम्पूर्ण व्रतोंका फल व सम्पूर्ण माहात्म्य व ग्राह्याग्राह्य वस्तुविचार व तपस्वी व धर्मात्माओं के लक्षण इत्यादि अनेक कथा विस्तारसे वर्णन कीगईहैं ॥

जिसको

भार्गववंशावतंस सकलकलाचातुरीधुरीण मुंशी नवलकिशोर जी (सी, आई, ई) ने अपने व्ययसे आगरापुर पीपलमंडीनिवासि चौरासियागौड़वंशावतंस पण्डित कालीचरण जी से संस्कृत महाभारत का यथातथ्य पूरे श्लोक श्लोक का भाषानुवाद कराया ॥

—*—

लखनऊ

मुंशी नवलकिशोरके छापेख़ाने में छपा
नवम्बर सन् १८८८ ई०

पहलीवार ६००

महाभारतोंकीफेहरिस्त ॥

इस यन्त्रालय में जितने प्रकार की महाभारतें छपी हैं उनकी सूची नीचे लिखी है ॥

महाभारतदर्पण काशीनरेशकृत ॥

—※—
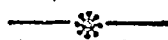
जो काशीनरेशकी आज्ञानुसार गोकुलनाथादिक कवीश्वरोंने अनेक प्रकार के ललित छन्दोंमें अठारहपर्व और उन्नीसवें हरिबंश को निर्माण किया यह पुस्तक सर्वपुराण और वेदकासारहै बरन बहुधालोग इस बिचित्र मनोहर पुस्तकको पंचमवेदबताते हैं क्योंकि पुराणान्तर्गत कोईकथा व इतिहास और वेदकथित धर्माचारकी कोईबात इससेछूट नहींगई मानोंयह पुस्तकवेदशास्त्र का पूर्णरूपहै अनुमान ६० वर्षकेबीते कि कलकत्तेमें यहपुस्तक छपीथी उस समय यहपोथी ऐसीअलभ्य होगईथी कि अन्त में मनुष्य ५०) रु० देनेपर राज़ीथे परनहीं मिलतीथी पहलेसन् १८७३ ई० में इस छापेखानेमें छपीथी और क़ीमत बहुत सस्ती यानेबाजिबी १२) थे जैसाकारखानेकादस्तूरहै ॥

अब दूसरीबार डबलपैका बड़ेहरफों में छापी गई जिसको अवलोकन करनेवालोंने बहुतही पसन्द कियाहै और सौदागरीके वास्ते इससेभी क़ीमत में किफायत होसक्तीहै ॥

इसमहाभारतके भागनीचेलिखे अनुसारअलग २ भीमिलतेहैं ।

पहले भागमें (१) आदिपर्व (२) सभापर्व (३) बनपर्व ।

दूसरेभागमें (४)विराटपर्व (५)उद्योगपर्व (६) भीष्मपर्व (७) द्रोणपर्व ॥

तीसरेभागमें (८)कर्णपर्व (९)शल्यपर्व (१०)सौप्तिकपर्व (११) योषिक व विशोकपर्व (१२) स्त्रीपर्व (१३) शान्तिपर्वराजधर्म्म आपद्धर्म्म, मोक्षधर्म्म ॥

चौथेभाग में (१४) शान्तिपर्व दानधर्म्म व अश्वमेध (१५) आश्रमवासिकपर्व (१६) मूसलपर्व (१७) महाप्रस्थानपर्व (१८) स्वर्गारोहण व हरिवंशपर्व ॥

अनुशासनपर्व्व भाषा का सूचीपत्र ॥

इति अनुशासन पर्व्व का सूचीपत्र समाप्त॥

——※——

अथ महाभारत भाषा ॥

दानधर्म्मगर्भित अनुशासनपर्व ॥

श्लोक

नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिं पीताम्बरालंकृतम् । प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम् ॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणं पापाटवीपावकम् । श्रीरामस्तकमाल्यलालितपदं वन्दावहेकेशवम् १ याभातिवीणामिववादयन्ती महाकवीनांवदनारविन्दे । साशारदाशारदचन्द्रबिम्बा ध्येयप्रभानःप्रतिभांव्यनक्तु २ पाण्डवानांयशोवर्ष्म सकृष्णमपिनिर्मलम् । व्यधायिभारतंयेन तंवन्देवादरायणम् ३ विद्याविदग्धेसरभूषणेन विभूष्यतेभूतलमद्ययेन । तंशारदालब्धवरप्रसादम् वन्देगुरुंश्रीसरयूप्रसादम् ४ चौरासियाभिधधरामरवंशजन्मा श्रीमान्मनीषिमणिगोकुलचन्द्रसूनुः । अत्यन्तरम्यमनुशासनपर्वणोद्य भाषानुवादमनुरागकरंकरोति ५ ॥

महाभारत भाषा अनुशासनपर्व प्रारम्भः ॥

युधिष्ठिर ने प्रश्नकिया कि हे पितामह आपने अनेकप्रकार के निर्विकल्प शोक संताप के हरनेवाले सूक्ष्म धर्मों का वर्णन किया इसप्रकार के इसज्ञानको सुनकर मेरे हृदय में शान्ती नहींहोती १ यद्यपि इस बिषय में आपने बहुत प्रकारकी शान्तियां कहीं परन्तु इन अनेकप्रकारकी शान्तियोंसे भी मेरे कियेहुये कर्म्मों में शान्ती नहीं होसक्ती २ हे अत्यन्त घायल और बाणोंसे भिदेहुये पिता-

मह में आपके शरीर को देखकर और अपने पापोंको ध्यानकरता हुआ महाक्लेशित होताहूं ३ हे पुरुषोत्तम मैं रुधिरसे भरेहुये पर्वत की समान श्रवते आपके शरीरको देखकर ऐसा खेदित होताहूं जैसे कि वर्षा कालमें कमल होताहै ४ हे हमारे पितामह जोकि आप युद्धभूमि में मेरेही कारणसे शत्रुओं के विरोधी शिखण्डी आदिके हाथसे ऐसी दशाको प्राप्तहुयेहो इससे अधिक कौनसा कष्टहोगा ५ और इसी प्रकारसे अन्य राजालोगों ने भी अपने पुत्र वा बान्धवों समेत मेरेही निमित्त मरणको पायाहै इससे अधिक क्या दुःखहोगा६ हे राजा हमसब और धृतराष्ट्रके पुत्र काल और क्रोधके वशीभूत होकर इस महानिन्दित कर्म्मके करनेसे कौनसी गतिको पावैंगे ७ हे महाराज इसदशामें प्राप्तहुये आपको जो दुर्योधन नहीं देखता है इससे मैं मानताहूं कि उसका बड़ाकल्याणहै ८ और मैं आपका और सुहृद जनोंका नाश करनेवाला आप को पृथ्वीपर अत्यन्त खेदित पड़ाहुआ देखकर मह क्लेशको प्राप्तहोताहूं ९ वह दुरात्मा कुलका कलंकी दुर्योधन अपने छोटेभाई और बान्धवों समेत इस क्षत्रीधर्म्मरूप युद्धमें क्या मारागया है १० कि जो ऐसी दशा में पृथ्वीपर पड़ेहुये आपको वह दुष्टात्मा नहीं देखता है इस हेतुसे मैं उसका मरना कल्याणरूप मानताहूं और अपने जीवनको धिक्कार समझताहूं ११ हे बीर इस युद्धमें शत्रुओं की ओर से मैं नाशको प्राप्त कियागया हे धर्म्मधारी जो भाइयों समेत मैं पूर्वही समर्थ होता १२ तो आपको इसरीतिसे पीड़ामान शायकों से महाक्लेशित नहीं देखता निश्चय करके हमलोगों को ईश्वरने पाप कर्म्म करने वाला उत्पन्न कियाहै १३ हे राजेन्द्र जो आपकी कृपा हमपर है तो अब जैसे कि परलोकमें हमलोग राग द्वेषसे रहित होजायँ वही शिक्षाहमको करिये १४ भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर यह सम्पूर्ण काल कर्म्म प्रारब्ध ईश्वरके स्वाधीन है तुमइन शुभाशुभ कर्मोंका कारण अपनेको समझतेहो यहबातबड़ी सूक्ष्म और इन्द्रियोंसे जाननेमेंनहीं आसक्ती १५ इस स्थान पर मैं एकप्राचीन इतिहास तुमसे

कहताहूं जिसमें कि मृत्यु गौतमीका काल लुब्धकका और पन्नगसर्प सेपरस्पर प्रश्नोत्तरहै १६ हे कुन्तीनन्दन एकगौतमीनाम वृद्धब्राह्मणी बड़ी विवेकयुक्त होतीभई उसकाएकसुकुमार पुत्रथा उसको दैवयोग से एक बड़े विषधर सर्पने काटा और काटतेही मर गया यहदशा देखकर एक अर्जुनक नाम लुब्धक अर्थात् बहेलिया महाक्रोधित होकर उससर्पको फांसीमें बांधकर गौतमीके पासलेआया १७।१८ और कहनेलगा कि हे गौतमी यह सर्पोंमें महानीच पन्नगनामसर्प है जिसने कि तेरेपुत्रको मारा इसको जैसे तू कहे वैसेही हममारें १९ महाप्रज्वलित अग्निमें डालें वा इसके खण्ड किये जायँ यह बालक का मारनेवाला महापापी बहुत बिलम्बतक जीता छोड़नेके योग्य नहींहै इसकोशीघ्रही जैसीआज्ञादो उसीप्रकारसे मारें २० गौतमी ने कहाकिहे अर्जुनक तुमनिर्बुद्धीहो इस सर्पकोछोड़दो यहसर्प तुमको मारना न चाहिये यहपूर्वकर्मके भोगसे भवितव्यतारूप होकरप्राप्त होताहै हज़ारों मनुष्य दुःखरूपी समुद्रमें पड़ेहुये उछलते और डूबते हुये कोई डूबजातेहैं कोईतैरजातेहैं और पूर्वकर्मकेही योगसे हज़ारों सुखी और दुखीरहतेहैं बहुतसे इसलोकमें धर्मरूपी नौकाके द्वारा दुःखरूपी समुद्र से तरजातेहैं औरपापसेऐसे डूबजातेहैं जैसेकिजल में बोझके कारण लोहेका टुकड़ा डूबजाताहै २२ इसकेमारनेसेमेरा पुत्रसजीवनहीं होगा और इसके जीवनेसे तेरीभीकुछ हानि न होगी इससजीवको निर्जीव करनेसे कौन मृत्युके अनन्त लोक को जाय-गा २३ लुब्धकबोला कि गुण अगुण पाप धर्मकी जाननेवाली देवी मैं निश्चयकरके जानताहूं कि पापहीके भारसे सबजीवमात्र पीड़ा पातेहैं यद्यपिश्रेष्ठ लोग सबकीपीड़ाको देखकर आप पीड़ित होतेहैं परन्तु उपदेश सुखी लोगोंके निमित्त कहेजातेहैं दुखीलोगोंको नहीं कियेजाते इसीकारण मैं इसनीच सर्पको मारूंगा २४ इच्छावान् जितेन्द्री मनुष्य ऐसे कामको कालका कर्म वर्णन करतेहैं और अर्थज्ञ लोग शीघ्रही शोचको त्यागकरतेहैं बहुतसे मनुष्य अपनी अज्ञानता से सुखके नाश होजानेको शोचतेहैं इसीकारण तुमभी इस सर्पके

मरजानेसे शोकक्रोधत्यागकरो २५ गौतमीबोली कि हम सरीखेजीवों को ऐसेप्रकारकी पीड़ा नहींहोती क्योंकिसज्जनलोग सदैवधर्मात्मा होतेहैं और यहबालकभी सदैव मृतकहै अर्थात् मरणधर्माहै इसी हेतुसे मैं इससर्पके मारनेमें समर्थनहींहूं २६ ब्राह्मणोंमें क्रोधनहींहै फिरक्रोधसे दूसरेको पीड़ा कैसे देसक्तेहैं—हे साधो इस सर्पको तू अपनीमृदुतासे क्षमा करके छोड़दे २७ लुब्धक बोला कि इसके मारनेसे परलोकका हितकारी अविनाशी लाभहै इसीकारण लाभ के लोभसे मनुष्य सबपराक्रमियोंसे उत्तमहोताहै इसनीचसर्पकेनाश योग्यहोनेसे जो उसके मरनेसे चित्तकामनोरथ प्राप्त हो वह लाभ अक्षय और कल्याणका करनेवालाहै परन्तु वह तुमको नहीं प्राप्त होसक्ताहै२८गौतमीबोली कि शत्रुकोपकड़कर उसकेजीव नाशकरने से क्या अर्थ सिद्धहोगा और शत्रुकोदृढ़बंधनमें करनेसे कौनसाचित्त का मनोरथसिद्ध होगा हे सौम्य मैं कौनकारणसे अपने शत्रुसर्पपर क्षमा न करूं अथवा किस हेतुसे इसको बन्धसे मोक्ष करनेकेद्वारा अपना कल्याण न करूं२९लुब्धकबोला हेगौतमी इसअकेले सर्पसे बहुतसे जीवधारी रक्षाकरनेके योग्यहैं और अकेला बहुत जीवों से अधिकरक्षाकेयोग्य नहींहै धर्मज्ञ पुरुष अपराधीको मारतेहैं इससे तू भी इसमहापापी सर्पको मार३०गौतमीबोली हे लुब्धक इस सर्पके मरजानेसे मेरापुत्रनहीं जीसक्ता और इसके मरनेसे मैं कोई दूसरा भी पुण्य होना नहींदेखतीहूं इसहेतुसे इससर्पको जीताहुआही छोड़ दे३१लुब्धकबोला कि देवराज इन्द्रने वृत्रासुरको मारकर प्रतिष्ठा पाई और देवदेव महेश्वरजीने दक्षके यज्ञको विध्वन्स करके अपना भागपाया इससे तुमभी देवताओंकी रीतिके अनुसार चलकरशीघ्र-ही इसदुष्टको मारो और किसी प्रकार का सन्देह मत करो ३२ भीष्मजीबोले कि लुब्धकके अनेक प्रकारसेसमझाने परभीवहमहा भागवती गौतमी पापमें संयुक्त नहींहुई ३३ दुःखसे कुछश्वासालेने वाले फांसीसे पीड़ामानसर्पने धैर्यतामें रक्षित होकरबड़ी मन्द वाणी से कहा कि हे लुब्धक अर्जुनक अब यहांमेराकौनसा अपराधहै जो

मृत्युनेमुझ अस्वतन्त्र और दूसरेकेआधीनको चलायमान किया ३५
इसबालकको मैंने उसीके कहनेसे काटाहै अपने क्रोध और इच्छासे
नहींकाटाहै हेलुब्धक जो इसमें पापहै तो उसीमृत्युका पापहै ३६
लुब्धकने कहा कि जो तुझ अस्वतन्त्रने इस पापको कियाहै इससे
तुमभी तो इस पापकेमूलहो इससे अवश्य अपराधीहो ३७ हेसर्प
जैसेकि मृत्तिकाकेपात्र बनानेमेंदण्ड और चक्र दोनोंकारणमानेजाते
हैं इसीप्रकार तुमभीकारणहो ३८ हेपन्नग तुमसबरीतिसे अपराधी
होनेकेहेतुसे मुझसेवध होनेकेयोग्यहो ३९ सर्पबोला जैसे कि दण्ड
चक्रादिक अपने स्वाधीननहींहैं उसी प्रकार मैंभी स्वतन्त्र नहीं हूं
इसहेतुसे तेराकल्पना कियाहुआ अपराधमुझमें नहींहै ४० अथवा
जो तू यहकहता होय कि वह सब चक्र दण्डादिक परस्परमें मिले
हुये कर्ममें प्रवृत्तहैं और परस्परके कहने सुननेमें कर्त्ता और कर्मका
सन्देह उत्पन्नहोताहै ४१ ऐसीदशामेंभी मेरा दोषनहींहै और न मैं
अपराधी होकर मारनेके योग्यहूं जो तुम अपराधही को मानते हो
तो वह अपराध सबप्रेरणा करनेवालोंमें होगा केवलमुझी अकेले
में कैसे होसक्ताहै ४२ लुब्धक बोलाकि जब कारणनहींहै तो तुम
भी कर्त्तानहींहो तुम बालकके मारने वा नाशमें हेतुरूपहो इसीसे
मैं तुझको वधके योग्य समझताहूं ४३ हेसर्प यहां तू अपने मत से
बुरे कर्मके करनेपरभी पापकाभागी नहींहोताहै इस कारण से भी
अपराधी दंडके योग्य न समझाजाय तो शास्त्रके अप्रमाण करनेका
हेतुहुआ इसीसे हेसर्प तू वधकेयोग्यहै और यह सब बनाईहुई तेरी
बातैं व्यर्थ हैं अरे दुष्ट काम तो तैंने किया है प्रेरकने नहीं किया
इससे तूही वधके योग्य है सर्प बोला कि हमने आयुध के
समान कर्म कियाहै इसमें आयुधका कुछदोष नहीं होता किन्तु
आयुध चलानेवाले काही दोष होताहै कर्त्ताके होने न होने परभी
जैसे कि कुल्हाड़ी वा परस्पर में बांसोंकी रगड़से वनकी नाशरूपा
क्रिया होजातीहै वैसेही कर्मके न होनेपर क्रियानहीं होसक्तीहै इसी
हेतुसे इनमेरेहेतुओंमें वह कारण विशेषकरके मुझको कहनेकेयोग्य

हैं ४६ हेलुब्धक जो मैं मुख्यतासे भी कर्त्तव्य भावको प्राप्त किया जाऊं तौभी कर्त्तादूसराहोगा और जीवके नाशमें अपराधी अन्य होगा ४७ लुब्धक बोला हेदुर्बुद्धी नीचसर्प बालकका मारनेवाला और हिंसा काकरनेवाला तू मेरे हाथसे वधकरनेके योग्यहै तेरे वहुत वकने से क्याहोताहै सर्पवोला हे लुब्धक जैसे कि ऋत्विज ब्राह्मण यज्ञमें हव्यवस्तुओंको होमतेहुयेभी फलको नहींपातेहैंइसी प्रकारमैंभी यहां फलके मिलनेमें बिचारकरनेके योग्यहूं ४८भीष्म जीबोले इसप्रकारसे उसमृत्युके प्रेरित सर्पके वार्त्तालाप करने पर

दो० इतनेमें आई तहां मृत्युमहा दुखदानि । व्याधासोंभाषत भई कर्मकाल कृतठानि ॥ मृत्युदेवता भी आपहुँचे और आतेही सर्पसे कहने लगे किहे सर्पकालपुरुष की प्रेरणा से मैंने तुमको प्रेरणा करी इससे मैं और तू दोनों इसप्राणी बालकके मारने में कारण नहींहै ५० हेसर्प जैसे कि वायु बादलोंको जहां तहां खैंच लेता है उसीप्रकार हमभी बादलहीके समान कालके स्वाधीनहैं ५१ इस स्थानपर सात्विक राजस तामस नामभावजीवों में वर्तमान होते हैं वहसव कालकेही समान कर्मकर्त्ता होतेहैं ५२पृथ्वी वा स्वर्गादिकों में जो जड़ चैतन्यजीव हैं वह सबकालात्मकहैं और यह जगत् भी कालात्मकहै५३इसलोकमें जो प्रवृत्तिनिवृत्तियांऔरउनकीरूपान्तर दशाहैं वहसब कालात्मकही कहीजातीहैं ५४ हेसर्प सूर्य,चन्द्रमा, वायु,जल,विष्णु,इन्द्र,अग्नि, आकाश,पृथ्वी,मित्र,परिजन्य, आठों वसु ५५ दैत्य नदी,सागर,ऐश्वर्य,नाश यह सब वारम्वार कालसेही उत्पन्न और नाश कियेजातेहैं५६इससे हेसर्प तुमऐसा जानबूझकर मुझको दोषी और अपराधी कैसे मानतेहो इसप्रकारसे जो मुझको अपराधी मानोगेतो तुमभी अपराधी हो ५७ सर्प बोला हे मृत्युमैं तुमको अपराधी और निरपराधी नहींकहताहूं केवल इतनाहीकह-ताहूं कि मैं मृत्युका प्रेरितहूं५८जो कालमेंदोषहै अथवा उसमें भी दोषकालगाना उचितनहीं समझाजाताहै तो इसस्थानमें मुझमेंदोष का देखनाभी योग्यनहींहै क्योंकि हमतो इसविषयमें अधिकारी भी

होंनहैं ५६ मुझको जैसे बने वैसे आप निर्दोष कीजिये और मृत्युको भी दोष नहीं होना चाहिये इसमें भी मेरा बड़ा प्रयोजनहै ६० भीष्म जीबोले दो० तदनु व्याधसों कहतभो बन्धन पीड़ितसर्प्प। सुनेमृत्यु के बचन मम काटौ बन्धनअर्प्प॥ अर्त्थात् इनबातों के पीछे सर्प्पने आर्ज्जुनकसेकहा कि तुमने मृत्युका वचन सुना अब तुम मुझ निरपराधीको फांसी सेकष्ट देने को योग्य नहीं हो ६१ लुब्धकबोला हे सर्प्प मैंने मृत्युका और तेरा दोनोंका वचन सुना इतनीही बातों से तुझमें निरपराधता नहीं होसक्ती ६२ इस बालक के नाशमें मृत्यु और तुमकारण हो प्रथम तुझी को कारण समझता था अब दोनों कोकारण समझताहूं क्योंकि कारण भी विना कारण के नहीं होसक्ता ६३ सत्पुरुषों को दुःखदेनेवाले निर्दयी दुरात्मा मृत्युको तो धिक्कारहै और तुझपापी और पापके कारण को मारूंगा ६४ मृत्यु ने कहा कि हम दोनों अस्वतन्त्र कालकी स्वाधीनता में वर्त्तमान उसके आज्ञाकारी हैं हम दोनोंको दोषभागी करना तुमको उचित नहींहै यह तुम अच्छे प्रकारसे जानतेहो और देखतेहो ६५ लुब्धक बोला हे मृत्यु और सर्प जो तुम दोनों कालके स्वाधीनहो तो मुझे यह बात समझाओ कि मुझमें प्रसन्नता और क्रोध कैसे उत्पन्न होतेहैं ६६ मृत्युने कहा कि हे लुब्धक जितनी चेष्टा होती हैं वह सब कालकी प्रेरणासेही होतीहैं इसीसे मैंने प्रथम सब कालही से होनेवाला वर्णन कियाहै ६७ इस हेतुसे हम दोनों कालके स्वाधीन होकर उसके आज्ञावर्त्तीहैं इससे तू हम दोनोंको किसी रीतिसे भी दोषसे संयुक्त करनेके योग्य नहीं है ६८ भीष्मजी बोले कि इसके अनन्तर कालने उनके समीप जाकर धर्म्म अर्थके संशय में प्रवृत्त उनमृत्यु सर्प और लुब्धक से कहा कि ६९ हे लुब्धक हम समेत मृत्यु और सर्प जीवधारीके मारनेमें पापी नहीं हैं और हम प्रेरणा करनेवाले भी नहींहैं ७० हे लुब्धक इसने जो पूर्व कर्म किया है वही हमको प्रेरणा करनेवाला है इसके विशेष इसके नाश का दूसरा कारण कोई नहींहै यह जीव अपनेही कर्म्म से मरण को

पाता है ७१ इसने अपनेही किये हुये कर्म्म से मरणको पाया है इसका कर्म्मही इसके नाशका कारण है और हम सब कर्म्म के स्वाधीन हैं ७२ यह संसार कर्म्म रूप पुत्र रखनेवाला है और इसका फल पुण्य पापका प्रकट करनेवाला है इसलोकमें जैसे २ कर्म्म प्रेरणा करते हैं उसी प्रकारसे हमसब परस्परमें कर्म्म करनेवाले होते हैं ७३ जैसे कि कारीगर मृत्तिका के पिण्ड से जो २ चाहता है वही बनालेता है इसी प्रकार मनुष्य अपने किये हुये कर्म्मको पाताहै ७४ जैसे कि धूप और छाया सदैव बराबर बँधी हुईहैं उसीप्रकार कर्त्ता और क्रिया अपने कर्मोंसे बँधेहुये हैं ७५ इसीप्रकार मैं मृत्यु सर्प तुम और यह वृद्धा ब्राह्मणी भी कारण रूप नहींहै यहां अपने नाशकाहेतु यही बालकहै ७६ हे राजा इस रीतिसे उसके कहने पर गौतमी ब्राह्मणीने लोकोंकोही कर्म्म रूप कारण रखनेवाला मानकर लुब्धक से यह बचन कहा ७७ कि इसमें न काल कारण है न सर्प न मृत्यु इस बालकने ही अपने कर्मोंसे कालके द्वारा मृत्युको पायाहै ७८ और मैंने भी कोई बुरा कर्म कियाथा जिससे कि यह मेरा पुत्र मारागया अब काल और मृत्यु अपने अपने स्थानको जांय और हे लुब्धक तुम इस सर्प को छोड़दो ७९ भीष्मजी बोले इसके पीछे मृत्यु काल और सर्प अपने अपने स्थानोंको चलेगये आर्जुनक शोकसे निवृत्त हुआ और गौतमीभी शोकसे रहित हुई ८० हे राजा युधिष्ठिर तुम इस वृत्तान्त को सुनकर शान्तीको प्राप्त होजाओ शोक समुद्र में मतडूबो सब लोग अपने अपने कर्मोंसेही प्राप्त कियेहुये लोकोंको पाते हैं ८१ यहकर्म न तैंने किया न दुर्योधन ने किया इस सबको कालकाही किया हुआ जानो सब राजा लोग अपने अपनेही कर्म्मों से काल वशहुये हैं ८२ वैशम्पायनजी बोलेकि बड़ा तेजस्वी और धर्मज्ञ राजा युधिष्ठर इस वचनको सुनकर शोकसे रहित हुआ और इस आगे लिखीहुई बातको पूछने लगा ८३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनपर्वणिदानधर्मगौतमीलुब्धकव्यालमृत्युकालसंवादेप्रथमोऽध्यायः१॥

दूसरा अध्याय॥

युधिष्ठिर ने कहा हे महा ज्ञानी सर्व शास्त्रज्ञ बुद्धिमान पिता-मह मैंने आपके मुखसे यह बड़ा आख्यानसुना १ इसके विशेष में और भी धर्म अर्थ से संयुक्त कोई उपाख्यान आपसे सुनाचाहता हूं आप कहने को योग्यहैं २ किस कुटुम्बीने धर्म में आश्रितहोकर मृत्यु को विजय किया इसको भी मूल समेत वर्णन कीजिये ३ भीष्मजी बोले कि इस स्थान में एक प्राचीन इतिहास तुमसेकहता हूं जिसमें कि एक कुटुम्बीने धर्म में आश्रय लेकर मृत्यु को विजय किया है ४ हे राजा प्रजापति मनुजी का पुत्र इक्ष्वाकु हुआ उस सूर्यके समान तेजस्वी इक्ष्वाकुके सौ पुत्र हुये ५ उन में से दशवां पुत्र दशाश्वनाम से प्रसिद्ध था वह धर्मात्मा सत्यवक्ता पराक्रमी होकर माहिष्मती पुरीका राजाहुआ ६ दशाश्वकापुत्र बड़ा धार्मिक राजा हुआ यह राजा सदैव सत्य, तप और दान में प्रीतिमान् था वह क्षितीश इस पृथ्वी पर मदिराश्व नामसे प्रसिद्ध हुआ इसको वेद और धनुर्वेद इन दोनोंमें प्रीतिथी और मदिराश्वकापुत्र द्युति-मान नामसे प्रसिद्ध हुआ यह भी बड़ा तेजस्वी बुद्धिमान् और परा-क्रमी था ७ द्युतिमान का पुत्र बड़ा धार्मिक सब लोकों में प्रसिद्ध सुवीरनामराजाहुआ ८। १० और सुवीरकापुत्र द्वितीयइंद्रके समान महाधर्मिष्ठ सब प्रकार के संग्रामों में दुर्जय और धनाधीश ११ सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ सुदुर्जय नाम हुआ १२ और दुर्जयकापुत्र इन्द्रके समान बली और अश्विनीकुमारके सदृश तेजस्वी राजर्षियों में श्रेष्ठ दुर्योधन नाम बड़ा राजाहुआ इस इन्द्रके समान बली युद्ध में मुख न मोड़ने वाले राजाके १३ देशमें इन्द्र देवता सदैव अच्छी वृष्टि करतेथे इसीसे रत्नधन पशु और नानाप्रकारकी खेतियां १४ और विचित्र नगरों से संयुक्त उसका देश हुआ उसके देशमें कोई कृपण और दरिद्री भी न था और न उस देशमें रोगी और दुर्बल मनुष्य था यह राजा सुन्दर दक्षिणावाला मृदुभाषी दूसरेके गुणों

में दोष न लगाने वाला जितेन्द्री १६ धर्मात्मा दयावान पराक्रमी अपनी प्रशंसा न करनेवाला यज्ञकर्त्ता स्वस्थचित्त शास्त्रज्ञ बुद्धिमान वेद ब्राह्मण का भक्त सत्यप्रतिज्ञ किसीका अपमान न करनेवाला महा दानी और वेद वेदांग में पूर्ण था १७ हे भरतवंशी पुरुषोत्तम महा पवित्र शीतल जलवाली कल्याणरूपा देवनदी नर्मदानेअपने हृदयसे उसको चाहा १८ तब उस देवनदी में कमल लोचन कन्या उत्पन्न हुई वह सुदर्शननाम कन्या महारूपवती थी १६ हे युधिष्ठिर पूर्व समयकी स्त्रियों में वैसी रूपवाली कोई स्त्री न थी जैसी कि स्वरूपवान वह राजा दुर्योधन की पुत्रीथी २० उस राजकन्या सुदर्शना को साक्षात् अग्नि देवताने चाहा और ब्राह्मणकारूपवन कर उस राजासे उस कन्याको मांगा २१ राजाने उस ब्राह्मणको दरिद्री समझा और यह भी मन में विचारा कि यह हमारा सवर्ण नहींहै इन हेतुओंसे उस ब्राह्मणको वह कन्या देना अंगीकार नहीं किया २२ तब अग्निदेवता अप्रसन्न होकर उसके विस्तृतयज्ञमेंसे गुप्त होगये इसहेतु से राजाने बहुत दुखी होकर यज्ञके ब्राह्मणों से यह बचन कहा २३ कि हे उत्तमब्राह्मण लोगो मेरा अथवातुम्हारा कोई दुष्कर्म है २४ जिससे कि अग्नि देवता ऐसे गुप्त होगये हैं जैसे कि नीच मनुष्यों में उपकार नष्ट होजाता है—हमारा पाप थोड़ानहींहै जिससे कि अग्निदेवता अदृश्यहुयेहैं मेरा वा आपलोगों का कोई महादुष्कर्म है इसको तुम अच्छी रीतिसे बिचार करो २५ दो० भूमिपालको वचनसुनि अग्निहिध्यायोविप्र। तब पावक वहां प्रकट भे उग्र रूप महि क्षिप्र॥ हेभरतर्षभ तब तो वह सब ब्राह्मण राजाके वचन को सुनकर बड़ी सावधानीसे वाणीकोजीतकर अग्नि की शरणमेंगये २६ तब तो शरदऋतु सूर्य्यके समान महा तेजस्वी अग्नि देवता ने अपने रूप को प्रकाश मान करके उनको दर्शन दिया २७ और उन महात्मा ब्राह्मणोंसे यह वचन कहाकि मैं राजा दुर्योधन की पुत्री को अपने निमित्त मांगताहूं २८ फिर उन आश्चर्य्यित ब्राह्मणोंने प्रातःकालके समय उठकर उस वृत्तान्त को

राजा के सन्मुख वर्णन किया २९ इसके पीछे उस बुद्धिमान् राजा ने ब्रह्मवादी ब्राह्मणों के उस वचन को सुनकर महा प्रसन्न होकर कहा कि तथास्तु ३० अर्थात् ऐसाही होगा यह कह कर राजा ने भगवान् अग्नि से यह शुल्क मांगा कि हे अग्नि देवता आप सदैव यहांहीं निवास कीजिये ३१ तब भगवान् अग्नि ने उस राजा से कहा कि ऐसाही होगा तब से लेकर अब तक माहिष्मती पुरी में अग्नि देवता वर्त्तमान रहते हैं ३२ उस समय दिग्विजय करने वाले सहदेवने अग्नि देवता का दर्शन कियाथा इसके अनन्तर राजा दुर्य्योधनने उस वस्त्रधारण करनेवाली कन्याको अच्छे प्रकार भूषणों से अलंकृत करके महात्मा अग्नि देवता के अर्थ दान किया ३३ और अग्नि ने भी वेदोक्त बुद्धीके अनुसार उस राज कन्या सुदर्शना को ऐसे ग्रहण किया जिस प्रकार यज्ञमें बसोर्द्धारा ग्रहण कीजाती है ३४ फिर अग्नि देवता उसके रूप, शील,कुल और शरीर की शोभासे प्रसन्न हुये और उसको गर्भवती करनेको प्रवृत्त चित्त हुये ३५ उससे अग्निका पुत्र सुदर्शननाम उत्पन्न हुआ वह सुदर्शन भी रूपसे पूर्ण चन्द्रमाके ही समान शोभायमानथा ३६ उसने बाल्यावस्थामेंही सब सनातन वेद प्राप्त किये उसी समयमें राजा नृग का पितामह ओघवान नाम राजा होता हुआ ३७ उसके ओघवतीनाम कन्या और ओघरथवाला ओघवाननाम एक पुत्र हुआ ओघवानने आप उस ओघवती कन्याको ३८ जो कि देवी रूपथी बड़े आदर दान सत्कारपूर्व्वक उस महाज्ञानी सुदर्शन को बिवाह करदी तब वह सुदर्शन उस कन्याकेसाथ गृहस्थाश्रममें प्रवृत्त हुआ ३९ हे राजा वह सुदर्शन उस ओघवती समेत कुरुक्षेत्र में रहने लगा हेयुधिष्ठिर फिर उस बुद्धिमान् तेजस्वीने यहप्रतिज्ञा करी कि मैं गृहस्थाश्रममें ही नियत रहकर मृत्युको विजयकरूंगा तदनन्तर उस अग्नि पुत्रने ओघवती से यह वचनकहा ४० । ४१ कि तू किसी दशा में भी अतिथिको बिमुख न जाने दीजियो सदैव जैसे बने वैसे अतिथिको प्रसन्नही करियो ४२ यहां तक कि अपने

शरीरकेदेनेसे भी जो प्रसन्नहोवे तो भी तू किसी बातका बिचार न कीजियो यह व्रत सदैव मेरे हृदय में वर्त्तमान रहता है ४३ हे सुन्दरी जो तू मेरे वचनको सत्यमानतीहै तो गृहस्थलोगोंको अतिथि पूजनसे विशेष कोई उत्तम धर्म नहीं है ४४ और बहुत सावधानी से मेरे इस बचन को सदैव हृदय में धारण करलो हे निष्पाप कल्याणी चाहेमैं घरमें रहूंवा बाहर जाऊं परन्तु तुकभी अतिथिका अपमान करनेको योग्यनहीं है इसमेरे बचनको बड़ीप्रीतिसेप्रमाण करना ४५ सो० अनुशासन धरि शीश ओघवती पतिसों कही। देतसु आज्ञा ईश सो व्रत पालब अवशिमैं ॥ अर्थात् तब ओघवतीने मस्तककेसमीप हाथोंकोजोड़के कहा कि हेप्राणपति मुझको आपके बचनसे किसी दशामें भी प्रतिकूल करना योग्य नहीं अर्थात् आपकी आज्ञासे सबकरसक्तीहूं ४६ हे राजा सदैव छिद्रोंके अन्वेषण करनेवाले और घरमें सुदर्शनको विजय करनेकी इच्छा करनेवाले मृत्यु देवता उस सुदर्शन की अविद्यमान ता में उसके घरमें आये ४७ अर्थात् जब अग्निका पुत्र सुदर्शन ईंधनलेनेके निमित्त बाहरगयाथा तब उस श्रीमान् अतिथि रूप ब्राह्मणने घरमें आकर ओघवती से कहा ४८ हे सुन्दरी अबमैं तुझसे वह आतिथ्य लिया चाहताहूं जो गृहस्थाश्रम का मुख्य धर्म तुझको प्रमाण है ४९ हे राजा उस बेदपाठी करके ऐसे याचना कीहुई यशवन्ती ओघवती राजपुत्रीने वेदोक्त विधिके अनुसार उसब्राह्मणको बड़े आदर से घरमें बुलाकर पाद्य अर्घ्य आसन देकर उस ब्राह्मणसे कहा कि आप क्याचाहतेहैं और किसवस्तुसेआपकाप्रयोजनहै उसको मैं आपके अर्थहूं ५०।५१ फिर उस ब्राह्मणने उस राजपुत्री सुदर्शना से कहा कि हे कल्याणी मेरा प्रयोजन तुझी से है जो गृहस्थाश्रम का मुख्य और अंगीकृत धर्म तुझ को प्रमाणी कहै तो तू निश्शंक होकर उस कर्म को कर ५२ हे रानी तू अपने शरीर दान से मेरा प्रयोजन सिद्ध करनेको योग्यहो ५३ और कहा कि हे राजकन्या मैं तेरे शरीर दान के सिवाय दूसरा दान किसी प्रकार का भी नहीं चाहताहूं ५४ तब

तो उस लज्जायुक्त राजपुत्री ने आदिसे ही पति के वचनोंको स्मरण करके उस उत्तम ब्राह्मण से कहा कि जो आपकी इच्छा हो सोई कीजिये ५५ तब तो वह ब्रह्मऋषि हँसकर बैठगये और वह स्त्री भी उस गृहस्थाश्रम के चाहने वाले अपने पति के वचनों को स्मरण करके बैठगई ५६ इसके पीछे वह अग्नि का पुत्र भी वन से ईंधन को लेकर उस आश्रम के समीप आया जो कि रुद्र भावयुक्त मृत्यु से बन्धु लोगों के समान सदैव संयुक्त था ५७ तब उस अग्निपुत्र ने आश्रम में आकर बारम्बार उस ओघवतीको पुकारा कि कहां गई है ५८ तब उसब्राह्मण के हाथोंसे स्पर्शवती उस पतिव्रता सतीने उस अपने पतिको उत्तर नहीं दिया ५९ कि मैं उच्छिष्ट हूं इस बात को मानने वाली और पतिसे लज्जावान् वह साध्वी मौन होगई और कुछ भी उत्तर नहीं दिया ६० फिर सुदर्शन ने कहा कि वह साध्वी कहां है कहां गई है इससे अधिक मेरी उत्तमवस्तु कौनसीहै ६१ वह पतिव्रता सत्यशीला सदैव सत्य मेंप्रवृत्त अब वह पूर्वके समान मन्द मुसकान करतीहुई कैसेसन्मुख नहीं आतीहै ६२ फिर पर्णशाला में बैठेहुये ब्राह्मणने उस सुदर्शन को उत्तर दिया कि हे अग्निके पुत्र तुम मुझ आये हुये ब्राह्मण को अतिथि जानो ६३ हे साधो मैं इसतेरी भार्याकी ओर से इनअनेक प्रकारके अतिथि सत्कारोंके द्वारा लुभाया गयाहूं परन्तु हेब्राह्मण मैंने और सब सत्कारों को छोड़कर इसी को मांगाथा ६४ सो यह शुभमुखी इस बुद्धी से मुझ को प्राप्त है अब जो आप इसके अपराध को योग्य समझो उसका दण्ड दीजिये ६५ फिर लोहमयी दण्ड हाथ में लिये मृत्युदेवता यह विचार करतेहुये चले कि अब मैं इस भ्रष्ट प्रतिज्ञा वाले को अवश्य मारूंगा ६६ फिर मन वचन कर्म वाणी आदि इन्द्रियों से ईर्षा और क्रोधके त्यागने वाले मन्द मुसकान करते हुये सुदर्शन ने कहा कि हे ब्राह्मणोत्तम तेरा संग आदिक कर्म अच्छेप्रकार से होय इसमें मेरी भी बड़ी प्रसन्नता है जो आये हुये अतिथिका सत्कार पूजनरूप धर्म गृहस्थी से होय

यही गृहस्थ का उत्तम धर्म है ६७ जिस गृहस्थका अतिथि पूजित होकर जाताहै उससे अधिक ज्ञानियों का कहा हुआ दूसरा धर्म नहीं है ६८ जो मेरे प्राण स्त्री आदि सब धन हैं वह अतिथियोंके ही देने के योग्यहैं यहीमेरा दृढ़ व्रत है ६९ मैं सत्य २ आत्मा की शपथ पूर्वक कहताहूं कि इस वचन में मुझको किसी प्रकारकाभी सन्देह नहीं है ७० पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, पांचवां अग्नि बुद्धि, आत्मा, मन, काल, दशों दिशा, गुण, इन्द्री ७१ यह सबशरीर में नियत होकर सदैव पुण्य पाप कर्म और धर्म को भी देखते हैं हे धर्म धारियोंमें श्रेष्ठ ७२ जैसे कि मैंने इस समय मिथ्या वचन को नहीं कहा सत्यही सत्य कहाहै इसी प्रकार देवता लोग भी मुझको उस सत्यता से चाहै कृपा करो चाहै नाशकरो हे भरतर्षभ इस के अनन्तर सब दिशाओं में बारम्बार यह शब्द प्रकट हुआ कि यहसब प्रकारसे सत्यहै मिथ्या नहींहै ७३ । ७४ इसकेपीछेवह ब्राह्मण उस पर्णशाला से बाहर निकला और अपने तेजसे स्वर्ग और पृथ्वी को व्याप्त करके वायुके समान खड़ाहोगया ७५ और उदात्तादि स्वरों से तीनों लोकों को शब्दायमान करके ब्राह्मण ने प्रथम तो उस धर्मज्ञ को नामसे पुकारकर सन्मुख होकर यहवचन कहा ७६ कि मैं धर्महूं तेरा कल्याण हो और निष्पाप मैं तेरी परीक्षा के निमित्त आया हूं तेरी सत्यता को जानकर तुझ में मेरी प्रीति अतिशय करके है ७७ इस मृत्यु को तुमने विजय कर लिया जो सदैव तेरे छिद्रों के देखने के लिये तेरे पीछे २ चलताथा तुमने अपने धैर्य के द्वारा इस को अपने स्वाधीनकर लिया ७८ हे पुरुषोत्तम तीनों लोकोंमें इस तेरी पतिव्रता साध्वी स्त्रीकी ओर देखने को भी किसी की सामर्थ्य नहीं है ७९ यह स्त्री तेरे गुणों से और अपने पातिव्रत धर्म के गुणों से ऐसी रक्षित और अधृष्यहै कियह जो मुख से कहदेगी वह कभी मिथ्या नहीं होगा ८० यहब्रह्मवादिनी अपने तपसे युक्त होकर संसारके पवित्र करनेके लिये उत्तम नदी होगी ८१ इसलोकमें तुम इसीदेहसे सबलोकोंको देखोगेऔर

यह स्त्री आधे शरीर से ओघवती नाम नदी होजायगी और आधे शरीर से तेरेपास नियत रहैगी ८२ क्योंकि यह महाभाग है और योग सिद्धी इसके आधीनतामें नियतहै ८३ और तुम इस स्त्री समेत तपसेप्राप्तहोने वाले इन प्राचीन और सनातन लोकोंको जाओगे जहां जाकर फिर आवागमन नहीं होताहै और इसी देहसे लोकों को प्राप्त करोगे ८४ मृत्युको तुमनेजीता और ऐश्वर्य भी तुम्हारा उतमहै हे स्वेच्छाचारी शीघ्रगामी तुमने अपने पराक्रम से पांचों तत्त्वोंकोभी उल्लंघन किया ८५ तुमने इस गृहस्थधर्मसेकाम क्रोध को विजयकिया हे राजा इसराजपुत्रीने तेरी सेवाके द्वारा स्नेह राग तन्द्रा मोह और शत्रुताको विजयकिया ८६ भीष्मजी बोलेकि भगवान् इन्द्रभी हजारश्वेत घोड़ोंसे युक्त उत्तम रथको लेकरउसके पास आये ८७ इसनेमृत्यु अपना आत्मा सबलोक पंचतत्त्व, बुद्धि काल, मन, आकाश और काम,क्रोधादिक विजयकिये ८८ हेनरोत्तम इसीहेतुसे अतिथिके सिवाय गृहस्थाश्रम का दूसरा देवता नहींहै इसोको चित्तसेविचार करो ८९ पूजित हुआ अतिथि जो चित्तसे आशीर्वाद देताहै उसको सौ यज्ञोंसेभी अधिक फलवाला ज्ञानीलोगोंने कहाहै ९० जो पुरुषशीलवान् और पात्र अतिथि को पाकर उसकासत्कार पूजन नहींकरताहै वहअतिथि उसको अपना पापदेकर उसके पुण्यको ले जाताहै ९१ हेपुत्रमैंने यह उत्तमइतिहास तुमसे कहा जिसकेकरनेसे पूर्वसमयमें गृहस्थीने मृत्युकोविजय किया ९२ यह उत्तम इतिहास धन वा यशका देनेवाला और आयुर्दा का पूर्ण करने वाला है और ऐश्वर्य्य चाहने वालों को यह आख्यान सब पापोंका दूरकरने वाला मानना योग्य है ९३ हे भरतर्षभ जो ज्ञानीपुरुष इससुदर्शनके चरित्रको वर्णन करेगा वह पवित्र लोकोंको प्राप्तकरेगा ९४ दो० उपाख्यानउत्तममहापावन धन्ययशस्य। पुण्यपुत्रधनधान्यप्रदमङ्गलमंजुरहस्य॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेदानधर्मेसुदर्शनोपाख्यानेद्वितीयोऽध्यायः २॥

तीसरा अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे महाराज राजा भीष्मजी जो तीनों वर्णों को ब्राह्मण वर्णका प्राप्त होना कठिनता से होता है तो ऐसी दशा में महात्मा क्षत्री विश्वामित्र ने ब्राह्मण वर्ण को कैसे पाया हे धर्म्मात्मा नरोत्तम पितामह इसको मुख्यता पूर्वक आप मुझको सुनाइये १ । २ और उसी अतुल पराक्रमीने अपने तप के द्वारा महात्मा वशिष्ठजी के सौ पुत्रों को मारा ३ और महाक्रोध युक्त होकर तपस्याके द्वाराअपने शरीरसे अत्यन्तघोर पराक्रमी राक्षसों कोभी उत्पन्न किया ४ फिरउस ब्राह्मणोंसे स्तूयमान ज्ञानी विश्वामित्रने इसी नरलोक में हजारों ब्रह्मर्षियों से व्याप्त कुशिककुल नियत किया ५ और महातपस्वी ऋचीक के पुत्र शुनःशेप को जोकि पशुभाव में करदियागया था उसको महायज्ञ से छुटाया ६ और राजाहरिश्चन्द्र यज्ञमें अपने तेजसे देवताओं को प्रसन्न करके बड़े बुद्धिमान् विश्वामित्र के पुत्ररूप होगये ७ इसके पीछेविश्वामित्रने अपने पचासपुत्रोंको यह समझकर कि यह अपने बड़े भाई देवरातको नमस्कार नहीं करते हैं शापदिया तब उनके सबपुत्रोंने चाण्डाल वर्णकोपाया ८ इक्ष्वाकुबंशी राजा त्रिशंकु जो वशिष्ठजीके शापसे भाइयों से निकाला हुआथा उसको विश्वामित्र ने प्रीति समेत औंधाकरके स्वर्गकोभेजा वह दक्षिण दिशामें वर्त्तमान है ९ विश्वामित्रकी कौशिकीनाम बड़ीनदी देवर्षि ब्रह्मर्षियों से सेवित महा आनन्दकारी धर्मकी वृद्धिका कारणरूप है १० जिसकेशापसे तपका विघ्न करनेवाली पांच चूड़ाओं से शोभित बड़ी स्वरूपवान् रम्भानाम अप्सरा पर्व्वताकार बनगई ११ इसीप्रकार पर्वकाल में श्रीमान् वशिष्ठजी ने विश्वामित्र के भयसे अपने शरीर को बांधकर जलमें डुबोया और कुछकालपीछे बन्धन टूटजानेसे फिर उठबैठे १२ तबसे लेकर वह धर्मकी बढ़ानेवाली नदी महात्मा वशिष्ठजी के उस कर्म से विपाशा नाम करके लोकमें विख्यातहुई १३ देवसेना के

अग्रगामी इन्द्रदेवता उस राजर्षिसे स्तूयमान होकर बहुत प्रसन्न हुये और इसको वशिष्ठजी के शापसे छुटादिया अर्थात् वशिष्ठजीने यह शापदिया था कि तू चांडालका यजमान होकर चाण्डालही होगा उसको सत्य करनेके लिये विश्वामित्र ने चांडाल के घर से कुत्तेकी जंघाको चुराकर पकाना प्रारम्भ किया उसको इन्द्रदेवता ने बाजका रूप बनाकर हरलिया तब विश्वामित्र वशिष्ठजी के शापसेछूटे जैसेकि उत्तरदिशामें उत्तानपादकेपुत्र ध्रुवजी सदैवस्थिर रूपहोकर बर्त्तमान रहते हैं उसीप्रकार बिश्वामित्रभी ब्रह्मर्षियों के मध्यवर्त्ती होकर प्रकाशमान हैं १४।१५ हे युधिष्ठिर उसक्षत्री विश्वामित्रने इसीप्रकारके अनेककर्मकियेहैं इसहेतुसे यहमेराभी शोक कौतूहल रूपहै १६ हे भरतर्षभ यह क्या बातहै कि विश्वामित्र ने बिना दूसरे शरीर धारणकिये इसी शरीरसे ब्राह्मणवर्णपाया इस को मूलसमेत कहिये और ब्राह्मणी में शूद्रसे उत्पन्न होनेवाले मतंग काभी जो कुछ वृत्तांत है उसकोभी कहिये कि जिसने बड़ीबड़ी तपस्याओंसेभी ब्राह्मणवर्ण नहींपाया इसी प्रकार का यहभीहै इसको मूलसमेत बताइये १७।१८ हेभरतवंशियोंमेंश्रेष्ठ यहबातसत्यहै कि चांडाल योनिमें जन्म लेनेवाले मतंगने ब्राह्मण वर्ण को नहीं पाया फिर विश्वामित्रने ब्राह्मण वर्ण कैसे पालिया १६ ॥

इतिश्री महाभारते अनुशासनिके पर्वणि विश्वामित्रोपाख्यानेतृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय ॥

भीष्मजी बोलेकि हे तात युधिष्ठिर जैसेकि पूर्वसमयमें विश्वामित्रनें ब्राह्मण वर्ण को और ब्राह्मण वर्णसें ब्रह्मर्षि भावको पाया उसको मैं मूलसमेत कहता हूं तू दृढ़मति होकर सुन १ पूर्वकाल में भरतबंश में एक अजमीढ़नाम राजाहुआ वह महा यज्ञकर्त्ता और धर्मधारियोंमें उत्तमथा २ उसका बड़ापुत्र जह्नुनाम राजाहुआजिस महात्माकी साक्षात् श्रीगंगाजी पुत्रीहुईं ३ उसका पुत्र बड़ायशस्वी सिन्धुद्वीपनामहुआ और सिंधुद्वीपकापुत्रमहाबलीबलाकाश्वहुआ४

उसकापुत्र दूसरा धर्मरूप बल्लभ हुआ बल्लभकापुत्र इन्द्रके समान द्युतिमानकुशिक हुआ ५ कुशिककापुत्र राजागाधि हुआ वह अपुत्र होकरसन्तानके अर्थ बनमें वासकरनेलगा ६ वहांबनमें बसतेहुये उस के एक कन्या उत्पन्न हुई जिसकानाम सत्यवतीथा और रूपगुणमें उसके समान पृथ्वीमें कोई न था ७ उसकन्या को च्यवनपुत्र श्रीमान् भार्गव तपोमूर्त्ति ऋचीकऋषिने मांगा ८ तब शत्रुसंहारी राजागाधिनें उस ऋचीक ऋषिको निर्द्धन समझकर अपनी कन्या को नहीं दिया ९ और जब ऋषि निराश होकरचले तब उसबुद्धिमान्राजाने यह वचनकहा किजो आप मुझकोशुल्कदें तौ मैं कन्या आपको दूं १० ऋचीकबोले कि हे राजेंद्र मैं क्या शुल्क तुमकोदूं आप निःसंदेह संकल्प विकल्प को त्यागकर अपनी पुत्रीका शुल्क मुझसें कहो ११ गाधिने कहा हे भार्गवजी चन्द्रमाकी किरणों के समान प्रकाशित बायुके समान शीघ्रगामी एक हजारश्यामकर्ण घोड़े दीजिये १२ भीष्मजी बोले कि इस बातको सुनके च्यवनपुत्र महाप्रतापी ऋचीक ऋषिने जलोंके स्वामी आदित्य के पुत्र वरुण देवतासे कहा १३ हे देवताओं में श्रेष्ठ बरुण मैं तुमसे एक हजार श्याम कर्ण ऐसे घोड़े भिक्षा मांगताहूं जो चन्द्रमाके समान प्रकाशमान और बायु के सदृश शीघ्रगामी होयँ १४ फिर आदित्य के पुत्र वरुण देवताने उन उत्तम भार्गव ऋचीकसे कहा कि तथास्तु अर्थात् ऐसाही हो जहाँ आपकी इच्छा हो वहांहीं ऐसेघोड़े जलसे उठेंगे १५ और ऋचीक के ध्यान करतेही चन्द्रमाकी समान प्रकाशित बड़े तेजस्वी हजार घोड़े गंगाजल से बाहर निकले १६ अब तक भी वह स्थान जहां से घोड़े निकले कन्नौजके पास श्री गंगाजीके उत्तम तटपर अश्वतीर्थ नाम से प्रसिद्धहै १७ इसके पीछे महातपस्वी प्रसन्न चित्त ऋचीक ऋषिने शुल्क के निमित्त हजार उत्तम घोड़े राजा गाधि को दिये १८ उन घोड़ों को देख कर वह राजा गाधि बड़ा आश्चर्य्यित हुआ और शापके भयसे उस कन्या को आभूषणों से अलंकृत करके भार्गव ऋचीक जीके अर्थ बड़ी

श्रद्धा और प्रीतिसे दानकिया १६ और ब्रह्मर्षियों में श्रेष्ठ ऋचीकने बुद्धि के अनुसार उसका पाणिग्रहण किया और कन्या भी ऐसे महा तेजस्वी पतिको प्राप्त होकर बड़ी प्रसन्नहुई २० हेराजा वह ब्रह्म ऋषि उसकी सेवा आदि से बहुत प्रसन्न हुये और कहा कि हे सुन्दरी तू बर मांग २१ तब उस कन्या ने उस सब वृत्तान्त को अपनी माता से कहा तब उसकी माता ने नीचे को मुख करके कहा २२ कि हे पुत्री तेरा पति जो प्रसन्न है तो मुझे भी सन्तान देसक्ते हैं क्योंकि वह महा तपस्वी और समर्थ हैं २३ फिर उस सत्यवती ने शीघ्रही जाकर माता की इच्छाको ऋषि से कहा २४ तब ऋचीक ने उससे कहा कि हे कल्याणिनि वह तेरी माता मेरी कृपा से शीघ्रही गुणवान पुत्र को उत्पन्न करेगी और तेरी इच्छा बिपरीत न हो २५ हे स्तुतिके योग्य सुन्दरी तेरा पुत्र महा पुरुष श्रीमान् हमारे वंश का चलाने वाला उत्पन्न होगा यह तू मेरा कहना सत्यहीजान २६ सो हे प्रिये तेरी माता ऋतुस्नान से शुद्ध होकर पीपल के वृक्षको और तू गूलर के वृक्षको मिलो और देहसे स्पर्श करो इसके पीछे पूर्वोक्त अपने२ पुत्रोंको पाओगी २७ हे शुचिस्मिते यह दो चरु मैं मंत्र से पवित्र करके तुमको देताहूं इनको तुम दोनों भोजन करो तब तुम दोनों अपने २ चरु भोजन करने से पूर्व्वोक्त पुत्रोंको पाओगी २८ फिर अत्यन्त प्रसन्न चित्त सत्यवतीने जो ऋषिने कहाथा उसको मातासे प्रकटकरदिया २६ तब माताने सत्यवती पुत्री से कहा कि हे पुत्री तू अपने पतिसे भी अधिक मेरे वचन को कर ३० तेरे पतिने जो मंत्रों से अभिमंत्रित चरु तुझको दिया है उसको तू मुझे दे दे और मेरे चरुको तू ले ले और वृक्षोंको भी हम तुम परस्पर में बदललें जो तू मेरे वचन को माने ३२ सब संसार अपनी सन्तानोंको पवित्र और उत्तम चाहते हैं और प्रकट होताहै कि भगवान् ऋषिने भी चरुओंमें यही कर्म किया होगा ३३ इसकारण हे सुन्दरी तेरे चरु और वृक्ष में मेरी प्रीतिहै तुम इसको विचारो कि तुम्हारा भाई कैसे श्रेष्ठ होगा ३४

फिर उस सत्यवती और सत्यवतीकी माता ने ऐसा परस्पर अदल
वदल कर्म किया हे युधिष्ठिर इसके अनन्तर उन दोनों ने गर्भोंको
धारण किया ३५ भार्गवोंमें श्रेष्ठ महर्षि ऋचीक ने अपनी स्त्री को
गर्भवती देखकर महा दुखी चित्त होकर उससे कहा ३६ मुझको
विदित होताहै कि तेरा चरु बदला गया हे शुभ स्त्री तुमने वृक्षोंमें
भी अवश्य विपर्य्यय किया होगा ३७ क्योंकि मैंने तेरे चरु में स-
म्पूर्ण ब्रह्म तेज प्रविष्ट कियाथा और उसके चरुमें सम्पूर्ण क्षत्रीबल
प्रविष्टकियाथा ३८ तू वेद पाठी और तीनों लोक में प्रसिद्ध गुण
वाले पुत्रको उत्पन्न करेगी और वह तुम्हारी माता उत्तम क्षत्री को
पैदाकरेगी और यह सब विपरीत होगया ३९ हे उत्तमांगी जो कि
तुमने और तुम्हारी माताने चरु और वृक्षोंका वदला कियाहै इस
हेतुसे वह तेरी माता तो श्रेष्ठ ब्राह्मण को उत्पन्न करेगी ४० और
तुम भयकारी कर्म्म करनेवाले क्षत्रीको उत्पन्न करोगी हे भामिनी
तुमने माताकी प्रीतिसे यह अच्छा कर्म्म नहीं किया ४१ हे राजा
वह सत्यवती पतिके इस वचनको सुनकर महाखेदयुक्तहो व्याकु-
लतासे प्रथम तो सुन्दरलता और शिखरके समान पृथ्वी पर गिर
पड़ी ४२ फिर कुछ चैतन्य होकर बड़ी नम्रता से दण्डवत् करके
ऋचीक ऋषिसे कहनेलगी ४३ कि हे ब्रह्मज्ञानियोंमें श्रेष्ठ ब्रह्मर्षि
आपमुझ दीन अपनी भार्या परप्रसन्न हूजिये और ऐसी कृपाकरिये
कि मेरापुत्र क्षत्री नहींहोय चाहैमेरापौत्र भयकारी कर्मोंका करने
वाला होजाय परन्तु यहमेरा पुत्र क्षत्री न होय यह मुझे बरदान
दीजिये ४५ तव प्रसन्नहोकर उन महा तपस्वी महर्षिने कहाकि
ऐसाहीहो इसकेपीछे उसने जमदग्निनामपुत्रको उत्पन्न किया ४६
और राजागाधि की यशवन्ती भार्याने ब्रह्मऋषिकी कृपा से ब्रह्म
वादी विश्वामित्रको उत्पन्नकिया ४७ फिरवह महातपस्वी विश्वा-
मित्रक्षत्री ब्राह्मणवर्ण को पाकर ब्रह्म बंशका नियत करने वाला
हुआ ४८ और उसके पुत्र महातपस्वी ब्रह्मज्ञ ब्रह्मबंशको बढ़ाने
वाले और गोत्र कर्त्ताहुये ४९ उनकेनामयहहैं कि मधुच्छन्द, भग-

वानदेवरात, उक्षीण, शकुन्त, वभ्रु, कालपथ, याज्ञवल्क्य, नाम प्रसिद्धऋषि, महाव्रतस्थूण,उलूक, यमतद्र, सैंधवायनऋषि, वेल्गु-जंघ, बड़े ऋषि भगवान् गालव, वज्रऋषि, प्रसिद्ध सालंकायन, लीलाठ्य, नारद, प्रसिद्ध कूर्चामुख, वादुलि, मुसल, वक्षोग्रीन, आंघ्रिक, नैकदक, शिलायूप,शितशुचि, चक्रकामा, तंतव्य, वातघ्न, आश्वलायन, श्यामायन, गार्ग्यजावालि,सुश्रुत, कारीषि, संश्रुत्य, परपौरवतंतव, महर्षि कपिल, ताड़कायन, उपगहन, आसुरायन ऋषि, मार्द्दमर्षि, हिरण्याक्ष, जंघारि, वाभ्रवायणि, भूति, विभूति, सूत, सुरकृत, अरालि, नाचिकेत, चाम्पेय, अंजयन, नवतंतु, वक्र-नख, सयन, यति, अम्भोरु चारुमत्स्य, शिरीषी, गार्दभिः ऊर्जय, निरुद्यपेक्षी, महर्षिनारदी इतने विश्वामित्रजीकेपुत्र मुनि ब्रह्मवादी हुये इसीप्रकार विश्वामित्र क्षत्रीभी महातपस्वी थे ६० ऋचीक भार्गव ने जो उस चरु में परब्रह्म का तेज धारणकिया था यही उनके ब्राह्मणवर्ण होनेका मुख्य कारण था ६१ हेभरतर्षभ युधि-ष्ठिर यह सब वृत्तांत मैंने तुझसे मूलसमेत कहा इन विश्वामित्रजी का जन्म चन्द्रमा सूर्य और अग्निके समान तेजस्वी वर्णन किया इसकेसिवाय जो २ तुझको सन्देहहोय उनकोपूछ मैं तेरे सबसंदे-हांको निवृत्त करूंगा ६२ ॥

इतिश्री महाभारतेअनुशासनिकपर्वणि दानधर्मे विश्वामित्रोपाख्यानेचतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पांचवांअध्याय ।

युधिष्ठिर बोले हेधर्मज्ञ पितामह हिन्सा रहित कर्म और भक्त जनोंके गुणोंको मैं सुनना चाहताहूं आपकृपा करके वर्णन कीजिये भीष्मजीबोले कि इस स्थानपरमैं वहप्राचीन इतिहास वर्णनकरता हूं जिसमें इन्द्रका और शुकपक्षीका सम्वाद है २ काशीराजके देश में एकलुब्धक अपनेग्रामसे निकल विषभरे बाण को हाथ में लिये मृगोंके ढूंढ़नेको निकला ३ और उसमहावनमें समीपही मृगों को देख कर उसने बाणको धनुषपर चढ़ाया ४ और एकवृक्ष के नीचे

वैठे हुये मृगपर वह बाण चलाया वह बाण ऐसा विषयुक्त और तीक्ष्णथा कि उसनेमृगको छेदकर उससमीपवर्ती एक जङ्गली वृक्ष को भी छेदा ५ वड़ेतीक्ष्ण विषसेभरे बाण उग्रवेगसे वह वृक्ष विदीर्ण होगया और उसके विषकीअग्निसे उसके फलपत्ते आदि गिरे और वह खड़ाहीसूख गया ६ उसवृक्षकी वहदशादेखकर उस वृक्ष के खोहर में चिरकालसे निवास करनेवाले एक तोतेने उस वृक्ष की प्रीतिसे निवासस्थानको त्याग नहींकिया यहतोता उपकार का जाननेवाला था इसी हेतुसे वह महात्मा अत्यंत निर्वल निराहार चित्तसे महाखेदित होकर उसीवृक्षके साथ शरीरसेसूखगया ८ उस वड़ेबुद्धिमान कृतज्ञ दुखसुखमें समान बुद्धिलेव तोते को देखकर इन्द्रको वड़ाआश्चर्य हुआ ६ इसकारण इन्द्रने चिन्ताकरी कि यह पक्षी उसकरुणा और दयामें प्रवृत्तहै जो पक्षी व पशुजन्माओं में होना असम्भवहै १० या सव जीवोंकी जातोंमें करुणा दया आदि दिखाई देतेहैं ११ इसके निश्चय करनेकेहेतु इन्द्रने ब्राह्मण का रूप वनाकर उसतोतेसे पूंछा १२ हे पक्षियोंमें श्रेष्ठ तोते मैं तुझसे पूंछताहूं कि इस फलपत्र रहित रससे विगत सूखेवृक्ष में रहने से तुमको क्यालाभहै अब इस वृक्षको छोड़ कर पुष्पित फलित सप-ल्लव तरु पर निवास करो तुमको बहुत दिनतक जीनाहै औरइस वृक्षका शरीर मृतकहोगया इन्द्रके इस वचनको सुनतेही तोते ने जानलिया कि यहइन्द्रहै और हृदयसे नम्रता पूर्वक नमस्कारकर के साधुओंके समान वचनवोला कि हे शक्र तुमत्रिलोकीके पतिहो तुमको सवजीवोंका पालन उपकार और स्नेहकरनायोग्यहै हेसुर-पति आप धर्मशिक्षक और धर्मपालक विख्यातहैं कहिये मुझको इसवृक्षका त्यागनायोग्यहै व अयोग्य इसीवृक्षपरजन्मे और इसी के फलफूल खाकर इतने वड़ेहुये और इसीकीआड़में अनेकशत्रुओं से वचे अब इसकेऊपर आपत्ति पड़गईहै इससे यहफल दलसेहीन होगया इसके त्यागनेसे हमपातकी होंगे इससेइसीके कोठरमें वैठ कर मरजाना हमको भी उचितहै रक्षकपर आपत्तिकाल आने से

उसके आश्रितोंको उसकात्यागना महाअधर्महै इंद्रनेतोतेकीस्वच्छ और शुद्ध भक्तिको देखकर प्रसन्न होकर कहा कि हे शुक जो तेरे मनकोइच्छाहै वह वर मांग शुकनेकहा कि हे इन्द्रजो आपमुझपर प्रसन्नहैं तो यह वृक्ष पूर्व के समान पुष्पित फलित और सपल्ल-वितहोजाय तब इन्द्रने उसको अमृतसींचकर पूर्वकेही समानफल पुष्प और पल्लवोंसे युक्त किया फिर तोतेकी दृढ़भक्ती होने से वह वृक्षमनोहर फलपत्तोंसे युक्तहोकरअत्यंत शोभायमानहुआ ३० और उस तोतेने उसअपने कर्म और करुणा के करनेसे इंद्रके लोक को पाया ३१ हे नरेंद्र इसीप्रकारसे भक्तिमान् पुरुषकी रक्षा करने से मनुष्यसम्पूर्ण अभीष्टों को ऐसे सिद्धकरताहै जैसे कितोते की रक्षा करनेसे इसवृक्षने मनोरथोंको पाया ३२॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनपर्व्वणिदानधर्मेशुकवासवसम्वादेपंचमोऽध्यायः ५॥

छठवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले हे महा ज्ञानी सबशास्त्रज्ञोंमें श्रेष्ठ उद्योग और प्रारब्धमें कौन उत्तम गिना जाताहै १ भीष्मजी बोले हे युधिष्ठिर इसस्थान परभी एक प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें वशिष्ठ जीका और ब्रह्माजीका सम्वादहै २ पूर्वकालमें भगवान् वशिष्ठ जीने ब्रह्माजीसेपूछा कि दैव अर्थात् पूर्वजन्मका कर्म और मानुष वर्त्तमान जन्ममें कर्म करता अर्थात् उद्योग करना इन दोनों में कौनसा श्रेष्ठकहाजाता है ३ इसकेपीछे कमलोद्भव देव देव ब्रह्मा जीने इसविषय और हेतुसेभरेहुये मधुर वचनकोकहा ४ कि विना बीजके कुछ उत्पन्न नहीं होताहै और फलभी बीजहीसे पैदाहोताहै बीजसे बीज प्रकट होताहै और बीजहीसे फल हुआ ५ खेती करने वालाखेतमें जैसे बीजको बोताहै वैसेहीफलको पाताहै इसी प्रकार पुण्य पापके बीजरूप होनेपर भी ६ जैसे कि विनाबीजके जोता हुआ खेत निष्फल होताहै इसी प्रकार विनाउद्योगके दैव अर्थात् प्रारब्ध भी फलको नहीं देताहै ७ उद्योग तो क्षेत्र है और प्रारब्ध

बीजहै इसहेतुसे क्षेत्र और बीजके अच्छीरीतिसे योगहोनेसे धान्य की उत्पत्तिहोतीहै ८ कर्त्तामनुष्य आप अपने कर्मोंके कियेहुये फल को पाताहै लोकमें अच्छे बुरे फल देखनेमें आतेहैं ९ अच्छे कर्म्म काफल सुख और बुरे कर्मकाफल दुख पाताहै कर्महो सबस्थानों पर फलकोदेता है बिना कियाहुआ कभी नहीं भोगताहै १० कर्म करनेवाला सर्वत्र प्रारब्ध योगसेही प्रतिष्ठाको पाताहै और अकर्म कर्त्ता और अधिकार से भ्रष्ट मनुष्य घावपर नोन बुरकता है ११ तपस्यासे सुन्दर स्वरूप सौभाग्य और अनेक रत्नोंको प्राप्तकरता है कर्मसे सब पदार्थों को पाताहै परंतु अशुद्ध अन्तःकरण पुरुषोंके प्रारब्धसे नहीं पाता इसीप्रकार स्वर्ग, भोग वा व्रत श्रद्धा आदि निष्ठा और बुद्धिकी कुशलता इनसब बातोंको इसलोकमें करेहुये उद्योगसे पाताहै १२ और प्रकाशमान नक्षत्र आदि और देवता, नाग,यक्ष,चन्द्रमा,सूर्य, बायु, इन सब ने उपाय और उद्योगोंकेही द्वारा नररूपको उल्लंघन करके देवता रूपकोपाया १४ इसीप्रकार कर्मों के न करनेवाले पुरुषोंसे धनादिक अर्थ समूह वा मित्र कुल संयुक्त ऐश्वर्य और लक्ष्मीभी भोगनो कठिनहै १५ वेदपाठीब्राह्मण बाहर भीतरकी शुद्धता से लक्ष्मीको पाताहै क्षत्री पराक्रम से वैश्य उपायों से और शूद्र सेवासे लक्ष्मी को पाता है १६ दानके न करनेवाले, नपुंसक, कुछभी कर्म्म न करनेवाले संन्यासी शूरता से रहित और बिना तपस्यावान मनुष्य को धनादिक अर्थ सेवन नहीं करते हैं १७ जिससे तीनोंलोक देवता दैत्य और मनुष्यादिक उत्पन्न हुये वह भगवान् विष्णुजी भी समुद्र में तपस्या को करतेहैं १८ जब कि अपना कर्म फल नहीं होताहै तब सबबातें निष्फल होतीहैं उसको देखकर सबलोग उदासीनहोतेहैं १९ जो पुरुष अपने पुरुषार्थको न करके प्रारब्धके अनुसार कर्मको करता है वहऐसे निष्फल परिश्रम करताहै जैसे कि नपुंसक पुरुषको पाकर स्त्री परिश्रम करतीहै २० इस नरलोक में शुभाशुभ कर्मोंके करने में ऐसे भय नहीं है जैसे कि देवलोक में किसी पापसे भय उत्पन्न

होताहै २१ मनुष्यका कियाहुआ उद्योगरूप कर्म्म प्रारब्धके अनु-
सार वर्त्तमान होताहै और कर्म्म कियेबिना दैवरूप प्रारब्ध किसी
को कुछ नहीं देसक्ता है २२ जैसे कि देवताओं में भी इन्द्रलोक
आदिस्थान नाशमान दृष्टिआते हैं फिर शुभ कर्मके कियेबिना अपने
देवताओंके समूहके नियत करनेका आकांक्षी कैसे अपने देवताओं
के समूहको नियत करसक्ताहै २३ इसलोकमें देवतालोग किसीके
शुभकर्मको नहीं चाहतेहैं किन्तु अपने परास्त होनेके सन्देहसे धर्म
के विघ्नकरनेवाले व्यासंगोंको उत्पन्न करतेहैं २४ ऋषि और देव-
ताओंकी सदैव शत्रुताहोती है अर्थात् देवतालोग ऋषियोंके तपमें
विघ्न किया करतेहैं और च्यवनजी सरीखे ऋषिलोग देवताओंकी
अप्रतिष्ठा करतेहैं यद्यपि इसरीतिसे कर्म प्रधानहै तो भी किसीके
बचनसे दैवका न होना भी सिद्धहै उसकी उत्पत्ति इसप्रकारसेहै कि
जैसे प्रारब्ध वर्त्तमानहोता है इसीरीति से देवलोकमें भी बहुत से
भोगादिक गुण प्राप्तहोतेहैं २६ आत्माही आत्माका बन्धुहै आत्म-
ही आत्माका शत्रुहै आत्माही अपने पाप पुण्यका साक्षीहै २७ कर्म
के करनेपर पुण्यके साथ कुछ पाप भी प्राप्तहोता है इसी हेतुसे
पुण्यसे पापका और पापसे पुण्यका नाशहोनेपर शुभाशुभ कर्मों
का फल ठीक २ नहीं होता किन्तु परस्परमें उनका ऋण धनहो
जाताहै अर्थात् वसूलबाकी होजाताहै २८ देवताओंके सब पवित्र
लोक शुभ कर्मोंसे मिलतेहैं देवताओंको शरणमें पुण्यहै और पुण्य
से सब प्राप्तहोताहै और पुण्यशील पुरुषको प्राप्त होकर दैव क्या
करैगा अर्थात् पुण्यकी आधिक्यता से दैवनाश होजाताहै २९ उस
के यहफलहैं—पूर्व समयमें स्वर्गसे भ्रष्टहोकर राजा ययाति पृथ्वी
पर गिरायागया फिर पवित्र कर्म करनेवाले दौहित्रोंने स्वर्गमें पहुं
चाया ३० पूर्वकालमें राजर्षि ऐलनामसे प्रसिद्ध राजा पुरूरवाने
ब्राह्मणों से अभीष्ट सिद्ध करके स्वर्गको पाया ३१ अश्वमेधादि
यज्ञोंसे संस्कार पानेवाला कौशल पुरका सौदासनाम राजा मह-
र्षीके शापसे राक्षसके समान मनुष्योंका भक्षण करनेवाला हुआ ३२

मुनिके पुत्र धनुषधारी परशुराम और अश्वत्थामा दोनों महात्मा इसलोक में अपने कियेहुये कर्म से बहुत कालतक स्वर्ग को नहीं जायँगे ३३ सैकड़ों यज्ञोंके करनेके हेतु इन्द्रकी समान राजा वसु ने एकवारके मिथ्या कहनेसे रसातलके भीतलको पाया ३४ विरोचन का पुत्र राजा बलि देवताओं के धर्म बंधन में बंधा हुआ विष्णुजीके विचारसे पातालवासी कियागया ३५ तेजस्वियों के दोषके निमित्त पाप भी नहीं होसक्ता है इसको वर्णन करते हैं— राजा जन्मेजय ब्राह्मणों की स्त्रियों को मारकर इन्द्रकी शरण में होके स्वर्गको गया वह दैवसे क्यों न रोकागया ३६ वैशम्पायन ब्रह्मर्षि अज्ञानसे ब्राह्मणको मारकर बालवध के अपराध में स्पर्श नहीं कियागया वह दैवसे क्यों नहीं रोकागया ३७ किसीकापुण्य भी किसीकी रक्षानहीं करसक्ताहै इसको कहतेहैं—पूर्व समय में राजर्षि राजानृगने बड़े यज्ञमें ब्राह्मणको मिथ्या गोदानदेने से गिरगटकी योनि को पाया ३८ वह महावृद्ध धुंधुमार राजर्षि यज्ञों में देवताओंके दिये हुये वरप्रदानोंको त्याग करके गिरिव्रजमें सोने वालाहुआ अर्थात् यज्ञफल को नहीं लिया ३९ बड़े पराक्रमी धृतराष्ट्रके पुत्रोंने पांडवों का राज्य छीनलिया फिर अपने भुजबल से पांडवोंने लौटालिया परन्तु दैवसे नहीं लौटा ४० तप और नियमसे संयुक्त मुनिलोग जो शापदेतेहैं वहदैव बलसे नहीं देतेहैं किन्तु अपने कर्मकेही पराक्रमसेदेते हैं ४१ संसारमें बड़े दुष्प्राप्य ऐश्वर्यादिक पापीके पासपहुंचकर फिर उसको त्यागकरतेहैं और लोभमोहसे भरेहुये मनुष्यकी दैव रक्षानहीं करताहै ४२ अब दो श्लोकोंमें कर्मके आधीन दैवको वर्णन करते हैं जैसे कि अत्यन्त सूक्ष्म अग्नि भी वायुसे संपर्कहोकर बहुतबड़ा होता है इसीप्रकार कर्मसे संयुक्त होकर दैव भी अच्छी वृद्धिकोपाता है ४३ जैसे कि तैलकी समाप्ती होनेसे दीपकका नाशहोजाताहै इसीप्रकार कर्म्म की समाप्ती होनेसे दैवनष्ट होजाताहै ४४ इसलोकमें कर्म नकरने वाला पुरुष बहुतसे धनभोग और स्त्रियादिकोंको पाकरभी भोगने

को समर्थ नहींहोता और सदैव कर्म्ममें प्रवृत्त महात्मा पुरुष इस लोकमें देवताओंसे रक्षित और पातालमें नियत धनदौलतको भी पाताहै ४५ जो पुरुष बड़ा खर्च करनेवाला साधुहै उसको देवता लोग उसीके कर्मद्वारा अच्छेप्रकार से सेवन करते हैं इस नर-लोकसे देवलोक श्रेष्ठ होताहै क्योंकि धन आदिकी अत्यन्त वृद्धि से पूर्ण मनुष्यों के घर देवताओं को श्मशान भूमि के समान दृष्ट आतेहैं ४६ इस जीवलोक में कर्म न करनेवाला पुरुष फलको नहीं पाताहै और केवलप्रारब्धवाले निकृष्ट मार्गमें नियत मनुष्यको बुरे मार्गसे अच्छे मार्ग में नहीं लेजाते हैं दैवमें सामर्थ्यनहीं है दैव कियेहुये उत्तम कर्मके अनुसार ऐसे कर्मकर्त्ताहोताहै जैसेकि शिष्य गुरुकी इच्छाके अनुसार कर्मको करताहै और जिस जिस काममें उपाय अच्छीरीतिसे होताहै वहदैवको उसी उसी स्थानपर प्रकट करताहै अर्थात् जब उपाय करनेसे कोई प्रयोजन सिद्धहोता है तब संसारी लोग कहते हैं कि यह प्रारब्धसे प्राप्तहुआहै ४७ हे श्रेष्ठ मुनियो मैंने यह उपाय का फल सदैव मूल समेत देखकर तुमसे कहा पूर्व जन्मका कर्म जो दैवहै वह दोप्रकारका है एक संचित दूसरा भोगके निमित्त प्रकट होनेवाला प्रारब्ध इन दो प्रकार के दैवके प्रकट होनेसे वा उसके अनुसार कर्म करनेसे इसलोक का फल मिलताहै शास्त्र और शास्त्र के अनुसार कर्म्म करने से स्वर्ग मार्गको पाताहै तात्पर्य्य यहहै कि भोगदैवके आधीनहैं और भोग के पदार्थोंका समूह कर्मोंके स्वाधीनहै ४८ ॥

इतिश्री महाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेदैवपुरुषकार निर्देशेषष्ठोऽध्यायः ६ ॥

सातवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले हेभरतर्षभ तुमसबशुभकर्मोंके फलकोमुझसे कहो १ भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर ऋषियों की जो गुप्तबातहै उसको मैं कहताहूं तुम चित्त लगाकर सुनो २ कि शरीर त्यागने के पीछे जिसपुरुषसे कि बहुतकालका अभीष्टफल प्राप्तकियाजाताहै उसको

और मनुष्य जिस २ शरीरसे जिस २ कर्मको करताहै उसको सुनो ३ जिस २ शरीरसे जिस २ कर्म फलको पाताहै वह यहबात है कि जो जिस २ तरुण युवा और वृद्धावस्थामें जैसे २ शुभ और अशुभ कर्मोंको करता है वह पुरुष उसी२दशामें जन्म जन्मके मध्य मेंभोगताहै ४ इसलोक में पांचों कर्मेन्द्रियों से कियाहुआ कर्म नष्ट नहीं होताहै वह छः मन समेत इन्द्री और आत्मा उसके साक्षी-भूत हैं ५ अभ्यागत अतिथिको नेत्रदेना चित्तदेना सत्यबचन देना समीपबैठाना पीछेचलना यह पांचप्रकार का दक्षिणावाला यज्ञ कहाताहै ६ जो मनुष्य पश्चात्ताप और चित्तसे खेद नंकरके केवल अन्न वा भोजन आदिकी वस्तु पूर्वकभी न देखेहुये मार्गमें वर्त्तमान थकेमांदे पथिकको देताहै उसके पुण्य के फलको संख्या अगणित है मैदान जंगल आदिके सोनेवालों को घर और शय्या सोनेकोदे चीर वल्कल धारण करनेवाले पुरुष को वस्त्र और आभूषणों का दानकरे ८ योग में चित्त लगानेवाले तपोधन लोगों को घोड़े रथ आदि सवारियों का दानकरे वह पंचाग्नि तपनेवाले के समान राजाओं के ऐश्वर्य को पाताहै ९ रसोंके दानसे सौभाग्यता को पाताहै और भोगपदार्थ भोजन आदिके दानसे पशु और पुत्रों को पाताहै १०जो अधोमुख होकरलटके वा जलमें निवासकरे और जो ब्रह्मचारी आदि सदैव अकेला शयन करनेवालाहै वह यथेप्सित सिद्धी को पाताहै ११ जो पुरुष पाद्य, आसन, दीपक, अन्न और स्थानसोने बैठनेके निमित्त अतिथि के सत्कारके अर्थ देताहै वहयज्ञ पंच दक्षिणावाला है १२ जो पुरुष युद्ध भूमिरूप बीर आसन और बाणशय्यारूप वीरशय्या और स्वर्गलोकरूप वीरलोकमें नियत है निश्चय करके उसकेलोक अविनाशी औ अभीष्ट पदार्थोंसे परिपूर्ण हैं१३हे राजा दानसे धनको मौनतासे आज्ञा करनेके अधिकार को-कृच्छ्रआदि तपस्यासे उपभोगोंको और ब्रह्मचर्य्यसे पूर्ण आयुर्दा को पाताहै १४ और अहिंसाके फलसे रूप ऐश्वर्य नीरोगता आ-दिको भोगताहै फलमूल भोजन करनेवालेको राज्य और पत्तीखाने

वाले को स्वर्ग प्राप्तहोता है १५ हे राजा शरीरके त्यागने के अर्थ जलभोजन त्याग करनेवाले को सर्वत्र सुख मिलताहै शाक भोजन केनियम में गौवों का रखनेवाला और तृणका भोजन करनेवाला स्वर्गगामी होताहै १६ जो स्त्रीको त्यागकर तीनों संध्याओंमें स्नान करके वायुभक्षी होताहै वह सत्य संकल्पताको पाताहै फिर सत्यतासे स्वर्गको पाताहै और यज्ञ दीक्षासे उत्तम कुलको पाताहै १७ जो नित्य अग्निहोत्र करनेवाला संस्कारी ब्राह्मण जलका आहार करनेवालाहै और गायत्री आदि मंत्रको जपताहै वह राजसाधनको करताहै और अनसन व्रत अर्थात् अन्न जलका त्याग स्वर्गकोदेता है १८ हेराजा बारह वर्षकी दीक्षामें केवल दुग्धपान करने के व्रत को और अभिषेक तीर्थ को बारह वर्षतक करके वीर स्थानसे अर्थात् स्वर्गसे ऊपर धर्मलोकमें जाताहै १६ निश्चय करके सब वेदों को पढ़कर भी शीघ्रदुःखों से छूटताहै और मानसी धर्मका करने वाला स्वर्गलोक को भोगताहै २० जो दुर्बुद्धियोंसे कठिनता से त्याग करनेके योग्य है ऐसे लोभके त्यागने वाले को सुख होता है२१ जिसप्रकार बछड़ा हजारों गौवोंके मध्यमें अपनीही माताको पहिचान लेताहै इसीप्रकार पूर्वजन्मका किया हुआ कर्म्म कर्त्ताके पीछे २ जाताहै २२ जैसे कि बिना कहेहुये फूलफल अपने समय को उल्लंघन नहीं करतेहैं इसीप्रकार पूर्वका कियाहुआ कर्मभीअपने समयपर फलीभूत होताहै २३ वृद्ध मनुष्यके बालश्वेत होजाते हैं और दांत आंख कान भी निर्बल होजातेहैं परन्तु लोभही वृद्ध नहीं होताहै २४ जिसकर्मसे पिताको प्रसन्नकरताहै उसी कर्म्म से ब्रह्मा जी भी प्रसन्न होते हैं और जिस कर्मसे माताको प्रसन्न करता है उससे पृथ्वी प्रसन्नहोतीहै और जिस कर्मसे उपाध्याय प्रसन्न होता है उससेही ब्रह्म पूजितहोकर प्रसन्न होताहै जिस पुरुषके यह तीनों पूजितहैं उसकेसबधर्म प्रशंसनीय हैं और जिसके यह तीनों अपूजितहैं उसकी सब यज्ञादिक क्रिया निष्फलहैं २६ वैशंपायन बोले कि तब वह पांडव भीष्मजीकेइसवचनको सुनकर आश्चर्य्यित

होकर अत्यन्त प्रसन्न चित्त और प्रीतिमान हुये २७ निरर्थक उ-च्चारण कियेहुयेमंत्रमें और बिना दक्षिणाके सोमयज्ञमें और बिना मंत्रके हवन करनेमें जो पाप होता है वह सब मिथ्यावादी मनुष्य को प्राप्त होताहै २८ हे समर्थ यह शुभ और अशुभ फलकीप्राप्ती जो मैंने कही यह सब ऋषियोंसे कहीहुईहै इसके विशेष अब क्या सुनना चाहतेहो २९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेकर्मकालिकोपाख्यानेसप्तमोऽध्यायः ७॥

आठवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे भरतर्षभ भीष्मजी कौन पुरुष पूजनके योग्य है कौन नमस्कारके योग्यहैं और आप किसको नमस्कार करतेहैं और जिनके लिये कि आप इच्छा करते हो इन सबको आप मुझे समझाकेबताइये १ इस सम्पूर्ण नरलोक और परलोक में जो हित-कारीहै उसको और बड़ी आपत्तिमें वर्त्तमानहोनेपर भी जिसमें आप मन को लगाते हैं उसको भी वर्णन कीजिये २ भीष्मजी बोले कि मैं उन ब्राह्मणोंकेलिये इच्छा करताहूं जिनका परम धन परब्रह्महै और स्वर्ग साधन तप और वेद पाठहै और वह स्वर्ग जिनके ब्रह्म-ज्ञान के आधीन है जैसे कि वेदमें लिखाहै कि जो उस आत्मा को अनुभव करताहै वह सब लोक और सब मनोरथोंको प्राप्त करता है ३ जिनके बालक और वृद्ध बाप दादोंके भारको उठातेहैं और पीड़ित नहींहोते हैंउनके निमित्त भी मैं इच्छाकरताहूं ४ उनविद्या-ओंमें प्रवृत्त जितेन्द्री शास्त्र गुरु पूजनादि गुण सम्पन्न मृदुभाषी पताका बांधकर सत्पुरुषोंमें हितकारी कथा और वचनोंको अपनी मधुर वाणीसे कहते हैं अथवा जो लोग अच्छेप्रकार से प्रशंसित और कीर्त्तिमान होकर इसलोकमें से जातेहैं उनके निमित्त इच्छा करताहूं ७ और जो कथा पुराणादि के सुननेवाले सदैव सभा में स्वीकृत और विज्ञान गुण सम्पन्न हैं उनकेलिये भी इच्छा करता हूं ८ हे युधिष्ठिर सावधान पुरुष अच्छीरीतिसे बनाई हुई पवित्र

और गुणकारी भोजनकी वस्तुओंको ब्राह्मणोंकी तृप्तिकेलिये भोजन करवाताहै ९ चाहे युद्धभूमिमें लड़ना सम्भव है परन्तु गुणमें दोष लगाये विना किसी को कुछ देना असम्भव है हे राजा जो सदैव ब्राह्मणोंको दान करतेहैं मैं उनके लिये इच्छा करताहूं १० लोक में हजारों शूरवीर प्रसिद्ध हैं उनकी गणना होने पर दान में शूर पुरुष अधिक प्रशंसा पाताहै ११ हे राजा जो मैं नीच ब्राह्मण भी होऊं तो भी धन्यहूं फिर कुलमें उत्पन्न धर्म्म में गति रखनेवाला तप और विद्यामें प्रवृत्त होऊं तो क्याही कहनाहै १२ हे पांडुनंदन भरतर्षभ इसलोकमें तुझसे अधिक मेरा प्यारा कोई नहींहै परन्तु ब्राह्मणलोग मुझको तुझसे भी अधिक प्यारे हैं १३ जैसे वेदपाठी ब्राह्मण मुझको तुझसे अधिक प्यारेहैं इस सत्यतासे मैं उनलोकों को प्राप्त करूंगा जहां मेरे पिता शान्तनु वर्त्तमान हैं १४ मुझको ब्राह्मणों से अधिक प्यारे पिता भी न थे मेरे पितामह और अन्य सुहृद जन भी मुझको ब्राह्मणोंसे अधिक प्यारे न थे १५ उन शुभ-कर्मी ब्राह्मणों में थोड़ा वा वहुत कुछ भी फल मैं नहीं चाहता अ-र्थात् उनके पूजन में फल नहीं चाहताहूं १६ हे परन्तप मैंने मन वाणी और वचनसे भी कभी२ ब्राह्मणोंकेअर्थ जो कर्मकिया उसीके प्रताप से मैं ऐसी दशामें भी पीड़ाको नहीं पाताहूं १७ जो मुझको ब्राह्मणोंका भक्त कहताहै उसके वचनसे मैं तृप्त होताहूं यही कर्म सब पवित्र कर्मोंसे श्रेष्ठहै १८ हे तात मैं ब्राह्मणोंकी सेवा करनेवाले मनुष्योंके निर्मल और पवित्र लोकोंको देखताहूं उनलोकोंमें मुझ-कोबहुत समयतक रहनेके लिये जानाहै १९ हे युधिष्ठिर जैसे कि लोकमें स्त्रियोंका परम धर्म स्वामीकी सेवा और रक्षाहै उन स्त्रियों का वही देवता वही गतिहै इसके सिवाय दूसरी गति नहींहै इसी प्रकार क्षत्रीको धर्मके निमित्त ब्राह्मण सर्व्वभावसे माननीयहैं सौ वर्षके क्षत्री को दश वर्षका भी ब्राह्मण पिता के समान समझना योग्यहै ब्राह्मणोंमें भी गुरु रूप ब्राह्मण श्रेष्ठ है २१ स्त्री पतिके मर जानेपर देवरको अपना पति करतीहै और पृथ्वी ब्राह्मणके न होने

पर क्षत्रीको अपना स्वामी करतीहै २२ इसीप्रकार से वह पुत्र के समान ब्राह्मण भी रक्षा के योग्य गुरु के सदृश उपासना योग्य और अग्निकी समान सेवा करने के योग्य है २३ उन सत्यवक्ता सत्पुरुष सत्यप्रिय सब जीवों के उपकार में प्रवृत्त सर्प्प के समान क्रोध रूप ब्राह्मणोंको सदैव सेवन करे २४ हे युधिष्ठिर मैं उनके तेज और तप से सदैव भयभीत रहताहूं यह दोनों तप और तेज त्याग करनेकेयोग्य नहींहैं अर्थात् उनसे पृथक् रहना उचित है २५ हे राजा ब्राह्मण क्षत्री में नियत उन तेज तपोंकाफल शीघ्रही वर्त्तमान होजाता है परन्तु जो तेजस्वी ब्राह्मण हैं वह क्रोधरूप होकर मारते हैं २६ क्रोधरहित ब्राह्मणको पाकर जो तेज और तप दोनोंमें अधिकहोंय तबभी क्रोध न करनेवाले ब्राह्मणसे वह पराजितहोताहै ब्राह्मण वा क्षत्री के तेज वा तपसे चाहै कोई बाकी बचभीजाय परन्तु ब्राह्मण के क्रोधसेकिसी प्रकारकाभी शेषनहीं रह सक्ताअर्थात् सब नाश होजाताहै२७जैसे कि दण्डपाणि पशुओंका रक्षक सदैव गौवोंकी रक्षा करता है उसीप्रकार क्षत्रीवेद और ब्राह्मणों की चारोंओर से रक्षाकरे २८ नियम धर्म्मी ब्राह्मणों की ऐसे रक्षा करनी चाहिये जैसे पिता पुत्रोंकी रक्षा करते हैं राजाको यह देखना चाहिये कि इनके कोई जीविका है या नहीं जो जीविका न होतो जीविका देनाअवश्य है २९॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्म्मेअष्टमोऽध्यायः ८॥

नवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोलेहे महातेजस्वी पितामह जो दुष्टात्मालोग ब्राह्मणों के आगे प्रतिज्ञा करके अपनी अज्ञानता से नहीं देतेहैं उनका किस योनिमें जन्म होताहै १ इसको समझा कर कहिये २ भीष्मजीबोले कि जो मनुष्य थोड़ीया बहुतसी प्रतिज्ञा करके फिर नहींदेते उनकी सब आशा ऐसेनष्ट होजाती हैं जैसे कि नपुंसकका संतान फलनष्ट होताहै ३ हेराजा जीव जिसरात्रि को उत्पन्न होताहै और जिसरा-

त्रिको नाशहोजाता है इनदोनों रात्रियों के मध्यमें उसके जो २ उत्तम कर्म होमदान और तपादिकहैं सवनष्ट होजातेहैं ५ फिर धर्मशास्त्र के ज्ञाताल्लोगोंने यह बचन कहाहै इसको सुनकर उत्तमयुक्ति वाले विचार से विचारो ६ और धर्मशास्त्रकेही ज्ञाताओं ने यह भी कहाहै कि वहजीव हजारों श्यामकर्ण घोड़ोंके दानके द्वारा उसपापसे छूट जाताहै, हे भरतर्षभ इसस्थान पर एकप्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें शृगाल और बंदरका संवादहै ८ हे परंतप वहशृगाल और बंदर पूर्व मनुष्य जन्म में मित्रथे और इन योनियों में भीउत्पन्न होकर मित्र हुये ६ इसके पीछे पूर्व जन्म के स्मरण करने वाले बन्दरने श्मशान भूमिमें मृतकके खानेवाले शृगाल को देख कर यह बचन कहा १० कि तुमने पूर्व जन्म में कौनसा भयकारी पापकर्म कियाहै जिससे कि तुम श्मशान भूमिमें महादुर्गन्धित निन्दित मृतकोंको खातेहो ११ यह बात सुनकर शृगालने उत्तरदिया कि मैंने ब्राह्मणसे प्रतिज्ञा करके फिर नहीं दिया १२ इसहेतुसे हे बन्दर मैं पापरूप योनी में उत्पन्न हुआहूं और क्षुधातुर होकर ऐसे प्रकारका भोजन करताहूं १३ भीष्मजी बोले कि हे नरोत्तम इतना अपना वृत्तान्त कहकर शृगाल ने बन्दर से भी पूछाकि तुमने कौन सा पापकर्म किया है जिससे बन्दरकी योनि पाई १४ बन्दरबोला हे शृगाल मैं सदैव ब्राह्मणोंके फलका आहार करनेवाला था इसी हेतुसे ज्ञानीको कभी ब्राह्मणका धन न हरना चाहिये औरउससे विवादभी न करना चाहिये और जो उससे प्रतिज्ञाकरे वह अब देना योग्यहै १५ भीष्मजी बोले कि हे राजा प्राचीन पवित्रकथा कहने वाले धर्मज्ञ अध्यापक ब्राह्मणने यह इतिहासमुझसेकहाथा१६ हे युधिष्ठिर फिर मैंने पूर्व समय में ब्राह्मण के विषयमें कथा कहने वाले व्यास जी और श्रीकृष्णजीके भी मुखसे सुनाहै १७ ब्राह्मण का धन न हरना चाहिये सदैव उनपर क्षमा करना चाहिये वहब्राह्मण बालकहो वा कंगालहो वा विद्यादेने में कृपणभी हो तो भी उसका अपमान करना योग्य नहीं १८ ब्राह्मणलोग इसीप्रकार से

सदैव मुझको उपदेश करते हैं कि प्रतिज्ञा करके ब्राह्मण को देना-ही योग्यहै उसकी आशाको कभी छेदन न करना चाहिये १९ हे राजा प्रथम आशाके छेदन करने से ब्राह्मण को ऐसा वर्णन किया है जैसे अत्यन्त वृद्धि युक्त देदीप्य अग्नि होतीहै २० हे राजा पूर्व्व उत्पन्न होनेवाली आशासेयुक्त अत्यन्त क्रोध भरा ब्राह्मण जिसको देखे उसको ऐसे भस्म करदेता है जैसे कि सूखेहुये वनको अग्नि भस्मीभूत करतीहै २१ और जबब्राह्मण प्रसन्नहोकर बचनोंसे आशीर्वाद देताहै तब वही ब्राह्मण उसके देशमें चिकित्सकके समान हो जाताहै अर्थात् सब प्रकारके रोग रूपी उपद्रवों का शान्त करने वाला होताहै २२ इसीप्रकार पुत्र पौत्र पशु बांधव मन्त्रीपुर और देशको भी शान्तीके द्वारा निर्विघ्नता से पोषणकरे २३ इस संसारमें ब्राह्मणका यह उत्तम तेज ऐसा दिखाई देताहै जैसे कि पृथ्वीके ऊपर सहस्रकिरणवाले सूर्य्यका तेज होताहै २४ हे भरतर्षभ युधिष्ठिर इसीहेतुसे इस संसार में जो अच्छे नियम को करना चाहै तो अवश्य प्रतिज्ञा करके देनाचाहिये २५ निश्चय करके ब्राह्मण को दानदेनेसे अनुपम स्वर्ग की प्राप्तिहोतीहै मुख्य करके यह दानही बड़ा उत्तम कर्म है २६ यहांके दिये हुये दानसे देवता और पितर अपना जीवन करते हैं इस निमित्त ज्ञानीलोगोंको ब्राह्मण के अर्थ दान देना अति उत्तम और योग्यहै २७ हेराजा ब्राह्मण महातीर्थ रूप कहाजाता है ब्राह्मणको कभी बिना पूजन किये न जाने देना चाहिये २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदान धर्मेश्रृगालवानरसंवादेनवमोऽध्यायः ९ ॥

दशवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे राजर्षि जो पुरुष मित्रताकी प्रीतिसे नीचजाति को उपदेश करताहै उसको दोषहोताहै वा नहीं १ निश्चयकरके धर्मकी बड़ी सूक्ष्मगतिहै जिसमें मनुष्य मोहको पातेहैं इसको हे पितामह आपमूल समेत मुझे समझाइये २ भीष्मजी बोले हेराजा

जैसा कि पूर्वसमयमें मैंने ऋषियोंके मुखसे सुनाहै उसकोही में क्रम सहिततुझसेकहताहूं ३ किसीनीचजातिको उपदेश न करनाचाहिये क्योंकि उपदेश करने वाले उपाध्याय को बड़ादोष लिखा है इस का व्योरेवार वृत्तान्तमैं कहताहूं तुमचित्त से सुनों कि हिमालयके ब्रह्मस्थान आश्रममें हीन जातिके उपदेश करनेसे यह दशाहुई कि वहां एकस्थान धर्मकी वृद्धिका हेतु नाना प्रकारके वृक्षोंसे संकुलित था ६ वहअनेक गुल्मलता और पशु पक्षियोंसेसेवित सिद्ध चारणों से व्याप्त प्रफुल्लित बनसमेत बहुतसे ब्रह्मचारी तपस्वी वाणप्रस्था-दिकोंसेपूर्णसूर्य और अग्निकेसमान तेजवान् नियमी व्रती ब्राह्मणों से शोभित और दीक्षितमितभोजी शुद्ध अन्तःकरणवाले तपस्वियों से शोभायमान तपवेद पाठ आदि के शब्दोंसे शब्दायमान बाल-खिल्यनामऋषि और अनेक संन्यासियों सेभूषितथा १० उसस्थान मेंकोई दयावान शूद्रबड़े उत्साहको करकेआया और सबकोप्रणाम करके आशीर्वादयुक्त हुआ ११ वह शूद्रउन महा दीक्षित देवताओं के समान तेजस्वी मुनियों के समूहों को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ १२ फिरउसके चित्तमेंआयाकि मैं भी तपकरूं और मुनियोंके चरणों को पकड़ कर बड़ी दीनता से यह कहने लगा कि हे उत्तम ब्राह्मण लोगों मैं आपकी कृपासे धर्म्मकी प्राप्ती करना चाहताहूं इससे आप मुझे उपदेश करके संन्यासी बनाने को योग्य हैं १४ परंतु हेतपस्वियों मैं नीचवरण शूद्रजातिहूं मैं सेवा करना चाहताहूं आपलोग मुझको अपना शरणागत जानकर कृपाकरें १५ कुलपति ने कहा कि शूद्रको संन्यास धर्ममें प्रवृत्त होकर वर्त्ताव करना उचित नहींहै जो तू यहां ठहरना चाहताहै तो सेवामें चित्तको प्रवृत्त करके निवासकर १६ सेवासेही तू निस्सन्देह उत्तम लोकोंको पावेगा १७ भीष्मजी बोलेकि मुनिके इन वचनों को सुनकर उस शूद्रने विचार पूर्व्वक चिन्ताकरी कि इसस्थान में मुझको कैसाकर्म करना योग्य है क्योंकि धर्म्ममें मेरी बड़ी श्रद्धाहै १८ इस रीतिसे प्रसिद्ध होकर अपना प्रयोजन सिद्ध करूंगा ऐसा विचारकर उसआश्रमके स्थान

से दूर एकपर्णाकुटी बनाई १९ और उसमें पूजा करनेकी एक बेदी और शयनआदि के निमित्त पृथ्वीको और देवताओं के स्थानादिक का बिचार करके आपयम नियममें नियत होकर मुनि होबैठा २० फिर वह तीनों सन्ध्याओं में स्नान नियम और देवताओं के स्थानोंमें बलि होम आदि को करके देवताओं के भी पूजन को करने लगा २१ चित्तवृत्तिका निरोध और निममोंमें प्रवृत्त जितेन्द्री और फलाहारी होकर उसने अपने समीवर्त्ती औषधी और फलों से अपने पास आने वाले अतिथियों का बुद्धिके अनुसार पूजन किया और इसी रीति से उसको बहुत समय व्यतीत होगया २३ फिर उसके मिलाप करने को कोई मुनि उसके आश्रममें आये तब उसने उनका कुशल मंगल पूछकर बहुत शिष्टाचार पूर्वक उस महात्मा मुनिको पूजन करके अच्छी रीतिसे तृप्तकिया २४ फिरवह तपोमूर्त्ति तेजव्रत धर्मात्मा ऋषि बहुतसो श्रेष्ठ२ कथाओं को कहकरअपने आश्रम को चलेगये २५ हेराजा इसी प्रकारसे वह महात्मा ऋषि उस शूद्रके देखनेको बहुतबार उसके आश्रमगये २६ फिर उसशूद्र ने उस तपस्वी मुनिसे कहा कि मैं पितृकार्यको करूंगा उसमें आप मुझपर अनुग्रह करियेगा २७ तबउस ब्राह्मणने उससेकहाकि बहुत अच्छा फिर उस शूद्रने पवित्र होकर उस ऋषिके निमित्त पाद्यको देकर २८फिरबनकी औषधीऔर कुशाओंसे ऋषिको आसनदिया२९ इसके अनन्तर ऋषिनें दक्षिण दिशामें बिछाये हुये उस आसन को जिसका मुख पश्चिमकी ओरथा न्यायके बिपरीत देखकर उसशूद्र सेकहा ३० किइस कुशासनको पूर्वाभिमुख करदो और तुम पवित्र होकर उत्तराभिमुख होजाओ यहसुन कर शूद्रने वही किया जो ऋषिने कहा ३१ अर्थात् उस बुद्धिमान ने कुशा और अर्घआदिकोउनके उपदेशके अनुसार ठीकर नियतकिया फिर उस तपस्वीने उससे सबहव्यकव्य की विधिवर्णन करी ३२ तबशूद्रपुत्र कार्य्य के मध्यमें ऋषियोंके धर्ममार्गमें नियतहुआ फिर पितृ कार्य्यके समाप्तहोने पर वह ऋषिभी विदाहोकर चलेगये ३३ और बहुत कालतक तपस्या

करते हुये उस शूद्रतपस्वीने बनमेंही मृत्युपाई निश्चय करके उस उत्तम कर्मके फलसे शूद्रने किसी महाराज के वंशमें जन्मपाया ३५ इसी प्रकार उस बड़ेतेजस्वी ऋषिनेभी कालधर्मको पाया अर्थात् देहकोत्याग किया ३६ हे भरतर्षभ वहवेदपाठी ब्राह्मण अपने कर्म योगसे पुरोहितके घरमें उत्पन्न हुआ इसरीतिसे वह दोनोंशूद्रऔर मुनि उत्पन्न हुये ३७ और क्रम२ सेबड़े होकर सब विद्याओंमेंकुशलहुये वह ऋषितो अथर्व आदिचारों वेदोंमें पूर्णहोकर कल्प प्रयोग और ज्योतिषमें पारांगतहुआ ३८ और सांख्य शास्त्र में भीउस की अत्यन्त प्रीतिवृद्धिको प्राप्तहुई पिताके मरने पर शौचादिक्रियाकरने वाले उसराज पुत्रको ३९ मन्त्री आदिलोगोंने अभिषेक करके राज्य पर बैठाया और उस अभिषेक कियेहुये राजाने उसऋषि ब्राह्मण को अपनी पुरोहिताई में अभिषेक किया ४० इसरीतिसे यह राजा उस ब्राह्मण को अपनी पुरोहिताई में नियतकरके सुख पूर्व्वक रहनेलगा और प्रजापालन करके धर्मपूर्वक आज्ञा करनेलगा ४१ वहराजा सदैव पुण्याह वाचन और धर्म कार्य्यों में पुरोहित को देखकर बारंबार मुस्करा मुस्कराकर हंसाकरताथा ४२ इसरीतिसे उसराजाने बारंबार उस पुरोहितसे हास्यकिया और यहपुरोहित जी बारंबार हंसतेहुये ४३ राजाको देखकरमहाक्रोध युक्तहुये और एकान्तस्थानमें राजासे जाकर मिले ४४ और चित्तके विनोद की बढ़ाने वाली कथाओं को सुनाकर राजाको प्रसन्नकिया इसकेपीछे पुरोहितजीने राजासेकहा४५कि हे तेजस्वीमैं आपसे एक वरमांगताहूं ४६ राजाने कहा हे ब्राह्मण आप एक वर क्या मांगते हैं मैं आपको सौ बरदान देसक्ताहूं आपके निमित्त प्रीति और मानसे कोई,वस्तु मेरे अदेय नहींहै अर्थात् सबकुछ देसक्ताहूं ४७ पुरोहित ने कहाकि मैं एकही बर चाहताहूं जो आप मुझसे प्रसन्न हैं तो प्रतिज्ञा करियेकि मैं सत्य२ कहूंगा मिथ्यान बोलूंगा ४८ भीष्मजी बोले हे युधिष्ठिर राजाने उसको उत्तर दियाकि बहुत अच्छा जो मैं जानताहूं उसको सत्यही कहूंगा और जो जानता हीनहींहूं उसक

नहीं कहसक्ता ४६ पुरोहितने कहाकि तुम सदैव पुण्याहबाचन धर्म कार्य्य और होमशान्तियों में मुझको देखकर क्यों हंसते हो ५० तेरे हंसने से मेराचित्त बड़ा लज्जा युक्त होताहै हेराजा आपनेशपथ खाईहै इससे सत्य२ कहने को उचित हो ५१ यह अच्छी तरहसे बिदितहोता है कि इसमें कोईन कोईहेतुहै तेराहंसना वे कारण नहीं है मैं इस अपूर्व्व बातके सुनने की इच्छा करताहूं आपव्योरेवार मुझसे वर्णन कीजिये ५२ राजाने कहा हे वेदपाठी इसरीतिसे आपके पूछने पर जो न कहने को भी बातहोय वह भी कहनी चाहिये तुमचित्तलगाकरसुनों ५३ हे श्रेष्ठ ब्राह्मण आपकी पूर्व्व जन्म में जो दशाथी उसको सुनों हे ब्रह्मन् मुझको अपनेपिछले जन्मका सब स्मरणहै उसको आपसावधानी से सुनों ५४ हे श्रेष्ठ ब्राह्मण में पिछले जन्ममें बड़ा तपस्वीशूद्रथा उस समय तुम उग्र तपस्वी ऋषिथे ५५ हे निष्पाप ब्राह्मण आप प्रसन्न मूर्त्ति होकर पूर्वजन्म में मेरे ऊपर अनुग्रहकी बुद्धिरखने वाले थे आपने पितृ कार्य्य में मुझको यह उपदेश किया ५६ कि कुशासन और कुशाको हव्यकव्य में ऐसे काम में लाओ इसी कर्मके दोषसे आप पुरोहिती कर्म में उत्पन्न हुये और मैं राजाउत्पन्न हुआ ५७ हे विप्रेन्द्र मैं इसी कारण से आपसे हास्यविनोद करता था आप समय की विपरीति को देखिये कि तुमने मुझको उपदेश करने से यह फलपाया ५८ हे ब्रह्मन् मैं इसीकारणसे तुमसे हंसा हूं आप निश्चयजानिये कि मैं आपकी निन्दाकरके नहींहँसाहूं क्योंकिआप मेरे गुरूहो ५९ इस समयकीलौटपौटसे मुझकोखेदहै इसीसे चित्त खेदपाता है मैंआपके पूर्वजन्म को स्मरण करताहूं इसी हेतुसेआप से हंसताहूं ६० देखिये उसकर्म से आप का उग्रतप नष्ट होगया इससे आप पुरोहिताई को त्याग करके फिर ऐश्वर्य्य के निमित्त उपायकरो ६१ हे ब्राह्मणवर्य्य बेदपाठी इसके करने से तुम फिर किसी दूसरीनीचयोनि को नहीं पाओगे आपधन को लेकर पवित्र आत्मा हूजिये ६२ भीष्मजी बोले कि इसके पीछे राजा से बिदा

होकर उस वेदपाठी ब्राह्मणने ब्राह्मणोंकेअर्थ बहुतसा धनगांव भूमि और अनेकप्रकार के दानदिये ६३ फिर वह ब्राह्मणों के करने के योग्यकृच्छ्र व्रतादिकोंकोकरके उत्तम२तीर्थों में नाना प्रकारकेदानों को ६४ और गौओंको ब्राह्मणों के अर्थ देकर आत्मज्ञानी पवित्रात्मा होगया और अपने उसी आश्रम में जाकर बड़ी तपस्या करने लगा ६५ इसके पीछे उस ब्राह्मणने बड़ीसिद्धी को पाया और उस आश्रम में उन आश्रमवासियों का कृपा पात्र हुआ ६६ हे साधु राजा युधिष्ठिर इस प्रकार से उस ऋषिने बड़े दुःखको पाया इसी हेतु से ब्राह्मण लोगों को शूद्रका उपदेश करना महानिषेध है ६७ हे राजा ब्राह्मण क्षत्री वैश्य यहतीनों वर्ण द्विजन्माहैं इन तीनों के उपदेश करने से ब्राह्मण को दोष नहीं होता है ६८ इसीकारण सत्पुरुषों को किसी के आगे कुछन कहना चाहिये क्योंकि धर्मकी गतिबड़ी सूक्ष्म है अशुद्ध अन्तःकरण वाले पुरुषों को दुःखसेजानने के योग्य है ६९ हे राजा इसी हेतु से पूजित मुनि लोग उपदेश करने को मौनता करजाते हैं औरनीचको उपदेश करने के भय से कुछ नहीं कहतेहैं ७० धार्मिक गुणी सत्य और सरलता युक्त पुरुष इसलोकमें नीचों के उपदेश से बड़े पाप युक्त होते हैं ७१ किसी समयभी किसी को उपदेश न करना चाहिये ब्राह्मण उपदेश करने से उसी शिष्यके पापकाभागी होता है ७२ इसी हेतुसे इच्छावान् धर्मज्ञज्ञानी पुरुषको बिचार पूर्वक कर्मकरना उचित है धनकेलोभ से किया हुआ उपदेश नाशकारक होकर मार डालताहै ७३ इस लोक में निश्चय करने के योग्य बात को अच्छी रीति से निश्चय करके गुरूसे पूछकर उपदेश करना योग्य है और यह भी जानना चाहिये कि जिसको उपदेश करनाहै वह योग्यहै वा नहीं जोयोग्य होगा तो उसके धर्मको पावैगा और अयोग्य में पाप का भागी होगा ७४ मैंने यह तुमसे कहा कि उपदेश करने से महा कल्मषी होता है इसी कारण इसलोक में उपदेश न करे ७५ ॥

इतिश्री महाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेशूद्रमुनिसंवादेनामदशमोऽध्यायः १० ॥

ग्यारहवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे भरतर्षभ पितामह किसप्रकार के पुरुष और स्त्री के पास विद्या और लक्ष्मी निवास करतीहै इसको मुझेसमझाकर कहिये १ भीष्मजी बोले इस स्थान पर जैसा वृत्तान्त मैंने सुनाहै और श्रीरुक्मिणीने श्री कृष्णजीके सन्मुख जसे पूंछाहै उसको मैं कहताहूं २ आश्चर्य्यकारी अद्भुत दर्शन की अभिलाषा से प्रद्युम्न की माता रुक्मिणी जीने नारायण श्रीकृष्णजीकी गोदी में वर्त्तमान ज्वलित रूप कमलवर्णालक्ष्मीजी को देखकर उनलक्ष्मीसे पूंछा कि तुम हाथी घोड़े आदिकेरूपसे कौनसेजीव धारियोंको सेवन करतीहो और धैर्य्यता सुन्दरता और शूरता आदि रूपसे किन पुरुषोंके पास नियत होती हो और कैसे २ लोगों को सेवन नहीं करती हो हे त्रिलोकेश्वर की प्यारी हे महर्षि नारायण के सदृश लक्ष्मी तुम उनजीवोंको मुख्यता पूर्वककहो३।४ इसप्रकारसे गरुड़ध्वजकेसन्मुख देवी रुक्मिणीके वचनोंको सुनकर प्रसन्नचित्त चंद्रमुखीलक्ष्मीजीने मनोहर कोमलवचनोंसे कहा५हे सुन्दरि ऐश्वर्य्यमान् मैं उस पुरुषके पास सदैव निवास करतीहूं जो उत्तम बचन कहने वाला बुद्धिमान् कर्म में प्रवृत्त क्रोध रहित ईश्वरभक्त कृतज्ञजितेन्द्रिय और सदैव उत्तम बुद्धियुक्त रहताहो ६ और ऐसे पुरुषके पास कभी नहीं निवास करतीहूं जो कर्मों का न करने वाला ईश्वर और परलोक का न मानने वाला अकृतज्ञ गुरु पूजनादि व्रतों से रहित कठोर वचन कहने वाला चोर और गुरुलोगों की निन्दा करने वालाहो७ और जोबल शूरता और बुद्धि से न्यून होकर जहां तहां धनवान् लोगों पर क्रोधकरके दुःखको पातेहैं अथवा बाह्याभ्यन्तर से शत्रु हैं ऐसे प्रकार के मनुष्यों के पास मैं स्थिर नहीं रहतीहूं ८ और जो अपनी आत्मा से कुछ इच्छा नहीं करता है और स्वभाव से घायल अन्तरात्मा है उसथोड़े से लाभ में संतोषी मनुष्यों के पास अच्छी रीति से निवास नहीं करतीहूं ९ और ऐसे

लोगोंकेपास रहतीहूं जो कि धर्मके अभ्यासी औरज्ञातावृद्धोंकीसेवा में प्रवृत्त चित्त जितेन्द्रिय शुद्धअन्तःकरण क्षमावान् और समर्थ हों औरऐसी स्त्रियोंकेपास निवास करतीहूं १० जोक्षमावान् जितेन्द्रिय सत्यस्वभाव सरलतायुक्त देवता और ब्राह्मणोंकी पूजा करनेवाली हैं और ऐसी स्त्रियों को त्याग करतीहूं जो कि पात्रों को इकट्ठा न रखने वाली बिनाविचारकिये कर्म करनेवाली सदैव पतिसे विरुद्ध वार्तालाप करनेवाली ११ दूसरेके घरमें प्रीति करनेवाली निर्लज्ज निर्दय अपवित्र क्रोध रूप धैर्य्यता रहित कलह प्रिय हो १२ और नींदकी मारीहुई सदैव सोनेवालीहैं और ऐसी स्त्रियोंके पास रहा करतीहूं जो सदैव सत्य बोलने वाली सुन्दर स्वरूप गुण से भरी हुई सौभाग्यवती पतिव्रता कल्याण वती होकर भूषणादि से अलंकृत हों १३ और सवारियों में कन्याओं में भूषणों में यज्ञों में और बर्षाकरनेवाले बादलोंमेंफूलेहुये कमल कमलिनियोंमें १४ और शरदऋतुमें दीखने वाले नक्षत्र मार्गमें हाथीमें गोशालामें आसन में फूले उत्पल कमलवाले सरोवरोंमें निवासकरतीहूं १५ और ऐसी नदियों पर निवास करतीहूं जोकि हंसोंके शब्दसे वाक्रौंच पक्षियों केशब्दसे व्याप्त किनारेपरफैलेहुये १६ शोभायमान वृक्षोंसेमनोहर तपस्वी सिद्ध और ब्राह्मणों से सेवित जलसे पूर्णसिंह और हाथियों से व्याकुल उत्तम जलवालीहैं मतवाला हाथी सुन्दर ऊंटराजा सिंहासन और सत्पुरुषों में सदैव निवास करती हूं १७ जिस स्थानमें मनुष्य अग्निमें हवन करतेहैं व गौ ब्राह्मण और देवताओं को पूजतेहैं और समय पर फलोंके द्वारा बलिदानोंको करतेहैं उस घरमें मैं सदैव आनन्दसे निवास करतीहूं १८ सदैव वेदपाठ करने वाले ब्राह्मणों मेंवा धर्म्ममें प्रसक्त क्षत्रियों में कृषि कर्म्म परायण वैश्योंमें और सदैव सेवा करनेवाले शूद्रोंमें भी निवास करतीहूं १९ और अपने निज शरीर और सब भावों से युक्त होकर मैं श्रीनारायणजी के पास निवास करतीहूं उस नारायण में वेद ब्राह्मण की रक्षा करना सबको प्यारा जानना आदि अनेक धर्म्म वर्त्तमान

हैं २० हे देवि मैं नारायणके सिवाय किसी दूसरे स्थान में अपने निज शरीर युक्तहोकर निवास नहीं करतीहूं और मुझको इसरीति से कहना भी यहां योग्य नहींहै कि मैं अपने भावों समेत इस पुरुष के पास रहती हूं क्योंकि वह पुरुष धर्म्म यश अर्थ और कामसे वृद्धिपाता है २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्म्मेश्रीरुक्मिणीसंवादेएकादशोऽध्यायः ११ ॥

बारहवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोलेहेराजा स्त्री और पुरुषके संयोगमें किसकोविषय का सुख अधिक होताहै इस सन्देहको भी दूरकरिये १ भीष्मजी बोले किइसस्थानपर मैं उस प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें इन्द्रसे और भंगाश्वनसे शत्रुता उत्पन्न हुईथी २ पूर्वसमय में भंगाश्वन नाम एक राज ऋषि बड़ा धर्म्मात्मा हुआ उस असन्तान ने सन्तान के अर्थ एक यज्ञकी रचना करी ३ तब उस महाबली राज ऋषिने अग्निष्ठित नामयज्ञ जिसमें केवल अग्निकाही पूजनहोताहै और इन्द्रकेविरुद्धहोताहै जारीकिया वह यज्ञ मनुष्योंके प्रायश्चित्त में सन्तान की उत्पत्ति के निमित्त कियाजाता है ४ बुद्धिमें सावधान महाभाग देवताओं के ईश्वर इन्द्र ने अपने विरुद्ध यज्ञको जान कर उसराज ऋषिके किसीछिद्र को चाहा ५ हेराजा परन्तु इन्द्रने उसके किसीछिद्रको नपाया कुछ समयकेपीछे वह राजाशिकारको गया ६ इन्द्रने समय पाकर उसको भुला दिया तब वह घोड़े पर चढ़ाहुआ अकेलाही इन्द्रसे मोहित होकर इधर उधर घूमनेलगा ७ और क्षुधापिपासा से महापीड़ित होकर वह राजादिशाओंको भूल गया और इधर उधर घूमता हुआ परिश्रम और तृषासे महा व्याकुल होगया ८ तब दैवयोग से सुन्दर निर्म्मल शीतल जलसे भरा हुआ एकसरोवर उसनेदेखावहांजाकरउसने घोड़ेकोजलपिलाया ९ फिर इस राजा ने पानीसे तृप्त करके घोड़ेको वृक्षसे बांधकर आप स्नान किया और स्नान करतेही वहस्त्री रूप होगया १० फिर वह

उत्तम राजा अपनेको स्त्रीरूप जानकर महालज्जित और चिंतायुक्त होकर सर्वात्मा से व्याकुलेन्द्रिय चित्त हुआ ११ और विचारने लगा कि मैं किसप्रकारसे घोड़ेपरसवारहोकर अपने पुरकोजाऊंगा और इसअग्निष्ठितयज्ञसेमेरे और सौ पुत्रहुये १२ मैं उन पुत्रोंसे व अपनी स्त्रियोंसे अथवापुर वासी देशवासी लोगोंसे क्या कहूंगा १३ धर्मदर्शीऋषियोंने कोमलता सूक्ष्मांगता और व्याकुलताआदि धर्म स्त्रियोंकेकहेहैं १४ और परिश्रम करनेमें शरीरकी दृढ़ता और बल यह पुरुषके बर्णन कियेहैं परन्तु यहनहीं जानताहूं कि किसकारण से मैं पुरुषत्वता से हीन होकर स्त्री रूपमें प्राप्त होगया १५ अब इस स्त्रीरूपसे घोड़ेपर सवार होनेको कैसे साहस करूं यह कहता हुआ वह स्त्री रूपराजा बड़े उपाय पूर्व्वक घोड़ेपर सवार होकर१६ अपने पुरको आया पुत्रस्त्री दास पुरबासी देशवासी आदिलोगों ने १७ इस बात को जानकर बड़ा आश्चर्य्य किया कि यह कैसे स्त्री रूपहोगया इसके अनन्तर उसमहावक्ता स्त्रीरूप राजानेकहा कि १८ अपनी सेनाओंकी साथ लेकर बड़ी दृढ़ता से शिकार को गयाथा वहां दैवयोग और ईश्वर की प्रेरणासे मैं अकेला घूमता हुआ एक भयानक बनमें जापहुंचा १६ उसभयानक बनमें तृषासे पीड़ित व्याकुल चित्त होकर मैंने एक सुन्दर सरोवर को देखा जिस पर अनेक पक्षी कलोलेंकर रहेथे मैं पूर्व्व जन्मके दैवयोग से उस सरोवरमें स्नान करतेही स्त्रीरूपहोगया स्त्रियोंके और मंत्रियों के सन्मुख नाम और गोत्र को कहकर २१ उस स्त्री रूप राजाने अपने पुत्रोंसे कहाकि हे पुत्रो तुमपर स्परमें प्रीति पूर्व्वक स्नेह के साथ राज्यकोभोगो मैं अब बनको जाऊंगा २२ इसप्रकारसे अपने सौ पुत्रों को समझाकर वह बनको चला गया वहां किसी आश्रम में जाकर एक तामसी ब्राह्मण को पाया उस तामसी ब्राह्मण से उसके सौबेटेहुये फिरउसने उनसबको साथलेकर अपनेपहले बेटों से कहा २३ । २४ कि मेरे पुरुष रूप होनेमें तुम बेटेहुये और स्त्री रूप होनेमें यह सौ बेटे हुये हे पुत्रो तुम भाईपनेकी प्रीतिसेउत्तम

राज्य को एकही स्थान पर भोगो २५ इसके पीछे उन भाइयोंने मिलकर राज्यको भोगा भाईपने की प्रीति से उत्तम राज्यका भोगनेवाले उन राज कुमारों को देखकर २६ क्रोध से भरे देवराज इन्द्रने चिन्ता करी कि मैंने इसराज ऋषिके साथ नेकीकरीहै वदी नहीं करी २७ इसके अनन्तर इन्द्र ने ब्राह्मण रूप से नगर में जाकर उन राज कुमारों की परस्पर में शत्रुता करादी २८ और कहा कि भाइयों में चाहैएक पिताके भी पुत्रहों परस्पर भाईपनेकी प्रीति नहीं होतीहै देखो कश्यपजी के पुत्र देवता और राक्षस हुये उनदोनो प्रकारके पुत्रोंने राज्यके कारण वादकिया तुमभंगाश्वन के पुत्रहो और यहसब दूसरे तपस्वी केपुत्रहैं जैसेकि कश्यपजीके पुत्रदेवता और असुरहैं २९।३० तुम्हारे पिताका राज्य तामसके पुत्रभोगतेहैं फिरइन्द्रसे विरुद्धकियेहुये उन राजकुमारोंने परस्पर में युद्धकरके एकने दूसरेकोमारा ३१ तामस भी इसबातको सुनकर अत्यन्त क्रोधयुक्तहुये इसकेपीछे इन्द्रनेब्राह्मण रूपसे सन्मुखजाकर उसस्त्रीरूप राजासे पूछा कि हे श्रेष्ठ मुखीतुम किस दुःखसे दुखी होकर रोतीहो तब उसस्त्रीने ब्राह्मण को देखकरकरुणा पूर्वक वचन कहे ३३ हे ब्रह्मन् मेरे दो सौ पुत्र कालसे परस्पर में मारेजाते हैं हे द्विजवर्य वेदपाठी मैं पूर्वमें राजाथा तव मेरे सौ वेटे ३४ उत्पन्न हुये वहमेरेही समान रूपवानथे मैं एकसमय शिकारकोगया और वड़े घने वनमें भूलकर घूमनेलगा ३५ फिर मैं एकसरोवरमें स्नान करनेसे स्त्री रूप होगया फिरअपने पुत्रों को राज्य पर नियतकरके वनको आया ३६ यहां इस महात्मा तापस से मुझ स्त्री में सौपुत्र हुये मैंने उनको भी नगर में पहुंचादिया ३७ फिर कालपाकर उन सबमें परस्पर शत्रुता उत्पन्न हुई अब दैवसे महा व्याकुल होकर मैं शोचतीहूं ३८ इंद्रने उसको दुखी देखकर कठोर वचन कहा कि कल्याणिनि तुमनें पूर्व समय में मेरा असह्य दुःख उत्पन्न किया था ३९ इन्द्रके विरुद्ध अग्निष्टितयज्ञ करनेवाले तुमने मुझकोआवाहन न करके यज्ञ किया हे निर्बुद्धी मैं इन्द्रहूं मैंने अपनी शत्रुताका

बदला लिया ४० वह राजऋषि इन्द्र को देखकर शिरके बलदोनों चरणों पर गिर पड़ा और कहा कि देवेन्द्र आप प्रसन्न हूजिये वह यज्ञ मैंने सन्तानकी इच्छासे किया था हे देवेश आप उसमेरेअपराध को क्षमा करिये फिर उसकी नमस्कार से प्रसन्न होकरइन्द्रने उसको वर दिया कि हे राजा तू स्त्री रूपके वा पुरुष रूपके कौनसे पुत्रोंको सजीव होना चाहताहै उसको मुझसे कह तब तो हाथजोड़ कर उसतापसी ने इन्द्रसे कहा कि हेइन्द्र मुझस्त्रीरूपके जो पुत्रहैं वह सजीव होजांय ४४ यह सुनकर इन्द्रने आश्चर्य्यित होकरफिर उस स्त्री से पूछा कि तुझपुरुषरूपसे जो पुत्र उत्पन्नहुये वहतेरे पुत्र किस प्रकारसे शत्रुता के योग्यहैं ४५ स्त्री रूपके जो बेटेहैं उनमें अधिकप्रीति किसहेतुसे है मैं इसकारणको सुना चाहताहूं तुममुझ से कहो ४६ स्त्री बोली कि स्त्रीकी प्रीति पुरुषकी प्रीतिसे अधिक होतीहै हे इन्द्र इसहेतुसे वह पुत्रजीवें जो मुझस्त्रीरूपसे उत्पन्नहुवे हैं ४७ भीष्मजी बोले कि इसके पीछे इसके कहनेसे प्रसन्न चित्त इन्द्रने यह वचन कहा कि हे सत्यबोलने वाली तेरे सबपुत्रसजीव होजांय ४८ हे सुन्दर व्रतवाले राजेन्द्र इसके विशेष जो तू चाहता है वह और मांग स्त्रीरूप चाहताहै या पुरुष रूप चाहता है जैसे कहै वैसाही तुझको करदूं ४९ स्त्री बोली हे इन्द्र मैं स्त्री रूप को मांगतीहूं पुरुषरूपको नहीं चाहती इसप्रकार से कहे हुये देवेन्द्रने उसस्त्री को उत्तरदिया ५० हे समर्थ तुम पुरुषरूपको त्याग करके क्योंस्त्री रूपको चाहते हो इन्द्रके इस वचनको सुनकर उसस्त्रीरूप राजाने उत्तर दिया ५१ कि स्त्री पुरुषके संयोगमें स्त्री को अधिक प्रीति होतीहै इसहेतुसे हे इन्द्र मैं स्त्रीरूपकोही चाहताहूं ५२ हे देवोत्तम मैं स्त्रीरूपमें अधिक क्रीड़ा करूंगा यह सत्यहै कि मैं स्त्री रूप से प्रसन्नहूं हे देवराज आप कृपा करके जाइये ५३ तथास्तु कहकर उससे पूछकर इन्द्र देवता स्वर्गको गये हे महाराज युधिष्ठिर इस रीतिसे स्त्री की प्रीति अधिक कहीजाती है ५४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्म्मेद्वादशोऽध्यायः १२ ॥

तेरहवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि लोक यात्रा का हित चाहने वाले मनुष्य को क्या करना उचितहै कैसे स्वभावयुक्त होकर किस लोक यात्रा को करे १ भीष्मजी बोले कि देहसे तीन प्रकारके कर्मको वाणीसेचार प्रकारके कर्म्मको चित्तसे तीन प्रकार के कर्म्मको अर्थात् इन दशों कर्म मार्गों को त्यागकरे २ हिंसा, चोरी, दूसरेकी स्त्री,से संग यह तीन पाप देहसे होतेहैं इनको सब ओरसे त्यागकरे ३ असत्, अनर्गल और निरर्थक बोलना, कठोर वचन कहना, राजा की सभा आदिमें दूसरेके छिद्र को प्रकाश करना, दूसरेको दुःख देनेवाली निष्प्रयोजन बकवाद करना यह चारपाप वाणीसे अर्थात् वचन से होतेहैं हे राजा इनचारोंको कभी न कहे और न ऐसे बचनकहनेको चित्तमें विचारे ४ दूसरे के धन आदिमें बुराई न करना, सबजीवों से प्रीति करना, यह सब वेदोक्त कर्मोंके फलहैं इनतीनों प्रकारके कर्मोंको मनसे आचरणकरे ५ इसीकारण मनुष्य मन वचन देह से इनपापों को नहीं करे क्योंकि अच्छे बुरे कर्म्मोंका कर्त्ता अपने२ कर्म फलको भोगता है ६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेलोकयात्राकथनेत्रयोदशोऽध्यायः १३ ॥

चौदहवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे श्रीगांगेय जी शुभकर्म करनेवाले मनुष्य को जैसे जपकरना चाहिये इसको चाहता हुआ मैं आपसे पूछता हूं कि आपने उसपितामह के भी पिता ईश्वर अन्तर्यामी आनन्दके उत्पत्ति स्थान जगत्पतिके नामसुने हे प्रभु उन नामों को १ और उस विशालरूप विश्वात्मा देवासुरोंके गुरू देवता आनन्दके करने वाले और अज्ञान व प्रधान नाम अव्याकृत के उत्पत्ति और लयके स्थानरूप ईश्वर के ऐश्वर्यको वर्णन कीजिये २ भीष्मजी बोले कि मैं उन महाज्ञानी महादेवजीकेगुण वर्णनकरनेको समर्थ नहींहूं वह

देवेश्वर सर्वत्र व्यापकहै और सब स्थानमें दृष्टिनहीं आताहै३ और विराटरूप ब्रह्मा सूत्रात्माविष्णु और देवेश्वरका उत्पन्नकरने वाला प्रभुहै उसकी ब्रह्मासे आदि लेकर पिशाच पर्यन्त सबदेवता उपासना करतेहैं अर्थात् अपनी २ उपाधियों को त्याग करके उसको प्राप्त होतेहैं ४ पंच तन्मात्रा से लेकर अव्यक्त पर्यंत सब प्रकृतियों से परे होनेसे भोक्ताजीव पुरुष सेभी श्रेष्ठ तरहै ५ जिस को बुद्धि आदिके असङ्गरूप योगके जाननेवाले तत्वदर्शी ऋषिलोग संपूर्ण चिन्ताओं को त्यागकरके प्राप्त करतेहैं और जिसने रूपान्तर दशा से रहित परब्रह्म रस्सी सर्प की समान दृष्टि गोचर होकर भी वाणी से परे उस माया पुरुष रूप माया सबल अव्याकृत नाम को जीवों के कर्मों के द्वारा एकसी दशा से हटाकर अपनी सत्ता स्फूर्त्ती से महत्तत्त्व को उत्पन्न किया उससे देवताओं के देवता चतुर्म्मुख ब्रह्मा उत्पन्न हुये ऐसे देव देवेश्वरजी के गुणों को गर्भ जन्म जरामरण संयुक्त मरणधर्म्मवाला कौनजीवात्मा वर्णन कर सक्ताहै अर्थात् कोई समर्थनहींहै ८ हेयुधिष्ठिर शंख चक्र गदापद्म धारी नारायणजी के सिवाय मुझसरीखा कौनसा पुरुष उससबके उत्पत्तिस्थान परमेश्वरके गुणोंके जाननेको समर्थ है ९ यह विद्वान गुणमें श्रेष्ठ महादुर्जय दिव्यचक्षुधारी तेजस्वी विष्णुजीभी उसको योगरूप नेत्रोंसे देखसक्ते हैं १० महात्मा श्रीकृष्णजीने रुद्रजी की भक्तीसे अर्थात् आकाशादि अष्टमूर्त्तियोंके ध्यानसे जगतको व्याप्त किया तब बदरिकाश्रममें उसदेवताको प्रसन्नकरके सबलोकोंमेंभोग पदार्थोंसे अधिक अपनी प्रियतमत्वता उनदिव्य दृष्टीवाले महेश्वर जीसे प्राप्तकी ११ इनमाधवजीने चराचर जगत के गुरू वरदायी देवता शिवजीको प्रसन्न करके परेहजारवर्षतक तपस्याकरी आशय यहहै कि शिवजीकेविना प्रसन्नकिये तपस्या करना बड़ा कठिनहै १२ हरएकयुगमें श्रीकृष्णजीने महेश्वरजीको प्रसन्नकिया और परमाभक्ती से परमात्माकी प्रीति प्राप्तकरी १३ उसजगत के उत्पत्ति स्थान परमात्मा शिवजीका जैसा ऐश्वर्य्यहै उससाक्षात् ऐश्वर्य्य को

उस अविनाशी हरिने पुत्रके निमित्तदेखा १४ उसऐश्वर्य्यसेबढ़कर मैं किसी ऐश्वर्य्यको नहीं देखताहूं हेराजा यह महाबाहु श्रीकृष्ण जो उन देवताओंके देवता महेश्वरजीके नामोंको मुख्यता पूर्वक अर्थ संयुक्त पूर्णतासे वर्णन करनेको समर्थहैं यही श्रीकृष्णजीभगवतगुण और माहेश्वरी सच्चाऐश्वर्य्य वर्णन करनेको समर्थ हैं १६ वैशंपायनबोले कि तबबड़े यशस्वी भीष्म पितामहने बासुदेवजीको इसरीतिसे वर्णन करके शिवजीके माहात्म्यसे संयुक्तयह बचनकहा १७ हेसुरासुरोंके गुरूदेवता विष्णुजी आपही उसकेकहनेको योग्य हो जिसको युधिष्ठिरने विश्वरूप शिवजीके विषयमें मुझसे पूछाहै इसका असली सिद्धांतयहहै कि शिव और विष्णुकी एकताहोनेसे विष्णुजी शिवजीके गुणोंको और शिवजीविष्णुजीके गुणोंकोवर्णन करसक्तेहैं १८ ब्रह्माकेपुत्र तंडीऋषिने इनदेवदेव शिवजीके हजार नाम ब्रह्मलोक में वर्णनकिये उनको पूर्वसमय में ब्रह्माजीने प्रकट किया १६ यह तपोधन महाव्रती जितेन्द्री व्यासआदि ऋषिलोग आपके कहेहुये नामोंकोसुनें २० हेसमर्थ आपउस ध्रुवआनन्द स्वरूप कर्त्तारूप विज्ञानमूर्त्ति अग्निहोत्र कर्मफल देनेकेद्वारा सम्पूर्ण संसारके स्वामी अग्निरूप मुंडी कपर्द्दिन शिवजीके ऐश्वर्य्य को वर्णनकरो २१ वासुदेवजी बोले कि ईश्वरके कर्मोंकी गति मुख्यता पूर्वक हिरण्य गर्भ को आदिले सबदेवता और इन्द्रादिमहर्षी और सूक्ष्मदर्शी अदितीकेपुत्र आदित्यों ने जिसके हृदयाकाश रूप भवन को नहींजाना वह सत्पुरुषोंका गतिरूप ईश्वर केवल मनुष्यसेजान ना कैसे संभव होसक्ताहै २३ इससेमैं उसअसुरारि व्रतयज्ञोंकेफल दायीभगवानके कुछ २ गुणोंको आपलोगोंके सन्मुख ठीक २कहता हूं २४ वैशंपायनबोले कि ब्रह्मविद्यामें प्रसिद्ध भगवान श्रीकृष्ण जीने इसरीतिसे सबको विदितकिया तदनन्तर आचमनादिसे शरीर को पवित्रकरके उन महात्माके गुणोंको वर्णनकिया २५ वासुदेव जीबोले हेब्रह्मर्षिलोगो हेतातयुधिष्ठिर और हेगांगेय तुमइससगुण -ह्म कपर्द्दिनके नामोंकोसुनो २६ मैंने पूर्वसमयमें जो शिवजीके

निमित्तबड़ेदुःखसे करनेयोग्य तपकोप्राप्तकिया और पूर्वसमाधियोग केद्वारा बुद्धिके अनुसार भगवानका दर्शनकिया २७ और व्यतीत समयमें बुद्धिमान प्रद्युम्न के हाथसे सम्बर दैत्यके मरनेको बारह वर्ष व्यतीत होनेपर हेयुधिष्ठिर रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्न और चारु देष्ण आदि पुत्रोंको देखकर पुत्रकी आकांक्षा करनेवाली जाम्बव-तीने मुझको बुलाकर यह वचन कहाकि २६ हे अविनाशी मुझको भी ऐसापुत्रदो जो शूरवीर पराक्रमी सुन्दर स्वरूपवान शुद्ध चित्त आपके समानहो इसकेदेनेमें बिलम्बनकरो ३० क्योंकि तीनोंलोक में आपको कोई अप्राप्त वस्तुनहींहै हेयादव जो तुमचाहोतो दूसरे लोकोंको उत्पन्न करसक्ते हो ३१ बारहवर्ष पर्य्यन्त व्रतोंसे देहको शुष्ककरके आपने शिवजीको पूजनादिसे आराधन करकेरुक्मिणी में पुत्र उत्पन्नकिये(शंकासमाधान)श्रीकृष्णभगवानने गीतामेंकहा है कि मुझमें चित्तकोलगाओ मुझीमें एकताकरो तोक्या उनकाभी कोई दूसरा ईश्वरहै इसकायह उत्तरहै कि मैं शब्दकरके परमात्मा का अर्थ बोधितहोताहै और एकत्वता अपनेही शरीरसे होतीहै कुछ गुणोंसे नहीं होतीहै इसहेतुसे श्रीकृष्णजीने गीतामें मैं शब्द करके अपने शुद्धरूपको कहाहै और मायाकृत रूपसे अपनी एकत्वता के विषयमें शास्त्रको उपदेशकिया शिव और विष्णुमें भिन्नता नहींहै दोनों एकही शरीरहैं इससेउन श्रीकृष्णजीने अपनेहीरूप शिवजी-का आराधन किया दूसरेका नहींकिया और यह आराधना केवल संसारके उपदेशके निमित्तहै ३२ रुक्मिणीके पुत्रोंकेनामचारुदेष्ण, सुचारु, चारुवेश, यशोधर, चारुश्रवा, चारुयशा, प्रद्युम्न, शम्भु ३३ जैसे कि यह श्रेष्ठ पराक्रमी सुन्दर पुत्र आपने रुक्मिणीमें उत्पन्न किये उसीप्रकार हे मधुसूदनजी मुझे भी पुत्रदो ३४ इसरीतिसे देवी जाम्बवतीके कहनेपर मैंने उससुन्दरीसे कहा कि हे रानी तू मुझे आज्ञादे मैं तेरेभी कहनेको पूरा करूंगा ३५ फिर उसनेमुझसे कहा कि आपकल्याण पूर्वक विजयके अर्थजाओ ब्रह्मा शिवकाश्यप नदी और मनके संग चलनेवाले देवता ३६ क्षेत्र औषधी देवताओं को

हव्य पहुंचानेवाले यज्ञ छन्द ऋषियोंके समूहपृथ्वी समुद्र दक्षिणा स्तोभ नक्षत्र पितर ग्रह देवपत्नी देवकन्या देवमाता ३७ मन्वन्तर गौ चंद्रमासूर्य विष्णु ३८ सावित्री ब्रह्मविद्या ऋतु वर्ष क्षण लव मुहूर्त निमेष युगका विपर्य्यय ३९ यहसब सर्वत्र वर्त्तमानतुम्हारे आनन्दकी रक्षाकरें हेनिष्पाप यादवजी तुम निर्विघ्न मार्गमें जाओ और सावधान रहो ४० इसरीतिसे स्वस्त्ययन कियाहुआ मैं ऋक्ष राजकी पुत्रीको विदाकरके नरोत्तम अपने पितामाता और राजा उग्रसेन के समीप जाकर विद्याधर इन्द्रकी पुत्रीका कहा हुआ सब वृतान्त उनसे कहकर महादुःख से उनसे बिदाहोके भाईगद और बड़े पराक्रमी बलदेवजी से मिला तब अत्यन्त प्रीतियुक्त होकर वह दोनों बोले कि आपके तप केतप की वृद्धि निर्विघ्नता से होय ४२ मैंने गुरुलोगों की आज्ञा पाकर गरुड़जी को स्मरण किया वह गरुड़ आकर मुझको हिमालय पर्व्वत पर लेगया मैंने उस पर्व्वत को प्राप्तकरके गरुड़जी को विदा किया ४३ उस उत्तम पर्व्वत पर मैंने अपूर्व्व वृत्तान्त को देखा कि एकउत्तम क्षेत्रमें एक बड़े महात्मा ऋषि दिखाई दिये ४४ वह क्षेत्र वैयाघ्र पाद्य गोत्री महात्मा उपमन्युऋषि का निवासस्थान दिव्यदेवता गंधर्वों से पूजित ब्राह्मणों की लक्ष्मीसे संयुक्त ४५ धवककुभ कदंबनारिकेल कुरवककेतकजंबु पाटल वट वरुण कवत्स नाम बिल्व सरल कपित्थ पिप्पल साल ताल बदरी कुन्द पुन्नाग अशोक आम्र अतिमुक्तक मधुक कोबिदार चंपक कठर बढ़र इत्यादि अनेक प्रकार के वनके फल पुष्प वाले वृक्षों से संयुक्त पुष्प गुल्म लताओं से आकीर्ण केलेके खम्भोंसे शोभित अनेक पक्षियों के भोजनके योग्य फलवान वृक्षोंसे अलंकृत और यथा योग्य स्थानोंमें स्थापित भस्मसे ढकी हुई अग्नियों से अत्यन्त मनोहर ४९ रुरुवानरशार्दूल सिंहदीपीनाम पशुओंसेव्याप्त मयूर कुरंगोंसे संयुक्त बिलार और सर्पों से युक्त ५० मृग जाति के झुण्ड भैंसे रीछों से सेवित सदैव मदोन्मत्त रहनेवाले हाथियों से शोभित अत्यन्त प्रसन्न असंख्य पक्षियोंसे सेवित अच्छे फूले हुये

मेघवर्ण चित्र विचित्र वृक्षोंके वनोंसे आनन्दरूप अनेक प्रकार की पुष्परेणु से युक्त गजोंके मदसे सुगन्धित दिव्य अंगनाओंके गानसे संयुक्त वायु जिसमें अनुकूल वहतीथी ५१ हे वीर वहां जलधाराओं के और पक्षियोंके शब्द हाथियों की चिग्घाड़ और किन्नरोंके उत्तम गान सामगनाम ब्राह्मणोंकी सुन्दर वाणियों से संयुक्त थे ५२ ऋषियों के सिवाय अन्य लोगोंकेमनसे भी अचिन्त्यसरोंके सुन्दर पुष्पयुक्त वृक्षों से और बड़ी २ अग्निशालाओंसे महा शोभायमान था ५३ धर्मकी वृद्धि करनेवाली पवित्रजल भरी श्री गंगाजी से सदैव सेवित और अग्निके समान महातेजस्वी तपस्वियों से चमत्कृत वायु जल भक्षी सदैव जपमें प्रवृत्त शास्त्र रीतिसे चित्तकी शुद्धी करनेवाले ध्याननिष्ठ योगी धूम्र पान करने वाले सूर्य्यकी किरणों के भक्षी दुग्धाहारीब्रह्मर्षियों सेसबओरको सेवित५४।५५गोके समान व्यापार और हाथके बिनाही भोजन करने वाले पत्थर पर कूटकर खानेवाले दांतरूप ऊखल रखने वाले सूर्यकी किरणोंसे हो उदर भरनेवाले जलके फेन पान करनेवाले इसीप्रकार मृगचारी ५६ पीपलके फलभोगी जलशायी चीर और मृगचर्मरूप वस्त्र और वल्कल धारी ऋषिलोग वहां वर्तमानथे ५७ महा कठिन ऐसे २ नियमों के कर्त्ता और पुण्यधन मुनियोंको देखताहुआ मैं वहां पहुंचा हेभरतर्षभ पवित्रकर्मी शिवजी आदि महात्मा देवताओंसे अच्छी रीतिसे पूजित वह आश्रम मंडल सदैव ऐसा शोभायमान था जैसे कि आकाश में चन्द्रमण्डल५८।५९वहांप्रकाशमान तेजस्वी महात्माओं के प्रभावसे नौले सर्पोंके साथ मृग व्याघ्रों के साथ क्रीड़ा कर रहे थे ६० और जीवों के मनके प्रसन्न करनेवाले वेदवेदाङ्ग के पारगामी ब्राह्मण ६१ और नानाप्रकारके नियमों में प्रसिद्ध बड़ेमहात्मा ऋषियों से सेवित उस आश्रममें जाकर मैंने जटा चीर धारी तेज और तपसे अग्निकेसमान शिष्यों समेत शांतरूपयुवाब्राह्मणर्षभ उपमन्यु ऋषिको देखा६२।६३ फिरमैंने शिरसे उनको दण्डवत की तब वह मुझसे बोले कि हे कमललोचन श्रीकृष्णजी आप आ-

नन्दसे आये अब हमारे तप सफलहैं जो पूजनके योग्य आपही हमको पूजतेहो और जगत् के दर्शनकरने के योग्य होकरभी आप हमारे दर्शनकी इच्छा करते हो ६४। ६५ फिर मैंने हाथ जोड़कर मृगपक्षी और अग्नि धर्मी शिष्यों के समूहोंकी क्षेम कुशल उन से पूछी ६६ इसके अनन्तर भगवान् ऋषिने बड़ेमनोहर मधुरवचनसे मुझसे कहा कि हे श्रीकृष्णजी तुम निस्सन्देह अपनेसमान पुत्रको पावोगे ६७ तुम बड़े तपमें नियतहोकर ईश्वर शिवजी को प्रसन्न करो हे विष्णुजी यहां वह देव देव शिवजी अपनी शक्तीसमेतक्रीड़ा करतेहैं ६८ पूर्व समय में यहां पर हमने देवता और ऋषियों के समूहों समेत देवताओं में श्रेष्ठ शिवजीको तप ब्रह्मचर्य सत्य दम इत्यादि बातोंसे प्रसन्न करके शुभ कामनाओंको प्राप्त कियाहै६९ हे दुष्टोंके पीड़ित करने वाले श्रीकृष्णजी जिनको आप चाहते हो वह तपों के समूह अचिन्त्य भगवान् शिवजी शुभाशुभ से संयुक्त भावों को उत्पन्न करते और अपनेमें लय करते श्रीदेवी के साथयहां निवास करते हैं७०। ७१ मेरु पर्वत का कँपाने वाला जो हिरण्य-कशिपु दानव है उसने भी देवताओंका ऐश्वर्य शिवजीसे एक अरब वर्ष पर्यन्त पाया ७२ और उसके मन्दार नाम प्रसिद्ध उत्तम पुत्रने महादेवजीके बर प्रदानसे एकअरबवर्ष पर्यन्तइन्द्रसे युद्ध किया ७३ हे केशवजी पूर्वसमयमें विष्णुभगवान् का वह घोर चक्र और इन्द्र का वज्र मन्दार के अंगों पर निष्फल होगये ७४ और जो चक्र कि पूर्व समय में भगवान् शिवजीने अग्निके समान देदीप्यमान तुमको दिया वह चक्रभी शिवजीने तेजसे पूर्ण महा अजेय उत्पन्न करके जलके मध्यवर्त्ती महा अभिमानी दैत्यको मार कर तुमको दिया था ७५। ७६ शिवजीके सिवाय उसके देखने को दूसरा कोई समर्थ न था उसका सुन्दर दर्शनथा इसीसे शिवजीने सुदर्शन नाम कहा और लोकमें भी वह सुदर्शननाम चक्र करके विख्यात हुआ हेकेशव जो वह मन्दारनाम दैत्यके अंगोंपर बरप्रदानके का-रण निष्फल हुआ ७७ उसके शरीर पर सैकड़ों शस्त्र बज्र और चक्र

कोई भी असर नहीं कर सक्ता था ७८। ७९ देवता लोग उस महापराक्रमी ग्रहसे अत्यन्त पीड़ितहुये अर्थात् उस वलवान् ग्रह करके सब देवता अर्द्धमान होकर युद्ध में पिसने लगे ८० और शिवजीने प्रसन्न होकर विद्युतप्रभाव कोभी तीनों लोकोंकाऐश्वर्य दिया इसीसे वह एकलाख वर्षतक सब लोकोंका स्वामी रहा ८१ शिवजीने कहाथा कि सदैवतू मेराही अनुचरहूजियो इसीसेउसको दशसहस्र पुत्रभी दिये और राज्यके निमित्तकुशद्वीप दियाद२।८३ फिर शतमुख नाम एक महा असुर उत्पन्नहुआ जिसनेकि सौ वर्ष सेभी अधिक तक अपने मांस को काट२कर अग्नि में होम किया तब प्रसन्न होकर शिवजीने कहा कितू क्या चाहताहै ८४ तबशत मुखने कहा कि मुझमें ऐसा अद्भुत योग होजाय जिससे कि चन्द्रमा सूर्य और पृथ्वी आदि के उत्पन्न करनेकी सामर्थ्य हो और ब्रह्म-विद्या से उत्पन्न मुझमें अविनाशी बलदो तब शिवजीने कहाऐसा ही हो पूर्वकाल में योगबलसे सूत्रात्मा में प्रविष्ट होकर अर्थात् तीनसौवर्ष तक सूत्रात्मा का ध्यान करतेहुये स्वायंभूमनुका यज्ञपुत्र के निमित्तहुआ तब उसको संकल्पकेअनुसार हजारपुत्रदियेद५।८६ हे श्रीकृष्णजी आप भी उस देवताओं से स्तुतिमान योगेश्वर को निस्सन्देह जानतेहो एक याज्ञवल्क्य नाममहाधार्मिक और प्रसिद्ध ऋषिहुये ८७ उन्होंने भी महादेवजी की आराधना करने से बड़े यशको प्राया और पराशरजी के पुत्र योगात्मा वेदव्यास नाममुनि हुये ८८ उन्होंने भी शंकरजीको आराधन करके वड़ा यश पाया एक समय बालखिल्य ऋषियों का इन्द्रने अपमान किया ८९ तब उन क्रोधरूप ऋषियों के तपसे भगवान् रुद्र जी प्रसन्न हुये और उनसेकहा ९० कि तुम अपने तपसे अमृत लाने वाले गरुड़जी को उत्पन्न करोगे पूर्वकालमें महादेव जीके क्रोधसे जलगुप्त होगये फिर देवतावोंने सात कपालों से शिवकी पूजा करके दूसरे जलों को उत्पन्न किया फिर शिवजी के प्रसन्न होजानेसे पृथ्वीपर जल उत्पन्न हुआ ९१। ९२ अत्रि ऋषिकी ब्रह्म वादिनी भार्य्या भी

इस वचनको कहकर मुनिको त्यागकर शिवजी की शरण में गई कि मैं इस मुनिके आधीन नहींहूं वहां वह महादेवजी के प्रसन्न करनेके लिये तीनसौवर्षतक निराहाररही ९३ और अत्रिऋषिके भय से मूसलोंपर शयन करनेलगी तब शिवजीने हँसकर उससे कहा कि तेरे पुत्रपतिके योगविना भी चरु भक्षण करने से अवश्य होगा ९४।९५ और तेरेहीनामसे वंशमें बड़ी उत्तम कीर्त्तिको पावेगा ९६ हेमधुसूदनजी इसीप्रकार भगवान् विकर्णने भक्तोंके सुखदायीमहा देवजी को प्रसन्न करके सिद्धिको पाया ९७ हे केशवजी तीक्ष्णबुद्धि साकल्यने ९०० वर्षतक मानसी यज्ञसे शिवजीकी आराधनाकरी तब प्रसन्न होकर भगवान्ने उससे कहा हेपुत्र तू बड़ा ग्रन्थकार होगा तीनोंलोकोंमें तेरी अक्षयकीर्त्ति होगी ९८।९९ और तेरावंश और कुल महर्षियोंसे शोभित होकर अविनाशीहोगा और हे श्रेष्ठ ब्राह्मण तेरापुत्र सूत्रकार अर्थात् सूत्रोंका बनानेवाला होगा १०० सतयुगमें सावर्णि नामएक महर्षी हुये उन्होंने भी यहां छः हजार वर्षतक तपस्या करी १०१ तब साक्षात् भगवान् रुद्रजीने उससे कहा कि हे निष्पाप मैं तुझपर प्रसन्नहूं इससे तुम लोकमें अजर अमरहोकर प्रसिद्ध ग्रन्थकर्त्ता होगे १०२ हे जनार्द्दनजी पूर्वसमय में इन्द्रने वाराणसीपुरी में दिगंबर भस्मधारी शिवजीका आराधन किया १०३ उसने भी इन्हींकी कृपासे देवताओंके राज्यको पाया इसीप्रकार पूर्व्वकालमें नारदजीने भी बड़ी भक्तीसे शिवका आरा-धनकिया १०४ देवगुरूके भी गुरू शिवजीने प्रसन्नहोकरकहा कि तेरे समान तेज तप और कीर्त्ति में कोई न होगा १०५ गीतवाद्य संयुक्त तू सदैव मेरेपीछे २ चलेगा और हेप्रभुमाधवजी मैंनेभी पूर्व कालमें जैसे इनदेवदेव महादेवको प्रसन्नकिया उसको भी ब्यौरे समेतसुनो और मैंने पूर्व समयमें जो इनसेपाया उसको भी तुमसे कहताहूं हेतातपूर्व सतयुगमें व्याघ्रपादनाम ऋषि महातपस्वी वेद वेदांगके पारगामी हुये उनका मैं पुत्रहुआ और मेरा छोटा भाई धौम्यनामथा १०६।१०७।१०८।१०९।११० कुछकालकेपीछे

मैं अपनेभाई धौम्यकेसाथ क्रीड़ा करताहुआ शुद्ध अन्तष्करणवाले मुनियोंके आश्रमको गया १११ वहां मैंने एक दुहतीहुई गौकोदेखा और उसके दुग्धका स्वादु अमृतके समान पाया ११२ इसकेपीछे बाल्यावस्थाके कारणसे मैंने अपनी मातासे कहा कि हेमाता तुम खीरके भोजन मुझे खिलाओ ११३ तब मेरीमाता दूधके न होनेसे दुःखीहुई इसकेपीछे हेमाधवजी पिट्टीको जलमें घोरकर ११४ उसको दूधकी सूरतकरके यह कहतीहुई हमदोनों भाइयों के पिलानेकोलाई कि हे पुत्रो यह दूधहै इसकोपियो हमने किसीसमय गौका दूध पियाथा इससे श्रेष्ठ न लगा फिर मैं किसी बिरादरीके बड़े कुलीन के यज्ञमें अपने पिताके संगगया वहां देवताओं के प्रसन्न करनेवाली वहदेवी दिव्य गौ दूधदेतीथी ११६ मैं उसके अमृत के समान रसरूपी दूधको पीकर दूधके गुणोंको और उसकी उत्पत्ति को समझकर सबबातोंसे विदितहुआ ११७ तब से मैं उसपिट्टी के पानीसे प्रसन्न नहींहुआ और अपने लड़कपन करके मातासे कहा ११८ कि हे माता यहखीरनहींहै जो तुमने मुझकोदीहै तबतोदुःख शोक युक्त माताने पुत्रभावकी प्रीतिसे हमको गोदीमें उठाकर मुख चुम्बनकरके कहाकि हे पुत्र शुद्ध अन्तष्करण वाले वनवासी सदैव कन्दमूल फलको भोजन करनेवाले मुनियों के पास दूधभात वा खीर कहांहै बालखिल्य ऋषियोंसेसेवित दिव्यनदीपर नियत वन-वासी पर्वत निवासी मुनियोंके पास दूध कहांसे आसक्ताहै ११९। १२० वायु जल भक्षण करनेवाले वन आश्रम निवासी बालबच्चे-दारोंके आहारसे रहित वनके फलोंके भोजन करनेवाले ऋषियों के पास दूधकैसे प्राप्त होसक्ताहै १२१ हे पुत्र सुरभी गौकी संतान के बिनावनमें दूधनहीं मिलता नदी गुफा पर्वत और अनेक प्रकार के तीर्थोंमेंभी १२२ शवके संगजपकरनेवाले हमलोगोंके परमगति शिवजीहैं हेपुत्र उस बरदाता अचल अविनाशी विरूपाक्ष महादेव जीके प्रसन्न कियेबिना खीर या दूध भातके सुख और वस्त्रादिक यहां कहांसे आसक्ते हैं इससे हेपुत्र तुम उन शिवजीकी शरणमें

जाओ १२४ उसके प्रसन्न करने से तुम अपने सब मनोरथों को पाओगे हे शत्रुसंहारी श्रीकृष्णजी तब मैंने माताके बचनोंको सुन-कर १२५ हाथजोड़कर नमूता पूर्वक मातासे कहा कि हेमाता यह महादेवजी कौनहैं कैसे प्रसन्नहोतेहैं १२६ और कहां निवास करते हैं कैसे दर्शनके योग्यहैं और उनकी तृप्तीकैसे होतीहै और रूपउनका कैसाहै १२७ वह कैसे प्रसन्नहोकर मुझको दर्शनदेंगे हे श्रीकृष्ण जी तब पुत्रको प्यार करनेवाली हमारीमाता १२८ नेत्रों में जल भरके मेरेअंग और मस्तकको सूंघकर महादुखी होकरबोली १२६ हे तात महादेवजी दुराराध्य दुर्विज्ञेय दुराधारदुरंतक दुराबाध दुर्ग्राह्य दुर्दृश्य और शास्त्रोंसेभी उनका जानना कठिनहै १३० निराकार रूपको कहकर साकार रूपको कहतेहैं— ज्ञानीलोग उसके अनेक रूप अद्भुत स्थान और अनेक प्रकारकी कृपादृष्टियों को वर्णन करतेहैं १३१ उस ईश्वरका मूलसमेत सब चरित्र कौनसा मनुष्य जानसक्ताहै निश्चय करके जैसा कि पूर्व समय में उस देवताओं के देवताने जिन २ रूपोंको धारण किया और जैसी २ क्रीड़ाकरी और करतेहैं व जैसे प्रसन्नहोतेहैं १३२ वह जीवमात्रों के हृदयमें वर्त्तमान विश्वरूप महेश्वरहैं मैंने मुनियों के कहनेसे उन शिवजी का दिव्य शुभचरित्र और भक्तोंपर दयाकरने के निमित्त दर्शन को देना जैसा सुनाहै और ब्राह्मणोंपर दयाके लिये जिनजिन रूपोंको धारणकिया और जिनको देवताओं ने वर्णन किया १३३ । १३४ हे पुत्र उनको ब्योरे समेत तुझसे कहतीहूं तू चित्त लगाकर सुन १३५ माताने कहा कि वहसब उत्पत्ति स्थान ईश्वर, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, सूर्य्य और अश्विनीकुमारों के रूपों को १३६ और देवता, म-नुष्य, स्त्री, प्रेत, पिशाच, किरात, शबर और जलस्थलके जीवों १३७ का रूप धारण करताहै वनमें शबरादि रूपों को जलमें कछुआ व मछली, शंख, प्रवाल, अंकुर, भूषण १३८ यक्ष, राक्षस, सर्प, दैत्य, दानव और बिलमें रहनेवालों का रूप धारण करता है १३९ और भक्तों कीरक्षाके निमित्त ब्याघ्र, सिंह, मृग, तार्क्ष, रीछ, उलूक, कुत्ता, शृगाल

और पक्षियोंके भी रूपोंको धारण करताहै १४० हंस, काक, मयूर, कृकलासक, सारस, गिद्ध, चकवी, चकवा, और बलाकों के रूपों को भीधारण करताहै १४१ और सब पर्वतोंको भी धारणकरताहै वही महादेव गौ, हाथी, घोड़ा, ऊंट, गधा, छाग, शार्दूल आदिअनेकमृगों के रूपोंको धारण करनेवाले दिव्य पक्षियोंके भी रूपोंको धारण करतेहैं १४३ दण्ड, छत्र, कमण्डलका रखनेवाला और ब्राह्मणोंका पोषण करनेवाला षड़ानन बहुमुख तीननेत्र अनेक शिरोंका रखने-वाला अनेक कटि, चरण, मुख, हाथ, पसली आदि अशेष गुणोंसमेत १४५ ऋषि, गन्धर्व, सिद्ध, चारण कारूप धारण करनेवाला भस्म से पांडु वर्ण अंग अर्द्ध चन्द्रमा को मस्तकपर विभूषण करनेवाला बहुत शब्दोंसे शब्दायमान बहुतसी स्तुतियोंसे संस्कार कियाहुआ सबजीवों का नाश करनेवाला सर्वरूप सर्वलोक पूज्य सर्वात्मा सर्वव्यापी सर्वत्र गामी सर्ववाद्य सबशरीरी लोगोंका हृदयस्थ जा-ननेके योग्यहै १४८ जो पुरुष जिस अभीष्ट को चाहताहै वा जिस हेतुसे पूजनादि करताहै वह देवेश्वर इनसबको जानताहै उसीकी शरणागत होना चाहिये १४९ वह चक्र, शूल, गदा, मुसल, खड्ग, पट्टिशको धारण करनेवाला प्रसन्नभीहोताहै क्रोधभी करताहै और हुंकार भी देताहै १५० पृथ्वीका धारण करनेवाला शेषनाग रूप कीमेखला और नागकुंडलीका कुण्डल और सर्पोंकाही यज्ञोपवीत नागचर्म्मका बिछौना शय्या आदि रखनेवाला १५१ गुणोंसे युक्त हँसता गाताहुआ मनोहर बाजों समेत तांडवनाम उत्तम नृत्यको करताहै १५२ तिरछीचालसे जँभाई लेतारोता रुलाता उन्मत्तरूप होकर अच्छीरीतिसे संभाषण करताहै १५३ नेत्रोंसे मनुष्योंकोभय-भीत करता अत्यन्त भयानक हँसता जागता सोताहुआ सुख पूर्व-क जँभाई लेताहै १५४ जपकरताहै जपकिया जाता है तप करताहै तपकियाजाताहै देताहै लेताहै योग करताहै ध्यानभी कियाजाता है १५५ वेदीयज्ञ कुम्भगोशाला और अग्निके मध्यवर्ती बालक वृद्ध और तरुणरूप दृष्टिआताहै वा नहींआताहै १५६ ऋषियोंकी कन्या

और स्त्रियोंके साथ क्रीड़ा करता है बड़े केश लिंगयुक्त दिगम्बर विकृतलोचन गौर श्याम कृष्ण पांडुर धूम्र लोहित विकृताक्ष विशालाक्ष दिग्वास सबको वस्त्र देने वाला है १५८ इस माया से रहित आदिरूप माया करकेअनेकप्रकारके कार्यरूप संसारकीसूरत अजन्मा हिरण्यगर्भ के अन्तको और उस आदि अन्त न रखनेवाले की मुख्यताको कौन जान सक्ताहै १५६ वह महेश्वर अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनन्दमय योगात्मा शुद्धतम पदार्थरूप योगी ध्यान नाम योगमें प्रवृत्त सूक्ष्म चित्त वृत्तीसे प्राप्त करनेके योग्यहै क्योंकि आत्माहै आशय यहहै कि आत्मा ब्रह्म है इस महावाक्य का अर्थ इस श्लोकमें दर्शाया गयाहै १६० हजारों वा असंख्य नेत्र मुखधारी विराटरूप और आनन्द भोगने वाला आत्मारूपी एकमुख दो मुख तीन मुख आदि रखने वालाहै १६१ हेपुत्र इसका भक्त और ध्यान करनेवाला सदैव उसीमेंनिष्ठा रखनेवाला उसीको परमपद स्थान जानने वाला होकर उस महादेवजी का सेवनकर उसीसे अपने अभीष्ट मनोरथों को पावेगा १६२ हे शत्रुनाशक श्रीकृष्णजी माता केइस वचनको सुनकर तभीसेमहादेवजीमें मेरी निश्चलभक्ती उत्पन्नहुई १६३ फिर एक हजारवर्षतक वाम अंगुष्ठकी नोकसे तपमें नियत होकर मैंने उस आनन्ददायी देवताको प्रसन्न किया १६४ पहले सैकड़े में फलों काही आहार किया दूसरे सैकड़े में सूखे पत्ते भोजन किये तीसरे सैकड़े में जल को पान किया १६५ और फिर सातसौ वर्ष तक वायुभक्षण किया इस रीतिसे मैंने दिव्य एक हजार वर्ष तक आराधन किया १६६ इसके अनन्तर सर्वेश्वर प्रसन्न मूर्त्ति शिवजीने मुझको निज भक्त जानकर मेरी परीक्षा करी १६७ कि हजारनेत्र वज्रको धारणकिये अपना इन्द्रका रूप बनाके देवताओंसे व्याप्त १६८ अपनेतेजसे महातेजवान् किरीटहार केयूर से अलंकृत बड़े सुंदर श्वेतरूप लाल नेत्र स्तब्धस्कन्ध महोत्कट घोर शूंड़से आवेष्टित चारदाढ़ोंसे शोभित महागजराज पर सवार होकर वहषड़ैश्वर्य के स्वामी आन

पहुंचे १७० उस समय शिवजी घोर रूप पाण्डु वर्णदिव्य अप्स-
रा और गंधर्वों के शब्दों से सेवितथे १७१ तव उस देवराज रूपने
मुझसे कहा कि हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ मैं तुझपर प्रसन्नहूं अपने अभीष्ट
वरको मांग१७२ हे श्रीकृष्ण जी इन्द्रके वचनको सुनकर मैं प्रसन्न
नहीं हुआ और उत्तर दिया कि १७३ हे इन्द्रमैं शिवजी के सिवाय
आपसे या दूसरे किसी देवता से कोई वर नहीं चाहताहूं यही
मेरासत्य संकल्पहै १७४ और हे इन्द्र यह अच्छी रीतिसे निश्चय
किया हुआ मेरा बचन सत्य सत्यहीहै इस हेतु से कि मुझको म-
हेश्वर जी की कथाके सिवाय किसीकीकथा नहीं सुहातीहै १७५
चाहै पशुपति नाथके बचन से मैं कीट वृक्षादिक भी होजाऊं पर-
न्तु शिवजी महाराज के सिवाय दूसरे के प्रसन्नता से दिये हुयेती-
नों लोकोंके राज्य और ऐश्वर्य्य भी मुझको स्वीकार नहींहैं चाहै
महेश्वर जी की प्रसन्नतासे मैं तिर्य्यगयोनि और चांडाल योनि में
भी जन्म पाजाऊं१७६।१७७ परन्तु अपने ईश्वर महादेव की भ-
क्ती के सिवाय इन्द्र भवन में भी बासनहीं चाहता उस बायु जल
भक्षण करने वाले सत्पुरुषके दुःखका नाश नहीं होसक्ताहै १७८
जिसकी भक्ति सर्वेश्वर शिवजी में नहींहै १७६ और जिन पुरुषोंका
शिवजी के चरणके सिवाय किसी दूसरे धर्म में चित्तनहीं लगताहै
उनको शिवचरण का त्याग कैसे होसक्ताहै १८० कलियुगकोपा-
कर शिवके चरणों में प्रीतिकरने वाली बुद्धिके द्वारा ऐश्वर्य्य मान
होना चाहिये हरभक्ति रूप रसायन को पीकर संसारका भयनहीं
होताहै १८१ प्रसन्नतान प्राप्त करनेवाले पुरुषकी भक्ती शंकरजी
में क्षणमात्र कोभी नहीं होसक्ती है १८२ हेइन्द्र मैं शंकरजीकीआ
ज्ञासे चाहैकीटपतंगादिक भी होजाहूं परन्तु तुम्हारे दियेहुये तीनों
लोक के वैभवको भी नहीं चाहताहूं १८३ चाहै उनकी आज्ञा से
कुत्ताक्योंन होजाऊं परन्तु बिना शिवजीकी आज्ञाके देवताओं के
भी राज्य को नहीं चाहता १८४ मैं स्वर्गमें स्वर्गका राज्य ब्रह्मलो-
कमें ब्रह्मभाव आदिकिसी मनोरथ को नहीं मांगताहूं मैं केवल

शिवजीके दासभावको चाहताहूं १८५ जबतक चन्द्रमा के समान श्वेत किरीट धारी पशुपति नाथ प्रसन्न नहीं होतेहैं तबतक जरा जन्म मृत्यु के हजारों आघातोंसे उत्पन्न होनेवाले शरीर में वर्त्तमान अनेक दुःखोंको सहताहूं १८६ इस संसारमें उस सूर्य्यचन्द्रमा और अग्नि के समान प्रकाश मान तीनों लोकोंके सार असार आद्य अद्वितीय अजरअमर रूप शिवजीके प्राप्तहुये बिनाकोई पुरुष शान्ती को नहीं पासक्ता है १८७ जो मेरे दोषों से पुनर्जन्महोय तो सब जन्मों में मेरी शिवजीमें अचला भक्ती होय १८८ इन्द्र बोले कि उस सबके स्वामी संसार नाशकर्त्ताके होनेमें क्या तुझे निश्चयहै जो तू उसके सिवाय दूसरेसे वरको नहीं चाहताहै इस हेतुसे तू अज्ञान है अर्थात् दुःखदूर होनेके लिये जैसे गुणकी आवश्यकताहोतीहै वैसेही संसार के नाश कर्त्तासे वरकाचाहनाभी निर्बुद्धिताहै १८९ उपमन्यु ऋषिबोले कि ब्रह्मवादियोंने जिसको सत् असत् व्यक्त अव्यक्त कहाहै उसी नित्य एक और अनेक रूप धारीसेमैं वर मांगना चाहताहूं १९० जोआदिमध्य अन्त न रखने वाला ज्ञान ऐश्वर्य्य युक्त ध्यानसे अगम्य परमात्माहै उसीसेवरको चाहताहूं १९१ जिस अविनाशी से सकल ऐश्वर्य्य होते हैं और जिस अवीज से बीज उत्पन्न होते हैं उसीसे वरमांगताहूं १९२ वह अंधकारसे परे ज्योति रूपहै और गुरु पूजन करने वालोंका परम तपहै जिसको जानकर शोचसे निवृत्त होतेहैं उसीसेहम वर मांगतेहैं १९३ हे इन्द्रमैं उस देवताको पूजताहूं जोकि पंचतत्त्व और सब जीव मात्रोंकी उत्पत्तिके प्रयोजनका ज्ञाताहो कर संसार का स्वामी आदि भूत सर्वव्यापी सब मनोरथों का दाता महादेव है १९४ मैं उससे वरमांगताहूं जोकि युक्तियोंसे सिद्धनहोने वाला सांख्ययोगके आशयोंको साक्षात्कार कराने वालासबसे परेहैऔर तत्त्व ज्ञानी पुरुष जिसकी उपासना करतेहैं १९५ हे इन्द्र जिस देवताको तुझ इन्द्रका अंतरात्मा देवताओंका ईश्वर सब जीवोंका गुरूकहतेहैं हम उसीसे वरमांगतेहैं १९६ जिसने प्रथम आकाश

को अपनी सत्तासे व्याप्त कर ब्रह्मांडको उत्पन्न करके सबके स्वामी ब्रह्माजीको सृजा उसीसे हम वरको चाहतेहैं १६७ पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश बुद्धि मन इन सबका जो स्वामीहै उससे दूसरा कौन है उसको आप बताइये (इसस्थान पर पंचतत्त्व शब्दसे पंचतन्मात्रा अहंकार और अव्यक्तका प्रयोजनहै) १६८ हे इन्द्र बुद्धि अहंकार तन्मात्रा इन्द्रियां इन सबका उत्पत्तिस्थान शिवजीके सिवाय श्रेष्ठतर कौनहै इसको आप बताइये १६६ इस लोकमें ब्रह्माजी को चौदहं भुवनोंका उत्पन्न करने वाला कहते हैं वह ब्रह्माजीभी उसी अखिलेश्वरको आराधन करके महान ऐश्वर्यको भोगतेहैं २०० केवल एक २ गुण वाले ब्रह्मा आदिहैं और इनकेभी स्वामी तुरीय मूर्त्ति महेश्वरजी में जो उत्तम ऐश्वर्य वर्त्तमानहैं वहभी महादेवहीसेहैं तो कहिये इनसेपरे कौन दूसरा ईश्वरहै अर्थात् कोई नहींहै २०१ शत्रुओंका नाश कर्त्ता देवेश्वरके सिवाय दीनोंको ऐश्वर्य्यमानकरनेको दूसराकौनसमर्थहै न कोपीत्यर्थः क्योंकि वह देवेश्वर दैत्य दानवोंके भी ऊपर अपनी कृपा करताहै २०२ दिशाकाल सूर्यका तेज ग्रह वायु जलनक्षत्र इन सबोंकोभी महादेवजीसेही जानकर आप बताइये कि उनसे परेकौन है २०३ फिर यज्ञ और त्रिपुरकी उत्पत्ति और नाशमें बड़े२ दैत्य दानवोंको परास्त करके शत्रुओंका मर्दन करने वाला दूसराकौन है २०४ हे इन्द्रयहां बहुतसे हेतुवादरूप सूक्तों करके अर्थात्युक्तियोंसे क्या प्रयोजनहै हेहजारनेत्रधारी२०५सिद्ध गंधर्व देवता और ऋषियों से पूजित देखकर तुझको भी मैं उसी महादेवजीका कृपा पात्र जानताहूं २०६ हे इन्द्र इन लोकोंमें उस सर्व व्यापी ईश्वर का यह जड़ चैतन्यात्मक स्वर्ग शरीर और इंद्रीनाम भोग पदार्थ उसजीवात्मा के अर्थ ईश्वर से उत्पन्न होता है २०७ हे भगवान् इन्द्रतत्त्वदर्शी ज्ञानी भूलोकसे महर्लोकतक लोकालोकके मध्यवर्त्ती द्वीपादि उत्तम स्थान और मेरु पर्वतके दिव्य स्थान और सूर्यचंद्रमा आदि संपूर्ण ब्रह्मांडमें उसीदेवताको ज्योतिस्वरूप कहतेहैं हे

देवेन्द्र जोपुरुष शिवजीके समान किसी दूसरेरूपको देखतेहैं २०८ २०९ तो असुरोंसे पीड़ित होकर देवता उसीकी शरणमें क्योंनहीं जातेहैं यक्ष राक्षस सर्प और देवताओंके परस्पर नाशकारी युद्धमें ऐश्वर्य्य नहींहै इस निमित्त शिवजी स्वर्ग बासियोंको ऐश्वर्य्यकेदेनेवालेहैं अंधक शुक्र दुन्दुभी महिषासुर २१० । २११ कुवेरवलि और निवात कवच आदि राक्षसोंके वरदान और नाशमें महेश्वर जीके सिवाय दूसरा कौन समर्थहै इसको बताइये २१२ देवता और असुरोंका जो अग्नि देवता गुरूहै पूर्व्व समयमें किसका वीर्य उसके मुखमें होमागया अथवा किस देवताका वहवीर्य्यथा जोसुवर्णका पर्व्वत कियागया २१३ लोकमें कौन दूसरा कहाजाताहै और कौन ऊर्ध्व में रहताहै अर्थात् वीर्य्यको नीचे नहीं उतरनेदेता किसकेअर्द्धांगमें स्त्री नियतहै किसनेकामदेवको भस्मकिया और किसके परमधामको देवता स्तुति करतेहैं किसकी क्रीड़ाके निमित्तश्मशानभूमिहै नृत्यमें किसकी प्रशंसाकी जातीहै और मृत्युसमय पर किसका नामलिया जाता है २१४ उसका ऐश्वर्य्य किसके समानहै भूतोंकेसंग कौन क्रीड़ाकरताहै किस के गुण ऐश्वर्य्यसेदर्पित समान बल रखने वाले हैं किसका धाम अचल और तीनोंलोक से पूजित प्रसिद्धहै कौन दूसरा वर्षा करताहै तपताहै और ज्योतिरूपहै २१५ किससे औषधियोंकी पूर्ण उत्पत्तिहै कौन पृथ्वीकोधारण करताहुआ तीनों लोकोंमें जड़चैतन्यसमेत इच्छा पूर्व्वकबिहार करताहै २१६ जोज्ञान सिद्धी और क्रिया योगके द्वारा ऋषिगंधर्व और सिद्धयोगियोंसे सेवितहै मैं उसीहरको कारण कहताहूं २१७ मैं देवता असुरोंकेकर्म यज्ञ और क्रिया योगसे सेवित और सदैव कर्म फलसे पृथक् उन शिवजीको कारण कहताहूं अर्थात् संसार का उत्पन्न कर्ता कहताहूं २१८ वह माहेश्वर पद सूक्ष्मसेसूक्ष्मअनूप होनेसे स्पर्श करने के अयोग्य गुणगोचर निर्गुणगुणकास्वामी और श्रेष्ठ तर है २१९ उत्पत्ति स्थिति का और स्थूल सूक्ष्म संसार का कारण त्रिकाल रूप सबका स्वामी और कारणहै २२० हेइन्द्र

जीवरूप अक्षर शरीररूपक्षर ईश्वररूप अव्यक्त विद्या अविद्याकर्म अकर्म धर्म अधर्म जिससे प्रकटहोतेहैं मैं उसको सबकी उत्पत्तिका कारण कहताहूं २२१ इस लोकमें उत्पत्ति नाश के कारण देव देव रुद्रजीसे संसारीसृष्टिको लिंग भगसे चिह्नित देखो २२२ प्रथमही उस संसार के स्वामी शिवजी को मेरी माताने सबकी उत्पत्तिका कारण वर्णनकिया हेइन्द्र उसईश्वरसे श्रेष्ठकोई नहींहै जो तू चाहताहो तो उसीकी शरणमें जावो २२३ प्रत्यक्ष में लिंग संयोग और ब्रह्मादि देवताओंके वीर्य्यसे विकार सहित यह तीनों लोकनिर्गुण और गुणके उत्पन्न होनेवाले तुम जानतेहो ब्रह्मा इन्द्रअग्नि और विष्णुजी समेत सब देवता दैत्य असुर जोकि बुद्धिमें वरदान नियत करने वालेहैं वहसब उस ईश्वर से श्रेष्ठ दूसरे किसीको नहींकहते हैं २२४ सावधान चित्त मनोरथ सिद्ध करने में उस सब जगत् के प्रकाशक जानने के योग्य प्रसिद्ध अवतारों में श्रेष्ठ शिवजीकोशीघ्रमोक्षके लिये इच्छा करताहूं २२५ उन दूसरी युक्तियोंसे क्या प्रयोजन है वह ईश्वर उत्पत्ति के कारण रूप देवताओं कीभीउत्पत्तिका हेतुहै हमने सिवाय शिवजीके लिंगके किसी देवताका लिंग पूजता हुआनहीं सुनाहै २२६ महेश्वरजी को छोड़ करकिस दूसरे का लिंगसब देवता लोग पूजते हैं वा आगे पूजतेथे जो आपनेसुना होय तो आपकहिये २२७ ब्रह्मा विष्णु और देवताओं समेत तुमभी जिसके लिंगका सदैव पूजन करतेहो इसकारणसे वहीसब से श्रेष्ठतरहै २२८ सबसृष्टि भर जिस हेतुसे शंख चक्र गदापद्मसे चिह्नितनहींहै और लिंगभगसे चिह्नितहै इस कारणसे प्रजामाहेश्वरी है २२९ देवीके कारण रूप भावसे उत्पन्न होने वालीसब स्त्रियां भगसे चिह्नितहैं और सब पुरुषभी प्रत्यक्षमें हरके लिंगसे चिह्नितहैं जो पुरुष ईश्वर और देवीसे दूसरेको उत्पत्ति काकारण कहताहै और जो उनकी उपासनाके चिह्नसे चिह्नित नहीं है वह दुर्बुद्धी पुरुष जड़ चैतन्य समेत तीनोंलोकमें निन्दित और निकाला हुआज्ञातिमात्र से बाहर करने के योग्यहै २३० सब पुल्लिंगों को

शिवरूप और स्त्रीलिंगको उमाका रूपजानों इन्हीं दोनों शरीरों से यह सब चराचर जगत व्याप्तहै २३१ हेबलिके मारने वालेइ-न्द्र मैं उससेही बर और मरण दोनों चाहताहूं हे इन्द्र आपपधा-रिये या इच्छा होयतो ठहरिये २३२ महेश्वरजी चाहैं मुझैवरदेंया शापदें परन्तु सब प्रकार की इच्छाओं का फलदेनेवाले शिवजीके सिवाय किसी दूसरे देवता को नहीं चाहताहूं २३३ इस प्रकार देवराजसे कहकर फिर दुःखसे व्याकुल हो चिन्ता करनेलगा कि यहक्या बातहै जो देवताशिवजी मुझपर प्रसन्न नहीं होते २३४ तदनन्तर मैंने क्षणमात्रमेंही हंसकुन्द और चन्द्रमा कमलके मृणाल औरचांदीके वर्ण २३५ शोभायमान ऐरावत हाथीको साक्षात् वृष रूपधारीक्षीर सागरके समान शुभ्र वर्ण कृष्ण पुच्छ बड़ेशरीर वाला मधु पिंगलनेत्रधारी २३६ वज्र कांचन के समान प्रकाशमान वज्र सार तीक्ष्ण मृदु रक्तनोक वालेसींगोंसे पृथ्वीकोखनन करनेवाला २३७ सुवर्ण वेष्ठित डोरीसे सब ओर को अलंकृत सुन्दरमुख नाक कान खुर और कमर से शोभित २३८ सुन्दर कनपटी बड़े स्कन्ध युक्त अद्भुत दर्शन कन्धोंतक ढकीहुई उसकी झूल प्रकाश मानहो रहीथी२३९ वह बरफके पर्व्वतके शिखरकी समानरूप अथवा श्वेत बादलके शिखरकी समान जिस पर चढ़े हुए उमा देवी समेत देव देव भगवान् शिवजी २४० ऐसे शोभायमान हुए जैसे कि पूर्णमा सीके दिन चंद्रमा पूर्ण रूपसे प्रकाशमान होता है उनके तेजसे उत्पन्नहोनेवाले अग्नि देव बादल और बिजली समेत २४१ हजा-र सूर्य्यके समान सबको व्याप्त करके नियत हुए फिर वह बड़ेतेज स्वी ईश्वर ऐसे दिखाईदिये जैसे प्रलयमें सब जीवोंका भस्मकरने वाला संवर्त्तक नाम अग्नि होताहै उस समय सब संसार उसके तेजसे व्याप्त होकर चारों ओरसे दुदृश्य होगया २४२ । २४३ फिर चित्तसे व्याकुल होकर मैंने चिंताकरी कि यहक्या बातहै फिर वहतेज एक मुहूर्त्तक दशोंदिशाओंमें फैला हुआनियत रहा २४४ तदनन्तर महादेवजीकी मायासे सब दिशाओंमें अत्यन्त शांतहोग

था इसके पीछे मैंने उन महादेवजीकोही नियत देखा जोकि नंदी गण पर सवार सौम्यरूप निर्धूम अग्निके समान सुन्दर सर्वांग युक्त पार्वती समेत नील कंठ अव्यक्तरूप तेजोमय अष्ट दशभुजा धारी सब तेजों से शोभित विराजमान महेश्वर श्वेत वस्त्र माला चंदन युक्त श्वेत ध्वजा और यज्ञोपवीत धारी दुराधर्ष २४७ गायक नर्तक बाजा बजानेवाले और अपने समान बल रखने वाले श्रेष्ठ पार्षदों से वेष्ठित २४८ शरद ऋतुके उदयहोने वाले चंद्रमा के समान बाल चंद्रमारूप पांडु वर्ण वालाथा वह मुकुट तीनोंनेत्रों के कारण उदय होनेवाले तीन सूर्य्यके समान प्रकाशमानथा२४९ और सुवर्णके समान वर्ण कमलोंसे युक्त रत्नोंसे अलंकृत उन शिवजीकी पुष्पमाला उनके शुक्लवर्ण शरीरमें महा शोभाय मान थी२५० हेगोविंदजी मैंनेसब तेजोंसे भरेहुए अस्त्रोंसे युक्त मूर्त्तिमान शिवजीकोदेखा उसमहात्माकाधनुष इंद्रधनुषकेसमान पिनाकनाम सेप्रसिद्ध बहुतबड़ा सर्पाकारथा २५२ वह सप्त शिर बड़ा शरीर विषैली तीक्षण दाढ़ युक्त प्रत्यंचा से बँधा हुआ बड़ीग्रीवासे युक्त पुरुष रूपथा २५३ उनका सूर्य्य और कालाग्निके समान तेजस्वी घोर रूप पाशुपतिनाम बाणही असादृश्य वर्णनसे बाहर सबजीवोंका भयकारी स्फुलिंगोंसे युक्त महा शरीरतीव्र अग्निका उत्पन्न करनेवाला एक चरण हजार शिरउदर करालद्रंष्ट्र हजार भुज कान आंख जिह्वा रखनेवाला अग्निका उगलनेवाला महा अस्त्रथा २५६ हे महाबाहु जो कि सब शस्त्रोंका नाश कर्त्ता ब्रह्मास्त्र नारायणास्त्र इन्द्रास्त्र आग्नेयास्त्र और वरुणास्त्र भी श्रेष्ठहै २५७ हे गोविंदजी पूर्व समयमें महादेवजीने लीला पूर्वक जिसअकेलेबाण से उस त्रिपुरको दग्ध करके क्षणमात्रमेंही भस्म करडाला २५८ महेश्वरजीके हाथसेछोड़ाहुआ अस्त्र आधेही निमेषमें सबजड़चैतन्य स्थावर जंगम जीवों समेत त्रिलोकी को निस्संदेह भस्म करदेता है २५९ इस लोकमें ब्रह्मा विष्णु आदि देवताओंमें जिसके समान दूसरा कोई नहींहै हेतात वहां मैंने इस उत्तम और अद्भुत अस्त्रको

देखा २६० कोई दूसरा अस्त्र उससे अधिक नहीं है वही लोकोंमें शिवजीका त्रिशूल प्रसिद्ध है२६१शिवजीका छोड़ाहुआ वह त्रिशूल स्वर्ग और संपूर्ण पृथ्वीको फाड़कर सब समुद्रोंको भी भस्म करता हुआ सब संसारकोभी नाशकर सक्ताहै हे गोविंदजी पूर्व्व समयमें इसलोकके वीच लवण राक्षसकेहाथमें नियत इसत्रिशूलसे युवनाश्वका पुत्र महा तेजस्वी चक्रवर्त्ती तीनों लोकका विजयी महाबली इंद्रके समान पराक्रमी राजामान्धाता अपनी सेना समेत मारागया २६२२६३ बड़ाभयकारी तीक्ष्ण नोकोंसे रोमहर्षण करनेवाला वह त्रिशूल भृकुटी को तीन शिखारखने वाली करके घुड़कता हुआनियतथा २६४ हे श्रीकृष्णजी उस निर्धूम प्रकाशमान अग्नि औरकाल सूर्य्यके समान उदय वाले कालरूप सर्प हाथमें रखने वाले वाणसे परैथमके समान पासरखनेवाले२६५ रुद्रजीकेसंमुख उस अस्त्र को देखा हे गोविंद जी जोतीक्ष्ण धार क्षत्रियोंका नाश करनेवाला फरसा पूर्व्व समयमें प्रसन्नहोकर परशुरामजीको शिवजीने दियाथा और जिसके द्वारा युद्धमें परशुरामजीने कार्त्तिवीर्य को मारा २६७ फिर यमदग्निजीके पुत्र परशुरामजीने उसी फरसे केद्वारा यह पृथ्वी इक्कीस बार निक्षत्र करदी २६८ प्रकाशितधार वाला वड़ा भयानक वह फरसा जिसके कंठमें सर्पलगाथा औरहजारों प्रकाशमान अग्नियोंकेसमान तेजस्वीथा वहशिवजीकेसन्मुख नियत हुआ २६९ ऐसे ऐसे अस्त्र उस बुद्धिमान के असंख्यथे हेनिरुपाप मैंने यह उत्तम उत्तम अस्त्र वर्णनकिये २७० हंसपरसवार सब लोकोंके पितामह ब्रह्माजी इच्छानुचारी शीघ्रगामी दिव्यविमानमें सवार होकर शिवजीके दाहिनी ओर नियत हुए २७१ इसी प्रकार शंख चक्र गदा पद्मधारण करनेवाले नारायणजी भी गरुड़ पर सवार होकर शिवजी के वाईं ओरको नियत हुए २७२ और अग्निके समान स्कंदजीशक्ति और घंटालिये मोरपर सवारहोकर देवी पार्वतीके सन्मुख नियतहुए २७३ दूसरे महादेवजीके समान शूलको लिये नंदीगण को देवताके आगे नियत देखा २७४ इसी

प्रकार स्वायंभुवआदिमनु और भृगुआदिक मुनिइन्द्रादिक देवता यह सब भी चारोंओर से आये २७५ इसी रीति से अनेक प्रकारकी माताभी नियत हुईं तब उन देवताओंने महात्मा शिवजीको दण्ड-वत् पूर्व्वक चारोंओर से घेरकर २७६ नानाप्रकारके स्तोत्रोंसे म-हादेवजी की स्तुतिकरी तब ब्रह्माजीने भी सामवेद की रथंतरनाम ऋचाको पढ़कर शिवजीकी स्तुतिकरी और नारायणजी ने ज्येष्ठ साममन्त्रसे शिवजीकी स्तुतिकी २७७ फिर इन्द्रने उस परब्रह्म की स्तुति करके उत्तम शतरुद्री का पाठ किया तदनन्तर ब्रह्मा विष्णु और इन्द्र यह तीनों महात्मा अग्नि के समान शोभायमान हुये २७८ उनके मध्यमें वर्त्तमान् भगवान् शिवजी ऐसे शोभायुक्तहुये जैसे कि शरदऋतु में बादलोंसे रहित मण्डलमें नियत सूर्य्य प्रका-शित होताहै २७९ हे केशवजी मैंने आकाश में हजारों सूर्य्य और चन्द्रमाओंको देखा फिर मैंने भी उस जगदीश स्वामीको स्तुति करीउपमन्युजी बोले कि २८० ॥

स्तोत्र ॥

उपमन्युरुवाच ॥ नमोदेवाधिदेवायमहादेवायतेनमः । शक्ररू पायशक्राय शक्रवेषधरायच २८१ नमस्तेवज्रहस्तायपिङ्गलायारु णायच । पिनाकपाणयेनित्यंशङ्खशूलधरायच २८२ नमस्तेकृष्ण वासायकृष्णकुञ्चितमूर्द्धजे । कृष्णाजिनोत्तरीयायकृष्णस्वभिरता यच २८३ शुक्लवर्णायशुक्लायशुक्लाम्बरधरायच । शुक्लभस्मावलि प्तायशुक्लकर्मरतायच २८४ नमोस्तुरक्तवर्णायरक्ताम्बरधरायच । रक्तध्वजपताकायरक्तस्त्रगनुलेपिने २८५ नमोस्तुपीतवर्णायपीता म्बरधरायच । नमोस्तूच्छ्रितछत्रायकिरीटवरधारिणे २८६ अर्द्धहा रार्द्धकेयूरअर्द्धकुण्डलकर्णिने । नमःपवनवेगायनमोदेवायवैनमः २८७ सुरेन्द्रायमुनीन्द्रायमहेन्द्रायनमोस्तुते । नमःपद्मार्द्धमालायउत्पलै र्मिश्रितायच २८८ अर्द्धचन्दनलिप्तायअर्द्धस्त्रगनुलेपिने । नमोआ दित्यवक्त्रायआदित्यनयनायच २८९ नमःआदित्यवर्णायआदित्य प्रतिमायच । नमःसोमायसौम्यायसौम्यवक्त्रधरायच २९० सौम्य

रूपायमुख्यायसौम्यदंष्ट्राविभूषणे । नमःश्यामायगौरायअर्द्धपीतार्द्धपाण्डवे २६१ नारीनरशरीरायस्त्रीपुंसायनमोस्तुते । नमोवृषभवाहायगजेन्द्रगमनायच २६२ दुर्गमायनमस्तुभ्यमगम्यागमनायच । नमोस्तुगणगीतायगणवृन्दरतायच २६३ गणानुयातमार्गायगणनित्यव्रतायच । नमःश्वेताभ्रवर्णायसंध्यारागप्रभायच २६४ अनुदिष्टाभिधानायस्वरूपायनमोस्तुते । नमोरक्ताग्रवासायरक्तसूत्रधरायच २६५ रक्तमालाविचित्रायरक्ताम्बरधरायच । मणिभूषितमूर्द्धायनमश्चन्द्रार्द्धभूषिणे । विचित्रमणिमूर्द्धायकुसुमाष्टधरायच २६६ नमोग्निमुखनेत्रायसहस्रशशिलोचने । अग्निरूपायकान्तायनमोस्तुगहनायच २६७ खचरायनमस्तुभ्यंगोचराभिरतायच । भूचरायभुवनायअनन्तायशिवायच २६८ नमोदिग्वाससेनित्यमधिवाससुवाससे । नमोजगन्निवासायप्रतिपत्तिसुखायच २६९ नित्यमुद्बद्धमुकुटेमहाकेयूरधारिणे । सर्पकुन्तोपहारायविचित्राभरणायच ३०० नमस्त्रिनेत्रनेत्रायसहस्रशतलोचने । स्त्रीपुंसायनपुंसायनमःसांख्याययोगिने ३०१ शंयोरभिस्रवंतायअथर्वायनमोनमः । नमःसर्वार्त्तिनाशायनमःशोकहरायच ३०२ नमोमेघनिनादायबहुमायाधरायच । बीजक्षेत्राभिपालायस्रष्टारायनमोनमः ३०३ नमःसुरासुरेशायविश्वेशायनमोनमः । नमःपवनवेगायनमःपवनरूपिणे ३०४ नमःकाञ्चनमालायगिरिमालायवैनमः । नमःसुरारिमालायचण्डवेगायवैनमः ३०५ ब्रह्मशिरोपहर्त्तायमहिषघ्नायवैनमः । नमस्त्रिरूपधारायसर्वरूपधरायच ३०६ नमस्त्रिपुरहर्त्तायअयज्ञविध्वंसनायच । नमःकामाङ्गनाशायकालदण्डधरायच ३०७ नमःस्कंदविशाखायब्रह्मदण्डायवैनमः । नमोभवायशर्वायविश्वरूपायवैनमः ३०८ ईशानायभवघ्नायनमोस्त्वन्धकघातिने । नमोविश्वायमायायचिन्त्याचिन्त्यायवैनमः ३०९ त्वन्नोगतिश्चश्रेष्ठंचत्वमेवहृदयंतथा । त्वंब्रह्मासर्वदेवानांरुद्राणांनीललोहितः । आत्माचसर्वभूतानांसांख्येपुरुषउच्यते ३१० ऋषभस्त्वंपवित्राणांयोगिनांनिष्फलःशिवः । गृहस्थस्त्वमाश्रमिणामीश्वराणांमहेश्वरः ३११ कुबेरःसर्वयक्षाणांक्रतूनां

विष्णुरुच्यते। पर्वतानांभवान्मेरुर्नक्षत्राणांचचन्द्रमा ३१२ वशिष्ठ
स्त्वमृषीणांचग्रहाणांसूर्य्यउच्यते। आरण्यानांपशूनांचसिंहस्त्वंपर
मेश्वरः३१३ग्राम्याणांगोवृषश्चासिभवान्लोकप्रपूजितः। आदित्या
नांभवान्विष्णुर्वसूनांचैवपावकः ३१४ पक्षिणांवैनतेयस्त्वनन्तोभुज
गेषुच। सामवेदश्चवेदानांयजुषांशतरुद्रियम् ३१५ सनत्कुमारोयो
गीनांसांख्यानांकपिलोह्यसि। शक्रोसिमरुतांदेवपितॄणांहव्यवाड
सि३१६ ब्रह्मलोकश्चलोकानांशैलानांहिमवान्गिरिः। वर्णानांब्राह्म
णश्चासिविप्राणांदीक्षितोद्विजः ३१७ आदिस्त्वमसिलोकानांसंह
र्त्ताकालएवच। यच्चान्यदपिलोकेवैसर्वतेजोधिकंस्मृतम् ३१८ तत्स
र्वंभगवानेवइतिमेनिश्चितामतिः। नमस्तेभगवान्देवनमस्तेभक्तव
त्सल ३१९ योगेश्वरनमस्तेस्तुनमस्तेविश्वसंभव। प्रसीदममभक्त
स्यदीनस्यकृपणस्यच ३२० अनैश्वर्येणयुक्तस्यगतिर्भवसनातन।
यच्चापराधंकृतवानज्ञात्वापरमेश्वर ३२१ मद्भक्तइतिदेवेशतत्स
र्वंक्षन्तुमर्हसि। मोहितश्चास्मिदेवेशत्वयारूपविपर्ययात् ३२२ ना
र्घंतेनमयादत्तंपाद्यंचापिमहेश्वर। एवंस्तुत्वाहमीशानंपाद्यमर्घ्यं
चभक्तितः ३२३ कृतांजलिपुटोभूत्वासर्वतस्मैन्यवेदयम्। ततःशीतांबु
संयुक्तादिव्यगन्धसमन्विता ३२४ पुष्पवृष्टिःशुभातातपपातमम
मूर्द्धनि। दुन्दुभिश्चतदादिव्यस्ताडितोदेवकिङ्करैः। ववौचमारुतःपु-
ण्यःशुचिगन्धसुखावहः ३२५ ततःप्रीतोमहादेवःसपत्नीकोवृषध्वजः।
अब्रवीत्त्रिदशांस्तत्रहर्षयन्निवमांतदा ३२६ पश्यध्वंत्रिदशासर्वेउप
मन्योर्महात्मनः। मयिभक्तिंपरांनित्यमेकभावादवस्थिताम् ३२७
एवमुक्तास्तदाकृष्णसुरास्तेशूलपाणिना। ऊचुःप्राञ्जलयःसर्वेनम
स्कृत्वावृषध्वजम् ३२८ भगवन्देवदेवेशलोकनाथजगत्पते। लभ
तांसर्वकामेभ्यःफलंत्वत्तोद्विजोत्तमः ३२९ एवमुक्तस्ततःसर्वैःसुरैर्ब्र
ह्मादिभिस्तथा। आहमांभगवानीशःप्रहसन्निवशंकरः३३०॥ श्रीभग
वानुवाच॥ वत्सोपमन्योतुष्टोस्मिपश्यमांमुनिपुंगव। दृढभक्तोसिवि
प्रर्षेमयाजिज्ञासितोह्यसि ३३१ अनयाचैवभक्त्यातेअत्यर्थंप्रीतिमान
हम्। तस्मात्सर्वान्ददाम्यद्यकामांस्तवयथेप्सितान् ३३२ एवमुक्त

स्यचैवाथमहादेवेनधीमता।हर्षादश्रूण्यवर्त्तन्तरोमहर्षस्त्वजायत३३३
अब्रुवन्चतद्दादेवंहर्षगद्गदयागिरा । जानुभ्यामवनीगत्वाप्रणम्य
चपुनःपुनः ३३४ अद्यजातोह्यहंदेवसफलंजन्मचाद्यमे । सुरासुर
गुरुर्देवोयत्तिष्ठतिममाग्रतः ३३५ यन्नपश्यन्तिचैवाहोदेवाह्यमितवि
क्रमम् । तमहंदृष्टवान्देवंकोन्योधन्यतरोमया ३३६ एवंध्याय
न्तिविद्वांसःपरंतत्वंसनातनम् । तद्विशेषमितिख्यातंयदजञ्ज्ञानमक्षर
म् ३३७ सएषभगवान्देवःसर्वसत्वादिरव्ययः । सर्वतत्वविधान
ज्ञःप्रधानपुरुषःपरः ३३८ योसृजद्दक्षिणादंगाद्ब्रह्माणंलोकसंभ
वम् । वामपार्श्वात्तथाविष्णुंलोकरक्षार्थमीश्वरः ३३९ युगान्ते
चैवसंप्राप्ते रुद्रमीशोऽसृजत्प्रभुः । सरुद्रःसंहरन्कृत्स्नंजगत्स्थावरज
ङ्गमम् ३४० कालोभूत्वामहातेजाःसंवर्त्तकइवानलः । युगान्ते
सर्वभूतानिग्रसन्निवव्यवस्थितः ३४१ एषदेवोमहादेवोजगत्सृष्ट्वा
चराचरम् । कल्पान्तेचैवसर्वेषांस्मृतिमाक्षिप्यतिष्ठति ३४२ सर्वगः
सर्वभूतात्मासर्वभूतभवोद्भवः । आस्तेसर्वगतोनित्यमदृश्यःसर्वदैवतैः
३४३ यदिदेयोवरंमह्यंयदितुष्टोसिमेप्रभो । भक्तिर्भवतुमेनित्यंत्वयि
देवेश्वरेश्वर ३४४ अतीतानागतंचैववर्त्तमानंचयद्विभो।जानीयामि
तिमेबुद्धिःप्रसादात्सुरसत्तम ३४५ क्षीरोदनञ्चभुञ्जीयामक्षय्यंसहबा
न्धवैः।आश्रमेचसदास्माकंसान्निध्यंपरमस्तुते३४६ एवमुक्तःसमांप्रा
हभगवान्लोकपूजितः।महेश्वरोमहातेजाश्चराचरगुरुःशिवः ३४७
श्रीभगवानुवाच ॥ अजरश्चामरश्चैवभवत्वंदुःखवर्जितः । यशस्वी
तेजसायुक्तो दिव्यज्ञानसमन्वितः ३४८ ऋषीणामभिगम्यश्चमत्प्र
सादाद्भविष्यसि । शीलवान्गुणसम्पन्नःसर्वज्ञःप्रियदर्शनः ३४९
अक्षयंयौवनन्तेस्तुतेजश्चैवानलोपमम् । क्षीरोदःसागरश्चैवयत्रयत्र
च्छसिप्रियम् ३५० तत्रतेभविताकामसान्निध्यंपयसोनिधेः । क्षीरोद
नञ्चभुंक्ष्वत्वममृतेनसमन्वितम् ३५१ बन्धुभिःसहितःकल्पंततोमामु
पयास्यसि । अक्षयाबान्धवाश्चैवकुलंगोत्रञ्चतेसदा ३५२ भविष्यति
द्विजश्रेष्ठमयिभक्तिश्चशाश्वती । सान्निध्यंचाश्रमेनित्यङ्करिष्यामि
द्विजोत्तम३५३ तिष्ठवत्सयथाकामंनोत्कण्ठाञ्चकरिष्यसि। स्मृतस्त्व-

यापुनर्विप्रकरिष्यामिचदर्शनम् ३५४ एवमुक्तासभगवान्सूर्य्यकोटिसमप्रभः। ईशानःसवरान्दत्वातत्रैवान्तरधीयत ३५५ एवंदृष्टोमयाकृष्णदेवदेवःसमाधिना। तदवाप्तञ्चमेसर्वंयदुक्तंतेनधीमता ३५६ प्रत्यक्षञ्चैवतेकृष्णपश्यसिद्धान्व्यवस्थितान्। ऋषीन्विद्याधरान्यक्षान्गंधर्वाप्सरसस्तथा ३५७ पश्यवृक्षलतागुल्मान्सर्वपुष्पफलप्रदान्। सर्वर्त्तुकुसुमैर्युक्तान्सुखपत्रान्सुगंधिनः ३५८ सर्वमेतन्महाबाहोदिव्यभावसमन्वितम्। प्रसादाद्देवदेवस्यईश्वरस्यमहात्मनः ३५९ वासुदेवउवाच॥ एतच्छ्रुत्वावचस्तस्यप्रत्यक्षमिवदर्शनम्। विस्मयंपरमङ्गत्वाब्रवंतंमहामुनिम् ३६० धन्यस्त्वमसिविप्रेन्द्रकस्त्वदन्योस्तिपुण्यकृत्। यस्यदेवाधिदेवस्तेसान्निध्यंकुरुतेश्रमे॥ अपितावन्ममाप्येवंदद्यात्सभगवाञ्छिवः। दर्शनंमुनिशार्दूलप्रसादंचापिशंकरः ३६१ उपमन्युरुवाच॥ द्रक्ष्यसेपुंडरीकाक्षमहादेवंनसंशयः। अचिरेणैवकालेनयथादृष्टोमयानघ ३६२ चक्षुषाचैवदिव्येनपश्यास्यमितविक्रमम्। षष्ठेमासिमहादेवंद्रक्ष्यसेपुरुषोत्तम ३६३ षोडशाष्टौवरांश्चापिप्राप्स्यसित्वंमहेश्वरात्। सपत्नीकाद्यदुश्रेष्ठसत्यमेतद्ब्रवीमिते ३६४ अतीतानागतंचैववर्त्तमानंचनित्यशः। विदितंमेमहाबाहोप्रसादात्तस्यधीमतः ३६५ एतान्सहस्रशश्चान्यान्समनुध्यातवान्हरः। कस्मात्प्रसादंभगवान्नकुर्यात्तवमाधव। त्वादृशेनहिदेवानांश्लाघनीयःसमागमः ३६६ ब्रह्मण्येनानृशंसेनश्रद्दधानेनचाप्युत। जप्यन्तुतेप्रदास्यामियेनद्रक्ष्यसिशंकरम् ३६७ विष्णुरुवाच॥ अब्रुवंतमहंब्रह्मन्त्वत्प्रसादान्महामुने। द्रक्ष्येदितिजसंघानांमर्दनंत्रिदिशेश्वरम् ३६८ एवंकथयतस्तस्यमहादेवाश्रितांकथाम्। दिनान्यष्टौततोजग्मुर्मुहूर्त्तमिवभारत ३६९ दिनेष्टमेतुविप्रेन्द्रदीक्षितोहंयथाविधि। दंडीमुंडीकुशीचीरीघृताक्तोमेखलीकृतः ३७० मासमेकंफलाहारोद्वितीयंसलिलाशनः। तृतीयंचचतुर्थंचपंचमंचजलाशनः ३७१ एकपादेनतिष्ठंश्चऊर्ध्वबाहुस्तंद्रितः। तेजःसूर्य्यसहस्रस्यअपश्यंदिविभारत ३७२ तस्यमध्यगतंचापितेजसःपाण्डुनन्दन। इन्द्रायुधपिनद्धांगंविद्युन्मालागवाक्षकम् ३७३ नीलशैलचय

प्रख्यंवलाकाभूषितंवनम् ३७४ तत्रस्थितश्चभगवान्देव्यासह महाद्युतिः। तपसातेजसाकान्त्यादीप्तयासहभार्य्यया ३७५ रराज भगवांस्तत्रदेव्यासहमहेश्वरः। सोमेनसहितःसूर्य्योयथामेघस्थि तस्तथा ३७६ संहृष्टरोमाकौन्तेयविस्मयोत्फुल्ललोचनः। अपश्यन् देवसर्वानांगतिमार्तिहरंहरम् ३७७ किरीटिनंगदिनंशूलपाणि व्याघ्राजिनंजटिलंदण्डपाणिम्। पिनाकिनंवज्रिणंतीक्ष्णदंष्ट्रंशुभां गदंव्यालयज्ञोपवीतम् ३७८ दिव्यांमालामुरसानेकवर्णांसमुद्वहंतं गुल्फदेशावलम्बां। चन्द्रंयथापरिविष्टंससंध्यंवर्षात्ययेतद्वदपश्यमे नम् ३७९ प्रथमानांगणैश्चैवसमंतात्परिवारितम्। शरदीवसुदुःप्रे क्ष्यंपरिविष्टंदिवाकरम् ३८० एकादशशतान्येवरुद्राणांवृषवाहनम्। अस्तुवंतयतस्मानंकर्मभिःशुभकर्मिणम् ३८१ आदित्यावसवःसाध्या विश्वेदेवास्तथाश्विनौ। विश्वाभिःस्तुतिभिर्देवंविश्वदेवंसमस्तुवन् ३८२ शतक्रतुश्चभगवान्विष्णुश्चादितिनंदनौ। ब्रह्मारथंतरंसामईरय न्तिभवान्तिके ३८३ योगीश्वराःसुबहवोयोगदंपितरंगुरुम्। ब्रह्मर्षयश्च ससुतास्तथादेवर्षयश्चवै ३८४ पृथिवीचान्तरिक्षंचनक्षत्राणिग्रहास्त थामासार्द्धमासाऋतवोरात्र्यःसंवत्सरःक्षणाः ३८५ मुहूर्त्ताश्चनिमेषा श्चतथैवयुगपर्य्ययाः। दिव्याराजन्नमस्यन्तिविद्याःसत्वविदस्त था ३८६ सनत्कुमारोवेदाश्चइतिहासास्तथैवच। मरीचिरंगिरा अत्रिःपुलस्त्यःपुलहःक्रतुः ३८७ मनवःसप्तसोमश्चअथर्वास बृहस्पतिः। भृगुर्दक्षःकश्यपश्चवशिष्ठःकाश्यपएवच ३८८ छन्दांसि दीक्षायज्ञाश्चदक्षिणापावकाहविः। यज्ञोपगानिद्रव्याणिमूर्त्तिमन्ति युधिष्ठिर ३८९ प्रजानांपालकाःसर्वेसरितःपन्नगानगाः। देवानांमा तरःसर्वादेवपत्न्यःसकन्यकाः ३९० सहस्राणिमुनीनांचअयुतान्य र्बुदानिच। नमस्यन्तिप्रभुंशान्तंपर्वताःसागरादिशः। गंधर्वाप्सर श्चैवगीतवादित्रकोविदाः ३९१ दिव्यतालेषुगायन्तःस्तुवन्तिभव मद्भुतम्। विद्याधरादानवाश्चगुह्यकाराक्षसास्तथा ३९२ नमस्य न्तिमहाराजवाङ्मनःकर्मभिर्विभुम्। पुरस्ताद्धिष्ठितःशर्वोममासी त्त्रिदशेश्वरः ३९३ पुरस्ताद्धिष्ठितंदृष्ट्वाममेशानंचभारत। सप्रजा

पतिशक्रान्तंजगन्मामभ्युदैक्षत ३६४ ईक्षितुंचमहादेवनमेशक्तिर भूत्तदा। ततोमामब्रवीद्देवःपश्यकृष्णवदस्वतम् ३९५ त्वयाह्याराधितश्चाहंशतशोथसहस्रशः। त्वत्समोनास्तिमेकश्चित्त्रिषुलोकेषुवैप्रियः ३९६ शिरसावन्दितेदेवेदेवीप्रीताह्युमातदा। ततोहमब्रुवन्स्थाणुंस्तुतंब्रह्मादिभिःसुरैः ३९७॥ विष्णुरुवाच॥ नमोस्तुतेशाश्वतसर्वयोनेब्रह्मादयस्त्वामृषयोवदन्ति। तपश्चसत्त्वंचरजस्तमश्चत्वामेवसत्यंचवदन्तिसन्त ३९८ त्वंवैब्रह्माचरुद्रश्चवरुणोग्निर्मनुर्भवः। धातात्वष्टाविधाताचत्वंप्रभुःसर्वतोमुखः ३९९ त्वत्तोजातानिभूतानिस्थावराणिचराणिच। त्वयासृष्टमिदंकृत्स्नंत्रैलोक्यंसचराचरम् ४०० यानीन्द्रियाणीहमनश्चकृत्स्नंयेवायवःसप्ततथैवचाग्नयः। येदेवसंस्थास्तवदेवताश्चतस्मात्परंत्वामृषयोवदन्ति ४०१ वेदाश्चयज्ञाःसोमश्चदक्षिणापावकाहविः। यज्ञोपगंचयत्किंचिद्भगवांस्तदसंशयम् ४०२ इष्टंदत्तमधीतंचव्रतानिनियमाश्चये। ह्रीःकीर्त्तिःश्रीर्द्युतिस्तुष्टिःसिद्धिश्चैवतदर्पणी ४०३ कामःक्रोधोभयंलोभोमदःस्तम्भोथमत्सरः। आधयोव्याधयश्चैवभगवंस्तनयास्तव ४०४ कृतिर्विकारःप्रणयःप्रधानंवीजमव्ययम्। मनसःपरमायोनिःप्रभावश्चापिशाश्वतः ४०५ अव्यक्तःपावनोचिन्त्यःसहस्रांशुर्हिरण्मयः। आदिर्गणानांसर्वेषांभवान्वैजीविताश्रयः ४०६ महानात्मामतिर्ब्रह्माविश्वःशंभुःस्वयंभुवः। बुद्धिःप्रज्ञोपलब्धिश्चसंवित्ख्यातिधृतिःस्मृतिः ४०७ पर्यायवाचकैःशब्दैर्महानात्माविभाव्यते। त्वांबुद्ध्याब्राह्मणोविद्वान्प्रमोहंविनियच्छति ४०८ हृदयंसर्वभूतानांक्षेत्रज्ञस्त्वमृषिष्टुतः। सर्वतःपाणिपादस्त्वंसर्वतोक्षिशिरोमुखः ४०९ सर्वतःश्रुतिमांल्लोकेसर्वमावृत्यतिष्ठसि। फलंत्वमसितिग्मांशोर्निमेषादिषुकर्मसु ४१० त्वंवैप्रभार्च्चिःपुरुषःसर्वस्यहृदिसंश्रितः। अणिमामहिमा प्राप्तिरीशानोज्योतिरव्ययः ४११ त्वयिबुद्धिर्मतिर्लोकाःप्रसन्नासंश्रिताश्चये। ध्यानिनोनित्ययोगाश्चसत्यसत्वाजितेन्द्रियाः ४१२ यस्त्वांध्रुवंवेदयतेगुहाशयंप्रभुंपुराणंपुरुषंचविग्रहं। हिरण्मयंबुद्धिमतांपरांगतिंसबुद्धिमानबुद्धिमतीत्यति

इति ४१३ विदित्वांसस्तसूक्ष्माणिपडंशत्वांचमूर्त्ति तः । प्रधानविधि योगस्थस्त्वामेवविशतेबुधः ४१४ एवमुक्तेमयापार्थभवेश्चार्त्ति विनाशनं । चराचरंजगत्सर्वंसिंहनादंतदाकरोत् ४१५ तंविप्रसंघाश्च सुरासुराश्चनागाःपिशाचाःपितरोवयांसि । रक्षोगणाभूतगणाश्च सर्वेमहर्षयश्चैवतदाप्रणेमु ४१६ ममसूर्द्धि नचदिव्यानांकुसुमानांसुगंधिनाम् । राप्तयोनिपतंतिस्मवायुश्चसुसुखोववौ ४१७ निरीक्ष्य भगवान्देवींह्युमांमांचजगद्धितः । शतक्रतुंचाभिवीक्ष्यस्वयंमामाह शंकरः ४१८ विद्मःकृष्णपरांभक्तिमस्मासुतवशत्रुहन् । क्रियतामात्मनःश्रेयःप्रीतिर्हित्वयिमेपरा ४१९ वृणीष्वाष्टौवरान्कृष्णःदातास्मि तवसत्तम । ब्रूहियादवशार्दूलयानिच्छसिसुदुर्लभान् ४२० ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमेघवाहनोपाख्यानेचतुर्द्दशोऽध्यायः १४ ॥

पन्द्रहवां अध्याय ॥

श्री कृष्णजी बोले कि इसकेपीछे मैंने बड़ी सावधानी से तेजपुंज में विराजमान् शिवजीको मस्तक से प्रणाम करके बड़ी प्रसन्नता पूर्वक यह वचन कहा १ कि हे शिवजी धर्ममें दृढ़ता आपकी सन्निकटता युद्धमें स्थिर होकर शत्रुओं को मारता उत्तम कीर्त्ति बल व योग समेत ऐश्वर्य्य और दशहजार पुत्रों की मैं आप से याचना करताहूं २ मेरे इस वचनके कहतेही शिवजी बोले कि ऐसाहीहोय फिर सबका पोषण करनेवाली बंधनसे निवृत्त करनेवाली जगत् की माताने मुझसेकहा ३ अर्थात् तपोंकापुंज शुद्धरूपउमा देवीने कहाकि हे निष्पाप भगवान् शिवसांब नामपुत्र तुमकोदिया ४ मैं भी तुमको आठअभीष्ट वरदेतीहूं उनकोलो हे पांडु नन्दन तबतो मैंने दंडवत् करके उनसे कहाकि ब्राह्मणोंको क्रोध न करने वाले पिताके आज्ञाकारी कुलके लोगोंसे प्रीति पूर्व्वक माताको प्रसन्न करनेवाले शान्तचित्त बड़ेबुद्धिमान् चतुरसौपुत्र आपसे मांगताहूं ६ उमाने कहा ऐसाही होगा फिर कहाकि हे दिव्य प्रभाव वाले मैं मिथ्यानहीं बोलतीहूं तुमभी कभीमिथ्या न बोलना सोलह हजार

स्त्री और उनस्त्रियोंमें प्रीतिहोना धनधान्य आदि अक्षय होना ७ मैं ब्राह्मणोंकी ओरसे उत्तम प्रीति और शरीरकी मनोहरता तुमको देतीहूं और तेरे घरमें सदैव सातहजार अतिथि भोजन करेंगे ८ वासुदेवजी बोले हे भरतर्षभ युधिष्ठिर इस रीतिसे वह देवता और उमादेवी मुझको वरदान देकरगणोंसमेत उसीक्षण अन्तर्द्धान होगये ९ हे राजाओंमें श्रेष्ठ प्रथमतोमैंनेइस अद्भुत वृत्तान्तकोवड़े तेजस्वी उपमन्यु ब्राह्मण के सन्मुख वर्णन किया तब उस उत्तम व्रती ब्राह्मणने देवताओं के देवता महेश्वरजी को नमस्कार करके कहा कि १० महादेवजीकी समान देवतानहीं और उन्हींके समान कोई गति नहीं और दातीभी इनके समान कोई नहीं और युद्ध करनेमेंभी शंकरजीके समान कोईनहीं है ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिमेघवाहनोपाख्यानेपंचदशोऽध्यायः १५ ॥

सोलहवां अध्याय ॥

उपमन्यु बोले हे तात सतयुगमें एक तंडीनाम ऋषि विख्यात हुये उसने समाधि और भक्ति के द्वारा दशहजार वर्षतक शिवजी की आराधना करी १ उसके फलके उदयको सुनो उसने महादेवजीको प्रत्यक्ष दर्शन करके स्तोत्रोंसे स्तुतिकरी २ अर्थात् उसतंडी ऋषिने अपनेतप और योगके द्वारा उससदैवअखण्डरूप परमात्मा को ध्यान करके वड़े आश्चर्य्यको प्राप्तहोकर कहा ३ कि सांख्य मतवाले और योगीजन जिसपरम प्रधान पुरुष अधिष्ठाता ईश्वर को सदैव पढ़तेहैं और ध्यान करतेहैं ४ और ज्ञानियोंने जिसको उत्पत्ति नाशका हेतुरूप वर्णनकिया और देवता असुर व मुनियों में भी उससे श्रेष्ठ कोई नहीं है ५ उस अजन्मा आदि अन्त रहित निष्पाप ईश्वरकी मैं शरण लेताहूं ६ ऐसा कहते हुये उस ऋषिने उस रूपान्तर रहित तपोमूर्त्ति अनुपम अचिन्त्य सब के आदिकूटस्थ पुरुषकोदेखा ७ वहपुरुष कलारहित कलाधारीनिर्गुण सगुणरूप योगियोंका परमानन्द अविनाशी मोक्षनाम ८ मन

इन्द्रअग्नि मरुत् विश्वेदेवा और ब्रह्माजीकाभी उत्पत्तिस्थान स्पर्श रहित अचल शुद्ध ज्ञानसे स्पर्श करनेके योग्य मनके धर्मरूपकर्त्ता आदि के स्वाधीन होने वाला ९ दुर्ज्ञेय अप्रमेय अशुद्ध पुरुषों को दुःप्राप्य संसारका उत्पत्ति स्थान अज्ञानसे परेहै १० जो देवता अपनेको जीवरूप करके और उस जीवको मनरूप करके ज्योति रूपहोके इस जीवमें नियतहुआ ऐसा जानकर उस दर्शनाभिलाषी ऋषिनेवहुत असंख्य वर्षतक उग्र तपको करके उसका दर्शन किया और दर्शन करके वड़ीस्तुतिकरी ११ तंडीऋषिस्तुति करतेहैंतंडिरुवाच ॥ पवित्राणांपवित्रस्त्वंगतिर्गतिमताम्वर । अत्युग्रंतेजसांतेजस्तपसांपरमंतपः विश्वावसुहिरण्याक्ष पुरुहूतनमस्कृत १२ भूरिकल्याणदविभो परंसत्यंनमोस्तुते । जातीमरणभीरूणां यतीनांयततांविभो। निर्वाणदसहस्रांशो नमस्तेस्तुसुखाश्रय १३ ब्रह्माशतक्रतुर्विष्णु र्वि-श्वेदेवामहर्षयः । नविदुःस्त्वांतुतत्त्वेन कुतोवेत्स्यामहेवयम् । त्वत्तः प्रवर्त्ततेसर्वंत्वयिसर्वंप्रतिष्ठितम् १४ कालाख्यःपुरुषाख्यश्चब्रह्माख्यश्चत्वमेवहि । तनवस्तेस्मृतास्तिस्रः पुराणज्ञैःसुरर्षिभिः १५ अधिपौरुषमध्यात्म मधिभूताधिदैवतम् । अधिलोकाधिविज्ञान मधियज्ञस्त्वमेवहि १६ त्वांविदित्वात्मदेहस्थं दुर्विदंदैवतैरपि । विद्वांसोयातिनिर्मुक्ताः परंभावमनामयम् १७ अनिच्छतस्तवविभोजन्ममृत्युरनेकशः । द्वारंतुसर्वमोक्षाणा माक्षेप्तात्वंददासिच १८ त्वंवैस्वर्गश्चमोक्षश्च कामःक्रोधस्त्वमेवच । सत्त्वंरजस्तमश्चैव अधश्चोर्ध्वंत्वमेवहि १९ ब्रह्माभवश्चविष्णुश्च स्कन्देन्द्रौसवितायमः । वरुणेन्द्रमनुर्धाता विधातात्वंधनेश्वरः २० भूर्वायुःसलिलोग्निश्च खंवाग्बुद्धिः स्थितिर्मतिः । कर्मसत्यानृतेचोभेत्वमेवास्तिचनास्तिच २१ इन्द्रियाणींद्रियार्थाश्च प्रकृतिभ्यःपरंध्रुवम् । विश्वाविश्वपरोभावश्चिन्त्याचिन्त्यस्त्वमेवहि २२ यच्चैतत्परमंब्रह्म यच्चैतत्परमंपदम्। यागतिःसांख्ययोगानांसभवान्नात्रसंशयः २३ नूनमद्यकृतार्थाःस्म नूनंप्राप्ताःसतांगतिम् । यागतिंप्रार्थयन्तीह ज्ञाननिर्मलबुद्धयः २४ अहोमूढाःस्मसुचिरमिमंकालमचेतसा । यन्नविद्मःपरंदेवं शाश्वतयं

विदुर्बुधाः २५ सेयमासादितासाक्षात् त्वद्भक्तिर्जन्मभिर्मया । भक्तानुग्रहकृद्देवोयंज्ञात्वामृतमश्नुते २६ देवासुरमुनीनान्तु यच्चगुह्यं सनातनम् गुहायांनिहितंब्रह्म दुर्विज्ञेयंसुरैरपि २७ सएषभगवान् देवः सर्व्वकृत्सर्व्वतोमुखः । सर्व्वात्मासर्व्वदर्शीचसर्व्वगः सर्व्ववेदिता २८ देहकृद्देहभृद्देही देहभुग्देहिनांगतिःप्राणकृत्प्राणभृत्प्राणीप्राणदःप्राणिनांगतिः२९ अध्यात्मगतिरिष्टानां ध्यायिनामात्मवेदिनाम् । अपुनर्भवकामानां यागतिःसोयमीश्वरः ३० अयंचसर्व्वभूतानां शुभाशुभगतिप्रदः । अयंचजन्ममरणे विदध्यात्सर्व्वजंतुषु।अयंसंसिद्धिकामानां यागतिःसोयमीश्वरः ३१ भूराद्यान्सर्व्वभुवना न्युत्पाद्यसदिवौकसः । दधातिदेवस्तनुभि रष्टाभिर्योविभर्त्ति च ३२ अतःप्रवर्त्ततेसर्व्वमस्मिन्सर्व्वंप्रतिष्ठितम् । अस्मिंश्चप्रलयंयाति अयमेकःसनातनः ३३ अयंसत्यकामानां सत्यलोकःपरंसताम् । अपवर्गश्चमुक्तानां कैवल्यंचात्मवेदिनाम् ३४ अयंब्रह्मादिभिःसिद्धै गुंहायांगोपितःप्रभुः देवासुरमनुष्याणाम प्रकाशोभवेदिति ३५ तंत्वांदेवासुरनरा स्तत्त्वेननविदुर्भवम् । मोहिताःखल्वनेनैव हृदिस्थेनाप्रकाशिना ३६ येचैनंप्रतिपद्यन्ते भक्तियोगेनभाविताः । तेषामेवात्मनात्मानं दर्शयत्येषहृच्छयः ३७ यंज्ञात्वानपुनर्जन्म मरणंचापिविद्यते । यंविदित्वापरंवेद्यं वेदितव्यंनविद्यते ३८ यंलब्ध्वापरमंलाभंनाधिकंमन्यतेबुधः । यां सूक्ष्मांपरमांप्राप्तिं गच्छन्नत्ययमक्षयम् ३९ यंसांख्यागुणतत्त्वज्ञाः सांख्यशास्त्रविशारदाः । सूक्ष्मज्ञानतराःसूक्ष्मं ज्ञात्वामुच्यन्तिबंधनैः४० पंचदेवविदोवेद्यं वेदान्तेचप्रतिष्ठितम् । प्राणायामपरानित्यं यंविशन्तिजपंतिच ४१ ओंकाररथमारुह्य तेविशन्तिमहेश्वरम् । अयंसदेवयानाना मादित्योद्वारमुच्यते ४२ अयंचपितृयानानांचन्द्रमाद्वारमुच्यते । एषकाष्ठादिशश्चैव संवत्सरयुगादिच ४३ दिव्यादिव्यः परोलाभो अयनेदक्षिणोत्तरे । एनंप्रजापतिःपूर्व्व माराध्यबहुभिस्तवैः ४४ प्रजार्थंवरयामास नीललोहितसंज्ञितम् । ऋग्भिर्यमनुशासन्तितत्त्वेकर्म्मणिवहूवृचः ४५ यजुर्भियत्त्रिधावेद्यंजुहृत्यध्वर्य्यवोध्वरे । सामभिर्यंचगायंतिसामगाः शुद्धबुद्धयः ४६ ऋतंसत्यंपरंब्रह्म

स्तुवंत्यथर्वणा द्विजाः । यज्ञस्यपरमायोनिः पतिश्चायंपरःस्मृतः ४७
रात्र्यहःश्रोत्रनयनः पक्षमासशिरोभुजः । ऋतुर्वीर्यस्तपोधैर्य्योह्य
ब्दगुह्योरुपादवान् ४८ मृत्युर्यमोहुताशश्च कालःसंहारवेगवान् ।
कालस्यपरमायोनिः कालश्चायंसनातनः ४९ चन्द्रादित्यौसनक्षत्रौ
ग्रहाश्चसहवायुना । ध्रुवःसप्तर्षयश्चैवभुवनाःसप्तएवच ५० प्रधानंमह
दव्यक्तं विशेषान्तंसवैकृतम् । ब्रह्मादिस्तम्बपर्य्यन्तंभूतादिसदसच्च
यत् ५१ अष्टौप्रकृतयश्चैवप्रकृतिभ्यश्चयःपरः । अस्यदेवस्ययद्भागं
कृत्स्नंसंपरिवर्त्तते ५२ एतत्परममानन्दंयत्तच्छाश्वतमेवच । एषागति
र्विरक्तानामेषभावःपरःसताम् ५३ एतत्पदमनुद्विग्नमेतद्ब्रह्मसना
तनम् । शास्त्रवेदांगविदुषामेतद्ध्यानंपरम्यपदम् ५४ इयंसापरमाकाष्ठा
इयंसापरमाकला । इयंसापरमासिद्धिरियंसापरमागतिः ५५ इयंसा
परमाशान्तिरियंसानिर्वृतिःपरा । यंप्राप्यकृतकृत्याःस्म इत्यमत्यन्त
योगिनः ५६ इयंतुष्टिरियंसिद्धिरियंश्रुतिरियंस्मृतिः । अध्यात्मगति
रिष्टानांविदुषांप्राप्तिरव्यया ५७ यजतांकामयानानांमखैर्विपुलदक्षि
णैः । यागतिर्यज्ञशीलानांसागतिस्त्वंनसंशयः ५८ सम्यक्योगजपैः
शान्तिर्नियमैर्देहतापनैः । तप्यतांयागतिर्देवपरमासागतिर्भवान् ५९
कर्मन्यासकृतानांचविरक्तानांततस्ततः । यागतिर्ब्रह्मसदनेसागति
स्त्वंसनातनम् ६० अपुनर्भवकामानांवैराग्येवर्त्ततांचया । प्रकृतीनांल
यानांचसागतिस्त्वंसनातन ६१ ज्ञानविज्ञानयुक्तानांनिरुपाख्यानि
रंजना । कैवल्यायागतिर्देवपरमासागतिर्भवान् ६२ वेदशास्त्रपुरा
णोक्ताःपंचैतागतयः स्मृताः । त्वत्प्रसादाद्धिलभ्यन्तेनलभ्यंतेन्यथावि
भो ६३ इतितंडिस्तपोराशिस्तुष्टावेशानमात्मना । जगौचपरमंब्रह्म
यत्पुरालोककृज्जगौ ६४ उपमन्युरुवाच । एवंस्तुतोमहादेवस्तांडि
नाब्रह्मवादिना । उवाचभगवान्देवउमयासहितःप्रभुः ६५ ब्रह्माशत
क्रतुर्विष्णुर्विश्वेदेवामहर्षयः । नविदुस्त्वामितितततस्तुष्टःप्रोवाचतंशि
वः ६६ श्रीभगवानुवाच । अक्षयश्चाव्ययश्चैवभविताडुःखवर्जि
तः ६७ यशस्वीतेजसायुक्तोदिव्यज्ञानसमन्वितः । ऋषीणामभिगम्य
श्चसूत्रकर्त्तासुतस्तव ६८ मत्प्रसादाद्द्विजश्रेष्ठभविष्यतिनसंशयः ।

कंवाकामंददाम्यद्य हि यद्वत्सकांक्षसे ६९ प्रांजलिःसउवाचेदं त्वयिभक्तिर्दृढास्तुमे ७० उपमन्युरुवाच । एतान्दत्वावरान्देवोवंद्यमानःसुरर्षिभिः । स्तूयमानश्चविबुधैस्तत्रैवान्तरधीयत ७१ अन्तर्हितेभगवतिसानुगेयादवेश्वर । ऋषिराश्रममागम्यममैतत्प्रोक्तवानिह ७२ यानिचप्रथितान्यादौतंडिराख्यातवान्मम । नामानिमानवश्रेष्ठतानित्वंशृणुसिद्धये ७३ दशनामसहस्राणिदेवेष्वाहपितामहः । सर्वस्यशास्त्रेषुतथादशनामशतानिच ७४ गुह्यानीमानिनामानितंडिर्भगवतोच्युत । देवप्रसादाद्देवेशपुराप्राहमहात्मने ७५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमेघवाहनोपाख्यानेषोडशोऽध्यायः १६ ॥

सत्रहका अध्याय॥

बासुदेवजी बोले कि हेतात युधिष्ठिर इसकेअनन्तरउससावधान ब्रह्मर्षिने हाथ जोड़कर शिवजी के सहस्रनाम मेरे सन्मुख वर्णन किये १ उपमन्युऋषि बोले कि ब्रह्माजीके और ऋषियोंके कहेहुये वेदवेदान्तोक्त नामोंसे स्तुतिके योग्य और सबलोकोंमें बिख्यात परमेश्वरकी स्तुति करताहूं २ महर्षियोंसे बिचार कियेहुये सत्य शुद्ध और सब मनोरथोंके प्राप्त करनेवाले वेदमें मन लगाने वाले तंडीऋषिकी भक्तिसे वेदमेंसे निकालेहुये और तत्त्वदर्शी मुनियोंसे प्रशंसाकियेहुये साधुओंके कहेहुये नामोंसे उस अत्यन्त श्रेष्ठ सब के आदि स्वर्गकेदाता सर्वजीव हितकारी शुद्धचैतन्यरूप३।४ब्रह्म-लोकसे आये सर्वव्यापी सत्यनामोंसे वेदमें कहेहुये सनातनब्रह्म रूप देवताकी स्तुतिको करताहूं ५ हेयदुनन्दन तुमसावधानचित्तसे श्रवणकरो क्योंकि इससंसारके उत्पत्तिस्थान परमेश्वरके तुमपरम भक्तहो इससे तुमको सुनाताहूं ६ उनशिवजीकीविभूतियोंकापूरा २ वर्णन बड़े २ सावधान लोगोंसे भी हजारों वर्षतकभी कहना असंभवहै उसका आदिमध्य अन्त देवताओंसेभीनहीं जानागयाहै ७।८ हेमाधवजी उसके संपूर्ण गुणोंके वर्णन करनेको कोईभी पुरुषसमर्थनहींहै परन्तु अपनी सामर्थ्य और उस महाविज्ञानरूपदेवताकी

कृपासे उन महादेवजीके चरित्रोंकोवर्णन करताहूं उसकी कृपा और आज्ञाके विनाकोई कहनेको समर्थनहींहै उससंसार के उत्पत्तिस्थान वरदायी श्रेष्ठज्ञानी विश्वरूपके नामोंको कुछभागवर्णन करताहूं १२ हे श्रीकृष्णजी इन ब्रह्माजी से कहेहुये दशहजार नामोंका मनसे मथनकरके ऐसासार निकालाहै जैसेकि दहीकासार घृत पर्व्वत कासारसुवर्ण और फूलोंकासार शहदहोताहै १३।१४ अथवाजैसे कि घृतकासार मंड होताहै वैसाही यहभी सार निकाला है यह सबपापोंका दूर करनेवाला चारोंवेदोंसे युक्त बड़े उपायसेभी सिद्ध करना योग्य है और बड़े सावधान बुद्धिवाले पुरुषसे यह धारण करनेके योग्यहै यह मंगलकादाता वृद्धिकर्त्ता पौष्टिक राक्षसों का नाशकर्त्ता महापवित्र करनेवालाहै इसको श्रद्धामान आस्तिक और भक्तोंकेनिमित्त देनायोग्यहै १५।१६ और अश्रद्धामाननास्तिक और अजितेन्द्रियको कभीन देनाचाहिये १७हे श्रीकृष्णजी जो पुरुषइस कारणरूप आत्मा अविनाशी ईश्वरकी निन्दा करताहै वह अपने पूर्वज और पुत्रोंसमेत नरकगामी होताहै १८ यही जपध्यान योग और ध्येयहै इससे अधिक दूसरा नहींहै यही जपके योग्य ज्ञान उत्तम रहस्य पापोंका नाश करनेवाला मंगलरूप यज्ञादिका फल देनेवाला कल्याणरूप सर्वोत्तम अन्त समयपर भी जिसको जानकर परमगतिकोपाताहै १९।२० पूर्व्वसमयमेंसबलोकोंकेपितामहब्रह्मा जीने इसको निर्माण करके सबदिव्य स्तोत्रों के ऊपर राज्यपदवी दीहै तबसेलेकर परमात्मा ईश्वरका यहस्तोत्र देवताओंसे पूजित होकरस्तवराजनामसेप्रसिद्धहुआ २१।२२ यहस्तवराजपूर्वसमयमें ब्रह्मलोकसे स्वर्गमेंआया २३ और स्वर्गलोकसे तंडीऋषि के द्वारा इससंसारमें पृथ्वीपर लायागया यह मंगलों का भी मंगल करने वाला सर्वपाप मोचनहै २४ हे महाबाहु सब स्तोत्रों में उत्तम इस स्तोत्रराज को वर्णन करताहूं यह वेदों काभी वेद सर्वोत्तम मन बुद्धि वाणीसे परे जो पुरुष है उससे भी परे महापुरुष है यह महापुरुष नेत्रादि सब तेजोंका भी तेज तपोंका तप शान्तोंका भी शान्त मोक्ष

रूपहै और वृत्तीरूप ज्ञानों का भी साक्षीरूप ज्ञानहै २५।२६ और जो जितेन्द्रियोंमें भी महाजितेन्द्रिय ज्ञानियोंका ज्ञान अनुभव रूप आत्माहै देवताओं का भी देवता ऋषियोंका भी ऋषि है क्योंकि यही वेदका निर्माणकर्त्ताहै २७ यही यज्ञोंका भी यज्ञ कल्याणोंका भी कल्याण रुद्रोंका भी रुद्र ऐश्वर्य्योंका भी ऐश्वर्य्य योगियों और ब्रह्मा आदिका भी योगी अर्थात् ध्यानके योग्यहै और अव्यक्तादि कारणोंकाभी कारण शुद्धब्रह्महै जिससे जीव उत्पन्न होकर उसीमें लयहोतेहैं२८।२९ उस सब जीवमात्रोंके आत्मा बड़े तेजस्वी नाश कर्त्ता हरके एक हजार आठ नामोंको मैं कहताहूं हे पुरुषोत्तम जिसके सुनने से तुम सब अभीष्ट पदार्थों को प्राप्त करोगे ३० ॥

अथ शिव सहस्र नाम लिख्यते ॥

श्रीगणेशायनमः ओम्॥स्थिरःस्थाणुःप्रभुर्भीमः प्रवरोवरदोवरः । सर्वात्मासर्वविख्यातः सर्वःसर्वकरोभवः १ जटीचर्म्मीशिखंडीचसर्वाङ्गःसर्वभावनः । हरश्चहरिणाक्षश्चसर्वभूतहरः प्रभुः २ प्रवृत्तिश्चनिवृत्तिश्चनियतःशाश्वतोध्रुवः । श्मशानवासीभगवान्खचरोगोचरोर्द्दनः ३ अभिवाद्योमहाकर्मातपस्वीभूतभावनः । उन्मत्तवेषप्रच्छन्नःसर्वलोकप्रजापतिः ४ महारूपोमहाकायोवृषरूपोमहायशाः । महात्मा सर्वभूतात्माविश्वरूपोमहाहनुः ५ लोकपालोन्तर्हितात्माप्रसादोहयगर्द्दभिः पवित्रंचमहांश्चैवनियमोनियमाश्रितः ६ सर्वकर्मास्वयंभूत आदिरादिकरोनिधिः । सहस्राक्षोविशालाक्षःसोमोनक्षत्रसाधकः ७ चन्द्रःसूर्यःशनिःकेतु र्ग्रहोग्रहपतिर्वरः । अत्रिरत्र्यानमःकर्त्तामृगवाणार्पणोनघः ८ महातपाघोरतपाअदीनोदीनसाधकः । संवत्सरकरोमंत्रः प्रमाणंपरमंतपः ९ योगीयोज्योमहाबीजोमहारेतामहाबलः । सुवर्णरेताःसर्वज्ञःसुबीजोबीजवाहनः१० दशबाहुस्त्वनिमिषोनीलकंठउमापतिः । विश्वरूपःस्वयंश्रेष्ठो बलवीरोबलोगणः ११ गणकर्त्तागणपतिर्दिग्वासाःकामएवच । मंत्रवित्परमोमंत्रःसर्वभावकरोहरः १२ कमंडलुधरोधन्वीबाणहस्तः कपालवान् अशनीशतघ्नीखड्गीपट्टिशीचायुधीमहान् १३ स्त्रुवहस्तःसुरूपश्चतेजस्तेजस्करोनिधिःउष्णीषीचसुव

क्षश्चउदग्रोविनतस्तथा १४ दीर्घश्चहरिकेशश्चसुतीर्थःकृष्णएवच।
शृगालरूपःसिद्धार्थोमुंडःसर्वशुभंकरः १५ अजश्चबहुरूपश्चगंध
धारीकपर्द्यपि। ऊर्ध्वरेताऊर्ध्वलिंगऊर्ध्वशायीनभस्थलः १६ त्रिजट
श्चीरवासाश्चरुद्रःसेनापतिर्विभुः। अहश्चरोनक्तचरस्तिग्ममन्युःसु
वर्चसः १७ गजहादैत्यहाकालोलोकधातागुणाकरः। सिंहशार्दूलरू
पश्चआर्द्रचर्माम्बरावृतः १८ कालयोगीमहानादःसर्वकामश्चतुष्प
थः।निशाचरःप्रेतचारी भूतचारीमहेश्वरः १९ बहुभूतोबहुधरःस्वर्भा
नुरमितोगतिः नृत्यप्रियोनित्यनर्त्तोनर्त्तकःसर्वलालसः २० घोरोमहा
तपाःपाशोनित्योगिरिरुहोनभः। सहस्रहस्तोविजयोव्यवसायोह्यत
न्द्रितः २१ अधर्षणोधर्षणात्मायज्ञहाकामनाशकः। दक्षयागापहारीच
सुसहोमध्यमस्तथा २२ तेजोपहारीबलहामुदितोर्थोजितोवरः।गंभीर
घोषो गंभीरो गंभीरबलवाहनः २३ न्यग्रोधरूपोन्यग्रोधोवृक्षकर्ण
स्थितिर्विभुः।सुतीक्ष्णदशनश्चैवमहाकायोमहाननः २४ विष्वक्सेनो
हरिर्यज्ञः संयुगापीडवाहनः। तीक्ष्णतापश्चहर्यश्वः सहायःकर्मकाल
वित् २५ विष्णुप्रसादितोयज्ञः समुद्रोवडवामुखः। हुताशनसहायश्च
प्रशान्तात्माहुताशनः २६ उग्रतेजामहातेजाजन्योविजयकालवित्।
ज्योतिषामयनंसिद्धिः सर्वविग्रहएवच २७ शिखीमुंडीजटीज्वालीमूर्
त्तिजोमूर्द्धगोबली वेणवीपणवीतालीखलीकालकटंकटः २८ नक्षत्र
विग्रहमतिर्गुणबुद्धिर्लयोगमः। प्रजापतिर्विश्वबाहुर्विभागः सर्वगो
मुखः २९ विमोचनःसुसरणोहिरण्यकवचोद्भवः। मेढ्रजोबलचारीच
महीचारीस्तुतस्तथा ३० सर्वतूर्य्यनिनादीचसर्वतोद्यपरिग्रहः।व्या
लरूपोगुहावासीगुहोमालीतरंगवित् ३१ त्रिदशस्त्रिकालधृक्कर्मसर्व
बंधविमोचनः।बन्धनस्त्वसुरेन्द्राणांयुधिशत्रुविनाशनः ३२ सांख्यप्रसा
दोदुर्वासाःसर्वसाधुनिषेवितः। प्रस्कन्दनोविभागज्ञोअतुल्योयज्ञभाग
वित् ३३ सर्ववासःसर्वचारीदुर्वासावासवोमरः।हैमोहेमकरोयज्ञःसर्व
धारीधरोत्तमः ३४ लोहिताक्षोमहाक्षश्चविजयाक्षोविशारदः। संग्रहो
निग्रहःकर्त्तासर्पचीरनिवासनः ३५ मुख्योमुख्यश्चदेहश्चकाहलिःसर्व
कामदः।सर्वकालप्रसादश्चसुबलोबलरूपधृक् ३६ सर्वकामवरश्चैव

सर्वदःसर्वतोमुखः। आकाशनिर्विरूपश्चनिपातीह्यवशःखगः ३७ रौद्ररूपोंशुरादित्योवहुरश्मिःसुवर्चसी। वसुवेगोमहावेगोमनोवेगोनिशाचरः ३८ सर्व्ववासीश्रियावासीउपदेशकरोकरः। मुनिरात्मनिरालोकः संभग्नश्चसहस्रदः ३९ पक्षीचपक्षरूपश्चअतिदीप्तोविशांपतिः। उन्मादोमदनःकामोह्यश्वत्थोर्थकरोयशः ४० वामदेवश्चवामश्चप्राग्दक्षिणश्चवामनः। सिद्धयोगीमहर्षिश्चसिद्धार्थःसिद्धसाधकः ४१ भिक्षुश्चभिक्षुरूपश्चविपणोमृदुरव्ययः। महासेनोविशाखश्चषष्टिभागोगवांपतिः ४२ वज्रहस्तश्चविष्कंभीचमूरुस्तंभनएवच। वृत्तावृत्तकरस्तालोमधुर्मधुकलोचनः ४३ वाचस्पत्योवाजसनोनित्यमाश्रमपूजितः। ब्रह्मचारीलोकचारीसर्वचारीविचारवित् ४४ ईशानईश्वरःकालोनिशाचारीपिनाकधृक्। निमित्तस्थोनिमित्तंचनन्दिर्नन्दकरोहरिः ४५ नन्दीश्वरश्चनन्दीचनन्दनोनन्दिवर्द्धनः। भगहारीनिहंताचकालोब्रह्मापितामहः ४६ चतुर्मुखोमहालिंगश्चारुलिंगस्तथैवच। लिंगाध्यक्षःसुराध्यक्षोयोगाध्यक्षोयुगावहः ४७ वीजाध्यक्षोबीचकर्त्ताअध्यात्मानुगतोवलः इतिहासःसकल्पश्चगौतमोथनिशाकरः ४८ दंभोह्यदंभोवैदंभोवश्योवशकरःकलिः। लोककर्त्तापशुपतिर्महाकर्त्ताह्यनौषधः ४९ अक्षरंपरमंब्रह्मवलवच्छक्रएवचनीतिह्यनीतिःशुद्धात्माशुद्धोमान्योगतागतः ५० बहुप्रसादःसुस्वप्नो दर्पणोथत्वमित्रजित्। वेदकारोमन्त्रकारोविद्वान्समरमर्द्दनः ५१ महामेघनिवासीचमहाघोरोवशीकरः। अग्निज्वालोमहाज्वालो अतिधूम्रोहुतोहविः ५२ वृषणःशंकरोनित्यंवर्चस्वीधूम्रकेतनः। नीलस्तथांगलुब्धश्चशोभनोनिर्वग्रहः ५३ स्वस्तिदःस्वस्तिभावश्च भागोभागकरोलघुः। उत्संगश्चमहांगश्च महागर्भपरायणः ५४ कृष्णवर्णःसुवर्णश्च इन्द्रियंसर्वदेहिनाम्। महापादोमहाहस्तो महाकायोमहायशाः ५५ महामूर्धामहामात्रोमहानेत्रोनिशालयः। महान्तकोमहाकर्णो महोष्ठश्चमहाहनुः ५६ महानासोमहाकंबुर्महाग्रीवःश्मशानभाक्। महारक्षामहोरस्कोह्यन्तरात्मामृगालयः ५७ लंवनोलंवितोष्ठश्च महामायःपयोनिधिः। महादंतोमहादंष्ट्रो महाजिह्वो महामुखः ५८ महानखोमहारोमामहाकेशोमहा

ज्ञटः । प्रसन्नश्चप्रसादश्च प्रत्ययोगिरिसाधनः ५९ स्नेहनोस्नेहन श्चैव अजितश्चमहामुनिः । वृक्षाकरोवृक्षाकेतुरनलोवायुबाहनः ६० गंडलीमेरुधामाचदेवाधिपतिरेवच । अथर्वशीर्षःसामास्यऋक्सहस्रा मितेक्षणः ६१ यजुपादभुजोगुह्यः प्रकाशोजंगमस्तथा । अमोघार्थः प्रसादश्चअभिगम्यःसुदर्शनः ६२ उपकारःप्रियःसर्वःकनकःकांचनः छविः। नाभिर्नन्दिकरोभावः पुष्करस्थपतिस्थिरः ६३ द्वादशस्त्रासन श्चाद्योयज्ञोयज्ञसमाहितः । नक्तंकलिश्चकालश्चमकरःकालपूजितः ६४ सगणोगणकारश्च भूतबाहनसारथिः । भस्मशयोभस्मगोप्ता भस्मभूतस्तरुर्गणः ६५ लोकपालस्तथालोकोमहात्मासर्वपूजितः। शु- क्लस्त्रिशुक्लःसंपन्नःशुचिर्भूतनिषेवितः ६६ आश्रमस्थःक्रियावस्थो बिश्व कर्ममतिर्वरः। बिशालशाखस्ताम्रोष्ठोह्यंबुजालःसुनिश्चलः ६७ कपि- लःकपिशःशुक्ल आयुश्चैवपरोपरः । गन्धर्बोह्यदितिस्तार्क्ष्यःसुबिज्ञेयः सुशारदः ६८ परश्वधायुधोदेव अनुकारीसुबांधवः । तुंबवीणोमहा क्रोधऊर्ध्वरेताजलेशयः ६९ उग्रोबंशकरोबंशो बंशनाशोह्यनिन्द्रि तः । सर्वाङ्गरूपोमायाबी सुहृदोह्यनिलोनलः ७० बन्धनोबन्ध कर्त्ताचसुबंधनबिमोचनः। सयज्ञारिःसकामारिर्महादंष्ट्रोमहायुधः ७१ बहुधःनिन्दितशर्बः शंकरःशंकरोधनः । अमरेशोमहादेवो बिश्वदेवः सुरारिहा ७२ अहिर्बुध्न्योनिलाभश्चचेकितानोहविस्तथा । अजैक पाश्चकापाली त्रिशंकुरजितःशिवः ७३ धन्वन्तरिर्धूम्रकेतुःस्कन्दो वैश्रवणस्तथा । धाताशक्रश्चविष्णुश्च मित्रस्त्वष्टाध्रुवोधरः ७४ प्र भावः सर्वगोवायुरर्यमासविताविः उषंगुश्चबिधाताच मांधाताभूत भावनः ७५ विभुर्वर्णबिभावीच सर्वकामगुणावहः । पद्मनाभो महागर्भश्चन्द्रवक्रोनिलोनलः ७६ बलवांश्चोपशान्तश्चपुराणःपुण्य चंचुरी । कुरुकर्त्ताकुरुवासीकुरुभूतोगुणौषधः ७७ सर्वाशयोदर्भचारी सर्वेषांप्राणिनांपतिः । देवदेवःसुखासक्तः सदसत्सर्बरत्नवित् ७८ कैलासगिरिवासीचहिमवद्गिरिसंश्रयः । कूलहारीकूलकर्त्ताबहुविद्यो बहुप्रदः ७९ वणिजोवर्धकीवृक्षोवकुलश्चन्दनच्छदः ।सारग्रीवोमहा जत्रुरलोलश्चमहौषधः ८० सिद्धार्थकारीसिद्धार्थः छन्दोव्याकरणो

त्तरः। सिंहनादःसिंहदंष्ट्रःसिंहगःसिंहवाहनः ८१ प्रभावात्माजगत्काल स्थानोलोकहितस्तरुः। सारंगोनवचक्रांगः केतुमालीसभावनः ८२ भूतालयोभूतपतिरहोरात्रमनिन्दितः ८३ वाहितासर्वभूतानांनिलय श्चविभुर्भवः। अमोघःसंयतोह्यश्वोभोजनप्राणधारणः ८४ धृतिमा न्मतिमान्दक्षःसत्कृतश्चयुगाधिपः। गोपालिगोपतिर्ग्रामोगोचर्मव सनोहरिः ८५ हिरण्यबाहुश्चतथागुहापालःप्रवेशिनाम्। प्रकृष्टारिर्म हाहर्षोजितकामोजितेन्द्रियः ८६ गान्धारश्चसुवासश्चतपःसक्तोरति र्नरः। महागीतोमहानृत्योह्यप्सरोगणसेवितः ८७ महाकेतुर्महाधा तुर्नैकसानुचरश्चलः। आवेदनीयआदेशःसर्वगन्धसुखावहः ८८ तोर णस्तारणोवातःपरिधीपतिखेचरः। संयोगोवर्द्धनोवृद्धोअधिवृद्धोगु णाधिकः ८९ नित्यआत्मसहायश्चदेवासुरपतिःपतिः। युक्तश्चयुक्त बाहुश्चदेवोदिविसुपर्वणः ९० आषाढश्चसुषाढश्चध्रुवोथहरिणो हरः। वपुरावर्त्तमानेभ्योवसुश्रेष्ठोमहापथः ९१ शिरोहारीविमर्षश्च सर्वलक्षणलक्षितः। अक्षश्चरथयोगीचसर्वयोगोमहाबलः ९२ समा म्नायोऽसमाम्नायस्तीर्थदेवोमहारथः। निर्जीवोजीवनोमन्त्रः शुभा क्षोबहुकर्कशः ९३ रत्नप्रभूतोरत्नांगोमहार्णवनिपानवित्। मूलंवि शालोह्यमृतोव्यक्ताव्यक्तस्तपोनिधिः ९४ आरोहणोधिरोहश्चशिल धारोमहायशाः। सेनाकल्पोमहाकल्पोयोगोयुगकरोहरिः ९५ युग रूपोमहारूपोमहानागहनोवधः। न्यायनिर्वपणःपादःपंडितोह्यचलो पमः ९६ बहुमालोमहामालः शशीहरसुलोचनः। विस्तारोलवणः कूपस्त्रियुगःसफलोदयः९७त्रिनेत्रश्चविषण्णांगोमणिविद्धोजटाधरः। बिन्दुर्विसर्गःसुमुखःशरःसर्वायुधःसहः ९८ निवेदनःसुखजातः सुगं धारोमहाधनुः। गंधपालीचभगवानुत्थानःसर्वकर्मणाम् ९९ मंथा नोबहुलोवायुः सकलःसर्वलोचनः। तलस्तालःकरस्थालीऊर्ध्वसंह ननोमहान् १०० छत्रंसुछत्रोविख्यातोलोकः सर्वाश्रयःक्रमः। मुंडो विरूपोविकृतोदंडीकुंडीविकुर्वणः १०१ हर्यक्षःककुभोवज्रीशतजि ह्वःसहस्रपात्। सहस्रमूर्द्धादेवेन्द्रःसर्वदेवमयोगुरुः १०२ सहस्र बाहुःसर्वाङ्गः शरण्यः सर्वलोककृत्। पवित्रंत्रिककुन्मंत्रःकनिष्ठःकृष्ण

पिंगलः १०३ ब्रह्मदण्डविनिर्माताशतघ्नीपाशशक्तिमान् । पद्मगर्भो
महागर्भोब्रह्मगर्भोजलोद्भवः १०४ गभस्तिब्रह्मकृद्ब्रह्मीब्रह्मविद्ब्राह्म
णोगतिः । अनन्तरूपोनैकात्मातिग्मतेजाःस्वयंभुवः १०५ ऊर्ध्वगा
त्मापशुपतिर्वातरंहामनोजवः । चन्दनीपद्मनालाग्नः सुरभ्युत्तरणो
नरः१०६कर्णिकारमहास्तम्बीनीलमौलिःपिनाकधृक्। उमापतिरुमा
कांतोजाह्नवीधृगुमाधवः१०७वरोवराहोवरदोवरेण्यःसुमहास्वनः।
महाप्रसादोदमनः शत्रुहाश्वेतपिंगलः १०८ पीतात्मापरमात्माचप्र
यतात्माप्रधानधृक् । सर्वपार्श्वसुखस्त्र्यक्षोधर्मसाधारणोवरः १०६
चराचरात्मासूक्ष्मात्मा अमृतोगोवृषेश्वरः । साध्यर्षिर्वसुरादित्यो
विवस्वान्सविताम्रतः ११०व्यासःसर्गःसुसंक्षेपोविस्तरःपर्य्ययोनरः।
ऋतुसंवत्सरोमासःपक्षःसंख्यासमापनः १११ कलाकाष्ठालवामात्रा
मुहूर्त्ताहःक्षपाःक्षणाः । विश्वक्षेत्रंप्रजाबीजंलिंगमाद्यस्तुनिर्गमः ११२
सदसद्व्यक्तमव्यक्तं पितामातापितामहः । स्वर्गद्वारंप्रजाद्वारंमोक्षः
द्वारंत्रिविष्टपम् ११३ निर्वाणंह्लादनश्चैवब्रह्मलोकःपरागतिःदेवासुर
विनिर्मातादेवासुरपरायणः ११४ देवासुरगुरुर्द्देवोदेवासुरनमस्कृतः।
देवासुरमहामात्रोदेवासुरगणाश्रयः ११५ देवासुरगणाध्यक्षोदेवा-
सुरगणाग्रणीः। देवातिदेवोदेवर्षिर्देवासुरवरप्रदः ११६ देवासुरे
श्वरोविश्वोदेवासुरमहेश्वरः । सर्वदेवमयोचिंत्यो देवतात्मात्मसं-
भवः ११७ उद्भिस्त्रिविक्रमोवैद्यो विरजोनीरजोऽमरः । ईड्योहस्ती
श्वरोव्याघ्रोदेवसिंहोनरर्षभः ११८ विबुधोग्रवरःसूक्ष्मःसर्वदेवस्तपो
मयः । सुयुक्तःशोभनोवज्रीप्रासानांप्रभवोव्ययः ११६ गुहःकान्तो
निजःसर्गःपवित्रंसर्वपावनः । शृंगीशृंगप्रियोबभ्रूराजराजोनिरा
मयः १२० अभिरामःसुरगणो विरामःसर्वसाधनः । ललाटाक्षो
विश्वदेवोहरिणोब्रह्मवर्चसः १२१ स्थावराणांपतिश्चैवनियमेन्द्रिय
वर्द्धनः । सिद्धार्थःसिद्धभूतार्थोचिन्त्यःसत्यव्रतःशुचिः १२२ व्रता
धिपःपरंब्रह्मभक्तानांपरमागतिः । विमुक्तोमुक्ततेजाश्चश्रीमान्श्रीवर्द्ध
नोजगत् १२३ यथाप्रधानंभगवानितिभक्त्यास्तुतोमया । तेनब्रह्मा
दयोदेवाविदुस्तत्त्वेननर्षयः १२४ स्तोतव्यमर्च्यंवंद्यंचकःस्तोष्यति

जगत्पतिम्। भक्त्यास्त्वेवंपुरस्कृत्यमयायज्ञपतिर्विभुः १२५ ततोऽभ्य नुज्ञांसंप्राप्यस्तुतोमतिमतांवरः। शिवमेभिःस्तुवन्देवंनामभिः पुष्टि वर्द्धनैः १२६ नित्ययुक्तःशुचिर्भक्तःप्राप्नोत्यात्मानमात्मना १२७ एतद्धिपरमंब्रह्मपरंब्रह्माधिगच्छति। ऋषयश्चैवदेवाश्चस्तुवंत्येतेन तत्परम् १२८ स्तूयमानोमहादेवस्तुष्यतेनियतात्मभिः। भक्तानुकंपी भगवानात्मसंस्थाकरोविभुः १२९ तथैवचमनुष्येषुयेमनुष्याःप्रधा नतः। आस्तिकाःश्रद्दधानाश्चबहुभिर्जन्मभिःस्तवैः १३० भक्त्या ह्यनन्यमीशानंपरंदेवंसनातनम्। कर्मणामनसावाचाभावेनामिततेज सः १३१ शयानाजाग्रमाणाश्चव्रजन्नुपविशंस्तथा। उन्मिषन्निमिषं श्चैवचिन्तयन्तःपुनःपुनः १३२ शृण्वन्तःश्रावयंतश्चकथयंतश्चते भवन्। स्तुवन्तःस्तूयमानाश्चतुष्यन्तिचरमंतिच १३३ जन्मकोटिस हस्रेषुनानासंसारयोनिषु।जंतोर्विगतपापस्यभवेभक्तिःप्रजायते १३४ उत्पन्नाचभवेभक्तिरनन्यासर्वभावतः। भाविनःकारणेचास्यसर्वयुक्त स्यसर्वथा १३५ एतद्देवेषुदुष्प्रापंमनुष्येषुनलभ्यते। निर्विघ्नानिश्च लारुद्रेभक्तिरव्यभिचारिणी १३६ तस्यैवचप्रसादेन भक्तिरुत्पद्यते नृणाम्। येनयांतिपरांसिद्धिंतद्भागवतचेतसः १३७ येसर्वभावानु गताःप्रपद्यन्तेमहेश्वरम्।प्रपन्नवत्सलोदेवःसंसारात्तान्समुद्धरेत् १३८ एवमन्येविकुर्वन्तिदेवाःसंसारमोचनम्। मनुष्याणामृतेदेवंनान्याश- क्तिस्तपोवलम् १३९ इतितेनेन्द्रकल्पेन भगवान्सदसत्पतिः। कृत्ति वासाःस्तुतःकृष्णतंडिनाशुभबुद्धिना १४० स्तवमेतंभगवतोब्रह्मा स्वयमधारयत्। गीयतेचसबुध्येतब्रह्माशंकरसन्निधौ १४१ इदंपुण्यं पवित्रंचसर्वदापापनाशनम्। योगदंमोक्षदंचैवस्वर्गदंतोषदंतथा १४२ एवमेतत्पठन्तेयएकभक्त्यातुशंकरम्। यागतिःसांख्ययोगानांव्रज- न्त्येतांगतिन्तदा १४३ स्तवमेवंप्रयत्नेनसदारुद्रस्यसन्निधौ।अब्दमे कंचरेद्भक्तःप्राप्नुयादीप्सितंफलम् १४४ एतद्रहस्यंपरमंब्रह्मणोहृदि संस्थितम्। ब्रह्माप्रोवाचशक्रायशक्रःप्रोवाचमृत्यवे १४५ मृत्युःप्रो वाचरुद्रेभ्योरुद्रेभ्यस्तंडिमागमत्। महतातपसाप्राप्तस्तंडिनाब्रह्म सद्मनि १४६ तंडिःप्रोवाचशुक्रायगौतमायचभार्गवः। वैवस्वतायम

नवेगौतमःप्राहमाधवः१४७नारायणायसाध्यायसमाधिष्ठायधीमते। यमायप्राहभगवान्साध्योनारायणोच्युतः १४८ नाचिकेतायभगवानाहवैवस्वतोयमः मार्कण्डेयायवार्ष्णेयनाचिकेतोभ्यभाषत १४६ मार्कण्डेयान्मयाप्राप्तोनियमेनजनार्दन। तवाप्यहममित्रघ्नस्तवंदद्यांहिविश्रुतत् १५० स्वर्ग्यमारोग्यमायुष्यंधन्यंवेदेनसंमितम्। नास्यविघ्नंविकुर्वन्तिदानवायक्षराक्षसाः १५१ पिशाचायातुधानावागुह्यकाभुजगोअपि। यःपठेत्शुचिःपार्थब्रह्मचारीजितेन्द्रियः। अभग्नयोगोवर्षन्तुसोश्वमेधफलंभवेत् १५२॥ इतिश्रीशिवसहस्त्रनामसंपूर्णम् १८२॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिशिवसहस्रनामवर्णनोसप्तदशोऽध्यायः१७॥

अठारहवां अध्याय॥

वैशंपायन बोले कि इसके अनन्तर महायोगी व्यासमुनिने कहा कि हे पुत्र तेरा कल्याणहो तू स्तोत्रका पाठकर तेरे ऊपर महादेवजी प्रसन्नहोंगे १ हे महाराज पुत्र युधिष्ठिर पूर्वकालमें मेरुपर्व्वत पर अपने पुत्रके निमित्त उत्तम तपस्या युक्त होकर मैंने भी इसी स्तोत्रका पाठ कियाथा २ हे पांडुनन्दन इसीके प्रतापसे मैंने वांछित फलकोपाया इसीप्रकार तुमभी शिवजी से सब मनोरथोंको पावोगे ३ तदनन्तर सांख्यशास्त्रके बनानेवाले देवताओंके मान्य कपिल ऋषि ने कहा कि मैंने अनेक जन्मोंतक उस सबके उत्पत्ति स्थान परमेश्वरका बड़ी भक्ति पूर्व्वक पूजनादिकिया ४ तब प्रसन्न होकर भगवान्ने मुझको भवान्तक ज्ञानदिया इसके पीछे इन्द्रके प्यारे मित्र आलम्ब गोत्री महादयावान् चारुशीर्षने कहा ५ हे राजा पांडुके पुत्र मैंने भी गोकर्ण तीर्थ में दशहजार बर्षतक शिवजीकी तपस्याकरके ऐसे सौ पुत्रपाये जो योनिसे उत्पन्न जितेन्द्रिय धर्मज्ञ महातेजस्वी जरारहित दुःखसे विहीन और एक लाखबर्षकी अवस्थावालेथे ६।७ फिर भगवान् वाल्मीक ऋषिनेयुधिष्ठिर से कहा कि हे भरतवंशी मैं विवादके कारण अग्निहोत्री मुनियोंकरके

इस प्रकार शापित हुआथा कि तुम ब्रह्महत्या करनेवाले होगे ८ इस बचनके होतेही क्षणभरमें उस अधर्मसे युक्त शरीर होगयातब उस निर्मल शुद्ध रूप शिवजीकी शरणमें गया ९ जब उनकी कृपासे निष्पाप होगया तब महाप्रलय कर्त्ता सुखकर्त्ता त्रिपुरारिशिवजीने मुझसे कहाकि तेरोउत्तम कीर्त्तिविख्यातहोगी १० फिर धर्मधारियोंमें श्रेष्ठऋषियोंके मध्यवर्त्ती सूर्य्यकेसमानप्रकाशमान परशुरामजीने युधिष्ठिरसे यहबचनकहा ११ हेराजा युधिष्ठिर वेदपाठी बड़े २ भाइयोंके मारेजानेसे बड़ेदुःखमें प्राप्तहोकर मैंने बड़ीपवित्रता से शिवजीकी शरणली १२ और नामोंसेही उनकी स्तुतिकरी तब उसीसे शिवजीने प्रसन्नहोकर मुझकोफरसा और दिव्यअस्त्रदिये १३ और कहाकि तुझको किसीप्रकारका पापन होगा और सबसेअजेय होगा जरामरणसे रहित विचरैगा १४ जो २ मुझसेकहा वह सब मैंने उसमहाभागी जटाधारीकी कृपासेपाया १५ तब विश्वामित्रजी बोलेकि मैं क्षत्रीथा मैंनेभी ब्राह्मण होनेके निमित्त शिवजीका ही आराधनकिया १६ तब उनकी कृपासे मैंने महादुष्प्राप्य ब्राह्मण वर्णपाया फिर असितदेवलऋषिनेकहा कि हे राजा युधिष्ठिर इन्द्र के शापसे मेराधर्मनष्ट होगयाथा तब इन्हींप्रभु परमेश्वर महेश्वर जीने मेरे उत्तमधर्मऔर कीर्त्तिकोदिया१७।१८वृहस्पतिजीकेसमान तेजस्वी इन्द्रके परममित्र गृत्समदनाम ऋषिने उस अजमीढ़वंशीसे कहा १९ कि चाक्षुषमनुके पुत्र भगवान् वरिष्ठने इन्द्रके सहस्र वर्ष के यज्ञ प्रारंभ होनेपर और मेरे मुखसे सामवेदके पाठ करनेपर यह बचन कहाकि हे ब्राह्मणोत्तम रथन्तर नामऋचा अच्छीरीति सेनहीं पढ़ीजातीहै२०।२१तुम विपरीत पढ़नेकेपापसे निष्पापहोकर फिर बुद्धिसे विचारकरो हे मन्दबुद्धी तुमने अशुद्ध पढ़नेसे यज्ञके विरुद्ध अपराधकिया २२ क्रोधयुक्त ऋषिने ऐसे कल्याणयुक्तवचनों को कहकर फिरकहाकितुम बुद्धिसेरहित महादुःखी सदैव भयकारी वनमें रहनेवाले दुःखों में पूरित क्रूरमृगहोगे और ग्यारह सहस्र आठसौवर्षतक उसदेशमें निवासकरोगे जोवायुजलसे रहित अन्य

मृगोंसेशून्य यज्ञके अनुपकारी वृक्षोंसेयुक्त रुरुसिंहादिकोंसे व्याप्त होगा २३।२४।२५ हेराजा इसवचनके समाप्त होतेही मैं मृगरूप होगया तदनन्तर योगीश महेश्वरजीने मुझशरणागतसेकहा २६ कितू अजरअमर होकरदुःखोंसे रहितहोगा और तेरासुख सदैवएक सावनारहैगाऔरइन्द्रकायज्ञ औरगृत्समदतुमदोनोंकीवृद्धिहोय २७ यहषड़ैश्वर्य्यका स्वामी नानारूपोंसे प्रकट होनेवाला ईश्वर इस रीतिसे अपनी दयाको करता है और वही सदैव सुखदुःखों में पोषण कर्त्ताहुआ सबका रक्षकहै २८ हेयुद्धकर्त्ताओंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर यहपरमेश्वर मनवाणी और कर्मसे अचिन्त्यहै और विद्या करके मेरे समान पंडित नहींहै २९ फिर बुद्धिमानों में श्रेष्ठ वासुदेवजी बोलेकि मैंने तपस्याकरके सुवर्णाक्ष महादेवजीको प्रसन्नकिया ३० और प्रसन्न होकर शिवजीने मुझसे कहा कि हे श्रीकृष्ण तुम मेरी कृपासे संसारी वस्तुओं से भी अधिक सबको प्यारे होगे ३१ युद्ध में अजेय होकर दीप्ताग्निके समान होगे इसी प्रकार से परमात्मा महादेवजी ने मुझे हजारों बार बरदान दिये ३२ मैंने पूर्व्वसमय में मणिमन्थ पर्व्वत पर करोड़ों वर्षतक इन महादेवजी का पूजनकि-याथा ३३ तब प्रसन्न होकर शिवजी ने मुझसे कहाथा कि तेरा कल्याण हो मैं प्रसन्नहूं जोचाहो सोवरमांगो ३४ उस समय मैंने दण्डवत् करके यह बचन कहा कि जो आप मेरी भक्ति से प्रसन्न हैं ३५ तो हे ईश्वर मेरी भक्ति आपके रूपमें सदैव अचल नियत हो फिर भगवान् तथास्तु अर्थात् ऐसाही हो यह कहकर वहीं अन्त-र्द्धान होगये ३६ जैगीषव्यजी बोले कि हे युधिष्ठिर पूर्व समय में वाराणसीपुरी में भगवान् तेजस्वी शिवजीने थोड़ेही उपायों से अष्ट गुणित ऐश्वर्य्य मुझको दिया ३७ गर्गजी बोले हे पांडव सरस्वती नदी के तटपर शिवजी ने मेरे मानसी पूजन से प्रसन्न होकर मुझ को चतुष्षष्टि अंग युक्त ज्ञान और एक हजार पुत्र ऐसे दिये जोमेरे ही समान ब्रह्मवादीथे और मुझ संतान युक्तकी आयुर्दा भी दश लाख वर्षकी करदी ३८।३९ पराशरजी बोले हे राजा पूर्व्व समय में

मैंने शिवजी को प्रसन्न करके मनमें यह विचार किया कि शिवजी की कृपा से महातेजस्वीयोगी यशस्वी४० वेद रूप लक्ष्मीकानिवास स्थान दयावान्ब्रह्मज्ञानी वेदव्यासनाम एक इच्छाके अनुरूप पुत्र मेरेहोय ४१ तब उसउत्तम देवताने मेरेहृदय में वर्त्तमान इच्छाको जानकर मुझसे कहा कि मुझमें जो तेरी भक्ति है उसके फलसे कृष्णनाम पुत्र होगा ४२ सावर्णि मनुकी सृष्टिकी उत्पत्तिमें सप्तर्षिहोकर वहीवेदोंका प्रारंभ करने वाला और कौरववंशका उत्पन्न करनेवाला होगा ४३ वह तेरा पुत्र महामुनि इन्द्रका प्यारा जगत्का शुभचिन्तक होकर इतिहासों का निर्माण करने वाला होगा ४४ हे पराशर तुम्हारा पुत्र अजर अमरहोगा ऐसा कहकर वह शिवजी वहीं अन्तर्द्धान होगये हेयुधिष्ठिर वही महायोगी पराक्रमी अविनाशी न्यूनाधिकता से रहितहै ४५ मांडव्य ऋषिबोले हे राजा चौरकर्मसे रहित भी मैं चौरज्ञानसे शूलीपर चढ़ाया गया वहां शूलीपरसेही मैंनेशिवजीको ध्यानकिया तबवहीं शिवजीनेकहा कि ४६ हे वेदपाठो तू शूलीसे बचैगा और एक अर्बुद वर्षतकजीता रहैगा और शूलीसे कोई प्रकारका तुमको दुःख न होगा ४७ और तुम दैहिक मानसिक रोगोंसे भी रहित होगे इस कारणसे कि तेरा शरीर धर्मके चौथेचरण सत्यनामसे उत्पन्न हुआहै ४८ इसी हेतुसे तुम अनुपम भी होगे और सब तीर्थोंका स्नान निर्विघ्नता पूर्वक करके सुख पूर्वक अपने जीवनको भोगोगे ४९ और हे वेदपाठीतेरे उत्तम स्वर्गको भी अक्षय करताहूं इन सब वरदानों को देकर वह षड़ैश्वर्य्यमान ईश्वर वहीं गणों समेत गुप्तहोगये ५०।५१ गालवऋषिबोले कि विश्वामित्रजी की आज्ञा पाकर मैं पिता के दर्शन को आया वहां पिता का मरण होगया था इससे अपने स्वामी के नष्ट होजानेसे मेरी माताने महारुदन करके मुझसे कहा ५२ हे निष्पापपुत्र तेरा पिता तुझ गुरुके आज्ञाकारी वेदोंसे अलंकृत जितेन्द्रिय तरुण पुत्रको नहीं देखसका ५३ माता के इस वचनको सुन कर पिताके दर्शनसे निराशहोके मैंने बड़ी सावधान बुद्धीसेमहादेव

जी का दर्शन किया तब उन्होंने मुझसे कहा ५४ हे पुत्र तेरे माता पिता और तुम मृत्यु से रहित होगे तुम शीघ्रही घरमें प्रवेशकरो अपने पिता के दर्शन को पावोगे ५५ हे तात युधिष्ठिर भगवान् शिवजीकी आज्ञा पाकर मैंने घरमें जाकर यज्ञ किये हुये अग्निकुंडसे निकले हुये स्नान किये बनसे लकड़ियां लियेहुयेमहा पवित्र शरीरधारी अपने पिताको देखा और पित ने मुझकोदेखतेही लकड़ी कुशाआदिको रखकर बड़े अश्रुपाती नेत्रोंसे देखा५६।५७ और बहुत स्नेह पूर्व्वक मुझको हृदयसे लगा मस्तक चूंबकर यह बचन कहा कि हे पुत्र मैंने प्रारब्ध से तुम बिद्यावान् अपने पुत्रको देखाहै ५८ वैशंपायन बोले कि पांडव युधिष्ठिर मुनियोंसे वर्णन कियेहुये इन अत्यन्त अद्भुत कर्मोंको सुनकर बड़ा आश्चर्य्यितहुआ ५६ इसके पीछे ज्ञानियों में श्रेष्ठ श्रीकृष्णजी उस धर्मनिधि युधिष्ठिरसे यह बचन ऐसे कहनेलगे जैसे कि बिष्णुजीने इन्द्रसे कहाथा ६० वासुदेवजी बोले कि सूर्य्यके समान महा तेजस्वी उपमन्यु ऋषिने मुझसे कहाकि जो पापात्मा पुरुष अपने अशुभकर्ममें फंसेहैं ६१ वहतामसी और राजसी प्रकृतिवाले मनुष्य शिवजीको नहीं प्राप्त होसक्तेहैं और शुद्ध अन्तःकरण वाले द्विजलोग उस ईश्वरको अच्छी रीतिसे प्राप्त होतेहैं ६२ सब दशामें कर्म कर्त्ता जो पुरुष ईश्वर का भक्तहै वह शुद्ध अन्तःकरण बनबासी मुनियोंके समान है ६३ जब शिवजी प्रसन्नहोतेहैं तब विष्णुभाव शिवभाव ब्रह्मपद और देवतासमेततीनों लोकोंके राज्यको भी देतेहैं ६४ हे तात जो मनुष्य चित्त से भी शिवजीको ध्यान करतेहैं वहसब पापोंसे निवृत्त होकर देवताओं के साथ निवासकरते हैं ६५ घर और घरकी सब ममताको त्यागकर जो शिवजी महाराज का आराधन करताहै वह पापमें कभीनहीं फंसताहै६६ सब लक्षणोंसेहीन और पातकोंसे भराहुआ भी जो पुरुष शिवजीको ध्यान करताहै वहसब पापोंको दूर करताहै ६७ हे केशवजी जिन कीटपक्षी और पशुओं नेभी शिवजी की शरणलीहै उनको भी कभी कहीं भयनहीं रहता

इसप्रकार जो मनुष्य इसपृथ्वी पर महादेवजी के भक्तहैं ६८ वह संसारके आधीन नहीं होते यह मेराहृढ़ सिद्धान्तहै इसकेपीछे फिर श्रीकृष्णजीने धर्म पुत्र युधिष्ठिर से यह बचन कहा ६९ कि सूर्य्य चन्द्रमा, वायु, अग्नि, स्वर्ग, पृथ्वी, जल, अष्टवसु बिश्वेदेवा ७० ब्रह्मा इन्द्र, मरुत, सत्यब्रह्म, वेद, यज्ञ, दक्षिणा, वेदपाठी, सोमयज्ञ, यज्ञकर्त्ता हव्य, देवताओंका भाग, रक्षा, दीक्षा और इनके विशेष जितने संयम हैं ७१ स्वाहा, वौषट्, ब्राह्मण, कामधेनु, उत्तमधर्म, कालचक्र, बल, यश जितेन्द्रिय, बुद्धिमानोंकी मर्य्यादा, शुभाशुभकर्म, सातोंमुनि ७२ ब्रह्माकारधोब्रत, मन और चक्षुषोंसे स्पर्शकर्म शुद्धोदेवगण ऊष्मपा सोमपा, लेखा, सुयाम, तुषित, ब्रह्मकाय ७३ आभासुर, गंधप, धूमप मन बाणी के जीतने वाले शुद्ध योग से अनेक शरीर धारण करने वाले देवता स्पर्शासना, दर्शपा, आज्यपा ७४ और चिंतवन करते ही जिनकी अभीष्ट वस्तु प्राप्त होती हैं वह उत्तम देवता और जो अन्य देवता हैं गरुड़, गन्धर्व, पिशाच, दानव, यक्ष, चारण पन्नग ७५ स्थूल, सूक्ष्म, मृदु, वृहत्, सुख, दुःख, सदैव दुःख, सांख्य योग, और उनपर कर्मकर्त्ताओंका मेलनस्थान इत्यादिजो मैंने वर्णन किये उन सबको तुम शिवजी के ही उत्पन्न किये हुये जानो ७६ आकाश आदि तत्त्वोंकेउत्पन्न करनेवाले सब उपासकोंके इष्ट और इस संसारके रक्षक सब देवतालोग इस आनन्द स्वरूप चौथे से उत्पन्न हुयेहैं जिन्होंने इस पृथ्वीपर आकर उस देवताकी सृष्टिको चारों ओरसे रक्षितकिया ७७ जिस ईश्वर सूत्रात्मा या विराट् को ध्यानसे निश्चय करतेहैं वह सूक्ष्मतमहैं इसीहेतु से मोक्षके अर्थ मन बाणीके विषयसे रहित तत्त्वके आश्रय होकर मैं प्राप्त होताहूं वह ईश्वर रूप होकर सदैव स्तूयमान प्रभु अविनाशी हमारे मन चाहते वरोंकोदो ७८ जो पुरुष सावधान चित्त जितेन्द्रिय योगबल वाला पवित्र होकर इस स्तोत्र को एक मासतक पाठ करेगा वह अश्वमेध यज्ञके फलको पावेगा ७९ हे राजा ब्राह्मण सब बेदोंको पढ़े और राजासबपृथ्वीको बिजय करे वैश्यलाभ और कुशलताको

पावे और शूद्रशरीर त्यागने के पीछे सुख और गतिको पावे ८० कीर्त्तिमान् लोगोंने सबपापोंकेमोचन करनेवालेनरकसे बचानेवाले महापवित्र इस राजस्तोत्र के आश्रय होकर रुद्रजीमें अपनेको लय कियाहै ८१ हेभरतर्षभमनुष्यके शरीरमें जितने रोमकूपहोतेहैं वह मनुष्य उतनेही हजारवर्षतक स्वर्गमें बासकरताहै ८२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्म्मेमघवाहनोपाख्यानेअष्टादशोऽध्यायः १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जानने के योग्य ब्रह्मको जानकर उसके ज्ञान साधन रूप धर्मको मैं जानना चाहताहूंऔर हेभरतर्षभ जो यह कहाजाताहै कि अग्नि होत्रादिक धर्मस्त्रीपुरुष के साथही होनेमें होताहै मैं पूछताहूं कि वहधर्म साथ रहने वाली स्त्रियों के बिवाहकेही समय होताहै याबिवाहसे पूर्व्व होताहै १ किसी मुख्य धर्ममें स्त्रीका साथहोना चाहिये वा सर्वत्र इसशंकाको करके कहते हैं यह जो आर्षधर्म या प्राजापत्यया इन्द्रियोंके जीतनेके वास्ते स्त्री पुरुषोंका धर्ममहर्षियोंने पूर्व समयमें वर्णन कियाहै २ इसमें बड़ा सन्देह और विरुद्ध है क्योंकि इस लोक में जो सह धर्मताहै तो मरनेकेपीछे परलोकमें कहांहै अर्थात् कहींनहीं है यहमेरा सिद्धान्त है ३ हे पितामह देहत्याग करने वालोंको जो सहधर्मता के द्वारा स्वर्ग होताहै जबकि स्त्री पुरुष दोनोंमेंसे प्रथम एक मरताहै तब एकता कहां रहतीहै अर्थात् भिन्नता होजातीहै ४ जब कि बहुत से मनुष्य नाना प्रकारके फलयुक्त धर्मोंको करते अनेक प्रकारके कर्मों में प्रवृत्त और बहुत रीतिकी नरक देनेवाली निष्ठाका निश्चयरखने वालेहैं ५ और पुरुष के साथमें स्त्री केवल सन्तानके ही निमित्तहै तो इस दूसरे पक्षको भी दूषित करतेहैं जब धर्म का बर्णन करने वालानिश्चय करताहै कि स्त्रियांमिथ्याहैं अर्थात् बिनापतिकेभीकुंड-कगोलक आदिपुत्रोंकी उत्पत्ति देखनेमें आतीहै हेतात भीष्मजीजब स्त्रियां मिथ्याहुई तबसहधर्मताकहांसेहोसक्तीहै६ स्त्रियांमिथ्याहैंयह

वेदोंमेंभी वर्णनकियाहै इसहेतुसे यहव्यवहार और यज्ञादिक धर्मक्रिया विधि गौणधर्म कहाजाता है७हे सदैव विचारकरनेवाले मुझको यहधर्म कठिनतासे समझनेके योग्यविदित होताहै हेपिता- मह यहसब जैसे सन्देहसे रहित और वेदके अनुसार जैसा है और जिसरीतिसे जारीहुआहै उसको आप मुझसे ब्यौरेसमेत वर्णन कीजिये ८।९ भीष्मजीबोले हेभरतवंशी इसस्थानपर मैं एकप्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें दिशाओंका और अष्टावक्रऋषि का संबादहै १० पूर्व्व समयमें बिवाहकी इच्छाकरके महातपस्वीअष्टा- बक्रने महात्मा वदान्य ऋषिकी कन्याको मांगा ११ वह सुप्रभा नाम कन्या सुन्दरतामें अद्वितीय गुण प्रभाव शील और चरित्रों से शोभायमान थी १२ इसीसे उस सुन्दर नेत्रवालीने देखतेही उस ऋषिको ऐसा मोहित करलिया जैसेकि वसन्त ऋतुमें पुष्पोंसे युक्त अद्भुत बनकी पंक्तियां चित्तको लुभातीहैं १३ तब ऋषिने अष्टावक्र से कहा किमेरीपुत्री तुम्हारे देनेके योग्यहै इसहेतुसे प्रथम यह बात आपकरें कि उत्तर दिशाकोजायं इसके पीछे आपको कुछ दिखाई देगा१४अष्टाबक्रने कहा वहांमें जाकर क्याबात देखूंगाइसको आप मुझसे कहिये मैं वैसाही करूंगा जैसा कि आप मुझसे कहेंगे १५ वदान्यने कहा कि हिमालय पर्व्वत और कुबेरजीके स्थानको भी उल्लंघन करके सिद्ध चारणोंसे सेवित प्रसन्नचित्त नानाप्रकार के मुखरखनेवाले पार्षद और दिव्यकेसर चन्दनसे चर्चित शरीर नृत्य कर्त्ता नानाप्रकारके पिशाचोंसे संयुक्त रुद्रके भवनको देखकर आगे जावो १६।१७ वहां हाथकी तालीके साथ तालनामबाजे औरसम- यके अनुसार स्वरताल समेत उत्तम नृत्यकरनेवाले पार्षदोंसे रुद्रजी सेवितहैं १८ वह स्थान पर्व्वतभरमें अत्यन्तउत्तम और चित्तरोचक है वहांवह पार्षद और देवता सदैव वर्त्तमान रहतेहैं वहांहीं देवी पार्वतीजीने शंकरजीकी प्राप्तिके निमित्त महाकठिन तपस्या की किया इसी कारणसे वहस्थान देवता और उमादेवीको अत्यन्त प्रियहै१९।२० वहांपर्व्वतके पूर्व और देवताके उत्तरकी ओर काल

रात्रिपृथ्वी और स्वर्गलोक सम्बन्धीजोबस्तुहैं २१ वहसब अपना २ शरीर धारण कियेहुये देवताकी उपासना करती हैं उस भवनको उल्लंघनकरके तुमको जानायोग्यहै २२ उसके आगे नीलबनके मुख्यस्थानको देखियेगा वहस्थान मेघके स्वरूप चित्तरोचक और क्रीड़ाके योग्यहै वहां आपएकस्त्रीको देखेंगे२३ वहस्त्री बड़ीवृद्धातपस्विनी महाभागा और दीक्षासे अनुष्ठान करनेवाली है उसको तुम बड़ेयत्न पूर्व्वकदेखो और पूजनकरके जब लौटआवोगे तबइस कन्यासे बिवाह करोगे जो इसप्रणको पूराकरो तो वहां जावो २४।२५ अष्टावक्र बोलेकि मैं ऐसाहीकरूंगा हे साधु मैं अवश्य वहांजाऊंगा परन्तु आप अपने बचनमें सच्चे बने रहिये २६ भीष्मजी बोले कि इसके अनन्तर वहअष्टाबक्रजी उस पूर्व्वोक्त गुणबिशिष्ट पर्व्वत परगये२७ वहांपहुंचकर वहधर्मिष्टऋषि धर्मसे शोभित होकरबाहुदानाम नदीपरगये २८ उसनदीके निर्मलजलमें स्नान तर्पणादिक कर्मोंकोकरके निर्मल कुशशय्यापर सुखपूर्व्वक बिराजमानहुये २६ फिररात्रि व्यतीत होनेपर प्रातःकालके समय स्नानकरके उस ऋषिनेअग्निको प्रकटकिया और बड़ीश्रद्धापूर्व्वक पूजनस्तुतिकेद्वारा उसकीस्तुति करके३० रुद्र और रुद्राणीको हृदयमेंध्यानकरकेबिश्राम लेकर वहांसे उठकर कैलासकी ओरको चले ३१ वहां उसने महात्माकुबेरजी के सुन्दर स्वर्णमयी द्वारको और मन्दाकिनी नाम कमलनीको देखा ३२ इसके पीछे कमलनीकी रक्षा करनेवाले वह सब राक्षस जिनमें मुख्य नभूरिथा सबके सब इन भगवान् ऋषिके अभ्युत्थानको उठे ३३ तब इसने उन भयानक रूपवाले राक्षसोंको आशीर्वाददिया और कहा कि शीघ्रही मेरेसमाचार कुबेरजीसेकहो ३४ तब उन राक्षसोंने ऋषिसे कहा कि यह राजाकुबेरजी आपही आपके पास आतेहैं कुबेरजी आपकोजानतेहैं और यहां आपकेआनेका प्रयोजन भी कुबेरजीजानतेहैं हे ऋषि तुम इस महाभाग तेजसे प्रकाशमान देवताको देखो ३५।३६ फिरकुबेरजी इसनिर्दोष अष्टावक्र ऋषिके पास आकर रीतिके अनुसार इनकी कुशलक्षेम पूछकरबोले

कि आप आनन्दसे आये मुझसे क्या चाहतेहो हेब्राह्मण जो आप मुझसे कहोगे सो सब मैं करूंगा ३७।३८ हे ब्राह्मण तुम इच्छाके अनुसार मेरे स्थानमें प्रवेशकरो आप अपने मनोरथ समेत प्रतिष्ठा पूर्व्वक यहां से जावोगे ३९ फिर कुवेरजी उस उत्तम ब्राह्मण को साथ लेकर अपने स्थानमें गये वहांजाके अपना आसनपाद्य और अर्घ्य दान उसकोदिया ४० फिर कुबेरजीके आज्ञावर्त्ती यक्षगन्धर्व किन्नर जिनमें मुख्य मणिभद्रथा सब आकर उन दोनों के समीप बैठगये ४१ इसके पीछे उन बैठेहुओंके मध्यमें कुवेरजीने यह बचन कहा कि अप्सराओं के समूह जो आपकी इच्छापावें तो नृत्यकरें ४२ क्योंकि हमको आपका वड़ा शिष्टाचार और सेवा करना उचित है मुनिने बड़ी कोमलतासे कहा कि अच्छा नृत्यहोय ४३ फिर उर्वरा,मिश्रकेशी,रंभा, उर्वशी, अलम्बुषा, घृताची,मित्रा, चित्राङ्गदा,रुचि ४४ मनोहरा,सुकेशी,सुमुखी,हासिनी, प्रभा, विद्युता प्रशमी,दांता,बिद्योता,रति यह सब और इनके बिशेष अन्य उत्तम२ अप्सरा नृत्य करने लगीं ४५ और गन्धर्वोंने नानाप्रकार के बाजों को वजाया ४६ फिर उस गांधर्व बिद्याके जारी होनेपर वह ऋषि बैठगये और ऐसे महातेजस्वी यह अष्टावक्र ऋषि वहां एकदिव्यबर्ष पर्य्यन्त नृत्य देखतेरहे ४७ फिर राजाकुवेरजीने भगवान् ऋषिसे कहा कि हे ब्राह्मण यहां तुमको तमाशा देखते हुये एक दिव्यबर्षसे भी अधिक व्यतीत होगया ४८ हे ब्राह्मणयह गान्धर्वी विद्या बड़ी चित्तरोचकहै हे वेदपाठी आपकहैं तो आपकी इच्छानुसार होय या जैसाआपकहैं वहहोय तुम अतिथिहो इससे हमको पूजन के योग्यहो यह आपका घरहै आप अपनी इच्छाके समान जो चाहोसो आज्ञा करो हम आपकी आज्ञाकोकरेंगे ४९।५० इसके अनन्तर बहुत प्रसन्नहोकर ऋषिने कुवेरजीको उत्तर दिया कि हे धनके स्वामीआपने मेरा न्यायके अनुसार पूजन सत्कार कियाहै अब मैं जाऊंगा आशय यह है कि जो पुरुष जीवोंकी उत्पत्ति प्रलय जन्म मोक्ष विद्या अविद्याको जानताहै उसको भगवान् कहना योग्यहै दिव्य

भोगोंसे अजेय सर्वज्ञ होकर भी वदान्यऋषिकी कन्याके लिये दिशाके अन्ततकगया इससे यह पिशाचकाम बड़ाप्रबलहै ५१ हेधन के स्वामी मैं वहुत प्रसन्नहूं औरआप सब वातोंकेयोग्यहैं आपकी कृपा और महात्मामहर्षिकी आज्ञासे अबआगे जाऊंगा तुम्हारे धनकी वृद्धिहोय इसकेपीछे वह ऋषि उत्तर की ओरकोचले ५२।५३ औरकैलास मन्दरऔरहिमालय पर्व्वतोंमें होतेहुयेबड़े२पर्वतोंको उल्लंघन करके किरात रूपधारीशिवजी केउत्तमस्थानको वड़ी सावधानीसेशिरकेद्वारा दण्डवत्करके परिक्रमाकरीऔर वहांसे पृथ्वीसे उड़करआकाशमार्गसेचलनेवाले होकर शरीरसेपवित्रहुये ५४।५५ अव यहांसे आगे सूक्ष्म पृथ्वी पर्व्वतादि का वर्णनहै प्रीतिमें भरे हुये वह ऋषितीनों पर्व्वतों की परिक्रमा करके समधरातलपृथ्वी पर उत्तरकी ओरको चले ५६ फिर क्रीड़ायोग्य सबऋतुओं के फल पुष्पों समेत पक्षियोंसे युक्त दूसरे बनके स्थानको देखा ५७ वहां अच्छे २ स्थानोंको देखते हुये ऋषिने दिव्य आश्रमपर स्थान को देखा ५८ वहस्थान नानाप्रकारके रत्नोंसे जटित स्वर्णमयी पर्वतों से व्याप्त मणियों के निर्मित तड़ागों से शोभितथा इसी प्रकार अन्य वहुतसे उत्तम २ स्थानोंको देखतेहुये उसपवित्र अन्तःकरण वालेमुनिका चित्तअत्यन्त प्रसन्नहुआ ५९।६० वहांउस ऋषिनेस्वर्णमयी अपूर्व्व स्थान को देखा जो नानाप्रकार के दिव्य रत्नों से खचित कुवेरजीके भी स्थानों से उत्तमथा ६१ जहांअनेक मणियोंके वड़े २ पर्व्वत सुन्दर रत्नमयी बिमानोंसे शोभितथे ६२ और मन्दार के पुष्पोंसे सुगन्धित मन्दाकिनी नदीकोदेखा जिसपर अपनेतेजों से प्रकाशमान अनेक मुनिलोग हीरोंसे जटित पृथ्वीपर बिराजमान थे ६३ उसस्थान का द्वारविचित्र मणियोंका मुक्ताजालसे आच्छादितथा ६४ उस स्थानकोभी ऋषियों से व्याप्तदेखा वहस्थान भी चित्तका चुरानेवाला और क्रीड़ाके योग्यथा ६५ फिरऋषिने चिन्ता करी कि मैं कहां निवास करूंयह विचारकर द्वारकी ओरगये वहां जाकरठहरकर यहकहने लगेकि जो यहांका स्वामीहै वहमुझआये

हुये अतिथिको जाने ६६। ६७ इसके पीछेचारोंओरसे महाविभव वाली अत्यन्त स्वरूपवान् सात कन्या उसस्थान से निकलीं वह ऐसी चित्तकी चुरानेवाली कन्याथीं कि जिस २ को मुनिने देखा उसीने इनका चित्त वशीभूत करलिया यहांतक कि अपने मोहित चित्तकेरोकनेको मुनिसमर्थ नहींहुये६८।६९इसकेपीछेउसबुद्धिमान् ब्राह्मण में धैर्य्यता उत्पन्नहुई और उन स्त्रियोंने इनसे कहा हेभग-वन् आप स्थानमें चलिये ७० फिर उसस्थान के देखने के अभि-लाषी ऋषि उसमें गये ७१ वहां जाकर एकबड़ी वृद्धास्त्रीको देखा वह अनेक उत्तम भूषण और वस्त्रोंसेअलंकृतएक शय्यापर बिराज-मानथी ७२ उसनेऋषिसेकहा कि कल्याणहो ऋषिनेउसकोदण्ड-वत्करी तब उसने उठकर कहा हे ब्राह्मण ठहरिये बैठिये ७३ अष्टावक्र बोलेकि हे स्त्रियो तुमअपने २ स्थानोंकोजाओ केवल यही अकेली इस स्थान में नियतरहै जोकि बड़ी ज्ञानवान् और चित्तको जीतनेवालीहै७४फिरवहसबकन्याऋषिकोपरिक्रमाकरकेउसस्थान सेबाहरनिकलीं और वहीअकेली वृद्धानियतरही ७५ तबप्रकाशित शय्यापरबैठेहुयेऋषिनेउसस्त्रीसे कहा हेकल्याणिनि तुझकोभी शयन करना चाहिये रात्रिबहुत व्यतीत होगई ७६ फिर वहस्त्री उन के कहनेसे दूसरी उत्तम रत्नजटित शय्यापरजासोई ७७ इसकेपीछे वहशरीरसे कांपतीहुई स्त्रीशीतकाहेतु करकेमहर्षिकी शय्यापरचढ़ी ७८ तबऋषिने उस आईहुई स्त्रीसे कहा कि आनन्द पूर्व्वक आई हे नरोत्तम तबतो वहस्त्री बड़ीप्रीतिसे अपनी दोनोंभुजाओंसे ऋषि से मिली ७९ तबउसने ऋषिको रूपान्तर दशासे रहित काष्ठपा-षाण के समान देखकर महादुःखीहोकर ऋषिसे कहा ८० कि हे ब्राह्मणस्त्रियोंका स्वभावपुरुषकी इच्छासे अन्यहैऔरपुरुषकोपाकर स्त्रियोंका धैर्य्य स्त्रियोंके स्वाधीन नहीं है मैं कामसे मोहित होकर तुमको चाहतीहूं आपभी मुझको चाहो ८१ और प्रसन्न होकर मेरेसाथ संगकरो हेब्राह्मण मुझको अंगसे लिपटालो मैं तेरेकारण कामसे अत्यन्त पीड़ितहूं ८२ हेधर्म्मात्मा यहतेरे तपकाफल पूजा

जाताहै क्योंकि मैंने देखतेही तुम्हारी इच्छाकरीहै मेरी इच्छाको पूर्णकरो ८३ यहमेरा संपूर्ण धन यश और जो २ पदार्थ देखतेहो उसके और मेरे शरीरके तुमनिस्संदेह स्वामी होजावोगे ८४ आप के सब मनोरथोंको मैं पूराकरूंगी और सब अभीष्ट फलके देनेवाले क्रीड़ाके वनमें तुममेरे साथ बिहारकरो ८५ हेब्रह्मन् मैं आपकी आज्ञाकारी रहूंगी और जोतुम मुझसे प्रीतिकरोगे तो हम पृथ्वी और स्वर्गकी सब प्रयोजनकी बस्तुओंको भोगेंगे ८६ स्त्रीकोजैसा कि पुरुषका संगप्याराहै इससे बढ़कर त्रिलोकीमेंभी कोई सुखनहीं वर्त्तमानहै इससे हमसे प्रीतिकरना आपको उचितहै ८७ कामदेव से व्याकुल स्त्रियां अपनी इच्छाके समान काम करतीहैं और वह काम पीड़ित होकर पुरुषकेपास जानेकेलिये मार्गमें अग्निके समान जलतीहुई पृथ्वीसेभीनहीं डरतीहैं अर्थात् उसपृथ्वीसेभी नहींजल-तीहैं ८८ अष्टावक्र बोले हे कल्याणिनि मैं किसी दशामेंभी अन्य कीस्त्रीसे संगनहीं करसक्ता परपुरुष की स्त्रीसे संगकरना धर्मशास्त्र में महादोष कहाहै अत्यन्त दूषित कियाहै ८९ हे भाग्यवान् मैं विवाहका इच्छावानहूं मैं सत्य २ शपथ करताहूं कि मैं विषयों में तो प्रवृत्त नहींहूं परन्तुधर्मसे सन्तानकी इच्छा करताहूं क्योंकि सन्तान केवल धर्मकेही निमित्तहै निस्सन्देह पुत्रोंकेही द्वारामैंउत्तम लोकोंको जाया चाहताहूं हेकल्याणिनि तुम धर्मको जानकर इस कर्मसेबचो ९०।९१ स्त्रीबोली हे ब्रह्मन् स्त्रियोंको अग्निवायु वरुण आदिसब देवता ऐसेप्यारे नहींहैं जैसा कि कामदेव प्याराहै क्यों कि स्त्रियोंको पुरुषके संगकाही जन्मसे अभ्यास होताहै हजारों लाखोंस्त्रियोंमेंकोई पतिव्रताहोतीहै९२।९३ यहस्त्रियांन पापकोजान-तीहैं न कुलको न माता पिताभाई बेटे देवर और पतिको जानती हैं ९४ पुरुष संगकी चाहनेवाली स्त्रियां अपने कुलका ऐसा नाश करतीहैं जैसे कि उत्तमनदियां किनारोंको बिध्वंसकरतीहैं ९५ भीष्म जी बोलेकि इसके अनन्तर स्त्रीके दोषोंको ध्यानकरते एकाग्र चित्त ऋषिने उसस्त्रीसे कहा मौनहोकर चुपहोजाओ प्रीतिसे इच्छा होती

है अर्थात् मैं प्रीति से रहितहूं अबतुम कहो कि मैं क्या करने के योग्यहूं ९६ तबउस स्त्रीने उत्तरदिया हे भगवन् देशकालके अनुसार तुमप्रीतिके सुखको देखोगे हेमहाभाग जबतक तुम्हारा मनोरथ सिद्धहोय तबतक यहां आप ठहरिये आपकी इच्छा पूर्णहोगी तब उस ब्रह्मर्षिने उसको उत्तर दिया कि मैं निस्सन्देह जब तक आपका उत्साहहै तबतक यहांनिवासकरूंगा ९७।९८ फिर ऋषिने उसस्त्रीको वृद्धावस्थाकी दशासे महादुःखीदेखकर बड़े चिन्तायुक्त होकर खेदको पाया ९९ और उसस्त्री के जिस जिस अंगको देखा उन उन अंगोंका प्रीतिसे रहित होकर आलिंगन नहींकिया १०० और बिचारकियाकि यह इसघरकी देवताहै या किसीके शापसेरूपान्तर दशामें प्राप्तहै मायामें बशीभूतलोग इसके भेदके जाननेको समर्थनहींहै १०१ महाव्याकुल चित्त चिन्तासे दुःखित उसकेभेदके जाननेके इच्छावान् ऋषिका वहदोषदिवस समाप्तहुआ १०२ फिर उसस्त्रीनेकहा हेभगवन् सायंकालके लालबादलोंसे रक्तवर्ण सूर्य्य के रूपको देखो और आपके निमित्त कौन वस्तुलावें १०३ तब ऋषिने उस स्त्रीसे कहा कि स्नानके निमित्त जलयहांलाओमैंस्नान करकेवाणीकोजीत जितेन्द्री होकर संध्योपासन करूंगा १०४॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेअष्टावक्रदिक्संवादेएकोनविंशोऽध्यायः १९

बीसवांअध्याय॥

भीष्मजी बोले फिर उस स्त्रीने कहा बहुत अच्छा ऐसाही होगा और वहां से उठकरदिव्यतेल को सन्मुख रखकर स्नानके वस्त्रोंको लेआई १ फिर उस महात्मा मुनिकी आज्ञा वर्ती उस स्त्रीने उनके सब अंगोंको तेलसे मर्दन किया २ और बड़ी कोमल वाणीसे कहे हुये ऋषि स्नान शालामें गये वहां से अपूर्वनवीन उत्तम आसनके पास गये ३ जब ऋषि उस उत्तम आसन पर बैठगये तब उससुखदायी हाथी वाली स्त्रीने बड़ी कोमलता से ऋषिको स्नानकरवाया ४

और बुद्धिके अनुसार उनकी दिव्य सेवाकरी ५ तबउस महाव्रतवाले ऋषिने उस महा सुखदायी उष्णजल के स्नान से और स्त्रीके सुखदायी हाथसे व्यतीत रात्रिको नहीं जाना फिर अत्यन्त आश्चर्यित मुनिने वहां से उठकर पूर्वदिशा से आकाश में उदय हुये सूर्य्यको देखा विचार किया कि यह क्या बातहै यथार्थमें अज्ञानसा विदित होताहै ६।७ फिर सूर्य्यकी उपासनाकरके उससेकहा अवक्या करूं तब उस स्त्री ने अमृतके स्वादु युक्त अनेक भोजन की वस्तुलाकर ऋषि के आगे धरीं ८ उसने उन भोजनकी वस्तुओंके स्वादुसे तृप्ति नहीं मानी इसके पीछे वह शेष दिन भी समाप्त हुआ और संध्या वर्त्तमान हुई ९ तब उसस्त्रीनेऋषिसे कहा कि आप सोजाइये फिर वह स्त्री और मुनि अपनी अपनी दिव्य शय्याओं पर पृथक् २ सोगये और उसी पूर्व रीतिसे वह स्त्री अर्द्धरात्रि के समय उनकी शय्या पर आई १०।११ अष्टावक्रने कहा हेकल्याणिनि मेरा चित्त दूसरे कीस्त्री पर आसक्तनहीं होताहै तुमउठो तुम्हारा भलाहो तुम आपभी इस निन्दित कर्मकोत्यागो भीष्मजीबोले कि इस रीतिसे उसवेदपाठीसे लौटाईहुई उसस्त्रीने ऋषिसे कहा कि मैं आप स्वतन्त्रहूं अन्य मनुष्यको मोहितकरनेका मुझको अपराधनहीं है और दूसरे की स्त्री से संग करनेमें आपकोभी अपराधनहींहै १२ अष्टावक्रबोले कि स्त्रियों को स्वतन्त्रतानहींहै स्त्रियां सदैव दूसरेके स्वाधीन हैं ब्रह्माजी का यह वचन है कि (नस्त्रीस्वातन्त्र्यमर्हति) अर्थात् स्त्री स्वतन्त्रता के योग्यनहीं है १३ स्त्रीने कहा हे वेदपाठी जो तुम मेरी भक्ती को भी देखकर मुझको प्रसन्ननहींकरते अर्थात् मेरे इतनेस्नेह करने पर भी जो आप मैथुनको त्याग करतेहो तो आप अधर्मके भागी होगे १४ अष्टावक्रजीबोले कि काम क्रोध आदि दोष उसी पुरुषको स्वाधीन करतेहैं जोकिअपनी इच्छाकेअनुसार उसकर्मको करताहै हेकल्याणिनिमैंसदैव अपनेधैर्यमेंनिश्चलहूंतुमअपने शयनस्थानकोजाओ १५ स्त्री बोली हे निष्पाप वेद पाठी मैं शिरसे तुमको प्रणाम करती हूं आप कृपा करने के योग्यहैं मुझ भूमिमें गिरी हुई पर आप कृपा

करें १६ हे ब्राह्मण जो तुम अन्यकी स्त्रियों में दोषको देखतेहो सो मैं अपनीशपथखातीहूं आपमेरे हाथको पकड़िये १७ आपकोकिसी प्रकारसे दोषनहीं होगा मैं यहसत्य२ कहतीहूं आपमुझको स्वतन्त्र ही जानो और मेरेविषयमें जो आपको पाणिग्रहणादि कर्मसंस्कार करनाहो उसको आपकरिये१८मैंआपमें चित्तकीलगानेवालीहूंऔर सत्य २ स्वतन्त्र हूं इस से आपमुझे ग्रहण कीजिये अष्टावक्र बोले हे कल्याणिनि तुम किस रीति से स्वतन्त्र हो इसका कारण वर्णन करो तीनोंलोक में ऐसीकोई स्त्री नहींहै जो स्वतन्त्र होने के योग्यहो १९ बाल्यावस्था में पितारक्षा करताहै तरुणता में पति रक्षक होताहै और वृद्धावस्था में पुत्र रक्षा करताहै इन कारणों से स्त्री कभी स्वतन्त्र नहीं होसकी २० स्त्रीने कहा हेवेदपाठी बाल्यावस्थासे मेरा ब्रह्मचर्य्य है मैं निस्सन्देह अभी कन्याहीहूं आप मेरी श्रद्धाको नष्ट न करियेशीघ्रही मुझको अपनीस्त्रीबनाइये २१ अष्टावक्र बोले कि जैसे कामसे मैं व्याकुलहूं उसी प्रकार तूभीहै अर्थात् जो दशा तेरीहै वहीदशा मेरी है क्या यह उसी ऋषिकी ओर सेतो परीक्षा नहीं होतीहै कि साधुहै वा असाधुहै सत्यहै विघ्न क्यों न होय अर्थात् अवश्य होना चाहिये २२ यहबड़ा आश्चर्य्यहै कि यह वृद्धास्त्री दिव्यभूषणोंसे अलंकृत कन्या रूपहोकर मेरेसन्मुख आनकर नियत हुईहै २३ परन्तु इसकारूप अत्यन्त सुन्दरहै वहकिस प्रकार से वृद्धावस्था से अब कन्या के रूप में होगईहै इस स्थान पर इसका त्याग उचितहै वा अंगीकार करना योग्यहै २४ जबकि मुझ में धैर्य्यता प्राप्त है तो इसको कभी अंगीकार नहीं करूंगा मैं धर्म का उल्लंघन करना नहीं चाहताहूं किंतु सत्यतासे स्त्री प्राप्त कियाचाहताहूं २५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेअष्टावक्रादिकसंवादेविंशोऽध्यायः २०

इक्कीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोलेकि अष्टावक्रने पूछाकि किसप्रकारसेस्वरूपान्तर

करना योग्यहै और मुझको भी मिथ्या कहना उचित नहींहै प्रतिष्ठा पूर्वक ब्राह्मणसे वर्णनकरो १।२ स्त्री बोली हेश्रेष्ठ ब्राह्मण पृथ्वी और स्वर्गमें स्त्रीपुरुषकी यहइच्छा परस्परहै अर्थात् मोक्षकेसिवाय दूसरा इच्छासे रहित कोईस्थान नहींहै तुम सत्य पराक्रमी होकर इसको सुनो ३ हे निष्पाप मैंने तेरे चित्तकी दृढ़ता देखने के लिये यह परीक्षा करीहै हे सत्य पराक्रमी अमर्य्यादता न होने से तैंने लोगोंकोविजयकिया ४ तुममुझको उत्तरदिशारूप भवानीदेवीजानो तुमने स्त्रियोंकी चेष्टादेखी अबकाम भोग वृद्धा स्त्रियोंकोभी कष्टदेता है अबतेरा पितामह और इन्द्र प्रसन्न है और इन्द्र के आज्ञावर्त्ती देवताभी प्रसन्नहैं सो हेब्रह्मन् आप जिसकामके लिये यहांआये हो ५।६ और उसकन्याके पिताने तुमकोउपदेशकरनेकेनिमित्तभेजा है हे ब्राह्मणोत्तम वहसब मैंनेकहा ७ हे वेदपाठीतुम आनन्दसेघर को जावोगे औरमार्गके परिश्रमसे रहितहोकर उसकन्याको पावोगे और वहकन्या पुत्रवतीहोगी तुमनेजो स्त्रीपुरुष के परस्पर स्नेह के विषयमेंप्रश्नकियाथा इसीसेमैंनेउत्तम वर्णनकियावहस्त्रीपुरुषकोपर-स्परकी प्रीतिलोकोंमें उल्लंघन नहींहोसक्ती अर्थात् सबउसकेबंधन मेंहैं औरहोसक्ते हैं ८।९ तुमशुभ कर्मकरतेहुयेजावो औरइसकेसिवाय जो और कुछसुननेकी इच्छाहोय सोभीकहो हेब्रह्मऋषि अष्टावक्र मैंउसकासत्य २ उत्तरदूंगी १० हेश्रेष्ठतेरेही निमित्तउस ऋषिनेमुझ को प्रसन्नकियाहै उसीकी प्रतिष्ठाके निमित्त मैंने आपसे वार्त्तालाप करी ११ भीष्मजीबोले कि उसके उसबचन को सुनकर वहवेदपाठी ऋषि हाथजोड़े खड़ेहोकर उसदिशारूप देवीसे आज्ञा लेकर अपने स्थानको आये १२ औरस्थानमें आकर विश्राम किया हे युधिष्ठिर इसके अनन्तर वह ऋषिअपने सुजन इष्टमित्रों से पूंछकर न्यायके अनुसार उसऋषिकेपासगये १३ उस ऋषिने इनसे कहाकि आपने क्या चमत्कार देखा उसको मेरे आगे वर्णनकरो तब अष्टावक्र बोले कि मैं आपसे आज्ञापाकर प्रथम गन्धमादन पर्व्वतको गया उसकी उत्तरदिशामें मैंनेबड़ा देवतादेखा १४।१५ मुझकोउसने आज्ञाकरी

और आपकाभी प्रसंग उसके मुखसे मैंने सुना इसके पीछे हे प्रभु अपने घरकोआया १६ तबउस ब्राह्मणाने कहाकि आप उत्तम सुपात्र हैं मेरीपुत्रीको योग नक्षत्र मुहूर्त्त विचारकरआपग्रहणकीजिये १७ भीष्मजीबोले कि तबबड़े धर्मज्ञ अष्टावक्रजी उसके वचन को अंगीकारकरके शुभयोग नक्षत्रादिमें उसकीकन्याको ग्रहणकरके अत्यन्त प्रसन्न हुये १८ और उत्तम कन्याको अपनी भार्य्याकरके तपसेनिवृत्तहो अपने आश्रममें सुखपूर्व्वक निवास करनेलगे १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेअष्टावक्रादिक्संवादेएकविंशतितमो ऽध्यायः २१ ॥

बाईसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोलेकि हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ सनातन वेदपाठियोंने किस को पात्र वर्णान कियाहै अर्थात् ब्रह्मज्ञानीको वा ब्रह्मचारीको वा संन्यासीको अथवा दण्डादिचिह्नोंसे रहित केवल ब्राह्मणको पात्र वर्णानकियाहै १ भीष्मजीबोले हे महाराज जोकि अपने कालक्षेपकेलिये अपने योग्य जीविका में प्रवृत्त है अर्थात् अपने धर्म का सेवन करनेवालाहै वहचाहो ब्रह्मचारी संन्यासी अथवा गृहस्थी होय वहीदान देनेकेयोग्य वर्णानकियाहै क्योंकि यहतीनोंतपस्वीहैं अबदोश्लोकोंमें श्रद्धाको दाताका गुणावर्णान करते हैं हे पितामह जो अपवित्र मनुष्य श्रद्धापूर्व्वक हव्य या कव्य अथवा ब्राह्मणको दानदेताहै उसदानीको अपवित्रतासे कौन २ दोष उत्पन्नहोतेहैं २ भीष्मजीबोले हेतात जोमनुष्य शान्त चित्त नहींहै ३ वहभी श्रद्धासे पवित्र होनेवाला निस्संदेह सर्वत्र पवित्र होसक्ताहै हेबड़ेतेजस्वी तुम इसमें क्या मानतेहो ४ युधिष्ठिरबोले कि दैवकर्मोंमें मनुष्यको ब्राह्मणकी परीक्षा न करनी चाहिये परन्तु ज्ञानी लोगोंने पित्रोंके कव्य अर्थात् श्राद्धमें भोजन करानेकेलिये ब्राह्मणकी परीक्षा करनी

योग्य कहीहै अर्थात् जो श्रद्धासेही पवित्रता होजाती तो कव्यदान मेंभी ब्राह्मणकी परीक्षानहोती ५ भीष्मजी बोले कि ब्राह्मणहव्यको नहीं साधन करताहै वह दैवसेही सिद्धहोताहै देवताओंकी कृपासे ही ब्राह्मण यजमानोंसे देवताओंको पुजवातेहैं ६ हे भरतर्षभ पूर्व समयमें बुद्धिमान् मार्कण्डेयजीने पिता पितामह आदिके पूजन में सदैव ब्रह्मवादियोंकोही ब्राह्मण वर्णनकियाहै ७ युधिष्ठिरबोले कि जो पुरुष अपूर्व, वेदवान्, नातेदार होय वा तपस्वी होकर यज्ञका अभ्यासी होय वह किस कारण से पात्रहोता है ८ भीष्मजी बोले कुलीन, यज्ञाभ्यासी, वेदवान्, दयावान्, लज्जावान्, सत्यवक्ता, सत्यप्रतिज्ञमनुष्यपात्रहोताहै औरजिनकोप्रथमवर्णनकियाहै वहभीइनगुणों से युक्त होकर पात्र होतेहैं ९ हे युधिष्ठिर इसस्थानमें एकप्रसंगकहताहूं जोपृथ्वी, काश्यपऋषि, अग्निदेवता औरमार्कंडेयऋषि इनचारों तपस्वियोंका अंगीकृतहै १० पृथ्वीबोलीकिजैसे समुद्रमें डाला हुआ मृत्तिका का पिंड शीघ्र नष्ट होजाताहै उसी प्रकार सब पापभी उस पुरुषमें अन्तर्गतहोकर नष्ट होजाते हैं जोकिपठन पाठन औरयज्ञ कराना इन तीनोंजीविकाओंको करताहै अर्थात् अपने स्वधर्मनिष्ठ होनेसे उन तीनोंकर्मों की योग्यता रखताहै इसीसे कुलीनताकेगुण को वर्णनकिया ११ काश्यपजी बोले हे राजा छओं अंगोंसमेत सब वेद, सांख्य शास्त्र, पुराण, कुलमें जन्मलेना, यह सबउस ब्राह्मणके गति रूप नहीं होतेहैं जो ब्राह्मण कि शीलसे रहित होताहै १२ अग्नि देवता बोले कि जो पुरुष यज्ञादिक सत्यकर्मों को नहीं करता है अर्थात् दया और कर्मोंके अभ्यास से रहित है वह नष्टता को पाताहै और उसकेसब लोकभी नाशहोजाते हैं १३ मार्कण्डेयजी बोले कि हजारों अश्वमेध को और सत्यवक्तापने को जो तुला पर तौला जायतो सत्यवक्तापने के आधेभाग कीभी बराबर हजारों अश्वमेध नहीं होसक्ते हैं १४ भीष्मजी बोले कि यह चारों महा तेजस्वी ऐसा२ कहकर शीघ्रही चले गये १५ युधिष्ठिर ने प्रश्न किया कि हे पितामह लोक में जो वह ब्रह्मचारी ब्राह्मण हव्यादि

को भोजन करते हैं उन ब्रह्मचारियों के लिये जो दान किया वह दान किस प्रकार शुभ कर्म होगा अर्थात् दान लेने में ब्रह्मचारी का व्रत नष्ट होजाने से हमारा श्राद्धादि कर्म दोषको पाताहै यान-हीं १६ भीष्मजी बोले हे राजेन्द्र जिनको गुरूने ब्रह्मचर्य्य के लिये बारह वर्ष की आज्ञा दीन्हीहै वह वेद पारग ब्राह्मण जो भोजनकरतेहैं उन्हींका व्रतलोप होताहै अन्य ब्रह्मचारी और दान देनेवालों-का नहीं होताहै १७ युधिष्ठिर बोले कि ज्ञानी लोग धर्मको बहुत फल उत्पन्न करने वाला और अनेक द्वार रखने वाला वर्णन करते हैं इसस्थान में कौन से गुण नियम समेत पात्र होने के कारण हैं उनको आप मुझसे वर्णन कीजिये १८ इसका उत्तर भीष्मजी तीन श्लोकों में देते हैं हे राजेन्द्र हिंसा से रहित सत्यता क्रोध हीनता दया चित्तकी शान्तता सरलता यह निश्चय कियेहुये धर्मके चिह्न हैं १९ हे प्रभु जो पुरुष धर्मकी प्रशंसा करते हैं और उस धर्मको नहीं करतेहैं वह इस पृथ्वी पर विचरते हुये धर्म संकरतामें संयुक्त होते हैं २० जो मनुष्य उनको सुवर्ण रत्नगौ और अश्वादिक को देताहै वह नरकमें नियत होकर दशवर्षतक विष्ठाको भोजन करता है २१ जो गौ भैंस आदिकके मांस खानेवाले पुल्कस और चर्मकारादिकहैं और जो ब्राह्मणादि लोग अन्यके किये न किये पापकर्मों को प्रकट करते हैं उनके भी साथ वह विष्ठाको खाताहै २२ हेरा-जेन्द्र इस लोकमें जो अज्ञानी पुरुष वैश्व देव सम्बन्धी और अति-थियों के देनेके योग्य भोजन को वस्तु को ब्रह्मचारी और संन्यासी को नहीं देतेहैं वह अशुभ लोकों को भोगते हैं २३ हे पितामह कौन ब्रह्मचर्य्य उत्तम है कौन धर्म लक्षण श्रेष्ठ है और कौन शौच श्रेष्ठतरहै उन सब को मुझे समझाइये २४ भीष्मजी ने कहा हेतात ब्रह्मचर्य्य से मदिरा और मांस का त्यागना उत्तमहै और विषयोंसे इन्द्रियों को रोकना श्रेष्ठ तरहै वह शौच धर्मका लक्षण है जोमर्य्यादा में वर्त्तमान है २५ युधिष्ठिर ने कहा हे पितामह किस समय धर्मको करे और किस समय अर्थको करे और किस समय सुखो

होना चाहिये इसको मुझसे कहो २६ भीष्मजीने उत्तर दिया कि दिवसके तीन भाग होतेहैं उनमें प्रथम भागमें अर्थका सेवन करे दूसरे में धर्मको फिर कामको सेवन करे परन्तु उसके अधिकतर संगको नहीं सेवन करे २७ सब जीवों से सत्य कहना मृदुस्वभाव प्रिय भाषण कर्त्ताहोकर ब्राह्मणोंकी प्रतिष्ठा करे और गुरुलोगों का अच्छी रीतिसे पूजन करे २८ और राज्य अधिकार में जो मिथ्याकर्महै और राजाओंसे जो आभ्यन्तरीय शत्रुता है और जो गुरू का अप्रिय काम करताहै वह ब्रह्महत्याके समानहै २६ राजाओंके ऊपर शस्त्र न चलावे गौ को न मारे जो मनुष्य इन दोनों पापकर्मों को करताहै वह भ्रूणहत्याके समान है ३० अग्निका त्याग कभी न करे वेदोंका त्याग नहींकरे ब्राह्मणको दक्षिणाआदि न दे वह ब्रह्महत्याके समानहै ३१ युधिष्ठिरने प्रश्न किया कि किस प्रकारके वेद पाठी साधूहैं और किनका देना अत्यन्त सफलहै और किसप्रकार के मनुष्यका अन्न भोगने के योग्यहै हे पितामह इसकोमुझसे समझाकर कहिये ३२ भीष्मजी बोले जो क्रोधसे रहित धर्म्ममें प्रवृत्त सदैव सत्यवक्ता शान्तचित्तता में विख्यातहैं उसप्रकारके वेदपाठी ब्राह्मण साधूहैं उनका देना बड़ा पुण्यहै ३३ जो अहंकारसे रहित क्षमा शील दृढ़ अर्थी और पक्के जितेन्द्रिय हैं और सब जीवोंके शुभचिन्तक और मित्रहैं ऐसे ब्राह्मणोंका दियाहुआ बड़ा फलदायीहोता है ३४ जो लोभसे रहित पवित्रात्मा पंडित लज्जावान् अपने कर्म में सावधान होकर प्रवृत्तहैं उनका दियाहुआ भी महाफलदायी है ३५ जो श्रेष्ठब्राह्मण अंगोंसमेत चारोंवेदोंको पढ़ताहै औरमांसमद्य रहित मर्यादा पालन करताहुआ शौच पूर्वक वेदपढ़ना पढ़ाना यज्ञ करना कराना दान देनेआदिमें प्रवृत्तहै महात्माऋषिलोगों ने उस को दान आदिका पात्र वर्णन कियाहै ३६ जो ब्राह्मण इस प्रकारसे गुणवान् हैं उनको देना महाफलदायक होता है गुणवान् ब्राह्मण को दान करनेवाला पुरुष सहस्रगुणे फलको पाताहै ३७ इसलोक में ज्ञान शास्त्र गुरु पूजन आदिव्रत और शीलसेयुक्त अके-

ला भी ब्राह्मण पुरुषोत्तम और श्रेष्ठ होकर सम्पूर्ण कुलको तारता है ३८ जो गौ घोड़े धन और भोजनकी वस्तु और इसीप्रकार अन्य सब वस्तु ऐसे प्रकारके ब्राह्मणको दानकरता है वह शरीर त्यागनेके पीछे शोचसे रहित होता है ३६ इसलोक में उत्तम एकही ब्राह्मण सम्पूर्ण कुलभरेको तारता है तो पूर्व्व कहेहुये गुणों से संयुक्त ब्राह्मण क्यों नहीं तारेगा हेपुत्र इसहेतुसे पात्रको निश्चय करनायोग्यहै साधुओंके अंगीकृत गुणवान्ब्राह्मण को जान कर बड़े आदर भावसे अभ्युत्थान पूर्व्वक अपने स्थान में लाकर विधिपूर्व्वक पूजन करे ४०।४१॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणि दानधर्मेबहुप्राश्निकेद्वाविंशोऽध्यायः २२॥

तेईसवा अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे पितामह श्राद्ध देवकर्म और पितृकर्मके समय जो २ मुख्यबातें देवर्षियोंने विचार करीहैं उनको आपसे सुनना चाहताहूं १ भीष्मजीबोले कि शौच करनेवाला अपने दृढ़ाचार से युक्त बड़े उपायोंका करनेवाला मनुष्य दिनके पूर्व्व भागमें देवकर्म को करे और दिनके तीसरे भागमें पितृकर्मको करे २ औरमध्याह्न के समय सबको यथायोग्य बड़ी प्रतिष्ठासे अन्न भोजन और दान दे और जो कुसमय में दान होताहै वह राक्षसोंका भाग होताहै ३ जिस वस्तुको उल्लंघन किया वा जिह्वाग्रसे स्वाद लिया वाकलह करके सिद्धकिया और जिसको रजस्वलास्त्रीने देखलिया उसकोभी राक्षसोंकाही भागजानो ४ हे भरतर्षभ जो भोजनबहुतकहनेसुननेसे तैयार हुआ वा ब्रह्मचर्य्यआदि व्रतसेही पुरुषने भोजन कियावकुत्ते का स्पर्श कियाहुआहो उसकोभीराक्षसों का भागजानो और जिस को किसी दुरात्मा पुरुषने भोजन किया है वह भी राक्षसोंका भाग जानो ५ बाल वा किसी प्रकार के कीड़े जिसमें गिरपड़ेहों वा छींकसे दूषित होगयाहो कुत्तों का देखाहुआ जिसपर रुदन किया गयाहो तुच्छ कियागया हो उसको भी राक्षसों का भागजानो ६

हेराजा जो अन्न कि विनाआज्ञा का वा शूद्रका भोजनकिया हुआ अथवा शस्त्रधारीवा दुरात्मा मनुष्य से भोजन किया हुआ होय वह राक्षसोंका भागजानो ७ देव कर्म और पितृकर्म में जो दूसरे का उच्छिष्ट भोजनकिया हुआ अथवा देवता अतिथि पितृ और बालक आदिको त्यागकर आपही भोजन कियाहो उसकोभी सदैव राक्षसोंका भागजानो ८ और मन्त्रक्रिया आदिसे रहितजो श्राद्धका भोजनतीनों वर्णवालोंके हाथसे परोसाजाता है उसको राक्षसोंका भागजानो ९ घृतकी आहुतिकियेबिना जोकुछपरोसाजाताहै और जो दुराचारीपुरुषोंसे भोजनकियागया वहभीराक्षसोंका भागहै१० हे भरतर्षभ जो भागराक्षसोंको प्राप्तहोतेहैं वहवर्णन कियेगये इस के पीछे दानपात्रब्राह्मणोंकी परीक्षाकोसुनो ११ जितने ब्राह्मणमहा पातकी होनेकेकारण बिरादरीसे त्यागेहुये निर्बुद्धी और उन्मत्त हैं वहब्राह्मण दैवकर्म या पितृकर्म में निमन्त्रणके योग्य नहींहै १२ जो मनुष्य श्वेतक्षती अर्थात् सफ़ेद कोढ़वाला नपुंसक यक्ष्मरोगी अपस्मारी अर्थात् मृगीरोगवाला औरअन्धाहोय वहभी निमन्त्रण के योग्यनहींहै १३ चिकित्सक देवलक अर्थात् वैद्य और पुजारी मिथ्यानियमी अर्थात् पाखण्डी और जो सोम के बेचने वाले हैं वह निमन्त्रणके योग्यनहींहैं १४ और गानेवाले नाचनेवाले प्लवक अ-र्थात् जासूस वादक अर्थात् बाजाबजानेवाले कथक अर्थात् असभ्य बोलनेवाले और योधको अर्थात् कुश्ती लड़नेवाले ब्राह्मणभी नि-मन्त्रणके योग्यनहींहैं १५ और शूद्रोंको यज्ञ करानेवाले पढ़ानेवाले अथवा उनकेदासहैं वहभी निमन्त्रणके योग्य नहींहैं १६ जो ब्रा-ह्मण मासिकलेकर पढ़ाताहै वा मासिकदेकर पढ़ताहै वहदोनोंभी श्राद्धके भोजन के योग्य नहींहैं इसहेतुसे कि वह दोनों वेदके बेचने और मोललेनेवालेहैं १७ हेराजा जो सब विद्या का जानने वाला ब्राह्मणप्रथमप्रतिष्ठावान् कियागया और फिरशूद्रकी स्त्रीकास्वामी होजायवहभी निमन्त्रणके योग्य नहींहै१८ जो ब्राह्मण श्रौत स्मार्त कर्मोंसेरहितहैं और जो मजूरीलेकर मुर्दोंको लेजातेहैं औरपतितहैं

वहभी निमन्त्रणके अयोग्यहैं १९ जिनकोप्रथम अच्छीरीतिसे नहीं जानाहै और ग्रामीण अर्थात् देहातीहैं औरजो प्रथमबेटीकापुत्र था फिर जिसके नानाने अपनीप्रतिज्ञाके अनुसार उसको अपना पुत्र बनाया वह ब्राह्मणभी श्राद्धमें निमन्त्रणके योग्य नहींहै २० जो ब्राह्मण ब्याजपर करजादेताहै औरज्यो इसेसिवाय खेती करनेवालों को अनाज देताहै और पशुजीवोंके बेचनेकी जीविका करताहै वह भी निमन्त्रणके योग्यनहींहै २१ और हेराजा जितने ब्राह्मणस्त्रीके वशीभूतहैं और वेश्याके पतिहैं और सन्ध्या वन्दनको नहींकरते हैं वहश्राद्धमें भोजनके योग्यनहींहैं २२ हे भरतर्षभ यह श्राद्ध और दैवकर्मके अयोग्य ब्राह्मण वर्णनकिये अबनिषेधित ब्राह्मणोंकोभी निमन्त्रण देनेकी आज्ञासुनो २३ जो खेतीकरनेवाले ब्राह्मणव्रत करनेवाले सावित्री के ज्ञाता क्रियावान् और गुणवान् होयं वह भी निमन्त्रण के योग्य हैं २४ हे तातकुलीन ब्राह्मण यद्यपि युद्ध भूमिमें क्षत्री धर्मका भी रखनेवाला होय वहनिमन्त्रणके योग्यहै परन्तु वैश्य वृत्ति रखनेवाले ब्राह्मण को श्राद्ध में निमन्त्रण नहीं करे २५ हे राजा जो वेदपाठी और अग्निहोत्रीहै वह निमन्त्रण के योग्य है २६ जो ब्राह्मण तीनोंकालमें गायत्री का जप करताहै वाभिक्षावृत्तीवालाहै और क्रियावानहै वह निमन्त्रणके योग्यहै २७ जो ब्राह्मण दिन के पूर्व भागमें धनकी प्राप्ति से धनवान् होता है और शीघ्रही उसके व्यय होजाने से दरिद्री होजाताहै और प्रातः काल ही के समय धनके न मिलनेसे दरिद्री होकर मध्याह्नके समय धनकी प्राप्तीसे धनी होजाताहै और हिंसासे रहित होकर थोड़ा दोषी होताहै अर्थात् निर्द्धन होने से दानी नहीं है वह भी निमन्त्रणके योग्यहै २८ हे राजा युधिष्ठिर जो ब्राह्मण पाखण्डी और पापी नहींहै और तर्कणा रहित अपने मेलके अनुसार घरके निश्चय होनेपर भिक्षावृत्ती करनेवालाहै वह निमन्त्रण के योग्य है २९ व्रत न करनेवाला अर्थात् ब्रह्मचर्य्यसे रहित धूर्त्तरूपपन अर्थात् अपने धर्म कर्मका त्यागनेवाला जीवोंका बेचनेवाला वैश्य

वृत्तीमें नियत जो ब्राह्मणहै और इसके पीछे उसने यज्ञमें सोम को पिया वह भी निमंत्रण के योग्यहै ३० जो ब्राह्मण प्रथम भयकारी कर्मोंसे धनको इकट्ठा करके पीछे से सब देवताआदिका आतिथ्य करने वाला होजाय वह निमन्त्रणके योग्यहै ३१ जो धन कि वेद के वेचने से प्राप्तहोय अथवा स्त्री का इकट्ठाकिया हुआहो अथवा मीठी २ बातोंसे वा मिथ्या शपथखानेसे वा नपुंसक से प्राप्तहुआ होय वह धनपितृ और ब्राह्मणोंके देनेके योग्यनहीं है ३२ जो ब्राह्मण श्राद्धकी समाप्तीमें अस्तुस्वधाआदि वचनों को नहीं कहताहै उसको गौकी मिथ्या शपथखाने का पाप होताहै ३३ हे युधिष्ठिर जब दही घृत अमावास्या मृगादिकामांस औरब्राह्मणभी मिलजाय तभी श्राद्धका समयहै ३४ श्राद्धके समाप्त होनेपर ब्राह्मणके मुखसे स्वधा वचन कहना पित्रोंका महाआनन्ददायक है अर्थात् दाताको कहना चाहिये कि स्वधोच्यताम् और ब्राह्मणोंको अस्तु स्वधा यह वचन कहना चाहिये और क्षत्रीके श्राद्धमें पितरःप्रीयन्ताम् यह वचन कहै अर्थात् पितृतृप्त और प्रसन्न होयं ३५ और वैश्यके श्राद्धसमाप्त होनेपर अक्षय्यवचन कहना योग्यहै अर्थात् श्राद्ध निर्विघ्नहो और शूद्रके श्राद्ध समाप्त होनेपर स्वस्तिवचन कहै अर्थात् कल्याणहो ३६ और ब्राह्मणका प्रणव सहित पुण्याहबाचनकहा जाताहै और यही पुण्याहवाचन प्रणव से रहित क्षत्रीका किया जाताहै अर्थात् यजमान ब्राह्मणों से कहवावे कि यह दिन पुण्य उत्पन्न करनेवाला हो ऐसा यजमानके कहने पर ब्राह्मण लोग प्रणव समेत संस्कृतमेंकहैं कि यह दिन पुण्यकारक हो ३७ वैश्य के पुण्याहवाचन मेंप्रणवके स्थानापन्न देवता प्रीयंतामस्तु इस वचन को कहै अर्थात् देवता प्रसन्नहों और यज्ञादि पुण्यकारी हो कर्मोंके क्रमसे वृद्धिके अनुसार क्रिया को कहताहूं उसकोभी सुनो ३८ हे भरतवंशी युधिष्ठिर ब्राह्मण क्षत्री वैश्य इनतीनों वर्णोंकी जातकर्मादिक क्रियावेदोक्त मन्त्रोंके अनुसार होतीहैं ३६ ब्राह्मण की मेखला मूंजकी होतीहै और क्षत्रीकी मेखला मूर्वा नाम बेलकी

होतीहै और वैश्यकी बिल्वजनाम तृण विशेषकी होती है यहीवेदो क्त धर्महै ४० दाताके और दानलेने वालेके धर्मको कहताहूंइसको चित्तसे श्रवणकरो किसीवस्तुके निमित्त मिथ्याबोलने वाले ब्राह्मण को जितना अधर्म होताहै उससे चौगुना क्षत्रीको और अठगुना वैश्यको होताहै४१जोब्राह्मण प्रथमन्योता देनेवालेकेघरमें जेंवताहै वह उत्तमहै औरजो दूसरे न्योतेदेनेवालेके घरखाता हैवहमध्यमहै ब्राह्मणका प्रथमन्योताहुआब्राह्मणदूसरेस्थानमेंभोजन न करेजोकि दूसरे स्थानपरभोजन करनेसे मध्यम होताहै ऐसीदशामें विनायज्ञ किये जो पशुहिंसा का अधर्म होताहै वह उसको प्राप्तहोताहै ४२ इसी प्रकार क्षत्री वैश्यका न्योता हुआ ब्राह्मण जो दूसरेस्थान में भोजन करे तो मध्यम गिनेजाने के सिवाय निरर्थक पशुहिंसा के आधेपापका भागी होताहै ४३ हे राजा ब्रह्मचर्य्य की समाप्ती होने पर गृहस्थाश्रम में प्रवृत्तहोने के निमित्त जिस ब्राह्मण ने स्नान न कियाहो और वह ब्राह्मण देवता और पितरोंके कार्य्यमें ब्राह्मणोंमें बैठकर अन्नको भोजन करे तो उसका पाप गौकी मिथ्या शपथखा-ने के समान है ४४ औरजो जन्म मरणके अशौच का रखने वाला ब्राह्मण जानबूझकर या लोभसे ब्राह्मणों में बैठकरभोजनकरे उसको भी गौकी मिथ्या शपथ खाने के अधर्मकी समान पापहोता है ४५ और जो ब्राह्मण तीर्थ यात्राके बहानेसे अपनी जीविकाके लिये या कर्मके लिये दूसरेसे धन लेताहै या भिक्षामांगताहै उसकाभी पाप गौकी मिथ्या शपथ खानेके समानहै ४६ हे युधिष्ठिर वेदका व्रत और अनुष्ठान जो ब्राह्मण नहींकरते उनकोमन्त्रोक्त वृद्धिके अनुसार जो श्राद्ध में तीनोंवर्ण भोजन कराते हैं उसका पापभी मिथ्यागौकी शपथ करनेके तुल्यहै ४७ युधिष्ठिर ने प्रश्नकिया हे पितामह जो पितृ संबंधी भोजन दियाजाताहै वह कैसे २ ब्राह्मणोंके देनेसेमहा फलदायक होताहै इसको कृपाकरके कहिये ४८ भीष्मजी बोले कि जिन ब्राह्मणोंकी स्त्री भोजनके पात्र और थाली में उच्छिष्ट परि-शेषकी ऐसी प्रतीक्षा अर्थात् इच्छा करतीहैं जैसे कि खेती के करने

वाले सुन्दर दृष्टिको चाहतेहैं अर्थात् जिनके घरमें उसअन्नके सि
वाय दूसरी कोई भोजनकी वस्तु नहींहै हेयुधिष्ठिर तू ऐसे ब्राह्मणों
कोभोजन करवा ४६ जो ब्राह्मण वेदोक्त कर्मके अनुष्ठान में प्रवृत्त
क्षीण शरीर थोड़ी जीविका रखनेवाले इच्छासे भरेहुये सन्मुखआते
हैं उनकाभी देना बड़ा फलदायकहै ५० और जिन ब्राह्मणोंका वेदोक्त
कर्मका अनुष्ठानही घर वा इसलोकमें दोष दूर करनेकी सामर्थ्य
और परलोक जानेका सहाराहै और केवल बड़ी आवश्यकताही में
इच्छाको करतेहैं उनका दियाहुआ बड़ा फलदायी होताहै ५१ और
जो ब्राह्मण चोरोंके औरशत्रुओंके भयसेपीड़ामान इच्छायुक्त होकर
भोजन करना चाहतेहैं उनके देने में बड़ाफल होताहै ५२ क्षुधा से
पीड़ित ब्रह्मचारी दरिद्रताके कारण पाखण्ड और छलसेरहित ब्राह्म-
णोंके सन्मुखजाके मुझको दो ऐसा कहकर हाथहीमें भोजनको मां-
गतेहैं ऐसे दरिद्रियोंका दियाहुआ महाफल देनेवाला होताहै ५३
देशकी किसी आपत्तिमें जिन ब्राह्मणोंकी स्त्री और धनलुटगया और
वह धनके निमित्त सन्मुख आवें उनका देना बड़े फलका देनेवाला
है ५४ जो ब्राह्मण कि व्रत करनेवाले नियमी औरशास्त्रसे अंगीकृत
हैं और उस व्रतके उद्यापन करनेकी इच्छा करतेहैं उनके निमित्त
देनाभी बड़ाफलकारी होताहै ५५ जिन धर्म्मोंमें पाखण्डी लोगोंकी
मर्य्यादा है उनसे अत्यन्त दूर रहनेवाले निर्बल और निर्द्धनहैं उन
का दियाहुआ भी महाफलदायी है ५६ जिनका सब धन जाता रहा
और निर्दोष होकर दाता लोगोंसे केवल अपने पेटभरने कोचाहते
हैं और स्वादुके निमित्त नहींमांगते उनकाभी दियाहुआ बड़ाफल-
दायी होताहै ५७ जोतपनिष्ठ वा तपस्वी हैं और उनमें जो भिक्षा-
चारी और इच्छायुक्त ५८ होकर जो चाहतेहैं उनकादेना बहुतसेफलों
कादेनेवालाहै हेभरतवंशी दानकी जो बड़ेफलकी देनेवाला विधि है
उसकोतुमनेसुनाअबजिनकर्म्मोंसेस्वर्गऔरनरकोंकाजातेहैं उनकोभी
सुनो ५९ हेयुधिष्ठिरगुरूकेनिमित्त और भयकेदूरकरनेकेलियेजोमि
थ्याबोलताहै इन दोनों कामोंके सिवाय जो मिथ्या भाषणकरतेहैं

वह निस्सन्देह नरकगामी हैं ६० जो मनुष्य दूसरेकी स्त्रीको हर-नेवाले वा दूसरे की स्त्रीसे संगकरने वाले अथवा दूसरी स्त्रीकोउस के यार अर्थात् जारसे मिलाने वाले दूतहैं वह नरकगामी हैं ६१ जो पुरुष दूसरेके धनको हरनेवाले वा दूसरेके धनको नाश करने वाले अथवा दूसरे के दोषों को प्रकट करने वालेहैं वहनरकगामी हैं ६२जो मनुष्य प्याऊ,सभा, धर्मशाला आदि गृहोंके तोड़नेवाले हैं वह नरकगामीहैं ६३ जो पुरुष अनाथ स्त्री वा भयभीत लड़की और तपस्विनी वृद्धास्त्री को ठगते हैं वह नरकगामीहैं जो आदमी दूसरे की आजीविका, गृह, स्त्री और मित्रको उससे पृथक् कर-तेहैं वाआशाकोछेदनकरतेहैंवहनरकगामी हैं ६४।६५ जो पुरुष राज्य के सेवकोंकी निन्दा करनेवाले श्रेष्ठ मर्य्यादाओं के तोड़ने वाले दूसरे की आजीविकासे अपना पोषण करने वाले और दूसरे के मित्रों के उपकार को भुलादेने वालेहैं वह नरकगामी हैं ६६जो पुरुष पाखण्डी सत्पुरुषों के निन्दक और धर्म चिह्नों को दोष ल-गाके उनके ऊपर से चढ़कर गिरने वाले हैं वह नरकगामीहैं ६७ जिनके व्यवहार मनुष्यों से विरुद्धहैं वा नफा और वृद्धियों में भी विरुद्धहैं वह नरकगामीहैं ६८ जो आदमीद्यूतव्यवहारकोकरतेऔर जीवों के मारनेमें प्रवृत्त वा असभ्य हैं वह नरकगामीहैं ६९ दास अथवा इच्छावान् जिनका मासिक नियत हुआ और जिन्होंनसेवा करने में परिश्रम किया और जिसके साथमें यह प्रतिज्ञा हुई कि तुझको यह देंगे उनको जोपुरुष छलोंके द्वारा अपने स्वामी से जुदा करतेहैं वह नरकगामीहैं ७० जोपुरुष स्त्री, अग्नि,पोषण केयोग्य दास इत्यादि और अतिथि को त्याग करके आपही अकेले भोजन करतेहैं और जिन लोगों ने देवपितरों का पूजन त्याग किया वह नरकगामी हैं ७१ वेदों के वेचने वाले वा वेदों को दोष लगाने वाले और वेदोंकेही लिखनेवाले हैं वह नरकगामी हैं वेदके अशुद्ध लिखने से वेदके लिखने वाले लेखकको नरकगामी कहाहै ७२ जो मनुष्य चारों आश्रम के धर्म और वेदकी श्रुतियों से पृथक्हैं और

निंदित कर्मोंसे अपना निर्वाहकरतेहैं वह नरकगामीहैं ७३ हेराजा जो मनुष्य चमर कंवल विष और दूध आदिके बेचने वाले हैं वह नरकगामीहैं ७४ हेयुधिष्ठिर जो मनुष्य गौ ब्राह्मण और कन्याओं के कार्य्यमें विघ्न कर्त्ताहोतेहैं वह नरकगामी हैं ७५ और जो शस्त्र वनानेवाले वेचने वाले और धनुषबाण के बनाने वाले हैं वह नरकगामीहैं ७६ हे भरतर्षभ जो मनुष्य शिलाओं से वा शुंकुनाम कीलोंसे अथवा गर्त्तों से मार्गको रोकते हैं वह नरकगामी हैं ७७ और जो पुरुष उपाध्याय वा दास आर्त्त भक्तोंको और रूपान्तर दशासे रहित स्त्रियोंको त्याग करते हैं वह नरकगामी हैं ७८ जो मनुष्य पशुओं को उनकी इन्द्री मर्द्दनादिकर्मों से नपुंसक करते हैं वा नाथतेहैं और पशुओंके बंधन करनेवालेहैं वह नरकगामीहैं ७९ जो राजा षष्ठांश भागकोलेकर चोर रूप संसार के मनुष्यों की रक्षान करके समर्थ होकर भीदानको नहीं करते वह नरकगामी हैं ८० जो मनोरथ सिद्ध करनेवाले पुरुष ऐसे लोगोंका त्यागकर-तेहैं जो क्षमावान्, शान्ती, दांत, प्राज्ञ और जो लोगकि बहुत समय तक साथ में रहे उनको जो त्यागते हैं वह नरकगामी हैं ८१ जोमनुष्य वालक बृद्ध और दासोंको न देकर आपही अकेले प्रथम भोजन करतेहैं वहनरक गामीहैं ८२ पूर्वसमयमें उपदेश होनेवाले यहसव नरकगामी वर्णनकियेगये अबजोलोगकि स्वर्गके जानेवाले हैं उनको कहताहूं ८३ हेराजा सबकार्य्यों में जो दैवकोही मुख्य जानतेहैं उनको ब्राह्मणोंकीआज्ञाका न माननाही नाशकरनेवाला है अर्थात् जो मनुष्य ब्राह्मणोंकी आज्ञापर चलतेहैं वह स्वर्गगामी हैं ८४ जो मनुष्य दान तप और सत्यता पूर्व्वक धर्मकार्य्य करते हैं वहस्वर्गगामीहैं ८५ जो पुरुष गुरुसेवाके द्वारा तपकरके विद्या को प्राप्तकरतेहैंवहस्वर्गगामी हैं ८६ जिनकीकृपासे भयपापसंकट दरिद्रता और रोगोंके भयसे निवृत होतेहैं वहमनुष्य स्वर्गगामी हैं ८७जो पुरुष क्षमावान् पंडित और धर्मकार्य्योंमें सहायकहोकर मंगलाचारसे युक्तहैं वहस्वर्गगामीहैं ८८ जो मनुष्य मधुमांसअन्य-

की स्त्री और मदिरा आदिके मदसे रहितहैं वह स्वर्गगामीहैं ८९ जोमनुष्य आश्रमीलोगोंकेकुलोंके देशोंके और नगरोंके पोषणकरने वालेहैं वहस्वर्गगामीहैं ९० जोवस्त्र भूषण और खानेपीनेकीवस्तुओंके दान करनेवालेहैं और बालबच्चे वालोंको देनेवाले हैं वह स्वर्गगामीहैं ९१ जो मनुष्य सबहिंसाओंसे रहित सबसे क्षमावान् और सबकी रक्षाके स्थानहैं वहस्वर्गगामीहैं ९२ जितेन्द्री मनुष्य मातापिताकी सेवाकरते हैं और भाइयोंकेसाथ प्रीति रखतेहैं वह स्वर्गबासीहैं ९३ हेराजा जोपुरुष धनी पराक्रमी और तरुणहोकर जितेन्द्रिय और पंडितहैं वह स्वर्गबासीहैं ९४ जो पुरुषअपराधों के होनेपरभीप्रीतिमान् मृदुस्वभाव और मृदुस्वभावी मनुष्योंकेप्यारे होकर दूसरोंके सुखदायीहैं वहस्वर्गबासीहैं ९५ जो पुरुषहजारों ब्राह्मणों के आगे परोसने वाले हजारोंही दक्षिणा देनेवाले और हजारोंकोही रक्षा करनेवालेहैं वह स्वर्गगामी हैं ९६ जो मनुष्य सुवर्णवस्त्र गौ घोड़े रथ आदिके दानकरने वालेहैं वह स्वर्गगामी हैं ९७ हे युधिष्ठिर जो पुरुष विवाहसंबंधी भूषणादि वस्तुओं को और दासदासी वस्त्रादिकोंके दानकरनेवालेहैं वहस्वर्गगामीहैं ९८ जोपुरुष विहारस्थान क्रीड़ाकेवन कुयेंबाग सभा प्याऊं और नगर के कोटआदिके बनाने वालेहैं वहस्वर्गगामीहैं ९९ जोपुरुषस्थान खेत ग्राम और जो २ मांगनेवाला मांगताहै उनसबको देते हैं वह स्वर्गगामीहैं १०० जोपुरुष रसबीज और धान्यों को आप उत्पन्न करके दानकरने वाले हैं वह स्वर्गगामी हैं १०१ उत्तम २ कुलमें उत्पन्न बहुतसे शतवर्षकी अवस्थावालेपुत्र उत्पन्न करनेवालेदयावान् क्रोधके जीतनेवाले पुरुष स्वर्गगामीहोते हैं १०२ हेभरतर्षभ यहदेव पितृकर्म और प्रारब्धसे प्राप्त होनेवालेधनकादान धर्म और परलोक सम्बन्धी धर्मयही उत्तम कर्मकाफलहै जिसको कि पूर्वसमयमें ऋषियोंने किया है १०३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेभीष्मयुधिष्ठिरसंवादे धर्मस्वर्गनरकवर्णनेत्रयोविंशतितमोऽध्यायः २३ ॥

चौबीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे भरतर्षभ भीष्मपितामह यह बात आपमुख्यता समेत मुझ को समझाइये कि अहिंसावान् होनेसे भी ब्रह्महत्या कैसे प्राप्त होती है १ भीष्मजी बोले कि हेराजेन्द्र मैंने पूर्व्वकाल में व्यासजी से जो पूछाथा वह मैं तुमसे कहताहूं तुम चित्त लगाकर सुनो २ मैंने व्यासजी से कहा कि हे मुनि आप वशिष्ठ जी के पोतेहो मुझे आप यह समझाइये कि हिंसा रहित होकर कौनसे कर्मसे ब्रह्महत्या प्राप्तहोती है ३ मेरेपूछनेपर पराशरजी के पुत्र व्यासजी ने सन्देह से रहित वचन को कहा ४ जो पुरुष गुण रूप और आजीविका वाले ब्राह्मण को भिक्षा के निमित्त बुलाकर कहै कि भोजन नहीं है उसको ब्रह्मघाती जानो ५ इस लोकमेंजो दुर्बुद्धी मनुष्य उस ब्राह्मण की जीविका को हरताहै जोकि छओं अंगों समेत वेदपाठी वेद वेदांग के अर्थों का ज्ञाता और समर्थ होकर उदासीनहै उसको ब्रह्मघाती जानो ६ हे राजा जो पुरुषप्यासे खेदित गौओं के जल पीनेमें विघ्नको डालताहै उसको ब्रह्मघाती जानो ७ जो पुरुष लोक में अच्छी रीति से जारी श्रुतिको और मुनियों के बनाये शास्त्रको ठीक२ न जानकर दोषोंको लगाता है उसको ब्रह्मघाती जानो ८ जो पुरुष अपने शरीर से उत्पन्न रूपवान् बड़ी कन्याको योग्य वरके निमित्त नहीं देताहै उसको ब्रह्मघाती जानो ९ जो अधर्म में प्रवृत्त अज्ञानी पुरुष बिना कारण के ब्राह्मण में मर्म भेदी शोक को करदे वह ब्रह्मघाती होताहै १० जो मनुष्य अन्धे लंगड़े विक्षिप्त मनुष्योंके धनको हरताहै वह भी ब्रह्मघाती जानो ११ जो पुरुष मोहसे आश्रम वन ग्राम अथवा पुर में अग्निको लगावै वह भी ब्रह्मघाती है १२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेब्रह्मघ्नकथनेचतुर्विंशोऽध्यायः२४॥

—※—

पच्चीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर ने कहा हे भरतर्षभ महाज्ञानी भीष्मजी तीर्थों का दर्शन स्नान और उनकी कथाओं का सुनना कल्याणकारीहै इसी हेतुसे उसको मूल समेत सुनना चाहता हूं १ हे महा बुद्धिमान् पवित्रात्मा भीष्मजी जो पवित्र २ तीर्थहैं उनको मूल समेत वर्णन कीजिये मैं निश्चयकरके सुनूंगा २ भीष्मजी बोले कि हेवड़े तेजस्वी अंगिराऋषि का वर्णन किया हुआ तीर्थों का संग्रह है तुम उसके सुनने के योग्य हो तेरा कल्याण हो तू उत्तम धर्मों को प्राप्त करेगा ३ तेज व्रत वाले गौतमऋषि ने तपोवनमें वर्त्तमान अंगिरा ऋषि के पास जाकर पूछा ४ कि हे भगवन् मुझको तीर्थोंके विषयमें बहुतसा सन्देह है उसको पूर्णता समेत सुना चाहता हूं आप कहने के योग्य हैं ५ हे बड़े ज्ञानी मुनीश्वरजी उन बड़े २ तीर्थों में स्नान करने से दूसरे जन्ममें क्या फलहोता है उसको यथार्थता से कहिये ६ अंगिराऋषिबोलेकि निराहार निर्मल पुरुष तरंगों की माला युक्त वितस्ता और चन्द्रभागा नदियोंमें सात दिन स्नान करके मुनियों की गतिको पाता है ७ जो नदियां कि काश्मीर मंडल में महानद के बीच में गिरती हैं उन नदियों में और सिन्धु नद में बलवान् मनुष्य स्नानको करके स्वर्ग को पाता है ८ पुष्कर प्रभास, नैमिष, सागरोदक, देविका, इन्द्रमार्ग और स्वर्णविन्दु नाम तीर्थों में स्नान करके ९ शरीर को त्याग विमान में बैठ अप्सराओं से स्तुतिमान होकर जगाया जाता है सावधान पुरुष हिरण्यविन्दु तीर्थमें स्नान करके १० पवित्र और स्तुतिमान हो कुशेशयमें स्नानकरके देवताकेभावको पाकर निष्पाप होजाता है और गन्धमादन पर्व्वतके समीप इन्द्रतोया तीर्थको पाकर ११ करतोया और अंकुरंग तीर्थपर तीनरात्रि निवास करनेवाला सावधान पवित्र मनुष्य स्नान करके अश्वमेधयज्ञके फलकोपाताहै १२ गङ्गाद्वार, कुशावर्त्त, बिल्वक, नीलपर्व्वत और कनकलतीर्थमेंस्नान

करके निष्पाप होकर स्वर्गको जाताहै १३ और हिंसासे रहित क्रोधका जीतनेवाला सत्यसंकल्प ब्रह्मचारी पुरुष अपांहृद तीर्थमें स्नानकरके अश्वमेध यज्ञके फलको प्राप्त होताहै १४ जिस उत्तर दिशामें महेश्वरजीके स्वर्ग मर्त्य पाताल इनतीनों स्थानोंमें भागीरथी गंगाजी गिरती हैं १५ वहांजो मनुष्य निराहार होकर एक महीनेतक उसमें स्नानकरताहै वह देवताओंके दर्शनकरताहै सप्तगंगा त्रिगंगा और इन्द्रमार्गमें जो पितरोंका तर्पण करता है वह अमृतका भोजनपाताहै परन्तु फिर जन्मको लेताहै जो अग्निहोत्र करनेवाला पवित्र पुरुष महाआश्रमतीर्थमें स्नान करके१६।१७एक महीनेतक निराहार रहै वह एकही महीनेमें सिद्धोंको पाताहैलोभ से रहित भृगुतुंग महाहृद को स्पर्श करके जो तीनरात्रि निराहार रहताहै वह ब्रह्महत्यासे छूटजाताहै १८ जो उपाय करके बलाका तीर्थमें कन्याकूपको स्पर्श करताहै वह देवताओंमेंभी कीर्ति कोपाकर विराजमान होताहै१९।२० जो पुरुषदेवतातीर्थवा सुन्दरिकाहृद औरअश्विनी तीर्थमें स्नान करताहै वहशरीर त्यागनेकेपीछे तपस्वी रूपको पाताहै २१ और एकपक्षतक निराहार रहनेवाला निर्मल मनुष्य महागंगा और कृत्तिकांगारकमें स्नान करके स्वर्गको पाता है २२ वैमानिक और किंकणीक आश्रम में निवास पूर्वक स्नान करके अप्सराओं समेत कामचारी होकर स्वर्ग में शोभाको पाता है २३ कालिकाश्रमको प्राप्त होकर क्रोधरहित ब्रह्मचारी विपाशा तीर्थमें स्नान आचमन तर्पण करनेवाला मनुष्य तीनरात्रि निवास करके संसारके बंधनसे छूटता है २४ जोनिर्मल मनुष्य कृत्तिकाओं के आश्रम में स्नानकर पितृतर्पण पूर्वक महादेवजी को प्रसन्न करता है वह स्वर्गको पाताहै २५ जो पवित्र मनुष्य महापुर तीर्थ मेंतीन रात्रि निवास पूर्वक स्नानकरता है वहस्थावर जंगमजीवों के और मनुष्योंके अनेक भयोंसे निवृत्त होताहै २६ देवदारुबन में स्नानतर्पणकर सातरात्रि निवासकरनेवाला मनुष्य निष्पापहोकर देवलोकको जाता है २७ जो पुरुष शरस्तंब कुशस्तंब द्रोण और

शर्मपद झिरनेमें स्नानकरताहै वहअप्सरागणोंसे सेवितहोताहै २८ चित्रकूट जनस्थान और मन्दाकिनी के जल रूपीतीर्थों में स्नान करके निराहार रहनेवाला मनुष्य राजलक्ष्मीसे सेवनकिया जाता है २६ जो श्यामाके आश्रमको जाकर निवास पूर्व्वक अभिषेक करताहै वहांइसरीतिसे एकपर्य्यन्त निराहार रहनेवाला पुरुषअन्त र्द्धान फल अर्थात् गन्धर्वोंके भोगोंको पाताहै ३० कौशिकी तीर्थको प्राप्तहोकर निर्लोभ वायुका भक्षणकरनेवाला मनुष्य इक्कीसदिनमें स्वर्गकोजाताहै३१ जो मनुष्य मतंगकीवापी और अनालंब वा अंधकनाम सनातन तीर्थमेंस्नानकरताहै वहएकरात्रिमें शुद्धहोताहै ३२ जे।जितेन्द्री पुरुषनैमिष और स्वर्गतीर्थमें स्नानकरताहुआ एकमास पितृ तर्पण को करताहै वह शुद्धहोकर यज्ञके फलको पाताहै ३३ जो पुरुष गंगाहृद और उत्पलावनतीर्थमें स्नानकरके एकमासतक पितृतर्पण करताहै वहअश्वमेध यज्ञके फलकोपाता है ३४ जोपुरुष कालिंजरपर्व्वत और गंगायमुनाके तीर्थमेंस्नानपूर्व्वकएक मासतक पितरोंका तर्पण करताहै वहअश्वमेध यज्ञकेफलको पाताहै ३५जो पुरुष षष्ठिहृदमें स्नान करताहै उसको अन्नदानसेभी अधिक फल मिलताहै हेभरतर्षभ माघमहीने में तीन करोड़ दशहजार तीर्थ ३६ प्रयागजीमें इकट्ठे होतेहैं उत्तमव्रती सावधान मनुष्य माघमहीने में प्रयागजीमें स्नानकरके निर्मलतासे स्वर्गको पाताहै३७ जोपवित्र मनुष्यमरुद्गण और पितरोंकेआश्रममें स्नानकरके वैवस्वततीर्थमें स्नानकरताहै वहपवित्रतामें तीर्थरूप होताहै इसीप्रकार ब्रह्मसरु परजाकरभागीरथीमेंस्नानतर्पणकरताहुआ ३८।३६ एक महीनेतक हजारव्रतकरके सोमलोकको पाताहै ४० उत्पादक और अष्टावक्र तीर्थमेंस्नानकरके तर्पणकरताहुआ वारहदिन निराहार रहनेवाला पुरुषनरमेध यज्ञकेफल को पाताहै ४१ गयातीर्थ में प्रेतशिला पर पहिलीब्रह्महत्याको दूरकरके निर्विन्दनाम श्वेतपर्वतपरदूसरीब्रह्महत्याको त्यागकर क्रौंचपद्यपर तीसरी ब्रह्महत्याका नाशकरकेशुद्ध होताहै४२ कलविंकतीर्थमें स्नानकरकेबहुतसे जलकीप्राप्ति होती है

जोमनुष्य अग्निपुरमेंस्नान करताहै वह अग्निकन्याके पुरमेंनिवास करताहै ४३ जोपुरुष करवीरपुर में स्नानकरके विशालतीर्थमें तर्प-णादिककरताहुआदेवहृदमेंस्नानकरताहैवहब्रह्मरूपशोभाकोप्राप्त होताहै ४४ हिंसारहित जितेन्द्रीपुरुष पुन रावर्त्त नंदा और महा-नन्दाकोसेवनकरके इन्द्रकेनन्दनवनमें अप्सराओंसेसेवितकियाजा-ताहै ४५ जो सावधान पुरुषकार्त्तिककी पूर्णमासी को उर्वशीतीर्थ मेंजाकर बुद्धिके अनुसार लौहित्य तीर्थमें स्नानकरताहै वहपुंडरीक यज्ञके फलकोपाताहै ४६ और रामहृद में स्नानकर बिपाशातीर्थमें तर्पणकरता बारहदिनतक निराहार रहनेवाला पुरुषपापसे मुक्त होताहै ४७ जोमनुष्य पवित्रचित्तहो महाहृदमें स्नानकरता हुआ एकमहीने निराहार रहताहै वहजमदग्निजीकीगतिको पाताहै ४८ सत्य संकल्प हिंसारहित मनुष्य विंध्याचल में शरीर को संतप्त कर गुरुकी आज्ञानुसार तप में प्रवृत्तहोकर एकमहीनेमें सिद्धहोता है ४९ नर्मदा औरसूर्पारक तीर्थमेंस्नानकरता हुआ एकपक्षभरनि-राहार रहनेवाला राजपुत्र होताहै ५० जितेन्द्री शान्तचित्त मनुष्य सावधानीसे तीनमहीने में और जंबूमार्ग तीर्थमें एकही रात्रिकेमध्य मेंसिद्धीको पाताहै ५१ कोकामुखतीर्थ में स्नानकरताहुआअंगुलि-काश्रम में शाकाहारी और चीर वस्त्रधारी होकर दश कुमारी को पाता है ५२ जो मनुष्य कन्याहृद तीर्थ में निवास करता है वह यमलोकको त्यागकर देवलोकको जाताहै ५३ हे महाबाहो प्रभा-सक्षेत्र में अमावास्याके दिन समाधि धारण करनेवाला मनुष्य एकही रात्रिमें सिद्धीको पाकर अविनाशी होजाता है ५४ उज्जा-नक आर्ष्टिषेण और पिंगाके आश्रम में स्नान करके सब पापों से छूटजाता है ५५ कुल्यातीर्थ में स्नानकर अघमर्षण मन्त्र को जप करके तीनरात्रिनिवासकरनेवाला मनुष्य अश्वमेध यज्ञके फल को पाताहै ५६ पिंडारक तीर्थमें स्नानकरके एक रात्रि निवास करने वाला पवित्र मनुष्य प्रातःकालही अग्निहोत्र के फल को पाता है ५७ इसीप्रकार पवित्र मनुष्य धर्मारण्य से शोभित ब्रह्म सरोवर

पर जाकर स्नान करने से पुंडरीक यज्ञके फलको पाता है ५८ मैनाकपर्व्वत पर स्नान संध्योपासनादि पूर्व्वक एक महीने तक कामदेवको जीतकर सब यज्ञोंके फलको पाता है ५९ भ्रूणहत्या करनेवाला पुरुष कालोदक नन्दिकुंड और उत्तरमानसनाम तीर्थ पर जाकर स्नान करनेसे उस हत्यासेछूटताहै ६० जोपुरुषनन्दी-श्वरकी मूर्त्तिका दर्शनकरके सबपापोंसे दूर होताहै वह स्वर्गमार्ग में स्नानकरके ब्रह्मलोकको जाताहै ६१ हिमालयपर्व्वत शिवजीका श्वशुर सब रत्नोंकीखान सिद्ध चारणों से सेवित बिख्यातहै ६२ वेदान्तका ज्ञाताजो ब्राह्मण जीवनको नाशमान जानकर बुद्धिके अ-नुसार अनशन ब्रत करताहुआ उसपर्व्वतपर देवता और मुनियोंको नमस्कार करके अपने शरीर को त्यागताहै वह शुद्ध सनातन ब्र-ह्मलोकको जाताहै ६३।६४ जो मनुष्य इच्छा क्रोध लोभ को जीत कर तीर्थ में निवास करताहै उस तीर्थयात्रा से उसको अप्राप्तवस्तु कोई नहीं होती है ६५ जो तीर्थ कि न मिलने के योग्य दुर्गम और विषम मार्गवाले हैं वह सब तीर्थ दर्शन की इच्छासे चित्तसेही प्राप्त करने केयोग्य हैं ६६ जैसे कि यह तीर्थोंका सेवन यज्ञोंके फल का दाता पापोंका नाशकर्त्ता स्वर्गमें पहुंचानेवाला अपूर्व्वहै इसीप्रकार यह तीर्थस्नान भी वेदोंकी गुप्तबातों का और पवित्रता का प्राप्त करनेवालाहै ६७ द्विजन्माओंमें जोसाधूहोकर अपनाभला चाहता है उस को यह तीर्थमाहात्म्य देना योग्य है और शिष्य समीपी और मित्रोंको सुनावै ६८ यहतीर्थोंका माहात्म्य बड़े तपस्वीअंगि-राऋषिने गौतमऋषिको दिया और काश्यपऋषि समेत गौतमऋषि ने वर्णनकिया ६९ हे पवित्रात्मा क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिरयह तीर्थ माहात्म्य महर्षियोंसेपाठ करनेकेयोग्यहै जो पवित्रमनुष्य धर्म में प्रवृत्तचित्तहोकर इसकोजपताहैवहस्वर्गकोपाताहै ७० जोमनुष्यअं-गिराऋषिकेअंगीकृतइसगुप्ततीर्थ माहात्म्यकोसुनेगावहउत्तमकुलमें उत्पन्न होगा और पिछले जन्मोंकाभीस्मरणकरनेवालाहोगा७१॥

श्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेअंगिरसस्तीर्थयात्रायांपंचविंशोऽध्यायः २५ ॥

छब्बीसवां अध्याय॥

वैशंपायन बोले कि भाइयों और अन्य महात्माओं के साथ बैठे हुये राजा युधिष्ठिरने उन भीष्मजी से प्रश्नकिया जो कि बुद्धिमें बृहस्पतिजीके समान क्षमामें ब्रह्माके समान पराक्रम में इन्द्रके तुल्य तेजमें सूर्य्यके समान ऐसे महापराक्रमी युद्धमें अर्जुनके हाथसे घायल गांगेयजीथे १।२ वीर शय्यापर सोयेहुये अन्तसमयमें मोक्ष-पदके अभिलाषी भरतबंशियोंमें श्रेष्ठ भीष्मजीके दर्शनकी इच्छासे महर्षीलोग आये ३ उनके नाम यहहैं अत्रि,बशिष्ठ,भृगु, पुलस्त्य, पुलह,क्रतु,अंगिरा,गौतम,अगस्त्य, बड़ेजितेन्द्रीसुमति४ बिश्वामित्र, स्थूलगिरा,संवर्त्त,प्रमत्ति,दम,बृहस्पति,शुक्र,ब्यास,च्यवन,काश्यप, ध्रुव ५ दुर्वासा,जमदग्नि,मार्कण्डेय,गालव,भरद्वाज,रैभ्य,यवक्रीत, त्रित ६ स्थूलाक्ष,शवलाक्ष, कण्व, मेधातिथि, कृश, नारद, पर्ब्बत, सुधन्वा,एकत,द्वित७ नितंभू,भुवन,धौम्य,शतानन्द,कृतब्रण, परशु-राम,कच इत्यादि सवमहर्षीलोग महात्मा भीष्मजीके दर्शनकोआये और युधिष्ठिरने अपने भाइयों समेत उन सब आये हुये महात्मा महर्षियोंको बुद्धिके अनुसार यथायोग्य क्रमसे पूजन किया तदन-न्तर उन पूजित और सुखपूर्वक बैठे हुये महर्षियोंने८।६ । १० भीष्म जी से संबन्ध रखनेवाली अमृतरूप चित्तकी आकर्षण करनेवाली अनेक कथा कहीं तब उन पवित्रात्मा महर्षियोंको कही हुई कथा को सुनकर ११ भीष्मजीने बड़ी प्रसन्नतासे युक्त अपने को स्वर्गमें नि-वासी जाना इसके पीछे वह सब महर्षी भीष्मजी और पांडवों को पूछकर १२ सवके देखतेही देखते गुप्त होगये तब उनअन्तर्द्धान होने वाले ऋषियों को पांडवलोगोंने बारंबार नमस्कार करके स्तुति करी १३ फिर महाप्रसन्नचित्त होकर उन सब कौरवों में श्रेष्ठ महा साधु भीष्मजीके १४ पास ऐसे नियत हुये जैसे कि मन्त्र केज्ञाता मनुष्य उदय होनेवाले सूर्य्यके सन्मुख बर्त्तमान होतेहैं उनऋषियों के प्रभावके प्रताप से सब दिशाओं को प्रकाशमान देखकर १५

सब पांडवों ने बड़ा आश्चर्य्य किया और उन भीष्मजी के साथ उन ऋषियोंके बड़े माहात्म्यको विचारकर उनसे संबन्ध रखनेवाले इतिहास वर्णनकिये १६ वैशंपायन बोले कि धर्मपुत्र पांडवयुधिष्ठिर ने कथाके समाप्त होनेपर भीष्मजीके चरणों को शिरसे दण्डवत् करके धर्मसम्बन्धी प्रश्नकिया १७ हे पितामह कौनसे देश नगर आश्रम पर्व्वत और नदियां महापुण्यकारी जानने के योग्यहैं १८ भीष्मजी बोले हे युधिष्ठिर इस स्थानपर एकप्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें शिलोञ्छवृत्ती रखनेवाले ब्राह्मण और सिद्ध का प्रश्नोत्तर रूप संवादहै १९ कोई उत्तम ब्राह्मण पर्व्वतोंसे अलंकृत पृथ्वीको वारंवार परिक्रमा करके किसी शिलोंछवृत्तीवाले श्रेष्ठ कुटुम्बीके घरपर आया २० और वहां बहुत सत्कार पूर्व्वक पूजित होकर रात्रिको निवास किया २१ और प्रातःकालके सन्ध्यावंदनादिक कर्मोंको उस शिलवृत्ती ब्राह्मणने किया फिर उस कर्म से निवृत्त होकर उस सिद्ध अतिथिके सन्मुख गया २२ तब सुखपूर्व्वक दोनों मिले फिर उन दोनों महात्माओंने वेदोक्त वह शुभ कथा वर्णन करीं जोकि वेदके अंगोंसे चिह्नितथीं २३ फिर उसबुद्धिमान् शिलोंछवृत्तीवाले ब्राह्मणने कथाके अन्तपर बड़ी युक्ति पूर्व्वक उस सिद्धको आमन्त्रण करके यही प्रश्न किया जोकि तुमने मुझसे किया है २४ शिलवृत्तीने कहा कौनसा देश नगर पर्व्वत नदी महा पुण्यकारी होकर जाननेके योग्यहैं उनको आप वर्णन कीजिये २५ सिद्धने उत्तर दिया कि नदियों में उत्तम भागीरथी गंगा जिनदेशोंके मध्यमेंहोकर जातीहै वह देश उत्तमहैं और उसदेशके नगर पर्व्वत और आश्रम भी महाफल के देनेवाले हैं २६ जोमनुष्य गंगाजीका सेवन करताहै वह जिस गतिको पाताहै वह गति तप, ब्रह्मचार्य्य, यज्ञ, और त्यागसे भी नहीं प्राप्त होसक्तीहै २७ जिन शरीरधारियों के अंग श्रीगंगाजीके जलोंसे स्पर्श होकर गंगाजीमें नियत हैं वह स्वर्गसे फिर पृथ्वीको नहीं गिरते २८ जिन शरीरधारियों के संपूर्ण काम गंगाजलसे होतेहैं हेब्राह्मण वह मनुष्य पृथ्वीको त्याग करके

स्वर्गमें नियत होतेहैं २९ जो मनुष्य पूर्वअवस्था में पापकर्म करके गंगाजीका सेवन करतेहैं वह भी उत्तमगतिको पाते हैं ३० गंगाजी के पवित्र जलोंसे स्नान करनेवाले शान्तचित्त मनुष्योंकी जो पुण्य फलकी वृद्धि होतीहै वह सैकड़ों यज्ञोंसेभी नहींहोतीहै ३१ जबतक मनुष्यके हाड़ गंगाजीके जलोंमें नियत वर्त्तमानरहते हैं वहउतनेही हजारवर्षतक स्वर्गलोक में प्रतिष्ठा पूर्व्वक निवास करता है ३२ जैसेकिसूर्य्य उदयाचल पर्व्वतपर घोरअंधकारको दूरकरके प्रकाश-मानहोताहै उसीप्रकार गंगाजीसे अभिषिक्त मनुष्यभी,पापोंकोदूर करके प्रकाशमान होताहै ३३ जैसे कि चन्द्रबिन रात्रि और पुष्पों से रहित वृक्षअशोभित होतेहैं उसीप्रकार गंगाजलोंसे रहित देश और दिशाभी अशोभित और अप्रकाशित होतीहैं ३४ जैसे कि धर्म ज्ञान रहित सब वर्णाश्रम और सोमकेबिना यज्ञ कल्याण कारक नहींहोते उसीप्रकार यह जगत्भी श्रीगंगाजीकेबिना होताहै ३५ जैसे सूर्य्यसे रहित आकाश और पर्व्वतोंसेरहित पृथ्वी और वायुसे रहित अन्तरिक्ष निस्सन्देह उसीप्रकार श्रीगंगाजी से रहित देश और दिशाहैं ३६ तीनोंलोकों के जो जीवमात्रहैं वहसब श्रीगंगाजी के उत्तमजलोंसे तृप्तता को पाते हैं ३७ जो मनुष्य सूर्य्य से संतप्त कियेहुये गंगाजल कोपान करता है वह गौको भोजन करवाकर उसके गोबर के कणों के भोजन करनेवाले व्रतसे अधिक है ३८ जो शरीर पवित्र करनेवाले मनुष्य हजारचान्द्रायणव्रतोंको करे उन से भी अधिक गंगाजल पान करने से शुद्धी होतीहै ३९ जोमनुष्य गंगाजी में एकमहीने तक खड़ारहै वह उससे भी अधिक फल वाला होता है जो एकहजार युगोंतक एकचरण से खड़ारहै ४० जो मनुष्य इच्छानुसार गंगापर नियतरहै वह एकहजार युगतक औंधे शिरसे लटकनेवाले सेभी अधिक फलभागी होता है ४१ हे ब्राह्मणोत्तम जैसे अग्नि में गिरीहुई रूई क्षणमात्र में भस्महो-जाती है उसीप्रकार गंगाजी में स्नानकरनेवाले के सबपाप दूर होजाते हैं ४२ इसलोक में दुःखसे पीड़ित चित्त और उपायों के

निश्चय करनेवाले जीवों की गति गंगाजी से अधिक नहीं है ४३ जैसे कि गरुड़ के देखने से सर्प निर्विष होजाते हैं उसीप्रकार गंगाजीके दर्शनसे सबपापोंसे रहितहोता है ४४ जो कोई मनुष्य प्रतिष्ठावान् हैं अथवा अधर्मवान् हैं उन सबका रक्षास्थान और आनन्दपूर्व्वक पापोंकी दूर करनेवाली श्रीगंगाजीहैं ४५ बड़ेभारी पापोंसे घिरेहुये नरकमें गिरनेवाले नीचमनुष्योंको गंगाजीके सेवनसे गंगाही पार उतारनेवालीहै ४६ जोमनुष्य गंगाजी को सदैव जातेहैं वह निश्चय करके देवता समेत इन्द्र और मुनियोंसे भाग पानेवालेहैं ४७ हे ब्राह्मण जो नीच मनुष्य नम्रता और आचारसे रहित अकल्याण रूपहैं वह गंगाजीपर निवास करनेसेमहाकल्याणरूप होजातेहैं ४८ जैसे देवताओंका अमृत पितरोंका स्वधा और नागोंका सुधा होताहै उसीप्रकार मनुष्योंका गंगाजल होता है ४९ जैसे क्षुधा से पीड़ामान बालक अपनी माताकेपास नियत होतेहैंउसीप्रकार इसलोकमें अपनाकल्याणचाहनेवाले शरीरधारी गंगाजीकी उपासना करतेहैं ५० जिसप्रकारसबलोकोंमें ब्रह्मलोक उत्तम कहाजाताहै उसीप्रकार इसलोकमें नदियों में श्रेष्ठ गंगाजी सबस्नान करनेवालोंकेलिये श्रेष्ठ कही जातीहैं ५१ जैसे कि भोजन की इच्छाकरनेवाले देवताओंकी कामधेनु और पृथ्वीहैं उसीप्रकार सब शरणागतजीवोंकी काम धेनु श्रीगंगाजीहैं ५२ जैसे शत्रादिक यज्ञोंकेद्वारा देवताचन्द्रमा वा सूर्य्यमें वर्त्तमान अमृतसे जीवतेरहतेहैं उसीप्रकार मनुष्य भी गंगाजलसे जीवतेहैं ५३ गंगाजीके किनारों से उठीहुई रजसे भराहुआ यहलोक अपने को ऐसा प्रकाशमान मानताहै जैसा कि स्वर्गमें वास करनेवालोंको समझताहै ५४ जो मनुष्य गंगाजी के किनारे की मृत्तिका को अपने मस्तकपर धारण करता है वह अपने अपराधरूपी अंधकारों के दूरकरने को सूर्य्य के निर्मलरूप को धारण करता है ५५ जब गंगाजी के किनारे की शीतल बायु मनुष्य को स्पर्श करती है वह शीघ्रही उसके पापको दूर करती है ५६ द्यूत और मद्यपान आदि दुर्व्य-

सनों के दुःखों से पीड़ामान अथवा आसन्न मृत्यु मनुष्यके उन दुःखों को गंगाजी के दर्शन की प्रीति दूर करदेती है ५७ इन गंगाजीने अपने तीरनिवासी हंस कोक और अन्य अनेकप्रकार के पक्षियोंके शब्दोंसे गन्धर्वोंको और किनारोंसे पर्वतोंको प्रसन्न कियाहै ५८ हंसआदि अनेकप्रकारके नानापक्षियोंसे संयुक्त गौ-वोंसे व्याप्त गंगाजीको देखकर स्वर्गभी लज्जायुक्त होताहै ५६ सबपदार्थोंके भोगी स्वर्गमें निवास करनेवाले जीवोंकी ऐसीप्रीति नहीं होतीहै जैसी कि श्रीगंगाजीके किनारेपर बसनेवालोंकी होती है ६० इसलोकमें कर्ममनवाणीसे उत्पन्न पापोंमें फंसेहुये मनुष्य निस्संदेह गंगाजीके दर्शन करनेसे पवित्र होजातेहैं ६१ जो मनुष्य श्री गंगाजीके स्नान दर्शन और स्पर्शोंको करतेहैं वह सात पूर्वके और सातपरेके पुरुषोंको तारकर उनसेभी परपितरोंको तारते हैं ६२ जो पुरुष अपनी प्रीतिसे गंगाके माहात्म्यको सुनता जल को पीता और स्पर्शको करता देखता स्नानकरताहै उसके दोनों कुलोंको श्रीगंगाजी तारदेतीहैं ६३ दर्शनसे स्पर्श करनेसे तथा गंगा गंगा इसशब्दके कीर्त्तनसे हजारों महापातकी लोगोंको श्री गंगाजी तारतीहैं ६४ जो मनुष्य अपने जन्म जीवनको और शास्त्र को सफल करनाचाहै वह श्रीगंगाजीके किनारेपर जाकर देवता और पितरोंका तर्पणकरे ६५ पुत्रधन और कर्मोंसेभी जिसफलको मनुष्य नहीं पासक्ता सो श्रीगंगाजीके प्राप्तहोनेसे पाताहै ६६ जो मनुष्य समर्थ होकर पवित्र जलवाली गंगाजीका दर्शन नहीं करते हैं वह इसलोकमें मृतक लंगड़े और जन्मकेअन्धोंकी समानहैं ६७ जोगंगाजी देवताओं समेत इन्द्र और त्रिकालज्ञ महर्षियोंसेसेवित हैं उनका सेवन कौन नहीं करेगा ६८ जोगंगाजी चारों आश्रमियों की और विद्वान्लोगोंकी रक्षास्थानहैं उनगंगाजीका आश्रय कौन नहींकरेगा ६९ श्रेष्ठ मनुष्योंका अंगीकृत सावधान देहत्यागनेका इच्छावान् पुरुष मनवचन और श्रद्धासे श्रीगंगाजीको स्मरणकरता है वह उत्तमगतिको पाताहै ७० जो मनुष्य इसलोकमें देहके

त्यागनेतक गंगाजीके समीप निवास करताहै वह व्याघ्रादि पशु
और पिशाचादिसे निर्भयहोकर ब्रह्महत्यादिक पापोंसे निवृत्तहोके
किसी राजासेभी भयकोनहीं पाताहै ७१ इस महापवित्र आकाश
से गिरनेवाली श्री गंगाजीको अपने उत्तमशिरपर धारणकियाऔर
उसीको सब देवता स्वर्गमें भी सेवन करतेहैं ७२ गंगाजीके तीन
निर्मलमार्गोंसे तीनोंलोक अलंकृतहैं जो पुरुष उसकेजलकासेवन
करताहै वह आनन्दपूर्व्वक निवास करताहै ७३ जिस प्रकार
स्वर्गमें देवताओंकी ज्योतिसूर्य्यहै पित्रोंकी चन्द्रमाहै औरमनुष्यो
की ज्योति राजेन्द्र है उसीप्रकार नदियोंकी ज्योति श्रीगंगाजी
हैं ७४ माता पिता पुत्र स्त्री और धनसे रहित मनुष्य का दुःख
ऐसा नहीं होता जैसा कि गंगाजी से विमुख रहने का दुःखहै ७५
ब्रह्मलोक के विषय और यज्ञसे प्राप्त होनेवाले स्वर्गके विषयों से
वा पुत्र और धनकी प्राप्तीसे ऐसीप्रसन्नता नहीं होती है जैसी कि
प्रसन्नता श्रीगंगाजी के दर्शनसे होतीहै ७६ जैसे कि पूर्ण चन्द्रमा
के देखने से मनुष्योंकी दृष्टिको आनन्द होताहै उसीप्रकार स्वर्ग
पृथ्वी और पाताल में वर्त्तमान श्रीगंगाजी के दर्शनसे जीवधारि
योंकी दृष्टिको आनन्द होताहै ७७ गंगाजी में श्रद्धापूर्व्वक चित्त
लगानेवाला नेष्ठावान् पुरुष जो उसीको सर्वोत्तम स्थान समझता
है और भक्तिसे गंगाजी के समीप वर्त्तमान है वह उसके स्वरूप
कोपाताहै ७८ सत्पुरुषोंका बचनहै कि पृथ्वी आकाश और स्वर्गमें
नियत नानाप्रकारके सब जीवधारियोंको गंगास्नान करना योग्य
है ७९ धर्मकावृद्धिस्थान होनेसे उनगंगाजीकी शुभकीर्त्ति लोकोंमें
प्रसिद्धहै जिन्होंने राजासगरकेभस्मीभूतपुत्रोंको इसलोकसे स्वर्गमें
पहुंचाया ८० बायुसे प्रेरित अच्छे उठायेहुये अत्यन्त मनोहर और
शीघ्रगामी श्रीगंगाजी की तरंगों से पवित्र और प्रकाशमान मनुष्य
सूर्य्यरूप होतेहैं ८१ दूधऔर घृतजो यज्ञोंके हव्य हैं उनके धारण
करनेवाले जो बड़ेभारी यज्ञहैं वह स्वर्गादिकके फलके देनेवाले हैं
उनको भी शीघ्रगामी गंगाजी का स्नान महाकठिनतासे होता है

उसगंगाजीपर जाकर जोलोगशरीरको त्यागकरतेहैं वहपंडितलोग देवताओंकी समानताकोप्राप्तहोतेहैं ८२ इन्द्रसमेत देवतामुनि और मनुष्योंसे सेवित यहश्रेष्ठयशसेभरीहुईगंगाजी जिसकेद्वारादेवताओं कारूप और सौभाग्य प्राप्तहोताहै और अन्धेविक्षिप्त और निर्द्धन लोगोंको सब इच्छाओंसे पूर्णकरतीहै ८३ भोज्य वस्तुओंकी और पशुओंकी दाता ब्रह्म से मिलानेवाली महापवित्र तीनोंमार्गों में वर्त्तमान तीनोंलोकों की रक्षक श्रीगंगाजीकी जिन्होंने शरणलीनी वहअवश्य स्वर्गकोगये ८४ जो मनुष्य गंगातटपर निवासकर गंगा जीकादर्शनकरताहै उसमनुष्यको देवतासुखदेते हैं और गंगाजीके दर्शन और स्पर्श से प्रतिष्ठापानेवाले दूसरे देवता उसमनुष्य को उत्तमगति दिखातेहैं ८५ मोक्षदेनेमेंसमर्थ कृष्णकीमातादेवकीरूप पृथ्वी और सरस्वतीरूप बहती सबसेपरे कल्याणरूप वृद्धिसे युक्त ऐश्वर्य्यकी स्वामिनी आनन्दरूप प्रकाशक सब जीवोंकी प्रतिष्ठा रूप श्रीगंगाजीको जोपुरुष प्राप्तहैं वहस्वर्गको प्राप्त हैं ८६ पूर्व्व समयमेंजिसकीकीर्त्ति आकाश स्वर्ग पृथ्वीदिशा और विदिशामेंवर्त्त- मानहै उसनदियोंमें श्रेष्ठश्रीगंगाजीकेजलोंकोसेवनकरके सबमनुष्य आनन्दोंको भोगतेहैं ८७ यहगंगाजीहैं इसभावसे दूसरोंके दर्शन करनेवालों की प्रतिष्ठा नियमके साथकरे तो गंगाही के समान होतीहै कार्त्तिकेय सेनापति और सुवर्णकी उत्पत्तिस्थान धर्म अर्थ कामको देनेवाली जलवाहिनी पापों की दूर करनेवाली गंगा जो जनका कि जल संपूर्ण स्थावर जंगम जीवमात्रों को प्यारा है वह प्रातःकालके समय आकाशसे पृथ्वी में उतरीहैं तात्पर्य्य यहहै कि प्रातःकालके समय गंगा का स्नान करना अत्यन्त श्रेष्ठ है ८८ हे राजा वहगंगाजी प्रकाशमान मेरुनाम पर्व्वत या हिमालयकी पुत्री और महादेवजी की भार्य्या स्वर्ग और पृथ्वी का भूषणरूप पृथ्वीपरशुभअंश और वशिष्ठ इन तीनोंलोकोंको पुण्यकी देनेवाली ८९ धर्मद्रवा तेजरूप धारा रखनेवाली घृतकी समान तेजस्वी बड़ी २ तरंगों और ब्राह्मणों से शोभायमान स्वर्गकी पोषण करने

वाली स्वर्गमेंही नियत वह गंगाजी मेरुपर्व्वतसे उतरी और जिसको शिवजीने धारणकिया ६० वह गंगाजी परम कारुण निर्मल सूक्ष्म शय्या शीघ्रगामी प्रभावाली उत्तम कीर्त्ति की देनेवाली संसार का पोषण करनेवाली सिद्धोंकीप्यारी असंख्य मायाओंसेभरी अथवा सिद्धोंको प्रिय माननेवाली स्नानकरनेवाले पुरुषोंको स्वर्गकामार्ग है ६१ क्षमा रक्षा और पोषणकरनेमें पृथ्वीके समान और तेजमें अग्नि और सूर्य्यके समान सदैव ब्राह्मणोंपर अनुग्रह करनेसे कार्त्तिकेय और ब्राह्मणोंकी अत्यन्त प्यारीहै ६२ इसलोकमें जो मनुष्य अ त्मा और चित्तसे इसऋषियों स्तुतिमान विष्णुपदीनाम गंगाकी शरण मेंगये वह ब्रह्मलोकको गये ६३ इनसबस्थावर जंगम जीवोंकोनाश मानदेखकर उन गंगाजी के उत्पत्तिस्थानब्रह्मके औरमन समेत बुद्धि कोस्वाधीन रखनेवाले मनुष्योंसे वह गंगाजी इसप्रकार से सदैव उपासनाके योग्य है जैसे कि सर्वगुणसम्पन्न माता सबआत्मा से अपने पुत्रोंको प्यारकरतीहै ६४ सिद्धीका चाहनेवाला ज्ञानीमनुष्य उन गंगाजीकी शरणले जोकि अमृतरूप दूधदेनेवाली सर्वपदार्थों की देनेवाली संपूर्ण संसार के भोजनकी वस्तुआदिकी कारणपर्व्व- तोंकी माता उत्तम मनुष्योंका रक्षा स्थान अमृतरूप होकर ब्रह्माजी के भी चित्तकी हरनेवालीहैं ६५ कठिन तपस्याके द्वारा ईश्वरों समेत देवताओं को प्रसन्न करके राजा भगीरथ जिनको पृथ्वीपर लाये उन गंगाजीके तटपर पहुंचकर इसलोक और परलोकमें म- नुष्योंको सदैव निर्भयता होती है ६६ मैंने सबप्रकारसे विधिपूर्व्वक बिचारके गंगाजीके गुणोंका एकभाग तेरेआगे वर्णनकिया क्योंकि उनके सबगुणोंके कहनेको मेरी सामर्थ्य नहींहै ६७ चाहै मेरु पर्व्वतके पाषाणोंको और समुद्र के जलकी संख्या होजाय परन्तु इन गंगाजीके गुणोंकी संख्याकरना संभव नहींहोसक्ता ६८ इसी हेतुसे मेरे कहे हुये गंगाजीके सब गुणोंको बड़ीश्रद्धासे जानकर और सदैव श्रद्धामान होकर मनवाणी वचन और भक्तिसे संयुक्त होजावो ६९ तुम इनतीनों लोकोंको अपनी शुभकीर्त्ति से परिपूर्ण

करके दुष्प्राप्य महासिद्धीकोपाके थोड़ेदिनोंके पीछे उनलोकों के भीतर अपनी इच्छाके अनुसार विहारकरोगे जो कि गंगासेवन से प्राप्त और संकल्प सिद्धहैं १०० महानुभाव श्रीगंगाजी अपनेधर्म संयुक्तगुणोंसे मेरी औरतेरी बुद्धिको सदैव निर्मलकरें क्योंकि श्रद्धा-मान मनुष्यों की प्यारी गंगाजी संसारमें अपनेभक्तों को सुखोंसे परिपूर्ण करतीहैं १०१ भीष्मजी बोले कि वहबड़ा बुद्धिमान् तेज-स्वी सिद्ध श्री गंगाजीके सच्चेगुणोंको शिलवृत्ती ब्राह्मणसे इस प्र-कार वर्णन करके आकाशको चलेगये १०२ तब सिद्धके बचनों से अच्छेप्रकार से बिदित होकर शिलवृत्ती ब्राह्मणनेबुद्धिके अनुसार श्री गंगाजीको सेवनकरके महाकठिनतासे प्राप्त होनेवाली उत्तम सिद्धीको पाया १०३ हे कुन्तीनन्दन उसीप्रकार उत्तमभक्ति संयुक्त होकर तुम भी श्री गंगाजीकोजावो वहां तुम उत्तमसिद्धीको पावोगे १०४ वैशंपायन बोले कि भाइयों समेत युधिष्ठिरने भीष्मजी के कहेहुये गंगाजीके माहात्म्यरूपी इतिहासको सुनकर बड़ीप्रसन्नता कोपाया १०५ जो मनुष्य गंगाजीकी प्रशंसासे युक्त इसपवित्र कथाको सुनेगाया पढ़ेगा वह सबपापोंसे मुक्त होगा १०६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेगंगामाहात्म्यकथनेषड्विंशतितमोऽध्यायः

सत्ताईसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरने प्रश्न किया कि ज्ञान शास्त्र गुरु पूजनादि आचार शील नानाप्रकार के उत्तम गुण और बड़ी अवस्था से आप संयुक्त हो १ वृद्धि ज्ञान और तपके कारणसे भी आप बड़े वृद्धहो इसीहेतु से हे धर्म धारियों में श्रेष्ठ मैं आपसे धर्मको पूछताहूं २ हे राजा-ओंमें महाराज भीष्मजी तीनोंलोकों में आपके सिवाय कोई दूसरा क्षत्री वा वैश्य अथवा शूद्र प्रश्न करनेके योग्यनहींहै ३ बड़ेतप या कर्म अथवा शास्त्रके द्वारा जैसे मनुष्य ब्राह्मणके भाव को पाता है उसको आप मुझसे कहिये ४ भीष्मजीबोले हेतात युधिष्ठिर क्षत्री आदि तीनोंवर्णोंसे ब्राह्मणवर्ण होना महाकठिन और दुष्प्राप्य है

क्योंकि सब जीवमात्रोंमें यह ब्राह्मणकापद सबसेउत्तमहै ५ हेतात
बहुत योनियोंमें बारम्बार घूमता और जन्म लेताहुआ किसीजन्म
में आकर ब्राह्मणवर्ण उत्पन्न होताहै ६ हेयुधिष्ठिर इसस्थानमें एक
प्राचीन इतिहास तुमसे कहता हूं जिसमें मतंग और गर्दभी का
प्रश्नोत्तरहै ७ हे तात किसी ब्राह्मणकापुत्र तुल्यवर्णथा वहसर्वगुण
सम्पन्न होकर मतंग नामसे प्रसिद्धहुआ ८ हेकुन्तीनन्दन वहयज्ञ
कर्त्तापरंतप मतंगनामबालक ईंटैलानेके निमित्त पिताकीआज्ञालेकर
बड़े शीघ्रगामीगर्दभरूप खिच्चड़ोंको जोतकर रथकीसवारीमेंचला९
हेराजा उसमतंगने माताके समीप वर्त्तमान अशिक्षित रथ खैंचने
वाले खिच्चड़को चाबुकोंसे बारबार नाकपरघायलकिया १० वह
पुत्रको चाहनेवाली गर्दभीने बेटेकी नाकपर कठिनघावको देखकर
कहा हेपुत्र शोचमतकर चांडाल रथपर सवार है ११ क्योंकि ब्रा
ह्मणसे किसी दूसरेको भयनहीं होता है ब्राह्मण सबका मित्र कहा
जाताहै और सबजीवोंकाशिक्षक और गुरूभीहोताहै जोयहब्राह्मण
होता तो काहेको प्रहारकरता १२ यह पापात्माबालकपरभी दया
नहीं करताहै यहअपनी योनिके प्रभावसे बुद्धिको कुमार्ग मेंडालता
है १३ मतंगने उस गर्दभीके उस कठोर और निन्दायुक्त वचनको
सुनतेही शीघ्रही रथसेउतरकरउससेकहा १४ हे कल्याणिनिगर्दभी
मेरीमातादोषसेयुक्त कैसेहैं और मुझको तैंनेचांडालकैसेकहाइसका
सबहेतु तू मुझसेकह १५ हे बड़ी ज्ञानवान् तू मुझको कैसे चांडाल
जानती है ऐसी बातों से ब्राह्मणका वर्ण नष्टहोताहै इस निमित्त तू
इसको मूल समेत वर्णनकर १६ गर्दभीबोली कि तुम शूद्र नाई से
सेवित नाऊ ब्राह्मणी में चांडाल उत्पन्नहुयेहो इसकारणसे तेरा ब्रा-
ह्मणवर्णनाशहुआ है १७ इसबातके सुनतेही वह मतंग घरको लौट
आया तब पिताने उस लौटेहुयेको देखकर यह वचन कहा १८ कि
तुझको मैंने यज्ञके बड़ेकार्य्य के निमित्त भेजाथा तू लौटकर कैसेचला
आया क्यातू अपनीभलाईनहींजानता और नाशहोनाचाहताहै १९
मतंगने कहा जोमनुष्य चांडाल जाति का है वा उससे भी अधम

नीचहै उसकी कैसेकुशल होसक्तीहै और हे पिताउसकी कुशलकैसे होसक्तीहै जिसकी कि यहमाता है२० हेपिता यह उत्तमगर्दभी मुझ को ब्राह्मणीमें शूद्र करके उत्पन्न हुआ बताती है इसकारण मैं बड़ी तपस्या कोकरूंगा २१ फिर वह निश्चय करनेवाला मतंग पिता सेऐसे वचन को कहकर वनको चलागया वहां बड़े बनमें जाकर इसने बड़ी तपस्याकरी २२ फिर श्रेष्ठ रीति से बड़ी तपस्या के कारण ब्राह्मणवर्ण को चाहनेवाले मतंग ने तपके बलसे देवताओं को संतप्तकिया २३ इसप्रकार तपमेंभरेहुये मतंगसे इन्द्रने आकर कहा कि हेमतंग तुम नरलोक के भोगों को छोड़कर किसनिमित्त तपस्याको करतेहो २४ तुम जोचाहो सो बरदान मांगो मैं तुमको देताहूं इसको शीघ्रमांगो बिलम्ब मतकरो २५ मतंग ने कहा कि मैंने ब्राह्मणवर्ण होनेकी इच्छासे इस तपका प्रारंभ कियाहै मुझको वही बरदान दो मैं यही चाहताहूं २६ भीष्मजी बोले कि इन्द्र ने यह बचन सुनकर कहा कि हे मतंग यह दुष्प्राप्य ब्राह्मणवर्ण तू मांगताहै २७ हे दुर्बुद्धी यह ब्राह्मणबर्ण अशुद्ध अन्तःकरणवाले मनुष्योंको नहीं प्राप्त होसक्ता इसकी इच्छा करने से तुम नष्टहो जावोगे इसको मांगना त्यागदो इसमें बिलम्ब न करो २८ उस सब जीवधारियों में श्रेष्ठतम ब्राह्मणबर्ण को यह तपनहीं प्राप्तकर सक्ता और तू इस ब्राह्मणबर्णको चाहताहुआ थोड़ेही दिनमेंनाशको पावेगा २९ जो ब्राह्मणवर्ण देवता असुर और मनुष्योंके मध्यमें पवित्र और उत्तम कहाजाताहै वह चांडालयोनीमें उत्पन्न होनेवाले मनुष्यको किसी दशामें भी प्राप्त नहीं हो सक्ता ३० ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मे इन्द्रमतंगसंवादेसप्तविंशोऽध्याय: २७ ॥

अट्ठाईसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले इसप्रकारके वचनोंको सुनकर वह तीक्ष्ण बुद्धि सावधान व्रत तपस्वी अविनाशी मतंग सौबर्ष पर्य्यंत एकचरण से खड़ारहा १ इसकेपीछे बड़ेयशस्वी इन्द्रने फिर उसके पास जाकर

कहा कि हे तात ब्राह्मणवर्ण बड़ा दुष्प्राप्यहै तू उसको मांगनेसे नहीं पावेगा २ हे मतंग उस उत्तमस्थानकी इच्छाकरनेसे तू नष्टताको पावेगा हे पुत्र बिनाविचारकिये कर्मका करना योग्यनहींहै यहतेरा धर्म मार्गनहींहै ३ हे दुर्बुद्धी तुमको ब्राह्मणवर्ण मिलना असंभवहै अप्राप्तवस्तुके चाहनेसे तू थोड़ेही कालमें नष्टता पावेगा ४ हे मतंग मैंने वारंवार तुमको निषेधकिया परन्तु तुम तपस्याके बलसे उस उच्चपदको चाहतेहो तू सबप्रकारसे नष्टताको प्राप्तहोगा ५ पशु पक्षी की योनिमें वर्त्तमान जीव जो कदाचित् मनुष्यताको पाताहै तो निस्सन्देह पुल्कस वा चांडालकीही योनिमें उत्पन्न होताहै ६ हे मतंग इसलोकमें जोकोई पुल्कस अथवा किसी पापयोनिवाला दृष्ट पड़ताहै वह बहुत कालतक उसीयोनिमें भ्रमण करताहै ७ फिर एकहजार वर्षकेपीछे शूद्रजन्मकोभी पाताहै तदनन्तर वह शूद्रयोनि मेंभी बहुतदिनतक भ्रमताहै ८ उससे त्रिगुणित समयमें वीसजन्मोंको पाताहै उन्हीं बीसों योनिरूपोंमें बहुत समयतक घूमताहै ९ उससे छः गुणित समयतक क्षत्रीवर्ण उत्पन्नहोताहै फिरउससे छःगुणित समयमें नाममात्रका ब्राह्मण होताहै १० फिर वह ब्राह्मण बन्धु अर्थात् नाममात्रका ब्राह्मणहोकर बहुतकालतक उसी योनीमें भ्रमण करताहै फिर द्विशत संख्यक समयमें शस्त्रधारण करनेवाली जीविकाको पाताहै ११ फिर वह शस्त्रोंसे जीविका करनेवाला बहुत कालतक उसीमें भ्रमणकरताहै इसकेपीछे त्रिशत संख्यक समयमें गायत्री जपकरनेवालों में जन्मको पाताहै १२ उस जन्मको पाकर बहुत समयतक उसीमें भ्रमण करताहै फिर चारशत संख्यक समय में वेदपाठी ब्राह्मणका जन्मलेताहै तब बहुतकाल पर्य्यन्त वेदपाठियोंके जन्मोंमें घूमताहै १३ हे पुत्र उस निकृष्ट ब्राह्मणमें हर्षशोक इच्छा ईर्षा अहंकार औरबड़ी वाचालताआदि दोषप्रवेशकरतेहैं १४ जब वह अपने इनशत्रुओंको विजय करताहै तब संद्गतीको पाताहै और जो कदाचित् वह शत्रुही उसको विजयकरलेतेहैं तब वह ऐसे गिराया जाताहै जैसे कि वृक्षके ऊपर से ताल गिरायाजाताहै १५

हेमतंग जो मैंने तुमसे वर्णन किया उसको चित्तमें रखकर दूसरे अभीष्टको मांगो ब्राह्मणवर्ण अत्यन्त दुःष्प्राप्यहै १६॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेइंद्रमतंगसंवादेअष्टाविंशोऽध्यायः२८॥

उन्तीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि इन्द्रके इन वचनोंको सुनकर वह तीक्ष्णबुद्धि व्रतमें सावधान मतंग एकहजार वर्षतक फिर एक चरणसेही ध्यानमें नियतहुआ १ और एकहजार बर्षके पीछे इन्द्र उसकेपास उसके देखनेकोआये और आनकर फिर वही वचन उससे कहा २ मतंग ने कहा कि मैं ब्रह्मचारी होकर एकचरण से एकहजार बर्ष तक खड़ारहा अब क्यों नहीं ब्राह्मणबर्ण होसक्ताहूं ३ इन्द्रने कहा कि चांडालयोनीमें उत्पन्न होनेवाले किसीदशामें भी ब्राह्मणबर्णको नहींपासक्ते ४ इससे तुम दूसरे वरको मांगो तेरा परिश्रम किया हुआ वृथा न जाय ऐसेवचनों को सुनकर अत्यन्त शोचग्रस्तहोकर वह मतंग ५ गयाजीमें जाकर सौ बर्षतक एकअंगूठे से खड़ारहा इस बड़े कठिन महाअसह्य योग के धारण करने से महादुर्बल हड्डियोंकी माला होकर वह धर्मात्मा पृथ्वीपर गिरपड़ा तब यहभी हमने सुना कि वरोंकेदेनेवाले सब जीवमात्रोंके उपकारी इन्द्र देवताने जाकर उस गिरतेहुये मतंगको पकड़लिया ६। ७ इन्द्र बोले हे मतंग इसलोकमें तेरा ब्राह्मणहोना असंभव और बिपरीत देखने में आताहै ब्राह्मणवर्ण अत्यन्त कठिनतासे प्राप्तहोनेवाला है और कामादिचोरोंसे घिराहुआहै८ब्राह्मणके पूजनसे सुखहोताहै और न पूजनेसे दुःख होताहै ९ ब्राह्मणही सब जीवमात्रों के मनोरथों का पूर्ण करनेवाला और रक्षाकरनेवालाहैपितृ और देवता ब्राह्मण के द्वारा तृप्त होतेहैं १० हे मतंग सब जीवोंमें ब्राह्मण उत्तम कहा जाताहै ब्राह्मण जो जो चाहताहै वही २ करसक्ताहै ११ हे तात इसीलोकमें बहुतसी योनियोंमें भ्रमताहुआ बारंबार जन्मलेताहुआ किसी जन्ममें ब्राह्मणवर्ण पाताहै वह ब्राह्मणवर्ण जीवोंको मिलना

कठिनतासे होताहै उसकोतुम मलिन अन्तःकरणवाले नहींपासक्ते इससे ब्राह्मण वर्णको छोड़कर दूसरा जोजो वरचाहो सो मैं तुमको दूं १२। १३ मतंगने कहा मुझ दुःखसे पीड़ामानको क्यों दुःख देतेहो और मृतकको क्या मारतेहो मैं आपको शोचताहूं कि आप ब्राह्मण की दयाआदि रक्षाको प्राप्तकरके फिर उनको नहीं पाते हो १४ हे इन्द्र जो ब्राह्मणवर्ण तीनोंवर्णोंको दुष्प्राप्य है इसीकारण वहसदैव कठिनतासे प्राप्तहोनेकेयोग्यहै क्योंकि मनुष्य उसको पाकर शान्तचित्तता आदिगुणोंसे उसकी रक्षानहीं करते १५ जैसे कि कठिनतासे प्राप्त होनेयोग्य धनको पाकर मनुष्य उसकी प्रतिष्ठा को नहीं जानतेहैं उसीप्रकार जो मनुष्य ब्राह्मणवर्ण की रक्षाकरना नहीं जानताहै वह महापापियोंसे भी नीचहै १६ निश्चय करके ब्राह्मणवर्ण बड़ेकष्टों से प्राप्तहोनेवाला है और जो कोई इसको प्राप्त भी करले तो इसकी रक्षा करनी महाकठिनहै मनुष्य उस दुष्प्राप्यको पाकर भी उसके अनुसार कर्म नहीं करते हैं १७ हेइन्द्र ईश्वरके वास्ते ब्रह्ममें क्रीड़ा करनेवाला सुख दुःख आदियोगोंसे और स्त्री आदि परिग्रहों से पृथक् शान्तचित्त और अहिंसा धर्म में नियत होकर मैं कैसे ब्राह्मणवर्णके योग्यनहीं हूं १८ हे इन्द्र यह पूर्वजन्मोंका कर्मरूपी दैव कैसा है जो धर्मका ज्ञाता भी होकर मैंने अपनी माताके दोषसे इस दशाको पाया १९ इससे निश्चय होताहै कि प्रारब्ध उपाय करनेसे उल्लंघनके योग्य नहीं होसक्ताहै हे प्रभु जिसके निमित्तमें उपाय करनेवाला होकर भी उसको नहीं पासक्ताहूं २० जो मैं आपकी कृपाके योग्य समझा जाऊं और मेरा कुछ कर्म भी शुभहै तो ऐसी दशामें आप मुझको धर्मरूप बरप्रदान देनेके योग्यहैं २१ वैशंपायन बोले कि इसबात को सुनकर इन्द्रने उनसे कहा कि मांगो तब तो वह मतंग इन्द्रकी आज्ञापाकर यह बचन बोला २२ कि आकाश में वर्त्तमान होकर अपनी इच्छाके अनुसार रूप धरनेवाला होकर स्वेच्छाचारी विहार करनेवाला होजाऊं और ब्राह्मण क्षत्रियों के अविरुद्ध पूजाको

प्राप्तकरूं २३ और हे इन्द्र मेरी कीर्त्ति जैसे अविनाशी होजाय वही आप करने को योग्यहैं हे बड़ेदेवतामैं आपको शिरसे दण्डवत् करताहुआ प्रसन्न करताहूं २४ इन्द्र बोले कि हे पुत्र तू छन्दोदेव इस नामसे प्रसिद्ध स्त्रियों का पूज्य अर्थात् पूजने के योग्य होगा और तीनोंलोक में तेरी असंख्य कीर्त्ति विख्यात होगी २५ इस रीतिसे इन्द्र देवता उसको वरदान देकर अन्तर्द्धान होगये फिर मतंगने भी समयपर प्राणोंको त्यागकरके उत्तमपदको पाया २६ हे भरतर्षभ इसरीतिसे यह ब्राह्मणवर्ण बड़ाउन्नत और श्रेष्ठ उत्तम स्थानहै वह इसलोकमें महाइन्द्रके वचनके अनुसार बड़ी कठिनता से प्राप्त होनेवालाहै २७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेइन्द्रमतंगसंवादेएकोनत्रिंशो ऽध्यायः २९॥

तीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे महावक्ता भीष्मजी यह बड़ा उत्तम आख्यान आपसेमैंने सुना १ हे महासाधुजो आप ब्राह्मणवर्णको कठिनतासे प्राप्तहोने योग्य कहतेहो तो पूर्व्वसमय में विश्वामित्र क्षत्रीने कैसे ब्राह्मणवर्णपाया इसकोसुना चाहताहूं २ हे प्रभुभीष्मजी मैंने सुना है कि राजा वीतहव्यने भी ब्राह्मणवर्णको पायाप्रथम उसीका वर्णन सुनना चाहताहूं ३ उस उत्तम राजाने किसकर्म या वरदान अथवा तपस्याके द्वारा ब्राह्मणवर्णको पाया वहमुझसे आप कहने को योग्यहैं ४ भीष्मजी बोले हे राजा जैसे कि बड़ेयशस्वी राजर्षि राजा वीतहव्य ने इसलोकमें अतिमान्य बड़ीकठिनता से प्राप्त होनेवाले ब्राह्मणवर्णको पाया उसको मैं तुमसे वर्णनकरताहूं ५ हेतात धर्मसे प्रजालोगोंके आज्ञादेनेवाले महात्मा मनुजीका पुत्र बड़ा धर्म्मात्मा शर्य्याति नामसे प्रसिद्धहुआ ६ उसके वंशमें राजा वत्सके दोपुत्र हैहय और तालजंघ नाम महाविजयीथे ७ हेराजेन्द्र हैहयकी दशस्त्रियोंमें सौपुत्र उत्पन्न हुये वह सब बड़े शूरवीर युद्ध में मुख न मोड़नेवालेथे ८ बराबर रूप प्रभाववाले पराक्रमी युद्ध

में शोभा पानेवाले वेद धनुर्वेद और सबशास्त्रोंमें परिश्रम करने वालेथे ६ और काशीदेशियों में दिवोदासका पितामह हर्य्यश्वनाम से प्रसिद्ध विजयी राजाओंमें बड़ाउत्तम राजाहुआ १० हे पुरुषोत्तम वहराजागंगा यमुनाके मध्य में वीतहव्यकेपुत्रोंकेसन्मुखहोकर युद्धमें मारागया ११ वह हर्य्यश्ववंशी महारथीउसराजाको मारकर निर्भयता पूर्वक वत्सवंशियोंकी सुन्दरपुरीको चलेगये १२ हर्य्यश्वकापुत्र सुदेवजोकि देवताकेसमान तेजस्वी और साक्षात् दूसरे इन्द्रके समानथा उसने राज्याभिषेककिया फिर काशीदेशके प्रसन्न करनेवाले उसधर्मात्माने प्रजा का पालन किया और युद्धमें सन्मुख होकर उनवीतहव्यकेही पुत्रोंकेहाथसे मारागया १३।१४ वह उसको मारकर अपनी राजधानीको चलेगये फिर सुदासकेपुत्र दिवोदास ने काशीके राज्यपर अभिषेककिया १५ बड़े तेजस्वी दिवोदास ने उन बुद्धिमानोंके पराक्रमको जानकर इन्द्रकी आज्ञासे वाराणसी पुरीको बसाया १६ वहपुरी ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्रोंसे भरीहुई बहुत द्रव्यका संचय रखनेवाली वृद्धियुक्त ब्यापार और अनेक ब्यापारोंके गोदाम आदि रखनेवाली १७ गंगाजीके उत्तरीय तट पर और गोमतीके दक्षिण तटपर ऐसी बसीहुईथी जैसे कि इन्द्रकी पुरीकी बस्ती १८ हे भरतर्षभ हैहयवंशियोंने फिर वहांआकर उस राजाके ऊपर चढ़ाईकरी १६ फिर उस बड़े तेजस्वी और पराक्रमी दिवोदासने अपने नगरसे निकलकर उनसे युद्धकिया वहयुद्धदेवासुरोंके युद्धके समान भयकारीथा २० हे महाराज उसराजाके सब घोड़े आदि मरगये थे इस कारण उसने बहुतसे युद्धों में दुःखको पाया २१ इसकेपीछे वह राजा जिसके शूरवीर मरे और धनका कोशभी खालीहोगयाथा अपनी पुरीको त्यागकर भागनेकी इच्छा करनेलगा २२ हे शत्रुहन्ता वहांसे जाकर उसराजाने भरद्वाजजी के उत्तमस्थान में पहुंच साष्टाङ्ग दण्डवत् करके उनकी शरणली वृहस्पतिजीके बड़ेपुत्र शीलवान् पुरोहित भरद्वाजजीने उसराजा दिवोदाससे कहा २३।२४ किहेराजायहां तेरेआनेका क्याप्रयोजन

है मुझसे सब वर्णनकरो मैं तेरा अभीष्टअवश्य करूंगा २५ राजाने कहा हे भगवन् युद्धमें वीतहव्यके पुत्रोंने मेरे वंशभर का नाशकर दिया मैं चारोंओर से आपत्तियों से फंसाहुआ निर्बल होकर आपकी शरणमें आयाहूं २६ हे भगवन् आप शिष्यताकी प्रीतिसे मेरी रक्षा करनेको योग्यहो यह मेरावंश उन पापात्माओं से नष्टकिया गया २७ तब महातेजस्वी प्रतापवान् भरद्वाजने उससेकहा कि हे सुदेवकेपुत्र दिवोदास तुमकोभय न होगा २८ हे राजामैं तेरे पुत्रके निमित्त यज्ञको करूंगा जिसके कारणसे तुमवीतहव्यके पुत्रों समेत हजारों शत्रुओंको मारोगे २९ इसके पीछे उसऋषिने उसके पुत्रोत्पत्तिका संकल्प करके यज्ञकिया तब इसकापुत्रप्रतर्दननाम उत्पन्न हुआ वह उत्पन्न होतेही तेरहवर्षकी अवस्थाकाहोगया तब उसने शीघ्रहीवेदको औरधनुर्वेदको पढ़लिया ३०।३१ बुद्धिमान् भरद्वाजजी केयोगवलसे भराहुआ वह बालक तेजस्वी और प्रतापवान्होगया क्योंकि वहभरद्वाजजीसबलोकोंकेवर्त्तमानतेजोंकोलेकर उसप्रतर्दन के शरीर में प्रवेशकरगये ३२ इसहेतुसे वह कवच धनुष धारण करनेवाला देवर्षियोंसे स्तुतिमान बन्दीजनोंसे प्रशन्सित प्रकाशमान सूर्यके समान शोभित होताभया ३३ वह खड्गधारी रथपरसवार होकर देदीप्य अग्निके समान प्रकाशमान अपने शोभित धनुषको टंकारताहुआचला ३४ सुदेवका पुत्र उसको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और वीतहव्यके पुत्रों को उसने अपने चित्तसे मराहुआही माना ३५ इसके पीछे वह राजा उस प्रतर्दनको अपने युवराज पदपर नियत करके अपनेको कर्मोंसे निवृत्तमानकर प्रसन्न हुआ ३६ हे शत्रुहन्ता इसके पीछे उस राजानेवीतहव्यकेपुत्रों के मारने की इच्छासे उनके पास अपने पुत्र प्रतर्दनको भेजा ३७ वह शत्रुओंके पुरोंका विजय करनेवाला महापराक्रमी राजा शीघ्रही रथ की सवारीमें गंगापार होकर वीतहव्यके पुत्रोंकी पुरीकोगया ३८ उसके रथका बड़ाशब्द सुनकर वीतहव्यके पुत्रभी रथोंपर चढ़कर बाहर निकले उनके रथ नगरके स्वरूप और शत्रुओंके रथोंके पीड़ा

देनवालेथे ३९ उन अपूर्व पराक्रमी कवच शस्त्रधारी नरोत्तमों ने पुरसे निकलकर प्रतर्द्दनको बाणोंकी वर्षा से घायल करदिया ४० और रथोंके द्वारा नानाप्रकारके अस्त्र शस्त्रोंकी ऐसी वर्षाकरी जैसे कि बादल हिमालय पर्वतपर वर्षाकरता है ४१ बड़े तेजस्वी राजा प्रतर्द्दनने उन सबके अस्त्रोंको अपने अस्त्रों से रोककर अपने वज्र और अग्निके समानबाणोंसे घायलकिया ४२ हे राजाफिर प्रतर्द्दन केभल्लनाम बाणोंसे उन क्षत्रियोंके शिरकटकर रुधिर में लिप्त पृथ्वी पर ऐसेगिरे जैसे वृक्षसे टूटकर किंशुकफूल गिरते हैं यदि उनसब पुत्रोंके मरनेसे राजा वीतहव्य अपने नगरको त्यागकर भृगुमुनिके आश्रमकीओरभागा ४३।४४ वहांजाकर उसवीतहव्यने भृगुजीकी शरणली तब भृगुजीने उसराजा को निर्भयकिया ४५ उसके पीछे-ही राजा प्रतर्द्दन बड़ी शीघ्रता से वहां आया वहांआकर उस दिवो-दासके पुत्रने भी सुन्दर आश्रमको पाकर यह बचन कहा ४६ कि हे महात्मा भृगुजीके शिष्य इस आश्रम में कौनहै मैंभी भृगुमुनिका दर्शन करना चाहताहूं आप मेरा आगमन मुनिजीसे कहदो४७ तब भृगुजी उस प्रतर्द्दनको जानकर आश्रमसे बाहर निकले और बुद्धिके अनुसार उस राजासे शिष्टाचार पूर्वक पूजनकरके कहा४८ कि हे राजेन्द्र कहो क्या कार्यहै तब राजाने अपने आने का यह वृत्तान्त कहा ४९ हे ब्रह्मन् यह राजा वीतहव्यहै इस को यहां से बिदा कीजिये इसके पुत्रोंके हाथसे मेरा सब वंश नाशहोगया ५० और काशीदेशों की राजधानी जो कि रत्नों के समूहों से पूर्ण थी उसको भी उन्होंने नाश कर दिया इसी से मैंने इस परा क्रमाभिमानीके सौपुत्र मारे ५१ अब इसके मारनेसे मैं पिताके ऋण से निवृत्तहूंगा तब धर्म्म धारियों में श्रेष्ठ करुणानिधान भृगुजी ने उससे कहा ५२ कि यहां कोई क्षत्री नहींहै सब ब्राह्मण लोग हैं प्रतर्द्दनने भृगुजीके इस सत्यबचनको सुनकर बहुत प्रसन्नता पूर्वक बड़ी मृदुतासे दोनों चरणोंको स्पर्शकरके यह बचन कहा हे ब्रह्मन् मैं निस्संदेह इसप्रकारसेभीकृतकृत्यहूं ५३।५४ जोमैंने आपने परा-

क्रमसे इसराजा को अपनी ज्ञातिसे पृथक् किया हे ब्रह्मन् मुझको आज्ञा दो और आनन्दका आशीर्वाद दो ५५ हे भृगुजी मैंने यह राजा दूसरे वर्णमें करदिया इसके पीछे उनसे आज्ञालेकर राजा प्रतर्द्दन अपने देशको चलागया ५६ हे महाराज जैसे कि सर्प विषको उगलकर निर्विकार होताहै उसीप्रकार उस वीतहव्य ने भृगुजीके वचनसेही ब्रह्मऋषिभावाको पाया ५७ हे राजा उसवीत हव्यने ब्रह्मवादी भावकोपाया फिर उस का पुत्र गृत्समदरूप में दूसरे इन्द्रकी समानथा ५८ और इन्द्रकी सारूप्यता से उसको निश्चयइन्द्रही जानकर दैत्योंने पकड़लियाथा और उस महात्माकी उत्तम श्रुति ऋग्वेदमें वर्त्तमानहै ५९ हे ब्रह्मन् जिस श्रुतिमें गृत्स-मदऋषि ब्राह्मणोंसे प्रतिष्ठा कियाजाताहै वह ब्रह्मचारी श्रीमान् ब्रह्मऋषि गृत्समदनाम से प्रसिद्धहुआ ६० गृत्समदकापुत्र सुतेजा नाम ब्राह्मणहुआ सुतेजाकापुत्र वर्चाहुआ और वर्चाकापुत्र बिहव्य नामब्राह्मणहुआ६१ बिहव्यकापुत्र बितत्य बितत्यका पुत्र सत्य और सत्यकापुत्र संतहुआ६२ उसकापुत्र श्रवाऋषि और श्रवाऋषिकापुत्र तमहुआ तमकापुत्र प्रकाशनामहुआ वह ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठथाप्रकाश का पुत्र वागिन्द्रहुआ वहभी बिजय करनेवालोंमें श्रेष्ठथा६३ उसका पुत्रप्रमिति वेदवेदांगका पारगामीहुआ और उसकापुत्र घृताची में रुरुनाम होताहुआ ६४ रुरुकापुत्र प्रमद्वरामें शुनक नाम ब्रह्मर्षी हुआ उसकापुत्र शौनकहुआ पूर्व्वमें प्रमितिको च्यवन ऋषिकापुत्र और प्रमितिकापुत्र रुरुको कहाहै यहां उसकी ऐक्य ताहै कारण यहहैकि वहीनाम इसकुलमेंभी रक्खेगये क्योंकि वीतहव्यका कुल भृगुवंशियोंमेंहीसंयुक्तहै६५ हेराजेन्द्र इसरीतिसे क्षत्रियोंमें श्रेष्ठराजा वीतहव्यने भृगुजीकी कृपा से ब्राह्मण के भावको अर्थात् ब्राह्मण वर्णको पाया ६६ हे महाराज इसरीति से मैंने गार्त्समद वंशका ब्यौरेसमेत तुमसे वर्णनकिया इसके सिवाय दूसरी कौनसी बात पूछतेहो ६७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेवीतहव्योपाख्यानेत्रिंशोऽध्यायः ३० ॥

इकतीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे भरतर्षभ इसत्रिलोकीमें निश्चय करके कौन२ से मनुष्यपूजन के योग्यहैं उनको बिस्तार पूर्व्वक वर्णन कीजिये क्योंकि मैं आपके वर्णनोंसे तृप्तनहीं होता हूं १ भीष्मजी बोले कि इस स्थानपर इस प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें नारदजी और वासुदेवजीका प्रश्नोत्तरहै २ उत्तमब्राह्मणोंका पूजनकरनेवाले नारदजीको हाथजोड़ेहुये देखकर श्रीकृष्णजीने प्रश्न किया कि हे नारदजी आपकिसको नमस्कार करतेहैं ३ हे धर्मजानने वालों में श्रेष्ठ भगवान् हेब्राह्मणोंके पूजन करनेवाले आप किसको नमस्कार करते हैं जो यह हमारे सुनने के योग्य होय तो बर्णन कीजिये ४ नारदजी बोले हे शत्रुहन्ता गोबिन्दजी मैं जिसको पूजताहूं उसके सुननेको इसलोकमें आपके सिवाय दूसरा कौनपुरुष योग्यहै आप सुनिये ५ हेप्रभु बरुण, बायु, सूर्य्य, पर्जन्य, जातवेदस, स्थाणु, स्कंद, लक्ष्मी, बिष्णु, ब्राह्मण ६ वाचस्पति, चन्द्रमा, जल, पृथ्वी, और सरस्वतीको जो पुरुष नित्य नमस्कार करतेहैं उन पुरुषों को मैं नमस्कार करताहूं ७ हे यादवोत्तम जो तपरूप धन रखनेवाले वेदज्ञ सदैव वेदके अनुसार कर्मकरनेवाले और बड़े पूजनके योग्यहैं मैं उनको सदैवपूजन करताहूं ८ हेप्रभुजो अपनी प्रशंसा न करने वाले सन्तोषी शान्तचित्त मनुष्य बिना भोजन किये देवकार्य्यों को करतेहैं मैं उनको नमस्कार करताहूं ९ जो शान्तचित्त शिक्षित जिते न्द्री मनुष्य अच्छी रीतिसे यज्ञोंको करतेहैं अथवा सत्यता पूर्वक धर्मको पूजन करते हैं अथवा पृथ्वी गौ आदिका दान ब्राह्मणोंको करते हैं हे श्रीकृष्ण जोमैं उनको ध्यानसे नमस्कार करता हूं १० वनमें मूल फलोंके खानेवाले संचयन न करनेवाले संध्या आदि कर्मों में प्रवृत्त होकर जो पुरुष तप करते हैं हे यादवजी मैं उनको नमस्कार करताहूं ११ जो आदमी दास आदिके पोषण में समर्थ सदैव अतिथियोंका सत्कार करनेवाले देवताओंसे शेष बचे

हुये अन्नको भोजन करतेहैं १२ वा निर्भय होकर सुष्टुभाषी ब्रह्म-
चारी वेद को प्राप्त होकर सदैव यज्ञ करने कराने और वेद
पढ़ने पढ़ाने में प्रवृत्तहैं मैं उनको नमस्कार करताहूं १३ जो
पुरुष सदैव सब जीवधारियों में प्रसन्नचित्त दोपहर तक वेदपाठ
वाजपमें प्रवृत्तहैं मैं उनको नमस्कार करताहूं १४ जो दृढ़ब्रतवाले
गुरु सेवापरायण दूसरेके गुणमें दोषन लगानेवाले गुरूकीप्रसन्न-
ताके अर्थ ब्रह्मयज्ञ या मन्त्र जपआदि उत्तम कर्मोंसे उपाय करने
वालेहैं १५ अथवा जो ब्राह्मण सत्य संकल्प सुन्दर ब्रतवाले मुनि
रूप यज्ञोंके द्वारा देवता और पितरोंको हव्यकव्य पहुंचानेवालेहैं
हे यादव मैं उनको नमस्कार करताहूं १६ जो पुरुष भिक्षावृत्ती में
प्रवृत्त दुर्बल शरीर सुखसे रहित निर्द्धनहोकर गुरुकुलमें शरण
रूपहैं १७ अथवा वेदको प्राप्त होकर ममता और सुख दुःखादिसे
रहित निर्पेक्ष और निर्भय होकर ब्रह्मबादीहैं १८ और हिंसासे रहित
सत्यव्रती शान्तरूप शुभकार्य्योंमें परिश्रमीहैं हे श्रीगोबिन्दजी मैं
उनको नमस्कार करताहूं १९ जो गृहस्थी देवता अतिथिकी पू-
जामें प्रवृत्त सदैव कपोतवृत्तीहैं २० अथवा जिन पुरुषोंके चतुर्वर्ग
दायक कर्मोंमें मनलगे हुयेहैं और उत्तममध्यम निकृष्ट पदोंसे नहीं
गिरतेहैं वा अच्छेपुरुषोंके आचार में प्रवृत्तहैं मैं उनको सदैव नम-
स्कार करताहूं २१ हे केशवजी जो शास्त्रज्ञ पुरुष धर्म अर्थकामका
अभ्यास रखनेवाले निर्लोभी और उत्तम कर्म करनेवालेहैं उनको
नमस्कार करताहूं २२ जो पुरुष केवल जलपान करनेवाले वायु-
भक्षी और सदैव सुधाको भक्षणकरतेहैं अर्थात् बलिवैश्वदेव कर्म
करके शेषअन्नका भोजन करनेवाले नानाप्रकारके व्रतोंसे संयुक्तहैं
हे माधव मैं उनको नमस्कार करताहूं २३ जिन्होंने बिवाह नहीं
किया और जो स्त्री वा अग्निहोत्र से संयुक्तहैं और वेदोंके रक्षा
स्थानहैं और सब जीवोंके आत्मारूपहैं मैं सदैव उनको नमस्कार
करताहूं २४ हे श्रीकृष्णजी मैं इन सब संसारके पिता बड़े कुलीन
आपत्ति और उपद्रवों के नाश करनेवाले सबके वृद्धलोक के प्रकाश

करनेवाले ऋषियोंको नमस्कार करताहूं २५ हे निष्पाप यादवजी इसीकारण से आपभी सदैव ब्राह्मणोंको पूजो वह पूजनके योग्य ब्राह्मण पूजित होकर तुमको सुख दायीहोंगे २६ इसलोक और परलोकमें सुखके देनेवाले यह ऋषि सदैव घूमते हैं वह पूजित होकर आपको आनन्ददेंगे २७ जो पुरुष गौ और ब्राह्मणोंमें सदैव सबका पूजन करनेवालेहैं और सदैव सत्यतामें अनुरक्तहैं वह बड़ी२ आपत्तियों से पार उतरतेहैं २८ जो मनुष्य सदैव शान्त चित्तहैं और दूसरे के गुणोंमें दोष नहीं लगातेहैं और सदैव ब्रह्म यज्ञ वा मन्त्रोंका जप करते हैं वह कठिनताओं से पार होतेहैं २६ जो पुरुष केवल वेदमें निष्ठा रखनेवाले जप यज्ञके कर्त्ता श्रद्धावान् और जितेन्द्रीहैं वह सब देवताओंके नमस्कार करनेवाले हैं अर्थात् सब यज्ञ और जपादिमें बर्त्तमानहैं वही कठिनताओंसे निवृत्त होतेहैं इसीप्रकार जो सावधान व्रत मनुष्य उत्तम ब्राह्मणोंको नमस्कार करके दान करनेमें प्रसक्त होतेहैं वह कठिनताओं से निवृत्त होतेहैं ३०।३१जो आदमी बाल्यावस्थासे ब्रह्मचारी तपस्वीऔर तप से पवित्र अन्तःकरणहैं वह कठिनतासे पार उतरसक्तेहैं ३२ जो पुरुष देवता अतिथि और पोषणके योग्य दासआदि वा पितरोंके पूजनादिमें संलग्नहैं और जो उत्तम मनुष्योंके अन्नको अथवा उत्तम भोजनकी बस्तुओंको भोजन करतेहैं वह बिपत्तियोंसे पार होतेहैं३३ जो नम्र मनुष्य बुद्धिके अनुसार अग्निस्थापन करके धारण करतेहैं और सोमकीआहुतिको प्राप्तहैं वह कठिनताओं से पार होतेहैं ३४ हे यादव जो मनुष्य सदैव माता पिता और गुरुओंके साथ आपके समान अच्छा बरताव करतेहैं वह दुःखोंसे तरतेहैं ऐसे२ वचन कह कर वह नारदजी मौनहोगये ३५ हे कुन्तीनंदन इसीकारणसे तुम भी सदैव देवता पितृ अतिथि और ब्राह्मणोंको अच्छीरीतिसे पूजते हुये यथेच्छगतिको पावोगे ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेकृष्णनारदसंवादेएकत्रिंशतमोऽध्यायः३१॥

——*——

बत्तीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरने प्रश्न कियाकि हे महाप्राज्ञ सर्वशास्त्र विशारद पिता मह मैं आप से धर्मको सुनना चाहताहूं १ हे भरतर्षभ जो पुरुष शरणागत होनेवाले चारोंप्रकारके जीवोंकी रक्षा करतेहैं उसका मुख्य फल क्या होताहै२ भीष्मजी बोले हे बड़े बुद्धिमान् शुभकीर्त्ति वाले धर्म पुत्र तुम इसप्राचीन समय के इतिहासको सुनो जिसमें शरणा गतकी रक्षाके महाफलका वर्णन है ३ बाजसे गिरायाहुआ बड़ा स्वरूपवान् कपोत पक्षी उस महाभाग राजा वृषदर्भ की शरण में आया ४ उस पवित्रात्मा राजाने भयभीत होकर अंकमें आने वाले उस कपोतको देखकर उसको विश्वास देकरकहा कि हे पक्षी तू विश्वास युक्त होजा अब तुझको किसीप्रकार का भय नहींहै ५ हे कपोत तुमको किस जीवसे बड़ा भयहै अथवा तुमने कहीं कोई कर्म कियाहै जिसके कारण तू चित्तसे व्याकुल भ्रान्तीसे युक्तहोकर यहां आयाहै ६ नवीन नीलकमल के समान कोमल शरीर सुंदर वर्ण देखने में शोभित दाड़िम और अशोकके फूलकी समान नेत्र वाले अब तू निर्भयहै किसी का भय न कर ७ तुझ मेरी शरण में आनेवाले को कोईजीव चित्तसे भी पकड़ने को समर्थनहीं होसक्ता ८ हे कपोत अब मैं तेरे निमित्त काशीके राज्यको और जीवन को भी त्याग करसक्ताहूं तू निर्भय होकर अब विश्वास युक्तहो तुझको किसी से भी भयनहीं होसक्ता ९ बाजने कहा हे राजा यह कपोत मेरा भोजन नियत हुआहै मैंने बड़े परिश्रम और उपायोंसे इसको पायाहै इसकी रक्षा करनेको आप योग्य नहीं हैं १० इसका मांस रुधिर भेजा चरबी मेरा पौष्टिक भोजनहै यह मेरी तृप्ती का करने वालाहै इस मेरे भोजन का तू रक्षक मतहो ११ हे राजा मुझको रुधिरकी पिपासा महापीड़ित कररही है और कठिन क्षुधासे मैं अत्यन्त व्याकुलहुआ जाताहूं इसको आप छोड़दीजिये मुझमें भूख के रोकने की सामर्थ्य नहींहै १२ यह कपोत मेरे पक्ष और नखों से

घायल अच्छीरीतिसे पीड़ा कियाहुआ जिसकापोड़ासा श्वासवाकी है इसकी आपरक्षा करने के योग्य नहींहो १३ हे राजेन्द्र यह सत्यहै कि तुम अपने देशके बीचमें मनुष्योंकी रक्षा करने के स्वामी हो परंतु क्षुधासे पीड़ामान पक्षीके स्वामी आपनहीं हैं १४ यद्यपि आप अपने शत्रु दासकर्म बालबच्चे व्यवहार और इन्द्रियों के विषय के पराक्रम और शासनमें कर्मको करतेहो वह तो योग्य है परन्तु आकाशचारी जीवोंपर आपको बल और शासन करनायोग्य नहीं १५ आज्ञा भंग करनेवाले शत्रुओंपर अच्छीरीतिसे पराक्रम करना तेरे राज्य का शासनहै जो आप धर्मके इच्छावान् हो तो इस दशामें आप मेरी ओरको भी देखने के योग्यहो अर्थात् मुझ अपत्रको मेरी जीविका के रोकनेवाले तुझ धर्मेच्छा वाले को भी अधर्महोगा १६ भीष्मजी बोले कि उस राजऋषिने बाज के इन बचनों को सुनकर बड़ा आश्चर्य्य किया फिर उसकी और उसके बचनोंकी प्रशंसा करके उस कपोतके चाहने वाले राजाने उत्तर दिया १७ कि अब तेरे और तेरी क्षुधाके दूर करने के निमित्त बैल वराह भैंसा जो तू चाहै सोले १८ परन्तु अब शरणागतकोमैं कैसे त्यागकरसक्ताहूं क्योंकि शरणागत पर रक्षा करनाही हमराब्रतहै यह पक्षी मेरे अंगोंको नहीं छोड़ताहै हे पक्षी तुम भी इसको देखो १९ बाज बोला कि मैं बैल वराह मृग और अन्य पक्षियोंको भी नहीं खाताहूं क्योंकि जो मेरे खानेके अयोग्य हैं उनसे मुझे क्या प्रयोजन है २० आप देवताओंने जो मेरा भोजन पूर्वसे नियत कियाहै वही भोजन मुझको उचितहै अर्थात् बाजपक्षी केवल कपोतोंकोही खातेहैं यह प्राचीन मर्य्याद चली आईहै २१ हे निष्पाप राजा उशीनरजो तेरी इसी कपोत में प्रीतिहै तो तुम इसके समान तराजूमें तोलकर अपना मांस मुझको दो २२ राजा ने कहा कि आपकी मुझ पर बड़ी कृपा हुई जो ऐसा वचन कहा बहुत अच्छा ऐसाही करूंगा यह कहकर उस श्रेष्ठ राजाने २३ अपने मांसको काट २ कर तराजू में तोला इसके अनन्तर रत्नों से अलंकृत

उसके महलकी रानियां २४ इसवृत्तान्तको सुनकर अत्यन्त दुखी और हाय२ करतीहुई महलसे बाहर निकलीं तब उनओंवा मंत्री और दासआदिके रुदन शब्दसे २५ ऐसाबहुत बड़ाशब्दहुआ जैसे कि बड़ाघोर बादलशब्दकरताहै उससमय अभ्रसे रहित आकाश चारोंओरको मेघोंसे रुकगया २६ उसराजा के सत्य कर्म से पृथ्वी कंपायमानहुई जोमांस भुजाके समीपसे और जंघाके समीपका था २७उस मांसकोराजा अच्छीरीतिसेकाट२ करधीरे २ तराजूको भर ताथा तबभी वहमांस कबूतरकेसमान नहींहोताथा २८ जब अपने मांसको काटते काटते उसराजाके शरीरमें अस्थिमात्र रहगये और रुधिर चूनेलगा तबवह राजाआप उसतराजूपरचढ़ा २६ इसकेपीछे इन्द्रसमेततीनोंलोक उसमहाराजके सन्मुखआकरउपस्थितहुये और आकाशमें वर्त्तमान देवताओंने भेरी और दुन्दुभी बजाई ३० और राजाभी अमृत से सींचा गया तदनन्तर उसपर दिव्य सुखदायी पुष्पोंकी वर्षा हुई ३१ सबओरको देवगंधर्वोंके समूहोंसमेत अप्सरा ओंनेनृत्य और गानको ऐसा देखाया जैसे कि प्रभु ब्रह्माजी नृत्य और गानों से प्रसन्नकिये जातेहैं ३२ इसके पीछे सुवर्ण के महलों से और मणियोंसे खचित कंचनके द्वार समेत वैडूर्यमणिके खंभ वाले विमानमें वहराजा सवारहुआ ३३ क्योंकि वह राजऋषि उस शुभकर्म से सनातन स्वर्गको गया हे युधिष्ठिर तुमभी शरणा गतोंकेऊपर सबप्रकारसे पोषणादि कर्मोंकोकरो ३४ भक्तोंका मित्रों का और शरणागतोंका रक्षक सब जीवोंपर दयाकरने वाला मनुष्य परलोकमें सुखसेवृद्धिको पाताहै३५ जो शुभकर्मी राजा उत्तमपुरुषों कीरीतिपर कर्मकोकरताहै इस लोकमें अपने निश्छल कर्मोंसे उस को कोईपदार्थ या वस्तुअप्राप्तनहींहै अर्थात् सब प्राप्तहोसक्ताहै३६ वह काशीदेशोंका स्वामीतच्चा पराक्रमी पंडित शुद्ध अन्तःकरण राजऋषि तीनों लोकोंमें अपने कर्मसे प्रसिद्धहुआ ३७ हे भरतर्षभ जो दूसरा राजाभी इसीरीतिसे शरणागतोंकी रक्षा करेगा वहभी उसीगतिकोपावेगा ३८ राजऋषिवृषदर्भके इसवृत्तान्तको जोलोक

में विख्यातकरेगा वहपवित्रात्मा होगा और जोसदैव सुनेगावहभी पवित्र होगा ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्म्मेश्येनकपोतोपाख्यानेद्वात्रिंशोऽध्यायः ३२ ॥

तेंतीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे पितामह राजा के सबकर्मोंमें कौनसा कर्मश्रेष्ठ है राजाकौनसेकर्मोंकोकरकेदोनोंलोकोंको अच्छीरीतिसेभोगता है १ भीष्मजी बोले हे भरतवंशी राज्याभिषेक करनेवाले राजाका यही बड़ाकर्म कहाताहै कि जोराजा सुखकी इच्छाकरै वह ब्राह्मणोंको यथेच्छ पूजनकरे २ और जबकरेतब वेदपाठीब्राह्मणकाही सदैवपूजन करे ३ और इसीरीतिसे विश्वासयुक्त उत्तमजीविका और नमस्कारसे पुरवासी देशवासी और अनेकशास्त्रों के ज्ञाताब्राह्मणोंका भी पूजन बिधिपूर्व्वककरे ४ सदैव राजाके इसबड़ेभारी कर्मको जाने कि जैसे अपने शरीरको वा पुत्रोंको पोषणकरता है उसीप्रकार इनपुरवासी आदिकोंभीपोषणकरे ५ और जो इनब्राह्मणोंमें बड़ेप्रतिष्ठितहैं उनको उनकी योग्यताके समानबड़ा पूजनकरे उनलोगों के शान्तरूपहोने परवह सबदेश आनन्दसे प्रकाशमान होताहै ६ वहसब इसरीतिसे पूजन नमस्कार और प्रतिष्ठाके योग्यहैं जैसे कि पितरलोग और उन्हीलोगोंमेंलोकोंका प्रबन्धभीऐसाहै जैसेकिपर्जन्यनाम बर्षाकेमेघों सेजीवोंकाप्रबंध इन्द्रके द्वाराहोताहै ७ वहसच्चे पराक्रमी और उग्ररूप ब्राह्मण अनुष्ठानके उपायोंसे वा संकल्पमात्रसेभी भस्मकरसक्ते हैं और क्रोधरूपहोकर अत्यन्त नाशकरसक्ते हैं ८ मैंउन्हों के नाश कर्त्ताको नहींदेख सक्ताहूं औरउन्होंकेलिये सबदिशा बे रोकटोक हैं वहजब क्रोधयुक्तहोतेहैं तबइसरीतिसे देखतेहैं जैसेकिवनों में प्रज्वलित अग्नि होतीहै ९ जो मनुष्य बिना बिचारकिये कर्म को करने वालेहैं वह इन ब्राह्मणों सेभयभीत होतेहैं क्योंकि इन में अनेक गुणहैं और जैसे कि तृण आदिसे ढकाहुआ कूपहोताहै उसीप्रकार उनमेंभी कोई जड़ भरतादिक सरीके गुप्तहोतेहैं और कोई २ स्वर्ग

के समान अत्यन्त पवित्र वशिष्ठादिक सरीके होतेहैं १० इनमेंकोई तो हठसे कर्मकरनेवाले दुर्वासादिकहैं और कोई कपास के सदृश मृदु गौतमादिकहैं कोई बड़े शठ अगस्त्यादिक हैं इसीप्रकार अन्य बहुतसे तपस्वीहैं ११ कोई उद्दालक आदि खेती और गौको रक्षा को करतेहैं और कोई दत्तात्रेयी आदि भिक्षाकरनेवालेहैं कोई चोर वाल्मीक और विश्वामित्र आदिक हैं कोई कलहप्रिय नारदादिक हैं इसीप्रकार कोई भरतादिक नट और नर्तकहैं १२ हे भरतर्षभ कोई कोई ब्राह्मण राजा और वैश्य आदिकोंकेपास समुद्रके शोषण आदिके सहनेवाले नानाप्रकारके रूप रखनेवाले ब्राह्मणहैं १३ संसारकी रक्षाके निमित्त नानाप्रकारके कर्मोंमें चित्तसे प्रवृत्तअनेक कर्मोंसे निर्बाह करनेवाले उन सत्पुरुषोंके धर्म ज्ञानको सदैववर्णन करनेवालेहैं १४ हेराजा यह महाभाग ब्राह्मण इनपितृदेवता मनुष्य सर्प और राक्षसोंसेभी प्राचीनहैं १५ यह ब्राह्मण इन देवता पितरगन्धर्व राक्षस असुर और निशाचरोंसेभीविजयकरने के असंभवहैं १६ यही ब्राह्मण देवताको अदेवता और अदेवताको देवता करसक्तेहैं जिसको चाहैं उसको राजाकरें जिसको न चाहैं उसका पराभवहो १७ हेराजा जो निर्बुद्धीलोग ब्राह्मणोंकी निन्दा करता है वह निस्सन्देह नाश होजाताहै यह तुमसे मैं सत्यही सत्य कहता हूं १८ निन्दा प्रशंसामें कुशल और कीर्ति अकीर्ति में परायणवह ब्राह्मण अपने विरोधियों के ऊपर सदैव क्रोध करतेहैं १९ ब्राह्मण जिसकी प्रशंसा करतेहैं वहमनुष्य अत्यन्त वृद्धिको पाताहै औरजो पुरुष ब्राह्मणों करके निन्दितकिया जाताहै वह क्षणमात्रमेंही निर्लज्जता और नाशको पाताहै २० शक यवन कांबोज आदि जो २ क्षत्रियजातिहैं उन सब जातोंने ब्राह्मणोंकेदर्शन न करनेसे वृषलताकोपाया अर्थात् शूद्रवर्णकोपाया २१ द्राविड़,कलिंग,पुलिन्द,उशीनर,कोलिसर्प, और महिषक नाम क्षत्रियजातोंने २२ ब्राह्मणोंका दर्शन न होनेसे शूद्रवर्णको पाया है विजय करनेवालोंमें श्रेष्ठ उन ब्राह्मणोंसे हारना अच्छाहै विजय पानानहीं अच्छाहै २३ जो म-

नुष्य ब्राह्मण के सिवाय इस सब संसारको मारे और एक ब्राह्मण को भी मारे वह समान नहींहै क्योंकि ब्रह्महत्या महापापहै यहमहर्षियों का कथन है २४ ब्राह्मणोंकी निन्दा किसी दशामें भी न सुनना चाहिये जहां कोई निन्दाकरे वहांसे उठजाय अथवा नीचेशिरसे मौनहोकर बैठारहै २५ ऐसा मनुष्य इस पृथ्वीपर न उत्पन्नहै न आगे होगा जो ब्राह्मणोंके साथ द्वेष करने अथवा ब्राह्मणोंके विपरीत कर्मोंके करनेसे आनन्द पूर्वक जीवन करनेकी बुद्धि करे २६ हे राजा जैसे मुट्ठीसे वायुका पकड़ना हाथ से चन्द्रमाका स्पर्श करना और पृथ्वीका उठालेना कठिनहै इसीप्रकार इस पृथ्वी पर ब्राह्मणोंका विजय करनाभी अत्यंत कठिनहै २७॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेब्राह्मणप्रशंसावर्णनेत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३॥

चौंतीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि ब्राह्मणका सदैव अच्छीरीतिसे पूजनकरेक्योंकि यह लोग चन्द्रमाको राजा रखनेवाले और सुख दुःखोंके स्वामीहैं १ इन ब्राह्मणोंको राजालोग भोग आभूषण और अन्य२ अभीष्ट वस्तुओं से नमस्कार पूर्वक सदैव पूजनकरें ये ब्राह्मण पिताकी समान रक्षा और पोषणके योग्यहैं २ जैसे कि जीवोंको सुखपूर्वक शान्ती इन्द्रसेहोतीहै उसीप्रकार देशकी शान्तीब्राह्मणों के उस पूजनसे होतीहै जो किब्रह्मतेज से प्रकटहोनेवालीहै क्योंकि देशमें ब्राह्मण लोग पवित्र अग्निरूप शुद्ध आचरणवाले पवित्र मंत्रोंके ज्ञाताहैं ३ हे राजा जब कि धर्मज्ञ तेज व्रतधारी कुलीन ब्राह्मणको घरमें निवास करवावे तो शत्रुओंके विजय करनेवाले महारथी राजाकी क्या आवश्यकता है क्योंकि उससे बढ़कर नहीं है जो भोजनकी वस्तुआदि ब्राह्मणकेनिमित्त दान करीजाती है उसको देवता भी अंगीकार करतेहैं ५ औरसब जीवोंके पितरभीमनसे स्वीकार करतेहैं इन ब्राह्मणोंसे उत्तम कोई नहींहै सूर्य्य, चन्द्रमा,

वायु,जल,पृथ्वी,आकाश और दिशा ६ यह सब ब्राह्मणके शरीर में प्रवेश करके सदैव भोजनकी वस्तुओंको खातेहैं जिसके अन्नको ब्राह्मण नहीं भोजनकरतेहैं उसकेपितरभी भोजन नहीं करतेहैं ७ जो ब्राह्मणका शत्रुहै उस पापी मनुष्यके अन्नको देवताभी भोजननहीं करतेहैं और पितरदेवता ब्राह्मणों के तृप्तहोनेसे सदैवतृप्तहोतेहैं ८ इसीप्रकार देवताभी संतुष्ट होतेहैं तो यहभी निस्सन्देहहै किजिनकी वहभोजनकी वस्तुहै वहदाताभी प्रसन्न होतेहैं ९ वहदातालोग नाश नहींहोतेहैं किन्तु परमगति रूपमोक्षको पातेहैं मनुष्य जिन २ भोजन की वस्तुओंसे ब्राह्मणको तृप्त करताहै १० उसी उसीभोजनकीवस्तुसे देवता पितरभी प्रसन्न और संतुष्टहोतेहैं ब्राह्मणसेही वह यज्ञादिक उत्पन्न होतेहैं जिनसे कि सब सृष्टि उत्पन्न होतीहै (इसका यह प्रयोजनहै कि श्रुतिमें लिखाहै कि अग्निमें होमी हुई आहुति सूर्य्यके पासजातीहै तब सूर्य्यसे वर्षा होतीहै वर्षासेअन्न और अन्नसेप्रजा उत्पन्न होतीहै) ११ जिससे संसारकी उत्पत्ति होतीहै और मरनेके पीछे जिसमें सबलयहोतेहैं वह और स्वर्ग नरकका मार्ग यह सब ब्राह्मणहीहै अर्थात् ब्राह्मणकी ही प्रसन्नतासे और क्रोधसे यह सब प्राप्तहोताहै इसको यथार्थही जानो १२ हे भरतर्षभ जो द्विपादोंमें श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मणहै वह भूत भविष्य को और अपने धर्मको जानताहै १३ जो मनुष्य इस ब्राह्मणकी आज्ञानुसार कर्मोंको करतेहैं उनका कभी पराभव नहीं होताहै न वह नाशकोपातेहैं न अप्रतिष्ठाको पातेहैं १४ जो मनके जीतनेवाले बड़े बुद्धिमान् मनुष्य ब्राह्मण के मुखसे निकलेहुये वचनको स्वीकारकरतेहैं वह नाशको नहीं पातेहैं १५ पराक्रम और प्रतापसे तपानेवाले क्षत्रियोंके बल और तेज ब्राह्मणोंमेंही शान्तीको पाते हैं १६ भृगुवंशियोंने ताल जंघ नाम क्षत्रियोंको विजय किया अंगिरा वंशियोंने नीपनाम क्षत्रियोंको और भरद्वाजने वैतहव्य और नैलवंशी क्षत्रियोंको विजय किया १७ जिनकी ध्वजा कृष्ण मृगका चर्म्महै उन ब्राह्मणोंने अपूर्व शस्त्रधारी क्षत्रियों को विजय किया इसीकारण पृथ्वीको

ब्राह्मणोंके अर्थ दानकरके परलोक संबन्धी कर्मोंका प्रारंभकरे वह कर्म दोनों लोकोंमें प्रकाशको उत्पन्न करताहै १८ जो भूत भविष्य स्थूल सूक्ष्मआदि जो कुछलोकमें ब्रह्मपर्यन्त कहा जाताहै अथवा सुना और पढ़ाजाताहै वह सब ब्राह्मणोंमेंऐसे गुप्तहैं जैसे कि लक-ड़ियोंमें अग्नि होतीहै १९ हे भरतर्षभ इसस्थानपर इस प्राचीन इतिहासको भी कहताहूं जिसमें कि पृथ्वी और वासुदेवजीका प्र-श्नोत्तरहै २० वासुदेवजी बोले कि हे शुभस्त्री तू सब जीवोंकी माताहै तुझसे मैं एक सन्देह को पूछताहूं कि कुटुम्बी मनुष्य किस कर्मसे अपनेपापकोदूरकरताहै २१ पृथ्वी बोली ब्राह्मणोंकाहीसेवन बड़ा पवित्रकर्महै ब्राह्मणोंके सेवनकरनेवाले मनुष्यका सबरुजनाश होजाताहै २२ ब्राह्मणोंकेही पूजनसे ऐश्वर्य्य यशकीर्त्ति और आत्म-ज्ञान उत्पन्न होताहै शत्रुओंका विजयीमहारथी राजा खोजनेके यो-ग्यहै २३ नारदजीने मुझसे यह कहाहैकि धर्मज्ञ तीव्रबुद्धि पवित्र कुलीन ब्राह्मणको सब ऐश्वर्य्यके निमित्त इच्छा करे २४ भूतभविष्य वर्त्तमानके जीवधारियोंसे उत्तमजो देवताहैं उनसेभी बढ़कर जोब्रा-ह्मणहैं वह जिसकी प्रशंसा करतेहैं वहबड़ी वृद्धिको पाताहै २५ जो मनुष्य ब्राह्मणोंसे कठोर वचन कहताहै वह थोड़ेहीसमयमें नष्टहो-जाताहै जिसप्रकारसे समुद्रमें गिराहुआ मृत्तिका का ढेला गलकर नष्टहोजाताहै २६ उसी प्रकार ब्राह्मणसे करीहुई सच्चीशत्रुताउस-के नाशको करनेवाली होतीहै देखो चन्द्रमामें कलंक उत्पन्न किया और समुद्रको खारी किया २७ इसी प्रकार महाइन्द्रके सहस्रभगहुई थींपरन्तु इन्हीं ब्राह्मणोंके प्रभावसे फिर इन्द्र सहस्राक्षहोकर हजार यज्ञोंकाकरनेवालाहुआ २८ हेमाधवजी उनकेप्रभावकोदेखोकिइनकी कृपासेकैसे२कामहुये और क्रोधहोनेसे कैसी२ हानिहुई हेमधुसूदन जी जो पवित्रबुद्धिमान् मनुष्य अपनी शुभकीर्त्ति ऐश्वर्य्य और लोकों को चाहै वह ब्राह्मणों के उपदेशमें नियतहो २९ हे कौरव फिरमधु-सूदनजीने पृथ्वी के इस वचनको सुनकर उसकी प्रशंसाकरी और बड़ा धन्यवाद किया ३० हेराजा युधिष्ठिर तुमभी इस उत्तम इति-

हास को सुनकर सावधानता से सदैव ब्राह्मणों को पूजो इसीसे तुम्हारा कल्याण होगा ३९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेपृथ्वीवासुदेवसंवादे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ३४ ॥

पैंतीसवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोलेकि यहमहाभाग सबजीवोंका अतिथि सबसे प्रथम भोजन करनेके योग्य ब्राह्मण जन्मसेही सबसेबड़ा और नमस्कार करनेकेयोग्य होताहै १ हेतातजिनब्राह्मणोंसे धर्मादिक सबअर्थ प्राप्त होतेहैं और जो सबकेशुभ चिन्तक और देवताओंके मुखरूपहैं वह ब्राह्मण पूजित होकर अपने मंगली वचनोंसे कल्याणकारी आशीर्वाद देतेहैं २ हेतात हमारे शत्रुओंसे अपूजित क्रोधमेंभरेहुये वह ब्राह्मण अपकारी वचनों से हमारे सब शत्रुओं को बुरा आशीर्वाद देकर नाशकरो ३ प्राचीन वृत्तान्तके जाननेवाले मनुष्य पूर्वसमय कीकहीहुई गाथाओंको कहतेहैं जिसप्रकारसेकि ईश्वरने ब्राह्मणोंको उत्पन्न करके नियम कियाहै ४ इसलोकमें जबकि बुद्धिके अनुसार रक्षित ब्राह्मण सब की रक्षा करता है तो फिर दूसराकोई कर्म न करना चाहिये इन ब्राह्मणोंसे तुम्हारा कल्याणहोनाबहुत श्रेष्ठहै ५ ब्राह्मणकी रक्षा आदि अपना कर्मकरो तुम्हारी लक्ष्मी ब्राह्मीहोगी और तुमसबजीवोंके प्रमाणरूपहोकरउनके स्वाधीन करनेको समर्थ होगे ६ बुद्धिमान् पुरुष को ब्राह्मण से सेवाआदि शूद्रों का कर्म न कराना चाहिये जो मनुष्य उनसे शूद्र कर्म कराताहै उसकाधर्म नष्ट होजाताहै ७ क्योंकि वह ब्राह्मण लक्ष्मी बुद्धि और तेजका संतप्त करनेवाला ऐश्वर्य्य वेदपाठ और जपमें बड़ीप्रतिष्ठा और वृद्धताको प्राप्तकरताहै ८ वहब्राह्मण आहवनी नाम अग्निमें नियतदेवताओं के समूहोंको आहुती देकर वृद्धतामें युक्तहोकरबालकोंसेभी प्रथम भोक्ताहै वह ब्राह्मणविद्यारूप ब्राह्मलक्ष्मीके द्वारापात्रविचारकिये गयेहैं ९ अशत्रुतासे प्राप्तहुई श्रद्धासेयुक्त शान्तचित्त जपमें प्रवृत्त

तुम संपूर्ण मनोरथोंको प्राप्तकरोगे१०नरलोक और देवलोकोंमें जो कुछहै वहसब तपज्ञान और नियमसे प्राप्तहोनेके योग्यहै ११ हेनिष्पाप इसरीतिसे यह वेदमें कहीहुई ब्राह्मण संबंधीगीता तेरीवृद्धिकी इच्छासे मैंने तुझसेकही यहगीता उससब प्राचीन वृत्तान्तके ज्ञाता से कहीहुईहै १२ मैंउनब्राह्मणोंका पराक्रम ऐसाबहुत बड़ामानताहूं जैसाकितेजस्वीराजाकाहोताहै क्योंकि वह ब्राह्मणबड़ी कठिनतासे स्वाधीनहोनेवाले तीव्रप्रकृतिशीघ्रताकरनेवाले और तत्काल कर्मकरनेवाले हैं १३इनमें कोई सिंहके समान पराक्रमी हैं कोई व्याघ्रके समान बलवानहैं औरकोई २ब्राह्मण बराहमृग और जलके समान पराक्रमी हैं १४ कोई सर्पके स्पर्श के समान कोई मगर के स्पर्श के समान हैं कोई शापसे मारनेवाले कोई दृष्टिसेही नाशकरनेवालेहैं १५कोई विषैले सर्पके समान कोईमृदुस्वभावहैं हेयुधिष्ठिर इसलोकमें ब्राह्मणोंके वृत्तान्त नानाप्रकारकेहैं १६ मेकल द्रविड़लाट पौंड्र कोन्वशिर शौंडिक दरद दर्व चौर शवरबर्बर किरात यवन१७ आदिक क्षत्री जातोंने ब्राह्मणके क्रोधकेनसहनेसे शूद्र वर्णोंकोपाया १८ असुरलोग ब्राह्मणोंकी प्रतिष्ठा नकरनेसे जलमें निवासीहुये और देवतालोग ब्राह्मणोंकी कृपासेस्वर्गवासीहैं१६जैसे आकाशका स्पर्श हिमालय पर्व्वतका चलायमानहोना असम्भव और गंगाजी पुलोंसे रोकनेके अयोग्यहैं उसीप्रकार इसपृथ्वीपर ब्राह्मणभी कठिनतासे विजय होनेवालेहैं २०ब्राह्मणोंके बिरोधियोंसे पृथ्वीकेजीवों का स्वाधीन करना असंभव है यह महात्मा ब्राह्मण देवताओं के भी देवताहैं २१ हेयुधिष्ठिर जोतुम इस सागर रूप मेखला रखनेवाली पृथ्वीको भोगनाचाहतेहोतो इन ब्राह्मणोंको दान सेवा आदि से सदैव पूजनकरो २२ हेनिष्पाप राजायुधिष्ठिर दानलेनेसे ब्राह्मणोंका तेज शान्त होताहै जोब्राह्मण दानलेनेकी इच्छानहीं करते हैं उनसेही तुमको अपनेकुलभरकी रक्षा करानाचाहिये२३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेब्राह्मणप्रशंसायांपंचत्रिंशोऽध्यायः३५॥

छत्तीसवां अध्याय॥

भीष्मजीबोले हेयुधिष्ठिर इस स्थानपर इसप्राचीन इतिहासको कहताहूं जिस में इन्द्रदेवता और शम्बर दैत्यकाप्रश्नोत्तरहै १ इन्द्र ने अपने स्वरूप को छपाकर धूम्रकृष्णता युक्त रक्तवर्णहोकर रथ में बैठकर शम्बरसे प्रश्न किया २ हे शम्बर तुम किस कर्मसे अपने भाई बिरादरी और नातेदारों से उन्नत नियत होतेहो और किसका-रणसे तुमको वह लोग उत्तम मानते हैं इस को मूल समेत वर्णन करो ३ शम्वरनेउत्तरदिया कि मैं ब्राह्मणोके गुणोंमें कभी दोषनहीं लगाताहूं तब उस दशामें मेरे संपूर्ण उपाय ब्राह्मणोंकी सलाहसे होते हैं और शास्त्रके विचार करने वाले ब्राह्मणों की बड़े आनन्द पूर्व्वक प्रतिष्ठा करताहूं ४ उनकी आज्ञाका भंग और अपमान नहीं करताहूं और किसी समय अपराधनहीं करताहूं और उनबुद्धिमानों का पूजन करताहूं उनके दोनों चरण छूता हूं और सब बिषयों में पूछपाछकियाकरताहूं ५ वह विश्वासी और शांतरूप होकर अच्छे प्रकारसे वर्णन करते हैं और सदैव मुझ को पूजते हैं और मैं उन सदैव बिस्मरण होजानेवालों में सावधानहूं और सोनेवालोंके मध्यमें सदैवजागताहूं ६ वह शिक्षा करनेवाले ब्राह्मणमुझवेद ब्रा-ह्मणों के रक्षक दूसरेके गुणोंमें द्वेषरहित शास्त्रमार्गमें बर्त्तमानको अमृत रूपी विद्यासे ऐसे सींचतेहैं जैसे कि सहद को मक्खी अपने छत्ते को सहद से सींचतीहैं ७ जब प्रसन्न होकर वह ब्राह्मण कुछ कहतेहैं तब मैं बुद्धिके द्वारा उसको अंगीकार करताहूंमैंने सदैवउस ब्रह्म बचन को अपने अनुसार आत्माकी समाधि विचार कियाहै ८ जो बिद्यारूपी अमृत जिह्वाग्रमें बड़ा मधुर मालूम होताहै उसका चाटनेवाला मैं चित्तकी दृढ़तासेअपने भाई बन्धुरिश्तेदारोंकी शास-नामें ऐसे नियत होताहूं जैसे कि नक्षत्रोंके ऊपरचन्द्रमा शासन क-रनेवाला होताहै ९ वह पृथ्वीपर अमरहै और उत्तमनेत्रहै जो इस लोकमें ब्राह्मणके मुखसे शास्त्रको सुनकर कर्म कर्त्ता होताहै १० पूर्व

समय में इस सबको जानकर और देवता असुरोंके युद्धको देखकर प्रसन्न चित्तमेरे पिता आश्चर्य्य युक्त हुये ११ महात्माब्राह्मणों की महानताकोदेखकर चन्द्रमासे पूछा कि यह ब्राह्मण किस प्रकारसे सिद्ध हुयेहैं १२ चन्द्रमानेउत्तरदिया वचनमें सामर्थरखनेवाले सब ब्राह्मणसदैवतपसे सिद्ध होतेहैं राजालोगभुजाबल रखनेवाले और ब्राह्मणलोग वचन रूपीबज्र रखनेवालेहैं १३ गुरुकुलमें दुःख रूप निवास करता ब्राह्मण प्रणव और वेदार्थको जप और पाठकरे और क्रोधसे रहित समदर्शी जीवन मुक्त संन्यासी १४ ज्ञानसेयुक्त स्तुतिमान ब्राह्मण पिताके घरमें सब वेदोंको पढ़े यह ग्रामीणशिक्षाहै आशय यह है कि पिताके घरमें पढ़ना निन्दितहै पृथ्वी उन दोनोंको ऐसेनिगलजातीहै जैसे कि सर्पबिलमें निवास करनेवाले मूषकआदि को एक प्रथम युद्ध न करनेवाला राजा दूसरा वेदाध्ययनके निमित्त किसी अन्य नगर वा ग्राममें निवासन करनेवाला ब्राह्मण १६ और न्यून बुद्धी मनुष्यका अहंकार लक्ष्मीका नाशकरताहै कन्यागर्भरहने से ब्राह्मण घरमें निवास करनेसे दोष युक्त होजातेहैं १७मेरेपिताने अपूर्व्व दर्शन चन्द्रमासे इसबातको सुनकर बड़ेव्रतवाले ब्राह्मणको पूजनकिया १८ भीष्मजी बोलेकि इन्द्रने दानवेन्द्रके मुखसे निकले हुये इसवचन को सुनकर ब्राह्मणोंका अच्छीरीतिसे पूजनकियाइसी से महाइन्द्र पदवी को पाया १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेब्राह्मणप्रशंसायामिन्द्रशंबरसंवादे षट्त्रिंशोऽध्यायः३६ ॥

सैंतीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह जो पूर्वमें नहींदेखाहै वह ब्राह्मण या बहुतकालतक समीपहीनिवास करनेवाला अथवा दूसरे आया हुआ ब्राह्मण इनतीनोंमेंसे कौन सापात्र होताहै १ भीष्मजी बोले कितनेही ब्राह्मणोंके पात्रहोनेमें याज्ञिक विद्यावान गुरुदक्षिणा और बालबच्चोंकेपोषणके लिये किसीसेयाचना करना इत्यादि और मोन

संन्यास होनाभी कारण होताहै स्वरूपहीसे ब्राह्मणत्व नहींहोताहै इसी से प्रथम श्लोकमें कहेहुये पात्र ब्राह्मण जो कुछ याचनाकरे उनको यही उत्तर देऊंगाकि निषेधकभी न करे२परन्तु पोषणाकरने के योग्य दास आदिको कष्ट न देताहुआ उस बस्तुकोदे क्योंकि पोषण योग्यदास आदिको दुःखकादेना स्वामीको निर्बल करताहै यह हमने श्रेष्ठ लोगों से सुनाहै ३ जो ब्राह्मणप्रथमनहीं देखा और जो वहुतकालसे समीपरहनेवालाहै यहदोनों और जो दूरसे आया होय उन सबको पूजनकरे क्योंकि बुद्धिमानलोगउनसबको पात्रही मानतेहैं४जीवोंको दुःख न देनेसे और धर्मकी हिंसानकरनेसेउस-को दानदेनाचाहिये जिसकोकिअच्छीरीतिसे पात्रजाने और जिसको देनेसे उस दान वस्तुका अभिमानी देवता कष्ट न पावे ५ भीष्मजी बोले कि शास्त्रज्ञ औरदूसरेकी निन्दान करनेवाले ऋत्विजपुरोहित आचार्य्यशिष्यनातेदारबांधव यहसबपूजन और प्रतिष्ठाकेयोग्यहैं ६ इसके विपरीत कर्मकरने वालेसबलोग पूजनादिके योग्य नहीं हैं इसीहेतुसे पूराउपाय करके सदैव मनुष्योंकी परीक्षाकरे ७ हेभरत वंशी क्रोधरहित सत्यवक्ता और हिंसासे बर्जित शान्तचित्त सत्यता में भरा किसीसे शत्रुता न करनेवाला लज्जा सन्तोषयुक्त भीतरसे क्षमावान् इतनेगुण जिसमें दिखाई देतेहैं और यहीसबगुण जिसमें स्वाभाविकभी होयं वहपात्र प्रतिष्ठाके योग्यहै ८ इसी प्रकार जो बहुतकाल समीप वसताहो अथवा जो अभ्यागत प्रथम देखाहोय वानदेखाहोय वहीपात्रहै और प्रतिष्ठाके योग्यहै १० वेदोंका प्र-माण न करना शास्त्रोंके विपरीत कर्मकर्त्ता होना और संपूर्ण शुभ कार्य्योंमें न ठहरना यहबातें पात्रताकी नाशकरने वालीहैं जो ब्रा-ह्मण अपनेको पंडित माननेवाला और वेदोंको निन्दा करने वाला होय और शास्त्रका विरोधी होनेसे मोक्षमें कामन देनेवाली अन्वी-क्षिकी नामतर्क विद्या में प्रवृत्तहोय १२ सत्पुरुषों में हेतुबचनों को कहकर विजय करनेवालाहै परन्तु शास्त्रके विनालिखे हेतुबचनोंको कहताहुआ हेतुवादीनहींहै और सदैव ब्राह्मणों को दक्षिणा आदि

का देनेवाला होकर अधिक वक्तृत्व शक्तिवालाहै १३ शास्त्रके सब वचनोंमें शंका करनेवाला मूर्ख अज्ञान और कटुवचनों का कहने वालाहै उस प्रकार का मनुष्य स्पर्श करने केभी योग्य न जानना उचितहै क्यों कि श्रेष्ठ लोगोंने उसको कुत्ते के समान मनुष्यवर्णन कियाहै १४ जैसेकि कुत्ता भोंकने और काटने को तैयार होताहै उसी प्रकार ऐसे प्रकारका मनुष्य तर्ककरने और सबशास्त्रोंकेनाश करनेको तैयार होताहै १५ अच्छे लोगोंका आचारादि व्योहार वेद और स्मृतियों के लिखेके अनुसार होताहै और अपनी कुशल चाहनेवाले शान्तचित्त लोग गुणोंसे रहितभी देखनेके योग्यहैंइस प्रकारसे कर्म करनेवाला मनुष्य सदैव वर्षोंतकवृद्धिको पाताहै१६ देवताओंका यज्ञादिक ऋण ऋषियोंका वेदपाठादिकऋण पितरों का सन्तान उत्पन्नादिकऋण ब्राह्मणोंका दान और प्रतिष्ठादिक ऋण अतिथियोंका वैश्वदेवके अन्तमें आने वालोंको भोजनादिका देनाइन सबऋणोंको १७ पवित्रकर्म और अच्छेप्रकारसे सीखेहुये उपायोंसे देकरऋणोंसे निवृत्तहोके यज्ञादिक कर्मोंको करताहुआ धर्मसेभ्रष्ट नहींहोताहै १८॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेपात्रपरीक्षायांसप्तत्रिंशोऽध्यायः ३७॥

अरतीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे भरतबंशियों में श्रेष्ठ साधू पितामह मैं आप से स्त्रियोंके स्वभावोंको सुनाचाहताहूं क्योंकि स्त्रियांही दोषोंकी मूलहैं वह स्त्रियां वायुके समान चित्तकी कंपाने वा डुलाने वाली कही गईहैं १ भीष्मजीबोले कि इस स्थानपरइस प्राचीनइतिहास को कहताहूं जिसमें पंचचूड़ा अप्सराका और नारद मुनिका संवाद है २ पूर्व समयमें सब लोकोंमें घूमते हुये देवऋषि नारदजीने ब्रह्म लोकमें नियत निर्दोष पंचचूड़ा नाम अप्सराको देखा ३ मुनिनेउस भयानक रूप सर्वांग अप्सरा को देखकर पूछाकि हे सुमध्यमे मेरे हृदयमें कुछ सन्देहहै उसको तू मुझसे वर्णनकर४भीष्मजीबोले कि

इसप्रकारनार दजीके पूछनेपर उसअप्सराने नारदजीको उत्तरदिया कि कहनेके योग्य होगा तो कहूंगोआप मुझको समर्थ जानतेहो ५ नारदजीबोले हे कल्याणिनी मैं किसी दशामें भी तुमसे कहने के अयोग्य बातको न पूछूंगा हे श्रेष्ठ मुखी तुम से मैं स्त्रियों का स्वभाव सुना चाहताहूं६ भीष्मजी बोले कि देवऋषि नारदकेबचन को सुनकरउस उत्तम अप्सराने उत्तरदियाकिमैंस्त्री होकर स्त्रियोंकी निन्दाकरनेको समर्थ नहीं हूं ७ जैसे स्वभावकी स्त्रियांहोतीहैं वह सब आपजानते हैं हे देवऋषि आप ऐसे बिषयमें मुझसे पूछनेको योग्य नहींहो ८ तब देव ऋषिने उससेकहा कि हे सुमध्य मैं तुम सत्य२ कहो मिथ्या बोलने में दोषहै सत्यमें कभी दोषनहीं है ६ऐसे कही हुई वह प्रसन्न मूर्ति अप्सरा कहने को उपस्थित हुई औरस्त्रियोंके प्राचीन सत्य २ दोषोंका कहना प्रारंभ किया १० पंच चूड़ा बोली हे नारदजी अत्यन्त कामीरूपवान् पति रखने वाली स्त्रियां मर्य्यादाओं पर नियत नहीं होती हैं यही स्त्रियों में दोषहैं ११ निश्चय करके स्त्रियों से अधिक कोई पापीनहीं होता स्त्रियां दोषोंकी मूलहैं यह तुमभी जानते हो १२ स्त्रियां विरुद्धता को पाकर अच्छी परीक्षा करी हुई अपने योग्य स्वाधीनता में नियत भी पतियों से पूजन के योग्य नहींहैं १३ हे प्रभु हम स्त्रियोंका यह तेज धर्महोता है जो हम लज्जा को त्याग कर दुराचारी मनुष्यों का सेवन करती हैं १४ जो मनुष्य स्त्रीको चाहता है वह उसके पास जाताहै थोड़ी सी भी सेवाकरता है स्त्रियां उसीको चाहती हैं १५ वह बे मर्य्याद स्त्रियां अन्य मनुष्यों के बुलाने पर केवल अपने नातेदारों के भयसे अपने पतियों के पास मर्य्यादा में नियत होतीहैं १६ कोई मनुष्य इन को स्पर्श करने के अयोग्य नहीं है और तरुणावस्था आदिमें इनका कुछभी भरोसा और निश्चय नहीं है चाहै पुरुष कुरूप होय या स्वरूप वान होय कैसाभी होय उसको भोगती हैं १७ स्त्रियों को किसी दशामें भी भय दया वा धनका हेतु वा जातिका बिचार वा कुलका बिचार नहीं होताहै वह स्त्रियां अपने पतियों के पास

नियत नहीं होती हैं १८ कामी स्त्रियां उन स्त्रियोंको इच्छा करती हैं जोकि तरुण स्वच्छ भूषण और पोशाक रखनेवाली और स्वेच्छाचारीहों १६ जो स्त्रियां अत्यन्त प्यारी होकर अंगीकृतहैं और सदैव रक्षामें रहतीहैं वह भी कुबड़े अन्धे लूले और अज्ञान अन्य मनुष्यों से संभोग करती हैं २० हे देवऋषि जो लंगड़े या अन्य दोषवाले मनुष्य हैं वह उनसे भी मिलती हैं हेमहामुनि इसलोकमेंस्त्रियों को भोगके लिये कोई पुरुष अयोग्य नहीं है २१ हे ब्रह्मन् जो किसी दशामें उन को पुरुष नहीं मिलते हैं तब वह परस्पर में भी संभोग करतीहैं अर्थात् बनावटका लिंग धारण करके भोग कर्मको करती हैं पतिके दूर होने पर धैर्य्यमें नियत नहीं रहतीहैं २२ वह स्त्रियां दूसरे पुरुषों के न मिलने पर नातेदारों के भयसे और पकड़े जानेमें मारेजाने के डरसे आपही रक्षित होतीहैं २३ इस लोकमें स्त्रियां चंचल स्वभाव और कठिनता से सेवन के योग्यहैं और बड़ीप्रीतिके द्वारा भी इस रीतिसे स्वाधीन रहती हैं जैसे कि ज्ञानी मनुष्य का बचन स्वाधीन होताहै २४ जैसे कि लकड़ियों से अग्नि नदियोंसे महा समुद्र और सबजीवों के मारने से मृत्यु तृप्तिनहीं होतीहै इसी प्रकार सुन्दर मुखरखने वाली स्त्रियां भी पुरुषों से तृप्त नहीं होती हैं २५ हे देवऋषि सब स्त्रियों की यह दूसरी गुप्त बात है कि अपने चित्त रोचक मनुष्य को देखकर स्त्रीकी योनितर होजातीहै २६ स्त्रियां अपने उस पतिको भी नहीं सेवती हैं जो कि अभीष्ट वस्तुओं का और मनोरथों का देनेवाला चित्त का प्रसन्न करनेवाला और रक्षकहो २७ मन माने बड़े२ भोग आभूषण और महलोंकोभी ऐसा बाड़ानहीं मानतीहैं जैसा कि स्नेह और भोग विषयको उत्तम और बड़ा आनन्द कारी समझतीहैं २८ यमराज वायु मृत्यु पाताल बड़वानल नाम अग्नि खड्गकी धार विष अग्नि यह सबतो एक ओरको और स्त्रियां दूसरी ओर को अर्थात् स्त्रियां मृत्यु आदिके समान शीघ्रही मारने वालीहै २९ हे नारदजी जिस ईश्वरसे पंचमहा भूत और सब लोक उत्पन्न हुये और जिससे स्त्री पुरुष उत्पन्न किये गये

उसीने स्त्रियोंमें दोषोंको भी उत्पन्न कियाहै अर्थात् यह उनके स्वाभाविकीय ऐसे गुणहैं जैसे कि अग्नि में स्वाभाविकीय गुण गरमी होतीहै ३० ॥

इतिश्रीमहाभारते अनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेपंचचूड़ानारदसंवादेऽष्टत्रिंशोऽध्यायः ३८

उन्तालीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकिया कि हेपितामह ईश्वरसे उत्पन्न बड़ेमोहोंमेंभरेहुये यह मनुष्य संसार में सदैव स्त्रियोंपर आशक्त होतेहैं १ और स्त्रियां पुरुषोंके ऊपर अनुरक्त होतीहैं यहबात प्रत्यक्ष और लोकको साक्षी रखनेवाली है इस बिषयमें बड़ाभारी कठिन सन्देह मेरे हृदय में वर्त्तमान हुआ है और बहुत समय से रहता है २ हे कौरव नन्दन मनुष्य किस प्रकारसे इनका संगकरते हैं और वह स्त्रियां कौनसे मनुष्योंके साथ प्रीति करतीहैं और फिरप्रीतिको हटालेती हैं ३ हे पुरुषोत्तम वह स्त्रियां इसलोकमें पुरुषसे किस प्रकार रक्षा करनी चाहिये उसेआप कृपा करिके कहिये ४ इसलोकमें क्रीड़ाको करतीहुई यह स्त्रियां मनुष्यको ठगती हैं इन्हांके हाथमें आयाहुआ कोई मनुष्य नहीं छूटता ५ जैसे कि गौ नवीन तृणोंको लेतीहैं उसी प्रकार यह स्त्रियां नवीन नवीन पुरुषोंको अपने आधीन करतीहैं शम्बर दैत्यकी जोमायाहै अथवानमुचि असुरकी जोमायाहै ६ राजाबलि वाकुंभीनसीकी जोमायाहै उनसब मायाओंको स्त्रियोंने जानाहै यहस्त्रियांहंसतेहुओंको हंसतीहैं औररोतेहुओंके पासरोतीहैं ७ और समयकी लौट पौटसे प्यारेवचनोंसे अप्रियको प्राप्तकरतीहैं शुक्रजी जिस शास्त्रको जानतेहैं और बृहस्पतिजी जिस शास्त्रको जानतेहैं ८ वह दोनोंभी स्त्रीकी बुद्धिसे अधिकनहींजानते वह स्त्रियां किस प्रकारसे पुरुषोंकी रक्षाके योग्यहैं ९ जिन स्त्रियोंने मिथ्याको सत्यकहा और सत्यको मिथ्याकहा हेवीर पितामह वहस्त्रियांकिस प्रकार मनुष्योंसे पूरीरक्षाके योग्यहैं हेशत्रु संहारीमैं मानता हूंकि बृहस्पति सरीके सत्पुरुषोंने स्त्रियोंकी बुद्धिसे निकलेहुये प्रयोजनसे

अर्थ शास्त्रको बनाथा मनुष्योंसे अच्छेप्रकारसे पूजित स्त्रियां मनुष्यों के साथ मनको बदल लेतीहैं १०।११ हेराजाउसीप्रकार निर्लज्ज स्त्रियांभी मनको बदल लेती हैं हे महाबाहो यह स्त्रीरूप धर्मात्मा सृष्टि है यह हमने वेदमें सुना है अर्थात् वेदसे संबंध रखनेवाली सावित्रीआदिहैं यह बचन मुख्य करके उन्हींके वास्तेहै १२ यह स्त्रियां पूजित और अपूजित भी सदैव मनको बदलती हैं कौनसा पुरुष उनकी रक्षाकरनेको समर्थ होसक्ता है यह मुझको बड़ासन्देहहैं १३ हे कौरव बंशकी वृद्धि करनेवाले कौरवोंमें श्रेष्ठ महाभाग भीष्मजी किसी समय परभी उनकी रक्षाकरना संभवहै अथवा कभी पूर्व समयमेंभी किसीने करी यहमूल समेत आप मुझसे कहनेको योग्यहैं १४॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिराजधर्मेविपुलोपाख्यानेएकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ३९॥

चालीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले हे महाबाहु राजा युधिष्ठिर यह इसीप्रकारसे है इसमें कुछभी मिथ्यानहींहै जैसा कि तुम स्त्रियोंकेविषयमें कहतेहो१ इस स्थानपर एक प्राचीन इतिहास कहताहूं जिसमें पूर्व समयमें बिपुलनाम महर्षीने स्त्रीकी रक्षाकरीहै २ हेभरतर्षभ राजायुधिष्ठिर ब्रह्माजीने जैसे और जिस प्रयोजनके निमित्त स्त्रियां उत्पन्नकी हैं हेतात वह सब तुमसेकहताहूं३ हेपुत्रस्त्रियों से अधिक कोई पापी नहीं है अग्निकीज्वाला मय दैत्यकी माया खड्गकी धार सर्पका बिष यह सब मिलकर स्त्रियों के समान हैं हे महाबाहो हमने भी सुना है कि यह धर्मात्मा सृष्टिहैं ५ यह आप देवभावकोपाती हैं इस कारण देवताओंको इनसे भय उत्पन्न हुआ हे शत्रुओं के विजय करनेवाले तब वह देवतालोग ब्रह्माजीके पासगये ६ और अपने चित्तकी बातको प्रकट करके नीची गर्दन करके मौनहो बैठे प्रभु ब्रह्माजी ने उन देवताओं के चित्तकी इच्छाको जा-

नकर, मनुष्यों के छलने के निमित्त कृत्यारूप स्त्रियां उत्पन्नकीं हे कुन्ती नन्दन पूर्व्व सृष्टिको आदि में स्त्रियां शुभ कर्म्मी और पतिव्रता थीं ८ ब्रह्माकी कृत्यानाम उत्पत्तिसे, दुराचारिणी स्त्रियां उत्पन्न हुईं फिर ब्रह्माजीने उन स्त्रियों के लिये इच्छानुसार कार्य्यादिक सुपुर्दकिये ६ वह स्त्रियां स्नेह और भोगके लोभसे सदैव मनुष्योंको दुःख देतीहैं फिरउस देवताओंके ईश्वर ब्रह्माजीनेकाम देवके सहायक क्रोधको उत्पन्नकिया १० कामक्रोधके आधीन हो कर सब सृष्टिके जीव विषय भोगमें प्रवृत्त हुये स्त्रियोंकी कोईक्रिया नहींहै यह धर्मशास्त्रमें लिखाहै ११ स्त्रियां इन्द्रियोंसे और शास्त्रसे रहित मिथ्याका रूपहैं यह इस श्रुतिका अर्थहै (निरिंद्रियाह्यशास्त्राश्चस्त्रियोनृमिति)ब्रह्माजीने पलंगआसनभूषणादिवस्तु खानेपीने की वस्तु अनार्य्यता कठोर वचनोंसे कलहको उत्पन्न करना और भोग यह सब ब्रह्माजीने स्त्रियोंको दिये इसहेतुसे पुरुष इनकी किसीदशामें भी रक्षा नहीं करसक्ता १३ हे तात इनको रक्षा ईश्वरभी नहीं करसक्ता फिर इस लोकमें मनुष्य कैसे करसक्ता है बातों से मार पीटसे और इनके सिवाय अनेक प्रकारके दुःखों से भी १४ स्त्रियां रक्षाकरनेके योग्य नहीं क्योंकि वह शास्त्रमें लिखेहुये नियमोंसे सदैव पृथक्हैं हे पुरुषोत्तम मैंने पूर्वकालमें यह सुनाहै १५ जैसे कि विपुलऋषिने अपने गुरूकी स्त्रीको रक्षित किया एक देव शर्मानाम प्रसिद्ध ऋषिथे १६ उसकी स्त्री रुचिनाम स्वरूपमें पृथ्वी पर अनूपमथी हे राजेन्द्र देवता गन्धर्व दानव उसकेरूपपर आशक्त थे १७ मुख्यकर वृत्रासुरका मारनेवाला इन्द्रभी उससे आशक्तथा स्त्रियोंके चरित्रको जाननेवाले देवशर्म्मानाम महामुनिने १८ सामर्थ्य और उत्साह के अनुसार उस भार्य्याको रक्षितकिया वह ऋषि इन्द्रको दूसरेकी स्त्रीसे भोग करनेवाला जानतेथे १६ इसी हेतु से उसने अपनेयोग बलसे उस भार्य्याकी रक्षाकरी हे तात कभी उस ऋषिने यज्ञ करनेमें चित्तको लगाया तब उसने बड़ी चिन्ताकरी कि भार्य्याकी पूरीरक्षा करनी चाहिये सो कैसेहोय २० तब उस बड़े

तपस्वीने रक्षाका उपाय चित्तसे विचारकर अपने शिष्य विपुलभार्गवको बुलाकर यह वचन कहा कि २१ मैं यज्ञ करनेकी इच्छा से जाऊंगा और देवेश्वर इन्द्र इस रुचिको सदैवसे जानता है इस कारण उसको उस इन्द्रसे अपने योगबलसे रक्षाकरो २२ हे भार्गवों में श्रेष्ठ सदैव तुझ सावधानको इन्द्र से खबरदार रहना चाहिये क्योंकि वह नानाप्रकारके स्वरूपोंको धरताहै २३ भीष्मजी बोले हे राजा इस रीतिसे समझायेहुये उस तपस्वी जितेन्द्री सदैव उग्र तपकरनेवाले अग्नि सूर्यके समान कान्ति रखनेवाले २४ धर्मज्ञ सत्यवक्ता विपुलमुनिने उत्तर दिया कि ऐसाही होगा हे महाराज फिर उसने चलतेहुये गुरूसे यह पूंछा २५ हे मुनि आतेहुये इन्द्र के कौन २ से रूप होते हैं कैसा शरीर और तेज होताहै उस को आप मुझसे कहनेको योग्य हैं २६ भीष्मजीने कहा हे भरतवंशी इसके अनन्तर उस भगवान् ऋषिने महात्मा विपुल के सन्मुख इन्द्रकी मायाको मूल समेत वर्णन किया २७ देवशर्म्माने कहा हे ब्रह्मऋषि वह इन्द्र अनेकमाया रखनेवाला है बारंबार अपने शुद्ध रूपोंको बदलताहै २८ वह किरीटमुकुट वज्र धनुष और कुंडलधारण करनेवाला होकरएक मुहूर्त मेंही चांडालकेसमान दर्शनवाला होजाताहै २९ हे पुत्र फिर वहशिखा जटा और चीरपत्र का धारण करनेवाला होताहै फिर बड़े शरीरवाला चीर वस्त्रधारी होकर अत्यन्त दुर्बल भी होजाताहै ३० फिरघोर श्याम औरकृष्ण वर्णको बदलताहै दुःखरूप स्वरूपवान् तरुणवृद्ध ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्रकेरूप होजाताहै ३१ औरप्रतिलोम अनुलोम वर्णवालाहोकर तोता काक हंस औरकोकिलकासारूप होजाताहै ३२ फिरसिंह व्याघ्र और हाथीकीभी सूरतहोता है फिर देवता दैत्य और राजाओं केभी शरीरको धारण करलेताहै ३३ मोटावायुसे टूटाहुआ शरीरका चर्म पक्षीरूप और रोगीकी सूरत फिर बहुत प्रकारके पशुओंकी सूरतवालकरूप कभी मच्छर आदिकेभी शरीरको धारण करताहै हे विपुल कोईउसको पकड़नहींसक्ता ३५ हेतात सृष्टिके स्वामीसेभी यह बात

होनी असंभवहै अन्तर्धान होनेवाला इन्द्रज्ञान दृष्टीसे दिखाई देता है ३६ फिर वह देवताओं का राजा वायु रूप भी होजाताहै इस प्रकारके अनेक२ रूपोंको वह इन्द्र सदैव धारणकिया करताहै ३७ हे विपुल इसीकारण बड़े उपायोंसे इस सुन्दरीकी रक्षाकरो हेभार्ग वोत्तम अवजिसरीतिसे वह देवेन्द्र इसरुचीको ऐसे दूषितन करे३८ जैसे कि दुष्टचित्त कुत्तायज्ञस्थापनमेंरक्खेहुये हव्यको दूषितकरताहै हे भरतर्षभ तवयज्ञ करनेके अभिलाषी वहमहाभाग देवशर्मा मुनि इसप्रकार से कहकर चलेगये ३९ विपुलने गुरूके वचनों को सुन कर बड़ीचिन्ताकरी और बड़ेवली देवराज इन्द्रसे पूरी रक्षाकरी४० अर्थात् विचार किया कि मुझको गुरूकी स्त्रीकीरक्षा करनेके बिषयमें क्या करना चाहिये यह महामायावी पराक्रमी देवराज बड़ी कठिन तासे विजय होनेवालाहै ४१ आश्रम वा बर्ण शालाको ढकनेसे भी इन्द्रसे रक्षा करना संभवनहींहै क्योंकि वह अनेक प्रकार के रूप धारण करताहै४२कदाचित इन्द्र वायुरूप होकरगुरुपत्नीकोसतावे या दूषितकरे इस हेतुसे मैं इस रुचीके शरीरमें प्रवेश करके नियत होऊंगा ४३ यह पराक्रमके द्वारा मुझसे रक्षाकरनेके योग्य नहीं है क्योंकि इन्द्र अनेक रूप वाला सुनाजाताहै ४४ सो मैं योगबलके द्वारा इसको इन्द्रसे वचाऊंगा अर्थात् अपनेसूक्ष्म अंगसे उसके अंगों के मार्गोंमें होकर शरीरमें प्रवेश करूंगा ४५ जो अब मेरेगुरू इस अपनी पत्नीको उच्छिष्ट रूपदेखेंगे तब वह दिव्यज्ञानवाले महातप स्वी अपने क्रोधसे अवश्य शापदेंगे४६ जिसप्रकारसे अन्यस्त्रियोंकी मनुष्य रक्षाकरतेहैं उस प्रकारसे इसको रक्षाकरना असंभवहै क्यों कि यह देवराज बड़ा मायावीहै बड़ेखेदकी वातहै कि मैंने अपनेऊ- पर भारी उपाधिको लिया ४७ और गुरूकी आज्ञाका करना भी अत्यन्त अवश्यहै जो मैं इसको करूंतो उसदशामें कहीं मुझको दोष न लगे४८योग वलसे गुरुपत्नीके शरीरमें प्रवेश करना ऐसी निर्लें पता से रहितहै जैसे कि कमल के पत्तेपर चलायमान और नियत अंबुकण होताहै ४९ परन्तु जो गुणके स्वभावसे मुझ रहित का

ऐसे अपराध नहींहै जैसे कि विदेशी सभामें होकर जंगलके मार्ग में निवासकरै ५० अब मैं उसीप्रकारसे गुरुपत्नीके शरीर मेंनिवास करूंगा ५१ वहभार्गव इसप्रकार से सब धर्म वेद और वेदांगोंको विचारकर गुरूके और अपने बड़े तपको देखकर ५२ और रक्षाके निमित्त चित्तसे इस निश्चयको करके जैसे उत्तम उपाय में प्रवृत्त हुआ हे युधिष्ठिर उसको तुम मुझसे सुनो ५३ और जैसे उस बैठे हुये महातपस्वी बिपुलने उस बैठीहुई निर्दोष गुरुपत्नी को प्रयो-जनमें लुभाया ५४ और उसके दोनोंनेत्रोंकी किरणोंको अपने नेत्रोंकी किरणोंसे मिलाकर ऐसेशरीर में प्रवेशकिया जैसे कि वायु आकाश में प्रवेश करतीहै ५५ अर्थात् छायाके समान अन्तर्द्धान हो वह मुनि लक्षणोंसे लक्षणमें मुखसेमुखमें चेष्टासेचेष्टामें स्थिति से स्थितिमें प्रविष्ट होकर निश्चेष्ट होकर नियतहुआ ५६ इसके अनन्तररक्षामें प्रवृत्त उस बिपुलनेगुरुपत्नीके शरीरकोनिश्चेष्ट करके निवास किया और उस गुरुपत्नीने उसको नहीं जाना ५७ हे राजा जबतककिउसमहात्माका गुरूयज्ञको समाप्तकरकेअपनेघरको नहीं आया तबतक उसने उसकी रक्षाकरी ५८॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेविपुलोपाख्यानेचत्वारिंशोऽध्यायः ४०॥

इकतालीसवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि इसके पीछे देवेन्द्र किसी समय अपना अवकाश जानकर बहुत दिव्यरूप और उत्तम शरीरको धारणकरके उस आश्रममें आया १ हे राजा वह इन्द्र अनुपम और छलित करनेवाले अत्यन्त दर्शनीय स्वरूपको बनाकर आश्रम में आया २ उसने उस बैठेहुये विपुल केशरीर और नेत्रोंको ऐसे निश्चेष्ट देखा जैसे कि काग़ज़का लिखा चित्र होताहै ३ उस इन्द्रने सुन्दरनेत्र मोटे कान और स्तनवाली कमलपत्रकी समान आयतनेत्र पूर्णचन्द्रमा के समान मुख रखनेवाली रुचिको भीदेखा ४ तब उसकोदेखकर यहकहनेको इच्छासेकि यह कौन पुरुषहै उसके रूपसे आश्चर्य्य

युक्त होकर रुचीने उसका अभ्युत्थान और आसन आदिदेनेके निमित्त अकस्मात् उठनाचाहा हे महाराज जभी उसनेउठनाचाहा उसीसमय विपुलने उससतीको उठने से रोंका तव उससे रोंकीहुई रुचि जराभी उठनेको समर्थनहुई ५।६ तब देवराजने बड़ी सुन्दर मनोहर प्रिय और मधुर वाणीसे उसकोकहा हे पवित्र मुसक्यानवाली मैं देवताओंका इन्द्रहूं और तेरेही निमित्त आयाहूं तेरी अभिलाषासे प्रकटहुये कामदेवसे मैं पीड़ितहूं और मुझे तू इसीनिमित्तसे आयाहुआजान हे सुन्दर भृकुटीवाली पहिला समयव्यतीत होताहै८तब उसके शरीरमें वर्त्तमान बिपुलमुनिने उस इन्द्रके बचनोंको सुना और उसको देखा ६ हे राजा उस बिपुलसे रोंकी हुईवह निर्दोषरुची प्रतिष्ठाके निमित्त उठनेको समर्थ नहींहुई और सम्भाषण करनेको योग्यनहींहुई १० फिर उस वड़ेतेजस्वी भार्गवने गुरुपत्नीकी उसशरीर चेष्टाको जिससे कि प्रीति प्रकट होतीथी जानकर योगबलके द्वारा उसको पकड़ा ११ उसने योगके बन्धनों से उसकी सब इच्छाओंको वांधा फिरलज्जितहोकर इन्द्रनेउसयोग बलसे मोहित रुचीको रूपान्तरदशा से रहित देखकर फिर भी आवो२यह शब्दकहा इसकेपीछे उसने उसको उत्तरदेनाचाहा १३ तब उस विपुलने उस गुरुपत्नीके बचनको भी रोंका परन्तु चंद्रमाके समान उसके मुखसे यह संस्कृतवाणी वाहर निकली कि हे इन्द्र आपके आनेका कौन कार्य्यहै तब वह दूसरे की स्वाधीनता में होनेसे इस वचन को कहकर लज्जायुक्त हुई १४ । १५ तब इन्द्रभी अत्यन्त वहांबेमन होगया हे राजा फिरसहस्राक्ष देवराज इन्द्रने उस विपरीत दशाको देखकर १६ अपने दिव्यनेत्रोंसे देखा तब उसने उसस्त्रीके शरीरमें नियत उस विपुलमुनिको देखा १७ जैसेकि दर्पणमें प्रतिविम्बहोताहै उसीप्रकारउसगुरुपत्नीकेशरीरमें वर्त्तमानमुनिको देखा तब वह इन्द्र उस घोरतपयुक्त मुनिको देखकर १८ अत्यन्त भयभीत होकर कंपायमान हुआ और उसके शापदेदेनेके भयसे महाखेदित हुआ हे राजातब वड़े तेजस्वी विपुल

नेभी अपनी गुरुपत्नीको छोड़कर १६ अपने शरीर में प्रविष्टहोकर उस भयभीत इन्द्रसे यह बचन कहा हे दुर्बुद्धोइन्द्रियों के स्वाधीन पापात्मा इन्द्र तुझको देवता और मनुष्य बहुतकालतक नहीं पूजैंगे २० हेइन्द्र क्या तुमभूलगये और वह मैत्रीबुद्धि में नियतनहींहै जो गौतम ऋषिके शापसे शरीरके हज़ारभगचिह्नोंसे छूटाहै २१ मैं तुझ ईश्वर को अज्ञानी अजितेन्द्री आदिदोषों से युक्त जानताहूं हे अज्ञानी इसरुचीकी मैं रक्षाकरताहूं हे पापी तू अपने लोक को जा२२हे अल्पबुद्धी अबमैं अपने तेजसे तुझको भस्म नहींकरता हूं हे इन्द्र मैं दयाकरके तुझको भस्म करना नहीं चाहताहूं २३ अब वहबड़ेघोररूप बुद्धिमानगुरू जो तुझपापात्माको देखकरक्रोध युक्त ज्वलित नेत्रोंसे भस्म करदेंगे २४ इससे हेइन्द्र फिरऐसानकरियो क्योंकि ब्राह्मण तेरे पूज्यहैं ब्राह्मणके तेजबलसे तुम पीड़ितहोकर अपनेपुत्र औरमन्त्रियों समेत नाशकोमतप्राप्तहो२५ कदाचित् तुम इस अहंकारसे कर्म करतेहो किमैं अमरहूं अर्थात्मृत्युसेबचाहुआहूं देवताहूं जो इस बुद्धिमेंनियत होकर कर्मकरतेहोतो अभिमान करके किसीका अपमान मतकरो क्योंकि तपस्या से कोईदुःप्राप्य पदार्थ नहीं है २६ भीष्मजी बोले कि उस महात्मा बिपुल के इस बचन को सुनकर इन्द्र लज्जा से महापीड़ित उससे कुछ न कहकरउसी स्थान में अन्तर्द्धान होगया २७ फिर दोमुहूर्त्तके पीछे महा तपस्वी देवशर्मा इच्छाके अनुसार यज्ञको करके अपने आश्रम में आये २८ गुरुजी के आनेपर प्रिय कर्म करने वाले बिपुल ने उस निर्दोष रक्षित गुरु पत्नी को गुरु से बर्णन किया २९ वह गुरूका प्यारा शान्तात्मा निस्सन्देह बिपुल गुरूको दण्डवत् करके पूर्वकेही समान सेवामें प्रवृत्त होगया ३० इसके पीछे गुरुपत्नी समेत आनन्द से बैठे हुये गुरूके सन्मुख बिपुल ने इन्द्रके उस कर्मका वर्णन किया ३१ वह प्रतापवान् मुनिश्रेष्ठ उसको सुनकर बिपुल के गुरु पूजनादि शील स्वभाव तप और नियमसे प्रसन्नहोकर ३२ अपने स्वरूपमें भक्ति और धर्ममें नियत बुद्धि को देखकर धन्यहै

धन्यहै यह वचन कहनेलगे ३३ फिर उस धर्मात्मा महामुनिदेव-शर्माने धर्ममें पूर्ण अपने शिष्यको पाकर बरदेने का बिचार किया ३४ और उससे कहा कि बरमांगो तब उस गुरूके प्यारे ने अपने गुरूसे धर्ममें नियत होना मांगा और गुरूकी आज्ञा से वह तपस्या करो कि जिससे उत्तम कोई तपस्या नहीं है ३५ और गुरूजी ने भी उसीप्रकार इन्द्रसे निर्भयहोकर अपनी भार्य्या समेत निर्जन बनमें जाकर बड़ी तपस्या करी ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेविपुलोपाख्यानेएकचत्वारिंशोऽध्यायः४१ ॥

बयालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि पराक्रमी विपुलने गुरू के बचनको सुनकर कठिन तपस्याकरके अपनी आत्माको तपसे संयुक्त माना हेपृथ्वी पति राजा युधिष्ठिर वह उत्तम कीर्त्तिका प्राप्त करनेवाला निर्भय और प्रसन्नचित्त विपुल इस अपने कर्मसे अत्यन्त प्रसन्नता को मानताहुआ पृथ्वीपर विचरनेलगा २ और इसी प्रकार उस समर्थ बिपुल ने उस कर्मसे और बड़ी तपस्या से दोनों लोकों को भी विजय किया हुआ माना ३ हेकौरव नन्दन फिर कुछकाल ब्यतीत होनेपर रुचीको बहिनके घर बड़े बैभव वाला उत्सवहुआ ४ और उसीसमय कोई दिव्य उत्तम स्त्री स्वर्ग की बसनेवाली उत्तम रूप को धारणकिये आकाशमार्ग होकर गई ५ उसके शरीर से दिव्यसुगन्ध से भरे उत्तम फूल उसके आश्रम के समीप आकर पृथ्वी पर गिरे ६ तब उस सुन्दर मुखनेत्र वाली रुचीने उनफूलों को उठाया और तभी उसको नौता देने वाला मनुष्य अंग देशसे आया ७ हे तात उसकी प्रभावती नाम बड़ी बहिन अंग देश के राजा चित्ररथकी भार्य्याथी ८ इसकेअनन्तर वह नौती हुई सुन्दर वर्ण युक्त रुची उन फूलोंको शिरके बालोंमें धारण करके अंगदेश केराजा के घरगई ९ तब सुन्दर नेत्र वाली अंग देशके राजा की भार्य्याने उन फूलोंको देखकर और फूलोंके निमित्त बहिनसे कहा

अर्थात् यह कहा कि ऐसेफूल मुझको भी मंगादे १० तब उस सुन्दर मुखवाली रुचीने अपनी बहिनके सब बचनोंको अपने पतिसे आकर कहा और ऋषिनेभी उसको स्वीकार किया ११ हे भरतवंशी इसके पीछे महातपस्वी देवशर्माने बिपुलको बुलाकर फूलोंके लानेकी आज्ञादी१२हे राजा उसे बड़े तपस्वी बिपुलने गुरूकेवचनमें बिचारन करके कहा कि बहुतअच्छा ऐसा कहकर उसदेशको गया १३ जिस स्थानमें वह फूल आकाशसे गिरेथेवहां शेषबचेहुये और भी बहुतसेकुंभिलायेहुये फूलपड़ेथे१४हेभरतवंशी इसकेपीछे उसने उन मनोहर दिव्य सुगन्धयुक्त पुष्पोंको जो कि अपने तपसे प्राप्तहुयेथे उठालिया १५तब गुरूकी आज्ञाका करनेवाला प्रसन्नमन वह बिपुल उन फूलोंको पाकर चम्पेके पुष्पोंकी श्रेणी बद्ध चम्पापुरीमें गया१६वहां उसने निर्जनवनमें जाकर मनुष्योंकी इसदशाको देखा कि हाथमें हाथ पकड़ेहुये चक्रकी समान घूमतेथे १७ उनमें एक पुरुष अपनी तीव्रतासे दूसरेके चरणोंको बिवर्त्तन करताहुआ बड़ी शीघ्रतासे जाताथाऔरदूसरा शीघ्रनहीं चलसक्ताथा तबउन दोनोंने लड़ाईकरी १८एकने कहा तुम शीघ्र चलतेहो दूसरने कहानहीं हे राजा फिरदोनोंने यह बचनकहा कि नहींनहीं१९तब उनईर्षा करने वालोंकी शपथहुई फिर अकस्मात् बिपुलको ओर चेष्टा करके यह बचन कहा २०कि हम दोनोंमें से जिसने मिथ्याकहाहै उसकी वह गतिहोय जोगति कि परलोकमें उस बिपुल ब्राह्मणकी होगीइसका आशय यहहै कि(यह दोनोंदिन और रातथे और उन्होंने मिथ्यानहीं कहाथा क्योंकि जब सूर्य्य मिथुनके होतेहैं तब दिनका देवताशीघ्र चलनेवाले रात्रिअभिमानी देवतासे कहताहै किंतु शीघ्रगामीहै वह भी सत्यहै क्योंकि उसकी चालोंसेअधिकहै औररात्रि कहतीहै किमैं अपनीनियत गतिसे चलतीहूं शीघ्रनहींचलती इसीहेतुसे उनदोनोंने मिथ्या शपथ नहींखाई) २१ बिपुल इसबचनको सुनकर उदासहुआ और बिचारनेलगा कि मैं इतने और तपसेयुक्तहूं और इनदोनोंका परिश्रम युक्तकर्म पीड़ासे युक्तहै २२ मैंने इनदोनोंका कौन अपराध

कियाहै जिसकेकारण इन्होंने इससमय सवजीवोंकीअप्रियगतिका वर्णनकिया २३ हे राजर्षि इसप्रकारसे बिचारते नीचाशिर किये दुःखी चित्त विपुलऋषिनें अपने दुष्कर्मका ध्यानकिया २४ इसके पीछेलोभ और प्रसन्नतायुक्त दूसरे छःपुरुषोंको सुबर्णके पाशोंसे खेलताहुआदेखा २५ और उसीप्रकारसे शपथ खाताहुआ उनकोभी देखाजैसीकि उनदोनोंने खाईथी इन छःओंनेभी विपुलकीओर चेष्टा करके बचनकहा(यहछःओं खिलाड़ी छःओंऋतुथीं वहभी सत्यवक्ता हैं उनका सत्य कथन ज्योतिष विद्यासे बिदित होसक्ताहै)२६ हम मेंसे जो मनुष्य लोभयुक्त होकरबिपरीत कर्मकरनेकी इच्छाकरे वह उस गतिकोपावे जो कि परलोकमें बिपुलकी होगी २७ बिपुलने इसवचनको सुनकर जन्मसे लेकर अब तक अपने कियेहुये धर्म-संकटको नहींदेखा २८ हेराजा उसने उसप्रकारके शापको सुनकर चलायमान चित्तसे इसप्रकार ध्यानकिया जैसे कि अग्नि में वर्त्तमान अग्नि २९ हे तात उसके ध्यान करतेहुये वहुत दिनरात व्यतीतहोगये तवचित्त में यहवात आईकि मैंने रुचीकी रक्षा के मनोरथसे ३० इन्द्रीको इन्द्रीसे मुखको मुखसे मिलाकर गुरूसे नहीं कहा यही मेरा सत्य २ पापहै ३१ हेकौरव तव महाभाग बिपुलने अपने में इस दुष्कर्मको निश्चय और यथार्थ करके माना ३२ फिर इस महाभागने चंपानगरी में जाकर गुरूको फूल दिये और यह निश्चयमानलिया कि वह पापयथार्थमें वैसाही है ऐसा समझकर उस गुरूके प्यारेनेअपने गुरूको बुद्धिके अनुसार पूजा ३३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेविपुलोपाख्यानेद्विचत्वारिंशोऽध्यायः ४२॥

तेंतालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले हेराजा उसबड़े तेजस्वी देवशर्म्मा ने उस आये हुये अपने शिष्यको देखकर जो वचन कहा उसको सुनो १ गुरूने कहा हे शिष्य विपुल तुमने उस महावन में क्या क्या देखा हे बिपुल वह तेरा आत्मा और रुची तुझको जानते हैं २ बिपुलने

कहा हे प्रभु ब्रह्मऋषि जिनको आप पूछतेहैं वह दोनों कौन हैं जो मुझको मुख्यता से जानते हैं ३ देवशर्म्मा ने कहा कि हे ब्रह्मन् वह दोनों दिनरातहैं वेहीचक्रके समान घूमतेहैं और वह तेरेदुष्कर्म को जानतेहैं ४ हे वेदपाठी और वह छः पुरुष जो प्रसन्न चित्त के समान पाशोंसे खेलतेहैं वह ऋतुहैं वहभी तेरेदुष्कर्मको जानतेहैं ५ हे ब्राह्मण पापात्मा मनुष्य एकांतमें पापकर्मको करके यह विश्वास न करे कि मुझको कोई नहीं जानताहै ६ सब ऋतु और दिन रात सदैव एकान्तमें पापकर्म करनेवाले मनुष्यको देखते रहतेहैं ७ वह कर्म जैसे किया उसरीति से करके जो तैंने मुझसे नहीं कहा इससे उसप्रकार के लोक तुझको मिलेंगे जैसे कि पापियोंको मिलते हैं ८ प्रसन्नताके अहंकार युक्त होकर जो तुमने गुरूसे अपना कर्म किया हुआ नहीं कहा इस निमित्त तुमको देखकर स्मरणादिलानेवाले रात्रि दिन और ऋतुओंने तुमसे यह वचन कहा जोकि तुमने सुना ९ शुभकर्म करनेवाले दिनरात और सब ऋतु सदैव मनुष्योंके शुभाशुभ कर्मों को जानतेहैं १० दूसरे की स्त्रीसे मिलने का जो भयानक रूप कर्म तुमने मुझसे नहीं कहाहै सो हे ब्राह्मण इसबातके जाननेवाले ऋतुआदिने तुमसे इसरीतिपर कहा है ११ इसीकारण वहकर्म जिसरीति से किया उसको करके तुम मुझ से न कहनेवाले के लोक उसप्रकार के होंय जैसे कि पापी के १२ हे ब्राह्मण तुझ दुष्टकर्म्मी दुराचारी से स्त्रीकी रक्षाकरना उचित और संभव नहींथा परंतु तुमने दुराचार नहीं कियाथा इसीसे मैं तुझ से प्रसन्नहूं १३ हे ब्राह्मणोंमें बड़े साधू जो कदाचित् मैं तुमको दुराचारी देखता तो अवश्य बिना बिचार किये क्रोधसे शाप देता १४ स्त्रियां पुरुषके निमित्त अलंकृत होतीहैं वही पुरुषों का बड़ा प्रयोजन है इसके सिवाय दूसरीरीतिसे रक्षाकरनेवाले को शाप होगा यह मेरा अभिप्रायथा १५ हे पुत्र उस स्त्रीकी तैंने रक्षाकरी और मुझकोभी सुपुर्दकरदी इससे हे तात मैं तुझपर प्रसन्नहूं तुम प्रसन्नता से स्वर्गको जावोगे १६ यह कहकर वह प्रसन्नमन देवशर्मा

समय पर अपनी स्त्री और शिष्य समेत स्वर्ग में नियत होकरआ-
नन्द करने लगा १७ हे राजा पूर्व्व समय में गङ्गाजी के तट पर
महा मुनि मार्कण्डेय जी ने कथाके मध्यमें इस आख्यानको मुझसे
कहाथा १८ इसीहेतु से मैं तुमसे कहताहूं कि स्त्रियां सदैव रक्षा
करने के योग्य हैं उन शुभचलन वा अशुभ चलनवाली स्त्रियोंमें
सदैव दोनोंलोक दिखाई देतेहैं १६ हे राजा पतिव्रता स्त्रियां महा-
भाग और लोकों की माता हैं और इस पृथ्वीको बन उपवनों स-
मेत चारों ओर से धारण करती हैं २० हे राजा बदचलन कुलकी
नाशक पापका निश्चय करनेवाली बे मर्य्यादा यह सब प्रकारकी
स्त्रियां हाथ पैर की रेखा आदिके चिह्नों से जान लेने के योग्य
हैं २१ इसप्रकार से इन स्त्रियोंकी रक्षा महात्मा लोगोंको करना
उचितहै क्योंकि स्त्रियां अवश्य रक्षा करने केही योग्य हैं हे राजा
इसरीतिके सिवाय दूसरी रीतिसे इनस्त्रियोंकी किसीप्रकारसे भी
रक्षा नहीं होसक्ती २२ हे नरोत्तम वह स्त्रियां तीक्ष्ण औरा तीक्ष्ण
पराक्रमी हैं इनका कोई प्यारा नहीं है जो बिषयमें इनको अपने
शरीरमें लगाताहै वही इनका प्यारा होताहै २३ हे भरतर्षभ यह
स्त्रियां प्राण लेनेवाले देवता की सूरत हैं और एक की स्वीकृत हो
कर भी दूसरेसे मिलनेकी उत्कण्ठा रखतीहैं हेपांडुनन्दन यहस्त्रियां
एकही पुरुष के साथ क्रीड़ा नहीं करती हैं २४ हे राजा इन-
के साथ पुरुष को शत्रुता और मित्रता दोनों हीन करना चहिये
चांहेदुःखसे इनको भोगे वा ऋतुकालके स्नानकरनेके पीछे इनको
भोगकरे २५ हे कौरवनन्दन जो मनुष्य विपरीत कर्म करताहैवह
अपना नाशकरताहै सब स्थानोंपर और सब दशामें उनसेपृथकही
रहना उत्तम कहाजाताहै २६ हे राजा उस अकेले एक बिपुलने
स्त्री को रक्षाकरीहै इसके सिवाय तीनोंलोकमें भी स्त्रीकी रक्षाकरने
वाला कोई नहीं है अर्थात् स्त्री की रक्षाकरने को कोई भी समर्थ
नहींहै २७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेविपुलोपाख्यानेत्रिचत्वारिंशोऽध्यायः४३॥

चवालीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरने कहाकि हे पितामह अपने बालबच्चे और गृह अतिथि और देवता पितर आदिका मूलरूप जो धर्महै उसको मुझसे वर्णन कीजिये १ हे राजा सब धर्मोंमें इस धर्मको बड़े विचार के योग्य मानाहै कि अपनी कन्या कैसे मनुष्यके देनेके योग्यहै २ भीष्मजी बोले स्वभावसे गुरु पूजनादिक ब्रतवाले बिद्यावान् माताकी ओर से पवित्र कर्मको अच्छीरीति से जानकर सत्पुरुषों की आज्ञा से गुणवान् बरके निमित्त कन्या देना योग्य है यह धर्म ब्राह्मबिवाह रूप ब्राह्मण लोगोंकाहै (इस स्थानपर ब्राह्मबिवाह में दैव और आर्षबिवाह भी संयुक्त जानना चाहिये क्योंकिब्राह्मणके योग्यतीन बिवाहहैं प्रथम तो कन्याको अलंकृत करके हाथमें जल लेकर जो कन्याका दानहोताहै वह ब्राह्मबिवाह कहलाताहै और जो यज्ञ में कन्याको अलंकृत करके ऋत्विज को दानकरे वह दैवबिवाहहै और जो बरसे दोगौ लेकर उसको कन्यदानकरे वह आर्षबिवाह कहाताहै) ३ जो मनुष्य इसरीतिसे बिवाहके योग्य कन्याको गुणवान् बरको बुलाके धन धान्य बस्त्र आभूषणों समेत श्रद्धा पूर्व्वक कन्या दानकरे वह सनातन धर्म उत्तम ब्राह्मण और क्षत्रियोंकाहै(यह प्राजापत्य बिवाहका बर्णनहै) ४ हे युधिष्ठिर जो अपने अनुराग को प्रकट करके कन्याको चाहताहै अथवा कन्या जिसको चाहतीहै उसको कन्यादेनी चाहिये ५ वेदज्ञ पुरुषोंने उस धर्मको गान्धर्व बिवाह कहाहै बहुत प्रकारके धनसे बांधवोंको लुभाकर और कन्या को मोल लेकर जो बिवाह होताहै ६ हे राजा उसको ज्ञानी लोगोंने असुरोंका धर्म कहाहै रोतेहुये मनुष्योंको मार उनके शिरोंको काटकर हठ करके रोतीहुई कन्याको जो घरसे लेकर भागवाहै ७ हे तात वह भी राक्षस बुद्धि कहीजातीहै क्योंकि कन्या और बरको परस्परकी इच्छासे जो संयोग होताहै वही श्रेष्ठहोताहै सोतीहुई वा असावधान अथवा नशों से उन्मत्त कन्याको जो प्राप्त करताहै वह

विवाहोंमें पापरूप पिशाचनाम विवाह निकृष्टसे भी निकृष्टतम है
हे युधिष्ठिर पांचोंविवाहों में तीन विवाह धर्मरूप और दो अधर्म
रूपहैं ८।९ अलग२ या मिलेहुये विवाह करनेचाहियें इसमें सन्देह
नहींहै कि ब्राह्मणकी तीनभार्य्याहैं क्षत्रीकी दोभार्य्या १० बैश्य अ-
पनीही जातिकी स्त्री को भार्य्याकरे उन स्त्रियों में सन्तान उत्तमहो-
तीहै उनमें ब्राह्मणकी ब्राह्मणीभार्य्या बड़ीहै और क्षत्रीकी क्षत्रिया
भार्य्याबड़ीहै ११ और भोगकरनेके लिये शूद्राभी चारोंबर्णों की
स्त्री है यह अन्यलोगोंका कथन है क्योंकि महात्मा लोग शूद्रामें
उत्पन्न होनेवाले पुत्रको अच्छानहीं कहतेहैं जो कि आगे लिखेहुये
वेदके वचन से वह पतिही अपनी भार्य्यामें उत्पन्न होताहै (वेदका
बचनहै कि आत्मावैजायतेपुत्रः) १२ इसीसे ब्राह्मण शूद्रास्त्री में
सन्तानके उत्पन्न करनेसे प्रायश्चित्ती कहाजाताहै तीसबर्ष का
मनुष्य दशवर्ष की स्त्री जो अवस्थाके कारण एकही बस्त्र धारण
करनेवाली हो उसको प्राप्तकरे १३ औरइक्कीसबर्षकीअवस्थाबाला
मनुष्य सातवर्षकी कन्याको प्राप्तकरे हे भरतर्षभ जिस कन्याका
भाई या पितानहोवे १४ उस कन्याको कभी न बिवाहकरे क्योंकि
वह पुत्रिका धर्मवालीहै ऋतुमती वा मर्य्यादावाली सतीकन्या तीन
वर्षतक राहदेखे १५ चौथेबर्ष होजानेपर आप पतिको अन्वेषण
करके प्राप्तकरे हे भरतर्षभ उसकी सन्तान और भोगका बिलास
नष्टनहीं कहाजाताहै इसके बिपरीत करनेवाली वह कन्या प्रजा-
पतिजीकी बुद्धिसे नष्टहै जो कन्या माता पिताके पिंड और गोत्रमें
नहींहै उससे विवाह करके जो भोग करताहै उसको मनुजीने धर्म
रूप कहाहै १६।१७ युधिष्ठिर बोले कि एकनेशुल्क दियाहोयऔर
दूसरा कहताहै कि देताहूं और कोईबल से वार्त्तालापकरे कोई धन
को दिखलावे १८ और कन्याका हस्तग्राही अर्थात् उससे बिवाह
करनेवाला कोई औरहीहो तब वह किसकी भार्य्या है हे पितामह
आप मूलसमेत हम लोगोंसे बर्णनकीजिये १९ भीष्मजी बोले कि
मनुष्यके बिवाहसे संबंध रखनेवाला जो कुछकर्म भार्य्याके साबित

करनेके लिये दिखाई देताहै, और विचार करनेवाले पुरुषोंसे विचार कियागयाहै कि यहकन्या अमुक पुरुषको देना योग्यहै उसका छिपाना पातकहै २० भार्य्याका पति ऋत्विज आचार्य्य शिष्य उपाध्याय यह सब लोग बचनों को कहकर फिर स्त्री से नाहीं करें तो प्रायश्चित्त के योग्यहैं इसमें अन्यलोगोंने कहा है कि नहीं २१ बिनाचाहनेवाली के साथ हम निश्चय नहीं करतेहैं यह मनुजीका बचनहै जो बिपरीत कर्मसे धर्मको क्रोधयुक्त होकर करताहै वह उत्तम कीर्त्ति और धर्मके नाशका हेतुहै २२ हे भरतवंशी जिसकन्या को बांधव लोग धर्म से देतेहैं और जिसको शुल्क देकरलेतेहैं वहां एक पक्षका निश्चय होजानेपर बहुत निश्चयवाला दोष किसी को नहीं प्राप्तहोता है २३ उनदोनोंपक्षों में से पहले पक्षका निश्चय करतेहैं और दूसरे को फिर निश्चय करेंगे—अर्थात् (अच्छीरीतिसे बांधवोंकी आज्ञा होनेपर मन्त्रोंसे युक्त होकर हवनकरे वह मन्त्र इसरीतिसे सिद्धहोतेहैं और बांधवोंने जिसकन्याको नहीं दियाहै उसके बिवाह मंत्र किसीदशामें भी सिद्ध नहीं होतेहैं २४ जब कि शुल्कका देना और मा बाप को लड़की देने का विचार यह दोनों वर्त्तमानहों उस स्थानपर यह कहतेहैं कि जो यह कन्याके बिवाह का विचार जातिवालोंके बिचारसे हुआहो तो उत्तमहै परन्तु यहां पर भार्य्या और पतिके कौल जो मन्त्रयुक्त होकर कियेगयेहैं उसी को श्रेष्ठतम कहाहै २५ जो पति देवताकी धर्मरूप आज्ञासे दीहुई भार्य्याको पाताहै वह देवता और मनुष्योंके उन वचनोंको अपनसे पृथक् करताहै जो कि मिथ्यासे संबंध रखनेवालेहैं २६ युधिष्ठिरने प्रश्नकिया कि जिस कन्याका शुल्क बिचार किया हुआहै वहां जो कदाचित् धर्म कामार्थसे युक्त दूसरा वर उत्तम आजाय तो ऐसे स्थानपर मिथ्या बिवाह कहना योग्यहै वा नहीं२७ उनदोनोंदोषों के बर्त्तमानहोनेपर कन्याका बिवाह करनेवाला कौन से उत्तमकर्म को करे और यही धर्म हमने सबधर्मोंमें बिचारके योग्य मानाहै२८ आप हम लोगोंसेठीक २ मूल समेत सबको बर्णनकीजिये मैं आप

के बचनों से तृप्त नहीं होताहूं २९ भीष्मजी बोले कि स्त्रीका शुल्क नाम मूल्यही स्त्रीपन साबित करनेवालाहै यह जानकर उस मोल लेनेवालेने मूल्यनहींदिया किन्तु मोललेनेके निमित्त दिया केवल मोललेनेसेही स्त्रीपन साबित नहीं होताहै ३० बांधवलोग उस समय शुल्कको मानतेहैं जब कि अन्य २ गुणोंसेभी संयुक्तहोयजो कन्याका स्वामी कन्याको अलंकृतकरके कहै कि इसको धारणकरो इसरीतिसे भूषण को देवे और जो कन्याका पिता धनआदि से संयुक्त बरको समझाकर कन्याको दान करताहै वह न शुल्कलेने वालाहै और न वह बेचीहुईहै भूषणलेकर उस भूषण समेत कन्या देने के योग्य है यही सनातन धर्म है ३१ । ३२ जोमनुष्य प्रथम कहते हैं कि कन्याको दूंगा और जो कहते हैं नहीं दूंगा और जो कहतेहैं कि अवश्य दूंगा वह सब नहीं के बराबरहै अर्थात् वह बचन नहीं करने के समान है ३३ इसीहेतु से बिवाह होनेतक परस्पर में याचना करते हैं पूर्वसमय में मरुद्गण नाम देवताओं ने कन्याके विषयमें वरदियाहै यह हमने सुनाहै अर्थात् (उत्तमबरके प्राप्त होनेमें कन्या अन्य किसी बरके न देनेमें दोष नहींहै जबतक कि बिवाह न होगया हो ३४ अप्रिय बरको कन्या न देना चाहिये यह ऋषियों की आज्ञाहै जिसका मूलरूप कामहै उस सन्तानका मूल ऋषियों का बचनहै यह मेरा मतहै तात्पर्य्य यहहै कि कन्या को अच्छे दौहित्र होने के प्रयोजन से उत्तमही बरको देना उचित है ३५ कन्याको मोलवेचके सब दोषोंको बड़े ध्यानसे बिचार करके जानो कि उसप्रकार का शुल्क कभी स्त्रीपन का उत्पन्न करने वाला नहीं हुआहै ३६ उसीप्रकार पराक्रम भी शुल्क होताहै उसको में कहताहूं तुम सुनो किमैं सब मगध काशी और कोशलदेश निवासियों को बिजय करके राजा बिचित्रवीर्य्य के निमित्त दोकन्याओं को लाया ३७ उनमें एक तो बिबाही गई दूसरी नहीं बिबाही गई क्योंकि पराक्रम रूप शुल्क से प्राप्त करीथी उसस्थान में मेरे पिताके भाई वाह्लीकने कहाकि यह त्याग करनेके योग्यहै इसको

मत विवाहो ऐसी उस कौरवने आज्ञादी ३८ फिर पिताके वचन पर सन्देह करनेवाले मैंने अन्य शिष्ट लोगोंसे भी पूछा क्योंकि उस मेरे पिताके धर्म में इच्छा अत्यन्त करके थी ३६ हे राजा इसके अनन्तर आचार की इच्छा करनेवाले मैंने वारंवार इस बचन को कहा कि मैं आचारको मूल समेत जानना चाहताहूं ४० हे महाराज इसके पीछे मेरे इसबचन के कहने पर उस धर्मध्वज मेरे पिता रूप वाह्लीक ने यह बचन कहा ४१ कि तुम्हारे विचार में पराक्रम रूपी शुल्क से ही स्त्रीपन नियत होताहै और पाणि-ग्रहण से नहीं होताहै तो वह कन्या या वर जिसमें होम के योग्य द्रव्य बर्त्तमान होय वह लज्जायुक्त हो जाय जिससे कि उसका दोष दूर होजाय ४२ जिनके बिचार से कन्या का स्त्री भाव होना पराक्रम रूपी शुल्कसे है उनका बचन भी प्रमाण कहा जाताहै इस बातको धर्मज्ञ लोगोंने नहीं कहा है क्योंकि उनके विचार से स्त्रीभावका नियत होना पाणिग्रहणही से होताहै ४३ कन्यादान प्रसिद्ध है इसकारण जो मनुष्य कन्या का मोल अथवा उसके शुल्क को अंगीकार करते हैं वह दोनों प्रकार के मनुष्य धर्मज्ञ नहीं हैं और इन शुल्क बादियों का कोई प्रमाण भार्य्यापन प्रकट करने वाला नहींहै ४४ इन लोगोंको कभी न कन्या देना चाहिये न इस प्रकारके बिवाह करने चाहियें क्योंकि किसी दशामें भी भार्य्या का मोल लेना और कन्या का बेचना उचित नहींहै ४५ जो पुरुष दा-सीको मोल लेतेहैं और बेचते हैं उन लोगोंको वही पाप होताहै जैसा कि लोभी और पापात्मा लोगोंको होताहै ४६ इसी प्रयोजन से मनुष्योंने सत्यवान् से पूछा कि जब पराक्रम से प्राप्त कन्या का शुल्क देनेवाला अर्थात् मूल्य देनेवाला मनुष्य मरजाय ४७ और बिवाह करने वाला अन्यहोय ऐसे विषय में हमको धर्मका सन्देह है हे महाज्ञानी तुम इसको समझावो क्योंकि तुम बुद्धिमानों के अंगीकृत हो ४८ आप मुख्य वृत्तान्तके जानने के इच्छावान् हम लोगों के नेत्र हूजिये इन सबके इसप्रकार के वचनों को सुनकर

सत्यवान् ने सब से यह वचन कहा ४६ कि जिसको मनसे प्रसन्नता पूर्वक चाहते हो उसीको कन्या देना योग्य है इसमें विचार न करना चाहिये शुल्क देनेवाले के जीवते हुये ऐसा करते हैं और उसके मरने पर तो कुछ सन्देह ही नहीं है ५० वह कन्या देवर के साथ विवाह करे अथवा परलोक में अपने पतिके मिलने की इच्छा से उस देवर के साथ निवास करके फिर तपस्या भी करे (देवर से विवाह करना सतयुग का धर्म है कलियुग का नहीं है) ५१ किसीके मतमें भाईकी स्त्रीको देवर आदि के भोगने से भी पवित्र मानकर अपने साथमें संयुक्त करते हैं और दूसरे मतवाले इसको यह कहते हैं यह अभ्यास कर्म इच्छासंबंधी है शास्त्र संबंधी नहीं है——जो मनुष्य इस विषय में वाद करतेहैं वह इस वचन पर विश्वासकरते हैं ५२ तत्पाणिग्रहणात्पूर्वमन्तरंयत्रवर्त्तते । सर्वमंगलमंत्रावै मृषावादस्तुपातकः ॥ अर्थात् जब स्त्रीका बर पाणिग्रहणसे पूर्व दैवयोग से मरजाय उससमय उसके जिस भाई की मंगली हल्दी स्नान आदि रीतें मन्त्रोंकेअनुसार वर्त्तमान होतीहैं वही उसका अधिकारी है पाणिग्रहण के पीछे कोई अधिकारी नहीं है और उस मन्त्र सिद्ध भाई को मिथ्या कहना पापहै ५३ सातवीं भावंर पर पाणिग्रहण के मन्त्रोंकी निष्ठा रूप प्रमाण होताहै तब उस हाथ पकड़नेवाले की भार्य्या होतीहै जिसको कि जल समेत संकल्पकरके दानकी जातीहै ५४ और इसस्थानपर जो मनुष्य कन्या दानको देनेके योग्य कहतेहैं उन लोगोंने यहनिश्चयमानाहै कि उत्तम ब्राह्मण न्यायकेअनुसार भांवर फेरकर उस भार्य्या को ग्रहण करे जो अनुकूल होकर अपने भाई की दीहुई अग्निके सन्मुख वर्त्तमानहो ५५ । ५६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः४४ ॥

पैंतालीसवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि जिस कन्याका शुल्क देदिया गयाहो और

उसका कोई पति नहीं है अर्थात् शुल्कदेनेवाला परदेश चलागया हो और अन्य मनुष्य उसकेभयसे विवाह नहींकरताहै उसविषयमें क्या करना चाहिये हे पितामह इसको मुझे समझाइये १ और जिस कन्याका पिता पुत्रहीन होकर अपनी धनाढ्यतासे उस कन्या का पोषण करके उसकीरक्षाकरे और शुल्कको नहींफेरे तव वह कन्या शुल्कदेनेवाले की मोल लीहुईहै अर्थात् उसका पिता किसी दूसरे के देनेका अधिकार नहीं रखता २ वह कन्या जिस न्यायसे वा रीति से समर्थ होकर उस शुल्क देनेवाले के लिये सन्तान को चाहै और शुल्क देनेवाले के सिवाय कोई पुरुष उसके साथ विवाह न करे ३ इसरीतिसे जिसका शुल्कदियागयाहै उसके करने के योग्य कर्म को कहकर अब उस कन्याके योग्य कर्म करने को कहते हैं जिसका कि शुल्क नहीं दियाहै--पिता से आज्ञा लेकर सावित्रीने अपने अभीष्ट बरको प्राप्त कियाहो उसके उस कर्म को कोई अच्छा कहतेहैं और धर्मज्ञ उसकी निन्दाकरतेहैं ४ इसका कारण यहहै कि अन्य मनुष्योंने कभी उस कर्मको नहीं किया और कोई साधुजन कहतेहैं कि धर्म का चिह्न रखनेवाला जो साधुओं का आचारहै वही उत्तम है ५ इसी बिषयमें महात्मा राजा जनक बिदेहके पौत्र सुक्रतुने यह बचन कहाहै ६ कि जब पिता नीचोंके मार्ग में बर्त्तमानहै अर्थात् कन्याके बरको नहीं ढूंढ़ता है तब यह शास्त्रका बचन कैसे उचित होगा कि (नस्वातन्त्र्यंक्कचित्स्त्रियः) अर्थात् स्त्री स्वतन्त्रतासे रहितहै चाहै इसमेंप्रश्न और संदेह कैसा-ही हो वा सत्पुरुषों की निन्दाहो ७ यह जो स्त्रियोंके धर्म में स्त्रि-यों की अस्वतन्त्रताहै यह आसुरी धर्महै उत्तम नहींहै हमकभी इस धर्मको वृद्धोंमें और साधुओंमें नहीं सुनतेहैं ८ स्त्री और पतिका संयोग बहुत सूक्ष्महै अर्थात् केवल शास्त्रसे ही जाना जाताहै और स्त्री पुरुषका भोग साधारणहै इसीकारण शास्त्रकी आज्ञाके विना केवल भोग करनेकोही विवाह न करे यह भी उसीराजाने कहा ९ युधिष्ठिर बोले फिर किस प्रमाण से मनुष्यों का धन लियाजाताहै

और उस अपुत्री पिताकी कन्याही पुत्रकी समान होने को लायक है१० भीष्मजी बोले जैसा कि अपना आत्माहै वैसाही पुत्रहै और कन्याभी पुत्रकीही समानहै उस आत्मा रूपपुत्रीके वर्त्तमान होने पर अन्य भाई बन्धुआदि कैसे धनको लेसक्ते हैं ११ पिता श्वशुर पति और सूतकातने आदिके परिश्रम से वा माताका दिया हुआ जो धनहै वह क्वारीकन्या का भागहै उस नानाका पुत्र होय वा न होय परंतु असन्तान नानाकाधन बेटीका पुत्रही लेगा १२ क्योंकि वह लड़कीका पुत्र नानाके और अपनेपिताके पिंडोंको देताहै धर्म-शास्त्रकी रीतिसे पुत्र और दौहित्रमें अन्तर नहींहै दोनों बराबरहैं प्रजाके पुत्र यद्यपि औरस नहींहैं वह दौहित्रके साथ सदैव भाग चाहतेहैं परंतु जो लड़का औरस नहीं है उससे लड़की अधिक है इसका प्रयोजन यह है कि (जब प्रथम लड़की को पुत्री किया और इसके पीछे पुत्र उत्पन्न हुआ उस दशामें पिताके धनके पांच भागकिये जांय उनमें से दो भाग तो कन्याले और तीनभाग पुत्र ले और जो पुत्र दत्तक आदिमें से हैं उस दशामें उन पांचभागों में से कन्या तीन भागको और पुत्र दोभागोंकोपाताहै)१३।१४ क्यों-कि यह बात दौहित्रके धर्म से है और किसी धर्म से नहीं है आगे लिखेहुये वर्णन में मैंकारण देखताहूं कि मोलकी लीहुई स्त्रियों में जो पुत्र उत्पन्न होतेहैं वह भागलेनेके योग्य नहीं हैं १५ क्योंकि पिताके आसुरी बिवाहसे उत्पन्न हुये पुत्र दूसरे के गुणमें दोष लगानेवाले अधर्म में प्रवृत्त पर धनापहारी छली अधर्मरूप और दुराचारी होतेहैं १६ इस आसुरी विवाहके विषय में भविष्यद्वक्ता धर्माधर्मज्ञ धर्मकेसेतु शास्त्रोंकेआज्ञानुवर्त्ती मनुष्य यमराजकी कही हुई कहावतको कहतेहैं १७ जो मनुष्य अपने पुत्रकोबेचकर धनको चाहताहै अथवा अपने निर्वाह करनेके लिये शुल्कलेकर कन्याको देताहै १८ वह अज्ञानी कालसूत्रनाम बड़ेभयानक आठवें नरकमें जाकर पसीना मूत्र बिष्टाको खाताहै १९ कोई २ लोगोंने आर्षबि-बाहमें दो गौको भी शुल्क कहाहै वह भी सत्य कहनाहै हे राजा

थोड़ाहो वा बहुत हो वह उतनाही वेचना कहाजाताहै २० यद्यपि चाहै जितने मनुष्योंने इसको कियाहै तौ भी यह प्राचीन धर्मनहीं है राक्षस विवाह करनेवाले अन्य मनुष्यों के आचरण भी लोक मेंदिखाई देतेहैं २१ जो मनुष्य पराक्रम से स्वाधीन होनेवाली उस कुमारी को भोगतेहैं वह पाप करनेवाले मनुष्य अन्धतामिस्र नाम नरक में पड़ेहुये दुःखों को भोगतेहैं २२ कोई भी मनुष्य न बेचनाचाहिये तो सन्तान कैसे बेचनी चाहिये जिनकाबेचना महा-अधर्म का मूल है उन धनवानोंसे कोई धर्म नहीं होताहै २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेविवाहधर्मेयमगाथा वर्णनेपंचचत्वारिंशोऽध्यायः ४५ ॥

छियालीसवां अध्याय ॥

भीष्मजीबोले कि प्राचीन वृत्तान्तके जाननेवाले मनुष्य प्राचेतस के वचन को कहते हैं कि लड़की के पिता माता आदि मालिक जिसके न्यायके निमित्त कुछ आभूषणादिक लेते हैं वह बेचना नहीं कहलाताहै १ वह कुमारियों का पूजनहै वह संपूर्ण आभूषण कन्याही के देने के योग्य है अर्थात् माता पिता उसको कदापि न लें २ बहुत कल्याण चाहनेवाले पिता भाई श्वशुर और देवरोंसे वह स्त्रियां पूजन और आभूषणादिसे अलंकृत करने के योग्यहैं ३ निश्चयकरके जो स्त्री इच्छा न करे और पुरुषको अभिलाषी न करे तो अभिलाषी न करने से पुरुषकी सन्तान वृद्धिको नहीं पातीहै ४ हे राजा स्त्रियां सदैव पूजन के योग्य होकर प्रीति पूर्वक पोषण करने के योग्यहैं जिसघरमें स्त्रियां पूजितहोतीहैं वहां देवता क्रीड़ा करतेहैं ५ और जिसघरमें पूजितनहीं होतीहैं वहां सबकाम निष्फल होते हैं जब स्त्रियां शोचकरतीहैं तब वह कुलनष्ट हुआजानो ६ हे राजा स्त्रियोंसे शापपानेवाले घरोंको कृत्यादेवीनाश करदेती है और लक्ष्मी से रहित होकर शोभाहीन होजातेहैं और वृद्धिको भी नहीं पाते स्वर्ग में जानेके इच्छावान् मनुजीने पुरुषों को कन्या-

दान किया और कहदिया कि यह स्त्रियां निर्बल और शीघ्र बे परदह होकर स्वाधीन होनेवाली शुभचिन्तक और सत्यवक्ता हैं ७।८ ईर्षावाली पूजा चाहनेवाली अत्यन्त क्रोधभरी अशुभचिन्तक और अज्ञानभीहैं तौभी वह स्त्रियां पूजनके योग्य हैं हे मेरे पुत्रो तुम उनका पूजन करो ६ धर्म स्त्रीकोही कारण समझताहै इस हेतुसे तुम्हारे बिषयादिक भोग पाकादि और सेवा नमस्कारादिक उस स्त्रीके आधीन होंय १० लोकयात्राकी प्रीति केलिये सन्तान की उत्पत्ति और उत्पत्तिहुई सन्तानका पोषण स्त्रीसे ही संबन्धित देखो ११ तुम इनको अच्छीरीति से पूजते हुये सब मनोरथोंको पावोगे इसी स्त्री धर्मके बिषय में राजा जनक की पुत्री ने श्लोक कहाहै १२ उसका अर्थ यहहै कि स्त्रीके कोई यज्ञ क्रिया श्राद्ध और व्रतनहींहै उनका केवल यहीधर्महै कि अपने पतिकी सेवाकरना इसी धर्म से वह स्वर्गको विजय करतीहैं १३ बाल्यावस्थामें उनकी रक्षा पिता करताहै तरुणावस्था में उनका पति रक्षक है और वृद्धावस्थामें पुत्र रक्षा करतेहैं स्त्रीको स्वतन्त्रता किसीदशा में भी नहीं है १४ हे भरतवंशी यहस्त्रियां लक्ष्मीरूप हैं ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्य को इनका बड़ा आदर सत्कार करना उचित है रक्षाकीहुई महलोंमें नियत हुई स्त्री लक्ष्मीरूप होती है १५॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेविवाहधर्मेनामषट्चत्वारिंशोऽध्यायः४६॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले हे सर्वशास्त्रोंके बिधान जाननेवाले धर्मधारियों में श्रेष्ठ पितामह आप इस पृथ्वी पर बड़े सन्देहों के निवृत्त करनेवाले विख्यातहो १ मेरा यह एक सन्देह है उसको मुझे समझाइये हे राजा इससंदेहके उत्पन्न होनेसे हम किसी दूसरेसे प्रश्न नहीं करसक्ते २ हे महाबाहु धर्ममार्ग में प्रवृत्त होनेवाले मनुष्य को जिस रीतिसे कर्म करना चाहिये आप उस सबके वर्णन करनेके योग्यहैं ३ इसप्रकारसे राजायुधिष्ठिर ऋत्विज और स्त्री की पवि-

त्रताको सुनकर धनकी पवित्रता के अर्थ पिताके धनके बिभाग को पूछते हैं-हे पितामह ब्राह्मणकी चार स्त्रियां नियत करीं ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या और भोगकी इच्छासे शूद्राभी अर्थात् शूद्राधर्म से विपरीतहै ४ हे कौरवों में बड़े साधू उनसव स्त्रियोंके पुत्र उत्पन्न होने पर उनमें पिताके धनके भागोंमें कौन किसकिसभागका पानेवाला है ५ हे पितामह उस पिताके धनमेंसे कितना भाग किसको लेना उचितहै उनमें जोबिभाग होनाचाहिये उसको कहिये ६ भीष्मजी बोले हे युधिष्ठिर ब्राह्मण क्षत्री वैश्य यह तीनों वर्ण द्विज कहाते हैं इन्होंके कुलोंमें ब्राह्मणका बिवाह धर्मबिचार कियागया है ७ हे शत्रुसंतापी ब्राह्मणके धर्म बिरुद्ध लोभसे या इच्छासे जो शूद्रास्त्रीहै वह शास्त्रसे नहीं कहीहुईहै ब्राह्मण शूद्राको अपनी शय्यापर बैठाने से अधोगति को पाताहै और वेदोक्त कर्मसे प्रायश्चित्त केभी योग्यहोताहै ८।९ उसशूद्रामें पुत्रोंके उत्पन्न होनेपर प्रायश्चित्त दूना होनाचाहिये और हे राजा युधिष्ठिर पिताके धनके विभाग को मैं अच्छी रीतिसे वर्णन करूंगा उसको सुनो १० जो मुख्य बस्तु यथा गौ बैल सवारी आदि उत्तम धनहोय पिताके धनमेंसे उस उत्तम धनके भागको ब्राह्मणीका पुत्र लेगा ११ हे युधिष्ठिर शेष बचे हुये ब्राह्मणके धनके दशभाग करने चाहियें उनमेंसे चार भाग तो ब्राह्मणीके पुत्रके लेनेके योग्यहैं १२ और क्षत्रियाका जो पुत्र है वहभी निस्सन्देह ब्राह्मणहै परन्तु वह अपनी माताके संबंध से तीनभाग लेनेका अधिकारी है १३ और हे युधिष्ठिर ब्राह्मण से जो वैश्यामें जो तीसरे वर्णमें उत्पन्न हुआ पुत्रहै उसको ब्राह्मण के धनके उनभागोंमेंसे दोभाग मिलने चाहियें १४ हे भरतवंशी ब्राह्मणसे शूद्रामें उत्पन्न होनेवाला पुत्र सब दशाओंमें भाग न पानेके योग्य कहाहै तौभी उस शूद्राके पुत्र के लिये भी थोड़ाधन अर्थात् दशवांभाग देनेके योग्यहै १५ दशभाग होनेवाले धनका यह बिभाग क्रम होताहै और जो पुत्र कि सवर्णा स्त्रियोंमें उत्पन्नहैं वहसब समान भाग पानेके अधिकारीहैं १६ संस्कारकी योग्यता न होनेसे

शूद्राके पुत्रको ब्राह्मणका पुत्र नहीं मानतेहैं ब्राह्मण से तीनों वर्णों में उत्पन्न होनेवाला पुत्र ब्राह्मण होताहै इसका आशय (चारोंवर्णों की स्त्रियों मेंसे ब्राह्मणी और क्षत्रियामें ब्राह्मण वर्ण उत्पन्न होता है परन्तु यह बात ऋषियोंमें थी दूसरे ब्राह्मणोंमें नहींथी और वैश्या और शूद्रा के पुत्र माताके वर्णमें संयुक्त होतेहैं १७ यह चारों वर्ण वर्णन किये इनके सिवाय पांचवां वर्ण नहीं पायाजाताहै शूद्रा का पुत्र पिताके धनमेंसे दशवें भागको लेसक्ताहै १८ वहभी पिता केदेनेसे लेसक्ताहै परन्तु जोपिता न देतोवह लेनहीं सक्ता है हे भरतर्षभ शूद्राके पुत्रके निमित्त अवश्य धनदेना उचितहै १९ क्योंकि दयाकरना भी बड़ाधर्म उत्तमहै इसीहेतु से उसको दियाजाता है जहां दयाअच्छीरीति से उत्पन्नहोतीहै वहां अच्छे गुणोंके कारण वह धन शुद्ध होजाता है २० चाहै यहसन्तानयुक्त होय वानहोय तौभी यह शूद्राके पुत्रके लिये दशवेंभाग से अधिक देवे २१ जब कि ब्राह्मण का धन संचित सौ वर्षके भोजनके खर्चसेभी अधिकहोय तोउसधनसे यज्ञ करे बिना यज्ञके प्रयोजन बिना दान आदि अथवा दूसरे कारण से उसके भागका रखना न चाहिये २२ धनके भागमेंसे तीनहजार से अधिकधन स्त्रीको नदेनाचाहिये२३ पतिका दियाहुआ वह धन भी उचित रीतिसे खर्च करनेके योग्यहै पतिकादिया हुआ स्त्रियोंका भाग भोगोंके फलकादेनेवाला कहा है पतिके दिये हुयेधनमेंसे उसके पुत्र किसीदशामें भी उसके भाग को अपने खर्चमें नहीं लासक्ते २४ हेयुधिष्ठिर जो स्त्रीका धन उसके पिताका दियाहुआहै उसको ब्राह्मणीकी कन्या लेसक्तीहै जैसा पुत्रहै वैसेही वह कन्याभीहै २५ हे कौरवनन्दन राजा युधिष्ठिर कन्या पुत्र केही समान विचार कीगईहै पिताके धनके विभाग औ धर्मके विभाग उपदेश किये हे युधिष्ठिर इसप्रकारसेधर्मको विचार करके अन्यायसे धनको नहीं चाहै २६ युधिष्ठिर बोले कि जो शूद्रा स्त्रीमें ब्राह्मणसे उत्पन्न होनेवाला पुत्र धन देनेके अयोग्य कहातो उसको दशवांभाग भी किस मुख्यतासे दियाजाताहै २७ ब्राह्मणी

में ब्राह्मणीसे उत्पन्न हुआ पुत्र ब्राह्मण होताहै और इसीप्रकार क्ष-त्रिया वा वैश्यामें उत्पन्न होनेवाला पुत्रभी ब्राह्मण होताहै २८ हे राजेन्द्र फिर वह किस हेतुसे भिन्न २ भागको पातेहैं जब कि आपने तीनों स्त्रियों के पुत्रोंको ब्राह्मण कहाहै २९ भीष्मजी बोले हे शत्रुसन्तापी लोकमें स्त्री एक नाम से दारा भी कही जाती है अर्थात् धर्म अर्थ कामचाहने वालोंसेआदरकीजातीहै वह गुणशूद्रा में भी है इस नामके कहने से यह बहुत बड़ी मुख्यता इसमेंभीहुई ३० जो ब्राह्मण प्रथम शूद्राकोभार्य्याकरके फिरब्राह्मणीको भार्य्या करेतब भी वहब्राह्मणीही बड़ी और पूजन के योग्य हैवही भार्य्या सबमें वृद्धहै अर्थात् पिताकीही प्रधानता से ब्राह्मणी को सब लौ-किक वैदिककर्मोंमें सब आदर करते हैं ३१ पतिको स्नान कराना शिरकेबाल धोने वा दंतधावनकादेना देवता पितरोंके देनेकेयोग्य वस्तुओं की तैयारी और जो २ धर्म संबंधी घरमें कार्य्य होंय ३२ उस ब्राह्मणी के वर्त्तमान होने पर दूसरी स्त्री कभी उसके करने के योग्य नहीं है हे युधिष्ठिर ब्राह्मणके सब कार्य्योंको ब्राह्मणीभा-र्य्याही करे ३३ खानेपीने की वस्तु फूलमाला वस्त्र आभूषण यह सब पति की वस्तु ब्राह्मणी भार्य्या ही के हाथ से देने के योग्यहैं क्योंकि वह उसपति की बड़ीस्त्री है ३४ हे कौरव नन्दन महाराज जोशास्त्र मनुजी का कहा हुआहै उसमें भी यही प्राचीन सनातन धर्म देखा गयाहै ३५ हे युधिष्ठिर फिर जो प्रीतिवश होकर धर्म कोविपरीत कर्म करे तो वह उस दशामें वैसाहीहै जैसा कि पूर्व्व समयमें मातंग नाम चांडाल ब्राह्मण देखा गयाहै ३६ क्षत्रिया का जो पुत्र होय वह ब्राह्मणी के पुत्रकी समान है हे राजा इस स्थानमें जो दोनों वर्णोंकी मुख्यताहै ३७ लोकमें क्षत्रिया ब्राह्मणी के समान नहीं होती हे राजाओं में श्रेष्ठ साधु युधिष्ठिर ब्राह्मणी का प्रथम पुत्र बड़ा होताहै उसको पिताके धनसे बड़ा भागदेना योग्य है जैसे कि क्षत्रिया कभी ब्राह्मणी के समान नहीं होसकी ३८।३९ इसी प्रकार वैश्या कभी क्षत्रियाके समान नहीं होसक्ती

हेयुधिष्ठिर क्षत्रिया में लक्ष्मी राज्य खजाना ४० और चारों समुद्र तक पृथ्वी पर संसार नियत दिखाई देताहै क्षत्रीही अपने धर्म से बड़ी लक्ष्मीको प्राप्त करताहै ४१ हे युधिष्ठिर दण्डधारी क्षत्रीके सिवाय पृथ्वी की रक्षा और किसी से नहीं होसकीहै महा भाग ब्राह्मण लोग देवताओं के भी देवताहैं हे राजा उन ब्राह्मणों में शास्त्रकी रीति के अनुसार बर्त्ताव करे ४२ यहां क्षत्री ऋषियों के नियत धर्मोंको प्राचीन और अबिनाशी जानकर उस गुप्त होनेकी दशामें अपने धर्म से रक्षा करताहै ४३ राजाही चोरोंसे सबवर्णों के धनों की और दुरा चारियों से स्त्रियों की रक्षा करताहै ४४ क्षत्रिया का पुत्र निस्सन्देह वैश्याके पुत्र से बड़ा होताहै हेयुधिष्ठिर इसी हेतु से उसको पिताके धनमें से बड़ा भाग देनेके योग्यहै ४५ युधिष्ठिर बोले हे पितामह राजा भीष्मजी तुम ने ब्राह्मणका भाग बुद्धिके अनुसार वर्णन किया अब दूसरे वर्णोंका नियम जैसे होय उसकोभी वर्णन कीजिये ४६ भीष्मजी बोले हे कौरव नन्दनक्षत्री को भी दो भार्य्या बिधान कीगईहैं और तीसरी शूद्राभी है परन्तु वह शास्त्र से नहीं कही गईहै ४७ हे राजा क्षत्रियोंकी भी यही रीति होतीहै कि क्षत्रियों के धनके आठ भाग होने चाहियें ४८ उनमें से क्षत्रिया का पुत्र पिताके धनके आठ भागोंमेंसे चार भाग कोले और पिताके युद्धका जो सामान है उसकोभी ले ४९ वैश्या का पुत्र तीन भागको और शूद्राका पुत्र एक भागको पाताहै वह एक भाग भी पिताके देनेसे लेगा बिना दिये हुये वह भी नहीं ले सक्ता ५० हे कौरव नन्दनवैश्यकी एकही भार्य्या होतीहै दूसरीशूद्रा है परन्तु वहशास्त्र से नहीं कही गईहै ५१ हे भरतर्षभ कुन्तीनन्दन वैश्या और शूद्रा नाम दोनों स्त्रियों से संग करनेवाले वैश्यका यह नियम कहाहै ५२ कि वैश्यके धनके पांच भाग किये जांयअब उन दोनों स्त्रियोंकी सन्तान और धनके विभागोंको वर्णन करताहूं ५३ पिताके धनके पांचभागोंमें से चारभाग तो वैश्याके पुत्रको लेना योग्यहै और शूद्राके पुत्रको पांचवांभागकहाहै ५४ वह भी पिताके

देने से ले विनादिये नहीं ले सक्ता ५५ शूद्रकीभार्य्यासवर्णा होतीहै उसकी दूसरी भार्य्या किसी दशामें भी नहीं होसक्ती उसके चाहै सौ पुत्र भी होंय वह सब बराबर भाग पावेंगे ५६ सब वर्णोंकी सवर्णा स्त्रियोंमें उत्पन्न होनेवाले पुत्रोंका भाग समान होताहै इसमें किसी को मुख्यता नहींहै ५७ बड़े पुत्रका वह भाग बराबर समझा जायगा जो कि प्रतिष्ठासे उत्तमभाग गिनाजायगा हे राजा प्राचीन समयमें यह पिताके धनके बिभागकी रीति ब्रह्माजीने कहीहै ५८ सवर्णा स्त्रियोंमें उत्पन्न होनेवाले पुत्रोंकी यह अपूर्व मुख्यताहै कि विवाहके समय की मुख्यतासे प्रथम दूसरे से अधिक होताहै ५९ उन बराबर के पुत्रोंमें भी बड़ा पुत्र एक उत्तम भागलेगा मध्यमको मध्यम भाग छोटेको छोटाभाग मिलेगा ६० इस प्रकारसे सबजातोंमें सवर्णाके पुत्रोंने प्रतिष्ठाको पाया है मरीचि के पुत्र काश्यप महर्षिने भी इसको वर्णन कियाहै ६१॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेविवाहधर्मेरिक्थविभागोनामसप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ४७॥

अड़तालीसवां अध्याय॥

युधिष्ठिरने पूछा हे पितामह अर्थ काम लोभ और स्त्रियोंकी ओरसे वर्णोंका निश्चय न करने और वर्णोंके अज्ञान से भी वर्णसंकर उत्पन्न होताहै १ इस रीतिसे उत्पन्न होनेवाले उन्होंके वर्णसंकर में कौन धर्म और कर्म होतेहैं हेपितामहउनको मुझसे वर्णनकीजिये २ भीष्मजीबोले कि प्रथमहीब्रह्माजीने चारोंशुद्धवर्ण और चारोंवर्णोंके कर्म युगोंके लिये वर्णन कियेहैं ३ ब्राह्मणकी चार स्त्रियांहैं उनमें से इन दोनों ब्राह्मणी क्षत्रियामें तो ब्राह्मणही उत्पन्न होताहै शेष बची दोनों स्त्रियोंमें ब्राह्मणसे नीचे क्रमसे माताकी जातिके रखने वाले उत्पन्न होतेहैं ४ ब्राह्मणकापुत्र श्मशान रूपभी शूद्रसे उत्तम है शूद्राके उस पुत्रको पराशव कहतेहैं वह शूद्राकालड़का अपने कुलका सेवाकरनेवाला होकर अपने कर्मको कभी न त्यागे ५ सब

उपायोंको काममें लाकर अपने कुलके कार्य्योंका करनेवाला होय जो पारशव अवस्थामें भी बड़ाहै तौ भी वह तीनों वर्णोंसे छोटाहै वह तीनों वर्णोंकी सेवाका करनेवाला होगा ६ क्षत्रीसे तीन पुत्र उत्पन्न होतेहैं उनमें से उसकी क्षत्रिया और वैश्या दोनों स्त्रियोंमें तो क्षत्रीही उत्पन्न होताहै और तीसरी शूद्रास्त्री में उग्रनाम नीचे वर्ण शूद्र उत्पन्न होतेहैं यहस्मृतिहै ७ वैश्यकी भी दो स्त्रीहैं इसकी दोनों स्त्रियोंमें वैश्य उत्पन्न होताहै शूद्रकी भी एक स्त्री शूद्राही होती है वह शूद्रही को उत्पन्न करतीहै ८ अपने पितासे न्यूनतम शूद्र अपने ब्राह्मणआदि गुरूकी स्त्री केसाथ भोगकरने से चांडाल आदि उन वर्णोंको उत्पन्न करताहै जो कि चारों वर्णोंसे निन्दित हैं ६ और क्षत्री ब्राह्मणी स्त्री में उस बाह्यनाम सूतको उत्पन्न करताहै जो कि गाड़ीवानी और राजाआदिकी प्रशंसाकरताहै और जो वैश्य ब्राह्मणी से संगकरताहै उससे वैदेहिकनाम जो कि स्त्रियोंके महल्लोंका रक्षक और संस्कारके अयोगहै उत्पन्न होताहै १० जो शूद्र ब्राह्मणी से संग करतेहैं उससेभी बड़ा उग्रचांडाल उत्पन्न होताहै यह सब नीच पुत्र राजाकी आज्ञासे चोरआदिके शिरोंके काटनेवाले नगरसे बाहर बसनेवाले कुलके कलंकीहैं हे बुद्धिमानों मेंश्रेष्ठ युधिष्ठिरयह पुत्र वर्णसंकरसे उत्पन्नहैं ११ जो कि अमर्यादासे वैश्यके द्वाराक्षत्रियामें उत्पन्न होताहै वह वन्दी मागध नामवाक्यों से अपनी जीविकाकरनेवाला होताहै और शूद्रके द्वारा क्षत्रियामें निपादनाम उत्पन्न होताहै १२ दुराचारी शूद्रसे वैश्यामें आयोगवनाम पुत्र उत्पन्न होताहैवह तक्षावर्धनकी जीविका करनेवाला ब्राह्मणों से त्यागके योग्यहै १३ यह भी अपनी सवर्णा स्त्रियोंमें अपनेसमान वर्णोंको उत्पन्न करतेहैं दूसरे पुत्रनीच योनियोंमें माताकी जातिके उत्पन्न होतेहैं जैसे कि चारों वर्णोंकी स्त्रियोंमें से दो २ स्त्रियों में उसका सवर्ण उत्पन्न होताहै उसीप्रकार अन्तर न होने से बाह्य प्रधानउत्पन्नहोतेहैं १४।१५ वेभी अपनी सवर्णा स्त्रियोंमें अपनेसमान वर्णोंको उत्पन्न करतीहैं और एकदूसरे की स्त्रियोंमें निन्दितपुत्रोंको

उत्पन्न करतेहैं १६ जैसे कि शूद्र ब्राह्मणी में वाह्य नाम जीव को उत्पन्न करताहै उसीप्रकार चारों वर्णोंसे मिलेझुले उत्तम बाह्यसे नीचा वाह्य उत्पन्न होताहै १७ फिर बाह्यसे और बड़े वाह्यसे प्रतिलोम वृद्धिपातेहैं और नीचसे पन्द्रह नीच वर्ण उत्पन्न होतेहैं १८ अब उन पन्द्रह बाह्योंकी टीका करतेहैं —जो स्त्री भोग के योग्य नहीं है उसके साथ भोग करनेसे बाह्योंका वर्ण संकर उत्पन्न होताहै सैरन्ध्री स्त्रीमें मागधोंके वह पुत्र उत्पन्न होतेहैं जो कि राजाआदिको चन्दन भूषणों से अलंकृत करनेवाले दासपने से रहित होकर दासोंकीसीही जीविका रखनेवाले होतेहैं १६ इस मागधसे सैरन्ध्री स्त्रीमें आयोगववंशी सैरन्ध्रनाम वह पुत्र उत्पन्न होताहै जो कि बहेलिये की जीविका से अपना निर्वाह करताहै और वैदेहजातिके मनुष्यसे उसी सैरन्ध्री स्त्रीमें मैरेयक नाम मद्य बनाने वाला पुत्र उत्पन्न होताहै २० और निषादसे उसी स्त्री में मुद्गर अर्थात् माहीगीर नाम मल्लाह पुत्र उत्पन्न होताहै जो नौकाके द्वारा अपनी जिविका करनेवाला दासहोताहै और उसी स्त्री में चांडालसे स्वपाक नाम पुत्र होताहै वह श्मशानभूमिका अधिकारी कहाजाताहै यह बहुत प्रसिद्धहै २१ आयोगवआदि जातिवालोंसे मागधी जातिकी स्त्रीमें मांसबेचनेवाला, मांसपकानेवाला शाकादि का पकानेवाला और सौगंधनाम यह चारों पुत्र उत्पन्न होतेहैं २२ और वैदेहसे आयोगव स्त्रीमें वह पुत्र उत्पन्न होताहै जो पापकर्मी निर्दयी और आखेट आदिक छलकर्म से अपनी जीविका करताहै और निषादसे आयोगव स्त्री में मद्रनाभ नाम पुत्र होताहै जो गधे की सवारी पर चढ़नेवाला कुंभारआदि होताहै २३ चांडाल से भी आयोगव स्त्री में पुल्कस नाम पुत्र होताहै जो गधेघोड़े औरहाथी के मांसोंकाखानेवाला मुरदों के कपड़े पहननेवाला खंडित पात्र में भोजन करनेवाला होताहै २४ यह तीनों नीच वर्ण आयोगवीनाम स्त्रियोंमें उत्पन्न होतेहैं वैदेहिकसे निषादीस्त्री में क्षुद्र अन्ध्र अर्थात जंगली जीवोंका मारनेवाला और गांवसे बाहर रहनेवाला २५

उत्पन्न होताहै और तीसरा कारावर न
को उत्पन्न करताहै चांडालसे निषादी स्त्री
होताहै जो बांसका व्यापार करताहै २६
में आहिराडक होताहै और उसी स्त्रीमें चां
है वह भी चांडालही के समान वृत्ती कर
से निषादी स्त्री में अन्तेवसायिन नाम पुत्र
में रहने वाला बाह्य लोगोंसे भी निकाला
की अमर्य्यादा से इतने वर्णसंकर उत्पन्न हो
वा गुप्त होंय परन्तु उनके कर्मों से वेजानने
में चारों वर्णो काही धर्महै इनके सिवाय किस
वर्णोंके वे धर्म होने से किसी की संख्या नहीं
स्त्रीसे भोग करने वाले यज्ञ और साधुओंके
हुये बाह्यों से बाह्य उत्पन्नहोतेहैं और उस
जीविका को प्राप्त करने वालेहैं ३१ वह स
अपने शरीर को अलंकृत करके चौराहे स्म
के नीचे ३२ अपने कर्म से वर्त्ताव करते स
निवास करें और आभूषण आदि अनेक
को तैयार करके ३३ गौब्राह्मणों के निमित्त
निवास करें और करुणादया सत्य कथन श
से भी दूसरेकी रक्षा करना यह सब बातें
कारणहोताहै यहबात निस्सन्देहहै ३४।३५
करके शिक्षाके अनुसार शास्त्र में लिखी हु
उत्पन्न करे क्योंकि नीच योनीमें उत्पन्न हो
को करताहै जैसे कि जलमें पैरने वाले मनु
है ३६ इस लोकमें स्त्रियां अज्ञानहैं और कां

ठिरनेपूछा कि जो मनुष्य वर्णोंसे बाहर वर्ण संकर योनिमें उत्पन्न होकर कर्मोंने भी सज्जन रूप हैं हम उनसे विदितन होकर उनको कैसे जाने ३९ भीष्मजी बोले कि नाना प्रकार के दुराचारों से युक्त मनुष्यों को संकर योनिसे उत्पन्न जानना चाहिये और जिन उत्तम कर्मोंको उत्तम जन किया करतेहैं उन लक्षणों से युक्त मनुष्य को उत्तम योनिमें उत्पन्न हुआ जानो ४० इस लोक में कमीनापन निर्दयता अकर्मता अवगुणता यह सब बातें मनुष्य के संकर योनि में उत्पन्न होने को प्रकट करती हैं ४१ नीचजात वाला पिताके आचरण वा माताके आचरण अथवा मातापिता दोनोंके आचरणों को काम में लाताहै वह किसी दशामें भी अपने उत्पत्ति स्थानको गुप्त नहीं करसक्ता ४२ जैसे व्याघ्रके शरीर के चिह्न मा बापके समान होतेहैं इसी प्रकार मनुष्य भी अपने मूल चिह्न को नहीं त्याग सक्ता ४३ जिस कुलमें वीर्य्यका वृत्तान्त और उत्पत्ति गुप्त है उसमें जिस मनुष्य का माता पिताका अन्तर रूपयोनि संकर होताहै वह मनुष्य उन पिता माताको थोड़ो या बहुत प्रकृतिको अवश्य काम मे लाताहै ४४ उसकी प्रकृति के निश्चय करने के समय उस मनुष्य का अच्छा बुरा स्वभाव रूप आचरणही उसको शुभ प्रकृतिको प्रकट करदेताहै जो कि अच्छे बुरे आचरण रूप वा आचार रखनेवाला वा बिपरीत मार्गमें चलनेवाला उत्तम वर्ण वा निकृष्ट वर्ण है ४५ इसलोक में नानाप्रकार के चाल चलन वाले अनेक प्रकारके कर्मोंमें प्रवृत्त हुये मनुष्यों में जन्म और चलनके अनुसार जो स्वाभाविक प्रकृति है वह दूर नहीं होती है ४६ इस लोकमें उस वर्णसंकर का शरीर जिस शास्त्र बुद्धोके द्वारा बुरेमार्ग से नहीं हटासक्ते हैं वह बुद्धि उत्तम मध्यम निकृष्ट इन तीनों प्रकारकी है तो जो बुद्धि उस शरीर के योग्यहै वही नियतरह-तीहै ४७ दुष्ट मनुष्य यद्यपि उत्तम भी होय उसकोकभी न पूजे धर्मज्ञ सत्पुरुषोंका चलन रखने वाले शूद्रकाभी सत्कार करना योग्य है ४८ प्रत्येक मनुष्य अपने कर्मोंसे और अच्छे बुरे स्वभाव

चरित्र और कुलसे अपनेको आपही प्रकटकर देताहै इसी प्रकार कुलमें अत्यन्त नष्ट होनेवाली रक्षाको अपने कर्मके द्वारा फिर आप प्रकट करताहै ४६ इनसंकरोंमें और अन्य सब योनियोंमें आत्मा रूप पुत्र को कभी उत्पन्न न करे किन्तु जहांतक होसके वहांतक बुद्धिमान मनुष्य इन सबको त्याग करे ५० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेविवाहधर्मेसंकरोनाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ४८ ॥

उनचासवां अध्याय ॥

प्रथम ऋत्विजकी पवित्रताके निमित्त संकरयोनि वालोंके लक्षण वर्णन किये अब क्षेत्रज पुत्रके संस्कारी होने न होनेके विषयमें पुत्रोंका क्रम वर्णन करतेहैं युधिष्ठिरने पूछा हे कौरवोत्तम पितामह सब वर्णोंके कैसे कैसे पुत्र कैसी कैसी स्त्रियोंमें उत्पन्न होते हैं फिर वह कौनहैं और किसकेहोतेहैं १ और हे पितामह पुत्र संबंधी नानाप्रकार के अनेक वर्णनसुने जातेहैं इस स्थान पर हम अज्ञान और अविदित लोगोंका सन्देह आप दूर करनेको योग्य हो २ भीष्मजीबोले कि जो पुत्र औरस है वह अपना वर्ण जाननेके योग्य है और जो क्षेत्र के स्वामीकी आज्ञासे दूसरेके वीर्य्य से उत्पन्न होनेवाला पुत्र है वह निरुक्तज कहाताहै और क्षेत्रके स्वामीकी आज्ञा बिना दूसरेके वीर्य्यसे जो पुत्र उत्पन्न होताहै वह प्रसृतज नाम कहाजाता है प्रसृतजकी स्त्रीमें न्यायके अनुसार मिलनेवाला उसीपतिसे उत्पन्न होनेवाला वा दत्तकपुत्र वा क्रीतपुत्र अर्थात् मोललिया व अध्यूढ़ अर्थात् जिसकी माता गर्भवती होकर बिवाही गई उसका पुत्र ४ और उपध्वंस नाम छः पुत्र वा कानीन अर्थात् बिवाह से पूर्व्वही कन्यामें उत्पन्न होनेवाला और इसीप्रकार के अपसद नाम छःपुत्रहैं यह सब वर्णन कियेहैं उनको समझो ५ युधिष्ठिरने पूछा कि छःउपध्वंस पुत्र कौनसेहैं और छःअपसद पुत्र कौनसेहैं इनसब को मूलसमेत आप बर्णन कीजिये ६ भीष्मजी

बोले हे भरतवंशी युधिष्ठिर तीनोंवर्णोंकी स्त्री में ब्राह्मणके जो तीन पुत्र होतेहैं और वर्णकी स्त्रीमें क्षत्रीके जो दोपुत्र होतेहैं ७ एकवंशका पुत्र बिड्वर्ण नाम होताहै वह भी इसमें गिनाजाताहै तबवहछःओं उपध्वंस कहलातेहैं और इसीप्रकार छःअपसदोंको भी सुनो८ ब्राह्मणी क्षत्रिया और वैश्यामें शूद्रसेउत्पन्न तीनपुत्र चांडाल व्रात्यवैद्य नामसे प्रसिद्ध यह तीनों अपसदहैं ९ और वैश्यकेब्राह्मणी और क्षत्रियामें जो दो पुत्र मागध और बामकनाम देखनेमें आतेहैं और क्षत्रीका एकपुत्र ब्राह्मणी में सूतनामदेखने में आताहै यह तीनोंभी अपसद नामसे कहेजातेहैं हे राजा यह सब पुत्र मिथ्यानहीं होसक्ते १०।११ युधिष्ठिरने पूछा कि कितनेही मनुष्योंने क्षेत्रजको पुत्र कहाहै और कितनोहीने वीर्य्यसे उत्पन्न होनेवालेको कहाहै यह पुत्र किसके बराबरहैं अर्थात् किसकेहैं हे पितामह इसको भी मुझे समझाइये १२ भीष्मजीबोले कि अपने वीर्य्यसे उत्पन्न पुत्रहोय अथवा दूसरे के वीर्य्यसे अनुमान कियाहुआ क्षेत्रजनाम पुत्रहोय और दूसरे के वीर्य्यसे उत्पन्नहोने के कारण पुत्रहोनेका दावा दूर होनेपर विवाह से पूर्वही कन्या के गर्भवती होने से उत्पन्न होने वाला अध्यूढ़ नाम पुत्र होता है १३ युधिष्ठिरने पूछा कि मैं वीर्य्यसे उत्पन्न होनेवाले पुत्र को जानता हूं परन्तु क्षेत्रज पुत्रका सिद्धकरनेवाला शास्त्र किसरीतिसेहै मैं अध्यूढ़ नाम पुत्रको भी जानता हूं परन्तु पुत्रत्वका दावा दूर करके कैसे पुत्र कहलाताहै १४ भीष्मजी बोले कि जो मनुष्य अपने शरीर से उत्पन्न पुत्र को उत्पन्न करके संसार आदिकी अपकीर्त्ति से त्याग करता है उसमें वीर्य्य कारण नहीं है वह क्षेत्रके स्वामी का पुत्रहै १५ हे राजा पुत्र का चाहने वाला मनुष्य पुत्र के लिये जिस गर्भवती कन्या को विवाह करता है उसका पुत्र क्षेत्रज प्रमाण कियाजाताहै वह अन्यत्रक्षेत्रज पुत्र नहीं है १६ हे भरतर्षभ दूसरे के क्षेत्र में उत्पन्न होनेवाला पुत्र विदित हो जाता है क्योंकि आत्मा गुप्त नहीं हो सक्ता है यह प्रत्यक्ष देखने से जाना जाताहै तात्पर्य्य यहहै कि जो पुरुष अध्यूढ़

पुत्रका चाहनेवाला होय तो उस दशामें वह पुत्र उसका है और जो पुत्र की इच्छा न रखता होय ऐसी दशामें वह पुत्र अन्यत्रक्षेत्रजहै १७ किसीस्थान में कृतक नाम पुत्र भी संग्रह से देखने में आताहै वहां उसमें वीर्य्य और क्षेत्र दोनों नहीं दिखाई देते १८ युधिष्ठिर ने पूछा कि कृतक पुत्र कैसाहै जो संग्रह से देखने में आताहै और जिसमें वीर्य्य और क्षेत्रभी नहीं दिखाई देता १९ भीष्मजी बोले कि जिस लड़के को माता पिता ने त्यागकर दिया हो उसको कोई मनुष्य मार्गमें पाकर अपना पुत्र विचार करले और उसके माता पिता नहीं जानेजांय वही कृतक कहलाता है २० जिस पुत्रमें अस्वामीका स्वामीपन देखने में आता है और जो वर्ण उसका पोषणकरे तो उस पुत्रका भी वही वर्ण होताहै २१ युधिष्ठिर ने कहा इसका संस्कार कैसे और किसरीति से करना उचित है अथवा यह किसका है यह किसप्रकार से जानाजाय और किसकी कन्या उसको देनी उचित है हे पितामह इसको समझाइये २२ भीष्मजी बोले—अपने समान स्वामी के सदृश उसके उस संस्कारको करे क्योंकि माता पितासे त्यागाहुआ वह लड़का उसके वर्णको पाता है २३ हे धर्मसे अच्युत युधिष्ठिर उसका स्वामी अपने गोत्री भाइयोंमें उसको अपने गोत्रमें हुआ वर्णन करके उसके संस्कार को करे फिर उसी वर्णकी कन्या उसके देने को योग्य है यही प्राचीन लोग कहतेहैं तात्पर्य्य यह है कि वर्णका निश्चय नहोनेपर संस्कार करनेवालेकाही वर्ण और गोत्र होताहै २४ माताकागोत्र निश्चय न होनेपर संस्कार करनेवालेकाही वर्ण और गोत्र होताहै कानीन, और अध्यूढ़ज भी किल्विषीपुत्र जानने के योग्य हैं २५ वह पुत्रभी निश्चयकरके अपनेपुत्रोंकी समान संस्कारकेयोग्य हैंजो क्षेत्रज अपसद और अध्यूढ़जहैं उनमेंभी २६ ब्राह्मणआदि अपने समान संस्कारोंको संयुक्तकरें यहवर्णोंकानिश्चय धर्मशास्त्रों में देखाहै २७ यह सबतुमसेकहा अब क्या सुनना चाहते हो २८॥

इतिमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेविवाहधर्म्मे एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ४९॥

पचासवां अध्याय॥

इसरीतिसेयज्ञ,स्त्री,धन,और ऋत्विज इनसबकोपवित्रताकहकरयज्ञकोदक्षिणारूप गौवोंकामाहात्म्यवर्णनकरतेहैं॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकिया कि हेपितामह दर्शनमें और समीप रहनेमें किसप्रकारकी प्रीतिहोतीहै यह औरगौवोंका माहात्म्य मुझसेआप कहनेको योग्यहैं १ भीष्मजी बोले हे बड़ेतेजस्वी बहुत अच्छाप्रश्नहै इसमेंएकप्राचीन वृत्तान्त तुझसेकहताहूंजिसमेंराजानहुष और च्यवनऋषिकासंवादहै २ हेभरतर्षभ प्राचीन समयमें बड़ेव्रतवालेभार्गव च्यवनमहर्षी उदवासव्रतकाप्रारंभकरतेहुयेवहमुनि अहंकारक्रोधहर्ष और शोकको त्यागकरके बारहवर्षतकजलमें वासकरकेव्रतको करने लगे ३।४ सबजीवोंमें उत्तम विश्वास और शुभपनेको ऐसेप्राप्तकिया जैसे कि प्रभु चंद्रमाने सबजलके जीवोंमें कियाथा ५ वह मुनि पवित्र और निश्चलशरीर होकर सबदेवताओंको नमस्कार करके गंगा यमुनाके मध्यवर्ती जलमें घुसे ६ और गंगा यमुनाके उसवेगकोजो अत्यन्त भयानक भयकारी शब्दवालाथा और वायुके समान शीघ्रगामीथा उसको अपने शिरपरलिया ७ गंगा यमुना और इसमें मिलनेवाले नदीसरोवरोंने ऋषिकी परिक्रमाकरी और किसीप्रकार का इनको कष्ट नहींदिया ८ हे भरतर्षभ वह बुद्धिमान् महर्षीकाष्ठ रूपहोकर जलमें शयनकरगये और फिरबैठगये ९ फिरवहसब जल जीवोंके प्यारे दर्शनीयहुये तबजलके जीवोंने प्रसन्नहोकर उनके होठोंको सूंघा १० इसीप्रकार उनऋषिको जलमें बैठेहुये बहुतकाल व्यतीतहुआ फिरकभी किसीसमयपर महाजाल रखनेवाले मच्छी पकड़नेवाले ११ उसदेशमें आये हे बड़ेतेजस्वी युधिष्ठिर उसस्थानमेंसे मछली निकालनेका निश्चय करनेवाले शूर पराक्रमी बहुत निषाद जो कि जलसे मुख न मोड़नेवाले जालकर्ममें कुशलथे वह उसदेशमें आये और फैलगये तब उनलोगोंने मछलियोंसे व्याप्त उस जलको जानकर अपने सब जालोंको लगादिया १२।१३।१४

इसकेपीछे उन मत्स्याभिलाषी मल्लाहों ने बड़े २ उपायोंसे गंगा यमुनाके जलको उन सबजालों से अच्छेप्रकार से छाना १५ और उनका एकजाल बहुतदूरतक नवीन प्रकारका बनाहुआ बहुत लंबाचौड़ाथा उसको उस जलमें डाला १६ तब इसकेपीछे उन सबने जलमें उतरकर उस बहुत बड़ेलम्बे चौड़ेदृढ़ और नियतजालको उस जलमेंसे खैंचा १७ हे स्वरूपवान् प्रसन्नमूर्त्ति तब परस्पर में एक मत किये हुये उन मल्लाहोंने वहांपर मछली आदि बहुत से जल जीवोंको बांधा १८ और उसीप्रकार दैवयोग से उन मछलियों से घिरे हुये भृगुनन्दन च्यवन जी को भी अपने जालके द्वारा खैंचा १९ वह च्यवनजी नदीके सिवार से लिप्त शरीरसे पिंगलवर्ण डाढ़ी मूछ जटाधारी अंगोंमें लगीहुई छूटी शिखाओंसे ऐसे दिखाई देतेथे जैसे कि अपूर्व्व चिह्नोंसे चित्रित होता है तबवह सबदास अर्थात् धीवर उसवेदवेदांगमें पूर्णऋषिको जालमें आयेहुये देखकर हाथजोड़२ शिरके बल पृथ्वीपरगिरे २०।२१ और वह मछलियां बड़े दुःख भय औरजालके खिंचने वास्थलके स्पर्शसेनिर्जीव होगई २२ तब वह मुनि उनमछलियोंका नाश देखकर बारंबार श्वास लेतेहुये दया और करुणामें डूबगये २३ निषाद बोले हे महामुनि हमनेजो अज्ञानतासे पापक्रिया उसको आप क्षमाकरें आपकोजो आज्ञाहोय वही हमकरें २४ इसरीतिसे कहेहुये उसमछलियोंमें नियत च्यवन मुनिने यहवचनकहा कि अब जो मैं चाहताहूं उसको तुमबड़ी सावधानीसे सुनो २५ मैंमछलियोंके साथही प्राणोंकीरक्षा वा त्यागको करूंगा मैं समीप रहनेके कारणसे इन जलजीवोंके त्यागनको नहीं सहसक्ताहूं २६ यह बात च्यवनजीसे सुनकर अत्यन्त भय भीत और कम्पितगात उन धीवरोंने स्वरूपोंको बदलकर उस वृत्तान्त कोराजा नहुपसे जाकर निवेदन किया २७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेच्यवनोपाख्यानेपंचाशत्तमोऽध्यायः ५०॥

—※—

इक्यावनवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि इसके पीछे राजा नहुष उस दशामें युक्त च्यवन ऋषिको सुनकर बड़ी शीघ्रता से अपनी स्त्री और पुरोहितको साथ लेकर उनके पास गया १ न्यायके अनुसार बाह्याभ्यन्तरकी पवित्रता पूर्व्वक हाथजोड़ बड़ी सावधानी से राजा महात्मा च्यवनजी के सन्मुख खड़ा हुआ २ हे राजा राजानहुष के पुरोहितने भी उस सत्यव्रत देवता की समान महात्मा ऋषिको पूजन किया ३ फिर नहुषने कहा हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ आपकी क्या अभीष्ट है जिसको मैं करूं उसको आप आज्ञा कीजिये हे भगवन् मैं आपकी सब आज्ञाओं को करूंगा चाहै दुःख से भी करने के योग्य होय तौभी सामर्थ्य के अनुसार अवश्य करूंगा ४ च्यवनजी बोले कि मछलियों से अपनी जीविका करनेवाले यह धीवर बड़े परिश्रम से युक्तहैं मेरे मूल्यको भी इन्हीं मछलियों के मूल्यके साथ इनको देदो ५ नहुषने कहा हे पुरोहित जी हजार रुपये भगवान् ऋषिके मूल्यके निमित्त निषादों को देदो—जैसा कि भृगुनंदनजी ने कहाहै ६ च्यवन जी बोले हे राजा मैं हजार रुपये के योग्य नहीं हूं तुम क्या मानतेहो मेरामूल्य उचित होय सो दीजिये अपनी बुद्धिसे निश्चय करो ७ नहुषने कहा हे वेदपाठी एकलाख रुपयेदूं या आप जो मानते हैं वह दूं ८ च्यवनजी बोले हे राजेन्द्र मैं लाख रुपये के समान नहीं हूं उचित मूल्य दीजिये आप अपने मंत्रियों समेत विचार कीजिये ९ नहुषने कहा हे पुरोहित जी एक करोड़ रुपया निषदोंको दो और जा यहभी मूल्य नहोयतो इससे अधिक दो १० च्यवनजी बोले हे बड़े तेजस्वी राजा नहुष मैं करोड़ रुपये वा करोड़से अधिक केभी योग्य नहींहूं मेरे योग्य मूल्यदो तुमअपने ब्राह्मणों केसाथ विचार करो ११ नहुष ने कहा हे ब्राह्मण आधा या सब राज्य निषादोंकोदूं मैंतो यह मूल्य मानताहूं इसके सिवाय आप क्या मूल्य मानतेहैं १२ च्यवन जी बोले हे राजा मैं आधे

अथवा संपूर्ण राज्यके मूल्य योग्य नहींहूं ऋषियोंके साथ बिचार करके उचित मूल्य दो १३ भीष्मजी कहते हैं कि तबतो दुःख से पीड़ामान नहुषने महर्षीके वचनको सुनकर मन्त्री और पुरोहितके साथ बिचार किया १४ वहां कोई दूसरा वनचारी मूल फल का भोजन करनेवाला गविजात मुनि उस नहुषके सन्मुख बैठाथा १५ उस उत्तम ब्राह्मण ने उस राजाको समझाकर यह कहा कि मैं जैसे ऋषि प्रसन्नहोंगे उसीप्रकार बहुत शीघ्र प्रसन्न करताहूं १६ मैं स्वतन्त्र दशामें भी मिथ्या नहीं बोलता इससे कभी विपरीत नहीं बोलूंगा मैं आपसे जो कहूं उसको निस्सन्देह करना १७ नहुष ने कहा इन भगवान् भार्गव महर्षी के योग्य मूल्यको कहो और मेरे देश कुल समेत मेरीभी रक्षा करो १८ यह भगवानऋषि केवल अपने क्रोधही से तीनोंलोकों का नाश करसक्ते हैं फिर मुझ तपहीन भुजा बल रखनेवाले का नाश करना इनको क्या कठिन है १९ हे महर्षी मन्त्री ऋत्विजों समेत असंख्य गंभीर जलमें मुझ डूबे हुये की नौका बनो और इनके मूल्यका निश्चय करो २० भीष्मजी बोले कि नहुषके बचन को सुनकर सब मंत्रि-योंसमेत राजाको प्रसन्न करते प्रतापवान् गविजात ऋषिने यह कहा हे महाराज तीनों वर्णों में श्रेष्ठ ब्राह्मण और गौभी अमूल्यहैं इससे गौको ऋषि का मूल्य बिचार कीजिये २१।२२ हे युधिष्ठिर इसके पीछे राजा नहुष उस महर्षी के बचन को सुनकर मन्त्री और पुरोहित समेत बहुत प्रसन्न हुये २३ फिर उस स्तुति के योग्य भृगुनन्दन च्यवनजी के पास जाकरबचनों से प्रीति पूर्वक राजाने यह कहा २४ हे ब्रह्मर्षि भार्गवजी उठिये उठिये आप को गौके बदले में लियाहै हे धर्मधारियों में श्रेष्ठ मैं उस गौको आपका मूल्य मानता हूं २५ च्यवनजी बोले हे निष्पाप धर्म से च्युत न होनेवाले राजेन्द्र मुझको तैंने अच्छीरीतीसे पूर्ण मूल्य दे-कर मोल लिया अब मैं उठता हूं मैं इसलोकमें गौके समान किसी धनको नहीं देखताहूं २६ हे वीर राजा नहुष गौवों की कथाओं

गये ४० इसके अनन्तर हे भरतर्षभ वह राजा नहुष स
ढ़नेवाले उन मछलियों को और धीवरोंको देखकर आ
था ४१ फिर गविजऋषि और भार्गव च्यवनजीने
दानों का राजाको अभिलाषी किया ४२ तब उस ब
संपूर्ण पृथ्वी के प्रसन्न चित्त राजा नहुष ने कहा बहुत
यहवचन कहकर इन्द्रके समान राजाने धर्ममें स्थित
और वैसाही हुआ इसवचनसे प्रसन्न होकर राजाने दो
का पूजन किया ४४ फिर दीक्षाको समाप्त करनेवाले
अपने आश्रमको गये और महातेजस्वी गविजऋषिभी
श्रम स्थानको गये ४५ हे राजा वह सब मछलियां
स्वर्गको गये और राजा नहुष भी बरदानको पाकर
आया ४६ हे तात युधिष्ठिर दर्शन और सहवासी ह
प्रीति होतीहै और जिसको तुमने मुझसे पूछा वहसब
कही ४७ और इसीप्रकार गौवों कामाहात्म्य और ध
निश्चयभी वर्णनकिया अवतेरेहृदयमेंक्यापूछनेकी अभि

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेच्यवनोपाख्यानेएकपंचाशत

बावनवां अध्याय॥

युधिष्ठिरने प्रश्न किया हे बड़े ज्ञानी मेरासन्देह
समानहै हे महाबाहु आपइसको सुनकर मेरे सन्देहको
हे प्रभु धर्मध्वज पितामह जमदग्निजीके पुत्र परशु
कथाके श्रवण करनेको मुझको बड़ी अभिलाषाहै इसको
कीजिये २ यह सत्य पराक्रमी परशुरामजी कैसे उत्पन्न
यह ब्रह्मऋषि वंशहोकर क्षत्रीधर्म के धारण करनेवाले
हे राजा इनके उस जन्मको पूर्णतासे कहो और कौशिक
वंश कैसे ब्राह्मणवंश होगया ४ हे नरोत्तम बड़ा आ
ऐसे बड़ेमहात्मा विश्वामित्र और परशुरामजीका बड़ा
किसप्रकारसे यह दोष उनके पुत्रोंको उल्लंघन करके उ

। इसको व्योरे समेत कहनेके योग्यहैं भीष्मजीबो-
ो इसस्थानपर मैं एकप्राचीन इतिहासको कहताहूं
ऋषिका और राजा कुशिकका प्रश्नोत्तरहै ७पूर्व्वस-
मान् मुनियोंमेंश्रेष्ठ तपोधन भार्गव च्यवनजीने आगे
ष्यकालमें अपने वंशमें प्रकटहोने वाले इसदोषको
के गुणदोष बलाबलको चित्तसे निश्चयकरके कुशिक
कुलभरेको भस्मकरनेकी इच्छासे राजाकुशिकके पास
नकहा ६ हेनिष्पाप तेरेसमीप रहनेकी हमारीइच्छा
० राजाकुशिकने कहा हेभगवन् इसलोकमें यह सब
धारण किया जाताहै और सदैव कन्यादानके समय
इसको कहा करतेहैं ११ तपरूपी धनसे युक्तत्याग
नेके योग्य जो धर्मकाउपायहै उसको तबतक करूंगा
प आज्ञान देंगे १२ भीष्मजीबोले इसके अनन्तररा-
मुनि च्यवनजीके आसनकोलेकर अपनीस्त्रीसमेत
ांमहामुनि विराजमान थे १३ राजाने झारीलेकर
उनकी सब सेवाको किया १४ इसकेपीछे उससा-
ाकुशल महात्माराजाने बुद्धिके अनुसार च्यवनजी
दानदिया १५ इसरीतिसे उस वेदपाठी को पूजकर
ाभगवन् हमसनाथहुये जोआप आज्ञाकरें उसको
व्रत जोराज्य धन गौ अथवा यज्ञ में देने के योग्य
ाकताहै आपआज्ञा कीजिये सोमैं दूं १७ यह घरहै
आपका धर्मासनहै आपराजा होकर देशपर आज्ञा
ोने से सनाथहूं १८ इस वचन के कहने से बड़े
भार्गव च्यवनजीने राजा कुशिक को उत्तरदिया १६
ाज्यको नहीं चाहता धन स्त्री गौ आसन और यज्ञको
हूं मेरी इस बात को सुनो २० जो तुम दोनों को
ो मैं कुछ नियम प्रारंभ करूंगा तुम निश्शंक और
दोनों से अपनी सेवा चाहताहूं २१ इस प्रकार के

ऋषिके वचन सुनकर वह दोनों स्त्री पुरुष प्रसन्न हुये और ऋषि को उत्तर दिया कि वहुत अच्छा ऐसाही होगा २२ तव तो प्रसन्न होकर राजा कुशिकने उनच्यवनजीको एक अद्भुत स्थानमें रक्खा तदनन्तर देखने के योग्यअपना मुख्य रहनका स्थान ऋषिको दिखाया २३ और कहा हे तपोधन भगवान् आपका यह पलंगहै यहां इच्छाके अनुसार निवास करिये हम आपके प्रसन्न करने का उपाय करेंगे २४ इस रीतिसे उनको वार्त्तालाप करतेहुये सूर्य्यास्त हुआ फिरऋषिने कहा कि खानेपीनेकी वस्तुओं को लाओ २५ तव नम्रीभूत राजाकुशिकने उनसेपूछा कि किसप्रकारकी भोजनकीवस्तु आपकोप्रियहैं जैसी आपआज्ञाकरें वैसेही निवेदनकरूं २६ हे भरत-वंशी इसके पीछेउनच्यवनजीने वड़ीप्रीतिसे राजाको उत्तरदिया कि जो भोजनवर्त्तमानहोय वही लेआवो २७ उस राजानेउनके वचन की प्रशंसा करके कहा वहुत अच्छा और जो भोजनतैयारथा वह लाकरउनकोदिया २८ हे समर्थउसके अनन्तर उसधर्मज्ञ भगवान् ऋषिने भोजन करके दोनों स्त्रीपुरुषोंसे कहा किमैं सोया चाहता हूं मुझको निद्रासतारही है २९ इसकेपीछे वह ऋषियोंमें वड़े साधु भगवान् च्यवनजी शयनस्थान को पाकर उसमें चले गये और स्त्री समेत राजा वहां नियतहुआ ३० तवभार्गव च्यवनजीने कहाकि अच्छे प्रकार से जव मैं सोजाऊं तवतुम मुझको जगानानहीं और तुमको संपूर्ण रात्रि भर जागना चाहिये और मेरे दोनोंचरण दाव ने योग्य हैं ३१ निश्शंक होकर उस धर्मज्ञ राजा कुशिकने कहा कि इसी प्रकार होगा फिर उन दोनों स्त्री पुरुषोंने प्रातःकाल होने पर भी उनको नहीं जगाया ३२ हे महाराज तव वह दोनों स्त्री पुरुष महर्षिकी आज्ञाके अनुसार सावधान होकर उनकी सेवामें तत्पर हुये ३३ फिर वह भगवान् ऋषिराजाको आज्ञा देकर एक ही करवट से इक्कीस दिनतक सोये ३४ हे कौरवनन्दन च्यवनजी की सेवाआदिमें प्रवृत्त निराहार प्रसन्न चित्त राजानेभी स्त्री समेत उसी ऋषिके पास इक्कीस दिन तक वर्त्तमानता करी ३५ तपोधन

महातपस्वी भार्गव च्यवनजी आपही उठे और कुछ न कहकर घर से निकल गये ३६ क्षुधायुक्त परिश्रमसे निर्बल शरीर वह दोनों भी उन ऋषि के पीछे चले और उन उत्तम मुनिने उन दोनों स्त्री पुरुष की ओर दृष्टि भी नहीं की ३७ हे राजेन्द्र वह च्यवनजी उन दोनों के देखते देखतेही गुप्त होगये इसकेपीछे राजा पृथ्वीपर गिर पड़ा ३८ तब उस बड़े तेजस्वीने स्त्री देवी समेत एकमुहूर्त्त आश्रय लेकर फिरउनके खोजने में बड़ा उपाय किया ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेच्यवनकुशिकसंवादेद्विपंचाशतमोऽध्यायः ५२ ॥

तिरपनवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह तब उस ऋषिके गुप्त होने पर राजाने और उसकी साध्वी भार्य्याने क्या किया उसको आप कृपा करके वर्णन कीजिये १ भीष्मजी बोले कि ऋषिको नदेखकर थका व अचेत और लज्जा युक्त होकर वह राजा लौटकर स्त्री समेत घरको आया २ उस महादुःखी ने अपनी पुरी में आकर कुछनहीं कहा और च्यवनजी के उस चरित्रको जाना और चिन्ता करने लगा ३ फिर राजा ने अपने चित्तकी शुद्धिता से अपने महल में प्रवेश करके भृगुनन्दनजी को उसी पलंग पर सोता हुआ देखा उस ऋषिको देखकर बड़े आश्चर्य्यको विचार कर दोनों आश्चर्य्य युक्त हुये ४ और दोनों उस ऋषिके देखने से विश्वास युक्त हुये और अपने नियतस्थान पर बैठकर फिर उनके चरणोंको दाबा ५ फिर वह पराक्रमी महामुनि दूसरी करवटसे सोने लगे और उतनेही समय अर्थात् इक्कीस २१ दिनमें जागे ६ हे राजा भयसे शंकायुक्त उन दोनों ने कुछ रूपान्तर दशा नहीं की और जागने वाले उस मुनिने उन दोनोंसे कहा कि मेरे तेलका उबटन लगाओ ७। ८ मैं स्नान करूंगा वह क्षुधा युक्त और परिश्रम से निर्बल शरीर दोनों बहुत अच्छा कहकर बड़े मोलके शतपाक तेलको लेकर सन्मुख

नियत हुये इसके पीछे दोनों वाग्जितोंने सुख पूर्व्वक बैठेहुये ऋषि के चरणों को दावा ९ बड़े तेजस्वी भार्गव च्यवनजी ने यह नहीं कहा कि बस जब भार्गवजी ने उन दोनों को रूपान्तरदशासे रहित देखा १० तब एका एकी उठकर स्नानके स्थानमें प्रवेश कियावहां पर राजाओंके योग्य स्नानकी चौकी बिछीथी ११ तब वह मुनि उन सब चौकी आदिको तुच्छ करके फिर भी राजाके देखते देखते उसी स्थान पर गुप्त होगये १२ हे भरतर्षभ उन दोनों स्त्री पुरुषने निन्दा नहीं करी फिर उस समर्थ स्नान किये हुये सिंहासन पर वर्त्तमान भगवान् ऋषिने १३ स्त्री समेत राजाकुशिक को दर्शन दिया हे कौरवनन्दन स्त्री समेत अत्यन्त प्रसन्न मुख रूपान्तरदशा रहित झुके हुये नम्रीभूत राजा कुशिकने मुनिजी से प्रार्थना करीकि भोजन की वस्तु तयारहै तब मुनिने उस राजा से कहा कि लाओ १४। १५ तब भार्य्या समेत उसे राजाने उस भोजनकी वस्तुओंको लाकर उपस्थित किया १६ उसमें नानाप्रकार के बनाये हुये मांस बहुत प्रकारके मसालों से युक्त शाक बहु प्रकारकी चटनी पापड़ बहुत प्रकारके मीठे रसीले पाचक पदार्थ और शिखरन आदि पानकी वस्तु वा अतिअद्भुत पूप लड्डू चूरमें १७ अनेक भांतिके रस और मुनियों के भोजन जंगली फलमेवा आदि और राजाओं के भोजन के योग्य अनेक अपूर्व२ वस्तु १८ बेर, हिंगोट, काश्मर्य्य, भल्लातक नाम फल औरगृहस्थी वा वनवासियों के जो भोजन हैं १९ राजा ने शापके भयसे इन सब वस्तुओं को लाकर उपस्थित किया और उन च्यवन जी के आगे रक्खा इस के पीछे उस भृगुनन्दन च्यवन मुनिने उनसब पदार्थों को लेकर उन सब भोजन सामग्रियों समेत पलंग आसन को अच्छे वस्त्रों से ढककर २०। २१ सब को भस्म कर दिया फिर बड़े बुद्धिमान उन स्त्री पुरुषोंने क्रोध नहीं किया २२ तबउन दोनों के देखते हुये फिर गुप्त होगये और वह राजऋषि उसीप्रकार उस रात्रिको वहां पर वर्त्तमान रहा २३ उस श्रीमान् राजाने प्रारब्ध

से स्त्री समेत जरा क्रोध नहीं किया सदैव राज महलमें नाना प्रकारकी भोजन की वस्तु तैयार रहती थीं २४ उस उत्तम पलंगों पर परिषेचन पात्र नाना प्रकार की पोशाकें अच्छीरीतिसे वर्त्तमान थीं २५ तबतो च्यवनजी उसकेदोषदेखनेकोसमर्थ न हुये और उस राजा कुशिकसे यह वचन कहा २६ कि भार्य्या समेत तुम शीघ्रही रथकी सवारी में जहां मैं कहूं वहां ले चलो तब निश्शंक राजा ने उस तपोधन ऋषि से कहा ऐसा ही होगा २७ पूछा कि हेभगवन् क्रीड़ा रथ तैयार होय वा युद्धका रथ तयरकरें उसप्रसन्न चित्तराजा के उसवचनको सुन कर प्रसन्न हुये २८ च्यवन मुनिनेउसदेश और शत्रुओं के बिजयी राजा को यह उत्तर दिया कि शीघ्र उस रथको तैयार करो जो तेरे युद्ध करने काहै २९ और वह धनुष पताका वा सुबर्ण यष्टी की शक्ती रखने वाला क्षुद्रघंटिकाओं से शब्दायमान चंचल तोरणों समेत ३० जांबूनद नाम सुवर्णसे चित्रितउत्तम सोवाणों समेत होय इसके पीछे वह राजा ऋषि से बहुतअच्छा शब्द कहकर उस बड़े रथको तैयार करके ३१ भार्य्याको बायेंधुर में और अपने को दाहिने धुरमें जोतकर उस रथमें वह चावक रक्खा जिस का नाम त्रिदंड था और उसकी नोक लोहेकी सूईके समान थी ३२ राजाने उस सबको उसी प्रकार से देकर यह वचन कहा हे भगवन् भृगुनन्दनजी रथ कहां जाय ३३ हेब्रह्मर्षि जहां आप कहैं वहांही रथ आपका जायगा यह वचन सुन कर भगवान् ऋषिने उस राजाको उत्तर दिया ३४ यहां से बड़े धीरे२ ऐसे पैरों पैरों चलना चाहिये जिससे कि मुझकोकष्ट न होने पावे तुम इसी रीतिसे मेरी इच्छाके अनुसार चलो मैं बड़ी प्रसन्नता पूर्व्वक धारण करने के योग्य हूं और सबमनुष्यइसी कौतूहलको देखैं ३५ कोई पथिक जन मार्गसे नहटाया जाय मैं उनको धनदूंगा और ब्राह्मणों को वह उनकी अभीष्ट वस्तुदूंगा जो वह मांगनें मांगेंगे ३६ मैं सब धन और रत्नसब मांगने वालेंकोदूंगा हेराजा इसको संपूर्णतासे कर अनुचिंतन करना ३७ राजाने उनके वच

न को सुन कर अपने नौकरों से कहा कि जोजो आज्ञा मुनि करें
वह २ सब तुमनिस्सन्देह मुनिकोदो ३८ इसकेअनन्तर बहुतप्रकार
के रत्नस्त्रियां घोड़ेआदिभेड़े बकरी बनेहुये आभूषण और बिनाबना
सुवर्ण और पर्व्वतके समान हाथी और राज्यके संपूर्ण प्रधान लोग
उस ऋषिके पीछेचले ३९ तबनगरमें हाहाकार शब्दमचगया सब
प्रजा महापीड़ित हुई फिर वह दोनों उस तीक्ष्ण नोकवाले चाबुक
सेघायलहुये ४० पीठ औरकमरपर घायलहोकर भीरूपान्तर दशा
से रहित वह दोनों इस ऋषिको लेचले कंपायमान पचासदिवसके
भूखे दुर्बल शरीर ४१ उन दोनोंवीर स्त्री पुरुषने उस उत्तम रथको
किसीप्रकार से चलाया बहुतघायल और घावोंसेरुधिर डालनेवाले
वह दोनों प्रफुल्लित किंसुक वृक्षके समान दृष्ट पड़तेथे हे महाराज
पुरवासी लोग उन दोनोंको देखकर शोकसे अत्यन्त ब्याकुल शाप
के भयसे भयभीत होकर कुछनहीं कहसक्तेथे फिर परस्परमें एक
एकसे कहताथा कि तपके प्रभावको देखो ४२।४३।४४ हम सब
क्रोधभरेहुये भी इस उत्तम मुनिकी ओरको देखनेमें भी असमर्थहैं,
इन पवित्रात्मा महर्षिका अद्भुतपराक्रम है ४५ और भार्य्या समेत
राजाके भी इस धैर्य्यको देखो कि इन दोनों थकेहुओंने भी दुःखसे
इस रथको चलाया४६ भृगुनन्दनजीने इन दोनोंको बिपरीतदशाको
नहीं देखा भीष्मजी बोले कि इसके अनन्तर उन भार्गवजीने उन
दोनों को रूपान्तर दशासे रहितदेखकर ४७ धनके स्वामी कुबेरजी
के समान धनको दानकिया उस समय परभी प्रसन्नचित्त राजाने
आज्ञाके अनुसारही किया ४८ इसपीछे मुनियोंमें श्रेष्ठ बड़े साधु
भगवान् च्यवनजी इनपर प्रसन्नहुये और उस उत्तम रथसे उतर
कर अपने हाथसे दोनों स्त्री पुरुषको छुड़ादिया ४९ भार्गवजीनेइन
दोनोंको बुद्धिके अनुसार रथसे छुटाकरअत्यन्तनिर्मल स्वच्छगंभीर-
ता और प्रीतिमें डूबीहुईवाणीसे यह बचनकहा ५० कि तुम दोनों
को उत्तम वरदूंगा जो तुम्हारा अभीष्ट होय सो कहो हे भरतर्षभ
राजा युधिष्ठिर उसउत्तम मुनिने प्रीतिके साथ अमृतके समान दोनों

हाथोंसेउनके घावोंको मलके दोनों स्त्री पुरुषोंको स्पर्शकिया इसके पीछे राजाने यह वचन कहा हे भगवन् यहां हम दोनों को थोड़ा भी दुःख नहींहै ५१।५२ यह कहकरदोनोंने भार्गवजी से कहा कि हम दोनों आपके प्रभावसे आनन्द युक्तहैं तब तो अत्यन्त प्रसन्न भगवान् च्यवनजीने उन दोनों से कहा ५३ कि जो मैंने पूर्व में कहाहै वह मिथ्या नहींहै वहीहोगा यह गंगाका तटबड़ा शुभहै और इसके समीपवर्त्ती देश क्रीड़ाके योग्यहैं ५४ हे राजा व्रतकरनेवाला मैं कुछ समय तक यहां निवास करूंगा हे पुत्र तुम अपने पुरको जावो और आनन्द करके फिर आना ५५ हे राजा स्त्री समेत तुम प्रातःकालके समयपर मुझको यहां नियत देखोगे तुमको क्रोध न करना चाहिये तेरा कल्याण वर्त्तमान हुआ ५६ जो तेरा अभीष्टतेरे हृदयमें वर्त्तमानहै वह सब होगा यह वचन सुनकर राजाकुशिकने अत्यन्त प्रसन्नात्मा से संयुक्त ५७ उस उत्तम मुनिसे यह सार्थक वचन कहा हेमहाभाग मेरा क्रोधनहींहै हेभगवन् हम दोनों आपके द्वारा पवित्र हुआ ५८ हम दोनों तरुण अवस्थामें नियत तेजस्वी और पराक्रमी होगये चावकसे जो आपने मेरे और मेरी भार्य्याके शरीर पर घावकिये ५९ उन अंगोंको मैं अंगोंमें नहीं देखताहूं मैं भार्य्या समेत बड़ा सुखीहूं इस देवीको शरीरसे अप्सराके समान देखताहूं ६० यह स्त्री बड़ी शोभासे युक्तहै पूर्व में इसको ऐसानहीं देखाथा जैसा कि अब आपकी कृपासे इसको देखताहूं ६१ हे सत्य पराक्रमी यह बात आपमें कोई आश्चर्य्य की नहींहै ऐसे वचनोंको सुनकर च्यवनजीने राजाकुशिक को उत्तर दिया ६२ हे राजा तुम भार्य्या समेत यहां आना ऐसे कहाहुआ अच्छीरीतिसे आज्ञप्त वह राजऋषि कुशिक उस ब्रह्म ऋषिको दण्डवत् करके ६३ दिव्य शरीर युक्त देवराजके समानवहां से चला इसके पीछे सबप्रधान मन्त्री लोग पुरोहितों समेत उसके समीप उपस्थितहुये ६४ सेना के सेनापति आदि सर्दारलोग और हाथोंमें भेटलियेहुये सबप्रजाके लोगभी वर्त्तमान हुये उनके मध्यमें राजा प्रकाशमान अग्निके स-

मान शोभायमान हुआ ६५ प्रसन्नमन वन्दीजनों से स्तूयमान वह राजाकुशिक अपने पुरमें आया इसके पीछेवह महातेजस्वी नगरमें आकरप्रातःकालके समय सम्पूर्ण सन्ध्याबन्दनादि कर्मोंको करके स्त्री समेतभोजनादि से निवृत्त हो रात्रिको निवास किया ६६ तब उस उत्तम ऋषिकी दीहुई शोभासे युक्त सुन्दर शरीरवाले परस्पर पीड़ासे रहित देवताओंकी सैया के समान पलंग पर वर्त्तमान होकर वह दोनों अपनी नवीन तरुणताको देखकर प्रसन्न हुये ६७ इसके पीछे भृगुवंशकी शुभ कीर्तिके बढ़ाने वाले तपोधन ऋषिने अपनी बुद्धि से एक ऐसे वनको उत्पन्न किया जोकि धनोंसे पूर्ण चित्तरोचक अनेक प्रकारके रत्नों से अलंकृतथा जैसा कि इन्द्रके पुरमें भीन था ६८॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेच्यवनकुशिकसंवादेत्रि पञ्चाशत्तमोध्यायः ५३॥

चौवनवां अध्याय॥

भीष्मजीबोले इसके पीछे ब्राह्ममुहूर्त्त में जागनेवाला प्रातःकाल के संध्योपासनादिक कर्मों से निवृत्त होकर वह महासाहसी राजा कुशिक भार्य्या को साथलेकर उस बनको ओर चला १ वहां उस राजाने सुवर्ण जटित ऐसे महलको देखा जिसमें हजारों रत्नोंके खम्भ थे और गन्धर्वोंके नगरके समान था तब राजा कुशिकने बड़ी बड़ी दिव्य वस्तुओंको देखा २ सुवर्णके शिखर वाले पर्व्वत कमल युक्त सरोवर नानाप्रकारके चित्रशाला बन्दवारोंसे शोभित और सुवर्णकी खानोंसे शोभित हरित मणिमय भूमि ३ प्रफुल्लित सहकार, केतक, उद्दालक, धव, अशोक, सहकुंद, अतिमुक्तक ४ चंपक, तिलक, उत्तम पनस, वंजुल, और जहांतहां फूले हुयेकर्णि-कारों केवृक्षों को देखा ५ क्रीड़ाके योग्य पद्म उत्पल नाम कमल और सब ऋतुओंके पुष्प धारण करनेवाले विमानरूप पर्व्वतों के समान अनेक महलोंको भी देखा ६ हे भरतवंशी कहीं शीतल

जल कहीं उष्ण जलसे शोभित उत्तम चित्रविचित्र अत्यन्त पवित्र आसन७और वहां शयनके स्थान सुवर्ण रत्नोंके बनेहुये बहु मूल्य बिछौनोंसेयुक्त सैया और स्थान स्थान पर रक्खेहुये भक्ष्य भोज्यके पदार्थों समेत देखे ८ उनमें सुन्दर वाणी बोलनेवाले तोते मयना भृङ्ग, राजक, कोकिल, शतपत्र, कोयष्टिक, कुक्कुभ, मोर, कुक्कुट, जीव जीवक, चकोर, बानर, हंस, सारस, चक्रवाक, ९।१० इनसब अत्यन्त प्रसन्न चित्तरोचक पक्षियोंको चारोंओरको देखा हे राजा कहीं अप्सराओं के और गन्धर्वों के समूहोंको देखा ११ और कितनेही जीवोंको अपनी स्त्रियोंसे मिलते हुये देखा जिनको एकवार राजानेदेखा उनको फिरदूसरीवार न देखा१२अत्यन्त मधुर स्वरोंके गान वेदपाठ होनेकी ध्वनि और अत्यन्त मधुरवाणीसे बोलतेहुये हंसोंकोभी वहां राजानेदेखा और उनकी बाणीको सुना १३।१४ तब राजाने उसबड़ी अद्भुतताको देखकर चित्तसे बिचार किया कि यह स्वप्नहै अथवामनकाभ्रमात्मकविचारहै अथवासत्यहै १५आश्चर्य्यहै कि मैं शरीर समेत परम गतिको प्राप्तहूं अथवा उत्तरकुरुनाम पवित्र देशमें वा अमरावती पुरीमें मैं प्राप्तहोगयाहूं १६ मैं यह क्या बड़ा अद्भुत और आश्चर्य्य का स्थान देखरहाहूं यह बिचार और शोच करतेहुये राजाने उस रत्नों के खंभोंसे युक्त सुवर्णके बिमान में वृद्धोंके योग्य दिव्य पलंगपर सोते हुये मुनियोंमें श्रेष्ठ भृगुनन्दन जीको देखा १७।१८ तबतो भार्य्या समेत राजा बड़ी प्रसन्नतासे उसऋषिके पास गया इसके पीछे च्यवन ऋषि पलंग समेत गुप्तहो गये १९ इसके पीछे बनके किसी दूसरेस्थानपर कुशाके आसन पर बिराजमान जपमें प्रवृत्त उस महाव्रत मुनिको फिर देखा २० इस प्रकार ऋषिने अपने योग बलसे राजाको मोहित किया २१ फिरएक क्षणमेंही वहबन अप्सरा गंधर्वोंके समूह और सब वृक्षादिक गुप्तहोगये हे राजा फिरवही गंगाकातट शब्दसे रहित होगया २२ और पूर्व्व के समान बहुतकुशा और सर्पों की बामीरखने वालाहुआ इसकेपीछे वहराजा अपनी स्त्री समेत २३ उस अपूर्व

बड़े चमत्कारको देखकर उस कर्मसे आश्चर्य्य युक्तहुआ फिर प्रसन्न होकर कुशिकने अपनीस्त्री से कहा २४ हे कल्याणिनि देखो इन उत्तमऋषि भार्गवजीकी कृपासे जैसे यह अपूर्व्वकठिनतासे प्राप्त होनेवाले अद्भुत चमत्कारों को देखा इससे विदितहुआकितप बलसे अधिककोई बलनहीं होताहै २५ जो चित्तकी इच्छासे अप्राप्तहै वह तपसे मिलना संभवहै तीनोंलोक के राज्यसेभी तपबलअधिक है २६ अच्छी रीतिसे करेहुये तपके बलसे मोक्षका होनाभी संभव है इन महात्मा ब्रह्मर्षि च्यवनजीका प्रभाव अपूर्व्व है २७ तप केही बलके द्वारा इच्छानुसार अन्य लोकोंको भी उत्पन्न करसक्ता है यह ब्राह्मण पवित्रवाणी बुद्धि और कर्मोंकेही द्वारा सबसे उत्तम होतेहैं २८ यहां च्यवनजीके सिवाय दूसरा कौन ऐसा आश्चर्य्य का कर्म करके शान्त होसक्ताहै लोकमें मनुष्योंको ब्राह्मण वर्णमिलना बड़ा कठिनहै और राज्यका मिलना सहजहै २९ हमदोनों ब्राह्मणकेही प्रभावसे घोड़े आदिके समान रथमें जोड़ेगये इस प्रकारसेविचार करनेवाला वह राजा च्यवनजीको विदितहुआ ३० तब ऋषिने राजाको अच्छीरीतिसे देखकर कहा कि शीघ्र आओ ऋषिके इसवचनको सुनतेही वहराजा स्त्री समेत महामुनिके समीप गया ३१ राजाने शिरसे दण्डवत्‌करी तब ऋषिने राजा को आशीर्वाद देकर विश्वास युक्तकर आनन्द युक्त होकर यह वचन कहाकि आओ बैठो ३२ हे भरतवंशी राजा युधिष्ठिर इसके पीछे अपने स्वभावमें नियत शुद्ध वचनोंसे तृप्त करते हुये च्यवन जीने उस राजासे कहा ३३ हे राजा यहांतुमने पंचज्ञानेन्द्री पंचकर्मेन्द्री और मनको अच्छीरीतिसे स्वाधीन किया इसी हेतुसे तुम दुःखसे छूटेहुयेहो ३४ हे वचनकहने वालोंमें श्रेष्ठ पुत्रमेरा तुमने अच्छी रीति से पूजन कियाहै इस से तुझ में किंचित्‌मात्र भी पाप नहीं रहा ३५ हे राजा मैं जहांसे आयाहूं वहां जाऊंगा अब तुममुझको बिदाकरो हे राजेन्द्र मैं तुझपर प्रसन्नहूं जो चाहोसो वरमांगो ३६ कुशिकने कहा हे श्रेष्ठ भार्गवजी मैंने भगवान्‌के पासअग्निके मध्य

में वर्त्तमान् वस्तुके समेत अपनी वर्त्तमानता करी और भस्मनहीं हुआहूं यहीवहुतहै ३७ हेनिष्पाप भृगुनन्दनजी मैंने यहीवड़ाभारी उत्तमवर पायाहै जो आपने हमसे प्रसन्न होकरमेरे कुलकी रक्षा करी हे वेदपाठी यहमुझपर वड़ा अनुग्रहहै और यही जीवनका धर्म और प्रयोजनहै यहीराज्य और मेरे तपकाफलहै ३८ हेभृगुनन्दनजी जोआपमुझपर प्रसन्नहो मुझेकिसी बातका सन्देहहै उसको आपप्रकटकरनेको योग्यहैं ४० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेच्यवनकुशिकसंवादेचतुःपंचाशत्तमोऽध्यायः ५४ ॥

पचपनवां अध्याय ॥

च्यवनजी बोले हे नरोत्तम तुममुझसे वरलेलो और तेरे हृदयमें जोसंशयहै उसकोकहोमैं सबकोसिद्ध करूंगा १ कुशिकनेकहाहेभगवान्भार्गवजीजोआप प्रसन्नहोतो मुझसेकहियेकि किसहेतुसेआपने मेरेघरमें निवासकिया इसको कृपाकरके आपकहियेमैं मनसेसुना चाहताहूं २ हेश्रेष्ठमुनि एकही करवटसे २१ इक्कीस दिनतक सोना और कुछनकहकर बाहर जाना ३ अकस्मात् गुप्तहोजाना फिरदर्शन देना फिर२१इक्कीस दिनतक दूसरीकरवटसे सोना ४ तैलसे मर्दित शरीर होकर जाना मेरेघरमें नानाप्रकार के भोजनों को मंगाकर अग्निसेभस्म करना ५ फिर आपने अकस्मात् शीघ्र रथकी सवारी द्वाराजोगमन किया धनोंका दान वनका दिखलाना ६ हे महामुनि बहुत से सुवर्णके महलरत्न और मूंगेके पायेकेपलंगोंका दर्शनदिखा करगुप्तहोजाना आदिककर्मकिये इन सबकेकारण कोसुना चाहताहूं हे भार्गवजी मैं इसको शोचता हुआ अत्यन्त मोहित होताहूं ८इस स्थानपर मैं इन सबबातों के पूरे निश्चय को नहीं पाताहूं हे तपोधन यह सत्य वृत्तान्त जिसहेतुसे किया है उसको मूल समेत वर्णन कीजिये १० च्यवनजी बोले कि हे राजा पूर्व्व समय में देवताओंकी सभामें ब्रह्माजीने जो कहा है उसको जो मैंने सुना उसको

तुम मुझसे सुनो ११ हे राजेन्द्र ब्राह्मण और क्षत्रियोंकी शत्रुता से शबरादिकोंका संकट होगा और तेरा पौत्र तेज और पराक्रमसे संयुक्त होगा १२ इसीहेतु से तेरे नाशकरने की इच्छासे तेरेकुलके नाशकरने केलिये तेरे पास आयाथा १३ और पुरमें आकर तुमसे कहाथा कि में कुछ नियम को प्रारंभ करूंगा तुम मेरी सेवा करो १४ मैंने तेरे घरमें किसी बुरे कर्म को नहीं पाया इसीकारण से हे राजऋषितू जीवताहै नहीं तो अन्य दशामें नाशको पाता १५ हे राजामें इस बुद्धिमें नियत होकर२१इक्कीस दिन सोयाहूं किकदाचित् कोई मुझको बीचमें जगावे १६ जब भार्य्या समेत तुमने मुझसोतेको नहीं जगाया इसीसे मैं उसी समय से तेरे ऊपर प्रसन्न हुआ १७ हे समर्थराजा कुशिक फिर मैं उठकर निकला जो तुम मार्गमें मुझको कहते कि कहां जातेहो तो मैं तुमको शापदेता १८ गिरगुप्त हुआ फिर योग में नियत होकर २१ इक्कीस दिन तक तेरे घरमें सोया १९ हे राजा तुम अपनी गृहस्थपने की दशासे दुःखी होकर कदाचित् मेरी निन्दा करते मैंने इस बुद्धिमें नियत होकर तुम दोनोंको गृहस्थितीमें पीड़ा-मान किया २० इसपर तुमको भार्य्या समेत बहुत थोड़ा भी क्रोध नहीं हुआ मैं इसहेतुसे तुमपर प्रसन्न हुआ २१ मैंने भोजन को मंगाकर जो भस्म करदिया उसमें मेरा यह बिचारथा कि तुम मित्र-ता में क्रोधयुक्त होजावो २२ इसके अनन्तर मैंने रथमें सवार होकर तुम से कहा कि भार्य्या समेत मुझको लेचलो तुमने उस मेरी आज्ञाको भी वैसाही किया २३ हे राजा तुमने शंकारहित होकर वह सब काम किये इसीकारण से मैं प्रसन्न हूं कि धनका दान करदेने पर भी क्रोधने तुमको नहीं जीता २४ हे राजा इसके पीछे भार्य्या समेत तेरे प्रसन्न और नम्रता होनेपर मैंने यह बन उत्पन्न किया और तेरी प्रसन्नताके निमित्त यह स्वर्ग दिखाया २५ हे राजा कुशिकजो इस बनमें तुमने दिव्य पदार्थोंको देखा २६ वह तुमने इसी देहसे स्वर्गके एक मुख्य स्थानको एक मुहूर्त्ततक देखा २७ यह मैंने तप और धर्मका फल दिखलाने के निमित्त सब किया

और दिखाया इस स्थानपर जो तेरी इच्छा हुई वह भी मुझको विदित हुई २८ हे सब पृथ्वीके राजा कुशिक तुम सब पृथ्वी के और देवताओं के राज्यको भी पाकर प्रतिष्ठा करके ब्राह्मण वर्ण और तपको चाहतेहो २९ यह ऐसाही है जैसा तुम कहतेहो हे तात ब्राह्मण वर्ण कठिनतासे प्राप्त हो सक्ता है फिर ब्राह्मण होकर ऋषिहोना कठिनहै और ऋषि होने पर तपस्वी होना कठिनहै ३० यह तेरी चित्तकी इच्छा प्राप्त होगी कुशिकसे कौशिक ब्राह्मण वर्ण होगा तेरा तीसरा पुरुष ब्राह्मण वर्णको पावेगा हेराजा तेरा वंश भार्गव ऋषियों के तेज से ब्राह्मण होगा और तेरा पौत्र वेदपाठी तपस्वी और अग्नि के समान तेजस्वी होगा ३१।३२ वह मनुष्य देवताओंसे लेकर तीनोंलोकोंके भयको उत्पन्न करेगा ३३ हे राज-ऋषिजो तेरे चित्तमेंहै उस वरकोले मैं तीर्थयात्राको जाऊंगा क्योंकि उस तीर्थयात्रा का पहला समय जाता है ३४ कुशिक ने कहा हे निष्पाप महामुनि जो तुम प्रसन्न हो तो यही मेरा भी वरहै कि जो आपने कहाहै वही होय और मेरा पौत्र होय ३५ हे महर्षी जो मुझे वर दियाहै कि तेरे कुलवाला ब्राह्मण होगा उसको फिरकर ब्यौरे समेत सुनना चाहता हूं ३६ हे भृगुनन्दन मेरा कुल कैसे ब्राह्मण वर्णको पावेगा कौन मेरावन्धु और अंगीकृत होगा ३७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेच्यवनकुशिकसंवादेपंचपंचाशत्तमोऽध्यायः ५५॥

छप्पनवां अध्याय॥

च्यवन जी बोले हे राजा कुशिक यह बात मुझको अवश्य इस निमित्त कहनी चाहिये कि मैं तेरे नाश केही निमित्त आयाथा १ हे राजा क्षत्री लोग भृगुवंशी ब्राह्मणों के यजमान हैं यह बात सदैव से चली आती है वह दैवके नियत किये हुये कारण से विरुद्धता प्राप्तहोंगे २ दैव दंड से पीड़ामान वह क्षत्री गर्भपतन आदिको

भी करते हुये सब भृगुवंशियों को मारेंगे इसके पीछे हमारे कुलमें गोत्रका बढ़ानेवाला अग्नि सूर्य्य के समान तेजस्वी और महा पराक्रमी ऊर्व नाम पुत्र उत्पन्न होगा ३।४ वह संसार की प्रत्येक वस्तुके लिये क्रोधाग्नि को उत्पन्न करेगा और पर्व्वत बन समेत पृथ्वी को भस्मीभूत करेगा ५ वह मुनियों में बड़ा साधु कुछ कालके पीछे उस क्रोधाग्निको समुद्रमेंबड़वानल नाम अग्निकेमुख में छोड़कर शान्तकरेगा ६ हे निष्पाप महाराज सम्पूर्ण धनुर्वेद साक्षात् उसके पुत्र भृगुनन्दन ऋचीक नाम ऋषिके पास नियत होगा ७ दैवके नियत कियेहुये कारणसे क्षत्रियोंके नाशके निमित्त वर्त्तमान होगा फिर वह उस धनुर्वेदको प्राप्त करके अपनेबेटेमहा-भाग तपसे पवित्रात्मा जमदग्नि नाम ऋषिमें नियत करेगा फिर वह श्रेष्ठ भार्गव उत्तम वेदको भी धारण करेगा ८।९ हे भरतर्षभ धर्मात्मा वह जमदग्नि आपकी प्रतिष्ठाके निमित्त तुम्हारे कुलमें से कन्याको पावेगा १० वह महातपस्वी तेरी पौत्री कन्याकोपाकर क्षत्री धर्मधारी ब्राह्मण पुत्रको उत्पन्न करेगा ११ हे बड़े तेजस्वी वहऋषि तेरे कुलमें ऐसे पुत्रकोदेगा जोकि क्षत्री रूप होकरब्राह्मणों के कर्म करनेवाला तेजमें बृहस्पतिजी के समानराजा गाधिका पुत्र बड़ा धर्मात्मा तपोमूर्त्ति विश्वामित्र नाम होगा वहां इनके बिपर्य्य यमेंकारण रूपदो स्त्रियां होंगी १२।१३ब्रह्माजीकीआज्ञासे यह अन्य थानहीं होगा च्यवनजीके इसबचन को सुनकर राजाकुशिक बहुत प्रसन्न हुआ १४।१५ हेभरतर्षभोंमें बड़ेसाधु फिर उस धर्मात्मा राजाने कहा कि ऐसाही हो इसके पीछे महातेजस्वी च्यवनजीने दूसरी बारभी राजासे वरमांगनेकी आज्ञाकरी१६ तव राजाने कहा बहुतअच्छाहे महामुनिमें आपसे अपने अभीष्टको मांगताहूंकि १७ मेराकुल ब्राह्मणहोकर मनसे धर्ममें प्रवृत्तहोय१८तब यह बचनसुन कर च्यवनजीनेकहा ऐसाही होगा यह कहकर और राजा से पूछ कर तीर्थयात्रा को चलेगये १९ हे राजा भृगुवंशी और कुशिक वंशियोंकी नातेदारीका यह संपूर्ण कारण तुमसे कहा २० और

ऋषिने जैसा कहाथा वैसाही हुआ परशुराम मुनि और विश्वामित्र काभी जन्महुआ २१ ॥

श्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेकुशिकच्यवनसंवादेषटपंचाशत्तमोऽध्यायः५६॥

सत्तावनवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले अबमैं श्रीमान् राजाओंकेसमूहोंसे रहितइसपृथ्वी को देखकर बारंबार चिन्ता करताहुआ मोहकोप्राप्त होताहूं १ हे भरतबंशी पितामह मैं सैकड़ोंराज्योंको पाकर पृथ्वीको विजयकरके किरड़ोंमनुष्योंको मारकरदुःखको पाताहूं २ उनस्त्रियोंकी कौनदशा होगी जोकि पति पुत्र मामा और भाईलोगोंसे रहितहैं ३ हमकौरव बिरादरीवालेमित्रोंकोभीमारकर निस्सन्देह शिरनीचाकियेहुये नरकमें पड़ेंगे ४ मैं उग्रतप करके अपने मरणको कियाचाहताहूं और आपसेउपदेशलियाचाहताहूं ५ वैशंपायन बोले कि बड़ेसाहसीभीष्म जीने युधिष्ठिरके इसवचनको सुनकर और उसको बुद्धिमेंपूर्ण देखकर यहकहा ६ हे राजा मैंगुप्त अद्भुत और अत्यन्त श्रेष्ठबचन तुमसेकहताहूं कि शरीरत्यागनेके पीछे जिस मनुष्यको जोगति प्राप्त होती है उसको मुझसेसुनो ७ हेसमर्थ तपसे स्वर्गकी प्राप्तिहोतीहै तपसे हीशुभकीर्त्ति होतीहै तपसेही दीर्घायु और भोगोंकीप्राप्तिहोतीहै ८ हेभरतर्षभ तपसेही परोक्षज्ञान अपरोक्षविज्ञान नीरोगतासुन्दररूप धन और सौभाग्यता प्राप्तहोती है ९ तपसे मौनताको पाताहै मौन तासे बुद्धिको स्वाधीन करताहै दानसेसुख और ब्रह्मचर्य्य से जीवन को पाताहै १० हिंसा नकरनेकाफल रूपकी शोभाहै और दीक्षाका फल कुलमेंजन्मलेनाहै फलमूल खानेवालोंको राज्यसुख पत्ते खाने वालोंको स्वर्ग प्राप्तहोताहै ११ दूधका आहार करनेवाला मनुष्य स्वर्गको जाताहै दानसेबड़ा धनमान होताहै गुरुकी सेवासे विद्या कोपाताहै सदैव श्राद्धकरनेसे सन्तानहोतीहै १२ व्रतमेंशाकमाहार करनेसे गौधन रखनेवाला होताहै तृण खानेवालों का फल स्वर्गहै तीनोंकालमें स्नानकरके स्त्रियोंके और वायुको पानकरके यज्ञके

फलको पाताहै १३ सदैवस्नान करनेवाला द्विजदोनों संध्याओं में जपकरनेसे निरालस्य होकर बुद्धिमान् होताहै पर्वत गुहा और रेतके सेवन करनेवालेको राज्यमिलताहै और प्राणायाम करने वालेको स्वर्गमिलताहै १४ पृथ्वीपर शयन करनेवालेकोस्थान और शय्याआदि प्राप्तहोते हैं चीर और बल्कल धारणकरनेसे पोशाक और भूषणमिलतेहैं १५ पलंग आसन और सवारीभी प्राप्तहोतीहैं तपोधन योगीके अग्निमें प्रवेशकरने से ब्रह्मलोकमें सदैवके लिये प्रतिष्ठा पाताहै १६ इसलोकमें रसीलीवस्तुओंके त्यागनेसे अच्छे ऐश्वर्यको पाताहै लोभसंबंधी वस्तुके त्यागनेसे सन्तानकी आयुर्दा बढ़तीहै १७ जो जलमेंनिवास करेवहराजाहोताहै हेनरोत्तम सत्य-वक्तामनुष्य देवताओंकेसाथ विहारकरताहै १८ दानसेशुभकीर्त्ति होतीहै इसीप्रकारहिन्सान करने से नीरोगता होती है ब्राह्मण की सेवासे बड़ेद्विजभावको और राज्यकोभी पाताहै १९ जलके दानसे सदैव शुभकीर्त्ति होतीहै और भोजनकी वस्तुकेदानसे अभीष्टवस्तुओं काभोगमिलताहै २० सब जीवोंसे प्रियभाषण करनेसेविश्वासधैर्य-ताका देनेवाला सब शोकों से रहित होताहै और देवताकी सेवा से राज्य और दिव्य स्वरूपको पाताहै २१ दीप दर्शनके दानसे मनुष्य दिव्यनेत्रवाला होताहै और सबकेऊपर प्रसन्नदृष्टीसेप्रशंस-नीय शास्त्रोंकी स्मरण रखनेवाली बुद्धिको पाताहै २२ चन्दन आदि सुगन्धकी वस्तु और फूल मालाके दानसे बड़ीशुभकीर्त्ति विख्यात होतीहै शिरपर बाल और डाढ़ी मूछ रखनेवालों की उत्तम सन्तान होतीहै २३ हे राजा व्रतदीक्षा यज्ञ स्नातअथवामन्त्रको बारह वर्ष तक करने से और स्थान अर्थात् योगी के स्थान से बढ़कर नियत होताहै २४ हे राजा ब्राह्म्यविवाह से कन्या का दान देने सेदासी दास भूषण छत्र और मकानातको पाताहै २५ हेभरतर्षभ यज्ञ और व्रतोंके द्वारा स्वर्गको जाताहै फल फूल का दान करनेवाला मनुष्य कल्याणरूप ज्ञानको पाताहै २६ सुवर्णके शृंगोंसे शोभित हजार गौकेदान से मनुष्य बड़े पुण्यको पाकर देवलोक को पाताहै

देवताओंके समूहोंने स्वर्गमें ऐसा कहा है २७ जो मनुष्य वत्स कांस्य दोहिनीपात्र और सुवर्णके शृङ्ग रखनेवाली कपिला गौको दानकरताहै वह गौ उन उनगुणोंमें उसको अभीष्ट देनेवालीहोकर उसदाता मनुष्यको प्राप्त होतीहै २८ गौके जितने रोमहोतेहैं उतनेही दिनोंतक वह मनुष्य गौदानसे स्वर्गको पाकर पुत्र पौत्र और सबकुल भरको सातवीं पुस्ततक परलोकमें आवागवनसे छुटाकर आपभी छूटताहै २६ सुन्दर स्वर्णमयीशृङ्ग कांसेका दुहिनेकापात्र और सुनहरी झूल रखनेवाली तिलकीधेनुको दक्षिणासंयुक्त ब्राह्मणके अर्थ देताहै उसको बसुओंके लोक सुगमतासे मिलते हैं ३० गौवोंका दान परलोकमें उस मनुष्यको जोकि अपनेकर्मोंसे रुका हुआहो और कठिन अन्धकारयुक्त नरकमें गिरनेवालाहै ऐसे मोक्ष देताहै जैसे कि बायुसे युक्त जहाजमहासमुद्रसे उद्धार करदेताहै ३१ जो मनुष्य ब्राह्म्यबिवाहमें कन्यादान करताहै और वेदपाठीब्राह्मण के निमित्त होमदान करताहै अथवा जो बुद्धिके अनुसार अन्नदान करताहै वह इन्द्रकेलोकको पाताहै ३२ जो मनुष्य सबगुणोंसे युक्त सब सामग्री समेत सुन्दर स्थानको ऐसे ब्राह्मणको दान करताहै जो वेदपाठ जपवाला शुभचालचलन आदिक गुणोंसे प्रशंसनीय होय उसकेभी लोक उत्तर कुरुदेशियोंमें होतेहैं ३३ ऐसे गौवोंके दानसेभी मनुष्य बसुओंके लोकोंको पाताहै हिरण्यनाम सुवर्णका दान स्वर्गका दाता और कंकनाम सुवर्णकादान उससेभी अधिक कहाहै ३४ छत्रके दानसे उत्तम घरको पाताहै और जूतेके जोड़ेके दानसे सवारीको पाताहै वस्त्रोंके दानसे सुन्दररूप फलपाताहैचन्दनादिक सुगन्धित बस्तुके दानसे सुगन्धयुक्त शरीर होताहै ३५ जो मनुष्यपुष्पवाले वा फलवाले वृक्षका ब्राह्मणको दान करताहै वह बिना उपाय प्राप्त होनेवाले धनसे पूर्णहोकर वृद्धियुक्त असंख्यरत्नोंसे भरेहुये स्थानको पाताहै ३६ भोजनके योग्य खानेकी वस्तु वा पीनेकी वस्तु अथवा रसोंकादान करनेवाला मनुष्य इच्छाकेसमान सब खट्टे मीठे सुस्वादुरसोंको पाताहै और स्थान वा वस्त्रोंकावृद्धि

के अनुसारदान करनेवाला उनकोभी निस्सन्देह प्राप्तकरताहै ३७ हेराजाजो मनुष्य मालाधूपगन्ध चन्दनादिकालेप पुष्प और स्नान की सामग्री ब्राह्मण को दानकरे वह इसलोकमें नीरोगता पूर्व्वक रूपवान् होताहै ३८ जो मनुष्य पुष्पोंसेपूर्ण पलंगआदि से संयुक्त स्थानको स्थानकी सब सामग्री समेत ब्राह्मण को देताहै वह पवित्र मनोहर रत्नोंसे भरेहुये उत्तम स्थानको पाताहै ३९ जो मनुष्य सुगन्धलगायेहुये अनेकरंगोंसे रंगे बिछौने तकिये आदि सब वस्त्रोंसे अलंकृत पलंगको ब्राह्मणके अर्थ दान करताहै वह बिना उपाय प्राप्तहोनेवाली अति स्वरूपवान् चित्तरोचक भार्य्याको प्राप्त करताहै ४० वीर शय्यापर अर्थात् योगशय्यापर सोनेवाला पुरुषब्रह्माजी के समान होता है जिससे अधिक दूसरी वस्तु नहीं है यह महर्षियों ने कहा है ४१ वैशंपायन बोले कि भीष्मजी के इसवचन को सुनकर प्रसन्नचित्त युधिष्ठिर ने बीरमार्गकी इच्छा से आश्रम में निवास को नहीं अंगीकार किया ४२ हे पुरुषोत्तम इसके पीछे समर्थ युधिष्ठिरने पांडवोंसे कहा कि पितामह का जो वचन है वह तुमको भी स्वीकृतहोय ४३ इसके अनन्तर सब पांडव और यशस्विनी द्रौपदी ने युधिष्ठिर के उस बचनको अंगीकार किया ४४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसप्तपंचाशत्तमोऽध्यायः ५७ ॥

अट्ठावनवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे भरतर्षभ पितामह बागबगीचे और तड़ाग आदि के दानका जो फलहै उसको मैं आपसे सुनना चाहताहूं १ भीष्मजी बोले कि देखने में अति सुन्दर दृढ़ और विचित्र धातुओं से अलंकृत सब जीवों से युक्त पृथ्वी इसलोकमें उत्तम गिनीजाती है २ मैं उस पृथ्वी के मुख्य क्षेत्र और तड़ागों की बनावट और सब प्रकार के तड़ागों का क्रमपूर्व्वक वर्णन करता हूं ३ बनाये हुये तड़ागों के जो गुणहैं उनको भी बर्णन करूंगा तड़ाग देखनेवाला

मनुष्य तीनोंलोकों में सर्वत्र प्रतिष्ठा के योग्य मान्य होताहै ४ अथवा तड़ागों का नियत करना मित्रों के स्थान में मित्रता का बढ़ानेवाला श्रेष्ठ कीर्त्ति का उत्पन्न करनेवाला सबोंका मित्र होने का उत्तम कारण है ५ प्रतिष्ठित लोगोंने देशमें बनाये हुये एक बड़े रक्षाके स्थानरूप तड़ाग क्षेत्र को धर्म अर्थ कामका फल वर्णन किया है ६ तड़ाग को चारोंप्रकार की सृष्टिका अभीष्ट देनेवाला जानो सब तड़ाग उत्तम लक्ष्मीको देतेहैं ७ देव मनुष्य गंधर्व पितर उरग राक्षस और स्थावरजीव भी तड़ागादि का आश्रयलेते हैं ८ इसीहेतुसे जो गुण कि तड़ागमें कहे हैं उनको तुमसे कहता हूं और उससे जो फलकी प्राप्तिका होना ऋषियों ने वर्णन किया है वहभी तुमसे कहता हूं ९ वर्षाऋतुमें जिसके तड़ाग में जल नियत होताहै उसका फल ऋषियों ने अग्निहोत्रके समान कहा है १० और शरदऋतु में जिसके तड़ाग में जल नियत रहताहै वह परलोकमें हजार गोदान के उत्तम फलको पाता है ११ हेमन्तऋतु में अर्थात् अगहन पूषमें जिसके तड़ाग में जल नियत रहताहै वह बहुत से सुवर्ण दान और यज्ञके फलको पाताहै और शिशिरऋतु में अर्थात् माघ फाल्गुण में जिसके तड़ाग में जल होताहै उसका फल ऋषियों ने अग्निष्ठोम यज्ञके समान कहा है १२। १३ जिसका अच्छेप्रकार से बनाहुआ तड़ाग वसन्त ऋतु में अर्थात् चैत बैशाख में जीवों के उत्तम आश्रय का स्थान है वह अतिरात्र यज्ञके श्रेष्ठ फलको पाताहै १४ ग्रीष्मऋतु अर्थात् ज्येष्ठ आषाढ़ में जिसके तड़ाग में जल नियत होता है उसका फल मुनियोंने वाजपेय यज्ञके समान कहाहै १५ जिस मनुष्य के खुदाये हुये तड़ाग में गौ साधू मनुष्य सदैव जलको पीतेहैं वह अपने सब कुलको उद्धार करताहै १६ जिसके तड़ाग में प्यासीगौ अन्य पशु पक्षी और मनुष्य जलको पीते हैं वह अश्वमेध यज्ञ के फलको पाताहै १७ जिसके बनाये हुये तड़ाग में जो जलपान करते हैं स्नान करते हैं अथवा विश्राम लेते हैं वह सब परलोक

में असंख्य फल पाने का अधिकारी गिना जाता है १८ हे तात परलोक में जलकी प्राप्ती कठिनता से होतीहै जलके दानसे प्राचीन प्रीति उत्पन्न होती है १९ तिलदान जलदान और दीपदान जागरण और सजातियोंके साथ आनन्द करो यह बस्तु परलोकमें बड़ी कठिनता से प्राप्त होतीहैं २० हे नरोत्तम यह जलदान सब दानों से बड़ाभारी दान है इसहेतुसे अवश्य जलको देना योग्य है २१ इसरीति से तड़ाग का उत्तम माहात्म्य वर्णन किया अब वृक्षों के लगाने का फल वर्णन करते हैं २२ स्थावर जीवों की यह छःजातें कही हैं आंब आदि वृक्ष और अनार आदि गुल्म और अंगूर आदि लता और खरबूजा आदि बल्ली और बांस आदित्व कसार और घास आदि तृण यह छःजातेहैं २३।२४ वृक्षोंकी इन छः जातोंके लगाने से इतने गुणहैं यहां शुभकीर्त्ति और परलोक में उत्तम फल मिलता है २५ इसलोकमें शुभकीर्त्ति पाकर पितरोंके साथ प्रतिष्ठा को पाताहै और देवलोक में जानेपर भी उसके नाम का नाश नहीं होताहै हे भरतबंशी वृक्ष लगानेवाला मनुष्य पिता के भूत और भविष्य दोनोंवंशोंको तारदेता है इसहेतुसे वृक्षोंको भी अवश्य लगावे २६ यह वृक्ष उसके नरकके तारनेवाले उसके पुत्र पौत्रादि रूप होतेहैं इसमें सन्देह नहीं है कि परलोकमें जाने वाला मनुष्य स्वर्ग को और अविनाशी लोकों को पाता है २७ यह पृथ्वीपर उपजनेवाले वृक्ष अपने पुष्पों से देवताओं को फलोंसे पितरों को छायासे अतिथि लोगोंको पूजा किया करते हैं २८ और इन्हीं वृक्षों का किन्नर सर्प राक्षस देवता गन्धर्व मनुष्य और ऋषियों के गण भी आश्रय लेतेहैं २९ इसलोकमें फल फूल धारण करनेवाले वृक्ष मनुष्यों को तृप्त करते हैं और वृक्षके दान देने वाले को परलोक में पुत्रकी समान उद्धार करते हैं ३० इसीहेतुसे कल्याण का चाहनेवाला मनुष्य सदैव उन वृक्षोंको तड़ाग या अन्य जलाशय के स्थानपर चित्त से लगावे यह वृक्ष मनुष्यों को पुत्रों की समान पोषण करने के योग्य हैं यह धर्मसे पुत्ररूप कहेजाते

हैं ३१ जो तड़ाग वा खात बनानेवाला है और जो यज्ञ करनेवाला ब्राह्मण है और जो कोई सत्यवक्ता मनुष्य हैं यह सब स्वर्ग में प्रतिष्ठा पातेहैं ३२ इसहेतु से तड़ाग वा खात बनवावे बागबगीचे लगावे अथवा नानाप्रकार के यज्ञों से पूजन करे और सदैव सत्यबोले ३३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेआरामतड़ागवर्णनेअष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ५८ ॥

उनसठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर ने कहा हे कौरवों में श्रेष्ठ जो यह दान वेदी के बाहर किये जातेहैं उन से उत्तम कौनसादान आपने मानाहै १ हेसमर्थ उस में मेरी बड़ी अभिलाषा है कि यह दिया हुआ दान दाता को मिलता है या किसको इसको मुझे समझाइये २ भीष्मजी बोले कि जोमनुष्य सब जीवों को निर्भयता देताहै और आपत्तिकाल में सहायता और भरण पोषण करे अथवा जो मनुष्य तृषित और याचक को उसको अभीष्ट वस्तु को देताहै ३ वा जो मनुष्य दान करके उसको सत्य माने वह दान सब दानों से उत्तम कहा जाता है हे भरतर्षभ जो दानदियागयाहै वह दाताको मिलताहै ४ सुवर्ण दान गोदान पृथ्वीदान यहउत्तम और पवित्र दानहैं यहदान पापी कोभी उद्धार करदेतेहैं ५ हे पुरुषोत्तम तुमसदैव इनदानोंको साधु और ब्राह्मणोंको दो यह निश्चयहै कि सबदान मनुष्यको पापों से दूर करतेहैं इसमें किसीप्रकारका सन्देह नहींहै ६ लोकमें जो प्रियतमहै और घरमें जो वस्तु उसको अत्यन्त प्यारीहै अविनाशीपने की इच्छा रखनेवाला दानकर्ता उन उन वस्तुओंको गुणवान् और अत्यन्त पवित्र मनुष्योंको देवे ७ प्रियवस्तुओंका दान करनेवाला मनुष्य अपने मन वांछित अभीष्टोंको पाताहै और इसलोकपरलोक दोनोंमें जीवमात्रका प्यारा होताहै ८ हे युधिष्ठिर जो निर्दयमनुष्य अहंकारसे ऐसे याचना करनेवालेको जो अकिंचन होकर संसारी

वस्तुओंमें प्रीतिनहीं रखताहै उस मनुष्यको अपनी बुद्धिके अनुसार पूजन नहींकरताहै वह बड़ाही निर्दयहै ९ जो मनुष्य खेदमें पीड़ित शरण होनेकी इच्छासे पास आनेवाले शत्रुकीभी सहायता करता है वही पुरुषों में साधू गिनाजाताहै १० जो मनुष्य दुर्बल निर्द्धन और जीविकासे दुःखीमनुष्यके कष्ट और विपत्ति को दूर करताहै उसके समान कोई मनुष्य नहीं होताहै ११ हे कुन्तीनन्दन जो मनुष्य यज्ञक्रिया आदिके व्रतधारण करनेवाले साधू अपने पुत्र स्त्रियों समेत पीड़ामान भी होकर किसी से नहीं मांगतेहैं उनको अनेक उपाय करके निमन्त्रण देकर भोजन पूर्व्वक यथा सन्मान करे १२ जो मनुष्य देवता और मनुष्योंसे कुछनहीं चाहते और सदैव संतुष्ट होकर जो मिलताहै उसीसे निर्वाह करनेवालेहैं १३ हे भरतवंशी उनको दानकरो वह विषैले सर्पकी समान ब्राह्मणहैं उनसे अपनी सदैव रक्षाकरो और इसीप्रकार श्रेष्ठतर ऋत्विजब्राह्मणोंको १४ उन स्थानादिके दानके निमित्त सदैव निमन्त्रण दोजो मृत्तिका वा चूनेआदिसे वनेहुयेदासदासी और घरके संपूर्णपदार्थसे संयुक्त होकर अभीष्ट सुखों के रखनेवाले होंय १५ हे युधिष्ठिर जो वह धर्मात्मा पवित्रकर्मी ब्राह्मण इसबातको मानें कि यह निमन्त्रण अंगीकार करना योग्यहै तो उस श्रद्धासे पवित्र निमन्त्रण को अंगीकार करें १६ जोकि गुरूसे विद्या को प्राप्त करके समावर्त्तन स्नान करनेवाले अथवा ज्ञान से पवित्र गायत्री आदि जप के करने से पवित्र और निराश्रय होकर निर्वाह करनेवाले गुप्त जप और तप करनेवाले तीव्रव्रत ब्राह्मणहैं १७ हे युद्धकर्त्ताओं के स्वामी उनपवित्र शान्तचित्त अपनीही स्त्रीसे संतुष्ट ब्राह्मणोंके साथ में जो उपकार करेगा वह लोकमें तीसरा कल्याणहै १८ प्रातःकाल सायंकालके समय ब्राह्मण से अच्छेप्रकार कियाहुआ अग्निहोत्र जैसे फलका देनेवाला होताहै वैसेही ब्राह्मणों के निमित्त दिया हुआ दान जितेन्द्रियों के फलका देनेवाला होताहै १९ हे तात तुझ दान करनेवालेका यह फैलाहुआ यज्ञ जो श्रद्धासे पवित्र द-

क्षिणा संयुक्तहै वह सबयज्ञोंसे उत्तमहै वही वर्त्तमान हो २० हे युधिष्ठिर दानके लिये जलहाथमें रखनेवाला मनुष्य पूजन करता हुआ उस प्रकारके ब्राह्मणोंमें निवासकरे तो उनके पास रहने से अऋणता को प्राप्तकरताहै २१ जो ब्राह्मण क्रोधनहीं करतेहैं और तृणमात्र परभी लोभनहीं करतेहैं और जो प्रियभाषीहैं वहीहमारे परम पूज्यहैं २२ हमवृद्धहैं हमारी कोई प्रतिष्ठा नहीं करता इस बातको यह ब्राह्मण नहीं मानतेहैं और जो ब्राह्मण लोभसे कर्म को नहीं करतेहैं वहपुत्रके समान पोषण करनेके योग्यहैं क्योंकि वह दोनोंकर्म उसीप्रकारकेहैं २३ वह ऋत्विज पुरोहित आचार्य्य उस वेदके धारण करनेवाले हैं जोकि कृपासे पूर्णहै क्षत्री से प्राप्त कियाहुआ बल पराक्रम ब्राह्मणमें शान्तीको पाताहै २४ हे युधिष्ठिर मेरेपास धनहै मैं पराक्रमीहूं राजाहूं यहमानकर ब्राह्मणको वस्त्र भोजनादिक से तृप्त न करूं यह नहीं करना चाहिये अर्थात् उसको अवश्य भोजन वस्त्रादिसे तृप्तकरो २५ हे निष्पाप शोभा और सेनाके निमित्त जो तेरा धनहै अपने धर्मपर आरूढ़ होकर तुमको उस धनसे ब्राह्मणों का पूजन करना उचितहै २६ इसीप्रकार सत्यमार्गमें चलनेवाले ब्राह्मणभी नमस्कार करनेके योग्यहैं वहसुख और उत्साहपूर्व्वक पुत्रोंके समान तेरेपास निवासकरें २७ हे कौरवोंमें बड़े साधु तेरेबिना दूसरा कौन पुरुष उन ब्राह्मणों की जीविका नियत करनेको योग्यहै जोकि अक्षय आशीर्वाद देनेवाले शुभचिन्तक और थोड़ेहीसे तृप्तहोनेवाले हैं २८ लोक में जैसेकि स्त्रियोंका सनातन धर्म पतिसे संबंध रखताहै और सदैव उनको इसके सिवाय दूसरीगति नहींहै वैसेही ब्राह्मण लोगभी हमारे गतिहैं हे तात जो ब्राह्मण क्षत्रीमें नियत भयकारी कर्मको देखते हुये पूजनको नहींपातेहुये हम सरीखे क्षत्रियोंको त्यागकरदें २९।३० तब उस ब्राह्मणकी शरणके बिना उनवेद यज्ञ और लोकोंसे रहित अकर्मी क्षत्रियोंको जीवनसे क्या प्रयोजनहै अर्थात् उनका जीवन निरर्थकहै ३१ इस स्थानपर जैसा कि प्राचीन धर्महै वह मैं तुझसे

कहताहूं हे राजा प्राचीनसमयमें क्षत्रियोंने ब्राह्मणोंकी सेवाकी३२ वैश्यने क्षत्रियोंकी और शूद्रने वैश्यकी सेवाकरी यहश्रुति है अग्नि केसमान तेजस्वी ब्राह्मण शूद्रकरके दूरसेही प्रतिष्ठा करनेके योग्य हैं ३३ और वैश्य वा क्षत्रीको उसके चरण धोने और सेवा करनी उचितहै हे राजा मृदु स्वभाव सत्यवक्ता और सत्य धर्मके पालन करनेवाले३४ बिषधर सर्पकी समान क्रोधमूर्त्ति ब्राह्मणों की सेवा करो वह ब्राह्मण देवता और मनुष्यों सेभी उत्तम और श्रेष्ठहैं ३५ पराक्रम और प्रतापसे तपानेवाले क्षत्रियोंके तेज और तप ब्राह्मणों में शान्त होते हैं ३६ हे राजा युधिष्ठिर जैसे ब्राह्मण मुझको प्यारे हैं वैसामेरा पिताभी मुझको प्यारा नहींहै और तुम न मेरे पिता- मह न मेरा आत्मा न जीवन प्यारा है हे भरतर्षभ संपूर्ण पृथ्वी भरे में मुझको तुझसे अधिक कोई प्यारा नहींहै सो तुझसेही मेरे प्रियतम ब्राह्मणहैं३७।३८हे पांडुनन्दन मैं जैसे यह सत्यरबचनकह- ताहूं उस सत्यतासे मैं उनलोकोंको जाऊं जिनलोकोंमें मेरा पिता शन्तनु है ३९ सत्यपुरुषोंके उन पवित्रलोकों को जिनमें ब्रह्मा जी पूजितहैं अथवा जहां ब्रह्मलोक उत्तम है उसको देखूं हे तात बहुत दिनों के लिये मुझको वहां जानाहै ४० हे भरतर्षभ राजा युधिष्ठिर सों मैं इनलोकोंको देखकर इसहेतुसे दुःखीनहींहूंकिमैंने ब्राह्मणोंकी सेवा और परिचर्य्या करीहै ४१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेएकोनषष्टितमोऽध्यायः ५९ ॥

साठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोलेकि जोयाचक वा अयाचक दोब्राह्मण वेदशाखा मीमांसासे विदित विद्या और जन्म से समानहों इनदोनोंमें से किसको दानदेना उत्तमहै याचकके निमित्त वा अयाचककेनिमित्त १ भीष्मजी बोले हे राजा याचककी अपेक्षा अयाचक को दान देना उत्तम कहाजाता है चित्तको स्वाधीन न करनेवाले याचक ब्राह्मण से धैर्य्यमानअयाचकब्राह्मणअधिकतम पूजनीयहै२।३।४क्षत्रीप्रजा-

पालन रक्षणरूप धर्मका धारण करनेवाला और ब्राह्मण अयाच-कतारूप धर्मका धारण करनेवाला है धैर्य्यमान बुद्धिमान् शन्तोषी ब्राह्मण देवताओंको तृप्तकरताहै ३ हे भरतवंशी याचक ब्राह्मणके स्वरूपमें याचना करनाही प्रतिष्ठा आदिका नाश करनेवाला कहा जाताहै जब वह याचना करतेहैं तब चोरके समान जीवधारियोंको चित्तसे व्याकुल करते हैं ४ याचना करनेवालाही मरता है दान करनेवाला कभी नहीं मरताहै हे युधिष्ठिर दानकर्त्ता अपनी इस आत्मा को सदैव के लिये जीवनमुक्त करता है ५ याचकके नि-मित्त जो दिया जाता है उसका कारण यहहै कि दया करना उत्तम धर्महै परन्तु याचना न करनेवाले दुःखी ब्राह्मणों के सब उपायोंसे निमंत्रण देके दानदेना योग्य है ६ जो इसप्रकार के वह उत्तम ब्राह्मण देशोंमें आकर निवासकरें तब तुम बड़े उपायोंसे उन ब्राह्म-णोंको गीलीमृत्तिकासे ढकेहुयेगुप्तअग्निके समानजानो ७ हेकौरव्य तपसे प्रकाशमान और पूजन न पानेवाले वहब्राह्मण पृथ्वीकोभी भस्म करडालतेहैं क्योंकि ऐसे ब्राह्मण सदैव पूजनके योग्यहैं ८ हे शत्रुसंतापी वह ज्ञान विज्ञान तप और योगसे संयुक्त पूजनके यो-ग्यहैंउन ब्राह्मणोंके निमित्त पूजन करना अवश्यहै ९ उन याचना न करनेवाले ब्राह्मणोंके सन्मुखजाता और अनेकप्रकारके दानोंको देताहुआ मनुष्य सुखी होता है प्रातःकाल सायंकाल अच्छेप्रकार से कियेहुये अग्निहोत्रमें जोफलहोताहै १० वहीफल विद्या वेद और व्रतधारण करनेवाले ब्राह्मणके अर्थ दानदेने में होताहै विद्या वेद और व्रतमें पूर्ण और किसीके आश्रय न रहकर अपना निर्बाहकरने वाले गुप्तजप और तपके करनेवाले तीव्रव्रत ब्राह्मणों में श्रेष्ठब्राह्म-णोंका उन मकानातके दानदेनेकेलिये निमंत्रणकरो जोकि मृत्तिका और पाषाणादिसे बनाचित्तरोचकदासदासी और घरके सबसामानों से वा अन्यप्रयोजनकी सबवस्तुओं से संयुक्तहोंय हे कौरव युधि-ष्ठिर वह सूक्ष्मधर्मोके ज्ञाता ब्राह्मण इसबातको समझलें कि यह निमंत्रण अंगीकार करना योग्यहै तब श्रद्धायुक्त निमंत्रणको अंगी-

कारभी करतेहुये वह ब्राह्मण भोजन करके दक्षिणायुक्त घरोंमें भी वर्त्तमान होतेहैं ११।१२।१३।१४ जिनलोगोंकी स्त्रियां अतिथि के भोजनकी ऐसी प्रतीक्षा करतीहैं जैसे कि खेती करनेवालेपरजिन्य मेघकी करतेहैं हेतात प्रातः स्नानकरनेके समय भोजन पदार्थों के भोजन करनेवाले सावधान ब्रह्मचारी ब्राह्मण १५ त्रेता अग्निको तृप्त करतेहैं हेतातगौ सुवर्ण और वस्त्रदान करनेवाले तुझदाताका स्नान मध्याह्नकेसमयहोय जिससे कि तुझपर इन्द्रप्रसन्नहो और हेयुधिष्ठिर तेरातीसरास्नान उसवैश्वदेव कर्मसे संयुक्तहोय१६।१७ जिसको देवतापितर और ब्राह्मणोंके निमित्त देतेहो हिन्सा नकरना और जीवोंके लिये विभागकी रीतिसे भागदेना १८ शान्तचित्तधैर्य्य कान त्यागना यहसब तेरे यज्ञके निमित्त अवभृथस्नानरूप होतेहैं यहतेरा फैलाहुआ यज्ञजोकि श्रद्धासे पवित्रदक्षिणाका रखनेवाला है १९ और सब यज्ञोंसे श्रेष्ठहै हे तात वह सदैव बर्त्तमानहो २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेषष्टितमोऽध्यायः ६० ॥

इकसठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकिया कि इसलोकमें दान और यज्ञ इनदोनोंमें सेकौन परलोकमें अधिक फल देनेवालाहै स्वर्गमें उत्तमफल किसका समझा जाताहै और किसकाल में कौनसे ब्राह्मणों के निमित्त किसरीतिसे देना उचितहै १ हे भरतबंशी मैं इसको मुख्यता समेत जानना चाहताहूं इसहेतुसे हे महाज्ञानी मुझ इच्छावान्से दानधर्मोंको वर्णन करिये २ वेदीके बीचमें जो दानकिया वा श्रद्धाऔर दयासे दानकिया उनमें कौनसा कल्याण करनेवालाहै हेपितामह उसको मुझसे कहिये ३ भीष्मजीबोले कि हेतात क्षत्रीकाजो युद्धादिक भयकारी कर्म सदैव वर्त्तमानहै उस क्षत्री धर्मका पवित्रकरने वाला यह वैतानिक श्रौतकर्म और दानधर्महीहै ४ वहसाधुब्राह्मण पापीराजाओंके दानको नहींलेतेहैं इसनिमित्त राजाको उचितहै कि पूरी दक्षिणावाले यज्ञसे पूजनकरे ५ जो कदाचित् वह लेनेको मन

करें तो राजा बड़ीश्रद्धामें नियतहोकर प्रतिदिन दानकरे यह उत्तम कर्म पवित्रताका करनेवालाहै ६ इसीहेतुसे सावधानव्रत राजाइन वेदज्ञ दयावान् साधूस्वभावसे शान्ततपनिष्ठ उत्तम ब्राह्मणोंको यज्ञ में बुलाकर अनेक द्रव्योंसे तृप्तकरे ७ जो वह ब्राह्मण तेरे दानको नहींलेंगे तो तेरापुण्यभी नहींहोगा तव तुम उत्तम स्वादुयुक्त भोजन की वस्तुरखनेवाले दक्षिणायुक्त यज्ञोंको साधूब्राह्मणोंकेअर्थसाधन करो ८ दानकर्मके द्वारा अपनेको यज्ञ करनेवाला मानो अर्थात् यज्ञभी दानकर्म में वर्त्तमानहै यज्ञ करनेवालोंका पूजन करोगे तो तुम्हाराभी उसयज्ञमें कुछ भागहोगा ९ बड़े कुटुम्बी सन्तानवाले ब्राह्मणोंको पोषणकरो इसकर्मसे वैसाही प्रजाका स्वामी होताहै जैसे कि सन्तानवाला मनुष्यहोताहै १० यह सब सन्तलोग साधूजन धर्मोंकी बड़ीवृद्धि करतेहैं और जो बड़ेउपकार करनेवाले मनुष्य हैं वह सवधनोंसेही पोषण करनेके योग्यहैं ११ हे युधिष्ठिर तुमऐश्वर्य्य मानहोकर ब्राह्मणोंको गो जल भोजनकीवस्तु छत्र वस्त्र जूतेकेजोड़े धन इन सववस्तुओंका दानकरो १२ हे भरतवंशी यज्ञ करनेवालोंके निमित्त घृतआदि रस भोजनकी वस्तु घोड़ोंसमेत सवारियां मकानात पलंग आदि सुखदायी पदार्थोंका दानकरो हेभरतवंशी यह गौ दान आदि फलके देनेवाले पदार्थ थोड़ेही उपायसे होनेके योग्य हैं १३ निर्दोष और जीविका न होनेसे दुःखी ब्राह्मणोंको जानकर उनको प्रत्यक्ष अथवा गुप्तजीविकाकेद्वारा पोषणकरे क्षत्रीलोगोंको वहकल्याण राजसूय और अश्वमेध यज्ञोंसे प्राप्त होनेके समान होताहै इसरीतिसे तुमपापोंसे छूटकर स्वर्गको पावोगे१४।१५ फिर जो तुम धनागारको धनसेपूर्ण करके प्रजाका पालनकरोगे तो उस कर्मसे धनोंको और ब्रह्मभावको पावोगे १६ हे भरतवंशी अपनी और दूसरोंकी जीविकाको रक्षाकरो अपने सेवकलोग और प्रजा लोगोंकोभी पुत्रकेसमान पोषणकरो १७ हे युधिष्ठिर तेरी अप्राप्त वस्तुका मिलना और प्राप्तवस्तुकी रक्षा सदैव ब्राह्मणोंके स्वाधीन नियतहो और तेराजीवन उन ब्राह्मणोंकेनिमित्त हुआहै इसीसेउनका

सदैव पोषणकरो कभीपोषणसे रहित मतहो जो बड़ाभारी धनका संचयहै यह ब्राह्मणका अनर्थहै क्योंकि सदैव धनमेंही प्रवृत्त रहना अत्यन्त अहंकार और अचेतताको प्राप्त करताहै १८।१९ निश्चय करके ब्राह्मणोंके अचेत होजानेसे धर्मका नाशहोताहै और धर्मके नाशहोनेसे जीवोंका नाशहोताहै इसमें ज़रासन्देह नहींहै २० जो राजा धनसंचय करनेवाले मनुष्योंको धनदेकर यह आज्ञादेताहै कि यज्ञके निमित्त अमुकदेश से धनकोलावो वह देशभरेका सत्यानाश करताहै उसआज्ञासे उत्पन्नहुये भयसे दियेहुये यश धनको लेकर उस कोपसंबंधी धनसे २१ जो यज्ञकरे उसके यज्ञकी साधूलोग निन्दा करतेहैं पीड़ासे रहित अच्छे समृद्धिमान जो प्रजाके लोग प्रसन्नता से देते हैं ऐसे उपाय पूर्वक संचित धनसे यज्ञ करना योग्यहै जब प्रजाका अनुकूल राजा बुद्धिके अनुसार चारों ओरसे धनको इकट्ठाकरे२२।२३तव वह बहुत दक्षिणावालेमहायज्ञोंसे पूजन करे वृद्ध बालक अन्धे और दुःखी लोगोंकाधन रक्षा करनेके योग्य है २४ किसीको जड़को न उखाड़े और रुदन करनेवालेका धननहीं लेना चाहिये दुःखी और कंगालका लियाहुआ धन देशको और राज लक्ष्मीको नाश करताहै २५ ऐसे सत्पुरुष गृहस्थलोगोंके भय और दरिद्रको उत्तम भोगोंके देनेसे दूरकरे जिनके कि बालक सुस्वादु भोजनोंकी बाट देखतेहों २६ और जो उन भोजनोंको बुद्धिके अनुसार भोजन नहींकरें तो इससे अधिक कोई पापनहीं होताहै जो तेरे देशमें उसप्रकारका ज्ञानी ब्राह्मण क्षुधासे पीड़ाको पावे तब तुम उस महापापके करने से भ्रूणहत्याकोपावोगे २७ जिसके देशमें ब्राह्मण वा दूसरा कोई मनुष्य भी पीड़ा पाता है उस राजाके जीवन को धिक्कारहै इसपर राजा शिवीका कथनहै २८ कि जिस राजाकेदेशमें सनातन ब्राह्मण क्षुधासे पीड़ाको पाताहै वहदेश राजा समेत वृद्धिको नहीं पाता है किन्तु हानिको पाता है २९ जिसके देशसे रोती पुकारती हुई वह स्त्रियां चोरोंकी आधिक्यतासे चोरी करी जाती हैं जिनके पति और पुत्र पुकाररहे हैं ऐसा राजा मरा

हुआहै जीवता हुआ नहीं है ३० वह प्रजाके लोग अनेक उपाय करके उस राजा के कुलका नाश करते हैं जो कि निर्दय चोर उपाधियोंसे रक्षा न करनेवाला होताहै और वह राजा प्रजाका स्वामी भीनहींहै ३१ जो यहबचन कहकर कि मैं तुम्हारी रक्षाकरूंगाफिर रक्षाको नहीं करता है ऐसा राजा सबलोगों को परस्परमें मिलकर मारडालने के योग्यहै जैसे कि रोगी और बावला कुत्ता मारने के योग्य होताहै ३२ हे भरतवंशी राजासे अरक्षित प्रजाजो कुछ पाप करती हैंउनके पापके चतुर्थांश को राजा पाताहै ३३ फिर यहभी कहाहै कि उनके पूरेही पापको राजा पाताहै और आधेकोभी पाता हैमनुजी की आज्ञाको सुनकर हमारा भी यही निश्चय मतहै कि वह राजा प्रजाके चौथाई पाप को पाताहै ३४ और हे भरतवंशी जो राजा से अच्छी रक्षित होकर प्रजा शुभ कर्म करती है उसके पुण्यके भी चौथे भाग को राजा पाता है ३५ हे युधिष्ठिर सब प्रजा तुझ जीवते हुयेके पास अपना जीवन ऐसे करे जैसे कि जीवलोग वर्षाकरनेवाले बादलों की सहायता से और पक्षी बड़े २ वृक्षों के आश्रय से अपना निर्वाह करतेहैं ३६ हे शत्रुसंतापी जैसे किराक्षस कुबेरजी के पास और देवता इन्द्र के पास अपना निर्वाह करते हैं उसी प्रकार सजाती लोग और मित्रवर्ग तेरे समीप आश्रित होकर अपना जीवन करें ३७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेएकषष्टितमोऽध्यायः ६१॥

बासठवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि (इदंदेयमिदंदेयमिति) अर्थात् यह देना योग्य है यह देना योग्य है यह जो श्रुतिहै उसके आदरके लिये राजालोग बहुतदान करनेवाले हैं उनमें से अत्यन्त श्रेष्ठ कौन सा दानहै १ भीष्मजी बोले सब दानों से अधिकतर पृथ्वीका दान कहाजाता है क्योंकि वह पृथ्वी अचल अविनाशी फल देनेवाली और उत्तम अभीष्ट फलों की देनेवाली है २ इसीप्रकार रत्न वस्त्र

पशु और चावल जो आदि अन्नको दाताहै भूमिदान करनेवाला सवजीवों के मध्यमें बहुत वर्षतक वृद्धि पाताहै ३ इसलोक में जब तक पृथ्वी की आयुर्दा है तबतक भूमिदान करनेवाला वृद्धिको पाताहै हे युधिष्ठिर इसलोक में भूमिदान से बड़ा कोई भी दान नहीं है ४ हमने सुनाहै कि जिन मनुष्योंने पृथ्वी का थोड़ाभाग भी दान कियाहै उन सबने पूरी भूमिदानका फल पाया वह मनुष्य भूमिको भोगते हैं ५ मनुष्य इसलोक परलोक में अपने कर्मों सेही अपना निर्वाह करते हैं यह पृथ्वी ऐश्वर्य्य रूप महादेवीहै वह दान देने वाले को अपना प्यारा करतीहै ६ हे राजाओं में बड़ेसाधु जो राजा इस अविनाशी फलवाली पृथ्वी को दक्षिणा में देताहै वह मनुष्य शरीर को पाकर पृथ्वी का श्वामी होता है जैसा दान होताहै वैसाही भोग होताहै७यह धर्मोंमें निश्चयहै युद्ध में शरीरको त्यागे अथवा इस पृथ्वी का दान करे ८ इसको क्षत्रियों का बड़ाभारी धन कहते हैं दान करी हुई पृथ्वी दाताको पवित्र करती है यह हमने सुनाहै ९ वही पृथ्वी पाप कर्मी ब्रह्महत्या करनेवाले मिथ्यावादी पापी राजाको भी पापों से उद्धार करती है वही पापोंसे वचाती है १० साधु लोग पापी राजाओं कीपृथ्वी जो माता के समान पवित्र है उसको दानमें लेते हैं दूसरे दान को नहीं चाहते हैं ११ प्रकट है कि देवी पृथ्वी का दान करना अथवा दान लेना बहुत श्रेष्ठ और सबका प्रियहै और यह सनातन धर्महै इसीहेतुसे इसका प्रथम नाम प्रियदत्ताहै १२ जो राजाइसपृथ्वीको वेद शास्त्रज्ञ ब्राह्मण को दान करें वही इस पृथ्वीपर सबका प्रिय वा यज्ञादिक कर्महै यहां से परलोकमें जाकर राज्यको पाताहै १३ फिर इस जन्म को पाकर निस्सन्देह राजाके समान होताहै इस कारण राजा पृथ्वी को प्राप्त करके वेदपाठी शास्त्रज्ञ ब्राह्मण के निमित्त दानकरें १४ और जो पृथ्वी का स्वामी नहीं है उसको पृथ्वीपर किसीदशामें भी अपना अधिकार न करना चाहिये और जो दानपात्र नहीं है उसको लेनी भी न चाहिये और जिसको

दान नहीं दिया वह उसमें निवास न करें १५ जो कोई मनुष्य पृथ्वी को चाहें वह निस्सन्देह इसरीति से कामकरें जो मनुष्य साधू की पृथ्वीको लेता है वह पृथ्वी को नहीं पाता है १६ साधू के लिये पृथ्वीको देकर उत्तम पृथ्वी को पाता है वह धर्मात्मा इसलोक परलोक दोनोंलोकों में बड़ी शुभकीर्त्ति को पाता है १७ हे राजा वेदपाठी ब्राह्मण सदैव जिससाधू की पृथ्वी को कहते हैं उसके शत्रु उसकी पृथ्वी की प्रशंसा नहीं करते हैं १८ आजीविका से दुःखी मनुष्य जो कुछ पाप करता है वह गोचर्ममात्र पृथ्वी के दानसेही पवित्र होता है जिस पृथ्वी में एक बैल समेत सौ गऊ आनन्द करतीहैं १९ उसको गोचर्ममात्र कहतेहैं जो राजा करने और न करने के योग्य कर्मों के करनेवाले और भय के उत्पन्न करनेवाले कर्म को करते हैं उनके लिये भूमिदान अनूप और पवित्र कहना योग्य है २० जो मनुष्य अश्वमेध यज्ञ से पूजन करे अथवा साधूको पृथ्वीका दान करे इन दोनों कर्मोंको प्राचीन धर्मज्ञलोग समान कहते हैं २१ नानाप्रकार के शुभकर्मों को करके और भूमि का भी दान करे तो पण्डित लोग उस दान के निश्चयपाने को कहते हैं २२ बड़ाज्ञानी पुरुष पृथ्वी का दान करताहुआ सोना चांदी वस्तु रत्नों समेत बहुतसा धन देता है २३ तप यज्ञ शास्त्र प्रसन्न चित्त निर्लोभ सत्यबोलना गुरू और देवताओं की पूजा इत्यादि का करना यह सब गुण भूमिदान करनेवालों में नियत होते हैं २४ स्वामी की शुभचिन्तकतामें प्रवृत्त शरीर से मोहन करनेवाले युद्धमें घायल ब्रह्मलोक में नियत सिद्धलोग भूमिदान करनेवालों को उल्लंघन नहीं करते हैं अर्थात् भूमिदान करने वाला उनसे अधिकहै २५ जैसे कि माता अपने दूधसे सदैवअपने बच्चे को पोषण करती है इसीप्रकार पृथ्वी सब रसोंसे भूमिदाता पर अनुग्रह करती है २६ मृत्युकिंकरनाम दण्ड अंधेरा बड़ा भयकारी अग्नि और महा असह्य फांसी यह सब भूमिदान करने वाले के समीप भी नहीं आसक्ते २७ जो शान्तबुद्धी मनुष्य पृथ्वीको

दान करताहै वह पितृलोकमें नियत होकर पितरों को और देव-
लोकवासी देवताओं को अच्छीरीतिसे तृप्त करताहै २८ जो ब्रा-
ह्मण दुर्बलता और कृशाङ्गता से मृतक की समान आजीविका
के विषयमें शोकग्रस्त और पीड़ामान हैं उन ब्राह्मणों के निमित्त
जो मनुष्य उनके जीवन के निर्वाह के समान पृथ्वी को दानकर
सत्री होता है (जहां बहुत से होताहोय और बहुत जीव बुलाये
जायं और बहुतोंको दिया जाताहै उसको सत्र कहतेहैं और जिस
का वह सत्रहै उसको सत्री कहते हैं) २९ हे महाभाग जैसे प्रस-
न्नता से गौ दूधको डालती हुई बछड़े की ओर को दौड़ती है उसी
दशावाली भूमिदान करने वालेकी पृथ्वी भी होती है ३० जो-
तीहुई बीज बोईहुई फालसे समकरी हुई पृथ्वीको और बड़े सुन्दर
विस्तार दैर्घ्ययुक्त स्थान को जो दान करता है वह दान उसी
प्रकार की अभीष्ट वस्तुओं का देनेवाला होता है ३१ जो ब्रा-
ह्मण यज्ञ करना करानाआदि जीविका रखनेवाला अग्निहोत्री
और पवित्र व्रतवाला है उस ब्राह्मण को पृथ्वीदान करके धर्म
लोपहोनेके कारण मनुष्य परमगतिको नहीं पाताहै ३२ जैसे कि
चन्द्रमा की कलाओंकी प्रतिदिन वृद्धि होतीहै उसीप्रकार पृथ्वीका
कियाहुआ दान हर एक ऋतुके अन्न उपजनेमें वृद्धिको पाताहै ३३
प्राचीन वृत्तान्तके ज्ञातालोग पृथ्वीकी कहीहुई इस कथाको कहते
हैं जिसकथाको सुनकर परशुरामजीने इस पृथ्वीको कश्यपजी
के अर्थ दानकिया ३४ अर्थात् पृथ्वीने कहाहै कि मुझको दानकरो
मुझको प्राप्तकरो मुझको दानकरके फिर तुम मुझीको पावोगे वह
दान कियाहुआ यहां वहां दोनोंलोकोंमें फिर उत्पन्न होताहै ३५ जो
ब्राह्मण वेदकेसमान इस कथाको जानताहै वह कियेहुये श्राद्धमें ब्र-
ह्मभावको पाताहै मारणआदि प्रयोगकर्मोंसे उत्पन्न कृत्याहै अथवा
स्त्री प्रसंगादिकका जिनको मिथ्यादोष लगाया गयाहै उनके मृत्यु
चिह्नका दूरकरनेवाला बड़ाप्रायश्चित्त रूपयह भूमिदान है जैसे
पृथ्वीको दानकरके आगे और पीछेके अपने दश२पुरुषाओंकोपवित्र

करताहै ३७ वैसेही जो मनुष्य इसवेद वचनको जानता है वह भी पवित्रकरताहै यह वैश्वानरी पृथ्वी सब जीवमात्रोंकी उत्पत्ति स्थान मानीहै ३८ राजाको राज्याभिषेक कराके यही शास्त्र सुनाना उचित है जिससे कि इसको सुनकर पृथ्वीको दानकरे और साधुसे पृथ्वी कभीनले ३६ यही निश्चय और निस्सन्देह ब्राह्मण और क्षत्रीका मुख्यऔर पूरा प्रयोजनहै धर्ममेंकुशल राजाभी प्रजाके ऐश्वर्य्यका प्रथम चिह्नहै ४० फिर जिन प्रजालोगोंकाराजाधर्मका न जानने वाला और न परलोकका माननेवाला होताहै वह प्रजा न सुख पूर्व्वक सोतीहै और न आनन्दसे जागतीहै न सुखको पातीहै ४१ उस राजाके निकृष्ट कर्मोंसे मनुष्यअसह्यदुःखके कारणसे व्याकुल होतेहैं और उसके उस देशमें अभीष्टोंकी प्राप्तीकी आधिक्यता प्रवेश नहीं करतीहै ४२ फिर जिन्हों का राजा बुद्धिमान् और धर्म की प्रकृति रखनेवाला होताहै वह प्रजालोग सुख पूर्व्वक जगतेहैं और अत्यन्त सुखसे सोतेहैं ४३ उस राजाके उत्तम शुभकर्मोंसे सुखी हुये मनुष्य अभीष्टोंकी प्राप्ती और वस्तुओंकी रक्षा जलकीवर्षा यह सब अपने कर्मोंसे बड़ी वृद्धिको पातेहैं ४४ जो पृथ्वीको दान करताहै वह कुलीनहै पुरुषहै सबका प्रिय बन्धुहै और पुण्यका करनेवाला होकर वही शूरकहाताहै ४५ जो मनुष्य धन समेत पृथ्वीको वेद शास्त्रज्ञ ब्राह्मणके अर्थ दान करतेहैं वह इस पृथ्वी पर अपने तेजसे सूर्य्यके समान प्रकाशमान होतेहैं ४६ जैसे कि पृथ्वीपर बोयेहुयेबीज उपजतेहैं उसीप्रकार भूमिदानसे प्राप्त हुये अभीष्ट अच्छेप्रकारसे प्रकट होतेहैं ४७ सूर्य्यचन्द्रमा अग्नि वरुण ब्रह्मा बिष्णु और भगवान् शिवजी भूमिदान करनेवाले मनुष्यपर प्रसन्नहोतेहैं ४८ सब मनुष्य पृथ्वीपरही उत्पन्न होतेहैं और पृथ्वीपरही मरतेहैं और यह जो अंडजस्वेदज जरायुज उद्भिज चार प्रकार के जीव होतेहैं वह पृथ्वीके गुणरूपहैं ४६ हे राजा यह पृथ्वी जगतकीमाता और पितारूपहै इसके समान दूसरे जल अग्नि वायु आकाशयहचारों तत्त्वनहींहैं ५० हेयुधिष्ठिर इसस्थान

पर एक प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें वृहस्पति और इन्द्र का प्रश्नोत्तर रूप संवादहै ५१ इन्द्रने दक्षिणायुक्त शत महायज्ञोंसे पूजन करके वक्ताओंमें श्रेष्ठ वृहस्पतिजीसे पूछा ५२ कि हेभगवन् किसदानसे स्वर्गमें पहुंचनेवाला मनुष्य सुखसे वृद्धिको पाताहै जो अविनाशी और बहुत बड़ादानहै हे महाबक्ताओं में श्रेष्ठ उसको कहो ५३ भीष्मजी बोले कि इसके पीछे जब इन्द्रने ऐसे बचनकहे उनको सुनकर वृहस्पतिजीने इन्द्रको उत्तर दिया ५४ कि हे वृत्रासुरके मारनेवाले बड़े बुद्धिमान् देवराज सुवर्णदान गोदान और भूमिदान इनदानोंसे बड़ा कोई दाननहीं है ५५ जैसा कि ऋषियों ने कहा है उसीको मैंभी उत्तम मानता हूं ५६ हे देवताओं में श्रेष्ठ जो युद्धाभिलाषी युद्धमें मरे हुये शूरबीर स्वर्गको गये वह सब भूमिदान करनेवाले मनुष्यको उल्लंघन नहीं करसक्तेहैं ५७ स्वामी के शुभ चिन्तकतामें प्रवृत्त शरीरसे प्रीतिको त्याग ने वाले युद्ध में मरनेवाले ब्रह्मलोकमें वर्त्तमानयोग पुरुष भी भूमिदान करनेवाले मनुष्य को उल्लंघन नहीं करसक्ते हैं ५८ जो पुरुष इस लोक में भूमिदान करताहै वह अपने पांच पुरुष पहले और छः पुरुष उत्तरोत्तर होनेवाले इनग्यारह पुरुषोंको तारताहै ५९ हेइन्द्र जोमनुष्य रत्नोंसमेत पृथ्वीको दानकरताहै वह सबपापोंसे छूटकर स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठाको पाताहै ६० हे राजा सब प्रयोजन के गुणों समेत वृद्धिमान पृथ्वीकादान करने वाला राजा राजाधिराज होताहै इस कारण से यह दान उत्तम तरहै ६१ हे इन्द्र जब मनुष्य सब प्रयोजनकी वस्तुओं से युक्त काश्यपी नाम पृथ्वीको दान करताहै तब सब जीवधारी मानतेहैं कि यह हमको दान करताहै ६२ सब अभीष्ट वस्तुओंकी देनेवाली सब अभीष्ट वस्तुओंसे युक्त पृथ्वीको जो दान करतेहैं हे इन्द्र वह मनुष्य स्वर्गको जातेहैं ६३ हेदेवेन्द्र इस लोकमें भूमि दान करनेवाले मनुष्य को वह नदियां तृप्तकरती हैं जोकि जल घृत दूध दही और सहत की बहनेवाली हैं ६४ भूमि दानकेद्वारा राजा सब पापोंसे छूटता है इस भूमि दानसे अधिक

कोई दान नहींहै ६५ जो राजाशस्त्र बलसे विजयकरीहुई चारों स-
मुद्रपर्य्यन्त पृथ्वीको दान करताहै वह इस लोकमें तबतक रहताहै
जब तक कि यह पृथ्वी नियत रहतीहै ६६ हे इन्द्र जो राजा इस
पवित्र और धन रसकी धारण करने वाली पृथ्वीको दान करताहै
उसके भूमिदानके गुणोंसे प्राप्तहुये लोक नाशको नहीं पातेहैं ६७
हेइन्द्र इसलोकमें बड़े ऐश्वर्य्य और सुखके चाहनेवाले राजाको
सदैव बुद्धिकेअनुसार पात्रकेलिये भूमिकादान करना योग्य है ६८
मनुष्य पापको भी करके ब्राह्मण को भूमिदान देकर उस पापको
ऐसे छोड़ देताहै जैसे कि पुरानी कांचली को सर्प त्यागकर देता
है ६९ हे इन्द्र जो मनुष्य भूमिदान करता है ७० वह समुद्र नदी
पर्व्वत बन और बाग बगीचों आदिकोभी दान करताहै भूमि दान
करनेवाला तड़ाग कूपके समीपी पौशाला पशुओं को प्याऊ नदी
सरोवर अशेष रस और घृतादि को दान करता है ७१ भूमि दान
करनेवाला पराक्रमी पुरुष बीज फूल फलोंसेयुक्त वृक्ष बन पहाड़ी
पृथ्वी और पहाड़ोंको भी दान करताहै ७२ पूर्ण दक्षिणा वाले
अग्निष्टोम आदि यज्ञों से पूजन करके वैसे फलको नहीं पाता है
जैसाकि भूमिदान करने से फल पाताहै ७३ भूमि दान करनेवाला
दश आगे पीछे के पुरुषों को तारताहै और दान करने वाले को
निषेध करने वाला आगे पीछे के दश पुरुषों को नरक में डालता
है और जो पूर्व्व दानकी हुई पृथ्वीको जप्त करताहै वह घोरनरक
में पड़ताहै ७४ और जो प्रतिज्ञा करके फिर नहीं देताहै और जो
देकर फिर लेलेताहै वह वरुण के पाश से बन्धकर नरक में जा-
कर बड़े दुःखोंको पाताहै ७५ जो मनुष्य अग्नि स्थापन करनेवाले
सदैव यज्ञ करने वाले थोड़ी जीविका रखनेवाले अतिथिप्रिय
उत्तम ब्राह्मणकी सेवा करतेहैं वह यमराजके पास कभी नहींजा-
ते ७६ हे इन्द्र राजाको सदैव ब्राह्मणों के ऋणसे उऋण होना
चाहिये और क्षत्री आदि अन्य वर्णों में जो दुर्बल और पराक्रम
हीनहैं उनका भी पोषण करे ७७ हे देवराज दूसरे की दान की

हुई पृथ्वीको जप्त नहीं करे हे देवताओं में श्रेष्ठ थोड़ी जीविका रखने वाले ब्राह्मणकी पृथ्वीको कभी नलेवे ७८ उनदुखी पीड़ित ब्राह्मणों का क्षेत्र जप्त करने से उनके जो अश्रुपात गिरतेहैं उनसे उस जप्त करने वाले के तीन पुस्त नरक में पड़तेहैं ७६ हे सहस्राक्ष इन्द्र जो मनुष्य देशसे निकालेहुये राजाको फिर राजसिंहासन पर बैठाताहै उसका निवास भी स्वर्गमें होताहै और पृथ्वी पर प्रतिष्ठा पाकर स्वर्गमें भी प्रतिष्ठा को पाताहै ८० जो पुरुष इक्षु दण्डकी खेतीकी भूमि जौ गेहूं आदिकी खेती गौ और अश्वकी सवारी अथवा अपने भुज बलके प्रताप से उत्पन्न करी हुई ८१ और सुवर्णादिकी आकरों से युक्त रत्नोंके आभूषणों समेत पृथ्वी को दान करताहै वह अविनाशी लोकों को प्राप्त करताहै उसका वह भूमिही यज्ञहै ८२ जो मनुष्य भूमिदान करताहै वह सब पापों से औ रजोगुण से पृथक् होकर श्रेष्ठ जनोंका प्यारा होके लोकों में सत्पुरुषोंसे प्रतिष्ठा पाताहै ८३ हे इन्द्र जैसे कि जलमें गिरी हुई तेलकी बूंद फैल जातीहै उसी प्रकार किया हुआ भूमिका दान प्रत्येक खेतियों पर वृद्धिको पाताहै ८४ और युद्धमें शूरबीरतासे शोभा पानेवाले जो राजा लोग युद्धके मुख पर सन्मुख होकर मरतेहैं वह ब्रह्मलोकको जातेहैं ८५ हे देवेन्द्र स्वर्गमें नृत्यगान से पूर्ण दिव्यमालाओं से अलंकृत स्त्रियां भूमिदान करने वाले के पास वर्त्तमान होतीहैं ८६ जो राजा इस लोकमें अच्छीरीति से बुद्धिके अनुसार पृथ्वी को ब्राह्मण के अर्थ दान करताहै वह स्वर्ग में देवता गंधर्वों से सेवित होकर सुख पूर्व्वक बिहार करताहै ८७ हे देवेन्द्र दिव्यमालाओं से भूषित सौ अप्सरा भूमिदान करनेवाले के पास वर्त्तमान रहतीहैं ८८ पुष्प शंख उत्तम आसन छत्र श्रेष्ठ घोड़ेपालकी आदि यह सब भूमिदान करनेवाले मनुष्य के समीप नियत होतेहैं ८६ भूमिके दान करने से पुष्पोंके समूह सुवर्ण वह शासन जिसको सब लोग सदैव करें जय शब्द पूर्व्वक सब प्रकार के धन प्राप्त होतेहैं ६० हे इन्द्र भूमिदान का फल स्वर्ग पवित्र

वस्तु सुवर्ण पुष्प औषधी कुश कांचन शाड्वल आदि होतेहैं ६१ भूमिदान करने वाला अमृत की पृथ्वीको पाताहै भूमिके समान कोई दान नहीं है माताके समान कोई गुरू नहीं है सत्यता के समान कोई धर्म नहींहै दानके समान धनागार अर्थात् खजाना नहींहै ६२ तव तो इंद्रने वृहस्पति जीसे ऐसे २ बचनों को सुनकर धन रत्नोंसे पूर्ण इस पृथ्वीको वृहस्पतिजीके अर्थ दान किया ६३ जो मनुष्य भूमिदान के इस माहात्म्य को श्राद्ध में सुनावे उसका वह श्राद्ध राक्षस और असुरों का भाग नहीं होताहै ६४ और पितरोंको दिया हुआ निस्सन्देह अक्षय होताहै इसी हेतु से ज्ञानी मनुष्य श्राद्धमें भोजन करने वाले ब्राह्मणों को यह माहात्म्य सुनावें ६५ हे निष्पाप भरर्षभ सब दानों में श्रेष्ठ यहदान मैंने तुझ से कहा अब क्या सुनना चाहताहै ६६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिइन्द्रवृहस्पतिसंवादेद्विषष्टितमोऽध्यायः ६२ ॥

तिरसठवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे भरत वंशियों में बड़े साधु इसलोकमें दानोत्सुक राजा बड़े गुणवान् ब्राह्मणके अर्थ कौन २ से दानोंको करे १ हे महाबाहो वह ब्राह्मण कौन दानसे शीघ्रप्रसन्न होतेहैं और प्रसन्न होकर क्या उपदेश करते हैं इस पुण्यसे उत्पन्न होने वाले बड़े उत्तम फलको आप मुझसे वर्णन कीजिये २ और हे राजा पितामह दिया हुआ दान इस लोक और परलोक में किस फल का देनेवाला है इसको भी ब्यौरे समेत सुनने की मेरी इच्छा है आप कृपा करके कहिये ३ भीष्मजी बोले कि पूर्व समय में देवता के समान दर्शनवाले नारदजी से भी यही प्रयोजन मैंने पूछाथा तब उन्हों ने जो बचन कहा उसको मैं तुमको सुनाता हूं ४ नारदजीबोले कि देवता और ऋषियों के समूह तो अन्नकीही प्रशंसा करतेहैं और लोकयात्रा अर्थात् संसारी प्रबन्ध और संज्ञा अर्थात् चैतन्यता अन्नमें नियतहैं ५ अन्नके समान दान न हुआहै

और न होगा इसी हेतुसे मनुष्य अधिकतासे अन्नकाही दानकरना चाहतेहैं ६ इस लोकमें अन्नही बलपुरुषार्थका देनेवाला है और प्राणभी अन्नमें नियतहैं हे प्रभु अन्नसेही सब विश्व धारणकिया जाताहै ७ इसलोकमें वालबच्चे वाले कुटुम्बी संन्यासी और तपस्वी अन्नसेही जीवतेहैं अन्नसेही प्राणभी उत्पन्न होते हैं यह प्रत्यक्ष है इस में किसी प्रकारका सन्देह नहीं है ८ अपना ऐश्वर्य चाहनेवालेको पीड़ामान वालबच्चेवालों और महात्मा भिक्षुकब्राह्मण के निमित्त अन्नदेना उचितहै ९ जो पुरुष याचना करनेवाले पंडित ब्राह्मणको अन्नकादान करताहै वह परलोक संबंधी उत्तम खजानेको संचय करताहै १० ऐश्वर्य्य चाहनेवाला कुटुम्बी मनुष्य अपने घरमें आनेवाले सन्मुख वर्त्तमान पूजनके योग्य वृद्धको और मार्गमें वर्त्तमान थकेहुये ब्राह्मणको पूजन करे ११ हे राजा उठे हुये क्रोधको त्याग करके प्रसन्न चित्त ईर्षा से रहित होकर अन्न दान करनेवाला मनुष्य उस सुखको पाताहै जो कि इस लोक परलोक दोनों लोकोंमें है १२ सन्मुख आनेवाले याचक को निरादर न करे और कठोर वचन तो कभी न कहै चांडाल और कुत्ते का भी दियाहुआ नाश नहीं होताहै १३ जो मनुष्य उस पुरुष को जो कि मार्गमें वर्त्तमान महापीड़ित जिसको पूर्व कभी न देखाहो दुर्गंधादि से रहित शुद्ध अन्नको देताहै वह बड़े पुण्यका भागी होताहै १४ हे राजा जो मनुष्य भोजनादिको वस्तुके द्वारा पितृ देवता ऋषिब्राह्मण और अतिथियोंको तृप्तकरताहै उसकोपुण्यका बड़ाभारी फल होताहै १५ जो महापातक करनेवाला भी पुरुष याचक को मुख्य कर ब्राह्मण के अर्थ अन्नको देताहै वह पापकर्मसे मोह को नहीं पाताहै १६ ब्राह्मणोंको अन्नदान देना बड़ाअविनाशीहै शूद्रको देना बड़ा फलदायी है शूद्रके देनेसे ब्राह्मणको अन्न देना अधिक फलदायकहै १७ किसी अभ्यागत से गोत्र चरण वेदपाठ और देश को न पूछे भिक्षा मांगनेवाले ब्राह्मणको और याचना करनेवाले संन्यासीके अर्थ इस लोकमें मनुष्योंको अन्नदेना उचित है १८ अन्न

दान करनेवाले राजा के सब मनोरथों को देनेवाले अन्न के वृक्ष निस्संदेह इस लोक और परलोक में उत्पन्न होते हैं १६ पितर लोग आशाकियाकरते हैं कि हमारापुत्र पौत्रादि कोईभी अन्नदान करेगा इसकी ऐसीबाट देखा करतेहैं जैसे कि किसानलोग उत्तम वर्षा करनेवाले बादलकी बाट देखते हैं २० ब्राह्मणही बड़ाप्रत्यक्ष तेजहै जबकि वह आप मांगताहै फलके चाहनेवाले उसकी इच्छा के फलको देकर पुण्यको प्राप्त करें २१ ब्राह्मणसबजीवोंका अतिथिहोकर सब से उत्तम भोजन करनेवालाहै भिक्षा करनेवाले ब्राह्मण जिसकेघरमें सदैव आतेहैं २२ और सत्कारयुक्त होकर उस के घरसे जाते हैं वह घर अत्यन्त वृद्धिको पाताहै हे भरतवंशी वह दाता शरीर त्यागनेके पीछे बड़े प्रारब्धी घरानेमें जन्मको पाताहै इस लोकमें अन्नदान करनेवाला पुरुष अत्यन्त उत्तम स्थान को पाताहै और जो ब्राह्मणको सदैव मिष्ठ भोजनोंको देता है वह बड़े सत्कार पूर्वक स्वर्गमें बास करताहै २४ अन्न मनुष्योंके प्राण हैं सब अन्न मयहै अन्नदान करनेवाला पशुओंकास्वामी सन्तान युक्त धनी और संसारी सुखोंसे पूर्ण रहताहै २५ और बड़ाबली और उदारचित्त होताहै हेराजा लोकमें अन्नदान करनेवालापुरुष प्राणोंका देनेवालाहै और वह सर्व दान देनेवाला भी कहा जाता है २६ अतिथि ब्राह्मणके निमित्त बुद्धिके अनुसार अन्न को देकर अन्नदान करनेवाला महासुखोंकोपाताहै और देवताओंसेभी पूजित होताहै २७ हे युधिष्ठिर ब्राह्मण बड़ा महद्भूत और क्षेत्ररूपहै उस ब्राह्मण में जो बीज उपजताहै वह बड़े पवित्रफलका देनेवाला है २८ अन्नका दान नेत्रों के सन्मुखही दाता और भोक्ताकी प्रीतिका उत्पन्न करनेवाला होताहै और अन्य सब प्रकारके दान दृष्टि से गुप्त फलके देनेवाले हैं २९ हे भरतवंशी अन्नसेही सन्तान को उत्पन्न करते हैं और अन्नसेही स्त्रियोंसे भोगादिक होतेहैं अन्न सेही धर्मअर्थ होतेहैं अन्नहीसे रोगोंका नाशहोताहै ३० पूर्वकल्प में ब्रह्माजीने अन्नको अमृतरूप कहाहै पृथ्वी स्वर्ग आकाश अन्न

रूप है और सब संसार भी अन्नमें नियतहै ३१ अन्नके नाशहो जानेपर शरीरमें पंचतत्त्व और पंचप्राण पृथक्२ होजातेहैं इसलोकमें अन्न न होनेसे पराक्रमीका पराक्रम भी नष्टहोजाताहै३२ हेनरोत्तम इसलोकमें अन्नके बिना व्रत विवाहादिकऔरयज्ञभी बंद होजातेहैं औरवेदभीगुप्त होजातेहैं ३३तीनोंलोकोंमें जो कुछ स्थावर जंगम हैं वह सबअन्नहीसे नियतहैं इसहेतुसे बुद्धिमानोंको धर्मकेअर्थअन्न कादान करना अवश्य उचितहै ३४ हे राजा अन्नदान करनेवाले मनुष्य का बलतेज यश और शुभ कीर्त्ति सदैव तीनोंलोकोंमें वृद्धि को पाते हैं ३५ अब अन्नके पूर्व प्रसंगको कहतेहैं हे भरतबंशीप्राणोंका रक्षक वायु बादलोंमें जाताहै बादल वायुसे प्रेरित होते हैं और बादलोंमें वर्त्तमान जलको इंद्र देवता बरसातेहैं ३६ सूर्य्य अपनी किरणोंसे पृथ्वीके रसोंको आकर्षण करतेहैं और वायु सूर्य्य से उन रसोंको धारण करता है और इंद्रदेवता उसको बरसाता है ३७ हे भरतवंशी जब वह जलबादलोंसे पृथ्वीपर गिरताहै तब धनोंसे परिपूर्ण पृथ्वी देवी आर्द्र होतीहै३८उसीसे खेतियां उपजती हैं जिससे सब संसार अपना जीवन करताहै फिर उससे मांस मज्जा अस्थि पैदाहोके उन्हींसे वीर्य उत्पन्न होता है ३९ हे राजा उस वीर्य्यसे प्राणी उत्पन्नहोते हैं उसी वीर्य को सूर्य और चन्द्रमा उत्पन्न करते हैं और आप भी रजरूप होजाते हैं ४० । ४१ हे भरतर्षभ जो मनुष्य घरपर आने वाले याचक के लिये अन्न को देताहै वह जीवमात्रके तेजरूप और प्राणोंको देताहै ४२ भीष्मजी बोले हे राजा इसरीति से नारदजीके बचनों को सुनकर मैंने भी सदैव अन्न दान किया इसी हेतुसे दूसरे के गुणों में दोष न लगाने वाले और वस्तु देकर पश्चात्ताप न करने वाले तुम भी अन्नको दान करो ४३ हे प्रभु राजा युधिष्ठिर तुम बुद्धिके अनुसार वेद पाठी पंडित ब्राह्मण के निमित्त अन्नका दान करके स्वर्गलोक को पाओगे ४४ हे राजा अब तुम अन्नदाताओं के जो लोकहैं उनको सुनो कि उन अन्नदेने वाले महात्माओं के रम्य स्थान स्वर्ग

लोकमें प्रकाशमान हैं ४५ जिनका रूप नक्षत्रों पर नियतहै और वह नानाप्रकार के स्तंभोंसे युक्त चन्द्रमंडल के समान उज्ज्वल क्षुद्रघंटिकाओंके जालोंसे शोभित ४६ तरुण सूर्य्यके समान प्रकाशमानग्रह औरनक्षत्रहैं उनमें सैकड़ों तो सूक्ष्मरूप पृथ्वीपरवर्त्तमान जलके भीतर चेष्टा करनेवाले ४७ बैडूर्य्य मणि और सूर्य्यके सदृश सुवर्ण और चांदीके देदीप्यमानहैं और उन स्थानोंमें नियत वृक्ष भी सब कामनाओंके देनेवालेहैं ४८ बावड़ी वीथी सभाकूप दीर्घका और जुतीहुई हजारों सवारियां भक्ष्य भोज्य की वस्तुओंके पर्व्वत वस्त्र भूषणोंसे भरे वर्त्तमानहैं और दूधकी वह नेवाली नदियां और अन्नके पहाड़भी वहां वर्त्तमानहैं ४९।५० श्वेतवादलके समान महल जिनमें सुवर्णकेसमान उज्ज्वल पलंग पड़ेहुयेहैं उन स्थानोंको अन्नके देनेवाले प्राप्त करतेहैं इस हेतुसे हे युधिष्ठिर तुम भी अन्न दान करनेवाले होजाओ ५१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेदानधर्मार्थकथनेत्रिषष्टितमोऽध्यायः ६३ ॥

चौंसठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि मैंने अन्नदानकी बुद्धिवाला आपका बचन सुना अबआप नक्षत्र योगके दानकल्पको मुझे समझाइये १ भीष्म जीबोलेकि इस स्थानपर एक प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें श्रीकृष्णजीकी माता देवकी और नारद महर्षिका प्रश्नोत्तर रूप संवादहै २ देवकीजीने द्वारकामें आनेवाले देवता और धर्मके समान दर्शनवाले नारदजीसे यही प्रश्नरूप बचन कहा ३ इसके पीछे देवर्षि नारदजीने उसप्रश्न करनेवाली देवकी के सन्मुखजो२ वर्णन किया उसको तुम मुझसे सुनो४नारदजी बोले हे महाभाग कृत्तिका नक्षत्रमें घृत संयुक्त खीरके भोजनों से साधू ब्राह्मणों को अच्छेप्रकार तृप्त करनेसे मनुष्य उत्तम लोकोंकोपाताहै ५ रोहिणी नक्षत्रमें पकायेहुये मृगोंके मांस और घृतसंयुक्त अन्नसे ब्राह्मणोंको जो तृप्त करताहै वह उत्तमोत्तमलोकोंको पाताहै अनृण होनेकेलिये

दूध भोजनकी वस्तु और पीनेकी वस्तु ब्राह्मणको देना योग्यहै ६ जो मनुष्य मृगशिरा नक्षत्रमें दूधदेनेवाली सवत्सागौ को दानकरताहै वह इसलोकसे सर्वोत्तम स्वर्गलोकको जाताहै ७ निर्जल व्रत करनेवाला मनुष्य आर्द्रानक्षत्रमें तिल संयुक्त खिचड़ीका दानकरनेसे दुर्गम स्थान और खड्गकी धारके समान पर्वतोंसे पार होजाताहै ८ हे शोभापानेवाले युधिष्ठिर मनुष्य पुनर्बसु नक्षत्रमें पूप और अन्य भोजनकी वस्तुओंके दान करनेसे बड़ा तेजस्वी और रूपवान् होकर बहुत अन्नरखनेवाले कुलमें उत्पन्न होताहै ९ पुष्य नक्षत्रमें बनेहुये वा बिनाबने सुवर्णको दान करके अप्रकाशित लोकोंमें चन्द्रमाके समान प्रकाशमान होताहै १० जो मनुष्य श्लेषा नक्षत्रमें चांदी और बैलकोदान करता है वह सब भयोंसे रहितजन्म को पाताहै ११ जो मनुष्य मघा नक्षत्रमें तिलसे पूर्ण मृत्तिका के पात्रको दान करताहै वह इसलोक में पुत्र और पशुओंसे संयुक्त होकर परलोकमें आनन्दकरताहै १२ निर्जल व्रत करनेवाला मनुष्य पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें फाणि संयुक्त अर्थात् गोरससे संयुक्त भक्षणकी वस्तुओंको ब्राह्मणोंके अर्थ दानकरता है वह सबका अंगीकृत होताहै १३ उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें घृत दूध समेत षष्टिकोदन नाम वस्तुको वृद्धिके अनुसार देनेवाला पुरुष स्वर्गलोक में प्रतिष्ठाकोपाताहै १४ उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में मनुष्य जो जो दान देतेहैं वह निश्चय करके बहुतबड़े और अनन्त फलवाले होतेहैं १५ निर्जल व्रत करनेवाला मनुष्य हस्तनक्षत्रमें चारहाथियों समेत रथ को दानकरनेसे पवित्र अभीष्ट वस्तुओंसे युक्त उत्तम लोकोंको पाता है १६ हे भरतवंशी चित्रानक्षत्रमें वृषभ और सुगंधियोंको जो दान करतेहैं वह अप्सराओंके लोकमें विचरते हैं और नन्दनवनमें भी क्रीड़ाकरतेहैं १७ स्वातीनक्षत्र में जो अपनेअत्यन्त प्रियधनकोदानकरता है वह पुरुष इसलोकमें बड़ी शुभकीर्त्ति को और परलोकमें शुभलोकोंको पाताहै १८ विशाखा नक्षत्रमें जो पुरुष दूधदेनेवाली गौ और प्रासङ्ग शकटधान्य और वस्त्रोंसे अलंकृत बैलको दानकरता

है १६ वह देवता और पितरोंको तृप्त करताहै और परलोक में अनन्त सुखको भोगता हुआ कठिनताको नहीं पाताहै सिखानेके समयजो बछड़ोंके कंधोंपर काष्ठहोताहैउसको प्रासंगकहतेहैं २० वहपूर्वोक्त वर्णनके अनुसार, वेदपाठी ब्राह्मणको दानकरनेसेअभीष्ट जीविका को पाताहै और नरकआदिके दुःखोंकोभी निश्चय करके नहीं पाताहै २१ अच्छे प्रकारसे व्रत करनेवाला मनुष्य अनुराधा नक्षत्र में वस्त्र और उत्तम भोजनकी वस्तुओंको दानकरके सौयुग तक स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठा को पाताहै २२ जो मनुष्य ज्येष्ठा नक्षत्र में मूल समेत कालशाकको और प्रियधनको वेदपाठी ब्राह्मणों के अर्थ करताहै वह अभीष्ट गतिको पाताहै २३ जो सावधान मनुष्य मूल नक्षत्रमें मूल फलोंको ब्राह्मणों के अर्थ दान करताहै वह पितरोंको तृप्त करताहै और अभीष्ट गतिको भी पाताहै २४ जो व्रत करनेवाला मनुष्य पूर्वाषाढ़ नक्षत्रमें कुलीन शान्तवृत्ती आदि गुणोंसे युक्त वेदमें पूर्ण ब्राह्मण को दुग्धपात्र अर्थात् दोहनी देता है २५ वह शरीर त्यागने के पीछे बहुत से गोधन रखनेवाले कुलमें जन्म लेताहै सतुआ जलका भरापात्र घृत और मिश्री को उत्तराषाढ़ नक्षत्रमें जो पुरुषदान करताहै वहसब अभीष्टोंको प्राप्त करताहै जो पुरुष धर्ममें प्रवृत्त होकर अभिजित नक्षत्र में मधुघृत संयुक्त दूध अच्छे ज्ञानी ब्राह्मणोंको दान करतेहैं वे स्वर्गलोक में प्रतिष्ठाको पातेहैं २६।२७जो पुरुष श्रवण नक्षत्रमें दुशाले और कंबल आदि अथवा रुईसे भरेहुये वस्त्रोंको दान करतेहैं वहश्वेत रंगके बिमानोंकी सवारी में चढ़कर बहुत बड़ेद्वारवाले स्वर्गलोकों को जातेहैं २८ जो सावधान मनुष्य धनिष्ठा नक्षत्रमें बैलों समेत गाड़ी बहुत से वस्त्र और धनों को दान करताहै वह दूसरे जन्ममें शीघ्रही राज्यको पाताहै २९ जो मनुष्य शतभिषा नक्षत्रके योगमें अगर चन्दन आदि सुगन्ध वस्तुओंको देताहै वह परलोकमेंअप्स राओंके समूहोंको और सनातन गन्धर्वोंको प्राप्त होताहै ३० जो पुरुष पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रके योगमें राजमांसनाम अन्नको दानकर

ताहै वह परलोक में सब भोजनकी वस्तु और मेवा आदि पदार्थों के सेवन से सुखी रहताहै ३१ जो पुरुष उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में और भ्रनाम पशुके मांसका दान करताहै वह पितरों को तृप्तकर-ताहै और परलोक में बड़े सुखोंको भोगताहै ३२ जो मनुष्य रेवती नक्षत्रमें कांसेकी दोहिनी पात्र समेत गौको दान करताहै वह गौ शरीर त्याग करनेके पीछे अभीष्ट मनोरथोंको साथ लेकर दाता के समीप नियत होतीहै ३३ जोराजा अश्विनीनक्षत्रमें घोड़ोंसमेत रथको दान करताहै वह तेजस्वी होकर उस कुल में जन्म लेताहै जोकि हाथी घोड़े और रथोंसे परिपूर्ण होय ३४ जो पुरुषभरणी नक्षत्र में ज्ञानी ब्राह्मणको दक्षिणा समेत तिलकी गौका दानकरता है वहपरलोकमें बहुतसी गौओंको और शुभकीर्त्ति को पाताहै ३५ भीष्मजी बोलेकि नारदजीने देवकीके सन्मुख यह नक्षत्रोंके योगमें दान करना वर्णन किया और देवकीने उसी दानको पुत्रबधुओं से वर्णनकिया ३६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेनक्षत्रयोगदानवर्णनेचतुःषष्टितमोऽध्यायः ६४ ॥

पैंसठवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि जो पुरुष सुवर्णका दान करते हैं वह सब प्रकार के चित्त के अभीष्टों को देतेहैं यह ब्रह्मा के पुत्र अत्रिऋषि ने कहाहै १ वह सुवर्ण का दान महापवित्र आयुका करनेवाला और पितरों के स्वर्गका अबिनाशी करनेवाला है यह महा-राज हरिश्चन्द्रका कथन है २ दानों में जलदान श्रेष्ठहै यह मनुजी ने कहाहै इसीहेतु से कूप वापी और तड़ागों को बनवावे ३ जलसे पूर्ण सदैव जारी रहने वाला कूप मनुष्य के आधे पापको दूर करताहै ४ जिसके खुदाये हुये तड़ाग में गौ ब्राह्मण और साधू लोग सदैव जलको पीते हैं वह सब बंशको उद्धार करता है ५

ग्रीष्म ऋतुमें अर्थात् ज्येष्ठ आषाढ़ में जिसका जल अप्रतिबन्ध नियत होताहै वह कभी आपत्ति के दुर्गम कठिन स्थानों को नहीं पाताहै ६ घृतदान करने से भगवान् बृहस्पति पूषा भग अश्विनीकुमार और अग्नि इन सब देवताओं की प्रसन्नता होतीहै ७ यह घृत उत्तम औषधीहै यह यज्ञोंमें उत्तमहै यह रसों में श्रेष्ठहै यह फलों में उत्तम है ८ पवित्र ज्ञानवान् मनुष्य शुभकीर्त्ति के सदैव चाहने वाले शरीर से नीरोग होकर ब्राह्मणों के अर्थ घृत दान करें ९ जो मनुष्य आश्विन अर्थात् क्वार महीने में वेदपाठी पंडित ब्राह्मणोंको घृतका दान देताहै उससे प्रसन्न होने वाले अश्विनीकुमार देवता उसको स्वरूपता देतेहैं १० जो मनुष्य घृत संयुक्त खीरको ब्राह्मणों के अर्थ देताहै उसके घर को राक्षस लोग कभी विजय नहीं करते हैं ११ जो मनुष्य करकान्य अर्थात् मृत्तिका की सुराही जल पूरित दान करता है वह तृषासे कभी नहीं मरता है और घरके सब पदार्थों से भरा पूरा रहकर दुःखको नहीं पाता है १२ जो पुरुष बड़ी सावधानी और श्रद्धा से युक्त होकर सदैव उत्तम ब्राह्मणों को जलका दान करताहै वह उनके स्नानादिके छठे भागको पाताहै १३ हेराजेन्द्र जो मनुष्य यज्ञके साधन अथवा तापनेके अर्थ लकड़ियां उन ब्राह्मणोंको जोकि शान्तचित्त होकर गुरु पूजन आदि गुणों से युक्तहैं सदैव दान करताहै १४ उसके अभीष्ट सदैव प्राप्त होतेहैं और नाना प्रकारके उसके कर्म पूर्णताको पाते हैं और वह शत्रुओंसे पृथक् शरीर से प्रकाशमान होताहै १५ और भगवान् अग्निदेवता भी उसपर सदैव प्रसन्न होतेहैं और गौ आदि पशु उसको त्याग नहीं करते हैं और युद्धमें भी विजय को पाताहै १६ जो मनुष्य छत्र दान करताहै वह लक्ष्मी और विषयोंको पाताहै नेत्र रोगों से रहित होकर भोजन आदिके सुखोंको भोगताहै १७ जो मनुष्य ग्रीष्मऋतुमें वा वर्षा में छत्रदान करताहै उसके चित्तमें कभी शोक उत्पन्न नहीं होताहै १८ हे राजा महाभाग शांडिल्य ऋषि ने ऐसा कहाहै कि सब दानोंमें शकटका दान

बड़ाहै उसको जो मनुष्य करताहै वह शीघ्रही कठिन आपत्तियोंसे छूट जाताहै १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेपंचषष्टितमोऽध्यायः ६५ ॥

छियासठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले जो मनुष्य उस ब्राह्मणके अर्थ जिसके पैर सूर्य्य के तापसे संतप्त धूलीसे तपते होयँ उपानह अर्थात् जूते का जोड़ा देताहै हे पितामह उसके फलको आप मुझसे कहिये १ भीष्मजी बोले कि जो सावधान मनुष्य ब्राह्मण को जूते का जोड़ा देता है वह सब प्रकार के कांटोंसे बचता है और आपत्तियों से भी बचा रहता है२ हे युधिष्ठर वह मनुष्य शत्रुओं के ऊपर नियत होता है और खच्चरों से युक्त चांदी सुवर्ण से अलंकृत रथभी उसके समीप नियत होताहै और बैलों समेत शकट दान का जो फल है वह भी उसको मिलता है ३ । ४ युधिष्ठिर ने पूछा कि हे कौरव तिलदान भूमिदान गोदान और अन्नदान में जो फल कहा है उसको भी आप वर्णन कीजिये ५ भीष्मजीबोले हे कौरवों में बड़े साधु तिल दानकाजोफलहै उसको मैंकहताहूं उसको सुनकर न्यायकेअनुसार तू कर ६ ब्रह्माजीने पितरोंका उत्तम भोजन जो तिलहैं उनको उत्पन्न कियाहै इसी हेतुसे तिलदानसे पितृपक्ष आनन्दकरता है ७ जो मनुष्य माघ महीने में ब्राह्मणोंको तिलोंका दान करताहै वह सब जीवोंसे भरापूरा होकर नरक को नहीं देखताहै ८ जो पुरुष तिलोंसे पितरोंको पूजताहै वह सब यज्ञोंसे पूजनकरताहै श्राद्धमें बिना संकल्प किये तिलदान न देनाचाहिये ९ यह तिल कश्यप महर्षी के अंगोंसे उत्पन्न हुयेहैं हेसमर्थ इसी हेतुसे दानोंमें तिलोंने दिव्य भावकोपायाहै १० वह तिल शरीरमें आनन्द पूर्व्वक स्वरूपताको देतेहैं और पापोंके नाश करनेवालेहैं इसीहेतुसे सबदानों से तिलोंका दान उत्तमहै ११ शास्त्रको स्मरण रखनेवाले, बुद्धिके स्वामी आपस्तंभ१२शंख१,लिखित और गौतममहर्षीभी तिलदान

करनेकेहीद्वारा स्वर्ग को गये १२ सब वेदपाठी ब्राह्मण भूमिदानमें व्रती शास्त्रके नियमोंके अनुसार अपनी पत्नियोंमें भोगकरनेवालेहैं क्यों कि वह तिल घृतके होममेंरत ब्राह्मण प्रवृत्ति मार्गोंमें अच्छी रीतिसे नियतहैं १३ सब दानों में तिलका दान बहुत बड़ाहै इस लोकमें सब दानोंकेमध्यमें तिलका दान अक्षयहै १४ पूर्व्वसमय में शत्रुओंके तपानेवाले कुशिकऋषिने हव्य पदार्थके न मिलनेसे तिलोंसेही तीनों अग्नियोंमें होम करके उत्तम गतिको पायाथा १५ हे कौरवोत्तम इसप्रकारसे यह उत्तम तिलदान वर्णन किया इस लोकमें जिस बुद्धिकी रीतिसे तिलोंके विधानका उपदेश कियाजाताहै वह बुद्धि मैंने तेरे आगे बर्णनकी १६ हे महाराज इसके पीछे यज्ञकरनेके अभिलाषी देवताओंके इसमिलापको स्वयंभू ब्रह्माजीके भी साथ जानो १७ हे राजा पृथ्वीके किसी भागमें यज्ञ करने के अभिलाषी देवताओंने ब्रह्माजीसे मिलकर शुभ देशको इसविचार से मांगा कि हम यज्ञ करेंगे १८ देवताओंने कहा हेभगवन् आप सब पृथ्वी और स्वर्गोंके भी स्वामीहैं हम सब देवता आपकी आज्ञासे यज्ञ करेंगे क्योंकि जिसको पृथ्वीकी आज्ञा नहींदीजातीहै वह यज्ञके फलको नहीं भोगताहै आप सब स्थावर जंगम जगत्के स्वामीहैं इसहेतुसे आप अच्छे प्रकारसे आज्ञादेनेके योग्यहैंब्रह्माजीबोले हेश्रेष्ठ देवताओ मैं तुम्हारे निमित्त पृथ्वी का एकभाग देताहूं हे काश्यपजीके पुत्रो तुम उसी पृथ्वीके भागवाले देशमें यज्ञ करो १९ देवताबोले हे भगवन् हमारा मनोरथ सिद्धहुआ हम पूर्ण दक्षिणावाले यज्ञोंसे वहांपजन करेंगे जहां कि मुनिलोग हिमालयके समीप जिसदेशको चारों ओरसे उपासनाकरतेहैं २० इसके अनन्तर अगस्त्य,कण्व,भृगु,अत्रि, वृषाकपि,असित,देवल यहसब ऋषि देवताओंके यज्ञमें आये २१ इसके पीछे उन श्रेष्ठ देवताओंने उस अविनाशी परमात्मा यज्ञपुरुष का पूजन किया और नियत समयके पीछे यज्ञको समाप्त किया २२ फिर यज्ञ करनेवाले उन देवताओंने पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ हिमालय के समीप कुरुक्षेत्र व गंगाद्वार

में भूमिदानको उस यज्ञका छठाभाग बिचार किया२३जोपुरुषपृथ्वी का एक प्रादेशमात्र भागभी दान करताहै वह आपत्तियों से पीड़ा मान नहीं होताहै और कठिनताओंको नहीं पाताहै २४ शीतउष्ण और वायुके सहनेवाले अच्छेप्रकारसे बनेहुये अलंकृत स्थान और पृथ्वीको दानकरनेवाले पुरुष स्वर्गलोक में नियतहोकर पुण्य क्षीण होजाने परभी नहीं गिरते हैं २५ हेराजा वहज्ञानी मनुष्यभी स्थान पृथ्वी आदिके दानसे प्रसन्नता पूर्व्वक इन्द्रकेसाथ निवास करताहै और स्वर्गमें प्रतिष्ठाको भी पाताहै २६ वेद पढ़ानेवालेके कुलमें उत्पन्न शान्तचित्त वेदपाठी ब्राह्मण जिसके घरमें आनन्दके साथ तृप्तहोकर निवास करताहै वह पुरुष ब्रह्मलोकको भोगताहै २७हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ साधु इसरीति से शीतवर्षा आदिका सहने वाला दृढ़ स्थान जोकि गौओंके निमित्त बिचार किया जाय ऐसे स्थान का बनवाने वाला अपने सात कुलोंतकको तारता है २८ जो मनुष्य क्षेत्रकी भूमिकोदान करताहै वह इसलोकमें शुभलक्ष्मी पाताहै और जो रत्न भूमिको दान करताहै वह इस लोकमें अपने कुल और वंशभरेको वृद्धि करता है २९ जो पृथ्वी ऊषर या जली हुई अथवा श्मशान से संयुक्त वा पापी लोगोंसे सेवितहो उस भूमि का दान किसी दशामेंभी न करे ३० जो मनुष्य किसी को पृथ्वी के भागमें पितरों का श्राद्ध करे अथवा उसी पृथ्वीको पितरोंके निमित्त दानकरे वह भूमिदान और श्राद्ध कर्म दोनों निष्फल होते हैं ३१ इसी कारण बुद्धिमान् मनुष्य थोड़ीसी पृथ्वीको भी मोल लेकर दानकरे उस पृथ्वीमें पितरोंके अर्थ किया हुआ पिंडदान सफल और अविनाशी होताहै ३२ बन पर्व्वत नदी तीर्थ इनका कोई स्वामी नहीं होताहै वहां किसीकाभी अधिकार वा स्वत्व नहींहै ३३ हे राजा यह भूमिदानका फल मैंने वर्णन किया हे निष्पाप इसके पीछे अब गौके दानको वर्णन करताहूं ३४ जिस हेतु से कि गौ सब तपस्वियोंसे भी अधिकहैं इसी निमित्त से उनके साथ नियत होकर देवता महेश्वरजीने तपस्या करीहै ३५ यहगौ

अमृत से भरी हुई ब्रह्मलोकमें निवास करतीहैं जिस परममोक्ष
ाति रूप लोकको बड़े २ सिद्ध और महर्षी लोग मनसे चाहतेहैं
३६ हे भरतवंशी वह गौ दूध घृत दही गोमयचर्म अस्थिकेश और
शृंगोंसे सालोक्य रूपमोक्ष करने वालीहैं ३७ इनको शीतोष्णता
नहीं होती यह सदैव कर्मोंकी करने वाली हैं और वर्षा ऋतुमें
भी इनको खेदनहीं होता ३८ यह गौ पर लोकमें ब्राह्मणोंके साथ
जातीहैं इसहेतुसे उन्नततम स्थानहैं इसी निमित्त ज्ञानी लोग
गौ और ब्राह्मणों को महाउत्तम कहतेहैं ३९ वह गौ राजा रन्ति-
देवके यज्ञमें यज्ञपशु भी कल्पना करी गईहैं हे राजा इसीकारण
ते गौके चर्मसे चर्मरावती नदी जारी हुईहै ४० वह गौयें पशु
भावसे छूटकर दानके निमित्त बिचार को गईहैं जो पुरुष इनगौओं
को उत्तम ब्राह्मणों को दान करताहै ४१ वह आपत्तियों में फँसा
हुआ भी महाकठिन आपत्तियोंसे छूटजाताहै हजार गौ दानकरने
वाला शरीर त्यागनेके पीछे नरक को नहीं जाताहै ४२ हे राजा
वह गौका देने वाला सर्वत्र विजयको ही पाताहै देवराज इंद्रने
यह कहाहै कि गौका दूध अमृतहै ४३ इसी कारण जो पुरुष गौ
को देताहैवह अमृत का दान करताहै वेदज्ञ ब्राह्मणोंने उस गौको
अग्नियों का अविनाशी हव्य वर्णन कियाहै ४४ इसी हेतुसे जो
मनुष्य गौको देताहै वह होमके योग्य हव्यका दान करताहै नि-
श्चय करके यह गौ मूर्त्तिमान् स्वर्गहै जो पुरुष गौओंकेपति बैल
को गुणवान् ब्राह्मण को दान करताहै वह स्वर्गमें प्रतिष्ठा पाताहै
४५ हे भरतर्षभ यह गौ निश्चय करके प्राणियों के प्राण रूपभी
कही जातीहै इसीहेतु से जो गौकोदान करताहै वह प्राणोंका भी
दान करने वालाहै ४६ गौ जीवधारियोंकी रक्षा स्थानहैं वेदज्ञ
लोगोंने ऐसा कहाहै इसी कारण जो मनुष्य गौको दानकरताहै वह
रक्षाके स्थानका भी दान करनेवालाहै ४७ हे भरतवंशियों में
श्रेष्ठ यह गौ दुष्ट हिंसाके लिये कभी न देनी चाहिये जो पुरुष
कृषिकर्मी वा गौके बेचने वाले वा अन्य पशुओंके बेचने वाले अय-

वा परलोक और ईश्वरके न माननेवाले वा गौसे अपनी जीविका करने वाले हैं उनको गौ दान न करना चाहिये ४८ जो मनुष्य इस प्रकार के पापियों को गौका दान करताहै वह अविनाशी नरकको पाताहै यह महर्षियोंका कथनहै ४९ जोगौ दुर्बल बछड़ेसे हीन बंध्या अंगहीन और थकीहुई होउसकोब्राह्मणके अर्थकभी दान नकरे ५० दशहजार गौओंका दान करनेवाला आदमी इन्द्रकेसाथ आनन्दकरताहै और लाखों अविनाशी लोकोंको पाताहै ५१ हेभरतबंशी यह गोदान तिलदान और भूमिदान वर्णनकियाअबअन्नके दानका जोफलहै उसकोसुनों ५२ हेकुन्तीपुत्र अन्नदानको बड़ादान कहतेहैं राजा रन्तिदेव अन्नके दानसेही स्वर्गको गया ५३ हेपृथ्वीकेस्वामी राजा युधिष्ठिर जोमनुष्य स्नानकियेहुये क्षुधासे पीड़ित मनुष्योंको अन्नदान करताहै वह ब्रह्मलोकको जाताहै ५४ हेभरत बंशी प्रभु युधिष्ठिर सुवर्णवस्त्र औरअन्यप्रकारके दानोंसेभी वैसाकल्याणनहीं होताहै ५५ जैसाकि अन्नदान करनेसे मनुष्यको फलहोताहै निश्चय करके अन्नही मुख्य द्रव्यहै अन्नही उत्तम धनअन्नहीसे प्राणतेज बल और पराक्रम होताहै ५६ जोसमान चित्तरहने वाला मनुष्य सदा अन्नको दान करताहै वह कठिनताओं को नहींपाताहै यह पराशर जीकावचनहै ५७ न्यायकेअनुसार देवताओंको पूजनकरके अन्नको उनकीभेटकरे और हेराजा मनुष्य जिसभोजनके खानेवाले होतेहैं उसी भोजनको उनके देवताभी भोजनकरतेहैं ५८ जोपुरुष कार्त्तिक महीनेके शुक्लपक्षमें अन्नदान करताहै वहबड़ी आपत्तियोंसेनिवृत्त होताहै औरमरनेकेपीछेअत्यन्त पुण्यके फल सुखोंको भोगताहै ५९।६० जो सावधान मनुष्य विना भोजन किये अतिथिको अन्नदेताहै हे भरतर्षभ वह अन्नदाता ब्रह्म ज्ञानियोंके लोकोंको पाताहै ६१ अन्नदान करनेवाला मनुष्य कठिन आपत्तिमें पड़ाहुआभीउद्धार होजाताहै इस लोकमें पापसे निवृत्तहोकरपापकर्मोंको दूरकरताहै ६२ यह अन्नदान तिलदान भूमिदान और गोदानका फल मैंने वर्णनकिया ६३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेषटषष्टितमोऽध्यायः ६६ ॥

सरसठवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे भरतवंशी पितामह आपने जो दान पूर्व कहे वह सुने परन्तु इसलोकमें सबसे उत्तम अन्नदानहै १ हे पितामह इस लोकमें यह जलदान किसरीतिसे बड़े फलका देनेवालाहै इस कोमूल समेत पूरा २ सुनना चाहताहूं २ भीष्मजी बोले हे भरतर्षभ सत्यपराक्रमी युधिष्ठिर यह बहुत उत्तम तैंने पूछा इसकोमैं कहताहूं तुम चित्तलगाकर सुनो ३ हे निष्पाप जलदानको आदि लेकर सब दानोंको वर्णन करताहूं और जल वा अन्न दानको देकर मनुष्य जिस २ फलको पाताहै उसको भी वर्णन करूंगा ४ अन्न दानसे बड़ाकोई दान नहींहै यह मेराचित्त कहताहै क्योंकि अन्न सेही सब प्राणी जीवते हैं ५ इसी हेतुसे इस लोकमें और सब लोकोंमें अन्न उत्तम कहाजाता है अन्नसेही प्राणियोंका बल तेज सदैव बढ़ताहै ६ इसी हेतुसे ब्रह्माजीने अन्न दानको श्रेष्ठकहाहै हे बड़े बुद्धिमान कुन्तीके पुत्र तुमने यह सावित्री काभी शुभ वचन सुना ७ वह अन्नदेव यज्ञमें जिससे और जिस रीतिसे प्रकटहुआ इस लोकमें मनुष्य जो अन्नदान देताहै वह प्राणदान देताहै ८ इस लोकमें प्राणदानसे अधिक कोईदान नहींहै हे महाबाहु यह तुमने लोमस ऋषिकाभी वचन सुना ९ हे राजा पूर्व समयमें राजाशिवी ने कपोतके प्राणोंकी रक्षासे जो फल प्राप्तकिया उसी गतिको ब्राह्मणके अर्थ अन्नदान देनेसे पाताहै १० इसी कारण से प्राणदाता मनुष्य उत्तम गतिको पातेहैं यह हमने सुनाहै हे कौरवों में बड़े साधु अन्नभी जलसे उत्पन्न होताहै जलसे उत्पन्न होनेवाले अन्नके विना कुछभी नियत नहीं रहताहै ११ नक्षत्र गणोंकास्वामी चन्द्रमाभी जलहीसे उत्पन्नहै हे महाराज इसी प्रकार अमृत स्वधा और स्वधा नाम अमृत १२ अन्न औषधि वीरुध यहसब जलसे उत्पन्नहैं जिन सेकि जीवधारियों के प्राण प्रकट होतेहैं १३ देवताओंका अन्न अमृतहै नागोंका अन्न स्वधाहै और इसी प्रकार पितरों काभी अन्न

स्वधाहै और पशुओंका अन्न वीरुध वर्णन करतेहैं १४ ज्ञानी पु-
रुषोंने अन्नकोही मनुष्योंका प्राणरूप कहाहै हे नरोत्तम वह सब
प्रकारके अन्नादिक पदार्थ जलसेही उत्पन्न होतेहैं १५ इस हेतुसे
जलदानसे अधिक उत्तम दान नहींहै मनुष्य को उचितहै कि सदैव
जलका दान करता रहै जो मनुष्य ऐश्वर्य्य को चाहै वह जलदान
करे क्योंकि जलका दानकरना इस लोकमें धन और शुभ कीर्त्ति
कादेने वाला होकर आयुका पूर्ण करने वाला वर्णन कियाजाता
है१६हे कुन्तीके पुत्र जलदान करनेवाला मनुष्य शत्रुओंके ऊपर
भी नियत होताहै १७ और सब चित्तके अभीष्टों को पाताहै और
सदैव शुभ कीर्त्ति को पाकर सब पापों से निवृत्त होकर मरनेके-
पीछे अत्यन्त सुखोंको भोगताहै १८ हे बड़ेतेजस्वी नरोत्तम युधि
ष्ठिर जलदान करने वाला मनुष्य स्वर्ग को जाकर अविनाशी लो-
कोंको पाताहै यह मनुजीका कहाहुआहै १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसप्तषष्ठितमोऽध्यायः ६७ ॥

अरसठवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह तिल दीपक अन्न और वस्त्रोंका
दान कैसाहै इसको फिर भी आप मुझसे कहिये १ भीष्मजी बोले
हे युधिष्ठिर इस स्थानपर उस प्राचीन इतिहास को कहताहूं
जिसमें एक ब्राह्मण और यमराजका सम्वादहै २ गंगा यमुना के
मध्यके अन्तर्वेद नाम देश में यामुन पर्व्वत के नीचे एक ब्राह्मणों
का बड़ाग्रामथा ३ हे राजा वह ग्राम क्रीड़ाके योग्य पर्णशील
नामसे प्रसिद्धथा उसमें बहुत से बुद्धिमान ब्राह्मण निवास करते
थे ४ एक दिन यमराज ने किसी ऐसे पुरुष से जो कि काले वस्त्र
रक्त चक्षु खुलेहुये बाल काकजंघा के समान आंख नाक रखने
वालाथा यह वचन कहा ५ कि तुम इस ब्राह्मणोंके ग्राममें जाकर
उस ब्राह्मण को ले आओ जिसका कि अगस्त्य गोत्र और शर्मिण
नाम है ६ वह शान्त चित्ततामें प्रवृत्त महाज्ञानी वेद पढ़ानेवाला

विख्यातहै इसके सिवाय उसके धोखे सेतुम दूसरे गोत्रवाले व
उसके समीप से न लाना,क्योंकि वह दूसरा भी उसी प्रकार व
गुणवान् वेदपाठ संस्कार गुरु पूजनादि गुण विशिष्ट और सन्ता
में भी उस बुद्धिमान के समान है ८ मेरी आज्ञाके अनुसार उसीव
लाओ उसका पूजन करना योग्यहै उस दूतने जाकर उस यम
राजकी आज्ञाके विपरीत किया ९ अर्थात् जिसको कि यमराज
निषेध कियाथा उसीको शरीरसे पृथक् करके लेआया तब पर
क्रमी यमराजने उठकर अभ्युत्थान करके १० उस दूतसे कहा कि
इनको लेजाओ और उस दूसरे महात्माको लाओ धर्मराजके इ
बचनके कहनेपर ११ वेदपाठी अनिच्छायुक्त उस ब्राह्मणने धम
राजसे कहा कि हेधर्मसे च्युत नहोनेवाले जोमेरे जीवनका सम
कुछवाकी होयतबतक यहांही निवास करूं १२ यमराजने कहा
आयुर्दाके समाप्तहुये बिना किसी दशामें भी यहां ठहरनेको सम
र्थ नहींहूं मैं केवल धर्मकरनेवालेके धर्मको जानताहूं १३ हेबड़ेतेजस्व
ब्राह्मण तुमअभी अपने घरको जाओ और हेधर्मसेन डिगनेवाले अ
जो तुमअभीष्ट मांगो वह मैं तुमकोदूं १४ ब्राह्मणने कहा हेबड़ेसा
इस संसारमें जिसकर्मके करनेसे बड़ा पुण्यहोय उसको मेरेआ
वर्णन कीजिये क्योंकि आप सब त्रिलोकीके प्रमाणरूपहो १५यम
राजने कहा हे ब्रह्मर्षि दानकी उत्तम बुद्धिको तुम मूल समेतसु
इसलोकमें तिलदान बड़ा उत्तम पवित्र और अविनाशीहै१६हेश्रे
ब्राह्मण तिलोंकादान अच्छेप्रकारसेसामर्थ्यके अनुसार करनाचा
ये वह तिल सदैव दान करनेसे सब अभीष्ट मनोरथोंको प्राप्तकर
तेहैं१७श्राद्धमें तिलोंकी प्रशंसा करतेहैंकि निश्चयकरके तिलदा
सर्वोत्तम है शास्त्रमें देखेहुये कर्मकेसाथ उन तिलोंको ब्राह्मणों के
दानकरो१८वैशाखशुदी पूर्णमासी केदिन तिलोंकादान ब्राह्मणोंके
देना योग्यहै तिल भोजनकरनेके और मर्द्दनकरनेकेभी योग्यहै १९
जो मनुष्य सर्वात्मा भावसे सदैव घरहीमें अपनी वृद्धि चाहनेवालेहै
उनको उचितहै कि वह निस्सन्देह सदैव जल का दान और पा

क्रिया करें २० तड़ाग झिरनेहुये आदि जलाशयोंको जो इसलोक में खुदवातेहैं यहकर्म इसलोकमें महा कठिन और दुष्प्राप्यहै २१ तुमको सदैव जलदान करना उचितहै यह दान महापवित्र और अनूपहै हे ब्राह्मणों में बड़ेसाधु तुमको जलदान के निमित्त सदैव पौशाला बनवाना योग्यहै भोजनकी बस्तुके भोजन करने पर अ-वश्य जलदेना योग्यहै २२ भीष्मजी बोलेकि इस बचनके कहनेके पीछे वह ब्राह्मण यमदूतों के द्वारा अपने उसीके घरपर पहुंचाया गयावहां आकर उसने यमराजकी सब शिक्षाओंको किया २३ तब वहयमदूत उसको घरपर पहुंचाकर शर्मणा ब्राह्मण को भी लेकर गयाऔर उसको भी यमराजके सन्मुख बर्त्तमान् किया २४ प्रतापवान् धर्मराजने उस धर्मज्ञ ब्राह्मणको अभ्युत्थान देकर और उसके कर्मोंको जानकर नियतस्थानके जानेको बिदाकिया २५ और उसको भी वैसेही सबशिक्षा करी शरीर त्यागनेके पीछेफिर जन्म लेकर उसनेभी वही सबबातें करी जो २ यमराजने कहीथीं २६ इसीप्रकार यमराज पितरोंके अभीष्टोंकी इच्छासे दीपकों के दानकी प्रशंसा करतेहैं इसी हेतुसे सदैव दीपदान करने वाला मनुष्य पितरों को उद्धार करताहै २७ हे भरतबंशियों में श्रेष्ठ साधु समर्थ युधिष्ठिर तुमकोभी सदैव दीपदान करना चाहिये दीपदान करनेसे देवता और पितर नेत्रोंकी दृष्टीको देतेहैं २८ हेराजारत्न दानका बड़ा पुण्य कहाहै उनदानसे प्राप्तहुये रत्नों को ब्राह्मण बेचकर यज्ञ करताहै वह दान निर्भयताका देनेवाला है २९ जो ब्राह्मण दान लेकर ब्राह्मणों को दान करताहै वह दान देनेवाले और लेनेवाले दोनों मनुष्यों का अविनाशी होताहै ३० जो पुरुष मर्य्यादा में नियत होकर उस प्रकार के ब्राह्मण को दान देताहै उन दोनों का धर्म अविनाशीहै इसको बड़े धर्मज्ञ मनुजीने कहाहै ३१ केवल अपनी स्त्री से सदैव प्रीति करने वाला मनुष्य वस्त्रों के दानसे सुवर्ण वर्ण रूप और पोशाक वाला होताहै यह सुनाजाता है ३२ हे पुरुषोत्तम वेद के प्रमाण देखने से गौ सुवर्ण और

तिल आदि अनेक दान वर्णन किये ३३ हे कौरव विवाहों को करके पुत्रोंको उत्पन्न करे पुत्रोंका लाभ सब लाभों से अधिक होताहै ३४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मे अष्टषष्टितमो ऽध्यायः ६८ ॥

उनहत्तरवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे कौरवों में श्रेष्ठ बड़े ज्ञानी आप फिर भी दानों की उत्तम बुद्धि और मुख्यकर भूमिदान को वर्णनकीजिये १ पृथ्वी के दान करने वाले क्षत्री लोग यज्ञ करने वाले ब्राह्मणको भूमि दानकरें और वह ब्राह्मण भी बुद्धिके अनुसार दानकोले इसके सिवाय दूसरा दान करने वाला नहींहै २ फलके चाहने वाले सब वर्ण जिस दानको करसक्तेहैं अथवा जो वेदमें कहाहै वह आप मुझसे कहने को योग्यहैं ३ भीष्मजी बोले कि गौ पृथ्वी सरस्वती अर्थात् गायत्री मंत्रादि यह तीनों प्रकार के दान बड़े दिव्य एक से नाम सदैव फलके देने वाले और सब अभीष्ट फलोंके देने वाले हैं ४ जो पुरुष धर्म रूप वेदोक्त सरस्वती गायत्रीको अपने शिष्य को उपदेश करताहै वह पृथ्वीदान और गौ दानके समान फलको भोगताहै ५ अब इसी प्रकार गौओंकी प्रशंसा करतेहैं किगौ दान से बढ़कर कोई दान नहींहै हे युधिष्ठिर वह मनो रथोंकी सिद्धकरने वाली गौ शीघ्रही फलकी देनेवालीहैं ६ गौ सब जीवों की माता होकर सब सुखोंको देनेवालीहैं अपनी वृद्धि चाहने वाले पुरुषोंको वह गौयें सदैव परिक्रमा करनी चाहिये ७ गौ कभी पैरोंसे ताड़न के योग्य नहीं हैं यह देवी गौ आनन्द मंगल की घरहैं इनके मध्य में से होकर न निकलना चाहिये और सदैव पूजन के योग्य हैं ८ यज्ञोंके प्रयोजन और खेती आदिके निमित्त जोतने आदिमें वर्त्त-मान बैलोंको यद्यपि चाबुक आदिसे चलायमान करना देवताओं ने नियत कियाहै तथापि यज्ञके निमित्त प्रेरणा करना महा कल्याण

कारीहै और दूसरी रीतें खेती आदिके निमित्त उस वैदिक कर्म से पीछे जारी हुईहैं इस हेतुसे वह दूसरी रीतें निन्दितहैं ६ ज्ञानी पुरुष भागने और पीछा करने में उन गौओंको भयभीत न करें वह प्यासी होकर जलको नपीने वाली गौ सबभाई बंधुओं समेत पुरुष को नाश करदेतीहैं १० जिनके गोबरसे पितरोंके भवन और देवताओंके स्थान सदैव पवित्र होतेहैं उससे अधिक पवित्र कौन होसक्ताहै जो पुरुष एक वर्ष पर्य्यन्त वेतन लिये बिना सदैव प्रतिदिन एक गट्ठा घास किसी दूसरेकी गौको देताहै वह व्रत उसके सब अभीष्ट मनोरथोंका देने वाला है ११।१२ वह घासका देनेवाला पुत्र पौत्र धन कीर्त्ति और शोभाको भी पाताहै और निष्पाप होकर दुस्स्वप्नको नहीं देखताहै १३ युधिष्ठिर बोले कौन लक्षणरखने वाली गौदान करनेकेयोग्यहै और कैसी गोदानके अयोग्य गिनीजाती है और कैसे प्रकारके ब्राह्मणको देनी चाहिये और किसको न देनी चाहिये १४ भीष्मजी बोले कि जो ब्राह्मण बदचलन पापी लोभी मिथ्यावादी और हव्यकव्यादिक दानों से रहितहै उसको किसी दशामें भी गौन देनीचाहिये १५ दान करनेवाला मनुष्यउस ब्राह्मणके अर्थ जो कि भिक्षुक वेदपाठी अग्निहोत्री और बहुतसे पुत्र पौत्रादिकों से युक्तहै उसको दश गौदान करके ऐसे लोकोंको पाताहैजो सब से श्रेष्ठहैं १६ दानलेनेवाला जो धर्म करताहैउसके धर्मका जो फलहै उस सब फलका वह दान करनेवाला भागीहोताहै उसीके निमित्त दानोंमें प्रवृत्तीहै १७ जोउसको उत्पन्न करताहै और भयोंसे रक्षा करताहै और जो उसकी जीविका नियत करताहै यह तीनों उसके पिता रूपहैं १८ गुरूकीसेवा पापको दूरकरतीहै अहंकार बड़ी उत्तम शुभ कीर्त्ति को नाश करताहै तीनपुत्र अपुत्रतापनेको दूरकरते हैं दश गौ ऐश्वर्य्यके रोकनेवाले दोषोंका नाश करतीहैं १९ जो वेदान्तमें निष्ठा रखनेवाला बड़ाज्ञानी बहुश्रुत प्रज्ञानान तृप्त जितेन्द्री शिष्ट दान्त यती और सबभूतोंमें प्रियवादी २० साधु वृत्ती और जो गृहस्थाश्रमके भयोंसेभी कभी असत्कर्मों

को नहीं करता और मृदुस्वभाव होकर अतिथियोंका प्याराहै अथवा जो पुत्र स्त्री २१ आदिमें एकसा स्वभाव रखनेवालाहै उसके निमित्त उचित जीविका नियत करे जो गुण कि शुभपात्रको गो दान देनेसे होतेहैं उतनेही दोष ब्राह्मणके धन जप्त करनेमें हैं इस हेतुसे सब दशाओंमें ब्राह्मणका धन त्यागके योग्यहै और इन्होंकी स्त्रियां भी दूरहीसे त्यागके योग्यहैं २२॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेएकोनसप्ततितमोऽध्यायः ६९॥

सत्तरवां अध्याय॥

भीष्मजी बोले हे कौरव इस स्थानपर सत्पुरुषोंका कहाहुआ यह इतिहास कहताहूं जिसमें राजानृगने ब्राह्मणके धन जप्तकरने से महाखेदको पाया १ हे राजा पूर्व्वसमयमें जब सब यादवलोग द्वारकामें जावसेथे तब वहां बहुत से यादव आदि सब लोगों की तृण वीरुधियों से ढकाहुआबड़े शरीरवाला गिरगट नाम जीव दृष्ट पड़ा तबयह सुनतेहैंकि२ वहां बड़े२ उपाय करनेवाले और उसकूप से जल चाहनेवाले हजारों मनुष्योंने बड़े परिश्रम युक्त होकर उस घासआदिसे ढकेहुये जलमें ३ बैठेहुये बड़े शरीरधारी गिरगटको देखकर उसके निकालनेको अनेकयत्न कियेथेरस्सी और चमड़ेकी बेटियोंसे उस पर्व्वताकार जीवको बांधकर उसके उठानेको सब मनुष्य मिलकर भी समर्थ नहींहुये तब सब मिलकर श्रीकृष्णजीके पास गये ५ और श्रीकृष्णजीके सन्मुख वर्णन किया कि एक गिरगट नाम बड़े शरीरवाला जीवकुयेंको रोकेहुये पड़ाहै उसको कोई उठा नहीं सक्ता ६ तब वासुदेवजीके उठानेसे उठआया और कूपसेबाहर आकर उस गिरगट रूप राजानृगने उसयोनिसे मुक्तहोकर अपने कर्मका वर्णन किया और उसीसमय हजारोंयज्ञ करनेवाले अपने प्राचीन शरीरको प्रकटकिया ७ फिर माधवजीने इसरीतिसे कहने वाले उस राजानृगसे कहाकि तुमने बड़े २ उत्तमकर्म किये औरकोई पापनहींकियाथा हेमहाराज फिरकैसे इसदुर्गतिको प्राप्तहुये इसको

आपवर्णन कीजियेऐसा दुःखआपको कैसे हुआ८हेराजातुमने पूर्व्व कालमें लाखों किरोड़ों गोदान ब्राह्मणों को बराबरकिये यह सब सुनाजाताहै वह तुम्हारा पुण्य का फल कहांगया जो इसयोनि को पाया ६ तब राजा नृगने श्रीकृष्ण जी से कहा कि एक मेरी दान करी हुई किसी अग्निहोत्री ब्राह्मण की गौ कहीं अन्यत्र पहुंच कर देवयोगसे मेरे गोधन में आकर संयुक्त होगई १० तब मेरे पशु रक्षकने उस गौको हजारों गौओं में अपनी गिनली और पर-लोक के अभिलाषी मुझ निर्बुद्धीने अपनी अज्ञानता से वह गौ एक ब्राह्मण को दानकरदी ११ और उस तलाश करनेवाले पूर्व्व अग्निहोत्री ब्राह्मणने उसगौको दूसरे ब्राह्मण के घरमें बंधा हुआ देख और वास्तवमें वहउसीकी गौथी उस ब्राह्मणनेकहा यह मेरी गौहै १२ तब वह परस्पर बिबाद करते हुये महा क्रोधयुक्त दोनों ब्राह्मण मेरे सन्मुख आये१३ उन्होंने मुझसे कहाहै कि आपही दाता हौ और आपही उसको जप्त करते हो मैंने उस दान लेने वाले ब्राह्मण से उस एक गौ के बदले हजार गौ देनेको कहा पर-न्तु उसने मुझसे यह कहा १४ कि जो देश कालके अनुसार प्राप्त हुई दूध देनेवाली शान्तरूप अग्रभागसे युक्त स्वादु संयुक्त क्षीर की दाता जिसकी प्रशंसा सदैव मेरे घरमें होती है १५ वह गौ मेरे उस पुत्रको जो कि अतिदुर्बल और अपनी माता के स्तनको त्याग करनेवालाहै पोषण करती है वह गौ मैं देने को समर्थ नहीं हूं ऐसा वचन कहकर वह ब्राह्मण चलागया १६ इसके पीछे मैंने उसके बदलेके लिये दूसरे ब्राह्मणसे प्रार्थना करी कि उसके बदले आप एक लाख गौ लीजिये १७ हे मधुसूदन जी तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं अपनी जीविका के खोजमें प्रसक्तहूं राजाओं का दान नहीं लेताहूं वही गौ मुझको दीजिये १८ सुवर्ण घोड़े चांदी और रत्नोंको भी जो आपदेंगे वह भी नहीं लूंगा यह कहकर वह उत्तम ब्राह्मण भी चलागया १९ उससमय काल धर्म से प्रेरित होकर मैं पितृलोकमें प्राप्तहोकर धर्मराजके पासगया २० यमराज ने

मेरा आदर सत्कार करके यह वचन कहा हे राजा तेरे पवित्रकर्मों की संख्या का अन्त नहीं होसक्ता है २१ परन्तु तुमने अज्ञान से कुछ पापभी कियाहै उसको पूर्व्वमें भोगोगे वा पीछे से भोगोगे जैसी तुम्हारी इच्छा होय वैसा कियाजाय २२ तुमने जो कहा कि मैं संसार का रक्षकहूं वह तेरा प्रण और संकल्प मिथ्याहै दूसरे तुमने ब्राह्मण का धन लिया यह तुम्हारी दो प्रकार की अमर्य्यादाहैं २३ तब मैंने कहा कि हे प्रभु मैं प्रथम अपने पाप फलको भोगूंगा फिर पुण्यफल को भोगूंगा इसरीतिसे धर्मराज से कहतेही मैं गिरगट होकर पृथ्वीपर गिरपड़ा २४ पृथ्वीपर गिरेहुये मैंने यमराज के कहे हुये उच्चस्वर युक्त वचन को सुना कि हे राजा दुष्टोंके संहार करनेवाले वासुदेवजी तेरे उद्धार करनेवाले होंगे २५ पूरे हजार वर्षके अन्त में पाप कर्म के नाश होनेपर तू अपने पुण्यकर्म से बिजय किये हुये अर्थात् प्राप्त किये हुये लोकों को पावेगा २६ मैंने इस कुयेंमें गिरकर अपने को नीची गर्दन हुआ देखा और तिर्य्यग्योनि में प्राप्त होकर भी मुझको पूर्व्व का सब स्मरण बनारहा २७ अब आपने मेरा उद्धार किया और तपस्या से सिवाय कुछनहीं है हे श्रीकृष्णजी अब मुझको आप स्वर्ग में जानेकी आज्ञादो २८ तब श्रीकृष्णजी की आज्ञा पाकर शत्रुओं का बिजय करनेवाला वह राजा उन दुष्टसंहारी वासुदेव जीको नमस्कार कर दिविमार्ग में नियत होकर स्वर्ग को गया २९ हे भरतबंशियों में बड़ेसाधू कौरवनन्दन युधिष्ठिर उसराजा नृगके स्वर्गमें जानेपर बासुदेवजीने यह श्लोक कहा (श्लोक) ब्राह्मणस्वंन हर्त्तव्यंपुरुषेणविजानता॥ ब्राह्मणस्वंहृतंहन्तिनृगंब्राह्मणगौरिव ३० इसका आशय यह है कि ज्ञानी पुरुषको ब्राह्मण का धन कदापि हरना न चाहिये ब्राह्मण का जब्त कियाहुआ धन ऐसे मारता है जैसे कि राजा नृगको ब्राह्मण की गौने माराहै ३१ हे राजा सत्पुरुषों के साथ सत्पुरुषों का मिलापहोना निष्फल नहीं होता देखो कि सत्पुरुषों के मिलापही से राजा नृग नरक से छूटा ३२ और

उस साधुओं के मिलाप होनेमें भी उपकार करना महाफलदायी है और शत्रुताकरना निष्फलहै हे युधिष्ठिर इसीरीतिसे गौओंके अप्रिय कर्मोंको सदैव त्यागकरे ३३॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेनृगोपाख्यानेसप्ततितमोऽध्यायः ७०॥

इकहत्तरवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे निष्पाप महाबाहु आप गोदानों के फलकी प्राप्तिको मुझसे व्यौरे समेत कहिये क्योंकि आपके अमृत रूपी वचनोंसे मेरी तृप्तिनहीं होतीहै १ भीष्मजी बोलेकि इस स्थानपर एक प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें उद्दालक और नाचिकेतु ऋषिका परस्पर संबादहै २ बुद्धिमान् उद्दालक ऋषिने अपने पुत्र नाचिकेतके पास जाकर कहाकि तुम मेरी सेवाकरो ३ यह कहकर महर्षिने उस नियमके समाप्त होनेपर पुत्रसे कहा मैं स्नान आचमनादि में प्रवृत्त जपमेंनिष्ठ होकर ४ इन्धन कुशाफूल कलश बहुत से शाकफल आदिके भोजन भूलआयाहूं उनको तुमनदी के किनारे से लेकर यहांआवो ५ उनकी आज्ञापातेही उस मुनिने वहांजाकर नदीके चढ़ाव से डूबेहुये उससब सामान को न पाकर वहांसे लौट कर पितासे आनकर यहकहा कि मैंने बहुतसा ढूंढ़ा परन्तु मुझे वह सामान कहीं नहीं दीखा ६ यह सुनतेही गृहस्थीपनेकी तृष्णा में भरेहुये उस महातपस्वी उद्दालक मुनिने उसपुत्रको शापदिया कि यमराजको देखो, पिताके इस वज्ररूपीवचनसे घायल होकर हाथ जोड़ेहुये वह नाचिकेत शीघ्रही निर्जीव होकर पृथ्वीपर गिरा ७।८ तब तो पृथ्वीपर पड़ेहुये नाचिकेतको देखकर मुनिबड़े दुःखमें अचेत हुये और कुछ चैतन्य होकर कहने लगे कि मैंने क्याकिया यहकहकर वहभी पृथ्वीपर गिरपड़े ९ वहां उस दुःखमें डूबेहुये अपने पुत्र का शोच करनेवाले उस ऋषिका वह शेष दिवस और भयकारी रात्रि व्यतीतहुई १० हे कौरव पिताके अश्रुपात से वह नाचिकेत

कुशाकी शय्यापर ऐसेचेष्टा करनेलगा जैसेकि वर्षासे सींचीहुईखेती सजीव होजातीहै ११ उसने मृतक होकर शयन से जगेहुये की समान फिर आनेवाले दिव्य गन्ध युक्त शरीरवाले अपने पुत्र से पूछा १२ हे बेटा तुमने अपने कर्मसे शुभलोकभी विजय किये तुम प्रारब्ध से फिर प्राप्तहुयेहो तेराशरीर मानुषी नहींहै अर्थात् दिव्य शरीरहै १३ इस पिताके बचनको सुनकर सब वृत्तान्त अपने नेत्रों से देखनेवाले महात्मा नाचिकेतने पिताके समीपवर्त्ती महर्षियों के मध्यमें अपने पिता के सन्मुख उस वृत्तान्त को वर्णन किया १४ कि हे पिता मैं आपकी आज्ञाके अनुसार आज्ञाको प्रतिपालन करताहुआ शीघ्रही यमराजकी सभामें पहुंचा वह सभा बहुत लम्बी चौड़ी हजारोंयोजनकी महाप्रकाशमान सुवर्णकेसमान चमकतीथी उस सभामें बैठेहुये धर्मराज को देखा १५ मुझको सन्मुखआतेहुये देखतेही उसने आज्ञाकरी कि इनको आसन बिछाओ फिर उसने आपके कारणसे मेरा पाद्य अर्घ्य आदिसे पूजन किया १६ इसके पीछे सभासदोंने पूजन करके मुझको चारोंओर बैठकर मध्यमें किया फिर मैंने मध्यवर्त्ती होकर बड़े धीरेपनसे उनसे कहा कि हे धर्मराज मैं आपके देशमें आयाहूं मैं जिसलोकके योग्यहूं उसी लोकमें मुझे भेजनेका विचार कीजिये १७ तब यमराजने कहा हे प्रिय दर्शन तुम मृतक नहीं हो देदीप्य अग्निके समान तेजस्वी तपस्वी उस आपके पिताने तुमको यही कहाहै कि तुम यमराजको देखो उनकी बातको मैं मिथ्या नहीं करसक्ता १८ हे तात तुमने मुझको देखा अब तुम शीघ्रहीजावो तुम्हारा पिता सोचकर रहाहै तुम हमारे प्रिय अतिथि हो जो आपमनसे मांगो वहमैं दूं जो आपके अभीष्टहो आप उनको मांगिये १९ उसके इसप्रकार कहनेपर मैंने उनको उत्तरदिया कि मैं आपके देशमें वर्त्तमानहूं जहांसे फिरलौटना महाकठिन है जो मैं वरकेयोग्य समझाजाऊं तो पुण्यसे उत्पन्न धर्मसे पूर्ण आपके लोकोंको देखना चाहताहूं २० हे द्विजेन्द्र तब उस देवताने घोड़ोंसे युक्त अच्छीप्रकाशमान सवारीमें मुझको

सवार करके अपने और पवित्रकर्मी पुरुषोंके सब लोकोंको अच्छे प्रकारसे दिखलाया२१ मैंने वहां महात्माओंके उन स्थानोंको देखा जो कि तैजस अर्थात् स्वतःप्रकाश रूप नानाप्रकार की अद्भुतरचनाओंके बने अनेक रंगोंके रत्नोंसे जटित २२ चन्द्रमंडलके समान श्वेतवर्ण क्षुद्र घंटिकाओंसे रचित जालोंसे संयुक्तथे उनमें हजारों महल सूक्ष्म पृथ्वीपर शोभायमान बड़ेभारी जलके मध्यमें चेष्टा करनेवालेथे २३ और सूर्य्यके समान प्रकाशित वैडूर्य्यमणि सुवर्ण चांदी और नवीन सूर्य्यके समान प्रकाशमान वर्ण रखनेवाले ग्रह औरनक्षत्रथे२४भक्ष्यभोज्यादि पदार्थोंके पर्ब्बत वस्त्र पर्य्यङ्कयुक्त शयनस्थान और भवनोंपर नियत सब अभीष्टफल देनेवाले वृक्षोंको देखा २५ नदी मार्ग सभा बावड़ी दीर्घका और शब्दायमान घोड़ों समेत हजारों सवारिओंको देखा २६ दूधकी नदियां पर्ब्बत घृत निर्मल जल और यमराजके बिहार स्थानवाले अनेकदेश जिनको कि पूर्व्वकभी न देखाथा उनको भी देखा २७ उनसबको देखकर मैंनेउन पुराणपुरुष धर्मराजसे यह बचन कहा यह सदैव बहने वाली दूध और घृतकी नदियां भोजनके योग्य किसके प्रारब्धमें नियतकी गई हैं २८ यमराजनेकहा कि जो साधू मनुष्य गोरसों का दान करनेवाले हैं उन पुरुषों के निमित्त यह सब नदियां भोगने योग्यहैं और अतिप्राचीन शोकसे रहित जीवोंसे व्याप्तजोअन्य लोकहैं वह उनपुरुषों के निमित्तहैं जोकि गोदान करने में प्रीति करतेहैं २९ इनगौओं का केवल दानकी महिमाही कहनाप्रशंसा के योग्यनहींहै किन्तु दानपात्र ब्राह्मण कालगौकी मुख्यता और शास्त्रबुद्धिको जानकरदान करनाभी उचितहै हेब्राह्मण गौओंकेगुणों की न्यूनाधिकता सूर्य्य और अग्निके समानहै इसीसेइसकाजानना कठिनहै ३० जो ब्राह्मण वेदपाठवा गायत्रीका जप करनेवाला बड़ा तपस्वी वेदके अनुसार अग्निस्थापन करनेवालाहो वह इन गौओं के लेनेका पात्रहै जो गौ कसाईके मारनेसे छुटाकर प्राप्तकी होयं अथवा पोषण के निमित्त गरीबके घरसे आईहो उनका पोषणकरना

अत्यन्त श्रेष्ठहै इन पोषणादि उपायोंसे गौओंके प्रकारोंका जानना प्रशंसनीयहै ३१ तीन रात्रितक जलकाही आहारकर पृथ्वीपर शयन करके तृप्त हुई गौओंको गोशाला समेत ब्राह्मणोंके अर्थ देनीयोग्य है वह गौ वे प्रसन्न मन सुन्दर सन्तान युक्त होकर अच्छे प्रकार से सेवा करीगईहों उनको दान करके तीन दिनतक गोरसोंको भोजन करना चाहिये ३२ कांसेका दोहन पात्र कल्याणरूप बछड़ा और सुन्दर व्रत रखनेवाली बिना भागनेवाली गौको दान करनेसे जितने उसके शरीरमें बाल अर्थात् रोम होतेहैं उतनेही वर्षपर्यन्त वह स्वर्गको भोगताहै ३३ इसीप्रकार सुशिक्षित भारवाहक बली तरुण और अपने सजाति समूहों में निवास करने को अभ्यासी पराक्रमी बड़े बैलको उत्तम ब्राह्मणके अर्थ दान करनेवाला गोदान करनेवाले के समान लोकोंको भोगताहै ३४ जो गौओंपर कृपा करनेवाला गौओंके आश्रय स्थानका ज्ञाता उनके साथ उपकार और जीविकाका दुःख पानेवालाहै उसप्रकारके ब्राह्मणको सुपात्र कहतेहैं वृद्ध और रोगीको दान करने में दुर्भिक्षमें यज्ञ और खेती और होमके निमित्त दान करने में और पुत्रके जन्ममें दान करने में ३५ गुरुके अर्थ और बालकों के पोषण के अर्थ गोदान करनेमें देश और काल श्रेष्ठ समझना चाहिये वह गौ घरमें उत्पन्न हुई वा मूल्य से लीहुई शान्ती और ज्ञान गुण से प्राप्त अपने प्राणोंको संकटमें डालकर मोललीया विजय करीहुई अथवा विवाहके समय श्वशुर आदिनेदीहो ३६ नाचिकेतने कहाकि मैंने यमराजके वचनों को सुनकर फिर बचन कहा कि गौके न होनेपर गोदान करनेवालों के लोकोंको कैसे पाताहै ३७ यह सुनकर बुद्धिमान् यमराजने गो दानको परमगतिको वर्णनकिया और गोदानके अनुकल्पको भी कहा कि गौके बिना भी गोदान करने वाले होतेहैं (अनुकल्प गौण कल्पको कहतेहैं जैसे कि मधुके न होने पर गुड़ही कल्पना किया जाताहै) ३८ जो व्रतमें सावधान मनुष्य गौओंके न मिलने पर घृतकी गौका दान करताहै उसको यह घृतकी नदियां पर्वत से

मिली हुईसी बहतीहैं ३९ जो व्रतमें सावधान पुरुष घृतके न मिलने पर तिलकी गौका दानकरताहै वह उसगौके द्वारा दुर्गम स्थान से पार होकर दूधकी नदीपर आनन्द करता है ४० जो व्रत परायण मनुष्य तिलोंके न मिलने पर जलकी गौको दान करताहै वह इच्छाके अनुसार शीतल जलकी बहनेवाली नदीको भोगताहै ४१ हे धर्म से च्युत न होनेवाले वहां इसरीतिसे धर्मराजने उन २ स्थानोंको दिखलाया और मैंने उनका दर्शन करके बड़ी प्रसन्नता को पाया ४२ मैं अब आपके इस अभीष्टको कहताहूं कि यहथोड़े धनसे होने वाला गोदान रूप बड़ा यज्ञहै हे तात मैंने भी इसी को प्राप्त कियाहै वेद वुद्धीसे जारी होनेवाला मुझसे उत्पन्न वह यज्ञप्राप्त होगा ४३ यह आपके शापके अनुग्रहकेलिये प्राप्तहुआहै जहां मैंने यमराज देखे हे धर्मात्मा वहां मैंने दानोंके फलोंकोही बहुत देखा इससे हे तातमैं निस्सन्देह होकर दानोंको करूंगा ४४ हे महर्षी तव तो अत्यन्त प्रसन्न यमराजने बारंबार मुझसेयही कहा कि जोपुरुष सदैव दानमेंसावधान होय वह मुख्यकर गोदानहोकरे ४५ यहवड़ापवित्रकर्महैकिधर्मोंकी कभीनिन्दा वा अपमान नकरके देश और कालमें पात्रके निमित्त दान दिया करे यही योग्य है इस हेतुसे हेराजा तुमको सदैव गोदान करना उचितहै इसमें तुमको कभी सन्देह न हो ४६ शान्तवुद्धी दानमार्गमें प्रवृत्त हुये पुरुषोंने पूर्व्वसमय में इन गौओं को दान कियाहै उग्रतपों में सन्देह न करनेवाले उन मनुष्यों ने अपनी सामर्थ्यके अनुसार दानोंको दियाहै ४७ पवित्रात्मा श्रद्धावान पुण्य करनेवाला मनुष्य ईर्षासे रहित होकर अपनी सामर्थ्य के अनुसार समयपर गोदान करकेपरलोक को गये वह मनुष्य पुण्यरूप स्वर्ग में प्रकाशमान हैं ४८ जो गौके साथ में न्यायसे प्राप्त होनेवाला पदार्थ तीनोंवर्णके योग कर्मेष्टीपात्र ब्राह्मणको दे तो उसके सिवाय गौका आहार आदि देनाभी अवश्य योग्य है और दश दिन तक गोरस अथवा गोबर वा गोमूत्र से अपना निर्वाह करना चाहिये ४९ बैलों के नादसे

देवताओं का व्रत रखनेवाला ब्रह्मचारी सूर्य मंडल को भेदकर जाताहै और गौ वा बैल के जोड़के दानसे वेदोंकी प्राप्ति होती है और बैलोंसे युक्त रथ आदिके दान से तीर्थोंकी प्राप्तिहोतीहै कपि-ला गौके दान करने से पापोंसे छूटताहै ५० न्यायसे प्राप्त होने वाली एक कपिला गौ कोभी अच्छी रीतिसे दान करने से पापोंसे निवृत्त होताहै गौओं के रसरूप दूधसे उत्तम संसारमें कोई पदार्थ नहीं है इसीसे गौओंके दानको उत्तमोत्तम कहतेहैं ५१ दूधदेनेवाली गौ लोकों को उद्धार करतीहैं और गोलोक में अन्न को उत्पन्नकरती हैं जो मनुष्य उनको जानकर गौओंके अभीष्ट को प्राप्तनहीं करता अर्थात् शरीरकी खुजली आदिको नहीं मिटाताहै वह पापात्मापुरुष नरकको जाता है५२जिन मनुष्यों ने बछड़े समेत हजारसाधू गौया सौ दश पांच अथवा एकही गौका दान साधू ब्राह्मणके अर्थ किया है वह गौ परलोक में उसको पवित्र तीर्थवालीनदी होतीहै ५३ इस पृथ्वीपर गोरस देनेवाली पुष्ट शरीर युक्त और संसार की पूरी २ रक्षासे वह गौ सूर्य्यकी किरणोंके समान हैं मैं देताहूं जो कि यह एक शब्द है और उपभोग नम्रताआदि गुणभी इसमें हैं इसी हेतुसे गोदान करनेवाला सूर्य्यके समान प्रकाशमान होताहै५४जो शिष्य कि अपने गुरूको गौकादान देताहै वहअवश्य स्वर्गकोजाताहै जो शास्त्र बुद्धिके ज्ञाताहैं उनको यह बड़ाउत्तम धर्महै और जो अन्यज्ञान बुद्धीहैं वह गुरुपूजन नाम प्रथमबुद्धिमें प्रवृत्तहोजाते हैं अर्थात् गुरु पूजनसेही उनकाफल मिलता है५५तीनों वर्णोंका यह न्यायसे प्राप्त हुआदानहै परंविचार पूर्वक पात्रकोदेकर उसको उसपर पूराअधि-कार देना योग्यहै यही न होय कि गौ केवल पुरुषको सुपुर्दही की जाय तुझ पुण्यके अभ्यासीकी शासनामें देवता मनुष्य और हमभी आनन्द करतेहैं ५६ हे ब्रह्मऋषि इसप्रकार उनसे कहा हुआ मैं उस धर्म्मात्मा सूर्य्यपुत्र धर्मराज को शिरसे नमस्कारकर और उ-नकी आज्ञालेकर आप भगवान् के चरणोंमें आया ५७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेयमवाक्यंनामएकनहतितमोऽध्यायः७१ ॥

बहत्तरवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले हे प्रभुआपने नाचिकेतऋषिकी कथामें गोदानका वर्णन किया और उसी प्रसंगमें गौओंका माहात्म्यभी कहा १ हे बड़े बुद्धिमान् पितामह महात्मा राजानृगने अज्ञानतासे होनेवाले एक अपराधसे बड़ेकष्टको पाया २ जैसे कि द्वारकामें प्रवेश करने के समय यह कूपसे निकालागया और श्रीकृष्णजी उसकी मोक्षके हेतुहुये वह सब मैंने सुना ३ परन्तु हे प्रभुगौओंके लोकके बिषयमें मुझको सन्देहहै उसको आपकहिये और उस स्थानको भी कहिये जहां पर गोदानके करनेवाले निवास करतेहैं ४ भीष्मजीबोले इस स्थानपरएक प्राचीन इतिहासको कहतेहैं जिसमेंइन्द्रने इसी बातको ब्रह्माजी से पूंछाहै ५ इन्द्रने प्रश्नकिया कि स्वर्गलोक बासियोंकी लक्ष्मीको अपने तेजसे तुच्छ करके गो लोकके जानेवालोंको देखताहूं यह मुझे सन्देह है ६ हे निष्पाप भगवन् वह गौओंके लोक कैसेहैं जहां गौकेदान करनेवाले बसतेहैं उनको मैं जानना चाहताहूं ७ वहलोक किसप्रकारके और कैसे२ फलोंके देनेवालेहैं उसकी परमकाष्ठा क्याहै और कौनगुणहै और ज्वरसे रहित मनुष्य वहां किसरीतिसे जातेहैं ८ दाता कितने समयतक दानके फलको भोगताहै बहुत प्रकार का और थोड़े प्रकार का दान किसप्रकारसे होताहै ९ बहुत गौओंका वा थोड़ी गौओंका दान कैसाहै गोदान किये बिना गोदानका फल कैसे मिलसक्ताहै यह सब आपमुझेसमझाइये १० हे प्रभु बहुतदान करनेवाला मनुष्य किसरीतिसे थोड़े दान करनेवालेकी समान होताहै हे स्वामी इस लोकमें थोड़ादान करनेवाला मनुष्य किसरीतिसे बहुत दान करनेवाला होताहै ११ गोदानमें कैसी दक्षिणा श्रेष्ठ होतीहै हे भगवन् इसको यथार्थतासे आपकहिये १२॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेगोप्रदानिकेद्विसप्ततितमोऽध्यायः७२॥

——*——

तिहत्तरवां अध्याय॥

ब्रह्माजी बोले कि जो गोदानके विषयमेंतुमने मुझसे प्रश्नकिया हे इन्द्र इस प्रश्नका पूछनेवाला तेरे सिवाय इस लोकमें कोई पुरुष नहींहै १ हे इन्द्र नानाप्रकारके लोकहैं उनको मैं देखताहूं तुम नहीं देखसक्तेहो उन लोकोंको पतिव्रता स्त्री भी देखतीहैं २ और सुन्दर व्रतवाले ऋषिभी अपने शुभ कर्मोंके द्वारा देखतेहैं उन लोकोंमें शुभ बुद्धीवाले ब्राह्मण शरीर समेतजातेहैं ३ इसलोक में सुन्दर व्रतवाले मनुष्य भी समाधि के समयअथवा मरणकाल के समय शुद्धअन्तष्करणके द्वारा उनस्वप्नरूपलोकोंको देखतेहैं ४ हे सहस्राक्ष वहलोक जैसेप्रकारके गुण धारण करनेवालेहैं उनको मैं कहताहूं वहां न कालजाताहै न जरावस्था होतीहै और न अग्नि ५ किसीप्रकारका भी वहां अशुभ नहीं है वहां रोग परिश्रम आदि भी नहींहैं हेइन्द्र उसलोकमें गौवें जो मनसे चाहतीहैं६ वह सब मेरेआगे प्राप्त करतीहैं इच्छापूर्व्वक अपनी चाहनासे कर्मकर्त्ता होकर अभीष्ट पदार्थोंको भोगतीहैं ७ वापी, सरोवर, नदी, नानाप्रकारके बन, स्थान, पर्व्वत और जितने सब पदार्थहैं ८ और सब जीवोंकेलिये मनोहर धनआदि यही सब वहां दिखाई देतेहैं इतनेवड़े लोकसे उत्तम दूसरा लोक कोई वहां नहीं हैं ९ हे इन्द्र जो उत्तम मनुष्य कठिनदुःखोंके सहनेवाले क्षमावान् सबके मित्र गुरूकी सेवा करनेवाले अहंकारसे रहितहैं वह पुरुष उसलोकमें जातेहैं १० जो पुरुष किसीप्रकारके मांसको नहीं खातेहैं सदैव पवित्र धर्म संयुक्त होकर मातापिताके पूजन करनेवाले सत्यवक्ता ब्राह्मणों की सेवा करनेवाले हैं और दोषोंसे रहित हैं ११ अथवा गौ ब्राह्मणों पर क्रोध न करने वाले धर्ममें प्रवृत्त गुरूकी सेवा करने वालेहैं अपने जीवन पर्य्यन्त सत्याचार और दानमें प्रीति करने वालेहैं अपराधी परभी क्षमा करने वाले हैं १२ वा मृदु स्वभाव शान्तचित्त देवताकी उपासना करनेवाले सब को अतिथि रूप माननेवाले दया दान

में संलग्न हैं हे इन्द्र इस प्रकार के गुण रखनेवाले मनुष्य उस सनातन गोलोक को जातेहैं १३ जो दूसरे की स्त्रीसे भोग करने वालाहै वा गुरू का मारने वालाहै अथवा मिथ्या वादीहै वहलोग इस लोक को नहीं देखसक्ते हैं और जो सदैव ब्राह्मणों के साथ विवाद और शत्रुता करने वाला दुष्टात्माहै वह भी नहीं देखसक्ता है १४ जो मित्रोंसे शत्रुता करने वाला छली, अकृतज्ञ, धनीहोकर भी कंगाली प्रकट करनेवाला कुटिल धर्म का बिरोधीहै और जो ब्राह्मण का मारने वालाहै ऐसे पुरुष मनसे भी उस लोकको नहीं देखसक्ते १५ हे देवताओं के ईश्वर जोकि पवित्र कर्मी पुरुषोंका निवासस्थानहै उसमें दुराचारी नहीं जासक्ते किन्तु देख भी नहीं सक्ते हे इन्द्र यह सब वृत्तान्त मुख्यता समेत तुझसे बर्णन किया और जो मनुष्य गोदान में प्रीति करने वाले हैं उनके फलों को सुनो १६ जो मनुष्य बाप दादेको जायदाद से प्राप्त हुये रुपयोंके बदले गौओंको मोल लेकर उन धन से मोललीं हुई धर्म से प्राप्त गौओंको दान करताहै वह अबिनाशी लोकोंको पाताहै १७ हे इन्द्र जो आदमी द्यूतसे धनको जीतकर गौओंको मोललेके दान करता है वह भी हजारों दिव्य बर्षतक फलको भोगताहै १८ जिसको कि दाय भागसे न्यायके अनुसार गौ मिलीहैं उनको दानकरे उन दाताओंकी गौ भी अचल होतीहैं १९ हे शचीपति जो ब्राह्मण गौओंको दान लेकर शुद्ध चित्तसे दान करताहै उसके लोक भी अचल और अबिनाशी होतेहैं २० जो शान्त चित्त गुरू और ब्राह्मण की क्षमा करने वाला और उनके अपराधोंका सहनेवाला मनुष्य आजन्म सत्य बोले उसकी गति भी गौओंके समान है २१ हे इन्द्र जब ब्राह्मण घृणाके भी योग्य होय तौ भी कभी निन्दाके योग्य नहीं है जो मनुष्य गौओंकी जीविका रखने वाला घास आदि से उनका पोषण करने वालाहै वह वैसी भी गौओंके साथ शत्रुता न करे २२ हे इन्द्र जो मनुष्य सत्य और धर्म में प्रवृत्तहै उसके फल को सुनों कि उसकी एक गौ हजार गौ के समान होतीहै २३ इन्हीं

गुणोंसे क्षत्रीकाभी फलसुनों कि निश्चय करके उसकी गौभी ब्रा-
ह्मणकी गौके समानहोतीहै २४ जो वैश्य में भी यही गुणहोंय तो
उसकी एकगौ भी पचास गौ के समान होतीहै और जो शूद्रनम्रता
आदि गुणोंसे भराहै उसका फल भी चौगुना वर्णन कियाहै २५
जो योग्य पुरुष सत्यता में प्रवृत्त प्रवीण गुरूकी सेवा करने वाला
क्षमावान देवताकी उपासना करने वाला शान्तरूप पवित्र ज्ञानी
धर्म का अभ्यासी होकर अहंकार से रहित इस रीति से कर्म को
करताहै २६ वह इसरीति से दूधवाली गौको ब्राह्मणके अर्थ दान
करके बड़े फलको पाताहै सदैव मध्याह्नके समय एक बार भोजन
करनेवाला सत्यमें नियत गुरूकी सेवा करनेवाला मनुष्य बारं-
बार दान करे २७ गौओंके मध्यमें वेदका पढ़नेवाला गौओंकी ही
भक्ति रखनेवाला जो मनुष्य सदैव दान करके गौओंको स्तुति
पूर्व्वक तृप्त करताहै और जो जन्म से लेकर मरण पर्य्यन्त गौओं
को नमस्कार करताहै हे इन्द्र उसके भी फलको मुझ से सुनों २८
पूजन करके राजसूय यज्ञमें जो फल होताहै अथवा अधिक सुवर्ण
से पूजनकरके जोफलहोताहै वह सब साधू ऋषि और सिद्ध लोगों
ने समान और उत्तम कहाहै २९ गौकाव्रत रखनेवाला सत्यवक्ता
शान्तरूप निर्लोभ मनुष्य भोजनके समय अपनीसिद्ध भोजनमें से
सदैव थोड़ा भोजनगौके निमित्त निकालकर भोजनकरे तो एकवर्षमें
एकहजार गौदानके फलको पाताहै ३० गौकाव्रत रखनेवाला और
घास आदिसे उनका पोषण करनेवाला जो मनुष्य एक भाग आप
खाय और दूसरा भाग गौओंको सदैव खिलावे वह दशवर्षमें असं-
ख्य गौदानके फलको पाताहै ३१ हे इन्द्र जो पुरुष अपने एक
समयके भोजनको इकट्ठाकरके उसके मूल्यसे गौओंको मोललेकर
दान करताहै उसगौके शरीरमें जितने बालहोतेहैं ३२ वहउतनेही
गौदानोंका सनातन फल पाताहै यहतो ब्राह्मणके गौदानका फल
है अब क्षत्रीका सुनों ३३ पांचवर्षके भोजनके मूल्यसे गौओंकादान
करनेसे क्षत्रीकाभी फल ब्राह्मणके फलके समान होताहै वैश्यका

फल उसका आधा और शूद्रकाफल बैश्यका आधा होताहै ३४ जो अपने शरीरको बेचकरके उसके मूल्यसे गौओंको मोललेकर दान करताहै वह इस ब्रह्माण्डमें जबतक गौओंको देखे तबतक फलको भोगताहै ३५ हेमहाभाग गौओंके प्रत्येक रोममें अनेक अविनाशी लोक वर्णनकियेहैं जोराजा युद्धोंमें गौओंको जीतकर दान करताहै उसको अपने शरीर बेचनेके समान अबिनाशी फलका भोगनेवा-लाजानो ३६ जोब्रतमें सावधान मनुष्य गौओंके न होनेपर तिलकी गौको दान करताहै वह गौकेद्वारा दुर्गमस्थानोंसे पार होकर दूध की नदीपर आनन्दोंको भोगताहै ३७ उन्होंकादान केवल प्रशंसा केही योग्य नहीं है किन्तु दानके समय दानपात्र ब्राह्मण औरगौके गुणोंसे उसके प्रकार वा दानकी विधिभी विचारनी उचितहै समय की परीक्षा ब्राह्मण और गौओंके गुणोंकी परीक्षा और उनमेंन्यूना धिकता जो अग्नि और सूर्य्यके समानहै इनसब बातोंका जानना बड़ा कठिनहै ३८ जो वेदपाठी पवित्र जन्मा शान्त रूप वेदकेअनु-सार अग्नि होत्रादि करनेवाला पापोंसे भयभीत दान शिरोमणि गौओंमें क्षमायुक्त मृदुस्वभाव रक्षाके स्थान जीविका की ओरसे दुखित है उस प्रकार के ब्राह्मणको पात्रबर्णन किया है ३९ जो ब्राह्मण जीविका की ओरसे महादुःखी होकर पीड़ित है उस के निमित्त खेतीकेलिये वा होमकेलिये गुरूकेलिये और बालकों के पोषणकेलिये पुत्रके जन्मके समय उत्तमदेश और कालमें गौओं-को दानकरे ४० हे इन्द्रजो घरकी उत्पन्नहुई गौ अथवा ज्ञान सेवा प्राणोंसे वा पराक्रमसे प्राप्त बिवाहके समय स्वसुरालसे मिलीहो अथवा मरनेसे बचाईहुईहो और जो पोषणके द्वाराप्राप्त होनेवाली हैं इन उपायोंसे गौओंके प्रकार प्रशंसाके योग्यहैं ४१ पराक्रमी प्रसन्नमूर्त्ति तरुणता युक्त सुगन्धित ऐसी सब गौवें प्रशंसाकेयोग्य हैं जैसेकि नदियोंमें श्रेष्ठ श्रीगंगाजीहैं उसी प्रकारगौओंमें कपिला गौ उत्तमहै ४२ हेराजा तीनरात्रितक जलका आहारकर पृथ्वीपर निवासकरके गौदानकरे भोजनसेतृप्त अच्छीसेवाकरीहुई गौअच्छी

हृष्टपुष्ट दूधपीनेवाले बछड़ेसमेत उन ब्राह्मणोंको दानकरनीउचित है जो अच्छे प्रकारसे तृप्त कियेगयेहोंय और गोदान करके तीन दिनतकगोरसोंसे अपना जीवनकरना उचितहै जो सुन्दरव्रतवाला मनुष्य कल्याण रूप सवत्सा दूध देनेमें साधू भागने न वालीगौ को दान करता है वह गौ के शरीर के रोमसंख्या के समान वर्षों पर्य्यंत परलोकमें निवास करतेहैं ४४ इसीप्रकारभार वाहकता के योग्य तरुण पराक्रमी शिक्षित हल उठानेवाले अत्यन्त बलिष्ठ बैलको जो ब्राह्मणके अर्थ दानकरताहै वहदशगोदान करनेवालेके लोकोंको प्राप्त होताहै४५ हे इन्द्र जो मनुष्य महावनमें चारों ओर से गौ और ब्राह्मणोंकीरक्षा करताहै वह क्षणमात्र मेंही सब पापोंसे छूटताहै अब उसके पुण्यफलकोसुनो४६ हेइन्द्र उसका फल अश्व-मेध यज्ञके समानहोकर सदैव नियत रहताहै और मरने के समय जिन२लोकोंमें उसकेजानेकी वृत्तिहोतीहै उन२ अनेकप्रकारके दिव्य लोकोंमें जाताहै और अनेकअक्षय उत्तम भोगोंको भोगताहै ४७।४८ गोलोकमें गौओंका आज्ञा कारी होकर वह दाता सर्वत्र प्रतिष्ठाको पाताहै जोमनुष्य इस न्यायसे वनोंमें गौके पीछे चलताहै ४६ घास गोबर औरपत्तोंका खानेवाला अनिच्छापूर्व्वक सावधान और पवित्र है हेइन्द्र वह प्रसन्नचित्तमेरे लोकमें निवास करनेके योग्यहै यद्यपि वह इच्छा नहीं करे अथवा जिस लोकमें इच्छा करता है उस में भी देवताओं समेत निवास करता है ५० । ५१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेत्रिसप्ततितमोऽध्याय:७३॥

चौहत्तरवां अध्याय॥

इन्द्रने कहा कि जो मनुष्य जान बूझकर गौको चुरावे अथवा धनकी इच्छा के कारण से वेचे उसकी गति कैसे और कहां होस-कीहै इसको मुझे समझाइये १ ब्रह्माजी बोलेकि जो मनुष्य भक्षण के निमित्त अथवा बेचने के लिये गौकी चोरी करते हैं व ब्राह्मण के अर्थ दान देनेके हेतुसे चुरातेहैं उनके फलोंको कहताहूं तुममन

सुनो २ गुरू और शास्त्रसे निरंकुश होकर जो मनुष्य मांस बेचनेके लिये गौको मारताहै व भक्षण करताहै और जो मांसके आकांक्षी गौ मारनेवालेको अनुमति देतेहैं यह तीनों अर्थात् मारनेवाले खने वाले और अनुमति देने वाले यह सब उतने काल तक नर्क में पड़तेहैं जितने कि उन गौओं के शरीर में रोम होते हैं ४ हे समर्थ जिस प्रकार के जो दोष ब्राह्मण और यज्ञके नाश करने वाले मनुष्य में होते हैं उतनेही दोष गौओं के बेचने और चोरी करने में कहेहैं ५ जो मनुष्य गौको चुराकर ब्राह्मण के निमित्तदान करताहै उसके दान का जितना फलहै उतने ही बर्षतक नर्क को भोगताहै ६ हे महा तेजस्वी गोदान में सुवर्ण की दक्षिणा कही है क्योंकि सब दक्षिणाओं से उत्तम सुवर्ण की दक्षिणा होतीहै इस में जरा भी सन्देह नहींहै कि गोदान से सात पूर्वके और सात पिछले पुरुषों का उद्धार होताहै और सुवर्ण युक्त दक्षिणासे वही गोदान दूने फल वाला हो जाता है ७। ८ हे इन्द्र सुवर्ण का दान महा उत्तम है सब से श्रेष्ठ सुवर्ण की दक्षिणा होती है सुवर्ण पवित्र करनेवाला है इसीसे सब पवित्र बस्तुओं से वह उत्तम गिना जाता है ९ हे वड़े तेजस्वी इन्द्र जात रूप नाम सुवर्ण को सब सुवर्णोंसे श्रेष्ठऔर पवित्र कहाहै यह मैंने दक्षिणाका आशय वर्णन किया१० भीष्मजी बोले हे भरतर्षभ ब्रह्माजी ने इन्द्र को यह उपदेश किया और इन्द्र ने राजादशरथ जीसे कहा और पिता दशरथ जीने रामचन्द्रजीसे कहा ११ रामचन्द्रजीनेभी अपनेप्यारे भाई यशस्वी लक्ष्मणजी से कहा और वनवास करने वाले लक्ष्मणजी ने ऋषियोंसे वर्णन किया १२ यह दान धर्म परंपरा पूर्व्वक प्राचीन चला आयाहै फिर तीव्रव्रत रखनेवाले ऋषि और धर्म के अभ्यासी राजा लोगों ने कठिनता से अभ्यास करने के योग्य इस दान धर्म को अभ्यास कियाहै १३ हे प्रभु युधिष्ठिर फिर इस धर्मको उपाध्याय ने मुझसे कहा जो ब्राह्मण सदैव ब्राह्मणों की सभामें इस दान धर्म को वर्णन करताहै १४ और यज्ञों में गोदानों में किन्तु

दोनों की वर्त्तमानतामें वर्णन करे निश्चय करके सदैव उसके लोक देवताओं समेत अविनाशी होते हैं १५ उस भगवान् परमेश्वर ब्रह्माजी ने इसको अपने मुखसे वर्णन किया है १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगोलोकप्रश्नेचतुस्सप्ततितमोऽध्यायः ७४॥

पचहत्तरवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे समर्थ पितामह विश्रंभितदशामें धर्मोंके वर्णन करनेवाले आप मेरे कहेहुये सन्देहों को निवृत्त कीजिये १ हे बड़े तेजस्वी व्रतोंका फल कैसा और कौनसा होताहै अथवा प्रबन्ध और रीति समेत वेदपाठ करने का क्या फलहै २ इस लोकमें दानका और वेदोंके धारण करने का क्या फलहै अथवा वेद पढ़ाने का कौन फलहै इन सब के जानने की मेरी इच्छाहै ३ हे पितामह इसलोक के मध्यमें दान न लेनेवाले ब्राह्मणको क्या फल मिलताहै जो पुरुष शास्त्र अथवा ज्ञानको देताहै उसका क्या फल देखागयाहै ४ और अपने कर्ममें प्रवृत्त शूरवीरोंका क्या फल हैवा शौच अर्थात् बाह्याभ्यन्तरकी पवित्रता ब्रह्मचर्य्यता पिता माताकी सेवा आचार्य्य गुरूकीसेवा दूसरेके दुःखसेदुःखी होना और उसके दुःख के दूर करने का उपाय करना इन सबका क्या२फलहै ५।६ हे धर्मज्ञ पितामह यह सब जैसाहै उसको मैं मूलसमेत सुनना चाहताहूं इसमें मेरी बड़ी रुचिहै ७ भीष्मजी बोले कि जो व्रतजिस रीति से उपदेश हुआ है और अच्छेप्रकारसे प्रारंभकरके समाप्त कियागयाहै वह उसी प्रकार करके प्राप्त होताहै उस व्रत करने वाले को सनातनलोकों की प्राप्ति होतीहै ८ हे राजा इस लोकमें नियमोंका फल प्रत्यक्ष देखने में आता है तुमने भी नियमों का और यज्ञों का फल प्राप्त कियाहै ९ वेदपाठका फल भी इसलोक और परलोकमें दृष्ट पड़ताहै अर्थात् इसलोक और परलोक दोनों में आनन्दोंको भोगता है १० हे राजा तुम शान्तचित्त होनेके फल को व्योरे वार सुनो अपनी इन्द्रियोंको जीतनेवाले मनुष्य सब

स्थानों में सुख पूर्व्वक आनन्द से नियत होतेहैं ११ वह जितेन्द्री तप वल्कद्वारा स्वर्गमें आनन्द करतेहैं यथेच्छा सर्वत्रगमन करनेवाले होकर सब शत्रुओंके मारनेवाले होतेहैं १२ वह जितेन्द्री लोग जो चाहतेहैं उसीको निस्सन्देह प्राप्तहोतेहैं हेयुधिष्ठिर जितेन्द्री मनुष्य सर्वत्र अपने अभीष्टोंको पातेहैं १३ नानाप्रकारके दान और यज्ञोंसेजोफल प्राप्तहोतेहैं वह जितेन्द्री शान्तपुरुषको इच्छाहीसे प्राप्त होजातेहैं दान से जितेन्द्री पुरुष उत्तमहैं दाता ब्राह्मण के अर्थ कुछ देताहै १४ तो क्रोध करताहै परन्तु जितेन्द्री शान्तचित्त पुरुष नहीं करता है इसीसे दानी पुरुष से शान्तचित्त जितेन्द्री मनुष्य उत्तम है जो मनुष्य क्रोध रहित होकर दान करताहै वह सनातन लोकोंको प्राप्त करताहै १५ जोकि क्रोध दानको नाशकरताहै इसीहेतुसे जितेन्द्री शान्तवृत्ती मनुष्य दान से श्रेष्ठतमहै हे महाराज स्वर्गमें हजारोंस्थान दृष्टिसे अलक्षहैं १६ वहसब ऋषियों के लोक कहलातेहैं उनलोकोंको देवता लोगही प्राप्त करतेहैं अथवा शान्तवृत्ती जितेन्द्री महर्षी लोग उनको पातेहैं १७ क्योंकि वह महर्षी उन उत्तम स्थानोंके अभिलाषी होतेहैं इसकारण शान्त जितेन्द्री दानसे श्रेष्ठतर है वेदका पढ़ानेवाला भी बड़ी कठिनता से उस अबिनाशी फलको पाताहै १८ हे राजा बुद्धिके अनुसार अग्नि में हवन करके ब्रह्मलोक में जाताहै जो मनुष्य वेदोंको पढ़कर न्याय जाननेवालों को पढ़ाताहै १६ और गुरूके कर्मोंकी प्रशंसा करने वालाहै वह भी स्वर्गमें प्रतिष्ठापाताहै जो क्षत्री वेदपाठ अथवा जप यज्ञ दान आदि कर्मोंमें प्रवृत्तहै और युद्धमें सबका रक्षकहै वह भी स्वर्गमें प्रतिष्ठाको पाताहै २० अपने स्वधर्म और कर्मोंमें प्रवृत्त वैश्य भी दान के द्वारा ऐश्वर्य्यको पाताहै और अपने कर्ममें प्रीति करनेवाले शूद्रादि सबवर्ण सेवाआदिके द्वारा स्वर्गको जाते हैं २१ शूरवीर अनेक प्रकार के कहे और उनकरने के योग्यकर्मोंमें शूरोंके प्रयोजनोंको और जो २ शूरवीरोंके फलकहेहैं उनसबको सुनिये २२ कोई तो यज्ञ करने में शूरहैं कोई इन्द्रियों के जीतने में शूरहैं कोई

सत्यतामें शूरहैं कोई युद्ध करने में शूरहैं और कोईदानमें शूरकहाते हैं २३ वहुतसे मनुष्य सांख्यविद्यामें शूरहैं कोई योगमें शूरहैं और कोई गृहआदिके पूर्णत्यागी वनके वास करनेमें शूरहैं २४ इसी प्रकार वहुतसे सत्यवक्तापनेमें शूरहैं और कोई वाह्याभ्यन्तरकी इन्द्री जीतनेके कर्मोंमें प्रवृत्तहैं २५ वहुतसे वेदपाठ वेद पढ़ानेकी प्रीति २६ गुरूकी सेवाकरना पिताकी सेवा करना माताकी सेवा करना इनसब बातोंमें शूरहैं इसीप्रकार वहुतेरे भिक्षामांगनेमें शूर हैं २७ और वनमें वा अपने गृहमेंअतिथिके भोजनकरानेमेंवहुतसे शूरवीरहैं यह सब अपने २ कर्मोंके फलसे विजय कियेहुये उत्तम लोकोंको पातेहैं २८सब वेदोंके धारण करनेवाले वा सबतीर्थोंके स्नान करनेवाले इन दोनोंप्रकारके लोगोंकेही समान सदैव सत्यतामेंकर्म करनेवाला होताहै २९ जो हजार अश्वमेधके फलको और सत्यताको तराजूमें रक्खा तो उन अश्वमेधोंसे सत्यताही अधिक हुई ३० सत्यतासेही सूर्य्य प्रकाशमानहैं अग्नि भी सत्यताहीसे प्रकाशित होकर देदीप्य होतीहै सत्यतासेही सब वायु चलतेहैं सब सत्यतामें नियतहैं ३१ देवतापितर और ब्राह्मण भी सत्यसेही तृप्त होतेहैं यह सत्यहीउत्तमधर्म कहाजाताहै इसीहेतुसे सत्यको कभी न छोड़े ३२ मुनिलोग सत्यमें नियत होकर सत्यपराक्रमी और सच्चेप्रकारके हैं इसीसे सत्यता अश्वमेधोंसे भी अधिक होतीहै ३३ हे भरतर्षभ सत्यवक्ता पुरुष स्वर्गलोकमें आनन्दकरते हैं यह सब जितेन्द्री होनेके और सत्यताके फलका मिलना मैंने वर्णन किया ३४ जो चित्त समेत इन्द्रियोंके जीतनेवाले हैं वह निस्सन्देह स्वर्गमें प्रतिष्ठा पातेहैं हेराजा अवतुम ब्रह्मचर्य्यके फलको सुनो ३५ जो मनुष्य इसलोकमें जन्मसे लेकर मृत्यु पर्य्यन्त ब्रह्म चर्य्यमें रहताहै उसको कोई पदार्थ भी अप्राप्त नहीं है इसको तुम निश्चयजानो३६ हजारों लाखों ऋषिलोग जो कि सदैव सत्यतामें प्रवृत्त जितेन्द्री और ऊर्ध्वरेताहैं वह ब्रह्मलोकमें निवासकरतेहैं ३७ हे राजा सेवन कियाहुआ ब्रह्मचर्य्य सवपापोंको भस्म करता है

मुख्यकरके ब्राह्मणसे सेवन कियाहुआ ब्रह्मचर्य्य अवश्य पापोंको भस्म करताहै क्योंकि ब्राह्मण अग्निरूप कहाजाता है ३८ यह बात ब्राह्मण और तपस्वियोंमेंप्रत्यक्षहै जैसे कि ब्रह्मचारीसे विजय कियाहुआ इन्द्र भयभीत होताहै ३९ उसीप्रकार इसलोकमें ऋषियोंके ब्रह्मचर्य्यका फल देखनेमें आताहै माता पिताके पूजनमें जो धर्म है उसको भी मैं कहताहूं तू सावधान होकर सुन४० जो मनुष्य माता पिता भाई गुरू और आचार्य्यको सेवा करताहै और उनमें कभी दोषनहीं लगाताहै ४१ उसका यह फलहै कि वह सेवा करने वाला पुरुष स्वर्गलोक में प्रशंसनीय उत्तमस्थान को पाता है और गुरूकी सेवाके कारणसे ज्ञानी लोग कभी नरकको नहीं देखते४२

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगोलोकप्रश्नोनामपंचसप्ततितमोऽध्यायः ७५ ॥

छिहत्तरवां अध्याय ॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकिया कि हे राजा पितामह गोदानकी उत्तम वृद्धिको मुख्यता समेत सुनना चाहताहूं जिसके द्वारा अभिलाषी लोग सनातन लोकोंको प्राप्तकरें १ भीष्मजी बोले हे राजा गोदान से श्रेष्ठतर कोई बस्तु नहींहै न्यायसे प्राप्तहुई गोका दान बिधि पूर्व्वक होनेसे वह गो बहुतही शीघ्र कुलभरको तारताहै २सत्पुरुषों का जो धनादिक अर्थ अच्छीरीतिसे प्राप्त कियाजाताहै वह इस सृष्टिके निमित्त कल्पना कियाजाता है इसीहेतुसे उस पूर्व्वसमय सेभी पूर्व्व जारी हुये गोदानके लिये उनकी उत्पत्तिआदिको और जैसे कि ३ पूर्व्वसमयमें समीप आनेवाली गौके विषयमें सन्देहसे युक्त राजा मान्धाताने प्रश्नकिया और उसका उत्तर जैसे बृहस्पति जीने दिया वह सब मैं तुमसे कहताहूं तुम चित्तसे सुनो ४ कि व्रत में सावधान मनुष्य ब्राह्मणको सत्कार करके यह वचन कहै कि कलके दिन गोदान होगा आप आइये अथवा अपनेमरनेका समय जानकर दानके निमित्त लोहितवर्ण गौ खोजकर दानकरे ५ उस

लोहित वर्णा गौको रोहिणी कहतेहैं उसको इस संबोधनसे बोले कि हेसमंगेहे वहुले और गौओंके मध्यमें जाकर इस श्रुतिकोपढ़े (गौमेंमातावृषभःपितामेदिवंशर्मजगतीमेप्रतिष्ठाप्रपद्येवंशवरीमुत्स्यगोषुपुनर्वाणीमुत्सृजेद्गोप्रदाने) इत्यादि श्रुतियोंकोपढ़े इनका अर्थ यह है कि गौ मेरी माताहै वैल मेरापिताहै हे गौ तू इसलोक और परलोक का सुख और प्रतिष्ठा हमको दे इसरीतिसे रात्रिके समय गौशालामें गौओंके मध्यमें निवास करके फिर प्रातःकाल गोदानके समय-गोदानके वचनको कहै वह मनुष्य उसी एकरात्रिमें गौओंके साथ समान प्रकृति समानव्रत और पृथ्वी शयनकरनेवाला होकर७ एकरूप होनेसेशीघ्रही पापोंसे छूटताहै ८ जिसका उत्तमवछड़ा छोड़ा गया हो उस गौको सूर्य्योदयमें सूर्य्यका दर्शन करके दानकरना योग्यहै ऐसा करनेसे मंत्रोंमें वर्णन किये हुये आशीर्वाद तुमकोप्राप्त होंगे ९ वह सब आशीर्वाद उत्साह वा ज्ञानसे युक्त यज्ञमें अमृतके क्षेत्ररूप इस संसारकी प्रतिष्ठा और ऐश्वर्य्यके उत्पादक और सनातन प्रवाहरूप प्राजापत्य नाम से प्रसिद्धहैं १० हे सूर्य्यसंबंधिनी गौ मेरे पापोंको दूरकर हे चन्द्रसंबंधिनी गौ स्वर्गजानेके निमित्तकारणरूप होकर मातांके समान मेरे आत्माकीरक्षाकरो इसरीतिसे मुझको कहेहुये वा न कहेहुये आशीर्वाद प्राप्तहों ११ हे गौ जोकि तुम रोगके दूर करनेमें पंचगव्यादिक कर्मोंसे सरस्वती आदि नदियोंके समान कल्याण करनेमें प्रवृत्तहो और सवपुण्यों कीधारण करनेवाली हो इसहेतुसे तुम सबकी प्यारी उपाधियों से रहित गति मुझको दिखाओ १२ जो तुमहो वह मैं हूं अन्नमें तुमसे एकता करनेवाला होकर तुमको दान करके अपनी आत्माका दान करने वालाहूं मनसे प्रकट मनकेही रूप सौम्य और उदयरूप होकर तुम मुझदाताको अभीष्ट भोगोंसे युक्त करके प्रकाशमान करो १३ इसरीति से गोदान करनेवाला प्रथम देखेहुये आधे श्लोकको बुद्धिके अनुसार उस गौके आगे होकर प्रथम पढ़े और बुद्धिका जाननेवाला दानलेनेवाला ब्राह्मण दानकोलेताहुआ गोदानके समय

चाकी का आधा श्लोक पढ़े १४ जो मनुष्य गौकीनिष्क्रेणी दक्षिणामें वस्त्र अथवा पृथ्वीका दान करनेवालाहै उसको भी गोदान करनेवाला कहना उचितहै और ब्राह्मणको इसरीतिसे कहै कि यह ऊर्ध्वमुख रखनेवाली वैष्णवीगो मैं दान करताहूं आप ग्रहण कीजिये इसरीतिसे कहकर वह दाता अपने बिचारादिके अनुसार दशगौके नामोंको उच्चारणकरे तब वह हजार गोदानके फलको पाताहै१५।१६इसप्रकारसे क्रमपूर्व्वक इन गौ आदिके गुणोंको जाने परन्तु प्रत्यक्ष गोदान करनेवाला गौके आठवें चरणपर उनसब गौओंके दानको प्राप्तकरताहै१७गोदान करनेवाला शीलवान्पुरुष वा गौके मूल्यका देनेवाला यह दोनों निर्भयहोतेहैं और सुवर्णका देनेवाला कभी दुःखीनहींहोता जो स्नानकरके प्रातःकालके नित्य कर्मोंके करनेवालेहैं और जो महाभारतके जाननेवालेहैं वह विष्णु भगवान्के भक्त चन्द्रमाके समानदर्शनवाले प्रसिद्धहैं १८गौको कामा षष्ठीके दिन दानकरके रात्रितक व्रतकरनेवाला होकरएकरात्रिमें तो उन गौओंकेसाथ निवासकरेऔरगोरस गोमय वा गोमूत्रसे अपना निर्वाह करना चाहिये१९ वैलका दानकरनेमें देवताका व्रत रखने वाला अर्थात् ब्रह्मचारी सूर्य्यमंडलको चीरकर जानेवाला होताहै और इस वैलकेदान से वेदोंकी प्राप्तिहोतीहै इसीप्रकार गौओंकी वृद्धिको पाकर पूजन करनेवाला मनुष्य उत्तमलोकोंको पाताहै जो बुद्धिसे अज्ञात हैं वह नहींपाता२०जोमनुष्य इच्छाके अनुसार दूध देनेवाली एकगौको दान करताहै वह उसी एकदानमें नियतहोकर सबदानोंकेफलोंको और सबप्रकारके अभीष्टोंको प्राप्तहोताहै हव्य कव्य देनेवाली तीन गौभी सुंदर फलोंकी देनेवालीहैं और जो उनसे अधिक श्रेष्ठ गौओंका दान होय तो वह औरभी कल्याणकारीहै २१ जो मनुष्य शिष्यता रहित व्रतोंसे हीन श्रद्धा से विगत और कुटिल बुद्धिहै उसको यह गोदान का विषय नहीं सुनाना चाहिये यह धर्म सबलोकोंमें गुप्तरूप है इसको जहां तहां कहना अयोग्यहै २२ इसलोकमें श्रद्धामान मनुष्यहैं और मनुष्योंमें नीच

और राक्षस अथवा राक्षस बुद्धिके भी लोग होतेहैं उनको दिया हुआ यह गोदान शास्त्र अप्रियकारी होताहै जो थोड़ा पुराय रखने वाले नास्तिकतामें नियत २३ निकृष्टकर्मीभी जो २ राजा लोग बृहस्पतिजी के इसवचन को सुनकर वहुत से गोदानों को करके स्वर्गलोकोंमें गये उनको मैं वर्णन करताहूं तुम मनसे सुनो २४ उशीनर, विश्वगव्य, नृग, भगीरथ, विश्रुत, यौवनाश्व, मांधाता, मुचुकुन्द, राजाभूरिद्युम्न, नैषध, सोमक २५ पुरूरवा, चक्रवर्ती भरत जिसके वंश में सब भरतवंशीहैं इसीप्रकार दशरथके पुत्रबीर रामचंद्रजी और इनके विशेष जो २ शुभकीर्त्ति वाले प्रसिद्ध हैं२६ ऐसेही बड़े कर्मवाला शास्त्र बुद्धीका ज्ञाता राजादिलीप यह सब गोदानोंकेही द्वारा स्वर्गमें पहुंचे राजा मांधाता यज्ञ दानतप और राज धर्मपूर्व्बक गोदान में बिख्यातथा २७ हे राजा युधिष्ठिर इसीहेतुसे तुम भी मेरे कहेहुये इस बृहस्पतिजीके वचनको चित्त में धारण करो तुम कौरवों के राज्यको पाकर बड़े प्रसन्न चित्तसे पवित्र गौओंका दान ब्राह्मणों के अर्थ करो २८ वैशंपायन बोले कि भीष्मजी से आज्ञा लेकर धर्मराज युधिष्ठिरने गोदान में बुद्धिकरके जैसा पितामहने कहा वैसाही किया उस राजाने उस धर्मको उसी प्रकार धारण किया जैसे कि बृहस्पति जीने राजा मांधाताको उपदेश किया था २९ हे राजा तब वह राजा गोदानोंके करने में सदैव गोबर समेत जब कणों को खाता बैलके समान पृथ्वीतलमें सोता शिखाधारी और मनको स्वाधीन करने वाला होकर राजाओं में श्रेष्ठ हुआ ३० वह राजा सदैव उनगौओंके निमित्त मनसेऐसासावधान रहा कि उनकी प्रतिष्ठा करके किसी राजधर्म में वा सवारी आदिमें कभी न जोड़ा जहां तहां जब कभी जाताथा तब उत्तमघोड़ों कीही सवारी में जाताथा ३१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगोदानवर्णनेषट्सप्ततितमो ऽध्यायः ७६ ॥

—※—

सतहत्तरवां अध्याय॥

वैशंपायन बोले कि इसके पीछे नम्रता पूर्वक बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर ने गोदान के विस्तारको फिर भीष्मजी से पूछा १ युधिष्ठिर बोले हे भरतवंशी वीर भीष्मजी आप गोदान के गुणों को फिर अच्छे प्रकार से वर्णन कीजिये आपके इन अमृतरूपी वचनों के सुननेसे मैं तृप्त नहीं होताहूं २ वैशंपायन बोले कि धर्मराज के इसप्रकार के वचनों को सुनकर राजा भीष्मजी ने गोदान के शुद्ध गुणों को अच्छी रीति से वर्णन किया ३ भीष्मजी बोले कि जो गौ बछड़े से प्रीति करनेवाली तरुण गुणवाली और वस्त्रों से युक्त है ऐसी गौको जो वेदपाठी ब्राह्मण के अर्थ दान करताहै वह सब पापोंसे मुक्त होजाता है ४ गोदान करनेवाला उनलोकों में नहीं जाता है जो अन्धकार से पूर्णहैं जोगौ जल घास आदिसे तृप्त दूध न देनेवाली इन्द्रियों से रहित ५ वृद्धावस्था और रोगों से युक्तनिर्जल वापी के समान दुर्बल है ऐसी गौकादान करके जो मनुष्य ब्राह्मण को कष्टमें डालताहै वह अन्धतामिस्र नरकमेंपड़ता है ६ जो गौ दोषसे युक्त क्रोध रूप और रोगों करके दुर्बलहैं अथवा विना मूल्य दिये प्राप्त हुईहैं वह दानके योग्य नहींहैं जो मनुष्य वेदपाठी ब्राह्मण को निरर्थक कष्टों से युक्त करताहै उसके सबलोक निर्बल और निष्फल होतेहैं ७ ऐसी गौओं की सब लोग प्रशंसा करते हैं जो बलवान् होकर महा सौम्य प्रकृति तरुण रूप सुगन्ध से युक्त हैं जैसे कि सब नदियोंमें श्रीगंगा जी उत्तम हैं उसीप्रकार गौओं में श्रेष्ठ कपिला गौ होती है ८ युधिष्ठिर ने प्रश्न किया कि बहुत से गोदान जोकि सामग्री में बराबर हैं उन सब दानोंमें कपिला गौ का दान सत्पुरुषों ने किसहेतुसे उत्तम कहाहै उसको अच्छीरीति से मैं सुनना चाहताहूं हे महाप्रभावयुक्त मैं प्रश्नकरने में समर्थहूं आप उसके कहने में आलस्य न करें भीष्मजी बोले हे तात जो मैंने वृद्धोंके मुखसे प्राचीन वृत्तान्त सुना है उसको मैं

संपूर्णतासे कहूंगा जैसे कि गौओंकी उत्पत्ति हुई है ९ । १० पूर्व काल में ब्रह्माजीने दक्षप्रजापति को आज्ञादी कि तुम सृष्टिको उत्पन्न करो तब दक्षने संसार की प्यारी जीविका को प्रथम उत्पन्न किया ११ हेसमर्थ जैसे कि देवता लोग अमृत का आश्रय लेकर जीवतेहैं इसीप्रकार यह सृष्टि और पृथ्वी के सब जीवमात्र जीविका के आश्रयसे जीवते रहतेहैं १२ चैतन्य चेष्टावान् जीव जड़ और अचेष्टोंसे उत्तमहैं और सबमें ब्राह्मण उत्तमहैं उन्हीं ब्राह्मणोंमें यज्ञ नियतहैं १३ यज्ञोंसे अमृत प्राप्त होताहै और वह गौओंमें नियत है उसीसे देवता प्रसन्न होतेहैं इसी हेतुसे प्रथम जीविका है उसके पीछे सृष्टिहै १४ उत्पन्न होतेही जीवधारी जीविकाकी ही इच्छा करके पुकारतेहैं और वह प्यासे और भूखे माता पिता के समान जीविका देनेवालेके समीप वर्त्तमान होतेहैं १५ तबभगवान् प्रजापतिजीने उसको इसरीतिसे विचारकर अपनी सृष्टिकी उत्पत्ति के निमित्त अमृतको पान किया १६ अच्छी सुगंधित डकारें लेतेहुये प्रजापतिजीने उसकी तृप्तता को प्राप्तकिया और डकारयुक्त मुख से उत्पन्न हुई अपनी पुत्री सुरभी नामगौको देखा १७ उससुरभी ने उन अपनी पुत्रियोंको उत्पन्न किया जोकि लोकोंकी मातासुवर्ण सी कपिल वर्ण सृष्टिकी आजीविकाको उत्पन्नकरने वालीहैं १८ उन अमृतवर्णा चारों ओरसे चेष्टा करनेवाली गौओंके अमृतसे ऐसे फेण उत्पन्नहुआ जैसे कि नदियोंकी लहरों से फेण उत्पन्न होता है १९ बछड़ेके मुखसे गिराहुआ वह फेण पृथ्वीके ऊपर विराजमान रुद्रजीके शिरपर आनकर गिरातब क्रोधसे युक्त गौको संतप्त करते हुये प्रभुशिवजीने ललाटके तीसरे नेत्रसे उनकोदेखा हेराजा इसके अनन्तर रुद्रजीके उसतेजने उनकपिला गौओंको २० । २१ नाना प्रकारके रंगोंसे युक्त ऐसे करदिया जैसे कि सूर्य्य बादलों के अनेक रंग करदेतेहैं और जो गौ उससे पृथक् होकर चन्द्रमा के आश्रित हुईं वह अपने मुख्यरूपमेंही रहीं उनका दूसरारूप नहीं हुआ फिर प्रजापतिजीने उन क्रोधयुक्त महादेवजीसे कहा कि २२ । २३

आप अमृतसे सींचेगयेहो गौओंकी उच्छिष्ट नहीं होतीहै जैसे कि अमृतको लेकर चन्द्रमा वर्षाताहै उसीप्रकार यहगौवेंभी अमृत से उत्पन्न दूधको देतीहैं वायु, अग्नि, सुवर्ण, नदी,समुद्र इनमें कभी दोष नहीं होताहै वैसेही गौओंका अमृतरूप दूधभी दूषित नहीं होताहै पियाहुआ अमृत और वछड़ेसे पानकरी हुई गौभी दोष को नहींपातीहै २४।२५ वह गौवें अपनेघृतसे इनलोकोंको पोषण करेंगी सबसृष्टि के जीव इन गौओं के ऐश्वर्य्य और अमृतरूप शुभकारी दूधको चाहते हैं यह कहकर प्रजापतिजीने उनकी प्रसन्नता के अर्थ गौओंसे युक्त एक बैलदिया २६ हे भरतवंशी उसदान से रुद्र-जीको मनसे प्रसन्न किया तब प्रसन्न होकर शिवजीने उसबैलको अपना वाहन बनाया २७ और अपनी ध्वजा में भी उसी बैल का चित्र धारण किया इसीहेतुसे वह शिवजी वृषभध्वज कहलाते हैं इसके अनन्तर शिवजीको देवताओंने पशुपतिभी वर्णनकिया ऐसे गुणोंके निधान ईश्वर गौओंके मध्यमें वृषभध्वज कहेगये २८ इसहेतुसे इनसब रूपान्तर वर्णसेपृथक् बड़ीतेजस्वी कपिला गौओं के दानमें पूर्वकल्प वर्णनकिया (कल्प उसशास्त्रको कहतेहैं जिसमें दानादिकका वर्णनहो) २६वहगौवें सृष्टिकीमान्य और संसारकीजी-विकाकेनिमित्त उत्पन्नहोकर रुद्रजीसेयुक्त अमृतचूनेवाली सुशील पुण्यकारी पवित्रात्मा और प्राणोंकी देनेवालीहैं उनगौओंको दान करके सब अभीष्टोंका देनेऔरप्राप्तहोनेवाला होताहै पवित्रता और मंगलोंको प्रियमाननेवाला मनुष्य सदैव गौओंकी इसउत्पत्ति को औरउत्तमबुद्धिकोपढ़ताऔर सुनताहुआकलियुगकेपापोंसेमुक्तहोता है और सदैवशोभासेयुक्तधनपशुपुत्रादिसेभीसम्पन्नहोताहै ३०।३१ हे राजा दानकरनेवाला मनुष्य सदैव गौओंकेदानमें इनसब गुणों कोप्राप्तकरे और देवता वा पितरोंके दानके योग्यवस्तु तर्पण शांति कर्म सवारी वस्त्र और वृद्धवालकों को तृप्त करना यहभीकरे ३२ वैशंपायन बोले कि अजमीढ़वंशी राजायुधिष्ठिरने भाइयोंसमेत पितामहके वचनोंको सुनकर सुवर्ण वर्ण बैल और गौओंको श्रेष्ठता

ब्राह्मणोंके अर्थदान किया ३३ इसीप्रकार स्वर्गादिलोक और उत्तमयशकीर्त्ति के निमित्तयज्ञोंको जारीकरके दक्षिणामें हजारोंलाखों गौओंको ब्राह्मणोंके अर्थदान किया ३४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगोदानवर्णनेसप्तसप्ततितमोऽध्यायः७७ ॥

अठहत्तरवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इससमयमें वक्ताओंमें श्रेष्ठ इक्ष्वाकुवंशीराजा सौदासने ऋषियोंमें बड़ेसाधू१वेदोंके भंडार प्राचीन सिद्धसब लोकों में घूमनेवाले अपने पुरोहित वशिष्ठजीको दण्डवत् करके यहप्रश्न किया २ कि हे निष्पाप भगवन् कौनसो वस्तुतीनों लोकोंमें पवित्र कही जातीहै जिसके सदैव कहने वा करनेसे मनुष्य उत्तम पुण्य फलको पाताहै ३ भीष्मजी बोले कि राजाके इस वचनरूपी प्रश्न को सुनकर उस पवित्रात्मा वेदशास्त्रोंके पूर्णज्ञाता वशिष्ठजीने उपदेश पूर्वक गौओंको नमस्कार करके उसनम्र और झुकेहुये राजा से यहहितकारी वचनकहा ४ कि गौ उत्तम सुगन्धवाली या गूगलकीसी गंधवाली होतीहै गौही जीवोंकी रक्षास्थान वा प्रतिष्ठा रूपहैं गौ महाकल्याणका घरहैं ५ गौ सत्यता और प्रसन्नताकी मूर्त्ति हैं गौहीभूत भविष्यहैं गौ सनातन पुष्टिहै गौ लक्ष्मी रूप हैं गौओंका दिया हुआ कभीनाश नहींहोता ६ गौउत्तमअन्न और देवताओंका उत्तम हव्यइन्हीं गौओं में स्वाहाकार वषट्कार भी नियतहैं ७ गौ यज्ञकाफलहैं गौओंमें यज्ञनियतहैं गौयज्ञकीप्रतिष्ठा पानेवालीहैं ८ हे वड़ेतेजस्वी पुरुषोत्तम गौवेंही प्रातःकाल सायंकाल ऋषियोंको उनके हवनादि यज्ञोंके निमित्त घृतादिक पदार्थों को देतीहैं ९ हेप्रभुजोलोग गोदान करतेहैं वह पापसे मुक्तहोजातेहैं और जो कोई उनके कियेहुये कर्म महाघोररूप कठिनहैं उनसेभी छूटजातेहैं १० दशगौ रखनेवाला एकगौका दानकरे सौ गौ रखनेवाला दशगौओंका दानकरे वहदोनों समानही फलके पाने वाले हैं ११ जो सौगौका रक्षक अग्निस्थापन करनेवाला नहीं है और

जो हजार गौकास्वामी होकर यज्ञकरनेवाला नहींहै और धनीहो कर ब्राह्मणका असत्कारी होकर कृपणहै यहतीनों पूजनादि के योग्य नहींहैं १२ जो मनुष्य वस्त्र और कांसेके दोहनपात्र समेत वस्त्रोंसे आच्छादित सुन्दर वर्णवाली कपिलागौका दानकरतेहैं वह दोनों लोकोंको विजय करतेहैं १३ हे शत्रुसंतापी जो मनुष्य पूर्ण अंगवाले तरुणरूप हजारों बैलोंके रक्षक बड़े उत्तमरूप बलवान् बैलको उत्तम वेदपाठी ब्राह्मणके अर्थदान करतेहैं वहबारंबारजन्म लेनेवाले होकर ऐश्वर्य्योंको पातेहैं १४।१५ गौओंके गुणोंको वर्णन करके सोवे और उन्हींका ध्यान कर के उठे प्रातःकाल सायंकाल गौओंका दर्शनकरके नमस्कारकरे तो इसकर्मसे शरीरकी पुष्टिता और गौ आदि धनकी वृद्धिको पाताहै १६ गौओं के मूत्र गोबर से कभी घृणा न करे और गोमांस कभी न खाय वहपुरुषभी शरीरकी पुष्टिता पूर्वक गौ आदिधनको प्राप्तकरताहै १७ मनुष्यकोउचित है कि सदैव गौओंकी प्रशंसाकरे कभी अप्रतिष्ठा न करे और अशुभ स्वप्नको देखकर गौओंके गुणानुवाद वर्णन करे १८ सदैव गोबर से स्नानकरे और गौओंके सूखेगोबरपर अर्थात् कर्सीपर बैठे और गोशाला में कभी थूक मूत्र विष्ठा आदिको न डाले गौको कभी न मारे १९ अपनी वाणीका जीतनेवाला मनुष्य प्रदक्षिणासे गीले चर्मपर बैठकर पृथ्वीके ऊपर घृत संयुक्त भोजनकरे और पश्चिम दिशा को मुखकर देखे तो इस कर्मसे सदैव उसके घरमें गौओंकी वृद्धिहोतीहै २० घृतसे अग्नि में होमकरे और घृतसे स्वस्तिवाचन करावै घृतको दानकरे घृतकाही भोजनकरे तो भी गौओंकी वृद्धिकोपाताहै २१ जोमनुष्य गोमती विद्याकरके गौकोतिलोंसे अभिमंत्रणकर सर्वरत्न संयुक्त दानकरके अपने कृत और अकृतको नहीं शोचे और इनआगे लिखेहुये वचनों को पढ़े २२ गावोमानुप तिष्ठन्तुहेमशृंग्यःपयोमुचः ॥ सुरभ्यःसौरभेय्यश्चसरितःसागरंयथा २३ गावःपश्याम्यहंनित्यंगावःपश्यन्तुमांसदा ॥ गावोऽस्माकंवयंतासांयतोगावस्ततोवयम् २४ इसरीतिसे रात्रिमें वा दिनमें

सत्यता वा दुर्गम अथवा भयोंमें गौओंके गुणोंके वर्णन करनेसे बड़े २ भयोंसे छूट जाताहै २५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगोप्रदानिकेअष्टसप्ततितमोऽध्यायः ७८ ॥

उनासीवां अध्याय ॥

वशिष्ठजी बोलेकि पूर्व्व समयमें उत्पन्न होनेवाली गौओंने एक लाखवर्ष पर्य्यंत कठिन तपस्याकरी इस बिचारसे कि हमारीप्रतिष्ठाहोय १ इसलोकमें सबदक्षिणाओंमें श्रेष्ठ होकर किसी प्रकारके दोषोंसे लिप्त न होयं २ और मनुष्य लोग सदैव हमारे गोबर और मूत्रके स्नानसे पबित्र होयं और देवता वा मनुष्य अपनी वा अपने गृहोंकी पबित्रताके निमित्त उन गोबर मूत्रोंको अपने काममेंलावें३ हे शत्रु संतापी महादानी गौओंने यहभी चाहाकि जो जड़ चैतन्य स्थावर जंगम जीवमात्र हमारे दानोंकोकरें वहसब हमारेहीलोकोंको प्राप्तहों ४ तपस्याके अन्तपर आपसमर्थ प्रभु ब्रह्माजीनेजाकर तथास्तु कहकर बरदानदिया और यहभी कहाकि तुमलोकोंकाउद्धारकरो ५ भूतभविष्यकी मातावह गौवें अपने मनोरथोंको पाकर उठखड़ीहुईं इसीसे वहसब गौवें प्रातःकालके समय अवश्य नमस्कार करनेके योग्यहैं उससेगौओंकीवृद्धि और शरीरमें पुष्टताप्राप्त होतीहै ६ हे महाराज वह गौ तपस्याके अन्तपर संसारकी रक्षा स्थानहुईं इसीहेतुसे यह महाभाग महापबित्रतम कही जातीहैं७ इसीरीतिसे यह सबजीवोंके मस्तक परभी नियत होगईहैं अपनेरंगके समान बछड़ा रखनेवाली दुग्धवती सुन्दर व्रतयुक्त कपड़े से अलंकृत कपिला गौके दानकरनेसे ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठाकोपाताहै८ लोहितवर्णा अपने रंगके समान बछड़ा रखनेवाली दुग्धवतीपूर्वोक्त गुण विशिष्ट गौकेदान करनेसे सूर्य्यलोकमें प्रतिष्ठा पाताहै९समान वत्साशबला पयस्विनी सुव्रता वस्त्रोंसे अलंकृत गौकेदानसे चन्द्रलोकमें प्रतिष्ठा पाताहै १० इसीउक्त सबगुण विशिष्ट गौकेदानसे इन्द्रलोकमेंभी प्रतिष्ठा पाताहै ११ समान वत्सा कृष्णा दुग्धवती

सर्वगुणसंपन्न गौके दानकरनेसे अग्निलोकमें प्रतिष्ठा पाताहै १२ समान वत्सा धूम्रवर्ण उक्तगुणवाला अलंकार युक्त गौके दानसे यमलोकमें प्रतिष्ठा पाताहै १३ जलोंकेफेण समान रंगवाली सवत्सा गौके दानसे वरुणलोक में प्रतिष्ठा पाता है १४ वायुसे उड़ी हुई रेणुके समान रंगवाली सवत्साकांस्य दोहनी युक्त उक्त गुण वस्त्रादि से युक्त गौकेदान से वायुलोक में प्रतिष्ठा पाता है १५ सुवर्ण के रंग वाली पिंगाक्षी कांस्य दोहनी संयुक्त सवत्सा वस्त्र से आच्छादित गौको दान करे तो कुवेरके लोकमें प्रतिष्ठा पावे १६ कांसे की दोहनी समेत सवत्सा लाल और धूम्रवर्ण वाली वस्त्रों से युक्त गौके देनेसे पितृलोक में प्रतिष्ठाको पाता है १७ अतिकण्ठा सवत्सा हृष्टपुष्ट वस्त्रादिसे अलंकृत गौके दानसे निरुपाधिहोकर रहित विश्वेदेवताओं के उत्तम स्थान को पाता है १८ समान रंग वछड़ा रखने वाली गौरी दुग्धवती वस्त्रों से अलंकृत गौके दान करनेसे वसुओं के लोकों को पाताहै १६ पांडु कमल के रंग वाली सवत्सा वस्त्रों से युक्त कांसेकी दोहनी समेत गौके दान से साध्य लोगोंके लोकोंको पाता है २० सव रत्नों से अलंकृत वैराट पीठ वाले वैलके दानकरनेसे मरुद्गणोंके लोकोंको पाताहै २१ जोमनुष्य तरुण नील रंग वाले वैल को सबरत्नों से अलंकृत करके दान करता है वह गंधर्व और अप्सराओंके लोकों को पाताहै २२ सब रत्नों से अलंकृत ऐसे वैलको जिसकी ग्रीवामें कंवलनाम अंगलटकताहो दान करने से शोकों से रहित दाता प्रजापतियों केलोकों को पाताहै २३ हे राजा गोदान में प्रीति करने वाला मनुष्य बादलों के समूहों को चीरकर स्वर्ग में पहुंचकर सूर्य्यबर्ण बिमान में शोभित होता है २४ उस नरोत्तम गोदान में प्रीति करने वाले मनुष्य को सुन्दर पोशाक युक्त सुन्दर स्वरूपवाली हजारों देवांगणा रमण कराती हैं २५ और वल्लकी वीणा के वाजे सेवानूपरोंके झणत्कार शब्दोंसे और हरिणाक्षी सुन्दर रूपवाली स्त्रियोंके हास्यों से वह मनुष्य शयन से जगाया जाताहै गौको देह में जित-

ने रोमहोतेहैं उतनेही वर्षांतक वह स्वर्ग में प्रतिष्ठाको पाताहै और स्वर्ग से गिरकर भी इस नरलोक में बड़े मनुष्य के घर में जन्म लेता है २६।२७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेगोप्रदानिकेएकोनाशीतितमोऽध्यायः ७६॥

अस्सीवां अध्याय॥

वशिष्ठजीने कहा गोदुग्ध घृत देनेवाली घृतकी उत्पत्ति स्थान घृतहीसे उत्पन्न घृतकी भ्रमर रखनेवाली नदियांहैं वह सदैव मेरे गृहमें वर्त्तमानहैं। सदैव मेरे दोनोंनेत्रोंमें घृत नियतहै नाभि आदि सर्व्वांग और चित्तमेंभी घृतही व्याप्तहै१।२ गौसदैव मेरे आगेपीछे और सब ओरकोहैं गौओंकेही मध्यमें निवास करताहूं ३ जो मनुष्य इस आगेलिखेहुये गौके वशिष्ठकृत स्तोत्रको प्रातःकाल आचमन करके जपताहै वह अपने दिवस भरके पापोंका अत्यन्त नाश करताहै४ हजार गौकेदानकरनेवाले उन २ स्थानोंमें जातेहैं जहां सुवर्णके महल मंदाकिनी गंगा और गंधर्वों समेत अप्सरा हैं ५ और वहांभी जातेहैं जहांपर मक्खन रूप कीच दूधरूप जल और दहीरूपी काईसमेत नदियां वहतीहैं ६ जो मनुष्य वुद्धिके अनुसार एकलाख गौओंका दान करताहै वहबड़ी वृद्धिको प्राप्तकरके स्वर्ग लोकमें प्रतिष्ठापाताहै७ वहपुत्रमाताके दोनों पक्षोंके दश२पीढ़ियों का उद्धार करताहै और पवित्रलोकोंको प्राप्त करके अपने कुल भरकोभी तारताहै ८ गौके प्रमाणतिल गौकेभी दान करनेसेउद्धार होताहै और जल गौकादान करनेवाला यमलोकमें किसी दुःखको नहींपाताहै ६ यहगौ पवित्रात्मा सबसे श्रेष्ठ जगत्‌का उत्पत्तिस्थान देवमाता अचिन्त्य प्रभाववालीहैं उनको स्पर्शकर दक्षिणावर्त्ती करकेजाय और समयको विचारकरपात्रको दानकरे १० सवत्सा रौप्य शृङ्गीकलियाला गौकोवस्त्रोंसे आच्छादित कांस्य दोहनीपात्र और वस्त्रसे संयुक्तकरके जोदान करताहै वह मनुष्य निर्भय होकर

महादुर्गम यमराजकी सभाको उल्लंघन करताहै ११ सुन्दर और अनेक रूप रखनेवाली बिश्वरूप गौ माता मेरे समीप नियत हों इस वचनको सदैव कहाकरे १२ गोदानसे बढ़कर न कोई दानहै न फलहै न इससे उत्तम जोवलोकमें जन्मलेनेके योग्यहै १३ वह गौ ऐश्वर्य्यमान होकर चर्मरोम शरीर शृंग पुच्छकेकेश दूधदही और घृतसे यज्ञोंको प्राप्त कराती हैं इससे अधिकतर कोई वस्तु नहीं है १४ यह जड़ चैतन्य रूप सब जगत् जिससे व्याप्तहै उस भूत भविष्यकी माता गौको शिरसे दंडवत् करताहूं १५ हेराजेन्द्र यह मैंने गौओंके गुणोंका एकस्थल बर्णनकिया इस लोकमें गोदानसे बढ़कर न तो कोई दानहै और न कोई रक्षाका स्थान होसक्ताहै १६ भीष्मजी बोले कि इसकेपीछे जितेन्द्री राजा सौदासने ऋषिके कहेहुये इसउत्तम वचनको बहुत श्रेष्ठ बिचारकर बहुतसा गोधन ब्राह्मणों को दानकिया उस भूमिदान करनेवाले राजाने लोकोंकोप्राप्तकिया १७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगोप्रदानिकेअशीतितमोऽध्यायः८०॥

इक्यासीवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हेपितामह लोकमें मोक्षका देनेवाला दानों में जो अत्यन्त फलका देने वाला दानहै उस पवित्ररूपको मुझसे कहो भीष्मजीबोले कि गौ बहुत उत्तम धन और पवित्र रूपहै और मनुष्योंका उद्धार करने वाली हैं उसीप्रकार दूध और घृतसेसंसार का पोषण करतीहैं १।२ हे भरतवंशियों में बड़े साधु गौसे अधिक धर्मकी वृद्धिका कोई दूसरा कारण नहींहै तीनों लोकों में गौवेंही धर्मकी हेतुरूप उद्धार करनेवाली होकर महासाधुरूपहैं ३ निश्चय करके यह गौ देवताओंसे अधिक प्रतिष्ठितहैं ज्ञानी इनकोदानकरके अपने कुलोंका उद्धार करतेहैं और आपभी स्वर्गको जातेहैं४ सदैव लाखों गौओंके दान करनेवाले राजा मान्धाता युवनाश्व ययाति नहुष ५ उन उत्तम लोकोंको गये जोकि देवताओंको भी अत्यन्त

कठिनता से प्राप्त होनेके योग्यहैं हे निष्पाप मैं इस स्थान पर उसकथाको भी कहताहूं जोकि पूर्व समय में श्रेष्ठ लोगोंने कहीहै ६ संध्या वन्दनादिसे निश्चिन्त्य दृढ़ चित्त बुद्धिमान् शुकदेवजी ने ऋषियों में श्रेष्ठ ७ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संसार के देखने वाले अपने पिता व्यास देवजी को दण्डवत् करके प्रश्न कियाथा कि हे पिता सब यज्ञोंमें कौनसा यज्ञ सबसे श्रेष्ठ आपकोदिखाईदेताहै ८ अर्थात् कौनसे कर्मको करके उत्तमोत्तमस्थानको प्राप्तकरते हैं और हे समर्थ पिताजी देवतालोग किस पवित्रकर्मके करनेसे स्वर्गको भोगतेहैं ६ यज्ञका यज्ञरूपहोना क्याहै और कहांयज्ञ नियतहै देवताओंमें उत्तम क्याहै ऊपरके लिखेहुयेसे उत्तमक्याहै १० औरमोक्ष देनेवालोंमें बड़े मोक्षका देनेवाला क्या है इनसबको आप मुझसे वर्णनकीजिये हे भरतर्षभ उत्तम धर्मोंके ज्ञाता व्यासजीने इस बचनको सुनकर सब वृत्तान्तको मूलसमेत पुत्रसेकहा ११ व्यासजी बोलेकि गौमनुष्योंकी उत्पत्ति स्थान श्रेष्ठ धर्मवृद्धिकी कारणउद्धार करनेवाली और पवित्र धनरूपहैं १२ हम सुनतेहैं कि पूर्वसमयमें गौवें शृङ्गोंसे रहितथीं तब उन्होंने अपनेशृङ्गोंके निमित्तप्रभुकीउपासनाकरी १३ तब ब्रह्माजीने खानपान भी त्यागकरनेवाली गौओं को देखकर उनगौओंके अर्थ अभीष्ट मनोरथोंकोदिया १४ अर्थात् जैसे जिसको अभीष्टथे वैसे सींग उत्पन्नहुये हेपुत्र अनेकप्रकारके वर्ण और सींगरखनेवाली गौवें प्रकाशमानहुईं १५ फिर उनब्रह्माजीसेवरकोपाकर वह गौवें देवता औरपितरोंके भोजनोंकी देनेवाली उत्तम और शुभधर्मों के वृद्धिकी हेतुरूप उद्धार करनेवाली श्रेष्ठ ऐश्वर्यमान दिव्यमूर्ति और लक्षणोंकी रखनेवाली हुईं १६ यह गौ बड़ी दिव्य तेजरूपहैं इसीसेगौओंका दान प्रशंसा कियाजाताहै ईर्षासेरहित जो श्रेष्ठ साधु मनुष्य गौओंका दानकरतेहैं १७ वहीनिश्चय करकेशुभकर्मी और दानी होकर दानोंको देतेहैं १८ हेनिष्पाप वह गौओं के देने वाले पवित्र लोकों को प्राप्त करते हैं १६ जिस लोकमें सुन्दर मिष्ठ रूप स्वादुओं से भरे फल और फूलोंसे युक्त

वृक्ष उत्पन्न होते हैं उन सुगन्धित फल पुष्पों से युक्त जहांकी सब पृथ्वी मणियों से मढ़ीहुई सुवर्ण की धूलिसे व्याप्तहै सब ऋतुओं में सुख स्पर्श वाली कीच और धूलसे रहित बड़ी शुभ रूप २० सुन्दर रक्त वर्णके सरोवरों में सुवर्ण के कमलोंके वन और तरुण सूर्य्य के समान प्रकाशमान मणि खंडों से शोभायमान लोक प्रकाशित हैं २१ बड़े मूल्य की मणियों के समान पत्ते सुवर्ण से चमकते केसरोंसे युक्त अनेक नीले कमलों से व्याप्त सरोवर वाले २२ हजारों फूली हुई श्रेणियों से शोभित करवीर नाम वृक्षों के वन वा प्रफुल्लित संतानक नाम कल्प वृक्षों के बनोंसे अच्छी रीतिसे अलंकृत हैं २३ उस लोकमें निर्मल मोती और बड़ी२ मणियोंसे और सुवर्ण से निर्मित अतिप्रकाश से युक्त पुलिन वाली नदियां हैं २४ जोकि सब रत्नों के प्रकाश रखने वाले महाअद्भुत उत्तम अग्नि के समान प्रकाशमान अनेक प्रकार के स्वर्णमयी वृक्षों से व्याप्त हैं २५ उस लोकमें सुवर्ण और मणि रत्नों के पर्व्वत रत्नों से पूर्ण बड़े स्वरूपमान ऊंचे २ शिखरों से प्रकाश कररहेहैं २६ हे भरतर्षभ उसलोकमें सदैव फल पुष्पों से युक्त पक्षियोंसे पूर्ण दिव्यगंध रस वाले फूल और फलोंसे भरे वृक्ष वर्त्तमान हैं २७ और हे युधिष्ठिर उस लोकमें जो पवित्र कर्मी लोग क्रीड़ा करते हैं वह सब अभीष्ट पदार्थों से युक्त और शोक क्रोधसे रहित वर्त्तमान हैं २८ हे भरतवंशी वह सुन्दर कीर्त्ति वाले पवित्र कर्मी लोगचित्र विचित्र सुन्दर विमानोंमें बैठेहुये आनन्द पूर्व्वक बिहार करते हैं २९ हेराजा युधिष्ठिर उन लोगोंकेपास शुभ अप्सराओं के समूह क्रीड़ा करते हैं जो मनुष्य गौका दानकरते हैं वह इन लोकों को प्राप्तकरते हैं ३० जिन्हों के ऐश्वर्य्य में बली पराक्रमी पूषा मरुत और राजा वरुण स्वामी हैं वह मासिक आदिक यज्ञों के धारण करने वाले हैं ३१ सुन्दर और अनेक विश्वरूपवाली माता हैं हे ब्राह्मण सावधान व्रत मनुष्य सदैव ईश्वर के नामके समान प्रजापति जी के उपदेश को जपकरें ३२ जो मनुष्य गौओंकी सेवा

करताहै और सब स्थानों में उसके पीछे२ चलताहै तो गौवें प्रसन्न होकर उसके अभीष्टोंको भी देतीहैं ३३ जो मनुष्य सदैव गौओं को सुखदेने वाला होकर कभी चित्तसे भी शत्रुता न करे और प्रतिदिन उनका पूजन करे और नमस्कारों से उनकी प्रतिष्ठा करे ३४ वहजितेन्द्री प्रसन्नचित्त होकर सदैव गौओंके फलोंको भोगताहै तीनदिन तक गरम२ मूत्रको पिये और तीनदिन गरम२ दूधको पिये ३५ फिर गौओं के उष्ण दूध कोपीकर गौओंके गरम कियेहुये घृत को पिये फिर घृतपीने के पीछे तीन दिन वायु काभक्षण करने वाला होकर ३६ जिस पवित्र घृतके द्वारा देवता लोग उत्तम लोकों को भोगते हैं और पवित्र वस्तुओं में महा पवित्र वस्तु है उस घृत को शिरसे धारण करे ३७ घृत से अग्नि में हवनकरे घृतसेही स्वस्ति बाचन घृतकाही भोजन और घृतकाही दान करने वाला उसी प्रकार की गौओं की वृद्धिको करताहै ३८ जो गोबरसे निकलेहुये जव कणोंको एक महीने तक भोजन में बनाकर खाता है उस पुरुष के ब्रह्महत्या के समानसब पाप दूर होजाते हैं ३९ देवताओं ने दैत्योंसे पराजित होकर यह आचार किया इसीसे वह देवभावको पाकर श्रेष्ठ रीति से शुद्ध होगये ४० गौ उद्धार करने की हेतुरूप महापवित्र और उत्तम हैं जिनके दान करने से मनुष्य स्वर्ग को भोगता है ४१ पवित्र होकर महापबित्र जलों से आचमन करके गौओं के मध्यमें गोमती नाम मंत्र जपै तो वह अन्तःकरण से पवित्र और निर्मल हो जाताहै ४२ बिद्या और वेद व्रतोंमें पूर्ण पवित्रकर्मी ब्राह्मण अग्निके समीप गौओं के मध्य ब्राह्मणों की सभामें ४३ इस यज्ञ के समान गोमती मन्त्र को अपने शिष्यों को उपदेश करे जो इसरीतिसे तीनरात्रि व्रतको करे वह गोमती देवी से मिले हुये उत्तम मनोरथों को प्राप्तकरता है ४४ पुत्रधनाकांक्षी पुत्र धनको और पतिकी इच्छा करने वाली स्त्री सुन्दर पतिको और जप करनेवाला मनुष्य सब अभीष्ट पदार्थों को प्राप्त करताहै निश्चय करके से-

करी हुई प्रसन्न गौवें मनुष्य को सब कुछ देती हैं ४५ इसरीति से यह महाभाग गौवें यज्ञमें सहायता देने वाली सब यथेप्सित कामनाओं की देने वालीहैं इनसे अधिक और कोई उत्तम नहींहै ४६ इस रीतिसे महात्मा पिता व्यासजी से समझाये हुये महातेजस्वी शुकदेवजी ने भी सदैव गौ का पूजन किया इसी हेतुसे तुमभी उनका पूजनकरो ४७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगोप्रदानिकेएकाशीतितमोऽध्यायः ८१ ॥

बयासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह मैंने गौओं का गोबर लक्ष्मी से भी सेवित सुनाहै उस में मुझको कुछ सन्देह है उसको आपके मुखसे सुना चाहताहूं १ भीष्मजी बोले कि हेभरतबंशियों में बड़े साधु राजा युधिष्ठिर इस स्थान पर मैं इस प्राचीन इतिहास को भी कहताहूं जिसमें कि गौओं से और लक्ष्मी जीसे प्रश्नोत्तर रूप संवादहै २ दैवयोगसे किसी समय लक्ष्मीजी अपना दिव्य रूप बनाकर इसलोक में गौओं के मध्य में आईं तब गौवें उनके धन और रूप को देखकर बड़े आश्चर्य युक्त हुईं ३ गौवें बोलीं कि हे देवि तुम कौनहो कहांसे आई हो तुम इस पृथ्वी पर स्वरूप में असादृश्य हो हे महाभागिनि हमतेरे धन और स्वरूप से आश्चर्य युक्तहैं ४ हम तुमको जानना चाहती हैं कि तुम कौनहो और कहां को जाना चाहतीहो हे उत्तम वर्ण महास्वरूप की धारण करने वाली तुम इस सब वृत्तान्तको मूल समेत हमसे कहो ५ लक्ष्मी बोलींकि तुम्हारा कल्याणहो मैं लोकोंकी अभीष्ट रूपहोकर लक्ष्मीनाम से प्रसिद्धहूं मेरेही त्यागे हुये दैत्य लोग हजारों वर्षोंतक नाशमान हुये ६ और मेरे अंगीकार किये हुये देवता लोग बरा बर हजारों वर्षोंसे आनन्दोंको भोगरहेहैं इन्द्र सूर्य्य चन्द्रमा विष्णु जल अग्नि ७ देवता और ऋषि लोग मेरेही अंगीकृतहोकर शुद्ध होतेहैं हे गौओ में जिनके पासनहीं रहतीहूं वह सब नाशको

पातेहैं ८ मुझहीसे सेवितहोकर धर्म अर्थ कामभी सुख संयुक्त होतेहैं हे सुखदेने वाली गौओ मुझको तुम ऐसे प्रभाववाली जानों ९ मैं भी तुम सबके पास निवास करना चाहतीहूं और तुम से प्रार्थना करतीहूं कि तुम सब भी लक्ष्मी से सेवित होजाओ १० गौवें बोलीं कि तुम सदैव स्थिरन रहनेवाली औरचपलहो औरसबकी साधारण स्त्रीहो इस हेतुसे हम सब तुमको नहीं चाहतीहैं तेराकल्याण होय जहां तुम जाना चाहतीहो वहां चलीजाओ ११ हम सब तेजस्वी शरीर वालीहैं हमको तुमसे क्या प्रयोजनहै तुम अपनी इच्छापूर्वक जाओ हम तुमसे भी अधिक मनोरथ सिद्ध करने वालीहैं १२ लक्ष्मीबोलीं कि हे गौओ यह तुम्हारी यहां कैसी योग्यताहै जो तुम मुझको अंगीकार नहींकरतीहो किसहेतुसे मुझ दुष्प्राप्य पूजित और साधु स्त्रीको अंगीकार नहीं करतीहो १३ हे सुन्दर व्रतवाली गौओ लोकमें यह सत्य २ बचन घूमताहै कि किसीके पास बिना बुलाये जानेसे अवश्य अप्रतिष्ठा होतीहै १४ मनुष्य देवतादानव गन्धर्व पिशाच उरग राक्षस बड़े २ उग्रतपोंको करके मुझको सेवन करतेहैं १५ और तुम्हारा इसलोकमें यह प्रभावहै इससे तुममुझ को अंगीकार करो मैं संसारके किसीजड़ चैतन्य जीवसे भी अप्रतिष्ठा मानने के अयोग्य नहींहूं १६ गौवें बोलींकि हे देविन हम तुम्हारा अपमान करतीहैं और न अप्रतिष्ठा करतीहैं तुम एकत्र स्थिर नरहने वाली होकर चित्तसे भी चलायमानहो इसी हेतुसे हम तुमको त्याग करतीहैं १७ हे निष्पाप बहुत बातोंसे क्या प्रयोजनहै तुमजहां चाहोवहांजाओ हम सब तेजस्वी शरीर वालीहैं हमको अब तुमसे क्या प्रयोजनहै १८ लक्ष्मी बोलींकिहे उत्तर देनेवालीगौओमें तुम्हारे ऐसे उत्तर देनेसे सब संसार में अप्रतिष्ठितहूंगी इससे हमारे ऊपर कृपाकरो १९ तुम बड़ी बड़भागिनी औररक्षालेने वालोंकी आश्रय रूपहो इससे मुझ निर्दोषी और आकांक्षीको सदैव रक्षाकरो २० मैं अपनी प्रतिष्ठा को चाहतीहूं और आप सदैव कल्याण रूपा हो मैं अकेलीही तुम्हारे किसी छोटेसे छोटेअंगमें निवास करना चाह

तीहै २१ हे निष्पाप गौओ तुम्हारे अंगोंमें कोई अंग नीच नहीं दिखाई देताहै तुम धर्मके वृद्धिकी हेतु रूप होकर उद्धार करनेवाली और श्रेष्ठऐश्वर्य्योंसे भरीहो तुम अपने अंगोंमें जहांआज्ञाकरोवहांमें जाकर निवासकरूं २२हेराजा लक्ष्मीके ऐसे बचन सुनकर शुभरूप दीनों पर दयाकरनेवाली सब गौओंनेपरस्परमें सलाह करके लक्ष्मी जीको उत्तरदिया २३ कि हे यशस्विनी शुभलक्ष्मी हमलोगों को तेरी प्रतिष्ठा अवश्य करनी चाहिये तुम हमारे गोबर और मूत्रमें निवास करो यही हमारा महा पवित्र अंगहै २४ लक्ष्मीने कहाकि तुमने मेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह किया जो मुझको अपने गोबर मूत्रमें निवास दिया ऐसाही होगा और तुम्हारा कल्याणहो हे सुखदाई गौओ में तुमसे पूजितहुई २५ हे भरतवंशी वह लक्ष्मीजी गौओंसे ऐसा नियम करके उनके देखतेही देखते उसी स्थानपर अन्तर्द्धान होगई२६हे पुत्र इसरीतिसे गौओंके गोबरका माहात्म्य तुमसे मैंने कहा अबमुझसे उनके माहात्म्यको श्रवणकरो २७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेश्रीगोसंवादोनामद्व यशीतितमोऽध्यायः ८२ ॥

तिरासीवां अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर जो मनुष्य गौओंका दानकरतेहैं और जो होमसे बचेहुये शेष अन्नको भोजन करतेहैं उनके नित्य यज्ञजारी रहते हैं १ इसलोकमें दही और घृतके बिनायज्ञ नहीं वर्त्तमान होसक्ता है इसी हेतुसे वह यज्ञका मूल कहाजाताहै २ सब दानों में गौकादान प्रशंसा किया जाताहै यह गौ महापवित्रात्मा और उद्धार करनेवाली हैं ३ और देहकी पुष्टि और पराक्रम के निमित्त भी उनका सेवनकरे इन्होंका दूधदही और घृत सब पापों का दूर करनेवाला होताहै ४ इस लोक और परलोकमें गौओं को उत्तम तेज वर्णन करते हैं हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ गौओं से उत्तम और अधिक पवित्र दूसरी वस्तु नहीं है ५ हे युधिष्ठिर इस स्थान

पर इसप्राचीन इतिहासको भी कहताहूं जिसमें कि ब्रह्माजी और इन्द्रका प्रश्नोत्तरहै दैत्योंके पराजय होनेपर इन्द्रतीनों लोकोंका स्वामीहुआ६ और सब सृष्टिकेजीव प्रसन्न चित्त होकर अपने सच्चे धर्मोंपर नियतहुयेइसके अनन्तर ऋषि गन्धर्व किन्नर उरग राक्षस देवता असुर और पक्षियोंमें गरुड़ आदि और इसी प्रकार सबप्रजापति लोग ७।८ किसी समय ब्रह्माजीके पास जाकर इकट्ठे हुये हे कुन्तीनन्दन नारद वा पर्व्वत ऋषि और दिव्य गानोंके गानेवाले बिश्वावसु और हाहा हूहू नाम गन्धर्वोंनेउस प्रभुब्रह्माजीकी उपासना करी वायुनेसुगन्धित पुष्पोंकी वर्षा करी ६।१० और ऋतुओंने भी अपने२ समयके दिव्य२ सुगन्धयुक्त पुष्पोंको वर्त्तमान किया तात्पर्य्य यहहै कि सबजीवोंके समूह उस देवसमाजमें ११ जो कि दिव्य शब्दोंसे शब्दायमान दिव्य स्त्री और चारणोंसे मोहित- तथा उसदेवसमाजमें इन्द्रने देवताओंके ईश्वर ब्रह्माजीको नमस्कार और दंडवत् करके यह प्रश्नकिया १२।१३ कि हेभगवान् ब्रह्माजी किस हेतुसे गौ लोक सब लोकोंसे श्रेष्ठ तरहै इसको मैं अच्छी रीतिसे जाननाचाहताहूं १४ हे ईश्वरइस लोकमें गौओंने कौन सातप और ब्रह्मचर्य्य कियाहैकि रजोगुणोंसे रहितगौवें देवताओंके ऊपर सुख पूर्व्वक विराजमान रहतीहैं १५ इसके पीछे ब्रह्माजीने उस बलिके मारनेवाले इन्द्रको उत्तरदिया कि हे इन्द्र गौवें तुमसे सदैव अपमानकी गईहैं १६ इसीकारण तुमइनकी माहात्म्यको नहीं जानतेहो हे देवताओंमें समर्थ इन्द्र जिसहेतुसे कि गौओंका प्रभाव और माहात्म्य बड़ाहै १७ उसको सुनो कि गौवें यज्ञका अंगवर्णन की गईहैं इसीसे वह यज्ञ रूपहैं उनके विना किसीप्रकारसे भी यज्ञनहीं होसक्ता १८ ये गौवें दूध और घृतसे लोकोंको सहायता देतीहैं और इनके पुत्र भीलोकोंको कृषि कर्मोंमें सहायता देतेहैं१९ वह बैल लोकमें अनेक प्रकारके दुःखोंको सहकर नाना प्रकारके बीजोंको उत्पन्न करतेहैं उसीसे देवपितृ यज्ञोंके भोजनके पदार्थसब उत्पन्न होते हैं २० और यज्ञोंके बड़ेउपकारी दूध दही घृत भी इन्हीं

गौओंसे उत्पन्न होतेहैं हे देवराज यह गौवें धर्म के वृद्धिकी हेतु रूपहैं और भूखप्यासमे पीड़ामान बैल अनेक प्रकारके बोझोंको उठातेहैं २१ यह गौवें अपने कर्मोंसे मुनि लोग और प्रजाओंका पोषण करतीहैं और शुभकर्मोंसे निःछल व्यवहारोंकी करनेवाली हैं २२ इसीहेतुसे यह गौवेंहमारेऊपर सदैव निवास करतीहैं हे इन्द्र यह उनके ऊपर रहनेका कारण मैंनेतुझसे कहा २३ हे शतक्रतु इन्द्र मैंने गौओंका लोक सबसेऊपर वर्णन कियायह गौवें बरपाने वाली होकर आपभी वरकी देनेवालीहैं २४ यह गौपवित्र कर्मोंकी करनेवाली शुभ लक्षणवती भीहैं हे देवताओंमें बड़े साधु जिस प्रयोजनसे कि गौवें पृथ्वीपर गईं २५ उस हेतुको भी मुझसेसुनो हे तात पूर्व्व सतयुगमें महात्मा इन्द्र समेत देवताओंके २६ तीनों लोकोंमें राज्य करतेहुये पुत्रकी प्राप्तिके निमित्त एक चरणसे खड़े होकर कठिन और घोर तपस्या करनेवाली अदिति के गर्भ में विष्णुजी के नियत होनेपर बड़ी तपस्या करनेवाली उस महादेवी अदिति को देखकर २७।२८ दक्षकी पुत्री प्रसन्नचित्त धर्म पर नियत देवी सुर भीनाम गौनेबड़ी घोरतपस्या करी २९ देवता गन्धर्वोंसे सेवितसुन्दर कैलाशके शिखरपर नियत होकर वह देवी एक चरणसे खड़ीहुई ३० और ग्यारह हजार वर्ष पर्य्यन्त खड़ीहो कर तपकिया तवऋषि और महाउरगों समेत देवता लोग उस के उग्रतपसे प्रसन्न हुये ३१ और मुझको साथलेकर उसके पासनियत हुये इसकेपीछे मैंने उसतप्रस्यामें प्रवृत्तदेवीसे कहाकि ३२ हे निर्दोष महाभाग शोभायुक्त देवीतू किसनिमित्त ऐसा महाघोरतप करतीहै मैं इसतेरी तपस्या से प्रसन्नहूं ३३ हे देविमैं बरका देनें वालाहूं तूभी अपने अभीष्ट वरकोमांग ३४ हे इन्द्र मेरेइस वचन को सुन कर सुरभीनेकहा कि हे पापोंसे रहितसब संसार के पितामह भग वान् ब्रह्माजी मैंने वरलेनेके लिये तपस्या नहीं करीहै मेरी केवल यही तपस्या है कि आपमुझ पर प्रसन्न हूजिये ३५ ब्रह्माजी बोलेहे देवेन्द्र शचीपति इन्द्र उस सुरभीके वचनको सुनकर जो मैंने उससे

कहा उसको तुम सुनो ३६ अर्थात् मैंनेकहा कि हे शुभमुखीदेवी मैं तेरे निष्काम तपसे बड़ा प्रसन्नहूं इसीसे तुझको अविनाशी पने का वरदान देताहूं ३७ तू तीनों लोकोंके ऊपर ब्रह्मलोकमें निवास करेगी मेरी प्रसन्नता से उसलोक का नाम गोलोक विख्यात होगा ३८ हे महाभाग तेरेसब बेटे और बेटी नरलोकों में शुभकर्मी होकरनिवासकरेंगे ३६ हेशुभदेवी तेरेचित्तसे विचारेहुये सबदिव्य मानुषी भोग तुझ को प्राप्तहोंगे ४० हे इन्द्र उससुरभीके लोकसब अभीष्ट पदार्थों से संयुक्तहैं वहां न वृद्धा अवस्था न मृत्यु और न अग्निहै ४१ और वहां कोई दैवीउपद्रव औरअप्रिय बस्तुभी नहींहै वहांदिब्य बनोंसहित बड़ेउत्तम भवनहैं ४२ और अच्छे प्रकार के स्वेच्छाचारीउड़नेवाले बिमानहैं हेकमललोचन इन्द्रवहां ब्रह्मचर्य तपसत्य और लोकभी प्राप्तकरना संभवहै यहसब वृत्तान्तमैंने तुझ से कहा ४५ हे असुरोंके मारनेवाले इसीसे तुमको गौओंका निरा-दर कभीन करना चाहिये ४६ भीष्मजी बोलेकि हे युधिष्ठिरइंद्रने इसको सुनकर गौओं का सदैव पूजन कर के उनकी प्रतिष्ठा की किया ४७ हे बड़ेतेजस्वी यहसब गौओंका माहात्म्य अत्यन्तपवित्र उद्धारका करनेवालाहै यहसबतुझसे बर्णनकिया ४८ हे पुरुषोत्तम यह गौओंका माहात्म्य सबपापोंसे छुटाने वालाहै जो सावधान मनुष्य सदैव हव्य कव्य यज्ञ और पित्रोंके श्राद्धादिमें इस माहात्म्य कोब्राह्मणों के सन्मुख बर्णन करेगा उसके पितरों को सब अभीष्टों कादेनेवाला सामानप्राप्तहोगा ४६।५० गौओंमें भक्ति रखनेवाला मनुष्य जो २ चित्तसे चाहताहै उस २ को प्राप्तकरताहै और जो २ स्त्रियांभी गौओंमें भक्ति रखनेवाली हैं वहभीअपने अभीष्टोंकोप्राप्त करतीहैं ५१ पुत्रका चाहनेवाला पुत्रको पाताहै कन्याका चाहने वालाउत्तम कन्याको पाताहै धनाकांक्षी धनकोधर्मका चाहनेवाला धर्मको ५२ विद्याकांक्षी विद्या को और सुखाभिलाषीसुखको पाता है हे भरतर्षभ गौओं की भक्तिसे कोई वस्तु दुष्प्राप्य नहींहै ५३ ॥

इति श्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगोधर्मतपवर्णनेत्र्यशीतितमोऽध्यायः ८३॥

चौरासीवां अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले कि पितामहने यहगौओंका उत्तमदान और मुख्य कर इसलोकमें धर्मके बिचारने वाले राजाओं का श्रेष्ठधर्म बर्णन किया १ यहराज्य सदैव दुःखरूपहै और जो अपवित्रात्मा मनुष्य हैं उनपुरुषोंसे इसका प्रबन्धकरना कठिनतरहै बहुधा राजालोगों की अशुभगति होतीहै २ उसस्थानपर पृथ्वीका दानकरने में अ-वश्य पवित्र होतेहैं हे कुरुनन्दन आपने संपूर्ण धर्म मुझ से बर्णन किये ३ और गौओंका दानभी तुमने वर्णन किया इस गोधर्म को पूर्व समयमें राजानृग और नाचिकेत ऋषिने प्रकट किया था ४ वेदोंकी गुप्त २ बातेंभी वर्णन करीं सबकर्म और यज्ञों में गौ और सुवर्णकीदक्षिणा कहीगईहै ५ इसस्थानमें एकबड़ीश्रुतिहै कि सुवर्ण की दक्षिणा देनीयोग्यहै हे पितामह मैं उसको ठीक २ सुनना चाहताहूं ६ सुवर्ण क्या वस्तुहै और कैसे प्रकार से कहां और किस समय उत्पन्न हुआहै उसका मूलक्याहै देवता कौनहै और फल क्याहै और किसरीतिसे उत्तम कहाजाताहै ७ ज्ञानीपुरुष किसहेतु से सुवर्ण के दानकी प्रशंसा करतेहैं और यज्ञादिक कर्मों में किस कारणसे उत्तम दक्षिणा कहा जाताहै ८ वहसुवर्ण किसहेतुसे पवित्र होकर पृथ्वी और गौसेभी श्रेष्ठगिना जाताहै और दक्षिणा में सब धनोंमें उत्तमतरहै हे पितामह उसको मूलसमेत वर्णन कीजिये ९ भीष्मजी बोलेकि हे राजा अनेक हेतुओं से भरीहुई जो सुवर्ण की उत्पत्तिहै उसको तुमबड़ी सावधानी से सुनो जैसा कि मुझको नि-श्चय हुआहै १० जबमेरे पितासंतनुने शरीरको त्यागकिया मैं उन के श्राद्ध करनेकी इच्छासे गंगाद्वार अर्थात् हरद्वारमेंगया ११ हे पुत्र मैंने वहां जाकर पिताके श्राद्धको प्रारम्भ किया तबवहां मेरी माता श्रीगंगाजीने मेरीसहायताकरी १२ फिर मैंने गंगाजीकेपास शुद्ध ऋषियोंको बैठाकर जलदानादिक कर्म करना प्रारंभकिया १३ और बड़ीसावधानी से उस पूर्व कर्म को समाप्त करके श्रे

रीति से पिण्डदान देना प्रारंभ किया १४ इसके अनन्तर सुन्दर बाजूबन्द और दिव्य भूषणों से अलंकृत एक भुजा उस स्थापन को चीरकर बाहरनिकली हे भरतर्षभ राजा युधिष्ठिर १५ मैंने उस उठीहुई भुजाको देखकर बड़ा आश्चर्य्य किया कि मेरापिता मेरे प्रत्यक्ष में हाथोंसे पिंड लेने वाला है १६ तब शास्त्रके विचार से मेरीयह बुद्धिहुई कि यह विधि वेदोंमें नहीं कही है १७ कि इस लोकमें मनुष्य को हाथमें पिंडदेना चाहिये फिर मेरी बुद्धि हुई कि इस लोकमें किसीस्थान पर पितृ लोग मनुष्य के दिये हुये पिंड को नहीं लेतेहैं १८ वेदों में ऐसा कहाहै कि पिण्डकुशा और नीर देना चाहिये. फिर मैंने उस अपने पिता के उत्तम हाथकी अवज्ञा करके १९ शास्त्रके प्रमाणसे पिंडकी सूक्ष्मविधिको बिचारकर उस सब सामिग्री समेत पिंडको कुशाओंके ही ऊपर दिया २० हेभरत र्षभ शास्त्रकी रीतिके अनुसार वह पिंडमैंने दिया इसके पीछे वह मेरे पिता की भुजा गुप्त होगई २१ इसके पीछे पितरोंने स्वप्नमें मुझको दर्शन दिया और प्रसन्न चित्त होकर मुझसे बोले कि हेभर-तर्षभ २२ जो तुमधर्मको नहीं भूलतेहो इसीसे हम तेरे इस विज्ञान से प्रसन्न हैं हेशास्त्रके प्रमाण करनेवाले राजा २३ तुमने इसधर्म से अपना आत्मा, धर्म, शास्त्र, ऋषियों समेत वेद, पितृ और साक्षात पितामह ब्रह्माजी प्रजापति और सबगुरू २४ मर्य्यादाओं परनियत किये और अपने शास्त्रकी मर्य्यादा को त्याग नहीं किया हे भरत श्रेष्ठ अबतुमने यह श्राद्धकर्म अच्छी रीतिसे प्रारंभ किया २५ परन्तु पृथ्वी और गौओंके दान में तुम सुवर्णकी दक्षिणा दो हेधर्मज्ञ इस रीति से हम और हमारे सब पितामह २६ पवित्र होंगे क्योंकिवह सुवर्ण महा पवित्र और श्रेष्ठहै जो लोग कि सुवर्णका दान करतेहैं वह अपने दश पूर्व्वके और दशपरके पुरुषोंको तारते हैं २७ इस रीतिसे जबमेरेपित्रोंने कहातब हेराजा मैं आश्चर्य्यमें होकर जाग पड़ा २८ औरसुवर्णके दानमें बुद्धिकरी हेभरतर्षभ राजा युधिष्ठिर इसके सिवाय एक प्राचीन इतिहास कोभी सुनो २९ जोकिवड़े २

धनोंका देने वाला शत्रुको पूर्ण करनेवाला परशुरामजी के समक्षमें हुआहै अर्थात् पूर्व समयमें कठिनक्रोध युक्त परशुरामजी के हाथसे ३० यह पृथ्वी इक्कीसवार क्षत्रियों से रहित कीगई इस के अनन्तर उनबड़े वीर परशुरामजी ने सब पृथ्वी को विजयकरके उस यज्ञकी रचना करी जोकि ब्राह्मण क्षत्रियों से पूजितसब अभी पदार्थोंसे युक्त अश्वमेध नाम ३१ सब जीव मात्रोंकापवित्र करने वाला होकर तेज और कान्ती का बढ़ानेवालाहै हे महाराजा उस यज्ञके द्वारा वह परशुरामजी अपने पापकर्मों सेछूटे ३२ परन्तुउस यज्ञके करने से भी वह सब पापोंसे नहीं छूटेतब उन भार्गवजी ने बड़े यज्ञोंसे पूजन करके ३३ वेदज्ञ ऋषियों से और देवताओं से पूछा कि हे महात्मा ऋषि और देवता लोगो हिंसात्मक कर्म में प्रवृत्त मनुष्यों के पापों को दूर करनेवाला जो श्रेष्ठ दान है उस को तुमसब लोग मुझसे कहो उनके इस बचनको सुनकर वेदज्ञ और धर्मज्ञ महर्षियोंने उनसे कहा ३४ । ३५ कि हे परशुराम जी वेदका प्रमाण देखने से वेदपाठी ब्राह्मणों का सत्कार किया जाय इसके पीछे पवित्रता के विषय में ब्रह्मऋषियों के समुदाय से पूछना योग्य है ३६ वह ब्रह्मज्ञानी जिस बातको कहें वह बात तुम श्रेष्ठ रीतिसे करो इसके पीछे बड़े तेजस्वीभृगुनन्दन जी इसी विषयको देव ऋषि वशिष्ठ अगस्ति और काश्यपजी से पूछा किहे वेदपाठी महात्मा ऋषिलोगो मैं आपसे पूछताहूं कि मेरी पवित्रता कैसे होसक्तीहै ३७ । ३८ इस लोकमें किस कर्म योग व कौनसे पवित्र दानसे मेरी शुद्धी होय हे बड़े महात्मा साधु अपा तेजधारी ऋषि लोगोजो आपकी मेरे ऊपर बड़ी कृपाहै तो मुझसे कहिये कि कौनसी बातसे मेरीपवित्रता होसक्तीहै ऋषिबोले कि भृगुनन्दनजी गौ पृथ्वी और धनको इसलोकमें दान करने वाला मनुष्य पवित्र होताहै यही हम सुनते आयेहैं ४० । ४१ हे ब्रह्मऋषि इसके विशेष हम दूसरे उस उत्तम दानको भी तुमसे कहतेहैं जोकि बड़ा पवित्र दिव्यरूप अग्नि का पुत्रहै ४२ वह पूर्व समयमें अप

पराक्रमसे लोकोंको भस्म करके इस लोक में प्रकट होकर सुवर्ण नाम से विख्यात हुआ है तुमभी उसीके दानसे शुद्धोंको प्राप्तहोगे ४३ इसके पीछे तेज व्रत वाले भगवान् वशिष्ठजीने उनसे कहा कि हे परशुरामजी वह अग्नि के समान प्रकाशित सुवर्ण जैसे उत्पन्न हुआ है उसको सुनिये कि वह इस लोकमें सुवर्ण नाम उत्तमपदार्थ कहा जाताहै वही आपको शुद्धकरेगा, वह जिसरीतिसे और जिससे उत्पन्न हुआहै उसको भी मुझसेसुनो ४४।४५ वहसुवर्ण बड़ी अग्नि रखने वालाहै निश्चय करके इस सुवर्णको अग्नि और चन्द्रमारूप जानो ४६ बकरा अग्नि रूपहै भेड़ वरुण रूपहै घोड़ा सूर्य्य रूप हाथी मृग नाग और भैंसा ग्रह असुर रूपहैं यह शास्त्रका वचन है ४७ हेभृगुनन्दन कुक्कुट बराहभीराक्षसरूप हैं और पृथ्वीगौ दूध जल यह चारों ऐश्वर्य्यरूपहैं यह स्मृतिहै ४८ सब जगत को मथ कर तेजपुंज उत्पन्न हुआ हे ब्रह्मर्षी भृगुनन्दनजी इनसबसेभी उत्तम सुवर्ण बड़ाश्रेष्ठरत्नहै ४९ इसी हेतुसे देवता गन्धर्व्व राक्षस मनुष्य और पिशाच पवित्र होकर उस सुवर्ण को धारण करतेहैं ५० हे श्रेष्ठ भार्गव देवता लोग इसी सुवर्णके मुकुट और बाजू बन्दसेयुक्त नाना प्रकार के स्वर्णमयी भूषणों से शोभायमान होतेहैं ५१ हे नरोत्तम इसीहेतुसे पृथ्वीको सबपवित्र वस्तुओंसे व गौ औररत्नोंसे भी वह सुवर्ण पवित्र और श्रेष्ठकहागया है इसको आपजानो ५२ हे समर्थ इसलोकमेंपृथ्वी गौ औरअन्य अनेकप्रकारके धनों से भी ५३ सुवर्णहीकादान महाउत्तम औरश्रेष्ठ कहाजाताहै हेदेवताके समान तेजस्वी यह सुवर्ण अविनाशी और पवित्रहै इसपवित्र और उत्तम सुवर्णको केवल ब्राह्मणोंकेही अर्थ दान करो ५४ इनसब दक्षिणाओंमें सुवर्णही श्रेष्ठ कहाजाताहै जो मनुष्य सुवर्णको देतेहैं वह सदैव ऐश्वर्य्यमान होतेहैं ५५ जो सुवर्णको देतेहैं वह मानों सब देवताओंकोही देतेहैं क्योंकि अग्नि सब देवताओं का रूपहै और सुवर्ण अग्निरूपहै ५६ इसी हेतुसे सुवर्ण के दान करनेवाले से सब देवता दानकिये हुये होतेहैं हे पुरुषोत्तम इससे बढ़कर कोई

वस्तु नहींहै ५७ हे सबशस्त्र धारियोंमेंश्रेष्ठ ब्रह्मऋषि परशुरामजी
अब मुझसे आप सुवर्ण के माहात्म्यको सुनिये पर हे भृगुनन्दन
मैंने पूर्व्व समयमें पुराणोंमेंन्यायके अनुसार बर्णन करनेवाले प्र-
जापतिजीके मुखसे सुनाहै ५६ हे भार्गव भृगुनन्दनजी जब हिमा-
लय नाम उत्तम पर्व्वत पर शूलधारी महात्मा भगवान् रुद्रजी
का विवाह देवी रुद्राणी केसाथहोने और देबीजीके साथ महात्मा
रुद्रजीका संयोग होने पर ६१ प्रसन्न होकर सब देवता रुद्रजीके
पास आये हे भार्गवजी तब उन सब देवताओंने बिराजमान शिव
जी और देवी पार्वतीजीको देखकर साष्टाङ्ग दंडवतकरी और हाथ
जोड़ वड़ीनम्रता से यह कहा कि हे निष्पाप शिवजी महाराज
आप महा तपस्वी तेजस्बी का संयोग जो इस उग्रतपस्विनी महा
तेजस्विनी उमादेवीके साथ हुआ है हे देवता आप और तेजस्वी
देवी सफल तेजवालीहै ६३ । ६४ हे समर्थ देव तुमदोनोंकीसन्ता-
न बड़ी पराक्रमी होगी निश्चय करके वह सन्तान तीनोंलोकों में
कुछ वाकी न छोड़ेगी ६५ हे दीर्घ नेत्रधारी योगेश्वर आप सब
संसार की प्रियकारी इच्छाके अनुसार इन झुके हुये देवताओं को
वरदानदीजिये६६ हे प्रभुहम सवयही चाहतेहैं किसंतानकेनिमित्त
जो आपका उत्तम तेजहै उसको रोको तीनोंलोकके साररूपआपदो-
नों लोकोंको तपाओगे६७निश्चयकरकेआपकी वह संतानदेवताओं
कोपराजय करेगी हे प्रभु देवी पृथ्वी आकाश और स्वर्ग ६८ यह
तीनोंआपके तेजकेधारण करनेको समर्थनहींहैंयहहमारा मतहै६६
हे प्रभु भगवान् आपऐसी कृपाकरिये जिस्सेकि तीनों लोक भस्म
न होंय हेदेवताओंमें श्रेष्ठ आपकापुत्र देवीपार्वतीजीके गर्भमें उत्पन्न
न होने पावे आप अपने धैर्य्यसेही इस अग्निरूप तेजको रोकिये
७० हे ब्रह्म ऋषि देवताओंकी इसप्रार्थनाको सुनकर भगवान्
शिवजीने उनको उत्तरदिया किऐसाही होय ७१ शिवजीने देवता
ओंसे यह वचनकहकर अपने बीर्य्यको ऊपरकीओर चढ़ाया तभी
से शिवजी ऊर्ध्वरेताहुये ७२ तब वहां संतान के लोपहोनेपर क्रोध

युक्त रुद्राणीजीने स्त्रीस्वभावसे उन देवताओंसे कठोर बचनकहा ७३ जोकि तुमने मेरेपतिको पुत्रके उत्पन्न करने से बंदकर दिया इस हेतुसे तुम सब देवता सन्तान रहित होगे ७४ अर्थात् हेआ-काशचारी देवताओ जैसे कि तुमने मेरी सन्तानका अभावकिया इसी हेतुसे तुम भी सन्तान का सुख न देखोगे ७५ हेभार्गवजीवहां शापदेने के समय सब देवताओं के साथ में अग्नि देवता नहीं आयेथे इसके अनन्तर देवी उमाके उस शापसे देवता असन्तान हुये ७६ तब रुद्रजी ने अपने अनुपम तेजको रोका परन्तु उन से च्युतहोकर थोड़ासा तेज पृथ्वी पर गिर पड़ा ७७ और अग्नि में गया वहां जाकर उस तेजकी बड़ी वृद्धि हुई क्योंकि तेजमें मिले हुये तेजने अपनी उत्पत्तिस्थान को प्राप्तकिया ७८ उसी समय में एकतारक नाम असुर हुआ उसके मारे इन्द्रादिक सब देवता भयभीत होकरमहाव्याकुलता पूर्वक पराजयहुये ७९ द्वादशसूर्य्य अष्टवसु एकादश रुद्र एकोनपंचाशत वायु दोनोंअश्विनी कुमार साध्यगण यह सब उसदैत्यके पराक्रमसे अत्यन्त भयभीतहुये ८० देवताओंके भवन विमान पुर और ऋषियोंके आश्रमोंकोभी असु-रोंने छीनलिया८१ फिर वह सबदेवता और ऋषि लोग महादुखी चित्त होकर प्रभु देवता ब्राह्मजीकी शरणमेंगये ८२॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसुवर्णोत्पत्ति नामचतुर शीतितमोऽध्यायः ८४॥

पच्चासीवां अध्याय॥

देवताओंने कहा कि हे प्रभु ब्रह्मजी जिसको आपने बरदियाहै वह तारकनाम असुर देवता और ऋषियोंको दुःखदेताहै उसके मारनेका कोई उपाय बिचार कीजिये १ हे पितामह उससे हम सब भयभीतहैं हे देव आप हमारी सब ओरसे रक्षाकरिये हमारा आपके सिवाय और कोई दूसरा आश्रयनहींहै २ ब्रह्माजी बोले कि मैं सब जीवोंको समान दृष्टीसे देखनेवालाहूं परन्तु मुझको अधर्म

अच्छानहीं लगताहै इससे देवता और ऋषियोंके समूहोंका दुख दायी तारक असुर शीघ्र मारनाचाहिये ३ हे बड़े साधुदेवतालोगो वेद और धर्मकेनाश न होनेके कारण मैंने पूर्वहीउपायकर रक्खाहै तुम अपने संतापोंको दूरकरो ४ देवताबोले कि वह दैत्य आपहीके वरदानके पराक्रमसे महा अहंकारीहै उसको देवतालोग नहींमार सक्तेहैं तो उसका कैसे नाश होगा ५ हे पितामह उसने आपसे वरमांग लियाहै कि मैं देवता असुर और राक्षसोंके हाथसे नहीं मरूं ६ हे ब्रह्माजी पूर्व्व समयमें सन्तानके रोकनेके कारणसे देवी उमा पार्वतीजीने सब देवताओंको शापदियाहै कि तुम सब असन्तान होगे ७ ब्रह्माजीबोले हे श्रेष्ठ देवता लोगोवहां पार्वतीजीकेशाप देनेके समय अग्नि देवता नहींथा वहीअग्नि देव असुरोंके मारने वाले अपने पुत्रको उत्पन्न करेगा ८ वह अग्निका पुत्र सब देवता दानव,राक्षस,मनुष्य,गन्धर्व,नाग और पक्षियोंको उल्लंघन अर्थात् सबसे अधिक होकर ९ सफल प्रहार वाली शक्तिके द्वारा उसको मारेगा जिससे कि तुम भयभीत हो रहे हो और जो अन्य २ असुरहैं उनको भी मारेगा १० सन्तानके अभिलाषी पुत्रकी उत्पत्तिका संकल्प अग्निमें ही सदैव करते चले आयेहैं यह बात सब लोग जानतेहैं रुद्रजीका तेज जो कि अग्निमें गिरपड़ाथा वह शिवजीके शरीरसे पृथक् होगयाहै ११ अग्निदेवता असुरोंके मारनेके निमित्त उस दूसरे अग्निके समान रुद्र तेजको गंगामें उत्पन्न करेगा १२ उस अग्निने शापनहीं पायाथा इस हेतुसे कि वह वहां शापदेनेके समय सब देवताओंके साथमें नहीं वर्त्तमानथा हे देवताओ इसी हेतुसे तुम्हारे भयका निवृत्त करनेवाला अग्निका पुत्र उत्पन्न होगा १३ अब तुम अग्निको निश्चय करो हे निष्पाप देवताओ मैंने इसरीतिसे तारकअसुर के मारनेका उपाय तुमसे वर्णन किया १४ तेजस्वियोंका शाप तेजोंपर नहींहोताहै निश्चयकरके सब प्रकारके पराक्रम दूसरे पराक्रम को पाकर निर्बल होजातेहैं १५ वह तेज उनको भी मारसक्ताहै जोकि सबसे अवध्य होकर वरके देनेवाले

तपस्वी भी चाहैं होयं फिर वह वड़ा देवता पुत्रके उत्पन्न होनेके संकल्पमें प्रवृत्त चित्तहुआ १६ वह संसारका स्वामी इन्द्रियोंसेपरे सर्वव्यापी सबका उत्पत्तिस्थान सब जीवोंके हृदय में शयन करने वाला रुद्रजीसे भी उत्तमहै १७ तेजोंका समूह अग्नि देवता शीघ्रतासे निश्चय करना चाहिये वह देवता तुम्हारे चित्तकी अभिलाषाको पूर्ण करेगा १८ इसके पीछे देवता लोग ब्रह्माजीके इसवचनको सुनकर अच्छीरीतिसे शुद्धसंकल्प होकर अग्निके निश्चय करनेको चले १६ इसके पीछे उन अग्निके दर्शनके चाहनेवाले देवता और ऋषियोंने अग्निके खोज करनेमें प्रवृत्त चित्त होकरतीनों लोकोंको देखा २० हे भार्गवजी वह महातपस्वी लोकमें विख्यात देवता और ऋषि लोग सबप्रकारके लोकोंमें घूमे २१ परन्तुदृष्टिसे अगोचर जलमें लय होजानेवाले अग्निदेवको नहीं पाया तब वह अग्निके दर्शनाभिलाषी महासिद्ध लोग अत्यन्त अप्रसन्न हुये २२ हे भार्गवजी अग्निके तेजसे संतप्त महादुखीचित्त रसातलसे उठनेवाले जलचारीजीव मंडूकने उन देवताओंसे कहा २३ हे देवताओ वह अग्निदेव पातालमें निवास करतेहैं क्योंकि मैं अग्निसे उत्पन्न होनेवाले तापसे तपित होकर यहां आयाहूं २४ हे देवताओ वह भगवान् अग्नि अपने तेजोंसे जलोंको मिलाकर जलहीमें गुप्तहैं उन्होंनेही हम सब जीवोंको अत्यन्त तपायाहै २५ हे देवता लोगो जो तुम उसकोदेखा चाहतेहो तो वहांजाकर उनकादर्शन करो २६ हे देवताओ जाओ हम अग्निकेभयका उपायकरेंगे इतनाकहकरवह मंडूक शीघ्रही जलमें प्रवेश करगया २७ जब अग्निने मंडूककेदूत कर्मकोजाना तब अग्निने उसको शापदिया कितूरसोंको नहीं जानेगा २८ मंडूकको ऐसाशापदेकर वहअग्नि देवता शीघ्रही किसीदूसरे स्थानमें रहनेको गये परन्तु अपना दर्शन किसीको नहीं दिया २६ हे महाबाहो भार्गवजी इसके पीछे देवताओंने मंडूकोंके ऊपर जो२ कृपाकरी वह हम तुमसे कहतेहैं ३० देवता बोले कि हे मंडूको अग्निके शापसे जिह्वासे खाली रसज्ञान रहित जो तुमहो सो हम

लोगोंकी कृपासे विना जिह्वाके भी सब बातें करोगे ३१ बिबरमें रहनेवाले निराहार अचेत सूखेनिर्जीव होनेपर भी तुम्हारी रक्षा यह पृथ्वी करेगी ३२ तुम अंधेरी रात्रिमें भी बिचरोगे उस मंडूक को इतने आशीर्वाद देकर फिर देवतालोग अग्निके ढूढ़नेको घूमे परन्तु अग्निको कहीं न पाया ३३ तदनन्तर गजराजकेसमानकिसी हाथीने आकर देवताओंसे कहा कि ३४ अग्नि पीपलमें नियतहै तब तो महाक्रोध युक्त होकर अग्निने उन हाथियोंको भी यहशाप दिया ३५ कि तुम्हारी जिह्वा उलटीहोगी यह कहकर वह अग्नि देवता पीपलके वृक्षसे निकल कर शमी वृक्षमें प्रवेश करगये ३६ इसके पीछे हे श्रेष्ठ महात्मा भार्गवजी देवताओंने हाथियों परभी जो २ अनुग्रह किया उसको भी मुझसे सुनो ३७ देवताओंने कहा कि हे हाथियो तुम उलटी जिह्वासेभी सब प्रकार के आहारोंको करोगे और बड़े उच्चस्वरसे अक्षरों से रहित बाणीको कहोगे ३८ हाथियोंको भी बरदान देकर फिर देवता अग्निके खोजनेको चले ३९ हे वेदपाठी परशुरामजी उस शमीमें बर्त्तमानहोने वाली अग्निको फिर तोतेने आकर देवताओंको प्रकट किया तब देवताउस अग्निके पासगये औरअग्निने तोतोंकोभी शापदिया कि बातोंके कहनेसे रहित होगा ४० और हाथियोंके समान तोतेकोभी जिह्वाको उलटी करदिया अग्निको देखकर दयावान देवताओंने तोतेसे कहा कि ४१ तुम तोतेके रूपमें अत्यन्त अबाकनहीं होगे तुम प्रतिकूल जिह्वा होनेपरभी सबको प्यारी और चित्तरोचकबाणीको बोलोगे ४२ जैसे कि बालकका निरर्थक शब्दभी सबकोमधुर और प्यारा मालूम होताहै वैसेही तुम्हारे भीवचन मधुर औरप्यारे सबको लगेंगे यह कहकर उस अग्निको शमीके बीचमें देखकर उसी वृक्षको अग्निकास्थान और सब कर्मोंमें पवित्रकिया ४३ तब से लेकर अबतक अग्निदेवता शमीके वृक्षमें सदैव दिखाई देते हैं ४४ वैसेही मनुष्यों ने भी अग्निके प्रकट करनेको अनेक उपाय किये और जो जल कि अग्निसे स्पर्श कियेगये ४५ वह जलउसी

शयन करनेवाली अग्निके तेजसे संतप्त होकर पर्व्वतीय झरनाओं से उष्णताको प्रकट करतेहैं ४६ तबतो अग्नि देवता उन आयेहुये देवतालोगोंको देखकर पीड़ामान हुये और पूछा कि हे देवताओ तुम्हारे यहां आनेका क्या कारणहै ४७ तब सब देवता और ऋषियोंने उनसे कहाकि हम तुमको किसी काममें प्रवृत्त करेंगे आप उसकार्य्यके करनेके योग्य हो ४८ उस कार्य्यके करनेसे आपका भी बड़ा गुणहोगा ४९ अग्निने कहा हेदेवताओ उस अपने कार्य्य कोकहो मैं उसको अवश्य करूंगा मैं तुम्हारा हितकारी काम करने को उपस्थितहूं तुम किसीबातका सन्देह मतकरो ५० देवताओंने कहा कि ब्रह्माजीके बरदान पानेसे तारक नाम असुर बड़ा अहंकारी होकर हमको दुःख देताहै उसके मारनेका आप उपाय करिये ५१ हे महाभाग प्यारे अग्नि तुम इन देवता प्रजापति और ऋषियोंके समूहोंकोभी चारोंओर से रक्षाकरो ५२ हे प्रभु अग्नि तुम उस अपने बड़े वीर पराक्रमीअतुल तेजस्वी पुत्रको उत्पन्नकरो जो उस असुरको मारकर हमारे भयको दूरकरे ५३ हे प्रभु महादेवी उमाजीसे शापित हम लोगोंको रक्षाका आश्रय आपके सिवाय दूसरा नहींहै इस हेतुसे आप हमारी रक्षाकरो ५४ देवताओंके इस बचनको सुनकर वह भगवान् अग्निदेवता उन देवताओंके कहनेकोअंगीकार करके भागीरथी श्रीगंगाजीके पासगये ५५ और उनसे संयोग किया तब गंगाजोने उसके गर्भको धारण किया और क्रमसे थोड़ेही दिनोंमें वह गर्भ ऐसा बड़ाहोगया जैसे कि सूखे वनमें लगीहुई अग्नि वृद्धिहोतीहै ५६ उस देवताके तेजसे व्याकुल चित्त गंगाजीने बड़ी संतप्तताको पाया और उसगर्भके धारण करने को समर्थनहुईं ५७ जब कि अग्नि देवताने उस तेजभरे गर्भको गंगाजीमें नियत कियाथा उसीसमयके पीछे किसी असुरने गंगाजीके समीप आकर भयभीतताका शब्दकिया ५८ फिर अकस्मात् उत्पन्न होने वाले उस बड़े भयकारी शब्दसे वह गंगाजी भयभीत होकर फैले हुये नेत्रों से महाव्याकुल चित्त हुईं ५९ और ऐसी अचेत

होगईं कि अपने शरीर समेत उसगर्भ के सम्हालने को समर्थ न हुईं हे वेदपाठी परशुरामजी तब तो तेजसे पूर्ण कंपायमान शरीर ६० गर्भके वेगसे अत्यन्त व्याकुल होकर गंगाजी ने अग्निसेकहा कि हे भगवन् मैं इस तेरे तेजके धारण करने को समर्थ नहींहूं ६१ मैं इसके मारे व्याकुल और अचेतहूं पूर्व्वके समान मैं सावधान चित्त नहींहूं हे निष्पाप भगवान् अग्नि मैं बहुत व्याकुलहूं मेरा चित्तनाश हुआ जाताहै ६२ हे संतप्त करनेवालों में श्रेष्ठ मैं इस गर्भके धारण करने को समर्थ नहींहूं इसको मैं दुःखसेही त्याग करूंगी किसी दशामें अपनी इच्छासे नहीं त्यागूंगी ६३ हे बड़े तेजस्वी अग्निदेवता इस तेजसे मेरास्पर्श अच्छीरीतिसे नहीं है उससे अत्यन्त सूक्ष्मभी मैं आपत्तिके समय धारण करसक्तीहूं ६४ हे अग्नि इसस्थान पर जो गुणवान वा निर्गुणहै और वह चाहे धर्महोय वा अधर्म होय मैं उसको अपनेमें ही जानतीहूं ६५ इसके अनन्तर अग्निने उन गंगाजीसे कहा कि धारण करो धारण करो मेरे तेजसे भराहुआ यह गर्भ बड़े गुण तेज औरफलोंका उदय करनेवालाहै ६६ तुम संपूर्ण पृथ्वीके उठाने और धारण करने को समर्थहो दूसरे के गर्भ धारणकरने के सिवाय तेरी कुछहानि नहीं है ६७ तब अग्नि और देवताओंसे निषेधकी हुई उस श्रेष्ठ गंगानदीने उसगर्भको मेरुनाम उत्तम पर्व्वत पर छोड़ा ६८ अर्थात् धारण करने में समर्थ रुद्रजीके तेजसे व्याकुल गंगाजी उसगर्भ को अपनी सामर्थ्य से धारण करने को समर्थ नहीं हुईं ६९ तब गंगाजीने उस अग्निके समान प्रकाशित उस गर्भको बड़े दुःख से त्यागकिया हे भार्गवजीतब अग्निने उनगंगाजीको दर्शन देकर७० कहा कि हे गंगा देवी वह गर्भ कैसे सुखका उत्पन्न करने वालाहै और किस प्रकार के वर्ण और रूप को दिखाई देताहै और कैसे तेजसे भराहुआ है इस सब वृत्तान्त को मुझसे कहो ७१ गंगाजी बोलीं कि हे निष्पाप निश्चय करके यह गर्भ जातरूप सुवर्ण के रूप काहै और तेजमें आपके समानहै देखो उसी सुंदर वर्ण निर्मल

प्रकाशमान ने उस पर्व्वत को भी प्रकाशित करदियाहै ७२ हे तप्त करने वालोंमें श्रेष्ठ उसकी सुगन्धि उनहृदोंके समानशीतलहै जोकि पद्म और उत्पलों से युक्त कदम्बोंके पुष्पोंसे घिरे हुये हों ७३ जैसेकि सूर्य्यकी किरणों से संसार प्रकाशमान होताहै उसी प्रकार उस गर्भके तेजसे पृथ्वीकी जिन २ वस्तुओंने पर्व्वतको स्पर्शकिया ७४ वह सब वस्तु सुवर्ण रूप होगईं वह वालक पर्व्वत नदीऔर झरनाओंके चारों ओर को दौड़कर ७५ सब जड़ चैतन्योंको कंपाता हुआ तीनों लोकोंमें घूमा हे अग्नि वह आपका पुत्र महारूपमान सूर्य्य और वैश्वानरके समान प्रकाश युक्त कान्तीमें दूसरे चन्द्रमा के समान है ७६ हे भार्गवनन्दन ऐसे कहकर वह गंगा देवी उसीस्थानपर अन्तर्द्धानहोगई और वहतेजस्वीअग्निभी देवताओंके कार्य्यको करके ७७।७८ अपने अभीष्ट देशको गये इसलोकमें इन गुण और कर्मोंके कारण से अग्निका नाम ऋषि और देवता लोगों ने हिरण्यरेता विख्यात किया तभी से पृथ्वी देवी भी विश्वमती प्रसिद्ध हुई ७६ वह अग्नि से उत्पन्न गंगाजी का पुत्र महातेजस्वी अपूर्व्व दर्शन वाला वालक दिव्य सुरोंके नन्दनादि वनोंको पाकर बड़ा हुआ ८० और कृत्तिका नक्षत्रने उस प्रातःकाल के सूर्य्यके समान तेजस्वी वालक को देखकर अपने स्तनके दूधको पिलाकर उसका पोषण किया ८१ इसी हेतुसे उस बड़े तेजस्वी का नाम कार्त्तिकेय विख्यात हुआ और गर्भके डालने से स्कन्धभी इनका नाम प्रसिद्ध हुआ और गुहा अर्थात् गुफामें निवास करने से इन का गुह नाम प्रकट हुआ ८२ इसरीतिसे अग्निका पुत्र सुवर्ण उत्पन्न हुआ सुवर्णोंके भेदोंमें से जांबूनद नाम सुवर्ण सब सुवर्णों से श्रेष्ठ होकर देवताओं काभी भूषणहै ८३ तबसे लेकर यहजात-रूप सुवर्ण भी सब रत्नों में रत्न और भूषणोंमें श्रेष्ठ कहा जाता है ८४ यहसुवर्ण पवित्रोंका भी पवित्र होकर मंगलों काभी मंगल रूपहै यह सुवर्ण प्रजापति भगवान् अग्निही है ८५ हे बड़े साधु ब्राह्मण कंकनाम सुवर्ण पवित्रोंका पवित्र है और जातरूप नाम

सुवर्ण अग्नि और जलरूप कहा गयाहै ८६ वशिष्ठजी बोले हे परशुरामजी यह कथा भी जोकि सुवर्णको उत्पत्तिके विषयमेंबर्णन कीगईहै इसमें ब्रह्माजीका वर्णनहै ८७ और मैंने पूर्व्व समयमेंसुनी है हेप्रभु तात परशुरामजी महादेवजी के वरुण रूप धारण करने पर उस ईश्वर शिवजी के वारुणैश्वर्य्यमें ८८ नीचे लिखे चमत्कार उत्पन्न हुये अग्निको अग्रगामी रखनेवाले सब मुनि देवता यज्ञांग मूर्त्तिधारी वषट्कार ८९ सामवेद और यजुर्वेदकी मूर्त्तिधारी हजारों ऋचा वा पदक्रमसे संस्कृत मूर्त्तिधारी ऋग्वेद भी वहां आकर वर्त्तमान हुआ ९० लक्षण सुरास्तोम निरुक्त सुरपंक्ति ओंकार निग्रह परिग्रह यह सब शिवजीके नेत्रमें नियत हुये ९१ उपनिषदों समेत वेद विद्या सावित्री भूत भविष्य औरवर्त्तमान कोभी शिवजी ने धारण किया ९२ हे प्रभु तब पिनाक धनुषधारीने आपही से अपनी आत्मासे आत्माको आहुतिदी और बहुत से रूप युक्त यज्ञोंको शोभित किया ९३ स्वर्ग अन्तरिक्ष पृथ्वी और पृथ्वी के स्वामियोंकेभी स्वामी शिवजीहैं और यही शिवजी सब विद्याओंके ईश्वर श्रीमान् अग्निभी हैं९४ यही सब जीव मात्रोंके स्वामी भगवान् शिवजी ब्रह्मा, शिव, रुद्र, वरुण, अग्नि और प्रजापति नाम से भी कहे जातेहैं ९५ हे भृगुनन्दन तब उन पशुपति महात्मा वरुणजीके यज्ञमें मूर्त्तिधारी यज्ञतप कृत प्रकाशित ब्रतरखनेवाली देवी दीक्षा दिग्पालों समेत सब दिशा ९६ देवाङ्गना देवकन्या और देवताओंकी माता यह सब भी इकट्ठी होकर प्रसन्नचित्त वर्त्तमान हुईं उनको देखकर ब्रह्माजी का वीर्य्य पृथ्वीपर गिरा ९७। ९८ तब पूषानाम देवताने अपने हाथसे उस वीर्य्य संयुक्तधूलिको उठाकर उसी अग्निमें डाला ९९ इसके अनन्तर देदीप्य अग्नि वाले यज्ञके जारी होने पर ब्रह्माजी के हवन करने के समय जीवों की उत्पत्ति हुई १०० हे भृगुनन्दनजी उन ब्रह्माजी ने उस पृथ्वी परगिरे हुये वीर्य्यको श्रुवेमें रखकर घृतके समानमंत्र पूर्व्वक अग्नि में हवन किया १०१ उस वीर्य्यके स्वामीने उस वीर्य्यसे चारों

खानि के जीवोंको उत्पन्न किया व उस त्रिगुणात्मक तेजसंबंधी रजोगुण भागसे तैजसजीव उत्पन्न हुये १०२ तमोगुण के भागसे तामसी जीव पैदा हुये और दोनों गुणोंमें व्यापकरूप धर्मका हेतु जो सतोगुणहै वह प्रकाश रूप बुद्धि का स्वरूप है और उसबुद्धि का स्वरूप आकाशादिक सब विश्वहै वह सब प्रकट हुये १०३ इसी प्रकार सब तमोगुण रूप भी प्रकटहुये इन जड़ शरीरों में सतोगुणका प्रकाश उत्तम तेज है और उसी प्रकार उससे धर्मकी प्रवृत्तीहै हे प्रभु इसी हेतुसे उस अग्नि में वीर्य्यके हवनहोने से तीन पुरुष उत्पन्न हुये १०४ वह तीनों पुरुष शरीरवाले होकर अपने २ कारण जन्यगुणोंसे संयुक्तथे साक्षात् ज्वालासे प्रथम तो भृगुऋषि उत्पन्न हुये और अंगारों से अंगिराऋषि उत्पन्न हुये १०५ अंगारों में नियत थोड़ी ज्वाला से अन्यकवि नाम ऋषि उत्पन्नहुये भृगुजी ज्वालाओंसे उत्पन्नहुये हैं इसी हेतुसे भृगु नामसे प्रसिद्धहुये १०६ अग्निके स्फुलिंगों से मरीचिऋषि हुये और मरीचि ऋषिके पुत्र कश्यपजीहुये अंगारोंसे उत्पन्नहोनेसे अंगिराऋषि नाम हुआ और कुशाओंके समूहोंसे वालखिल्य ऋषि उत्पन्नहुये १०७ और इसी कुशाओंके समूहोंसे एकऋषि और भी उत्पन्नहुये उस समय देवता आदिकोंने अत्र अत्र शब्द कहा इसी से उनको अत्रिऋषि कहतेहैं१०८तपशास्त्र और गुणोंके चाहनेवाले वैषानसनाम ऋषि उत्पन्नहुये और अश्रुपातोंसे वड़े स्वरूपमानदोनों अश्विनीकुमार उत्पन्नहुये१०९ बाक़ी प्रजापति उसकी इन्द्रियोंसेप्रकटहुयेशेषऋषिलोग उसके रोमोंसेश्वेदसे छंदऔरवलसेमन उत्पन्न हुआ११०इसीकारणसे शास्त्रज्ञ ऋषियोंनेवेदकाप्रमाणदेखनेसेकहा हैकिअग्नि सब देवता रूपहै वा सब देवताही अग्निकेरूपहैं १११ काष्ठ और काष्ठमेंजो लाक्षाआदि होतीहैं वहीमहीने पक्ष दिन रात्रि और मुहूर्त्त हुये और जो ज्योतिहै उसको वरुणरूप रुद्र संबंधीपित्त और रुधिर वर्णन कियाहै उस रुधिरसे कनकनाम सुवर्ण उत्पन्न हुआ वह सुवर्ण मित्रनाम सूर्य्यको देवता रखनेवाला कहागयाहै

और धूम से आठोंवसु उत्पन्न हुये ११२।११३ अग्निके जो सखा हैं वह बड़े प्रकाशमान ग्यारह रुद्र और बारह सूर्य्य कहेजाते हैं इसी प्रकारजो अंगारेथे वह स्वर्गमें अपने २ स्थानोंपर नियत ग्रह और तारागणहैं ११४जोइस सृष्टिका मुख्य स्वामीहै और जिसको रूपान्तर दशासे रहित सदैव रहनेवाला सब अभीष्टोंका देनेवाला कहकर जिसको अत्यन्त गुप्त अवाच्य वर्णनकियाहै ११५इसकेपीछे वायु औरवरुणरूप महादेवजीने कहाकि यहमेरा दिव्यसत्रहै मैंगृह कास्वामीहूं ११६ वहप्रथम भृगु कवि अंगिरातीनों पुरुषमेरे पुत्रहैं औरवहीमेरे निस्सन्देह यज्ञकेफलहैं११७फिर अग्निनेकहाकि यह मेरे अंगोंसे उत्पन्न और मुझको अपना रक्षास्थान जानने वालेहैं इस हेतुसे यहमेरेही पुत्रहैं वरुण देवता भ्रान्तचित्तहैं ११८ फिर सबके पितामह ब्रह्माजी बोलेकि यह मेरेही पुत्रहैं क्योंकि मेरेही वीर्य्यके होमकरनेसे उत्पन्न हुयेहैं ११६मैंही यज्ञकरने वाला और अपनेवीर्य्यका होमनेवालाहूं अग्निवीर्य्यकाहेतु मानागयाहैइसीसे जिसका वीर्य्यहै उसीका फलहै १२० इसके पीछे सब देवताओंने ब्रह्माजीके पास आकर हाथ जोड़कर ब्रह्माजीसे कहा १२१ हेभगवन् सब जड़ चैतन्य जीवों समेत हमसब देवता लोग आपहीके पुत्रहैं इसीहेतुसे अग्निदेवता १२२और ईश्वर वरुण देवताअपने अभीष्ट मनोरथों को प्राप्त करें जलोंके स्वामी ईश्वर वरुणजी ने ब्रह्माजीकी सन्तानसे १२३ प्रथम पुत्र सूर्य्यके समान तेजस्वी भृगुजीको लिया अग्निने अंगिराको अपना पुत्रबनाया १२४और सिद्धान्तके ज्ञाता ब्रह्माजीने कविनाम पुत्रकोलिया तबप्रश्रवकर्म के करनेवाले वहभृगुजी वारुण अर्थात् वरुणकेपुत्र विख्यातहुये१२५ और श्रीमान् अंगिरा आग्नेय अर्थात् अग्निकेपुत्र प्रसिद्धहुये और बड़ेउत्तम कविजी ब्राह्म्य अर्थात् ब्रह्माकेपुत्र प्रख्यात हुये लोकमें भार्गव और अंगिरसवंशी लोककी सन्तानके लक्षण अर्थात् चिह्न हैं१२६ यहतीनोंपुत्रप्रजाओंके स्वामीहैं इन्हींकी सबसन्तानहैं इसी कोनिश्चयजानो १२७ भृगुजीकेही गुणोंके समान उनभृगुजी के

च्यवन, वज्रशीर्ष, शुचि, और्व १२८ शुक्र, वरेण्य, विभुसवन यह सातपुत्रहुये वहसवभार्गवलोग वारुणअर्थात्वरुणकेपुत्रहैं आपभी उन्हींके वंशमेंहै १२६ और अंगिराऋषिके वृहस्पति, उतथ्य, वयस्य, शान्ति, घोर, विरूप, सम्वर्त, सुधन्वा, यहआठों पुत्रभी वारुणअर्थात् वरुणकेहीपुत्र कहेजातेहैं परन्तु यह आठोंउपाधियोंसे रहित ज्ञान निष्ठअग्नि के पुत्र हैं १३०। १३१ ब्रह्माजीके पुत्रकविकेभी आठ-हीपुत्रहैं वह आठोंभी अपने स्वाभाविक गुणों से युक्त ब्रह्मज्ञानी औरशुभ हैं वह भी वारुणही कहलाते हैं १३२ कवि, काव्य, धृष्णु, वुद्धिमानउशना, भृगु, विरज, काशी, धर्मज्ञउग्र, १३३ यह आठों कविके पुत्रहैं इन्हीं से सव संसार व्याप्त है यह प्रजापति हैं इस लोकमें वर्णोंके प्रकारों समेत प्रजालोग इन्हीं से उत्पन्न हुये हैं १३४ हे श्रेष्ठ भार्गव जी इस रीति से यह संसार भृगु अंगिरा और कविकी सन्तानोंसे व्याप्त हुआ है १३५ हे वेदपाठी प्रारंभ में उस प्रभु ईश्वर वरुण ने कवि और भृगुको लियाहै इसी हेतुसे वह दोनों वारुण नाम से प्रसिद्ध हुये १३६ और जोकि अग्नि ने अंगिरा को लियाहै इसी हेतुसे उसके वंशको सव सन्तान अंगिरस नाम से जानने योग्य हैं १३७ प्रथम उन देवताओंने जो ब्र-ह्माजी को प्रसन्न किया था उसमें यही हेतुथा कि यहप्रजापतिजी अपनी सन्तान के द्वारा हमारा उद्धार करेंगे और सव वंशों केवृद्धि कर्त्ता आपके तेजके बढ़ाने वाले वेदज्ञ वेदोक्त कर्मों के जाननेवाले होंगे १३८। १३९। १४० इसी प्रकार देवताओंके पक्षवाले वह मृदु चित्त प्राजापत्य महर्षी तप और उत्तम ब्रह्मचर्य्य कोभी पावें १४१ हे प्रभु हम सव समेत यह ऋषि लोग आपकेही पुत्र हैं हेपितामह आपही देवता और ब्राह्मणों के भी ईश्वर हो १४२ मरीचिको आदिलेकर सव ऋषि और सव भार्गव मेरेही पुत्र हैं इससे हे पितामह उसको श्रेष्ठ रीति से विचारकर उनको परस्पर में स्नेह युक्त और क्षमावान करो १४३ वह उस शान्ति औरक्षमा युक्त रूपसे प्रजाओं को उत्पन्न करेंगे और उत्पत्तिकालमें वा प्रल-

यकाल में अपने शरीर को भी नियत रक्खेंगे १४४ उनके इनबच-
नोंको सुनकर लोकके पितामह ब्रह्माजी ने कहा कि ऐसाही होय
यह सुनकर वह भी अपने नियतस्थान परगये १४५ इसरीतिसे
संसार की पूर्व सृष्टिमें उस देवताओं में श्रेष्ठ महात्मा वरुण रूपधा-
री शिवजी के यज्ञमें यह विश्व उत्पन्न हुआ १४६ अग्निही जीवा
त्माका स्वामी विश्वपति ब्रह्मा नाश करनेवाला पशुपति शर्व रुद्र
प्रजापतिहैं और यह सुवर्ण भी यथार्थमें उस अग्निका पुत्रहै १४७
हे परशुरामजी शास्त्रके प्रमाणका जाननेवाला ब्राह्मण अग्निके
वर्त्तमान न होने पर वेदकी श्रुतिके प्रमाण से अग्निके स्थानापन्न
सुवर्ण को स्थापन करताहै १४८ कुशाके स्तंभ परभी जो सुवर्ण
नियत होय तो उस परभी ब्राह्मण अग्नि संबंधी आहुति देसक्ताहै
वामीके छिद्रमें वकरे के दक्षिण कान १४६ से स्पर्श हुई पृथ्वी में
तीर्थों के जलमें और ब्राह्मणों के हाथ में हवनहोने पर भगवान्
ऋषि लोग अत्यन्त प्रसन्न होकर वृद्धि को मानते हैं १५० इसी
हेतुसे सब देवता अग्निको श्रेष्ठतर मानते हैं यह हमने श्रवण
किया है ब्रह्माजी का पुत्र अग्नि है और अग्निका पुत्र सुवर्ण
है १५१ इसी कारण जो धर्मदर्शीलोग सुवर्ण का दान करते हैं
वह सब देवताओंकाही दान करते हैं यह हमने बड़ोंके मुखसे
सुनाहै १५२ हे भार्गवजी प्रकाशमान लोकों में जानेवाले उस
पुरुष की परम गतिकोभी वर्णन कियाहै किवह सुवर्ण कादेनेवाला
स्वर्गलोकमें जाकरकुवेर की पदवी पर अभिषेक किया जाता
है १५३ जोमनुष्य सूर्योदयके समय शास्त्रकी बुद्धिसे मंत्र के द्वारा
सुवर्णको आगे रखकर दान करता है वह दुःस्वप्न देखनेके अशुभ
फलका नाश करनेवालाहै १५४ जोमनुष्य सूर्यके उदय होतेही
दान करताहै उसका सब पापनष्ट होजाताहै और मध्याह्नके पीछे
जो सुवर्ण का दान करताहै उसके आनेवाले पापनष्ट होजाते
हैं १५५ जो व्रतमें सावधान मनुष्य सायंकाल के समय सुवर्णका
दान करताहै वह ब्रह्मा अग्नि वायु और चन्द्रमा की सालोक्यता

को पाताहै अर्थात् उनके लोकों में निवास करता है १५६ और इन्द्रलोकमें अच्छी प्रतिष्ठा को पाताहै और इस लोकमें शुभकीर्त्ति को प्राप्त करके पापों से निवृत्त होकर आनन्द करताहै १५७ इस के विशेष वह अपूर्व्व मनुष्य अन्य लोकोंमें भी सदैव ऐश्वर्य्यमान होताहै और अवाध्य गति होकर जहां चाहैवहां घूमनेवाला होता है १५८ अपने लोकों से नहीं गिरता है और बड़ी शुभ कीर्ति को पाताहै इस अविनाशी सुवर्णके दान करनेसे उत्तम लोकोंको पाता है १५९ जो व्रतमें नियत होके प्रातःकालके समय श्रौत वा स्मार्त्त अग्निको प्रकट करके सूर्य्योदय के समय सुवर्ण का दान करे वह सब अभीष्ट पदार्थों को प्राप्तकरताहै यह सुवर्ण अग्निरूपहै इसीसे इसका दान करना महासुख दायीहै जोकि अपने प्रिय गुणोंसे युक्त स्वर्ग औरपृथ्वीपर प्रकाशमान रूप से नियतहोकर उत्पन्न होने के समय उदयमान सूर्य्यके समान उत्पन्नहुआहै इसज्ञानको सुवर्णके दानमें प्रवृत्त होने वालाकहाहै १६० । १६१ हेनिष्पाप भृगुनन्दन प्रभुपरशुराम जीमैंने यहसुवर्णऔर कार्त्तिकेयकी उत्पत्ति वर्णन की है इसकोआप निश्चयही जानो १६२ हे भार्गव बहुत समय में बड़े होने वाले कार्त्तिकेयजीको इन्द्रादिक सब देवताओं ने सेनानीके अधिकारपर नियतकिया १६३ फिर उससेनापतिने संसारकी वृद्धि की इच्छासे देवराज इन्द्रकीआज्ञासे अनेकअन्यअसुरों समेत तारक असुरकोयुद्धमें मारा १६४ हे देवताओंमें श्रेष्ठ प्रभु मैंनेसुवर्ण दान के गुणतुमसे कहे इसी हेतुसे तुम ब्राह्मणोंके अर्थ सुवर्णका दानकरो १६५ भीष्मजीबोले किवशिष्ठ जीके इसप्रकार कहेहुयेवचनोंको सुन करप्रतापवान् परशुरामजीने बहुतसा सुवर्ण वेदपाठी ब्राह्मणोंको दान किया औरपापोंसे निवृत्त हुये १६६ हे राजा युधिष्ठिरसुवर्ण काजन्म औरउसकेदानका जो२ फलहैवहसब तुझसेकहा १६७इसी हेतुसेतुमभी ब्राह्मणोंकेअर्थबहुतसा सुवर्णदानकरो हेराजाइससुवर्ण के दान करने से तुम भीअवश्य अपनेपापोंसे छूटजाओगे १६८ ॥

इतिमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसुवर्णोत्पत्तिनामपंचाशीतितमोऽध्यायः८५ ॥

छयासीवाँ अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि सुवर्ण दानके जो२ फल वेदमें लिखेहैं उनको इस स्थान पर पितामह ने बहुत संक्षेपता से वर्णन किया है १ सुवर्ण की उत्पत्ति का जो हेतुहै वहभी तुमसे वर्णन किया यह मैंने सुना परन्तु उस तारकासुरको कार्त्तिकेय जी ने कैसे मारा उस सब वृत्तान्तको आप वर्णन किजिये २ क्योंकि वह तारकासुर तो देवताओं से अबध्यथा वह कैसे मारा गया इस को ब्योरे समेत वर्णन कीजिये ३ हे कौरव्य पितामह मैं इस तारकके मरने को संपूर्णता पूर्व्वक सुनना चाहताहूं इसके सुनने की मुझको बड़ी अभिलापाहै ४ भीष्मजी बोले कि हे राजेन्द्र उन देवता और ऋषियों ने जिनका कार्य्य गर्भके गिरजाने से नष्ट होगयाथा कृत्तिका नाम छःनक्षत्रों को उस गर्भसे उत्पन्न होने वाले पुत्र के पोषण के लिये प्रार्थना पूर्व्वक प्रेरणा करी ५ कि हे कृत्तिकाओ इस गर्भके धारण करने को कोईदेवता भी समर्थ नहीं हुआ है तुम इस अग्निके गर्भ धारण करने को समर्थहो यह सुनकर प्रसन्न चित्तछओं कृत्तिकाओं नेउस बालक के पोषण करने को अंगीकार किया ६ तब अग्निदेवता अपने बड़े तेज और पराक्रम के छोड़ने और उनछओं कृत्तिकाओं के सगर्व होनेसे प्रसन्नहुये ७ और उनछओं कृत्तिकाओंने अग्निके गर्भको पोषणकिया अर्थात् उन छओंने अपने २ गर्भों में अग्निका संपूर्ण तेज धारण करलिया ८ तदनन्तर बड़े होनेवाले महात्मा कुमारके तेजसे पूर्ण शरीरवाली कृत्तिकाओंने कहीं सुखको नहींपाया ९ तब तेजसे पूर्ण शरीरवाली उन कृत्तिकाओंने समयपर अपने गर्भको उत्पन्नकिया १० इसकेपीछे पृथ्वीने छःउत्पत्ति स्थान रखनेवाले और एक रूप प्राप्त करनेवाले उस बालकको कार्त्तिसर नाम स्थानके पास लेलिया ११ अपूर्व्व स्वरूप दिव्यनिवास स्थान रखने वाला अग्निके समान प्रकाशमान वह बालक स्वर्गसंबंधी नन्दनादि सुरवन को पाकर बड़ाहुआ १२ फिर कृत्तिकाओंने उस

सूर्य्य के समान बड़े तेजस्वी बालकको देखा तब बड़ीप्रीतिसे स्नेह करके अपने स्तनों का दूध उसको पिलाया १३ इसीसे वह बालक सब स्थावर जंगम संसार में कार्त्तिकेय नाम से प्रसिद्ध हुआ और गर्भके पतन होने से स्कन्धनाम विख्यात हुआ औरगुहामें निवास करने से गुहनाम हुआ १४ इसके पीछे देवता, दिशा, दिगीश्वर, रुद्रदेवता, धाता, विष्णु, यमराज, पूषा, अर्य्यमा, भग, १५ अंश, मित्र, साध्यगण, अष्टवसु, इंद्र, अश्विनीकुमार, जल, वायु, आकाश, चन्द्रमा, नक्षत्र, ग्रह, सूर्य्य, १६ और अन्य शरीरधारी ऋग यजु साम वेदजिनके द्वारादेवताओंको आहुतिदीजातीहैं यहसवपृथक् २ होकर उस अपूर्व्व दर्शन कुमाररूप अग्नि के पुत्रके देखने को आये १७ ऋषियों ने स्तुतिकरी गन्धर्वोंने गाया उस षड़ानन द्वादश नेत्रधारी ब्राह्मणों के प्यारे १८ बड़े स्कन्धयुक्त द्वादश भुजायुक्त अग्नि और सूर्य्य के समान तेजस्वी सुरवनमें सोतेहुये को देखकर ऋषियोंसमेत देवताओंने१९ बड़ा आनन्दमाना और सब असुरों समेत तारक को मराहुआही जाना इसके पीछे सब देवताओंने उसकी अभीष्ट वस्तुओंको प्राप्त किया २० उस खेलने वाले बालक को खेलकी अनेक बस्तुदीं और गरुड़जीने उसको अपना पुत्र मोर दिया जोकि बड़ा अपूर्व्व अनेक रंगोंके पक्ष धारण किये था २१ राक्षसोंने वराह और भैंसा उसको दिया वरुण देवताने अग्निके समान बड़ा तेजस्वी कुक्कुट दिया २२ चन्द्रमाने मेष नाम पशु दिया सूर्य्य ने सुंदर तेज दिया गौओंकीमाता सुरभी ने लाखों गौ देवीदीं २३ अग्निने गुणयुक्तबकरादिया पृथ्वीनेअनेक फूल फल दिये सुधन्वाने शकट और बड़े कूबरवाला रथ दिया २४ वरुण देवताने अपने लोकमें उत्पन्न होनेवाले महादिव्य शुभ हाथी दिये देवराजने सिंह व्याघ्र हाथी और अन्य २ पक्षी २५ घोर रूप बहुत से हिंसक पशु और नाना प्रकार के छत्र भी दिये फिर उस ईस्वरकेपीछे राक्षस औरदेवताओंके समूहचले २६ तब तारक ने उस वृद्धि युक्त कुमार को देखकर अनेक उपायोंसे मार-

ना चाहा परन्तु वह किसी प्रकार से भी उस प्रभुको नमारसका २७ देवताओं ने उस गुहानिवासी कात्तिकेयको सेनानीके अधिकार पर अभिषेक करके तारक की शत्रुता और कृतघ्नताका वृत्तान्त उससे कहा २८ फिर उस अत्यन्त वर्द्धमान देवताओं के सेनापति प्रभु गुहनेअमोघ शक्ति से तारकासुरको मारा २९ उसक्रीड़ा करने वाले कुमार के हाथ से उस असुरके मरने पर देवराज इन्द्र फिर करके देवताओंके राज्यासन पर नियत किया गया ३० वह देवताओं का ईश्वर रक्षक और शंकरजी का अभीष्ट करनेवाला प्रतापवान सेनापति स्कन्ध महा शोभायमान हुआ ३१ इस सुवर्णमूर्त्ति भगवान् कुमार कात्तिकेयने सदैव देवताओं की सेनापतिकी पदवी कोही पाया ३२ इसीहेतुसे अग्निके पुत्र कात्तिकेयके साथ उत्पन्न मंगली और अविनाशी उत्तम रत्न सुवर्ण मानागया ३३ हे राजायुधिष्ठिर पूर्व्व समयमें वशिष्ठजीने यह सब वृत्तान्त परशुरामजीसे कहा है इसी हेतुसे तुम सुवर्णके दानके अर्थ अच्छे २ उपाय करो ३४ परशुरामजी सुवर्ण का दान करके सब पापों से मुक्तहोगये और स्वर्गमें उन्होंने उस उत्तम स्थानको पाया जोकि मनुष्यों को बड़ी कठिनतासे प्राप्त होने के योग्य है ३५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसुवर्णदानंनामषड्शीतितमोऽध्यायः८६ ॥

सत्तासीवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे धर्मात्माराजा भीष्मजीजिस प्रकारसे आपने चारों वर्णोंके धर्मोंका वर्णन किया उसी प्रकारसे श्राद्ध बिधिको भी मुझसे कहो १ वैशंपायन बोलेकि युधिष्ठिरके इस बचनको सुनकर भीष्मपितामह ने इस संपूर्ण श्राद्ध विधिको कहना प्रारंभकिया २ भीष्मजी बोले कि हे शत्रुसंतापी राजा युधिष्ठिर तुम बड़ी सावधानीसे श्राद्धोंकी शुभ विधियोंको सुनो जोकि पितृयज्ञ नामसे धनकीर्त्ति और सन्तानमें पुत्रोंकी देनेवाली हैं ३ वह पितृ सदैव देवता असुर मनुष्यगन्धर्व उरग राक्षस पिशाच और किन्नरोंके भी

पूज्य हैं ४ अमावास्या चाहै दिनभर या पूर्व्व अमावास्या के पीछे दिनके दूसरे भागमें प्रतिपदा होय तब प्रथम भागमें देवताओंको और दूसरे भागमें पितरोंको तृप्त करतेहैं इसी हेतुसे मनुष्यको उचितहै कि उन देव पितरोंको सब रीतिसे पूजनकरे ५ हे महाराज पितरोंका मासकी श्राद्ध अमावास्याके दिन कहाजाताहै इसीहेतुसे यह पूर्व्व विचारकी हुईमुख्य विधिविशेष कही जातीहै अर्थात् जब कि एकही दिन अमावास्या और प्रतिपदा दोनों होयँ तब अमावास्यामें देवयज्ञ और प्रतिपदामें पितृयज्ञ होताहै ६ सब दिनोंमें श्राद्ध करने से पितृतृप्त होकर प्रसन्नहोते हैं अब तुझसे मैंतिथि अतिथिके सबगुण और अवगुणोंको कहताहूं ७ हेनिष्पाप जिन २ दिनोंमें श्राद्ध करनेसेजो २ फलप्राप्त होता है उन सबको ठीक २ कहूंगा ८ प्रतिपदामें जो पितरोंको पूजताहै वह अपने गृहमें रूपवान सन्तान उत्पन्न करनेवाली दर्शनके योग्य अनेक पुत्र वा कन्या रखनेवाली स्त्रियोंको पाताहै ९ द्वितीयाके दिन श्राद्धकरनेसे पुत्री उत्पन्न होतीहैं तृतीयाके दिन श्राद्ध करनेसे घोड़ोंकी प्राप्ति होतीहै चतुर्थीके दिन श्राद्ध करनेसे छोटी जातिके बकरी आदि अनेक पशुओंको पाताहै १० हे राजा पंचमीके दिन श्राद्ध करनेसे बहुतसे पुत्र उत्पन्न होतेहैं षष्ठीके दिन श्राद्ध करनेसे तेजस्वी मनुष्य होतेहैं ११ सप्तमीके दिन श्राद्ध करनेवाला मनुष्य बहुतसी खेतियों का स्वामी होताहै अष्टमीकेदिन श्राद्ध करनेवाला मनुष्य व्यापारमें लाभको प्राप्त करताहै १२ नवमीके दिनमें श्राद्ध करने वाले मनुष्यके गृहमें बहुत घोड़ेआदि होते हैं दशमीके दिन श्राद्ध करनेवाले को गौओं की वृद्धि होतीहै १३ हेराजाजो मनुष्य एकादशीको श्राद्ध करताहै वह वस्त्रोंसे पूर्ण होकर पुण्यभागी होताहै अर्थात् उसके गृहमें ब्रह्मतेजधारी पुत्र उत्पन्नहोतेहैं १४ द्वादशीमें श्राद्ध करनेसे उसके गृहमेंसदैव यथेप्सितसुवर्ण और चांदी दिखाई देतेहैं १५ त्रयोदशीके दिन जो श्राद्ध करताहै वह अपने सजातियोंमें उत्तम होताहै जो मनुष्य चतुर्दशीमें श्राद्ध करताहै वह युद्धको

जीविका पानेवाला होताहै और उसके मनुष्य और पुत्रादि कभी अवश्य तरुणही मरतेहैं अमावास्यामें श्राद्ध करनेसे सब मनोरथों को पाताहै १६।१७ कृष्णपक्षमें चतुर्दशीको छोड़कर दशमीसेलेकर अमावास्यातक जोतिथिहैं वह श्राद्ध कर्म में श्रेष्ठतरहैं और इनके विशेष अन्यतिथि उत्तमनहींहैं १८ जैसे कि पूर्व पक्षसे दूसरा पक्ष उत्तमहै उसी प्रकार श्राद्धके निमित्त पूर्वके आधे दिनसे दूसरा अर्द्धभाग श्रेष्ठहै १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेश्राद्धकल्पेसप्ताशीतितमोऽध्यायः ८७ ॥

अट्ठासीवां अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे ईश्वर पितरोंके अर्थ कौनसी दीहुईवस्तुअविनाशी होतीहै कौनसा हव्य चिरकालके लिये और कौन अत्यन्त चिरकालके निमित्त पूर्णता करनेवाला कहा जाताहै १ भीष्मजी बोले कि हे श्राद्धके ज्ञाता युधिष्ठिर पंडितोंने श्राद्धकल्पमें हव्यों को जानाहै उन सुन्दर हव्योंको और श्राद्धके फलोंको मुझसेसमझो २ हेराजा तिल, जव, चावल, मासान्न, जल, मूल, फल, इन वस्तुओंके द्वारा श्राद्धकरने वालेके पितर एकमासतक तृप्त होते हैं ३ मनुजीने तिलके वृद्धियुक्त श्राद्धको अविनाशी कहाहै सब भोजनोंमें भी तिलहीको प्रधान किया है ४ मांस मछलियोंसे श्राद्ध करनेमें पितरोंके समूहोंकी दोमहीनेतककी तृप्ति होतीहै और भेड़ के मांससे तीन महीनेकी खरगोशके मांससे चारमहीनेकी ५ बकरी के मांसके श्राद्धसे पांच महीनेतक बराहके मांससे छः महीनेतक और पक्षीकेमांससे सातमहीनेतक पितृगण तृप्त रहतेहैं ६ हे प्रभु पार्षत मृगके मांससे आठमहीने और रुरुनाम मृगके मांससे नौ महीनेतक गायके मांससे दशमहीनेतक भैंसेकेमांससे ग्यारहमहीने तक पितरोंकी तृप्तिहोतीहै इसलोकमें गायके मांससे श्राद्धकरनेसे एक वर्षतक तृप्ति कहीजातीहै जैसे कि गायका मांसहै उसी प्रकार की घृतयुक्त तस्मैभी है वा ध्रीगासरुय अथवा मुख्य बकरेके मांससे

पितृ बारह वर्षतक तृप्त होतेहैं ९ क्षयाहके दिन दियाहुआ गेंड़ेका मांस बड़ी मधुरताको देताहै और चूकाकासाग कचनारके फूल आदिऔर छागनाम पशुभी अत्यन्त फलवाला कहाजाता है १० हे युधिष्ठिर इस स्थानपर पितरोंकी कहीहुई कहावतको भी गातेहैं११ पूर्व्व समयमें भगवान् सनत्कुमारजी ने मुझसे कहाहै कि वहपुत्र हमारे वंशमें भी उत्पन्न होताहै जो दक्षिणायन सूर्य्य मघा नक्षत्र तेरसकेदिन घृत संयुक्त तस्मै हमको देताहै १२ अथवा वह व्रतमें सावधान मनुष्य बकरेके मांस कचनारके फूल आदिसे बना हुआ हाथीकी छायामें उसी हाथीके कानोंकी वायुसे स्पर्श किया हुआ पिंड मघानक्षत्रमें बिधिके अनुसार देवे १३ ऐसे बहुतसे पुत्रचाहने के योग्यहैं जिनमेंसे एकभी पुत्र वहांजाय जहांकिलोकमें विख्यात यह अक्षिणीकर्णनाम बटसे युक्त गयाहै १४ वहांपितृके क्षयाहके दिन जल मूल फल मांस अन्न आदिजो २ पदार्थ मिष्ठान्नसे युक्त दियाजाताहै वह अत्यन्त चिरकालके निमित्त तृप्तिकोदेताहै १५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिश्राद्धकल्पेअष्टाशीति तमोऽध्यायः ८८॥

नवासीका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि यमराजने नक्षत्र योगोंमें होनेवाले फलसे संयुक्तजो श्राद्ध राजाशशिबिन्दुसे वर्णन कियेहैं उनको पृथक् २ मुझसेसुनो १ जोमनुष्य कृत्तिका नक्षत्रमें सदैव श्राद्धकर अग्नियों को नियत करके पूजन करता है वह तपस्या से रहितभी पुत्रवान होताहै २ सन्तानका चाहनेवाला रोहिणी नक्षत्र में तेज प्रताप का चाहनेवाला मृगशिर नक्षत्र में श्राद्धकरे निर्दयकर्मी मनुष्य आर्द्रा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्यताके गुणों से युक्तहोताहै ३ धन का चाहनेवाला पुरुष पुनर्वसुनक्षत्रमें श्राद्धकरे शरीरका बल चाहने वालापुष्य नक्षत्रमें श्राद्धकरे जो मनुष्यश्लेपानक्षत्र में श्राद्धकरता है वहधैर्य्यमान पराक्रमी और क्षमावान पुत्रोंको उत्पन्न करताहै मघा

नक्षत्रमेंश्राद्ध करनेसे बिरादरीमें श्रेष्ठ होताहै ५ फाल्गुनी नक्षत्रमेंश्रा द्धकरनेवाला मनुष्य ऐश्वर्य्यमान होताहै उत्तरानक्षत्रमें श्राद्धकरनेसे सन्तानयुक्त होताहै हस्तनक्षत्रमेंश्राद्धकरनेसे अभीष्टमनोरथोंकोपाता है ६ चित्रानक्षत्रमें श्राद्ध करनेसेरूपवानपुत्रोंकोपाताहै स्वातिनक्षत्रमें पितरोंको पूजकर ब्यापारके लाभसे अपनी जीविका करताहै ७ पुत्र की कामना करनेवाला मनुष्य बिशाखा नक्षत्रमेंश्राद्ध करनेसेबहुत सेपुत्रोंको पाताहै ८ अनुराधानक्षत्रमेंश्राद्धकरनेसेराज्यका अधिकारी होताहै हेकौरव्य जोमनुष्य धनवान औरजितेन्द्रीहै वह ज्येष्ठानक्षत्र में श्राद्ध करनेसे प्रधानताको पाताहै मूलनक्षत्रमें श्राद्धकरनेसे नीरोगताको पाताहै ६ पूर्वाषाढ़ नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे उत्तम कीर्त्ति को पाताहै उत्तराषाढ़ नक्षत्रमें श्राद्ध करने से शोकसेरहित होकर पृथ्वीपर विचरताहै १० अभिजित नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे वैद्यक विद्या की सिद्धीको पाताहै श्रवण नक्षत्रमें श्राद्धकरनेसेमरनेके पीछे सद्गतिको पाताहै ११ जोमनुष्य धनिष्ठा नक्षत्रमें सदैवश्राद्धकरताहै वह राज्यको पाताहै शतभिषा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे श्रेष्ठविद्याको पाताहै १२ पूर्व्वाभाद्रपद नक्षत्रमें श्राद्धकरनेसे बहुतसी भेड़बकरि योंको पाताहै उत्तराभाद्रपदमें श्राद्धकरनेसे हजारों गौओंकोपाताहै १३ रेवती नक्षत्रमें श्राद्धकरने वाला मनुष्य तांबेपीतलकी बनीहुई अनेक वस्तुओंको पाताहै अश्विनी नक्षत्रमें श्राद्धकरनेसे घोड़ोंको पाताहै भरणी नक्षत्रमें श्राद्धकरने वाला दीर्घायु होताहै १४ राजा शशिबिन्दुने इस श्राद्ध विधिको सुनकर उसी प्रकारसे किया इसके फलसेउसने सुगमतासे पृथ्वीकोविजयकरकेउसपर राज्यकिया १५॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेश्राद्धकल्पेएकोननवतितमोऽध्यायः ८९॥

नब्बेका अध्याय॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकिया किहे कौरव्य पितामह श्राद्धसामग्री कि- सप्रकारके ब्राह्मणको देना उचितहै उसको आपमुझसे कहनेको योग्यहैं १ भीष्मजी बोलेकि दानधर्मका जाननेवाला क्षत्री दैवकर्म

में ब्राह्मणोंकी परीक्षा न करे परन्तु पितृकर्म अर्थात् श्राद्धमें ब्राह्मण
की परीक्षा करनी न्यायके अनुसारहै २ इसलोकमें दैवतेजसेही
देवताओंका पूजन करतेहैं इसीहेतुसे सन्मुख होकर देवताओं के
नामसे सबप्रकारके ब्राह्मणोंको देना योग्यहै३हेराजा परन्तु ज्ञानी
मनुष्य श्राद्धमें ब्राह्मणके वंशगुण प्रकृति अवस्था रूप विद्या शुभ
कीर्त्ति इनगुणोंकी परीक्षाकरे ४ मैं जानताहूं कि उन ब्राह्मणों में
पंक्तिके दोष लगानेवाले एकाक्ष आदिक होतेहैं वैसेही बहुत से
ब्राह्मण पंक्तियोंके पवित्र करनेवाले वेदपाठी आदिभी होतेहैं अब
जो पंक्तिके अयोग्यहैं उनको कहताहूं तुमचित्तसेसुनो ५ द्यूतखेलने
वालेछली गर्भपाती, बालघाती, राजयक्ष्मारोगी, पशुपाल, वेद-
पाठ और जपसेरहित, गांवकाटहलुआ, व्याजखानेवाला, गाने
वाला, सबघृतादिक वस्तुओंका बेचनेवाला६ दूसरेके घरमें अग्नि
लगानेवाला, विषदेनेवाला,स्त्रियोंको उनके मित्रोंसे मिलानेवाला
कुटना, सोमबल्लीकाबेचनेवाला, सामुद्रिक,तेलबेचनेवाला,मिथ्या
गवाहीदेनेवाला ७ पितासे विवादकरनेवाला, और जिसकी स्त्री
का दूसरा पुरुषमित्रहै, लांछनी,चोर, शिल्पविद्यासे जीविकाकरने
वाला ८ भूषण और वस्त्रोंसे रूपान्तर करनेवाला, दूसरेके दोष
का प्रकट करनेवाला, मित्रसे शत्रुता करनेवाला, दूसरेकी स्त्री से
संभोगकरनेवाला, शूद्रोंका उपाध्याय,शस्त्रोंसे जीविकाकरनेवाला६
कुत्तोंकेद्वारा आखेटकरनेवाला, कुत्तेकाकाटाहुआ, जिसकाविवाह
बड़ेभाईसे पूर्व्वहुआ, जिसके शरीरकी त्वचा दूषितहो, कुष्टीहोय,
गुरूकीस्त्रीसे भोग करनेवाला १० खेतीकरनेवाला,दैवल,जोतिथि
पत्रको सुनाकर जीविका करताहै हेयुधिष्ठिर यहसब ब्राह्मणपंक्ति
के अयोग्यहैं इनके भोजन कियेहुये ११ हव्यको राक्षसपातेहैंयह
ब्रह्मबादियोंका कथनहै जो श्राद्धके अन्नकोखाकर वेदपढ़ताहै,जिस
कीस्त्री पिताकेही घर कन्यापने में रजस्वलाहोय,उस पुरुषकेविष्ठा
में उसकेपितर एक महीनेतक निवास करतेहैं १२ सोमबेचनेवाले
को दियाहुआ भोजन विष्ठाके समान होताहै श्राद्धमें वैद्यको दिया

हुआअन्न रुधिरके समानहै १३ मेहनत लेकर जोदेवपूजन करने वालेहैं उनका दियाहुआ नाशरूपहै ब्याजखाने वालेका दिया हुआ निष्फलहै जो ब्यापारी ब्राह्मणको दियाजाताहै वहलोकऔर परलोक दोनोंमें नहींरहता १४ जो ब्राह्मण पुनर्विवाह करनेवाली स्त्रीसे उत्पन्नहै उसकोदियाहुआ ऐसाहै जैसेकि भस्ममें होमाहुआ होताहै जो पुरुष हव्य और कव्यको धर्माचारके त्यागने वालेको देतेहैं उनका दियाहुआ दान परलोकमें नाशको पाताहै १५ जो निर्बुद्धी पुरुष इन ब्राह्मणोंको जानबूझकर देतेहैं निश्चय करके परलोकमें उसके पितर उसके बिष्ठाको भोजन करतेहैं १६ इन ब्राह्मणोंको पंक्तिके अयोग्य ब्राह्मणोंमें महानीचजानो जो निर्बुद्धी शूद्रोंको उपदेश करतेहैं १७ हेराजा पंक्तिके अच्छी रीतिपरबैठजाने पर काना मनुष्य साठको नपुंसक सौको और कुष्ठी जितनेमनुष्यों को देखताहै और स्पर्श करताहै उतनेही वह दूषित करताहै १८ जो वेष्ठित शिरा अर्थात् दिस्तारबन्द भोजनको करताहै और जो दक्षिण को मुख करके भोजन करताहै और जोजूतापहरे हुयेभोजन करताहै इन सब भोजनोंको आसुरी भोजनजानो १९ दूसरे के गुणमेंदोष लगानेवाला पुरुष जो कुछदेताहै व श्रद्धासे रहित दिया जाताहै उस सबको राजाबलिका भागजानो २० और पंक्ति केदोष लगानेवाले ब्राह्मण किसी दशामें भी पंक्तिको नदेखने पावें इसीहेतु से घिरे हुये स्थानमें भोजन करावे और तिलोंको मकानमें फैला देना चाहिये २१ जो श्राद्ध कि तिलोंसे रहित क्रोधयुक्त का किया हुआहै उस हव्यको यातुधान और पिशाच लोग नाशकरते हैं २२ पंक्तिके अयोग्य ब्राह्मण जितने पंक्तियोग्य ब्राह्मणोंको देखताहै उस अज्ञानी श्राद्ध करनेवालेको वह उतनेही फलसे रहित करताहै२३ हेभरतर्षभ पंक्तिके पवित्र करनेवाले ब्राह्मणभी जाननेके योग्यहैं इसी हेतु से मैं उनको कहताहूं इस श्राद्धमें उनकी परीक्षाकरो २४ विद्या वेद व्रतोंसे पूर्ण सदाचारवान ऐसे सबके पवित्र करनेवाले ब्राह्मण प्रत्येक मनुष्यको जानने केयोग्यहैं २५ अर्थात् पंक्तिकेयो-

ग्य ब्राह्मणोंको वर्णनकरता हूं वह पंक्तिपावन ब्राह्मण जानने के योग्यहैं तृणाचिकेत मंत्रके पढ़नेवाले पंचाग्निके स्थापन करनेवाले त्रिसुपर्ण नाम मन्त्रोंके ज्ञाता वेदके छओंअंगोंके ज्ञाता २६ वेदके पढ़ानेवाले वेद पढ़ानेवालोंके वंशमें उत्पन्न होकर आप ब्रह्मज्ञानी या वेदका पढ़ानेवाला सामवेद और ज्येष्ठ सामवेदका गानेवाला माता पिताका आज्ञाकारी दशपुस्तसे वेदपाठी२७ जोसदैव ऋतुका-लहीमें अपनी धर्मपत्नियोंकेपासजाने वाला है और वेदविद्याव्रतमें पूर्णब्राह्मण पंक्तिको पबित्र करताहै२८ अथर्व शिरका पढ़ने वाला ब्रह्मचारीव्रतमेंसावधान सत्यवक्ता धर्माभ्यासी स्वकर्ममेंप्रीतिमान २९ जिन ब्राह्मणोंने पबित्र तीर्थोंके समान औरमंत्रोंमेंपरिश्रमकिया हैऔरजो मन्त्रयुक्तयज्ञोंमेंअवभृतनाम स्नान केकरनेवालेहोतेहैं ३० जोक्रोध चपलतासे रहित क्षमावान तपकाकष्ट उठानेवाले जितेन्द्री होकर सब जीव मात्रोंके उपकारमें प्रवृत्तहैं उनको श्राद्धोंमें निम-न्त्रणदे ३१ ऐसे ब्राह्मणोंका दियाहुआअविनाशीहोताहै यह ब्राह्मण पंक्तिकेपबित्र करनेवालेहैं इनको औरअन्य२ पंक्तिपावन महाभागों कोभी जानना अवश्य योग्यहै ३२ मोक्षधर्मके जाननेवाले संन्यासी श्रेष्ठरीतिसे ब्रतकरनेवाले योगी औरजोसावधान उत्तमब्राह्मणोंको इतिहास सुनातेहैं ३३ जोभाष्यके जाननेवाले व्याकरणमें प्रवृत्तहैं और जो पुराण वा धर्म शास्त्रोंकोभीपढ़तेहैं ३४औरन्यायके अनुसार पढ़कर बिधिके अनुसार करनेवालेहैं जोगुरुकुलमें निवासी होकर सत्यबक्ताहैं ३५ सब वेद और वेदार्थोंमें श्रेष्ठजोहजारों ब्राह्मण हैं यह ब्राह्मण जितनी पंक्तियोंको देखतेहैं उतनीही पंक्तियोंको पवित्र करतेहैं ३६ उसपवित्र करनेसे पंक्तिकेयोग्य और पंक्तिपावन कहे जातेहैं उस प्रकारका एकभी ब्राह्मण साढ़े तीनकोशसे पवित्र कर ताहै ३७ जोकि वेद पढ़ाने वालोंके वंशमें उत्पन्न वेदपाठी और धर्मज्ञानीहो यह ब्रह्मज्ञानी लोग कहते हैं जो वह ब्राह्मण ऋत्विज और उपाध्याय नहीं है और ऋत्विजों की आज्ञानुसार बड़े आसन को पावे तब भी वह पंक्तिका दोष दूर करताहै जो वेदका जानने

वाला पंक्तिके सब दोषों से पवित्र होय ३८ और पतितन होय हे राजा वहभी पंक्तिका पावन करनेवालाहै इसी हेतुसे सब उपायों से परीक्षा करके ब्राह्मणों को निमंत्रणदे ३६ जो दूसरे वंशके बड़े ज्ञानी और अपने कर्म में प्रीति करने वाले हैं उनको भी निमन्त्रणकरे जिसके श्राद्ध और हव्यदोषों के प्रधान रखने वालेहैं वह पितर और देवताओं को तृप्त नहीं करतेहैं और वह श्राद्ध करने वाला स्वर्गको नहीं जाताहै ४० जो मनुष्य श्राद्ध में मित्रता को करताहै वह देवयान मार्गसे नहीं जाताहै और वह श्राद्धमें मित्रता करनेवाला मनुष्य अपने कर्म फलके समाप्त होने परस्वर्ग लोक से गिरताहै ४१ इसीसे श्राद्ध करने वाला मनुष्य मित्रको श्राद्धमें निमंत्रण देना योग्य न समझे परन्तु मित्रों के इकट्ठे करने के प्रयोजन से मित्रोंको वहुतसा धनदे और जिसको न मित्रजाने न शत्रुजाने उस उदासीन ब्राह्मण को हव्य कव्यमें भोजन करावे ४२ जैसे कि ऊसर पृथ्वीमें वोया हुआ बीजनहीं उपजताहै और वोने वाला बीजके भागको नहीं पावे इसीप्रकार अयोग्य ब्राह्मणों का भोजन किया हुआ श्राद्ध भी इसलोक और परलोकमें निष्फल होताहै ४३ वेद अथवा गायत्री का न जाननेवाला ब्राह्मण तृणकी अग्निके समान शान्त होताहै उसको श्राद्धमेंकभी भोजनन कराना चाहिये क्योंकि भस्म में हवन नहीं किया जाताहै ४४ प्रकट है कि अपनेही नातेदारोंको श्राद्धमें भोजन कराना पिशाच दक्षिणा है वह नतो देवताओंको न पितरोंको पहुंचतीहै किन्तु पुण्य फल रहित होकर इसी लोकमें ऐसे घूमतीहै जैसेकि गौ शालामें मृतक वछड़े वाली गौ व्याकुल होकर घूमतीहै ४५ जैसेकि शान्त अग्नि में घृतका होमकरनादेवताओर पितर दोनोंको नहीं पहुंचाता इसी प्रकार नर्त्तक वा गानेवाले औरमिथ्याकर्मी ब्राह्मणको दक्षिणा देता है वह सब निष्फलहै ४६ मिथ्यावादीको जो दक्षिणा दीजाती है वह लेनेवाले और देनेवाले दोनों पुरुषोंकी हानि करतीहै किसी कोभी फलदाई नहीं होतीहै अर्थात् यह दक्षिणा मारने वाली

निन्दित और बिनाशवानहै देने और लेनेवालोंके पितरोंको देव-
यान से गिराताहै ४७ हे युधिष्ठिर जो पुरुष ऋषियों के नियमपर
चलतेहैं वह निश्चय रखनेवाले सर्व धर्मज्ञहैं देवता लोग उन्हीं
को ब्राह्मण कहतेहैं ४८ अर्थात् वेदपाठी जपमें निष्ठा रखने
वाले ज्ञाननिष्ठ तपनिष्ठ और कर्मनिष्ठ ४९ हे भरतर्षभ श्राद्धादिके
पदार्थइन्हीं ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणोंको देना उचितहै इनमेंभी जोब्राह्मणों
को निन्दासे रहित है किन्तु उनकी वृद्धिके करने वाले हैं वह
उत्तमहैं ५० परन्तु जो ब्राह्मणकि परस्परकी वार्त्तालापों मेंअन्यों
की निन्दा करतेहैं उनको श्राद्धोंमें भोजन न करावे हे राजा यह
वैषानस नाम ऋषियोंका बचन सुनागयाहै कि ब्राह्मणका निन्दक
अपनी तीन पीढ़ियों का नाश करताहै ५१ । ५२ वेदमेंपूर्ण ब्राह्मण
को दूरही से परीक्षा करे वह चाहै उनका कोई प्यारा होय वा
बिरोधी होय परंतु श्राद्ध में उसको संयुक्त करे जो मनुष्यदश लाख
मिथ्यावादीब्राह्मणोंको भोजन करावे उनसबकीसमानप्रसन्नमूर्त्ति
एक मंत्रज्ञ ब्राह्मण होताहै ५३ । ५४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेश्राद्धकल्पेनवतितमोऽध्यायः ९० ॥

इक्यानबेका अध्याय ॥

युधिष्ठिरने प्रश्न किया कि जब केवल अंगिरावंशी और भृगुवंशी-
ही ब्राह्मण संसारमेंथे तबकिस ब्राह्मण वा मुनिने श्राद्ध किससमय
में करना बिचार किया और किस रूपका था १ श्राद्धमें कौनसा
कर्म निषेधितहै वा कौन से मूल फलोंका श्राद्धमें निषेध कहाहै हे
पितामह उसको मुझसे कहो २ भीष्मजीबोले हे राजाजिसरीतिसे
जिस समयमें जैसे रूपवाला श्राद्धजारी हुआ और जिसने उसका
संकल्प किया उसको मुझसे सुनो ३ हे महाराज युधिष्ठिर स्वायंभू
नाम मनुजीके पुत्र बड़े प्रतापी अत्रि महर्षिहुये उसके वंशमें दत्ता-
त्रेयीजी बिख्यातहुये ४ दत्तात्रेयीका पुत्रतपोधननिमिहुआ निमिका
पुत्र भी ब्राह्मणों की लक्ष्मीसे युक्त श्रीमान् नाम प्रसिद्धहुआ ५

वह श्रीमान् एकहजार वर्षतक कठिन तपस्याको करके कालधर्मसे मृतक हुआ तब उसके पिता निमिनेशास्त्रकेलिखेहुये के अनुसार उसकी सब कर्म क्रिया आदिको करके पुत्रके शोकमें डूबकर अत्यन्तदुःखोंको पाया ७ फिर वह महाबुद्धिमान् चतुर्दशीके दिन बड़े मिष्ठान्न युक्त भोजनोंको तैयारकरके उसीके शोकमें सोगया और इसीशोकको विचारकरताहुआ प्रातःकालके समय जागा ८ शोक से व्याकुल जगनेवाले उस ऋषिकी बड़े कर्म करनेवाली बुद्धि उसके शोकको मनसे पृथक् करके प्रकट हुई ९ इसके पीछे उस सावधान ऋषिनेश्राद्ध कल्पको और उस श्राद्ध संबन्धी अन्न व फल फूल पदार्थोंको अच्छी रीतिसे बिचार किया १० और जो अन्नघृत और उसको जो२ चेष्टाहैं उन सबको मनसे ठीक २ निश्चय करके उस तपोधन ११ महाज्ञानीने अमावास्याके दिनपूजित ब्राह्मणोंको वुलाकर अपनेही हाथ दक्षिणओर को आसनोंको बिछाया १२ इसके पीछे आप उनके पास जाकर सात वेदपाठी ब्राह्मणोंको आसनोंपर बैठाया फिर लवणसे रहित सामाक अन्नका भोजन दिया १३ इसके पीछे दक्षिणकीओर नोंक रखनेवाले कुशा अन्नको भोजन करनेवाले ब्राह्मणोंके चरणोंमें कुशाहीके बिस्तरों पर रखदिया १४ फिर कुशाओंको दक्षिणकी दिशामें अपने नाम गोत्रको बुद्धिकेअनुसार कहतेहुये उस सावधान पबित्रात्मा ऋषिने अपने पुत्र श्रीमान्के पिण्डोंको दिया १५ जो कि वेदकी आज्ञासे पुत्र पिताका पिण्डदेताहै और पितापुत्रका नहीं देताहै इस हेतुसे उसने धर्म संकटको करके बड़े पश्चात्तापसे दुःखित होकर बिचार किया १६ कि यह मैंने क्याकिया यह कर्मतो पूर्व्वसमयके मुनियों के कर्मोंसे विपरीतहैकहीं इस अपराधसे ब्राह्मण लोगमुझको शाप से भस्म न करदें १७यह शोचकर उसनेअपनेबंशके कर्त्ताको ध्यान किया उसके ध्यान करतेही महातपोधन अत्रि शीघ्रही आये १८ तब उन ब्रह्मरूपअत्रिऋषिने पुत्रके शोकसे पीड़ामान उस निमिको खेदकीदशामें देखकर बहुतप्यारे प्रियवचनोंसे बिश्वासितकिया१९

और कहनेलगे कि हे तपोधन निमि तैंने जो यह पितृ यज्ञका संकल्प कियाहै इससे तेरा बड़ा लाभ होगा यह धर्म पूर्व्वसमयमें आप पितामह ब्रह्माजीने कियाहै और वहीं हमनेभी देखाहै २० ब्रह्माजीसे वुद्धिके अनुसार जानाहुआ यहउत्तम धर्म तुमनेकियाहै ब्रह्माजीके सिवाय दूसरा कोई श्राद्ध वुद्धीनहीं प्रकट करसक्ता २१ इस हेतुसे हे पुत्र मैं वह उत्तम श्राद्धकी वुद्धि तुझसे कहता हूं जो कि ब्रह्माजीने करीहै इसको अच्छो रीतिसे जानकर तुमकरो २२ हे तपोधन प्रथम मंत्रों करकेअग्नि कारण वुद्धिको करके सदैव अग्नि चन्द्रमा और वरुणके निमित्त २३ विश्वेदेवा भी पितरोंके साथ आतेहैं उनके अर्थ आप ब्रह्माजीने भाग विचार कियेहैं २४ इस स्थानमें पिण्डोंकी धारण करनेवाली पृथ्वी प्रथम स्तुतिके योग्यहै वैष्णवी काश्यपी और ऊहाक्षय अर्थात् दाक्षा इननामोंसे २५ जललानेमें प्रभुवरुणजी भी स्तुति करनेके योग्यहैं हे निष्पाप इसके पीछे तुमको अग्नि और चन्द्रमा तृप्त करनेचाहिये २६ जो देवता और पितर ब्रह्माजीसे उत्पन्न कियेगयेहैं और जो महाभाग उष्णप नामसे प्रसिद्धहैं उनका भागभी विचार कियागयाहै २७ इसलोकमें श्राद्धकेद्वारा वह पूजेहुयेपितर नर्कसे उद्धार कियेजातेहैं ब्रह्माजी का देखाहुआ पितृवंशसात समूहवाला है २८ विश्वेदेवा और अग्निके आगे रखनेवाले देवताओंका वर्णन हमने प्रथमही तुमसे कहाहै उन भागपानेकेयोग्य महात्माओंके नाम तुमसे कहताहूं२९ बल,पृथ्वी,विपाप्मा,पुण्यकृत्य,पावन, पाण्णिक्षेम, समूह, दिव्यसानु, ३० विवस्वान,वीर्यवान,ह्रीमान,कीर्त्तिमान, कृत, जितात्मा,मुनिवीर्य,दीप्तरोमा,भयंकर ३१ अनुकर्मा,प्रतीत,प्रदाता,अंशुमान,शैलाभ परमक्रोधी,धीरोष्णी,भूपति ३२ श्रज,वज्री,वरी, यह सब सनातन विश्वेदेवाहैं और विद्युद्वर्चा,सोमवर्चा, सूर्य्यश्री ३३ सोमप,सूर्य्यसावित्र,दत्तात्मा,पुंडरीक,उष्णीनाभ, नभोद, विश्वायु-दीप्ति, ३४ चमूहर,सुरेश,व्योमारि,शकर,भव,ईश,कर्त्ता, कृति, दक्ष भुवन, दिव्यकर्मकृत ३५ गणित,पंचवीर्य,आदित्य,रश्मिवान, सप्त

कृत,सोमवर्च,विश्वकृत, कवि, ३६ अनुगोप्ता,सुगोप्ता, नप्ता, ईश्वर यह सब महाभाग कालगतिके विषय रूप हमने तुमसे कहे ३७ अब श्राद्धके अयोग्य अन्नादिकोंको सुनो,कोदों, पुलक, शाकके मसालों में हींग, शाकोंमें प्याज, लहसन ३८ सहजनेकीफली आदि विष संयुक्त पशुओंकामांस कचनार की कली सलगम और गृंजनआदि कूष्मांडजात तोंबा कालानिमक ३९ ग्रामीण शूकरका मांस और जिसको प्रोक्षणनहीं किया जाताहै ऐसे कालाजीरा, बिटनाम लवण शीतपाकी नाम शाक इसी प्रकार अंकुरादिक और सिंघाड़ेआदिभी वर्जितहैं ४० सब नोन और जम्बूफल निषेधित हैं श्राद्धमें अन्नके साथही छिका और रुदन करनाभी निषेधहै ४१ पितरोंके हव्य कव्यनाम दानोंमें सुदर्शन नाम शाककाभी निषेध है इनके हव्य दानको पितृ और देवता अंगीकार नहीं करतेहैं ४२ पितृदानके वर्त्तमान होनेपर चांडाल और श्वपच पृथक् करदेनेके योग्यहैं गेरुये वस्त्रधारी कुष्ठी पतित ब्रह्महत्या करने वाला ४३ वर्णसंकर और जो २ ब्राह्मण कि पतितके नातेदारहैं यह सब पितृदानके वर्त्तमान होनेपर समीपमें न आने पावें ४४ तपोधन भगवान् अत्रिऋषि अपने वंशके पुत्रको ऐसा कहकर ब्रह्माजीको सभाको गये ४५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेश्राद्ध कल्पेयोग्यायोग्यवस्तुवर्णने एकनवतितमोऽध्यायः ९१ ॥

बानबेका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इस प्रकार निमिके कर्म कर्त्ता होनेपर सब महर्षी लोग वेदोक्त कर्मके द्वारा पितृयज्ञोंको करते हैं १ सदैवधर्म में प्रवृत्त सावधान व्रत ऋषियोंने पिण्डदान करके तीर्थोंके जलोंसे तर्पणभी किया २ हे भरतवंशी चारों वर्णोंके दियेहुये पिंडोंसे तृप्त रूपहोकर वह पितर और देवता उस तर्पणसे अन्नको पचातेहैं ३ पितरोंसमेतवहसबदेवता बिनापचेहुयेअन्नोंसेमहाकष्टितहोकरनाश-

ताकोपातेहुये अन्नसे महापीड़ितहोकर चन्द्रमाकेपासगये ४ वहां जाकर अन्नकेन पचनेसे पीड़ित देवताओंने चन्द्रमासेकहा कि हम लोग पिण्डोंके अन्नसे महा पीड़ितहैं आपहमारे रोगको दूरकरिये ५ चन्द्रमाने उनको उत्तरदियाकि हे देवताओ जो तुमको रोग दूर करनेकी और सुखी होनेकी इच्छाहै तो तुम ब्रह्माजीके पास जाओ वह तुम्हारा कल्याण करेंगे ६ तब चन्द्रमाकी आज्ञापाकर वह पितरों समेत देवता ब्रह्माजीके पासगये वह ब्रह्माजी मेरुके शिखरपर विराजमानथे ७ उनकेपास पहुंचकर पितरलोगबोले कि हे भगवन् हम पिंडोंके अन्नोंसे अत्यन्त पीड़ामानहैं हेदेवता हमारे ऊपर कृपाकरके हमारा कल्याणकरो ८ उनके वचनको सुनकर ब्रह्माजीने यहवचन कहाकिमेरेसमीप बैठेहुये यह अग्निदेवता तुम्हारा कल्याणकरेंगे ९ अग्निने कहा कि हेतात पिण्डदानके वर्त्तमान होनेपर हम तुमसब मिलकर एकसाथ भोजनकरेंगे तुम निस्सन्देह मेरे साथमें होकर अवश्यश्राद्धके अन्नोंको पचाओगे १० फिरवह पितृ अग्निके इसबचनको सुनकर तपस्यासे पृथक्हुये हे राजा इसीहेतुसे प्रथम अग्निका भागदिया जाताहै ११ हे नरोत्तम प्रथम अग्निको पूजकरजोपिण्डदान देतेहैं उनपिंडोंको ब्रह्मराक्षस नहीं नाश करतेहैं १२ देवता अग्निके स्थापन होनेपर सबराक्षस दूर होजातेहैं प्रथम पिताका पिण्ड फिर पितामहका पिंड १३ और तदनन्तर प्रपितामहका पिंड देना चाहिये यह श्राद्धविधि वर्णन करीगई प्रत्येक पिंडपर बड़ी सावधानीसे गायत्रीको पढ़े १४ और चन्द्रमाके वा पितृमतिके अर्थ रजस्वला और दोनों कानोंसे वह रीकनकरी स्त्रीको श्राद्धके सन्मुख वा समीपन आनेदे और जो स्त्री दूसरे बंशकीहैं वह भोजनके बनानेको बुलानेके योग्य नहीं हैं १५ जलसेपार होकर पिता पितामहादिकोंका कीर्त्तनकरे और नदीको पाकर पितरोंका पिंडदान और तर्पण अवश्यकरे १६ जो अपने वंशमें उत्पन्नहैं प्रथमतो जलसे उनका तर्पणकरे फिरमान्य और नातेदारोंके अर्थजलकी अंजलीदे चित्रबर्ण बैलोंसे जुतेहुये छकड़ेके

द्वारा पारहोनेवाले मनुष्यके हाथसे बैलकी पूंछपकड़कर पितृलोग जलके तर्पणको चाहतेहैं और उस वृत्तान्तके ज्ञाता सावधान पुरुष नौकापरभी चढ़ेहुये सदैव पितरोंको जलदान करतेहैं जो कृष्णपक्ष की अमावास्याके दिन पितरोंके पिंडदानको करैहै १६ वह पितरों की भक्तिसे नीरोग शरीर पूर्ण आयुर्दा पराक्रम और लक्ष्मीको भी पाताहै हे कौरव्य ब्रह्मा पुलस्ति बशिष्ठ पुलह २० अंगिरा क्रतु कश्यप महर्षी यहसब महा योगेश्वर कहेहैं २१ हेराजा यहीपितृ हैंइस उत्तम श्राद्धकी बिधिसे इसकर्मके द्वारा पिंडदानके कारण से पितर प्रेतयोनिसे उद्धार होतेहैं २२ हे पुरुषोत्तम पूर्ब्ब समय में यहशास्त्रके अनुसार उपदेश पाईहुई श्राद्धकीबिधि तुमसे बर्णनकरी इसकेपीछे दानका वर्णन करूंगा २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेश्राद्धकल्पेद्विनवतितमोऽध्यायः ९२ ॥

तिरानबेका अध्याय॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकियाकि हेपितामह जो ब्रत करनेवाले ब्राह्मण यजमानके अभीष्ट मनोरथोंके निमित्त हव्य अन्नोंको भोजन करतेहैं उनको क्याफल होताहै उनकाब्रत नाशहोताहै वानहीं १भीष्मजी बोलेकि हे युधिष्ठिर जो ब्राह्मण वेदोक्त ब्रतोंको नहीं करते हैं वही अपनी इच्छासे भोजनकरते हैं परंतु वेदोक्त ब्रतके करने वाले जो कदाचित् किसीकेश्राद्धादि मेंभोजन करतेहैं उनका ब्रत अवश्यनष्ट होताहै २ युधिष्ठिरने कहा कि मूर्ख लोगोंने जो इस उपबासकोही तपकहाहै सो हेपितामह यही तपहै वा कोईअन्यतपहै ३ भीष्मजी बोले किजो मनुष्य एकमास वा एकपक्षके उपबाससे तपस्यामानता है औरआत्मतंत्र का दुःख देने वालाहै वह न तपस्वीहै न धर्मका जानने वालाहै४दानमें जो प्रवृत्तीहै वह भी उत्तमतपकहा जाताहै वह दानी सदैव उपवास का करने वाला और ब्रह्मचारी होता है ५ वेदपाठी ब्राह्मण सदैव मुनि होताहै (मुनि उसकोकहते हैं जो कि दृढ़बुद्धि तरकणा क्रोध आदिसे रहित सदैव सुखदुःखमें एकसी

दशावालाहोय) और सदैव वेदोंका जपकरे धर्म का चाहनेवाला गृहस्थी मनुष्य अपने धर्म में सावधान होकर ६ सदैव मांस से वर्जितस्तोत्रादिकों का पाठकरे और सदैव सत्यवक्ता होकर सावधानी से ७ विघस अन्नका भोजन करने वालाहोय सदैव अतिथि का प्रिय होकर अमृत भोजी और पवित्र होय ८ युधिष्ठिर ने प्रश्न किया कि हे राजा कैसी रीतिसे सदैव व्रती उपवासी और ब्रह्मचारी होना चाहिये और कैसे विघसान्न का भोजन करने वाला होताहै कैसे अतिथियों का प्याराहोवे ९ भीष्मजी बोले जो मनुष्य मध्याह्न वा सायंकाल अथवा प्रातःकाल और सायंकालके समय भोजनको करताहै और बीचमें भोजन नहीं करताहै वहसदैवउपवासी कहाताहै १० केवल ऋतुकाल में अपनी स्त्रीसे भोगकरने वाला मनुष्य ब्रह्मचारी होताहै और सत्य बोलने वालासदैवधर्माभ्यासी कहा जाताहै ११ यज्ञके बिना जो मांस को नहीं खाताहै वह बिना मांस खाने वाला कहा जाताहै दान करने वाला पवित्र होताहै दिनमें शयन न करने से जागरणके फलको पाताहै १२ हे युधिष्ठिर जो मनुष्य अतिथि और पोषणके योग्य मनुष्योंको खिला कर पीछे से आप भोजन करताहै उसको केवल अमृतहीकाभोजन करने वाला जानो १३ जो मनुष्य ब्राह्मणों के भोजन किये बिना आप भोजन नहीं करताहै उस कर्म से वह स्वर्गको विजय करता है १४ जो मनुष्य देवता पितृ और आश्रित लोगों से बचे हुये भोजन के पदार्थ और पीनेके पदार्थोंको खाता पीताहै वह विघसाशी कहाता है १५ ब्रह्मलोक में उनको ऐसे अनेक प्रकारके स्थान मिलतेहैं जोकि गन्धर्व और अप्सराओंसे सेवितहैं १६ जो पुरुष देवता अतिथि और पितरों के साथ भोजन करतेहैं और अपने पुत्र पौत्र कलत्रादिकों के साथ क्रीड़ा करतेहैं उनको उत्तमताकी गति अनुपमहै १७ युधिष्ठिर ने प्रश्न किया कि हे पितामह नाना प्रकार के जो दान ब्राह्मणों को देतेहैं उन दानी और दान लेने वालों में कौन गुणवान होना चाहिये १८ भीष्मजीने कहा किजो ब्राह्मण

साधूदाताका दान लेताहै वा असाधूका दानलेताहै उनमें जो दाता कि गुणवानहै उसके दानसे थोड़ा दोष और अगुणवान से दान लेनेपर दोषोंसे पूर्ण होताहै अर्थात् दोषोंमें डूबजाताहै १६ इसस्थान पर उस एकप्राचीन इति हासको भी कहताहूं जिसमें कि वृषादर्भ और सप्तऋषियोंका संवादहै २० कश्यप,अत्रि,बशिष्ठ,भरद्वाज,गौतम,विश्वामित्र, यमदग्नि,साध्वी,अरुन्धती २१इनसबकीसेवाकरने वाली एक गंडानाम स्त्रीथी उस गंडाका पति एक शूद्र सखा नाम शूद्रथा २२ पूर्व्व समय में वह सब ऋषि ब्रह्मलोक की इच्छा से समाधिमें नियत तपस्याओं को करते हुये इस पृथ्वी पर घूमे हे कौरव नन्दन इसके पीछे बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा जिसमें यह सब संसार गृहस्थीपने में संयुक्त प्राणोंका भी दुःखदायी होगया २३ । २४ निश्चय करके पूर्व्व समय में शिविके पुत्र शैब्यने किसी यज्ञ में दक्षिणा के निमित्त ऋत्विजों को अपना पुत्र दिया २५ और उस न्यूनअवस्था वाले बालकने उसी समय में मरणको पाया तब बड़े रोते पीटते हुये वह सब ऋत्विज लोग उसके ओर पास नियत हुये २६ हे भरतवंशी उस समय महादुःखी मन ऋत्विज ऋषियोंने यजमान के पुत्रको मरा हुआ जानकर एक हांड़ीमें अग्निपर पकाया २७ अर्थात् फिर शरीर के रखने की इच्छा करने वाले उनतपस्वियों ने इस अन्नसे रहित संसार में भोजन के कारण दुःखरूपी आजीविका को पाया २८ मार्गमें चलते हुये शिविके पुत्र राजावृषदर्भने उन मांस पकाने वाले महादुःखी तपस्वियों को देखा २६ तब वृषदर्भने कहा कि हे तपोधन ऋषियो दानका लेना आपत्तियों से छुटाताहै अब अपने शरीर की पुष्टिता और पराक्रम के लिये इस पासके धनको आप लीजिये ३० याचना करने वाले ब्राह्मण मुझको प्यारेहैं इससे मैं तुमको ऐसी हज़ार खिच्चरें देताहूं जो सब एक २ बलवान बच्चा रखने वालीहैं और सबके बच्चे शीघ्रगामी और श्वेतरोम वालेहैं ३१ औरमैं सबको ऐसे दशहजार बैलभी देताहूं जोकि कुलंभरा नाम पृथ्वीके जोतने वाले जुयेंउठाने

के योग्य और श्वेत रूपहैं और उतनीही संख्यावाली गौवें भी देताहूं जोकि प्रथमही गर्भवती तरुण व एक वच्चा देनेवालीं महा उत्तम सुन्दर व्रतवालीं हैं ३२ और उर्वरा भूमिवाले धान्य रसजव और उत्तम रत्नों के देने वाले अनेक ग्राम और जो धन तुमचाहो सोभी मैं देसक्ताहूं परन्तु तुम इसरीतिसे इस अभक्ष्य पदार्थमें प्रीति मतकरो अबकहो किमैं इनसब वस्तुओंसे कौन२ सीवस्तु तुम्हारे शरीर के निर्वाह और बल पुरुषार्थ के निमित्तदूं ३३ ऋषि बोले हेराजा राजाओं का दान लेना सहत के समान मिष्टहै परन्तुविष के समान गुणवाला है तुम उसको जानबूझ कर क्यों हमकोलुभाते हो ३४ इस लोकमें देवताओं का क्षेत्र ब्राह्मणों के शरीरोंमें नियतहै क्योंकि यहतपसे नर्मल और प्रसन्नरूप ब्राह्मण देवताओं को प्रसन्न करके तृप्त करताहै ३५ इस लोकमें ब्राह्मण कातप एकहीदिन में उत्पन्न होताहै परन्तु किसी समय पर राजा से मिला हुआ दान ब्राह्मणोंके उस तपको अग्निसे वनके समान भस्म करदेताहै ३६ हेराजा दानसमेत तेराकल्याणहो यह अपना सबधन इच्छा करनेवालोंको दीजिये यह कहकर वह सब ऋषिदूसरेमार्गसे चलेगये ३७ उन महात्माओंको पकाया हुआमांस अच्छी रीति से नहींपकाथा इसीसे वह भोजनकी इच्छासे उसको त्यागकर वनको चलेगये ३८ इसके पीछे राजाकी आज्ञासे उसके मंत्री लोग वनमें जाकर उन ऋषियोंको स्नेह पूर्वक गूलर देनेलगे ३९ फिर उन मंत्रियों के सेवकलोग ऐसेअन्य गूलरों कोलाये जिनमें कि सुवर्ण रक्खाहुआथा और उन गूलरोंके देनेको उनकेपास गये ४० उनको भारीजानकरअत्रिऋषिने कहा कि यह गूलरलेनेकेयोग्यनहींहैं हम लोग थोड़ेविज्ञान और अल्पबुद्धिवाले नहींहैं ४१ यह गूलर सुवर्णसे भरे हुयेहैं ऐसा हमजानते हैं हम सावधानीसे जागते हैं इसलोक में यह लियाहुआ दान परलोकमें अप्रिय करनेवाला है ४२ इस लोकऔरपरलोक दोनोंमें सुखचाहनेवाले मनुष्योंको यहदानलेनेके योग्यनहींहै वशिष्ठजीने कहाकि सौ वा हजारनिष्कया बहुतसेनिष्कों

केमूल वाले धनको लेनेवाला मनुष्य पापियोंकी गतिको पाताहै कश्यपजीने कहाकि पृथ्वीपर जो जव चावल आदिधान्य सुवर्णपशु और स्त्रीयहसवएक लोभके दूरकरनेको समर्थनहींहैं इसोहेतुसेज्ञानी पुरुष सन्तोषको प्राप्तकरें४४जैसेकि उत्पन्न होकर बड़े होनेवाले रुरुनाम मृगके सींग वड़े होतेजातेहैं उसी प्रकार पुरुषकीभीइच्छा है इसकी संख्या नहींहै४५गौतमजी बोलेकिलोकमें वहद्रव्यनहींहै जोलोकको तृप्तकरे पुरुष समुद्रके समानहै कभी पूर्णनहीं होताहै अर्थात् अपनी इच्छाओंसे तृप्तनहीं होताहै४६ विश्वामित्र बोलेकि जव इच्छावान् पुरुषका मनोरथ सिद्धहोताहै फिरदूसरी लोभरूपी इच्छा उसको बाणकी समान घायल करतीहै ४७ जमदग्नि जीबोलेकि दानलेनेसेजो इन्द्रियोंको रोकताहै वह अचल तपको धारण करताहै इसलोकमें लोभीब्राह्मणका तपरूपधननाश होजाताहै४८ अरुन्धती बोलींकि इसलोकमें धर्मके अर्थ जोद्रव्योंका इकट्ठाहोना हैवहउसके पक्षवालोंका अंगीकृतहै परन्तु इसलोकमेंजोतपको संचय करताहै वह धनके ढेरसे उत्तमहै ४९गंडा बोलीकि यहबड़ेपराक्रमी मेरेस्वामी जिस हेतुसेकि इस भयकारी भयसे निर्बल मनुष्यों केसमान डरतेहैं इसीकारणसे मैंभी अत्यन्त भयको करतीहूं५० पशुसुखने कहाकि जिस हेतुसे धर्मसे पृथक् होजानेमें परम्पदनहींहै अर्थात् वह परम्पद प्राप्तनहीं होताहैऔर ब्राह्मणोंने उस धर्मको धन जानाहै इसी हेतुसे मैं शिक्षा पानेके लिये विधिपूर्व्वक ऋषियों की उपासना करूं५१ ऋषियोंने कहाकि दान समेत उस राजाका कल्याणहो जिसकीकि यह प्रजाहै और जो राजा इसप्रकारसे छल संयुक्त फल हमको देताहै ५२ भीष्मजी बोलेकि सब व्रतधारी ऋषि ऐसा वचन कहकर और उन सुवर्णसे भरेहुये फलोंको छोड़कर दूसरे स्थानमें चलेगये ५३फिर मन्त्रियोंने राजासे कहाकिहेराजा छलका सन्देह करने वाले वह ऋषिलोग उन फलोंकोछोड़करफिर दूसरे मार्गोंसे जातेहैं इसको आपजाने मंत्रियोंके इन वचनोंको सुनकर राजा वृषदर्भाने क्रोधकिया और उनसबका प्रबन्ध करनेको

घरगया ५५ फिर बड़े कठिन नियमों में नियत होकर उस राजाने घरमें जाकर अपनी आहवनीय अग्निमें संस्कार कियेहुये मन्त्रोंके द्वारा एक आहुतको हवनके योग्य अग्निमें हवनकिया ५६ उसअ-ग्निसे संसारभरेकी भयकारी एककृत्या उठी राजावृषदर्भीनेउसका नाम यातुधानी रक्खा कालरात्रि के समान वह कृत्या हाथजोड़कर राजावृषदर्भीसे बोली कि क्याकरूं ५७।५८ वृषदर्भीने कहा कि जावो तुम उन अरुन्धती समेत सातों ऋषियोंके दासदासीसमेत भर्त्तोओं के नामोंको चित्तसे विचारो ५९ अर्थात् नामके अनुसार उनकी सा-मर्थ्योंको विचारकर इन सबको नाशकरो इनका नाश करके जहां तुम्हारा चित्तचाहे तहां चलीजावो ६० वह स्वरूपमान यातुधानी ऐसाही होय यहबचन कहकर उसवनमेंगई जहांपरवहमहर्षी फिरते थे ६१ भीष्मजीने राजा युधिष्ठिरसे कहा कि हे राजा वह अत्रिको आदिले सबमहर्षी मूलफलोंकोभक्षण करतेहुये उसवनमें विचरे ६२ फिर उन्होंने एक ऐसे संन्यासीको कुत्त के साथ देखा जोकि अत्यन्त समांसल हाथपांवमुख उदर रखनेवाला हृष्टपुष्ट शरीर चारोंओरको घूमनेवालाथा ६३ अरुन्धतीने उस स्थूलकायशोभायमान शरीर वालेको देखकर ऋषियोंसे कहाकि आपऐसे रूपवाले नहींहोगे ६४ बशिष्ठजीने कहा कि इसलोकमें जैसा कि हमारा अग्निहो-त्रहै वैसा इसका नहींहै प्रातःकाल सायंकाल जो हवन करनेके योग्यहै वह इसके समान नहीं कियागया इसीहेतुसे यह कुत्त समेत मोटाताजाहै ६५ अत्रिने कहा किजैसे गृहस्थीपनेसे हमारा पराक्रम न्यून होगयाहै वैसेही दुःखसे पढ़ीहुई हमारी विद्याभी विस्मरण होगईहै वैसा गृहस्थीआदिका दुःख इसकोनहींहै इसी हेतुसे यह कुत्त समेत मोटाताजाहै ६६ विश्वामित्रने कहा जैसे कि हमारा शास्त्रोक्त सनातनधर्म नाश होगयाहै और इसका हमको जैसा दुःखहै वैसा इसको नहीं है इसीहेतुसे यह धर्म में व्याकुल मन और मूर्खहै इसहेतुसेही यह कुत्त समेत मोटा ता-जाहै ६७ जमदग्निने कहा कि जैसे कि हमारे चित्तमें एक वर्षका

भोजन और इन्धनादि बड़ी चिन्ताका करनेवालाहै वैसा उसको नहीं है इसीसे यह कुत्ते समेत मोटाहै ६८ कश्यपने कहा जैसे कि हमारे चारभाईहैं और दीजिये२ मांगा करतेहैं वैसे उसके नहींहैं इसीसे कुत्ते समेत मोटाताजाहै ६६ भरद्वाजने कहा जैसे कि भार्य्याके दोषलगने के कारण हमारी और त्यागसे हमको दुःखहै इसरीति से इस अचेत ब्रह्मबन्धुका नहीं है इसीहेतुसे कुत्ते समेत मोटाहै ७० गौतमने कहा जैसे कि हमारा त्रिकौशेयनाम बस्त्रऔर टांकव नाम मृगचर्म हरएक तीन २ वर्षकाहै वैसे इसका नहींहै इसीसे यह कुत्ते समेत मोटाहै ७१ भीष्मजी बोले हे राजा युधिष्ठिर इन सब बातोंके पीछे उसकुत्ते समेत संन्यासीने उन महार्षियों के पास जाकर न्यायके अनुसार उनको पाणिसे स्पर्श किया ७२ तब वह सब ऋषि परस्परमें यह कहकर कि हम गृहस्थीपने के दूर करनेवाले बनके चारों ओरको घूमेंगे चलदिये ७३ एकही निश्चय के कर्म करनेवाले वह सब महर्षी मूल फल फूलोंकोलेते हुये बनोंमें घूमे ७४ इसीप्रकार से घूमते घूमते उन्होंने सघन वृक्षोंसे युक्त पवित्र और स्वच्छजलोंसे भरीहुई एकशुभकमलिनी को देखा ७५ जोकि बाल सूर्य्यके समान प्रकाशमान कमलों से शोभायमान बैडूर्य्य वर्ण कमलके पत्तोंसे शोभित ७६ जलकेसमीप वर्त्ती नानाप्रकार के पक्षियों से आवृत एक घाट रखनेवाली दुर्गम कीच से रहित सूपतीर्थ नाम से प्रसिद्धथी तब उस वृषादर्भी से कार्य्यमें प्रवृत्तकरीहुई भयानकरूप यातुधानी नाम से प्रसिद्ध उस कृत्याने उस कमलिनीकी रक्षाकरी ७७। ७८ और वह सब महर्षी पशूसुख नाम संन्यासी के साथ कमलकी मृणाल लेनेके लिये उस सरोवरके पास गये जो कि चारोंओर को कृत्यासे रक्षित था ७६ इसके पीछे उन महर्षियों ने सरोवरके किनारे पर भयंकर रूप खड़ीहुई कृत्याको देखकर यह वचनकहा ८० कि तूयहां अकेलीही खड़ी हुई कौनहै और किसलिये क्यों खड़ीहै और इससरोवरके किनारे पर क्या करना चाहतीहै सो कहो ८१ यातुधानीने

कहा कि मैंतो जोहूं सोहूं तुमको मुझसे किसीदशा में भी प्रश्न न करना चाहिये हे तपोधन लोगो मैं इस कमलिनीकी रक्षा करने वाली हूं ८२ ऋषियों ने कहा कि हम सब क्षुधासे पीड़ामान हैं और हमारे पास कोई भोजनकी वस्तुनहींहै जो तुम्हारी आज्ञाहोय तो हम सबलोगइससरोवरमें से कमलोंके मृणालोंकोलें ८३ यातुधानीनेकहा कि तुम अपने २ नामोंके अर्थों को बता बताकर यहां से जितनेचाहो उतने मृणाल लो विलम्ब न करो ८४ भीष्मजी बोले कि इसके पीछे गृहस्थीपनेमें प्रवृत्त शरीर अत्रिऋषिने उस ऋषियों के मारने की अभिलाषिनी यातुधानी नाम कृत्याको जानकर यह बचन कहा ८५ कि हे सुन्दरी जिसमें कामक्रोधादिक शत्रुवर्त्तमान हैं उस पापसे जो रक्षा करता है उसको अरात्रिनाम कहतेहैं और जो कि मैं मृत्युसे रक्षाकरताहूं और मृत्यु वा पाप दोनों एकही अर्थवालेहैं इसीहेतुसे मेरानाम अत्रिहै और जो कि धर्म पापको दूरकरताहै इसहेतुसे धर्मकोभी अत्रि कहतेहैं इसीसे प्रसिद्धहै कि वर्त्तमानकाल में भूत भविष्य और वर्त्तमान इनतीनोंकालों का बिभाग नहीं करते हैं सब समय वर्त्तमानही मानतेहैं और जिसदशामें कि हार्द आकाशनाम संसारका कारण ब्रह्मकी प्राप्तिही सबपापोंको दूरकरनेवालीहै वहदशा अरात्रिनाम से प्रसिद्धहै औरजोकिमैं अरात्रिहूं इसहेतुसेभी मुझको अत्रिकहते हैं ८६ यातुधानीनेकहा हेबड़े तेजस्वी तुमने मेरेसन्मुख यहअपना नाम जिसरीतिसे अर्थसंयुक्त वर्णनकियाहै यहचित्तसे कठिनसमझ पड़ताहै तात्पर्य्य यहहै किमैं तेरे विजय करनेको समर्थ नहींहूंतुम जावो और सरोवरमें उतरो ८७ वशिष्ठ जी बोले कि वायु पृथ्वी अन्तरिक्ष स्वर्ग सूर्य्य चन्द्रमा और नक्षत्रादिक संसारके विश्वास स्थानहैं और जो उनकास्वामीहै वह वसुमाननामहै अर्थात् आत्मा आदि ऐश्वर्य्योंका प्राप्तकरनेवाला महायोगी वसुमान है उसीको वशिष्ठ कहतेहैं वह वशिष्ठमैंहूं सबमेरे आधीनहैं और मैं किसीके स्वाधीन नहींहूं इसीहेतुसे वशिष्ठ नामहूं सबके रक्षाश्रय गृहस्था-

श्रममेंभी निवास करताहूं इसकारण सबजीवोंका रक्षास्थान होने
और गृहस्थाश्रम में नियत होनेसे मुझको बशिष्ठजानो ८८ यातु-
धानीने कहा कि जो तुमने अपने नामका कारण बर्णनकिया यह
कठिन वर्णनअर्थ और अक्षरोंसे युक्तहै इसका समझनामेरी साम-
र्थ्यसे बाहरहै इससे तुमभी पद्मिनीमें चलेजावो ८९ कश्यपजी ने
कहाकि सब शरीरोंमें केवल मैंही अकेला कश्यपनाम द्विजहूं कश्य
नाम शरीरोंको जोरक्षाभोगऔरनाशकरताहै वहकश्यपहै इसोहेतुसे
में सब शरीरों में प्रवेशकरके अन्तर्य्यामी रूपसे पोषण करताहूं जीव
रूपसे तो सुख दुःखादिको भोगताहूं ब्रह्मरूप से उन सबको
अपनी आत्मामें लयकरता हूं इसरीति सब अध्यात्म मेराही स्व-
रूपहै इसहेतुसे दैवभी मेरा स्वरूपहै इसको बर्णन करतेहैं कि
जलको आकर्षणकर करके पृथ्वीपर बर्षा करनेवाले सूर्य्यादिसब
देवता मेरे पुत्रहैं और पुत्र अपनी आत्माहै मैं प्रकाशमानहूं
क्योंकि बड़ी भारी अवस्थाहोने से कांसके फूलके समान सबओर
से श्वेत बाल और तपसे प्रकाशित हूं ऐसा मेरा नामहै ९० यातु-
धानीने कहा हे बड़े तेजस्वी जैसे कि तुमने यहनाम मेरे सन्मुख
सार्थक वर्णन किया यह चित्तमें कठिनतासे आसक्ता है तुम भी
सरोवर में चले जावो ९१ भरद्वाज बोले कि प्रजा बाज अर्थात् प-
क्षरूप है उनको जो पुरुष करताहै वह भरद्वाजहै इसश्रुतिके अनु-
सार अपने नामको भरद्वाज ने कहना प्रारंभ किया कि हे सुन्दरी
में शिक्षाके अयोग्य अर्थात् राक्षस और शत्रुओं को स्वाधीनकरके
दयासे पोषण करताहूं और अपुत्र अर्थात् उदासीन दीन अदीन
जीवोंको भी पालताहूं देवता और ब्राह्मणोंको भी पालन करता हूं
और भार्य्या पुत्र और भृत्यादिकों कोभी पालताहूं मैं अपनीही मा-
यासे संसारकी वृद्धिकेलिये प्रकट हुआहूं कर्म करनेसे नहीं हुआहूं
इसीहेतुसे मेरानाम भरद्वाज हुआ है ९२ यातुधानी ने कहा कियह
तेरे नामकाहेतु बड़े कठिन अर्थ और अक्षरों वाला है मेरीसामर्थ्य
से इसका भी समझना कठिनहै इससे तुमभी सरोवरमें जावो ९३

गौतमजी बोले हे यातुधानी कृत्या गोपदार्थ स्वर्ग और पृथ्वीको स्वाधीन करताहै उसको गोदम कहते हैं तात्पर्य्य यह है कि मैं जितेन्द्रीपने से पृथ्वी और स्वर्गके विजय करने को समर्थहूं और निर्धूम अग्नि के समानहूं इसीहेतु करके मैं तुझसे अजेयहूं दकार केस्थानमें तकार करदेने से गौतमनामहूं जो ऐसापाठहै कि(गोभिस्तमोममध्वस्तंजातमात्रस्यदेहतः) तब यह अर्थहै कि मुझमाता के शरीरसे उत्पन्न तप न करनेवाले सूर्य्यके समान अपनी किरणोंसे अन्धकार दूरहुआ इसीहेतुसे उपद्रवों और अपराधोंका दूरकरने वाला किरणधारी मैं गौतम नामहूंऔर अग्निरूप होनेसे मैंतुझसे अजेयहूं ऐसामुझ गौतमकोसमझो ९४।९५ यातुधानी बोली हे बड़े तेजस्वी जैसे कि तुमने इस अपनेनामको अर्थयुक्त वर्णनकिया इसका समझना असंभवहै इससे तुमभी सरोवरहीमें जावो विश्वामित्रबोले कि विश्वेदेवा अधिदैव अर्थात् अध्यात्म मेरे मित्रहैं वैसेही इन्द्रियोंकाभी मित्र हूं इस अर्थसे मेरा विश्वामित्र नाम प्रसिद्धहै हे यातुधानी यही मेरानामसमझो ९६ यातुधानीने कहाकि तेरे नामका जो यह अर्थ है यह अत्यन्त कठिनहै इसका समझना असंभवहै तुमभी सरोवरमें जावो जमदग्निजीबोले जाज हव्यको कहते हैं और यज्ञोंमें बारंबार हव्यके भक्षण करनेवाले देवताओं का नाम जाजमदहै और जिसमें देवता पूजेजातेहैं इस अग्निकोयज कहतेहैं उनअग्नियोंको जो प्रकटताहै उसको जोवअर्थात् गाण कहते हैं जोकि मैं अग्निसे उत्पन्नहुआ हूं इसीसे इसलोकमें मुझको यजाहनाम जानो और उसीकारण जमदग्निभी मेरानामहुआहै अर्थात् जाजमद शब्दसे जाकारका लोपहोकर जमद् शेपरहा हे सुन्दरी इसी हेतुसेदेवता और अग्निका निवासस्थान रूप मुझ जमदग्निकोजानो ९७।९८ यातुधानीबोली कि हेमहामुनि तुमने जोयह नामजैसे वर्णनकिया यह समझना कठिनहै इससेतुमभी सरोवर में जावो ९९ अरुन्धती बोलीं कि पर्व्वतोंको धारण करनेवाली पृथ्वी और वसुनाम देवताओं का धारण करनेवाला स्वर्ग इनदोनोंको मैं

स्वामिनीहूं क्योंकि मैं अपने पति बशिष्ठजी के चित्तको प्रसन्न रखतीहूं उन्हींके चित्तके अनुसार सदैव कर्मको करतीहूं इसकर्म से और पृथ्वी आदिके धारण करनेसे मुझको अरुन्धती नामसे जानो १०० यातुधानी बोली कि तुमने यह अपना नामहेतु संयुक्त बर्णन किया यहबड़े कठिनअर्थ और बिषयसे भराहुआहै इसकासमझना बहुत कठिनहै इससे तुमभी सरोवरमें जावो १०१ गंडा बोली कि मेरे मुखके निज स्थानपर गंडाहै इसको धातु कहतेहैं हे अग्नि से उत्पन्न यातुधानी उसऊंची उठीहुई गिल्टीके कारणसे मुझको गंडा नामजानो १०२ यातुधानीने कहा कि तुमने जो अपने नामका हेतु बर्णनकिया यहभी कठिन आशय और अर्थोंसे व्याप्तहै इससेतुमभी सरोवरको जावो १०३ पशूसुखने कहा कि मैं जीवोंको देखकररक्षा करताहूं और सदैव जीवोंका मित्रहूं हे अग्निसे उत्पन्न यातुधानी इसीहेतुसे पशूसुखनाम स्वच्छता रखनेवाला मुझकोजानो १०४ यातुधानीने कहाकि तुमने जो यहअपने नामका हेतु बर्णन किया यहबड़े आशय और कठिन अक्षरोंसे युक्त समझमें आना असंभव है इससे तुमभीसरोवरमें जावो १०५ शुनासुखने कहा कि हे यातु-धानी जिसप्रकार से इनलोगोंने अपने नामको बर्णन कियाहै मैं उसप्रकारसे बर्णन करना नहीं चाहताहूं मुझको शुनासुख का सखा समझो अर्थात् शिवानाम धर्मकाहै उसके सखा मुनिलोगहैं उनका सखाशुनासुखहुआ १०६ यातुधानीने कहाकि हे द्विजतुमने अपने नामका हेतुबर्णन करनेवाला वचन टूटीहुई बाणीसे कहा इसीहेतुसे अबफिर अपने नामका हेतुबर्णनकरो १०७ शुनासुखने कहाकि एकबार में कहचुका जो तुमने नहीं समझाहै इसीहेतुसे त्रिदंड से घायल होकर भस्म होजावो बिलम्ब न करो १०८ तब ब्रह्मदण्डके समान उस त्रिदंडसे मस्तकमें घायलहोकर वहकृत्या पृथ्वी पर गिरपड़ी और अत्यन्त भस्म होकर सूक्ष्म शरीरसे चली गई १०६ शुनासखा उसबड़ी पराक्रमी यातुधानीको मार पृथ्वी पर त्रिदंडको धरके घासोंपर बैठगये ११० इसकेपीछे वहप्रसन्न

मनसबमुनिलोग इच्छा पूर्व्वक कमलोंके मृणालोंको लेकर सरोवरसे बाहर निकले १११ बड़े परिश्रमसे मृणालोंको इकट्ठाकरके कमलिनीकेतटपर रखकर उनमुनियोंने जलसे तर्पण किया ११२ फिर वह उसजलसे निकलकर वहांआये जहांकि वह सबइकट्ठे मृणाल रक्खेथे वहांउन पुरुषोत्तमोंने उन मृणालोंको नहीं देखा ११३ तब ऋषियोंने कहा कि किसनिर्दयी पापकर्मीने गृहस्थीपने से धरे भोजनके अभिलाषी हमलोगोंके मृणाल चुरा लिये ११४ हे शत्रुओंकेबिजय करनेवाले युधिष्ठिर उनसन्देहोंसे भरेहुये ऋषियोंने परस्परमें पूछातब वहबोले कि हमसब शपथखायं ११५ तब बहुत से थकेहुये क्षुधासे पीड़ित हमलोगोंने बहुतअच्छा कहकर एकसाथही शपथ करना प्रारंभकिया ११६ अत्रिने कहा कि जो मनुष्य मृणालोंकी चोरीकरताहै वहचरणसे गौकास्पर्शकरे सूर्य्यकी ओर मूत्रकरे अनध्यायों में वेदोंको पढ़े ११७ वशिष्ठजीनेकहा कि वह मनुष्य लोकमेंअनध्यायोंके दिनवेदका पाठकरे और कुत्ते को क्रीड़ा के अर्थ अथवाआखेट करनेकेलिये अपनेसाथरक्खे और संन्यासी होकर वेश्यादिकों का संगकरे जोकि मृणालोंकी चोरीकरे ११८ जो मृणालोंको चोरीकरता है वह अपने शरणागतको मारे और अपनी कन्याका मूल्यलेकर जीविकाकरे और तुच्छ वा पशुघाती से अर्थोंकी याचना करे ११९ कश्यपजीने कहा कि जो मनुष्य मृणालोंकी चोरीकरताहै वह सबस्थानोंमें सबबातोंको कहे धरोहर मारेझूंठी गवाहीदे १२० यज्ञकेबिना मांसखानेवालाहोय निरर्थक दान करनेवाला होय दिवस में स्त्रीसे संभोग करे जो मृणालों की चोरीकरे १२१ भरद्वाजऋषिने कहा कि जो मनुष्य मृणालों की चोरी करताहै वहस्त्रियोंमें वा गौओंमें निर्दयी और धर्मका त्यागने वालाहो और ब्राह्मणकोभी बिजयकरे १२२ जोमनुष्य मृणालोंकी चोरीकरताहै वह उपाध्यायको अपमान करके यजुर्वेदकी ऋचाओं को पढ़े और सूखेतृणकी अग्निमें होमकरे १२३ जमदग्निऋषिने कहाकि वहमनुष्यजलोंमेंमूत्र औरबिष्ठाकोकरेगौकोमारे औरउससे

शत्रुताकरे ऋतुकालबिना स्त्रीसे संभोगकरे जोकिमृणालोंको चोरी करताहै १२४ वहमनुष्य सबका विरोधी और भार्य्याका शरणागत जातसे बाहर और उनका शत्रुहोय और परस्परमें अतिथिहोय जो मृणालोंकी चोरीकरताहै १२५ गौतमनेकहा कि जो मृणालों को चोरीकरताहै वहवेदोंको पढ़कर त्यागकरे तीनोंअग्नियोंको न पूजे और सोमवल्लीकोबेचे १२६ जिसगांवमें केवलए कहीकुंवाहै उसमें रहनेवाला और जो स्त्री अपने पिताके घरही में ऋतुमती हुई उसकापतिजो ब्राह्मणहै उसकीसालोक्यताको वहमनुष्यपावे जो कि मृणालोंकी चोरीकरताहै १२७ बिश्वामित्रने कहा उस मनुष्यकी जीवन दशामेंही दूसरेमनुष्य उसकेगुरू माता पितादासदासीआदि को पोषणकरें और धनादिक जीविका से रहित होकर बहुतसी सन्तान रखनेवालाहोय जोकि मृणालोंकीचोरी करताहै १२८ वह मनुष्यअपवित्रवेदोंका समूहरखनेवाला और धनकी आधिक्यतासे अहंकारी कृषिकर्मी और ईर्षाकरनेवाला होय जोकि मृणालों को चोरीकरताहै १२९ जोमनुष्य कि मृणालोंकोचोरी करताहै वहवर्षा- ऋतुमें घूमनेवाला नौकर और राजाका पुरोहित और यज्ञ न करने वालेका ऋत्विजहोय १३० अरुन्धतीने कहा कि जोस्त्रीमृणालोंकी चोरीकरतीहै वहसदैव सासुकी अप्रतिष्ठाकरे और पतिसे दुष्ट मन होय और स्वादिष्ट भोजनोंको भोजनकरे १३१ बिरादरी वालों के घरमेंनियत सायंकालके समय सक्तुवोंकाभोजनकरे भोगकेअयोग्य और वन्ध्यायोनिवालीहो जोकि मृणालोंकी चोरी करतीहै १३२ गंडानेकहा कि जो मृणालोंको चोरीकरतीहैवह मिथ्यावादिनीहोय सदैव बांधवोंसे विरोधकरे और मूल्यलेकर कन्याका दानकरे १३३ पाकोंकोतैयारकरके आपहीभोजनकरे दासीभावमेंवृद्ध होजायऔर जारसे उत्पन्न गर्भआदिके कारणसे मृत्युपावे जो मृणालोंकीचोरी करतीहै१३४पशुशुकने कहा कि वहमनुष्यखालीहाथ अपुत्रीहोकर दूसरेकादास होयऔरदेवताओंका नमस्कारकरनेवाला न होयजो मृणालोंकी चोरी करताहै १३५ शूनासखाने कहा किजो वेदपाठी

होकर मृणालोंकी चोरीकरताहै वह अध्वर्य्युब्राह्मणके अर्थ कन्यादे अथवा ब्रह्मचारी और सामवेदके गानकरनेवाले ब्राह्मणको कन्या दे और अथर्ववेदकोपढ़कर समावर्त्तन स्नान करे १३६ ऋषि बोले कि तुमने जो यह शपथ खाई यहब्राह्मणोंको प्रिय हैं हे शूनासुख तुमनेही हमसबके मृणालोंकीचोरीकीहै १३७ शूनासुखने कहा कि तर्पणसे निवृत्तहोकर रक्खेहुये भोजनों के न देखनेवाले आपलोगों ने जो यहबचन कहाहै यह सत्यहै मिथ्या नहीं है क्योंकि मैंनेही मृणालोंकीचोरी करीहै हे निष्पाप ऋषिलोगो यहांमुझसे गुप्तकिये हुये इन मृणालोंकोदेखो मैंने यहकर्म आपसरीखे भगवान् ऋषियों को परीक्षाके अर्थकियाहै १३८।१३६ मैंतुमसबलोगोंकीरक्षाके निमित्त आयाहूं औरयहअत्यन्त निर्दयी यातुधानीनाम कृत्या तुम सब कोमारनाचाहतीथी१४०हेतपोधनऋषियो राजा वृषादर्भीकी भेजी हुई यहकृत्या मैंनेमारी और मैं यहविचारकर आयाहूं कि यहअग्नि सेउत्पन्न होनेवाली पापात्माकृत्या कहीं आपके साथमें दुष्टकर्म न करे१४१इसहेतुसे मैं आयाहूं हे वेदपाठियोमैंइन्द्रहूं तुमने अभीष्ट मनोरथोंके देनेवालेसबलोक अपनेसन्तोषसे प्राप्तकिये१४२ हेब्राह्मणो अबतुमयहांसे शीघ्रउठो और उनलोकोंको प्राप्तकरो १४३ भीष्मजीबोले कि इसकेपीछे वह प्रसन्नचित्त महर्षी इन्द्रकीप्रशंसा करकेऔर उसके कहनेको अंगीकार करके उसइन्द्रकेसाथ स्वर्गको गये१४४ इसरीतिसे अनेकप्रकारकेभोगोंकेद्वारा महात्माओंसेलुभाने परभी उनबड़ेगृहस्थाश्रममें फंसेहुये महात्माओंने१४५ लोभ नहीं- किया इसीहेतुसे स्वर्गको पाया इसीकारणसे मनुष्यको भी उचित है कि सबदशाओं मेंलोभका त्यागकरे१४६ हेराजा यह श्रेष्ठधर्महै इसनिमित्त अवश्यलोभको त्यागकरे१४७जो मनुष्य इसचरित्रको सभाओंमें कहताहै वह अभीष्ट मनोरथोंको पाताहै और किसी विपत्तिमेंनहींपड़ताहै१४८ उसकेपितृऋषि औरसबदेवता प्रसन्नहोतेहैं और परलोकमें शुभकीर्त्ति युक्त होकर धर्मअर्थोंकोपाताहै१४९ ॥

इतिमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेबिसस्तैन्योपाख्यानेत्रिनवतितमोऽध्यायः९३॥

चौरानबेका अध्याय॥

भीष्मजीने कहा कि इसीविषय में एकअन्य प्राचीन इतिहासको भी कहताहूं जो कि तीर्थयात्रामें शपथखानेके विषयमें प्रकट हुआ उसको भी तुम सुनो १ हे भरतवंशियोंमें बड़े साधू युधिष्ठिर पूर्व्व समयमें इन्द्रने कमलोंके निमित्त चोरीकरी तब राजऋषि और धर्म ऋषियोंने शपथखाई २ किसीसमय पश्चिमदिशा में प्रभास नाम तीर्थमें ऋषि लोग इकट्ठे हुये उन सब इकट्ठे ऋषियोंने यह सलाह करी कि हम सब लोग इस पवित्र तीर्थवाली पृथ्वीपर घूमें और जब इच्छा होय तब अपने २ आश्रमोंको जायं ३ उनके यहनामहैं शुक्र, अंगिरा, ज्ञानीकवि, अगस्त्य, नारद, पर्व्वत, भृगु, बशिष्ठ, कश्यप, गौतम, बिश्वामित्र, जमदग्नि ४ गालवऋषि, अष्टक, भरद्वाज, अरुन्धती, वालखिल्य, शिवी, दिलीप, नहुष, अंबरीष, राजाययाति, धुन्धमारि, पुरु५ यह सबब्रह्मर्षि और राजर्षि उस वृत्रासुरके मारनेवाले महा इन्द्रको आगे करके सब तीर्थोंमें घूमतेहुये माघकी पूर्णमासीको पवित्रतीर्थवाली कौशिकीनदी पर पहुंचकर ६ सब तीर्थोंमें पापोंसे रहित पवित्र होकर अत्यन्त पवित्र रूप ब्रह्मसरको गये हे राजा उन अग्निके समान तेजस्वी कमलके पुष्प और मृणालोंके भोजन करनेवाले ऋषियोंने देवतीर्थोंमें स्नान करके७ कितनोहीने तो कमलोंकी सूत्रमालाको और बहुतोंने मृणालोंको खोदा इसके अनन्तर ह्रदसे अगस्त्य ऋषिके निकाले हुये कमलको उन ऋषियोंसे चुरायाहुआ देख ८ ऋषियों में श्रेष्ठ अगस्त्यजीने उन सबसे कहा कि मेरे मनोहर कमलको किसनेलियाहै मुझको तुम सब लोगोंपर सन्देहहै आप लोग मेरे कमलोंको देदो क्योंकि तुम लोग कमल के चुरानेके योग्य नहीं हो९ मैं सुनताहूं कि समयकी प्रबलतासेधर्म नष्ट होताहै वही बात वर्त्तमान हुई है धर्म को पीड़ा वर्त्तमान है यहां जबतक अधर्म वर्त्तमानहै तबतक चिरकालके निमित्त स्वर्ग लोकको जायं १० जबतक ब्राह्मणलोग बड़े२ शब्दोंसे शूद्रोंको वेद

सुनातेहैं और जबतक राजा व्यवहारसे धर्मोंको देखताहै उससे पूर्व्वही मैं परलोकको जाताहूं ११ जबतक सब मनुष्य दूसरे सामान्य और उत्तम पुरुषोंका अपमान नहीं करतेहैं और जबतक अज्ञानको प्रधान करनेवाला यह संसार नहीं वर्त्तमान होताहै उससे पूर्व्वहीमैं बहुतकालके लिये परलोकको जाताहूं १२ मैं सदैव दूसरे पराक्रमीसे दासभावमें कियेहुये अन्य मनुष्योंको देखताहूं इसीहेतुसेमैं चिरकालके निमित्त परलोकको जाऊंगा यहां मैं इस जीवलोकके देखनेकी इच्छानहीं करताहूं १३ तब तो पीड़ामान उन ऋषियोंने महर्षीसे कहाकिहमतुम्हारे कमलको नहींचुरायाहै आपको मिथ्या अपवादन लगाना चाहिये हेमहर्षी हम कठिन शपथों के खानेसे शापदेतेहैं यहकहकर वह राजऋषि और महर्षी लोग उसका निश्चय करनेवालेहुये फिरवह सब ऋषिराजा और उनके पुत्र पौत्रादिकों समेत पृथक् २ रीतिसे शपथ खाने लगे १४ भृगुजीने कहाकि इसलोकमें वह मनुष्य शपथ खाया हुआ भी फिर शपथ खिलायाजाय और ताड़ित होकरभी फिर ताड़ना किया जायऔर सवारीकेयोग्य घोड़ेआदिके मांसको खाय जिसने तेरा कमल चुरायाहोय १५ । १६ बशिष्ठजीने कहा कि लोकमें वह मनुष्य वेदपाठ वा जपको न करे और कुत्ते को क्रीड़ाके निमित्त अथवा आखेट करनेके निमित्त अपने साथमें रक्खे औरसंन्यासी होकर अपने नगरमें नियत होय जिसने तेरा कमलचुराया होय १७ कश्यपजीने कहा कि वहमनुष्यसबस्थानमें सबप्रकारको बेचनेके अयोग्य वस्तुओंको लेनादेनाकरे धरोहर को मारखावे मिथ्या साक्षीबनेजिसनेतेरा कमल चुरायाहोय १८ गौतमजीने कहा कि वह ब्राह्मण काम क्रोधादिकोंसे युक्त बिपरीत वुद्धीसे अहंकारी होकर कालक्षेपणकरे वा खेतीकरने वाला और ईर्षा करने वाला होजाय जिसने तेरा कमल लियाहो १९ अंगिरा ऋषिने कहा कि वह ब्राह्मण वेदका झूठा रखनेवाला और कुत्ते को क्रीड़ा अथवा मृगयाके निमित्त साथमें रक्खे वा ब्रह्महत्याकरके उसका

प्रायश्चित्त न करनेवाला होय जिसनेतेरे कमलको चुरायाहोय२०
धुन्धमारने कहा कि वह मनुष्यमित्रोंके उपकारका भूलजानेवाला होय शूद्रास्त्रीमें सन्तानका उत्पन्न करनेवालाहोय तैयार भोजनको खावो जिसने तेरा कमल चुरायाहोय२१ पुरूनेकहा कि वहमनुष्य रोगियोंकी चिकित्सामें प्रवृत्त होय और भार्य्याके द्वारा पोषणपावे श्वशुरसे उसकी जीविका होय जो तेरे कमलका चुरानेवालाहो २२ दिलीपनेकहा कि केवल एकहीकूप रखनेवाले गांवमें जो वृषलीपति ब्राह्मण रहताहै उसकी सालोक्यताको वह मनुष्यपावे जिसने तेरा कमल चुरायाहोय२३शुक्रजीनेकहा कि वहमनुष्यबिना यज्ञके मांसको खाय दिनमें स्त्रीसे भोगकरेराजाका आज्ञावर्त्तीहोय जिसने तेरे कमल चुरायेहोंय २४ जमदग्निजी ने कहा कि वह मनुष्य अनध्यायोंमें वेदका पाठकरे श्राद्धमें मित्रको भोजन करावे और शूद्रके श्राद्ध में भी भोजनकरे जिसने तेरा कमल चुरायाहै २५ शिवीनेकहा कि वह मनुष्य अग्निस्थापन न करनेवाला मृतकहोजाय यज्ञमें विघ्नकरे तपस्वियोंसे बिरोधकरे जिसनेतेरा कमल चुराया होय २६ ययातिने कहा कि वह मनुष्य व्रत करनेवाला होकर बिना ऋतुकालके भार्य्यासे संभोगकरे वेदोंकी अवज्ञाकरे जिसने तेरा कमललियाहोय २७ नहुषने कहा कि वह मनुष्य संन्यासी अतिथि होकर घरमें नियत होय और जितेन्द्री नहोकर स्त्रीसंगकरे और नौकर होकर विद्याको पढ़ावे जिसने तेरा कमल चोरी किया होय२८अम्बरीषने कहा कि वहमनुष्य स्त्रियोंपर अपनीबिरादरीपर और गौओंपर निर्दयताकरे औरधर्मको त्यागकर ब्राह्मणकोभी मारे जिसने तेरा कमल चुराया होय २९ नारदजीने कहा कि वह गृहमें अज्ञानी बाहर बड़े शास्त्री और स्वर रहित पाठकोकरे पढ़ेहुये योग्य पुरुषोंका अपमानकरे जिसने तेराकमल चुराया होय३०नाभागने कहा कि वह मनुष्य सदैव मिथ्यावादी होय सत्पुरुषोंका बिरोधी होय मूल्यलेकर कन्यादानकरे जिसने तेरा कमल लिया होय३१ कविऋषि बोले कि वह मनुष्य चरणसे गौको घातकरे सूर्य्यके

सन्मुख मूत्रादिककरे शरणागतको त्यागे जिसने तेराकमल लिया हो ३२ विश्वामित्रजी बोले कि जिस मनुष्यने तेरे कमलको चुरायाहै वह वैश्यसे मोललिया हुआ कृत्रिम वर्षाकरे राजाका पुरोहितहो और यज्ञ करानेके अयोग्य पुरुषका ऋत्विज् होय ३३ पर्व्वत ऋषिने कहा कि वह गांवमें अधिकारी होय गधेकी सवारीमें चले जीविकाके हेतुकुत्ते को साथमें रक्खे जिसने तेरे कमलकोचुरायाहै ३४ भरद्वाजऋषिने कहा कि मिथ्या कहनेमें और निर्दयतामें जो पाप होताहै वहीपाप उसको सदैवहोय जिसने तेरा कमल चुरायाहोय ३५ अष्टक बोले वहराजाव्यभिचारीअज्ञानी पापी होकर अधर्मसे पृथ्वीपर राज्यकरे जिसने तेरा कमल चुराया होय ३६ गालवऋषिने कहा कि वह मनुष्य पाप करनेवाला और पापियों से भी अधिक निन्दित होय और दानको देकर मुखसे कहे जिसने तेरा कमल चुराया होय ३७ अरुन्धती बोलीं कि वह स्त्री सासुसे कठोर बचन कहे पतिसे दुष्ट चित्ता होय अकेलीही संपूर्ण स्वादिष्ट भोजनको करे जिसने तेरा कमल चुराया होय ३८ शूनासुखने कहा वह ब्राह्मण अग्निहोत्रकी अवज्ञा करके सुखसे सोवे संन्यासी होकर व्यभिचारी होय जिसने तेराकमल चुरायाहो ३९ सुरभीने कहा कि जो तेरे कमलको चुरातीहै उसका कांस्यदोहन पात्र उस रस्सीसे बांधाजाय जो कि मनुष्योंके वालोंसे पैरोंके बांधनेको बनी होय और पैरोंमें बंधीहोय और अन्य गौ के बछड़ेसेदुहीजाय ४० भीष्मजीनेराजा युधिष्ठिरसे कहा कि कौरवेन्द्र इसकेपीछे उन नाना प्रकारकीशपथ खानेसेअत्यन्त प्रसन्न हजारनेत्रधारी देवराजइन्द्रने उनवेदपाठियोंमें श्रेष्ठ अगस्त्यमुनिको क्रोधयुक्त देखकर ४१ उस क्रोध भरे मुनिको सावधान चित्तसे अपने समक्ष करके ब्रह्मर्षि देवर्षि और राजर्षियोंके मध्यमें जो अपने चित्तका भेद उससे कहा वह मैं तुमसे कहताहूं ४२ इन्द्रने कहा किवह अध्वर्य्यब्राह्मणको अपनी कन्यादे यासामवेदके गानेवाले ब्रह्मचारीको अपनीकन्यादे और वह ब्राह्मण अथर्वण वेदको पढ़कर समावर्त्तन स्नानकरे जि-

सने तेरा कमल लियाहो ४३ वह सबवेदोंको पढ़े पुण्यका अभ्या सी और धर्मकी प्रकृति रखनेवाला होय और ब्रह्मलोकको जाय जिसने तेरा कमल लियाहै ४४ अगस्त्यजी बोले हे इन्द्र तुमने हमसे आशीर्वादरूप शपथखाईहै मेरे कमल मुझको दो यही सनातन धर्म है ४५ इन्द्रने कहा हे भगवन् अब मैंने लोभ से कमल नहीं लिये धर्मोंके संदेहोंकी इच्छा से चुरायेहैं आप क्रोध करने के योग्य नहीं हो ४६ मैंने इस वेद बचन से प्रधानधर्म का सेतु उपाधियों से रहित प्राचीन सनातन अबिनाशी आर्ष नाम धर्मको सुना ४७ हे ब्राह्मणों में बड़े साधू महाज्ञानी आप इस कमलको लीजिये हे निर्दोष भगवान् ऋषि मेरी अमर्य्यादाको क्षमा कीजियेगा ४८ इन्द्रके इस बचन को सुनकर उस क्रोध युक्त बड़े बुद्धिमान् तपस्वी मुनिने उस कमलको लिया और बहुतप्रसन्न हुये ४९ तदनन्तर वह पर्य्यटन करने वाले ऋषितीर्थोंको गये और पवित्र २ तीर्थोंमें स्नान किया ५० जो योगीपुरुष पर्व्व २ में इस उपाख्यान को पाठकरे वह मूर्खपुत्रको नहीं उत्पन्न करे और कभी उसका अनादर न होय ५१ किसीआपत्तिमेंनहींपड़े रोगोंसे निवृत्त हो वृद्धावस्था से अजितरजोगुण रहित कल्याण युक्त होकरशरीर त्यागनेके पीछे स्वर्ग कोपावे ५२ हे नरोत्तम जो पुरुषऋषियों से रक्षित शास्त्रको पढ़ताहै वह अबिनाशी ब्रह्मलोकको पाताहै ५३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशपथविधिनामचतुर्न्नवतितमो ऽध्यायः ९४ ॥

पंचानबेका अध्याय ॥

युधिष्ठिर ने प्रश्न किया कि हे भरतर्षभजो यह छत्र और जूते का जोड़ा श्राद्ध कर्मोंमें दिये जातेहैं इनको किसने जारी कियाहै १ कैसे उत्पन्न हुये और किस निमित्त दिये जातेहैं केवल श्राद्धकेही कर्मोंमें नहीं किन्तु स्त्रियों के व्रत उत्सवादिकोंमेंभी दिये जातेहैं २ पुण्यका आश्रय लेकर अनेक निमित्तोंमें दियेजातेहैं हेब्रह्मज्ञानी

मैं इसको मूल समेत ब्योरेवार सुना चाहताहूं ३ भीष्मजीने कहा हे राजा तुम बड़ी सावधानी से इन छत्र और उपानतोंको उस कथाको सुनो जैसे कि यहलोकमें प्रकटहोकर जारीहुये और हेराजा इन वस्तुओंने जैसे अबिनाशीपनेको और पुण्यको पाया उस सब कथाकोभी मैं पूर्णता से कहताहूं ४।५ जिसमें जमदग्नि ऋषि और महात्मा सूर्य्यका प्रश्नोत्तरहै हे प्रभु पूर्व्व समय में निश्चय करके उन भगवान् भार्गवजीने साक्षात् धनुष से क्रीड़ाकरी और चढ़ा २ कर बाणों को छोड़ा हे धर्मसे च्युत न होनेवाले तब उन रेणुका जीने उस बड़े तेजस्वी जमदग्निजीके छोड़े हुये बाणोंको बारं-बार ला२ कर ६।७ उनको दिये और धनुषकी प्रत्यंचा और बाणों के शब्दों से प्रसन्नहोहोकर बारंबार बाणोंकोछोड़ा और रेणुकाजी उनको बारंबार लेलेआईं इसके पीछे ज्येष्ठा के मूलवर्त्तीरोहिणी नक्षत्र में आये हुये सूर्य्यके आकाशमें आने पर८।६ उस ब्राह्मणने बाणोंको छोड़कर रेणुकाजी से यह बचन कहा कि हे बिशालाक्षी तुम जाकर उन धनुष से निकले हुये बाणोंको लावो १० जिससे कि हे सुभ्रू फिर उन बाणों को फेंकूं हे राजावह तेजस्विनी तीरों के लानेवाले मार्ग में कहीं छायाका आश्रय पाकर ठहरगई ११ इसहेतुसे कि उसका शिर और दोनों चरण अत्यन्त संतप्त हो-गये थे वहां वह सुन्दरी रेणुका अपने स्वामी के शापसे भयभीत होकर १२ केवल एक मुहूर्त्त मात्रही ठहरी और फिर बाणोंके ला-ने को तैयार हुई तब वह श्यामनेत्रा यशस्विनी उन बाणोंको लेकर लौट कर आई १३ पतिके भयसे कांपती चरणों से दुःखोंको सहती हुई महादुःखी सुन्दर अंग वाली वह रेणुकाजी अपने पति के पास आईं १४ तब क्रोध युक्त ऋषिने उस सुमुखी से बारंबार यह बचन कहे कि हे रेणुका तुम बिलम्ब करके क्यों आई१५ रेणु-काजीने कहा कि हेतपोधन मेरा शिरऔर दोनोंपैर सूर्य्य के संताप से गरम होगयेथे इससे उसतापके शान्त करने को वृक्षकी छाया में आश्रयवाली हुईथी १६ हे ब्रह्मर्षिजी इसहेतुसे मुझको बिलम्ब

होगई हे प्रभु आप इस मेरे सत्य २ वृत्तान्तको सुनकर क्रोध न करिये १७ जमदग्निजी ने कहा हे रेणुका अब मैं तेरे संतप्त करने वाले रश्मिवान् प्रतापी सूर्य्यको अपने तेजके अग्नि रूप अस्त्र से उसके तेजको बड़ी सुगमता से गिराऊंगा १८ भीष्मजी ने राजा युधिष्ठिर से कहा कि रेणुकासे यहवचन कहकर जमदग्निजी दिव्य धनुषको चढ़ाय बहुतसे बाणों को हाथ में लेकर सूर्य्यकेसन्मुख खड़े हुये और ठीक २ उनके मुखको लक्षबनाया तब तो हे कुन्तीनन्दन सूर्य्य देवता ने उनको अपने मारने के निमित्त तैयार देखकर ब्राह्मणके रूपसे उनके सन्मुख आकर यह बचन कहा कि हे तपोधन आपका सूर्य्यने क्या अपराध कियाहै १९।२० वह दिनका उत्पन्न करने वाला सूर्य्य स्वर्ग वा आकाशमें नियत होकर अपनी किरणों के द्वारा जहां तहां से रसोंको आकर्षण करताहै और उस आकर्षण किये हुये जलको वर्षाऋतुमें बरसाताहै २१ उसीसे वह अन्न उत्पन्न होताहै जोकि मनुष्यों का सुख दायीहै जैसे कि वेदोंमें पढ़ा जाताहै कि अन्नही प्राणहै २२ हे ब्राह्मण फिर वह बादलोंमें गुप्त किरणों से घिरा हुआ सूर्य्य इनसातों द्वीपों पर जलकी वर्षा करताहै २३ हे प्रभु इसके अनन्तर वर्षासे प्रकट और औषधी और बिरुधियों के फूल पत्तोंसे उत्पन्न सब अन्न उत्पन्न होतेहैं २४ जातकर्म आदि सब कर्म व्रत यज्ञोपवीत धारण करना गोदान बिवाह और सामान्य यज्ञ सब शास्त्रोंके ज्ञाताओंका संयोग और धन संचय यह सब पदार्थ अन्नसेही उत्पन्न होतेहैं हे भार्गवजी जिसको आप भी जानतेहैं २५।२६ जितनी बस्तु कि क्रीड़ाके योग्यहैं और जितने प्रारंभ कर्म हैं वह सब अन्नही से प्रकट होतेहैं यह सब जो मैं कहताहूं उस सब को आपभी जानतेहैं २७ हे वेदपाठी जो यह मैंने कहा है उससबको आप अच्छीरीतिसे जानतेहो हे ब्रह्मऋषि आप प्रसन्न हूजिये सूर्य्य के गिराने से आप का क्या लाभहोगा २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेछत्रोपानहोत्पत्तिनामपंचनवतितमो ऽध्यायः ९५ ॥

छ्यानबेका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि इस रीतिसे सूर्य्यके प्रार्थना करने पर उन मुनियों में बड़े साधु महा तेजस्वी जमदग्निजी ने कौनसा कर्म अपने करने के योग्य जाना १ भीष्मजी ने उत्तर दिया कि हे कुरुनन्दन उस अग्निके समान तेजस्वी जमदग्नि मुनिने उसप्रार्थना करने पर भी शान्तीको नहीं पाया २ इसके पीछे उन हाथ जोड़ने वाले सूर्य्य देवताने इस ऋषिको प्रणाम करके फिर मधुर बाणी से यह बचन कहा ३ हे ब्रह्मर्षि सदैव घूमनेवाले सूर्य्य का लक्ष अर्थात् निशाना चलायमानहै सदैव चलायमान एक द्वीपसे दूसरे द्वीपमें जाने वाले सूर्य्यको तुम कैसे टुकड़े करोगे ४ जमदग्निजीने कहाकि मैं ज्ञानरूपी नेत्रोंसे तुम्हारी स्थिरता और अस्थिरता दोनों को जानताहूं अब अवश्य तेरे मधुर और मृदुवचनोंका उत्तर मुझको देना योग्यहै ५ हे दिनके उत्पन्न करने वाले सूर्य्य तुम मध्याह्नके समय अर्द्धनिमेष नियत होतेहो उसी समय पर तुम्हारे टुकड़े करूंगा इसमें मुझको कुछ विचारना नहीं है ६ सूर्य्यने कहा हे धनुषधारियों में श्रेष्ठ ब्रह्मर्षिजी आप निस्सन्देह मेरे टुकड़े करोगे मुझ अप्रियकारीको हे भगवन् आप अपनी शरण में जानों ७ भीष्मजी राजा युधिष्ठिर से कहा कि इस वचन को सुनकर जमदग्निजीने हंसकर सूर्य्य से कहा कि हे सूर्य्य देवता तुमको भय न करना चाहिये क्योंकि तुम नम्रता पूर्व्वक मेरे शरण में आये हो ८ ब्राह्मणों में जो सत्य का कहनाहै और पृथ्वी पर जो नियतताहै चन्द्रमाकी जो सोमताहै वरुणकी जो गंभीरताहै ९ अग्नि का तेज मेरुकी प्रभा और सूर्य्यका जो प्रताप है वह मनुष्य इन सब गुणोंको त्यागे जो शरणागतको मारे १० वह गुरुकी स्त्री से भोग करने वाला होय वह ब्रह्महत्या करनेवाला होय वह मद्यपान भी करे जो शरणागतको मारे ११ हे तात इस अपराध के प्रतीकार को विचारो जिसमें कि तेरी किरणों से संयुक्त

मार्ग सुख पूर्व्वक गमन करनेके योग्यहोय १२ भीष्मजी ने युधि-
ष्ठिर से कहा कि ऐसा कहकर वह श्रेष्ठ भार्गवजी मौनहुये फिर
सूर्य्यने शीघ्रही उनको छत्र औरउपानह अर्थात् जूतेलाकरदिये १३
सूर्य्य ने कहा हे महर्षि मेरी किरणों के रोकने वाले देहकी और
शिरकी रक्षाके निमित्त छत्रको लीजिये और चरणों की रक्षा करने
वाले जूतेके जोड़ेको लीजिये और दोनों चरणों में धारण कीजिये
१४ अब से लेकर इस लोकमें यह दान अच्छे प्रकारसे जारीहोगा
और स्त्रियोंके व्रत उत्सव आदि सब कर्मोंमें बड़ा अबिनाशी होगा
१५ भीष्मजी युधिष्ठिर से कहने लगे कि हे भरतबंशी यह छत्र
और जूतेके जोड़ेकी कथा तुम से वर्णन की यह दान सूर्य्यसे जारी
किया हुआ है और यह दानतीनों लोकोंमें पवित्र होकर धर्म की
वृद्धिका हेतु विख्यात हुआ १६ इसी हेतुसे उत्तम छत्र और जूतेका
जोड़ा वेदपाठी ब्राह्मणों के निमित्त दान करो उनमें बड़ा धर्म्महोने
वालाहै इसमें मुझको किसी बातका बिचारना नहींहै १७ हेभरत
बंशियों में श्रेष्ठ जो मनुष्य शत शलाका का रखने वाला श्वेतछत्र
ब्राह्मण को दानकरे वह मरने के पीछेसुखसे वृद्धिको पाताहै १८
हे भरतर्षभ वह दानका देनेवाला सदैव देवता ब्राह्मण और
अप्सराओं से सेवित होकर इन्द्रलोक में निवास करता है १९ हे
महाबाहो जो पुरुष जूतेका जोड़ा ऐसे ब्राह्मण को दान करता है
जोकि वेदपाठी होकर समावर्त्तन नाम स्नान करनेवाला संस्कार
तेज व्रत सूर्य्य से संतप्तहो २० वह भी देवताओं से पूजित लोक
को पाताहै और मरणके पीछे बड़ी प्रसन्नता पूर्व्वक गोलोक में
निवास करताहै २१ हे भरतबंशियों में बड़े साधु यह छत्र जूते
के जोड़े के दान का फल सम्पूर्णता के साथ तुझसे कहा २२

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेछत्रोपानहदानप्रशंसानामषण्णवतितमो
ऽध्यायः९६ ॥

—※—

सत्तानबेका अध्याय॥

युधिष्ठिर ने कहा हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ राजा भीष्मजी अब आप कृपा करके गृहस्थ धर्म को पूर्णतासे वर्णन करो मनुष्य किस२ कर्मको करके वृद्धिको पाताहै १ भीष्मजी ने कहा कि हेभरतर्षभ राजा युधिष्ठिर इस स्थान पर मैं एक प्राचीन वृत्तान्त तुझसे कहताहूं जिस में कि बासुदेवजी और पृथ्वी देवीका प्रश्नोत्तरहै २ हे श्रेष्ठ युधिष्ठिर प्रतापवान बासुदेवजी ने पृथ्वी देवीको स्तुति करके यही प्रश्नकिया था जोकि तुमने मुझसे कियाहै ३ बासुदेव जीने कहा कि हे पृथ्वी मुझको वा मेरे समान किसी दूसरे मनुष्य को गृहस्थाश्रम में प्रवृत्तहोकर कौनसी बात अवश्य करने के योग्य है और किस कर्मके करने से सब प्रकार के आनन्द से युक्तहोय४ पृथ्वी बोली हे माधवजी जिस प्रकार ऋषि देवता पितर औरमनुष्य पूजन और आहुति देने के योग्यहैं उनको मैं कहतीहूं ५ सदैव यज्ञसे देवता आतिथ्यसे मनुष्य पूजित होकर प्रतिदिन इच्छानुसार योग्य भोजनों की वस्तुओं का भोजन करे या प्रतिदिन पूजन के योग्य देवता आदिको इच्छाके अनुसार पूजन से प्रसन्न करे६ हे मधुसूदनजी इस कर्मसे सब ऋषि लोग प्रसन्न होतेहैं सदैव भोजन से पहले अग्निका पूजन करके बलिवैश्वादिक कर्मकरे उससे देवता प्रसन्न होतेहैं प्रतिदिन भोजन के योग्य अन्न और जलसे श्राद्ध करे ७। ८ जल मूल फलादिकोंसे भी पित्रोंको प्रसन्नता दे और बुद्धिके अनुसार सिद्धान्न से अग्निमें वैश्वदेव कर्म करे ९ अग्नि सोम वैश्वदेव धन्वन्तर और प्रजापतिको पृथक् २ आहुति दे यह होम कहा जाताहै १० इसी प्रकार क्रम पूर्व्वक बलिकर्मको प्रारंभ करे दक्षिण दिशामें यमराज के लिये पश्चिम दिशामें वरुण के लिये ११ उत्तर दिशा में चन्द्रमा के लिये और स्थिरता के योग्य होमके मध्य में प्रजापति के लिये पूर्व्वोत्तर कोणमें धन्वन्तर जी के लिये पूर्व दिशामें इन्द्रके हेतु १२ और गृहके द्वार पर मनुष्य के

लिये बलिकोदे और गृहके मध्यमें मरुद्गण और देवताओंकेलिये बलिकोदे १३ इसी प्रकार आकाश में बिश्वदेवताओं के लिये और रात्रिमें घूमने वाले राक्षसों के लिये बलिको देवे १४ इसरीति से विधि के अनुसार बलि प्रदान करके भिक्षाके लिये ब्राह्मणको दे ब्राह्मणके न मिलने पर प्रथम भोजन को उठाकर अग्निमें छोड़ दे १५ जब मनुष्य पित्रोंके श्राद्ध को करना चाहै तब श्राद्ध कर्मके समाप्त होजाने पर बलिकर्म करे १६ पित्रोंको अच्छीरीति से तृप्त करके बुद्धिके अनुसार बलि प्रदान करे फिर बिश्वेदेव को इस के पीछे ब्राह्मण बाचन करे १७ हे महाराज इस पीछे प्रथमअतिथिको पूजकर विशेष अन्नसे उनको भोजन करावे उससे मनुष्योंकी तृप्ति करताहै और जो एक स्थानपर नियत नहीं रहताहै वहअतिथि कहाताहै आचार्य्य पितामित्र और प्राप्त अतिथिके सन्मुखसदैव यह बर्णन करे कि यह वस्तु मेरे घरमेंहै इस पर वह लोग जोकहैं उसी को करे यही धर्म कहा जाताहै १८ । १९ । २० हे श्रीकृष्णजी तब गृहस्थी मनुष्य शेष अन्न को भोजन करे राजाके ऋत्विज ब्रह्मचर्य्य के समाप्त होने पर समावर्त्तननाम स्नान करनेवाले गुरू श्वसुर जो कि एक बर्षके पिछे आये हों उनको मधुपर्कसे पूजन करेकुत्ते चांडाल और पक्षियों के लिये पृथ्वी परडालदे २१।२२ यह वैश्वदेवनाम प्रातःकाल और सायंकाल में दियाजाताहै दूसरेके गुणमें दोष नलगाने वाला जो मनुष्यइन गृहस्थ धर्मों को वर्त्तावकरे वह इस लोकमें ऋषियों से बरोंको पाकर शरीर त्यागके पीछे स्वर्गमें प्रतिष्ठा पाताहै २३ । २४ भीष्मजी युधिष्ठिर से कहते हैं कि प्रतापवान वासुदेवजी ने पृथ्वी के इन वचनों को सुनकर सदैव उसी प्रकार से किया तुमभी उसी प्रकार सेकरो२५ हेराजा तुम इस गृहस्थ धर्म को करके इनलोक में शुभ कीर्त्ति को पाकर परलोक में प्रतिष्ठा को पाओगे २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेबलिदानविधिर्नामसप्तनवतितमोऽध्यायः ९७ ॥

अट्ठानबेका अध्याय॥

युधिष्ठिर ने कहा कि हेभरतर्षभ यह दीपदान आदिकैसा दान है उसक क्या फलहै और कैसे२ किससे जारीहुआ है उसको आप मुझसे कहै। १ भीष्मजी बोले हे भरतवंशी इस स्थान पर एक प्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें प्रजापति मनुजी और सुवर्ण ऋषिका संवादहै २ हे राजा एक सुवर्ण नाम महातपस्वी ऋषिथा वह वर्णमें सुवर्णके वर्ण समानथा इसीसे उसका सुवर्णनामहुआ ३ वह कुलवान श्रेष्ठ प्रकृति शुभ गुणोंसे युक्त वेदोंके पाठमें सिद्धान्त का जानने वालाथा और अपने गुणोंसे वहुत से अपने वंशवालों से अधिक था ४ उस वेदपाठीने किसी समय मनुजी को देखाऔर समीप गया और दोनों ने परस्पर कुशल क्षेमपूर्व्वक मनुकीप्रसन्न-ताको पूछा५ फिर वह दोनों सत्यसंकल्पी मेरु नाम सुवर्णके पर्व्वत पर एक सुवर्ण की शिलापर बैठ गये ६ वहां बैठ कर उन दोनोंने बड़े२ पुराणों को और ऋषि देवता और दैत्यों की नान प्रकारकी कथाओं को कहा ७ सुवर्ण ऋषिने स्वायंभू मनुजी से यह वचन कहा कि सब जीवों की वृद्धिके लिये मेरा प्रश्नकहने के योग्य हो-य ८ हे प्रजाओं के ईश्वर पुष्पोंसे जो देवताओं को पूजते हैं यह क्याहै और किस प्रकार से उत्पन्न होकर जारी हुआ इसकोफल संयुक्त मुझ से कहिये ९ मनुजीने कहा कि इस स्थानपर एक प्राचीन इतिहास मैं तुमसे कहताहूं जिसमें माहत्मा शुक्र जी औरराजा बलिका प्रश्नोत्तर है १० एक समय तीनों लोकों में राज्य करने वाले विरोचन के पुत्रराजा वलिके पास शुक्रजी गये ११ तब उस बलिने वहुत दक्षिणा सहित उन भार्गवजी को अर्घ पाद्यादि से पूजन किया और फिर आसन पर वैठगये १२ वहां परभी यही कथा हुई जो तुमने पुष्प धूप दीप आदि के दान और फलके विषय में पूछी है १३ फिर दैत्येन्द्र राजा बलिने यह उत्तम प्रश्न शुक्रजी से पूछा १४ कि हेब्राह्मणों में श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी

पुष्प धूप दीप आदिके दान का क्या फलहै आप उसके कहने को योग्य हैं १५ शुक्रजी ने उत्तर दिया कि प्रथम तप उत्पन्न हुआ फिर धर्म प्रकट हुआ और इसी समय में लता चांवल नाम अन्न अनेक ओषधी १६ और चन्द्रमा का आत्मा अनेक प्रकार से इस पृथ्वीपर प्रकट हुआ अमृत विष और अन्य तृणादिकभी उत्पन्न हुये १७ अमृत शीघ्र चित्तकी प्रसन्नता को देताहै और तीक्ष्ण विष अपनी गन्धिसे सबके चित्तोंको व्याकुल करताहै १८ अमृतको मंगल रूप और बड़े विषको असंगल रूप जानों सब ओषधी अमृत हैं और विष अग्निके तेजसे उत्पन्न होनेवालाहै १९ और जो कि मनको प्रसन्न कर शोभाको भी देताहै इसीसे श्रेष्ठ लोगोंने इन पुष्पों का नाम सुमन रक्खा २० जो पवित्र मनुष्य देवताओं के अर्थ पुष्पोंको देताहै उसके ऊपर देवता प्रसन्न होतेहैं और प्रसन्न होकर उसकी वृद्धिकरते हैं २१ हे प्रभु दैत्यराज जिस२ देवता का ध्यान करके मंगल के निमित्त पुष्पोंको देताहै वह देवता उस कर्म से उसके ऊपर प्रसन्न होताहै २२ वह फूल पृथक् करके उग्र सौम्य और तेजस्वी जानने के योग्य हैं इसी प्रकार से ओषधी भी अनेक रूप और पराक्रमों की रखने वाली हैं २३ यज्ञके योग्य देवताओं के प्रसन्न करने वाले वृक्षोंके फूलोंको और यज्ञके और देवताओं के अयोग्य असुरों के योग्य वृक्षोंके फूलोंको तुम मुझसे सुनो २४ और इसी प्रकार जो फूल राक्षस उरग यक्ष पितर और मनुष्योंको मनसे प्रसन्नहैं उनको भी क्रमसे सुनो २५ इसलोक में जो फूल बन खेत गांव और पर्वतों पर उत्पन्न होनेवाले कंटकी अकंटकी गन्ध रूप और रससे युक्तहैं उनको भी सुनो २६ पुष्पों से उत्पन्न हुई गन्धि दोप्रकारकीहै एक प्रिय और दूसरी अप्रिय प्रिय गंधवाले पुष्पोंकोतो देवताओंके योग्यजानो २७ कंटक रहित वृक्षोंकेजो श्वेतरंगकेफूलहैं वह सदैव देवताओं के प्रियहैं २८ जो कमल आदिके पुष्पजलमें उत्पन्न होने वालेहैं वह नाग यक्ष गन्धर्वोंके योग्य होतेहैं २९ जो ओषधी कटुता युक्त रक्तफूल रखनेवाली हैं वह अथर्व वेदके मंत्रोंमें

शत्रुओं के मारण उच्चाटन आदिके निमित्त वर्णन की गई हैं ३० वह बड़ी पराक्रमी कंटक वाली जीवों से कठिनता पूर्व्व स्पर्श करने के योग्य बहुधारक्त और कृष्णरंग वाली ओषधी शत्रुओं के मारण आदिके लिये देवताओं के अर्पण करे ३१ और हे राजा जो पुष्प कि मन और हृदय को प्रसन्न करने वाले बहुत मीठे और स्वरूपवानहैं वह मनुष्योंको प्यारेहैं ३२ जो पुष्प कि सामानअथवा देवताओंके स्थानों में उत्पन्न होनेवाले हैं उनको वृद्धि युक्त विवाहों में और शयन स्थानादिमें कभी न लेजाय ३३ जो पुष्पकि पर्व्वतीय बन में उत्पन्न सौम्य निर्मल जलसे स्वच्छ और मन्त्रसे पवित्र हैं उनको स्मृतियों के अनुसार जैसे उचितहो वैसेही देवताओं के ऊपर चढ़ावै ३४ देवता पुष्पों को गन्धिसे प्रसन्नहोतेहैं यक्ष राक्षस उनके देखनेसे नाग उनकेस्पर्शसे और मनुष्य गन्धि दर्शन स्पर्श इनतीनोंसे प्रसन्न होतेहैं ३५ इसरीतिसे शीघ्र देवता प्रसन्न होते हैं तब वह प्रसन्न हुये देवता उन मनुष्यों के चित्त रोचक उत्तम इच्छाके मनोरथों को देकर पोषण करतेहैं ३६ देवतालोग प्रसन्न होकर सदैव मनोरथोंको देतेहैं और पूजेहुये होकरमान करतेहैं और अप्रतिष्ठित पूजन न पानेवाले देवता उन नीच मनुष्यों को भस्म करदेतेहैं ३७ अब धूपदीप दान की विधिके फल और नाना प्रकार के प्रथम गूगल आदि निर्य्यास दूसरी लकड़ी चन्दन और अग्निके द्वारा उत्पन्न सारिणी और तीसरी अष्टगंधादि कृत्रिम इन प्रकारों से तीन प्रकारकी धूपहैं परन्तु उनकीगन्धिप्रिय और अप्रिय होती है उनकी भी मूल समेत मुझसे सुनो ३८ । ३९ सल्लकी निर्य्यासके सिवाय सब गुग्गुलादि निर्य्यास देवताओं के प्रिय हैं उन सबमें श्रेष्ठगुग्गुल है ४० सारिणों में श्रेष्ठ अगरकी धूप यक्ष राक्षस और सर्पोंको प्रिय है और जो दैत्योंकी प्रिय सल्लकी नाम निर्य्यास की धूपहै वह दोप्रकारकीहै ४१ राल और मल्लिकाके पुष्परससेसंयुक्त और देवदारु आदिक गन्धोंसे मिलीहुई धूपसे मनुष्यों की प्रसन्नताकी जातीहै ४२ शीघ्रता से देवता दानव और भूतों को प्रसन्नता करने

वाली धूप वर्णन की और जो इनके सिवाय अतर आदि हैं वह मनुष्योंकी प्रसन्नता करने वाली अन्यंही धूपहैं ४३ फूलोंके दान मेंजो गुणहेतु वर्णनकिये वही धूपोंके भी दानमें प्रीतिके बढ़ानेवाले गुण हेतु जानने के योग्यहैं ४४ दीपदान के फलके समान दूसरा श्रेष्ठ फलनहीं है इससे उसकेभी फल योगको कहताहूं वह दीपक जैसे जिस बुद्धिसे जिसरीतिसे और जिस समय पर कि दान करने के योग्यहैं उनसवको भी कहूंगा ४५ अर्थात् वह दीपज्योतिकांति कीर्त्ति और ऊर्ध्वमार्गगामी भी कहा जाताहै इसी हेतुसे तेजोंका दान मनुष्यों के तेजोंका बढ़ाने वालाहै ४६ दक्षिणायन नर्क रूप अन्धतम है इसी हेतुसे उत्तरायनरूप दीपदान प्रशंसा किया जाता है ४७ जोकि यह ज्योति ऊर्ध्व गामी और अन्धकार के भयकोदूर करने वालीहै इसी हेतुसे इस लोकमें वह गतिकी देनेवाली होती है ४८ जोकि देवता लोग तेजस्वी प्रभा वान और प्रकाशित हैं और तामस राक्षसलोग प्रभासे रहितहैं इसी हेतुसे दीप दान किया जाताहै ४६ दीपदान करनेसे मनुष्य स्वच्छ नेत्र और तेजस्वी होताहै इसीसे दीपदानके दीपकोंको न बुझावे और नचोरी करे ५० दीपक का चुराने वाला आदमी तमोगुणी श्रेष्ठ तेजसे रहित और अन्धा होताहै और दीप दानका करनेवाला मनुष्य स्वर्ग लोकमें दीपकों की माला के समान प्रकाश करताहै ५१ घृत भरे हुये दीपकों का दान प्रथम अर्थात् मुख्य कल्पहै और सरसों तिल आदिके तेलसे पूरित दीपदान करना दूसरा अर्थात् मध्यमकल्प है परन्तु अपनी वृद्धिका चाहनेवाला मनुष्य वसा अस्थि आदि के तेलसे पूरित दीपकों का दान कभी न करे ५२ और ऐश्वर्य्यका चाहनेवाला पर्व्वत सम्बन्धी दुर्गम स्थान घनवन देवमन्दिर और चौराहे आदिमें सदैव दीपकों का दान करे ५३ वह दीपदान करनेवाला मनुष्य वंश में प्रतापी और पवित्रात्मा होकर प्रकाशताकोही पाताहै और सदैव ज्योतिषोंकी सालोक्यता को पाताहै ५४ देवता, यक्ष, उरग, भूत और राक्षसादिकों के बलि

कर्मोंमें उन कर्म फलके उदय करनेवालेगुणों को भी वर्णन करूंगा ५५ जिनलोगोंके घरमें वेदपाठी ब्राह्मण देवता अतिथि बालक प्रथम भोजन करनेवाले नहींहै उन निश्शंक निर्भय और अमंगल रूप मनुष्योंको राक्षसही जानो ५६ इसी हेतुसे आलस्यसे रहित शिरसे नम्रीभूत मनुष्य भोजन करनेसे प्रथम हव्यको देवताओंके अर्थ देकर ५७ बाहर रहनेवाले अन्य देवता अतिथि यक्ष राक्षस और सर्पादिकोंके अर्थ बलिप्रदान करे क्योंकियह बाहर रहनेवाले बलिको ग्रहण करतेहुये गृहस्थियोंको आशीर्वाद देते हैं ५८ यहां के दिये हुये हव्य कव्योंसे देवता और पितर जीवतेहैं और प्रसन्न होकर उनहव्यकव्यदेनेवालोंको आयुशुभ कीर्त्ति औरधन संपत्तियों सेतृप्त करतेहैं ५६ देवताओंके बलिदूध दहीरूपपवित्रसुगन्ध युक्त और देखनेमें प्रियहों उनको पुष्पों समेत उनकी भेंट करे ६० और यक्ष राक्षसोंके बलि रुधिर और मांससे युक्त करनेचाहियें मदिरा आसव समेत लाज और उल्लादिकसे भूषित करके देना उचितहै ६१ पद्म उत्पलनाम कमलसे युक्त बलिनागोंको सदैव प्रियहैंऔर गुड़से युक्त बलिको भूतोंके अर्थ भेंटकरे ६२ अपने भोजनसे पहले देवता आदिको देनेवाला मनुष्य बल पराक्रम युक्तहोकर सर्वत्र प्रथम भोजन पानेवाला होताहै इसीहेतु से प्रथम पूजित अन्नको देवताओं के अर्थदे इसकेघरके देवतालोग जो इसके घरको प्रकाशमानकरतेहैं६३वहदेवतालोगऐश्वर्य्यकेचाहनेवालेसेसिद्धान्न काप्रथमभागचाहाकरतेहैं इसीसेसबमनुष्योंकोअपनेसिद्धभोजनके प्रथमभागसे वहदेवतापूजनेके योग्यहैं ६४इस कथाको भार्गवशुक्र जीनेअसुरेन्द्रबलिसेकहा और स्वायंभू मनुजीनेसुवर्ण ऋषिसेकहा सुवर्णऋषिने नारदजीसे कहा ६५ हे बड़े तेजस्वी फिर नारदजीने इससम्पन्न कथाको मुझसे कहा हे पुत्र तुम भी अब यहांजानकर सबको करो ॥ ६६

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमनुसंवादोनामअष्टनवतितमोऽध्यायः ९८

———※———

निन्नानवेका अध्याय॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकिया कि हे भरतर्षभ फूल और धूपदान करने वालोंका फल मैंने सुना बलि विधानका जो फलहै उसकोफिर आप कहिये १ धूप दान और दीप दानका भी फल कहिये और वाल बच्चे वाले बलिदान किस निमित्त करतेहैं २ भीष्मजी बोलेकि इस स्थानपर एकप्राचीन इतिहासको भी कहताहूंजिसमें राजानहुष भृगुऔर अगस्त्य ऋषिका प्रश्नोत्तरहै ३ हे महाराजबड़े तपस्वी राजर्षि नहुषने यहां अपने शुभ कर्म से देवताओं के राज्य को पाया ४ और स्वर्गमेंभी मनुष्य और देवता सम्बन्धीनानाप्रकार की क्रियाओं को करता हुआ बड़ी सावधानी से नियत हुआ ५ हे राजा स्वर्गलोकमें उस महात्मा की दिव्य सनातन क्रिया मनुष्य और देवता संबंधीजारीहुई ६ अर्थात् अग्निके सबकार्य्य समिध कुशा फूल फल सब प्रकार के बलि लाजा अन्नके साथ धूप देना दीपकरना७ यहसब उस महात्मा राजाके घरमें आकर वर्त्तमान हुये उसने स्वर्गमें भी जपयज्ञ और मुनियों के यज्ञोंको किया ८ हे शत्रुविजयी उस देवेश्वरने पूर्व्वकी समान न्याय और बुद्धिके अनुसार सब देवताओंका भी पूजन किया ९ फिर अपनेको इन्द्र जानकर अहंकारमें संयुक्त हुआ और उसकी सब क्रियाभी नाशको प्राप्तहुई १० वरदानके अहंकारसे युक्त उस नहुषने ऋषियोंको सवारीमें लगाया और क्रियाके त्यागनेसे उसने निर्बलताकोपाया ११ तपोधनऋषियोंको सवारीमेंजोड़कर चलानेवाले उसअहंकारी नहुषका बहुत समय व्यतीतहुआ १२ हेभरतवंशी फिर उसने क्रम क्रमसे नम्बरवार ऋषियोंकोसवारीमें जोड़ना प्रारंभकियाइसमेंएक दिन अगस्त्यजीकी नौबत आई १३ फिर बड़ेतेजस्वी ब्रह्मज्ञानियोंमें श्रेष्ठ भृगुजीने आकर आश्रममें बैठेहुये अगस्त्यजी से मिलकर यह वचनकहा १४ हेमहामुनि हम लोग इसरीतिसे इसनिर्बुद्धी देवराज नहुषके असत्कारको किसलियेसहैं अगस्त्यजीनेकहाकि हेमहामुनि

इस नहुषको तुमकैसे शापदेसक्केहोक्योंकिइसको वरदाताने वरदिय-
है वह आपभीजानतेहैं १५।१६ स्वर्गको जानेवाले इस नहुषने दे
वतासे यह वर मांगाहै कि जोमेरी दृष्टिके गोचरहोयवहीमेरे स्वाधीन
होजाय १७ इसीसे मैंने और आपने उसको भस्म नहींकिया और
न किसी दूसरे ऋषिनेभी उसको भस्मकरके स्वर्गसे गिराया १८हे
प्रभु पूर्व्वसमयमें महात्मा देवताने इसको अमृत दियाहै इसहेतु
से हमसे नहीं गिराया जाताहै १६ देवता सदैव ऐसेही वरोंको
देताहै जोकि प्रजाओंके दुःखकामूल होताहै वहनीच मनुष्य ब्राह्म-
णोंके साथ अधर्मयुक्त कर्मको करताहै हेमहावक्ता इसस्थानपर जो
हमारा कर्म समयके अनुसार होय उसको आपकहिये आपजैसेक-
हेंगे निस्सन्देह मैं वैसाही करूंगा२०।२१भृगुजी बोलेकिमैं ब्रह्मा
जीकीआज्ञासेउस दैवके मारे पराक्रमी नहुषसे शत्रुताका बदलालेने
केलिये आपकेपास आयाहूं २२वह अत्यन्त दुर्बुद्धीदेवराज तुमको
भीरथमें जोड़ेगाअबमैं अपनोसामर्थ्यसे उस दुर्बुद्धीको इन्द्रके पदसे
जुदा करूंगा २३ अर्थात् मैं तुम्हारे देखतेहुये इस दुराचारीपापा-
त्मा दुर्बुद्धीको इन्द्रके पदसे गिराकर शतक्रतु इन्द्रदेवताको इन्द्रके
पदपर नियत करूंगा २४यह अल्प बुद्धी नीचदेवराज दैवसेघाति-
तमन होनेके कारण अपने नाशके लिये तुमको वाणोंसेघायलकरे-
गा २५फिर अवज्ञा और असत्कारतासे अत्यन्त क्रोधित होकर मैं
उस अधर्मी ब्राह्मणों केशत्रु पापी नहुषको क्रोधसेयहशापदूंगा कि
तू सर्पहो२६हेमुनि इसके अनन्तरमैं इस तेजहतनहुषको बड़ीरधि-
क्कारियां देकर पृथ्वीपर गिराऊंगा यह नहुषपाप कर्म करनेवाला
अपनेऐश्वर्य्यकेबलसे मोहितहोरहाहै इसकोजैसाआपचाहैं वैसाही
मैंकरूं२७।२८भृगुजीके इस वचनको सुनकर वह धर्मसे अच्युत
मैत्रावरुण अगस्त्यजी अत्यन्त प्रसन्न होकर तपसे पृथक् हुये२६॥

इतिमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेअगस्त्यभृगुसंवादेनवनवतितमोऽध्यायः६६॥

—*—

सौका अध्याय॥

युधिष्ठिरने पूछा हेपितामह उसनहुषने इन्द्रकी पदवी कैसेपाई कैसे नाशहुआ और किसरीतिसे पृथ्वीपर गिराया गया आप इसके कहनेकेयोग्यहैं १भीष्मजी बोले कि उनदोनों वार्त्ता करनेवाले ऋ-षियोंकातोयह विचारहुआऔरनहुषकायहवृत्तान्तहैकि उसमहात्मा कीस्वर्ग और पृथ्वीसे संवन्धरखनेवाली सवक्रिया जारीथीं २ इसी प्रकार दीपदान वलि कर्मके सब सामान और पुत्रादिकों की वर्ष गांठआदि के जुदे प्रकारके कर्म हैं ३ वहसवमिलकर उसमहात्मा देवराज नहुषके पास वर्त्तमान हुये नरलोक और देवलोकमेंशुद्धा-चारी पुरुष ज्ञानीकहेगये ४ हे राजेन्द्र जब वह सदाचारवान् होते हैं तव गृहस्थीलोग वृद्धि पातेहैं धूपदान दीपदान नमस्कार ५ और सिद्धान्नका प्रथमभाग अतिथिके निमित्त दियाजाताहै और ग्रह मंडलोंके स्थानोंपर जो वलिकर्म किये जातेहैं उस से देवता प्रसन्न होतेहैं ६ जिसरीतिसे बलिकर्ममें गृहस्थीकी तृप्ति उत्पन्न होती है उसी प्रकार देवताओंको सौगुणी प्रसन्नता उत्पन्न होती है ७ इस रीति से साधुलोग नमस्कारों से युक्त अपने गुण प्र-कट करनेवाले धूपदान और दीपदानकोदेतेहैं ८ स्नानकरनेवाले पंडित लोग जलके द्वारा संध्या तर्पणादिक करते हैं नमस्कार युक्त ऐसे कर्म से देवता प्रसन्न होते हैं ९ विधि पूर्व्वक पूजे हुये सवमहा भागपितृ तपोधन ऋषि और गृहके सब देवता प्रसन्न होते हैं १० ऐसी वृद्धि में नियत होकर उस राजा नहुषने देवता-ओंके वड़े इन्द्र पदको पाकर इस अपूर्व्व कर्मको किया ११ फिर एक समय प्रारब्धकी हीनता होनेपर उसने इन सवकर्मोंकोअना-दर करके इसऐसे दुष्टकर्मको किया १२ वह पराक्रमसे अहंकारी देवेन्द्र नहुष अपने कर्मके त्यागनेसेतेज और पराक्रमसेहीनहोगया और उसी धूपदीप और जलकी वृद्धिको जैसा चाहियेथा वैसानहीं किया १३ इसीहेतुसे उसकी यज्ञशाला राक्षसोंने नष्टकरडालीइस

के पीछे शीघ्रही ऋषियों में श्रेष्ठ अगस्त्यऋषि को रथमें जोड़ने के लिये १४ सरस्वती नदीके तटपरसे बुलवाया फिर मन्द मुसकान करते बड़े पराक्रमी महातेजस्वी भृगुजीने अगस्त्यजीसे कहा १५ किआप तबतक अपनेनेत्रोंकोबन्दकरो जबतक कि मैं तुम्हारीजटाओंमें प्रवेश न करूं तदनन्तर वह धर्म से च्युत न होनेवाले बड़े तेजस्वी भृगुजी उसनिश्चेष्ट अगस्त्यजीकी जटामें १६ राजानहुष को स्वर्गसे गिरानेके निमित्त प्रवेश करगये फिरवह देवराज नहुष उन अगस्त्यजीको रथमें जोड़नेके लियेमिला १७ हे राजा इसके पीछे अगस्त्यजीने देवराजसे यहवचन कहा कि मुझको शीघ्ररथ में जोड़ो और कहोकि तुमको किसदेशमें लेचलूं १८ हे देवराज जहां तुमकहोगे वहींहम तुमकोलेचलेंगे अगस्त्यजीके इसवचनको सुनकरनहुषने उसमुनिको रथमें जोड़ा १९ तबतो उसकी जटाके ऊपर बैठेहुये भृगुजी बड़े प्रसन्न हुये और उसका दर्शन भृगुजीने नहीं किया २० क्योंकि वह उसमहात्मा नहुषके वरदानका प्रभाव जानतेथेतबनहुष करके रथमेंजोड़ेहुये अगस्त्यजीभी क्रोधयुक्तहुये २१ हे भरतबंशी राजा नहुषने उनको चाबुकसे चेष्टायुक्त करकेचलायमानकिया इससे वह धर्मात्मा ऋषिक्रोधयुक्त नहींहुये २२ तब देवराज नहुषने बामचरणसे अगस्त्यजीके शिरमें आघात किया उस शिरके घायल होनेपर जटामें बैठेहुये क्रोधयुक्त भृगुजी ने २३ पापात्मा नहुषको शापदिया कि जो तैंने क्रोधकरकेइसमहा मुनिको शिरपर चरणसे आघात किया २४ हे दुर्बुद्धी इसी हेतुसेतुम सर्प होकर शीघ्र पृथ्वीपर जाओ भृगुजीके इसवचन के कहतेहीवह नहुष सर्प बनकर पृथ्वीपर गिर पड़ा २५ अर्थात् हे भरतर्षभ उन न दीखनेवाले भृगुजी के शापसे शीघ्रही पृथ्वी परगिरा हे पृथ्वीपति जो कदाचित् नहुष भृगुजीको देखलेता २६ तो भृगुजीउसको अपने तेजसे नहीं गिरासक्के और वह पृथ्वीपर गिराहुआ नहुषभी अपने दान तप और नियमों से २७ स्मरण करने के योग्य हुआ अर्थात् उसने भृगुजीको प्रसन्नकिया कि मेरे शापका अन्तहो २८

इसकेपीछे करुणासे भरेहुये अगस्त्यजीने शापके अन्तकरनेके लिये भृगुजीको प्रसन्नकिया तब दयायुक्त भृगुजीने कहाकि २९ हे नहुष तेरेवंशकाउद्धार करनेवाला जबराजा युधिष्ठिरहोगा वहतुम को शापसे मुक्त करेगा यह कहकर अन्तर्द्धान होगये ३० फिर बड़े तेजस्वी अगस्त्यजी भी इन्द्रके कार्य्यको करके ब्राह्मणों से पूजित होकर अपनेआश्रममेंआये ३१ हेराजा तुमने नहुषकोभी उसशाप से छुटाया और तेरे देखतेहुये वह ब्रह्मलोकमेंगया ३२ और भृगुजी नहुषको पृथ्वीपर गिराकर ब्रह्मलोकको गये और ब्रह्माजीसे सब वृत्तान्त वर्णनकिया ३३ इसकेपीछे ब्रह्माजीने इन्द्रको बुलाकरदेवताओंसेकहा कि हे देवताओ नहुषने मेरेवरदानसे इन्द्रकी पदवी कोपाया ३४ अगस्त्यजीके क्रोधहोनेसे वह पृथ्वीपरगया हेदेवता लोगो राजाकेबिना किसीस्थानमें संसारकाकामजारीनहीं होसक्ता है ३५ इसीहेतुसे यह इन्द्रफिर अपनेराज्यपर अभिषेक कियाजाय हेराजा ब्रह्माजीके इस वचनको सुनकर देवताओंने अत्यन्त प्रसन्न होके ब्रह्माजीको उत्तरदिया ३६ कि ऐसाही होय हे युधिष्ठिर तब ब्रह्माजीसे इन्द्रपदवीपर वह अभिषेक कियाहुआ इन्द्र ३७ पूर्व्व केही समान शोभायमानहुआ इसरीतिका यह प्राचीनवृत्तान्तनहुष की वेमर्य्याद होजानेके विषयमेंहै ३८ वह नहुषफिर उन्हीं कर्मोंके द्वारा सिद्धहुआ इसीकारण गृहस्थोंलोगोंको सायंकालकेसमय दीप दान करना उचितहै ३९ दीपदान करनेवाले मनुष्य शरीर त्यागने केपीछे दिव्यनेत्रोंकोपातेहैं और पूर्णचन्द्रमाके समान तेजस्वी होते हैं ४० नेत्रके जितने निमिख होतेहैं उतनेही वर्षतक प्रकाशमान होतेहैं दीपदान करनेवाला प्रतापी और पराक्रमीभी होताहै ४१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेअगस्त्यभृगुसंवादोनाम शततमोऽध्यायः १०० ॥

एकसौएकका अध्याय ॥

युधिष्ठिरने पूछाकि हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ जो निर्बुद्धी नृशंसी

लोभकरके ब्राह्मणके धनोंकोलेतेहैं वहकहां जातेहैं १ भीष्मजीबोले
हेभरतवंशी इसस्थानपर एकप्राचीन इतिहास को कहताहूं जिसमें
चांडाल औरक्षत्रीका प्रश्नोत्तरहै २ क्षत्रीने कहाकि चांडालतूस्वरूप
में वृद्धहोकर बालकोंके समान कर्म करताहै कुतिया और गधीके
मांसका खानेवालाहै फिर गौओंसे क्यों बचताहै ३ चांडालके कर्म
की साधूलोग निन्दाकरतेहैं फिरकिसहेतुसे गौकी रजमेंलिप्त शरीर
को जलके कुंडमें स्नानकरताहै ४ चांडालबोला हेराजापूर्व्वसमयमें
ब्राह्मणकी गौओंको किसीराजाने हरणकियाथा उनकी रजनेसोम-
लताको लिप्तकियाथा जिनब्राह्मणोंने यज्ञके मध्यमें उस सोमलता
को पियाथा ५ वहसबलोग और दीक्षादियाहुआ राजाभी उन सब
याचकोंसमेत ब्राह्मणकेइसधनको भोगकरनरकमेंगये ६ और जिन २
ब्राह्मणआदि अन्यलोगोंने भी उन गौओं के दूधदही और घृतको
खायाथावह सबभी राजाकेसाथ नरकमेंगये ७ अपने स्वामी और
बछड़ोंके अलग होजानेके दुःखसे शरीरकोकंपाती और देखतीहुई
उनगौओंने अपने शुभ आचरण औरदूधके प्रभावसे उनके पुत्रपौत्र
पशुस्त्री आदि समेत पुरुषोंको शीघ्रही न्यूनअवस्था वाला किया ८
हेराजाब्रह्मचारी और जितेन्द्री होकरमैं वहां नियतहुआ मेरीभिक्षा
उनगौओंके दूधसे संयुक्त हुई ९ हे राजा उसीके खानेके हेतुसे मैं
चांडालहुआ ब्राह्मणकाधन हरनेवाले उसराजाने भी प्रतिष्ठा से
रहित गतिकोपाया १० इसीहेतुसे किसी समयमेंभी ब्राह्मणकेकिसी
धनकीचोरी या मारलेनानकरे ब्राह्मणके धनरूप दूधसे संयुक्त अन्न
को खाकर मेरीदशाको देखो कि मैं चांडाल हुआहूं ११ इसीकारण
पंडित लोगोंको सोमलताका बेचना योग्यनहींहै इसलोकमें सोम-
लताके बेचनेकोज्ञानीलोग निन्दाकरतेहैं १२ हेतात जोमनुष्य इस
सोमको मोललेतेहैं और जो बेचते हैं वहसब यमराज को प्राप्त
होकर रौरवनाम नरकको जातेहैं १३ जो वेदपाठी ब्राह्मण गोरस
से मिलेहुये सोमको वृद्धिके अनुसार बेचताहै वह ब्याज का लेने
वाला होकर बहुतकाल पर्य्यंत नरकमेंपड़ा २ नाशको पाताहै १४

और तीनसौ नरकोंमेंपड़कर विष्ठासे जीविका करता है कुत्तेकासेवन अहंकार मित्रकी स्त्रीसे भोग १५ इन तीनोंको समानही जानना चाहिये अहंकारी मनुष्य धर्मको त्यागकरनेके पुण्यसे रहित होताहै कुत्ते को पापीनीचपांडुवर्ण और दुर्बलदेखो १६ मैंने अहंकारसेजीवों को इसगतिको पाया हेतातमैं पूर्व्वजन्ममें उत्तमबंश महाधनी के गृहमें उत्पन्न होकरज्ञान बिज्ञानमेंपूर्णथा हेप्रभुतब वहां इन दोषों के जाननेवाले १७।१८ मुझक्रोध युक्तने सदैव पशुओंके मांसको खाया तबमैं उस आहारबिहारसे इसदशाको प्राप्तहुआ इस समय की विपरीत दशाकोदेखो कि क्रोधमें पूर्ण हुपट्टेके कोने को धारण किये भवरोंसेपीड़ित १९।२० अत्यन्त क्रोधरूप गोरज से संयुक्त मुझदौड़नेवालेको देखो गृहस्थी मनुष्य वेदपाठ और जवादिकोंसे अथवा ज्ञानियोंके कहेहुये २१ पृथक् २ प्रकारके दानोंसेभीबड़े २ पापोंको दूरकरतेहैं हेराजा इसीप्रकार पापोंके करने वाले आश्र-मोंमें नियत सबसंगोंसे रहित वेदपाठी मनुष्यकोवेदोंके छन्दउद्धार करतेहैं हेक्षत्रियों में श्रेष्ठ मैं पापयोनिमें पैदाहोने से निश्चय को नहींपाताहूं कि कैसेमुक्तहूं २२।२३मुझको अपने किसीपूर्व कियेहुये पुण्यसे पहलेजन्मका स्मरणहै हेराजा जिसशुभकर्मसे इसचांडाल योनिसे छूटकर मेरेमुक्तिहोनेका कोई उपाय आपकृपाकरके वता-इये २४।२५ क्षत्रीबोला हेचांडाल उसबातको मनसे समझोजिससे कि तू मोक्षको पावेगा जो कोई ब्राह्मणके अभीष्टके निमित्त अपने प्राणोंको त्यागदेताहै वह यथेच्छगतिको पाताहै २६ जोतूब्राह्मण के प्रयोजनकेलिये कच्चेमांस भक्षियोंको शरीरदेकर युद्धरूपीअग्नि में प्राणोंका हवनकरेगा तो तेरीमोक्षहोगी इसके सिवाय औरकिसी प्रकारसे तू मोक्षके योग्यनहींहै २७ भीष्मजीने राजा युधिष्ठिरसे कहा कि हे शत्रुसंतापी तब ब्राह्मण के धनके बिषय में क्षत्री से इसरीति पर समझाये हुये उस चांडालने युद्धमें प्राणोंको त्याग कर अभीष्टगति को पाया २८ हे भरतर्षभ बेटा युधिष्ठिर इसी हेतु से जो तुम भी अपनी सनातन सद्गतिको चाहते हो तो तुमको

भी सब प्रकार से ब्राह्मण के धनको रक्षा करना उचित है २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेराजन्यचांडालसंवादोनामैकोत्तर शततमोऽध्यायः १०१ ॥

एकसौदोका अध्याय ॥

युधिष्ठिरने पूछाकि हे पितामह शुभकर्मियों के कोई मुख्य लोकहैं अथवा वह जहां तहां पृथक् २ हैं उन सब को आप मुझसे वर्णन कीजिये १ भीष्मजी बोले हे राजा कर्मोंसे लोकोंके अनेक प्रकार हैं पवित्रकर्मी मनुष्य पवित्र लोकोंको पाते हैं और पापी पापयोनि वाले लोकों को जाते हैं २ हे तात इस स्थान पर एक प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें गौतममुनि और इन्द्रका परस्पर संबादहै ३ किसी मृदुस्वभाव जितेन्द्री शिक्षा युक्त गौतम नाम ब्राह्मण ने महाबनमें चारों ओरसे क्रीड़ा करनेवाले माता से रहित हाथीके बच्चे को देखा ४ तब उसदयावान् व्रत करनेवाले ने उसको देखकर उसका पोषण किया फिर वह बहुत कालमें बड़ा पराक्रमी हुआ ५ इंद्रने राजा धृतराष्ट्र का रूप बनाकर उस मतवाले मदझाड़ने वाले पर्वत के समान बड़े पराक्रमी हाथी को पकड़ लिया ६ तब तेजव्रत महातपस्वी गौतमने उस पकड़े हुये हाथी को देखकर राजा धृतराष्ट्र से यह वचन कहा ७ कि हे अकृतज्ञ राजा धृतराष्ट्र इस मेरे पुत्र हाथी कोमत लेजाओ यह मेरा पुत्र बड़ी कठिनता से पोषण किया गयाहै सत्पुरुषोंके साथ सातचरण चलने को मित्रता कहतेहैं हे राजा यहां मित्र से शत्रुता करनेवाला दोष तुमको स्पर्श नहीं करेगा ८ इससे हे धृतराष्ट्र मेरे पुकारतेहुये आप इस हाथी के ले जाने के योग्यनहीं हो यह हाथी मेरे आश्रम मेंईंधन और जलका लाने वाला अपने गुरूके वंशमें वर्त्तमान गुरु सेवामें प्रीतिसे प्रवृत्त बहुतेरी श्रेष्ठ शिक्षाओं से युक्त कृतज्ञ होकर मेरा सदैव प्याराहै ९ धृतराष्ट्र ने कहा हेमहर्षि मैं आपको हजार गौवें सौदासी पांचसौनिष्क और नाना प्रकार के अन्य २

धनोंको भी दूंगा ब्राह्मणको हाथी से क्या प्रयोजनहै ११ गौतम
ने कहा हेमहाराज राजा धृतराष्ट्र दासी दास निष्क बहुतप्रकार
के रत्न और नाना प्रकारका दूसराधन तुम्हाराहीहै हमको इन
धनोंसे क्या प्रयोजनहै १२ धृतराष्ट्र बोले कि हे वेदपाठीहाथियोंसे
ब्राह्मणोंका कोई प्रयोजननहींहै वह सब हाथी राजाओंकेहैं इससे
अपने सवारी वाले हाथीके लेजाने में हमकोकोई दोषनहींहै हे
गौतम तुम इसको त्यागो १३ गौतमने कहाकि हे महात्मा जिस
यमलोकमें पवित्रकर्म करनेवाला मृतकमनुष्यआनन्दकरताहै और
करनेवाला शोचताहैवहांउसके पासजाकर मैंतुमसे अपने हाथीको
लूंगा १४धृतराष्ट्रबोलेकि जोसंध्या आदिककर्मोंके न करनेवालेपर-
लोकऔरईश्वरके न माननेवालेश्रद्धासे रहित पापबुद्धीमनुष्यइन्द्रि-
योंके विषयोंमें प्रवृत्तहैं वहलोग यमराजके दण्डको पातेहैं धृतराष्ट्र
ऊंचेसेऊंचेलोकमें जायगा यमलोकमें नहींजायगा१५गौतमनेकहा-
किमनुष्योंकोदण्डदेनेवाली यमराजकीसभाहै उसमेंमिथ्यानहींकहा
जाताहैजहांपरसत्यहैऔरजिसमेंनिर्बललोग पराक्रमियोंकोभीदण्ड
करातेहैं मैं वहांपर तुझसेहाथी लूंगा १६ धृतराष्ट्र बोलेहेमहर्षिधन
आदिके मदसेजोमनुष्य बड़ीबहिन और मातापिताको शत्रुकेसमान
मानकरवर्त्तावकरतेहैंउस प्रकारके मनुष्योंकावहलोकहैधृतराष्ट्र बड़े
उच्चलोकोंको जायगा १७ वहां न जायगा गौतमनेकहा राजाओं
को वैरकी नदी और महाभाग भोगी मनुष्योंकी अप्सरा गन्धर्वोंसे
सेवित मंदाकिनी नाम नदीहै मैं तुमसे वहांपर हाथीको तुमसेलूंगा
१८धृतराष्ट्रने कहाजो अतिथियोंके पूजन करनेवाले सुन्दर व्रतयुक्त
होकरब्राह्मणोंके अर्थ स्थानोंकोदेतेहैं औरआश्रितलोगोंको भोजन
कराके शेष बचेहुये अन्नको भोजन करतेहैं वह आकाशकी गंगामं
दाकिनीको शोभा देतेहैं १९ गौतमने कहाकिजोमेरुपर्व्वतके आगे
गंधर्वोंके गीतोंसे सेवित उत्तम पुष्पोंसे शोभायमान वन प्रकाशित
होरहाहै और जिसमें अतिसुन्दर बहुत बड़े२ जंबूनामवृक्षहैं मैंवहां
तुझसे हाथीको लूंगा २० धृतराष्ट्रबोलेजो ब्राह्मणमृदुस्वभाव सत्य

वक्ता वहुतसे शास्त्रोंके ज्ञाता सब जीवोंके प्यारेहैं औरजो इतिहासों समेत पुराणोंको पढ़तेहैं और ब्राह्मणोंके निमित्त मधु आहुतियोंसे हवन करतेहैं २१यह लोक उस प्रकारके लोगोंकाहै और धृतराष्ट्र ऊंचेलोकोंकोजायगा वहांनजायगाजोजानाजाताहै औरजाना हुआ स्थानहैउसकोकहोमैंशीघ्र जाताहूं२२गौतमनेकहाकिनारदजी और गन्धर्व समेत अप्सराओंकाअति प्रियकिन्नरोंकेराजासेसेवितअच्छा फूलाहुआ नन्दनबनहै मैं वहां हाथीको तुमसे लूंगा २३ धृतराष्ट्र बोले जोमनुष्य नृत्य और सरोदमेंकुशल अयाचक वृत्तिसेचारोंओर कोसदैवघमतेहैंउसप्रकारकेलोगोंकावहलोकहैहेमर्षि धृतराष्ट्र बहुत उच्च लोककोजायगावहांनजायगा२४ गौतमनेकहाहेमहाराजजिस स्थानपर क्रीड़ाके योग्य उत्तर कुरवनाम देश प्रकाश करतेहैं और जहांपर अग्निजल और पर्व्वत से उत्पन्नहोनेवाली सृष्टि देवताओं समेत आनन्दमें भरीहुई निवासकरतीहै२५ जहां इन्द्रदेवतासब अभीष्टोंको देतेहैं और स्त्रियां अपनीइच्छाकेअनुसार कर्मकरनेवालीहैं और जिसस्थानमें स्त्रीपुरुषोंमें ईर्षानहीं है वहांमैं तुझसेहाथीकोलूंगा २६ धृतराष्ट्र बोलेकि सब जीवोंमें विना इच्छाके मांस नखानेवाले दण्डसे रहित जो मनुष्य विचरतेहैं और किसी जड़ चैतन्यजीवको भी नहीं मारतेहैं और सबजीवमात्रोंके आत्मारूपहैं२७इच्छा ममता और प्रीतिसे रहित हानिलाभ और निन्दा स्तुतिको समान जानने वालेहैं उस प्रकारके जीवोंका वह लोक है हे महर्षि धृतराष्ट्र बड़े उच्चलोकको जायगा वहांनजायगा २८गौतमनेकहा हेमहात्माइस के विशेष राजा चन्द्रमाके लोकमें पवित्र सुगन्धियोंसे युक्त रजोगुण और शोकसे रहित सनातन लोक प्रकाश करतेहैं वहां परमें तुमसे हाथी लूंगा २९ धृतराष्ट्र ने कहा कि सदैव दानकरने के अभ्यासी जो मनुष्यदान नहीं लेतेहैं अथवा दूसरे मनुष्योंसे किसी प्रकारके धनआदि कोभी नहींलेतेहैं और जिनको कोईवस्तु अदेय नहींहै अर्थात् सबवस्तु याचकोंको देतेहैं और सबको आतिथ्य करने वाले होकर प्रसन्न चित्तहैं ३० जो पुण्यके अभ्यासी क्षमावान् होकर

किसी दूसरे से वाद नहीं करतेहैं और सदैव अग्निहोत्री और गृहस्थीहैं ऐसे मनुष्यों का वह लोकहै धृतराष्ट्र उनमें न जायगा किन्तु महाऊंचे लोकोंको जायगा ३१ गौतमने कहाकि इसके भी विशेष महात्मा सूर्य्य देवताके लोकमें अन्य लोक प्रकाश करतेहैं और रजोगुण तमोगुण और शोकसे रहित सनातन कहे जाते हैं वहां मैं तुमसे हाथीलूंगा ३२ धृतराष्ट्र बोले जो मनुष्य वेदपाठ और यज्ञोंके अभ्यासी गुरु भक्ति परायण महातेजस्वी ब्रती सत्य वक्ता आचार्य्यों के समान वार्त्तालाप करनेवाले गुरूके कार्य्यों में विना प्रेरणा कियेहुये चित्तसे प्रवृत्तहैं ३३ उस प्रकार के अत्यन्त पवित्र वाक्जित सत्यतामें नियत महात्मा वेदज्ञ लोगोंके निमित्त यह लोकहै इससे राजाधृतराष्ट्र उत्तम लोकोंको जायगा इसलोक में नहीं जायगा ३४ गौतमने कहा कि इसके विशेष बड़े महात्मा राजा वरुणजीके लोकमें सनातन लोक प्रकाशमानहैं जोकि पवित्र सुगंधियों से युक्त रजोगुण और शोक से पृथक्हैं वहां मैं तुम से हाथीलूंगा ३५ धृतराष्ट्र ने कहाकि जोमनुष्य सदैव चातुर्मासिकनाम यज्ञोंसे पूजन करतेहैं और एक हजार इष्टी यज्ञ को प्राप्त करते हैं और जो वेदपाठी श्रद्धावान् तीनबर्षतक मर्यादके अनुसार अग्नि होत्रोंको करतेहैं ३६ और जहांपर धर्मका प्रकाशहै वहां महाआकाशके धारण करनेवाले महात्मा उपदेश पायेहुये मार्गमें नियत हैं ऐसे धर्मात्मा गतिके प्राप्तकरनेवाले जीवोंका यहलोकहै उस में धृतराष्ट्र नहींजायगा किन्तु ऊंचेलोकमें जायगा ३७ गौतमनेकहा कि इन्द्रके लोकशोक और रजोगुणसे जुदेमहा दुर्गम मनुष्यों के प्रियहैं हेराजा मैं उसबड़े तेजस्वी इन्द्रके भवनमें हाथीको तुझसे लूंगा ३८ धृतराष्ट्र बोलेकि जोशूरमनुष्य सौ बर्षतकजीवतारहने वालाहै और वेदपाठी यज्ञकरने वाला और सावधानहै यहसबइंद्र के लोकको जातेहैं परन्तु धृतराष्ट्र वहांनजायगा किन्तु ऊंचेलोकों को जायगा ३९ गौतमने कहाकि प्रजापति नाम बहुत बड़े लोक शोक रहित स्वर्गकी पृष्ठपर नियत सबसृष्टिके मनोरथोंके वादेनेले

हैं वहां मैं तुमसेहाथीको लूंगा ४० धृतराष्ट्र बोलेकि जो राजाराज सूययज्ञमें अभिषेक नामस्नान करनेवाले धर्मात्मा और संसार के रक्षक हैं और अश्वमेधके अवभृथस्नान करनेवालेहैं वह उनलोगों केलोकहैंवहांधृतराष्ट्र नहीं जायगा किन्तुउत्तमलोकोंमें जायगा४१ गौतमने कहाकि उससेभी श्रेष्ठजो सनातन लोक प्रकाश करतेहैं और पवित्र सुगन्धित रजोगुण और शोकसे जुदेहैं उस दुष्प्राप्य गोलोकमें तुझसे हाथीलूंगा ४२ धृतराष्ट्र बोले कि जो हजार गौओंका रखनेवाला प्रतिवर्ष सौ गौओंका दानकरने वालाहै और सौ गौरखनेवाला अपनी सामर्थ्य के अनुसार प्रतिवर्ष दश गोदान करनेवालाहै इसीप्रकार दशगौओंमें से एकगौदानकरे और वैसेही दानका अभ्यासी पांचगौओं में से एकका दानकरे ४३ जोवेदपाठी ब्राह्मण ब्रह्मचर्य्यादिकों से वृद्ध होजातेहैं और वेदके वचनोंकी चारोंओर से रक्षा करते हैं और बड़े साहसी होकर तीर्थयात्रा में प्रवृत्तहैं वह उस लोकमें आनन्द करतेहैं ४४ प्रभासक्षेत्र, मानस तीर्थ, सवपुष्कर, महत्सर, नैमिषनाम पवित्र तीर्थ, बाहुदा, करतोयिनी ४५ गंगा, गयाशिर, विपाशा स्थूल, बालुका, कृष्णा, गंगा, पञ्चनद, महाह्रद ४६ गोमती, कौशिकी, पंपा, सरस्वती, द्रशद्वती और यमुनाजीमें जो व्रत करने वाले महात्मा जाते हैं ४७ वह उसलोकमेंजातेहैं और दिव्यस्थानोंमें दिव्य मालाधारी कल्याण रूप और पवित्र गन्धवाले होते हैं वहां धृतराष्ट्र नहीं जायगा किन्तु उससे भी उत्तम लोकोंको जायगा ४८ गौतम ने कहा कि जहां शीतोष्णता का भय नहीं और क्षुधा पिपाशा ग्लानि और दुःख सुख नहीं है ४९ प्रिय अप्रिय भी कोई नहींहै इसी प्रकार शत्रु मित्र भी कोई नहीं है जरा मरण पुण्य पाप भी नहीं हैं ५० रजो गुणसे जुदे वृद्धि युक्त ज्ञानशक्तिमें नियत हैं ऐसे पवित्र लोक में तुझसे हाथी लूंगा ५१ धृतराष्ट्र ने कहा किजो सब संगों से पृथक् पवित्रात्मा व्रत में सावधान वेदज्ञ वेदान्तशास्त्र और योग शास्त्रके कर्मकर्त्ता होकर स्वर्गगती को प्राप्तहैं ५२ वह सात्विकी

रूप उस ब्रह्मलोक को पाते हैं हे महामुनि जिसको तू और मैं देख भी नहीं सक्ता ५३ गौतम ने कहा जहांपर बृहत्‌रथन्तर नाम वेदकी ऋचाओं का गान किया जाताहै और जहां पर पुण्डरीक नाम कमलोंकी वेदियां विस्तृतहैं और हरिनाम घोड़ोंके द्वारासोम मार्ग पर चलतेहैं वहां मैं तुझसे हाथीको लूंगा ५४ मैं तीनोंलोकों के उल्लंघन करनेवाले तुझ इन्द्र को जानताहूं मैंने मन के दुःख से तेरा अपराध बचन करके भी नहीं किया ५५ इंद्रने कहा कि मैं इन्द्रहूं हाथीकेविषय में लोकोंके हितकारी बिवाद में प्रवृत्त हुआ हूंइसी कारण आप मुझ नम्रीभूत को शिक्षाकरो जो तुम कहौगे सोसवकरूंगा ५६ गौतमने कहा हेदेवराजमेरादशबर्षकी अवस्था वा वन में मेरे आश्रम में रहनेवाला श्वेतरूप हाथी तुमने पकड़ लियाहै उसको मुझेदेदो ५७ इन्द्र बोले किहे उत्तम ब्राह्मण यह तेरा पुत्र रूप हाथी तेरी ओरको देखता हुआ आताहै नाकसे तेरे दोनों चरणों को सूंघताहै आपमुझे आशीर्बाद दो मैं आपको नमस्कार करता हूं ५८ गौतमने कहा हे देवराज मैं यहां सदैव तुझ को आशीर्वाद देताहूं और सदैव पूजा करताहूं इससे हे इंद्र तुम मेरे भी कल्याणको दो तुमसे दिये हुये हाथीको लेताहूं ५९ इंद्र ने कहा कि जिन बुद्धिमान सत्यवक्ता महात्माओं के हृदय में वेद गुप्तहैं उनके मध्यमें तुझ अकेले महात्मासे मैं आशीर्बाद दिया हुआहूं इसी कारण मैं तुझ पर प्रसन्न हूं ६० हे ब्राह्मण तुम अपने पुत्र हाथी समेत शीघ्रही बहुत कालकोलिये शुभलोकोंको चलो ६१ तदनन्तर वह वज्रधारी इंद्र उसके पुत्र हाथी समेत गौतमको साथ में करके उस स्वर्गको चढ़े जोकि सत्पुरुषोंसे भी कठिनता से प्राप्त होने के योग्यहै ६२ जो जितेन्द्री पुरुषइसको मन लगाकर सदैव पढ़ेगा वा सुनेगा वह ऐसेही ब्रह्मलोक को जायगा जैसे कि हाथी समेत गौतम ब्राह्मण गयाहै ६३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेहस्तिकूटोनामद्व्यधिकशततोऽध्यायः १०२ ॥

एकसौतीनका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि बहुत प्रकारका दान शान्ति सत्यता अहिंसा अपनी स्त्रीसेही भोग और जवोंके दानका जो फलहै वह सब तुमने कहा १ कृच्छ्र चन्द्रायण आदिमें से तपोवलके सिवाय और कोई महाबलिष्ठ नहीं है अबतपोंमें जो महा उत्तम तपहै उसको आप कहने को योग्यहैं २ भीष्मजीने कहा कि हे कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर जितनातप होताहै उतनाही भोगमें प्रवेशहै यहमेरामतहै अनशन व्रतसे बड़ा कोई तपनहींहै ३ इस स्थानपर इस प्राचीन इतिहासको कहताहूं जिसमें राजाभगीरथ और ब्रह्माजीका प्रश्नोत्तरहै ४ हेभरतवंशी वहभगीरथ स्वर्गलोक और गोलोकको उल्लंघन करके ब्रह्मलोकको गये ५ हे राजा ब्रह्माजीने उस भगीरथको देखकर यह बचन कहा कि हे भगीरथ तुमने किस प्रकारसे इस दुःप्राप्यलोकको पाया ६ हे राजा तपके न करनेवाले देवता गंधर्वादिक भी यहां नहीं आसक्ते तुम यहां कैसे आये हो ७ भगीरथ बोले हे ज्ञानी ब्रह्माजी मैंनेसदैव ब्राह्मणोंके व्रतमें नियत होकर प्रतिदिन एक २ लाख निष्क ब्राह्मणोंको दिये उसके फलसे मैं यहां नहीं आया ८ एक रात्रि नाम दशयज्ञ पंचरात्रि नाम दश यज्ञ ग्यारह दिनमें होनेवालेग्यारह यज्ञ और ज्योतिष्टोमनाम सौयज्ञ किये उन सबके भी फलसे यहां नहीं आया ९ जो मैं सदैव तपको करता हुआ श्री गंगाजीके तटपर हजार वर्षतक नियत हुआ और वहां हजार कन्यादान किये उनके भी फलसे यहां नहीं आया १० मैंनेपुष्करतीर्थमें एकलाखघोड़ेदो लाखगौ और अन्य लाखों प्रकार के दान ब्राह्मणोंकोदिये ११ मैंनेस्वर्णमयी चन्द्रमा धारण करने वाले जांबूनद नाम सुवर्णके भूषणोंसे अलंकृत साठ हजार कन्या दान किये उसके भीफलसेयहां नहीं आया १२ हे लोकनाथ मैंने सवर्ण वत्साऔर सुवर्णसे भूषित कांस्य दोहन पात्रवाली दुग्धवती दशअर्बुद गौवें यज्ञोंमें दानकरीहैं उनमेंसे प्रत्येक ब्राह्मणको दश२

गौवेंदीथीं उनके फलसे भी नहीं आया १३ निश्चय करके यज्ञके आदि और अन्तके प्रत्येक समयपर प्रति सैकड़ा दश २ गौवेंऐसी दीं जो कि प्रथम की ब्याई हुई और दुग्धवती थीं १४ हे ब्राह्मण वह दुग्धवती गौवें संख्यामें दशप्रयुतथीं उनके साथ दूनाधनभी दान किया उनके भी फलसे मैं यहां नहीं आया १५ बाल्हि देशी श्वेतरंग सुवर्णके मालाओं से भूषित एकलाखघोड़े दान किये उस केफलसे भी यहांनहीं आया १६ हेब्रह्माजी मैंनेप्रत्येक यज्ञमेंअठा-रहकोटि स्वर्ण मुद्रादीं उनके फलसे भी मैं नहींआया१७ फिर मैंने श्याम कर्ण हरित वर्ण सुवर्ण की माला युक्त सत्रह कोटि घोड़ेदान किये१८ईशानाम काष्ठदण्ड हलकेसमान दांतरखनेवाले स्वर्णमयी माला युक्त उच्चशरीरवाले बड़े कमल चिह्नोंके धारण करनेवाले सहत्र हजारहाथी दानकिये१६हे देवेश मैंनेसुवर्णके दिव्य भूषणों से अलंकृत सुवर्णके अंगवाले दश हजार रथ दान किये २० और अच्छेघोड़ोंसे शोभित अन्य प्रकारके भी सात हजार रथ दानकिये दक्षिणा के जो२ अंगवेदों में वर्णन किये २१ मैंने उनकोभी बाजपे यनाम दश यज्ञोंमें दिये मैंने यज्ञ और पराक्रम में इन्द्र के समान प्रभाव रखने वाले २२ निष्कों के कंठा रखने वाले हजार छत्रभी दक्षिणा में दिये हे पितामह सब राजाओं को बिजय करके धन आदिके द्वारा २३ राजसूयनाम आठ यज्ञों से पूजन करके दान किये उसके फलसे भी यहां नहीं आया हे जगत्पति जहां तक श्री गंगाजी का प्रवाहहै वहां तक के ब्राह्मण लोग मेरी दक्षिणाओं से ढकगये मैं उनके फलसेभी यहां नहीं आया २४ मैंने प्रत्येक ब्राह्मण कोसौ२ सुवर्ण के मालाओं से अलंकृत दो २ हजार घोड़े २५ और तीन२ सौ उत्तम गांव दिये सामान्य आहार युक्त बाणी को वशमें करके मैंने जितेन्द्री होकर २६ बहुत कालतक हिमालय पर्व्वत में उस गंगाजीके तटपर तप किया जिस गंगाजी की महाअसह्यधा-राको महादेवजी ने अपने मस्तक और शिरपर धारण किया था २७ हे पितामह मैं उस फलसे भी यहां नहींआया २८ शम्या

नाम दण्डकाष्ठ पराक्रमी के हाथ से जितनी दूरतक फेंकाजाय उतने प्रमाण वाली पृथ्वीपर जो वेदीहोयँ उन पर देवताओं को आहुति देकर सुदक्षनाम दश हजार यज्ञों से और दिनमें होने वाले १३ यज्ञोंसे भी पूजन किया और पुंडरीक नाम यज्ञको किया हे देवता मैं उनके भी फलसे यहां नहीं आया २६ मैंने श्वेत वर्ण उत्तम आठ हजार बैलभी इन ब्राह्मणों को दान किये हरएकब्राह्मणको एक२ सुवर्ण का तुरंग देकर निष्क के कंठे रखने वालीस्त्रियां दीं ३० सुवर्ण और रत्नोंके समूह और मणियोंके पर्व्वत दान किये धन धान्यसे पूर्ण हजारों प्रकार के गांव दान किये ३१ निरालस्य होकर मैंने बहुत से महायज्ञों से पूजन करके यह लौन बच्चादेने वाली असंख्य गौ ब्राह्मणों को दानकरीं उनके भी फलसे मैं यहां नहीं आया ३२ हे ब्राह्मण देवता जो ग्यारहदिनमें यज्ञ होतेहैं उन यज्ञोंसे और जो चौबीस दिन में होतेहैं उन यज्ञ और अश्वमेधोंसे और आर्कायण नाम सोलह यज्ञोंसे पूजन किया उनके भी फलसे यहां नहीं आया ३३ जो जंगलकि एक योजन लम्बा और चौड़ाथा और रत्नों से अलंकृत सुवर्ण के वृक्षोंसे पूर्ण था और जिसकाकंठ निष्कों कासमूह था मैंने उसको दान किया उनके फलसेभी मैंनहीं आयाहूं ३४ क्रोध रहित होकर मैंने तीस वर्षतक कठिनकर्मवाले तुरायण नाम व्रतको भी किया और प्रतिदिन नौसै गौवेंब्राह्मणोंको दीं ४५ उसी प्रकार अन्य ब्राह्मणों कोउतनेही बैलदिये हेलोकनाथ इसके सिवाय सदैव ब्राह्मणोंको दान किये उसफलसे भी मैं नहीं आया ३६ हे ब्रह्माजीजो मैंने सदैव तीस अग्निहोत्रों को आठसर्व मेध सातनरमेध ३७ और २८०० विश्वजित नाम यज्ञों से पूजन किया हे देवेश्वरउनकेभी फलसे मैं यहां नहीं आयाहूं ३८ सरयू, बाहुदा, गंगा, और नैमिषतीर्थ पर दशलाख गौवें दानकरीं उससे भीयहांनहीं आयाजिस अनशनव्रतको इन्द्रने छुपाया ३६ और जिस को भार्गव शुक्रजी ने तपके बलके द्वारा जाना हे प्रधानपुरुष मैंने शुक्रजी केबचन से उस प्रकाशित व्रतका साधनकिया ४० इसकर्म

के शुद्धहोने पर हजार ऋषि और जो२ अन्य ब्राह्मण वहांपर इक-ट्ठे हुयेथे वह सब मुझपर प्रसन्नहुये ४१ हेप्रभु उन लोगोंने मुझसे कहा कि तुम ब्रह्मलोक को जाओ उन प्रसन्न चित्त हजार ब्राह्मणों के इस वचन को सुनकर मैं ४२ इस लोकमें आयाहूं इसमें आप किसी बातका बिचार न करिये ४३ जैसा चाहा वैसाही मनोरथ ईश्वरसे प्राप्त हुआ मैं सत्य २ ही कहताहूं कि अनशन ब्रतसे श्रेष्ठ कोई तप नहीं है यह मेरा मत है हे श्रेष्ठ देवता आप प्रसन्न हूजिये आप को मैं नमस्कार करता हूं ४४ भीष्म जी बोले उन ब्रह्माजीने इसप्रकार की वार्त्ता करनेवाले पूजाके योग्य राजाभगी-रथको शास्त्रके लिखेहुये कर्म और बिधिसे पूजनकिया४५ इसीहेतु से तुमभी अनशन ब्रतोंसे युक्तहोकर ब्राह्मणोंकापूजनकरो वेदपाठी ब्राह्मणों के वचनोंसे इसलोक और परलोक दोनोंमें सब पदार्थ प्राप्त होतेहैं ४६ तुमबस्त्र अन्न गौ और अच्छे२ स्थानोंसेभी उत्तम ब्राह्मणोंका पूजनकरो क्योंकि उत्तम देवताओंके समूहोंसेभी ब्राह्म-ण प्रसन्न करनेके योग्यहैं ४७ इस बड़े गुप्तब्रतको निर्लोभ होकर करो ४८ ॥

इतिश्री महाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेब्रह्माभगीरथसंबादेत्र्यधिक शततमोऽध्यायः १०३ ॥

एकसौचारका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोलेहेपितामह मनुष्यकी शतबर्षकी आयुर्द्दावालाकहा हैइसीसे वहसौवर्षजीने वालाहोकर उत्पन्न होताहै फिरकिसकारण बालक अवस्थामेंही मरजातेहैं१ किस कर्मसे मनुष्य पूर्णायुवाला होताहैऔर किस कर्मसे अल्पायुहोजाताहै किसकर्मसे शुभकीर्त्ति को पाताहै और किसकर्मसे धनको पाता है २ तप ब्रह्मचर्य्य जप होम औषधीऔर मन बाणीके कर्म इनसबमेंसे कौनसे कर्मको करकेउन सब बातोंकोपाताहै हेपितामह उसको आप मुझसे कहनेके योग्य हैं ३भीष्मजी बोलेकि इसस्थानपरजो तुम पूछतेहो कि मनुष्य किस

हेतुसे अल्पायु वा दीर्घायु होताहै ४ और काहेसे शुभकीर्त्ति और लक्ष्मीको पाकर कल्याणयुक्त होताहै उन सब कारणोंको और उपायोंको तुझसे कहताहूं ५ मनुष्य आचारसे अवस्थाको पाताहै आचारसे ही लक्ष्मीको प्राप्त करताहै और आचारहीसे इसलोक परलोक दोनोंमें शुभकीर्त्ति को पाताहै ६ ऐसा दुराचारी मनुष्य जिससे कि सब जीवधारी भयभीत रहते हैं वह अप्रतिष्ठावान होकर बड़ी अवस्थाको नहींपातेहैं ७ इसीहेतुसे अपने ऐश्वर्य्यका चाहनेवाला इसलोकमें आचारका अभ्यास करे वह मनुष्यका आचार पापयुक्त मनुष्यके शरीरके कुष्ठ आदि दुष्ट चिह्नों को दूर करताहै ८ धर्म आचार रूप लक्षण रखनेवालाहै और सन्तभी आचार रूप चिह्न रखनेवालेहैं साधू मनुष्योंका जैसा चलनहै यही आचारका लक्षणहै ९ देखा और सुनाभी गयाहै कि साधुलोग उस मनुष्यको जो धर्मचारी और ऐश्वर्य्य उत्पन्न करनेवाले कर्मोंका करने वालाहै उसे अपना प्यारा मानतेहैं १० जो परलोक और ईश्वरके न माननेवाले संध्याआदिक कर्मोंके न करनेवाले गुरू शास्त्रसे विरुद्ध धर्मसे अज्ञात और दुराचारीहैं वह थोड़ी अवस्था पातेहैं ११ दुष्टप्रकृति बे मर्य्याद सदैव वर्णसंकर स्त्रियोंसे भोगकरनेवाले आदमी इस लोक में अल्पायु और नर्कगामी होतेहैं १२ जो मनुष्य सब लक्षणों से रहितभीहैं परन्तु आचारमान श्रद्धामान और दूसरेके गुणोंमें दोष न लगानेवालाहै वह सौबर्षतक जीताहै १३ क्रोधका त्यागी सत्यवक्ता जीवोंका न मारनेवाला दूसरेके गुणमें दोष न लगानेवाला ईर्षा और कुटिलता से रहित मनुष्य सौबर्ष तक जीवताहै १४ जो मनुष्य मृत्तिकाके ढेलेका मर्द्दन करनेवाला तृणोंका छेद न करनेवाला दांतों से नखोंको काटनेवाला सदैव छोटा मुख होकर दुर्जन वा अस्तव्यस्तप्रकृतिहै वह इस लोकमें बड़ी अवस्थाको नहीं पाताहै १५ ब्राह्म मुहूर्त्तमें जागकर धर्म अर्थको विचार करे और उठकर आचमनादि करके हाथ जोड़कर प्रातःकालकी संध्यामें प्रवृत्त हो १६ और इसी रीतिसे वचन को मानकर सायंकालको भी संध्योपासनादि क्रियाओंको करे और उदय वा अस्तसमय सूर्य्यको कभी न देखे १७

राहुसेग्रसे हुये जलमें नियत आकाशस्थ सूर्य्यको नहीं देखे ऐसे
बिचार पूर्व्वक संध्या करनेसे ऋषिलोगोंने बड़ीअवस्थाको पाया
है १८ इसीकारण मनुष्य सदैव मौन होकर प्रातःकाल और सायं-
कालकी संध्याको उपासना करे जो ब्राह्मणक्षत्री बैश्य प्रातःकाल
वा सायंकालकी संध्याओंको नहीं करतेहैं १६ तोधर्मका अभ्यासी
राजा उन सब लोगोंसे शूद्रका कर्म करावेसब वर्णोंके मध्यमें किसी
दशामें भी अन्यकी स्त्री संभोगके योग्यनहींहै २० ऐसाअल्पायुकरने
वाला कर्म इस लोकमें नहींहै जैसा कि इसलोकमें दूसरेकीस्त्री से
भोगादि करना दुष्टकर्म मनुष्यों का होताहै २१ स्त्रियोंके अंगमें
जितनेरोम कूप उत्पन्नहैं वह उनका भोग करनेवाला उतनेही बर्ष
तक नरक में निवास करताहै २२ केशोंकी स्वच्छता नेत्रोंमें अंज-
नादिलगाना दन्तधावन करना देवताओंका पूजन यह सब काम
दिनके पूर्व्व भागमें करना चाहिये अपनी वा पराई मूत्र बिष्टाको
कभी न देखे उसके समीप वा उसीके ऊपर खड़ानहोवे प्रातःकाल
सायंकाल और मध्यान्हके समय २४ अपरिचित मनुष्योंके साथ
वा वृषली लोगोंके साथ अकेलानजाय ब्राह्मण गौ राजा २५ वृद्ध
पुरुष भाराक्रान्त गर्भिणी स्त्री और निर्बल मनुष्यको सदैव मार्ग
देना उचितहै पीपल आदिके वृक्षकोजानकर जहांतक बने वहांतक
प्रदक्षिणा करे २६ सब चौराहोंको दाहिनाकरे मध्यान्ह रात्रि अर्द्ध
रात्रि २७ और दोनों संध्याओंमें चौराहे पर जाय दूसरोंका पह-
राहुआ वस्त्र और जूताकभी काममें नलावे २८ सदैव ब्रह्मचारीरहे
चरणसे चरणकोनहीं लांघे अमावास्यापूर्णमासी और दोनों पक्षकी
चतुर्दशी और अष्टमीकोसदैव ब्रह्मचर्य्यमेंरहै २६।३० बिनायज्ञकेऔर
सवारी के योग्य पशुओंके मांसको न खाय द्वेषनिन्दा और ईर्षाको
त्याग करे ३१ शरीरसे दुष्टनहोय निर्दयतासेबातेंनकरेनीचकेद्वारा
शत्रुओंको विजय न करे जिसवचनसे दूसरा मनुष्य भयभीतहोकर
व्याकुल होय उस पापसे युक्त शोककी उत्पन्न करनेवाली बातको
नहीं कहे ३२ बाणरूपी वचन मुखसे निकलतेहैं जिनसे घायलहो

कर मनुष्य रात्रिदिन शोचताहै और वह वचन रूपीबाण दूसरे के मर्मस्थलोंपर गिरतेहैं पंडित मनुष्य उन वचनरूपी बाणोंको दूसरे पर नहींछोड़े ३३ तीरोंसे छेदाहुआ और फरसोंसेकाटाहुआबन चाहै उपजआवे परन्तु बचन रूपी भालोंसे घायल मनुष्यका हृदयफिर नहीं सम्हलताहै ३४ कर्णनालीक अर्थात् बाणोंके निकालनेवाले बाणों को शरीरसे निकालभी लेतेहैं परन्तु बचनरूपी भाले नहींनिकल सक्तेहैं क्योंकि वह हृदयमें निवास करनेवाले होजाते हैं ३५ जो मनुष्यकिसी अंगसे रहित अथवा अधिक अंग रखने वाले विद्यासे शून्यधनके चमत्कारसे बिहीन और सत्यतासे रहितहैं उनका हास्य नकरे ३६ ईश्वर और परलोक का नमानना वेदकी निन्दानकरना देवताओंकी निन्दा शत्रुता औरप्रकृतिकी चपलता को अत्यन्तत्याग करे ३७ सिवाय पुत्र और शिष्यके दूसरे के ऊपर दण्डको नहीं उठावे परन्तु कभी क्रोध युक्त होकर उनको न मारे क्योंकि शिक्षा और शासनाही आज्ञावर्त्तीको करनी चाहिये ३८ ब्राह्मणको निराश नकरे नक्षत्र औरपक्षोंको तिथियोंको न सुनावे इसरीतिसे मनुष्यकी अवस्थाका नाश नहीं होताहै ३९ मूत्र और बिष्ठाको करके और मार्ग चलके चरणों को धोवे इसी प्रकार वेदपाठ जप और भोजन में चरणों को धोवे ४० देवताओंने ब्राह्मणकी तीन वस्तु पवित्र विचार करीहैं शूद्र और ऋतुस्नाता स्त्रीका न देखाहुआ जलों से शुद्ध किया हुआ औरजो वचनसे प्रशंसाकिया जाताहै ४१ संयाव अर्थात् घृत दुग्ध बूरा और गेहूं के आटेसे बनीहुई कृशर अर्थात् तिल चावल से बना हुआ मांस शष्कुली अर्थात् पूरी और तस्मै इन सब भोजनोंको केवल अपनेही लिये बनाना योग्य नहीं किन्तु देवताओं के उद्देश से तैयार करे ४२ सदैव अग्निको पूजन करे भिक्षुक कोभिक्षादे और सदैवमौन होकर दंतधावनकरे ४३ सूर्य्यो- दयहोजानेके समय निद्रानकरे क्योंकि सूर्य्योदय में सोने वाला प्रायश्चित्ती होताहै प्रातःकाल उठकर प्रथम तो मातापिताकोदण्ड- वत्करे ४४ और गुरू आदिक अन्य वृद्धोंको भी नमस्कारकरे इस

रीतिके करने से बड़ी अवस्थाको पाताहै त्यागके योग्य दांतनको सदैव त्याग करे ४५ शास्त्र में लिखी हुई दांतनोंको काममें लावे पर्व्वोंमें दांतन नकरे बड़ी सावधानी से उत्तराभिमुख होकरदांतन करे ४६ दांतनबिना किये देव पूजन न करे देवताका पूजन किये विना कभी राजा आदिके पासन जाय ४७ परन्तु गुरू वृद्ध और धर्मात्मा पंडित के पास जाना निषेध नहीं है जो बड़े बुद्धिमान हैं उनकोमैला दर्पणन देखनाचाहिये ४८ बिना जानीहुई औरगर्भिणी स्त्री से भोग न करे ४९ उत्तर और पश्चिमकी ओरशिर करकेनसोवे बुद्धिमान मनुष्य सदैव पूर्व्व या दक्षिणकी ओर शिर करकेसोवे ५० टूटी हुई पुरानी और जिसका वृत्तान्त नहीं जाना हुआ है ऐसी शय्यापर न सोवे और जिसपर स्त्री सो रहीहो उस पर न सोवे और कभी तिरछा होकर न सोवे ५१ किसी काम अथवा निज से भी नास्तिक मनुष्य के पास न जावे इसी प्रकार मनुष्य चरणसे आसनको खैंचकर नबैठे ५२ नंगा होकरकभीस्नान नकरे पंडित मनुष्य स्नान करके अंगोंका मर्दननहींकरे ५३ बिनास्नानकिये चन्दननलगावे स्नानकरके वस्त्रकोनहीं फटकारे मनुष्य कभी गीले वस्त्रको नहीं धारणकरे ५४ मालाको नहींखैंचे और बाहर धारण नहींकरे रजस्वलास्त्रीसे कभी वार्त्तालापनकरे ५५ खेत अथवाग्राम के समीप मूत्र और विष्टाको नहींकरे जलके बीचमें मूत्र औरबिष्टा कभी नकरे ५६भोजन करने को जाने के समय तीनबार आचमन करे और भोजन कर चुकनेके पीछेभी तीनबार आचमन करे फिर दोबारमुखको धोवे५७सदैव पूर्व्वाभिमुख मौनहोकर अन्नकोनिन्दा न करताहुआ भोजनकरे और कुछअन्नछोड़दे भोजनकेपीछे आचमनकरके अग्निको मनसे स्पर्शकरे ५८पूर्वाभिमुख भोजन करनेसे पूर्णायुको पाताहै और दक्षिणाभिमुख होकर भोजन करने से शुभ कीर्त्ति को पाताहै और पश्चिमाभिमुख होकर भोजन करनेसे धनको पाताहै और उत्तराभिमुख होकर भोजन करनेसे कल्याणोंको पाता है ५९ जलयुक्त हाथसे अग्नि को स्पर्श करके सब इन्द्रियों समेत

प्राणोंको स्पर्शकरे ६० भुसपर न बैठे बालभस्म मुंड और अन्यके स्नान कियेहुयेजलको दूरहीसे त्यागकरे ६१ होमोंकी शान्ति करे सावित्र नाम मन्त्रोंको धारण करे सदैव बैठकर भोजनकरे चलता हुआ कभी न करे ६२ खड़े होकर मूत्रकरना अनुचितहै भस्म और गोशालामेंमूत्रकभी नकरेगीले पैरोंसे भोजनतोकरे परन्तुगीलेपैरों सेकभीनसोवे ६३ गीलेपैरोंसे भोजनकरनेवाला हजारवर्षतक जीता है उच्छिष्टमुखसे अग्नि गौ ब्राह्मण इन तीनों तेजस्वियोंको कभीस्प- र्श न करे६४इस रीतिसे आयुका नाशनहीं होताहै और जूठे मुखसे सूर्य्य चन्द्रमा और नक्षत्र इनतीनोंको भीनदेखे ६५ वृद्ध मनुष्य के आनेपरतरुण मनुष्यके प्राणऊपरको चलायमान होतेहैं६६प्रतिष्ठा पूर्व्वक अभ्युत्थान के लिये उठने और दण्डवत् करनेसे फिर उन प्राणोंको पाताहै अर्थात् वृद्ध लोगोंको दण्डवत् करके अपने हाथसे आसनदे ६७ हाथजोड़कर समीप बैठे और चलने के समय उनके पीछे २ चले टूटे हुये आसन पर नहीं बैठे और टूटी हुई रुईको त्यागकरे ६८ एकवस्त्रसे भोजन न करना चाहिये अर्थात् धोतीके विशेष अंगोछा भी होना चाहिये नंगेशरीरसे स्नान करना योग्य नहीं है और नंगेहोकरसोनाभी योग्य नहींहै जूठे मुखसेभी कभी न सोवे ६९जूठे मुखसे शिरकोकभी स्पर्शनकरे क्योंकि शिरमेंही सब इन्द्रियां आश्रय लियेहुये हैं बालोंका पकड़ना और शिरपर प्रहार करना इन सब बातोंको त्यागकरे७०मिलेहुये दोनोंहाथोंसे अपने शिरको नहीं खुजावै और सदैव शिरसे स्नान नहींकरे इसरीतिके कर्मकरनेसे उसकी आयुर्दा नष्ट नहीं होतीहै७१ जिस तेलको शिर पर मलाहो उसको अपने और किसीअंगपर नहीं मर्दनकरे तिल युक्त अन्नकाभोजन नहींकरे ऐसे कर्मोंके करनेसे उसकी आयु पूरी होती है ७२ जूठेमुखसे न कभी पढ़े और न किसी दूसरेको पढ़ावे और दुर्गन्धित बायुके आनेपरचित्तसेभी वेदको नविचारे७३ प्राचीन वृतान्तोंकेज्ञातालोग इसस्थानपरयमराजके कहेहुयेप्रसंग को कहतेहैं७४अर्थात् यमराजकहतेहैं किमैं उसमनुष्यकी आयुर्दा

को खंडित करताहूं और उसकी सन्तानको लेताहूं ७५ जोजूठेमुख होकर मार्गमें चलताहै और वेदको पढ़ता पढ़ाताहै और जो ब्राह्मण अनाध्यायों में भी वेदोंको पढ़ताहै उसको वेद बिस्मरण होजाताहै और आयुर्दा नाश होजातीहै इसी हेतुसे योग्य मनुष्य अनाध्यायों में वेदों को कभी नपढ़ें ७६ जोमनुष्य सूर्य्य अग्नि गौ ब्राह्मण इन चारोंकी ओरको अथवा मार्गमें मूत्र को करते हैं वह भी अल्पायु होतेहैं ७७ दिनमें उत्तरको मुख करके मूत्र बिष्ठाकरे और रात्रिमें दक्षिण की ओर मुख करके बिष्ठामूत्र करेतो आयुर्दा नष्टनहीं होती है ७८ बहुत कालतक जीवने के इच्छा वान पुरुष ब्राह्मण क्षत्री सर्प इनतीन दुर्बल शरीर वालों को अपमान नकरे यह तीनोंडाढ़ में विष रखने वाले हैं ७९ डाढ़में बिष रखने वाला क्रोध युक्त सर्प जहांतक नेत्रों से देखता है वहांतक भस्म करदेताहै औरक्रोध युक्त क्षत्री भी जहांकत अपने पराक्रम से स्पर्श करता है वहां तक विध्वंस करताहै ८० और ब्राह्मण देखनेसे और शापसे संपूर्ण बंश भरेको नाश करदेता है इसी हेतुसे पंडित मनुष्य इन तीनों केपास बड़ेविचार पूर्व्वक जायँ८१गुरूके साथमें कभी हठनकरना चाहिये हे युधिष्ठिर क्रोधयुक्त गुरू प्रतिष्ठा पूर्व्वक प्रसन्न करने के योग्य है ८२ यहां मिथ्यावादी गुरू के भी साथमें श्रेष्ठ कर्म करना चाहिये गुरूकी निन्दा करना निस्सन्देह मनुष्यकी आयुर्दाको भस्मकरती है ८३ स्थानसे दूरजाकर मूत्रकरे और दूरही जाकार पैरभीधोवे अपनी वृद्धि चाहने वाले मनुष्यको उच्छिष्ट अर्थात् जूठन स्थानसे दूरडालना चाहिये ८४ पंडित मनुष्योंको रक्तमाला धारणकरना उचित नहीं है श्वेतमाला धारण करनेके योग्य हैं हे प्रभु परन्तु रक्तोत्पलनाम कमल को ८५ और वनमें उत्पन्न होने वाले लाल पुष्पको शिर पर धारण करना उचितहै कचनारका फूल और सुवर्ण काफूल कभी दूषित नहीं होताहै ८६ हे राजा स्नान करनेवाला मनुष्य तरचन्दन लगावे और बुद्धिमान मनुष्य वस्त्रोंको ओतप्रोत नकरे अर्थात् ऊर्ध्व भागके वस्त्रको अधोभाग में और अधोभाग के

वस्त्रको ऊर्ध्वभागमें धारणनहींकरे ८७ इसीप्रकार दूसरेकापहरा हुआ वस्त्र आपत्ति कालके सिवाय धारण करना उचित नहीं है हे नरोत्तम शयन स्थान का दूसरा वस्त्र होना चाहिये ८८ मार्गमें दूसरा वस्त्र होना चाहिये देवताओं के पूजन में जुदा वस्त्र होय सुपेद सरसों चन्दन विल्व तगर ८९ केसर से पृथक् २ शरीर पर लेप करे बुद्धिमान् मनुष्य स्नान करके पवित्रता पूर्व्वक अलंकृत होके ब्रह्मचर्य्य ब्रतको धारण करे ९० सब पर्व कालों में सदैव ब्रह्मचारी होय हे राजा एकपात्रमें दूसरे केसाथ भोजन न करे ९१ रजस्वला स्त्रीका बनाया हुआ भोजन कभी न खाय और जिसको गौ आदिने सूंघलिया है उसको भी बिनाधोये कभी न खाय और दूध आदि याचना करनेवाले को दिये बिना कभी नखाना चाहिये ९२ बुद्धिमान् मनुष्य भ्रष्ट मनुष्यके पास बैठकर भोजन न करे श्राद्ध आदिक धर्मोंके बिना जो अन्न निषिद्ध हैं उनको श्राद्धादिके बिना भोजन नहीं करे परन्तु श्राद्ध में अवश्य खाय ९३ ऐश्वर्य्य का चाहनेवाला पीपल की पिप्पली बड़ का फल सनका साग और गूलर इन सबको न खाय ९४ अजके गौके मोर के और सूखे मांसको त्यागकरे और बासीमांसकोभी त्यागकरे ९५ ज्ञानी मनुष्य हाथमें नोनकोलेकर न खाय रात्रिकेसमयदही और सत्तूको न खाय बिनायज्ञके मांसको त्यागकरे ९६ सावधानमनुष्य प्रातःकाल और सायंकाल भोजनकरे उनदोनों समयोंके मध्यमें न खाय बाल संयुक्तअन्नको भोजन न करे इसीप्रकारशत्रुके श्राद्धमेंभी भोजननकरे ९७मौनहोकर भोजनकरे केवल एकवस्त्रसे न करेऔरलेटाहुआ भी कभी भोजनन करे पृथ्वीपर रखकर भोजन न करे खड़ाहुआ और शब्द को करताहुआ भोजननहीं करे ९८ हे राजा जलसमेत अन्न को अतिथियोंको देकर पीछेसे आपभोजनकरे पंडित मनुष्य दूसरेमें मनरखनेवालाभी भोजन न करे ९९हे राजा एक पंक्तिमें भोजन के योग्य सब अन्न एकसाहोय जो मनुष्य अपने पूज्य और आश्रित लोगोंको न देकर खाता है वह हलाहल नामविष को भोजनकरता

है १०० भोजनकीवस्तु खीर सत्तूदही घृत और मधुको छोड़कर इन अन्यभोजनकी वस्तुओंका शेषबचाहुआ किसीदूसरेको नहींदे यह धर्मशास्त्रमें लिखाहै जो पुत्र कि पिताके जूठे दूधआदि का भोजन करे उसका दोषनहींहै १०१ हे नरोत्तम भोजन करताहुआ उसको पाचकता और अपाचकताका सन्देह नकरे अर्थात् भोजनके पूर्व्वही पाचक अन्नको तैयारकरे किन्तुतैयार करके सन्देह न करे ऐश्वर्य्य चाहनेवालेको भोजन करनेके पीछे दूधपीना योग्यहै १०२ उसी प्रकार आचमनकर एकहाथसे जलकोलेकर दक्षिणपांवके अंगूठे कोधोवे १०३ प्रयोग में कुशल सावधान पुरुष अग्निकोस्पर्श कर हाथको मस्तकपर धरकरके अपनी बिरादरी वालों में प्रतिष्ठा को पाताहै ।१०४ जलोंसे सबइन्द्रियों को स्पर्श करे और हाथकीहथेली सेनाभि को स्पर्श करताहुआ खड़ाहोजाय मनुष्यके हस्तकेमूल से दाहिने अंगुष्ठतकमें ब्रह्मतीर्थ होताहै और कनिष्ठा उंगलीकेपीछे देवतीर्थहोताहै १०५।१०६ हे भरतवंशी अंगूठे और तर्जनीउंगलीका जो मध्यस्थानहै उसीसे न्यायके अनुसार सदैव जलको स्पर्शकरके पित्रोंका तर्पणकरे १०७ दूसरेकी निन्दासे रहितहोकर कभी किसी से अप्रिय बचन न कहै ऐश्वर्य्यकेचाहनेवाले मनुष्यको क्रोध अहंकार और शोक प्रकट न करना चाहिये १०८ जो मनुष्य अपने वर्ण से च्युतहोगये हैं उनके साथ कोई कथा कहना न चहिये उनके दर्शन कोभी त्याग करे उनके साथ मेल मिलापभी न करे तोवह पुरुष भीबड़ी आयुर्दा को पाताहै दिनमें स्त्री संग न करे कन्या और दुष्टाचारणी स्त्री से प्रीति न करे १०९ ऋतु के स्नान किये बिना स्त्री से मनुष्य को संग करना योग्य नहीं है इनबातों के करनेसेभी बड़ी अवस्था को पाता है करने के योग्य श्राद्ध आदिके विचार होजाने पर अपने तीर्थ में आचमन पूर्व्वक तीन बार जल पीकर दो बार मार्जन करके पवित्र होता है ११० मनुष्य एक बार इन्द्रियों को स्पर्शकर तीनबार चेष्टा देकर वेद में देखे हुये क्रम से देवता और पितरों का पूजन करे १११ हे कौरव्य भोजन के आदि अन्त

में ब्राह्मण के लिये जो हितकारी और पवित्र करनेवाले शौच हैं
उनको मैं तुमसे कहताहूं ११२ सब शौचोंमें ब्राह्म्यतीर्थ से आच-
मन करे छींककर वा थूककर आचमनसे पवित्र होताहै ११३ जो
विरादरीका कोईमनुष्य वृद्ध और मित्रहोकर निर्द्धन्य होंय वह सब
गृहमें निवास करवानेके योग्यहैं उनका अपनेघर में निवासकरना
संसारके धन ऐश्वर्य्य और आयुर्दा का देनेवालाहै ११४ गृह में
कपोत तोता मैना और तैल पायक नाम पक्षी धनके शूचक चिह्न
हैं यहसब गृह में ऐश्वर्य्य की वृद्धि के करनेवालेहैं उद्दीपक गिद्ध
भौंरा ११५ जब गृहमें निवास करें तब गृहकी शान्ति करनी चा-
हिये यहसब अमंगल रूपहैं इसीप्रकार महात्माओं से कठोर बचन
कहना भी अशुभ करनेवाला है ११६ महात्माओंको जो गुप्त
बातेंहैं वह किसी समयमें भी किसीके सन्मुख कहनेके योग्यनहींहैं
जो स्त्री कि संभोग के योग्य नहींहैं उनसे कभी संग न करे राजा
की रानी सखी वैद्या बालक वृद्धादासी बन्धुकी स्त्री ब्राह्मणकी स्त्री
और रक्षाकरनेकी इच्छा रखनेवालोंकी जो स्त्रियांहैं वह भोगकरने
के योग्यनहीं हैं इन सबबातोंका विचार करनेवाला बड़ी अवस्था
को पाताहै ब्राह्मण और कारीगरोंके प्रधानोंके प्रबन्धसे जो स्थान
तैयार किया गयाहो ११७। ११८। ११९ ऐश्वर्य्यका चाहनेवाला
ज्ञानीमनुष्य उसस्थानमें सदैवनिवासकरे सायंकालके समयमनुष्य
इन चारबातोंको कभी न करे अर्थात् सोना विद्याका पढ़ना भोजन
का करना और स्त्री से संभोग करना इनबातों के विचार से भी
बड़ी अवस्था को पाताहै रात्रिके समय श्राद्ध कर्मादिक न करे भो-
जनकरके शिरके बालोंको नहीं वहावे १२०।१२१ ऐश्वर्य्यकेचाहने
वालेमनुष्यको सायंकालके समय शिरसे स्नानकरना योग्यनहींहै
और रात्रिके समय सदैव सत्तू खाना वर्जितहै १२२ रात्रिकेसमय
दूसरे भोजन के पदार्थोंका खानाभी वर्जितहै परन्तु भोजन के पीछे
जलआदि वस्तुपीना उचितहै दूसरे के घर में बहुतसा भोजन न
करेपरन्तु अपने घरमें तृप्तीकरे १२३ पक्षियोंको न मारे पक्षियों के

मांसको मोल लेकर खाये परन्तु आप अपने हाथसे न मारे जोपंच-
शब्दके स्थानापन्न पान शब्दहोय तब यह अर्थहै कि भोजनकरने
के अन्त में जलादिकोंका पानकरना योग्यहै ज्ञानी मनुष्यकोउस
कन्या से विवाह करना योग्यहै जोकि बड़े बंश में उत्पन्न होकर
शरीरके चिह्नों से उत्तम और तरुणहोय ऐसी स्त्रीसे विवाह करके
सन्तान को उत्पन्न कर अपने बंशको नियत करके १२४ । १२५
फिर पुत्रोंको अपने कुल धर्मरीति और व्यवहार सिखलानेके लिये
ज्ञानी पंडितोंको सुपुर्द करना योग्यहै हे भरतवंशी जो कन्या उ-
त्पन्नहोय उसको बुद्धिमान् उत्तमवंशवाले बरको देनायोग्यहै १२६
हे भरतवंशी पुत्रोंकोभी अच्छे बंशमें विवाह करना चाहिये और
भृत्यादिक लोगभी अच्छे घरवालों से प्राप्तकरने के योग्यहैं शिर
से स्नान करनेवाला मनुष्य देवता और पितरों के पूजन को करे
और जो मनुष्य जिसनक्षत्रमें उत्पन्नहुआ हो उसमें दोनों कर्मों को
नहींकरे हे भरतवंशी कृत्तिका पूर्व्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद में
भी वहकर्म न करने चाहिये १२७ सब दारुण नक्षत्रादिमें भी प्रत्य-
रि नक्षत्रको त्यागकरे और जो २ नक्षत्र ज्योतिषमें निषिद्ध कहेगये
हैं उनकोभी त्यागकरे १२८ हे राजेन्द्र अच्छा सावधान मनुष्य
पूर्व्वकी ओर वा उत्तरकी ओर मुखकरके क्षौर कर्म करावे ऐसेकर्मों
का करनेवाला बड़ी अवस्थाको पाताहै १२९ दूसरों के वा अपने
निन्दित वचनों को कभीन ग्रहणकरे हे भरतर्षभ वह निन्दित बचन
अधर्मके निमित्त कहाजाताहै १३० हे नरोत्तम जोस्त्री अथवाकन्या
किसी अंगसे रहित समान प्रवरवाली न्यूनवा अधिक अंग युक्त
मातृकुल वा अपने कुलमें उत्पन्नहै उससे बिवाह न करे१३१ जो
स्त्री वृद्धा वैरागिनी और पतिव्रता होकर नीच वा उत्तम वर्ण की
है उससेभी विवाहनकरे १३२ जिसस्त्रीका कुल ज्ञातनहींजानाहुआ
है और वास्तवमें दुराचारिणी पिंगलवर्ण और कुष्टयुक्तहै वह भी
पंडितोंसे विवाह करनेके अयोग्यहै १३३ जो कन्या मृगी रोगवाले
वंशमें उत्पन्नहै उससेभी विवाहनकरे १३४ जो शुभलक्षणोंसे युक्त

है उसकन्यासे बिवाह करना योग्यहै १३५ हे युधिष्ठिर बड़े वंशमें अथवा अपनेसमान कुलमें विवाह करना योग्यहै ऐश्वर्य्यकाचाहने वाला पुरुष दूसरे प्रकारकी पतित स्त्रियोंको भी त्यागकरे १३६ अग्नियोंको प्रकट करके उपायकेसाथ उनसब ब्राह्मणोंकी कहीहुई वेदोक्त क्रियाओंको अच्छीरीति से करे १३७ स्त्रियोंकेसाथ ईर्षा न करना चाहिये स्त्रियां सबप्रकारसे रक्षाकरनेके योग्यहैं और ईर्षा का करना आयुर्दा को क्षीण करता है इसीहेतुसे ईर्षाको अत्यन्त त्यागकरे १३८ दिनमें और सूर्य्योदयके पूर्व्व और पश्चात् सोना भी आयुर्दाका क्षीण करनेवालाहै इसीप्रकार जो मनुष्य रात्रिके समय जूठ मुखसे सोतेहैं वह शीघ्र अल्पायु होतेहैं १३९ दूसरेकी स्त्रीसे संभोग करना क्षौर कराकर स्नान न करना भी अल्पायु होने का कारणहै हे भरतवंशी दूसरेकी स्त्री के पास अनेक उपायों से निवास न करना चाहिये १४० संध्याकालमें न स्नानकरे न भोजन करे और वेदपाठभी न करे केवल उससमय पवित्र और नियम रखनेवाला होय इसके सिवाय और कुछनहीं करे १४१ हे राजा फिर स्नानकरके ब्राह्मणोंका पूजनकरे और स्नान कर्त्ताहोकरदेवता और गौओंकोभी प्रणामकरे १४२ बिना निमन्त्रणके यज्ञमें न जाय परन्तु तमाशा देखनेकी इच्छासेजाय हे भरतवंशी आदर सत्कार न होनेपर वहांजाना आयुर्दा के नष्टहोनेके हेतुहोताहै १४३ अकेला मनुष्यको चारोंओर घूमना और रात्रिके समय चलना चाहिये संध्याके प्रारम्भसे पूर्व्वही घरमें आकर नियतहोना चाहिये १४४ माता पिता और गुरुओंकी आज्ञाको करनाचाहिये चाहें प्रियहोय वा अप्रिय होय तौ भी उन तीनोंवृद्धोंकी आज्ञा में किसीप्रकार का बिचार न करना चाहिये १४५ हे राजा वेद में और धनुर्वेद में उपाय करना योग्य है हाथी घोड़े और रथकी सवारी में बैठने का अभ्यास करना चाहिये १४६ हे राजेन्द्र उपायों का करनेवाला हो क्योंकि उपायपूर्व्वक उद्योग करनेवाला मनुष्य सुखसे वृद्धिपाता है शत्रुओंसे सेवकोंसे और अपने नाते रिश्तेदारों से अजित १४७

प्रजापालन करनेवाला राजा कहीं पराजय को नहीं पाता है हे भरतर्षभ नीतिशास्त्र और शब्दशास्त्र तुमको जानना योग्यहै १४८ गन्धर्वशास्त्र और सब बड़े२पुराण इतिहास आदिजोआख्यानहैं वह सबभी जाननेके योग्यहैं १४६ तुमको महात्माओंका चरित्र सदैव सुनना चाहिये अपनीऋतुवती स्त्रीकेपास नजाय औरनउसकोबुलावै १५०जब वह चौथेदिनका स्नान करले तब पंडितमनुष्यको उचित है कि रात्रिके समय उसके पासजाय ऋतुस्नानसे समदिन में पुत्र और विषम दिनमें लड़की गर्भमें नियत होतेहैं १५१पंडित मनुष्य इसरीतिसे अपनी स्त्रीके पास जाय सजातीय नातेदार और मित्र लोग यह सब पूजनके योग्यहैं १५२ हे राजा सामर्थ्य के अनुसार नानाप्रकारकी दक्षिणावाले यज्ञोंसे ईश्वर का पूजनकरना चाहिये इसके पीछे वनका सेवन करना चाहिये १५३हे युधिष्ठिर पूर्णआयुर्दा करनेवाले आचारोंका यह संक्षेप मैंने तुमसे कहा शेषवृत्तान्त तुमको तीनोंवेद के जाननेवाले ब्राह्मणों से जानना चाहिये १५४ आचार ऐश्वर्य्यका वृद्धिकरनेवालाहै आचारही शुभकीर्त्ति का बढ़ानेवालाहै आचारहीसे आयुर्दा बढ़तीहै आचारही बुरे लक्षणोंको दूरकरताहै १५५ सब शास्त्रोंमें आचारही श्रेष्ठकहाजाताहै आचारहीसे धर्मभी प्रकट होताहै धर्मसे आयुकी वृद्धि होतीहै सब वर्णों पर दयाकरके ब्रह्माजीने शुभकीर्त्ति आयुर्दा और स्वर्गका देनेवाला बड़ा कल्याण रूप यह बड़ा शास्त्र वर्णन कियाहै १५६। १५७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मे आयुर्द्धाउपायवर्णनोनामचतुरधिकशततमो ऽध्यायः१०४॥

एकसौपांचका अध्याय॥

युधिष्ठिरने पूछा कि हेभरतर्षभ जिसरीतिसे बड़ाभाई छोटेभाई के साथ वर्त्ताव करे और जैसे छोटेभाई बड़ेभाईके साथ वर्ताव करें वह सब आपमुझसे वर्णन कीजिये १ भीष्म जी बोले कि हे तात तुमसबभाइयोंमें बड़े इससे तुमबड़ेके समान वर्त्तावकरो हे युधिष्ठिर

जैसे कि गुरू और शिष्यकीगरीयसी वृत्तिहोतीहै २ वैसी वृत्तिगुरूके
अज्ञान होनेपर शिष्यसे होनी असंभव है हे भरतवंशी शिष्यकी जो
दूरदर्शकताहै वह गुरूकीहीहै ३ और जो कदाचित् उन गुरूमें कोई
अमर्य्यादा पाईजाय तो उसको बर्णनकरदेना चाहिये जिससे कि
गुरू को कोई दोष न लगे अन्ध वेलामें अन्धा होय और बुद्धिमान्
अज्ञान भी होवाहै ४ हेकुन्तीनन्दन धनकेदेखनेसे महादुःखी शत्रुत
करने के अभिलाषी दुष्टचित्त शत्रुलोग प्रत्यक्षमें मनुष्योंके मित्रोंको
शत्रुबना देखतेहैं ५ बड़ाभाईवंशकी वृद्धिको करके फिर नाशभी क
देताहै और बड़भाईही उससब कुलभरेको मारताहै जिसमेंकिआप
उत्पन्नहुआ है फिर जो बड़ाभाई छोटेभाइयों का पोषणनकरे व
बड़प्पनके अधिकारसे अलग धनके भागसेरहित होकर राजाकरके
भी दण्डदेनेके योग्यहै ६।७ अन्यायकरनेवाला मनुष्यनिस्संदेहपा
लोकोंको ऐसे जाताहैजैसे कि वेतके वृक्षका लगानेवाला फल पु
से रहित होताहै ८ जिसकुलमें पापीपुरुष उत्पन्नहोताहै उसमेंस
अनर्थहै अपकीर्त्ति को उत्पन्नकरताहै और शुभकीर्त्ति को नाशक
देताहै ९ विपरीतकर्ममें नियत होकर सब सहोदर भाईभी भोगपा
के योग्य नहींहैं बड़ाभाई अपने छोटेभाईको भागन देकर सबधनक
अपने पुत्रादिकों के बिवाहमेंव्यय न करे ९।१० जोभाईअपनेपिता
धनकोखर्च न करता अपने परिश्रम से धनका प्राप्तकरनेवाला औ
परदेशमें निवास करताहै तो उसकोअधिकारहै किजोउसकी इच्छ
नहोय तो अपना उपार्जित किया हुआ धन देनेके योग्य नहींहै ज
भाग न पानेवाले भाइयों से सबको मिली हुई जीविका के कार
उसको सन्देहहै तो पिता किसीदशामें भी पुत्रको अलग भाग
दे ११।१२ जो स्त्री अथवा छोटाभाई दुष्टकर्मीहैशुभकर्मी नहींहै तोभ
बड़ाभाई उसका अपमान नकरे किन्तु जो कल्याण है उसी क
करे १३ धर्मज्ञ लोग धर्मकोही कल्याण रूप कहते हैं दश आचा
र्य्योंको तो उपाध्याय और दश उपाध्यायों को पिता १४ और द
पिताओंको माता किन्तु संपूर्ण पृथ्वी को भी अपनी महत्वता

तिरस्कार करतीहै माताके समान गुरू नहींहै १५ माताकी बड़ी महत्वताहै इसीसे मनुष्य उसकी प्रतिष्ठा करते हैं हे भरतबंशी पिताके मरनेपर बड़ाभाई भी पिताके समानहै १६ वही बड़ाभाई अपने छोटे भाइयों को जीविका देनेवाला होकर उन्होंका पोषण करे सब छोटेभाई उसकी इच्छानुसार कर्मोंको करके उसको सदैव नमस्कार करें १७ जैसे कि पिताके पास अपना निर्बाह करते थे उसीरीतिसे उस बड़ेभाई के भी पास अपना निर्बाह करें हे भरतवंशी यह माता पिता शरीर को उत्पन्न करते हैं १८ और गुरूके उपदेशसे जो द्वितीय जन्महै वह रूपान्तरदशा से रहित सत्य और अविनाशीहै हे भरतर्षभ बड़ी बहिन भी माताके समान है १६ वह बड़े भाई की स्त्रीभी माताके समान गिनी जाती है जिसका कि बाल्यावस्था में स्तन पान किया होय २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेज्येष्ठकनिष्ठवृत्तिर्नामपंचाधिकशततमोऽध्यायः १०५ ॥

एकसौछाका अध्याय ॥

युधिष्ठिर ने पूछा कि हे पितामह चारोंबर्ण किन्तु सब म्लेक्षों की भी ऐसीही बुद्धि सब व्रतादिक करने में है इसका कारण मैं नहीं जानताहूं १ हे पितामह मैंने सुनाहै कि वह नियम ब्राह्मण और क्षत्रियों सेही करने के योग्य हैं उन्होंके व्रतों में किसप्रकार के कर्म करने के योग्य हैं २ हे राजा सब के नियम और व्रतोंको वर्णन कीजिये और हेतात वह व्रत करनेवाला मनुष्य किसगति कोपाताहै ३व्रत पवित्र उत्तम और उन्नत स्थानवाला है हे नरोत्तम इसलोक में व्रतकरके किस फलको पाताहै ४ कौनसे कर्मके द्वारा अधर्मसे छूटताहै और किसरीति से धर्म को पाताहै किसप्रकारसे स्वर्गको पाताहै हेराजा व्रत करके उसको कौनसी बस्तु दानकरने के योग्यहै और जिस धर्मसे सुखपूर्व्वक मनोरथोंको प्राप्तकरे उस को आप कहिये ५।६ धर्मके सिद्धान्त जाननेवाले शंतनुकेपुत्र भीष्म

जी ने इसवचनको सुनकर धर्मज्ञ धर्मपुत्र राजायुधिष्ठिरसे यहवचन कहा ७ हे भरतर्षभ राजा युधिष्ठिर निश्चय करके इन उत्तम गुण वाले व्रतोंकी विधिके प्राचीन वृत्तान्तको सुनाहै ८ अर्थात् हे राजा मैंने पूर्व्व समयमें अंगिरा ऋषिका दर्शनकिया और जैसा तुमनेमुझ सेपूछाहै उसीप्रकार मैंने भी उस तपोधनसेयही वृत्तान्तपूछाथा ९ हेभरतर्षभ मेरे इसप्रश्नको सुनकर उस अग्निकेपुत्र भगवान अंगिराऋषिने व्रतकी पवित्र विधिका वर्णनकिया १० अंगिरा बोले कि हे पुरुषोत्तम कुरुनन्दन ब्राह्मण और क्षत्रियोंमें तीनदिनका व्रत नियतकियागया फिर एकदिन दोदिन और तीनदिनके व्रतकाभी उपदेशकिया ११ वैश्य और शूद्रोंनेमोहसे तीनरात्रि अथवा दोरात्रि का जो व्रतकहा उनदोनों व्रतोंका फलनहींहै १२ दिनमें दो समय दोबार भोजन करना नियतहै इसलिये वैश्य और शूद्रोंमें यहव्रत कहाजाताहै कि वह दो दिनतक तोएकबार भोजनकरें और दोदिन दोनों समयपर धर्मज्ञ देखनेवाले महात्मा लोगोंने उनके निमित्त तीनरात्रिका व्रतनहीं नियतकियाहै १३ हेभरतवंशी बाह्याभ्यन्तर से शुद्ध जितेन्द्री सावधान मनुष्य पंचमी छठ अथवा पर्णमासी के दिन एकसमयके भोजनके व्रतकेद्वारा १४ दूसरे जन्ममें क्षमावान् रूपवान् औरशास्त्रोंका ज्ञाता उत्पन्न होताहै वह ज्ञानी पुरुष कभी सन्तानहीन और दरिद्री नहीं होताहै १५ जो देवताके पूजन का अभ्यासी मनुष्य पंचमी और छठकेदिन ब्राह्मणोंको भोजनकरवाता है वहकुलमें वृद्धता और प्रतिष्ठाको पाताहै हेकौरव्य कृष्णपक्षकी अष्टमी और चौदशको व्रतकरके १६ नीरोगता पूर्व्वक बलवान् होकर उत्पन्नहोताहै जोमार्गशिर महीनेमें तीसों दिनतक एकसमय भोजनकरे १७ और सामर्थ्यके अनुसार ब्राह्मणोंको भोजन करावे वह रोग औरपापोंसे छूटताहै १८ औरसबकल्याणोंसेपूर्णहोकरसब औषधियोंसे संयुक्त होताहै व्रतकरनेसे नीरोग और बलवान् उत्पन्न होताहै १९ हेकुन्तीनन्दन जो मनुष्य पौषमासमें एकसमयभोजन करके व्यतीतकरताहै वहबड़ा ऐश्वर्य्यमान दर्शनकेयोग्य और की

ति मान उत्पन्न होताहै२०जो सावधान पुरुष माघमहीने को एक समय भोजन करके व्यतीतकरे वह बड़ाधनी होकर अपने सजातियोंमें वृद्धताको पाताहै २१ जोमनुष्य फाल्गुण महीनेको एक समय भोजन करके व्यतीतकरे वहस्त्रियोंमें प्यारो मित्रताको पाता है और वह इसकी आज्ञावर्त्ती होतीहै २२ जो मनुष्य चैत्र महीनेको एकसमयके भोजनकरनेके व्यतीतकरे वहसुवर्णमोती और मणियों से युक्तवड़े कुलमें उत्पन्न होताहै २३।२४ जो जितेन्द्री पुरुष वा स्त्री वैशाख महीनेको एकसमय भोजन करके व्यतीतकरे वह जातिके लोगोंमें प्रतिष्ठाको पाताहै २५ जोमनुष्य वा स्त्री ज्येष्ठ महीने को एक समयके भोजनसे व्यतीतकरे वह अत्यन्त उत्तम बड़े ऐश्वर्य्य को पाताहै२६ निरालस्य मनुष्य आषाढ़ महीनेमें एक समयभोजन के करनेसे वहुत धनवान् और पुत्रवान् उत्पन्न होताहै२७जोसावधान मनुष्य श्रावण महीने में एक समय भोजन करे वह जिस तिसतीर्थोदक के स्नान के फल से युक्त होकर ज्ञाति की वृद्धि करनेवाला होताहै २८ जो मनुष्य भादोंके महीने में एकसमय भोजन करनेवाला होताहै वह गौओंसे युक्त अचलवृद्धियुक्तऐश्वर्य्य को पाताहै २९ इसीप्रकार जो मनुष्य आश्विन महीनेमें एकसमय भोजन करताहै वहपवित्र शरीरसे युक्त वहुतसी सवारी और पुत्रों से युक्तहोताहै ३० जो मनुष्य कार्त्तिक मासमें एकही समयभोजन करे वहवड़ा पुरुषार्थी शुभकीर्त्ति और वहुतसी स्त्रियों का रखने वाला होताहै ३१ हे नरोत्तम यहमहीनोंके व्रतकहे अवतिथियोंके जो नियमहैं उनकोभी सुनो ३२ हे भरतवंशी जो मनुष्य सबमहीनों में एकपक्षके अन्त होनेपर दूसरे पक्षमें प्रतिदिन एकसमय भोजन करताहै वह वहुत गौमणि और अनेक स्त्रियोंका रखनेवाला होता है ३३ (जवएक पक्षमें भोजन न कियाजाय तो जलकापीना योग्य हैक्योंकि जलपान कियेविना जीवन नहींहोसक्ता) जो मनुष्य प्रति महीनेमें तीनदिनतक एकसमय भोजन करके वारह वर्षतक यही नियम करताहै वहऐसे वहुतसे गौओंका स्वामी होताहै जोविमणि

यों से रहित और निष्कण्टक होतेहैं ३४ हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ युधि-ष्ठिरप्रवृत्तधर्म वाले मनुष्यको यहसब नियम बारह वर्षतक करना चाहिये ३५ जो मनुष्य केवल प्रातःकाल और सायंकालही में भोजन करनेवालाहै और उनदोनोंसमयोंके मध्यमेंनहींखाय ३६ औरअग्नि में हवनकरके सदैव अहिंसा में प्रवृत्तहै हे राजावह मनुष्यछः वर्ष में शुद्धहोताहै और निस्सन्देह अग्निष्ठोमके फलको पाताहै ३७ वह शुभकर्मी रजोगुणसे रहित हजारों स्त्री रखनेवाला मनुष्य नृत्यगीतादिसे युक्त अप्सराओंके लोकमें क्रीड़ाकरताहै ३८ और तप्त कंचन मयी प्रकाशमान् बिमानोपर सवार होताहै और पूरेहजार वर्षतक ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठा पाताहै ३९ उसपुण्य के समाप्त होनेपर इस लोकमें आकर प्रतिष्ठाको प्राप्तकरताहै जो मनुष्य एकपूरे वर्षतक प्रतिदिन एकसमय भोजन करनेवाला होताहै ४० वह अतिरात्र यज्ञके फलको पाताहै और दशहजार वर्षतक स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठा पाताहै ४१ फिर उसपुण्यके समाप्त होनेपर इसलोक मेंभी आकर प्रतिष्ठा पाताहै जो मनुष्य एक वर्षतक अपने चतुर्थांश भोजनको करताहै ४२ और सदैव अहिंसायुक्त सत्यबक्ता और जितेन्द्रीहै वह बाजपेय यज्ञके फल को भोगता है और दशहजार वर्षतक स्वर्गलोक में प्रतिष्ठा पाता है ४३ हे कुन्ती नन्दन जो मनुष्य एकवर्षतक अपने भोजनके छठे भागको प्रतिदिन भोजन करता है ४४ वह अश्वमेध यज्ञके फलको पाताहै और चक्रवाक पक्षियों से जुड़ेहुये महाउत्तम बिमानमें चलताहै और चालीस हजारवर्षतक स्वर्गमें आनन्द करताहै ४५ हे राजा जो अपने भोजनके प्रतिदिन अष्टमांश भोजनसे एक पूरेवर्षको व्यतीत करताहै वह मनुष्य गो-मेध यज्ञके फलको पाताहै ४६ और हंस सारस से युक्त विमान् पर चलताहै और पचासहजार वर्षतक स्वर्गमें आनन्द करताहै ४७ हे राजा जो मनुष्य एक पूरेवर्षतक एकपक्षके व्यतीव होनेपरदूसरे पक्षमें भोजन करे भगवान अंगिरा ऋषिने उसको परामासिक अनशन व्रत कहाहै ४८ वह साठहजार वर्षतक स्वर्गमें निवास करता

हेराजा वह स्वर्गमेंसोयाहुआ मनुष्यबल्लिकी बीणानाममधुर
ाले बाजेसे जगायाजाता है ४६ इसलोकमेंजोमनुष्य एकवर्ष
क महीने जलपिये और दूसरे महीनेमें भोजनकरे ५०हेतात
नुष्य विश्वजितनाम यज्ञके फलको पाताहै और सिंहव्याघ्र
विमानमें बैठकर चलताहै ५१और सत्तर हजार बर्षतकस्व-
आनन्द करताहै हेनरोत्तम एक महीनेसे अधिक ब्रतनहीं कहा
है ५२हेराजा धर्मज्ञलोगों ने अनशन ब्रतकी विधिको कहाहै
ो नीरोग और पीड़ासे रहित मनुष्य अनशन ब्रतको करे वह
न्देह प्रति चरणपर यज्ञके फलको पाताहै ५३ और हंसयुक्त
नमें बैठकर स्वर्गको जाताहै और एकलाख बर्षतकस्वर्गमें आ-
करता ५४ अप्सराओंकी कन्याओंके साथ विहार करताहै जो
और पीड़ामान होकरभी अनशन ब्रतको करताहै वह एकलाख
क स्वर्गमें वासकरताहै ५५ और सोयाहुआ कांची और नूपुरों
ब्दोंसे जगाया जाताहै हजारहंसवाले विमानकी सवारीसे चल-
और स्वर्गमें जाकर सैकड़ों स्त्रियोंसमेत क्रीड़ा करताहै ५६इस
कमें निर्बलका बलवानहोना घावकोभरना रोगीकी औषधि क्रो-
क का प्रसन्न होना ५७ धन और प्रतिष्ठासे हीन मनुष्यका
न्न होना और दुःखोंकीचिकित्साको भी देखा परन्तु अविनाशी
र्ममें बुद्धि रखनेवाले स्वर्गाभिलाषी मनुष्यको यहसबबातें अच्छी
ीं मालूमहोतीहैं अर्थात् वह रोगादिकोंके दूरकरनेकोउपायनहीं
ता किन्तु सबको सहाकरताहै ५८ इसीसेसकाम संयुक्तस्वर्णके
ान विमानमें सैकड़ों अलंकृत स्त्रियोंसे भरेहुये स्वर्णमयी बिमा-
ंविहार करताहै ५६ वह स्थिर चित्त सफलसंकल्प पापसे रहित
ो मनुष्य अनशन ब्रतको करता हुआ शरीर को त्यागकर उत्तम
कको पाताहै ६० अर्थात् वह मनुष्य उस बाल सूर्य्यके समान
काशित सुवर्ण के समान तेजस्वी वैडूर्य्यमणि और मुक्ताओं से
क बीणा आदिके बाजोंसे शब्दायमान ६१ देदीप्यपताकाओंसे
ात दिव्य घंटोंसे और हजार स्त्रियों से संयुक्त विमान में सुखसे

वृद्धिको पाता है ६२ हे पांडव उसके अंगों पर जितने रोम कूप होतेहैं वह उतनेही हजार वर्षतक स्वर्गमें आनन्द करताहै ६३ वेद से उत्तम शास्त्र नहींहै माताके समान कोई गुरू नहींहै धर्मसे उत्तम कोई लाभ नहींहै अनशन ब्रत से बढ़कर कोई तपनहींहै ६४ नर-लोक और स्वर्गलोक में ब्राह्मणों से बढ़कर कोई पवित्र करनेवाला नहींहै और ब्रतोंके समान कोई तपकर्म नहींहै ६५ देवताओंनेबिधि के अनुसार ब्रतोंको करके स्वर्ग पायाहै ऋषियों ने ब्रतकेही द्वारा बड़ी २ सिद्धियों को पाया ६६ बुद्धिमान बिश्वामित्रजीने हजारों दिव्य वर्षतक एकही समय भोजनको किया इसीसे ब्राह्मण वर्णको पाया ६७ च्यवन, जमदग्नि, वशिष्ठ, गौतम, भृगु, यह सब गृह-स्थीपने में क्षमावान ऋषि स्वर्ग में गये ६८ पूर्व समयमें अंगिरा ऋषिने यह वृत्तान्त वैश्योंको दरशायाजो मनुष्य दूसरे मनुष्यों को सदैव दरशाता है वहदुःखको नहींपाताहै ६६ हेकुन्तीनन्दन अंगिरा ऋषिने इसविधिको क्रमपूर्वकबर्णन किया है जो मनुष्यइसको पढ़ैगा वा सुनेगा वहपापसेनिवृत्तहोगा ७० और सबसंगोंसे पृथक् होकर रागद्वेष औरमोहादिकोंसे कभी अचेत नहींहोगा और पक्षी आदिके शब्दोंको भी जानकर अबिनाशी शुभकीर्त्ति को पावेगा ७१॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेअनेकविधिदर्शनेषडधिक शततमोऽध्यायः १०६॥

एकसौसातका अध्याय॥

युधिष्ठिर ने कहा कि आपने बिधिके अनुसार यज्ञोंका वर्णन किया और नरलोक स्वर्गलोक दोनोंमें जो इनके गुण हैं वह सब भी यथावत् वर्णन किये १ हेपितामह वहयज्ञ दरिद्रीसे होने असं-भवहैं क्योंकि उन यज्ञों में बहुत से पदार्थ अनेक २ प्रकारके होते हैं २ हे पितामह वह यज्ञ केवलराजा और राजकुमारोंसेही होने के योग्य हैं और जोगुणों से रहित निर्बल अकेले और असहाय हैं

पुरुष उनयज्ञोंको नहीं करसक्के ३ इससे हे पितामह जो विधि
शून्य अवगुणी अकेले असहाय दरिद्री लोगोंसे होसक्की होय४
र उन्हीं यज्ञों के फलके समान फलवाली होय इनको आप
मसे कहिये भीष्मजी बोले हे युधिष्ठिर अंगिराऋषि के वर्णन किये
ये जो व्रत यज्ञों के फलके समान हैं उसको मुझसे समझो ५ अ-
सा धर्ममें प्रवृत्त होकर जो मनुष्य सदैव अग्नि में होम करता
र प्रातःकाल सायंकाल इन्हीं दोनों समयों में भोजन करताहै
ौर दोनों समयों के मध्यमें कभी नहीं खाताहै वह निस्सन्देह
वर्षमें सिद्धहोताहै वह मनुष्य तप्त सुवर्णके रंगके समान विमान
ो पाताहै ६।७ और पद्म वर्षतक उस प्रजापति के लोकमें निवास
रताहै जो कि देवताओं की स्त्रियोंका निवास स्थान नृत्यगीता
कों से शब्दायमान और अग्नि के समान प्रकाशमान है ८
र्मपत्नी से प्रीति रखने वाला जो मनुष्य तीन वर्षतक बराबर
क समय भोजनकरे वह अग्निष्टोम यज्ञके फलको पाताहै ९ जो
नुष्य बहुत सुवर्णकी दक्षिणा वाले इन्द्रके प्यारे यज्ञको करे
ौर सत्यवक्ता दानका अभ्यासी वेद और ब्राह्मणों का रक्षक
सरे के गुण में दोष नलगाने वाला क्षमावान् जितेन्द्री और क्रोध
ा त्यगाने वालाहै वह परमगतिको पाताहै १० फिर दोपद्म वर्ष
क अप्सराओं समेत उस विमान पर निवास करताहै जोकिपांडु
र्ण बादल के समान प्रकाशमान हंसोंके चिन्हों से युक्तहै ११जो
मनुष्य बारह महीने तक अग्निमें होम करता हुआ दूसरे दिन
एक समय का भोजन करे१२ सदैव अग्निहोत्र में प्रवृत्त औरप्रति
दिन प्रातःकाल जगने वाला है वह मनुष्य अग्निष्टोम यज्ञ के
फल को पाताहै १३ और हंस सारसों से युक्त विमान को पाकर
उत्तम स्त्रियों समेत इन्द्रलोक में निवास करता है १४ जो मनुष्य
सदैव बारह महीने तक अग्निमें हवन करता हुआ तीसरे दिनएक
समय भोजन करताहै १५ वह सदैव अग्निहोत्रमें प्रवृत्त प्रतिदिन
प्रातःकाल जगने वाला होकर अतिरात्र नाम यज्ञके उत्तम फलक

पाताहै १६ और मोर हंसोंसे संयुक्त बिमानको पाता है औरसदैव अप्सराओं समेत सप्त ऋषियों के लोकमें निवास करता है १७ हे प्रभु वहां वह तीनपद्म बर्षतक नियम पूर्व्वक निवास करता है १८ जो पुरुष बारह महीने तकसदैव अग्निहोत्रको करता हुआ चौथे दिन एक समय भोजनकरे १९ वह वाजपेय यज्ञके उत्तम फलको पाकर इन्द्रकी कन्याओंकीसवारी से युक्त बिमानको पाता है २० और स्वर्गलोकके इन्द्रलोकमें निवास करताहै और प्रतिक्षण देव राजकी क्रीड़ाओंको देखताहै २१ जो मनुष्य बारहमहीनेतक सदैव अग्निमें हवनकरताहुआ पांचवेंदिन एकसमयभोजनकरताहै २२वह सन्तोषीसत्यवक्ता वेद ब्राह्मणों का रक्षक हिंसारहित दूसरेके गुणों में दोष नलगाने वाला पाप से पृथक् होकर द्वादशाह नाम यज्ञके फलकोपाताहै२३और जांबूनद सुबर्णसेबने हुये हंसोंसेयुक्त प्रकाशित दिव्य बिमान जिसमें पांडुबर्णके गृहबनेहैंउसमें सवार होताहै २४ मनुष्य वहां इकयावन पद्म बर्षपर्य्यन्त सुखसे निवास करताहै २५ जो मुनि बारह महीने तक प्रतिदिन हवन करता हुआ छठवें दिन एक समयपर भोजन करे २६ और सदैव तीनों कालपर स्नानकरने वाला ब्रह्मचारी दूसरे के गुणमें दोष नहीं लगाने वालाहै वह गो-मेधके यज्ञके फलको पाकर २७ अग्निके समान प्रकाशमान हंसमोरों से सेबित अत्यन्त उत्तम सुबर्ण के बने हुये बिमानको पाता है २८ और अप्सराओं के साथ सोया हुआ होकर वहनूपुर और मेखला नाम भूषणों के शब्दोंसे जगाया जाताहै २९ और असंख्य पद्म बर्ष अर्थात् रीछके शरीर में जितने रोम होतेहैं उतने सैकड़े बर्षोंतक ब्रह्म लोकमें प्रतिष्ठा पाताहै ३१ जो मनुष्य बारह महीने तक सदैव अग्नि होत्र करता हुआ सातवें दिन एक समय भोजन करता ३२ मौनता पूर्व्वक ब्रह्मचर्य्यको करता हुआ फूल माला चन्दन आदि मांस मद्यको त्याग करताहै ३३ वह मनुष्य मरुद्गण और इन्द्रके लोकोंको पाताहै और वहां मनोरथोंको प्राप्त करकेदेवताओंकी कन्याओंके से पूजन किया जाताहै ३४ औरबहुत

सुवर्णकी दक्षिणा वाले यज्ञके फलको पाकर असंख्य वर्षतक उन लोकोंमें आनन्द करताहै ३५ देवकार्य्यमें प्रवृत्त क्षमावान होकर जो मनुष्य सदैव हवन करता हुआ एकवर्षतक आठवें दिन भोजन करताहै ३६ वह पुंडरीक यज्ञके उत्तम फलको पाताहै और पद्म वर्णविमान पर चढ़ताहै ३७ कृष्णा सुवर्ण के समान रूपवाली और द्वितीय श्यामा तरुणता और स्वरूपों से अलंकृत भोगवती स्त्रियोंको भी अवश्य पाताहै ३८ जो मनुष्य बारह महीनेतक सदैव अग्नि में हवन करता हुआ नवें नवें दिन भोजन करताहै ३९ वह मनुष्य सदैव अश्वमेध के फलको पाताहै ४० और पुंडरीक नाम प्रकाशित विमानको पाताहै ४१ और प्रकाशित सूर्य्यके समान तेजस्वी दिव्यमालाधारी रुद्रकन्याओंके द्वारा सनातन अन्तरिक्ष में पहुंचाया जाता है और एककल्प लाखकोटि अठारह हजार वर्षोंतक उन लोकोंमें निवास करताहै ४२ जो मनुष्य सदैव बारह महीनेतकनित्य हवनकरता पूरेवर्षतक दशवें२ दिन भोजन करता है ४३ वह सबके चित्तरोचक ब्रह्मकन्याओं के लोकमें जाता है और हजारअश्वमेधके फलको पाकर ४४ नीले और लाल कमल के समान रूपवाली उत्तम कन्याओं के साथ बिहार करताहै ४५ और उस उत्तम विमानको पाताहैजोकि मंडलाकार उत्तमअस्तरणों से अलंकृत समुद्रकी लहरों के समान उत्तम सवारीहै ४६ सिंहोंके शब्दोंसे शब्दायमान विचित्र माला और वज्रोंके स्तंभोंसे अलंकृत है और जिसमें सुन्दर वेदी बनीहैं ४७ और हंससारस पक्षियों के शब्दों से युक्तहै उस बड़े विमान में चढ़ताहै जो मनुष्य ग्यारह दिनके पीछे वर्त्तमान होने पर हव्यको भोजन करे ४८ और सदैव बारह महीनेतक अग्नि में हवन करता दूसरे की स्त्रीमन बचनसे भी नचाहे और मातापिताके वचनोंको मिथ्यावचन न कहै वह उस महाबली विमानमें बैठकर महादेवजीकेपास जाताहै और हजार अश्वमेधके उत्तम फलको पाताहै ५० बिमानोंमें बैठाहुआ स्वायंभू मनुजीको देखे सुवर्ण वर्ण रूपवाली कुमारियां उसको ५१

स्वर्गके भीतर उस रुद्रोंके लोकमें लेजातेहैं जो कि दिव्य और मनका हरनेवालाहै फिर वह पुरुष यज्ञान्त अग्निके समान प्रकाशमान असंख्य वर्षोंतक रुद्रलोकमें निवास करताहै औरइसप्रकार केकिसी २ मनुष्यके निवासकी संख्या लाखकोटि और हजारकोटि बर्षकीहै वह वहां देवता दानवोंके स्वामी शिवजीको सदैव प्रणाम करताहै और शिवजी सदैव उसको दर्शन देतेहैं ५३ जो मनुष्य सदैव बारह महीनेतक बारहवेंदिन भोजनकरताहै वह सर्व मेधयज्ञ केफलको पाताहै ५४ उसकाबिमान बारहसूर्य्यके लोकमेंरचाजाता है जो कि बहुमूल्य मणिमुक्तारत्नोंसे शोभायमान ५५ हंसोंकीमालाओंसे बेष्ठित नागोंकी पंक्तियोंसे युक्त शब्द करनेवाले मोर चक्रबाकादिसे शोभित ५६ बड़े अट्टोंसे संयुक्त ब्रह्मलोक में नियत स्त्री पुरुषोंसे ब्याप्तसदैव आनन्दका स्थानहै यहधर्मज्ञ महाभाग अंगिरा ऋषिने इसरीतिसे कहाहै ५७ जोपुरुष सदैवबारह महीनेतकतेरहवें दिन भोजनकरेवह देवरात्र यज्ञके फलको पाताहै और उस रक्तपद्मोदयनाम बिमानकोपाताहै जोकियानरूपसुवर्ण और रत्नोंकेसमूहों से शोभित ५८।५६ देवकान्याओंसे युक्त दिव्य भूषणोंसे अलंकृत पवित्र सुगंधियोंसे युक्तदिव्य और बायुवाले स्थानोंसे शोभायमान है ६० वहांपर एकदो महापद्म एक यज्ञांत कल्प दशकोटि और पद्म बर्षतक निवास करताहै ६१ गन्धर्वों के गान और भेरी पणव नाम बाजोंके शब्दोंसे सदैव प्रसन्नचित वह मनुष्य देवकन्याओंसे पूजन किया जाताहै ६२ जो पुरुष सदैव बारहमहीनेतक चौदहवें दिन हव्य भोजन करताहै वह महा मेधयज्ञके फलको पाताहै ६३ वर्णनसे बाहर सुन्दर रूपवाली भूषणोंसे अलंकृत देवकन्या विमानोंकी सवारियोंमें उसके पासआतेहैं ६४ और जहां तहां कल हंसोंसे और नूपुर कांचीके उच्च शब्दोंसे जगायाजाताहै ६५ और उन देव कन्याओंके निवासस्थानमें गंगाजीकी बालूके कणों की संख्याके समान वर्षोंतक निवास करताहै ६६ जो जितेन्द्री बारह महीनेतक सदैव हवन करताहुआ एक पक्षके अन्तपर एक समय

भोजन करता है ६७ वह हजार राजसूय यज्ञ के उत्तम फलको पाताहै और उस दिव्य विमान पर चढ़ताहै जो कि मोरोंसे सेवित ६८ मणि गणोंसे जटित जातरूप नाम सुवर्णसे शोभित दिव्य भूपणोंसे अलंकृत उत्तम स्त्रियोंसेव्याप्त ६९एक स्तंभ चारद्वार और सात महल रखनेवाला अच्छी मंगलीवैजयन्ती नाम पताका और गानोंके शब्दों से शोभायमान दिव्य गुणोंसे युक्तहै ७० अथवा मणिमोती मूंगोंसे शोभित विजलीके समान प्रकाशमान विमानको प्राप्त करताहै और घोड़े हाथीकीसवारीरखनेवाला वह पुरुषहजार युगोंतक निवास करताहै ७१ जो पुरुष सदैव बारह महीनेतक सोलहवें दिन एकसमय भोजनकरे वह सोमयज्ञ के फलको पाता है ७२ वह सदैव चन्द्रमा की कन्याओं के निवासस्थान में नियत होताहै और सौमीय गन्धको शरीर पर लेपन करनेवाला और स्वेच्छाचारीहोताहै ७३ विमान में बैठाहुआ वह पुरुष सुन्दरदर्शन वाली चित्तरोचक स्त्रियोंसे पूजन किया जाताहै और इच्छाभोगोंसे भी तृप्त कियाजाताहै ७४ यह मनुष्य एकसौ चौदह पद्मवर्ष तक और एक महा कल्प तक स्वर्ग फलको साधन करताहै ७५ जो मनुष्य बारह महीनेतक सदैव अग्निमें हवन करता सत्रहवें दिन वर्त्तमान हुये हव्यको भोजन करता है ७६ वह बरुण लोक इन्द्र लोक रुद्रलोक मरुत् लोक शुक्रलोकऔर ब्रह्मलोकको पाताहै ७७ वहां देव कन्याओंकेद्वारा आसनपूर्व्वक सेवनकिया जाताहै भूलोक पूर्व्वक देवऋषि और विश्वलोक को भी देखताहै वहां इन्द्रकी बारह कन्या जो कि स्वरूपमान चित्तकी रोचक और अच्छे प्रकारसे अलंकृत होतीहैं वह उसको विहार करवातीहैं ७९ हेप्रभुजबतक सूर्य्य और चन्द्रमा आकाशमें भ्रमण करतेहैं तब तक वहसुधामृत रसका भोजन करनेवाला पंडित मनुष्य स्वर्गका भोग करता है ८० जो मनुष्य बारह महीनेतक सदैव अठारहवें दिन एकसमय भोजन करे वह उस सातवें लोकको देखताहै ८१ जो कि अच्छे शोभायमान ऐसे रथोंसे जिनमें देवताओं की कन्या सवारहैं और

जिनमें आनन्दके शब्दहोरहेहैं वहां वह पुरुष पीछे से आगेकीओर को सन्मुख कियाजाताहै और देवकन्याओंकी सवारियों समेतवाले ऐसे दिव्य विमानपर चढ़ताहै जोकि सिंहव्याघ्रसेसंयुक्त शब्दवाले बादलके समान शब्दायमानहै वह वहांपर हजार कल्पतककन्याओंके साथ आनन्द करताहै और अमृतके समान उत्तम सुधारसको भोजन करताहै ८४ जो पुरुष बारह महीनेतक सदैव उन्तीसवें दिन एक समय भोजन करताहै वह सातलोकोंको देखताहै ८५ और उत्तम स्थानोंसे शोभित ऐसे विमानको पाताहै जो कि अप्सराओंके समूहोंसे सेवित सूर्य्यके समान प्रकाशमानहै और जिसमें गंधर्व लोग शरोधका गान करतेहैं ८६ वहां पर दिव्य पोशाकोंसे अलंकृत महा शोभित शोकसे रहित वह अत्यन्त असंख्य वर्षोंतक देवताओंकी श्रेष्ठ स्त्रियोंके साथ आनन्द करता है ८७ सत्यवक्ता व्रतका करनेवाला जो पुरुष बारह महीनेतक सदैव वीसवें दिन एक समय भोजन करताहै ८८ मांसकात्याग करनेवाला ब्रह्मचारी और सब जीवोंकी वृद्धिमें प्रवृत्तहै वह क्रीड़ाके योग्य बहुत बड़े बारह सूर्य्योंके लोकोंको अच्छीरीति भोगताहै ८९ गन्धर्व अप्सरा और दिव्यमाला चन्दनसे प्रसन्न सुवर्णमय दिव्य बिमानोंसे आगे किया जाताहै ९० जो पुरुष बारह महीनेतक इक्कीसवेंदिन एक समय भोजन करताहै ९१ वह पुरुष सदैव सुखोंको भोगता शुक्रइन्द्र अश्विनी कुमार और मरुद्गण नाम देवताओंके लोकोंको प्राप्त करताहै ९२ दुखोंको न जानता उत्तमबिमान परबैठा श्रेष्ठ स्त्रियोंसे सेवित वह देवताओंके प्रभुकीसमान क्रीड़ा करताहै९३ जो मनुष्य बारह महीनेतक बाईसवें दिन एकसमय भोजन करताहै९४ अहिंसा युक्त सत्य बक्ता दूसरेके गुणोंमेंदोषनलगानेवाला वह सूर्य्यके समान तेजस्वी पुरुष वसुओंके लोकोंको पाताहै९५कामचारी सुधा का आहार करनेवाला उत्तम बिमान में दिव्यभूषणों से अलंकृत वह पुरुष देव कन्याओंके साथ क्रीड़ा करताहै ९६ स्वल्प भोक्ता जितेन्द्री होकर जो मनुष्य बारह महीने तक तेईसवें दिन एकसमय

भोजन करे ६७ वह वायु शुक्र और इन्द्र के लोकमें जाताहै और अप्सराओं से पूजित स्वेच्छाचारी होकर विहार करने वालाहोता है ६८ बहुत गुण वाले उत्तम विमान में नियत और दिव्य भूषणों से अलंकृत वह पुरुष देव कन्याओं के साथ क्रीड़ा करताहै ६६जो पुरुष बारह महीनेतक सदैव हवन करता हुआ चौबीसवें दिन एक समय हव्यका भोजन करताहै १०० वह दिव्य माला बस्त्रोंसे अलंकृत दिव्य चन्दनादि से लिप्त शरीर प्रसन्न चित्त होकर बारह सूर्य्योंके लोकमें निवास करता हुआ १०१ हंस युक्त चित्त रोचक सुवर्णके विमानमें हजारों लाखों देवकन्याओं के साथक्रीड़ा करता है १०२ जो पुरुष बारह महीने तक अग्निहोत्र करता सदैव पचीसवेंदिन एक समय भोजन करे वह उसवड़े विमान में सवार १०३ रत्नोंसे आच्छादित कियाजाता है जोकि सिंह व्याघ्रसे युक्त बादल की गर्जनाके समान शब्दायमान आनन्द के घोषोंसे युक्त है १०४ देव कन्याओंसे शोभित सुवर्णमय स्वच्छ दिव्य चित्तरोचकहै १०५ और अमृत के समान उत्तम सुधारस से जीवनको करता उन हजारों स्त्रियों से संयुक्त लोकमें हजार कल्प तक निवास करताहै १०६ जोमनुष्य सदैव सावधानी से अल्प भोजनवाला होकर बारहमहीनेतक छब्बीसवें दिन एक समय भोजन करता १०७ जितेन्द्रीसंसार से वैराग्यवान वह भाग अग्निमें हवन करताहै वह शरीर त्यागने के पीछे अप्सरागणों से पूजित १०८सातों मरुद्गणों के लोकों को पाताहै और वसुओंके भी लोकों को भोगताहै स्फटिक मणियों के बने सबरत्नों से अलंकृत दिव्य विमान पर १०६ दो हजार दिव्य युगोंतक गन्धर्व और अप्सराओं से पूजित होकर अपने दिव्यतेजसे अच्छे आनन्दको करताहै ११० जो पुरुष बारह महीने तक सदैव हवन करता हुआ सत्ताईसवें दिन एकसमय भोजन करताहै १११ वह बड़े फल को पाकरदेवलोकमें होके निर्लोभतासे आनन्दकरता है ११२ हे राजा यह व्रत देवऋषि और राजऋषि लोगोंका किया हुआहै उत्तम विमान पर नियत दिव्य शरीर वाला वह पुरुष वहां

निवास करता हुआ ११३ तरुणता से पूर्ण अत्यन्त चित्त रोचक स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करताहुआ तीनहज़ार कल्प युगतक सुखसे निवास करताहै ११४ जो मनका जीतने वाला जितेन्द्री पुरुष बारह महीनेतक अट्ठाईसवें दिन सदैव एक समय भोजन करे ११५ वह देव ऋषियों के भोगने वाले बड़े फलको अच्छी रीतिसे भोगता हुआ तेजसे निर्मल सूर्य्यके समान प्रकाश करताहै ११६ और कमल शरीर अच्छी तेजस्विनी स्थूल कुचा वृहज्जंघा वाली दिव्य भूषणों से अलंकृत स्त्रियों के साथ ११७ दशलाख कल्प वर्षपर्य्यन्त उस दिव्य बिमानमें बिहार करताहै जोकि स्वेच्छाचारी सूर्य्य के समान प्रकाशित और अभीष्ट मनोरथों से पूर्णहै ११८ सच्चेव्रत में नियत जो पुरुष बारह महीने तक उन्तीसवें दिन एक समय भोजन करे ११९ उसके वह दिव्य शुभ लोक हैं जो देवता और राज ऋषियों से पूजितहैं वह मनुष्य उस बिमान को अच्छेप्रकार से पाताहै जोकि दिव्य सूर्य्य चन्द्रमाके समान सदैवप्रकाशित १२० जातरूप सुवर्ण का बनाहुआ योग्यरत्नों से जटित अप्सरागणों से व्याप्त गन्धर्वों से शब्दायमान है १२१ वहां पर दिव्य भूषणों से अलंकृत चित्तरोचक तरुणता के मदमें भरीहुई शुभ स्त्रियां उसको बिहार करातीहैं १२२ हे महाराज वह भोगमान तेजसेयुक्त वैश्वानर अग्निके समान प्रकाशित दिव्य शरीर से देवता के समान शोभाय मान पुरुष १२३ अष्टबसु उन्चास मरुद्गण साध्यगण अश्विनी कुमार और ग्यारह रुद्रोंके लोकों को पाताहै १२४ जो जितेन्द्री मनुष्य बारह महीनेतक महीनेकेअन्तमें एकदिन एकसमय भोजनकरे वह ब्रह्मलोक कोपाताहै १२५ वहां सुधा रसका आहारकरने वाला सबके चित्तका हरने वाला वह शोभाय मान पुरुष अपने तेज और शोभासे सूर्य्यके समान सुशोभितहोताहै १२६ दिव्यमाला अस्तरणोंका धारण करनेवाला दिव्यचन्दनादि से लिप्त सुखोंमें प्रवृत्त दुःखोंसे अज्ञात १२७ विमान में बैठा हुआ वह पुरुष अपने तेजसे प्रकाशमान होकर स्त्रियोंसे प्रतिष्ठा पाताहै और रुद्र

देव ऋषियों की कन्याओं से पूजा जाताहै १२८ नाना प्रकारकी क्रीड़ा और वहुत रीतोंकी प्रीति और वहुत प्रकारकी मधुरवाणी और अनेक रंगसे संग करनेवाली स्त्रियोंसे १२६ उस विमान पर प्रसन्न कियाजाता है जोकि आकाश रूप जिसके पूर्व में सूर्य्य वैडूर्य मणि के समान प्रकाशमान पीछेके चन्द्रमाके समान तेजस्वी और तीन वादलोंके समान प्रकाशित १३० दक्षिणमें रक्त वर्ण नीचेको और नीलामंडल रखने वाला बाईं ओरको झुकाहुआ विचित्र रूपहै वह पूजित और स्त्रियों आदिको साथ रखनेवाला पुरुष उस विमानपर नियत होताहै१३१ जितने हजारवर्षतक जंबूद्वीपमें वर्षा होती है उतनेही वर्षतक यह बुद्धिमान पुरुष ब्रह्मलोक में निवास करताहै १३२ हे तात वर्षाऋतु में वर्षा करनेवाले वादलकी जितनी पानीकी बूंदें पृथ्वी पर गिरती हैं वह देवता के समान तेजस्वी पुरुष उतनेही वर्षतक निवास करताहै १३३ एक महीनेका व्रत रखनेवाला मनुष्य दशवर्षमें उत्तम स्वर्गको पाताहै और महर्षी होकर शरीरसमेतही स्वर्गको जातहै १३४ सदैवजितेन्द्री क्रोध रहित क्षुधाको जीतनेवाला सावधान संध्योपासनादि कर्म करने वालापवित्र मनुष्य अग्नियों में हवन करता हुआ १३५ वहुत नियम पूर्वक भोजन करने वालाहै और आकाश के समान निर्मल है और उसकातेज सूर्य्यके समानहै १३६ हेराजा उस प्रकारका मनुष्य अपने शरीरसमेत स्वर्गमें जाकर देवताके समान पवित्र स्वर्गको इच्छाके अनुसार भोगता है १३७ हेभरतर्षभ यह यज्ञोंकी उत्तम विधि जिसका फल व्रतरूप है उसको मैंने क्रम पूर्वक वर्णनकिया १३८ हेराजा जैसे कि दरिद्री मनुष्योंको यज्ञका फल मिलता है उसी प्रकार इस व्रतको करके परमगतिको भी पाता है १३९ जोकि देवता और ब्राह्मणों के पूजनमें तत्परलोग हैं हे भरतर्षभ यह विधि उन्हीं लोगोंके निमित्त कही गईहै १४० जो आचारज्ञता सावधान वाह्याभ्यन्तरसे पवित्र द्वेष छल आदिसे पृथक् धर्मसे चलायमान और कंपित न होनेवाले महात्माओं में

होती है इसमें तुमको किसी प्रकार का सन्देहमतहो १४२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेउपवासविधिनामसप्ताधिकशततमोऽध्यायः १०७ ॥

एकसौआठका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोलेकि हे पितामह सब तीर्थोंमें श्रेष्ठ जो तीर्थहै और जिसमें उत्तम पवित्रता होसक्तीहै वह मुझसे कहने के योग्यहै १ भीष्मजी बोलेकि निश्चय करके सबतीर्थ गुणवान्हैं परन्तु ज्ञानी का जो तीर्थ और शौचहै उसको तुमसावधानीके साथ सुनो २ मन रूपी तीर्थमें सत्यता तोधृतिका देनेवाला अगाध और निर्मलजल है उसमानसरूपी तीर्थमें सत्यताको धारणकरके सदैवस्नानकरना चाहिये ३ निष्काम होना सत्यकहना मृदुता सबजीवोंमें अहिंसा दया बाह्याभ्यन्तरसे जितेन्द्री होना यहसबगुण शौचतीर्थ के समान हैं ४ जो ममता अहंकार सुखदुख आदियोग और स्त्री आदि परि-ग्रहोंसे पृथक् पवित्र मनुष्य भिक्षा का भोजन करतेहैं वहतीर्थरूप हैं ५ तत्त्वज्ञ और अहंबुद्धि से रहित पुरुष उत्तमतीर्थ कहा जाताहै और सबबातोंका जो बिचारहै यही तेरे शौचका लक्षणहै ६ जिन लोगोंके आत्माका सतोगुण रजोगुण तमोगुण पृथक् हुआ है और शौच अशौच में अच्छी रीतिसे प्रवृत्त होकर अपने कार्य्यके निश्चय करनेवाले सर्बत्यागमें आरूढ़ सर्वज्ञसमदर्शीपवित्र और शौच अर्थात् चित्तकी पवित्रता पूर्व्वक आचारकीपवित्रताकेइच्छावानहैं वहपुरुष तीर्थरूप हैं ८ जलसे अंगोंका भिजोनेवाला स्नानकर्त्ता नहीं कहा जाताहैकिन्तु जो जितेन्द्री होकर स्नानकरने वालाहै वहस्नानकर्त्ता कहाताहै और वहीबाह्याभ्यन्तरसे शुचिहै ९ व्यतीत कालकीवस्तु-ओंकी जिनको अपेक्षानहींहै और प्राप्तहुयेमनोरथोंमें जिनकीममता नहींहै और अनिच्छावान् हैं वहीउनका शौच है १० मुख्य करके शरीरकीपवित्रता बिज्ञानहै और कुछ न चाहना यहीचित्तकोस्वच्छ ताहै ११ गुरु पूजनादि गुणोंसे जोपवित्रता है वही उत्तमताहै और

चित्तकी पवित्रता और है इसकेपीछे पवित्रता तीर्थ है जो पवित्रता कि ज्ञानसे होतीहै वही श्रेष्ठ गिनी जातीहै १२ जो पुरुष चित्त के द्वाराउस मानसतीर्थमेंब्रह्मज्ञान रूपजलसे स्नान करताहै वहस्नान तत्त्वदर्शी पुरुपकाहै १३ अच्छीरीति स्नानादि शौचकरनेवाले सदैव सावधानचित्त शुद्ध गुणसे युक्त मनुष्य सदैव पवित्र हैं १४ हे भरतवंशी यह शरीर में वर्त्तमान तीर्थ मैंने वर्णन किये अबपृथ्वीके जो २ पवित्र तीर्थ हैं उनको भी सुनो १५ जैसेकि शरीरकेमुख्य २ स्थान पवित्र कहेजातेहैं उसी प्रकार पृथ्वीकेभी मुख्य २ जल और भाग पवित्रहैं १६ जोपुरुष तीर्थके कीर्त्तन स्नान और पितृतर्पण से तीर्थोंपर पापको दूरकरतेहैं वहसुख पूर्व्वक स्वर्गकोजातेहैं १७ जैसेकि पुरुषसाधुओंकी सेवापरिचर्य्या और पृथ्वी जल के तेजसे बड़े पुण्योंके भागीहैं उसीप्रकारमन और पृथ्वीके दोनोंपवित्र तीर्थों में जो पुरुपस्नान करताहै वह शीघ्रही सिद्धी को पाताहै १८ जैसे कर्मसे रहित बल और बलसेरहित कर्मइस संसार में मनोरथों को सिद्ध नहींकरताहै और बलसे अच्छी रीतिसे मिलाहुआ कर्मअच्छे प्रकार करके पूरा होताहै उसी प्रकार पवित्र मनुष्य अपने शरीर की शुद्धता रूपशौचादिको तीर्थरूप शौचसेमिलाकर सिद्धीकोपाता है यहदोनों प्रकारका शौचउत्तमहै २०।२१॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशौचानुपृच्छानामअष्टाधिक शततमोऽध्यायः १०८॥

एकसौनवका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि सबव्रतों में जो व्रतकल्याण रूप और बहुत बड़े फलवालाहै और जोलोकमें संशयसे रहितहै उसको आपमुझ से कहनेके योग्यहो १ भीष्मजी बोलेकि हेराजा ब्रह्माजीका कहा हुआ वहव्रत जिसको करकेपुरुष निस्सन्देह परलोक को जाताहै वहमुझसे सुनो २ मार्गशिर महीनेकी द्वादशीमें दिन और रात्रिमें केशवजीको पूजनकरनेसे अश्वमेध यज्ञ के फलको पाकर सबपापोंसे

मुक्त होताहै सर्वत्रद्वादशी शब्दसेद्वादशी युक्तएकादशीजानो ३ इसी प्रकार पौषमहीनेमें नारायणजीका पूजना योग्यहै जोपौषमें पूजन करताहै वह वाजपेय यज्ञके फलकोपाकर बड़ी सिद्धीको पाताहै ४ माघ महीनेकी द्वादशीकेदिन अहर्निश माधवजीके पूजनेसे राजसूय यज्ञके फलको पाकरअपने सबकुटुम्बभरको उद्धारकरताहै ५ फाल्गुन महीनेमें गोविन्दजीके पूजनसे अतिरात्र यज्ञके फलकोपाकर चन्द्र-लोकको जाताहै ६ चैत्रमहीनेकी द्वादशीको अहनिशं गोविन्दजीके पूजनकरनेसे पुण्डरीक यज्ञके फलको पाकर देवलोकको जाताहै ७ बैशाखमहीनेकी द्वादशीमें मधुसूदनजीके पूजनसे अग्निष्ठोम यज्ञके फलकोपाकर चन्द्रलोकको जाताहै ८ ज्येष्ठ महीने की द्वादशीको त्रिविक्रमजीको पूजकर गोमेध यज्ञके फलकोपाकर अप्सराओं के साथआनन्द करताहै ६ आषाढ़महीनेकी द्वादशी में बामन जीको पूजनकर नरमेधयज्ञके फलको पाकर वड़ेपुण्यको प्राप्तकरताहै १० श्रावणकी द्वादशीमें श्रीधरजीके पूजन से पंचयज्ञ के फलको प्राप्त करके विमानमें बैठा आनन्द करता है ११ भाद्रमहीने में हृषीकेश जीको पूजन करके सौत्रामणि यज्ञ के फलको पाकर पवित्र होता है १२ कार्त्तिक महीनेकी द्वादशीको दामोदरजी को पूजकर स्त्री पुरुषदोनों निस्सन्देह गोमेध यज्ञके फलको पातेहैं १३ । १४ इस रीतिसे जो पुरुषएक पूरेबर्षतक पुण्डरीकाक्ष जीको पूजन करेवह पूर्व्वजन्मके सबवृत्तान्तोंके स्मरणताको पाताहै और वहुतसे सुवर्ण और स्वरूपकोभी पाताहै १५ और जो प्रतिदिन उसकी सारूप्य मुक्तिको प्राप्तकरताहै अर्थात् ध्यानकेद्वारा कीटभृंगीके न्यायकेअनु सारबिष्णुरूपका ध्यानकरताहै और वार्षिकव्रत पूरेहोनेपरब्राह्मणों को भोजनकराताहै वा घृतकादानकरताहै १६ इससेबढ़कर बिष्णु जीकाकोईव्रतनहीं होताहै आपभगवान् ब्रह्माजीने इस प्राचीनव्रत को बर्णनकियाहै १७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेविष्णोर्द्वादशकनामनवाधिक शततमोऽध्यायः १०६ ॥

एकसौदशका अध्याय ॥

वैशंपायन कहतेहैं कि बड़ेज्ञानी युधिष्ठिरने उनशर सैथापर प
हुयेकौरवोंके पितामह भीष्मजीसे यहपूछा १ कि अज्ञानी लोगोंक
स्वरूपवान् होना प्रारब्धवान् होना और चित्तका अभीष्ट कैसेह
सक्ताहै और किसरीतिसे धर्मअर्थ कामसेयुक्त होकर सुखका भाग
होताहै २ भीष्मजीबोले हे राजेन्द्र जब मार्गशिरशुदी प्रतिपदा
दिनमूल नक्षत्रहो तब चान्द्रव्रतको प्रारंभकरे अर्थात् पुण्याहबाच
आदिकेद्वारा चित्तके मनोरथको प्राप्तिकेअर्थ व्रतको अंगोकार क
आत्माको चन्द्रमासे लयकरके उसचन्द्रमाके अंगोंमें उनके देवता
समेत नक्षत्रोंको नियतकरके मंत्रोंसे और जपहोम आदिसे उनक
आराधन करनाचाहियेइसरीतिसेपूर्णमासीतक व्रतकरके औरव्रत
समाप्तहोनेमें घृतसेहवनकोकरकेआचार्य्यको घृतदे ३ मूलनक्षत्र
तो दोनोंचरण कल्पनाकरे रोहिणी नक्षत्रको जंघामें नियतकरे अ
श्विनी नक्षत्रको सक्थिनी पूर्व्वाषाढ़ और उत्तराषाढ़को दोनों ऊ
नियतकरे पूर्वाफाल्गुणी और उत्तराफाल्गुणी नक्षत्रको गुह्यन
अंगकरे और कृत्तिकानक्षत्रोंको कटिका स्थानजाने ४ पूर्व्वाभाद्र
और उत्तराभाद्रपदको नाभिजाने रेवती नक्षत्रको नेत्रमंडल धनि
को पीठअनुराधानक्षत्रको उदर ५ विशाखानक्षत्रको दोनोंभुजा ह
नक्षत्रकोदोनोंहाथ पुनर्वसुनक्षत्रको उंगलियां श्लेखाको नखनि
करे ६ और हेराजेन्द्र ज्येष्ठानक्षत्रकोग्रीवा श्रवणको दोनोंकान पु
नक्षत्रको मुखस्वाती नक्षत्रकोदांत और ओष्ठकल्पनाकरे ७ शतभि
नक्षत्रकोहास्य मघानक्षत्रको नाकमृगशिरनक्षत्रको नेत्रचित्रानक्ष
कोललाटकल्पनाकरे ८ भरणीनक्षत्रकोशिरआर्द्रा नक्षत्रको केशनि
करेजवयहव्रतसमाप्तहोजायतववेदज्ञब्राह्मणकोघृतकादानकरे ९
वहव्रतकाकरनेवाला अच्छाऐश्वर्य्यमान दर्शनीयज्ञानीऔर पूरे
वालाहोकरऐसेजन्मलेताहैजैसेकि पूर्णमासीमेंचन्द्रमाहोताहै १०

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेनक्षत्रांगवर्णनोदशाधिकशततमोध्यायः॥

एकसौग्यारहका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि हेसर्वशास्त्रज्ञ महाज्ञानी पितामह इस पृथ्वी के जीवोंकी उत्तम संसार विधिको सुनाचाहताहूं १ हे राजेन्द्र इस पृथ्वीपर किसरीतिसे कर्मकरने वाले मनुष्य उत्तमस्वर्गको औरनर्क को पातेहैं २ मृतक होकर मनुष्य अपने शरीरको काष्ठ मृत्तिकाके समान त्यागकर परलोकको जातेहैं तबकौन उनकेसाथ जाताहै ३ भीष्मजी बोलेकि यहबड़े बुद्धिमान् भगवान् वृहस्पति जी आते हैं तुम इन्हीं महाभागसे यहगुप्त और प्राचीनभेदपूछो ४ क्योंकियह बात दूसरा कोईनहीं कहसक्ताहै वृहस्पतिजीके समान कोई कहने वाला किसीस्थानमें नहींहै ५ वैशंपायनबोले कि इसरीतिसे भीष्म और युधिष्ठिरके वार्त्तालाप करतेही करते अत्यंत पवित्रात्मा भगवान् वृहस्पतिजी स्वर्गसे आपहुंचे ६ इसकेपीछे धृतराष्ट्रको आगे किये हुये राजा युधिष्ठिर और उनसब उत्तम २ सभा सदोंने उठकर उनका पूजनकिया ७ फिर धर्मपुत्र राजायुधिष्ठिर ने भगवान् वृहस्पतिजीके समीपजाकर न्याय और सिद्धांतके अनुसार इसप्रश्न को पूछा ८ हे सर्वशास्त्रज्ञ अशेष धर्मोंकेज्ञाता भगवान् वृहस्पतिजी जबकि यहजीवात्मा मरताहै और अपने शरीरको काष्ठमृत्तिका के समान इसी पृथ्वीपर छोड़कर जाताहै ९ उससमय उसके साथ पिता माता भाई पुत्र गुरू इष्ट मित्र ज्ञाति बांधव नातेदार इत्यादि मेंसे कौन उसके साथजाताहै १० वृहस्पतिजीबोले हेराजा अकेलाही उत्पन्न होताहै अकेलाही नाशहोताहै अकेलाही आपत्तियोंसे निवृत्त होता और अकेलाही दुर्गतीको पाताहै ११ माता पिताभाई पुत्र गुरू इष्ट मित्र ज्ञात कुटुम्बनातेदार आदिकोईभीउसकेसाथीनहीं होते १२ मनुष्य मृतक शरीरको काष्ठ मृत्तिकाके समान त्यागकर दोचारघड़ी रोनापीटना करके मुखमोड़ २ करचलेजातेहैं १३ उन शरीरके त्यागने वालोंकेसाथ केवल धर्महो पीछे २ जाताहै इससे इस सहायक और साथमेंरहनेवालेधर्मको मनुष्यसदासेवनकरे १४

धर्मसेयुक्त प्राणी स्वर्गमें परमगतिको पाताहै और अधर्म से युक्त मनुष्य नर्कको पाताहै १५ इसीहेतुसे पंडित मनुष्य अपने धर्म और न्यायकेद्वारा पैदाकियेहुये धनसे धर्मको प्राप्तकरें क्योंकि परलोक संबंधी अकेला धर्महीं इसकासाथी होताहै १६ लोभ और मोहसे अपनेशास्त्रको अच्छीरीतिसे न जाननेवाला मनुष्य क्रोधलोभमोह औरभयसे दूसरे पुत्रादिकेही निमित्तकरनेकेअयोग्य कर्मोंको करता है १७ धर्मअर्थ काम यहतीनों संजीवहैं इनतीनोंको अधर्मसे रहित प्राप्त करना उचितहै १८ युधिष्ठिर बोले मैंने आपकाधर्म संयुक्त मनोरथोंका प्राप्त करनेवाला उत्तम वचनसुना अब मैं शरीरकेअंगों के वृत्तान्त जाननेकी इच्छा करताहूं १९ मनुष्योंका मृतक शरीर अव्यक्त रूपप्राप्त करनेवाला जो अत्यन्तसूक्ष्महोकर दृष्टिसेभी गुप्त है उसकेसाथ धर्मकैसे जाताहै २० वृहस्पतिजी बोले कि पृथ्वी जल तेजवायु औरआकाश मनबुद्धि यमराज आत्मा यह सब साथहोकर सदैव धर्मको देखतेहैं २१ इसलोकमें यह पृथ्वीआदि दिनरात्रिसब जीवोंके साक्षीहैं और उसजीवके साथपीछे २ धर्मभी जाताहै २२ हेवड़े वुद्धिमान् अस्थिमांसचर्म वीर्य्य रुधिर यहसवमृतक शरीरको त्यागकरतेहैं २३ इसीहेतुसेधर्मसेयुक्तवहजीवइसलोक और परलोक में सुखसे वृद्धिको पाताहै २४ इसीकारण धर्मसे संयुक्त जीवभीउस धर्मसे फलकोपाताहै औरपंचतत्वोंमें वर्त्तमान देवतालोग इसशुभा शुभ कर्मको देखतेहैं अब औरकथा सुनना चाहताहै २५ युधिष्ठिर ने कहाकि जैसेजीवके पीछे २ धर्मसाथमें जाताहै वहसव आपने वर्णनकिया अवमैं यह जानना चाहताहूं कि वीर्य्य किस प्रकारसे उत्पन्नहोताहै २६ वृहस्पतिजीनेकहा हेराजा शरीरवर्त्ती देवताऔर पृथ्वीजल अग्निवायु आकाश मन यहजिस अन्नको भोजनकरते हैं २७ उनपांचोंतत्त्व और छठेमनके तृप्तहोनेसे उसअन्नके सारांश से वीर्य्य उत्पन्न होताहै २८ फिरस्त्री पुरुषके संभोग के कारण उस वीर्य्यसे गर्भ उत्पन्न होताहै यहसव तुमसेकहा हे पवित्रात्मा अब क्या सुननाचाहताहै २९ युधिष्ठिरने कहा कि जैसेगर्भ उत्पन्नहोता

है वह आपसे मैंनेसुना अवजैसे कि जन्मलेनेवाला पुरुष जिसरीति से इसम्लान वीर्य्यसे मिलताहै उसको वर्णनकीजिये ३० वृहस्पति जीने कहाकि साथमें रहनेवाला पुरुष उन पांचों तत्त्वोंसे मिलाया जाताहै फिर उनतत्त्वोंसे पृथक् होनेवाला जीव दूसरीगतिकोपाता है ३१ सबतत्त्वोंसे युक्तहोकरजीवही गुणोंको प्राप्त करता है तब पंचतत्त्वस्थ देवता उसके शुभाशुभ कर्मोंकोदेखतेहैं अब क्यासुनना चाहताहै ३२ युधिष्ठिरनेकहा हे भगवान् वृहस्पतिजी अस्थि मांस चर्म इत्यादिको त्यागकरके उनतत्त्वोंसे पृथक् होकर वहजीव किस स्थानपर नियतहोकर सुख दुःखोंको भोगतेहैं ३३ वृहस्पति जी बोले हेभरतर्षभ अच्छीरीतिके कर्मसे संयुक्त शीघ्रतासे वीर्य्य रूप सूक्ष्म शरीर प्राप्त करनेवाला जीव स्त्रियोंकेपुष्प अर्थात् रुधिरको अच्छी रीतिसे पाकर जन्मलेता है ३४ परन्तु गर्भमें आनेसे पूर्व्व स्वतंत्र दशामें सूक्ष्म रूप धारणकरताहुआ जीव यमराजके पुरुषों से ताड़ित और क्लेशित कियाजाता है और संसार चक्रमें घूमता हुआ अनेकप्रकारके कष्टोंको पाताहै ३५ हे राजा धर्म फलकाआ-श्रयी प्राणी इसलोकमें जन्मसे लेकर मरण पर्य्यन्त शुभकर्मोंके फलकोप्राप्त करताहै ३६ जोजन्मसे लेकर सामर्थ्यके अनुसारधर्मका-ही सेवन करताहै तो वहपुरुष उस धर्मसे शुद्धात्माहोकर सदैवसु-खका सेवन करताहै ३७ और जो धर्मके मध्यमें अधर्मकाभी सेवन करताहै वह जीवसुखके पीछेदुःखकोभी भोगताहै ३८ अधर्मसेयुक्त होकर यमराजके देशमें जाने वाला वहजीव बड़े २ दुःखोंको पाकर पशुपक्षियोंकी योनियोंको पाताहै ३९ मोहसेसंयुक्त वह जीव इस लोकमें जिस २ कर्म के द्वारा जिस २ योनिमें उत्पन्न होताहै उसको मुझ से सुनो ४० शास्त्र इति हास और वेदमें जो यह यमराजका घोर देश कहाजाताहै उस देशको मरण धर्मवाली सृष्टि प्राप्तकरती है ४१ हेराजा उस यमलोकमें ऐसे २ स्थानहैं जो पवित्र देवभव-नों के समान होकर चलायमानहैं ४२ यमराज के भवनों में जो भवनकि ब्रह्म लोकके समान दिव्यहैं उनमें शुभकर्मा जातेहैं शुभा-

शुभ कर्मोंमें बंधा हुआ जीव दुःखोंका भोगता है ४३ और जिस २
मन वाणी और कर्म से जीव कठिन और भयकारी गतिको पाताहै
उसको इसके पीछे कहूंगा ४४ चारों वेदको पढ़कर मोहसे संयुक्त
ब्राह्मण पतित मनुष्य से दान लेकर गधेकी योनिको पाताहै ४५
और वह गधापन्द्रह वर्षतकजीवताहै फिर गधेकी योनिसे छूटकर
बैलकी योनिमें सातवर्ष रहताहै ४६ उस बैलकी योनिसे छूटकर
ब्रह्मराक्षसकी योनिपाताहै तदनन्तर फिर ब्राह्मणयोनिको पाताहै
४७ हे भरतवंशी पतित मनुष्य को यज्ञ कराके कृमियोनिकोपाताहै
उसमें पन्द्रहवर्षतक जीताहै ४८ फिर कृमियोनि को त्यागकर वह
गधेकी योनिमें पैदाहोताहै और पांचवर्ष गधेकी योनिमेंरहकर पांच
हीवर्ष शूकर शरीर को पाताहै ४९ पांचवर्ष मुर्गापांच वर्षशृगाल
औरएकवर्ष कुत्ता होताहै इसके पीछे मनुष्य जन्मपाताहै जो निर्बुद्धी
शिष्य अपने उपाध्यायका पापकहै ५० वह जीवइस लोकमेंनिस्स-
न्देहतीन जन्म को पाताहै प्रथमकुत्ता फिर कच्चे मांस काखानेवाला
पशु फिर गधा इसके पीछे चारों ओर से दुःखोंको पानेवाला प्रेत
होकर फिर ब्राह्मण होताहै ५१ इस लोकमें जो पापात्मा पापका
करने वाला शिष्यमनकी प्रेरणा से अधर्म मनसे भी गुरू कीभार्य्या
का संभोग करताहै वह बड़े भयानक शरीरोंको पाताहै ५२ प्रथम
तो तीनवर्ष कुत्ता होताहै फिर मरकर कृमियोनिमें पैदा होता है
५३ फिर एकवर्ष कृमि योनिमें रहकर वहां से मरकर ब्रह्मयोनिमें
जन्म लेताहै ५४ जो गुरू बेटेके समान अपने शिष्यको निष्कारण
केवल अपने चित्त से मारे वह गुरू भी मांसाहारी पशु उत्पन्न हो-
ताहै ५५ हे राजा जो पुत्र माता पिताकी अप्रतिष्ठा करताहै वह
मृतक होकर प्रथम गधा होताहै ५६ गधेके शरीरमें दशवर्षजीता
रहताहै और एक पूरेवर्षतक कुंभी पाकमें रहकर फिर मनुष्ययोनि
को पाताहै ५७ जिस पुत्रके माता पिता उस पुत्रकी अवज्ञा आदि
से अप्रसन्नहैं वह भी मरकर गधा उत्पन्न होताहै ५८ वह गधा
दश महीने जीवताहै फिर कुत्ता होकर चौदह महीने जीताहै

औरसात महीने बिलार होकर मनुष्य का जन्म लेताहै ५६ माता पिताको दूषण देके वा निन्दा करके सारक होताहै और जो माता पिताको मारताहै वह कछुआ होताहै ६० दशवर्ष तक कछुआतीन वर्ष तक शल्यक औरछः महीनेतक सर्प योनिमें रहकर फिर मनुष्य का जन्म पाताहै ६१ जो मनुष्य अपने स्वामीके अन्नको भोजन करके उसकेसाथ किसीप्रकारकी शत्रुता करताहै वह मोहसे युक्त मरकर वन्दरकी योनि पाताहै ६२ दशवर्ष वन्दर पांचवर्षचूहा और छः महीनेतक कुत्ता होकर फिर मनुष्यका जन्म पाताहै ६३ किसी की धरोहर मारने वाला मनुष्य यमलोकमें पहुंचकर हजार जन्म लेकर फिर कृमियोनिमें उत्पन्न होता है ६४ हे राजा पन्द्रहवर्ष कृमि शरीर में रहकर अपने पापोंके नाश होने पर फिर मनुष्य शरीर को पाताहै ६५ दूसरे के गुण में दोष लगाने वाला मनुष्य भी मरनेके पीछेशार्ङ्ग पक्षी होतीहै विश्वासघाती मनुष्य मछलीका जन्मलेताहै ६६ आठवर्ष मछली रहकर मृगका जन्मलेता है चार महीने मृगरहकर छागका जन्म लेताहै ६७ एकवर्ष छागयोनिमें रहकर कीट का जन्म लेकर मनुष्य योनिमें आताहै ६८ जव तिल, माष,सरसों, मूंग, चना, कुलत्थ,कलापान्न,गेहूंऔर अलसी ६९ और इनके सिवाय अन्य धान्योंका चुराने वाला मोहसे अचेत जो जीव है वह मूषक और घूंसका जन्म पाताहै ७० फिर शूकर का जन्म पाताहै और शूकर के जन्ममें रोगसे मरताहै ७१ फिर वह अज्ञानी कुत्ता होताहै और पांचवर्ष कुत्ता रहकर फिर मनुष्य होताहै ७२ दूसरे कीस्त्रीसे भोगकरने वाला भेड़िया होताहै इसके पीछे कुत्ताशृगाल गिद्ध व्याल कंक और बगलाहोता है ७३ जो पापात्मा मोह युक्त मनुष्य भाई की स्त्रीसे भोग करताहै वह एक वर्षतक पुंसकोकिला नामपक्षी के जन्मको पाता है मित्रगुरू और राजाकी स्त्री को ७४ अपनी इच्छा से भोग करके मरनेके पीछे शूकर होताहै पांचवर्ष शूकर रहकर दश वर्षतक कुत्ता तीनमहीने पिपीलिका और एक महीनेकीट ७५ इन शरीरोंको पाकर फिरभी

कृमियोनिमें उत्पन्न होताहै वहां चौदह महीनेजीताहै फिर अधर्मके नाश होजानेपर मनुष्यका जन्मपाताहै ७६ हे प्रभु जो मनुष्य विवाहमें यज्ञमें और दानमें मोहसे विघ्न करनेवाला होताहै वह मरकर कृमिहोताहै ७७ वह कृमि पन्द्रह वर्षतक जीताहै अधर्म नष्टहोनेपर फिर मनुष्य होताहै ७८ जो ममुष्य प्रथम किसीको कन्या देकर फिर दूसरेको देनाचाहै वह भी कृमियोनिमें पैदा होताहै ७९ और दशवर्ष कृमियोनिमें रहकर फिर अधर्म नष्टहोनेपर मनुष्य जन्मपाताहै ८० देवकार्य्य पितृकार्य्यकोन करके और अतिथि को भी भिक्षा नदेकर जो मनुष्य भोजन करताहै वह काकयोनि में उत्पन्न होताहै ८१ हजार बर्षकाक रहकर फिर मुर्गा होताहै और एक महीने सर्पभी होताहै तदनन्तर मनुष्यका जन्मपाताहै ८२ जो मनुष्य अपने पिताके समान बड़े भाईको अपमान करताहै वहभी मृत्युको पाकर क्रौंचयोनिमें उत्पन्न होताहै ८३ वह क्रौंचएकबर्ष जीवताहै फिर चील्ह होकर एकबर्ष पीछे मनुष्यहोताहै ८४ शूद्रमनुष्य ब्राह्मणी स्त्रीसे भोगकरके कृमियोनिमें जन्म लेताहै फिर शूकर योनिमें जन्म लेताहै ८५ वह शूकरहोतेही रोगसे मरजाताहै और मरकर कुत्ता होताहै ८६ फिर पाप कर्मको नाश करके मनुष्य होताहै उस जन्ममें सन्तान उत्पन्न करके घूंसका जन्म लेताहै ८७ जो मनुष्य कृतघ्नीहै वह यमलोकमें जाकर यमराजके क्रोधरूप मनुष्योंसे नानावेदनाओंकोपाताहै ८८ दंड, मुद्गर, शूल, भयकारी, अग्निमुख, असिपत्र, घोरगरम बालूकावन, कूट, शाल्मलि ८९ हे भरतवंशी यमराजकेदेशमेंवर्त्तमान होकर अनेक जीवोंसे दुःखोंको पाकर बड़े २ दंडोंको पाकर फिरमाराजाताहै ९० इसके पीछे वहां भयकारीमुद्गर आदिसे घायल वह कृतघ्नी मनुष्य संसार चक्रको पाकरकृमियोनिमें उत्पन्नहोताहै ९१ हेभरतवंशी पन्द्रह वर्षतककृमियोनिमें रहकर फिर गर्भमें आकर बच्चाही मरजाताहै ९२ फिर सैकड़ों गर्भोंमें पैदाहो होकर अनेकशरीरोंकोपाकर तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न होताहै ९३ इसके पीछे इस लोकमें अनेकवर्षतक दुःखोंको

पाकर फिर समुद्रका कछुआ होताहै ९४ दहीके चुरानेसे बगला और प्लव मत्स्य होताहै जो दुर्बुद्धी मनुष्य विनापकी हुई मछलियोंको चुराताहै वह मधुदन्शनाम पक्षी होताहै ९५ जो मनुष्य फल मूल और अपूपोंको चुराताहै वह पिपीलिकाका जन्मपाताहै जो मनुष्य निष्पावको चुराताहै वह हलगोलक नामकीट होताहै ९६ जो मनुष्य खीरकोचुराताहै वह तीतरकीयोनिपाताहै बड़ी आदिका चुराने वाला दुष्टउलूक पक्षी होताहै ९७ जो दुर्बुद्धी मनुष्य लोहेको चुराताहै वह काक उत्पन्न होताहै कांसेके चुरानेसे हारित नाम पक्षी होताहै ९८ चांदीके पात्रके चुरानेसे कबूतरहोताहै सुवर्ण पात्रके चुरानेसे कृमियोनिमें उत्पन्न होताहै ९९ श्वेतरेश्मी वस्त्रके चुराने से गिरगिटकी योनिको पाताहै कौशिक बस्त्र अर्थात् एक प्रकारके रेश्मी बस्त्रके चुरानेसे भेड़के जन्मको पाताहै १०० अंशुक बस्त्रके चुराने से तोतेकी योनिपाताहै दुकूल बस्त्रके चुरानेसे हंसपक्षी होताहै १०१ कपासके चुरानेसे क्रौंचनाम पक्षी होताहै हे भरतवंशी जो मनुष्य रेश्मी वा ऊनी अथवा शनकेबनेहुये बस्त्रको चुराताहै वह शशानाम पशु होताहै हरतालआदि धातुओंके चुरानेसे मोर पक्षी होताहै १०२।१०३ लालबस्त्रोंके चुरानेसेजीव जीवक होताहै और लोभसे चन्दन आदि सुगंधित बस्तुओंको चुराकर १०४ छछूदरका जन्मपाकर पन्द्रहवर्ष जीताहै १०५ तबपाप नष्ट होनेपर मनुष्यका जन्मपाताहै दूधके चुरानेसे बलाकपक्षी होताहै १०६ हे राजा जो लोभी मनुष्य अज्ञानसे तेलको चुराताहै वह तेलपायी नामपक्षी होताहै १०७ शस्त्रधारी नीच मनुष्य इच्छावान् होकर वा शत्रु होकरजो निश्शस्त्रमनुष्यको मारताहै वहगधेकी योनिको पाताहै १०८ दशबर्षतक जीताहै और शस्त्रसेही माराजाताहै फिरमृगयोनि में उत्पन्नहोकर सदैवभयभीत और व्याकुल चित्तरहताहै १०९ फिर वह मृग भी बर्षदिनके पीछे शस्त्रसेही माराजाताहै फिर मरकर मत्स्यका जन्मलेताहै वह भी जालके द्वारा चौथे महीनेमें माराजाताहै ११० फिर वह मांसभक्षी पशु उत्पन्न होताहै दश वर्ष मांस

भक्षी और पांच वर्ष चीता द्वीपिज जन्तु होकर पीछेसे अधर्म के नाशहोने पर मनुष्यका जन्मपाता है ११२ स्त्रीको मारकर यमपुर में जानेवाला दुर्बुद्धी मनुष्य बहुतसे कष्टोंको पाकर फिर बीस जन्म तक कृमियोनियों में पैदाहोता है ११३ वह बीसवर्ष में कृमियोनियोंसे छूटकर फिर मनुष्यका जन्मपाताहै ११४ जो मनुष्य भोजन कोचुराताहै वहमक्खीका जन्मपाताहै औरबहुतमहीनोंतकमक्खियोंके समूहोंमें रहताहै ११५ फिर पापका नाशहोनेपर मनुष्य शरीर पाताहै धानको चुरानेवाला लोमसदेहको पाताहै ११६ जोमनुष्य सण्य संयुक्त भोजनको चुराताहै वह मूषक योनिको पाताहै ११७ और पापीशरीरवाला होकर सदैव मनुष्योंको काटताहै जो मनुष्य घृतको चुराताहै काकमद्गुनाम पक्षीहोताहै ११८ जोदुर्बुद्धीमनुष्य मछलीके मांसको चुराताहै वह काकहोताहै नोनके चुराने से चमर जातिका काकहोताहै ११६ जोमनुष्य धरोहर रक्खीहुईको लेलेने की इच्छा करताहै वह मरनेकेपीछे मछलीकी योनिमें उत्पन्न होता है १२० फिर मनुष्य होताहै परन्तु मनुष्य शरीरपाकर अल्पायु होताहै १२१ हेभरतवंशी सब मनुष्यपापोंको करके तिर्य्यक् योनियोंमें जन्मलेतेहैं वहकिसी धर्ममेंभी अपना विश्वास नहीं करते हैं १२२ जोमनुष्य अपने कियेहुये पापोंको सदैव व्रतादि करकेदूर करतेहैं तौभीवह दुःख सुखसे संयुक्तहोकर रोगीहोतेहैं १२३ लोभ मोहसे अचेत पापाचारी मनुष्य निस्संदेह बिनागृहवाले म्लेक्ष उत्पन्न होतेहैं १२४ जो मनुष्य जन्मसे लेकर मरण पर्य्यन्त पापों को त्यागकरतेहैं वहनीरोगी स्वरूपवान पराक्रमीऔर धनपुत्रवान उत्पन्न होतेहैं १२५ स्त्रियांभी इसीप्रकार पापोंको करके उसकेफल को पातीहैं वह स्त्रियांफिरभी उन्हींजीवोंकी भार्य्याहोतीहैं १२६ हे निष्पापमैंने दूसरेके धनचुराने वालोंके सबदोष वर्णनकिये यहसब मैंने उनका संक्षेप कहाहै १२७ हेभरतवंशी इनकेविशेष अन्योंके वृत्तांतमेरीकथा योगमें फिरसुनोगे हेमहाराज मैंने पूर्वसमयमेंदेव ऋषियोंके मध्यमें ब्रह्माजीके मुखसे यह सब सुनाहै और बुद्धिके

अनुसार उनसे प्रश्नभीकिया १२८।१२९ मैंनेभी उसको पूरा पूरा ठीक ठीक वर्णनकिया हेमहाराज तुमभी इसको सुनकर सदैवधर्म में मनको लगाओ १३० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेसंसारचक्रनामएकादशाधिक शततमोऽध्यायः १११ ॥

एकसौबाराका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोलेकि हे निष्पाप ब्राह्मण आपने अधर्मकी गतिको कहा वहमैंने अच्छीरीतिसे जाना अबमैंधर्म कीगतिको सुनाचाहता हूं १इसलोकमें पापकर्मको करकेफिरकैसे शुभगतिको पातेहैं अर्थात् कौनसे कर्मके करनेसे शुभगतिको प्राप्त करतेहैं २ बृहस्पति जी बोलेकि मनके विपरीत गतिकेद्वारा अधर्मके बशीभूत होकरमनुष्य पापकर्मोंको करके नर्कको प्राप्तहोताहै ३ जो मनुष्य भूलसे अधर्म को करके फिरबड़ा पश्चात्ताप करताहै और चित्तकी एकाग्रता से फिर वह पापोंको नहींकरे ४ उसका मनजैसीरीतिसे पापकर्मों की निन्दा करताहै उसी २ प्रकार से उसका शरीर पापसे मुक्त होता है ५ हेराजा जोवह मनुष्य धर्मबादी वेदपाठी ब्राह्मणोंके सन्मुख अपने पापकर्म को वर्णन करताहै तबवह अधर्मसे उत्पन्न होनेवा- ली अपकीर्त्तिसे शीघ्र छूटताहै ६ मनुष्य अपनेमनकी सावधानी से जस २ रीतिसे अधर्मको अच्छीरीतिसे वर्णन करताहै उसी २ प्रकार । ऐसे छूटताहै ७ जैसेकि सर्प पहले भोगीहुई पुरानीकांचली से टताहै सावधान मनुष्य वेदपाठी ब्राह्मणको नानाप्रकारके दान कर ८ मनकी एकाग्रतासे संयुक्त होकर शुभगतिको प्राप्तहोताहै युधिष्ठिर अबमैं ऐसे बड़ेदानोंका वर्णन करताहूं जिनको मनुष्य करअयोग्यकर्मोंकोभी करकेधर्मसे संयुक्त होताहै ९सबदानोंमेंअन्न नही श्रेष्ठ कहाहै मृदुल स्वभाव धर्म के इच्छावान् मनुष्य को थम अन्नदान करना उचितहै १० अन्न मनुष्योंकी तृप्तिको करता और उसीसे जीवमात्र उत्पन्न होतेहैं यहसब सृष्टिभी अन्नही में

नियतहै इसी हेतुसे अन्नकी प्रशंसा की जातीहै ११ देव ऋषि पितृऔर मनुष्य यहसव अन्नहीकी प्रशंसा करते हैं कौशिक ऋषि अन्नहीके दानसे स्वर्गको भोगतेहैं १२ न्याय से पैदा कियाहुआ उत्तम अन्न ब्राह्मणों को देना योग्य है अत्यन्त प्रसन्नात्मा मनुष्य को वेदपाठ और जप अच्छी रीतिसे करना योग्य है १३ चित्तकी प्रसन्नता से जिसके दियेहुये अन्नसे हजारों मनुष्य भोजन करते हैं वह तिर्य्यक् गतिवालोंकी गतिको कभी नहीं पाताहै १४ हे नरोत्तम मनुष्योंमें सदैव कर्मकर्त्ता मनुष्य दशहजार ब्राह्मणों को भोजन कराके अधर्म से निवृत्त होताहै १५ वेदको मुख्य जानने वाला ब्राह्मण भिक्षाके अन्नको लाकर वेदपाठ वा जप में प्रवृत्तवाले ब्राह्मण के अर्थ देकर इसलोक में सुख पूर्व्वक वृद्धिको पाता है १६ जो नियमवान् अच्छा सावधान क्षत्री ब्राह्मणों के धनोंको नाशनकरताहुआ न्यायसे उनकीपूरीरक्षा करकेबलसेप्राप्त हुये अन्नको उन ब्राह्मणोंके अर्थदान करताहै जोकि वेद विद्या में प्रवीण और महात्मा हैं हे धर्मात्मा पांडव वहउस कर्मसे अपने वड़े २ पापकर्मोंकोभी नाश करताहै १७ । १८ जो वैश्यअपनेप्राप्त हुये खेतीके भागमेंसे राजाके षष्ठांशको देकर बाकीको ब्राह्मणों के अर्थ देताहै वह पापसे अत्यन्त छूटजाताहै १९ जो शूद्रअपनेप्राण संदेहको पाकर कठिन परिश्रमसे पैदाकियेहुये अन्नको ब्राह्मणोंके अर्थ दानकरताहै वहपापों से मुक्तहोताहै २० जो हिंसा न करने वाला मनुष्य अपने पराक्रमसे अन्नको इकट्ठा करके वेदपाठी ब्राह्मणोंको दान करताहै वह कठिन आपत्तियोंको नहींदेखताहै २१ प्रसन्नता से युक्तमनुष्य न्याय से उपार्जित किये हुये अन्नको वेद विद्यामें वृद्ध ब्राह्मणोंको दानकरके पापसे निवृत्त होताहै २२ इस लोकमें अन्नही वलका करनेवालाहै इसीहेतु से उसको दानकर के पराक्रमीहोना चाहिये और सत्पुरुषों के सन्मार्ग में चलने से सब पापोंसे निवृत्त होताहै २३ दानकरने वालोंने जो मार्गवनाया है उसी मार्गसे ज्ञानीलोग चलतेहैं वहदानी प्राणोंके देनेवाले हैं

उन्हींसे सनातन धर्मजारीहैं२४ न्यायसे प्राप्तहोनेवाला अन्नमनुष्य को सदैव ब्राह्मणोंके अर्थ देना योग्यहै क्योंकि अन्नही परमगति है २५ मनुष्य अन्नकेही दानसे भयके स्थान में भयनहीं पाता है इसीसे न्यायसे उपार्जित अन्नदान करना उचित है २६ गृहस्थी मनुष्य सदैव प्रथम ब्राह्मणोंको अन्न देकर पीछे अपने भोजन का बिचार करे और बिना अन्नदानकिये दिनको नहींव्यतीतकरे २७ हे राजा न्याय जानने वाला मनुष्य वेदइतिहास और धर्मोंकेज्ञाता एकहजार ब्राह्मणोंके भोजनकरानेसे २८ घोरनर्कको नहीं जाताहै और नाना शरीरकी योनियोंको नहींभुगतताहै परलोकमें भी सब मनोरथों समेत सुखको भोगताहै २९ निश्चय करके इसरीति के कर्ममें प्रवृत्त मनुष्य बिना तपस्या केभी क्रीड़ाको करताहै और स्वरूपयुक्त शुभकीर्त्तिवान् होकरधनवान्होताहै ३० हेभरतवंशी यह अन्न दानका सबफलमैंने तुमसे कहा यहीसब धर्म और दानों का मूलहै ३१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसंसारचक्रेद्वादशाधिक शततमोऽध्यायः ११२॥

एकसौतेराका अध्याय॥

युधिष्ठिरबोलेकि अहिंसा, वैदिककर्म, ध्यान, जितेन्द्रीहोना, तप, गुरूकीसेवा, इनसबमेंसे कौनसा गुण मनुष्यका अधिककल्याणकरने वालाहै१ वृहस्पतिजीने कहा हेभरतर्षभ यहसब धर्मरूपहैं औरस-बभिन्न२रीति वालेहैं अबतुम इनछओंकोटीकासमेत पृथक्२सुनो २ प्रथममैं जीवके उत्तम रूपवाले कल्याणकोवर्णनकरताहूं जोमनुष्य अहिंसा सम्बंधी धर्मका आचरण करताहै ३ वह पुरुषकाम क्रोध लोभ इनतीनों दोषोंको दूसरे जीवोंमें छोड़कर और अपनेसे उन तीनोंको अच्छे प्रकार बिजयकरके सिद्धीको पाताहै ४ जोमनुष्य अपने सुखकी इच्छासे अवध्य जीवको दंडआदिसे मारताहै वहपर-लोकमें सुखी नहीं होताहै ५ जोपुरुष दण्डको त्यागकर क्रोधका

जीतने वाला होकर सब जीवमात्रों में आत्मभावको मानताहै वह परलोकमें सुखसे वृद्धिपाताहै ६ चिह्नसे रहित परमात्माकेस्थान केचाहने वालेदेवता उस ब्रह्मज्ञानीके मार्गमेंमोहको पातेहैं जोकिस व जीव मात्रका आत्मारूपऔर सब जीवोंको अपनाही आत्मादेखनेवालाहै ऐसा मनुष्य व्यापक होकर मुक्तिको पाताहै ७ मनुष्यको उचित हैकि जो अपनाअप्रियहै उसकोभीदूसरेके लिये नहीं बिचार करे यह धर्मखुला हुआहै और दूसरा धर्म इच्छासे जारी होताहै ८ मनुष्य प्रिय अप्रिय सुखदुःख दानकरना निषेध करनाइनसबबातों में आत्माके समान होनेसे प्रतिष्ठाको पाताहै ९ जैसेकि एकमनुष्य दूसरोंका उपकार करताहै उसी प्रकार वह दूसरे सब मनुष्यभी उसके साथ उपकार करने वाले होतेहैं इसजीवलोकमें उनमनुष्यों मेंवही समानताहै जैसेकि धर्मका उपदेशहुआहै उसको बड़ी सावधानीसे काममें लावे १० वैशम्पायन बोले कि यह कहकर देवताओं के गुरू वृहस्पतिजी उस धर्मराज युधिष्ठिरसे यह कहकर हमारे देखतेहुये स्वर्गको चढ़े ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसंसारचक्रसमाप्तंत्रयोदशाधिकशततमो ऽध्यायः११३ ॥

एकसौचौदहका अध्याय ॥

वैशंपायनजी बोलेकि इसके अनन्तर बक्ताओं श्रेष्ठ महातेजस्वी राजा युधिष्ठिरने बाण सैयापर वर्त्तमान अपने पितामह भीष्मजी सेफिर पूछाकि १ हेबड़े बुद्धिमान् पितामह ऋषि ब्राह्मण औरदेवता लोग वेदोंके प्रमाण देखनेसे उस धर्मकी प्रशंसा करतेहैं जोकिअहिंसा रूप लक्षण रखने वालाहै २ हे राजाओंमें बड़ेसाधु मनुष्य मनवाणी और कर्मसे हिंसाको करके फिरकैसे दुःखोंसे छूटताहै ३ भीष्मजी बोले कि हेशत्रुओं के नाश करनेवाले युधिष्ठिर ब्रह्मबादी लोगमनवाणी कर्म और भोजन इन चारों प्रकारोंसेचार प्रकारकी हिंसावर्णन करते हैं वह हिंसाएक२ अंगसेही सब नहीं नाश हो-

सक्तीहै अर्थात् जब भक्षण नहींकरे तब बाकीबचीहुई तीनोंप्रकारकी हिंसा नहीं छूटसक्ती और जबसंकल्प नहींकरे वाअपने भक्षण करने को निषेधकरे अथवा हिंसा नकरे तबभी सबनहीं छूटसक्ती ४ जैसे किसब पशु जीवतीन पांवसे खड़ेनहीं होसक्ते उसी प्रकारकी यह हिंसाहै जोकि तीन हेतुसे बर्णन कीजातीहै ५ जैसे कि हाथीके पैर केचिह्नमें अन्यसब जीवोंके चरण अन्तर्गत होजातेहैं उसीप्रकार हिंसामें सब धर्म गुप्तहैं ६ पूर्व्वसमयमें सब लोकोंमें हिंसा धर्महीं से उपदेशकी गईहै यह जीवकर्म बाणी और मनसेभी अपराधीहोताहै ७ जो मनुष्य प्रथमतो मनकरके फिर बाणी और कर्मसेभी तीनों प्रकारकी हिंसाको त्याग करके मांसको नहीं खाता है उसका उद्धार होताहै ८ तीन प्रकार का कारण ब्रह्मबादी पुरुष बर्णन करते हैं और उसी का वह उपदेश भी करतेहैं उनमनबाणी और भोजन में सब दोष नियतहैं ६ इसी हेतुसे तप युक्त बुद्धिमान मनुष्य मांसको नहीं खातेहैं अब मांस खानेके दोषों को तुम मुझसे सुनो १० जो अचेत असावधान मनुष्य उस मांसको जोकि पुत्रके मांसकी समान है खाताहै वह पुरुष नीच कहा जाताहै ११ जैसे कि माता पिताके संभोगमें पुत्रका जन्म होताहै उसीप्रकार हिंसा करके अस्वतन्त्र मनुष्य पापयोनियों में अनेक जन्मों को लेताहै १२ शास्त्रोंसे निश्चय हुआहै कि जैसे जिह्वाकी रसग्राहकता स्वादुसे बिदित होतीहै उसी प्रकार प्रीति भी स्वादु के लेनेसे उत्पन्न होतीहै १३ जैसेकि संस्कारसे रहित और युक्त कच्ची पक्की नोनकी और अलोनी भोजन पानादि करनेकी वस्तु तैयार होतीहैं १४उसी प्रकार चित्त भी उनमें बंधन किया जाता है अल्पबुद्धी मांसभक्षी मनुष्य भेरी मृदंग और उत्तम बीणाओंके शब्दोंको किसी प्रकारसे भी सेबन नहीं करसक्ते १५ जो निष्काम होकर फलके चाहनेवाले मनुष्य हैं वह उस रसकी प्रशंसा करते हैं जोकि अच्छे लोगोंसे स्मरण पूर्व्वक संकल्प से त्याग नहीं किया गयाहै १६ मांसकीजो प्रशंसाहै वह दोष रूप कर्म फल से संयुक्तहै बहुत से साधू लोग

जीवन को त्याग करके अपने मांसों से दूसरों के मांसोंकी वृद्धि करतेहुये ऐसे स्वर्गको गये १७ जैसे कि राजा शिविगये तात्पर्य्य यहहै कि दूसरे का मांस खानेसे अधोगतिको पातेहैं १८ हेमहाराज इस प्रकार से यह अहिंसा जोकि चार हेतुओं से युक्त और सब धर्मों से प्राप्तहै उसको मैंने तुमसे बर्णन किया १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमांसबर्जनकथनेचतुर्द्दशाधिकशततमोऽध्यायः ११४ ॥

एकसौपन्द्रहका अध्याय ॥

युधिष्ठिर ने पूछाकि आपने बहुधा कहाकि अहिंसा धर्म उत्तम है और श्राद्धोंमें पित्रोंको मांस को चाहने वाले कहे १ आपने पूर्व्व में श्राद्धकी विधि अनेक प्रकार के मांसों से बर्णनकी सो हे पितामह बिना हिंसा किये कहां से मांस आसक्ताहै इसरीति में यह वात विरुद्ध होतीहै २ मांस के त्याग रूप धर्म में हमको सन्देह होगयाहै अब यह बताइये कि मांस खानेमें और नखाने में कौन२ सा गुण है मारकर लानेवाले या दूसरे से लायेहुये मांसके खाने वालेको कैसा २ दोष होताहै जो मनुष्य दूसरेके लिये मारे अथवा मोल लेकर भोजनकरे उसको क्या २ दोष होताहै हे निष्पाप यह पुरुष आयुर्दाको कैसे पाता है और बल पराक्रम अंगोंकी योग्यता और लक्षण को कैसे प्राप्त करताहै इसको आप मूल समेतवर्णनकरिये क्योंकि मैं इस सनातन धर्म को निश्चयके साथ करना चाहताहूं ५ । ६ भीष्मजी बोले कि हे कुरुनन्दन राजायुधिष्ठिर मांसके त्यागन में जोधर्महै और जैसी उसकी उत्तम विधि है उसको तुम मूल समेत मुझसे सुनो ७ सुरूपता अंगोंकी अव्यंगता आयु बुद्धि सत्त्ववल स्मृति और साधुपने को प्राप्त करने के इच्छावान महात्मालोगों से हिंसाकरना त्यागने के योग्य है ८ हे कुरुनन्दन युधिष्ठिर इस विषयमें ऋषियों के अनेक प्रकार के शास्त्र विनोद हुये उन सबका जो सिद्धान्त हुआ उस को सुनो ९ हेयुधि-

स्थिर जो व्रतमें सावधान मनुष्य हरमहीनेमें अश्वमेध यज्ञसेपूजन करे वह और जो मांस मद्यको त्याग करताहै यह दोनो समानहैं १० हे राजा बुद्धिमान बालखिल्यऋषि सप्तऋषि और मरीच्यादिक नामी ऋषि मांसके त्यागने की प्रशंसा करतेहैं ११ जो मनुष्य मांस को नहीं खाताहै नकिसी को मारता न प्रहार करताहै वह सब जीव मात्रोंका मित्रहै यह स्वायंभूमनु नाम ऋषिने कहाहै १२ मांसको त्यागनेवाला सब जीवोंका मित्र और बिश्वासपात्र है वह साधुओं से सदैव अंगीकृतहै १३ धर्मात्मा नारदजी ने कहाहै किजो मनुष्य दूसरे के मांससे अपने मांसको बढ़ाना चाहताहै वह निश्चय पीड़ा पाताहै १४ बृहस्पतिजी ने भी ऐसा कहाहै कि मांस और मद्यके त्यागने से दानी यज्ञ करनेवाला और तपस्वी होता है १५ जो मनुष्य हजार बर्षतक प्रतिमास अश्वमेध यज्ञको करे वह और जो मांसका नहीं खाने वालाहै उन दोनोंको मैं समानही जानताहूं १६ मांस और मद्यके त्यागनेसे सदैव यज्ञोंके द्वारा पूजनकरने वालाहै और सदैव दान करने वाला होकर तपस्वी होताहै १७ संपूर्ण वेद और उससे विदित होनेवाले यज्ञ मनुष्य को हिंसामें प्रवृत्त नहीं करते हैं किन्तु त्याज्य बस्तुओं की संख्या में मांसके भीत्याग को बतलाते हैं जो मनुष्य मांसों को खाकर पीछेसे त्यागभी कर देताहै १८ और सबजीव मात्रों कोनिर्भय ताका देनेवाला है इस उत्तम ब्रतके करने को मांस के स्वादुके जानने की दशामें उसका त्यागना कठिनहै १९ जो बुद्धिमान मनुष्य सब जीव मात्रोंकोनिर्भयता रूपी दक्षिणा देताहै वह निस्सन्देह इस लोकमें प्राणों का दाताहै २० इस रीति से ज्ञानी लोग उत्तम धर्मकी प्रशंसा करतेहैं जैसे कि अपने प्राण प्यारे हैं उसी प्रकार जीवोंके भी प्रियहैं २१ पवित्रात्मा बुद्धिमान मनुष्यों को सब जीवोंमें आत्माके समान भाव होनेसे यह मानना योग्यहै कि मृत्युसे उनलोगों को भी भयहै जो कि बड़े बुद्धिमान और ज्ञानीहैं २२ फिर मांस से जीवन करनेवाले पापियों के हाथसे शीघ्र मरनेवाले उनजीवों को क्यों नहोगा जो

कि जीवन के चाहने वाले नीरोग और पापसे रहितहैं २३ हेमहा-
राज इसी हेतुसे मांसके त्याग धर्मकोस्वर्ग और सुखकाउत्तमस्थान
जानो२४अहिंसा धर्म उत्तमहै अहिंसा तप और अहिंसा सत्यउत्तम
है जिससे धर्म जारीहोताहै २५वह मांसहै वहघासकाष्ठऔर पत्थर
म्होंसेभी नहीं उत्पन्न होताहैकिन्तुमारनेसे हीउत्पन्नहोताहै इसी
कारणउसके खाने में दोषहै२६ सत्यता औरआर्जवको प्रिय मानने
वाले और स्वाहास्वधा अमृतकेभोजन करनेवालेहैं और कुटिलता
वा मिथ्याभाषणमें नियत मांसभक्षियोंको राक्षसजानो२७हेराजा
मांसके त्यागनेवाले इननीचेके स्थानोंपरभी अन्यजीवों से भयको
नहीं पातेहैं भयका उत्पन्न करनेवाला वा दुर्गम्य घन,रात्रि, दिन,
संध्या, चवूतरा, आदि सभासन्नद्ध शस्त्र और मृग सर्प इत्यादि
२८ । २६ सदैव सब जीवोंका रक्षास्थान सबजीवों में बिश्वसित
सृष्टि में भयआदि का उत्पन्न न करनेवाला मनुष्य आपभी कहीं
भयभीत नहीं होता है ३० जो मांसभक्षी न होगा तो मारनेवाला
भी न होगा इसी हेतु से मारनेवाला मनुष्य मांस खानेवालेकेही
निमित्त किसी को मारता है ३१ यह अभक्ष है ऐसा संकल्प
करनेके द्वारा हिंसासे निवृत्त होता है इसी हेतु से मृगादिकों की
हिंसा मांस खानेवालोंके ही निमित्तकीजाती है ३२ हे महातेजस्वी
जोकि यहमांस हिंसक लोगोंकी आयुको भक्षण करता है इसीहेतु
से ऐश्वर्य्यका चाहनेवाला पुरुष हिंसाको त्यागकरे ३३ जीवोंके
मारनेवाले भयकारी मनुष्य अपने रक्षकको नहींपातेहैं जैसेकिसर्प
और सिंहजीवोंके भयके करनेवालेहैं ऐसेही वहभीहैं ३४ लोभमोह
के कारण वा पापियोंके संगसे अथवा अपने बलपराक्रमके निमित्त
मनुष्योंकी अधर्मों में प्रीति होतीहै ३५ जोमनुष्य दूसरोंके मांससे
अपने मांसको बढ़ाना चाहताहै वह जहां जहां जन्मलेताहै वहां
भयके साथही निवास करताहै ३६ नियमी महर्षियोंने मांसके न
खानेको धन शुभकीर्त्ति अवस्था स्वर्ग और बड़े २ कल्याणों का
देनेवाला कहाहै ३७ हे कुन्तीनन्दन निश्चय करके पूर्व्व समय मैं

मैंने मांसखानेके दोषोंको मार्कण्डेय ऋषिके मुखसे वर्णन कियेहुये सुनेहैं ३८ जो जीवनको इच्छा करनेवाला मनुष्य जीवोंको मार उनके मांसको खाताहै चाहै वह दूसरेसे वा अपने हाथसे मारेहोयं तौभीवह वैसाहीहै जैसाकि मारनेवाला होताहै ३६ मांसकामोल लेनेवाला अपने धनकेद्वारा हिंसाकरताहै और खानेवाला स्वादु केद्वारा और मारनेवाला पकड़नेके द्वारा हिंसा करताहै यहतीन प्रकारकी हिंसाहै ४० जो मनुष्य मांस नहींखाताहै और अपनेचित्त के दोषसे हिंसाको उचित वर्णन करताहै और मारना योग्यहैऐसा कहताहै वहभी दोषी होताहै ४१ इसलोकमें जीवोंके ऊपर दया करनेवाला जो मनुष्य मांसको नहींखाताहै वह सदैव सब जीवोंका मित्रहोकर आयुर्दायुक्त और नीरोग होताहै ४२ मांसके त्यागने में जो धर्महै वहसुवर्णदान गोदान भूमिदान आदि सबदानोंसे श्रेष्ठहै यहहमने श्रवण कियाहै जिसमांसको प्रदक्षिण नहींकिया अथवा अविधिसे यज्ञकेबिना तैयारकियाहै ४३ उसको नहींखाय जो पुरुष उसमांसको खाताहै वह निस्सन्देह नर्कको जाताहै ४४ जो मांस कि यज्ञके निमित्त बनायागया है और अभिमंत्रित करके जलसे छिड़कागयाहै और ब्राह्मणको तृप्तिकी इच्छासेसंस्कार कियागया है उसको इसलोकमें थोड़ेदोषवाला जानना चाहिये इसके विपरीत होनेपर दोषयुक्त होताहै ४५ जो नीचमनुष्य मांस खानेवालों के निमित्त जीवोंको मारताहै उस स्थानमें मारनेही वाला बड़ा दोष भागीहै खानेवाला नहीं दोषभागीहै ४६ जोमांस के लोभी वेद यज्ञोंके न जाननेवाले साधारणलोग देवपूजन और यज्ञोंके मिस करके जीवों को मारते हैं वह अवश्यही नर्क गामीहैं ४७ जो मनुष्य मांसखाकर पीछेसेभी त्यागी होताहै उसका भी बहुत बड़ा धर्म है इसहेतु से कि वह पापसे अत्यन्त हाथ को खेंच लेता है ४८ लानेवाला, पशुके मारनेकी आज्ञा देनेवाला मारनेवाला मोलबेच करनेवाला अथवा युक्तिसे पकानेवाला खानेवाला यह सब मांसके भक्षिही हैं ४६ और दूसरा भी वह प्रमाण कहता

है जोकि ईश्वरका रचाहुआ प्राचीन ऋषियोंका किया हुआ और वेदोंमें पूरे प्रमाणों समेत नियतहै ५० हे राजा उत्तम प्रवृत्ति लक्षणवाला धर्म सन्तान की इच्छा रखनेवाले पुरुषोंने जिस को दृष्टान्त सहित वर्णन कियाहै और जिस रीति से कहागयाहै वह धर्ममोक्ष जाननेवालों का नहींहै ५१ पित्रों के श्राद्धों में वेदोक्त प्रमाण से जो पवित्रहव्य मंत्रके द्वाराशुद्ध और प्रोक्षण कियागया है ५२ इसके बिपरीत जो मांसहै वह खानेके योग्य नहींहै यहमनुजीका कहाहुआहै हे भरतर्षभ वहस्वर्ग और शुभकीर्त्ति का न देनेवाला भोजन राक्षसके समानहै ५३ हेराजा मनुष्यको उचितहै कि बुद्धिके विपरीत मांसको न खाय जो मांसकि बुद्धिके बिपरीत और यज्ञके बिनाहै और प्रोक्षण नहींकिया गयाहै उसको नहींखाय५४ जो पुरुष अपनेको आपत्तियोंसे अत्यन्त छुटानाचाहे वहइसलोक में जीवमात्रके सबमांसोंका त्यागकरे ५५ सुना जाताहै कि पूर्व समयमें मनुष्योंका पशुपुरोडास आदिकी सूरतकाथा उसीके द्वारा यज्ञकी इच्छाकरनेवाले पवित्र पुरुषोंने यज्ञकियाथा५६ हेप्रभु चंदेरी के बसुनाम राजाने ऋषियोंसे पूछाथा कि यहमांस अभक्ष्यहै वा भक्ष्यहै यहकहतेही वह आकाश से गिरा और इसीबातको दुबारा कहनेसे पातालको गया५७ पर संसारकी वृद्धि चाहनेवालेमहात्मा अगस्त्य ऋषिने अपने तपकेद्वारा उनसब जंगली मृगोंको जिनके अधिष्ठाता सबदेवताहैं प्रोक्षण किया है ५८।५९ इसकारणसे देव पितृसंबंधीकर्म नष्टनहींहोतेहैं न्यायके अनुसारमांससेतृप्तहोकरपितृ अत्यन्त प्रसन्न होतेहैं अर्थात् मृगोंको अग्निके समीप खड़ाकरके छोड़देतेहैं इसीहेतुसे यज्ञकरनेमेंभी उनका मारनानहींहोता है ६० हे निष्पाप राजा युधिष्ठिर मेरेकहेहुये इसवचनको सुनो कि मांस खानेके त्यागमें सबसुखहै ६१ जो मनुष्य पूरेहजार बर्षतक कठिन तपस्याको करे और जो मांसको त्यागे यहदोनों मेरीबुद्धिसे समान हैं ६२ हेराजा मुख्य करके पूरे कार्त्तिक महीनेभर अथवाशुक्लपक्ष में मद्य और मांसको त्यागदे क्योंकि इसमहीने में धर्मकियाजाता

है ६३ जो मनुष्य वर्षा ऋतुके चारोंमहीनों में मांसको त्यागदे वह नीचेलिखे हुये चारकल्याणोंको पाताहै शुभकीर्ति आयुपराक्रम प्रसिद्धी ६४ अथवा केवलएकमहीनेतक सबमांसोंके त्यागनेसेसब दुःखोंको दूरकरके नीरोगता पूर्वक सुखसे जीवन करता है ६५ जो पुरुष महीनेभर या पक्षभरभी मांसोंको त्यागदेते हैं उनहिंसा त्याग करनेवालों का ब्रह्मलोकमें निवास होना कहतेहैं ६६ हे कुन्तीनन्दन सबजीवोंका कार्त्तिक महीनेभर वा उसके शुक्रपक्षमें मांसका खाना इनआगेलिखे हुये परमात्मा परायण बाह्याभ्यन्तर से शुद्धराजा लोगोंकरके निषेध कियागयाहै ६७ नाभाग, अम्ब-रीष, महात्मागय, आयु, अनरण्य, दिलीप, रघु, पुरु, ६८ कार्त्त-वीर्य्य,अनिरुद्ध,नहुष,ययाति,नृग,बिष्वक्सेन, शशिबिन्दु ६९ युव-नाश्व,शिवि,औशीनर, मुचुकुन्द, मांधाता, हरिश्चन्द्र, ७०इत्यादि सत्यबोलो मिथ्यामतबोलो सत्यताका धर्म प्राचीनहै राजाहरिश्चंद्र सत्यताके द्वाराचन्द्रमाके समान स्वर्गमें बिचरताहै ७१ हे राजेन्द्र श्येनचित्र, सोमक, वृक, रैवत, रन्तिदेव, बसु सृंजय ७२ इनके सिवाय कृप,भरत, दुष्यन्त, करूष,राम, अलर्क, नल, विरूपाश्व, निमि, बुद्धिमान् जनक ७३ शिन, पृथु, बीरसेन, इक्ष्वाकु, शंभु, श्वेत, सगर ७४ अज, धुन्धु, सुबाहु, हर्यश्व क्षुप ७५ पूर्वसमय में इनसब समेतअन्य २ राजाओंने कार्त्तिकमहीनेमें मांसको नहीं खायाइसीसे उनसबने स्वर्गकोपाया ७६ हजारोंअप्सरा और गंध-र्वोंसे व्याप्तवहराजा लोगब्रह्मलोकमें नियतहुये ७७ इसीप्रकारजो महात्मालोग अहिंसा धर्म के लक्षण रखनेवाले होकर इस उत्तम धर्मका आचरण करतेहैं वह स्वर्गमें निवास करतेहैं ७८ इसलोक में जो धर्मके अभ्यासी मनुष्य जन्म से लेकर मरण पर्य्यन्त सदैव मद्य और मांस को त्याग करतेहैं वह सब मुनि रूपकहे जातेहैं ७९ जो मनुष्य इस मांस त्यागनाम धर्म का अभ्यास करेगा वा दूसरे को सुनावेगा वह चाहै कैसा भी दुराचारी होय कभी नर्कको नहीं जायगा ८० हेराजा जो मनुष्य इस पवित्र और ऋषियोंसे पूजित

अमांस भक्षण विधिको सदैव पढ़कर काममें लाताहै ८१ वह सब पापों से छूटकर सब अभीष्ट मनोरथोंकी वृद्धिपाता है और अपने सजातियों में भी निस्सन्देह प्रतिष्ठा पाता है ८२ आपत्तियों में फंसाहुआ आपत्तिसे छूटे बंधाहुआ अपने बंधनोंसे छूटे रोगी रोग से निवृत्त होय दुःखी दुःखसे छूटे ८३ हे कौरव्य वह मनुष्यतिर्यक् योनियोंको नहीं पाता है और स्वरूपवान धनवान होकर बड़ी शुभकीर्त्ति को पाता है ८४ हे राजा प्रवृत्ति और निवृत्ति में मांस के खानेके विषयमें यह वेदोक्त विधान तुझसे कहा ८५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमांसभक्षणनिषेधेपंचदशाधिकशततमोऽध्यायः ११५ ॥

एकसौसोलहका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले लोकमें यह निर्दयी मांस के लोभी मनुष्य बड़े राक्षसों के समूहोंके समान नाना प्रकार के भक्ष पदार्थों को छोड़ कर १ जैसे मांसको खातेहैं और बहुत प्रकारके अपूप और नाना शाक खांडवनाम चूर्ण और रसयोगवाली भोजन की वस्तुओं को नहीं चाहतेहैं इस स्थान पर मेरी बुद्धि इस बिषयमें मोहको पाती है यद्यपि यहमैं भी जानता हूं कि मांससे अधिक कोई स्वादु युक्त पदार्थ नहीं है २।३ हे प्रभु इसी हेतुसे मांस न खाने में जो गुण हैं उसको सुनना चाहताहूं और हे पुरुषोत्तम खानेमें भी जो दोषहैं उनको भी सुनना चाहताहूं ४ हे धर्मज्ञ आप इस सब वृत्तान्त को मूल समेत ठीक २ वर्णन कीजिये कि भोजन करने के योग्य और नभोजन करने के योग्य कौन २ वस्तुहैं ५ यह वस्तु यथातथ्य जैसी हैं अथवा मांसादिभक्षण जैसा है और उनके त्यागमें जो२ गुण हैं और मांस खानेवाले को भी जो२ दोष होतेहैं हे पितामह उन सब को मुझसे वर्णन कीजिये ६ भीष्मजी बोले कि हेमहाबाहो यहइसी प्रकार काहै जैसा कि तुम कहतेहौ हे भरतवंशी इस पृथ्वीपर मांस से अधिक स्वादिष्ट वस्तु और कोई नहीं है ७ घायलमनुष्यको निर्बल

दुःखी मनुष्यको शरीर से दुःखी और स्त्रीके भोगादि में प्रवृत्तचित्त वालों को मार्गचलनेवालोंको और अनेक प्रकारके कर्षितमनुष्योंको हितकारीमांससे अधिक कोईवस्तु नहींहै ८ यहमांसशीघ्रही इन्द्रियों केवलको बढ़ाताहै और वही उत्तम मांसभोग की सामर्थ्य को वृद्धि करताहै हे शत्रुसंतापी मांस से अधिक कोई भोजन की वस्तु नहीं है ६ हे कौरवनन्दन अब उस मांसके त्याग करनेमें जो मनुष्योंको गुण होतेहैं वह भी मुझ से सुनो १० जो मनुष्य अपने मांस को दूसरे के मांससे बढ़ाना चाहताहै उससे नीच कोईभी नहीं है और निर्दयभी उससे बढ़कर कोई नहींहै ११ इससंसारमें प्राणोंसेअधिककोई प्यारा नहींहै इसी हेतुसे मनुष्य को उचितहै कि दूसरे के ऊपर वैसीही दया करे जैसीकि अपने शरीर और प्राणोंपर करताहै १२ हेतात इसलोक में वीर्य्यसे मांसकी उत्पत्तिहै उसकेखाने में बड़ादोषहै और त्यागने में महापुण्य कहाजाता है १३ इस संसारमें वेदोक्त विधिसे मांसके खानेमें दोष नहीं होताहै क्योंकि यह श्रुतीभी सुनी जातीहै कि (यज्ञार्थे पशवः सृष्टा) अर्थात् पशु यज्ञकेही अर्थ उत्पन्न कियेगये हैं १४ इसके विपरीत कर्म करने वालोंका आचरण राक्षस बुद्धिवाला कहा जाताहै और क्षत्रियों की बुद्धि जो वेदमें देखी गई है उसको भी मुझसे सुनो १५ कि वह क्षत्रीपराक्रम से प्राप्त किये हुये मांसको खाताहै इसीसे दोषका भागी नहीं होताहै हे राजा पूर्व्व समय में वह सब जंगली पशु जिनके देवता अधिष्ठाताहैं अगस्त्यऋषि करके प्रोक्षण कियेगये हैं १६ इसीसे शिकारको योग्य कहतेहैं अर्थात् जब यजमान पशुको प्रोक्षणकरके छोड़दे तब राजाको शिकारसे मारना न्यायके अनुसार है क्योंकि उसके जीवते रहनेसे उसके देवताकी तृप्तिनहीं होती है प्रत्यक्षहैकि अपनेशरीरको मृत्युके भयसे पृथक्करकेशिकार करना नहींहै १७ मनुष्य पशुके साथ समानताको पाकर जीवधारीको मारतेहैं हे भरतवंशी इसीकारणसे सब राज ऋषि मृगयाको जाते हैं १८ वह पापकेभागी नहीं होतेहैं और न उसको दोषजानते हैं

अब प्रवृत्ति मार्गको कहकर निवृत्ति मार्गको वर्णन करतेहैं हेकौर-वनन्दन इसलोक और परलोकमें इसके सिवाय कोई कर्म नहीं है १९ जो सब जीवोंपर दयाकरी जाय क्योंकि इस संसारमें दया वान् पुरुषको कहीं भी भय नहीं होताहै २० दयावान् तपस्वियों के सबसे उत्तम यह लोकहैं २१ और धर्मज्ञ लोगोंने जानाहै कि यहधर्मअहिंसालक्षवाला है जो अहिंसात्मक कर्महै उसको ज्ञानी मनुष्य करे देवता पित्रोंके यज्ञोंमें केवल प्रोक्षण किया हुआ ही हव्य कहाजाताहै २२ जो दयावान् मनुष्य सब जीवोंको अपनेसे निर्भयता देताहै उसको वह सबजीव भी निर्भयतादेतेहैं ऐसेअच्छे लोगोंसे सुनाहै २३ जो पुरुष वीरोंकी मर्य्यादसे युद्धमें घायलहो-कर पृथ्वी रूपीवीर सैयापर सोताहुआ रथके चक्रसे दबाहुआहै उस वीरको रक्षा सबजीव सुगम और कठिनमार्गोंमें करतेहैं २४ जो मनुष्य भयके स्थानसे दूसरोंको छुटाताहै वह भयके समयसे छूटताहै और उसको सर्प मृग पिशाच और राक्षस आदि कोई भी नहीं मारताहै २५ प्राणदानसे उत्तम न कोई दानहै न होगा यह निश्चयहै कि इस लोकमें आत्मासे प्यारा कोईनहींहै २६ हेभरत वंशी मरना सब जीव मात्रोंको बुरा मालूम होताहै मरनेके समय बहुत शीघ्रजीव कंपायमान होतेहैं २७ सबजीव सदैव जन्म गर्भ और जरा आदि दुःखोंके कारण इस संसारसागर में घूमते हैं और मरनेसे डरतेहैं २८ और गर्भमेंवर्त्तमान होनेकी दशामें मूत्र प्रश्वेद और विष्ठाके उन जलादि रसोंसे जो कि तीक्ष्ण दुस्सह खारी और कड़वे हैं पकतेहैं २९ वहां जन्मलेनेवाले भी अस्वतन्त्र मांसके लोभी भीखमांगते हुये वारवार पीड़ामान दिखाई देतेहैं ३० कुंभीपाक नामनरक में पकतेहैं और उन सब योनियोंमें दबा २ कर मारेहुये वारंवार घुमाये जातेहैं ३१ सबपृथ्वी भरमें आत्मासे प्यारा कोई नहींहै इसी हेतुसे सबजीव मात्रोंपर दया करनेवाला मनुष्यज्ञानी होताहै ३२ हे राजाजो मनुष्य जन्मभरतक किसी मांसको नखाय वह निस्संदेह स्वर्गकेउत्तम स्थानकोप्राप्त करताहै ३३ जीवनकी

इच्छा रखनेवाला जो मनुष्य जीवोंकेमांसोंको खाताहै वहभीनिस्स-न्देह उन्हीं जानवरोंसे भक्षण किया जाताहै ३४ जीव कहताहै कि जो वह मुझको भक्षण करताहै इसीसे मैं भी उसको भक्षण करूंगा हे भरतवंशी मांसके इस मांसभाव होनेको सुनो ३५ मारनेवाला सदैव माराजाताहै उसी प्रकार मांस खानेवालाभी सदैव माराजा-ताहै हे राजा जैसेदोषलगानेवाला दूषित किया जाताहै उसीप्रकार शत्रुता और विरोधको प्राप्त करताहै ३६ जो मनुष्यजिस२ अंगसे जिस २ कर्मको करताहै वह उसी उसी शरीरसे उसके फलको पा-ताहै ३७ अहिंसा परम धर्म्महै अहिंसापरम दमहै अहिंसा परम दानहै अहिंसा परम तपहै ३८ अहिंसा परम यज्ञहै अहिंसाही परम फलहै अहिंसाही परम मित्रहै अहिंसाही परमश्रुतहै ३९ सब यज्ञोंमें जो दानहै सब तीर्थोंमें जो स्नानहै सब दानोंका जो फलहै यह सब अहिंसाकेफलके समान नहींहै ४० हिंसान करनेवालेका-ही अक्षयतपहै हिंसान करनेवालासदैव यज्ञ करताहै हिंसानकरने वाला मनुष्य सब जीवोंके मातापिताके समानहै ४१ हेकौरव्य हिंसानकरनेका यह फलहै यह अहिंसाके गुण हजारों बर्षतक भी कहनेमें नहीं आसक्तेहैं ४२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेअहिंसाफलकथनेषोडशाधिकशततमो ऽध्यायः ११६ ॥

एकसौसत्रहका अध्याय ॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकिया हेपितामहजो इच्छावान वाअनिच्छावान मनुष्य बड़ेयुद्धमें मारेगये उन सबने किस २ गतिको पाया यहसब आप मुझसे कहनेके योग्यहैं १ हे बड़ेज्ञानी घोर युद्धमें प्राणोंका त्यागना बड़ा दुखदायीहै तुमभी प्राणोंके त्यागनेको बहुत कठिन जानतेहो २ जोलोग धनी वा निर्धनी उत्तम वा अनुत्तम कुलमें वा शरीरसे जन्म लेतेहैं उसके सब कारणों को आप कहिये क्योंकि आप सर्वज्ञहैं ३ भीष्मजीबोले कि हेराजा धनी वा निर्धनी अच्छे वा

बरे संसारमें जन्मलेनेवालेजीव ४ जिसनिमित्त मनसे उसमें प्रवृत्त हैं उस कारणको मुझसे सुनो हेयुधिष्ठिर यह तुमने पिछला प्रश्न अच्छापूछाहै ५ पूर्व्व समयमें घूमतेहुये ब्रह्मरूपवेदपाठी कृष्णद्वैपायन व्यासजीने मार्गमें शीघ्रतासे दौड़ने वालेकीट नाम जीवको देखा ६ तब उससर्वजीवोंकी गतिऔर भाषाओंकेजाननेवालेऋषिने कीटको देखकर यह वचन कहा७कि हेकीट तूभयानकरूपवालाहै और शीघ्रता करनेवाला दिखाई देताहै किधरको दौड़ता है और कहांसे तुझको भय उत्पन्न हुआहै उसको कहो ८ कीटने कहाकि हेबड़े बुद्धिमान् ऋषि इस छकड़ेके बड़े शब्दको सुनकर मुझको भयहै और वह आन पहुंचाहै यह कठोर शब्द ९ सुना जाताहै यह मुझको कहींमारनडाले इस हेतुसे हटताहूंहेप्रभु केवल चाबुकसेताड़ित होकर श्वास लेनेवाले बड़े बोझके उठानेवाले बैलोंके १०इस शब्दको मैं बहुत समीपही सुनताहूं और उस छकड़े के हांकनेवाले मनुष्योंके भीनाना प्रकारके शब्द सुनाईदेतेहैं ११ मुझसरीकेकीट योनि वाले जीवसे इस शब्दको सुनना बहुत कठिनहै इसीहेतुसे मैं बड़ा भयभीत होकर भागताहूं १२ जीवोंकी मृत्यु बड़ीदुखरूपहै जीवन बड़ी कठिनतासेप्राप्तहोताहै इसनिमित्त भयसे व्याकुलहोकर भागताहूं जिससे कि सुख पूर्व्वक दुखसे बचूं१३ भीष्मजी बोलेकि कीटके इन बचनोंको सुनकर व्यासजीने कहाकि हेकीट तुझकोसुख कैसे होसक्ताहै तूतो कीट योनिमें वर्त्तमानहै १४हेकीड़ेतू शब्दस्पर्श रस गंध और छोटे बड़े अनेक भोगोंको नहीं जानताहैतेरामरना कल्याण रूपहै १५ कीटने कहा हेबड़ेज्ञानी यहजीव सब शरीरोंमें प्रीति का करनेवालाहै मुझको इस शरीरमेंभीजो आनंद है उसको बिचारताहूं इसीसेमैं जीवनको चाहताहूं१६ मनुष्योंके औरजड़जीवोंके भोग पृथक् २ हैंइस देहमेंभी सब बिषय शरीरके अनुसार वर्त्तमान हैं १७ हेप्रभु मैं पूर्व्व समय में बड़ाधनवान शूद्रवर्ण था मैं ब्राह्मणोंकी सेवासे रहितनिर्दयी अपनेबाल बच्चेस्त्री कुटुंब आदिको और शरीरकोभी कष्टदेकरधनको इकट्ठा करने वाला ब्याज खाने

वाला१८कठोर बचन छल बुद्धी सब जीवोंका शत्रु प्रारब्धहीनदू-सरेके धनचुरानेमें प्रवृत्त१९स्वादुका चाहनेवाला करुणा दयासेर-हित केवल अपनेही निमित्त भोजनका चाहनेवालाथा मैंने अपनी कृपणतासे घरमें पोषण केयोग्य भृत्यादिक और अतिथियों कोभी छोड़कर अकेलेही भोजन किया २० मुझधनकेलोभीने देवयज्ञ और पितृ यज्ञकेलिये भीश्रद्धा पूर्व्वक तैयार और दानके योग्य अन्नको नहींदिया बहुधामनुष्य भयके कारणसे मेरे गुप्त स्थानमें नियतहो-करशरणागतहुये२१उननिर्भयताके चाहनेवाले शरणागतलोगोंको मैंनेत्यागदिया और किसीप्रकारकोभी रक्षाउनकी मैंने नहींकी और ननुष्योंकोधन,धान्य,प्यारीस्त्री,सवारी, पोशाक आदिअपूर्वशोभाओं को देखकरमैंनिरर्थक दोषलगाताथा दूसरेके नाशका चाहनेवाला और अन्यके सुखका ईर्षाकरने वालाथा २३ स्वतन्त्र और स्वेच्छा चारीथाऔर अन्य मनुष्योंके त्रिबर्गका भी नाश करनेवालाथाऔर पूर्व्बसमयमें मैंने ऐसे२ कर्मकिये जोकि निर्दयताके गुणोंसे भरे हुये थे २४ उन सब कर्मोंका स्मरण करके मैंशोचता हुआ ऐसा महा दुःखीहूं जैसा कि अपने प्यारे पुत्रको छोड़करकोई दुःखको पाताहै मैं अपन कर्मों के शुभ फलोंको नहीं जानताहूं २५ मैं ने केवल एकतो अपने वृद्धमाता पिताको पूजाहै और दैवयोग से अपने घरमें आनेवाले एक ब्राह्मणको भी एक वार पूजन कियाहै २६ हे ब्राह्मण एक अतिथि ब्राह्मणको भी मैंने पूजाहै इसी से मुझको पूर्व्व जन्मका स्मरण बनाहै २७ और उसी एक शुभ कर्मसे आने-वाले समय के भी सुखको देखताहूं हे तपोधन इसी हेतुसेमें तुमसे अपने कल्याणको सुनना चाहताहूं २८॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेकीटोपाख्यानेसप्तदशाधिकशततमो-ऽध्यायः११७॥

एकसौअठारहका अध्याय॥

व्यासजी बोलेकि हे कीट वह मेराही कर्महै जिसके द्वारातुम

अपना पूर्व्व वृत्तान्त नहीं भूलेहो जोकि उस मेरे शुभ कर्म से तुम कीट योनिमें भी विस्मरण नहीं होतेहो १ इसी हेतुसे मैं अपने तपबलके के द्वारा अपने दर्शनसेही तुम्हारा उद्धार करताहूं तपबल से अधिक कोई बल नहीं है २ हे कीट तू अपने कर्मोंसे कीटयोनि में पड़ाहै जो तू धर्मको मानता है तो अवश्य धर्मको पावेगा ३ जो देवता पक्षी और पशु आदिहैं वह कर्म भूमि के कर्म को भोगते हैं मनुष्यों में धर्मभीहैं और अज्ञानों में गुणोंसे रहितभी हैं जिनका केवल संसारके विषय भोगही का प्रयोजन मोक्षका नहीं है ४ वाणी बुद्धि और हाथ पैरों से रहित जीवते हुये ज्ञानी वा अज्ञानी मनुष्यको कौन त्याग करसक्ताहै अर्थात् उसको कोई नहीं त्याग करसक्ता क्योंकि वह सब प्रयोजनोंको त्यागे हुयेहैं ५ हेकीट जिस स्थान पर वेद पाठियोंमें श्रेष्ठब्राह्मण पवित्र कथाओंकोकहताहुआ चन्द्रमा औरसूर्य्यका पूजन करताहै तू वहां पर जन्म लेगा ६ उस वेदपाठी शरीर में नियत होकर तुम गुणवान प्राणियों से भिक्षा लोगे वहां मैं तुमको ब्रह्मज्ञान का उपदेश करूंगा और जहां तू चाहेगा वहां तुझको पहुंचादूंगा ७ व्यासजीके बचनों को सुनकर ऐसाही होय ऐसा कहकर वह कीट मार्गमें नियतहुआ और प्रारब्धाधीन वह चलता हुआ वड़ा शकट भी वहां आपहुंचा ८ और पहिये के नीचे दबकर शरीर से खंडित वह कीट भी प्राणोंको त्यागकर बड़े तेजस्वी व्यासजी की कृपासे थोड़ेही काल में क्षत्रीके कुलमें उत्पन्न हुआ ९ स्वाविध, गोधा, बराह, पशु, पक्षी, श्वपाक, शूद्र, वैश्य और क्षत्री आदिक सब योनियोंमें उस कीटने उनव्यास ऋषिको देखा १० तब इस रीतिके सत्यवक्ता ऋषिको देखकर कृतज्ञहो उनके उपकारोंको स्मरणकर दोनों हाथोंको जोड़कर उस क्षत्रीरूपने व्यासजीसे कहा कि यह वह वड़ा स्थानहै ११ जोदशगुणों के कारण से चित्त का प्रियहै इसी हेतुसे मैंने कीटका जन्म पाकर फिर राजकुमारताको पायाहै १२।१३ स्वर्णमयी मालाधारी बड़े२ हाथियों पर मेरी सवारी होतीहै और रथों में कांबोज देशी अर्थात्

काबुलके उत्तमघोड़े जुततेहैं १४ और ऊंट खिच्चरोंकीभी सवारीमें चलताहूं और अपनेभाई पुत्रस्त्री और बांधवोंसमेत मैं अनेक प्रकार की मेवाओंको खाताहूं १५ हेमहाभाग सुन्दर गुणवालीवायु वाले स्थानों में वृद्धोंके योग्य सुखदाई सैयाओंपर अत्यन्त प्रतिष्ठापूर्व्वक सोताहूं १६ और पिछली रातोंमेंसूतमागध और वंदीजन ऐसेमेरी स्तुति करतेहैं जैसेकि देवतालोग इन्द्रकी करतेहैं १७ मैंने कीट शरीर को पाकर जो राजकुमार का जन्म पाया यह सब सत्यबक्ता आप महात्माकीही कृपासे है १८ हे बड़ेज्ञानी आपको नमस्कार करके प्रार्थना करताहूं कि आप मुझको क्या करनेकी आज्ञाकरते हैं जो आप आज्ञादें वही मैं करूं आपके तपोवलसे यह सब ऐश्वर्य्यमैंने पायाहै १९ व्यासजी बोलेकि हे राजा अब मैं होन हारके कारण तेरे वचनों से पूजन किया गया कीट शरीर को पाकर अब तेरी स्मरण शक्ति निर्दोष प्रकट हुई २० उस पापका नाश नहींहै जोकि पूर्व्व समय में तुझ निर्दयी धनके लोभी और आततायी शूद्र ने इकट्ठा कियाथा २१ तुमने मेरेदर्शन किये यह बहुतश्रेष्ठ बात हुई तुझ तिर्य्यक् योनि वालेने जो मेरा पूजन कियाहै इसीसे २२ इस राजकुमार के शरीर के पीछे ब्राह्मण शरीर को पावेगा अर्थात् हे राजा सुखको प्राप्तहोकर पूर्ण दक्षिणावाले यज्ञोंको करता हुआ२३ गौ ब्राह्मणों के निमित्त युद्धमें प्राणोंको त्याग करके ब्राह्मणकेशरीर को पावेगा फिर ब्रह्मरूप होकर अविनाशी स्वर्गमें सुखोंको पावेगा २४ उस स्वर्गमें जानेकी यह रीतिहै कि तिर्य्यकयोनि पशु और आकाशचारी पक्षियोंके शरीर से शूद्र जन्मको पाताहै फिर वैश्य होताहै और वैश्य शरीर से क्षत्री शरीरहोताहै वहां गुरु पूजनादिक से पवित्र क्षत्री ब्राह्मण के शरीर को पाताहै और ब्राह्मण भी गुरु पूजनादि कर्मोंसे पवित्र स्वर्गको पाताहै २५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिकीटोपाख्यानेनामअष्टादशोपरिशत तमोऽध्यायः ११८॥

एकसौउन्नीसका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजा उसने कीट शरीर को त्याग कर क्षत्री धर्मको पाया फिर पूर्व्व वृत्तान्त को जानकर उस पराक्रमी ने बड़ा तपकिया १ तब ब्राह्मणों में श्रेष्ठ कृष्ण द्वैपायन व्यासजी उस धर्म अर्थमें बड़े बुद्धिमान राजाके तपको देखकर आपहुंचे २ व्यास जीने कहा हे कीट जीवोंकी रक्षा और पोषण करना क्षत्रीका देव-व्रतनाम व्रत कहा जाताहै उस क्षत्रियोंके देवव्रत नाम व्रतको ध्यान करता हुआ तू वेदपाठी ब्राह्मण के शरीर को पावेगा ३ हे शुभाशुभके ज्ञाता ब्रह्मज्ञानी तुम पापों के भी पवित्र करने वाले होकर शुभ मनोरथोंसे श्रेष्ठ रीतिके द्वारा सब प्रजा लोगोंको भाग देते हुये उत्तम प्रकार से रक्षाकरो ४ प्रसन्न चित्त स्वकर्मनिष्ठ और ज्ञाना होकर फिर क्षत्रीके शरीर को त्यागकर वेदपाठी ब्राह्मणके शरीर को पावेगा ५ भीष्मजी बोले कि हे राजाओं में बड़ेसाधु युधिष्ठिर उस क्षत्रीने बनको भी प्राप्त होकर व्यासजी के वचनोंको सुनकर फिर अपनी प्रजाको धर्म पूर्व्वकरक्षण और पोषण करके६ थोड़ेही समय में शरीरको त्याग करके धर्म और प्रजाकीरक्षाकेद्वारा ब्राह्मणके शरीरको पाया ७ इसके पीछे बड़ेतेजस्वी ब्रह्मर्षि व्यास जी उस ब्राह्मण को देखकर फिर भी आन पहुंचे ८ व्यासजीबोले कि हे ब्रह्मर्षियों में श्रेष्ठ श्रीमान् तुम किसी दशामेंभी दुःखीमत हो शुभ कर्म करने वाला शुभ योनियों में और पाप करने वाले उन अशुभ योनिमें जन्म लेताहै ९ जिनमें कि पाप फलकी प्राप्तिहोती है हे धर्मज्ञकीट इस हेतुसे तू किसीभयकारी मृत्युसे भयभीत मतहो १० तुमको धर्मके लोप होनेकाभयहोय इसी कारण उत्तम धर्मको करो ११ कीटने कहा हेभगवन्मैंने आपके अनुग्रहसे बड़ा सुखपाया अब यहां उस लक्ष्मीको जिसकी जड़ धर्महै पाकर मेरा पाप नष्ट होगया १२ हे राजाकीटने भगवान् ऋषिके वचनसे कठिनतासे प्राप्त होने योग्य ब्राह्मणकेजन्मको पाकर पृथ्वीको सैकड़ों यज्ञस्तंभों

से चिह्नत करदिया १३ हेकुन्तीनन्दन इसके पीछे उसब्रह्मज्ञानियों में श्रेष्ठ कीटने ब्रह्माजीकी सालोक्यताको पाकर सनातन ब्रह्मपद को प्राप्तकिया १४ तब व्यासजीके वचन और अपने कर्म फलसे उत्पन्न गतिको पाया और वह श्रेष्ठ क्षत्रीभी जिस प्रभावसे मारेगये १५ उन्होंने भी पवित्रगति को पाया हे पुत्र इस कारण तुशोच मतकर १६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेकीटोपाख्यानंनामएकोनविंशत्यधिकशत तमोऽध्यायः ११९ ॥

एकसौबीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिरने प्रश्नकिया कि हे सत्पुरुषों में श्रेष्ठ पितामह विद्या तप और दानोंमें कौन बड़ा कहाजाताहै इसको आप कृपा करिके कहिये १ भीष्मजी बोले कि इस स्थानपरइस प्राचीन इतिहासको भी कहताहूं जिसमें कि मैत्रेयजी और व्यासजीका संवादहै २ हे राजा संसारकी दृष्टिसे गुप्त आनन्द पूर्वक विचरते हुये व्यासजी काशीपुरीमें मुनियोंके निवासस्थान में जाकर मैत्रेयजीके पास नियतहुये ३ मैत्रेयजीने उनमहात्मा व्यासजीको मुनियोंमें सन्मुख बैठाहुआ जानकर बड़े सत्कार पूर्वक उत्तम भोजनको करवाया ४ तब उस गुणयुक्तस्वादु विशिष्ठ उत्तम अन्नको भोजन करके व्यास जीने बड़ा आश्चर्य्य किया ५ उस समयमैत्रेयजीने उन आश्चर्य्य युक्त व्यासजीको देखकर यह कहाकिहे महात्मा आप अपने आश्चर्य्य करने का कारण कहिये और आपसरीके धैर्य्यवानको ऐसीप्रसन्नता काहेसे हुई ६ हे बुद्धिमान् मैं आपको प्रणाम करके इस आपकी प्रसन्नताका कारण पूछताहूं ७ हे तात जो जीव रूप पृथक् आत्मा और सुखात्मा है उन दोनों से विलक्षण मुक्त और अमुक्त रूप तुझ जीवन मुक्तके अन्वयसे तुमको अल्पान्तर वालाही मानताहूं अर्थात् जिस निमित्त कि आपमेरी सौभाग्यताको देखकर आश्चर्य्यितहुये इस हेतुसे मैं आपसे थोड़ेही अन्तरवालाहूं और

मित्रवंशी होनेके कारण अन्य लोगोंसे कुछ विशेषताभी रखताहूं ८ व्यासजी बोले कि अत्यन्त अंतरवालेहोकर उसीके आशयका बयान करना इन दोनोंवातोंसे मुझको यह आश्चर्य्यहुआ कि वेदका बचन मिथ्याहै अर्थात् वेदमें लिखाहै कि यह स्थान विना हजार यज्ञके नहीं मिलसक्ता और तुमने मुझकोजलहीके पिलानेसे उसस्थानको पाया इससे सिद्धान्तहुआ किमुख्यकरकेदेशकालके अनुसारपात्रमें थोड़ादियाहुआ भी दान वहुत बड़ा होताहै तो वेद किस कारणसे से मिथ्या कहताहै ९ अभ्यास करनेके योग्य इन तीनवातोंको पोषण करनेवाला उत्तम व्रतकहाहै १० शत्रुतारहित,दान,सत्य,उत्तम वचन पूर्व्वमें इन वेदोक्त वचनोंको ऋषियोंने नियम से किया ११ पूर्व्व से सुनाहुआ वचन अब हमको अवश्य करना योग्य है उस प्रकारका थोड़ा दानभी बड़ेफलवाला होताहै१२ हे प्रभु तुमनेदोष आदिसे रहित शुद्ध हृदयसे तृषायुक्त के अर्थ जलदिया अर्थात् मुझ तृष्णावानको तुमने भोजन और जलको देकर बड़े लोकोंको ऐसे विजय किया जैसेकि यज्ञ करने वाला१३बड़ेयज्ञोंसेलोकों कोविजय करताहै इसीहेतुसे तप और दानसे पवित्र होनेवाले हे मैत्रेयजी मैं तुमसे प्रसन्नहूं १४ आपका बुद्धिवल पुण्यका है आपका दर्शन पुण्य काहै आपके शरीरकी गंधि पुण्यकी है मैं मानताहूं कि वह सब कर्मविधानसे उत्पन्नहै १५ हे तातदानही उद्धार करनेवाले सब कर्मोंमें शुभ तीर्थस्नान और वेदव्रत समापन से भी अधिक है १६ दानही करने वालों से मार्ग उत्पन्न कियागया ज्ञानी मनुष्य जिसमार्ग से चलतेहैं वहीप्राण दाताहै उन्हींमें धर्म नियत है १७ इसलोक में जैसे कि अच्छे पढ़े हुयेवेदहैं और जितेन्द्रीहैं वा सबके त्यागहैं वैसाही दानहै इससे उत्तम कोई नहींहै १८ हे वड़े बुद्धिमान् तात तुम अच्छे सुख को पाओगे बुद्धिमान् मनुष्य सुख पूर्व्वक बड़े आनन्दको प्राप्तकरताहै १९ निस्सन्देह यह प्राप्त होने के योग्य दान हमारे सन्मुखहै श्रीमान् लोगधन धान्य यज्ञ और सुखको प्राप्त करतेहैं २० हे बड़े ज्ञानी सुखसे बड़ादुःख

और दुःखसे अन्यबड़ा सुख दिखाई देताहै निश्चय करके यह स्वभावही से उत्पन्न होताहै २२ ज्ञानियोंने इसलोक में मनुष्यों की वृत्तीतीन प्रकारकी वर्णन करीहै पुण्य, पाप, और पुण्य पापदोनों से रहित २३ वहब्रह्म निष्ठन तो यज्ञादिकोंको उत्तम कर्म मानतेहैं न अपने कर्मसे उत्पन्न पुण्य और पापको मानतेहैं २४ यज्ञदान और तपका अभ्यास रखनेवाले मनुष्य पवित्र और शुभकर्मी कहलातेहैं और जो लोगकि जीवोंसे शत्रुता करतेहैं वहपापी दुष्टकर्मी कहातेहैं २५ प्रथम मनुष्य द्रव्यों को प्राप्त करताहै और दूसरा दुःखोंको पाताहै और गिरताहै इसके सिवाय जो कुछ कर्महै वह पुण्यहैनपापहै २६क्रीड़ाकरो वृद्धिपाओआनन्दकरो दानकरो और यज्ञकरो वेदपाठी तपस्वीलोग तुम्हारा असत्कार नहींकरेंगे २७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमैत्रेयभिक्षायांविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२० ॥

एकसौइक्कीसका अध्याय॥

भीष्मजी बोलेकि बड़े श्रीमान् कुल में उत्पन्न ज्ञानी शास्त्रज्ञ वेदोक्त कर्मोंकी प्रशंसाकरने वाले मैत्रेयजीने व्यासजीके इनवचनों को सुनकर उत्तर दिया १ कि हे बड़ेज्ञानी जैसा आपने कहा वह यथार्थहीहै हे प्रभु आपकी आज्ञाहोय तो मैंभी कुछकहूं २ व्यास जी बोले हे बड़ेज्ञानी मैत्रेयजी आप जहां का वृत्तान्त जैसे चाहतेहो उसको अच्छीरीतिसे कहो मैं उससबको सुना चाहताहूं ३मैत्रेयजीने कहाकि दोषरहितनिर्मलवचनकहनाभीदानकेसमानहै आपनिस्सन्देह विद्या और तपकेद्वारा पवित्रात्महो ४ आपको पवित्रात्मतासेयह मेरा बड़ालाभ है और मैं अच्छे वृद्धियुक्त तपस्वी मनुष्य के समान बुद्धी से देखताहूं ५ कि आप के दर्शन से हमारा भी चारोंओर से उदय होय मैं मानताहूं किजो आपके चित्तकी प्रसन्नता है वह मेरे शुभ कर्मके फल से है ६ तप शास्त्र उत्पत्तिस्थान माता पिता यह तीनों ब्राह्मण होने के कारणहैं इसीसे तीनों गुणोंसे अच्छे प्रकार

उदय होने वाला मनुष्य ब्राह्मण होताहै ७ इस ब्राह्मणके तृप्तहोने से देवता और पितरभी तृप्त होजाते हैं इससे अधिक शास्त्र वालों का कुछशास्त्रज्ञान नहीं है जो ब्राह्मण न होये तो यह संसार बिना ब्राह्मण के ८ अत्यन्त प्रकाश रहित होकर ऐसा अन्धकार युक्त होजाय कि कुछभी न जाना जाय चारों वर्ण धर्म्म धर्म सत्य मिथ्या का ज्ञान यह सवनष्ट और गुप्त होजायं ६ जैसे कि मनुष्य अच्छे जुते हुये खेतमें फल को पाताहै इसी प्रकार दाता मनुष्य शास्त्री ब्राह्मण को दान देकर अच्छी रीतिसे फलको पाताहै १० जो शास्त्री और गुरु पूजनादि गुणों से युक्तदान का लेनेवाला ब्राह्मण न मिले उस दशामें धनवान का धन निष्फल होताहै ११ अज्ञान ब्राह्मण भोजन को करके अन्नका नाश करता है और वह भोजन कियाहुआ अन्न उसको मारता है अन्नही रक्षा औरपोषण करताहै और अन्नही मारने वाला है परन्तु जो दाता और दान लेने वाला दोनों अज्ञान हैं तो वही मारे जातेहैं १२ ज्ञानी ब्राह्मण अन्नको भोजन करता हुआ उसका स्वामी होताहै और स्वामी अर्थात् ईश्वर होनेसे क्षेत्र रूपहुआ वही उसको उत्पन्नकरताहै अर्थात् दाताको वहुत गुण फल देताहै और उस अन्नसे वह दान लेने वाला प्रजा रूप से उत्पन्न होताहै इसी कारणकुटुम्बी वाल वच्चेवाला मनुष्य दूसरे के अन्नको भोजन नहीं करे १३ दाताका जो पुण्यहै वहीदानलेनेवालेका है क्योंकियह दोनोंचक्रके समान संसार की रक्षा करतेहैं ऋषिलोगोंने ऐसा जानाहै १४जहां पर शास्त्री और गुरु पूजनादि गुणों से युक्त ब्राह्मणहैं वहां पर इस लोकऔरपरलोकमें भोगनेकेयोग्य दानका पवित्रफल होताहै १५ जो ब्राह्मण पवित्र जन्मा सदैव तपमें प्रवृत्त दान और वेद पाठ में प्रशंसनीय हैं वह सदैव पूजनके योग्य हैं १६ जिन सत्पुरुषोंसे जो मार्ग उत्पन्नकिया गयाहै उसपर चलने वालामोह को नहीं पाताहै वह यज्ञ करनेवाले सनातन ब्राह्मण स्वर्गमें पहुंचने वालेहैं १७॥

श्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमैत्रेयभिक्षायांएकविंशत्युपरिशततमोऽध्यायः॥

एकसौबाईसका अध्याय॥

भीष्मजी वोले कि इस प्रकारके मैत्रेयजी के वचनोंको सुन कर भगवान् व्यासजीनेकहा कि हे मैत्रेयजी तुम प्रारब्धसे ऐसा चाहते हो इससे प्रारब्धही से आपकी ऐसी बुद्धि है १ यह संसार बहुधा उत्तम पुरुष के गुणोंको भी प्रशंसा करताहै सुन्दर रूप तरुणता और धनका अभिमान २ यह सब भी प्रारब्धही से आपको विजय नहीं करते तुम्हारे ऊपर दैवकी कृपाहै अबजो दान सेभी उत्तमहै उसको मैं तुमसे कहताहूं इसलोक में जो आगम शास्त्र और प्रवृत्ति मार्गहै वह सब वेदको आगे करके क्रम पूर्व्वक जारी हुये ३ । ४ मैं अब दान की प्रशंसा करताहूं और आपभी तप और वेदकी प्रशं- सा करतेहैं तपही पवित्र और स्वर्गका साधनहै ५ यह हमनेसुना है कि विद्या और तपसेही उत्तम स्थान को पाताहै जोकोई पाप कर्म होय उसको भी तपसे दूरकरे ६ मनुष्यजिस अभीष्टको चित्तमें नियत करके तपस्या करताहै उन सब मनोरथों को तप और विद्या के द्वारा पाताहै यहभी हमने सुनाहै ७ जो कठिनता से प्राप्त होने योग्य है और जिस का जीतना भी दुःखोंसेहै और जिन काप्राप्त होना दूखसे हैं और जिनका उल्लंघन भी कठिनहै उन सबों को तपसे पाताहै इससे निश्चय करके तपसब से बलवानहै८ मद्यपीने वाला दुसरे के निमित्त बिचार किये हुये दानका लेने वाला बाल बध करने वाला गुरूकी स्त्रीसे संभोग करनेवाला यह सब मनुष्य तपसेही अपने पापोंको दूर करके तरतेहैं ९ जो सर्वज्ञ हैं वहीनेत्र वालाहै और जितेन्द्री तपस्वीभी सर्वज्ञ कहाजाता है इनदोनोंको नमस्कार करना उचितहै १० शास्त्ररूपीधन रखनेवाले सबब्राह्मण और तपस्वी पूजनकेयोग्यहैंदानके देनेवाले इसलोकमें लक्ष्मीवान होकर परलोकमें सुखको पातेहैं ११ शुभकर्मीलोग अन्नदानकेद्वारा मृत्युलोक ब्रह्मलोक औरजितने पराक्रमी लोकहैं उनसबकोपातेहैं १२ पूजन और प्रतिष्ठा पानेवाले लोग दूसरोंकी भी पूजन और

प्रतिष्ठा करतेहैं वहदान देने वाला १३ जहां २ जाताहै वहां २ सब ओर फलकाभागी कियाजाताहै कर्त्ता और अकर्त्ताभी जिसकाजैसा कर्महै उसीको पाताहै चाहै तुमऊपररहौ वानीचेरहौ परन्तु तुमसब लोकोंको पाओगे१४ और जिस२ प्रकारकी जो २खानेपीनेकी बस्तु को चाहौगे उनसबको तुम पाओगे तुम शास्त्रके स्मरण रखनेवाले बुद्धिके स्वामी उत्तमकुलमें उत्पन्न होकर शास्त्रज्ञ और दयायुक्तहो १५ हेमैत्रेयजी तुमकुमारअवस्थावाले औरशास्त्रज्ञहो शास्त्रमें प्रवृत्त हो इससे गृहस्थियोंके इस निजधर्मको स्मरणकरो १६ जिसकुलमें पति अपनी स्त्री पर प्रसन्नहै और स्त्री अपनेपतिसेप्रसन्नहै उसकुल में सवप्रकारका कल्याण बर्त्तमानहोताहै १७ जैसेकि जलके द्वारा अंगोंकामैल और अग्निके प्रकाशद्वारा अन्धकार दूरहोताहै उसी प्रकार मनुष्य भी दान और तपकेद्वारा सवपापोंको दूरकरताहै१८ हेमैत्रेय तुमकल्याणको पाओ मैंभी अपने स्थानको जाताहूं यहमन में नियतकरनाचाहिये कि इसरीतिसे कल्याणहोगा १६ फिरमैत्रेय जीने हाथजोड़प्रदक्षिणा करके ब्यासदेव जी से कहा कि हेभगवान आपभीकल्याणको पाओ २० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणि दानधर्ममैत्रेयभिक्षायांद्वाविंशत्युपरि शततमोऽध्यायः १२२ ॥

एकसौतेईसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोलेकि हेज्ञानके और सबउत्तम धर्मकेज्ञाता पितामह मैंआपसे उत्तमस्त्रियोंकेशुभ आचरणोंको सुनाचाहताहूं उसकोआप कहिये १ भीष्मजी बोलेकि केकयदेशके राजाकी सोमनानाम स्त्री ने देवलोकमेंसर्वज्ञ और सवसिद्धांतोंकी जाननेवाली चित्तको जीतने वाली सांडिलीसे पूछा २ कि हेकल्याणिनि तुम किसव्रत औरकिस आचरणसे सवपापोंको दूरकरके देवलोकको आईहो ३ तुमअपने तेजसे अग्निके समान और प्रकाशमें चन्द्रमाकी पुत्रीके सदृशतेज-स्वी स्वर्गमें वर्त्तमानहो ४ दिव्यवस्त्रोंसे अलंकृत सुखोंसे ब्याप्तबि-

मानमें नियत अत्यन्त शुभदर्शन होकर तुमहजार चन्द्रमाकेसमान प्रकाशमानहो ५ तुमथोड़े तप दान और नियमोंसे इसलोकमें नहीं आईहो आप अपने मुख्य वृत्तान्तको मुझसे कहो ६ सोमनाके इन वचनोंको सुनकर सुन्दर हास्यवाली सांडिलीने यहमधुर और गुप्त वचन सोमनासेकहा ७ कि मैंने न तोरंगेहुये वस्त्रोंको धारण करके न मुंडित और जटिल होकर इस देवभावको पाया ८ केवल मैंने बड़ी सावधानीसे अपने पतिसे कभी कठोर और अप्रिय वचननहीं कहे ६ सास और श्वशुरकी आज्ञामें वर्त्तमान होकर मैं सदैवदेवता पितर और ब्राह्मणोंके पूजनमें प्रवृत्तरही और परोक्षमें किसी की बुराई करनेकी मेरी प्रकृति कभी नहींहुई अपनेस्थानके बाहर के द्वारपर मैंबिलम्ब तकनहीं ठहरतीथी औरबहुत समयतककिसी से बार्त्तालाप नहीं करतीथी १०।११ मैं एकान्त में वा सबके समक्ष मेंअकारणहास्य और अप्रिय कर्ममें कभी प्रवृत्त नहीं होतीथी १२ मेरापति किसीकार्य्यके निमित्त बाहर जाताथा और उस कामको निवृत्तकरके जब घरमें आताथातबमैं उसकोआसनपर बैठाकर पूजा करतीथी १३ मेरापति जिसभक्ष्य भोज्यवाली वस्तुको खानानहीं चाहताथा अथवा अंगीकारनहीं करताथा उसकोमैंभीत्याग करदेती थी१४ औरजो कुछबालबच्चोंके व अन्यगृहस्थधर्मके लिये जोकुछ कामवर्त्तमानहोताथा उसकोप्रातःकाल दूसरोंसे कराकर औरआप भीकरकेपूराकरतीथी १५जबकभी मेरापतिकिसी जीविकाकेनिमित्त विदेशकोजाताथा तबमैं बड़ी जितेन्द्री अपने कर्ममें प्रवृत्त आचारज्ञ बहुतसीपतिव्रतास्त्रियोंमें बैठतीथी और केवलमंगल सूत्रमात्रधारण करतीथी तांबूलादिकको कभीनहीं सेवन करतीथी १६ पतिकेविदेशमें बसने पर अंजन लगाना मांगभरना स्नान और मालाफेरना चन्दन लगाना बालोंका संभारना इत्यादिक सब बातोंको त्यागदेतीथी १७ और अपने सोतेहुये पतिको मैंनेकभी आवश्यक कार्य्यके भीनिमित्त नहीं जगाया इसीसे मेराचित्त प्रसन्न रहताथा१८ और बालबच्चोंकेभी निमित्त कभी पतिको दुखित नहीं करतीथी अर्थात्

परिश्रम नहींदेतीथी सदैव परदेमें रहतीथी और सत्संगमेंही बैठतीथी १९ स्त्रियोंमें सावधान जो स्त्री इसधर्ममार्गमें चलतीहैं वह अरुन्धती के समान स्वर्ग लोक में प्रतिष्ठा पातीहैं २० भीष्मजी बोले इसके अनन्तर वह महाभाग तपस्वनी देवी सांडिली सोमना स्त्रीसे इस धर्म रूप तपको कहकर अदृष्ट होगई २१ हेपांडव इस प्रकारजो पुरुष पर्व्व२में इस उपाख्यानको पाठकरताहै वह देवलोक कोपाकरआनन्द पूर्व्वक सुखसे निवास करताहै २२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशांडिलीसोमनासंवादेत्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः१२३ ॥

एकसौचौबीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिरने पूछा कि हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ आपने मधुर भाषण और दान इन दोनोंमें किसको उत्तममानाहै इनमेंजोअधिकहै उसके आपकहिये १ भीष्मजी बोलेकि कोईतो मधुर भाषणसे प्रसन्न कियाजाताहै और कोईदानसे हर्षित कियाजाताहै मनुष्य दूसरेके स्वभावको जानकर उनदोनों गुणोंमेंसे जिसको उचित समझे उसको काममें लावे २ हेभरतर्षभ राजा युधिष्ठिर अबमैं मधुर भाषणकेउनगुणोंको तुमसे कहताहूं जिनके द्वाराभयानक रूपजीवभी प्रसन्न होजातेहैं ३इस स्थानपर एकप्राचीन इतिहासकोभी कहताहूंजिसकेद्वारा वनमें राक्षससे पकड़ाहुआ कोई ब्राह्मण उससे छूटा ४ निर्जन वनमें वाणी और वुद्धिसेसपन्न किसी ब्राह्मणकोक्षुधासेपीड़ित किसी राक्षसने खानेके लिये पकड़ा जब वहब्राह्मण महा आपत्ति में पड़कर दुखितहुआ ५ तब उस वुद्धिमान वेदपाठी ब्राह्मणने उस भयंकर राक्षसको देखकर मोह और पीड़ासे रहित होकर उस से मधुर भाषण करना प्रारंभ किया६ राक्षसनेउसके उस बचनकी प्रशंसा करके ब्राह्मणसे यह पूछा कि हेब्राह्मणतूमेरे प्रश्नको बतादे कि मैं किसकारणसे दुर्बल और पांडुवर्णहूं ७ तब उस सावधान ब्राह्मणने एकमुहूर्त्त विचारांश करके इनबचनोंसे राक्षस के प्रश्नों

को वर्णन किया कि तुम पराये देशमें नियत होकर अपने इष्ट मित्रों के विना परदेशियों के साथ वहुत विषयों को भोगते हो इसी हेतु से तुम दुर्बल होकर पांडु वर्णहो ९ हे राक्षस निश्चय करके तेरे मित्र लोग भी साधुओं के आचरणों को अच्छा नहीं मानतेहैं इसी से दुर्बल और पांडुवर्णहो १० और जोकि तू धन ऐश्वर्य्यमें अधिक मदान्धहै इसी से उत्तम राक्षस तेरी निन्दा करतेहैं इसी हेतु से पांडुवर्ण और दुर्बलहै ११ तुम गुणमान ज्ञानीहोकर दूसरे निर्गुण और अज्ञानियों को प्रतिष्ठा युक्तदेखतेहो इससेही दुर्बल और पांडु वर्णहो १२ जीविका के न होने से कष्टित होकर जो जीविका के उपायोंकी निन्दा करतेहो इस हेतुसे भी तुम दुर्बल और पांडु वर्ण हो १३ हे साधू तुमने प्रतिष्ठाके कारण अपने शरीर को कष्ट देकर किसी मनुष्य को रोटी और कपड़े से पोषण किया है वह तुमको पराजय हुआ मानताहै इस कारण तुम पांडु वर्ण और दुर्बलहो १४ मैं जानताहूं कि तुम ऐसे मनुष्यों को शोचतेहो जोकि कुमार्ग में दुखित और अन्तःकरण में काम क्रोध से जीते हुये हैं इसी से दुर्बल और पांडु वर्णहो १५ निश्चय करके बुद्धिसे पवित्रात्मा होकर तुम अज्ञानियोंके साथ में नियत रहतेहो और दुराचारी लोगों से सहायता चाहतेहो इसी से दुर्बल और पांडु वर्णहो १६ प्रत्यक्ष में मित्र और भीतरसे शत्रु कोई मनुष्य कर्म करने वाला बनकर तुमको ठगकर चला गया इसीसेतुमदुर्बल और पांडुवर्णहो १७।१८ निश्चय करके तुम प्रत्यक्ष प्रयोजनके ज्ञातागुप्त निषेधमें पंडितऔर सावधानहो जो दूसरे मनुष्य उससे विदितहैं उनसे पूजित नहीं होतेहो इससेभी दुर्बल और पांडुवर्णहो १९।२० मैं जानताहूंकि तुझतपमें प्रवृत्त को तेरे बांधव लोग तुझको तपस्याके निमित्त वनमें नहीं जाने देतेहैं इसी से तुम दुर्बल और पांडु वर्णहो २१ तुझ स्त्री के मानने वाले का सहवासी वड़ा धनमान सुन्दर और तरुण अवस्थासे महा कामीहै २२ निश्चय करके धनमानों में समयपर कहा हुआ मधुर वचन शुभ दायक होताहै उससे अधिक कोई श्रेष्ठ नहीं

है उसका तुम पर असर नहीं होताहै इसी से तुम दुर्बल और पांडु वर्ण हो २३ जो तेरा प्यारा चित्त अज्ञानहै और तेरी शिक्षाको सुन कर क्रोध युक्त होताहै और तू उसके समझाने और प्रसन्न करने को समर्थ नहीं होता है इस हेतुसे भी दुर्बल और पांडु वर्ण हो २४ निश्चय करके कोई मनुष्य तुमको किसी प्रिय कर्ममें प्रवृत्त करके सदैव उसको चाहताहै इसीसे तुम दुर्बल और पांडु वर्ण हो २५ श्रेष्ठ गुणों से युक्त सुहृद जनों का पूजन करने वाला तुम को जानताहै कि यह मेरा आज्ञा वर्तीहै इसी हेतुसे तुम पांडु वर्ण और दुर्बलहो २६ निश्चय करके तुम लज्जासे और अपने प्रयोजनकी सिद्धी से निरास होकर अपने मनका गुप्त वृत्तान्त प्रकट नहीं किया चाहतेहो इसी से दुर्बल और पांडु वर्णहो २७ तुम इस संसार में नाना प्रकारकी बुद्धियों में प्रीति मान सब लोगोंको अपने आप स्वाधीनतामें करना चाहतेहो इसीसे दुर्बल शरीर और पांडु वर्णहो २८ अज्ञानी और भयभीत होकर तुम थोड़े धनमें भी उस शुभ कीर्त्ति कोप्राप्तकियाचाहते हो जोकि विद्या पराक्रम और दानसे प्राप्तहोतीहै इसीसेदुर्बल और पांडु वर्णहो २९ बहुत दिनोंसे चाहाहुआ और प्राप्तहुआ कोई तेरा फल दूसरे मनुष्यने अपने आधीन करलियाहै इससेभीपांडुवर्ण औरदुर्बलशरीर हो ३० निश्चय करके अपने कियेहुये निज दोषको न देखते निष्कारण दूषित किये गयेहो इसीसे दुर्बल और पांडुवर्णहो ३१ गृहस्थी साधू वनचारी साधू औरजीवन मुक्त पुरुषोंको गृहमें प्रवृत्त चित्त देखकर शोचतेहो इससे दुर्बल और पांडु वर्ण हो ३२ तुम पीड़ासे उत्पन्न धन और शुभ गुणोंसे रहित अपने इष्ट मित्र भाई बन्धु आदिके बड़े २ दुःखोंको दूर नहीं कर सक्ते हो इसीसे दुर्बल और पांडु वर्ण हो ३३ धर्म अर्थकामसे संयुक्तजो समय पर अभीष्ट सिद्ध करनेवाला तेराबचन है उसको वह सब इष्टमित्रादिक अच्छा नहीं मानतेहैं इसी हेतुसे दुर्बल और पांडुवर्णहो ३४ निश्चयकरके तुम जीवनके चाहनेवाले और बुद्धिमान होकर भी अज्ञानियोंसे

दिये हुये धनसे अपना निर्वाह करतेहो इससे भी दुर्बल और पांडु वर्णहो ३५ निश्चय करकेतुम पापियोंकी वृद्धिको औरशुभकर्मियोंको हानिको देखकर सदैव निन्दा करतेहो इसीसे दुर्बल और पांडुवर्ण हो ३६ ठीक२तुम शिक्षा और शासनके द्वारा उनअपने नातेरिश्तेह दारोंका जो कि परस्परमें शत्रुहैं भला किया चाहतेहो इस हेतुसे दुर्बल और पांडुवर्णहो ३७ और मैं यह भीजानताहूं कि तुम विपरीत कर्म करनेवाले वेदपाठियोंको और इंद्रियोंके वशीभूत बुद्धिमान मनुष्यों को शोचतेहो इसीसे दुर्बल और पांडुवर्णहो ३८ इस रीतिके वचनोंको सुनकर उसउग्र राक्षसने उस ब्राह्मणका पूजन किया और अपना मित्र बनाकर अभीष्टोंको देकर अपने बंधनसे छोड़दिया इस अध्याय भरेका यह आशयहै कि अनात्मा से संबन्ध रखनेवाली चिन्ता दुर्बलताका हेतुरूप पांडु वर्णहै और सामर्थ्यवान न होनेसे मधुर भाषणही जीवनका उपाय है ३९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेहरिणकृशकाख्यानेनामपञ्चाधिकशततमोऽध्यायः १२४ ॥

एकसौपच्चीस का अध्याय

युधिष्ठिरने प्रश्न किया कि हे पितामह मनुष्य का जन्म और कठिनतासे प्राप्त होनेवाले कर्म क्षेत्रको पाकर कल्याणके चाहने वाले दरिद्री मनुष्यको क्या करना योग्यहै १ हे गांगेयजी दानोंमें जो श्रेष्ठ दानहै और जो दान कि प्रतिष्ठावान पूजनीय ब्राह्मणके देनेके योग्यहैं इनदोनों गुप्तवार्तोंको आप मुझसेकहिये २ वैशंपायन बोले कि युधिष्ठिरके इसवचनको सुनकर भीष्मजीने धर्मोंकीगुप्तवार्त्ता ओंको युधिष्ठिरसे वर्णनकिया ३ अर्थात् भीष्मजीने कहाकिहे राजा तुमसावधान होकर उनधर्मकी गुप्तवार्त्ताओंको सुनोजिनको किपूर्व्व समयमें व्यासजीने मुझसे कहाहै ४ हेराजायहदेवताओंका गुप्तभेद बड़ेतपका फलहै जिसको कि नियमसेनियत योगीजनोंने और सुगम कर्मी यमराजने प्राप्तकियाहै ५ उसीसे ज्योतिस्वरूप ब्रह्मदेवपितर

प्रमथा लक्ष्मी चित्रगुप्त और आठोदिग्गजभी प्रसन्न होतेहैं ६ उसी में बड़ेफलवाला रहस्यों समेत ऋषि धर्ममहादानफल और संपूर्ण यज्ञोंका फलभी कहा है ७ हे निष्पाप जो मनुष्य इसको इसरीति से जान करताहै वहचाहै दोषी वा निर्दोषी कैसाही होय वहगुणों से युक्त होताहै ८ दश पशु घातकों की समान एकतेली है और दश तेलियों के समान एक मद्यपहै दश मद्यपों के समान एकवेश्या है दश वेश्याके समान एक राजाहै ९ जो राजाको उन सबके समान तुलना किया जाय उस दशामें यह मिलकर उस राजासे आधे हैं और राजा उन सब का आधाहै इसीसे राजा सब से अधिक कहा जाता है इसी हेतुसे दान लेनेके इच्छावान ब्राह्मण को धर्म अर्थ कामका प्रकट करनेवाला पवित्र पुरायोंका चिह्न रखनेवाला शास्त्र जानना योग्य है १० धर्मका प्रकट करने वाला बड़े बिहितधर्मोंसे युक्त देवताओं का नियत किया हुआ वह शास्त्र सुनना योग्यहै ११ जिसमें कि श्राद्ध विधि के बीच पित्रोंकी गुप्त वार्त्ता कही जाती हैं और सब देवताओं को विहित कर्मोंका वाक्यभी कहाजाताहै १२ उसीमें रहस्य और बिहित कर्मों समेत बड़ेफलवाले ऋषियोंके धर्म यज्ञ और दानों का फल कहाहै १३ जो मनुष्यसदैव शास्त्र को पढ़ते सुनते स्मरण करते और कहते हैं उन सबको जो फल देताहै वह आप प्रभु नारायणहै १४ अब शास्त्रके अभिप्रायको कहतेहैं कि जो गौओंका तीर्थोंका और यज्ञोंका फलहै इन सबफलोंको वह मनुष्य पाताहै जो अतिथि का पूजन करनेवाला है १५ जोशास्त्रके सुनने वाले वा श्रद्धावान और अन्तःकरण से शुद्ध हैं उनमें से श्रद्धावान साधू लोकों को विजय करनेवालाहै १६ वह श्रद्धा वान मनुष्यपापसे निवृत्त होकर फिर पापोंसे युक्त नहीं होताहै इसीसे वह परलोकमें जाकर अपने प्राचीन धर्म को पाताहै १७ किसी समयदेव दूतने गुप्ततामें वर्त्तमान होकर इन्द्र से पूछा १८ कि अभीष्ट गुणों से युक्त चिकित्सा करनेवालों में श्रेष्ठ जोअश्विनी कुमारहैं मैं उनकी आज्ञा से देवता ऋषि और पितरों से यह पूछने को आया हूं १९

कि श्राद्ध करनेवाले को और श्राद्धमें भोजन करनेवाले को स्त्री से संभोग करना किस कारण से निषेध किया है और पृथक् २ तीन पिण्ड किस निमित्त बिचार किये हैं २० पहला पिंडा किस को देना उचितहै मध्यका पिंड कहांजाताहै और अन्तका पिंड किसका कहाहै इनका वृत्तान्त मैं जानना चाहताहूं २१ श्रद्धावान दूत के इसधर्म संयुक्त प्रश्नको सुनकर पूर्व्व दिशामें नियत जोदेवता और पितरथे वहसब उस आकाश चारीदूतसे सत्कार और पूजन पूर्व्वक बोले २२ हे आकाश चारियोंमें श्रेष्ठ तेराआना शुभदायीहोय और तेराभी कल्याणहो तुमनेगुप्त आशयवाला उत्तमप्रश्न अच्छी रीति से पूछाहै २३ जो मनुष्य श्राद्ध करके वा श्राद्धका भोजन करके स्त्री के पासजाय उसके पितर एकमहीनेतक उस वीर्य्यमें निवास करते हैं २४ अबपिंडोंका बिभाग क्रमसेसुनो कि प्रथम पिंडतो नीचे को और चलायमान होकरजलमें तृप्तकरताहै आशय यहहै कि प्रथम पिंडको जलमें डालदेना उचितहै २५ और दूसरे पिंडको अकेलीस्त्री हीभोजन करतीहै और तीसरे पिंडको अग्निमेंहवनकरे २६ यहश्राद्ध विधि बर्णन करीहै इसरीति परकरनेसे धर्मका लोप नहीं होता है और उसके पितरभी अत्यन्त प्रसन्न चित्तहोकर सदैवसुखको पाते हैं २७ उसकी सन्तानभी बृद्धियुक्त और अबिनाशीनियत होतीहै २८ देवदूतने कहाकि तुमने पिंडोंकी प्रशंसा क्रमपूर्व्वक पृथक् २ बर्णन की और तीनोंपिंडोंमें सबपितरोंका सम्बन्ध भी कहा २९ अब यह बताइयेकि वह पहला पिंडजलमेंसे किसको मिलताहै और कौनसा देवताउससे तृप्तहोताहै और पितरोंको कैसेउद्धार करताहै और स्त्री आज्ञा दिये हुयेमध्य पिंडको किस प्रयोजनसेभोजन करतीहै क्योंकि उसके पितर लोगतो कव्यकोही भोजन करतेहैं ३१ और जो अन्त का पिंड अग्निमें होमा जाताहै उसकी क्या गतिहोती है किस को अच्छी रीति से मिलताहै ३२ तीनोंपिंडोंमें जो गतिफल और वृत्ती है अथवा जो उसकोपाताहै इनसब बातोंकोभी मैं सुनाचाहताहूं ३३ पितर बोले कि हे आकाशचारी यह बहुत बड़ा प्रश्नहै ३४ इसी

श्राद्धकी देवता और मुनिप्रशंसा करतेहैं उस महात्मा चिरंजीवीनाम उत्तमऋषिके सिवाय वह भी इसप्रकारके पूरे निश्चयको नहीं जानते हैं ३५ जोकि बड़ायशस्वी वेदपाठी होकर भगवानसे तीनों पिंडोंकी गतिको सुनकर पित्रोंकी भक्तिकोकरके उनसेवरकापानेवालाहुआहै हेदेवदूत जोतुमनेश्राद्धविधिकोपूछाहै३६।३७ सोतुमसावधानहोकर उसऋषिकीकहीहुई तीनोंपिण्डोंकी गतिको हमसेसुनो उनतीनोंमेंसे जोबड़ा पिण्डजल में डालाजाताहै वह चन्द्रमाको तृप्तकरताहै ३८ फिरवह चन्द्रमा देवता और पितरोंको तृप्त करताहै उनमें बीचके पिण्डको जोआज्ञा पाकर स्त्रीभोजन करतीहै ३९ उससे पितृलोग उसपुत्रकीइच्छा करनेवालीकोपुत्रदेतेहैं औरतीसरापिंडजो अग्निमें डालाजाताहै उसकाभी वृत्तांतसुनो४०उसपिण्डसेपितृलोग अत्यन्त प्रसन्न होकर अभीष्ट मनोरथोंको देतेहैं यहतीनों पिण्डोंकी गति हमने तुमसेकही४१श्राद्धके अन्नका खानेवाला ऋत्विज यजमान के पिताके अधिकार को पाताहै इसी हेतुसे उसदिन स्त्रीका संग करना निषेधित कियागया है अर्थात् दूसरारूप प्राप्त करनेवाला अपनी स्त्रीके पास जानेवाला वह ऋत्विज कुकर्म के फलको पाता है ४२ हे आकाश चारियोंमें श्रेष्ठ सदैवपवित्र ब्राह्मणको श्राद्धका अन्न भोजन करना उचितहै परन्तु इसके खानेमें वहीदोष होते हैं उसके विपरीत नहीं होतेहैं जो हमने पहलेकहे हैं ४३ इसीहेतु से स्नान किया हुआ पवित्र शान्त क्षमावान ब्राह्मण श्राद्धके अन्नको भोजनकरेतो उसश्राद्ध करनेवालेकी सन्तान बहुत वृद्धियुक्त होती है ४४ इसके अनन्तर विद्युत्प्रभानाम ऋषिजिसका रूपआकाशमें सूर्य्यकी किरणोंके समान प्रकाशमानथा उसने धर्मके गुप्तरहस्यों कोसुनकर इन्द्रसे यहवचन कहाकि अज्ञानीमनुष्य जो तिर्य्यक्योनिवाले कृमि, पिपीलिका, सर्प, बकरा, मृग, पक्षी आदिजीवोंको मारतेहैं ४६ वहबड़े पापकेभागीहैं उन्होंका प्रायश्चित्तक्याहै ४७ यह सुनकर सबदेवता तपोधन ऋषि और महाभाग पितरोंने उस मुनिकी प्रशंसाकरी ४८ इन्द्रने कहा कि कुरुक्षेत्र गया गंगा प्रभास

और पुष्कर उन्होंको चित्तसे स्मरणकरके उनके जलोंमें स्नानकार
तेही ४६ वहपुरुष पापोंसे ऐसे छूटताहै जैसेकि राहुसे चन्द्रमा छूट-
ताहै उस मनुष्यको तीनदिनतक तीर्थके जलमें स्नानकरके निरा-
हार रहना योग्यहै ५० जो गौओंके पुच्छकोस्पर्श करताहै और
नमस्कार भी करताहै वह भी पापोंसे छूटताहै फिर विद्युत प्रभा
ऋषिने इन्द्रसेकहा ५१ कि हेइन्द्रइसके विशेष यह धर्मबड़ा सूक्ष्महै
इसको स्मरणकरके सदैव जानतेरहो कि राजर्षिपवको शरीर परम
दर्शनकरके वटकीजटाको पानीमेंऔटाकर स्नानकरे औरपकेहुयेधानों
कोदूधकेसाथ छःदिन भोजनकरेतो सबपापोंसे निवृत्त होताहै ५३
हेदेवताओंके ईश्वर शचीपति जोमैंने बृहस्पतिजीके स्थानपर शि-
वजीके मुखसे ऋषियोंके बिचार कियेहुये अन्य२ रहस्योंको सुनाहै
उसकोभी सुनो ५४ किजो मनुष्य पर्व्वतके ऊपर एकचरणसे खड़ा
होके हाथोंको जोड़े हुये ऊपरको भुजाकरके सूर्य्य देवताको सदैव
देखे ५५ वह बड़े तपवाले व्रतके फलकोपाताहै और सूर्य्यकेसन्मुख
किरणोंसे संतप्त होकरसब पापोंकोभी दूरकरताहै ५६ जोउष्णऋतु
वाशीत ऋतुमें इसरीतिसे पापोंको दूरकरताहै उसकापाप दूरहो-
कर उसमें सदैव रहनेवाला तेजप्रकट होताहै ५७ फिरअमनतेजसे
सूर्य्यके समान तेजस्वी होकर वह पुरुष चन्द्रमाके समान शोभाय
मानहोताहै इसके पीछे देवराजइन्द्रनेसबदेवताओंके मध्यमें ५८ बृ
हस्पतिजीसे यह उत्तम और मधुर वचन कहाकि हेभगवन जोगुप्त
धर्ममनुष्योंको सुखका देनेवालाहै ५९ और जोमित्र दोषगुप्तभेदवाले
हैं उनको पूरा २वर्णन कीजिये ६० बृहस्पतिजीने कहाकि हेशची
पति जोमनुष्य सूर्य्यके सन्मुख मूत्र करते हैं और जोवायुको दूषित
करतेहैं और यज्ञकी अग्निके प्रज्वलित होनेपर समधियोंको नहीं
होमतेहैं ६१ और बालवत्सा गौको दूधके प्राप्तकरनेकोदोहतेहैं उन
सबके दोषोंको कहताहूं ६२ हेइन्द्र सूर्य्य वायु अग्नि और सृष्टिकी
माता गौ इन सबको ब्रह्माजीने उत्पन्न कियाहै ६३ वहसब देवता
इन मर्त्यलोकोंमें सृष्टि के उद्धार करनेको समर्थहैं ६४ तुमसबलोग

प्रत्येक धर्मके निश्चयको सुनो हे पुरन्दर दुराचारिणी स्त्रियां सूर्य्य कीओर पेशाबकरतीहैं और जोमनुष्य वायुको दूषित करतेहैं उनकी गर्भस्थ संतान गिरतीहैं अर्थात् गर्भोंका पतनहोताहै ६६ जोमनुष्य यज्ञोंमेंहव्यवाह नाम अग्निके प्रकाशित होनेपर समिधियोंको नहीं होमतेहैं उनके हव्यको अग्निदेवता नहीं भोजन करतेहैं ६७ इस लोकमें जो मनुष्य बालक व बछड़ोंके भागवाले दूधको भक्षणकरतेहैं उनके घरमें वंशकी वृद्धिकरनेवाले कोई दूधपीनेवाले बालक नहीं होतेहैं ६८ वह मनुष्य संतान कुल और वंशके अभावसे नाशहोतेहैं इसरीतिसे यह धर्म कुलमें वृद्ध ब्राह्मणोंसे कियाहुआ देखागयाहै ६९ इसीसे ऐश्वर्यके चाहनेवाले मनुष्यको करनेके योग्यकर्मको करना योग्यहै और त्याग करनेकेयोग्य दुष्कर्मोंका त्यागना योग्यहै इसी को तुमसत्य२ जानो ७० तदनन्तर मरुद्गणों समेत सबमहा भाग देवता औरऋषियोंने पित्रोंसेपूछा ७१ कि निर्बुद्धीमनुष्यके कौनसे कर्म से पितृप्रसन्न होतेहैं और और्ध्वदैहिक दानकैसे अक्षयहोताहै और कौनसे कर्म करके मनुष्य को अऋणता होतीहै इनसबबातोंको मैं सुनना चाहताहूं मुझको सुननेसे तृप्ति नहींहोतीहै ७३ पितृबोलेहे महाभागदेवता ऋषियो तुमनेन्यायसे संशयकोकहाहै महात्मालोगो संसारके शुभकर्मीलोगोंके जिस कर्मसेहम प्रसन्नहोतेहैं उसकोसुनो ७४ नीला वृषभ अर्थात् सांड़ छोड़ने से अमावास्या के दिन तिल युक्त जलके तर्पण से वर्षाऋतुमें दीपदान करनेसे पितरोंसे अऋण होताहै ७५ यहतीनों दानबड़े पवित्र अविनाशी और उत्तम फलोंके देनेवालेहैं अर्थात् हमारी स्वास्थताके करनेवाले होकर अविनाशी कहातेहैं ७६ जो श्रद्धावान मनुष्य सन्तानको उत्पन्न करतेहैं वह पुत्रादिकअपने पितामहादिकों को कठिन स्थान और नर्कोंसेउद्धार करतेहैं ७७ पितरोंके इसवचनको सुनकर प्रसन्न मूर्त्ति महा तेज स्वी तपोधन वृद्धगार्ग्य ऋषिने उनसे यह वचनकहा ७८ हे तपो धन पितर लोगो नीलेसांड़के छोड़नेका कौन फलहै और वर्षाऋतु में दीप दानसे वा तिल जल के तर्पण से क्या२ फल होतेहैं ७९

जो नीले सांड़की पूंछके जलको ऊपर उछाले तो उसजल से पितृ लोग साठ हजार वर्षतक तृप्त होतेहैं ८० जो नीलासांड़ अपने सींगोंसे तीर्थके किनारेकी कीचड़मट्टीको उठाकर वर्त्तमान होताहै उस कर्मसे पितृलोग निस्सन्देह चन्द्रलोकको जातेहैं ८१ वर्षा ऋतुमें दीपदान करनेसे मनुष्य चन्द्रमाके समानशोभायमान होता है अर्थात् जो दीपकोंको देताहै उसका रूपकभी अप्रकाशित नहीं होताहै ८२ जो मनुष्य अमावास्या के दिनगूलरकी लकड़ीके पात्र को लेकर मधुयुक्त तिलजलोंको दान करतेहैं ८३ और उनमनुष्यों से गुप्तबुद्धीसे युक्तठीक २ श्राद्ध कियाजाताहै उन लोगोंकीसन्तान सदैव प्रसन्नहोकर हृष्टपुष्ट होतीहै ८४ जो श्रद्धावान् मनुष्य पिंडदान करताहै उसके फलसे उसके कुलकीवृद्धिहोतीहै और आप अपने पितरोंके ऋणसेअऋण होताहै ८५ इसरीति से यहश्राद्ध का समयउसके करनेकी रीतिविधि पात्र औ फलका ठीक उपदेशवर्णन किया ८६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेपितृरहस्यंनामशतोपरिपंचविंशततमोऽध्यायः १२५ ॥

एकसौछब्बीसका अध्याय ॥

भीष्मजी बोलेकि आपकिसकर्मसे प्रसन्नहोतेहैं और किसरीति से आनन्द युक्त होतेहो इसरीतिके इन्द्रसे पूछनेपर ईश्वर हरिने उत्तर दिया १ कि ब्राह्मणोंके साथजो कठोर वचनहै वहीमेरी बड़ी भारी शत्रुताहै और निश्चय करके ब्राह्मणोंकेपूजित होनेपर मैंसदैव पूजित होताहूं २ वेदपाठियोंके अधिपति ब्राह्मणसदैवदंडवतके योग्य हैं इसी प्रकार भोजन करके अपने दोनों चरणभी नमस्कार के योग्यहैं मनुष्यों में मैं उसमनुष्य पर प्रसन्न होताहूं जो कि गोबर से लीपकर सुदर्शन चक्रपर बलिदान देताहै ३ बावन अवतार ब्राह्मणको और जलसे उठेहुये बराहको और जलसे उठीहुई पृथ्वी को मस्तकपर धारण करताहै देखकर उनदर्शन करने वालों का

कुछपाप और दुःख बाकी नहींरहता अर्थात् दोनोंका नाशहोजाता है जो मनुष्य सदैव पीपलके वृक्ष और गौको पूजनकरता है वहदेवता असुर और मनुष्यों समेत सबसंसारका पूजन करताहै मैंअपनेरूप से उनकी पूजाको चित्तसे ग्रहणकरताहूं ६ मेरीयही पूजाहै दूसरी पूजा नहींहै यहसृष्टि मुझीसे नियतहै अल्पबुद्धि मनुष्य निरर्थक दूसरे प्रकारसे पूजन करतेहैं ७ मैं उसविपरीतपूजनको अंगीकार नहीं करताहूं उसमें मेरीकिसी प्रकारसेभी प्रसन्नता नहींहै ८ इन्द्र नेकहा तुम किस निमित्त चक्र चरण बराह बावन ब्राह्मण और उठीहुई पृथ्वीकी प्रशंसा करतेहो ९ आपजीवोंको उत्पन्न करतेहो और आपहीसब सृष्टिका नाशकरतेहौ आपही सबदेवता मनुष्या-दिकोंकी प्राचीन उत्पत्ति स्थानहो १० भीष्मजी बोले कि यहसुन कर विष्णुजी अत्यन्त प्रसन्नतासे हंसकर बोले कि मैंने चक्रसे तो सबदैत्य मारे और चरणोंसे स्थूल सूक्ष्म दोनों पृथ्वीपर चले ११ बराह रूपमें नियत होकर हिरण्याक्ष दैत्यको मारा और बावन रूपमें नियत होकर राजा बलिको बिजयकिया १२ इसअभिप्राय से मैं महात्मा मनुष्योंके ऊपर प्रसन्न होताहूं इस रीतिसे जोपुरुष मेरा पूजनकरेंगे उनकी अप्रतिष्ठा और हानिनहीं होगी १३ अथवा समीप आयेहुये ब्रह्मचारी ब्राह्मणको देखकर उसको बड़ी भक्तिसे भोजन करावे उसका भोजन किया हुआ अमृत रूपहोताहै १४ प्रातःकाल की संध्योपासनादिक कर्मोंको करके सूर्य्य के सन्मुख नियत होनेवाला वहमनुष्य सब तीर्थोंका स्नान करनेवाला होता है और सबपापोंसे भी छूटताहै १५ हे तपोधन देवता और ऋषि लोगो यह गुप्तरहस्य संपूर्णता के साथ मैंने तुमसब संदिग्ध पूछने वालोंसे वर्णन किया इसके विशेष जो कहो सो और कहूं १६ बल देवजी बोलेकि मनुष्योंके सुखदायी बड़ेगुप्तरूप उन धर्मोंको सुनो जिनके न जाननेसे अज्ञानी लोग निर्धनतासे पीड़ायुक्त होकर कष्टों को पातेहैं १७ जो मनुष्य प्रातःकालके समय गौ घृतदही सर्षप और राजसर्षपको स्पर्श करताहै वहपापों से निवृत्त होताहै १८

तपोधन ऋषि सवजीवमात्र और शूद्रादिकों कोभी आगे वा पीछे जूठन देनेको निषेध करते हैं १९ देवता बोले कि गूलरकी लकड़ी के जलसे भरे पूर्णपात्रको लेकरउत्तराभि मुखहोकर व्रतकासंकल्प करे वा अंगीकार करे २० उसके देवता प्रसन्न होकर चित्तके मनो-रथोंको देतेहैं अत्यन्त निर्बुद्धी लोग निरर्थक विपरीतकर्मकरतेहैं २१ व्रत और वलमें ताम्रका पात्र श्रेष्ठ कहाजाताहै बलिभिक्षा अर्घदान और तिलोदकसे पितरोंका तर्पण २२ यहसबकर्म ताम्रपात्र मेंहीं करना उचितहै इसके बिपरीत करने से निष्फल होताहै यह गुह्य रहस्य मैंने तुमसे कहा इसी से देवता प्रसन्न होतेहैं २३ धर्मने कहाकि जो बेदपाठी ब्राह्मणराजाका आज्ञाकारी होकरउसकेकार्य्य में प्रवृत्तहै२४ और राजाके जगानेके लियेघंटे का वजाने वाला और गौओंका रक्षक अथवा व्यापार करनेवाला शिल्प बिद्या का जानने वाला नर्त्तक मित्रसे शत्रुता करनेवाला विद्यासे रहित और वृषलीपति है इन ब्राह्मणों को किसीदशा में भी देवता पितरों के नामका अन्नादिक देना उचित नहींहै २५ जिसके घरसे अतिथि निराशा होकर लौटजाताहै उसकी पिंडदाता सन्ताननष्ट होजाती है और वहभी पितरोंको तृप्तनहीं करताहै २६ अतिथि का आदर सत्कार करनेसे उसके पितृदेवता और अग्नियां यहसब निराशा होकर चले जातेहैं २७ जिसके घरमें अतिथिकी पूजानहीं होतीहै वह मनुष्य आगेलिखे हुये दुष्टकर्मियोंके समान पापकाभागी होता है अर्थात् स्त्री गौ और ब्राह्मणका मारनेवाला अकृतज्ञ गुरुकीस्त्री से संभोग करनेवाला २८ इतनोंके समान पापभागीहोताहै अग्नि देवताने कहाकि जो बड़ानिर्बुद्धीमनुष्य पैरोंकोउठाकर गौ ब्राह्मण और प्रकाशित अग्निको स्पर्श करताहै उसके दोषोंको तुमसाव-धानीसे सुनो उस पुरुषकी अपकीर्त्ति स्वर्गको स्पर्शकरतीहै और उसके पितृ भयभीत होतेहैं २९।३० देवता,लोगभी चित्त से विरुद्ध होजातेहैं और बड़ातेजस्वी अग्निभी उसके हव्यको अंगीकार नहीं करताहै ३१ और वहसौजन्मतकनरकमें पकताहै और किसीप्रकार

सेभी उसका प्रायश्चित्त नहींमाना जाता है ३२ इसीसे गौ महा-
तपस्वी ब्राह्मण और प्रकाशित अग्निको कभीपैरोंसे स्पर्श करना
उचितनहींहै ३३ जो मनुष्य श्रद्धामान होकर अपनी वृद्धिको चाहने
वालाहै उसको इसपर अमल करना योग्यहै जो मनुष्य इनतीनोंको
पैरोंसे स्पर्शकरे उसकेयहदोष मैंनेवर्णनकिये ३४ विश्वामित्रनेकहा
कि अत्यन्त गुप्तधर्मोंसे युक्तरहस्यको सुनोजोमनुष्य दक्षिणाभिमुख
होकरहस्तनक्षत्रके प्रारम्भमें और माघवाभादौंमहीनोंके कृष्णपक्ष
मेंजबकि मघानक्षत्रहोताहै ३५ तबउत्तमान्नसे पितरोंकाश्राद्धमध्या-
ह्नकेकुतुप कालमेंदेताहै ३६ उसकेश्राद्धकेगुण और फलोंकाजैसावि-
स्तारहै उसकोसुनो प्रथमतो यह फलहै कि एकदिनके श्राद्धकरनेसे
प्रतिदिन तेरहवर्ष श्राद्धकरनेके फलको पाताहै ३७ गौवेंबोलीं कि
हे समंगेबहुले अकुतोभये क्षेमेसखे और भूयसी तुमसब बृद्धतम हो
इससे हमारी वैसीही रक्षाकरो जैसेकितुम पूर्व समयमें बछड़ोंसमेत
ब्रह्मलोकमें और इंद्रकेयज्ञमें रक्षाकरनेवाली हुईथीं ३८ और जोगौ
विष्णुलोक मेंसूर्य्यमार्गपर नियतहै उसगौका नाम नारदजी समेत
सबदेवता सर्व सर्वदा कहाकरतेहैं ३९ जोपुरुष इसनाम रूपमंत्रसे
गौओंकोनमस्कार करताहै वहपापकर्मोंसे जुदाहोकर इन्द्रलोकको
पाताहैऔर गोदानोंके फलोंसमेत चन्द्रमाके समानतेजकोपाताहै४०
जो पुरुष पूर्व्वकालमें गोशालाके मध्य में देवताओंसे सेवित इस
नाम रूप मंत्रको इस रीति से पढ़ता है वह पाप शोक और भयसे
निवृत्त होकर इन्द्रलोक को जाताहै ४१ भीष्मजी बोले इसके पीछे
लोक में प्रसिद्ध महाभाग वशिष्ठादिक सातों महर्षी लोग उस
कमल से प्रकट होने वाले ब्रह्माजी की परिक्रमा करके हाथ जोड़
कर नियत हुये उनमेंसे ब्रह्मज्ञानियों में श्रेष्ठ वशिष्ठजी ने यहवचन
कहा ४२ । ४३ कि जो प्रश्न कि सबजीवों की वृद्धिका करनेवाला
और मुख्य करके ब्राह्मण क्षत्री के लिये हितकारी था वह यह है
कि धनहीन कंगाल और सुचाली मनुष्य इसलोक में किसरीति
से ४४ कौनसे कर्म को करके यज्ञके फल को पातेहैं ब्रह्माजीने

उन्होंके इस वचन को सुनकर यह वचन कहा कि ४५ हे महाभाग ऋषियो बड़ा आश्चर्य्यकारी आपने यह प्रश्न किया यह प्रश्न अत्यन्त शुभ सूक्ष्म गुप्त आशयों से भराहुआ नरलोकवासियों का कल्याणरूप है ४६ हे तपोधन ऋषियो सुनो कि मनुष्य जिस २ कर्मके करने से यज्ञों के फलोंको पातेहैं वह मैं संपूर्णता से ठीक२ कहताहूं ४७ जब पौष महीने के शुक्लपक्ष में रोहिणी नक्षत्र प्रारंभ होय उस नक्षत्रके प्रारंभ से स्नान पूर्व्वक एक पवित्र वस्त्रको धारण किये हुये चौपटे मैदान में शयन करके चन्द्रमा की किरणोंको जो पान करताहै वह बड़े यज्ञ के फलको पाताहै ४८। ४९ हेब्राह्मणों में बड़े साधु सूक्ष्म सिद्धान्त दर्शी ऋषि लोगो यह मैंने तुमसे बड़ा गुप्त धर्म कहा है ५० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेदेवरहस्येशतोपरिपटविंशतितमोऽध्यायः १२६॥

एकसौसत्ताईसका अध्याय॥

विभावसुने कहा कि जो मनुष्य पूर्णमासी के दिन उदय होने वाले चन्द्रमा के सन्मुख नियत होकर घृत युत अक्षत समेतजलकी पूर्णांजली को चन्द्रमा के अर्पण करे उससे अग्निके सबकार्य्यों समेत तीनों अग्नियां हव्यसे पूजित होतीहैं १।२ जोनिर्बुद्धी मनुष्य अमावास्या के दिन बनस्पतिके एक पत्रकोभी तोड़े वह ब्रह्महत्या के पापसे संयुक्त होताहै ३ जो निर्बुद्धी अमावास्याके दिन वृक्षादिकों की लकड़ी की दातून करताहै वह मानों चन्द्रमा को घायल करताहै और उसके पितृ भयभीत होते हैं ४ पर्व्वों में भी देवता लोग उस के हव्यको नहीं अंगीकार करते हैं उसके ऊपर पितृभी क्रोधित होतेहैं और कुटम्बभरमें उसका और उसके वंशका नाश होताहै ५ लक्ष्मीजी ने कहा कि जिस मैले कुचैले घरमें पात्र भ्रष्ट हैं वा पात्र और आसन फूटे और टूटेहैं और स्त्रियां पीटी जाती हैं ६ उन अशुद्ध वस्तुओं वाले घरों में से उत्सव और पर्व्वों में

देवता और पितर लोग निराश होकर चलेजाते हैं ७ अंगिराऋषि बोले कि जो मनुष्य एक वर्षतक करंजक वृक्ष और सुवर्चलावल्ली जिसके हाथ रूप जड़हैं उनको दीपक देताहै उसके सन्तान की बड़ी वृद्धि होती है ८ गार्गीने कहाकि जो मनुष्य दिनको न सोता हुआ सदैव अतिथि का पूजन करे और यज्ञशाला आदि पवित्र स्थानोंमें दीपकों को जलावे और मांसको न खाय ९ गौ ब्राह्मण को कष्ट न दे पुष्करादितीर्थोंका कीर्त्तनकरे यहगुप्त रहस्य समेत धर्म कल्याण रूप और बड़े फलका देने वालाहै १० सैकड़ों यज्ञों से भी पूजन किये हुये हव्य चाहै किसी समय क्षय होजातेहैं परन्तु श्रद्धामानों के किये हुये धर्म कभी नाश नहीं होते हैं ११ इस बड़ी गुप्त बातको गुप्त रहस्यों समेतही जानो श्राद्ध विधि देवकर्म और पर्व्वों के मध्यवर्त्ती तैर्थिक कर्म में १२ ऐसी स्त्रियां जोकि रजस्वला कोढ़िन बंध्या अवत्सा होती हैं इनके देखे हुये हव्यको देवता लोग भोजन नहीं करते हैं १३ पितृभी तेरह वर्ष तक प्रसन्न नहीं रहते हैं जो ऐसा होजाय तो पवित्र श्वेत वस्त्रों से अलंकृत शरीर होकर ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन करवावे १४ और भारतके पर्व्वोंका कीर्त्तनकरे तो हव्यमें निर्विघ्नताहोतीहै १५ धौम्यमुनिबोले टूटेपात्र टूटी शय्या मुर्गाकुत्ता और जो वृक्ष घरमें उपजताहै वहसब अशुभ रूपहैं १६ टूटेपात्रमें कलियुग नियतहोताहै टूटी शय्यासे धनका नाशहोताहै घरमें मुर्गे और कुत्तेके होनेपर देवता हव्यको नहीं भोजन करतेहैं १७वृक्षकी जड़में सर्प विच्छू आदिजीव अवश्य होताहै इस हेतुसे घरमेंवृक्षको नहीं लगावे १८ जमदग्नि ऋषिबोले कि जो पुरुष अश्वमेध और वाजपेय यज्ञसे पूजन करे वा अधोमुख होकरलटके अथवा वृद्धियुक्त यज्ञकोकरे १९ जो उसका हृदय पवित्र नहींहै तो वह अवश्य नरकको जाताहै यज्ञ, सत्यता और हृदय की शुद्धीयह तीनों समानहैं २० शुद्धमनसे एक प्रस्थभर सत्तू के दान करने से ब्रह्मलोक में जाता है यही दृष्टान्त बहुतहै २१ ॥

श्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेदेवरहस्येशतोपरिसप्तविंशतितमोऽध्यायः१२७॥

एकसौअट्ठाईसका अध्याय॥

वायु देवता बोले कि मैं मनुष्योंके सुखदायी कुछ धर्मोंको वर्णन करताहूं और जो दोषगुप्त रहस्यों समेत वर्त्तमानहैं उनको तुम बड़ी सावधानी से सुनो १ जो मनुष्य वर्षाके चारों महीनों में तिल और जलका नित्यदान करताहै और सामर्थ्यके अनुसार वेदज्ञ ब्राह्मणों को भोजन देताहै २ उसको अग्निकार्य्य करना योग्यहै और तिल जल समेत पित्रोंका दीपक भी प्रकाश करना उचितहै ३ इसलोकमेंश्रद्धामान मनुष्य इसरीति से सौ पशुबंधु नाम यज्ञ के फलको पाताहै ४ इस महाकर्मको तुमपरम गुह्यतर जानो जिसके सब संस्कारोंकी अग्निका लेचलने वालाशूद्र और हव्यकोसुधारने वाली अज्ञान स्त्रियांहैं और वहइसको धर्महीमानताहै वह पुरुष अधर्म का भागीहोताहै और उसकीसब अग्नियां क्रोधित होतीहैं इसीसे वह शूद्रयोनि को पाताहै ५। ६ उसके देवताओं समेतपित्र भी प्रसन्न नहीं होतेहैं उसके प्रायश्चित्तको मुझसेसुनो ७ जिसको मनुष्यगौकेगोबर मूत्रदूध और घृतकेद्वारा अच्छीरीतिसे करकेनीरोगतापूर्व्वकसुखी होताहै जबनिराहार समाहित चित्तहोकर मनुष्य तीनदिनतक अग्निहोत्रको करताहै उसकेएकबर्षके पीछेदेवतालोग हव्यको भोजनकरतेहैं८।९श्राद्धका समय वर्त्तमान होनेपर इसके पितर प्रसन्नहोतेहैं यह धर्माधर्म सहित गुप्तबातवर्णनकी१० स्वर्गके चाहनेवाले मनुष्योंको परलोकमें स्वर्गहीसुखकादेनावालाहै ११॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेदेवरहस्येशततोपरिअष्टाविंशतितमोऽध्यायः १२८॥

एकसौउन्तीसका अध्याय॥

लोमशजी बोलेकि जो मनुष्य अपना विवाह न करके दूसरे की स्त्रियोंपर प्रवृत्तचित्त हैं उनके पितर श्राद्धके समय निराश होते हैं १ जो मनुष्य दूसरेकी स्त्रीसे प्रीतिकरने वालाहै और जो बंध्या

स्त्रीको सेवन करताहै और जो ब्राह्मण का धन रहताहै यहतीनों समान दोषवालेहैं २ यहसब लोग पितरों के भाषणके भी योग्य नहींहैं और देवता समेत पितरउनके हव्यकोभी नहींअंगीकारकर-तेहैं ३ इसीहेतु से अपने अभीष्ट मनोरथ चाहने वालोंको ब्राह्मण का धनकभी न हरना चाहिये और दूसरे कीस्त्री वा वेश्यास्त्री इन दोनोंकोभी त्यागकरे ४ अबदूसरे गुप्तरहस्य धर्मोंकोसुनो किश्रद्धा वान मनुष्यको गुरुओंके वचनके अनुसार कर्म करना उचितहै ५ जो मनुष्य हरमहीने की द्वादशी और पूर्णमासी के दिनघृत और चावल ब्राह्मणोंके अर्थदेताहै उसका पुण्ययहहै ६ कि उसदान से चन्द्रमा और महासमुद्र वृद्धिको पाताहै इन्द्र देवता उसके फलको अश्वमेध यज्ञके चतुर्थांश के समान वर्णन करतेहैं ७ इसदान के करनेसेमनुष्य तेजस्वी और पराक्रमीहोताहै और भगवान् चन्द्रमा प्रसन्न होकर अभीष्ट मनोरथोंको देतेहैं ८ अबबड़ा फलवाला गुप्त रहस्य समेत दूसरा धर्मजोकि इस कलियुगको पाकर मनुष्यों को सुखका देनेवालाहै उसको श्रवणकरो ९ जोसावधान मनुष्यप्रातः कालके समय उठकर स्नान पूर्वक श्वेतवस्त्र युक्तहोकर तिलपात्र ब्राह्मणके अर्थदेताहै १० और जो मनुष्य मधुसमेत तिलजलपित्रों को देताहै और जो दीपक और कृषरान्नको देताहै इन सबके जो २ फलहैं उनको सुनो ११ भगवान् इन्द्रने तिलपात्र देनेका यहफल कहाहै कि जो मनुष्य गोदान और अविनाशी भूमिका दान करता है और जो बहुत दक्षिणा वाले अग्निष्टोम यज्ञको करताहै इनसब के समान तिलपात्र दानको देवतालोग कहतेहैं १२।१३ पित्र लोग श्राद्धमें सदैव तिलजलको अविनाशी मानतेहैं और दीपका कृषरान्न के दानसे मनुष्य के पितामह प्रसन्न होतेहैं १४ इसरीति से स्वर्ग मेंऋषियोंकादेखाहुआ और पितृलोकमेंदेवतापितरोंसे स्तुतिकिया हुआयह धर्मतुमसे वर्णनकिया १५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेलोमशरहस्येशतोपरिएकोनत्रिं-शतितमोऽध्यायः १२९ ॥

एकसौतीसका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि इसकेपीछे सावधानरूप सबऋषि पितृ और देवताओंके समूहोंने तपसे वृद्ध १ तपोबलमें वशिष्ठजी के समान उत्तम स्वभाववाली श्रीअरुन्धतीसे यह वचन कहा कि हम तुमसे धर्मके गुप्तरहस्य सुनाचाहतेहैं २ हे कल्याणिनि जो आपगुह्य से गुह्यधर्मजानतेहीहो उसको वर्णनकीजिये ३ अरुन्धतीने कहाकिमैंने आपलोगोंके स्मरणसेही तप में वृद्धतापाई आपहीकी कृपासे मैं सनातन धर्मोंका वर्णनकरूंगी ४ गुप्तरहस्यों समेतउनगुप्त धर्मोंको पणीता समेत सुनो क्योंकि जो श्रद्धामान पवित्रात्माहै उसको उप-देशकरना योग्यहै ५ श्रद्धारहित अहंकारी ब्रह्महत्या करने वाला गुरुकी स्त्रीसे भोगकरनेवाला यहचारों वार्त्तालाप के योग्यनहींहैं इनसेकभी धर्म न कहे६ जो मनुष्य प्रतिदिन बारहवर्षतक कपिला गौकोदानकरे और जो मनुष्य हरमहीनेमें यज्ञसेपूजनकरे ७ और जो ज्येष्ठपुष्कर परएक लाखगौओंका दानकरे वहसब उसके धर्म फलके समान नहींहोताहै जिसका अतिथि प्रसन्न होताहै ८ और दूसरा धर्मजो कि मनुष्योंका सुखदेनेवाला है उसबड़े फलवाले धर्मको गुप्तरहस्यों समेत श्रद्धामान मनुष्य से कहना योग्यहै ९ प्रातःकाल उठकर जो निराहार मनुष्य गौओंके मध्यमें जाकर कुशाओंसे गौओंके सींगोंको जलसेसींचे और उसगौके सींग से टपकेहुये जलको मस्तकपर १० धारणकरे उसके धर्मफल को सुनोकि तीनोंलोकोंके जो २ तीर्थ ११ किसिद्ध चारण और महर्षि-योंसे सेवित सुनेजातेहैं उनकेजलमें स्नान और गौकेसींगोंके जल का सींचना दोनोंसमान गिनेजातेहैं १२ यहअत्यन्त प्रसन्न चित्त देवतापितृ और अन्य २ उत्तम महात्मा लोगोंका कहाहुआहै उस को सुनकर सबलोगोंने धन्यवाद करके अरुन्धतीकापूजनकिया १३ ब्रह्माजी बोलेकि हे महाभागिनी तुमने गुप्तरहस्यों समेत धर्म को वर्णनकिया हे पुण्यकी अभ्यासिनी मनोरथों के सिद्ध करनेवाली

प्रशंसनीय अरुन्धती मैं तुझको बरदेताहूं कि तेरी तपस्याकी सदैव वृद्धि होय १४ यमराज बोले कि जो २ कथाचित्तरोचक और शुद्ध हैं वह सब मैंने आपसे सुनीं अब मेरा प्रियकारी जो चित्रगुप्त का वर्णन है उसकोसुनो १५ वहधर्मसंयुक्त गुप्तरहस्य महर्षिलोग और अभीष्ट चाहनेवाले श्रद्धामान मनुष्योंको सुनने के योग्यहै १६ किया हुआ पाप और पुण्य नाश नहीं होताहै अर्थात् उसका फल अवश्य मिलताहै पर्व्वकाल में जो कुछ किया जाताहै वह सूर्य्यके पास इकट्ठा होताहै १७ प्रेतलोक में मनुष्य के जाने पर उस सब पुण्य को सूर्य्य देवता देतेहैं और वह पुण्यकरने वाला वहां उसको पाताहै १८ अब चित्रगुप्त के अंगीकृत कुछ शुभधर्मों को कहता हूं कि जल और दीपदान करना सदैव योग्यहै जूतेका जोड़ा छत्र और कपिला गौका बिधि के अनुसार दान करना योग्य है वह कपिला गौ पुष्करतीर्थ में वेदज्ञ ब्राह्मणको देना चाहिये १६।२० सब स्थान में अग्निहोत्र को उपाय पूर्व्वक करे यह धर्म चित्र गुप्तजीने कहा है २१ अच्छे२ साधु मनुष्योंको इसका फल पृथक्२ सुननेके योग्य है आयुर्दाके पूरे होनेपर सब जीवमात्रोंको मरनाअवश्यहै २२इस स्थान पर दुर्गम मार्गके पानेवाले गृहस्थीपने से पीड़ामान संतप्त जीव पकतेहैं वहां भागना नहींहै २३ इसीप्रकार अल्पबुद्धी मनुष्य भयकारी अपराधों में प्रवृत्त होतेहैं इस स्थान पर मैं उस धर्मको कहताहूं जिसके द्वारा कठिनताओं से छूटताहै २४ वह धर्म थोड़ेही व्ययसे वड़े फलका देने वाला और परलोक में वड़े सुखका उदय करने वाला है जलदान के वड़े उत्तमगुण हैं और मरनेके पीछे पर लोकमें अधिकतर सुखोंका देनेवाला है स्वर्गमें उन जलदान करने वालों की पुण्योदक नाम नदियां लिखी हुई बिख्यात हैं उनका जल अत्यन्त शीतल अमृतके समान अविनाशी होताहै २५।२६ उस नदीके जलको वही मनुष्य पीताहै जो जलदानकरता है अब दीपदान करने के जो गुण हैं उनको सुनो २७ निश्चय करके दीप- दानसे अन्धकार दूर होताहै क्योंकि सूर्य्य चन्द्रमा उसको प्रकाश

देतेहैं २८ निर्मल देवता लोग उसका सब ओरसे सत्कार करतेहैं और प्रेतलोक में वर्त्तमान होकर मनुष्य सूर्य्य के समान प्रकाश करताहै २९ इसी कारण दीपदान और जलका दान अधिक करना चाहिये जोपुरुष वेदपाठी ब्राह्मण को कपिला गौका दान करतेहैं वा पुष्करतीर्थमें कपिला गौ का दान करते हैं उसका यह फलहै कि उस एक गौके दान करने से सौ सवत्सा गौओंके दानके समान फल होताहै और जो कुछ ब्रह्महत्या के समान पापहैं उनको यही अकेली कपिला गौदूर करतीहै ३०।३१।३२ इसी हेतुसेकार्त्ति-क शुदी पूर्णमासी के दिन ज्येष्ठ पुष्कर तीर्थमें कपिला गौकादान करना उचितहै और जो पुरुष पात्र रूप उत्तम ब्राह्मण को जूतोंका जोड़ा देतेहैं उनको कोई मार्ग अगम्य नहींहै और न उनको किसी प्रकारका दुःख और शोक होताहै परलोक में जाने वाला मनुष्य छत्र दानके द्वारा सुख रूप छायाको पाताहै ३३।३४ इसलोकमें दिये हुये दानका कभीनाश नहींहै इस रीतिके चित्रगुप्तजी के वचनों को सुनकर सूर्य्य देवताके शरीरमें आनन्द के रोम खड़े होगये फिर बड़े तेजस्वी सूर्य्यदेवताने ३५ सब देवता और पितरोंसे यह वचन कहा कि आप सब लोगों ने महात्मा चित्रगुप्तजी का गोप्य धर्म सुना ३६ जो श्रद्धामान मनुष्य महात्मा ब्राह्मणोंको यहदानदेतेहैं वह निर्भय होतेहैं ३७ अब पांच दुष्कर्मियोंको कहतेहैं अर्थात् ब्रह्महत्या करनेवाला गोबध करनेवाला दूसरे की स्त्रीसे प्रीति रखने वाला श्रद्धासे रहित स्त्रीकेद्वारा अपनी जीविका करनेवाला यह पाप बड़े घोरहैं इनका प्राय श्चित्तभीइसलोकमें नहींहै ऐसेदुराचारी आचार से रहित नीच मनुष्य त्यागकरनेके योग्य हैं उनसे कभी वार्त्ता भी न करना चाहिये ३८।३९ यह पापकर्म करनेवाले मनुष्य प्रेतलोक में पहुंचकर नरकमेंमछलियोंके समान पकतेहैं औरपीब वा रुधिरको खातेहैं ४० वहपांचोंदुष्टात्मा पापीलोग पितृ देवता स्नातक वेदपाठी औरजो अन्य २ तपोधन ऋषिहैं उनसे संभाषणभी नहींकरते ४१।

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेचित्रगुप्तरहस्येत्रतीयाधिकत्रिंशततमोऽध्यायः १३०

एकसौइकतीसका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि इसके पीछे सब महाभाग देवता पितृ और ऋषियों ने प्रमथों से यह वचन कहा कि हे संसार के प्रत्यक्ष वृत्तान्तोंके देखने वाले राक्षस लोगो तुम सब बड़े बड़भागीहो तुम इन अपवित्र जूठे मुखवाले नीच मनुष्यों को कैसे मारतेहो २ वह मारने वाला कौनसा हेतुहै जिसके द्वारा मनुष्यों को मारा करतेहो और जब तुम घरमें गुप्त होजातेहो तब तुम्हारे दूर करने का कौनसा उपायहै ३ हे राक्षस लोगो यह सब तुम लोगोंका वर्णन सुनना चाहतेहैं ४ प्रथम गणोंने कहा किजो मनुष्य स्त्रीके भोग करनेसे अपवित्रहैं अर्थात् भोग करनेके पीछे स्नान नहीं करतेहैं और नीचे के ओष्ठको ऊपर के ओष्ठपर रखने से जूठे मुख वाले हैं और जो मोहसे मांसको खातेहैं और जो वृक्षकी जड़ पर सोवे ५ जिसके शिरपर रखकर मांस भेजाजाय जो शय्या पर पगांतकी ओरको शिर करके सोवे इत्यादि कर्मों से वह सब मनुष्य अपवित्र और बहुत विघ्नोंके धारण करने वाले हैं ६ जो मनुष्य जलमें मूत्र और थूक आदिको करते और डालतेहैं ऐसेमनुष्यनिस्सन्देह मारने और भक्षण करने के योग्यहैं ७ इस प्रकार के अभ्यास औररीति रखने वाले मनुष्यों को हम विजय करतेहैं अब उन उपायोंको हमसे सुनो जिनके कारण से हम उनके सताने को समर्थ नहीं होसक्ते हैं ८ जो मनुष्य गोरोचन को मस्तक पर लगावे वचाको हाथमें धारण करने वाला घृत युक्त अक्षतको मस्तक पर धारण करने वाला ९ और जो मांसको नहीं खातेहैं हम उनके मारने को समर्थ नहीं होतेहैं जिसके घरमें सदैव अग्नि प्रकाशित होतीहै १० तरक्षुनाम मृगके दांत चर्म पहाड़ी कछुआ घृतका धूम बिलार कृष्ण पिंगल वर्णका बकरा ११ यह सब जीव जिन गृहस्थी लोगों के घरों में नियत रहते हैं वह घर उन राक्षसों से नहीं पराजित होतेहैं जो कि कच्चे मांस के खाने वाले और बड़े भयानक हैं १२ और हमारे

समान वाले जो राक्षस सुख पूर्व्वक लोकोंमें घूमतेहैं उनको दूर करने वाली वह अग्निहै जो गृहस्थियों के घरोंमें सदैव प्रकाशित रहतीहै जिन २ बातोंमें तुमको सन्देह था उन सब बातों को हमने कहा १३। १४॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मे प्रथमरहस्येशतोपरिएकत्रिंशो ऽध्यायः १३१॥

एकसौबत्तीसका अध्याय॥

भीष्मजी बोलेकि इसकेपीछे कमलसे उत्पन्न कंवल वर्णब्रह्माजी ने शची पति इन्द्र और देवताओं से यह बचन कहा १ कि यह रसातलमें बिचरने वाला रेणुकनाम दिग्गज बड़ाबली तेजस्वी बड़ेपराक्रम और बुद्धिका रखने वालाहै और अन्यदिग्गजभी बड़े २तेजबलों समेत अतुल पराक्रमीहैं जो वनकाननपर्व्वतोंसमेत संपूर्णपृथ्वी को धारणकरतेहैं ३ हे देवताओ तुम अपनीआज्ञासे इसरेणुकको वहां भेजकर उन दिग्गजोंसे धर्मकेसब रहस्योंको पुछवाओ ४ तबउनसावधान देवताओंने ब्रह्माजीके इसबचनको सुनकर रेणुकको वहांपर भेजा जहांकि वह पृथ्वीको धारण कियेहुये सब दिग्गज वर्त्तमान थे ५ रेणुकने कहाकि हे महाबली दिग्गजो मैं देवता औरपितरों का भेजाहुआ तुमसे उन सबको सुनाचाहताहूं जोकि धर्मके गुप्त रहस्यहैं ६ हे महाभाग दिग्गजो जोसिद्धान्त तुम्हारा बिचाराहुआ है उसको बर्णनकरो ७ दिग्गज बोलेकि कात्तिकबदी अष्टमीको जब श्लेषा नक्षत्र होताहै वह महाकल्याण रूपहोता है जो पुरुष उस नक्षत्रयुक्त कात्तिकबदी बहुलनाम अष्टमी को गुड़ भात दानकरता है ८ अर्थात् क्रोधसे रहित नियम पूर्व्वक आहार करनेवाला मनुष्य श्राद्धमें इसआगे लिखेहुयेमंत्रको जपकरे (मन्त्रः) बलदेवप्रभृतयो येनागाबलवत्तराः ९ अनन्ताह्यक्षयानित्यंभोगिनाःसुमहाबलाःतेषां कुलोद्भवायेचमहाभूताभुजंगमाः १० तेमेबलिंप्रयच्छन्तु बलतेजोभिवृद्धये ११ यदानारायणःश्रीमानुज्जहारवसुंधराम् तद्बलंतस्य

देवस्यधरानुद्धरतस्तथा इसरीतिसे इसमन्त्रको पढ़कर उस बामी पर ऐसेबलिको भेटकरे १२ जोकि गजेन्द्रनाम पुष्पोंसे युक्त नीले वस्त्रपर धराहुआहोय ऐसे बलिको सूर्य्यके अस्तहोनेके समयसर्प की वामीमेंछोड़दे १३ इसरीतिसे उस बलिदानसे हमसबनाग जो कि भारकेकारणसे पीड़ायुक्तहैं उसदुःखको नहींजानतेहैं औरप्रसन्न होतेहैं १४ बोझसे पीड़ितभी निर्पक्ष होकर हम सबयह मानते हैं कि व्रतकरनेवाला ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्रभी एकबर्ष पर्य्यन्त इसरीतिसे बलिदानको करके बड़ेफलकोपाताहै वह बलिदानबामी कादियाहुआ हमलोग लेकर बहुत फलवाला मानतेहैं १६ तीनों लोकमें जो बड़ेपराक्रमीनागहैं वहउस बलिदानसे सौबर्षतकपूजि-तहोतेहैं महाभाग ऋषिदेवता और पितरोंने दिग्गजोंके उसबचन को सुनकर रेणुकका धन्यवाद किया १८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेदिग्गजानांरहस्येशतोपरिद्वात्रिंशोऽध्यायः १३२ ॥

एकसौतेंतीसका अध्याय॥

महेश्वरजी बोलेकि तुमने सारांश निकालकर यह साधुओं का धर्म वर्णनकिया अबतुम सबलोग मुझसेभी इसगुप्त धर्मकोसुनो१ यह धर्म उनलोगों के उपदेश करने के योग्यहै जो श्रद्धामान और धर्म परायणहैं २ जो स्थिरचित्त मनुष्य एकसमयभोजन करकेएक महीनेतक गौकोभोजनदे उसकेफलको मुझसेसुनो ३ यहमहाभाग गौ पवित्र और उत्तमकहीजातीहैं उन्होंने देवताअसुर औरमनुष्यों समेत तीनोंलोकोंको धारण कियाहै ४ उनकी सेवाबड़ी पुण्यकारी और उत्तम फलोंकी देनेवाली है प्रतिदिन गौको भोजन देनेवाला मनुष्य नित्य २ धर्मसेयुक्त होताहै ५ प्रथम सतयुगमें इनगौओंको मैंनेदेखा इसके पीछेब्रह्माजीने मुझको आज्ञाकरी ६ इसीहेतुसे गौ-शालासे प्राप्त होनेवाला नन्दीश्वर मेरे ऊपर अर्थात् मेरी ध्वजामें नियत होताहै और मैं गौओंके साथ रमताहूं इसी कारणसे वहगौवें

सदैव पूजनकेयोग्यहैं ७ वहवड़ा प्रभाव रखनेवाली वरदाता गौवें उपासना करनेसे बरको देतीहैं और वहफलदेतीहैं जोकिसबकर्मों में होताहै ८ जो मनुष्य अपने प्रयोजन के निमित्त गौको भोजन देताहै उसको चौथाई फलहोताहै ९ ॥

इतिश्री महाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमहादेवरहस्येशतोपरित्रयस्त्रिंशोऽध्यायः १३३ ॥

एकसौ चौंतीसका अध्याय॥

स्कन्धजीबोले किजोधर्म मुझको प्रियहै वहभीसावधान होकर तुमसुनो जो मनुष्य नीले सांड़के सींगोंसे मृत्तिकाको लेकर १ तीन दिनतक शरीर में लगाकर मंत्रयुक्त होकर स्नान करताहै वह सब पापोंको दूरकरके परलोकमें ऐश्वर्य्यको पाताहै २ और गुप्तरहस्य समेत इस दूसरेगुप्त धर्मकोभी जानोकि वह पुरुष जब जब जन्म लेगा तबतब शूरवीरही होगा ३ जो मनुष्य पूर्णमासीकेदिन गूलर की लकड़ीके बनेहुयेपात्रको पकवान और मधुसेसंयुक्त करकेउदय होनेवाले चन्द्रमाको बलिदान देताहै ४ उसधर्मके प्राचीन फलसे साध्यगण ग्यारह रुद्र द्वादशसूर्य्य विश्वेदेवा अश्विनीकुमार ५ मरुद्गण अष्टवसु यहसब उसके बलिप्रदानको अंगोकार करतेहैं और उसी बलिसे चन्द्रमा और महासमुद्रभी वृद्धिको पातेहैं ६ यह मैंने महा सुखकारी धर्मगुप्त रहस्य समेत तुमसे वर्णनकिया ७ विष्णु जी बोलेकि जोपुरुष महात्मा देवताओंके इसगुप्त रहस्यवाले धर्म को और ऋषियोंके गुप्त धर्मोंको प्रतिदिन पाठकरे ८ अथवा दूसरेकेगुणोंमें दोष न लगानेवाला श्रद्धामानसावधान मनुष्य इस कोश्रवणकरे वहसब प्रकारसे निर्विघ्नहोकर निर्भयरहताहै ९ जो जितेन्द्री शान्तचित्त मनुष्य इसकापाठ करतेहैं वह इन वर्णनकिये हुये शुभपवित्र और गुप्त रहस्योंसमेत धर्मोंके फलोंकोपातेहैं १० जो मनुष्य इसको पढ़ैगा वा सुनेगा उसका नतो पाप प्रकट होगा औरन उसपापसे कभीलिप्तहोगा ११ और इसकेअविनाशी हव्य

और कव्यको देवता और पितर भोजन करतेहैं धर्मोंमें सदैव उपाय करनेवाला जो श्रीमान सावधान मनुष्य पर्वोंमें वेदपाठी ब्राह्मण को सुनवाताहै वह देवता और पितरोंका सदैव अंगीकृत होता है १२ । १३ सिवाय महापातकके पापकर्मको करकेभी इस गुप्त धर्मको सुनकर सबपापोंसे छूटताहै १४ भीष्मजी बोले हेराजायह सब देवताओं से प्रतिष्ठा पानेवाला गुप्त धर्म जिसको कि व्यास जीने मुझे उपदेश कियाथा वहसब मैंने वर्णनकिया १५ यहसबसे श्रेष्ठ गुप्तज्ञान और रत्नोंसे पूर्ण पृथ्वीदोनों समान हैं इसीहेतुसे इसीका श्रवण करनायोग्यहै धर्मज्ञ लोगोंको इसका मानना उचितहै १६ यहधर्मश्रद्धा, रहित, नास्तिक, अधर्मी, निर्दय, हेतु दुष्ट गुरूकाशत्रु, ब्रह्मज्ञानरहित इनसबके आगेकहनायोग्य नहींहै १७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेदेवरहस्यशतोपरिचतुस्त्रिंशोऽध्यायः१३४॥

एकसौपैंतीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हेभरतवंशी इसलोकमें ब्राह्मणके घरमें भोजन करनेके योग्य कौन२हैं क्षत्रीके घरमें भोजन करनेकेयोग्यकौन२ हैं इसी प्रकार वैश्य और शूद्रके घरमें भोजनके योग्यकौन२ हैं १भीष्म जी बोले कि इसलोकमें ब्राह्मणके घरमें ब्राह्मणही भोजन करनेके योग्यहैं और जो क्षत्री और वैश्यहैं वहभी भोजन करने केयोग्यहैं परन्तु शूद्रका भोजन कराना निषेधहै २ क्षत्री के घर ब्राह्मण क्षत्री और वैश्यभोजन करनेके योग्यहैं परन्तु सब वस्तुओंके खानेवाले शूद्रभोजन कराने में त्याज्यहैं३ जो वैश्य सदैव अग्निके पूजनकरने वाले होकर पवित्रता से चातुर्मासके व्रतमें तत्पर हैं वहवैश्य लोग ब्राह्मण और क्षत्रियों के घरमें भोजन करनेके योग्यहैं ४ जो द्विज शूद्रोंके घरों में शूद्रोंके अन्नको भोजन करताहै वह पृथ्वी के मैल को भोजन करता है और मनुष्यों के मोमलोंको भोजन करता है ५ । ६ जो संध्या वंदनादि उत्तम कर्म को करता है वह भी शूद्रकी सेवा करने से नर्कमें दुःखों को पाताहै तात्पर्य्य यह है कि

शूद्रका अन्नही केवल निषेध नहीं है किन्तु उसकी सेवा करनी भी ऐसीहै कि संध्या वंदनादिके भी करनेवाले ब्राह्मण क्षत्री वैश्य तीनों नर्कमें पड़तेहैं ७ वेदपाठी ब्राह्मण वेद पाठ जप और मनुष्यों के कल्याण में प्रवृत्त होतेहैं क्षत्रीको रक्षाके निमित्त और वैश्य को गौ आदिके पोषणके अर्थ कहाहै ८ वैश्य जो कर्म करताहै अथवा जिस कर्म से अपनी जीविका करताहै वह खेती गौकी रक्षा और व्यपार हैं यही निन्दा से रहित वैश्यों के कर्महैं ९ जो द्विज अपने कर्मको छोड़कर शूद्रके कर्मको करताहै उसको शूद्रहीके समान जानना योग्यहै वह कभी भोजन कराने के योग्य नहीं है १० वैद्य, कांडपृष्ठ अर्थात् वेश्या पति वा शस्त्रोंसे जीविका करने वाला पुराध्यक्ष अर्थात् कोतवाल पुरोहित सांवत्सर अर्थात् केवल ज्योतिष सेही जीविका करनेवाला अनाध्यायों में वेदका पढ़ने वाला यह सब शूद्रके समानहैं ११ इनशूद्र कर्म करनेवाले शूद्रोंके घरजो निर्लज्जमनुष्य भोजन करताहै वह अयोग्य भोजनको करके कठिन और असह्यभयों को पाताहै १२ वह कुल का भय करनेवाला नीच पराक्रमी कुत्ते के समान अपना कर्म करनेवाला होकर धर्म हीनहै तासे वह तिर्यक् योनिमें जन्म पाताहै १३ जो वैद्यके अन्नको भोजन करताहै वह अन्नभी विष्टाके समान है दुराचारिणी स्त्रीका अन्न मूत्रके समानहै रसोइया मैमार और शिल्पी आदिका अन्न रुधिर के समानहै १४ साधुओं का अंगीकृत जो मनुष्य विद्या वेचनेवाले का अन्नखाता है वह अन्नभी शूद्रके अन्नके समानहै उसको भी साधु त्यागकरे १५ धोखा देने वाले पुरुष का अन्नरुधिर के हृदके समान कहा जाताहै परोक्ष निन्दा करनेवाले का अन्न ब्रह्महत्याके समान है १६ जिस अन्नको तुच्छ और अप्रतिष्ठित कर दियाहै उसको भी कभी भोजन नकरना चाहिये १७ जो ब्राह्मण ऐसे अन्नको खाताहै वह शीघ्रही रोगीहोकर अपने कुलका नाशकरताहै जो नगरके रक्षकके अन्नको खाताहै वह श्वपचों का प्रधान होताहै १८ जो वेदपाठी ब्राह्मण गोबध करने वालेके घरमें ब्रह्महत्यारे के घरमें मद्यप के घरमें

गुरूकी स्त्रीसे भोग करनेवालेके घरमें भोजन करताहै वह राक्षसों के कुलकी वृद्धिका करनेवाला उत्पन्न होताहै १६ जोमनुष्य किसी की धरोहड़ के मरनेवाले कृतघ्नी और हीजड़ेकेघरमें भोजनकरताहै वह मध्यदेश से बाहर शबरोंके देशमें उत्पन्नहोताहै २० यह मैंने भोजन के योग्य और अयोग्य मनुष्यों का वर्णन बुद्धिके अनुसार किया हे कुन्ती के पुत्र अब और क्यासुनना चाहतेहो २१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मे भोज्याभोज्यान्नकथनंनामशततोपरिपंचत्रिंशोऽध्यायः १३५ ॥

एकसौछत्तीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे पितामह तुमने भोजन के योग्यायोग्य का वर्णन किया इसमें मुझको कुछ संदेहहै उसको आप मुझसे वर्णन कीजिये १ हव्य कव्य और दानों में जो नाना प्रकार हैं उनके विषय में जो२ ब्राह्मणों के प्रायश्चित्तहैं उनको भी आप वर्णनकीजिये २ भीष्मजी बोले कि हे राजा अच्छा प्रश्न तैंने पूछाहै अबमैं दान और भोजनों में जो महात्माब्राह्मणों के प्रायश्चित्त हैं उनको वर्णनकरताहूं जिनके द्वारा पापोंसे छूट जाताहै ३ घृत और तिलका दान लेकर गायत्री मंत्रसे अग्निमें आहुति दे तो शुद्धहोय यहघृत और तिलका दान समानहीहै मांस लवण और मधुका दान लेने वाला ब्राह्मण सूर्य्योदय में सूर्य्य का उपस्थान करने से पवित्र होता है ४ । ५ और सुवर्ण का दानलेनेवाल ब्राह्मण कृष्ण लोहे को धारण करके गुरुश्रुतिके जपने से शुद्ध होताहै ६ धन स्त्री और वस्त्रके दानमें भी यही कर्म करना उचितहै जोकि सुवर्ण के दानमें कहाहै ७ अन्न खीर ईखका रस और तेल घृत आदिके दान लेनेमें यह प्रायश्चित्तहै कि तीनों संध्याओंमें जलमें गोता लगावे इसी से शुद्धी होतीहै ८ फल फूल जल और पिष्टी से युक्त भोजनकी बस्तु पावक दही दूध आदिकदान लेने में हजार गायत्रीको जपै ९ मृतक कर्ममें जोजूतेकाजोड़ा और छत्रकादान लेनेवाला अच्छासावधान

मनुष्य एकाग्र चित्तहो सौवार गायत्रीजपै तो पापसे निवृत्त हो-
ताहै १० क्षेत्रदान और गृह के सूतकी दानमें तीन रात्रि व्रतकरके
पाप से छूटताहै ११ जो ब्राह्मण कृष्णपक्ष में श्राद्ध संबंधी पितृके
अन्नको भोजन करताहै वह एकदिन रात्र व्रतकरनेसे पापसेनिवृत्त
होताहै १२ अथवा वह ब्राह्मण बिनास्नान किये संध्योपासन जप
और दूसरे समय का भोजन नहीं करे इस कर्मसे भी पवित्र होताहै
१३ पूर्व निमंत्रित ब्राह्मण शास्त्र में लिखे हुये मनुष्योंके घरमें तृप्त
होकर भोजनकरे इसी हेतुसे श्राद्ध अपराह्न कालमें करना कहा
गयाहै १४ जो ब्राह्मण मृतक के तीसरे दिन अन्नको भोजनकरता
है वह तीनों समय स्नान करके बारह दिनमें पवित्र होताहै १५
मरने के दिनसे बारह दिन व्यतीत होने पर अधिकतम पवित्रता
प्राप्त करने वाला मनुष्य ब्राह्मणों के अर्थ अन्नका भोजन कराकर
पापसे निवृत्तहोताहै १६ मृतक के दश दिनतक भोजनकराने में इन
प्रायश्चित्तों को करावे गायत्रीजप रैवतनाम साम मंत्रसे इष्टी यज्ञ
कूष्मांडनाम यज्ञ क्रिया और अघमर्षणनाम मन्त्र का जप जल में
तीन बार करे १७ जो ब्राह्मण मृतकके घरमें ऊपर लिखे हुयेतीन
दिनके भीतर भोजन करता है वह सातदिन तक तीनों समय
स्नान करके बड़ा पवित्र वा और सिद्धीको पाकर कभी आपत्ति को
नहीं पाताहै १८। १६ जो ब्राह्मण एक भोजनमें भी शूद्रोंके साथ
बैठकर खाताहै बुद्धिके अनुसार उसका प्रायश्चित्त केवल शरीरकी
पवित्रता रूपही कहा जाताहै अर्थात् उसका पातक दूरनहीं होता
है २०जो ब्राह्मणएक भोजनमें भी वैश्योंके साथ खाय वहतीन रात्रि
नियम करके उस कर्मसे शुद्ध होताहै २१ जो ब्राह्मण एक भोजन
मेंभी क्षत्रियोंके साथ भोजन करे तो सचैलस्नान करनेसे शुद्धहोता
है २२ब्राह्मणोंकी पंक्तिमें भोजन करना शूद्रके तो कुलको वैश्यकेपशु
बांधवोंको और क्षत्रियों के धनको नाश करताहै और उनके साथ
भोजन करना ब्राह्मणके तेजको नाश करताहै २३ इसनिमित्त प्रा-
यश्चित्त और हवनसे शान्तीको करके गायत्रीका जप रैवतनाम

सामसंत्रसे इष्टी यज्ञ कूष्मांडनाम यज्ञ क्रिया और अघमर्षण मंत्रके करनेसे वह पापोंसे छूटता है २४ जो अपनी बिरादरीकी जूंठनको खाय और एकही पात्रमें साथ २ भोजनकरेतो गोरोचन,दूब,हल्दी आदि मंगली वस्तुओंको स्पर्श करे २५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेप्रायश्चित्त विधिनामशततोपरिपटत्रिंशो ऽध्यायः १३६॥

एकसौसैंतीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिरबोले हेभरतर्षभ पितामह आपनेकहाकि दानसेस्वर्गकी प्राप्तिहोतीहै और तपसेभी स्वर्गको जाताहै सोमुझको आपयहसम झाइयेकि पृथ्वीपर इनदोनोंमेंसे कौनश्रेष्ठहै इस मेरेसन्देहको आप दूरकरनेको योग्यहैं १ उनदोनोंमेंसे दानकी प्रशंसा करनेको भीष्म-जीने कहाकि धर्ममें प्रवृत्त तपसे पवित्रात्मा पवित्रकर्मीजिन२ राजा लोगोंने निश्चय करके लोकोंको विजयकिया उन २ राजालोगोंको शिष्योंसे पूजित अत्रिऋषि निर्गुण ब्रह्मका उपदेश करके उनलोकों कोगये जिनसेकि श्रेष्ठ दूसरे लोक नहींहैं ३ औशीनरका पुत्र राजा शिवि अपने प्यारे पुत्रके प्राणोंको ब्राह्मणोंके अर्थदेकर इसलोकसे स्वर्गलोकको गया४और काशीपुरीका प्रतर्द्दनराजाभीअपने पुत्रको ब्राह्मणके निमित्त देकर इसलोक और परलोक दोनोंमें वड़ीशुभकी-र्त्ति को भोगता है ५ संकृत्यका पुत्र राजारन्ति देव वशिष्ठके अर्थ विधिपूर्वक अर्घदान करके सबसे उत्तम लोकोंको गया६राजादेवा वृध यज्ञके निमित्त शत शलाका रखनेवाला दिव्य सुबर्णका छत्र ब्राह्मणको देकर स्वर्गको गया ७ भगवान् अंबरीष बड़े तेजस्वीब्रा-ह्मणके अर्थ अपने संपूर्ण देशको देकर स्वर्गको गया८ सूर्य्यकापुत्र कर्ण दिव्य कुंडलोंको और जनमेजय सवारी और गौको ब्राह्मणके अर्थ देकर श्रेष्ठतम लोकोंको गये ६ राजऋषि वृषादर्भी नानाप्रका-रकेरत्न और उत्तम२ स्थानोंको ब्राह्मणोंकेअर्थदेकरस्वर्गकोगया१० राजावेदर्भी निमीदेशको और अपनी कन्याको महात्मा अगस्त्यजीके

निमित्त देकर पुत्रस्त्री बांधव और पशुओं समेत स्वर्गको गया ११ इसीप्रकार बड़े प्रतापी जमदग्निजीकेपुत्र महात्मापरशुरामजीपृथ्वी को वेदपाठी ब्राह्मणके अर्थदेकर उन अविनाशी देशोंको गयेजोमन के संकल्पसे भी उत्तमहैं १२ परिजन्यके वर्षा नकरनेपरभूदेववशिष्ठ जीने सबजीवोंको जीवदानदिया उसीकर्मकेद्वाराउन्होंने अबिनाशी गतिकोपाया १३ राजा दशरथके पुत्र श्रीरामचन्द्रजी यज्ञोंमेंवहुतसे धनोंको व्ययकरके अबिनाशी लोकोंको गये और इस लोकमेंभी उनकी अचल कीर्त्ति बिख्यातहै १४ बड़ा यशस्वी राजर्षि कक्षसेन विधिके अनुसार महात्मा वशिष्ठजीको दानदेकर स्वर्गकोगया क-रंधमका पौत्र विक्षितका पुत्र राजामरुत अपनी कन्याको अंगिरा ऋषिको दानदेकर शीघ्रही स्वर्गकोगया १५।१६ धर्मधारियोंमेंश्रेष्ठ पांचाल देशकेराजा ब्रह्मदत्तने एक शंखधनका दानकरके परमगति कोपाया १७ राजामित्र सहने बशिष्ठजीकोअपनी प्यारी भार्य्यामद यन्ती कोदेकर स्वर्गकोगया १८ मनुजीका पुत्र सुद्युम्नधर्मसे म-हात्मा लिखितऋषिको दण्डदेकर सर्व्वोत्तम देशोंको गया १९ वड़ा यशस्वी सहस्र चित्य राजऋषि अपनेप्रियप्राणोंको ब्राह्मणकेमनो-रथके लिये त्यागकरके सर्वोत्कृष्टलोकोंकोगया २० राजाशतद्युम्न सबअभीष्ट बस्तुओंसेपूर्ण स्वर्णमय महलको मौद्गल्य ऋषिकोदान देकर स्वर्गको गया २१ पर्व्वसमयमें राजा सुमन्यु भक्ष्यभोज्योंकेप-र्व्वतके समान ढेरोंको शांडिल्य ऋषिकोदेकर स्वर्गमेंनियतहुआ २२ शाल्वदेशका बड़ा कीर्त्तिमान् प्रतापी राजा द्युतिमान्अपने राज्य को ऋचीकऋषिको दानकरके सर्वोन्नत लोकोंको गया २३ राज ऋषि मदिराश्व अपनी सुमध्यमा कन्याको हिरण्यहस्तऋषिको दान करके उन लोकोंको गया जोकि देवताओंके निवास स्थानहैं २४ लोमपाद राजऋषि अपनी शान्तानाम पुत्रीको ऋष्यशृङ्ग ऋ-षिको दान करके सबबड़े २ मनोरथोंका प्राप्त करनेवाला हुआ २५ राजऋषि भगीरथ अपनी हंसीनाम कन्याको कौत्सऋषिको दान करके इस लोक से अविनाशी लोकको गया २६ राजा भगीरथ

दशहजार सवत्सा गौवों को हलकृषिको दान करके बड़े उत्कृष्ट लोकोंको गया २७ हेयुधिष्ठिर यहभगीरथ और दूसरेअन्य राजा लोग दान और तपके द्वारा स्वर्गकोगये और बारंबार फिर लौट कर आये २८ जिनगृहस्थी लोगोंने दान और तपके द्वारालोकोंको विजय किया उनसबकी शुभकीर्त्ति तबतक नियत रहैगीजबतककि पृथ्वी वर्त्तमानहै २९ हे युधिष्ठिर मैंने यह उत्तम पुरुषों का बर्णन तेरे आगेकिया यहसब लोग दानतप और सन्तानके द्वारा स्वर्ग में नियत हुयेहैं ३० हेकौरवोंके स्वामी जिन लोगोंने सदैवदानकिया उनसबके धर्मकी वृद्धि करनेवाली बुद्धि दान यज्ञ औरक्रियाओं से युक्तथी ३१ हेराजाओंमें श्रेष्ठ अबजो २ तेरे सन्देह औरहोंगे उनको कल वर्णन करूंगा अबसंध्याकाल वर्त्तमानहुआ३२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशततोपरिसप्तत्रिंशो ऽध्यायः १३० ॥

एकसौअरतीसका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे सत्यव्रत और सत्य पराक्रम रखने वाले पितामह मैंने सुनाहै कि बड़े २ राजालोग दानधर्मके ही द्वारास्वर्ग को गये १ हे धर्मधारियों में श्रेष्ठ मैं इनधर्मों को सुनना चाहताहूं कितने प्रकारके दानदेनेके योग्यहैं और जो देने उचित हैं उनका फलक्याहै २ धर्मरूप देनेके योग्यदान किसरीति से और कौन २ से ब्राह्मणोंको देनायोग्यहै और किन २ हेतुओं से कितने प्रकार काहै यहसब मैं मूलसमेत सुनना चाहताहूं ३ भीष्मजी बोले किहे निष्पाप भरतर्षभ अबतुमदानके बिषयमें सिद्धान्तोंको मुझसे सुनो जैसे २ कि सब वर्णोंमें दानका देना उचितहै ४ हे युधिष्ठिर वह दान धर्म, अर्थ, भय, इच्छा और दया से पांच प्रकार का जानना योग्यहै और जिसहेतुसे पांचप्रकारका होताहै उसकोभी समझो ५ दानदेने वाला इसलोक में शुभकीर्त्ति को और परलोकमें उससुख को पाताहै जिससे श्रेष्ठ अन्यसुख नहीं है धर्मसे होने वाला दान दूसरेके गुणोंमें दोष न लगानेवाले मनुष्योंको ओरसे ब्राह्मणों के

लियेदेना योग्यहै ८ यहमुझको देताहै वा देगा इसबिचारसे जो दानदेताहै वह दानअर्थ संयुक्त कहाजाताहै इससेयाचना करनेवाले जिस वस्तुकी याचनाकरें वही दाताको देना योग्यहै न मैं इसका कोई हूं न यह मेरा कोईहै कदाचित् सत्कार न करनेसे यह कोई पापकरे इसभयसे पंडित मनुष्य अज्ञानी कोभी देवें७।८निरालस्य बुद्धिमान् मनुष्य यहविचारकर कि यहमेराप्याराहै और मैं इसका प्याराहूं अपने मित्रको ऐसादानदे जिसके देनेमें दुःख न होय ९ दीनलोग याचना के योग्यही याचना करते हैं और थोड़े दानसे प्रसन्नहोतेहैं यहसमझकर हरदशामें करुणाकरके दीनहीको दान देनाउचितहै १० यह पांच प्रकार का दान पुण्य और शुभकीर्त्ति काबढ़ाने वालाहै इससे अपनी सामर्थ्य के अनुसार देनायोग्य है यह प्रजापतिजी का कथनहै ११ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशतोपरिषट्त्रिंशोऽध्यायः १३८॥

एकसौउन्तालीसका अध्याय॥

युधिष्ठिरने पूछा कि हे सर्व शास्त्रज्ञ बुद्धिमान् पितामह आप हमारे उत्तम भरतवंशमें बहुतसे शास्त्रोंके जाननेसे वृद्धियुक्तहो १ हे शत्रुहन्ता मैं आपसे उस कथाको सुनना चाहताहूं जो कि धर्म अर्थसे युक्त होकर सुखकाउदय करनेवाली सृष्टिको आश्चर्यकारी है २ पुरुषोत्तमयहवह समयवर्त्तमान हुआहै जोकि बिरादरीवाले और बांधवोंसेकठिनतासे प्राप्तकरनेके योग्यहै और आपकेसिवाय हमाराहितकारी कोई मनुष्य नहींहै ३ हे निष्पाप राजा भीष्मजी जोभाइयों समेतमैं आपसे पोषण करनेके योग्यहूं तो आपसेजो२ प्रश्न मैं करूं उसका उत्तर आप देनेको योग्यहैं ४ सब राजाओंमें बड़े साधू यह श्रीमान् नारायणजी बहुत मान और प्रीतिसे संयुक्त होकर आपको सेवन करते हैं ५ तुम प्रीतिसे मेरे प्रियके निमित्त सब राजा लोगों समेत मेरे भाई और इन श्रीनारायणजी के सन्मु-

ख सब वृत्तान्त कहने को योग्य हो ६ वैशंपायन बोले कि उसके उस वचन को सुनकर उन गांगेय भीष्मजीने बड़ी शीघ्रता से यह वचन कहा ७ कि हे राजा मैं अब तुमसे बड़ी चित्तरोचक कथा वर्णन करताहूं कि पूर्व्वसमयमें इन विष्णुजी का प्रभाव वाशिवजी का प्रभाव अथवा रुद्राणीजी का संशय और शिव पार्वतीजी का जो प्रश्नोत्तरहै इन सबको मैं कहताहूं तुम चित्तसे सुनो ८।९ धर्मात्मा श्रीकृष्णजी ने बारह वर्षका ब्रतकिया था उस समय नारद और पर्व्वतऋषि उन दीक्षित श्रीकृष्णजी के दर्शन के निमित्त आये १० जप करने वालों में श्रेष्ठ व्यास, धौम्य, देवल, काश्यप महत्काश्यप ११ और इन्द्रियों के जीतने वाले दीक्षा युक्त अन्य २ ऋषि जिनके साथ में देवताओंके समान तपोधन सिद्ध लोगथे वह सब आये १२ तब प्रसन्न चित्त श्रीकृष्णजीने उनके सत्कार और अतिथि पूजन कोजो अपने कुलकी प्रशंसा के योग्य और देव पूजन के योग्य था विचार किया १३ फिर वह सब प्रसन्न मूर्त्ति ऋषि लोग उन आस्तरणों पर बैठ गये जो कि हरित उत्तम वर्ण नवीन कुशाओं के बने हुयेथे १४ तब उन सबने राजऋषि देवता और तपोधन ऋषियों की धर्म युक्त मधुर कथाओं को वर्णन किया १५ इसके पीछे ब्रतचर्य्या रूप ईंधनसे उत्पन्न नारायण तेज उन अपूर्व कर्मा श्रीकृष्णजी के मुख से निकल कर अग्नि रूप हुआ १६ उस अग्निने वृक्षलता, क्षुप, पशु, पक्षी, हिंसक, पशु, और सर्पों समेत उसपर्व्वत को भस्म करदिया १७ और पर्व्वत के उस शिखर को भी मथा जोकि नानाप्रकार के मृगोंसे हाहाकार रूप जीवतेजीवों से रहित और अकिंचन लोगोंसे दर्शनीय था १८ उस बड़ी अग्नि की ज्वालाने जब पर्व्वतको अत्यन्त भस्म करदिया तब उसपर्व्वत ने विष्णुजी के सन्मुख आकर शिष्यके समान दोनों चरणोंको आकर स्पर्श किया १९ इसके अनन्तर शत्रुओंके पराजय करने वाले विष्णुजी ने उस भस्मरूप पर्व्वत को देखकर अपनी अमृत रूप दृष्टिसे फिर ज्योंका त्यों कर दिया २० तब वह पर्व्वत वृक्षपशु

वल्लीलता और हिंसादिक जीवोंसे यथावस्थित शोभित हुआ सब मुनिलोग इस आश्चर्य्यकारी वृत्तान्त को देखकर कपायमात्र रोमांचों से युक्त नेत्रोंमें अश्रुपात युक्त हुये २१ । २२ इसके पीछेउन महा वक्ता नारायणजीने उन ऋषियों को आश्चर्य्य युक्त देखकर नम्रता पूर्व्वक प्रीति युक्त मधुर बचनों से यह पूछा २३ कि हे ऋषि लोगों सदैव संगोंसे रहित ममतासे खाली शास्त्रज्ञ होकर तुम लोगों को आश्चर्य्य कैसे हुआ २४ हे निर्दोष तपोधन ऋषियो इस मेरे सन्देह को निवृत्त करने के योग्य हो २५ ऋषि बोले कि आपही सृष्टिको उत्पन्न करके नाश करतेहैं आपही शीत उष्ण ऋतु रूप होकर वर्षाको करतेहौ २६ पृथ्वी के सब जड़ चैतन्योंके माता पिता रूपभी आपही हौ सब लोकोंके स्वामी और प्रभुहौ २७ हे कल्याण रूप मधुसूदनजी इस प्रकार हमारे संशयोंका उत्पन्न करनेवाला जो आपका तेजरूप प्रकट हुआ अग्नि है उसको आपही कहनेके योग्य हौ २८ हे नारायण जी इसके पीछे हम सब भी निर्भय हो-कर जो कुछ कि हमने देखाहै और सुनाहै उसको वर्णन करेंगे २६ बासुदेवजी बोले कि यह वैष्णवतेज प्रलयाग्निके समान जो मेरे मुखसे निकला जिससे यह पर्व्वत भस्म होगया ३० क्रोध और इन्द्रियों के जीतने वाले तपोधन देवताओं के समान आप लोग भी आश्चर्य्य युक्त होकर पीड़ामान हुये ३१ वह तपस्वियों का व्रतसे-वन करने से मुझ ब्रत करने वाले के मुखसे अग्नि प्रकट हुआ है उससे आप लोग पीड़ामान होनेकेयोग्य नहींहो ३२ में इसपर्व्वत पर व्रत करके अपने समान पराक्रमी पुत्रको तपस्याके द्वारा प्राप्त करनेके लिये आयाथा ३३ जब ब्रतकी समाप्ति हुई तब मेरे शरीर में जो आत्माहै वह अग्नि होकर बाहर निकला और लोकों के पितामह बरके देनेवाले शिवजी महाराज के दर्शनको गया ३४ हे वड़े साधू मुनिलोगो उन महात्मा शिवजी ने उसमेरे अग्निरूप आत्माको पुत्र भावमें नियत करके यह वचन कहा कि आधे तेजसे तुम्हारा पुत्र होगा ३५ यह वही अग्नि शिष्यके समान मेरे पास

आकर मेरी सेवाके निमित्त मेरे चरणों में आकर शान्त हुआ और अब इसने अपने पूर्व रूप को पाया ३६ यह मैंने विष्णु भगवान् जीके गुप्त रहस्य का संक्षेप वर्णन कियाहै हे तपोधन ऋषिलोगो इससे भय न करना चाहिये ३७ हे सावधान महात्मालोगो उन्नत दृष्टिके द्वारा आप लोगोंकी विज्ञता सर्वत्रहै तुम सब लोग तपस्वि-योंके व्रतसे महा तेजस्वी औरज्ञान विज्ञानसे शोभायमान हो ३८ तुमने स्वर्ग वा पृथ्वी पर जो कुछ आश्चर्य्य देखाहै वा सुना है उ-सको मुझसे कहो ३९ यहां आपसरीखे तपोवन निवासी लोगोंके वर्णन कियेहुये उस अमृतरूप वचन के मधुर रसके पीनेकी मेरी इच्छाहै ४० हे देवदर्शन ऋषियो यद्यपिमैं स्वर्ग पृथ्वी आदि के सब दर्शन के योग्य आश्चर्य्यों को जिनको कि तुमने भी नहीं देखाहै उनसबको जानता और देखताभीहूं ४१ और वह मेरी परा-प्रकृति किसी स्थान में भीनहीं रुकतीहै और मेरेआत्मामें वर्तमान ऐश्वर्य्यादिकभी मुझको अपूर्व आश्चर्य्यकारी नहीं विदित होतेहैं ४२ परन्तु श्रद्धाके योग्य और सज्जनोंसे श्रवण कियाहुआ आशय विलम्बतक पृथ्वीपर ऐसे नियत होताहै जैसे कि पर्व्वतपर नियत कियाहुआ लक्ष्य होताहै४३ सोमैं सज्जनोंके मुखसे निकलेहुये म-नुष्योंकी बुद्धिके प्रकाशक गुप्तआशयों को सज्जनोंकी सभामें वर्णन करूंगा ४४ इसके अनन्तर मुनियोंके सबसमूह श्रीकृष्णजीके पास नियत होकर आश्चर्य युक्तहुये और कमलदलरूप नेत्रोंसे युक्तउन दुष्टसंहारी विष्णुजीको देखा ४५ तब किसीने आशीर्वाददिया और किसीने उनका पूजनकिया और किसीने ऋग्वेदके मंत्रोंसेयुक्त वचनों केद्वारा इन मधुसूदनजीकी स्तुतिकरी ४६ फिर मुनियोंके सब समू-हने बड़ेवक्ता वार्तालाप करनेमें सावधान देवऋषि नारदजीको वर्त-मान वृत्तान्तके कहनेको प्रेरणाकरी४७ मुनियोंने कहाहेप्रभुनारद-जी तीर्थयात्रा करनेवाले मुनियोंने बुद्धिसे वाहरजो वृत्तान्त इस हिमालय पर्व्वत पर देखाहै ४८ उस आश्चर्य्यको इन मुनियोंकी वृद्धके लिये श्रीकृष्णजीसे आपही कहनेके योग्यहैं ४९ मुनियोंके

इस बचनको सुनकर भगवान् देवऋषि नारदजीने प्राचीनवृत्तान्तों समेत इस कथाको बर्णन किया ५० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशतोपरिएकोनचत्वारिंशोऽध्यायः १३९ ॥

एकसौचालिसका अध्याय ॥

भीष्मजीने राजा युधिष्ठिरसे कहा कि तब नारायणजी के भक्त भगवान् नारदजीने शंकरजी और उमादेवीके प्रश्नोत्तर को बर्णन किया १ नारदजी बोले कि देवताओं के ईश्वर धर्मात्मा शिवजीने उस उत्तम पवित्र सिद्ध चारणोंसे सेवित २ नानाप्रकारकी ओषधियोंसेसंयुक्त क्रीड़ाके योग्य बहुतप्रकारके पुष्पोंसे अलंकृत अप्सराओंके समूहोंसे व्याप्त और पशुपक्षी आदि जीवोंसे शब्दायमान हिमालय नामपर्व्वतपर तपकिया ३ वहांपर देवदेव शिवजीमहाराज उन भूतगणों समेत आनन्द युक्तथे जोकि नानाप्रकारके रूप धारण करनेवाले दिव्य अपूर्व दर्शन ४ सिंह व्याघ्र हाथी शृगाल बघेरा चीता और रीछके समान मुख रखनेवाले सबजातोंसे युक्त ५ उलूक भेड़िया बाघ और मृगोंके समान मुख अनेक बर्णवाले भयानक रूप इत्यादि सब प्रकारके रूपोंसे संयुक्तथे ६ वह शिवजी किन्नर यक्ष गन्धर्व राक्षस और भूतगणों समेत परमानन्द रूप थे उनशिवजीकी सभा दिव्यबाजोंसे शब्दायमान अनेकरंगकेपुष्पों से युक्त देदीप्य ज्वालाओंसे व्याप्त सुगंधित चंदनसहित औरदिव्य धूपोंसे धूपितथे ७। ८ मृदंग, पणव, शंख और भेरीके शब्दोंसे भी शब्दायमान चारोंओरको नृत्य करनेवाले भूतगण और मोर पक्षियोंसे शोभायमानथे ९ और जिसमें दिव्यअप्सरा नृत्य करनेवाली थीं वह देवऋषियोंके समूहोंसे सेवित देखनेमें प्रियवाणी से परे दिव्य और अपूर्व्व दर्शनके योग्यथे १० वह पर्व्वत उन शिवजीके तपसे शोभायमान हुआ जोकि वेद पाठ औरजपमें नियत वेदपाठियोंके वेदघोषसे शब्दायमानथा ११ हे माधवजी वहशैल्य भवरोंके उपगीतोंसे अनूपरूप वालाथा हेजनार्द्दनजी इसकेपीछे उस बड़ी

उत्सवरूप भयकारी सभाको देखकर १२ सबमुनियों के समूहबहुत प्रसन्नहुये महाभागमुनि ऊर्ध्वरेतासिद्ध १३ मरुद्गण, अष्टवसु, साध्य गण, इन्द्रसमेत विश्वेदेवा नाग पिशाच सब लोकपाल अग्नि १४ वायु और सब महाभूत उसस्थानमें इकट्ठे हुये वहां सबऋतुओंनेभी बड़े अपूर्व्वसबप्रकारके फूलोंसे उसस्थानको शोभितकिया १५ और प्रकाशमान औषधियोंने उसबनको प्रकाशित किया उस पर्व्वत के सुन्दरशिखरोंपर प्रसन्नतायुक्त पक्षीअपनीमधुर और प्यारी बोलियों को बोलतेहुये नाच २ कर शब्दोंको करनेलगे उस दिव्यधातुओंसे अलंकृतपर्व्वतके एक भागमें महासाहसी दिव्यरूप शिवजी महाराज एकपलंगपर विराजमान व्याघ्रचर्म सिंहचर्मकाबिछौना धारण करनेवाले १६।१७।१८ सर्पका यज्ञोपवीत और लाल बाजूबन्दोंसे अलंकृत पिंगलवर्ण डाढ़ीमूछ और जटाधारी भयानकरूप असुरों के भयकारी १९ सबजीव और भक्तों को निर्भयता देनेवाले वृष, भध्वजथे उनकोदेखकर सबमहर्षीलोग शिरकेबल दंडवत्कर पृथ्वी पर बैठे २० वह महर्षी सबसंगोंसे रहित क्षमावान् और पापों से मुक्तथे उससमय जीवमात्रोंके स्वामी शिवजी महाराजकी वह भयानक रूप सभा अत्यंत शोभायमान हुई । २१ हे मधुसूदनजी एकक्षणभरमेंही वह महाउग्र अजेय उरगोंसे व्याप्त २२ उग्ररूप शिवजीकी सभा महाभयानकरूप होकर शोभायमानहुई उससमय भूतोंकी अनेकस्त्रियोंसे व्याप्त शिवजीकेही समान विस्तर औरव्रतों की रखनेवाली सबतीर्थोंके जलोंसे पूरितसुवर्णका कलशलिये शुभ रूपपार्व्वतीजी भी उससभामें आई २३ । २४ उनपार्वतीजीके और पासमें सबनदियां स्त्री रूपकियेहुये वर्त्तमानथीं इसकेपीछे पार्वती जी उनसब स्त्रियोंसमेत वहांसे उठकर महादेवजीके बामांगमें वर्त्तमानहुई २५ वहां पहुंचकर मन्दमुसकान करती सुन्दर हास्यकरती हुई श्रीपार्वतीजीने दानों हाथोंसे शिवजीके दोनोंनेत्र बन्दकर दिये २६ उननेत्रोंके ढकनेसे यहसंसार प्रकाशरहित अचेष्ट होकर हवन और वषट्कारसे खाली होगया २७ तब सबजीव मनसे भयभीत

हुये अर्थात् शिवजीके नेत्र बन्दहोनेसे सबसंसार नेत्रोंकरके अंधों के समान होगया २८ इसकेपीछे यहलोक क्षणभरहीमें प्रकाशमान होगया क्योंकि उन शिवजीके ललाटसे बड़ी प्रकाशयुक्त ज्वाला निकली २९ उनका तीसरानेत्र जोकि प्रलयकालके सूर्य्यकेसमान प्रकाशित था उसनेत्र को अग्नि प्रकाशितहुई उसीसे यह पर्वत भस्म होगया ३० तब तो शिवजी के बड़े नेत्रको अग्नि के समान खुलाहुआ प्रज्वलित देखकर पर्वतने शिवजीको प्रणामकिया ३१ और शाल सरलनाम वृक्ष सुन्दर चंदनकेवन दिव्य औषधी आदि वनस्पति और भयभीत होकर भागनेवाले शिवजीकी शरणमेंआने वाले और अपनी रक्षाका आश्रय नपानेवाले मृग समूहों से वह सभासंकुलहोकरमहाशोभितहुई ३२।३३ और चंचलविजलीकेसमान अग्निकेसदृश प्रकटहुये द्वादशसूर्य्यके समान दूसरी प्रलयकालकी तुल्य ज्वालाने आकाशको स्पर्श किया ३४ उसअग्निसे क्षणभरही में वह हिमालय पर्वत शिखरऔर सबधातुओं समेत भस्महोगया जिसमें सब निरपराध पशुपक्षी और औषधी जलगईथीं ३५ इसके पीछेहिमाचल पर्वतकी पुत्रीदेवी पार्वतीजी उसभस्महोजानेवाले पर्वतको देखकर शिवजी की शरण में आकर हाथ जोड़कर खड़ी हुई ३६ तब शिवजी ने उमा देवीको स्त्री भाव से मृदुल स्वभाव वाली पिताका दुःख न चाहनेवाली देखकर बड़ी प्रीति पूर्वक उस पर्वतकोदेखा ३७ उनके देखतेही वह पर्वत यथावस्थित पूर्वकेही समान वृक्ष वल्ली फल पुष्पोंसे और अनेक पशु पक्षियों से व्याप्त होकर शोभायमान हुआ ३८ तबतो अपनी पूर्व दशामें प्राप्त हो- जानेवाले पर्वतको देखकर प्रसन्न चित्त निर्दोष देवी ने सब सृष्टिके स्वामी शिवजीसे यह बचनकहा ३९ कि हे सब जीवमात्रोंके ईश्वर महाव्रती शूलधारण करनेवाले भगवान् मुझको बड़ा सन्देह पैदा हुआहै उसको आपही निवृत्तकरने को समर्थहैं ४० प्रथम तो आपके ललाटमें तीसरा नेत्र किसनिमित्त प्रकटहुआ और सबवनस्पति और पशु पक्षियों समेत यह पर्वत किस निमित्त भस्म हुआ ४१

और फिर आपनेउसको इसकारण से अपनी पूर्वदशामें नियतकिया और मेरे पिताको भी फिर सब वृक्षोंसे आच्छादित करदिया ४२ महेश्वरजी बोले हेआनन्दित देवीतुमने अज्ञानतासे मेरेदोनों नेत्र ढकदिये इसीसे यह संसार क्षणभरमेंही प्रकाश से रहित होगया ४३ हे पार्वती इसरीति से सूर्य्यके गुप्तहोने और संसारमें अंधकारके छाजानेपर मुझ संसारके रक्षकने अपना तीसरा नेत्र प्रकट किया ४४ उस नेत्रका बड़ा उग्र तेजथा जिससेकि यह बड़ाभारी पर्व्वत भस्म होगया हे देवी अब मैंने तेरेअभीष्टकेलिये फिर अपनी मुख्यदशाको धारणकिया ४५ उमा बोलीं कि हे भगवन् आपका पर्व्वदिशाका मुख किसकारण चन्द्रमाके समान अपूर्वदर्शनकेयोग्य है और इसीप्रकार उत्तरीय और पश्चिमीय मुखभी किसहेतुसे शोभासे चित्तरोचकहैं ४६ और दक्षिणीय मुख किस निमित्त रुद्ररूपहै और जटा किसहेतु से कपिल वर्ण है आप का कण्ठ किसहेतु से मोरपक्षके समान नीला होगयाहै ४७ और हेदेवता आपके हाथ में पिनाक धनुष किसके लिये सदैव नियत रहताहै तुम सदैव जटिल और ब्रह्मचारी काहेसे रहतेहो ४८ हे प्रभु वृषभध्वज आप इनसब मेरे संशयोंके दूरकरनेको योग्यहो मैं आपकेसाथमें धर्माचरण करने वाली आपकी और भक्तहूं ४९ भीष्म जीने कहा कि पार्वतीके यह सब वचन सुनकर भगवान् शिवजी उसके बुद्धिकी धैर्य्य से प्रसन्न हुये ५० इसके अनन्तर देवदेव शिवजीने उनसे कहा कि हे ऐश्वर्य्यवती सुन्दर मुखवाली पार्व्वती जिस २ कारणसे यहसब मेरे रूपहैं उनसब हेतुओंको सुनो ५१ ॥

इतिश्रीमहाभारते आनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेउमामहेश्वरसंवादोनामशततोपरि चत्वारिंशोऽध्यायः १४० ॥

एकसौइकतालीसका अध्याय ॥

इसरीतिसे शिवजी और श्रीकृष्णजीकीएकताको कहकर चतुर्मुख ब्रह्माजीसेभी जो ऐक्यताहै वहभी वर्णनकरतेहैं श्रीभगवान्बोलेकि

पूर्व्वसमय में ब्रह्माजीने सब रत्नोंके तिल २ भरकेअवयवोंकोलेकर तिलोत्तमा नामशुभरूपवाली उत्तम स्त्री उत्पन्नकरी १ हे शुभदेवी वह स्वरूपमेंअनूपम सुन्दरमुखी तिलोत्तमा परिक्रमाओं से मनको मोहनकरतीहुई मेरेपास आई २ जिधर जिधरसे वह प्रसन्न दर्शन वाली तिलोत्तमा मेरेपास आई हेदेवी उधरही उधरको मेरासुन्दर मुख प्रकटहुआ ३ उसके देखनेकी अभिलाषा से मैंनेयोग से चार मूर्त्ति वालाहोना अंगीकार किया उत्तम योगको दिखलाताहुआमैं चतुर्मुखहुआ ४ उनमुखों में से पूर्वके मुखसे तो इन्द्रकेदेशमें राज्य करताहूं हे आनन्दिते उत्तरीय मुखसे तेरेसाथ रहताहूं५ और मेरा पश्चिमका मुखप्रियदर्शनचित्तरोचक और जीवमात्रोंका सुखउत्पन्न करनेवालाहै और जो भयकारीरुद्ररूप दक्षिणीय मुखहै वहसंसार कानाश करनेवालाहै ६ और संसारकी वृद्धिकेलियेमैं जटिल और ब्रह्मचारीहूं और देवताओंकी कार्य्यसिद्धीके निमित्त मेरेहाथमेंसदैव पिनाक धनुष रहताहै ७ पूर्वसमयमें लक्ष्मी के चाहनेवाले इन्द्रने मुझपर वज्रको छोड़ावह वज्रकण्ठसे अपने तेज बलको करकेचला गया इसीहेतु से मेरी श्रीकण्ठताहै अर्थात् मैंनेदासोंके अपराधोंको क्षमाकिया और उनकी कीर्त्ति केही निमित्त नीलकण्ठ हुआ हूं इस बर्णनसे मैंने अपनी परम दयालुता प्रकटकीहै ८ उमाबोलीं किहे बड़े साधू देवता अन्य उत्तम २ अनेक शोभायमान सवारियों के बर्त्तमान होनेपर बैलनेही किसकारणसे आपकी सवारी के अधिकारको प्राप्तकिया ९ महेश्वर जी बोलेकि ब्रह्माजीने देवताओंकी दूधकी देनेवाली सुरभीनाम गौको उत्पन्नकिया वहउत्पन्नहोकर दूधरूप अमृतको देतीहुई अनेक रूपोंसे प्रकट हुई अर्थात् बचन रूप गौके चारथनहैं स्वाहाकार,हंतकार,स्वधाकार, बषट्कार इन चारोंसेपोषण प्राप्तकरने वाला गोधर्म गोवृष नामहै इसका फल रूपपरमवैराग्य विवेक आदिक फेनके समानहै जबवह उपायों से प्राप्तहोताहै तब बचनरूपगौका पारमार्थिक फलसिद्ध होताहै १० उससुरभीके वछड़ेके मुखसे छूटाहुआफेन मेरेशरीरपर गिरा इसके

पीछे मेरेतेजसे संतप्त होनेवाली गौओंने नानाप्रकार के वर्णोंको पाया ११ फिर प्रयोजनके ज्ञाता लोकके गुरू ब्रह्माजीने मुझको शान्तकिया और इसबैलको मेरीसवारी और ध्वजाके निमित्तदिया तात्पर्य्य यहहै कि गौओंका वर्ण जो नानाप्रकारका होताहै यही धर्मका स्वरूपहै और ध्वजा जीवनमुक्त स्वरूपको जतलानेवाली है १२ उमा बोलीं कि स्वर्गमें आपके निवासस्थान बहुत रूपवाले और सबगुणों से संयुक्त हैं हे भगवन् आप उन सब उत्तमस्थानों को त्याग करके श्मशान भूमिमें क्यों निवास करतेहो १३ वह श्मशान भूमिवाले और हड्डियोंसे युक्त भयानक रूप कपालरूप घटोंसे व्याप्त बहुतसे गिद्ध शृगालों से पूर्णसैकड़ों अग्निकी चिता-ओंसे आकीर्ण १४ अपवित्र मांससे व्याप्तरुधिर मज्जारूप कीचड़ वाला शृगालों के शब्दोंसे शब्दायमान है और जिसमें आंत और हड्डियां फैलरहीहैं १५ महेश्वर जी बोले कि मैं पवित्र स्थानों को ढूंढ़ताहुआ सदैव पृथ्वीपर घूमताहूं इसलोक में श्मशान भूमि से अधिक कोई स्थान पवित्र नहीं दिखाई देता है इसके आशय को लिखतेहैं कि प्रथम मैत्रेयजी की भिक्षामें व्यास के बचनों से सिद्ध किया गया है कि मोक्षके चाहनेवाले मनुष्यों को काशीजी में गुप्त निवास करना उचित है पूर्वमें उस काशीमें थोड़ी भिक्षादेने मैत्रेय का बड़ा पुण्य होने से काशी का पवित्र क्षेत्र होना कहा गया आदिमें काशीक्षेत्र के मृतक दर्शन के द्वारा शिव दर्शन की सिद्धी प्रकट होनेसे जीवनमुक्तों का शरीर शिवलिंग रूपहोता है आशय यहहै कि श्मशान के कहनेसे काशीक्षेत्र का कहना प्रयोजन है उन्नीसवें श्लोकको ध्यानकरो १६ इसीहेतुसे सब निवासस्थानोंमें से ऐसी श्मशान भूमिहीमें मेरा चित्त रहता है जो कि बट वृक्षकी शाखाओंसे आच्छादित बिनाभोगीहुई मालाओंसे शोभायमानहो १७ हे पवित्र मुसकानवाली देवी यहमेरे भूतोंके समूह उस श्म-शानमें रहते हैं और मैं अपने भूत समूहोंके बिनारहना अंगीकार नहीं करताहूं १८ हे शुभपार्वती मैंने इस पवित्रस्थान को स्वर्गसे

सम्बन्धरखनेवाला मानाहै यहउत्तम और पवित्रतम अर्थात् काशी पुरीकाक्षेत्रब्रह्मकी प्राप्तिचाहनेवाले पुरुषोंसे सेवनकियाजाताहै१६ उमाबोलीं कि हे सर्वगान विद्याके जाननेवाले धर्ममें उत्तम सब जीवोंके ईश्वर पिनाक धनुषधारी बरदाता शिवजी यह मेरा बड़ा सन्देह है कि मुनियोंके सब समूहने तपस्याकरी और नानाप्रकार का रूप रखनेवाला वह ऋषियोंका समूह तपकी इच्छासे घूमरहा है २०।२१ हे शत्रु संहारी आप मेरेइस ऋषि समूहके उपकार के लिये इस सन्देहको दूरकरनेके योग्यहैं २२ धर्मका क्या लक्षण है धर्मके न जाननेवालोंसे कैसे करना संभवहै हेधर्मज्ञ प्रभुइसको भी आपमुझे समुझाइये २३ नारदजीबोले कि इसकेपीछे मुनियों के सब समूहने उनवचनों से जिनका अर्थ ऋग्वेद के मन्त्र और स्तुतियोंसे शोभायमान था और महा उत्तम अर्थवाले स्तवोंसे उस देवीकी स्तुतिकरी २४ महेश्वरजी बोले कि अहिंसा सत्यबोलना सबजीवोंपर दया जितेन्द्रीहोना सामर्थ्यके अनुसार दान यह सब धर्म उत्तम गृहस्थीकेहैं २५ दूसरेकी स्त्रीसे संग न करना स्त्री और पराई धरोहड़की पूरीरक्षा बिनादीहुई वस्तुका नलेना मांसमदिरा का त्याग २६ यहपांच प्रकारका धर्म्म जो कि बहुत शाखाओं का रखनेवाला सुखोंका उदय करनेवाला और धर्मके पुण्यका उत्पत्ति स्थानहै शरीरधारी धर्मात्मा लोगोंसे करनेके योग्यहै २७ उमा बोलीं हे भगवन् जो मैंने अपना सन्देह आपसे पूछाहै उसको आप कहिये अपने २ वर्णमें चारोंवर्णोंका जोधर्मसुखदायीहै २८ब्राह्मण और क्षत्रीमें कैसा २ धर्म नियतहै और वैश्य वा शूद्रमें कौनसेल- क्षणवाला धर्म होनाचाहिये २६ महेश्वरजी बोले कि हे महाभाग उमा तुमने न्यायपूर्व्वक सबप्रश्न अच्छेकिये इसलोकमें महाभाग ब्राह्मण सदैव भूमिदेवहैं ३० ब्राह्मणका धर्म निश्चय करके सदैव उपवास करनाहै धर्म अर्थसेयुक्त वही ब्राह्मण ब्रह्मभावके योग्य समझाजाताहै ३१ हे देवी उसका न्यायके अनुसार ब्रह्मचर्य्य व्रत और यज्ञोपवीतका धारण करना यहीव्रतहै जिससे कि उसकाद्विज

नाम होताहै ३२ धर्मात्मा शरीरवालेको गुरू और देवताके पूजन केलिये धर्मका उत्पत्तिस्थान वेदनाम व्रतका अभ्यास करना उचित है ३३ उमाबोलीं हे भगवन् अब आपचारोंबर्णोंके धर्मोंको अपनी विज्ञानतासे वर्णन करिये ३४ महेश्वर जी बोले कि गुप्त धर्मका सुनना और वेदव्रतका अभ्यासही धर्महै इसीप्रकार गुरूके यज्ञके कार्य्योंका करनाभी बड़ा धर्महै वहभी अवश्य करनेके योग्यहै ३५ सदैव यज्ञोपवीत धारण करनेवाले ब्रह्मचारीको भिक्षाकरना उत्तम धर्महै वेदपढ़नेवाले को और जपकरनेवालेको ब्रह्मचर्य्य आश्रम में रहनाधर्महै ३६ गुरूकी आज्ञापानेवालाद्विज समावर्त्तननाम स्नान करे फिर अपनेयोग्य सवर्णास्त्रीकोविधिकेअनुसारबिवाह करके प्राप्त करे ३७शूद्रके अन्नका त्याग और सत्पुरुषोंके मार्गका सेवनकरना धर्महै इसीप्रकार सदैव व्रतकरना और ब्रह्मचर्य से रहना भी धर्म है ३८ गृहस्थी मनुष्य अग्निका स्थापन करनेवाला वेदपाठी हवन कर्त्ता पक्का जितेन्द्री देवताआदिके शेष अन्नका खानेवाला नियत से आहार करनेवाला और सत्यवक्ता होय ३९ अतिथि व्रतधर्म है गृहस्थीलोग इष्टी और पशुबंध नाम यज्ञोंको विधिके अनुसार करें ४० यज्ञधर्म उत्तमहै इसीप्रकार शरीरधारीकी हिंसा न करना धर्महै एकसमय भोजन करना धर्महै देवता आदिसे शेष बचा हुआ भोजनकरना धर्महै ४१ सब बालबच्चोंके पीछे भोजन करना गृहस्थी ब्राह्मण और मुख्य करके वेदपाठी का धर्म कहाजाता है स्त्री पुरुषका एकसा स्वभाव होना गृही देवता और अन्य देवताओं को सदैव पुष्पों से बलिक्रिया करना गृहस्थी का धर्महै ४२। ४३ सदैव गोबर आदि से शरीर पर मलना धर्म है इसीप्रकार सदैव व्रत करना धर्महै अच्छी सफ़ाई और लिपाईसे संयुक्त घरमें घृतका धुआं वर्त्तमान होना धर्महै यह द्विज लोगों का लोक के धारण करनेवाला धर्म है सतपुरुष ब्राह्मणों को यह धर्म सदैव वर्त्तमान रहता है ४४। ४५ हे देवी जो तुमने क्षत्री में नियत धर्म वर्णन कियाउसकोमें कहताहूं तुम सावधान होकरसुनो ४६ क्षत्रीका धर्म

प्रारंभही से प्रजा का पालन करना कहागया है खेतीके छठे भाग का लेनेवाला राजा धर्मसे युक्त होता है ४७ जो राजा धर्मसे प्रजा का पालनकरताहै उसको प्रजापालनता आदिधर्म से उत्तम लोकों की प्राप्ति होतीहै ४८ और जितेन्द्री, वेदपाठ, अग्निहोत्र करना, दान, जप, यज्ञोपवीत धारण करना, यज्ञ, धर्मक्रिया, पालन के योग्य दास आदिकों का पोषण करना और उनकी ओर से पूरेकाम के होनेपर पारितोषिक आदिको देना ४६ । ५० और अपराधियों को दण्ड देना वेदमें लिखे हुये यज्ञ और व्यवहारों को अच्छीरीति से करना व्यवहारों में स्थिर बुद्धिता सत्य बोलने में प्रवृत्त चित्त होना यह सब राजाके धर्महैं ५१ पीड़ामान मनुष्यके हाथोंमेंदेने वाला राजा इसलोक और परलोकमें प्रतिष्ठाको पाताहै गौ ब्राह्मणके कार्य्योंमें पराक्रम करनेवाला युद्धमें मरनेवाला राजा ५२ स्वर्ग में उन२ लोकों को पाताहै जोकि अश्वमेध यज्ञसे प्राप्तहोते हैं ५३ वैश्य का धर्म सदैव गौ आदिका पोषण खेतीकरना अग्निहोत्र करनादान वेदपाठ जप ५४ व्यापार सत्पुरुषोंके मार्गमेंवर्त्तमानहोना अतिथि पूजन जितेन्द्री होना वेदपाठी ब्राह्मण का आदर सत्कार और उनको देनायह वैश्यका सनातन धर्म है ५५ व्यापार मार्गमें वर्त्तमान सत्पुरुषों के मार्ग में आश्रित होकर वैश्य तिल रस और गेहूं आदिका बेचना नहीं करे ५६ सामर्थ्य के अनुसार जैसा उचित है वैसाही सर्वत्र अतिथि पूजन और त्रिबर्गका साधन करे और सदैव तीनों वर्णोंकी सेवा करना यही शूद्रों का परम धर्म है ५७ तेज तपवाला सत्यवक्ता जितेन्द्री समीप आनेवाले अतिथि की सेवा करनेवाला शूद्र बड़े तपोंको इकट्ठा करताहै ५८ सदैव शुभाचरण वाला देवता ब्राह्मण का पूजन करने वालाबुद्धिमान शूद्र अभीष्ट धर्म के फलोंसे संयुक्त होताहै ५६ हे शोभामान सुन्दर ऐश्वर्य्यमान देवी यह वर्णोंका जुदा २ धर्म पृथक् २ करके तेरे आगे वर्णन किया अब दूसरी कौनसी बात सुनाचाहतीहै ६० उमा बोलीं हे भगवन्, आपने चारों वर्णोंका हितकारी मुख्य धर्म

वर्णन किया अत्र सर्वव्यापी धर्मको मुझे सुनाइये ६१ महेश्वर जी बोलेकि गुणोंके निश्चय जानने के अभिलाषी ब्रह्माजी ने सब लोकोंकी सृष्टिके उद्धार करने की इच्छासे लोकके सार भूत ब्राह्मण उत्पन्न किये वह इस पृथ्वीपर भूमि देव कहातेहैं ६२ उन्होंके धर्म कर्मका उदय रूप जो फल है उसको वर्णन करूंगा जोधर्म कि ब्राह्मणोंमें है उसीको श्रेष्ठमानाहै ६३ सृष्टिकी उत्पत्ति के समय ब्रह्माजीने यह तीन धर्म उत्पन्न किये वह तीनोंधर्म सृष्टिके निमित्त सदैव प्रकट होतेहैं वह यहहैं ६४ प्रथम धर्म वेदोक्तहै दूसरा स्मृत्योक्त तीसरा श्रेष्ठ लोगोंका आचरण कियाहुआ होताहै यह तीनों धर्म सनातन हैं ६५ ज्ञानी ब्राह्मण त्रिवेदीहै दूसरेके निमित्त वेदपाठ अथवा जप करने से अपनी जीविका करनेवाला नहीं है दान वेद पाठ यज्ञ इन तीनों कर्मोंका करने वाला काम क्रोध और लोभसे पृथक् होनेवालाहै यह ब्राह्मण मैत्र अर्थात् मित्रकुलकहा जाताहै ६६ भुवनेश्वरने इन छः कर्मोंको ब्राह्मणोंकी जीविका के निमित्त वर्णन कियाहै उन सनातन धर्मोंको सुनो ६७ यज्ञ करना यज्ञ कराना दानदेना दानलेना पढ़ना पढ़ाना इन छः कर्मोंका करने वाला ब्राह्मण धर्मका भागीहै ६८ सदैव वेद पढ़ना अथवा गायत्री का जप करना धर्महै यज्ञ करना सनातन धर्महै सामर्थ्य और विधिके अनुसार दानदेना प्रशंसा कियाजाताहै ६९ जितेन्द्री होना और वैराग्य धर्म यह दोनों सदैव सत्पुरुषों में प्रचलित हैं अत्यन्त पवित्र गृहस्थियों के धर्म का बड़ा समूहहोता है ७० जो पांचों यज्ञोंके करने से पवित्रात्मा सत्यवक्ता दूसरेके गुणमें दोष न लगाने वाला, दानी, ब्राह्मणका सत्कार करने वाल,अत्यन्तस्वच्छ स्थान रखनेवाला ७१ अहंकार रहित सदैव मधुर और सत्यभाषी शुद्ध वार्त्ता करने वाला अतिथि अभ्यागत से प्रीति करनेवाला देवता आदिसे भोपबचे हुये अन्न का भोजन करने वालामनुष्य ७२ न्यायके अनुसार पाद्य अर्घ आसन, शयन, दीप, और स्थान को देताहै वही धार्मिक अर्थात् धर्मका अभ्यासीहै ७३ प्रातःकाल उठ

कर आचमन पूर्व्वक भोजन के निमित्त निमन्त्रण देकर सत्कार करने के अनन्तरकुछ चरण पीछे २ चले उसी का सनातन धर्म है ७४ सब प्रकार से सामर्थ्य के अनुसार प्रतिदिन तीनों वर्णों का पूजन और सेवन करना शूद्रोंका धर्म वर्णन किया ७५ प्रवृत्ति लक्षणवाला धर्म गृहस्थियों में विचार किया जाताहै वह गृहस्थ धर्म भी सब जीवोंको शुभ फलका देनेवालाहै उस शुभ धर्मको अब वर्णन करताहूं ७६ अपनी सामर्थ्यके अनुसार सदैव यज्ञ और दान करना योग्य है ऐश्वर्य्य के चाहनेवाले पुरुषको पुष्टि कर्म करना उचितहै धर्मको उत्तम माननेवाले पुरुषोंको धर्म से प्राप्त होने वाले धनके तीन विभाग करने चाहिये ७८ उन तीनों भागोंमें से प्रथम भाग करके तो धर्म अर्थ करना योग्यहै दूसरे भागसे काम प्राप्तकरे और तीसरे भागको बहुत बढ़ावे ७६ निवृत्ति लक्षणवाला दूसरा धर्म मोक्षके अर्थ नियत होताहै अब उसकी वृत्तीको वर्णन करताहूं हे उमा देवी उसको तुम मूल समेत मुझसे सुनो ८० सब जीवों पर दया करना एक ग्राममें निवास न रखना आशा रूपी बंधन से रहित जो धर्म है वह मोक्षके चाहने वालों का कहाजाताहै ८१ जल, बिछौना, आसन, त्रिदंड, शय्या, अग्नि, और स्थान से पृथक् रहना योग्यहै ८२ हे महाभाग जो पुरुष ब्रह्मज्ञान से प्राप्त हुई गतिमें मन बुद्धि और चित्त का लगाने वाला और उसमें नियत होकर योग और ज्ञानसे युक्त ८३ सदैव वृक्षों के मूलमें अथवा उजड़े हुये स्थान में निवास करने वाला नदी के तटोंपर सोनेवाला और विहार करने वालाहै ८४ सब संग और उपसंगों से रहित वह ब्रह्मज्ञानी अपनीही आत्मामें परमात्माको देखे ८५ स्तंभ के समान निश्चल और निराहार वहयोगी मोक्ष शास्त्रके लिखे हुये कर्मोंके द्वारा संन्यासी होताहै उसका धर्म भी सनातनहै ८६ एकही स्थान पर चित्त न लगाने वाला और एकग्राम में वासभी न करने वाला एकही पुलिन पर अर्थात् नदी के तटपर सदैव न सोनेवाला होकर मुक्त और जीवनमुक्त रूपहो

के भ्रमण करताहै ८७ यह सत्पुरुषों का सन्मार्ग मोक्षके चाहने वालोंका वेदोक्त धर्महै जो इस मार्गमें चलताहै उसका चिह्न भी वर्त्तमान नहीं८८ संन्यासी चारप्रकारकेहैं कुटीचक, बहूदक, हंस, परमहंस, अर्थात् कुटीचक वह हैंजो त्रिदंडीहोकर घरमेंहीरहै बहूदक,वहहै जो त्रिदंडी होकर तीर्थमें घूमताहै, हंसवहहै जो दंड धारण कर के आश्रम में सावधान होताहै, परमहंस वह है जो दंडी होकर तीनों गुणोंसे पृथक् होताहै इनमें जो चौथाहै यह सबसेश्रेष्ठ है८६ इससे कोई न श्रेष्ठहै और न इससे दूसरा कोई अन्तकापद है यह सुख दुखसे रहित सौम्य अजर अमर और न्यूनता बिनाहै ६०उमा बोलीं कि सुजनों से अभ्यास किया हुआ गृहस्थधर्म और जीव लोकका कल्याण करनेवाला मोक्षधर्म आपनेवर्णन किया६१ हे धर्मज्ञ अब मैं ऋषियों के उत्तम धर्मों को सुना चाहतीहूं क्योंकि तपो वनवासियोंमें मेरी सदैव प्रीतिहोती है घृतके धुवेंसे जो सुगन्धि होतीहै वह तपोवनको व्याप्त करतीहै हे महेश्वरजी उस को देखकर मेराचित्त प्रसन्नहोताहै ६३ हे धर्म अर्थके मूलसमेत जाननेवाले देवताओंके भी देवता महेश्वरजी मुनि धर्मके विषयमें जो मेरा संशयहै उसको आप कहिये ६४ हे महादेवजी जो२ मैंने आपसे पूछाहै उसको संपूर्णताकेसाथ वर्णन कीजिये ६५ श्रीभगवान् शिवजीबोले कि हे शुभदेवी अवश्य सबसे उत्तम उसमुनियों के धर्मको कहताहूं जिसके करनेसे संन्यासी लोग तपस्याकेद्वारा सिद्धीको पातेहैं ६६ हे धर्मज्ञ महाभाग पार्व्वती उनधर्मज्ञ सत्पुरुषोंमें श्रेष्ठ फेनपनाम ऋषियों का जो धर्महै वह मुझसे सुनो ६७ वह ब्रह्मवंशसे सम्बन्ध रखनेवाले फेनोत्करनाम ऋषि उत्तम अन्न को थोड़ा २ करके संचय करते हैं वही अमृतहै जिसको ब्रह्माजीने भोजनकिया वह यज्ञमें वृद्धिद्वारा और स्वर्ग में दिव्य भोगरूप से प्रकटहै ६८ हे तपोधन उन पवित्रात्मा फेनप ऋषियोंको धर्म्म चर्य्यासे उत्पन्नहुआ यह मार्गहै अववालखिल्य ऋषियोंके कियेहुये धर्मको सुनो ६६ तपसेपवित्र शाकुनीनाम वृत्तिमें नियतधर्मज्ञवाले

खिल्य मुनि सूर्य्य मंडलके मध्यमें उंछवृत्तीसे जीविका करतेहैं १०० वह तपोधन वालखिल्यऋषि मृगचर्म वा वृक्षके बल्कलके चीररखने वाले दुखसुखादि योगोंसे जुदे सन्मार्गमें वर्त्तमानहैं १०१ वह ऋषि नर अंगुष्ठके समानशरीर रखनेवाले होकर अपने २ मार्गमें नियत होकर तपकरना चाहतेहैं उनके धर्मका भी बड़ाफल है १०२ वह देवकार्य्यको सिद्धीकेलिये देवताओंसे समानता प्राप्त करतेहैं और तपसे पापोंको भस्मकरके सबदिशाओंको प्रकाशित करतेहैं १०३ और जोदूसरे पवित्रात्मा दयाधर्मसे युक्तचक्रचर नामसन्तहैं और पवित्रचन्द्रलोकमें विचरतेहुये१०४पितृलोकके सन्मुखनियतहैं वह वृद्धिके अनुसार चन्द्रमाकी किरणोंको पानकरतेहैं वहप्रतिदिनपात्र कोखाली करनेवाले अर्थात् द्वितीय पदार्थको नरखनेवाले पत्थरपर कूटकरखानेवाले दांतोंकोऊखलवनानेवालेहैं १०५ उनसबकाअग्नि होत्र पित्रोंका पूजन और पांचों यज्ञोंका करनाही धर्म कहा जाता है १०६ जो इन्द्रियोंसे सावधान सोमप और ऊष्मप नाम ऋषि अपनी स्त्रियों समेत देवताओं के सन्मुख नियत होकर किरणों को पान करते हैं १०७ हे उमा चक्रचर और देवलोक चारो ब्राह्मणों से यह ऋषि धर्म प्राप्त किया गयाहै अब इसके विशेष जो दूसरा धर्म है उसको भी मुझसे सुनो १०८ सब ऋषिधर्मों में जितेन्द्री पुरुषों को आत्माका जानना योग्यहै इसके पीछे काम क्रोध का जीतना उचितहै यह मेरामतहै १०९ अग्नि होत्र करना सनातन धर्म रात्रिमें नियत होनासोम यज्ञमें दीहुई पांचवींयज्ञदक्षिणा११० सदैव यज्ञ करना देवता पित्रोंकेपूजन में प्रीति रखना धर्म है उंछ वृत्तीके संचित अन्नसे सब प्रकार अतिथिका पूजन करना उचित है १११ उप भोगोंमें अप्रीति, गोरसोंका भोजन, जितेन्द्री होना गुप्तप्रीति स्थंडिलमें शयनयोग शाकपत्रादि का खाना ११२ फल मूल वायुजल और शैवलका भोजन यह ऋषियोंके नियमहैं उन्हीं नियमोंके द्वारा ऋषिलोग अजेय गतीकोभी विजय करते हैं ११३ जब गृहस्थाश्रमियों केघर में निर्धूम अग्निहोत्र मूसल रखदिया

हो सबमनुष्योंने भोजनकरलियाहो पात्रोंकी शुद्धीहोगईहो भिक्षुक भिक्षा लेगयेहों तब उनके घरोंमेंसे भिक्षाकरनी उचितहै ११४ जो अतिथिका बुलानेवाला शेषबचेहुये अन्नका भोजन करनेवाला धर्ममेंप्रवृत्त और शान्तहै वहमुनिधर्मसे संयुक्तहोताहै जोजड़मनुष्य के समान अहंकारी अप्रसन्न और आश्चर्य्ययुक्त न होवे शत्रुमित्रमें एकभाव होय वहधर्मज्ञों में श्रेष्ठहै ११६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशततोपरिएकचत्वारिंशोऽध्यायः १४१ ॥

एकसौबयालिसका अध्याय ॥

उमाबोलींकि सावधान व्रतवाले चतुर ऋषि उनपवित्र रमणीय देशोंमें निवास करतेहैं जोकि नदियोंके निकुंज झिरनेवाले पर्वत और फल मूल रखनेवाले पवित्रबन होतेहैं २ हे देवताओंके ईश्वर शंकरजी अपने शरीरोंसेही निर्वाह करनेवाले उनबाणप्रस्थों की भी पवित्र विधिको मैं सुनना चाहतीहूं ३ महेश्वरजीने कहा हे देवी वाणप्रस्थोंमें जोधर्महैं उनकोभी तुम सावधानीसेसुनो औरउनको सुनकर तुमभी धर्मबुद्धीमें प्रवृत्तहोजाओ ४ नियमोंसे अच्छे सिद्ध कियेहुये बनवासोंके प्राप्त करनेवाले सत्पुरुष वाणप्रस्थ लोगों को जैसाकर्म करना उचितहै उसकोसुनो ५ तीनों समयपर मन्त्रों से स्नान देवता पितरोंका पूजन अग्निहोत्रादिक करना इष्टी हवन विधि६ शामाक आदि मुनियोंके धान्योंकालेना फल मूलका भोजन और दीपक प्रकाश करनेको इंगुद और अरण्डके तेलको रखना ७ जोएरूप योगचर्य्यासे सिद्धकाम क्रोधसे रहित वीरशैय्या और वीरों के स्थानोंपर नियत ८ योगके धारण करनेवाले सत्पुरुष योगी ऊष्मऋतुमें पंचाग्नितपनेवाले मंडूकयोगमेंन्यायके अनुसार उपाय और कर्म करने वाले ६ वीरोंके आसन पर धर्मकी बिधिमें प्रवृत्त हैं उन लोगों को यह कर्म करना योग्यहै मैदान में चबूतरे पर सोना वर्षा ऋतुमें अपने ऊपर वर्षाका सहना हेमन्त ऋतुमें जल के मध्य निवास करना ग्रीष्म ऋतुमें पंचाग्नितपना १० वायु जल

और नदीके शिवारका भोजन करना पत्थर से कूटकर अथवादांतों से चबाकर खानेवाले प्रति दिन भोजन पात्रोंके नाश करनेवाले ११ वल्कल और मृगचर्म धारण करनेवाले वाणप्रस्थों को धर्म के समय वुद्धिके अनुसार शरीर यात्रा करना योग्यहै बनमें उत्पन्न वनचारी वनमें ही प्रवृत्त चित सदैव वनवासी वनसेही आजीविका करने वाले महात्माओंको गुरूके समान वनको पाकर निवास करना योग्य है १३ हवन करना,पंचाग्निका सेवन वेदोक्त पंच यज्ञ रूप भाग का अनुपालन १४ इष्टीयज्ञमें प्रवृत्तचातुर्मास्यका सेवन पौर्णमास्यआदि यज्ञ नित्य यज्ञकरना १५ स्त्रीके सहित रहना और स्त्री संग आदि अन्य२ सब प्रकार के संगोंसे रहित होना इत्यादि बातों से सब पापोंसे बिमुक्त मुनि लोग वनमें बिचरते हैं स्रुक्नाम पात्रको उत्तममाननेवाले और सदैव त्रेताग्निकी शरणमें रहनेवाले सन्मार्ग मेंनियत जो सन्तहैं वह परमगतिको पातेहैं १७ सत्य धर्म मेंआश्रित सिद्ध मुनि बड़े पवित्र सनातन चन्द्रलोक और ब्रह्मलोक कोजातेहैं १८ हे देवी यह मैंने वाणप्रस्थोंसे सम्बन्ध रखनेवाला शुभ धर्म बड़े बिस्तार पूर्व्वक वर्णन किया १६ उमा बोलीं हे सब जीवोंके स्वामी संपूर्ण जड़ चैतन्यों से स्तूयमान भगवन् ज्ञान गोष्ठियोंमें मुनियों के समूहोंका जो धर्महै उसको आप कहिये २० ज्ञान गोष्ठियों में वर्त्तमान वनबासी कभी अकेले विचरनेवाले और कभी स्त्रीके साथ होतेहैं उन्होंका धर्म कैसे २ कहा है २१ महेश्वरजी बोले हे देवी जो तपस्वी अकेले विचरने वालेहैं उनका यह चिह्नहै शिर मुंड होना और गेरुवे वस्त्रोंकाधारण करना और जो स्त्रीसे विहारकरनेवालेहैं उनके निवास में रात्रिही कारणहै२२ तीनों समय पर मंत्रों से स्नान वनके जलफलसे बड़ाहोम समाधी औरसन्मार्ग में नियतता गुरूके उपदेशका सेवन यह उन दोनोंके धर्म हैं २३ पूर्व्वमें जो मैंने बनबासियोंके तुझसे धर्मकहे जो लोग उन धर्मोंको सेवन करतेहैं वह तपके फलको पातेहैं २४ स्त्री पुरुष का धर्म रखनेवाले अपनी स्त्रीके साथ जितेन्द्री और ऋतुकाल मेंही

अपनी स्त्रीके पास जाने वाले पुरुष जो कर्म करतेहैं वह शास्त्र में देखा हुआ कर्म है २५ उन धर्मात्माओंका आर्ष धर्म सिद्ध होताहै उन धर्मके ज्ञाताओंको अपनी स्त्रीके सिवाय दूसरा अनुचित धर्म करना उचित नहीं है २६ जो मनुष्य सब जीवोंमें निर्भयता रूपी दक्षिणाको अच्छी रीतिसे देताहै और हिंसासे रहित है वही धर्म से संयुक्त होताहै २७ जो सब जीवों पर दया करने वाला सब जीवों के साथ सत्यवक्ता और जीव मात्रका आत्मा रूप है वही धर्म से संयुक्त होताहै २८ सब वेदोंमें सम्मा बर्त्तन नाम स्नान और सब जीवों में सत्यवक्ता पन यह दोनों समान हैं वा दोनोंमें सत्यताही अधिकहै २९ सत्यताको धर्म कहतेहैं और कुटिलता वा असत्यता को अधर्म कहतेहैं इस लोकमें सत्य बोलने वाला मनुष्य धर्म से संयुक्त होताहै ३० जोमनुष्य सदैव सत्यतामें नियत होताहै वह अविनाशी ईश्वरकेपास निवास करत है इसोहेतुसे जो अपनाधर्म चाहै उसको सत्यतामें नियत होना उचितहै ३१ इन्द्री और क्रोध का जीतने वाला क्षमावान धर्म रूप हिंसा रहित और सदैव धर्म में चित्त लगाने वाला मनुष्य धर्मसे युक्त होताहै ३२ आलस्य से रहित धर्मात्मा सत मार्गमें आश्रित उत्तम व्रतवाला ज्ञानी मनुष्य ब्रह्म भावके योग्य होताहै ३३ उमाबोलीं हे देवता जो तपोधन तपस्वी आश्रम में प्रीति करने वालेहैं वह किस धर्म चर्य्यासे तेज-स्वी होतेहैं ३४ हे भगवन् जो राजा वा राज कुमार बड़े धनी वा निर्धनहैं वह किस कर्म से बड़े फलको प्राप्त करतेहैं ३५ हे देवता दिव्य चन्दनों से अलंकृत वह लोग प्राचीन स्थान को पाकर किस कर्म से बड़े फल को पातेहैं अथवा कौनसे कर्म से बनबासी होते-हैं ३६ हे त्रिनेत्रधारी त्रिपुरारि तप चर्य्या सम्बन्धी जो यह मेरा उत्तम सन्देहहै उसको पूर्णता से वर्णन कीजिये ३७ महेश्वरजी बोले कि उपवास व्रतों से जितेन्द्री हिंसा से रहित सत्यतामें पूर्ण सिद्ध लोग शरीर को त्याग करके सब रोगों से छूटकर गन्धर्वोंके साथ आनन्द करतेहैं ३८ जो धर्मात्मा न्याय और बुद्धिके अनुसार

मंडूक योग शयन नाम दीक्षाको करताहै वह नागोंके साथआनन्द करताहै ३६ जो आनन्द से युक्त दीक्षावान पुरुष मृगोंकेसाथउन के जूठे फलोंको भक्षण करताहै वह अमरावतीमें जाताहै ४० जो मनुष्य सदैव शीतका सहने वाला व्रत धारी होकर नदीकेशिवार और सूखे पत्तोंको खाता है वह परमगति को प्राप्त करताहै ४१ वायु जलका भोजन करने वाला और फल मूल का खानेवाला मनुष्यपक्ष लोगोंमें अधिकारको पाकर अप्सराओंके समूहोंके साथ आनन्द करताहै ४२ ग्रीष्मऋतुमें शास्त्रोक्त कर्मसे पंचाग्नि तपने वाला मनुष्य बारहवर्ष व्रत करके संसार का राजाहोता है ४३जो मुनि बारहबर्षतक उपाय पूर्व्वक आहार नियम करके मरु साधन करताहै वह भी पृथ्वीका राजा होताहै भोजन त्याग करने से जो शरीर को त्यागताहै वह स्वर्ग में जाकर सुखकी वृद्धिको पाता है जोमनुष्य मैदान में शुद्ध आकाश को चारों ओर से धारण करके अर्थात् नंगा बैठकर ४४ । ४५ आनन्दसे बारह वर्षतक व्रतमेंनि-यत होताहै वह बड़े२ फलोंको पाताहै अर्थात् सवारी पर्य्यङ्कआदि-क ४६ और चन्द्रमा के समान उज्वल वृद्धों के योग्य स्थानको भी पाताहै जो मनुष्य अपने शरीर से निर्वाह करने वाला आचारवान नियम से भोजन करनेवाला होकर ४७ शरीर को शयनस्थान पर त्याग करताहै वह उत्तम स्वर्ग को भोगताहै जो मनुष्य बारह बर्षतक केवल अपने शरीर हीसे निर्वाह करनेवाला होकर व्रतका नियम करताहै ४८ वह महासमुद्र में शरीर को त्याग करके वरुण लोकमें निवास करता है जो मनुष्य केवल शरीर से निर्वाह करने वाला बारह बर्षतक व्रतमें नियत होताहै ४९ वह पत्थरसे दोनों चरणों को भेदकर गुह्यकों में निवास करता है जो मनुष्य आत्मा से आत्मा को साधन करके दुख सुख आदिक योगों से और स्त्री आदि से पृथक् होके बारह वर्षतक चित्तमें वर्त्तमान व्रतको नियम पूर्व्वक करताहै वह स्वर्ग लोक को पाताहै और देवताओं के साथ आनन्द करताहै ५० । ५१ जो मनुष्य केवल शरीरही से

निर्वाह करता हुआ बारह वर्षतक अग्निमें हवन करताहै वहशरीर के त्यागने पीछे अग्नि लोकमें प्रतिष्ठा पाताहै ५२ हेदेवी जोब्राह्मण न्याय के अनुसार दीक्षित नियमवान होके आत्मा को आत्मामें धारण कर ममता के बिना धर्मकी इच्छा करताहै ५३ वह इस चित्त रोचक दीक्षा को बारह वर्षतक करके और अरणी समेत अग्नि को वृक्षमें लय करके नंगे शरीरसे जाताहै ५४ और सदैव बीर मार्गमें नियत बीरोंके आसन पर प्रवृत्त बीरशैया पर नियत होताहै वह धर्मात्मा मनुष्य बीर गती को प्राप्त होकर ५५ सब मनोरथों से युक्त इन्द्रलोक में वर्त्तमान दिव्य चन्दन पुष्पादि से अलंकृत ५६ होकर स्वर्ग में देवताओंके साथ सुखसे बिहार करताहै जो मनुष्य सदैव बीर योग का सहनेवाला होताहै वह सदैव के लिये बीर लोकमें नियत होताहै ५७ जो मनुष्य सतोगुण में नियत दीक्षित नियमवान सबका पवित्र करने वाला पवित्रात्मा सबको त्याग कर बीर मार्ग को प्राप्त करताहै उसके लोक सनातन हैं ५८ सब रोगोंसे रहित शोभायमान होकर वह पुरुष इच्छा के अनुसार उस विमान की सवारी के द्वारा बिचरताहै जोकि इच्छानुकूल चलनेवालाहै औरइन्द्रलोकमें वर्त्तमानहोकर आनन्दकरताहै ५९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेउमामहेश्वरसंवादेश्चतोपरिद्वि- चत्वारिंशोऽध्यायः १४२ ॥

एकसौतेतालीसका अध्याय ॥

उमाबोलीं हेभगदेवताके नेत्रोंके फोड़नेवाले पूषाके दांतोंके गिरानेवाले दक्षके यज्ञको विध्वंसकरनेवालेभगवान शिवजी यह मुझको बड़ा सन्देहहै १कि पूर्व्व समयमें भगवान ब्रह्माजीने इनचारोंवर्णों को उत्पन्नकिया उनमेंसे वैश्य किसकर्मके फलसे शूद्रयोनिमें जन्म कोपाताहै २ क्षत्री कौनसे कर्मसे वैश्ययोनिमें और ब्राह्मण किस कर्मसे क्षत्री योनिमें उत्पन्न होताहै अथवा प्रतिलोम जातिवाला किसरीतिसे होताहै हेदेवताधर्म किसरीतिसे करनाचाहिये ३ हेप्रभु

वेदपाठी ब्राह्मण किसकर्मसे शूद्रयोनिमें उत्पन्न होताहै और क्षत्री किसहेतुसे शूद्र होताहै ४ हे जीवमात्रकेस्वामी निष्पाप देवता आप इसमेरे सन्देहकोभी निवृत्तकरो कि इसलोकमें तीनवर्ण अपने २ कर्मसे कैसे ब्राह्मणके जन्मकोपातेहैं ५ महेश्वरजी वोलेकि हेशुभ देवी ब्राह्मण भाव होना वड़ा कठिनहै ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्र यह चारोंजन्मसे होतेहैं यह मेरा मतहै ६ ब्राह्मण इसलोकमें बुरे कर्मके करनेसे अपने अधिकारसे पतित होताहै इसीसे इस उत्तम ब्राह्मण वर्णको पाकर अपनी वहुत रक्षाकरे ७ जो क्षत्री वा वैश्य ब्राह्मणके धर्ममें नियत होकर ब्राह्मणोंके गुणों से अपनी जीविका करताहै वह ब्राह्मण की योनिमें जन्म पाताहै ८ जो वेदपाठी ब्राह्मणोंके धर्मको छोड़कर क्षत्री धर्मको करताहै वह ब्राह्मण वर्ण से पतित होकर क्षत्रीकी योनिमें जन्म लेताहै ९ जो अल्प बुद्धी ब्राह्मण कठिनतासे प्राप्त होनेवाले ब्राह्मण वर्ण को पाकर वैश्य धर्मको करताहै वह ब्राह्मण वैश्य जन्मको और इसीप्रकार शूद्रके कर्म करनेसे शूद्रयोनिको पाताहै अपने धर्मसे पतित होनेसे पीछे ब्राह्मण शूद्रताको प्राप्त होताहै ११ यहां यहनिर्णयहै कि वर्णसे भ्रष्ट होनेवालाबाहर कियाजाताहै अर्थात् ब्रह्मलोकसे पतितहोकर शूद्रताको प्राप्तहोताहै १२ हेधर्म चारिणी जो महाभाग क्षत्रीअथ-वा वैश्य अपने २ कर्मोंको त्यागकरके शूद्रके कर्मको करतेहैं १३ वह अपने स्थानसे गिरकर वर्णसंकर होतेहैं ऐसे २प्रकारसेब्राह्मण क्षत्री और वैश्य शूद्रभावको पातेहैं १४ जो मनुष्य अपने धर्ममें सावधान पवित्र ज्ञान विज्ञानवाला धर्मज्ञ होकर सदैव धर्ममें प्रवृत्तहै वहधर्मके फलको पाताहै १५ हे देवीयह दूसराधर्म ब्रह्मा जीका कहाहुआहै जोकिब्रह्मज्ञान और नैष्ठिक ब्रह्मचर्य्यसे सम्बन्ध रखनेवालाहै वहधर्मके चाहनेही वालोंसेअभ्यास कियाजाताहै १६ हे देवी उग्रजातिका अन्न सूतकी श्राद्धका अन्न और जो वहुत से मनुष्यों के लियेतैयार हुआहै अथवा वहुतसेमनुष्य उसके मालिकहैं वहसव अन्न निन्दित हैं दुष्ट मनुष्यका और शूद्र का अन्नकभी न

खानाचाहिये १७ हेदेवी महात्मालोग शूद्रके अन्नकी सदैव निन्दा करतेहैं यहब्रह्माजीके मुखसे निकला है इसीसे इसमें मेरा भीसतहै १८ जिस ब्राह्मणके पेटमें शूद्रका अन्नशेषहै और वहमरता है चाहै वह अग्निस्थापन औरयज्ञका भी करवनेवाला है तौ भी वह शूद्र गतिको पाताहै १९ उस उदर में शूद्र अन्नहोने के कारण वह ब्राह्मण ब्रह्मलोकसे बहिर्मुख होकर निस्सन्देह शूद्रयोनिको पाताहै २० ब्राह्मण जिस जिसके अन्न को पेटमें धरेहुये मरता है वह चाहे वेदपाठी भी होय तौभी उसी उसीयोनिमें जन्म लेताहै २१ जो मनुष्य कठिनता से प्राप्त होने के योग्य शुभ और उत्तम ब्राह्मण वर्णको पाकर किसीका अपमान करताहै औरअभक्ष्य अन्नोंको खाता है वह ब्राह्मण वर्णसे पतित होताहै २२ मद्यप ब्रह्महत्या करने वाला नीच चोर व्रत का खंडन करने वाला अपवित्र वेदपाठ और जप से रहित पापी लोभी छली शठ २३ व्रतों का न करनेवाला शूद्राका पति रसोई करनेके पात्र में खानेवाला सोमवल्ली का बेचने वाला नीच संगी ऐसे अवगुणोंसे युक्त वेदपाठी भी ब्राह्मण ब्रह्म योनिसे नष्टता को पाताहै २४ गुरूकीस्त्रीसे भोग करने वाला गुरूका शत्रु और गुरूकी बुराइयोंमें प्रवृत्तहैवह द्विज चाहै ब्रह्म ज्ञानी भी होय तौभी ब्रह्मयोनि से भ्रष्टता कोपाता है २५ हे देवी इन शुभ कर्मों केद्वारा शूद्र ब्राह्मण वर्ण को पाताहै और वैश्य क्षत्री वर्ण को पाताहै २६ जो सदैव सन्मार्गमें नियत देवता और ब्राह्मणों का सत्कार करने वाला सबरीति से अतिथि पूजन का व्रत करनेवाला प्रसन्न चित्त शूद्र पूरे उपायों से अपनेसब कर्म और अपने से उत्तम वर्ण वालों की सेवा आदि न्याय औरविधिके अनुसार करे २७। २८ और ऋतु काल में स्त्रीके पास जाने वाला नियमी नियम से ही भोजन करनेवाला पवित्र और पवित्र हो मनुष्यों का खोजने वाला और बाल बच्चों से बचे हुये अन्न का खाने वाला होके २९ निरर्थक मांस को न खाय ऐसे प्रकार का शूद्र वैश्य वर्णको पाता है जो सत्यवक्ता सुख दुःखादि योगों

से रहित जितेन्द्री सावधान ३० जपको उत्तम मानने वाला सब वर्णोंमें ऐश्वर्य्य मान होनेका इच्छावान नित्य यज्ञों से पूजनकरने वालाहै ३१ अथवा गृहस्थ व्रतमें नियत केवल दोही समयपर भोजन करने वाला आहारका जीतने वाला इच्छा और अहंकार से रहित ३२ अग्निहोत्र की उपासना करने वाला बुद्धि के अनुसार हवन करनेवाला सबके पूजन में तत्पर देवता पितरोंसे शेष बचे हुये अन्नका खाने वाला ३३ और मन्त्रों के अनुसार त्रेता अग्नि का स्थापन करने वालाहै वह बैश्य ब्राह्मण होताहै अर्थात् वह बैश्य प्रथम क्षत्रियों के पवित्र और श्रेष्ठ कुलमें जन्म लेता है ३४ फिर क्षत्री का जन्म लेने वाला बैश्य जन्मसे संस्कारीयज्ञोपवीत धारी व्रतका करने वाला होकर प्रतिष्ठा वान ब्राह्मण होता है ३५ फिर वेद पढ़कर स्वर्ग की चाहना करता सदैव त्रेताअग्नि की शाला रखनेवाला होकर दान करताहै और अच्छी दक्षिणा वाला वृद्धि युक्त यज्ञ करताहै ३६ जो सदैव धर्मसे प्रजापालन करता हुआ दुखियाओं को हाथमें दान देने वाला सत्य वक्ता सुन्दर दर्शन वाला क्षत्री सदैव सच्चे कर्मोंको करताहै ३७धर्म पूर्व्वक दण्ड देने वाला धर्म कार्य्य में उपस्थित राज्य के छठे भागका लेने वाला ३८ राज्यके कार्य्यों में प्रवीण क्षत्री अपनी इच्छा से ग्राम्य धर्म अर्थात् परस्त्री गमनादि कर्म न करे और सदैव ऋतु कालमें ही स्त्रीके पास सोवे ३९ सदैव व्रत करने वाला नियमी वेदपाठमें प्रवृत्त पवित्र अग्नियों का सदैव सेवन करने वाला अग्निशालाही में शयन करने वाला ४० ब्रह्मचारी बाणप्रस्थ संन्यासी के आतिथ्य का सदैव करनेवाला सदैव प्रसन्न चित्त और भोजन चाहने वाले दासोंको भोजन से तृप्त करनेवाला ४१ और अपने प्रयोजनकी इच्छा से कुछ नहीं देखे और देवता पितृ और अतिथियों के निमित्त साधन करताहै ४२ तीनों समय पर बुद्धिके अनुसार अग्नि होत्र करने वालाहो अपने घरमें न्यायके अनुसार भिक्षा वृत्तीको उपासना करताहै ४३ वह क्षत्री

गौ ब्राह्मणकी वृद्धिके लिये युद्धमें सन्मुख होकर मरनेवाला अथवा मन्त्रों से पवित्र त्रेता अग्निमें प्रवेश करके ब्राह्मण होताहै ४४ जो धर्मात्मा क्षत्री ज्ञान विज्ञानसे युक्त अपनेही कर्मके द्वारा ऐसा वेद पाठी ब्राह्मण होताहै जो ज्ञान बिज्ञानसे युक्त संस्कारी और वेदमें पूर्ण होय ४५ हे देवी नीची जातिमें उत्पन्न होनेवाला शूद्र भी इन कर्मोंके फलों से संस्कारी और शास्त्रज्ञ ब्राह्मण होताहै ४६ जो दुराचारी सब वर्ण संकरों के अन्नका भोजन करने वालाहै उस प्रकार का ब्राह्मण भी पवित्र ब्राह्मण वर्णको छोड़कर शूद्र होताहै ४७ हे देवी शुभ कर्मोंकेद्वारा पवित्रात्मा जितेन्द्री शूद्र भी ब्राह्मणके समान सेवनके योग्य है यह आप ब्रह्माजी ने कहा है ४८ जिस शूद्रमें आत्मज्ञान और शुभकर्म नियत है ब्राह्मणसे उत्तम जानना योग्य है यह मेरामतहै ४९ माता पिता संस्कार शास्त्र सन्तान यह सब ब्राह्मण होनेके हेतु नहीं हैं ब्रत अर्थात् बाह्याभ्यन्तरकी शुद्धीआदि गुणही ब्राह्मण होनेके कारण हैं लोकमें उत्तम गुणोंसे भी ब्राह्मण कहा जाताहै व्रत में नियत होने से शूद्र भी ब्राह्मण भावको पाता है ५१ हे सुन्दरी ब्राह्म्य स्वभाव सब जीवोंमें समानहै यह मेरामत है जिसमें निर्गुण और निर्मल ब्रह्म नियतहै वही ब्राह्मणहै ५२ हे देवी सृष्टिके कर्त्ता वरदाता ब्रह्माजी ने आप अपने मुख से इनधर्मों को वर्णन कियाहै जोकि उत्पत्तिस्थान रूप फल रखनेवाले और स्थानोंके भेदोंके दिखलाने वालेहैं ५३ ब्राह्मणही बड़ा क्षेत्र रूप होकर संसारमें चेष्टावानोंके समान घूमताहै जो मनुष्य उसमें बीज को बोताहै वह खेती परलोक में फलोंकी देने वालीहै ५४ सन्मार्ग में आश्रित देवता पितृ आदिसे शेष बचे हुये अन्नके खाने वाले मनुष्य को वह फल प्राप्त करने के योग्य है ऐश्वर्य्यके चाहने वाले को ब्रह्ममार्ग में नियत होकर उस कर्म का करना योग्यहै ५५ संहिताके पाठ करने वाले सदैव व्रत करनेवाले घरमें रहने वाले गृहस्थी से वह फल प्राप्त करने के योग्यहै ५६ जो ब्राह्मण सदैव सन्मार्गमें नियत अग्नि स्थापन वेद पाठ और जपका करनेवाला

है वह ब्रह्मभावके योग्यहोताहै ५७ हे पवित्र मुसकान वाली देवी ब्राह्मण वर्णको अच्छी रीतिसे पाकर नियम में स्थिर चित्त वाले मनुष्य को नीचे लिखे हुये बुरे अवगुणों से उसकी रक्षा का करना योग्यहै अर्थात् अन्य जातिकी स्त्रीके साथ विवाह करने से अयोग्य दान लेनेसे कुवस्तु के लेनेसे और सब कर्मोंसे रक्षा करनी योग्य है ५८ पर यह गुप्त भेद तुझसे कहा जिसके कारण शूद्र ब्राह्मण होताहै और धर्म से च्युत होकर ब्राह्मण शूद्र होताहै ५९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मे उमामहेश्वरसंवादेशततमोपरिचत्वारिंशो ऽध्याय: १४३ ॥

एकसौचवालिसका अध्याय ॥

उमा बोलीं कि हे सबजीव धारियों के ईश्वर देवता असुरों से स्तूय मान षड़ैश्वर्य्य के स्वामी प्रभु देवता आप मनुष्योंके धर्मको तो वर्णन करिये इसमें भी मुझको सन्देहहै १ मनुष्य सदैव मन वचन और कर्मके कारण तीन प्रकारकी फांसीमें फंसताहै अथवा उनसे छूटताहै २ इस संसार में मनुष्य कैसे स्वभाव चाल चलन आचार और गुणोंसे स्वर्गको जातेहैं ३ महेश्वर जी बोले हे धर्म अर्थके मूलोंको जाननेवाली सदैव धर्ममें नियत जितेन्द्रीपने में प्रवृत्त तुम उसप्रश्नको सुनो जोकि सबजीवोंका अभीष्ट करनेवाला और बुद्धिकी वृद्धि करने वालाहै ४ जोपुरुष सत्यधर्ममें प्रवृत्तसन्त रूपसब आश्रमोंके चिह्नसे पृथक् धर्मसे प्राप्तहोने वाले अन्न के भोजन करने वालेहैं वह स्वर्ग गामीहैं वह निस्सन्देह धर्म और अधर्ममें नहीं फंसतेहैं ५ उत्पत्ति और प्रलय के मूलको जाननेवाले सर्वज्ञ और सर्वद्रष्टा संसारकी प्रीतिसे रहित मनुष्य बन्धन कर्मसे छूटतेहैं ६ जो पुरुष मनवाणी और कर्मसे कोई प्रकार कीभीहिंसा नहीं करतेहैं और जो किसीमें प्रवृत्त चित्तनहीं होतेहैं वहकर्मबंधन को नहीं पातेहैं इन्द्रियोंके विषयोंसेरहित शीलवान और दयावान प्रिय अप्रियको समान जानने वाले जितेन्द्री पुरुषकर्म बंधनसेमुक्त

होतेहैं ८ जो मनुष्य सबजीवों में दयावान विश्वसित हिंसा के त्यागने वाले और श्रेष्ठ आचरण वालेहैं वह स्वर्ग गामीहैं ६ जो मनुष्य सदैव दूसरेके धनमें ममता न करने वाले अन्यकी स्त्री से पृथक् रहने वाले धर्मसे प्राप्तहुये अन्न के भोजन करने वाले हैं वह स्वर्गगामीहैं १० जो मनुष्य दूसरे की स्त्रीको अपनी माता बहिन और पुत्रीकेसमान मानतेहैं वह स्वर्गगामीहैं ११ जोमनुष्य सदैव चोरीसे रहित अपने धनमें सन्तोषी और अपने प्रारब्धसेही जीविका करके निर्वाह करतेहैं वह स्वर्ग गामीहैं १२ जो मनुष्य अपनीही स्त्री से प्रीति करनेवाले ऋतु कालही में स्त्रीके पास जाने वाले और पवित्र सुखके भोगने वालेहैं वह स्वर्ग गामीहैं १३ जो मनुष्य दूसरेकी स्त्रियोंको कुदृष्टिसे न देखनेवाले इन्द्रियों से साव-धान और शीलवानहैं वहस्वर्गगामीहैं १४ यहईश्वरका रचाहुआ मार्ग पाप मलका नाशकरने वाला सदैव ज्ञानियोंसे सेवनकेयोग्य है क्योंकि यहयोग के निमित्त उत्पन्न किया गयाहै इसी से बुद्धि मान लोगोंसे सदैव सेवन करना उचितहै १५ जो मार्ग कि दान धर्म और तपसे युक्तशील पवित्रता और दयारूपहै वहसदैव जीवि का के लिये अथवा धर्मके निमित्त मनुष्यों को सेवन करना चाहि ये १६ और जो स्वर्गमें वासी होनेके अभिलाषीहैं उन कोभी उस मार्गपरही चलना चाहिये इसके बिशेष जो मार्गहै वह त्यागने के योग्यहै १७ उमाबोली हे जीवधारियों के स्वामी पापोंसेरहित शिवजी जिस वचनसे मनुष्य अधर्मके बंधनमें पड़ताहै अथवाजिस से छूटताहै उस कर्मकोभी मुझसे कहो १८ महेश्वर जी बोले कि जो मनुष्य अपने वा दूसरों के लिये हास्यास्पदमें भी मिथ्यावचन नहीं कहतेहैं वह स्वर्गगामीहैं १६ जो मनुष्य जीविका के निमित्त वा धर्मके लिये और चित्तकी इच्छासे मिथ्या वचननहींकहतेहैं वह स्वर्गगामीहैं २० जो मनुष्य सब लोगोंसे यह कहतेहैं कि आनन्द सेआये वा अच्छेआयेइस वचनको पीड़ा और पापसे रहित मधु-रता और शीतलता से कहतेहैं वह स्वर्ग गामीहैं २१ जो मनुष्य

कड़ुये कठोर और रूखे २ वचनोंको नहीं कहते हैं और रागादि से रहित सन्तरूपहैं वह स्वर्गगामीहैं २२ जो मनुष्य दयासे रहित और मित्रों में शत्रुता करनेवाले वचनोंको कभी किसीसे नहीं कहते हैं किन्तु अत्यन्त ठीक २ मित्रता के करनेवाले बचनोंको कहतेहैं वह स्वर्ग गामीहैं २३ जोमनुष्य दूसरेसे शत्रुताकरनेवाले कठोर बचनों को त्याग करतेहैं और सबको समान जाननेवालेहोकर जितेन्द्रीहैं वहस्वर्ग गामीहैं २४जो मनुष्य धूर्त्तोंके समान वार्त्ता करनेसे घृणा करतेहुये शत्रुओंकेसंगको त्यागनेवालेहैं और सबकीप्यारी वातोंके कहनेवालेहैं वह स्वर्गगामीहैं २५जोमनुष्यक्रोधसेभी हृदयकेफाड़ने वाले बचन को नहीं कहतेहैं क्रोधयुक्त होकरभी प्रिय बचनोंकोही कहतेहैं वहस्वर्गगामी हैं २६ हे देवीयह बचनोंसे उत्पन्न सत्यताका गुणरखनेवालाशुभधर्म सदैवज्ञानी मनुष्योंसेअभ्यासकरनेकेयोग्य है और मिथ्या बोलना सदैव त्यागकरना योग्यहै २७ उमाबोलींहे देवताओंके देवता महाभाग शिवजी मनुष्य सदैव जिसचित्तकेकर्म से पापकाभागी होताहै उसकोभी आपमुझसे कहनेकोयोग्यहो२८ महेश्वरजी बोले हे कल्याणिनि इसलोकमें मानसी धर्मसेसंयुक्त मनुष्य स्वर्गको जातेहैं इसको मैं तुमसे कहताहूं २९ हेपार्वती जो मनको कष्टसे भी शुभकर्ममें युक्तकरे तो उसके कारणसे शरीर भी उसी प्रकारका होताहै इसलोकमें जिसकर्मसे मन पापोंके बंधनमें होताहै उससे सम्बन्ध रखनेवाले मेरेबचनको सुनो ३० जबनिर्जन बनमें रक्खाहुआ दूसरेकाधन दिखाई देताहै तब जोमनुष्यउसको मनहीसे लेनानहीं चाहतेहैं वही स्वर्गगामी हैं ३१ जो धन ग्राम अथवा घरके मध्यमें दूसरेके खाली मकानमें नियतहै उसको जो मनुष्य कभीलेनानहीं चाहतेहैं वहस्वर्ग गामीहैं ३२ इसी प्रकार जो मनुष्य एकान्तमेंभी संगकी इच्छा करनेवाली दूसरे की स्त्रियों से चित्तसेभी संगकी इच्छानहीं करतेहैं वहस्वर्ग गामीहैं ३३ जो मित्रता करनेवाले मनुष्य मिलाप करके शत्रुमित्रको एकसा चाहते हैं वह स्वर्गगामीहैं ३४ जो मनुष्य शास्त्रज्ञ दयावान पवित्र और

सत्यप्रतिज्ञावाले होकर अपनेही धनआदिमें सन्तोषीहैं वहस्वर्ग गामीहैं ३५ जो मनुष्य शत्रुताके त्यागनेवाले परिश्रम करनेवाले सबकी मित्रतामें लगेहुये सबजीवोंपर दया करनेवाले हैं वह स्वर्गगामी हैं ३६ श्रद्धामान दयामान पवित्र मनुष्योंके प्यारे और सदैव धर्म अधर्मके ज्ञाताहैं वह स्वर्गगामी हैं ३७ हे देवी जो मनुष्यकर्मोंके शुभाशुभ फलोंके ज्ञाताहैं वह स्वर्गकेगामीहैं ३८ जो मनुष्य न्याय और गुणोंसे युक्त सदैव देवता ब्राह्मणोंके भक्त और दृढ़ताके उपाय करनेवालेहैं वह स्वर्गगामी हैं ३९ हे देवी शुभकर्मोंके फलोंसे स्वर्गमार्गको उत्तम जाननेवाले यह पुरुष मैंने वर्णनकिये अवतुमक्यासुनना चाहतीहो ४० उमाबोली हे महेश्वर जी मनुष्योंके विषयमें एकमेरा बड़ासंशयहै इसहेतुसे अब तुमपूर्णता समेत कहनेके योग्यहो ४१ हेप्रभु देवेश्वर मनुष्य किस कर्म और तपसेवड़ी आयुर्दाको पाताहै ४२ और इसपृथ्वीपर किसकर्म से मनुष्यको आयुर्दा क्षीणहोतीहै हे आनन्दित शिवजी आप कर्म फलोंके कहनेके योग्यहो ४३ कोईतो बड़े प्रारब्धी हैं और कोई प्रारब्धसे हीनहैं कोईनिकृष्ट कुलवालेहैं कोईउत्तम कुलवालेहैं ४४ कोई मनुष्यकाष्ठरूप कुरूपहोतेहैं दूसरे सुन्दररूपवाले होतेहैं ४५ कोई दुर्बुद्धी कोईपंडितमालूम होतेहैं इसीप्रकार बहुतसे बड़े बुद्धि मान और ज्ञान विज्ञानसे पवित्रात्मा होतेहैं ४६ कोई मनुष्य थोड़े दुखवाले और कोईबड़े २ दुःखोंमें बंधेहुये दिखाई देतेहैं इसका हेतु आप कहनेके योग्य हैं ४७ महेश्वरजी बोले हेदेवी इसमर्त्य लोकमें जिसके द्वारा मनुष्य अपने फलको पाताहै उसकर्म फलके उदयको मैं तुमसे कहताहूं तुम चित्तलगाकर सुनो ४८ विषयकी चाहनेवाली इन्द्रियोंके होनेपर जोमनुष्य भयानक रूप हाथ में दंडलिये सदैव उद्यत होताहै और उसी उद्यत शस्त्रके द्वारा प्रतिदिन सब जीव धारियोंको मारताहै ४९ और निर्दयरूप सदैव सब जीवोंके भयका उत्पन्न करनेवाला चेंटी आदि कीट पतंगों का भी रक्षा स्थान नहींहै वह मनुष्य बड़ा निर्दयी है ५० हेदेवी ऐसा

मनुष्य नर्कमें पड़ताहै इसके सिवाय जोधर्मात्माहै वहप्रतापी प्रकाशवान उत्पन्न होताहै ५१ हेदेवी पापकर्ममें बंधाहुआ हिंसामें प्रवृत्तसब जीवोंका अप्रिय मनुष्य थोड़ीअवस्था वाला उत्पन्नहोताहै ५२ हिंसा करनेवाला नर्कको जाताहै और हिंसा न करनेवाला स्वर्गको जाताहै वह हिंसा करनेवाला मनुष्य नर्कमें दुखसे संयुक्तभयकारी दंडकोप्राप्तकरताहै ५३ और जबकिसी समयपर उसनर्कसे छूटताहै और मनुष्य शरीरको पाताहै वह इस जन्ममें थोड़ी आयुर्दाकोपाताहै ५४ हेदेवी जोकोई मनुष्य पापकर्ममें बंधा हिंसामें प्रवृत्त सबजीवों का अप्रिय होताहै वह थोड़ी अवस्था वाला उत्पन्न होताहै ५५ जो पवित्र और उत्तम जातिवाला मनुष्य जीवोंके मारनेवाले शस्त्र दंड आदिका त्यागकरनेवाला होकर कभीहिंसानहीं करताहै ५६ न मारताहै न दूसरेसे बध कराताहै और मारनेवालेको अच्छानहीं मानताहै और सब जीवोंपर प्रीति करताहै अर्थात् जैसेकि अपनीआत्मा में उसी प्रकार दूसरेकी आत्मामें मानताहै ५७ हेदेवी ऐसापुरुषउत्तम देव भावको पाताहै और आनन्द युक्त होकर अपने योग्य प्राप्त होनेवाले सुखोंको भोगताहै ५८ जोकभी वह इसनरलोकमें आता है तबवह जन्म लेनेवाला मनुष्य बड़ी आयुर्दा वालाहोकर सुखसे वृद्धिपाताहै ५९ जीवमात्रको हिंसाके त्यागनेसे शुभकर्मी और नेक चलन वालोंका यहमार्ग ब्रह्माजीसे वर्णन किया गयाहै ६० ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेउमामहेश्वरसंवादेशतोपरिचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः १४४ ॥

एकसौपैंतालिसका अध्याय॥

उमा बोलीं कि शील और आचारवाले मनुष्य कौन२ से कर्म और दानोंसे स्वर्गको प्राप्त होतेहैं १ महेश्वर जी बोलेकि दानी, ब्राह्मणों का सत्कार करनेवाला दुखी पीडामान और कंगालों को भोजन और पानकी वस्तुदेकर वस्त्रोंका देनेवाला २ स्थान सर-य कूप वापी तड़ाग और सदैव याचकोंको देनेके योग्य अभीष्ट व

स्तु ३ आसन, सैया, सवारी, घर, रत्न, धन और सब अनाजोंके पैदा करनेवाले खेत याचकको इच्छाके अनुसार देनेवालाहोकरजो मनुष्य सदैव प्रसन्न होताहै हेदेवी ऐसा मनुष्य देवलोकमें ऐश्वर्य्य मानहोताहै ५ वहां बहुत कालतक उत्तम भोगोंको भोगकर अप्स-राओं समेत प्रसन्नता पूर्व्वक नन्दन बनमें निवास करताहै ६ उस स्वर्ग लोक से गिरने वाला मर्त्यलोकमें मनुष्य योनिमें उत्पन्न होताहै और बड़े वंशमें धन धान्य युक्त बड़े भोगोंसे युक्त होताहै ७ वहां वह मनुष्य सब अभीष्ट गुणोंसे युक्त प्रसन्नमनबड़ेसामानऔर भोगोंके ऐश्वर्य्यका प्राप्त करनेवाला होताहै ८ हे देवी पूर्व्व समय में ब्रह्माजी ने इतने प्रकार के महाभाग दान के अभ्यासी दर्शनीय सबके सुखदायी मनुष्यों का बर्णन किया है इनके सिवाय अल्प बुद्धी दान करने में कृपिण धनके वर्त्तमान होने पर भी जो ब्राह्मणों को दानादि नहींदेतेहैं १० वह मनुष्य लोलुप जिह्वासे युक्त होकर दुखी अंधे निर्धन संन्यासी और अतिथियों को भी देखकर उनसे मुख फेरकर उनको कुछ नहीं देतेहैं ११ वह लोग किसी समय पर भी वस्त्र धन भोग सुवर्ण गौ और भोजनोंकी वस्तुओंको भी दान नहीं करतेहैं जो अपने कर्म में अप्रवृत्त ईश्वर से बहिर्मुख दान को नहीं करतेहैं हे देवी ऐसे निर्बुद्धी लोग नरक को जातेहैं १३ जब वह समयकी लौट पौटसे मनुष्य शरीर को पातेहैं तब वह अत्यन्त निर्बुद्धी और धनहीन वंशमें जन्मको पाकर १४ क्षुधातृषा से महा दुखी सब लोकोंसे वहिष्कृत सब भोगों से निराशहो अधर्म रूप आजीविका से जीवन करतेहैं अथवा थोड़े ऐश्वर्य्य वाले वंशमें उ-त्पन्न और थोड़ेही भोगमें प्रवृत्त होतेहैं १६ और जो मनुष्य सदैव नियत कर्म से रहित होकर धनसे अभिमानी होतेहैं अथवा अपनी निर्बुद्धिता से आसन के योग्य पुरुषों को आसन नहीं देतेहैं १७ वा मार्ग देनेके योग्य मनुष्य को मार्ग नहीं देतेहैं और जो अभागे पाद्यके योग्य पुरुषों को पाद्य नहीं देतेहैं और अर्घके योग्य पुरुषों को विधिके अनुसार सत्कार करके पूजन नहीं करते हैं और अर्घ

पाद्यादि भी नहीं करतेहैं और सन्मुख आनेवाले गुरूको प्रेम से गुरूके समान पूजन नहीं करतेहैं और अभिमान से प्राप्तहोनेवाले लोभमें नियत होकर अच्छी रीति से पूजन के योग्य मनुष्यों का अपमान करतेहैं वा वृद्धोंका हास्य और तिरस्कार करतेहैं हे देवी इस प्रकार के सब मनुष्य नर्क गामी हैं २१ जब वह मनुष्य बहुत वर्षोंमें उस नर्क से निकलते हैं तब कुत्सित वंशमें जन्मको पातेहैं और गुरू वा वृद्धोंकी प्रतिष्ठा को कम करनेवाले मनुष्य उन कुलों में जन्म लेतेहैं जोकि कुत्सित चित्तवाले स्वपाक और पुल्कसादिकों के होतेहैं २३ जो मनुष्य अपने नित्य कर्मके करनेवाले निरहंकारी देवता ब्राह्मणों के पूजन करनेवाले लोकमें पूज्य सब को नमस्कार करने वाले नम्रता और मधुरभाषी २४ सब वर्णोंके प्रियकारी सदैव सब जीवोंके हितकारी शत्रुता से रहित प्रसन्न मुख स्वच्छ शरीर सदैव सब के प्यारे मधुर बचनों को कहने वाले २५ सब की आव भक्ति करने वाले सब जीवोंकी हिंसासे रहित और नम्रता पूर्वक पूजन करते नियत होतेहैं २६ और मार्ग देने के योग्यों को मार्ग देते गुरू को गुरू के समान पूजन करना और अतिथि के आदर सत्कार में प्रवृत्त अभ्यागत के पूजन करने वाले हैं २७ हे देवी ऐसे मनुष्य स्वर्गको प्राप्त करतेहैं फिर स्वर्गके भोगोंको भोग कर मनुष्य शरीर में जन्मको पातेहैं २८ उस मनुष्य शरीरमें सब रत्नोंसे युक्त अनेक भोगों समेत योग्यताके अनुसार उत्तम पुरुषों को दान देनेवाले और धर्मचर्या में पूर्ण होते हैं २९ वह लोग सब जीवोंके अंगीकृत सब लोकसे पूजित होकर सदैव अपने कर्म के फलोंकोपातेहैं ३० अर्थात् बड़े कुलजातिमें उत्पन्न होकर सदैव बड़े संस्कारी होतेहैं यह मैंने ब्रह्माजीका कहाहुआ धर्म तेरे आगे वर्णन किया ३१ जो भयकारी कर्म करनेवाला सब जीवों को भय उत्पन्नकरनेवाला मनुष्यहाथ पैर रस्सीदंड३२मट्टीका ढेलास्तंभ और अनेकशस्त्रों से जीव धारियों कोपीड़ादेताहै हे शोभामान वह छल युक्त बुद्धिवाला मनुष्य हिंसाकेलिये जीवोंको भयभीत करताहै ३३

सदेव भयकारी वह मनुष्य जीवोंको मिलकर भयदेताहै ऐसीप्रकृति और कर्म करने वाला मनुष्य नर्क को पाताहै ३४ जब वह जीव समय के विपर्य्यय से मनुष्य शरीरको पाकर निकृष्ट कुलमें उत्पन्न होताहै ३५ हेदेवी तब वह अपनेही कर्मके फलसे अपने सजाती यलोग और भाइयों में संसार का शत्रु रूप निकृष्ट जानना योग्य है ३६ जो मनुष्य प्रीतिकी दृष्टि रखने वाला सदेव पितासे शत्रुता न करने वाला जितेन्द्री होकर सब जीवोंको देखता है ३७ और जीव मात्रको भयभीत नहीं करताहै और अपने हाथ पैरोंसे अच्छा नियमवान होकर किसी को नहीं मारताहै वह सब जीवधारियोंमें विश्वासरूप जानना योग्यहै ३८ शुद्धकर्मी दया वान दंडादिशस्त्र और पाषाण ईंट ढेले आदिसेभी जो किसी जीव को नहीं भयभीत करताहै ऐसा स्वभाव और आचार रखने वाला मनुष्य स्वर्ग में जाताहै ३९ और वहां जाकर दिव्य भवनोंमें देवताओं की समान आनन्द पूर्व्वक निवासकरताहै ४० और जबवह पुण्य फलकेसमाप्तहोने पर मनुष्योंमें जन्म लेताहै तब वह रोग पीड़ासे रहितसुख से वृद्धिको पाताहै ४१ और सदेव सुखी दुखों से रहित होकरनिर्भय होताहै हेदेवी बस सत्पुरुषों का मार्गहै इसमें किसी प्रकार की पीड़ा नहींहै ४२ उमा बोलींकि जो मनुष्य पूर्व पक्ष और सिद्धान्तमें कुशल ज्ञानी विज्ञानी बुद्धिमान और संसार के कार्य्यों में बड़े सावधान दिखाई देतेहैं ४३ और कोई दुर्बुद्धी ज्ञान विज्ञान शून्य हैं सो हे विरूपाक्ष शिवजी मनुष्य किस मुख्य कर्मके करनेसे बुद्धिमान होताहै और किस कर्मसे निर्बुद्धी होताहै हे सर्व धर्मज्ञों में श्रेष्ठ आप इस मेरे संशय को निवृत्त करिये ४५ हे देवता कोईमनुष्य जन्मांध कोई रोगोंसे दुखी और कोई नपुंसक दिखाई देतेहैं इन सबके कारणोंको वर्णन कीजिये ४६ महेश्वरजी बोले किजोसावधान मनुष्य प्रतिदिन वेदज्ञ ब्राह्मण और धर्मज्ञ सिद्धों से कुशल क्षेम पूछते हैं ४७ और बुरे कर्मों के त्याग और शुभ कर्मोंके आचरण को करतेहैं वह लोग सदेव इस लोकमें सुख कोपातेहैं और

अन्तमें स्वर्ग को जाते हैं ४८ जो ऐसे मनुष्य फिर मनुष्य शरीरको
पातेहैं वह शास्त्रोंके स्मरण रखने वाले और बड़े बुद्धिमान होते हैं
जिसका शास्त्र बुद्धिके अनुसार होताहै उसका कल्याण होताहै ४९
जो मनुष्य दूसरे की स्त्री को कुदृष्टि करते हैं उस नष्ट प्रकृतिसे वह
जन्मसे ही अन्धे होतेहैं ५० जो मनुष्य दोषी चित्त नंगी स्त्रीको
देखते हैं वह दुष्कर्मी मनुष्य इस लोकमें रोगोंसे दुखी होतेहैं ५१
जो अज्ञानी दुराचारी मनुष्य नीचजाति की स्त्रियों के भोग करनेमें
प्रवृत्तहैं वह लोग सब मनुष्यों में दुर्बुद्धी होकर नपुंसक होतेहैं ५२
जो मनुष्य पशुओं को क़ैद करतेहैं वा मारते हैं और जोगुरूकीस्त्री
से भोग करने वालेहैं और वर्णसंकर स्त्रीसे संग करनेवाले हैंवह
मनुष्य नपुंसक उत्पन्न होतेहैं ५३ उमा बोलीं कि हेदेवताओं में बड़े
साधू कौनसा कर्म दोष युक्तहै और कौन सा निर्द्दोष कर्महै जिसको
करके मनुष्य कल्याण को पाताहै ५४ महेश्वरजी बोले जो धर्मका
निश्चय करनेवाला और गुणोंका चाहनेवाला मनुष्यकल्याण मार्ग
को चाहता हुआ ब्राह्मण से पूछता है वह स्वर्ग कोभोगताहै ५५
हेदेवी जब वह कालपाकर मनुष्य शरीर को पाताहै तब वह बुद्धि
मान और धारणा युक्त उत्पन्न होताहै ५६ हेउमादेवी यह सत्पुरुषों
का धर्म ऐश्वर्य उत्पन्न करनेवाला मानना योग्य है मैंने संसार के
मनुष्यों के उपकारार्थ प्रसन्नता पूर्व्वकतुमसे कहा ५७ उमा बोलीं
जो निर्बुद्धी धर्मके विरोधी मनुष्यवेदज्ञ ब्राह्मणों के पास जाना नहीं
चाहते हैं ५८ और जो मनुष्य व्रतदान श्रद्धा और धर्ममें नियत हैं
इसीप्रकार जो अन्यमनुष्य व्रत नियमादिसे रहितराक्षसोंके समान
हैं ५९ कोई यज्ञोंके करनेवालेहैं, कोई हवनादि कर्मोंके त्याग करने
वाले हैं वह इसलोकमें ऐसे २ धर्म अधर्मवाले कैसे २ होतेहैं यह
आप मुझसे कहिये ६० महेश्वरजी बोले कि पूर्वसमय में सबशास्त्र
जोकि लोकके धर्मोंकी मर्य्यादहैं प्रकट कियेगये दृढ़व्रतवाले मनुष्य
उनशास्त्रोंके प्रमाण से कर्मकर्त्ता दिखाई देतेहैं ६१ और मोहके वशी
भूत व्रत न करने वाले मर्यादाके नाशक जिनलोगोंने अधर्मको

धर्म कहाहै वही ब्रह्म राक्षस कहेजाते हैं ६२ और जब वह जीव समयकी लौट पौटसे इस संसारमें मनुष्य होतेहैं तब वह नीचलोग होम और वषटकारसे रहित होतेहैं ६३ हेदेवी मैंने तेरे सन्देहके दूरकरनेके लिये मनुष्योंका यह सब धर्मसागर जोकि मनुष्यकी बुद्धिसे बाहरहै वर्णनकिया ६४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेउमामहेश्वरसंवादेशततोपरिपंच-चत्वारिंशोऽध्यायः१४५ ॥

एकसौछियालिसका अध्याय ॥

महेश्वरजी बोले हे सगुण निर्गुण ब्रह्मके जाननेवाली धर्मज्ञ तपोधन बनबासी पतिव्रता सुभ्रूके शान्त रखनेवाली हिमालय पुत्री १ सावधान इन्द्रियोंकी जीतनेवाली ममतारहित धर्मचारिणी सुन्दरी मैं तुमसे जो पूंछताहूं उसको कहौ कि ब्रह्माजीकी पतिव्रता स्त्री सावित्रीहै और शचीइन्द्रकी पत्नीहै, सूर्य्यके पुत्रकीपत्नी धूमोर्णा कुबेरजीकी पत्नी ऋद्धिहै, वरुण देवताकी पत्नी गौरी,सूर्य्यकी पत्नी सुवर्चला, चन्द्रमाकी रोहिणी औरअग्निकी स्वाहानाम पतिव्रतास्त्री है ४कश्यपजीकी अदितीहै यहसब अपने२ पतिहीको देवता मानने वालीहैं हेदेवी उनको तुमने सदैव पूजनकिया है और उपासना कियाहै ५ हेधर्मज्ञ धर्मवादिनी इसकारणमैं तुम्हारा कियाहुआ स्त्री धर्मप्रारंभसे सुना चाहताहूं६ हेसुधर्म चारिणी तु तेजबल शील और व्रतमें मेरेही समान प्रताप तपोबल रखने वालीहै तुमने बड़ा तप कियाहै ७ इसीसे हेदेवी तुम्हारेमुखसे कहाहुआ स्त्री धर्मबड़ा गुण कारीहोगा और लोकमें तुमसे प्रमाणताको पावेगा ८ पुर्व्व समय में स्त्रियां मुख्यकरके स्त्री लोगों की गतीहुईहैं इसीसे यह तुम्हारे मुखसे कहाहुआ स्त्रीधर्म सदैव पृथ्वीपर प्रचलितहोगा ९ तेरे आधे शरीरसे मेरा आधाशरीर प्रकटहुआहै तुम देवताओंका कार्य्यकरने वाली सनातन लोकोंकी उत्पन्न करनेवालीहो १० हे शुभदेवी तुम कोसनातन स्त्रीधर्मअच्छी रीतिसे विदितहै इसहेतुसे तुमअपने धर्म

को संपूर्णता पूर्वक मेरे सन्मुख वर्णनकरो ११ उमाबोली हे ऐश्वर्यके स्वामी सब जीवोंके ईश्वर तीनों कालके ज्ञाता देवता मेरा वचन आपहीके प्रभावसे प्रकट होताहै १२ हेदेवेश्वर सब र्थोंके जलसे संयुक्त यहरूपवान नदियां आपके स्नानके लियेसन्मुखसे आतीहैं १३ मैंइन सबसे मिलकर सलाहके अनुसार क्रम पूर्वक वर्णन करूंगी जोअहंकारसे रहितहैवही पुरुषकहाजाताहै हेभूतेश स्त्रीही स्त्रीकी गतिरूप होतीहै इसीसे इन उत्तम स्त्रियों में पूजनकरूंगी १५ यहसब नदियेंमें महाउत्तम समुद्रगामी प सरस्वती नदीहै १६ विपाशा,वितस्ता, चन्द्रभागा,ऐरावती, शत देविका, सिन्धु, कौशिकी, गौतमी १७ इसी प्रकार सब तीर्थों वृद्धियुक्त सब नदियेंमें श्रेष्ठ यह देवनदी गंगादेवीआकाशसे पृथ्वी पर आई १८ देवताओंके देवता शिवजीकी पत्नी उमाभवानी कहकर अपनी मंदमुसकान से उन नदियोंको अपने समक्षमें कर १९ धर्म वत्सला उमा देवीने नदियोंमें श्रेष्ठ स्त्री धर्ममें सावधान गंगा आदि नदियों से कहा कि २० हे श्रेष्ठ नदियो यह स्त्री ध सम्बन्धी प्रश्न सबके ईश्वर शिवजी महाराजने कियाहै उसको तुम्हारे साथ में अच्छे प्रकार से बिचार कर शंकरजी से क चाहतीहूं २१ हे समुद्र गामिनी नदियो मैं इस पृथ्वीपर वा स्व मेंभी इस विज्ञानको किसी से सिद्ध होनेवाला नहीं देखतीहूं इ हेतुसे मैं तुमको पूजन करतीहूं २२ इस रीतिसे उमा देवीने उ पवित्र कल्याण रूप सब नदियों से पूछा तब बहुत नदियों से प्र छा पूर्वक प्रेरणाकरी हुई २३ नदियों से मिलीहुई वृद्धियुक्त धर्मकी ज्ञाता पवित्र मुसकान वाली सुमेरुकी पुत्री पापभय मोचन करनेवाली २४ बुद्धिसे नम्र सब धर्मों की ज्ञाता बुद्धिमा श्रीगंगा देवीने मंदमुसकान समेत यह बचन कहा २५ हे पापों रहित धर्म में प्रवृत्त देवी मैं धन्यहूं और अनुगृहीतहूं जोसब जग की मान्यरूप तुम हमारा सन्मान करतीहौ निश्चय करके जोसम होताहै वही प्रश्न करताहै अथवा प्रतिष्ठाको करताहै वही पंडि

और धर्मात्मा कहाताहै २७ ज्ञान विज्ञानयुक्तखंडन मंडन में कुश-
लहोकर जो दूसरे वक्ताओंसे पूछताहै वह आपत्तिमें नहीं पड़ताहै
२८ जो अधिक बुद्धिमान नहींहै वही सभा में विपरीतवचनको क-
हताहै और अहंवादीभी विपरीत और दुर्वल बचनोंको कहताहै२६
हेस्वर्गमें श्रेष्ठ दिव्य ज्ञान वाली देवी तुमही हमसेस्त्रीधर्म कहनेको
योग्यहो३० भीष्मजी बोलेकि इसके अनन्तरश्रीगंगाजीसे बहुतगु-
णोंकेद्वारा स्तूयमान उस उमादेवीने सब स्त्रीधर्मकोसंपूर्णताकेसाथ
वर्णनकिया ३१ उमाबोली कि यह स्त्री धर्मजैसा मुझको अपनी बु-
द्धिके अनुसार विदितहै उस सबको मैं वर्णन करूंगीतुम इसीप्रकार
आज्ञा करने वालीहोवो ३२ प्रथमही विवाहमें यह स्त्री धर्म बांध-
वोंसे विचार कियागयाहै वह उस धर्मका वचन अग्निके सन्मुख
पतिके साथ करने वाली होतीहै३३जोस्त्री सुन्दर प्रकृति श्रेष्ठवच-
नवाली सुहृदचित्त नेकचलनप्रियदर्शन दूसरेमें चित्तनलगानेवाली
सुन्दर मुखीहै वही पतिके साथ धर्मकी करनेवालीहै ३४ जोपति-
व्रता स्त्री नियमसे आहार करनेवालीहै और जैसे पुत्रके मुखको
देखतेहैं उसी प्रकार बराबर जोपतिके मुखको देखने वालीहै वह
धर्मचारणी ३५ स्त्री धर्मको उत्तममाननेवाली और धर्मभागी हो-
तीहै जो पतिव्रतास्त्री पतिको सदैव देवताकेसमानदेखतीहै ३६ और
सेवा आज्ञा पालनको देवताके समान करतीहैप्रीतिसे सुहृद उत्तम
व्रतवाली और श्रेष्ठ दर्शनहै ३७धर्मको उत्तम मानने वाली पतिके
समान व्रतकरनेवाली वहपति वृता अपने पतिको देवताके समान
देखतीहै यह स्त्री पुरुषका शुभधर्म कहागया ३८ जोसेवापरिचर्य्या
को देवताके समान करनेवाली और विनावशी करण प्रसन्न चित्त
सुन्दर वृत उत्तम दर्शन दूसरेमें चित्त नलगाने वाली सुन्दर मुखी
और पतिके साथ धर्मचारिणीहै ३६ और जोस्त्री पतिके कठोरवच-
नसुननेवाली और क्रोध युक्त दृष्टिसे देखीहुईभी प्रसन्नचित्त और
प्रसन्नाननहै वह स्त्री पतिवृताहै ४० जो पुल्लिङ्ग नामवाले चन्द्रमा
सूर्य और वृक्षको भी नहीं देखतीहै और पतिसे प्रतिष्ठावान् है वह

सुन्दरी धर्म चारिणी होतीहै ४१ जोस्त्री अपनेरोगी दुखीनिर्धनी मार्गसे थके हुये पतिको ऐसे सेवा करतीहै जैसेकि प्रीतिसे पुत्रकी करतेहैं वह धर्मभागीहै ४२ जो नियमवान सावधान स्त्री पुत्रवान है और जो पतिकी प्यारी और स्वामीको प्राणोंकेसमान माननेवा-लीहै वह स्त्रीभी धर्म भागिनीहै ४३ जोप्रसन्नचित्तस्त्री सदैव सेवा और परिचर्याको करतीहै और अत्यन्त प्रसन्नता और नम्रतासेयुक्त है वह धर्म भागिनीहै ४४ भोग ऐश्वर्य्य और सुखोंमें जिसकी वैसी अभिलाषा नहीं है जैसी कि पतिमें है वह स्त्री धर्म भागिनीहै ४५ सदैव प्रातःकाल जागने वाली घरके काम पूरे करने में प्रवृत्तचित्त गोबर आदि से लीप कर अत्यन्त स्वच्छ स्थान रखने वाली ४६ सदैव हवनादिकके कार्य्यों में प्रवृत्त सदा पुष्प बलि को देने वाली और पति के साथ देवता अतिथि पालन योग्य दासादिको भाग देने वाली ४७ औरउनका भागदेकरशेषबचेहुयेअन्नकोबुद्धिके अनु-सार खानेवाली और बालबच्चोंको प्रसन्न और नीरोगरखनेवाली स्त्री धर्मसे युक्त होतीहै ४८ सास श्वशुरकेचरणोंको दंडवत् करके प्रसन्न करनेवाली गुणवान् होकर जो अपने मातापिताकी आज्ञा कारी स्त्रीहै वह तपरूप धन रखने वालीहै ४९ जो स्त्री ब्राह्मण दुर्बल बिना मा बापके दुखी अन्धे और कंगालको अन्न दान से प्रसन्न करतीहै वह पतिव्रत धर्मप्राप्त करने वालीहै ५० जो स्त्री अपनी बुद्धिके बलसे कठिन आज्ञा रूपीव्रतोंको सदैव पालनकरती है पतिमें चित्त लगानेवाली और उसका अभीष्ट करने वालीहै वह पतिव्रतहै ५१ जो स्त्री पतिकोही श्रेष्ठ माननेवाली और उसकाव्रत करनेवाली श्रेष्ठ चलनहै उसका पुण्यही तप और सनातन स्वर्गहै ५२ जो स्त्रियोंका देवता पतिहै वही बंधुहै वहीगति रूपहै जैसा पति होताहै उससे अधिक कोई देवता और गतिनहीहै ५३ पति की प्रसन्नता के समान चाहेस्वर्ग होय अथवा न होय परन्तु तुझ महेश्वरके अप्रसन्न होनेपर मैं स्वर्ग कोभी नहीं चाहतीहूं ५४ निर्धन रोगी आपत्ति में फंसाशत्रु के पंजेमें वर्त्तमान अथवा ब्रह्म

शापसे पीड़ामान् भी पति करनेके अयोग्य अधर्मकी अथवा प्राणों के नाश करनेकी भी आज्ञादे उसको किसी प्रकारके आपधर्मों का विचार न करके अवश्य करना योग्यहै ५५ । ५६ हे देवता मैंने आपकी आज्ञासे यह स्त्री धर्मवर्णन किया जो इस रीति से पति के साथ प्रीति करनेवाली स्त्री है वह पतिव्रता है ५७ भीष्म जी बोले कि पार्वती जीके इस प्रकार वर्णन करनेपर उन देवेश्वरजीने पार्वती का धन्य वाद करके सब साथियों समेत संसारके लोगों को विदा किया ५८ इस के पीछे भूत गण नदियां गन्धर्व और अप्सराओं के गण शिवजीको शिरसे प्रणाम कर २ अपने २ स्थानों को गये ५६ ॥

इति श्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मे उमामहेश्वरसंवादेशतोपरिषट् चत्वारिंशोऽध्यायः १४६ ॥

एकसौसैंतालिसका अध्याय ॥

ऋषिबोले कि हे पिनाक धनुषधारी भग देवताके नेत्र फोड़ने वाले सबलोगोंसे स्तूयमान शंकरजी हम वासुदेवजी के माहात्म्य को सुना चाहते हैं १ महेश्वरजी बोले कि सबपापों का नाश करनेवाला सनातन पुरुष विष्णु ब्रह्माजी सेभी श्रेष्ठ और जाम्बूनद नाम सुवर्ण के समान ऐसा प्रकाशित है जैसे कि स्वच्छ आकाशमें उदय होनेवाला सूर्य्य होताहै २ दश भुजाधारी महातेजस्वी असुरोंका मारनेवाला श्री वत्स चिह्नसे अलंकृत आत्मारूप से इन्द्रियोंका स्वामी और सब देवताओंसे पूजितहै ३ जिसकेउदर से ब्रह्माउत्पन्नहुये मैंशिरसे उत्पन्नहूं केशजालोंसे सूर्य्यादिकप्रकाशवान ग्रह नक्षत्रादि और शरीरके रोमोंसे देवता और असुर प्रकट हुयेहैं ४ ऋषि और सनातनलोक उसकेशरीरसे पैदाहैं वहीसाक्षात् पुरुष ब्रह्माआदिक सबदेवताओंका उत्पत्ति स्थानहै ५ वह तीनों लोकोंका ईश्वर इससंपूर्ण पृथ्वीका कर्त्ताहै और सब स्थावर जंगम जीवोंका नाशकर्त्ताहै ६ वही देवताओंमें श्रेष्ठ साक्षात देवताओं का

स्वामी बड़े तपका करने वालाहै वही सर्वज्ञ सबजीवमात्रके हृदयों में नियत सर्वत्रवर्त्त मान होकर सबओरको मुख रखनेवाला है ७ वही परमात्मा इन्द्रियोंका स्वामी सर्वब्यापी और महेश्वर है तीनों लोकोंमें उससे उत्तम कोईनहींहै ८ वह मधु दैत्य का मारनेवाला सनातन गोविन्द नामसे प्रसिद्धहै वही बड़ाई का देनेवाला युद्धमें सबराजाओंको मारेगा ६ वहदेवकार्य्यके निमित्त मनुष्य शरीर में प्रकटहोकर नियतहुआहै उसबिष्णुके सिबायसबदेवताओंका समूह भी समर्थ नहीं है१० जो अपनास्वामी न रखने वाला इससंसारमें देव कार्य्य करने को प्रकट हुआ है वह सब जीवों का स्वामी और सब देवताओं से प्रतिष्ठा पाने वालाहै ११ इस देवनाथ देवताओं के कार्य्य पूरे करने में चित्त से प्रवृत्त ब्रह्म रूप सदैव ब्रह्म ऋषियों का रक्षा स्थान १२ जिसके शरीर के गर्भमें ब्रह्मा सुख से वर्त्त-मानहै और रुद्रभी उसीके शरीर में सुख पूर्व्वक आश्रयीभूतहै १३ और सब देवता उसके शरीर में सुख पूर्व्वक रक्षितहैं वह कमल लोचन देवता श्रीगर्भ लक्ष्मीके साथ नियत १४ शार्ङ्ग धनुष समेत चक्र और खड्ग रखने वाला गरुड़ध्वज प्रसन्न चित्त जितेन्द्रीपनेमें संयुक्त है१५ रूप बल और शुभ दर्शन वाला उन्नत शरीर यथार्थ ज्ञान रूप धैर्य्य और सत्यता रूपी धनसे युक्तहै१६ दया स्वरूप और अतुल बलसे सम्पन्नहै अपूर्व्व दर्शन सब दिव्य अस्त्रों स-हित उदय होरहाहै १७ योगमाया का स्वामी सहस्राक्ष निर्दोष महा साहसी शूर बीर मित्रों से स्तुतिमान बिरादरी और बांधवों का प्यारा १८ क्षमावान शान्त और अहंकार से रहितहै वही वेद ब्राह्मणों का रक्षक और स्वामी भयभीत भक्तों के भय का दूर करने वाला और उनकी प्रसन्नता का बढ़ानेवाला है सब जीवों का रक्षा स्थान दुखी लोगों के पोषण में प्रवृत्त शास्त्र और अर्थ से युक्त सब जीवोंसे स्तूयमान १६।२० शरणमें आये हुये शत्रुओं पर भी बड़ा उपकार करने वाला धर्मज्ञ नीतिज्ञ ब्रह्मबादी और इन्द्रियों का जीतने वाला है २१ वह गोविन्दजी इस लोकमें देवताओं के

ऐश्वर्य्य के अर्थ अपनी मायाके द्वारा महात्मा मनुजीके बंशमें अव तारलेंगे और प्रजापति मनुके शुभ धर्मोंसे भरे हुये मार्गमें नियत होंगे मनु का पुत्र अंग होगा उसका पुत्र अन्तर्द्धामा होगा २२। २३ अन्तर्द्धामा का पुत्र दोषों से रहित हविर्धामा नाम अनिन्दित प्रजापति होगा हविर्धामा का बड़ा पुत्र प्राचीन बर्हिष होगा २४ उस के प्रचेतस को आदि लेकर दशपुत्र होंगे और प्राचेतसका पुत्र दक्षप्रजा पति होगा और दक्षकी कन्या का पुत्र सूर्य्य होगा सूर्य्य से मनु होगा और मनुके बंशमें इला और सुद्युम्न उत्पन्नहोंगे २६ वुध से पुरूरवा और पुरूरवा से आयु पैदा होगा उस से नहुष उत्पन्न होगा नहुष का पुत्रययाति होगा२७ उससे बड़ा पराक्रमी यदु उत्पन्न होगा उससे क्रोष्टा और क्रोष्टासेवृजनीवान् होगा२८ वृजनी वान्का पुत्र उषंगुनाम अजेय महापराक्रमी होगा उषंगु का पुत्र चित्र रथ होगा २९ उसका छोटापुत्र शूर नाम होगा उन विख्या-त वीर्य्य चरित्र गुण वाली ३० यज्ञकरने वाले अत्यन्त पवित्रात्मा ब्राह्मणोंके अंगी कृत क्षत्रियो के बंशमें वह शूर बड़ा पराक्रमी क्षत्रियों में श्रेष्ठ विख्यात कीर्त्ति होगा वह बड़ाई देनेवाले ऐसे पुत्र को उत्पन्न करेगा जोकि अपने बंशका बढ़ाने वाला ३१ बसुदेव नाम से प्रसिद्ध आनक दुन्दुभी नाम होगा उसका पुत्र चतुर्भुज वासुदेव नाम होगा ३२ जोकि ब्राह्मणों का सत्कार करने वाला महादानी ब्रह्म रूप ब्राह्मणोंका प्यारा जरासन्ध के बन्धन में पड़े हुये राजाओंको बन्धन सेमुक्तकरेगा३३ वह यदुवंशी राजाजरासंध को गिरिगह्वरमें बिजयकरकेसबराजाओंकेरत्नोंसेधनाढ्यहोगा३४ वह पराक्रमी अपनी सामर्थ्यसे पृथ्वी पर अजेयहोगा पराक्रम सं-युक्त सब राजाओंका राजा ३५ शूरसेन देशोंमें पालन करता नीति मान् प्रभुहो द्वारकामें राज्यकरता हुआ सब पृथ्वीको बिजय करके सदैव पालनकरेगा३६ आप उसको पाकर वचनरूपपुष्प औरउत्तम भेटोंसेन्याय के अनुसार ऐसे पूजन करो जैसे कि सनातन ब्रह्माजी कोकरतेहो ३७ जो पुरुषश्रेष्ठको और पितामह ब्रह्माजीको देखना

चाहै उसी से वह प्रतापवान् भगवान् वासुदेव दर्शन के योग्य हैं ३८ हे तपोधन ऋषियो उसके दर्शन करने से निस्सन्देह मेरा और ब्रह्माजीका भी दर्शन कियाहुआ जानो ३९ वह कमललोचन जिस पर प्रसन्न होगा उस पर ब्रह्माको आदि लेके सब देवता प्रसन्न होंगे ४० जो मनुष्य नरलोकमें उस केशवजीको शरणलेगा उसको शुभ कीर्त्ति विजय और स्वर्ग प्राप्त होगा ४१ वह धर्मात्मा साक्षात् धर्मोंका उपदेश करनेवाला होगा वह ईश्वर सदैव सावधान धर्मज्ञ पुरुषोंसे नमस्कार करनेके योग्यहै ४२ उस प्रभु के पूजन करनेसे उत्तम धर्म्म प्राप्तहोता है उसी बड़ेतेजस्वी पुरुषोत्तम देवताने संसारकी वृद्धि करनेके अर्थ ४३ धर्म के निमित्त किरोड़ों ऋषियोंको उत्पन्न कियाहै विधिके अनुसार उस से ऐक्यता करनेवाले वह तपोधन सनत्कुमारऋषि गंधमादन पर्वतपर नियत रहतेहैं इसी हेतुसे वह उत्तम वचनोंका कहनेवाला धर्मज्ञ भगवान् प्रभु नारायणहरि नमस्कार करनेके योग्यहै हे उत्तम ब्राह्मणलोगो वह स्वर्गमें भी श्रेष्ठ लोगोंसे दण्डवत और प्रतिष्ठा करने के योग्य है उसको सब देवता मनुष्य पूजन करतेहैं वह ईश्वर वचन मन बाणी आदिसे स्तुति और धन्यवाद करनेकेयोग्य है ४४।४५।४६ वह दर्शन करनेवालेको दर्शन देताहै और शरणागतको शरणागत वत्सल होताहै चित्तसे ध्यान करनेसे चित्तमें दर्शन देताहै ४७ इस निर्दोष सबको आदिरूप विष्णुभगवान् का वह बड़ा व्रत है जोकि उत्तम और सुजन धर्मज्ञोंसे अभ्यास कियाजाता है ४८ वह सनातन पुरुष स्वर्गमेंही सदैव देवताओंसे पूजन कियागया उसके भक्त अपनी योग्यतासे भक्तीके योग्य होतेहैं ४९ वह सदैव द्विजन्माओं की ओरसे मन बाणी बचन इन तीनोंके द्वारा नमस्कारके योग्यहै वह देवकीसुत उपाय करनेवाले भक्तोंसे समीप नियतहोकर दर्शनके योग्यहै ५० हे बड़े साधुमुनि लोगो मैंने यहमार्गतुम को दिखलाया उसको देखकर सब देवता उत्तम दर्शन किये हुयेके समान होतेहैं ५१ मैंभी उस जगत्पति और सब लोकों के पिता-

मह महावराह रूप देवताको नमस्कार करताहूं५२ उसकेहीदर्शन से तुमको निस्संदेह तीनों देवताका दर्शन होगा क्योंकि हम सब देवता उसके शरीरमें निवास करतेहैं ५३ पृथ्वीका धारण करने वाला श्वेत पर्व्वतोंके समूहों की समान जो शेषनाग है वह हल-धारी बलदेव नामसे विख्यात उसका बड़ा भाई होगा ५४ उस देवताके रथपर दिव्यध्वजा नियतहोगी और उस ध्वजामें तीनशा खा रखनेवाला सुवर्णमय तालका वृक्ष होगा ५५ उस सब लोकों के ईश्वर महाबाहुका शिर बड़ेफणवाले महात्मा नागोंसे व्याप्तहो गा ५६ उसके स्मरण कियेहुये अस्त्र शस्त्र प्राप्तहोंगेवह अविनाशी भगवान् हरि अनन्तनामसे प्रसिद्धहोगा ५७ हे ऋषिलोगो तुम उस प्रभु अनन्तका भी दर्शनकरो जिसके परमात्माका अन्त देवता ओंको आज्ञानुसार कश्यप का पुत्र बलवान् गरुड़भी अपने परा-क्रमसे देखने को समर्थ नहीं हुआ वह शेषनाग अपने फण से पृथ्वीको धारणकर पृथ्वीकेही भीतर विचरताहै ५९ जो विष्णु है वही पृथ्वीका धारणकर्त्ता षड़ैश्वर्य्यवान् अनन्त है जो बलदेव वही कृष्णहै जो विष्णुहैं वही शेषनागहैं ६० वह दिव्य पराक्रमी चक्र और हलके धारण करनेवाले दोनों पुरुषोत्तम दर्शन और पूजनके योग्यहैं ६१ हे तपोधन ऋषियो मैंनेयह तुम्हारा अनुग्रह रूप पवित्रवचन वर्णन कियाहै इस कारण तुम बड़े उपाय करके उस श्रीकृष्णका पूजन करो ६२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेपुरुषमहात्म्यनामशतोपरि सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः १४७ ॥

एकसौअड़तालीस का अध्याय ॥

नारदजी बोले कि इसके पीछे बिजली और गर्जनासे युक्त आ-काशसे बड़ाभारी शब्दहुआ और सम्पूर्ण आकाश नीले बादलोंसे ढकगया १ और परिजन्य ने वर्षाऋतुमें जलको बरसाया घोर अं-धकारसे दिशा अप्रकाशितहुईं २ उस समय मुनियोंने उसक्रीड़ा के

योग्य पवित्र सनातन देव पर्व्वत में सब भूतों के समूहों को नहीं देखा ३ फिर शीघ्रही आकाश बादलों के बिना निर्मल हुआ तब ऋषिलोग तीर्थयात्राको और अन्य २ लोग अपने २ स्थानों को गये ४ उमाके साथशंकरजीके उस आपकी कथासे संबंध रखनेवाले संबादको और बुद्धि सेबाहर उस आश्चर्य्य को देखकर सबऋषिलोग अचंभे से युक्तहुये ५ हे पुरुषोत्तम सोआपसनातन धर्म रूपहो आपही के निमित्तवहां शिवजी महाराजने हम सबको उपदेश किया ६ अब आपकेतेजने यह दूसराचमत्कार उत्पन्न कियाहै हेश्रीकृष्णजी जिसको देखकर हम आश्चर्य्य युक्तहो रहेहैं और हमको वह भूत कालका आनन्द स्मरण हुआ ७ हे महाबाहो प्रभु श्री कृष्णजी उस देवताओंके भी देवता गिरीश शिवजीका यह माहात्म्यतुमसेकहा ८ तब तपोबनबासी उनऋषियोंके इस बचन कोसुनकर देवकीनन्दन श्रीकृष्णजीने उन सब ऋषियों का पूजन किया ९ उस समय अत्यंत प्रसन्न होकर उन ऋषियोंने श्रीकृष्णजी से कहा कि हेमधुसूदनजी आप सदैव बारं बार हमको दर्शन दो १० हे प्रभु स्वर्गमें हमारी प्रीति वैसी नहीं है जैसीकि तुम्हारे दर्शनमेंहै हे महाबाहो जो शिवजी ने कहा वह सत्यहै ११ हे शत्रुहन्ता यह सब गुप्त वृत्तान्त मैंने तुमसे कहा तुमही मुख्यबातके ज्ञाताहो जो हमारे कहने सेहमसे पूछतेहो १२ इसीसे हमने यह गुप्त वृत्तान्त आपकी प्रसन्नताके अर्थ वर्णन कियाहै तीनों लोकोंके सबगुप्त और प्रकट वृत्तान्तों के आप ज्ञाताहैं अर्थात् सर्वज्ञहो १३ हे प्रभु आप जन्म मरण आदि सब कारणों के जानने वाले हो हम अत्यन्त चपलता से उस गुह्य पदार्थ के धारण करनेको समर्थ नहींहैं १४ हे प्रभु इसी कारण से आपके नियत होने पर बड़ीशीघ्रता से कहतेहैं कि ऐसी कोई आश्चर्य्यकारी बार्त्ता नहीं है जिसको आप नहीं जानते १५ हे देवता स्वर्ग और पृथ्वीका सब वृत्तान्त आपको बिदितहै हेश्रीकृष्णजी हम आशीर्वाद करतेहैं कि आप बुद्धि और पुष्टिको प्राप्तकरो १६ हे तात आपका पुत्र बड़े प्रभाव और प्रतापसे युक्त उत्तमविख्यात

कीर्तिका प्राप्त करने वाला आपके समान सामर्थ्यवान् अथवा विलक्षण होगा १७ भीष्मजी बोले इसके पीछे वह महर्षि उस देव देव ईश्वर श्रीकृष्णजी को प्रणाम और परिक्रमा करके चले गये १८ और वह श्रीमान् नारायणजी भी जोकि बड़े तेजसे युक्त थे उस व्रत को बिधिके अनुसार पूर्ण करके फिर द्वारका कोआये १९ हे प्रभु फिर दश महीने के पूरे होने पर उनका पुत्र अपूर्व्व दर्श-नीय सब का अंगीकृत प्रतापी शूर और बंशका धारणकरनेवाला श्री रुक्मिणीजी से उत्पन्न हुआ २० हे राजा वह सब जीवोंका कामदेव और भगवद्भक्त है और सदैव देवता वा असुरोंकेहृदय में विचरताहै २१ वह मेघ वर्ण चतुर्भुज पुरुषोत्तम प्रेमकेबशीभूतहोकर पांडवों के पास नियत है और आप इसके शरणमें हैं २२ जहांपर यह त्रिविक्रम विष्णु देवता उपस्थित होकरबर्त्तमानहैं वहां कीर्त्ति लक्ष्मी धैर्य्य और स्वर्गका मार्गहै २३ यही आदिदेव महादेवसब जीवोंका रक्षाश्रय और इन्द्र समेत सब तेंतीस करोड़ देवताओं का रूपहै२४ यह महात्माआदि अन्तसे रहित अरूप महातेजस्वी मधुसूदनदेवताओं के अभीष्ट सिद्ध करनेके लिये बर्त्तमान हुआहै २५ यहमाधवजी बड़ेगूढ़ और कठिन आशयोंके कहनेवाले होकर सबके कर्त्ताहैं हेयुधिष्ठिर तेरीपूर्णबिजयहै और बड़ी शुभ बिख्यात कीर्त्ति है २६ नारायणजी की शरण लेनेसे यह संपूर्ण पृथ्वी तेरीहै यह तेरास्वामी श्रीकृष्ण बुद्धि और मनसेभी परेहै उसकी गति नाराय-णहै २७ सोआप हवन करनेवाले तुमने रणरूपी अग्निमें प्र-लय काल की अग्निके समय श्रीकृष्णरूपी बड़े श्रुवासे राजाओंको होमा २८ यह दुर्य्योधन पुत्र बांधव और भाइयों समेत शोचकरने के योग्यहै क्योंकि उस अज्ञानी ने क्रोधरूप होकर नर नारायण के साथ युद्धकिया २९ बड़े२ पराक्रमी बृहत् शरीरधारी दैत्य और दानवेन्द्रों ने उसके चक्ररूप अग्नि में ऐसे नाशको पाया जैसे कि दावानल में टीड़ियां नाशको पाती हैं ३० हे पुरुषोत्तम इससंसार में यह नारायण युद्धमें उन मनुष्योंके सन्मुख लड़ने को योग्य नहीं

हैजो कि बुद्धिकी शक्ति पराक्रम औरबलसे अत्यन्त रहित हैं ३१
हेराजा युद्धमें वर्त्तमान प्रलयकालकी अग्निके समान योगीऔर
महाविजयी अर्जुनने पराक्रमसे दुर्य्योधनकी सबसेनाको मारा३२
शिवजीने हिमालयकी पृष्ठपर मुनियों से जो २ प्राचीन वृत्तान्त
वर्णन किया उस सबको मैं कहताहूं तुम चित्तसे सुनो ३३ तेजबल
और पराक्रम से श्रीकृष्णाजी की प्रसन्नता होय प्रभु श्रीकृष्णजी में
वह तीनों गुणहैं जोकि प्रभाव नम्रता और जन्म कहाते हैं ३४
जबकि वह समर्थ होताहै तब कौन पुरुष उसके बिपरीत करसक्ताहै
सुनो जहां यह श्रीकृष्णजी बर्त्तमान हैं वहां पर वहपुष्टिहै जिससे
उत्तम दूसरीनहीं है ३५ यहां हम निर्बुद्धी मनुष्य दूसरेके स्वाधीन
होकर अत्यन्त व्याकुलहैं जो जान बूझकर भी मृत्युके अबिनाशी
मार्गमें आकर वर्त्तमानहुये ३६ आपप्रथमही श्रीकृष्णजीकी शरण
लेकर सत्यबक्तापनेमें नियतहुये और प्रतिज्ञापालनमें प्रवृत्तहोकर
तुमराज्यके चलनको नहीं प्राप्तकरतेहो अर्थात्ब्राह्म प्रकृतिमें उप-
स्थितहो ३७ हेराजा इसीप्रकारतुम अपने मरणकोभी अच्छी रीति
से मानतेहो हे शत्रुओंके विजय करने वाले जोप्रतिज्ञा की गई उस
केत्यागने को योग्य नहींहो ३८ यह सब मनुष्य युद्धभूमिमें काल
के हाथसे मारे गये हमभी कालहीसेमारेगये इससे कालही परमे-
श्वर है ३६ कालका जानने वाला पुरुषकालके पंजेमें बंधा हुआ
है इससे शोचकरनेके योग्य नहींहै जो रक्त नेत्र दण्डधारी कालहै
वही कृष्ण हरिहै ४० हे कौरवनन्दन युधिष्ठिर इसी हेतुसे तुमयहां
ज्ञातिवालोंको शोच करने के योग्य नहीं हो सदैव शोचसे रहित
रहो मैंने जो माधव जीका माहात्म्य कहा वह तुमनेसुना ४१ वह
उतनाही दृष्टान्त सज्जन के लिये बहुतहै हे महाराज मैंनेबुद्धिमान
व्यास और नारदजी का वचन सुनकर ४२ महापूजित श्रीकृष्णजी
का और ऋषियों के समूहोंका बहुत बड़ा प्रभाव वर्णन किया ४३
और शिव पार्वतीजीका संवादभी कहा जो पुरुष उस महापुरुषकी
कथा को सुनेगा ४४ पढ़ेगा अथवा वर्णन करेगा वह बड़े कल्याण

को पावेगा और उसके चित्त के सब मनोरथ सिद्ध होंगे ४५ और शरीर त्याग के पीछे वह निस्संदेह स्वर्गको पावेगा ४६ कल्याण के चाहने वाले पुरुष को श्रीकृष्णजीका प्राप्त करना न्यायके अनुसार उचितहै हे राजा वेदपाठी ब्राह्मणोंने भी इन्हीं श्रीकृष्णजीकी स्तुतिकरी है ४७ हे कुरुराजमहेश्वरजीके मुखसे निकलेहुये जो धर्म और गुण कहेगयेहैं उन को तुम रात्रिदिन सेवनकरने के योग्यहो अर्थात् तुमको सदैवसेवन करना चाहिये ४८ तुझसरीके ऐसेशास्त्र के अनुसार कर्म कर्त्ता और प्रजा पालनमें दण्डधारण पूर्बक कुशल बुद्धीको स्वर्गलोक प्राप्त होगा ४९ हेराजा तुम धर्मसे प्रजाकी रक्षा करने के योग्य हो राजाका जो दण्डहै वह अच्छे धर्मवाला कहा जाताहै ५० हे राजा जो मैंने सब सुजन लोगोंके सन्मुख इस शिव पार्वतीके प्रश्नोत्तररूप संवादको बर्णनकिया जो इस लोकमें ऐश्वर्य्यकी इच्छा रखताहै ५१ वहउसको सुनकर अथवा सुनने का इच्छावान पुरुष पवित्र चित्तसे शिवजी का पूजन करे ५२ और हे पांडव उस निर्दोष महात्मा नारदजीका जो यह शिवजी के पूजन के विषय में उपदेशहै उसको उसी प्रकार से करे ५३ हे युधिष्ठिर इस हिमालय पर्व्वत परयह अपूर्व्वआश्चर्य्यकारी प्रभाव बासुदेव जी और शिवजी के स्वभाव से उत्पन्नहै ५४ इस सनातन पुरुषने गांडीव धनुषधारी समेत बद्री आश्रम में दश हजार बर्षतक बड़ा घोरतप किया है ५५ यह कमललोचन अर्जुन और बासुदेवजी तीनों युगों में अवतार लेने वालेहैं इन दोनों का वृत्तांत मुझको नारदजी और व्यासजी से विदित हुआहै ५६ इस महानुभाव श्री कृष्णजीने बाल्यावस्थाही में बिरादरी वालोंकी रक्षाके निमित्त कंसको मारा ५७ हे कुंतीनन्दन युधिष्ठिर हम इस सनातन पुराण पुरुष के कर्मोंकी संख्या करने की सामर्थ्य नहीं रखते ५८ हे तात निश्चय करके तेरा उत्तम कल्याण अवश्यहोगा क्योंकि जो तेरा सखा यहपुरुषोत्तम श्रीकृष्णहै ५९ पर लोकमें वर्त्तमानदुर्मतिदुर्य्योधन को शोचताहूं जिसके कारण से घोड़ हाथी आदिसमेत सब

पृथ्वीके लोगोंका नाशहुआ ६० दुर्योधन कर्ण शकुनि दुश्शासन इन चारोंके अपराधोंसे और अपनी दुर्मतियोंसे कौरवोंने नाश को पाया ६१ वैशंपायनजीबोले कि इस प्रकारसे पुरुषोत्तम भीष्मजीके वार्तालाप करतेहुये राजा युधिष्ठिर उन महात्माओंके मध्यमें मौन हुआ ६२ धृतराष्ट्र आदि राजालोग उस कथाको सुनकर आश्चर्य युक्त हुये और सबोंमें चित्तसे श्रीकृष्णजी को श्रेष्ठ रीति से पूजकर हाथोंको जोड़ा ६३ और उन नारदादि सबऋषियोंने उस वचनको श्रवण करके बड़ी प्रशंसापूर्वक आशीर्वाददिये ६४ पांडव युधिष्ठिर ने सब भाइयोंसमेत भीष्मजीके इस पवित्र और अद्भुत उपदेशको सुनो ६५ बड़े बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिरने इसके पीछे भी उस शर शय्यापर वर्त्तमान गांगेय भीष्मजीसे प्रश्नकिया ६६॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमहापुरुषप्रस्तावेअष्टचत्वारिंशो ऽध्यायः १४८॥

एकसौउन्चासका अध्याय॥

वैशम्पायन बोले॥

जयकरी छंद॥

भूपयुधिष्ठिर सुनिके धर्म्म। अरु पावन सुनि सुस्तवपर्म्म॥
फेरि पितामह सों इमि वैन। कहते भये मनीषा ऐन॥

युधिष्ठिरउवाच॥

दोहा॥

मुख्य देवता कौन हैं लोक माहिं अभिराम।
अरु सुपरायण है कहा कहौ मोहिं बुधिधाम॥
केहिको अरचै औ पढ़ै किहिकी स्तुति सु अनूप।
प्राप्तहोहिं कल्याण को मानव कहिये भूप॥
सब धर्मन में परम तुम जान लहौ को धर्म।
अरु सुजपेका जन्मसों रहित होहिं जन भर्म॥
पांडवके यह वचन सुन गंगासुत मतिमान।

कहतभये इमि वीर बर धरिके हर्ष महान॥

भीष्मउवाच॥

रामगीती छंद॥

जगत के प्रभु देव देव अनन्त बर भगवान। भक्तजनको कीर्ति वर्द्धन मोदमान महान॥ सर्बलोकनके महेश्वर विष्णुआनंदधाम। स्तुतिसु तिनकी किये छूटत मनुज दुखसों मान॥ विष्णुही हैं सर्व के उत्पत्तिधाम नरेश। पूजिवे के ध्यायबेके योग्यपरम सुवेश॥ पुरुषअव्यय चारु तिनको स्तुति सुकीवो जौन। सर्व धर्मन माहिं हम को अधिक धर्म सुतौन॥ देवतनमें परमदेवत विष्णुही हैं जानु॥ पावननमें परमपावन और मत अनुमानु॥ सर्बभूतनकेपिताहैं नाश रहित अनूप। मंगलन में परम मंगल विष्णुहीहैं भूप॥ विष्णुहीते होतहैं उत्पन्न भूतक सर्व। विष्णुहीमें होत प्रापित प्रलयमाहिं अखर्व॥ सुनहुनाम सहस्र तिनको पापभयको हर्ण। कहतहौं मैं तोहिं भूपति परम आनन्द कर्ण॥

विष्णुसहस्रनाम॥

श्रीवैशंपायनउवाच॥ श्रुत्वाधर्मानशेषेणपावनानिचसर्वशः॥ युधिष्ठिरःशांतनवंपुनरेवाभ्यभाषत १ युधिष्ठिरउवाच॥ किमेकंदैवतंलोके किंवाप्येकंपरायणम्॥ स्तुवंतःकंकमर्चंतःप्राप्नुयुर्मानवाःशुभम् २ कोधर्मःसर्वधर्माणांभवतःपरमोमतः॥ किंजपन्मुच्यतेजंतुर्जन्मसंसारबंधनात् ३ भीष्मउवाच॥ जगत्प्रभुंदेवदेवमनंतपुरुषोत्तमम्॥ स्तुवन्नामसहस्रेण पुरुषःसततोत्थितः ४ तमेवचार्चयन्नित्यंभक्त्यापुरुषमव्ययम्॥ ध्यायंस्तुवन्नमस्यंश्च यजमानस्तमेवच ५ अनादिनिधनंविष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम्॥ लोकाध्यक्षंस्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगोभवेत् ६ ब्रह्मण्यंसर्वधर्मज्ञंलोकानांकीर्तिवर्द्धनम्॥ लोकनाथंमहद्भूतंसर्वभूतभवोद्भवम् ७ एषमेसर्वधर्माणां धर्मोधिकतमोमतः॥ यद्भक्त्यापुंडरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरःसदा ८ परमंयोमहत्तेजःपरमंयोमहत्तपः॥ परमंयोमहद्ब्रह्म परमंयःपरायणम् ९ पवित्राणांपवित्रंयोमंगलानांचमंगलम्॥ दैवतंदेवतानांचभूतानांयोऽव्ययःपिता १० यतःसर्वाणिभूतानि भवंत्यादि

युगागमे॥ यस्मिंश्चप्रलयंयातिपुनरेवयुगक्षये११ तस्यलोकप्रधानस्य जगन्नाथस्यभूपते ॥ विष्णोर्नामसहस्त्रंमे शृणुपापभयापहम् १२ यानितामानिगौणानि विख्यातानिमहात्मनः ॥ ऋषिभिःपरिगीतानितानिवक्ष्यामिभूतये १३ ओम् विश्वंविष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः ॥ भूतकृद्भूतभृद्भावो भूतात्माभूतभावनः १४ पूतात्मापरमात्माचमुक्तानांपरमागतिः ॥ अव्ययःपुरुषःसाक्षी क्षेत्रज्ञोक्षरएवच १५ योगोयोगविदांनेता प्रधानपुरुषेश्वरः ॥ नारसिंहवपुःश्रीमान्केशवः पुरुषोत्तमः १६ सर्वःशर्वःशिवःस्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः ॥ संभवो भावनोभर्ता प्रभवःप्रभुरीश्वरः १७ स्वयंभूः शंभुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः ॥ अनादिनिधनोधाता विधाताधातुरुत्तमः १८ अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोमरप्रभुः ॥ विश्वकर्मामनुस्त्वष्टा स्थविष्ठःस्थविरो ध्रुवः १९ अग्राह्यःशाश्वतःकृष्णो लोहिताक्षःप्रतर्दनः ॥ प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रंमंगलंपरम् २० ईशानःप्राणदःप्राणो ज्येष्ठःश्रेष्ठःप्रजापतिः ॥ हिरण्यगर्भोभूगर्भो माधवोमधुसूदनः २१ ईश्वरोविक्रमीधन्वी मेधवीविक्रमःक्रमः ॥ अनुत्तमोदुराधर्षः कृतज्ञःकृतिरात्मवान् २२ सुरेशःशरणंशर्म विश्वरेताःप्रजाभवः ॥ अहःसंवत्सरोव्यालःप्रत्ययः सर्वदर्शनः २३ अजःसर्वेश्वरःसिद्धः सिद्धिःसर्वादिरच्युतः ॥ वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः २४ वसुर्वसुमनाःसत्यः समात्मा सम्मितःसमः ॥ अमोघःपुंडरीकाक्षो वृषकर्मावृषाकृतिः २५ रुद्रोबहुशिराबभ्रुर्विश्वयोनिःशुचिश्रवाः ॥ अमृतःशाश्वतःस्थाणुर्वरारोहो महातपाः २६ सर्वगःसर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनोजनार्दनः ॥ वेदोवेदविदव्यंगो वेदांगोवेदवित्कविः २७ लोकाध्यक्षःसुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः ॥ चतुरात्माचतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः २८ भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्तासहिष्णुर्जगदादिजः ॥ अनघोविजयोजेताविश्वयोनिःपुनर्वसुः २९ उपेंद्रोवामनःप्रांशुरमोघःशुचिरूर्जितः ॥ अतीन्द्रःसंग्रहःसर्गो धृतात्मानियमोयमः ३० वेद्योवैद्यःसदायोगी वीरहामाधवोमधुः अतीन्द्रियोमहामायो महोत्साहोमहाबलः ३१ महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युतिः ॥ अनिर्देश्यवपुःश्रीमानमेयात्मामहाद्रिधृक् ३२

महेष्वासोमहीभर्त्ता श्रीनिवासःसतांगतिः॥ अनिरुद्धःसुरानंदोगोविं
दो विदांपतिः ३३मरीचिर्दमनोहंसः सुपर्णोभुजगोत्तमः॥ हिरण्यना
भःसुतपाः पद्मनाभःप्रजापतिः ३४ अमृत्युःसर्वदृक्सिंहः संधाता
संधिमान्स्थिरः॥अजोदुर्मर्षणःशास्ता विश्रुतात्मासुरारिहा ३५गुरु
र्गुरुतमोधाम सत्यःसत्यपराक्रमः॥ निमिषोनिमिषःस्रग्वीवाचस्पति
रुदारधीः ३६ अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान्न्यायोनेतासमीरणः॥सहस्र
मूर्द्धाविश्वात्मा सहस्राक्षःसहस्रपात् ३७आवर्त्तनोनिवृत्तात्मा संवृ
तःसंप्रमर्द्दनः॥अहःसंवर्त्तकोवह्निरनिलोधरणीधरः ३८सुप्रसादःप्रस
न्नात्माविश्वधृग्विश्वभुग्विभुः॥सत्कर्त्तासत्कृतिः साधुर्जन्हुर्नाराय
णोनरः ३९असंख्येयोप्रमेयात्मा विशिष्टःशिष्टकृच्छुचिः॥ सिद्धार्थःसि
द्धसंकल्पः सिद्धिदःसिद्धिसाधनः ४० वृषाहीवृषभोविष्णुर्वृषपर्वावृषो
दरः॥ वर्द्धनोवर्द्धमानश्च विविक्तःश्रुतिसागरः ४१ सुभुजोदुर्धरोवा
ग्मी महेंद्रोवसुदोवसुः॥ नैकरूपोवृहद्रूपःशिपिविष्टःप्रकाशनः ४२
ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्माप्रतापनः॥ ऋद्धःस्पष्टाक्षरोमंत्र
श्चंद्रांशुर्भास्करद्युतिः ४३ अमृतांशूद्भवोभानुः शशबिंदुःसुरेश्वरः॥
औषधंजगतःसेतुः सत्यधर्मपराक्रमः ४४ भूतभव्यभवन्नाथः पवनः
पावनोनलः॥ कामहाकामकृत्कान्तः कामःकामप्रदःप्रभुः ४५
युगादिकृद्युगावर्त्तो नैकमायोमहाशनः॥ अदृश्योव्यक्तरूपश्च सह
स्रजिदनंतजित् ४६ इष्टोविशिष्टःशिष्टेष्टः शिखंडीनहुषोवृषः॥ क्रोध
हाक्रोधकृत्कर्त्ता विश्वबाहुर्महीधरः ४७ अच्युतःप्रथितःप्राणः प्राण
दोवासवानुजः॥ अपांनिधिरधिष्ठानमप्रमत्तःप्रतिष्ठितः ४८ स्कंदः
स्कंदधरोधुर्यो वरदोवायुवाहनः॥ वासुदेवोवृहद्भानुरादिदेवःपुरं
दरः ४९ अशोकस्तारणस्तारः शूरःशौरिर्जनेश्वरः॥ अनुकूलः
शतावर्त्तः पद्मीपद्मनिभेक्षणः ५० पद्मनाभोरविंदाक्षः पद्मगर्भः
शरीरभृत्॥ महर्द्धिरृद्धोवृद्धात्मा महाक्षोगरुडध्वजः ५१ अतुलःशर
भोभीमः समयज्ञोहविर्हरिः॥ सर्वलक्षणलक्षण्योलक्ष्मीवान्समितिं
जयः ५२विक्षरोरोहितोमार्गो हेतुर्दामोदरःसहः॥ महीधरोमहाभागो
वेगवानमिताशनः ५३ उद्भवःक्षोभणोदेवः श्रीगर्भःपरमेश्वरः॥ कर

णंकारणंकर्त्ता विकर्त्तागहनोगुहः ५४ व्यवसायोव्यवस्थानःसंस्था
नःस्थानदोध्रुवः॥ परर्द्धिःपरमस्पष्टस्तुष्टःपुष्टःशुभेक्षणः ५५ रामो
विरामोविरजोमार्गोनेयोनयोनयः॥वीरःशक्तिमतांश्रेष्ठो धर्मोधर्मविदु
त्तमः ५६ वैकुंठःपुरुषःप्राणः प्राणदःप्रणवःपृथुः॥ हिरण्यगर्भःशत्रु
घ्नो व्याप्तोवायुरधोक्षजः ५७ ऋतुःसुदर्शनःकालःपरमेष्ठीपरिग्रहः॥
उग्रःसंवत्सरोदक्षो विश्रामोविश्वदक्षिणः ५८ विस्तारःस्थावरः
स्थाणुः प्रमाणंबीजमव्ययम्॥ अर्थोनर्थोमहाकोशोमहाभोगोमहा
धनः ५९ अनिर्विण्णःस्थविष्ठोभूर्द्धर्मयूपोमहामखः॥ नक्षत्रनेमिर्न
क्षत्री क्षमःक्षामःसमीहनः ६० यज्ञइज्योमहेज्यश्चक्रतुःसत्रंसतांगतिः॥
सर्वदर्शीविमुक्तात्मासर्वज्ञोज्ञानमुत्तमम् ६१ सुव्रतःसुमुखःसूक्ष्मःसुघो
षःसुखदःसुहृत्॥ मनोहरोजितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ६२ स्वा
पनःस्ववशोव्यापी नैकात्मानैककर्मकृत्॥ वत्सरोवत्सलोवत्सी रत्न
गर्भोधनेश्वरः ६३ धर्मगुप्धर्मकृद्धर्मी सदसत्क्षरमक्षरम्॥ अविज्ञाता
सहस्रांशुर्विधाताकृतलक्षणः ६४ गभस्तिनेमिःसत्वस्थः सिंहो
भूतमहेश्वरः॥ आदिदेवोमहादेवो देवेशोदेवभृद्गुरुः ६५ उत्तरोगो
पतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यःपुरातनः॥ शरीरभूतभृद्भोक्ता कपीन्द्रोभूरि
दक्षिणः ६६ सोमपोमृतपःसोमः पुरुजित्पुरुसत्तमः॥ विनयोजयः
सत्यसंधो दाशार्हःसात्वतांपतिः ६७ जीवोविनयितासाक्षी मुकुंदो
मितविक्रमः॥ अंभोनिधिरनंतात्मा महोदधिशयोंतकः ६८ अजोमहा
र्हःस्वाभाव्योजितामित्रःप्रमोदनः॥ आनंदोनंदनोनंदः सत्यधर्मात्रि
विक्रमः ६९ महर्षिःकपिलाचार्यः कृतज्ञोमेदिनीपतिः॥ त्रिपदस्त्रिद
शाध्यक्षो महाशृङ्गःकृतांतकृत् ७० महावराहोगोविंदः सुषेणःकन
कांगदी॥ गुह्योगभीरोगहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः ७१ वेधाःस्वांगो
जितःकृष्णो दृढःसंकर्षणोच्युतः॥ वरुणोवारुणोवृक्षःपुष्कराक्षोमहा
मनाः ७२ भगवान्भगहानंदी वनमालीहलायुधः॥ आदित्योज्योति
रादित्यःसहिष्णुर्गतिसत्तमः ७३ सुधन्वाखंडपरशुर्दारुणोद्रविणप्रदः॥
दिवस्पृक्सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः ७४ त्रिसामासा
मगःसाम निर्वाणंभेषजंभिषक्॥ संन्यासकृच्छमःशांतो निष्ठा

शांतिःपरायणः ७५ शुभांगःशांतिदःस्रष्टा कुमुदःकुवलेशयः ॥ गोहितोगोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षोवृषप्रियः ७६ अनिवर्त्तीनिवृत्तात्मा संक्षेप्ताक्षेमकृच्छिवः॥ श्रीवत्सवक्षाःश्रीवासः श्रीपतिःश्रीमतांवरः७७ श्रीदःश्रीशःश्रीनिवासः श्रीनिधिःश्रीविभावनः ॥ श्रीधरःश्रीकरःश्रेयः श्रीमान्लोकत्रयाश्रयः ७८ स्वक्षःस्वंगःशतानंदो नंदिर्ज्योतिर्गणे श्वरः॥ विजितात्माविधेयात्मा सत्कीर्त्तिश्छिन्नसंशयः ७९ उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशःशाश्वतःस्थिरः ॥ भूशयोभूषणोभूतिर्विशोकःशोक नाशनः ८० अर्चिष्मानर्चितःकुंभो विशुद्धात्माविशोधनः ॥ अनि रुद्धोप्रतिरथः प्रद्युम्नोमितविक्रमः ८१ कालनेमिनिहावीरः शौरिः शूरजनेश्वरः ॥ त्रिलोकात्मात्रिलोकेशः केशवःकेशिहाहरिः ८२ कामदेवःकामपालः कामीकांतःकृतागमः। अनिर्द्दिश्यवपुर्विष्णुर्वीरो नंतोधनंजयः ८३ ब्रह्मण्योब्रह्मकृद्ब्रह्मा ब्रह्मब्रह्मविवर्द्धनः ॥ ब्रह्म विद्ब्राह्मणोब्रह्मी ब्रह्मज्ञोब्राह्मणप्रियः ८४ महाक्रमोमहाकर्मा महा तेजामहोरगः॥ महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञोमहाहविः ८५ स्तव्यः स्तवप्रियःस्तोत्रं स्तुतिःस्तोत्तारणप्रियः ॥ पूर्णःपूरयितापुण्यःपुण्य कीर्त्तिरनामयः ८६ मनोजवस्तीर्थंकरो वसुरेतावसुप्रदः॥ वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमनाहविः ८७ सद्गतिःसत्कृतिःसत्ता सद्भूतिःसत् परायणः ॥ शूरसेनोयदुश्रेष्ठः सन्निवासःसुयामुनः ८८ भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोनलः ॥ दर्पहादर्पदोदृप्तो दुर्द्धरोत्थापराजितः ८९ विश्वमूर्त्तिर्महामूर्त्तिर्दीप्तमूर्त्तिरमूर्त्तिमान् ॥ अनेकमूर्त्तिरव्य क्तःशतमूर्त्तिःशताननः ९० एकोनैकःसवःकःकिं यत्तत्पदमनुत्तमम् ॥ लोकबंधुर्लोकनाथो माधवोभक्तवत्सलः९१सुवर्णवर्णोहेमांगो वरांग श्चंदनांगदी॥ वीरहाविषमःशून्यो घृताशीरचलश्चलः ९२ अमानी मानदोमान्यो लोकस्वामीत्रिलोकधृक् ॥ सुमेधामेधजोधन्यः सत्य मेधाधराधरः९३तेजोवृषोद्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतांवरः॥ प्रग्रहोनिग्रहो व्यग्रो नैकश्टृंगोगदाग्रजः ९४ चतुर्मूर्त्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतु र्गतिः ॥ चतुरात्माचतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात् ९५ समावर्त्तोनिवृ त्तात्मादुर्जयोदुरतिक्रमः ॥दुर्लभोदुर्गमोदुर्गोदुरावासोदुरारिहा९६

शुभांगोलोकसारंगः सुतंतुस्तंतुवर्द्धनः ॥ इन्द्रकर्मामहाकर्मा कृत
कर्माकृतागमः ९७ उद्भवःसुंदरःसुंदो रत्ननाभःसुलोचनः ॥ अर्कोवा
जसनःशृङ्गी जयंतःसर्वविज्जयी ९८ सुवर्णबिंदुरक्षोभ्यः सर्ववागी
श्वरेश्वरः ॥ महाह्रदोमहागर्त्तोमहाभूतोमहानिधिः ९९ कुमुदः
कुंदरःकुंदः पर्जन्यःपावनोनिलः ॥ अमृतांशोमृतवपुः सर्वज्ञःसर्वतो
मुखः १०० सुलभः सुव्रतःसिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः ॥ न्यग्रोधो
दुंबरोश्वत्थश्चाणूरांध्रनिषूदनः १०१सहस्रार्चिःसप्तजिह्वः सप्तैधाः
सप्तवाहनः ॥ अमूर्त्तिरनघोचिंत्यो भयकृद्भयनाशनः १०२ अणुर्बृ
हत्कृशःस्थूलो गुणभृन्निर्गुणोमहान्॥अधृतःस्वधृतःस्वास्यः प्राग्वंशो
वंशवर्द्धनः १०३ भारभृत्कथितोयोगीयोगीशःसर्वकामदः॥ आश्रमः
श्रमणःक्षामः सुपर्णोवायुवाहनः १०४ धनुर्द्धरोधनुर्वेदो दण्डोदमयि
तादमः॥ अपराजितःसर्वसहो नियंतानियमोयमः१०५ सत्यवान्सा
त्त्विकःसत्यः सत्यधर्मपरायणः॥ अभिप्रायःप्रियार्होर्हः प्रियकृत्प्रीति
वर्द्धनः १०६ विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग्विभुः ॥ रविर्वि
रोचनःसूर्य्यः सवितारविलोचनः १०७ अनन्तोहुतभुग्भोक्तासुखदो
नैकदोग्रजः॥ अनिर्विण्णःसदामर्षीलोकाधिष्ठानमद्भुतः १०८ सना
त्सनातनतमः कपिलःकपिरव्ययः॥ स्वस्तिदःस्वस्तिकृत्स्वस्ति स्व
स्तिभुक्स्वस्तिदक्षिणः १०९ अरौद्रःकुण्डलीचक्री विक्रम्यूर्जितशा
सनः ॥ शब्दातिगःशब्दसहः शिशिरःसर्वरीकरः ११० अक्रूरः
पेशलोदक्षो दक्षिणःक्षमिणांवरः ॥ विद्वत्तमोवीतभयःपुण्यश्रवणकी
र्त्तनः १११ उत्तारणोदुष्कृतिहा पुण्योदुःस्वप्ननाशनः ॥ विरहार
क्षणःसन्तोजीवनःपर्यवस्थितः ११२ अनन्तरूपोनन्तश्रीर्जितमन्यु
र्भयापहः ॥ चतुरस्रोगभीरात्मा विदिशोव्यादिशोदिशः ११३ अ
नादिर्भूर्भुवोलक्ष्मीः सुवीरोरुचिरांगदः॥ जननोजनजन्मादिर्भीमोभी
मपराक्रमः ११४ आधारनिलयोधाता पुष्पहासःप्रजागरः । ऊर्ध्व
गःसत्पथाचारः प्राणदःप्रणवःपणः ११५ प्रमाणंप्राणनिलयः प्राण
भृत्प्राणजीवनः॥ तत्वंतत्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ११६
भूर्भुवःस्वस्तरुस्तारः सपिताप्रपितामहः ॥ यज्ञोयज्ञपतिर्यज्वायज्ञां

गोयज्ञवाहनः ११७ यज्ञभृद्यज्ञकृद्यज्ञी यज्ञभुग्यज्ञसाधनः॥ यज्ञां
तकृद्यज्ञगुह्यमन्नमन्नादएवच ११८ आत्मयोनिःस्वयंजातो वैखा
नःसामगायनः॥ देवकीनन्दनःस्रष्टा क्षितीशःपापनाशनः ११९
शंखभृन्नन्दकीचक्री शार्ङ्गधन्वागदाधरः॥ रथांगपाणिरक्षोभ्यः सर्व
प्रहरणायुधः १२० ओंनम इतीदंकीर्त्तनीयस्य केशवस्यमहात्म
नः॥ नाम्नांसहस्रंदिव्यानामशेषेणप्रकीर्त्तितम् १२१ यइदंशृणुया
न्नित्यंयश्चापिपरिकीर्त्तयेत्॥ नाशुभम्प्राप्नुयात्किंचित्सोमुत्रेहचमा
नवः १२२ वेदान्तगोब्राह्मणःस्यात्क्षत्रियोविजयीभवेत्॥ वैश्योधन
समृद्धःस्याच्छूद्रःसुखमवाप्नुयात् १२३ धर्मार्थीप्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थीचा
र्थमाप्नुयात्॥ कामानवाप्नुयात्कामी प्रजार्थीप्राप्नुयात्प्रजाः १२४
भक्तिमान्यःसदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः॥ सहस्रंवासुदेवस्य
नाम्नामेतत्प्रकीर्त्तयेत् १२५ यशःप्राप्नोतिविपुलं ज्ञातिप्राधान्यमे
वच॥ अचलांश्रियमाप्नोति श्रेयःप्राप्नोत्यनुत्तमम् १२६ नभयंक्वचि
दाप्नोति वीर्यंतेजश्चविन्दति॥ भवत्यरोगोद्युतिमान्बलरूपगुणान्वि
तः १२७ रोगार्त्तोमुच्यतेरोगाद्बद्धोमुच्येतबन्धनात्॥ भयान्मुच्येत
भीतस्तु मुच्येदापन्नआपदः १२८ दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषःपुरु
षोत्तमम्॥ स्तुवन्नामसहस्रेणनित्यंभक्तिसमन्वितः १२९ वासुदेवाश्र
योमर्त्यौवासुदेवपरायणः॥ सर्वपापविशुद्धात्मा यातिब्रह्मसनातन
म् १३० नवासुदेवभक्तानामशुभंविद्यतेक्वचित्॥ जन्ममृत्युजराव्या
धिभयंनैवोपजायते १३१ इमंस्तवमधीयानःश्रद्धाभक्तिसमन्वितः॥
युज्येतात्मसुखक्षांतिःश्रीधृतिस्मृतिकीर्त्तिभिः १३२ नक्रोधोनचमा
त्सर्यं नलोभोनाशुभामतिः॥ भवंतिकृतपुण्यानां भक्तानांपुरुषोत्त
मे १३३ द्यौःसचंद्रार्कनक्षत्राखंदिशोभूर्महोदधिः॥ वासुदेवस्यवी
र्येणविधृतानिमहात्मनः १३४ ससुरासुरगंधर्वंसयक्षोरगराक्षसम्॥
जगद्वशेवर्त्ततेदंकृष्णस्यसचराचरम् १३५ इंद्रियाणिमनोबुद्धिः स
त्वंतेजोबलंधृतिः॥ वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रंक्षेत्रज्ञमेवच १३६
सर्वागमानामाचारःप्रथमंपरिकल्प्यते॥ आचारप्रभवोधर्मोधर्मस्य
प्रभुरच्युतः १३७ ऋषयःपितरोदेवामहाभूतानिधातवः॥ जंगमाजं

गमंचेदं जगन्नारायणोद्भवम् १३८ योगोज्ञानंतथासांख्यं विधाशिल्पादिकर्मच ॥ वेदाःशास्त्राणिविज्ञानमेतत्सर्वंजनार्द्दनात् १३९ एको विष्णुर्महद्भूतंपृथग्भूतान्यनेकशः ॥ त्रींल्लोकान्व्याप्यभूतात्मा भुंक्ते विश्वभुगव्ययः १४० इमंस्तवंभगवतो विष्णोर्व्यासेनकीर्तितम् ॥ पठेद्यइच्छेत्पुरुषःश्रेयःप्राप्तुंसुखानिच १४१ विश्वेश्वरमजंदेवं जगतःप्रभवाप्ययम् ॥ भजंतियेपुष्कराक्षं नतेयांतिपराभवम् १४२ अर्जुनउवाच ॥ पद्मपत्रविशालाक्षपद्मनाभसुरोत्तम ॥ भक्तानामनुरक्तानांत्राताभवजनार्द्दन १४३ श्रीभगवानुवाच ॥ योमांनामसहस्रेण स्तोतुमिच्छतिपांडव ॥ सोहमेकेनश्लोकेन स्तुतएवनसंशयः १४४ नमोस्त्वनंतायसहस्रमूर्त्तयेसहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ॥ सहस्रनाम्नेपुरुषायशाश्वतेसहस्रकोटीयुगधारिणेनमः १४५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांसंहितायांवैयासिक्यांअनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेविष्णुसहस्रनामरूपःशतोपरिएकोनपंचाशततमोऽध्यायः १४९ ॥

शुभम्भवतु ॥

विष्णुसहस्रनामकी व्याख्या ॥

नत्वेन्दिराकान्तपदारविंदंनखप्रभान्यकृतचन्द्रखण्डम् ॥
करोम्यहंविष्णुसहस्रनाम भाषानुवादंकृतिनांप्रसत्त्यै ॥

एकसौउन्चासका अध्याय ॥

वैशंपायनने राजा जन्मेजयसे कहाकि हेराजा महाराजायुधिष्ठिरने पापके नाशक कल्याण और मोक्षके कारण पवित्र धर्मोंको संपूर्णताके सहित सबरीतिसे सुनकर भीष्मजीसे फिर यह आगे लिखेहुये प्रश्न किये १ प्रश्न १ लोकमेंदर्शनकेयोग्यसर्वसिद्धान्तोंका और विद्याओंका अस्थान महाप्रकाशमान ज्योतिस्वरूप एकही देवता कौनहै प्रश्न २ आवागमन वा संयोगकास्थान और वड़ामार्गरूप कौनहै प्रश्न३मनुकेपुत्र किसके गुणोंका कीर्त्तनकरते और किसका वाह्याभ्यन्तर नामसे पूजन करतेहुये सबस्वर्ग मोक्षादिक फलरूप कल्याणोंको पातेहैं २ प्रश्न४सब धर्मोंमें आप कौनसे धर्मको उत्तम

मानतेहैं बड़े उच्चस्वर समेत अपने सिवाय दूसरेको श्रवण न होनेवाला मानसी जीवात्मा किस जपकोकरके जन्म संसार बंधन से मुक्त होताहै ३ भीष्मजी बोले कि जो सदैव सावधान मनुष्य चराचर जगत्के स्वामी देवदेव अनन्त देशकाल बस्तु और कार्य्य कारणसे परेजो पुरुषोत्तमहै उसका सहस्त्रनामके द्वारा गुण कीर्त्तन करताहै वहपूर्ण होनेसे आनन्द स्वरूप होकर ४ प्रतिदिन उस अविनाशी सर्वव्यापी सर्वनिवासीपरमात्माको भक्तिसे पूजनस्तुति नमस्कार और ध्यानकरके प्रधान फलका भोक्ता होताहै ५ आदि अन्तसे रहित सर्व्वव्यापी और सब लोकोंकेस्वामी ब्रह्मादिकों के भीईश्वर सर्बलोकोंके महेश्वर सबप्रकाश रूपोंकेसाक्षात् देखनेवाले परमात्माको जो सदैव नमस्कार करताहै वह सब दुःखोंसे छूटता है ६ जो कि वेद ब्राह्मण आदिका रक्षक सर्व धर्मज्ञ अपनी सामर्थ्य देकर सबजीवोंकी शुभकीर्त्ति का वृद्धि करनेवाला लोकोंका प्रसिद्ध प्रकाशकर्त्ता और कीर्त्ति वर्द्धक होकर लोकनाथ महद्भूत अर्थात् स्वयंसिद्ध ब्रह्म और सब जीवोंकी उत्पत्तिका हेतुहै ७इसी धर्मको मैंने सबधर्मोंमें श्रेष्ठमानाहै जीवात्मा सदैव उसहृदयकमल में प्रकाशमान वासुदेवको स्तोत्रोंकेद्वारा प्रतिदिन पूजनकरताहै८ वह श्रेष्ठतमतेज कल्याण तपवाला उत्युत्तम महद्ब्रह्म सबसे परे सन्देह और आवागमनसे रहित बक्ताओंकाभी बक्ता होकरदेवताओंकाभीदेवताहै और वहीसबप्राणी मात्रोंका अविनाशीकर्त्ताहै१० प्रथम युगके प्रारंभमें सबजीव जिससे उत्पन्न होते हैं और नियत रहतेहैं और फिर प्रलय होनेपर जिसमें ऐसे लयहोते हैं जैसेकि घरके फूटनेपर प्रतिबिम्ब सूर्य्यमें लयहोताहै ११ हेराजा युधिष्ठिर इसलोक प्रधान जगन्नाथ सर्वव्यापी ब्रह्मके उससहस्त्र नामकोजो किपाप और भयकादूर करनेवालाहै तुममुझसे सुनो १२ उससहस्त्रनाममें उस महात्माके जोनाम गुणोंसे संबंध रखने वालेहैं और ऋषिलोग जिनको चारोंओर गातेहैं उन सबको मैं चारोंपुरुषार्थों की अर्थात् अर्थ धर्म काम मोक्षकी सिद्धीकेनिमित्त वर्णनकरता हूं१३

अथनामोंकीव्याख्या प्रारंभः॥

विश्व १ जगत्को उत्पन्न करके उसमें प्रवेश करनेवाला अथवा जिसमें सब संसार प्रवेश करताहै और जो प्रणवरूपहै इसबिश्व नामसे सगुण निर्गुण इनदोनों ब्रह्मोंकावर्णन होताहै, बिष्णु २सर्व व्यापी देशकाल और बस्तुके परिच्छेदसे रहित, बषट्कार ३ जिसको ध्यान करके बषटकिया जाताहै अथवाजिसयज्ञमें बषट्कार किया जाताहै वहयज्ञरूपबिष्णु, भूतभव्यभवत्प्रभुः ४भूतभबिष्यऔरबर्त्त-मानका स्वामी सन्मात्रके विरुद्ध तीनों कालोंको तिरस्कार करके ऐश्वर्य्यमान, भूतकृत् ५ रजोगुणमेंनियत होकर ब्रह्मारूपसे जीवोंका उत्पन्न करनेवाला अथवा तमोगुणमें नियत होकर रुद्ररूपसे जीवों का नाश करनेवाला, भूतभृत् ६ सतो गुणमें नियत होकर बिष्णु रूपसे जीवोंकी रक्षा और पोषण करनेवाला, भाव ७ प्रपंच रूपसे प्रकट होनेवाला अथवा केवल वासनात्मक होकरप्रकटहोनेवाला, भूतात्मा ८ जीवमात्रका आत्मा अथवा अन्तर्य्यामी, भूतभावन ९ जीवोंकोउत्पन्न और वृद्धियुक्त करनेवाला १४ पूतात्मा १० गुणजन्म कर्म दोष आदिसे पृथक् निर्गुण क्योंकि पुरुषका सगुणहोना केवल अपनी इच्छासेहै, परमात्मा ११ कार्य्य कारणसे बिलक्षण नित्यशुद्ध मुक्ति स्वभाव, मुक्तानांपरमागतिः १२ मुक्त पुरुषोंकालयस्थानक्योंकि उसमें लयहोकर फिरसंसारमें लौटकरनहींआते, अव्यय १३ नाशऔर रूपान्तर दशासे रहित, पुरुष १४ ब्रह्म पुररूपी शरीरमेंशयन करने वाला अथवा अनेक ईप्सित फलोंका देनेवाला अथवा प्रलय का लमें भुवनोंका नाश करनेवाला, शाक्षी १५ अभेद दृष्टि से सबका देखनेवाला क्षेत्रज्ञ, १६ क्षेत्रनामशरीरका ज्ञाता, अक्षर, १७ वहीअबि-नाशीहै और इसमें जोएवच, यह शब्दहै उससे क्षेत्रज्ञ और अक्षर को एकही कहा १५ योग १८ सब ज्ञानेन्द्रियोंको मनसमेत रोक कर एकताके होजानेको नामयोग्यहै जोकि वह योगसे प्राप्तहोताहै इसी हेतुसे योग्यरूपहै, योगविदांनेता १९ योगकोजानने वाले और प्राप्त करनेवालेजो योगीहैं उनके योगक्षेमकाप्राप्तकरनेवाला, प्रधा-

न, पुरुषेश्वर२०प्रधान नाम माया और पुरुषनाम जीव इनदोनोंका ईश्वर, नारसिंह बपु२१नृसिंह अवतार, श्रीमान् २२जिसकेहृदयमेंसदैवलक्ष्मी निवास करतीहै, केशव२३ब्रह्मा बिष्णुको अपने आधीनरखनेवाला अथवा केशी दैत्यकामारनेवाला, पुरुषोत्तम२४मायाजीवसे उत्तम १६ सर्व २५ मायाजीवका उत्पत्ति स्थान सर्वज्ञ, शर्व२६संसारकानाशकर्त्ता, शिव २७ तीनोंगुणोंसे पृथक् शुद्ध आनन्दस्वरूप, स्थाणु२८अचल भूतादि२६कारण रूपसे जीवमात्रकाआदि, निधि अव्यय ३० प्रलयकेसमय सबजगत् जिसमें प्राप्तहोताहै और वही अबिनाशी शेषरहजाताहै संभव ३१ इच्छाके अनुसार अवतारलेनेवाला, भावन३२भोक्ताओंको सब फलका देनेवाला, भर्त्ता ३३ प्रपंचका अधिष्ठाता औरउसका धारण करनेवाला, प्रभव ३४ महाभूतोंका उत्पन्नकरनेवाला अथवाजिसका जन्म उत्तमहै, प्रभु३५ सबकाकर्त्ता, ईश्वर ३६ उपाधिसे रहितऐश्वर्य्यका रखनेवाला १७ स्वयंभू ३७ अपनेआप उत्पन्न होनेवालासबसेपरे अथवा स्वतंत्र, शंभु ३८ भक्तों का सुखदेनेवाला, आदित्य ३९ सूर्य्यमंडलमें नियत भर्गनाम प्रकाशरूप अथवा बारहसूर्य्योंमें बिष्णु वा अखंडित पृथ्वीकास्वामी अथवा जैसेकि एक सूर्य्यबहुतसेजलपात्रोंमें प्रकाशित होताहै इसी प्रकार वही एक सबशरीरोंमें प्रकाशकरनेवालाहै, पुष्कराक्ष ४० जिसके नेत्र कमलकेसमानहैं अथवाहृदय कमलमें ब्याप्त, महास्वन ४१वेदरूप उत्तम शब्दका रखनेवालाक्योंकि वेद बिष्णुकी श्वासा हैं, अनादि निधन ४२जन्म मरणसे प्रथक्, धाता४३अनन्तादि रूप सेजगत्को धारण करनेवाला, बिधाता ४४ कर्म और कर्मके फल का उत्पन्न करनेवाला अथवा अनन्तादिकों का धारणकर्त्ता, धातुरुत्तम ४५ पृथ्वी आदिधातुओं से वा ब्रह्माआदिसे अथवा कार्य्य कारण से उत्तम चिदात्मा १८ अप्रमेय ४६ प्रत्यक्ष अनुमान वा उपमा आदि सेबिदित न होनेवाला केवल एकतासे प्रकट होने वाला, हृषीकेश ४७ साक्षीहोनेसे इन्द्रियोंका स्वामी क्षेत्रज्ञरूप अथवा इन्द्रियोंको स्वाधीन रखनेवाला परमात्मा सूर्य्य चन्द्रमा

रूपसंसारकी उत्पत्तिकरनेवाली ज्वालाओंका स्वामी, पद्मनाभ४८ सबजगत् का कारण रूप कमलजिसकी नाभिमेंहै, अमरप्रभु ४६ देवताओंका स्वामी, विश्वकर्मा ५० संसार को उत्पन्न करनाही जिसकी क्रियाहै अथवा बिश्वकर्मारूप मनुः ५१ मन्त्रकामननकरने वाला अथवा प्रजापति, त्वष्टा५२ प्रलय के समय सब जीवोंको सूक्ष्म करनेवाला, स्थविष्ट ५३ अत्यन्त स्थूल, स्थविरोध्रुव ५४ प्राचीन और चेष्टाओंसे रहित(१६) अग्राह्य ५५ मन और इन्द्रियों के बंधनमें न पड़नेवाला, शाश्वत ५६ सब समयपर वर्त्तमान कृष्ण ५७ कृष् शब्दका अर्थ संसार और न शब्दका अर्थ निवृत्ति इसी हेतुसे परब्रह्म कृष्णअवतार, श्याम सुन्दर, लोहिताक्ष ५८ रक्तनेत्र, प्रतर्द्दन ५६ प्रलयके समय जीवों का मारनेवाला, प्रभूत ६० ज्ञानऐश्वर्य्यआदि गुणोंसेयुक्त, त्रिककुब्धाम ६१ ज्येष्ठ मध्य लघु इन त्रिभागोंसे तीनोंलोक और तीनों वायु पृथ्वी और तेजका धामअर्थात्उत्पत्ति स्थान, पवित्र ६२ पवित्र करनेवाला वा करानेवाला ऋषि और देवताओंसेभी पवित्र वा बज्र से रक्षा करने वाला, परममंगल ६३ ध्यानमात्रसे पुरुषोंको परमानन्द देनेवाला परममंगलरूप(२०) ईशान ६४ सब जीवोंका अधिपति, प्राणद ६५प्राणदाता अथवा प्राणोंको चेष्टा देनेवाला कालरूप प्राणों काखंडनकर्त्ता अथवा प्राणोंका पवित्रकरनेवाला, प्राण ६६ क्षेत्रज्ञ परमात्मा प्राणोंका प्राण अथवा मुख्य प्राण, ज्येष्ठ६७सबके उत्पत्तिका कारण होनेसे वृद्धत्तम, प्रजापति६८ ईश्वरहोनेसेसबसृष्टिका स्वामी, हिरण्यगर्भ ६६ स्वर्णमयी अंडके मध्य में वर्त्तमान होने से ब्रह्मा, भूगर्भ ७० जिसके गर्भमें पृथ्वीहै, श्रेष्ठ ७१ सबसे अधिक होनेसेउत्तम, माधव ७२ मा नामलक्ष्मी और धवनाम पति अर्थात्लक्ष्मीकापति, मधुसूदन ७३ उसमधु दैत्य का मारने वाला जोकि विष्णुके कानके मैलसे उत्पन्न हुआथा (२१) ईश्वर ७४ सब शक्ति रखनेवाला, विक्रमी ७५ पराक्रमी, धन्वी ७६ धनुषधारी, मेधावी ७७ बहुतसेशास्त्रों काधारण कर्त्ता, विक्रम ७८

तीनचरणसे तीनोंलोकों को उल्लंघन करनेवाला, बामन अवतार, क्रम ७६ गवन शक्तिका देवता, अनुत्तम ८० जिससे उत्तम कोई नहीं, दुरधर्ष ८१ दैत्य आदिकोंसे अजेय, कृतज्ञ ८२ जीवोंकेशुभाशुभ कर्मोंका जानने वाला अथवा पत्र फल पुष्पादि थोड़ी भेंट से भी मोक्षका दाता, कृति ८३ सब का आत्मा होने से सब कर्म और उपायों में दिखाई देनेवाला, आत्मवान् ८४ अपने ऐश्वर्य्य में नियत(२२)सुरेश ८५ देवताओं का ईश्वर अथवा शुभफल देने वालोंका ईश्वर, शरण ८६ दुःखी लोगोंकी पीड़ादूर करनेसेर क्षास्थान, शर्म ८७ परमानन्दरूप, बिश्वरेता ८८ बिश्वकी उत्पत्तिकाबीज, प्रजाभव ८६ सब सृष्टि जिससे उत्पन्न होती है अह ६० प्रकाशरूप होने से दिवस रूप, संवत्सर ६१ काल रूपसे नियत विष्णु, व्याल ६२ सर्प के समान पकड़ने में न आनेसे व्यालनाम, प्रत्यय ६३ परिज्ञान ब्रह्म, सर्वदर्शन ६४ सबका आत्मा होने से सर्वज्ञ (२३) अज ६५ भूत भविष्य वर्त्तमान इनतीनोंकालोंमें कभी जन्म न लेनेवाला सबजीवोंकाक्षेत्रज्ञ, सर्वेश्वर६६सब ईश्वरोंकाभी ईश्वर, सिद्ध ६७ सदैव सिद्धरूप, सिद्धि ६८ सर्व बस्तुमेंबड़ाफलरूप, सर्बादि ६६ सबजीवों का आदि कारण, अच्युत १०० तीनोंकालमेंस्वरूप सामर्थ्यसेच्युत न होनेवाला, वृषाकपि१०१सब अभीष्टोंकीबर्षा करने से धर्मको बर्षणकहतेहैं कपि वराह को कहते हैं इन दोनों रूपोंका रखनेवाला, अमेयात्मा १०२ अत्यन्तात्म, सर्बयोग १०३ सब संगोंसे रहित, वसु १०४ सबजीव जिसमें नियत हैं और जो सबजीवोंमें नियतहै अथवा भगवद्गीताके बचन द्वारा बिश्वरूप, वसुमना १०५ बसुधनको कहते हैं परन्तु उत्तमता के अर्थको देताहै राग द्वेष आदि क्लेश औरअहंकारादि उपक्लेशोंसे शुद्धचित्तवाला, सत्य १०६ सत्यहोनेसे परमात्मा, समात्मा १०७ रागद्वेषसे रहितमनवाला सबजीवोंमें समान, सम्मित १०८ सबपदार्थोंमें वर्त्तमान और उनसेपृथक्, सम १०६ सब जीवोंमेंसब रूपान्तर दशासे रहित अथवा लक्ष्मी से युक्त, अ-

मोच २१० पूजित स्तुयमान और ध्यान करनेसे सब फलका देने वाला और उसकर्मको निष्फल न करनेवाला अथवा सत्यसंकल्प, पुंडरीकाक्ष १११ हृदय कमल में वर्त्तमान और प्राप्त होनेवाला अथवा कमल लोचन, वृषकर्मा ११२ जिसका चिह्न धर्महै ऐसा कर्मकरनेवाला, वृषाकृति ११३ धर्मकी स्थिरताके निमित्त अवतार लेनेवाला(२४।२५)रुद्र ११४ प्रलय के समय सृष्टिको नाशकरता हुआरोदन शब्द करनेवाला अथवा दुःखके कारणको भगानेवाला, बहुशिरा ११५ बहुतसे शिर रखने वाला, बिराट्बभ्रु ११६ सृष्टिको धारण और पोषण करनेवाला, बिश्वयोनि ११७ बिश्वका उत्पत्ति स्थान, शुचिश्रवा११८पबित्र और संशयके योग्य नाम रखनेवाला, अमृत११९ जीवन्मुक्त,शाश्वत,स्थाणु १२० सदैव रहनेवाला और चेष्टासे रहित,बरारोह १२१ जिसका लोक उत्तमहै अथवा जिसमें प्रवेश करनाउत्तमहै क्योंकि उसमें प्रबिष्टहोकर फिर नहीं लौटकर आता है, महातपा १२२ तपज्ञान ऐश्वर्य्य और प्रतापको कहते हैं जिसकाज्ञान सृष्टिको उत्पत्ति से सम्बन्ध रखनेवाला है अथवा जिसका ऐश्वर्य्य और प्रताप बड़ाहै (२६) सर्वग १२३ कारण रूप सेसर्वत्रव्याप्त, सर्वबिद्वानु १२४ सर्वज्ञ अथवा सबको अपनेमें नियत रखनेवाला और सूर्य्यादिकों में प्रकाश देनेवाला तेज, बिष्वक्सेन १२५ युद्धमें जिसके पहुंचतेही दैत्योंकी सेना भागजाती है, जनार्द्दन १२६ दुर्जनों का पीड़ा देने वाला मारनेवाला नरकमें डारनेवाला अथवा जिससे सबप्राणी कल्याण लक्षणवाले पुरुषार्थ को चाहतेहैं, वेद १२७ वेदरूप और आत्मा रूपसे सबमें नियतहोकर ज्ञानदीपक से अज्ञानरूपी अन्धकार का दूरकरनेवाला, वेदबिद्१२८ वेद और वेदार्थोंका जाननेवाला और उसको अपनेही में पानेवाला, अव्यंग १२९ ज्ञानादि अंगों से पूर्ण अथवा गुप्तवेदांग १३० वेदही जिस के अंगहैं, वेदबित् १३१ वेदों का विचारनेवाला,कवि १३२ भूतकालका ज्ञाता,सर्वदर्शी (२७) लोकाध्यक्ष १३३ प्रधानतासे सबलोकोंका द्रष्टा, सुराध्यक्ष १३४

लोकपालोंकी विजयआदि मनोरथोंके प्राप्तकरने के
दर्शन देनेवाला, धर्माध्यक्ष १३५ योग्य फलदेनेके
का देखनेवाला, कृताकृत १३६ कार्य्य कारणरूप, चतु
चारआत्मा रखनेवाला वह चारों प्रत्येक तीन२ प्रक
दक्ष आदि, काल, सबजीव, यहपहला प्रकार सृष्टिक
कारण है विष्णु, मनु आदि, काल, सबजीव यह दू
सृष्टिके निवास का कारण है, रुद्र, काल, यमराज और
यह तीसराप्रकार नाशका कारणहै विष्णुपुराणके अनुस
खाहै, चतुर्व्यूह १३८ उत्पत्ति स्थिति और सृष्टिके नाशके अ
को वासुदेव आदिक चारों प्रकारकी मूर्त्ति योंमें नियत क
चतुर्दंष्ट्र १३९ नृसिंह रूप, चतुर्भुज १४० चारभुजाधारी
भ्राजिष्णु १४१ प्रकाश एक रस, भोजन १४२ भोगरूप होनेसे
रूप, भोक्ता १४३ पुरुष रूपसे उस मायाका भोगनेवाला,
ष्णु १४४ हिरण्याक्ष आदिदैत्योंका जीतनेवाला, जगदादिज
सृष्टिकी आदिमें हिरण्यगर्भरूपसे उत्पन्न होनेवाला, अनघ
पापोंसेरहित, विजयी, जेता १४७ । १४८ ज्ञानवैराग्य और ऐश्वर्य्या
क गुणोंसे विश्वका विजयकरनेवाला विश्वयोनि १४९ विश्वजिस
उत्पत्तिस्थान है अथवा जो विश्वका उत्पत्तिस्थानहै, पुनर्वसु १५
क्षेत्रज्ञरूपसे बारंबार शरीरोंमेंनिवास करनेवाला (२६) उपेन्द्र १५
वामन नाम लघुरूपहोकर इन्द्रके पास रहने वाला अथवा इन्द्रसे
वहुत बड़ा, वामन १५२ भजन करनेके योग्य नाम अवतार जिस
को लेकर राजावलिसे याचनाकरी प्रांशु १५३ वही तीन चरणसे
तीनोंलोकोंको उल्लंघन करके ऊंचाहुआ जवपृथ्वीको उल्लंघन
कियाथा तव चंद्रमा और सूर्यकातोके स्थानपरथे औरजव आकाश
को उल्लंघन किया वह दोनों नाभिपरथे और जवस्वर्गको उल्लं-
घन किया, तव वहदोनों जंघाओंपर थे यह हरिवंशपुराणके अनु-
सार लिखाहै, अमोघ १५४ सफलकर्म वाला, शुचि १५५ ...
स्तुति और पूजनके करनेवालोंको पवित्र...

त १५६ अत्यन्त पराक्रमी, अतीन्द्र १५७ स्वभाव सिद्ध ज्ञान ऐश्वर्य्यादिक गुणोंसे इन्द्रको उल्लंघन करके नियत, संग्रह १५८ प्रलयके समय सबको अपने में लयकरनेवाला, सर्ग १५६ ब्रह्माण्डरूप अथवा सब सृष्टिरूप, धृतात्मा १६० जन्मआदिसे रहित एक रूपमें आत्माको धारण करनेवाला, नियम १६१ अपने २ अधिकारोंपर प्रजाको नियत करनेवाला, यम १६२ अन्तर्य्यामी रूपसे चेष्टावान्करनेवाला (३०) वैद्य १६३ कल्याणके इच्छावान् मनुष्योंसे जाननेके योग्य, वेद्य १६४ सबविद्याओंका ज्ञाता, सदायोगी १६५ सदैव प्रकाश रूपहोनेसे सदायोगी, वीरहा १६६ धर्मकी रक्षाके प्रयोजन से बड़े वीर असुरोंको मारने वाला, माधव १६७ विद्याका स्वामी, मधु १६८ अमृतके समान बड़ीप्रीति करनेवाला, अतीन्द्रिय १६६ पृथकताके कारणशब्दादि विषयोंसे रहित, महामाया १७० मायावी लोगोंको अपनी मायामें बंधनकरनेसे बड़ी मायावाला, महोत्साह १७१ उत्पत्ति स्थिति और सृष्टिके नाशमें प्रवृत्त होनेसे बड़े उत्साह वाला, महाबल १७२ पराक्रमियोंसे भी महापराक्रमी होनेसे बड़ा बलवान् (३१) महाबुद्धि १७३ बुद्धिमानोंका भी बुद्धिमान, महावीर्य्य १७४ महत्तत्त्व की उत्पत्तिका कारणजो अज्ञानहै उसीलक्षणवाले पराक्रमकारखनेवाला, महाशक्ति १७५ बड़ीसामर्थ्य रखनेवाला, महाद्युति १७६ बड़ा प्रकाश जो कि सब प्रकाशोंका भी प्रकाशहै, अनिर्देश्यवपु १७७ वाणीसे परे शरीरवाला, श्रीमान् १७८ ऐश्वर्य्य लक्षण लक्ष्मीरखनेवाला, अमेयात्मा १७६ सब जीवों की दृष्टिसे असंख्य बुद्धिवाला, महाद्रिधृक् १८० गौओं की रक्षा में गोवर्द्धन पर्व्वत को और समुद्र मथन में मन्दराचल को धारण करनेवाला (३२) महेश्वास १८१ बड़ाधनुषवाला, महीभर्ता १८२ महासमुद्रमें मग्न होकर देवीपृथ्वीको ऊपर उठानेवाला, श्रीनिवास १८३ जिसके हृदयमें अचललक्ष्मी निवासकरतीहै, सतांगति १८४ वैदिक साधु लोगों के पुरुषार्थ साधनकी प्राप्तीका कारण, अनिरुद्ध १८५ सब-

तारोंमें किसीसे पराजय न होनेवाला, सुरानन्द १८६ देवताओंको आनन्द देनेवाला, गोविन्द १८७ गुप्त हुई पृथ्वी का पानेवाला अथवा गोवाणी और पृथ्वीका स्वामी, गोविदांपति १८८ वक्ताओंके स्वामी (३३) मरीचि १८९ तेजस्वीकाभी तेजस्वीहोनेसे महातेज, दमन १९० अपने अधिकारमें भूलकरनेवाली सृष्टिकोदंड देनेवाला यमराज आदिकारूप, हंस १९१ संसारबंधनका तोड़नेवाला अथवा सब पुरीरूप शरीरोंमें वर्त्तमान, सुपर्ण १९२ सुन्दरपक्षधारी पक्षी शरीररूपीवृक्षपरनियत अथवाईश्वरकी विभूतिगरुड़ भुजंगोत्तम १९३ परमेश्वरकी विभूति वासुकी वा शेषनाग, हिरण्यनाभि १९४ सुवर्ण की समान कल्याणरूपनाभिवाला अथवा वह सुवर्णकी नाभिजिससे कमलउत्पन्न हुआ, सुतपा १९५ वदरिकाश्रम में नरनारायण रूपसे वहसुन्दर तप करनेवाला जो कि मन और इन्द्रियोंकोएकाग्रताचेहोता है, पद्मनाभ १९६ हृदय कमलकी नाभिमें प्रकाशमान प्रजापति १९७ प्रजाओंका स्वामी (३४) अमृत्यु १९८ जिसका नाश मृत्युसे नहींहै, सर्वदृक् १९९ स्वाभाविक ज्ञानसेजीवोंके किये और न किये हुये कर्मोंकाज्ञाता, सिंह २०० स्मरण करतेही सब पापोंका नाश करनेवाला, संधाता २०१ कर्म फलसे जीवोंको संयुक्त करनेवाला, संधिमान् २०२ फलभोक्ता, स्थिर २०३ सदैव एक रूपसे नियत, अज २०४ चेष्टाकरनेवाला अथवा चेष्टादेनेवाला, दुर्मर्षण २०५ दानवादिकोंसे अजेय, शास्ता २०६ श्रुति स्मृति आदिसे सबको शिक्षाकरनेवाला, विश्रुतात्मा २०७ ईश्वरके पहिचाननेवाले आत्माकाधारण करनेवाला, सुरारिहा २०८ असुरोंका मारनेवाला (३५) गुरु २०९ सब विद्याओंका उपदेश करनेसे वा सबका कर्त्ताहोनेसे गुरुरूप, गुरुत्तम २१० ब्रह्माआदिको ब्रह्मविद्या काउपदेश करनेसे वृद्धतम, धाम २११ ज्योतिःस्वरूप अथवा सब संसारके अभीष्टोंका निवासस्थान, सत्य २१२ सत्यका भी सत्य, सत्यपराक्रम २१३ सत्यपराक्रमी, निमिष २१४ योगनिद्रासे नेत्रोंको मीचनेवाला अनमिष २१५ सदाज्ञान स्वरूप व सच्छ

रूपहोने से नेत्रोंका बन्द न करनेवाला, स्रग्वी २१६ पंचभूतकी तन्मात्रा रूप बैजयन्ती नाम मालाका धारण करनेवाला, वाचस्पतिरुदारधी २१७ विद्या का स्वामी और सब सूक्ष्म स्थूल को जाननेवाली बुद्धिका अधिपति (३६) अग्रणी२१८ मोक्षाभिलाषियों को परमपदकादेनेवाला, ग्रामणी २१९ जीव समूहोंका अधिपति श्रीमान् २२० सबसे अधिककान्ति रखनेवाला, न्याय २२१ सिद्धान्त का प्रकट करनेवाला, न्यायशास्त्रनेता २२२ जगत्यात्रा निर्बाहक, समीरण २२३ प्राण रूप वायुसे सबजीवों को चेष्टा युक्त करने वाला, सहस्रमूर्द्धा २२४ हजारों मस्तक रखनेवाला, बिश्वात्मा २२५ विश्वका आत्मा, सहस्राक्ष २२६ हजार नेत्र रखनेवाला, सहस्रपात् २२७ (३७) हजार चरण रखनेवाला, आवर्त्तन २२८ संसारचक्रको घुमानेवाला, निवृत्तात्मा २२९ संसार बंधनसे पृथक् रूपवाला, संवृत्त २३० गुप्तकरनेवाली अविद्यासे ढकाहुआ, संप्रमर्द्दन २३१ रुद्रकालआदि बिभूतिसे मर्द्दनकरनेवाला, अहस्संवर्त्तक २३२ दिनके जारी करने से सूर्य्यरूप, वह्नि २३३ होमके शाकल्यादि पदार्थोंको धारण करके देवताओंके पास पहुंचानेवाला, अनिल २३४ जगत्का प्राणरूप, धरणीधर २३५ शेष दिग्गज और बराह रूपसे पृथ्वीको धारणकरनेवाला (३८) सुप्रसाद २३६ अपमान करनेवाले शिशुपालादिकों को भी मोक्ष देने से श्रेष्ठ कृपालु दयालु, प्रसन्नात्मा २३७ रजोगुण तमोगुणसे शुद्ध अन्तःकरण अथवादयालु रूपसे स्वच्छमन अथवा संपूर्ण अभीष्ट सिद्ध होनेसेप्रसन्नचित्त, बिश्वधृक् २३८ विश्वका बिजयी, विश्वभुक् २३९ बिश्वका भोग करने और करानेवाला, विभु २४० हिरण्यगर्भ आदि रूप से अनेक प्रकारका होनेवाला, सत्कर्त्ता २४१ पूजन करने वाला सत्कृति २४२ पूजित देवताओं से भी पूजित, साधु २४३ न्यायके अनुसार कर्म कर्त्ता, साधक, साध्य रूप, जह्नु २४४ अज्ञानियोंका नाशकरनेवाला और भक्तोंको परम पददेनेवाला, नारायण २४५ नरआत्माको कहतेहैं और आत्मासे

उत्पन्न आकाशादिक नारा कहलाते हैं उन सब सृष्टियों के कर्त्ता रूपसे कृपास करता है इसी हेतुसे वह उसके आश्रय स्थानहोते हैं अथवा जो जीवात्माओं के अयका स्थान है इसलिये उसको नारा यणा कहते हैं, नर २४६ जीवआत्माओं को अपने में लय करनेवाला परमात्मा (३६) असंख्येय २४७ जिसमें संख्याके अनुसार नामरूप आदि वर्त्तमान नहीं हैं, अप्रमेयात्मा २४८ जिसका स्वरूप वाणीकी इन्द्रियोंसे बाहर है, वशिष्ठ २४६ विश्वसे श्रेष्ठतर, सृष्टिकृत् २५० वेदव-चनरूप शिक्षा करनेवाला अथवा श्रेष्ठपुरुषोंको उत्पन्न और पोषण करनेवाला, शुचि २५१ निरंजन, सिद्धार्थ २५२ जिसकेसब मनोरथ पूरे होनेवाले हैं अर्थात् सत्यकाम, सिद्धसंकल्प २५३ अर्थात् जो इच्छा करे वही होजाय, सिद्धि २५४ कर्त्ता लोगों को अधिकारके अनु-सार उनके कर्म फलका देनेवाला, सिद्धिसाधन २५५ क्रियाका साधन करनेवाला (४०) वृषाही २५६ धर्म प्रकाशक बारह दिन आदि में होनेवाले वृषाहनाम यज्ञ का रूप, वृषभ २५७ भक्तों पर कामनाओंकी वर्षा करनेवाला, विष्णु २५८ गतिका स्वामी, वृषपर्वा २५९ परमधाममें चढ़नेवालोंके लिये धर्मरूप दंड रखने वाली सीढ़ी, वृषोदर २६० जिसका उदर सृष्टि की वर्षा करताहै तात्पर्य यह है कि सब सृष्टि उसके उदरमें है, वर्द्धन २६१ वृद्धि कर्त्ता, वर्द्धमान २६२ प्रपंचरूपसे बढ़नेवाला, विविक्त २६३ ऐसे संयुक्त होकरभी पृथक् स्थित रहनेवाला, श्रुतिसागर २६४ जिस प्रकार समुद्रमें जलनियतहै उसीप्रकार उसमें श्रुतिनियतहैं (४१) सुभुज २६५ संसारके रक्षाकरनेवाली सुन्दर भुजाओं को रखने वाला, दुर्धर २६६ अन्यलोगोंसे असह्य लोक धारण करनेवाली पृथ्वीआदिको धारणकर्त्ता और आप किसीसे धारण न होनेवाला अथवा मोक्षाभिलाषियोंके ध्यानके समय बड़ी कठिनता से धारण होनेवाला, वाग्मी २६७ जिस से वेद रूप वचन प्रकट हुआ महेन्द्र २६८ बड़ा इन्द्र अर्थात् ईश्वरोंका भी ईश्वर, वसुद २६९ धनकादेनेवाला, वसु २७० धनरूप अथवा मायासे आत्मस्वरूप

कोगुप्तकरनेवाला व अन्तरिक्षमें स्थित रहनेवाला सूर्य्यादिकरूप, नैकरूप २७१ मायासे बहुत रूप रखनेवाला बृहद्रूप २७२ बड़े पृथ्वीतलको धारणकरनेवाला, शिपिविष्ट २७३ पशुओं में यज्ञमूर्त्ति नियत यज्ञ अथवा किरणोंके मध्यमें नियत प्रकाश २७४ सबका प्रकाश करनेवाला (४२) ओजस्तेजोद्युति धर २७५ बलप्राण शूरताआदिगुण, ज्ञानलक्षणवालाप्रकाश, इनतीनोंको धारणकरने वाला, प्रकाशात्मा २७६ प्रकाश स्वरूप आत्मावाला प्रतापन २७७ सूर्य्यादि बिभूतियोंसे बिश्वका संतप्तकरनेवाला,ऋद्धि २७८ धर्म ज्ञान वैराग्यआदिसे संयुक्त,स्पष्टाक्षर २७६ जिसका अक्षर उदात प्रणव लक्षणवालाहै,मन्त्र २८० ऋगयजुसाम लक्षणवाला मन्त्र अथवा मन्त्रसे जाननेके योग्य, चन्द्रांशु २८१ संसारवसूर्य्यके तापसे संतप्तचित्ती मनुष्योंको चन्द्रमाकी शीत किरणोंके समान आनन्ददेनेवाला, भास्करद्युति २८२ सूर्य्यके समान प्रकाश करनेका अभ्यासी(४३)अमृतांशूद्भव २८३ समुद्र मथनके समय जो अमृत रूप किरण रखनेवाला चन्द्रमा प्रकटहुआ उसका उत्पत्ति स्थान,भानु २८४ प्रकाशमान जिसके प्रकाशकरनेसे सब प्रकाश्य पदार्थ प्रकाशित होतेहैं,शशिबिन्दु २८५ चन्द्रमाके समान सब सृष्टिको प्रफुल्लित करनेवाला सुरेश्वर २८६ अभीष्ट सिद्धकरने वाले देवताओंका ईश्वर औषध २८७ संसार रोगकी औषध, जगतःसेतु २८८संसारका पुल अर्थात् संसारसे पारहोनेका कारण अथवा बर्णाश्रमी धर्मके ओतप्रोतन होनेका कारण, सत्य, धर्म, पराक्रम २८६ जिसका धर्म ज्ञानआदिक पराक्रम निष्फल नहीं है(४४)भूतभव्यभवन्नाथ २६० भूत भविष्य बर्त्तमान इनतीनों कालके जीवोंका अभीष्ट और प्यारा और अप्रिय कर्मोंसे चित्त को दुखदेने वाला और जिससे सबजीव अपने कल्याणका आशीर्वाद चाहतेहैं पवन २६१ पवित्र करने वाला अथवा तीव्रगामी वायु पावन २६२ अग्नि और वायुआदिरूपसे सबजीवों को पवित्र और चेष्टा युक्त करने वाला, अनल २६३ प्राणोंको आत्मभावसे पूर्ण

करनेवाला वा पोषण करनेवाला या गन्धादिक गुणोंसे पृथक् अथवा असंख्य अपार, कामहा २९४ मोक्षके अभिलाषी भक्त लोग अथवा हिंसकों की कामनाओं को नाश करनेवाला, काम प्रद२९५ भक्तोंके अभीष्टोंकोअधिकतासे देनेवाला, कामकृत २९६ इच्छावानों की इच्छापूर्ण करनेवाला अथवा पितारूप होकर प्रद्युम्नकोउत्पन्न करनेवाला कान्त२९७ मनोहर ब्रह्माके लयहोने का स्थानसबसंसारका प्रिय,काम २९८ पुरुषार्थ चाहनेवालों का अभीष्टकामप्रद २९९ भक्तोंके अभीष्टको अधिकतर देनेवाला, प्रभु ३००अत्यन्तप्रकट होनेवाला श्रेष्ठ ऐश्वर्य्यमानसबकास्वामी(४५) युगादिकृत३०१ युगादिकाकर्त्ता अथवा यज्ञादिकों का प्रारंभकरने वाला,युगावर्त्त ३०२ काल रूप से सतयुग आदिको भ्रमण कराने वाला, नैक माय ३०३ बहुतसीमाया रखने वाला महाशन ३०४ प्रलय काल में सब के निगल जाने से बहुत भोजन करने वाला, अदृश्य ३०५ सब इंद्री और बुद्धि से परे गुप्त रूप, व्यक्त ३०६ रूप, स्थूल रूप वास्वयं प्रकाश अथवा योगियों को प्रत्यक्ष होनेसे प्रत्यक्ष रूप वाला, सहस्रजित्, ३०७ हजारों असुरों को बिजय करनेवाला, अनन्तजित् ३०८ अनन्त शक्तिहोनेसे युद्धक्रीड़ा आदि-में सब जीवों को बिजय करने वाला(४६)इष्ट, ३०९ दूसरोंका आ-नन्द दाता होने से अथवा यज्ञ में पूजित होने से सब का प्यारा, विशिष्ट, ३१० सब का अन्तर्यामी होने वा सबसे परे होने से श्रेष्ठ तम, शिष्ट ३११ ज्ञानियोंका प्रिय अथवा ज्ञानीही जिसको प्यारे हैं या श्रेष्ठ पुरूषोंसे पूजित शिखंडी ३१२ मोर मुकुट रखने वाला गोप सहस्रधारी नहुष ३१३ माया से जीवों को बांधने वाला वृष ३१४ मनोरथों की वृष्टि करने वाला धर्म, क्रोधहा ३१५ साधुओं के क्रोध का नाश करने वाला क्रोध कृत्कर्त्ता ३१६ जो असाधुओं पर क्रोध करने वाला और संसार का कर्त्ता अथवा क्रोध करने वाले दैत्यों का मारने वाला विश्वबाहु ३१७ संसार के स्थिर रखने के निमित्त विश्वमें जिसकी भुजाहैं,महीधर, पूजाऔर

पृथ्वी का धारण करनेवाला (४७) अच्युत ३१८ छः प्रकार की बिपरीत दशा से रहित प्रथित ३१९ संसार के अत्यन्त कर्म से प्रसिद्ध, प्राण ३२० सूत्रात्मा रूपसे सृष्टिको सजीव रखने वाला, प्राणद ३२१ देवता और असुरों को बलका देने वाला, बासवानुज ३२२ कश्यपजीसे अदितीमाता के गर्भ से उत्पन्न इंद्र का छोटा भाई अपांनिधि ३२३ जलों का समुद्र रूप निवासस्थान, अधिष्ठान ३२४ उपा दान कारण होने से सब जीवों का निवास स्थान ब्रह्म, अप्रमत्त ३२५ कर्त्ता लोगों को उनके कर्म के अनुसार फल देनेमें बिस्मरण न होने वाला, प्रतिष्ठित ३२६ अपनी महान्ता में नियत(४८)स्कन्द ३२७ अमृत रूप से चेष्टावान अथवा बायु रूप से प्रसन्न करने वाला स्कन्दधर ३२८ धर्मपथका धारण करने वाला, धुर्य्य, ३२९ सब जीवों के जन्मादिक कालक्षण बरद ३३० मनबांछित बरोंका देनेवाला, अथवा यजमान रूपसे दक्षिणादेनेवाला बायुबाहन ३३१ सातोंबायुओं को चलानेबाला, बासुदेव ३३२ सब में स्थित स्थिरता देने वाला औरसबको माया से ढकने वाला बासु कहाताहै और जो क्रीड़ा अथवा व्यवहार और सबके विजय करने की इच्छा करताहै वह ज्योति स्वरूपहै और मोक्षाभिलाषियों से स्तूयमान होकर इच्छा किया जाताहै उसको देव कहतेहैं इन दोनों शब्दों के मिलने से बासुदेव नाम हुआ और जैसे सूर्य्य अपनी किरणों से जगत को व्याप्त करताहै उसी प्रकार यह भी अपनी बिभूतियों से जगत को व्याप्त करताहै औरजो सब जीवों का निवास स्थान है उसको वासुदेव कहतेहैं,बृहद्भानु ३३३ जिसकी किरणें सूर्य्य और चन्द्रमा आदिमें वर्त्तमान होकर सब सृष्टि भरको प्रकाशित करतीहैं आदिदेव, ३३४ सृष्टिकी उत्पत्तिका कारण ज्योतिस्वरूप, पुरन्दर ३३५ असुरोंके पुरोंका चीरने और तोड़ने वाला(४९) अशोक ३३६ शोकादि छः उर्म्मियों से पृथक् तारण ३३७ संसार सागर से तारने वाला,तार ३३८ गर्भ, जन्म जरा, मरण रूप मृत्युके भयसे छुटाने वाला,शूर ३३९ पराक्रमी,

शौरि ३४० शूरकुलमें उत्पन्न होनेवाला जनेश्वर ३४१ जीवात्मा-
ओं का ईश्वर अनुकूल ३४२ आत्मरूपसे सबका अनुकूल क्योंकि
कोई अपनाविरोधी नहींहोता, शतावर्त्त ३४३ धर्मके जारीकरनेकेहेतु
सैकड़ों जन्मलेने वाला अथवा प्राणरूपसे सैकड़ों नाड़ियोंमेंवर्त्त-
मान पद्मी ३४४ हाथमें कमल रखनेवाला पद्मनिभेक्षण ३४५ कमल
के समाननेत्र रखनेवाला (५०) पद्मनाभ ३४६ नाभिमें कमलपर
नियत अथवा चतुर्दश भुवनरूप कमल जिसकीनाभिमेंहै, अरविन्दा
क्ष ३४७ कमल लोचन, पद्मगर्भ ३४८ हृदयकमलमें उपासनाके
योग्य, शरीर भृत् ४४६ अन्न और प्राणरूप से अथवा अपनी मा
यासे जीवात्माओंके शरीरको धारण करनेवाला, महर्द्धि ३५०
जिसकी विभूति महानहै ऋद्ध ३५१ प्रपंच रूपसे वृद्धिपानेवाला,
वृद्धात्मा ३५२ जिसकाआत्मा पुरातनहै, महाक्ष ३५३ बड़ेनेत्र वा
वड़ा छत्र धारण करनेवाला, गरुड़ध्वज ३५४ जिसकी ध्वजामें
गरुड़का चिह्नहै (५१) अतुल ३५५ अनूपमक्योंकि उसके समान
कोईनहींहै शरभ ३५६ शरीरोंमें चिदात्मारूपसे प्रकाशमान भीम
३५७ जिससे सब भयभीत रहतेहैं, समयज्ञ ३५८ उत्पत्ति, स्थिति
और लयके समयकाज्ञाता छओंकालकाज्ञाता अथवा सबजीवमा-
त्रोंमें समदर्शीहोनाही जिसका पजनहै हविर्हरि ३५६ यज्ञोंमें हव्य
केभागोंका हरनेवाला सब पापोंका नाशकर्त्ता अथवा हरित वर्ण
सब लक्षण लक्षण्य ३६० जिसका ज्ञान सब प्रमाणोंसे कहागया,
लक्ष्मीवान् ३६१ जिस के हृदय में लक्ष्मी सदैव निवास करतीहै,
समितिंजय ३६२ युद्ध में विजय करनेवाला (५२) विक्षर ३६३
अविनाशी, रोहित ३६४ अपनी इच्छासे मत्स्यावतार लेनेवाला,
मार्ग ३६५ मोक्षके अभिलाषी जिसकोखोजते हैं और जो परमान-
न्दको प्राप्तकरताहै हेतु ३६६ अपादान कारण दामोदर ३६७ जि
तेन्द्री होकर जोउत्तम गति प्राप्तहोती है उसके द्वारा मिलनेवाला
यशोदा जीने जो उदरमें रस्सीसे वांधा इस हेतुसे अथवा जिसके
उदरमें सृष्टिभरेके नाम हैं, सह ३६८ सबको विजय करने वाला

और सबका सहनेवाला महीधर ३६९ पर्वत रूपसे पृथ्वीका धारण करनेवाला, महाभाग ३७० इच्छानुसार अवतार लेकर श्रेष्ठ भोगोंकोभोगनेवाला, वेगवान ३७१शीघ्रगामी,अमिता ३७२ अन, प्रलयके समय बिश्वका भक्षण करनेवाला (५३) उद्भव ३७३ सृष्टि का उपादान कारण अथवा संसारअसंयुक्त, क्षोभण ३७४ उत्पत्तिके प्रकृति पुरुषमें प्रवेशकरके उन सबको चलायमान करनेवाला, देव ३७५ उत्पतिके द्वारा क्रीड़ाबाजीकरनेवाला असुरादिकों को बिजय करनेवाला आत्मारूप से सब जीवोंमें व्यवहारी प्रकाशमानस्तोत्रों से स्तूयमानसर्व प्रियसर्वत्रवर्त्तमान, श्रीगर्भ३७६ जगतरूपबिभूति जिसके उदरमें नियतहै परमेश्वर३७७ जोश्रेष्ठ सबसेपरे और अपनी आज्ञा करनेकाअभ्यासीहै करण३७८सृष्टिकीउत्पत्तिमें बड़ासाधक, कारण३७९ उपादान निमित्त जैसेकिघटकाउपादानमृत्तिकाहै, कर्ता ३८०स्वतन्त्रकर्ता,बिकर्ता ३८१बिचित्रभवनोंका उत्पन्नकरनेवाला, गहन३८२ जिसकी स्वरूप सामर्थ्य और कर्मकाजानना असंभवहै गुह ३८३मायासे अपनेको गुप्तकरनेवाला (५४) व्यवसाय ३८४ सच्चिन्मात्र स्वरूप,व्यवस्थान ३८५ जिसमें सब नियतहों और जो लोकपालोंकेअधिकार चारोंप्रकारकेजीवचारोंवर्णऔर चारोंआश्रमों के धर्मोंको पृथक्२विचार करनेवाला, संस्थान ३८६ जिसमें जीवधारी नियतहैंअथवा जो सबकी लयका स्थानहै स्थानद ३८७ध्रुव आदिकोंको उनकेकर्मके अनुसार स्थानदेनेवालाध्रुव, ३८८ अबिनाशी,परर्द्धि ३८९ जिसकीबिभूति सर्वोत्तमहै, परमःस्पष्ट ३९० बड़ा शोभायमान अथवा सबसेपरे और सिद्धरूप होनेसे स्वतन्त्र स्तुष्ट ३९१परमानन्द एक रूप होनेसे आनन्द स्वरूप,पुष्ट३९२ सदैव परिपूर्ण होने सेपुष्टरूप,शुभेक्षण ३९३ जिसकाशुभदर्शनजीवात्माओंका कल्याण करनेवाला, मोक्षाभि लाषियों को मोक्षका देने वाला भोगियों को भोग पापियों को पापभागी करने वाला सब सन्देहोंका दूर करने वाला मनकी ग्रन्थीका छेदन करने वाला सब कर्मोंको पृथक् और अबिद्या को दूर करनेवाला, राम ३९४

जिस सच्चिदानन्द स्वरूपमें योगीजन रमतेहैं अथवा अपनी इच्छा-
सेअवतार लेनेवाला श्रीरामचन्द्र, विराम ३६५ जिसमें जीवोंका
अन्त होताहै, विरज ३६६ जिसकी प्रीति स्पर्शादिक विषयोंमें नहीं
है मार्ग ३६७ मोक्षाभिलाषी जिसको जानकर अविनाशी होतेहैं
वही मार्गहै उसका दूसरा मार्ग कोई नहींहै नेय ३६८ पूर्ण ज्ञान
से परमात्मा रूप होने वाला जीवात्मा, नय ३६९ मुक्ति आदिसे
संयुक्त होनेवाला, अनय ४०० जिसपर दूसरा कोई नियन्ता नहीं
है अथवा जिसके दूसरा आवागमनका नहींहै, वीर४०१ पराक्रमी,
शक्तिमतां श्रेष्ठ ४०२ ब्रह्मादिक कर्त्ताओं का श्रेष्ठकर्त्ता, धर्म ४०३
सब जीवोंका धारण, करनेवाला अथवा धर्मोंसेजिसका पूजनादिक
होताहै धर्म विदुत्तम ४०४ श्रुति स्मृतिही जिसकी आज्ञाहैं वही
धर्मज्ञोंमें श्रेष्ठहै (५६) बैकुण्ठ ४०५ नाना प्रकारके आवागमनों-
का बन्द करने वाला सृष्टिकी, उत्पत्ति के समय जुदे२ तत्त्वों को
परस्पर में मिला कर ऐसा नियत करने वाला है जैसे कि पृथ्वी
को जलसे आकाशको वायुसे और वायुसे अग्निको मिलाया
है कि वह पृथक् नहीं होसके पुरुष ४०६ सबसे आदि सब
पापोंका दूर करने वाला पुरीरूप शरीरों में निवास करनेवाला,
प्राण ४०७ क्षेत्रज्ञ रूपसे चेष्टा करने वाला प्राण, प्राणद ४०८
प्रलयादिकोंमें जीव धारियोंके प्राणोंका खंडन करनेवाला अथवा
उत्पात्यादिकों में अन्तर्यामी रूपसे प्राणोंका देनेवाला, प्रणव
४०९ देवताओं को जोप्रणाम करताहै वा कियाजाताहै वहप्रण
है अर्थात् बड़ा श्रेष्ठ प्रणव नामहै, पृथु ४१० प्रपंच रूपसे विस्तार
पाने वाला हिरण्य गर्भ, ४११ उत्पत्तिका हेतु हिरण्य गर्भ अथवा
सुवर्ण रूप ब्रह्माण्ड जिसके वीर्य्यसे उत्पन्न हुआ वह उसका गर्भहै
शत्रुघ्न ४१२ देवताओं के शत्रुओंका मारनेवाला, व्याप्त ४१३
कारण रूपसे सबकार्य्यों में व्याप्त, वायु ४१४ गन्ध उत्पन्नकरने
वाला गन्ध रूप क्योंकि भगवद्गीता में भी कहाहै कि पृथ्वी में
गन्ध मैंहूं, अधोक्षज ४१५ बुद्धिसे परे इन्द्रियों से बाहर औरइन्द्रि-

योंके जीतने वाले योगियों को प्रत्यक्ष होने वाला अथवा इस ब्रह्माण्ड के दोभागहैं एक अध अर्थात् पृथ्वीसे पाताल तक दूसरा अक्ष अर्थात् अन्त रिक्षसे सत्य लोक पर्य्यन्त उनको उत्पन्न करके उनके मध्यमें बिराट रूपसे प्रकट होनेवाला अथवा अपने स्व-रूपसे च्युतन होनेवाला(५७) ऋतु ४१६ कालात्मा रूप होकर ऋतु शब्दसे दृष्ट गोचर होने वाला, सुदर्शन ४१७ जिसका ज्ञान निर्वाण अर्थात् मोक्ष फलका देने वालाहै अथवा जो अपनीइच्छा से सुन्दर शरीर को धारण करने वालाहै वाभक्तलोगों को सुखसे दिखाई देताहै, काल ४१८ जो सबकी संख्या करताहै वह काल पुरुष, परमेष्ठी ४१६ जो अपनी महानता में वा हृदयाकाश में नि-यतहै परिग्रह ४२० सब स्थान में बर्त्तमान होने से सब ओर से शरण होंने वाले भक्त जिसकी शरण लेतेहैं अथवा जो चारोंओर से जाना जाताहै अथवा भक्तोंके अर्पण कियेहुयेपत्र पुष्पोंकोअंगी-कार करनेवाला, उग्र ४२१ सूर्य्यादिकोंके भयका कारण होने से भयका उत्पन्नकरनेवाला क्योंकि सब उसी के भयसे अपने अपने कर्म में प्रवृत हैं, संबत्सर ४२२ जिस में सबजीव निबास करतेहैं, दक्ष ४२३ जगत्रूपसे वृद्धिको पाकर सबकर्मों के शीघ्र करने में सावधान, बिश्राम ४२४ इससंसार सागरमें जोपुरुष क्षुधा तृष्णा आदि छःऊर्म्मी वा अबिद्या आदि महाक्लेश और मदादिक उप क्लेशों में बधेहुये विश्रामके अभिलाषी हैं उनकोकुशल और मोक्ष का करने वाला, बिश्वदक्षिण ४२५ संसारकास्वामी वा संसारके कर्मोंमें सावधान (५८) विस्तार ४२६ जिससे सबबिस्तार प्रकट होतेहैं, स्थावरः स्थाणु ४२७ निवासकरनेका अभ्यासी और पृथ्वी आदिका निवासस्थान प्रमाण ४२८ ज्ञानस्वरूप होनेसे प्रमाण वा प्रत्यक्षादिक प्रमाण, बीजमव्यय ४२६ अबिनाशी उत्पत्तिका कारणअर्थ ४३० आनन्दस्वरूपहोनेसे सबकाप्यारा, अनर्थ ४३१ अभीष्ठ सिद्धहोने में अनिच्छावान, महाकोश ४३२ अन्नमयादिक कोश जिसकोढकनेवालेहैं, महाभोग ४३३ जिसका आत्मस्वरूपही

बड़ा सुखहै, महाधन ४३४ जिसका धन बड़ेभोगोंका साधनकरने वाला है (५६) अनिर्विघ्न ४३५ सब मनोरथ सिद्धहोनेके कारण प्रसन्न, स्थविष्ट ४३६ बिराट रूपसे नियत अभूत वा अभूः ४३७ अजन्मा अथवा पृथ्वीरूप, धर्मयूप ४३८ जिसरीतिसे यज्ञस्तंभसे बंधेहुये पशु स्वर्गगामी होतेहैं उसीप्रकार उससे मिलनेवाले भक्त संसार बंधनसे छूटजाते हैं महामख, ४३९ जिसके अर्पण होने वाले यज्ञ निर्वाण लक्षण काले फलको देतेहैं और अच्छी वृद्धि पातेहैं, नक्षत्रनेमि ४४० नक्षत्र तारागणों समेत चन्द्रमा सूर्य्यादि ग्रह वायुके पाशके द्वाराध्रुवसे बंधेहुयेहैं वहज्योतिषचक्रको घुमाताहुआ ध्रुव शिशुमार चक्रके पुच्छस्थानपर नियतहै नेमि अर्थात् रथकेसमान घूमता उसशिशुमार चक्रकाहृदय विष्णुहै, नक्षत्री ४४१ नक्षत्रोंमें चन्द्रमारूप, क्षम ४४२ सब कर्मोंका कर्त्ता अथवा सहनशील, क्षामः ४४३ सब बिनाशवान सृष्टिमें आत्मा रूपसे नियत, समीहन ४४४ संसार की उत्पत्तिके प्रयोजन से अच्छी २ चेष्टा करनेवाला (६०) यज्ञ, ४४५ सबयज्ञोंका स्वरूप अथवा यज्ञनाम सृष्टिकीउत्पत्तिका हेतु विष्णु ईज्य ४४६ यज्ञकाफलदेनेसे पूजनके योग्य क्योंकि यज्ञों में जोदेवताओंका पूजनहै वह उसी विष्णु का पूजनहै, महेज्य ४४७ पूजनीय देवताओंमें अधिकतम यहीपूजन के योग्यहै क्योंकि मोक्ष फलका देनेवालाहै, क्रतु ४४८ यज्ञस्तंभ से युक्तयज्ञ, सत्र ४४९ सत्रनाम यज्ञका स्वरूप अथवा सत्पुरुषों की रक्षा करनेवाला, सतांगति ४५० मोक्षाभिलाषियों का लय स्थान, सर्वदर्शी, ४५१ सब जीवोंके किये वा बिना कियेहुये कर्मों को स्वाभाविक ज्ञानसे देखने वाला, बिमुक्तात्मा, ४५२ स्वभाव से मुक्तआत्मारूपसर्वज्ञ, ४५३ सर्व रूपब्रह्म, ज्ञान मुत्तम ४५४ पूर्ण ज्ञानस्वरूप (६१) सुव्रत ४५५ सुन्दर व्रतवाला जैसे कि रामायण में श्रीराम चन्द्रजीने कहाहै कि मैं तेरा हूं ऐसा एकबार भीजो जीव कहते हैं उनको उसीएक बारगी के ही कहनेपर निर्भयता देताहूं यही मेरा व्रतहै, सुमुख ४५६ प्रसन्नमुख क्योंकि

राज्यसे रहित होकर बनमें जानेवाले श्रीरामचन्द्र जीका चित्तव्याकुल नहींहुआ अथवा सब विद्याओंके उपदेशकरनेसे सुन्दर मुख, सूक्ष्म ४५७ शब्दादिक विषय जो आकाशादि तत्वोंकी स्थूलताके कारण हैं उनसे पृथक् होनेसे सूक्ष्म, सुघोष ४५८ जिसका शब्द प्रसन्न वेदरूप है अथवा मेघके समान बिशाल औरगंभीर है, सुखद ४५६ शुभ कर्मियोंको सुखदायी और अशुभ कर्मियों का नाश करनेवाला, सुहृत् ४६० प्रतीकारकी इच्छा बिनाही उपकार करने वाला, मनोहर ४६१ परमानन्दरूप से मनको हरने वाला पूर्णब्रह्म, जितक्रोध ४६२ वेदमार्गको नियत करता हुआ असुरादिकों को मारताहै क्रोधसे नहीं मारताहै क्योंकि सबका आत्मा रूपहै, बीरबाहु ४६३ असुरोंकेमारने और वेदमार्गके स्थापनमें जिसकी भुजा पराक्रम से शोभायमानहैं, बिदारण ४६४ अधर्मियों का नाशकरने वाला ६२ स्वापन ४६५ मायासे सब जीवोंको निद्रारूपमोहमें डालनेवाला, स्वबश ४६६ उत्पत्तिस्थिति और लयका हेतुरूप होनेसे स्वतंत्ररूप, व्यापी ४६७ आकाशके समान सबका कारण होनेसे व्याप्त, नैकात्मा ४६८ सबप्रत्यक्षसृष्टिसे बहुत प्रकारसे नियत, नैककर्मकृत ४६६ उत्पत्ति पालनादिक अनेक कर्मोंका करनेवाला, बत्सर ४७० यहां सब में निवास करने वाला, बत्सल ४७१ भक्तोंपर स्नेहकरने वाला, बत्सी ४७२ जगत्का पिता क्योंकि सबप्रजा उसके बत्स रूपहै, रत्नगर्भ ४७३ रत्नोंसे पूर्णसमुद्रके समान प्रीतिरूप, धनेश्वर ४७४ धनोंका ईश्वर ६३ धर्मगुप् ४७५ अवतार लेकर धर्मकी रक्षा करनेवाला, धर्मकृत ४७६ धर्माधर्म से रहित होकर भी धर्म की मर्यादा नियत करनेके लिये धर्मका करनेवाला, धर्मी ४७७ धर्मों को धारण करनेवाला, सत् ४७८ सत्यब्रह्म, असत् ४७६ अपरब्रह्म जोकि बाणीका बिषयहै, क्षर ४८० सबजीव, अक्षर ४८१ कूटस्थब्रह्म, अबिज्ञाता ४८२ अपनेमें कर्त्ता आदिगुणोंको नियतकरने वाला और उससे मिलाहुआ रूप जीवात्माहै और जो उस गुणसे

पृथक्है वहविष्णुहै, सहस्रांशु ४८३ सूर्य्यादिकोंमें जिसकी किरणें वर्त्त मानहैं, विधाता ४८४ सबजीवोंके धारण करने वाले शेष दिग्गज आदिका धारण करनेवाला, कृतलक्षण ४८५ नित्यशुद्ध चैतन्य स्वरूप वेदशास्त्रोंका प्रकट करनेवाला, सबजीवोंके समान और असमानताके लक्षणोंका प्रकट करने वाला अथवा हृदय में श्रीवत्सचिह्न रखनेवाला ६४ गभस्तिनेमि ४८६ चक्र के मध्यमें सूर्य्य रूपसेनियत, सत्वस्थ ४८७ प्रकाश रूपसतो गुणमेंप्रधानतासे नियत अथवा सब जीवधारियों में स्थित, सिंह ४८८ पराक्रमी होनेसे सिंह के समान नियत अथवा नर शब्द के लोप से नृसिंह अवतार, भूतमहेश्वर ४८९ जीवों का बड़ा ईश्वर, आदि देव ४९० जो सबजीवोंको अपनेमें लयकरताहै अथवा जो सबसे प्रथम देवताहै,महादेव ४९१ सबप्रत्यक्षको त्यागकरके जो आत्मज्ञानसे बड़ेयोग और ऐश्वर्य्य में महानताको पाताहै, देवेश ४९२ प्रधानता से देवताओं का ईश्वर देवभृद्गुरु ४९३ देवताओं का पोषण करनेवाला जो इन्द्र है उसका गुरू अथवा देवता और विद्यावों का पोषण करनेवाला ६५ उत्तर ४९४ संसार सागर से पार करनेवाला अथवा सबसे श्रेष्ठ, गोपति ४९५ गौओं का पालन करने से गोपरूप अथवा पृथ्वीपति, गोप्ता ४९६ सब जीवों का पालन और रक्षा करनेवाला, ज्ञानगम्य ४९७ केवल ज्ञानहीसे मिलने वाला क्योंकि ज्ञानमें सबकर्म लय होजाते हैं, पुरातन ४९८ काल चक्रसे बाहर प्राचीन, शरीरभूतभृत् ४९९ शरीर उत्पन्नकरनेवालेतत्वोंका पोषणकरनेसे प्राणरूप धारी,भोक्ता ५०० पोषण करनेवाला अथवा आनन्दके स्वरूपका भोगनेवाला, कपीन्द्र ५०१ वराह अवतार अथवा बानरोंके स्वामीश्रीरामचन्द्रजी, भूरिदक्षिण ५०२ धर्म मर्य्यादा दिखानेवाले यज्ञकर्त्ताहीजिस ईश्वर की बड़ी दक्षिणा है (६६) सोमप ५०३ पूजनके योग्यहोने से सबयज्ञोंमें देवतारूप से सोमपान करनेवाला अथवा धर्ममर्यादा दिखानेवाले यजमानरूपसे सोमपान करनेवाला, अमृतप५०४

अपने आत्म रसकाही पानकरनेवाला अथवा समुद्रसे निकले हुये अमृतको असुरोंसे रक्षाकरके देवताओंको पिलाकर आपभी पीने वाला, सोम ५०५ चन्द्रमारूपसे औषधियोंको पोषण करनेवाला अथवा शिवपार्वती रूप, पुरजित् ५०६ बहुत पुरोंका बिजय करने वाला, पुरुषोत्तम ५०७ पुरुविश्वरूपको कहते हैं औ षोत्तम श्रेष्ठ और सबसेपरको कहतेहैं, बिनय ५०८ दुष्टोंको दण्ड देनेवाला, जय ५०९ सबजीवों का बिजय करनेवाला, सत्यसन्ध ५१० सत्यसंकल्प, दासार्हः ५११ दानके योग्य अथवा दासार्ह कुल में जन्मलेने वाला, सात्वतांपति ५१२ सात्वतनाम तन्त्रको संवर्त करनेवाला अथवा सात्वत देशियोंकेयोग क्षेमका करनेवाला ६७ जीव ५१३ क्षेत्रज्ञ रूपसे प्राणोंका धारण करनेवाला जीव, विनयिता ५१४ साक्षीधर्माधर्ममें प्रवृत्त प्रजाओंको साक्षात् देखने वाला अथवा अपनी आत्मा के सिवाय दूसरे पदार्थको न देखने वाला, मुकुन्द ५१५ मुक्तिका देनेवाला, अमितविक्रम ५१६ जिसके तीनचरण अवरुद्धहैं अथवा जिसका अत्यन्त पराक्रमहै, अंभोनिधि ५१७ देवता मनुष्य पितृ और असुरनाम जल जिसमें नियतहैं अथवा समुद्ररूप, अनन्तात्मा ५१८ देशकाल और बस्तुके बिषय से रहित आत्मा, महोदधिशय ५१९ सब जीवोंका संहार करके जगतको एकरसकरके महासमुद्रमें शयनकरनेवाला, अन्तक ५२० संसार भरेकानाशकरनेवाला, अज ५२१ बिष्णुसे उत्पन्न कामदेव, महार्हः ५२२ पूजन केयोग्य, स्वाभाव्य ५२३ नित्यशुद्धरूप होनेके कारण स्वभावहीसे बिदित होनेवाला, जितामित्र ५२४ अंतर्गत रागद्वेषादिक शत्रुओंको और आवरणादि बाह्यशत्रुओंको बिजय करनेवाला, प्रमोदन ५२५ अपने आत्मारूप अमृत रसके स्वादुसे सदैव आनन्द करनेवाला और ध्यानमात्रसे ध्यानियोंको आनन्द देनेवाला, आनन्द ५२६ आनन्दस्वरूप जिसके आनन्द के एकअंशसे सबजीव अपनानिर्वाह करते हैं, नन्दन ५२७ आनन्द देनेवाला, नन्द ५२८ बिषयसुखसे परमानन्दरूप, सत्यधर्मा ५२९

ज्ञानादिक सत्यधर्मोंका रखनेवाला और योग्यके द्वारा आत्मदर्शन नाम धर्मवाला, त्रिविक्रम ५३० तीन चरणसे तीनों लोकों को उल्लंघन करनेवाला (६९) महर्षिःकपिलाचार्य्य ५३१ नामअवतार जो संपूर्ण वेदके देखनेसे बड़ाऋषि और शुद्ध आत्मतत्त्व विज्ञान नाम सांख्यशास्त्रके आचार्य्यहैं भगवानने भगवद्गीतामें कहाहैकि सिद्धोंमें कपिल मुनिमैंहूं, कृतज्ञ ५३२ कृतनाम जगत्काहै और ज्ञ आत्माको कहतेहैं अर्थात् जगतका आत्मा, मेदिनीपति ५३३ पृथ्वी पति, त्रिपद ५३४ तीनचरणवाला, त्रिदशाध्यक्ष ५३५ गुणको प्रवेशकरके जो जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति यहतीनदशा प्राप्तहोती हैं उन तीनोंकासाक्षी, महाशृंग ५३६ जलकी प्रलयकेसमय मत्स्याव-तारधारण करके प्रलयकालीन समुद्रमें नौकाको अपने सींगमें बांधकर क्रीड़ाकरनेवाला, कृतान्तकृत् ५३७ संसारकानाश करने वाला अथवामृत्युका विध्वंस करनेवाला (७०) महावराह ५३८ नाम अवतार, गोविन्द ५३९ वेदवाणी अथवा वेदके बचनों से प्राप्तहोनेवाला, सुषेण ५४० जिसकीगुणरूप सेनाही शोभाय-मानहै, कनकांगद ५४१ स्वर्णमयी बाजूबन्द रखनेवाला, गुह्य ५४२ उपनिपदसे जाननेके योग्य होकर हृदयाकाशमें शयनकरनेवाला, गभीर ५४३ ज्ञानैश्वर्य्यादिक पराक्रमों से गम्भीर, गहन ५४४ सबमें प्रविष्टहोने और तीनोंअवस्थाओंके भावाभावका साक्षीहोने सेगहनरूप, गुप्त ५४५ मनवाणीसेपरे होनेकेकारण गुप्त, चक्रगदा धर ५४६ संसारकी रक्षाके प्रयोजनसे मनतत्वरूप चक्र और विधि तत्वरूप गदारखनेवाला, वेधा ५४७ संसारका उत्पन्न करनेवाला, स्वांग ५४८ आपही कार्य्यके कारण रूपअंगों समेत करनेवाला अजित ५४९ अवतरों में किसी से भी विजय न होनेवाला, कृष्ण ५५० व्यासअवतार क्योंकि विष्णु पुराणमें लिखाहैकिव्यास जी को नारायण जानो क्योंकि नारायण जी के सिवाय दूसरा महाभारत को बना सक्ताहै, दृढ़ ५५१ स्वरूप समार्थ्यसे च्युतन होने वाला शङ्कर्षणऽच्युत ५५२ प्रलयके समय सृष्टिमात्रको

अपने में आकर्षण करने वाला और अपने स्वरूपसे कभी च्युत न होने वाला, बरुण ५५३ अपनी किरणोंके आकर्षण करने से सायंकाल का सूर्य्य, बारुण ५५४ बरुण का पुत्र बशिष्ठ अगस्त्य अथवा भृगु, बृक्ष ५५५ बृक्षकी समान अचल नियत, पुष्कराक्ष ५५६ हृदय कमल पर ध्यान किया हुआ स्वरूपसे प्रकाश करने वाला, महामनाः ५५७ संसारकी उत्पत्ति स्थिति लय इन तीनोंको चित्त केही संकल्पसे करने वाला ७२ भगवान् ५५८ संपूर्ण, ऐश्वर्य्य, धर्म, यश, लक्ष्मी, और मोक्षको भगकहते हैं और इन सबका जो स्वामीहै वह भगवान् कहा जाता है बिष्णुपुराण में लिखाहै कि जो जीवोंकी उत्पत्ति नाश आगति गति बिद्या और अबिद्याको जानताहै वह भगवान् है, भगहा ५५९ प्रलयके समय ऐश्वर्य्यादिकों का नाश करने वाला, आनन्दी ५६० सुखरूप सब ऐश्वर्य्यादिकों से बृद्धियुक्त, बनमाली ५६१ भूत तन्मात्र रूप बैजयन्ती मालाका धारण करने वाला, हलायुध ५६२ हलधारी बलदेव रूप, आदित्य ५६३ अदितीमें कश्यपजीसे उत्पन्न बामन अवतार, ज्योतिरादित्य ५६४ सूर्य्यमंडल में नियत प्रकाश व ज्योतिस्वरूप सूर्य्य, सहिष्णु ५६५ शीतोष्णादि योगोंका सहने वाला, गतिसत्तम ५६६ उत्तम लयस्थान ७३ सुधन्वा ५६७ सुन्दर इन्द्रीरूप शार्ङ्ग धनुष रखनेवाला, खण्डपरशु ५६८ शत्रुओंके नाशकरनेवाले परशुके स्वामी परशुरामरूप अथवा अखंड परशुधारी शिवजी, दारुण ५६९ सन्मार्ग बिरोधियों का भय उत्पन्न करनेवाला, द्रबिणप्रद ५७० भक्तोंका अभीष्ट देनेवाला, दिवस्पृक् ५७१ स्वर्गका स्पर्श करने वाला, सर्व्वदृग्व्यास ५७२ सबज्ञानोंका बिस्तार करने वाला अथवा सर्वदर्शी होनेसे सब ज्ञानोंका स्वरूप वेदोंको ऋग्वेदादिक नाम से चौदह प्रकार का किया प्रथम वेद इकीस प्रकार का किया दूसरा एक सौ एक प्रकारका किया सामवेद हजार प्रकार का किया और अथर्व वेद शाखा भेदसे नौप्रकार का किया और पुराण भी अनेक प्रकार के किये, वाचस्पतिरयोनि-

ज ५७३ विद्याओंका स्वामी विनायोनिके उत्पन्नब्रह्मा ७४ त्रिसा-
मा ५७४ देवव्रत नामतीन साम मंत्रों सेस्तुति मान,सामग५७५
साम गान करनेवाला, साम ५७६ साम वेदरूप, निर्वाण ५७७
सर्वदुःखकी शान्ति वा लक्षण परमानन्द रूपमोक्ष, भेषज ५७८
संसार रोगकी औषधि,भिषक् ५७९ संसार रोगसे निरोग करने
बाली परम विद्या का उपदेश करने वाला, संन्यासकृत ५८०
मोक्ष के निमित्त चौथे आश्रम को जारी करने वाला,शम ५८१
प्रधानता से संन्यासियों के ज्ञान साधन जितेन्द्रियों का उपदेश
करने वाला जैसेकि शास्त्र में लिखाहै कि संन्यासियोंका आन्तर्य्य
से जितेन्द्री होना बनबासियों का नियम गृहस्थियोंका दान और
ब्रह्मचारियों का धर्म गुरूकी सेवाअथवा सब जीवोंको शान्तीदेने
वाला, शान्त ५८२ विषय सुखसे पृथक्,निष्ठा ५८३ प्रलय के
समय सब जीव जिसमें नियतहोतेहैं, शान्ति ५८४ सब अविद्या-
ओंसे पृथक्ता जोकि ब्रह्मरूपहै,परायण ५८५ जोकि बड़ा सबसे
परे आवागमनके सन्देहोंसे रहितहै ७५ सुभांग ५८६ सुन्दर
शरीरधारण करनेवाला,शान्तिदः ५८७रागद्वेषसेपृथक् शान्तीका
देने वाला, स्रष्टा ५८८ उत्पत्ति की आदिमें सब जीवोंको उत्पन्न
करने वाला, कुमुद ५८९ पृथ्वी पर आनन्द करने वाला, कुबले-
शय ५९० शेष सय्यापर सोनेवाला बद्रीकलपर शयन करने
वाला तक्षक नाम सर्प बिभूति परमेश्वर, गोहित ५९१ गौओंके
पोषण के निमित्त गोवर्द्धन पर्व्वतका धारण करनेवाला अथवा
भूमिकाभार उतारनेको अवतारलेने वाला, गोपति ५९२ पृथ्वी-
पति, गोप्ता ५९३ संसारका रक्षक अथवा मायासे अपनी
आत्माका गुप्तकरने वाला, वृषभाक्ष ५९४ जिसकेनेत्र सबमनो-
रथोंके बर्षाकरनेवाले अथवा धर्मरूपहैं, वृषप्रिय ५९५ धर्म
जिसका प्याराहै ७६ अनिवर्ती, देवासुरोंके युद्धमें मुख नमोड़ने
वाला अथवा धर्मसे पृथक् न होनेवाला,निवृत्तात्मा ५९७ जिसका
चित्त स्वाभाविक विषयोंसे पृथक् है, संक्षेप्ता ५९८ प्रलयके समय

स्थूलको सूक्ष्मरूप करनेवाला, क्षेमकृत् ५९९ शरणागतकी रक्षाकरनेवाला, शिव ६०० ध्यान करतेही पवित्र करनेवाला, श्रीवत्सवक्ष ६०१ जिसके हृदयपर श्रीवत्सचिह्नहै, श्रीवास ६०२ जिसकेहृदयमेंसदैव लक्ष्मी श्रीनिवासकरतीहै, श्रीपति ६०३ समुद्र मथनेकेसमय लक्ष्मीजीने सब देवता और असुरोंकोत्याग करके जिसको वराअथवा परमशक्तिकास्वामी, श्रीमताम्बर ६०४ ऋग् यजु साम लक्षण वालीलक्ष्मीके स्वामीब्रह्मादिकोंमें श्रेष्ठ ७७ श्रीदः ६०५ भक्तों को लक्ष्मीदेनेवाला, श्रीशः ६०६ लक्ष्मीकाईश्वर, श्रीनिवास ६०७ श्रीमानोंमेंनिवास करनेवाला, श्रीनिधि ६०८ जिस सर्वशक्तिमान में सब श्री नियतहैं, श्रीबिभावन ६०९ कर्मके अनुसारनानाप्रकारकीलक्ष्मी सब जीवोंको प्राप्तकरनेवाला, श्रीधर ६१० सब जीवोंकी मातालक्ष्मीको हृदयमें शोनेवाला, श्रीकर ६११ स्मरण स्तुति और पूजन करनेवाले भक्तोंकी लक्ष्मीकोबर्त्तमान करनेवाला, श्रेय ६१२ अविनाशी सुखका लक्षण रखनेवाला कल्याण जोकि ब्रह्मरूपहै, श्रीमान् ६१३ लक्ष्मियोंका रखनेवाला, लोकत्रयाश्रय ६१४ तीनोंलोकोंका रक्षास्थान ७८ स्वक्ष ६१५ जिसके नेत्रकमलके समान शोभायमान हैं, स्वंग ६१६ सुन्दर अंगवाला, शतानन्द ६१७ एकहीपरमानन्दको उपाधियोंसे अनेक प्रकारका करनेवाला, अनन्दिः ६१८ प्राणस्वरूप, ज्योतिर्गणेश्वर ६१९ ज्योतिगुणोंका ईश्वर क्योंकि सब उसीकेतेजसे प्रकाशमानहैं, बिजितात्मा ६२० मनका जीतनेवाला, अबिधेयात्मा ६२१ जिसके रूपका कोई बर्णन नहीं करसक्ता, सत्कीर्त्ति ६२२ सत्यकीर्त्तिवाला, छिन्नसंशय ६२३ जिसकोहस्तामलककेसमानसब बिदितहै किसी स्थानमें जिसको संशयनहींहै ७९ उदीर्ण ६२४ सब जीवोंसेमहात्तम, सर्वतश्चक्षु ६२५ अपने चैतन्य भावसे सबकोदेखनेवाला, अनीश ६२६ जिसका दूसरा ईश्वर वर्त्तमान नहींहै, शाश्वतः स्थिरः ६२७ जो प्राचीन होकर भी कभी बिपरीत दशाको नहीं प्राप्त होकर नियतहै, भूशय ६२८ लंकाके मार्गके अन्वेषण केलिये समुद्रकी पृथ्वी पर शयन करने वाला, भूषण ६२९ अपनी इच्छा

नुसार अवतारों से पृथ्वी को चमत्कारी करने वाला, भूति ६३० सत्ता अथवा सब बिभूतियोंका उत्पत्तिस्थान बिभूति, बिशोक ६३१ परमानन्द रूप होनेसे शोक रहित शोकनाशन ६३२ स्मरणकरते-ही भक्तोंके शोक का नाशकरने वाला(८०)अर्चिष्मान ६३३ जिस की किरणों से चन्द्रमा और सूर्य्यादिक प्रकाशितहैं, अचितः ६३४ लोकपूजित ब्रह्मादिक देवताओं से भी पूजित, कुम्भ ६३५ घटके समान जिसमें सब नियतहैं,बिशुद्धात्मा ६३६ तीनोंगुणोंकी पृथक् ताके कारण अत्यन्त पवित्रात्मा, बिशोधन ६३७ स्मरण करते ही पापोंसे मुक्त करने वाला, अनिरुद्ध ६३८ चारों व्यूहों में अनिरुद्ध अथवा कभी शत्रुओंके आधीन न होने वाला,अप्रतिरथः ६३६ जि-सकी सन्मुखता करने वाला कोई रथी नहींहै, प्रद्युम्न ६४० बड़ा धनाढ्य अथवा चित्रव्यूहात्मा, अमितबिक्रम६४१ जिसका पराक्रम अत्यन्त और अविनाशी है (८१) कालिनेमिनिहा ६४२कालनेमी नाम असुरका मारनेवाला, बीर ६४३ शत्रुओंके समूहों को बिजय करके बिराजमान, शौरि ६४४ शूर बंशमें उत्पन्न, जनेश्वर ६४५ बड़ा शूर बीर होनेसे इन्द्रादिक शूरजनों का उपकारी, त्रिलोका-त्मा ६४६ अन्तर्य्यामी होनेसे तीनोंलोकों का आत्मा अथवा पर-मार्थ में तीनोंलोक जिससे पृथक् नहीं होसक्तेहैं, त्रिलोकेश ६४७ तीनों लोक जिसकी आज्ञासे अपने२ कर्ममें प्रवृत्तहैं, केशव ६४८ सूर्य्यादिकों की किरणें जिसके बालहैं अथवा ब्रह्मा बिष्णु महेश नाम शक्ति जिसके केशहैं,केशिहा ६४६ केशीदैत्यका मारनेवाला, हरिः ६५० हेतु संयुक्त संसारको हरनेवाला (८२) कामदेव ६५१ धर्मार्थ आदिकचारों पुरुषार्थके चाहनेवाले भक्तोंका अभीष्ट देवता, कामपाल ६५२ कामियोंकी कामनाओंका पालन करनेवाला, कामी ६५३ पूर्णकाम, कान्त ६५४ मनोहर शरीरवाला अथवा आयुर्दा व्यतीत होनेपर ब्रह्माजी जिसमें लयहोते हैं, कृतागमः ६५५ जिसने श्रुति स्मृति आदि सब शास्त्र बनाये, अनिर्देश्यवपु ६५६ निर्गुण होनेसे जिसको यह नहीं कहसक्तेहैं कि इसका रूप

ऐसाहै, विष्णु ६५७ जिसका प्रकाश तीनोंलोकोंको व्याप्त करके अधिक तर नियतहै, वीर ६५८ गतिवाला, अनन्त ६५९ सर्व-व्यापी सनातन और सबका आत्माहोनेसे देशकाल और वस्तुके विषयसे रहित, धनंजय ६६० दिग्विजयमें बहुतसे धनका बिजय करनेवाला अर्जुन क्योंकि गीतामें भगवद्वचनहै कि पाण्डवोंमें अर्जुन मैं हूं (८३) ब्रह्मण्य ६६१ तप वेद सत्य और ज्ञान इनचारों का नाम ब्रह्महै जो उनका हितकारीअथवा जाननेवालाहै उसको, ब्रह्मण्य कहतेहैं, ब्रह्मकृत ६६२ तपादिकोंका उत्पन्न कर्त्ता, ब्रह्मा ६६३ ब्रह्मा रूपसे सबका उत्पन्न कर्त्ता, ब्रह्म ६६४ सच्चिदानन्द स्वरूप जिससे कि उत्तमकोई नहींहै, ब्रह्मविवर्द्धन ६६५ तपादिकोंको अच्छी वृद्धि करनेवाला, ब्रह्मविद ६६६ जो वेद और वेदार्थको ठीकर जानताहै, ब्राह्मण ६६७ वेदोंके जो ब्राह्मणहैं वह सबभी उसीके रूपहैं, ब्रह्मी ६६८ ब्रह्मनाम उसके शेषरूप, ब्रह्मज्ञ ६६९ अपने आत्मारूप वेदोंकाज्ञाता, ब्राह्मणप्रिय ६७० ब्राह्मण काप्यारा अथवा ब्राह्मणजिसके प्यारेहैं (८४) क्योंकि भगवद्वचन है कि जो प्रहारकरनेवाला गालीदेनेवाला और कठोर बचनकहने वाला मनुष्य ब्राह्मणको दंडवत् नहींकरे वहपापात्मा ब्रह्म अग्निमें भस्महोनेवाला होकर दण्डदेने और मारनेकेयोग्यहै, महाक्रम ६७१ जिसका चरण प्रक्षेप बहुत बड़ाहै, महाकर्म ६७२ सृष्टिकी उत्पत्यादिकही जिसका कर्महै, महातेजा ६७३ बड़ा तेज जिसके प्रकाशसे सूर्य्यादिक सब प्रकाशमानहैं अथवा शूरताआदिक महा धर्मोंसे अच्छे प्रकार करके अलंकृत, महोरग ६७४ भगवद्विभूति बासुकी रूप, महाक्रतु ६७५ अश्वमेधादि यज्ञरूप, महायज्वा ६७६ लोक संग्रहकेलिये यज्ञोंका करनेवाला, महायज्ञ ६७७ बड़ा यज्ञ स्वरूप, जैसेकि भगवद्वचनहै कि यज्ञोंमेंजपरूप यज्ञमैंहूं, महाहवि ६७८ जिस ब्रह्ममें सब जगतका हवन होताहै क्योंकि वह जगदात्माहै (८५) स्तव्य ६७९ जो सब से स्तूयमानहै और वह किसीका स्तोता नहीं, स्तवप्रिय ६८० स्तोत्र जिसका प्यारहो,

स्तोत्र ६८१ जिससे स्तूयमान होताहै वहभी उसीका रूपहै स्तुति अथवा स्तुत ६८२ स्तवन क्रियाका विषय अथवा स्तवन क्रिया, स्तोता ६८३ वही स्तुतिका करनेवालाहै, रणप्रिय ६८४ जिसको युद्ध प्याराहै, क्योंकि सदैव संसारकी रक्षाके निमित्त पांचशस्त्रोंको धारण करताहै, पूर्ण ६८५ सब अभीष्ट और सब सामर्थ्योंसे पूर्ण है, पूरयिता६८६ धनादिसेसबको पूर्ण अर्थात् निहाल करनेवाला, पुण्य ६८७ स्मरण करतेही सबके पापोंका दूर करनेवाला, पुण्यकीर्त्ति ६८८ अपनी कीर्त्ति से जीवोंके पुण्यको बढ़ानेवाला, अनामय ६८९ जो कर्म जन्य बाह्याभ्यन्तरीय रोगोंसे पीड़ाको नहीं पाता, मनोजव ६९० सर्वत्र वर्त्तमान होनेसे जिसका वेगमनके समानहै, तीर्थकर ६९१ चौदह विद्या और उपविद्याओंका वक्ता और उपदेश करनेवाला, हयग्रीव रूपसे मधुकैटभ राक्षसको मारकर उत्पत्तिकी आदिमेंसबश्रुति और अनेकअन्य २ विद्याब्रह्माजीको शिक्षाकरी और वेदोंसे बाह्यविद्या असुरोंको ठगनेके लिये उपदेश करी, विश्वरेता ६९२ जिसका वीर्य्य सुवर्णहै जैसे कि मनुस्मृतिमें लिखाहै कि आदिमें जलको उत्पन्न करके उसमें वीर्य्यको छोड़ा उससे अंडाहुआ वह स्वर्णमयी अंडा हजार सूर्य्यके समान प्रकाशमानथा, वसुप्रिय ६९३ जो धनको अच्छे प्रकार देताहै साक्षात् धनाध्यक्षहै दूसरा पुरुष उसकी कृपासे धनाध्यक्ष होताहै, वसुप्रद ६९४ जो मोक्षफल नाम धन अपने भक्तोंको देनेवालाहैअथवा असुरोंके धनोंका बिगाड़नेवालाहै, वासुदेव ६९५ वसुदेवका पुत्रजिसमें जीव निवास करतेहैं, वसु ६९६ जो सब जीवोंमें निवास करता हुआ माया से अपने स्वरूप कोढकने वाला है, वसुमना ६९७ सब विषयोंमें नियतहोने वाला और उनमें चित्त से प्रवृत्त होने वाला, हविः ६९८ भगवद्गीताके समान हव्यभी ब्रह्महै(८७)सद्गति ६९९ जिन सन्तोंने जाना कि यह ब्रह्महै उनकोही प्राप्त होताहै अथवा जिसकी बुद्धि श्रेष्ठतमहै वह ब्रह्म, सत्कृति७०० जिसका शुभकर्म संसारकी उत्पत्ति आदिका चिह्नरखने-

वाला,सत्ता ७०१ सजातीय और विजातियों के भेदसे पृथक् एक अद्वैत ब्रह्म, सद्भूतिः ७०२ वही परमात्मा बहुत रीति से प्रकाशमान होने से चिदात्मा, सत्परायण ७०३ तत्वज्ञों का मुख्यस्थान, सूरसेन ७०४ जिस सेना में हनुमानजी आदिक शूर हैं उस सेना कास्वामी, यदुश्रेष्ठ ७०५ यदुवंशियोंका प्रधान, सन्निवास ७०६ ज्ञानियों का रक्षा स्थान, सुयामुनः ७०७ यमुनासे संबंध रखने वाले मंडल और पद्मासन आदि जिसके उत्तम हैं (८८) भूतावास ७०८ जिसमें सबजीव निवास करतेहैं, बासुदेव ७०९ जैसे कि सूर्य्य अपनी किरणों से संसारको ढकताहै उसीप्रकार अपनी माया-ओं से सब स्थावरजंगम जीवोंको ढकने वाला, सर्वासुनिलय ७१० जिस अविनाशी जीवात्मा में सब प्राणलयहोते हैं, अनल ७११ जिसकी ईश्वरता का अन्त नहीं है, दर्पहा ७१२ अधर्म मार्गगामी जीवोंके अहंकार का दूर करने वाला, दर्पद ७१३ धर्म मार्ग में नियत होने वाले मनुष्योंको अहंकार का देने वाला, दृप्त ७१४ सदैव आत्मा रूपी अमृत का स्वादु लेनेसे अत्यन्त प्रसन्न, दुर्धरो ७१५ सब उपाधियोंसे रहित होनेसे देहाभिमानियोंको जिसकी धारणा कठिनहै, अपराजित ७१६ भीतरके रागद्वेषादि शत्रुओं से और बाहरके दानवादिक शत्रुओंसे अजेय (८९) बिश्वमूर्त्ति ७१७ सबका आत्माहोने से बिश्वजिसकी मूर्त्ति है, महामूर्त्ति ७१८ जिस शेष शय्यापर शयन करने वाले ईश्वरकी बड़ी मूर्त्ति है, दीप्तमूर्त्ति ७१९ ज्ञानरूप मूर्त्ति अथवा इच्छा के अनुसार तेजस्वी मूर्त्ति का धारण करने वाला, अमूर्त्तिमान ७२० जिसकी मूर्त्ति कर्ममेंआश्रित नहीं है, अनेकमूर्त्ति ७२१ अवतारों में अपनी इच्छासे लोकों को उपकार करने वाली बहुत सी मूर्त्तियों का धारण करनेवाला, अव्यक्त ७२२ यद्यपि बहुतसी मूर्त्तियों को धारण करताहै तौभी निराकारहीहै, शतमूर्त्ति ७२३ जिसज्ञान स्वरूप की मूर्त्ति यांनाना प्रकारके विकल्पसे उत्पन्न हैं, सनातन ७२४ विश्व मूर्त्ति होने से हजारों मूर्त्ति रखनेवाला (९०) एक ७२५ सजातीय विजातीय

भेदोंसे पृथक् अद्वितीय एक परमेश्वर, अनेकः ७२६ मायासेबहुतसे रूपोंका रखने वाला, सबः ७२७ सबनाम यज्ञजिसमेंचन्द्रमा की स्तुति होती है, कः ७२८ यहकः शब्द सुखका अर्थवाचीहै जिस्से वह स्तूयमानहै उसकोकः ब्रह्मकहतेहैं, किं ७२९ सबपुरुषार्थरूप होने से विचार के योग्य ब्रह्म, यत् ७३० जिस शब्दसे स्वयंसिद्ध ब्रह्म उपदेश किया जाताहै वहभी उसीका रूपहै, तत् ७३१ वह जगतको फैलाने वाला क्योंकि तत् शब्दभी उसी का रूपहै, पदमनुत्तम ७३२ जोमोक्षाभिलाषियों से प्राप्त किया जाताहैऔर जिससे परेकोई नहींहै, लोकबन्धु ७३३ जिस आधार रूपसे सब संसारबेधाहुआहै अथवा सबका स्वामी होनेसे संसारकेसबजीवमात्रोंका बंधु जिसने अच्छे बुरे जानने के लिये श्रुति और स्मृतियोंको उत्पन्न किया, लोकनाथ ७३४ जोसृष्टिकादुखदायीहै उसकोदण्ड देताहै और जिस्से सब कल्याण में मांगते हैं वह सबका प्याराहै, माधव ७३५ मधुके कुलमें उत्पन्न, भक्तवत्सल ७३६ भक्तोंपर स्नेह करनेवाला (९१) सुवर्णवर्ण ७३७ सुवर्णके समान वर्णरखनेवाला, हेमांग ७३८ जोसुवर्ण शरीरवालापुरुषसूर्य्य मंडल के मध्यमेंहै, वरांग ७३९ जिसकेअंग अतिउत्तमहैं, चन्दनांगद ७४० चन्दन और और कर्पूरादिसे अलंकृत, वीरहा ७४१ धर्मकी रक्षाके अर्थ हिरण्य कश्यपादि दैत्य और रागादि का नाश करनेवाला, विषम ७४२ सबसे विलक्षणहोनेसे जिसकेसमान कोईनहींहै, शून्यः ७४३ गुणोंसे रहित, घृताशी ७४४ अनिच्छावान, अचल ७४५ स्वरूपसामर्थ्य, ज्ञान और गुणोंसे पृथक्नहोनेवाला कीर्त्ति सेरहित नहोने वाला, चल ७४६ वायुरूप से चलायमान (९२) अमानी ७४७ जिस शुद्ध ज्ञान स्वरूपका अभिमान अनात्मा बस्तुमें नहीं है, मानद ७४८ अपनी मायासे अनात्मामें सबका आत्माभिमान उत्पन्न करनेवाला, भक्तोंका सत्कार करनेवाला अभक्तोंको खंड २ करने वाला तत्त्वज्ञों के आत्माभिमानको जोकि अनात्मामें उत्पन्न होताहै उसका खंडन करनेवाला, मान्य ७४९ सब का

ईश्वर होने से सब का पूजित और पूजनके योग्य, लोकस्वामी ७५० चतुर्द्दशभुवनोंका स्वामी, त्रिलोकधृक् ७५१ तीनों लोकोंका धारण करने वाला, सुमेधा ७५२ सुन्दर बुद्धिवाला, मेधज ७५३ यज्ञमेंप्रकट, धन्य ७५४ सिद्धमनोरथ, सत्यमेधा ७५५ सत्यबुद्धि, धराधर ७५६ शेषादिक रूपोंसे स्थूल, सूक्ष्म पृथ्वी को धारण करनेवाला (६३) तेजोवृष ७५७ सदैव सूर्य्यके द्वारा जलको आकर्षण करके सूर्य्य रूप से बर्षा करने वाला, द्युतिधर ७५८ शरीरकीकान्ति और सत्कीर्त्तियों का धारण करनेवाला, सर्वशस्त्रभृताम्वर ७५९ सब शस्त्र धारियों में श्रेष्ठ, प्रग्रह ७६० भक्तों के अर्पण किये हुये पत्र पुष्योंको अंगीकार करने वाला अथवा चंचल इन्द्रियों को रस्सीके समान बांधने वाला, निग्रह ७६१ स्वभाव से सब को अपने आधीन करनेवाला, व्यग्र ७६२ अबिनाशी अथवाभक्तोंके अभीष्ट देनेमें प्रवृत्त, नैकशृंग ७६३ चारशृंगरखने वाला, गदाग्रज ७६४ मन्त्र से प्रथम प्रकट अथवा गदका बड़ा भाई श्रीकृष्ण(६४)चतुर्मूर्त्ति ७६५ जिसकी चारमूर्त्ति हैं, बिराट, सूत्रवता, व्याकृत,त्रमी,अथवा चारवर्ण हैं श्वेत, कृष्ण, पीत, रक्त, चतुर्बाहु ७६६ चारभुजारखने वाला, चतुर्व्यूह ७६७ छन्दपुरुष, वेदपुरुप, महापुरुष, शरीर पुरुष, यही चार जिसके व्यूहहैं, चतुर्गति ७६८ चारोंबर्ण और चारों आश्रमकोगति, चतुरात्मा ७६९ रागद्वेष से पृथक् होने से जिसका मन सावधानहै अथवा मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, जिसके आत्माहैं चतुर्भाव ७७० धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जिस्से यह चारों पुरुषार्थ उत्पन्न होतेहैं, चतुर्वेदबिद् ७७१ चारों वेदोंका अर्थ जानने वाल, एकपात् ७७२ जिसका एक चरण बिश्वहै (६५) समावर्त्त ७७३ संसार चक्र को अच्छीरीतिसे घुमाने वाला, निवृत्तात्मा ७७४ जिसका आत्मा सर्वत्र वर्त्तमानहै अथवा जिसका चित्त विषयों से पृथक्है, दुर्जय ७७५ जो विजय नहीं होसक्ता, दुरतिक्रम ७७६ भयका कारण होनेसे सूर्य्यादिक जिसकी आज्ञा के बिपरीत कर्मनहीं करसक्ते,

दुर्लभ ७७७ दुष्प्राप्य होनेसे भक्तिके द्वारा प्राप्त होनेवाला जैसे कि व्यासजीने कहाहै कि हज़ारों जन्मोंमें तप, ध्यान और समाधिके द्वारा श्रीकृष्ण में अनन्य भक्ति होतीहै, दुर्गम ७७८ जो दुःख से जाना जाय, दुर्ग ७७९ जिसका योग दुख से होताहै दुरावास ७८० योगी लोग समाधिके द्वारा भी जिसको कठिनतासे चित्तमें धारण करतेहैं, दुरारिहा ७८१ दुख से सन्मुखताके योग्य और असुरों का मारनेवाला (९६) शुभांग ७८२ ध्यान के योग्य होनेसे शुभ अंगों से बिराजमान, लोकसारंग ७८३ योगीको अपने में लय करने वाला अथवा प्रणव के द्वारा प्राप्त होनेके योग्य, सुतन्तु ७८४ जिसका वड़ा लम्बाचौड़ा प्रपंचशोभायमानहै, तन्तुवर्धन ७८५ उसीतन्तु प्रपंचको विजय करनेवाला इन्द्रकर्मा ७८६ जिसका कर्म इन्द्र के समानहै, महाकर्मा ७८७ आकाशादि पंचतत्त्व जिसके उत्पन्न कियेहुये हैं, कृतकर्मा ७८८ कर्मसे कृत्कृत्य अथवा धर्मरूप कर्मोंका करनेवाला, कृतागम ७८९ वेदरूप शास्त्रवनानेवाला (९७) उद्भव ७९० जिसकाउत्तम जन्म उसकीइच्छासेहोताहै अथवा सवकीउत्पत्तिकाकारणहोनेसेअजन्मा, सुन्दर ७९१ विश्वसे अधिक सौभाग्यशाली होनेसे महासुन्दर, सुन्द ७९२ दयावान, रत्ननाभ ७९३ रत्नकेसमान जिसकी सुन्दर नाभि है, सुलोचन ७९४ जिसके नेत्रअथवा ज्ञानसवसे उत्तमहैं, अर्क ७९५ पूजनके योग्य ब्रह्मादिकोंका भी पूज्यतम, वाजसनः ७९६ आकांक्षियोंको रत्नोंका देनेवाला, शृंगी ७९७ प्रलयके जलमेंशृंगधारी मत्स्यअवतार, जयन्तः ७९८ शत्रुओंकोअत्यन्त विजय करनेवाला अथवाविजयका हेतु, सर्वविज्जयी ७९९ सवप्रकारका ज्ञानजिसको हैऔर जो आन्तरीय रागादिक शत्रु और वाह्यशत्रु हिरण्याक्षादिक दैत्योंकाविजय करनेवालाहै (९८) सुवर्णविन्दु ८०० जिसके अंग सुवर्णके समान प्रकाशमानहैं अथवा जिसका मंत्र सुन्दर अक्षर और विन्दु रखनेवालाहै, अक्षोभ्य ८०१ रागद्वेषादिक वा शब्दादिक बिषय और असुरोंसे अजेय, सर्ववागीश्वर ८०२ ब्रह्माआदिक

वागीश्वरोंका भी ईश्वर, महाहृद ८०३ योगीजन जिस सदानन्द को मझाकर सुखी रहते हैं, महागर्त्त ८०४ जिसकी बड़ीमाया दुःखसेपार होनेके योग्यहै अथवा जो महारथीहै, महाभूत ८०५ तीनों कालके बिषयसे बाहर होनेसे बड़ाभारी प्रकाशित तेज, महानिधि ८०६ जिसमें सबजीव नियतहैं और जो श्रेष्ठ और अत्यन्त वृद्धतमहै (९९) कुमुद ८०७ भारके दूर करनेसे पृथ्वीको प्रसन्न करनेवाला, कुंदर ८०८ कुन्दके फूलके समान शीघ्रफल देनेवाला वराहरूपमें नियतहोकर हिरण्याक्षके मारनेकी इच्छासे पृथ्वीको फाड़नेवाला, कुन्द: ८०९ परशुराम अवतार लेकरपृथ्वी को कश्यप ऋषिके अर्थ दान करनेवाला, पर्जन्य ८१० वर्षाके समान अध्यात्म आदिक तीनों तापका दूर करनेवाला और सब अभीष्टोंकी वर्षा करनेवाला, पावन ८११ स्मरण करतेही पवित्र करनेवाला, अनिल ८१२ सदैव ज्ञानस्वरूप अथवा भक्तोंको सुखसे मिलनेवाला, अमृतांशु ८१३ अपने आनन्दामृत रसका पान करनेवाला अथवा समुद्रसे निकलाहुआ अमृत देवताओंको पिलाकरआपभी पीनेवाला, अमृत्युवपु ८१४ जिसका शरीरमृत्युके आधीन नहीं होता, सर्बज्ञ ८१५ सबका जाननेवाला, सर्वतोमुख ८१६ सब ओरको मुखरखनेवाला (१००) सुलभ ८१७ पत्र फूल और मूलोंकी भेटोंकेद्वारा सबसे मिलनेवाला, सुव्रत ८१८ जिसका सुन्दर व्रतहै, सिद्ध ८१९ स्वतंत्र होनेसे सिद्ध, शत्रुजित ८२० जो देवताओंके शत्रुहैं वही उसकेभी शत्रुहैं उनको मारनेवाला, शत्रुतापन ८२१ असुरोंको तपानेवाला, न्यग्रोध ८२२ जो मध्यमें उत्पन्न और वर्तमानहै अर्थात् जिनका आदि अन्त नहींहै उनके भी ऊपर नियत अथवा सब जीवधारियोंको अपनी मायासे ढकनेवाला, उदुम्बर ८२३ कारण होनेसे आकाशसेभी परे अथवा भोजनके अयोग्य उदुम्बरफलरूपसे बिश्वका पालन करनेवाला, अश्वत्थ ८२४ जोआजहै वहकल नियत न रहैगा, वह संसाररूपी वृक्षके समान नियत जैसे कि वेदमें लिखाहै कि जिसका मूल ऊर्ध्व

को और शाखावाईं ओर है वह वृक्ष प्राचीन है, चाणूरांघ्रिनिशूदन ८२५ चाणूर और अंघ्रको मारनेवाला (१०१) सहस्रार्चिः ८२६ शास्त्रमें लिखेके अनुसार जिसकीकिरणें अत्यन्तहैं कि जो एकबार आकाशमें हजार सूर्य्योंकी किरणें प्रकटहोंय वह उस महात्माकी किरणोंके समान होंयवा नहोंय,सप्तजिह्वा ८२७ आगे लिखीहुई सात जिह्वाओंकोरखनेवाला अग्निरूप,काली,कराली, मनोजवा, सुधूम्रवर्णा, सुलोहिता, स्फुलिंङ्गनी, विश्वमुखी इतिसप्तैधा ८२८ जिसकेसातप्रकाशहैं,सप्तवाहन८२६सातघोड़े जिसकी सवारीमें हैं अथवासप्तनाम अश्वजिसकी सवारीहै वह सूर्य्य,अमूर्त्ति ८३०जड़ चेतन्य रूप चिह्नवाले धन रूप धारण शक्ति से जो मूर्त्ति प्रकट हुई उससे पृथक् अथवा शरीरका निवास जिसका चिह्नहै और जिसके अंग अज्ञानीहैं उस मूर्त्ति से पृथक्, अनघ ८३१ जिसका दुख और पाप वर्त्तमान नहींहै, अचिन्त्य ८३२ सबपरमाणुओं से भी परे और यह ऐसाहै इस प्रपंच लक्षण से अचिन्त्य, भयकृत् ८३३ कुमार्ग चलनेवाले मनुष्यों के भयका उत्पन्न करनेवाला अथवा भक्तोंके भयोंको नाश करनेवाला, भयनाशन ८३४ पूजन और स्मरण करने से वर्णाश्रमके आचार रखनेवालों के भयका दूरकरने वाला (१०२) अणु ८३५ अत्यन्त सूक्ष्म, आत्मा वृहत् ८३६ महान्तमहोने से ब्रह्म, कृश ८३७ जोसंसार कीस्थूल वस्तुओं के समान स्थूल नहीं है, स्थूल ८३८ परन्तु सबका आत्मा होने से स्थूल, गुणभृत् ८३६ संसारकी उत्पत्ति स्थिति और लयका- स्वामी होनेसे सत्त्व, रज, तम नाम तीनों गुणोंका धारण करने वाला,निर्गुण ८४० परमार्थमें नर्गुण मायाके तीनों गुणों सेपृथक्, महान् ८४१ शब्दादि रहित अत्यन्त सूक्ष्म सदैव शुद्ध ज्ञानस्वरूप वाणी के विषय से परे होने महान्तम, अधृत ८४२ (जो ऐसाहै तो किससे धारण किया जाताहै इस शंका को कहतेहैं) स्वधृत,वहअपनी आत्मासेही धारण होताहै और अपनी महान्तामें नियतहै,स्वास्य ८४३ कमल के समान सुन्दर मुख अथवा उपदेशके पुरुषार्थ

केलिये वेदरूप बड़ा समूह जिसके मुखसे निकला, अथवा पक्षान्तर करके, अधृत ८४४ धारण करनेवाली पृथ्वी आदिका धारण करनेवाला होनेसे किसी से धारण नहोने वाला, प्राग्वंश ८४५ जोमूल पुरुष सबसे प्रथमहै और जिसका वंश प्रपंच दूसरों के वंशसेश्रेष्ठ और उत्तमहै, वंशवर्द्धन ८४६ प्रपंच नाम वंशकी वृद्धि करने वाला अथवा नाश करने वाला (१०३)भारभृत् ८४७ अनन्तादिक रूपों से भारका उठाने वाला, कथित ८४८ वेदादिकोंमें सबसे श्रेष्ठ कहा गया वा जोसबको लयका स्थान जानने के योग्य इन्द्रियों सेभी परे वर्णन किया गया, योगी ८४९ योग नाम ज्ञानसे मिलनेवाला अथवा सबको अपनी आत्मा में धारण करने वाला, योगीश ८५० जैसेकि अन्य २ योगी योग विघ्नोंसे अपने स्वरूप से मोहित होतेहैं, वहवैसानहींहै इसीसे वह योगियों काभी ईश्वरहै,सर्वकामद ८५१ अभीष्टोंका देने वाला, आश्रम ८५२ संसाररूपी बनमें घूमनेवाले, जीवोंका आश्रमस्थान, श्रमण ८५३ अविवेकियोंको दुःखदेने वाला क्षाम ८५४ सब प्रजाको नाश करने वाला, सुपर्ण ८५५ जिससंसार रूप वृक्षके पत्ते छन्द रूपहैं, वायुवाहन ८५६ जिसके भयसे वायु चला करतीहै, धनुर्द्धर ८५७ धनुर्द्धारी रामचन्द्र,धनुर्वेद ८५८ वही धनुर्वेद का ज्ञाता, दण्ड ८५९ दण्ड देने वालोंमें दण्ड रूप, दमयिता ८६० यमराज और राजाओं की मूर्त्ति से प्रजाको दण्डदेने वाला, दम ८६१ इन्द्रियोंके दण्ड देने केद्वारा प्रजाको सन्मार्गमें नियत करने वाला, अपराजित ८६२ शत्रुओं से अजेय, सर्व ८६३ सबकर्मों का कर्त्ता सब शत्रुओं को सहने वाला अथवा पृथ्वी रूपसे सबको सहने वाला, नियन्ता ८६४ सबको अपने २कर्मोंमें नियतकरने वाला,नियम८६५ जिसका कोई स्वामीनहीं यम ८६६ जिसकी मृत्यु वर्त्तमान नहीं (१०४।१०५) सत्त्ववान् ८६७शूरता और पराक्रमादिक जिसको प्राप्तहैं, सात्त्विक ८६८ सतोगुण प्रधान सत्य ८६९ सत्पुरुषों में साधू, सत्य धर्म परायण ८७० सत्य वचनादिक धर्म का मुख्य स्थान, अभिप्राय ८७१

पुरुषार्थ चाहनेवाले जिसको उपासना करते हैं अथवा प्रलय के समय जिसमें सब संसार नियत होताहै, प्रियार्ह ८७२ जो सब अभीष्ट पदार्थोंके योग्यहै, अर्ह ८७३ जो आसन अर्घ्य और नमस्कार आदिक पूजन साधनों से पूजाके योग्यहै, प्रियकृत् ८७४ उनस्तुत्यादिकों से भजन करने वालोंको अभीष्ट सिद्ध करनेवाला, प्रीतिवर्द्धन ८७५ उनकी प्रीतिको बढ़ाने वाला, बिहायसगति ८७६ जिसकी गति और निवास स्थान आकाशमें सूर्य्य मण्डल नाम विष्णुपदहै, ज्योति ८७७ स्वयं प्रकाश नारायण, सुरुचि ८७८ जिसकेप्रकाश और इच्छादिक सुन्दरहैं, हुतभुक् ८७९ सबदेवताओंके निमित्त जो यज्ञ जारी होतेहैं उनका भोक्ता और भोग करानेवाला, बिभु ८८० सर्वत्र स्थानों में वर्त्तमान और तीनों लोकों का स्वामी होने से बिभु, रबि ८८१ रसका आकर्षण करनेवाला सूर्य्यका आत्मा, बिरोचन ८८२ बहुत प्रकारसे प्रकाशमान सूर्य्य वा अग्नि, सूर्य्य ८८३ सब का कर्त्ता और लक्ष्मी का उत्पन्न करने वाला, सबिता ८८४ सब संसार का ईश्वर, रबिलोचन ८८५ जिसके नेत्र सूर्य्यहैं, अनन्त ८८६ प्राचीन सर्वत्र वर्त्तमान और देशकाल बस्तुके प्रच्छेद से रहित होने से अनन्त अथवा शेषरूप हुतभुक् ८८७ हुतको भोजन करने वा करानेवाला, भोक्ता ८८८ भोगके योग्य जड़ रूप प्रकृति का भोगने वाल अथवा जगत् का पालन करने वाला, सुखद ८८९ भक्तोंको मोक्षलक्षण सुख का देनेवाला दुःखों का दूर करने वाला, अनेकद ८९० धर्म की रक्षाके निमित्त वारंवार अवतार लेनेवाला, अग्रज ८९१ सब की आदिमें हिरण्य गर्भ रूप होकर उत्पन्न होने वाला, अनिर्बिं ८९२ सब मनोरथ सिद्ध होने और अभीष्ट सिद्धों के अप्राप्ति का कारण रूप न होनेसे जो व्याकुल और दुःखीनहींहै, सदामर्षी ८९३ शरणागत साधुओं पर क्षमा करनेवाला, लोकाधिष्ठान ८९४ जिसका कोईआधार नहींहै उस आधार रूप ब्रह्ममें तीनोंलोक नियतहैं, अद्भुत ८९५ बहुत से शास्त्रोंके श्रवणसे भी जो प्राप्त नहीं

होता और बहुत श्रवण करने वाले जिसको नहीं जानते इसका अपूर्व्व कहनेवाला पाने वाला सावधान अद्भुतताका जानने वाला और अपूर्व्व उपदेश करने वालाहै उसको अद्भुत कहतेहैं, अथवा अपने स्वरूप शक्ति और व्यापारों से अद्भुत, सनात् ८९६ कालरूप जैसेकि विष्णु पुराण में लिखाहै कि पर ब्रह्मके चार रूप हैं पुरुष, भक्त, अभक्त, काल, सनातनतम ८९७ सबके उत्पत्तिका कारण होनेसे ब्रह्मादिक सनातन पुरुषों का भी सनातन, कपिल ८९८ बड़वानल नाम अग्निका कपिल वर्णहै इसीहेतुसे बड़वानल रूप, कपि ८९९ अपनी किरणोंसे जलोंका पीनेवाला अथवा बराह अवतार, अव्यय ९०० प्रलय के मध्यमें जिसमें जगत् निश्चल होताहै, स्वस्तिदः ९०१ भक्तोंको मंगल देनेवाला, स्वस्तिकृत् ९०२ कल्याण करने वाला, स्वस्ति ९०३ स्वस्ति मंगल स्वरूप परमानन्द लक्षण, स्वस्तिभुक् ९०४ वही कल्याण भोगने वालाहै अथवा भक्तोंको मगल भोग कराने वालाहै, स्वस्ति दक्षिण ९०५ कल्याण रूप से वृद्धिपाने वाला वा कल्याण देनेको समर्थ अथवा शीघ्रहीकल्याण देनेको समर्थ (९०६) अरौद्र ९०६ जोकर्म प्रीति युक्त क्रोधयुक्त औररुद्ररूपहैं उनतीनोंको सम्पूर्ण अभीष्ट सिद्धतासे नहीं रखता इसीहेतुसेअरौद्रहै, कुण्डली ९०७ शेषरूप सूर्य्यकेसमान कुण्डली धारण करनेवाला अथवा सांख्य योगरूपमकराकृति कुण्डलधारी, चक्री ९०८ सबके चित्तकी रक्षाके निमित्ततत्त्वरूप सुदर्शननाम चक्रधारी जैसेकि विष्णुपुराणमेंलिखाहै चलस्वरूप तीव्रतामेंबायुके समानमनरूपीचक्रको हाथमेंरखनेवाला, बिक्रमी ९०९ चरणको उठाताहुआ शूरता रखनेवाला जो कि दूसरे लोगोंसे विलक्षणहै, ऊर्जितशासन ९१० श्रुति स्मृति लक्षणवाला बड़ी आज्ञाका रखनेवाला जैसे कि भगवद्वचनहै किजो मेरा श्रुतिस्मृति रूप आज्ञाओंको उल्लंघन करके कर्मोंको करताहै वह विरोधी और शत्रुहै और मेराभक्त होकर भी वैष्णव नहींहै, शब्दातिगः ९११ वाणी और मनसे परे परमपद, शब्दसह ९१२ सब वेद जिसके

कहतेहैं, शिशिर ६१३ संसारके तापसे संतप्तलोगों का बिश्राम स्थान,सर्वरीकरः ६१४ संसारियोंका रात्रिके समान आत्माज्ञानियोंको संसार रात्रिके समतुल्यहै उन दोनों रात्रियोंका उत्पन्न करनेवाला जैसा कि भगवद्वचनहै जो सर्व जीवोंकी रात्रिहै उसमें योगी जागतेहैं और जिसमें जीवधारी जागतेहैं वह उनकी रात्रिहै(११०) अक्रूर ६१५ सब अभीष्ट सिद्ध होने और न होनेमें जिसको क्रोध नहींहै क्योंकि क्रूरतानाम चित्तकाधर्म क्रोधसे उत्पन्न आभ्यन्तरीय शोकरूपहै और मृत्युका उत्पन्न करनेवाला भय अज्ञानसे युक्त है पेशल ६१६ कर्म मन वाणी और शरीरसे शोभायमान, दक्ष ६१७ जिसपरमेश्वरमें शक्ति,शीघ्रकर्मकरना, और समर्थ होना यह तीनों गुणहैं, दक्षिण ६१८ गतिका स्वामी और सबकानाशकरनेवाला, दक्षिणांवर ६१६ भारका उठानेवाला क्षमावान् योगी और पृथ्वी आदिमें श्रेष्ठ सब ब्रह्माण्डकोभी धारण करके भारसे पीड़ा न पानेवाला क्षमावान् समर्थ होते हैं यह सब का अद्वैत ईश्वर होने से सब क्रियाओंके करनेको समर्थहै, विद्वत्तम ६२० उसीकावड़ाज्ञान सब पर जारीहै दूसरे किसीका नहीं जारीहै,बीतभय ६२१ सबका ईश्वर और नित्यमुक्त होनेसे जिस को संसारका भय नहींहै, पुण्य श्रवण कीर्त्तन ६२२ जिसका कहना और सुनना पुण्यका उत्पन्न करनेवालाहै(१११)उत्तारण६२३ संसार सागरसे पारकरनेवाला दुष्कृतिहा ६२४ पापको अथवा पापीजनोंको नाश करनेवाला पुण्य ६२५ इतिहास पुराणादिकोंके सुननेवालोंका पुण्य उत्पन्न करनेवाला अथवा श्रुति स्मृति रूप वचनोंसे पुण्योंका प्रकट करनेवाला,दुःस्वप्ननाशन ६२६ जो ध्यान स्तुतिकीर्त्तन कियाहुआ दुःस्वप्नदेखनेके अशुभफलोंको नाश करताहै, बीरहा ६२७ मुक्तदानसे संसारियों के नाना प्रकारकी गतियोंका नाश करनेवाला, रक्षण ६२८ सतोगुण में नियत होकर तीनोंलोकों की रक्षा करनेवाला सन्त ६२६ जो सत्य मार्गमें नियतहैं वह सन्त कहातेहैं इससेवह विद्या की वृद्धिके लिये सन्तहै, जीवन ६३० प्राणरूपसे

सब प्रजाको सजीव रखनेवाला, प्रव्यवस्थित ६३१ सब ओरसे विश्वको व्याप्त करके नियत, अनन्तरूप ६३२ जो अनन्तादिक विश्व प्रपंच रूपसे नियतहै, अनन्तश्री ६३३ जिसकी शक्ति असंख्यहै, जितमन्यु ६३४ क्रोधका जीतनेवाला, भयापह ६३५ पुरुषों का जो संसार से भय उत्पन्न होताहै उसका नाश करनेवाला चतुरस्र ६३६ न्यायके अनुसार मनुष्योंकोकर्मके फलका देनेवाला गंभीरात्मा ६३७ जिसका स्वरूपअथवा चित्त गंभीरहै कोईउसका अन्त नहीं पासक्ता, विदिश ६३८ अधिकारियोंको नाना प्रकारके अत्यन्त फलोंका दिखानेवाला, व्यादिश ६३९ इन्द्रादिकों की प्रार्थनाओंको अंगीकार करनेवाला, दिश ६४० वेदरूपसे नाना प्रकारके कर्म फलोंका उपदेश करनेवाला (११३) अनादि ६४१ सबके उत्पत्तिका कारण होनेसे जिसकी उत्पत्तिका कोई कारण वर्त्तमान नहींहै, भूर्भुवः ६४२ सबका आश्रय स्थान होनेसे पृथ्वी और अन्तरिक्ष रूपसे सब जीवोंका आधार, लक्ष्मी ६४३ जिसकी आत्मविद्या उन भूर्भुवःलोकोंकीशोभाहै, सुवीर ६४४ जिसकीनाना प्रकारकी गति शोभायमानहै अथवा जिसकी नानाप्रकारकी चेष्टा प्रकाश देनेवालीहै, रुचिरांगद ६४५ जिसकेदोनों बाजूबन्द कल्याणरूपहैं, जनन ६४६ सब जीवधारियोंका उत्पन्न कर्त्ता, जनजन्मादि ६४७ मनुष्यके जन्मका मूल कारण, भीम ६४८ भयका हेतु भीमपराक्रम, ६४९ अवतारों में जिसका पराक्रम असुरादिकोंके भयका कारणहै (११४) आधारनिलय ६५० पंचतत्त्व रूप होकर आधारोंकाभीआधार, अधाता ६५१ जिसकाआधारभीउसीकाआत्मा हैजो कि प्रलयके समय सब सृष्टिको धारण और भक्षण करताहै पुष्पहास ६५२ प्रफुल्लित पुष्पके समान जिसका हास्य प्रपंचके प्रकाशरूपहै, प्रजागर ६५३ सदैव ज्ञानस्वरूप होनेसे बहुतजागने वाला, ऊर्ध्वग ६५४ सबकेऊपर नियतहोनेवाला, सत्पथाचार ६५५ सत्पुरुषोंकेजोसन्मार्गनामकर्महैं उनका अभ्यास करनेवाला, प्राणदः ६५६ मृतकपरीक्षितादिकोंको जिवानेवाला, प्रणव ६५७ परमात्मा का

कहनेवालाबड़ानाम जो ओंकारहै उसीकारूपहै, पण ६५८ व्यापारी अर्थात् अधिकारियोंसे उनके पवित्र कर्मोंको अंगीकार करकेउसका फलदेनेवाला (११५) प्रमाण ६५९ ज्ञानस्वरूप स्वयंप्रकाशब्रह्म प्राणनिलय ६६० इन्द्री अथवापंचप्राण जिस जीवात्मामेंलयहोतेहैं अथवा जिस पुरुषोत्तममें जीवलय होताहै वह पुरुषोत्तम, प्राणभृत् ६६१ अन्नरूपसे प्राणोंका पोषण करनेवाला, प्राणजीवन ६६२ प्राणोंसे सजीवकरनेवाला अथवा प्राणोंको चैतन्यकरनेवाला, तत्त्व ६६३ परमार्थसे ब्रह्मवाचक शब्द अर्थात् परब्रह्म, तत्त्ववित् ६६४ आत्मस्वरूपकोठीक २ जाननेवाला, एकात्मा ६६५ एकहीआत्मा अद्वैत स्वरूप जन्ममृत्यु, जरातिग ६६६ उत्पत्तिनाश औररूपा न्तर दशासे रहित (११६) भूर्भुवःस्वस्तरुः ६६७ होमके द्वारातीनों व्याहृतियोंसे तीनोंलोकोंकातारने वालाजैसे कि स्मृतियोंमेंलिखाहै कि अग्निमें जो आहुति दीजाती है वह सूर्य्य के पास जातीहै फिर सूर्य्य से वर्षा होतीहै वर्षासे अन्न और अन्नसे प्रजा उत्पन्न होतीहै अथवात्रिगुणात्मक सृष्टि रूपी वृक्ष जिसको आत्मा सेव्यासकरके नियतहै, तार ६६८ संसार सागरसे तारनेवाला अथवा प्रणवरूप, सपिता ६६९ सब लोकों का कर्त्ता होनेसे पिताहै, प्रपितामह ६७० ब्रह्माकाभी कर्त्ता होने से प्रपितामह, यज्ञ ६७१ यज्ञरूप यज्ञपति ६७२ यज्ञोंका स्वामी और रक्षक जैसा कि भगवद्वचनहै कि मैंहीं यज्ञोंकाभोक्ता और स्वामीहूं यज्वा ६७३ यजमान रूप यज्ञांग ६७४ यज्ञहीजिसके अंगहैं वह वराह मूर्त्ति जिसके चरण, वेद, दाढ़, यज्ञ कुंभ, हाथ, क्रतु, मुख, चितोती, जिह्वाअग्नि, रोम, कुशा, शिरब्रह्मा, दोनों नेत्र, दिन, रात्रि, भूषण वेदोंके अंगऔर श्रुति, घृत, नाक, शब्द, साम घोष, नख, प्रायश्चित्तादि हरिवंशके अनुसार, यज्ञ वाहन ६७५ यज्ञोंके फलोंके प्राप्त होनेके कारणों का धारण करने वाला अथवा प्राप्त करने वाला (११७) यज्ञभृत् ६७६ यज्ञका पोषण और रक्षा करनेवाला, यज्ञकृत् ६७७ जगत् के आदि और अन्तमें यज्ञकरने वाला अथवा नाश करनेवाला, यज्ञी ६७८ जिन यज्ञोंसे उसका

यजनादिक होताहै उनका प्रधान, यज्ञभुक् ६७६ यज्ञका भोक्ता और भोग कराने वाला यज्ञसाधन ६८० यज्ञप्राप्ती का साधन, यज्ञान्तकृत् ६८१ फलको देकर यज्ञका अन्त करने वाला अर्थात् समाप्त करने वाला अथवा बैश्ववीऋचाको पढ़कर पूर्णाहुतीसेपूर्ण करके यज्ञ समाप्त करने वाला, यज्ञ गुह्यम ६८२ ज्ञानयज्ञअथवा जिसमें फलकी इच्छानहीं है वह यज्ञ, अन्न ६८३ जो भोजन किया जाताहै अथवा जीवोंको भोजनकराताहैवह अन्नहै, अन्नाद६८४ जो अन्नको भोजन करताहै क्योंकि यह सब जगत् अग्नि सोम रूपहै (११८)आत्मयोनि ६८५ जिसका उपादान कारण उसी का आत्माहै दूसरा नहींहै, स्वयंजात ६८६ वही निमित्त कारणहै इसी हेतुसे अपने आप उत्पन्न होनेवाला अर्थात् प्रकट होनेवाला वैखानः ६८७ बाराह रूपसे पृथ्वीको अधिक तर खोदकर पाताल तलवासी हिरण्याक्षको मारने वाला, सामगायन ६८८ साममंत्रों को गानेवाला, देवकीनन्दन ६८९ देवकी माताका पुत्र इसीमहाभारत में लिखाहै कि प्रकाश रूप शरीरवाला सबका बीज रूप लोकपालों समेत तीनों लोक तीनों अग्नि और सम्पूर्ण ब्रह्मादिक देवता देवकी का पुत्रहै, स्रष्टा ६९० क्योंकि सब संसार का कर्त्ता है क्षितीश ६९१ भूमिका ईश्वर राजा रामचन्द्र, पापनाशन ६९२ (११९) कीर्त्तन पूजन और ध्यान करनेसे पापोंकेसमूहोंका नाश करने वाला जैसे वृद्ध शातातप का बचनहै कि पन्द्रह दिनके ब्रत से और सौ अथवा हजार प्राणायामोंसे जो पाप दूर होताहै वह एक क्षणभरही के ध्यान करने से नाश होजाताहै, शंखभृत् ६९३ अहंकाररूप शंखजिसका पांचजन्यनामहै उसकोधारण करनेवाला वाला, नन्दकी ६९४ विद्या रूप नन्दकी नाम खड्ग धारण करनेवालाचक्री ६९५ तत्त्वमणि रूप सुदर्शन, नाम चक्र रखने वाला अथवाजिसकी आज्ञासे संसार चक्र घूमताहै, शार्ङ्ग धन्वा ६९६ अहंकाररूप शार्ङ्ग धनुष रखने वाला, गदाधर ६९७ बुद्धितत्त्व रूप कौमोदिकी नाम गदा रखने वाला, रथांगपाणि ६९८रथका अंगरूप

चक्र जिसके हाथमें नियत है, अक्षोभ्य ९९९ अजेय, सर्वप्रहरणा-युध १००० जोकि सम्पूर्ण शस्त्रों का रखने वालाहै (१२०) ओंन-मोनमः यह नाम आदि अन्तमें लियाजाताहै और बड़ा मंगल रूप है क्योंकि उसका फल शास्त्रमें यह लिखाहै किजो प्रणाम श्रीकृष्ण भगवान्‌को किया जाय वह दश अश्वमेधके अमृत स्नानकी समान है दश अश्वमेध करने वाला भी फिर जन्म लेताहै परन्तु श्रीकृष्ण को प्रणाम करने वाला फिर जन्म नहीं लेताहै जो पुरुष इसअल-सी पुष्पके वर्ण पीताम्बर धारी गोविन्दजी को नमस्कार करतेहैं उनको कहीं भी भय नहींहै तीनों लोकोंके स्वामी अनुपम प्रभाव रखने वाले ईश्वर प्रभु विष्णुजी को थोड़ाभी प्रणाम करके मनुष्य का वह पाप जोकि हजार कल्पतकके जन्म लेनेसे उत्पन्न हुआहै नाश होजाताहै यह कीर्त्तन के योग्य महात्मा केशवजी के हजार दिव्य नाम मैंने संपूर्णताके साथ वर्णन किये १२१ जो इसको सदैव श्रवणकरेगा अथवा कीर्त्तन भी करेगा वह मनुष्य इसलोक और परलोक में किसी प्रकार के अशुभको नहीं पाताहै १२२ इसके श्रवण और कीर्त्तन से ब्राह्मण तो वेदपाठ ब्रह्मपाठ और ज्ञान इनतीनों का प्राप्त करने वाला होगा क्षत्रीविजय पानेवाला होय वैश्य बड़ा धनी होय और शूद्र जप यज्ञके बिना केवल श्रवण ही करने से सुखको पाताहै क्योंकि शूद्र यज्ञ और जपदोनों का अधिकारी नहींहै १२३ धर्मकी इच्छा करने वाला धर्म को पावे धनाकांक्षी धनादिकोंको पावे १२४ जो भक्तिमान् पवित्रात्मा और उसमें चित लगानेवाला मनुष्य सदैव प्रातःकाल उठकर बासुदेव-जीके इस सहस्र नामको पाठकरे १२५ वह बड़ा यशस्वी होकर अपनी जातिमें प्रतिष्ठा को पाकर अचल लक्ष्मीको पाताहै और उस उत्तम कल्याण को पाताहै जिससे श्रेष्ठ दूसरा नहीं है १२६ वह मनुष्य किसी स्थान पर भयको नहीं पाता है तेज और परा-क्रमको प्राप्तकरता है और नीरोगता पूर्व्वक तेजस्वीपन बल और सुन्दर स्वरूपताको पाताहै १२७जोरोगी अपनेरोगसे दुःखीहै

वह अपने रोगसे निवृत्त होता है बंधा हुआ अपने बंधन से छूटे भयभीत भयसे छूटे आपत्तिमें पड़ाहुआ आपत्तियोंसे छूटे १२८ भक्ति युक्त मनुष्य इस विष्णुके सहस्रनामसे पुरुषोत्तम को स्तुति करता शीघ्रही कठिनताओंसे निवृत्त होताहै १२९ बासुदेव में आश्रय और बासुदेव ही को सर्वोत्तम स्थान समझने वाला सबपापों से अत्यन्त पवित्रचित्त मनुष्य सनातन ब्रह्मको पाताहै १३० बासुदेवजीके भक्तोंको अशुभकहींभी नहींबर्त्तमानहै उनका जन्म मरण वृद्धावस्था रोग और भयभी नहीं है १३१ श्रद्धाभक्तिसे युक्तमनुष्य इसस्तोत्र को पाठकरताहुआ आगे लिखेहुयेफलों कोपाताहै अर्थात् आत्मसुख, शान्ती, लक्ष्मी, धैर्य्य, स्मरणता, कीर्त्ति १३२ जो पुरुषोत्तम के भक्त होकर पवित्र कर्म करने वालेहैं उनमें क्रोध, मत्सरता, अर्थात् ईर्षादिक लोभ, दुर्बुद्धिता यह सब अवगुण नहीं होतेहैं १३३ और नक्षत्रों समेत चन्द्रमा सूर्य्य स्वर्ग आकाश सब दिशा पृथ्वी महासमुद्र यह सब महात्मा बासुदेवजी के पराक्रमसे धारण किये गयेहैं १३४ देवता असुर गन्धर्व यक्ष उरग राक्षस और अन्य जड़ चैतन्य जीवों समेत यह सब जगत् श्रीकृष्णजी के आधीन बर्त्तमानहै १३५ इन्द्री, मन, बुद्धिबल अथवा सतोगुण तेज, धैर्य्यबल क्षेत्र क्षेत्रज्ञ इन सब को बासुदेव रूपकहाहै १३६ सब शास्त्रोंमें आचारही उत्तम कहा जाताहै धर्म आचारसे उत्पन्न होताहै धर्मके स्वामी बासुदेवजी हैं १३७ ऋषि पितृ देवता पंच महाभूत सब धातु और यह सब स्थावर जंगम जड़ चैतन्य जगत् नारायणहीसे प्रकटहै १३८ योग,ज्ञान,सांख्य,विद्या,शिल्प आदिक कर्म सब वेद शास्त्र और विज्ञान यह सब जनार्दन जीसेहीहै १३९ बड़े प्रकाश रूप बिष्णुजी एकहैं और पृथक्२ प्रकट किये हुये रूप अनेक हैं परन्तु वही न्यूनतासे रहित सब प्रत्यक्ष प्रकट होने वालोंका आत्मा नारायण तीनों लोकोंको व्याप्त करके बिश्वकोभोगताहै १४० व्यासजीने भगवान् विष्णुजीका यह स्तव बनायाहै जोपुरुष कल्याण और सुखोंको चाहै वह इस व्यासकृत स्तव को

पाठकरे १४१ जोपुरुष इस विश्वके ईश्वर अजन्मा बड़े तेज रूप संसार के उत्पत्ति और प्रलयस्थान हृदय कमल में वर्त्त मान नारायण को भजतेहैं वह नाशको नहीं पातेहैं १४२ जैसे कि स्मृति में लिखाहै कि यज्ञमें मोहसे कर्म करने वाले पुरुषों को जोकुछकर्ममें न्यूनताहोतीहै वह सब बिष्णुजीके स्मरणसे पूर्ण होताहै और ब्यास वचन भी है कि जैसे धन की इच्छासे धनाढ्य लोगोंकी प्रतिष्ठा पूर्व्वकप्रार्थना करते हैं उसी प्रकारही जब सब संसारके कर्त्ताको बन्दना करे तो क्यों नहीं संसार के बंधन से छूटेगा १ अर्जुनने प्रश्नकियाकि हेकमलपत्रकेसमान बिशालाक्ष कमल नाभ देवताओं में श्रेष्ठ जनार्द्दनजी आप प्रसन्न होकर अपने भक्तों के रक्षकहूजिये १४३ श्रीभगवान्बोले हेपांडव जो पुरुष मेरी सहस्त्र नामसे स्तुति करताहै और उससेमेरी जितनी प्रसन्नता होती है उतनीही मेरी प्रसन्नता आगे लिखेहुये एक श्लोकसे भी निस्सन्देहहोसक्तीहै १४४ अर्थात् अनन्तके अर्थ नमस्कार सहस्त्रमूर्त्ति वालेको नमस्कार सहस्त्रपाद अक्षशिर और भुजाधारी के अर्थ नमस्कार है सहस्त्र नाम धारण करने वाले सनातन पुरुषके अर्थ नमस्कार हजार कोटि युगधारी के अर्थ नमस्कार १४५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांसंहितायांवैयासिक्यांआनुशासनिकेपर्व्वणिदान धर्मेविष्णुसहस्रनामरूपशब्दस्व्याख्यामाहात्म्यसंयुक्तअर्थवर्णने शतोपरिएकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः १४९॥

अथ गजेन्द्रमोक्षप्रारम्भः ॥

शतानीकउवाच ॥ मयाहिदेवदेवस्यविष्णोरमिततेजसम् ॥ श्रुताःसंभृतयःसर्वागदतस्तवसुव्रत १ यदिप्रसन्नोभगवाननुग्राह्योस्मिवायदि ॥ तदहंश्रोतुमिच्छामि नृणांदुःस्वप्ननाशनम् २ स्वप्नादिषु महाभागदृश्यंतेयेशुभाशुभाः ॥ फलानिचप्रयच्छंतितदगुणान्येव भार्गव ३ तादृक्पुण्यंपवित्रंचनृणामतिशुभप्रदम् ॥ दुष्टस्वप्नोपशमनं तन्मेविस्तरतोवद ४ शौनकउवाच ॥ इदमेवमहाभाग पृष्टवान्श्चपितामहम् ॥ भीष्मंधर्मभृतांश्रेष्ठंधर्मपुत्रोयुधिष्ठिरः ५ भीष्म

उवाच॥ जितंतेपुंडरीकाक्ष नमस्तेविश्वभावन॥ नमस्तेस्तुहृषीकेश महापुरुषपूर्वज ६ आद्यंपुरुषमीशान पुरुहूतंपुरातनम् ॥ ऋत मेकाक्षरंब्रह्मव्यक्ताव्यक्तंसनातनम् ७ असच्चसच्चैवयद्विश्वंनित्यंसद सतःपरम् ॥ परंपराणांपरमं पुराणंपरमव्ययम् ८ मङ्गल्यंमङ्गलं विष्णुंवरेण्यमनघंशुचिम् ॥ नमस्कृत्यहृषीकेशंचराचरगुरुंहरिम् ९ प्रवक्ष्यामिमहापुण्यंकृष्णद्वैपायनस्यच॥ येनोक्तेनश्रुतेनापि नश्यते सर्वपातकम् १० नारायणसमोदेवो नभूतोनभविष्यति ॥ एतेन सत्यवाक्येन सर्वार्थान्साधयाम्यहम् ११ किंतस्यबहुभिर्मन्त्रैः किंतस्य बहुभिर्व्रतैः ॥ नमोनारायणायेति मन्त्रःसर्वार्थसाधकः १२ जज्ञेबहुज्ञं परमत्युदारं यंद्वीपमध्येसुतमात्मवन्तम्॥पराशराद्गन्धवतीमहर्षेस्तस्मै नमोज्ञानतमोनुदाय १३ नमोभगवतेतस्मै व्यासायामिततेजसे ॥ यस्यप्रसादाद्वक्ष्यामि नारायणकथामृतम् १४ वैशंपायनमासीनंपु राणोक्तिविचक्षणम् ॥ इममर्थंसराजर्षिः पृष्टवान्जनमेजयः १५ जनमेजयउवाच॥ किंजपन्मुच्यतेपापात् किंजपन्सुखमश्नुते॥ दुःस्व प्ननाशनंपुण्यं श्रोतुमिच्छामिसानद १६ वैशंपायनउवाच ॥ एव मेवपुराप्रश्नं पृष्टवान्स्तेपितामहः ॥ भीष्मंवैव्रतिनांश्रेष्ठंतंचाहंकथ यामिते १७ देवव्रतंमहाप्राज्ञं सर्वशास्त्रविशारदम् ॥ विनयेनोपसंग म्य पर्यपृच्छद्युधिष्ठिरः१८युधिष्ठिरउवाच॥ दुःस्वप्ननाशनंघोरमवेक्ष्य भरतर्षभ ॥ प्रयतःकिंजपेज्जाप्यंविबुधःकिमनुस्मरेत् १९ कस्य कुर्यान्नमस्कारंप्रातरुत्थायमानवः ॥ किञ्चध्यायेतसततंकिंपूज्यंवा भवेत्सदा २० पितामहप्रसादेनबुद्ध्यभेदोभवेन्मम ॥ तदहंश्रोतु मिच्छामि ब्रूहिनोवदतांवर २१ भीष्मउवाच ॥ शृणुराजन्महाबाहो कथयिष्येहिशान्तिकम्॥ दुःस्वप्नदर्शनेजाप्यं यद्वैनित्यंसमाहितैः २२ अत्राप्युदाहरंतीममितिहासंपुरातनम्॥ गजेन्द्रमोक्षणञ्चैवकृष्णस्या द्भुतकर्मणः २३ सर्वरत्नमयःश्री मान्त्रिकूटोनामपर्वतः ॥ सुतःपर्वत राजस्य सुमेरोर्भास्करद्युतेः २४ क्षीरोदजलवीच्यग्रैर्धौतामलशिला तलः॥ उत्थितःसागरंभित्त्वा देवर्षिगणसेवितः २५ अप्सरोभिःपरि वृतःश्रीमान्प्रस्रवणाकुलः॥ गंधर्वैःकिन्नरैर्यक्षैः सिद्धचारणपन्नगैः२६

मृगैःसिंहैर्गजेन्द्रैश्चवृतगात्रोविराजते॥ पुन्नागैःकर्णिकारैश्चसुविल्वैर्दि
व्यपाटलैः २७चूतनिंबकदंबैश्चचंदनागरुचंपकैः ॥ शालैस्तालैस्तमा
लैश्चतरुभिश्चार्जुनैस्तथा २८ बकुलैःकुंदपुष्पैश्चसरलैर्देवदारुभिः ॥
मन्दारकुसुमैश्चान्यैःपारिजातैश्चसर्वशः २६ एवंबहुविधैर्वृक्षैःसर्व
तःसमलंकृतः॥ नानाधात्वङ्कितैःशृंगैःप्रस्रवद्भिःसमंततः३०शोभितो
रुचिरप्रख्यैस्त्रिभिर्विस्तीर्णसानुभिः ॥ मृगैःशाखामृगैःसिंहैर्मातंगैश्च
सदामदैः ३१ जीवंजीवकसंघुष्टं चकोरशिखिनादितम् ॥ तस्यैकं
काञ्चनंशृंगंसेव्यतेयंदिवाकरः ३२ नानापुष्पसमाकीर्णंनानाःशृंगैः
समाकुलम् ॥ द्वितीयंराजतंशृङ्गंसेव्यतेयंनिशाकरः ३३ पाण्डुरां
बुदशंकाशंतुषाराचलसन्निभम् ॥ वज्रेन्द्रनीलवैडूर्यतेजोभिर्भाश
यन्नभः ३४ तृतीयंब्रह्मसदनंप्रकृष्टंशृंगमुत्तमम् ॥ पद्मरागसम
प्रख्यंतारागणसमन्वितम् ३५ नैतत्कृतघ्नाःपश्यंतिननृशंसाननास्ति
काः॥ नातप्ततपसोलोकेयेचपापकृतोजनाः ३६ नानाराधितगोविंदा
शैलंपश्यन्तितेनराः॥ तस्यसानुमतःपृष्टेसरःकाञ्चनपंकजम् ३७कार
ण्डवसमाकीर्णंराजहंसोपशोभितम् ॥ मत्तभ्रमरसंघुष्टंचकोरशिखिना
दितम् ३८ कमलोत्पलकल्हारपुंडरीकोपशोभितम् ॥ कुमुदैःशत
पत्रैश्चकांचनैःसमलंकृतम्३६ पद्मैर्मरकतप्रख्यैःपुष्पैःकाञ्चनसन्नि
भैः ॥ गुल्मैःकीचकवेणूनांसमंतात्परिवारितम् ४० अत्यद्भुतंमहा
स्थानंविचित्रशिखराकुलम् ॥ शतयोजनविस्तीर्णंदशयोजनमाय
तम् ४१ पंचयोजनमूर्धानांसरएतत्प्रमाणतः ॥ हिमखण्डोदकंरा
जन्सुस्वादममृतोपमम् ४२ त्रैलोक्येदृष्टपूर्वञ्च यत्तत्सरमनुत्तम
म् ॥ सुप्रसन्नंसरोदिव्यंदेवानामपिदुर्ल्लभम् ४३ खातेन्नद्विगु
णंप्रोक्तं शरद्यौरिवनिर्मलम् ॥ उपहारायदेवानां सिद्धाद्यर्चितपंक
जम् ४४ तस्मिन्सरसिदुष्टात्माविरूपोंतर्जलाशयः ॥ आसीद्
ग्राहोगजेन्द्राणांदुराधर्षोमहाबलः ४५ अथदन्तोज्ज्वलमुखःकदाचिद्
गजयूथपः ॥ आजगामतृषाक्रान्तः करेणुपरिवारितः ४६ मदस्रा
वीजलाकांक्षीपादचारीवपर्वतः ॥ वासयन्मदगंधेन महानैरावतोप
मः ४७ गजोह्यञ्जनसंकाशोमदाच्चलितलोचनः॥ तृषितःपानका

मोयमवतीर्णश्चतत्सरः ४८ पिवतस्तस्यतत्तोयं ग्राहश्चसमपद्यत॥ सुलीनःपंकजवनेयूथमध्यगतःकरी ४९ गृहीतस्तेनरौद्रेण ग्राहेणातिवलीयसा॥ पश्यन्तीनांकरेणूनां क्रोशन्तीनांसुदारुणाम् ५० नीयते पंकजवनेग्राहेणाऽव्यक्तमूर्त्तिना॥ गजोह्याकर्षतेनीरंग्राहश्चाकर्षते जलम् ५१ तयोर्युद्धंमहाघोरं दिव्यवर्षसहस्रकम्॥ वारुणैःसंयुतः पाशैर्निष्प्रयत्नगतिःकृतः५२ वेष्टयमानःसघोरैस्तुपाशैर्नागदृढैस्तथा॥ विस्फूर्जितमहाशक्तिर्विक्रोशंश्चमहारवान् ५३ व्यथितःसनिरुत्साहो गृहीतोघोरकर्मणा॥ परमापदमापन्नो मनसाचिन्तयद्धरिम् ५४ सतु नागवरःश्रीमान्नारायणपरायणः॥ तमेवशरणंदेवं गतःसर्वात्मनातदा ५५ एकाग्रोनिगृहीतात्मा विशुद्धेनांतरात्मना॥ नैकजन्मांतराभ्यासाद्भक्तिमान्गरुडध्वजे ५६ नान्यंदेवंमहादेवात्पूजयामास केशवात्॥ दिग्वाहुंस्वर्गमूर्धानंभूःपादंगगनोदरम् ५७ आदित्य चंद्रनयनमनंतंविश्वतोमुखम्॥ भूतात्मानम्भ्रमेघाभं शङ्खचक्रगदाधरम् ५८ सहस्रशुभनामानमादिदेवमजंविभुम्॥ संगृह्यपुष्करा ग्रेणकाञ्चनंकमलोत्तमम् ५९ निवेद्यमनसाध्यात्वापूजांकृत्वाजनार्दनम्॥ आपद्विमोक्षमन्विच्छन्गजःस्तोत्रमुदीरयत् ६० गजेंद्रउवाच॥ नमो मूलप्रकृतयेअजितायमहात्मने॥ अनाश्रयायदेवायनिस्पृहायनमोनमः ६१ नमआद्यायवीजाय आर्षेयायप्रवर्त्तिने॥ अनन्तायचमैकायअव्यक्तायनमोनमः ६२ नमोगुह्यायगूढायगुणायगुणधर्मिणे॥ अतर्क्यायाप्रमेयायअतुलायनमोनमः ६३ नमःशिवायशांतायनिश्चयायनयशस्विने॥ सनातनायपूर्वाय पुराणायनमोनमः ६४ नमो जगत्प्रतिष्ठाय गोविंदायनमोनमः॥ नमोदेवाधिदेवाय स्वभावाय नमोनमः ६५ नमोस्तुपद्मनाभायसांख्ययोगोद्भवायच॥ विश्वेश्वरायदेवायशिवायहरयेनमः ६६ नमोस्तुतस्मैदेवाय निर्गुणाय गुणात्मने॥ नारायणायदेवायदेवानांपतयेनमः ६७ नमोनमःकारणवामनायनारायणायामितविक्रमाय॥ श्रीशार्ङ्गचक्रासिगदाधराय नमोऽस्तुतस्मैपुरुषोत्तमाय ६८ गुह्यायवेदनिलयायमहोदरायसिंहाय दैत्यनिधनायचतुर्भुजाय॥ ब्रह्मेंद्ररुद्रमुनिचारणसंस्तुतायदेवोत्तमाय

वरदायनमोच्युताय ६९ नागेंद्रभोगशयनासनसुप्रियाय गोक्षी
मथुकनीयघनोपमाय ॥ पीतांबरायमधुकैटभनाशनाय विश्वायच
मुकुटायनमोक्षराय ७० नाभिप्रजातकमलासनसंस्तुतायक्षीरोद
र्णवनिकेतयशोधराय ॥ नानाविचित्रमुकुटाङ्गदभूषणाययोगेश्वर
विरजायनमोवराय ७१ भक्तिप्रियायवरदीप्तसुदर्शनायफुल्लार
विंदविपुलायतलोचनाय ॥ देवेंद्रविघ्नशमनोद्यतपौरुषायनाराय
वरदायनमोच्युताय ७२ नारायणायपरलोकपरायणायकाल
कालकमलायतलोचनाय ॥ रामायरावणविनाशकृतोद्यमायधीर
धीरविरजायनमोवराय ७३ पद्मासनायमणिकुण्डलभूषणायक
लकायशिशुपालविनाशनाय ॥ गोवर्धनायसुरशत्रुनिकृंतनायदाम
नायविरजायनमोवराय ७४ ब्रह्मायनायत्रिदशायनायलोकैकनाथ
हितात्मकाय ॥ नारायणायार्ति विनाशनायमहावराहायनमस्क
मि ॥ ३ ॥ कूटस्थमव्यक्तमचिंत्यरूपंनारायणंकारणमादिदेवम्
पुमांतथेप्रपुरुषंपुराणं तंवासुदेवंशरणंप्रपद्ये ७६ अदृश्यमच्छेद्य
नंतमव्ययंमहर्षयोब्रह्ममयंसनातनम् ॥ वदंतियंवैपुरुषंपुरातन
वासुदेवंशरणंप्रपद्ये ७७ उत्तिष्ठतस्तस्यजलोरुकुक्षेर्महावराह
महींविदार्य ॥ विदुर्व्वतोवेदमयंशरीरंलोकांतरस्थंमुनयोगृणन्ति
योगेश्वरंचारुविचित्रमौलिंज्ञेयंसमस्तंप्रकृतेःपरस्थम् ॥ क्षेत्रज्ञमा
प्रवरंवरेण्यंतंवासुदेवंशरणंप्रपद्ये ७९ किरीटकेयूरमहार्हनिष्कैर्म
तमालंकृतसर्वगात्रम् ॥ पीतांबरंकांचनचित्रजमालाधरंकेशवम
मैमि ८० कार्यक्रियाकारणमप्रमेयं हिरण्यबाहुंवरपद्मनाभम्
महाबलंवेदनिधिंसुरोत्तमंतंवासुदेवंशरणंप्रपद्ये ८१ भवोद्भवंवेदवि
वरिष्ठंयोगात्मकंसांख्यविदांवरिष्ठम् ॥ आदित्यचंद्राग्निवसुप्रभ
प्रभुंप्रपद्येच्युतमात्मवंतम् ८२ यदक्षरंब्रह्मवदंतिसर्वगंनिशा
यन्मृत्युमुखात्प्रमुच्यते ॥ तमीश्वरंयुक्तमनुत्तमैर्गुणैःसनातनंलो
गुरुंनमामि ८३ नमस्तस्मैवराहायलीलयोद्धरतेमहीम् ॥
मध्यगतोयस्यमेरुःखुरखुरायते ८४ श्रीवत्सांकंमहादेवंदेवगुह्यमनूप
म॥प्रपद्येसूक्ष्ममचलंवरेण्यमभयप्रदम् ८५ प्रभवंसर्वभूतानांनिर्गु

परमेश्वरम् ॥प्रपद्येमुक्तसंगानांयतीनांपरमांगतिम् ८६ प्रभवंतंगुणा ध्यक्षमक्षरंपरमंपदम् ॥ शरण्यंशरणांभक्त्याप्रपद्येभक्तवत्सलम् ८७ त्रिविक्रमंत्रिलोकेशंसर्वेषांप्रपितामहम् ॥ योगात्मानंमहात्मानं प्रपद्येहंजनार्दनम् ८८ आदिदेवमजंविष्णुं व्यक्ताव्यक्तंसनातनम् नारायणमणीयांसं प्रपद्येब्राह्मणप्रियम् ८९ अकूपारायदेवाय नमः सर्वमहाद्युते ॥ प्रपद्येदेवदेवेशमणीयांसमणोःसदा ९० एकायलोक नाथाय परतःपरमात्मने ॥ नमःसहस्रशिरसे अनन्तायनमोनमः ९१ त्वमेवपरमंदेवमृषयोवेदपारगाः ॥ कीर्तयंतिचसर्वेवै ब्रह्मादीनांपराय णम् ९२ नमस्तेपुण्डरीकाक्ष भक्तानामभयंकर ॥ सुब्रह्मण्यनमस्तेस्तु त्राहिमांशरणागतम् ९३ तावद्भवतिमेदुःख चिंतासागरसागरे ॥ यावत्कमलपत्राक्षं नस्मरामिजनार्दनम् ९४ भीष्मउवाच॥भक्तिंवरस्य तुसंचिंत्य नागस्यामोघसंस्तवान् ॥ प्रीतिमानभवद्राजन्श्रुत्वाचक्र गदाधरः ९५ आरुह्यगरुडंविष्णु राजगामसुरोत्तमः ॥ सान्निध्यं कल्पयामास तस्मिन्सरसिलोकधृक् ९६ ग्राहग्रस्तंगजेंद्रंच तंग्राहंच जलाशयात् ॥ उज्जहाराप्रमेयात्मा तरसामधुसूदनः ९७ जल स्थंदारयामासग्राहंचक्रेणमाधवः ॥ मोचयामासनागेंद्रं पाशेभ्यः शरणागतम् ९८ सहिदेवलशापेन हूहूगंधर्वसत्तमः ॥ इदमप्यपरं गुह्यंराजन्पुण्यतमंशृणु ९९ युधिष्ठिरउवाच ॥ कथंशापोभवत्तावद् गंधर्वस्यमहात्मनः ॥ एतदिच्छाम्यहंश्रोतुं विस्तरेणपितामह १०० भीष्मउवाच॥यथातौशापितौतेन देवलेनमहात्मना ॥ हाहाहूहूरिति ख्यातौ गीतवाद्यविशारदौ १०१ उर्वशीमेनकारंभा तथान्येचाप्सरो गणाः ॥ शक्रस्यपुरतोराजन् नृत्यंतेतासुमध्यमा १०२ ततस्तुतौ गायमानौ गंधर्वौराजसद्मनि ॥ अन्योन्यंचक्रतुःस्पर्द्धांशक्रस्यपुरतः स्थितौ १०३ आवयोरुभयोर्मध्येयःश्रेष्ठोगीतवाद्ययोः॥तंवदस्वसुरश्रेष्ठ ज्ञात्वागीतस्यलक्षणम् ४ गन्धर्वयोर्वचःश्रुत्वा प्रत्युवाचशतक्रतुः॥ युवयोर्गीतवाद्येषु विशेषोनोपलभ्यते५ एकएवमुनिः श्रेष्ठोदेवलोनाम नामतः॥ युवयोः संशयच्छेत्ता भविष्यतिनसंशयः६ ततस्तुतौशक्रव चोनिशम्य प्रणम्यःराजन्शिरसासुरोत्तमम् ॥ गतौसुहृष्टौजयकांक्षिणौ

तौ यत्राश्रमेतिष्ठतिसद्विजाग्र्यः७ ततोदृष्ट्वामुनिश्रेष्ठं देवलंशंसितव्रतम् ॥ अभिवाद्यमहात्मानमूचतुः पार्श्वसंस्थितौ ८ शक्रेणप्रेषितौदेवत्वत्समीपेद्विजोत्तम ॥ एकस्यनौजयंदेहि यत्त मनसिवर्त्तते९ पृथक्चरन्तौगायन्तौमधुरंमधुराक्षरम् ॥ नकिञ्चिद्वदतेवाक्यंमुनिर्मौनस्यधारणात् १० शृण्वन्नपिपदंतेषांनकिञ्चिद्वदतेमुनिः ॥ तदातौकुपितौतस्यदेवलस्यमहात्मनः ११ उचतुस्तौतदावाक्यं गन्धर्बौकालनोदितौ ॥ मूढोयंनाभिजानातिनिश्चयंगीतवाद्ययोः १२ निशम्यतद्वचस्तोषांगन्धर्वाणांमदान्वितम् ॥ क्रोधादुत्थायविप्रेन्द्रइदंवचनमब्रवीत् १३ एषहूहूर्दुरात्मातुग्राहस्त्वंयातुमूढधीः ॥ त्वमेवगजराजस्तुभवस्वगिरिगह्वरे १४ एवंशापंददौक्रुद्धोदेवलः सुमहातपाः ॥ ततस्तौशापितौतेनदेवलेनमहात्मना १५ प्रणम्यशिरसाविप्रंगन्धर्वाविदमूचतुः ॥ भूमंडलगतौह्यावांप्रसादंकुरुसुव्रत१६ निश्चयंकुरुविप्रेंद्रयेनशापाद्विमुच्यते ॥ ततस्तौपुरुषौदृष्ट्वाउभौशापभयार्दितौ १७ प्रत्युवाचमुनिःश्रेष्ठोगंधर्वाणांभयापहम् ॥ मेरुपृष्ठे सरोरम्यंवहुवृक्षसमाकुलम् १८ नानापक्षिगणाढ्याञ्चाद्वितीयइवसागरः ॥ तस्मिन्सरोवरेरम्येग्राहोनित्यंभविष्यति १९ तृषार्त्तस्तत्रमातंगोगमिष्यतिनगोत्तमात् ॥ तयोर्मध्येमहद्युद्धं भविष्यतिसुदारुणम् २० ग्राहेणाकृष्यमाणस्तुगजस्तोत्रंकरिष्यति ॥ तदैवदेवदेवेशस्तुष्यतेनात्रसंशयः २१ ततोनारायणःप्रीतःशापात्त्वांमोचयिष्यति ॥ इत्युक्ताऋषिणातेनवरेणौतौप्रमोदितौ२२ग्राहस्त्वमगमत्सोथ वधंप्राप्यदिवंगतः ॥ आपद्विमुक्तोयुगपद्राजोगन्धर्वएवच२३ गजोपिमुक्तांयातःश्रीकृष्णेनविमोक्षितः ॥ तस्माच्छापद्विनिर्मुक्तोगजोगंधर्वएवच २४ तौचस्वंस्वंवपुःप्राप्यप्रणिपत्यजनार्दनम् ॥ गजोगंधर्वराजश्चपरांनिर्वृत्तिमागतौ २५ प्रीतिमान्पुण्डरीकाक्षःशरणागतवत्सलः ॥ अभवद्देवदेवेशस्ताभ्यांचैवप्रपूजितः २६ भजंतंगजराजानमवदन्मधुसूदनः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मोनांत्वांचसरश्चैवग्राहस्यचविदारणम् २७ गुल्मकीचक वेणूनांतृञ्चशैलवरंतथा ॥ प्रभासंभास्करंगंगांनैमिषारण्यपुष्करम् २८प्रयागंब्रह्मतीर्थंचदण्डकारण्यमेवच ॥ येस्मरिष्यंतिमनुजाः प्रयताःस्थिर

वुद्धयः २९ दुःस्वप्नोनश्यतेतेषांसुस्वप्नश्चभविष्यति ॥ अनिरुद्धंगजं
ग्राहं वासुदेवंमहाद्युतिम् ३० संकर्षणंमहात्मानंप्रद्युम्नंचतथैवच ॥
मत्स्यंकूर्मंवराहंचवामनंतार्क्ष्यमेवच ३१ नारसिंहंचनागेंद्रं सृष्टिप्रलय
कारकम् ॥ विश्वरूपंहृषीकेशं गोविंदंमधुसूदनम् ३२ सहस्राक्षंचतुर्वा
हुंमुरारिंगरुडध्वजम् ॥ त्रिदशैर्वंदितंदेवं दृढभक्तिमनुत्तमम् ३३ वैकुंठं
दुष्टदमनंमुक्तिदंमधुसूदनम् ॥ एतानिप्रातरुत्थायसंस्मरिष्यंतियेनराः
३४ सर्वपापैः प्रमुच्यंतेविष्णुलोकमवाप्नुयुः ॥ श्रीभीष्मउवाच ॥ एव
मुक्त्वामहाराजगजेंद्रं मधुसूदनः ३५ स्पर्शयामासहस्तेन गजंगंधर्व
मेवच ॥ तौचस्पृष्टौततःसद्यो दिव्यमाल्यांबरावुभौ ३६ तमेवमनसा
प्राप्यजग्मतुस्त्रिदशालयम् ॥ ततोदिव्यवपुर्भूत्वाहस्तिराट्परमंपदम्
३७ गच्छतिस्ममहावाहोनारायणपरायणः ॥ ततोनारायणःश्रीमा
न्मोचयित्वागजोत्तमम् ३८ ऋषिभिःस्तूयमानोग्र्यैर्वेदगुह्यपराक्ष
रैः ॥ ततःसभगवान्विष्णुर्दुर्विज्ञेयगतिःप्रभुः ३९ शंखचक्रगदापाणि
रंतर्धानंसमाविशत् ॥ वैशंपायनउवाच ॥ गजेन्द्रमोक्षणंश्रुत्वाकु
न्तीपुत्रोयुधिष्ठिरः ४० भ्रातृभिः सहितःसम्यक्ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥
पूजायमासदेवेशं पार्श्वस्थंमधुसूदनम् ४१ विस्मयोत्फुल्लनयनः
श्रुत्वानागस्यमोक्षणम् ॥ ऋषयश्चमहाभागः सर्वेप्राञ्जलयःस्थिताः
४२ अजंवरेण्यंवरपद्मनाभं महाबलंवेदनिधिंसुरोत्तमम् ॥ तंवेदगुह्यं
पुरुषंपुराणं ववंदिरेवेदविदांवरिष्ठम् ४३ एतत्पुण्यंमहाबाहो नरा
णांपुण्यकर्मणाम् ॥ दुःस्वप्नदर्शनंघोरं श्रुत्वापापैःप्रमुच्यते ४४
तस्मात्त्वंहिमहाराजप्रपद्येशरणंहरिम् ॥ बिमुक्तःसर्वपापेभ्यःप्राप्स्य
सेपरमंपदम् ४५ यदामहाग्राहगृहीतकातरं सुपुष्पितेपद्मवनेमहाद्वि
पम् ॥ बिमोक्षयामासगजंजनार्दनोदुःस्वप्ननाशंचसुखोदयंसदा ४६
परंपराणांपरमंप्रविष्टं परेशमीशंसुरलोकनाथम् ॥ सुरासुरैरर्चित
पादपद्मं सनातनंलोकगुरुंनमामि ४७ वरंगजस्मरणाद्विमुक्तिहेतुं
पुरुषवरंस्तुतिदिव्यदेहगीतम् ॥ सततमपिपठंतियेतुतेषामभिहृति
मरणांतककिल्बिषापहंस्यात् ४८ धर्मद्रुढःस्मृतिवद्धमूलोवेदस्कंधः
पुराणशाखाढ्यः ॥ ऋतुकुसुमोमोक्षफलोमधुसूदनपादपोजयति ४९

नमोब्रह्मण्यदेवायगोब्राह्मणहितायचं ॥ जगद्धितायकृष्णाय गोविंदायनमोनमः ५० आकाशात्पतितंतोयंयथागच्छतिसागरम् ॥ सर्वदेवनमस्कारःकेशवंप्रतिगच्छति १५१ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेगजेन्द्रमोक्षणंशततोपरि पंचाशततमोऽध्यायः १५० ॥

एकसौपचासका अध्याय ॥

गजेन्द्रमोक्षकाअर्थ ॥

शतानीकने कहा कि हे सुन्दर व्रत शौनक मैंने आपके मुखसे देवताओं केभी देवता बड़े तेजस्वी बिष्णुजी की सब बिभूतियोंको श्रवण किया १ हे भगवन् जोआप प्रसन्न हैं और मैं अनुग्रह के योग्यहूं तोमैं आपसे मनुष्योंके दुःस्वप्ननाश करने वाले स्तोत्र को सुना चाहताहूं २ हे महाभाग भार्गवजी स्वप्नोंके मध्यमें जो शुभाशुभ वृत्तान्त देखनेमें आतेहैं और उनके गुण फलको देतेहैं जोउस रीति का महापवित्र बज्र सेभी रक्षाकरने वाला मनुष्योंका महा कल्याणकारी और दुःस्वप्नादिकोंका नाशकरनेवाला हो उसको आप कृपा करके वर्णन कीजिये ३।४ शौनक बोलेकि हे महाराज जन्मेजय इसी प्रश्नको, धर्मके पुत्र युधिष्ठिर नेभी धर्म धारियों में श्रेष्ठ राजा भीष्मपितामह से पूछा था तब भीष्मजी ने कहाकि हे हृदय कमलमें निवास करने वाले तुमने सब को बिजय किया हे संसार के कर्त्ता तुमको नमस्कार है हे सबसे पूर्व प्रकट होनेवाले इन्द्रियों के स्वामी महापुरुष तुमको नमस्कारहै ५।६ उस आदि पुरुष स्वामी इन्द्ररूप अथवा बहुत नाम रखने वाले प्राचीन, सत्य, प्रणव, वेदरूप, व्यक्त, अव्यक्त, सनातन, सत्, असत्, बिश्वरूप, सदैव रहने वाले सदसत् से पर श्रेष्ठतमोंसे भी श्रेष्ठतम पुराण पुरुष न्यूनतासे रहित ७।८ मंगलदाता, मंगलरूप, सर्बव्यापी, प्रधान, पापोंसे रहित, पवित्र, चराचर जगत्के गुरू, इन्द्रियोंके स्वामी हरि को नमस्कार करके ९ श्रीव्यास जीके अत्यन्त पवित्र मतकोकहूंगा

जिसके पढ़ने और सुननेसे सब पातक नाशहोते हैं १० पुरी रूप शरीरोंमें निवास करनेवाले परमेश्वरके समान नहुआहै और नहोगा इन्हीं सत्य२ वचनोंसे सब अभीष्टोंको सिद्धकरताहूं ११ उसकोबहुत से मंत्र और व्रतोंसे क्या प्रयोजनहै,ऊँनमो नारायणाय,यह मंत्रही सब मनोरथों का सिद्ध करने वालाहै १२ गन्धवती माताने द्वीपके मध्यमें पराशर महर्षिसे जिस परम ज्ञानमान श्रेष्ठ बड़े कृपालुबुद्धि मान पुत्रको उत्पन्न किया उस अज्ञानके अन्धकारोंके नाश करने वाले ऋषिको नमस्कारहै १३ उस बड़े तेजस्वी भगवान् व्यासजी के अर्थ नमस्कारहै जिसकी कृपासे इसनारायण की कथाको बर्णन करूंगा १४ उस राजऋषि जन्मेजयने इस प्रश्नको प्राचीनवृत्तान्तोंके कहनेमें कुशल बिराजमान बैशंपायनजी से पूछा १५ जन्मेजयने प्रश्नकिया कि हेप्रशंसा करनेके योग्य कौनसे जपके करनेसे मनुष्य पापोंसे छूटताहै औरकिसके जपको करकेसुखकोभोगताहै और कौनसी पवित्र करने वाली दुःस्वप्नकी नाश करने वाली कथाहै उस सबको आप बर्णन कीजिये १६ बैशंपायनबोले की पूर्वसमय में तेरे पितामह राजा युधिष्ठिर ने इसी प्रश्नको ब्रतधारियोंमें श्रेष्ठ भीष्मजीसेपूछाथावहीमैंतुझसेकहताहूं१७अर्थात्युधिष्ठिरनेउस सब शस्त्र धारियों में श्रेष्ठ महाज्ञानी देवब्रत भीष्मजी के पास जाकर नम्रता पूर्वक यह प्रश्नकिया कि १८ हेभरतर्षभ नाश और भयके करने वाले अशुभ स्वप्नों को देखकर जागने वाला सावधानमनुष्य कौनसे जपको जपै और किस देवता का स्मरण करे १९ प्रातःकाल उठकर मनुष्य कौनसे देवताको नमस्कार करे सदैव किस का ध्यान करे और सदैव प्रतिदिन किसका पूजन करना योग्य है २० हेपितामह आपकी कृपासे मेरी बुद्धिमें जैसे एकता प्राप्त होयवही आप कहने को योग्य हैं हे महावक्ता उसको आप कृपा करके मुझसे बर्णन कीजिये २१ भीष्मजी बोले हे महाबाहु राजा युधिष्ठिर मैं दुःस्वप्नके देखने के शान्ती कर्मको कहताहूं तुमचित्तसे सुनो कि जिसका सुनना सावधान मनुष्य को सदैव योग्य है २२

इस स्थानपर अपूर्वकर्मी श्रीकृष्णजीके इस प्राचीन इतिहास और गजेन्द्र मोक्षको भी कहताहूं २३ सूर्य्यकेसमान प्रकाशमान सुमेरु का पुत्र गिरिराज श्रीमान् त्रिकूटा चलनाम पर्व्वत सब रत्नों से पूर्ण है २४ जो क्षीर समुद्रके जलकी लहरों से धुलीहुई निर्मल स्वच्छ और पवित्र शिलाओं से युक्त पर्व्वत समुद्र से निकलकर देवऋषियों के समूहोंसे सेवितहै २५ वह अप्सराओं से युक्तमहा शोभित झरनाओं से व्याप्त गन्धर्ब किन्नर यक्ष सिद्ध चारण पन्नग २६ मृग सिंह और गजेन्द्रों से संयुक्त अंगहोकर अत्यन्त शोभाय मान है पुन्नाग,कर्णिकार, सुबिल्व, चूत, दिव्यपाटल, निंब, कदंब, चंदन, अगर, चंपक, शाल, ताल, तमाल और अर्जुन वृक्षों से २८ वकुल,कुन्द,सरल, देवदारु और मन्दारकेपुष्प और अन्य पारिजात आदि वृक्षों केफूलोंसे इसी प्रकार अन्य २ नाना प्रकारके वृक्षोंसे चारोंओरको अच्छे प्रकारसे अलंकृत और नानाप्रकारकी धातुओंसे चिह्नित चारोंओरसे जलके सुन्दर सोतों समेत २६।३० अत्यन्त उत्तम तीनशिखरों से शोभित जिसमें सदैव मदोन्मत्त हाथी सिंह मृग शाखा मृग ३१ जीव जीवक चकोर और मोरोंसे शब्दायमान है उसके एक स्वर्णमयी शिखरको यह सूर्य्य सेवन करताहै (अर्था त् यह पर्व्वत सूक्ष्म रूप पृथ्वी पर स्वर्गमें है इस स्थूल पृथ्वी पर नहींहै) ३२ और नाना प्रकार के भवनों से युक्त दूसरे चांदी के शिखर को यह चन्द्रमा सेवन करता है ३३ बज्र इन्द्र नीलमणि और वैडूर्य्योंके तेजोंसे आकाश को प्रकाशित करता पांडुवर्ण बाद लके समान तुषारी पर्व्वत के तुल्य प्रकाशमान है ३४ और नक्षत्र गणोंसे युक्त पद्मराग के समान वर्ण वाला श्रेष्ठ सब से बड़ा तीस रा शिखर ब्रह्माजी का निवासस्थान है ३५ इसलोक में जोकृतघ्नी निर्दयी नास्तिक और तपस्या से रहित मनुष्य हैं वह इस पर्व्वत को नहीं देखतेहैं ३५ गोविन्दजी के पूजन और ध्यानसे रहित जो मनुष्यहैं वहभी इस पर्व्वत को नहीं देखतेहैं ३६ उस पर्व्वतकेपृष्ठ भागमें सुवर्णके कमल रखने वाला एक सरोवर है ३७ कारण्ड

और राजहंस पक्षियों से शोभित मतवाले भौंरे चकोर और मोरों के शब्दोंसे शब्दायमान कमल उत्पल कल्हार और पुंडरीक नाम कमलोंसेशोभायमान स्वर्णके शतपत्र और कुमुदनाम पुष्पोंसे लंकृत ३८।३९ मर्कतमणिके समान पद्म औरस्वर्णमयीपुष्पोंसे औरकीचक बांसोंकी लताओंके पुष्पोंसेचारोंओरको व्याप्त ४० अत्यन्त अपूर्व विचित्र शिखरोंसे शोभित वहस्थान सौयोजन लंबा दशयोजन चौड़ा ४१ और पांच योजनका गंभीर ऐसेप्रमाणका वह बड़ाभारी सरोवरहै हे राजा उस सरोवरका जलशीतल और मिष्टतासेस्वादु युक्त होकर अमृतके समानहै ४२ जैसा कि वह अनुपम सरोवर है वैसा पूर्व्वमें कभी तीनों लोकोंमें भीनहीं देखा वह सरोवर अत्यन्त स्वच्छ दिव्य और स्वर्गके देवताओंकोभी दुर्लभ है, और सरोवर के बिस्तारसे द्विगुणित और शरदकालके आकाशको समान निर्मल है और जिसके कमलोंकोसिद्ध मुनिलोगदेवताओंकी भेंटोंके निमित्त पूजितमानतेहैं ४३।४४ उससरोवरमें एकग्राहथा जोकि दुर्बुद्धी कुरूप जलके भीतर रहनेवाला महापराक्रमी गजेन्द्रोंसेभी अजेय था ४५ किसी समयमें दांतोंसे उज्ज्वल मुख अपनी पत्नियों समेत एक पिपासासे युक्त वहां बड़ा भारी गजेन्द्र आया ४६ वह मदकाझड़ नेवाला जल पीनेका आकांक्षी चलायमान पर्व्वतके समान अपने मदकी सुगन्धिको फैलाताहुआ ऐरावतके समानबड़े शरीरवाला ४७ सुरमेके पर्व्वतके रूप मदसे चढ़े हुये चलायमान नेत्र तृषा युक्त जल के पीनेकी इच्छासे उस सरोवरमें उतरा ४८ और उसके जलपान करनेकीही दशामें वह ग्राहभी आकर बर्त्तमान हुआ और वह कमल बनके झुंडमें बर्त्तमान हाथी ४९ उन भयभीत शब्दोंकी करने वाली अपनी हथिनियोंके देखतेहुये उस डरावनीसूरत बड़ेपराक्रमी ग्राहकेपंजेमें पकड़ागया ५० गुप्तरूप ग्राह उसके पैरको कमलोंके वनमें मुखसे दाबकर खैंचताथा और गजराज किनारे की ओर खैंच ताथा ५१ इसी प्रकार उन दोनोंका दिव्य हजार बर्ष पर्य्यन्त बड़ा घोर संग्राम हुआ फिर वह वरुणकी फांसियोंमें पकड़ाहुआ गजराज

चलनेकी गतिसे निरुपाय कियागया ५२ फिर बड़ी दृढ़ और भय-
कारी नाग फांसियोंमें बंधाहुआ बड़े पराक्रमको प्रकट करताहुआ
महान् शब्दोंको करता ५३ भयकारी कर्मकरनेवाले ग्राहके मुखमें
बंधा वह गजराज उत्साहसे रहित होकर महापीड़ामानहुआ तबतो
महाआपत्तिमें पड़े हुये गजराजने उस समय चित्तसे हरिको स्मरण
किया ५४ अर्थात् वह नारायणका भक्त श्रीमान् गजराज सबआत्मा
से उस देवताकीशरणमें प्राप्तहुआ ५५ एकाग्र चित्त इन्द्रियोंकेजीतने
वाले उस गजराजने जोकि अनेक जन्मोंके अभ्याससे गरुड़ध्वजका
भक्तथा इसीसे अत्यन्त पवित्रात्मासे ५६ देवताओंमें बड़ेदेवताके-
शवजीके सिवायकिसीअन्य देवताका पूजन नहींकिया फिरआपत्तिसे
मोक्ष होनेकेअभिलाषी उसगजराजने अपनी सूड़की नोकसेएकबहुत
उत्तम सुवर्णका कमललेकर चित्तसेध्यानपूर्व्वक पूजन करके उसदे-
वताकेस्तोत्रकोपाठकिया जिसकी भुजादिशास्वर्ग मस्तकपृथ्वीचरण
आकाश उदर और सूर्य्य चन्द्रमा यही दोनोंनेत्रहैं और जो अनन्त
विश्वतोमुख भूतात्मा मेघवर्ण शंख चक्र गदाधारी हजार शुभनाम
रखने वाला आदिदेव अजन्मा प्रभु और दुष्टोंको पीड़ा देनेवालाहै
५७।५८।५९।६० गजेन्द्र बोलाकि मूल प्रकृतिके अर्थ नमस्कार
नमस्कार किसी से विजय न होनेवाले महात्मा रक्षाकेस्थान अ-
निच्छावान् देवताके अर्थ नमो नमो ६१ सबका आदि और सबकी
उत्पत्तिकाबीज कारण वेदरूपअथवावेदसे जाननेके योग्यवेदमार्गमें
नियत अनन्त भवरूप अव्यक्तके अर्थ नमस्कार नमस्कार६२ हृदया
काशमें गुप्तमायासे अप्रकट गुणरूप गुणधर्मीकोनमस्कार अतर्क्य
असंख्य औरअत्यन्त अपार रूपकेअर्थ नमस्कारनमस्कार६३ सुशा
न्तनिश्चयनाम यशस्वीके अर्थनमस्कार २ सनातन पूर्व्वपुराण पुरु
षके अर्थ नमस्कार ६४ जगत् प्रतिष्ठा नामकेअर्थ नमस्कारगोविन्द
जीके निमित्त नमस्कार २ देवताओं के अधिदेवताकेअर्थ नमस्कार
६५ पद्मनाभ और सांख्ययोगसे प्रकट होनेवालेके अर्थ नमस्कार२
विश्वेश शिव देवता हरिके अर्थ नमस्कार २ । ६६ उस निर्गुण

सगुण देवताके अर्थ नमस्कार देवताओंके स्वामीनारायणदेवताके अर्थनमस्कार६७सवजगत्के कारण बड़े पराक्रमीबामन नारायणके अर्थ नमस्कार उस श्री शार्ङ्गचक्र खड्ग और गदाधारी पुरुषोत्तमके निमित्त नमस्कार ६८उस गुप्तवेदमें नियत महोदर अर्थात् विश्व को उदरमें रखनेवाले दैत्य संहारी नृसिंह चतुर्भुज बरदाताअच्युत और ब्रह्मारुद्र मुनि चारणोंसे स्तूयमान सर्वोत्तम श्रेष्ठ देवताके अर्थ नमस्कार१६९ शेषके फणरूप आसन और सैयापर प्रीतिमान और दूध,गौ, सुवर्ण तोता और नीले बादलकेसमान रंगपीताम्बर धारी मधुकैटभके नाश करनेवाले बिश्वरूप सुन्दर मुकुटधारी म-हा अबिनाशीके अर्थ नमस्कार ७० नाभिमें उत्पन्न हुये बरकमल पर बिराजमान ब्रह्माजी से स्तुतिमान क्षीर सागरमें निवासकरने वाले नाना प्रकारके बिचित्र मुकुट और बाजू बन्दोंसेअलंकृत रजो-गुण रहित बड़े श्रेष्ठ योगेश्वरके अर्थ नमस्कार ७१ भक्तोंको प्रिय माननेवाले उत्तम तेजसे सुन्दर दर्शन और प्रफुल्लितकमलकेसमान दीर्घायत नेत्रवाले देवराजके बिघ्नोंके शान्तिके अर्थ उपायोंमें बर्त्त-मान अच्युत नारायणके अर्थ नमस्कार ७२ परलोकमेंउत्तमस्थान नारायण कालपुरुष ऋतुके कमलके सदृश बिशाल नेत्र रावणके नाश करनेमें उपाय करनेवाले रामचन्द्रके अर्थ नमस्कार बुद्धिके साक्षी श्रेष्ठज्ञानियोंमें प्रधान परमेश्वरके अर्थ नमस्कार ७ कमला-सन मणियोंके कुंडलोंसे अलंकृत कंस और शिशुपालके मर्दनकर-नेवाले गोवर्द्धनरूप असुरोंके नाशकर्त्ता दामोदर रजोगुणसे रहित पुरुषोत्तमके अर्थ नमस्कार ७४ जोब्रह्मादि सब देवताओंकेलयका स्थानहै और सब संसारका एकस्वामी महत् रूपपीड़ाका दूरकरने वाला महाबराह नारायण है मैं उसको नमस्कार करताहूं ७५ उस उपाधि रहित अव्यक्त अचिन्त्यरूप उत्पत्तिके कारणआदि देव नारायण प्रलयके अन्तमें आपअकेलेही शेष रहनेवाले पुराण पुरुष वासुदेवजीकी शरणमें प्राप्तहोताहूं ७६ जिसको महर्षिलोग दृष्टिसे अगोचर अविनाशी अनंत न्यूनता रहित ब्रह्मरूप सनातन कहतेहैं

उस पुराण पुरुष बासुदेवकी शरणमें प्राप्त होताहूं ७७ मुनिलोग जिस जलवर्त्ती पृथ्वीके बक्षस्थलको बिदीर्ण करके उठानेवाले और लोकके भीतर वर्त्तमान वेदरूप शरीरको कंपाने वालेमहाबराहजी की स्तुतिकरतेहैं उसयोगीश्वर सुन्दर विचित्र किरीटधारी जाननेके योग्य पूर्णब्रह्म प्रकृतिसे परेक्षेत्रज्ञ परमात्मा प्रार्थना करनेके योग्य वासुदेव भगवानकी शरण लेताहूं ७८ किरीट केयूर वृद्धोंकेयोग्य निष्क और उत्तम मणियोंसे अलंकृत सर्वाङ्गमें पीताम्बरधारी स्वर्ण मयी चित्रोंसे सुचित्रित मालाधारी केशवजीकी शरणलेताहूं ८० कार्य्य और क्रियाओंका कारण अत्यन्त स्वर्णमयी भुजा नाभिमेंउत्तम कमलधारी महाबली देवताओंके निवासस्थान देवताओंमें श्रेष्ठ श्री वासुदेवजीकी शरणागत होताहूं ८१ संसार की उत्पत्ति कारण वेदज्ञोंमें श्रेष्ठ योगरूपके ज्ञाता सांख्यशास्त्र में उत्तम सूर्य्यचन्द्रमा और अग्निमें अपना प्रभाव नियत करने वाले बुद्धिमान अच्युत कीशरणमें प्राप्त होताहूं ८२ जिसको सर्वव्यापीअबिनाशीब्रह्म कहतेहैं और जिसके श्रवण करनेसे मृत्युके मुखसे छूटताहै उस ईश्वर अबिनाशी गुणोंसे युक्त सनातन लोकोंके गुरूको नमस्कार करताहूं ८३ उन वराहजीको नमस्कारहै जो पृथ्वीको लीला पूर्बकही ऊपरको उठातेहैं और जिसके खुरमें वर्त्तमान मेरुपर्वत खुर खुराताहै ८४ श्रीवत्स चिह्नसे चिह्नित बड़ादेवोंका देवगुह्य अनुपम सूक्ष्मपबित्ररूपचेष्टा से रहित प्रधान और निर्भयता देनेवालेकी शरण होताहूं ८५ सब संगोंसे संन्यासियोंकी परमगतिसबजीवोंके कर्त्तानिर्गुण परमेश्वरकी शरण प्राप्त करताहूं ८६ उस सबके उत्पत्ति स्थान गुणोंके स्वामी अविनाशी परम्पद शरणके योग्य शरण्यरूप भक्त बत्सलको भक्ति से शरणागत होताहूं ८७ मैं उसत्रिविक्रम त्रिलोकेश सबकेप्रपितामह योगात्मा महात्मा दुष्टसंहारी नारायण को शरणागत होताहूं ८८ उसआदि देवअजन्मा सर्वव्यापी व्यक्ताव्यक्त सनातन पवित्र ब्राह्मणोंकेप्यारे नारायणकी शरण लेताहूं ८९ हे महातेजस्वी तुझ कच्छपरूप देवताकेअर्थ नमस्कार करके मैं उस पवित्रोंसेभी पवित्र

ईश्वरकी शरणाको प्राप्त होताहूं ६० उस एक लोक नाथसे परेसे परे परमात्माके निमित्त नमस्कार और सहस्त्र शिरधारीकेअर्थ नमस्कार २।६१ वेदमें पूर्ण जिसकोदेवऋषि सबसे बड़ा औरसबसेपरे ब्रह्मादिक देवताओंका लयस्थान वर्णन करतेहैं ६२ हे भक्तोंकोअभयता देनेवाले हृदय कमलमें वर्त्त मान आपको नमस्कार है वेद ब्राह्मणोंके पालक तुमको बारंबार नमस्कार आप मुझशरणागतकी रक्षाकरो ६३ इस संसार सागर में तभीतक मुझको चिन्ता दुःख होतेहैं जबतक कि कमललोचन जनार्दनजी को स्मरण नहींकरता हूं ६४ भीष्मजीने कहाकि हे राजा वह चक्रगदाधारीनारायणउस गजराजकीभक्तिको बिचार कर और सार्थक सफलस्तुतियोंको सुन कर प्रसन्न हुये ६५ और प्रसन्न होकर देवताओंमें श्रेष्ठ श्रीबिष्णु भगवान् गरुड़पर सवार होकर आगये अर्थात्लोकोंके धारणकरने वालेने उस सरोवर पर अपनी वर्त्तमानताकरी ६६ औरअसंख्यात्मावाले श्री मधुसूदन लक्ष्मीपतिजीने ग्राहके मुखमें फंसेहुये गजराजको और उस ग्राहकोशीघ्रही ऊपरको उठाकर अपने सुदर्शन चक्रसे उस ग्राहके शिरको देहसे काटकर जुदाकिया और अपने शरणागत गजराजको बंधनोंसे छुटाया हेराजा वह गन्धर्वोंमें श्रेष्ठ हूहू नाम गन्धर्व देवलऋषिके शाप से ग्राह होगयाथा इस दूसरी अपूर्व्व पवित्रतम कथाको भी सुनो ६६ युधिष्ठिर बोले हे पितामह उस हूहू नाम महात्मा गन्धर्वको शाप किसकारणसेहुआ उसको मैं ब्यौरे समेत सुनना चाहताहूं १०० भीष्मजीबोले कि वह गान बिद्यामें प्रवीण दोनों हाहा हूहू नाम प्रसिद्ध गन्धर्वजिस हेतुसेउस महात्मा देवलऋषिसे शापित हुये उसको चित्त से सुनो १०१ हे राजा उर्वसी, मेनिका, रंभा और अन्य२ सुन्दर अप्सराओंके समूह देव राजइन्द्रके सन्मुखनृत्य कररहेथे १०२ इसकेअनन्तर उसराजसभामें इन्द्रके आगे नियतहोकर गानेवाले उनदोनों गन्धर्वोंने परस्परमें एकने दूसरेसे अपनेको अधिक समझकर इन्द्रसेकहा कि हे देवताओंमें श्रेष्ठ आपगानलक्षणोंको जानकर हम दोनोंके मध्यमेंजो

गानेबजानेमें श्रेष्ठहोयउसको वर्णनकरो१०३।१०४इन्द्रनेउन दोनों गन्धर्वोंके वचनोंको सुनकरउत्तरदिया कि गाने बजानेमें तुमदोनोंमें से किसी कीभी मुख्यतानहीं पाईजातीहै १०५ औरतुमदोनोंके इस संशयको मुनियोंमें श्रेष्ठ एकदेवल ऋषिही निस्सन्देहन्यायकर के निवृत्त करेंगे हे राजा इसके पीछे वह अत्यन्तप्रसन्न बिजयाभिला-षीदोनों गन्धर्व इन्द्रके बचनको सुनकर और उस उत्तम देवताको शिरसे प्रणाम करके वहांपहुंचे जहांपर कि वह श्रेष्ठद्विजोत्तमदेवल ऋषि अपने आश्रममें नियतथे उन मुनियोंमें श्रेष्ठ महात्मा देवल-ऋषिको देखकर उनके समीप जाकर दोनोंने यह बचन कहा ८ कि हे देवतारूप ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ हम दोनों आपके पास इन्द्रके भेजेहुये आयेहैं हमदोनोंमें जिसकोआपन्यायसे श्रेष्ठ समझें उसको बिजय पत्रदीजिये १०६ मुनिने मौनता धारण करनेके कारणसे उन पृथक् विचरनेवाले मधुरभाषी और मधुरअक्षर युक्त शब्दोंके गानेवाले गंधर्वोंसे कुछ बचन नहीं कहा ११० अर्थात् उनके मधुर शब्दोंको सुनकर मुनिने कुछउत्तरनहींदिया तबवहदोनों गंधर्व उस महात्मा देवलऋषिपर कोपयुक्त हुये १११ उस समय कालकी प्रेरणासे उन गन्धर्वोंने देवलऋषिसे यह बचन कहा कि यह मुनि अज्ञानहै और गानेबजानेकेनिश्चयको नहीं जानताहै ११२ ऋषिने उन गन्धर्वों के अहंकार से भरे हुये वचनों को सुनकर क्रोधसे उठकर यह वचन कहाकि ११३ कि यह अज्ञान दुरात्मा हूहूगन्धर्व ग्राहके शरीर को धारणकरे और हाहासे कहा कितू पर्ब्बती बनमें गजराजहो ११४ इसरीति उस कोपयुक्त महातेजस्वी देवलजीने शापदिया तबतो उस महात्मा देवलऋषिके शापको सुनकर उन दोनों ने देवलऋषिको शिरसे दण्डवत् करके यह बचन कहा किहे सुन्दर व्रतवाले ऋषि आप भूमंडल में वर्त्तमान होकर हम लोगों पर कृपाकरो ११५।११६ हे ऋषि उस बातकाभी निश्चय करोकि किसके द्वारा शापसे निवृत्त हों इसके अनन्तर भयसे पीड़ित उन दोनों पुरुषोंको देखकर ११७ उस श्रेष्ठ मुनिने उनदोनोंसे भयका

दूर करने वाला यह बचन कहा कि मेरु पर्व्वतकी पृष्ठपर क्रीड़ाके योग्य सघन वृक्षोंसे व्याप्त एक सरोवरहै ११८ वह अनेक पक्षियों के समूहों से युक्त दूसरे समुद्रकी समानहै उस सुन्दर समुद्ररूप सरोवरमें तू ग्राहरूप होगा ११६ किसी समय यह गजराज बना हुआ तृषासे पीड़ित होकर पर्व्वत से उतर कर उस सरोवरमेंजल पीने को आवेगा तब तुमदोनों का महाभयकारी द्वन्द्व युद्धहोगा १२० उस समय ग्राहसे खिंचा हुआ गजराज परमेश्वरकी स्तुति करेगा तभी तेरे स्वरों का ईश्वर प्रसन्न होगा १२१ उसी स्तुतिसे प्रसन्नहोकरनारायणतुमकोशापसे मुक्तकरेंगेऋषिकेइसप्रकारकेबर देनेसे यह दोनों बहुत प्रसन्नहुये १२२ ग्राहरूप गन्धर्बने अपनेमरणकोपाकर स्वर्ग प्राप्तकिया और गजरूप गंधर्ब उसी समयआपत्तिसे निवृत्तहुआ १२३ और श्री कृष्णजीके द्वारा उस आपत्ति छुटे हुये गजराजने भी कालपाकर मुक्तिकोपाया और शापसे ग्राहरूप गन्धर्बभी छूटा १२४ फिर उन दोनोंगन्धर्ब राजोंने अपने २ शरीर को पाकर दुष्ट संहारी श्री कृष्णजीको दण्डवत् करके बड़े आनन्द को पाया १२५ हृदय कमलमें नियत शरणागतोंके प्यारे देवेन्द्रों केभी ईश्वर बिष्णुजी प्रसन्न होकर उन दोनोंसे पूजितहुये१२६ मधुसूदनजीने उस प्रार्थना करनेवाले गजराजसे यह बचन कहा कि जो पुरुष मुझको तुझको और सरोवरके ग्राहके मारनेका वृत्तान्त सुनेंगे १२७ और कीचक वेणुओंके गुल्मों समेत अनेक प्रकारके नाना वृक्षोंसे पूर्ण उस पर्व्वत प्रभास क्षेत्रसूर्य्य गंगा नैमिषारण्य पुष्कर १२८ प्रयाग ब्रह्मतीर्थ और दण्डक बनको जो सावधान और स्थिरबुद्धी मनुष्य स्मरण करेंगे १२६ उनका दुःस्वप्ननाशको प्राप्त होगा और सदैव उत्तम स्वप्नहोंगे, अनिरुद्ध, गजराज, ग्राह, बड़े तेजस्वी बासुदेव १३० महात्मा संकर्षण, प्रद्युम्न, मत्स्य,कूर्म, बराह, बामन, गरुड़ १३१ नृसिंहरूप, नागेन्द्र उत्पत्ति प्रलयकरने वालेबिश्वरूप इन्द्रियोंकेस्वामी गोविन्द मधुसूदन १३२ सहस्राक्ष चतुर्भुज मुरारी गरुड़ध्वज जो कि तीन दशा रखनेवाले जीवात्मासे

भी उत्तम स्तुतियोग्य प्रकाशमानहै जिसकीभक्तिदृढ़है और जिससे उत्तम और परेकोई नहींहै १३३वहवैकुण्ठ दुष्टदमन अपराधियोंका दण्डदेनेवाला और मुक्तिका देनेवाला मधुसूदनहै जो मनुष्यप्रातः कालके समय उठकर इसको स्मरण करेंगे १३४ वह सब पापोंसे मुक्त होकर स्वर्गको प्राप्तकरेंगे भीष्मजीबोले हेराजा मधुसूदनजीने इस रीतिसे उस गजेन्द्रको कहकर १३५ उस गजरूप गन्धर्वको हाथसे स्पर्श किया इसकेपीछेवह दोनोंस्पर्श कियेहुये गन्धर्वदिव्य शरीरोंको धारणकरदिव्यमाला और वस्त्रधारीहोके उसी ईश्वरको ध्यान करतेहुये स्वर्गको गये अर्थात् नारायणमें प्रवृत्त चित्त वह गजराज दिव्य शरीरवालाहोकर परमपदकोप्राप्तहुआ हेमहाबिद्धी युधिष्ठिर इसके अनन्तर श्रीमान् नारायणजी उसगजराजको आप- त्तिसे छुटाकर १३७।१३८ वेदोक्तगुह्यअक्षरवाली ऋचाओंकेद्वारा ऋषियोंसे स्तूयमान होतेही अन्तर्द्धान होगये वैशंपायनबोले कि इसरीतिसे कुन्तीनन्दन धर्म पुत्र युधिष्ठिरने गजेन्द्र मोक्षको सुन कर १३९।१४० सब भाई और वेदज्ञ ब्राह्मणोंसमेत अपने समीप वर्त्तमान देवेश्वर मधुसूदनजीको अच्छी रीतिसे पूजनकिया १४१ इस गजेन्द्र मोक्षको सुनकर आश्चर्य्य युक्तनेत्रोंसे युक्त युधिष्ठिरऔर सब महाभाग ऋषिलोग हाथ जोड़कर नियतहुये १४२ और प्रा- र्थना करनेके योग्य उस अजन्मा नाभिमें उत्तम कमल धारण करने वाले महबली वेदकेभंडार देवताओंकेशिरोमणि वेदके आभ्यन्तरके ज्ञाता और श्रेष्ठ उस पुराण पुरुषको प्रणाम किया १४३ हे महा बाहु पवित्रकर्मी मनुष्योंका यह पवित्र जपहै जो कोई दुःस्वप्न म- हाभयकारीहै वह भी इसके सुनने से शुभकारी होजाताहै १४४ हे महाराज इसीहेतुसे तुम हरिकी शरणागत होकर सब पापोंसे शुद्धतापूर्व्वक परम्पदको पावोगे १४५ जबकि दुष्ट संहारीविष्णुजी ने अच्छे प्रफुल्लित कमलोंके वनमें महाग्राहके आधीन बंधनमें बंधे हुये भयभीत गजराजकोबंधनरूपी आपत्तिसे छुटाया इसीसे इसके पाठसे दुःस्वप्नादिकोंका नाश होकर सुख पूर्व्वक परम्पदकीप्राप्ति

होतीहै १४६ उस परसे पर अत्यन्त पवित्र महेश्वरोंके भी ईश्वर देवलोककेस्वामी देवता और असुरों से पूजित चरण कमलवाले सनातन लोक गुरूको नमस्कार करताहूं १४७ गजराजने जिसके द्वारा स्मरण किया उस हेतुसेतो मुक्ति कारणहै और पुरुषोत्तमको स्तुतिकरी इस कारण दिव्यशरीर का गीतजो यह स्तोत्रहै उसको जो पुरुष सदैव पाठ करतेहैं वह पाठ उनके रोग औरकुसमयकी मृत्युका दूर करनेवाला होकर हितकारी होताहै १४८ जो धर्मसे दृढ़है और जिसका मूल धर्म शास्त्रसे बंधाहुआहै वेद जिसकीशाखा हैं और पुराणरूपी शाखाओंसे भी युक्तहै जिसमें ऋतुफूल औरमोक्षफलहै वह विष्णुरूपी वृक्ष विजयकारीहै १४६ उन वेद रक्षकके निमित्त नमस्कार गौ ब्राह्मण और जगत्के हितकारी कृष्ण गोविन्द देवताके अर्थ वारंवार नमस्कारहै १५० जैसे कि आकाशसे गिरा हुआ जल सागर में जाताहै उसी प्रकार सब देवताओंको किया हुआ नमस्कारभीकेशवजीको प्राप्तहोताहै अर्थात् सबदेवताउसीका रूपहैं १५१॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेशान्तपर्व्वणिदानधर्म्मेगजेन्द्रमोक्षणंनामशतोपरिपंचा शत्तमोऽध्यायः१५०॥

अथ सावित्रीस्तोत्र प्रारंभः॥

युधिष्ठिरउवाच॥ पितामहमहाप्राज्ञसर्वशास्त्रविशारद॥ किंजप्यंजपतोनित्यंभवेद्धर्मफलंमहत् १ प्रस्थानेवाप्रवेशेवाप्रवृत्ते वापिकर्मणि॥ दैवेवाश्राद्धकालेवा किंजप्यंकर्मसाधनम् २ शांतिकंपौष्टिकंरक्षा शत्रुघ्नंभयनाशनम् ॥ जप्यंयद्ब्रह्मसमितं तद्भवान्वक्तुमर्हति ३ भीष्मउवाच॥व्यासप्रोक्तमिमंमंत्रंशृणुष्वैकमनानृप ॥ साविञ्या विहितंदिव्यं सद्यःपापविमोचनम् ४ शृणुष्वंचविधिंकृत्स्नंप्रोच्यमानंमयानघ ॥ यं श्रुत्वापांडवश्रेष्ठसर्वपापैःप्रमुच्यते ५ रात्रावहनिधर्मज्ञजपन्पापैर्नलिप्यते ॥ तत्तेहंसंप्रवक्ष्यामिशृणुष्वैकमनानृप ६ आयुष्मान्भवतेचैवयं श्रुत्वापार्थिवात्मज ॥ पुरुषस्तुससिद्धार्थःप्रेत्यचेहचमोदते ७ सेवितंसततंराजन्पुराराजर्षिसत्तमैः ॥ क्षत्रधर्मपरैर्नित्यंसत्यव्रतपरायणैः ८

इदमान्हिकमव्यग्र कुर्वद्भिर्नियतैःसदा ॥ नृपैर्भरतशार्दूलप्राप्यते श्रीरनुत्तमा ९ नमोवसिष्ठायमहाव्रतायपराशरंवेदनिधिंप्रणम्य ॥ नमोस्त्वनंतायमहोरगाय नमोस्तुसिद्धेभ्यइहाक्षयेभ्यः १० नमोस्त्व ऋषिभ्यःपरमंपरेषांदेवेषुदेवंवरदंवराणाम् ॥ सहस्रशीर्षायनमःशिवाय सहस्रनामायजनार्दनाय ११ अजैकपादहिर्बुध्नः पिनाकीचापराजितः ॥ ऋतश्चपितृरूपश्चत्र्यंबकश्चमहेश्वरः १२ वृषाकपिश्चशंभुश्चहवनोथेश्वरस्तथा ॥ एकादशैतेप्रथितारुद्रास्त्रिभुवनेश्वराः १३ शतमेतत्समाम्नातं शतरुद्रं महात्मनाम् ॥ अंशोभगश्चमित्रश्चवरुणश्चजलेश्वरः १४ तथाधातार्यमाचैवजयंतोभास्करस्तथा ॥ त्वष्टापूषातथैवेंद्रोद्वादशोविष्णुरुच्यते १५ इत्येतेद्वादशादित्याःकाश्यपेयाइतिश्रुतिः ॥ धरोध्रुवश्चसोमश्चसावित्रोथानिलोनलः १६ प्रत्यूषश्चप्रभासश्च वसवोष्टौप्रकीर्त्तिताः ॥ नासत्यश्चापिदस्रश्च स्मृतौद्वावश्विनावपि १७ मार्त्तंडस्यात्मजावेतौसंज्ञानासाविनिर्गतौ ॥ अतःपरंप्रवक्ष्यामिलोकानांकर्मसाक्षिणः १८ अपियज्ञस्यवेत्तारो दत्तस्यसुकृतस्यच ॥ अदृश्याःसर्वभूतेषुपश्यंतित्रिदशेश्वराः १९ शुभाशुभानिसर्वाणिमृत्युःकालश्चसर्वशः ॥ विश्वेदेवाःपितृगणा मूर्त्तिमंतस्तपोधनाः २० मुनयश्चैवसिद्धाश्चतपोमोक्षपरायणाः ॥ शुचिस्मिताःकीर्त्तयतांप्रयच्छंतिशुभंनृणाम् २१ प्रजापतिकृताने तान्लोकान्दिव्येनतेजसा ॥ वसंतिसर्वलोकेषुप्रयताःसर्वकर्मसु२२ प्राणानामीश्वरानेतान्कीर्त्तयन्प्रयतोनरः ॥ धर्मार्थकामैर्विपुलैर्युज्यतेसहनित्यशः २३ लोकांश्चलभतेपुण्यान् विश्वेश्वरकृतांच्छुभान् ॥ एतेदेवास्त्रयस्त्रिंशत्सर्वभूतगणेश्वराः २४ नंदीश्वरोमहाकायोग्रामणीर्वृषभध्वजः ॥ ईश्वराःसर्वलोकानां गणेश्वरविनायकाः सौम्यारौद्रागणाश्चैव योगभूतगणास्तथा २५ ज्योतींषिसरितोव्योम सुपर्णःपन्नगेश्वरः ॥ पृथिव्यांतपसासिद्धाः स्थावराश्चचराचराः २६ हिमवान्गिरयःसर्वे चत्वारश्चमहार्णवाः ॥ भवस्यानुचराश्चैव हरतुल्यपराक्रमाः २७ विष्णुर्देवोथजिष्णुश्चस्कंदश्चांबिकया सह ॥ कीर्त्तयन्प्रयतःसर्वान् सर्वपापैःप्रमुच्यते २८ अतऊर्ध्वंप्रव

क्ष्याभिमानवान्नृषिसत्तमान् ॥ यवक्रीतश्चरैभ्यश्च अर्चीवसुपरावसू
२९ औशीजश्चैवकक्षीवान् चलश्चांगिरसःसुतः ॥ ऋषिर्मेधातिथिः
पुत्रःकण्वोर्बर्हिषदस्तथा ३० ब्रह्मतेजोमयाःसर्वे कीर्त्तितालोकभाव
नाः ॥ लभंतेहिशुभंसर्वे रुद्रानलवसुप्रभाः ३१ भुविकृत्वाशुभंकर्म
मोदंतेदिविदेवताः ॥ महेन्द्रगुरवःसप्त प्राचीवैदिशमाश्रिताः ३२
प्रयतःकीर्त्तयेदेतान्शक्रलोकेमहीयते ॥ उन्मुचुःप्रमुचुश्चैवस्वस्त्यात्रे
यश्चवीर्यवान् ३३ दृढव्यश्चोर्ध्ववाहुश्चतृणसोमांगिरस्तथा ॥ मि
त्रावरुणयोःपुत्रस्तथागस्त्यःप्रतापवान् ३४ धर्मराजर्त्विजःसप्तद
क्षिणांदिशमाश्रिताः ॥ दृढेयुश्चऋतेयुश्च परिव्याधश्चकीर्तिमान्
३५ एकतश्चद्वितश्चैव त्रितश्चादित्यसन्निभाः ॥ अत्रेःपुत्रश्चधर्मा
त्मा ऋषिःसारस्वतस्तथा ३६ वरुणस्यर्त्विजःसप्त पश्चिमांदिशमा
श्रिताः ॥ अत्रिर्वसिष्ठोभगवान् कश्यपश्चमहानृषिः ३७ गौतमश्च
भरद्वाजो विश्वामित्रोथकौशिकः ॥ ऋचीकतनयश्चोग्रो यमदग्निः
प्रतापवान् ३८ धनेश्वरस्यगुरवः सप्तैतेउत्तराश्रिताः ॥ अपरेमुन
यःसप्त दिक्षुसर्वास्वधिष्ठिताः ३९ कीर्त्तिस्वस्तिकरान्नृणां कीर्त्तिता
लोकभावनाः ॥ धर्मःकामश्चकालश्चवसुर्वासुकिरेवच ४० अनंतः
कपिलश्चैव सप्तैतेधरणीधराः ॥ रामोव्यासस्तथाद्रौणिरश्वत्थामा
चलोमशः ४१ इत्येतेमुनयोदिव्या एकैकःसप्तसप्तधा ॥ शांतिस्व
स्तिकरालोके दिशांपालाःप्रकीर्त्तिताः ४२ यस्यांयस्यांदिशिह्यते
तन्मुखःशरणंव्रजेत् ॥ स्रष्टारःसर्वभूतानां कीर्त्तितालोकपावनाः
४३ संवर्तोमेरुसावर्णो मार्कंडेयश्चधार्मिकः ॥ सांख्ययोगोनारद
श्चदुर्वासाश्चमहानृषिः ४४ अत्यंततपसोदांता स्त्रिषुलोकेषुविश्रु
ताः ॥ अपरेरुद्रसंकाशाः कीर्त्तिताःब्रह्मलौकिकाः ४५ अपुत्रो
लभतेपुत्रं दरिद्रोलभतेधनम् ॥ तथाधर्मार्थकामेषु सिद्धिंचलभते
नरः ४६ पृथुंवैन्यंनृपवरं पृथ्वीयस्याभवत्सुता ॥ प्रजापतिंसार्वभौमं
कीर्त्तयेद्वसुधाधिपम् ४७ आदित्यवंशप्रभवं महेन्द्रसमविक्रमम् ॥
पुरूरवसमैलंच त्रिषुलोकेषुविश्रुतम् ४८ बुधस्यदयितंपुत्रं कीर्त्तये
द्वसुधाधिपम् ॥ त्रिलोकविश्रुतंवीरं भरतंचप्रकीर्त्तयेत् ४९ गवाम

येनयज्ञेन येनेष्टंवैकृतेयुगे ॥ इतिदेवंमहादेवं कीर्त्तयेत्परमद्युतिम्
५० विश्वजित्तपसोपेतं लक्षण्यंलोकमंगलम् ॥ तथाप्येतंचराजर्षिं
कीर्त्तयेत्परमद्युतिम् ५१ सगरस्यात्मजायेन प्लाविताश्चताविता
स्तथा ॥ हुताशनसमानेतान्महारूपान्महौजसः ५२ उग्रकायान्महा
सत्वान् कीर्त्तयेत्कीर्त्तिवर्द्धनान् ॥ देवान्ऋषिगणांश्चैव नृपांश्च
जगतीश्वरान् ५३ सांख्यंयोगंचपरमं हव्यंकव्यंतथैवच ॥ कीर्त्तितं
परंब्रह्म सर्वश्रुतिपरायणम् ५४ मंगल्यंसर्वभूतानां पवित्रंबहुकी
र्त्तितम् ॥ व्याधिप्रशमनंश्रेष्ठं पौष्टिकंसर्वकर्मणाम् ५५ प्रयतःकीर्त्त
येच्चैतान् कल्यंसायंचभारत ॥ एतेवैपांतिवर्षंति भांतिवांतिसृजंतिच
५६ एतेविनायकाःश्रेष्ठा दक्षाःक्षांताजितेन्द्रियाः ॥ नराणामशुभंस
र्वं व्यपोहंतिप्रकीर्त्तिताः ५७ साक्षिभूतामहात्मानः पापस्यसुकृतस्य
च ॥ एतान्वैकल्यमुत्थाय कीर्त्तयन्शुभमश्नुते ५८ नाग्निचौरभयंत
स्य नमार्गप्रतिरोधनम् ॥ एतान्कीर्त्तयतांनित्यं दुःस्वप्नोनश्यतेन्न
णाम् ५९ मुच्यतेसर्वपापेभ्यः स्वस्तिमांश्चगृहंव्रजेत् ॥ दीक्षाकाले
षुसर्वेषुयःपठेत्प्रयतोद्विजः ६० न्यायवानात्मनिरतः क्षांतोदांतोन
सूयकः ॥ रोगार्त्तोव्याधियुक्तोवा पठन्पापात्प्रमुच्यते ६१ वास्तुमध्ये
तुपठतः कुलेस्वस्त्ययनंभवेत् ॥ क्षेत्रमध्येतुपठतः सर्वंसस्यंप्ररोहति
६२ गच्छतःक्षेममध्वानंग्रामान्तरगतःपठन् ॥ आत्मनश्चसुतानांच
दाराणांचधनस्यच ६३ बीजानामोषधीनांच रक्षामेतांप्रयोजयेत् ॥
एतान्संग्रामकालेतु पठतःक्षत्रियस्यतु ६४ व्रजंतिरिपवोनाशं क्षेमंच
परिवर्त्तते ॥ एतान्दैवेचपित्र्येच पठतःपुरुषस्यहि ६५ भुंजतेपितरःक
व्यंहव्यंचत्रिदिवौकसः ॥ नव्याधिश्वापदभयं नद्विपान्नहितस्करात्
६६ कश्मलंलघुतांयाति पाप्मनाचप्रमुच्यते ॥ यानपात्रेचयानेच प्र
वासेराजवेश्मनि ६७ परांसिद्धिमवाप्नोति सावित्रींह्युत्तमांपठन् ॥
नचरोगभयंतेषां नपिशाचान्नराक्षसात् ६८ नाग्न्यंबुपवनव्यालाद्भ
यंतस्योपजायते ॥ चतुर्णामपिवर्णानामाश्रमस्यविशेषतः ६९ करो
तिशततंशांतिं सावित्रीमुत्तमांपठन् ॥ नाग्निर्दहतिकाष्ठानि सावित्री
यत्रपठ्यते ७० नतत्रबालोम्रियते नचतिष्ठन्तिपन्नगाः ॥ नतेषांविद्यते

दुःखंगच्छंतिपरमांगतिम् ७१ येशृण्वंतिमहद्ब्रह्म सावित्रीगुण कीर्त्तनम् ॥ गवांमध्येतुपठतो गावोस्यबहुवत्सलाः ७२ प्रस्थाने वाप्रवासेवा सर्वावस्थांगतःपठेत् ॥ जपतांजुह्वतांचैव नित्यंचप्रय तात्मनाम् ७३ ऋषीणांपरमंजप्यंगुह्यमेतन्नराधिप ॥ याथातथ्येन सिद्धस्यइतिहासंपुरातनम् ७४ पराशरमतंदिव्यंशक्रायकथितंपुरा ॥ तदेतत्ते समाख्यातं तथ्यंब्रह्मसनातनम् ७५ हृदयंसर्वभूतानां श्रुतिरे षासनातनी ॥ सोमादित्यान्वयाःसर्वेराघवाःकुरवःस्तथा ७६ पठं तिशुचयोनित्यंसावित्रींप्राणिनांगतिम् ॥ अभ्यासेनित्यदेवानांसप्तर्षी णांध्रुवस्यच ७७ मोक्षणांसर्वकृच्छ्राणां मोचयत्यशुभात्सदा ७८ वृद्धैः काश्यपगौतमप्रभृतिभिर्भृग्वंगिरोत्र्यादिभिः शुक्रागस्त्यबृह स्पतिप्रभृतिभिर्ब्रह्मर्षिभिःसेवितम् ॥ भारद्वाजमतंऋचीकतनयैः प्राप्तंवशिष्ठात्पुनः सावित्रीमधिगम्यशक्रवसुभिः कृत्स्नाजितादा नवाः ७९ योगोशतंकनकशृङ्गमयंददाति विप्रायवेदविदुषेचबहु श्रुताय ॥ दिव्यांचभारतकथांकथयेच्चनित्यं तुल्यंफलंभवतितस्यचत स्यचैव ८० धर्मोविवर्द्धतिभृगोःपरिकीर्त्तनेन वीर्यंविवर्द्धतिवशिष्ठन मोनतेन ॥ संग्रामजिद्भवतिचैवरघुंनमस्यन्स्यादश्विनौचपरिकीर्त्त यतोनरोगः ८१ एषातेकथिताराजन् सावित्रीब्रह्मशाश्वती ॥ विव क्षुरसियच्चान्यत्तत्ते वक्ष्यामिभारत ८२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसावित्रीव्रतो पाख्यानंसमाप्तम् ॥

एकसौइक्यावनका अध्याय ॥

अथसावित्रीस्तोत्र व्याख्या प्रारम्भः॥

युधिष्ठिर बोले हेवड़े ज्ञानी सर्व शास्त्रज्ञ पितामह किसजप कर नेके योग्यका जप करनेसे सदैव बड़ाधर्मवालाफलहोताहै १प्रस्थान के समय, प्रवेशके समय और प्रवृत्त करनेकेसमय, दैवकर्म, श्राद्धकर्म इत्यादि शुभ कर्मोंके समय कौनसा कर्म और साधनकरना मनुष्य

को योग्यहै२ और जो जप शान्ति पुष्टि और रक्षाका करनेवालाशत्रु नाशक भयध्वंसक और वेदके समानहै उसकोभी आपकहनेकेयोग्य हैं ३ भीष्मजी बोलेकि हेराजा तुम चित्तको एकाग्रकरके व्यासजी केकहेहुये इस मंत्रको सुनो यह दिव्यमंत्र पापोंसे रहित करनेवाला और गायत्री के जपके साथमें जपनेसे महाहितकारीहै ४ हेनिष्पाप पांडवोंमें श्रेष्ठ तुम मेरे कहेहुये सब मंत्र और उसकी विधिको सुनो जिसको सुनकर मनुष्य सब पापोंसे निवृत्त होताहै ५ हेधर्मज्ञ राजा युधिष्ठिर इसको अहर्निश जपकरने वाला मनुष्य कभी पापोंसे लिप्तनहीं होताहै मैं अब उसको कहताहूं तुम एक चित्त होकर श्रवणकरो ६ जिसके सुननेसे पुरुष पूर्णायु वालाहोके श्रेष्ठ अभीष्ट सिद्धियोंको करके इसलोक और परलोकमें आनन्द करताहै७ हेराजा पूर्व्व समयमें क्षत्री धर्ममें प्रवृत्त सत्यव्रत बड़े २ साधू राजर्षियोंने इस मंत्रकोसदैवप्रतिदिनजपाहै ८ हेभरतर्षभ, इसजपकोजो नियम करके प्रतिदिन एकाग्र चित्त होकर जपताहै अथवा जोनियमवान राजाइसको जपताहै उसको सर्वोत्तमलक्ष्मी प्राप्तहोती है ९ अबवेदों केउत्पत्तिस्थान पराशरजीको नमस्कार करकेबड़ेव्रतधारी वशिष्ठजी केअर्थनमस्कार अनन्तनाममहाउरगकेनामनमस्कारऔरअबिनाशी सिद्धोंके अर्थ नमस्कार१० ऋषियोंके अर्थ नमस्कार जोश्रेष्ठसे श्रेष्ठ देवदेव सबका वरदाताहै उसको नमस्कार सहस्र शिर औरसहस्र नामवाले शिव और विष्णुके अर्थ नमस्कार ११ अजैकपाद, अहिर्बुध्न, अपराजित, पिनाकी, ऋत, पितृरूप, त्र्यंबक, महेश्वर १२ वृषाकपि, शंभु, हवन, ईश्वर, यह ग्यारहरुद्रतीनों भुवनोंके ईश्वर कहेजातेहैं १३ शतरुद्रीमें महात्माओंके सौनाम वर्णनकियेहैं अंश, भग, मित्र, वरुण, जलेश्वर १४ धाता, अर्य्यमा, जयन्त, भास्कर, त्वष्टा, पूषा, इन्द्र यह बारह विष्णुकहेजातेहैं श्रुतिके अनुसार कश्यपजीके यह बारह पुत्रद्वादश सूर्य्य कहेजातेहैं धर, ध्रुव, सोम, सावित्र, अनिल, अनल १६ प्रत्यूष, प्रभास यह आठ बसु वर्णन कियेहैं, नासत्य और दस्रयहदोनोंअश्विनीकुमार वर्णनकियेहैं १७

अर्थात् संज्ञानाम स्त्रीसे यह दोनों सूर्यकेपुत्र कहेजातेहैं अबसबबातोंके पीछे लोकों कर्मसाक्षीके वर्णन करूंगा १८ जोकि यज्ञ, दान और शुभ कर्मोंके ज्ञाता लोगहैं वह देवेश्वर दृष्टिसे गुप्त सब जीवोंमें १९ उनके शुभा शुभ कर्मोंको देखतेहैं, मृत्यु,काल, विश्वेदेवा, पितृगण, मूर्तिमान्, तपोधन, ऋषि २० तप और मोक्षमें नियत मुनि और सिद्धलोग और पवित्र मुसकान वाले देवतालोग कीर्त्तन करनेवाले मनुष्योंको कल्याण देतेहैं २१ सबकर्मोंमें पवित्र और सब लोकोंमें नियमवान यह देवता अपने दिव्य तेजसेउनलोकोंमें निवासकरते हैं जोकि ब्रह्माजीसे उत्पन्न किये गये हैं २२ जोनियमवान मनुष्य इन प्राणोंके ईश्वर देवताओंका सदैव कीर्त्तनकरताहै वह बड़े धर्म अर्थ और कामको प्राप्तकरताहै २३ और विश्वेश्वरके रचेहुये पवित्र और शुभ लोकोंको पाताहै यह तेंतीसों देवता सब जीवधारियोंके ईश्वरहैं २४बड़ा शरीरधारी नन्दीश्वर, ग्रामणी,वृषभध्वज, सब लोकोंके ईश्वर, गणेश्वरोंके विनायक, सौम्यगण, रुद्रगण, और योगभूतगण २५ तेजरूप शरीरधारी, नदियां, आकाश, सर्पोंका ईश्वर गरुड़, पृथ्वीपर तप से शुद्धस्थावर, जंगम, जीव२६ हिमालय आदिक सब पर्वत,चारों महासमुद्र, शिवजीके समान पराक्रमी उनकेपीछे चलनेवाले २७ विष्णु देवता, जिष्णु अर्थात् नरदेवता स्कन्द समेत उमादेवी, नियमी मनुष्य, जो मनुष्य इन सबका कीर्त्तन करताहै वह सब पापोंसे मुक्त होताहै २८ अब ऋषियोंमें बड़े साधु मनुष्योंको वर्णन करता हूं,यवक्रीत, रैभ्य, अर्वावसु, परावसु २९ औषोज, कक्षीवान्,अंगिराका पुत्र चल, कण्वका पुत्र मेधातिथि, ऋषि, वर्हिषद ३० यह सब सृष्टिके पितारूप ब्रह्मतेजसे पूर्ण ऋषिलोग मैंने वर्णनकिये यह सब रुद्र अग्निके समान महातेजस्वी सबके कल्याण कारीहैं ३१ सब देवतालोग इस पृथ्वीपर शुभ कर्मोंको करके स्वर्गमें आनन्द करतेहैं महेन्द्र समेत यह सातों गुरू पूर्व दिशामें वर्त्तमानहैं ३२ जो नियमवान् मनुष्य इनका कीर्त्तन करताहै वह इन्द्रलोक में

प्रतिष्ठाको पाताहै, उन्मुचु, प्रमुचु, और पराक्रमी स्वस्त्यात्रेय, दृढ़
व्य, ऊर्ध्ववाहु, तृण सोम, अंगिरा, मित्राबरुणका पुत्र प्रतापवा-
न् अगस्त्य,धर्मराजके यह सात ऋत्विज दक्षिण दिशामें वर्त्तमान
हैं दृढ़ेयु, ऋतेयु, कीर्त्तिमान् परिव्याध, और सूर्य्यके समान
महातेजस्वी एकत, द्वित, त्रित, और अत्रिके पुत्र महा धर्मात्मा
सारस्वत ऋषि ३६ बरुणके यह सात ऋत्विज पश्चिम दिशामें
वर्त्तमान होकर निवास करतेहैं अत्रिभगवान्,वशिष्ठ,महर्षिकश्यप,
गौतम,भरद्वाज,कुशिककेपुत्र बिश्वामित्र और ऋचीकके पुत्र महा-
प्रतापी उग्ररूप जमदग्नि ३८ और कुवेरजीके यह आगेलिखे हुये
सातगुरू उत्तर दिशामें वर्त्तमानहैं और अन्यसात मुनिलोगदिशा
विदिशाओंमें निवासकरतेहैं ३९इन सृष्टिके कारणरूप महात्माओं
काकीर्त्तन करनामनुष्योंकी कीर्त्ति आयु धनआदिअनेक कल्याणों
का देनेवालाहै अर्थात् यहसब लोग कल्याण कारीहैं और धर्म,
काम, काल, बसु, बासुकि ४० अनन्त, कपिल यह सात पृथ्वीके
धारण करनेवालेहैं परशुराम, व्यास, द्रोणाचार्य्यके पुत्र अश्वत्था-
मा, लोमश ४१ यह दिव्य मुनिहैं इस लोकमें ये प्रत्येकमुनि सा-
त२ प्रकारसे शान्ती और कल्याण करनेवाले दिग्पाल कहे गयेहैं
४२ ये जिस दिशामेंहैं उस ओरको मुख रखनेवाला शरणागतके
समान रक्षाकिया जाताहै यह सब जीवोंके उत्पन्न करनेवाले महा-
त्मा जिनकाकि कीर्त्तन कियाजाताहै यह लोकोंके पवित्र करने
वालेहैं ४३ साम्वर्त्त, मेरु, सावर्ण, धार्मिक,मार्कण्डेय, सांख्ययोग,
महर्षी दुर्वासा, यह महातेजस्वी और जितेन्द्री ऋषिलोग तीनों
लोकोंमें प्रसिद्धहैं और इनके विशेष अन्य २ ब्रह्मलोक निवासी
ऋषिभी रुद्रजीके समान तेजस्वी कहेगयेहैं इनका कीर्त्तन करने
वाला जो सन्तानकी कामना करताहै तो संतानकी प्राप्ति होतीहै
निर्धन धनकोपाताहैऔर धर्म अर्थ,काममेंसिद्धीकोप्राप्तकरताहै४६
राजओं में श्रेष्ठ वेणुका पुत्र राजापृथु जिसकी पुत्री पृथ्वी हुई और
संपूर्ण पृथ्वी और पृथ्वीके सब राजाओंके स्वामी मनुजीका कीर्त्तन

करे ४७ सूर्य्यवंश में उत्पन्न महेन्द्र के समान पराक्रमी पुरूरवाके समान राजा ऐल जिसका यशतीनों लोकोंमें विख्यातहै ४८ और जो बुधका प्यारा पुत्रहै उस राजाका कीर्त्तन करे ४९ जिसने कि सतयुग में गोमेध यज्ञसे पूजन किया उस बड़े तेजस्वी देवतामहादेवको कीर्त्तन करे ५० इसी प्रकार संसार के विजय करने वाले तपोमूर्त्ति लक्षणों से युक्त लोक के मंगलकारी महातेजस्वी राजऋषि श्वेतका कीर्त्तन करे ५१ जिसने राजा सगरके भस्मरूप गंगामें डूबे हुये पुत्रोंका उद्धार किया ऐसे राजर्षि भगीरथ का कीर्त्तन करे इन अग्नि और सूर्य्य के समान महातेजस्वी पराक्रमी कीर्त्ति के बढ़ाने वाले देवता ऋषि और महर्षियों के समूहोंका कीर्त्तन करे ५२। ५३ सांख्य परमयोग और हव्य कव्य कोभीसब श्रुतियों के अर्थ और मंत्रों समेत बर्णन किया ५४ सब जीवोंका मंगलकारी महापवित्र अशेष रोगोंका नाशक सब उत्तम कर्मोंका पूर्ण करने वाला जपभी अच्छी रीतिसे बर्णन किया ५५ हे भरतवंशी नियमवान् मनुष्य को इनसब का कीर्त्तन सायंकाल और प्रातःकाल के समय करना योग्यहै यही महात्मा सबकी रक्षाकरते हैं यही वर्षा करते हैं यही उदय होतेहैं और यही उत्पत्ति और नाशकेभी करने वाले हैं ५६ यह सावधान शान्तवृत्ती इन्द्रियों के जीतने वाले कीर्त्तन किये हुये सब लोगों के पाप और आपत्ति आदिकों को दूर करतेहैं ५७ यही महात्मा पाप पुण्यके साक्षी हैं जो मनुष्य प्रातःकालउठकर पवित्रता पूर्व्वक इनसबकाकीर्त्तनकरताहै वह सब प्रकारके कल्याणों को पाताहै ५८ और उसके अग्नि और चोरका भयभी नहींहोताहै उसको मार्गमेंभी कभीरोकनहींहोती औरजो इनका कीर्त्तन सदैव करतेहैं उनके दुःस्वप्न निष्फल होते हैं ५९ जो जपदीक्षा आदि उत्तम कालोंमें नियम से इसका पाठ करताहै वह सब पापोंसे छूटकर स्वर्गलोक को अवश्य जाताहै ६० जो न्यायवान आत्मामें प्रीति करने वाला जितेन्द्री दूसरेके गुणमें दोष न लगाने वाला शरीर के रोगसे खेदित मानसी व्यथासे युक्त

मनुष्य इसका पाठ करताहै वह देहसे नीरोग होकर मानसी व्यथा से निवृत्त होताहै ६१ जो वास्तुके मध्यमें इसका पाठ करताहै उस के कुल भरेमें कल्याण होताहै और जो खेतके भीतरपाठ करता है उसकी सब प्रकारकी खेती अच्छे प्रकार से उपजती है ६२ धर्म मार्गमें चलता अथवा अन्य ग्राम में वर्त्तमान होकर जो मनुष्य इसका पाठ करताहै वह अपने शरीरसे नीरोग होकर पुत्र स्त्री और धनको पाताहै ६३ बीज औषधीकी रक्षा के समय युद्धके समयइन के कीर्त्तन करने वाले क्षत्रीके ६४ सब शत्रु नाशको प्राप्तहोते हैं और कुशलता भी प्राप्त होतीहै यज्ञादिक देवकर्म और श्राद्ध में इनके कीर्त्तन करने वाले मनुष्य के हव्य कव्यों को देवता और पितर भोजन करते हैं ६५ और हिंसक मांसभक्षी पशु हाथी चोर और रोगादिकोंसे भी उसको कभी भयनहीं होता ६६ उसका मोह न्यून होजाता है पापोंसे निवृत्त होता है रथ आदिकी सवारी में चलता हुआ परदेश बासमें वा राज दरबार में ६७ जोइस श्रेष्ठ सावित्री का पाठ करता है वह परम सिद्धीको पाता है और न उस मनुष्य को रोग पिशाच और राक्षसादिकों से भय होता है ६८ अग्नि, जल, वायु और सर्पादिकों से भी निर्भय होताहै और न कभी चारोंवर्ण और आश्रमों से भय उत्पन्न होताहै ६९ यह महा उत्तम सावित्रीका पाठ श्रेष्ठ शान्ती को करताहै जिस स्थानमें इस सावित्रीका पाठहोता है वहां अग्निदेवता लकड़ी आदिकिसी वस्तु कोभी नहीं जलाता ७० बालककभी नहींमरता सर्प नियत नहीं होते और उस स्थानके जीव किसीप्रकार केभी दुःखसे खेदितनहो-कर परमगतिको पातेहैं ७१ इससावित्रीके गुणों के कीर्त्तन करने वाले इसमहामंत्र सावित्रीको धारण करतेहैं गौओंके मध्यमें पाठ करनेवालेकी गौवेंगोशाला में वृद्धिताको पातीहैं ७२ इसपाठ को यात्रामें परदेश वासमें और सबदशा में करना योग्य है हे राजा सदैव जपहोमादि करने वाले सावधान चित्तवाले ७३ ऋषियोंका यहमहागुप्त श्रेष्ठजप करनेके योग्य मन्त्रहै यह शुद्धमंत्रको प्राचीन

इतिहास पराशर ऋषिका अंगीकृत पूर्व समयमें इन्द्र के सन्मुख वर्णन कियागयाहै यहजैसा सनातन गुप्तउत्तम मंत्रथा उसीप्रकार तुमसे वर्णन किया ७४। ७५ यहमन्त्र सब जीवमात्रों का हृदयहै यह सनातन से सुनते आयेहैं वह चन्द्रबंशी सूर्य्यबंशी सब राघव और कौरवलोग ७६ पवित्र होकर इसजीवोंकी गतिरूप सावित्री को सदैव पाठ करते हैं जोकि देवता सप्तर्षि और ध्रुव के समीप वर्त्तमानहैं ७७ यह जपसब आपत्तियोंसे छुटानेवाला और पापों का दूरकरनेवालाहै ७८ यही जप वृद्ध,काश्यप,गौतम,भृगु,अंगिरा, अत्रि आदि से और इन्द्र अगस्त्य, वृहस्पति आदि ब्रह्मर्षियों से सेवित होकर भरद्वाज जीका अंगीकृतहै इसको ऋचीकके पुत्रों ने वशिष्ठ जीसेपाया इन्द्रने बसुओं समेत इस सावित्रीको पाकर सब दैत्य और दानव बिजयकिये ७९ जो मनुष्य स्वर्णशृंगी उत्तमवर्ण की गौवें शास्त्रज्ञ ज्ञानी वेदपाठी ब्राह्मणको दानकरताहै और जो पुरुषदिव्य महाभारतकी कथाका पाठकरताहै उनदोनों का फल समान होताहै ८० भृगुजीका कीर्त्तन करनेसे धर्मकी अत्यन्तबृद्धि होतीहै बशिष्ठजीको नमस्कार करनेमें झुकनेवाले मनुष्यके बलकी बृद्धिहोतीहै और जो मनुष्यराजर्षि रघुको नमस्कार करता है वह युद्धमें बिजयी होता है अश्विनीकुमार के कीर्त्तन करनेवाले मनुष्य को कभीरोग नहीं होताहै ८१ हेभरतबंशी राजायुधिष्ठिर यहसनातन वेदरूप सावित्री तेरे सन्मुख बर्णनकरी इसके बिशेष जोअन्य वार्त्ता पूछना चाहता है उसको भी सुनो मैं उसको भीकहूंगा ८२॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसावित्रीव्रतोपाख्यानेषतोपरिएक पंचाशत्तमोऽध्यायः १५१॥

इतिसाबित्रीस्तोत्रव्याख्यासमाप्तम्॥

एकसौबावनका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले हे पितामह कौन पूजनके योग्यहै कौन नमस्कार

के योग्यहै और किनलोगोंके साथ किस रीतिसे बर्त्ताव करे और कैसे मनुष्यमें कौनसा आचार नष्टनहीं होताहै १ भीष्मजीबोले कि ब्राह्मणोंका अपमान और अप्रतिष्ठा देवताओंकी भी हानिकारी होतीहै हे युधिष्ठिर जो मनुष्य ब्राह्मणोंको नमस्कार पूर्व्वक प्रतिष्ठा करतेहैं उनका नाश नहीं होताहै २ ब्राह्मणही सर्वथा पूजन और नमस्कारके योग्यहै उनमें अपने पुत्रकी समान बर्त्ताव प्रीतिका रखना उचितहै क्योंकि वह ज्ञानी ब्राह्मणही इस सब सृष्टिको धारण करतेहैं ३ धनका त्याग करके रमनेवाले भजन और धर्म में प्रवृत्त ब्राह्मण सबलोकोंके धर्मके सेतुरूपहैं ४ वह यशस्वी सुन्दर व्रतवाले उत्तम स्वरूपब्राह्मणजीवोंके रक्षास्थान सब लोकोंकेप्रभु और शास्त्रोंको उपदेश करनेवालेहैं ५ जिनका तपही धन और वचन महापराक्रमी है वह सूक्ष्म धर्मोंके ज्ञाताहैं ब्राह्मणही धर्मोंके उत्पत्तिस्थान ६ अपने शुभ कर्मोंसे धर्मके सेतुरूप धर्मके अभिलाषी होकर धर्ममें नियतहैं जिनका आश्रय लेकर अंडजादिचारों प्रकार की सृष्टिजीवन करतीहै ७ सबके नियन्ता यज्ञ प्राप्त करनेवाले सनातन ब्राह्मण सदैव बाप दादेके भारी धुरको उठातेहैं ८ और जो उस बाप दादेके धुरमें असह्य भूमिके धुरकेचलनेवाले बैलोंके समान पीड़ा नहीं पातेहैं वह देवता पितृ और अतिथियोंके मुखरूप ब्राह्मण हव्य कव्य और प्रथम भोजनको खानेवालेहैं ९ वह भोजनहीसे तीनोंलोकोंको बड़े २ भय और उत्पातोंसे रक्षा करतेहैं वह सब संसारके दीपक औरनेत्रवालोंके भी नेत्रहैं १० सब शिक्षा और श्रुतिरूप धन रखनेवाले सावधान मोक्षदर्शी सब जीवधारियोंके गतिकेज्ञाता और अध्यात्मगतिका बिचार करनेवाले हैं ११ आदि मध्य अंतके ज्ञाता संशय से रहित सगुण निर्गुण ब्रह्मके अच्छेज्ञाता और मोक्षको प्राप्त करनेवालेहैं १२ जीवन्मुक्त पापरहित सुख दुःखादि योगोंसे पृथक् स्त्री आदि परिग्रह न रखनेवाले प्रतिष्ठाके योग्य वह ब्राह्मण सदैव ज्ञानी महात्माओंसे पूजितहैं १३ वह चन्दन वा कीच और भोजन वा अभोजन इन सब बातोंमें समान

प्रकृति वालेहैं जिनके शरीरके वस्त्र दुपट्टा रेशमी वस्त्र औरमृगचर्म है १४ वह जितेन्द्री ब्राह्मण भोजनकिये बिनाभी बहुतदिनतक स्वस्त चित्त रहतेहुये वेदपाठ और जपकरनेमें अपनेशरीरों कोशोषण करतेहैं १५ वहक्रोधयुक्तहोकर बिनादेवताकेदेवताबनावें औरदेवता कोभी अदेवता बनासक्ते हैं दूसरे लोक और लोक पालों को भी उत्पन्न कर सक्तेहैं १६ जिन महात्माओं के शापसे समुद्रभी पान करने के योग्य नहींहै जिनके क्रोधकी अग्नि अबतक भी मंडूकबन में शान्तनहीं होती है १७ जो देवताओं के भी देवता कारण केभी कारण और प्रमाण के भी प्रमाणहैं उनका कौनसा ज्ञानी मनुष्य अपमान कर सक्ताहै १८ जिनलोगों में वृद्ध और बालकसब पूजन के योग्य हैं वह तप और विद्या की मुख्यता से परस्पर में पूजन करते हैं १९ अज्ञानी ब्राह्मण भी देवता के समान बड़े पवित्रपात्र हैं जो ज्ञानी बुद्धि से पूर्ण समुद्रकी समानहै वह बहुत बड़ादेवता है२० ब्राह्मण ज्ञानी होय वा अज्ञानीहोय मन्त्रहोय अथवाअमन्त्र होय वह भी अग्निके समान बड़ादेवताहै २१ तेजस्वी अग्निदेवता श्मशानमें भी दूषित नहीं होता है वही अग्नि देवता यज्ञ में विधि के अनुसार हव्य को लेता हुआ शोभा पाता है २२ ब्राह्मण यद्यपि अनहित कर्मोंमें भी प्रवृत्तहैं तौभी वह सबप्रकारसे पूजनके योग्य हैं उसकोभी श्रेष्ठ देवतामानो २३ ॥

इतिश्री महाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेशतोपरिद्विपंचाशत्तमोऽध्यायः१५२ ॥

एकसौतिरपनका अध्याय ॥

युधिष्ठिरने पूछा कि हे बड़े बुद्धिमान् राजाभीष्मजी तुमब्राह्मण पूजनके विषयमें ब्राह्मण के किस कर्मको वा फलको देखकर अथवा किसकर्मके उदयको मानकर उनको पूजतेहो १ भीष्मजी बोले हे भरतवंशी मैं इसस्थान पर इसप्राचीन इतिहासको भी कहताहूं जिसमें वायुदेवता और राजा सहस्रबाहुका प्रश्नोत्तरहै २ कि माहिष्मतीपुरीमें महापराक्रमी हजार भुजा रखनेवाला राजासहस्रा-

वाहु इस संपूर्ण पृथ्वीका स्वामीहुआ ३ उस सत्यपराक्रमी राजा सहस्त्रावाहुने इसरत्नोंसे पूर्णसागराम्बरा पृथ्वीको उसके सबद्वीप उपद्वीपों समेत अपने आधीनकिया ४ उसने क्षत्रीधर्म नम्रता और शास्त्रज्ञान को मुख्यकरके किसीहेतुसे अपना सबधन दत्तात्रेय मुनि को भेटकिया ५ अर्थात् सहस्त्रावाहुने उसमुनिका सेवन और पूजन किया तव अत्यन्त प्रसन्न होकर उनदत्तात्रेयजीने उसको तीन वर मांगनेकी आज्ञाकरी ६ तब ऋषिकी प्रसन्नता देखकर उसराजाने यह बचन कहा कि मैं घरमें तो दो भुजावालारहूं और सेना में हजार भुजावाला होजाऊं ७ और सब सेना के लोगों को मेरी हजार भुजादीखें और तेजव्रत में पूर्ण होकर मैं अपने पराक्रम से संपूर्ण पृथ्वीको बिजयकरूं और उसपृथ्वीको पाकरमैं निरालस्यहो के धर्मसे पालनकरूं हे वड़े साधुब्राह्मण इनवरोंके सिवाय मैं आप से चौथा बर भीचाहता हूं ६ आप मेरे पोषण के निमित्त वह वर देनेको योग्यहैं अर्थात् यह बर चाहताहूं कि मुझ आपके रक्षाकिये हुयेको अनुचित कर्म करनेमेंसंत महात्मालोग शिक्षाकरें १० राजा के इस वचनको सुनकर उन दत्तात्रेयने कहा कि ऐसाही होय उस प्रतापी राजाको इसी रीतिसेचारों वर प्राप्तहुये ११ इसके अनन्तर उसने अग्नि सूर्य्यके समान तेजस्वी रथपर सवार होकर मोहकी प्रबलतासे यह वचन कहाकि मेरे समान धैर्य्य पराक्रम शुभकीर्त्ति शूरता सामर्थ्य और तेजमें कौनसा राजाहोसक्ताहै अर्थात् कोई नहीं होसक्ताहै उसके उस बचनके कहनेके पीछे आकाशसे यह वाणी हुई १३ कि हे अज्ञान तू क्षत्रीसे उत्तमब्राह्मणको नहीं जानताहै इस लोकमें सब क्षत्रीलोग ब्राह्मणोंके आज्ञा वर्त्ती होते हैं १४ सहस्त्रा-वाहुने कहा कि मैं प्रसन्न होकर जीवधारियोंको जीव दानदूं और क्रोध रूप होकर मन वाणी और कर्मसे नाश करूं मुझसे उत्तम कोई ब्राह्मणनहींहै १५ जिसमें ब्राह्मण श्रेष्ठ समझा जाय यह पूर्व पक्षहै और जिसमें क्षत्रीअधिक समझाजाय वह सिद्धान्तपक्षहै तु-मने वह दोनों ब्राह्मण और क्षत्री प्रजाकी पालनता के कारण से

साथमें रहनेवाले कहे उसमें मुख्यता दिखाई देतीहै १६ ब्राह्मण लोगक्षत्रीवंशमें आश्रित हैं और क्षत्रीकाकुल ब्राह्मणोंका आश्रित नहींहै वेद और यज्ञरूप छलरखने वाले वेदपाठी ब्राह्मण पृथ्वीपर क्षत्रियोंसे अपनी जीविका करतेहैं १७ प्रजापालन नाम धर्मक्षत्रियोंमें आश्रितहै क्षत्रियोंकेही कुलसे ब्राह्मणोंकी जीविका है ब्राह्मण क्षत्रियोंसे कैसे उत्तमहोसक्ताहै १८ मैं सदैव उनवेदपाठी ब्राह्मणों को जोकि सब जीवधारियोंमें श्रेष्ठभिक्षावृत्ती रखनेवाले और पवित्रात्माहैं अपनी आधीनता में रखताहूं १९ इस सरस्वती कन्याने अर्थात् आकाशवाणीने स्वर्गसे मिथ्या बचन कहाहै मैं इन अस्वतंत्रमृगचर्म धारी सबब्राह्मणोंको बिजय करूंगा २० तीनों लोकमें कोई मनुष्य अथवा देवताभी मुझको राज्यसे भ्रष्ट नहीं करसक्ताहै इसी हेतुसेमें ब्राह्मणसे बड़ाहूं २१ अबइस ब्राह्मणके प्रधानमानने वाले लोक को क्षत्रीप्रधान नाम करूंगा कोई पुरुष या देवता युद्ध में मेरे पराक्रम को नहीं सहसक्ता है २२ सहस्राबाहुके इस बचन को सुनकर सरस्वती और राक्षसलोग भयभीत हुये तब आकाश और पृथ्वीके मध्यमें वर्त्तमान होकर बायुदेवताने उससे कहा २३ कि हे राजा तू इस अपने पापिष्ठ चित्तको त्याग कर और ब्राह्मणों के अर्थ नमस्कार कर उनका अपराध करने से संपूर्ण सृष्टि में महा उपद्रव मचैगा २४ हे राजा वह ब्राह्मण बड़े पराक्रमी हैं तुमको अवश्य दंडदेंगे और तुझ निरुत्साह को देश से निकाल देंगे २५ राजाने उनसे कहाकि तुमकौनहो बायुने उत्तर दियाकि मैं देवताओं कादूतबायुहूं तेरी वृद्धिका करनेवाला बचन कहताहूं २६ सहस्राबाहुने कहा कि बड़ा आश्चर्य्यहैकि आपने ब्राह्मणोंमें प्रीतिदिखाईहै जैसे पृथ्वी तत्त्वहै वैसेही प्रकारके ब्राह्मणको मुझसे कहो २७ अथवा तुम बायु जल अग्नि सूर्य्य और आकाश के भी समान उत्तम ब्राह्मणको वर्णनकरो २८ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेत्रिपंचाशतमोऽध्यायः १५३ ॥

—※—

एकसौचौवन का अध्याय ॥

वायुने कहा हे अल्पज्ञ मूर्ख अवतुम महात्मा ब्राह्मणोंके थोड़ेसे गुणोंको सुनो हेराजा जिनको तुमने वर्णनकियाहै उनसेभी ब्राह्मण उत्तमहैं १ यहपृथ्वी राजाअंगकी स्पर्धासे अपने पृथ्वीरूपको त्याग कर गुप्त होगई थी तब कश्यप ब्राह्मणने उसको नियतकिया २ हे राजापृथ्वी और स्वर्ग दोनोंमें ब्राह्मण सदैव अजेयहैं पूर्व्व समय में आय अंगिराऋषिने अपने तेजसे संपूर्ण जलको पान किया ३ हेराजावड़ाप्रतापीऋषि उनजलोंको दूधके समान पीता हुआ भी तृप्तनहीं हुआ फिरवड़े जलके समूहसे सवपृथ्वी को भरदिया ४ उस ऋषि केक्रोध रूपहोनेपर मैंभी संसारको त्यागकर चला गया और वहुतकालतक अंगिरा ऋषिके भयसे अग्निहोत्रमें नियतहुआ ५ अहिल्याको चाहनेवाले भगवान इन्द्रको गौतम ऋषिने शाप ही दिया औरधर्मके कारणसे जीवसे नहींमारा ६ हेराजा यहमीठे जल कापूर्ण समुद्रभी ब्राह्मणोंकेही शापसे खारीकिया गया ७ सुवर्ण के समान वर्णवाली निर्धूम ज्वाला रखने वाला अग्नि भी इन्हीं गुणोंसे रहित होने के कारण क्रोधरूप अंगिरा ऋषिसे शाप दिया गया ८ राजा सगर के पुत्रोंको भी भस्मरूप देखोजो कि समुद्रके समीप आयेथे वह सुन्दर वर्णधारी कपिल मुनिकरके शापदिये गये९ हेराजा तुम ब्राह्मणोंके समान नहींहोगर्भमें भी वर्त्तमान होने वाले इन ब्राह्मणोंको प्रभु देवता विष्णुजी नमस्कार करतेहैं इससे तुम भी अपने कल्याण को समझो १० दंडकनाम क्षत्रियों का वड़ा राज्यभी ब्राह्मणहीसे नाशकिया गया अकेले और्व ऋषिनेतालजंघा नामक्षत्रियोंके वड़े कुलका नाश किया ११ तुमनेभी दत्तात्रयी ऋषि की कृपासे वड़ी कठिनतासे प्राप्तहोनेवाले राज्य पराक्रम धर्म और शास्त्रके ज्ञानको पाया १२ हे सहस्रावाहु तुम सदैव अग्नि और ब्राह्मणको किसकारणसे पूजतेहो वह सव संसारके हव्यकोदेवता-ओंके पास प्राप्त करने वालाहै उसको तुमनहींजानतेहो १३ अथवा

सब सृष्टिके पोषण करनेवाले और जीव लोकको उत्पन्न करनेवाले ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजीको जानता हुआ तू किसहेतुसे भूलको करताहै वह ब्रह्माजी प्रभु प्रजापति अव्यक्त और अविनाशी हैं जिससे कि यह सब स्थावर जंगम संसार उत्पन्न हुआहै १५ कोई मूर्ख कहतेहैं कि ब्रह्माजी अंडसे उत्पन्नहैं उस टूटनेवाले अंडसे पर्व्वत दिशा जल पृथ्वी और स्वर्ग प्रकटहुये १६ अब यह जानना चाहिये कि यहतो अजन्मा है वह जन्म कैसे लेसक्ता है उस अंडको आकाश कहतेहैं उसीसे ब्रह्माजी उत्पन्नहुये यह कबहो सक्ताहै अर्थात् अज्ञानसे चिदात्माका जन्म नहीं होसक्ताहै अंडसे उत्पन्न होना और प्रकारसेभी कहसक्तेहैं १७ जिसदशामें कि कुछभी आधार नहींहै उस निराधारतामें ब्रह्माजी कैसे होसक्तेहैं यहां यह सन्देहहुआ कि वह प्रजापति कौनहै उसका यहउत्तरहै कि सुषुप्तिके समान अव्याकृत आकाशसे जो अहंकार उत्पन्नहुआ उस उपाधिसे युक्त अहंकाररूप कहागया वह व्यापकहै क्योंकि जल चन्द्रमा आदि न्यायसे सब चैतन्य हैं अर्थात् उसीने आकाशादि सब तत्वोंको कल्पित किया इस रीतिकरके शास्त्र और अनुभवसे जाननेवाला ब्राह्मण संसार कास्वामीहै उसके साथतेरी समता ऐसे नहीं होसक्ती है जैसे कि समुद्रके साथ समुद्रकी तरंगकी समतानहीं होसक्तीहै १८ इसी हेतुसे सर्प रज्जुके समान अंडनहींहै इस ब्रह्माण्डकी कल्पना करनेवाला ब्रह्मा ब्राह्मणहै यह बायुके बचन सुनकर वह राजा सहस्त्राबाहु मौन हुआ १९ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेवायुसहस्राबाहुसम्वादेशतोपरिचतुःपंचाशतमोऽध्यायः १५४॥

एकसौपचपनका अध्याय॥

वायु देवता बोले हेराजा पूर्व्व समयमें राजा अंग इसपृथ्वीको ब्राह्मणोंकेअर्थ दक्षिणामें देनेके लिये अभिलाषीहुआ इसहेतुसे पृथ्वी शोचग्रस्तहुई कि यह उत्तमराजा सब जीवोंकी धारण करनेवाली

मुझ ब्रह्माकी पुत्री पृथ्वीको पाकर किसरीतिसे ब्राह्मणों को देना चाहताहै २ इसीसे मैं पृथ्वीके रूपको त्याग करके ब्रह्मलोक को जाऊंगी और अपने देश समेत इस राजाका नाशहोय यह कह पृथ्वीरूप शरीर से निकलकर चली ३ तब उसके पीछे सावधान कश्यप ऋषिउस देखतेहुई चलनेवाली पृथ्वीको देखकर शीघ्रही अपने शरीरको त्यागकर उस निर्जीव पृथ्वीमेंप्रवेशकरगये४ इसके पीछे सब प्रकारसे यज्ञमें दानदीहुई तृण औषधियों समेतवहपृथ्वी देवी अपने धर्मके बलसे ब्रह्मलोकमें जाकर निर्भयहुई ५ हेराजा संशयसे रहित बड़े व्रत करनेवाले कश्यप ऋषि इसीरीतिसे तीस हजारदिव्यवर्षतकपृथ्वीरूपमें नियतहुये६इसके पीछेवहपृथ्वी ब्रह्म लोकसे आकर कश्यप जीको नमस्कार करके उसमहात्माकी पुत्री होकर कश्यपी नामसे विख्यात हुई ७ हेराजा यह कश्यप ब्राह्मण ऐसाहुआ अब तुम भी कश्यपसे अधिक किसी उत्तम क्षत्रीको वर्णन करो८ राजा मौन होगया फिर वायुने कहाकि हेराजाअब अंगिरा ऋषिकेकुलमें उत्पन्न होनेवाले उतथ्य ऋषिके माहात्म्यकोसुनो ९ चन्द्रमाकी पुत्री भद्रानाम स्वरूपमें अद्वितीयथी तबचन्द्रमाने उसके पति होनेके योग्य उतथ्य ऋषिको देखा १० बड़े नियमवाली उस सुन्दर मुखवाली यशस्विनी महाभाग भद्राने उतथ्य ऋषिकी प्राप्तिके लिये उग्र तप किया ११ उस अत्रिके पुत्र चन्द्रमाने उतथ्य ऋषिको बुलाकर उस यशस्विनी भद्रासे विवाह करदिया उसऋषिने भी उसको विधिके अनुसार ग्रहणकिया १२ परन्तु श्रीमान् वरुण देवताने पूर्व्वही उसको चाहाथा इसीसेउसने बनकेआश्रम मेंआकर उस भद्राको यमुनाजी में हरणकिया १३ जलोंके स्वामी वरुणदेवता उसको हरण करके उस अपने पुर में लेगये जो कि अत्यन्तअपूर्व्व रूपका छः लालहृद रखनेवालाहै १४उससेअधिक क्रीड़ा करने के योग्य कोईपुर उत्तम नहीं है उसके महल भी दिव्य अभीष्ट वस्तुओं से व्याप्त होकर उत्तम २ अप्सराओं से शोभायमानथे १५ हेराजा वहां राजा वरुणने उसभद्राकेसाथ क्रीड़ा करी

इसके पीछे नारद जी ने आकर वरुण करके स्त्रीका हरण करले-
जाना उतथ्यकेआगे वर्णनकिया १६ उतथ्यने नारद जीसे उस सब
वृत्तान्तको सुनकर नारद जीसे यह कहाकि तुमजाओ और वरुण
से यह कठोर बचनकहो १७ कि मेरे बचनसे मेरी स्त्रीको छोड़ो
तुमनेकिसहेतुसे उसकोहरण कियाहै तुमलोकोंके लोकपाल हो कि
लोकोंके नाशकर्त्ताहो १८ चन्द्रमाने मुझको भार्य्यादी अबतुमने उ-
सको हरणकिया उसके बचनके अनुसार नारदजीने राजा बरुण से
कहा कि तुम उतथ्यकी स्त्री को छोड़ो १६ तुमने किस हेतु से हरण
कियाहै तब नारदके बचन सुनकर बरुण देवताने उसको यह बचन
कहाकि २० यह मेरीप्यारी भार्य्याहै मैं इसके त्यागकरनेकोउत्साह
नहीं करसकाहूं फिरबरुणके बचनोंको सुनकर नारदजीने सबवृत्ता-
न्त उतथ्यऋषिसे आनकर कहा २१ हे महामुनि मुझको ग्रीवापकड़
कर बरुणदेवताने पिटवायाहै वहतेरी भार्य्याको नहीं देताहै अबजो
तुमको उचितकरना होयसोकरो २२ नारदजी के बचन को सुनकर
अंगिराबंशी उतथ्यऋषिने क्रोधसे ज्वलितरूपहोकर अपनी तपस्या
के तेजबलसे संपूर्णजलको निश्चल करके पानकरलिया २३ तबसब
जलोंके पीजाने पर अपने भाईबन्धु इष्टमित्रों समेत महाव्याकुल
चित्तहोकर भी उसबरुणदेवताने उसभार्य्याको नहींछोड़ा २४ इस
के पीछेउस क्रोधरूप श्रेष्ठउतथ्यनाम ब्राह्मणने देवीपृथ्वीसे यह ब-
चन कहाकि हे कल्याणितू मुझको उसस्थानको दिखलादे जहां
कि छः लालहृदवर्त्तमानहैं २५ तब पृथ्वीकी आज्ञापाकर समुद्रउस
स्थानसे हटगया जिसस्थानपर कि वह छः लाल हृदथे तब इसउ-
त्तम ब्राह्मणनेनदीसे कहा २६ कि हेभीरु सरस्वती तुम गुप्त होकर
मरुदेशोंमें जाओ हेशुभ जबतू इसदेशकोत्यागेगी तबयहदेशअपवि
त्रहोगा २७ तबउसभयकारी देशके शुष्कहोजाने पर बरुण देवता
ने भद्रानाम भार्य्याको लेकर उसउतथ्य ऋषिके शरणागत होकर
उनकी भार्य्याउनको देदोजी २८ हे राजा सहस्रबाहु उतथ्य ऋषि
उसभार्य्याको लेकर प्रसन्नहुये और सबसंसार समेत बरुण देवता

को दुःखसे छुड़ाया २६ इसके पीछे उस धर्मज्ञ महातेजस्वी उतथ्यने उस भार्य्याको लेकर जो२ बातें वरुणसे करीं उन सबको तुम मुझसे सुनों ३० हे जलेश्वर आपकी अप्रसन्नता होने परभी यह भार्य्या मुझकोतपसे प्राप्तहुईहै यह कहकर भार्य्या समेत अपने आश्रम को गये ३१ हे राजायह ब्राह्मणों में उत्तम उतथ्य ऐसा प्रतापी था इसको मैंने कहा अबतुम किसी क्षत्रीको ब्राह्मण से उत्तम बताओ ३२॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेउतथ्यमाहिमावर्णनेषृतोपरिपंचपंचाशतमोऽध्यायः १५५॥

एकसौछप्पनका अध्याय॥

भीष्मजीबोले कि वायुके इसरीतिके कहने पर वह राजामौनहुआ हे राजा अबतुम अगस्त्यऋषि के माहात्म्य को सुनो१ जब कि असुरोंने देवताओंकोविजयकिया और उनको उत्साहोंसेरहितकिया औरदेवतालोगोंके सबयज्ञभाग औरपितरोंके स्वधाभागोंको हरण किया२और मनुष्योंकी यज्ञशालाभी दानवोंने बिध्वंसकरदी तबसब देवता अपने२ राज्योंसेहत होकर पृथ्वीपर भ्रमण करने लगे यह श्रुतिहै ३ हे राजा इसके कुछकालही पीछे उन देवताओंने पृथ्वी पर घूमतेहुये एक समय उन अगस्त्यमुनिको देखा जोकि तेजमें प्रकाशमान सूर्य्यके समानमहातेजस्वीउत्तम ब्रतके धारणकरनेवाले थे ४ हे राजा उनको देवताओंने प्रणाम पूर्व्वक उनकी कुशलक्षेम पूछकर समय पाकर उस महात्मासेयह वचन कहा ५ कि हम सब देवता युद्धमें दानवलोगोंसेपराजयहुये और इसी कारणसे अपने२ राज्यसे भी रहितहुये हे मुनियोंमें श्रेष्ठ आप हमारी इस आपत्तिमें रक्षाकरके हमको इसदुःखसे छुटाओ ६ तब देवताओंके वचनोंको सुनकर वह महातेजस्वी अगस्त्य मुनि ऐसे क्रोधसे प्रज्वलित हुये जैसे कि प्रलय कालकी अग्नि होतीहै ७ हे महाराज तब उनके तेजकी प्रकाशित ज्वालाओंसे वहसब दैत्य भस्महोगये और हजारों

दानवलोग अन्तरिक्ष से पृथ्वी पर गिरपड़े ८ उन अगस्त्यजी के तेजसे संतप्त होकर वह सब बाकी बचेहुये दानव दक्षिण दिशाको चलेगये ९ उस समय पृथ्वीपरवर्त्तमान होकर राजाबलि यज्ञको कररहाथा और पाताल वा पृथ्वी पर वर्त्तमान जो अन्य बड़े २ महाअसुर थे वह सब ऋषिकी कोपाग्निसे भस्म होगये १० इसके अनन्तर देवताओंने फिर अपने २ लोकोंको प्राप्त किया और वह ऋषि भी शान्तहोगये इसके पीछे उन सब देवताओंने ऋषिसेकहा कि आप इन पृथ्वीपर वर्त्तमान राक्षसोंको विजय कीजिये ११ हे-राजा देवताओं के इस बचनको सुनकर अगस्त्यजीने देवताओंसे कहा कि इन पृथ्वीपर नियत असुरोंके नाश करनेको मैं इस हेतुसे समर्थ नहीं हूं कि मेरातप नष्ट होगा इस निमित्तमैं उनको नष्टनहीं करसक्ता हूं १२ हे राजा ऐसे तेजस्वी अगस्त्यजीका भी वृत्तान्त मैंने तुझसे कहा कि जिनके तपकेही तेजसे सब दानव लोग भस्म होगये १३ हे निर्ल्लज्ज ऐसे अगस्त्यजी भी तुमसे वर्णन किये इन से उत्तम किसी क्षत्रीका तुम वर्णन करो १४ भीष्मजी बोले कि तब तो इस रीतिके अनेक बचनोंको सुनकर वह राजा सहस्त्रावाहुमौन होगया फिर वायुने कहा कि हे राजा अब महातेजस्वी वशिष्ठजीके भी उत्तम कर्मको सुनो १५ देवताओंने वैखानस नाम सरोवर पर यज्ञकी रचनाकरी वहांचित्तसे वशिष्ठ और वशिष्ठजीकोगौरवताको जानकर चित्तसेही उनको ध्यानकिया १६ तब पर्व्वताकार खलिन नाम दानवोंने उन यज्ञ करनेवाले सब देवताओंको दीक्षाओंसे निर्बल शरीर देखकर मारनेकी इच्छाकरी १७ उनके समीपही ब्रह्माजीसे बरपानेवाला एक सरोवर था कि जिसमें मरे हुये राक्षस लोग गोतादिलानेसे सजीव होजातेथे १८ वह दशहजार दानव बड़े २ भयकारी पर्व्वतवृक्ष और परिघाओंकोलेकर चारसौ योजन ऊंचेउठेहुये जलको ओतल्पोतकरके देवताओंके सन्मुखदौड़े फिर उनसे पीड़ित होकर सब देवता इन्द्रकी शरणमेंगये १९।२० इन्द्रभी देवताओं समेत उनसे पीड़ित होकर वशिष्ठजी की शरण

में गया तब वशिष्ठऋषिने उस इन्द्रको निर्भयतादी २१ उससमय दयावान् वशिष्ठ मुनिने उन देवताओंको महादुःखी जानकर बिना उपाय किये अपने तेजसेही उनसखलिन नाम दैत्योंको भस्मकर दिया २२ और उसीबड़े तपस्वीने कैलास पर नियत श्री गंगानदी को उसदिव्य सरोवर में प्रविष्ट किया उससे वह सरोवर टूटा २३ फिर उसनदी से टूटाहुआ वह सरोवर सरयू नाम नदी हुआ और जिस स्थानमें वह खलिननाम दैत्य मारेगये वह खलिन नामदेश विख्यात हुआ २४ इसरीति से इन्द्रादिक सब देवताओंकीबशिष्ठ जीनें रक्षाकरी और ब्रह्माजी से बर पानेवाले वह सब दैत्य उन महात्मा बशिष्ठजीके तेजहीसे भस्म होगये २५ हेनिर्लज्ज यह मैंने वशिष्ठजीकावृत्तान्त वर्णनकिया अबतुम इन बशिष्ठजीसे उत्तमकिसी क्षत्रीका वर्णनकरो २६ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मे वशिष्ठतेजवर्णनेशतोपरिषट्पंचाशत्तमोऽध्यायः १५६ ॥

एकसौसत्तावनका अध्याय ॥

भीष्मजी बोले कि ऐसे २ वचनोंको सुनकर राजा सहस्त्राबाहु मौनहुआ फिरभी बायुने कहा कि हे राजा सहस्त्राबाहु अबमहात्मा अत्रि ऋषिके कर्मको मुझसे सुनो १ देवता दानव घोर अंधकार में जबपरस्पर युद्धकरनेलगे तबवहां राहुनेचन्द्रमा और सूर्य्यकोबाणों से घायल किया २ हेराजाओं में श्रेष्ठ उससमय वहइन्द्र समेत सब देवता अंधकार में घिरेहुये उनके बाणोंसे महाव्याकुलहुये ३ तबअसुरों से घायल हुये पराक्रम से रहित देवताओंने तप करने वाले तपोधन अत्रिऋषिको देखा ४ इसके पीछे देवताओंने इन क्रोधरहित जितेन्द्री महात्मा अत्रिमुनिसे कहा कि यहदोनों चन्द्रमा और सूर्य्य असुरोंके बाणोंसे घायल हुयेहैं ५ और अंधेरे से घिरे हुये हमसब देवताभी घायलहैं सुखको नहीं पातेहैं इससे हे प्रभु आपहमारी रक्षाकरो ६ अत्रिनेकहा कि मैं आपलोगों की कैसेरक्षा

करूं वह बोलेकि चन्द्रमा हूजिये औरअंधेरे और चोरोंके नाशकरने के लिये हमारेसूर्य्य भी हूजिये ७ यहबचन सुनतेही वहअत्रिऋषि अन्धकारके दूरकरनेवाले चन्द्रमाहुये और चन्द्रमा रूप होकरउस अपर्वरूप ऋषिने अपनी अमृतदृष्टीसे उनकोदेखा ८ हे राजाअत्रि ऋषिनेचन्द्रमा और सूर्य्यको अप्रकाश देखकर अपने तेजसे युद्धमें प्रकाश किया ९ तब संसारभी अंधकारसे रहितहोकर प्रकाशमान हुआ १० और अपने दिव्य तेजसे देवताओंके शत्रुओंको बिजयकिया तब अत्रिके तेजसे संतप्तहुये उन असुरोंको देखकर ११ उन ऋषिसे अच्छे प्रकारसे रक्षित हुये देवताओंने भी उन असुरोंकोअपनेपरा- क्रमसे मारा सूर्य्य प्रकाशमान हुये देवताओंकी रक्षाहुई असुर मारे गये १२ इन उत्तम तेजवाले सूर्य्यके समान तेजस्वी मृगचर्मके ओढ़नेवाले फलभोजन वाले सृष्टिकर्त्ता अत्रि ऋषिनेअपनीसामर्थ्य प्रकटकरी १३ हे राजऋषि अत्रिके कियेहुये कर्मको देखो यह मैंने महात्मा अत्रिका कियाहुआ वृत्तान्त तुमसे कहा इनसे विशेष किसी क्षत्रीका कर्म तुमभी वर्णन करो १४ यह सुनकर भी राजा सहस्राबाहू मौनहीरहा इसके पीछे फिर वायुदेवताने कहाकि हे राजा महात्मा च्यवन ऋषिकेभी बड़ेभारी कर्मको सुनो १५एकस- मय च्यवन ऋषिने दोनों अश्विनीकुमारोंसे प्रण करके इन्द्रसेकहा कि तुम इनदोनोंअश्विनीकुमारों को देवताओंकेसाथमेंयज्ञकाभागी करके सोमपान करो १६ इन्द्रने कहाकि यह दोनों हमसे निन्दित हैं हम इनके साथ कैसे सोमपान करें यहदोनों देवताओंकेसमान नहींहै इस हेतुसे आप हमसे ऐसा वचन मतकहो १७ हे महाव्रत हम अश्विनीकुमारोंके साथमें सोमपान करना नहीं चाहतेहैं हे विप्रवर्य्य इसके सिवाय जो आप आज्ञा करें उसको हमकरें १८ च्यवनजी बोले कि हेदेवराज यह दोनों अश्विनीकुमार आपलोगों के साथ सोमपान करें क्योंकि यह दोनों देवताभी सूर्य्यके पुत्रहैं हेदेवताओ तुम इसमेरे बचनको जैसा कि मैंने कहा है उसीप्रकार करो तुम सब कर्म कर्त्ताओंका कल्याण होगा और अकर्म कर्त्ताओं

का कल्याण न होगा १६।२० इन्द्रने कहा हे द्विजबर्य मैं अश्विनीकुमारोंके साथ सोमपान नहीं करूंगा चाहै अन्य देवतालोग अपने उत्साहसे उनकेसाथ सोम पियें परन्तु मैं उनके साथ सोमपान करनेको उत्साह नहीं करताहूं २१ च्यवनऋषिने कहा हे इन्द्र जो मेरे कहेहुये वचन को नहीं करेगा तो यज्ञमें मुझसे प्रमथित होकर तू शीघ्रही सोमपान करेगा २२वायु देवता कहतेहैं कि इसके पीछे च्यवनऋषिने अश्विनीकुमारोंके अभीष्टके लिये उस कर्मको प्रारंभ किया फिर देवता लोग मंत्रोंसे पराजित हुये २३ तब क्रोधसे मूर्च्छामान इन्द्र उसकर्मको प्रारंभहुआ देखकर एक बड़ेभारी पर्व्वत को उठाकर च्यवनऋषिकी ओरको दौड़ा और उस तपोधन च्यवन ऋषिने उस इन्द्रको वज्र और पर्व्वत समेत आता हुआ देखकर २४।२५ एक जलका छींटा मारकर बज्र और पर्व्वत समेत स्तब्ध अर्थात् निश्चल जड़रूप करके उस इन्द्रके शत्रु बड़े घोररूप ऐसे मदनाम असुरको अपनी आहुतिसे उत्पन्नकिया जिसके फैलेहुये मुख में हजार दांतसौर योजन लम्बेथे २६।२७ और उसकी महाघोर भयानक डाढ़ दोसौ कोसलम्बीथी उसकानीचेका ओष्ठ पृथ्वीपरथा और ऊपरका ओष्ठ स्वर्गको स्पर्श कियेहुयेथा उसके मुखमें इन्द्र समेत सब देवता ऐसे नियत हुये जैसे कि महासमुद्रमें तिमि नाम जल जन्तुके मुखमें मछलियां वर्त्तमान होतीहैं २८।२९ इसके पीछे इस मद दैत्यके सन्मुख वर्त्तमान उन देवताओं ने परस्पर में दृढ़ सलाह करके एक साथही सबने इन्द्रसे कहा कि हे इन्द्र तुम इस ब्राह्मण को नमस्कार करो ३० और हम सब लोग बिगत ज्वरहो कर अर्थात् सुख पूर्व्वक इन अश्विनीकुमारों के साथ सोमपानकरें देवताओं के वचन सुनकर उस नम्रीभूत इन्द्रने च्यवनऋषिके उस बचन को किया ३१ तब च्यवन ऋषिने उन अश्विनीकुमारों को सोमपान करने वाला कहा और इस चरित्रको करके फिर मुनिने उस अपने यज्ञ कर्मको समाप्त किया ३२ और मदनाम दैत्यको उस पराक्रमी ऋषिने द्यूत आखेट मद्यपान और स्त्रियोंमें बिभागित

कर दिया हे राजा मनुष्य ऐसे २ दोषोंसे अवश्य नाश होते हैं ३३ इसी हेतुसे मनुष्यको उचितहै कि इन द्यूत आदिबातों को दूरहीसे त्याग करे ३४ हे राजा यह च्यवन ऋषि का किया हुआ कर्मभी मैंने तुझसे कहा अब तुम इनसे अधिक कर्मवाले किसी क्षत्री का वर्णन करो ३५॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मे च्यवनप्रतापवर्णनेशतोपरिसप्तपंचाशतमोऽध्याय १५७॥

एकसौअट्ठावनका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि इस बातको सुनकर राजा सहस्रबाहु मौन हुआ और वायुने फिर कहा कि हे राजा ब्राह्मणोंमें जो उत्तम कर्म हैं उनको तुम मुझसे सुनो १ जब कि वह इन्द्र समेतदेवता उसमद के मुखमें वर्त्तमान हुये तभी च्यवन ऋषिने उनकी पृथ्वी हर लीन्ही २ देवता लोग दोनोंलोकोंको हरा हुआदेख शोकसे महापीड़ित होकर महात्मा ब्रह्माजीकी शरणमें गये ३ देवता बोले कि हे लोक पूजित प्रभु ब्रह्माजी इस मदके मुखमें वर्त्तमान होनेवाले हम सब देवताओं की पृथ्वी तो च्यवन ऋषि ने और स्वर्ग को कपोंने हरण कर लियाहै ४ ब्रह्माजी ने कहाकि इन्द्रसमेत तुम सब देवतालोग शीघ्रही ब्राह्मणों की शरणमें जावो तुम उनकोही प्रसन्न करके पूर्व्वके समान दोनों लोकोंको पावोगे ५ तब वह सब देवता वेद पाठी ब्राह्मणोंके शरणमेंगये उन ब्राह्मणोंने कहा कि हम किसको बिजय करें यह बात सुनकर देवताओंने ब्राह्मणोंसे कहा कि आप-यहां कपोंको विजय कीजिये ६ ब्राह्मणबोले कि हम अबफिर उन वर्त्तमान कपोंको बिजय करेंगे इसके पीछे ब्राह्मणोंने कपोंके नाश कारी कर्मको आरंभ किया ७ यह बात सुनकर कपोंने अपनी ओर से एकधनी नामदूतको ब्राह्मणोंके पासभेजा उसनेकपोंके राजाका जो वचन था वह सब ब्राह्मणोंसे आकरकहा ८ यहांकौन कर्मवर्त्त-मानहै सब कपलोग आपलोगों केही समान वेदज्ञ ज्ञानीऔर सब

यज्ञोंसे पूजन करने वालेहैं ९ सब सत्य व्रतधारी और महर्षियोंके समान हैं लक्ष्मीजी उनमें क्रीड़ा करती हैं और वहसब लक्ष्मी को धारणकरते हैं १० बिनाऋतुकालके स्त्रीके पास नहींजातेहैं यज्ञके विना मांस नहींखातेहैं प्रकाशमान अग्निमें हवन करतेहैं गुरुओं के वचनमें नियतहैं सब नियममें संयुक्त शरीर और बालकोंको अच्छी रीतिसे विभागदेनेवालेहैं और समीप आकर धीरेसेचलेजातेहैं परंतु रजस्वलास्त्रीका सेवन नहीं करते हैं ११।१२ और वृद्ध वा गर्भवती स्त्रीके भोजन न करनेपर आपभी भोजन नहीं करतेहैं दिनके प्रथम भाग जोकि धर्मका समयहै उसमें किसी प्रकारकाव्यसन नहीं करते हैं दिनमेंशयन नहीं करतेहैं १३ इत्यादिगुणोंसेयुक्त कपोंको किस रीतिसेविजयकरोगे हेलौटनेवालेतुमलौटो तुमलोगोंकाआनन्द और सुखहै १४ ब्राह्मणबोले कि हमकपोंको अवश्य बिजयकरेंगे क्योंकि जो देवता हैं वही हमहैं इसीहेतुसे कपलोग हमारे हाथसे बध्य हैं हे धनी तुम जहांसे आयेहो वहींको जावो १५ फिर धनीने जाकर कपोंसे कहा कि ब्राह्मण बिजय करनेके योग्य नहीं हैं यह सुनतेही सब कपलोग अस्त्रोंको लेकर ब्राह्मणों की ओरदौड़े १६ तब ब्राह्मणोंने उनध्वजाधारी कपोंको आतादेखकर उनअग्नियोंको छोड़ा जो कि उनके प्राणों की हरनेवालीथीं हेराजा ब्राह्मणोंकी छोड़ी हुईवह हव्यभोक्ता अग्नि देवता कपोंको मारकरआकाशमें जाकरबादलोंके समान शोभायमान हुई १७।१८ तब सबदेवताओंने इकट्ठे होकर युद्धमें दानवोंको मारकर ब्राह्मणोंसे मारेहुये कपोंको नहीं जाना १९ हे राजा इसके पीछे महातेजस्वी नारदजी ने आकर देवताओं से वह सबवृत्तान्त कहा जैसे कि ब्राह्मणोंके तेजसे वहसब कपमारे गये २० तब नारदजी के बचनकोसुनकर अत्यन्त प्रसन्नचित्त देवताओंने ब्राह्मणों की प्रशंसाकरी २१ इसकेपीछेउनदेवताओंको तेज और पराक्रमकी वृद्धिहुई औरतीनोंलोकमें पूजित देवभाव कोपाया हे महाबाहो युधिष्ठिर राजासहस्त्रावाहुने इनबचनों के कहने वाले वायुदेवतासे जो २ बातें कहीं उनकोभीसुनो २२।२३ राजासहस्त्रा

वाहुबोले हे प्रभुमैं सबदशामें ब्राह्मणोंकी समानतामें जीवता हुआ वर्त्त मानहूं मैं ब्राह्मणों का भक्त होकर सदैव ब्राह्मणों को दण्डवत् करताहूं २४ मैंने दत्तात्रेयी ऋषिकी कृपासे यह पराक्रम और संसारमेंशुभकीर्त्ति प्राप्तकी और बड़ाधर्मकिया २५ हेबायुदेवता मुझसावधानने आपके मुखसे कहेहुये ब्राह्मणों के संपूर्ण कर्मोंको सुना २६ बायु देवताने कहा कि तुमक्षत्रीधर्म से ब्राह्मणोंको औरअपनी इन्द्रियोंको पोषण करो और इस बातको याद रक्खो कि भृगुबंशियों से तुझको बड़ा कठिन भयहोनेवालाहै सो समयपर अवश्यहोगा २७ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेपवनसहस्रार्जुनसंवादोनामशतोपरिअष्टपंचाशत मोऽध्यायः १५८ ॥

एकसौउनसठका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे राजाभीष्मजी आप सदैव इन तेज ब्रतवाले ब्राह्मणोंको पूजतेहो सो हेमहाब्रतमहाबाहो तुम उनके कौनसे उदय होनेवाले फलको देखकर उनको पूजतेहो उस सबको मुझसे कहो १ । २ भीष्मजी बोले कि ब्राह्मणोंको पूजा करनेके जो२ फलहैं उनको यह बड़ेबुद्धिमान् श्रीकृष्णजी संपूर्णताकेसाथ वर्णनकरेंगे क्योंकि यह महाब्रत श्रीकृष्ण जी उसफलके देखनेवाले हैं ३ अब मैं बल शक्ति श्रोत्रबाणी मनदृष्टिकीशक्तिसेरहित होकर महाब्याकुलहूंऔर वह शुद्धज्ञानहै और थोड़ेही समयमें शरीरका त्यागना मुझको अंगीकारहै अब सूर्य्यशीघ्र नहींचलताहै अर्थात् मुझदुःखीका यहदिन बड़ा हुआ ४ हेराजायुधिष्ठिर पुराणोंमें ब्राह्मणक्षत्री वैश्य औरशूद्रों के जो बड़े२ धर्महैं जिनको कि वहसबअपने २ काममें लाते हैं वह सब मैंने वर्णनकिया बाकी बचेहुओंको श्रीकृष्णजी से सीखो ५ हे कौरवेन्द्र मैं इन श्रीकृष्णजीको उस मुख्यताकेसाथ कि जैसेहैं और जैसो इनका सनातन पराक्रमहै इनसबबृत्तान्तों को मैं अच्छीरीतिसे जानताहूं अर्थात् श्रीकृष्णजी अत्यंतज्ञानवालेहैं वह तेरे सब संदेहों को वर्णनकरेंगे ६ इन्हीं श्रीकृष्णजीने पृथ्वी आकाश और स्वर्गको

उत्पन्नकियाहै इसके शरीरसे पृथ्वीप्रकटहुई यहभयका उत्पन्नकर
नेवाला पराक्रमी प्राचीनवराहहै इसीने पर्वत और संसारकीदिशा
ओंकोउत्पन्नकिया७ स्वर्ग पृथ्वी पाताल आकाशादि सबइसके श-
रीरसेप्रकटहैं इसीने संपूर्ण सृष्टि उत्पन्नकरी इसीने इसप्राचीनविश्व
कोभी उत्पन्नकिया ८ इसीकी नाभिमें कमल उत्पन्नहुआ जिसमें
बड़ेतेजस्वी ब्रह्माजी उत्पन्नहुये हे युधिष्ठिर जिससे कि वह घोरअंध
कार दूरहुआ और वह घोरअथाह समुद्रमें नियतहै ९ हेराजायह
श्रीकृष्णजी सतयुगमें संपूर्णधर्मके रूपहुये त्रेतामें ज्ञानरूप द्वापरमें
बलरूपहुये कलियुगमें अधर्मरूप पृथ्वीपरहुये १० पूर्वसमय में
इन्हींश्रीकृष्णजीने दैत्योंकोमारा था यही संपूर्ण संसार केअसुरों
काराजाबलिरूप हुआ यही इसजगत्का रक्षकहै ११ जबदेवताओंके
कुलमें धर्मनाशको पाताहै तबयही श्रीकृष्ण नरलोकोंमें अवतारलेते
हैं वहीपवित्रात्मा धर्ममें नियतहोकर सबगुप्त प्रकट संसारकीरक्षा
करताहै १२ हे राजा जो श्रीकृष्ण असुरोंके मारनेके निमित्त त्याग
केयोग्योंको त्यागकरके कार्याकार्य और कारणरूपहै जोकुछउत्प-
न्नथा वा वर्त्तमानहै अथवा होनेवालाहै वहसबयही देवताहैइसी
को राहु चंद्रमा और इन्द्रजानो १३ यहीसंसारका कर्त्ता और बना-
नेवालाहै यही विश्वरूपहै यही विश्वका भोक्ताहै यहीविश्वको उत्प-
न्न और विजयकरनेवालाहै वह शूलधारी बाणोंके द्वारा रुधिरको
धारणकिये कराल रूपहै कर्मोंसे विदित होनेवाले इस ईश्वरको
स्तुतिकरतेहैं १४ नानाप्रकारके अनेकगंधर्व और अप्सरागण उस-
को आकर सदैव प्रसन्नकरते हैं राक्षसभी उसीकी स्तुतिकरतेहैं
यही अकेला सबका पालन करनेवाला १५ लक्ष्मी और विजयका
चाहनेवालाहै स्तुतिकरनेवाले पुरुष यज्ञमें उसकी स्तुतिकोकरतेहैं
सामग ब्राह्मण उसको रथन्तर ऋचामें वेदकेमंत्रोंसे स्तुतिकरते हैं
अध्वर्यु ब्राह्मण उसके निमित्त हव्यका विचारकरते हैं १६ हे भरत
वंशी प्राचीन ब्राह्मणोंमेंसे परशुराम रूप इस ईश्वरने सहस्रबाहु
कोदेखा फिर उत्तम कर्मोंने दैत्यउरग और दानवलोगोंको पराजय

करके पृथ्वीको ऊंचा उठाया १७ इन्द्रदेवता अपनी वृद्धिकेलियेवर्षा-कालके बादलोंके शब्दोंके द्वारा इनकी स्तुति करतेहैं हे भरतवंशी यही अकेला गौवोंका अथवा जीवमात्रोंका ईश्वरहै इनके भोजनोंको नानाप्रकार का जानतेहैं और युद्धमें इसीको बिजयका देनेवाला जानतेहैं १८ संपूर्णपृथ्वी आकाश और स्वर्ग इसी सनातनपुरुषके आधीन हैं इसीने मैत्रावरुणके वीर्य्यको घटमेंडाला जिसमें वशिष्ठजीकोउ-त्पन्नकिया १९ वही आदिदेव प्रभु वायुहै जिसकीइन्द्रियां चलाय मानहैं वहीकिरणोंका स्वामीसूर्यहै इसीसे सबअसुरविजयकियेगये इसीकेतीन चरणोंसे तीनोंलोक जीतेगये २० यही देवतामनुष्य और पितरोंका आत्माहै इसीको यज्ञकेज्ञाता पुरुषयज्ञोंका विस्तारकहतेहैं यही समयपर उदयहोताहै इसीकेउत्तर और दक्षिणदोनोंस्थानहैं २१ इसीकी किरणें पृथ्वीको प्रकाशित करतीहुई ऊपरकी ओर बाईं और तिरछीचलतीहैं वेदज्ञब्राह्मणइसीका सेवन करतेहैं इसीके तेज से संयुक्तहोकर सूर्य्य जगत् में प्रकाश करताहै २२ वही यज्ञ करनेवाला हरमहीने यज्ञरचना करताहै वेदज्ञलोग इसीको यज्ञोंमें पढ़तेहैं यही वार्षिकरूप चक्रकहाताहै जिसकी शीतउष्ण और बर्षा रूपतीननाभिहैं औरयहीसातघोड़ोंसे युक्तहोकरशीतको आदिलेकर तीनोंऋतु रूपप्रकारोंको प्राप्तकराताहै २३ बड़ेतेजस्वी सर्वव्यापी सर्वोत्तम अकेले श्रीकृष्णजीही लोकोंको धारणकरतेहैं हे युधिष्ठिर उससबके कर्त्ता अंधकारके नाशक सूर्य्यरूपबीर श्रीकृष्णजीको तुम सदैवप्राप्तकरो २४ वहीमहात्मा प्रभु अग्निरूप होकर एकसमय खांडवनाम सूखेबनमें बर्त्तमानहोकर अच्छेप्रकारसे तृप्त हुआ यह सर्वव्यापीईश्वर राक्षस और उरगोंको बिजयकरके सबको अग्निमें हवनकरताहै २५ इसीने श्वेतघोड़े अर्जुनकोदिये इसीने अन्यसब घोड़ोंकोउत्पन्नकिया यही उसरथका जोड़नेवालाहै जिसके सतोगुण रजोगुण और तमोगुण रूपतीन चक्रहैं वह त्रिवृत्तिशिराहै अर्थात् उत्तम मध्यम और निकृष्ट गतियोंका फलहै जिसके काल प्रारब्ध ईश्वर की इच्छा और निजसंकल्पनामचारोंघोड़ेहैं और श्वेत कृष्ण

धूम्र वर्णवाले होकर कर्मरूपगर्भोंको रखनेवाले हैं २६ उसबड़े तेजस्वी अग्निकेसमान प्रकाशमान इन्द्रियोंके स्वामी पंचतत्त्वोंके आश्रय स्थान उसपरमात्माने पृथ्वी आकाशऔर स्वर्गकोउत्पन्नकिया इसी ने वन और पर्वतोंको प्रकटकिया २७ मारनेकी इच्छा करनेवाले जिस ईश्वरने दिव्य नदियोंके पार होकर और वज्रके प्रहार करने वालेइन्द्रको पराजयकिया यहीअकेला महाइन्द्ररूप होकर हजारों ऋचाओंके द्वारा इनऋषियोंसे स्तुति कियाजाताहै २८ हे राजा बड़ेतेजस्वीदुर्वासाऋषिको भीघरमें ठहराना इसीकाकामथा दूसरे का नहीं होसक्ताहै इसीएकको पुराणऋषि कहतेहैं यही संसारका कर्त्ता अपने प्रभावोंको प्रकटकरताहै २९ जो अधिदेवता वेदों को जानकर उपदेशकरता है औरजो प्राचीन बिधिसे कर्मों को करता है और वैदिक लौकिक इच्छा में जो फल है वहसब श्रीकृष्णही है इसको प्राप्तकरो ३० सबलोक में श्वेत प्रकाशवाला नक्षत्र तीनों-लोक तीनोंलोकपाल तीनोंअग्नि तीनोंव्याहृती और जितने देव-ताहैं यह सब श्रीकृष्णही हैं ३१ और यही वर्षकाअंतहै यहीऋतु है यहीपक्ष दिन और रात्रिहै यहीसबका निष्ठा है यहीमात्रा मुहूर्त्त लव और क्षणनामसमयहै इस सबके आश्रय को तुम निश्चयकरो ३२ चन्द्रमा सूर्य्य ग्रह नक्षत्र तारागण सबपर्व नक्षत्र योग यह सबउत्तम २ पदार्थइसीबिश्वक् मेंसे उत्पन्नहुयेहैं ३३ एकादश रुद्र द्वादश सूर्य्य दोनों अश्विनीकुमार साध्य गण विश्वेदेवा मरुद्गण प्रजापति देवताओं की माता अदिति और सातों ऋषि यह सब श्रीकृष्णजी से उत्पन्न हुये हैं ३४ यह विश्वरूप वायु होकर सब विश्वको चलायमान करता है और अग्नि रूप होकर सबको भस्म करता है और जलरूप होकर सबको डुबोताहै ब्रह्मा होकर सृष्टिको उत्पन्न करताहै ३५ जो यही जानने के योग्य को उपदेश करताहै और आपही जानने के योग्य है विधि रूपहै और जो करने के योग्य कर्ममें प्रवृत्त होताहै इस चराचर संसार रूप के-शवजीकोही धर्म वेद और पृथ्वी में नियत हुआ निश्चय करो ३६

यह पुरुषोत्तम पूर्वही से परमज्योति रूपहै जिसके प्रकाश से यह बिश्वरूप प्रकाश करताहै पूर्व्व समयमें सबजीवों के उत्पत्ति स्थान इस ईश्वरने जलको उत्पन्न करके सब बसुओंको उत्पन्न किया ३७ सब ऋतु नाना प्रकार की अद्भुतता, उत्पात, बादल, बिजली, ऐरावत आदि सब जड़ चैतन्यजीवोंको श्रीकृष्णहीसे उत्पन्न हुआ जानो इस विश्वात्माको बिश्व रूपही निश्चय जानो इसको बिश्वका आश्रय स्थान मायाके गुणोंसे रहित सब शरीरों में निवास करने वाला संकर्षण जीव रूप कहतेहैं ३८ इस संकर्षण से प्रद्युम्न और चौथा अहंकार रूप अनिरुद्ध प्रकट हुआ पंचतत्त्वात्मक पांचप्रकार वाले इस बिश्वके उत्पन्न करने का अभिलाषी यह ईश्वर उनतीनों पर प्रेरणा पूर्व्वक आज्ञा देताहै यह परमात्मा अपने प्रकाश का आपही कारणहै ३९ हेराजा इसके पीछे इसने पृथ्वी जल अग्नि बायु और आकाश को उत्पन्न किया उसीने इस स्थावर जंगम संसारको और इस चार प्रकार की सृष्टिको उत्पन्नकरके ४० फिर पांच बीज रखनेवाली पृथ्वी अर्थात् चारोंप्रकारकेजीव और पांचवां उनका कर्म यही पांचवीज हैं और स्वर्गको प्रकट किया यही पृथ्वी पर बहुतसे जलोंको नियत करताहै हेराजा इसीसे यहबिश्व उत्पन्न किया गया है यही अपने आप प्रकट होने वाला अपनी आत्मासे उसको सजीव करताहै ४१ इसके अनन्तर सबजीवोंका स्वामी संसार की उत्पत्ति का अभिलाषी यह ईश्वर विधिके अनुसार देवता, असुर, मनुष्य, ऋषि, पितृ आदि सब सृष्टि और उनके संपूर्ण लोकोंको उत्पन्न करता है ४२ इस सब स्थावर जंगमऔर शुभाशुभको श्रीकृष्णही से उत्पन्न जानो यहां जो बर्त्तमान और जो आगे होगा इस सबको तुम श्रीकृष्ण रूपही जानो ४३ यही धर्मधारी सनातन श्रीकृष्ण प्रलयकालके समय सब जीवमात्र का मृत्यु रूप होताहै और जिसकिसी चमत्कार और अद्भुतताको हम नहीं जानतेहैं उस सबको भी श्रीकृष्णही से हुआ जानो ४४ लोकोंमें जो पवित्र और उत्तमहै अथवा शुभ और अशुभहै वा बुद्धि

सेपरेहै उस सबको केशव रूपही जानो इसके सिवाय जोसिद्धान्त है वह विरुद्ध है ४५ ऐसे श्रीकृष्णजी सब जीवोंके बासी सबसे उत्तम अबिनाशी इस जड़ चैतन्यात्मक संसारके आदिमध्य और अन्तरूप ऐश्वर्य्य चाहनेवालेमनुष्योंके अबिनाशी कर्त्ताहैं ४६ ॥

भीष्मजीबोले ॥

तोमर छन्द ॥

हमविकलहैंअबपर्म । सुनपांडुपुत्र सधर्म ॥
तेहितेनपूंछहुमोहिं । हमकहतसत्यहितोहिं ॥

जयकरीछन्द ॥

ब्राह्मणकीपूजाअभिराम । कीन्हेजोफल मिलतललाम ॥
सोजानतहैं कृष्णअनूप । पूंछो इनसों तुम हेभूप ॥
सबकेकर्त्ता हैं सर्बज्ञ । कृष्णचन्द्र सुनि भूपति प्रज्ञ ॥
भीषमकी सुनिकै यहबात । भूप युधिष्ठिर कुन्तीतात ॥
कृष्णचन्द्रको ऐसे बैन । कहत भये बर प्रज्ञा ऐन ॥
बिप्रनकी पूजामेंजोन । मिलत कृष्णफल कहियेतौन ॥
सुनिये बैन भूपके पर्म । कहत भये श्रीकृष्ण सशर्म ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमहापुरुषमाहात्म्यंनामशतोपरिएको नषष्टितमोऽध्यायः १५९ ॥

एकसौसाठका अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे मधुसूदनजी तुम ब्राह्मण पूजामें जो फलहै उसको वर्णनकरो आपको पितामह जानतेहैं कि आप इसके ज्ञाता हैं १ बासुदेवजी बोले कि हे भरतर्षभ कौरवों में बड़े साधू राजा युधिष्ठिर तुम बड़ी सावधानीसे ब्राह्मणोंके मूल सहित गुणोंकोमुझ से सुनो २ हे कुरुनन्दन पूर्व्व समयमें ब्राह्मणोंपर क्रोधयुक्त प्रद्युम्नने मुझ द्वारकामें बैठेहुये से यह प्रश्न किया३ कि हे मधुसूदनजी ब्राह्मणोंकी पूजामें क्याफलहै उनको ईश्वरता इसलोक और परलोकमें कहांसेहै ४ हे मानके देनेवाले ब्राह्मणोंके सदैव पूजन करनेमें

क्या फलहै मुझको इसमें बड़ा संदेहहै इससे आप इनके सब वृ-
त्तान्तको मुझसे कहिये ५ श्रीकृष्ण बोले हेराजा प्रद्युम्नके बचन
सुनकर जो मैंने उसका उत्तरदिया उसको तुम सावधानीसे सुनो ६
मैंने कहा कि हेप्रद्युम्न ब्राह्मणोंके पूजनकाजो फलहै उसको सुनो
कि यह ब्राह्मण चन्द्रमाको राजा रखनेवाले और सुख दुःखकेस्वा-
मीहैं ७ हे पुत्र प्रद्युम्न इस लोकऔर परलोकदोनोंमें ब्राह्मणको
प्रधान रखनेवाला कल्याणयुक्तहै इसको निस्संदेह तुम समझो ८
ब्राह्मणकी पूजासे आयु यश कीर्त्ति और पराक्रम प्राप्तहोताहै लोक
और लोकोंके ईश्वरभी ब्राह्मणोंके पूजनकरनेवालेहैं ९ वहब्राह्मण
हमारी ओर से धर्म अर्थ काम मोक्ष लक्ष्मी रोग शान्ति और देव
पितरोंके पूजनमें प्रसन्न करनेकेयोग्यहैं १० हेपुत्र मैं इस ब्राह्मणों
के पूजनको कैसे नहीं मानूं क्योंकि मैं ईश्वरहूं हे महाबाहो तुम
ब्राह्मणोंपर कभी क्रोधमतकरो ११ ब्राह्मणही इसलोक और पर-
लोकमें बड़ेतेजरूपहैं सब वृत्तान्तोंके पारदर्शी वहब्राह्मणजो कदा-
चित् क्रोध रूपहों तो इस संसारको भस्म करसक्तेहैं १२ अन्य २
लोकों को भी लोकपालों समेत उत्पन्न करसक्ते हैं अच्छे तेजस्वी
पुरुष ज्ञानसे उनके साथ कैसे नहीं अच्छे बर्त्ताव करेंगे १३ अर्थात्
उनके साथ अवश्य अच्छाही वर्त्ताव करना उचित है हेतात मेरे
घरमें एक हरि पिंगल वर्ण ब्राह्मण आकर ठहरा जोकि चीर बस्त्र
और बिल्वपत्रकी यष्टीधारणकिये बड़ी २ डाढ़ी मूंछसे युक्त अत्यन्त
कृश शरीरवाला था १४ और पृथ्वीके मनुष्यों के प्रमाणसे उंचाई
मेंबहुत ऊंचाथावह दिव्यलोक और दिव्य पुरुषों के चतुष्पथ और
सभाओंके बीच इसकथाको गाताहुआ स्वेच्छाचारी होकर बिचर-
ताथा कि कौन पुरुष ऐसेदुर्वासा ब्राह्मणको सत्कारकरके घरमेंठह-
रासक्ताहै जोकि जीवों के थोड़ेसे भी अपराध होजानेपर क्रोध युक्त
होताहै इस मेरी बातको सुनकर कौन निवास स्थानदेगा १५। १६
जोकोई मुझकोघरमें ठहरावे वहमुझको क्रोधनदिलावे और जोकिसी
का तिरस्कार नहीं करताहै मैं उसकेही घर में निवास करूंगा वह

अकेला एकही हज़ारों मनुष्योंके अन्नको खाताहै १७ एक समय थोड़ा खाताहै और निकलकर फिर घरमें नहीं आता है अकस्मात् रोताहै उसी प्रकार अकस्मात् हंसताहै १८ उस समय पृथ्वीपर उसकी समान अवस्थामें कोई नहींथा वह उत्तम स्थानको पाकर ठहरा और विस्तर समेत उत्तम शय्या और अलंकृत कन्याओंको भस्म करके फिर वहांसे गुप्तहोगया इसके पीछे उस तेजव्रत मुनिने फिर मुझसे कहा १९ । २० कि हे श्रीकृष्ण मैं खीरखाना चाहता हूं उसके चित्तकी जानतेवाले मैंने प्रथमही रसोई के लोगों को आज्ञादी थी कि २१ सब खानेपीनेकी वस्तु यहां अच्छीरीतिसे तय्यार हों २२ इसके पीछे मैंने गरम २ खीर उसको दी उसने शीघ्रही उसकोखाकर यह बचन कहा कि २३ हे श्रीकृष्णजी तुम शीघ्रही खीर से अपने अंगों को लिप्तकरो तब मैंने किसी बात के विचार किये विना वैसेही किया २४ अर्थात् उस उच्छिष्ट खीर से अपने शिर और अंगोंको मर्द्दनकिया तब उसमें बड़ी शुभ मुखी तुम्हारी माता को भी सन्मुख देखा २५ और देखतेही उसको भी खीर से लिप्तकिया और उसी खीरसे लिप्त शरीरवाली रुक्मिणी को उस मुनिने शीघ्रही एकरथमें जोता २६ वहअग्नि वर्णतेजस्वी बुद्धिमान् ब्राह्मण रथवान्की समान उस रथपर सवार होकर उसमें घोड़ेकी समान रुक्मिणीको लगाकर मेरे महल से निकला २७ और मेरे देखतेहुयेही उसने उस रुक्मिणीबालाको चाबुकसे घायल कियातब अधैर्य्यतासे उत्पन्न मुझको कुछभी कष्टनहीं हुआ २८ उसी रीतिसे वह ऋषिबड़े राजमार्गमें होकर निकला वहां उसबड़े आश्चर्य्य को देखकर दाशार्हदेशी लोग मनमें महा क्रोधयुक्तहुये २९ वहां कोई २ मनुष्य परस्पर में सन्मुख होकर यह वार्त्तालापकरनेलगे कि ब्राह्मणही सामर्थ्यवान्हैं दूसरा किसी प्रकारसेभी ऐसासामर्थ्य वान्नहीं होसक्ता ३० दूसरा कौन पुरुष इसरथ में सवार होकर जीवता रह सक्ताहै विषैले सर्पके तेजसेभी ब्राह्मणोंका तेज अधिक होताहै ३१ ब्राह्मणके विषैले मुखसे काटेहुये का कोई इलाज नहींहै उसअजेय

के चलानेसे रुक्मिणी मार्गमें गिरपड़ी वहां वह श्रीमान् उसको न सहसका और शीघ्रही प्रेरणाकरी इसके पीछेवह अत्यन्त क्रोधभरे दुर्वासा रथसे उतरकर ३२।३३ पैदलही दक्षिणाको मुखकरके बिषम मार्गमें भागे तबमैंभी उस विषममार्गमें दौड़ने वाले ऋषि के पीछे दौड़ा ३४ और उसीप्रकार खीरसे लिप्तशरीरसेही मैंने कहा कि हे भगवन् आप प्रसन्न हूजिये फिर उसतेजस्वी ब्राह्मणने मुझको देख कर कहा ३५ हे सुन्दर ब्रतमहाबाहो श्रीकृष्ण तुमने स्वभावही से क्रोधको बिजयकिया यहांमैंने बड़ेअपराधको नहींदेखा ३६ हे गो-विन्द मैं तुझपर प्रसन्नहूं जो इच्छाहोय वही अभीष्ट मांगो हे तात मेरीप्रसन्नताके फलको तुमबिधिके अनुसार देखो ३७ जबतकखाने पीनेकी वस्तुमें देवता और मनुष्योंकी प्रीतिहोगी तबतक उसीअन्न के समान तुझमेंभी मनुष्योंकी प्रीतिहोगी ३८ जबतक पवित्रलोकों में तेरीकीर्त्ति रहैगी तबतक तीनोंलोकों में प्रतिष्ठाको पावेगा ३९ हे जनार्द्दन तू सबसृष्टिमात्रका प्रियतम होगा जो तेरासमानतोड़ा वा भस्मकिया अथवा नाशकिया उससबको वैसाही किन्तु उस से भी उत्तम देखेगा हेमधुसूदन जनार्द्दन जहांतक यहखीरतेरे अंगों में मलीगई ४०।४१ वहांतक तुझको मृत्युका भयनहींहोगा जबतक जीवता रहना चाहताहै हेधर्मसे भ्रष्ट न होनेवालेपुत्र तुमने इसखीर कोपैर में किसहेतुसे नहींमली ४२ यह तैंने मेरा अप्रिय किया है जबउस प्रसन्न ब्राह्मणने मुझसे यह कहा तब मैंने अपने शरीरको वड़ी शोभा से युक्त देखा ४३ फिर प्रसन्नचित्तने रुक्मिणीजीसे भी यहवचन कहा कि हे शोभामान् तू सबस्त्रियों में उत्तम कीर्त्ति को अच्छी रीतिसे प्राप्त करेगी ४४ हे भामिनी तुझ को वृद्धावस्था रोग और शरीरकी अप्रभा बिजय नहीं करेगी तेरे शरीर में पवित्र सुगन्धियां उत्पन्न होंगी और श्रीकृष्णका पूजन और सेवन अच्छी रीतिसे करेगी ४५ तू श्रीकृष्ण की सोलह हजार स्त्रियों में श्रेष्ठ हो-कर उनकी सालोक्यता प्राप्त करनेवाली होगी ४६ तेरी मातासे यह वचन कहकर फिर उस चलनेवाले अग्निके समान तेजस्वी ने

मुझसे कहा ४७ हे केशव ब्राह्मणोंमें तेरी ऐसीही बुद्धिहोय हे पुत्र ऐसा कहकर वह ब्राह्मण उसी स्थान में अन्तर्द्धान होगया ४८ हे समर्थ मैंने उस के अन्तर्द्धान होने पर उपांशुव्रत किया कि जो ब्राह्मण आज्ञा दे उस सबको करूंगा ४९ हे पुत्र मैं तेरी माता समेत इस व्रतको करके अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक अपने घर में आया ५० और घरमें आतेही उस सबको जो कि ब्राह्मण ने तोड़ा और भस्मकर दियाथा नवीन देखा ५१ हे प्रद्युम्न उस सब टूटे और भस्मीभूत सामान को नवीनदेखकर मैंने बड़ाआश्चर्य किया और सदैव चित्तसे ब्राह्मणोंको पूजनकिया५२ हेभरतर्षभतबमैंने प्रद्युम्न के पूछनेपर उत्तम ब्राह्मणके सब माहात्म्यको वर्णन किया ५३ हे समर्थ युधिष्ठिर इसीप्रकार तुमभी वचन और दानसेसदैव प्रतिदिन पूजनकरो ५४ इसरीतिसे मैंनेब्राह्मणों को प्रसन्नतासे ही सबफल पाया हेभरतवंशियों में श्रेष्ठजोइसभीष्मने कहावहसबसत्यहै ५५॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेदुर्वासाभिधानामशतोपरिषष्टितमोऽध्यायः १६०॥

एकसौइकसठ का अध्याय॥

युधिष्ठिरबोले हेमधुसूदनजी आपने जोदुर्वासाऋषिकी कृपासेविज्ञान प्राप्तकियाहै वहमुझसे आपकहनेको योग्यहो १ हे बुद्धिमानों मेंश्रेष्ठ उसमहात्माके जोनामहैं और माहात्म्यहैं उनसबको मैंमुख्यतासमेत आपसे जाननाचाहताहूं २ वासुदेवजीबोले किहेराजाबहुतप्रच्छा मैंशिवजीको नमस्कार करके तुमसे वहसब वृत्तान्त कहूंगा जैसे२ मैंनेकल्याण और यशकीर्त्ति आदिको पायाहै ३ हेराजा प्रातःकाल उठकर नियम पूर्वक हाथजोड़कर मैं जिस शतरुद्रीको पाठ करताहूं उसको मैं तुझसे कहताहूं ४ हेतात बड़े तेजस्वी ब्रह्माजीने तपस्याकेअंतमें उसको प्रकटकिया और उन शंकरजीने सबस्थावर जंगम सृष्टिको उत्पन्नकिया ५ हेराजा इस त्रिलोकी में महादेवजी से बढ़कर कोई प्रतापी देवता नहीं है वहीशिवजी सब जीवमात्रकी

उत्पत्तिके कारणहैं ६ उसमहात्माके आगेकोई नियतहोनेको उत्साहनहीं करताहै त्रिलोकीमें उसके समानकोई महाप्रतापी तेजस्वी नहींहै ७ युद्ध में शत्रुलोग उस क्रोधयुक्त के शरीरकी सुगन्धिसेही बहुधा अचेत और मृतकहोकर पृथ्वीपर गिरतेहैं और बहुतसेकंपायमान होतेहैं ८ उसका भयकारीशब्द बादलकी गर्जनाकेसमान होताहै उसशब्दको सुनकर युद्धमें देवताओंकाभी हृदय फटजाताहै ९ वहक्रोधयुक्त पिनाक धनुषधारी जिनकोघोररूपनेत्रोंसे देखताहै वहनाशहोजातेहैं अर्थात् उसके क्रोधितहोनेपर गुफामेंभी वर्त्तमान देवता असुर गंधर्व और पन्नगलोग लोक में सुखसे वृद्धिकोनहीं पातेहैं दक्षप्रजापतिके बड़ेविस्तृतयज्ञको १०।११ उसक्रोधयुक्त ने विध्वंस किया वही निर्भयहोकर धनुषसे बाणको त्यागकर बड़े शब्दसे गर्जा १२ उनकीगर्जनासे देवता व्याकुलहोकर सुखशांती आदिके रहित हुये अकस्मात् यज्ञके विध्वंसहोने और शिवजी के क्रोधयुक्त होनेपर १३ उस प्रत्यंचा के शब्द होनेपर सबलोग व्याकुल चित्त हुये अर्थात् देवता और असुर व्याकुल होगये१४ समुद्र व्यथित हुआ पृथ्वीकंपायमान हुई पर्वतचलायमान हुये सबस्वर्ग कंपायमान हुआ १५ अंधेरे से गुप्तहुये सबलोग दिखाई नहीं पड़े और हे भरतवंशी सूर्यसमेत सब नक्षत्रों का प्रकाश नष्ट हुआ १६ अपना और सब जीवोंकाहित चाहनेवाले ऋषि लोगभी अत्यन्त भयभीत हुये इसी हेतुसे उन सबोंने शांति पूर्वक स्वस्तिवाचन किया १७ इसकेपीछे वहरुद्र पराक्रमी शिवजी देवताओं की ओर कोदौड़े और बड़े क्रोधसे भगदेवताके दोनोंनेत्रों को प्रहारोंसे फोड़ डाला १८ औरउसीप्रकार क्रोधयुक्तशिवजीपूषाकी ओरको भीभागे और उसपुरोडास खानेवालेपूषाके दांतों को अपने चरणोंके प्रहार से तोड़डाला १९ इसके पीछे उनकंपायमान देवताओंने शिवजीको प्रणाम किया तबरुद्रजी ने अपने प्रकाशमान तीक्ष्णबाणको फिर धनुषपरचढ़ाया २० तबऋषियों समेत सब देवतारुद्रजीके पराक्रम को देखकर भयभीतहुये फिर उन उत्तम देवताओं ने रुद्रजी को

प्रसन्न किया २१ अर्थात् देवताओंने हाथ जोड़कर शतरुद्रीको जपादेवताओंके इस प्रकार स्तुति करनेसे शिवजी प्रसन्नहुये २२ अर्थात् हेराजा महाभयभीत होकर सबदेवताओंने उनप्रतापीशिव-जी का यज्ञमें बड़ाउत्तमभाग कल्पनासे बिचार करके उनकीशरणली२३फिर वह यज्ञउन शिवजीके प्रसन्न होनेपर बड़ी उत्तमता से पूर्ण हुआऔर यज्ञमें जिनबस्तुओंका विध्वंस होगयाथा उनसबव-स्तुओंको यथावस्थितकिया२४स्वर्गमें पराक्रमी असुरोंके तीनपुरथे पहला लोहेका दूसरा चांदी का तीसरा सोनेका २५ उनके बिजय करनेको इन्द्रदेवता अनेक अपने सब अस्त्रोंके भी द्वारासमर्थ नहीं हुआ तवतो देवतालोगमहापीड़ित होकररुद्रजीको शरणमेंगये २६ और वहां इकट्ठे होकर सबदेवताओंने कहाकिहे रुद्रजी असुरलोग हमलोगोंके सब कर्मोंमें भयकारी हुयेहैं२७हे अभयके देनेवाले शि-वजी आपदैत्योंकासंहारकरो और देवताओंसमेत लोकोंको रक्षाकरो यह बचन सुनकर शिवजीने उनकी प्रार्थनाको अंगीकारकिया और विष्णुको उत्तमवाण २८ अग्निकोभाल और सूर्य्यपुत्र यमराजको पक्ष सब बेदों को धनुष और उत्तम गायत्रीको प्रत्यंचाबनाकर२९ ब्रह्माजीको सारथी करके सब प्रकारकी तैयारी के साथ उसतीन प-क्षऔरतीन भाल रखनेंवाले बाणसे उनपुरोंकोतोड़ा३०हेभरतवंशी वहांरुद्रजीने उससूर्य्यवर्णकालाग्नि के समान तेजस्वी बाणसे तीनों पुरोंसमेत उन असुरोंको भस्मकरदिया ३१ तवउसपांच शिखारख-नेवाले बगलमें वर्त्तमान बालकको देखकर परीक्षा करने की इच्छा से उमादेवीने कहाकि यह कौनहै ३२ उसबालकने निन्दाकरनेवा-ले और वज्रके प्रहार करनेके अभिलाषी इन्द्रको परिघके समान भु-जाको वज्रसमेतरोका ३३ परन्तु प्रजापति समेत सब देवताओं ने उस भुवनेश्वरको नहींजाना अर्थात् उसईश्वरमें सबने मोहको पा-या ३४ इसके पीछे भगवानब्रह्माजीने उसबड़े तेजस्वीको ध्यानकरके जानलियाकि यह श्रेष्ठहै ऐसाजानकर उन उमापतिजीको दंडवतक-री ३५ और सब देवताओंने रुद्र और उमादेवीको प्रसन्न किया

तबइन्द्रकीभुजा पूर्वकेसमान होगई ३६ वही पराक्रमी दुर्बासा नाम ब्राह्मणहोकर बहुत कालतक द्वारकापुरी में आकर मेरेघर नियतरहा ३७ मेरेमहलमें बड़े २ अप्रिय कर्मकिये परन्तु मैंने अपनी उदारतासे उनसब कठिन असह्यबातोंको सहा ३८ वहीरुद्रहै वही शिवहै वहीअग्निहै वहीसबहै वहीसबका बिजय करनेवालाहै वही इन्द्र बायु अश्वनीकुमार बिजली ३६ चन्द्रमा औरवही ईशानहै वहीसूर्य्यहै वहीबरुणहै वहीकालहै वही नाशकरनेवाली मृत्युहै वही यमराज वही दिनरात्रि ४० मास पक्ष ऋतु संध्या औरवही बर्ष की समाप्ति है वहीधाता वही बिधाता वहीविश्वकर्मा वही सर्वज्ञ ४१ वहीनक्षत्र ग्रहदिशा और बिदिशारूपहै वहीअप्रमेयात्मा षड़ैश्वर्य्यका स्वामी बड़ातेजस्वी औरविश्वमूर्त्ति है ४२ वहीएक अर्थात्ब्रह्महै वहीदो अर्थात् सगुणऔर निर्गुणहै वहीबहुत रूपरखनेवाला लाखों किरोड़ों रूपोंका धारणकरनेवालाहै ४३ वह भगवान महादेवऐसाहै कि जिस अबिनाशीकेगुण सैकड़ों बर्षमें भी कहने संभवनहीं होसक्ते ४४ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेईश्वरप्रशंसानामशतोपरिएकषष्ठितमोऽध्यायः १६१ ॥

एकसौबासठका अध्याय ॥

बासुदेवजी बोलेकि हे महाबाहु युधिष्ठिर उस अनेकरूप और नाम रखनेवाले महात्मा रुद्रजीके माहात्म्यको मुझसेसुनो १ उस महादेवजीकोही अग्नि कहतेहैं इसीप्रकार स्थाणुमहेश्वर एकनेत्र त्रिनेत्र बिश्वरूप औरशिव कहतेहैं वेदज्ञब्राह्मणोंने उसके दो शरीर बर्णनकिये हैं २ एकघोर दूसराशिव फिर वह दोनों शरीर बहुत प्रकारकेहैं इसकेजो उग्रऔर घोरशरीरहैं वहीतो अग्निबिजली और सूर्य्य हैं ३ उसकेजो शिवासौम्यानाम शरीरहै वही धर्मजल और चन्द्रमाहैं उसका आधाआत्मा अग्निहै उसीको अर्धचन्द्रभी कहते हैं ४ इसकाजो एकशरीर शिवाहै वह ब्रह्मचर्य्यको करताहै इसीप्र-

कार उसकी घोरमूर्त्ति जगतका नाशकरतीहै ५ ईश्वर और सबका वृद्धहोनेसे महेश्वर कहाजाताहै जोकि सबका नाशकरताहै और तेजवान उग्ररूप प्रतापवान ६ होकर मान्स रुधिर औरमज्जाको भक्षणकरताहै इनकारणोंसे वहीरुद्रभी कहाजाताहै और जोकि देवताओंमें बड़ाहै और उसकादेशभी बड़ाहै ७ औरजिस हेतुसे इसबड़े विश्वको धारणकरताहै इसीहेतुसे महादेव कहाजाताहै और जिस निमित्तसे उसकारूप धूम्रवर्णहै इसीहेतुसेवह धूर्जटिकहाजाताहै ८ औरजिस निमित्तसे वह मनुष्योंके कल्याणोंको चाहताहुआ सदैव सवलोगोंको सवकर्मोंसे पवित्रकरताहै इसीहेतुसे शिव कहाजाता है९औरजिस निमित्तसे ऊंचानियतहोकर मनुष्योंके प्राणोंको हरता हुआ नियतहै औरसदैव नियतलिंग अर्थात् ब्रह्मचारीहै इस हेतुसे स्थाणुनामविख्यातहुआ१०जिसनिमित्त उसका बहुतप्रकारकारूप भूत वर्त्तमानरूप स्थावर और जंगम जगतहुआ है उसकारणसे भवरूप कहाजाताहै और जिसहेतुसे विश्वेदेवाउसके शरीरवर्त्तीहैं इसीसे विश्वरूप कहागया ११ हजार नेत्रवाला वा सहस्राक्ष अथवा सब ओर को नेत्रों से देखनेवाला है उसके नेत्रसेही तेज उत्पन्न हुआ जिसके नेत्रोंका अन्तनहीं है १२ जिस हेतुसे वह सब दशाओं में पशुकी रक्षाकरता है और उनके साथ में रमताहै वा उन्हीं का स्वामी है उसहेतु से पशुपति कहाजाता है १३ जिस निमित्त कि सदैव के ब्रह्मचर्य्य से इसका लिंगनियत है और लोक उसका पूजन करते हैं और यह पूजन उस महात्मा को प्रियतर है १४ जो पुरुष इस महात्मा के लिंगस्वरूप को भी पूजन करताहै वह सदैव लिंगका पूजन करनेवाला बड़ी लक्ष्मी को भोगता है १५ ऋषिदेवता गन्धर्व्व और अप्सराओंने भी उसऊंचे १६ नियत लिंगकोपूजाहै इसीसे उसके पूजन करनेसे वह महेश्वरजी प्रसन्नहोते हैं वह भक्तोंकाप्यारा प्रसन्न चित्तहोकर सुखको देताहै १७ वही देवता नाशको करताहुआ श्मशानों में निवास करताहै जो मनुष्य वीरस्थानके सेवनकरनेवाले हैं वह

ों उनका पूजन करतेहैं १८ वही इस लोकमें शरीर वर्त्तीहोकर
षयों में प्रवृत्तहोकर मृत्युहै वही जीवोंके शरीरमें प्राण अपान
मवायुहै १९ उसके घोर और प्रकाशमान रूप असंख्यहैं लोकमें
ाके जिन २ रूपोंको पूजतेहैं उन रूपोंको वेदपाठी ब्राह्मणोंने जा-
है २० इसकी महानता ईश्वरता और कर्मोंसे इसके अनेक सा-
क नाम देवता लोग कहतेहैं २१ वेदपाठीब्राह्मणोंने वेदमेंइसकी
ारुद्रीको जानाहै और व्यासजीनेभी जो इसमहात्माका उपस्था-
बर्णन कियाहै उसको भी जाना २२ वह सब लोकोंका दाताहै
र महान् बिश्वरूप कहाजाता है ऋषिलोग और अन्य ब्राह्मण
ग इसको सबसे ज्येष्ठबर्णन करतेहैं २३ इस देवताओंके आदि
ाने मुखसे अग्निको उत्पन्न किया यह बहुत प्रकारके ग्रहोंसे ग्र-
तकिये हुये प्राणोंको भी निकालता है यह पवित्रात्मा रक्षाका
श्रय महेश्वर शरणागतोंको त्यागनहीं करताहै यही ईश्वरआयु
नीरोगता ऐश्वर्य्य और अनेक बड़ेबड़े २४।२५ अभीष्ट मनुष्योंको
ाहै और फिर लौटाभी लेताहै और इन्द्रादिक देवताओंमें भी
ीका ऐश्वर्य्य कहाजाताहै २६ यही तीनों लोक के शुभाशुभ का
रण है अर्थात् शुभाशुभ कर्मोंका फल देनेवाला है फिर काम-
ओंका ईश्वर होनेसे सबका ईश्वर कहाजाता है २७ यही लोकों
महेश्वर है और बड़े २ देवताओंकाभी ईश्वर है इसीने अनेक
कार केरूपोंसे इस बिश्व संसारको व्याप्त किया है २८ समुद्र में
वड़वानल नाम अग्निहै वह इस देवताका मुखहै २९॥

तिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेमहेश्वरमाहात्म्यंनामद्वाषष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः १६२

एकसौतिरसठका अध्याय॥

वैशंपायन बोले कि देवकी नन्दन श्रीकृष्णजी के इस वचनके
हने पर फिर युधिष्ठिर ने भीष्मपितामहसे प्रश्नकिया १ कि हे
व धर्मधारियों में श्रेष्ठ बड़े बुद्धिमान पितामह निर्णय अर्थात्

ठीक निश्चय अथवा प्रत्यक्ष आगम अर्थात् निश्चय ज्ञान इन दोनोंमें धर्मका कारण कौन है २ भीष्मजी बोले कि हे ज्ञानी इसमें मेरे मतसे किसीप्रकार का सन्देह नहीं है यह तुमने मुझसे अच्छा प्रश्न किया है इसको मैं कहताहूं ३ इसमें सन्देह होना तो सहजहै परन्तु उसका निर्णय कठिनहै जिसमें संशय दिखाई देताहै वह बहुत देखागया और सुनागयाहै अपनेको बुद्धिमान माननेवाले तर्कना करनेवाले मनुष्य प्रत्यक्ष कारणको भी देखकर सन्देह करतेहैं कि यह इसप्रकार नहींहै और अपने संशय को सच्चामानतेहैं ४।५ औरजो अपनेको पंडितमाननेवाले मनुष्य हैं वह उसमें निश्चय करलेतेहैं हे भरतवंशी फिर जो तुम एक निषेधहीको कारण मानतेहो और जाननाचाहतेहो कि वह क्या है ६ तो सुनोकि उस मनुष्यसेभी उसका देखना बहुतकाल में संभव होसक्ताहै जोकि योगाभ्यासी निरालस्य बहुतप्रकार को प्राणयात्रा का विचारकरनेवाला होकर ७ उसमें आप प्रवृत्तहोय न कि दूसरे मनुष्यसे वृत्तान्तकेअन्तको पाकर उत्तम ज्ञान ८ और संपूर्णसंसार की बड़ी ज्योति प्राप्त होतीहै हेराजासिद्धान्त और वृत्तान्त दोनोंही से उसका प्राप्त करना होसक्ता है जोबात पकड़ने और बंधनमेंनहीं आसक्तीहै उसके कहनेको कभी उत्साहनकरे ९ युधिष्ठिर बोलेकि लोककी सिद्धी प्रत्यक्षहै और शास्त्रको आगे रखनेवाला लोकहैश्रेष्ठ लोगोंका आचार बहुत प्रकारकाहै हे पितामह उसको मुझसे कहो १० भीष्मजी बोले कि बलवान और दुर्बुद्धी लोगोंसे नाश रूप धर्म का स्थापन युक्ति पूर्वकही करना योग्य है क्योंकि उस धर्मकेस्थापनको कालनष्ट करदेताहै ११ हे युधिष्ठिरजैसेकि तृणोंसे आच्छादित कूप होताहै उसीप्रकार अधर्म भी धर्मसे युक्त होता है तब वह सदाचार उन अधर्मियों से विनाश को पाता है उसको मुझसे अच्छीतरहसे सुनो १२ जो सदाचारसे रहित वेदके त्यागी धर्म के शत्रुरूप निर्बुद्धी मनुष्य आचारको भ्रष्ट करतेहैं उन्हीं लोगों में ऐसा संशय कहागयाहै १३ साधुओंके मध्यमें जो शास्त्र विधिवाले

सदैव अति काङ्क्षवान होकर भी अत्यन्त तृप्त हैं उन की उपासना करके उनसे पूछो क्योंकि वही श्रेष्ठ पुरुष प्रमाणहैं जो पुरुषलोभ मोहके अनुसार कर्मोंका करनेवाला काम और अर्थको त्यागकरके धर्मको अच्छीरीति से जानताहै उसकी उपासना करो और उसी से पूछो १४।१५ उन लोगोंका वेदपाठ यज्ञ व्रत अथवा जप नाम कर्म बिनाशको नहींपाताहै आचार कारण प्रत्यक्ष यह तीनों मिल कर यज्ञ धर्म कहाजाता है १६ युधिष्ठिर बोले कि फिरभी मुझ अथाह समुद्रके अपारदर्शीकीबुद्धि सन्देहोंसेमोहकोप्राप्तहोतीहै १७ वेद प्रत्यक्षआचार जो यह तीनोंप्रमाण हैं और उनकी पृथकताभी पाईजातीहै फिरयह तीनों किसप्रकार एक धर्मरूप होसक्तेहैं १८ भीष्मजी बोले कि हे राजा बलवान और दुर्बुद्धी मनुष्योंसे बिनाश किये हुये धर्मको जो तुम ऐसा बिचारते हो कि उस धर्मका बिचार तीन प्रकारकाहै १९ तो यह जानो कि तीनप्रकारसे धर्मका धारण करना एकहीधर्महै इनतीनोंकी पृथकता मानना मेरामतनहींहै २० तीनोंका जैसा २ मार्ग वर्णन किया है उसको उसीप्रकार अभ्यास करो तर्कसे धर्म को परीक्षा करना उचित नहीं है २१ हे भरतर्षभ इस धर्ममें तुझको कभी सन्देहन करनाचाहिये अज्ञान और अंधके समान होकर वेदके बचनों में सन्देह न करनेवाला होकर मैं जो २ कर्म अब तुम से कहताहूं उनको मतकरना २२ हे ब्रह्मज्ञानी युधिष्ठिर अहिंसा सत्यबोलना क्रोधसेबर्जित और दान करना इन चारोंकाहो अभ्यासकरो यही प्राचीनधर्महै २३ बापदादोंके योग्य जो प्रसिद्धरीति ब्राह्मणों के लियेउचितहै उसीको करो हेमहाबाहो यह ब्राह्मण धर्म का उपदेश करनेवाले हैं २४ जो अज्ञानी मनुष्य प्रमाणको अप्रमाण करताहै वह प्रमाणता के योग्य नहीं है किन्तु वादीहै २५ सत्कार पूर्वक श्रेष्ठपूजनोंसे ब्राह्मणोंकाभी सेवनकर उनको ऐसाजानो कि इन्हींमें सब लोकनियतहैं २६ युधिष्ठिरबोले कि जो लोग धर्मको दोषलगातेहैं और इस धर्मको काममें लातेहैं ऐसे प्रकारके लोगकहांजातेहैं उनका वृत्तान्त आप वर्णन कीजि-

ये २७ भीष्मजी बोले रजोगुण तमोगुणसेढकेचित्त और धर्मकोदोष लगानेवाले मनुष्य नरकको जातेहैं २८ हेमहाराज सत्य और सत्य आचरणोंमें प्रवृत्त जो सन्तलोग सदैव धर्मका अभ्यास करतेहैं वह स्वर्गभोगीहैं २९ गुरूकी उपासनासे धर्महीउनकी गति रूप होताहै जो धर्मको अभ्यास करतेहैं वह देवलोककोपातेहैं ३० लोभक्रोधसे रहित धर्मके करनेवाले मनुष्य अथवा देवताकेअर्थ शरीर को कष्टदेकर सुखपूर्व्वक वृद्धिको पातेहैं ३१ हे पुत्र ज्ञानी ब्राह्मण लोगोंने धर्मकोही श्रेष्ठकहाहै वहलोग धर्मसेही ईश्वरकी ऐसेउपासना करते हैं जैसे कि फल भोजन करनेवाले मनुष्य चित्तसे पक्केफलको सेवन करतेहैं ३२ युधिष्ठिर बोले कि नीच मनुष्यों का मनकैसाहै साधु क्याकरतेहैं और सन्तवा असन्तोंकाक्यालक्षण है इस सब वृत्तान्तको आपमुझसे कहिये ३३ भीष्मजीबोले कि असाधुलोग दुष्कर्म्मी निर्भय और अप्रियमुख होते हैं और साधुलोग प्रसन्न मनहोतेहैं यहीउनका शुभ लक्षणहै ३४ हे राजेन्द्रधर्मात्मा मनुष्य राजमार्ग गोशाला और अनाज आदिमें मूत्र विष्ठा को नहीं डालतेहैं ३५ साधु लोग देवता पितृ भूत अतिथि और कुटुम्ब को भोजन देकर शेषवचेहुये को आप भोजन करते हैं भोजन करते में वार्त्तालाप नहीं करते और जलसे भीजेहुये हाथ पैरों से नहीं सोतेहैं ३६।३७ जोमनुष्य अग्नि बैल देवता गोशाला चौराहा और धर्मात्मा वृद्ध ब्राह्मणों को दक्षिणावर्त्ती करते हैं और जोवृद्ध भाराक्रांत स्त्री ग्रामस्वामी सर्प ब्राह्मण गौ और राजाकोमार्ग देतेहैं वह साधुहैं ३८ उसीप्रकार शिष्टाचार आदर और सत्कार करनेवाला मनुष्य अतिथि दास कुटुम्बी और शरणकी इच्छा रखनेवाले इत्यादि सबप्रकार के मनुष्योंका स्वागत पूछनेवाला और रक्षक होता है ३९ और प्रातःकाल सायंकालके समय देवनिर्मित भोजन को देताहै यह दोनोंसमयके भोजन व्रतकी विधिहै ४० जैसेकि अग्नि देवताहोमके समय मुहूर्त्त बाटदेखताहै उसीप्रकार स्त्रीभी ऋतुकाल की बाटदेखा करतीहै ४१ जो पुरुषदूसरेकीस्त्रीसेसंयोग और भोग

नहीं करताहै उसको ब्रह्मचर्य्य ब्रतवाला कहते हैं अमृत गौ और ब्राह्मण यहतीनों समानहैं ४२ इसीहेतुसे सदैव गौ औरब्राह्मणका बुद्धिके अनुसार पूजनकरे और यजुर्बेदकी ऋचाओंसे संस्कारकिये हुयेमांस खानेमें दोषनहीं होताहै४३अपने देश वा परदेशमें अतिथिको क्षुधित न रक्खे बेदपाठ नाम कर्मको सफल करके गुरूको दक्षिणा देनाउचितहै ४४ दण्डवत् और पूजन करके गुरूको आसनदेना योग्यहै गुरूके पूजन करनेसे शरीरकी आयुको और लक्ष्मीको प्राप्त करके शरीरकी शोभाकोपातेहैं ४५ वृद्धलोगोंकी सदैवप्रतिष्ठा करना योग्यहैकभी उनको कामके पूरे करने के लिये खड़े होनेपरआपनबैठे इन सबरीतोंसे मनुष्यकीआयुनष्टनहींहोतीहै ४६ जो मनुष्य नंगीस्त्री और नंगे पुरुषको कभीनहीं देखताहै वह भोजन और स्त्रीकेसंभोगको भी सदैवगुप्तकरे ४७ तीर्थोंके गुरूतीर्थहीहैं पबित्रबस्तुओंमें हृदयपबित्रहै शास्त्रोंमें उत्तम ज्ञानहै सन्तोष उत्तम सुखहै ४८ प्रातःकाल सायंकाल के समय वृद्धों के वचनोंको सुने मनुष्य सदैव वृद्धों की सेवासे शास्त्रके ज्ञानको पाता है ४९ बेदपाठ और भोजनमें दाहिनेहाथको ऊंचारक्खे औरअपने मनबाणी और इन्द्रियोंको सदैव अपने स्वाधीन रक्खे ५० संस्कार की हुई पायस अर्थात् खीर यवागूकृषर नाम हव्य और पितृदेवताओंका अष्टिकाश्राद्ध और खीर आदिसे ग्रहोंका पूजन यह नित्यकर्महै ५१ हजामत बनवानेमें मंगलबचन छींक लेनेवालोंको आशीर्बादात्मकदीर्घायुहोने का बचन कहना और रोगियोंको पूर्णायुकेहोनेका आशीर्बाद देकर प्रसन्नकरना सब मनुष्योंको उचितहै ५२ आपत्तिमें पड़ाहुआभी कभी वृद्धमनुष्यकोतूका शब्दनकहे तू शब्द का कहना और मारडालना यह दोनों बुद्धिमानोंकी बुद्धिसे समान हैं ५३ अन्यबराबरकी अवस्थावाले और शिष्य लोगोंको भी शुभ आशीर्वाद देनायोग्यहै पापकरनेवाले मनुष्यकाहृदय सदैव पापकोहीकहताहै ५४ असाधुलोग जानबूझकर कियेहुये कर्मको गुप्तकरते हैं वृद्धलोगोंमें गुप्त करनेवाले वह पुरुष सबके देखते हुयेही नाश

कोपातेहैं ५५ मुझको न कोई मनुष्य देखते न कोई देवता देखते हैं यह विचार करके पापोंसे ढकाहुआ पापी मनुष्य पापकेही सन्मुख ऐसेवर्त्तमान होताहै५६ जैसेकि व्याजका खानेवाला मनुष्य दिन के भेदोंके समय में व्याजकी प्रतीक्षा करताहै और धर्मसे ढकाहुआ पाप धर्मकोही वृद्धिकरताहै५७जैसेकि जलमें डूबाहुआ निमकगुप्त होजाताहै उसी प्रकार प्रायश्चित्तसे ताड़ित वा घायल पापभीशीघ्र नाशहोजाताहै ५८ इसीहेतुसे पापको गुप्तनकरे क्योंकि गुप्तकिया हुआ पापवड़ी वृद्धिको पाताहै मनुष्यको पापकरके साधुओंके मध्य में कहनायोग्यहै क्योंकि साधुलोग पापको दूर करतेहैं ५९ आ- शा करके इकट्ठाकिया हुआ धन समय परही भोगाजाताहै उसश- रीरधारीके मरने पर उसके संचितधनको अन्यलोगही प्राप्त करते हैं ६० ज्ञानी मनुष्योंने सबजीवोंका धर्म मानसीही कहाहै इसी कारण सब जीव धर्म में नियत होते हैं ६१ अकेला धर्म को करे कभी अपने धर्म को प्रकट न करे जो धर्म कोही भोगते हैं वह धर्म का व्योपार करने वाले हैं ६२ देवता का पूजन दंभ अर्थात् पाषंड से रहित होकर करे और गुरुओं का पूजन और सेवन निश्छलतासे करे परलोक में आनन्द देने वाले धनको इकट्ठा करे और पात्रही कोदान देना योग्य है ६३॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशतोपरित्रिषष्टितमोऽध्यायः १६३॥

एकसौचौंसठका अध्याय॥

युधिष्ठिर बोले कि अत्यन्त पराक्रमी पुरुष भी बिना प्रारब्धके धनको नहीं पाताहै और अत्यन्त दुर्बल अज्ञान मनुष्य भी प्रारब्ध- वान् होनेसे धन आदि मनोरथों को पाताहै १ बड़े उपाय के करने परभी समयके आये विना कुछ भी नहीं प्राप्त कर सक्ताहै जबला- भका समय आताहै तब विना उद्योग कियेभी बहुतसे धनको पाता है २ सैकड़ों मनुष्य ऐसे देखनेमें आतेहैं जो अनेक उपाय करनेपर भीफलसे रहितहैं और विना उद्योग के वृद्धि पाने वालेभी बहुतसे

मनुष्य दिखाई देतेहैं ३ जो मनुष्य उपायकरने में समर्थहोय वह सब फलोंको पावे हे भरतर्षभ जो बस्तु मनुष्योंके मिलने के योग्य नहींहै उसको प्राप्त नकरसके ४ ऐसे उपाय करनेवाले मनुष्य भी जोकि सैकड़ों उपायोंसे धन आदिको खोजतेहैं वह निष्फल दिखाई देतेहैं और कोई२ धनादिके नखोजने परभी धनसे सुखी दिखाई देतेहैं ५ मनुष्य नहीं करनेके योग्य कर्मको भी बारंबार करके निर्धन दिखाई देतेहैं और कोई अपने कर्ममें नियत मनुष्य भी धनाढ्य दिखाई देतेहैं ६ कोई नीति शास्त्रोंको पढ़करनीति युक्तनहीं दिखाई देताहै और अनभिज्ञ किस हेतुसे प्रधानता को प्राप्त होताहै ७ बिद्वान् अबिद्वान् धनी और दुर्मति भी मनुष्यहैं जोमनुष्य बिद्याको प्राप्त करके सुखको पावै ८ उस दशामें बिद्वान् मनुष्य जीविकाके निमित्त अबिद्वान् मूर्खकी ऐसे शरणको न लेवे जैसे किमनुष्य जलको पाकर अपनी तृषाको बिजय करताहै ९ इसी प्रकार बिद्यासे भी मनोरथोंका सिद्ध करनेवाला होताहै मनुष्य बिद्याको त्याग न करे सैकड़ों बाणोंसे घायल मनुष्य भी बिनासमयके नहींमरताहै समय के तृणाग्रभागसेभी स्पर्श किया हुआ मृत्युसे नहीं बचसक्ता १० भीष्मजी बोले कि कर्मके प्रारंभका चाहनेवाला मनुष्य धनको नहीं प्राप्तकरे किन्तुकठिनतपस्याको करे क्योंकि बिनाबोया हुआ नहीं उपजताहै ११ दानकरने से भोगी होताहै वृद्धोंकी सेवा करनेसे शास्त्रज्ञ और बुद्धिका स्वामी होताहै ज्ञानी लोग कहतेहैं कि हिंसा नकरनेसे बड़ी अवस्था वाला होताहै १२ इसीसे दानकरे किसीसे याचना नकरेधर्मकेअभ्यासी लोगोंका भी पूजनकरे मधुरभाषीसब का प्रियकर्त्ताशान्त और सब जीवोंकी हिंसासे रहित होय १३ हे युधिष्ठिर जबउत्पत्ति का कारण रूप कर्मडांसकीटऔर चेंटियों तक के सुखदुःखमेंप्रमाणहै तब इसी प्रकार अपना भी सुखदुःख जान करस्थिर चित्तहोना योग्य है १४॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशतोपरिचतुष्षष्टितमोऽध्यायः१६४॥

—*—

एकसौ पैंसठका अध्याय॥

भीष्मजी बोले कि जो शुभाशुभकर्मकिया जाताहै वा दूसरेसे करवाया जाताहै और जो पूराहोने वाला वा न पूराहोने वाला है उन शुभाशुभ कर्म्मोंमें से कियेहुये शुभ कर्मपर तो विश्वास करे और अशुभ कर्म पर नहीं बिश्वास करे अर्थात् यह नहीं जाने कि यह मेरा काम सफल करेगा १ हरसमय में कालही पोषण करता है और कालही दंड देताहै और जीवोंकी बुद्धिमें प्रवेश करके धर्म अधर्म को जारी करताहै २ जब धर्मके फल दर्शन से उसकी बुद्धि धर्म को उत्तम माननें वाली होय तब धर्ममें चित्तलगाने वाला यह पुरुष उसमें विश्वास करे जो स्थिर बुद्धी नहीं है वह धर्म फल में विश्वास नहीं करे ३ जीवोंका यह विश्वास करनाही ज्ञानीहोनेका लक्षणहै करने और नकरने के योग्य कर्मोंका ज्ञाता और काल से संयुक्त मनुष्य योग्य कर्मको भी फलकी इच्छा से रहितकरे ४ जैसेकि ऐश्वर्य्यमान् मनुष्य अपने कल्याण में कर्म कर्त्ता होते हैं परन्तु अपबित्रात्मा नहीं करते, इसीप्रकार धर्मके अभ्यासी लोग इस लोकमें आत्माको आत्मासे पूजतेहैं ५ काल किसी दशामें भी धर्मको अधर्म रूपसे नहीं देखता है इसी हेतुसे धर्मचारी पुरुषको अत्यन्त पवित्रात्मा जाने ६ विस्तार पाने वाला अधर्म इसकालसे रक्षित होकर धर्मके स्पर्शकरने को ऐसे सामर्थ नहीं होसक्ताहै जैसे कि प्रकाशमान प्रज्वलित अग्नि को कोई स्पर्श नहीं करसक्ता ७ यह दोनों धर्मसे करनेकेयोग्यहैं क्योंकि धर्मही संसारमें विजयका देने वालाहै और वही धर्मतीनों लोकोंका भी कारण होताहै ८ कोई २ पुरुष ज्ञानी मनुष्य के सत्संगसे धर्म प्राप्त करसक्ताहै हर एक नहीं प्राप्तकर सक्ताहै क्योंकि संसार के भय दूरकरनेके निमित्त बड़े २ उपदेश किये हुये धर्म के अभ्यासी पंडित लोगभी उसकर्म कोनहीं करतेहैं ९ किसीको यह विश्वासहै किमैं शूद्रहूं चारों आश्रम के धर्मोंके आचरण करने का मुझे अधिकार नहींहै औरकोई साधू

छल से रहित हैं और अपने अधिकारके समान धर्मको करतेहैं १० अब मैं चारों वर्णोंके धर्म को लक्षणों सहित मुख्यता पूर्व्वक वर्णन करताहूं जिसमें पंचतत्त्वोंसे उत्पन्न एकसी आत्मा वाले सब जीवों केलोक धर्म और धर्ममें जो मुख्यता और जैसे कि जीव बनावटके धर्म में एकसी रूपताको प्राप्त करते हैं वह सब उसमें ब्यौरेवार है १२ लौकिक धर्म अध्रुव अर्थात् नाशमान क्योंहैं और अलौकिक धर्म ध्रुव अर्थात् अविनाशी क्योंहैं हेतात जो निष्काम कर्महै उसी में सनातन धर्महै १३ एकसे शरीर और आत्मा वाले सबजीवोंका संकल्प जोकि धर्मसे युक्त होय अर्थात् निष्काम होय उसकाउदय कैसे होताहै उसका यह उत्तरहै कि संकल्पसे शेषबचाहुआ कर्महीं गुरूहै अर्थात् वह धर्मके पराक्रम से आप उदय होताहै १४ ऐसा होने पर धर्मसेवन अर्थात् कर्मके फलके भोगमें जीवोंका दोषनहीं है क्योंकि पशु पक्षीको योनियों में बर्त्तमान जीवोंका धर्महो बड़ा माना गयाहै १५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेशतोपरिपंचषष्ठितमोऽध्यायः १६५ ॥

अथ नाममाला प्रारम्भः ॥

वैशम्पायनउवाच ॥ शरतल्पगतंभीष्मं पांडवोथकुरूद्वह ॥ युधिष्ठिरोहितंप्रेप्सुरपृच्छत्कलमषापहम् १ युधिष्ठिरउवाच ॥ किंश्रेयःपुरुषस्येह किंकुर्वन्सुखमेधते ॥ विपाप्मासभवेत्केन किंवाकलमषनाशनम् २ वैशम्पायनउवाच ॥ तस्मैशुश्रूषमाणाय भूयःशान्तनवस्तदा ॥ दैवंबंशंयथान्यायमाचष्टेपुरुषर्षभ ३ भीष्मउवाच ॥ अयंदैवतवंशोवै ऋषिवंशसमन्वितः ॥ त्रिसंध्यंपठितःपुत्र कलमषापहरःपरः ४ यदन्हाकुरुतेपापमिन्द्रियैःपुरुषश्चरन् ॥ बुद्धिपूर्वमबुद्धिर्वा रात्रौयच्चापिसंध्ययोः ५ मुच्यतेसर्वपापेभ्यः कीर्त्तयन्वैशुचिःसदा ॥ नान्धोनवधिरःकाले कुरुतेस्वस्तिमान्सदा ६ तिर्य्यग्योनिंनगच्छेच्च नरकंसंकराणिच ॥ नचदुःखभयंतस्य मरणेसनमुह्यति ७ देवासुरगुरुर्देवः सर्वभूतनमस्कृतः ॥ अचिन्त्योथाप्यनिर्देश्यः सर्वप्राणोह्ययो

निजः ८ पितामहोजगन्नाथः सावित्रीब्रह्मणःसती ॥ वेदभूरथकर्त्ताच
विष्णुर्नारायणःप्रभुः ९ उमापतिर्विरूपाक्षःस्कन्दःसेनापतिस्तथा ॥
विशाखोहुतभुग्वायु श्चन्द्रसूर्य्यौप्रभाकरौ १० शक्रःशचीपतिर्देवो
यमोधूमोर्णयासह ॥ वरुणःसहगौर्याच सहऋद्ध्याधनेश्वरः ११
सौम्यागौसुरभिर्देवी विश्रवाश्चमहानृषिः ॥ संकल्पःसागरोगंगा
स्तवंत्योथमरुद्‍गणः १२ वालखिल्यास्तपःसिद्धाः कृष्णद्वैपायन
स्तथा ॥ नारदःपर्वतश्चैव बिश्वावसुर्हाहाहूहूः १३ तुंबरुश्चित्र
सेनश्चदेवदूतश्चविश्रुतः ॥ देवकन्यामहाभागा दिव्याश्चाप्सरसां
गणाः १४ उर्वशीमेनकारंभा मिश्रकेशीऽलंबुषा ॥ विश्वाचीचघृता
चीच पंचचूडातिलोत्तमा १५ आदित्यावसवोरुद्राः साश्विनःपितरो
पिच ॥ धर्मश्रुतंतपोदीक्षा व्यवसायःपितामहः १६ शर्वर्योदिवसा
श्चैव मारीचःकश्यपस्तथा ॥ शुक्रोवृहस्पतिर्भौमो बुधोराहुःशनैश्च
रः१७नक्षत्राण्यृतवश्चैव मासाःपक्षासबत्सराः ॥ वैनतेयाः समुद्राश्च
कद्रुजाःपन्नगास्तथा १८ शतद्रुश्चविपाशाचचन्द्रभागासरस्वती ॥
सिन्धुश्चदेविकाचैव प्रभासंपुष्कराणिच १९ गंगामहानदीवेणाका
वेरीनर्मदातथा ॥ कुलंपुनाविशल्याच करतोयांबुवाहिनी २० सरयु
र्गंडकीचैव लोहितश्चमहानदः ॥ ताम्रारुणावेत्रवतीपर्णाशागौतमी
तथा २१ गोदावरीचवेणाच कृष्णावेणातथाद्रिजा ॥ दृषद्वतीच
कावेरीर्वक्षुर्मंदाकिनीतथा २२ प्रयागंचप्रभासंच पुण्यंनैमिषमेवच ॥
तच्चविश्वेश्वरस्थानं यत्रतद्विमलंसरः २३ पुण्यतीर्थेंषुकलिलं कुरु
क्षेत्रंप्रकीर्त्तितम् ॥ सिंधूतमंतपोदानं जंबूमार्गमथापिच २४ हिर
ण्वतीवितस्ताचतथाप्लक्षवतीनदी ॥ वेदास्मृतिर्वेदवती मालवाथाश्व
वत्यपि २५ भूमिभागास्तथापुण्या गंगाद्वारमथापिच ॥ ऋषि
कुल्यास्तथामेध्या नद्यःसिंधुवहस्तथा २६ नदीभीमरथीचैव बाहुदा
चमहानदी ॥ चर्मण्वतीनदीपुण्या कौशिकीयमुनातथा २७ माहेन्द्र
वाणीत्रिदिवा नीलिकाचसरस्वती ॥ नन्दाचापरनन्दाच तथातीर्थ
महाह्रदः २८ गयाथफल्गुतीर्थंच धर्मारण्यंसुरैर्वृतम् ॥ तथादेवनदी
पुण्या सरश्चब्रह्मनिर्मितम् २९ पुण्यंत्रिलोकविख्यातं सर्वपापहरं

शिवम् ॥ हिमवान्पर्वतश्चैव दिव्यौषधिसमन्वितः ३० विन्ध्यो धातुविचित्राङ्गस्तीर्थवानौषधान्वितः ॥ मेरुर्महेन्द्रोमलयः श्वेतश्च रजताद्भुतः ३१ शृङ्गवान्मंदरोनीलो निषदोदर्दुरस्तथा ॥ चित्रकूटो जनाभश्चपर्वतोगन्धमादनः ३२ पुण्यःसोमगिरिश्चैव तथैवान्येमही धराः ॥ दिशाश्चविदिशाश्चैव क्षितिःसर्वेमहीधराः ३३ विश्वेदेवान भश्चैव नक्षत्राणिग्रहास्तथा ॥ पातुनःसततंदेवाः कीर्त्तिताऽकीर्त्तिता मया ३४ कीर्त्तयानोनरोह्येतान्मुच्यतेसर्वकिल्विषैः ॥ स्तुवंश्च प्रतिनंदंश्च मुच्यतेसर्वतोभयात् ३५ सर्वसंकरपापेभ्यो देवतास्तव निन्दकः ॥ देवतानन्तरंविप्रांस्तपसिद्धांस्तपोधिकान् ३६ कीर्त्ति तान्कीर्त्तयिष्यामि सर्वपापप्रमोचनात् ॥ यमक्रीतोथरैभ्यश्चकक्षी वानौषिजस्तथा ३७ भृग्वंगिरास्तथाकण्वो मेधातिथिरथप्रभुः ॥ वर्हीचगुणसंपन्नः प्राचींदिशमपाश्रिताः ३८ भद्रादिशंमहाभागा उल्मुचुःप्रमुचुस्तथा ॥ मुमुचुश्चमहाभागः स्वस्त्यात्रेयश्चवीर्य्य वान् ३९ मित्रावरुणयोःपुत्रस्तथागस्त्यःप्रतापवान् ॥ दृढायुश्चो र्ध्वबाहुश्च विश्रुतावृषिसत्तमौ ४० पश्चिमांदिशमाश्रित्य पराधंते निवोधतान् ॥ उषंगुःसहसोदर्यैःपरिव्याधश्चवीर्य्यवान् ४१ ऋषि र्दीर्घतमाश्चैव गौतमःकाश्यपस्तथा ॥ एकतश्चद्वितश्चैव त्रितश्चैव महानृषिः ४२ अत्रेःपुत्रश्चधर्मात्मा तथासारस्वतःप्रभुः ॥ उत्तरां दिशमाश्रित्यपराधंतेनिवोधतान् ४३ अत्रिर्वशिष्ठःशक्तिश्चपारा शर्य्यश्चवीर्य्यवान् ॥ विश्वामित्रोभरद्वाजोजमदग्निस्तथैवच ४५ ऋचीकपुत्रोरामश्च ऋषिरौद्दालकिस्तथा ॥ श्वेतकेतुःकोहलश्चवि पुलोदेवलस्तथा ४५ देवशर्माचधौम्यश्च हस्तिकाश्यपएवच ॥ लोमशोनाचिकेतश्चलोमहर्षणएवच ४६ ऋषिरुग्रश्रवाश्चैवभार्गव श्च्यवनस्तथा ॥ एषवैसमवायश्च ऋषिदेवसमन्वितः ४७ आद्यः प्रकीर्त्तितोराजन्सर्वपापप्रमोचनः ॥ नृगोथयातिर्नहुषोयदुःपूरुश्च वीर्य्यवान् ४८ धुंधुमारोदिलीपश्चसगरश्चप्रतापवान् ॥ कृशा श्वोयौवनाश्वश्च चित्राश्वःसत्यवांस्तथा ४९ दुःषंतोभरतश्चैव चक्र वर्त्तीमहायशाः ॥ पवनोजनकश्चैवतथादृष्टरथोन्टपः ५० रघुर्नर

वरश्चैवतथादशरथोनृपः॥रामोराक्षसहावीरः शशविन्दुर्भगीरथः५१ हरिश्चन्द्रोमरुत्तश्च तथादृढरथोनृपः ॥ महोदर्योह्यलर्कश्चरोलश्चैव नराधिपः ५२ करंधमोनरश्रेष्ठः कध्मोरश्चनराधिपः ॥ दक्षोंवरीष कुकुरो रैवतश्चमहायशाः५३ कुरुःसंवरणश्चैव मांधातासत्यविक्रमः॥ मुचुकुन्दश्चराजर्षिर्जन्हुर्जान्हविसेवितः ५४ आदिराजःपृथुर्वैन्यो मित्रभानुःप्रियंकरः ॥ त्रसदस्युस्तथाराजा श्वेतोराजर्षिसत्तमः ५५ महाभिषश्चविख्यातो निमिराजातथाष्टकः ॥ आयुःक्षुपश्चराजर्षिः कक्षेयुश्चनराधिपः ५६ प्रतर्दनोदिवोदासः सुदासःकोसलेश्वरः॥ऐ लोनलश्चराजर्षिर्मनुश्चैवप्रजापतिः५७हविध्रश्चपृषध्रश्चप्रतीपःशां तनुस्तथा।अजःप्राचीनवर्हिश्चतथेक्ष्वाकुर्महायशाः ५८ अनरण्योनर पतिर्जानुजंघस्तथैवच॥कक्षसेनश्चराजर्षिर्येचान्येनानुकीर्त्तिताः५९ कल्यमुत्थाययोनित्यं संध्येद्वेस्तमयोदये ॥ पठेच्छुचिरनावृत्तः सधर्म फलभाग्भवेत६०देवादेवर्षयश्चैव स्तुताराजर्षयस्तथा ॥ पुष्टिमायुर्य शःस्वर्गं विधास्यन्तिममेश्वरः ६१ माविघ्नंमाचमेपापंमाचमेपरिपं थिनः ॥ ध्रुवोजयोमेनित्त्यःस्यात्परत्रचशुभागतिः ६२॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेवंशानुकीर्त्तनंनाम शतोपरिषट्पञ्चतमोऽध्यायः १६५॥

एकसौछाछठका अध्याय॥

वैशंपायन बोले कि अपना और दूसरों का हित चाहने वाले कौरव वंशी पांडव युधिष्ठिर ने बाण सय्यापर वर्त्तमान भीष्मजीसे पापोंका नाश करने वाला कर्म पूछा १ युधिष्ठिर बोले कि इसलो- कमें मनुष्य का क्या कल्याणहै किस कर्मके करने से सुख पूर्वक वृद्धि पाताहै और पापोंसे निवृत्त होताहै अथवा कौनसा कर्म पाप का नाशकारकहै २ फिर वैशंपायन कहतेहैं कि हे पुरुषोत्तम तब भीष्मजी ने उस युधिष्ठिरसे न्यायके अनुसार देववंशका बर्णन कि- या ३ भीष्मजी बोले कि हे पुत्र ऋषि वंशसे युक्त इस देव बंश को जोतीनों संध्याओं में पाठकरै वह महा उत्तम होकर अपने पापों को

नाश करताहै यही पाठ अत्यन्त उत्तम और सब प्रकारके पापों का विध्वंस करने वाला है ४ मनुष्य जान कर वा विना जानकर अहर्निश वा दोनों संध्याओं में भी जिस पापकर्मको करता है ५ वह पवित्र होकर सदैव उसका कीर्त्तन करनेसे पापोंसे मुक्तहोताहै जो समय पर करताहै वह अंधा और बहरा नहीं होताहै और सदैव प्रसन्न रहताहै ६ इसके विशेष पशुपक्षी आदि की योनिकोभी नहीं पाताहै न कभी दुःखका भय होताहै और न कभी शरीर त्याग के समय मोह कोपाताहै ॥

भीष्मउवाच रामगीती छन्द ॥

देवतनके ऋषिनकेअरुन्तपनकेबरनाम। कहतहौंमैंतुम्हहिंभूपति परमप्रज्ञाधाम॥ जपैंजिनकोहोतकल्मषदूरिसर्बमहान। भूरिआनंद होतप्रापितधर्मवानसुजान॥ विधाता अरुबिष्णुशङ्कर कार्त्तिकेयस शर्म। विशिखिशिखि आदित्यमारुत चन्द्रसुरपति धर्म॥ सहितगा र्गीबरुण घूमोरणासहयमराय। सहित ऋध्या धनेश्वर अरुबालखि ल्यसचाय॥ सुरभिअरुऋषि बिश्रवाबरमहतप्रज्ञावान।ब्यासनारद तथा पर्ब्बत शुक्रपरम सुजान॥ बृहस्पति बुधराहुकश्यप शनिसुओ नक्षत्र। अश्विनीसुतभौनअरुवसु अष्टपरमपवित्र ॥ तुंवरसुहाहासु हू हूचित्रसेनसुजान। औसुविश्वावसु महामति सुरसुगंध्रबजान॥ देवकन्या अप्सरा रंभादि सुन्दरि पर्म। और बरबहु देवगणहैं मोद मानसधर्म ॥ बिपाशाअरु चन्द्रभागा नदीसिंधुमहानि। नर्मदा सरजू बिशल्या सुरसरीसुखदानि॥ वेत्रवतिअरुगंडिकी ताम्रारुणा अभिराम।कृष्णवेणीतथावेणाभरीजलसोंमाम॥चक्षुऔमंदाकिनीत्यों अद्रिजागम्भीर। तिमिहिलोहित महानदबरतासदोऊतीर॥ नर्मदा कावेरिका बिमलामहाअघहर्णि। देविकाअरुनदीपुण्यापुण्यमयतन कर्णि॥ हिरण्यवति का पुच्छवतिका वेदस्मृतिसुअमन्द। चर्मण्वति-काकौशिकीअरुभरीसलिल बिलंद॥ भीमरथिका वाहुदायमुनासुपा वनरूप। सरस्वतिमाहेन्द्रवानी नीलिकासु अनूप॥ तिमिहिनन्दा फल्गुत्रिदिवा भूमिभागा चारु। ब्रह्मसर अरुमहा ह्रदबरभरोनीरसु

ढारु ॥ तिमिहि नैमिषपरमपुष्कर चारुधर्मारण्य । कलिलअरुकुरु क्षेत्रशिवसर अरुप्रयागसुपुण्य॥ बिन्धअरुहिमवानभूधरमेरुनिषधम हान । गन्धमादन अंचनामसु चित्रकूटसुठान ॥ रजतपर्ब्बतनीलदर्दुरमलयगिरि अभिराम । तिमिहिउन्नत सोमगिरिवरभरो औषधि माम ॥ दिशाबिदिशाभूमि भूरुहलता बृन्दअनूप । कहेतुमसोंतीर्थ यहहम परमपावनभूप ॥ सुऋषिकक्षीवानऔषिजतथारैभ्यसधर्म । अंगिराभृगुकण्वमेधातिथिसुतिमिही पर्म ॥ सुऋषिअरुवरहेंसुगुण सोंभरोपरम सुजान । सुऋषिप्राचीदिशामें ये रहतहैं मतिमान॥ उन्मुचू और प्रमूचुस्वस्त्यत्रेय बीरसुकाय । सुमूचुऔसुअगस्त्य ऊर धवाहुअरुसुद्दढ़ाय ॥ रहतदक्षिण दिशामेंयेसु ऋषि आनंदछाय । रहतभजनानन्दपूर्बक सकलबिघ्नबिहाय ॥ दीर्घतम सुउखंगगौतमत थाकश्यप पर्म । परिव्याधसुतथा एकतद्वित्तत्रित्तसधर्म ॥ सारस्वत औतिमिह सहसौन्दर्य्य ऋषिअभिराम । रहतपश्चिमदिशामेंयेसुऋषिवरबुधिधाम ॥ शक्तिअत्रिबशिष्ठपाराशर्य्य बिश्वामित्र । भरद्वाज सधर्मअरुजमदग्निपरमपवित्र ॥ बिपुलदेवलदेवशर्मा परशुराम सुजान । धौम्यकोहलहस्ति काश्यपच्यवनतेजसवान ॥ तिमिहि लोमसलोमहर्षणनाचिकेतसधर्म । श्वेतकेतुसुतिमिहिउग्रश्रबाभार्गव पर्म ॥ लियेते इनसबनकोअभिरामनामसुजान । जातह्वैसबदूरि कलमषप्रभाहोतिमहान ॥सुनहुअबतुमनृपनकेबरनामवरबुधिधाम । महाकलमष हरणआनंदकरणतेजसधाम ॥ नृपययातिसुनहुषयदु पुरुजनकतिमिहिकृशाश्व ।कोशलेश्वरतथानृपअनरण्यरजचित्राश्व॥ हरिश्चन्द्रनृपालरघुअरुभूपदशरथपर्म । रामराक्षस हरणअरु शशविन्दुमरुतसधर्म॥ भगीरथअरुऐलदृढ़रथमहोदयबलवान । करंधम कुरुमांधाताहुदक्ष सुजान ॥ आदिश्रीमहिपाल पृथुसहधर्म अरु मुचुकुन्द । मित्रभानसुजानऔत्रलदस्युश्वेतनरेन्द्र ॥ महाभिषनिमि आयुक्षुप अरुप्रतर्दनमहिपाल । दिवोदाससुदासशान्तनुअरु प्रतीप विशाल ॥ प्रियंकर प्राचीन वर्हिसुजानुजंघनरेश । कच्छसेनसुतथा वरइक्ष्वाकु भूपसुवेश ॥ प्रातउठिअरुतिमिहि सायंकालमाहीनाम ।

लियेतेइनसबनको अयमिटतअतिही माम ॥ विघ्नकौनहुहोतनहिंऔ धर्म प्रापितहोत । बढ़तआयुसकीर्त्ति तनमें होतपुष्टिउदोत ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेवंशानुकीर्त्तनंनामशतोपरिषट्षष्टितमोऽध्यायः १६६ ॥

एकसौसड़सठका अध्याय ॥

राजाजन्मेजयने प्रश्नकिया कि कौरवोंकेपालन पोषणकरनेवाले शर शय्यापर बर्त्तमान अर्थात् बीर शय्यापर सोनेवाले भीष्मजीके होनेपर और पांडवोंको इकट्ठे होजानेपर १ मेरे बड़े पितामह बड़े बुद्धिमान् युधिष्ठिरने धर्म शास्त्रको सुनकर सब संशयोंसे निवृत्त हो२ दान बिधिको सुनकर धर्म अर्थके सन्देहोंसे रहित होकरजो२ अन्य कर्म किये वह आप मुझसे कहनेको योग्यहैं ३ बैशंपायन बोले कि तदनन्तर उस राजाके मौन होने पर वह सब राजमंडल एक मुहूर्त्त पर्य्यन्त ऐसा निश्चेष्ट हुआ जैसेकि बस्त्र पर खिंचाहुआ चित्र होताहै ४ तब सत्यवतीके पुत्र व्यासजीने एक मुहूर्त्त ध्यान करके उस शयन करनेवाले राजा भीष्मसेयहबचन कहा ५ हेराजा इस कौरवराज युधिष्ठिरने सब भाइयों और सहचारी सहायक राजाओं समेत स्थिर चित्ततापूर्व्वक दृढ़ बिश्वासको पाया ६ यह बुद्धिमान् राजाश्री कृष्णजी समेत आपके पास वर्त्तमानहै आप इसको नगरमें जानेके निमित्त आज्ञादीजिये ७ भगवान्व्यासजीके इस बचनको सुनकर राजा भीष्मजीने युधिष्ठिरऔर उसके मंत्रियों को भी आज्ञादी ८ अर्थात् राजा भीष्मजीने उस युधिष्ठिरसे यह मधुर बचन कहा कि हे राजापुरीमें प्रवेश करो और तेरे चित्तका सब संताप निवृत्त हो ९ हे राजेन्द्र युधिष्ठिर तुम श्रद्धासे युक्त जितेन्द्री होकर राजा ययातिके समान बहुत अन्न और पूर्णदक्षिणा रखनेवाले नाना प्रकारके यज्ञोंसे ईश्वरका पूजनकरो १० हेराजा क्षत्री धर्ममें प्रवृत्त होकर तुम देवता पितरोंको तृप्त करो तुम्हारा

बड़ा कल्याण होगा और हेपुत्र तेरेचित्तका सब संताप दूरहोगा११ सब प्रजाको प्रसन्नकरो और राज्यके कार्य्य कर्त्ता नौकरचाकरोंको पारतोषिक और मधुर भाषणसे प्रसन्नकरो मित्रोंको सत्कारआदि से योग्यताके अनुसार पूजन करो १२ हे तात इष्टमित्र भाई बंधु तेरेसंबंधसेऐसे जीविकाकरें जैसेकि पक्षीगण फलवानवृक्षके चैतन्य स्थानपर वर्त्तमान होकर अपना जीवनकरतेहैं १३ हेराजासूर्य्यके लौटनेसे उत्तरायण होनेपर मेरे शरीर त्यागके समयतुमको आना योग्यहै १४ इस बचनको सुनकर और वहुत प्रमाणकरके पितामह को दण्डवत्कर साथियों समेत राजा युधिष्ठिर हस्तिनापुर को गया १५ अर्थात् धृतराष्ट्र और पतिव्रता गान्धारीको आगेकरके सब ऋषि भाई बान्धव श्रीकृष्ण १६ पुरबासी देशबासी और वृद्ध मंत्रियों समेत राजायुधिष्ठिरने हस्तिनापुरमें प्रवेश किया १७॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेयुधिष्ठिरपुरप्रवेशोनामशतोपरिसप्तषष्टितमोऽध्यायः १६७॥

एकसौअड़सठका अध्याय॥

वैशंपायन वोले कि इसके पीछे राजायुधिष्ठिरने पुरबासी और देशबासियोंको न्यायकेअनुसार पूजकर घरजानेकी आज्ञादी१ उस समय राजा युधिष्ठिरने उन स्त्रियोंको जिनके वीरपति और पुत्रमारे गयेथे वहुत अभीष्ट पदार्थोंके देनेसे प्रसन्न और बिश्वसित किया २ तव वह अभिषेक पानेवाला बड़ा ज्ञानी नरोत्तम राजा युधिष्ठिर राज्यको प्राप्तकर और अच्छे २ बिश्वास पात्र राज्यके कार्य्यकर्त्ता ओंको नियत करके ३ और वड़े २ ज्ञानी वेदज्ञ शास्त्रज्ञ महात्मा ब्राह्मणोंसे आशीर्वाद लेकर ४ पंचाशतरात्रि नगरमें व्यतीत करके भीष्मजीके समय और नियमको स्मरण किया ५ दक्षिणायन से हटकर उत्तरायणमें आनेवाले सूर्य्यको देखकरयाचक और ब्राह्मणोंसे परिवेष्ठित होकर वह राजा युधिष्ठिर हस्तिनापुरसे वाहर

निकला ६ वह कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरघृत फूल माला गन्ध पट वस्त्र चन्दन उत्तम अगर और कालीयक नाम कृष्णचन्दन ७ वृद्धोंके योग्य माला और नाना प्रकारके रत्नोंको भीष्मजीके संस्कारके अर्थ पर्व्वमें भेजकर धृतराष्ट्र यशस्विनी गांधारी माता कुन्ती और पुरुषोत्तम भाइयोंको आगे करके ८।६ बुद्धिमान् विदुर श्रीकृष्णजी युयुत्सु और सात्विकीको साथ लिये बड़े राजभोग और भाई बन्धु इष्ट मित्र नाते रिश्तेदारोंसे युक्त सूतगणोंसे स्तूयमान युधिष्ठिर जिसकेआगे भीष्मजीकी अग्निजातीथी१०।११ उस सब सामानसमेत उस पुरसे बाहर ऐसे निकला जैसे कि देवताओंका स्वामी इन्द्र निकलताहै हे राजऋषि इसके अनन्तरउसने राजा भीष्मपितामह को कुरुक्षेत्रमें १२ पाराशरजीके पुत्र व्यासजी नारद देवल असित १३ और मरनेसे शेषबचेहुये अन्य २ देशोंकेअनेक राजाओंसे व्याप्त और रक्षकोंसे चारोंओरसे रक्षित देखा १४ फिर वहां समीप जाकर वीर शय्यापर शयन करनेवाले भीष्मजीको देखा फिर धर्मराज युधिष्ठिरनेभाइयों समेत रथसे उतरकर १५ और शत्रुविजयी पितामहको प्रणामकरके व्यासादि ऋषिलोगोंको दण्डवतकी और उन सबसे आशीर्बादपाया १६ धर्मसे च्युत न होनेवाले धर्मराज युधिष्ठिरने ब्रह्मरूप ऋत्विज और भाइयों समेत उसभरतर्षभऋषियोंसे व्याप्त बाणशय्यापर नियत भीष्मजीको पाकर १७।१८ फिर उस भाइयों समेत कौरव्यने शयनकरनेवाले गांगेय भीष्मजीसेयह वचन कहा कि हे गांगेय राजाभीष्मजी मैं आपका प्रपौत्रयुधिष्ठिर हूं आपको नमस्कार करताहूं १६ हेमहाबाहो प्रभु जो आप मेरे वचनको सुनते हो तो आज्ञाकरिये कि मैं आपकी कौनसी सेवाकरूं हेराजा मैं समयपर आपकी अग्नियोंको लेकर आयाहूं २० आचार्य्य ऋत्विजब्राह्मणमेरेभाईआपका पुत्र राजा धृतराष्ट्र२१मंत्रियों समेत और पराक्रमी बासुदेवजी आपके सन्मुख वर्त्तमानहैं और मरने से शेष बचे राजालोग और सब कुरु जांगलदेशवाले वर्त्तमानहैं २२ हे नरोत्तम नेत्रोंको अच्छी रीतिसे खोलो और इन सब

को देखो यहां जो कुछ करनेके योग्यहै वह सव मैंने कियाहै २३ आपने जैसा२कहाथा वह सवसमय परही किया बैशंपायनबोले कि बुद्धिमान् युधिष्ठिरके इस प्रकारके बचनोंकोसुनकर भीष्मजीने २४ अपने चारोंओरको वैठेहुये सव भरतबंशियोंको देखा इसके पीछे बड़ेपराक्रमी सुष्टुवक्ता बादलके समान शब्दायमान भीष्मजीने उसकी बड़ी भुजाको पकड़कर समयपर यह बचनकहा कि हेकुन्ती नन्दन तुम अपने मंत्रियों समेत यहां प्रारब्धसे आयेहो २५ । २६ हजारों किरणोंका स्वामी भगवान् सूर्य्य उत्तरायण गतिमें आयाहै अब तीक्ष्णनोकवाले बाणोंपर मुझ शयनकरनेवालेकी अट्ठावन रात्रि एकसौ बर्षके समान ब्यतीत हुईहैं २७ हे युधिष्ठिर यहचित्त विनोदक माघका महीना बर्त्तमानहुआ इस शुक्लपक्ष नाम योग्य पक्षके होनेमें तृतीयांशबाकीहै २८ इस रीतिसे उस धर्म पुत्र युधिष्ठिरसे भीष्मजीने बचनको कहकर और धृतराष्ट्र को सन्मुख करके समय पर यह बचनकहा २९हे राजा तुम धर्मके ज्ञाताहो और सब अर्थसंशयोंका निर्णय करचुकेहो तुमने बड़े २ अनेक ज्ञानी ब्राह्मणों कीउपासना करीहै ३० तुम सब शास्त्र और धर्मोंको जानतेहो और चारों वेदोंको संपूर्णतासे सांगोपांग समझतेहो ३१ हे कौरव्य अब किसीप्रकारका शोचनकरना चाहिये यह इसी प्रकारकी होतब्यता थी तुमने ब्यासजीसे देवताओंकी गुप्तवार्त्ताओंको भी सुना ३२ हे-राजाधृतराष्ट्रयह युधिष्ठिर आदि जैसे कि पांडुकेपुत्रहैं उसीप्रकार धर्म से तेरे भी पुत्रहैं यह वृद्धोंकी सेवामें प्रवृत्तहैं उनको तुम भी धर्ममें प्रवृत्त होकर पोषण और पालन करो ३३ यह पवित्रात्मा धर्मराज युधिष्ठिर तेरी आज्ञामें नियत होगा मैं इसको अत्यन्त करुणावान् और वृद्धोंसे प्रीति करनेवाला जानताहूं ३४ तेरे पुत्र दुर्बुद्धी क्रोध और मोहमें लिप्त ईर्षासे भरेहुये और दुराचारीथे उन-का शोच करनेकेयोग्य नहींहै ३५ बैशंपायनबोले कि कौरव्यभीष्म जीने ज्ञानी धृतराष्ट्र से इतना वचन कहकर महाबाहु बासुदेव जी से यह बचनकहा कि ३६ हे षड़ैश्वर्य्यकेस्वामी देवताओंके ईश्वर

देवासुरोंसे स्तूयमान त्रिबिक्रम शंख चक्रगदाधारी तुमकोनमस्कार है ३७ तुम सब जीवों में निवास करनेवाले हिरण्यात्मा पुरोरूप शरीरोंमें शयन करनेवाले सबकेकर्त्ता विराटरूप जीवरूप अनुरूप परमात्मा और सनातनहो ३८ स्त्री आदि परिग्रह न रखनेवालामैं तेराभक्त और तुझीमें प्रवृत्त चित्तहूं हेहृदय कमलमें नियतपुरुषोत्तम आप सदैव रक्षाकरो ३९ हेपापोंसे छुटानेवाले बैकुंठपुरुषोत्तम आप मुझे आज्ञादीजिये यह सबपांडव आपसे रक्षाके योग्यहैं आपइनके रक्षास्थानहो मैंने उस दुर्बुद्धी प्रारब्धहीन दुर्य्योधनसे कहाथा ४० कि जिधर श्रीकृष्णहैं उधरधर्महै और जिधरधर्महै उधरहीबिजयहै हे पुत्र तीर्थ रूप बासुदेवजी केद्वारा पांडवोंके साथमें सन्धि और मिलाप कर तेरे सन्धि करनेका अच्छा समय है यह मैंने बारंबार कहा ४१ उस अज्ञानी निर्बुद्धीने मेरे उस बचनको नहीं कियाऔर सब पृथ्वीभर के मनुष्यों को मरवा कर अन्तको आपभी मारागया ४२ हेदेवतामैं तुझ देवताको प्राचीन और ऋषियोंमें श्रेष्ठजानताहूंतुमनेनरसमेत बद्रीआश्रममें बहुत कालतक निवासकिया ४३ और बड़ेतपस्वीब्यास और नारदजीने भी मुझसे कहा था कि यह दोनोंनर और नारायण मनुष्योंमें प्रकटहुये हैं ४४ हे श्रीकृष्णजी आपमुझको आज्ञादीजिये मैं अबशरीरको त्यागूंगा आपकी आज्ञा से मैं परम गतिको प्राप्तकरूंगा ४५ बासुदेवजी बोले कि हेराजा भीष्ममैं तुमको आज्ञा देताहूं कि तुमबसुदेवताओंको प्राप्तकरो हेमहातेजस्वी इसलोकमें तुमनेकोई पापनहीं किया ४६ हे राजऋषि तुमपिताके भक्तहो तुममानों दूसरे मार्कण्डेय ऋषिहो इसी हेतुसे सेवकके समान नम्रीभूत मृत्युतेरी आधीनतामें वर्त्तमानहै४७वैशंपायनबोले कि श्रीकृष्णजीके इनबचनोंको सुनकर गांगेय भीष्मजीने पांडव और धृतराष्ट्र आदि सब अपने प्रियइष्टमित्रोंसे यह बचन कहा ४८ कि हेप्रियलोगो मैं अब प्राणोंको त्यागना चाहताहूं तुम सब लोगभी मुझको आज्ञा देनेके योग्यहो तुम सबको सत्यतामें उपाय करना उचितहै क्योंकि सत्यताही सर्वोत्तम पराक्रमहै ४९

हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठसदैव सावधान चित्तहोकर दयावान वेद ब्रा- ह्मणोंके रक्षक धर्मके अभ्यासी सदैवतपमें प्रवृत्त तुम लोगोंको मनो- रथोंका सिद्धकरना योग्यहै ५० उनमहाबुद्धिमान्ने सब भाईबन्धु पुत्रपौत्रादि समेत नाते रिश्तेदारोंसे यह वचन कहके और सबसे प्रीतिपूर्व्वक मिलकर फिर युधिष्ठिर से यह वचन कहा कि हेराजा ब्राह्मण और मुख्य करके ब्रह्मज्ञानी आचार्य्य और ऋत्विज लोगों का तुमको सदैव पूजन करना योग्य है ५२ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्वणिदानधर्मेभीष्मशिक्षावर्णनेशतोपरिअष्टषष्टित मोऽध्यायः १६८ ॥

एकसौउनहत्तरका अध्याय ॥

वैशंपायन बोले कि हेशत्रुबिजयी राजा जन्मेजय तब वहकौरव्य भीष्मपितामह सब कौरवोंको इसरीतिसे कहकर एक मूहूर्त्त तक मौनहुये १ और आत्माको क्रमपूर्व्वक धारणाओं में धारण किया उससमय उस महात्माके रोकेहुये प्राणऊपरकी ओरकोचले २ अ- र्थात् हे प्रभु तब सबऋषियों समेत उन व्यासादिक महात्माओं के मध्यमें यह आश्चर्य्य प्रकटहुआ ३ अर्थात् उसकालमें वह भीष्म जी जिस २ अंगकोत्याग करतेथे उसयोगी शान्तनु का वह २ अंग शल्यसेविशल्यहोताजाताथा४ और सबलोगोंके देखतेही देखते वह भीष्मजीक्षणमात्रहीमें अव्रणहोगये अर्थात् घायलपनेसे रहितहो गये ५ हे राजातव व्यासादिक सब मुनियोंसमेत वह सब कौरव लोग जिनके अग्रवर्त्ती वासुदेवजीथे सब आश्चर्य्य युक्तहुये६ तबसब अंगोंमें भीष्मजीसे रोकाहुआआत्मा ऊपरकीओर मस्तक कोफोड़ करचला और स्वर्गको उड़ा उससमयसुमनोंकी वृष्टि संयुक्तदेव- ताओंकी दुन्दुभियोंके बड़ेशब्दहुये और सिद्ध वा ब्रह्म ऋषि धन्यहै धन्यहै ऐसा कहकर प्रसन्न हुये ८ हेराजाभीष्मजी के मस्तकसेआ- त्मावड़ी अग्निकी ज्योतिके समान निकलकर आकाशमेंप्रविष्टहोके क्षणमेंही अन्तर्धान होगया ६ हेश्रेष्ठ तब वह भरतवंशियोंके कुलमें

उत्पन्न राजाभीष्म इस रीतिसे कालधर्ममें संयुक्तहुआ १० इसके पीछे महात्मा पांडव और बिदुरजीने लकड़ी और नाना प्रकारकी अनेक सुगन्धियोंको लेकर उनकी चिताबनाई ११ और युयुत्सुभी उसकर्ममें प्रवृत्तहुआ और अन्यसब राजाआदिक उस सबकेदेखने वालेहुये युधिष्ठिर और बड़े बुद्धिमान् बिदुरजीने उस कौरव भीष्म जीको १२ पट बस्त्र और सुगन्धित उत्तम मालाओं से आच्छादित करदिया फिर युयुत्सुने उसके उत्तम छत्रको धारण किया १३ भीमसेन और अर्जुनदोनों ने श्वेतचमर और पंखाधारण किया इसीप्रकार नकुल और सहदेवने पगड़ी और किरीटको पकड़ा १४ कौरवनाथ की सब स्त्रियोंने पंखोंको लेकर कौरव्य भीष्मकी पवनकरी इसके पीछे इस महात्माके पितृयज्ञको बड़ी बिधिके अनुसार किया १५ अग्निमें बहुतसा हवन किया सामग ब्राह्मणों ने सामवेदकी ऋचाओंको गाया इसकेपीछे चन्दनकी लकड़ी कालीयक और काला अगर आदि सुगन्धित बस्तु और अनेक प्रकारकी सुगंधियोंसे १६ भीष्मजीको ढककर अग्नि प्रज्वलित करके धृतराष्ट्र आदिने चिताको दक्षिण किया १७फिरवह कौरवोंमें बड़ेसाधू सबलोग उन गांगेयजीका संस्कारकरके उसपबित्रऋषियों से सेबित श्रीगंगाजीको गये १८ उनकेसाथमें ब्यास नारद असित श्रीकृष्ण भरतवंशियोंकी स्त्रियां और चारोंओरसे घिरेहुये पुरबासी लोगथे उनउत्तमक्षत्रियोंने और सब मनुष्योंने महात्माभीष्मजीकी जलांजलीको बिधिके अनुसार किया १९ । २० इसकेपीछे पुत्रकी जलांजली करनेपर देवीगंगाजी उसअपनेजलसे निकलकर रोतीहुई शोकसे ब्याकुल हुई और उसी शोकसे रुदन करती हुई गंगाजीने कौरवोंसे कहा कि हे निष्पाप कौरवलोगो वह भीष्म जैसे चलने वाला और जिस दशामें युक्तथा उसका बृत्तान्त तुम मुझसे समझो २२ वह राजबृत्ति अर्थात् राजचलनबुद्धी और कुलसंबंधी बृद्ध कौरवों का सत्कार करने वाला पिताका भक्त महाब्रतधारीथा २३ पूर्बसमयमें जोअतुल पराक्रमी महा उग्ररूप परशुरामजी के दिव्य

अस्त्रों सेभी पराजय नहीं हुआ वह अब शिखण्डीके हाथसे मारा गया २४ हे राजालोगो निश्चय करके मेरा हृदय वज्रके समान है जो अपनेप्यारे पुत्रके अदर्शनसेभी नहीं फटताहै २५ काशीपुरी में स्वयंवरके मध्यमें इकट्ठे होनेवाले क्षत्री राजाओं को एकही रथसे विजय करके उसकी कन्याको हरण किया २६ जिसके समान का संपूर्ण पृथ्वीपर भीकोई पराक्रमी नहींहै उसबीरको शिखंडीकेहाथसे मृतक सुनकर भी मेराहृदय नहींफटताहै २७ कुरुक्षेत्र में युद्धके मध्य जिसमहात्माकेथोड़ेही उपायसे परशुरामजी पीड़ामान हुयेवह अबशिखण्डीके हाथसे मारागया तब प्रभुश्रीकृष्णजी ने इस प्रकार वहुत प्रकार का बिलाप करनेवाली महानदी गंगाजीको बिश्वास कराया २८ हेशुभदर्शन कल्याणी तू बिश्वास युक्त होकिसी प्रकार काशोचमतकरो वह तेरा प्रतापीपुत्र निस्सन्देह महाउत्तम लोकको गया ३० हे शोभायमान यह महातेजस्वी बसुदेवताहै इसने शाप दोषसे मनुष्य शरीरको पायाथा इसका तुम शोच करनेको योग्य नहींहो ३१ हे देवीयह भीष्मक्षत्री धर्मसे युद्धभूमि में महाघोर युद्ध करके अर्जुनके हाथसे मारागयाहै शिखण्डीके हाथसे नहीं मारा गया ३२ इस शस्त्रधारी कौरवोत्तम भीष्मकोयुद्धमें साक्षात् इन्द्रभी मारनेको समर्थ नहीं था ३३ हे सुन्दरमुखी तेरापुत्र अपनीइच्छानुसार स्वर्गकोगया उसको युद्धमें सब देवता लोग इकट्ठे होकर भी मारनेको समर्थ नहींथे ३४ हे उत्तमनदी इसी कारण तुमइस कुरुनन्दनका शोचमत करो हे देवि यह तेरा पुत्र जो कि स्वर्गको गयाहै वह वसुधा तुम अपने संतापको त्यागो ३५ बैशंपायन बोले कि हे महाराज श्रीकृष्ण और व्यासजीसे इसरीतिपर समझाई हुई वह श्रेष्ठनदी अपने शोकको त्यागकर अपनेजलमें गुप्त होगई ३६ हे राजा इसके अनन्तर वह श्रीकृष्ण आदिक सब राजा लोग उन गंगाजीको नमस्कार और सत्कार करके उसकी आज्ञालेकर लौट आये ३७ जो मनुष्य भक्तिसे युक्त होकर इस अनुशासन पर्वको सुनेगा वा पढ़ैगा वह नीरोगता पूर्व्वक आयुकी वृद्धि ऐश्वर्य और

अच्छीरीतिसे पुत्र पौत्रादि से सम्पन्न होगा ३८ ॥ शुभंभूयात् ॥

इतिश्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांसंहितायांवैयासिक्यांआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेभीष्म युधिष्ठिरसम्वादेभीष्ममुक्तिर्नामशतोपरिएकोनसप्ततितमोऽध्यायः १६६ ॥

इतिश्रानुशासनिपर्व्वं समाप्तम् ॥

बर्षेपयोनिधि युगांक शशाङ्क संख्ये
चौरासिया तिलक गोकुलचन्द्रसूनुः ॥
एकांत कांत मनुशासन पर्वणोऽस्य
भाषानुबादम मृतैक सखंव्यधत्त १

मुंशीनवलकिशोर के छापेखाने मुक़ाम लखनऊमें छपी
नवम्बर सन्१८८८ ई० ॥

महाभारत के पर्व अलग २ भी मिलते हैं ॥

१ आदिपर्व १
२ सभापर्व २
३ वनपर्व ३
४ विराटपर्व ४
५ उद्योगपर्व ५
६ भीष्मपर्व ६
७ द्रोणपर्व ७
८ कर्णपर्व ८
९ शल्य व गदा ९ सौप्तिक १० योषिक व बिशोक ११ स्त्रीपर्व १२
१० शांतिपर्व १३ राजधर्म्म, आपद्धर्म, मोक्षधर्म्म, दानधर्म्म
११ अश्वमेध १४ आश्रमबासिक १५ मूसलपर्व १६ महाप्रस्थान १७ स्वर्गारोहण १८
१२ हरिबंशपर्व १९ ॥

महाभारत सबलसिंह चौहान कृत ॥

यह पुस्तक ऐसी उत्तम दोहा चौपाइयों में है कि सम्पूर्ण महाभारत की कथा दोहे चौपाई आदि छन्दों में है यह पुस्तक ऐसी सरल है कि कमपढ़े हुये मनुष्योंको भी भली भांति समझमें आतीहै इसका आनन्द देखनेही से मालूमहोगा ॥

(१) आदि, (२) सभा, (३) बन, (४) विराट, (५) उद्योग, (६) भीष्म, (७) स्त्री, (८) स्वर्गारोहण, (९) द्रोण, (१०) कर्ण, (११) शल्य, (१२) गदा, ये पर्व्व छपचुके हैं बाकी जब और पर्ब मिलेंगे छापे जावेंगे जिन महाशयोंको मिलसक्ती हैं कृपा करके भेजदेवैं तौ छापेजावैं ॥

महाभारत वार्तिक भाषानुवाद ॥

जिसकातर्जुमा संस्कृतसे देवनागरी भाषामें होगयाहै जिसकी आदि, सभा, वन, विराट, उद्योग, भीष्म, द्रोण, कर्ण, अनुशासन, शान्ति, और हरिवंशपर्व्व छप गईहैं शेषपर्वें भी बहुत शीघ्र छपरही हैं ॥

भगवद्गीतानवलभाष्यका विज्ञापनपत्र ।

प्रकटहो कि यहपुस्तक श्रीमद्भगवद्गीता सकल निगम पुराण स्मृतिसांख्यादि सार भूत परमरहस्यगीताशास्त्रका सर्व्वविद्यानिधान सौशील्यविनयोदार्य्य सत्यसंगर शौर्य्यादिगुणसम्पन्न नरावतार महानुभाव अर्जुनको परमअधिकारी जानके हृदयजनित मोहनाशार्थ सबप्रकार अपारसंसार निस्तारक भगवद्भक्तिमार्ग दृष्टिगोचरकराया है वही उक्त भगवद्गीतावत्‌वत्वेदान्त व योगशास्त्रान्तर्गत जिसको कि अच्छेशास्त्रवेतारअपनीबुद्धि से पारनहींपासक्ते तव मन्दवुद्धी जिनको कि केवल देशभाषाहो पठनपाठन करने की सामर्थ्यहै वह कब इसके अन्तराभिप्रायको जानसक्तेहैं-और यहप्रत्यक्षहीहै कि जबतक किसी पुस्तक अथवा किसी वस्तुका अन्तराभिप्राय अच्छेप्रकार वुद्धिमें न भासितहो तब तक आनन्द क्योंकर मिले इसकारण सम्पूर्ण भारतनिवासी भगवद्भक्तपादाब्ज रसिक जनों के चितानन्दार्थ व वुद्धिवोधार्थ सन्तत धर्मधुरीण सकलकलाचातुरीण सर्व्वविद्या विलासीभगवद्भक्त्यनुरागी श्रीमन्मुन्शीनवलकिशोरजी सी,आई,ई ने वहुतसाधनव्यय कर फ़र्रुखाबादनिवासि स्वर्गवासि पण्डित उमादत्तजीसे इसमनोरंजन वेदवेदान्तशास्त्रोपरि पुस्तक को श्रीशंकराचार्य्यनिर्मित भाष्यानुसार संस्कृत से सरल देशभाषा में तिलकरचा नवलभाष्यआख्य से प्रभातकालिक कमलसरिस प्रफुल्लित करादिया है कि जिसको भाषामात्रके जाननेवाले पुरुषभी जानसक्ते हैं ॥

जबछपनेका समयआया तो वहुतसे विद्वज्जन महात्माओंकी सम्मतिसे यहविचार हुआ कि इस अमूल्य व अपूर्व ग्रन्थकी भाष्यमें अधिकतरउत्तमता उससमय परहोगी कि इस शंकराचार्य्य कृत भाष्य भाषाके साथ और इस ग्रन्थ के टीकाकारों की टीका भी जितनी मिलें शामिल कीजावें जिसमें उन टीकाकारों के अभिप्रायकाभी बोधहोवे इसकारण से श्रीस्वामी शंकराचार्य्यजीकी शंकरभाष्यका तिलक व श्रीआनन्दगिरि कृत तिलक अरु श्रीधरस्वामिकृत तिलकभी मूल श्लोकोंसहित इसपुस्तकमेंउपस्थित है ॥

ना चाहा परन्तु वह किसी प्रकार से भी उस प्रभुको नमा
२७ देवताओं ने उस गुहानिवासी कार्त्तिकेयको सेनानीके
कार पर अभिषेक करके तारक की शत्रुता औरकृतघ्नताका
न्त उससे कहा २८ फिर उस अत्यन्त बर्द्धमान देवताओं व
पति प्रभु गुहनेअमोघ शक्ति से तारकासुरको मारा २६ उ
करने वाले कुमार के हाथ से उस असुरके मरने पर देवरा
फिर करके देवताओंके राज्यासन पर नियत किया गया ३
देवताओं का ईश्वर रक्षक और शंकरजी का अभीष्ट करं
प्रतापवान सेनापति स्कन्ध महा शोभायमान हुआ ३१ इस
मूर्त्ति भगवान् कुमार कार्त्तिकेयने सदैव देवताओं की सेना
पदवी कोही पाया ३२ इसीहेतुसे अग्निके पुत्र कार्त्तिकेयवं
उत्पन्न मंगली और अविनाशी उत्तम रत्न सुवर्ण मानागया
राजायुधिष्ठिर पूर्व्व समयमें वशिष्ठजीने यह सब वृत्तान्त पर
जीसे कहा है इसी हेतुसे तुम सुवर्णके दानके अर्थ अच्छे २
करो ३४ परशुरामजी सुवर्ण का दान करके सब पापों से
गये और स्वर्गमें उन्होंने उस उत्तम स्थानको पाया जोकि
को बड़ी कठिनतासे प्राप्त होने के योग्य है ३५ ॥

इतिश्रीमहाभारतेआनुशासनिकेपर्व्वणिदानधर्मेसुवर्णदानंनामषडशीतितमो ऽध्य

सत्तासीवां अध्याय ॥

युधिष्ठिर बोले हे धर्मात्माराजा भीष्मजीजिस प्रकारसे
चारों वर्णोंके धर्मोंका वर्णन किया उसी प्रकारसे श्राद्ध बिधि
मुझसे कहो १ वैशंपायन बोलेकि युधिष्ठिरके इस बचनको
भीष्मपितामह ने इस संपूर्ण श्राद्ध विधिको कहना प्रारंभकि
भीष्मजी बोले कि हे शत्रुसंतापी राजा युधिष्ठिर तुम बड़ी
धानीसे श्राद्धोंकी शुभ विधियोंको सुनो जोकि पितृयज्ञ
धनकीर्त्ति और सन्तानमें पुत्रोंकी देनेवाली हैं ३ वह पित
देवता असुर मनुष्यगन्धर्व उरग राक्षस पिशाच और किन्न

ऽ तेजस्वी बालकको देखा तब बड़ीप्रीतिसे स्नेह
का दूध उसको पिलाया १३ इससे वह बालक
संसार में कार्त्तिकेय नाम से प्रसिद्ध हुआ और
ते स्कन्धनाम विख्यात हुआ औरगुहामें निवास
हुआ १४ इसके पीछे देवता, दिशा, दिगेश्वर,
विष्णु, यमराज, पूषा, अर्य्यमा, भग, १५ अंश,
अष्टवसु, इंद्र, अश्विनीकुमार, जल, वायु, आकाश,
ह, सूर्य्य, १६ और अन्य शरीरधारी ऋग् यजु
रादेवताओंको आहुतिदीजातीहैं यहसबपृथक्२
ई दर्शन कुमाररूप अग्नि के पुत्रके देखने को
ने स्तुतिकरी गन्धर्वोंने गाया उस षड़ानन
ब्राह्मणों के प्यारे १८ बड़े स्कन्धयुक्त द्वादश
और सूर्य्य के समान तेजस्वी सुरवनमें सोतेहु-
षियोंसमेत देवताओंने१९ बड़ा आनन्दमाना और
तारक को मराहुआही जाना इसके पीछे सब
अभीष्ट वस्तुओंको प्राप्त किया २० उस खेलने
लकी अनेक बस्तुदीं और गरुड़जीने उसको अ-
ा जोकि बड़ा अपूर्व अनेक रंगोंके पक्ष धारण
सोंने बराह और भैंसा उसको दिया वरुण देव-
ान बड़ा तेजस्वी कुक्कुट दिया २२ चन्द्रमाने
ा सूर्य्य ने सुंदर तेज दिया गौओंकीमाता सुरभी
दीं २३ अग्निने गुणयुक्तबकरादिया पृथ्वीनेअनेक
ग्न्वाने शकट और बड़े कूबरवाला रथ दिया २४
पने लोकमें उत्पन्न होनेवाले महादिव्य शुभ
ान सिंह व्याघ्र हाथी और अन्य २ पक्षी २५
हिंसक पशु और नाना प्रकार के छत्र भी दिये
पीछे राक्षस औरदेवताओंके समूहचले २६ तब
युक्त कुमार को देखकर अनेक उपायोंसे मार-